Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
पुस्तकालय

विषय संख्या
पुस्तक संख्या 7L0x8
आगत पंजिका संख्या

पुस्तक पर किसी प्रकार का निशान लगाना वर्जित है। कृपया १५ दिन से अधिक समय तक पुस्तक अपने पास न रखें।

11250

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

25 JUL 1983

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल पत्रिका

जनवरी, १९५३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रभारती

वर्ष ३. [जनवरी १९५३] अंक १.

इस अंकमें इन्हें पढ़िये

१. लेख :–		लेखक	पृष्ठ-संख्या
सूर्यकी कर्मनिष्ठा			२
१. शेख फरीद	...	श्री वियोगी हरि	४
२. मैंने संगीत कैसे सीखा ?	....	श्री मौलाना अबुल कलाम आजाद	१३
३. हिन्दी और मराठी साहित्यकी ऐतिहासिक परम्परा	....	श्री व्योहार राजेन्द्रसिंह	१६
४. भारतीय अितिहासका अेक युग प्रतीक 'बँगला नाटक'	...	श्री मन्मथनाथ गुप्त	२१
५. मेरे पासपोर्ट	...	भदन्त आनन्द कौसल्यायन	२५
६. हिन्दी काव्यमें गतिरोध	...	श्री प्रभुदयाल अग्निहोत्री	२९
७. अेशिया और प्रशांत देशोंकी शांति परिषद्	...	डॉ. जगदीशचन्द्र जैन	३९
८. कर्नाटककी अप्रतिम शिल्पकला	...	श्री श्रीपाद जोशी	६४
९. कहीं हिन्दी संस्कृतका पूर्ण अनुगमन करती है ?	...	श्री किशोरीदास वाजपेयी	७०
२. कविता :–			..
१. सत्य	...	श्री माखनलाल चतुर्वेदी 'भारतीय आत्मा'	१
२. ३० जनवरीकी शाम	...	श्री 'नीरज'	३
३. जय हो !	...	श्री रामेश्वरदयाल दुबे	१५
४. मंगलमय नूतन वर्ष बने !	...	सुश्री विद्यावती मिश्र	३८
५. नारी	...	श्री अंचल	४६
६. नारी (बँगला)	...	अनुवाक श्री काजी नजरुल अिस्लाम	४७
७. गीत	...	श्री भवानीप्रसाद तिवारी	५३
८. अेक दिसम्बरकी शाम	...	श्री जगदीशचन्द्र	६८
३. कहानी और अेकांकी :–			
१. खोअी हुअी आँखें (तमिल कहानी)	...	श्री कि. रा.	३३
२. अुपगुप्त और कामदेव (नाटक)	...	भदन्त शान्तिभिक्षु	४३
३. यलबल और मैं (कहानी)	...	श्री पितरस अनुवादिका–श्रीमती नज्मुन्निसा बेगम	५०
४. तीन पत्र और 'आलपीन' (कहानी)	...	श्री राजेन्द्र यादव	५४
४. साहित्यालोचन	...		७२
५. सम्पादकीय ...	...	... ...	७५

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे : अर्धवार्षिक ३॥) : : अेक अंकका मूल्य १० आना

पता:—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

112550
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

112550

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट * हृषीकेश शर्मा

* वर्ष ३ * वर्धा, जनवरी, १९५३ * अंक १ *

सूक्त्य

: श्री माखनलाल चतुर्वेदी, 'भारतीय आत्मा' :

सत्य सदा तुझको सूलीपर लटकाये
जाते ही देखा,
और पापको मुकुट पहनते सिंहासन
पाते ही देखा ।

तो भी राजों और महाराजोंकी
लखकर सीना-जोरी,
देता है भविष्य तेरे ही हाथों
अपनी जीवनडोरी ।

लखकर अेक अदृश्य कोणसे
फिर जगनंदनका वनमाली,
अै प्रभुके अपने, तेरी करता रहता
हरदम रखवाली ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूर्यकी कर्मनिष्ठा

" रोज सूर्य निकलता है। अुषाकालसे ही अुसकी किरणें बाहर आने लगती हैं। पूरी चमक, जगमगाहट और तेजसे आगका गोला निकलता है और सारा संसार प्रकाशित हो जाता है। जब तक रहता है सारे वातावरणको प्रकाशित करता है। वह अस्त होते होते भी अन्तिम क्षणतक कर्म रत रहता है। "

सन्त विनोबा कहते हैं हर रचनात्मक कार्यकर्ताको सूर्य बनना है। सूर्यकी कर्मनिष्ठाको अपनेमें लानेकी कोशिश हम कर रहे हैं न ? शुरूसे अन्ततक अुसी अुत्साहसे काममें लगे रहनेकी हमारी तैयारी है न ? क्या हममें अितनी शक्ति है कि हमारे आते ही वातावरण चमक अुठे ? सूर्यका तेज तो दूसरोंकी सेवाके लिये है। हम भी अपनी सारी प्रतिभा दूसरोंके लिये अर्पित करनेको तत्पर हैं न ?

—"मगन-परिवार" के सौजन्यसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'३० जनवरीकी शाम'

: श्री 'नीरज' :

है ३० जनवरी आज, न स्याही माँग कलम,
कुछ लिखना है तो आँसू काग़ज़पर अुतार
गानेका है गर चाव तोड़ दे यह वीणा
बन्दूक अुठा, गोली निकालकर भर मल्हार।

ओ चित्रकार! तस्वीर देखताकी न आँक
जो मनुज मर गया है अुसको दे रूप-रंग
यमुना तटपर सो रहा मसीहा जो अपना
अुसको जीवित कर, भर अुसमें यौवन अुमंग।

ओ शिल्पि! मूर्ति न गढ़ युगोंकी, देख अुधर
गोली खाकर ले रहा प्रेम आखिरी श्वास
लोहेके कपड़े पहने शान्ति बिलखती है
ढोते-ढोते बारूद थक गया है विकास।

अितिहासकार! यह पृष्ठ अंधेरेका न जोड़
आनेवाली सदियाँ काली हो जायेंगी
ओ कवि! अिस नफरतको मत दे अपनी जुबान
लाशें जो कुछ जी रहीं, न वे जी पायेंगी।

वैज्ञानिक! अेटमबम्ब फेंक मत और, बना—
है नागासाकी अब तक मुरदोंका बज़ार
टैंकोंके नीचे अब तक पड़ी तड़पती है
वह देख, कोरिया बीच अेशियाकी बहार।

मत शंख बजाओ मठ, मस्जिद आज़ान न दे!
कर रहा शहीदोंका शहीद मरणाभिषेक
आहिस्ता बोल अरे, ओ मज़हबकी किताब!
हो गया आज खामोश विश्व भरका विवेक।

सब अुठो चलो अुस राजघाटपर आज, जहाँ
बुन रही कफ़न कल्पना, चिता रच रहे छंद
है मूक जहाँ सौ-सौ कवियोंके महाकाव्य
आनंद स्वयं ही जहाँ हो रहा निरानंद।

पर ठहरो अपने रक्त-सने अिन हाथोंसे
अुसकी समाधि मत छुओ, न दो अुसको प्रणाम,
सिंहासन छोड़ो अगर वन्दना करनी है
गाँवोंमें जाओ जहाँ कि भूखे पड़े राम।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शेख फ़रीद

:श्री वियोगी हरि:

[परिचय—जन्मकाल—अनिश्चित, पिता—ख्वाजा शेख मुहम्मद, निवास-स्थान—अजोधन (पाकपट्टन), भेष—गृहस्थ, मृत्यु-काल—९६० हिजरी, २१ रजब, ओ. सन् १५५२]

असल नाम अिनका शेख बिरहम या अिब्राहीम था। पाकपट्टनके आदि फरीद हजरत बाबा फरीदुद्दीन मसऊद शकरगंजके यह वंशज थे, और फरीद अिनकी अुपाधि थी। अिन्हें फरीद सानी अर्थात् फरीद द्वितीय भी कहते हैं। शेख बिरहम कलाँ, बलराजा, शेख बिरहम साहब और शाह बिरहम नामोंसे भी यह प्रसिद्ध हैं।

आदि फरीद याने हजरत बाबा फरीदुद्दीन औसाकी तेरहवीं सदीमें विद्यमान थे। यह बहुत बड़े पहुँचे हुअे सूफी फकीर थे। दिल्लीके सुप्रसिद्ध हजरत निजामुद्दीन औलिया अिनको अपना गुरु मानते थे। निजामुद्दीनने अिनकी प्रशंसामें अेक बार कहा था—

"मेरे पीर पवित्रात्मा मौलाना फरीद हैं;
अुनके समान परमेश्वरने अिस लोकमें दूसरा नहीं सिरजा।"

हमारे यह द्वितीय फरीद या शेख बिरहम अुनकी ११ वीं पीढीमें आते हैं। आदिगुरु बाबा नानकके साथ अिन्हींका सत्संग हुआ था, और गुरुग्रन्थसाहिबमें अिन्हीं फरीदके २ पदों और १३० श्लोकोंका संग्रह मिलता है।

आदि फरीदकी तरह यह भी अेक अूँची श्रेणीके महात्मा थे। अिनके अनेक चमत्कारोंकी भी कथाअें प्रसिद्ध हैं। अेक कथा है कि अेक रातको अेक चोर अिनके घर चोरी करने आया और वह अंधा हो गया। सबेरा होते ही अुसने शेख साहबसे माफी माँगी, और प्रतिज्ञा की कि आंगे वह कभी अैसा बुरा काम नहीं करेगा। शेख बिरहमने अुसके लिये अीश्वरसे प्रार्थना की, और अुस चोरको फिरसे दृष्टि मिल गयी।

बाबा नानक दो बार अजोधनमें जाकर अिनसे मिले थे। अिन दोनों महात्माओंका सत्संग प्रसिद्ध है। अुस सत्संगमें शेख फरीदने कअी आध्यात्मिक प्रश्न किये थे और बाबा नानकने अुन्हें अुनके अुत्तर दिये थे।

कहा जाता है कि शेख बिरहमके दो पुत्र भी थे—शेख ताजुद्दीन महमूद और शेख मुनव्वरशाह शहीद। शेख ताजुद्दीन भी अेक अूँचे फकीर थे। शेख बिरहमके कअी शागिर्द थे जिनमें शेख सलीम चिश्ती फतेहपुरी बहुत प्रसिद्ध थे।

शेख बिरहमकी मृत्यु २१ रजब, ९६२ हिजरी सन्में हुअी। ४२ बरस तक अिन्होंने प्रेम व परमार्थकी अनमोल दौलतको दोनों हाथोंसे लुटाया, और खूब लुटाया।

बानी-परिचय

शेख फरीदकी बानी बहुत रसभरी, गहरी और मरम पर सीधे चोट करनेवाली है। अुनके कअी छन्दोंके अंदर गहरा रहस्य भरा हुआ है, और अुन्हींमें अुसके खोलनेकी कुंजी भी है। स्वरूपका साक्षात्कार करनेके बाद ही अिस आध्यात्मिक गहराअी और अूँचाअी तक पहुँचा जा सकता है। वैराग्यकी भी लहरें शेख फरीदने अूँची-से-अूँची अुठायी हैं। अिनका अेक-अेक शब्द अनूठा है। अिनकी प्रेम-प्रीतिकी मीठी बानीमें सूफी-रंग बहुत निखरा हुआ पाया जाता है।

भाषा पंजाबी-हिन्दी है, और बहुत मीठी और रसीली। कहनेका ढंग अैसा है मानों गागरमें सागर भर दिया है। अिनकी बानी जब पढ़ते हैं और सुनते हैं, तो तबीअत मस्तीमें झूमने लगती है।

रागु आसा

१. बोलै सेख फरीदु पिआरे अलह लगे।
अिहु तनु होसी खाक निमाणी गोर घरे॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आजु मिलावा सेख फरीद हाकिम ।
कूंजड़ीआ मनहु मचिन्दड़ीआ ॥
जे जाणा मरि जाओअे घुमि न आओअे ।
झूठी दुनिया लगि न आपु बजाओअे ॥
बोलीअे सचु धरमु न झूठु बोलीअे ।
जो गुरु दसै वाट मुरीदा जोलीअे ॥
छैल लंघदे पारि गोरी मनु धोरिआ ।
कंचन वंने पासे कलवति चीरिआ ॥
सेख है याती जगि न काओ थिरु रहिआ ।
जिसु आसणि हम बैठे केते बैसि गअिआ ॥
कतिक कूंजां चेति डअु सावणि बिजुलीआं ।
सीआले सोहंदीआं पिर गलि वाहडीआं ।
चले चलणहार विचारा लेअि मनो ।
गंढेदिआं छिअ माह तुडंदिआ हिकु खिनो ॥
जिमी पुछै असमान फरीदा खेवट किंनि गये ।
जालण गोरा नालि अुलामे जीअ सहे ॥ १ ॥

१. शेख फरीद कहता है— मेरे प्यारे मित्रो ! अल्लाहसे जोड़ लो अपनी प्रीति । यह शरीर तो खाक हो जायेगा, और अिसका घर निगोड़ी कब्रमें जा बनेगा । आज अुस प्रीतमसे मिलन हो सकता है, शेख फरीद, यदि तू अुन भावनाओंको काबूमें कर ले, जो तेरे मनको बेचैन कर रही हैं ।

यदि मुझे पता होता कि मुझे मरना ही होगा, और फिर यहाँ लौटना नहीं होगा,—

तो अिस झूठी दुनियासे प्रीति जोड़कर मैं अपने-आपको बर्बाद न कर बैठता ।

तू धरमसे सच बोल; झूठ न बोल ।
जो रास्ता गुरु दिखा दे, अुसीपर चलना चाहिये शागिर्द को ।
प्रेमीके रास्ता पार कर लेनेपर प्रियतमाको हिम्मत बँध जाती है ।

('छैल' या प्रेमीसे मतलब यहाँ साधकसे है, और 'गोरी' प्रियतमासे आशय है लक्ष्य-सिद्धि करनेवाले योगी से ।)

तू करीतसे चीर दिया जायेगा,
यदि कंचनकी ओर लुभायेगा ।
अय शेख, अिस दुनियामें कोअी भी हमेशा रहनेवला नहीं;
जिस पीढ़ेपर हम बैठे हुअे हैं,
अुसपर कितने बैठ चुके हैं !

जैसे कुलंग कातिकमें आते हैं, चैतमें दावानल देखनेमें आता है, और सावनमें बिजलियाँ कौंधती दिखायी देती हैं,—

और जाड़ोंमें जैसे कामिनी अपने प्रीतमके गलेमें बाहें डाल लेती है,

अैसे ही सब (क्षणभरको) आते और चल देते हैं; अिस (सत्य) पर तू अपने मनमें विचार कर ।

मनुष्यके गढ़े जानेमें तो लगते हैं छह मास, और टूट जाता है वह अेक क्षणमें ।

(अर्थात्, गर्भमें मनुष्यकी आकृति छह महीनेमें बनती है ।)

ज़मीनने आसमानसे पूछा— फ़रीद कहता है— कितने खेनेवाले, पार लगानेवाले (धार्मिक मार्ग-दर्शक) चले गये !

कुछ तो जल-बलकर खाक हो गये, और कुछ कब्रोंमें पड़े हुअे हैं, और अुनकी रूहें झिड़कियाँ झेल रही हैं ।

रागु सूही

२. तपि-तपि लुहि-लुहि हाथ मरोरअुं ।
बावलि होअि सो सहु लोरअुं ॥
तैं सहि मन महि कीआ रोसु ।
मुझु अवगुन सह नाही दोसु ॥
तैं साहिबकी मैं सार न जानी ।
जोबनु खोयि पाछे पछतानी ॥
काली कोअिल तू कित गुन काली ।
अपने प्रीतमके हअु विरहै जाली ॥
पिरहि विहून कतहि सुख पाये ।
जा होअि कृपालु ता प्रभू मिलाये ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विघण खूही मुंध अकेली ।
ना कोअि साथी ना कोअी बेली ॥
वाट हमारी खरी अुडीणी ।
खंनिअहु तिखी बहुतु पिअीणी ॥
अुसु अूपरि है मारगु मेरा ।
सेख फरीदा पंथु सम्हारि सवेरा ॥२॥

२. विरह-ज्वरसे मेरा अंग-अंग जल रहा है, और मैं अपने हाथोंको मरोड़ती हूँ;

प्रीतमसे मिलनकी लालसाने मुझे बावली बना दिया है।
प्यारे, तू अपने मनमें मुझसे रूठ गया था;
सो अिसमें मेरा ही दोष था प्यारे, तेरा नहीं ।
मेरे स्वामी, मैंने तेरे गुणोंको पहचाना नहीं;
मैंने अपना जोबन गवाँ दिया और बहुत पीछे पछताअी ।
री काली कोयल तू किस कारण काली हुअी ?
'अपने प्रीतमके' विरहमें जल-भुनकर;
अपने प्यारेसे विलग होकर क्या किसीको कभी सुख मिला ?
अुस प्रभुसे मिलना अुसीकी कृपासे बन सकता है।
कुआँ यह बहुत दुखदाअी है, और वह बेचारी अकेली अुसमें जा पड़ी है;
(कुआँ अर्थात् संसार; अकेली स्त्री अर्थात् जीवात्मा ।)
न अुसकी वहाँ कोअी सहेली है, न कोअी वेली,
मेरी बड़ी ही विकट बाट है;
दोधारी तलवारसे भी तेज़ और बहुत पैनी;
अुसपर मुझ चलना है;
शेख फ़रीद, तैयार हो जा अुस मार्गपर चलनेको—
अभी समय है ।

सलोक (श्लोक)

३. जितु दिहाडै धनवरी साहे लअे लिखाअि ।
मलकु जिकंनी सुणीदा मुहु देखाले आयि ॥
जिंदु निमाणी कढीअे हडा कूं कड़कायि ।
साहे लिखे न चलनी जिंदू कूं समझायि ॥
जिंदु वहूटी मरणु, वरु लैजासी परनायि ।
आपण हथी जोलिकै कै गलि लगै धायि ॥
बालहु निकी पुरसलात कंनी न सणीआयि ।
फरीदा किड़ी पवंदअी खड़ा न आपु मुहायि ॥१॥

३. वह दिन पहले ही लिख दिया गया था, जिस दिन कि धनवतीका ब्याह होना था ।

जिस दूलहके बारेमें सुन रखा था वह अपना मुखड़ा दिखाने आ पहुँचा है। हाड़ोंको कड़काकर वह अुस बेचारी धनवतीको खींचकर अपने साथ ले जायेगा।

अपनी जीवात्माको तू समझा दे, कि जो घड़ी नियत हो चुकी है अुसे बदला नहीं जा सकता।

जीवात्मा दुलहिन है, और मृत्यु है दूलह; वह अुसे ब्याहकर अपने साथ ले जायेगा।

विदा होते समय, वह बेचारी किसके गलेमें अपनी बाहें डालेगी ?

क्या तुमने सुना नहीं कि वह दुलहिन बालसे भी कहीं महीन है ?

फरीद, जब तेरा बुलावा आये, अुठकर खड़ा हो जाना, और अपने-आपको धोखा न देना ।

सलोक

४. किझु न बूझै किझु न सुझै दुनिआ गुझी माहि ।
साअीं मेरै चंगा कीता नाही त हंभी दझां आहि ॥२॥

४. मैं न कुछ न जानता हूँ, न कुछ देखता हू— दुनिया यह गोया धधकती हुअी आग है :

मेरे साअींने अच्छा किया कि मुझे चेता दिया, नहीं तो मैं भी अिसमें जल-बल गया होता ।

५. फरीदा जे तू अकलि लतीफ काले लिखु न लेखु ।
आपनडे गिरीवान महि सिरु नीवा करि देखु ॥३॥

फरीद, अगर तू तेज़ अक्ल रखता है, तो (दूसरोंके खिलाफ़) काले अंक मत लिख ।

अपना सिर झुकाकर तू तो अपने ही गरीबांकी तरफ़ देख ।

(मतलब यह कि दूसरोंके दोष मत देख; तू तो अपन दिलको देख कि अुसमें कितने क्या दोष भरे पड़े हैं ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. फरीदा जो तैं मारनि मुकीआं तिन्हा न मारे घुंमि ।
आपनडे घरि जाओअे पैर तिन्हादे चुंमि ॥४॥

६. फरीद, अगर लोग तुझे मुक्कोंसे मारें, तो बदलेम तू अुन्हें मत मार; तू तो अुनके क़दमोंको चूमकर अपने घर चला जा ।

७. फरीदा जां तअु खटण वेल तां तूरता दुनी सिअु ।
मरग सवाओ नीहि जां भरिआ तां लदिआ ॥५॥

७. फरीद, जब तेरे कमानेके दिन थे, तब तो तू दुनियाके रंगमें रंगा हुआ था ।

मौतकी नींव मज़बूत है; खेपके भरते ही वह लादनहार लेकर चल देगा ।

(मतलब यह कि आख़िरी साँस पूरी हुअी कि मौत अुसी पल जीवको खींचकर ले जायेगी ।)

८. देखु फरीदा जु थीआ दाड़ी होअी भूर ।
आगहु नेड़ा आयिआ पिछा रहिआ दूर ॥६॥

८. फ़रीद, देख तो ज़रा, यह क्या हुआ-- तेरी दाढी सफेद हो गयी; आगा तेरा नज़दीक़ है. और पीछा दूर छूट गया ।

९. देखु फरीदा जु थीआ सकर होअी विसु ।
साअी बाझहु आपणे वेदणु कहीअे किसु ॥७॥

फरीद, देख तो ज़रा यह क्या हुआ— शकर भी विष हो गयी । अपने स्वामीको छोड़ अब मैं और किसे अपना दुखड़ा (वेदना) सुनाअूँ ?

१०. फरीदा कालीं जिन्ही न राविआ धअुली रावै कोअी ।
करि साअीं सिअु पिरहड़ी रंगु नवेला होअि ॥८॥

क्या किसी नारीने, जब अुसके केश काले थे स्वामीके साथ रमण न कर, तब रमण किया, जब कि अुसके केश पककर श्वेत हो गये ?

खैर, साँअीसे तू अब भी प्रीति कर, जिससे कि तेरे केशोंका रंग फिरसे नया हो जाये ।

('रंगन वेला, भी अेक पाठ है-- जिसका अर्थ यह हुआ कि यही स्वामीके साथ रंग खेलनेका याने प्रेम करनेका समय है ।)

११. फरीदा जिन्ह लोअिन जगु मोहिआ,
ले लोअिण मैं डिठु ।
काजल रेख न सहदिआ,
से पंखी सूअि वहिठु ॥९॥

फरीद, मैंने अुन नयनोंको देखा है, जिन्होंने दुनियाको मोह लिया था--

जो काजलकी रेख भी सहन नहीं करते थे; अब चिड़ियाँ अुनमें अपने अंडे रख रही हैं ।

१२. फरीदा खाकु न निंदीअे खाकू जेडु न कोअि ।
जीवदिआ पैरा तले मुअिआ अूपरि होअि ॥१०॥

फरीद, मत खाककी निन्दा कर, खाकके बराबर कोअी चीज नहीं; जीते-जी वह हमारे पैरोंके नीचे रहती है, और हमारे मरनेपर हमारे अूपर ।

१३. फरीदा जा लबु त नेहु किआ लबु त कूड़ा नेहु ।
किचरु झति लवाओअे छपरि तुटै मेहु ॥११॥

फरीद, जहाँ लाभ है, वहाँ प्रेम कहाँसे होगा ? लोभ होगा तो प्रेम वहाँ झूठा होगा ।

१४. फरीदा जंगलु-जंगलु किआ भवहि वणि कंडा मोडेहि ।
वसी रबु हिआलीअे जंगलु किआ ढूढेहि ॥१२॥

फरीद, शाखों और काँटोंको तोड़ता हुआ अेक जंगलसे दूसरे जंगलमें तू क्यों भटकता फिरता है ?

रब तो तेरे हिये में बस रहा है; फिर जंगलमें तू अुसे क्यों ढूँढ़ रहा है ?

१५. फरीदा अिनी निकी जंघाअे थल डूगर भविओम्हि ।
अजु फरीदै कूजड़ा सै कोहां थीओमि ॥१३॥

फरीद, अिन पतली जाँघों व पिंडलियोंसे कितने ही मैदानों और पहाड़ोंको मैंने पार किया है ।

पर, आज फरीदके लिये अपना कूजा अुठाना भी मानो सैकड़ों कोसोंकी मंज़िल तय करना हो गया ।

१६. फरीदा राती बडिआं धुखि धुखि अुठनि पास ।
धिगु तिन्हादा जीविआ जिन्हा विडाणी आस ॥१४॥

फरीद, रातें लंबी हो गयीं; पसलियोंमें हूक अुठ रही है—दर्दसे करवटें बदलनी पड़ रही हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धिक्कार है अुनके जीनेको, जो बिरानी आसमें जी रहे हैं।

१७. फरीदा गलीअे चिकड़ु दूरि घरु नालि पिआरे नेहु।
चला त भीजै कंबली रहां त तुटै नेहु ॥१५॥

फरीद, गलियोंमें कीचड़-ही-कीचड़ है; और प्यारेका घर जिससे कि मैंने प्रीति जोड़ी है, दूर है;

अगर मैं अुसके पास जाअूँ तो मेरी कंबली भीग जायेगी; और मैं अपने घर रहूँ तो मेरी प्रीति टूट जायगी।

१८. भिजअु सिजअु कंबली अलह वासहु मेहु।
जाअि मिला तिन्हा सजणा तुटअु ताहो नेहु ॥१६॥

अल्लाह, भले ही तू मेह बरसाये, और मेरी कंबलीको भिगो-भिगोकर तर कर दे, फिर भी अपने प्यारे साजनसे मेरा मिलना होकर रहेगा, ताकि हमारी प्रीति न टूटे।

१९. फरीदा मैं भोलावा पगडा मत मैली होअि जाअि।
गहिला रूहु न जाणअी सिरु भी मिटी खाअि॥१७॥

फरीद, मैं डरता हूँ कि कहीं मेरी पगड़ी मिट्टीसे मैली न हो जाये;

मेरा बावला जो यह नहीं जानता कि पगड़ी तो क्या मेरे अिस सिरको भी यह मिट्टी सड़ा-गलाकर खा जायगी।

२०. फरीद सकर खंडु निवात गुडु माखिअु मांझा दुधु।
सभे वसतू मिठीआं रब न पुजनि तुधु ॥१८॥

फरीद! शकर, खांड, कंद, गुड़ और शहद और भैंसका दूध,—ये सभी चीजें मीठी हैं, पर अब मेरे रब, अुतनी मीठी नहीं जितना कि तू मीठा है।

२१. फरीद रोटी मेरी काठकी लावणु मेरी भुख।
जिन्हा खाधी चोपडे घणे सहिनगे दुख ॥१९॥

मेरी काठकी जैसी तो रोटी है, और लावण (तरकारी या चटनी) है मेरी भूख।

जो घी-चुपड़ी खाते हैं, अुन्हें बहुत दुःख अुठाना पड़ेगा।

२२. आजु न सूती कंत सिअु अंगु मुडे मुडि जाअि।
जाअि पुछहु डोहागणी तुम किअु रैणि विहाअि॥२०॥

गयी रातको मैं अपने स्वामीके साथ नहीं सोअी; मेरा अंग-अंग मरोड़ा ले रहा है।

किसी दोहागिन (दुर्भागिनी परित्यक्ता)से जाकर पूछ कि 'तू रात कैसे काटती है?'

२३. जोबन जांदे ना डरां जे सह प्रीति न जाअि।
फरीदा किती जोबन प्रीति बिनु सूकि गये कुमलाअि ॥२१॥

यौवन जानेसे मैं नहीं डरती, यदि अुसके साथ प्रीतमकी प्रीति न जाये; फरीद, कितनी बार बिना प्रीतिके यौवन सूख गया, कुम्हला गया!

२४. फरीदा अे विसु गंदला धरीआँ खंडु लिवाड़ि।
अिकि राहेदे रहि गअे अिकि राधी गअे अुजाड़ि॥२२॥

फरीद, ये (संसारी) सुख खांडसे चुपड़े विषके अँकुरे हैं; कुछ तो अुनको रोपते हुअे ही चल बसे; और कुछ अुजड़ गये अुन्हें चुनते हुअे।

२५. फरीदा दरि दरिवाजै जाअिकै किअु डिठो घड़ीआलु।
अेहु निदोसाँ मारीअे हम दोसा दाँ किआ हालु॥२३॥

फ़रीद, न्यायालयके दरवाजेपर जब तू गया, तब तूने क्या अुस घड़ियालको नहीं देखा था?

जब अुस बेगुनाहको वहाँ अिस तरह पीटा जाता है, तब हम गुनहगारोंका क्या हाल होगा?

२६. घड़ीअे घड़ीअे मारीअे पहरी लहै सजाअि।
सो हेड़ा घड़ीआल जिअु डुखी रैणि बिहाअि ॥२४॥

घड़ी-घड़ी अुसपर मार पड़ती, और हर पहर अुसे पूरी सज़ा मिलती है; अैसे ही घड़ियालकी तरह यह देह दरदभरी रैन काटती है।

२७. बुढा होआ सेख फरीदु कंबणि लगी देह।
जे सअु वरिहआ जीवणा भी तनु होसी खेह ॥२५॥

शेखफरीद अब बुड्ढा हो गया, और देह अुसकी लड़खड़ाने लगी है,

वह यदि सौ बरस भी जीये, तो भी अुसकी देहको तो आखिर खाकमें ही मिलना है।

२८. फरीदा बारि पराअिअै बैसणा साअी मुझै न देहि।
जो तू अेवै रखसी जीअु सरीरहु लेहि ॥२६॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साईं, मुझे किसी दूसरेके दरवाजेपर न बिठाना, न मँगवाना; अगर तू अैसा ही करना चाहे, तो अुससे पहले ही मेरे प्राणोंको देहसे निकाल लेना।

२९. फरीदा अिकना आटा अगला अिकना नाही लोणु।
अगै गये सिञासपन्हि चोटाँ खासी कोणु॥२७॥

फ़रीद, किसीके पास तो बहुत सारा आटा है, और किसीके पास नमक भी नहीं;

यह तो अुन सबके यहाँसे जानेके बाद ही मालूम हो सकेगा कि सजा किसे मिलेगी।

३०. पासि दमामे छतु सिरि भेरी सडो रड।
जाअी सुते जीराण महि थीअे अतीमा गड ॥२८॥

जिनके साथ नगाड़े और तुरही बजते थ, जिनके सिरपर राज-छत्र रहते थे, और जिनकी विरुदावली चारण गाते थे—

वे कब्रस्तानमें सोनेके लिअे चले गये, और वहाँ ग़रीब यतीमोंकी तरह दफ़ना दिये गये।

३१. फरीदा कोठे मंडप माड़ीआ अुसारेदे भी गअे।
कूड़ा सअुदा करि गये गोरी आअी पअे ॥२९॥

फ़रीद, जिन्होंने मकान, हवेलियाँ और अूँचे-अूँचे महल बनवाये थे, वे भी चले गये;

वे झूठा सौदा करके गये, और कब्रमें डाल दिये गये।

३२. फरीदा खिथड़ि मेखा अंगलीआ जिंदु न काअी मेख।
बारी आपो आपणी चले मसाअिक सेख ॥३०॥

फरीद अँगरखेमें, टिकाअू बनानेके लिअे, बहुत सारे टाँके लगा दिये हैं, पर जिन्दगीमें अैसा कोअी टाँका नहीं लगा हुआ है;

(मतलब यह कि अैसी कोअी चीज़ नहीं, जो शरीरके पिंजड़ेमेंसे प्राण-पक्षियोंको अुड़ जानेसे रोक सके।)

३३. फरीदा कंनि मुसला सूफु गलि दिलि काती गुड़ु बाति।
बाहरि दिसै चानणा दिलि अंधियारी राति ॥३१॥

फरीद, वे कंधेपर मुसल्ला रखते हैं, सूफ़ीकी कफ़नी पहनते हैं, और मीठी-मीठी बात करते हैं, पर दिलोंमें वे छुरी रखते हैं;

बाहर तो वे चाँदनी फैलाते रहते हैं, मगर दिलोंमें अुनके काली अँधेरी रात झुक रही है।

३४. फरीदा रतीरतु न निकलै जे तनु चीरै कोअि।
जो तन रते रब सिअुं तिन तन रतु न होअि ॥३२॥

फरीद कहता है—अगर कोअी मेरे अिस शरीरको चीरे तो अिसमेंसे रत्तीभर भी रक्त नहीं निकलेगा;

जो शरीर रबके रंगमें रंग गया है फिरि अुसमें रक्त नहीं रहता।

* अिसपर गुरु अमरदासने यह टीका की है:—

३५. फरीदा सोअी सरवरु ढूढि लहु जितहु लभी वथु।
छपहि ढूढै किआ होवै चिकड़ि डूबै हथु ॥३३॥

फ़रीद, तू तो अुस सरोवरको ढूंढ़ ले, जहाँ कि सच्ची वस्तु तेरे हाथ आ जाये;

पोखरेमें टटोलनेसे क्या मिलेगा; कीचड़में ही हाथ सनेगा।

३६. फरीदा सिरु पलिआ दाड़ी पली मुछाँ भी पलीआँ।
रे मन गहिले बावले माणहि किआ रलीआँ ॥३४॥

फ़रीद, तेरे सिरके बाल पक गये, दाढी और मूंछें भी सफेद हो गयीं;

अय मेरे लापर्वाह और बावले मन, क्यों तू दुनियाकी रंगरेलियोंमें पड़ा हुआ है?

३७. फरीदा कोठे मंडअे माड़ीआ अेतु न लाअे चितु।
मिटी पअी अतोलवी कोअि न होसी मितु ॥३५॥

फ़रीद, अिन मकानों, हवेलियों और अूंचे-अूंचे महलोंमें मत लगा अपने मनको;

जब तेरे अूपर बिनतोल मिट्टी पड़ेगी, तब वहाँ तेरा कोअी भी मीत नहीं होगा।

३७. फरीदा मंडप मालु न लाअि,मरग सताणी चित्ति धरि।
साईं जाअी सम्हाली, जिअै ही तअु वंजणा ॥३६॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फरीद, हवेलियों और दौलतमें अपना दिल न लगा; तू कब्रका ध्यान कर—

याद कर अुस जगहको, जहाँ तुझे जाना ही होगा।

३८. फरीदा काले मंडे कपडे काला मैडा वेसु।
गुनही भरिआ मै फिरा लोकु कहै दरवेसु ॥३७॥

फरीद, काले मेरे कपडे हैं, और काला ही मेरा भेष है;

मैं तो फिर रहा हूँ गुनाहों से भरा हुआ, और लोग कहते हैं मुझे दरवेश !

३९. जा कुआरी तां चाअु वीवाही तां मामले।
फरीदा अेहो पछोताअु पति कुमारी ना थीअै ॥३८॥

जब तक वह कुवाँरी है, तभी तक अुसमें अुछाह है; ब्याह होते ही आफतोंमें पड़ जाती है।

फरीद, अुसे पछताव है कि वह फिरसे कुवाँरी नहीं हो सकती।

(विवाह-बन्धनसे तात्पर्य है मायाकृत बन्धनसे; 'कुमारी'से आशय शुद्ध आत्मासे है।)

४०. चलि चलि गअिआं पंखिआ जिनो वसाये तल।
फरीदा सरु भरिआ भी चलसी थके कवल अिकल ॥३९॥

वे सब पक्षी, जिनसे कि तालाब आबाद था, अुड़ गये; फरीद, यह भरा तालाब भी रहनेका नहीं, अकेले कमल ही रहेंगे।

(पक्षी=राजे-महाराजे और अुच्च पदाधिकारी। तालाब=संसार। कमल=संतजन।)

४१. फरीदा अींट सिराणे भुअि सवणु कीडा लडिओ मासि।
केतड़िआ जुग वापरे अिकतु पअिआ पासि ॥४०॥

फरीद, अींटें तो होंगी तेरा तकिया, और तू सोयेगा जमीनके नीचे; कीड़े तेरे मांसको खायेंगे;

अेक ही करवट पड़े-पड़े कितने जुग बीत जायेंगे तेरे।

४२. अुठु फरीदा अुजू साजि सुबह निवाज गुजारि।
जो सिरु साअीं ना निवै सो सिरु कपि अुतारि ॥४१॥

अुठ, सबेरे, फरीद, वजूकर और नमाज पढ़;

काटकर फेंक दे अुस सरको, जो मालिकके आगे नहीं झुकता।

४३. जो सिरु साअीं ना निवै सो सिरु कीजै कांअि।
कुंने हेठि जलाअीअै बालण संदै थाअि ॥४२॥

अुस सरको लेकर करेगा क्या, जो रबके आगे नहीं झुकता? अींधनकी बजाय जला दे अुसे घड़ेके नीचे।

४४. फरीदा किथै तैडे मा पिआ जिन्हीं तू जणिओहि।
तै पासहु ओअि लदि गये तू अजै न पतीणोहि ॥४३॥

फरीद, कहाँ हैं तेरे माँ-बाप, जिन्होंने कि तुझे जनम दिया था?

तेरे पाससे वे चले गये; आज भी तुझे विश्वास नहीं होता कि दुनिया यह नापायदार है !

४५. फरीदा मै जानिआ दुखु मुझकू दुखु सबाअिअै जगि।
अूचे चड़िकै देखिआ तां घरि घरि अेहा अगि ॥४४॥

फरीद, मैं समझता था कि दुख मुझे ही है, मगर दुख तो सारी ही दुनियाको है;

जब अूँचे चढ़कर मैंने देखा, तब मैंने पाया कि यह आग तो हर घरमें लग रही है।

४६. फरीदा तनु सूका पिंजरु थीआ तलीआं खूंडहि काग।
अजै सुरबु न आहुड़िओ देखु बंदेके भाग ॥४५॥

फरीद, मेरा शरीर सूखकर ठठरी हो गया है; कौअे खोखले हिस्सोंमें चोंच मार रहे हैं;

अब तक भी, हाय मेरा मालिक नहीं आया, देखो तो अुसके बंदेका यह दुर्भाग्य !

४७ कागा करंग ढढोलिआ सगल खाअिआ मासु।
अे दुअि नैना मति छुहअु पिर देखनकी आसु ॥४६॥

कौवो, तुम मेरी ठठरीका खोज-खोजकर सारा मांस खा डालो; पर अिन दो नयनोंको चोंच न लगाना, क्योंकि मुझे अब भी अपने प्रीतमके देखनेकी आस है।

४८ फरीदा गोर निमाणी सडु करे निघरिआ घरि आअु।
सरपर मैथै आवणा मरणहु ना डरिआहु ॥४७॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ़रीद, निगोड़ी क़ब्र बुला रही है, अय बेघरवालो, अिस घरमें आ बसो। मेरे यहाँ तो तुम्हें आना ही होगा; मत डरो मौतसे।

४९ अिन्ही लोअिणी देखिदिआ केती चलि गयी।
फरीदा लोकां आपो आपणी मैं आपणी पयी ॥४८॥

मेरी अिन्हीं आंखोंके आगे कितने यहांसे चले गये!

फ़रीद, लोग सब अपनी-अपनी फिक्रमें हैं, और मैं अपनी फिक्रमें हूँ।

५० कंधी अुतै रुखड़ा किचरकु बंन्है धीरु।
फरीदा कचै भांढै रखीअे किचरु ताअीनीरु ॥४९॥

तटपरके वृक्ष कबतक अपना ठौर बनाये रहेंगे?

फ़रीद, कच्चे घड़ेमें तू पानी रखेगा तो वह कब तक अुसमें रह सकेगा?

५१. फरीदा निसरवण रहि गये वासा आअिआ तलि।
गोरांसे निमासरिआ बहसनि रूहाँ मलि॥
आखीं सेवां बंदगी चलणि अजु कि कलि ॥५०॥

फरीद, सारे ही ठौर खाली हो गये; अुनमें जो रहते थे, वे नीचे चले गये;

निगोड़ी क़ब्रोंने रूहोंपर क़ब्ज़ा कर लिया; अय शेख, बंदगी कर ले (अपने दोस्तोंसे); तुझे आज या कल कूच करना ही होगा।

५२. फरीदा दरीआव कंनै बगुला बैठा केल करे।
केल करेदे हंझ नो अंचिते बाज पये॥
बाज पये तिसु रब दे केलां बिसरीआं।
जो मनि चिति न चेते सनि सो गाली रबकीआं॥५१॥

फ़रीद, नदीके तीरपर बगुला बैठा हुआ कलोल कर रहा है;

अुसके कलोल करते समय बाज अचानक अुसपर आ झपटता है;

रबका भेजा बाज जब अुसपर झपटता है, वह अपना सारा केल-कलोल भूल जाता है।

रब अैसी-अैसी चीज़ कर बठता है, जिसका मनमें ख़याल भी नहीं आता।

५३. फरीदा हअु बलिहारी तिन्ह पंखिआ जंगलि जिना वासु।
कंकरु चुगति थलि बसनि रब न छोड़न्हि पासु॥५३॥

फरीद, बलिहारी अुन पक्षियोंपर, जो जंगलमें रहते हैं, फल खाते हैं, जमीन पर सोते हैं, और रबका आसरा नहीं छोड़ते।

५४. फरीदा रुति फिरी वणु कंबिआ पतझड़े झड़ि पाहि।
चारै कुंडा ढुंढिआं रहणु किथाअु नाहि॥५३॥

फरीद, ऋतु बदल गयी है, वन लहरा रहा है, पत्तियाँ झड़ने लगी हैं;

मैंने चारों दिशाअें ढूंढ़ डालीं, पर कहीं भी टिकने को ठौर नहीं मिला।

५५. फरीदा तिना मुख डरावणे जिना विसारिओनु नाअु।
अैथै दुख घणेरिआ आगै ठअुरु न ठाअु॥५४॥

फरीद, भयावने हैं अुनके चेहरे, जिन्होंने अुस मालिकका नाम भुला दिया;

यहाँ तो अुन्हें भारी दुख है ही, आगे भी अुनके लिअे कोअी ठौर-ठिकाना नहीं।

५६. फरीदा पिजल राति न जागिओहि
जीवदडो मुअिओहि।
जैने रबु विसारिआ तरबि न बिसरिओहि॥५५॥

फरीद, अगर तू रातके पिछले पहर नहीं जागता, तो तू जिन्दा भी मरा हुआ है।

तू रबको भुला भी दे, पर रब तुझे भूलनेका नहीं।

५७. ढूढेदीअे सुहाग कू तअु तनि काअी कोर।
जिन्हा नाअु सुहागणी तिन झाक न होर॥५६॥

तू अपने सुहागको, अपने प्रीतमको खोज रही है. तो तेरे अंदर ज़रूर कोअी-न-कोअी कमी है।

जिसे सुहागिन कहते हैं वह किसी औरकी तरफ़ कभी झाँकती भी नहीं।

५८. फरीदा दरवेसी गाखडी चोपडी परीति।
जिकनि किनै चालीअे दरवेसावी रीति॥५७॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ़रीद, दरवेश होना कठिन है; स्वामीके तईं मेरी प्रीति सो ऊपर-ऊपरकी ही है।

अैसे विरले ही हैं, जो दरवेशके रास्तेपर चलते हैं।

५९. तनु तपै तनूर जिअु बालणु हड बलंन्हि।
पैरी धकां सिरि जुलां जे मूं फिरी मिलन्हि ॥५८॥

शरीर मेरा तंदूरकी तरह तप रहा है, मेरी हड्डियाँ ईंधनकी तरह जल रही हैं;

मेरे पैर अगर थक जायें, तो भी मैं अपने प्रीतमसे मिलने सिरके बल चलकर जाऊँगी।

६०. सखर पंखी हेकडो फाहीवाल पचास।
अहु तनु लहरी गडु थिआ सचे तेरी आस ॥५९॥

तालाबमें पक्षी तो अकेला अेक है, और फँसानेके जाल हैं पचास; यह शरीर लहरोंमें डूब रहा है, अय सच्चे मालिक, मुझे अब अेक तेरी ही आशा है।

(पक्षी-जीवात्मा। जाल-सांसारिक प्रलोभन।)

६१. कुअरु सु अखरु कवणु गुणु कवणु सु मणीआ मंतु।
कवणु सु वेसो हअु करी जितु वसि आवै कंतु ॥६०॥

वह कौन-सा शब्द है, वह कौन-सा गुण है, वह कौन-सा अनमोल मंत्र है; मैं कौन-सा भेष धारूँ, जिससे कि मैं अपने स्वामीको बसमें कर लूँ?

६२. निवणु सुअखरु खवणु गुणु जिहवा मणीआ मंतु।
अेवै भैणे वैस करि ता वसि आवी कंतु ॥६१॥

दीनता वह शब्द है, धीरज वह गुण है, शील वह अनमोल मंत्र है; तू अिसी भेषको धारणकर, बहिन, तेरा स्वामी तेरे बसमें हो जायेगा।

६३. मति होदी होअि अिआणा, ताण होदे होअि निताणा।
अणहोदे आपु वंडाअे, कोअी अैसा भगतु सदाअे ॥६२॥

प्रभुके अैसे बिरले ही भक्त हैं,—

जो, बुद्धिमान होते हुअे भी, सरल हैं,
जो, बलवान होते हुअे भी, निर्बल हैं,

और, जो, अकिंचन होते हुअे भी, अपना सर्वस्व दे डालते हैं।

६४. अिक फिका ना गालाअि सभना मै सचा धणी।
हिआअु न कैही ठाहि माणिक सम अमोलवै ॥६३॥

अेक भी अप्रिय बात मुँहसे न निकाल, क्योंकि सच्चा मालिक हर प्राणीके अन्दर है।

किसीके दिलको तू मत दुखा;
हर दिल अेक अनमोल रतन है।

६५ सभना मन माणिक ठाहणु मूलि म चांगवा।
जे तअु पियो आसिक हिआअु न ठाहे कहीदा ॥६४॥

हर दिल अेक रतन है; अुसे दुखाना किसी भी तरह अच्छा नहीं;

अगर तू प्रीतमका आशिक है, तो किसीके भी दिलको न सता।

हरिजन-निवास, दिल्ली]
ता. १३-१२-'५२

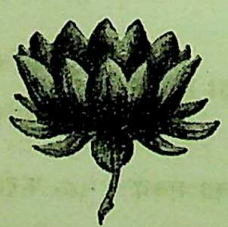

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने संगीत कैसे सीखा ?

: श्री मौलाना अबुल कलाम आज़ाद :

शायद आपको मालूम नहीं कि अेक जमानेमें मुझे संगीत कलाके अध्ययन और अभ्यासका भी शौक रह चुका है। यह व्यसन कअी साल तक रहा था। आरम्भ अिसका यों हुआ कि सन् १९०५ अीसवी में जब पढ़ाअी ख़त्म हो चुकी थी और मैं विद्यार्थियोंको पढ़ानेमें लगा था तो किताबोंका शौक़ मुझे अेक पुस्तक-विक्रेता खुदाबख्शके यहां ले जाया करता था जिसने कैलेजली स्ट्रीटमें मदरसा कालेजके सामने दूकान खोल रखी थी और अधिकतर अरबी और फ़ारसीकी हाथ लिखावटकी पुस्तकोंके खरीदने और बेचनेका कारोबार किया करता था। अेक दिन अुसने भगवद्भक्त सेफ़ख़ाँके 'राग दर्पण' की अेक सु-लिखित और सचित्र प्रति मुझे दिखायी और कहा कि यह किताब संगीत कलाकी है, सेफ खां आलमगीरी जमानेका अेक बड़ा अमीर था और हिन्दुस्तानकी संगीत विद्याका अूंचे दर्जेका आलिम था। अुसने संस्कृतकी अेक पुस्तकका फारसीमें अनुवाद किया जो "राग दर्पण" के नामसे मशहूर हुअी। यह प्रति जो खुदाबख्शके हाथ लगी थी आसफ़जाहके लड़के नासिर जंग शहीदके पुस्तकालयकी थी और बड़े अच्छे ढंगसे, सिलसिलेसे, संकलित की गयी थी। मैं अभी अुसकी भूमिका देख ही रहा था कि मिस्टर डेन्सनरास साहब आ गये जो अुस समय कालेजके प्रिंसिपल थे और अीरानी अुच्चारणसे फ़ारसी बोलनेके बहुत शौकीन थे। यह देखकर कि अेक छोटी अुम्रका लड़का फ़ारसीकी अेक हस्तलिखित पुस्तकको बड़े ध्यानसे पढ़ रहा है अुनको अचरज हुआ और मुझसे फ़ारसीमें पूछा, 'किस लेखककी पुस्तक है यह ?' मैंने फ़ारसीमें अुत्तर दिया 'सेफखांकी पुस्तक है और संगीत कलापर है।' अुन्होंने मेरे हाथसे पुस्तक ले ली और खुद पढ़नेका प्रयत्न किया। फिर कहा कि हिन्दुस्तानकी संगीत कला बहुत कठिन कला है' क्या तुम अिस पुस्तकका अर्थ समझ सकते हो ? मैंने कहा—जो पुस्तक भी लिखी जाती है अिसीलिये लिखी जाती है कि लोग पढ़ें और समझें। मैं भी अिसे पढ़ूंगा तो समझ लूंगा। 'अुन्होंने हँसकर कहा—तुम अिसे नहीं समझ सकते अगर समझ सकते हो तो अिस मज़मूनका अर्थ समझाओ। अुन्होंने जिस पन्नेकी तरफ़ अिशारा किया था अुसमें प्रारंभिक कुछ विभागोंका वर्णन था। मैंने शब्दोंको पढ़ लिया मगर अर्थ-वर्थ कुछ समझमें नहीं आया। लज्जित होकर चुप हो गया और अन्तमें कहना पड़ा कि अिस वक्त अिसका अर्थ नहीं कर सकता। गौरसे गहराअीके साथ पढ़नेके बाद अर्थ कर सकूंगा।

मैंने किताब ले ली और घर आकर अुसे शुरूसे अंततक पढ़ लिया लेकिन मालूम हुआ कि जबतक संगीतकी परिभाषाओंका ज्ञान न हो और किसी कला-मर्मज्ञसे अिसकी प्रारंभिक बातें समझ न ली जायँ, किताबका मतलब समझमें नहीं आ सकता। विद्यार्थी जीवनसे ही स्वभाव अिस बातका आदी हो गया था कि जो किताब भी हाथ आयी अुसपर अेक नज़र डाली और अुसके सारे अर्थका ज्ञान हो गया। अब यह जो रुकावट पेश आयी तो तबियतको बहुत अुलझन हुअी और विचार हुआ कि किसी तजरबेकार से सहायता लेनी चाहिये। लेकिन सहायता ली जाय तो किससे ली जाय ? कौटुम्बिक जीवनकी हालत यह थी कि अिस विषयके अूंचे ज्ञाताओंके साथ मिलना आसान न था। आखिर ध्यान मसीता खाँकी तरफ गया। अिस पेशेका यही अेक आदमी था जिसकी हमारे यहाँ गुज़र थी।

अिस मसीता खाँका हाल भी वर्णन करने योग्य है। यह सोनीपत डिस्ट्रिक् अंबालाका रहनेवाला था और पेशेका खान्दानी गवैया था। गानेकी कलामें अच्छा ज्ञान-संग्रह किया था और देहली और जयपुरके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुओंसे शिक्षा पायी थी। कलकत्तेमें गायिकाओंको संगीतकी शिक्षा देनेका कार्य किया करता था।

'तक़रीब[1] कुछ तो बहर[2] मुलाक़ात चाहिये'

यह पिताजीकी सेवामें शिष्य बननेके लिये अुपस्थित हुआ। अुनका नियम था कि अिस तरहके लोगोंको शिष्य नहीं करते थे; परन्तु सुधार और ध्यान देनेका द्वार बंद भी नहीं करते थे। कहते, बगैर शिष्य बने आते रहो। देखो, परमेश्वरको क्या मंजूर है। कअी परिस्थितियोंमें अैसा हुआ कि कुछ दिनोंके बाद लोग स्वयं अपना पेशा छोड़ कर दृढ़ प्रतिज्ञ हो गये अतः मसीताखाँको भी यही अुत्तर मिला। पिताजी शुक्रवारके दिन धार्मिक प्रवचनके बाद जामा मसजिदसे मकान आते तो पहले कुछ देर दीवान खानेमें बैठते फिर अंदर जाते, अुनके ख़ास ख़ास शागिर्द पालकीके साथ चलते हुअे आ जाते और अपनी बात अर्ज करके चले जाते। मसीता खाँ भी हर शुक्रवारको धार्मिक प्रवचनके बाद अुनकी सेवामें हाज़िर होता और दूर बिछातके किनारे हाथ बाँधे खड़ा रहता। कभी पिताजीकी दृष्टि पड़ जाती तो पूछ लेते-- मसीताखाँ, क्या हाल है? निवेदन करता-- श्रीमान्की कृपादृष्टिकी आशा लगाये हूँ। कहते-- हाँ, अपने दिलकी लगनमें लगे रहो। वह बेभान होकर चरणोंपर गिर जाता और अपने आँसुओंकी झड़ीसे अुन्हें तर कर देता। कभी विवेदन करता--रातके दरबारमें हज़िरीकी आज्ञा हो जाय अर्थात् रातकी मुख्य बैठकमें जो शिष्योंकी शिक्षाके लिये सप्ताहमें अेक बार हुआ करती थी, अुसे पिताजी टाल जाते मगर अुनके टालनेका भी अेक ख़ास ढंग था। कहते- अच्छी बात है, देखो सारी बातें अपने समयपर हो रहेंगी। वह अितने हीमें निहाल हो जाता और रूमालसे आँसू पोंछते हुअे अपने घरकी राह लेता। अन्तमें अुसकी विनम्रता और सच्ची चाह रंग लाये बिना न रही। पिताजीने अुसे शिष्य कर लिया और शिष्योंमें बैठनेकी आज्ञा भी दे दी। अुसे भी कुछ अैसी अन्दरूनी शक्ति मिली कि कलकत्तेकी गायिकाओंको संगीतकी तालीम देनेका काम छोड़ दिया और अेक बंगाली जमींदारकी सर्विसपर संतोष कर लिया।

मेरा ध्यान अिसी मसीताखाँकी तरफ़ गया और अुससे अिस विषयमें बात की। पहले तो अुसे कुछ हैरानी-सी हुअी परन्तु जब बात पूरी तरह समझमें आ गयी तो बहुत खुश हुआ कि गुरुके पुत्रकी दृष्टि अुसकी तरफ हुअी है। परन्तु अब मुश्किल यह थी कि मेरे प्रस्तावको अमलमें कैसे लाया जाय। घरमें जहाँ धार्मिक ग्रंथोंके पढ़नेवाले जमा होते थे सा. रे. ग.म. प. ध. नी. के पाठ पढ़नेका अवसर न था और दूसरी जगह जाना भी मुश्किल था फिर भी अिस कठिनाअीका अेक हल निकाल लिया गया और अेक अिस रहस्यका जाननेवाला व्यक्ति मिल गया जिसके मकानमें हमारे अुठने-बैठनेका अिन्तजाम हो गया। पहिले हफ्तेमें तीन दिन तय किये फिर प्रतिदिन दोपहर बाद जाने लगा। मसीताखाँ पहलेसे वहाँ मौजूद रहता और दो-तीन घंटे तक संगीतके अभ्यासका क्रम जारी रहता।

मसीताखाँकी शिक्षाका अेक ही ढंग रटा हुआ था जो अिस कलाके अुस्तादोंका आम तरीक़ा होता है। वही अुसने यहाँ भी चलाया लेकिन मैंने अिसे रोक दिया और प्रयत्न किया कि अपने ढंगपर ज्ञान अेकत्रित करूँ। संगीतके बाजोंमें अधिक ध्यान सितारपर दिया और बहुत जल्द अिससे अंगुलियोंको प्रैक्टिस हो गयीं। अब सोचता हूँ तो आश्चर्य होता है कि वह भी क्या जमाना था और क्या अुमंगें थीं मेरे दिलमें। अुम्र १७ से ज्यादा न होगी; लेकिन अुस समय भी अिच्छा यही थी कि जिस मैदानमें क़दम अुठाअिये पूरी तरह अुठाअिये और जहाँ तक रास्ता मिले बढ़ते ही जाअिये। कोअी काम भी हो, मगर मनने यह कभी नहीं चाहा कि काम अधूरा करके छोड़ दिया जाय, जिस राहपर भी क़दम अुठाया अुसे पूरी तरह छानकर ही छोड़ा। पुण्यके काम किये तो वह भी पूरी तरह किये, पापके काम किये तो अुन्हें भी अधूरा न छोड़ा। 'मधुशाला' का रास्ता पकड़ा था तो अुसमें भी सबसे आगे रहे थे। पवित्रताकी राह मिली तो अुसमें भी किसीसे पीछे न रहे। मनकी

१- कारण २-मिलनेके लिये।
(मुलाकातके लिये कोअी कारण तो होना चाहिये)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच्छा सदा यही रही कि कहीं जाअिये बेकारोंकी तरह न जाअिये। मेल-जोल रखिये, तो पूर्ण ज्ञाताओंसे रखिये।

अतः अिस दिशामें भी क़दम अुठाया तो जहाँ तक रास्ता मिल सका क़दम बढ़ाये जानेमें संकोच न किया। सितारका अभ्यास चार-पाँच साल तक जारी रहा। वीणासे भी अँगुलियाँ अपरिचित न रहीं परन्तु अिससे अधिक प्रेम न हो सका। फिर अिसके बाद अेक समय अैसा आया कि यह व्यसन छूट गया और अब तो गुज़रे हुअे समयकी केवल अेक कहानी बाकी रह गयी है। अलबत्ता अंगुलीपरसे मिज़राबका निशान बहुत दिनों तक नहीं मिटा था--

अब जिस जगहके दाग़ हैं, याँ पहिले दर्द था।

अिस सोने और सुगन्ध भरे संसारमें अेक तो ढंग मक्खीका होता है कि शहदपर बैठती है तो अिस तरह बैठती है कि फिर अुठ नहीं सकती-- कि पाँव तोड़के बैठे हैं पायबन्द तेरे।

और अेक भौंरेका ढंग है कि हर फूलपर बैठे, सुगन्ध ली, रसपान किया और अुड गये।

टुक देख लिया, दिल शाद[1] किया,
खुशकाम हुअे, और चल निकले।

जीवनके रंग-बिरंगे बाग़का अेक फूल यह भी था, कुछ देरके लिये रुककर सुगन्ध ली और आगे निकल गये। अिसका अुद्देश यह था कि अिस कलासे भी अपरिचित न रहें। मनकी समस्वरता और चिन्तनका सौन्दर्य बिना संगीतके अच्छे अभ्यासके नहीं मिल सकता। जब अेक ख़ास हद तक यह मक़सद पूरा हो गया तो फिर आगे व्यसन व्यर्थ था। अलबत्ता संगीतका शौक़ और असर जो दिलके अेक-अेक तन्तुमें रच गया था दिलसे निकाला नहीं जा सकता था और आज तक नहीं निकला।

जाती है कोअी कशमकश अंदोह[3] अिश्क[4] की।
दिल भी अगर गया तो वही दिलका दर्द था।

---

१. शाद–खुश, प्रसन्न।
३– दुःख ४– प्रेम

[फारसीसे अनुवादक—श्री अीशनारायण जोशी]

जय हो!

: श्री. रामेश्वर दयाल दुबे :

नव स्वतंत्र जनतन्त्र देशको
कोटि-कोटि जनताकी जय हो।
पुण्य भूमिकी पावन संस्कृति,
सदा अजय हो, सदा अभय हो।
शोषित, दीन, अधीन गा अुठें,
ओज भरे जागृतिके गीत।
सबल–स्वस्थ–सुगठित–शरीरमें
हो सबके ही हृदय अभीत।
जीवन सरल, किन्तु गौरवमय,
साथ शक्तिके शील-विनय हो।
नव स्वतन्त्र-जनतन्त्र देशको,
कोटि-कोटि जनताकी जय हो।
श्रम पूजित हो, मिले सभीको,
फल अपने श्रमके अनुरूप।
मिले पुनः लघुताको गरुता,
रहे न कोअी रंक न भूप।
बहें सभी बन्धुत्व भावमें,
स्नेह-सिक्त समताकी जय हो।
नव स्वतन्त्र जनतन्त्र देशकी,
कोटि-कोटि जनताकी जय हो।
स्वर विभिन्न चाहे जितने हों,
बजे अेक ही मधुमय राग।
छा जावे जन-जनपर सुखमय,
सहज, सरल रसमय अनुराग।
मातृ-भूमि, माँके आँगनकी,
गोदीकी, ममताकी जय हो।
नव स्वतन्त्र-जनतन्त्र देशकी,
कोटि-कोटि जनताकी जय हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी और मराठी साहित्यकी अैतिहासिक परम्परा

: श्री व्योहार राजेन्द्रसिंह :

हमारे मध्य प्रदेशमें हिन्दी और मराठी दोनों भाषाअें सदियोंसे सहोदरा बहिनोंकी तरह अेक साथ अुत्पन्न हुअीं और अेक ही साथ रहती आयीं हैं। दोनों भाषाओंके साहित्योंका आदान-प्रदान प्रारम्भ कालसे ही चलता आया है और आजकल चलता जा रहा है। अिस दृष्टिसे मध्य-प्रदेशके हिन्दी-भाषी प्रान्तमें विदर्भ साहित्य सम्मेलन (मराठी) का अधिवेशन होना विशेष महत्वकी वस्तु है। हिन्दीके राष्ट्रभाषाके रूपमें स्वीकृत हो जानेका यह अर्थ नहीं कि दूसरी सभी भाषा भगनियोंकी अुपेक्षा की जावे, अवहेलना की जावे अथवा अुनपर हिन्दीका 'साम्राज्यवाद" स्थापित किया जावे; जैसा कि कुछ लोग समझते हैं। वरन् अिसका अर्थ है कि अपने अपने क्षेत्रोंमें सभी भाषाओंको विकासका पूरा अवसर मिले और अुनके अध्ययन और आलोचनासे अेक दूसरेंमें आदान-प्रदान तथा सहयोगकी भावना बढे, जिससे कि समस्त अन्तरप्रान्तीय साहित्य संपन्न और समृद्ध हो सकें।

हमारे प्रदेशमें ये ही दो प्रधान लोक भाषाअें हैं जिनको अब राज-भाषाका भी पद मिल चुका है। अिसलिये अिस प्रदेशके भिन्न-भिन्न वर्गों और जातियोंमें सम्पर्क बढ़ाने तथा राजनैतिक और सामाजिक अेकता स्थापित करनेके लिये पठन-पाठन अध्ययन और अनुशीलन बढ़ानेकी नितान्त आवश्यकता है। राजनैतिक दृष्टिसे जिस प्रकार मराठी भाषियोंके लिये हिन्दी पढ़ना अनिवार्य कर दिया गया है अिसी प्रकार यदि नीची कक्षाओंमें नहीं तो हाअीस्कूल हिन्दी भाषियोंके लिये भी मराठी भाषा और साहित्यका कुछ अध्ययन अनिवार्य होनेकी बड़ी ही आवश्यकता है। साथ ही दोनोंकी जननी संस्कृतका पठन-पाठन सभीके लिये अनिवार्य होना चाहिये।

केवल राजनैतिक और सामाजिक दृष्टिसे ही नहीं, किन्तु सांस्कृतिक दृष्टिसे भी दोनों भाषाओंका परस्पर संपर्क बढ़ानेकी आवश्यकता सभी अनुभव करेंगे क्योंकि दोनों हीका मूल वही देववाणी संस्कृत है जो कि हमारी संस्कृति और सभ्यताकी मूलस्रोत है। यदि हम अैतिहासिक दृष्टिसे देखें तो ज्ञात होगा कि अिस देशमें हिन्दी, मराठी, गुजराती आदि लोक भाषाओंका जन्म प्रायः अेक ही समयमें देशके भिन्न भिन्न भागोंमें हुआ। संस्कृतसे अुत्पन्न महाराष्ट्रीय प्राकृतसे मराठीका अुदय हुआ और अुसी समय अुत्तरमें शौरसेनी प्राकृतसे हिन्दीका जन्म। हम कह सकते हैं कि जिस प्रकार अेक ही अमरकंटक पर्वत नर्मदा और सोन नदीका अुद्गम स्थान है अुसी प्रकार अेक ही संस्कृत भाषा हमारे देशकी प्रायः सभी लोक भाषाओंकी जननी है। यदि अिस अुपमाको ज़रा और आगे बढ़ाया जाय तो हम देखेंगे कि हिन्दी और मराठी, नर्मदा और सोनभद्रके समान विरुद्ध दिशामें बहनेवाली सरिताअें नहीं हैं; बल्कि वे अेक ही साथ पास-पास बहनेवाली धाराअें हैं जो समय-समयपर आपसमें संगम करती हुअी अपने पूर्णत्वके लक्ष्य सिन्धुकी ओर अग्रसर होती हैं।

भाषा-साहित्यके अितिहासमें प्रत्येक भाषा और अुसके साहित्यका विशेष स्थान रहता है। अुनके आदान-प्रदान और संसर्गसे नवीन भावनाओंकी अुत्पत्ति और विकास होता है। अेक सरिता यदि अपने क्षेत्रको जल-सिंचनसे शस्यश्यामल, हरा-भरा बनाती है तो दूसरे क्षेत्रपर भी अुसका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। दूसरे क्षेत्रके यात्री भी अुसकी नयनाभिराम हरीतिमासे मुग्ध ही नहीं होते; वरन् अुससे अुत्पन्न फूलों और फलोंको अपने क्षेत्रमें भी आरोपित कर अुसका बीज विस्तार करते हैं। संस्कृति सभ्यता और साहित्योंका यह परस्पर आदान-प्रदान सदा चलता आया है और चलता रहेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि हम दोनों भाषाओंके प्राथमिक अितिहासको देखें तो हमे अुनका आरंभ दो महान् विभूतियोंसे मिलता है। दक्षिणमें स्वामी मुकुन्दराज प्राचीन मराठीमें अपने 'विवेक सिन्धु'में संस्कृत साहित्यको भर देते हैं। अिसी समय अुत्तरमें चन्द वरदाअीका अुदय होता है। मुकुंदराज यदि वेदान्त परंपराका प्रारंभ करते हैं तो चन्द वरदाअी वीर गाथाका बीजारोपण। मुकुंदराज खेड़लाके राजा जयंतपालके लिये अपनी ग्रंथ-रचना करते हैं तो चन्द वरदाअी पृथ्वीराजके लिये अपना "रासो" लिखते हैं। यदि यह खेड़ला राज्य हमारे प्रदेशके बैतूल हीके आस-पास स्थित था तो मराठीके आदि कविके जन्मस्थानका गौरव हमारे मध्यप्रदेश ही को मिलेगा। श्री लक्ष्मण रामचन्द्र पाँगारकर ने अपने 'मराठी वाङ्मयाचा अितिहास' में लिखा है कि "नागपुर सारख्या महाराष्ट्राचा अगदी पूर्व टोकाकड़े झाल्यामुळे त्यांचा प्रकाश अिकडील प्रांतावर लवकर पडला नाहीं।" अिन दो महाकवियोंने जो अिन दो धाराओंको जन्म दिया वे बराबर अिन दोनों साहित्योंमे प्रवाहित रहीं। यद्यपि अुत्तर भारतमें पराधीनताके फलस्वरूप वीर गाथा कालके बाद भक्ति और अुसके बाद रीतिकाल आया; किन्तु प्राचीन मराठी साहित्यमें जो वेदान्तकी परम्परा चली वह अन्ततक अक्षुण्ण बनी रही। श्री ज्ञानेश्वर और नामदेव, दासो पंत और मुक्तेश्वर, त्र्यंबकराज व समर्थ रामदासने सतत समर्थ व समृद्ध बनाकर अुसे अग्रसर किया।

ज्ञान वैराग्यकी सरस्वतीके साथ मराठी साहित्यमें भक्तिकी अमर गंगाका प्रवाह जो अेकनाथ, तुकाराम, नामदेव और रामदासने प्रवाहित किया, वह हमारे लोक-भाषा साहित्यमें अेक लोकोत्तर वस्तु है। ज्ञान और भक्तिकी ये दो धाराअें केवल अेक प्रदेशतक ही सीमित नहीं रहीं; बल्कि सारे देशमें फैलती ही चली गयी हैं। अिनका प्रभाव हम गुजरातसे लेकर बंगाल तक और अुत्तर भारतसे लेकर कन्या कुमारी तक बराबर देखते हैं। अिन दोनों धाराओंका जन्म हमें सबसे पहले केरल और तमिल प्रांतोंमें मिलता है जहाँसे अुनका विस्तार अुत्तर, पूर्व और पश्चिम भारतमें होता है। अुक्त प्रान्तके आचार्य शंकर और रामानुज तथा भक्त (शैव और वैष्णव) तिरुवल्लुवर आदिका प्रभाव समीप होनेके कारण सबसे पहिले महाराष्ट्र प्रांतपर पड़ना स्वाभाविक ही था। अिसी कारण हमें ज्ञान, वैराग्य, भक्ति और प्रेमका साहित्य सबसे अधिक मराठी हीमें अुपलब्ध होता है।

महाराष्ट्र प्रदेशसे संपर्क रखनेके कारण ज्ञान साहित्यका दूसरा क्षेत्र विदर्भ प्रांत मिलता है, जिसे "महानुभाव" पंथके जन्मदाता होनेका गौरव प्राप्त है। विदर्भके ऋद्धिपुरमें ही महानुभावी पंथके प्रवर्तक संत चक्रधर और गोविन्द प्रभुका जन्म हुआ था। और अिसी प्रांतमें रचित सात ग्रंथ अथवा "साती" पंथके मुख्य ग्रंथ माने जाते हैं। हमारे प्रांत हीसे महानुभाव पंथ सारे महाराष्ट्र प्रांतमें फैला यह कम गौरवकी बात नहीं है। ज्ञानका क्षेत्र किसीकी बपौती नहीं होती। ज्ञान-सूर्य चाहे अेक दिशासे अुदय हो किन्तु अुसका प्रभाव सभी दिशाओंपर पड़ता है। ज्ञानकी गंगा अेक देशतक सीमित रह ही नहीं सकती अन्यथा वह अुन्मुक्त सरिता न रहकर सीमित सरोवर बन जाती। यही हाल ज्ञान और साहित्यका है; और संस्कृतिका भी है। यदि महानुभाव पंथका अुदय दक्षिणमें होकर अुसका प्रभाव अुत्तर तक पहुँचता है तो दूसरी ओर गोरख पंथका अुदय अुत्तर भारतमें होकर अुसका प्रभाव दक्षिण तक पहुँचे बिना नहीं रहता। कारण यह है कि सूर्य किरणोंके समान सन्त भी सारे देशमें भ्रमण कर अपने ज्ञानका विस्तार चारों दिशाओंमें करते हैं। स्वयं ज्ञानेश्वरने गुरु गोरखनाथसे ज्ञान विस्तारकी अिस परम्पराको स्वीकार किया है। गोरखनाथसे गैनीनाथ, गैनीनाथसे निवृत्तिनाथ और निवृत्तिनाथसे ज्ञानेश्वरकी शिष्य परम्परा सभीको मान्य है। अिस प्रकार अुत्तर भारत और दक्षिण भारतकी ज्ञान-धाराओं तथा अुनके विचार-प्रकाशनकी धाराओंका हिन्दी और मराठीमें आदान-प्रदान बराबर चलता रहा। यदि गोरखपुरके गोरखनाथका प्रभाव पूना और सतारा तक पहुँचता है, तो फिर यह धारा दक्षिणसे अुत्तरकी ओर अुलटती है और सतारामें जन्म लेकर नामदेव, पंजाब तक अपनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भक्तिका साम्राज्य फैलाते हैं और सिखोंके गुरु-ग्रन्थ साहित्यमें भी स्थान पाते हैं। अुनके मराठी पदोंके समान हिन्दी पद भी प्रसिद्ध हैं।

ज्ञानका प्रकाश चाहे पुरुषों तक ही सीमित रहा हो किन्तु भक्तिका विस्तार किसी वर्ण, लिंग या जातिको स्वीकार नहीं करता। अिसी कारण हम मराठीमें मुक्ताबाअी और जनाबाअी तथा हिन्दीमें मीराबाअी और सहजोबाअी सरीखी प्रेमकी दीवानी भक्त महिलाओं-को पाते हैं। मराठीमें यदि चोखामेला भक्ति-भावमें लीन दीख पड़ते हैं तो हिन्दीमें रैदास और कबीर अिसी सरितामें प्रवाहित होते हैं। विभिन्न मतोंके समन्वयकी भावना हमें ज्ञान मार्गके आचार्योंमें अुतनी नहीं दिखती जितनी कि भक्ति मार्गी सन्तोमें दीख पड़ती है। देशमें चाहे अूपरसे किसी भी विधर्मी या विदेशी साम्राज्यकी स्थापना क्यों न हो जावे; किन्तु भारतीय आत्मापर राम और कृष्णका ही साम्राज्य सदासे स्थापित रहा है। क्योंकि अुसके सन्देश-वाहक अथवा रामदूत सदा अुसका सन्देश वहन करते रहते हैं। हम देखते हैं कि मुसलमान साम्राज्यके समय अुत्तर और दक्षिण सभी दिशाओंमें अेक साथ सन्तोंकी परम्परा अुदय होती है जो अुनके अुस साम्राज्यको अस्वीकार कर राम और कृष्णके साम्राज्यको जनताके हृदयमें स्थापित करती है। सोलहवीं शताब्दीका सारे देशका अितिहास अिसी सन्त-परम्पराका अितिहास है।

गोस्वामी तुलसीदास और अेकनाथ स्वामी अिसी प्रकारके सन्त कवि थे जिन्होंने अपनी वाणीसे अुत्तर और दक्षिण भारतको पवित्र किया। दोनोंने विद्वानोमें आदृत संस्कृतको छोड़कर अुपेक्षित लोक-भाषाका आश्रय लिया और वर्ण-धर्मके स्थानपर लोक-धर्मकी स्थापना की। दोनों ही महाकवि प्रायः अेक ही समयमें अुत्पन्न हुअे और अुनका कार्य भी प्रायः अेक ही-सा रहा। अभी तक जो मराठी और हिन्दी साहित्यमें केवल ज्ञान मार्गकी प्रधानता थी अुसके स्थानपर अुन्होंने भक्ति प्रधान काव्य ग्रन्थोंकी रचना की; अथवा कहना चाहिये कि ज्ञानगर्भित भक्तिमार्गका प्रचार किया। अेक और विशेषता अुनकी समन्वयात्मक दृष्टिमें थी जिसके द्वारा अुन्होंने विष्णु और शिव तथा राम और कृष्ण दोनोंको अनन्यताकी दृष्टिसे, समानताके भाव से, देखा। जहाँ तक समन्वयका सम्बन्ध है, गोस्वामी तुलसीदासका अेक अलग ही स्थान है जिसे कोअी दूसरा व्यक्ति नहीं पा सकता। राम और कृष्णके प्रति समान दृष्टि होनेका कारण है कि अेकनाथ स्वामीने अेक ओर "नाथ भागवत" सरीखे ज्ञानगर्भित और कृष्ण परायण ग्रन्थकी रचना की और दूसरी ओर "भावार्थ रामायण" सरीखे राम भक्ति प्रधान-ग्रन्थकी रचना की। भावार्थ रामायणका मराठी साहित्यमें वही स्थान है जो राम-चरित मानसका हिन्दीमें है।

अिसी प्रकार अेकनाथके समान गोस्वामी तुलसी-दास भी गीतावलीके साथ कृष्ण-गीतावलीकी रचना कर अपनी अभेद दृष्टि प्रगट करते हैं। अवश्य ही देशका वातावरण अुनके विचारोंका प्रेरक रहा होगा। और दोनों भाषाओंमें तीर्थ-यात्राके कारण सम्पर्क रहा होगा अन्यथा अिस विचार साम्यका दो भाषाओंके संत महा-कवियोंमें मिलना सम्भव नहीं है।

संस्कृत साहित्यके रामायण और महाभारत ही दो महान ग्रंथ हैं जो कि हमारी प्राचीन संस्कृतिके प्रतिनिधि ग्रन्थ कहे जा सकते हैं। कृष्ण चरित्रकी दृष्टिसे महाभारतकी अपेक्षा भागवतका प्रभाव हिन्दी साहित्यपर अधिक पड़ा है। अिधर मराठी साहित्यपर महाभारतका प्रभाव अधिक दृष्टिगोचर होता है। ज्ञानेश्वरने ज्ञानेश्वरीके रूपमें जिस परम्पराका प्रारंभ किया अुसकी सफलता हमें दासोपंतके "गीतार्णव" में मिलती है जिसके बराबर विशाल और गंभीर ग्रन्थ भारतीय क्या संसारके किसी भी भाषामें मिलना कठिन है।

अिसके अतिरिक्त अुन्होंने "ग्रन्थराज" सरीखे गूढ़ आध्यात्मिक ग्रंथ लिखकर प्राचीन आध्यात्मिक परम्पराको आगे बढ़ाया। यह लिखनेमें लज्जाका अनुभव होता है कि हिन्दी साहित्यमें महाभारत और विशेषकर गीताकी नितान्त अुपेक्षा की गअी है। अि क्षेत्रमें हम मराठी साहित्यसे अभी भी बहुत कुछ ग्रहण कर सकते हैं। हमें ज्ञानेश्वरीके अनुवाद हीसे सन्तुष्ट न हो जाना चाहिये किन्तु "गीतार्णव" का प्रसाद भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी साहित्यको देना चाहिये। महाभारतको मराठी साहित्यमें लानेका प्रमुख श्रेय श्री कविवर मुक्तेश्वरको प्राप्त है। यद्यपि अुनके बाद कवि मोरोपंतने अुस दिशामें सराहनीय प्रयत्न किया किन्तु श्री राजवाडेके अनुसार "प्रतिभाकी दृष्टिसे मोरोपंतकी अपेक्षा मुक्तेश्वर अधिक अुच्च कोटिके सिद्ध होते हैं।"

श्री पांगारकरके शब्दोंमें, "मुक्तेश्वरकी कविता यदि कुलीन देशस्थ ब्राह्मण कन्याकी तरह तेजस्वी, भोली-भाली, काली, सांवली, खुले मनकी और परिपुष्ट है, वहाँ मोरोपन्तकी कविता सुस्वरूप, सजधजके साथ रहनेवाली आधुनिक कॉलेज कुमारीकी तरह पीन और चंचल है। पर दोनों ही सम्पन्न, पवित्र और धर्मपरायण हैं।"

मुक्तेश्वरने महाभारतके अतिरिक्त संक्षिप्त रामायणकी भी रचना की है जिसके कारण अुनकी तुलना हिन्दी-रामचन्द्रिकाके रचयिता महाकवि केशवदाससे की जाती है। दोनोंने संस्कृतके राम चरित सम्बधी काव्यों और नाटकोंका आधार लिया था। अिसके बाद यदि किसी हिन्दी और मराठी कविकी तुलना की जा सकती है तो वे हैं शिवकल्याण और हिन्दीके नंददास, जिन्होंने कि श्रीमद्भागवतके रास-पंच्याध्यायीके आधारपर अपनी सरस रचना की है।

कृष्ण भक्तिके क्षेत्रमें यदि दूसरे किसी कविका नाम आता है तो वे हैं संत तुकाराम। अुनके समकक्ष हिन्दीके महाकवि सूरदास बहुत पहले ही अुत्तर भारतको अपने सरस कविताका रसा-स्वादन करा चुके थे जिसका प्रभाव गुजरात बंगालके समान महाराष्ट्रपर भी बराबर पड़ता रहा। व्रज भाषाके अष्टछापके कवियोंकी तुलना हम तुकारामके सोलह शिष्योंसे कर सकते हैं। तुकारामके ही समसामयिक समर्थ स्वामी रामदासका प्रभाव अुत्तर भारत और हिन्दी साहित्यपर कहीं अधिक पड़ा। अिसका कारण अुनकी भारतव्यापी यात्राको ही दिया जा सकता है जिसमें कि अुत्तर भारतके तीर्थ प्रमुख थे।

शिवकल्याण और नंददासजीकी कविताओंके नमूनेकी तुलना कीजिये।—

मराठी

"नाना पुष्पि आकीर्ण। पहा हें सुशोभित तन।
अति कोमल जो शशि किरण। तया करि मंडित॥
जैसी पूर्णिमेची निशि। कलापूर्ण तैसा शशि।
तेणों आजि यावनासीं। शोभाविले बहु॥
आणि यमुना जल स्पर्शिता। शीतल मंद गति वात।
तेगें हें पल्लव वंत। योवनीवे वृक्ष॥
आपुले लीले करुन। शोभती दोलायमान।
पाववितिलें चलन, मंदोमि वातें॥"

हिन्दी

"ताहीं दिन अुडुराज अुदित रसतस सहायक।
कुमकुम मंडित बल प्रिया जनु नागरी नायक॥
कोमल किरन अरुन मानों बन व्याप रही त्यों।
मनसिज खेल्यो फाग घुमड़ घुरि रह्यो गुलाल त्यों॥
स्फटिक छटा-सी किरण कुज्ज रंध्रन जब आयी।
मानहुं वितत वितान सुदेस तनाव तनायी॥
मंद मंद चल चाल चंद्रमा अति छनि पायी।
झलकत हैं जनु रमा रमन प्रिय कौतुक आयी॥"

* * *

महाराष्ट्रमें संत तुकारामका विशेष स्थान है। अिनके भक्तिपूर्ण पद दक्षिण भारतमें अिसी प्रेमसे गाये जाते हैं जिस प्रकार कि अुत्तर भारतमें सूर और मीराके पद। अितिहासकार अलेक्झेंडर ग्रेटने अिनकी प्रशंसामें लिखा है:—

"It intense personal religion can be found anywhere. It can be found in Tukaram, It is impossible to avoid comparing his songs with the Pralms of David They are the natural expressions of a mind holding constant communion with God, poured out like the notes of a bird, in all the occasions and various modes of life."

सन्त तुकारामने अन्य भक्त कवियोंके साथ रैदास और कबीर आदि की वन्दनामें मराठीमें पद लिखे हैं जिससे जान पड़ता है कि अुनपर अुन कवियोंका काफी प्रभाव पड़ा था। अितना होते हुअे भी मराठीमें शृंगारका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाहुल्य नहीं आने पाया जो कि कृष्ण-भक्तिके साथ संयोजित कर दिया गया। अिसका कारण यही जान पड़ता है कि मराठीमें प्रारम्भ ही से ज्ञान और वैराग्यकी धारा अितनी प्रबल रही है कि अुसमें यदि भक्तिकी धाराका मिश्रण भी हुआ तो भी वह ज्ञान प्रधान ही बनी रही। अुत्कट प्रेमका प्राकट्य होनेपर भी अुसमें शृंगारकी कलुषितता, अश्लीलता, नहीं आने पायी।

कृष्ण और राम भक्तिकी धाराअें हिन्दीकी तरह मराठीमें भी अेकके बाद अेक बहती चली आयी हैं। यहाँ सूरके साथ तुलसी और केशवके बाद नन्ददास आते हैं तो वहाँ भी अेकनाथके बाद दासोपन्त और तुकारामके बाद समर्थ रामदासका अुदय होता है, जिन्होंने कि सगुणके बाद निर्गुण और सगुण भक्तिमें भी कृष्ण भक्तिके बाद राम-भक्तिकी धाराओंका प्रभाव जारी रक्खा और अुससे साहित्य-वाटिकाको सजल सरस बनाये रखा।

अिन कवियोंका प्रभाव केवल धर्म और समाजके क्षेत्रमें ही नहीं; बल्कि राजनैतिक और आर्थिक क्षेत्रोंमें भी काफी पड़ता रहा जिससे प्रेरित होकर अनेक वीर पुरुषोंने देशके लिये स्वातन्त्र्य-युद्धमें भाग लिया। समर्थ रामदासजीका प्रभाव शिवाजी महाराज पर विशेष रूपसे लक्षित होता है। अितिहास साक्षी है कि अुन्हींकी प्रेरणासे अुन्होंने स्वधर्मके आधारपर स्वराज्यका भवन निर्माण किया।

हिन्दी क्षेत्रमें वीरगाथा कालके कवियोंका अपने समयके महापुरुषोंपर काफी प्रभाव पड़ा। किन्तु बादमें अुत्तर भारत और राजस्थानके पराधीन हो जानेपर अुन्हें भी दक्षिण भारतका ही आश्रय लेना पड़ा। अिसका अुदाहरण हमें महाकवि भूषणके दक्षिणमें शिवाजी महाराजका आश्रय ग्रहण करनेमें मिलता है। समर्थ रामदास और भूषणके जन्मकालमें केवल पाँच ही वर्षका अन्तर मिलता है। स्वामी रामदासका जन्म संवत् १६६५ और भूषणका संवत् १६७० में माना जाता है। दोनोंके शिवाजी महाराजसे मिलनेके समयमें भी थोड़ा ही अन्तर जान पड़ता है। समर्थके बाद मराठीमें हमें कवि मोरोपन्तका अुदाहरण मिलता है। जिन्होंने कि कृष्ण और रामचरित्रका समान रूपसे गान किया है। हिन्दी और मराठी कवियोंका वही अन्तर फिर हमारे सामने आता है जिसका अुल्लेख किया जा चुका है। जहाँ मराठी कवियोंने महाभारतके आधारपर कृष्णचरित्र वर्णन किया है वहाँ हिन्दी कवियोंने भागवतका आधार लिया है और अुसमें भी बालचरित्र और शृंगार लीलाओंपर विशेष ध्यान दिया है। मोरोपन्तके समान किसी भी भाषामें अैसा कवि भी नहीं हुआ जिसमें कि अपनी १०८ रामायणोंके द्वारा रामचरित्रके अितने विविध कथानकों और अंगोपंर ध्यान दिया हो, और साहित्य साधनाके साथ मन्त्र-साधना भी कर डाली हो जैसी कि (मन्त्र-रामायण और नामांक रामायणमें) की गयी है।

यहाँ जो दोनों साहित्योंमें विभिन्नता दिख पड़ती है वह यह है कि महाराष्ट्र सरीखे वीरत्व प्रधान देशमें चन्द्रभूषण और भूषण सरीखे वीर गाथाके गायक महाकवियोंका अभाव क्यों रहा है जिनकी कि हिन्दीके प्रारम्भिक कालमें प्रचुरता रही है। दूसरा विचारणीय प्रश्न यह है कि मराठीमें हिंदीके समान प्रेम-काव्योंका अभाव क्यों रहा? हिन्दीमें जायसीके पद्मावत सरीखे प्रेमाख्यानोंका कारण मुसलमानी साम्राज्यके संपर्कमें फारसी साहित्यका प्रभाव माना जा सकता है जो कि मराठी साहित्यपर अुतना अधिक नहीं पड़ने पाया। मराठीके शाहिरोंपर अवश्य ही अुसका कुछ प्रभाव लक्षित होता है जिन्होंने अुर्दू फारसीके लावनी आदि छंदोंके आधारपर अपनी कविताओंकी रचना की। अिन शाहिरोंकी रचनाओंमें वीर गाथा और शृंगार दोनोंका सम्मिश्रण अवश्य मिलता है। जिन्होंने अपने पोवाड़ोंके रूपमें वीर और शृंगार रसका अद्भुत प्रवाह सारे महाराष्ट्रमें प्रवाहित कर दिया था। अिन शाहिरों की संख्या मराठीमें काफी है जिनमें कि मसीनदास रामजोशी, नागेश आदि नाथ आदि प्रसिद्ध हैं। अिन्होंने अपनी संगीतमयी रचनाओंसे सारे महाराष्ट्रमें अेक ओर वीर-रस और दूसरी ओर शृंगार रसको मूर्तिमान कर दिया था किंतु ये सब रचनाअें हमें स्फुट कविताओंके रूपमें ही मिलती हैं, महाकाव्य या खंडकाव्यके रूपमें नहीं जैसी कि वीर काव्य हम्मीररासो, और प्रेम-काव्य मधुमालती, अिन्द्रावती आदि हिन्दी काव्योंमें है।*

---

* जबलपुरमें हुअे १४ वें (मराठी) विदर्भ साहित्य सम्मेलनमें लेखक द्वारा पठित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

11250

भारतीय अितिहासका अेक युग-प्रतीक 'बंगला नाटक'

: श्री मन्मथनाथ गुप्त :

आज बंगालियोंमें कोअी 'नील दर्पण' नाटकको नहीं पढ़ता। मैं यहाँपर अुन लोगोंको नहीं गिना रहा हूँ जो परीक्षा पास करनेके लिये या साहित्यके अितिहासका गम्भीर अध्ययन करनेके लिये अिस पुस्तकको पढ़ते हैं। पर यह नाटक केवल साहित्यके अितिहासकी दृष्टिसे नहीं; हमारे राजनैतिक अितिहासकी दृष्टिसे भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। अुसका महत्व कितना अधिक है, अिस बातका अिसीसे अनुमान किया जा सकता है कि स्वयं बंकिमचन्द्रने अिस पुस्तकको बंगालका "टाम-काकाकी कुटिया" (अंकिल टॉम्स कैबिन) बतलाया है।

यह नाटक नीलकोठीके साहबोंके अत्याचारोंके विरुद्ध लिखा गया था। यहाँपर यह बताना आवश्यक है कि ये नील कोठीके साहब कौन थे, और नीलकोठी क्या थी। आजकल तो सभी रंग रासायनिक हैं। पर रँगनेके पहले नीलसे ही रंग बना करता था। मैं थोड़ेसे शब्दोंमें अपनी पुस्तक 'राष्ट्रीय आन्दोलनका अितिहास'से नीलकी खेतीका अितिहास संकलित करता हूँ जिससे आलोच्य नाटककी पृष्ठभूमि समझमें आ जावे।

जब अँग्रेज यहाँ आये, अुन्होंने बंगालकी जमीनको नीलकी खेतीके अुपयुक्त पाया। पहले-पहल कुछ किसानोंको अिससे फायदा भी रहा। स्वयं राजा राम मोहनराय ने सन १८२६ में यह कहा था कि नीलकी खेतीसे किसानोंको फायदा है। यदि किसानोंपर ही अिसका बोना-न-बोना, और बोना तो कितना बोना यह छोड़ दिया जाता, तथा अुन्हें अपनी अुपजको स्वतन्त्रता पूर्वक बेचने दिया जाता, तो, बात और होती।

पर यहाँ तो कुछ अँग्रेज कोठीवाले अिसके अेकाधिकारी हो गये, और अुन्होंने मनमाने ढंगसे बर्ताव शुरू किया। यद्यपि ये अँग्रेज कोअी सरकारी हैसियत नहीं रखते थे, पर अँग्रेज होनेके कारण ही अुन्हें मानो भारतीयोंपर मनमाना करनेका पट्टा मिला हुआ था। वे जो चाहे सो करते थे।

यों तो देखनेमें अेग्रीमेंट (करार) का रूप होता था; पर असलमें किसानको कोअी स्वतन्त्रता नहीं होती थी। नीलकी कोठीके कारिन्दे जाकर प्रत्येक खतपर निशान लगा देते थे कि अिस खेतमें नील और अिसमें धान बोया जायगा। किसानकी क्या मजाल थी कि वह अुसका अुल्लंघन करे।

नीलकोठियोंके साहबोंका यह अत्याचार बीसियों वर्ष तक बंगालमें चला। अेग्रीमेंट अेक सालका होता था, पर असलमें आजीवन गुलामीका पट्टा लिखा जाता था। हर साल जब हिसाब होता था, तो नीलकी गाड़ियाँ देनेके बाद नीलके किसानोंके हिसाबमें कुछ भी नहीं निकलता था, नतीजा यह होता कि अुन्हें और भी पेशगी लेनी पड़ती थी।

१८२२ में नीलके साहबोंके अत्याचारोंके विषयमें पहले अुल्लेख 'समाचार चन्द्रिका' और 'समाचार दर्पण' नामक बंगला अखबारोंमें मिलता है। अिसके बाद अक्षयकुमारदत्तने 'तत्वबोधिनी' पत्रिकामें नीलके किसानों-पर अत्याचारके सम्बन्धमें लिखा था। अच्छी से अच्छी जमीनपर जबरदस्ती नीलकी खेती करायी जाती थी।

किसी-किसी क्षेत्रमें दस सालके अेग्रीमेंटका पता मिलता है। यह भी पता चला है कि जब नीलके किसान अत्याचारोंके विरुद्ध विद्रोह करने लगे, तो अिस बहाने अत्याचारोंको बन्द करनेके बजाय अंग्रेज सरकारने नीलकी कोठीके साहबोंको मैजिस्ट्रेटोंके अधिकार दे दिये। जो लोग अंग्रेजी साहित्य और अंग्रेजोंकी विज्ञान-निष्ठाको सामने रखकर साम्राज्यवादके अिन पहलुओंको भूल जाते हैं, वे ब्रिटिश शासनकी असलियतको नहीं समझ पाते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीलके साहबोंको यह अधिकार तो पहलेसे मिला हुआ था कि वे किसानोंको जब चाहे तब अपनी कोठीमें कैद कर लें। नीलके किसानोंमें अिससे बड़ा असन्तोष फैला हुआ था। अिनमें आन्दोलन अिस मात्रा तक पहुँचा था कि बड़े लाट लार्ड कैनिंग १८५७ के विद्रोहसे कहीं ज्यादा अिसके सम्बन्धमें चिन्तित थे। अुन्होंने लिखा है—'करीब अेक हफ्ते तक मैं अितना अुद्विग्न था कि मैं दिल्लीके गदरके समय भी नहीं था, और मुझे डर था कि यदि अिस समय किसी नील मालिकने भय या मूर्खतावश अेक गोली चला दी, तो अुससे संभव है कि बंगालके दक्षिणी हिस्सेमें प्रत्येक कारखानेमें आग लग जाय।'

शायद अिसी अुद्विग्नताके कारण बंगालके लेफ्टिनेंट गवर्नर सर जान पीटर नदी-नाव द्वारा बंगालके देहातोंका दौरा करने लगे। सन् १८६०के१७ दिसम्बरको अुन्होंने दौरेके बाद अेक रिपोर्ट दी जिसमें अुन्होंने यह कहा कि 'मैं ६०-७० मील तक भागीरथी तथा जमुना नदियोंमें नावके द्वारा दौरा करता रहा तो अुसमें मैंने देखा कि यह ६०-७० मीलका किनारा अर्जी देनेवाले किसानोंसे भरा हुआ था। यहाँ तक कि गाँवकी औरतें तक जमा थीं, अैसा मालूम होता है कि जो लोग वहाँपर अपनी फ़रियाद लेकर आये थे, वे नदीके दोनों किनारोंपर स्थित दूर-दूरके गाँवोंसे आये थे। मैं नहीं जानता कि आज तक किसी राजकर्मचारीके भाग्यमें यह बात हुअी कि नहीं, कि लगातार १४ घंटे तक दोनों किनारोंपर खड़े अर्जी देनेवालोंकी कतारोंके बीचसे स्टीमरपर चले। सभी लोग बड़े अदबसे अपनी माँग रख रहे थे, और यह स्पष्ट है कि वे लोग जिस मामलेको लेकर आये थे अुसके सम्बन्धमें बहुत गम्भीर थे। यह सोचना बेवकूफी होगी कि जो यह दसियों हजार लोग आये थे, और जिनमें पुरुष, स्त्रियाँ तथा बच्चे भी थे अुसका कोअी अर्थ नहीं है।'

अिसके पहले, ही १८५९ में ५० लाख नीलके किसानोंने हड़ताल कर दी थी। अिसीकी प्रतिध्वनि बंगला साहित्य में 'नील दर्पण' नाटकके रूपमें हुअी। अिसे क्यों बंकिमचन्द्रने बंगलाका 'अंकिल टाम्स कैबिन' (टामकाकाकी कुटिया) बतलाया, यह पहले जो कुछ लिखा गया, अुससे स्पष्ट हो गया होगा।

बंकिमचन्द्रने यह लिखा—'दीनबन्धुमित्रको समाजके सम्बन्धमें अद्भुत ज्ञान था और अुनमें प्रबल सहानुभूति थी। अिन्हींके कारण वे नाटक लिखनेकी ओर अग्रसर हुअे। जिन अिलाकोंमें नील पैदा होता था, अुनमें वे खूब घूमते रहते थे। वे अपने ही तजरबेसे जानते थे कि प्रजापर किस प्रकारका अत्याचार हो रहा है। अुनको अिस प्रजा-पीड़नके सम्बन्धमें जितनी जानकारी थी, अितनी और किसीको नहीं थी। अपनी स्वाभाविक सहानुभूतिके कारण अुन्हें अैसा प्रतीत हुआ जैसे अुन्होंने ही अुन दुखोंको झेला हो। अिसीलिये अुन्होंने अपनी कवित्वपूर्ण लेखनीसे यह दुख-गाथा तैयार की। 'नील दर्पण' नाटक बंगालकी टाम काकाकी कुटिया है। टाम काकाकी कुटियाने अमेरिकाके हबशियोंको गुलामीसे मुक्त किया। अुसी प्रकार बंगला भाषाका अैतिहासिक युग प्रवर्तक नाटक "नील दर्पण" नीलके गुलामोंकी गुलामीको मिटानेमें बहुत कार्य कर सका।

हम पहले यह बता दें कि यह पुस्तक किस प्रकार अेक भयंकर राजनैतिक अस्त्रके रूपमें परिणत हुअी। अिस पुस्तकका अनुवाद अंग्रेजीमें प्रकाशित हुआ। अिससे अितना तहलका मचा कि अिसके प्रकाशक पादरी जेम्स-लैंगपर मुकदमा चला, और अुन्हें अेक महीनेकी कैद तथा अेक हजार रुपये जुर्माना किया गया। शासकवर्गके अिस क्रोधका यह रूप विशेष ध्यान देने योग्य है कि अिस पुस्तकके मूल लेखकको कोअी सजा नहीं दी गयी। अंग्रेजीमें 'नीलदर्पण' के प्रकाशनसे सरकार रुष्ट अिस कारण हुअी कि अिससे शासकवर्गके ढोंगमें बाधा पड़ती थी। यहाँ फिर अेक बार हम ब्रिटिश न्याय और अंततोगत्वा सब न्यायोंके वर्गचरित्रको देख लें।

जिस मधुसूदनदत्त नामक व्यक्तिने 'नील दर्पण'का अनुवाद किया था, अुसे भी सजा दी गयी। फिर भी आन्दोलन चलता रहा। मैं फिर अपने 'राष्ट्रीय आन्दोलनका अितिहास' से अुद्धृत करता हूँ— 'आन्दोलनने अितना जोर पकड़ा कि सरकारने अेक नील कमीशन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैठाया, पर अिस कमीशनने कोअी अच्छी सिफारिश नहीं की। कमीशनने अुल्टा यह कहा कि नीलकी खेती होनी चाहिये। साथ ही अुन्होंने नीलके किसानोंके दुखोंको दूर करनेके लिये कोअी अच्छी सिफारिश नहीं की। सच तो यह है कि जबतक जर्मनीने वैज्ञानिक ढंगसे नील अुत्पादन नहीं किया तबतक नीलकी खेती चलती रही। भारतवर्षमें अुस समय कोअी नेतृत्व अैसा अुत्पन्न होता जो नीलके किसानोंके आन्दोलनको १८५७ के विद्रोहके साथ संयुक्त कर देता, तो अिसमें संदेह नहीं कि भारतीय अितिहास कुछ दूसरा ही होता।'

जो कुछ भी हो नीलके किसानोंके विषयको लेकर अेक नाटक लिखना बड़े साहस और सूझकी बात थी। अिस लिये अिसमें आश्चर्यकी बात नहीं कि दीनबन्धु अिस नाटकको लिखकर बहुत प्रसिद्ध हुअे और अुनका नाटक जनप्रिय हुआ।

दीनबन्धुका जन्म बंगला संवत्के १२३८ में हुआ। अुनके पिताका नाम कालाचाँद मित्र था। बचपनमें हेयर स्कूलका छात्र रहते समय ही अुन्होंनें बंगला लिखना आरम्भ कर दिया था। वे अीश्वरगुप्तके अनुयायी थे। अैसा समझा जाता है कि अुनकी पहली रचना 'मानव चरित्र' नामक अेक कविता थी, जो अीश्वरगुप्त सम्पादित 'साधुरंजन' पत्रिकामें प्रकाशित हुअी थी। अिसके बाद तो वे बराबर कुछ न कुछ लिखते ही रहे। अुनकी अेकाध रचना अितनी प्रसिद्ध हुअी कि जिस संख्यामें वे कवितायें छपीं, पत्रिकाकी अुस संख्याको फिरसे छापना पड़ा।

दीनबन्धुने जीवनको बहुत पाससे देखा था। डाक विभागमें अेक मामूली बाबूके रूपमें भरती होकर वे अुस विभागके अेक बड़े अफसर हो गये थे, और अिस नाते अुन्हें मणिपुरसे गंजाम और दार्जिलिंगसे समुद्र तक बार-बार जाना पड़ता था। अिसके अलावा अुनमें यह आदत थी कि वे जहाँ पर भी दौरेपर जाते, वहाँ सरकारी काम समाप्त कर हर अेकसे मिलते—जन-सम्पर्क स्थापित करते। अिस कारण हम यह देखते हैं कि अुनकी रचनाओंमें छोटेसे लेकर बड़े तक सबके जीवनसे वे बखूबी परिचित थे।

जब अुनका "नीलदर्पण" नामक नाटक प्रसिद्ध हुआ, तो वे अेक पार्टीमें बैठे हुअे थे। किसीका परिचय अभी नहीं कराया गया था। अुस पार्टीमें नीलकोठीका अेक बंगाली कारिन्दा भी था। किसी प्रकारसे 'नील-दर्पण' नाटकपर अुसकी नज़र पहुँची। अिसपर अुस कारिन्दाने कहा—**"सालेने हूबहू नीलकी कोठीमें जैसे जो कुछ होता है, वैसा ही लिख दिया है। मालूम होता है जैसे हमारा कोअी कर्मचारी ही लेखक है।"**

दीनबन्धुने यह बात सुनी, तो वे हँसे। अुधर मेजबानने झेंपते हुअे दीनबन्धुका परिचय लोगोंको कराया। तब वह कारिन्दा दीनबन्धुसे माफी माँगने लगा। अिसपर दीनबन्धु बोले—आपके शब्द चाहे जैसे भी हों, पर आपने जैसी प्रशंसा मेरी की है, वैसी आज तक किसीने नहीं की।

दीनबन्धुके नाटककी अिस वस्तुवादिताके कारण ही अुनके नाटकमें वह गुण आ गया जिससे वह अुस युगमें प्रसिद्ध हुअे।

* * *

संक्षेपमें नाटककी कथा-वस्तु यों है :—

गोलोकचन्द्र और अुनके नौकर साधुमें बातचीत हो रही है। साधु यह कह रहा है कि अब अिस देशको छोड़ देना चाहिये, पर गोलोक कह रहा है—यहाँ हमारे सात पुरखे रहते आये हैं। जो धान पैदा होती है, अुससे साल भर चलता है, अतिथि सेवा होती रहती है और पूजा भी होती है। जो सरसों होता है अुससे तेल मिलता है, और साठ-सत्तर बच जाते हैं। खेतका चावल, खेतकी दाल, बागसे तरकारी और पोखरेसे मछली मिलती है। अैसे देशको कैसे छोड़ा जाय।

साधुने कहा—पर अब तो ये बातें जाती रहीं। नीलके साहबोंके मारे अब तो नील ही बोना पड़ता है। अुसका भी पैसा मिल जाता तो ठीक रहता।

दूसरे गर्भांकमें भी किसान आपसमें बात कर रहे हैं कि नीलकी खेतीके मारे सबकी आफत है। किसान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह आपसमें कह रहे हैं कि गाय-बैल बेचकर गाँव छोड़ कर कहीं भाग कर चला जाय। बात यह है कि किसानोंकी सारी जमीनपर नीलकी खेती होने लगी थी।

वे लोग बात ही कर रहे थे कि अितनेमें अमीन और प्यादे आकर अुन किसानोंको बाँधने लगे।

तीसरे गर्भांकमें मिस्टर अुड अपने दीवानको अिस लिये डाँट रहा है कि वह अधिक अत्याचार नहीं कर रहा है। साहब कह रहा है-- 'तुम साले डरपोक लोग हो, नालायक हो, तुम डर गये हो, तुम घबड़ाते हो।'

अिसपर दीवान कह रहा है-- हुजूर, जब मैंने यह ओहदा लिया, तो डर कैसा? मैंने तो डर, लज्जा, मान, मर्यादा, सबको तिलांजलि दे दी। गोहत्या, ब्रह्म-हत्या, स्त्री-हत्या, घरमें आग लगाना यह सब तो मेरे लिये अंगके आभूषण हो गये हैं। जेलखाना तो मेरे सिर पर नाचता रहता है।

अिसपर साहबने कहा-- मैं बात नहीं माँगता काम माँगता हूँ।

अितनेमें वे ही दो किसान बँधकर आते हैं। दीवानजीको तो खैरख्वाही दिखानी थी, वे अिनपर बहुत बिगड़ते हैं। कहते हैं-- सुना है, तुम साहबको कैद करना चाहते हो।

अिसपर वह किसान प्रतिवाद करता है। तब दीवानजी यह कहते हैं कि गाँवमें स्कूल बना है, अिसीसे राज्यद्रोह फैल रहा है। साहब कहते हैं कि मैं स्कूल बन्द करा दूँगा। अिसके अलावा वे और भी बिगड़ते हैं।

दीवानजी कहते हैं-- हुजूर, यह नीलवाले खेतमें खेती नहीं कर रहा है। सालेने लेनेको तो पेशगीके रुपये ले लिये, पर कहता है कि नीलकी खेती मुझसे नहीं होती। कहता है कि वक्त नहीं है।

अिसपर अुड साहब आपेसे बाहर होकर कहते हैं-- साला बड़ा हरामजादा बदमाश है। पेशगी तू लेगा, और खेती मैं करूँ? साला बड़ा हरामी है (जूतेकी ठोकर मारना) अभी तेरी मुलाकात श्यामचाँदसे कराता हूँ।

साहबने अपने डंडेका नाम श्यामचाँद रखा था। अुसे अुठाकर साहब मारना शुरू करते हैं और किसान जोर-जोरसे चिल्लाता है। अिसपर साहब पराक्रम दिखलानेके लिये ब्लाडी, निगर तथा माँ-बहनकी गालियाँ देते हैं।

अिसी प्रकारसे यह नाटक चलता जाता है। ब्रिटिश साम्राज्यवादका नग्न रूप सामने आ जाता है। मैंने पहले ही बतलाया कि अब यह नाटक न तो पढ़ा जाता और न खेला जाता है, फिर भी अिस नाटकके अन्दर भारतीय अितिहासका अेक अध्याय निहित है। अिस नाटकको बंगला साहित्य और साथ-ही-साथ भारतीय अितिहासका अेक क्रोशशिला (मील पत्थर) कहा जा सकता है। सच तो यह है कि अितिहासकी किसी पुस्तकमें नीलकी कोठियोंमें साहबोंके देशव्यापी अत्याचारकी कहानी अितने अच्छे ढंगसे नहीं लिखी गयी है।

दिल्ली]

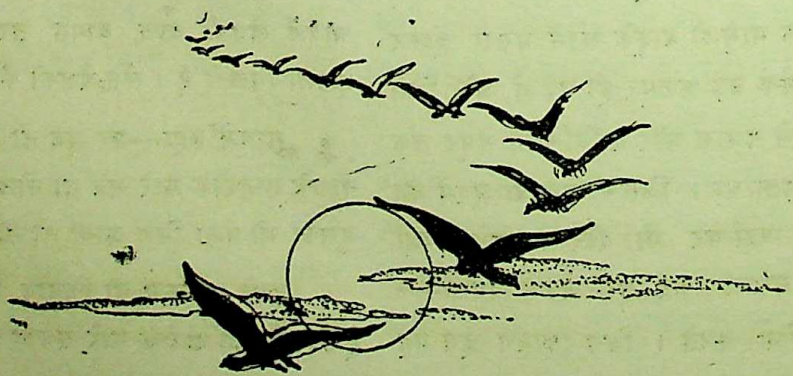

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरे पासपोर्ट

76038

: भदन्त आनन्द कौसल्यायन :

अक्सर विद्वानोंको कहते सुना है कि धन्य थे, वे प्राचीन धर्म-प्रचारक जो हिमालयकी अलंघ्य सीमाअें लांघकर चीन और तिब्बतमें धर्म प्रचारार्थ गये। अिसमें कुछ संदेह नहीं कि मध्य-युगके धर्म-प्रचारकोंकी यात्राअें याता-यातके साधनोंके अभावके दिनोंमें काफी दुःस्साहस-पूर्ण और जोखिमका काम थीं।

किन्तु आजके यातायातसम्पन्न युगकी यात्राअें भी यात्रीके लिये कम हैरानी और परेशानीका कारण नहीं होतीं।

श्रीमती अेनी बिसेंटने कहीं लिखा है कि "यदि अपने देशकी सेवा करनी हो, तो नगर-नगर घूमना चाहिये, गाँव-गाँव घूमना चाहिये तथा घर-घर घूमना चाहिये।" मैं नहीं जानता कि मुझसे अपने देशकी कुछ सेवा बन पड़ी अथवा नहीं, किन्तु श्रीमती बिसेंटके अुक्त कथनकी कृपासे मैं घूमा पर्याप्त हूँ। घर-घर और गाँव-गाँव ही घूमना हो तो अिस युगमें भी बिना रेलका टिकट खरीदे यात्रा हो सकती है। नगर-नगर घूमना हो और कहीं भी शीघ्र पहुँचना न हो तो भी बिना रेलके टिकटके काम चल सकता है। किन्तु, देशसे बाहर जाना हो तो बिना 'पासपोर्ट'के चल ही नहीं सकता। पासपोर्टका शब्दार्थ चाहे जो हो व्यवहारार्थ अपनी सरकारसे विदेश जानेके लिये देश छोड़नेका अनुज्ञा-पत्र है। सभ्य संसारको पासपोर्टकी प्रथा आरम्भ किये कुछ ही समय हुआ है। पाँच सात वर्ष पहले ही देशका जो भू-भाग देशका अेक अंग था, अुस पश्चिमी-पंजाब और पूर्वी बंगालमें जानेके लिये भी पासपोर्टकी आवश्यकता हो गयी है।

सन् १९३२ में मैंने सर्व प्रथम विदेश जानेकी कल्पनाको मनमें जगह दी। बौद्ध ग्रंथोंमें बुद्धसे आरंभ करके आचार्य-परंपराकी कुछ कड़िय अुपलब्ध हैं। और अिधर अुपाली महास्थविरसे आरंभ करके अिस समय तक चली आनेवाली आचार्य परंपराकी कड़ियाँ भी प्राप्य हैं। बीचकी कुछ कड़ियाँ अप्राप्य हैं। मुझे लगा कि संभव है स्यामदेशकी यात्रा करनेसे, वहांसे प्राप्त सामग्रीकी सहायतासे, मैं बुद्धसे अबतक चली आनेवाली आचार्य-परम्पराकी कडियोंको पूरा कर सकूं। अिसी अुद्देश्यकी पूर्तिके लिये मैंने स्याम जाना तय किया। प्रयत्न करनेपर सिंहल सरकारसे स्याम जानेका पासपोर्ट भी मिल गया।

अुसी वर्ष राहुलजीके आग्रहसे महाबोधि सोसायटी के निमन्त्रणपर मैं अिंग्लैंड जानेके लिये तैयार हो गया। स्याम जानेके लिये जो पासपोर्ट मिला था अुसेही लंदन जानेका अनुज्ञा-पत्र भी बनवाना था। जब अधिकारियों को अिस आशयका प्रार्थना-पत्र दिया गया तो अुत्तर मिला कि तुम्हें लन्दन जानेका पास-पोर्ट तो मिल नहीं सकता और स्याम जानेका तुम्हारा पास-पोर्ट भी जब्त किया जाता है। अधिक पूछ-ताछ करनेपर पता लगा कि भारत और सिंहल दोनोंकी प्रजाके ब्रिटिश प्रजा होने और भारतीय सी० आअी० डी० की सिंहल तक भी पहुँच होनेकाही यह परिणाम है। मैंने राजनीतिक क्षेत्रमें कभी कुछ अुल्लेख योग्य कार्य नहीं किया है। किन्तु, यदि अपने देशसे प्रेम करना मात्र ही 'राजनीति' समझा जाय तो कौन अैसा अभागा होगा जो राजनैतिक कार्यकर्ता होनेसे अिनकार करे।

मेरे हृदयपर अपना स्यामका मिला मिलाया पास-पोर्ट छिन जानेका और लन्दनका पास पोर्ट न मिलनेका बड़ा खराब असर हुआ। अैसा लगा कि आयु भरके लिये देशकी चहार-दीवारीके भीतर कैद कर दिया गया हूँ। संकल्प किया कि जैसे भी हो पास-पोर्ट मिलना ही चाहिये। अब लन्दन जानेके लिये पास-पोर्टकी अवश्यकता न थी, किन्तु पास-पोर्ट लेनेके लिये ही लन्दन तक जानेके लिये भी तैयार था। स्वर्गीय

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर डी. बी. जयतिलक अुस समय सिलोनमें होम मेम्बर थे। ये गवर्नरके पास गये और अपनी निजी जिम्मेदारीपर मुझे पास-पोर्ट दिलवाया। वे न होते तो सच यह है, मुझे पास-पोर्ट ही नहीं मिलता।

१९३६ में फिर विदेश जानेके लिये पासपोर्टकी आवश्यकता पड़ी। पाँच साल बीत जानेसे पुराना पासपोर्ट पुराना पड़ गया था। अुस समय मैं सारनाथमें रहता था। अिसलिये यू. पी. सरकारसे ही पासपोर्ट लेनेकी बात थी। पासपोर्टके प्रार्थना पत्रपर ऑनरेरी मैजिट्रेट जैसे किसी पदाधिकारी की सिफारिश अपेक्षित थी। अुस समयके बनारसके कमिश्नर श्री पन्नालाल सारनाथके प्रति श्रद्धावान थे, बीच-बीचमें सारनाथ आते रहते थे। अुन्होंने किसी ऑनरेरी मैजिट्रेटके नाम अेक पुर्जी लिखकर मुझे दे दी, कि मैं अुनका परिचित हूँ। मैं वह पुर्जी लेकर अुन महोदयके पास गया, और अपेक्षित सिफारिश मिल जानेसे थोड़े ही समयमें मुझे पासपोर्ट भी मिल गया।

मैं अुस वर्ष कोलंबो तक गया। वहाँ पहुँचनेपर विदेश जानेका विचार स्थगित कर देनेके कारण अुस पासपोर्टका कुछ भी अुपयोग न हो सका। युद्धके दिनोंमें वह पासपोर्ट सरकारको वापिस कर देना पड़ा।

विदेश जानेके लिये पासपोर्ट अनिवार्य होनेसे मुझे पासपोर्टकी चाह तो थी ही; लेकिन साथ ही अुससे असाधारण घृणा भी थी। पासपोर्टमें जातीय-पदका अेक स्थान रहता है, और वहाँ लिखना पडता था, 'जन्मसे ही ब्रिटिश प्रजा', प्रजा शब्द सुननेमें अुतना मर्म-भेदी नहीं है जितना कि 'गुलाम'। किन्तु अुसका अर्थ गुलाम ही था।

देशमें स्वातंत्र्य युद्ध जारी था। मैं कल्पना करने लगा कि कभी वह दिन भी आयेगा जब किसी भारतीयको अपने पासपोर्टपर ये शब्द न लिखने होंगे और संकल्प किया, कि अब यथासंभव तबतक पासपोर्टके लिये प्रार्थनापत्र भेजनेका अवसर न आनेदूँगा जबतक पासपोर्टपर अुक्त शब्द लिखनेकी मजबूरी बनी रहेगी। मुझे हर्ष है कि अुक्त संकल्प पूरा हुआ।

१९५० में विश्व बौद्ध सम्मेलनका प्रथम अधिवेशन कोलंबोमें हुआ। वहाँ जानेके लिये दिल्लीके मित्रोंसे मिली सहायताके कारण भारत और लंकाके ही बीचमें आ जा सकनेका पासपोर्ट अेक ही दिनमें मिल गया।

१९५२ के ही सितम्बरमें टोकिओ (जापान) में विश्व बौद्ध सम्मेलनका दूसरा अधिवेशन होना था। अिस बार कलकत्तेमें रहते समय मुझे अुसमें सम्मिलित होनेका निमन्त्रण मिला। मैंने कलकत्तेमें ही पासपोर्टके लिये प्रार्थना-पत्र दे दिया। जापान आते जाते मैं पास पड़ोसके जिन देशोंको देख आना चाहता था, अुन सभीका पासपोर्ट माँग लिया। चीनके बारेमें कुछ सन्देह था, किन्तु वह नाम भी अपने प्रार्थना-पत्रमें लिख ही तो दिया, आशा दिलायी गयी कि ३ सप्ताहके बाद पासपोर्ट मिल जा सकेगा।

"३ सप्ताहके बाद पानीके जहाजसे जानेसे तो मैं समयपर पहुँच ही न सकूँगा"

"तो आपको अिससे पहले प्रार्थना-पत्र देना चाहिये था।"

"विश्व बौद्ध सम्मेलनमें सम्मिलित होनेका निमन्त्रण ही अभी मिला है, पहलेसे प्रार्थना-पत्र कैसे देता?"

"तो आप सिक्युरिटी ऑफिसमें कोशिश कीजिये, वहाँसे यदि कागज-पत्र जल्दी लौट आयेंगे तो हम आपको पासपोर्ट जल्दी दे देंग।"

अब मैं सिक्युरेटी ऑफिसके पीछे पड़ा। दिनमें अेकाध बार आता-जाता और दो-चार बार टेलीफून करता। कुछ दिनके बाद सिक्युरिटी ऑफिसवालोंने कहा कि "हम आपके कागज जाँच पडतालके लिये भेज रहे हैं, आप स्थानीय पुलिसमें कोशिश कीजिये"

अब मैंने सिक्युरिटी पुलिस और अपने मुहल्लेके थानेके बीचमें ताना-बाना बुनना शुरू किया। सिक्युरिटी पुलिसवाले कहते कि कागज़ भेज रहे हैं और थानेवालोंका कहना था कि कागज़ पहुँच नहीं रहे हैं। चार-पाँच दिनके प्रयत्नके फलस्वरूप कलकत्तेमें ही अेक दफ्तरसे दूसरे दफ्तर कागज़ पहुँच पाये।

अेक प्रातःकाल स्थानीय थानेवालोंने कुछ कागजोंकी ओर देखकर मुझसे प्रश्न किया—'आप कहाँ जा रहे है"?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अिस प्रश्नका अुत्तर तो मैंने अपने प्रार्थना-पत्रमें दिया ही है !"

"आपको किस-किस देशका पासपोर्ट चाहिये ?"

"अिस प्रश्नका अुत्तर भी मैं अपने प्रार्थना-पत्रमें दे ही चुका हूँ"।

"हम क्या करें हमें तो जो-जो प्रश्न पूछनेको कहा जाता है हमें पूछकर अुसका अुत्तर लिखना ही पड़ता है"

"अच्छा तो आपका अगला प्रश्न क्या है ?"

"प्रश्न तो हमें स्वयं कुछ बेढँगासा लगता है किन्तु कुछ न कुछ अुत्तर लिखना ही होगा।"

"शौकसे पूछिये"।

"आप २४ वर्षकी आयुसे लेकर अभीतक छः महीनेसे अधिक कहाँ-कहाँ रहे है ?

नित्य नया स्थान बदलेनेवाला मैं अब अुनको क्या बताअूँ कि कहाँ-कहाँ रहा हूँ ? व्यावहारिक बननेपर मजबूर होनेके कारण मैंने अुन्हें लाहौर, कोलम्बो, लंदन, और वर्धा, के नाम लिखा दिये। थानेवालोंने आश्वासन दिया, कि "आज ही मेरे कागज वापिस सिक्युरिटी पुलिस भेज दिये जायेंगे"।

अब दुबारा थाने और सिक्युरिटी पुलिसके बीचमें ताना-बाना बुनना पड़ा। थानेवाले कहते थे कि हम कागज़ भेज रहे हैं, और सिक्युरिटी पुलिसवाले कहते थे कि— हमें कागज़ मिल नहीं रहे है। जैसे तैसे कागज़ सिक्युरिटी पुलिसमें पहुँचे। अब सिक्युरिटी पुलिसवालोंकी बारी थी। मेरा काम हर दूसरे दिन वहाँ जाना और निराश होकर लौट आना था। अुनका कहना था कि हम पुलिसकी रिपोर्टके अनुसार जाँच कर रहे हैं। अिसीसे विलम्ब होता है। अिस विलम्बकी अवधिको कम करनेके लिये अिधर-अुधरसे कुछ फोन किये कराये गये। अेक दिन झुंझलाकर मैंने पूछा "कि क्या आप, लाहौर, कोलंबो, अथवा लंदनमें मेरे बारेमें कुछ जाँच पडताल कर रहे है ?"

"नहीं हमारी जाँच कलकत्ते तक ही सीमित है।"

स्थानीय पुलिसके अेक बड़े-कर्मचारीकी मेरे प्रार्थना-पत्रपर सिफारिश थी, मुहल्लेके थानेकी पुलिस अपनी रिपोर्ट दे चुकी थी और अभी भी कलकत्तेमें ही न जाने मेरी और क्या जाँच हो रही थी !

अखिर अेक दिन अुन्होंने कहा कि हम अपनी रिपोर्टके साथ आपके कागज़ लौटा रहे हैं,। मुझे आशा और विश्वास हुवा कि अब 'पासपोर्ट' मिल जायेगा। अगले दिन पासपोर्ट कार्यालयसे मैं अपना पासपोर्ट ले आया।

यह पासपोर्ट मुझे बड़ा ही प्रिय है, अिसपर सबके अूपर 'अशोक चिन्ह' बना है। अिसपर देवनागरी अक्षरोंमें 'सत्यमेवजयते' छपा है। अिसपर जातीय-पद लिखनेके स्थानमें 'जन्मसे ब्रिटिश प्रजा' नहीं लिखना पड़ा है। अिसपर लिखा हुआ है— 'जन्मसे भारतीय'

विदेश यात्रीकी समस्या पासपोर्ट मिल जानेसे ही हल नहीं होती। जिस जिस देशकी यात्रा करनी हो, अथवा जिस जिस देशसे गुजरना हो, अुस अुस देशकी सरकारोंकी अनुमति भी लेनी पड़ती है, जो 'वीसा' कहलाती है। जिस प्रकार पासपोर्टके प्रार्थनापत्रके साथ अपनी सरकारोंको कुछ न कुछ फीस देनी पड़ती है, अुसी प्रकार अुस अुस देशकी यात्रा करनेके लिये अथवा अुनमेंसे गुजरनेकी अनुज्ञा प्राप्त करनेके लिये विदेशी सरकारोंके लिये भी कुछ न कुछ फीस देनी ही पड़ती है। बिना कुछ लिये, न अपनी सरकार देशसे बाहर जाने देती है और न विदेशी सरकार अपने देशमें घुसने ही देती है। अिन सरकारोंके मारे माँ-पृथ्वीके न जाने— कितने टुकडे हो गये हैं !

मुझे जापान जाना ही था। अिसलिये जापानका 'वीसा' लेना पड़ा। जापानी सरकारके कलकत्ता स्थित प्रतिनिधिने 'वीसा' देनेसे पहले यह देखलिया कि जापान पहुँचनेपर मेरे पास वहाँ रहने, खाने, पीनेके लिये पर्याप्त पैसा है अथवा नहीं ! बिना अिस प्रकारकी गारंटीके कोअी भी सरकार किसीको भी अपने देशमें आने नहीं देती। अिस युगकी और विशेष रूपसे सभ्य जगत्की यह विशेषता है कि हर किसीको अर्थकी तराजूपर चढ़ना ही होता है। जापानके अतिरिक्त रंगून और थायीलेंड (स्याम)का वीसा अपेक्षित था। दोनों बिना किसी विशेष तरद्दुदके मिल गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पासपोर्ट और वीसाके अतिरिक्त विदेशी यात्रीकी तीसरी आवश्यक तैयारी हैज़ा, चेचक आदिके अनिवार्य अिंजैक्षन अथवा अुनका सार्टिफिकिट है। यह समस्या विदेशी यात्रीको कुछ बहुत हैरान नहीं करती। अनेक डा० विदेश जानेके अिच्छुक यात्रीको काया-कष्ट न देकर थोड़ासा अर्थ-दंड देकर ही छुट्टी दे देते हैं।

२१ सितम्बरको मित्रोंसे बिदा ले, पासपोर्ट, वीसा, आदिकी सारी तैयारीसे सुसज्जित हो जब मैं ब्रिटिश ओवर्सीज़ अेअरवेज अर्थात् ब्रिटिश समुद्र-पार यात्रा-मार्ग कंपनीके कार्यालयमें पहुँचा और ज़ब अन्य सभी यात्रियोंके साथ मेरा सामान भी दम-दम वायुपत्तन (अैरोड्रोम) जानेवाली बसमें लद गया और जब कंपनीके अधिकारियोंने मेरा पासपोर्ट देखा तो वे आश्चर्य-चकित होकर बोले—"आपके पासपोर्टमें हाँग-काँगका अॅन्डोर्समेंट नहीं है, हम आपको नहीं ले जासकते"। अितनी छान-बीनके बाद तो यह पासपोर्ट मिला था, अब यह हाँग्-काँग्का अॅन्डोर्समेंट और कौनसी बला बच गयी! समझमें आया कि हाँग्-काँग्को भी चीनमें ही मानकर मैंने अपनी सरकारसे वहाँ जानेकी पृथक अनुज्ञा नहीं ली थी। मेरा जहाज अेक रातके लिये हाँग्-काँग् ठहरनेवाला था, और हाँग्-काँग् चीनी द्वीप होनेपर भी अंग्रेजोंकी छत्र-छायामें है, अिसलिये वहाँ जानेकी और अेक रात रहनेकी पृथक अनुज्ञा अनिवार्य थी। यह कोअी दुष्कर कार्य न था। लेकिन दुर्भाग्यसे २१ सितम्बरका दिन रविवारका दिन था, अुस दिन किसी भी तरह हाँग काँगका वह समर्थन प्राप्त नहीं ही किया जा सकता था। मेरी समस्या थी कि मेरा जहाज छूट रहा था। कंपनीके अधिकारियोंकी समस्या थी कि जहाजमें अेक सीट खाली जा रही थी। अुन्होंने यह पुस्तक देखी, और वह पुस्तक देखी, अिससे सलाह की, और अुससे सलाह की, अन्तमें बोले कि हम आपको आपकी अपनी जिम्मेवारीपर ले जा सकते है।

"क्यों क्या अिसमें कोअी खतरा है"?

"वे आपको पकडकर जेलमे भी डाल दे सकते हैं"।

मैं अेक सप्ताहसे अधिक कभी जेलमें नहीं रहा। अिसलिये अपने देशके अनगिनत जेल-यात्रियोंकी भांति जेल जीवनके बारेमे निश्चयात्मक रूपसे यह नहीं कह सकता कि मेरे मनमें अुसकी भीति है अथवा नहीं और यदि है तो किस मात्रामें? अिसलिये अुत्तर दिया—"जेल जानेलायक बात होनेसे जेल जानेका खतरा भी मोल लिया ही जा सकता है। किन्तु यदि आप मुझे अपने परसों जानेवाले जहाजसे भी भेज सकें तो मैं अुससे भी चला जाअूंगा।"

हांग् काँग्का अॅन्डोर्समेंट न होनेसे मैं अुस दिन जापानके लिये अुड़ता अुड़ता कलकत्तेसे ही चिपका रह गया।

२२ सितम्बरको सोमवार था और मैं मजेसे अॅन्डोर्समेन्ट ला सकता था। ऑफिसमें पहुँचा तो अधिकारी महाशय तमक कर बोले "बिना वहाँ की सरकारकी आज्ञासे हम आपको हाँग्काँगका अॅनडोर्समेन्ट कैसे दे सकते हैं?"

"मुझे वहाँ रहना नहीं है, मुझे वहाँसे केवल गुजरना है"।

"तो आपको केवल गुजरनेकी अनुज्ञा चाहिये?"

"और क्या?"

"तो पासपोर्ट रख जाअिये, शामको ले जाअियेगा।"

मुझे हाँग काँगका अिंडोर्समेन्ट मिल गया। २३ सितम्बरके बी. ओ. सी. कंपनीके जहाजमें कहीं कोअी जगह न थी। वे मुझे जापान नहीं ही ले जा सके। किन्तु मैं अुनका कृतज्ञ हूँ कि अुन्होंने पैन अमरिकन अेयरवेज कंपनीके जहाजमें मेरे जापान जानेकी व्यवस्था कर दी।

पैन अमरिकन अेयरवेजका जहाज दिनरात अुड़ता ही रहा। कूल ३ जगह बहुत थोड़ी थोड़ी देरके लिये रुका। २४ सितम्बरकी प्रातःकाल कलकत्तेसे अुड़कर २५ सितम्बरको प्रातःकाल ही हमारा जहाज तोकिओमें था।

कुल २४ घंटोंकी यात्राके लिये अितनी खटपट!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी काव्यमें गतिरोध

76028

: श्री प्रभुदयाल अग्निहोत्री :

साहित्य यदि समाजका प्रति विम्ब है, तो हमें कहना पड़ेगा कि हमारे समाजकी गति निश्चय ही रुद्ध हो रही है। यद्यपि यह सत्य है कि युगका जितना प्रतिविम्ब अुपन्यास अेवं कहानी साहित्यपर पड़ता है अुतना काव्यपर नहीं। कहानीपर युगका प्रकाश प्रत्यक्ष और सीधा पड़ता है किन्तु काव्यपर छनछन कर। नाटक हमारे यहां अभीतक भावाभिव्यक्तिके पूरे माध्यम नहीं बन पाये हैं, अिसलिये अुनमें समयुगीन विचार धाराका प्रभाव ढूँढ़ना भूल होगी फिर भी अिधर जिस द्रुतगतिसे अेकांकियों अेवं रेडियो रूपकोंका सृजन हो रहा है अुसे देखकर यह कहा जा सकता है कि निकट भविष्यमें नाटक भी हमारी आशाओं, आकांक्षाओं, तृप्तियों अेवं असफलताओंकी अभिव्यंजनाके माध्यम बन जायेंगे।

जहाँतक हिन्दी काव्य साहित्यका सम्बन्ध है शताब्दीके अिस पूर्वार्धमें अुसने अनेक मंजिलें पार की हैं। पं. श्रीधर पाठक और मन्नन द्विवेदीके समयसे लेकर जब कि खड़ी बोलीके हिन्दी काव्यका माध्यम बन सकनेकी क्षमतापर भी अनेक लोगोंको सन्देह था, आजतक अुसे न जाने कितनी परीक्षाओंसे गुजरना पड़ा है। समाज-सुधार, देशभक्ति, पौराणिक आख्यान, क्रान्ति-विप्लव, रूपविधान, सौन्दर्य प्रतिष्ठा, असीम अन्वेषण, वेदना, अवसाद, नवनिर्माण सभीके स्वर अुसमें बारी बारीसे प्रतिध्वनित हुअे। अिस आधारपर आदर्शवादी समीक्षकोंने अेक सिद्धान्त मान लिया कि कवि युगस्रष्टा है, राष्ट्रनिर्माता है और अुसका दायित्व समाजके निर्माण अर्थात् मानवीय प्रगतिमें सर्वोपरि है।

स्वतन्त्रता-प्राप्तिसे पूर्व यह बात बड़ी सरलतासे दुहरायी जाती रही। देशकी अन्य भाषाओंके बीच हिन्दीमें राष्ट्रीयताका स्वर प्रमुख होनेसे किसीको अिस ओर अुंगली अुठानेका अवकाश न मिला। हिन्दीके अनेक कवियोंकी यह विशेषता रही कि स्व० लोकमान्य तिलकके समयसे ही अेक ओर जहाँ वे कलम पकड़कर जनतामें क्रान्तिका शंखनाद करते वहाँ दूसरी ओर जनताकी अिकाअीके रूपमें स्वयं भी अुसके बीच खड़े दिखायी देते। छायावादके युगमें अवश्य अिसके अपवाद दिखायी दिये। छायावादका युग था भी अपवाद और किंकर्तव्य-विमूढ़ताका युग। बीचमें अेक दो आन्दोलन भी आये और अुस समय काव्यसरिता स्पष्ट ही दो धाराओंमें विभक्त दिखायी देती हैं। आज तो यह सोचकर आश्चर्य होता है कि कोअी कवि जो जनताका प्रतिनिधि कहलानेका दावा करता है अितने लम्बे समय तक युगयुगके गीत गानेके मोहमें युगकी आकांक्षाओंसे अपनी वाणीको अलिप्त कैसे रख सका।

यह स्पष्ट है कि काव्यमें गत बीस वर्षोंसे व्यक्तिवादी स्वर प्रमुख रहा है। वैदिक युगका ऋषि आत्मचिन्तक होते हुअे भी समष्टिवादी है। वेदोंकी स्तुतियोंमें सदा बहुवचनका प्रयोग है। अुपनिषदोंके चिन्तन-प्रमुख होनेसे अुनमें समष्टिका स्वर कुछ धीमा अवश्य पड़ा किन्तु आगे भारतीय साहित्यकी दृष्टि सदा समाजकी ओर ही रही। कहना तो यों चाहिये कि व्यक्तिने कलाकी साधनामें निजको यहाँ तक भुला दिया कि आज हमें अपने महानसे महान साधकोंकी कृतिसे कर्ताका अनुमान करना पड़ता है जैसे सृष्टिसे स्रष्टाका। किन्तु गत बीस-पचीस वर्षोंसे मनुष्यका जीवन अितना आत्मपरक हो गया है कि अुसे अपने सुख-दुख, सफलता-विफलता, आदिसे अूपर अुठकर झाँकनेका स्मरण ही न आया और अिस बीच जिस किसीने भूले भटके स्वयंको समष्टिसात् करनेका प्रयत्न भी किया अुसे कलाके क्षेत्रमें विजातीय कहकर अलग बैठा दिया गया।

गत कुछ वर्षोंसे, विशेषतः गत महायुद्धके समयसे, जब कि चीनमें राष्ट्रीय और साम्यवादी सेनाओंके अलग-अलग डिवीजनोंने जापानके विरुद्ध लड़ना शुरू किया भारतमें समष्टिका स्वर अूंचा अुठा। हिन्दीके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काव्यपर अिसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुअी । संसारके राजनीतिक चक्रने व्यक्तिको यों भी दबा दिया था । राष्ट्रके नामपर बलि होनेकी जो मायासे आवृत भावनायें अिधर अुधर व्यक्त की जा रही थीं अुनका स्वरूप अब प्रकाशमें आने लगा । कार्ला और गीताके नामपर प्राणोंका अुत्सर्ग अब सम्भव न था और 'मस्तकोंको दे रही थी संकेत कैसे वृक्ष डाली' के संकेत भी अब सहज मान्य नहीं हो सकते थे । बलिदान क्यों ? किसके लिये ? भारत-माताकी आजादीका अर्थ क्या ? थोड़ेसे नेताओंको अुच्च पदपर प्रतिष्ठित करनेके लिये तो प्राणोंकी आहुतियाँ नहीं दी जा सकतीं । किन्तु व्यक्ति पूजक देशको ये प्रश्न बड़े अटपटेसे लगे नास्तिक्यवाद जैसे । फिर भी प्रगतिवादके नामसे नवीन युगकी नवीन रचनायें हिन्दीमें फैलने लगीं । ठीक है, वे मँजी हुअी न थीं भाषाका निखार पानेके लिये अुन्हें समयकी प्रतीक्षा थी । अति यथार्थवादका रंग अुनपर गहरा था जो कहीं-कहीं जुगुप्सा और अश्लीलताकी सीमायें छू आता था । फिर भी अिस शैलीके कवियोंने काव्यको नया रूप दिया । अुसमें अभिजात वर्गका परिष्कार भले न हो, सर्वहाराकी स्पष्ट भाषिता अवश्य थी । समालोचकोंमेंसे कुछने अुनका स्वागत किया और कुछने विरोध; किन्तु हमारे देखते-देखते अुसने अुपन्यास, नाटक और समालोचना सबको प्रभावित कर डाला है । जीवन और साहित्य सभीको नया मूल्य देनेका प्रयत्न अिस श्रेणीके साधकोंने किया है ।

अिधर द्वितीय महायुद्धने जनसाधारणको आदर्शवादका लबादा अुतारकर भौतिकताकी पथरीली जमीन पर आखड़े होनेके लिये विवश कर दिया है । छायावादके मधुवनकी कलियाँ अिस पथरीली भूमिपर कैसे खिलतीं ! राष्ट्रीयताके नामपर पलनेवाली अुत्तान वृत्तियोंको स्वातन्त्र्य प्राप्तिकेबाद अवकाश न रह गया । कवियोंकी अेक बहुत संख्याके, जो सस्ती भावुकताके सहारे खड़ी थी, नीचेसे जमीन सरकने लगी । स्पष्ट ही प्रलय और हृदकम्पके गीत गानेवाले कवियोंको निर्माणका पथ ग्रहण करना पड़ा ।

अिधर हमें कविताका स्रोत तीन मुख्य धाराओंमें विभक्त होता दिखायी पड़ रहा है । छायावादका स्थान सस्ते रूमानी गीतोंने ले लिया है जिनमें अधकचरे दार्शनिक सिद्धान्तोंकी स्थापनाके साथ अतृप्त मौन वासनाओंका चित्रण रहता है, और रहता है बातको कुछ नये ढंगसे कहनेका आग्रह भी । ये कवि छायावादी कवियोंके समान अपने गीतोंको मानवकी शाश्वत भावनाओंके अभिव्यंजक मानकर स्थायी साहित्य-स्रष्टाके रूपमें स्वयंपर अभिमान भी कर लेते हैं :—

मैं आया नहीं हूँ बुलाया गया हूँ
तुम्हारी शपथ मैं तुम्हारा नहीं हूँ,
भटकती लहर हूँ किनारा नहीं हूँ
किसी देवताकी मधुर आरती पर
चढ़ाया गया हूँ, अुतारा नहीं हूँ ।

आज अचानक नींद न मुझको आयी सारी रात
और पास ही बजी कहीं शहनाअी सारी रात ।
जिन्दगी न तृप्ति है न प्यास है
क्योंकि पिया दूर है न पास है ।

ये कुछ अुन गीतोंके नमूने हैं जो तालियोंकी गड़गड़ाहटके बीच कवि-सम्मेलनों और रेडियो स्टेशनोंसे सुनाये जाते हैं । रहस्यवादके नामपर दो दशकोंतक दबायी हुअी वासनाओंका यह स्फोट स्वाभाविक ही है ।

राष्ट्रीय विचार धारा जिन दो भागोंमें विभक्त हुअी अुसमें प्रथमकी चर्चा अूपर की जा चुकी है । जिसके पास निश्चित अुद्देश्य है और अेक परिपक्व शास्त्र । रूपकी अपेक्षा अिसे भावपर अधिक मोह है । साहित्यमें यह विचार-धारा मार्क्सवादकी पोषिका है । आश्चर्यकी बात है कि मार्क्सवादके प्रतिरोधके रूपमें देशमें जो गाँधीवादी विचार धारा चल रही है और जिसने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपमें भारतीय जन-जीवनको अितना अधिक प्रभावित किया है, हिन्दी काव्यपर अुसका प्रभाव नगण्य-सा है । गाँधीजीके व्यक्तित्वपर श्रद्धांजलियोंको अलगकर दें और अुनकी मान्यताओंको ही लें तो मार्क्सवादकी तुलनामें गाँधीवादका प्रभाव हिन्दी काव्य पर बहुत थोड़ा पड़ा है । अिसका कारण गांधीवादको फ्रायड जैसे किसी मनोविश्लेषकका न मिलना भी हो सकता है । परिणामतः मैथिलीशरण, दिनकर और नवीन जैसे बलिष्ठ साधकोंके रहते हुअे भी काव्यके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माध्यमसे गाँधीवाद जन साधारणके जीवनमें अुतर नहीं पा रहा है, और हिन्दीका शोषित काव्यकार (अपवादोंको छोड़कर) कुछ छोटे-मोटे संशोधनोंके साथ जिनपर विवादके लिये काव्यमें अवकाश नहीं होता. स्वयं ही मार्क्सवादमें अपनी अतृप्त अिच्छाओंको सन्तुष्टि देता चल रहा है। अैसी स्थितिमें समाजवादी, अुग्र काँग्रेसी और साम्यवादी सभीके स्वर प्रायः काव्यमें अेकरस हो जाते हैं। वर्ग संघर्षको लेकर जो कुछ लिखा जा रहा है अुसमें यथार्थवादी ढंगसे समस्याके प्रस्थापनमें तो भेद होना सम्भव नहीं है और समाधान प्रस्तुत करनेकी ओर हिन्दी कवियोंने कभी ध्यान नहीं दिया। बहुत हुआ तो वे अेक आदर्श स्थितिकी मनोरथ कल्पना देकर रह गये। बीचकी प्रक्रिया जो सबसे अधिक महत्व पूर्ण है अुनकी लेखनीसे कभी न अुतरी।

चाहे प्रेमगीत हों या साम्यवादी ढंगकी रचनाअें हों, सभीकी दृष्टि अिधर प्रयोगोंकी ओर गयी है। ये प्रयोग छन्दोंतक ही सीमित नहीं है, भाषा और अभिव्यंजना-शैली सभीमें नित नये प्रयोग किये जा रहे हैं। प्रेमगीतोंकी दृष्टि गेयता और नये ढंगकी व्यजंनाकी ओर अधिक है तो राष्ट्रीयताके वर्षेत्रान्तर्गत आनेवाली रचनाओंकी दृष्टि शोषितवर्गकी भाषा और अुसके अनगढ़पनकी ओर जिससे वे जन-जीवनका अंग बन सकें और युगवाणी या ग्राम्याकी तरह पच्चीकारीकी वस्तु बनकर न रह जायँ। कुछ राष्ट्रीय प्रगतिवादी भी हैं जो प्रगतिशील होकर भी मार्क्सवादके अनुयायी नहीं। अज्ञेयके अिस समाजमें अनेक प्रतिभावान कलाकार हैं फिर भी अिनमेंसे अधिकांशकी रचनायें प्रयोग-बोझिल हो अुठी हैं। अँगरेजियतकी छाया भी अुनपर गहरी है जिससे ये रचनायें भारतीय पाठकसे दूर जा पड़ती हैं। योरोपका जनजीवन अधिक बौद्धिक है और अब वहाँ कलामें भावुकताको पसन्द नहीं किया जाता। अिसलिये वहाँका काव्यचिन्तन प्रधान अधिक हो गया है। यों भी भावुकताकी यात्रा अँगरेजी काव्यमें भारतकी तुलनामें सदा कम रही है। भारतमें रससिद्धान्तको बूढ़ा भले कह दिया जाय पर यहाँका पाठक भावुकता या रस-परिपाक हीन विधानको चाहे वह काव्य हो या नाटक, पसन्द नहीं करता। फिर भी प्रयोगके नामपर काफी नीरस रचनाअें चल रही हैं। देखिये—

ले लो, ले लो, वह
बेच रहा वेदना-निग्रह-रस,
जो 'सेरे वलम' की संग्रहणीको
करता छू मन्तर !
—आह ! वेदना मिली बिदाओ,
जब तुम चले—'अदम हौवा' बन
'अिदन' कुंजसे—
शल्य चिकित्साका युग है यह
क्यों न अपनी 'लेकाअिमल' ग्रंथि
निकलवा लो ?

ये दो लवणीय 'अेच-टु-ओ' के 'कम्पेन्दियस' और 'पोर्तवूल' अुदधि 'भीसूखे' रहा करेंगे !—

अेक और—

आओ नहायें
छतसे फुहार झरें
खड़े रहें आँख मींच
कभी कभी चुपकेसे देख, धुल रही धूल
थकी पिंडलियोंकी—
थके थके अेक दूसरेको अुघरे देखें
और न शरमायें

अुक्त दोनों अुद्धरण हिन्दीकी अेक अति प्रतिष्ठित पत्रिकासे लिये गये है जिनके रचयिता भी अुतने ही समादृत प्रखर प्रयोगवादी हैं। अेक प्रखर प्रयोगवादी कविताका अेक अंश देखिये:—

भरदूद, तू भी आदमी था
कौन कहता है ?
हः हः हः हः
खूनके कुल्ले किये
औ, चल बसा
जैसे कि भैंसा
रखी है लाश पटरीपर
सड़कपर है खड़ा रिक्शा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तमाशाओ अिकट्ठे हैं
पुलिस खुसखुस कर रही है
" कैसा परेशाँ कर रहा
अुल्लूका पट्ठा
मर गया हालाँ कि
पर दम चाटता है । "

अिस श्रेणीके कवियोंकी रचनाओंके विषय अंतर्राष्ट्रीय समझौता, कोरियाअी युद्ध, शान्ति-सम्मेलन, नजरबन्दी कानून जैसे सामयिक विषय होते हैं और सत्तारूढ़ पार्टियोंका व्यक्तियोंको गाली देना, जोकि कभी-कभी मछुआ बाजारके धरातल तक अुतर आता है, अुद्देश्य रहता है । कहनेकी आवश्यकता नहीं कि अिन रचनाओंसे कविके जीका बुखार कुछ भले हलका हो जाय, पाठकपर कोअी स्थायी प्रभाव नहीं होता ।

अिस तरह हम देखते हैं कि स्वतन्त्रता-प्राप्तिके बाद काव्य अेक अैसे चौराहेपर जा खड़ा हो गया है जहाँसे आगे अुसे निश्चित मार्ग नहीं सूझ रहा है । वह भारतकी जनताके समान अेक अजीब अुलझनमें पड़ गया है और जब स्वयं कोअी निश्चय नहीं कर पा रहा तो भारतीय सरकारके समान प्रयोगोंपर टूट पड़ा है और यदाकदा प्रयोगोंकी धुनमें वह यह भी भूल जाता है कि अुसके प्रयोगोंका लक्ष्य क्या है । जहाँतक नेतृत्वका प्रश्न है हिन्दी काव्य अुससे कोसों दूर है । हमारे देशमें संस्कृत वर्ग और जनसाधारणके बीच अेक बड़ी खायी है । काव्यपर भी अिसकी प्रतिक्रिया होना स्वाभाविक है । जनताके नामपर लिखा जानेवाला काव्य अितना फूहड़ और लद्धड़ है कि संस्कृत वर्ग अुसकी ओर देखना नहीं चाहता और कलाके नामपर की जानेवाली रचनायें जनसाधारणसे दूर जा पड़ती है । बचे रूमानी गीत जो कालेजोंके युवक-युवतियों और नयी अुमरके प्रोफेसरोंकी वाहवाहीपर टिके हुअे हैं हमारी अस्वस्थ वासनाओंके स्फोटमात्र ही कहे जा सकते हैं ।

वास्तवमें हिंदी काव्यमें गतिरोध अुत्पन्न हो गया है । अितना ही नहीं जैसे जैसे हमारा जीवन जटिल होता जा रहा है काव्यकी धारा अुथली और क्षीण होती जा रही है । अिस बातका तो भय नहीं है कि वह धीरे धीरे सिकता स्थलीमें खो जायगी फिर भी अुसका वेग और प्रभाव पूर्ववत् नहीं रह जायगा यह निश्चित है । यह बात हिन्दी काव्यके लिये नहीं, काव्य मात्रके लिये है । हिंदीमें काव्यका युग समाप्त हो रहा है; अन्य अनेक भाषाओंमें वह समाप्त हो चुका है । भावुकता और संवेदन शीलता जो काव्यका अनिवार्य अंग है अब जीवनका भूषण नहीं मानी जाती । काव्यको अनेक समालोचक अब अभिव्यक्तिका अस्वाभाविक ढंग मानने लगे हैं । अैसी स्थितिमें अब वह साहित्यका सर्वप्रधान अंग बना नहीं रह सकता । हिन्दीमें वह बहुत कुछ बौद्धिक हो चला है । गद्य धीरे धीरे अुसे अपने बाहुपाशमें समेटे ले रहा है । अतः काव्यका प्रश्न अकेली हिंदीका नहीं विश्वसाहित्यका प्रश्न है जो अतिप्रयोगवाद द्वारा नहीं सुलझाया जा सकता । अति प्रयोगवाद तो केवल अिस बातका द्योतक है कि अुसके भीतरका रस अब सूख चला है ।

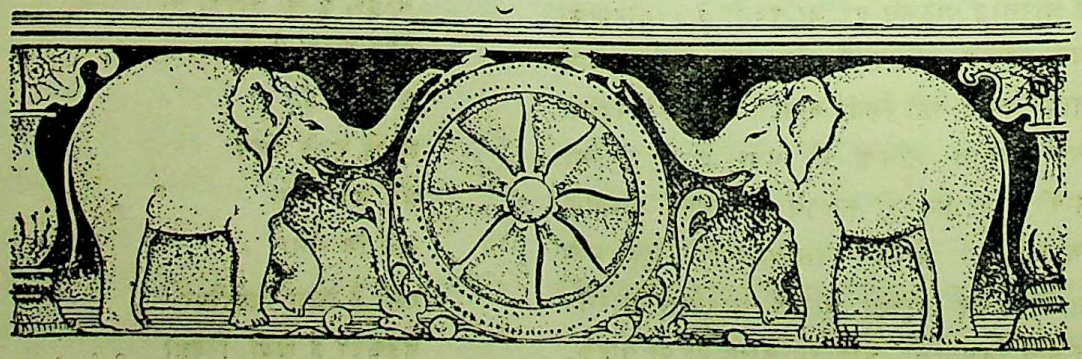

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खोअी हुअी आँखें

: श्री कि. रा. :

बहुत ही सुरीला कंठ ! अुसपर लहरोंके झूमनेकी-सी चिलचिलाहट! आत्माको अपनी ओर खींचकर, फिर पिघलाकर अपने हीमें अेकमेव अद्वितीय कर लेने की शक्ति रखनेवाली वह आवाज़की मिठास !

"अब मैं नाच्यो बहुत गुपाल
काम क्रोधको पहिरि चोलना कंठ विषयकी माल।"

आँखें बन्द थीं। अनुभूति भरे वे शब्द हृदयके अन्तरालसे मिठासको बिखेरते-से मालूम हुअे। झर झर झरनेवाले हृदय रूपी झरनेसे अमृत प्रवाह अपने आप आनन्दकी अद्भुत लहरियाँ चतुर्दिक्को अुँडेलता हुआ बहता-सा मालूम हो रहा था— श्रोताओंके मनको मुग्ध करके आनन्द सागरमें ले जाकर निमग्न करता-सा।

अुस अुजड़े क़िलेके मंडपमें अेक गायक बैठे हुअे अपना-आपा भूलकर गानेमें तल्लीन थे। अस्त होते हुअे सूर्यकी लाल-लाल किरणोंमेंसे अेक किरण अुनके सुन्दर चेहरेपर पड़ी और अुनके चेहरेकी कांतिकी श्रीवृद्धि करनेमें हाथ बटाने लगी।

तभी मंडपके द्वारपर अेक मोटरगाड़ी आकर रुकी। अुसमेंसे अेक गृहस्थ अुतरे। अुनके साथ अेक दूसरे भी सज्जन थे। दोनों सीधे गायकके पास पहुँचे।

प्रथम आये महाशय गायकके निकट आकर खड़े होकर बोले, "स्वामिन्! स्वामिन्!"

गीतका क्रम टूट गया। गायकने चौंककर पूछा, 'कौन हैं? क्या आप मुझीको बुला रहे हैं?"

"हाँ, आपहीकी तलाशमें यहाँ आया हूँ!" आगन्तुक व्यक्तिने अुत्तर दिया।

"क्या कहा? मेरी तलाशमें! अिस ग़रीबकी तलाशकी अैसी कौन-सी ज़रूरत पड़ गयी?"

अुनकी आँखें बन्द ही थीं। वे और भी आश्चर्य चकित होकर कांपते हुअे स्वरमें बोले, "मैं तो अांखोंका अंधा हूँ। आप अेक सभ्य घरानेके मालूम होते हैं। अिस ग़रीबकी तलाशमें आपको यहाँतक कष्ट करनेकी अैसी कौन-सी आवश्यकता आ पड़ी?"

"स्वामिन्! आपसे अेककाम पूरा कराना है। आप अुसमें हमारी मदद करेंगे तो आपका भी फायदा होगा!"

"कहिये, क्या काम है?"

"हम चल-चित्रके निर्माता हैं। याने हमारा काम है कि नाटक खेलवायें तथा अुसका फिल्म बनवाकर चित्रपटमें दिखलायें। मेरा नाम है सुन्दरमूर्ति और मेरे साथ जो आये हैं, वे मेरे घनिष्ठ मित्रोंमेंसे हैं। हम दोनों अपने अेक नये चल-चित्रके लिये अेक योग्य व्यक्तिकी तलाशमें निकले हैं। हम कअी जगह घूम आये, असफल रहे। पर आज ही सवेरे पासके अेक गांवमें आपकी तारीफ सुनी और सीधे आप हीके पास चले आ रहे हैं। आपका साक्षात्कार होनेपर .."

वाक्य पूरा भी न हो पाया था कि अुनका मुख संकोचसे सिकुड़ गया। कुछ क्षणोंके मौनके बाद अुन्होंने कहा, महाशय, मैं तो आँखोंका अंधा हूं। नाटकमें मैं किस प्रकार भाग ले सकूँगा?" अितना कह वे अेक सूखी हँसी हँसे।

"महाराज, हम जानते हैं कि आप क्या कर सकते हैं और क्या नहीं कर सकते हैं? अभी अभी हमने आपका अमृतमय अद्भुत गान सुना था। आगे जो कुछ होना है, अुसे हम देख लेंगे। आप हमारे साथ चलिये तो; यही गनीमत है। अलावा अिसके, आपकी आमदनी बढ़ानेकी .."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"महाशय, मुझे आमदनी बढ़ानेकी अैसी कोओं चाहना नहीं है। दो फल तथा अेक गिलास दूध—यही मेरी नित्यकी खूराक है। अगर वह मिले तो खाअूंगा। नहीं तो पास हीमें झरना है; अुसमेंसे दो चार चुल्लू पानी पीकर पड़ा रहूंगा। मेरा सारा जीवन अिसी तरह कट गया और जितने दिन बाकी हैं, सो थोड़े रह गये हैं; कट जायेंगे। अिसलिये गा-गाकर अिसी तरह अपना समय काट दूँगा!"

"स्वामिन्, हमारा मतलब आप नहीं समझे। जब आपके पास अैसी अपूर्व शक्ति है कि हज़ारों रुपया आप कमा सकते हैं तो....."

अन्धेका मुँह लाल हो गया। नसें अुभर आयीं। बोले, "क्या कहा? जो शक्ति अीश्वरने कृपा पूर्वक प्रदान की है, अुसका दुरुपयोग करूँ और पैसेपर बेचूँ- यही सलाह आप दे रहे हैं न?"

अितना कहकर अुन्होंने थोड़ी देरके लिये चुप्पी साधी। फिर कुछ मृदु स्वरमें बोले, "भाअी, भगवानने जो शक्ति मुझे प्रदान की है, अुसको अुन्हींके गुण गान तथा भजनमें लगाना चाहता हूँ। अेक ज़माना वह था, जब मैंने अपूर्व शक्तिको अपने जीवन-यापनका सुगम मार्ग समझकर अुसमें लगा दिया था। अिस गुनाहके लिये अीश्वरने वह चीज़ मुझसे छीन ली जो मेरे जीवनका आधार थी। मुझे अपनी करनीका फल मिल गया। अिसलिये मैं आगे भी वह गुनाह करनेके लिये तैयार नहीं हूँ, जिसे अेक बार करके मैंने फल भोग लिया है।"

अुन्होंने धीरे-धीरे अपनी बातें बन्द कर दीं और अपनी पुरानी विचार-धारामें स्वयं खो-से गये। अुनके दृष्टिहीन नेत्रोंमें आँसू छलछला आये।

अितनी देर तक सुन्दरमूर्तिके मित्र पीछे खड़े थे। वे अन्धेके पास जा बैठे और धीरेसे बोलना शुरू किया:—

"महाराज! मालूम होता है कि किसी बड़े दुखसे आपके मनको ठेस पहुँच रही है। अगर आप अपने दिलकी कुछ कह सकें तो हम अपनी शक्ति भर आपका वह दुख दूर करनेकी कोशिश करेंगे।"

"महाशय, अुस दुखको परमात्मा ही चाहे तो दूर कर सकता है! दूसरा कोअी अुसे दूर नहीं कर सकता। फिर भी आप लोग मुझपर तरस खाकर पूछ रहे हैं तो मैं कुछ कहनेका ढाढस करता हूँ। पर आप लोगोंको तो जाना है। अगर मेरे कारण आप लोगोंको कहीं देरी हो जाय ....."

सुन्दरमूर्तिके दोस्तने बीचहीमें टोककर कहा, "नहीं, नहीं! हमें कोअी जल्दी नहीं है। आप कहिये। हम सुननेको तैयार हैं।"

अितना सुननेपर गायकने कहना शुरू किया:—

"महाशय, छुटपनसे ही मुझमें गानेकी यह शक्ति विराजमान थी। यह कहना अत्युक्ति नहीं होगा कि यह हमारी वंशपरम्पराकी विरासत थी। लेकिन हमारे कुटुम्बमें किसीने जीवन-यापनके लिये अिसे बंधक नहीं रखा था। पहलेपहल मैंने ही अैसा किया, जिसका परिणाम अभीतक भुगत रहा हूँ।

"दिन-पर-दिन मैं संगीतमें अुन्नति करता जा रहा था। सारा दिन साधनामें रत रहता था। कहीं कोअी बड़े संगीत-पंडित नये गीत और रागके आलाप गाते तो घर आकर अुनके अनुकरणमें, अभ्यासमें, लग जाता। अिसीलिये जब मैं बड़ा हुआ तो जीवन-यापनके लिये अिसको छोड़ मेरे लिये गुजरबसरका दूसरा रास्ता ही न रहा। मैं कोअी दूसरा पेशा नहीं जानता था। आखिर क्या करता?

"मैंने आखिर अेक संगीत-शालाकी स्थापना की। अुससे जो कुछ मिलता था, वह मेरे और मेरी पत्नीके लिये काफ़ी था।

"तब मेरी अुम्र तीस सालकी थी। अेक लड़की हुअी। मेरे मनमें अेक अभिलाषा थी। यह कि मौरूसी जायदादके रूपमें यह गान-कला जो मेरे वंशको मिलती आ रही है, वह मंद न पड़ जाय या नष्ट न हो जाये। बाघके पेटमें जन्म लेकर कहीं कोअी बिल्ली हुआ है? दस वर्ष पूरा होते न होते मेरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लड़की संगीत कलामें मेरे समान बढ़ गयी। बल्कि यह कहना चाहिये कि मुझसे भी अेक क़दम आगे बढ़ गयी। अहा! कैसा मधुर कंठ पाया था अुसने! ओह! कैसी मिठास! कितना मर्मस्पर्शी कंठ-कंपन!— जब आप लोग मेरी ही अितनी तारीफ़ करते हैं तो अेक बार भी अगर अुसका गाना सुना होता तो न-जाने कितनी प्रशंसा करते — अब मेरा वह भाग्य कहाँ कि मैं अुसका गाना सुन सकूँ? सीता!"

वृद्धने यहाँ कथा बन्द कर दी और आप भूल-कर कहीं शून्यकी ओर अपनी अंधी आँखें गड़ाये बैठे रहे। अुनकी मनोवेदना आँसू बनकर गालोंके रास्ते बह रही थी।

सामने बैठे दोनों व्यक्ति अंधेके दुखमें अपनेको भूल गये और अचल होकर पत्थरसे बैठे रहे।

थोड़ी देर बाद वृद्धने स्वयं कहना शुरू किया:

"तभी मेरे दुर्भाग्यके दिन शुरू हुअे। मेरी पत्नीको चेचक हुअी। जब चेचकके लक्षण दिखाअी दिये तो तुरन्त मैंने अपनी लाडली मधु-सी मधुर कोकिलाको पड़ोसके घरमें भेज दिया। मेरी पत्नी पन्द्रह दिनतक बिस्तरपर पड़ी रही और सोलहवें दिन मुझे बिलखता छोड़ अिस दुनियासे चल बसी।

"लेकिन मेरी बदकिस्मती वहीं नहीं रुकी। संक्रामक चेचकने आकर मुझे भी आ धर दबोचा। चेचककी बीमारी दिनपर दिन बढ़ती ही गयी; घटनेके कोअी आसार नजर नहीं आते थे! अुन दिनों मेरे दिलपर क्या बीत रही थी — यह कहना सहल नहीं है। मेरे मनमें मेरी लाड़ली बेटी सीताको देखनेकी लालसा जोर पकड़ रही थी। लेकिन मनमें डर समा गया था। मुझे दिनपर दिन बढ़ते चेचकको देखकर यह विश्वास हो चला था कि मृत्यु मेरे सिरपर मँडरा रही है। फिर भी अपने पास सीताको बुला लेनेको मन नहीं हुआ। मगर मेरे ओठ आठों पहर 'सीता, सीता, सीता' की रट लगा रहे थे।

"हाय! अुस वक्त मेरे मनपर जो बीत रहा था, नरक-वेदनाके जो डरावने दृश्य मेरी आँखोंके सामने आ रहे थे, आप लोगोंके सामने अुनका कैसे वर्णन करूँ?

"अिस तरह बिलखते-बिलखते मैं होश-हवास खो बैठा। आखिर जब होशमें आया तो जाना कि खैराती अस्पतालमें पड़ा हुआ हूँ। मालूम हुआ कि मुझे वहाँ आये दो महीनोंसे भी अधिक हो गये हैं।

'मुझे पहले कौन याद आया—मालूम है?— लेकिन सीता सामने नहीं आयी। अुसीके साथ मेरी आँखोंकी भी शक्ति चली गयी थी। 'मेरी सीता कहाँ है?'-मेरे अिस सवालका जवाब देनेवाला वहाँ कोअी नहीं था! सब लोगोंने यही समझा कि मेरा दिमाग़ अभी ठिकाने नहीं हुआ है। जब डाक्टर आये तो मैं अुनसे गिड़गिड़ाया और बिनती की कि डॉक्टर साहब, मेरी सीताको खोज निकालनेका कष्ट करें। परन्तु अुन्होंने कह दिया कि तुम पन्द्रह दिनोंमें ही बाहर भेज दिये जाओगे। जानेपर अुसको खोज लेना।

"पन्द्रहवें दिन मैं अस्पतालसे बाहर कर दिया गया। नेत्रहीन तथा गति-हीन बनकर बाहर आया। किसी तरह जान हथेलीपर लेकर घर पहुँचा। पर घर ख़ाली था।

"सीता कहाँ? सीता कहाँ?— बड़े ही कडे परिश्रमके बाद अिस बातका पता लगा कि पड़ोसके घरवाले कहीं किसी दूसरी जगह चले गये हैं। लेकिन यह कहनेवाला कोअी नहीं मिला कि वे लोग किस शहरको गये हैं? सीता कहाँ चली गयी है?-मैं अिसी अेक चिन्तामें पागल-सा हो गया। आँखोंका अन्धा, कहाँ जाकर खोजें?

"अुस दिनसे आज तक मैं अपने अुस जीवन-धन बिटियाको खोज ही रहा हूँ। दस साल गुज़र गये। अपनी लाडलीकी खोजमें मैं गाँव-गाँव भटकता फिरता हूँ। अुसके लिये मैंने अब तक जितनी तकलीफ़ें अुठायी हैं, अुनकी कोअी गिनती नहीं। फिर भी अिसी आशाने मुझे अब तक जीवित रखा है कि किसी न किसी दिन आँखोंकी पुतलीसे भी प्यारी अपनी बेटीसे भेंट हो जायगी। महाशय, मैंने अपनी विद्वत्ताको जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यापनकी वृत्तिके रूपमें अंगेज लिया। अिसीलिये प्राण-प्यारी बेटीसे हाथ धोना पड़ा। आज आप लोग सलाह देते हैं कि मैं दुबारा अुसको अपनी जीविका-वृत्तिके रूपमें ग्रहण करूँ ? यह कहाँ तक अुचित है ? आप ही लोग बताअिये।"

धीरे-धीरे अुनका स्वर धीमा हुआ। वयोवृद्ध समाधिस्थ-से बैठे रहे। अुनकी आँखोंसे आँसू बरसाती नालेकी तरह बह रहे थे और गालोंको गीले कर रहे थे। न जाने अुनके दृष्टि-हीन नेत्रोंने कैसे-कैसे स्वप्न देखे ?

थोड़ी देरतक वहाँ सन्नाटा छाया हुआ था। अितनी देरतक दोनों निश्चल होकर वृद्धकी करुण कहानी सुन रहे थे। अुनकी गीली पलकोंवाली आँखोंने प्रगट कर दिया कि बूढ़ेकी अुस कहानीने अुनके दिलपर गहरा असर डाला है। दोनों अपनी डबडबायी आँखोंसे अेक दूसरेको देखने लगे।

सुन्दरमूर्तिके मित्रने कहना शुरू किया। अुनके स्वरमें सहानुभूति थी। दया थी; कंपन था; साथ ही वृद्धके प्रति आदरका भी भाव था :—

"स्वामिन्, आपकी हालतसे हम वाक़िफ़ हो गये हैं। हमने पहले जो कुछ कहा है, अुसके कारण अगर आपके मनको दुख पहुँचा हो तो हम क्षमा चाहते हैं। आपको परतन्त्र बनाने, या आपकी अुस अपार विद्वत्ताको खरीद लेनेका विचार हमारे मनमें लेशमात्र भी नहीं है। हम चाहते हैं कि आप अपनी अुस अद्भुत शक्तिको नष्ट न होने दें और सब लोगोंको समान-रूपसे अुसका आनन्द लूटनेका मौका दें। अिसलिये……"

"बस, बस। बन्द कीजिये अपनी बात !"

"महाराज, क्षमा कीजियेगा। मैं तो यह कह रहा था कि हम आपकी सेवा करेंगे तथा आपकी प्यारी बेटीको खोज निकालनेका ……"

"क्या कहा ? मेरी प्यारी बेटीको खोज निकालनेका प्रयत्न करेंगे ?"

वृद्धके स्वरमें आतुरता थी, अुत्सुकता थी ! अुसको देखकर दोनों चौंक पड़े।

फिर वे शांत होकर बोले: —

"महाशय, क्या आप मेरी बिटियाकी तलाश कर सकते हैं ? आप दिल्लगी तो नहीं करते ? या..."

"स्वामिन्, अैसा न कहें। हम जरूर आपकी पुत्रीको खोजकर यहां लानेका प्रयत्न करेंगे।"— दोनोंने अेक स्वर होकर कहा।

वृद्ध कुछ सोचमें पड़े। फिर अुन्होंने प्रश्न किया, "कितने दिनोंमें आप लोग खोज निकालेंगे ?"

"कल ही हम आदमी रवाना कर देंगे। आप पूरी हुलिया हमको देनेकी कृपा करें। दो महीनेके अन्दर-अन्दर अगर वह जिन्दा हो तो आपके पास पहुँचा देंगे।"

"अच्छा, अुसके वास्ते मैं आप लोगोंकी क्या सेवा करूँ ?"

"कुछ नहीं। हम अेक फिल्म बनानेकी सोच रहे हैं। अुसमें आपके लिये हम अेक 'पार्ट' देंगे। आप किसीकी चिन्ता न करें। हम सबकुछ देख लेंगे। आपको काम थोड़ा ही करना है। आप दो गीत गा देंगे, वही काफी है।"

"कब जाना होगा ?"

"अभी ! आपकी सारी सुविधाकी देखरेख हम कर लेंगे। आअिये, गाड़ी तैयार खड़ी है।"

२

'चित्रकला मूव्हीटोन' की 'शकुन्तला' चित्रका काम बड़ी तैयारीके साथ हो रहा था। स्टूडियोमें और बाहर भी अिस बातने बड़ी सनसनी पैदा कर रखी थी कि मूव्हीटोनके मालिक श्री सुन्दरमूर्ति कण्व महर्षिका पार्ट करनेके लिये बड़ी दौड़धूप और छान-बीन करके अेक बड़े ही योग्य आदमीको ले आये हैं। रोज शामको अुनके मधु-मधुर गीतोंको सुनकर लोग तारीफ करते थकते न थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेक ही सप्ताहके अन्दर वे वयोवृद्ध रामदास [वे चाहते थे कि लोग अुसी नामसे अुन्हें पुकारा करें] 'रिहर्सल' के लिये तैयार हो गये।

अुस दिन पहला 'रिहर्सल' था। चल-चित्रकी प्रथाके अनुसार अुस दिन मुख्य भागका ही 'रिहर्सल' होनेवाला था। अलावा अिसके रामदासके लिये वही पहला चित्र था। अिसीलिये अैसी व्यवस्था की गयी थी कि 'रिहर्सल' भी हो और अुनके अभिनयकी परीक्षा भी हो जाये।

'रिहर्सल' का विषय था शकुंतलाको अुसका पति भूल गया है और अपने राजमहलमें अुसे बुलानेका नामतक नहीं लेता। तब कण्व महर्षि अपने दो शिष्योंके साथ अुसे हस्तिनापुर भेजते हैं।

शकुंतलाकी भूमिकामें सुशीला देवी नामक अेक प्रख्यात अभिनेत्री थीं। वे भी गानेमें बड़ी प्रवीण थीं। दूर दूरतक अुनकी ख्याति थी अिसलिये जब अुक्त घटनाके 'रिहर्सल' की बात फैली तो सारा स्टूडियो स्फूर्ति और अुत्सुकतासे भर गया था। जिधर तिधर अिसी बातकी चर्चा थी।

अिसमें ख़ासकर अत्यन्त अुत्सुक दिखायी देनेवाले थे श्री सुन्दरमूर्ति। क्योंकि सुशीला देवी अुन्हींकी पत्नी थीं। अपनी पत्नीके गानेपर वे फूले न समाते थे। अुसके मधुसे भी मधुरतम गीतोंको सुनकर वे अेक तरहका गर्व अनुभव करते थे। सुशीला देवीके गाने जिसने सुने हों, वह यह मानेगा ही कि अुनका वह गर्व बेजा नहीं था। लेकिन अिसमें शक था कि अुसकी संगीत-पटुता रामदासके दैवी संगीतके सामने टिक सकती या नहीं? जो भी हो, वह गौरव भी अुन्हींको मिलनेवाला था न? क्योंकि रामदासको खोजकर चित्र-पटके संसारमें लानेवाले भी वे ही तो थे!

'रिहर्सल' शुरू होनेके थोड़ी देर पहले श्री सुन्दरमूर्ति अपनी पत्नीके कमरेमें गये।

सुशीला आदमक़द दर्पणके सामने खड़ी होकर बालोंपर कंघी कर रही थी।

"क्यों सुशी! आजके 'रिहर्सल' में तुम कैसा अभिनय करोगी?"— सुन्दरमूर्तिने मुस्कुराते हुअे पूछा और पासकी आराम-कुरसीपर बैठ गये।

सुशीलाने बड़ी लोच-लचकके साथ अेक बार अुनकी ओर घूमकर देखा और अुन्हें अपनी तिरछी नज़रका शिकार करते हुअे कहा, "मैंने सुना है कि आज गानेमें मुझे मात करनेवाले अेक अन्धे आदमीको लाये हैं?"

"सुशी! सचमुच अुन्होंने लाजवाब सुरीला गला पाया है। अहा! अितना मीठा, अितना मीठा—कि कुछ न पूछो। लेकिन....."

"लेकिन क्या?"

"यह कहना बड़ा मुश्किल है कि तुम दोनोंमें जीत किसकी होगी? आज यह मालूम हो जायगा।"

"क्या अितना बढ़िया अुनका गला है?"

"तुम्हीं देख लेना न?"

सुशीलाका मुख-भाव धीरे-धीरे बदल गया। बाल गूँथते हुअे अुसने बाहरकी तरफ़ देखा। अुसके मुख-मंडलमें कुछ बादलके टुकड़े तैरते-से नज़र आये। अगले क्षण आँखोंसे पानीकी अेक-दो बून्दें भी ढुलक पड़ीं।

आँखोंमें पानी देखकर सुन्दरमूर्ति चौंक अुठे और बोले, "क्यों सुशी! क्या बात है? आँखोंमें ये आँसू क्यों? किस सोचमें पड़ गयी हो? अिस तरह मैंने तुमको अकसर देखा है। अब तक तुमसे पूछनेकी हिम्मत नहीं हुअी। तुम्हारे दिलको कौन-सा बोझ दबा रहा है? क्या मुझसे नहीं कहोगी?"

अुनके अिन सहानुभूति भरे भावभीने शब्दोंको सुनना था कि सुशीलाकी आँखोंसे आँसूकी अविरल धारा बह चली। मानों ठंडी हवाका झोंका खाकर बादलोंसे पानी 'टप-टप' बरसने लगा हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"कुछ नहीं। मुझसे कुछ न पूछिये।" टूटे-फूटे शब्दोंमें अितना कहकर वह कमरेसे बाहर हो गयी।

❀ ❀ ❀

'रिहर्सल' हो रहा था।

शकुन्तला पितासे बिदा ले रही है। मुनिवर कण्व नियमानुसार अुपदेश दे रहे हैं। शकुन्तला मुड़ती है। पिताकी आंखोंमें आंसू छलछला आते हैं। "हाय, बेटी, मैं अब फिर तुमसे कब मिल सकूंगा?"—अितना कहनेपर महाकवि कालिदासके अेक श्लोकको रामदास 'रागमालिका'में* गाते हैं। अुनके गानेमें जो गंभीरता और अति चमत्कारी भावना झलकती है, अुसको सुनकर सब लोग स्तंभित रह जाते हैं। गीतका स्वर चढ़ता जाता है। गायक 'मुखारी' राग गा रहे हैं। प्रस्तर-प्रतिमाओं से भरे अेक मंडपके समान वह स्थान दिखायी देता है। रामदास अपनेको भूल गये। स्वर अूपर अूपर चढ़कर आखिर 'अुच्च स्थाअी' पर पहुँच गया। अुनका मुंह लाल हो गया और नसें चढ़ गयीं।

वे अपनी भूमिका तकको भूल गये। अेक ख्याल, अेक विचार, अेक ही स्मृति और वही शोक। "हाय, बेटी"—वही चिन्ता!

वैसे ही अुखड़े पेड़की तरह वृद्ध रामदास नीचे गिर पड़े।

सब लोग अुनको घेरकर खड़े हो गये।

सुशीला देवी अपनेको भूल गयी और 'हाय, पिताजी' चिल्लाती हुअी अुनसे लिपट गयीं।

"मुझे मालूम है। वह मेरी ही सीता है।—वही आवाज़ है।—मुझे विश्वास था कि मैं अुससे ज़रूर मिलूँगा। बिटिया, आओ! पास आओ।"—वृद्धसे आगे कुछ नहीं बोला गया। अुनकी आवाज़ लड़खड़ायी। खुली आँखें बन्द हो गयीं।

"हाय, पिताजी! मालूम न हुआ कि आप ही हैं। चेहरेपर दाग़ हैं। यही कारण है कि मैं पहचान नहीं पायी।"

सुशीला वृद्धके चेहरेके निकट झुकी।

सुन्दरमूर्ति स्तब्ध चकितसे खड़े रहे। कुछ क्षण बीत गये। अुनके दिमाग़ने अुलझी गुत्थियाँ सुलझाना शुरू किया। बम्बअीमें सुशीलासे अुनकी मुलाक़ात होना, माँ-बापके सम्बन्धमें पूछे जानेपर, अुसका अपनी अज्ञानता प्रगट करना, बार बार दुःखमें पड़कर आँसू बहाना—अिन सबकी टूटी शृंखलाअें जोड़कर देखीं तो अुनकी समझमें सारीकी सारी कहानी आ गयीं।

अिस विचारमें वे अपना आप भूले खड़े रहे। अुनकी आँखोंसे भी आँसूकी दो बूँदें छलछलाकर मोती जैसे लुढ़क पड़ीं।

---

* रागमालिका वह है, जिसमें अेक ही पदको तीन-चार मिश्र रागोंमें गाया जाता है, जो दक्षिण भारतीय कर्णाट संगीतमें प्रचलित है —सम्पादक

मंगलमय नूतन वर्ष बने!

:सु. श्री विद्यावती मिश्र:

१. नव सपनोंको आधार मिले,
भावोंको मृदु शृंगार मिले,
भूले भटकोंको प्यार मिले,
मरुथलको जलकी धार मिले,
जयका अनुगत संघर्ष बने!
मंगलमय नूतन वर्ष बने!!

२. वैसे तो संस्कृतिके क्रममें
वर्षोंका आवागमन अटल,
बनता अतीत है वर्तमान...
भावीका वर्तमान संबल,
यह परिवर्तन ही हर्ष बने!
मंगलमय नूतन वर्ष बने!!

३. अगणित अभिलाषायें मनमें,
अुतनी ही भूलें जीवनमें,
जय जागृति अिसके कण कणमें,
भय और पराजय क्षण-क्षणमें,
पर संयम ही अुत्कर्ष बने!
मंगलमय नूतन वर्ष बने!!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओशिया और प्रशान्त देशोंकी शान्तिपरिषद्

: डॉ० जगदीशचन्द्र जैन :

अमरीका, अिंगलैंड आदि देशोंके पूंजीवादी पत्र अक्सर अिस बातका प्रचार करते रहते हैं कि शान्ति-परिषदें कम्युनिस्टोंका प्रोपेगैंडा मात्र हैं और अिन परिषदोंके आयोजनमें रूसका बड़ा हाथ रहता है जो पूर्वी योरपके जनवादी राष्ट्र और जनवादी चीनको अपने साथ मिलाकर अमरीकासे युद्ध करनेकी तैयारियाँ कर रहा है। भारतके कतिपय पत्र भी अिसी विचार सरणिका अनुकरण करते हुअे दृष्टिगोचर होते हैं। लन्दन और हांगकांगकी अेजेंसियों द्वारा भेजे हुअे समाचार अुनके मुखपृष्ठपर स्थान प्राप्त करते हैं। परन्तु अुक्त परिषदकी बैठकमें सम्मिलित होने या अुसकी कार्रवाअियोंको ध्यान पूर्वक पढ़नेसे अुक्त बात निराधार प्रमाणित होती है।

द्वितीय युद्धमें जापानके फौजी सैनिकोंने पूर्वीय देशोंपर आक्रमण करके जो जुल्म ढाये हैं अुनकी याद करके मनुष्य थर्रा अुठता है। अिस युद्धकी अग्निमें अेक करोड़ चीनवासी भस्म हो गये और अुनकी ५० अरब की सम्पत्ति स्वाहा कर दी गअी। अिंडोनेशियामें २० लाख श्रमिक बेगारी करते-करते मृत्युके मुखमें पहुँच गये और दसियों हजार जापानी सेनाकी जेलोंमें सड़कर मर गये। फिलिपाअिन्समें ११ लाख स्त्री-पुरुषोंको अपनी जानसे हाथ धोना पड़ा और राष्ट्रकी ५॥ अरबकी सम्पत्ति बरबाद हो गयी। बरमामें १८ अरबकी राष्ट्रीय मिलकियतको क्षति पहुँची। वीतमानमें २० लाखसे अधिक और भारतमें ३५ लाख जनताने भूखसे बिलबिलाकर प्राण दे दिये। आस्ट्रेलियापर भीषण बमबारी की गअी। स्वयं जापानके २० लाख बच्चे अनाथ हो गये और १८ लाख ३० हजार स्त्रियाँ अपना सुख-सौभाग्य खोकर विधवा बन गअीं। जापानके हिरोशिमा और नागासाकी नगरोंपर केवल दो अणुबम गिरानेसे जो वहांकी जनताको नारकीय यातनायें सहन करनी पड़ीं, अुन्हें मानव जाति कभी न भूल सकेगी।

अुक्त घटनाओंको अभी बहुत दिन नहीं बीते कि फिरसे युद्धका वातावरण तैयार किया जाने लगा है और कतिपय स्थानोंपर तो भीषण युद्ध हो भी रहे हैं, यद्यपि अुन्हें युद्धका नाम नहीं दिया जाता। जापान अपनी सैन्य शक्ति बढ़ानेमें लगातार आगे बढ़ रहा है। ८ सितम्बर, १९५१ को सोवियत संघ चीन, मंगोलिया, भारत और बरमाके बिना पूछे-गिने सान फ्रांसिस्कोमें अमरीका और जापानके बीच 'शान्ति सन्धि' और 'सुरक्षा समझौते' पर हस्ताक्षर हो गये हैं। २८ फरवरी; १९५२ को अमरीका सरकारने जापानकी योशिदा सरकारके साथ 'शासन सम्बन्धी सन्धि' कर ली है। अिन सन्धि और समझौतोंको अप्रैल २८, १९५२ से कार्यरूपमें लानेकी घोषणा कर दी गअी है। अिसके अतिरिक्त, योशिदा सरकारने फारमोसा-स्थित चांग-काअी-शेककी सरकारके साथ शान्ति सन्धि स्थापितकर चीनकी ४७ करोड़ जनताकी घोर अवहेलना की है। २६ जुलाअी, १९५२ को अमरीका और जापानकी सरकारोंके बीच अेक और समझौता हुआ है जिसके अनुसार जापान अमरीकी सेनाके रहनेके लिये बैरक देगा, जल, थल और वायवीय सेनाओंकी ट्रेनिंगके लिये स्थानका प्रबन्ध करेगा तथा अपने हवाअी और समुद्री अड्डे देगा। अिस प्रकारके ३०० स्थान नियमित रूपसे अमरीकी सेनाओंके अुपयुयोगमें आ रहे हैं। अभी हालमें १ लाख ८४ हजारसे अधिक जापानी युद्ध-अपराधियोंको जेलोंसे मुक्त किया जा चुका है। जापानके कारखाने धड़ाधड़ अस्त्र-शस्त्र और बमगोले बनानेमें लगे हुअे हैं जिन्हें शांतिप्रिय नागरिकोंका हत्या करनेके काममें लिया जा रहा है। अिन सब बातोंसे चीनपर जापानी आक्रमणका खतरा बढ़ रहा है।

कोरिया-युद्धकी शान्ति-वार्ताको आरम्भ हुअे १ वर्षसे अधिक बीत चुका। परन्तु अमरीका युद्ध बन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं करना चाहता है। वह समझता है कि चीनको युद्धमें अुलझाये रखनेसे ही अुसका मनोरथ पूर्ण हो सकता है। कोरियामें आये दिन भीषण बमबारी होती रहती है। अमरीकाने कोरिया और अुत्तर-पूर्व चीनमें संहारकारी कीटाणु बम गिराकर अन्तर्राष्ट्रीय कानूनका अुल्लंघन किया है। फिर तुर्रा यह है कि वह अिस बातसे अिन्कार कर रहा है, यद्यपि स्वीडन, फ्रांस, ब्रिटेन, अिटली, ब्रजिल और सोवियत संघके गणमान्य वैज्ञानिकोंके कमीशनने और कीटाणु बम बरसानेवाले अमरीकी युद्धबन्दियोंने अिसको प्रमाणित कर दिया है। अमरीकाके हवाअी-जहाज अुत्तर-पूर्व चीनके नगरोंमें भी अनेक बार बमबारी कर चुके हैं। अब अमरीकन सरकार कोजे आदि कैम्पोंके युद्धबन्दियोंके प्रश्नको लेकर अड़ गअी है और अुन्हें किसी भी हालतमें अपने देश भेजनेसे अिंकार कर रही है।

मलय और वीतनामकी जनताको भी कठोर संघर्षका सामना करना पड़ रहा है। मलयके देशभक्तोंको 'आतंकवादी', 'गुंडे' आदि कहकर अुन्हें मौतके घाट अुतारा जा रहा है और अुनके कटे हुअे सिर लानेवालोंको बड़े-बड़े अिनाम देनेकी घोषणाअें की जा रही हैं। जनरल टैम्पलरकी सेनाअें विषैली गैसोंका प्रयोग करके फसल नष्ट कर रही हैं, और समूचे गाँवोंको कन्सन्ट्रेशन कैम्प बनाकर जनतापर मनमाना अत्याचार कर रही हैं। अिसी प्रकार फ्रेंच सरकार वीतनामकी जनताका दमन करनेपर तुली हुअी है और पश्चिमी जर्मनीके बेकार युवकोंको अपनी सेनामें भरतीकर अुन्हें युद्धके लिये भेज रही है। फिलिपाअिन्स, श्याम, अीरान, टर्की, अफ्रीका आदि देशोंकी जनता भी पश्चिमके साम्राज्यवादी देशोंकी स्वार्थमय नीतिसे संत्रस्त हो गयी है।

अुक्त अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियोंको मद्देनजर रखते हुये २ अक्तूबर, १९५२ को पेकिंगमें अेशिया और प्रशान्त देशोंकी शान्ति-परिषदका अुद्घाटन हुआ। अिस परिषदमें आस्ट्रेलिया, बरमा, कनाड़ा, सीलोन, चिली, चीन, कोलंबिया, कोस्ट रिका, सिप्रस, अेल सेल्वेडोर, अिक्विडोर, गुआतेमला, हॉन्डोरस, भारत, अिंडोनेशिया, अीरान, अीराक, अिसराअिल, जापान, कोरिया, लेबनन, पाथेत लाओ, मलय, मैक्सिको, मंगोलिया, न्यूजीलैंड, निकारगो, पाकिस्तान, पनामा, पेरू, फिलिपाअिन्स, सिरिया, श्याम, टर्की, संयुक्त राज्य अमरीका, सोवियत संघ और वीतनामके ३४४ प्रतिनिधियोंने भाग लिया था। भारतके प्रतिनिधियोंमें डाक्टर किचलू, डा. ज्ञानचन्द, रमेशचन्द्र, चतुरनारायण मालवीय, अे. के. गोपालन, डाक्टर अब्दुल अलीम, रविशंकर महाराज, गोविन्द सहाय, मनोज बोस, सरदार पृथ्वी सिंह, अुमाशंकर जोशी, अमृतराय, भगवतशरण अुपाध्याय, सरला गुप्ता, रोहिणी भाटे आदिके नाम मुख्य हैं।

परिषद्में निम्नलिखित विषयोंपर विचार किया गया: — १. जापान सम्बन्धी प्रश्न, २. कोरिया संबंधी प्रश्न, ३. सांस्कृतिक आदान-प्रदान, ४. आर्थिक सम्बन्धोंका विकास, ५. राष्ट्रीय स्वाधीनता सम्बन्धी प्रश्न, ६. स्त्री तथा शिशुओंके हितकी रक्षा, ७. पांच राष्ट्रोंके शान्ति-समझौते सम्बन्धी प्रश्न, ८. निकट तथा मध्यपूर्वमें शान्ति-आन्दोलनकी रिपोर्ट तथा १०. परिषदकी घोषणा और प्रस्ताव।

जापानके सम्बन्धमें अपनी रिपोर्ट अुपस्थित करते हुअे जापानके प्रतिनिधि टोगो कमेडाने सान फ्रांसिस्कोमें जापानके साथ की हुअी पृथक् संधिका विरोध करते हुअे अमरीका द्वारा जापानको अमरीकी फौजोंका अड्डा बनाये जानेकी निन्दा की। आपने बताया कि अन्तर-राष्ट्रीय समझौतेके अनुसार चीन आदि देशोंके साथ शान्ति-संधि करनेपर तथा जापानी जनताको स्वाधीन और स्वतंत्र जीवन व्यतीत करनेका अवसर मिलनेपर ही अेशिया और प्रशांत प्रदेशोंमें शांति कायम रह सकती है। कोरियाके प्रतिनिधि मंडलके नेता हन सुल याने कहा कि कोरिया-युद्धमें कोरियाकी जनताने जो अमानुषिक अत्याचार सहन किये हैं अुनकी तुलना नहीं की जा सकती। अमरीकी सैनिकों द्वारा बनाये गये युद्ध-बन्दियोंके सम्बन्धमें आपने बताया कि यदि ये बन्दी स्वदेश लौटाना नहीं चाहते तो फिर भारी टैंकों और हथियारबन्द युद्ध गाड़ियों द्वारा कोजे, चेजू,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और पूसान कैम्पोंके बन्दियोंकी क्यों निर्मम हत्या की जाती है ? आपने कहा कि अन्तर्राष्ट्रीय कानूनके अनुसार दोनों पक्षोंके युद्ध-बन्दियोंको स्वदेश लौटनेकी अनुमति देनेसे, कीटाणु युद्ध तथा मानव जातिके संहारक बमगोलोंके युद्धको बन्द कर देनेसे, तथा कोरियासे समस्त विदेशी सेनायें— चीनके स्वयंसेवक भी— हटानेसे ही कोरियामें शान्ति स्थापित हो सकती है।

सांस्कृतिक आदान-प्रदान सम्बन्धी प्रश्न पर रिपोर्ट अुपस्थित करते हुअे भारतीय प्रतिनिधि मंडलके नेता डा. किचूलने बताया कि अेशिया और प्रशान्त प्रदेशोंमें युद्ध द्वारा जो संस्कृतिका संहार किया जा रहा है वह अत्यन्त भीषण है, तथा अिससे जनताके सांस्कृतिक मूल्य युद्ध-प्रचार और जातीय घृणाकी वृद्धि करनेमें ही लग रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक आदान-प्रदानको बढ़ानेके लिये आपने सांस्कृतिक प्रतिनिधि मंडलोंके आदान-प्रदानपर, विश्वविद्यालयोंमें विदेशी भाषाओंके अध्ययन-अध्यापनपर, विदेशी पुस्तकोंके अनुवाद तैयार करनेपर तथा अन्तर्राष्ट्रीय महान पुरुषोंकी वर्ष-गांठ मनाने आदिपर जोर दिया। अिण्डोनेशियाके प्रतिनिधि सुरोसोने आर्थिक सम्बन्धोंके विकासपर बोलते हुअे कहा कि शान्ति पूर्ण और अुचित आर्थिक सम्बन्धोंके आधारपर ही अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सम्बन्ध स्थापित किये जा सकते हैं। चीनके विरुद्ध अमरीकाकी अनुचित नाकाबन्दीका आपने सख्त विरोध किया। डॉ. ज्ञानचन्दने बताया कि अेशिया और प्रशान्त देशोंके प्रायः सभी राष्ट्रोंकी समस्यायें अेक समान हैं। युद्धसे अिन राष्ट्रोंको किसी भी प्रकारका लाभ नहीं हो सकता, अुल्टा नुकसान ही अधिक है। अिन राष्ट्रोंके लिये शान्ति कोअी सामाजिक आदर्श न होकर अेक आर्थिक आवश्यकता बन गयी है क्योंकि बिना शान्तिके अिन राष्ट्रोंकी जनता सदा दरिद्रताकी चक्कीमें पिसती रहेगी।

विश्व शान्ति परिषदकी सदस्या चिलीकी प्रतिनिधि श्रीमती ओलगाने राष्ट्रीय स्वाधीनतापर रिपोर्ट अुपस्थित करते हुअे बताया कि हमें राष्ट्रीय स्वाधीनता प्राप्त करना अभी बाकी है, तथा युद्धकी तैयारियोंके कारण लैटिन अमरीका आधी दुनियासे बिलकुल अलग पड़ गया है। आपने अुत्तर और लैटिन अमरीकाकी जनताके शान्ति और स्वातंत्र्य युद्धका दिग्दर्शन कराया। अं. के. गोपालनने रशियामें अमरीकाकी साम्राज्यवादी नीतिकी निन्दा की। स्त्री तथा शिशुओंके सम्बन्धमें बोलते हुअे पाकिस्तानकी प्रतिनिधि तहीरा मजहरने युद्धके कारण कोरिया, मलय और वीतनामकी स्त्रियों और अुनके शिशुओंकी दुर्दशाका हृदय-द्रावक वर्णन किया। अमरीकाके प्रतिनिधि लुअिस व्हीटनने पाँच शक्तिशाली राष्ट्रोंके शान्ति समझौतेके प्रश्नपर भाषण देते हुअे कहा कि अमरीका, सोवियत संघ, जनवादी चीन, ब्रिटेन और फ्रांस अिन पाँच राष्ट्रोंमें शान्ति समझौता होनेपर सारी दुनियाके लिये अेक नया मार्ग खुल सकेगा और अुसी समय दुनियाकी संकटापन्न और भयोत्पादक स्थिति दूर हो सकती है। आपने बताया कि विश्व शान्ति परिषदकी पाँच-शक्ति समझौतेकी अपीलपर हस्ताक्षर कर ७० राष्ट्रोंकी ६० करोड़ जनताने अिस तथ्यको स्वीकार किया है।

तत्पश्चात् भिन्न-भिन्न देशोंके प्रतिनिधियोंने अपने देशके शान्ति-आन्दोलनोंकी रिपोर्ट अुपस्थित की। फिलिपाअिन्स, सिप्रस, मलय, पेरु, पाकिस्तान और कोलंबियाके प्रतिनिधियोंने बताया कि साम्राज्यवादी विदेशी सत्ताके कारण अुनके देशकी जनताको असीम कष्ट भोगने पड़ रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय विद्यार्थी यूनियनके अुपाध्यक्ष रेफ अेल अेचेवैरिआने ७२ राष्ट्रोंके ५३ लाख विद्यार्थियोंकी ओरसे शान्ति-परिषदका अभिनन्दन करते हुअे विश्वमें शान्ति-रक्षाके लिये जोरदार अपील की। भारतीय प्रतिनिधि मण्डलके सदस्य भूतपूर्व पार्लियामेंटरी सेक्रेटरी गोविन्द सहायने अपने भाषणमें कोरियामें युद्ध, वीतनाममें हस्तक्षेप, चीनकी नाकाबन्दी तथा जापानके पुनःशस्त्रीकरणके लिये अमेरीकाको जिम्मेदार ठहराते हुअे कहा कि जापानका स्वयं-शासन तथा अेशिया और प्रशान्तप्रदेशोंके साथ-विशेषकर चीनके साथ-अुसकी मित्रता द्वारा ही अिन क्षेत्रोंमें शान्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कायम रह सकती है। कोरिया, मलय और वीतनाममें किये गये अमानुषिक अत्याचारोंका वर्णन करते हुअे प्रसिद्ध गांधी-वादी श्री रविशंकर महाराजने समस्त विश्वकी जनतासे अपील की कि अमरीकी सेनाओंको कोरियासे हटनेके लिये बाध्य किया जाय। भोपालके भूतपूर्व प्रधानमंत्री चनुरनारायण मालवीयने युद्धके लिये अमरीकाको दोषी ठहराते हुअे कहा कि किटाणु युद्धके संबंधमें अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक कमीशनकी रिपोर्ट पढ़कर और कीटाणु युद्धमें भाग लेनेवाले अमेरीकन युद्ध-बन्दियोंके बयान पढ़कर मैं स्तब्ध रह गया। पांच राष्ट्रोंके शान्ति-समझौतेको ही आपने विश्वमें शान्ति स्थापित करनेका अेकमात्र आधार बताया।

अपनी युद्धनीतिके कारण ही अमेरीकी सरकारको युद्धके लिये बेशुमार रुपया खर्च करना पड़ता है। जून ३०,१९५२ तक शस्त्रीकरणको बढ़ानेके लिअे, कोरिया युद्धके लिये तथा 'सामूहिक सुरक्षा'के लिये अमरीकाको ६५ अरब डालर खर्च करने पड़े। यह रकम अुसके कुल बजटका ७६.१% हिस्सा है। जापान की भी अिसी घरफूंक नीतिके कारण भयंकर स्थिति होती जा रही है। योशिदा सरकार अपने बजटकी ७०% रकम फौजी व्ययमें लगा रही है। अिसके अलावा, वहां हजारोंकी संख्यामें छोटे-मोटे अुद्योग-धन्धोंके बन्द पड़नेके कारण भयंकर बेकारी फैल रही है और श्रमिकोंकी हड़तालोंकी संख्या दिनपर दिन बढ़ती जा रही है। परन्तु यह सब होते हुअे भी शान्ति-परिषदमें सम्मिलित होनेवाले भिन्न-भिन्न देशोंके प्रतिनिधियोंने यह महसूस किया है कि सब देशोंकी समस्यायें प्रायः अेक समान हैं, जनता शोषणसे मुक्त होना चाहती है, वह युद्ध नहीं चाहती, तथा शान्ति-कालमें ही सर्वसाधारण जनता सुखी जीवन व्यतीत कर सकती है। जापान, अमरीका, कोरिया, वीतनाम, मलय, फिलिपाअिन्स, भारत, अिण्डोनेशिया, बरमा, पाकिस्तान, श्याम, सीलोन तथा मध्यपूर्व और निकट पूर्वके देशोंमें जो शान्ति-आन्दोलनोंको सफलता मिली है, तथा अिस ओर चीनमें जो बृहत् परिमाणपर रचनात्मक कार्य हो रहे है अुनसे प्रमाणित होता है कि विश्वकी जनता युद्धसे घृणा करती है। जनता युद्धोंसे संत्रस्त हो अुठी है, अिसीलिये कोरियासे अमरीकी, मलयसे ब्रिटिश और वीतनामसे फ्रेंच सेनायें हटानेकी हर जगह मांग की जा रही है। अेशिया और प्रशान्त देशोंकी शान्ति-परिषदका अुद्देश्य विश्वमेंशान्ति स्थापित करना है जिससे प्रत्येक राष्ट्र बिना विदेशी हस्तक्षेपके जनसाधारणके जीवन स्तरको अूँचा अुठा सके। अिस अुद्देश्यको पूरा करनेके लिये मैडम सनयात सेनकी अध्यक्षतामें पेकिंगमें अेशिया तथा अन्यान्य देशोंकी शान्ति सम्पर्क कमेटीकी स्थापना की गअी है। अुपरोक्त ३१ देशोंके ५२ प्रतिनिधि अिस कमेटीके सदस्य हैं।

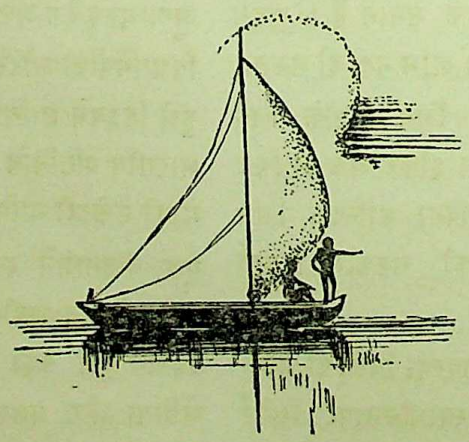

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुपगुप्त और कामदेव

: भदन्त शान्ति भिक्षु :

[बौद्धसाहित्यके अंगोंमें अवदान अेक अंग है जिसमें महापुरुषोंके चरित्रोंकी चर्चा हुआ करती है। अवदानकृतियोंमें "दिव्यावदान"में छब्बीससे अुनतीस अवदानोंमें अशोक सम्बन्धी अुपाख्यान हैं। अशोकके समयमें अुपगुप्त नामक अेक बड़े पहुँचे हुअे बौद्ध-भिक्षुक थे जिनके साथ अुन्होंने तथागताध्युषित स्थानोंकी वन्दना की थी तथा भारतको स्तूपों और धर्मलिपियोंसे मंडित कर दिया था अिन अुपगुप्तके संबंधमें वहां दो अुपाख्यान आये हैं। अिनमेंसे अेक अुपाख्यानको स्व० गुरुदेव रवीन्द्रनाथने अपनी कथात्मक कविता अभिसार ('कथाओ काहिनी', पृष्ठ ३७-४१)में कुछ हेर फेरके साथ गूँथा है। पर दूसरे अुपाख्यानका अभी भाषामें अवतरण नहीं हुआ है। यह अुपाख्यान अपनी शैलीमें अेक प्राचीन अेकांकी नाटक है। और अिस नाटकमें सर्वथा नवीन और अेक धीर-वीर विचारको प्रकट किया गया है। पुरानी काव्यधारासे लेकर अभिनव काव्यधारा तकमें अिस प्रकारके धीर विचारकी अभिव्यंजना अुपगुप्तमाराख्यानको छोड़कर अितने रमणीय रूपमें शायद ही कहीं हुअी हो। ऋषियोंको मार(काम) से पराभूत होते देखा जाता है। मार भी ऋषियोंसे पराभूत होता है, शप्त होता है, ताड़ित होता है, और शरीर त्यागकर भस्मसात् हो अनङ्ग तक भी बन जाता है; पर वह मोक्षधर्मपरायण कभी नहीं होता। पर अिस नाटक भंगीमें लिखे अुपाख्यानमें वह अिस धर्मका अभिलाषी बन जाता है। यहाँ संस्कृतमें निबद्ध अुस नाटकको बिना विशेष हेरफेर किये दे रहा हूँ।-लेखक]

(धर्मदेशनामें निरत भदन्त अुपगुप्तकी परिषदसे अनतिदूर मारबधुओंके साथ नृत्यगाननिरत मारकी धूमधामसे श्रोताओंका ध्यान भंग होता है। मार आकर अुपगुप्तके सिरको माल्यविभूषित करता है। अुपगुप्त भी मारके गलेमें अेक हार पहनाते हैं। जिससे मार मन ही मन अपनी विजयसे फूला नहीं समाता। पर अुसका हर्ष शोकमें बदल जाता है जब वह देखता है कि कंठहार श्वकुणप (कुत्तेका मुर्दा) बन जाता है।)

अुपगुप्त : तुमने मुझे अुचित माला नहीं पहनाअी। और मैंने भी तुम्हारे गलेमें जो कंठहार डाला है, वह भी फबेगा नहीं। अब —

गलेसे यह छूट सकेगा नहीं,
कुणपाकृति श्वा पिनधा रहेगा।
घुसो चाहे प्रदीप्त हुताशनमें,
घुसो सिंधुमें चाहे,संधा रहेगा॥
यह भिन्न भी होगा न विलग्न कभी,
बिना शुष्क हुअे ही नधा रहेगा।
शरणागत हो तुम अिन्द्रकी वा;
विधिकी तब भी तो बँधा रहेगा॥
दिखा लो तुम अपनी सब शक्ति
बुद्धके सुतसे है यह युद्ध।
शान्त, मलयाद्रिदरीमें सिन्धु
वातचक्रोद्धतमुख संक्रुद्ध॥

मार : देवताकी शरणकी बात ही क्या ? लो यह श्वकुणप मैं फेंकता हूँ। (बड़ा ज़ोर लगाकर जब जब गलेसे नहीं छुड़ा पाता तब देवताओंकी शरण जाता है। पर अुन्हें असमर्थ देख देवज्येष्ठ विधाताकी शरण जाता है। अुधर नेपथ्यमें देवभाषाबद्ध श्लोक सुनाअी पड़ता है।)

कामं ममापि महदस्ति बलं तथापि
नाहं तथागतसुतस्य बलेन तुल्यः।
तेजस्विनां न खलु न ज्वलनोऽस्ति किंतु
नासौ द्युति र्हुतवहे रवि मंडले या॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[मुझमें महान् बल भले ही हो फिर भी वह तथागतके पुत्रके बलके समान नहीं है। अग्निकी गणना तेजस्वियोंमें है अवश्य, पर जो ज्योति सूर्यमंडलमें होती है वह अुसमें नहीं होती।]

(मनमें सोचता है)

आज सुवर्णके समान सुरूप, सर्वथा अविचलित चित्त, मैत्री हृदय तथागतकी करुणा मेरी समझमें आ रही है। मुझ जैसे मूढ़ने अुन्हें तरह तरहसे सताया, तो भी अुन दशबलने कोअी कटु बात नहीं सुनाअी।

(अुपगुप्तके चरणोंपर गिरकर)

शाला नामक ब्राह्मणग्राममें मैंने तथागतके विरुद्ध लोगोंको भड़का दिया था। अिससे वे जैसे धुले हुअे पात्रके साथ भिक्षाके लिअे ग्राममें घुसे थे वैसे ही लौट आये थे। अुस दिन अुन्हें निराहार ही रह जाना पड़ा था। फिर भी अुन्होंने मेरी कोअी बुराअी नहीं की। मैंने बैलका रूप धरकर अुन्हें डराया। सांप बनकर भय दिखाया। शकटाकार जन्तु बनकर सताया। फिर भी प्रभुने मुझे दुःख देनेकी बात न सोची। पर हे वीर! तुम अुन्हीं तथागतके पुत्र होकर भी सहज दया छोड़ बैठे हो। तुमने आज देवताओं और असुरोंके सहित अिस त्रिलोकीमें मुझे विडम्बित किया है।

अुपगुप्त : मार, तथागतकी दयाका रहस्य तुम नहीं समझते हो। बुद्धको जो सताता है, बुद्धका जो अपकार करता है; अुसका वह पातक कभी धुल ही नहीं सकता यदि स्वयं भगवान् ही अुसपर कृपा न बनाये रहें। बुराअी करनेपर भी अुन्होंने तुम्हारी भलाअी ही सोची है और अिस तरहसे अुन्होंने तुम्हारे हृदयमें भक्तिका बीज बो दिया है। तथागतके प्रति थोड़ी भी भक्ति श्रेयप्राप्तिका साधन होती है। अधिक क्या कहूँ। मोहान्ध होकर तुमने जो भी पातक किया था अुसे भगवान्ने तुम्हारे हृदयमें भक्तिगंगा बहाकर धो डाला है।

मार : (मनमें) बोधिलाभसे पूर्व तथा बोधिलाभके अनन्तर भी बहुत तरहसे मैं भगवान्को सताता था, पर जैसे कारुणिक पिता पुत्रके अपराधको क्षमा कर देता है वैसे ही वह मेरे सब अपराधोंको क्षमा कर देते थे। (अुपगुप्तकी ओर अभिमुख होकर) भन्ते! आपने आज मुझपर बड़ी कृपा की है जो मुझे भगवान्की श्रद्धासे अपूरित कर दिया। अब करुणा करके मेरे गलेसे लटकते हुअे अपने कोपके आभूषण अिस श्वकुणपको तो छुड़ाअिये।

अुपगुप्त : छुड़ाअूँगा, पर समय (शर्त) के साथ।

मार : भन्ते, आज्ञा दीजिये समयका पालन करूँगा।

अुपगुप्त : भिक्षुओंको अब कभी न सताना।

मार : नहीं सताअूँगा भन्ते।

(गलेसे श्वाकुणप गिर पड़ता है)

अुपगुप्तः धार्मिक हितके लिये जो मुझे कहना था मैंने कह डाला। अब मुझे अपने कार्यके प्रति भी कहना है।

मारः कहिये भन्ते, कृपा करके कहिये।

अुपगुप्तः मैंने भगवान्का धर्मकाय तो देखा है पर रूपकाय नहीं देखा। तुम मुझे तथागतका रूप धरकर दिखाओ।

मारः दिखाअूँगा पर समय (शर्त) के साथ।

अुपगुप्तः तुम्हारा समय क्या है? बोलो।

मारः जब मैं तथागतका रूपकाय दिखाअूँ तब भन्ते नमस्कार न करें। क्योंकि—

बुद्धानुस्मृति पेशलेन मनसा पूजां यदि त्वं मयि
स्वल्पामप्युपदर्शयिष्यसि विभो दग्धोभविष्याम्यहं।
का शक्तिर्मम वीतरागविहितां सोढुं प्रणामक्रियां
हस्तन्यासभिवोद्वहन्ति न गजस्थैरण्ड वृक्षांकुराः॥

[प्रभो, यदि तथागतकी अनुस्मृतिसे द्रुत चित्त हो कहीं आपने नामको भी मेरी पूजा की तो मैं भस्म हुअे बिना न रहूँगा। भला मुझमें शक्ति ही क्या है कि वीतराग महात्माओंके प्रणामको सहन कर सकूँ। अेरण्डके बालपादपोंमें यह दृढ़ता कहाँ जो हाथीके शुण्डस्पर्शको सह सकें।]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुपगुप्तः अेवमस्तु। तुम्हें प्रणाम नहीं करूँगा।

(मार अपनेको अन्तर्धान कर, बुद्धरूप धर-कर सुरुचिरनेपथ्य नटकी भाँति गहन वनसे निकलने लगता है। दाहिनी ओर शारिपुत्र, बाअीं ओर महा-मौग्दल्यायन, पीछे बुद्धका भिक्षापात्र लिये आनन्द दिखायी पड़ते हैं। अर्धचन्द्राकृतिमंडल बनाये हुअे पीछे स्थविर महाकाश्यप, अनिरुद्ध, सुभूति आदि शिष्य रहते हैं। स्थविर (मनमें) अुस रूपको देखकर सोचते हैं।)

धिगस्तु तां निष्करुणा मनित्यतां,
भिनत्तिरूपाणि यदीदृशान्यपि।
शरीर मीदृक् किल तन्महामुने,
रनित्यतां प्राप्य विनाश मागतम्॥

[धिक्कार है अुस क्रूर अनित्यताको जो अिस प्रकारके स्वरूपको भी मिटा डालती है। महामुनिका अैसा शरीर अनित्यताको प्राप्तकर विनष्ट हो गया।]

(तथागतका रूप दर्शन करते-करते समय (शर्त) भूलकर, अंजलि बाँधकर) अहो तथागतकी रूप शोभा-

वक्त्रेणाभिभवत्यय हि कमलं नीलोत्पलं चक्षुषा
कान्त्या पुष्पवनं घनं प्रियतया चन्द्रं समाप्तद्युतिं।
गांभीर्येण महोदधिं स्थिरतया मेरुं रविं तेजसा।
गत्या सिंहमवेक्षितेन वृषभं वर्णेन चामीकरम्॥

[भगवान् मुखसे कमलको, आँखोंसे नीलोत्पलको, कान्तिसे सघन पुष्पवनको, रमणीयतासे पूर्णचन्द्रको, गम्भीरतासे महोदधिको, स्थिरतासे सुमेरुको, तेजसे सूर्यको, गतिसे सिंहको, अवलोकनसे वृषभको, और वर्णसे सुवर्णको अभिभूत कर रहे हैं।]

(यह कहकर चरणोंमें गिर पड़ते हैं।)

मार : (ससंभ्रम) भन्ते, समय (शर्त) को तोड़ना आप जैसेके लिये अुचित नहीं।

अुपगुप्त : मार, यह न समझो कि मैं यह भूल गया हूँ कि वादियोंमें प्रधान वे तथागत जलसे बुझी आगकी तरह शान्त हो चुके हैं। फिर भी नयनाभिराम अुनकी शोभाको देखकर मैंने अुन्हींको प्रणाम किया है, तुम्हें नहीं।

मार : अिस तरह भन्ते, जब मुझे प्रणाम करेंगे तब कैसे वह मेरी पूजा न होगी?

अुपगुप्त : अैसे लोग मिट्टीकी बनी देव-प्रतिमाओंको नमस्कार करते हुअे अुनके प्रति देवभाव ही रखते हैं, अुनके मनमें भाव अुठता ही नहीं कि वे कोरी मिट्टीकी गढ़न्त हैं। वैसे ही भगवान्का रूप धरे हुअे तुम्हें देखकर मैं यह सर्वथा भूल ही गया कि तुम मार हो। मेरे मनमें तो तथागतका ही ध्यान रहा और मैंने अुन्हींको नमस्कार किया है।

मार : (सन्तुष्ट होकर) आपका विवेक धन्य है, आप बत्तीस लक्षणोंसे रहित भगवान् ही हैं, मुझे अपना शरणागत समझें। (अेकत्रित परिषद्के प्रति अभिमुख होकर)

दृष्टो न यैर्वा द्विपद प्रधानः
शास्ता महाकारुणिकः स्वयंभूः।
ते शास्तृकल्पं स्थविरोपगुप्तं
पश्यन्तु भास्वत्त्रिभुव प्रदीपम्॥

[द्विपदोंमें श्रेष्ठ, परमकारुणिक, स्वयंभू, शास्ता भगवान् बुद्धको जिन्होंने नहीं देखा है वे शास्ताके समान ही तीनों लोकोंके अुज्ज्वल प्रदीप स्थविर अुपगुप्तके दर्शन करें।]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारी

: श्री अंचल :

पृथ्वीकी रंगस्थली-सी ओ स्वयंवरा !
मानव जगतीका प्रकाश जीवनकी स्रोत तुम
विश्वके प्रथम प्रातकी तुम हिमकणिका
सूखी नहीं मानवताके रूखपर जो अभी
रातकी श्रम अर्जित मीठी नींद-सी मधुर
नभचुम्बी अेक महा ज्योतिकी अमर तेज
चुम्बन-सी अधरोंके प्रान्तरकी नव शिखा।
आग और सोनेके पहाड़ों बीच
बहती पार्वत्य सरिताकी रक्तधारा-सी बेगुनाह
किरणोंके बाण लिये शारदीय अूषासी निष्कलंक
मृत्यु भय ग्रस्त चित्रित स्नायुओंमें
शुभ्र जल स्रोत-सी जीवनका सुख तुम
अुड़ती बालसी मृगतृष्णामें तुम अेक ओसिस-सी,
अिससे अधिक कोअी और कहे क्या—युवती हो तुम
निश्चल सागरकी आत्मा-सी शान्त हो।
युग-युगके अतृप्त प्रेमकी अिच्छा चाँदनी सी
अधरोंमें छिटकी
रतिकी स्थिर दीर्घ अेकान्त छाया-सी
छविके सपनोंकी रम्य शयनशिला
शान्त मधुवनकी निःशेष सित कामना
सुन्दर सजीली सौम्य
वेतस निकुंज-सी सलज बल खाती हो।
अिन्द्रधनुषोंके पथमें चल आती हो
तृण-तृणमें तुहिन बिन्दुसी सुअंकिता
गर्वोन्नत यौवन किरटिनी !
चपला— शत-शत बादलोंकी प्रेयसी
वारुणीसे सिक्त अंगोंकी ये बल्लरियाँ
जैसे हों तुम्हारे अभिनन्दनकी लड़ियाँ
रूपसिन्धुकी निवासिनी तुम चिर अुर्वशी
ओ जगत रंगिनी !
ओ पुलक पंखिनी !
जीवन वसंतके विभवकी पिक सारिका,
प्रेमियोंकी सिद्धि और रिद्धिकी सफल कला
तुम प्रतिनिशिमें बनती हो नव बधू
नित-नित नूतन हो।
प्रतिदिन सार्थक होती सीमन्तकी सिन्दूर रेख,
छटा और प्रकृति मनोजकी हो सहचरी
तीसरी तुम।
लक्ष्य वेध करती हो मन हरकर,
सद्य अुगते नवल चन्दनकी बाड़ी-सी।
युगका पथ निस्सम्बल फिरसे बनेगा दीप्त,
पा तुम्हारा पंथ दान
ओरी अभिमानिनी।
ओरी प्रतिगामिनी।
आज फिर निकलो—रजनीके कविकी साधना कुटीसे तुम
मसृण सघन वनके अँधियारेसे—— रम्य अुस तलहटीसे।
और आँखें फाड़ देखो जीवनका यह नरक,
देखो यह अनय, अनादर औ' अविश्वास।
सुनो यह हाहाकार
नवयुगके करवट लेनेका यह निनाद,
शोलोंसे करो सत्कार—क्रान्तिके अिस महामंगलमय युगका।
अुगलो तुम ज्वालामुखी
हम हों—— हो तुम और जीवनका संग्राम
रातको बनी थीं तुम गीली और रँगीली,
दिनमें बनो अखंड युद्धकी करालिका,
दिनमें पुकारकर ललकार कहो,
मुक्ति चाहती हैं हम
धनके असम और अनियमित वितरणसे
मानवद्वारा मानवके नारकीय शोषणसे
दुःख गरीबी और बढ़ती बेकारीसे
युगोंसे बँधे, सड़ते विषमताके दाहसे
अिन्द्रियोंके विकृत विकारमय निग्रहसे।
होगी नवयुगकी अवतारणा धरापर तब।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारी

: श्री क़ाजी नजरुल इस्लाम :

बंगला

सा येर गान गाअि
आमार चक्षे पुरुष-रमणी भेदाभेद कोनो नाअि।
विश्वे जा किछु महान सृष्टि चिर कल्याण कर।
अद्धक तार करियाछे नारी, अद्धेंक तार नर।
विश्वे जा किछु अेल पाप ताप वेदना अश्रुवारि,
अद्धेंक तार आनिया छे नर, अद्धेंक तार नारी।
नरककुंड बलियाके तोमा करे नारी हेय ज्ञान?
तारे बल, आदि-पाप नारी नहे, से जे नर शयतान।
अथवा पाप जे— शयतान जे— नर नहे नारी नहे,
वलीवसे, ताअिसे नर ओ नारी ते समान मिशिया रहे।
अे विश्वे जत फूटियाछे फूल, फलियाछे जत फल,
नारी दिल ताहे रूप-रस-मधु-गन्धसुनिर्मल।
ताजमहलेर पाथर देखेछ, देखियाछ तार प्राण?
अन्तरे तार मोमताज नारी, बाहिरेते शाजाहान।
ज्ञानेर लक्ष्मी, गानेर लक्ष्मी, शस्य लक्ष्मी नारी,
सुषमा लक्ष्मी नारीअि फिरिछे रूपे-रूपे संचारि।
पुरुष अेनेछे दिवसेर ज्वाला तप्त रौद्रदाह,
कामिनी अेनेछे यामिनी-शान्ति, समीरण, वारिवाह।
दिवसे दियाछे शक्ति-साहस, निशीथे हये छे बधू,
पुरुष अेसेछे मरुतृषा लये— नारी जोगायेछे मधू।
शस्य-क्षेत्र अुर्व्वर ह'ल पुरुष चलाल हल,
नारी सेअि माठे शस्य रोपिया करिल सुश्यामल।
नर बाहे हल, नारी बहे जल, सेअि जलमाटी मिशे,
फसल हअिया फलिया अुठिल सोनालि धानेर शीशे।
स्वर्ण-रौप्यभार
नारीर अंगपरश लभिया हयेछे अलंकार।
नारीर विरहे, नारीर मिलने, नर पेल कवि-प्राण,
यत कथा तार हअिल कविता शब्द हअिल गान।

हिन्दी

साम्य गान मैं गाता हूँ।
नारी-नरके बीच, बन्धु, मैं भेद नहीं कुछ पाता हूँ।
अिस दुनियामें जो कुछ भी है चिर महान, चिर मंगलकर;
आधेका स्रष्टा है नारी, आधेका* कर्त्ता है नर।
अिस दुनियामें पाप-ताप, वेदना, अश्रुके जो निर्झर
अुनमें आधे नारी कृत हैं, आधेको लाया है नर।
नरक-कुण्ड कह, नारि, तुम्हारा जो नर करते हैं अपमान
अुन्हें कहो कि आदि पाप नारी है नहीं, अपितु शैतान।
जो शैतान स्वयं पुरुष था; अथवा पाप या कि शैतान
नारी नरसे भिन्न जीव है, वह तो है रे क्लीव समान।
दुनियामें जो फूल फुले हैं, फले हुअे हैं जितने फल
नारीने ही दिया अुन्हें है रूप-गन्ध-रस मधु निर्मल।
ताजमहलके पत्थर देखो, देखो ताजमहलके प्राण
अन्तरमें मुमताज नारि है, बाहरमें नर शाहजहान।
ज्ञानलक्ष्मी, गानलक्ष्मी, शस्यलक्ष्मी भी नारी है;
जगकी छविके कणकणमें नारीकी छवि ही न्यारी है।
पुरुष दिवस है आया लेकर तप्त भानुका तीखा दाह।
और कामिनी शान्त यामिनी, लाअी बादल, पवन-प्रवाह।
दिनमें देती है बल साहस, बनती जो निशीथमें वधु हैं;
मरुकी तृषा लिये आया नर, नारी अुसको देती मधु है।
हल बैलोंको पुरुष चलाकर करता अुर्वर भूमि सकल;
शस्य रोपकर अुन खेतोंको नारी करती सुश्यामल।
हल बैलोंको पुरुष चलाता, नारी लाती जल शीतल;
मिट्टी-पानीमें मिल अुपजी नये धानकी स्वर्ण फसल।
स्वर्ण रौप्यके भार
नारीके अंगोंको छूकर जगमें होते अलंकार।
नारीके ही विरह-मिलनमें नरने पाया कविका प्राण।
अुसकी कथा हुअी कविताअें; अुसके शब्द हुअे नवगान।

---

* बायबिलमें वर्णित कथाके अनुसार आदि पुरुष अेडमको आदि नारी अीवा (Eve) ने ही निषिद्धफल खानेको विवश किया था। जिससे संसारमें पापका प्रवेश हुआ। किन्तु अिवा (हौवा) को भी यह कुमंत्रणा शैतानने दी थी। अतअेव आदि पापका भागी नारी नहीं; शैतान ही है। —अनुवादक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नर दिल क्षुधा, नारी दिल सुधा, सुधाय-क्षुधाय मिले
जन्म लभिछे महामानवेर महाशिशु तिले तिले।
जगतेर यत बड़ बड़ जय, बड़ बड़ अभियान,
माता भग्नी ओ वधूयेर त्यागे हअियाछे महियान्।
कोन रणे कत खून दिल नर लेखा आछे अितिहासे,
कत नारी दिल सींथिर सिन्दूर लेखा नाअि तार पाशे।
कत माता दिल हृदय अुपाड़ि, कत बोन दिल सेवा,
वीरेर स्मृति स्तम्भेर गाये लिखिया रखेछे केवा?
कोनो काले अैका हय नि क' जयी पुरुषेर तरवारी;
प्रेरणा दियाछे शक्ति दियाछे, विजयलक्ष्मी नारी।
राजा करितेछे राज्य-शासन, राजारे शासिछे रानी,
रानीर दरदे छूअिया गियाछे राज्येर यत ग्लानि।

पुरुष हृदय हीन,
मानुष करिते नारी दिल तारे अधिक हृदय ऋण।
धराय जाँदेर यश धरे ना क' अमर महामानव
बरसे बरसे जाँदेर स्मरणे करि मोरा अुत्सव।
खेयालेर बशे ताँदेर जन्म दियाछे विलासी पिता।
लव कुशे बने त्यजियाछे राम, पालन करेछे सीता।
नारीसे शिखाल शिशु-पुरुषेर स्नेह प्रेम दया माया,
दीप्त नयने पराल काजल बेदनार घन छाया।
अद्भुत रूपे परुष पुरुष करिलसे ऋण शोध,
बुके करे तारे चूमिलजे, तारे करिलसे अवरोध।

तिनि नर-अवतार:—
पितार आदेशे जननीरे जिनि काटेन हानि कुठार!
पार्श्व फिरिया शुये छेन आज अर्द्ध नारीश्वर
नारी चापा छिल अेतो दिन आज चापा पड़ियाछे नर!

से युग हयेछे बासी,
जे युगे पुरुष दास छिल ना क' नारीरा आछिल दासी!
वेदनार युग, मानुषेर युग, साम्येर युग आजि,
केह रहिबेना बन्दी काहार ओ, अुठिछे डंका बाजि।
नर यदि राखे नारीरे बन्दी, तबे अेरपर युगे
आपनारि रचा अै कारागारे पुरुष मरिबे भुगे।

युगेर धर्म अेअि—
पीड़न करिलेसे पीड़न अेने पीड़ा देबे तोमाकेअि।
लायी क्षुधा पुरुषने नारी देती अुसे सुधाका दान;
क्षुधा-सुधासे जन्म पा रहे महामनुजके ये सन्तान।
बड़े-बड़े जय हुअे जगतमें, बड़े-बड़े होते अभियान,
माँ, बहनोंके औ' बधुओंके परम त्यागसे सभी महान।
अितिहासोंमें भरा पड़ा है रणमें नरका शोणित दान
कहाँ लिखा है ललनाओंके सिन्दूरका नित दान महान।
वीरोंके जय-स्तम्भोंमें कहाँ लिखा है यह आख्यान
कितनी माताओं-बहनोंने दिया हृदय, सेवा, बलिदान।
कभी अकेली नहीं हुअी है विजयी पुरुषोंकी तलवार,
विजय लक्ष्मी नारी देती शक्ति, प्रेरणाका अुपहार।
राजा करते शासन जनपर, रानीके वश किन्तु नरेश
रानीकी ही कृपादृष्टिसे होते दूर प्रजाके क्लेश।

रे पुरुष जाति है हृदयहीन;
नारी मनुज बनाती अुसको देकर निज अन्तरका ऋण।
अिस पृथ्वीपर बहुत हुअे हैं अमर, यशस्वी, वर मानव
जिनकी स्मृतिमें वर्ष-वर्ष हम सभी मनाते नव अुत्सव।
अुन्हें कामनासे प्रेरित हो रसिक पिताने जन्म दिया
राम तजे लवकुशको पर सीताने अुनको बड़ा किया।
पुरुषोंके शिशुको नारीने दिया स्नेह ममता निर्मल
अुसके दीप्त नयनमें डाला घना, वेदनाका काजल।
अति विचित्र ढंगसे पुरुषोंने अिस ऋणका परिशोध किया।
जो अुनको है गले लगाती अुन्हें घरोंमें कैद किया।
निष्ठुर परशुरामको भी अवतार कहा करते सब जन,
पिता-वचनसे जिसने मांका निज कुठारसे किया हनन
अितने दिन तक नारि दलित थी आज दलित है देखो नर,
गौरीके चरणोंमें देखो गिरे अर्द्ध नारीश्वर शंकर।

आज पुरातन युग हैं बासी,
जिस युगमें था पुरुष मुक्त, नारी थी अुसकी दासी।
मनुष्यत्व वेदना, साम्यका नवयुग देखो, आया आज
नहीं किसीका बन्दी कोअी,—डंकेकी होती आवाज
नारीको बन्दिनी रखेगा नर तो भावी युगमें निश्चय
अपनी ही निर्मित कारामें पुरुष जातिका होगा क्षय।

युगका धर्म यही है भाअी,
पर पीड़न की पीड़ा अुत्पीड़कको ही होती दुःखदाअी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शोनो मर्त्येर जीव !
अन्येर जत करिबे पीड़न, निजे हबे तत क्लीव !
स्वर्ण रौप्य अलंकारेर यक्षपुरीते नारी,
करिल तोमाय बन्दिनी, बल कोन्‌से अत्याचारी ?
आपनारे आज प्रकाशेर तव नाहि सेहि व्याकुलता,
आज तुमि भीरु आड़ाले थाकिया नेपथ्ये कओ कथा
चोखे चोखे आज चाहिते पारो ना; हाते रुलि, पाये मल,
माथार घोम्‌टा, छिँडे फेल नारी भेंगे फेल ओ शिकल !
जे घोम्‌टा तोमा करियाछे भीरु ओड़ाओसे आवरण ।
दूर करे दाओ दासीर चिन्ह जेया जत आभरण !
धरार दुलाली मेये ।
फेरो नात आर गिरिदरीबने शाखी सने गान गेये ।
कखन्‌ आसिल "प्लूटो" जमराजा निशीथ पाखाय अुड़े,
धरिया तोमाय पुरिल ताहार आँधार विवर-पुरे ।
सेहि से आदिम बन्धन तव, सेहि हते आछ मरि;
मरणेर पुरे; नामिल धराय सेहि दिन विभावरी ।
भेंगे यमपुरी नागिनीर मत आय मा पाताल फूड़ि ।
आँधारे तोमाय पथ देखाबेना तोमारि भग्न चूड़ि ।
पुरुष यमेर क्षुधार कुकुर मुख ओ-पदाघाते
लुटाये पड़िबे ओ चरण-तले दलित यमेर साथे !
अेतदिन शुधु बिलाले अमृत, आज प्रयोजन जबे
जे-हाते पियाले अमृत, से-हाते कूट विष दिते हबे,
से दिन सुदूर नय—
जे दिन धरणी पुरुषेर साथे गाहिबे नारीर ओ जय ।

सुनो मर्त्यके जीव !
जितना तुम करते पर पीड़न, अुतना ही होते हो क्लीव ।
स्वर्ण रौप्यके अलंकारके यक्षपुरीमें, हे नारी,
तुम्हें बनाया किसने बन्दी, कहो कौन अत्याचारी ?
भीरु बनी तुम लुकछिपकर नेपथ्य, आड़में करती बात
आत्माको विकसित करनेकी चाह नहीं अब तुममें, मात ।
अवनत मुखी, नयन नत तेरे, करमें कंकण, पग मंजीर
घूँघट मुखका फाड़ फेकदो, भग्न करो तनकी जंजीर ।
जिस घूँघटने भीरु बनाया दूर करो वह अवगुण्ठन;
दूर करो आभरण, तुम्हारे दासीपनके चिह्न पुरातन ।
मा वसुन्धराकी कन्या तुम परम दुलारी कोमल प्राण
नहीं विचरती अब तुम गिरिवनमें चिड़ियों संग गाते गान
कब आया प्लूटो, यमराजा चढ़ निशीथके काले रथपर;
तुम्हें पकड़ पाताल पुरीमें बन्द किया अुसने सत्वर ।
यमपुरमें आदिम बन्धनमें जकड़ी तुम मरती हो, मात
अुसी समयसे मर्त्यलोकमें अुतरी है यह काली रात ।
क्रुद्ध नागिनी-सी निकलो तुम तोड़-फोड़ पाताल पुरी
तममें पथ दिखलाती तुमको तेरे करकी फूटी चूड़ी ।
यमओ'यमका क्षुधा-खान यह पुरुष जाति खाकर आघात
होकर दलित तुम्हारे चरणोंमें लोटेंगे दोनों, मात ।
अब तक थी तुम सुधा बाँटती, आज जरूरत पड़नेपर
अमृतवाले करसे बाँटो कालकूटका परम जहर ।
वह दिन दूर नहीं है निश्चय
जब धरणी पुरुषोंके सँग नारीकी भी गावे गी जय ।

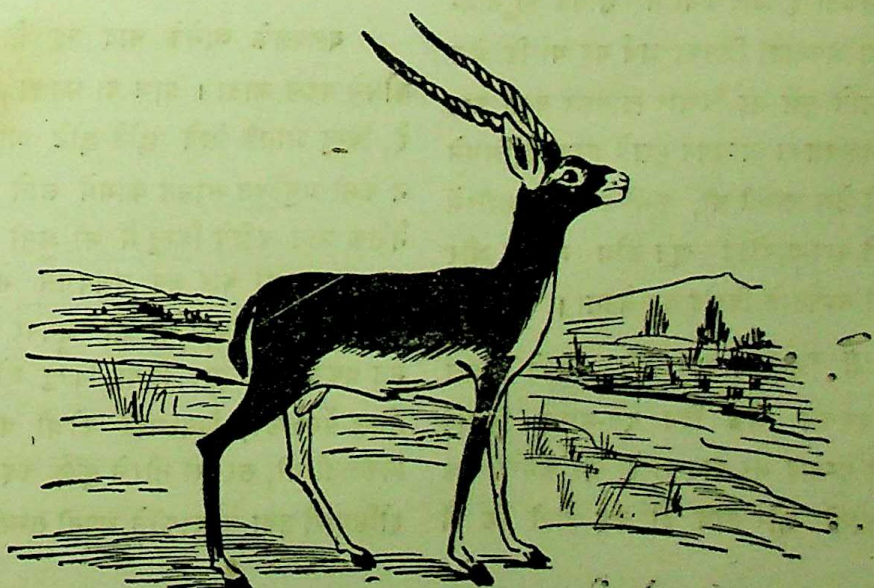

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यलबल और मैं

: श्री पितरस :

यलबल लड़कियोंके कालेजमें थी, लेकिन हम दोनों केम्ब्रिज यूनिवर्सिटीमें अेक ही विषय पढ़ते थे, अिसीलिये लेक्चरके समय प्रायः भेंट हो जाती थी। अिसके अतिरिक्त हम दोनों मित्र भी थे, कअी बातोंमें हम दोनों शरीक होते थे। चित्र और संगीतका चसका अुसे भी था। मैं भी अिन दोनोंका शौकीन; सो दोनों मिलकर गैलरियोंमें जाते। .दोनों अँग्रेजी साहित्यके विद्यार्थी थे। पुस्तकोंको लेकर वादविवाद चलता था। हममेंसे कोअी नयी किताब पढ़ता या किसी नये लेखक के बारेमें जानकारी पाता तो दूसरेको अवश्य परिचित कर देता और फिर हम दोनों मिलकर अुसके बारेमें अच्छे या बुरेका निर्णय देते।

हम दोनोंने बीसवीं सदीमें परवरिश पाअी थी, स्त्री और पुरुषकी बराबरीके क़ायल ज़रूर थे, फिर भी अपने विचारोंमें और कभी कभी अपने आचरणमें भी हम अिस समानताकी बातको भूल जाते थे। किन्हीं कारणोंसे यलबल अैसी सुविधाका प्राप्त करना अपना अधिकार समझती थी जो केवल किसी बूढ़ेको ही प्राप्त हो सकती है और कभी मैं शासक या मार्ग-दर्शकका रवैया अपनाता जिसका अर्थ यह था कि अेक पुरुष होनेके नाते मुझे यह विचार ख़ासकर बहुत कष्ट देता था कि यलबलका अध्ययन मुझसे गहरा है, अिससे मेरे पुरुषत्वको ठेस लगती थी, कभी-कभी मेरे शरीरमें मेरे अेशियायी बाप-दादोंका खून जोश मारता और मेरा मन नयी सभ्यतासे विद्रोह कर बैठता।

किन्तु मैं अिस बातको कैसे आँखसे ओझल करता कि यलबल अेक दिन दस-बारह किताबें खरीदती और सप्ताह भर बाद अुन्हें मेरे कमरेमें फेंक कर चली जाती और साथ ही कह जाती कि मैं अिन्हें पढ़ चुकी हूँ, तुम भी पढ़ चुकोगे तो अिनके बारेमें चर्चा करेंगे।

पहले तो अेक सप्ताहमें दस-बारह किताबें समाप्त करना मेरे लिये कठिन था, और समझ लीजिये अगर पुरुषोंकी लाज बचानेके लिये रातकी नींद हराम करके अिन सबका पढ़ डालना सम्भव भी होता तो भी अिनमें दो या तीन किताबें दर्शन या आलोचनाकी अवश्य अैसी होतीं कि अुनके समझनेके लिये मुझे काफी समय लगता, अतः सप्ताह भरकी मगजपच्चीके बाद मुझे अेक औरतके सामने यह स्वीकार करना पड़ता कि मैं अिस दौड़में पीछे रह गया हूं। जबतक वह मेरे कमरेमें बैठी रहती, मैं कुछ खिसियाना-सा होकर अुसकी बातें सुनता रहता और वह बिल्कुल विद्वानोंकी तरह बातें करती। मैं जब अुसके लिये दरवाजा खोलता था अुसकी सिगरेटके लिये दिया सलाअी जलाता या अपनी सबसे ज्यादा आरामदेह कुर्सी अुसके लिये खाली कर देता तो वह मेरी अिन सेवाओंको स्त्रियोंके अधिकारके रूपमें गुरुके अधिकारके रूपमें स्वीकार करती थी।

यलबलके जानेके बाद यह तिरस्कार क्रमशः क्रोधमें बदल जाता। प्राण या धनका बलिदान सरल है, किन्तु आनके लिये छोटे-छोटे आदमी भी कभी न कभी अनुचित साधन काममें लाते हैं। अिसे मेरा नैतिक पतन कहिये किन्तु मैं भी अुसी स्थितिमें पहुँच गया। अगली बार जब यलबलसे भेंट हुअी तो जो पुस्तकें मैंने नहीं पढ़ी थीं तो अुनपर भी मैंने अपना मत प्रकट करना शुरू किया, किन्तु जो कुछ कहता था सँभल-सँभलकर, विवरणकी कोअी बात मुँहसे नहीं निकलती थी, सरसरी तौरसे कुछ कह देता और बड़ी होशियारी तथा चालाकीसे अपनी सम्मति प्रकट करता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी अुपन्यासके बारेमें यलबलने मुझसे पूछा तो मैंने अुत्तर दिया —

हाँ अच्छा है, लेकिन कुछ अैसा अच्छा भी नहीं, लेखक वर्तमान युगके दृष्टिकोणको कुछ निभा नहीं सका। फिर भी कुछ बातें निराली हैं, बुरी नहीं।

कनखियोंसे यलबलकी तरफ देखता गया। अुसे मेरी चालाकी बिल्कुल मालूम नहीं हुअी। नाटकके बारेमें कहा करता था—

"हाँ पढ़ा तो है, लेकिन अभीतक मैं यह फैसला नहीं कर सका कि जो कुछ पढ़नेवाला अनुभव करता है, वह स्टेजपर भी बाकी रहेगा या नहीं? तुम्हारा क्या विचार है?"

और अिस तरह अपनी आन भी क़ायम रहती और चर्चाका बोझ भी यलबलपर डाल देता। आलोचनाकी पुस्तकके बारेमें फ़रमाता—

"अिस आलोचकपर अठारहवीं सदीके आलोचकों का कुछ-कुछ असर मालूम होता है, किन्तु यों ही, हलका-सा और कविताके बारेमें अिसके विचार दिलचस्प हैं, बहुत दिलचस्प।"

धीरे-धीरे मुझे अिस फ़नमें कमाल हासिल हो गया। जिस प्रवाह और विशेषताके साथ मैं बेपढ़ी किताबोंपर चर्चा कर सकता था अुसपर मैं स्वयं आश्चर्य करता था।

अब मैं यलबलसे दबता नहीं था। अुसे भी मेरे ज्ञानको स्वीकार करना पड़ा। यदि वह सप्ताहमें दस पुस्तकें पढ़ती थी तो मैं केवल दो दिनके बाद अुन सब पुस्तकोंपर सम्मति प्रकट कर सकता था। अब अुसके सामने ग्लानि अनुभव करनेका कोअी सवाल नहीं था। मेरी पुरुष-आत्मामें अिस विजयके कारण श्रेष्ठत्व आ गया था। अगर अब मैं अुसके लिये दियासलाअी जलाता या कुर्सी खाली करता तो श्रेष्ठत्वके भावसे जैसे अेक अनुभवी नवयुवक अेक नादान और कमज़ोर बच्चीकी रक्षा कर रहा हो।

हो सकता है कुछ लोग मेरे अिस फरेबको न सराहें लेकिन मैं कमसे कम पुरुष-वर्गसे अिसकी दाद जरूर चाहता हूं, औरतें मेरी अिस हरकतके लिये मुझपर दोहरी-दोहरी लानतें भेजेंगी कि अेक तो मैंने मक्कारी और झूठसे काम लिया और दूसरे अेक औरतको धोखा दिया। अुनकी तसल्लीके लिये मैं यह कहना चाहता हूं कि आप विश्वास कीजिये कि कअी बार अेकान्तमें मैंने अपने-आपको बुरा-भला कहा। कभी कभी अपने आपसे घृणा होने लगती, साथ ही अिस बातका भुलाना भी कठिन हो गया कि मैं बिना पढ़े ही विद्वत्ताकी धाक जमाता हूं और यलबल तो ये सब किताबें पढ़ चुकनेके बाद बातचीत करती है। मैं अपनी अज्ञानता प्रगट नहीं होने देता। लेकिन वास्तविकता तो यही है कि मैं अुन किताबोंको नहीं पढ़ता अिस विचारसे मुझे दुःख भी होता था। पहले मैं यलबलको विद्या-प्रेमी समझता था अब पवित्रता और निश्छलताकी देवी भी मानने लगा।

बीमारीके समय मेरा दिल ज्यादा नरम हो जाता है। ज्वरके समय बाजारू अुपन्यास पढ़ते हुअे मेरी आँखोंसे आँसू बहने लगते हैं। स्वस्थ होनेपर मुझे अपनी अिस कमजोरीपर हँसी आती है, किन्तु अुस समय अपनी कमजोरीका अनुभव नहीं होता। मेरा दुर्भाग्य कि मुझे अुन्हीं दिनों हल्का-सा अिन्फ्लुअेञ्जा हुआ। बहुत कष्ट भी नहीं था फिर भी बीते हुअे जीवनके छोटे-छोटे पाप पहाड़की तरह दिखायी देने लगे। यलबलका विचार आया तो हृदयने धिक्कारा। बहुत देरतक मैं बिस्तरपर करवटें बदलता रहा। सन्ध्याको यलबल कुछ फूल लेकर आयी, समाचार पूछा, दवा पिलायी, माथेपर हाथ रखा। मेरे आँसू टप-टप गिरने लगे। मैंने कहा—(मेरी आवाज़ भर्रायी हुअी थी) "यलबल, मुझे भगवानके नामपर क्षमा कर दो।" अिसके बाद मैंने अपना अपराध स्वीकार किया। और अपने आपको सज़ा देनेके लिये अपने छल-कपटका पूरा ब्यौरा सुना दिया। प्रत्येक पुस्तकका नाम लिया जिसपर मैंने बिना पढ़े लिखे लम्बे विद्वत्तापूर्ण भाषण दिये थे। मैंने कहा—यलबल, पिछले सप्ताह तुम जो तीन किताबें मुझे दे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गअी थीं अुनके बारेमें मैं तुमसे कितनी बहस करता रहा हूँ, लेकिन मैंने अुनका अेक अक्षर भी नहीं पढ़ा। मैंने कोअी न कोअी अैसी बात ज़रूर कही होगी जिससे मेरी पोल तुम्हारे आगे खुल गअी होगी।"

कहने लगी — "नहीं तो।"

मैंने कहा — "अुपन्यास तो मैंने पढ़ा ही न था। पात्रोंके सम्बन्धमें मैं जो कुछ बक रहा था वह सब मनगढन्त था।"

कहने लगी — "कुछ ग़लत भी न थी।"

मैंने कहा — "कथानकके बारेमें मैंने यह विचार प्रकट किया था कि ज़रा वह ढीला है। यह भी ठीक था?"

कहने लगी — "हाँ, कथानक कहीं-कहीं ढीला जरूर है।"

अिसके बाद मेरे पिछले छल-कपटपर वह और मैं, दोनों हँसते रहे। यलबल जाने लगी तो बोली — "तो वे पुस्तकें मैं लेती जाअूँ?"

मैंने कहा — "मुझे अपने सुधारका अवसर तो दो। मैंने अिन पुस्तकोंको अब तक नहीं पढ़ा। लेकिन मैं अब अिन्हें पढ़नेका विचार रखता हूँ। अिन्हें यहीं रहने दो। तुम तो अिन्हें पढ़ चुकी हो।"

कहने लगी — "हाँ, मैं तो पढ़ चुकी हूँ। अच्छा मैं यहीं छोड़ जाती हूँ।"

अुसके चले जानेके बाद मैंने अुन किताबोंको पहली बार खोला। तीनोंमेंसे किसी अेकके पृष्ठ भी अलग नहीं हुअे थे। यलबलने भी अुन्हें अभीतक नहीं पढ़ा था।

मुझे स्त्री और पुरुषकी बराबरीमें अब कोअी सन्देह नहीं था।

[अनुवादिका — श्रीमती नज़मुन्निसा बेगम]

अुत्तरप्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत

१. वर्द्धमान	१८००)	पुरस्कार	मूल्य ६)
२. शेरोसुख़न	५००)	,,	मूल्य ८)
३. शेरोशायरी	५००)	,,	मूल्य ८)
४. पथचिह्न	१०००)	,,	मूल्य २)
५. वैदिक साहित्य	६००)	,,	मूल्य ६)
६. मिलनयामिनी	५००)	,,	मूल्य ४)

सन् १९५२ के नवीन प्रकाशन

१. हमारे आराध्य (पं. बनारसीदास चतुर्वेदी) मू. ३)
२. संस्मरण ,, ,, मूल्य ३)
३. रेखाचित्र ,, ,, मूल्य ४)
४. रजतरश्मि (डा० रामकुमार वर्मा) मूल्य २॥)
५. आकाशके तारे धरतीके फूल (क. मिश्र) मू. २)
६. जैन जागरणके अग्रदूत (अ. प्र. गोयलीय) मू. ५)

पता :— भारतीय ज्ञान पीठ, दुर्गाकुण्ड रोड, बनारस ५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीत

: श्री भवानी प्रसाद तिवारी :

अगतिकी प्रगतिकी बड़ी धूम लेकिन
वही लास है बस कि नट ही नये हैं।

* * *

मनुज जन्म लेकर बिना मौत डूबा
न जो ढूँढ़ पाया सनेही सहारे
दिवस भर तिरी जो तरी ज़िन्दगीकी
कहीं रातको रोज़ लगती किनारे
शिखरसे अुदधि तक कि निर्बाध बहती
नदी तो वही बस कि तट ही नये हैं
अगतिकी प्रगतिकी बड़ी धूम लेकिन
वही लास है बस कि नट ही नये हैं।

* * *

तिमिर अप्सरीने मदिर बेसुधीमें
शिथिल–भुज–लता–पाश–बन्दी बनाया
किरण सुन्दरीने सुबह गुदगुदाकर
सुनहले करोंसे पलक छू जगाया
भरे जा रहे जागरण स्वप्नमें जो
वही रंग हैं, बस कि पट ही नये हैं
अगतिकी प्रगतिकी बड़ी धूम लेकिन
वही लास है बस कि नट ही नये हैं।

* * *

भले ही मुझे तुम पुरातन समझ लो
चिरन्तन स्वरोंपर अुठा जोश हूँ मैं
तुम्हें भ्रम हुआ है, अचेतन नहीं हूँ
अमर तालपर झूम मदहोश हूँ मैं
जिसे हम पिये औ' जिये जा रहे हैं
सुरा है वही बस कि घट ही नये हैं
अगतिकी प्रगतिकी बड़ी धूम लेकिन
वही लास है बस कि नट ही नये हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन पत्र और आलपीन

: श्री राजेन्द्र यादव :

पता नहीं यह कौनसा नियम है कि अेक बार जहाँ चोट लग जाती है, लाख बचानेपर भी चोट फिर-फिर वहीं लगती है !

आज ज़रा-सी असावधानीसे फिर पिन वहीं चुभ गयी जहाँ आजसे कुछ समय पहले चुभ गयी थी और चोट अभी तक ठीक नहीं हुअी थी।

और असावधानी भी मैं अिसे क्या कहूँ ? कोअी बात भी हो असावधानी की ! ज़रा-सी बात कि तीन पत्र अेक आलपीनसे नत्थी थे और वह आलपीन जैसे अुन पत्रोंसे चिपके रहनेसे जंग खा गयी थी। अिन तीन पत्रोंके अलावा अुस आलपीनमें कुछ और भी कागज़के कोरे-टुकड़े अिस तरह चिपके थे कि अनायास ही लगता था अवश्य ही कुछ और पत्र भी अिससे बिंधे होंगे। जो बादमें फट गये या फाड़ डाले गये और अब अुनके ज़रासे टुकड़े चिपके रह गये हैं। बहरहाल मैं अितना जानता हूँ कि होश मुझे अुस समय आया था जब अिन पत्रों और कागज़के टुकड़ोंसे अलग करनेके प्रयत्नमें यह आलपीन टूट गयी थी और अुसका टूटा हिस्सा निर्दयता पूर्वक मेरी अुँगलीके पहले घावमें घुस गया था तीनों पत्र धरतीपर जा पड़े थे और दर्दसे मैं कराह अुठा था !

सबसे अधिक आश्चर्यकी बात तो यह है कि अुँगलीमें पहली चोट भी आलपीनसे लगी थी। वह कैसे लगी अेक बड़ा किस्सा है जो समय और धैर्य दोनों चाहता है। अिस घटना और अुस घटनामें फर्क़ अितना है कि अुस बार आलपीन चुभनेसे मैं बेहोश हो गया था अिस बार जैसे बुरी तरह चौंककर दर्दके सहारे किसी गहरे कुँअेमें अुतर गया हूँ। अुस बार जो आलपीन चुभी तो अुँगली पक गयी रातभर जैसे कोअी प्राण खींचता रहा अैसी कसक मारती रही। सो नहीं सका। सुबह डाक्टरको दिखाया तो बोला अभी ठीकसे पका नहीं है, पकेगा तो ऑपरेशन होगा। और अुसने अैसी दवा बाँधी कि वह और पके... अब आप कल्पना कीजिये मेरे दर्द की ! जब अुसने दूसरे-तीसरे दिन चीरा तब जाकर आराम हुआ। और अब यह जैसे-तैसे ठीक होने आया तो ठीक अुसी जगह यह चोट लग गयी... ये कम्बख़्त आलपीनें.....

संक्षेपमें तो पहली बार बात यह थी कि मैं अत्यन्त व्यस्त भावसे अेक लेखके कुछ पन्नोंको अेक जगह अिकट्ठा करके पिन लगा रहा था कि अचानक रेडियोकी खबरकी तरफ ध्यान खुद ही चला गया। अुफ़ ! कैसी मशीनकी तरह अेनाअुन्सरने यह बात कह दी थी-- अुसके स्वरमें ज़रा भी कम्पन नहीं था, ज़रा भी गीलापन नहीं था, ज़रा भी... कोअी विशेष बात थी ही नहीं। अुसी भावहीन स्वरमें जिसमें ज़रा देर पहले अेक नये दियासलायीके कारखानेके — खुलनेकी बात बतायी थी अुसने कहा — "कल अपनी अेक टुकड़ीके साथ घिर जानेपर बड़ी बहादुरीके साथ लड़ते हुअे कैप्टेन किशोर वर्मा वीर गतिको प्राप्त हुअे। आज अुनका शव हवायी जहाज द्वारा श्रीनगरसे दिल्ली लाया जा रहा है....."

"भैया..." मैं अचानक चीख अुठा। सब घर-वाले अिकट्ठे हो गये। रोना-पीटना मच गया। जिस घरका पच्चीस वर्षका जवान लड़का, लड़ाअीमें यों मर गया हो आप अुसकी हालत सोचिये। घरसे भी जब तार आ गया तो खबर पक्की हो गयी। यह खबर पहले घर पहुँची थी—फिर घरवालोंने हमें तार दिया मेरी आँखोंमें रेखाका आँसुओंसे भीगा— बिखरे बालों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाला बेहाल चेहरा घूमता रहा— जो पिछले पाँच वर्षोंसे हठ किये बैठी थी कि शादी होगी तो किशोर भैयासे, नहीं तो जीवनभर कुमारी रहेगी।— नर्स, टीचर कुछ भी बनकर वह रहेगी। अगले महीने भैया छुट्टी लेकर आनेवाले थे और विवाहकी प्रारम्भिक रस्में होनेवाली थीं...अब...अब! कागज़ नत्थी करता हुआ हाथ विवश हो गया— हाथकी आलपीन बुरी तरह अँगलीमें घुस गयी। अुसे मैंने निर्दयतासे निकाल दिया था और खूनको दबाकर रोक दिया क्योंकि अैसी खबरके सामने अिस जरा-सी आलपीन चुभनेका क्या महत्व?

और अुस बातको चार महीने होने आये। घरमें अिन दिनों कैसी मनहूसियत छायी रही कि बयान नहीं की जा सकती। हर समय अैसा लगता जैसे अभी-अभी भैयाकी लाशको लोग जलाने ले गये हों। मनहूसियत कम होती गयी और दिलके घावकी तरह अँगलीका घाव भी पुरता गया। और आज या कलमें यह घाव बिलकुल ठीक हो ही गया था— अगर यह पिन फिर ठीक अुसी जगह न जा चुभती...

बात सिर्फ कलकी है। लेकिन अैसा लगता है जैसे अुसी वातावरणमें मैं वर्षोंसे रहा हूँ— रहूँगा। जैसे अब भी वहीं बैठा हूँ।

जिस स्थानपर मैं अिस समय बैठा हूँ वह रेलके पुलिस स्टेशनका कमरा है। बाबूजी स्टेशन अिंचार्ज हैं। गर्मियोंकी छुट्टियाँ हो गयी हैं— सो यहाँ आ गया हूँ। सुबह-शाम जब भी अिच्छा होती है— या जी अूबता है मैं घूमने या रेल देखनेके लिये यहाँ आ जाती हूँ। रेल आनेके समयकी प्लैटफॉर्मकी हलचल लोगोंका अुतरना चढ़ना— तरह-तरहकी आवाज़ें— अिनमें आनन्द लेना मेरा शौक है। कभी पुलपर खड़ा हो जाता हूँ तो नीचेसे गुजरती रेलें देखकर मन अेक स्वर्गीय पुलकसे भर अुठता है। प्लैटफॉर्मपर घूमते-घूमते जब मन अुकताया बाबूजीके दफ्तरमें आ जाता हूँ, किसी सिपाहीसे कह दिया— अेक कोल्डड्रिंक या चाय लानेको बैरासे बोल दो। मज़ेमें पंखेके नीचे बैठकर अेकसे अेक नयी घटनाअें सुनता हूँ— आज यह जेब काटते यों पकड़ा गया, ये स्त्री पुरुष कहीं भागकर जा रहे थे— यह पाँच सालका फरार है। हाँ, दफ्तरके बाहर— प्लैटफॉर्मकी ओर नोटिस बोर्डपर अिनामी लोगोंकी फोटो और अितिहास देखना भी अेक बड़ा रोचक विषय है। अुफ़! दो घण्टे आप किसी भी थानेमें बैठ जाअिये। आपको अैसा लगेगा जैसे संसारमें पाप, हत्या लूटमार व्यभिचारके सिवा कुछ भी बचा ही नहीं है!

आज बाबूजी रातभर यहीं रहे हैं। हालाँकि मुश्किलसे दो कदमपर क्वार्टर है— लेकिन खाना यहीं मँगाया था। सुबह भी आठ बजे ही वर्दी पहने खड़े-खड़े खाना खाया था। स्टेशनपर अेक विचित्र ढंगकी निस्तब्धता और अेक विशेष ढंगकी हलचल अेक साथ ही देखी जा सकती थी। जैसे सभी लोगोंके दिल धसक गये हों— या ब्लॉटिंग पेपर लगाकर किसीने चेहरेकी सारी रौनक सोख ली हो। बात यह हुअी कि कल शामको छः बजेसे यहाँसे दूसरे तीसरे स्टेशनके बीच— सत्रह मील— फ़िफ़्टीन डाअुन अेक्सप्रेस और अेक मालगाडी लड़ गयीं। जब दोनों तरफ़से लाअिन-क्लियर दिये जा चुके तब बादमें पता लगा कि दोनों अेक ही पटरीपर चल दी हैं। गुड्स ट्रेनमें मिलटरीकी लारियाँ, टैंक, पैट्रोलकी टाँकियाँ थी। सुनते हैं अेक्सप्रेसके अगले तीन डिब्बे तो जैसे अेक दूसरेमें घुस गये। डिब्बे चूर-चूर हो गये, अिंजन नीचे जा गिरा। सुनते हैं अिंजनके बाद दूसरा या तीसरा डिब्बा आर. अेम. अेस. का था— वर्ना पता नहीं कितनेका नुकसान और होता। ट्रॉलियाँ, क्रेन अेम्बुलैन्स और दर्शक अधिकारी सभी पहुँच चुके थे। गार्ड हिरासतमें था और ट्रेनगार्ड अस्पतालमें बेहोश पड़ा था। अपने दोनों असिस्टेण्टों और दूसरे सिपाहियोंके साथ बाबूजी वहीं जमे थे। जितनी लाशें मिली थीं अुनमें अभी दोकी शिनाख्त नहीं हो पायी थी।

मैं स्वयं बड़ा अुद्विग्न और अुत्सुक था। सुबह ही बाबूजीके साथ स्टेशनपर आ गया था। आज स्टेशनके सारे अधिकारी वहीं गये हुअे थे।

'प्लैटफॉर्म' पर घूम-फिरकर बाबूजीके दफ्तरमें आ गया। अुनकी खाली कुर्सीपर बैठकर पैर, मेज़पर,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखे हुअे अखबारपर फैला दिये। बगलके बन्द दरवाज़ेकी ओर मुँह करके पुकारा— "मुंशीजी !"

थाना अेक तरहसे खाली पड़ा था। अुधरसे आते समय देख आया था— जेलके मोटे सींखचोंके पीछे अेक गिरहकट बड़े आरामसे बैठा बीड़ी पी रहा था। दरवाज़ेपर सन्तरी खड़ा था। अुसने साफा अुतारकर किवाड़की चटखनीपर टाँग दिया था और बन्दूक अेक तरफ़ टिकाकर बड़े आध्यात्मिक 'मूड' में हथेलीपर अँगूठेसे चूना-तम्बाकू मल रहा था। अुसने अेक हाथसे अपनी बाहर निकल आती चुटियाको जबर्दस्ती अपनी चिकनी खोपड़ीपर साफेको घुमाकर भीतर करनेकी कोशिश करते हुअे आकर पूछा— "भैयाजी, मुंशीजी तो अे. अेस. अेम. के दफ्तर गये हैं— कुछ पूछकर टाअिप कराने। शायद कोअी आदमी वहाँसे लौटा हो। कुछ काम है क्या ?"

"और कोअी नहीं है ?" मैंने पूछा।

"रामगुलाम है— वह ज़रा सुरती लेने गया है पानवालेतक— अभी आता होगा।"

"अच्छा, किसी कुलीसे कह दो बैरासे अेक बोतल कोका कोलाको बोल दे।"

किवाड़ बन्द करके वह चला गया—तो सिरको कुर्सीके पीछेवाले हिस्सेसे टिकाकर मैं अूपर पंखेकी घूमती हुअी पंखड़ियोंको देखने लगा। दो-चार मिनट बाद योंही बाँयें हाथसे बाअीं ओरवाली दराज खोल डाली। अुसमें कागज़ भरे थे। बिना देखे ही हाथसे टटोलकर अेक लिफाफे जैसा कागज अुठा लिया सामने की ओर लाकर अधखुली आँखोंसे देखा—पीला बादामीसा कागज़का लिफाफा था--अुसपर बाबूजीके हाथकी लिखावटमें लिखा था-- "अुसकी जेबमें पाये गये खतोंसे चौंककर सीधा हुआ—किसकी ? झुककर दो-अेक लिफाफे और देखे, जिन दो लाशोंकी शिनाख्त नहीं हो पाया है अिन्हींमेंसे किसीकी जेबमें यह खत पाये गये थे।

फौरन लिफाफेमेंसे कागज निकाले। पत्र चार मोड़में थे। गन्दे किनारों और तहके निशानोंसे पता चलता था कि काफी दिनों अुसकी जेबमें रखे रहे थे – और ये तीनों ही अुस जंग लगी आलपीनसे नत्थी थे—अिसके साथ ही कागजके कुछ फटे कोने भी थे—अुन पत्रोंके अवशेष जो अिसी पिनसे बिंधे होंगे। यह असम्भव था कि अैसी हालतमें पाये गये अुन पत्रोंको मैं न पढ़ता:--

सामने ही पत्रपर निगाह पड़ी—

डियर दोस्त,

जबसे सुना है कुछ अजब पसोपेशमें हूँ। विश्वास नहीं होता। न कोअी चिट्ठी न समाचार, तुम्हें आखिर हो क्या गया कि यों भाग खड़े हुअे ? न किसीसे कुछ कहना न सुनना। जरा-सा हिंट तो दिया होता मेरे यार। छुट्टियोंमें जब अचानक घर मिलने गया तो तुमसे मिलने भी पहुँचा—बाबूजीने जब बताया तो सच जानों मेरे अूपर तो जैसे आसमान टूटा ! चार पाँच महीनेसे तुम्हारा कोअी पता नहीं है-बाबूजीसे पता चला।

तुमसे तो, सच मानो, अिस तरहकी ज़रा भी अुम्मीद नहीं थी कि यों घर छोड़कर भाग खड़े होगे। मुझे आश्चर्य है कि तुम्हारे जैसा आदमी कैसे जिन्दगीके संघर्षोंसे घबराकर भाग गया ? कॉलेजका सबसे गम्भीर प्रतिभाशाली विद्यार्थी—दूसरे लड़के जिसका दिनरात जिक्र करते थे; प्रोफेसर क्लासमें हमेशा डरता था कि कहीं कुछ गलत न कह जाय— आँख हमेशा अुसपर रहती थी। प्रशंसा और मुग्ध भावसे लड़कियाँ जिसे हमेशा छिपी नजरोंसे देखा करती थीं—जो हमेशा क्लासमें फर्स्ट आया अुसे आखिर हो क्या गया ?

घर छोड़नेसे पहले तुम्हारी मानसिक स्थितिका अन्दाज मैं तुम्हारे बाबूजीके वर्णनसे लगाता हूँ। यह समझकर कि तुम मेरे पास अवश्य आये होगे या कमसे कम मैं तुम्हारा पता जरूर जानता होअूंगा, तुम्हारे बाबूजीने साथवाला पत्र मेरे पास भेजा था कि मैं अुचित पतेपर भेज दूँ—बाबूजीने अेक पत्र मुझे भी लिखा कि मैं तुम्हें समझा-बुझाकर लौटा दूँ। अिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरहके झगड़े तो घरोंमें होते ही रहते हैं। और भाओ, दिलसे कौन चाहता है कि यों चख-चख हो—जब आदमी विवश हो जाता है तभी तो यह स्थिति अुत्पन्न होती है। अुनकी शिकायत यह भी है कि तुममें यह परिवर्तन या गैर-जिम्मेवारीकी भावना शादीके बादसे आओ है, अिससे पहले तो तुम अेक आदर्श पुत्र थे। वह लड़की देखनेमें तो सीधी सादी चुप लगती है लेकिन भीतरसे अैसी काट करनेवाली होगी— अिसकी कौन कल्पना कर सकता था! स्वभाव तो किसीके चेहरेपर लिखा नहीं रहता—सब जानते ही जान पाते हैं। अुनके दिलमें तुम्हारी तरफसे कोओ दुर्भावना नहीं है। अिस कहने-सुननेको भूलकर तुम्हें चाहिये कि लौट आओ।

हो सकता है बहुत-सी बातें तुम्हारे बाबूजीने अपने दृष्टिकोणसे देखी हों। लेकिन अिसमें जो सत्य है अुससे कैसे अिन्कार करूँ? तुम यों, कायरकी तरह संसारके संघर्षोंसे मुँह छिपाकर भाग जाओगे, अिसकी तो मैंने कल्पना भी नहीं की थी। मैं जानता हूँ आज जैसी निराशा और बेकारी कभी नहीं आयी। शायद अिस संख्यामें पढ़े लिखे बेकार कहीं भी नहीं हैं। अपनी अेक घटना याद आती है। मलाबारमें मुझे रास्ता पूछना था अेक सड़क का। अेक जगहसे सड़क दो तरफको जाती थी--वहाँ कोओ बोर्ड नहीं था। मैं राह देखने लगा कि कोओ आये और मैं अुससे पूछूँ। अचानक दो पढ़े लिखे शिक्षितसे व्यक्ति आते दिखायी दिये। मैंने पूछा— अलप्पीका रास्ता किधरसे जाता है?— वे दोनों बुरी तरह हाथ झटककर चले गये। अर्थ था—हमें नहीं मालूम, हमसे मत बोलो! मुझे अुनके व्यवहार पर बड़ा आश्चर्य हुआ—पढ़े-लिखे शिष्ट आदमी! लगभग आधे फर्लांग जाकर न जाने क्या सोचकर वे लौटे— पूछा-- "किधरका रास्ता आपने पूछा?" मैंने बताया तो बोले-- "आप नये आदमी मालूम होते हैं"। मैंने सोचा, अजब आदमी मालूम होते हैं। अुनके अिस व्यवहारका कारण पूछा, तो बोले--"यहाँकी स्थितिसे विवश होकर हमें यह व्यवहार करना पड़ता है। लोग अिस तरह बातचीत करनेका बहाना ढूँढ़ते हैं, फिर झट अपनी बेकारीका रोना लेकर सहायताकी भीख माँगने लगते हैं!" यह है स्थिति अुस जगहकी, जहाँ भारतवर्षमें सबसे अधिक अर्थात् पचहत्तर प्रतिशत शिक्षा है!

और नेता लोग रोना रोते हैं कि हम यह कर रहे हैं, हम वह कर रहे हैं। अुनसे कुछ नहीं होता तो न सही, लेकिन ये अुल्टी-सीधी बातें बककर हमें चिढ़ाअें तो नहीं! और अेक तुम हो, जब कि अिस समय संगठित प्रयत्नकी जरूरत थी—यों घरसे भागकर चले गये हो!

तरह-तरहके अनुमान मैंने तुम्हारे विषयमें लगाये हैं। अुन्हींमेंसे अेक अनुमानके आधारपर यह पत्र तुम्हें भेज रहा हूँ। वैसे मैं जानता हूँ कि धर्मका ढोंग तुम्हें पसन्द नहीं रहा। अिसलिये यह प्रश्न ही नहीं अुठता कि तुम साधु-सन्यासी बनकर निकल गये होगे। डाकू बनकर तुम निकल नहीं सकते, हालाँकि आजके ज़मानेमें लीडर बननेका अिससे अच्छा कोओ दूसरा तरीका है ही नहीं। (कलके डाकू आजके रहनुमा हैं!)—न अिन लीडरोंको सबक़ देनेका अिससे अच्छा कोओ तरीक़ा है! फिर तुम किस अुद्देश्यको सामने रखकर निकल गये हो, समझमें नहीं आता— हो सकता है निरुद्देश्य ही निकल गये हो, लेकिन यह निरुद्देश्यता आखिर तुम्हें ले कहाँ गयी है?—कुछ तो पता चले!

घरवालोंकी बात घरवालोंपर छोड़ो, लेकिन मुझे तो लिखो कि मैं तुम्हारी क्या मदद कर सकता हूँ। अगर अुचित समझो तो मिलो। शायद कोओ हल हमलोग बैठकर सोच सकें!

तुम्हारा,
नवीन

पत्र खत्म करके अूपर सिर किया तो लड़का कोकाकोलाकी झागदार बोतल लिये खड़ा था। अिशारेसे कहा- रख दे और चला जा। वह चुपचाप चला गया, मैंने दूसरा पत्र पढ़ा—

प्रिय बेटा,

पड़ोसके रघूने सलाह दी है कि तुम्हारे दोस्तके पतेसे मैं लिखूँ— अिसपर भी लिखकर देख रहा हूँ।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जहाँ-जहाँ अुम्मीदें थीं, पच्चीस-तीस खत तुम्हें डाल चुका हूँ। हफ्तों अखबारोंमें निकलवाया। अब निराश होकर बैठ जानेके सिवा और कोअी चारा नहीं है। फिर भी बापका दिल है, नहीं मानता। सोचा अेक खत और सही। अगर मिल जाय तो यह तो लिख दो कि जहाँ रहो कुशलसे रहो। हम लोगोंको सन्तोष हो जाय। वैसे, जब जोश था तो जिसने जो कहा, किया। फोटो निकलवाये, खत डाले; जहाँ पता लगा, भागा गया। देवी-देवता मनाये और ज्योतिषी-पंडित पूछे। अब तो सब रास्ते खत्म हो गये हैं—हारकर भाग्यके भरोसे बैठ गया हूँ!

अब मैं सोचता हूँ कि पत्रों और फोटोंसे ही तुम्हें लौटना होता, तो तुम यों बिना कहे सुने चल क्यों देते? ठीक है बेटा, सब अपना-अपना वक्त है। पढ़ा-लिखा कर—खिला-पिलाकर—बड़ा कर दिया; किसी लायक बना दिया! तुम्हीं अब हमें आँख नहीं दिखाओगे तो कौन दिखायेगा? सन्तोष करनेको चार लड़के और हैं--तीन लड़कियाँ हैं। तुम्हारे ही न रहनेसे कुछ बनता-बिगड़ता थोड़े ही है, लेकिन अुस कम्बख्त औरतको कौन समझाये! ओछी जात! सिर देहलीपर देमारा है। खूब मोटे-मोटे गुमटे अुठ आये हैं। छातीमें घूँसे मार-मारकर नील डाल ली हैं—तभीसे आधी पागल हो गअी है। पड़ी है खाटपर। रो-रोकर आँखें सुजा ली हैं—खराबकर ली हैं! मैं तो परेशान हो गया हूँ अिस जिन्दगीसे! किसी दिन तोले भर अफीम खाकर सो रहूँगा, सब चक्कर मिट जायेगा। सारा घर अपने-अपने रास्ते जाया चहता है, समेटते-समेटते जिन्दगी बीत गअी! अपना खून पसीना देकर अिसे बनाया, अपनी सारी जवानी झोंक दी—किसीकी समझमें ही नही आता कुछ! बेजार हो गया हूँ अपनी अिस जिन्दगीसे। अैसा ही रहा तो किसी दिन रेलसे कट मरूँगा या छातीसे पत्थर बाँधकर जमनामें डूब मरूँगा! भाड़में जाय सब! जरा सोच कर रह जाता हूँ, छोटे-छोटे लड़के हैं; सयानी-सयानी लड़कियाँ हैं—क्या होगा अिन सबका मेरे बादमें! गिरस्ती कुछ ठीक-ठौरपर चलने लगे तो मैं तो सन्यास लेकर निकल जाअूँगा कहीं!

तुमसे बड़ी-बड़ी आशाअें थी बेटा, बुढ़ापेमें सहारा दोगे; बिखरती गृहस्थीको सँभालोगे; छोटे भाअी बहनोंको ठिकानेपर लगाओगे और जिन्दगीभर कोल्हूके बैलकी तरह जुटे हुअे हम बूढ़े-बुढ़ियोंको कुछ शान्तिकी साँस मिलेगी। लेकिन खैर, तुम्हें जो ठीक लगा सो तुमने किया। मैं क्या कहूँ, लेकिन घरके झंझटोंसे अूबकर मैं भी कहीं चला जाता, तो तुम अितने बड़े नही हो जाते! मुझे तुम्ही बताओ—और बेटा-बेटी होते काहेके लिये हैं? आज हमारी ज़रा-सी बात सुननेमें तुम्हारी अिज्जत अुतरती है, तुम्हारी बहूका अपमान होता है—तब तुम्हें मान अपमान और अिज्जत अुतरती नहीं लगी, जब रात-रातभर माँ गोदमें लिये बैठी रहती थी, जरा-सा बुखार हो जाता तो हफ़्तों नहीं सोती थी! अुस वक्त तुम्हारी बहू नहीं आयी, जब हम डाक्टरोंके हाथ जोड़ते थे। वैद्योंकी खुशामद करते थे। आज ज़रा-सी बातसे घरमें महाभारत मच जाता है।

और मुझे बताओ, गृहस्थीका यह कलह किस घरमें नहीं है? भाअी, जहाँ चार बरतन होते हैं खटकते ही हैं। अिनके लिये कोअी यों घर छोड़कर चल देता है? फिर मेरी समझमें नहीं आता, तुमसे किसीने कहा क्या है? अेम. अे. तक, जैसे हिम्मत थी, पढ़ाया। अब अगर यह पूछते हैं कि नौकरी मिली तो क्या बुरा कहते हैं? और तुमसे कब सहारेकी आशा करें? आखिर तुम्हें नौकरीके लिये और किस क्लासतक पढ़ाया जाय? नौकरी नहीं मिली--नौकरी नहीं मिली—सुनते सुनते तो परेशान हो गये। आदमी कोशिश करे तो कैसे नौकरी नहीं मिले। लेकिन जब मुफ्तका बिना हाथ-पैर हिलाअे खाना मिले, तो जरूरत क्या किसीको? बाप है, जिन्दगीभर खिलाया; और खिलायेगा। चोरीकरे भीख माँगे लेकिन तुम्हें तो खिलायेगा ही, कहींसे लाकर खिलाये। कभी अिन बूढ़ी हड्डियोंपर भी दया की होती बेटा! जिन्दगीभर क्लर्की करके यह कमा लिया-- यही क्या थोड़ा है? अब किस-किसको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करूँ ? तुम सबसे बड़े हो, तुम्हें पढ़ादिया। समझा, तुम अपनेसे छोटोंको पढ़ा लोगे, सँभाल लोगे। सब मिलके अपनी बहनोंको देख-दाख लेंगे। लेकिन भगवानकी मरजी।

तुम पाँच भाओ हो, लाख लड़ोगे-झगड़ोगे पर हो तो अेक ही खूनके। खूनका जोश रुकेगा कहाँ ? लेकिन भैया, वह नयी जो आयी है अुसे तुम्हारे खून और मुहब्बतसे क्या मतलब ? अुसे तो अपनी पड़ी है ! शादी अिसलिये की कि घरमें अेक बहू आ जायगी। बुढ़ियाको आराम हो जायेगा। गृहस्थीको देखने भालनेवाला अेक हो जायेगा। सब स्कूल कॉलेज जानेवाले बच्चे हैं; बुढ़ापेकी अुम्रमें भी तुम्हारी माँ चार बजेसे ही काममें लगी रहे-- यह देखा नहीं जाता था ! हमें यह थोड़े ही मालूम था कि घरमें बहू लाना गुड़हलका फूल और सेहका काँटा लाना हो जायेगा। दिनरातकी चख-चख ! बुढ़ापेमें दिमाग़ ठीक नहीं रहता, मैं भी तेज़ हो जाता था। तुम बुरा मानकर अुसका पक्ष लेकर लड़ने तो लगते थे लेकिन सच मानो, न जाने कैसा तुम्हारी बहूका स्वभाव है। घरमें किसीसे भी तो नहीं बनती ! किसीसे भी बनती होती तो, चलो हटाओं सोच लेते कि हमी लोगोंका स्वभाव खराब है। वह तभीसे अपने घर है ! अेक खत भी नहीं डाला।

अब मैं सब क्या रोना रोअूँ ? और रोनेसे फायदा भी क्या है ? केवल मेरे रोनेसे तुम पिघल ही जाते, तो यहाँ चुपचाप घरवालोंसे पड़ौसियोंसे आकर पूछ जाओ- कितना रोया हूँ ? भाग्यमें ही रोना बदा है तो दूसरा कोअी क्या करेगा ? अब तो अचानक कभी-कभी रोते-रोते लगता है कि शायद तुम आकर आसूँ पोछोगे—शायद तुम आकर मुझसे लिपट जाओगे।

बेटा, मैं तुम्हें कैसे विश्वास दिलाअूँ कि मैं सिर्फ अेक तुम्हें-चाहता हूँ। तुमसे मैंने अपनी गृहस्थी शुरू की थी ! और सब तो बादकी भरती है, मुझे अुससे कोअी प्रेम नहीं है। दिनरात मनको समझाता हूँ कि तुम, अीश्वर न चाहे, मर ही जाते, तो भी तो मैं सन्तोष करता ही। पर अेक कीलकी तरह तुम्हारा चेहरा रातदिन दिलमें चुभता रहता है।

तुम नहीं आना चाहते, न सही; पर अेक बैरंग पोस्ट कार्डमें यह तो लिख दो—तुम सुखी हो, खुश हो ! बहने रोती हैं, भाअी बिलखते हैं, माँ मरी जा रही है और बाप पागल हो गया है, सबको धीरज तो बँध जाअेगा—कि तुम आनन्दसे हो। कुछ नहीं तो यह तो लिख दो कि चिट्ठी तुम्हें मिल गअी है। और क्या कहूँ ?

तुम्हारा अभागा—बाप

पत्र पढ़कर दिल पिघल अुठा—सूनी आँखोंसे अुसे देखता रहा.....

"भैयाजी, मुझे बुलाया था ?" टाअीप किया हुआ कागज़ लिये हुअे मुन्शीजीने अचानक दरवाजा खोलकर पूछा।

मैं चौंका। ज़रा गला साफ़ करके कहा—"नहीं, हो गया काम अब तो।" और मैं अपने आपमें खो गया—बात करनेकी स्पष्ट अनिच्छा दिखाता हुआ। मुन्शीजी थोड़ी देर खड़े रहे फिर मेरी मेज़पर वह टाअीप किया हुआ कागज़ पेपरवेटसे दबाकर चले गये। शायद बाबूजीके लिये रखकर चले गये थे।

मैंने गहरी साँस लेकर अगला पन्ना पलटा—

मेरे दिलके चाँद,

यह आशाकी डोर, अुम्मीदका तार मकड़ेके जालेकी तरह न समाप्त होनेवाला है—लेकिन कितना कमज़ोर।

सोचा था, तुम्हें कोअी पत्र नहीं लिखूँगी। जब अपनी अिच्छासे ही तुम गृहस्थीके माया और मोहके जंजालको काटकर चले गये हो, तो क्यों तुम्हारी साधनाको तोड़कर पापकी भागिनी बनूँ ? दमयन्तीके नल चले गये, अुर्मिलाके लक्ष्मण चले गये, पिंगलाके भरथरी चले गये—यशोधराके सिद्धार्थ चले गये—तब भी तो अुन्होंने अपने दिलपर पत्थर बाँधा होगा, किसी तरह रहकर अेक-अेक दिन काटा होगा। और अुन लोगोंने काटा होगा या नहीं, पर मैंने तो काटनेका निश्चय कर ही लिया है शक्तिभर ! कभी-कभी अकेले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पनके बोझसे मन कसक अुठता है; लगता है, कहीं अिस दुर्गम पथपर मैं काँप और डगमग। तो नहीं जाअूँगी? लेकिन अब मुझे डर नहीं है, 'हारिल' की लकड़ी निराशाकी आशा, और अँधेरेका आलोक मेरे भी पास है। मेरे पास मेरा 'राहुल' है— कमसे कम यह जिन्दगी काट देनेका आधार तो है ही।

लेकिन कभी-कभी खुद ही शंका होती है और मन बड़ा छोटा-छोटा होने लगता है। मैं अभागिन बौनी दमयन्ती, अुर्मिला, पिंगला और यशोधराको छूना चाहती हूँ—वास्तवमें वे कैसी रहीं, कौन जाने; लेकिन हज़ारों भाटों कवियोंने अुनके गुण यश गा-गाकर अुन्हें अितना अूँचा अुठा दिया! मुझ कम्बख़्तके लिये किससे अेक लाअीन भी लिखी जायगी। मध्यवर्गकी रूढ़ियोंमें जकड़ी बँधी अेक निरीह नारी! नामको जिसे अिन्टरके क्लास तककी पढ़ाअीमें निरन्तर समझना और बोलना ही रोज़ सिखाया जाता रहा— लेकिन बोलनेका ही जिसे ज़रा भी अधिकार नहीं था। और जब भी अुसने मुँह खोला— अुसे छिनाल कुलटा, लड़ाका क्या-क्या नाम नहीं दिये गअे? जिन्दगीमें अुसने चाहे अंगार पचाअें हों या ज़हर, कवियोंको अुन सबके लिखनेकी जरूरत और फ़ुर्सत क्यों हो? चाँद, तारे, फूल, पत्ते अीश्वरने अुन्हें काफ़ी बना दिये हैं, और कुछ नहीं तो नेता लोग तो हैं ही! कोअी मेरे दुखका ढोल नहीं पीटेगा। सिर्फ अिससे मेरे पास दुख ही है—कैसे मान लूँ? तुमने अेकबार जो लाअिने ताजमहलपर लिखकर पत्रमें भेजी थीं—वे मेरे दिलमें चुभकर रह गअी हैं।

अनगिनत लोगोंने नयामें मुहब्बत की है
कौन कहता है कि सादिक न थे जज्बे अुनके।
अेक शहंशाहने दौलतका सहारा लेकर
हम गरीबोंकी मुहब्बतका अुडाया है मजाक।

जज्बे सादिक हों या न हों – भावनाअें सच हों या न हों, लेकिन अुनकी नुमाअिश तो नहीं की जाती। फिर भी कभी-कभी मन बड़ा व्याकुल हो अुठता है। पता नहीं तुम कहाँ हो— किस हालतमें हो?

मेरे भाग्य, मेरे लिये नहीं, तो अपने अिस पुत्रके लिये तो अेक बार आही जाते। मैं नहीं जानती किन शब्दोंमें अपने आपको तुम्हारे सामने निरावरण कर दूँ। अिस वक्त तुम्हीं अनुमान लगा लो— मेरी क्या हालत है? रातको अेक बज रहा है। किसी नीलामसे लाअी गअी सादासी शृंगार मेज़पर लालटेन रखे मैं पत्र लिख रही हूँ। पीछे बेबी सो रहा है— पास ही ललिता और अन्नाकी चार पाअियाँ पड़ी है। वे दोनों शायद दो-दो नींदे ले चुकी हैं, बेबीके पास दस बजेसे बारह बजे तक सोनेकी कोशीश की—नींद ही नहीं आती। अूपरवाले कमरेसे भैया और भाअीकी खिलखिलाहटें अभी आरही थीं—अब तो हल्की-हल्की भनभनाहटें आ रही हैं। शायद वे लोग बातें कर रहे हैं। आज ठण्ड है और बाहर बादल आये हुअे हैं। हल्की-हल्की बूँदें अैसे पड़ रही हैं जैसे बादल रिस रहा हो। जाने मन कैसा-कैसा हो रहा हैं, बड़ा अुचरा-अुचरासा अुखड़ा-अुखड़ासा। हर समय मनमें अैसा लगता है जैसे न जाने क्या कुछ खुला हुआ बाहर भीगा जा रहा हो—कुछ अमूल्य गला जा रहा हो। बार-बार अुठ-अुठकर बाहर झाँक आनेको मन करता है...जैसे कोअी आनेवाला हो। कौन आ रहा है मेरा? शायद अैसा भाग्य लेकर ही पैदा नहीं हुअी! तुम्हीं सोच लो। अैसे समय कैसा बिखर-बिखर जानेको मन करता है! काश! मेरा अेक-अेक रेशा बिखरकर जीवन धरनेके अिस महा पापका प्रायश्चित कर पाता!

आज तो सच, बड़ी कातरता मनमें अुमड़ी पड़ती है। अैसा तो, पता नहीं पिछले कितने महीनोंसे, अनुभव कर रही हूँ जैसे कोअी जवान विधवा पतिकी लाशपर सिर रखकर रातदिन मनमें लगातार विलखती रहती हो-- पर आज तो अैसा लगता है, जैसे वह फूट-फूटकर रो अुठी है। अैसा मन तो अुस समय भी नहीं हुआ था, जब तुम्हारे घरवालोंने पाँच बजेकी ठंडमें मुझ पाँच महीनेकी गर्भवतीको गाड़ीपर लाकर बैठा दिया था और यहाँतकका अेक टिकट मेरी गोद में पटककर चले गये थे मेरे पास ताँगेतकको पैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं थे। यों बात-बातमें रोनेकी मेरी आदत कमी नहीं रही। रातको दस बजेसे सुबह पाँच बजेतक चुपचाप सिर झुकाये दरवाजेपर बैठी रही थी, तब तुम्हारे छोटे भाओंने (हाँ, वे तुम्हारे भाओ हों, मेरे कुछ भी नहीं है।) ताँगा लाकर खड़ा कर दिया, कहा—"चलो।" मैं चली आयी और आजतक अुधर मुँह करके नहीं सोओ। मैं खूब जानती हूँ अिस पत्रका कोओ अर्थ नहीं है—कौन जाने यह तुम्हें मिल ही जायगा। शायद न भी मिले। अुनकी ही बात तुम्हें सुननी होती तो क्या मुझे पता देकर न जाते। कभी-कभी आवेश आता है तुम्हें खोजने निकल पड़ूँ— पर कहाँ? यह कहाँका प्रश्न अुस समय भी आया था जब तुम्हारे पिताजीने ललकारकर कह दिया था "बेटा था तबतक तू हमारी बहू थी—अुसीके कारण तो तेरा-हमारा सम्बन्ध था। अब पता नहीं वह कम्बख़्त नालायक जीता है या मर गया। अितना ढूँढ़ा, पता ही नहीं चल रहा है। हमारे पास क्या वैसे ही बोझ कुछ कम है, जो तुम्हारा बोझ हम और सहें? पढ़ी-लिखी लड़की हो, कुछ भी कर सकती हो — जो समझमें आये सो करो। तुम्हारी अुम्र अभी अैसी ही है और हमारे लड़के अभी नासमझ हैं। मकान छोटा है। मुहल्ले-समाजमें हमारी बदनामी होती है" कहनेको तुम्हारे बापने काफ़ी कह दिया— और क्या सुनना चाहती थी? क्या तब भी वहाँ जमी रहती?

तुम चले गये— अुनकी निगाहमें यह मेरा ही कसूर है। अुनका जवान बेटा चला गया— मेरा क्या गया?

मेरे नाथ, कमसे कम मुझे यह तो बता देते, मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? मैं तुम्हारे चरणोंकी कसम खाकर कहती हूँ मैं अुस अपराधका प्रायश्चित् करते हुअे सारी जिन्दगी बिता दूँगी—मुझे बता तो दो!— तुम्हें नौकरी नहीं मिली, तुम बेकार रहे, अुन्होंने तुम्हें पढ़ाया, अुन्होंने तुमसे आशाअें कीं— क्या अुस सबके लिये कसूरवार मैं ही थी? मेरे दिलमें कम आशाअें थीं?—मेरे मनमें सपने नहीं थे?—क्या शादीसे पहले किसी भी आकांक्षाने मुझे नहीं लुभाया? आख़िर जिस वर्गमें पली थी अुसके कुछ संस्कार तो दिलमें थे ही। तुम्हारे यहाँ आकर जिन्दगी ख़त्म हो गयी तो क्या हुआ। अिससे पहले कॉलेज था, सखी-सहेलियाँ थीं— कहानी, किस्से, सिनेमा, अुपन्यास थे—क्या नहीं था जो आजकी लड़कीको लुभा सकता है? लेकिन मैंने तुमसे अेक शब्द भी शिकायतका कहा?—अिसलिये कि मैं जानती थी। मैं गानेके लिये पूरे कॉलेजमें मशहूर थी—लेकिन तुम्हारे यहाँ आनेपर किसीने अेक गुनगुनाहट भी सुनी?— अपने अरमानोंका यों खून पीकर भी मुझे अधिकार नहीं था कि चुप भी रह सकती! तब भी घमंडी असामाजिक और भी न-जाने क्या-क्या कहा गया।

तुम घोर अेकान्त पसन्द हो गये, रूखे हो गये, चिड़चिड़े हो गये, और तुम झल्लाये-से रहने लगे। लेकिन मैंने तो यही कोशिश की कि तुम्हें खुश रखूँ, तुम्हारे अूपर, घरवालोंके अूपर अपना कमसे कम बोझ डालूँ। क्योंकि मैं समझती थी, तुम खुद अपने-आपसे ही परेशान थे-अैसेमें प्रेम क्या खाक पनपता? मैं खूब समझ सकती हूँ, खूब अनुभव करती हूँ कि तुम जिन्दगीसे कितने आजिज़ आ गये होगे—जब तुमने घर छोड़ा होगा... और यहाँ मैं...मैं...खुद भी कभी-कभी क्या सोचने लगती हूँ, अिसे सुनकर क्या करोगे ..?

यों यहाँ रहती हूँ और शायद रहना ही पड़े, लेकिन दिनरात यहाँ तबियत अिस तरह घुटती रहती है, जैसे गलेमें फन्दा डालकर कोओ दोनों ओरसे खींच रहा हो, या बन्द कमरेमें धुँआ भर गया हो-- बाहर खुली हवामें भाग जानेको मन करता रहता है।... छोटे-से बड़े सबकी नजरोंमें अेक नफ़रत, अेक अुपेक्षा, अेक हिक़ारत... मेरे खूनकी अेक अेक बूँदमें ज़हर घोल देती हैं। हाँ, कभी यहाँकी बेटी थी— तब शायद सब अधिकार थे— अब तो जैसे बोझ हूँ अनावश्यक। अिसी डरके मारे बेबीको रोता-छोड़कर दिनरात काम करती हूँ [माँकी अिच्छा होती है तबतक रखती हैं। बाकी समय पड़ा चीखा करता है। सारा चेहरा लाल पड़ जाता है और नीली-नीली नसें तनकर अुभर आती हैं। कभी-कभी तो गुस्सा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आता है, गरदन घोटकर गलीमें फेंक दूँ। अभागा! आते ही जिसने अपने बापको छुड़ा दिया। लेकिन फिर खुद ही रुलाअी फूट पड़ती है-- अिस बेचारेने क्या किया है? जोरसे छातीसे चिपकाकर पुचकार लेती हूँ—यही तो हारिलकी लकड़ी अँधेरेका आलोक और निराशाका दीपक है। — तुम्हें तुम्हारे माँ-बापने अैसी शिक्षा दी कि तुम संघर्षोंमें स्थिर नहीं रह सके - कठिनाअियोंसे लड़ नहीं सके। मैं अिसे वह सब सिखाअूँगी जो तुम नहीं पा सके! लेकिन शायद अैसा मौका नहीं आयेगा .. दूध, दवा और देखरेखकी कमीमें पता नहीं वह अितने दिन चले ..।

दिनरात तुम्हारे विषयमें अुलटी-सीधी आशंकाअें करते हुअे भी बुरा नहीं सोचना चाहती।—मेरी चिन्ता नहीं करना चाहते, तो नहीं सही। तुम हो-बस अिसी आशापर जीवन काटनेका निश्चय कर लिया है। तुम विश्वास मानो, तुम्हारी तरह भागकर, जान छुड़ाकर चाहूँ तो भी नहीं जा सकती। थोड़े दिन और ठहरकर यहीं कुछ-न कुछ करूँगी - टीचर - या टाअिपिस्ट, कुछ भी! पिंजरेमें बहुत दिन बन्द रहनेसे पंखोंका अभ्यास छूट गया है—झिझक लगती है. आत्मविश्वास नहीं है। फिर भी ..

खैर अिन बातोंसे तुम्हें फायदा भी क्या? — तुमने जैसा ठीक समझा—किया। मैं अिसमें क्या कहूँ? तुम मुझसे ज्यादा पढ़े-लिखे हो, ज्यादा समझदार हो — विद्वान हो। अमरकान्त नामके अेक लेखककी कहानी पढ़ी थी, 'सोलह बरस'। अुसमें जब अेक युवकका, परीक्षामें फेल हो जानेपर घरवालों द्वारा बहुत अपमान किया गया तो वह सबसे सम्बन्ध तोड़कर हॉस्टलमें चला गया। और वहाँ अुसने भयंकर रूपसे पढ़ाअी शुरू की। माँ-बापके पत्र गये, हजारों पत्र पत्नीके गये। वह पढ़ता और हँसकर फाड़ देता— पढ़ाअीमें लग जाता। रात-दिन पढ़ता। घरवालोंकी तरफ़से जैसे पत्थरका बन गया—जैसे वह पढ़नेकी मशीन हो गया। आखिर पत्नीकी अेक लाअिनने अुसे हिला दिया! अैसी ही अेक रात्रिको अैसे पत्र मिला, लिखा था "अपने जन्मदिनके हिसाबसे परसों मैं पूरे सोलह बरसकी हो जाअूँगी—शायद यह दिन फिर कभी नहीं आयेगा।" अुसी रात वह बिस्तर बाँधकर घर पहुँच गया। तुम्हें हिला डालनेकी अैसी कोअी लाअिन मेरे दिमागमें नहीं आ रही है। मेरा सोलहवाँ बरस शायद अब सदाके लिये गुजर गया और यह अुन्नीसवाँ बरस लग रहा है, और अैसा लगता है जैसे यह सब वर्ष अँधेरेमें खाटपर लेटे हुअे अूपर ताकती खुली आँखोंसे ही मैंने काट दिये हैं— अुमड़-अुमड़कर आता कोरों और कनपटियोंपर बहता हुआ पानी कानोंमें भरता रहा है और मैं यों ही तारोंकी बछियोंके नीचे सुन्न पड़ी रही हूँ।

लो, लालटेनका तेल मन्द पड़ रहा है। अिस तेजीसे बुझती रोशनीमें क्या लिखूँ? लिखनेमें सोचनेके लिये जब सामने शृंगार-मेजके शीशेमेंअपने आपको देखती हूँ तो अँधेरेसे घिरी अिस परछाअीको देखकर डरसे चीख पड़नेकी अिच्छाको बड़ी कठिनाअीसे रोक पाती हूँ—यह मेरी परछाअी···यह मेरा भविष्य!

अभीतक शब्दोंमें खोअी रही, भूमिका बाँधती सोचती रही। कैसे पूछूँ—अब रोशनी बुझी जा रही है—अँधेरा काले राक्षसके पखोंकी तरह मुझे ढाँपे लेता है—अिस डूबती हुअी परछाअीको यह तो बता दो कि वेबी अनाथ नहीं है - मैं सुहागिन हूँ!

और सच मानो, अँधेरेके अिस विकराल मुँहमें मैं खुशीसे खो जाअूँगी...

तुम्हारी-कोअी नहीं...

जगह-जगह बूँदोंसे बिगड़े अक्षरोंवाला यह तीसरा और अन्तिम पत्र भी समाप्त हो गया था।

साँस रोके चुपचाप बैठा रहा। गीली आँखें सामनेके दरवाजेकी चिकके पार धूपमें चमकती रेलकी पटरियोंपर जमी रही। आवेशमें काँपते हाथकी अँगुलियाँ अुस आलपीनको निकालनेमें लगी थीं जिसमें यह तीनों पत्र नत्थी थे। अचानक निगाह पेपरवेटके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीचे दबे पंखेकी हवासे फरफराते टाअिपके पतले कागजकी ओर गयी, जिसे मुंशीजी अभी दबा गये थे। अुसमें लिखा था—"अिस दुर्घटनामें पैंतीस आदमी जानसे मारे गये, बानवे घायल हुअे। दोकी शिनाख्त नहीं हो सकी—वे अस्पताल़में हैं।"

अिस नोटसे चौंककर निगाह अखबारके कोनेपर छपी छोटी-सी खबरकी ओर चली गयी—"कोरियामें अमरीकी विमानोंका आजतकका सबसे जोरदार हमला! अिस हमलेमें अितने भारी बमोंका प्रयोग किया गया, जितना अभीतक किसी भी युद्धमें नहीं हुआ। अनुमान है अिस हमलेमें सात हजारसे अधिक जाने गयीं और नुकसानका कोअी अन्दाजा नहीं लगाया जा सका! लाशें पचास मील दूरसे देखी जा सकती थीं...

पढ़कर झन्नसे सारा शरीर जम गया—पता नहीं, कब अिसी बीचमें आलपीन पुराने घावमें जा चुभी। दर्दसे झुँझलाकर जैसे जाग अुठा। भावुकता अुड़ गयी। हुँह, क्या बेवकूफ़ हूँ कि जरासी खबरसे चौंककर यों आलपीन चुभा बैठा।

तो यह किस्सा है आलपीन चुभ जानेका। बोलो कोअी बात भी हो। ट्रेन दुर्घटनामें पैंतीस मरें या अमरीकी हमलेमें सात हजार। अुनपर अिंजन चढ़े या हाअिड्रोजन बम। हम क्या करें। भाअी, सच्ची बात तो यह है कि मरनेवालोंकी मरनेवाले जानें—या जानें अखबारवाले, जो अैसे महत्वहीन समाचारोंको दूसरे पृष्ठपर दो अिंचसे अधिक जगह नहीं दे सकते—अपनी तो मैं जानता हूँ। टूटी जंग लगी आलपीन मेरी अुँगलीमें जरासी चुभ गयी है तो अुँगली पक आयी है और रातभर अैसी टीस मारती रही है कि अेक पलको भी सो नहीं पाया हूँ। अब भी तकलीफ़के मारे जी रोने-रोनेको हो आता है।

और आलपीन भी कैसी? कोअी तीर, बल्लम, बर्छी, बम नहीं, अेक पतली-सी तारनुमा जंग लगी टूटी आलपीन! जिसमें सिर्फ तीन पत्र नत्थी थे, कुछ और भी अवश्य होंगे—यह फटे कागज़के चिपके रह गये कोनोंसे पता लगता है। अब तो सब न-जाने कहाँ होंगे। मेरे हाथमें तो तीन ही रह गये थे और अुनको बाँधे रखनेवाली यह पतली-सी आलपीन है—अुन्हें ही तो निकालनेकी अनजान कोशिशमें यह टूटकर चुभ गयी है और तीनों पत्र बिखर गये हैं!

मैं तय नहीं कर पा रहा हूँ कि अिस मशीनके पंखेकी हवासे अिधर-अुधर बिखरे पत्रोंके पन्ने समेट लूँ या अिस चुभी हुअी आलपीनको निकाल लूँ, जो बेहद तकलीफ़ दे रही है.....

अिस समय तो तीन पत्रोंके ही पन्ने हैं, पता नहीं अिस दिनमें अैसे कितने पृष्ठ और चिपके थे...जो टूटकर दिलमें चुभ गये हैं।

सामने कोकाकोलाकी बोतलके झाग अिस तरह सिमटकर बैठ गये थे, जैसे फँसी मक्खीको खा डालनेके बाद मकड़ा अेक कोनेमें सिमटकर बैठ जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्नाटककी अप्रतिम शिल्पकला

हळेबीड़ और बेलूर

: श्री श्रीपाद जोशी :

हम तमिळनाडु और केरलका खादी-कार्य देखने गये थे, अिसलिये हमें यह ख़याल नहीं था कि कर्नाटकके प्रेक्षणीय स्थान देखनेका अवसर भी हमें मिल सकेगा। हम जिस दिन तिरुपुरसे बेंगलोर पहुँचे अुस दिन रविवार था, अतः वहाँपर कुछ देखनेकी संभावना नहीं थी, क्योंकि अुस रोज़ वहाँके सारे कल-कारखाने और संस्थाअें बन्द रहती हैं। हर अितवारको मैसूरके बगीचेमें बढ़िया रोशनी की जाती है, अिसलिये कृष्णराज सागर तथा मैसूर देखनेका विचार मनमें आया; लेकिन अुसके लिअे काफ़ी ख़र्च होनेवाला था और हमारे पास अधिक समय भी नहीं था, अतः हमने अैसे दो दर्शनीय स्थान चुन लिये जो आसानीसे देखे जा सकते थे। हम सबको हुबली जाना था, अिसलिये हम बेंगलोरसे सुबह साढ़े नौ बजेकी पूना जानेवाली गाड़ीसे निकले और दोपहरको डेढ़ बजे अर्सीकेरी स्टेशन पहुँचकर वहाँसे मोटर बस द्वारा हलेबीड़की ओर रवाना हुअे।

होयसळेश्वर

खराब रास्ते, बसोंमें होनेवाली बेहद भीड़ और अुनकी असीम अनियमितताके कारण अर्सीकेरीसे चिकमगलूर तकके सत्तर मीलके सफरने हमारे नाकों दम कर दिया। लेकिन हलेबीड और बेलूरकी बेजोड़ शिल्पकलाके दर्शनोंसे हमारी सारी थकावट दूर हो गयी और अुन सुंदर कलाकृतियोंकी सुगंध हमारे दिल व दिमाग़में समा गयी।

अर्सीकेरीसे हलेबीड़ ३५ मील है। हम शामको पाँच बजे वहाँ पहुँचे। वहाँका होयसळेश्वरका भव्य मंदिर अति प्रेक्षणीय है। कर्नाटकके होयसळ राजाओंने अुसे बनाया। होयसळ शब्दकी व्युत्पत्ति बड़ी मजेदार है। अिस राजघरानेके प्रथम पुरुषका नाम 'सळ' था। अुसकी माताने अुसे बहुत शूर अेवं निर्भीक बनाया था। अेक बारका ज़िक्र है कि जंगलमें अेक बहुत बड़े शेर बबरसे सळका मुकाबला हुआ। अुस वक्त अुसकी माता अुसके साथ थी। अुसने सळको हिम्मत देते हुअे कहा, 'मार डालो शेरको!' कन्नड भाषामें 'होय' का मतलब है 'मार डालो!' अतः होयसळका मतलब हुआ, 'अै सळ, मार डालो।' अपनी माताका आदेश पाते ही सळने अुस शेरको मार डाला। तबसे अुसके सारे खानदानका नाम ही 'होयसळ' पड़ गया। शेरके साथ सळकी लड़ाअी दिखानेवाले छोटे-बड़े शिल्प हळेबीड और बेलूरके मंदिरोंमें पाये जाते हैं।

अश्लील चित्र

अिस मन्दिरके दो विभाग हैं। दोनों विभागोंमें अेक-अेक शिवलिंग हैं और अुसके सामनेके मंडपमें अेक-अेक नन्दी है। ये दोनों नन्दी बैठे हुअे हैं। अुनमेंसे अुत्तरकी तरफ़के नन्दीकी अूँचाअी लगभग ८ फीट है और दक्षिणकी तरफ़का नन्दी १२ फीटसे भी अधिक अूँचा है। अगर हम अुनके सामने खड़े हो जायें तो छोटे नन्दीकी नाकतक और बड़े नन्दीके मुँह तक हमारा हाथ पहुँच सकता है। नन्दीकी दोनों मूर्तियाँ अत्यंत परिमाण बद्ध (Proportionate) या सानुपात अेवं मोहक हैं। अुनकी ओर देखनेसे अैसा लगता है मानों दो जिन्दा साँड़ बैठे हैं।

अुत्तरी दरवाजेसे अन्दर प्रवेश करते ही सामने दाहिनी तरफ़ आठ हाथोंवाले गणेशजी हैं और बाकी तरफ डेढ़ फीट चौड़ी अेवं आठ दस फीट लम्बी पत्थरकी पट्टी है। अुसपर अश्लील चित्र खोदे गये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। यहाँ अश्लीलसे मतलब केवल शृंगारसे नहीं बल्कि स्त्री-पुरुषोंके प्रत्यक्ष शरीर-संभोगसे है। मन्दिरमें सामने ही अैसे असभ्य अेवं बीभत्स चित्र क्यों बनाये गये होंगे, अिसका कोअी अुत्तर नहीं मिलता। हो सकता है कि वहाँके दूसरे सुन्दर शिल्पको लोगोंकी बुरी नजरसे कोअी हानि न पहुँचे, अिस विचारसे ये भद्दे चित्र बानाये गये हों। जगन्नाथपुरीके मन्दिरमें भी अिसी प्रकारके चित्र देखनेमें आते हैं। याद रखनेकी बात यह है कि मन्दिरके आधे, यानी पूर्वी हिस्सेमें ही बीच-बीचमें अश्लील चित्र हैं, पश्चिमी हिस्सेमें बहुत ही सुन्दर बड़े-बड़े चित्र हैं।

पट्टियोंपर नक्काशी

अिस मन्दिरका सारा बाहरी हिस्सा छोटी-बड़ी मूर्तियोंसे भरा पड़ा है। लगभग अेक डेढ़ फीट चौड़ी पट्टियाँ मन्दिरके चारों ओर जड़ी हुअी हैं। अुनमेंसे पहली पट्टीपर हाथियोंकी कतार है। हजारों हाथी अेक पंक्तिमें अेकके पीछे अेक चले जा रहे हैं। फिर भी हर-अेकका पोज़ अलग है, प्रत्येक हाथी दूसरेसे अलग है। अुसके अूपरकी पट्टीमें सिंह हैं, अुसपर घुड़सवारोंकी पट्टी है। अुसके अूपरकी पट्टीमें नृत्यके प्रकार, फिर शेरोंकी कतार या युद्धके दृश्य हैं। अुसपर मोरोंकी पट्टी है। अिस तरह कुल बारह पट्टियाँ हैं। यहाँकी नक्काशी बिलकुल बारीक और कलापूर्ण है। जेवरों और स्त्रियोंकी केश-रचनाओंकी अितनी पद्धतियाँ (फैशन्स) यहाँ देखनेको मिलती हैं कि आधुनिक युवतियोंको भी अुन्हें अपनानेका मोह हो सकता है। चौथी या पाँचवीं पट्टीमें पौराणिक चित्र हैं। भागवतसे लेकर महाभारत-रामायण तकके कअी प्रसंगोंके चित्र वहाँपर खुदे हुअे हैं। अुनमेंसे समुद्रमन्थन, अभिमन्यु-वध, रण-क्षेत्रपर श्रीकृष्णार्जुन, अनन्त शयनम्, विष्णु और लक्ष्मीको लेकर- अुड़नेवाला गरुड़, गोवर्धनधारी कृष्ण आदि चित्र बहुत सुन्दर हैं। मन्दिरके दक्षिणमें मन्दिरसे दूर रखी हुअी गणेशजीकी अेक बड़ी मूर्ति है, जिसके सामने वह प्रसिद्ध चित्र है जिसमें होयसळ राजवंशका आदि पुरुष सिंहसे लड़ रहा है।

गज चर्माम्बरधारी शिव

मन्दिरके पश्चिमी विभागमें जो बड़ी-बड़ी शिल्प-कृतियाँ हैं अुनमेंसे अर्जुनका मत्स्यवेध, वीणाधारिणी सरस्वती, अैरावत गजराजपर बैठे हुअे अिन्द्र-अिन्द्राणी आदि चित्र अत्यन्त अनुपातयुक्त अेवं भावप्रदर्शक हैं। गजासुरका नाश करके अुसकी खालकी पृष्ठ भूमिपर नृत्य करनेवाले शिवजीका चित्र बड़ा अनोखा है। अिस चित्रमें हाथीका (गजासुरका) सिर जमीनपर है और अुसके चारों पाँव चार दिशाओंमें दिखायी देते हैं। अिससे यह स्पष्ट मालूम हो जाता है कि वह मरे हुअे हाथीकी खाल है। अिसी शिवको गज-चर्माम्बर धारी शिव कहते हैं। यह चित्र अुत्तर भारतमें बहुत कम पाया जाता है। महिषासुर मर्दिनी, नृसिंहावतार, वामनावतार आदि चित्र हमारे परिचयके हैं। अुनमेंसे वामनावतारका चित्र बहुत ही भावनापूर्ण है। बटु वामनने अेक पाँवसे स्वर्गको व्याप्त किया है और दूसरे पाँवसे भूमिको व्यापा है। अेक कोनेमें सम्राट् बलिराजा नम्रताके साथ घुटने टेककर झुके हुअे हैं। बलिका स्थान पाताल लोकमें दिखानेके लिये चित्रकारने समुद्रका दृश्य प्रस्तुत किया है, अुसमें तैरनेवाली मछलियोंने समुद्रका पूरा आभास अुत्पन्न किया है। अिसी विषयसे सम्बन्धित दूसरे अेक चित्रमें यह दिखाया गया है कि लँगोटी पहने हुअे बालवामनके हाथपर वैभवशाली बलिराजा गडुअेसे संकल्पका पानी छोड़ रहे हैं और देवोंकी कपट नीतिसे पूरी तरह परिचित दैत्यगुरु शुक्राचार्य बेबसीके साथ अुनकी तरफ़ देख रहे हैं। अिसमें शुक्राचार्यकी भावभंगी तो देखने ही लायक है।

बाहरकी तरह मन्दिरका अन्दरका हिस्सा भी प्रेक्षणीय है। वहाँ बड़े-बड़े सुन्दर खम्भे और छतमें बनाये हुअे देवी-देवताओंके चित्र हैं। नन्दीकी तरह शिवलिंग भी काफी बड़े और भव्य हैं। आजकल यह मन्दिर वीरान हालतमें है, फिर भी (या शायद अिसी लिअे) वहाँपर बिलकुल गन्दगी नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बस्ती हळ्ळी

हळेबीडसे आधे मीलके फासलेपर बस्ती हळ्ळी नामका अेक गाँव है। बस्तीका अर्थ है जैनमन्दिर और हळ्ळीका मतलब है देहात। 'बस्ती हळ्ळी' के मानी हैं जैनमन्दिरका गाँव। यहाँके जैन मन्दिरमें क्रमशः तेरह और पंद्रह फीट अूँची शान्तिनाथ तथा पार्श्वनाथकी बड़ी सुन्दर दिगम्बर मूर्तियाँ हैं। अुनके मन्दिर अलग-अलग हैं। अुनमेंसे पार्श्वनाथके मन्दिरके खम्भे अितने अद्भुत हैं कि देखनेवाला दंग रह जाता है। वास्तवमें दुनियाके बड़े-बड़े अजायबोंमें अिनको शुमार किया जाना चाहिये, लेकिन अिनकी तरफ किसीका ध्यान ही अबतक नहीं गया। ये खंभे अितने चिकने और चमकीले हैं कि अुनपर पानी लगानेसे अुनमें आअीनेकी तरह हमारा प्रतिबिंब दिखायी देता है। अैसे पाँच छः खम्भे वहाँपर हैं। अुनमेंसे अेक खम्भेमें मामूली आअीनेकी तरह प्रतिच्छवि दिखायी देती है। दूसरे खम्भेके सामने खड़े रहनेपर अुसमें अैसी छाया दिखायी पड़ती है मानो तालाबके किनारे कोअी आदमी खड़ा है और अुसकी छाया पानीमें पड़ी है। यानी आदमी और अुसकी छाया दोनोंका चित्र अेक साथ अुस खंभेमें दिखायी देता है। तीसरे खंभेके सामने खड़े होकर अेक खास ढंगसे हाथ हिलानेपर आदमीकी आकृति गायब होती है और अैसा मालूम पड़ता है मानो दो लम्बे नाग सिर नीचे झुकाकर पानीमें अपने ही अिर्दगिर्द बल खाते हुअे चक्कर लगा रहे हों। चौथे खंभेके सामने खड़े रहनेपर हमारे केवल हाथ और पैर ही दिखायी पड़ते हैं, बीचका शरीर न जाने कहाँ लुप्त हो जाता है। अिस तरह प्रत्येक खम्भेकी कोअी न कोअी विशेषता है जो अन्यत्र कहीं भी देखनेको नहीं मिलती।

बेलूरका चन्नकेशव मंदिर

हळेबीडसे बेलूर दस मील दूर है। वहाँ हम दूसरे दिन सुबह दस बजे पहुँचे। वहाँका सुप्रसिद्ध चन्नकेशव मंदिर शिल्पकलामें अप्रतिम माना जाता है। हळेबीडका मंदिर शैवोंका है और बेलूरका वैष्णवोंका। प्रवेश द्वारका गोपुर मदुराके मीनाक्षी मंदिरके गोपुरोंकी तरह भव्य है। दक्षिणके बड़े सम्पन्न मंदिरोंमेंसे यह अेक है। हजारों लाखों रुपयोंके जेवर और जवाहरात भगवानके शरीरपर रहते हैं, अिसलिअे अुनको मज़बूत तालोंवाले बड़े-बड़े दरवाज़ोंके अंदर बन्द करके रखा जाता है। अिसलिये नियत समयके अलावा भगवानके दर्शन करने हों तो वहाँके पुजारियोंको थोड़ी-बहुत रिश्वत देनी पड़ती है।

अिस मन्दिरकी दीवारोंपर बाहरकी तरफ जो चित्र हैं अुनमेंसे लगभग सभी हळेबीडके मन्दिरमें देखनेको मिले थे। लेकिन यहाँके चित्रोंमें नज़ाकत और चिकनापन अधिक है। सबसे महत्वकी बात यह है कि यहाँपर अश्लील चित्र बिलकुल नहीं हैं। शायद शैव शाक्त और वैष्णव लोगोंके दृष्टिकोणका यह भेद हो। अिस मन्दिरमें नृत्य अेवं भावभंगी, हाव-भावके अनेक दृश्य हैं। शंखिनी, पद्मिनी, डाकिनी और नागिनी— अिन चार प्रकारकी स्त्रियोंकी चार अत्यन्त सुन्दर मूर्तियाँ मन्दिरके अन्दर हैं। अुनके हाथकी चूड़ियाँ, बालोंके फूल, आदि जेवर अितनी बारीकी अेवं कुशलतासे कुरेदे गये हैं कि वे असली जेवरोंकी तरह हिलते हैं। छतमें बनाये हुअे धार्मिक अवतारोंके सुन्दर चित्र भी यहाँ बहुत हैं।

होयसळ राजा विष्णुवर्धनने लगभग नौ सौ वर्ष पहले यह मन्दिर बनवाया था। कहते हैं कि अिसे पूरा होनेमें अेक सौ तीन साल लग गये और अुसके विस्तार अेवं भव्यताको देखते हुअे यह लम्बी अवधि भी कम ही मालूम पड़ती है। अिस मन्दिरकी शिल्प कलाका श्रेय जकणाचारी और डकणाचारी नामक पिता-पुत्रको दिया जाता है, लेकिन कुछ लोगोंका कहना है कि अिस मन्दिरके बनानेवाले ये दो व्यक्ति नहीं थे; बल्कि अुनकी परम्पराके शिल्पियों द्वारा वह बनाया गया होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरिजनोंको मन्दिर-प्रवेश

अिस मन्दिरकी अुत्पत्तिके बारेमें निम्न लिखित दन्तकथा प्रचलित है:-

वेला और चेन्ना नामक दो परम भगवद्भक्त हरिजन थे। अुनकी सच्ची भक्तिसे प्रसन्न होकर भगवानने स्वप्नमें अुनसे कहा, 'तुम लोगोंको मेरे दर्शनके लिये कहीं जाना न पड़े अिसलिये मैं स्वयं तुम्हारे पास आ जाअूँगा,' और होयसळ राजा विष्णुवर्धनके स्वप्नमें जाकर अुसे आदेश दिया कि 'वेला और चेन्नाकी भूमिपर तुम मेरा मन्दिर बनवाकर वहाँ मेरी प्राणप्रतिष्ठा करो।' अुसके अनुसार वहाँपर मन्दिर बनाया गया और हरिजनोंके भगवद् प्रेमकी कद्र करनेके लिये सालमें दो-तीन बार सारे अछूतोंको मन्दिरमें प्रवेश करनेकी अिजाजत दी गयी। अब तो कानूनसे सभी कोअी मन्दिरमें जा सकते हैं, लेकिन अिससे पहले भी कुछ खास अवसरोंपर हरिजन लोग अिस मन्दिरमें जाकर भगवान्के दर्शन कर सकते थे। चेन्नाके नामपरसे भगवानने अपना नाम भी चेन्न केशव या चन्नकेशव रख लिया और वेलाके नामपरसे अुस गाँवको वेलूर या वेलूर कहा जाने लगा। (अूरु यानी गाँव) अिन भक्तोंकी यादको क़ायम रखनेके लिये मन्दिरकी सामनेवाली दीवारमें मरे हुअे जानवरको ढोते हुअे चेन्ना और वेलाका अेक छोटा चित्र बनाया गया है।

मोहक शिल्पकृतियाँ

अिस मन्दिरका सबसे बड़ा आकर्षण है अलग अलग पोज़के स्त्री-पुरुषोंकी मोहक अेवं प्राणवान् प्रतिमाअें। आअीनेमें देखकर सौंदर्य प्रसाधन करनेवाली रमणी, जिसके गीले बालोंके सिरोंपर पानीकी छोटी-छोटी बूँदें जमा हो गयी हैं, अैसी सद्यःस्नाता तरुणी, शिकारी-नृत्य करनेवाली नवयौवना आदि चित्र अत्यन्त भावपूर्ण हैं। अुन सबमें अधिक प्रभावकारी चित्र वह है जिसमें अेक रूपवती सुन्दरी स्नान करनेके बाद धोती पहन रही है। अुसकी साड़ीमें अचानक अेक बिच्छू निकलता है तो वह डरके मारे जल्दीसे साड़ीको झकझोरती है और नीचे गिरे हुअे बिच्छूकी तरफ़ देखती है। अिस चित्रकी युवतीका अनुपातयुक्त, साँचेमें ढला हुआ शरीर, नीचे गिरा हुआ बिच्छू और अुस कामिनीकी आँखोंकी भयभीतताकी छाप देखनेवालेके मनपर गहरा असर छोड़ जाती है।

और भी कअी नाजुक तथा सूक्ष्म कारीगरीके नमूने यहाँ देखनेको मिलते हैं। अेक चित्रमें अिमलीके बीज जितने छोटे कटहलपर बैठी हुअी मक्खी हू-ब-हू ज़िन्दा मक्खीकी तरह दिखायी देती है और अुसकी आँखोंको हम अपनी आँखोंसे साफ़ देख सकते हैं। अेक मूर्तिके शरीरके अलग अलग हिस्सोंपर आहिस्तासे आघात करनेपर अुसमेंसे सप्तस्वर निकलते हैं तो अेक पत्थरके खंभेसे धातुके खंभे जैसी आवाज़ निकलती है। नृत्य करनेवाले पुरुषोंके भी दो शिल्पचित्र यहाँ हैं जो अपनेमें अद्वितीय हैं। कहते हैं कि यहाँके नृत्योंके पोज सीखनेके लिये जगद्विख्यात नृत्यविशारद अुदयशंकर तथा रामगोपाल यहाँ आये थे और यहाँके नृत्य-सौंदर्यपर मुग्ध हो गये थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेक दिसम्बरकी शाम

: श्री. जगदीशचंद्र :

अभी धुआँ
अभी कुहर
अभी ज़हर अम्बरकी सतहोंपर छाया है
सोये सोये गीत
जड़तासे बोझल, पाषाणी गीत
जगनेसे पहले पलकोंमें भारीपनके गीत
अभी घुटनकी झिल्लीमें है कैद
अभी रगोंमें नीलापन है और लहू
भूख, तबाहीकी गलियोंमें भटक रहा है
रुका हुआ है
आवारा, लावारिस कुत्ते जैसे यह अिन्सान
किसी टीनके नीचे अपने लिये पनाह
खोज रहे हैं
अिस लम्बी फैली दुनियामें
और दिये भिखमंगोंके मानिन्द
कर फैलाये
मद्धिमसे बेजान
अपनी ही छायासे डरकर काँप रहे हैं
कहवाघरमें प्यालोंकी आवाज
नयी दिशा
नयी चेतना, नयी प्रगति
काफीके रंग-सी मटमैली
कड़वी, कुछ बेस्वाद
अभी गरम,
अभी भाप बनकर अुड़ जाती
कहवाघरके बुद्धिजीवियोंकी भाषामें
मरे हुअे शव-सी अुदास कुछ मौन
दिसम्बरकी यह शाम !
फिर भी कोअी गीतोंका सैलाब
फिर भी कोअी स्वर मेरे कानोंमें आता
मैं अतीतका
मैं भविष्यका
अलग-अलग मिश्रणके रंगोकी तस्वीरें
मैं शाश्वत हूँ मुझे चुनो तुम
मेरी पीड़ामें युग-पीड़ा मुझे सुनो तुम
बोल रहा है
चीख रहा है
वैयक्तिक अुन्मादोंका, अवसादोंका अितिहास
मेरा ही पथ सत्य, चिरन्तन
तुम भी आओ
जाने, अनजाने ओ साथी
पहियोंमें सघंर्ष बहुंत है
गतियोंमें तूफ़ान
रागोंमें अुन्माद
सड़कोंपर हावी होती है
मरे हुअे शव-सी अुदास कुछ मौन
दिसम्बरकी यह शाम
अिसमें कितने प्राण
अिसमें कितने स्वप्न
अिसमें कितने प्रश्न
मुझे समझनेका अवसर दो
अभी धुआँ
अभी कुहर
अभी जहर अम्बरकी सतहोंपर छाया है
मुझे परख लेने दो अिनमें
कौन प्रगतिके लिये निकट जीवनके
कौन सत्यके लिये निकट मानवके!
गतिसे सागरमें हिलोर पैदा होती है
मिट जाती है
क्यों मिट जाती
पैदा होना फिर मिट जाना ही स्वभाव है अुसका
होता होगा अैसा
कहवाघरके बुद्धिजीवियोंके दर्शनमें
जीवन सुख भी
जीवन दुख भी
गति धोखा है,–भ्रम भविष्यका
पत्थर है अितिहास
शून्य धरातल ही यथार्थ अन्तिम है
भावुकताके कुछ क्षण मेरे
और तुम्हारे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्मृतियोंमें
अेक दूसरेके स्वप्नोंमें
काट न पायेंगे क्या जीवन
अपनी अपनी नियति सभीकी
अपनी अपनी राहें ।
जीवन सुख भी
जीवन दुख भी
गति धोखा है, भ्रम भविष्यका
पत्थर है अितिहास
अितिहासोंके पत्थर खसकाकर यदि देखो
प्राचीरोंको
पाषाणोंको
मेहराबोंको
पिरामिड़ोंको
अिनमें नीचे, दबे हुअे भूतलमें
जीनेके अुद्‌गार
मिट्टीकी कब्रोंसे आती साँसोंकी आवाज
अुन प्राणोंकी चीख
जिनकी युगने हत्या की थी
समझा था जिनको गुलाम अतिनिम्न
पर जो धरतीके बेटे थे
अेक बराबर माँके
जो सँवारकर जो तराश कर, जो मेहनत कर
तुमको आगे रख खुद पीछे रहते आये
अपनी मिट्टीसे मिट्टीको जीवन देते आये
जिन्हें समझा और अदबमें
अितिहासोंके अिन पन्नोंमें
नहीं मिला स्थान
मूल्य नहीं जिनके कृतित्वका
क्योंकि वे श्रमजीवी थे, मेहनतकश थे, मजलूम क्षुद्र
कहवाघरके कोलाहलमें
जिनकी आवाजें और हूकें
हमसे कोसों दूर
क्योंकि हम अुस वृत्तके
जिसका केन्द्र न कोअी
बिना किन्ही बुनियादोंके पत्थरसे
जैसे सागरमें कोअी डूबा तिनका यह सोचे
में बहता हूँ अिसीलिये सागरमें गति है
लफ्फाजीके लिये कहानी
कवितायें जो लिखते
जिससे दुनिया जाने
यह भी कोअी कलाकार है
पतले-दुबले भावुकसे, छायावादी
रोमाण्टिक
बस अतीत जिनका भविष्य है !
मेरे मतमें जीवनका अेक निश्चित पथ है
निश्चित गति है
अनुभूति, संवेदन, पीड़ाओंका जमघट
जिससे मेरा पत्थरका मन गल अुठता है
लम्बे पथपर धँसा हुआ कीचड़में पहिया
चल अुठता है
किसी मेजपर झुका हुआ मैं सोच रहा हूँ
यह आसमान
यह अबाबील
यह धुंधला, पीला सूरज
डूब रहा है, फिर निकलेगा
फिर छायेगा तमपर, जगपर
क्यों मानव ही डूब गया है
सदा-सदाके लिये रंगोंमें
अुन रंगोंमें
जिनमें परिवर्तनका कोअी चिह्न नहीं है
जिनमें युगसे संवेदनका अंश नहीं है !
मेरी या तुम्हारी हार मामूली
मेरी या तुम्हारी जीत मामूली
अिससे भी अहम, गहरे हैं कितने प्रश्न मानवके
सदियोंसे
हजारों सालसे अिन्सान हल करनेकी कोशिशमें
मैं अुन प्रश्नोंसे कहता हूँ
मेरी जिन्दगी मेरी
मेरी मौत भी मेरी
जैसे मीलके पत्थर
अैसे गीत मेरे हैं
निरत होकर नहीं, रत हो
युगकी भावनाओं, वासनाओं, चीत्कारोंमें
सदा आगे, सदा आगे, नये पथपर
धुआँ भी हो,
कुहर भी हो
जहर भी हो
दिसम्बरकी विजन, सुनसान काँपती शाम फैली हो ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहीं हिन्दी संस्कृतका पूर्ण अनुगमन करती है ?

: श्री किशोरीदास वाजपेयी :

हिन्दीका मार्ग निःसन्देह संस्कृतसे तथा प्राकृत अपभ्रंशसे भिन्न है। यह मार्ग-भेद ही तो भाषा-भेदका मूल है। शब्दोंमें रूप-परिवर्तन भी भाषा-भेदका चिह्न है; परन्तु तद्रूप या परिवर्तित-रूप शब्दोंके प्रयोग-विधिपर ही भाषा-भेद आधारित है।

हिन्दीने शब्दोंसे नपुंसक लिङ्ग अेकदम हटा दिया है; यह अेक बहुत बड़ी सरलता कर दी है। संस्कृतमें सकर्मक क्रियाके 'भाववाच्य' या 'भावे' प्रयोग नहीं होते, यदि 'कर्म' साक्षात् अुपात्त (प्राप्त) हो। परन्तु हिन्दीमें सकर्मक क्रियाओंके भी भाववाच्य प्रयोग खूब होते हैं। संस्कृतमें विभक्ति लगाये बिना शब्द वाक्य बनानेमें असमर्थ रहते हैं; पर हिन्दीमें यह बात नहीं। बिना विभक्ति लगाये भी शब्द वाक्यार्थ सिद्ध करते हैं। जहाँ अनिवार्य आवश्यकता हो, वहीं विभक्तिका अुपयोग किया जाता है--

"माँ गोशाला देखती है"

अिस वाक्यमें न 'कर्ता' को विभक्तिकी जरूरत है, न 'कर्म' की। सन्देह सम्भावित नहीं; क्योंकि देखना क्रिया 'माँ' में ही सम्भावित है, 'गोशाला' में नहीं। 'गोशाला' के आँखें ही नहीं हैं। अिसी लिये 'को' के बिना भी अुसे 'कर्म' समझा जा सकता है। अिसी लिये, व्यर्थ समझकर 'को' का प्रयोग नहीं है। परन्तु—

"माँ लड़कीको देखती है"

या—

"लड़की माँ को देखती है"

यहाँ, कर्म 'को' विभक्तिके साथ ही रहेगा, अुसे छोड़ नहीं सकता। कारण, क्रिया ('देखना') माँ और लड़की दोनोंमें सम्भावित है—दोनों देख सकती हैं। अिसीलिये 'कर्म' में 'को' का प्रयोग होता है तब परिशेषतः कर्तृत्व स्पष्ट हो जाता। परन्तु—

'राम लड़की देखता है'

यहाँ 'को' नहीं है; यद्यपि 'लड़की' भी देख सकती है। फिर भी सन्देह नहीं। कारण यह, कि क्रियाका —पुल्लिग रूप—यह स्पष्ट कर रहा है कि अिस क्रियाका कर्तृत्व 'राम' पर है। क्रिया कर्तृ-वाच्य है न ! अिसी तरह यदि राम कहे—

'मैं लड़का देखता हूँ'

तो भी 'को' के बिना कर्मकी स्पष्टता रहेगी। यद्यपि कर्ता तथा कर्म, दोनो पुल्लिग हैं; परन्तु 'हूँ' ने स्पष्टता कर दी है। 'हूँ' अुत्तम पुरुष अेकवचनके साथ ही प्रयुक्त होता है, अन्यत्र नहीं। अिसलिअे 'देखता हूँ' का कर्ता कभी भी 'लड़का' हो नहीं सकता। फलतः 'को' की जरूरत नहीं।

अिस तरहके शतशः भेद हैं, संस्कृत और हिन्दीकी प्रयोग-पद्धतिमें। हिन्दीने अनावश्यक चीज ग्रहण नहीं की है।

परन्तु कहीं-कहीं हिन्दीने अेकदम संस्कृतका मार्ग पकड़ा है। अुदाहरणार्थ यहाँ हिन्दीकी —

भूतकालकी क्रियाअें

ले लीजिअे। हिन्दीने भूतकालमें कृदन्त क्रियाअें ग्रहण की हैं। और, अिन कृदन्त क्रियाओंका प्रयोग संस्कृत-पद्धतिपर ही यहाँ (हिन्दीमें) होता है। संस्कृतमें अकर्मक क्रियाअें (भूतकालमें, कृदन्त) या तो कर्तृवाच्य रहती हैं, या भाववाच्य। हिन्दीमें भी यही बात है— अकर्मक क्रियाअें कर्तृवाच्य ही रहती हैं, कभी-कहीं भाववाच्य भी—

बालकः सुप्तः, बालकाः सुप्ताः, बालिका सुप्ताः

लड़का सोया, लड़के सोये, लड़की सोयी

और—

बालकः न अिदानीम् अभि स्नातः

लड़का अभीतक नहाया नहीं

अिसका भाववाच्य भी—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालकेन न अिदानीम् अभि स्नातम्
लड़केने अभीतक नहाया नहीं
बालकेन न स्नातम्, बालिकयान स्नातम्
बालकैः न स्नातम् अस्याभिः न स्नातम्

हिन्दीमें अिसी तरह भाववाच्य—

बालकने नहीं नहाया, बालिकाने नहीं नहाया
बालकोंने नहीं नहाया, हमने नहीं नहाया।

हिन्दीमें नपुंसक लिङ्ग है नहीं; अिस लिअे सर्वत्र पुल्लिग अेकवचन।

सकर्मक कृदन्त क्रियाअें भूतकालमें संस्कृतकी कर्मवाच्य होती हैं, हिन्दीमें भी अैसा ही है—

बालकेन संहिता पठिता, बालिकया ग्रन्थः पठितः
लड़केने संहिता पढ़ी, लड़कीने ग्रन्थ पढ़ा

संस्कृतमें गत्यर्थक धातुओंकी भूतकालिक कृदन्त क्रियाअें, सकर्मक होनेपर भी, कर्तृवाच्य होती हैं, अन्य सकर्मकोंकी तरह कर्मवाच्य नहीं, हिन्दीमें भी यही बात है—

रामः काशीं गतः
राम काशी गया

भेद पहले बतलाया जा चुका है कि हिन्दीमें कभी-कभी सकर्मक क्रियाओंके भाववाच्य प्रयोग भी होते हैं, जब कि संस्कृतमें कभी भी अैसा नहीं होता। परन्तु हिन्दीने अत्यन्त वैज्ञानिक पद्धति ग्रहण की है, सकर्मक क्रियाका भाववाच्य प्रयोग करनेमें।

'पढ़ा-लिखाकर माँने लड़कीको चतुर बनाया' यह हिन्दीमें सकर्मक क्रियाका भाववाच्य-प्रयोग है। अिसे कर्मवाच्यमें बदलना ठीक न होगा—

बालिका विधालयं गता
लड़की विधालय गयी

क्रिया अुभयत्र कर्ताका अनुगमन करती है, कर्म (काशी या विधालय) का नहीं।
अिसी तरह—

रामः पाठशालाम् आगतः
राम पाठशाला आ गया

आदि समझिअे।

'पढ़ा-लिखा कर माँने लड़की चतुर बनाअी'

अच्छा न लगेगा। 'माँ' 'लड़की'को बनाती नहीं है। बनी-बनाअीमें कुछ संस्कार-परिष्कार करती है। 'लड़की' निसर्ग-सृष्टि है। अिसी लिअे भाववाच्य प्रयोग होता है— 'माँने लड़कीको चतुर बनाया'। हाँ, मानव रचनामें कर्म-वाच्य प्रयोग जरूर होगा—

'जुलाहेने धोती अच्छी बनाअी है'

यहाँ भाववाच्य प्रयोग न होगा। कोअी न बोलेगा—

'जुलाहेने धोतीको अच्छा बनाया'

हाँ, धोती बन चुके और फिर अुस बनी हुअी धोतीमें कोअी विशेष परिष्कार आदि करके अुसे और अच्छा बनाया जाय, तब जरूर कहा जायेगा—

'लड़कीने अिस धोतीको, कसीदा काढ़कर, और अच्छा बना दिया'

यहाँ कर्म-वाच्य प्रयोग न होगा—

'लड़कीने यह धोती, कसीदा काढ़कर और अच्छी बना दी'

यों कर्म-वाच्य प्रयोग न होगा, भद्दा लगेगा। अिसलिअे कि लड़कीने धोती बनाअी कहाँ है ? धोती बनाअी है जुलाहेने। लड़कीने तो अुस बनी-बनाअी धोतीमें कुछ और अच्छापन पैदा कर दिया है—धोती को और अच्छा बना दिया है।

सो, हिन्दीका संस्कृतसे यह मार्गभेद है—कितना वैज्ञानिक, कितना मनोवैज्ञानिक और कितना कलात्मक।

हिन्दीका अभीतक वस्तुतः स्वरूप विश्लेषण हुआ नहीं है। अिसीलिये लोग अिसकी कलात्मक और स्पष्ट प्रवृत्तियोंको भी 'अुलझन' तथा 'अनियमित बातें' बतलाया करते हैं! अिधर कुछ थोड़ा बहुत स्वरूप विश्लेषण हुआ है, जिससे अनेक भ्रान्तियाँ दूर हुअी हैं। मेरा विश्वास है, हिन्दी ही नहीं, हमारी अन्य भारतीय भाषाओंका भी स्वरूप-विश्लेषण अभी वैसा नहीं हुआ है,जैसा होना चाहिये। अेक भी भारतीय भाषाका स्वरूप विश्लेषण सर्वत्र अुपयोगी होगा। पेशावरसे गोहाटी तक चले जाअिये, सर्वत्र धातु-रूप अेक ही मिलेंगे—जा, खा, पी, कर, आदि। अिनके जासां, जायेगा, जैहै, जाब, जावै आदि प्रत्यय भेदसे रूप-भेद मिलेंगे। मराठी, गुजराती आदिमें भी यही बात है। प्रत्ययोंके आधारपर हमें अपनी भाषाओं-का 'सर्वे' करना चाहिये। सर्वत्र अेकसूत्रता मिलेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यालोचन

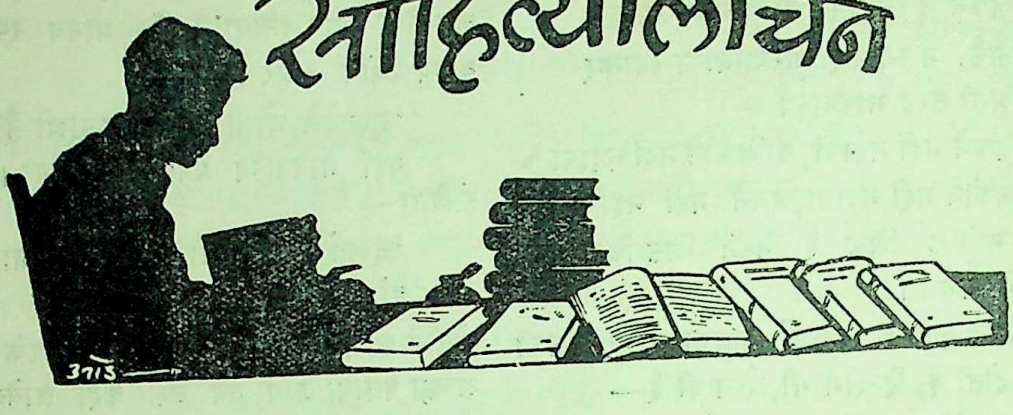

[सूचना—"राष्ट्रभारती" में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिअे।]

बापूकी सीख—प्रकाशक--सस्ता साहित्य मंडल, पृष्ठ संख्या ८२ मूल्य ।।)

राष्ट्रपिता गान्धीजीकी मृत्युके पश्चात् अुनके सत्साहित्यका प्रकाशन और प्रचार अत्यधिक मात्रामें हुआ है। गान्धीजीका जीवन महान् था और अुनकी मृत्यु तो जीवनसे भी महान् हुअी। अिसलिये अुनकी मृत्युके पश्चात् अुनके सिद्धान्तों, अुनके विचारों और अुनके अुपदेशोंके प्रति जनताका झुकाव होना स्वाभाविक था। सभी प्रतिष्ठित प्रकाशकोंने जनताकी अिस मनोदशासे लाभ अुठाया।

सस्ता-साहित्य-मण्डल प्रारम्भसे ही गान्धजीके विचारों और सिद्धान्तोंका प्रचारक रहा है। राष्ट्रभाषा हिन्दीको सबसे अधिक मात्रामें गान्धी-साहित्य अिसी संस्थाने दिया है। प्रस्तुत पुस्तक 'बापूकी सीख' सस्ता साहित्य मण्डलकी नवीन भेंट है।

'गान्धीजीकी रचनाओंमेंसे अुनके मूलभूत विचारोंका यह संग्रह स्कूलों और कालेजोंके विद्यार्थियोंके लिये' प्रकाशित किया गया है। अिस संग्रहमें लगभग वे सभी विषय आ गये हैं जिनकी आवश्यकता चरित्र-निर्माणके लिये हुआ करती है। गान्धीजीका जीवन अेक साधकका जीवन था। अपने जीवनमें अुन्होंने न-जाने कितने प्रयोग किये। वे किसी बातको पहले अपने जीवनमें अुतारते थे, तब अुसे वाणीपर लाते। कथनीसे पहले करनीका दूसरा नाम ही गान्धी है। अिसलिये बापूने जो कुछ कहा 'सीख' बन गयी। अिस पुस्तकमें बापूकी चुनी हुअी सीखें संग्रहीत की गयी हैं। निश्चय ही यह पुस्तक विद्यार्थी वर्गके लिये विशेष रूपसे लाभप्रद सिद्ध होगी।

अिस पुस्तकमें कुछ विषय अैसे अवश्य हैं जो छोटी अुम्रके विद्यार्थियोंके लिये गहन प्रतीत होंगे। भाषा सरल और रोचक है।

❀ ❀ ❀

गीता-सम्वाद—अनुवादक–श्री सियारामशरण गुप्त; प्रकाशक– साहित्य सदन चिरगाँव, झाँसी। पृष्ठ संख्या १५४ मूल्य १)

संभवतः 'गीता' ही वह गौरवशाली ग्रंथ है जिसकी सबसे अधिक टीकाअें हुअीं और संसारकी प्रत्येक भाषामें जिसका अनुवाद हुआ। अेक हिन्दीमें ही गीताके सैकड़ों गद्यानुवाद और पद्यानुवाद हुअे हैं। प्रतिभावान कवियोंने विभिन्न छन्दोंमें गीताका सफल अनुवाद प्रस्तुत किया है। अभी कुछ ही दिन पहले श्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरिभाऊ अुपाध्याय द्वारा पद्यानुवाद जनताके सम्मुख आ चुका है।

'गीता-सम्वाद' हिन्दीके प्रतिष्ठित कवि श्री सियारामशरण गुप्तजीके द्वारा प्रस्तुत किया गया श्री मद्भगवद् गीताका समश्लोकी अनुवाद है। पूज्य बापू गीता-जैसे ग्रंथोंके अनुवादके पक्षपाती न थे। वे चाहते थे कि गीताका पाठ मूल रूपमें ही किया जाय। किन्तु अिधर स्वभाषा प्रेम और अर्थ ग्रहण सरलताकी दृष्टिसे गीताके अनुवाद भी वे सहन करने लगे थे। पूज्य विनोबाजी कृत 'गीताअी' (मराठी) का प्रचार अिधर महाराष्ट्रमें काफी हुआ है। गीताअीकी भाँति प्रस्तुत 'गीता सम्वाद' भी समश्लोकी अनुवाद है। अिसलिये अिसके पठनमें भी मूल गीताका-सा आनन्द आता है।

'गीता सम्वाद' की रचनामें अनुवादकने कम परिश्रम नहीं अुठाया है। आचार्य श्री विनोबा और श्री. मश्रूवालाजी जैसे अधिकारी विद्वानोंके सम्पर्कमें रहकर अनुवादका परिमार्जन किया गया है। अतः यह निश्चय रूपसे कहा जा सकता है कि 'गीता सम्वाद' अनुवाद होकर भी अनुवाद प्रतीत नहीं होता। सफल अनुवादकी यही कसौटी हुआ करती है।

हिन्दी संसार श्री गुप्तजीका ऋणी रहेगा कि अुन्होंने अेक सुन्दर अनुवाद देकर हिन्दी पाठकोंको गीता-जैसे ग्रन्थके निकट पहुँचा दिया है।

अीशावास्य— अनुवादक— श्री सियारामशरण गुप्त, प्रकाशक—साहित्य सदन, चिरगाँव, झाँसी। पृष्ठ सख्या १६, मूल्य दो पैसा।

यों तो अुपनिषदोंमें अीशोपनिषत्का महत्व था ही, किन्तु अिधर पूज्य गान्धीजी और आचार्य विनोबा की प्रार्थनामें अुसे आदरका स्थान मिल जानेके कारण वह और अधिक जन-प्रिय हो गया है। पूज्य विनोबा अपनी प्रार्थनामें अुसके मराठी अनुवादका पाठ किया करते थे। अुत्तर भारतकी यात्रामें अुन्हें अीशोपनिषत् के हिन्दी अनुवादकी आवश्यकता प्रतीत हुअी।

हिन्दीके यशस्वी कवि श्री सियारामशरणजीने विनोबाजीके निर्देशनमें अिस हिन्दी अनुवादको प्रस्तुत किया है। श्री विनोबाजीके सुझाओंका लाभ अुठाकर अनुवाद सफल बन गया है।

'गीता सम्वाद' की भाँति ही यह 'अीशावास्य' भी हिन्दीकी अेक कमीको पूरा कर रहा है।

भूदान-यज्ञ—प्रकाशक—सस्ता-साहित्य-मंडल, पृष्ठ संख्या ३२, मूल्य चार आने।

आचार्य विनोबा, राष्ट्रपिता गान्धीके अुन अनुयायियोंमें सर्वश्रेष्ठ हैं जिन्होंने अपने जीवनको गान्धी सिद्धान्तोंके साँचेमें ढाला है। जनता जनार्दनके अनन्य सेवक सन्त विनोबाने अपना सारा जीवन देशसेवामें ही अर्पण किया है। अुनकी नयी प्रवृत्ति भूमि-दान-यज्ञने आज अुन्हें अत्यधिक जन-प्रिय बना दिया है। तैलंगानाके बाद आज वे अुत्तर भारतमें भूमिदान प्राप्त कर रहे हैं और अुसे भूमि-हीनोंमें बाँट रहे हैं। अिस पुण्य कार्यमें अुन्हें आशातीत सफलता मिल रही है।

स्थान-स्थानपर वे नित्य ही भूमिदान यज्ञके अुद्देश्य, महत्व और व्यापक प्रभावके सम्बन्धमें प्रवचन करते रहते हैं। आये दिन समाचार पत्रोंमें अुसके विवरण प्रकाशित होकर 'भूमिदान यज्ञ' के लिये अनुकूल वातावरणकी सृष्टि कर रहे हैं।

प्रस्तुत पुस्तकमें 'भूदान-यज्ञ' पर आचार्य विनोबाके केवल दो प्रवचन सग्रहीत किये गये हैं। पहला वह प्रवचन है जो अुन्होंने वारंगल (तेलंगाना) में दिया था और दूसरा, गान्धी-जयन्तीके दिन २ अक्टूबर १९५१ को सागरमें आयोजित सर्वोदय-सम्मेलनमें दिया गया भाषण है।

अिन दोनों प्रवचनोंमें 'भूदान-यज्ञ' अुसकी आवश्यकता, अुसके महत्व तथा अुसके प्रभाव आदि पर बड़ी रोचक शैलीमें प्रकाश डाला गया है। श्री विनोबाकी विवेचन शैली अितनी मार्मिक होती है कि श्रोता या पाठक बिना प्रभावित हुअे नहीं रहता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सस्ता-साहित्य-मंडलने विनोबाके अिन विचारोंको पुस्तिकाका रूप देकर अेक पुण्य कार्य किया है।

—रामेश्वर दयाल दुबे

तुलसीदास : नाटक—लेखक—श्रीराम शर्मा, प्रकाशक—हैदराबाद राज्य हिन्दी प्रचार सभा, नामपल्ली, स्टेशन रोड, हैदराबाद, मूल्य १ रुपया दो आने, पृष्ठ-संख्या ६७, छपायी सुन्दर, पुस्तकका बहिरंग साधारण।

भक्त कवि गोस्वामी तुलसीदासजीके जीवनपर आधारित अिस नाटकको लेखकने पुरानी शैलीमें लिखा है। अिस शैलीके अनुसार प्रत्येक अंकमें तीन या चार बार परदों द्वारा दृश्य बदलते हैं। जैसा कि लेखकने "कथावस्तु" में स्वीकार किया है, कुछ अैतिहासिक घटनाओंका अिसमें आधार लिया गया है। यदि अिन आधारोंके लिये प्राप्त अैतिहासिक तथ्योंको भूमिकामें प्रमाण अुपलब्ध कर पाते, तो नाटककारकी बात अधिक प्रामाणिक होती।

६७ पृष्ठके छोटेसे नाटकमें चार अंक, तेरह दृश्य और तेरह पात्र हैं, जिससे चरित्र-चित्रणको पूर्ण अवकाश नहीं मिल पाया। तुलसीदाससे जिनका केवल देश-काल सम्बन्ध है, अैसे केशवदास (रीतिकालीन) का अिसमें व्यर्थ ही समावेश किया गया है। तुलसीदासकी मुख्य कथा-शृंखलासे अिन पात्रोंका प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है। तेरह दृश्योंमेंसे केवल पाँच दृश्योंमें तुलसीदास मंचपर अवतीर्ण होते हैं। अन्य दृश्योंमें गौण पात्रोंको स्थान मिला है। कथा-शृंखला खंडित होनेका यही कारण है। नाटकीय प्रभावसे तुलसीदासको लेखकने बचाया है, किन्तु अैतिहासिक तथ्योंकी रक्षा करते हुअे भी कम पात्रोंमें दृश्योंके हेरफेरसे नाटकीय प्रभाव अुत्पन्न किया जा सकता था। कुतूहल, संघर्ष और चरम सीमाका—जो नाटककी आत्मा है, अिसमें अभाव है। अतः नाटक आरम्भसे अंततक बिना अुतार-चढ़ावके सीधी रेखामें चलता है। अिसके संवाद चुस्त, चटपटे और मार्मिक हैं। चरित्रके मनोभाव व्यक्त करनेकी, भाषा और विचारोंमें क्षमता है। देशकाल परिस्थिति अंकित करनेके लोभसे ही कविवर नन्ददास और केशवदासको खड़ा किया गया है किन्तु नाटकमें अिन चरित्रोंके विकासका अथवा मूल कथामें योग देनेका अवकाश ही नहीं मिला। सोमशंकर और कृष्णानन्दके रूपमें तत्कालीन पाखंडी सन्यासियोंकी मनोवृत्ति चित्रित हुअी है। किन्तु अिन विरोधी प्रकृतिके पात्रों द्वारा जो गति नाटकमें अुत्पन्न हो सकती थी अुसकी ओर नाटककार सजग नहीं रहा। मंचपर अुपस्थित करनेकी दृष्टिसे नाटक सहज और सरल है, परन्तु नाटकीय संविधानके अभावमें दर्शकोंपर अिच्छित प्रभाव नहीं डाला जा सकता। आशा है, संवाद लिखनेकी पटुता लेखकको किसी अन्य सफल नाट्य कृतिकी दिशामें अुन्मुख करेगी।

—अनिल कुमार

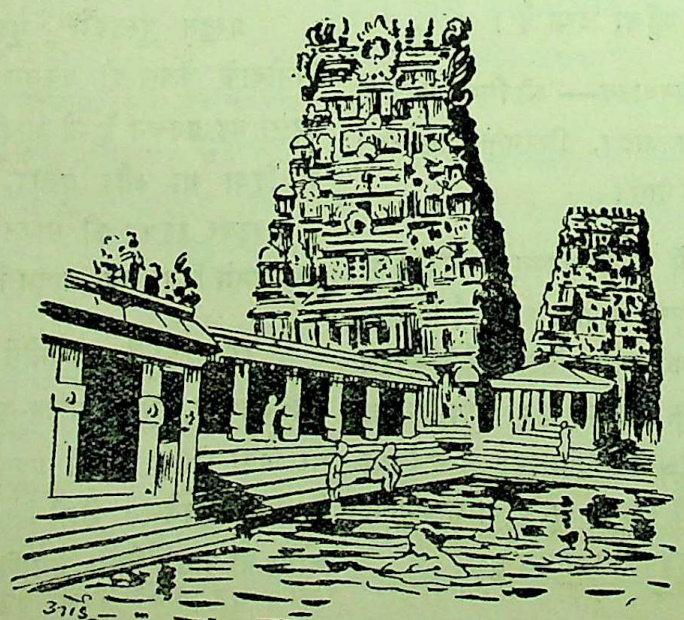

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय

'राष्ट्रभाषा' अेक जटिल समस्या और हल-

हमारी विधान-परिषदने कोअी ३ वर्ष हुअे, अपने धर्म-निरपेक्ष राज्यमें हिमालयसे कन्याकुमारीतक अिस महान् जनतंत्र राष्ट्रके लिये अेक राष्ट्रभाषा हिन्दी और अेक लिपि देवनागरीकी अैतिहासिक घोषणा की थी। कुछ अैसी परिस्थितियाँ थीं कि अुसे साथ-साथ १५ बरसकी अवधिकी शर्त भी अपनी घोषणाके साथ जोड़नी पड़ी।

निर्माण होने जा रहे राष्ट्रकी 'परिषद' के प्रतिनिधियोंका कर्तव्य था कि वे अपने निर्णयका गंभीरतापूर्वक पालन करते। 'परिषद-भवन' से अभी देर नहीं हुअी थी अपने राष्ट्रीय निर्णय पर राष्ट्रकी सील लगाकर बाहर निकले; कि आपसमें तू-तू-- मैं-मैं शुरू हो गयी। हिन्दीको लेकर अखबारोंमें, पर्चेबाज़ीमें, धुआँधार सार्वजनिक भाषणोंमें, बहसों और चर्चाओंमें अपने कृत निर्णयको विकृत करनेकी और तोड़फोड़की साजिशमें-दुष्प्रवृत्तिमें वे लग गये। जहाँ राजभाषा-राष्ट्रभाषा हिन्दीके रचनात्मक निर्माणमें अुन कर्मी कर्णधारोंको चुपचाप गंभीरतापूर्वक-- दूरदर्शितापूर्वक और अुदारतापूर्वक-- लग जाना चाहिये था वहाँ हिन्दीको लेकर अेक संघर्षका अखाड़ा तैयार करनेमें और अुस निर्णयको ध्वंस करनेमें वे कमर कसकर मैदानमें कूद पड़े। प्रान्तीय हिन्दी, राष्ट्रीय हिन्दी, टंडनजीकी हिन्दी और महामहोपाध्यायकी हिन्दी। दक्षिण भारतकी हिन्दी और अुत्तर भारतकी हिन्दी, न भैया, देवनागरीमें ही नहीं; साथ-साथ फारसी लिपिमें भी लिखी जानेवाली हिन्दी, बिना बिन्दीकी हिन्दी या बिन्दी लगी हिन्दी, साम्राज्यवादी हिन्दी, राष्ट्रीय हिन्दी, अराष्ट्रीय हिन्दी। अिस प्रकार राष्ट्रभाषा हिन्दीपर चारों ओरसे मर्मभेदी प्रहार होने लगे। हिन्दीकी जी-भर निन्दा हुअी, पानी पी-पीकर हिन्दीको कोसा गया, बायकाट-- बहिष्कार हुअे। अनेक तरहके लांछन हिन्दीपर लगाये गये और मूढ़ग्राहके वश होकर राष्ट्रीय निर्णयकी अवहेलना की 'घृताधारे पात्रं-पात्राधारे घृतं'की तरह बालकी खाल खींच-खींचकर, नाना तर्क और नाना कुतर्क! शांतं पापम्!

अिनमें किसी माअीके लालने आजतक अपनी हिन्दीका राष्ट्रभाषाका निर्दोष नमूना नहीं रखा कि अैसी हिन्दी, हिन्दी होगी। काश, वे वैसा नमूना पेश कर सकते!

राष्ट्रभाषा हिन्दीकी सहज प्रवृत्ति है कि वह जानबूझकर किसी शब्दका बहिष्कार नहीं करती। अिस पुण्य पुरातन देशको अुन आगत विदेशियोंने, मुसलमानोंने 'हिन्द' कहा और अुन्हींका रखा हुआ 'हिन्दी' नाम भी फारसी भाषाका शब्द है, जिसका सीधा-सा अर्थ है। हिन्दी अुर्दूसे कोअी झगड़ा नहीं करना चाहती और न वह किसी अपनी पड़ोसी भाषाको दबाना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहती है, न मिटाना चाहती है। स्वतन्त्र गणतन्त्र भारतमें वह अपना पद भिखारिन बनकर नहीं चाहती; स्वाभिमानिनी मनस्विनी गौरवशालिनी राष्ट्रभाषा बनकर चाहती है और हमारा विश्वास है, वह अुसे प्राप्त होगा।

लिपिका प्रश्न भी बडे महत्त्वका है। माना कि सबकी भाषाअें----प्रान्तीय भाषाअें---- यहाँ अलग-अलग हैं। रहें, फूलें, फलें। परस्पर दो-तीन प्रान्तीय भाषाअें सीखें, मेल-जोल बढ़ावें। भारतकी सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक अेकताको मजबूत बनावें। परन्तु अपने अक्षर अेक अक्षुण्ण रखें।

समूचे यूरोपमें कोअी १६-१७देश हैं, अलग-अलग हैं; किन्तु अुनकी लिपि प्रायः अेक है। अँग्रेजी, फ्रेंच, जर्मन, डच, अिटली, रशियन भाषाअें अुसी अेक लिपिमें लिखी जाती हैं–रोमन लिपिमें।

यदि भारतमें भी बँगला, मराठी, गुजराती, तमिल, तेलुगु, कन्नड़, पंजाबी, सिन्धी आदिकी पुस्तकें देवनागरी राष्ट्रलिपिमें भी प्रकाशित की जावें, तो ठीक होगा। देवनागरी अक्षर भारतवर्षमें सबसे श्रेष्ठ, स्वच्छ, सुवाच्य और अुत्तम अक्षर हैं। अिस देशकी हमारी प्राचीन सांस्कृतिक भाषा संस्कृत प्रायः सर्वत्र अिन्हीं अक्षरोंमें लिखी जाती है। समूचा महाराष्ट्र तो अपनी मराठीमें देवनागरी लिपिको ही अपनाकर राष्ट्रकी अेकताको पुष्ट कर रहा है। मुसलमान नागरीको अपनायें, गुजराती और गुरुमुखीवाले नागरीको अमलमें लायें, बंकिम, शरद और रवीन्द्रकी बँगला नागरीमें अवतीर्ण हो। दक्षिणकी भाषाअें भी संत नन्दनार और तिरुवल्लुवर और बल्लत्तोलकी भाषाअें नागरी अक्षरोंमें अपनी छटा दिखावें। अिससे अेक दूसरेके साहित्यको पढ़ने समझनेमें बड़ी सुविधा होगी, हमारी राष्ट्रीय अेकता बढ़ेगी और साहित्य तथा संस्कृतिका भी सर्वतोन्मुखी विकास होगा।

—ह० श०

तीसरे वर्षमें अपनी ओरसे--

अिस जनवरीसे 'राष्ट्रभारती' तीसरे वर्षमें पदार्पण कर रही है। यह अंक 'नववर्षांक' है। अिस वर्षमें राष्ट्रभारती क्या-क्या करेगी, यह अभी कहना मुश्किल है। फिर भी गतवर्षमें प्रकाशित १२ अंकोंपरसे अपनी अभिरुचि, शक्ति, श्रम और श्रद्धाके साथ हमने राष्ट्रभाषाकी और भारतीय साहित्यकी जो अल्प-स्वल्प सेवा की है अुसका अनुमान प्रेमी पाठक-पाठिकाअें लगा सकते हैं। हम तो नम्रतापूर्वक अितना ही निवेदन कर देना चाहते हैं कि 'राष्ट्रभारती' की लोकप्रियता बढ़ी, कृपालु ग्राहकोंकी संख्या बढ़ी। हिन्दीके तथा विभिन्न प्रान्तीय भाषाओंके विद्वानोंने, साहित्यकारोंने, हमारी कद्र की, और अपनी लेखनीका हार्दिक सहयोग देकर हमारा अुत्साह बढ़ाया। अिसके लिये हम अुनके प्रति कृतज्ञ हैं। अिससे हमारी दृढ़ श्रद्धा बढ़ी है राष्ट्रभाषा-- राजभाषाके प्रति और विभिन्न समृद्ध भारतीय भाषाओंके प्रति। हम यही चाहते हैं कि राष्ट्रभाषा समृद्ध, समुन्नत होकर सारे राष्ट्रका साहित्यिक-सांस्कृतिक सामर्थ्य वहन करनेमें समर्थ हो। हमारा यह भारत विशाल देश है। अिसकी सभी प्रादेशिक भाषाअें बहुत समृद्ध हैं, बहुत सुन्दर हैं और बहुमूल्य साहित्य अुनमें संचित हैं। अुत्तर-दक्षिणके बीच अुन-अुन प्रान्तीय भाषाओंके साहित्यकार जिन आनन्द-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रद कृतियोंकी सृष्टि करते हैं, 'राष्ट्रभारती' द्वारा हम अुनका स्वाद चखानेका संकल्प कर चुके हैं। अिस दिशामें हमने अेक नयी दिशा, नया मोड़, नयी आकांक्षा और नये संकेतोंका सूत्रपात किया है।

गत वर्ष जिन पाठकोंने ग्राहक बनकर, जिन संस्थाओंने और राज्योंने अपनी मान्यता देकर, जिन मित्रोंने, जिन सहयोगियोंने 'राष्ट्रभारती' के बारेमें सद्भावानापूर्ण अभिप्राय देकर, राष्ट्रभारतीकी सहायता की अुन सबके प्रति हम अत्यन्त आभारी हैं।

हिन्दी प्रचारकी दर्दभरी समस्यायें—

'राष्ट्रभारती'के दिसम्बरके अंकमें 'हमारा दुःख' शीर्षक मेरी टिप्पणी पढ़कर अेक मित्रने अेक दर्दभरा पत्र लिखा है। वे स्वयं तो हिन्दी-भाषी हैं परन्तु हिन्दीतर भाषी प्रान्तोंमें वर्षोंसे, अुसे अेक लम्बा युग ही समझें, हिन्दी-प्रचारके कार्यमें लगे हुअे हैं। वे लिखते हैं:—

"..... आपने अपने विचार अत्यन्त स्पष्टतासे रख दिये हैं। मैं आपको बधाअी देता हूँ।

"हिन्दी प्रचारकोंमेंसे अधिकांश आपके विचारका समर्थन करेंगे। जिनकी मातृभाषा हिन्दी थी, वे अपनी ही संस्कृत-हिन्दीका प्रचार करने यहाँ आये थे। अुन्हींके सिखाअे हुअे, और अुन्हींकी लिखी पुस्तकें पढ़कर आज हजारों प्रचारक अिस क्षेत्रमें हिन्दीका प्रचार कर रहे हैं। वह भाषा किसी व्यक्ति-विशेष या प्रान्त विशेषकी गढ़ी हुअी नहीं है। वह अुत्तरकी सर्वजन-स्वीकृत भाषा है। जैसा आपने जताया है, धीरे-धीरे अुसमें भले ही परिवर्तन होता जाय। गंगोत्रीका जल कलकत्ता पहुँचते-पहुँचते जो भी रूप धारण करे, पर सागरमें पहुँचकर 'गंगा-सागर' नाम अुसका बना ही रह जाता है।

"लेकिन आज जो दो भाषाकी चर्चा चल पड़ी है, समयके बहुत पहले हो रही है और सच्चे सेवकोंको आन्तरिक क्लेश पहुँचा रही है। जो भाषा देशको अेक करने चली थी, अुसीके समर्थक आज, अुसीके नामपर, कुछ अैसी बातें कहते पाये जाते हैं जिनका अर्थ समझना बहुत ही कठिन हो रहा है। आपने बड़े साहसके साथ टीस मारते हुअे अिस फोड़ेको छू दिया है। मैं समझता हूँ, नेताओं तथा प्रचारकोंको अिसपर गम्भीरताके साथ विचार करना चाहिये और अिस चर्चाको अेक निश्चित सीमामें बन्द कर देना चाहिये।

"आज कअी तरहकी तोड़क शक्तियाँ हमारे संगठनमें घुस आयी हैं। कअी जगह तो रँगे सियार भी जोर-जोरसे अपना परिचय देने लग गये हैं। जिन्हें हम प्रचार-क्षेत्रमें पूज्य मानते थे, जिनका नाम ले-लेकर हम आगे बढ़े थे, आज अुन्हींको लांछित करनेका संगठित प्रयत्न होने लग गया है। अैसे दुर्दिनमें अेक-अेक पग बड़ी समझदारीसे अुठानेकी जरूरत दीख पड़ती है। दक्षिण भारतमें तो खुलेआम सभाओंमें हमारे राष्ट्रके सर्वोच्च कर्णधारोंकी खिल्लियाँ अुड़ाअी जा रही हैं और सो भी हिंदी प्रचारके क्षेत्रोंसे। यह अत्यन्त दर्दनाक नजारा है, भट्टजी! आनेवाली सन्ततियोंके हाथमें चरित्र-निर्माणकी कौन-सी पुस्तकें हम रखने जा रहे हैं? यह प्रश्न मेरे हृदयको अत्यन्त तीव्रताके साथ मथ रहा है। लेकिन समाधान कहींसे नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिल रहा है। आपसे अत्यन्त नम्रता-पूर्वक निवेदन करता हूँ--प्रश्नको वैज्ञानिकताकी दृढ़ भित्तिपर अत्यन्त निर्भीकता तथा सौजन्यके साथ बढ़ा ले जाअिये। अिसे आप अपने अेक दूरस्थ बंधुका आग्रह ही समझियेगा।"

यह अुद्धरण मैंने ज्यों का त्यों यहाँ दिया है। भाषाके रूपके सम्बन्धमें यहाँ यह कह देना आवश्यक है कि हमारे हिन्दी भाषी प्रचारकोंका अुद्देश्य कैसा भी क्यों न रहा हो, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति तो आरम्भसे ही सरल आम-फहम हिन्दीका ही प्रचार करती रही है। आज तो विधानमें भाषाके विकासके लिये भी अुचित मार्गदर्शन करा दिया गया है। लिपिका प्रश्न भी अब नहीं रहता है। अैसी स्थितिमें जो व्यर्थ-की समस्याअें कुछ लोगोंकी ओरसे खड़ी की जा रही हैं, अुससे दुःख ही होता है। अिस दर्दभरी परिस्थितिका अेक ही अुपाय है और वह है श्रद्धा और धैर्यसे राष्ट्रके निर्माणके लिये आवश्यक हिन्दीका प्रचार करना। पत्रलेखक बन्धुको हम विश्वास दिलाते हैं कि हिन्दीका भविष्य अुज्ज्वल है। घबरानेकी कोअी बात नहीं।

—मो० भ०

सूचना

'राष्ट्रभारती' का नया मुखपृष्ठ-चित्र तैयार हो रहा है। कोशिश थी कि हम अिसी अंकमें वह नया ब्लाक देते; किन्तु ब्लाक बनकर नहीं आया है। आगामी अंकसे हम देंगे।

—प्रबन्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रभाषा – डायरी

अिसमें राष्ट्रभाषा प्रचार समितिकी परीक्षा आदि प्रवृत्तियोंके सम्बन्धमें विभिन्न जानकारियोंके साथ दैनिक व्यवहारमें आनेवाली अुपयोगी बातें संग्रहीत हैं।

राष्ट्रभाषाप्रेमी, प्रचारक वर्ग, छात्र वर्ग तथा सभी कोटिके लोगोंके लिये यह डायरी बहुत ही अुपयोगी है।

सुन्दर कागज, आकर्षक छपाअी तथा कपड़ेकी पक्की जिल्द।

१०० या अुससे अधिक डायरी मँगानेवालोंको साढ़े बारह प्रतिशत कमीशन दिया जायगा।

लागत मूल्य : १) अेक रुपया, डाक-खर्च अलग।

प्रकाशक :

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

शीघ्र ही प्रकाशित होगाः—

राष्ट्रभाषा कोष (गुटका)

सम्पादक

महापंडित राहुल सांकृत्यायन

शब्द-संख्या लगभग २५,०००

मिलनेका स्थानः—

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति,

हिन्दीनगर, वर्धा (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

रा. भा- प्रारंभिक बोधिनी	।=)
अुड़ते जुगुनु	॥)
नया गुलदस्ता भाग १—	।≡)
,, गुलदस्ता भाग २—	॥)
,, गुलदस्ता भाग ३—	।॥)
नया कहानी संग्रह भाग १—	।=)
,, कहानी ,, भाग २—	।॥)
,, कहानी ,, भाग ३—	।॥)
सरल रचना पत्र लेखन	।=)
हिन्दी मराठी स्व-बोधिनी	।॥)
मुहावरे और कहावतें	।॥)
नेताओंकी कलमसे	१)
रहीमके दोहे	॥=)
पाँच अेकांकी	१)
रा. भा. व्याकरण १—	॥=)
आधुनिक गद्य संग्रह	१॥)
साहित्यका साथी	१॥)
कोविद प्रश्न-पत्र (३३⅓% कमीशन)	॥=)
परिचय ,, (३३⅓% कमीशन)	॥)
प्रवेश ,, (३३⅓% कमीशन)	।=)
प्रारम्भिक ,, (३३⅓% कमीशन)	।)
रा. भा. प्र. सर्वसंग्रह	२)
कण्ठाभरण	॥)
चार अेकांकी	।॥=)
आधुनिक काव्यसंग्रह	२)
प्राचीन ,,	२।)
रा. भा. रचना २—	।॥)
,, रचना ३—	१)
,, रचना १—	॥)
प्रचलित हिन्दी	१)
अेकांकी	।=)
नया रा. भा. बोध १—	॥=)
,, ,, २—	।॥)
,, ,, ३—	१)
मराठीका वर्णनात्मक व्याकरण	२।)
भारतीय वाङ्मय भाग १—	२)
,, ,, भाग २—	१॥)
,, ,,	२)
कथा-काव्य	॥=)
फ्रेंचस्वयं शिक्षक देशमें	५)
,, विदेशमें	८ शिलिंग
शुद्ध शब्द-चार्ट	-)
रा. भा. डायरी	१)

पताः— राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने प्रचारक भाई-बहनोंसे

राष्ट्रभाषा प्रचार समितिका परिवार बहुत विशाल है। अिस परिवारमें ३३०४ से अूपर प्रमाणित-प्रचारक हैं और लगभग २००० केन्द्र-व्यवस्थापक भी। हमसे सहानुभूति और प्रेम रखनेवालोंकी संख्या भी बहुत बड़ी है।

'राष्ट्रभारती' समितिकी अन्तरप्रान्तीय (भारतीय) साहित्य और संस्कृतिकी प्रतिनिधि मासिक पत्रिका है। अिसकी अुपयोगिता और अुपादेयता आप लोगोंसे छिपी नहीं है। अपनी अितनी सस्ती, विविध विषय-सम्पन्न, अेवं सुरुचिपूर्ण सुन्दर पत्रिकाको अगर आप लोग चाहें तो बहुत ही शीघ्र स्वावलम्बी बना दे सकते हैं।

प्रत्येक प्रचारक और केन्द्र-व्यवस्थापक 'राष्ट्रभारती' का अेक-अेक ग्राहक बना दे, तो अिसकी सन्तोषजनक ग्राहक-संख्या बढ़ जायगी। सिर्फ आर्थिक लाभकी दृष्टिसे ही हमें नहीं सोचना है; भारतीय साहित्य और संस्कृतिके अुच्च अुद्देश्यको भी पूरा करनेके लिये भी अिस पत्रिकाके पाठकोंकी संख्या बढ़ाना, ग्राहक बनाना, अत्यन्त आवश्यक है। यह मुश्किल नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि आप लोग 'राष्ट्रभारती'के ग्राहक खुद बनेंगे, दूसरोंको बनायेंगे और 'राष्ट्रभारती'की पाठकसंख्या बढ़ानेमें अपनी समितिकी सहायता करेंगे।

मोहनलाल भट्ट
मंत्री, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

फ्रेंच भाषा सीखिये !

'फ्रेंच स्वयं शिक्षक'

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धाका यह नवीनतम प्रकाशन है। अिसके लेखक हैं प्रख्यात गुरुकुल (यूनिवर्सिटी) काँगड़ी हरद्वारके विद्वान स्नातक डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार डी. लिट. (पैरिस)।

राजधानी नयी दिल्लीमें भारत-स्थित फ्रांसके राजदूत श्री काअुन्ट आस्ट्रोरोग भारतके तरुणोंको शीघ्राति-शीघ्र फ्रेंच भाषा सीखनेकी सलाह देते हैं। फ्रेंच भाषा सारे यूरोपमें बहुत आमफहम और कूटनीतिज्ञ भाषा है। फ्रेंच भाषा बोलनेमें शान समझी जाती है।

बड़ी सरलतासे अिस पुस्तककी सहायतासे आप फ्रेंच भाषा सीख सकते हैं।

बढ़िया छपायी, साफ-सुथरी जिल्द, **कीमत ५ रुपया मात्र**

मिलनेका पता :—

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा [म. प्र.]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे 'राष्ट्रभारती' के बारेमें क्या कहते हैं ?

नअी दिल्लीसे भारत-सरकारके केन्द्रीय शिक्षा-मंत्रालय (मिनिस्ट्री ऑफ अेजुकेशन) से, सुविख्यात भाषा-विज्ञानाचार्य अेवं भारतीय साहित्यके प्रकांड पंडित डॉ० सिद्धेश्वर वर्माजीकी शुभ कामना है :—

" अपनी आयुके तृतीय वर्षमें पदार्पण करती हुअी 'राष्ट्रभारती' के दीर्घ अेवं अुज्ज्वल भविष्यके लिये शिव-संकल्प स्वीकार कीजिये ।

डाक्टर साहेब तथा अुनका कर्तृवर्ग, 'राष्ट्रभारती' के नववर्षका अभिनन्दन करेंगे । "

★ ★ ★

बिहारके लब्ध-प्रतिष्ठ तरुण साहित्यकार और बिहार सरकारके मनीषी शिक्षा-सचिव श्री जगदीशचन्द्र माथुर, आअी० सी० अेस० लिखते हैं :—

श्री हृषीकेश शर्मा,

सम्पादक, 'राष्ट्रभारती',

में 'राष्ट्रभारती' को मनोयोगसे पढ़ता रहता हूँ । निश्चय रूपसे यह पत्रिका विभिन्न भारतीय साहित्योंके बीच अेक कलापूर्ण कड़ीका काम कर रही है । अैसी पत्रिकाओंसे हिन्दीका गौरव बढेगा और समकालीन साहित्यकी बहुमुखी अभिवृद्धि होगी । "

★ ★ ★

राष्ट्रभाषा हिन्दीके ख्यातिप्राप्त प्रगतिशील कवि, अेवं साहित्यकार, रावर्टसन कालेज जबलपुरके हिन्दी- प्राध्यापक श्री रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' अेम० अे०, लिखते हैं :—

" प्रिय शर्माजी, "राष्ट्रभारती" आपके सम्पादकत्वमें अुत्तरोत्तर अुन्नति कर रही है । आपने बड़ी कुशलता और निष्पक्षतासे अुसका सम्पादन किया है । अच्छी-से-अच्छी अुपयोगी-से-अुपयोगी सामग्री आपने अपने पाठकोंके लिये प्रस्तुत की है । आज हिन्दीकी श्रेष्ठतम साहित्यिक पत्रिकाओंमें 'राष्ट्रभारती' का स्थान है । अेक व्यापक और सर्व प्रान्तीय साहित्यिक दृष्टिका प्रसार अुसने आपके सम्पादन-कालमें किया है । मुझे विश्वास है, 'राष्ट्रभारती' अपने नामको पूर्ण रूपसे चरितार्थ करेगी । "

प्रकाशक:— मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा ।

मुद्रक— गुरुराम शर्मा, राष्ट्रभाषा प्रेस, वर्धा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

फरवरी, १९५३

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची, फरवरी १९५३

वर्ष ३] [अंक २

[**सूचना:**— 'राष्ट्रभारती'में, सर्वश्री डॉ. बाबूराम सक्सेना, आचार्य काका कालेलकर, महामहोपाध्याय दत्तो वामन पोतदार, स्वर्गीय किशोरीलाल मशरूवाला और अुत्तर प्रदेशके वर्तमान राज्यपाल क० मा० मुन्शीजी आदि विशेषज्ञोंकी 'समिति' द्वारा १९३६ में निर्णीत नागरी लिपिका प्रयोग होता है:— अि, अी, अु, अू, अे, अै (इ, ई, उ, ऊ, ए और ऐ की जगह) और ञ, ण और क्ष (झ, ण और क्ष अक्षरोंके लिये) –सं०]

विषय	लेखक	पृष्ठांक
१. पँखुरियाँ (बंगला)	श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर अनु०–श्री शंकरदेव विद्यालंकार	८१
२. राष्ट्रभाषा और प्रांतीय भाषाका संगम	डॉ० अमरनाथ झा अेम. अे. डी. लिट.	८४
३. वेणु, मुरली और वंशी	श्री शिवनाथ अेम० अे.	८६
४. प्रतुल (कहानी)	श्री मोहनसिंह सेंगर	९१
५. कल्पना और सत्य (गुजराती)	श्री अुमाशंकर जोशी अनु०–श्री मनु पंडित	९५
६. बापू फिर मारे गये (अुर्दू कहानी)	श्री कृष्णचन्द्र अनु०– कु. मुबारक जहाँ	९६
७. तेलुगु लोकगीत 'चल मोहन रंग'	श्री प्राध्यापक वा. राममूर्ति 'रेणु' अेम. अे.	१०३
८. अेत्तिला जोसेफ–हंगेरियन सर्वहाराका महान् कवि	श्रीमती कमल आर्य, लंदन	१०४
९. गीत (कविता)	श्री नर्मदाप्रसाद खरे	११२
१०. बाज़ारसे सुअी मँगायी (शब्द-चित्र)	श्री प्रिन्सिपल मुमताज अशरफ़ कादिरी अेम. अे.	११३
११. आज भी हिया भर आता है (राजस्थानी कथा साहित्य)	श्री प्राध्यापक कन्हैयालाल सहल अेम. अे.	११८
१२. सन्त रैदास	श्री प्राध्यापक शंभुप्रसाद बहुगुणा अेम. अे.	१२०
१३. शान्तनु (ध्वनिरूपक)	श्री 'अमिताभ' अेम. अे.	१२५
१४. कौतुक प्रिय गान्धीजी (तमिळ)	श्री रा. वीलिनाथन	१३०
१५. सपनोंका व्यापारी (कहानी)	श्री फ्रान्सिशेक लैंगर अनु०–श्री वीरेन्द्र त्रिपाठी	१३३
१६. प्यास (कविता)	श्री 'भृंग' तुपकरी	१३
१७. सम्बोधन (कविता)	श्री अनिल कुमार 'साहित्य-रत्न'	१३
१८. प्रभाकर माचवेके नाम स्व० प्रेमचन्दजीका अेक पत्र		१४
१९. आजकी मराठी कहानी (मराठी)	श्री प्रा० म. ना. अदवन्त अेम. अे. अनु०– श्री प्रा० य. शं. गोडबोले	१४
२०. साहित्यालोचन	(सर्वश्री यशपाल, अनिलकुमार और अट्रावलकर)	१५
२१. सम्पादकीय		१५

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे : अर्धवार्षिक ३॥) : : अेक अंकका मूल्य १० आ

पता:—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai

राष्ट्रभारती

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

* वर्ष ३ * वर्धा, फरवरी, १९५३ * अंक २ *

राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसादकी मंगल कामना !

महामहिम राष्ट्रपतिके निजी सचिव श्री वाल्मीकि चौधरीका, राष्ट्रपति कैम्प, राजभवन कलकत्तेसे दिनांक ६ जनवरी १९५३ का पत्र है—

"श्री हृषीकेश शर्मा,

'राष्ट्रभारती' पत्रिका राष्ट्रपतिको मिली। अिसके लिये अुनकी ओरसे धन्यवाद। अिसकी रचनाओंको पढ़नेसे निर्विवाद रूपसे यह कहा जा सकता है कि आपकी यह पत्रिका राष्ट्रभाषाकी समुचित सेवामें अुचित और अुत्तम रीतिसे योगदान दे रही है। अिसकी लोकप्रियताकी कामना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और दो नयी शुभ कामनायें !

१. मध्यभारत हिन्दी साहित्य सम्मेलनके ग्वालियर-अधिवेशनके सभापति, प्रख्यात साहित्यिक, लब्धप्रतिष्ठ हिन्दी कवि और राष्ट्रसेवक पं. बालकृष्ण शर्माजी "नवीन" संसद-सदस्य नयी दिल्ली (पार्लमेंट) से लिखते हैं—

"गत दो वर्षोंसे 'राष्ट्रभारती' पत्रिका राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धाके तत्वावधानमें प्रकाशित हो रही है। जैसा कि प्रकाशकोंने अिस पत्रिकाके सम्बन्धमें कहा है, यह वास्तवमें भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी प्रतिनिधि पत्रिका है। भिन्न-भिन्न भारतीय भाषाओंके साहित्यको हिन्दीमें देनेका यह प्रयत्न अत्यन्त प्रशंसनीय है।

अिसके सम्पादक हृषीकेश शर्मा और मोहनलाल भट्ट राष्ट्रभाषा प्रचारके सम्मानित आचार्योंमें हैं। मैं अिन महानुभावोंके अिस प्रयासकी हृदयसे प्रशंसा करता हूँ और अिस राष्ट्रभारती पत्रिकाकी अुत्तरोत्तर अुन्नतिकी कामना करता हूँ।

—बालकृष्ण शर्मा"

२. मध्य-प्रदेशकी महाकोशल कांग्रेस कमीटीके अध्यक्ष, अ० भा० हिन्दी-साहित्य सम्मेलनके पूर्व-सभापति, भारतीय संसदके सदस्य और लब्धप्रतिष्ठ नाटककार, सेठ गोविन्ददासजीका पत्र :—

"आपकी 'राष्ट्रभारती' हिन्दीकी अुन प्रमुख साहित्यिक पत्रिकाओंमेंसे अेक है जो पाठकोंके सामने ठोस और गंभीर साहित्यको आकर्षक और लुभावने ढंगसे प्रस्तुत करती है। अिस पत्रिकाकी दूसरी प्रमुख विशेषता है, भारतकी प्रादेशिक भाषाओंके अुच्चतम साहित्यसे राष्ट्रभाषा सरस्वतीका भंडार भरना। दक्षिणके कअी अूँचे कलाकारोंकी कृतियोंका आनन्द मैंने अिस पत्रिकासे लूटा है। यह अिस बातका भी प्रतीक है कि राष्ट्रभाषा हिन्दी प्रादेशिक भाषाओंपर बलपूर्वक थोपी नहीं जा रही है; अपितु वह अुन्हींसे बल ग्रहण करती है।

मैं अिस प्रकारकी सुन्दर पत्रिका चलानेके लिये वर्धाकी राष्ट्रभाषा प्रचार समितिको तथा अुसके सम्पादकद्वयको बधाअी देता हूँ।

—गोविन्ददास"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पँखुरियाँ

: श्री गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर :

जय-पराजय

ततैया और मधुमक्खिकाके बीचमें विवाद चल रहा था। दोनोंमें कौन अधिक बलवान् है यही था झगड़ेका कारण। ततैयाने खीझकर मधुमक्खीसे कहा—"हजार प्रमाण देकर सिद्ध कर सकता हूँ कि मेरा डंक तेरे डंकसे अधिक शक्तिशाली है।" यह सुनकर मधु-मक्खी बिचारी निरुत्तर होकर लजा गयी।

वनदेवीने निराश मधुमक्खीके कानमें मन्दस्वरसे कहा—"बहन, शरमाती क्यों है? निरुत्तर क्यों बैठी है? यह बात तो सुनिश्चित है—डंककी विषमयतामें तू पराजित है, पर मधु-मयतामें तो तेरी ही विजय है!"

धन्यता

आम्रशाखाने बबूलकी डालसे कहा—"बहन, चूल्हेमें जलकर तू राख क्यों होती है? हे सखी, तेरा भाग्य अितना विरूप क्यों है?"

बबूलकी शाखाने कहा—"मुझे दूसरा जरा भी खेद नहीं। हे रसमयी डाल, तू जीवित रहकर सफल होती है! तो मैं अपने अस्तित्वको भस्म करके धन्यता प्राप्त करती हूँ।"

अुच्चताका हेतु

"पर्वतराज, मुझे समझ नहीं आता, पाषाणोंके सिंहासनपर बैठा बैठा तू क्या करता है? थोड़ी दूरतक अूँची जमीन, फिर कुछ दूरीतक नीची भूमि! विधाताने अिस अूबड़खाबड़ धरतीको क्यों बनाया है, कुछ समझ नहीं आता।"—मैदानने कहा—"मैं तो फलफूल और धनधान्यका बाजारमें ढेर लगा देता हूँ।"

पर्वतने कहा—"सारी ही धरती समान और सपाट होती तो निर्झरकी सुरम्य धारा कहाँसे बहती।"

शक्तिकी मर्यादा

ताँबेकी गागरने खिलखिलाकर कहा—"अरे भाअी कूआ, तू सागर-सा विशाल क्यों नहीं बना? यदि तू विशाल होता तो मैं बिना संकोचके आनन्दपूर्वक डुबकियाँ मारा करता और यथेच्छ पानी पिया करता!"

कूएने नम्रतापूर्वक अुत्तर दिया—"यह सत्य है कि मैं छोटा हूँ। अिसी विषादके कारण मैं सदा मौन रहता हूँ। पर भाअी, तू चिंता क्यों करता है? अपनी अिच्छानुसार जितना स्नान किया चाहता है, जी भर कर ले। जितना पानी पीना चाहता है, पी ले! वह सब कुछ प्रदान करनेपर भी मैं तो अक्षुण्ण ही रहूँगा!"

अधूरा वार्तालाप

कातर-स्वरसे रोती हुअी चकोरीने अेक दिन चन्द्रदेवसे कहा—"पंडितजीकी बात सुनकर मैं चिन्तासे गली जा रही हूँ। वे कहते हैं—अेक दिन तुम्हारा विलय हो जायगा! महाप्रलयके दिन तुम्हारा प्रकाश-मय जीवन-दीप बुझ जायगा! हाय सुधाकर, यदि अैसा होगा तो मेरी क्या गति होगी?"

चन्द्रदेवने कहा—"जाओ, पंडितजीके घरपर जाकर पूछ आओ कि आपका आयुष्य कितना है?"

भार

गौरैयाने मयूरसे कहा—"तुम्हारे विपुल और बेडौल शरीरको निहारकर मुझे दया आती है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुस भारी भरकम शरीरसे अधिक बोझल तुम्हारी पूंछको निहारकर अधिक विस्मय होता है। मुझे देखो क्या हलका-फुलका शरीर है। आनन्दसे जहाँ चाहूँ वहाँ फुदकती रहती हूँ! स्वच्छन्द विहार करती हूँ। तुम्हारे पीछे तो भारका अुत्पात लटक रहा है।"

मोरने कहा--"बहन, तू क्यों व्यर्थ ही शोक करती है। यह तो निश्चित ही है कि गौरवके पीछे भार तो होता ही है।"

अुचित कर्त्तव्य

छतरीने कहा--"मस्तक महाशय, तुम्हें धिक्कार है। तुम हाट-बाट और बगिया-बाजारमें निःशंक भावसे घूमते रहते हो और ग्रीष्म और वर्षा आदि सब कुछ मेरे सिरपर! अिस प्रकारका अविचारी अन्याय मुझसे सहन नहीं होता है। यदि तुम ही छतरी होते तो क्या करते?"

मस्तकने नम्र होकर कहा--"मैं छतरी होता तो कहता, माथेकी मर्यादाका मुझे ज्ञान है। पर साथ ही मुझे यह भी पता है कि माथेके गुणके कारण पृथ्वी भरी-पूरी है! मेरा तो अहोभाग्य है कि मैं अुसकी रक्षा करता हूँ।"

अधिकार

वसन्तपर सबसे अधिक अधिकार किसका है, अिसी वाद-विवादमें दुपहर हो गयी!

बकुलने कहा—"सुनो भाअियो, अपने परिमल द्वारा मैं वन-अुपवनको परिपूर्ण कर देता हूँ। अतः ऋतुराजपर मेरा अधिकार है!"

यह सुनकर पलाश नकारात्मक माथा हिलाकर कहने लगा—

"अपने मोहक रंगसे मैंने दिशाअें जीत ली हैं।"

गुलाब जरा विमनस्क होकर कहने लगा—"सुगंध और सुषमासे तो समस्त अुपवनको मैंने ही प्रभावित किया है!"

कचालूका पौधा कहने लगा—"सुगंध और शोभाको क्या घोलकर पी जाओगे? मैंने तो भूमिमें ही अधिकार किया हुआ है। मिट्टीके अंदर ही मैंने खूब जड़ जमायी है।"

प्रत्यक्ष प्रमाणसे कचालू की ही जीत हुअी।

हिंसककी निराशा

माला गूँथनेके लिये मालाकार फूल और सूअी-धागा लेकर बैठता है। अुस समय सूअी मन ही मन व्यथित होकर कहने लगती है—

"जूही बहन, प्रतिदिन हजार-हजार पुष्पोंको बींधती हूँ। न जाने कितनी परिमलों और सुगंधोंमेंसे होकर गुजरती हूँ, परंतु अुनका अेक भी अंश मुझे नहीं मिल पाता। विधाताके सन्मुख करबद्ध होकर यही अभ्यर्थना करती हूँ— "अब सूअीके रूपमें जन्म न पाअूं और फूल बनकर फिरती रहूँ!"

जूहीने आहभर कहा—"वैसा हो जाय तो काम ही अच्छा हो! तेरी अिच्छा पूर्ण हो जाय और मुझे भी सुरक्षा प्राप्त हो जाय।"

गुणज्ञ

"मैं पतंगा हूँ! अपनी रंग-बिरंगी पाँखोंसे अुड़ता हूँ तो भी कवि मेरी ओर निहारता तक नहीं! और हे दोस्त भ्रमर, तू किस गुणके कारण काव्योंमें अमरता प्राप्त कर लेता है? बता तो सही!"

भँवरा कहता है—"तू स्वयं तो सुन्दर अवश्य है, परन्तु सुन्दरताका गुण तेरे मुखपर नहीं है। मैं तो भाअी, मधु पीकर गुण-गान करता हुआ घूमता हूँ और कवि तथा फूल, दोनोंके हृदयोंको चुराता हूँ।"

रिक्तताका गौरव

वर्षाके पश्चात्, बरसा हुआ मेघ आकाशके अेक कोनेमें पड़ा हुआ था! वर्षाके कारण छलकता हुआ सरोवर अुसकी यह अवस्था निहार कर, दिनभर मुस्कराया करता है और कहता है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अरे श्रीविहीन, अपनेपनको गँवाकर तू कहाँ छिपा रहता है ? मुझे निहार,; मैं सदा ही कैसा परिपूर्ण सावधान और सुगंभीर रहता हूँ ! जरा भी हिलता नहीं !!"

मेघने कहा—"अरे भाअी, अभिमान मत कर, तेरी पूर्णतामें मेरा ही गौरव है ?"

स्पष्टभाषी

वन-अुपवनमें वसन्त खिल रही है । स्थान-स्थान पर फूल मुस्करा रहे हैं ! जरा भी थमे विना कोयल कूकती रहती है ! वह देखकर कौआ कहने लगा—"दूसरा कोअी काम नहीं मिलता प्रतीत होता तुमको ? अिसी कारण वसन्तकी चाटुकारीके गीत प्रारम्भ किये हुअे हैं !"

गाना बन्द करके, झाड़ीसे बाहर आकर कोयलने कहा—"कहिये, महाशय, कहाँसे पधारे ?"

"मैं तो स्पष्ट-भाषी काक हूँ।" कोयल कहने लगी—"धन्य हैं आप, नमस्कार हैं आपको ! आपकी स्पष्टभाषा आपको मुबारक है ! मुझे तो बारह मास अपनी मिष्टभाषा और सत्यभाषा ही पर्याप्त है ।"

प्रतापका ताप

हरी लकड़ी आँसू बहा-बहाकर रातदिन विचार करती रहती है—"अहो, अिस जलती हुअी लकड़ीमें कितना तेज समाया हुआ है ! बिचारा अन्धकार तो कोनेमें बैठा हुआ अीर्ष्यासे जला जा रहा है— अैसा तेज मुझे कब मिलेगा ?"

जलता हुआ अंगारा कहने लगा—"अरे भाअी, हरे काष्ठ, चेष्टाविहीन वासनासे तू यों ही पीड़ित रहता है ! हमें जो कुछ मरकर (जलकर) प्राप्त हुआ है, वह क्या तुम्हारे लिअे यों ही टपक पड़ेगा ?"

हरे काष्ठने कहा—"अिस आगमें कौन जले ?"

अँगारेने कहा—"तो जा फिर दीमकके लिये ।"

भिक्षा और अुपार्जन

"हे धरित्री, तू अितनी अधिक कृपण किस लिये है ? कितना प्रयास करते हैं हम, तब जाकर कहीं धान्य प्राप्त कर पाते हैं ! तुझे यदि देना ही है तो प्रसन्न होकर, हँस-हँसकर प्रदान कर ! हमारे माथेका पसीना ठेठ पैर तक क्यों लाती है ? बिना खोदे धान्य प्रदान करनेमें तेरा क्या जाता है ।"

मन्दस्मित करते हुअे धरित्रीने कहा—"अैसा करनेपर मेरा गौरव तो जरा बढ़ जायगा । पर, तेरा गौरव सर्वथा विलीन हो जायगा ।"

कारुण्य

नारदने आकर कहा—

"हे धरित्री, मनुष्य तेरा ही अन्न खाकर, तेरी निन्दा करते हैं ! तुझे मिट्टी कहते हैं, धूल कहकर तेरा परिचय देते हैं ! तुझे जड़ और स्थूल भी कहते हैं ! वे अकृतज्ञ, तुझे मलिन कहकर भी तेरी निन्दा करते हैं ! तू अुनको अन्न जल देना बन्द कर दे ! अिनके मुखड़े सूखने दे ! ये लोग भी जान तो सकें कि धूल-मिट्टीकी भी क्या कीमत होती है ।"

धरतीने हँसकर कहा—

"भले ही बोलें ! मैं क्या अुन जैसी हूँ कि वैर लेनेको तैयार हो जाअूं ! अुनकी निन्दासे मुझे कुछ कलंक लगनेवाला नहीं ! यदि मैं वैर लेने जाअूं तो वे सब मर जायँ ! तब तो मुझे बहुत ही दुःख होगा !!"

(बंगलासे अनुवादक—श्री शंकरदेव विद्यालंकार)

CC-0. In Public Domain. Gangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रभाषा और प्रांतीय भाषाका संगम

: डॉ. अमरनाथ झा :

हिन्दीको हमारे संविधानमें राष्ट्रभाषाका पद प्राप्त हो चुका है। अिसलिये हिन्दीका काम करनेवाली संस्थाओंके सामने हिन्दी प्रचारका जो बहुत बड़ा कार्य था अुसका अब अुतना महत्व नहीं रहा। अब तो साहित्य-निर्माणका कार्य ही महत्वपूर्ण है। हिन्दी-भाषियों और साहित्यकारोंका अुत्तरदायित्व भी बहुत बढ़ गया है। संविधानमें हिन्दीको स्थान प्राप्त हुअे लगभग तीन वर्ष हो गये। पन्द्रह वर्षकी अवधि पूरी होनेके पहले हमें पूर्ण रूपसे यह सिद्ध करना है कि हिन्दी राष्ट्रभाषा होने योग्य है। पन्द्रह वर्षतक अंग्रेजी बोली और लिखी जायगी। पन्द्रह वर्ष समाप्त होनेके पहले हमें यह दिखाना है कि हिन्दीमें वह क्षमता है कि अंग्रेजीका पूर्ण रूपसे स्थान ले सके। अिसलिये अुत्तरदायित्व बहुत बढ़ गया है।

तीन वर्षोंमें साहित्यके क्षेत्रमें अैसी कितनी अुच्च कोटिकी रचनायें प्रकाशित हुअीं? विश्वविद्यालयोंमें पढ़ाने योग्य कितनी पुस्तकें तैयार हुअीं? यह लज्जाकी बात है कि हिन्दीका काम करनेवाली संस्थायें आपसके झगड़ोंमें लगी हुअी हैं। अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलनपर कचहरीका ताला लगा। प्रायः अुसका समस्त कार्य 'रिसीवर' के हाथोंमें है। पिछले दिनों मैं काशी गया था। वहाँकी नागरी प्रचारिणी सभा भी आपसी झगड़ोंमें पड़ी हुअी है। हम अिन झगड़ोंमें अुलझे रहेंगे और १५ वर्षकी अवधि समाप्त हो जायगी। फिरसे विचार किया जायगा कि हिन्दी राष्ट्रभाषाके पदपर रहे या न रहे! हिन्दीका काम करनेवाली संस्थाओं और लेखकोंका अिस समय कर्त्तव्य है कि वे दत्तचित्त होकर हिन्दी-साहित्यका निर्माण करें।

अन्य प्रान्तीय भाषा-भाषी गुजराती और बंगाली आदि यह प्रश्न कर सकते हैं कि हिन्दी साहित्यमें क्या विशेषता है? कबीर, सूर, तुलसी और केशवदासको भूल जाअिये। यह सोचिये कि तमिळ, तेलुगु, कन्नड और मलयालमके साहित्यकी तुलनामें हिन्दीके वर्तमान साहित्यमें क्या है? संविधानमें हिन्दीको अिसलिये राष्ट्रभाषा नहीं स्वीकार किया गया है कि अुसका साहित्य अन्य भाषाओंके साहित्यकी अपेक्षा अुच्च कोटिका है। अुसे तो अिसलिये राष्ट्रभाषाका पद दिया गया है कि वह अिस देशकी बहुसंख्यक जनताकी भाषा है। देशमें हिन्दीको लोग जितना समझते व बोलते हैं अुतना और किसी भाषाको नहीं; लेकिन यह बात बहुत दिनोंतक हमारे काममें नहीं आयगी। अन्य भाषाओंके साहित्यकार द्रुत गतिसे अपने साहित्यका निर्माण कर रहे हैं। हम पिछड़ रहे हैं। हिन्दीकी संस्थाओंको सब काम छोड़कर अुच्चकोटिके ग्रन्थोंका प्रकाशन करना चाहिये। अिसके लिये धन, लेखकों और विश्वविद्यालयोंके सहयोगकी आवश्यकता है।

मध्यप्रदेशकी सरकारने १९५३ के अगस्तसे शासनका सारा काम हिन्दी मराठी भाषाओंमें करनेका आदेश दिया है। अुत्तर प्रदेश और बिहारमें भी अिसी प्रकारका आदेश हो चुका है। साहित्यकारोंका कर्तव्य है कि वे विभिन्न विषयोंपर अुच्च कोटिकी पुस्तकोंकी रचनाअें करें जिससे हिन्दीकी क्षमतामें वृद्धि हो।

प्रादेशिक भाषाओंके प्रति भी हमारा दृष्टिकोण निर्मल व अुदार होना चाहिये। अन्य भाषाभाषियोंको हिन्दीसे भयभीत होनेकी आवश्यकता नहीं है। लेकिन अुनको डर है कि हिन्दीके कारण अुनकी प्रादेशिक भाषाओंको हानि पहुँचेगी। पिछले दिनों मैं बड़ौदा विश्व-विद्यालयमें दीक्षान्त भाषण देने गया था। वहाँ गुजराती भाषाके चार दैनिक पत्रोंके सम्पादकोंसे मिलनेका अवसर मिला। मैंने अुनसे अनुरोध किया कि सप्ताहमें अेक दिन अपने पत्रमें हिन्दीका अेक लेख प्रकाशित किया करें तो अच्छा हो। मेरे अिस निवेदनको तीन सम्पादकोंने नहीं स्वीकार किया। अिसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण भी हिन्दीका हौआ (डर) था। जब गुजरात जैसे प्रदेशका, जहाँ महात्मा गान्धी, सरदार पटेल और काका कालेलकरजी जैसे हिन्दीके सेवक हुअे हैं, वहाँका यह हाल था कि दूसरे प्रान्तोंका क्या हाल होगा। तमिळ-नाड, आन्ध्र, कर्नाटक, केरल आदिको हिन्दीसे अुतना भय नहीं जितना महाराष्ट्र, बंगाल और गुजरातको।

शिक्षामें हिन्दीको अनिवार्य विषय बनाये जानेका भी विरोध हो रहा है। अिसके लिये यह आवश्यक है कि हिन्दीवाले अन्य प्रादेशिक भाषाओंको अवश्य सीखें। मध्यप्रदेशमें रहनेवाले हिन्दी भी सीखें और मराठी भी। यदि हिन्दी-भाषी प्रान्तोंमें गुजराती, मराठी, बंगला या तामिळ, कन्नड़, आदिमेंसे किसी अेक प्रादेशिक भाषाकी शिक्षा अनिवार्य कर दी जाय तो विरोध न रहेगा।

हिन्दीके दो स्वरूप हैं। अेक रूप राष्ट्रभाषा हिन्दीका; दूसरा प्रान्तीय हिन्दीका। राष्ट्रभाषामें संस्कृत शब्दोंकी मात्रा अधिक रहनी चाहिये। क्योंकि मराठी, बंगला, गुजराती और तेलुगु, मलयालम, कन्नड़ आदि प्रादेशिक भाषाओंमें ७५ प्रतिशत शब्द संस्कृत भाषाके हैं। संस्कृत शब्दोंकी राष्ट्रभाषामें प्रचुरता देखकर अुक्त प्रान्तीय भाषाओंके बोलनेवाले अपनी ही झलक देखेंगे। संस्कृतको राष्ट्रभाषा बनानेका आन्दोलन भी खड़ा किया जा रहा है। यदि हिन्दी-भाषी अधिक दुराग्रह करेंगे; तो संभव है संस्कृतको राष्ट्रभाषा बनानेका आन्दोलन जोर पकड़े। अिसलिये आवश्यक है कि राष्ट्रभाषा हिन्दीमें अधिकसे अधिक संस्कृत शब्दोंका प्रयोग हो।

प्रान्तीय हिन्दीमें प्रान्तीय शब्दोंका समावेश होगा। अन्य भाषाओंके शब्द भी अुसमें लिये जायँगे। "मेरे पत्रका अुत्तर शीघ्र दें"—यह हिन्दीका वह रूप है जिसे राष्ट्रभाषाके रूपमें ग्रहण करना चाहिये। "मेरे खतका जवाब जल्दी दें"— यह हिन्दीका प्रान्तीय रूप होगा। यदि हिन्दीके राष्ट्रीय और प्रान्तीय भेदको मान लें तो अुर्दू और हिन्दुस्तानीका झगड़ा भी समाप्त हो जाये। अुर्दू और हिन्दीमें केवल लिपिका भेद है। अुर्दू हिन्दीका अेक प्रान्तीय रूप है। अुर्दूके प्रसिद्ध शायर 'गालिब' ने लिखा :—

"आगे आती थी हाले-दिलपर हँसी।
अब किसी बातपर नहीं आती॥"

अिसी प्रकार अुर्दूके अेक दूसरे शायर 'मीर' ने कहा:—

"सिरहाने मीरके आहिस्ता बोलो।
अभी टुक रोते रोते सो गया है॥"

यह अुर्दू है या हिन्दी? प्रान्तीय हिन्दीमें प्रान्तके शब्दोंका प्रयोग अनिवार्य है। महाराष्ट्र आदि प्रदेशोंमें वहाँके शब्दोंका समावेश स्वाभाविक है। अुनका बहिष्कार करनेकी आवश्यकता नहीं है।

यही बात प्रयोगोंके सम्बन्धमें कही जायगी। मैं सन् १९४१ में बम्बअी गया था। वहाँकी अेक सभामें मुझे भाषण देना था। श्रीमती लीलावती मुन्शी सभाध्यक्षा थीं। श्रीमतीने मेरा परिचय कराते हुअे कहा कि "**आ साहब जैसी महती व्यक्ति यहाँ आयी है**" यह अशुद्ध नहीं है। कारण, संस्कृत भाषामें 'व्यक्ति' शब्द स्त्रीलिंग है। न जाने हिन्दीवालोंकी "आत्मा" स्त्रीलिंग क्यों हो गयी? अिसका कारण अुसपर फारसीका प्रभाव है। फारसीमें "रूह" शब्द स्त्रीलिंग है। कुछ लोगोंने 'चन्द्रमा' को अंग्रेजीके प्रभावमें आकर स्त्रीलिंग बना दिया है। हिन्दीके व्याकरणका भी सुधार करना होगा। "**सड़क चौड़ी**" और "**रास्ता चौड़ा**" क्यों? अन्य भाषा-भाषी व्याकरणके रहस्यको न जानकर गलती करें तो लोग हँसेंगे। अिसीलिये अन्य भाषा-भाषी बोलनेमें संकोच करते हैं। अन्य प्रान्तीय लोगोंकी सुविधा की दृष्टिसे हिन्दीके व्याकरणका सुधार करना होगा। केन्द्रीय सरकार कहती तो बहुत है; परन्तु कार्य करनेको तैयार नहीं। अेक अैसी समिति बनायी जाये जिसमें अन्य भाषाओंके विद्वान हिन्दीके विद्वानोंके साथ बुलाये जायें और अुनकी कठिनाअियाँ समझकर व्याकरणमें सुधार हो।

हम कोअी अैसा कार्य न करें जिससे अन्य भाषा-भाषियोंको ठेस लगे। हम अन्य भाषाओंके साहित्यके प्रति सद्भावना रखें और अुसकी अुन्नतिमें सहयोग दें। अन्य भाषा-भाषियोंका भी कर्तव्य है कि राष्ट्रभाषाकी प्रगतिमें बाधा न डालें। अुन्हें यह विश्वास रखना चाहिये कि हिन्दी किसी भी प्रादेशिक भाषाके विकासमें बाधक नहीं हो सकती।

CC-0. In Public Domain

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेणु, मुरली, वंशी

: श्री शिवनाथ :

वेणु, मुरली, वंशी, भारतीय कृष्ण-साहित्यका अभिन्न अंग है। नूपुर, पीतांबर, वनमाला, वैजयंतीमाला, तिलक, कुंडल, मोरमुकुट आदिकी भाँति ही वंशीको भी कृष्णका अेक अलंकार समझना चाहिये। कृष्ण-साहित्यमें वंशीके वादन, अिसके प्रभाव, अिसकी व्यापकता आदि-की अितनी बहुत वर्णना है कि अिसका साहित्य ही अपना अेक अलग अस्तित्व रखता है। महाकवि सूरने वंशीका नानाविध वर्णन किया है। चंडीदासके 'श्री कृष्णकीर्तन' में तो 'वंशीखंड' नामक अेक स्वतंत्र खंड ही है। कृष्ण-साहित्यके अन्य कवियोंने भी वंशीका यथा-स्थान समुचित सुन्दर वर्णन किया है। अिसके अिस प्रकारके वर्णनको देखकर यह कहा जा सकता है कि जैसे वंशी कृष्णका अलंकार है वैसे ही वंशी-वर्णन भी कृष्ण-साहित्यके अनेक आभूषणोंमेंसे अेक आभूषण है।

भारतीय वाङ्मयमें कृष्ण लीला-पुरुषोत्तम माने गये हैं और मुरली अुनकी लीलाका अेक प्रधान अुप-करण है। अिसी मुरलीके मनोहारी स्वरसे वृंदावनमें व्रज-वनिताओंका आह्वान करके अुन्होंने अिनके साथ अपनी प्रधान लीला—'रास' किया था, जिसमें वे अपना कुल-शील सब छोड़कर सम्मिलित हुअी थीं। यहाँ मैं कृष्ण-लीलाके आध्यात्मिक पक्षकी ओर दृष्टि नहीं डाल रहा हूँ, जिसके अनुसार महारास ब्रह्मजीवका सम्मिलन है, जिसमें सभी जीवोंको नहीं, वरन् केवल अनुग्रहभाजन पुष्टि-जीवोंको ही सम्मिलित होनेका अधिकार है। 'रास' में गयी गोपियाँ सामान्य मानवी नहीं थीं, अैसी ही जीव थीं।

अेक और वाद्यसे कृष्णका संबंध है, जिसका अुपयोग अुन्होंने 'महाभारत' के समय किया था। अिसका नाम है 'पांचजन्य' शंख। कृष्ण-साहित्यमें अिसका वर्णन नहीं है, क्योंकि कृष्णकी मधुर लीलाओंका वर्णन ही अिसमें हुआ है। कृष्णके कालखंडमें जो विग्रह और पुरुष लीला की थी, कृष्ण-साहित्यमें अुसका चित्रण नहीं हो सका। कृष्ण साहित्यके कवियोंने कृष्णकी बाल तथा यौवन-लीलाके नानाविध रूपोंका ही रसात्मक चित्रण किया है। अुनके कठोर पौरुष कर्मोंपर अिन कवियोंकी दृष्टि नहीं थी, जिसके द्वारा अुन्होंने अपनी महान् राजनीतिज्ञताका परिचय दिया है। विद्वानोंको कृष्णके दो विरोधी रूपों—लीला पुरुषोत्तमका रूप और कुरुक्षेत्रमें पुरुषार्थ-पुरुषोत्तमका रूप—को देखकर काफी आश्चर्य होता है। अतः अुन्होंने तीन कृष्णोंकी कल्पना की है — वासुदेव कृष्ण (लीला-पुरुषोत्तम), महा-भारतके कृष्ण और कृष्णद्वैपायन व्यास। अस्तु; बात यह है कि कृष्ण-साहित्यके कवि प्रायः वे ही हैं जो कृष्णको लेकर प्रतिष्ठापित दार्शनिक संप्रदायोंमें दीक्षित थे, और अिन संप्रदायोंमें कृष्णकी बाल तथा यौवन लीलाअें ही गृहीत थीं। अतः वे सिद्धान्ततः अुनकी अिन लीला-ओंके वर्णनके लिये बाध्य थे। वंशी अिन लीलाओंके वर्णनमें अेक प्रधान विषय है।

आज वंशी बहुतही सामान्य वाद्य यंत्रोंमें समझी जाती है और संगीतके क्षेत्रमें अिसका अुतना अधिक प्रचार-प्रसार नहीं दिखायी पड़ता; परंतु आज भी कुछ अैसी जातियाँ हैं जिनके जीवनसे वंशीका अभिन्न संबंध है। मेरा मतलब वन्य प्रदेश निवासिनी संथाल, भील आदि आदिवासी जातियोंसे है। जहाँ तक लीलाका संबंध है, कृष्णने अिसे वन्य प्रदेशमें ही किया है, अर्थात् वृंदावनमें। कृष्णकी बाल, गो-चारण, रास आदि लीलाअें वन-प्रदेशमें ही हुअी थीं। गोवर्धन-धारण, असुरोंका वध आदि भी वन-प्रदेशसे ही संबद्ध हैं। मेरा कथन यह है कि अुक्त आदि-वासी जातियोंका तथा कृष्णका भी प्रधानतः संबंध वन प्रदेशसे है; कृष्णके जीवनकी भांति अिनके जीवनसे भी वंशीका अमिट संबंध है। अैसी हालतमें क्या अैसी जातियोंसे कृष्णका किसी प्रकारका संबंध था अथवा अैसी जातियोंका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभाव क्या कृष्णपर भी कुछ पड़ा है ? यह बात जिज्ञासा-भावसे ही विद्वानोंसे कह रहा हूँ।

'महाभारत' में जहां कओी वाद्य-यंत्रोंका अुल्लेख है वहां वेणुका भी नाम लिया गया है —

पठन्ति पाणिस्वनिकास्तथा गायन्ति गायकाः
शंखानथ मृदंगाश्च प्रवाद्यन्ति सहस्रशः ॥
वीणा पणव वेणूनां स्वनश्चाति मनोरमः ।
सहास अिव विस्तीर्णः शुश्रुवे तस्य वेश्मनः ॥

(म. भा. शान्तिपर्व ५३, ४–५)

'ऋग्वेद' में भी वेणुकी चर्चा है, मगर बांसके अर्थमें, वाद्ययंत्रके अर्थमें नहीं, जिस बांससे वेणु निर्मित होता है। (देखिये, मोनियर विलियम्स संपादित 'अे संस्कृत-अिंग्लिश डिक्शनरी')

विभिन्न दृष्टियोंसे किये गये वंशीके भेद, वंशी-रचनाके अुपकरण, अिसके दोष, वंशी-बजैया आदिके संबंधमें संगीत-शास्त्रके ग्रंथोंमें विवेचना हुअी है। कृष्ण-भक्तिके अैसे ग्रंथोंमें, जिनमें अुनकी साज-सज्जा तककी वस्तुओंका अुल्लेख है, वंशी-संबंधी बहुत-सी बातें लिखी मिलती हैं। शुभंकर (अीसाकी सत्रहवीं शतीसे पूर्व) कृत "संगीत-दामोदरः" तथा रूपगोस्वामी (सन् १४९०–१५६३) कृत 'भक्तिरसामृतसिंधु' अैसे ही ग्रंथ हैं।

संगीत शास्त्रमें वाद्ययंत्रोंकी बड़ी महिमा गायी गयी है, वंशी भी अिनमेंसे अेक है। अैसे वाद्ययंत्रोंके स्थूल प्रकार तथा अिनकी महत्ता 'संगीत दामोदरः' में अिस प्रकार कही गयी है —

तालेन राजते गीतं तालो वादित्रसंभवः ।
गरीयस्तेन वादित्रं तच्चतुर्विधमुच्यते ॥
ततं शुषिरमानद्धं घनमित्थं चतुर्विधम् ।
ततं तंत्रीगतं वाद्यं वंशाद्यं शुषिरं तथा ।
चर्मानद्धमानद्धं घनं तालादिकं मतम् ॥

तालद्वारा गीतकी शोभा है और ताल वाद्ययंत्रसे पैदा हुआ है। अतः वाद्ययंत्रकी महिमा अधिक है। यह चार प्रकारका कहा गया है। चारों प्रकारोंके वाद्य-यंत्रोंका स्थूल स्वरूप यों है—शुषिर, आनद्ध, घन और तांत अथवा तारसे निर्मित वाद्ययंत्र। बांस आदिसे निर्मित वाद्ययंत्र, जिनमें छिद्र होते हैं, शुषिर चमड़ेसे मढ़ेको आनद्ध और ताल आदिको 'घन' वाद्ययंत्र कहा गया है। चौथे तंत्रगत वाद्ययंत्रकी चर्चा अूपर हो चुकी है। अिस प्रकार चार श्रेणीके वाद्ययंत्र स्थिर होते हैं।

वंशी-रचनाके अुपकरणोंको दृष्टिमें रखकर विचार करनेसे यह अनेक प्रकारकी लकड़ियों, धातुओं आदिसे बनी हुअी जान पड़ती है। संगीत-शास्त्रीय ग्रंथोंमें अिसके अुपकरणोंका अुल्लेख मिलता है। वंशी सीधी और वर्तुलाकार भी होती है। अिसको बनानेके लिये बाँस या लकड़ी संग्रह करते समय अिसका ध्यान रखना जरूरी है कि वह पोर अथवा गाँठके दोषोंसे मुक्त हो। वंशी अिन लकड़ियों द्वारा निर्मित हो सकती है —बाँस, खदिर, लालचन्दन और श्रीखंड (चन्दन), सोने, चाँदी, ताँबे और लोहेकी भी वँशी हो सकती है। हाथीदाँत और स्फटिककी भी वँशी बन सकती है।—

वर्तुलः सरलश्चैव पर्वदोषविवर्जितः ।
वेणवः खदिरो वापि रक्तचन्दनजोऽथवा ॥
श्रीखंडजोऽथ सौवर्णो दंतिदंतमयोऽपिवा ।
राजतस्ताम्रजो वापि लौहजः स्फटिकोऽथवा ॥

(संगीत-दामोदर)

अिसका तात्पर्य यह कि वंशी किसी भी अुपकरणसे बनायी जा सकती है। अब पीतल, सिलवर आदि धातुओंकी भी वंशी मिलती है। अिसी प्रकार अुपर्युक्त लकड़ियोंके अलावा अन्य लकड़ियोंका अुपयोग भी आज वंशी निर्माणके लिये होता है। अिससे यह भी स्पष्ट है कि समय पाकर—सभ्यताके विकासके साथ-साथ—वँशी बाँसकी ही नहीं रह गयी। अुसे अधिक स्थायी बनानेके लिये अन्य लकड़ियों और यहाँ तक कि धातुओंका भी अुसके अुपकरणके रूपमें अुपयोग होने लगा।

वंशीकी विवेचना करते हुअे हमें अिसपर ध्यान रखना पड़ेगा कि यह विवेचना आड़ी वंशीके सम्बन्धमें की गयी है। त्रिभंगी मुद्रामें कृष्ण अैसी ही वंशी बजाते थे। आजकल आड़ी वंशीका प्रचार अधिक नहीं है, प्रायः सीधी वंशी ही बजायी जाती है। अैसा जान पड़ता है

CC-0. In Public Domain. G

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि बजानेकी सुविधाके लिये ही सीधी वंशीका प्रचार हुआ। अैसी सीधी वंशी बजाते हुअे कृष्णजीका चित्र नहीं मिलता; मिलता भी है, तो बहुत ही कम।

वंशीके अुपकरणके बीच नापके अनुसार यथास्थान आवश्यक आकारके छिद्र बनाकर अुसे वंशीके रूपमें परिणत करनेका विवरण, अथवा यों कहें कि वंशी-रचनाका विवरण संगीत शास्त्रीय ग्रंथोंमें मिलता है। वंशीमें कनिष्ठिका अँगुलीकी मोटाअीके आकारका गर्भ-रन्ध्र होना चाहिये। त्रिभंगी मुद्रामें वंशी बजाते समय अिसी गर्भरन्ध्रपर बायें हाथका अँगूठा रहता है। वंशीके अुपकरणके शिरोदेशसे अँगुलीके पादों द्वारा दो अंगुल नाप कर फुत्काररंध्र बनाया जाये। अिस रंध्रको मुख रंध्र भी कहते हैं। अिसके पश्चात् पाँच अंगुल छोड़कर अूँचे सप्तक अथवा अुच्च स्वर निकालनेके लिये तार नामक छिद्र बनाया जाये। तार छिद्रके बाद बेरके बीज-की मोटाअीके बराबर अन्य सात छिन्द्र बनाये जायें। वंशीके अुपकरणके दोनों छोरोंपर सुष्ठु स्वरों तथा नादों-को सहूलियतसे निकालनेके लिये बाँध दें। वंशीके अुप-करणपर मोमसे पालिश (कला) कर देनेसे वंशीमें सुस्वरता आती है।—

कनिष्ठांगुलि तुल्येन गर्भरंध्रेण शोभितः।
शिल्पविद्या प्रवीणेन वंशःकार्यो मनोहरः॥
तत्र त्यक्त्वा शिरोदेशादधो द्विमितिमंगुलम्।
फुत्काररंध्रं कुर्वीत मितमंगुलि पर्वणा॥
पंचांगुलानि संत्यज्य तारंध्राणि कारयेत्।
कुर्यात्तथान्य रंध्राणि सप्तसंख्यानि कौशलात्॥
वदरी बीज तुल्यानि संत्यज्यार्द्धार्द्धमंगुलम्।
प्रांतयोर्बंधनं कार्यं स्वरादेर्नाद्हेतवे॥
सिक्थकेन कला देया तेन सुस्वरता भवेत्।

(संगीत-दामोदर)

फुत्कार (फूँक) और तारंध्रके बीच जितनी अँगुलीकी दूरी होगी वंशी अुतनी ही बड़ी कही जायगी। अंतः शास्त्रीय दृष्टिसे वंशीकी छोटाअी-बड़ाअी अुक्त दोनों रंध्रोंकी दूरीकी छोटाअी-बड़ाअीपर आश्रित है। वंशी अेक अंगुलसे लेकर अठारह अंगुल तक बड़ी हो सकती है। अेक अंगुलसे लेकर चार अंगुल बड़ी तक की वंशी अतितार स्वर निकालनेके कारण वांशिकों (वंशीवादकों) द्वारा अुपेक्षित समझी जाती है। तेरह, पंद्रह और सत्रह अंगुलकी वंशी भी अच्छी नहीं समझी जाती —

पंचांगुलोयं वंशः स्यादेकैकांगुलि वृद्धितः।
षडंगुलानि नाम्ना स्यात् यावदष्टादशांगुलम्॥
फुत्कार तार रन्ध्रस्य यावदंगुलिमन्तरम्।
तदेव नामवंशस्य वांशिकैः परिकीर्त्यते॥
अकांगुलो द्व्यमंगुलश्च अंगुलश्चतुरंगुलः।
अति तारतरत्वेन वांशिकै समुपेक्षितः॥
त्रयोदशांगुलो वंशोऽपरः पंचदशांगुलः।
निन्दितो वंशतत्त्वज्ञैस्तथा सप्तदशांगुलः॥

(संगीत-दामोदर)

वंशीकी नापकी शास्त्रीय पद्धतिका अुल्लेख अूपर हो चुका है। अिसी नापकी पद्धतिके अनुसार दस अंगुलकी वंशीको महानंद, ग्यारह अंगुलवालीको नंद, बारह अंगुल लंबी वंशीको विजय और चौदह अंगुलवालीको जय नाम दिया जाता है—

महानन्दस्तथा नन्दो विजयोथ जयस्तथा।
चत्त्वार अुत्तमा वंशा मतंगमुनि सम्मताः॥
दशांगुलो महानन्दो नन्दो अेक दशांगुलः।
द्वादशांगुलमानस्तु विजयः परिकीर्तितः॥
चतुर्दशांगुलो मितो जयः अित्यभिधीयते।

(संगीत-दामोदर)

'संगीत-दामोदर'में वंशीके ये ये गुण और दोष बताये गये हैं—

नैविड्यं प्रौढ़ता चापि सुस्वरत्वंच शीघ्रता।
माधुर्यमिति पंचमी फुत्कृतेषु गुणाः स्मृताः॥
शीत्कारबहुलः स्तब्धो विस्वरः स्फुटितो लघुः।
अमधुरश्च विज्ञेयाः षड्दोषा फुत्कृते क्रमात्॥

वंशीको फूँकनेसे स्वरमें निविड़ता (गहराअी), प्रौढ़ता, सुस्वरता, शीघ्रता और माधुर्य हो तो ये पाँच वंशीके गुण माने जाते हैं। यदि फुत्कार देनेसे वंशी बार-बार शीत्कार युक्त हो, अुससे निकला स्वर स्तब्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विस्तर, स्फुटित, लघु और अमधुर सुना जाय तो ये छह वंशीके दोष समझे जायेंगे।

श्री रूप गोस्वामीने 'भक्तिरसामृतसिंधु'में वेणु, मुरली, वंशीकी कुछ भिन्न मीमांसा की है। (कोष अभिधान) ग्रंथोंमें ये तीनों शब्द पर्यायके रूपमें चलते देखे जाते हैं। परंतु रूप गोस्वामीने वेणु, मुरली, वंशीकी जो विवेचना की है उसे देखकर यह ज्ञात होता है कि अिन शब्दोंका पर्यायके रूपमें व्यवहार नहीं होना चाहिये। व्यावहारिक जीवनमें भी हम वेणु, मुरली, वंशीमें कोअी भेद नहीं मानते।

ध्यानं बलात् परमहंसकुलस्य भिन्दन्।
निन्दन् सुधामधुरिमाणमधीरधर्मा।
कन्दर्प शासनधुरां मुहुरेष शंसन्।
वंशी ध्वनिर्जयति कंसनिषूदनस्य ॥

(भक्तिरसामृतसिंधुः, दक्षिण, १ लहरी, श्लोक १८८)

अुक्त श्लोकमें आये वंशीका भेद बतलाते हुअे लिखा गया है—

अेष त्रिधा भवेद्वेणु मुरली वंशिकेत्यपि।

(वही)

अिसके तीन प्रकार हैं— वेणु, मुरली, वंशिका अथवा वंशी।

वेणुके स्वरूपके संबंधमें लिखते हुअे कहा गया है कि 'पारिक' नामक वेणु अुसे कहते हैं जो बारह अंगुल लंबा, अंगूठे जितना मोटा और छह छिद्रोंसे युक्त हो।

पारिकाख्यो भवेद्वेणुर्द्वादशांगुल दैर्घ्य भाक्।
स्थौल्येऽगुंष्ठमितः षड्भिरेष रन्ध्रैः समन्वितः ॥

(वही)

यहाँ 'पारिक' नामक वेणुके अुल्लेखसे अैसा जान पड़ता है कि वेणुके और प्रकार भी हैं जिनका अुल्लेख नहीं किया गया है। यहाँ वेणुकी लंबाअीके बारेमें जो बात कही गयी है अुससे यह स्पष्ट नहीं होता है कि यह वेणुकी संपूर्ण लंबाअी है अथवा तार-रंध्र तथा मुख-रंध्रके बीचकी लंबाअी है, जिसके अनुसार वेणु अथवा वंशीकी लंबाअी समझी जाती है, जैसा कि 'संगीत दामोदर' के अुल्लेखसे हम जान चुके हैं। जान पड़ता है कि यहाँ बारह अंगुल संपूर्ण वेणुकी लंबाअीका ही द्योतक है; क्योंकि आगे ही 'मुरली' को दो हाथ लंबी, मुख-रंध्र तथा तारस्वर छिद्रोंसे युक्त माना है। अिस प्रकार यहाँ लंबाअीका तात्पर्य संपूर्ण लंबाअीसे ही है।

हस्तद्वय मितायामा मुखरंध्र समन्विता।
चतुः स्वर च्छिद्रयुक्ता मुरली चारुवादिनी ॥

(वही)

"भक्तिरसामृतसिंधुः" में वंशीके संबंधमें अिस तरह का वर्णन है—

अर्द्धांगुलांतरोन्मानं तारादिविवराष्टकम्।
ततः सार्द्धांगुलादयत्र मुखरंध्रं तथांगुलम् ॥
शिरो वेदांगुलं पुच्छं त्र्यंगुलं सातु वंशिका।
नवरंध्रास्मृता सप्तदशांगुलमिता बुधैः ॥

(वही, श्लोक १८९)

जीव गोस्वामीने अिस श्लोककी टीका अिस प्रकार की है—

"अर्द्धांगुलमंतरं छिद्रयोर्मध्य भागस्तयोन्मानं छिद्रस्य विस्तारो यत्र तत्। ततोऽङ्गुलांतर अित्यत्र ततः सार्द्धांगुलादि पाठः। सप्तदशांगुलत्वानुपपत्तेः। योगत्वाच्च ततोंगुलांतर अिति पाठे ग्रंथितो बहिरर्द्धांगुलंज्ञेयम्। तथांगुलमित्यत्र प्रमाणे लुगिति मात्र चोलुक्। अर्द्धांगुलादिशब्दास्तु संख्याव्ययाभ्यामंगुलेरिति समासांतविधानात्।

वंशीमें अेक-अेक अँगुलीकी दूरीपर आठ छिद्र, सार्द्ध अंगुलके अंतरपर फुत्कारका मुखरंध्र होता है। अिस प्रकार अिसमें नव छिद्र होते हैं। मुखरंध्र शिरोभागसे चार अंगुलपर और पश्चात् भागमें किनारेसे तीन अंगुलपर रंध्र रहें। दोनों ओर आध-आध अंगुलपर तार आदिसे बांध दिया जाय। यह वंशी सत्रह अंगुल लंबी होती है। 'संगीत-दामोदर'में भी हम वंशी-रचनाका विवरण देख चुके हैं। दोनों विवरणोंकी जाँच करनेसे ज्ञात होता है कि 'संगीत-दामोदर'का विवरण अपेक्षाकृत अधिक विस्तृत, व्यापक और स्पष्ट है। संगीत-दामोदर'के विवरणमें गर्भरंध्रका अुल्लेख है, किंतु 'भक्तिरसामृतसिंधु'के विवरणमें अिसका अुल्लेख

CC-0. In Public Domain

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं है। 'संगीत-दामोदर:'में फुत्कार रंध्रको शिरोभागसे दो अंगुलपर बनानेका विधान है और 'भक्तिरसामृत-सिंधु:' में चार अंगुलपर। 'संगीत-दामोदर:'में लिखा है कि तार रंध्र तथा फुत्कार रंध्रकी दूरी पाँच अंगुल हो। 'भक्तिरसामृतसिंधु'में अिस तरहका कोअी अुल्लेख नहीं है। 'संगीत-दामोदर'में यह भी लिखा है कि तार आदि रंध्रोंके आकार बेरके बीजकी मोटाअीके समान हों। प्रांत वा ग्रंथि-बंधनका विधान दोनों ग्रंथोंमें समान है। 'भक्तिरसामृतसिंधु' में कहा गया है कि वंशी सत्रह अंगुल लंबी हो; मगर 'संगीत-दामोदर'में अैसी वंशी अच्छी नहीं मानी जाती। 'संगीत दामोदर' में तो वंशी नापनेकी पद्धतिका अुल्लेख है, मगर 'भक्तिरसामृतसिंधु'में अिस पद्धतिका अुल्लेख नहीं है। 'संगीत-दामोदर:'में यह भी स्पष्ट रूपसे कह दिया गया है कि मुख-रंध्र तथा तार-रंध्रकी बीचकी लंबाअीके मुताबिक ही वंशीकी लम्बाअी मानी जाती है। 'भक्तिरसामृतसिंधु'में बंशीकी लंबाअी समझनेकी कोअी अैसी बात नहीं कही गयी है।

मुख-रंध्र तथा तार-रंध्रकी बीचकी दूरीके अनुसार 'संगीत-दामोदर' की भाँति 'भक्तिरसामृत-सिंधु:'में भी वंशीके प्रकारोंका अुल्लेख है। जिस वंशीमें मुख तथा तार-रंध्रकी दूरी दस अंगुल होती है अुसे महानंदा और संमोहिनी भी कहते हैं। 'संगीत दामोदर'में भी महानंदाका यही लक्षण है, मगर अुसमें अिसके 'संमोहिनी' नामका अुल्लेख नहीं है। अकर्षिणी नामकी वंशी वह होती है जिसके मुख तथा तार-रंध्रके बीचकी लंबाअी बारह अंगुल होती है। 'संगीत-दामोदर'में अैसी वंशीको विजय कहते हैं। मुख तथा तार-रंध्रकी दूरी यदि चौदह अंगुल हो तो अैसी वंशीको आनंदिनी कहेंगे। 'संगीत दामोदर' में अैसी वंशीको जय नामसे पुकारते हैं। गोपोंको आनंदिनी बहुत प्रिय थी, अिस आनंदिनीको वंशुली भी कहा जाता है। रचनाके अुपकरणके विचारसे 'भक्तिरसामृतसिंधु'में तीन वस्तुओंसे निर्मित वंशीका अुल्लेख है, अर्थात् मणियुक्त (स्फटिककी ?) सोने और बाँसकी वंशी। अिस ग्रंथमें यह भी कहा गया है कि संमोहिनी मणिमयी और आकर्षिणी सोनेकी और आनंदिनी बाँसकी होती है।

दशांगुलांतरा स्याच्चेत् सा तारमुख रंध्रयोः।
महानन्देती विख्याता तथा संमोहिनीति च॥
भवेत्सूर्यान्तरा साचेत्तत आकर्षिणी मता।
आनन्दिनी तदा वंशी भवेदिन्द्रांतरा यदि॥
गोपानां वल्लभा सेयं वंशुलीतिच विश्रुता।
क्रमान्मणियमयी हैमी वैणवीति त्रिधा च सा॥

(वही, श्लोक १९०)

अूपर तुलना करके हमने देखा है कि संगीत-दामोदर' तथा रूपगोस्वामीके 'भक्तिरसामृतसिंधु' में हुअे वंशी संबंधी विवेचनमें कहीं-कहीं थोड़ा-थोड़ा साम्य है, यद्यपि दोनों ग्रंथोंमें विवेचित अक ही प्रकारकी वंशीके नाम भिन्न-भिन्न हैं। रूप गोस्वामी द्वारा किये गये विवेचनसे यह भी ज्ञात होता है कि अेक 'वंशुली' भी है, जिसे अुन्होंने आनंदिनी कहा है। अुक्त विवेचनसे यह भी ज्ञात होता है कि रचनोपकरणकी दृष्टिसे रूप गोस्वामी वंशीके तीन ही प्रकार मानते हैं। रूप गोस्वामीके विवरण तथा विवेचनकी सबसे बड़ी विशेषता है अुसमें वेणु, मुरली, वंशीमें भेदकी स्थापना। यह भेद किस आधारपर अुन्होंने स्थापित किया है, यह कहा नहीं जा सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी:

प्रतुल

: श्री मोहनसिंह सेंगर :

प्रतुलने आकर जैसे अुमाके विरस दाम्पत्य-जीवनके दीपककी मन्द पड़ती हुअी लौको अेक बार फिर अुकसा दिया था। बहुतसे कारण थे जिनसे अुमा अभी माँ बनना नहीं चाहती थी—अिसलिये नहीं कि अभी अुसके विवाहको कुल जमा चार ही वर्ष हुअे थे, न अिसलिये कि माँ बननेके बाद कम-से-कम कुछ समयके लिये अुसे अपना अध्यापन-कार्य छोड़ देना पड़ेगा; बल्कि... । पर क्या फायदा अब वह सब सोचनेसे ? अब तो प्रतुलने आकर जैसे अुसके जीवनकी धाराको ही बदल दिया था—अुस धाराको, जो न जाने कब-कहाँ रुककर किसी विदिशाको चल पड़नेको बेचैन और अुतावली हो रही थी।

जब प्रतुल हुआ ही हुआ था, तो सहमी दृष्टिसे अुसकी ओर देखकर अुमा मूर्तिवत् देखती ही रह गयी थी—मानो वह निर्णय नहीं कर पा रही थी कि अुसे अपना प्यार दे या घृणा ? पर न जाने मनके किस अज्ञात कोनेमें छिपे पड़े मातृ-वात्सल्यने आकर अुसकी सारी दुविधा-आशंकाका बाँध तोड़कर अुसमें कुछ अैसी प्रेरणा पैदा कर दी थी कि अुसने बार-बार चूमकर प्रतुल को छातीसे चिपटा लिया। अुसकी आँखें भर आयी थीं। पर अुसकी यह भावना स्थायी नहीं रह सकी। अक्सर जब वह अपने और अपने भविष्यके बारेमें सोचने लगती, तो अुसे प्रतुलपर बड़ा क्रोध आता, बड़ी घृणा होती अुससे। किन्तु जब वह सामने आता, अुससे चार आँखें होते ही मानो अुमाका सारा राग-द्वेष-घृणा आदि पहली मुस्कानके साथ ही तिरोहित हो जाते।

ज्यों-ज्यों प्रतुल बड़ा होने लगा, वह अुमा ही नहीं, सारे मोहल्लेवालोंके लिये अेक समस्या बन गया। मोहल्लेके बच्चे तो अुससे डरते ही थे, अुसके माँ-बाप भी अुसे छेड़नेका साहस नहीं करते थे। अेक बार अेक पड़ोसिन आँचलमें शीशेके टुकड़े भरकर लायी और अुन्हें अुमाको दिखाते हुअे बोली—"देखो बहन, यह गिलास मैंने कल ही तो मँगाया था और तुम्हारे लाड़लेने अभी-अभी अिसे तोड़ डाला। अुसके पीछे-पीछे आते हुअे प्रतुलने कहा—"अिसमें भला मेरा क्या कसूर, माँ ? अिसपर लिखा था 'न टूटनेवाला काँच'। मैंने आजमाया, तो वह टूट गया ! अब अिसीसे पूछो कि गलत लेबिलवाला गिलास लायी ही क्यों ?" अुमा मन-ही-मन मुस्करायी और पड़ोसिनको दूसरा गिलास मँगवा देनेका आश्वासन देकर विदा किया।

अुसे गये अभी पाँच मिनट भी न हो पाये थे कि भींगे कपड़ों-सहित अेक अन्य स्त्रीने आकर कहा—"देखिये बहूजी, आपके सपूतने मेरा घड़ा फोड़ दिया। कहता था कि जब सब जगह पानीके नल लग गये हैं, तो यह जंगलीपन क्यों ?" अुमाने आगन्तुकासे माफी माँगी और घड़ेके पैसे देकर अुससे जल्दी घर जाकर कपड़े बदलनेका अनुरोध किया।

अुसके जानेके बाद अुमा प्रतुलके घर आनेकी प्रतीक्षा ही कर रही थी कि अेक स्त्री अपने ४-५ वर्षके अेक बच्चेको लिये आयी। अुसके सब कपड़े भींग रहे थे। आते ही अुसने आँखोंमें पानी भरकर कहा—"देखो बहू, तुम्हारे प्रतुलके लच्छन ! अिस बेचारेको भरे तालाबमें धकेल दिया। यह तो भला हो बेचारे अेक राहगीरका, जिसने तुरन्त कूदकर अिसे बचा लिया; वर्ना मैं तो आज निपूती हो गयी होती !"

अभी अुमा कुछ कहने ही जा रही थी कि पीछेसे आकर प्रतुलने कहा—"भला तुम्हीं सोचो माँ, अगर कोअी तैरना नहीं जानता, तो बाढ़ आने या नौका डूबनेपर अपनी प्राण-रक्षा कैसे करेगा ? मैं चाहता हूँ कि हमारे देशका बच्चा-बच्चा तैरना सीखे। अिस बुद्धकी मोटी अक्लमें यह बात आ नहीं रही थी,

CC-0. In Public Domain

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिसीलिये मैंने अिसे सबक सिखानेका जरा अेक हाथ दिखाया।"

"और अुसकी जान चली जाती, तो ?"—अुमाने चिढ़कर पूछा।

"तो अिसमें मेरा क्या कसूर ? न तैरनेवाला हमेशा डूबता ही है—अुसे डूबना ही चाहिये।"—कहकर प्रतुल लापरवाहीसे बाहर चला गया।

लड़केको बिस्कुट-टिकिया देकर तथा अुसकी माँसे माफी माँगकर अुमाने छुट्टी पायी। साँझ होते-होते अेक लड़की अपने भाअीको लेकर आयी, जो सिसक रहा था और जिसके सिरसे खून बह रहा था। अुसके कुछ कहनेसे पहले ही प्रतुलने पीछेसे तमककर कहा—"अिनकी फरियादपर कान न देना माँ। ये कायर हैं। पिटकर फरियाद करनेवाले न सिर्फ दब्बू और कायर ही होते हैं, बल्कि दुनियामें कुछ भी कर-धर नहीं सकते। अिसलिये मैं कभी किसीसे पिटकर घर नहीं लौटता। क्यों, ठीक है न माँ ?"

अुमाने अपनी अेक पुरानी रेशमी साड़ीसे अेक टुकड़ा फाड़कर अुसे जलाया और बच्चेके घावमें अुसकी राख भरकर अुसकी बहनसे बार-बार माफी माँगी तथा प्रतुलको माकूल सजा देनेका आश्वासन देकर अुन्हें बिदा किया।

अिस तरहकी बातें कोअी आकस्मिक अथवा अपवाद-स्वरूप नहीं थीं। अक्सर अुमाको अिसी तरहकी परेशानियोंमेंसे गुजरना पड़ता था। वह समझ नहीं पा रही थी कि आखिर अिस सबका क्या अिलाज करे ? अुसके सभी अुपाय-अुपचार बेकार हो चुके थे। डराने-धमकाने या मारनेका प्रतुलपर कोअी असर नहीं होता था। कअी बार अुसने अुसे खाना नहीं दिया, तो वह बिना खाये ही सो गया और सुबह अुठकर बिना कुछ खाये-पिये फिर अपनी शरारतोंकी 'ड्यूटी' पर चल दिया ! अिससे अुमाकी परेशानी और भी बढ़ जाती थी। डर नामकी किसी चीजसे तो जैसे वह परिचित ही न था। माता-पितामेंसे किसीका भी स्नेह अुसे नहीं मिला था—मिला था मात्र घृणा-मिश्रित तिरस्कार और पिताकी तिरस्कार-मिश्रित अुपेक्षा; शायद अिसी लिये वह काफी ढीठ हो गया था।

(२)

स्नान कराकर अुमाने प्रतुलको पाअुडर लगाया और कहा—"जा, जल्दीसे कपड़े पहन ले।"

प्रतुल बिना कुछ बोले अुठा और निकर, बनियान हाफशर्ट, मोजे तथा जूते लाकर अुमाके सामने रख दिये और प्रतीक्षा-भरी आँखोंसे अुसकी ओर देखने लगा। अेक क्षण असमंजसके साथ अुमाने अुसकी ओर देखा, फिर तुनककर कहा—"नंगा क्यों खड़ा है ? कपड़े नहीं पहनेगा ?"

"तुम पहना दो।"—मुँह बनाकर धीरेसे प्रतुलने कहा।

अुमाका हृदय चलते-चलते जैसे पल-भरको रुक गया हो। खीझकर अुसने कहा—"अितना बड़ा गधा होने आया और अभीतक कपड़े पहननेकी भी तमीज नहीं !"

"तुमने गधा क्यों पैदा किया, माँ ?" सहज भावसे प्रतुलने कहा।

"न पढ़ना, न लिखना और ज़बान बिलाँत भर की !" अुमा झुँझला अुठी। प्रतुलने लगभग पूरी ज़बान मुँहसे बाहर निकाली और अपने बालिश्तसे नापकर बोला—"ना माँ, बिलाँत भर तो नहीं है मेरी जीभ। तुम्हारा अन्दाज़ कुछ ठीक नहीं, माँ !"

अिस बार अुमा अपनी हँसी नहीं रोक सकी और खीझकर प्रतुलको हाथसे खींचकर कुर्सीपर बिठाते हुअे बोली—"अच्छा बाबा, तू ही जीता; मैं हारी। बस, ले पहन कपड़े।"

कुर्सीपर बैठकर प्रतुलने अपने दोनों नन्हें हाथोंसे अुमाके गालोंको थपथपाते हुअे कहा—"मेरी अच्छी माँ, तुम कितनी अच्छी हो ! काश, तुम कुछ और अच्छी होतीं !"

अुमाने सहमकर प्रतुलकी ओर देखा—वह शरारत से मुस्करा रहा था। ज्यों ही अुमाने बायें पैरका मोजा पहनाना चाहा, प्रतुलने अुसे हटाकर अपना दाहिना पाँव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगे बढ़ा दिया और जब अुमाने झुँझलाकर मोज़ा दाहिने पाँवके पंजे पर ही चढ़ा दिया, तो अुसे पीछे हटाकर बनावटी आवाज़में प्रतुलने कहा— "ओ ममी, तुम क्या जंगलीका माफ़िक़ मोजा पेनाटा है ? बायें पाँवका मोज़ा दाहिनेमें क्या पहना जाता है ?"

अुमा झुंझलाकर अुठने लगी, तो साड़ी पकड़कर अुसे फिर बिठाते हुअे प्रतुलने कहा—"अच्छा, माफ करो माँ, अब शरारत नहीं करूँगा। मेरी अच्छी माँ।"

अुमा फिर बैठ गयी। मोजे पहनाकर अुसने प्रतुलको बनियान पहनायी और फिर हाफ शर्ट तथा निकर। जब वह निकरके बटन बन्द कर रही थी, तो प्रतुलके दोनों नन्हें-नन्हें हाथोंने अुसके हाथोंको दबा दिया और अेक क्षीण स्वर सुन पड़ा –"तुम मुझे पसंद नहीं करती न, माँ ? तुम मुझे प्यार नहीं करती हो न ?"

अिस बार फिर झुंझलाकर अुमाने ज्यों ही प्रतुल की ओर देखा; अुसके चेहरेपर शरारत न थी, बल्कि आँखोंमें आँसू चमक आये थे। वह जैसे कुछ कहती-कहती थम गयी। डबडबायी आँखोंसे प्रतुलने अुसकी ओर देखा और फिर अपने दोनों हाथ अुसके गलेके दोनों ओर डालकर अुससे चिपटकर रोने लगा। अेक क्षण अुमा कुछ असमंजसमें पड़ी रही। फिर अुसने अुसे और कसकर छातीसे चिपटा लिया और स्वयं भी रोने लगी।

कुछ क्षण बाद अुमाने प्रतुलकी आँखोंको पोंछा और पूछा—"क्योंरे, आज तुझमें यह नेह और समझ कहाँसे आ गये ? तूने कैसे जाना कि मैं तुझे नहीं चाहती ? प्यार नहीं करती ??"

प्रतुलने तीक्ष्ण दृष्टिसे अुमाकी आँखोंमें आँखें डालकर देखते हुअे कहा—"कल रात जब तुम्हारा बाबूजीसे झगड़ा हुआ, तो मैं आँखें मूंदे पर जगते हुअे सब-कुछ सुन रहा था। तुमने नहीं कहा था कि 'अगर यह लड़का न होता, तो अबतक मैं कभीकी यहाँसे चली गयी होती। अिसने मेरे दिल और दिमाग़को फँसा दिया है अेक नयी अुलझनमें। न-जाने यह बदनसीब कहाँसे आ मरा मेरे भाग्यमें ?' अगर मेरे चले जानेसे तुम्हारी अुलझन दूर हो जाय माँ, तो मैं अभी चला जाता हूँ, दूर, बहुत दूर—अितनी दूर कि फिर तुम्हारे बुलानेपर भी कभी न लौटूंगा।"

अिस बार अुमाका सारा शरीर जैसे अेक तीक्ष्ण दंशनसे तिलमिला अुठा। अुसका दिल जैसे बैठने लगा। अिसी समय प्रतुलने दूसरा तीर छोड़ा—"सच बताओ माँ, आखिर वह कौनसी औरत है, जिसने बाबूजीको अपने जालमें फँसा लिया है ? तुमसे छीन लिया है ?"

अिस बार अुमा और भी हक्की-बक्की रह गयी ! यह ज़रा-सा छोकरा न जाने कहाँसे अिन सारी बातोंकी गठरी बाँधे बैठा है ? डबडबायी आँखोंसे वह केवल प्रतुलकी ओर देखती-भर ही रह गयी।

प्रतुलकी देहयष्टि कुछ तनी और अुसने सहमी हुअी आवाज़में कहा—"आँखें फाड़-फाड़कर यों देख क्या रही हो ? क्या मैं कुछ ग़लत थोड़े ही कह रहा हूँ ? या तुम्हें यह आश्चर्य हो रहा है कि मैंने ये सारी बातें जान कैसे लीं ?"

हाँ, सचमुच अुमाको यही अचंभा हो रहा था। और अिससे भी अधिक आश्चर्य अिस बातका था कि कम अुम्र होनेपर भी प्रतुल बातोंको कितना समझता-बूझता है। पर प्रतुलसे वह क्या कहती ? बोली—"अच्छा, जाओ, खेलो अभी। जब खाना हो जायगा तो मैं तुम्हें बुला लूंगी, फिर कोअी शरारत या लड़ाअी-झगड़ा न कर बैठना किसीसे।"

"अच्छी बात है !"—अेक लंबी साँस लेकर कहते हुअे अपनी गुलेल लेकर फुदकता हुआ प्रतुल बाहर चला गया।

द्वारके पास पहुँचकर प्रतुल रुक गया। भीतर जैसे झगड़ा हो रहा था—फिर अुसके बाबूजी और माँ-में ही। बाबूजी नाराज़गीके स्वरमें कह रहे थे—"अिसे समझा दो अच्छी तरह। अगर अिस लड़केके कारनामे रहे अिसके, तो मेरे घरमें अिसके लिये जगह नहीं है।"

अुसकी माँ कुछ न बोली थी। कदाचित् अिसी लिये बाबूजीने फिर तुनककर कहा था—"तुम जवाब क्यों नहीं देती ? सुना, मैं क्या कह रहा हूँ ?"

CC-0. In Public Domain

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"सब कुछ सुना। आज कोअी नयी बात थोड़े ही है ?"—अुसकी माँने बिगड़कर कहा—"पर अुसके कुलच्छनोंके लिये ज़िम्मेदार कौन है ? मैं अुसे सज़ा दे-देकर थक गयी। आखिर अुसकी जान तो ले नहीं सकती।"

"अच्छी बात है, तो अब मैं अुसे देखूँगा। देखता हूँ, कैसे सीधा नहीं होता है ?"

अिसके बाद प्रतुलके बाबूजी बाहर चले आये। प्रतुल फुर्तीसे द्वारके बाहरके जीनेकी ओटमें हो गया। जब वे बाहर चले गये, तो अुसने दबे पाँवोंसे कमरेमें प्रवेश किया। देखा, अुसकी माँकी आँखोंमें आँसू थे। प्रतुलने अनुनयभरे स्वरमें कहा—"मुझे माफ़ कर दो माँ। आअिन्दा अैसा नहीं करूँगा।"

अुमाने अेक झल्लायी हुअी दृष्टिसे अुसकी ओर देखा और फिर बिना कुछ कहे ही दूसरे दरवाजेसे सहनकी ओर चली गयी। अुसके हृदयमें अेक विचित्र-सी हलचल मची हुअी थी, पर समझमें नहीं आ रहा था कि वह क्या कहे, क्या करे ?

प्रतुलने दूसरा पाँसा फेंका। पास जाकर रुआँसे स्वरमें बोला—"माँ, बड़ी भूख लगी है, कुछ खानेको दो।"

अिस बार भी अुमा कुछ न बोली और मुँह फेरकर अपने कमरेमें चली गयी। अेक क्षण प्रतुल खड़ा रहा—कुछ सोचता-सा; फिर न जाने क्या सोचकर तेजीसे मुड़ा और द्वारके बाहर हो गया।

अुस रात अुमाने भी खाना नहीं खाया। अुसे नींद भी नहीं आयी। प्रतुलके बाबूजी तो रातको घर पर सोना न जाने कबसे छोड़ चुके थे, सो वह अकेली ही बिस्तरपर बैठी सोचती रही अपने बारेमें, प्रतुलके बारेमें और रोज-रोज अुठनेवाले अिस व्यर्थके तूफ़ानके बारेमें। पर सब-कुछ सोचकर भी जैसे वह कुछ निर्णय नहीं कर कर पा रही है, अुसे अपनी समस्याका जैसे कोअी हल नहीं सूझ पड़ रहा है। नींद ही नहीं, जिन्दगी भी जैसे अुसकी बैरन हो रही थी; पर वह करे, तो भी क्या ?

अिस तरह बैठे और सोचते-सोचते कब रात बीत गयी, अुसे पता भी न चला। अुसके पतिने जब अुसके कमरे में प्रवेश किया, तो अुसकी आँखें अैसे खुली थीं, मानो किसी मूर्तिकी घटित आँखें हों, जिसके पलक झँपते ही न हों। अपने आनेपर भी जब अुन्होंने अुमाकी दृष्टि और चेहरेपर कोअी प्रतिक्रिया नहीं देखी, तो झुँझलाकर बोले—"अितना अुजाला हो गया है और तुम अभी बिजली जलाये पलँगपर ही बैठी हो !"

"हूँ ! हैं !"—हक्काबक्का होकर अुमाने अिधर-अुधर देखा। वह कुछ कहे, अिससे पहले ही अुसके पतिने पीछे मुड़कर देखा। अिशारा पाकर अेक आदमी कपड़ेमें लिपटी किसी चीजको दोनों हाथोंपर अुठाये भीतर आया और अुसे अुमाके पाँवोंके पास रख दिया। अुमाकी आँखें और फैल गयीं और घबराकर अुसने पूछा—"क्या है यह ?"

अुसके पतिने सिर झुका लिया। यद्यपि अुनकी आँखोंमें आँसू न थे, तथापि अुनके चेहरेपर असाधारण अुदासी थी, यह अुनके कमरेमें प्रवेश करनेपर ही भासित हो गया था।

अुमाने फिर खीझकर पूछा—"क्या है यह ? बताते क्यों नहीं ? बोलो।"

अिस बार अुसके पतिका मौन भंग हुआ। काँपते हुअे होठोंसे बोले—"प्रतुलकी लाश है ! आज सुबह पुलिसने अिसे शाहजीके तालाबमें तैरते हुअे पाया।"

अुमाके मुँहसे अेक जोरकी चीख निकल गयी और वह 'हाय मेरे लाल, तूने यह क्या किया !' कहते हुअे अुसपर गिर पड़ी। अँधेरेकी अेक मोटी चादरने जैसे आज अुन दोनोंको ढँक लिया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कल्पना और सत्य

: श्री अुमाशंकर जोशी :

कल्पना और सत्यका क्या सम्बन्ध है ? सामान्यतः कल्पना और सत्यका सहज वैर होता है। अिसी विचारसे प्रश्न मनमें अुठता है कि जिसकी कल्पना की गयी हो अुसका और सत्यका सम्बन्ध कैसे हो सकता है ? कल्पना की चीज़ तो किसी अकर्मण्यके दिमागकी अुपज होती है। कल्पना अेक पूरा दंभ है - अेक मिथ्या सृष्टि है।

किन्तु यह सोचना सही नहीं है। असल बात तो यह है कि जब सत्यको प्रकाशित होना होता है तब कभी-कभी वह हमारी कल्पनासे ही जन्म लेता है और यही सत्यकी बलिहारी है ! सत्य विविध रूपसे प्रकट हो सकता है। कुछ विशेष रूपसे ही वह प्रकट हो तभी वह सत्य कहलायगा अैसी चार खूँट सीमा बाँधनेकी हम कोशिश भले ही करें; किन्तु सत्य हमारी बाँधी हुअी मर्यादाओंका गुलाम नहीं है। अितना ही नहीं; वह तो अैसी संकीर्ण मर्यादाओंको पार करनेमें भी हमारी मदद करता है। शिन्द्रियोंसे जो प्रत्यक्ष अनुभव होता है वही सत्य है, अैसा हम मान लेते हैं। सच्ची हकीकतोंको भी हम मानते हैं। किसी अेक घटनाके समय अुपस्थित चार व्यक्ति अुसी घटनाका वर्णन करें तो क्या वह वर्णन बराबर अेकसा बैठेगा ? फिर भी घटना द्वारा सत्यका निश्चय जरूर हो जाता है। प्रयोग-शालामें जो सिद्ध हुआ हो वही सत्य है, अैसा हम मानते हैं। लेकिन प्रयोग-शालामें अुष्णता-मापक यंत्र अुष्णताका नाप निकालनेकी प्रक्रियामें स्वयं अुस नामके अूपर असर किये बिना नहीं रह सकता। तोलनेकी तुलाकी स्थितिका असर नापके अूपर पड़ेगा ही। संक्षेपमें कह सकते हैं कि सत्यको ग्रहण करनेवाला, जाँचनेवाला, साधन ही स्वयं अुस निर्णयके अूपर असर डालता है। फिर भी सत्यका अन्दाज मिले बिना नहीं रहता। अकसर हम कहते हैं कि अेक और अेक मिलकर 'दो' होते हैं। मगर यह भी सोचनेकी बात है। अेक पेड़ और दूसरा पेड़, यह अुसके पेड़ होनेके सम्बन्धमें और संख्याकी दृष्टिसे हम कहें तब तो हम दो कह सकते हैं, लेकिन प्रकृतिमें अेक दूसरेसे सदृश न होनेपर भी हम अुनको अेक और अेक मिलकर दो कैसे कह सकते हैं ! फिर भी गणित शास्त्र सत्यका अनुमान हमको जरूर करा देता है।

वास्तविक दर्शन, प्रयोगशालाके अनुभव और गणितशास्त्रके नियम सत्यकी प्राप्तिके मार्ग हैं। अेक दूसरा भी रास्ता है। अेक तालाबमें पानी कम हो जानेके कारण दूसरे भरे हुअे तालाबमें कछुअेको ले जानेके लिये अुसके साथ दो बगुले हमारी मदद करते हैं। अेक लकड़ीके दोनों छोर दो बगुले पकड़ें और बीचका हिस्सा कछुआ मुँहसे पकड़े, अैसी तरकीब सोची गयी और वे अुड़े। बीचमें किसी गाँवके लोगोंने यह दृश्य देख लिया। वे आनन्दके मारे किलकिलाने लगे — देखो, कछुआ अभी गिरता है, वह गिरा। हम अुसे खा जायेंगे। यह सुनते ही कछुआ क्रोधित हो गया। "आप लोग कौन हैं मुझे खानेवाले ?" यह भाव जाहिर करनेसे वह अपनेको रोक न सका और गुस्सेमें, "मुझे क्या खाओगे, खाओ अपना सर", अैसा कुछ कहनेको वह अपना मुँह खोल बैठा। मुँहसे आधार छूट गया और कछुआ धड़ामसे नीचे गिर पड़ा। सोचा जाय तो अैसा लगता है कि कछुआ न तो हमारी भाषा समझता है न बोलता ही है। अिस कहानीमें 'पंच-तंत्र' के विष्णु शर्माने कैसा कथा-दोष किया है ? लेकिन फिर भी अिस कथामें क्या मानव-जीवनके अेक सत्यका दर्शन हमें नहीं होता ? कहानी कल्पित है। वास्तविकताकी दृष्टिसे देखो जाय तो निर्दोष नहीं है। फिर भी अिसमें सचाअी तो है ही।

केवल घटनाओंमें ही पूरा सत्य नहीं समा सकता। बल्कि कभी घटनाका निषेध करके भी सत्य प्रकट होना पसंद करता है। अिसीलिअे स्व० आचार्य आनन्दशंकर ध्रुवने कहा है कि "कल्पनाका जगत् मिथ्या जगत् नहीं है।" हृदयमें अनेक यातनाओंको भोगते हुअे भी कहना कि नरक नहीं है। हृदयमें अपार रसका अनुभव करते हुअे भी कहना कि स्वर्ग नहीं है— यह ठीक नहीं है। जगत्में जिनको हम साक्षात् देख सकते हैं, वे स्त्रियाँ मिथ्या होंगी; लेकिन सीता और सावित्री मिथ्या नहीं हैं।

कल्पनाका विरोध सत्य नहीं, बल्कि कल्पनाके द्वारा अैसा कहना चाहिये, कि कल्पनाके जरिये कवि, कलाकार सत्यको पकड़ते हैं— जिनकी कल्पना-सृष्टि भी सत्यको पानेका अेक साधन है।

(गुजरातीसे अनुवादक : श्री मनु पंडित)

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी :

बापू फिर मारे गये

: कुमारी मुबारकजहां :

साढे पाँच बज चुके थे। मैं शामका अख़बार पढ़कर कमरा खोलनेके लिये अुठी ही थी कि किसीने किवाड़ थपथपाये। मैंने कमरा खोलनेके लिये जल्दी की, परन्तु मेरे ताज्जुबका कोअी ठिकाना न रहा, जब कमरा स्वयं खुल गया और आगन्तुक मेरे सामने खड़ा दिखायी दिया। वह बूढ़ा था, दुबला-पतला केवल अेक लंगोटी बांधे हुअे और अुसकी छातीपर गोलियोंके तीन निशान थे, जिनसे लोहूकी पतली-पतली धारें बह रही थीं। वह लम्बे-लम्बे डग भरता हुआ मेरे पास आ बैठा और मुसकिराकर बोला—

'क्या कर रही थी?'

'हिसाब लगा रही थी!'

'कैसा हिसाब?'

'यही कि पिछले तीन सालमें मज़दूरोंकी छाती-पर कितनी गोलियां बरसायी गयीं!' बूढे बाबा हँसकर बोले—'मेरी छातीपर लगी तीन गोलियाँ तो नहीं भूल गयी?' उन्हें भी अपने हिसाबमें शामिल कर लेना!'

मैंने कहा—'आपकी छातीपर लगी हुअी गोलियाँ? वे तो अिस हिसाबमें शामिल नहीं हो सकतीं! परन्तु... परन्तु... ठीक है; आपकी छातीपर लगी हुअी गोलियाँ शामिल न करूँगी, तो मेरा हिसाब अधूरा रह जायगा।'

वे उसी तरह हँसकर बोले—'समझ गयी बच्चू! अच्छा, अब जल्दीसे उठ बैठो, मेरे साथ चलो; मैं अपना देश देखना चाहता हूँ।'

मैंने कहा—'आप तो सब दुःखोंसे सदैवके लिये छुटकारा पा गये। अब आपको हमारे दुःखोंसे क्या मतलब!'

सचमुच मैं बड़े आरामसे लेटा हुआ था। अचानक नीचे अिस दुनियासे अिलता शोर सुनायी दिया कि मुझसे रहा नहीं गया। मैंने सोचा, चलकर देखूं तो, क्या बात है और लोग मुझे क्यों याद कर रहे हैं!'

'आपको ग़लत सूचना मिली है। मालूम होता है कि स्वर्गका सूचना-विभाग ठीक काम नहीं कर रहा है। अब यहां किसीको भी आपकी याद नहीं आती। पहले लोग सिनेमामें आपका चित्र देखते और तालियां बजाया करते थे। परन्तु अब मंत्रियोंके चित्र देखते देखते उनकी वह अिच्छा भी दब गयी है।'

'अरे नहीं, मैंने आहोंका धुआँ अुठता देखा था।'

'भगवन्, वह धुआँ तो बड़ी-बड़ी मिलोंकी चिमनियोंका था, जिसकी ओटमें मिलवाले अपनी तिजोरियाँ सुरक्षित कर रहे हैं। वे लोग आपका नाम लेते हैं और धड़ाकेसे मज़दूरोंके गले काटते हैं—ठीक अुसी तरह, जिस तरह क़साअी अल्लाहका नाम लेते लेते बकरे जिबह कर डालते हैं।'

वे मुसकिराय, बोले—'ताने देनेकी तुम्हारी पुरानी आदत है। मैंने वर्धामें तुम्हारा अेक लेख पढ़ा था—स्वराज्यके पचास साल बाद। वह लेख पढ़नेके बाद मुझे तुमपर बहुत क्रोध आया था।'

मैंने कहा—'वह लेख तो मैंने सन् '४० में लिखा था, जब स्वराज्यकी कहीं परछायी भी न थी। परन्तु अभी तो स्वराज्यके पाँच साल ही बीते हैं. और मेरा लेख, खैर, जाने भी दीजिये, मैं अपने मुँह अपनी क्या तारीफ़ करूँ!'

वे हँसने लगे और बोले—'खैर, अब तुम जल्दी कमरेसे बाहर निकलो, मैं ज़रा अपने देशकी हालत देखना चाहता हूँ।'

मैंने पूछा—'कैसे चलेंगे? बसके लिये अेक लम्बी लाअिन (क्यू) में खड़े होना पड़ेगा।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिसपर अुन्होंने कहा—'जीवनमें तो लोग मेरी प्रतीक्षामें लम्बी लाअिन लगाकर खड़े रहते थे; परन्तु समयकी बात है; अब यों ही सही।'

कमरेसे निकलकर हम लोग बसकी प्रतीक्षामें बस-स्टेशनपर जाकर खड़े हो गये। हमारे आगे अेक सिंधी महिला थी। वह हाथमें मिट्टीके तेलका पीपा लिये थी और नाराज़ होकर कह रही थी—'ये लोग बसमें मिट्टीके तेलका पीपा नहीं ले जाने देते, तो मैं अिसे राशनकी दूकान तक कैसे ले जाअूँ? राशनकी दूकान यहाँसे दो मील दूर है, और केम्पमें बिजली भी नहीं है।...अच्छा राम-राज्य मिला। हम सिंध-कराँचीमें क्या बुरे थे? वहाँ घर भी छोड़ा, दूकान भी छोड़ी, अब यहाँ कैम्पमें बेकार पड़े हैं। ...अच्छा सुराज मिला है—अब सुना है शरणार्थियोंका राशन भी बन्द होनेवाला है। अच्छा राम-राज मिला है। अब पेड़ अुगाते हैं, हमारा राशन बन्द करते हैं और हमें बसमें पीपा भी नहीं रखने देते।'

अेक मरहठा क्लर्क बोला—'हाँ बाअी, पेड़ अिसलिये अुगाते हैं कि सारा हिन्दुस्तान जंगल बन जाय। फिर हर पेड़पर बन्दर अुछलेंगे और तब सचमुच रामराज्यकी स्थापना होगी।'

मैंने अुकताकर कहा—'चौथी बस निकल गयी, यह पाँचवीं बस भी भरी हुअी जा रही है, और जगह अेक आदमीकी भी खाली नहीं है।'

अुन्होंने पूछा—'अैसा क्यों है?'

मैंने अुत्तर दिया—यहाँ पास ही शरणार्थियोंका कैम्प है, अिसलिये आबादी तो बहुत अधिक बढ़ गयी है, परन्तु बसें अुतनी ही हैं।'

अुन्होंने कहा—'तो चलो, पैदल चलें; मैं अपना देश अवश्य देखूंगा।'

बीस मिनट बाद हम लोग स्टेशन पहुँचे। मैंने अुनसे पूछा—'आप स्वर्गसे थर्ड क्लास'में आये थे या फर्स्ट क्लासमें?'

अुन्होंने अुत्तर दिया—'नहीं, मैं अपने स्टेशन वैगनमें आया था। वह तो मैंने वापिस कर दिया है; चलो, अब थर्डमें ही चलें।'

'परन्तु यह सचमुच थर्ड नहीं—वह थर्ड जिसमें आप सफ़र किया करते थे, जिसमें बिजलीके पंखे लगे रहते थे और दोनों ओरकी सीटें आपके लिये खाली पड़ी रहती थीं। अुनपर गद्दे भी रक्खे रहते थे। अब तो आपको सचमुच जनताके थर्डमें सफ़र करना पड़ेगा, जिसमें न पंखे हैं, न गद्दे और आदमी अेक-दूसरेपर अिस तरह लदे रहते हैं, जिस तरह माल गोदाममें बोरे।'

'अब टिकट लेती हो, या बातें बनाती हो? मैं तुमसे अधिक अपने देशकी जनतामें घूमा हूँ।'

'खूब सोच लीजिये, आजकल कोअी भी कांग्रेसी नेता या मंत्री जनताके डिब्बेमें सफ़र नहीं करता। सुना है, अब तो....भी फ़र्स्टमें सफ़र करते हैं, और फ़र्स्ट भी कैसा?....अेयर-कण्डीशन,...नहीं तो ख़ास चार्टर्ड हवाअी जहाज़....'

'तुम बोलती ही जाओगी? अच्छा है, मैं किसी दूसरेका सहारा लिये लेता हूँ।'

'अप्रसन्न न हूजिये बापू! यह बताअिये कि टिकट कहाँका ले लूँ?'

'दिल्लीका!'

दिल्ली पहुँचकर हमने सीधा वाअिसराय भवनका मार्ग पकड़ा, जहाँ राष्ट्रपति रहते हैं। अुनका अे. डी. सी. बड़े तपाकसे मिला। मैंने अुससे कहा—'ये मेरे मित्र हैं—राष्ट्रके बहुत बड़े, बहुत पुराने सेवक; आप राष्ट्रपतिजीसे मिलना चाहते हैं।'

अे. डी. सी. था तो हिन्दुस्तानी, और बात भी हिन्दुस्तानीमें करता था, परन्तु अुसका रंग-ढंग बिलकुल अँगरेजी था। अैसा जान पड़ता था, जैसे अुसके गलेमें लाअिनो टाअिपकी मशीन लगी हुअी है, जो हर अच्छे-भले हिन्दुस्तानी वाक्यको अँगरेजी साँचेमें ढालती जा रही है।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'बरा अफ़सोस हाय, रेष्ट्रपती नेअीं मिलने सकटा। डरबार हाय !'

'हाय, हाय !'—मैंने अफ़सोससे कहा।

'हाँ, हाय, हाय; डरबार हाय !'—अे. डी. सी. बोला।

अे. डी. सी. का चेहरा कानों तक लाल हो गया; वह बिगड़कर बोला—'और क्या मैं झूठ बोलता हूँ ? हाय-हाय, डरबार हाय। रेष्ट्रपती बरा मशरूफ़ हाय-डरबार के अण्डर नेअी मिलने सकटा।'

'नेअीं मिलने सकटा ?'—मैंने पूछा—'डरबारके अण्डर जानेकी कोअी शर्ट हाय।'

वह बोला—'या तो प्रिन्स होना माँगटा, या काअुन्सिलर होना माँगटा, या फिर कांग्रेसका बरा-बरा नेटा होना माँगटा।'

मैंने अुससे कहा—'तब तो ये जरूर जा सकते हैं।'

और अुन्होंने भी अे. डी. सी. से बडे मीठे शब्दोंमें कहा—'तुम जाकर राष्ट्रपतिको मेरी यह चिट दे दो; वे स्वयं आकर मुझे ले जायेंगे।'

अे. डी. सी. चिट लेकर अन्दर गया, और थोड़ी देर बाद वापिस आकर बोला—'रेष्ट्रपती बोलटा, टुमसे किसीने हँसी किया। अैसे नेमका आडमी कैसे अण्डर आने सकटा, वह टो राजघाटपर हाय।'

'हाय-हाय।'—मैंने कहा।

'हाय-हाय-हाय।'—अे. डी. सी. गुस्सेमें आकर बोला—'आम टुमको बोलटा हाय, अुधर राजघाटपर अैसे आडमीका कबर हाय—आम खुड डेखा हाय।'

'हाय हाय।'—मैंने कहा।

'हाय हाय हाय।'—अे. डी. सी. गुस्से में आकर बोला—'आम टुमको बोलता हाय, उधर राजघाटपर अैसे आडमीका कबर हाय-आम खुड डेखा हाय।'

'हाय हाय' !—मैंने उनसे कहा—'अब क्या विचार है ? राजघाटपर चलेंगे या यहीं सत्याग्रह करने का अिरादा है।'

वे हँसे, बोले—'स्वराज्य आनेके बाद भी वाअिसराय भवनकी वही दशा है।' फिर उन्होंने अे. डी. सी. से कहा—'क्या मैं अेक मिनटके लिये अन्दर जा सकता हूँ ? यहाँकी बहुतसी वस्तुओंसे मेरा परिचय है, और यहाँ मेरी बहुतसी यादगारें हैं।'

अे. डी. सी. बोला—'सारी ! आपका डावट नेअीं ! फिर आप ड्रेसमें भी नेअीं।'

'ड्रेस—कौनसा ड्रेस ?'

'अँगरेजी ड्रेस या फिर काली अचकन ?'

अुन्होंने अप्रसन्न होकर कहा—'अजी, मैं अिसी ड्रेस में सम्राट के बकिंघम पैलेस तक हो आया हूँ।'

मैंने कहा—'वह स्वराज्य आनेसे पहलेकी बात है। अब आप यह लिबास पहिनकर बकिंघम पैलेस तो क्या, किसी साधारण अदालत में भी नहीं जा सकते।'

'चलो, चलें।'

'कहाँ चलेंगे ?'

'जवाहरलाल नेहरूसे मिलेंगे।'

नेहरूजी के यहां गये, तो मालूम हुआ कि वे बम्बअीके अेक पागलखानेका निरीक्षण करने गये हैं। वहाँसे सरदार पटेलके यहाँ पहुँचे, तो पता चला कि वे 'अखिल भारतीय मारवाड़ी चेम्बर्स आफ़ कामर्सका उद्घाटन करनेके लिये बीकानेर गये हैं। वहाँसे मिस्टर मुशीके यहाँ गये, तो मालूम हुआ कि वे भारतसे अन्नाभाव दूर करनेकी चिन्तामें भुसावल और मनमाडके बीच खजूरका अेक पौधा रोपनेके लिये गये हैं। उसी दिन जगजीवनरामजीको नासिकमें कोलो-कोला कम्पनीकी ओरसे मानपत्र भेंट किया जा रहा था, किदवअी साहब चेलाबेलीपट्टममें अेक नया टेलिफोन-अेक्सचेंज जारी करने चले गये थे, श्री हरेकृष्ण मेहताब सत्यनारायणकी कथा सुना रहे थे, सरदार बलदेवसिंह काश्मीरकी हवा खा रहे थे और श्रीराजगोपालाचार्य अमरीकी राजदूतके यहाँ दावतकी शोभा बढ़ा रहे थे। मतलब यह कि पूरा-का-पूरा मन्त्रि-मण्डल नदारद था। मैंने कहा—'बताअिये, अब क्या किया जाये ? चलिये, किसी अुपमन्त्रीसे ही मिल लें।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुन्होंने पूछा—'यह अुप-मन्त्री कौनसी चीज़ है ?

मैंने अुत्तर दिया— 'अुप-मन्त्री बड़े मजेकी चीज़ है। कुछ मन्त्रीसे नीची और कुछ डिपुटी सेक्रेटरीसे ऊँची...यानी दो सीढ़ियोंके बीचकी लकड़ी समझिये।'

अुन्होंने नाकपर अैनक ठीक करते हुअे कहा— 'मैंने बीचकी लकड़ीको कभी पसन्द नहीं किया।'

मैंने अुत्तर दिया—'यह तो आप नहीं कह सकते— आपका सिद्धान्त ही बीचकी लकड़ीपर अवलम्बित था। अँगरेजोंके विरुद्ध आन्दोलन और बम्बअीमें मज़दूरोंपर गोली ..और हिन्दी अुर्दूके बजाय हिन्दुस्तानी क्या बीचकी लकड़ी नहीं थी ? ख़िलाफ़त और गो-सेवा, मसजिद-मन्दिर सहयोग, पूना–अेवार्ड, अिर्विन–पैक्ट, माअुण्ट–बैटन समझौता–जान पड़ता है, नअी आजादीका सारा ढाँचा अिसी बीचकी लकड़ीपर तैयार किया गया था। मतलब यह कि अँगरेजोंकी डिपुटी मिनिस्टरीसे और कांग्रेसकी अिस डिपुटी मिनिस्टरीसे लोग पिटे, औरतें लुटीं, रिवाल्वर चले और अेक ·· दो ··तीन ··जी हाँ, आपकी छातीके ये तीन निशान — भारतकी छातीसे कभी न मिटनेवाले ये तीन निशान ··'

अुन्होंने कहा—'जान पड़ता है, तुम्हारा दिमाग पहलेसे अधिक चल गया है। अच्छा, अब चलो यहाँसे।'

मैं बोली—'शरणार्थियोंका कैम्प देखेंगे आप ? आअिये, आपको बम्बअीके कोलीवाड़ा-कैम्पमें ले चलूँ, जहाँ पाँच सौ आदमियोंके लिये अेक ही टट्टी है। हिटलरके कड़े कैदखानेमें भी अिससे कहीं बहुत ज्यादह सफ़ाअी रहती थी। परन्तु जब लोगोंने अपना कष्ट दूर करनेके लिये आवाज अुठायी और शान्त प्रदर्शन किया, तो अुनपर गोली चलायी गयी। आजकल गोली तो अैसे चलती है, जैसे भाड़में चने भुनते हैं।'

अुन्होंने कुछ सोचकर कहा—'चलो, चम्पारन चलें, जहाँ सबसे पहले मैंने किसानोंका आन्दोलन चलाया था।'

मैंने पूछा— फिर थर्ड क्लासका टिकट कटाअूं ? मेरी तो हड्डी-पसली चूर-चूर हो गयी, अुस लकड़ीके तख्तेपर बैठे-बैठे।'

अुन्होंने कहा—'ठहरो, मैं स्वर्गसे स्टेशन-वैगन मँगवाता हूँ। फिर मुझे भूख भी लग रही है।'

'तो अपनी बकरी भी मँगवा लीजिये। यहाँ दिल्लीमें कहीं भी बकरीका दूध न मिलेगा अब।'

'आजकल लोग क्या पालते हैं ?'

'अमीर हैं, वे परमिट और अलाटमेण्ट पालते हैं। जो सटोरिये सेठ हैं, वे अमरीकनोंकी दोस्ती पालते और डालरोंके वोट चाटते हैं। जो रिश्वतखोर अफसर हैं, वे सफेद रङ्गकी प्रेमिका और काले रङ्गकी पेकार्ड पालते हैं और जो मेरे अैसे बुद्धू हैं, वे आपका दिमाग चाटते हैं, और अपना भी दिमाग चाटते हैं।'

'अच्छा, बच्ची, आज मैं तुम्हारा दिमाग ठीक कर दूँगा। बकरीका अैसा अच्छा दूध पिलाअूँगा कि तुम भी जीवनभर याद करोगी।'

'मैंने सुना है, यहाँ आपकी बकरीको बड़े-बड़े ताकतवर चारे दिये जाते थे, बादाम खिलाये जाते थे, और विटैमिनके अिंजेक्शन लगाये जाते थे। भला वह स्वर्गमें क्या खाती होगी ?'

'खाती कुछ नहीं है, केवल अमृत पीती है।'

हम दोनों हँसने लगे। अितनेमें स्वर्गसे स्टेशन-वैगन आ गया और हमें चम्पारन पहुँचनेमें कुछ देर न लगी।

झब्बूने मूझसे कहा—'जैसा तुम्हारा साथी है, वैसा ही अेक आदमी बहुत पहले हमारे जिलेमें आया था। वह बिलकुल अिसी तरह मुसकिराता था। अुन दिनों मैं जवान था और मुझे दो सालकी सजा हुअी थी।'

'क्यों भला ?'—मैंने पूछा ?

'अिसलिये कि लगान बहुत अधिक था, जमींदार बेगार लेता था, अँगरेजका अफसर सदा अन्याय करता था और जिस तरहका तुम्हारा साथी है, अुसी तरहके आदमीपर मैंने और मेरे गाँववालोंने भरोसा किया था और अुसके कहनेपर चलकर जेल काटी थी, चक्की पीसी थी, जमीन जब्त करवायी थी, घर लुटवाया था।'

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'अब क्या हाल है ?'—मेरे बूढ़े साथीने झब्बूसे कहा—'अब तो मजे ही मजे होंगे, अब तो अपना राज्य है।'

'सो तो है ही !' – झब्बूने ठण्ढी साँस भरकर कहा—'राज्य तो अपना है, परन्तु जमीन अपनी नहीं है। जमीन तो अुसी जमींदारकी है और अुसका अत्याचार भी अुसी तरह चल रहा है। अुसके अूपर बड़ी सरकार है, कहनेके लिये तो वह अपनी है, परन्तु है वैसी ही, जैसी आजादीके पहले थी। केवल टोपी बदली है, और कुछ नहीं बदला मेरे भाअी ! पहले अँगरेजी टोपी थी, अब सफेद टोपी है, जिसके रहते पिछले महीनोंसे अकाल पड़ गया है, और लोग अन्नके दानों बिना तरस-तरसकर मर रहे हैं। परन्तु सुना है, मन्त्री नहीं मानता, कहता है—बिहारमें अकाल है ही कहाँ ?' अभी कल की बात है, हमारे गाँवके कुम्हारका कुनबा-का-कुनबा भूखों मर गया, परन्तु हमारा मन्त्री क्यों मानने चला ? गाँव-भर मर जायेगा, तो भी अुसकी नजरमें अकाल न पड़ेगा। अूपरसे तहसीलदार कहता है—'पेड़ अुगाओ, अनाजकी कमी न रहेगी।' अरे भाअी, जिस जमीनमें धान ही के पौधे नहीं होते, अुसमें अितने बड़े पेड़ कैसे अुगेंगे ? कितनी हठधर्मी है यह ?'

'तुम सत्याग्रह क्यों नहीं करते ?' - अुन्होंने पूछा।

झब्बूने अिधर-अुधर चारों ओर देखकर धीरेसे कहा—'जरा धीरे-धीरे बातें करो भाअी ! कहीं किसीने सुन लिया तो गोली चल जायेगी। चार दिनकी जिन्दगानी है, जैसे-तैसे काटही लेंगे। ....परन्तु रामजी भला करें अुस लँगोटीवालेका ! यारने कैसा चकमा दिया स्वयं अुसके भाअीबन्द और चेले-चाँटे तो मजे लूट रहे हैं, और हम किसान-मजदूर अुसी तरह चक्कीमें पिसे जा रहे हैं ! अच्छा राम-राज्य है ! अिससे तो भला वही रावण-राज्य था !'— यह कहते-कहते झब्बूकी आँखोंमें आँसू झलक अुठे।

मैंने अुनसे पूछा– 'झब्बूसे और कुछ मालूम करना हो, तो रुक जायँ, नहीं तो कहीं और चलें !'

अुन्होंने भरे हुअे गलेसे कहा—'नहीं, अब चलो यहाँसे !'

'तो अब कहाँ चलें—सलेम जेलमें, जहाँ अिक्कीस राजनैतिक कैदी गोलीसे भून दिये गये थे ?'

'नहीं !'

'अच्छा, तो त्रिवेन्द्रमका वह बूचड़खाना देखिये, जहाँ बकरियाँ काटी जाती हैं और जिसका ठेका अेक कांग्रेसीने ले रक्खा है।'

'नहीं-नहीं !'

'अच्छा, तो आचार्य कृपलानीसे ही मिल लीजिये। वे आपको बतायेंगे कि मन्त्रि-मण्डल किस प्रकार बिगड़ते और किस प्रकार सँभलते हैं।'

'नहीं...नहीं ..नहीं !'

'अच्छा, तो फिर काश्मीर चलिये, जहाँ हिन्दुस्तानी और पाकिस्तानी फौजें अेक दूसरेके विरुद्ध युद्धकी तैयारियोंमें लगी हुअी हैं।'

'नहीं भाअी, मैं अपने देशकी सच्ची दशा देखना चाहता हूँ।'

'यह तो आपको सरकारी कीमतोंकी फेहरिस्तसे ही पता चल जायेगा। जब आप मरे थे, तबसे आज तक कीमतें लगभग तीन सौ प्रतिशत बढ़ गयी हैं। पहले चीनी नहीं मिलती थी, अब गुड़ भी ब्लैक मार्केटमें पहुँच गया है और खद्दर भी। अन्तर सिर्फ यह है कि गुड़ ब्लैक-मार्केटके अन्दर होता है और खद्दर ब्लैक मार्केटके अूपर मढ़ा रहता है। जनताके हाथमें खाली चर्खा-ही-चर्खा रह गया है।'

'मुझे तुम्हारी बातोंपर न पहले कभी भरोसा था, और न अब है।' —अुन्होंने मुसकुराते हुअे कहा—'मैं स्वयं किसीसे पूछूँगा। चलो, बम्बअी चलें। वहाँ बहुतसी बातोंका पता चल जायेगा। रोटीका भाव तो मुझे चम्पारनमें मालूम हो गया। अब कपड़ेका भाव मालूम करनेकी अिच्छा है।'

'कपड़ेकी भी दो किस्में हैं !'—मैंने अुत्तर दिया—'अेक अमीर आदमीके कपड़ेका भाव है, जिसका मूल्य नियन्त्रण अलग है। दूसरा गरीब आदमीके कपड़ेका भाव है, जिसका मूल्य-नियन्त्रण अलग है और पिछले दो सालसे वही चला आ रहा है।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'अर्थात् ?'

'अर्थात् वही लँगोटी; भाव कुछ भी क्यों न हो– लँगोटी अपनी जगहपर कायम है। चाहे राम-राज्य हो, चाहे रावण-राज्य; बस, वही अेक लँगोटी है गरीबके लिये।

'पहले तो तू अितनी झक्की नहीं थी, अब क्या बात हो गयी ? अुन्होंने मुझसे पूछा।

'पहले मूल्य अितने नहीं बढे थे,'–मैंने बताया– 'जितने अब बढ़ गये हैं और मूल्य बढ़ जानेके बाद ही मुझे लँगोटी बाँधनेके लिये मजबूर होना पड़ा है। अिसलिये आप स्वयं सोच सकते हैं कि मुझमें परिवर्तन होना चाहिये या नहीं ?'

'बकरीका दूध पीयेगी ?'—अुन्होंने पूछा।

'आपकी स्वर्गकी बकरीका दूध नहीं पी सकूँगी; क्योंकि अमृत पीनेवाली बकरीका दूध पीकर मैं हमेशा जीवित रहना नहीं चाहती।'

'क्यों ?'

'सदैव जीवित रहना अगली पीढ़ीवाले बच्चोंके लिये बुरा है। यह अच्छा है कि हम लोग थोड़ी देरके लिये जीवित रहें, फिर मर जायँ और दुनियाको हमेशाके लिये भूल जायँ।'

'जैसे ?'

'जैसे पुराने फूल खिलकर, महककर, लहलहाकर मुरझा जाते और अुनके स्थानपर नये फूल आ जाते हैं।

अितनेमें स्टेशन-वैगन आ गया और हम लोग बम्बअीके बाजारमें जा पहुँचे।

'मैंने आपको पहिचान लिया।'—कमालने कहा।

'कैसे ?'

'आप अहमदाबादमें आकर साराभाअीके यहाँ रहते थे और मैं अुनकी मिलमें नौकर था।'

'आजकल कहाँ हो ?'

'यहीं–सीसतन मिलमें।'

'अँगरेजोंकी मिल अभी तक यहाँ है ?'

'अँगरेजोंकी कौन-सी चीज़ यहाँसे गयी है ? अँगरेजी तक तो यहाँ मौजूद है।'

'कपड़ेका क्या भाव है ?'

'मुझे नहीं मालूम– चूँकि पिछले दो सालसे मैंने कपड़ा नहीं खरीदा।'

'क्यों ?'

'खाना, खोली, बीमारी, बिजली, पानी और बीड़ीके बाद दाम नहीं बचते।'

'तुम्हारी स्त्री कहाँ है ?'

'पाकिस्तानमें !'

'क्यों ?'

'जब दंगा हुआ था, तो अपनी माँके साथ चली गयी थी। मैं भी चला जाता, मगर आपने मेरी जान बचा ली।'

'अब तुम अपनी स्त्रीको वापस क्यों नहीं बुलाते?'

'कैसे बुलाअूँ– खर्च नहीं है और मज़दूर हड़तालपर हैं।'

'मज़दूरोंने हड़ताल क्यों कर रक्खी है ?'

'बोनस नहीं मिला !'

'बोनस ? . . . बोनस किस बातका ?'

'मिल मालिकोंने करोड़ों रुपये कमाये हैं। आपको याद होगा, अेक बार आपने कण्ट्रोल अुठवा दिया था, अुन थोड़े दिनोंमेंही मिल-मालिकोंने करोड़ोंका वारा न्यारा कर लिया था।'

'हाँ, वह मेरी ग़लती थी !'

'ग़लती आपकी थी, और मज़ा हमें मिल रहा है। ज्यों-ज्यों स्वराज्यकी अुमर लम्बी होती जा रही है, त्यों-त्यों चीजोंके दाम बढ़ते जा रहे हैं।'

'आखिर तुम चाहते क्या हो . . . बोनस ?'

कमालने कहा— 'नहीं, मैं अपना राज्य चाहता हूँ। खुद सारी मिलें चलाअूंगा, खुद सारे खेत बोअूँगा, खुद मेहनत करूँगा और खुद सारे फल चखूँगा।'

वे हँसकर बोले —'तो फिर गोली चलेगी।'

कमालने कहा—'तो मैं क्या करूं ! मगर मैं पूछता हूँ कि क्या आप मुझे अिस अेक लँगोटीमें देखकर खुश हैं ? अगर अैसा है, तो आपने मेरी जान क्यों बचायी थी ? क्या सिर्फ कुढ़-कुढ़कर मरनेके लिये ?'

वे कहने लगे— 'मैंने खुद जीवन-भर लँगोटी बाँधी है कमाल !'

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'वह तो अल्लाहकी मेहरबानी थी।'– कमाल बोला– 'और अल्लाहकी मेहरबानी जिन्दगीमें सिर्फ अेक बार मिलती है, जिससे सारी कौम जिन्दा हो अुठती है। लेकिन यह कैसी मेहरबानी है कि अितनी कुरबानियोंके बाद भी तनपर सिर्फ लँगोटीकी लँगोटी ही रही ?'

'धीरज रखना सीखो कमाल।'– अुन्होंने गम्भीर होकर कहा।

'अच्छा चलिये, सिर्फ बोनस ही दिलवाअिये-मिलाअिये हाथ !'–कमाल मुसकिराकर बोला।

'तुम्हारी हड़तालका कोअी प्रभाव नहीं पड़ा ?'– वे हँसने लगे।

'गोली दो बार चल चुकी है, शायद आगे भी चले। घरके बर्तन तक बिक गये हैं। अहमदाबादके मिल-मालिक बहुत खुश हैं; क्यों कि बम्बअीकी मिलें बन्द हैं और अहमदाबादकी मिलें चल रही हैं। अिस तरह हमारे लिये जो नुकसान है, वही अमीरोंके लिये फायदा है।'

'मेरे स्वराज्यमें शेर और बकरी अेक घाट पानी पीते हैं।'

'तो वह चिड़िया-घर या सरकसका घाट होगा, जंगलका घाट नहीं हो सकता।'

'मेरे स्वराज्यमें अमीर और गरीब सब बराबर हैं।'

'तो वह अमीरों ही अमीरोंका स्वराज्य होगा, गरीबोंका नहीं।'

'तुम दूसरोंके हक छीनना चाहते हो।'

'अगर दूसरेके हकमें पूरी मिल है और मेरे लिये सिर्फ अेक खोली है, अगर दूसरेके हकमें लन्दनका सफर है और मेरी जेबमें चाय पीनेके लिये भी पैसा नहीं है, अगर दूसरेके हकमें युनिवर्सिटी कालेजकी तालीम है और मेरे लिये क. ख. का काला अच्छर भी भैंस बराबर है, तो मैं जरूर दूसरेका हक छीनूंगा।'

'मालूम होता है, तुम बहुत भूखे हो कमाल !'

'हाँ, मैंने दो दिनसे खाना नहीं खाया है; क्योंकि मैं डेढ़ महीनेसे हड़तालपर हूँ।'– कमालके चेहरेपर मुर्दा-सी मुसकिराहट नाच अुठी।

'तो आओ तुम्हें बकरीका दूध पिला दूँ।'

कमाल हँसा, बोला—'भूख जोरोंसे लगी है बापू! बकरीके दूधसे क्या होगा ! वह सामने नूरा कबाबिअेकी दूकान है। वहीं चलकर कुछ दिलवा दीजिये।'

अितनेमें स्टेशन-वैगन आ गया और हम लोग कड़प्पा चल दिये।

कड़प्पामें किसान-मजदूरोंका जुलूस निकल रहा था। क्या देहाती, क्या अध्यापक, क्या क्लर्क, क्या पत्रकार सभी अिन्कलाबी नारे लगाते हाथमें सुर्ख झण्डा लिये आगे बढ़ रहे थे। नागरिक स्वतन्त्रताके अपहरणके विरोधमें यह जबर्दस्त जुलूस निकला था।

कुछ देर बाद जुलूस अेक बहुत बड़े मैदानमें पहुँचा। लोग अिकट्ठे हो ही रहे थे कि ट्रकपर सवार मिलिटरी आ धमकी और चारों ओरसे मैदानको घेर लिया। कप्तानने मंचके पास आकर कड़कती हुअी आवाजमें लोगोंसे पूछा—'जुलूसका नेता कौन है ?'

सबको खामोश देख अुनसे चुप न रहा गया और अुन्होंने आगे बढ़कर अपने सीनेपर चोट देते हुअे कहा–'मैं!'

बस, ठाँय-सी आवाज हुअी और पिस्तौलकी गोली अुनके सीनेके पार निकल गयी। वे वहीं ढेर हो गये।

अिकट्ठी भीड़में खलबली मची और सब भागने लगे। पर अुस भागतोंपर गोलियोंकी वर्षा शुरू हुअी, कितनोंकी संगीनें चुभायी गयीं ! देखते-ही-देखते कराहती और छटपटाती लोथें शान्त हो गयीं।

मेरे हाथोंमें भी हथकड़ियाँ थीं। गिरफ्तार लोगोंके साथ वे मुझे भी ट्रकपर अपने साथ बिठाकर पुलिस-स्टेशनमें ले गये। थोड़ी देर बाद पुलिस अिन्स्पेक्टरने मुझसे पूछा –'तुम अिस बुड्ढेको पहिचानती हो ?'

मैंने आँखोंमें आँसू भरकर अुत्तर दिया—'हाँ, क्यों नहीं ! ये भारतके बापू हैं मोहनदास कर्मचन्द गांधी। आज ये दोबारा मारे गये हैं।'

पुलिस-अिन्स्पेक्टर सिट-पिटा कर रह गया पड़ा और बोला—हैं, तो बापू फिर मारे गये ! आखिर ये गैर कानूनी मजमेमें शरीक ही क्यों हुअे थे ?'

(सुप्रसिद्ध अुर्दू लेखक कृष्णचन्द्रकी अेक कहानीका स्वतन्त्र हिन्दी रूपान्तर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेलुगु लोकगीत- 'चल मोहन रंग'

:श्री वारणासि राममूर्ति 'रेणु':

साहित्यके क्षेत्रमें शृंगार रसराजके नामसे प्रसिद्ध है और अुस शृंगारका सर्वस्व विप्रलंभ माना जाता है। "न विना विप्रलंभेन शृंगारः पुष्टि मश्नुते", आलंकारिक आचार्योंकी यह अुक्ति विप्रलंभके महत्वकी प्रशंसा मुक्त-कंठसे कर रही है। अिसका कारण यही है कि शृंगार-का प्रभाव सार्वभौम है और अुसकी परिधिके भीतर प्रायः अन्य सभी रस पर्यवसित हो जाते हैं। विप्रलंभ शृंगार वियोग प्रधान होता है। यहाँ पर वियोगका अर्थ 'विगतः योगः' न लेकर 'विशेषेण योगः' लिया जाना अधिक समीचीन होगा। वैसे तो विरह अथवा वियोगमें दो प्राणियोंका शारीरिक अयोग रहेगा ही; किंतु वही अर्थ ठीक मान लेनेसे तो भावमें कोअी विशेष प्रकारकी रमणीयता नहीं आ सकती है। अुस अयोगावस्थामें भी दो प्रेमी अेक दूसरेके सामीप्यका अनुभव, मनसा करते अवश्य हैं। अेक दसरेके भावना-जगत्में प्रवेश कर अुपद्रव मचाते ही रहते हैं। अेक दूसरेका अेकांत विशेष प्रकारसे भंग करते ही रहते हैं ('विशेषण रहः विरहः' न कि 'विगतः रहः विरहः')। शरीरसे अलग रहनेकी स्थिति अुनके हृदयोंको अेक ही भावनाके सूत्रमें बांधे रहती है। दो हृदयों, आत्माओंमें संगम अनुक्षण जारी रहता है। प्रत्येक दूसरेके स्मृति लोकमें नित्य नूतन रूप धारण किये विहार करता रहता है। अतः यह मानना कि वियोग दशामें प्रेमीजन अेक दूसरेसे दूर रहते हैं, गलत ही है। यदि अिसे ठीक भी माना जाय तो कम-से-कम वह वियोग 'वि-योग' नहीं रह सकता। आर्योंने तो शरीर-संगमको तुच्छ घोषित कर दिया है।

"हृदय-संगम अेव सुसंगमः
न तनु-संगम आर्य सुसंगमः"

अिसी तथ्यको अनुभव कर किसी आधुनिक कविने भी कहा है कि—

"मिलन अंत है मधुर प्रेमका,
तथा विरह जीवन है।"

अैसे अपूर्व शक्तिशाली विप्रलंभको अपने काव्य-जीवनका पाथेय बनाकर विश्वके कितने ही कवि अमर हो गये हैं। आदि कविसे लेकर आजके कवियों तक प्रायः सभी अिस रसार्णवमें पैठकर राशि-राशि भाव-मुक्ता बटोर लाये हैं। रामायण, महाभारत, मेघदूत, शाकुंतल आदि कृतियां अैसे मोतियोंकी तरलतासे आब-दार बनी हैं।

विप्रलंभका प्रसार केवल पढ़े-लिखे कवि तथा पण्डित-समाज तक ही सीमित रह गया हो और अनपढ़ ग्रामीण जनता अुसका रसग्रहण करनेसे वंचित रह गयी हो, सो बात नहीं। भारतीय लोक-साहित्यमें कितने ही अैसे अनुपम गीत भरे पड़े हैं, जिनके पोर-पोरसे विप्रलंभ-की मिठास चू पड़ती है। यहांपर हम तेलुगुका अेक अतीव लोकप्रिय गीत प्रस्तुत करते हैं, जो कि विप्रलंभका अति अुत्तम नमूना है। अिसमें कोअी ग्रामीण सुंदरी अपने प्रवासी प्रियतमको, जिसका नाम **'मोहनरंग'** है, संबोधित करके निजवियोग व्यथाकी कहानी सुनाती है। कुल गीतके ५० चरण हैं। सड़कोंपर पत्थर फोडते हुअे, खेत निराते अथवा फसल काटते समय निम्न वर्गीय नरनारी-गण अिसकी मधुर कड़ियां गा-गाकर अपनी थकान दूर किया करते हैं।

गँवार जनताके जिह्वाग्रपर थिरकनेवाली, अिस विरह गीतकी पंक्तियोंका भाव-सौंदर्य कितने अुदात्त स्तरका है, हृदयकी ग्रंथियोंको हिलानेवाला है, यह गीतकी कतिपय कड़ियोंका अवलोकन करनेसे प्रकट होगा। गीतका अुठान ही अुस प्रोषित भर्तृका पतिप्राणा नायिकाका भव्य अेवं अविस्मरणीय चित्र पाठकोंके सम्मुख अुपस्थित करता है। अुस तस्वीरकी अेक झलक मात्र पा लेनेपर पाठक अुसके हृदन्तरमें लहरायमान

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भावसिंधुकी गहराअियोंका अनुमान कुछ-कुछ लगा पावेंगे। नायिका गँवअी गाँवकी है; किसी राज-प्रासादके झरोखेमें पारिवारिक झंझटोंसे सर्वथा मुक्त बैठकर, प्रवासी प्रियतमके पास प्रेमसन्देश, पवन अथवा पावसकालके मेघको दूत बनाकर भेजनेवाली, असूर्यंपश्या 'राजकुँअरि' नहीं है। वह अपनी विरह व्यथाका बहाना करके घरेलू काम-धन्धोंसे छुट्टी नहीं पा सकती है। अितना ही नहीं, घर बैठे-बैठे प्रियतमका स्मरण करके प्रकट रूपसे बाष्प विसर्जन तक नहीं कर पाती। गुरुजनोंका ख्याल अुसे करना ही पड़ता है। सास ननदोंकी अुपस्थितिकी अवहेलना किसी भी रूपमें नहीं कर सकती है। दिलकी बात सुनानेको कोअी सदय अन्तरंग सखी ही अुसे नहीं मिलती है। मनकी मन हीमें रखकर दिन-रात विसूरती रहती है। रातके अेकांतमें अथवा सबेरे पनघटपर चलते समय अुसे कतिपय क्षणोंका अवकाश मिलता है तो प्रवासी प्राणेश्वरको सम्बोधित कर अपनी करुण गाथा सुनाने लगती है, सो भी दबी जबानसे। अुस प्रणयिनीके दर्शन हमें प्रथमतः पनघटपर ही होते हैं—

कंट काटुक बेट्टि
कडव चंकनु बेट्टि
कन्नीळ्ळ कडव निंपिति गदरा !
चल मोहन रंग !
कन्नीळ्ळ कडव निंपिति गदरा !॥

'हे मोहन रंग ! (प्रियतम) मैंने आँखोंमें अंजन लगाया; घड़ा कमरसे लगाये पनघटपर आ गयी हूँ। किन्तु आश्चर्य है, (देखो) घड़ा तो मैंने आँसुओंसे ही भर दिया है !'

सहृदय पाठक ! तनिक गहरेमें पैठकर अिन पंक्तियोंका परिशीलन करें। आँखोंमें काजल दिये और हाथमें घड़ा लिये नायिका अनमनी-सी चली पनघटकी ओर जल भरने। तालाबके किनारे खड़ी रह गयी, अपनेमें कुछ खोयी-खोयी-सी ! अुसकी दृष्टि जा पड़ी, सामने तरंगायमान नील अुपरितलवाले जलपर। तुरन्त अुसे साँवले सलोने अपने प्रवासी चितचोरकी याद हो आयी। हठात् जैसे दिलमें हूक-सी अुठी ! कितनी ही अतीतकी मधुर स्मृतियाँ, मीठे दृश्य आँखोंके सामने घूम गये चल-चित्रोंकी भाँति। भावाम्बुधिमें ज्वार अुठ आया जिसका जोर वह अबला अेकाकिनी बरदाश्त न कर सकी। निदान वह नेत्रोंका विवर पाकर अुबल पड़ा, अुमड़ बहा। अुस बिचारीके अनजानेमें ही, कमरसे टिकाया हुआ घड़ा, अुसके अवनत अेवं म्लान वदनसे निःसृत खारे कजरारे आँसुओंसे भर गया ! हा हंत ! वह दीना प्राणपणसे प्रयत्न करके भी हृदयकी अुस अक्षय निधिका गोपन न कर पायी। कलमुँहे आँसुओंने भरे पनघटपर अुसका पानी अुतारकर ही दम लिया ! हाय, वह क्या करे !

अूपरकी पंक्तियोंका भाव स्पष्ट करनेको अितना विवेचन अलम् होगा, अिसका हमें विश्वास नहीं होता। अिस अपूर्व; भाव सौन्दर्यके अतिरिक्त चित्रकारिताकी दृष्टिसे भी अिस पंक्तिद्वयका महत्व अनुपम है। हम डंकेकी चोट कह सकते हैं कि कोअी चतुर चितेरा गरब गरूर अपने रंग व रेखाओंके सहारे अुस शब्द-गत-मूर्तिको आकार देनेमें सफल हो सका तो विश्वव्यापी यशका भागी हो जावेगा। विप्रलंभ शृंगारके अन्तर्गत 'स्मृति' संचारीके रूपमें अभिव्यक्त अुस भाव-शबलताको रेखाओंमें जकड़ पाना किसी चोटीके कलाकारके ही बूतेका काम हो सकता है। अन्यत्र दुर्लभ अैसी स्पंदनशील चित्रमयता ही अिस पंक्तिद्वयका प्राण है।

अब यहाँपर गीतकी कुछ रसमय कड़ियाँ सानुवाद प्रस्तुत की जाती हैं:—

नीकु नाकू औडु जोडू
निन्नोक्क निमुषमैन
विडनाड जालकुंटिनि गदरा ! चल०

(भगवानकी कृपासे) हम दोनोंकी जोड़ी बड़ी अुत्तमतासे बन पड़ी है। तुमसे बिछुड़कर पलभरके लिये भी रह पाना मुझसे न होता था ! (किंतु हाय ! अब यह दीर्घकालीन वियोग कैसे कटे ?)

निनु जूचे कोर्के तोड
निनु जूचे भ्रांति तोड
वन सोमलन्नि तिरिगिति गदरा ! चल०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हें देखनेकी अिच्छासे, तुमसे मिलनेकी आतुर आकांक्षा लिये मैं समूचा वन प्रांत ढूंढ आयी हूँ। (ग्रामीण स्त्रियोंको जीविका कमानेके लिये खेतों व गांवोंके नजदीकवाले जंगलोंमे काम करना पड़ता है। वे क्षण भी नायिकाने प्रियान्वेषण ही में बिता दिये।)

निम्मल बावि काड,
गुम्मयिन मरि नीड
नीरूपु दलचि निलचिति प्रियुडा ! ॥ चल०

हे प्रियतम ! नीबू-नारंगीवाली बावड़ीपर वट वृक्षकी सघन शीतल छायामें (गयी थी। वहां) तुम्हारे रूपका स्मरण हो आया तो ठिठकी रह गयी हूँ !*

नी जाडलरमुकुंटू
निनु बिलचि यरचुचुंडा,
प्रतिशब्दमुनके यडलिति गदरा ! ॥ चल

तुम्हारी खोज करते करते नाम लेकर तुम्हें आवाज देने लगी तो वह दिशाओंसे टकरा कर गूंज गयी। वह प्रतिध्वनि सुनकर मैं सिरसे पैर तक सिहर अुठी !

'को' यन्न 'को' यटंचु
कोंटे शारिक नन्नु
रेयेल्ल येडिंपिचेनु गदरा ! ॥ चल०

चिरु मावि गुन्नमीद
चिलुक दंपतुल जंटा
चेरि नन् वेक्किरिंचेनु गदरा ! ॥ चल०

निनु गानलेक विसिगि
निलचि येड्चिन नन्नु
गनि चंदमाम नव्वेनु गदरा ! ॥ चल०

---

* मिलाअिये अिस दोहेसे:—
सघन कुंज छाया सुखद
शीतल मन्द समीर,
मन हवै जात अजौं वहै
वा जमुनाके तीर !
—बिहारीलाल

चिंदु कन्नीटि कालव
बन्दरुप्पेन यय्ये
अंदाक निलचिपुंडुट तगुरा ? ॥ चल०

नाशोकालापमुलकू
नडवि कन्नीरु गार्चे
नीशीत हिम तुषारमु गनरा ! ॥ चल०

प्यारे, देखो तो, तुम्हारे वियोगमें मैं विलख बिलखकर रोने लगी तो, वह ढीठ मैना भी, मेरी जैसी आवाजमें 'को' 'को' करती हुअी रातभर मुझे चिढ़ाती रही !

वह लो ! अुधर 'अंबिआकी डाली पे' बैठे अल्हड़ शुक-दंपति मेरे अकेलेपनकी कैसी हँसी अुडा रहे हैं !

तुम्हें खोज खोजकर थकानसे चूर हो गयी, और विवशतावश बिलखकर रो पड़ी, तो मुझ दुखियाको देख आसमानका चाँद भी हँस पड़ा है ! (हाय हाय ! देखो तो तुम्हारी अनुपस्थितिमें मैं किस कदर जगहँसाअी की शिकार बन गयी हूँ !)

मेरी आंखोंसे छलक पड़नेवाले आंसुओंकी नहरें 'बन्दर' के जलप्लावनका दृश्य १ खड़ाकर रही हैं। क्या, तबतक हाथ समेटे बैठे रहना अुचित है ?

मेरा हृदय-वेधक क्रंदन सुनकर सारा जंगल आठ आठ आंसू रो पड़ा है। देखो तो सही, यह शीतलहिम तुषार वही (अश्रुधारा) है ! (अिसे अन्यथा नहीं समझना !)

---

१. 'बंदरु' आन्ध्रके प्रधान नगरोंमेंसे अेक है। यह पूर्वी समुद्रके तटपर समुद्री सतहसे नीचे बसा हुआ है। अिससे जब कभी समुद्रमें जोरका तूफान आता है और पानीका स्तर अूपर चढ़ने लगता है तो नगरके जलमग्न होनेका खतरा बराबर बना रहता है। 'बन्दरुप्पेन' याने 'बंदरु' नगरकी समुद्री बाढ़ प्रसिद्ध है। अिस प्रकार आन्ध्र प्रदेशगत सहज वातावरणके रंगमें रंगकर, गीत और भी हृदयहारी हो अुठा है। बंदरुको अिस समय 'मछलीपट्टण' कहते हैं।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिस प्रकार बिचारी विरहिणी अत्यंत करुण स्वरमें अपना दुखड़ा कअी पंक्तियोंमें सुनाने लगती है। यहाँ पर हम अेक कड़ी और देकर आगे बढ़ेंगे। प्रायः विरह-जनित कृशताकी आत्यंतिकता व्यक्त करनेके लिय भारतके कवि-गण मुँदरी अथवा कंकणका सहारा लिया करते हैं। यदि कवि कुलगुरु कालिदासके नायक दुष्यंतका भुजबंध बाँहके लिये अितना ढीला पड़ जाता है, कि बार-बार अूपर सरकाते रहनेपर भी गट्टे पर खिसक आता है। × और धनुषकी डोरीकी फटकारसे पड़े हुअे घट्ठों पर भी नहीं ठहरता, तो अपने जीवन-सर्वस्व भगवान रनछोड़जीके विरहमें मतवाली मीराबाअीकी--

आँगुलियाकी मूंदडी,
(म्हारे) आवण लागी बाँहि !'

कविवर केशवदासकी कल्पनाके घेरेमें आकर हनुमान द्वारा प्रेषित रामचंद्रजीकी मुद्रिका चुप्पी साध-कर, बारबार प्रश्नोंकी झड़ी लगानेवाली पतिप्राणा सीताजीको अपनी क्रिया विदग्धतासे चक्करमें डाल देती है। अुसके मौनका सकारण समर्थन दुभाषिये बुद्धिमंत हनुमंतके शब्दोंमें सुनकर सीताजी आश्वस्त हो जाती हैं।

"तुम पूछति 'कहि मुद्रिके !'
मौन होति यहि नाम।
कंगनकी पदवी दअी
तुम बिन या कहँ राम !"

अिसी प्रकार हिंदीके आदि कवि अभिनव जयदेव मैथिलकोकिल नायिका राधिकाकी कृशताका वर्णन करते हैं--

'अँगुरि वलय भेल काम पिधाओल,
दारुण तुअ नव नेंहे।
सखिगन साहसे छुअये न पारअे,
तंतुक दोसर देहे !"

× अनभिनुलित ज्याघातांकं
मुहुर्मणिबंधनात्।
कनकवलयं स्रस्तं
मया प्रतिसार्यते ॥
—शाकुंतल ३। ११

निवृत्ति पथके पथिक संत तुलसीदासजी भी अिस अतिरंजना-व्यापारसे अपनेको बचा न पाये। माता सीताजी अशोकवाटिकामें बैठी विलाप करती हैं--

'अब जीवन कै है सखि, आस न कोय,
कनगुरिया कै मुंदरी, कंगन होय।'

कनिष्ठिकाकी अंगूठीको कंगन बनाकर गुसअींजी अेक कदम आगे बढ़ गये हैं। अैसी अतिशयोक्तियोंका आशय मात्र विरह व्यथाका आधिक्य व्यंजित करना है, और कुछ नहीं, यह कहनेकी जरूरत नहीं रह जाती। किंतु तुलसीदासजीका कथन भी अपना आकर्षण खो बैठता है, जब कि हम अुसकी परीक्षा अपनी अिस अन-पढ ग्रामीण नायिकाके करुण आत्मनिवेदनके समकक्ष रखकर, करते हैं। तनिक सुनते जाअिये, मोहनरंगकी नायिकाका हुलिया भी--

नीमिदि बेंग चेत
निलुवेल्ल जिक्किपोव,
अंगुळी वड्डाणमय्येनु गदरा ! ॥ चल०

प्रियतम मेरे, तुम्हारी यादमें रो-रोकर मैं सिरसे पैर तक सूख गयी हूँ। देखो तो सही, अब मेरे लिये अँगूठी ही करधनीका काम देने लग गयी है !

बलिहारी ! हद हो गयी है अतिरंजनाकी !

नायिकाको शंका होती है कि कहीं अुसका प्रवासी प्रियतम अुसके अिस आत्मनिवेदनको कोरा प्रलाप मात्र न समझ बैठे। अिसलिये वह अपनी व्यथाकी सत्यता प्रमाणित करने 'जुन्हैयाके राजा' को ही साक्षी रखती है। 'जुन्हाअीके राजा' चांदके अधिकार क्षेत्रमें समूचा विश्व आ जाता है; अतः वही प्रवासी प्रियतमको अुस विरहिणीकी दशाका ठीक-ठीक ज्ञान करानेमें समर्थ हो सकता है।

'नन्नु नम्मक युन्न
वेन्नेल राजु नंडुगु
येन्नो रात्रुलनु गडपिति सखुडा ॥ चल०'

(हे सखा ! यदि मेरा विश्वास न हो तो जुन्हाअीके राजा ही से पूछ लो न, कि मैंने कितनी रातें अिस कदर बितायी हैं।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीतके कअी चरणोंमें, अिस प्रकार, अपनी विरह दशाका ब्योरा देनेके पश्चात् नायिका अपने अुस भावी प्रेममय जीवनके भी भावपूर्ण चित्र खींचती है, जिसके मुग्ध मनोहारी सपने, आशाके पंखोंपर अुड़कर, वह अभीसे देखने लग जाती है। प्रियतमके पास अुड़ जानेकी अपनी आकुल आकांक्षामें बाधक निज मानव शरीरको कोसती है। काश कि, वह अेक चिड़िया होती !--

नेनोक्क पक्षि नैते
नारेक्कलंदु निन्नु
पूनि लोकमुलु द्रिप्पुद्रु गदरा ! ॥ चल०

(यदि मैं चिड़िया होती, तो तुम्हें अपने डैनोंपर बिठाकर तीनों लोकोंकी सैर करा लाती !)

नेलवंक दोम्मेलोन,
कलमोडनंबु पालु
कलिपि नीनोट निडुदुनु गदरा ! ॥ चल०
पसिडि तामरलदेच्चि
प्रणय बन्धमु गूचि
वेसनीकंठमुन वेसेद गदरा ! ॥ चल०
अमृत स्नवंतिलोन
नवगाहनम्बु जेसि
अमृतस्वरूपि वौदुवु लेरा ! ॥ चल०
संपंगि पूलदंड सरिग
नी रोम्मुनिंडा
अिपार नलंकरिंतुनु प्रियुडा ! ॥ चल०
अिद्दरामु कूडियुंटे
ओताकु गुडिसे लोन,
अिन्द्र सौख्यमु गलुगुनु गदरा ! [१] ॥ चल०
जनुलंता नींदु रूपु
गन दृष्टि तगुलकुंडा,
चिकुरंबु लंदु दातुनु रारा ! " चल०

हे प्रियतम ! दुनियाके चाँदको दोना बनाकर अुसमें कलमान्न और दूध मिलाअूंगी और प्यारसे तुम्हारे मुंहमें डाल दूंगी !

प्रेमके धागेमें सुनहले कमल गूंथ कर, वह माला तुम्हें पिन्हाअूंगी !

(मेरे प्रेमकी) अमृत सरसीमें स्नान कर तुम अमृत-पुरुष बन जाओगे !

चंपक प्रसूनोंके हारसे मैं तुम्हारा वक्षःप्रदेश ढक दूंगी। अितनी तत्परतासे तुम्हें सजा दूंगी कि मेरी युग-युगोंकी साध पूरी हो जाय !

अै प्यारे ! यदि दोनोंका मिलन हो जाय तो खजूरके पत्तोंकी छप्परवाली कुटिया हीमें, हम अिन्द्र-पुरीके मजे लूट लेंगे !

मुझे डर है कि कहीं तुम्हारे सलोने रूपको किसी (चुड़ैल) की नजर न लग जाये ! सो आओ, मैं सावधानीसे तुम्हें अपने चिकुर जालमें छिपाके रखूंगी ! वाह ! कितनी मीठी मनुहारें हैं !

साधारणतः स्त्री-प्रकृति गहने-कपड़ोंकी चमकमें ही प्रेमका आलोक देखा करती है। किंतु आदर्श भारतीय नारीका चरित्र कुछ और प्रकारके अुपादानोंसे निर्मित होता है। सच्चे प्रेमकी प्रतिमा हमारी नायिका अपना प्रगाढ विश्वास किन शब्दोंमें प्रकट करती है, जरा देख लें--

अिद्दरिकी प्रेमलुंटे मुदमेन नगलवेला ?
मन प्रेमे कोटि नगलगु गदरा !

प्रियतम ! यदि दोनोंमें सच्चा प्रेम है तो फिर गहनोंकी जरूरत ही कहाँ रह जाती है,? हमारा प्रेम ही कोटि-कोटि आभरण बन जावेगा !

त्याग व आत्मसमर्पणका दूसरा नाम ही प्रेम है। प्रेम तो देना ही जानता है, लेना नहीं। प्रेमीके लिये हँसते-हँसते प्राणों तकका अुत्सर्ग करनेमें ही प्रेमकी चरितार्थता रहती है। अैसा ही प्रेम हमारी नायिकाके लिये अभिलषणीय है--

---

१. भावसाम्यके लिये मिलाअिये:--

टूट खाट घर टपकत टटियौ टूटि,
पियकै बाँह सिरहनवा सुखकै लटि ॥
—रहीम

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीकै ना प्राणमिच्चि
लोकंबु लेल्ल मेच्चि
व्याकुलमंद जेसेद गनरा ! ।। चल०

प्रतिफलापेक्ष लेक
प्रणयार्पणंबु जेसि,
बतुकु नीकोरकु बासेद लेरा ! ।।

ना प्रेम निक्कुवमैते
नेने नीकांति ननी
देवतले साक्ष्यमित्तुरु प्रियुडा ! ।। चल०

देखते रहना प्रियतम, मैं तुम्हारे लिये प्राणतक दे डालूंगी; मेरे प्रेमकी तीव्रताकी प्रशंसा करते करते तीनों लोकोंके प्राणी मारे थकावटके अकुला उठेंगे ! बिना किसी प्रकारके प्रतिफलकी आशा रखे मैं तुम्हारे चरणोंपर अपने प्रेम तथा प्राणोंका समर्पण कर दूंगी ! यदि मेरा प्रेम सच्चा है तो स्वयं देवता लोग मेरे तुम्हारी अर्द्धांगिनी होनेकी घोषणा कर देंगे। वही हमारे अिस पवित्र संबंधके लिये साक्षी रहेंगे !

गीतके अन्तमें यह विरहिणी तेलुगुवालोंके अिष्टदेव भद्राद्रिवासी रामचन्द्रकी मिन्नतें मनाती है, कि अुसका अपने प्रियतम मोहन रंगके साथ निकट भविष्य ही में मिलन हो जाय।

मोहन रंग डेपुडु
मोहिंचि नन्नु जेर
सीतारामुलनु वेडुदु गवरा ! ।। चल०

चेंगुलु मुडुलुवेसि
रंगैन गोदावरिलो
सरिगंगा लाडिवत्तमु पदरा ! ।। चल०

कोव्वरि पंचदार
गुडिलो रामय्य किच्चि
मंगळ हारतुल नित्तमु पदरा ! ।। चल०

मैं माता सीता तथा रामचन्द्रजीसे प्रार्थना करती हूँ कि मेरा प्यारा मोहन रंग सदा मेरे प्रेमसे आकृष्ट होकर मुझसे मिलकर रहे।

हे प्रियतम ! (यदि मेरे अरमान पूरे हो गये तो) हम दोनों साथ-साथ गोदावरीमें दंपति स्नान करेंगे। भगवान रामचंद्रजीके दरबारमें नारियल और शर्करा चढ़ाकर अुनकी आरती अुतारेंगे। मधुर मंगल गीतोंसे मंदिरका कोना-कोना मुखरित कर देंगे। शीघ्रता करो प्रियतम (जिससे मेरी ये सभी मनोकामनायें सफल हो जावें !)

सहृदय पाठक देख चुके होंगे कि समूचा गीत आदिसे लेकर अंततक कितनी करुण-मधुर-भावनाओंसे, तलस्पर्शी मनुहारोंसे, सरल गंभीर हृदयोद्गारोंसे, मर्यादा विलसित प्रेम-तरंगोंसे, परिप्लावित है ! गँवअी गाँवकी अनपढ़ बालिकाके विरह व्यथित कंठसे फूटी कैसी मर्म-वेधक रागिनी है यह ! कैसी अकृत्रिम सरल प्रांजल अेवं स्फीत वाग्धारा है ! अिस सुंदर गीतका साहित्यिक महत्व भी है अथवा नहीं, अिसका समाधान गीतकी पंक्ति-पंक्ति दे रही है। और सत्य-स्पंदनशील हृदयवाले रसज्ञ स्वयं भी निर्णय कर सकेंगे।

यद्यपि हम, लेखके कलेवरके बढ़ जानेके डरसे गीतकी अनेक पंक्तियां नहीं दे पाये हैं, किंतु फिर भी जो कुछ 'राष्ट्रभारती' के पाठकोंके सम्मुख रख दिया गया है अुससे अुनका संतोष ही होगा, अैसी हमारी धारणा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेत्तिला जोसेफ—हंगेरियन सर्वहाराका महान कवि

: श्रीमती कमल आर्य :

पिछले सौ सालोंमें कई हंगेरियन लेखकों और कवियोंने हंगेरीके विकासमें अेक बहुत ऊंचा अपना हिस्सा अदा किया है, वे सब प्रगति और सुखद भविष्यके लिये संघर्षके प्रवक्ता थे। उनमें तीन महान् कवियोंके स्थान हंगेरियन अितिहासमें तीन विभिन्न; परन्तु अपनेमें पूर्ण युगोंसे संबन्धित हैं। सैंडोर पैटोफी हंगरीकी आज़ादीकी लड़ाअीका अेक बड़ा नायक था और १८४८ की क्रान्तिका कवि था। हंगेरियन साहित्यिक पैटोफी युग मध्य योरोपमें हैप्सबर्ग शासन और अत्याचारके विरुद्ध अुस समयके योरोपीय आज़ादीके आन्दोलनका अेक जबरदस्त और सबसे अधिक असर करनेवाला चिन्ह था। यह अुन्नीसवीं सदीकी बात है। अुसके बाद आन्द्रे आदी आया। अुसने हंगेरीके साहित्यमें अिस सदीके पहले दो दशाब्दोंमें अेक अैसी छन्दमयी कविता रची जिसके अन्दर काव्य और कल्पना सौष्ठवके साथ ही तात्कालीन बुर्जुआ प्रजातन्त्रीय क्रान्तिका पुरोगम सर्वहाराकी जनवादीके क्रान्तिके पुरोगममें बदलता दीखता था। और जिसमें १९१८–१९ की हंगेरियन क्रान्तिके बीज निहित थे। अपने समयमें पूर्वी योरोपमें केवल आदी ही अेक अैसा बुर्जुआ प्रतीकवादी कवि था जिसने अपने समकालीनोंसे आगे देखनेकी कोशिश की और भविष्यके निर्माण करनेवाली सर्वहाराकी शक्तिकी ओर अिंगित किया। अिसी शक्तिने अेक तीसरे कविकी सृष्टि की। अुसी युग–निर्माता कविको आजके हंगरीमें 'सर्वहाराका महान् कवि' या 'अेत्तिला जोसेफ' कहते हैं। अुनकी कविता पैटोफी और आदीकी धाराओंकी ही अविच्छिन्नताके रूपमें रही है। अुनके व्यक्तित्वमें हंगरीकी सर्वहाराने अपनेको राष्ट्रकी संपूर्ण प्रगतिशील परंपराओंका प्रतिनिधित्व करते हुअे पाया। परन्तु साथ ही अेत्तिला जोसेफने अेक नये क्रान्तिकारी नादम अन्तर्राष्ट्रीय सर्वहाराके गीत भी गाये।

यह शायद भाग्यकी कोअी दुर्घटना नहीं थी कि जन्मसे लेकर मृत्यु तक अेत्तिलाको अपने जीवनको कायम रखनेके लिये सदा संघर्ष करते रहना पड़ा। पैटोफीको जीवनकी बहुतसी सुविधाअें कभी मिली ही नहीं। बाकी सारी दुनियाकी तरह हंगरीमें भी जनताके सच्चे और अीमानदार कवियोंको सदा भूखों ही मरना पड़ा। परन्तु आधुनिक योरोपीय काव्यके अितिहासमें अेत्तिला जोसेफकी परेशानियां कहीं अधिक भयानक थीं।

अेत्तिला जोसेफके प्रारंभिक जीवनकी तुलना मैक्सिम गोर्कीके जीवनके साथ की जा सकती है। अिन दोनोंकी ग़रीबी सर्वहारात्मक ग़रीबी थी और अिसीलिये अिनके संघर्ष सर्वहाराके संघर्ष थे।

अेत्तिला जोसेफका जन्म ११ अप्रैल १९०५ को हुआ था और अुनकी मृत्यु ३ दिसम्बर १९३७ को हुअी थी। अुनके पिता बुडापेस्टमें काम करनेवाले अेक औद्योगिक मज़दूर थे। जब अेत्तिला तीन साल के ही थे तभी बेकारीके कारण अुनके पिताको वहांसे दूर जाकर कहीं और काम खोजनेको बाध्य होना पड़ा। हर साल लाखों हंगेरियन कामकी तलाशमें अमेरिका जाते रहे। परन्तु जिस दिनसे अुनके पिता आर्रो जोसेफ बुडापेस्ट छोड़कर गये तबसे वे कभी देखे या सुने नहीं गये। परन्तु अेत्तिलाकी दो बहिनें भी थीं। अुनकी मां अकेले अुन सबकी देखभाल करते करते जब बीमार हो गयी तो अुन्हें तो किसी दातव्य औषधालयमें भेज दिया गया और बच्चोंको पहले अेक अनाथालयमें और पीछे अेक किसानके घर। जब अेत्तिला सात सालके हुअे तब कहीं जाकर अुनकी मां थोड़ी-सी अच्छी होकर फिरसे अुनकी देखभाल करनेके लायक हुअी। अपनी अुस समयकी जिन्दगीके बारेमें अेत्तिलाने लिखा है—

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी माँ दूसरोंके कपड़े धोकर और अुनके घरोंमें झाड़ू-बुहारू लगाकर हमें पालती थी। मैं अपनी तरफसे अुसकी पूरी मदद करनेकी कोशिश करता था। मैं सिनेमामें पीनेका पानी बेचा करता था। रंगीन कागजके खिलौने बनाकर अुन बच्चोंको बेचता था जिनका जीवन मुझसे कहीं अधिक सुखी था। मैं बाज़ारमें छावड़े और पार्सल अुठाकर ले जाता था और अुससे भी कुछ पैसे कमा लेता था... जब मैं नौ बरसका था तो विश्वयुद्ध प्रारंभ हुआ और हमारा जीना दूभर हो गया... असह्य हो गया...।

जब अेत्तिला १४ सालके थे तो अुनकी माँकी मृत्यु हो गयी। घरमें पैसा था नहीं। अुन्हें अेक नावपर सफाअी करनेका और पानी फेंकनेका काम मिल गया। अुसी कमाअीमें वे रहते भी थे और अपने स्कूलका खर्च भी निकालते थे। अिसीमें किसी तरह अुन्होंने अपनी स्कूलकी शिक्षा समाप्त की। हालाँकि धनाभावके कारण अुन्हें कअी दफे अपनी पढ़ाअी रोक देनी पड़ी। अुस अरसेमें कभी खेतपर, कभी बागमें और कभी धनिक व्यक्तियोंके बच्चोंको पढ़ानेमें वे अपना समय लगाते रहे और आवश्यक धन जुटाते रहे। १९ सालकी अुम्रमें अुनकी पहली कविता 'न्यूगात" (पश्चिम) नामक पत्रिकामें छपी। अपने जीवनके अिन दिनोंके बारेमें अेत्तलाने लिखा है कि वे मुझे प्रतिभाशाली बच्चा कहते थे; हालाँकि मैं तो यतीम था।

अेत्तिलाके काव्यने बड़ी जल्दी राष्ट्रीय साहित्यमें अपना स्थान बना लिया परन्तु अिस यशोलाभके साथ ही अुनकी कोअी मुसीबत कम नहीं हुअी। बल्कि अुनकी दिक्कतें और बढ़ गयीं। अुनकी कवितामें क्रान्तिका अभिनन्दन होनेके कारण अुन्हें कहींपर काम मिलना दूभर हो गया। अुस समयकी शासक श्रेणीने अुन्हें शेगेद विश्वविद्यालयसे निकलवा दिया। तब अिन्हें वियेना चले जानेपर बाध्य होना पड़ा। वहाँ जाकर अिन्हें और कोअी काम नहीं मिला तो ये अखबार बेचने लगे और कअी घरोंमें अुन्होंने झाड़ू देनेका काम संभाल लिया। आखिर पेट तो भरना ही था। पीछे कुछ साहित्यिक मित्रोंके साथ ये पेरिस चले गये और वहाँ सौरबौनमें रहकर अिन्होंने अध्ययन किया।

जब वे पढ़-लिख कर वापस घर आये तो चारों तरफके दरवाजे अुनके लिये बन्द हो गये। अुनकी कविताअें छापने वाला कोअी नहीं मिलता था! बहुत संघर्ष करके अुन्होंने अेक साहित्यिक पत्रिका निकाली भी जो मुद्रक और कुछ मजदूर संस्थाओंके सहारे चलायी; परन्तु तत्कालीन सरकारकी वक्र दृष्टि अितनी रही कि अुसपर गहरी सेन्सरशिप बैठा दी गयी। अुससे मोटी-मोटी रकमें गारंटीके रूपमें मांगी गयीं। अुन्हें अुसका प्रकाशन बन्द करना पड़ा। अुसके बाद अपने जर्मन और फ्रेंच ज्ञानका अुन्होंने कुछ अिस्तेमाल करना चाहा परन्तु वह भी अुनको नहीं संभव हो सका। चारों ओर थी बेकारी, भूख और धीमी मौत...अैसे ही समय जब वे जीवनकी सत्ता कायम रखनेके संघर्षमें अेकदम पस्त हो हो गये तो रेलगाड़ीके नीचे आकर अुन्होंने ३२ बरसकी छोटी अुम्रमें आत्महत्या कर ली। अेक महान् प्रतिभा अिस दुनियासे अुठ गयी...

अपने संघर्षकालमें अेत्तिलाको औद्योगिक मजदूरों और गांवके किसानोंके साथ अपना जीवन बितानेका मौका मिला और वहीं वह तत्कालीन हंगरीमें गैरकानूनी करार दिये गये कम्युनिस्ट आन्दोलन और कम्युनिस्ट पार्टी के संपर्कमें आये। वियेना और पैरिसमें अुन्होंने मार्क्स, अेंजेल्स, लेनिन और स्टालिनकी कृतियाँ पढी थीं। प्रसिद्ध फ्रांसीसी कम्युनिस्ट सैनिक "ल्हुमैनिते" के संपादकीय विभागमें भी अिनका आना जाना बना रहता था। अिन सबके कारण अुनके जीवनमें मार्क्सवादी, समाजवादी दृष्टिकोणका प्राबल्य होना कुछ अनहोनी या अवांछनीय घटना नहीं थी और शायद यह भी अेक कारण था कि अेडमिरल हौर्थीकी सरकार अुनके पीछे हाथ धोकर क्यों पड़ी हुअी थी ...।

प्रथम विश्व-युद्धके बाद हंगेरियन साहित्यमें दो धाराअें बडी साफ थीं। अेक ओर तो आन्द्रे आदिक प्रभावशाली व्यक्तित्व था जिसका असर अुनके विरो[illegible]

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"कला कलाके लिये है" नारा भी जोरोंपर था, जो कि अुस सड़नशील बुर्जुआ समाजका द्योतक था जिसका हंगरीमें राज था। अुस समय हंगरीमें या यों कहिये सारे योरोपमें नयी शैलियोंकी खोज बड़े जोरशोरके साथ हो रही थी। अभिव्यक्तिवादसे लेकर आस्तिकवाद तककी सब नअी शैलियाँ अुसी अँधेरे गढेमें जाकर समाप्त होती थीं, जिसका कोअी पता नहीं था, जिसका कोअी आधार नहीं था।

अेत्तिला जोसेफकी अुम्र अुस समय १९ सालकी थी जब अुनकी पहली कविता "साफ ओर पाक दिल" प्रकाशित हुअी। अुसका प्रकाशन होना था कि अुसपर दर्जनों आलोचनायें लिखी गयीं। कुछ अुनका अभिनन्दन करते हुअे और कुछ अुनको फटकार बतलाते हुअे। यहींपर वे आदीके प्रभावसे मुक्त होकर स्वतन्त्र रूपसे सामने आये। यहींपर हंगेरियन साहित्यमें यह भी स्पष्ट हुआ कि जबतक कविताका अभ्यन्तर नहीं बदलता है तबतक बाह्य कलेवरका परिवर्तन करनेवाली "नयी शैलियोंकी खोज" अेकदम गलत है; व्यर्थ है; बेमानी है। अेत्तिलाकी कवितामें अेक नवीन सर्जनशील विचार था संघर्षका, जो कि सर्वहाराकी पुकार न होकर अुनकी हुंकार और अुनका संदेश था। अेत्तिलाके मुक्तछन्दमें यह बहुत अच्छी तरहसे स्पष्ट हो गया है। गैरकानूनी ढंगसे लिखी अेत्तिलाकी अुन कविताओंमें अेक नयी शक्ति, अेक ताजापन, अेक क्रान्तिकारी संदेश स्पष्ट दिखलायी पड़ता है।

अेत्तिलाने भाषाके लिहाजसे सदा आसान भाषाका प्रयोग किया। अपनी २० और ३२ सालोंकी अुम्रोंके बीच अुन्होंने लगभग ४५० कवितायें लिखीं। जिनमें बहुत ही यथार्थताके साथ गांवों और नगरोंके गरीब लोगोंका सही चित्रण हुआ है। केवल हंगेरियन साहित्यमें ही नहीं वरन् समूचे योरोपीय साहित्यमें अेत्तिलाने अेक नयी चीज़ दी। अुसने सर्वहाराके जीवनको बाहरसे न देखकर अेकदम भीतरसे देखा था ..परन्तु अपने मनकी अेक साथिनकी खोजमें जो प्रेममयी कवितायें अेत्तिलाने लिखी हैं अुनमें व्यक्तिगत आकांक्षायें जो भी रही हों पर साथही अुनमें सर्वहारापन समाप्त नहीं हो पाया है। वह अपनी हृदयकी देवीको रूमानी संकेतोंके पुंजमें बांधकर नहीं रखता है। वह अुसे देवी भी नहीं बनने देता है। वह अुसे मानवीके रूपमें, अुसकी कमियोंके साथ यथार्थरूपमें देखनेकी कोशिश करता है। अिसलिये अुसकी प्रेममयी कवितायें आदर्शवादी कल्पनाकी अुड़ान न रहकर यथार्थवादी जीवनकी दुलकी चाल बन जाती हैं।

अुसके बाद यदि आप अेत्तिलाके प्राकृतिक वर्णनोंको देखिये तो वे अुस ज़मीनपर रहनेवालोंसे अलग नहीं दीखते हैं। अुसकी देशभक्ति वहां भी सर्वहाराकी देशभक्ति है। यानी केवल फूलोंकी सुन्दरताकी ही भक्ति नहीं है वरन् ग्रामीण "कुरूपता" की भक्ति भी है, अुसका अपनापन भी है।

अेत्तिलाने अपने काव्यमें यह स्पष्ट दिखलाया है कि सर्वहारा होकर वह अपने देशके अतीतको भूल नहीं गया है। अुसे अपने देशकी जनवादी परंपराओंमें पूरा विश्वास ही नहीं वरन् गहरी आस्था भी है। अुन्हींके सहारे वह अेक स्वर्णिम भविष्यकी कल्पनायें करता है। केवल अपने और अपनी प्रेयसीके लिये ही नहीं; वरन् अपने समूचे देशवासियोंके लिये, अपने समूचे समाजके लिये। "डैन्यूबके किनारे" नामक कवितामें वह विश्वबन्धुत्वका पाठ पढ़ानेकी कोशिश करता है और कहता है कि अेक दिन जनताका लाल सितारा आसमानमें चमकेगा जब कि शासकों द्वारा पोषित ये पारस्परिक भेदभाव समाप्त हो जावेंगे और समूची मानवता प्रगतिकी ओर कदम बढ़ा सकेगी।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीत

: श्री नर्मदाप्रसाद खरे :

तुमने मेरी पीर न जानी, तुमने मेरा प्यार न देखा ।
क्षण-क्षण अुठनेवाले मेरे हृदय-सिन्धुका ज्वार न देखा ।

आँखोंमें आँसू पी मैंने
मुसकानोंके फूल खिलाये,
ज्वालामुखी प्राणमें दाबे
मन-वीणाके तार मिलाये,

तुमने मेरी आग न देखी, आग भरा संसार न देखा ।।

मैंने सदा तुम्हारे पथमें
काँटे बीन, फूल बिखराये,
भृकुटि-भंगिमा होनेपर भी
गीत वन्दनाके दुहराये,

तुमने अश्रु-अर्चना देखी, मनका हाहाकार न देखा ।।

नव वसन्तकी शिशु-शोभा-सा
हृदय-दोलपर तुम्हें झुलाया,
आँसूसे श्रीचरण पखारे
पलकोंका मृदु चँवर डुलाया,

जीवनकी मुसकानें देखीं, मनका हाहाकार न देखा ।।

जाने यह कैसा जादू है,
पल-पल मरता, पल-पल जीता,
मैंने सिन्धु सोखना चाहा,
किन्तु रहा रीताका रीता,

तटकी गिनी लहरियाँ तुमने, बीच भँवर, मँझधार न देखा ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेक शब्दचित्र :

बाज़ारसे सुअी मँगायी !

: श्री मुमताज अशरफ़ कादिरी :

साबिक खान बहादुर और हाल श्री मीर करीर हुसैन सा० मुस्तकिल तहसीलदार और कायम मुकाम डिप्टी कलक्टरने लगातार साढे तीन घंटे काम करने के बाद घड़ी पर निगाह दौड़ायी तो साढे दस बज चुके थे। अितनी मेहनतके बाद वह सिर्फ ढाअी सफहा लिख पाये थे। "ओह ! आज भी यह जजमेन्ट अधूरा ही रह गया। अरे क्या अिस क़दर सुस्त हूँ मैं।" अुन्होंने दिलही दिल में कहा, और अेक निगाह रद्दीकी टोकरीपर डाली जो अधाये हुअे कुत्तेकी तरह होकर मेज़के नीचे अुनके क़दमोंके पास पड़ी थी। डिप्टी साहबको अितमीनान हो गया कि जजमेन्टके पूरा न होनेका ताल्लुक मुक़दमेकी पेचीदगीसे है, न कि अुनके दिमाग़ या क़लमकी सुस्त रफ्तारी से। रद्दीकी टोकरी यक़ीनन अिस बातकी गवाह थी कि साढे तीन घंटेमें वह बीसों पन्ने लिख सकते हैं। किसी पेचीदा मुक़दमेका फैसला अेकदम बिना सोचे लिखना कोअी खेल तो है नहीं ? और फिर मसविदा कौन नहीं दुहराता ? शायरके दिमाग़में अेक ख्याल सैकड़ों सूरतें अिख्तयार करता है और तब कहीं जाकर अिस काबिल बनता है कि दुनियाके सामने अेक शैरकी सूरतमें पेश किया जा सके। शायरकी कशमकश ही अुसके ख्यालोंमें रंग भरती है। यह मेहनत कभी बेकार नहीं जाती !

जो काग़ज़ात रद्दीकी टोकरीमें फ़ेंके जा चुके हैं वह हरगिज़ अिस बातकी दलील नहीं हैं कि आज साढे तीन घंटे मुफ्त खराब हुअे। खुदा न करे कि मीर साहब का अेक मिनट भी बरबाद हो। टोकरीके काग़ज़ात अिस बातके सुबूत हैं कि मुकदमेके हर पहलू पर निहायत बारीकीसे गौर किया जा चुका है। ख्यालात दिमागमें तरतीब पा चुके हैं और अब सिर्फ अुनका काग़ज पर अुतरना बाकी है। गोया बादल घिर चुके हैं, सिर्फ बरसनेकी देर है। फैसला आज पूरा न हो सका, न सही। अब कल अिसके खत्म होनेमें तो कोअी बात ही नहीं। वह बात ही क्या जो अुतावलीमें लचर तरीकेसे पेश कर दी जाये। बड़े बड़े हाकिम कुछ यूंही तो आपके मसविदोंकी तारीफ़ नहीं किया करते। अभी गये हफ्ते में ही आपने अेक रिपोर्टका मसविदा कलक्टर साहबकी खिदमतमें पेश किया था। साहब बहादुर देर होनेकी वजह से कुछ नाराज़-से हो गये थे। मगर जब मीर साहबने ढाअी महीनेकी मेहनतके बाद तिरासी पन्नोंकी रिपोर्ट खुद ले जाकर मेज़ पर रख दी तो साहब बहादुर दंग रह गये। वर्क अुलटते जाते थे और मुस्कुराते जाते थे। आखिरकार न रहा गया और सारे बड़प्पनको ताक़में रखकर अुन्हें कहना ही पड़ा। "वल्लाह–मीर साहब आपके अंगरेजी जुमलोंकी बनावट तो बिलकुल नयी चीज़ है। रहे हिज्जे, अिमला, तो मजाल है कि अमरीकनोंकी हिज्जे सफाअी आपकी कल्पनाका दामन भी छू सकें !"

वह तो और न जाने क्या क्या कह जाते कि अितनेमें सक्सेना नायब तहसीलदार कोअी जरूरी कागज लेकर कमरेमें आ गये। फिर भी अुस कागजपर हुक्म करनेके पेश्तर ही अुन्होंने मुस्कुराते हुअे फरमाया। "देखो सक्सेना" अिस तरह लिखी जाती है रिपोर्ट ! अिसे लेते जाओ और कलतक साफ करवा कर मेरे पास भेज दो। मगर देखना, कागजके खर्चमें किफायत बरतनेके बारेमें जो सरकारी हुक्म हो चुके हैं अुनका जरूर ख्याल रखना।"

गये हफ्तेके वाकयेसे मीर साहबका चेहरा खुशीसे चमक अुठा और खुशीकी अेक हल्कीसी लहर अुनके होटोंपर नाच गयी। आपने कागजात समेटे, कलम पेन्सिल-बिलाटिंग पैड-पिनकुशन वगैरहको अपनी अपनी जगहपर रक्खा और अुठ खड़े हुअे। अन्दर जाकर आपने मुँह हाथ धोया, कमीज, टाअी, पतलून और मोजे

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जूतेसे लेस होकर आप कोट पहनने ही वाले थे कि अेक बटनपर आपकी निगाह पड़ गयी और आप फौरन बायीं आस्तीनपर कोट टांगे हुअे और दाहनी मुट्ठीमें अेक बटन दबाये हुअे आफिस-रूममें फिर दाखिल हुअे।

मेजपर रखी हुअी घंटीपर आपने हाथ मारा। अेक जोरदार "टन" की आवाज हुअी और अुसके साथ ही आपने हाकिमाना ढंगसे फरमाया।

"अरे कोअी है ?"

अेक बर्दीपोश चपरासीने फौरन चिकपर हाथ रक्खा।

"कौन ? गफूर ?"

"शाबाश--भअी बड़े मुस्तैद आदमी हो तुम ! चपरासी हो तो अैसा, अिधर घँटीपर हाथ पड़ा और अुधर चिक अुठी। और वह अेक रतना है। कहनेको तो ड्यूटीपर है, मगर बंगलेके कोने-अंतरेमें बैठा नौकरोंके साथ चिलमके दम लगाया करता है। घंटी बजती रहती है, मैं चीखता रहता हूँ, मगर अुसके कानों-पर जूँ तक नहीं रेंगती। बड़े साहबने अुसे कनफर्म कर दिया वरना मैं तो अुसे दो दिनमें निकाल देता। मुझे तो तुम जैसा चपरासी चाहिये जो ड्यूटीको ड्यूटी समझकर करे। सच पूछो तो अफसरोंका चौथाअी वक्त बच जाता है अच्छे चपरासियोंसे ! और चपरासी दिये भी अिसी लिये जाते हैं कि साहब लोगोंका जरा-जरा सी बातोंके लिये वक्त खराब न हो।"

"परसों तुम बड़े साहबके बंगलेपर मेरा खत लेकर गये थे ना ! बड़े खुश हुअे तुम्हारी मुस्तैदी देख-कर। कल मुझसे कहने लगे कि मीर सा० गफूराको मुझे दे दीजिये। मैंने अर्ज किया कि हुजूर आप तो कलक्टर हैं। जिले भरके हाकिम हैं आपके पास तो सैकड़ों अेक-से-अेक बढ़कर मुलाजिम हैं और मेरे पास तो ले देकर यही अेक गफूर समझदार आदमी है। आपने अिसे भी ले लिया तो मेरे तो हाथ-पाँव ही टूट जायेंगे। खैर अिस वक्त तो वह चुप हो गये मगर मेरे दिलमें खटका लगा हुआ है कि कहीं फिर न माँग बैठें! लेकिन तुम अितमीनान रखो, जहाँ तक मुमकिन होगा मैं तुम्हें अपने पाससे न जाने दूंगा।"

अरे दस बजकर पचास मिनट हो गये ! हाँ मैंने तुम्हें अिसलिये बुलाया था कि लपककर बाजारसे अेक सूअी ले आओ। यही रोजमराके अिस्तेमालकी, सीने-पिरोनेकी सूअी। अपनी घरवालीके पास तो देखा होगा तुमने कअी मरतबा ! समझ गये ना ? भअी बात यह है कि मैंने अभी सूट-केससे अेक सूट निकाल लिया। अब जो देखता हूँ तो कोटके बीचका बटन ढीला हो गया है। जरा हिलाकर देखा तो हाथमें आ गया। यह देखो ! बस अिसे टाँकना है। अब दो बटन लगाकर तो मैं कचहरी जानेसे रहा। वहाँ वकील, डाक्टर, मुखतार, गवाह सभी आते हैं। और सबसे बड़ी बात तो यह है कि अक्सर बड़े साहब सलाह-मशवरेके लिये बुलवा भेजते हैं। वह टूटा हुआ बटन देखेंगे तो क्या कहेंगे ? अिन छोटी बातोंसे अफसरोंका अिम्प्रैशन खराब हो जाता है। हाँ तो जरा जल्दीसे अेक सूअी ले आओ।"

"यूँ तो ट्रंकमें दरजनों सूट धरे हैं मगर मुझे यह बटन अुस वक्त नजर आया जब मैं यह पतलून पहन चुका था। अब अुसे अुतारकर दूसरा पहनना अेक फुजूल-सी बात है। अिस सूटकी अिस्तरी तो टूट ही चुकी, अब दूसरा सूट बदलकर वक्त और खराब करूँ। अिस्तरी तो खैर फिर हो सकती है मगर गया वक्त फिर हाथ नहीं आता। अिसके लिये तो जो सावधानी बर्ती जाये कम है। तुम तो देखते हो कि मैं अेक मिनिट भी बरबाद नहीं करता और फिर भी यह हाल है कि काम पूरा नहीं होता। अिस तरह वक्त खराब करना शुरू करूँ तो अितनी बड़ी सरकारी नौकरी हो चुकी ! हाँ तो तुम सूअी ले आओ। बटन टाँकना कौनसी बड़ी बात है, मैं खुद ही टाँक लूँगा।"

"जब मैं पढ़ता था तो मैं सूअी तागा हमेशा पासमें रक्खा करता था ; लेकिन अब बेगम साहिबाके होते हुअे यह खटराग कौन पाले ! मालूम नहीं बेगम साहिबाकी नजर अिस बटनपर क्यों नहीं पड़ी। अुनकी तो आदत है कि धोबीको कपड़े देनेके पेश्तर ही वह सब चीजें देखभाल लेती हैं, और करना भी यही चाहिये। धोबीके घरसे आनेके बाद कपड़ोंकी मरम्मत की जाय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो भद्दे नजर आने लगते हैं ! मगर मैंने कहा ना, कि यह बटन बिलकुल अलग नहीं हुआ था। अलग होता तो बेगम साहिबाकी नजर जरूर पड़ जाती। हो न हो यह धोबीकी कारस्तानी है ! ताकीद करनी पड़ेगी कम्बख्तको ! जरा तुम बेगम साहिबाको अिसकी याद दिला देना। अब अितनी सी बात डायरीमें कौन लिखे।"

"आज बिरस्पत है ना ? बस वह मंगलको आ जायँगी, सुबहकी गाड़ीसे। अुनका मलिकपुर जाना निहायत जरूरी हो गया था ! अुनके बड़े भाअी बम्बअी से आये हुअे हैं। आनेके बाद अुन्होंने मुझे तार दिया कि वह यहाँ न आ सकेंगे; हम लोग ही वहाँ मिलने चले जायें। मगर मैं छुट्टी कैसे ले सकता हूँ। सारे जिलेका अिन्तजाम कलक्टर साहबने मेरे सुपुर्द कर रखा है ! खैर—मैंने बेगम साहिबासे कहा कि आप अकेली चली जायें और मेरी तरफसे माफी माँग लें। भअी गफूर, बड़े नाजुक होते हैं यह रिश्तेदारीके मामलात। हर कदम फूँक २ कर रखना पड़ता है। बेगम साहिबा पूछने लगीं कि मुझे खाने-पीनेकी तकलीफ तो न होगी ! मैंने कह दिया—अजी साहिब, अेक हफ्ता भी कोअी बड़ी बात है ? घरमें नौकर चाकर सभी तो हैं। आखिर दौरेपर यही लोग तो खिदमत करते हैं ! गफूर। बात यह है कि अिस मौकेपर मैंने अुन्हें रोकना मुनासिब न समझा वरना हकीकत यह है कि बेगम साहबाका अिन्तजाम कुछ और ही चीज है। अब यही देखो न, अेक जरा-सी बातके लिये आज अटक जाना पड़ा।"

"यूं तो जाते वक्त बेगम साहिबा अपनी कुंजियोंका गुच्छा मेरे आफिस बाक्समें रखती गयी हैं। अुन्होंने सोचा होगा कि शायद मुझे किसी चीजकी जरूरत ही पड़ जाये। मगर मुझसे यह हरगिज न होगा कि वह तो अिस दूरअन्देशीसे काम लें और मैं अुनकी गैर-हाजिरीमें अुनकी सन्दूकें लौटपौट करता फिरूँ। अुनकी बक्चीमें यकीनन, सूअी, तागा, कैंची, अंगुस्तान सभी कुछ होगा। मगर औरतें अपनी चीज अेक खास सलीके से रखती हैं। मैंने अुनकी सन्दूक खोली तो मुझसे अुनकी चीजें फिर ठीक तौरसे धरते न बनेंगी। और भला मैं अेक सूअीके लिये अुनकी जमी जमायी चीजें तितत-बितर करूं। नहीं-नहीं यह मुझसे न होगा, तुम सूअी ले ही आओ। मगर हां जरा जल्दी—लपकके—यह लो पैसे।"

"अरे हर चीज पर तो आग बरस रही है। दो पैसेमें मिल जायगी शायद ! पहले तो अेक पैसेमे २५-२५ मिलती थीं और कोअी पूछता तक न था ! अरे यह तो अिकन्नी है। खैर कोअी हर्ज नहीं तुम अिकन्नी ही लेते जाओ।

"मगर हां ख्याल रखना कि बस यही मामूली सीने-पिरोनेकी सूअी चाहिये, बटन भी अिसीसे टांका जाता है समझ गये ना ? मशीन या ग्रामोफोनकी सूअी नहीं। मशीन और ग्रामोफोनकी सूअीमें नाका नहीं होता। नाका समझते हो न ? देखो, सूअीके दो सिरे होते हैं। अेक तरफ नोक रहती है और दूसरी तरफ नाका। नोक तो तुम समझते ही हो; यानी नोक ! नाका अेक बारीक सूराख होता है जिसमेंसे तागा पिरोया जाता है। बस सीनेकी सूअीमें यही दो चीजें देखना जरूरी है। 'नोक और नाका'—नोक टूटी या मुड़ी हुअी हो तो सूअी बेकार है और नाका टूटा हुआ हो तो तागा नहीं पिरोया जा सकता। बस अिन दो चीजोंको जरूर देख लेना ! अिनमेंसे अेक चीज भी खराब हुअी हो तो सारी मेहनत अकारथ चली जायगी और पैसा मुफ्त बरबाद होगा। खैर पैसेकी तो कोअी बात नहीं मगर असली चीज वक्त है। अिसका खराब करना पैसा खराब करनेसे भी बदतर है। नोक या नाका खराब हुआ तो सूअी फेकनेकी नौबत आयगी। सौदा फेरना यूं भी अैबकी बात है। मगर अेक चीजके लिये दो चक्कर करनेकी जरूरत ही क्या है ? सब बातें पहले ही से अच्छी तरह समझ लो और बस झगड़ा मिटा !"

"अरे जरा देखो ! बस मझोली सूअी ही अच्छी होगी, अिस कामके लिये, कहीं वह दो-ढाअी अिंच लम्बी सूअी जिससे लड़के कापियां सीते हैं, न अुठा लाना ! दूकानदारको जता देना कि कोटके बटन टांकनेके लिये चाहिये। वह खुद समझ जायेगा। नाका जरा गौरसे जरूर देख लेना। दो किस्मके होते हैं नाके—अेक जर्दी माअिल यानी पीले पीले रंगका और

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरा सफेद – यानी जो रंग सूओंका वही रंग नाकेका। ज़र्दी-मायिल नाके अकसर कमजोर निकल जाते हैं। देखनेमें तो वाज नाके अच्छे खासे नज़र आते हैं मगर तागा डालकर खेंचते ही टूट जाते हैं। नाका टूटा और सूओ बेकार हुओ। अब तुम्हीं बतलाओ कि अगर नाका टूट गया तो बटन कैसे टांका जायगा।"

शायद अैसी सूओ सस्ती भी मिल जाय। मगर मुझे सस्ती सूओ नहीं चाहिये। मसल मशहूर है––'महँगा रोये अेक बार, सस्ता रोये हजार बार!' दूकानदार बड़ी चालाकीसे कभी-कभी खराब चीजें तारीफ़ करके सर मढ़ देते हैं। अैसा न करें तो अुनकी खराब चीजें बिकें कैसे! मगर तुम तो होशियार आदमी हो। अिन चालाकियोंमें जिले कचहरीके चपरासी आने लगें तो अंधेर ही हो जाय––और फिर जब हमें पैसेकी परवाह नहीं तो खराब चीज़ लें क्यों?"

अरे जरा ठहरो––पूरी बात तो सुन लो पहले। अितनी जल्दी भी नहीं करनी चाहिये। शेख सादीने कहा है कि––"ताजील कारे, शयातीन बुवद।" मगर तुम पढ़े-लिखे तो हो नहीं, क्या समझोगे अिस बातको? खैर अिसका मतलब यह होता है कि जल्दीका काम शैतानका होता है। हां, तो मैं यह कह रहा था कि अेक जरा-सी सूओके लिये किसी बहुत बड़ी दूकानपर जानेकी जरूरत नहीं। दर्जन दो दर्जन लेना होता तो और बात थी। मुझे तो सिर्फ अेक सूओ बटन टाँकनेके लिये चाहिये। यह जो छोटी-छोटी बिसातियोंकी दूकानें होती हैं न? बस वहीं कहींसे ले लेना। और कभी-कभी तो ठेलेवालोंके पास भी मिल जाती हैं अैसी चीजें। रास्तेमें कोओी ठेलेवाला मिल जाय तो पूछते जाना। मिल गयी तो वक्तकी बड़ी बचत हो जायगी।"

और हां, कभी-कभी यह भी होता है कि सरकारी अर्दी-वर्दी देखकर दूकानदार छोटी-मोटी चीजोंके पैसे लेनेसे अिनकार कर देते हैं। कहते हैं अरे ले भी जाओ। साहबको हमारा सलाम कह देना। देखो खबरदार। मुझे अैसा सलाम-वलाम नहीं चाहिये। अुनकी सादगी पर कहीं फँस न जाना। यह दूकानदार अपनी चालमें रहते हैं। आज अेक सूओ मुफ्त दे देंगे और कल किसी मुकदमेकी सिफारिश लेकर आ धमकेंगे। अेक डिप्टी कलेक्टर साहबको तो अिन कम्बख्तोंने लहरगंजमें बदनाम ही कर दिया था। वह तो खैर हुओ कि कलेक्टर साहब बड़े तजर्बेकार आदमी रहे; वरना अिन बेचारोंके तो लेनेके देने पड़ जाते।"

"अरे ज़रा ठहरो–तुम तो जैसे घोड़ेपर सवार हो!––ज़रा भीड़-भाड़का भी ख्याल रखना! बाज़ लोगोंने अजीब तरीक़ा सौदा ख़रीदनेका अिख्तयार किया है .....मान लो कि दूकानपर भीड़ लगी हुओ है। दूकानदार गाहकोंको तरह-तरहके सौदे दे रहा है। तुमने अिकन्नी अुसके पास फेंक दी और कहा कि मुझे अेक सूओ दे दो! अिकन्नी तो अुसने रख ली और दूसरे गाहकोंको सौदा देता रहा। जब तुमने कुछ देरके बाद तकाज़ा किया तो अुसने चौंककर पूछा। क्या चाहिये आपको? तुमने कहा––अरे भाओी अिकन्नी दी है मैंने सूओके लिये! कोओी शरीफ़ दूकानदार हुआ तो चुप रह जायगा और सूओ निकालकर दे देगा। लेकिन कोओी बेअीमान हुआ तो कह अुठेगा––अभी तो मैं अिन दस गाहकोंको सौदा दे रहा था। अिकन्नी कब दी आपने? चलो अेक सूओके लिये खासी भीड़ लग गयी और तू-तू मैं मैं होने लगी! कोओी तुम्हारी तरफ़दारी कर रहा है, कोओी दूकानवालेकी तरफ़से बोल रहा है। मतलब यह कि तुम अेक झगड़ेमें फँसे हुओ हो और मैं अिन्तज़ार कर रहा हूँ कि ग़फ़ूर कब आता है। और मैं कब बटन टाँककर कचहरी जाता हूँ? देवीपूरवाला किस्सा तो याद होगा तुमको! मगर नहीं तुम वहाँ नहीं थे। खैर देवीपूरमें अेक मुक़दमा मेरे पास बस अिसी किस्मका आया था। कोओी दस पन्द्रह रुपयेकी बात थी और महीनों मुक़दमा चला। आखिरकार जब वहांसे मेरा तबादला होने लगा तो आपसमें मैंने बड़ी मुश्किलसे काम्प्रोमाअिज़ करा दिया। काम्प्रोमाअिज़ समझते हो ना? मगर तुम तो हिन्दी अुर्दू भी नहीं जानते, अंगरेजी क्या समझोगे? काम्प्रोमाअिज़ कहते हैं आपसी समझौतेको। ....तुम पढे-लिखे हुओ होते तो दफ्तरी बनवा देता तुमको! देखो अपने लड़कोंको खूब पढ़ाना। वो रामलालके लड़केको क्लर्क बना दिया न बड़े साहबने?...अुफ़्–– साढ़े ग्यारह बज गये। अरे अब जाओ भी जल्दी। मुँह क्या देख रहे हो? लपककर ले आओ अेक सूओ। मैं अितनी देरमें खाना खाये लेता हूँ। मिडिल साअिज़की––लाहौल वला कुव्वत–अनपढ़ चपरासियोंसे तो नाकमें दम है!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai

मिडिल साअिज़की यानी मझोली। न बहुत छोटी और न बहुत बड़ी ! सफेद नाका ज़रूर देख लेना। कितनी बार तो समझा दिया तुमको ! हाँ ज़रा सावधानीसे अंगरखेमें खोंसकर लाना, गिरा न देना कहीं रास्तेमें ?"

अभी मीर साहब गफूरको सूअी सावधानीसे लानेके मुताल्लिक पूरी पूरी हिदायत न फ़रमाने पाये थे कि अेक मोटर पोर्चमें आकर खड़ी हो गयी। मोटर देखकर मीर साहब कुछ परेशानसे हो गये।

"हैं कलक्टर साहबकी मोटर ?—अरे रामाधार क्या बात है ? बड़े साहब कहां हैं।"

मोटरसे अुतरते हुअे रामाधारने कहा।

"बड़े साहबने हुजूरको सलाम दिया है और कहा है कि बहुत जल्दी आ जाअिये। सब साहब लोग आ गये हैं मीटिंगमें !"

मीर साहब— मीटिंग ? कौन दिन है आज ?

रामाधार—शुक्रवार, हुजूर—बहुत जल्दी बुलाया है बड़े साहबने—सब कागज लेके।

मीर साहब— अुफ—अिन कामके झगड़ोंमें दिन भी नहीं याद रहा —और यह कम्बख्त गफूरा कहता जा रहा है कि आज बिरसपत है। दो घंटेसे मेरा सर चाट रहा है। अेक सूअी नहीं ला सकता बाजारसे यह, और चपरास लगाये खड़ा है। भला पूछो तो यह चपरास लगानेके काबिल है ? अिस दफ्तरका सारा स्टाफ बिगड़ा हुआ है। जितने निकम्मे चपरासी हैं, बस मेरी अरदलीमें दे दिये जाते हैं। और कोअी मेरे पास पन्द्रह दिनसे ज्यादा नहीं रखा जाता कि मैं खुद ट्रेन कर लूँ। कल मैंने बड़े बाबूको डाँटा तो झेंपकर वे बगलें झांकने लगे। कहते हैं कि साहब हर अेक चपरासी आपहीकी अरदलीमें रहना चाहता है अिसलिये मैंने पन्द्रह-पन्द्रह दिनकी टर्न बांध दी है ताकि हर अेकको मौका मिल जाये .. ... बस यह बदला मिल रहा है मुझे मेरी नेकियोंका ! नेकी बरबाद गुनाह लाजिम— अब यह बेवकूफ मेरे सर थोप दिया गया है। अभी रतनासे कहता तो बँगला भर देता सूअियोंसे ! नामाकूल कहींका ! चल दूर हो मेरे सामनेसे ! आज बड़े साहब के सामने मुंह दिखानेके काबिल नहीं रक्खा तूने !

रामाधार—हुजूर, साहबने कहा है कि बड़ी जल्दी लेकर आना। बातोंमें न लगा देना साहबको !

मीर साहब— अरे वह बड़े साहब तुम सबको खूब पहचानते हैं। जब तो अितनी ताकीद करके भेजा है। तुम लोगोंको वक्त खराब करनेके अलावा और आता ही क्या है ? तुम सब अेक ही थैलीके चट्टे-बट्टे हो— मुझे तो.....

रामाधारने याद-दहानीके तौरपर मोटरका दरवाजा खोल दिया।

मीर साहब:— अरे तो क्या अब बगैर कोट पहने मोटर पर बैठ जाअूं ? बटन टांकना था अिस कोटमें ! खैर अभी आया अेक सेकण्डमें—चपरासी अैसे मिलते हैं कि खुदाकी पनाह, और बेगम साहबाको अपने भाअी-भतीजोंसे फुरसत नहीं। जब सूझेगी तो मायकेकी। अपना घर तो काटने दौड़ता है अुन्हें। कोअी पन्द्रह दिन हुअे अिस कोटको धुलकर आनेको—अितना न हुआ कि बटन टाँककर जातीं अपने चहैतोंसे मिलने।

रामाधार—"हुजूर कोट ले आअूं अंदरसे।"

डिप्टी साहब— अरे हाँ ! नहीं-नहीं !! मैं खुद ही लिये आता हूँ तुम झटसे अिन कागजोंको समेट कर मोटरपर रख लो। लाहौल विला कुव्वत—यह तो बिलकुल बेजोड़ है—अिस पतलूनपर ये कोट ! लोग देखेंगे तो क्या कहेंगे। अुफ् क्या मुसीबत है .....खैर बटन टूटा हुआ है तो बलासे—मैं अिसे ही पहने लेता हूँ.....गफूर ! अबे ओ गफूराके बच्चे ! अब यह कहां सटक गया गफूरका बच्चा ! अरे आज ही डिसमिस न करवा दिया तो मेरा नाम !.....भअी क्या नाम है तुम्हारा.....अरे हाँ रामाधार... ..ज़रा अिस बटनको मेज़के खानेमें रखदो .....अब शामको टांकूंगा अिसे। भअी रामाधार, अेक सूअी ला देना मुझे .....

रामाधार— हुजूर—ये तो रिंगवाला बटन है .. रिंग कहां है सरकार, अरे यह पेपरक्लिप लगाये देता हूँ, सरकार, ठीक तो हो गया हुजूर !

सरकारी कामके आगे डिप्टी साहबको अपनी जाती तकलीफोंकी कभी परवाह नहीं होती, वे बगैर खाना खाये ही मोटरपर बैठ गये।

मीटिंगके बाद जो बातचीत डिप्टी साहब और कलक्टर साहबके दरम्यान हुअी वह आज तक अेक रहस्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज भी हिया भर आता है

: श्री कन्हैयालाल सहल :

बीकानेरके महाराज राव कल्याणसिंहजीके तीन पुत्र थे। सबसे बड़े रायसिंहजी तथा अुनसे छोटे रामसिंहजी तथा पृथ्वीराज। पृथ्वीराज विद्याव्यसनी, चतुर, शूरवीर और बड़े भगवद्भक्त थे। अकबरके दरबारमें अुनकी गणना कविरत्नोंमें हुआ करती थी। जैसलमेरके महाराज हरराजकी कुंवरी लालांदेके साथ पृथ्वीराजका विवाह हुआ था। लालांदे केवल अनुपम सुन्दरी ही नहीं थी, अुसकी वाग्विदग्धता तथा काव्य-चातुरी भी अद्वितीय थी। पृथ्वीराज तथा लालांदेमें परस्पर अटूट प्रेम था।

मुगल बादशाहके अधीन रहनेवाले प्रत्येक राजाको बादशाहके लश्करमें नौकरीके लिये जाना पड़ता था। बीकानेरके महाराज रायसिंहको जब बादशाहका हुक्म मिला तो अुन्होंने अपनेको दिल्ली जानेकी आज्ञा दी। दम्पतिको यद्यपि यह वियोग असह्य था किन्तु पृथ्वीराज ने वादा किया कि मैं ६ महीने बाद अवश्य बीकानेर पहुंच जाअूंगा। लालांदेने अिस शर्तपर पृथ्वीराजको दिल्ली जाने दिया कि यदि निश्चित अवधिसे अेक भी दिन अधिक लग गया तो वह अपने प्राण त्याग देगी। अुसीके शब्दोंमें सुनिये। अर्थ सरल है—

पति परतिग्या सांभलो, अवध अुलंघण थाय।
प्राण तजूं तो विरहमें, कदे न राखूं काय॥

पृथ्वीराजकी वीरता, अुनके चातुर्य तथा काव्य विनोदको देखकर बादशाह अकबर अुनसे अत्यन्त प्रसन्न हुआ। अवधि समाप्त होनेपर थी; किन्तु बादशाह पृथ्वीराजको बीकानेर जाने ही नहीं देता था। अन्तमें बड़ी मुश्किलसे आज्ञा मिली और पृथ्वीराज बीकानेरके लिये रवाना हुअे।

छः महीनेके अूपर अेक दिन हो गया किन्तु पृथ्वीराज बीकानेर न पहुंच पाये। विरहके वशीभूत होकर लालांदेने खान-पान सब त्याग दिया। सारा दिन और सारी रात प्रियका नाम रटते बीती। दूसरे दिन प्रातःकाल लालांदेके प्राण-पखेरू अुड़ गये। राजदरबार तथा प्रजा वर्ग सबमें विपुल शोक छा गया। लालांदेके प्रिय-प्रेमकी सर्वत्र प्रशंसा होने लगी। स्मशानमें जब लालांदेकी चिता जल रही थी, अुस समय पृथ्वीराज वहां पहुंचे। जलती चिताको देखकर अुनके मुंहसे निकला—

"कंथा अूभां कामणी, साअीं! तू मत मार।
रावण सीता ले गयो, वै दिन आज संभार॥"

हे भगवान! मैं यहां खड़ा हूं, मेरी लालां का मरण न होने दो। हे प्रभो! आप तो भुक्तभोगी हैं, वियोगी जनोंके कष्टोंको समझते हैं। रावण जब सीताको ले गया था तो कितना दुःख आपको हुआ था, अुसी दुःखका आज स्मरण कीजिये और मृत्यु-मुखमें प्रविष्ट मेरी लालांको अुबारिये।

लालां लालां हूं करूं, लालां साद म देय।
मो आंधारी लाकडी, मीरां! खैंच म लेय॥

मैं लालां लालां पुकार रहा हूँ किन्तु लालां प्रत्युत्तर नहीं देती। हे मीरां! (भगवान) मुझ अन्धेकी लकड़ीको मुझसे न छीन। फिर अग्निको संबोधित कर पृथ्वीराज कहने लगे—

"तो रांध्यो नहिं खावहूं, रे वासदे निसड्ड।
मो देखत तू बालिया, लालां हंदा हड्ड॥"

हे अग्नि! अब तुझपर पकाया हुआ भोजन नहीं किया करूंगा क्योंकि मेरे देखते देखते तूने लालांदे शरीरको भस्म कर दिया है।

पृथ्वीराज पागल हो गये और "लालांदे लालांदे" की रट लगाते हुअे अुन्होंने खान-पान सब छोड़ दिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai

राजकर्मचारियोंने सोचा कि हरराजकी दूसरी कुंवरी चाँपादे है जो रूप, गुण और चातुर्यमें लालांदेके समान ही है। पृथ्वीराजको यह विश्वास हो गया कि चिता भस्ममेंसे लालांदे पुनरुज्जीवित होकर अवश्य निकलेगी। यदि किसी तरह चांपादेको चिता-भस्ममेंसे निकलती हुअी दिखला दिया जाय तो पृथ्वीराज, जो भावोन्मादके वशीभूत हैं, अुसे लालांदे ही समझ लेंगे। यह आयोजन सफल हो गया, दोनोंका विधिवत् लग्न कराया गया। अब पृथ्वीराजके आनन्दका क्या ठिकाना! वे आनन्द-महोदधिमें क्रीड़ा करने लगे। लालांदेके पुनर्मिलनको वे अपने सौभाग्यकी पराकाष्ठा समझते थे। रातको शयनालयमें पृथ्वीराज पलंगपर बैठे थे। चांपादे नूपुरोंकी झंकारके साथ जब महलमें प्रविष्ट हुअी तो पृथ्वीराज पुलकित और अधीर हो अुठे। पृथ्वीराजकी दृष्टि चांपादेपर पड़ी। पहली दृष्टिमें तो अुन्होंने लालांदे ही माना किन्तु स्थिर दृष्टिसे जब देखा तो बोल अुठे—

" आयी है चांपा अठे, वा लालां अब नाहिं "

अर्थात् यह तो चांपादे यहां आयी है, वह लालां अब अिस लोकमें नहीं रही। चांपादेका माथा ठनका। सारी चतुराअी निष्फल हो गयी। यदि लालांदेके वियोगमें अुन्होंने प्राण छोड़ दिये तो? किन्तु हिम्मत करके चाँपादेने कहा—"विवाह मंडपके नीचे समर्थ स्वामीसे पाणिग्रहण हो चुका है, अब चांपा साथ छोड़नेकी नहीं।" पृथ्वीराजने सोचा—विधिका विधान यही था, अिसमें चांपाका कोअी दोष नहीं। अब जब विधिवत् लग्न हो चुका है, दूसरा कोअी चारा नहीं। पृथ्वीराज कहने लगे—

" चांपा ! डगला चार, साँमा हूवै दीजै सजण।
हींडलतै गल हार, हंसतमुखां हरराय री।"

अर्थात् हे चांपा! वक्षःस्थलपर पड़े हुअे अपने हारको झुलाती हुअी तथा हास्यकी किरण विखेरती हुअी अपने प्रियके सामने आओ तो सही। चांपाने भी काव्यमें ही अुत्तर दिया—

"मूकुल परिमल परहरे, जब आये ऋतुराज।
अलि नहीं आली हय नकी, कलि विकसे केहि काज?"

वसन्त ऋतुके आनेपर जब भ्रमर पुष्पोंके परिमलको छोड़ दे तो कली किसलिये विकसित हो?

पृथ्वीराजने देखा कि चांपादे तो लालांदेसे भी काव्य रचनामें कुशल है तो अुन्होंने दौड़कर बड़े प्रेमसे चांपादेको गले लगाया। पृथ्वीराज और चांपादेका दाम्पत्यजीवन बड़ा सुखपूर्ण रहा।

रानी चांपादेको भी कवि-हृदय मिला था। कहते हैं कि अेकबार महाराज पृथ्वीराज अपनी दाढी संवार रहे थे। दाढीमें अुनको अेक सफेद बाल दिखायी पड़ा, तो अुसे अुखाड़कर फेंक दिया। पीछेसे रानी चांपादेने महाराजको अैसा करते देख लिया। महाराज मुस्कराकर कवितामें ही अपनी प्रियासे कहने लगे—

"पीथल धौला आविया, बहुली लागी खोड़।
पूरे जोबन पदमणी, अूभी मुक्ख मरोड़॥
पीथल पलीट भुक्कियां, बहुली लागी खोड़।
मरवण मत्त गयन्द ज्यूं अूभी मुक्ख मरोड॥"

पीथल कहता है कि सफेद बाल अुग आये, यह तो बड़ी खोड़ (खोट, खराबी, त्रुटि) लग गयी। बड़ा बुरा हुआ कि पूर्ण यौवनको प्राप्त पद्मिनी-सी मोहिनी प्रिया खड़ी हुअी मेरी ओर देखकर मुख मरोड़ रही है। पीथल कहता है कि दाढीके बाल पकने लगे, बड़ा बुरा हुआ, जिसके कारण मदोन्मत्त हाथीके समान प्रिया मरवण खड़ी खड़ी मुख मरोड़ रही है। यह सुनकर चांपादे महाराजका भाव ताड़ गयी और अुनकी आत्म-ग्लानिके भावको दूर करती हुअी अपने पतिके सन्तोषार्थ कहने लगी—

"प्यारी कहे पीथल सुणो, धौलां दिस मत जोय।
नरां नाहरां डिगमरां, पाक्या ही रस होय॥"

प्यारी कहती है कि हे पीथल, सुनो सफेद बालोंकी ओर न देखो। मर्दों, सिंहों और दिगम्बरों योगियोंमें रस परिपाक अवस्था पकनेपर ही होता है।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्त रैदास

"व्यास बड़ाओ छोडिके, हरि चरनन चित जोरि।
अेक भक्त रैदास पै, बारौं ब्राह्मण कोरि।"

: श्री शंभुप्रसाद बहुगुणा :

रैदास रामानन्दके शिष्य थे, रामानन्द (१२९९–१४४८ अी.) के शिष्योंमें अुनकी गिनती पन्द्रहवीं शताब्दीसे ही होने लगी थी। सेनी (१४४५ अी.) ने अुन्हें कबीरका गुरुभाअी लिखा है। चेतनदासने जोकि रामानन्दके संपर्कमें रहे हुअे व्यक्ति थे अपने प्रसंग पारिजातमें जोकि १४६० अी. में रचा गया, कबीर, पीपा, सेनी, धना, रैदास आदिको रामानन्दके प्रमुख बारह शिष्योंमें बताया है और नाभादासने अपने भक्त-मालमें रामानन्दके शिष्योंमें अनन्तानन्द, कबीर, सुषा, सुरसुरा, पद्मावति, नरहरि, पीपा, भवानन्द, रैदास, धना, सेन, सुरसरि आदिकी गिनती करके रैदासके बारेमें लिखा––

सन्देह ग्रंथि खंडन निपुन वानी विमल रैदासकी।
सदाचार स्मृति सास्त्र वचन अविरुद्ध अुचारचौ
नीर छीर विवरन परम हंसनि अुर धारचौ
भगवत कृपा प्रसाद परम गति अिहि तनु पायौ
राज-सिंहासन बैठि ज्ञाति परतीति दिखायौ।
बर्नाश्रम अभिमान तजि पद रज बन्दहि जासकी
सन्देह ग्रंथिखंडन निपुन वानी विमल रैदासकी।

नाभादास और सेनी दोनों ही रामानन्दी परंपराके हैं। नाभादासने सेनीका नाम रैदासके शिष्योंमें गिना। रेवासाकी रामानन्दी परम्परामें नाभादास आते हैं। रामानन्द, अनन्तानन्द, कृष्णदास, अग्रदास, विनोदी, नारायणदास, नाभादास अिन्हीं नाभादासके गुरु भाअी अनन्तदास हुअे जिन्होंने सन् १५८९ अी. में पीपा, कबीर, रैदास, मीरा आदिकी परचियाँ लिखीं। अनंतदासनें पीपा परचीमें यह भी लिखा है कि पीपाके यहाँ अेक समय रामानन्द, कबीर, रैदास पहुँचे। पीपा तथा अुनकी रानी सीताने अुनका खूब सत्कार किया––

दास कबीरा करी बड़ायी,
गुरु समानि जेठे गुरु भाअी।
बहुत मान रविदासहि दीन्हों,
जितनों हित स्वामीकों कीन्हों।

रैदासका समय पंजाबी रैदासी परम्परामें १४१५ अी. से १५४० अी. तक माना जाता है। अिस बीच वल्लभ (१४७८-१५३५ अी.), सूर (१४७८-१५८३ अी.), चैतन्य (१४८३-१५३३), मीरा (१४८८-१५४६ अी.) आदिका अुदय हो गया था। मीरा रैदासकी शिष्या मानी जाती है। अुनके नामसे मिलनेवाले कअी पदोंमें गुरु सन्त रैदासका नाम * आया है और अेक पदमें चैतन्यका भी नाम पाया जाता है।

स्याम किशोर भयो नव गोरा, चैतन्य जाको नाँव।
गौर कृष्णाकी दासी मीरा, रसना कृष्णा बसै।

मीराके पदोंमें कृष्ण तथा रामकी सगुण निर्गुण भक्ति पायी जाती है। अैसी ही प्रवृत्ति रैदासमें भी रही किन्तु निर्गुणकी मात्राके आधिक्यके कारण।

सेनी (सन् १४४५ अी. के आसपास) काशीमें अुस समय हुआ जब कि झाली रानीने रैदाससे दीक्षा ली थी। अपनी आँखों देखा रैदास कबीर संवाद लिखा। अुसको पढ़नेसे विदित होता है कि रैदासका झुकाव पहिले कृष्णकी ओर था––

---

* मीरा म्हाने सन्त हैं, मैं सन्तोंकी दास,
चेतन सन्ता सैन ये दीसत गुरु रैदास।
मीरा सतगुरु देवकी करै वन्दना आस,
जिन चेतन आतम कह्या, धन भगवत रैदास।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai

निरगुण सगुण मेरा ठाकोर, जाके रूप न रेखा,
सो मैं देखा नन्द गोकुलमें ब्रह्म गोपके वेषा।
प्रगत्य समानी परम पुरुषमें, सो वृन्दावन आया,
गोपनके संग ग्वालनके संग चूटकी दे दे नचाया।

किन्तु बादको कबीरके निर्गुणके प्रभावमें वे आये और अुन्होंने निर्गुण सगुणकी अेकता स्वीकार की।

रैदासके बारेमें पन्द्रहवीं सोलहवीं शताब्दीमें सेनी (१४४५ अी.), मीरा (१४९८–१५४६), नाभादास (अी. १५४३–१६२३) ने भी थोड़ा बहुत लिखा है किन्तु अनन्तदास (१५८९ अी.) पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने रैदासका परिचय विस्तारसे दिया है। अनन्तदासके कथनानुसार—

रैदास पूर्व जन्ममें ब्राह्मण थे। हरिजनोंकी सेवा करते थे और मांस खाते थे—अिसी अपराधसे नीच कुलमें शाक्त चमार घरमें काशीमें अुन्हें जन्म मिला। बालक रैदास भोजन ग्रहण न करता था। रामानन्दको अर्द्धरात्रिमें आकाशवाणी हुअी। रामानन्दने बालकको मरनेसे बचाया और सारे परिवारको हरिभक्त बना लिया। सात ही वर्षके रैदास थे कि अुनमें नवधा भक्ति दृढ़ हुअी। बड़ा होनेपर परिवारने अुसे अलग कर दिया। बखारके पिछवाड़े अुसको जगह दी, चमड़ा मोल लेकर लाते और जूते बनाते। टूटे फाटेको जोड़ते। परिश्रम करनेमें आनाकानी नहीं करते थे। अलग भोजन बनाते। भक्तिमय जीवन बिताते। अिस प्रकार रैदासने पांच साल तक तपोमय जीवनसे शरीरको कसा। भक्तका वेष बनाकर भगवान अुनके घर आये। रैदासने बड़ी आव भगत की। भगवानकी चर्चा पहले की फिर भोजन बनाकर अतिथिको जिमाया। दरिद्रतासे छुटकारा देनेके लिये भगवानने रैदासको पारस देना चाहा, सुअीको छूकर सोना बनाकर दिखाया, रैदासने कहा—आप ही अिसको अपने पास रखकर वैभव भोगिये। साधुने बड़ी अनुनय विनय की। रैदासके पांवोंपर पारस पत्थरको रख दिया। अतिथिका मन रखनेके लिये रैदासने कहा कि कपड़ेपर बाँधकर अिसे छप्परमें खोंस दीजिये। वर्षभर बीतनेपर हरि फिर आये तो देखा कि पारस पत्थर जहांका तहां धरा है। भगवान तब अुसके घर प्रति दिन पांच अशरफियां छोड़ जाने लगे। रैदास अुनसे सन्तोंकी सेवा तथा महोत्सव करने लगे। ब्राह्मणोंने विरोध किया। ब्राह्मण लोग बघेला राजाके पास पहुँचे और कहा कि नीच जातिका व्यक्ति शालिग्रामकी पूजा नहीं कर सकता। वाद-विवाद बहुत बढ़ गया तो रैदासने भी ब्राह्मणोंको ललकारा। निश्चय यह हुआ कि सिंहासनपर बैठे हुअे सालिगराम जिसके बुलानेसे अुसके पास चले आवें अुसकी विजय। आधे दिन तक तो सालिगराम टससे-मस न हुअे; किन्तु रैदास भक्तिमें अविचल रूपसे लवलीन हो गये और अुनके नेत्रोंसे अविरल अश्रुधारा छूटने लगी तो सालिगराम स्वयमेव अुनकी गोदीमें आ विराजे।

पाँच वर्ष बीत जानेपर चित्तौरकी झाली रानीके मनमें आया कि किसी पक्के गुरुसे दीक्षा लेकर अपनी भक्तिको दृढ़ करना चाहिये। जिस किसी भक्तको रोक पाती अुसीसे अिस सम्बन्धमें पूछती। पता लगा कि केवल दो सन्त अैसे हैं जिनसे दीक्षा लेना अुचित है; काशीके कबीर और रैदास, रानीने दीक्षा लेनेका निश्चय किया। दीक्षा लेनेके लिये रानी काशी जा रही है यह सुनकर ब्राह्मण भी अिस आशासे साथ हो लिये कि रानी हमीसे दीक्षा लेगी। रानीके बरजनेपर भी वे अुसके साथ काशी आ पहुँचे। रानीने पता लगवाया तो कबीरको बहुत कंगालीकी हालतमें पाया। रैदास बड़े वैभवशाली थे। रानीने अुन्हींसे देवोत्थानी अेकादशीको दीक्षा ली। अिसपर ब्राह्मणोंने धरना घर दिया और पूर्णिमाके दिन बखेड़ा खड़ा किया। बाँधव गढ़के बघेला राजा और सेना नायी आये। अुन्होंने ब्राह्मणोंको समझाया लेकिन वे माने नहीं। कठिनाअीमें रैदासने कबीरका स्मरण किया। कबीरने कहला भेजा कि शालिगरामको मध्यस्थ बनाओ। सालिगरामने स्पष्ट वाणी कही कि रैदासका कर्म अुचित है।

रैदास अपने साथ सेनीको लेकर कबीरके दर्शनको गये। कबीरनें निर्गुणका अुपदेश दिया, रैदासनें सगुणकी हठ की। बादको कबीरकी शिक्षाका रैदासपर प्रभाव पड़

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर रहा और अुन्होंने सगुण निर्गुणकी अेकताको स्वीकार किया और निर्गुणका ध्यान करने लगे। कबीरके चरणोंमें रैदास गिर पड़े तो सेनीने रैदासको गुरुके रूपमें स्वीकार कर लिया।

अेक बार झाली रानीने कुछ भक्तोंको भेजकर रैदासको अपने राज्यमें आमंत्रित किया। रैदासने अिस बारेमें कबीरसे परामर्श किया। कबीरने जानेका आदेश दिया। कबीरका आदेश पाकर रैदास आये। राजसी ठाठसे अुनका स्वागत हुआ और अेक वृहद् भोजकी तैयारी रानीने की। ब्राह्मणोंने भोजमें विघ्न करनेकी सोची। रानीको पता लगा तो बहुत समझाया, पर वे न माने। अन्तमें यही निश्चय हुआ कि पहिले ब्राह्मण ही रसोअी जीमेंगे। ब्राह्मणोंने निश्चय किया कि दिन भर बैठे खाते रहो, देखें रैदासको जीमना फिर कैसे नसीब होता है। असंख्य ब्राह्मण भोजमें सम्मिलित होनेको आये किन्तु जीमने जब बैठे तो सबने अपनी अपनी बगलमें रैदासको बैठा पाया। रैदासके डेरेपर अेक आदमी भेजा गया अुसने अुन्हें डेरेपर बैठे पाया। अिस चमत्कारसे ब्राह्मणोंने हार मानी और रैदाससे क्षमा मांगी। रैदासने ब्राह्मणोंकी प्रशंसा की और कहा कि मैं भी पूर्व जन्ममें ब्राह्मण था। हरि-भक्ति न करनेके कारण अिस बार नीच कुलमें जन्म ग्रहण करना पड़ा। आप लोग भी अपना जन्म सुधारिये। राजा-प्रजा सबने रैदाकी स्तुति की।

जन्मसे ही कोअी अुच्च वर्णका नहीं हो जाता। अहिंसा, तप और हरिभक्तिसे वर्णकी अुच्चता प्राप्त होती है। अुच्च कर्म न करनेसे अुच्च कुलमें जन्मे भी नीच वृत्तियोंसे युक्त हो जाते हैं। अहंकारसे हानि होती है। अैश्वर्य वैभव लुभावने आकर्षण हैं। भगवान अिनको प्रस्तुत कर भक्तकी परीक्षा लेते हैं किंतु सच्चा भक्त अिनके जालमें नहीं फँसता। राजासे भी बड़ा अीश्वरका सच्चा भक्त होता है। सच्चा भक्त परिवारके साथ रह कर भी स्वावलम्बी रीतिसे रहकर भगवानकी भक्ति करता है...आदि ध्वनियाँ अिस कथासे निकलती हैं। स्त्री-पुरुषका भेदभाव भक्तिमार्गमें नहीं। सामुको अहंकारसे दिया हुआ अन्न नहीं ग्रहण करना चाहिये। रैदास सच्चे भक्त थे।

ब्राह्मण भोजमें त्वचामें सोनेका जँनेअू दिखाने तथा चामका सिक्का ब्राह्मणके हाथ गंगाको चढ़ाने देना, गंगाका सोनेका कंगन ब्राह्मणको रैदासको देनेको देना, ब्राह्मणका अुससे ललचा जाना, गंगाका रैदासके यहाँ आकर चामका सिक्का लेना आदि बातें अिस कथामें नहीं हैं।

जैपुरकी रामानन्दी-शिष्य परम्परामें क्षेमदास हुअे जिनके शिष्य रामदासके शिष्य छबीलेदासके संपर्कमें मन्मथपंथी भोलाराम (१७५०-१८४० अी.) आये। भोलारामने रैदास, कबीर, सेनी, नामदेव आदि संतोंका स्मरण किया है। रामानन्दसे क्षेमदास तककी जैपुरी परम्परा अिस प्रकार है। रामानन्द, अनन्तानन्द, कृष्णदास टीला, लाहाराम, अंगद परमानन्द, गोदावरीदास, भागीरथीदास, क्षेमदास। क्षेमदासने सन् १६६२ अी. में भक्त पचीसी लिखी जिसमें रैदासके विषयमें यह कवित्त है—

राखी रज राजाहूके आगे रयदासजीकी
कनक जनेअू कन्ध गंग अुलटायी जी,
नृपके सिंहासनमें बैठे ही सभा दबायी
दीनियर आगे दीप राजत रजाअी जी,
निगम अुचारे द्विज सारे पचिहारे तब
पानी माँहि पाहनकी प्रतिमा तिरायी जी,
फीके भये विप्रमुख, भूपहू न राषो कष
षेमदास दासन कौ दीन्हो है बड़ाअी जी।

गंगा अुलट लेनेकी कहानी षेमदासके समयसे पहिले गढ़वालके निरंकार मन्त्र गीतोंमें मिलती है। चामका सिक्का और सोनेका कंगना दोनोंकी ही कथा निरंकार मन्त्रमें मिलती है।

नाभादासके भक्तमालका विस्तार प्रियादासने सन् १७१२ अी. में भक्तिरस बोधिनीमें किया। प्रियादासने रैदासके बारेमें ये छंद लिखे हैं—

(१) रामानंद जू कौ सिष्य ब्रह्मचारी रहे अेक
गहे वृत्ति चूटकीकी कहे तासों बानियों।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करो अंगीकार सीधो कहि दस बीस बार,
बरषे प्रबल धार तामें वापि आनियों।
भोगको लगावें प्रभु ध्यान नहिं आवे अरे,
कैसें करि ल्यावे जाअि पूछि नीच मानियों।
दियो साप भारी बात सुनो न हमारी घटि
कुलमें अुतारी देह सोअी याकों जानियों।२५६।

(२) माता दूध प्यावे याकों छुओअू न भावे सुधि,
आवे सब पाछिली सु सेवाको प्रताप है।
भअी नभबानी रामानंद मन जानी बड़ो
दंड दियो मानी बेगि आये चल्यो आप है।
दुखी पिता माता देखि धाय लपटाय पाय,
कीजिये अुपाय कियो सिष्य गयो पाप है।
स्तनपान कियो जियो लियो अुन्ह अीस जानि,
निपट अजानि फेरि भूलो भयो ताप है।२५७।

(३) बडेअी रैदास हरिदासनि सों प्रीति करी,
पिता न सुहायी दअी ठौर पिछवार हीं।
हुतो धन भाल कन दियो हू न हाल तिया,
पति सुख जाल अहो कियो जब न्यारहीं।
गाँठै पगदासी कहूँ बात न प्रकासी ल्यावे,
खाल करें जूती साधु संतको सँभारहीं,
डारी अेक छानि कियो सेवाको सुस्थान रहे,
चौड़े आप जानि बाँटि पावे यहि धारहीं।२५८।

(४) सहे अति कष्ट अंग हिये सुखसील रंग,
आये हरि प्यारे लियो भक्त भेष धारि कै।
कियरो बहु मान खान पान सों प्रसन्न ह्वै कै,
दीनो कह्यो पारस है राखियो सँभारि कै।
मेरे धन राम, कछु पाथर न सरै काम,
दाममें चाहों, चाहों डारौं तन वारि कै।
राँपी अेक सोनों कियो दियो करि कृपा राखी
राखो यह छानि माँझ लेहो जु निकारि कै।२५९।

(५) आये फिरि स्याम मास तेरह बितीत भये,
प्रीति करि बोले कहो पारसकी रीति कौं।
वाहि ठौर लीजै मेरो मन न पतीजै अब
चाहों सोअी कीजै मैं तो पावत हौं भीति कौं।
ले के अुठि गये नये कौतुक सो सुनो पावें,
सेवक मुहर पाँच नित ही प्रतीति कौं
सेवहु करत डर लाग्यो निसि कह्यो हरि,
छोड़ो अर आपनी औ राखो मेरी जीति कौं।२६०।

(६) मानि लअी बात नअी ठौर लै बनायी चाह,
संतनि बसायी हरि मंदिर चिनायो है।
विविध बितान तान गनो जो प्रमान होअी,
भोअी गअी भक्ति पुरी जग जस गायो है।
दरसन आवें लोग नाना विधि राग भोग,
रोग भयो विप्रनि कौं तन सब छायो है।
बडेअी खिलारी वे रहे हैं छान डारि करी,
घरपै अँटारी फेरि द्विजन सिखायो है।२६१।

(७) प्रीति रसरासि सों रैदास हरि सेवत हैं,
घरमें दुराअि लोक रंजनादि टारी है।
प्रेरि दिये हृदै जाअि द्विजनि पुकार करी,
भरी सभा नृप आगे कह्यो मुख गारी है।
जनकौं बुलायी समुझायी न्यायी प्रभु सौंपि,
कीनों जग जस साधु लीला मनुहारी है।
जीते प्रतिकूलमें तौ मानें अनुकूल या तें,
संतनि प्रभाव मनि कोठरीकी तारी है।२६२।

(८) बसत चितौर माँझ रानी अेक झाली नाम,
नाम बिन कान खाली आनि सिष्य भअी है।
संगहुतें विप्र सुनि छिप्र तन आगि लागी,
भागी मति नृप आगे भीर सब गयी है।
वैसेहि सिंहासन पै आयि कै बिराजे प्रभु,
पढे बेदवानी पै न आये यह नयी है।
पतित पावन नाम कीजिये प्रगट आजु,
गायो पद गोद आयी बैठे भक्ति लअी है।२६३।

(९) गयी घर झाली पुनि बोलिके पठाये अहो,
जैसे प्रतिपाली अब तैसें प्रतिपारियै।
आपु हू पधारे अुन बहु धन पट वारे,
विप्र सुनि पाँव धारे सीधौ दै निवारियै।
करि कै रसोअी द्विज भोजन करन बैठे,
दै दै मधि अेक यों रैदासकों निहारियै।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखि भओ आँखें दीन भाखें सिख लाखें भये,
स्वर्णको जनेऊ काढ्यौ त्वचा कीनी न्यारियै ।२६४।

प्रियादासने रैदास विषयक यह कथा अनंतदास कृत रैदास परचीके आधारपर लिखी है ।

रैदासने चमार कुलमें अपने जन्म होनेका संकेत दिया है --

(१) मेरी जाति विखिआत चमार (२) मेरी जाति कुटुंबा ढला ढोर ढोवंता नित ही बनारसी आस पासा (३) जाके कुटुंबके ढेढ सब ढोर ढोवंत फिरहिं अजहुँ बनारसी आस-पासा, आचार सहित विप्र करहिं डंडवति तिनि तनै रविदास दासान दासा । (४) मोर कुचिल जाति कुचिलमें वास (५) नीचसे प्रभु ऊंच कियो कह रैदास चमारा ।

रैदासने कबीरके तिरनेकी और दादूने रैदासके तिरनेकी बात लिखी है। दादूके शिष्य रज्जबने (१५६७–१६८९ ई० में) अपनी सर्वांगीमें भक्त रैदासको चमारीके गर्भसे अुत्पन्न बताया है--

चमारी ग्रमें अुत्पन्नौ, रैदासो महामुनी,
अुत्यम ब्रह्म सुमिरनं नामं, तत्स्मात क्यं नांति कारणं ।

भविष्योत्तर पुराणमें रैदासके विषयमें ये तीन तीन श्लोक मिलते हैं--

चर्मकार गृहे जातो द्वितीयः पिंगला पतिः ।
भानदासस्य तनयो रैदास अिति विश्रुतः ।
पुरीं काशीं समागम्य कबीरं रामतत्परं ।
जित्वा मत विवादेन शंकराचार्य मागतः ।
पराजिस्स रैदासो नत्वातं द्विज सत्तमम ।
रामानंद मुपागम्य तस्य शिष्यत्व मागतः ।

मानदासका माणदास गुरुके रूपमें अुल्लेख रैदासके गुजराती पदोंमें मिलता है-- "गुरु माणदासे मोहे बताओ रवीदास यं भरथ आ" ।

चंवरवंश पुराणमें रैदासका नाम यशवंत भी दिया गया है और रैदासको रघ्घूका पुत्र कहा गया है। रघ्घूको रैदासके पिता और धुरविलियाको रैदासकी माताके रूपमें जनश्रुति भी जानती है ।

बीसवीं शताब्दीमें जरादपुरके वरुशीदासने रैदास रामायणमें लिखा है हरिनन्द और चतुर कौरके पुत्र राहुकी तीन पत्नियाँ करमा, कलदेवी तथा जैनदेवी हुअीं । करमाके गर्भसे रैदासका जन्म हुआ, रैदाससे अपना परिचय स्वयं दिलवाया है--

काशीपुरी ढिंग नगर हमारा,चँवर वंस अरु शूद्र कुमारा
राहू चक्र हमारे ताता, कर्मा जननी गर्भकी माता ।
माडुर नगर लीन औतारा, रविदास शुभ नाम हमारा,
पिपलग गोत्र अरु सूर्य अुपासी, निशि दिन रटत
अलख अविनासी ।

सन १८४० अी में रामचरण कुरीलने (जन्म १८८२ अी.) अपनी रैदास सत्यकथा छपवायी जिस में रैदास विषयक चित्र और नकशे भी छपे हैं अिसमें बताया गया है रैदासकी मृत्यु मेवाड़में हुअी । और झालीं रानी राणा अुदयसिंह (१४६८–१४७३ अी.) की पत्नी थीं । कुरीलने रैदास विषयक महत्वपूर्ण कथाओं तथा पदोंका संकलन अिससें देकर रैदासको अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की है--

आशा की टेकी लगा, जगसे रहे अुदास ।
ज्ञान भास्कर भक्तिके, जगको दिया प्रकाश ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शान्तनु

: श्री 'अमिताभ' :

[रथकी गड़गड़ाहट, पहियोंके घुंघरुओंकी झनकार, अश्वोंकी हिनहिनाहट]

मंत्री :—क्षितिजको छूते मैदानोंकी सीमायें पीछे छूट गयीं । यह नगराज हिमाचलका अंचल है, महाराज !... यह सघन वन-राजि; सजग प्रहरीसे देवदारुके विशाल वृक्ष !.....

शान्तनु :—मंत्री ! कितनी सुन्दर है यह पर्वतीय भूमि ? माँ वसुन्धराके वक्षस्थलपर सोयी भोली बालिका-सी—मधुमयी अुषा, नित्य अिसके पिंगल केशोंपर स्वर्ण-किरीट रखती है। रागमयी संध्या, अिसके अरुण कपोलोंको चूम, और भी रक्ताभ कर जाती है। शांतिमयी रजनी अिसे तारोंकी झिलमिलाती चादर अुढ़ाकर सुला देती है। तब सोते-सोते भी अिसके कंठसे किसी गीतके बोल फूट पड़ते हैं—नदियोंका कल-कल, छल-छल संगीत !

मंत्री :—यह संगीत ही तो ऋषि-कलाकारोंके गीतोंको प्रेम और सौन्दर्यका दिव्य स्वर देता है, देव !

शान्तनु :—सत्य है । कहते हैं कि कैलाशके राजा शिव, अिन शैल-शिखरोंपर भाव-विभोर होकर सांध्य-नृत्य करते हैं। अचेतन सृष्टिमें नव-प्राणोंका संचार करते हैं तब वन-श्रीके कल-कंठसे ही मानों साम-गान फूट पड़ता है। कवित्वका प्रेरणा-निर्झर— (अुंगुली से दूर दिशामें संकेत करते हुअे) वह सूर्यकी किरणोंसे झलमलाती जल-धारा देख रहे हो न ?

मंत्री :—वह तो भगवती भागीरथीका तट है, प्रभु !

शान्तनु :—वही नभवासिनी जब पृथ्वीपर स्वर्गकी श्री ही नहीं, संगीत भी लेकर अुतरीं, तब ऋषियोंने अुनके स्वरमें स्वर भरकर मंगल-गान गाये। बचपनमें पिता हिमाचलके पाषाण-भवनसे मचलकर निकलती नन्हीं बालिका-सी—वय-सन्धिमें अपने ही लावण्यकी प्रतिच्छवि देख, मंद हंसी हंसती मुग्धा सी। देखते नहीं महामंत्री— जान्हवी आज भी तो अपनी ही कल्पनाके लोकमें खोयी, विचारोंके वेगमें बहती, गुन-गुनाती चलती जा रही हैं। सारथि ! रथको अुनके तटवर्त्ती मार्गपर ले चलो।

(रथ चलता जा रहा है। वीणाका स्वर अुभरता है।)

शान्तनु :—कितनी मधुर स्वर-लहरी है ?

मंत्री :—मानों साक्षात् वन-देवीकी अुंगलियां वीणापर खेल रही हों।

(महाराज शान्तनु रथसे अुतरकर वनमें प्रवेश करते हैं। वे देखते हैं कि अेक अनिन्द्य सुन्दरी, स्फटिक शिलापर वीणा लिये बैठी है। राजाको देखते ही झंकार थम जाती है।)

शान्तनु :—(निकट जाकर) वीणा मौन क्यों हो गयी, देवि !

(स्त्री कोअी अुत्तर नहीं देती)

शान्तनु:— अिसकी झंकार तो मुझे अुस लोकमें लिये जा रही थी, जहाँ रस, प्राण और माधुर्यकी त्रिवेणी बहती है। दिव्य-रूपे ! क्या मैं तुम्हारा परिचय जान सकता हूँ ? कौन हो तुम ? किसी कण्वकी कुटीकी शोभा, वन-कन्या शकुंतला-सी— लगता है कि मैंने पहले भी तुम्हें कहीं देखा है।

[स्त्री सहसा बोल पड़ती है] आपन मुझे देखा है ? कहाँ... स्मरण तो नहीं।

शान्तनु:— स्मरण नहीं कहाँ ? पर लगता है कि युग-युगकी परिचिता हो, हृदयके किसी अेकान्त कक्षमें अभी-अभी मीठी नींद ले रही थी और अब अंगड़ाअी लेकर अुठ बैठी हो।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्त्री:– युवक! शब्द कहते हैं कि तुम वाणीमें मधु घोलनेवाले, स्वप्न-द्रष्टा कवि हो।

शान्तनु:– देवि! शान्तनुके जीवनकी यह प्रथम प्रणयानुभूति, अुसके यौवनका प्रथम दिवा-स्वप्न ..

स्त्री:– (घबराहट और आश्चर्यसे) तो .. तो आप शान्तनु हैं। हस्तिनापुरके महाराज!

शान्तनु:– क्यों! तुम्हें आश्चर्य हो रहा है! .. अरे, तुम तो अुदास हो गयीं।

स्त्री:— कुछ नहीं महाराज!

शान्तनु:— (आग्रह पूर्वक) फिर भी तो!

स्त्री:— केवल आपकी अुपमा स्मरण हो आयी, 'किसी कण्वकी कुटीकी शोभा वन-कन्या शकुंतला-सी' महाराज! दुष्यंत भी सम्राट् थे, वे भी स्वर्ण-मुकुट पहिन, मृदुवचनोंकी गठरी लाद, प्रेमका क्रय-विक्रय करने निकले थे।... भोली शकुंतलाकी करुणा, आज भी ऋषि-कन्याओंके नेत्रोंमें आँसू ले आती है। वह अहेरी, जो हिरणोंको कठोर बाणोंसे वेधनेके पहले बीन भी बजाना जानता है, भोले, निरीह प्राणी जिसकी तानपर झूमने भी लगते हैं, सचमुच बहुत निर्दय होता है।

शान्तनु:—प्रत्येक व्यक्ति अेकसा नहीं होता, देवि।

स्त्री:— क्षमा करें महाराज! टकसालमें ढलनेवाली मुद्राअें अेकसी ही होती हैं। जो नहीं होतीं वे खोटी कहकर समाजसे अलग कर दी जाती हैं। मैं विवश हूँ महाराज, अेक वन-कन्याके जीवनमें सम्राट् प्रवेश न कर सकेगा।

शान्तनु:— यदि सम्राट सम्राट बनकर नहीं, अेक अकिंचन प्रेमी बनकर आये तो! मनुष्यको अुसके प्रेमके अधिकारसे तो वंचित न करो, देवि।

स्त्री:— फिर भी महाराज, हम अिस सौन्दर्य-लोकके वासी हैं— वन-मृगोंसे स्वच्छंद, पर्वत-शिखरसे छूटी जल-धारासे अबाध, आपके राज-नियमोंकी कारामें.....

शान्तनु— (बीच हीमें) देवि! शान्तनु, पाषाण खंड बनकर अिस जल-धाराके पथको कभी न रोकेगा। वह मुक्त होकर जिधर चाहेगी, बहती रहेगी। देवगण साक्षी हों।

द्वितीय दृश्य

[राजद्वारपर बजती हुअी शहनाअीका मीठा स्वर लहरा रहा है। अेक भव्य प्रासादमें स्वर्ण-सिंहासनपर महाराज शान्तनु बैठे हैं। नर्तकियोंका नृत्य चल रहा है।]

शान्तनु:— कुमारके जन्मोत्सवका अुपहार; यह मुक्ताहार लो, राजनर्तकी। आज शान्तनु अितना प्रसन्न है कि कुबेरका रत्न-कोष लुटाकर भी अुसका मन तृप्त नहीं होगा।

[प्रतिहारीका प्रवेश] महाराजाधिराजकी जय हो। महामंत्रीजी पधारे हैं!

शान्तनु:— नर्तकियो! तुम जा सकती हो।

[नर्तकियाँ जाती हैं। मंत्री प्रवेश करते हैं।]

मंत्री: — (कंठ अवरुद्ध, शिथिल-सा स्वर) महाराजकी जय हो।

शान्तनु:— (प्रसन्न मुद्रा) आओ, महामंत्री!... देखा! आज पौर-जन कितने प्रसन्न हैं! अनगिन दीपोंकी माला पहिनकर अिन्द्रप्रस्थ नगरीने आज अपना रूप ही बदल डाला है।

मंत्री.— (कंपित स्वरमें) प्रभु! अपराध क्षमा करें।

शान्तनु:— (चौंककर) हैं! यह क्या! कांपते अधर, छल-छलाती आँखें, भग्नदूतसे डगमगाते पाँव!... वज्रपुरुष! तुम्हारी यह दशा देखकर मेरा मन अप्रिय आशंकाओंसे घिर अुठा है।

मंत्री:— मंगल-मय विभु रक्षा करें, महाराज कुमारके प्राण संकटमें हैं।

शान्तनु:— (अुद्विग्नतासे) यह क्या कह रहे हैं महामंत्री; राजवैद्य आ गये, कुछ अुपचार किया गया? बोलो, बोलते क्यों नहीं!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मंत्री:— (धीमे स्वरमें) राजमहिषी कुमारको जल-समाधि देने गंगातटपर जा रही हैं। सारथीको रथ ले आनेका आदेश मिल चुका है।

शान्तनु:—(विव्हल स्वरमें) हे भगवन्! पुष्प-सा सुकुमार शिशु और क्रुद्ध नागिन-सी फुफकारती लहरें।

मंत्री:— चित्तको शांत कीजिये। कुमारकी प्राण-रक्षाका यत्न कीजिये महाराज!

शान्तनु:— महामंत्री! बार-बार यही अप्रिय घटना घटती रही और मैं अपने आपको भुलावेमें रखता रहा। सोचता कि दुधमुंहा शिशु जब अपने पतले-पतले, लाल-लाल ओठोंको बिसूरकर रो अुठेगा तो अबकी बार माँ अिसे अपने कलेजेसे चिपका लेगी। पर...पर मेरे सपनोंने मुझे फिर यथार्थकी कठोर धरती पर पटक दिया; किन्तु आत्माको तो बार-बार नहीं छला जा सकता। अुसका स्वर तो बार-बार अनसुना नहीं किया जा सकता।

[दृश्य परिवर्तनके लिये संगीतकी हल्की लहर]

रानी:— (अपने कक्षमें किसीके पैरोंकी आहट सुनकर) कौन? मल्लिके?

शान्तनु:— मैं हूँ प्रिये।

रानी:— (चौंककर) आप?

शान्तनु:— लालका नन्हा-सा मुखड़ा देखनेकी लालसा जग पड़ी तो आँख कैसे लगती? कितना सुन्दर है?

(दासीका प्रवेश) महादेवि! बाहुल रथ लेकर अुपस्थित है।

शान्तनु:— (आश्चर्य प्रदर्शित करते हुअे) रथ? कौन जा रहा है, रथपर?

रानी:—(शिथिलसे स्वरमें) मैं ही...(दासीसे) दासी! बाहुलसे कहो कि द्वारपर प्रतीक्षा करे।

दासी:— जो आज्ञा। (दासी जाती है)

शान्तनु:— रातका पहला पहर बीत चुका है। नगरकी दीपमालाओंकी ज्योति मंद हो चुकी है। अिस समय कहाँ जा रही हो, प्रिये?

रानी:—अिस शिशुको गंगाकी लहरोंको सौंपने—

शान्तनु:— नहीं, नहीं। यह न करो देवि, प्रजा अपने भावी युवराजका जन्मोत्सव मना रही है। आनंदमें विभोर है। अुसके मन-मुकुरपर अैसा निर्मम आघात न करो। वह चूर-चूर हो जायेगा। ललनाओंके नृत्यमें थिरकते पाँव सहमकर थम जायेंगे। अुनके हवामें मंडराते गीत परकटे पक्षीकी भांति भूमिपर आ गिरेंगे।

रानी:— (व्यंग पूर्वक) देखती हूँ कि राजाको अपनी प्रजाकी बहुत अधिक चिन्ता है। अुसने तो कहा था कि वह मेरे जीवनमें राजा नहीं अेक प्रेमी, अेक सामान्य व्यक्ति बनकर आयेगा।

शान्तनु:— अुसने जो कुछ कहा था, वह आज भी अुतना ही सत्य है जितना अुस दिन था। शान्तनु आज भी राजा बनकर तुम्हें अपनी आज्ञाओंसे बाध्य करने नहीं आया।

रानी:— तो फिर क्या पिताका स्नेह दिखाने आये हैं?

शान्तनु:—वह भी नहीं। मैं अेक मनुष्यके नाते यह कहने आया हूँ। शिशु, माता-पिताका ही नहीं समस्त मानवताका भविष्य होता है। कौन जानता है कि यह अेक दिन राम बनकर आर्यों और अनार्योंके बीचमें अुदार विचारोंका सेतु न बांधे? कौन कह सकता है कि यह अेक दिन पृथ्वीपर किसी महान आदर्शकी प्राण-प्रतिष्ठा न करे? महादेवी! शिशु तो अेक धरोहर है, जो जननीको पालनेके लिये सौंपी जाती है।

रानी:—किन्तु अिसके पालनका अुत्तर-दायित्व तो जननीपर ही है न? वह चाहे अिसे स्वीकार करे, चाहे न करे।

शान्तनु:—फिर भी अुसे शिशुकी हत्या करनेका कोअी अधिकार नहीं है। देवि! अिस विशाल संसारमें कुछ व्यक्ति केवल अेक बार मिलकर फिर कभी नहीं मिल पाते। क्या वे अेक दूसरेके लिये मर नहीं

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाते ? तुम भी समझ लो कि कुमार तुम्हारे लिये जीवित नहीं। लाओ, अिसे मुझे दो और विश्वास रखो कि अब तुम अिसे कभी न देख सकोगी। मैं यह शिशु अुसे दूंगा जो ललककर अिसे हृदयसे लगा लेगी। आंचलकी छायामें छिपा लेगी और अिसपर तुम्हारी अमंगल.....

रानी :—(बीच ही में चीखकर) महाराज ! यह मेरे नारीत्वका अपमान है।

शान्तनु :—नारी ! नारीत्व जीवन-विटपपर झूमंता हुआ अेक फूल है, जिसकी सार्थकता मुरझा जानेमें नहीं, मातृत्वका मधुर फल बननेमें है। फल जो सृष्टिको नये बीज देता है।

रानी :—मैं यह सब तर्क नहीं जानती महाराज ! मुझे अेक ही प्रश्नका अुत्तर चाहिये। आपको कौन अधिक प्रिय है ? प्रेयसी या पुत्र ? आप किसका अुत्सर्ग कर सकते हैं ?

शान्तनु :—प्रेयसी मेरे प्राणोंका स्वर है। मेरे जीवनका संगीत है। प्रणय मूक होता है वह पुकार कर कहता है कि तुम्हारे विरहका अेक-अेक क्षण मेरे जीवनका भार बन जायगा।

रानी :—फिर भी अितना आग्रह ? बालूकी नींवपर तर्कोंका अितना विशाल दुर्ग ?

शान्तनु :—अिसलिये कि शान्तनुका रोम-रोम पश्चात्तापकी अग्निसे जल रहा है। जब वह स्वर्ण-सिंहासनपर राज-दण्ड लेकर बैठता है, तब जान पड़ता है कि कविके स्वप्नसे मनोरम, अधखिले गुलाबसे सुन्दर नन्हें-नन्हें मुखड़ोंने अुसे चारों ओरसे घेर लिया है। फिर वे कातर दृष्टिसे देखने लगते हैं। मानो पूछ रहे हों, 'पिता ! तुम सबको न्याय देते हो किन्तु हम अबोध शिशुओंको जल-समाधि दे दी गयी और तुम देखते ही रहे।' रानी ! अुस समय जान पड़ता है कि मेरा अस्तित्व, आत्मप्रवंचना है और मेरा न्याय, आडम्बर !

रानी :—महाराज ! मैं समझती हूँ कि मेरे प्रश्नको अपना अुत्तर मिल गया है। मेरा प्रणाम स्वीकार करें। (चल देती है।)

शान्तनु :—महादेवी ! दुराग्रह न करो !..... ठहरो... ...आह !.....चली गयीं। अिस घनघोर तमिस्रामें नवजात शिशु लेकर चली गयीं।

तृतीय दृश्य

(काल के प्रवाहमें दस वर्ष बह गये। अेक दिन महाराज शान्तनु फिर अुसी अुपत्यकामें जा निकले जहां रानीसे अुनका प्रथम साक्षात्कार हुआ था। रथकी गड़गड़ाहट—घुंघरुओंकी झनकार।)

शान्तनु :—सब कुछ वही है, महामंत्री। वही हिमालयकी अुपत्यका, जहां अुनका प्रथम साक्षात्कार हुआ था। सब कुछ वही है, पर न जाने वे कहां होंगी ? मैं पुकारता रहा और वे घोर तमिस्राके गहन अन्धकारमें विलीन हो गयीं।

मंत्री :—गत-स्मृतियोंको स्वप्नकी भांति भूलनेका यत्न कीजिये महाराज। नदीकी वेगवती धारामें दो काष्ठ-खंड अनायास आकर मिल जाते और छूटकर कहां चले जाते हैं, कोअी बता सकता है ?

शान्तनु :—सच कहते हो महामंत्री, मेरे जीवनमें वे क्षणभरका अेक स्वप्न बनकर आयीं, विश्वकी जलधारामें बहते-बहते मिलीं और फिर अपार जन-राशिमें विलीन भी हो गयीं पर जो रोम-रोममें बस गया हो, वह भी भूला जा सकता है ? चेतना और विवेक भले ही सुनी-अनसुनी कर दें पर कच्चे धागोंसे बुना मन तो आज भी कभी-कभी कह अुठता है, 'पुत्र न सही वे ही बनी रहतीं—व्याज न सही मूल ही सुरक्षित रहता'

मंत्री :—यह तो मनका दौर्बल्य है महाराज। अन्यथा आपने जिस आदर्शकी प्रतिष्ठा की है, वह निस्संदेह महान है।

सर्र्र्... (अेक बाण आकर गिरता है।)

शान्तनु :—किसी अहेरीका बाण जान पड़ता है।

मंत्री :—किन्तु कोअी दिखायी नहीं दे रहा (सिर अूंचा करके) वह देखिये महाराज, अेक गौर वर्ण—बालक भागीरथीके तटपर खड़ा होकर अुसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशाल पटको बाणोंसे बांध देनेकी चेष्टा कर रहा है। अुसके निकट ही अेक नारी-मूर्ति है, जलमें खड़ी–

शान्तनु :––सारथि, रथको वहीं ले चलो।

(रथ चलता है–– फिर रुक जाता है। राजा अुतरकर जलमें प्रवेश करते हैं। मंत्री तटपर ही खड़े रह जाते हैं।)

शान्तनु:––(स्त्रीके निकट जाकर) प्रिये !

रानी:––स्वामी !

शान्तनु:––महादेवी ! तुम! ..तपस्विनीके वेषमें ?

(रानी कोअी अुत्तर नहीं देती।)

शान्तनु:–– प्रिये ! अिन्द्रप्रस्थका राजभवन, कब तक निर्जन वन-सा सांय-सांय करता रहेगा ? दुःसह वियोगमें झुलसता शान्तनु, कबतक अुद्भ्रांत प्रेतकी भांति भटकता रहेगा ?

रानी:–– महाराज ! प्रत्यंचासे छूटा बाण फिर तूंणीरमें कहीं पहुँच पाता है ? पर्वत शिखरसे छूटी जल-धारा मुड़कर फिर वहां पहुँच पाती है? क्या अुस राज-भवनमें लौटकर जाना मेरे लिये शोभनीय होगा ?

शान्तनु:–– क्या वह तुम्हारे पतिका और अब पुत्रका भी घर नहीं है, रानी ?

रानी:–– (संकोचवश) फिर भी महाराज...

शान्तनु:–– (आग्रह पूर्वक) कहो न प्रिये.... तुम क्या कहना चाहती हो ?

रानी:––महाराज ! मनके किसी अेकांत कोनेमें पूर्वघृणाकी भावना विष वृक्षके बीजकी भांति पड़ी रहती है और अनुकूल स्थितिपर वही विशाल आकार धारण कर लेती है। . महाराज ! क्या आप यह भूल सकेंगे कि मैं पुत्रघातिनी हूँ ?

शान्तनु:–– मूल-मानव पवित्र होता है, वह जन्म-जात पापी, अपराधी नहीं होता रानी। क्रूर वृत्तियां, अनिष्ट ग्रहोंकी भांति कभी-कभी अुसे ढंक लेती हैं, पर जब वह ग्रहण मुक्त होता है, तो फिर दमकने लगता है।

रानी:––फिर भी महाराज ! आप देवव्रतको लेकर राजधानीको लौट जाअिये।

शान्तनु:– तुम्हें वनमें छोड़कर शान्तनु राजधानीको लौट जाय ? यह क्या कहती हो प्रिये ?... (कुछ क्षण विचार करता है) यदि तुम राजधानीमें नहीं जाना चाहती तो मंत्रीजी कुमारको ले जावेंगे और अुसका राज्याभिषेक करके शासनका भार संभाल लेंगे। शान्तनु, अिस निर्जन वनमें ही तुम्हारे साथ रह जायगा। कहो यह स्वीकार है ?

(रानी कोअी अुत्तर न देकर अथाह जलकी ओर बढ़ती जा रही है।)

शान्तनु:––आगे न बढो प्रिये ! अथाह जल है और नदीकी गति तीव्र है।... (आगे बढ़ता है।) रानी ! मैं जीते-जी तुम्हें जल-समाधि न लेने दूंगा।.... ठहरो.....मैं भी तुम्हारे साथ ही चल रहा हूँ। (छप-छप जलकी आवाज)

(तटपरसे) **कुमार**:––माँ ! लौट आओ, आगे बहुत पानी है।

मंत्री:––लौट आअिये महाराज! आगे अथाह जल है।

(छप-छपकी आवाज––दोनों बढ़ते जा रहे हैं।)

रानी:––(स्वरमें अथाह करुणा) मेरा पीछा न करो महाराज ! लौट जाओ, (रुँआसा-सा स्वर) जिस रहस्यको जीवनभर छिपाये अभिनय करती रही, वह आज कह रही हूँ। मैं स्वर्गसे, तुम्हारे मनुष्यत्वकी परीक्षा लेने आयी थी। अुसे कसौटीपर कसने आयी थी, और अन्तमें तुम खरे निकले। देवव्रतको लेकर लौट जाओ। यह तुम्हारी निष्ठाका अमृत-फल है। मैं देवांगना गंगा हूँ––और वे देखो,––अंतरिक्षकी ओर––वे हैं तुम्हारे पुत्र; सातों वसु। पार्थिव पुरुष। लौट जाओ। अब हम कभी मिल न सकेंगे।

(गंगा अन्तर्ध्यान हो जाती है।)

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौतुक-प्रिय गांधीजी

: श्री. रा. वीळिनाथन :

कितने ही ज्ञानी महात्माओंका अिस संसारमें अवतार हुआ है। पर यह तो कम ही सुननेमें आया है कि वे कौतुक-प्रिय थे तथा हास्यसे सनी हुअी बातें करते थे। प्रायः अुनका हँसीसे नाता बहुत दूरका ही रहा होगा। लेकिन गांधीजी अिसके अपवाद थे। अुनके जीवनमें हास्यरसका पुट अधिक मात्रामें पाया जाता था। यह कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं माना जा सकता कि अुनकी व्यक्तित्व-विशेषतामें हास्यरसका अपना अलग हाथ था। गांधीजी समय-समयपर कोअी न कोअी हँसानेवाली बात कहते तथा अपने निकट रहनेवालोंको हँसमुख बनाये रखते थे। अुन्होंने कभी भी, चाहे वह कितनी ही नाजुक अवस्था क्यों न हो, अपने स्वाभाविक हास्य-भावसे मुंह नहीं मोड़ा था। अुनका अपना सिद्धांत है कि जीवनमें हँसी-खुशी मज़ाकका अधिक से अधिक स्थान दिया जाना चाहिये। अेक बार अुन्होंने अपने विषयमें कहा था कि अगर मुझमें हास्यकी भावना विद्यमान नहीं होती तो मैंने कभीकी आत्महत्या कर ली होती।

गांधीजीकी हास्य-कौतुक प्रियताकी, नमूनेके रूप में, यहाँपर कुछ घटनाअें अुद्धृत की जाती हैं।

: १ :

सन् १९४२ अी. में जब महात्माजीने भारतके स्वातन्त्र्य-संग्रामका अंतिम आंदोलन प्रारंभ किया तब ब्रिटिश सरकारने अुन्हें और काँग्रेसके अनेक नेताओंको गिरफ्तार करके आगाखांके महलमें नज़रबन्द कर रखा था। वहाँ अुन लोगोंका समय काटे न कटता था। अेक दिन स्वर्गीया श्रीमती सरोजिनी देवीने महात्माजीके पास जाकर पूछा—"बापूजी, क्या आप 'बैड्मिंटन्' खेलने आयेंगे?"

गांधीजीने खुश होकर अुत्तर दिया, "मुझे सहर्ष स्वीकार है। आअिये, खेलें।"

"हाँ, आपको वह खेल मालूम है न?" सरोजिनी देवीने शंकित भावसे पूछा।

"अभी तक मैंने अपने हाथों 'बैटमिंटन' का वह 'बैट' नहीं छुआ है। फिर भी खेलना शुरू कर दूं तो निश्चय ही आपको खेलमें जीत लूंगा!" गांधीजीने अुत्तर दिया।

"अच्छा: तब आअिये, देखें!" सरोजिनी देवीने गांधीजीको खेलके लिये आमन्त्रित कर दिया।

जेलके अधिकारियोंने जाल, गेंद, बैट, आदि खेलकी आवश्यक सामग्रियां जुटाकर दे दीं तथा मैदान भी साफ़ कर दिया।

गांधीजी और सरोजिनी दोनों अपने अपने हाथोंमें 'बैट' लेकर मैदानमें आये। अुस वक्त श्रीमती सरोजिनीका दाहिना हाथ कुछ लचक गया था, अिसलिये अुन्होंने बाअें हाथसे 'बैट' पकड़ा था। गांधीजीने भी अुनकी देखा-देखी बायें हाथसे 'बैट' पकड़ लिया। अिसे देखते ही सरोजिनी देवीको हंसी आ गयी। वे हंसती हुअी ही बोलीं, "आपको यह भी तो नहीं मालूम कि 'बैट' किस हाथसे पकड़ना चाहिये? अैसी हालतमें आप मुझे किस प्रकार हरा पायेंगे: यह मेरी समझमें नहीं आता।"

अुनका यह ताना सुनकर गांधीजीने थोड़ी देरके लिये कुछ सोचा और फिर बोले, "क्यों? आप भी तो अपने बायें ही हाथसे 'बैट' पकड़े हुअी हैं!"

"हां, मेरे दाहिने हाथमें थोड़ासा-सा दर्द है, अिस लिये मैंने बायें हाथसे पकड़ा है।" सरोजिनी देवीने अुत्तर दिया।

गांधीजी मन ही मन बहुत लज्जित हो गये। पर फिर भी अुन्होंने अुसे बाहर प्रगट होने न दिया और पहले जैसे ही बायें हाथसे 'बैट' पकड़कर खेलने लगे।

"आपने अभी भी अपनी गलती सुधारी नहीं है, यह क्यों?" सरोजिनीने जिज्ञासा भरे स्वरमें पूछा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"पहले तो वह हो सकता है कि गलती रही हो। पर अब तो वह गलती नहीं रही। आप तो बायें हाथसे 'बैट' पकड़कर बड़े ही कष्टके साथ खेल रही हैं। अैसी हालतमें मैं अपने दाहिने हाथसे 'बैट' पकड़कर खेलूँ तो वह कहां की मर्दानगी कही जा सकती है? अैसी जीत भी कोअी जीत है? अेक नारीकी असुविधाका लाभ अुठाकर मैं खेलमें जीतना नहीं चाहता।"

गांधीजीका यह अुत्तर सुनकर श्रीमती सरोजिनी देवी अवाक् रह गयीं।

(२)

गांधीजीको कभी यह गवारा नहीं था कि छोटी-मोटी बीमारियोंके लिये भी आदमी दवाकी शीशियों और गोलियोंका सेवन करने लगे। अिंजेक्शनसे तो अुनको अपार घृणा थी। प्राकृतिक चिकित्सामें अुनका भरपूर विश्वास था।

अेक बार जेलमें रहते हुअे अुनको जोरका जुकाम हो गया था। जेलके डाक्टर अुनकी परीक्षा करके बोले — "आप अभी अेक पेनिसिलिन अिंजेक्शन ले लें तो जुकाम तीन ही दिनके अन्दर काफूर हो जायगा। नहीं तो जुकामके ठीक होनेमें तीन हफ्तोंसे भी ज्यादा लगेंगे।"

"अिन्जेक्शनकी अैसी कौनसी आवश्यकता है? जुकाम धीरे ही ठीक हो। मुझे कोअी अुतावली या जल्दी नहीं है।" गांधीजीने जवाब दिया।

"आपको जल्दी नहीं हो, पर जुकाम दूसरे लोगों में फैल जाय तो क्या हो।" डाक्टरने यह आपत्ति अुठायी।

"...तो अुन्हीं लोगोंको अिन्जेक्शन दे दीजिये! आपको कौन रोकता है?" गांधीजीने तुरन्त डाक्टरको टोक दिया।

(३)

दूसरे गोलमेज कांफ्रेन्सके लिये लंदन गये हुअे थे तब ब्रिटिश सम्राट पंचमजार्जने अुनको चायमें आमंत्रित किया। यह खबर अखबारोंमें छपी तो सारे लंदनमें अिसीकी चर्चा थी। चर्चा अिस बातपर नहीं थी कि सम्राटने गांधीजीको चायके लिये आमंत्रित किया है। बल्कि अिस बातपर थी कि गांधीजी हमेशाकी तरह अपने सादे लिबासमें जायेंगे या ठाठबाटके लिबासमें? लोगोंने समझा था कि सम्राटका सम्मान करनेके अुद्देश्यसे गांधीजी बढ़िया ही पोशाकमें जायेंगे।

नियत दिनपर बकिंघम पेलेसमें चायपार्टी हुअी। गांधीजी अुसमें शामिल हुअे थे। दूसरे दिन किसी पत्रके संवाददाताने गांधीजीसे भेंट करके पहला सवाल यह किया कि कलकी पार्टीमें आप कैसी पोशाक पहनकर गये थे?

"क्यों? हमेशाकी अपनी पोशाकमें ही गया था!" गांधीजीने सहज ढंगसे जवाब दिया।

"क्या केवल यह मोटा लिबास पहनकर गये थे?" आश्चर्यचकित होकर संवाददाताने पूछा।

"हाँ। क्या वह काफी नहीं था? सम्राट् तो अितने कपड़ोंसे सजधज कर आये थे कि वह मेरे जैसे अनेकोंके लिये काफी था!" यह कहते हुअे गांधीजी अपनी बेदांती हँसी हँसे।

(४)

जब गांधीजी साबरमती आश्रममें रहते थे तब की बात है। वहां कअी बच्चे भी अुनके साथ थे। हर हफ्ते गांधीजीसे मिलकर कुछ न कुछ सवाल किया करते थे। गांधीजी अपने कामोंके मध्य भी कठिनाअियोंकी परवाह किये बिना अुनके प्रश्नोंका अुत्तर दिया करते थे। लेकिन अुत्तर बहुत ही संक्षिप्त रहता था। कभी-कभी अुत्तर अितना संक्षिप्त होता था कि 'हां' या 'नहीं' में समाप्त हो जाता था। यह बात अुन बच्चोंको पसन्द न आयी।

अेक दिन गांधीजी अिस प्रकार जवाब दे रहे थे कि अेक लड़केने अत्यन्त साहस करके पूछा, "क्यों बापूजी? आप तो अक्सर गीताके सम्बन्धमें कुछ न कुछ बताते रहते हैं। गीतामें अर्जुन संक्षेपमें अेक प्रश्न करता है जो अेक ही पंक्तिमें समा जाता है। भगवान् कृष्ण अुस प्रश्नका जो अुत्तर देते हैं, वह तो अेक बड़े अध्यायमें आकर कहीं समाप्त होता है। लेकिन आप तो ठीक अिसके अुलटे हैं। हम अेक अेक पृष्ठका भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सवाल करते हैं तो आप अेकही शब्दमें जवाब दे देते हैं। क्या आपके लिये यह न्यायसंगत मालूम देता है ?

गांधीजीने हंसते हुअे अुत्तर दिया, " अेक तरह से तुम्हारा कहना ठीक ही है। लेकिन मैं अुसके लिये क्या करूँ ? भगवान कृष्णके तो अेक ही अर्जुन थे, पर मेरे तो साठ-सत्तर अर्जुन हैं। हरेक के प्रश्नका मैं हनुमानकी दुम जैसा लंबा अुत्तर देने लगूं तो क्या होगा ? ज़रा सोचो तो ! "

अितना सुनना था कि सभी लड़के जोरसे खिल-खिलाकर हँस पड़े।

कुरसी खाली !

जब मैं लन्दनमें था, तब रोमांचकारी अेक घटनाकी बात सुनी थी।

गोल मेज़ कान्फ्रेन्सके अवसरपर महात्मा गांधी लंदनको पधारे थे न ? तब अेक अंग्रेज़ महात्माजीके पास आये। वे भारतके गवरनर रह चुके थे। महात्माजीसे भेंट होनेपर अुन्होंने कहा, " मिस्टर गांधी ! आप तो हम अंग्रेज़ लोगोंको भारत छोड़कर चले जानेको कह रहे हैं। आपको मालूम है, हमने भारतमें सौ करोड़ पौंडकी पूंजी लगायी है ? रेलवे लाअिनें बिछवायी हैं। तारके आवागमनकी व्यवस्था चालू की है। बांध बंधवाये हैं। सिंचाअीकी आयोजनायें की हैं। क्या आप चाहते हैं कि हम अिन सबको यों ही छोड़कर भारतसे चले जायें ? "

यह सुनकर महात्मा गांधीने कहा, " मैंने कब कहा कि आप लोग यों ही चले जायें; मैं तो यही कहता हूँ कि हम अैसे अेक न्याय संघकी स्थापना करें जिसके अध्यक्ष अेक अमेरिकन सज्जन हों तथा अंग्रेज और भारतीय अुसके सदस्य हों। वह संघ जो निर्णय करे, वह हम दोनों पक्षवालोंके लिये मान्य रहे। "

गांधीजीकी अिस सलाहपर भूतपूर्व गवर्नरने कान नहीं दिया तो गांधीजीने अेक दूसरी सलाह अुनके सामने रखी।

अुन्होंने कहा, "तब तो अेक काम करें। रेलवे लाअिनें, रेलके डिब्बे, अिन्जिन, तारके साधन आदि जितनी भी सामग्रियाँ आपने भारतमें लगायी हैं, अुन सबको आप भारतसे लेते जाअिये। अपने बनवाये बांधों को काट डालिये। सिंचाअीकी व्यवस्था चूर्ण कर डालिये या तोड़-फोड़ डालिये। पेड़ों-पौधोंको काट डालिये तथा खेतीको बरबाद कर डालिये। जिन जिन वस्तुओंको आप अपने साथ ले जा सकते हैं, अुन अुन वस्तुओंको अपने साथ अवश्य लेते चलिये। परन्तु हम भारतीयों और हमारे भारतको छोड़ जाअिये। हम अितना ही चाहते हैं कि हमारा भारत बाकी रहे। फिर हम अपने भाग्यका निर्माण आप कर लेंगे।"

यह सुनकर निकटके अंग्रेजोंकी समझ ही में नहीं आया कि अिसका जवाब क्या दिया जाय। विचारसे छुट्टी पाकर जब अुन लोगोंने आंख अुठायी तो देखा कि भूतपूर्व गवरनरकी कुरसी खाली पड़ी थी ! अुनको यह भी विदित नहीं हो सका था कि भूतपूर्व गवरनर वहाँसे कब खिसक गये और अुनकी कुरसी कितनी देरसे खाली पड़ी है !

(लेखक—जस्टिस श्री अे. अेम. पी. अय्यरके तमिळसे अनुवादक—श्री रा. वीळिनाथन)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and

सपनोंका व्यापारी

: श्री फ्रान्सिशेक लैंगर :

मेरे पिताजी अनोखा व्यापार करते थे--वह सपने खरीदते और बेचते थे।

बड़े तड़के अुठकर, वह अपना झोला ले कर गलियोंमें निकल जाते और हर घरके पाससे गुजरते हुअे फेरी-वालेकी नायीं संगीत लहरीमें आवाज लगाते—सपने बिकाअू हैं क्या ?

सपने साबुनके अुन बुलबुलोंकी भाँति होते हैं जिन्हें बच्चे अपने मनोरंजनके लिये अुड़ाते हैं। वैसे ही कोमल, अुड़नेवाले, आरपार कुछ अिन्द्रधनुके रंगोंवाले और कुछ साधारण सफेद। अगर किसी तरह अुन्हें हथेलीमें पकड़ा जा सके तो वह बहुत ही सुन्दर लगते हैं। लेकिन अिसके लिये बड़ी कुशलता चाहिये--हाँ अगर कोअी अैसा कर सके, तो बस यही समझिये कि अैसा पदार्थ हाथमें आ गया है जो किसी बादशाहके पास भी न मिलेगा। और कितनी गहरायी होती है अुनमें जब वे पास ही होते हैं--अगर लापरवाहीसे अुन्हें कहीं दबा दिया या नाखूनोंसे मसल दिया तो अुनकी सब कोमलता नष्ट हो जायगी और अुनकी सब गहराअी पिघलकर बह जायगी।

अैसे थे सपने--जिन्हें मेरे पिताजी रोज सबेरे लोगोंसे खरीदते थे। अुनकी, किसीको भी, दिनमें कोअी जरूरत नहीं होती थी अिसलिये बड़ी प्रसन्नतापूर्वक बेच देते थे।

मेरे पिताजी अुन्हें हाथमें लेकर अुनका मूल्यांकन करते फिर अुसे खरीदते या छोड़ देते। जिन्हें वह खरीदते अुनको अपने कन्धेपर पड़े हुअे झोलेमें रख लेते। दोपहर तक अुनका थैला अुनसे भर जाता। कभी-कभी तो वह अितने अिकट्ठा कर लाते कि वह अुनकी जेबोंमें और बटुअेमें भी भरे होते—पर अुसमें अैसे ही सपने भरे होते थे, जो अधिक नाजुक होते और जिनके दूसरोंके साथ रखनेपर खराब हो जानेका डर रहता था। फिर वह घर लौटते और दोपहर बाद हम लोगोंका, मेरा मतलब मैं और बहिन है--काम शुरू होता। हम अेक मेजपर आमने-सामने बैठकर अेक रेशमके कपड़ेसे सपनोंको पोंछते थे। हम अुन्हें बड़े प्यारसे अपनी अंगुलियोंमें पकड़े लेते और अुस सिल्कके झाड़नसे बड़ी कोमलतासे अुन्हें सँवारते मानों वह अिंसानकी आँखें हों। कुछ समय बाद सभी संगमर्मरकी गोलीकी तरह चिकने, श्वेत और लुभावने लगने लगते।

अूँचे प्रकारके सपने बहिनके सुपुर्द होते, क्योंकि अुसके हाथ बहुत मुलायम, लम्बे और गरम थे। अंगुलियाँ पतली और आकर्षक थीं--अैसी कि कोमलसे कोमल चीज अुठाये तो अैसा लगे मानों कुछ छुआ ही नहीं है। अुन अंगुलियोंसे अगर अिन्सानका दिल भी अुठाया जाता, तो भी वह धड़कना बन्द न करता। अिसलिये मेरी बहिन बच्चोंके और प्रेमियोंके नरम सपनोंको अुठा-अुठाकर अुन्हें दुलारती-सँवारती, क्योंकि मेरे कठोर हाथोंको अुन्हें अुठानेमें झिझक लगती थी।

हम अिस प्रकार काम करते रहते कि साँझकी लाली अपने आनेकी सूचना कमरेमें भेज देती।

और हाँ रोशनी करनी पड़ती ताकि काम करनेमें सहूलियत रहे। हमारा कमरा लम्बा और घुमावकी छतका था, जिसमें अेक छोटी-सी खिड़की थी। और फिर वह अेक संकरी गलीमें अेक बड़ी खाली हवेलीके पिछवाड़ेकी ओर था, अिसलिये भी, रोशनी कम ही आती थी।

लैम्पकी रोशनी सीधी और पीली लौ बनाती--जिसकी झिलमिलाहटमें श्वेत-बुलबुलोंकी चमक अेक नयी आभा अुत्पन्न करती। मेरी बहिन काम करनेमें व्यस्त थी-सिर झुका हुआ--कभी-कभी वह अुसे अुठाकर मेरी ओर देखती और मुस्करा देती- अुसकी मुस्कराहट अिस बातकी सूचक होती थी कि अुसे कोअी अच्छी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिलचस्प चीज मिल गयी है। अुसके मनोहर हाथ धीमे-धीमे अिधर-अुधर घूमते ही रहते, बस पलभरको अिसलिये ठहरते कि वह अेकको रखकर दूसरा अुठा सके। अुसके भूरे-भूरे बाल सिरके दोनों तरफ फैले अपनी चमकसे मचलते कभी-कभी अेक गुच्छा माथेपर फेंक देते, जिन्हें वह अपनी अंगुलियोंसे पीछेकी ओर फेंक देती। जब कभी अैसा होता वह मेरी ओर देखती, मानों कामके बीच आ गये अिस व्याघातके लिये क्षमा मांग रही हो, पर जब अुसे मेरी ओरसे प्रसन्नता सूचक अुत्तर मिलता (क्योंकि मैं अुसके सौंदर्यका बड़ा प्रशंसक था और अभिमानी भी) तो अुसके लाल ओठोंपर भी मुस्कराहटकी रेखा नाच अुठती और वह सिर झुकाकर काममें व्यस्त हो जाती। और तब तो बड़ा ही सुहावना सतरंगी समाँ होता जब लैम्पकी पीली रोशनी अुसके हाथमें रखे बुलबुलेमें छनकर अुसके लाल चेहरेपर पड़ती या सपनेकी खुशनुमा अनुकृति अुसके माथेपर, अुस प्रकाशमें, अिधरसे अुधर झलकती। वह खुद भी तो स्वप्न देखनेवाली थी—सच तो यह है, हम दोनों ही सपने देखनेवाले थे। अितना ही नहीं हमारे सपने बड़े बहुमूल्य सपनोंमेंसे थे, अुनमेंसे जिन्हें पिताजी अपने बटुअेमें रखते थे और जब कभी वह अुन्हें बेचते थे तो काफी अूँची कीमत वसूलते थे। अुनके बिकनेका स्थान होता था—बड़ी-बड़ी हवेलियाँ, जिनमें सुन्दर छज्जे होते, नक्काशीवाली खिड़कियाँ होतीं या फिर कलाकार अुन सपनोंको खरीदते।

जब हम प्राप्य सपनोंको ठीक-ठाक कर लेते तो अुन्हें अेक पुरानी चालके सन्दूकमें रख देते, जैसे सेव रखे जाते हैं—अूपर नीचे—अूपर नीचे—सबसे बड़े नीचे और अुससे छोटे अूपर, फिर अुससे छोटे अूपर। और सब अैसे चमकते जैसे बिल्कुल ताजा हों।

पिताजी अिस बीच तम्बाकू पीते और अूँघ लेते।

जिस समयकी मैं चर्चा कर रहा हूँ वे अुस समय बूढ़े हो चले थे, अुनकी दाढी सीनेतक आ गयी थी और भौंहें भी थकी-सी छितरा गयी थीं। सवेरेके कामसे अुन्हें काफी थकान मालूम देती थी, फिर भी अुन्हें शामको फिर कामपर जाना होता था।

सूरज फिरते ही वह खाटसे अुठकर अपना झोला अुठाकर अुसमें सपने भरते। मैं और बहिन अुनसे तरतीबसे लगानेमें मदद करते। फिर झोला अुठाकर अुनके कँधोंपर डाल देते और फिर वह हमें प्यार करते और घरसे बाहर निकल जाते।

फिर वह सड़कोंपर फिरते—अेक घरसे दूसरे घर सपने बेचनेके लिये। जिस दरवाजेपर वह जाते, अुन्हें पहलेसे ही यह पता होता था कि वहां किस प्रकारके सपनेकी दरकार है। वह धीरज पूर्वक मोल-भाव करते और गाहकको छोड़ते कभी नहीं। अुनका स्वभाव अितना मीठा था कि गाहक कभी अुनसे छूटता ही नहीं। कभी-कभी जिस घरमें वह कअी सपने बेच देते, वहाँ वह अेक सपना—छोटा, मधुर और प्रातःकालके अुपयुक्त, अुपहारके रूपमें भेंट कर देते। आधी रातके आसपास अुनका झोला खाली हो जाता और घर लौट आते। कभी-कभी वह बड़ी रात बीत जानेपर भी नहीं लौटते—जैसे मौसम खराब होनेपर या मालका निकासी न होनेपर—तब अुनका तन थका होता और मन हारा होता—वह बिना कपड़े-वपड़े अुतारे ही धमसे आकर खाटपर लुढ़क जाते। जब भी कभी अैसा होता, बहिन अुनके आनेकी आहट जान जाती और धीमेसे अपने बिस्तरसे अुठकर अुनके पास पहुँचती और बिना किसी आहट या दबावके अुनकी नींदमें तनिक भी बाधा किये बिना पिताजीके जूते अुतार देती।

पिछले वर्ष, नवम्बरके अन्तमें घना कुहरा पड़ा। आनेवाले दिनोंमें भी मौसम अत्यन्त खराब रहा। दोपहरको कुछ समयके लिये छोड़कर बाकी पूरे दिन सांझ छायी रहती—रातकी मियाद तीन घंटे सवेरे और तीन घंटे सांझ और बढ़ गयी। न तो गैसकी रोशनी और न ही सड़कपर पूरे दिन जलनेवाले आर्क लैम्पोंसे, किसीसे भी अुस घने कुहरेका चक्रव्यूह भेदन न हो पाता था। अन्धकारने सब काममें रुकावट डाल रखी थी। कोअी कहीं आता-जाता न था। सब अपने घरोंमें घुसे रहते, लेकिन हर समय घरमें घुसे रहना भी दुखदायी लगता, अिसलिये दुखकी अुन घड़ियोंको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुदासीसे बचानेके लिये सोते ही रहते। और नींदकी यह अकुलाहट अुन्हें सपनोंके लिये मजबूर करती। पिताजी कुछ ही देरमें अपने सपने बेच आते, सवेरे खरीदे सब सपनोंको बेच देनेपर भी कुछेककी मांग अधूरी ही रह जाती। अिसलिये अुन्होंने अपने जमा किये हुअे मालको टटोला। कमरेके कोनेमें रखे बड़े सन्दूकको खोला और अुन सपनोंको निकाला, जिन्हें अबतक बेचनेमें वह असफल रहे थे और अब क्योंकि मालकी कमी थी, अिसलिये अुन्हें अच्छे लाभसे बेचा जा सकता था। वह सन्दूक भूरे देवदारका बना था और हर प्रकारकी सुन्दरतासे अपरिचित था और अुसमें काफी गाहकोंके लिये काफी दिनोंके लिये सपने अेकत्रित थे। पर अेक सप्ताह बीतते न बीतते वह भी खाली हो गया और कुहरा समाप्त होनेपर न आया।

अिसलिये अेक साँझ पिताजीने पुरानी पेटीकी सतहसे सब सपने निकालकर और वे बुरे मौसमको गालियां देते, बड़बड़ाते, अुन्हें संवारने लगे। वह सब निकालकर संवार चुके और अेक चमकदार गोला पेटीकी सतहपर रह गया, जो भयभीत चूहेकी तरह अेक कोनेमें दुबका पड़ा था। पिताजीने अुस सपनेको अुठाया और अपने झोलेमें रखनेको तैयार ही थे कि अुसकी ओर अुन्होंने अेक भरपूर निगाहसे देखा, कअी बार अपना सिर हिलाया और फिर अुसे वापस पेटीमें रख दिया।

अबतक कभी भी मैंने पिताजीको सिवा अेक व्यापारी दृष्टिके और किसी भी दृष्टिसे सपनेको निहारते नहीं देखा था। वह अपने तीखे नेत्रोंसे अुसकी चमक देखते, गहरायी भाँपते, प्रभावका अनुमान करते और फिर अुसीके अनुसार खरीदने या बेचनेका मोलतोल करते। किसी भी सपनेको अेक क्षण भरके लिये भी अुन्होंने अिस प्रकार नहीं देखा—वह तो कुछ भी अनुभूति न दिखानेके आदी थे। बूढी अुम्र, कठिन जिंदगी और शायद शारीरिक थकानने अुनकी कोमल वृत्तियोंको, अिनसानी हमदर्दीको भी कठोर बना दिया था। पहिले कभी भी अुन्होंने अितनी दयासे किसी सपनेको देखकर सिर नहीं हिलाया था। वह सदैव अुन अनन्त नियमोंका विचार करते रहते थे, जिनसे स्वप्न भी परे नहीं हैं— अिसीलिये अुन्होंने सब प्रकारकी अिच्छाओंको शान्ति और आरामके लिये अुत्सर्ग कर दिया था। यह अुनके व्यवहार और अुनकी मुस्कराहटसे पता चल जाता था। अिससे पहिले अुन्होंने कभी किसी भी सपनेको, चाहे वह कितना ही कीमती क्यों न हो, अपने पास रखनेकी वस्तु न समझकर, सौदागरीकी अेक जिन्ससे अधिक और कुछ नहीं समझा था। फिर भी अब वह यह सपना बेचना नहीं चाहते थे। और अिसीलिये अुसे दुबारा पेटीके कोनेमें रख दिया था। मुझे अुनके अिस व्यवहारपर आश्चर्य हुआ। तब वह हमारी खाटोंके पास पड़ी छोटी मेजोंपर झुके और अुनपरसे हमारे—बहिनके और मेरे— सपने अुठा लिये। हमने झोला बाँधने और अुठानेमें अुनकी मदद की। फिर वह चल पड़े।

बहिनके और मेरे विचारोंका केन्द्र अेक ही था— क्योंकि जैसे ही पिताजी गये, अुसकी निगाह सबसे पहिले खुली हुअी पेटीपर गयी। पिताजी द्वारा फोड़ दिये गये अुस सपनेको अुसने अुठाया और बड़ी मुलायमतसे मेजपर रख दिया। वह बड़ा था— काफी बड़ा, पर धूल अुसे लपेटे हुअे थी। अुसने अपने नन्हे हाथोंसे सपनेको पोंछा।

फिर बोली— देखो, कितना बड़ा है! फिर भी पिताजी अिसे यहाँ छोड़ गये। मैंने आजतक अिससे बड़ा कोअी सपना नहीं देखा। लेकिन अिसमें हर चीज झिलमिला रही है— कुहरेकी तरह। बड़ा धुंधला-धुंधला-सा है यह।

हमारे सिर पास-पास आये और आँखें अुस श्वेत गोलेपर टिक गयीं—लैम्पकी धीमी रोशनी जल रही थी।

मैं बोला— 'कुछ-कुछ मेरी समझमें बात आ रही है। लोग चल फिर रहे हैं। दिखायी दिया कुछ?' बहिन सिर हिलाकर बोली, 'बहुतसे लोग हैं। पूराका पूरा शहर, मेरे ख्यालसे।'... हाँ, बहुतेरे लोग आगे बढे चले जा रहे हैं। मुझे साफ दीख रहे हैं— बिल्कुल साफ। मैं अिस गोलेको धीरे-धीरे घुमाअूंगी। देखो,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह सामने-- कैसा जमघट है-- कितने पास-पास हैं सब लोग। वह अपने हाथ अूपर फैला रहे हैं। हाँ, वह अपना सिर भी अूंचा अुठा रहे हैं। लाखों लोग हैं-- अरे, यह देखो पीछे, वह अब भी फुरती दिखा रहे हैं, वह अब भी अपने लक्ष्यपर नहीं पहुँचे हैं-- और वह अपने हाथ भी नहीं फैला रहे। और ये सबसे बादमें-- ये तो बच्चे हैं। सिर्फ कमीजें पहिने हैं येह बच्चे-- कुछ तो बिल्कुल नंगधड़ंग हैं। अच्छा, बूढ़े-बुढ़ियाँ भी हैं-- और लंगड़े अपाहिज भी। सभीको लक्ष्यतक पहुँचनेकी जल्दी है। कितनी जल्दी चल रहे हैं। लेकिन कहाँ जा रहे हैं अितनी शीघ्रतासे? बताओ न, कहाँकी जल्दी है अिन्हें? वहाँ बादलोंमें कुछ है... कुछ अूंची चीज़ अुनके सामने है! पर मुझे दिखायी नहीं देता...

मैंने स्वप्न अुसकी अंगुलियोंसे ले लिया। वह बोली, 'हमें अिसे दूसरी ओर मोड़ लेना चाहिये ताकि रोशनी अूपरसे पड़े। अब दोखो! बहिन अपना सुडौल मुँह मेरे मुँहके पास लायी और हम दोनों अुसके भीतर अिस प्रकार झाँकने लगे मानो हम दोनोंकी अेक ही आँख हो।

'देखो कोअी है, अुनसे अुँचाअीपर खड़ा हुआ। वह लोगोंको कुछ दे रहा है। अुसीके लिये ये सब आसमानकी ओर हाथ फैलाकर छोड़े चले जा रहे हैं।'

'लेकिन वह अुन्हें दे क्या रहा है?'

'मुझे साफ-साफ दिखायी नहीं देता। वह सोने-का बुरादा-सा दीखता है लेकिन अुसी स्थानपर स्वप्न पर स्वप्न धुंधला गया है। और मुझे वह भी दिखायी नहीं देता, जो यह भेंट दे रहा है।'

'ताज्जुब है-आखिर कौन हो सकता है!'

'अच्छा हम पिताजीके आनेकी बाट देखें। वह आकर हमें समझा देंगे।'

हमने स्वप्न पेटीमें रख दिया और फिर मेजके पास बैठ गये। बहिनने बुनायी चालू कर दी और मैं अितिहासकी किताब पढ़ने लगा।...पिताजीके आनेकी आहट लगी। अुन्हें अधिक देर नहीं हुअी थी, क्योंकि अुनका माल जल्द ही बिक गया था। मुहल्लेके कारण वह तरबतर थे। हमने अुन्हें ओवरकोट अुतारनेमें मदद दी और फिर बहिन आग जलाकर, अुनके लिये खाना ले आयी।

पिताजीने काफी लज्जतसे खाना नहीं खाया क्यों-कि वह बहुत भूखे थे--प्लेटसे बीन-बीनकर वह रोटीका अेक-अेक टुकड़ा खा गये। खाना समाप्त करते ही अेक ओरसे बहिनने अुन्हें पाअिप भरकर दिया और दूसरी ओरसे मैंने दियासलाअीकी जली हुअी तीली अुसपर रख दी। अुन्होंने कुछ कश खींचे और धुआँ हवामें अुड़ाया और अुनके चेहरेपर प्रसन्नताकी अेक चमक दौड़ गयी।

अिस बीच बहिनने पेटीके पास पहुँचकर मुझे अिशारा किया। मैं भी अुसके पास जा पहुँचा।

'तुम दोनों क्या खुसुर-पुसुर कर रहे हो।' पिताजीने पूछा।

मैंने पेटीसे वह गोला निकालकर अुनके सामने रख दिया।

'पिताजी, आपके व्यवहारने हमें अचम्भेमें डाल दिया है। जब आप बाहर गये तो अिस सपनेको घरपर ही छोड़ गये, हालांकि आपने अिसे बहुत सावधानीसे देखा था और अिसमें कोअी शक नहीं कि यह मूल्यवान है। क्योंकि जब हम दोनोंने अिसे देखा, तो यह सोचा कि अिससे बड़ा सपना हमने तो कभी नहीं देखा है।'

पिताजीने सपना अुठाया, लैम्प अपने पास सर काया और अुसे अपने हाथोंमें लेकर अिधर-अुधर घुमाव और जिस जगह सपना धुंधला था अुस स्थानसे अुन्हों वह बुराअी दूर करनी चाही। पर असफल रहे। फि अुन्होंने अेक लम्बी साँस खींची।

बहिन बोली, 'हमने अिसे देखा, पर कुछ समझ में नहीं आया।'

कुछ देर शान्ति छायी रही। पिताजीका सि झुका था, आँखें आधी खुली थीं मानों वह पूर्व स्मृति में खो गये हों। सिर्फ घड़ीकी टिक-टिक हमें सुनायी रही थी। दूर कहींपर गाड़ीकी खड़खड़ाहट भी

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रही थी और धीरे-धीरे वह खड़खड़ाहट हमारे घरके पास आ गयी थी।

तब पिताजी बोले--'प्यारे बच्चो, यह मेरा अन्तिम सपना है।'

हम सांस लेनेका भी साहस न कर सके, क्योंकि हममें अुनकी प्रत्येक बात सुननेकी अुत्कंठा जाग्रत हो चुकी थी। गाड़ीकी खड़खड़ाहट भी अब दूर जाकर मद्धिम हो चुकी थी; सिर्फ घड़ीकी टिक-टिक जारी थी।

'तुम्हें मालूम ही है कि मैं कभी सपने नहीं देखता। मैं तुम्हारे मनहर सपने लेकर अुन्हें बेच देता हूँ। पर तुमने मेरे पास, मेरे बिस्तरके पास कभी-कोअी सपना सवेरेके समय नहीं पाया होगा, क्योंकि मुझे स्वप्न आते ही नहीं। यह मेरा अन्तिम स्वप्न है। यह मैंने बहुत वर्ष पहिले देखा था। तब मैं युवा था। तुम खुद देखो अपने स्वप्नमें मैं बड़ी भीड़के आगे बढ़ा चला जा रहा हूँ अुनसे कितना अूँचा! और मेरे हाथोंमें कितनी सुन्दर भेंट हैं--अिन्सान अिन्सानको अिससे बढ़कर क्या दे सकता है? सपने, अिच्छायें, आकांक्षायें! सब अुनकी ओर बढ़ रहे हैं। मैं सबको भरपूर बाँट रहा हूँ। औघड़ दानीकी तरह सबको सपने बाँट रहा हूँ। सपनोंसे अुन्हें प्रसन्नता प्राप्त होती है। वह अुनके लिये भागते हैं--सब अुनके लिये भागते हैं। और मैं अुनको अंगुलियाँ भर-भर लुटा रहा हूँ। मैं अुनकी जिंदगीको और रातोंको सुन्दर बना रहा हूँ--अुससे भी अधिक सुन्दर जितनी कि वे पहिले नहीं थी। मैं मुस्कान बिखेर रहा हूँ--वहाँ जहाँ पहिले मुस्कान नहीं थी। जहाँ कहीं भी दुख है, मैं वहाँ सुख बरसाता हूँ। मैं अुनके अवकाश-के क्षणोंको सुन्दरता और महत्व प्रदान कर रहा हूँ। और यह मेरा अन्तिम स्वप्न था।

'दूसरे दिनसे मैं अपने स्वप्नको मूर्तरूप देने लगा। मैं अपने ही स्वप्नपर जीवित हो अुठा। मैं स्वप्न बेचने लगा। मुझे अुनका मूल्य मिलने लगा। मूल्यमें अन्तर होता--कभी कम, कभी अधिक। पर मैं सबको बेच देता। मुझे हर स्वप्नके लिये ग्राहक मिल जाता और जब मैं घर लौटता तो मेरी झोली खाली होती।

अगली रात जब मैं सोया तो थकानके कारण पलकें भारी थीं। और सपना? मैंने अपना थैला खोला, पर वह खाली था। मैं अपने सब स्वप्न बेच चुका था। मेरे पास अेक भी नहीं बचा था। मैं लेटा रहा, पर नींद नहीं आयी। सारी दुनिया स्वप्न देख रही थी, सब लोग स्वर्गके नन्दन काननमें सैर कर रहे थे, समुद्रके तट-पर अठखेलियाँ कर रहे थे, दूरदराजके बान्धवोंसे चर्चा कर रहे थे या मरे हुअे स्वजनोंसे प्रीति कर रहे थे, सुन्दर गीत सुन रहे थे, सुन्दरतम स्त्रियोंसे प्रेम कर रहे थे; फूल अुनके पास भीनी-भीनी गन्ध बिखेर रहे थे--नर्तकियाँ अुनके आमोदके लिये थिरक रही थीं--और अकेला मैं--स्वप्नविहीन--अेक दूरतक फैला लम्बा मैदान--सपाट रंगहीन--आकारहीन मेरे सामने तैर रहा था।

'और अैसा ही हमेशा रहा। लोग सपनोंकी चाहमें अेक दूसरेको कुहुनियोंके आगे बढ़ते और मेरे हाथोंसे सपने छीन लेते--और मैं रातको भिखमंगेकी नाअीं अुन लोगोंमें पड़ा रहता, जिन्हें मैंने ही धनवान बनाया था। हर रात अेक-सी होती। हर रात, यहाँ तक कि मैं अिस अकेलेपनका आदी हो गया। जैसे अिसके सिवा और कोअी चारा नहीं था। अब मैं बूढ़ा हो गया हूँ। अब मुझमें सपनोंकी चाह बाकी नहीं रही है। बूढ़े आदमी सपने देखते भी नहीं।'

'मुझे यह भी नहीं मालूम कि मेरा यह अन्तिम स्वप्न यहाँ कैसे रह गया। मुझे अिसका कुछ ख्याल ही न रहा होगा। और अब तो यह दागी हो गया है--बुरी तरह दागी। सभी चीजोंका यही अन्त होता है।'

पिताजीने सपना अुठाया और अुसे पेटीमें रखकर बन्द कर दिया। और तब अपना पाअिप स्टोवके पास रखकर बिस्तरपर लेट गये।

[अनुवादक: श्री वीरेन्द्र त्रिपाठी]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्यास !

: श्री 'भृंग' तुपकरी :

मैं प्यासा हूं,
मेरी कामनाएं प्यासी हैं !
कोओ मुझसे सरल हृदयसे मिले।
कोओ अैसा,
जो अपने हृदयको नकली पर्दोंसे बिना ढाँके
मुझसे दो घड़ी बातें कर सके !
कोओ अैसा,
जिसके मनके स्वर बनावटकी बोलीमें घुल न गये हों।
कोओ अैसा,
जिसने व्यावहारिक नम्रताके लिये
अपनी स्वाभाविक सरलताका गला न घोंट डाला हो।
मैं प्यासा हूँ,
आवरण विहीन, स्नेहसे भींगी,
सरल हृदयकी मधुर बातें सुननेको प्यासा हूँ।
मेरी कामनाओंकी प्यास
सान्त्वनाके देशको लाँघकर
बेचैनियोंके मरुस्थलकी तपती हुओ रेतमें
आ पहुँची हैं,
और झुलस-झुलसकर तड़प रही हैं।
कितनी ही बार
ये रेगिस्तानी मृगजलके पीछे दौड़ी हैं,
दौड़ती रही हैं,
लेकिन अिनकी तड़पन
आज तक किसी मरुद्यानमें पहुँचकर
शान्ति और सन्तोषके झिलमिलाते सरोवरमें
गोता नहीं लगा सकी,
प्यास नहीं बुझा सकी।
हाय ! मेरी कामनाओंको भटकते हुअे
ज़माने गुज़र गये हैं मेरे दोस्त !
अितनी बड़ी दुनिया
क्या मेरे लिये अेक नन्हा-सा,
भोला-सा,
सरल हृदय नहीं छोड़ सकती ?
अितनी बड़ी दुनिया !
मेरी वासनाओंको शरण देनेवाले
यहाँ सैंकड़ों नहीं, हजारों हैं,
लेकिन मेरी कामनाओंको
अपने शीतल आँचलसे ढाँककर
स्नेहसे दुलरानेवाला कोओ नहीं,
हाय, अेक भी नहीं,
और ये दुनिया अितनी बड़ी है !!!

* * *

मेरी पत्नी है,
जिसने मेरे मनको स्नेहका वह सम्बल दिया
जो मेरे जीवन-पथका जगमगाता दीपक बना हुआ है।
जिसने मेरी वासनाओंकी भड़कती हुओ ज्वालाको
शांत किया, शीतल किया,
जीवनके मैदानमें वह मेरे कंधेसे कंधा भिड़ाकर
दिन और रात,
सुबह और शाम,
सुखकी शीतल छायामें और दुखोंकी कड़कती धूपमें
मेरे साथ-साथ बढ़ती चल रही है।
वह मुझे जीवनका अुत्साह और शक्ति देकर,
मुझसे ले रही है।
मेरे बच्चे हैं !
अुन्होंने मेरे हृदयमें खिले स्नेहके कोमल सुमनोंको
बरबस अपनी अंजलियोंमें बटोर लिया है,
वे अपने भविष्यके लिये अपनी आशाकी नन्हीं नन्हीं
अधखुली आँखें
मुझपर जमाये
मेरे कर्तव्यकी झोलीको
अपनी मीठी-मीठी, मंद-मंद, मासूम मुसकानोंसे भर देते हैं।
और मैं
गुजरी मंजिलोंकी बीती थकानोंको बिसारकर
नयी खुशी, नये अुल्लास और नये अुत्साहकी
नयी किरणोंके सायेमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिन्दगीकी नयी ताजगीके साथ चलने लगता हूँ,
बढ़ता जा रहा हूँ— आगे, आगे, और आगे।
मगर यह प्यास कैसी है।
कहीं नहीं बुझी !
कभी नहीं बुझी !!
और मैं आज भी प्यासा हूँ !!
हाय, अभीतक मेरी कामनाएँ तरस रही हैं!
तड़प रही हैं !!!
यह प्यास किसके लिये है ?
कैसी है ?
क्यों है ?
क्या, नहीं समझे मेरे दोस्त ?
यह तुम्हारे लिये है,
तुम्हारे अभावकी प्यास है,
और तुम्हारे स्नेहसे सच्चाओंका तकाज़ा करनेके लिये है।
मेरे दोस्त !
यह संसारके हर दोस्तको
दोस्तके अभावमें बेचैन कर देनेवाली
वह अनबुझी प्यास है
जिसने आज तक सारे मानवोंको
अेक दूसरेसे बाँध रखा है,
और जो संसारके अन्त तक अपने बन्धन कसे रहेगी।
और—मेरे दोस्त। मैं तुझे पुकार रहा हूँ,
युगोंसे मेरी आवाज़ तेरे अभावोंकी घाटियोंको
गुँजा रही है,
और वो बेचारी तेरे अभावोंकी पहाड़ी
चट्टानोंसे टकरा-टकराकर,
अपनी बेबसीका सिर पीट-पीटकर,
मेरे ही पास वापस लौट-लौट आती है।
और मेरे दोस्त !
यह भी याद रख,
जिस रोज़ अिसकी गूँज मिट जायेगी,
वही अिस दुनियाकी ज़िन्दगीका आख़िरी रोज़ होगा,
अुसी दिन क़यामतका दामन दुनियाको समेट लेगा।

सम्बोधन !

: श्री अनिलकुमार :

आँकती अनुरागिनी छवि,
याद तेरी।
स्नेह शीतल प्रणय अुज्वल,
प्राण मेरी !
री निकटते व्यथित अुरकी
विरह मूरी।
शून्य नयनोंके किरणकी
मौन दूरी।
विगत जीवनके क्षितिजकी
अरुण रेखा।
सजल सुधियोंसे सुसज्जित
करुण लेखा।
तरुणते मनकी तरलते
सुखद दुखती।
सजल नभकी अश्रु चूरी
री बिलखती।
रुदनके लघु बिन्दु अगनित,
सिन्धु बनते;
सृजनके बहु सिन्धु बिम्बित
बिन्दु छनते।
री विशदते बिन्दुओंकी
सृजन प्रेरी।
रूप अुज्वल शशि शरद छवि
प्राण मेरी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री प्रभाकर माचवेके नाम—

स्व० प्रेमचन्दजीका अेक पत्र

'हंस'

The Magazine working
For a commonwelth of
Literature in India.

Bombay, III Esplanade Road,

Banaras, 'HUNS' Karyalaya

Proprietors :
The Huns Limited,
Editors
Premchand
&
Kanhaiyalal Munshi.

१५-९-१९३५

प्रिय प्रभाकर,

मैं तुम्हें कअी दिनोंसे पत्र लिखनेका अिरादा कर रहा था पर तुम्हारे पहले पत्रमें तुम्हारा पता न था। कल तुम्हारे दोनों लेख मिल गये। मैंने श्री खांडेकरजीकी कहानी पढी। वास्तवमें बहुत सुन्दर चीज है। हां! अंतमें या तो अनुवादमें कुछ रह गया है या और कोअी बात है। जमनामें ताजका प्रतिबिम्ब कैसे कुछ और हो गया यह मैं न समझ सका। मगर अिस कहानीको छापनेके लिये मुझे श्री खांडेकरजीसे अनुमति लेनी पड़ेगी। मुझे अुनका अेड्रेस मालूम नहीं। तुम लिख दो तो मैं अुन्हें पत्र लिखूँ। यदि वह अनुमति न देंगे तो कैसे छपेगी! 'मराठीके तीन अुपन्यासकार' मार्मिक आलोचना है! वह मैं अक्टूबरके अंकमें दे रहा था। तुम्हें यह धन्यवाद दूँ तो गोया यह मेरा काम होगा, तुम्हारा काम नहीं। अिसलिये धन्यवाद न दूँगा। पर तुम्हारी लगन सराहनीय है। दूसरे तीसरे महीने हंसके लिये कुछ लिख दिया करो। मैं तो समझता हूँ अगर अनुवाद न करके तुम मराठीके अच्छे अुपन्यासोंकी विस्तारसे आलोचना कर दिया करो तो वह अेक चीज हो जायगी और संभव है पुस्तक बन जाय। मि. फडके, देशपांडे (पु. य.) और खांडेकर तीनों मास्टरोंकी सर्वोत्तम कृतियोंकी आलोचना तीन महीनेमें कर डालो। अिसमें तुम्हें परिश्रम कम पड़ेगा और तुम्हारी पढाअीमें बाधा न पड़ेगी।

तुम्हारी कहानी 'दूधका पानी' मुझे बहुत अच्छी लगी, लेकिन तुम जानते हो मैं खाली भावुकता नहीं चाहता, कहानीमें कुछ मतलबकी बात भी चाहता हूँ।

बीरेन्द्र कुमारने अभी अेक और संस्मरण भेजा है। किसी गुजराती युवतीकी प्रेम-कथा है। मेरा विश्वास आत्म-लग्नमें नहीं है। विवाह अेक कांट्राक्ट सही, लेकिन जब कांट्राक्ट पूरा हो गया तो बिना विशेष कारणके अुसकी अुपेक्षाको मैं बेअीमानी समझता हूँ—अुसका हृदयसे पालन होना चाहिये। मगर अुनका आग्रह है कि वह कहानी अवश्य छपे। अिसलिये छापूँगा।

शुभाकांक्षी—
प्रेमचन्द

ता. क.—हंसमें बंगला, तेलुगु, तमिळ कन्नड, मलयालम, मराठी, गुजराती, अुर्दू आदि लेख छप रहे हैं। हमारा साहित्य-क्षेत्र कितना विस्तृत हुआ जा रहा है!

नोटः— पत्रकी नकलमें मूल पत्रके हिज्जे और सब बातें ज्यों की त्यों दी गयी हैं।—प्र० माचवे

(यह अुस समयका पत्र है जब बम्बअीसे १९३५ में श्री माननीय के. अेम. मुन्शीजी और स्व० प्रेमचन्दजीके संयुक्त सम्पादकत्वमें 'हंस' भारतीय साहित्यका प्रतिनिधि-पत्र बनकर शानसे निकल रहा था और मैं अुनका सह-सम्पादक था। कैसे स्मरणीय दिन थे वे! तेहि नो दिवसा गताः। —हु० श० सं०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आजकी मराठी कहानी

: श्री प्राध्यापक म. ना. अदवन्त :

आजकी मराठी कहानी आधुनिक कविताकी भाँति विवादका विषय बन गयी है। "आजकी नयी कहानी विकृत है, कृत्रिम है समझके परे है— अैसे आक्षेपोंसे लेकर वास्तवमें सच्ची कहानीका श्रीगणेश नवीन कथा-शैलीसे ही हुआ है।" अैसी आत्म-श्लाघा तकके अनेक 'वाद' अिस क्षेत्रमें अुठ खड़े हुअे हैं। प्रो. फडके, डॉ. वर्टी, श्री गंगाधर गाडगीळ जैसे नये-पुरानोंके पक्षपाती अिस क्षेत्रमें बड़े अुत्साहके साथ आगे बढे और नूतन काव्यधाराकी तरह नूतन कहानीके क्षेत्रमें भी विभिन्न मतोंका बाज़ार गर्म हुआ। मराठी साहित्यमें अिस तरहके वादोंका यातायात कोअी नयी बात नहीं है; बल्कि यों कहना चाहिये कि अैसे वाद ही साहित्यकी सजीवताके द्योतक हैं। और अिस दृष्टिसे देखें तो नयी कहानीपर आनेवाले आक्षेप स्वागत योग्य ही माने जाने चाहिये। अिन आक्षेपोंमेंसे ही नये मूल्योंकी छानबीन होती है और वे ही मूल्य टिकाअू होते हैं जो अिस कसौटीपर खरे अुतरते हैं।

मराठी कहानीके अितिहासपर सरसरी दृष्टि डालनेपर हमें मालूम होगा कि प्रत्येक कालखंडमें अुसके स्वरूपमें परिवर्तन होता गया है। आशय और अभि-व्यक्ति दोनोंमें वह प्रगतिशील रही है। स्व. हरिनारायण आपटेजीके समयकी सीधीसादी बालबोध कहानीको श्री वि. सि. गुर्जरजीने आकर्षक और कलात्मक रूप दिया। चरित्रचित्रणकी तरफ ध्यान देते हुअे श्री दिवाकर कृष्णने कहानीके अुस अंगको पुष्ट किया। प्रो. ना. सि. फडकेने कहानीको तन्त्रबद्ध, सुगठित स्वरूप प्रदान करके अुसे आकर्षक सतरंगी भाषाका अभिनव परिधान पहनाया और अुसके सौंदर्यमें चार चाँद लगाये। श्री खांडेकरजीने अुसे जीवनके अुन्मुख और आदर्शवादी बनाया। श्री य. गो. जोशी और बोकिलजी अुसे घरेलू वातावरणमें घुमा लाये। श्री लक्ष्मणराव सरदेसाअीने अुसपर गोमांतककी पार्श्वभूमिका रंग चढ़ाया और प्रो. वामन चोरघडेने अुसे काव्यात्मरूप दिया। यों १९३९ तक कहानीका क्षेत्र अनेक लेखक लेखिकाओंसे फूला फला। और अिस क्षेत्रमें लघुतमकथा जैसी नयी चीज नये सिरेसे अपना आसन दृढ़ करती हुअी विविध रसोंका पोषण करती चली जिससे अैसा लगता था कि मराठी कहानी अुत्कर्षकी चरम बिन्दुपर पहुँच गयी है।

पर अिसी समय दूसरा महायुद्ध छिड़ गया और १९३९ से कुछ समयतक अिस क्षेत्रमें बड़ी ढिलाअी आ गयी। अच्छी कहानियोंका सृजन न हो सका और यह शिकायत सुनायी दी कि आजकल अच्छी कहानियाँ लिखी ही नहीं जातीं। पुरानी पीढीके प्रतिनिधि कहानी-लेखक श्री. फडके, खांडेकर आदिका लेखन अिस क्षेत्रमें अपेक्षाकृत कम ही होता रहा। नये लेखक अभी हालहीमें अिस क्षेत्रमें पदार्पण कर रहे थे। अिन चार वर्षोंकी अवधिमें लघुकथा-स्पर्धाअें भी शुरू की गयीं ताकि मराठी कहानी साहित्यमें अच्छी मौलिक कहानियाँ लिखी जायँ। पर अिससे कोअी लाभ न हुआ। श्रेष्ठ कहानियोंका अभाव ही रहा।

१९४३ के अनन्तर अिस क्षेत्रमें परिवर्तन हुआ। नये कहानी लेखक अिस क्षेत्रमें आगे बढे। अुनकी कहानियाँ पुरानी बँधी हुअी परिपाटीको छोड़कर नये स्वरूपमें अुपस्थित हुअीं। अिन नयी कहानियोंमें जीवनके अधिक यथार्थ, सूक्ष्म और विभिन्न पहलुओं तथा भूमिकाओंके दर्शन होने लगे। मनोवैज्ञानिक सत्यके नये स्वरूपका आविष्कार अुसमें पाया गया। तंत्रकी बँधी शृंखलाको तोड़कर मराठी कहानी स्वच्छंद विहार करने लगी। कारीगरीसे बढ़कर कला निर्मिति-को ही श्रेष्ठ माना गया जिससे घटनाओंका ढाँचा ढीला पड़ गया। और घटनाओंसे भी अुनके पीछे, मूलमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्य करनेवाली चित्तवृत्तिको महत्व दिया गया। मानव मनकी सूक्ष्मताओंकी खोजमें चरित्र-चित्रणका नया तंत्र अुसने अपनाया। आशय और अभिव्यक्ति दोनोंमें नयी कहानीने आमूलाग्र परिवर्तन कर डाला।

गत आठ वर्षोंमें मराठीके कहानी-क्षेत्रमें नाम कमानेवाले श्री. अरविंद श्री गोखले, गंगाधर गाडगीळ, श्री पु.मा. भावे, श्री व्यंकटेश माडगुलकर आदि लेखकोंकी कहानियोंको पढ़नेपर हमें स्पष्ट मालूम होगा कि आशय और अभिव्यक्तिमें किस प्रकार कितना परिवर्तन हो गया है। यदि यह मान लें कि आजकलके कहानी-लेखकोंमें ये चारों प्रतिनिधि कहानी-लेखक हैं तो स्वाभाविक ही अुनकी कहानियोंके गुणदोष ही आजकी कहानीके गुणदोष हो सकेंगे। और यदि हम मराठी कहानीको समझ लेना चाहते हैं तो अिन चारोंकी कहानियोंको जानने और गुननेकी आवश्यकता है।

नयी कहानीके प्रतिनिधि लेखकोंमें श्री अरविन्द गोखलेको प्रथम स्थान देना चाहिये। अुनके ६ कहानी-संग्रह जो अब तक प्रकाशित हो चुके हैं अुन्हें सरसरी दृष्टिसे पढ़नेपर हमें विदित होगा कि अुनका 'कहानी-विश्व' कितना विशाल है अेवं समाजके विविध श्रेणीके लोगोंके चित्रणमें अुनको कितनी सफलता मिली है। अछूतोंकी बस्तीमें रहनेवाली 'सुन्की' से लेकर ब्याह होकर प्रथम ही मायकेमें आयी हुअी 'अक्का' तक, सभी तरहके व्यक्तियोंको अुनकी कहानीमें स्थान है। अिन सभी व्यक्तियोंके हृदयमें वे प्रवेश करते हैं, अुनसे समरस होते हैं और अुनके विचारों और भावनाओंकी छानबीन करके अुन व्यक्तियोंके अन्तर्मनकी कोमलताको सहृदयतापूर्वक व्यक्त करते हैं। दूसरेके दिलमें पैठनेकी सामर्थ्य जैसी अुनमें है शायद ही किसी औरमें वह पायी जाती है। 'मीलन' में सुमतीको ले आनेके लिये स्टेशन-पर आये हुअे मुकुंदका अन्तरंग अुन्होंने कलाके सहारे व्यक्त किया है। 'दिव्य' नामकी कहानीमें प्रसववेदनाके अनुभवसे झुलसी हुअी सगुणा, बम्बअीके यांत्रिक, नीरस और सौंदर्य-विहीन जीवनसे बाज़ आयी हुअी मंजुळा, 'अपनी धर्मपत्नी ही अपनी अुपेक्षा करती है अिस कल्पनासे खिन्न त्र्यंबकराव' अिन सभी लोगोंके चरित्र-चित्रण अुनके मनोविश्लेषणकी सामर्थ्यके साक्षी हैं। अपनी कहानीके पात्रोंके दिलमें गोखलेजी गहरे पैठते हैं अुनसे अेकरूप होते हैं, अपने व्यक्तिमत्त्वको अुनमें विलीन कर देते हैं और अिसीलिये अुनके चरित्रचित्रण अत्यन्त प्रभावी और कलापूर्ण होते हैं।

परकीय हृदय-प्रवेशकी सामर्थ्य गोखलेजीका अेक विशेष गुण है। अुनकी लेखन-शैली भी अुतनी ही आकर्षक है। किसी घटना या प्रसंगका हूबहू दर्शन करानेके लिये अुसमें कलावृत्तिसे समरस होना पड़ता है और अिस कलामें गोखलेजी सिद्धहस्त हैं। चँहु ओर जो घटनाअें घटित होती हैं अुन्हें वे तटस्थ रहकर ही नहीं देखते, किन्तु रसिकतासे अुनका अनुभव कर लेते हैं अुनसे समरस होते हैं और अपने व्यक्तित्वको अुसमें मानते हुअे अुनका वर्णन करते हैं, जिससे अुनके वर्णनमें सजीवता प्रतीत होती है और वे पाठकोंको आकृष्ट कर लेते हैं। अिसके अलावा संसारके विविध अंगोंसे समरस होनेकी क्षमता रखनेके कारण अुनका "कथाविश्व" विशाल हो गया है। विभिन्न क्षेत्रोंके लोगोंका चित्रण जहाँ वे समरस होकर करते हैं वहाँ समाजके निम्न-श्रेणीके लोगोंके दिलमें प्रविष्ट होकर अुनके जीवनके सभी पहलुओंको जान लेते हैं और सहृदयतासे अुनके जीवनके चित्र खींचनेको अुत्सुक रहते हैं और अिसीलिये हमें अुनकी कहानियोंमें विविधताके दर्शन होते हैं।

प्रतिनिधि कहानी-लेखकोंमें गंगाधर गाड-गीळका दूसरा स्थान है। अुनकी कहानी आज अेक विवादका विषय बन गयी है। अगम्य मनोविश्लेषण विकृत मनोवृत्तियोंका चित्रण आदि अनेकों आक्षेप अुनकी कहानी-कलापर किये गये हैं। 'अुंट आणि लंबक' नामकी अुनकी कहानी अभी अभी विवादका विषय बन चुकी थी। लेकिन अुनकी कहानियोंकी आलोचना करनेके पहले हमें अुनके बहुविध और व्यापक व्यक्ति-त्वको जान लेना चाहिये। अुनकी क्रीड़ामयी लेखन-शैलीके साथ ही अुनकी काव्यमयी शैलीका भी हमें विचार करना चाहिये। अुनकी कहानियोंमें अुत्कटता और कल्पनाविलास चरम सीमापर पहुँचा हुआ होता है। सूक्ष्म मनोविश्लेषण करते हुअे अन्तःकरणमें पायी जानेवाली विसंगतिपर भी अुनका ध्यान रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिससे अुनकी कहानियोंमें अेक अपूर्व विविधता निर्माण हुअी है। पतिपत्नीकी गृहस्थीमें चायके प्यालेके कारण मची हुअी आँधीका चटपटी और विनोदी भाषामें वर्णन करनेवाले गाडगीळजी, अपनी आँखोंके सामने देखे हुअे हत्याकांडसे, सहने हुअे निर्वासितका चित्र कोमलतासे खींचते हैं। बकुला जैसी वेश्याके अंतःकरणकी भावनाओंके स्तर खोलकर दिखाते हुअे, अपनेसे छोटी अुम्रके युवकपर अनुरक्त किसी ३५ सालकी अधेड़ स्त्रीके मनोविकारोंका वर्णन करते वे नहीं हिचकते। अिसीलिये संसारके अनेक व्यक्ति और प्रसंगोंको देखते हुअे अुनकी तहतक पहुँचकर अत्यन्त आकर्षक शैलीमें अुनका शब्दचित्र खींचनेकी अपूर्व क्षमता अुन्होंने पायी है।

विविधता, विपुलता और वैचित्र्य आदि अुनकी कहानीकी विशेषताओंके साथ ही यहाँपर अुनकी कहानियोंके दो-तीन गुणोंका अुल्लेख कर देना आवश्यक है। अुनकी कहानियोंकी अेक विशेषता यह है कि अुनमें विवरणात्मकता रहती है। वे अपनी कहानियोंमें वह विवरण अितनी सूक्ष्मतासे और चुने हुअे शब्दोंमें देते हैं कि अुनकी सफाअी और निरीक्षण शक्तिपर आश्चर्य होता है। अैसे अवसरपर वे यों शब्दरचना करते हैं कि अुस विवरणको पढ़कर पाठकोंके मनमें अर्थके अनेक वलय निर्माण होते हैं। कभी अैसे शब्दोंका प्रयोग करते हैं या कोअी चमत्कृतिपूर्ण प्रतीक रखते हैं कि अूपरसे निरर्थक लगनेवाले किसी विवरणसे ही हमारे सामने जीवन विषयक विशद तत्वज्ञान अुपस्थित होता है। अुनकी शैलीमें अुत्प्रेक्षाओंके लिये अेक अपना विशेष स्थान है। सिर्फ भाषाको सजाना ही अुनका हेतु नहीं होता। कथावस्तुके आशयसे ये अुत्प्रेक्षाअें अितनी अेकरूप रहती हैं कि अुनके स्वतन्त्र अस्तित्वका विचार ही नहीं रहता। 'गढूळ पाणी' नामकी कहानीमें चन्द्रकान्तकी अस्वस्थ मनोदशाका वर्णन करते हुअे अुन्होंने जो पार्श्वभूमि खड़ी की है और जिन अुत्प्रेक्षाओंका प्रयोग किया है वे यों हैं—

"बरसाती हवासे मरा हुआ कबूतर पंख फैलाये दुनियाके धूरेपर पड़ा था। हवाका दम घुटा हुआ था। सभी घरोंको सिरदर्दने पछाड़ रखा था। पानीकी बूंदें टपकाते मुंहसे वे अपनी रामकहानी सुना रहे थे और बिजलीके खंबे अुसे सुन रहे थे—नहीं सुननेका बहाना कर रहे थे। बिजलीकी कतरनी बरसातकी धाराको कतरनेके लिये बीच-बीचमें चमक जाती थी ... .."

यह वर्णन पढ़नेपर गाडगीळकी कल्पनाके अलावा कथा-वस्तुकी आत्मासे अेकरूप होनेकी वृत्ति भी हम जान सकते हैं। अिस दृष्टिसे अुनकी "विन चेहेऱ्याची संध्याकाळ" नामकी कहानी सचमुच ही पढ़ने लायक है।

और अिनके साथ ही अुनके मनोविश्लेषणके अभिनव तंत्रको देखकर हम झट समझ सकते हैं कि गाडगीळजीकी कहानीकी अपनी खास विशेषता किसमें है। सिर्फ मानव-मनकी भावनाओंका वर्णन करनेसे ही अुन्हें सन्तोष नहीं होता। वे अुनके अन्तस्तलमें पैठते हैं और अुन भावोंको बारीकीसे व्यक्त करते हैं।—'मनुष्यका मन विसंगतिकी गठरी है—अिस बातका अनुभव हमें अुनकी कहानियोंको पढ़नेपर होता है। अिसलिये विसंगतिके चित्र जब वे खींचते हैं अुस समय अुस व्यक्तिसे, अुसके अंतर्मनसे गाडगीळजी कितने समरस होते होंगे अिसकी प्रतीति हमें होती है। जागृत मनोव्यापारोंके वर्णनकी अपेक्षा सोये मनकी आशा आकांक्षाअें और अनुभवोंका वर्णन करना टेढी खीर है। यहाँपर कल्पनाशक्तिके अतिरिक्त अुस व्यक्तिके मनसे समरस होनेकी क्षमता होनी चाहिये। बिना अिसके कोअी लेखक सफल नहीं हो सकता। सौभाग्यसे गाडगीळजीने अिस क्षेत्रमें अपूर्व सफलता प्राप्त की है। पात्रके दिलमें कअी बार वे अितने गहरे पैठ जाते हैं कि अुनका अनुगमन करना पाठकोंके लिये दूभर-सा हो जाता है। और तभी तो अगम्य मनोविश्लेषणकी शिकायत पाठक करने लगते हैं।

अिन दोनों कहानी लेखकोंकी अपेक्षा पु० भा० भावेकी कहानीका स्वरूप कुछ भिन्न है। अुन्मत्त भावना और ओजस्वी भाषासे अुन्होंने अपने कहानी-कुंजको सजाया है। कल्पना विलाससे भी भावनाओंकी अुत्कटता अधिक मात्रामें अुनकी कहानियोंमें पायी जाती है। और अुन भावनाओंका चित्रण वे बिना संकोच

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते हैं। खासकर प्रेमभावनाओंके अनेक पहलुओंको वे प्रभावशाली ढंगसे दिखाते हैं। 'सतरावे वर्ष' नामकी कहानीमें, जिसके मनमें प्रेमका अंकुर हाल हीमें फूट पड़ा है अुस 'बवन'से लेकर, जवानीके नशेमें अुन्मत्त ३५ वर्षकी श्रीमती 'सुशीला' तक सभी पात्र पाये जाते हैं। अिन व्यक्तियोंका चित्रण करते समय, स्त्री पुरुषोंके जीवनमें जो मोह या प्रेमभावनाअें रहती हैं अुनको व्यक्त करनेकी ओर वे विशेष प्रयत्नशील रहते हैं। कामवासना और प्रेमका जीवनमें स्थान, अुनका विविध रूपोंमें होनेवाला आविष्कार परिणाम स्वरूप समाजमें स्थान-स्थानपर पाया जानेवाला ढोंग, झूठ, चोरी, दुराचार-भ्रष्टाचार आदि अनेक बातोंको अुनकी कहानियोंमें हम देखते हैं। यह केवल शृंगारिक वर्णन न होकर जीवनका खुली आँखों किया हुआ निरीक्षण होता है और यही अुनकी कहानियोंकी जान है।

कअी बार अुनकी कहानियोंमें जीवनकी भव्य घटनाओंके दर्शन होते हैं। 'अखेर' कहानीमें मृत्युका भीषण चित्र पाठकोंके सन्मुख रखा है। 'ध्यास' कहानीमें जगन्नाथके मनोव्यापारोंका चित्रण करते हुअे अेक भव्य परिणामको प्रगट किया है। भाषा और भावनाके साथ ही कल्पना-विलासका भी अुनकी कहानीमें विशेष स्थान है। भावेजीकी काव्यात्म-प्रवृत्ति मानव जीवनके दुख और पीड़ाको भी जान लेती है और अुनसे समरस होकर अुनका यथार्थ शब्दचित्र खींचती है।

'तन्द्रा और व्यथा' जैसी कहानियोंमें कोमल हाथोंसे मनुष्य मनकी खोली हुअी पर्तें अिसकी साक्षी हो सकती हैं।

कथावस्तुको भावेजी अधिक महत्व नहीं देते। 'काळ, काम व वेग' नामकी अुनकी कहानीको शक ही है कि कोअी कहानी माने। वर्णन, पुनरुक्ति आदि अनेक दोषोंके रहनेपर भी ओजस्वी भाषा, असरकारी भावचित्रण, कतिपय स्थानोंपर पायी जानेवाली काव्यात्मकता आदि अुनकी शैलीकी विशेषताअें हैं जिससे अुनकी कहानियोंमें अेक अनोखा आकर्षण पैदा हो गया हैं।

"माणदेशी माणसे" के लेखक श्री. व्यंकटेश माडगूळकरने अपनी कहानियोंमें अेक निराली दुनियाके दर्शन कराये हैं। देहाती जीवनका वर्णन अपनी कहानियोंमें आजतक अनेकोंने किया है। पर कतिपय लेखकोंके वर्णनमें अद्भुतरम्यता ही रही। कअी लेखकोंकी कहानियोंमें कृत्रिमता पायी गयी। देहाती जीवनके परम्परागत संकेतोंके दर्शन हुअे। लेकिन माडगूळकरजीकी कहानी माणदेशकी अुर्वरा भूमिमें निर्माण हुअी है। अुसकी जड़ें माणदेशकी जमीनमें धँसी हुअी हैं। वे माणगंगाके जलसे सिंचकर पनप अुठी हैं, जिससे अुसमें सजीवता आ गयी है। अुसे देशके लोगोंका दारिद्र्य, अुनका भोला स्वभाव, निर्भयता, अुनकी आदतें, अुनकी भाषा, अिन सभीके दर्शन अपने दो कहानी संग्रह 'माणदेशी माणसे' और गांवाकडच्या गोष्ठी' में अुन्होंने कराये हैं। अुपरोक्त दो संग्रहोंको पढ़नेपर यों लगता है कि मानों हम माणदेशमें घूम रहे हैं। दरिद्रता और प्रतिकूल परिस्थितिसे झगड़नेवाले अिन व्यक्तियोंको देखकर सामाजिक और आर्थिक विषमताको बिना महसूस किये हम नहीं रह सकते। 'बकरीकी तरह घासफूस खाकर जीवित रहनेवाला धर्मा रामोशी' जिन्दगीभर अिसी तरह गरीबीमें घुलकर अन्तमें हम मौतके घाट अुतर जायेंगे" अिसी तरहके दुःखोद्गार निकालते हुअे भगवानसे भी कैफियत पूछनेवाला रामा मैलकुलीं, दरिद्रताके कारण डाकूगिरीके फंदेमें पड़कर मनुष्य और समाजसे बहिष्कृत 'शिवा माळी' गरीबीमें पिसा हुआ, साहुकारोंसे मुंह चुराकर गलीकूचोंमेंसे होकर दफ्तर जानेवाला और पत्नीकी बदचलनको देखकर, अफीम खाकर जान देनेपर तुला हुआ 'रघू क्लर्क' ये व्यक्ति सचमुच ही हमारी आँखोंके सामने मूर्तिमन्त खड़े हो जाते हैं, दिलमें पैठते हैं और असीम करुणाको जगा देते हैं। श्री. माडगूळकरजीकी यही विशेषता है। नपे-तुले शब्दोंमें किसी व्यक्तिका शब्द-चित्र पाठकोंके सामने खड़ा कर देनेमें ही अुनकी अपनी विशेषता है। और साथ ही अुस व्यक्तिके हृदयमें प्रविष्ट होकर, अुसका अन्तरंग खोलकर अुसके व्यक्तित्वकी जानकारी करानेकी अपूर्व क्षमता अुनमें है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'गांवाकड़ील गोष्टी' नामक संग्रहमें माणदेशकी अनेक घटनाओं, अनेक-कल्पनाओं अेवं व्यवहारोंका दर्शन करानेमें अुन्होंने कलम तोड़ दी है। देहाती जीवनका कोरा वर्णन करके ही वे नहीं रहते। अुन लोगोंके जीवनके दैन्य, दुःख और संकटोंका चित्र अिस प्रकार खींचते हैं कि पाठकोंके दिलमें करुणा अुत्पन्न होकर ही रहती है। यही अुनकी कहानियोंकी विशेषता है।

अिन चार कहानी लेखकोंके अलावा और कतिपय कहानी लेखक मराठी-कथा साहित्यकी श्रीवृद्धि कर रहे हैं। यद्यपि हर अेकके बारेमें विस्तारके साथ लिखना असंभव है फिर भी यहाँपर अुनका नामनिर्देश गौरवके साथ करना अुचित है। 'लामण दिवा' संग्रहके लेखक श्री मोकाशी, काव्यकी भांति कहानियोंमें भी स्वछंद प्रतिभाके दर्शन करानेवाले मनमोहनजी नातू 'सुःख दुःख' के लेखक अुमाकांत ठोमरे आदि लेखकोंका कार्य प्रशंसनीय है। अिनकी कहानियाँ संग्रह या संकलनके रूपमें होनेके कारण पाठक अुनसे परिचित भी हो चुके हैं। पर जिनके संग्रह अबतक प्रकाशित नहीं हुअे अैसे 'शशिकांत पुनर्वसु "मौज" में लिखनेवाले 'माणूस' सदानंद रेगे, रणजित देसाअी आदिका यहाँपर गौरवके साथ अुल्लेख करना चाहिये। नयी कहानीके सभी लक्षण अिनकी कहानियोंमें नहीं पाये जाते। फिर भी विषयोंकी विविधता, सूक्ष्म निरीक्षण, सुन्दर स्वचरित्र चित्रण और आकर्षक अभिव्यक्ति आदि गुण अुनकी कहानियोंमें पाये जाते हैं। खासकर शाशिकांत पुनर्वसु और 'माणुस' नामसे लिखनेवाले लेखकोंका यहाँपर विशेष रूपसे अुल्लेख करना होगा। शाशिकांत 'पुनर्वसु' ने आजतक अनेक सुन्दर कहानियाँ लिखी हैं। मनुष्यके स्वभावके अलग-अलग नमूने अुन्होंने अपनी कहानीद्वारा पाठकोंके सामने आकर्षक रूपमें पेश किये हैं। अुनकी चलती चटपटी लेखनशैली और अपनी अनुभूतिके क्षेत्रसे चुनी हुअी खास घटनाओंको वर्णन करनेकी पद्धति सचमुच ही तारीफके लायक है। साप्ताहिक "मौज"में लिखनेवाले 'माणूस' के बारेमें भी मुझे कुतूहल होता है। प्रति सप्ताह अेक सुन्दर समाज चित्र खींचनेवाले अिस लेखककी प्रतिभा और सूक्ष्म निरीक्षण-शक्ति अेक हद तक प्रशंसनीय है। प्रसादकी 'लघुकथा-स्पर्धामें' 'भैरव' नामकी कहानीको जिन्हें तीसरा पारितोषिक मिला है अुन रणजित देसाअीजीकी देहाती कहानी भी यथार्थता-के दर्शन कराती है। देहाती-जीवनपर लिखनेवाले कहानी लेखकोंमें भिलवडीके भोंसले और व्यंकटेश माडगुळकरजीके अनुज ग. दि. माडगुळकरजीका नाम विशेष अुल्लेखनीय है। सदानन्द रेगेजीकी प्रतिभा—गाडगीळ और गोखलेकी शैलीका अनुकरण करती प्रतीत होती है जिससे नयी कहानीकी कुछ विशेषताअें अुनकी भी कहानीमें दिखायी देती हैं। लगता है कि अिन सब तरुण कहानी-लेखकोंने मराठी कहानी क्षेत्रकी श्रीवृद्धि करनेकी ठान ली है।

पुरानी पीढ़ीके—पुरानी परिपाटीपर चलनेवाले लेखक भी मराठी-कहानीकी श्रीवृद्धि कर रहे हैं। पुरानी पीढ़ीके लेखकोंमेंसे अनेकोंकी लेखनी पूर्ण विराम ले चुकी है। कतिपय लेखकोंकी गति मंद पड़ गयी है, और कअी तो पुरानी परिपाटीपर ही चल रहे हैं। अनन्त काणेकर, द. र. कवठेकर आदि लेखक तो अिस क्षेत्र-से रुखसत हुअे-से जान पड़ते हैं। श्री य. गो. जोशी, बोकिल, फड़के, खाण्डेकर आदि लेखक अिस क्षेत्रमें शायद ही झाँकते नजर आते हैं। डॉ० वर्टी और सर-देसाअीका लेखन विपुलतासे हो रहा है पर वे अेक बँधी हुअी सीमामें ही चक्कर काटते हैं। आमतौरपर सभी पुराने कहानी-लेखकोंने अिसी मार्गको अपनाया है जिससे गिनतीमें नयी कहानियोंकी जितनी ही प्रसिद्ध होनेवाली अुनकी कहानियाँ पाठकोंका मन आकृष्ट करनेमें पिछड़ी हुअी दिखाअी देती हैं।

श्री फडके और श्री खाण्डेकर पुरानी पीढ़ीके प्रतिनिधि कहानी-लेखक हैं। अेक समय अिस क्षेत्रमें अपना विशेष नाम कमा चुके हैं। पर साहि-त्याकाशके ये चन्द्र-सूर्य अब निस्तेज-से हो गये हैं। श्री फडकेजीने अुपन्यासके-क्षेत्रमें भले ही अपनी प्रतिभाका विलास-वैभव सुरक्षित रखा हो, पर कहानियोंमें अेक ही बातका पिष्टपेषण या दुहराना महसूस होता है जिससे अुनकी कहानियोंको पढ़नेपर पाठकोंको निराश होना पड़ता है। शायद फडकेजीने अिस बातको जान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिया होगा और अिसीलिये परायी भाषाकी कहानियों-के अनुवाद करनेमें ही आजकल वे दत्तचित्त हैं। श्री खाण्डेकरजीकी कहानियोंमें आजकी नूतनता प्रतीत होती है। अुनकी प्रतिभाने परिवर्तनशील युगके मूल्योंको आत्मसात् किया और धीरे-धीरे नयी अनुभूतियोंका आविष्कार अुनकी कहानियोंमें होने लगा। 'हस्ताचा पाअूस', 'सांजवात' नामके अुनके कथा-संग्रह जो हालही-में प्रकाशित हुअे हैं, अुन्हें पढ़नेपर हम कल्पना कर सकते हैं कि अुनकी प्रतिभा पुराना चोला छोड़ती हुअी प्रगति-शील हो रही है। फिर भी आजकल अुनकी लेखनी थकी हुअी-सी प्रतीत होती है। 'दीपावली' अंकके लिये लिखनेवाले लेखकोंमें अुनकी गिनती होने लगी है जिससे पहले जैसी विपुलताका अुनके लेखनमें अभाव रहता है और अेक हदतक यह स्वाभाविक भी है। लेखककी प्रतिभा हमेशा खिली हुअी रहनी चाहिये—अैसी अिच्छा हम करें भी कैसे ?

मध्यम-वर्गकी पारिवारिक भावनाओंका सहृदयतासे चित्रण करनेवाले श्री य. गो. जोशी, और चलती विनोदपूर्ण भाषामें गृहस्थीके रमणीय चित्रोंको खींचने-वाले बोकिलजीका लेखन अब मंद गतिपर है। और अुनके लेखनमें रहनेवाली अुपरोक्त विशेषताअें भी अब अुतनी नहीं निखरती नज़र नहीं आतीं। दोनोंकी अच्छी कहानियाँ आज भी कभी-कभी 'मासिकों'में दिखायी देती हैं, पर वे अपनी बँधी हुअी सीमाको लाँघने नहीं पाती। श्री बोकिलजीने 'माती' और 'अिस्माअिल' जैसी कहा-नियोंमें अपनी बँधी हुअी परिपाटीको तोड़नेकी कोशिश जरूर की है, पर दोनोंकी कहानियोंमें जीवनकी व्यापक अनुभूतियोंकी प्रतीति अुतनी नहीं होती। प्रसादकी 'लघुकथा-स्पर्धामें' प्रथम श्रेणीका पुरस्कार प्राप्त करने-वाले अच्युत बर्वेने कुछ अंशोंमें अिस परंपराको बनाये रखनेका प्रयत्न अवश्य किया है पर अुनमें भी पहले जैसा अुत्साह नहीं रह गया है।

गोमांतक (गोवा) की अभिनव पार्श्वभूमिपर अपनी कहानियोंकी रचना करनेवाले लक्ष्मणराव सर-देसाअी और पं. महादेवशास्त्री जोशीजी आज भी बड़े अुत्साहसे लिख रहे हैं। लक्ष्मणरावजीके 'संसारातील अमृत' नामके कहानी संग्रहमें हम प्राकृतिक सौंदर्यके साथ ही सरस भावनाओंका भी चित्रण पाते हैं। गोमां-तकके प्रकृति सौंदर्यके साथ-साथ वहाँकी संस्कृति, वहाँका जीवन और व्यक्तियोंका दर्शन जो अुसमें दिखायी देता है, सचमुच नवीन और आकर्षक हैं। अुन्मादी प्रेमकी भावनाओंके वर्णनमें वे कभी-कभी बहक जाते हैं; फिर भी अुन्होंने अपनी कहानीमें आकर्षण अब भी बनाये रखा है। अन्तरराष्ट्रीय कहानी-स्पर्धामें अपनी मराठी कहानीका प्रथम पुरस्कार प्राप्त करके अुन्होंने अपनी प्रतिभाकी अभिनवताको सिद्ध किया है।

"खडकातील पाझर", 'विरागी' 'मोहनवेल' आदि लघुकथा संग्रहोंके लेखक महादेवशास्त्रीजीका यहाँपर अुल्लेख करना चाहिये। (अुपरोक्त लघुकथा संग्रहोंके कारण अुनका नाम प्रसिद्ध हो गया है।) अुनका "कहानी-विश्व" समृद्ध है— अुनकी कहानियाँ पुरानी बँधी हुअी परिपाटीपर चल रही हैं; फिर भी गोमां-तककी पार्श्वभूमिका सहयोग अुन्हें मिला है। विविध भावनाओंका मनोहर आविष्कार अुनमें है। चरित्र चित्रणकी भी विविधता है। सात्विक जीवन तथा पवित्र भावनाओंका दिलपर होनेवाला असर पाठक भली भाँति महसूस करते हैं। पवित्र भावोंकी निर्मिति और कथा-वस्तुकी सजावटकी ओर ध्यान देते हुअे अुन्होंने सुखांत और मनोरंजक कहानियाँ लिखनेका कार्य किया है। अिससे अुनकी प्रतिभा हमें जीवनके अंतस्तलमें कहीं भी नहीं ले जाती।

श्री दिघे और श्री ठोकल पाठकोंको देहाती जीवनकी ओर भले ही ले गये हों पर अुनके देहाती जीवनमें अद्भुत रम्यताके ही दर्शन होते हैं। अद्भुतकी रुचि यही अुनकी कहानियोंकी विशेषता है और यही कारण है कि अुनकी कहानियोंमें यथार्थके दर्शन नहींके बराबर ही रहते हैं। स्वप्निल कल्पना-विलास और काव्यात्म आविष्कार अुनकी कहानियोंको पढ़ते हुअे नजर आता है और अिसमें ही अुनकी अपनी विशेषता है। प्रा. माटेजीकी कहानियोंमें पाया जानेवाला अुपेक्षितोंका जीवन अपेक्षाकृत अधिक असरकारक और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यथार्थ है। अुनके लिखे हुअे "अुपेक्षितांचे अन्तरंग" से "माणुसकीचा गहिवर" तकके कथासंग्रहोंको गौरसे पढ़नेपर, अुनकी विविधता, भावनाओंका अुन्मेष और अनुभूतियोंका प्रत्यय विशेष रूपसे हमें दिखायी देता है। अुपेक्षितोंके अन्तस्तलमें पैठकर अुनसे समरस होकर माटेजी अुपेक्षितोंके जीवनके संपूर्ण दर्शन सरस भाषामें हमें कराते हैं। फिर भी कहानी क्षेत्रमें प्रा. माटेका अुल्लेख पिछड़ जाता है। कारण यह हो सकता है कि लोग अुन्हें अेक विद्वान प्रबन्ध-निबन्धकार लेखककी हैसियतसे ही पहचानते हैं जिससे अुनके अिस गुणकी ओर लोगोंका ध्यान नहीं जाता।

श्री ग. दि. माडगुळकरजीकी कहानियोंमें देहाती जीवनके यथार्थ और असरकारक दर्शन होते हैं। अपने अग्रजकी तरह वे सुन्दर कहानियाँ लिखते हैं पर वे संख्यामें कम रहनेके कारण अुनका नाम अिस क्षेत्रमें पिछड़ा हुआ है।

यहाँपर डॉ. वर्टीजीका स्वतन्त्र रूपसे नामनिर्देश करना चाहिये। आजके कहानी लेखकोंमें सबसे अधिक लोकप्रिय कहानी लेखकके रूपमें वे हमारे सम्मुख आते हैं। अुनकी कहानियोंके विषय विविध हैं, लिखनेकी शैली भी आकर्षक है और भाषा चलती और ललित-रम्य है। 'समीक्षक' और 'किर्लोस्कर' मासिकोंमें जो स्पर्धाअें रखी गयी थीं अुनमें ये पुरस्कार भी प्राप्त कर चुके हैं। मनोरंजक कथा-वस्तु, आकर्षक शैली ये ही अुनकी कहानीकी अुल्लेखनीय बातें हैं। विनोदके लिये भी अुनकी कहानीमें अवकाश रहा है। अितना होनेपर भी अुनकी कहानियोंमें गहराअी नहीं होती जीवनके बाह्यरूपकी झाँकी वे कराती हैं। पर गहरे आशयसे भी बढ़कर, कारीगरीकी ओर अुनका ध्यान रहता है जिससे अधिक समय तक अुनकी कहानी मनको पकड़ नहीं पाती।

अत्यंत मंदगतिके लेखकके रूपमें वामनराव चोरघडे और कुसुमावतीबाअी देशपांडेका नाम हमारे सामने आता है। चिंतनशील मनोवृत्ति और काव्यात्मक आविष्कारके कारण अिन दोनों प्राध्यापकोंकी कहानियोंमें अेक निराला ही वैशिष्ट्य प्रतीत होता है। कहानीको कथावस्तुकी शृंखलासे मुक्त कर देनेका श्रेय श्री. चोरघडेजीको देना चाहिये अिस ढंगकी कहानियाँ लिखनेके लिये आवश्यक काव्यात्म दृष्टि चोरघडेजीको प्राप्त है। जिससे अुनकी कहानियोंके विषय वातावरण और चरित्रचित्रणमें दिखाअी देनेवाली विविधता आकर्षक हो अुठती है। 'सुषमा' से लेकर 'संस्कार' तक अुनके लिखे छः कहानी संग्रह पढ़नेपर हमें मालूम होता है कि अनेक भावनाओंको वे कितनी कोमलता और सरलतासे लिख सकते हैं। घटनासे बढ़कर वे भावोंको अधिक महत्व देते हैं और काव्यात्मक ढंगसे अुनको प्रस्तुत कर देते हैं। अुन्होंने अपनी कहानियोंका तन्त्र स्वयं ही तैयार किया है। सुश्री कुसुमावती देशपांडेके बारेमें भी हमें यही कहना चाहिये।

चिन्तनशील प्रवृत्ति और भावोत्कटताका मनोहर संगम अुनकी कहानियोंमें दिखाअी पड़ता है। अुसपर काव्यात्मक चित्तवृत्तिका अलंकरण चढ़ाया नजर आता है जिससे अुनकी कहानीका स्वरूप चांदनीकी तरह रमणीय लगता है। परन्तु साहित्याकाशके ये दोनों कहानी लेखक अब तो आदिके चांद बन गये हैं। फलतः अुनकी कहानियाँ पाठकोंको शायद ही पढ़नेको मिलती हैं।

अिनके अलावा शांता शेलके, कमलाबाअी फडके, शान्ताराम, प्रभाकर पाध्ये, रा. भि. जोशी, भा. र. आठवले आदि पुरानी परिपाटीपर चलनेवाले लेखक भी अिस क्षेत्रमें अनमोल कार्य करते रहे हैं। अनेकोंकी अनेक विशेषताअें अुनकी कहानियोंमें प्रकट हो रही हैं। आजकी नअी कहानीके प्रवाहके समान ही अिस कहानीका वेग भी अुतना ही प्रबल है और अुसमें भी अेक अनोखा सौंदर्य है यह बात हम न भूलें।

यों आजकी मराठी-कहानी नये-पुरानेके संगमपर खड़ी है। यहाँपर खड़े रहकर हम दोनों धाराओंकी शोभा देख सकते हैं। और अिस प्रकार देखते हुअे अेक बात सहज ही नजर आती है। नयी कहानीका प्रवाह गहरा, गंभीर और विशाल प्रतीत होता है, तो पुरानी धारामें निर्झरकी क्रीड़ा दीख पड़ती है। पुरानी कहानी बँधे हुअे ढाँचेसे भले ही निर्माण न हुअी हो, फिर भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुसका ढंग बहुत-कुछ निश्चित-सा हुआ था। बाह्य आविष्कारकी ओर अुसका ध्यान था। आशयसे भी अभिव्यक्तिके सौन्दर्यको वह व्यक्त कर रही थी। पुरानी कहानियोंमें तंत्रको ही श्रेष्ठ माना गया। कथा-वस्तु और चरित्र-चित्रणका अेक निश्चित संकेत कायम हुआ। प्रारम्भ, मध्य और अन्तकी तरफ ही अुसका ध्यान रहने लगा। मानव-जीवनके अथाह-सागरमें अुसने कभी अवगाहन नहीं किया। वह व्यक्तिके बाह्यांगकी ओर ही देखती रही। अुसके अंतरंगमें पैठनेका प्रयत्न अुसने कभी नहीं किया। मध्यमवर्गके जीवनमें ही वह बहुत कुछ अुलझी रही जिससे अुसका क्षेत्र अपेक्षाकृत मर्यादित रहा। मानव मनका मन्थन कर, अुसके तलमें प्रविष्ट होकर अुसकी विविध प्रवृत्तियोंका आविष्कार पुरानी कहानीने कभी नहीं किया; बल्कि मानव-जीवन-के बँधे हुअे संकेत निर्माण कर अुनके ढाँचेमें ही कहानी-को बिठा दिया गया। परिणामतः श्री फडकेजीने नयी कहानीकी आलोचना करते हुअे लिखा है—"किसी पात्रके चित्रणके बारेमें लेखक पहले मनमें ठानते थे कि 'अिसे सज्जन बनाया जाय या दुष्ट'—और तभी अुसका चरित्र चित्रण करते थे, जिससे अुनके निर्माण किये चरित्र संस्मरणीय हुअे हैं और हो रहे हैं।"

नये कहानी लेखकोंने पुराने संकेतोंको बहुत अंशों-में ठुकरा दिया है। पहली बात तो यह है कि नयी कहानी जीवनकी सभी तहोंमें पैठकर मानवके जीवन और मनका कुतूहलतासे निरीक्षण कर रही है जिससे नयी कहानीका स्वरूप बहुत व्यापक हुआ है।

समाजके विविध स्तर, अलग अलग स्वभाव और अुम्रके लोग, जुदे-जुदे अनुभव और विभिन्न घटनाओंका आविष्कार आजकी कहानीमें हो रहा है। खासकर, दूसरा महायुद्ध, देश-विभाजन, जहाँ-तहाँ फैला हुआ हत्याकाण्ड, भ्रष्टाचार, आदि जो घटनाअें गत आठ दस वर्षोंमें घटित हुअीं अुनका असर भी नयी कहानीपर हुअे बिना नहीं रहा। आजकी नूतन कहानी नवकाव्यकी नाअीं अुजड़ी हुअी दुनियासे निर्माण हुअी है। आज वह मानव, कहानीका विषय बन गया है जिसका मानव-आदर्शोंपरसे विश्वास अुठ गया है, जिसके जीवनका आनन्द और सौंदर्य नष्ट हो गया है और यंत्र युगके जीवन व गरीबीकी चक्कीमें पिस जानेसे जो संज्ञाहीन बना है। आज कअी कहानियोंमें अुनका चित्रण पाया जाता है जो देशके विभाजनके कारण प्रज्वलित आगमें झुलसकर निकले हैं। निम्नश्रेणीके अुपेक्षितोंके जीवनके बारेमें रहनेवाला कुतूहल भी आजकी कहानीकी कथा-वस्तु बना है। अिससे आजकी कहानीकी परिधि विशाल हो गयी है। पुरानी कहानीके चहुँ ओर रहनेवाली चहार दीवारी छा रही है और अुसे विशाल विश्वके दर्शन करने-करवानेकी चेष्टा नये कहानी-लेखक कर रहे हैं, यह मार्केकी बात है।

आजकी नयी कहानीमें कथावस्तुके लिये महत्व नहीं है। तंत्रकी बँधी हुअी चौखट भी वह तोड़ बैठी है, जिससे आजकी नूतन कहानीमें प्रतिभाके स्वच्छंद विहार-को अधिक अवकाश मिला है। अेकाध मनोवृत्ति, कोअी भावछटा या अंतर्द्वन्द्व भी कहानीका विषय हो सकता है। 'कथावस्तु' शब्दके रूढ़ अर्थको छोड़कर अत्यन्त सूक्ष्म और सरल मनोवृत्तियोंको भी लेखकोंने 'कथावस्तु' बनाया है। पुरानी परम्पराके बँधे हुअे संकेतोंपर किया हुआ यह आघात कतिपय सज्जनोंको असह्य हो गया और अुन्होंने नयी कहानीके विरोधमें आवाज़ अुठाना शुरू किया। श्री गंगाधर गाडगीळकी 'बिन चेहऱ्याची संध्याकाळ', भावेजीकी 'ध्यास', अरविंद गोखलेकी 'माहेर' और 'कातरवेळ' आदि कहानियोंमें 'कथावस्तु' तो नहींके बराबर है; फिर भी ये कहानियाँ श्रेष्ठ मानी गयी हैं।

आजकी नवीन कथा अंतर्मुख हो गयी है। बाह्य भावनाओंके आविष्कारमें ही संतुष्ट न रहकर मनुष्यके मनकी छिपी प्रवृत्तियों और संज्ञाप्रवाहोंका चित्रण वह पैनी नजरसे और कलाके सहारे व्यक्त कर रही है। परिणाम स्वरूप अुसके संघर्षके स्वरूपमें सहज ही परि-वर्तन हो गया है। केवल बाह्य परिस्थिति या घटनाओं-पर निर्भर न रहकर आजके कहानी लेखक मानव-मनके अंतरंगकी भली बुरी भावनाओंके द्वंन्दका दर्शन करानेमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिक कुशलता दिखा रहे हैं। यह मनोविश्लेषण जहाँ अभिनव है, वहाँ कठिन भी है। अुसके लिये दूसरेके मनमें प्रवेश करनेकी शक्ति और दूसरेके मनकी संज्ञाओं तथा भावनाओंसे तदाकार होनेकी क्षमता अेवं लेखकोंकी कल्पनाशक्ति भी सूक्ष्म होनी चाहिये। सौभाग्यसे नयी कहानीको ये दोनों गुण प्राप्त हो चुके हैं। मनुष्य जैसा दिखाअी देता है वैसा वह नहीं होता। बाहरसे सज्जन दीखनेवालोंके मनमें दुष्ट अेवं स्वार्थी विचार पाये जाते हैं। अुसी तरह दुष्ट माने गये मनुष्यके मनमें कोमल भावनाओंका निवास रहता है। अिस बातको नये लेखक भलीभाँति पहचान चुके हैं। मनुष्यके अंतर्मनकी विसंगतिकी यह अुलझन अत्यंत सूक्ष्म दृष्टिसे सुलझानेमें ही सच्चे अर्थमें मनुष्यका दर्शन हो सकता है, और यह मनोविश्लेषण ही आजकी नवकथाकी अपनी विशेषता है। अिस तरहका मनोविश्लेषण क्लिष्ट है, समझके परे है— अैसी शिकायत सुनायी देती है। और शिकायत वे पाठक करते हैं जो सुगठित तंत्रबद्ध कथावस्तु अेवं परंपरागत पुरानी परिपाटीपर मुग्ध हैं। पर आश्चर्य तब होता है कि श्री फडके जैसे मनोविज्ञानके आचार्य भी अिन लोगोंके विचारोंसे सहमत होकर यह कहते हैं कि मनोविश्लेषणकी धुन सवार होनेसे नये कहानी-लेखक सौंदर्य दृष्टिसे हाथ धो बैठे हैं। यदि यह माना जाय कि बाह्य और स्थूल घटनाओंकी अपेक्षा अंतर्मनकी विविध भावनाओंके दर्शन करानेमें सौंदर्य दृष्टि नष्ट हो जाती है तो बात ही अलग है। बाह्य घटनाअें और मनुष्यके मनके परस्परके संबंधको जानकर अुनके अेक दूसरेपर होनेवाले घात-प्रत्याघातके वर्णनमें अधिक महत्त्व है या सिर्फ कथावस्तुकी घटनाओंका सुचारु रूपसे वर्णन करनेमें— अिसका निर्णय पाठक स्वयं ही कर लें।

यह शिकायत सुनाअी देती है कि नयी कहानीमें विकृत मनोविकारोंका चित्रण पाया जाता है। पर अिस प्रकारकी शिकायत निरर्थक है। केवल पवित्र और अुच्च भावनाओंका वर्णन किया जावे, सज्जनोंका ही चरित्र-चित्रण किया जाये, नैतिक विचारोंको ही परमोच्च स्थान दिया जावे—आदि बातोंको सोचकर ही कोअी कहानीकार कहानी-लेखनका आरम्भ नहीं करता। मनुष्य, जैसा वह है वैसा ही अुसका चित्रण करना आजके साहित्यकारका कार्य है। मानवमनकी विविध प्रवृत्तियाँ और अुसके स्वभावके विभिन्न नमूनोंको वह पेश करे या पवित्र, आदर्श मनोभावोंका अेक पुतला ही वह पाठकोंके सामने खड़ा कर दे?

जहाँ मनुष्यके मनमें सम्भावनाअें रहती हैं वहाँ दुर्भावनाअें भी पायी जाती हैं। कामवासना और प्रणयभावनाअें तो अुसके दिलमें घर किये हुअे ही हैं। विरला ही कोअी असामान्य व्यक्ति हो जो अिनसे अलिप्त रह चुका हो। अैसी हालतमें नये कहानी-लेखकोंने मानव सुलभ सहज भावनाओंको कहानीमें स्थान दिया तो अुनपर विकृत मनोवृत्ति और अश्लीलताके आरोप करनेमें क्या पाया जायेगा? कमसे कम नये कहानी-लेखक ढोंग और आडंबरको छोड़कर सच्ची भावनाओंका आविष्कार तो कर देते हैं। प्रेमके बँधे संकेत और कोमल चंचल भावनाओंका ही वर्णन न करके, मनुष्यके मनमें अुन बातोंके दर्शन जैसे दीख पड़ते हैं वैसे ही वे चित्रित कर देते हैं। और अिस बातसे हम अिन्कार भी नहीं करते कि अिस तरहकी भावनाओंके आविष्कारमें सजीवता और सरसता रहती है। और नये कहानी-लेखकोंकी कहानियोंमें सिर्फ विकृत मनोवृत्ति और कामवासनाको ही स्थान दिया जाता है। अिस तरहका आक्षेप कोअी सुज्ञ रसिक अुनपर नहीं लगायेगा।

मतलब यह है कि क्या आशय, क्या अभिव्यक्ति दोनोंमें नअी कहानी प्रगतिशील है, अिसमें सन्देह नहीं। नयी बातें और नूतन अनुभूतियाँ आज नूतन स्वरूपमें नव कथामें पायी जाती हैं। अुसकी परिधि और अनुभूतियोंका क्षेत्र अपेक्षाकृत विशाल होता चला जा रहा है। मनुष्य जीवनके नये-नये पहलुओंको वह प्रकट कर रही हैं। आज वह अपेक्षाकृत अधिक अन्तर्मुख और तत्वदर्शिनी बन रही है। और यह सब होते हुअे भी वह सौंदर्य दृष्टिसे हाथ नहीं धो बैठी, बल्कि नूतन सौंदर्यसे ओतप्रोत रही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब अिसे हम अिन्कार नहीं कर सकेंगे कि नयी कहानीमें भी कुछ त्रुटियाँ हैं। कथावस्तुके लिये भी कोअी अपना स्थान कहानीमें रहता है। अिस बातको न पहचानकर लेखकोंने अुसे बिल्कुल ठुकरा दिया। जिससे अुनकी कहानियोंमे कहीं-कहीं नीरसता प्रतीत होती है। जहाँ कहानीमें 'कथावस्तुको ही सब कुछ' मानना अनुचित है वहाँ अुसके अपने स्थानको न स्वीकार न करना भी निरा अतिरेक है। कहीं-कहीं किसी पात्रके अन्तरंगका दर्शन करते हुअे लेखक अुस पात्रके दिलकी हर तहको पाठकोंके सामने रखते हैं जिससे वह पात्र कथावस्तुका अेक अंश न रहकर मनोविज्ञानके अध्ययनका विषय बन जाता है। यह अति भी त्याज्य है। पुरानी पीढ़ीके कंधेपर नयी पीढ़ी खड़ी है, अुसकी दृष्टि भी विशाल है अिस बातको भूलकर नयी कहानी पुरानी कहानीसे कअी गुनी अधिक सम्पन्न और श्रेष्ठ है, मराठी कहानीका आरम्भ वास्तवमें नयी कहानीसे ही हुआ—अैसी अपने मुंह मिया मिट्ठू बननेकी वृत्ति जो नये कहानी-लेखकोंमें दीख पड़ती है वह अनुचित है। पुराने कहानी लेखकोंने अपनी प्रतिभा और सामर्थ्यके अनुरूप कहानीको सजाया है और अनेक विशेषताओंसे अुसे सँवारा है। नये लेखकोंको चाहिये कि वे आगे बढ़ें। और यहाँ शेखी बघारनेकी कोअी आवश्यकता नहीं है। पुरानी कहानियोंके गुणोंको परख कर अुन्हें आत्मसात् कर नये कहानी-लेखकोंको अग्रसर होना चाहिये। और यह करते हुअे भी पुराने लोगोंका ऋण कृतज्ञतापूर्वक मानना चाहिये। अिसीमें अुनकी बुद्धिमत्ता है।

[महाराष्ट्र साहित्य पत्रिका, पुणेके सौजन्यसे अनुवादक—श्री य. शं. गोडबोले, साहित्यरत्न]

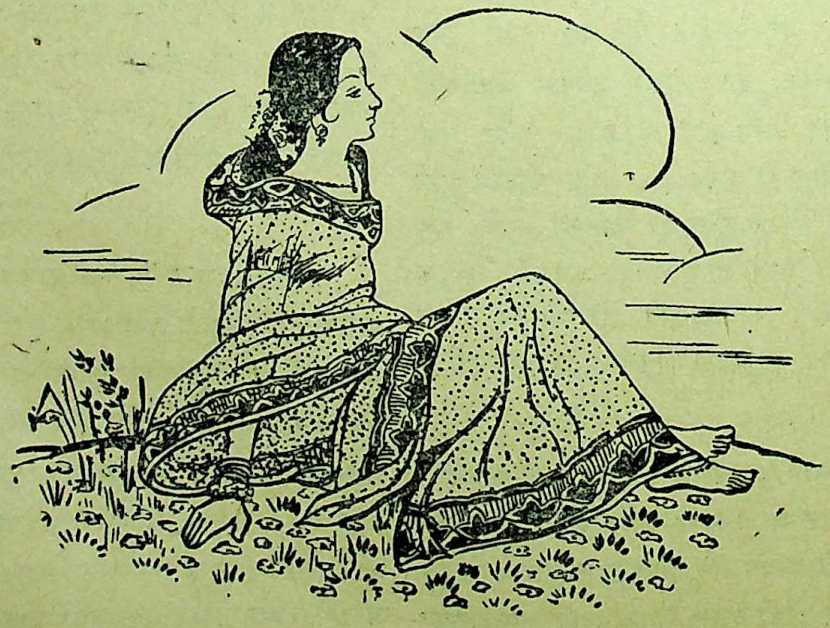

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[सूचना—'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिये।]

नया मार्ग–(कहानी-संग्रह), लेखक : श्री सत्य-प्रकाश संगर अेम. अे. (आनर्स), प्रकाशक : सुषमा साहित्य मन्दिर, जबलपुर। मूल्य ३ रु. ४ आना।

संगरजीकी 'नया मार्ग' शीर्षक कहानियां हिन्दी-की अन्य कहानियोंके अेक दोषसे मुक्त हैं। हम-हिन्दी लेखकोंका वह दोष या कमजोरी है कि हमारी बोलचालकी भाषामें और लिखनेकी साहित्यिक भाषामें बहुत अन्तर रहता है। हिन्दीको लिखनेकी भाषा बनानेका सौभाग्य बहुत पुराना नहीं है। अिसलिये अुसके मँज जानेमें कुछ अड़चनें आ रही हैं। संगरजीने अिस अड़चनको हटानेमें बहुत योगदान दिया है। अिसी बातको दूसरे शब्दोंमें कहा जा सकता है कि 'नया मार्ग' की कहानियां आडम्बरहीन भाषामें लिखी गयी हैं। आडम्बर न होनेका कारण अिनमें स्वाभाविक वेग है और वे विश्वास पैदा करती हैं।

कहानियां प्रायः जीवनकी साधारणतः सभीको अनुभव हो सकनेवाली, बहुत ही मामूली-सी बातसे अुठ आती हैं। जान पड़ता, लेखकने कहानियां केवल आत्मतोषके लिये लिख डाली हैं। परन्तु आत्मतोष या 'स्वान्तः सुखाय' का सिद्धान्त समाजके प्रति जिस अुपेक्षाका द्योतक है, वह संगरकी कहानियोंमें नहीं है। अिन कहानियोंकी सबसे बड़ी सार्थकता यह है कि यह स्वाभाविक रूपसे सप्रयोजन हैं। अैसा जान पड़ता है कि लेखक समाज-अुद्धारका बीड़ा अुठाये बिना या अैसी सेवाका डंका पीटे बिना समाजकी विषमताओं, अुत्तर-विरोधोंको अेक सजग कलाकारके रूपमें अनुभव करता है और आडम्बरहीन भाषामें कह डालता है अुसे जो कुछ कहना है। यदि अिसी ढंगकी और कहानियाँ लिखी जायें तो हमारी साहित्यिक भाषा और साहित्यके अुद्देश्य, दोनों ही समस्याओंके सुलझावमें काफी सहयोग मिलेगा।

—यशपाल

कवि आरसीकी काव्य-साधना :—लेखक श्री प्रताप साहित्यालंकार, प्रकाशक :—तारामंडल ४७, जकरिया स्ट्रीट, कलकत्ता, पृष्ठ १५१, मूल्य २॥ रु.

बिहारकी नयी पीढीके तरुण गायक आरसीप्रसाद सिंहकी काव्य-कलापर प्रकाश डालते हुअे अिस छोटेसे ग्रंथमें नवोदित आलोचकने विभिन्न दिशाओंका दिग्दर्शन किया है। वर्तमान काव्यशैलीकी प्रमुख भाव-धारा, अभिव्यंजन पद्धतियां आदिसे 'आरसी' की काव्यकला प्रभावित होती रही। 'काव्य प्रवृत्ति' शीर्षक विस्तृत अध्यायमें प्रेम, विरह-वेदना, राष्ट्रीय भावना, वीरता और क्रान्ति-की भावना, प्रकृतिप्रेम, दार्शनिकता, हालावादी भावना अिन भिन्न-भिन्न दृष्टियोंसे आरसीके काव्यका परीक्षण किया गया है। वास्तवमें आरसी प्रेम, विरह और वेदनाका कवि है। अुसकी अभिव्यंजनामें विरह-मिलन-की अनुभूतियां अधिक स्पष्ट हैं। किसी कविकी दो चार पंक्तियोंमें दार्शनिकता-प्रसूत वैराग्य या हथकड़ियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेड़ियोंकी झनकार सुनकर अुसे दार्शनिक कवि या राष्ट्रीय कवि मान बैठना भ्रम ही समझा जायगा। हाला, प्याला, मधुबालाके स्वर अेकाध.....दो रचनाओंमें सुनकर कविको थोड़ी देर के लिये हालावादी कह देना भी युक्तिसंगत नहीं। यह तो बड़ी मजेकी बात है कि...

"खिला हूं आज अुपवन में
कभी हो जायगा कल लय,
प्रथम मुसकान फिर रोदन
यही तो पुष्पका परिचय।"

लिखकर अपनी दार्शनिकताका परिचय देनेवाला, कवि दिन ढलते ही.....

"अिस करमें लेता सुरा पात्र,
वह कर रूपसियोंकी कटि में।"

लिखकर हालावादी भी बन सकता है। खेद है, कविकी अिस प्रवृत्तिके प्रति आलोचक भी मौन है। आरसीकी समस्त काव्य कृतियां देखनेपर ज्ञात होता है कि ऋतुओंकी तरह अुसके विचार और वृत्तियां बदलती रहती हैं। आलोचक कविकी अिन भावनाओंसे परिचित है।

पुस्तकके अन्य अध्याय...विचार सौन्दर्य, प्रगतिवादिता, बाल-साहित्य कलानैपुण्य आदि द्वारा आरसीकी समस्त काव्य प्रकृतिका हिन्दी जगत्के सम्मुख अच्छा परिचय प्रस्तुत किया गया है। कविकी सर्वत्र प्रांजल सहज, तथा प्रासादिक भाषा पाठकको प्रभावित करती है। आलोचक कविके अिस प्रमुख कौशलके प्रति विशेष सजग नहीं। जैसा कि पुस्तकके लेखकने अपने निवेदनमें स्वीकार किया है..."मेरे अिस प्रयत्नसे कविकी काव्य-साधनापर सम्यक् रूपसे तो नहीं, मगर थोड़ा बहुत प्रकाश अवश्य पड़ेगा।"...सत्य प्रतीत होता है।

दिनकर और अुनकी काव्य प्रवृत्तियाँ :— लेखक : श्री० शिवचन्द्र शर्मा, प्रकाशक : जनवाणी प्रकाशन कलकत्ता ७; पृष्ठ-संख्या २४१, मूल्य ३। रु०।

राष्ट्रनिर्माणका स्वर आलापनेवाले जिन कवियों-पर राष्ट्रको अभिमान हो सकता है अुनमें दिनकरका स्थान बहुत अूंचा है। अतीतके भग्न खण्डहरोंमें आँसू बहानेवाला कवि वर्तमानको झकझोरकर नव चैतन्य भर रहा है। दिनकरकी काव्य कृतियोंमें जागरणका सच्चा स्वर मिलता है। यह जागरणके लिये जागरण-वाला नकली स्वर नहीं; राष्ट्रकी तरुण पीढी दिनकरसे प्रभावित होती रही अिसका यही कारण है। दिनकरकी काव्य प्रवृत्तियोंके सांगोपांग विवेचनाकी हिन्दीमें आवश्यकता अनुभव की जा रही थी। अिस दिशामें श्री शिवचन्द्र शर्माका प्रयास स्वागतार्ह है।

कवि और गद्यकार दिनकरकी विविध शैलियों, प्रवृत्तियों तथा भावनाओंपर आलोचकने अपनी तुली हुअी लेखनीसे दृक्पात किया है। कवित्व शक्ति,काव्य-में व्याकरणके बन्धन, शास्त्रीय अध्ययन, कविताओंमें प्रयक्त शब्द, शैली और छन्दोंकी नवीनता आदि परि-च्छेदोंमें दिनकरके काव्यकी शास्त्रीय दृष्टिसे समीक्षा हुअी है। प्रतिवेश और पाश्चात्य प्रभाव, प्रगतिवाद और दिनकर, रसवन्ती.....पलायन वृत्ति, शीर्षक अध्यायोंमें नवीन समीक्षाके मानदण्डोंको भी स्वीकार किया गया है। दिनकरकी प्रमुख कृति "कुरुक्षेत्र"-की चर्चा विस्तारके साथ हिन्दी-जगत्में हो चुकी है। अुनका अुल्लेख करते हुअे आलोचकने अपने मतका प्रतिपादन किया है। कहीं अैसा प्रतीत होने लगता है कि आलोच्य वस्तुके प्रभावसे आलोचक अभि-व्यक्त हो रहा है। अुसका दृष्टिकोण जितना तटस्थ होना चाहिये, नहीं प्रतीत होता। प्रतिवेश और पाश्चात्य प्रभाव शीर्षक अध्यायमें प्रमाण स्वरूप समानता सूचक कल्पनाओं, भावनाओं, विचारों तथा प्रवृत्तियोंको परस्पर सम्मुख रखकर विवेचन किया जाता तो यह अध्याय अधिक मूल्यवान हो जाता परन्तु परिश्रमसे बचनेकी प्रवृत्ति आजकल आलोचकको अैसा करनेसे बचाती रहती है।

गद्यकार दिनकरके सम्बन्धमें संक्षेपमें सिंहाव-लोकन किया गया है। अिस विषयपर विस्तृत प्रकाशकी आवश्यकता अनुभव होती है। आलोचककी विवेचन-शैली प्रवाहशील, प्रांजल अेवं रसमय है। अुक्त पुस्तक हिन्दीमें दिनकर सम्बन्धी आलोचनात्मक ग्रंथोंके अभावकी अच्छी पूर्ति है।

— अनिल कुमार, साहित्यरत्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवगुण्ठन—ले.– श्री सत्यप्रकाश संगर, अेम. अे., प्रकाशक—अवध पब्लिशिंग हाअुस, लखनअू। पृष्ठ-संख्या १६६, मूल्य २ रु. १२ आ.

भाषा पहले, बादमें व्याकरण, अुसी तरह कहानी और अुसके तंत्रकी बात है। प्रस्तुत पुस्तककी कहानियोंका अपना तंत्र है या यों कहना होगा कि अिनमें लेखककी अपनी शैली है। यह शैलीकी मौलिकता ही अिसकी विशेषता है जिसकी अेक अजीब छाप पाठकके दिमागपर अंकित हो जाती है।

अिनका वह प्रकृति–वर्णन हिमालयकी तराअियाँ, चोटियाँ, बर्फका आवरण आदि अिन सबमें थोड़ी-सी चूक दूर नीचे खंदकमें ले जा सकती है। किन्तु लेखककी सहज, स्वाभाविक सतर्कता सबको सुरक्षित रखे हुअे है। अिसीमें लेखककी चतुराअी है। अिसमें अैसा लगता है कि लेखक बर्फसे ढकी अिन पहाड़ी चट्टानोंका निवासी है। प्रस्तुत कहानी-संग्रहकी पांचवीं कहानी "अवगुण्ठन" में हमारी यह धारणा और भी अधिक पक्की हो जाती है।

"अुसके लिये यह नयी जगह न थी। पिछले कअी वर्षोंसे वह यहाँ आया करता था। अुसे अिस स्थानसे विशेष प्रेम था। गर्मी हो या सर्दी, वह पहाड़पर अवश्य आता।.....वह सदैव अिसी विशाल चट्टानपर बैठता। घोर वर्षा और तुषारापात अुसके प्रोग्राममें बाधा न डालते।"

प्रकृति-वर्णनमें पाठकको कभी-कभी यह भ्रम होता है कि क्या अिनकी सादगी विरागीकी सादगीकी तरह अपनी शुष्कताके कारण अेक रसिकको खटकनेवाली सादगी है? अिसके बावजूद संगीत लिये हुअे सजीव सादगीको देखिये—

"खेतोंको छूती हुअी नागिनके समान बल खाती हुअी अेक नीली श्रेणी थी, जिसमें कहीं-कहीं श्वेत अुभरे हुअे चिह्न देख पड़ते थे। यह पहाड़ोंमें बहती हुअी रावी थी। यौवनके मदमें चूर वह अेक चंचल सुन्दरीके समान बल खाती हुअी मस्त नृत्यमें निरत थी। अुसकी नस-नसमें मस्ती भरी हुअी थी।"

अिसी कहानी "राही" में और आगे बढ़िये—

"प्रियतम, मैं कबतक तुम्हारी राह देखती रहूँ? प्रकृतिका सौंदर्य मुझे पागल बना रहा है। पहाड़ोंकी चोटियाँ सफेद बर्फका चोला पहने खड़ी हैं। सूर्यकी किरणें अुनका आलिंगन कर रही हैं। चीड़ोंके वृक्ष नशेमें झूम रहे हैं और मादकतासे भरा 'चश्मा' नृत्यमें मग्न है। प्रियतम, मैं कबतक तुम्हारी राह देखती रहूँ?"

कहानियोंकी भाषा रोजमर्राके मुहावरोंसे भरपूर, सहज गति लिये हुअे बोलचालकी फबती हुअी भाषा है। प्रसंगानुकूल अँग्रेजी, अुर्दू शब्दोंका प्रयोग किया गया है जो शायद ही किसी पाठकको खटकेगा।

खोज—ले.–श्री द्विजेन्द्रलाल 'निर्गुण', प्रकाशक–चेतना प्रकाशन लिमि० हैदराबाद। पृष्ठ-संख्या १६०, मूल्य ३ रु०

अिस पुस्तकमें पाँच कहानियाँ हैं। अिसमें अनुक्रमणिका नहीं है, न प्रस्तावना अथवा लेखकके दो शब्द हैं। विवश होकर पाठकको 'खोज' की खोज करनी पड़ती है।

कहानियोंकी पुस्तकके नामकरणमें सबसे आसान तरीका है किसी अेक कहानीका नाम दे देना। अिससे कभी-कभी सभी कहानियोंके स्वरूपकी, प्रकारकी पूरी सही कल्पना नहीं आती और कभी-कभी पाठककी कल्पना गलत भी साबित होती है। कहानियाँ अेक ही लेखककी होने पर भी यह नहीं कहा जा सकता कि सभी कहानियाँ अेक ही रंग-ढंगकी अथवा किसी अेक ही विषय-विशेषकी होंगी। 'खोज' के बारेमें यह बात लागू नहीं है। हाँ, यहाँ यह कह देना आवश्यक है कि 'अनुभव' कहानीको छोड़ चारों कहानियाँ लम्बी हैं। पहली कहानी 'अश्रु' अड़तीस पृष्ठकी है जिसके, लेखकने छोटे-छोटे सोलह खंड किये हैं। 'अंधेरा' और 'आसरा' कहानी भी अिसी प्रकारकी है। किन्तु ये कहानियाँ, कहानियाँ हैं, अुपन्यास नहीं। अन्तिम कहानी और जो हमें अिनमें अच्छी लगी, 'खोज' है। "खोज" सीधी-सादी परिचित ढाँचेकी-सी कहानी है। अिसमें शुरूहीमें बिना खोजे "जीवनकी भोरके समय जब सुधाकरने विश्वको पहचाना तब सबसे निकट जाना सुखदाको।" किन्तु अन्त बड़ा ही सुन्दर है। योग्य जीवन-साथीकी व्याख्या यहाँ कहानीके रूपमें सही दिशामें साकार हो अुठी है। अिस कहानीके भीतर कलाके अुपासकके प्रति अिस देशकी 'थ्योरी' (लेखकके शब्दोंमें) को, कटु सत्यको लेखकने साफ-साफ कहा है— "अिस देशमें कलाका अुपासक होनेका अर्थ है—भूखों मरना। फूल खिलता है अुनकी समाधिपर।"

—श्रीराम अट्टावलकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

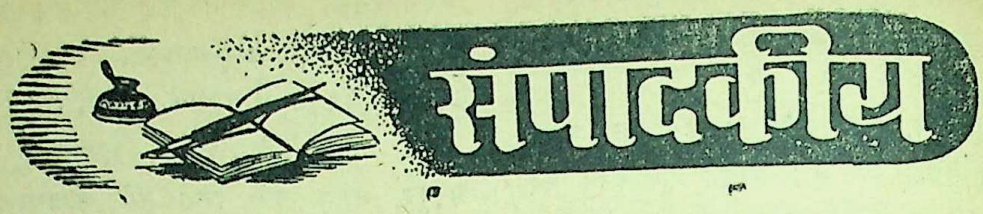

२६ और ३० जनवरी :

भारतीय स्वतंत्रता–प्राप्तिको पूरे छह वर्ष हो गये हैं। स्मरणीय बात यह कि १९४७ में १५ अगस्तको भारतमें स्वतंत्रताकी स्थापना हुअी थी। लगभग २०० बरसकी अनन्त निरंकुश अंग्रेजी सत्ताका भारतसे अन्त हुआ था और तीन वर्ष पूर्व २६ जनवरीको वह अेक स्वतंत्रमहिमा-संम्पन्न गणतंत्र राष्ट्र बना था। विश्वके शक्तिशाली राष्ट्रोंने अुसका अभिनन्दन किया था। तबसे अिस राष्ट्रका शासन कोटि कोटि प्रजाके बहुमतसे राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद और राष्ट्रमंत्री प्रियदर्शी पंडितजी कर रहे हैं। अिन दोनों अैतिहासिक महामानवोंके हाथोंमें राष्ट्रका गौरव, राष्ट्रका ध्वज, राष्ट्रका स्तंभ, राष्ट्रका चक्र, राष्ट्रकी भाषा, राष्ट्रका योगक्षेम और सर्वांगीण समृद्धि सुरक्षित हैं। चिरायु हो भारतका गणतंत्र स्वातंत्र्य !

और ३० जनवरी! राष्ट्रका अेक स्मरणीय पुण्य पावन पर्व है। पांच वर्ष हुअे, १९४८ की ३० जनवरीका सूर्यास्त हो रहा था। राष्ट्रपिता गान्धीजी भारतकी तत्कालीन भीषण परिस्थितिसे अत्यन्त चिन्तित और व्यथित हो रहे थे। साम्प्रदायिकताकी विषाक्त हानियाँ भयंकर आँधियाँ बनकर अुनके भारतको विनाशकी ओर ले जा रही थीं। महात्माके वज्रादपि कठोर और कुसुमादपि सुकोमल दिलमें जहरीली छुरियोंके गहरे घाव हो रहे थे। कअी बार अपनी जानपर खेलकर अुस भयंकर तूफानको शान्त करनेमें वे मग्न थे। हजारों लाखों विस्थापितों, अधभूखों, अधनंगों और लुटे–पिटे बेघरबार निराशोंको तसल्ली दे रहे थे––अुनमें आत्म-विश्वासका प्राण वायु भर रहे थे। राष्ट्रकी अुलझनें, गुत्थियां और हुल्लडोंको सुलझा रहे थे। शामके ५ बज रहे थे। नित्यकी प्रार्थनामें पाँच मिनटका विलम्ब अक्षम्य मानकर वे अपनी निश्चित प्रार्थना-भूमिकी ओर सहज द्रुत गतिसे जा ही रहे थे कि अुस धुंधली-सी सन्ध्यामें किसी शैतानकी तीन गोलियाँ छातीमें लगीं और सर्व भूतेषु निर्वैर, विश्ववन्द्य विभूति बापू 'हे राम''का नामोच्चारण कर, धरती माताकी गोद, प्रभुकी प्यारी गोदमें सदाके लिये महानिद्रामें सो गये। तब मृत्युवेलाका हाथ जोड़े अुनका वह 'हे राम! हे राम!' अंतिम अुच्चारण विश्वमें पीडित मानवताके संरक्षणके लिये व्याप्त हो गया। अिस पुण्य पर्व-कालको शत शत नम्र वन्दन !

अेक लिपि नागरीका विस्तार :

१९०५ की बात है। कलकत्ता हाअी-कोर्टके न्यायाधीश जस्टिस स्व० शारदाचरण मित्र महोदयने बड़ी सुन्दर युक्तियों और अपने निष्पक्ष अनुभवसे, देशके बड़े-बड़े विद्वानोंके समक्ष स्पष्ट कर दिया था कि अब सारे भारतमें अेक लिपि-के व्यवहारका, प्रचारका, समय आ गया है और वह लिपि दूसरी कोअी नहीं, देवनागरी ही है। स्वर्गीय जस्टिस शारदाचरण बाबूने तो यहाँतक हिम्मत कर ली थी कि भारतवर्षमें ही नहीं; लंका, ब्रम्हदेश, चीन, जापान, जावा सुमात्रा आदि देशोंमें भी अेक नागरी लिपिका प्रचार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होना चाहिये। अिस संकल्पकी पूर्तिके लिये शारदाचरणजीने "देवनागर" नामका अेक मासिकपत्र भी निकाला था, जिसमें वे भारतकी मुख्य-मुख्य भाषाओंके अच्छे-अच्छे चुने हुअे अवतरणोंको नागरी अक्षरोंमें छापते थे और नीचे संक्षेपमें अर्थ भी दे दिया करते थे। न्यायमूर्ति शारदाचरणने बहस और विवाद छोड़कर यह राष्ट्रहितका कार्य बेधड़क शुरू कर दिया था। ४८ साल पहलेकी ये बातें हैं। अुन्होंने तब प्रमाणित कर दिया था कि नागरी लिपि ही सबसे सरल, सुन्दर, शुद्ध और देशमें अधिक प्रचलित है। अपने अुद्देश्यकी सिद्धिमें मित्र बाबूको काफी सफलता मिली थी। अुनके स्वर्गवाससे वह काम आगे न बढ़ सका। दुर्भाग्यसे 'देवनागर' पत्र ही बन्द हो गया। संस्कृत भाषा भारतीय संस्कृतिकी रीढ़ है। काश्मीर, पंजाब, संयुक्त प्रांत, बंगाल, आसाम, अुत्कल, सिन्ध, राजस्थान, महाराष्ट्र, गुजरात, मध्यभारत, मध्यप्रदेश और कन्याकुमारी पर्यन्त समूचा भारत संस्कृत भाषासे अनुप्राणित है। कलकत्तेके प्रसिद्ध अंग्रेजी मासिक 'माडर्न रिव्यू' और बंगला 'प्रवासी' के यशस्वी सम्पादक स्वर्गीय बाबू रामानन्द चटर्जीने भी अेक बार "चतुर्भाषी" नामका अेक पत्र निकाला था जिसमें वे हिन्दी, गुजराती, मराठी, बंगला, अिन चारों भाषाओंके लेख देवनागरीमें प्रकाशित करते थे। अेक राष्ट्रीय लिपिके प्रसारके वे प्रयत्न न्यायाधीश शारदाचरण बाबूके मरणोत्तर अुन्हींके साथ लुप्त हो गये।

आज हिन्दी राजभाषा-राष्ट्रभाषा जगजाहिर हो चुकी है। संविधान-स्वीकृत सभी प्रादेशिक भाषाओंका साहित्य-सौरभ हिन्दीको मिले और वे भी हिन्दीके अति निकटके आयें, हिन्दी अुनके निकट सम्पर्कमें आये, अिसके लिये तो देवनागरी लिपि ही समर्थ, अुपयोगी और व्यावहारिक है। देशके अेक कोनेसे दूसरे कोने-तक हिन्दीका महत्त्व बढ़ रहा है—नागरीका प्रचार और प्रसार भी बढ़ रहा है। भारतके प्रान्तोंकी भाषाअें भले ही जुदी जुदी हों; किन्तु अगर लिपि अेक नागरी ही हो तो हमारे अन्तर-प्रान्तीय व्यवहारमें बड़ी मज़बूत अेकता आ जायगी। सारे यूरोपमें रोमन लिपिका प्रचार है। अुसी तरह सारे अन्तर्भारतीय व्यवहारमें हम देवनागरीको लावें और भारतकी संविधान सम्मत भाषायें देवनागरीमें चलें। यही राष्ट्रकी मांग है। अब समय आ गया है कि सब बहस और विवादोंसे दूर रहकर, पूर्व और पश्चिम भारतकी तथा अुत्तर और दक्षिण भारतकी भाषाओंको हम अेक राष्ट्रलिपि नागरीके अैक्य सूत्रमें बाँधनेका आरम्भ करें।

समग्र भारतीय साहित्यका प्रतिनिधित्व करनेवाली 'राष्ट्रभारती' के आगामी मार्च १ को प्रकाशित होनेवाले अंकसे हम 'देसेनागर' के स्तम्भोंका श्रीगणेश कर रहे हैं। आअिये, हमारा साथ दीजिये!

डा० अमरनारथ झा महोदयसे :

श्रद्धेय डा० पं० अमरनाथ झा का अेक लेख 'राष्ट्रभारती'के अिसी अंकमें ८४ वें पृष्ठपर प्रकाशित है। आपके विचार प्रत्येक विचारशील भारतीयके मनन करने योग्य हैं। हिन्दी और अ-हिन्दी क्षेत्रोंमें राष्ट्रभाषाके नाम और रूपको लेकर जो गलत फहमी अहंपूर्व—अहंपूर्व कहकर फ़ैलायी जा रही है अुसपर डा० झाने निष्पक्षता और स्वाधीनतापूर्वक राष्ट्रभाषा और प्रान्तीय भाषाओंके सम्बन्धमें अपने विचार व्यक्त कर दिये हैं। यह लेख आपका वह भाषण है, जो आपने मध्यप्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति नागपुर तथा प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन, दोनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्थाओंकी ओरसे आयोजित सत्कार समारम्भ गोष्ठीमें दिया था। अेक जगह आपने कहा कि गुजरातके चार दैनिक गुजराती पत्रकारोंने अपने समाचार-पत्रोंमें हिन्दीके स्तम्भ प्रकाशित करनेके अुनके अनुरोधको नहीं माना। अुनके प्रस्तावको ठुकरा दिया गया।

हमें यहाँ स्वर्गीया डॉ० अेनी बेसेंटकी अेक बात याद आ गयी है। १९१८ में गाँधीजीने मद्रासमें राष्ट्रभाषाका आन्दोलन शुरू किया था। मद्रास तो अंग्रेजीका गढ़ ठहरा। श्रीमती बेसेंट देश-कालकी परिस्थितिको कुछ-कुछ दूरदर्शिताके साथ समझ गयी थीं। अुन्होंने दो वर्षतक महात्माजीका हिन्दी प्रचारमें साथ दिया और अपने लोकप्रिय प्रसिद्ध दैनिक अंग्रेजी अखबार "न्यु अिंडिया" में दो कॉलम हिन्दीके लिये सुरक्षित कर दिये। श्रीमतीने, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभासे (१९१८ और १९ तक) अपना निकट सम्पर्क रखा था। सभाके कार्यालयसे नागरी हिन्दीमें अंग्रेजी अनुवाद सहित कोअी बढ़िया अुद्बोधक हिन्दीका मजमून रोज तैयार कर भेजा जाता तो 'न्यु अिंडिया' के सुबहके संस्करणमें वह निकल जाता। १९२० से महात्माजीके असहयोग आन्दोलनसे असहमत होकर डॉ. बेसेंटने अुस प्रवृत्तिको बन्द कर दिया था। पता नहीं अुन गुजराती पत्रकारोंने किस प्रकार संशयापन्न मानस भावनासे प्रेरित होकर डॉ. झाके अनुरोधको अमान्य क्यों कर दिया?

श्री पोतदारजीके भाषणका अेक अंश :

जिन महाराष्ट्रीय विद्वान महानुभावोंने अ-हिन्दी प्रदेशोंमें राष्ट्रभाषा हिन्दीकी गत ३५ वर्षोंमें सतत सेवा की है, अुनमें श्रद्धेय काकासाहब कालेलकरकी मन, वचन, कर्मसे अथवा क्रियात्मक और वाचात्मक दोनों रूपोंसे हिन्दीका परम हितकारी हम मानते आ रहे हैं। सचमुच काकाजीने हिन्दीका बड़ा ही हित-साधन किया है—सम्पादन, लेखन और प्रवचनके रूपमें। अिधर चार पाँच वर्षोंसे श्रद्धेय महामति महामहोपाध्याय दत्तो वामन पोतदारजी भी राष्ट्रभाषा हिन्दीको चिर-कृतज्ञ बना रहे हैं। हिन्दीकी ताक़त बढ़ानेमें पोतदारजीकी भी सम्पादन, लेखन, भाषण और प्रवन शक्ति लगी हुअी है! चाहे हम अुनके विचारोंसे सहमत न हों, भले कभी-कभी अुनका हिन्दीका नटखटपन हमें अच्छा न लगे, फिर भी अुनकी सचायी और निष्ठाका हमें सम्यक् आदर करना होगा। हिन्दीको अिसका बड़ा हर्ष और अभिमान है कि अुसीके हितकारियोंमें महाराष्ट्र के प्रकांड पंडित, प्रतापशाली पोतदारजीका शुभ नाम स्मरणीय रहेगा।

अभी गत ११ जनवरीको, अहमदाबादके गुजरात विद्यापीठमें हिन्दी-हिन्दुस्तानी (?)-प्रचारक सम्मेलन श्री पोतदारजीकी अध्यक्षतामें हो गया है। आपने अुस पदसे जो भाषण दिया अुसका निम्न लिखित अंश बहुत ही मार्मिक और मनन योग्य है। वे अेक जगह कहते हैं:—

"जैसे बगीचेमें कअी किस्मके फूल होते हैं वैसे ही राष्ट्रके बगीचेमें भी विविध भाषाअें फूलोंकी जैसी हैं। अुनमें अेक राष्ट्रभाषाका पुष्प तो मुख्य होना ही चाहिये। भारतमें गुजरात महाराष्ट्र, बंगाल, तामिल, आदि पृथक् पृथक् रंगके लोग भले ही रहें, पर अन्तमें देश तो सारा अेक ही है। अलग अलग वहांकी भाषायें रहें, किन्तु राष्ट्रभाषा तो हिन्दी-हिन्दुस्तानी ही होनी चाहिये।

भाषाके झगड़ेका जिक्र करते हुअे वे बोले—कि डांगका सवाल लें (यह अेक मराठी गुजराती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की सीमाका सम्मिलित छोटा-सा अिलाका है, मैं समझता हूँ कि डांग गुजरातमें मिल जानेसे नरकमें नहीं चला जानेवाला है और महाराष्ट्रके साथ मिल जानेसे भी वह नरकमें नहीं चला जायगा। है तो वह भारतवर्षका ही शरीर। अेक अंग दुबला हो, किन्तु चौदह भाषाओंसे बना हुआ भारत अेक है। और हमें सबके साथ मिलकर चलना है। और जो पिछड़ता हो अुसे साथमें लेकर हमें आगे बढ़ना है।....."

—ह० श०

× × ×

हिन्दी हिन्दुस्तानीके चक्करमें !

गुजरात हिन्दी हिन्दुस्तानी प्रचारक सम्मेलन जो गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबादमें हुआ, अुसके प्रस्तावोंको "हरिजन सेवक" के ता. १७ जनवरीके अंकमें पढ़कर दुःख हुआ। ११ तारीखको यह सम्मेलन था और तब हम अहमदाबादमें ही थे। अिन प्रस्तावोंको और सम्मेलनके सभापति श्री म० म० दत्तो वामन पोद्दार तथा गुजरात-विद्यापीठके महामात्र श्री मगनभाअी देसाअीके भाषणोंको हमने समाचार-पत्रोंमें पढ़ा था। परन्तु "हरिजन सेवक" में अिन प्रस्तावोंको देखकर हमारे हृदयको सचमुच गहरी ठेस ही लगी।

हम हिन्दुस्तानी प्रचार सभाकी बात समझ सकते हैं। भारतके संविधानमें भारतकी भाषा हिन्दी तथा अुसकी लिपि नागरीको स्वीकार किया गया। अुसके कारण बदली हुअी परिस्थितिको स्वीकारते हुअे भी, जिसे वह गाँधीजीका काम मानती थी अुसे अुसने अुसी रूपमें जारी रखा। परन्तु मैं अुनकी बातोंको समझ नहीं सकता, जिन्होंने संविधानमें हिन्दी और नागरीका स्वीकार होनेपर अेक ही रातमें अपनी नीति बदल डाली, नागरी लिपिमें लिखी जानेवाली हिन्दीके प्रचारक बन गये, और फिर धीरे-धीरे दो भाषाओंकी तथा भाषाके स्वरूपकी भ्रमात्मक बातें फैलाकर अब हिन्दीके साथ हिन्दुस्तानी शब्दको भी जोड़ने लगे हैं। वे यहाँ तक कहते हैं—"हरेक अहिन्दी भाषी प्रदेश को अपने प्रदेशके हिन्दी प्रचारका काम खुद अुठा लेना चाहिये और वहाँसे हिन्दी-भाषी प्रदेशकी संस्थाओंको अब हट जाना चाहिये। अगर अैसा न हुआ तो हिन्दी और अहिन्दी प्रदेशोंमें बिना कारण गलतफहमी पैदा होगी, जिसका नतीजा हिन्दी प्रचारके लिये खराब होगा।

राष्ट्र तथा राष्ट्रभाषाके प्रति जिसकी निष्ठा पक्की है अैसी राष्ट्रभाषाका कोअी भी सेवक अिससे डरेगा नहीं—डिगेगा नहीं। परन्तु जनताको हम सावधान कर देना आवश्यक समझते हैं कि ये लोग सम्भवतः अुचित-अनुचित का विवेक छोड़कर भी राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धाकी सोलह वर्षकी सेवाओंको व्यर्थ करनेपर तुले हुअे हैं और अपनी ही हिन्दुस्तानीको फिरसे लाना चाहते हैं। हमारा हिन्दुस्तानीसे भी कोअी विरोध नहीं। परन्तु अुनकी प्रवृत्तियाँ और हरकतें राष्ट्रभाषाके प्रचारके लिये घातक हैं अिसलिये हम यह चेतावनी दे रहे हैं।

बम्बअी राज्यमें सरकारकी ताकत अुन्हें प्राप्त है अिसलिये वे अपनेको सबल मानते हैं और वे सच्चे राष्ट्रभाषाके कार्यके मार्गमें रोड़ा अटकानेमें कुछ सफल भी हुअे हैं। परन्तु सरकार-का बल मिलनेसे गलत बात सही नहीं होती। जनताको कुछ समयके लिये भ्रममें डाला जा सकता है; परन्तु हमेशाके लिये अुसे न। असम्भव है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रभाषा प्रचार समितिने अपनी भाषा-सम्बन्धी नीति समय-समय पर स्पष्ट की है और वह मानती है कि प्रान्तीय भाषाअें तथा राष्ट्र-भाषा अेक दूसरेकी पूरक हों और भारतकी सदियों से विकसित और अुसकी अुत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम विभागोंमें रहनेवाले तमाम भारतीयोंके प्रयत्नोंसे परिवर्द्धित सबकी मिली-जुली संस्कृतिके सब अुत्तम तत्वोंको व्यक्त करनेका वह साधन बने। समिति प्रारम्भसे ही अिसी आदर्शको अपने सम्मुख रखकर राष्ट्रभाषाका कार्य कर रही है और समितिके ३५०० प्रचारक जिनमें ९० फीसदी प्रचारक हिन्दीतर भाषी ही हैं, अपने-अपने प्रदेशमें प्रचारका कार्य कर रहे हैं। अुनसे हमारे ये हिन्दी-हिन्दुस्तानीवाले अब कहते हैं कि वे अपना काम बन्द करें! वे अपना काम क्यों बन्द करें? क्या अिसीलिये कि विधानने हिन्दीको स्वीकार कर लेनेपर भी हिन्दुस्तानीवाले खुल्लम-खुल्ला हिन्दुस्तानीका प्रचार कर सकें और अिस प्रकार राष्ट्रभाषाका गला घोंट सकें?

राष्ट्रभाषा जो बनेगी वह सारे भारतवर्षकी होगी, केवल गुजरात, महाराष्ट्र या बम्बअीकी न होगी। मिथ्याभिमानके कारण जो लोग सारे भारतवर्षसे अपनेको अलग रखना चाहते हैं वे आज नहीं तो कल अिस बातको समझेंगे। हमारी तो अीश्वरसे यही प्रार्थना है कि अीश्वर अुन्हें सद्बुद्धि दे और राष्ट्रभाषाकी कुसेवा करनेसे अुनकी रक्षा करे।

पंचवर्षीय योजना :

राष्ट्रके तमाम आर्थिक पहलुओंपर विचार करके भारत सरकारकी 'योजना-समिति' ने जो पंच सतत सर्जना बनायी है अुसके प्रति हम अपने कलेजेकर ध्यान खींचना आवश्यक समझते हैं। यद्यपि अिस पत्रिकाका ध्येय अन्तरप्रान्तीय साहित्यका प्रचार करना है, फिर भी अिस योजनाके प्रति हमें ध्यान देना होगा। पेटमें भूख रहनेपर साहित्यके प्रति रुचि नहीं होती और हमारा राष्ट्रभाषा प्रचार कार्य केवल अेक छोटेसे अति शिक्षित वर्गके लिये ही नहीं, अपितु जनसाधारणके लिये भी है; अिसलिये आर्थिक प्रश्नोंके प्रति हम अुदासीन नहीं रह सकते। समाजकी आर्थिक भित्तिका असर अुसके साहित्य-पर भी होता है।

अिसका अर्थ यह नहीं, कि हम अब अिस पत्रिकामें आर्थिक प्रश्नोंका भी विचार किया करेंगे। पंच वर्षीय योजनाका स्वागत करना हम अपना कर्तव्य समझते हैं, अिसलिये हमने यह भूमिका बांधी है। हमारा ख्याल है अैसी योजना, जिसमें सब प्रकारके आर्थिक प्रश्नोंका विचार किया गया हो, हमारे सामने अिससे पहले कभी नहीं आयी। पूँजीका मनमाना अुपयोग करके प्रजाका शोषण किया जाय, पूँजीवादके अिस रूपको यह योजना स्वीकार नहीं करती। पूँजी-वादका सर्वथा नाश कर देना भी अुसे स्वीकार नहीं है, परन्तु वह अुसपर आवश्यक नियन्त्रणकी व्यवस्था अवश्य रखना चाहती है। "मिश्र आर्थिक व्यवस्थाके आधारपर यह योजना बनायी गयी है। योजनाका ध्येय है अेक अैसा समाज स्थापित करना जिसमें सबको न्याय मिले, और सबको समान अवसर प्राप्त हो।"

प्रधान मन्त्री श्री नेहरूने योजनाके सम्बन्धमें बोलते हुअे कहा है :— हिन्दीमें अिस योजना द्वारा हम आर्थिक प्रजातन्त्र (Economic Democracy) तथा वर्गहीन समाज रचना स्थापित करना चाहते हैं। हमारा अन्तिम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्येय, अैसे धनी, जिसे अपने विकासके लिये सब प्रकारके अवसर या सुविधाअें प्राप्त हैं तथा अुस गरीबमें जो अिन सबसे वंचित है, जो अन्तर पाया जाता है अुस सबको मिटा देना है। अिस ध्येयके मार्गमें जो विघ्न आवें, अुन्हें हटा देना है। परन्तु वह कार्य मित्रतापूर्ण सहयोगके द्वारा ही किया जायगा। (In a friendly way and a cooperation way.)।

योजनाके तीन विभाग हैं। (१) खेती, सिंचायी तथा खेती सम्बन्धी विकास योजनायें। (२) अुद्योग तथा वाहन अेवं सन्देश व्यवहार (३)लोक कल्याणके कार्य तथा बेकारीका प्रश्न। योजकोंने अिन तीनों प्रश्नोंपर सम्पूर्ण विचार करके अपनी योजना बनायी है। परन्तु न मालूम क्यों लोगोंमें अिस पंचवर्षीय योजनाके लिये, जैसा अुत्साह चाहिये वैसा दिखायी नहीं दे रहा है। अेक कारण तो यह है कि विदेशी पूंजीको जो सुविधायें दी गयी हैं अुससे कअी लोगोंके मनमें सन्देह है और यही अुनकी खिन्नताका कारण है। पूँजीपर नियंत्रण रखनेके कारण पूंजीपतियोंको अुत्साह नहीं होता और दूसरे लोगोंको पूंजीपतियोंको जो सुविधायें दी गयी हैं वह अखरती है।

खाद्यमंत्री श्री किदवअीने अन्नपरका नियंत्रण हटानेका आश्वासन दिया परन्तु अिस पंचवर्षी योजनाके कारण ही वह दूर नहीं किया जा सका। अिससे लोगोंके मनमें थोड़ा विरोधी भाव जागा है। परन्तु अिस योजनाकी सफलता-असफलताका सारा आधार लोगोंकी सहानुभूति तथा सहयोगपर ही अवलम्बित है। सरकारको अपनी अिस योजनाको सफल बनानेका पूरा अवसर मिलना चाहिये। सरकार अपनी है। प्रजाके प्रतिनिधि ही तो हमारे गणतंत्रकी बागडोर संभाल रहे हैं। अुन्होंने प्रजाके हितके लिये, देशकी अुन्नतिके लिये जो योजना बनायी है, अुसमें पूरा सहयोग देना हम सबका कर्तव्य है।

साहित्य तथा संस्कृतिके लिये भी योजना चाहिये :

यह योजनाओंका युग है। भारतीय साहित्य तथा संस्कृतिके विकासके लिये, प्रान्तीय साहित्योंके तथा संस्कृतियोंके परस्पर आदान-प्रदानके लिये तथा अिस कार्यमें वाहन या माध्यमका काम देनेवाली अुस राष्ट्रभाषाके प्रचारके लिये भी अेक पंचवर्षीय योजना होनी बहुतही आवश्यक है। सरकार यदि अैसी कोअी योजना अथवा कार्यक्रम बनाती तो बहुतही अच्छा होता। परन्तु सब काम सरकारके भरोसे छोड़ कर हम निश्चिन्त होकर बैठ नहीं सकते? जो संस्थायें अिस क्षेत्रमें कार्य कर रही हैं, अुन सबको मिल कर साहित्य निर्माण तथा प्रचार कार्यकी योजना बनानी चाहिये। राष्ट्रभाषाका अेक प्रामाणिक कोश, परिभाषाके तथा दूसरे सन्दर्भ ग्रंथ, व्याकरण जैसे आधार ग्रंथ, प्रान्तीय साहित्योंमेंसे प्रमाणभूत ग्रंथोंका हिन्दीमें और हिंदीसे प्रान्तीय भाषाओंमें अनुवाद आदि बहुत कुछ कार्य करनेकी आवश्यकता है। अलग-अलग कुछ प्रयत्न होते दिखायी देते हैं। क्या अुन सबको मिलाकर योजनापूर्वक कुछ कार्य नहीं किया जा सकता?

—मो०भ०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

★ कल्पना मासिक ★

पढ़िये

जिसमें अुच्चकोटिके साहित्यिकों और कलाकारोंकी रचनाअें आपको मिलेंगी

प्रत्येक अंकमें अेक रंगीन चित्र

स्थायी स्तम्भः—

कला प्रसंग—विनोद बिहारी मुकर्जी

सांस्कृतिक टिप्पणियाँ—दिनकर कौशिक

साहित्य धारा—अिस स्तम्भके अन्तर्गत पाठकों, लेखकों आदिद्वारा अुठाये गये साहित्यिक प्रश्न आदि हैं।

पुस्तक समालोचना—

कल्पना अपनी निर्भीक समीक्षाके लिये प्रसद्धि हैं।

पृष्ठसंख्या ८०, वार्षिक मूल्य १२), अेक प्रतिका १)

पता—८३१, बेगम बाजार, **हैदराबाद**

'जीवन-साहित्य' ही क्यों पढ़ें ?

अिसलिये किः—

"विचारके लिये वह अच्छा खाद्य दे रहा है।"

—विनोबा

* यह मासिक पत्र वर्षभर आपके समूचे परिवारके लिये सुपाठ्य सात्विक मानसिक आहार देगा।
* अिसके ग्राहक होनेपर मंडलकी पुस्तकें रियायती मूल्यमें मिलेंगी।
* अुसके विशेषांकोंकी पाठकोंने भूरी-भूरी प्रशंसा की है।

वार्षिक चंदा चार रुपये।

आजही ग्राहक बन जाअिये।

पताः— सस्ता साहित्य मंडल, नयी दिल्ली।

❀ अुद्यम ❀

हिन्दी और मराठी भाषामें प्रकाशित होता है।

प्रतिमास १५ वीं तारीखको पढ़िये।

अुद्यममें निम्न विषयोंके लेख छपते हैं:—

लाभदायक अुद्योगधंधोंकी जानकारी अनाज तथा सब्जीकी खेती व रोगोंका निवारण, पशु-पालन, दुग्धव्यवसाय व ग्रामोद्योग संबंधी लेख, विद्यार्थियोंके लिये वैज्ञानिक व अन्य जानकारी आरोग्य, घरेलू औषधियों संबंधी लेख, हिंदुस्थानके वैज्ञानिक और औद्योगिक क्षेत्रकी अुपयोगी जान-कारी, कृषि, औद्योगिक और व्यापारिक क्षेत्रमें काम करनेवाले लोगोंकी मुलाकात तथा परिचय

अुद्यमके विशेष स्तंभ

महिलाओंके लिये अुपयुक्त, रुचिकर खाद्य-पदार्थ बनानेकी विधि, घरेलू मितव्ययिता, अुद्य-मकी पत्रव्यवहार, खोजपूर्ण खबरें, आर्थिक तथा औद्योगिक परिवर्तन, जिज्ञासु जगत्, व्यापारिक हलचलोंकी मासिक समालोचना, नित्योपयोगी वस्तुयें स्वयं तैयार कीजिये।

सतत सु

कलिलकरको चन्दा ७ रु. और प्रति अंक १२ आना

—'अुद्यम' मा[illegible], धर्मपेठ, नागपुर (म. प्र.)

सरस्वती-संवाद

[मासिक पत्र]

हिन्दी साहित्यका प्रश्न और अुत्तर सहित आलोचनात्मक प्रगतिशील पत्र

वार्षिक मूल्य ४) अेक प्रति छः आना

अिस पत्रको पढ़नेसे आपको लाभः—

* अनुभवी अुच्च कोटिके विद्वानों द्वारा तर्कपूर्ण आलोचनात्मक अुत्तर प्राप्त होंगे।
* पिछले वर्षोंमें पाठ्य विषयोंपर आये प्रश्नोंका क्रम ज्ञात होगा।
* केवल चार रुपयेमें अेक वर्षमें ५०० पृष्ठकी समस्त परीक्षाओंकी प्रश्नोत्तरी तैयार कर लेंगे।
* प्रत्येक वर्षमें अेक परीषांक नामका अुसी वार्षिक मूल्यमें विशेषांक पायेंगे।
* यह पत्र गाअीड, प्रश्नोत्तरी, पथ-प्रदर्शन आदि सभीका काम करेगा।

अतः प्रथम वर्षसे ग्राहक बनकर अपना अंक सुरक्षित करा लें। वी. पी. से मँगाने अथवा मनीआर्डर भेजनेका पताः—

सरस्वती संवाद कार्यालय,

१९७६, मोती कटरा-आगरा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने प्रचारक भाअी-बहनोंसे

राष्ट्रभाषा प्रचार समितिका परिवार बहुत विशाल है। अिस परिवारमें ३३०४ से अूपर प्रमाणित-प्रचारक हैं और लगभग २००० केन्द्र-व्यवस्थापक भी। हमसे सहानुभूति और प्रेम रखनेवालोंकी संख्या भी बहुत बड़ी है।

'राष्ट्रभारती' समितिकी अन्तरप्रान्तीय (भारतीय) साहित्य और संकृतिकी प्रतिनिधि मासिक पत्रिका है। अिसकी अुपयोगिता और अुपादेयता आप लोगोंसे छिपी नहीं है। अपनी अितनी सस्ती, विविध विषय-सम्पन्न, अेवं सुरुचिपूर्ण सुन्दर पत्रिकाको अगर आप लोग चाहें तो बहुत ही शीघ्र स्वावलम्बी बना दे सकते हैं। यह अितनी नियमित है कि प्रतिमास १ ली तारीखको पाठकोंके हाथमें पहुँच जाती है। वार्षिक मूल्य ६ रुपया, अर्धवार्षिक ३॥) और अेक अंकका दस आना है।

प्रत्येक प्रचारक और केन्द्र-व्यवस्थापक 'राष्ट्रभारती' का अेक-अेक ग्राहक बना दे, तो अिसकी सन्तोषजनक ग्राहक-संख्या बढ़ जायगी। सिर्फ आर्थिक लाभकी दृष्टिसे ही हमें नहीं सोचना है; भारतीय साहित्य और संस्कृतिके अुच्च अुद्देश्यको भी पूरा करनेके लिये भी अिस पत्रिकाके पाठकोंकी संख्या बढ़ाना, ग्राहक बनाना, अत्यन्त आवश्यक है।' यह मुश्किल नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि आप लोग 'राष्ट्रभारती'के ग्राहक खुद बनेंगे, दूसरोंको बनायेंगे और 'राष्ट्रभारती'की पाठकसंख्या बढ़ानेमें अपनी समितिकी सहायता करेंगे।

मोहनलाल भट्ट
मंत्री, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

फ्रेंच भाषा सीखिये!

'फ्रेंच स्वयं शिक्षक'

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धाका यह नवीनतम प्रकाशन है। अिसके लेखक हैं प्रख्यात गुरुकुल (युनिवर्सिटी) काँगड़ी हरद्वारके विद्वान स्नातक डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार डी. लिट. (पैरिस)।

राजधानी नयी दिल्लीमें भारत-स्थित फ्रांसके राजदूत श्री काअुन्ट आस्ट्रोरोग भारतके तरुणोंको शीघ्रातिशीघ्र फ्रेंच भाषा सीखनेकी सलाह देते हैं। फ्रेंच भाषा सारे यूरोपमें बहुत आमफहम और कूटनीतिज्ञ भाषा है। फ्रेंच भाषा बोलनेमें शान समझी जाती है।

बड़ी सरलतासे अिस पुस्तककी सहायतासे आप फ्रेंच भाषा सीख सकते हैं।

बढ़िया छपायी, साफ-सुथरी जिल्द, **कीमत ५ रुपया मात्र**

मिलनेका पता:—

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा [म. प्र.]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रजिस्टर्ड नं० ना० १३८६

हम आपसे कुछ कहना चाहते हैं !

'राष्ट्रभारती' का तीसरा वर्ष अिसी जनवरी '५३ से शुरू हो चुका है, और तीसरे वर्षका यह दूसरा अंक आपके हाथमें है ।

'राष्ट्रभारती'के जिन प्रेमी ग्राहकोंका वार्षिक चन्दा अिस अंकके साथ पूरा हो जाता है, अुनसे हमारा नम्र निवेदन है कि वे अपना अगले वर्षका चंदा ६ रु. मनी आर्डर द्वारा तुरन्त भेजनेकी कृपा करें । वार्षिक या छह माही चंदा हर हालतमें मनी आर्डर द्वारा भेजना ही ठीक होगा । अिससे हमको और आपको सुविधा होगी । आपको अंक समयपर मिलेगा । वी. पी. और 'रजिस्ट्री' चार्जकी झंझटसे आप और हम दोनों बचेंगे । आशा है, आप हमारी अिस प्रार्थनापर जरूर ध्यान देंगे ।

दूसरा निवेदन यह भी है कि कमसे-कम अपने किसी अेक-दो पडौसी मित्रोंको भी ग्राहक अवश्य बना दें और अुनका सालाना चंदा मनीआर्डरसे भिजवा दें । 'राष्ट्रभारती' ही सबसे सस्ती, सुन्दर साहित्यिक सांस्कृतिक पत्रिका है जो ठीक समयपर हर १ ली ता० को निकलती है।

मनी आर्डरसे वार्षिक चंदा ६ रु. **छह माही चंदा ३ रु. ८ आ.**

पता :– प्रबंधक—'राष्ट्रभारती', हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

अपने कृपालु लेखकोंसे निवेदन !

(१) 'राष्ट्रभारती'में प्रकाशनार्थ रचना आदि सामग्री स्वच्छ सुवाच्य नागरी लिखावटमें ही भेजनी चाहिये । प्रकाशन योग्य सामग्री जो कुछ भी आप भेजें वह बहुत भारी और खूब लंबी चौड़ी नहीं होनी चाहिये, कृपया अिसका खयाल रखें । आपके हार्दिक सहयोगके लिये राष्ट्रभारती बहुत आभारी होगी ।

(२) अच्छी तरह ध्यानमें रहे कि राष्ट्रभारतीमें प्रकाशनार्थ भेजी हुअी आपकी रचना अिसके पूर्व किसी हिन्दी पत्र-पत्रिकामें प्रकाशित न हुअी हों; और जो कुछ सामग्री भेजें वह 'राष्ट्रभारती'के लिये ही भेजें ।

(३) अपनी अस्वीकृत रचनाको वापस मंगानेके लिये डाक टिकट अवश्य भेजें अथवा आप अुसकी प्रतिलिपि अपने पास सुरक्षित रखें ।

(४) लेख, रचना आदि प्रकाशन योग्य सम्पादकीय सारा व्यवहार अिस पतेपर करें:—

संपादक : **'राष्ट्रभारती'**
पोस्ट — हिन्दीनगर, वर्धा (मध्यप्रदेश)

प्रकाशक:— मोहनलाल भट्ट, मन्त्री–राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा ।
मुद्रक— गुदराम शर्मा, राष्ट्रभाषा प्रेस, वर्धा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

मार्च १९५३

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची, मार्च १९५३

'राष्ट्रभारती' बिहार, राजस्थान, मध्यभारत, हैदराबाद और भोपाल राज्यके शिक्षा-विभागों द्वारा स्कूलों, कालेजों और वाचनालयोंके लिये स्वीकृत हो चुकी है।

[**सूचनाः—** 'राष्ट्रभारती'में, सर्वश्री डॉ. बाबूराम सक्सेना, आचार्य काका कालेलकर, महामहोपाध्याय दत्तो वामन पोतदार, स्वर्गीय किशोरीलाल मशरूवाला और अुत्तर प्रदेशके वर्तमान राज्यपाल श्री क०मा०मुन्शीजी आदि विशेषज्ञोंकी अेक 'समिति' द्वारा १९३६ में निर्णीत नागरी लिपिका प्रयोग होता है: —अि, अी, अु, अू, अे, अै (इ, ई, उ, ऊ, ए और ऐ की जगह) और झ, ण और क्ष (झ, ण और क्ष अक्षरोंके लिये) —सं०]

		लेखक	पृ० सं०
१. लेख :			
१. नोखा और अनोखा	...	आचार्य चन्द्रबली पांडे अेम. अे,	१६१
२. मेरा रंग-मंचपर प्रवेश (मराठी)	...	श्री मामा वरेरकर अनुवादक— श्री प्रभाकर माचवे अेम. अे.	१६४
३. हिन्दी नाट्य-रचनाकी प्रगतिका अेक वर्ष	...	श्री जगदीशचन्द्र माथुर अेम. अे., आय्. सी. अेम्.	१६७
४. जीवनकी अुलटवासियाँ	...	महात्मा भगवानदीनजी	१७२
५. सिन्धके सन्तकवि शाहसाहब (सिन्धी)	...	श्री रूपकुमार जेठानी 'घायल' राष्ट्रभाषा-रत्न	१७६
६. औद्योगिक कार्य-क्षमता	...	श्री रमाप्रपन्न नायक, अेम. अे., आय्. सी अेस्.	१८२
७. कामरेड 'दादा'—शचीन्द्रनाथ सन्याल	...	श्री प्रोफेसर रंजन अेम. अे.	१९६
८. जीवन और कला (अुर्दू)	...	श्री हकीम अब्दुलवाली	२००
९. विश्वका विशाल साहित्य हिन्दीमें भर दो	...	श्री महाराज कुमार डॉ० रघुवीरसिंह अेम. अे., डी. लिट्, सीतामअू	२०१
१०. भारतीय राष्ट्रपति और राज्यपाल	...	श्री प्रोफेसर जगदीश प्रसाद व्यास अेम. अे.	२०४
११. ग्रीक ट्रेजिडीज़ (मराठी)	...	श्री बाबा साहब खापर्डे अनु०— श्री अनिल कुमार साहित्यरत्न	२०९
१२. हिन्दीमें अन्तर-प्रान्तीय साहित्य और संस्कृति	..	श्री लक्ष्मीशंकर व्यास अेम. अे. (ऑनर्स)	२१७
१३. गुजराती भाषा और साहित्य	...	श्री पांडुरंग ग० देशपांडे बी. अे.	२२८
२. कविता :—			
१. स्वर्गीय गुरुदेवकी वाणी (बंगला)	...	... ...	१६६
२. गीत (हिन्दी)	...	श्री 'नीरज', कानपुर	१८१
३. रंगभूमिने (गुजराती)	...	श्री चन्द्रसिंह बारोट	१८६
४. असीम नर्तन (हिन्दी)	...	श्री 'लहरी अेम. अे.' नागपुर	१९६
५. वसंत गीत (हिन्दी)	...	श्रीमती कमला चौधरी, मेरठ	२०८
६. स्वातंत्र्य गीत (तमिळ)	...	स्व० सुब्रह्मण्य भारती	२३४
३. कहानी और अेकांकी :—			
१. शुण्डुका सन्यास (तमिळ कहानी)	...	श्री रा. कृष्णमूर्ति 'कल्की' अनु०— श्री रा. वीळिनाथन	१८७
२. बुनियादी पत्थर (कहानी)	...	श्री रामरत्न बडोला अेम. अे.	२१२
३. होलीके दिन (अेकांकी)	..	श्री गोपाल शर्मा अेम. अे.	२२१
४. साहित्यालोचन	...	श्री प्राध्यापक विनयमोहन शर्मा अेम. अे., और श्री अट्रावलकर	२३५
कालेलकरकी [illegible]कीय	...	... ...	२३८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक : —

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

* वर्ष ३ * वर्धा, मार्च, १९५३ * अंक ३ *

नोखा और अनोखा

:श्री चन्द्रबली पांडे :

शोधके क्षेत्रमें कौन जाने कौनसी अनोखी वह शुभ घड़ी थी जिस दिन बड़े अधिकारसे कहा गया—

"संस्कृत 'नवक' बहुत दिनोंतक तो 'नोखा' था और 'नोखेकी नाअिन बाँसकी नहरन'में अब तक दिखायी पड़ जाता है; पर आजकल अुसने 'अ'की अगाड़ी लगाकर 'अनोखा' रूप रचा है।"

विचारनेकी बात है कि 'अनोखा'में 'अ'का स्थान शब्दके आगे है अथवा पीछे। यदि पीछे है तो कहना चाहिये 'पिछाड़ी' न ? आगा तो अुधर ही होता है न, जिधर अुसकी स्वाभाविक गति होती है। तो फिर 'अनोखा'में 'अ' की 'अगाड़ी'का अर्थ क्या ? यह तो प्रसंगवश यह दिखानेको कह दिया गया कि स्थापक कितना असावधान है। अब अजानपर ध्यान दीजिये। अुसका कहना है—

पर आजकल अुसने 'अ'की अगाड़ी लगाकर 'अनोखा' रूप रचा है।

हो सकता है। परन्तु प्रमाण तो सर्वथा अिसके विपरीत हैं। अधिक श्रम करनेकी आवश्यकता नहीं। काशी नागरी प्रचारिणी सभाके 'हिन्दी-शब्दसागर'को हाथमें ले लीजिये और देखिये तो सही अुसमें 'ओखा'के विषयमें क्या कहा गया है। लीजिये, अुसका लेख है—

"ओखा— संज्ञा पुं० [सं० ओख=वारण करना, बचाना] मिस। बहाना। हीला। अु०—

(क) गोरख लै तो जेठानी चलै घर सासु परी रहै प्रानन पोखे।
जान ही जाय जवाल है ज्वाल है, पौंरि न पाँव सक्यौं धरि धोखे।
क्यों हूँ परै कल अेक घरी न परी फँसि, बेनी प्रवीन अनोखे।
देखिबे को नँदनंदनको ननदी नँदगांव चलौं केहि ओखे॥

—कवि बेनी प्रवीन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ख) नेकौ अनखाति न, अनख भरी आँखिन,
अनोखी अनखीली रोख ओखेसे करति है,
— देव ।

(ग) बालम त्यों न बिलोकती अंतर खोलती ना करि ओखो ।
जानि परै न विराग सोहाग तिहारो भटू अनुराग अनोखो ।
—देव ।

वि० [सं० ओख=सूखना । पं० औखा=टेढ़ा, कठिन]
(१) रूखा-सूखा । (२) कठिन । विकट । टेढ़ा । अ०—

सुनु, नीको न नेह लगावनो है, फिर जो पै लगै तो निबाहनो है ।
अति ओखी है प्रीतिकी रीति अरी, नहि जोसको रोस सुहावनो है ।
—सुन्दरीसर्वस्व ।

(३) खोटा । जिसमें मिलावट हो । 'चोखा' का अुलटा । (४) झीना । जिसकी बिनावट दूर दूरपर हो । विरल ।"

और 'अनोखा' का अुसमें अर्थ दिया गया है—

"अनोखा–वि० [सं० अन्=नहीं+ओक्ष=देखना] [स्त्री० अनोखी, संज्ञा अनोखापन]

(१) अनूठा । निराला । विलक्षण । अद्भुत । विचित्र । (२) नूतन । नया । (३) सुन्दर । खूबसूरत । तथा 'नोखा' का भी—

"नोखा–वि० [हिं० अनोखा] [स्त्री० अनोखी] अद्भुत । विचित्र । विलक्षण । अनूठा । अपूर्व ।"

हिन्दी-शब्दसागरमें 'ओखा' के सम्बन्धमें जो कुछ लिखा गया है अुसमें 'ओखा' के साथ ही 'अनोखा' भी आप ही आ गया है । कहना चाहें तो सरलतासे कह सकते हैं कि 'मिस, बहाना, हीला' आदिका वाचक जो 'ओखा' है वह सदा अुदाहरणोंमें 'अनोखा' के साथ ही आया है । अिससे यह भले ही सिद्ध न हो सके कि वास्तवमें 'अनोखा' बना है 'अन्+ओखा' से; किन्तु देखते ही अिसे, कहा तो, बड़ी सरलतासे जा सकता है कि वस्तुतः यही अिसकी सच्ची निरुक्ति भी है, और न भी हो, तो भी अितना तो निर्विवाद ही है कि यह कहना साधु नहीं कि

"आजकल अुसने 'अ' की अगाड़ी लगाकर 'अनोखा' रूप रचा है ।"

कारण यह कि अुसकी यह अगाड़ी, यदि कही जा सकती है, 'बेनी प्रवीन' और 'देव' तक पहुँचती है। यहीं क्यों ? सूरदासका भी तो अेक पद है—

तू तो मोसों बात न कहति माओी चलौंगी कहाँ ते ।
काहे को गहरु कीजै बिन थर कहा लीजै दीजै जाअि अुत्तर मैं आयी हौं जहाँ ते ।।
अनोखी मानिनी नयी यह पाहन पूतरी भओी बैनन बदति और जरति नहाते ।
आयी हौं शपथ खाअि जात न परत पाँअि सूरदास प्रभु नवल पहाते ।। २२३७ ।।

'अनोखी मानिनी' के साथ ही 'नयी यह पाहन पूतरी भओी' पर ध्यान दें और सच तो कहें कि अिसका रहस्य क्या है । क्या यह 'नयी' 'नोखी' का अर्थ नहीं देती ? यदि हाँ, तो कहा जा सकता है कि 'नयी' का लगाव है 'नवक' से । 'नवक' से ही निकले हैं 'नवा', 'नया', 'नयी', 'नओी' आदि रूप । और 'नोखी' ? कह नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकता; पर कहा जा सकता है कि अुसका मूल है 'नवकः'। 'नवकः' से तो 'नोखा' बन सकता है, पर 'नवक' से स्यात् नहीं।

अच्छा होगा, यहीं सूरदासका अेक दूसरा भी पद ले लें और देखें यह कि अुसमें 'नोखी' की स्थिति क्या है।, सो सूरका वह पद है--

यह कछु नोखी बात सुनावति।
काको गथ धौं मैं लीन्हों है बार-बार बन मोहिं बोलावति॥
मेरी धाँ हरि लरत कौन सों अिती मया मोहिं कीन्हीं।
जैसे है हरि तेरे माओ मैं नीके करि चीन्हीं॥
की बैठो की भवन जाहु की मैं अुनपै नहिं जाअुँ।
सूरदास प्रभु को री सजनी जन्म न लैहौं नाअुँ॥ १८८२॥

'नोखी' निश्चित रूपसे यहाँ विशेषण है और है 'अनोखी' का पर्याय ही न? तो फिर अिस 'नोखी' का रहस्य क्या? कहा गया है—

"संस्कृत 'नवक' बहुत दिनों तक तो 'नोखा' था और 'नोखेकी नाअिन बाँसकी नहरन' में अब तक दिखायी पड़ जाता है।"

किन्तु विचारनेकी बात है कि 'नोखेकी नाअिन' में 'नोखा' विशेषण नहीं। यदि सीधी बात होती तो कह देते।

नोखी नाअिन बाँसकी नहरन।

किन्तु जनश्रुति अैसी नहीं है। कारण कुछ तो होगा ही। तो क्या 'नोखेकी नाअिन' का अर्थ है 'नोखे पुरुषकी नाअिन'? यदि हाँ तो 'नोखा' बना 'नवकः' से न? सुबन्धुने वासवदत्तामें खेदके साथ लिखा है कि--

सा रसवत्ता विहता नवका विलसन्ति चरति नो कङ्कः।
सरसीव कीर्तिशेषं गतवति भुवि विक्रमादित्ये॥

हमारी समझमें 'नवकः' से ही 'नोखा' सिद्ध होता है कुछ 'नवक' से नहीं। हाँ, हो सकता है कि कभी जनवाद रहा हो--

ओखेकी नाअिन बाँसकी नहरन।

और फिर धीरे-धीरे बन गया हो 'ओखे' से 'नोखे'। स्थिति कुछ भी हो, पर 'अनोखा' आजकलका रचा शब्द नहीं। नहीं वह तो हिन्दीका पुराना शब्द है और फलतः बना भी हो 'ओखा' में 'अन्' की पिछाड़ी लगानेसे। चाहें तो 'नोखा' को भी 'न+ओखा' समझ लें। 'नौखा' और 'नोखा' में भेद क्या?

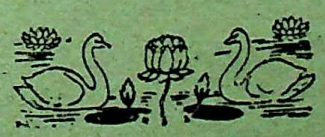

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरा रंगमंचपर प्रवेश

: श्री मामा वरेरकर :

[अेकाध नाटक मंडलीके किसी अभिनेताके हाथसे थप्पड़ खाकर नाटककार कैसे बना जाता है ? लीजिये मराठीके लब्धप्रतिष्ठ नाटककार मामा वरेरकर अपने लड़कपनमें अेक नाटक कम्पनीके संचालकसे अेक थप्पड़ खाकर किस प्रकार सफल नाटककार बने और कीर्ति कमायी, यह अिस लेखमें पढ़िये। —संपादक]

हर आदमी मुझसे पूछता है— 'आप नाटककार कैसे बने ?'

यह कहानी बड़ी मनोरंजक है।

मैं तब नौ-दस बरसका था। नाटकका बहुत शौक था। नाटक लिखते कैसे हैं, अुनकी Rehearsals (रिहर्सल) कैसे होती हैं, पात्र कैसे रँगे जाते हैं, और रंगमंचपर आकर वे काम कैसे करते हैं—यह जाननेकी मुझे बहुत अुत्सुकता थी। हमारे गाँवमें हर साल तीन-चार नाटक-मंडलियाँ आती थीं। वहाँ पक्का थियेटर नहीं था। नारियलके पत्तोंसे ढँका कच्चा थियेटर बनाया जाता था। अुस थियेटरमें खेल होते तब अुस थियेटरके चारों ओर पक्की बागड़ बना देते। डोअर-कीपर टिकिट लिये बिना अंदर किसीको नहीं जाने देते थे अिस बातकी भी बड़ी सावधानी रखी जाती।

नाटककी रिहर्सल नाटक-मंडली जहाँ ठहरती थी, वहीं होती। यह रिहर्सल कोअी न देखे अिसके लिये दरवाजे पक्के बंद कर दिये जाते। सन् १८९३ (अठारह सौ तिरानबे) में 'स्वदेश हित चिन्तक' नाटक मंडली हमारे मालवण गाँवमें आयी थी। अिस मंडलीमें बहुतसे पढे-लिखे लोग थे। यह अेक विशेष बात थी। यह नाटक मंडली कोल्हापूरके शाहू छत्रपति महाराजके आश्रयमें स्थापित हुअी थी। अिसमें पढे-लिखे लोग कैसे थे अिसके अुदाहरणके रूपमें कहूँ तो अिस कम्पनीमें अुस समय स्त्रियोंका पार्ट खेलनेवाले दो आदमी आगे बहुत बड़े आदमी हुअे— आर. के. कुलकर्णी, ग्वालियर कॉलिजमें प्रोफेसर थे और दीवान बहादुर अेल. पी. कुलकर्णी भारतके डाक-तार विभागके डाअिरेक्टर-जनरल हुअे। अधिकतर अभिनेता मैट्रिक पास थे।

यह बात विशेष रूपसे अिसलिये कह रहा हूँ कि अुस समय नाटक मंडलियोंके अभिनेताओंमें रसोअिये, पानी ढोनेवाले या पुजारी जैसे लोग भरे हुअे थे। अिसलिये समाजमें अुन्हें मान नहीं था। यह अभिनेता-वर्ग बे-पढ़ालिखा यानी अंग्रेजी न जाननेवाला था। फिर भी बहुश्रुत था। पुराणोंका अुनका अध्ययन व्यापक रूपमें था। कअी संस्कृत भाषाके विद्वान् अभिनेता भी थे। फिर भी साधारण जनता अुन्हें 'नाटकी' कहकर तिरस्कारपूर्ण दृष्टिसे देखती।

अिसलिये 'स्वदेश-हितचिंतक नाटक मंडली' के पढे-लिखे अभिनेताओंको देखकर हमारे गाँववाले अुनका सम्मान करते। गाँवके बड़े अफसरोंके ठाठमें, पोशाकमें और रौबसे जब वे चलते तो गाँववाले अुन्हें अुतना ही आदर देते। अिसलिये अुनकी रिहर्सल देखना बड़ा कठिन काम था। हमारे अेक मित्रकी बड़ी भारी कोठी थी। वहीं ये नाटकवाले ठहरे थे। रिहर्सल देखनेके लिये मैं अितना प्यासा हूँ यह देखकर घरके मित्रने दरवाजेमें अेक छेद किया। घंटों हम अुसी दरवाजेसे सटे खड़े रहते और नाटक कैसे स्टेजपर लाया जाता है, अिसका अध्ययन करते।

दूसरा महत्वका सवाल था : पात्र कैसे रँगे जाते हैं। अुनका मेक-अप कैसे होता है। अिस मंडलीके रंगपट या ग्रीनरूमका अितजाम बड़ा कड़ा था। वहाँ कोअी कैसे जा सकता था ? कम्पनीके बड़े अभिनेताओंसे या मैनेजरसे बहुत बिनती की। जब अुन्होंने मना कर दिया तब ग्रीनरूम या रंगपट देखनेकी जिज्ञासा और भी बढी। स्टेजके दोनों ओर भी नारियलके पत्ते ही लगाते। अेक बार रंगपटका अंदाजा लगाकर अिन पत्तोंके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फाड़कर मैं अंदर पहुँचा। अेक बार अंदर जानेपर रंग-पटकी ओर दृष्टि गयी। रँगनेवाले लोग दिखायी दिये। वे कैसे रँग रहे हैं यह देखना बाकी था। अितनेमें अेक मोटे युवक अभिनेताकी ओर मेरी दृष्टि गयी। वह भी मेरी ओर देख रहा है अिस बातकी ओर मेरा ध्यान नहीं गया था। वह आया और अुसने मेरा बाजू पकड़-कर अेक तमाचा जड़ दिया। मैं किसी तरहसे अपने आपको बचाता हुआ बाहर भागा। भागते हुअे मैं पीछे मुड़कर देख रहा था। परन्तु कोअी पीछा नहीं कर रहा है यह देखा तब जी हलका हुआ। अुसके बाद रंगपट देखनेकी हिम्मत कभी नहीं हुअी।

आगे संयोग अैसा हुआ कि अिसी 'मंडली' ने मेरा पहिला नाटक "**कुंजविहारी**" रंगमंचपर अभिनीत करनेका निश्चय किया। यह सन् १९०८ की बात है। नाटकके निर्देशनके लिये मैं धुलियामें गया। तब नाटक मंडली कोअी नया नाटक खेलनेके लिये ले, यह मुश्किल था। जबतक लेखकका नाम बड़ा न हो तबतक यह संभव नहीं था। अिससे पहलेके सब मराठी नाटककार डिग्रीधारी थे। मैं तो मॅट्रिक पास भी नहीं था। और मैं डाकघरमें नौकरी कर रहा था। जिन्हें कोअी और नौकरी नहीं मिलती थी, वे ही लोग डाकघरमें आते थे, अैसा तब खयाल था।

महाराष्ट्रमें दो नाटक मंडलियाँ प्रधान थीं : अेक 'किर्लोस्कर', दूसरी 'स्वदेशहितर्चिंतक'। मेरा यह "कुंजविहारी" नाटक मेरे अेक मित्रने किर्लोस्कर-मंडलीके संचालकको दिखाया था। अुन्हें वह नाटक पसन्द था। पहले अुन्होंने वह नाटक लेनेकी बात मान ली। परंतु जब अुन्हें पता लगा कि लेखक कम पढ़ा है या छोटी नौकरीपर है तो वे बुरा-भला कहने लगे। नाटक अच्छा था, अुन्हें पसंद था, अुनकी पूर्व परंपराके अनुसार था, फिर भी, लेखकको सामाजिक दर्जा नहीं यह पता लगते ही अुन्होंने नाटक अस्वीकृत किया। वह काँटा मेरे मनमें चुभ रहा था। अिसके बाद दर्जा बदलना संभव नहीं था।

जी अकुला रहा था। नाटककार बननेकी महत्वाकांक्षा तीव्र थी। मेरा अेक ही नाटक रंगमंचपर आ जाय, अुसके बाद मराठी रंगभूमिपर मेरा नाम सुस्थापित हो जायगा अैसा मुझे आत्मविश्वास था। परंतु किर्लोस्कर नाटक मंडलीके संचालकोंके दिये हुअे अिस धक्केसे मैं निराश हो गया था।

नौकरी कर रहा था, परंतु अुसमें मेरा मन नहीं रम रहा था। लेखनी मुझे बुला रही थी। वह लेखनी नाटक लिखनेमें ही काममें लायी जाय अैसा लग रहा था, फिर भी लेखनीकी आदत न छूटे अिस विचारसे अलग-अलग मासिकोंमें लघुकथा, निबंध और कविता भी लिखा करता था।

संयोगसे रत्नागिरीमें तारघरमें काम कर रहा था तब "स्वदेश-हित-चिंतक नाटक-मंडली" रत्नागिरीमें आयी। मेरे दफ्तरके अेक साथी जिस घरमें रहते थे अुसी घरके आधे हिस्सेमें नाटक-मंडलीके मैनेजर रहने आये थे। यह मेरे साथी भी बड़े नाट्य-प्रेमी थे। किर्लोस्कर मंडलीसे वापिस आयी मेरी 'कुंजविहारी' नाटककी कापी अुनके पास पड़ी थी। कहीं अुस मैनेजरने यह देख ली। अुसने पढ़कर नाटक पसंद किया। वह अपने मालिकको दिखाया। मालिकने मुझे बुला भेजा। तब मैं कुछ अचरजमें पड़ गया। परंतु मनमें डर भी लगा हुआ था। अपमानका डर। किर्लोस्कर मंडलीके संचालकोंकी तरह अगर यह मालिक भी जवाब दे दे तो। तो मुझे मरणप्राय दुख होता। यह कोड़ा सहनेकी मेरी तैयारी नहीं थी। परंतु अिस कंपनीके मैनेजर खुद जब मुझे बुलाने मेरे घर आये तब मनकी कुछ हिम्मत हुअी। कंपनीमें गया। अुस समय वहाँ करीब-करीब दरबार-सा लगा था। सारे महाराष्ट्रमें जिनके नाम प्रसिद्ध थे अैसे अभिनेता वहाँ बैठे थे। अुन्हें देखकर मैं सिटपिटा गया। अिष्ट देवताका स्मरण करके मैंने पढ़ना शुरू किया। पहले ज़रा डरते-डरते मैं पढ़ रहा था। पढ़ते समय नाटक कंपनीके मालिककी ओर देखता था। वह आँखें मूँदकर निर्विकार मुद्रासे सुन रहे थे। शेष अभिनेताओंके मुँह खिले हुअे देखकर मेरा हौसला बढ़ा।

नाटक संगीत था। बचपनमें मैंने गाना सीखा था। पर आगे कंठ फूटनेपर मिहनत नहीं की; सो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवाज जमी नहीं थी। धीमे स्वरमें मैं पद गाकर सुनाता तब मुझे अपनेआपपर शर्म आती। परंतु जब देखा कि यहाँ जमे हुअे लोगोंमेंसे कोअी मेरा परिहास नहीं करता है तब मैं मुक्त हृदयसे नाटक पढ़ने लगा और गाने भी गाकर सुनाये।

सबको नाटक पसंद आया, अैसा जान पड़ा। परंतु नाटक पूरा सुननेपर भी मालिक साहबने आँखें नहीं खोलीं। यह देखकर मैं और घबड़ा गया। पूरे पाँच मिनिट बीतनेपर वे बोले–'नाटक सुंदर है। हमें पसंद है। यहं नाटक हम खेलनेके लिये लेंगे।'

मेरी साँसमें साँस आयी। अब मैं नाटककार बनूंगा। मेरी महत्त्वाकांक्षा पूरी होगी, अैसा मुझे विश्वास हुआ। नाटक मंडली रत्नागिरीसे, बंबअी होते हुअे खानदेशमें जानेवाली थी। वहाँसे बुलावा आया और मैं धुलियामें जा पहुँचा।

पहले दिनकी बात। नाटक शुरू होते ही सब नट रंगपटमें रँगे जा रहे थे। मैनेजर मुझे लेकर थियेटरके अंदरके हिस्सेमें आये। मालिकको भी अुस दिन नाटकमें काम था, सो वे भी रँगे जा रहे थे। रंगपटमें जाकर अुनके साथ गपशप करने मैनेजर मुझे रंगपटके दरवाजेके पास ले आये। मुझे बचपनकी याद आयी। अिसी रंगपटमें प्रवेश करनेके लिये मुझे अेक बार थप्पड़ खानी पड़ी थी। और वह भी अिसी मैनेजरके हाथसे।

मैंने जब यह बात वहाँ कही तो सारी मंडली खिलखिलाकर खूब हँसी। नाटक मंडलीके ग्रीनरूममें मैंने प्रवेश किया सो अिस तरहसे। आगे कुछ महीने बाद मेरा वह नाटक मंचपर आया और मैं नाटककार बन गया।

मैं नाटककार बना सो बचपनमें अेक अभिनेताके हाथकी थप्पड़ खायी अिस कारणसे। नये नाटककार अिससे सबक सीख लें।

(मराठीसे **अनुवादकः- श्री. प्रभाकर माचवे, अेम.अे.**)

बंगला :

स्वर्गीय गुरुदेवकी वाणी

"मरिते चाहि ना आमि सुन्दर भुवने,
मानुषेर माझे आमि बाँचिबारे चाअी।"

**अर्थः— मरना चाहता नहीं मैं सुन्दर भुवनमें,
मानवके बीच मैं जीना ही चाहता हूँ।**

"हृदय आजि मोर कैमोने गैलो खुलि,
जगत् आसि सेथा करिछे कोलाकुलि।"

**अर्थः— हृदय आज मेरा कैसे तो गया खुल,
जगत् आकर वहाँ कर रहा आलिंगन।**

अनन्त अे आकाशेर कोले
टलमल मेघेर माझार--
अेअिखाने बाँधियाछि घर
तोर तरे, कविता आमार!

**अर्थः— अनन्त अिस आकाशकी गोदमें,
टलमलाते बादलोंमें।
यहीं बांधा है नीड़ (घर) तेरे तअीं
कविता मेरी!**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी नाट्य-रचनाकी प्रगतिका अेक वर्ष

: श्री जगदीशचन्द्र माथुर :

साहित्यके अितिहासमें अेक वर्ष बहुत ही छोटा है जिसमें प्रगतिका मूल्यांकन करना कठिन ही नहीं; बल्कि अेक मानीमें अितिहासका अुपहास करना होगा। लेकिन जिस तेजीके साथ नयी चेतनाके प्रभावस्वरूप नये साहित्यिक रूपोंका प्रस्फुटन आये दिन हो रहा है, अुसका सम्यक् अवलोकन निकट से भी किया जाना चाहिये, वरना भविष्यके अितिहासज्ञके लिये हम लोग यथेष्ट सामग्री न छोड़ पायेंगे।

सन् ५१ के अंतिम अंश और सन् ५२ के मुख्य भागमें प्रकाशित नाटकोंमें यदि किसी अेक संस्थाका स्पष्ट और सर्वव्यापी प्रभाव लक्षित होता है, तो वह है रेडियो। रंगमंचके अभावमें पिछले तीन-चार बरसोंसे हिन्दी नाटकोंका संरक्षण रेडियोके हाथमें रहा है। नाट्य रचनाको पथ भी मिला और पाथेय भी, और अिस तरह साहित्यके अेक नूतन रूप और अंशकी अवतारणा हुअी– ध्वनिरूपक। विज्ञानकी अिस देनके प्रति साहित्य अुदासीन नहीं रह सकता और आज जो सामयिक और अस्थायी जान पड़ता है वह कालान्तरमें काव्यका अेक सम्मान्य अंग बन जायेगा, अिसमें कोअी संदेह नहीं। अिस वर्ष अिस तरहके रूपक-साहित्यकी समृद्धि हुअी ही, किन्तु रेडियो द्वारा हिन्दी नाटककी अेक मूल प्रवृत्तिका भी जो पुनर्विकास हो रहा है, अुसका अुत्कर्ष अिस वर्षके प्रकाशित नाटकोंमें विशेष रूपसे दृष्टिगत हुआ। जयशंकर प्रसादके नाटक रंगमंचीय विधानके परे श्रव्यकाव्यके सौन्दर्यको अपनाकर आधुनिक रंगमंचकी सीमाओं और अुसकी आवश्यकताओंकी अुपेक्षा कर सके। किन्तु अुनके बाद अेकांकी नाटकोंका अुदय रंगमंचकी (चाहे वह रंगमंच अव्यावसायिक रंगमंच ही था) जागृति, अुसके अस्तित्व-संकल्पका सूचक बना। नाटक पुनः दृश्य काव्यकी रूप-रेखाको पहचानने लगा। अुसे श्रव्यकाव्यकी कल्पना-प्रधान-शैलीपर लगाम लगानी पड़ी; अुसे काल, स्थल और कार्य-व्यापारकी सीमाओंका ध्यान रखना पड़ा। भाषामें स्वाभाविकताका आरोप, कथानकमें गतिशीलताका निर्वाह, चरित्रचित्रणमें मूल अभिप्रायोंका अुत्थान, ये सभी तत्व अेकांकी रंगमंचकी विशेषताअें हैं जिन्होंने हिन्दी नाटकको अेक नया घुमाव दिया और जिनके फलस्वरूप "प्रसाद" की शैली थोड़े समयके लिये विस्मृत-सी हो चली। और तभी १९४७ के बादसे रेडियोमें हिन्दी नाटकोंकी मांग प्रारम्भ हुअी। हिन्दी लेखकोंको प्रोत्साहन मिला। अिस मांगके फलस्वरूप बीसियों लेखकोंको अपनी प्रतिभा आजमानेका अवसर मिला। अुनके सौभाग्यसे रेडियो नाटक रंगमंचके बन्धनोंसे मुक्त था, लेखकको अपूर्व स्वच्छन्दताका आभास हुआ। नाटकोंके अिस स्वच्छन्द रूपकी स्थापनामें लेखकोंको प्रसादकी श्रव्यकाव्यवाली शैलीके लिये खूब गुंजायश मिली। पिछले वर्षमें प्रकाशित हिन्दी नाटकोंमें अधिक संख्या अैसी ही कृतियोंकी है जिनमें प्रसादकी आत्मा पुनः मुखरित होती जान पड़ती है; जिनमें प्रसादकी महती कल्पना, आंशिक रूपमें पुनः साकार होती दीख पड़ती है। जयशंकर प्रसादकी अिस नवीन प्रतिष्ठाप्राप्तिमें रेडियोका प्रभाव स्पष्ट लक्षित है, और यही अिस वर्षके अनेक नाटकोंकी प्रधान विशेषता है।

अिसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि लक्ष्मीनारायण मिश्र जैसे मंजे हुअे यथातथ्यवादी नाटककार भी खुल्लमखुल्ला अैतिहासिक और पौराणिक नाटकोंकी ओर झुक गये हैं। 'वत्सराज' के बाद अुनका "दशाश्वमेध" भी अेक "संस्कृति प्रधान अैतिहासिक" नाटक है जिसमें अुन्होंने विदेशी कुषाणोंसे भारतवर्षको स्वतन्त्र करनेवाली भारशिव-नाग जातिके कुमार वीरसेनकी कथाको आधार बनाया है। किन्तु 'प्रसादजी' की परम्परा मिश्रजीकी प्रतिभाको पूरी तरह आत्मसात् नहीं कर पायी है। "दशाश्वमेध" में तीन ही अंकोंमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समूचे कथानकको सिमेटा गया है और नाटककी मूल प्रेरणा घटनाओंके तारतम्यमें भटकी नहीं है। दूसरे संवादोंकी शैली मानवीय स्वभाव और भंगिमाकी अपेक्षा नहीं करती, केवल टकसाली और सुलझे हुअे वाक्य ही पात्रोंके मुखसे नहीं निकलते, खंडित शब्द मालाअें, अवरुद्ध स्वर, अनसुनीसी बातें सभीको थोड़ा बहुत स्थान मिला है। तीसरी विशेषता यह है कि जहाँ प्रसादका अितिहास मानवतावादी आदर्शों और अुत्कट देशप्रेमकी भावनाओंसे अनुप्राणित था वहाँ "दशाश्वमेध" में अेक नयी प्रेरणाका भी आभास मिलता है; जनवादी विचारोंकी प्रेरणा। *

स्वाधीनता-संग्रामके समाप्तप्राय होते-होते देश-प्रेमकी भावनाका स्थान धीरे-धीरे जनवाणीकी प्रेरणा ही ग्रहण करती जा रही है और प्रसादकी शैलीका यह नवीन रूप सबसे अधिक अुभरा है हरिकृष्ण प्रेमीके नये नाटक "शपथ" में। कथा है मालव जननायक विष्णु-वर्धन द्वारा हूण युवराज मिहिर कुलकी पराजयकी। गुप्त साम्राज्यकी शक्ति भी जिस हूण झंझाके आगे छिन्न-भिन्न हो गयी, अुसे पलट दिया मालवोंके लोक-प्रिय नेता विष्णुधर्मनने जिसे वंशानुगत राजाओंका आभिजात्य गौरव तो न मिला था लेकिन गणतंत्रकी असीम शक्ति जिसका प्राण भी थी और आभूषण भी। हरिकृष्ण प्रेमीजीके अन्य नाटकोंसे भी अधिक अिसमें अुनकी भाषा निखरी हुअी है। संवादोंमें अुच्चस्तरका स्पंदन है और है भावाविष्ट व्यक्तित्व। किन्तु जिस तरहसे सँवार सँभालकर हरेक शब्दको तोलकर अुनका प्रत्येक पात्र अपने विचारोंको व्यक्त करता है अुससे जान पड़ता है कि प्रेमीजी संतुलित संवादोंके सम्मोहनमें आकर अपना सारा कौशल अुन्हींमें लगा देते हैं। अत: कथानकके गुम्फनमें ढिलाअी हो जाती है और कहीं-कहीं पात्र भी भिन्न-भिन्न नकाब लगाये हुअे अेक ही वाणीके मालिक जान पड़ते हैं।

डा. रामकुमार वर्माके सफल अेकांकी "स्वर्णश्री" में भी अुसी जनशक्तिके प्रति सहानुभूति और जाग-रूकताका प्रदर्शन है। अंतिम मौर्य सम्राट बृहद्रथकी कायरता, देशहितके प्रति अुसकी विमुखता और जन-साधारणके प्रति अुसकी अुदासीनता पुष्यमित्रके विद्रोहका कारण बनी। वस्तुत: जिस कौशलके साथ अेकांकीके सीमित दायरेमें डा. रामकुमारने अिस अुद्देश्यकी परिणिति दिखायी है, वह पं० सीताराम चतुर्वेदीके बड़े नाटक "सेनापति पुष्य मित्र" में अप्राप्य है। किन्तु वर्माजीके अिस संग्रहके अन्य नाटक अितने गठे हुअे नहीं हैं। "भारतका भाग्य" में अुन्होंने रामायणके अेक लोकप्रिय अंशको ध्वनिरूपकका आकर्षक आवरण दिया है, किन्तु संवरणकी नीति न अपनाकर भक्तिके वातावरणकी खातिर शायद अुन्होंने भावा-तिरेकको प्रदर्शित करना चाहा और यों नाटकीय शिल्पविधानको शिथिल कर बैठे।

वस्तुत: संस्कृत नाटकों और महाकाव्योंकी विषय-वस्तुका "आधुनीकरण" अिस वर्षमें प्रकाशित कअी नाटकोंकी विशेषता रही है। अुदयशंकर भट्टकी पुस्तक "विश्वमित्र और दो भाव नाट्य" आलोच्य कालसे थोड़ा पहले ही निकल गयी थी लेकिन अुसमें अिस नूतन प्रयासका आरम्भिक रूप मिलता है। "मत्स्यगंधा" की सत्यवती द्विजेन्द्रलाल रायकी सत्यवतीसे कहीं अधिक प्रभावोत्पादक है, और "राधा" में तो भागवतका अेक नया स्पष्टीकरण है। नाटकके क्षेत्रमें अपेक्षाकृत अपरिचित हंसकुमार तिवारी और कैलाशनाथ भट्ट-नागरने भी अिसी पद्धतिमें दो प्रयोग किये हैं। तिवारीजीके अेकांकी संग्रह "पुनरावृत्ति" के प्रथम पुष्पमें "अभिज्ञानशाकुन्तलम्" की अत्यन्त प्रिय पुनरा-वृत्ति की गयी है, प्रिय भी और वर्तमान पाठक और

---

* कुछ मित्रोंका विचार है कि अिन पंक्तियोंके लेखकका नाटक "कोणार्क" जो आलोच्य कालमें ही प्रकाशित हुआ है, अिसी शैलीका अेक अुल्लेखनीय और सफल नमूना है। पिछले छ:सात महीनोंमें "कोणार्क" पाँच स्थानोंमें रंगमंचपर अभिनीत किया जा चुका है। जनवादी प्रेरणाका जो भी आभास अुसमें हो, मेरी दृष्टिमें तो 'कोणार्क' में युगयुगसे मौन और कुण्ठित कलाकारकी वाणीका सत्ताके विरुद्ध विस्फोट है। टेकनिक सम्बन्धी कुछ नये प्रयोग भी मैंने "कोणार्क" में लिये हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दर्शकके लिये मूलकी अपेक्षा अधिक ग्राह्य भी। नये रंगमंचके निर्माणकालमें अभी अिसी परिवर्धित रूपमें संस्कृतके प्रतिष्ठित नाटकोंका अभिनंदन हो सकेगा। भटनागरजीने "चाणक्यप्रतिज्ञा" में विशाखदत्तके मुद्रा-राक्षसका विस्तार कम कर दिया है। तीन अंकोंमें ही नाटक समाप्त हो जाता है, जगह जगह आधुनिक शैलीके गीतों और नृत्योंका समावेश कर दिया गया है। भारतेन्दुके अनुवादकी अपेक्षा भाषा अधिक संस्कृतमयी है। शम्भूदयाल सकसेनाके अेकांकी संग्रह "नंदरानी" में छः पुरानी कथाअें सरस और मुहावरेदार वाणी और मौलिक अभिव्यंजनाका सहारा पाकर अत्यन्त मनोहर रूपमें अुपस्थित की गयी हैं। शम्भूदयालजीने परिस्थितियोंका चुनाव बड़ी सावधानीसे किया है। राधा, बुद्धदेव, गोपा, कुन्ती, मानवी सीता और वियोगी राम आदि चिरपरिचित पात्रोंकी जटिल भाषा, अतीतके विलक्षण वातावरण अथवा अुच्चस्तरकी दार्शनिकतासे अभिभूत दिखाकर पाठकको प्रभावित नहीं किया गया; बल्कि वर्तमान मुहावरों और भंगिमासे सुसज्जित कर अुन्हें अनुपम आत्मीयता प्रदान की गयी है। शम्भूदयालजीके कम ही नाटक लोगोंकी जानकारीमें आये हैं, किन्तु मैं तो समझता हूँ कि रंगमंचकी आवश्यकताओंसे अिस लेखकका अनायास ही परिचय है। अिनका दूसरा नाटक "सगाअी" भी सामाजिक नाटकोंके वर्गमें अेक सफल प्रयास है। अिसी सिलसिलेमें अुमाशंकर बहादुरके "कालपथ" के दो नाटकोंका भी अुल्लेख होना चाहिये। 'अुदयन" में बौद्ध जातकोंकी अेक कथा नवीन रूपमें अुतरी है और "कालपथ" में अृग्वेद की। दोनोंमें आधुनिक विचार-शैलीका गतिशील संवादके द्वारा प्रदर्शन किया गया है।

अिन अुदाहरणोंसे यह स्पष्ट हो जाता है कि वर्तमान नाटककी मुख्य प्रवृत्ति प्रसादकी शैलीमें जनयुगके आग्रहको प्रतिष्ठित करनेकी ओर रही है, और अुसका शिल्पविधान रेडियो द्वारा प्राप्त स्वच्छन्द वातावरणमें रंगमंचीय रूपकोंकी सीमाओंका अुल्लंघन करके अेक नवीन साहित्यिक अंगकी सर्जना कर रहा है। लेकिन अेकांकी रंगमंचकी धारा क्षीण नहीं हो पायी; वस्तुतः तो सन् ४७ के बादसे अेमेचर, यानी अव्यावसायिक नाटक मंडलियोंमें नवस्फूर्तिका संचार हुआ, महिलाअें भी रंगमंचपर अुतरने लगीं। दिल्ली, पटना अित्यादि नगरोंमें छात्रोंके अतिरिक्त मध्यवर्गके सम्भ्रान्त सज्जन और महिलायें हिन्दी रंगमंचकी ओर आकृष्ट हुअीं। सामाजिक समस्याओंका यथातथ्य निरूपण करनेवाले सरल और बोलचालकी भाषासे सम्पन्न और आडम्बर-युक्त रंगमंचके झंझटोंसे मुक्त नाटकोंकी मांग बढ़ने लगी और बढ़ रही है। अिस मांगका पूरा-पूरा प्रभाव तो दो-तीन वर्षोंके बाद ही जान पड़ेगा, किन्तु आलोच्य वर्षमें नाट्य साहित्यकी मूल प्रगतिको यदि स्थायी प्रेरणा मिली है तो अिसी शैलीके दो चार नाटकोंसे। अुपेन्द्रनाथ अश्कके समान हिन्दीमें शायद ही किसी दूसरे आधुनिक नाटककारको वर्तमान रंगमंचके अवयवोंकी अितनी अधिकारपूर्ण जानकारी हो। केवल गोविन्दवल्लभ पंत ही दूसरे नाटककार हैं जिन्हें रंगमंचका अश्कसे भी अधिक अंतरंग परिचय प्राप्त है, लेकिन अेक तो पन्तजी जिस रंगमंचके अभ्यस्त हो रहे हैं, यानी भावप्रधान और चमत्कारपूर्ण पद्धतिवाला रंगमंच अुसका पुनरुत्थान अभी दूसरे क्षणकी बाट जोह रहा है; अेमेचर, अेकांकी रंगमंचसे वह मेल नहीं खाता। दूसरे पिछले कुछ वर्षोंसे अुनकी कोअी नवीन कृति सामने नहीं आयी। अिधर अश्कजीकी प्रतिभाको अपने विकासका यथेष्ट अवसर मिला है। अिस वर्ष अुनके दो नाटक निकले, अेक तो प्रहसन संग्रह 'पर्दा अुठाओ, पर्दा गिराओ' और दूसरा अपेक्षाकृत दीर्घ सामाजिक व्यंग 'पैतरे'। अश्क यथातथ्य नाटकोंके शैलीके जौहरी हैं यह बात अिन दोनों पुस्तकोंमें भली भाँति झलक पड़ती है। जैसा मैंने अन्यत्र भी लिखा है, जीवनकी सतत प्रवाहशील धाराका क्षणिक ठहराव ही अश्कके अेकांकीमें मूर्तमान होकर अुतरता है।...लेकिन अिस अनायास प्रदर्शनके पीछे कितनी तैयारियां, कितनी तराश, कितनी नापजोख है, अिसका अन्दाज मननशील पाठक ही लगा सकते हैं। .....नाटककारको अैसा करनेमें अप्रत्याशित संयमकी आवश्यकता होती है। यथार्थ पर अश्कका अितना अनुपम अधिकार है कि अुन्हें अविरंजना शैलीका सहारा लेनेकी जरूरत ही नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ती। अुनके नाटकोंमें व्यंग्यकी प्रतीति अेक महीन वातावरणके रूपमें होती है, जिसके साधन हैं हल्की-सी फबतियां, सांकेतिक कार्यसम्पादन और पात्रोंकी अनजान कमजोरियोंका थोड़ा बहुत अुभार। 'बतसिया','तौलिये' और 'कअिसा साहब कअिसी आया' अिन नाटकोंमें अुनकी यह शैली बड़े मनोहर रूपको प्राप्त हुअी है। किन्तु बम्बअीकी फिल्मी दुनियाका चित्र खींचते समय (शायद निजी अनुभवोंके भारसे कुंठित होनेके फलस्वरूप) वे मस्केबाजोंका स्वर्ग और पैतरेमें अिस तटस्थ और व्यंजनात्मक शैलीको त्यागकर अतिरंजना-प्रिय लेखकोंकी पाँतमें शामिल हो गये हैं। यह भी अच्छा ही है, क्योंकि अश्कको कभी-कभी अपनी परिष्कार-प्रिय और बारीक सांकेतिक शैलीके बन्धनोंसे सतर्क रहना चाहिये। भारतीय व्यक्तित्व पाश्चात्य लेखकोंकी सांकेतिक और संवरण प्रधान पद्धतिमें दब-सा जाता है।

अिस वर्ष हिन्दी नाट्य साहित्यमें अेक महत्वपूर्ण घटना घटी है, यशपालका नाटककारके रूपमें प्रवेश। अेक समर्थ कहानी लेखक अुतने ही अधिकारसे दृश्य काव्यका भी सृजन कर सकता है या नहीं, यशपालजीने अिसी प्रश्नके अुत्तरमें 'नशे नशेकी बात' वाले संग्रहका प्रयोग हिन्दी पाठकोंके सामने रखा है। लेकिन परिस्थितियोंका सावधानी पूर्वक चुनाव, पात्रोंके विकासमें मितव्ययता और गतिशील संवादोंके माध्यमसे कथानक विकाससे सभी नाटकीय तत्व अुनकी कहानियों और अुपन्यासोंमें विद्यमान हैं। अिसलिये यशपालको नाट्य शैलीके अपनानेमें शायद विशेष परिश्रमकी आवश्यकता नहीं पड़ी। अिस संग्रहके तीनों ही नाटक अेक परिपक्व व्यक्तित्वकी अभिव्यंजना है और अिनमें है अनुभूतिका खरापन और गहराअी अेवं अपने पर्यवेक्षणके प्रति वफादारी। पहला नाटक विशेष तौरसे सहज प्रगतिसे अुठकर तिलमिलानेवाली चोट देता हुआ अेक अप्रत्याशित पर्यावसानकी प्रतीति देता है, और विलक्षण परिस्थितिका प्रयोग करते हुअे भी अस्वाभाविकताका आभास नहीं देता। मुझे आशा है कि जब यशपाल अिस ओर मुड़े हैं तो हिन्दी नाट्य साहित्यको अभूतपूर्व देन देकर ही जायेंगे।

यह वर्तमान हिन्दी साहित्यका दुर्भाग्य रहा है कि भगवतीचरण वर्माने अपनी सहज नाटकीय प्रतिभाका यथेष्ट अुपयोग नहीं किया। अुनका, नया संग्रह "बुझता दीपक" वस्तुत: नये-पुराने नाटकोंका नमूना है। लेकिन ये तीनों नाटक हिन्दी अेमेचर रंगमंचकी निधियाँ हैं। "बुझता दीपक" शीर्षकवाला नाटक हिन्दीमें अेक नूतन प्रवृत्तिका संकेत देता है। स्वाधीनता-प्राप्तिके बाद जो सामाजिक रोग अुभड़ आये हैं अुनमें सबसे व्यथित शिकार हैं वे संवेदनशील राजनैतिक कार्यकर्ता अथवा देशभक्त जिन्होंने आदर्शोंसे रंगे विहानमें अपनी प्रथम चेतना पायी थी और जिनके वही आदर्श वर्तमान परिस्थितियोंके निर्मम आघातसे छिन्नभिन्न हो रहे हैं। भगवतीचरणजीका नायक अेक क्षतविक्षत योद्धाकी भांति अिस संहारलीलामें वीर-गतिको प्राप्त होता है। लेकिन वृन्दावनलाल वर्माजीके नवीनतम नाटक 'केवट' में डा. गोदावरी और किन्नर दोनों ही अेक नूतन आशा और आश्वासनकी खोजमें सफल होते दिखाये गये हैं, वह आशा है, नयी पीढीका छात्रवर्ग। सम्भव है अिस प्रतिकारमें कुछ लोगोंको वृन्दावनलाल वर्माजीके स्वप्नोंका ही प्रतिबिंब मिले।

लेकिन आज दिन न सिर्फ लेखकको स्वप्न देखनेका अधिकार है बल्कि अेक मानीमें यह अुसका कर्तव्य भी है कि अेक कल्याणकारी स्वप्नकी यथार्थकी भूमिपर अवतारणा होते दिखाये। अिसीमें वर्माजीकी अिस नवीन कृतिकी सार्थकता है। वे हमारे प्रौढ़ और सम्मानित नाटककार हैं। अुनकी प्रतिभा बहुमुखी है। लेकिन शिल्पविधानकी दृष्टिसे अिस नाटकमें वे अपनी जिम्मेदारीको निबाह नहीं पाये हैं। समस्यामूलक और घटनाप्रधान शैलियोंका सम्मिश्रण करनेकी अुन्होंने चेष्टा की है, लेकिन अिस सम्मिश्रणकी सफलताके लिये कथानकका क्षेत्र कुछ सीमित होना चाहिये था, और पात्रोंका निजत्व भी अधिक अुभड़ना चाहिये था। कहीं-कहीं घटनायें कांबूसे बाहर हो जाती जान पड़ती हैं। शायद सिनेमाके लिये यह नाटक अधिक अुपयोगी सामग्री दे सके।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृन्दावनलाल वर्माने सामाजिक विभीषिकाको आशावादकी ओर मोड़नेकी चेष्टा की है, लेकिन पं. मोहनलाल महतां वियोगीका नया नाटक "कसाअी" कोमल भावनाओं और आदर्शवादितासे कोअी समझौता नहीं कराता। वियोगीजी अभीतक छायावादके अग्रगण्य कवि और कहानीकारके रूपमें विख्यात थे। कविताकी शीतल छांहमें वे भले ही संतप्त अनुभूतियोंको विश्राम देते हों लेकिन नाटकका क्षेत्र तो अुन्हें जीवनके संघर्षपूर्ण और अत्याचार और विनाशसे अुत्तप्त रंगमंचका प्रतीक जान पड़ता है। गत महायुद्धके दिनोंमें और अुसके बादकी कुरूप, पापपंकमयी सामाजिक निशाकी झांकी हमें कसाअीमें वियोगीजीकी निर्मम तूलिकाने अिस नाटक "कसाअी" के रूपमें दी है।

रामानंद सागर और पृथ्वीराजने मिलकर पृथ्वी थिअेटर्सके रंगमंचके लिये "कलाकार" नामक नये नाटकमें हिन्दी लेखकोंको अेक नयी दिशाकी ओर संकेत दिया है। मेरा विचार है कि पृथ्वीराज यदि अेक बारगी रामानंद सागरको अिस नाटकके अंतिम अंकमें यथार्थ जीवनकी समस्याको अेक प्रश्नवाचक चिन्हके रूपमें ही प्रदर्शित करने देते तो कलाकी दृष्टिसे श्रेयस्कर होता। किन्तु पृथ्वीराज तो केवल कलाकार ही नहीं स्वर्णिम भविष्यके स्वप्नद्रष्टा और निर्माता भी हैं। फिर भी प्रभावोत्पादक परिस्थितिका चुनाव, द्वन्द्वात्मक और गीतिप्रधान वातावरणका समन्वय अेवं चुस्त, कर्णप्रिय संवाद, अुस नाटककी मनोरम विशेषतायें हैं।

अिसी महीनेमें मुझे मराठीकी सुप्रसिद्ध लेखिका मुक्ताबाअी दीक्षित का नाटक "जूआ" भी हिन्दी अनुवादके रूपमें मिला है। विवाहित पुरुषके प्रेमसंघर्ष और सपत्नी विवाहकी समस्या यों तो पाश्चात्य नाटकोंके लोकप्रिय वस्तुविषय रहे हैं। किन्तु भारतीय दृष्टिकोणसे अिस समस्यापर प्रकाश डालनेका श्रेय अिस नाटकको ही है। लेखिका भारतीय सतीके आदर्शकी दुहाअी देकर अिस विकट परिस्थितिका समाहार नहीं करती बल्कि व्यक्तिकी सुख-कामनाके विश्लेषणमें समस्याका हल खोजती है। अुसके दृष्टिकोणकी नींव है किसी अेकके दुखसे किसी दूसरेकी सुख-साधनाकी असंभावना। सूक्ष्म मनोदिशाओंकी पकड़ और विविध विचार-शैलियोंका अविकल प्रदर्शन अिस नाटककी आत्मा है। कथानक पात्रोंकी चारित्रिक विशिष्टताओंका सहारा लेकर आगे बढ़ता है। अिस नाटकका चौथा अंक भाव-सन्तुलन, गतिशीलता और प्रभावोत्पादकताके विचारसे आधुनिक भारतीय नाट्यसाहित्यका गौरव माना जायेगा। खेद यही है कि अनुवादकी भाषामें मुहाविरेकी अनेक त्रुटियाँ हैं।

अनुवादोंके सिलसिलेमें श्री प्रभुदयाल अग्निहोत्रीके "मृच्छकटिक" और श्री देवदत्त शास्त्रीके "कौमुदी महोत्सव" के अनुवादोंका अुल्लेख आवश्यक है। दोनों अनुवादकोंने परिश्रम किया है किन्तु अिस दिशामें अभी और मनोयोग और प्रतिभा वांच्छनीय है।

यहाँ मैंने अुदाहरण स्वरूप ही कुछ नाटकोंका अुल्लेख किया है। प्रकाशित नाटकोंकी संख्या तो कहीं अधिक है, और सम्भव है कतिपय महत्त्वपूर्ण रचनायें मुझसे छूट गयी हों। लेकिन अिस सिंहावलोकनसे हम लोग अिस निष्कर्षपर पहुँच सकते हैं कि सन् १९५१-५२ साल हिन्दी नाटकोंके अितिहासमें नवीन रूपोंकी खोज और विभिन्न शैलियोंके समन्वय प्रयासके लिये स्मरणीय रहेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवनकी अुलट बासियाँ

: महात्मा भगवानदीन :

बच्चा पैदा होते ही रोता है किसलिये ? अपने सुखके लिये। अगर अुसे बोलना आता तो रोता नहीं, कहता, लाओ खाना, मैं भूखा हूँ। मरते दमतक अुसका यही हाल बना रहता है। खाना, सोना और खाये हुअेको निकाल देना बच्चेके काम हैं, अिसीमें अुसे आराम है, यही अुसका सुख है। जब तक जीता है अिन तीनोंको नहीं छोड़ता। जरा बड़ा हुआ कि हाज़िरीकी लत पड़ी, और यह भी अुमरभर नहीं जाती। कोअी न कोअी अुसकी हाजिरीमें रहना ही चाहिये। अगर हम बच्चोंके सुपनेको जान सकते होते तो सौ फीसदी हाजिरी और दूध पीनेके होते। बच्चा कहनेके लिये छोटा है किन्तु हर बातके लिये बड़ा है– न अपने आप अुठेगा, न अपने आप खायगा, न अपने आप सोयेगा, हर कामके लिये अुसे नौकर चाहिये। अैसा मालूम होता है मानो बच्चा अपने लिये ही जीता है, अपनी भलाअीके सिवाय अुसके पास कोअी काम नहीं। मां बीमार हुआ करे, गोदीमें अुसको बिठाना ही चाहिये, सुलानेके लिये अुसे थपथपाना ही चाहिये। अुसकी सेवामें कोअी कमी नहीं होनी चाहिये। माँ भूखी हो, रहा करे, अुसको अुसे दूध पिलाना ही पड़ेगा। स्तनोंमेंसे दूध नहीं निकलेगा तो वह रो-रोकर घर सिरपर अुठा लेगा और अगर कहीं दांत हुअे तो स्तन कुतरने लगेगा। बचपनकी यह सब शरारतें आदमी मरते दमतक नहीं छोड़ता। आदमी अपनी भलाअीके सिवाय और कुछ नहीं सोच सकता। जीना माने अपना भला सोचना। अपना भला सोचना–जीवन है।

कुछ धर्म तो सिर्फ अपना भला सोचना ही सिखाते हैं। कहते हैं, अपना कोअी नहीं। वह अम्माँ भी नहीं जिसने ९ मार्ह पेटमें रखा और अपने प्राणोंको दावपर लगाकर अुसे प्रकृति या भगवानसे पाया। और जिसने अपना खून पसीना अेक कर और अपना सुख चैन आगमें झोंक कर अुसके लिये भोजन तैयार किया अुसके लिये सेज बिछायी और अुसको पालपोसकर बड़ा किया।

धर्मवालोंको यह कहनेकी कैसे हिम्मत हो जाती है कि "आदमीका कोअी नहीं"। अगर यह धर्मवाले सच्चे हैं तो पैदा होते ही अेक बच्चेको लें और पालपोसकर दिखायें। पांच छः महीने बाद अुसे धरतीके हवाले करना पड़ेगा। अुनसे वह मरा हुआ भी न सँभलेगा, अुसको सँभालेगी धरतीमाता !

अिन सब धर्मवालोंको छोड़िये, अिनकी माया ये ही जानें। यह "कोअी नहीं अपना" कहनेवाले आये दिन दरेवाजेपर खड़े रहते हैं और हाथ पसारे, कुछ जोरजोरसे और कुछ मन-ही मन, यह कहते मिलेंगे, "अम्माँ रोटी दे, बाबा रोटी दे"। अब नहीं कहते, "कोअी नहीं किसीका"।

कुछ सही आदमी अपने भलेकी सोचे तो सोचे, पर वह तो कभी कभी यह सोच बैठता है, कि "जान है तो अुसमें, और प्राण हैं तो अुसमें"। बड़ी हिम्मत कर गया तो अपने कुटुम्बवालोंमें जान मान ली, यह तो शायद वह कर ही नहीं सकता कि, सारे आदमियोंमें जान मान ले। अशोक, जो महान अशोकके नामसे मशहूर है, अपने भाअीमें जान समझता होता तो क्या, अुस राजगद्दीके खातिर अपने भाअीको मार डालता, जिस गद्दीको वह मौतकी देवीके हाथ छिनवा बैठा। आदमीके स्वार्थका कुछ ठिकाना है ! बिलकुल अैसा मालूम होता है, मानो हरअेक आदमी, दुनियाका नहीं, दिखायी देनेवाले सारे जगत्का, अकेला मालिक है। और दुनियाको और सारे जगत्को अुसे खुश रखनेके लिये मर मिटना चाहिये। हमने अेक रेल-दुर्घटनामें अेक बच्चेको हँसते-हँसते अपनी मरी माँका दूध पीते अपनी आँखों देखा था। हमारे पढ़नेवाले अुसे बालक समझकर माफ कर सकते हैं पर यही बालक तो बड़े हो-होकर राजगद्दीके खातिर बापको कैदखानेमें रख सकते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाअियोंको मार सकते हैं, चाचाको जहर दे सकते हैं, और माँका गला घोट सकते हैं।

संस्कृतके 'पंच-तन्त्र' में अेक श्लोक पढ़ा था जिसका खुलासा था, अपनेको जीते रखनेके लिये सबको खतम कर दो, अैसे आदमीके लिये जानवरोंमें जान कैसे रह सकती है। अगर आदमी भूलसे या मजबूर होकर अपनी जैसी सूरतवालोंमें जान मान लेता है, तो यह तो हर्गिज नहीं मानता, कि जितनी अच्छी अुसमें जान है अुतनी अच्छी किसी औरमें भी है। अगर अुसमें जान है तो दूसरोंमें जानकी परछायीं।

प्राण और जानके लिये जब आदमीका यह हाल है तब जानकारी यानी ज्ञानके लिये कुछ कम नहीं हो सकता। फारसीकी अेक किताबमें हमने पढ़ा था अगर दुनियाके परदेसे अकल नेस्तनाबूद हो जाय तब भी कोअी आदमी यह न कहे कि मैं नादान हूँ। अिसी तरहकी अेक कहावत गाँव-गाँवमें फैली हुअी है। वह यह कि 'सारी अकलकी अेक चौथाअी मुझमें और तीन चौथाअीमें सारी दुनिया'। आदमीमें जरासी खोपड़ी है, अुस खोपड़ीमें मामूली ज्ञान है, और अुस मामूली ज्ञानसे वह अपनी जानको सब कुछ माने हुअे है। अपनी जानको वह हर तरह समझता है, दुख आनेपर अुसे अेकदम यकीन हो जाता है, "मैं हूँ" "मैं जानदार हूँ" "मैं ही मैं हूँ"। और अितनी बात तो छोटा बच्चा आदमीसे ज्यादा समझता है। अुसे जब भूख लगती है तब वह समझता है कि मुझमें जान है क्योंकि मुझे तकलीफ होती है। पर जब माँके स्तन दाँतोंसे काटता है तब अुसको कोअी तकलीफ नहीं होती अिसअिये वह समझता है कि अम्माँमें जान नहीं है। जब जरा बड़ा होकर स्तन काटनेपर अम्माँको फड़कते और चिल्लाते देखता है और कभी कभी अुसका थप्पड़ अपनी पीठपर पड़ते देखता है तब अुसे शक होने लगता है, हो न हो, अम्मा में भी जान जैसी कोअी चीज है। यह हाल बच्चेका नहीं, पढे-लिखे अंग्रेजोंका, जब वह हिन्दुस्तानके मालिक बने हुअे थे, हिन्दुस्तानियोंके बारेमें था कि हिन्दुस्तानियोंमें जान नहीं होती, पर जब दो-चार हिन्दुस्तानियोंने बम फेंककर अंग्रेजोंकी जान लेना शुरू की तब अुन्हें शक होने लगा कि हिन्दुस्तानियोंमें, हो सकता है, जान जैसी कोअी चीज हो। अमेरिकावाले भी बहुत दिनोंतक हिन्दुस्तानियोंको बेजान समझते रहे। कहाँतक कहें, हर मालिक नौकरमें अगर जान मानता है तो अपनी जैसी हर्गिज नहीं मानता। यही हाल हजार पीछे ९९९ पतियोंका है। वह अपनी पत्नियोंमें अपनी जैसी जान माननेके लिये हर्गिज तैयार नहीं। यह किसे नहीं मालूम कि सोये हुअे आदमीको या सोये हुअे जानवरको अकसर बेजान मान लिया जाता है। अुसमें जान अुस वक्त मानी जाती है जब अुसकी जान परखनेकी कसौटीपर कस लिया जाता है। दूसरोंकी जानको आदमी और किसी तरह जान नहीं सकता। जिस तरह अुसे अपनी जानकी हरदम याद बनी रहती है, अुस तरह दूसरोंकी नहीं रहती। सोचनेसे दूसरोंकी जानकी याद आ सकती है। अपनी जान वह जान सकता है, दूसरोंकी जान वह मान सकता है। मानने और जाननेमें बड़ा अन्तर है। अिस अन्तरको हरअेक जानता है, बच्चा अम्माँमें अगर जान मान ले तो साथ साथ यह भी मानेगा कि अम्माँमें जान अुसके काम करनेके लिये है, अुसका काम न होता तो अम्माँमें जान न होती। आदमी बड़ा होकर, और सोचेगा भी क्या। वह भी यही समझता है, औरमें जान है, तो रहे, पर है वह अुसीके लिये। यही विचार तो कारण है, जो माँस खानेवालोंसे यह कहलवा लेता है कि अीश्वरने पशु-पक्षी आदमीके खानेके लिये पैदा किये हैं। बहुत दिन तक अीसाअी यही समझते रहे कि पशुपक्षियोंमें जान नहीं होती। जो माँस नहीं खाते वह सब्जी तरकारियोंमें जान मानते हुअे भी जान नहीं मानते, और अपनी जैसी जान तो कभी भी नहीं मानते। माँस न खानेवालोंमें कोअी कोअी अैसे आदमी पैदा हो जाते हैं जो यह समझने लगते हैं कि अुनकी जैसी जान किसी औरमें है, न अुनकी जैसी जानकारी। वह अपने साथियोंपर अैसा रौब बैठा देते हैं कि अुनके साथी यह कहने लगते हैं कि दुनियाका कोअी आदमी कुछ नहीं जानता या बहुत कम जानता है, और अुनके गुरु सब और सब समझका हाल जानते हैं। यानी दुनिया अल्पज्ञ है और अुनके गुरु सर्वज्ञ। गनीमत है, यह नहीं कहते अुनके गुरु जानदार हैं और दूसरे सब बेजान।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरेकको अपनी जान ही जान मालूम होती है। औरोंकी जानको वह जान कहे तो कैसे कहे? वह अुसको मानता है, जानता कहां है? बच्चा अगर मांको नहीं पीटता या नहीं पिटने देता तो सिर्फ अिसलिये कि अुसको दूध मिलनेमें दिक्कत होगी। बापको पीटनेके लिये जल्द तैयार हो जाता है। थोड़ा बड़ा होकर बापको जरूरी समझकर बापके कहनेसे माँपर हाथ अुठाने लगता है। बड़े होकर बच्चेके अिस स्वार्थी स्वभावमें कोअी तबदीली नहीं आती। वह और तरक्की पकड़ जाता है। बादशाह या लोकशाही सरकारें बागियोंको खत्म करती रही हैं और वफादारोंको पालती रही हैं। शेर, चीतेको मारना और गायोंको पालना आदमीके स्वभावका साफ साफ हाल कह रहा है।

हाँ, आदमी दूसरेका भला करता मिलेगा पर अपना जैसा नहीं। वह अपने लिये मैदा रखकर भूसी गायको दे सकता है, वह मक्खन निकाल कर छाछ नौकरको दे सकता है, यह भी मुफ्त नहीं। वह दूसरोंको सुख पहुंचाता है अिसलिये नहीं कि अुनको सुख मिलना चाहिये बल्कि अिसलिये कि अुनको सुख मिलनेसे अुसका अपना सुख दुगना चौगुना हो जायेगा। मोटे बैलसे ज्यादा खेत जोता जा सकेगा और मजबूत नौकरसे ज्यादा काम लिया जा सकेगा। राजाओं–बादशाहोंका अितिहास अिसी स्वार्थ भावनासे भरा मिलेगा। सूर्य-बंसी, चन्द्रबंसी, रघुबंसी, हरिबंसी सब अेक साँचेमें ढले मिलेंगे। बच्चेसे बूढेतक, रंकसे राजातक हरेक यही चाहता है कि अुस जीवनका भला होना चाहिये जिसको वह अपना माने और माने हुअे है।

अिस स्वार्थ अँधेरेमें कहीं चमक नहीं है, अैसा नहीं है। अगर अन्धेरा ही अन्धेरा होता तो अेक आदमी दूसरेको खा गया होता, या किसी राजाने, कम-से-कम, दूसरे देशको जीतकर अुसके सब आदमी खतम कर दिये होते। स्वार्थ अन्धेरेमें चमक है, और वह चमक है कि जब वह अपना भला करनेकी कोशिश करता है तब अुसे पता लगता है कि अुसका भला दूसरे करते हैं, वह अपना भला आप नहीं कर सकता। अब अुसको दूसरोंसे लगाव, मुहब्बत, प्रेम होने लगता है। किसी किसीसे अुसे अितना प्रेम हो जाता है कि अुसके साथ वह अेकमेक बन जाता है। अेकमेक होकर अुसके मनका हाल जाननेमें आसानी होती है। अिस आसानीसे अुसे यह ज्ञान हो जाता है कि जिस तरह वह अपना भला चाहता है अुसी तरह अुसका साथी अपना भला चाहता है। अेकमेक होनेमें जरूरी नहीं कि वह सब आदमियोंसे अेकमेक हो ही गया है या पशु-पक्षियोंसे अेकमेक हो गया है। हाँ, मामूली अेकमेकताका नतीजा होता है कि अुसे मालूम हो जाता है कि अुसकी तरह हर प्राणी अपने भलेमें लगा हुआ है, अपने ही जीवनकी सोचता है, अपनी जानको जान मानता है, अपनी जानको बड़े कामकी समझता है, हरअेक अपने सुखकी सोचता है और समझता है, सारी दुनिया अुसीको सुख देनेके लिये बनी है।

आदमीमें सबसे बड़ी कमी यह है कि वह पशु-पक्षियोंको हर तरह अपने लिये बना मानता है। वह चाहता है, सब अुसके हुक्मपर नाचें, सब अुसके लिये जान देनेको तैयार रहें। जब देखता है, जिनको वह अपने लिये बना समझता है वह अुसको अपने लिये बना समझते हैं, तब अुसको अैसा मालूम होने लगता है मानो वह चारों तरफ अुन प्राणियोंसे घिरा है जो अुसे खा जाना चाहते हैं। यह हालत देख अुसमें अेक क्रांति पैदा होती है। अुसका स्वार्थ परमार्थमें बदल जाता है। दूसरोंकी भलाअीमें अुसे अपनी भलाअी मालूम होने लगती है। वह अपनी भलाअी भूलकर, दूसरोंकी भलाअी सोचने लगता है। अेक लड़की जो अपने लिये जीती थी माँ बननेपर जैसे बच्चेके लिये जीने लगती है वैसे मनुष्य समाजके बालपनका आदमी जो अपने लिये जीता था जगतभाअीचारे (विश्वबंधुत्व) नामी पुत्रको जन्मकर अुसके लिये जीने लगता।

मनुष्य समाज जैसे जैसे पुराना होता जाता है या आदमी जैसे जैसे अुमरमें बढ़ता जाता है वैसे वैसे अुसका जगतभाअीचारेका विचार अनुभवकी गर्मी पाकर पक्का होता जाता है और वह यह समझने लगता है कि दुनियाके सब प्राणियोंमें अेक ही तरहकी जान है, अेक ही जीवनके सूतमें सब प्राणी मालाके दानोंकी तरह पिरोये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुअे हैं। यह कोरी भूल है कि वह अेक दूसरेको खा जानेके लिये तैयार हैं। यह समझकर वह जान जाता है कि अपनी भलाअीके लिये जीना बुराअी है।

अितना ही नहीं, आदमी यह समझकर कि वह सब जानवरोंको दुनियाके परदेसे खतम कर सकता है वैसा करनेकी नहीं सोचता क्योंकि अुसको मालूम है कि अैसा करनेसे जो सुख अुसे मिलेगा वह अुस दुखके मुकाबलेमें कुछ न होगा जो दुख अुसे पशु-पक्षियोंके नाश हो जानेके बाद होगा। अुसे यह भी मालूम है कि जिन तमाशोंको देखकर वह खुश होता है, जिन कामोंमें वह बहुत सुख मानता है अुनमें न अुसकी भलाअी है न अुसकी तरक्की। वह सुखके काम और खुशीके तमाशे, भलाअीकी बानगी जितने नहीं अुसकी भलाअी का आदर्श कुछ दूसरा हो जाता है। अुसे साफ मालूम होने लगता है कि अुसका हर सुख, दुख भरा होता है। अितना ही नहीं, धीरे-धीरे आदमीके आनन्द कम-कम होके चले जाते हैं और बड़ी अुमरमें वही आनन्द दुखमें बदल जाते हैं। किसे नहीं मालूम, जवानीके सुख बुढ़ापेमें काटते हैं, और बचपनके सुख जवानीमें।

बुढ़ापा अैसी चीज है जो आदमीके लिये अेक गुरुका काम करता है। वृद्धने, बुढ़ापेसे पाठ लेकर, अपना स्वार्थी जीवन अेकदम बदल डाला। बुढ़ापेमें बलके कम होनेका अनुभव होने लगता है। अुस वक्त जो बीमारी अुसके पास आती है अुसे वह बीमारी नहीं समझता, मौतकी भेजी दूती समझता है। वह यह अनुभव करने लगता है कि बहुत जल्दी अुसको अिसी तरह मौतका मुकाबला करना पड़ेगा जिस तरह वह दूसरेको मुकाबला करते देखते रहा है। अब अुसको यह ज्ञान हो जाता है कि अपने लिये जीना भूल था और वह अपना यह अनुभव दूसरोंके हाथ सौंप देता है।

मनुष्य समाज आज जो दूसरोंकी भलाअीमें लगा हुआ मिलता है अुसकी तहमें वह अनुभव है जो अुसने मर-मरकर सीखा है।

आदमी समझ गया है कि जिस आये (स्व) के लिये वह भलाअी चाहता था, जिस जीवनको वह अपना समझता था, न वह आया अपना है, न वह जीवन अपना है। दोनों समाजके अंश हैं। जिन्हें वह पराया समझ रहा था अुन्हींके पास आया और जीवन है। अुन्हींकी भलाअीमें अुसकी भलाअी है। अुनसे अेकदम अकेला पड़कर न वह अपना भला कर सकता है, न सुख पा सकता है, न जीता रह सकता है।

आदमीका जितना कुछ हमेशा बना रहेगा, जिसे सचमुच जीवन नाम दिया जा सकता है, वह तो वे भलाअियाँ हैं जो वह अपनेको भूल दूसरोंके लिये कर जाता है। आदमीका असली जीवन वही है; वह न कभी मरा, न मरता है, न मरेगा। खाना पीना, मर जाना जीवन नहीं, जीवनके साधन हैं। जीवन वही जो दूसरोंके लिये जीया जाता है। अुसको अपना वह पुराना जीवन जिसे वह सब कुछ समझे हुअे था और जिसको जीनेके लिये सारा जोर लगाये हुअे था सबका सब सपनेकी चीज बन जाता है और जिस जीवनको वह पराये समझे हुअे था, और जिसे वह जानना भी न चाहता था और अगर किसी तरह जान जाय तो अुसकी परवाह नहीं करना चाहता था, वही पराया जीवन अुसको असली जीवन मालूम होने लगता है।

पराये जीवनमें वह सब गुण मौजूद हैं जिनकी हमें जरूरत है। यह कल्पना नहीं है अनुभवके हाथकी दी हुअी सचाअी है; यह बुढ़ापेकी कमजोरीका पाठ नहीं है, अनुभवकी जवानीका पाठ है; यह अिन्द्रधनुषके रंगोंकी तरह पलक मारते नष्ट होनेवाली चीज नहीं, सदा अमर रहनेवाली सचाअी है; यह अधीर या निराश मनकी सूझ नहीं, आशासे भरे अन्तरात्माकी पुकार है। यह सचाअी अैसी सचाअी है जो मनपर जम गयी तो हमेशाके लिये जम गयी, और अितनी गहरी अुतर गयी कि जीवनका अंग बन गयी।

हमारे जीवनमें हमारा जीना नहीं है, मनुष्य-समाजके जीनेमें हमारा जीना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिंधके संत-कवि शाहसाहब

: श्री रूपकुमार 'घायल' :

जीवन-झाँकी

शाह अब्दुल्लतीफ़, सैयद हबीब अल्लाशाहके सुपुत्र थे। अुनका जन्म हैद्राबाद (सिन्ध) जिलेके हाला नामक शहरमें सन् १६९० अी० में हुआ था। बचपनसे वे अेकांत-प्रेमी थे। अुन्होंने अपना जन्म-स्थान 'हाला' त्याग कर चार मील दूर वालूके खंडहरोंपर अपना डेरा डाला। कालान्तरमें वही स्थान 'शाहजी भिट्ट' नामसे सम्बोधित होने लगा और अुसीके आधारपर आगे चलकर वे 'शाहभिट्टाअी' कहलाये।

अुनका स्वभाव अत्यन्त सरल अेवं निर्मल था। विनम्र भी वे वैसे ही थे। वे अत्यन्त सादा खाते, सादा पहनते, और सादा चलते। वे अेक कम-खर्चीले व्यक्ति थे।

अुनका अेकान्त जीवन आदर्श-जीवन था। अिसी अेकान्तके बलपर वे बहुत कुछ और बहुत सुन्दर सोच सके, और अपनी अद्भुत प्रतिभा द्वारा सिन्धीके साहित्य क्षेत्रमें अपनी अमिट छाप छोड़ गये।

अुनकी पाठशाला कृत्रिम और कोलाहलमय पाठशाला नहीं थी; अपितु वह अेक स्वाभाविक और शान्त प्रकृतिकी पाठशाला थी। प्रकृति देवीके प्रांगणसे अुन्हें जो अमूल्य रत्न हाथ लगे और जिन्हें वे कृपा पूर्वक सिन्धी-साहित्यको प्रदान कर गये सिन्धी समाज अुन्हें अुनकी अिस अुदारता और अमूल्य सेवाके लिये कदापि नहीं भूल सकता।

अपने जीते-जी वे सिन्धी समाजमें आदरणीय स्थान प्राप्त कर चुके थे और अनेक लोग –हिन्दू और मुसलमान– अुनकी पूजाके लिये अुनके यहाँ अेकत्रित हुआ करते थे। वे केवल महान् कवि ही नहीं, अुच्च कोटिके सन्त भी थे। अुन्होंने अपनी जीवन-लीला ६२ वर्ष पूर्ण कर सन् १७५२ में समाप्त की।

धर्म

वे स्वयं सुन्नी मुसलमान थे, पर अुनके विचार शीयोंके-से थे। रोजे, नमाजें रखते; पर प्रिय (परमात्मा) की प्राप्तिके प्रयत्नमें, अुनकी दृष्टिमें, वे सब निरर्थक थे।

"रोज़ा अैं नमाज़ूं अे पिण चडगे कमु,
पर अिहो को बियो फ़हमु, जंहिं सां पसिजे प्रींअ खे।"

वे सूफी मतके थे और अुनका वास्तविक धर्म भी सूफी ही था।

कवित्व

शाहसाहबकी कविता अत्यन्त ही सरस, सुरुचि-पूर्ण अेवं लोककल्याणकारी है। शब्द-माधुर्य अुनके काव्यकी प्रमुख विशेषता है। जीवनकी विविध हिलोरोंका अंकन अुन्होंने बड़ी खूबीसे, प्रभावोत्पादक शब्दोंमें किया है।

अधिकतर अुनके काव्यका आलम्बन प्रेमगाथाअें और कहानियाँ हैं, जो सर्वसाधारणमें प्रचलित हैं। यद्यपि अुन व्यक्तियोंको, (जिनके सम्बन्धमें अुन्होंने कविता की है–अुमर-मारुअी, लीला-चनेसर, मूमल-राणो, सुहिणी-मेहार, ससुअी पुन्हूँ आदि) अुन्होंने कभी न देखा था, (वे अुनके पूर्व हो चुके थे) तथापि अुन्होंने अपनी अद्भुत कल्पना-शक्तिके सहारे अुन्हें वह सजीव रूप प्रदान किया है कि पाठकके समक्ष अुन सबका दृश्य-सा अुपस्थित हो जाता है और वह जैसे अुन्हें अपनी-आँखोंके सामने देखने लगता है।

वे अपनी कवितामें सदैव सजधज और शान-शौकतके साथ अुपस्थित होते हैं। कहीं, नाममात्र भी शिथिलता प्रतीत नहीं होती। अुनका काव्य मानवके हृदयपर सीधी चोट करता है और अुसे अनन्तमें विलीन हो जानेकी प्रबल प्रेरणा करता है। सिन्धी-समाज आज भी अुनकी अिस जनमांगलिक और शक्तिदायिनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवितासे पूर्णतः लाभान्वित हो रहा है, और अेक भी पढ़ालिखा सिन्धी अैसा न होगा जो शाहसाहबकी अनमोल-काव्य-रचनासे अनभिज्ञ हो, और जिसे अुनके काव्यकी दो-चार पंक्तियाँ याद न हों।

अपनी कवितामें वे यत्र-तत्र अैसी वक्रोक्तियाँ और गूढ़ पहेलियाँ रखते गये हैं, जिन्हें पूर्णरूपेण समझनेके लिये किसी कुशाग्र बुद्धिकी आवश्यकता है। लम्बी-चौड़ी बातोंको संक्षेपमें और प्रभावोत्पादक ढंगसे कह जाना भी अुनकी अेक विशेषता है।

प्रकृति-नटीने अुन्हें बहुत कुछ दिया और शाहसाहबने अुससे हमें बहुत कुछ दिया। प्रकृतिके प्रत्येक कणमें अुन्हें अुसी अनन्त, असीम और अपार अगोचर परमेश्वरका प्रतिबिम्ब दिखायी दिया और अुसीको पानेकी धुनमें वे आजीवन लगे रहे। अुनका जीवन वास्तवमें अेक सन्यासी-जीवन था, जिसमें न कोअी सांसारिक लोभ रहता है और न मोह। सिन्धी-समाजमें वे केवल कविहीके रूपमें नहीं, सन्त रूपमें भी प्रतिष्ठित हैं।

अुनकी कविता प्राचीनोन्मुख न होकर सिन्धी साहित्यके लिये अेक स्थायी निधि है। वह सब कालोंमें, सब लोगोंमें, समान रूपसे प्रभाव अुत्पन्न करनेवाली है। सिन्धी-रक्त अुन्हें कदापि नहीं भूल सकता।

भाषा

शाहसाहबकी भाषा मँजी हुअी, हृदयस्पर्शिनी और शुद्ध सिन्धी है। शब्दोंके तो वे अटूट भंडार ही हैं। प्रत्येक शब्दके न जाने कितने अन्यान्य पर्यायवाची शब्द वे अपनी कवितामें प्रयुक्त करते गये हैं। 'अुठु' (अूँट) शब्दके जो पर्यायवाची शब्द अुन्होंने विभिन्न स्थानोंपर दिये हैं, वे हैं:— 'करहो', 'डाघो', 'वाँगो', 'तोडो', 'लीड़ो', 'बोतो', 'मयो', 'गोनरो', 'बोर'। अुसी प्रकार 'तीर' (बाण) शब्दके लिये भी अुन्होंने अनेक समानार्थक शब्द दे रखे हैं:— 'बाण', 'लोह', 'कान', 'लोरी', 'टंगर', 'सीलो' और 'पीलो'। 'बहादुर' (वीर) के लिये भी अुनकी शब्दावली देखिये:— 'वीर', 'बाँको', 'जुंग', 'घोट', 'रावत', 'कोपो', 'पावंग', 'मुहाअी', 'पानो', 'वरंह', 'माँझी', 'सघर' और 'कुँअर'।

अितने सारे शब्द अुन्होंने अपने पाण्डित्य-प्रदर्शनके लिये कदापि प्रयुक्त नहीं किये हैं। वे तो, जब अुनकी कविता-सरिता अुनकी भाव-लहरियोंसे लहर अुठी है और अबाध गतिसे बहने लगी है, अुनके मुखसे स्वतः निकल पड़े हैं।

अुनके दुःखमय दोहे बड़े ही मार्मिक तथा ध्यानाकर्षक हैं। अुन्हें सुनकर कौन सिन्धी द्रवीभूत न होगा और किस सिन्धीके कानोंमें रह-रहकर अुनके दोहोंके शब्द गुञ्जरित न हो अुठेंगे!

अुनकी भाषामें वह शक्ति है जिससे कोअी भी पाठक प्रभावित हुअे बिना न रहता। वह अुसे किसी और ही दुनियामें पहुँचा देती है, स्वर्गीय दुनियामें, प्रणय-प्रधान दुनियामें। वह दुनिया पाठकको अतिप्रिय है और वह अुसे कभी नहीं छोड़ना चाहता। शाहसाहबका भाषा-सौष्ठव अविस्मरणीय है।

ग्रन्थ

हिन्दी साहित्यके 'सूर-सागर' की भाँति ही अुनकी रचनाओंका भी अेक वृहद् संग्रह 'शाह जो रसालो' नामसे सिन्धीमें प्रकाशित है, जिसका सिन्धी समाजमें महान् आदर है। अुसमें सिन्ध प्रदेशकी घटी हुअी प्राचीन प्रेम-गाथाओंका विस्तारपूर्वक वर्णन बड़े ही रोचक ढंगसे किया गया है। यही नहीं, अुसमें 'मानव'को 'मानव' बनाने और अुसे हीनावस्थासे अूपर अुठानेका भी स्तुत्य प्रयास किया गया है। सिन्धी-विद्वत्-समाजमें अुनके अिस रसालेकी बड़ी धूम है और सिन्धी साहित्यका सर्वोत्तम ग्रन्थ होनेसे, अुसका सबसे बड़ा गौरव है।

सिन्धीमें शाहसाहबका ठीक वही स्थान है, जो बंगलामें रवीन्द्रका और हिन्दीमें तुलसीदासका। यह अुन्हींका 'रसाला' है जिसके आधारपर आज 'सिन्धी' भाषा 'सिन्धी' है—और अुसका मस्तक अूँचा है।

शाह साहबकी वाणी

शाहसाहबके कुछ लोकप्रसिद्ध अेवं श्रेष्ठ पद हिन्दीमें अर्थ-सहित यहाँ दिये जाते हैं। आशा है, 'राष्ट्रभारती' के पाठकोंको अिनसे कुछ सुख संतोष मिलेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्वीं छो वणिकार, हिति न गोलीं होत खे ?
लिको कीन लतीफु चअे, बारोचो बिअे पारि,
थी सती बधु सेदिरो, प्रीति पुन्हूँअसीं पारि,
नाँअे नेण निहारि, तो में देरो दोस्तजो ।

अर्थात्— शाहसाहब 'ससुओ' को (आन्तरिक रूपसे ओश्वरके अुपासकोंको) सुन्दर परामर्श देते हुअे कहते हैं कि तुम विपिनमें अपने प्रीतमको क्या खोज रही हो ! अपने अन्तरमें अुसे क्यों नहीं देखती ? तुम्हारा प्रिय कहीं छिपा हुआ नहीं है । (यह केवल तुम्हारा अज्ञान है, जो तुम्हें भटकाता है) तुम अपने सत्यपर दृढ़ रहो और निश्चल होकर अपने प्रियसे प्रेमका नाता निभाओ । अपने अन्तरमें झाँककर देखनेसे तुम्हें भली भाँति मालूम हो जायगा कि तुम्हारा प्रीतम तुम्हारे ही हृदयमें वास कर रहा है । (परमेश्वर सर्व-व्यापक है । जब मनुष्यके नेत्रोंसे अज्ञान रूपी पर्दा दूर हो जाता है, तभी वह अपने प्रीतमको अपने समक्ष देखता है ।)

(परमेश्वरके पक्के अुपासकोंको) शाहसाहब फिर कहते हैं :—

जा जर जाटूं न दिये, दिया न मोहे,
सधूं कोहि करे, सा पंहिंजे काँध जूं ।

अर्थात्— जो स्त्री (अपने प्रीतमको पानेके लिये) जलकी यात्राअें (दुःसह कष्ट) नहीं करती और सागर-तटपर जाकर दीपक आदि नहीं जलाती, वह अपने प्रियसे किस आधारपर मिलनेकी आशा करती है । (परमेश्वरको पानेके लिये अुसके चाहने-वालोंको असंख्य कष्ट सहन करनेकी सहन-शक्ति होनी चाहिये । अन्यथा कामी मनुष्योंकी भाँति, व्यर्थ कामनाअें करनेसे कोअी लाभ नहीं होगा ।)

ओश्वरके जिज्ञासुओंको सच्चे प्रेमका पाठ कुम्हारकी 'भट्टी' से सीखना चाहिये, यही शाहसाहबका अुपदेश है :—

निहाअीं अ-खाँ नींहुँ, सिखु मुंहिंजा सुपिरीं
सडे सारो वींहु, बाहिरि बाफ़ न निकिरे ।

अर्थात्—कुम्हारकी 'भट्टी' यद्यपि सारा दिन-भीतरही भीतर सुलगती और जलती रहती है, परन्तु फिर भी वह धुआँ तक बाहर नहीं निकालती । (ओश्वरके सच्चे अुपासकोंका भी यही गुण होना चाहिये कि वे प्रेम-रूपी-अग्निमें अपनेको निरन्तर और निर्वाद जलाते रहें । ज्यों ही अपनी प्रीति और अुसके कष्टोंका सर्व-साधारणके समक्ष प्रकाशन किया जायगा, त्यों ही प्रीतमके प्रेमका सारा मज़ा किरकिरा हो जायगा ।)

'भक्ति' का रूप कैसा होना चाहिये; अिस संबंधमें भी शाहसाहबके अपने अनुभव-सिद्ध विचार हैं । वे कहते हैं:—

चाअिंतु पाअे चित्तमें, सन्हों कत्योजिनि,
तिनि जो सराफनि, दुको दाखिल न कयो ।

अर्थात्—जिन व्यक्तियोंने अपने अन्तरमें द्वेष भाव रखते हुअे पतला सूत काता (भगवानकी अपार भक्ति की), अुनकी कताअी (भक्ति) का नामांश भी परमेश्वरके दरबारमें स्वीकृत नहीं हो पाया । किन्तु:-

मुहिबत पाअे मनमें, रंढा रोड़िया जिनि,
तिनि जो सराफ़नि, अण तोरियोअी अवाअियो ।

अर्थात्—जिन व्यक्तियोंने साफ़ व सच्चे हृदयसे मोटा और अुलझा हुआ सूत काता (सच्चाअीसे भगवानकी भक्ति की), अुनका सारा सूत बिना तौले ही स्वीकार किया गया ।

योगियोंको शाहसाहबका सुन्दर सन्देश है:—

जे भाअीं जोगी थियाँ, त तमअु छदि तमामु,
गोला जे गोलनि जा, तिनि जो थीअु गुलामु,
सबुर जे शमिशेर साँ, करि कीने खे कतिलामु,
त नाँगा तुहिंजो नामु, लिखिजे लाहूतमें ।

अर्थात्—अगर तुम चाहते हो कि तुम्हारा नाम योगियोंमें शामिल किया जाये तो तुम लालचका परित्याग कर दो । जो सच्चे साधु और सन्त लोग हैं, अुनके आज्ञाकारी अनुचर बनकर रहो । (नम्रताको अपनाओ)। अपने हृदयके सारे अीर्ष्या-द्वेषको धैर्य-रूपी-तलवारसे नष्टकर दो । तभी, तुम्हारा नाम पहुँचे हुअे तद्रूप-प्राप्त भिक्षुओंमें गिना जायगा । (मनुष्य नम्रता अपनाकर ही अीश्वरको पा सकता है ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्य-मात्रको अुनकी वाणी आज भी सचेत कर रही है:-

मतो आहीं मछ, थूंघारियो थूना हणीं,
तो जा भाअीं अछ, तँहिं पाणी पुना अथेअी ड्रींहडा ।

अर्थात्--हे मनुष्य ! तुम 'मॉगर-मच्छ' (समुद्रीजीव) की भाँति शरीरमें मोटे बन गये हो और प्रबल-श्वास ले लेकर खूब धक्के दे रहे हो। किन्तु अिस बातको कभी मत भूलना कि जिस पानीपर तुम्हें गर्व हो रहा है, अुस पानीके दिन अभी समाप्त होनेपर हैं (पानी सूखने पर है)। (वैभवके दिनोंमें तुमने जो अीश्वरको भुला दिया है और दौलतके नशेमें अन्धे बन गये हो, वह तुम्हारी सरासर मूर्खता है। जब तुम्हारे सुख-सम्पन्नताके दिन समाप्त हो जायँगे, तब तुम पछताकर रह जाओगे।

नाँघेमें ताणे, बधु पंहिंजो तुरहो ।
अून्हेंमें आणे, कोन दींडुअि को बियो ।।

अर्थ:—हे मनुष्य ! कोअी कार्य करते समय अुसकी तैयारी तू स्वयं कर। संसार-रूपी-समुद्रमें तुझे अपना-(जीवन-रूपी) जहाज़ खुद मज़बूत बनाना होगा, अन्य कोअी मनुष्य अिस कार्यमें तुझे सहायता न पहुँचायेगा। शाहसाहब मनुष्यको 'आत्मावलम्बन' का पाठ सिखा रहे हैं।

खम खमन्दनि खटियो, हारायो होड़न ।
चखियो व चवन्दनि, हो जो साअु सबुर जो ।।

अर्थ:—क्षमाशील लोगोंकी सदैव जीत होती है, और हठी तथा घमण्डी मनुष्य सदैव नीचा देखते हैं। 'संतोष'का रसास्वादन, शिकायत करनेवाले तथा असंतुष्ट मनुष्य कभी नहीं कर पाते।

पातशाही न पाड़ियाँ, सरतियूं सुअी अ साणु ।
ढके अुघाड़नि खे कोन ढकियाअीं पाणु ।।

अर्थ:—सुअीकी ओर संकेत करते हुअे शाहसाहब फरमाते हैं कि सुअी सचमुच अिस योग्य है कि अुसपर सल्तनतें न्यौछावर कर दी जायें। वह अपना शरीर नंगा रखकर भी, दूसरोंको नंगा नहीं रखती। (अिन पंक्तियोंमें शाहसाहबने 'परोपकार'का महत्त्व बतलाया है।) सुअीकी परमार्थ-वृत्ति वास्तवमें प्रशंसनीय है।

कीअँ माअींदा मनमें, खुदी अें खुदा ।
बिन तरारियुनि जाअि, नाहे हिक म्याणमें ।।

अर्थ:—मनुष्य-मानसमें अभिमान और अीश्वर कभी अेकसाथ नहीं समा सकते। यह अुसी प्रकार असम्भव है--जिस प्रकार अेक म्यानमें दो तलवारें नहीं समा सकतीं। अीश्वर-प्राप्तिके लिये यह अत्यावश्यक है कि मनुष्य 'अहम्' का सर्वथा त्याग कर दे।

चण्ड तुहिंजी ज़ाति, पाड़ियाँ न पिरीं अ सीं ।
तूँ अछोमें राति, सजणु नितु सोझिरो ।।

अर्थ:--शाहसाहब चन्द्रमाकी ओर संकेत करते हुअे कह रहे हैं कि हे चन्द्रमा ! सुन्दरतामें तुम मेरे प्रियतम (परमेश्वर) के बराबर नहीं ठहर सकते। (तुम्हारी समानता अीश्वरसे नहीं की जा सकती)। तुम केवल रात्रिमें ही प्रकाशमान रहते हो, किन्तु मेरा प्रियतम (परमेश्वर) नित्य-प्रति प्रकाशमान है।

सुता अुथी जागु, निंड न करि अेतिरी ।
सुलतानी सुहागु, निंडूं कन्दें न लहीं ।।

अर्थ:--हे सोते हुअे मनुष्य ! अपनी अिस गहरी निद्राको त्याग दे। आँखें खोल, और प्रियको प्राप्त करनेका प्रयत्न कर। बेखबर सोये रहनेसे, तुम अुस स्वर्गिक-सुखको प्राप्त न कर सकोगे।

'सिराअिकी' (सिन्धीकी अेक विभाषा) में, 'शाहसाहब' का मधुर काव्य देखिये:--

सुर हीर-राँझो

(१) **किथि असाँ किथि यार असाँडा,**
किथि यारां दी वस्ती
राँझा खसणु खड़ा दसणु,
वेखि जटाँ दी मस्ती,
सारे जगि विचि अिक दोस्तु,
कीतोसीं, लोकतिनानूं खस्ती ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(डिवीडेण्ड) में मजदूरोंका हिस्सा या अुनकी मजदूरी बढ़ती है और साथ ही साथ बढी हुअी आमदनीका अुपभोग करनेके लिये अुन्हें अधिक अवकाश भी मिलता है। यह सच है कि वैज्ञानिक प्रबन्ध अपनानेसे अनेकों बुराअियाँ अुत्पन्न होती हैं परन्तु अिस सम्बन्धमें यह बात हमें याद रखनी चाहिये कि हमारा अन्तिम लक्ष्य अधिकतम अुत्पादन नहीं है, वरन् श्रेष्ठ अुत्पादन है अर्थात् जिससे देश और समाजकी सर्वाधिक भलाअी हो। अुदाहरणार्थ, यदि आधुनिक यंत्रोंके अुपयोगसे बेकारी फैलती है तो अुसे यथासंभव कम करनेके प्रयास किये जाने चाहिये। हमें यह नहीं भूलना है कि चाहे कुछ भी हो मनुष्य मशीन नहीं है और न अुसके साथ अैसा व्यवहारही किया जा सकता है। टेलरने देखा कि विभिन्न मजदूर, विभिन्न अुपायों और औजारोंसे अेक ही कार्य करते हैं। अेक ही कार्य कोअी अधिक मेहनत खर्च करके करता है, कोअी कम। अिसपरसे अुसने यह निष्कर्ष निकाला कि अधिकतम अुत्पादनके हेतु यह आवश्यक है कि वे सब अेक बराबर (स्टैण्डर्ड) परिश्रम करें— श्रमका अपव्यय न करें। किन्तु अुसने अिसके मनोवैज्ञानिक पहलूपर ध्यान नहीं दिया। अब अिसका अनुभव किया जा रहा है। परिणामस्वरूप कामकी अेकरसता, भीड़ तथा थकावट आदिकी बुराअियोंको कम करनेकी दिशामें अुपाय किये गये हैं क्योंकि अैसी बुराअियाँ वैज्ञानिक प्रबंधके कारण अनिवार्यतः अुत्पन्न होती हैं। अनिवार्य विश्राम अवधि, पाली-बदली, मनोरंजन आदिकी व्यवस्था तथा कामके घंटोंके बीच संगीत और फिल्मोंका प्रदर्शन, कामकी अवधिमें कमी, अूँची मजदूरी, ये कुछ विधियाँ हैं जिनसे अभिनवीकरणके दोषोंकी तीव्रता कम होती है।

अिस प्रकार मजदूरोंके वैज्ञानिक संघटनसे अभिनवीकरण आरंभ हो गया तथा धीरे धीरे सारे संसारके सभी अुद्योगोंमें व्याप्त हो गया। अिसके फलस्वरूप औद्योगिक कार्यक्षमतामें महान वृद्धि हुअी और अिसी कारण अुत्पादन तथा भौतिक क्षेममें भी वृद्धि हुअी।

अपने यहां, हम देखते हैं कि दुर्भाग्यवश भारतने वैज्ञानिक प्रबंधके आधुनिक सिद्धान्तोंको नहीं अपनाया है। अिस कारण हमारा देश दूसरे राष्ट्रोंसे पीछे है। जैसा कि श्री गोरवालाने राज्य अुद्योगोंके सक्षम-संचालन पर अपनी रिपोर्टमें बतलाया है, अिस देशमें वैसे प्रबंधका प्रायः अभाव-सा है। यहाँ बड़ी-बड़ी प्रतिष्ठित कम्पनियोंतकमें सामान्यतः कार्यक्षमताका आधार वैज्ञानिक प्रणाली और अनवरत निरीक्षण है। योजना आयोगके प्रारूपके अध्याय ११ में भी अिसी मतकी पुष्टि की गयी है। वास्तवमें भारतका आर्थिक-विकास बहुत पिछड़ा हुआ है तथा अनेक बातोंमें वह अभीतक मध्ययुगीन बना हुआ है।

निस्सन्देह वैज्ञानिक प्रबंधके द्वारा हम अपने मजदूरों तथा अुद्योगोंकी कार्यक्षमतामें वृद्धि कर सकेंगे तथा द्रुतगतिसे आर्थिक प्रगति कर सकेंगे। भारतकी औद्योगिक बनावटमें अुच्च स्तरकी कार्यक्षमताके साथ प्रसार अेवं अुत्पादन केवल वैज्ञानिक ढंगसे मशीनोंके अधिकतम अुपयोग द्वारा ही संभव हो सकता है। दुर्भाग्यवश साधारण मजदूर-वर्ग अभिनवीकरणका विरोध करता है, क्योंकि वह यह समझता है कि मालिक केवल अुसको हानि पहुंचाकर ही अुत्पादनमें वृद्धि कर सकते हैं, जैसे अुसी मजदूरीपर अुन्हें अधिक काम करनेके लिये बाध्य करके। जैसा कि हमने देखा यदि अभिनवीकरणकी योजनाको ठीकसे काममें लाया जाय तो अुत्पादनमें निस्सन्देह वृद्धि होगी तथा अिससे मजदूरोंको भी लाभ होगा। जो मालिक मजदूरसे कम मजदूरी पर अधिक काम लेना चाहता है अुसका दृष्टिकोण संकीर्ण है। यह अेक मानी हुअी बात है कि अिस मामलेमें भारतके मालिकोंको मजदूरोंका विश्वास प्राप्त करना होगा तथा अपने आचरणसे यह सिद्ध करना होगा कि वे मजदूर-वर्गको भी लाभ देना चाहते हैं।

जैसा कि मंगस्थनीज तथा व्हेनच्चांगके समान विदेशी पर्यटकोंके कथनसे सिद्ध है, प्राचीन समयमें भारतीय मजदूर बहुत कार्यक्षम थे। प्रोफेसर बेबर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहते हैं, महीन बुने हुअे कपड़े तैयार करने, रंगोंको मिलाने, धातुओं और कीमती पत्थरोंमें खुदावका काम करने और सभी तांत्रिक कलाओंमें भारतीय कौशलकी सदासे संसारमें ख्याति रही है। बादमें मुगलकालमें भी भारतीय बुनकर विश्व भरमें अपने महान् कौशल तथा हस्तकलाओंके लिये प्रख्यात थे। दुर्भाग्यवश आजके भारतीय औद्योगिक मजदूरोंके लिये यह बात नहीं कही जा सकती। अितने पर भी यह कहना, जैसा कि सर अेलेक्जेंडर मेक राबर्टने कहा है, अतिशयोक्ति होगी कि अंग्रेज मजदूर भारतीयोंकी अपेक्षा तिगुना कार्यक्षम हैं। दूसरी ओर जमशेदपुरके भूतपूर्व जनरल मैनेजर मि. टुटविलरका मत है कि भारतीय मजदूरको ठीकसे काम सिखाया जाये तो प्रायः प्रत्येक प्रकारके विदेशी मजदूरोंके स्थानपर काम कर सकते हैं। सामान्यतः यह स्वीकार करना पड़ेगा कि भारतीय मजदूर अुतना कार्यक्षम नहीं है जितना वह था या हो सकता है। अिसे स्पष्ट करनेके लिये बहुतसे कारण दिये गये हैं किन्तु जो बात मुझे जँचती है वह यह है कि प्राचीन समयमें भारतीय मजदूर कुटीर-अुद्योगके मजदूरके रूपमें या किसी छोटे प्रतिष्ठानमें, अनुकूल वातावरणमें किसी आचार्यके नीचे काम करते थे। अुन्हें अच्छा निवास, अच्छे वस्त्र अेवं अच्छा भोजन मिलता था। अुस समय बेकारी या भूखों मरनेकी आशंका नहीं थी। दूसरी ओर, आजके औद्योगिक मजदूरको घने शहरके गन्दे क्षेत्रोंमें, बिना पर्याप्त भोजनके, निरन्तर कर्जके भारसे दबे हुअे रहना पडता है। आधुनिक नगरोंकी गतिशीलताके भयंकर भारसे मजदूर दिन-पर-दिन नीचे दबता जा रहा है। अिसलिये अुसे शीघ्र ही मलेरिया, हुकवर्म और तपेदिकका शिकार होते देख आश्चर्य नहीं होता। अिससे अुसकी जीवन शक्ति और अधिक घटती चली जाती है। अिस कारण वह अपने कामपर नियमित रूपसे अुपस्थित नहीं हो पाता। वह अस्वास्थ्य, खराब काम, कम मजदूरी, कम खुराक और फिर अस्वस्थताके कुचक्रमें घिरा रहता है। अतः अुसकी कार्यक्षमता बढ़ानेके लिये यह आवश्यक है कि अुसके लिये संतुलित आहार, सुधरे हुअे मकान, शिक्षा, अुचित स्वास्थ्य-रक्षा, कामके कम घंटे, मनोरंजनकी सुविधाअें संक्षेपमें – जीवन स्तरके सुधार और आरामकी व्यवस्था की जावे। ज्योंही ये सुविधाअें अुसे दी जावेंगी त्योंही भारतीय मजदूरके सम्बन्धमें की जानेवाली बहुतसी आलोचनाओंका आप ही आप अन्त हो जावेगा। ये आलोचनाअें बहुधा अिस आशयकी होती हैं कि भारतीय मजदूरोंकी काम करनेकी अिच्छा नहीं रहती; गांवोंमें पाले-पोसे जानेके कारण अुनमें मानसिक और दृष्टिगत तीव्रता नहीं होती। अशिक्षा, कामके लंबे घंटे, गरीबी, अनुशासनका अभाव आदि भी अन्य दोष हैं।

अिसके अतिरिक्त और भी अन्य परिस्थितियां हैं जिनके लिये मजदूर बिलकुल जिम्मेदार नहीं है। अिनमें मुख्य वैज्ञानिक प्रबन्धका अभाव है। यदि हम औद्योगिक-क्षेत्रमें किसी प्रकारकी अुन्नति करना चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि हम भारतीय अुद्योगोंमें वैज्ञानिक प्रबन्धकी प्रणाली अविलम्ब आरम्भ कर दें। वैज्ञानिक प्रबन्धके द्वारा हम मजदूरोंपर कम व्यय करके अधिक माल अुत्पन्न कर सकेंगे और अंतमें अुससे मालिकको अधिक लाभ होगा, मजदूरोंको अधिक मजदूरी मिलेगी तथा अुपभोक्ताको सस्ते भावपर माल मिलेगा। केवल औद्योगिक गवेषण (रिसर्च), यंत्रोंके अुपयोग और अुत्पादित मालके स्तर-निर्धारणसे ही अधिक प्रमाणमें अुत्पादन हो सकेगा।

फिर भी यह स्पष्ट है कि हम कितना भी वैज्ञानिक प्रबन्ध क्यों न करें हमें अुससे तबतक कोअी लाभ नहीं होगा जबतक हम अपने नैतिक स्तरको अूंचा न करें। जबतक मालिक यह चाहते हैं कि वे मजदूरोंको यथासम्भव कम मजदूरी देकर और खोटा माल काममें लाकर अधिक लाभ प्राप्त करें तबतक वैज्ञानिक प्रबन्धकी बात करना व्यर्थ है।

यहाँ चेतावनीके रूपमें कुछ शब्द कहना अनुचित न होगा। अूपर मैंने अिस बातका अुल्लेख किया था कि हमारा अुद्देश्य अधिकतम अुत्पादन नहीं वरन् श्रेष्ठ अुत्पादन करना है। पश्चिममें कअी देशोंने यंत्रीकरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अधिक अुत्पादनके अुन्मादमें, सामाजिक कल्याणके अुच्चतम आदर्शोंका त्याग कर दिया है और अुन्होंने औद्योगिक मजदूरको अुत्पादनका तांत्रिक साधन समझ कर अुसके द्वारा अधिक-से अधिक अुत्पादन करानेका प्रयत्न किया है। हमें चाहिये कि हम मानवीय और तांत्रिक साधनोंके भेदको समझें और विभिन्न तांत्रिक प्रक्रियाओंकी गतिमें अितनी वृद्धि न करें कि मजदूर केवल स्वयं-चलित यंत्र बन जावे। चार्ली चेपलिनने अपने चलचित्र "माडर्न टाअिम्स' में अिस तथ्यको प्रभावकारी ढंगसे स्पष्ट किया था। यदि हम अिसे ध्यानमें रखें और अुच्चतम नैतिक मापदंड बनाये रखें तो कोअी कारण नहीं कि वैज्ञानिक प्रबन्धकी आधुनिक प्रणाली आरम्भ करनेसे औद्योगिक क्षमतामें आशातीत सुधार न हो।

अुद्योगके स्वास्थ्य और समाजके स्वास्थ्यमें कोअी भेद नहीं किया जा सकता और जो राष्ट्र अपने मानसिक तथा सुख-सम्बन्धी सभी साधनोंका विकास करेगा, वह विश्वकी औद्योगिक आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेमें सबसे अधिक समर्थ हो सकेगा। अिन सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि हमें सामान्य व्यक्तिके मनमें यह विश्वास अुत्पन्न कर देना चाहिये कि भौतिक अुत्पादनकी वृद्धिसे राष्ट्रीय आयमें वृद्धि होती है (जिसमेंसे स्वयं अुसे कुछ अंश मिलेगा) और अिस कारण यदि वह अपने काम करनेके तरीकेमें सुधार करे तो वह सामाजिक तथा राष्ट्रीय सेवा ही करेगा। सामान्य पुरुषों तथा स्त्रियोंके मनमें यह बात जमा देनेके लिये कि वे अपने देशकी आर्थिक अुन्नतिमें योग दान दे सकते हैं, सबसे अच्छा तरीका यह है कि अुनके दैनिक जीवनके क्रममें ही यह दिखला दिया जावे कि वे केवल अपने मालिकोंके लाभके लिये ही काम नहीं कर रहे हैं। अुन्हें यह अनुभव और विश्वास करा दिया जाना चाहिये कि कारखाने, रेलें, खानें, अित्यादि सामाजिक अर्थमें अुनकी ही हैं। हम अुत्पादनकी विधिमें कितनी ही वैज्ञानिक प्रगति क्यों न कर लें अुससे राष्ट्रको तब तक कोअी वास्तविक तथा स्थायी लाभ न होगा जबतक चारों ओर संतोष और कल्याणकी भावना न हो जो अिस विचारसे ही अुत्पन्न होगी कि हम सब सामान्य व्यक्तिको सुखी बनानेके संयुक्त प्रयासमें भाग ले रहे हैं।

गुजराती:

रंगभूमिने

: श्री चन्द्रसिंह बारोट :

रंग अमारी रंग-भूमि, हो
त्हारो जय जय कार!
गौरव अंकित अुत्सव त्हारो
अुजवीअे आ बार!
रंग अमारी रंग-भूमि, हो.....
मूर्तिमंत हे ज्ञान चेतना!
कला अमारी हृदय-वेदना!
सींच निरन्तर जनसमाजमां
अुन्नतिना संस्कार,
रंग अमारी रंगभूमि, हो...
रंगदेवतानी ओ राणी!
क्रान्ति, शान्ति प्रेरक शाणी!
महाशक्ति, कर नव चेतनमय
जनगणनो संसार,
रंग अमारी रंगभूमि हो...

(गुजराती संस्कृति)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुण्डुका सन्यास

: श्री रा. कृष्णमूर्ति "कल्कि" :

हमारे शुण्डुको आप जानते हैं कि नहीं ? 'हाँ' कहिये और स्वीकार कर लीजिये कि जानते हैं। 'नहीं' मत कहिये। अगर आप 'नहीं' कहेंगे तो शुण्डु आपको नहीं छोड़ेगा। हाँ, अभी मैं चेतावनी दिये देता हूँ कि अगर आप कहें कि मैं नहीं जानता तो आपकी पीठकी मरम्मत होने लग जायेगी फिर पछताअियेगा कि अुसने कहा, हमने नहीं माना !

पहले पहल जब मेरी पहली मुलाक़ात शुण्डुसे हुअी तब मैंने अिसी तरहका बहाना किया था। परंतु सहसा जब पीठपर जोरका तमाचा पड़ा और चौंककर मैंने पीछे फिरकर देखा तो शुण्डु गुमसुम बैठा था।

"क्यों, महाशय, अिस तरह क्या देख रहे हैं ? क्या आप अपने शुण्डुको पहचानते नहीं ?" पूछते हुअे अुसने मेरे दोनों कंधोंको पकड़कर अेक बार झकझोर दिया। यह बड़ी घटना अुस समय घटी, जब मैं स्कूलके शिक्षकोंकी अेक सभाकी आख़िरी क़तारमें बैठा बड़ी ही तत्परता और दिलचस्पीके साथ व्याख्यानकी बातोंपर कान दे रहा था।

"हाँ, पहचान नहीं पाता !" मैंने सहज स्वभावसे अुत्तर दिया।

"ओ हो ! यह बात है ! अरे रे !" शुण्डुने हँसते हुअे कहा, "अुस ज़मानेमें तुम जैसे थे, वैसे ही अब भी हो ! तुम्हारी शक्ल-सूरतमें या स्वभाव-गुणमें ज़रा भी फ़र्क नहीं आया !"

"महाशय, आप किस ज़मानेकी बात कह रहे हैं ?" मैंने पूछा।

"अरे, क्या तुम अितनी जल्दी भूल गये या बड़े आदमी बन गये ? चिदंबरम्में जब शिक्षा पा रहे थे, अुसी ज़मानेकी तो बात कह रहा हूँ।"

मैं तब तक चिदंबरम् गया ही नहीं था। परन्तु फिर भी हमारे अिन्कार करनेसे, कहीं हमारी पीठकी बुरी दशा हो जाय तो क्या हो, अिस डरसे मैंने स्वीकार कर लिया, "ओ हो अुस समयकी बात आप कह रहे हैं।"

"क्यों, कृष्णस्वामी ! तुमने क्या अिस शुण्डुको चकमा देनेकी सोची ? भाअी, अैसा कभी नहीं होनेका !" कहकर शुण्डुने मेरी पीठ पर दुबारा अेक अैसा तमाचा लगाया कि मेरे मुंहसे बलात् अेक हुंकार निकल पड़ा।

"मेरा नाम कृष्णस्वामी नहीं है ; नारायणस्वामी है।" मैंने कहा।

"शाबाश, बेटा शाबास ! अब आ गये राहपर, यों कहो।... मैंने तो केवल आज़माया था कि कहीं मेरे कृष्णस्वामी कहनेपर, 'हाँ, मेरा नाम कृष्णस्वामी ही है' कहकर मुझे धोखा तो नहीं दे जाओगे ? भाअी, नारायणस्वामी, क्या तुमने यह समझा था कि मैं तुम्हारा नाम नहीं जानता !"

सच पूछा जाय तो मेरा नाम नारायणस्वामी भी नहीं है। पर अुससे यह कहनेसे क्या लाभ हो सकता था ?

अैसी विचित्र प्रकृतिके बारेमें कुछ जानकारी हासिल कर लेना ज़रूरी है, अिस विचारसे मैंने पूछा, "क्यों, शुण्डु ! आजकल तुम क्या कर रहे हो ?"

"क्या कहूँ कि क्या कर रहा हूँ ? अब तो तुम्हारी पीठके पीछे बैठा बैठा स्कूलके शिक्षकोंकी दुख-गाथा सुन रहा हूँ। ये लोग अेक अरससे अपना दुखड़ा रो रहे हैं। अिससे किसे क्या फायदा हो सकता है ? यह अरण्य-रोदन कौन सुनेगा ? अिन लोगोंको चाहिये कि नयी दिल्ली तक जायें और राष्ट्रपति या प्रधान मंत्रीजीके सिरपर भूतकी तरह सवार हो जायें। तभी अिनका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रास्ता खुलेगा। ये तो 'अ, आ' पढ़ानेवाले निरे अध्यापक हैं। अिनको ये सारी बातें कहाँसे मालूम हो सकती हैं?"

"जरा धीमें स्वरमें बोलो न!" मैंने अुससे बड़ी बिनती की और कहा, "मैं अेक बात तुमसे पूछूँ तो कहीं नाराज तो नहीं हो जाओगे?"

"नाराज क्यों होअूँगा?"

"तब क्या तुम शिक्षक नहीं हो?"

"वाह भाअी, वाह! तुमने तो बड़ा अच्छा सवाल कर दिया! क्या तुम जानते नहीं कि मैं कौन हूँ? अगर जानते होते तो यह सवाल ही क्यों कर सकते? मैं तो डेपुटी कलक्टरका बेटा हूँ, डेपुटी कलक्टरका! अुस निगोड़ी परीक्षामें अेक अंक कम क्या मिला! अिस वजहसे मैं आअी. सी. अेस. में प्रवेश नहीं पा सका! अैसे आदमीसे तुम पूछते हो कि क्या तुम कहीं शिक्षकका काम तो नहीं करते? तुम्हारे जैसे अहमक जबतक अिस संसारमें रहते हैं, तब तक अिस संसारका निस्तार नहीं। हाँ, कह दिया कि निस्तार नहीं। समझे?" अितना कहकर शुण्डुने मेरी पीठपर अैसा जोरका घूँसा जमाया कि अुसकी बातोंका जोर मेरे दिलपर पड़े।

"समझ गया, भाअी, समझ गया!" मैं दर्दके मारे जोरसे चिल्ला अुठा।

अिस प्रकार मुझमें और शुण्डुमें परिचयका प्रारंभ हुआ। बाद अुसके, शुण्डु और मैं अप्रत्याशित जगहोंमें अप्रत्याशित ढंगसे मिलते और हम लोगोंकी दोस्ती दिन दूनी और रात चौगुनी बढ़ने लगी। शुण्डुके तमाचों और घूँसोंने हम दोनोंकी दोस्तीके पौधेको बढ़ानेमें पानीका काम किया।

अेक दिन शुण्डुसे मिला तो पूछा, "भाअी, अब क्या कर रहे हो?"

"हाँ, सवाल पूछना हो तो अिस तरह पूछना चाहिये। यही सवाल पूछनेका अच्छा ढंग है। हाँ, तुमने क्या पूछा? यही न कि अब मैं क्या कर रहा हूं? अिस संसारको सुशिक्षित करने तथा सुबुद्धि प्रदान करनेका अुपाय ढूंढ रहा हूं। यह संसार जो है, मैंने देख लिया कि बड़ा ही मूर्ख है। जिस आदमीके पास चार पैसा होता है, अुसीका यहाँ मान होता है। यह संसार अितना अहमक हो गया है कि पैसेवाला चाहे जो भी बकवास करे और जितना भी करे, अुसे मुंह बाये सुनता रहता है। अगर कोअी ग़रीब, चाहे वह जितना भी बुद्धिमान क्यों न हो, और कितनी ही अच्छी शिक्षा क्यों न दे, अुसकी बातोंकी ओर ध्यान ही नहीं देता। अगर देता भी है तो अेक कानसे सुनकर दूसरे कानसे निकाल देता है।"

"हाँ, दुनियाका रंग-ढंग ही अैसा है। क्या किया जाय?"— मैंने शुण्डुकी बातोंका अनुमोदन किया।

"लेकिन बेचारी दुनिया क्या कर सकती है? दुनियाकी शिकायत कर देने मात्रसे क्या होगा? जिस भगवानने अिस दुनियाकी सृष्टि की, सारा दोष अुसका है। अगर मैं भगवान होता तो क्या करता, मालूम है? हमारे झूठे मोटे सेठजी, अण्णा मलेरिया मुदलियार, अप्पण्णा अबक्कण्णा अय्यंगार, कृपणाजी दखलबाजी अय्यर, डबल निमोनिया डिलामिया, दिजोडिया डिमिक्कि लाल डिंगर लाल, भयानकदास मयानदास भयंकरलाल आदि सारेके सारे अुन बड़े-बड़े धनवानोंको बुलाकर अेक कतारमें खड़ा करता। फिर अुन लोगोंके कान मरोड़कर पूछता कि सच सच बताओ। तुम लोगोंके पास कितना धन है? अुन लोगोंके मुंहसे सच्चा सच्चा हाल निकलवाता। सत्यको छिपानेका कोअी प्रयत्न करे भी तो यहाँ कौन छोड़नेवाले हैं? अुनके ही मुखसे सत्य-वार्ता जाननेपर पूछूंगा कि तुम लोग अिन रुपयोंको किस प्रकार खर्च करना चाहते हो? बोलो, जल्दी। झटसे अुन लोगोंसे जवाब देते नहीं बनेगा। आँखें फाड़-फाड़कर वे लोग अेक दूसरेका मुंह देखेंगे। तब मैं कहूंगा कि तुम लोगोंको खर्च करनेका सलीका मालूम न हो तो यह देखो, अेक आदमी है। अिसी क्षण तुम लोग अपने धनसे आधा आधा बांटकर हमारे शुण्डुके हाथमें रख दो, तब दूसरा काम देखो। वे लोग मेरे कहे अनुसार अवश्य करेंगे। अगर नहीं करेंगे तो यहाँ कोअी बुद्ध नहीं है कि अुनको यों छोड़ दे। जब मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुन्हें अपनी अुंगलियोंपर नचाने लग जाअूंगा, तब झख मारकर रुपये गिनकर रख देंगे। 'टनाटन' करते हुअे अिस शुण्डुके चरणोंमें रौप्यवर्षा होने लग जायेगी।"—शुण्डुने अपने मनकी लालसा अुगल दी।

पर भगवान् शुण्डुकी अिच्छा पूरी करते दिखायी नहीं देते। अिसलिये मुझसे पांच रुपयेका अेक नोट तथा ट्राम-खर्चके लिये अेक चवन्नी अलग लेकर ही शुण्डुने मेरा पीछा छोड़ा।

* * *

अगली बार जब मैं शुण्डुसे मिला तो बोला, "पैसा ! छिः ! पैसा यहाँ किसको चाहिये ? यहाँ पैसेके लिये कोअी नहीं मर रहा है ! अगर हाथमें पैसे हों तो ले जाकर बाढ़में फेंक दो।"

अैसी बातें अुसके मुंहसे निकलते देखकर मैं भौचक्का-सा खड़ा रहा तो अुसने अपनी बातोंका सिलसिला आगे बढ़ाया और कहा, "हाय पैसा ! अिसी पैसेके कारण तो मनुष्य-समाजका पतन होता जा रहा है। पैसेवाले आदमी समाजको पतनोन्मुख करनेमें कोअी कसर अुठा नहीं रखते। अिसलिये मैंने पैसा पैदा करनेका विचार ही अपने मनसे निकाल दिया !"

"ओहो, यह बात है। तो आगे क्या करनेका विचार है ?" मैंने प्रश्न किया।

"मेरे आगेके प्रोग्रामकी बात ही पूछते हो न, मैंने निश्चय कर लिया है कि अबसे संसारका अुद्धार करूंगा तथा मानव-समाजको महोन्नत दशामें लाअूंगा। मेरे मनमें अिसका पूरा पूरा 'प्लान' है !"

"प्लान ? कैसा प्लान ?" मैंने पूछा।

"क्या पूछा ? कैसा ? अच्छा, सुनो, बताता हूँ। मैंने ठान लिया है कि मैं लेखक बन जाअूंगा। छपे हुअे अक्षरोंमें जितनी शक्ति है, अुतनी शक्ति और किसी चीज़में नहीं है। कोअी भी बात, चाहे वह कितनी ही बेढंगी और बे-मतलबकी क्यों न हो, अगर वह छप जाय तो अुसको अहमक आदमी सोलहों आना सच मान लेता है और अिसपर पूरा पूरा विश्वास कर लेता है। अिसलिये मैंने देखा कि अिस संसारका अुद्धार करना है तो लेखक बन जाना ही अुत्तमोत्तम अुपाय है। अिसीलिये मैं अिस निष्कर्षपर पहुँचा हूं।" शुण्डुने कहा।

मैंने कहा, "बहुत अच्छा : यही भले आदमीका काम है।"

"लेकिन डरो मत कि मैं कहीं तुमको भूल जाअूंगा। संसारका अुद्धार करके अुसे अुन्नतिके रास्तेपर लानेके बाद, मैं तुम्हारी भी खबर लूंगा।" यह कहकर शुण्डुने मुझे अभय प्रदान किया।

* * *

फिर जब शुण्डुको देखनेका मौका मिला तो मैंने अुससे दर्याफ्त किया, "लेखक बननेके प्रयत्नमें कहाँ तक सफल हुअे हो ?"

शुण्डुने, मेरा प्रश्न सुनना था कि अेक लंबी हाँकते हुअे अुत्तर दिया, "अरे, भाअी ! अिस संसारमें तुम जो चाहो, सो काम करो। पर मैं तो कहूँगा कि लेखक बननेके फेरमें न पड़ो। अगर कोअी काम करना ही चाहते हो तो गली-नाली साफ़ करो, कूड़ा-कचरा फेंको, होटल चलाओ। चाहो तो मन्त्रीका काम भी संभालो, पर भूले-भटके भी लेखक मत बनो। अगर लेखक बननेकी अिच्छा तुम्हारे मनमें लहरें मारती ही है तो कमसे कम तब तक मत बनो, जब तक आजकल के संपादक संपादक बने रहते हैं। ये संपादक संपादक नहीं, वरन् चोर हैं, पक्के चोर हैं, लफंगे हैं !"

'अरे, यह क्या ? अेकदम संपादकोंकी मिट्टी पलीद करना शुरू कर दिया !"

'और क्या; अपनी रचनाके साथ जो अेक दो आनेका डाक-टिकट भेजते हैं, अुसको भी ये लोग चुरा लेते हैं ! भेजी हुअी रचनाको वापस भेजने तककी शिष्टता तक नहीं करते ! अैसे संपादक अुचक्के-चोर नहीं हैं तो और क्या हैं ?"

"हाँ, भाअी, हाँ ! मैंने माना कि कुछ पत्रोंके संपादक अैसे होते ही हैं। परन्तु अिसके लिये सबको..."

मैं वाक्य पूरा भी नहीं कर पाया था कि शुण्डुने कहा, "ओहो, यह बात है ! क्या तुम अिससे साफ़-साफ़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बच जाना चाहते हो ? परन्तु तुम भी तो अुसी वर्गके हो। अैसी दशामें मैं तुमको कैसे अपवाद मान लूँ ?"

"हाँ, भाअी ! तुम्हारा कहना बजा है ! मुझे माफ़ करना !" मैंने कहा !

"माफ़ करूँ ? माफ़ कैसे करूँ और क्यों करूँ ? तुम लोग पत्रके संपादक जो हो बड़े बुरे हो। मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि बेरहम जल्लाद हो। जब तक लेखक जीवित है, तब तक अुसे भूखों मारोगे और वह भी तिल तिल करके मारोगे। फिर जब वह मर जाये तो अुसके लिये चंदा वसूल करोगे, चंदा वसूल करोगे और स्मारक चिन्ह भी बनाओगे !"

"हाँ ! कमसे कम अितना संतोष तो है कि . . ."

"संतोष ! कैसा संतोष ?" शुण्डु बरस पड़ा।

मैंने बात बदलनेके विचारसे पूछा, "अच्छा अब आगे क्या करनेका विचार है ?"

"अब मैंने कान पकड़ लिया कि आगेसे किसीके भरोसे किसी काममें नहीं पड़ूँगा। मैंने कल रातको साढे बारह बजे यह निश्चय कर लिया कि मैं स्वयं अेक परचा निकालूँगा !"

"यह तो बड़ी खुशीकी बात हुअी !"

"देखो, नारायणस्वामी ! अिस तरह ज़बानी खुशी या सहानुभूति दिखानेसे कोअी फ़ायदा नहीं। अगर अपनी खुशी दिखाना चाहते हो तो कार्यमें दिखाओ !"

"कार्यमें दिखाअूँ ? वह कैसे ?"

"अिस तरह कार्यमें दिखाओ कि अेक हज़ार रुपयेका चेक लिखकर शुण्डुके हाथमें दो। लेखककी लेखक, सम्पादककी सम्पादक अगर मदद नहीं करेंगे तो और कौन करेगा ?"

"मेरे लाख क़सम खानेपर कि मेरे पास हज़ार रुपये नहीं है, शुण्डुने कहा, "अेक शून्य [Zero] कम कर लो।" जब अुसके लिये भी मैंने अपनी असमर्थता प्रकट की तो शुण्डुने दूसरा भी शून्य बड़ी अुदारतासे कम कर लिया और दस रुपयेका अेक नोट लेकर ही मेरा पिंड छोड़ा।

अुसके बाद जब शुण्डुसे दुबारा मिलनेकी नौबत आयी तो मैंने पूछा, "क्यों, भाअी; अपना परचा निकालना शुरू कर दिया क्या ?"

शुण्डुने झटसे जवाब दिया, "अिन परचोंको ले जाकर बहते पानीमें फेंको। पत्रोंके समान संसारको अहित पहुँचानेवाली चीज़ शायद संसार भरमें कोअी है ही नहीं।"

"यह रहस्य तुमने कैसे जाना ?" मैंने शुण्डुसे सवाल दिया।

"क्या यह भी कोअी बड़ी बात है कि अिसके लिये नाहक़ माथा-पच्ची की जाये ? रोज़-ब-रोज़ हम अख़बार पढ़ते हैं। कहो तो देखूं कि किस दिन अख़बारमें हज़ार झूठसे कम छपे हैं ? सच-सच बताना, अपनी अन्तरात्मासे पूछकर !" शुण्डुने अन्तरात्माकी दुहाअी ली।

अधिक हमारा भण्डा-फोड़ मत करो। हाँ, यह कहो कि आजकल तुम क्या कर रहे हो ?— मेरा अितना पूछना था कि शुण्डुने अेक छपा कार्ड अपनी जेबमेंसे निकालकर मेरे हाथमें रख दिया। अुसमें लिखा था, "**मिस्टर शुण्डु, स्टॉक अेण्ड शेयर ब्रोकर।**"

नाकपर अंगुली रखकर मैंने अपना आश्चर्य प्रकट किया।

"नारायणस्वामी, सुनो, मैं सुनाता हूं। आखिर पैसा पैदा करनेका रास्ता निकाल ही लिया मैंने। रुपया आये तो अिस पेशेमें जैसा आयगा, वैसा और किसी भी पेशेमें नहीं आयगा। तुम्हारे डालमिया, डीलमिया, बिड़ला, गिडला, टाटा-बाटा वगैरह कैसे करोड़पति हुअे, अिसका राज तुम जानते हो ? सबने अिसी शेयर-मार्केटकी शरण ली थी। तभी तो वे अितने बड़े धनी बन सके। किन्तु अेक राज बताता हूं, सुनो। शेयर-मार्केटकी अिस दुनियामें जितने बड़े बेवकूफ़ हैं, अुतने बड़े बेवकूफ़ सारी दुनियामें छाननेपर भी नहीं मिलेंगे। जब कोअी चीज खरीदना हो, तब जाकर जल्दी जल्दी बेच डालेंगे। जब बिक्रीका बाजार गरम हो तब अपनी तिजोरीके तालेपर मुहर लगा देंगे। ये लोग स्वयं भी नहीं जानेंगे और दूसरोंकी बातपर ध्यान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं देंगे। अुनके दिमागमें कभी यह विचार नहीं अुठता कि हमारा शुण्डु हमारे लिये अपना सारा का सारा काम ज्योंका त्यों छोड़कर, दौड़-धूप कर रहा है अुसकी बात सुनें तो हमारी भलाअी ही भलाअी है। अच्छा, अब जाने दो, अुन बातोंको ! कहो कि तुम्हारी क्या राय है ? अब शेयर मार्केटमें पैसा पैदा करनेका अच्छा खासा मौका है। मैसूरका कोयला है न ? वह अब, सच मानो, कि सोना है, सोना ! आज अुसका दर तेअीस रुपया है और आजसे दस दिनके अन्दर अन्दर अुसका दर अुन्तीस तक चढ़ न जाये तो मुझसे पूछना। चाहो तो तुम अिसमें अभी अेक हज़ार शेयर ले सकते हो। दस ही दिनोंमें तुम अपने ही हाथों टनाटन करके छः हज़ार रुपये गिन सकते हो। और कुर्गकी 'काफी' है न, वह भी 'अे वन' है। अुसमें भी अच्छे मुनाफेकी संभावना है।"

मैं बीचमें पूछ बैठा, "अेक बीस" का ❀ क्या दाम है ?"

"अजी, महाशय ! मैं निरी काफीके बीजकी बात नहीं बता रहा हूँ। मैं तो कुर्गकी गोल-काफी कंपनीके शेयरकी बात बता रहा हूँ। अगर तुमको अुसमें कोअी दिलचस्पी न हो तो तिरुवितांकूर (ट्रावनकोर) की मूँगफलीकी खली है ही। वह केवल खली नहीं, वरन् सोनेकी, सच मानो, तो सोनेकी अींट है। अुसमें चाहो तो तुम दो हज़ार शेयर ले सकते हो। कुछ ही दिनोंके अंदर वह मूँगफलीकी खली सोना अुगलने लगेगी।"

मिस्टर शुण्डुके मुंहसे अुस दिन मैंने लगभग लाख रुपये कमा लिये थे। 'बस, आजके लिये अितनी कमाअी काफी है !' कहकर किसी तरह शुण्डुको बिदा किया।

* * *

अेक महीना बीत गया। अुस दिन शुण्डु मिला तो तपाकसे हाथ मिलाते हुअे कहने लगा, "नारायण-स्वामी ! परमात्माको धन्यवाद दो कि तुम बाल-बाल बच गये ! मेरी बातें अनसुनी करके तुमने कहीं तिरुवितांकूरकी खली, मैसूरका कोयला, कोचीनकी कॉफी खरीद ली होती तो अेकदम अधःपातालमें धँस गये होते। अुसके लिये तुम मुझे धन्यवाद देने लगो, अिसकी कोअी ज़रूरत नहीं है। क्योंकि हम दोनों मित्रोंमें यह अर्थहीन शिष्टाचार क्यों ?"

"अच्छा !" मैंने पूछा, "अब तुम क्या कर रहे हो ?"

"क्या तुमको याद है, मैं तुमसे बार-बार अेक प्रश्न किया करता था कि यह दुनिया अिस तरह क्यों अपनी बुद्धि खोकर अहमक़ बनी फिरती है ? आख़िर अब जाकर किसी तरह अुस रहस्यका पता लग ही गया !"

"वह रहस्य कौन सा है ?"

"दुनियामें अच्छी शिक्षा नहीं। जो शिक्षा है, वह भी बहुत खराब है। वह अितनी खराब है कि कुछ कहते नहीं बनता। अिसलिये पहले हमें अपनी धारा-सभाके सदस्योंको शिक्षित बनाना है। अुसके बाद पाठशालाके शिक्षकोंको शिक्षित बनाना चाहिये। अुसके अनन्तर, बच्चोंकी सुशिक्षाकी सुव्यवस्था करनी चाहिये। अिस बातपर तुम्हारी क्या राय है ?" शुण्डुने मुझसे पूछा।

"यह कार्य अवश्य तुरन्त प्रारंभ कर देना चाहिये !" मैंने अनुमोदन किया।

"तब तो पहले धारासभाके सदस्योंकी शिक्षा-दीक्षाकी व्यवस्था करनेके विचारसे अेक मदरसा खोल लूंगा। तुमको अपनी शक्तिभर अुसकी सहायता करनी ही चाहिये।" यह कहकर शुण्डुने चंदेकी अेक किताब निकालकर मेरे हाथमें थमा दी। शुण्डु अिस बार चला जाये तो वापस नहीं आयेगा, अिस हिम्मतपर मैंने अपनी शक्तिके अनुसार चंदा लिख दिया तथा चंदेका रुपया हाथोंहाथ देकर अुसको बिदा भी कर दिया।

* * *

परन्तु मेरी आशा निराशा बन गयी। शुण्डु जल्दी ही वापस आया और बोला, "वाहरे यार ! तुमने कितने दिनोंका यह बदला चुकाया-कि यह काम मुझे सौंपा ! अिसके बदले, काश, तुमने कहा होता कि

❀ बीस (बीसा) दक्षिणका डेढ़ सेर। —सं.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुपारीका रस निकालकर बादामकी खीर बनाओ। भाओ, बाज़ आया, मैं अिस कामसे !"

"क्यों, क्या बात है ? हमारी धारासभाके सदस्योंको सुशिक्षित नहीं कर सके क्या ?" मैंने पूछा।

"वे पाठशाला आयें, तब न हम अुन्हें पढ़ा सकते हैं। कहते हैं कि हमें पढ़ाओ-वढ़ाओ कुछ नहीं चाहिये। हममें अब जितना ज्ञान है, वह यथेष्ट है। मैं पूछता हूँ कि अैसे आदमियोंके हाथ हम अपना राज्य सौंप दें तो अुसका अुद्धार कहाँसे हो सकता है ?"

"तब तो यों कहो कि संसारके निस्तारका काम जो है वह बड़ा 'होपलेस' है !"

"वाह, भाओ, वाह ! यों अिस संसारको कैसे छोड़ा जाये ? अिसके सिरपर अेक जोरका टकोरा मारकर अिसे ठीक रास्तेपर लाना चाहिये। तभी अिनका अुद्धार हो सकता है। संसारको सुशिक्षित करनेका अेक अच्छा अुपाय मैंने अभी अभी खोज निकाला है। मुझे तो बड़ा आश्चर्य होता है कि अितने दिनतक यह अुपाय मेरे मनमें आया क्यों नहीं ? हाँ, कभी कभी अैसा हो जाता है न कि हम दूर पर्वतकी चोटीपरके दीपकको देखते हैं। पर पैरोंतलेके सूरजको नहीं देख पाते हैं ! तुमने सिनेमा टॉकीका नाम सुना है न ?"

"हाँ, सुना है !"

"अगर यह सिनेमा मेरे हाथमें आ जाये तो बस, अुसकी सहायतासे हमारे विश्वविद्यालयके वाअिस-चान्सलरों तथा पाठ्य-पुस्तक-समितिके सदस्योंको बड़ी ही आसानीसे पढ़ाया जा सकता है। लेकिन आजकल यह सिनेमा-संसार जितना बिगड़ा हुआ है अुतना अन्य कोअी संसार नहीं बिगड़ा है। यह सिनेमा-संसार अितना अधःपातालके अन्दर धँसकर, सर्वनाशके गहरे गड्ढेमें गड़ गया है कि कुछ मत पूछो। पहले दरजेके निरक्षर कुली लोग फ़िल्मके डायरेक्टर बनकर आ गये हैं। अैसी हालतमें सिनेमाके कथा-लेखकोंके बारेमें क्या कहा जाये ? अभिनेता बनकर जो आते हैं वे बहुत, बहुत बुरे हैं कि कितने ही 'बहुत' लगाये जायें थोड़े हैं। सबको अेकदम झाड़ू देकर बंगालकी खाड़ीमें फेंक देना चाहिये और नये सिरेसे यह पेशा शुरू करना चाहिये।"

"अैसा ही कर दिया जाये। मुझे कोअी आपत्ति नहीं !"

"लेकिन अुसके लिये तुम्हारी कुछ मदद भी जरूरी है !"

"कैसी मदद चाहते हो ? कहो !"

"अेक अैसे पूँजीपतिको पकड़ लाना तुम्हारे जिम्मे है जो आँखें मूँदकर दस लाख रुपये अिस पेशेमें लगा दे। मेरे हाथमें रुपये देनेके बाद अुस आदमीको मेरे सामने कभी 'क्या, क्यों, कितना, कैसे' आदि प्रश्न-वाचक शब्द ही अपनी ज़बानमें नहीं लाना चाहिये। मुझपर अुनको पूरा पूरा विश्वास रहना चाहिय। तब देखना कि सिनेमाका यह संसार सिरसे पैरतक अेकदम पलट जाता है कि नहीं ?"

मैंने अुसे आश्वासन दिया, "अच्छा, शुण्डु ! मैं अवश्य प्रयत्न कर देखूँगा !"

* * *

अगली बार जब मैं मिस्टर शुण्डुसे मिला तब अुनकी शकल-सूरतही अेकदम बदल गयी थी।

मैंने पूछा कि आजकल क्या कर रहे हो तो जवाब मिला, "टॉकी जगत्में मैंने पदार्पण कर लिया है। और कुछ दिन सब्र करो।"

मैंने प्रत्युत्तर दिया, "कुछ ही दिन क्यों ? तुम जितने दिन कहोगे, अुतने दिनोंके लिये, अगर आवश्यकता हो तो अुससे भी अधिक दिनके लिये मैं सब्र करनेको तैयार हूँ।"

"अधिक दिनोंकी आवश्यकता नहीं है। कुछ ही दिन काफी हैं। फ़िलहाल अेक 'तमिल टॉकी' के डायरेक्टरका सेक्रेटरी बन गया हूँ। टॉकीका पहला पाठ अर्थात् वर्णमाला तक जो नहीं जानते। वे तस्वीर बनाकर अुसकी कैसी मिट्टी पलीद कर रहे हैं !—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिसका बड़े ही गोरसे "आबज़र्व" याने निरीक्षण कर रहा हूं। लेकिन अभी तुमको सूचना दिये देता हूं कि अगले साल अिसी समय सिनेमा संसारमें अेक अुथल-पुथल मच जानेवाली है, जिसको देखकर तुम दंग रह जाओगे। अिसलिये अभीसे अुसकी प्रतीक्षा करो। कहीं ठीक अुस समय सो न जाना!" 'ठाह' कहते हुअे शुण्डुने मेरी पीठपर अेक अैसा घूंसा जमाया मानों मैं सो गया था और शुण्डुने अपने घूंसेसे मुझे जाग्रतकर सावधान कर दिया था।

अुसके आदेशानुसार मैं आँखोंमें झपकी तक लाये बिना, सिनेमा-संसारकी क्रान्तिकी राह देख रहा था। लेकिन कुछ समय तक कुछ नहीं हुआ। अिसलिये मेरे मनमें यह शक पैदा हुआ कि शायद अुपदेश देकर शुण्डु ही कहीं सो न गया हो।

दो वर्षोंके बाद अचानक अेक दिन शुण्डु मेरे सामने प्रकट हुआ जिसकी वजहसे मेरे कंधों और पीठको दुस्सह दुःख भोगना पड़ा।

"जब म तुमसे आखिरी बार मिला था, तब क्या कहा था?" शुण्डुने प्रश्न किया।

"कहा था कि सोओ मत। अब नींद लानेके लिये दवाका सेवन करता हूं तो भी निगोड़ी नींद पास तक नहीं फटकती। क्या करूँ?" मैंने शुण्डुसे सवाल किया।

"कहा था न कि देखते रहो कि सिनेमाके संसारमें अेक बड़ी अुथल-पुथल मचनेवाली है। अुसके होनेमें अब अधिक विलंब नहीं।"

"शाबाश!"

"बस! शाबाश ही कहा? तुम्हारे जैसे सुस्त और अुत्साहहीन आदमीको मैंने आज तक अपने जीवन हीमें नहीं देखा। मैं तो कह रहा हूं कि अैसी अनहोनी बात होनेवाली है जो अिस दुनियामें कभी नहीं हुअी है और कभी होगी भी नहीं। यह सुनकर तुम केवल शाबाश कहते हो!"

"तब और क्या कहूं?"

"मुंहसे कुछ न कहो। अुठकर मदमस्त होकर झूमो, नाचो, अुछलो, कूदो।"

"अच्छा, अैसा ही करूंगा। बोलो, सिनेमा-संसारका आंदोलन कैसा चल रहा है?"

"आधा हो गया ही समझो। कहानी तैयार और सीनोरियो भी पूरी हो गयी। संवाद भी सत्तर फी सदी तैयार हो गया है। क्या कुछ सुनोगे?"

"प्रिये! प्राण-प्रिये मेरी! कालेसे काले बादल भी तुम्हारे जामुनी रंगके चिबुकोंको देखकर शरमसे गड़ जायेंगे। अुन चिबुकोंसे होकर अुफनती सुन्दरता बाढ़की तरह प्रवाहित होगी। अुस सौंदर्य-बाढ़की गहराअीमें, गहराअीमें, गहराअीमें....."

"क्यों, शुण्डु! तुम्हारी बोली अिस तरह कबसे तोतली बनी?" मैंने पूछा।

"क्या कहा?" शुण्डुने यह सवाल अैसा किया मानों वह अेक दूसरी ही दुनियासे अिस दुनियाको आ रहा हो! हाँ, वह सचमुच फिल्मी दुनियाहीमें विचरण कर रहा था न?

"गहराअीमें, गहराअी, गहराअीमें.....टूटे ग्रामोफोनकी तरह दुहराये जा रहे थे न? अिसलिये मैंने सोचा कि शायद तुम्हारी बोली तोतली तो नहीं बन गयी?"

"मुझे अच्छी तरह, बहुत अच्छी तरह मालूम है कि तुमसे ये सारी बातें कहनेसे कोअी फायदा नहीं है। फिर भी मैं कैसा बड़ा मूर्ख हूँ कि तुमसे ये सारी बातें कहने चला। मेरी अक्लको फटे जूतोंसे मारना चाहिये। तभी अक्ल ठिकाने आयेगी! अरेरे! अितनी देर हो गयी कि पाँच बज गये। लुल्लू बहुत देरसे मेरी प्रतीक्षा करती होगी। अिसलिये मुझे जल्दी जाना है!"

"अभी अभी तुमने किसका नाम लिया? लुल्लू! अरे, वह लुल्लू कौन है?"

"हाय रे भगवान्! क्या तुम अितना भी नहीं जानते कि लुल्लू कौन है? अगले साल अिन्हीं दिनोंमें देखोगे कि लुल्लूका नाम जगत्प्रसिद्ध हो रहा है। जगत याने सिनेमा जगत्की ही बात कह रहा हूँ। चाहे तुम बड़े बहरे ही क्यों न हो जाओ, तो भी तुम्हारे कानोंमें अुसका नाम और यश पड़ेगा ही।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अच्छा ! यह कहो कि वह लुल्लू कौन है ?"

"सिने-जगत्का आधा आंदोलन मैंने पूरा कर दिया है। बाकी आधा लल्लो पूरा करेगी। अुसीको प्रधान भूमिकामें मानकर मैंने कहानी और सीनोरियो लिखी है। और चार पाँच महीने जागरूक बने रहो। फिर देखना कि क्या क्या करामातें होती हैं !"—अितना कहकर शुण्डु वहाँसे खिसक गया।

मेरी पीठकी मरम्मत किये बिना सब कुछ भूलकर, अपना आपा तक भूलकर शुण्डुका वहाँसे चला जाना मुझे असीम, असीम, असीम, अरे शुण्डु, असीम असीम आश्चर्यमें डाल रहा था।

अुसके बाद शुण्डु मुझसे अनेकों दफे मिल चुका है और जब जब मुझे मिला है, तब तब लल्लोका नाम स्मरण करके मेरे प्राण भी खा चुका है। मैं अितना तंग आ गया कि मुझे अुस समय बहरा होना तक स्वीकार था। पीछे जाना कि लल्लोका पूरा असली नाम लीला मनोहरी है। जब 'सुब्रह्मण्यम्' नाम ही अपना रंग रूप बदलकर शुण्डु हो गया है, तब लीला मनोहरीका 'लल्लो' नाम बननेमें आश्चर्य ही क्या ?

बादको यह भी विदित हुआ कि लल्लो और अुसकी माँ अनाथ हैं। फिल्मोंमें छोटी-छोटी भूमिकाओंमें भाग लेती हैं तथा सामूहिक नृत्य आदिमें भाग लेकर किसी तरह अपना जीवन यापन करती हैं।

अुसी लल्लोपर शुण्डुने अपना दिल न्योछावर कर दिया था। अुसने केवल अपना दिल न्योछावर नहीं किया था, बल्कि अपने दिलमें हवाका यह किला भी बाँध रखा था कि अुसे अेक अैसी प्रधान अभिनेत्री बना दें कि दुनिया अुसकी अैसी तारीफ़का पुल बाँधने लग जाये, तारीफ़का पुल बाँधने लग जाये कि अरे, चट ! यहाँ भी वही शुण्डु आ गया।

चूँकि मैं शुण्डुके स्वभावोंसे भली भांति परिचित था, अिसलिये लल्लो और अुसकी माँके प्रति मेरे हृदयमें बेहद करुणा अुत्पन्न हो आयी। मैं डर रहा था कि शुण्डुकी बातोंमें आकर कहीं वे धोखा न खा जायें और अपना जीवन नष्ट कर न लें तो क्या हो ! अेक दिन मेरे मनमें यहाँ तक विचार अुठा कि अुनसे जाकर मिलें और शुण्डुके स्वभावसे अुन्हें अवगत करा दें।

भगवानकी कृपा कहो कि मुझे चेतावनी देनेके लिये अुनके पास जानेकी जरूरत ही नहीं पड़ी।

अेक दिन शुण्डु मेरे पास बेतहाशा भागा आया। अुसके बाल बिखरे थे और हवामें झूल रहे थे। अुसके मुँहपर भी हवाअियाँ अुड़ रही थीं। बोला, "भाअी, यह दुनिया जो है, बड़ी चांडालिन, है बडी कपटी है, बड़ी फरेबकी है, बड़ी बेअीमान है, बड़ी जालिम है, बड़ी धोखेबाज है। बड़ी ठग है और बड़ी सत्यानाशी भी है, अिस फरेब भरी दुनियामें अेक क्षणके लिये भी मुझसे नहीं रहा जा सकता। मैंने निश्चय कर लिया है कि अेकदम अिसे छोड़कर हाथ धो बैठूं। तुम्हारी क्या राय है ?"

मैंने कहा, "बहुत ठीक !"

"अेक बार कहना काफी नहीं है। सौ बार कहो कि ठीक है !"

"अच्छा ! सौ बार कहे देता हूं। चाहो तो गिन लो ! ठीक है, ठीक है, ठीक है···!"

"बस करो, अिस बक झकको ! अिस फरेबी दुनियासे मुंह मोड़कर, मैंने निश्चय कर लिया है कि सन्यास ग्रहण कर लूं। चाहे कोअी कितना ही क्यों न रोके, मैं रुकूँगा नहीं !" शुण्डुने कहा।

"अरेरे ! तब लल्लोकी क्या गति होगी ?" मैंने चिन्तित भावसे पूछा।

"लल्लो ! लल्लो ! लल्लो ! बड़ी आयी लल्लो ! अुसका नाम स्मरण क्यों करते हो ? भअी ! अुसीके कारण तो मुझे यह सन्यास लेना पड़ रहा है। अगर अुसने धोखा नहीं दिया होता तो मैं अपने मनको सन्यासके लिये स्थान ही क्यों देता ? सारे अनर्थकी जड़ तो वही तुम्हारी लल्लो है !"

थोड़ा थोड़ा करके अुससे पूछनेपर शुण्डुकी सारी विरक्तिका कारण मुझे मालूम हो गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लल्लोको ध्यानमें रखकर, लल्लोके वास्ते शुण्डुने कहानी संवाद आदि जो लिखे थे, अुन्हें वह अेक टॉकी कंपनीके मालिकके पास ले गया और बोला, "मेरे पास चित्र बनाने लायक अेक दिलचस्प कहानी है, जो अपने ढंगकी अलग चीज है। अगर आप अुसका चित्र बनवाना चाहते हैं तो मेरी दो शर्तें आपको माननी पड़ेंगी। अेक शर्त यह है कि मुझ ही अुक्त चित्रका डायरेक्टर बनाना होगा और दूसरी यह है कि मेरी लल्लोहीको प्रधान नायिकाकी भूमिकामें लेना होगा। जब अिस संबन्धमें बातें हुअीं तो अुस सिलसिलेमें लल्लोकी मुलाक़ात टॉकी कंपनीके मालिकसे होना अनिवार्य हो गया था। थोड़े दिन फिल्म लेनेकी बात जारी रही तो लल्लो और मालिककी मुलाक़ातका सिलसिला भी जारी रहा। फलस्वरूप टाकी कंपनीके मालिक लल्लोको प्रधान-नायिकाकी भूमिकामें लेनेके बजाय, अपनी प्रेयसी नायिकाके रूपमें स्वीकार करनेको तैयार हो गये। लल्लो और मालिकका विवाह तय भी हो गया। अैसी हालतमें शुण्डुको संसारसे विरक्त होकर सन्यास ग्रहण करनेकी अिच्छा होना अेक तरहसे स्वाभाविक ही है न ?

लेकिन मैंने सोचा कि शुण्डुमें वह विरक्ति कहाँ कि संसारको छोड़कर सन्यास ग्रहण कर ले। चार ही पाँच दिनोंमें लल्लोको भूल जायेगा और किसी अुल्लूको पकड़ लेगा तथा पिछली सारी बातें भूलकर अुसके साथ रंग-रेलियाँ करना शुरू कर देगा। यही बात मैंने अुससे सुनायी भी। शुण्डुने आँखें लाल-पीली करके मुझे अेक बार देखा और वहाँसे चला गया।

* * *

अेक महीनेके बाद शुण्डुसे मुझे अेक पत्र मिला। अुसमें अुसने लिखा था -- अुस दिन तुमको मेरी बातपर विश्वास नहीं हुआ न ? अमुक दिन अमुक समयपर अमुक स्थानपर मिलो तो मेरी बातकी सच्चाअीका पता लगेगा।

मैं यह देखनेके विचारसे कि वह क्या करता है, फलानी जगहको ठीक समयपर पहुंच गया।

शुण्डु अपने खूबसूरत बालोंका खूब मुंडन करके गेरुआ वस्त्र पहने, हाथमें कमण्डल लिये खड़ा था।

"अरे ! यह क्या ? क्या सचमुच तुमने अपनी बातको सच्चा साबित कर लिया ?"--मेरे मुंहसे बलात् यह प्रश्न फूट पड़ा।

अितनेमें, "सायलेन्स ! चुप रहो !" की जोरकी आवाज़ आयी ! अुसीके साथ "जाओ हट जाओ जल्दी !" करके कअी दिशाओंसे कअी आवाजें आयीं।

कोअी दौड़ा हुआ आया और मुझे जल्दी-जल्दी खींचकर दूर ले गया।

"शूट !" फिर वही जोरकी आवाज़ आयी।

यह जाननेपर कि लल्लो द्वारा अिन्कार किये जानेपर शुण्डु जीवनसे विरक्त हो गया और 'माया लोक' नामक चित्रमें कपटी सन्यासीका भेषज धारण कर अभिनय कर रहा है, मेरे मनको शान्ति हुअी।

मेरी तो यही हार्दिक अिच्छा रही है कि चाहे जिस किसी रास्तेसे भी हो, शुण्डु चार पैसा खुद कमाना शुरू कर दे और अपना निर्वाह आप कर ले तो ठीक है।

हाँ, ठीक है; सौ बार ठीक है।

(अनुवादक : श्री रा० वीळिनाथन)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असीम नर्तन !

: श्री 'लहरी' :

यह तुम्हारी थाप है।
नृत्य-बन्दी नित्य रसके रासकी जो माप है।
वायुकी निर्बन्ध गति-सा,
आदि-विस्मृत, शेषहीना गूँजती अनसुनी श्रुति-सा,
अेक अणुसे अेक कणमें,
गत, अनागत, सद्य क्षणमें,
अनगिनत भर भंगिमाअें, सत्य शिव आलाप है।
यह तुम्हारी थाप है।

वेणु-वीणा पंगुस्वर हो--
चुप गयी सब तंत्रियाँ, अुस छमकमें क्षणभर मुखर हो,
मौनमें झर मौन आता,
बूँदसे सागर नहाता,
अुस सरस पदतल परसकी अवनि चंचल छाप है।
यह तुम्हारी थाप है।

गगनमें ध्वनि मुक्ति पाले,
अमर स्पन्दन, कीर अपना, ध्यानमें अुसके चुपाले,
मूर्त सब मिट-सा चला तब
वेग भावोंमें ढ़ला जब,
झूमता वातास अविकल, चल-चरणकी चाप है।
यह तुम्हारी थाप है।

ज़्वार सीमासे घिरा है,
सिन्धुका आह्लाद है वह, मेघ बन, जो नभ तिरा है।
पार अिसके जा चुका जो
समय पथ जिसमें गया खो,
गति बना, संसृति बना वह नृत्यमय अुत्ताप है।
यह तुम्हारी थाप है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कामरेड–'दादा'

: प्रो. रंजन :

आज सब कुछ बदल गया है।* जेलकी कहानी, सीकचोंकी झंकार, और आज़ादीके तराने ! असमर्थता और विवशताकी गठरी सरपर रख पराधीनता भाग चुकी है। गुलामीकी अुस राखके भीतरसे अेक नये देशके दर्शन हो रहे हैं, अेक नयी आवाज सुनायी दे रही है और तभी अिस सरंजामका कोअी तार टूटा-सा लगता है। अिस सुखद संगीतके भीतरसे अेक करुण स्वर अुठकर मनको कचोट अुठता है। अुनके शब्द सारे अस्तित्वको झकझोर देते हैं— "क्या हम भी स्वराज्य-मन्दिरकी प्रतिष्ठामें अिस शरीरसे भाग ले सकेंगे ?" और आज वे सैकड़ों शहीद हमारे बीचमें नहीं हैं जिन्होंने जीवन भर आज़ादीकी अिस शमाको अपने खूनकी आहुतिसे जलते रखा ! और तब, आज जो नहीं हैं अुनकी प्राणमय पुण्यस्मृतिके सिवाय अपने निकट कुछ नहीं पाता। स्मृतिके अुन बिखरे गुरियोंको जब मालामें पिरोकर सामने रखता हूं तो 'दादाजी' सुमेरुके समान अुसमें गुथे नजर आते हैं। आज कितने लोग अुनकी याद करते होंगे। युक्तप्रान्तके कितने नेताओं और मंत्रियोंने अुनके चरणोंमें बैठकर राजनीति सीखी। अेक युग था जब 'बन्दी-जीवन' के अेक महान् लेखकके रूपमें वे युवा-राष्ट्रके प्राणोंमें समा गये थे। अुत्तर-प्रदेशका तो प्रत्येक नौजवान अुनसे प्रेरणा और आदर्श प्राप्त करता था। बंगाली होते हुअे भी वे यू. पी. के हो गये थे। २० वीं शतीके प्रथम चरणमें स्वाधीनता, संघर्ष और अुत्सर्गके वे प्रतीक बन गये थे। काल और स्थानका कितना विशाल अंश अुस महासागरसे स्फूर्ति और आदेश ग्रहण करता था और सागरकी अिस गंभीरतामें छिपी जिस सहज स्निग्धताके दर्शन किसीने अेक बार भी कर पाये हैं, वह चाह कर भी अुन्हें भूल नहीं सका है। वे शहीद ! अुनके वे युग-गुरु अब हमारे बीच नहीं हैं। बन्धन मुक्त माँ भारती काश अेक बार अुन्हें अपनी गोदमें लेकर स्वतंत्रताका महान् पर्व मनाती तो अुसका मातृत्व सफल हो जाता।

भावना और प्रेम समुद्रके अिस तटपर खड़े होकर मैंने कितनी बार अुन्हें समझना चाहा, पर समझ न सका। स्थूल दृष्टिसे भी अुन्हें कभी तौल न सका। वे स्वयं पुंजीभूत विरोधाभास थे। अति कठोर और अति कोमल दोनों तत्व अुनमें मिलकर अेक हो गये थे। बहुतसे लोग अुन्हें हिंसक मानते हैं। अंग्रेजोंने अुन्हें भयंकर खूनीकी अुपाधि दी थी। और तब मुझे लेनिनके वे शब्द याद आते हैं। अेक बार वे कुछ बच्चोंके बीचसे गुजर रहे थे, बच्चे अुन्हें देखकर सहमसे गये। अुन बच्चोंको गोदमें अुठाते हुअे लेनिनने कहा था, "तुम सब मुझे भयंकर खूनी और हिंसक समझते हो– तुम्हें क्या पता, अपने देशके अिन अर्ध विकसित बच्चोंको सदा हँसाते रखनेके लिये ही मुझे यह खूनी नाटक करना पड़ा है।" यही बात बिलकुल दादापर लागू होती है।

वह दिन अच्छी तरह याद है जब नैनी सेन्ट्रल जेल (यू. पी. की अुन दिनोंकी अति बदनाम और सख्त जेल) से मैंने पहली बार अुस दीवानेके दर्शन किये थे। तब तक अुनका नाम सुना था। अुनके विषयमें पढ़ा था पर अुस दिन ममता और विस्फोटकी अुस मूर्तिने मेरे सिरपर हाथ फेरते हुअे बड़े भाअीके स्वरमें आश्वस्त किया और किसी बातकी चिन्ता न करनेको कहा तो मैंने अुस नेताके भीतर अेक सुहृद साथीके दर्शन भी किये और तबके वे दिन आज ज्यों-के-त्यों याद हैं। अुनके साथ बीते दिनोंकी कहानीका तो अेक अेक शब्द आज भी बोल रहा है। नैनी जेलमें

---

*देशके प्रसिद्ध क्रान्तिकारी नेता श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूख-हड़तालके सिलसिलेमें जेल-अधिकारियोंने अुन्हें हमलोगोंके पास समझानेको भेजा था। और अन्य शर्तोंके साथ हमारी अेक शर्त यह भी थी कि कोठरियोंसे हटाकर हमें 'दादा' के साथ 'सियासत' (नैनी जेलका अेक भाग जिसमें अुन दिनों दादा रहा करते थे) में रखा जाय। अुस समय अिस जेलमें मैं केवल ६ माहका बोझा लेकर आया था और वे तब अुस जेलमें अपनी २७ वर्षकी सज़ाकी तीसरी सीढ़ी चढ़ रहे थे। मेरे वहाँ पहुंचते ही दादाने अपनी भुजाओंमें अैसे जकड़ लिया मानो हम युग-युगसे परिचित हों। जेलमें न मिल सकनेपर भी परिचय प्राप्त करनेके सब साधन मौजूद रहते हैं। यही साधन स्थूल मिलनके अभावमें भी परिचयकी अिब्तदाको घनिष्ठतामें बदल देते हैं। क्या था यह सब? पहिचाने, बिना पहिचाने हम सफीरोंका अेक विशाल परिवार बन गया था। अुसमें परिचय और ममत्वको रक्त और परिवारकी तराजूपर तब नहीं तोला जाता था और न अिन्सानियत और मित्रताके लिये समान पार्टीका लेबिल जरूरी था। मुझे अन्दर पहुँचकर अपनी सारी व्यवस्था अुनके हाथमें सौंप देनी पड़ी थी। हमें तो अैसा लगा जैसे बिछुड़े परिवारके सदस्य बड़े दिनोंसे अेक दूसरेसे मिल रहे हों।

अिसके बाद जितने दिनतक 'दादा' को नजदीकसे देखनेका सौभाग्य मिला अुनके व्यक्तित्वका अेक नया परत खुलता रहा और बढ़ते दिनोंके साथ-साथ वे अुज्ज्वलसे अुज्ज्वलतर होते गये। सोनेके घंटोंको छोड़कर हम लोगोंके सब काम प्रायः अेक साथ बैठकर ही होते थे। कोअी अैसा विषय न था जिसपर चर्चा न छिड़ती हो और दो अेक महीनेके भीतर तो हमारी सियासत राजनैतिक चर्चाका केन्द्र बन चली। श्री मोहनलाल गौतम (वर्तमान स्वायत्तशासन मंत्री अुत्तर प्रदेश), श्री केशवदेव मालवीय (केन्द्र-मंत्री), श्री अुपाध्याय, श्री भूपेन्द्रनाथ (दादाके छोटे भाअी) और बादमें कुछ दिनके लिये पूज्य मालवीयजी। सबसे अुग्र रूप था दादाका। अुन्हें सत्याग्रहकी बात पसन्द न थी। असहयोग अुनके गले न अुतरता था। मालवीयजी बापूके सविनय अवज्ञा आन्दोलनकी बात सुनसे घण्टों करते पर 'दादा' अपने पथ और विश्वासपर दृढ़ थे। दादाजीसे जहांतक साधनका प्रश्न था हमारी अेकता न थी पर अुनकी आजादी-तड़पनकी कीमत कौन लगा सकता है? अुनमें साध्यके प्रति समरस होनेकी अपूर्व निष्ठा थी। कअी बार गुलामीकी तस्वीर खींचते-खींचते अुनकी आँखें भर अुठतीं तब दादाका कवित्व और वक्तृत्व दोनों मुखर हो अुठते।

राजनीति, दर्शन, साहित्य, विज्ञान अुनमें निखर अुठे थे। स्वस्थ अवस्थामें अुन्हें कभी मैंने ११ बजेसे पहिले सोते नहीं देखा और प्रातःकाल भी घण्टों वे अपने छोटे पुस्तकालयकी पुस्तकोंमें डूबे रहते थे। अध्ययन अुनके जीवनका दीप था। यही वह रोशनी और सहारा था जिसके बलपर अुन्होंने आजन्म काले-पानीकी तीन सजाको हँसते-हँसते काटा। राजनीतिकी कठोरता, दर्शनकी अुदासीनता, साहित्यकी सरसता और विरानका तर्क अुनके जीवनके अंग बन गये थे। अिसी लिये जिसने अुन्हें केवल राजनीतिकी चर्चाके बीच देखा, पूरा न समझ सका, जिसने साहित्य गोष्ठीमें देखा अुनके भीतरके प्रगाढ़ राजनीतिज्ञके दर्शन कर सका। दादाके संपूर्ण व्यक्तित्वके अध्ययनके लिये दादाजीको चारों कोनोंसे देखना जरूरी है। और जो अैसा न करके अुनपर अपनी राय प्रगट करते थे, वे दादापर अन्याय करते थे। अिस देशभक्त तपस्वी दादाके भीतर अेक प्रेमी पति और ममतामय पिताका रूप भी छिपा था। अपनी पत्नी और पुत्रीकी चर्चाका मूल्य अुन्हें सदा आँसुओंसे चुकाना पड़ता था पर ये आंसू कभी अुनपर दुर्बलताकी छाप नहीं छोड़ पाते। विश्रामके क्षणोंमें प्रायः वे अपने छोटे परिवारकी बात सोचते। वे अेक मानव थे तभी तो बाहर-भीतरसे वे सचमुच हम सबके लिये 'दादा' बन गये थे। कभी बात होती तो वे कह अुठते 'भाअी तुम सब तो महीनोंके मेहमान हो, मुझे तो अिन्हीं अींट-पत्थरोंके साथ अभी २४ वर्ष गुजारने हैं। और तब हम भी अुसी ममत्व और विश्वाससे अुन्हें जवाब देते— 'दादा स्वराज्यके बाद कांग्रेस सरकारका प्रथम कर्तव्य आप लोगोंको बाहर लाना होगा।'

❀ ❀ ❀

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अितवारका दिन बड़ा प्रिय था। जेलके काममे छुट्टी। विनोद, विवाद, खेल, बाली-बौल और लिखाअी पढ़ाअी। अिसी दिन प्रायः हम सब जेलके भीतर नेहरूजीसे मिलने जाते, वहाँ भी दादाकी बहस पंडितजीसे साध्य-साधन आदिपर छिड़े विना न रहती। अिस दिन खानेकी लिस्टमें भी कुछ अिजाफा होता था। शनिवारको दीवारके सहारे खड़े होकर, पेटको खोलकर दादा हम लोगोंको चुनौती देते हुअे कहते— "तुममेंसे जो कोअी मेरे पेटको दोनों हाथोंसे दबा देगा अुसे कल पकौड़ी और पुअेकी दावत मिलेगी।" खिलानेका दादाका यह अेक विनोदी तरीका था पर पहिले अुनकी तोंदको हमारे मुक्कोंकी चोट सहनी पड़ती।

कभी दिनमें जो पढ़ा जाता, अुसीपर शामको विवाद होता। कभी विवादमें गर्मी बढ़ जाती और तब दादाकी आवाज पंचमपर चढ़ जाती पर विवाद खत्म होते ही वही ममता भरी बोली। विवादकी गर्मीका हम लोगोंके संबंधपर कोअी असर न पड़ता। विरोध और ममत्वका अैसा सुन्दर समन्वय कम लोगोंके भीतर मैंने देखा है। अुनकी यह साधना अध्ययन और ज्ञान-पिपासासे अनवरत जुड़ी रहती थी। बे-नागा ६-७ घंटे पढे बिना दादाका खाना हजम नहीं होता था। कभी सोचता किसी भी आबाद देशमें दादा जैसे व्यक्ति कितने अुपयोगी होते। राजनीति और व्यवहार; न्याय और कोमलता अुनमें साकार हो अुठे थे। और अैसे व्यक्तिने अपने जीवनके लगातार २५ वर्ष जेलमें बिता दिये थे। काले पानीकी रातें देखी थीं।

क्रान्ति, संघर्ष और अुत्सर्गके बीच दादाजीका मानव कभी-कभी बोलने लगता। अुनकी आँखें गीली हो जातीं पर वे सदा परिवारकी अिस कोमल स्मृतिकी भावमयी अभिव्यंजनाको पश्चातापमें बदलते मैंने कभी नहीं देखा। राष्ट्रीय यज्ञमें अुन्होंने अपना जो कुछ दिया अुसके लिये अुनके मनमें कभी संताप न हुआ और अुनकी गीली आँखोंमें पत्नी और पुत्रीके जो चित्र खिचते वे अुनके मनमें सरसता और ममत्वकी फुहार भले छोड़ जायें, अुनके साधकको कभी डिगा नहीं पाते थे। करुण और वीररसके मूर्तिमान थे हमारे दादा। कभी वे अनुभवकी पिटारी खोल हम छोटोंके आगे बिखेरने लगते तो अैसा लगता मानों अुनके ज्ञानका यह असीम भंडार कभी खत्म होनेवाला नहीं है। और तभी बन्दी जीवनके अिस लेखककी महानता हमारे सामने और सजीव हो अुठती।

कभी गीताकी वाणीसे रागके फुहारे छूटने लगते और कभी अुपनिषदके गानमें पूर्व मानवकी बोली अुनके भीतरसे गूँज अुठती। तिलककी गीताके वे बड़े भक्त थे।

अिस प्रकार खेल-कूद, पढ़ने-लिखनेके बीच मेरे बाकी जीवनके ६ माह कब कट गये— मालूम भी न पड़ा। अेक दिन रोते मन और भरे दिलसे दादासे विदा ले हम फाटककी ओर चले। सियासतके अुस छोटे द्वारपर अुनका स्थिर शरीर बड़ी देरतक अपने दूर जाते छोटे भाअीको देखता रहा था और मेरे मनमें विदाके समयका अुनका वह वाक्य मय रहा था— "जाओ, राष्ट्रीय यज्ञकी अिस पुण्य ज्योतिको कभी बुझने न देना।" नैनी जेल छूट गया और अुसका वह तपस्वी भी; पर अुन स्मृतियोंको कंजूसके धनकी तरह मैं आज भी सजाये फिरता हूँ।

अुपरोक्त घटनाके कुछ वर्ष बाद जब "श्वेतपत्र" (व्हाअिट पेपर) की कृपासे लूली-लंगड़ी आजादी देशको सन् १९३४ में मिली तो अुत्तर प्रदेशकी सरकारने पहिला कार्य अिन वीर देशभक्तोंको जेलसे बाहर लानेका किया। तब अेक दिनके प्रकाशमें दादाके स्वागतके लिये कानपुरकी सड़कें खचाखच भर गयी थीं। अितनी भीड़, अितना लम्बा जुलूस—कानपुरमें कम निकला है। हमारे दादा फूलोंसे दबे थे। मुस्कराहट, विश्वास और कृतज्ञता तीनों अुनके भीतर बोल रहे थे। तभी अुनके पास खड़े होकर दादासे मैंने मजाकमें कहा था "कहो दादा, गांधी बाबाका असहयोग आप लोगोंको बाहर ले आनेमें सफल हुआ न?" दादा तब खूब दिल खोलकर हँसे थे। अिसके बाद अेक दो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बार वे मुझे युक्त प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें मिले थे पर अिस बार अुनके शरीरकी स्थूलता घट रही थी। तोंद गायब हो रही थी। मैंने मजाकमें लखनअूमें अुन्हें याद दिलाया था—'दादा, तोंद क्या आजादीकी हवा बरदास्त नहीं कर सकी।' और अुसी मज़ाकमें अुत्तर मिला था देशमें कोटि-कोटि पिचकी तोंदोंके रहते अपने रामकी तोंद कैसे फूल सकती है?'

अेक दिन दो वर्ष बाद अेक मित्रसे सुना, सुनकर स्तंभित रह गया। शायद यह ३५ या ३६ की बात है कि दादाजीको क्षय हो गया है। विश्वास न हुआ। वर्षोंतक यातनाओंसे जूझनेवाला यह अथक सिपाही किनारेपर आकर कैसे परास्त हो गया? पर तर्क तथ्यको कैसे समेटता! और फिर मर्ज बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की। वर्षका अेक पूरा चक्कर भी न हो पाया था कि दादाका वह स्थूल व्यक्तित्व अपनी सीमाके बन्धन तोड़ चुका था। महान आत्मा बिखरकर भारतके कण-कणमें समा चुकी थी। अन्तिम क्षणोंमें अुनसे न मिल पानेका क्षोभ हमेशा रहेगा।

दादा चले गये पर अिस देशके अनेक नेताओं और देशभक्तोंके भीतर आज भी अुनकी रूह बोल रही है। अुनकी यादके साथ अतीतका पर्दा अेक बार फिर अुठ जाता है और तब जेलके अुस चौकमें अपनी मीठी हँसीके साथ दादाजीको खड़े हुअे देखता हूँ। वे युग-युगतक भूले भटके यात्रियोंके मार्ग-दर्शनके लिये जैसे आज भी वहाँ खड़े हैं।

अुर्दू :—

जीवन और कला

: श्री हकीम अब्दुलघाली :

कला क्या है? विद्रोह और क्रान्ति, प्रकृतिसे और अुन चीजोंसे जो सूखके, अचल होके बेजान हो गयी हैं। पहला महान् कलाकार वह था, जिसने मनुष्यको कुदरतकी गुलामीसे मुक्त किया। पहला महान् विद्रोह, और विशाल कलाकृति मनुष्यकी यह थी कि वह बाह्य जगत्की भयंकर, प्रचंड शक्तियोंसे विमुख हुआ, अुनकी अुपासना छोडी, अपने देवता बनाये, अपनी जिहन (बुद्धि) में अुनकी रूपरेखा स्थिर करके मूर्तियां बनायीं। यह मानव हृदयकी लड़ाअी थी, दृश्य जगत्से। कौन नहीं जानता कि दृश्य जगत्की हार हुअी। चाँद, सूरज, पहाड़, नदी, आग और पानीका रोब आदमीके दिलसे अुठ गया। देवताओं और देवियोंकी पूजा होने लगी। मन्दिरोंके द्वार खुले। साकारकी अुपासना पूरी शानके साथ होने लगी। मानवताका विकास हुआ। अुस मौन्दर्यकी, अुस सत्यकी, जो मनुष्यके हृदयसे निकला था, आधिपत्य हो गया। विकराल, भीषण, विध्वंसकारी, अुबलती हुअी नदियोंका नहीं, भीमकाय, गगनचुम्बी पहाडोंका नहीं, तूफानी समुद्रोंका नहीं, मनुष्य अब अिनके रूपसे और तेजसे प्रभावित नहीं होता। वह प्रभावित होता है अपने बनाये हुअे मन्दिरोंसे, अुनमें स्थापित देवताओंके सौंदर्यसे। हर चीज पडी हँस रही है। मानों हर अेक वस्तुमें मनुष्यका हृदय और मनुष्यकी आत्मा है। वह जुदाअी और वह नावाकफ़ियत (अपरिचय) जो जंगल, पहाड़ और मानवके बीचमें थी, जाती रही। अिन अपनी बनाअी हुअी चीजोंसे अुसकी घनिष्ठता हुअी। संसर्ग बढे। अेक दूसरेके नज़दीक आये। अिनमें मानवीय गुणोंका प्रादुर्भाव हुआ। कला वास्तवमें प्रकृतिकी वस्तुओंमें मानवता पैदा करती है। आकाश और पृथ्वीमें जितनी चीजें हैं, अुनमें मनुष्यकी आत्माका आवाहन करना कलाका यथार्थ रूप मानवताकी सृष्टि है, जिससे मनुष्यका कुदरतके साथ सामंजस्य हो सके।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वका विशाल साहित्य हिन्दीमें भर दो

: श्री महाराजकुमार डॉ. रघुवीरसिंह :

(गत जनवरीमें, अिन्दौरमें सम्पन्न मध्यभारत राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनमें अध्यक्ष-पदसे दिये गये अभिभाषणका अेक महत्वपूर्ण अंश।)

यह निर्विवाद सत्य है कि भारतीय संविधान द्वारा हिन्दी भारतकी राजभाषा घोषित की जाकर १५ वर्षकी कालावधिके बाद, अवश्य ही सारे राजकीय व्यवहारोंके लिये हिन्दीके ही प्रयोग किये जानेका भी आशापूर्ण निर्देश अुसमें किया गया है। किन्तु अुक्त कालावधिके बाद भी राजभाषाके रूपमें अंग्रेजीका प्रयोग किये जा सकनेकी सम्भावनाका संविधानने सर्वथा अन्त नहीं किया है। अत अेव अिस बातके लिये विशेष प्रयत्न किये जाने चाहिये कि सन् १९६५ अी० तक हिन्दी हर तरहसे राजभाषा बननेके योग्य हो जावे, जिससे अंग्रेजी भाषाके प्रयोगकी कालावधिको आगे भी बढ़ानेकी कोअी आवश्यकता ही नहीं रह जावे। अुत्तर प्रदेश, राजस्थान, आदि हिन्दी भाषाभाषी राज्योंके शासनकार्यमें आज भी हिन्दी भाषाके ही प्रयोग किये जानेसे धीरे धीरे अुपयुक्त हिन्दी शासन-शब्दावली सुनिश्चित होने लगी है और यह आशा की जा सकती है कि नित्यप्रतिके अिस प्रयोगसे कुछ ही वर्षोंमें अुसका समुचित ग्राह्य स्वरूप अवश्य ही निखर आवेगा। तथापि यह अत्यावश्यक है कि अिन प्रान्तोंके अुपयुक्त प्रमुख अधिकारी समय-समयपर अेक साथ बैठकर अिस शासन-शब्दावलीके विकसित होते हुअे स्वरूपपर विचार करते रहें जिससे वे अपने अनुभवोंसे अेक-दूसरेको लाभान्वित कर सकेंगे।

अिस सम्बन्धी निरन्तर अुठनेवाली नयी नयी कठिनाअियोंको सरलतापूर्वक हल कर पावेंगे और अिस शब्दावलीका सर्वत्र ही समान स्वरूप बनाये रखनेमें भी अुन्हें पूरी-पूरी सहायता प्राप्त हो सकेगी।

परन्तु शासन-कार्यमें हिन्दीके अधिकाधिक प्रयोगमें सबसे बड़ी कठिनाअी जो प्रायः हर बातमें आज सामने आ रही है, वह है हिन्दी–टाअिपरायटरोंके लिये भारतके केन्द्रीयशासन द्वारा स्वीकृत अेक सुनिश्चित 'कीबोर्ड' (Key Board) का अभाव। आज हिन्दीके जो अनेक टाअिपरायटर प्राप्य हैं या जो नये बनाये जा रहे हैं अुनमें प्रायः सब ही का अपना–अपना अलग–अलग 'की बोर्ड' है जिससे टाअिप करनेकी शिक्षा देनेमें और तदनन्तर अुनका अुपयोग करनेवालोंको जो अमुविधा अेवं कठिनाअियाँ होती हैं वे सुज्ञात हैं। अिस महत्वपूर्ण प्रश्नपर पूरी तरहसे विचार कर अुस सम्बन्धी अपने सुनिश्चित सुझाव प्रस्तुत करनेके लिये संविधान परिषदके अध्यक्ष, डॉ. राजेन्द्रप्रसादने जनवरी, १९४९ अी. में जो विशेष कमिटी नियुक्त की थी, अुसकी रिपोर्ट भी फरवरी, १९५१ अी. में ही पेश हो गयी थी, परन्तु अुसपर अब तक केन्द्रीय शासन द्वारा कोअी निर्णयात्मक कार्यवाही नहीं की गयी है। सारे संभवनीय सुधारों अेवं अनेकानेक अत्यावश्यक परिवर्तनोंके सुझावोंपर पूरी तरह विचार करनेके बाद ही सुविधानुसार हिन्दी टाअिपरायटरके सुनिश्चित 'की बोर्ड' तथा अुसके अन्तिम स्वरूप और यंत्र-रचना सम्बन्धी कोअी शासकीय निर्णय देनेकी अिस नीतिके फलस्वरूप जो देरी हो रही है अुससे हिन्दीके व्यवहारमें अुत्पन्न होनेवाली कठिनाअियाँ ही नहीं बढ़ रही हैं परन्तु भविष्यमें कअी नयी अुलझनोंका अुत्पन्न हो जाना भी अवश्यम्भावी है। प्रारंभमें हो सारे प्रयत्न करनेपर भी आगे किये जा सकनेवाले अुपयुक्त सुधारोंकी संभावनाका सर्वदाके लिये कदापि अन्त नहीं किया जा सकता है, अेवं यह अत्यावश्यक है कि अब तक सारी प्राप्य जानकारी, अनुभव अेवं सुधार सम्बन्धी सुझावोंपर बड़ी ही तत्परताके साथ पूरा विचार कर केन्द्रीय शासन अिस महत्वपूर्ण प्रश्न सम्बन्धी अपना सुस्पष्ट निर्णय शीघ्रातिशीघ्र घोषित कर दे, जिससे विभिन्न राज्योंके शासनोंको अिस प्रश्नपर अपना-अपना स्वतंत्र निर्णय करनेकी कोअी आवश्यकता ही नहीं रह जावे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजभाषाके रूपमें शीघ्र ही पूर्ण रूपेण हिन्दी भाषाका प्रयोग किये जानेकी माँगको सबल बनानेके लिये यह आवश्यक है कि हम हिन्दीको वास्तवमें राष्ट्रभाषा बना दें । अब तक हिन्दी-साहित्यमें प्रधानतया हिन्दी भाषा-भाषी प्रदेशोंकी ही भावनाओं और विचारधाराओंका चित्रण या प्रतिबिम्ब दिखायी दिया है । अन्य भारतीय भाषाओंके साहित्यके जो भी अनुवाद हिन्दीमें प्राप्य हैं वे अितने थोड़े और बहुत-कुछ अेकांगी हैं कि अुनसे अुन विभिन्न भाषाओंके साहित्यकी सर्वांगीण रूप-रेखाका भी ठीक-ठीक आभास नहीं हो पाता है । सुदूर दक्षिणकी भाषाओंके साहित्यसे तो हिन्दी भाषा-भाषी सर्वथा अनभिज्ञसे ही हैं । आसाम और अुत्कल जैसे सुदूरस्थ प्रान्तोंके साहित्यकी बात अलग रही, पंजाबी और सिंधी साहित्योंका भी कोअी विवरण हिन्दीमें प्राप्य नहीं है । चाहिये तो यह कि भारत भरकी सारी प्रमुख प्रादेशिक भाषाओंके महत्त्वपूर्ण स्थायी साहित्यके प्रामाणिक अनुवाद हिन्दी भाषामें पढ़नेको मिलें, अुन भाषाओंके साहित्यिक अितिहास तथा साहित्यिकोंकी जीवनियाँ, आदि हिन्दीमें लिखी जावें और अुन भाषाओंके अन्य समकालीन साहित्यकी विशिष्ट कृतियोंके साथ ही अुन साहित्योंमें चल रही वर्तमान प्रवृत्तियों तथा प्रमुख विचारधाराओंके विवरण और अुसकी विवेचना भी हिन्दीमें होती रहे जिससे हिन्दी भाषा-भाषी ही नहीं अन्य प्रादेशिक भाषा-भाषी साहित्यकार भी हिन्दीमें प्राप्य अिस सामग्री द्वारा अपने राष्ट्रकी अिन सारी विभिन्न भाषाओंकी प्रगति अेवं प्रवृत्तियोंसे निरन्तर परिचित होते रहें । यों हिन्दी साहित्य वास्तवमें समस्त विभिन्न भारतीय भाषाओंके साहित्योंका तीर्थ-संगम हो जावेगा और अिन सब साहित्य-धाराओंको आत्मसात कर हिन्दी सचमुच राष्ट्रभाषा बन जावेगी ।

किन्तु यह सब कार्य कौन करेगा ? राष्ट्रभाषा हिन्दीके प्रचारके लिये सर्वत्र प्रयत्न हो रहे हैं और प्रायः सारे ही विभिन्न अहिन्दी भाषा-भाषी प्रदेशोंके सुशिक्षित तथा नवयुवा नरनारी हिन्दी पढ़नेमें लग गये हैं । अतअेव यह सब अनुवाद कार्य करनेके लिये क्या हम अुन विभिन्न भाषा-भाषियोंके ही भरोसे बैठे रहेंगे कि हिन्दी भाषामें पारंगत होकर अपनी सुविधानुसार वे अपनी-अपनी मातृभाषाओंमें लिखे गये अुच्च कोटिके ग्रंथोंका हिन्दी भाषामें अनुवाद करें ? अन्य भाषाओंको सीखकर अुनमें प्राप्य साहित्यका ठीक-ठीक अर्थ समझ लेना कठिन नहीं होता है परन्तु किसी भी बातको नअी सीखी हुअी अुस अन्य भाषामें ठीक-ठीक व्यक्त करना कदापि अुतना सरल नहीं होता है, अतअेव अिन अहिन्दी भाषा-भाषियों द्वारा किये गये ये हिन्दी-अनुवाद क्या सचमुच अिच्छित कोटिके हो सकेंगे ? और जहाँ हम हिन्दी भाषा-भाषी यह चाहते हैं कि अन्य भाषा-भाषी लोग हमारी भाषा पढ़ें, वहाँ क्या हम हिन्दी भाषा-भाषियोंके लिये भी यह अुचित अेवं आवश्यक नहीं है कि हम भी अन्य प्रदेशोंकी भाषाओंको सीखकर अुनमें कम-से-कम अितने पारंगत तो अवश्य ही बन जावें कि अुन भाषाओंमें प्राप्य साहित्य-रत्नोंके सुन्दर प्रामाणिक हिन्दी अनुवाद करके हम हिन्दी भाषाके साहित्य-कोषको अधिक सुसमृद्ध बना सकें ? बंगला, मराठी और गुजराती साहित्यके अनुवादकी ओर तो कुछ ध्यान दिया गया है, परन्तु अन्य भाषाओंके साहित्यके प्रति हमारी यह अुपेक्षा कब तक बनी रहेगी ?

पुनः अपने राष्ट्रकी अन्य प्रादेशिक भाषाओंके साहित्योंसे प्राप्त रत्नोंसे ही हमें संतुष्ट नहीं हो जाना चाहिये । साहित्य, विद्या और विचारोंकी विदेशीय बाहरी दुनियासे भी अपना अटूट सम्पर्क बनाये रखनेके लिये हमें सतत प्रयत्न करना चाहिये जिससे विदेशीय साहित्यके असाधारण साहित्य रत्न भी हम हिंदीमें अनुवादित कर भारतके जनसाधारण तक पहुँचा सकें । हमारे यहाँ अंग्रेजी भाषाका पठन-पाठन पर्याप्त रहा है अेवं अुस भाषाके साहित्यका अनुवाद करवानेमें विशेष कठिनाअी नहीं होगी । परन्तु हमारी राष्ट्रभाषाके साहित्य-भण्डारको भरपूर करनेके लिये हमें अन्य युरोपीय तथा अेशियाकी प्रमुख समुन्नत भाषाओंके साहित्योंसे भी अनेकानेक अुच्च कोटिके महत्त्वपूर्ण ग्रंथोंके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुवाद करवाने होंगे। फ्रेंच, जर्मन और रूसीके साथ ही आधुनिक अरबी, आधुनिक फारसी, चीनी और जापानी भाषाओंके साहित्य भण्डारोंको भी हमें टटोलना होगा। जिस प्रकार आज अंग्रेजी भाषामें प्राप्य विभिन्न भाषाओंके ग्रंथोंके अनुवाद पढ़कर अंग्रेजी-भाषा-भाषी अुन अन्य भाषाओंके साहित्यकी जानकारी अेवं अुनका रस भी ले लेते हैं वैसे ही हमें अिन विभिन्न विदेशीय साहित्य रत्नोंको अनुवादित कर अुन्हें हिन्दीमें प्राप्य करना है कि हिन्दीके माध्यम द्वारा अुन विदेशीय साहित्योंकी जानकारी भारतमें हिन्दी भाषा-भाषियों तथा अन्य अहिन्दी भाषा-भाषियोंको भी प्राप्त हो सके।

अब तक अिन विदेशीय भाषाओंके जिस किसी भी साहित्यका कोअी अनुवाद हमारे यहाँ हिन्दी या अन्य भारतीय भाषाओंमें हुआ है वह प्रायः मूल ग्रन्थसे नहीं किया जाकर अुसके अंग्रेजी अनुवादसे ही किया गया है। परन्तु मूल ग्रन्थको छोड़कर अुसके अनुवादका अनुवाद करनेकी प्रवृत्तिसे अब आगे काम नहीं चलेगा। राष्ट्रभाषाको महत्त्व देने या अुसकी अुन्नति करनेका यह अर्थ कदापि नहीं है कि हम अंग्रेजी या अैसी ही अन्य विदेशीय भाषाओंका बहिष्कार या अुनकी अुपेक्षा करें। वास्तविकता तो बिलकुल अुसके विपरीत है। स्वतन्त्रता प्राप्तिके बाद हमारे लिये यह सर्वथा अनिवार्य हो गया है कि देशकी राजनैतिक, आर्थिक, व्यापारिक, आदि अनेकानेक आवश्यकताओंको पूरा करनेके लिये हमारे देशवासी संसारके अन्य देशोंकी प्रमुख भाषाओंपर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लें। हमारी राष्ट्रभाषाके साहित्य-भण्डारको भरपूर करनेके लिये साहित्यिक क्षेत्रमें भी अिन प्रमुख विदेशीय भाषाओंका अध्ययन अत्यावश्यक है जिससे अुन भाषाओंमें लिखे गये मूल ग्रंथोंसे ही सीधा हिन्दीमें अुनका अनुवाद किया जा सके। अतअेव अनेकानेक अुपयुक्त सुयोग्य हिन्दी भाषा-भाषियों या कम से कम हिन्दीमें अनुवाद कर सकनेवालोंको अिन प्रमुख विदेशीय भाषाओंके अध्ययन अेवं अुनपर पूर्ण अधिकार प्राप्त करनेके लिये जुट जाना चाहिये।

किसी भी साहित्यको सुसमृद्ध बनानेके लिये अुच्च कोटिकी मौलिक रचनाओंके समान ही अन्य भाषाओंके महत्त्वपूर्ण साहित्य-रत्नोंके अनुवादोंकी भी बहुत आवश्यकता है। यों विभिन्न देश-काल और संस्कृतियोंकी प्रवृत्तियों, कल्पनाओं अेवं विचारधाराओंका बहुत-कुछ परिचय प्राप्त हो सकेगा, जिससे न केवल हमारा दृष्टिकोण ही विस्तीर्ण और विविधतामय होगा; अपितु अिस विभिन्नतासे स्फूर्तिमय प्रेरणा प्राप्तकर नयी भावनाअें तथा मौलिक अनुभूतियाँ हमारे साहित्यमें भी अंकुरित हो अुठेंगी। पुनः मूल रचनाके भावों अेवं भाषा-सौन्दर्यको बनाये रखकर सुन्दर प्रामाणिक अनुवाद करना कोअी सरल कार्य नहीं है। अैसे अुच्च कोटिके अनुवादकोंका स्थान साहित्यके अितिहासमें मौलिक लेखकोंसे किसी प्रकार कम महत्वका नहीं होता है। यह कहना किसी भी प्रकारकी अतिशयोक्ति नहीं होगी कि हिन्दी साहित्यके लिये आज तो हमें माध्यम या साधारण कोटिके मौलिक साहित्यकी रचना करनेवाले साहित्यिकोंकी अपेक्षा कहीं अधिक अुच्च कोटिके अनुवादकोंकी आवश्यकता है, अतअेव आजके नये अुठते हुअे नवयुवा साहित्यकारोंका ध्यान हमारे राष्ट्रभाषा साहित्यकी अिस प्रमुख आवश्यकताकी ओर दिलाना चाहता हूँ, जिससे वे अिस कार्यके विस्तार अेवं अुसके महत्त्वको ठीक तरहसे समझकर अिस अनिवार्य आवश्यकताकी पूर्ति कर सकनेके योग्य स्वयंको बनानेके लिये दृढ़-प्रतिज्ञ हो प्रयत्नशील बनें। यह बड़े हर्षकी बात है कि हिन्दी माध्यमसे ही विभिन्न प्रान्तीय अेवं विदेशीय भाषाओंको सीखनेके लिये अुपयुक्त साहित्य तैयार करवानेका वर्धा समितिने निश्चय कर लिया है और वैसे कअी ग्रंथ प्रेसमें छप भी रहे हैं। वर्धा समितिका अन्तर्प्रान्तीय संगठन भी विभिन्न प्रान्तीय भाषाअें सीखनेके अिच्छुक व्यक्तियोंके लिये अन्य प्रकारसे भी बहुत सहायक हो सकता है। अिस प्रकारके महत्वपूर्ण कार्यमें हाथ बँटानेके लिये हम विभिन्न प्रान्तीय अेवं विदेशी भाषाओंको सीखनेकी नहीं सोचेंगे?

अनुवादों द्वारा राष्ट्रभाषा-साहित्यको समृद्ध बनानेका यह कार्य बहुत महत्त्वपूर्ण ही नहीं; अपितु अत्यधिक विस्तृत भी है। समस्त संसार-व्यापी साहि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्यिक प्रतिभा, लाखों-करोड़ों मस्तिष्कोंकी मौलिक कल्पना, युगोंकी अेकनिष्ठ साधना, सहस्रों वर्षोंके गंभीर तथा निरन्तर चिन्तन अेवं मानव हृदयकी चिरन्तन अनुभूतियोंसे अुद्भूत विशाल साहित्य-सागरको हमें हिन्दी भाषामें अवतरित करना है। अिने-गिने या मनोरंजनार्थ कुछ ही कालके लिये अिधर ध्यान दे सकनेवाले साहित्यकारोंसे ही यह महान् कार्य कदापि पूरा नहीं होना है। तदर्थ हमें सुनिश्चित योजना बनाकर आगे बढ़ना होगा कि कम-से-कम समयमें अिस सारे कार्यको हम बहुत अंशोंमें पूरा कर सकें। अनेकानेक साहित्यिक संस्थाओंका पूर्ण सहयोग भी अिस कार्यके लिये कदापि पर्याप्त नहीं होगा, अेवं यदि कोअी भी साहित्यिक संस्था अिस कार्यको प्रारम्भ करे तो बादमें अन्य संस्थाअें भी अुसमें हाथ बँटानेको अवश्य ही तत्पर हो जावेंगी। अिन अनुवादोंके प्रकाशनकी समुचित व्यवस्था करनेमें कोअी भी कठिनाअी नहीं होनेवाली है, अतअेव केवल तदर्थ अनुवाद-कार्यकी योजना बनानेमें हमें ज़रा भी देरी नहीं करनी चाहिये।

समय पहले ही कम है और वह भी दिनोंदिन निरन्तर घटता ही जा रहा है अेवं आज तो शीघ्रातिशीघ्र अिस ओर ध्यान देकर तत्परताके साथ कार्यारंभ कर देनेकी आवश्यकता है। राष्ट्रभाषा हिन्दीके साहित्य-भंडारको अिस प्रकार समृद्ध बनानेमें भारतके केन्द्रीय शासनके निर्देशन या वहाँकी सहायताकी आशामें बैठे रहना पूर्णतया अनावश्यक और सर्वथा अनुचित ही होगा। सन् १९६५ अी० तककी कालावधिके रूपमें हिन्दी भाषियोंको संविधानमें जो सुस्पष्ट चुनौती दी गयी है, अुसका क्रियात्मक परिणामों द्वारा सफलता पूर्वक अुत्तर दिये बिना तब किस मुँहसे भारतीय संसदको हम यह कह सकेंगे कि राजभाषाके रूपमें प्रयोगके लिये अंग्रेजी भाषाकी कालावधिको वह आगे नहीं बढ़ावें?

भारतीय राष्ट्रपति और राज्यपाल+

: श्री जगदीशप्रसाद व्यास :

भारतवर्ष रिपब्लिक है। अिस पार्श्वमें वह फ्रांस और अमेरिकाके समान है; और अिसी पार्श्वमें वह अिंग्लैंडसे भिन्न है। फ्रांस और अमेरिकाकी नाअीं भारतका सर्वश्रेष्ठ राज्याधिकारी प्रेसीडेंट अर्थात् राष्ट्रपति है। परन्तु भारतका राष्ट्रपति अिंग्लैंडके सम्राट् अथवा अमेरिकाके प्रेसीडेंटके समान सरकारका मुखिया नहीं है, और अिस पहलूमें वह फ्रांसके प्रेसीडेंटके समान है। अमरीकी और फ्रेंच प्रेसीडेंटोंकी नाअीं भारतीय राष्ट्रपति अप्रत्यक्ष चुनावके द्वारा सत्तारूढ़ होता है। अंग्रेजी सम्राटकी नाअीं वंश-परम्परागत अुत्तराधिकारके अनुकूल वह पदासीन नहीं होता।

भारतीय राष्ट्रपतिका चुनाव भारतीय संसदके दोनों सदनों तथा राज्योंकी विधान सभाओंके निर्वाचित सदस्यों द्वारा होता है। ये सब मिलकर अेक निर्वाचक मंडल अथवा अिलेक्टोरल-कालेज कहलाते हैं। अेक रूपमें चुना होनेके कारण भारतीय राष्ट्रपतिको वह प्रजातंत्रीय सम्मान और अधिकार मिलता है कि जो संसारके अन्य संविधान सम्मत वंशपरंपरानुगत सम्राटको नहीं मिलता। अिस तरह हमारा राष्ट्रपति अधिक बलका भागी हो जाता है। परन्तु राष्ट्रपतिके प्रजातंत्रीय बलकी तुलना प्रधानमंत्री अथवा अुसके मंत्रिमंडलके प्रजातंत्रीय बलसे नहीं की जा सकती क्योंकि ये दोनों ही प्रजाके प्रत्यक्ष प्रतिनिधि हैं। तात्पर्य यह कि प्रेसीडेंट अथवा राष्ट्रपति और प्रधानमंत्रीके चुनावोंकी विभिन्न प्रणाली हमारे देशमें मौजूद है। साथ-साथ हमारा

+ लेखमें कहीं कहीं हिंदी और अंग्रेजी संज्ञाओंका प्रयोग अेकसाथ ही कर लिया गया है, जैसे—गवर्नर अथवा राज्यपाल, प्रेसीडेंट, अथवा राष्ट्रपति अित्यादि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रपति सीधा काठकी पुतली, बलहीन, संवैधानिक आभूषण मात्र ही नहीं है।

संविधान और कानूनकी निगाहमें भारतीय राष्ट्रपतिके अधिकार अंग्रेजी सम्राटकी नाअीं सर्वव्यापी, अमोघ और असीम हैं। वे केवल कार्यकारी क्षेत्र तक ही परिमित नहीं, अुनकी सीमायें विधान और न्यायमें भी फैली हैं। सबसे बड़ी शक्ति जो अुसके पास है वह है राष्ट्रके अुच्चतम अधिकारियों और कर्मचारियोंकी नियुक्ति। प्रधानमंत्रीकी प्रत्यक्ष नियुक्ति तथा अन्य मंत्रियोंकी अप्रत्यक्ष नियुक्तिसे लेकर, अेटर्नीजनरल, सुप्रीम कोर्ट और हाअीकोर्टोंके जजों, राज्यपालों, चीफ चुनाव कमिश्नर, चुनाव कमीशन, वित्त कमीशन, (फाअिनेंस कमीशन) तथा सरकारी नौकरी कमीशनोंकी नियुक्ति, सब राष्ट्रपतिके हाथमें है। अिसके अतिरिक्त संसदकी बैठकें कराना, स्थगन कराना, तथा भंग करना भी कतिपय शर्तोंके भीतर अुनका अधिकार है। वे संसदको जब चाहें तब भाषण दे सकते हैं, अुनकी मर्जी हो तो अकेले या दोनों सदनोंको अेकसाथ बिठाकर। राष्ट्रपति आय-व्यय-पत्रक पेश करवाते तथा पैसा-बिलके अतिरिक्त अन्य किन्हीं भी बिलोंको संसद द्वारा पास हो जानेके बाद भी पुनः विचारार्थ वापिस कर सकते हैं। अुन्हें आर्डिनेंस जारी करनेका अधिकार है, राज्यपालकी सलाहपर, राज्योंके कतिपय कानूनोंपर विचार करनेका अधिकार है, और अन्तमें यदि अुचित समझें तो संक्रांति 'अिमर्जेंसी' घोषितकर संविधानको मुलतवी कर देनेकी अुन्हें स्वतन्त्रता है। अिसके सिवा राष्ट्रपति भारतीय सेनाओंके सर्वोच्च सेनापति हैं जिसके कारण अुन्हें संधि-विग्रह करने तथा सेनाओंके संचालनका भी अधिकार प्राप्त है। तो भारतका राष्ट्रपति अंग्रेज सम्राटकी नाअीं सारी सत्ताओंका संवैधानिक भांडार है। संसारके किसी अधिनायक अथवा डिक्टेटरको अिनसे अधिक अधिकार कानूनके द्वारा नहीं दिये गये। परन्तु असल प्रश्न कानूनका नहीं है, असल प्रश्न तो अुन सत्ताओंके प्रयोगका है।

राष्ट्रपतिकी सत्ताओं और अधिकारोंका प्रयोग करनेके लिये भारतीय संविधानने पूरी मशीनरी और कार्यकारिणी बनायी है। अपने कर्तव्योंका निर्वाह करनेके हेतु राष्ट्रपतिकी सहायता अेवं परामर्शार्थ अेक प्रधानमंत्री तथा अुसकी अध्यक्षतामें कार्य करनेवाला अेक मंत्रिमंडल रहेगा। प्रधानमंत्री अथवा अुसका मंत्रिमंडल राष्ट्रपतिको क्या परामर्श देता है, अिसे जाननेका अधिकार भारतके किसी न्यायालयको नहीं है। प्रधानमन्त्रीकी नियुक्ति राष्ट्रपति करेंगे। अन्य मंत्रियोंकी नियुक्ति भी प्रधानमंत्रीके परामर्शसे राष्ट्रपति ही करेंगे। मंत्रियोंकी पदासीनता राष्ट्रपतिकी मर्जीपर रहेगी, परन्तु वे सब सामूहिक रूपमें संसदकी लोक-सभाके प्रति अुत्तरदायी होंगे। साधारणतः सभी मंत्री लोक-सभाके निर्वाचित सदस्य होंगे। प्रधानमन्त्रीका यह कर्तव्य रहेगा कि वे राष्ट्रके शासन, विधान अथवा अन्य विषयोंपर मन्त्रिमंडलके अथवा मन्त्री विशेषके प्रत्येक विचाराधीन मसलों अथवा निश्चयोंसे राष्ट्रपतिको अवगत कराया करें। अुधर राष्ट्रपति भी अिनमेंसे किसी भी मसलेको अपने पास विचारार्थ बुला सकते हैं।

नियुक्तियोंके प्रसंगमें हमारा ध्यान राज्योंके राज्यपालों (गवर्नरों) की नियुक्तिकी ओर विशेष रूपसे जाता है। राष्ट्रपतिको अिसमें बड़ा भारी अधिकार है, और संविधानके अनुसार यहाँ यह भी आवश्यक नहीं कि वे राज्यपालोंकी नियुक्तिमें अपने प्रधानमन्त्री अथवा अुसके मन्त्रिमंडलके परामर्शसे ही नियुक्ति करें। दूसरी बात विशेष रूपसे अुल्लेखनीय है कि गवर्नरीके पदका जो विकास अंग्रेजी शासनके विस्तारके साथ हुआ, वह समाप्त कर दिया गया है। अब राष्ट्रपतिके हाथों राज्यपालकी नियुक्ति दे दी गयी है। परन्तु साथ ही राज्योंमें प्रजातन्त्रीय ढंगसे चुने हुअे मुख्य मन्त्रीका मन्त्रि-मण्डल अेवं विधान सभा रखना, अेक प्रतिगामीसा कदम दिखता है। गवर्नरीके आरम्भिकतम युगमें गवर्नर अेक निरंकुश अेकाधिकारी था। वह युग १७७३ के रेगुलेटिंग अेक्टमें शुरू होकर १९१९ तक चला। सन् १९१९ और १९४७ के बीचमें प्रजातन्त्रीय संविधान-बादके कतिपय सिद्धान्तोंके अनुरूप प्रान्तोंमें धारा-सभाओंका निर्माण हुआ, द्विविध शासनका सूत्रपात हुआ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अुसपर गवर्नर जनरल तथा भारत मन्त्रीके जरिये अंग्रेजी पार्लिमेंट अेवं अंग्रेजी निर्वाचक मण्डलका अंकुश रहा। १९३५ के विधानके अनुसार जब यहाँ प्रान्तीय-स्वतन्त्रताका श्रीगणेश हुआ तो गवर्नर केवल संवैधानिक अुच्चाधिकारी मानकर रखा गया। सन् १९४७ के बादके गवर्नर लगभग मन्त्रि-मण्डलोंकी कठपुतली रहे; क्योंकि अधिकांशमें भारतके स्वातंत्र्य-संग्राममें कुछ सहयोग देनेके कारण सरकारने अुन्हें सम्माननीय पेंशन कमानेका अेक जरिया अिस पदके माध्यमसे निकाल दिया। १९५० के संविधानके अनुसार भारतके संघीय राज्य बनाये जानेका आभास मिलता है। परन्तु अिसमें संघीय-राज्यकी अनेकानेक परिस्थितियाँ मौजूद नहीं हैं। अेक तो यही कि संघकी अिकाअियाँ किसी भी दृष्टिसे अेक समान नहीं, कोअी बड़ी, कोअी छोटी, कोअी घनी बसी, कोअी बिरली आबाद, कोअी धनी, कोअी गरीब, कोअी रियासती सामन्तवादसे ओतप्रोत, कोअी संप्रदायवादसे बोझिल। दूसरे संघमें शामिल होने अथवा न होनेका विकल्प अुनके सामने आया ही नहीं, अुन्हें शामिल होनेके लिये अंग्रेजी राज्यके दीर्घ कालीन अितिहासके अेक कल्याणप्रद परिणामके कारण मजबूर होना पड़ा था। और अिन सबसे बढ़कर बात यह है कि राज्यका प्रधान और सर्वश्रेष्ठ शासक अर्थात् राज्यपाल राज्यकी जनताका प्रत्यक्ष प्रतिनिधि न होकर केन्द्रके राष्ट्रपतिका नामज़द व्यक्ति होगा। वह राष्ट्रपतिके प्रति जिम्मेवार और जबाबदार होगा, प्रदेशों अथवा राज्योंकी जनताके प्रति नहीं।

अिस तरह राज्योंमें भी दो प्रकारकी कार्य-कारिणीकी स्थापना कर दी गयी है, अेक तो हुआ राज्यपाल और दूसरा मुख्य मन्त्री अपने मन्त्रि-मण्डलके साथ। दोनों ही कार्य-कारिणियोंकी जवाबदारियाँ अलग-अलग दिशाओंमें हैं। अिसका अंजाम शासनमें अेकसूत्रता, और प्रजातन्त्रके कल्याणकी दृष्टिसे किस सीमा तक लाभकारी होगा, अिसे भविष्य ही बता सकता है। अिसमें अेक कठिनाअी और भी है। राज्यपाल मात्रके विवेकाधिकारके कारण राज्यमें संक्रान्ति (अिमर्जेंसी) घोषित की जाकर मन्त्रि-मण्डल तथा विधान सभाको मुअत्तिल किया जा सकनेका कानून प्रस्तुत है। विचारणीय बात है कि जितने विशेषाधिकार संविधानने भारतके राष्ट्रपतिको दिये हैं अुनका सबसे अधिक अुपयोग और अुपभोग राज्यपालको प्राप्त है। अिधर राज्यपालको डिसमिस भी नहीं किया जा सकता, संविधानमें यह अधिकार राष्ट्रपतिको भी नहीं है। हाँ, विधान सभा अलबत्ता राज्यपालपर महाभियोग (अिंपीचमेंट) चला सकती है; परन्तु स्पष्ट है कि अेक धूर्त राज्यपाल अैसी नौबतके पहले ही विधान सभा भंग करनेका अिमर्जेंसी-हुकुम निकाल देगा। नामज़द व्यक्तिको अितने अधिक अधिकार देना और फिर अुसे रक्षाके लिये लगभग कोअी नकेल न रखना हमारे संघात्मक संविधानकी सबसे असाधारण चीज़ है। अितने अधिकार तो शायद अंग्रेजी राज्यके गवर्नरोंको भी बीसवीं शतीमें हासिल नहीं थे, क्योंकि आखिरकार अुनपर भी अंग्रेजी निर्वाचक-दलका पार्लमेंट और भारतमंत्रीके जरिये अंकुश बाकायदा बना हुआ था। मजेकी बात है कि राज्यपालके विशेषाधिकारोंकी सीमा भी राज्यपालकी मर्जी निश्चित करेगी।

अतः दीखता है कि राज्यपाल और अुसके मंत्रि-मंडलकी नोंक-झोंक अवश्यंभावी है। आजके काँग्रेसी अथवा काँग्रेस-मनोनीत राज्यपालोंकी बात जाने दीजिये; क्योंकि यहाँ तो काँग्रेसी बलका ही बोल-बाला है। असल झगड़ा तब खड़ा होगा जब कि भारतका राष्ट्रपति काँग्रेसी व्यक्ति हो, अुसका नामज़द राज्यपाल, काँग्रेसका अथवा काँग्रेसके अेक गुटका पिट्ठू हो और राज्यका मंत्रिमंडल कम्यूनिस्ट अथवा काँग्रेसके अन्य विरोधी गुटका हो। १९५१-५२ के आम चुनावोंकी दिशा देखकर यह संभावना कोरी कपोलकल्पना नहीं मानी जा सकती। हैदराबाद, त्रावणकोर-कोचीन, मद्रास और अुड़ीसामें तो गैर-काँग्रेसी मिनिस्ट्रियाँ बनते बनते बच ही गयीं। अैसी हालतमें समझ लीजिये अगर मंत्रिमंडलको रद्दोबदल करानेमें राज्यपालने अपने हथकंडे चलाये और वह अपने मनके मंत्रिमंडलके चक्करमें रहा तो शायद विधान सभाके विरोधके कारण शासन ठप्प ही हो जावेगा। ध्यानमें रखना है कि मुख्य मंत्री आदिकी नियुक्ति भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गवर्नरके अुस विवेकाधिकार पर निर्भर है कि वह नपी-तुली पार्टी-संख्याओंके बीच जिसे चाहे अुसे बहुमतका नेता मान ले। अिमर्जेंसीकी घोषणा यद्यपि केवल दो हफ्तोंके लिये है तो भी राज्यपाल अुस घोषणाको राष्ट्रपतिके समक्ष रखकर, अुधर राष्ट्रपति लोक सभामें रखकर अधिक स्थायी बनवा सकता है। अिस परिस्थितिमें अूपरी बात है कि राष्ट्रपति अपने नामजद राज्यपालका समर्थन न करेगा तो क्या मंत्रिमंडलका करेगा? तो अिसका बड़ा दुष्परिणाम होगा कि प्रांतीय स्वशासनका अेकदम अंत ही हो जावेगा। हर बातोंमें राज्यका मंत्रिमंडल राज्यपालका मुखापेक्षी, केन्द्रका मुखापेक्षी और राष्ट्रपतिका मुखापेक्षी बना रहेगा। यह प्रजातंत्रके लिये ख़तरनाक है; क्योंकि प्रजातंत्रका अुसूल है कि प्रजाकी जरूरतें संगठनके आधारस्थलपर संतुष्ट की जाती चाहिये, शिखर स्थलपर नहीं। राज्य आधार है और राष्ट्रपति शिखर। अिस व्याख्याके अनुसार अैसा प्रतीत होता है कि राज्यपाल प्रस्तुत संविधानकी कार्यकारिणीका कुछ बेढब और अप्रजातांत्रिक अंश है क्योंकि अुसे हदसे ज्यादा विवेकाधिकार दे दिये गये हैं।

अिस प्रसंगमें अंग्रेजी सम्राट, अथवा कनेडा, आस्ट्रेलियाके गवर्नर ज़नरलोंकी तरह राज्यपालको संवैधानिक अुच्चाधिकारी बनाकर परामर्श, निरीक्षण और प्रतिवेदन (रिपोर्ट) करने भरका अधिकार दिया जाता, अितने असीम विवेकाधिकार नहीं। आम तौरसे हमें यह भरोसा है कि राज्यपाल संवैधानिक अुच्चाधिकारियोंकी परंपराओंका पालन कर अपने प्रमुखमंत्री और मंत्रिमंडलकी सहायता तथा परामर्शसे ही शासन चलावेगा, और राष्ट्रपतिमें केन्द्रीयकृत सत्ताओं और अधिकारोंके अनिष्टकारी अंशोंका परिहार करेगा, ताकि प्रजातंत्र प्रजाके सौख्य, समृद्धि और सर्वोत्कर्षकी भूमिका बने। वैसे समस्या तब खड़ी होगी ही जब कि केन्द्र और राज्यमें विभिन्न दलोंके मंत्रिमंडल हों।

अेक बात और है। क्या राज्यपालोंकी नियुक्ति अथवा नामजदगी राष्ट्रपति अपने प्रधानमंत्रीकी सलाहसे करेंगे? संविधानमें अैसी कोअी मजबूरी नहीं और यह बात अत्यंत कल्याणप्रद है। अैसे मौके अवश्य ही आवेंगे जब कि राज्योंमें सरकार-निर्माणके वक्त पहलेसे नये राज्यपालकी नियुक्ति होनी आवश्यक होगी। अिसी वक्त भारत सरकारका मंत्रिमंडल भी यदि चुनावके चक्करमें हुआ, जो बिलकुल हुआ ही है और आम तौरसे होता भी जावेगा तो क्या राष्ट्रपतिको प्रधानमंत्रीसे निष्पक्ष सलाह और मदद मिल सकेगी। क्या वे अुस तटस्थतावाले व्यक्तिको राज्यपाल नियुक्त कर सकेंगे कि जो निष्पक्षतापूर्वक राज्योंमें बहुमतकी ही अुचित सरकार बनवावे? अिस प्रसंगमें हम यही कह सकते हैं कि यह अधिकार राष्ट्रपतिके ही विवेकार हो। यह बात जुदी है कि राज्यपालके अूपर अिधर यदि विधान सभाके अिंपीचमेन्ट (महाभियोग) की नकेल है तो राष्ट्रपति द्वारा डिसमिस होनेकी नकेल भी संविधानमें होनी चाहिये।

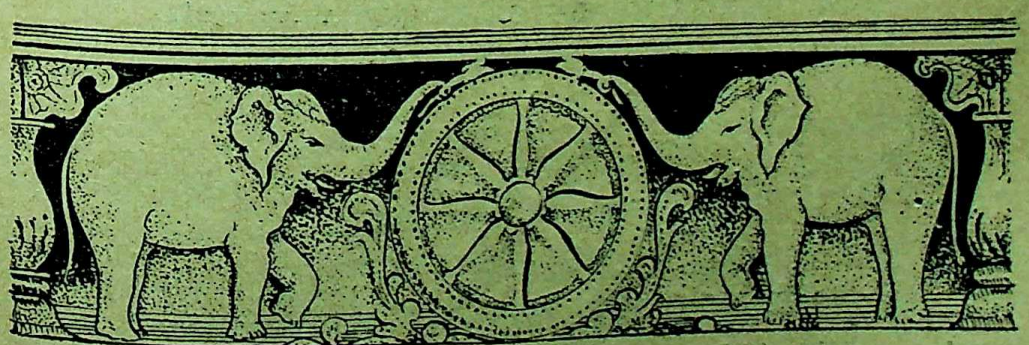

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वसंत गीत

:श्रीमती कमला चौधरी:

नवल वसंत आम बौराये, शोभित सुरभित डाली-डाली।
वन वन सारे तरुवर फूले
महक उठी फिरसे अमराओ
लहके गुल मोहर रतन् भरे
तरुपर बरस रही अरुणाओ
नैनन घन चपला बन कौंधै नव ऋतुकी लाली हरियाली
नवल वसंत आम बौराये शोभित सुरभित डाली-डाली।
सरसों ऊपर कंचन सरसै
नभ-तारावलि भूपर छायी
शत-शत नूतन पल्लव उपजे
प्रांतर प्रांतर नव हरियाओ
चट चट चटकैं मृदु मृदु कलियाँ श्यामल श्यामल कोमल बाली
नवल वसंत आम बौराये शोभित सुरभित डाली-डाली।
नवल कमल दल पीले-पीले
शत पद्मा खिल-खिल मुसकायी
चितवनके शर ऊषा बेधै
उमगी पद्मन तन तरुणाओ
गुन गुन गुन गुन गूँजत मधुकर कुह कुह कूकत कोकिल काली
नवल वसंत आम बौराये शोभित सुरभित डाली-डाली।
पाटल-भाल गुलाबी आभा
धवल सलज कलिका हुलसायी
मंजुल मंजुल सौरभ सिंचित,
कुसमन तन अनुपम सुघरायी
यौवन मदिरा मधु ऋतु बाँटत तृन दल पीवत भर-भर प्याली
नवल वसंत आम बौराये शोभित सुरभित डाली-डाली।
लख अपरूप सुप्रकृति विमोहित
यौवनके मदसों अलसाओ
सौरभके संग मत्त समीरण
जाग उठे तब लै अंगड़ाओ
अित अुत डोलत प्रकृति जगावत झूमत विहँसत दै दै ताली
नवल वसंत आम बौराये शोभित सुरभित डाली-डाली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रीक ट्रेजिडीज़

: श्री बाबासाहेब खापर्डे :

"ट्रेजिडी" शब्दका अर्थ आजकल साहित्यमें दुःखान्त नाटकके अर्थमें प्रचलित है। वास्तवमें अिस शब्दका मूल अर्थ अैसा नहीं है। ट्रेजिडी शब्द पारिभाषिक है। यहाँ अुसका प्रयोग अिसी रूपमें किया जायेगा।

भारतवासी प्रतिवर्ष अनेक देवताओंके अुत्सव मनाते हैं। ग्रीक लोग भी अपने देवताओंके अुत्सव मनाते हैं। डायोनिसस, धान्य, वृक्ष, फल और लताओंके देवता थे। अिस देवताकी प्रसन्नतासे आराधकको विपुल धन, धान्य, समृद्धि तथा विविध भोग-विलासकी प्राप्ति होती है, यह धारणा थी। अिस देवताके दो अुत्सव मनाये जाते थे जिनमेंसे अेक वसंतकालीन था। अूपर वाली आधी देह आदमीकी जिसके सिरपर जटा, पैनी दाढी, कमरमें डोरेका कमरबन्द (कमर दोरा) तथा नीचेवाली आधी देहमें बकरेके पाँव और घोड़ेकी पूंछ... डायोनिससकी कल्पना अिस रूपमें की गयी थी। अिस प्रकारकी आकृतिका, डायोनिससका पुतला अथेन्समें विद्यमान है। यह रूप क्रमशः परिवर्तित हुआ, कालांतरमें अुसे सुकुमार कुमारिकाका स्वरूप प्राप्त हुआ और अूबड़ खाबड़ डायोनिसस लावण्य लतिका बनी।

डायोनिसस संबंधी अुत्सवमें लोग गोल घेरा बनाकर नाचते तथा घेरेके बीच डायोनिससकी मूर्ति स्थापित करते थे। अिस नृत्यमें बकरे जैसा वेश और हावभाव करते हुअे डायोनिससकी स्तुतिके गीत गाये जाते थे। ये गीत डिथेरॅम छन्दमें रचे जाते थे और यह नृत्य भी डिथेरॅम ही कहलाता था। सबसे अच्छा गानेवाले व्यक्तिको पुरस्कार स्वरूप अेक बकरा मिलता था। बकरेका माँस भक्षण अिस अुत्सवका अेक गौण अंग था। ग्रीक भाषामें बकरेके अर्थमें 'ट्रॅगी' शब्द है। डायोनिससके वासन्तिक अुत्सवमें बकरेका महत्त्व था अतअेव अिस अुत्सवका नामकरण आगे चलकर ट्रेजेडी हुआ। ट्रेजेडी याने अजा सम्बन्धी... बकरेके बारेमें।

अिस अुत्सवमें घेरा बनाकर नाचते हुअे, घेरेके बीच सामने चबूतरेपर अेक व्यक्ति खड़ा होकर गीत गाया करता था। अिन गीतोंमें डायोनिससकी स्तुतिको पुराण कथाओंकी तथा वीरोंके पराक्रम वर्णनकी जोड़ मिली। और कुछ समय बाद चबूतरेपर गानेवाला गायक, अकेला ही अनेक पात्रोंके संवाद हावभाव पूर्वक सुनाने लगा। किन्तु राजा, रानी तथा संवाद-वाहक अिन सबके संवाद अेक ही व्यक्ति कहा करें यह असुविधाजनक प्रतीत होने लगा। और भिन्न-भिन्न संवाद हावभाव पूर्वक कहनेके लिये भिन्न-भिन्न अभिनेताओंकी योजना हुअी। अिस प्रकार नट संख्या अेकसे अनेक तक बढी। चबूतरेकी लम्बाअी चौड़ाअी बढ़कर अुसकी रंगभूमि बनी और ट्रेजेडी नामक अुत्सव नाटक बना। पात्रोंकी वेश परिवर्तन संबंधी सुविधाके लिये चबूतरेके निकट ही पीछेकी ओर अेक कुटिया बनाया करते थे। कुटियाके लिये ग्रीक भाषामें 'स्किनी' शब्द है जिसका अपभ्रंश हुआ 'सीन'। आज अुसका ग्रीनरूम बन गया है। शायद अिस कुटियाको हरा रंग दिया करते हों।

अिस अुत्सवमें अपने-अपने नाटकोंका अभिनय कर नाम पानेकी लालसा अेवं स्पर्धासे प्रेरित सैकड़ों कवियोंने हजारों नाटक लिखे। यह जरा भी अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं। अुस कालमें मुद्रणालय नहीं थे और जमाना अस्थिरताका था। अतः अुस समयका अधिकांश साहित्य कालके गालमें समा गया। तत्कालीन कुछ कवियोंकी कुछ नाट्य कृतियां आज भी अुपलब्ध हैं। अुस समयकी मान्यताअें, संस्कृति, और साहित्यका अितिहास जाननेकी दृष्टिसे वे नाट्य-कृतियां पठन अेवं मनन करने योग्य हैं।

अिन कवियोंमें प्रथम नाम लेने योग्य कवि थेस्पिस हुआ। अनेक अभिनेताओंसे पहला नाटक अिसीने करवाया। अिसके बाद अॅसफेलिस आया। वह कहता है, देवताने मुझे दृष्टांत देकर आज्ञा की कि तू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाटक लिख, अिसलिये मैंने नाटक लिखे। असफेलिस अत्यंत शूर योद्धा और सेनानायक था। ग्रीक अितिहासमें मॅरेथानका भीषण संग्राम विश्वविख्यात है। अॅसफेलिस अिस संघर्षका प्रमुख योद्धा था। 'सप्लायन्सेस' अर्थात् शरणागत अुसका अेक नाटक है। यह नाटक पुराने रिवाज और नये सुधारोंके बीचकी कड़ी माना जाता है। अेक ही नाट्य संविधानके सुविधाजनक खंड बनाकर, प्रत्येक खंड कथापर अेक-अेक नाटक रचकर, अनेक नाटकोंमें अेक ही संविधान गूंथनेकी कल्पना अिसीने अुत्पन्न की और अिस शैलीके नाटक लिखे। अिस प्रकारके सम्पूर्ण तीन नाटकोंको ट्रिलॅजी कहा जाता था। सौभाग्यसे अॅगमेमनॉम, लायवेशन्स और काअिन्डली वन्स यह अेक ही संविधानके तीन खंडोंपर लिखी गयी अॅसफेलिसकी ट्रिलॅजी (तीन नाटक) आज अुपलब्ध हैं। तीनों नाटकोंके अिस समूहका नाम ऑरेस्ट्रिया है। अेक ही संविधानके तीन खंडोंमेंसे प्रत्येक खंडपर अेक अेक नाटक लिखनेसे प्रत्येक खंड मूल संविधानका अंक (अॅक्ट) हुआ और अनेक अंकी नाटक अुत्पन्न हुआ। अिसीके साथ दो अंकोंके बीच काफी समय बीत चुका है, यह दिखाना कविके लिये संभव हुआ। अनेक अंकी आधुनिक नाटककी यह पहली नींव है।

अॅसफेलिसकी मृत्युके संबंधमें बड़ी विचित्र कथा है। अेक गरुड़ अपने चंगुलमें कछुअेको पकड़कर आसमानमें अुड़ रहा था। अुड़ते अुड़ते कछुआ गरुड़के चंगुलसे छूटा और अॅसफेलिसके सिरपर गिरा। अिस दुर्घटनासे दोनोंकी मृत्यु हुअी। अॅसफेलिसके बाद सोफोक्लीज़ और युरिपायडीज़ नामक दो कवियोंका अुदय हुआ। सोफोक्लीज़ वास्तवमें अॅसफेलिसका समकालीन था और अुन दोनोंकी आयुमें केवल २८ सालका अन्तर था। किन्तु सोफोक्लीज़ने अॅसफेलिसकी अपेक्षा अधिक सुधार किये, अिस दृष्टिसे अुसे परवर्ती मानना पड़ता है। सोफोक्लीज धनिक परिवारमें पैदा हुआ। वह अेक मंदिरका पुजारी था। पुजारीका अधिकार अत्यंत महत्वपूर्ण और मजेदार माना जाता था। अुसकी दिलदार तबीयतका पता अुसके नाटकोंसे चलता है। साथ ही वह बहादुर सिपाही और कूटनीतिज्ञ भी था। अन्य देशोंके दरबारमें राजदूतकी जिम्मेदारी निभाकर अुसने नाम कमाया था। अुसने अपने नाटकोंमें क्रमशः बीती हुअी घटनाओंका अितिहास मात्र नहीं लिखा, प्रत्युत कार्यकारण परंपराका विवेचन कर मनुष्यकी अन्तर्गत भावनाओं और विचारोंका चित्रण प्रस्तुत किया है। अपनी कविता अेक सांसमें सुनानेके हठमें वह श्वास अवरुद्ध होकर मरा।

युरिपायडीज दार्शनिकताका प्रेमी था। अेकांत अुसे अत्यन्त प्रिय था। अुसकी दो पत्नियाँ थीं। दोनों दुष्टा थीं। अुनसे चिढ़कर अुसने अेक नाटकमें स्त्री जातिकी खूब निन्दा की। अिससे प्रेक्षक महिलायें बिगड़ खड़ी हुअीं और युरिपायडीजको मार डालनेका अुन्होंने संकल्प किया। अिस बातका पता चलते ही अुसने महिलाओंसे निःसंकोच क्षमा याचना की और पुनः अैसा कभी न लिखनेका वचन दिया। तभी अुस संकटसे वह सही सलामत मुक्त हो सका। युरिपायडीजने अिस घटनाके बाद अत्यन्त महान, आदर्श अेवं सद्गुणी नायिकाओंका सृजन किया। कुछ लोग कहते हैं शेक्सपियरने यही आदर्श सामने रखकर डेस्डिमोना और ओफिलियाका चित्रण किया है। वीर, करुण और हास्यका संयोग करनेवाला युरोपका यह पहला कवि माना जाता है। अिसी तरह पुराण कथाओंका आधार न लेकर केवल काल्पनिक कथाओंपर आधारित नाटक लिखनेवाला भी अुधरका पहला कवि यही है। अुसका "मिडिया" नाटक बहुत प्रसिद्ध है। ग्रीकोंकी अधिकांश पुराण कथाअें दुःखान्त हैं जिससे नाटककी क्रिया-पोषक भावनायें क्रोध, शाप, शोक, प्रतिशोध आदि तीव्र रूपमें व्यक्त हुअी हैं तथा रौद्र, वीर, करुण आदि रसोंका अिन नाटकोंमें अच्छा परिपाक हुआ है।

अैसा अुल्लेख मिलता है कि, अीसाके ३२४ साल पूर्व झेलम नदी-तटपर अलेक्जन्डरकी फौजी छावनीमें 'अेजन' नामक ट्रेजेडीका प्रयोग किया गया था। अिस नाटककी आज केवल सत्रह पंक्तियाँ अुपलब्ध हैं। अिस शैलीके नाटक अी. पू. करीब ६०० से १२५ तक लिखे गये। स्थूल दृष्टिसे अिसमें करीबन ३०० सालका युग समाविष्ट होता है। दूसरे टोलमीके शासनकालके पश्चात् अिस प्रकारकी ट्रेजेडीज लिखना बन्द हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अॅथेन्स नगरके नाटच गृहमें करीवन तीस हजार दर्शकोंके बैठनेकी सुविधा थी। आरंभमें टिकटोंका चलन नहीं था, किन्तु बादमें यह तरीका चल पड़ा। टिकट चार आने कीमतका था। अपने नाटकका बोल-बाला करनेके लिये कविगण किरायेके प्रेक्षक लाया करते थे। प्रसंग विशेष पर दंगा या लड़ाओ झगड़े भी हुआ करते थे। 'वन्स मोर' का व्यवहार था। रुचने-वाले कार्यक्रमोंको तालियां मिलतीं और अप्रियको अनादर सहना पड़ता। अप्रिय अभिनेतापर फल और प्रसंग विशेष पर पत्थर तक फेंके जाते। अॅसफेलिस अैसे ही अेक प्राणांतक संकटसे मरते मरते बचा, और सिरपर पांव रखकर भागा। पांव पटक कर शोर मचाना अुसी समयकी पुरानी प्रथा है। नाटचभवनमें किसी भी विभागसे किसी भी अन्य विभागमें जानेके लिये मार्ग रखे जाते थे। महिलाओंके लिये सुरक्षित स्थान रखे जाते थे। नाटच प्रयोग दिनमें हुआ करते थे। अेक ही कविके प्रयोग सवेरेसे शामतक होते थे। स्त्रियोंका अभिनय पुरुष ही करते थे। मुंहको रंग लगानेका अुल्लेख कहीं नहीं मिलता। तब दिनके अुजालेमें स्त्रियोंका अभिनय पुरुष किस प्रकार करते होंगे, यह कल्पना करनेका विषय है।

नाटच-भवनकी व्यवस्था देखनेके लिये सरकारकी ओरसे आरकेन नामका अधिकारी नियुक्त हुआ करता था। कौन अभिनेता किस पात्रका अभिनय करें, यह वही निश्चय करता था। अभिनेताको निश्चित अभिनय करनेके लिये विवश होना पड़ता था और कविको वह अभिनेता स्वीकार करना पड़ता था। सार्वजनिक रूपसे परीक्षक नियुक्त हुआ करते और सर्वोत्तम सिद्ध होनेवाले अभिनेता नाटककारको देश भरमें सम्मान प्राप्त होता था। अुनके गलेमें 'आयव्ही' नामक लताकी माला पहनायी जाती थी और अुसीके पत्तोंके मुकुट अुनके सिरपर रखे जाते थे। असंख्य धन राशिसे अिन किरीटोंको अधिक मानते थे।

प्रत्यक्ष युद्ध अथवा मारपीट रंगभूमिपर नहीं दिखायी जाती थी। "ग्रीक ट्रेजेडीज़" वीर योद्धाओं और मर्दानी तबीयतके लोगोंने लिखी है अत: अिन नाटकोंमें शृंगारको कहीं भी प्रवेश नहीं मिल सका। अिसी कारण यूरोपमें दु:खान्त नाटकोंका 'ट्रेजिडी' नाम-करण हुआ। ग्रीक नाटकोंकी रूपरेखा समझनेके लिये अॅसफेलिसकी ट्रिलेजीके तीनमेंसे प्रथम अॅगमेमनॉम नामक नाटकका संक्षिप्त कथाभाग निवेदन करता हूं।

अॅगमेमनॉम आरगॉसका राजा था। अुसके पिताको अुसके भाअीने भयंकर अभिशाप दिया। अॅगमेमनॉमके भाअीकी पत्नी हेलन अत्यंत सुन्दर थी। ट्रायका राजकुमार अुसे भगाकर ट्राय ले गया। बदला लेनेके लिये अॅगमेमनॉमने ट्रायपर आक्रमण करनेके अिरादेसे अेक बेड़ा तैयार किया। किन्तु 'आर्टिमिस' नामक देवताके कोपसे भयंकर तूफान अुठा और अॅगमे-मनॉमका बेड़ा आफतमें पड़ा। देवताका कोप शमन करनेके लिये अॅगमेमनॉमने अपनी बेटी अेफीजिनियाकी बलि देनेका निश्चय किया और स्वयं ही देवतापर अुसका बलिदान दिया। अपनी बेटीका बलिदान देनेके कारण अॅगमेमनॉमकी रानीने राजासे बदला लेनेका निश्चय किया। रानीका नाम था क्लायटेमनिस्ट्रा। अॅगमेमनॉमके चचेरे भाअी अेजिथसने अिस काममें रानीकी सहायता की; क्योंकि रानी अुससे संबंधित थी। दस साल युद्ध करनेके बाद अॅगमेमनॉमने ट्रायपर विजय प्राप्तकी और विजयी होकर राजधानीमें लौट आया। लौटते हुअे ट्रायकी राजकन्या कॅसेन्ड्राको दासीके रूपमें अपने रथमें बिठा लाया। रानीने दिखावटी प्रसन्नतासे, राजप्रासादके सिंहद्वार तक जाकर अुसका शाही स्वागत किया और ज़रीकी चादरोंपर चलाते हुअे अुसे राजभवनमें ले गयी। राजा नहानेके लिये स्नानगृहमें गया था, अुसी समय रानीने अुसपर कपड़ोंका आवरण डाला और राजाके अुलझनेपर अुसे अपने हाथसे कुल्हाड़ीके घाव लगाकर मार डाला। राजाकी चीख-पुकार सुनकर ट्रायकी राजकुमारी कॅसेन्ड्रा वहाँ दौड़ी आयी। रानीने अुसी कुल्हाड़ीसे अुसे भी मार डाला। अिस प्रकार रानीने अपनी प्रतिशोध-पिपासा राजा और कॅसेन्ड्राके रुधिरसे तृप्त की। अेक ओर राजा और दूसरी ओर कॅसेन्ड्राके खूनसे लथपथ शव पड़े हैं और रानी रक्तरंजित कुल्हाड़ी हाथमें लेकर विजयोन्मादमें फूली हुअी बीचमें खड़ी है... यह अन्तिम दृश्य दिखानेपर नाटक समाप्त होता है।

अुक्त नाटकसे अिसके बादकी कथापर लिखे गये अन्य दो नाटकोंका स्वरूप किस प्रकारका होगा अिसकी कल्पना पाठकोंको सुगमतासे हो सकेगी।

(मराठीसे अनुवादक:— श्री अनिलकुमार, साहित्य-रत्न)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुनियादी-पत्थर

: श्री. रामरत्न बडोला :

मैं रेस्तरांमें बैठा हुआ चायकी चुसकियाँ ले रहा था। बाहर मौसम बदरीका था। जाड़ोंके मौसममें बादलोंका आकाशपर छा जाना अखर गया था। अिधर दो दिनसे वर्षा भी हो गयी थी और सूरजने नव-दुल्हिनकी तरह घूंघट हटानेकी कोशिश नहीं की थी। नव-दुल्हिनके मुखड़ेको देखनेके लिये दिल मचल रहा था। कार्यवशात् आगरा आनेपर मेरा सारा दिन रेस्तरांमें ही बीतता। नगरसे अधिक परिचय न होनेके कारण सिवाय रेस्तरांकी पनाहके और चायकी गरम घूंटोंकी शरणके अलावा मेरा कोअी सहारा नहीं था। अपना काम पूरा कर चुका था और दिलमें केवल अेक ख्वाहिश रह गयी थी— ताजमहलको चाँदनी रातमें देखने की। अिसी अिन्तजारमें था कि बादलोंकी ये लापरवाह सेनायें अपने खतरनाक मोर्चोंको आसमानसे हटा ले तो चाँदनी रात नजर आये और जाड़ेकी ठिठुरन सूर्य किरणोंके सामने घुटने टेक दे।

"क्या चाय और लाअूं ?" बैराने आकर पूछा "हाँ ! अेक प्याली और बनाके ले आओ। जरा खौलती हुअी हो"। मैंने अुत्तर दिया और अपनेमें डूब गया। "चाय भी क्या नायब चीज है ? जिन्दगी क्या चायकी गरम चुसकीकी भांति नहीं—बढ़िया सोंधी और क्षणिक, लेकिन जीवन जैसे गहन, कठोर और महान सत्यको घूंटके सदृश समझना मेरी ज्यादती नहीं तो और क्या है ? मैं मन ही मन अपनेको फटकारने लगा। पर ताजमहल जिसे देखनेके लिये मैं आगेरेमें रुक गया हूँ क्या मेरी बातका समर्थन नहीं करता ? आज बादशाह शाहजहाँ कहाँ है, केवल अितिहासके पन्नोंमें ? क्या अितिहासज्ञोंके मस्तिष्कों द्वारा पनपे विचार कलमकी नोकसे शाहजहाँके जीवन सत्यको प्रमाणित करनेका दावा कर सकते हैं ? क्या शाहजहाँका जीवन, अितिहासके पन्नोंमें ही छिपा रह सकता है ? कहाँ है मुमताज जिसने शाहजहाँके गलेमें बाँहें डालकर जिन्दगीको प्यार समझा था। क्या ताजमहलके विशाल संगमरमरी मकबरेमें ? क्या दुनियामें शाहजहाँ और मुमताजका प्यार अमर था ? औरोंका नहीं, क्योंकि ताजमहलका निर्मल सौन्दर्य अुसका जोर-जोरसे विज्ञापन करता है; साक्षी है प्रेमका, अुन्नत शिखर अुठाये, जमुनाके नीलम जलपर परछायी डालता हुआ और चाँदकी चाँदनीको पीता हुआ।

"बाबूजी ! यह बादल कहाँसे आते हैं ?" बैराने चायकी प्याली मेजपर रखते हुअे पूछा।

"समुद्रसे"

"नहीं साहब ! लोग तो कहते हैं कि बेचारे प्रेमके पागल जहाँतहाँ भटकते फिरते हैं और जिधर भी चलते हैं आँसू गिराकर चलते हैं।" अुसने कहा।

"क्या सूझ है ? प्रेम क्या हो गया, बीमारी हो गयी" मैं मनमें सोचकर बोला। "तब" ?

लेकिन अिनकी दुनिया कभी आबाद न होगी ?

"क्यों" ? मैंने जिज्ञासासे पूछा।

सुनते हैं अिन्हें श्राप है। अेक बिरहीको अिन्होंने सता दिया था और बिरहीने लम्बी श्वास छोड़कर कहा था, "जा, तू मेरी श्वासोंकी तरह धुंआ बनकर बिरही बना आकाशमें सदा चक्कर लगाया करेगा और तेरी अिश्ककी दुनिया कभी आबाद न होगी। तबसे बेचारे बादल बने तड़फते हुअे आकाशमें घूम रहे हैं और...।"

"अच्छा, चुप रहो। यह बताओ कि तुमने भी अिश्क-विश्क कमाया है कहीं।" मैंने अुसे समझानेके लिये पूछा।

"मैंने तो नहीं साहब, पर मेरे पुरखोंने कमाया था।" मुझे अुसके अुत्तरपर हँसी आ गयी। बातका मजा लेते हुअे मैंने कहा। "अच्छा, कुर्सी खींचकर बैठ जाओ और अितमीनानसे सुनाओ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"और गाहक..." अुसने चारों ओर देखा। रेस्तरांमें मेरे अतिरिक्त और कोअी नहीं था। बाहर नन्हीं-नन्हीं बूंदें पड़ रही थीं।

"अिस बारिश और जाड़ेमें अब कौन आयेगा? तुम आरामसे बैठकर कहो। हाँ! अेक प्याली चाय चाहो तो अपने लिये भी बनाकर ले आओ।"

"पर मैनेजर साहब!" अुसने डरकर कहा। मैं कह दूंगा। कोअी हर्ज नहीं। तुम अितमीनानसे सब सुनाते जाओ।" मैंने अुसकी परेशानी दूर करते हुअे कहा।

वह बैठ गया। "क्या कह रहा था मैं?"

"अरे वही पुरखोंके अिश्ककी बात।" मैंने हंसते हुअे कहा।

मेरे होठोंपर हंसी देखकर वह बहुत गम्भीर हो गया। मालूम पड़ता था कि अुसे मेरी हंसी जरा भी अच्छी नहीं लगी। आप हंसते हैं बाबूजी? लेकिन ख्याल रखियेगा और यकीन मानियेगा कि मेरी कहानीका हरफ़ हरफ़ सच है। वह चिढ़ता हुआ-सा बोला।

अुसके अिन शब्दोंके साथ ही मेरे होंठोंकी मुस्कराहट भाप-सी अुड़ गयी और अुसने कहना आरम्भ किया।

"बाबूजी, मैं शहादत अलीका खान्दानी हूँ। शहादतअली जो कि अेक संगतराश था, कारीगर था और था मशहूर कलाकार। जब वह अपनी छेनी और हथौड़ेसे पत्थरको अिन्सानकी शक्लमें ढालता तो मालूम पड़ता कि पत्थरकी निर्जीव शिलाओंमें प्राण आ गये हैं और अेक नये अिन्साननें धरतीपर जीवन ले लिया है। अेक दिन बादशाह शाहजहांने शहादत अलीको बुला भेजा। बादशाह अुन दिनों कुछ गमगीन रहते थे। शहादतको हुक्म दिया। "शहादत! मैं मुमताजकी यादमें अेक अैसा मकबरा बनवाना चाहता हूँ जिसका सानी दुनियामें कोअी न हो। संगमरमरका अेक कलात्मक भवन जिसकी अूंची दीवारें, गोल गुम्बद और खूबसूरत कंगूरे शाहजहाँ और मुमताजके प्यारको अमर कर दें, जिसका सफेद संगमरमर मुमताजके सौन्दर्यका प्रतीक बनकर भविष्यमें मुमताजके सौन्दर्यको अमर-अमर बना दें और जिसकी कलामय आकृति शाहजहाँकी कला-प्रियताकी अेक अमिट निशानी हो।"

"पर अिस परिवर्तनशील जगतमें कौनसी वस्तु चिरस्थायी हुअी है, जहांपनाह..." शहादतने विनीत होकर कहा।

"चुप रहो। शाहजहाँ और मुमताजके प्यारको अितना थोथा न समझो। तुम्हें फारस और देशके अन्य कोनोंसे आये हुअे शिल्पकारोंके साथ स्मृतिकी सजीव प्रतिमा बनानी ही होगी। अपने हाथोंकी सुन्दर कलाको शाहजहाँकी कला-प्रियताके लिये लगाना होगा। नहीं तो..अच्छा। अब कलसे कामपर जाओ। तुम्हारी कलाके लिये तुम्हें अुचित पुरस्कार दिया जायगा।"

बादशाहके तेवरोंके आगे बेचारा शहादत क्या कहता, चुपचाप सिर झुकाये चला गया। वह सोच रहा था, यदि वह बादशाहसे साफ मना कर दे तो ... तो.....जैसे कोअी कह अुठा .....तो..... शहादतका सिर तलवारकी धारपर होगा?

"क्यों?" शहादतने अुस ध्वनिसे अुत्तर पूछा। "क्यों कि ताजमहलके निर्माण न होनेसे शाहजहांका प्यार धुंधला पड़ जायगा और आनेवाली दुनिया शाहजहांको कला-प्रेमी बादशाह न कह सकेगी।"

"तो क्या कला-प्रेमी बादशाहकी प्रशंसा होगी और कलाकारकी नहीं? क्या बादशाहोंके अिश्कको अिश्क माना जायगा, सुन्दर और महान्, और गरीबोंका नहीं?"

"चुप रहो। तुम्हें अिन गहन विषयोंपर सोचनेका भी अधिकार नहीं है। बस तुम्हारा काम छेनी, हथौड़ा लेकर कलाकी सेवा करना है। अपने भाग्यकी सराहना करो कि तुम्हें बादशाहने अैसी अमर कृतिके निर्माणमें शरीक होनेका अवसर दिया है।"

\+ \+ \+

शहादतने छेनी-हथौड़ा रख दिया। सुबहसे वह लगातार कामपर जुटा था और अिस समय साँझ हो गयी थी। सूरज कल आनेका वादा करके चला गया था। शहादतका शरीर टूटने लगा। अुसने थकान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिटानेके लिये अंगडाअी ली और प्यास बुझानेके लिये जमुना-तटकी ओर चला। चांद मुस्कराता अुगने लगा था और अुसकी निर्मल किरणें जमुनाके नीलम जलपर नाच रही थीं। शहादत अुन्हें देखकर अेक बारगी सोचने लगा। "अेक दिन चन्द्र-किरणें अिसी भांति ताजमहलके संगमरमरी श्वेत मकबरेपर पड़ेंगी और ताजमहलकी सौन्दर्य-सराहना करते दुनिया फूल अुठेगी। शाहजहां और मुमताजकी स्मृति सजग हो अुठी; पर कौन जानेगा बेचारे शहादतको, जिसकी छेनीने संगमरमरके बेतरतीब टुकड़ोंको संवारकर सौन्दर्य दिया है, मुमताजके सौन्दर्यको अमर करनेके लिये। शहादतने छककर पानी पिया। यमुनाके जलसे टकराकर शीतल बयार लहरोंपर चल रही थी।

शहादत जागा तो, रजनीने आंचल समेट लिया था और लज्जासे रक्तिम अुषा दिनकरकी प्रतीक्षा कर रही थी। शहादतने अुठकर चारों ओर देखा। वातावरण स्तब्ध था। समीप ही अेक छोटी-सी रोशनी टिमटिमा रही थी। शहादत झोपड़ीकी ओर बढ़ा। भूखके मारे हाल बेहाल था।

"मुझे कुछ खानेको चाहिये। भूखसे मरा जाता हूं।" शहादतने दरवाजा खट्खटाया। द्वार खुला। यौवनके द्वारको खटखटाती हुअी और रूपकी आभाको छिटकाती हुअी अेक तरुण बाला अुपस्थित हो गयी। सौन्दर्यके अिस कोहनूरके वस्त्र बहुत जगह फटे थे और घुटनों तकका घाघरा पहिने थी। "क्या चाहिये!" शहादतसे अुसने पूछा।

शहादत जैसे अिस दुनियामें न था। झोपड़ीके अिस फूलको गरीबीके कीचड़में खिला हुआ देखकर वह न जाने क्या-क्या सोच गया। यह सौन्दर्य और यह चिथड़े वस्त्र, यह रूप और यह दीनता, यह आभा और यह घास-फूसकी झोपड़ी; कितना विरोध था अिन सबमें, परन्तु फिर भी जीवनका पहिया घूमनेमें न चूकता था।

'क्या चाहिये? कौन हो तुम? कहांसे आये हो?' अेक साथ फिर प्रश्नोंकी बौछारसे शहादत चौंका।

"मुझे बेहद भूख लगी है। कुछ खानेको दो।"

"बैठ जाओ! मैं अभी लाती हूँ।" कहते हुअे युवतीने चटाअी शहादतकी ओर सरकायी और भीतर चली गयी। थोड़ी देरमें भुनी मछली और रोटी लाकर शहादतके आगे रख दी। 'मट्ठा पियोगे?"

'ले आओ।' शहादतने कहा और रोटी खाने लगा।

मट्ठेके लोटेको शहादतके आगे रखते हुअे वह बोली। "तुम्हारी किस्मत है कि बापू तड़के नाव लेकर चले गये हैं और अुनके लिये मैंने अभी अुठकर ताजा मछली और रोटी बनायी है। नहीं तो अितनी सुबह तुम्हें रोटी कहाँ मिलती? क्यों बहुत दूरसे आ रहे हो क्या?"

"नहीं। लेकिन कल रात बिना खाये-पिये ही जमुनाके किनारे सो गया था।" शहादतने कहा।

"क्या काम करते हो तुम?" युवतीने पूछा।

"संगतराश हूँ, मूर्तिकार हूँ और आजकल ताज-महलके निर्माणमें लगा हुआ हूँ बादशाह सलामतके हुक्मसे।"

"ताजमहल क्यों बनवाया जा रहा है?" युवतीने पूछा।

"मुमताज बेगमकी यादमें।"

"कहाँ बन रहा है वह?"

"तुम्हारे ही नज़दीक। क्या तुम अपने नजदीक बहुतसे आदमियोंकी भीड़ नहीं देखती? कुछ कारीगरोंको नहीं देखती जो दिनभर अितनी देर तक वहाँ काम करते हैं तब भी महीनोंमें अेक फुट दीवार खड़ी हो सकती है?

"अितनी देर क्यों लगती है बनानेमें?"

"बादशाहकी आज्ञा है कि जरा भी नुक्स हो तो फौरन अुजाड़ दो और नअी दीवार चिनो।"

"अैसा क्यों?"

"क्योंकि बादशाह अुसे दुनियामें सबसे खूबसूरत और कलात्मक मकबरा बना देना चाहते हैं।"

युवतीने अेक दीर्घ निश्वास छोड़कर पूछा। "क्या, मैं अुसे देखनेके लिये कल आ सकती हूँ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हुक्म तो नहीं है पर तू मेरा नाम लेकर कहना कि मैं शहादतके लिये हमेशा भोजन पहुँचाने आऊँगी। क्या तैयार हो रोज मेरे लिये रोटी पहुँचानेको ?" शहादतने युवतीके नेत्रोंमें नेत्र डालकर पूछा।

"तैयार हूँ। लेकिन....."

"क्या नाम बताया था अपना ?"

"शहादत। और तुम्हारा नाम"।

"नूरा।"

"नूरा। बहुत अच्छा नाम है। नूरसे बिगड़कर गरीबी नूरा बना देती है पर मछुअेकी बेटीका नूर अिससे न घट सकेगा। नूरा अब चलूँ। आकाशमें सूरजने अवतार ले लिया है—धरतीको तिमिरसे अुबारनेके लिये।"

\+ \+ \+

सन्ध्या समय कार्य समाप्त कर शहादत नूराकी झोपड़ीमें पहुंचा। नूरा चिन्तित लकड़ीके सन्दूकका सहारा लिये भूमिपर बैठी थी। शहादतने पुकारा। "नूरा! अभीतक दिया नहीं जलाया ? अन्धेरेमें क्या कर रही हो ?"

"शहादत! मेरे प्यारे शहादत! कल नूराका घर अुजाड़ दिया जायगा।" नूरा चिल्लायी।

"क्या बात है नूरा ? साफ-साफ कहो।"

"बादशाहके सिपाही आये थे। कह गये हैं कि झोपड़ी खाली कर दो कल सुबहतक, यहां ताजमहल बनेगा। झोपड़ी कल अुजाड़ दी जायेगी। हम कहाँ जायेंगे शहादत ?"

नूरा रोने लगी।

शहादतने नूराके आंसुओंको पोंछा। "बात ठीक है नूरा। ताजमहल बनेगा। हिन्दुस्तानकी मलकाकी यादगार। झोपड़ी अुजाड़ देनी होगी।"

कहकर शहादतने गहरी निश्वास छोड़ी। अेककी कब्रपर दूसरेका महल, यह शब्द अुसके होठोंपर आकर रुक गये।

\+ \+ \+

नूराकी झोपड़ी अुजाड़ दी गयी। नूराको शहादतने पत्थर ढोनेका काम दिलवा दिया। नूरा अक्सर शहादतके पास आकर बैठ जाती और शहादत कभी अुसकी ओर कभी ताजमहलकी अुठती दीवारोंकी ओर और कभी यमुनाकी गतिको देखता। अेक दिन शहादतने नूरासे कहा—"नूरा, यदि तुम्हें मुमताजकी पोशाक पहिना दी जाती तो ....."

"तो क्या ?" टोककर और रूठते हुअे नूराने अुत्तर दिया। "शहादत कपड़ोंकी झिल-मिलाहटमें नूरापर मर मिटता। तुम्हारी गरीब आंखोंमें बादशाहत की खुमारी कबसे आने लगी ?"

"पगली नूरा।" शहादतने हल्की-सी चपत नूराके अुभरे चमकते गोल कपोलोंपर देकर कहा। "यदि यह होता तो शहादत भी शाहजहांकी तरह "नूर-महल" खड़ा करवा देता लेकिन शहादत शिल्पकार होकर भी बादशाह नहीं। अच्छा नूर! अिसी तरह बैठी रहना। आज शहादत अिन्हीं संगमरमरके टुकड़ोंसे तुम्हारी मूर्तिका निर्माण करेगा।"

"अच्छा! अगर तुम नूर-महल बनवाते तो क्या मुझे मर जाना पड़ता मुमताज बेगमकी तरह ?" हंसते हुअे नूराने कहा।

चुप रह पगली। न नूर मुम, और न शहादत शाहजहां। दोनों सुबहसे शामतक परिश्रम करके अपनी हड्डियां तोड़कर खाते हैं। और शहादतकी छेनी संगमरमरपर चलने लगी। नूरा कलाकारकी दक्षताको देखती रही, छेनी चलती रही, हथौड़ा खुट खुट करता रहा, और नूराकी प्रतिमा संगमरमरके टुकड़ोंमें बनकर सजीव होने लगी। नूराके लम्बे लहराते घुंघराले बाल आकाशकी-सी काली घटाकी तरह, जामुन-सी आँखें, दाड़िमसे होंठ और नारंगीसे कपोल।

"नूरा।" "सहसा शहादत चिल्लाया। "तुम्हें खुदाने तो सब कुछ दिया है लेकिन समाजने कुछ न दिया। तब भी यह फटा हुआ घघरा मूर्तिमें कितना सुन्दर लगता है। देखो अेक बार, अपनेको संगमरके टुकडोंमें देखो।"

नूरा देखकर नाच अुठी। शहादतके गलेमें बाहें डाल चिपट गयी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यह क्या हो रहा है ?" तोपकी-सी भयानक ध्वनिसे दोनों चौंके। निरीक्षक सामने खड़ा था। बड़ी-बड़ी मूंछें और सामन्ती लिबास, अधिकार-मदका नशा और शाहंशाहकी जी हुजूरी लिये हुअे। आंखोंसे चिनगारियां बरस रही थीं।

"क्यों बे शिल्पकार, क्या यही काम हो रहा है ?"

"क्यों री छोकरी ? अिसी किस्मसे पत्थर ढोये जाते हैं ? दिन दहाड़े अिश्क हो रहा है। मूर्तिको बनवानेके लिये तुम्हें रखा है ? अेक मछुअेकी छोकरीकी मूर्ति बनानेमें तुमने कितने कीमती संगमरमरके टुकड़ोंको बरबाद कर दिया है।" कहते हुअे निरीक्षकने नूराकी प्रतिमापर ठोकर मारी।

शहादत जो अब तक सिर झुकाये अपराधीकी तरह सब सुन रहा था, आग बबूला हो गया। अुसने निरीक्षकके मुखपर जोरोंसे तमाचा जड़ दिया। सिपाहियोंने शहादतको बांध लिया। निरीक्षककी आज्ञासे शहादतके नंगे बदनपर सड़ासड़ कोड़े पड़ने लगे। नूरा शहादतसे लिपट गयी आज्ञाके लिये सिपाहियोंने निरीक्षककी ओर देखा। निरीक्षकने गर्जना की "दोनोंपर कोड़े पड़ने दो। पड़ने दो तब तक, जब तक कि अिनके जिस्मसे हरअेक कतरा लहूका न टपक जाय। अिन्होंने बादशाहके प्यारकी तौहीन की है। बादशाहके साथ गद्दारी की है। बादशाहके गुमाश्तोंपर हाथ अुठाया है। मुमताज बेगमकी यादगारको नीचा दिखाया है। कीमती संगमरमरको बरबाद किया है।"

कोड़े लगे और खून टपकता रहा। जब अेक बूंद भी लहू न बचा तो दोनों लाशोंको वहीं खड्डमें डालकर अूपर मिट्टीसे पाट दिया गया। निरीक्षकने खुद हथौड़ा लेकर नूराकी मूर्तिके टुकड़े-टुकड़े कर दिये और अट्टहास कर हँस पड़ा।

वर्ष बीतते गये और ताजमहलका सुन्दर मकबरा सिर अुठाये खड़ा हो गया। दुनियामें अेक नायब चीज अेक अतीव सुन्दर भवन अेक महान् कलात्मक मकबरा जिसकी बुनियाद शाहजहांके प्यारसे पड़ी, जिसकी खूबसूरती शाहजहांकी कला-प्रियतासे चमकी और जिसकी गरिमा मुमताजकी स्मृतिसे बढी।"

बैराकी क्रहानी सुनकर मैं पत्थर बन गया। मेरी नसोंका खून जैसे भूतोंने चूस लिया हो। हृदयकी धड़कन बिना चाबी दी हुअी घड़ीकी तरह अेकदम चलते चलते ठप्प हो गयी। लाशकी फटी आंखोंकी तरह मेरे नेत्र विस्फारित हो गये और पाँवोंके नीचे रौंदे हुअे गुलाबकी तरह मेरे होंठ फैल गये।

\+ + + +

मेघ-सेनायें सूर्य किरणोंके सामने पीठ दिखा चुकी थीं। आकाशका युद्ध दिनकरकी विजयके साथ समाप्त हुआ और चन्द्र-ज्योत्स्नाके आंचलमें शान्ति बटोर लाया।

चांदनी रातमें ताजमहल सोहागरात मना रहा था। बादशाह शाहजहां और मुमताजकी कब्र युगल-प्रेमियोंकी तरह आपसमें लिपटी हुअी थी जिनपर कलाकी सीमा लांघनेके लिये शिल्पकारोंने प्राणोंकी बाजी लगा दी थी।

मैं पागलोंकी भांति ताजके संगमरमरी फिसलते हुअे फर्श पर दौड़ रहा था। मुगल-साम्राज्यके अतुल वैभवका प्रतीक, भारतवासियोंकी महान कलाका द्योतक और संसारका सर्व श्रेष्ठ बहुमूल्य मकबरा चांदनी रातमें किसी सम्राटके अभिमानकी तरह खड़ा था। अुन्नत मस्तक किये मुम बेगम और शाहजहांके प्रेमको शाश्वत प्रदर्शित करता हुआ।

दुनियाकी दृष्टिमें ताजमहलने शाहजहां और मुमताजको अमर कर दिया है, अुनके प्यारको अमर बना डाला है तथा शाहजहांकी कला-प्रियतापर चार चांद लगा दिये हैं परन्तु शहादत और नूरा-मैं सोच रहा था। शहादतका खून, नूराका खून, कलाकारकी कला खून और गरीबोंके प्यारका खून क्या ताजमहलके संगमरमरी टुकडोंके साथ नहीं जुड़े हैं ? क्या मुझे संगमरमरपर शहादत और नूराके रक्तकी लाली दुनियाको नहीं दिखायी देती ?

मेरी आँखें ताजमहलके भीतर शहादत और नूराको ढूंढ रही थीं जिन्हें दुनिया नहीं जानती, संसारकी दृष्टिमें जो कभी नहीं आये और जिनकी यादगारमें ताजमहलका निर्माण नहीं हुआ; लेकिन शहादत और नूराके लहूके कतरे-कतरेने शाहजहां और मुमताजको अमर करनेके लिये ताजमहलकी जमीन खूनसे सींची है। नूराकी अुजड़ी झोपड़ीने ताजमहलको पनाह दी है और नूरा-शहादतकी लाशें ताजमहलके बुनियादी पत्थर बने हैं जिनके कोमल कच्चे जिस्मोंपर खड़ा होकर भी ताजमहलका विशाल भवन नहीं कांपता-परन्तु चट्टानकी तरह अडिग है। कितने मजबूत थे वे बुनियादी पत्थर जिनके कारण ताजमहलका मस्तक गर्वसे अुन्नत है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दीमें अन्तर प्रान्तीय साहित्य और संस्कृति

: श्री लक्ष्मीशंकर व्यास :

किसी भाषा अथवा साहित्यकी सम्पन्नताका अेक प्रमुख लक्षण यह भी है कि अुसमें अन्तरप्रान्तीय साहित्य है या नहीं, यदि है तो अुसका स्वरूप क्या है। अिस दृष्टिसे हिन्दी भाषा तथा अुसके साहित्यकी समीक्षा आवश्यक है और अिसलिये भी अनिवार्य है कि हिन्दी राष्ट्रभाषाके पदपर आसीन हो चुकी है। हिन्दीको वास्तविक रूपमें समस्त राष्ट्रकी भाषाका द्योतक होनेके साथ अुसका बोधक और परिचायक भी होना चाहिये। अभिप्राय यह कि हिन्दी साहित्यके अवलोकन और आलोड़नसे ही देशके समस्त साहित्यकी प्रमुख विशेषताओं और विशिष्टताओंका परिदर्शन हो जाय। क्या आज हिन्दी भाषा तथा साहित्यकी अैसी स्थिति है ? कहना होगा कि अिसका अुत्तर नकारात्मक है। तब होना क्या चाहिये, अिसपर विचार कीजिये। यह भी देखिये कि हो क्या रहा है और होना क्या चाहिये।

अन्तरप्रान्तीय साहित्य कबसे ?

हिन्दी भाषा और साहित्यमें विभिन्न भारतीय अधिकांश साहित्यका प्रभाव तथा प्रच्छन्न रूप, कहीं प्रत्यक्ष अेवं कहीं अप्रत्यक्ष रूपसे अिसलिये दृष्टिगत होता है कि सभी भारतीय संस्कृत भाषासे प्रसूत हैं। केवल प्रसूत ही नहीं, आज भाषाअें भी अुनका पोषण संस्कृत भाषाके ही अजस्र स्रोतसे हो रहा है। हिन्दीमें प्रायः सभी प्रान्तीय साहित्योंका कुछ न कुछ स्पर्श अिसलिये हो पाया है कि पैंतीस कोटि जनसंख्यावाले देशमें यही अेक भाषा है जिसे अल्पाधिक अंशमें सभी समझ या बोल सकते हैं। सभी की भाषाभिव्यक्तिमें अन्तर रखते हुअे भी कोअी साम्यमूलक भाषाका माध्यम है तो, वह और कोअी भाषा नहीं; हमारी भारती ही है।

हिन्दी साहित्यमें अन्तरप्रान्तीय साहित्य और संस्कृतिका परिचय अेवं परिदर्शन करानेकी व्यापक योजना आजसे लगभग बीस-पचीस वर्ष सर्वप्रथम हुअी थी। अिसका श्रेय है अुपन्यास सम्राट स्वर्गीय प्रेमचंदजी तथा अुत्तरप्रदेशके वर्तमान राज्यपाल तथा गुजराती साहित्यके विख्यात श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशीको। प्रेमचंदजी और मुंशीजीके संयुक्त संपादकत्वमें 'हंसमें' अुक्त योजनाको कार्यरूप दिया गया। दो वर्षों तक अिसके अन्तर्गत गुजराती, मराठी, तमिल, तेलगू, मलयालम, कन्नड़, बंगला, अुड़िया आदिके साहित्यकी प्रगति तथा अुसका परिचय करानेवाले साहित्यिक निबन्ध, टिप्पणियाँ आदि प्रकाशित होती रहीं। किन्तु बादमें विशेषतः प्रेमचंदजीके निधनोपरान्त अिस परम्पराका सफल निर्वाह न हो सका। अब पुनः आधुनिक प्रकृतिकी धाराको पहचान कर अुनके पुत्र श्री अमृतरायजी अुस ओर प्रवृत्त हो रहे हैं।

'हंस' के अतिरिक्त अुस समय प्रकाशित होनेवाली प्रमुख मासिक पत्रिकाओं 'सरस्वती' 'माधुरी' और 'सुधा' में भी प्रायः संस्कृत, बंगला, मराठी, गुजराती साहित्यकी चर्चा हो जाया करती थी। अुनमें अेक बातका स्पष्ट अभाव था। वह यह कि दक्षिणके साहित्यकी अुनमें शायद ही कभी चर्चा हुअी हो। यदि हुअी भी तो नाम मात्रकी। यों कहा जाय तो कुछ हर्ज नहीं कि अुस समय अिस प्रकारकी लोकरुचिका भी अभाव ही था। बात यह न थी कि अुत्तर और दक्षिणकी सांस्कृतिक अेकता न रह गअी थी अथवा शताब्दियोंसे चली आती धार्मिक अेकताका अुस समय लोप हो गया था। नहीं अैसा कदापि नहीं हुआ था। राजनीतिक दृष्टिसे सैकड़ों टुकड़ोंमें विभाजित होकर भी भारतीय जनताने अपनी सांस्कृतिक अेकता कभी विशृंखल न होने दी थी, जो व्यवधान अुपस्थित हो गया था, वह राजनीतिक पराधीनताके कारण। विदेशी सत्ताने राजनीतिक प्रभुत्व स्थापित करनेके साथ ही भारतीय साहित्यिक और सांस्कृतिक आदान-प्रदानका मार्ग अेवं माध्यम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी अवरुद्ध कर दिया। यही कारण है कि स्वाधीनता प्राप्तिके साथ ही हमारे देशमें लोक साहित्य, अन्तरप्रान्तीय साहित्य और विश्व-साहित्यकी ओर जनरुचि प्रबल रूपसे आकृष्ट हुअी है। देशके सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक आन्दोलनोंमें यह तथ्य स्पष्टतः स्वीकार कर लिया गया है कि हिन्दी भाषा-भाषी-प्रान्त अन्तरप्रान्तीय साहित्यका अध्ययन प्रारम्भ करें और शताब्दियोंका पुरातन सांस्कृतिक विनिमय पुनरुज्जीवित किया जाय। आज जब कि भाषावार प्रान्तका आन्दोलन देशमें चल रहा है और जब कि अुसके अनुसार प्रान्त निर्माणका सिद्धान्त स्वीकार भी कर लिया गया है, यह प्रश्न अत्यन्त महत्त्वका हो गया है।

* साहित्य जीवनका प्रतिबिम्ब है और है लोक-भावनाओंका प्रतीक। स्वाधीनता प्राप्तिके बाद देशमें अन्तरप्रान्तीय लोक जीवन और आकांक्षाओंका पारस्परिक परिचय प्राप्त करनेकी होड़सी मच गयी है। अिस जनप्रवृत्तिका परिचय देशकी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओंसे तद्विषयक लेखों, कहानियों आदिके प्रकाशनसे स्वतः प्रमाणित है।

यद्यपि अन्तरप्रान्तीय साहित्य और संस्कृतिका परिचय करानेवाली पुस्तकें हिन्दीमें अिनी गिनी तथा नगण्य ही हैं तथापि मासिक पत्र-पत्रिकाओंमें अिनकी चर्चा प्रचुर और प्रभूत रूपमें दृष्टिगत होती है। यह शुभलक्षण है और अिस बातका प्रतीक है कि साहित्यके निर्माताओंका ध्यान, अिस अुपेक्षित और अब अनिवार्य अंगकी ओर भी आकृष्ट हुआ है। अँग्रेजी भाषामें प्रान्तीय साहित्यकी गतिविधिका लेखा-जोखा 'पी० अी० अेन०' के तत्त्वावधानमें बड़े सुन्दर ढंगसे हो रहा है। श्रीमती सोफिया वाडिया अिस संस्थाकी प्राण हैं और बम्बअीमें अिसका प्रधान केन्द्र है। अिस संस्थाके सदस्य देशके प्रमुख साहित्यकार हैं, लेकिन खेदकी बात है कि अिनमें हिन्दीके साहित्यिकोंकी संख्या नगण्य है। 'पी० अी० अेन०' के अधिवेशनोंमें भारतके प्रान्तीय साहित्योंका लेखा-जोखा प्रस्तुत किया जाता है और विभिन्न साहित्यिक-सांस्कृतिक प्रश्नोंपर विचार-विनिमय होते हैं। अिस प्रकारका अेकाध प्रयत्न हिन्दीमें भी गतवर्षों हुआ किन्तु अेकांगी होनेके कारण अुसे सफल नहीं कहा जा सकता। किसी प्रकारके 'वाद' से ग्रसित होकर न तो सत्साहित्यका सर्जन हो सकता है और न तटस्थ दर्शन अेवं समालोचन। यही कारण है कि अुक्त सम्मेलनमें किसीने 'हिन्दी कथा साहित्यके दसवर्ष' और किसीसे 'हिन्दी कविताके पाँच वर्ष' निबन्ध पढ़े पर अुनमें समन्वयात्मक प्रवृत्तिका अभाव रहनेके कारण समग्रका समालोचन न होकर 'परस्परं प्रशंसंति अहो रूप महोध्वनि' की अुक्ति ही चरितार्थ हुअी। साहित्यके क्षेत्रमें यह पद्धति कदापि नहीं चल सकती, क्योंकि अुसमें तो शाश्वत तत्व ही स्थिर और चिर हो सकते हैं।

वर्तमान प्रगतिपर अेक दृष्टि

गुजराती, बंगला, मराठी और राजस्थानी साहित्य का परिचय करानेवाली कतिपय पुस्तकोंके प्रकाशनको छोड़कर पिछले पांच वर्षोंमें अिस सम्बन्धमें जो कुछ प्रगति हुअी है अुसका समस्त श्रेय हिन्दीकी मासिक पत्रिकाओंको है। 'सुधा' ने साहित्यांक निकालकर अिस दिशामें अेक नया आदर्श स्थापित किया था। 'विशाल भारत' ने दक्षिण भारत अंक निकालकर स्तुत्य प्रयत्न किया था। 'हंस' के बाद अितना सुन्दर और अभिनन्दनीय प्रयत्न किसीने न किया। अब तो सभी पत्रोंका अिधर ध्यान गया है और अन्तरप्रान्तीय साहित्य विषयक स्थायी स्तम्भ सभी पत्रोंमें दिखायी पड़ते हैं। वर्धासे प्रकाशित होनेवाली 'राष्ट्रभारती' पत्रिकामें अन्तर प्रान्तीय साहित्य तथा संस्कृति विषयक लेखोंका ही प्राधान्य रहता है। अिसमें अुनका परिचय तथा आलोचना ही नहीं अपितु अुनका हिन्दी रूपान्तर भी प्रति मास प्रकाशित होता है। हैदराबादसे प्रकाशित होनेवाली दो पत्रिकाअें 'कल्पना' और 'अजन्ता' के दृष्टिकोण भी अिसी प्रकारके अन्तर प्रांतीय विशेषतः दक्षिणके साहित्य और साहित्यकारोंका परिचय तथा आदान-प्रदानको प्रोत्साहन प्रदान करनेवाले हैं। अिसके अतिरिक्त अिन

* अन्तरप्रान्तीय साहित्यकी माँग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दीकी अुन्नतिशील मासिक तथा साप्ताहिक पत्र-पत्रिकाओंमें अन्तरप्रान्तीय साहित्य तथा संस्कृतिको विशेष महत्व दिया जाता है अुनमें प्रमुख हैं—आजकल, विश्वदर्शन, राष्ट्रभारती, कल्पना, अजन्ता, नया समाज, नअी धारा, सरस्वती, आलोचना, नया जीवन, ज्ञानोदय, हंस, धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान आदि। अब अिन पत्रोंमें गत वर्ष प्रकाशित अन्तरप्रान्तीय साहित्यकी कुछ वानगी भी ले लीजिअे।

संस्कृत और बंगला साहित्य

संस्कृत साहित्यके अुपेक्षित अथवा अुनके महत्त्वके परिचायक ग्रंथोंको हिन्दीमें प्रस्तुत करनेका प्रयास अभिनन्दनीय रहा है। अिस सम्बन्धमें आचार्य चन्द्रबली पाण्डेयके 'नया समाज' तथा 'नयी धारा' में प्रकाशित लेखोंमें (१) पुत्रवत्सला अुर्वशी (२) सस्ते स्वर्गका दुष्परिणाम (३) रघुवंशके संविधानककी झलक (४) मृच्छकटिकका परिव्राजक, डाक्टर वासुदेव शरण अग्रवालके 'नया समाज' में प्रकाशित (१) पंचतन्त्र तथा (२) वाणकी सरकारी नौकरोंपर फबती, 'नयी धारा' में प्रकाशित भादुड़ी महोदयका 'गणनायक', श्री दीक्षितका ऋतुसंहार अुल्लेखनीय हैं। 'कल्पना' में प्रकाशित श्री बलदेव अुपाध्यायका 'संस्कृत गद्यकी रूपरेखा' का अुल्लेख भी यहाँ आवश्यक है। 'ज्ञानोदय' में प्रकाशित महाकवि पुष्पदन्ती भी अिसी प्रकार रचना है।

अिसी प्रकार बंगला साहित्यके कथा-साहित्यके सम्बन्धमें श्री अिलाचन्द्रजी जोशीका 'आजकल' में प्रकाशित 'शरत' साहित्य तथा श्री ताराशंकरजीकी अंधेरीत (नअीधारा) तथा अन्य कहानियाँ, श्री गोपाल हालदारका सम-सामयिक बंगला साहित्य (आलोचना), श्रीमती माया गुप्तकी बंगलाकी कवयित्रियाँ (प्रवाह) आदि अुल्लेखनीय हैं। रवीन्द्रकी कविताओं तथा अुनके अन्य साहित्यका भी हिन्दीमें सफल अनुवाद हुआ है।

दक्षिणी और अुर्दू साहित्य

दक्षिणी साहित्य-तमिल, तेलगु, मलयालम तथा कन्नड़ सम्बन्धी लेख 'राष्ट्रभारती' के अतिरिक्त 'अजन्ता', 'कल्पना', 'हंस', 'आजकल', 'नअी धारा' आदिमें विशेष रूपसे प्रकाशित हुअे। 'अजन्ता'में तेलगु महिलाओंकी साहित्य सर्जना, दखनी भाषाका गद्य, महाकवि पोतन्ना, भारती आदि प्रमुख हैं। 'सम्मेलन पत्रिका' के आश्विन अंकमें शुभ श्री माधवीने तेलगू साहित्यका परिचय देते हुअे लिखा है — 'आजकलके तेलगू साहित्यमें सबसे अुच्च स्थान विश्वनाथ सत्य-नारायणजीका है। अिन्होंने तेलगू गोष्ठी, गल्प, लघुकथा, प्रबन्ध, नाटक तथा अुपन्यासके रूपमें विपुल रचनाअें की हैं।..' गुजराती, मराठी, असमिया, अुत्कल, आदिके प्रान्तीय साहित्योंपर भी विभिन्न पत्र-पत्रिकाओंमें परिचयात्मक लेख प्रकाशित हुअे हैं। 'राष्ट्रभारती' में मराठीकवि बोरकरका 'कोंकणीकी कैफियत' तथा श्री देशपांडेके गुजराती भाषा और साहित्य लेख अुल्लेख्य हैं। अिसी प्रकार बौद्ध साहित्य और जैन साहित्यको भी पाली तथा प्राकृतसे हिन्दीमें प्रस्तुत करनेका अभिनन्दनीय श्रीगणेश किया गया है।

अुर्दू साहित्य और साहित्यकारोंके सम्बन्धमें जोश मलीहाबादीकी रचनाअें, सागर निजामीकी कृतियाँ तथा श्री अयोध्याप्रसादजी गोयलीयके संस्मरण विभिन्न पत्रिकाओंमें हिन्दी जनताके सम्मुख आये। श्री रघुपति सहाय 'फिराक' १९३९ से १९५० तककी प्रसिद्ध अुर्दू कविताओंका संकलन 'अंजकार' में किया। अिसी प्रकार श्री अयोध्याप्रसाद गोयलीयकी 'शेरो-सुखन' और 'शेरोशायरी' से प्रभूत अुर्दू साहित्य हिन्दीमें आया। अब युगकी मांग है कि सम्पूर्ण अुर्दू साहित्य नागरी लिपिमें शीघ्र-से-शीघ्र प्रस्तुत कर दिया जाय। अिससे सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि भाषाके प्रश्नको लेकर चलनेवाले अप्रिय प्रसंगकी समाप्ति हो जायगी। जिस प्रकार दक्षिणवाले हिन्दीका आधिपत्य स्वीकार नहीं करना चाहते, और चाहते हैं कि हिन्दी सीखें किन्तु अुनकी भाषा और साहित्यका अध्ययन भी अुत्तर भारतकी हिन्दी भाषा-भाषी जनता करे। अुसी प्रकार यदि अुर्दू साहित्य भी देवनागरी लिपिमें सुलभ हो जाय तो अिस क्षेत्रका अेक कटु अध्याय समाप्त हो जाय। अिस दिशामें शीघ्र और सुविचारित साहित्यिक योजना कार्यान्वित की जानी चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोक-साहित्य और संस्कृति

लोक-साहित्य, जनपद-साहित्य और संस्कृति विषयक सामग्रीके संकलन, अध्ययन और अनुसन्धानकी प्रवृत्ति भी हमारी नवचेतनकी परिचायक है। बनारससे 'जनपद' और आरासे 'भोजपुरी' के प्रकाशन अिस सम्बन्धमें अुल्लेख्य हैं। हिन्दी जनपदीय परिषदका मुख-पत्र 'जनपद' अक्तूबर १९५२ से निकलना प्रारम्भ हुआ। प्रथम अंकमें ही ग्राम-साहित्य, भोज-पुरी लोक गीत, मालवी भाषा, लोक साहित्यका अध्ययन, गुजरातके लोक कवि मेघाणी आदि अत्यन्त पठनीय और प्रेरणा अुत्पन्न करनेवाले लेख प्रकाशित हुअे हैं। 'जनपद' का स्वागत साहित्यके क्षेत्रमें बड़े अुत्साहसे किया गया है। अिनके अतिरिक्त आजकल, राष्ट्रभारती, नया समाज, नअी धारा, ज्ञानोदय, नया जीवन, धर्मयुग, अजन्ता, कल्पना आदि पत्र-पत्रिकाओंमें लोक-साहित्यके परिचायक लेखों अथवा साहित्यका निरन्तर प्रकाशन होता रहता है। कुछ पत्रिकाओंमें तो तद्विषयक स्थायी स्तम्भ हैं। अिनमें देवीलाल सामरका राजस्थानी लोकनाट्य, दिवाकर साहुका मालेर और अुनकी संस्कृति (नअी धारा) संथाल और अुनकी संस्कृति (अवन्तिका), राजस्थानी लोककला (कल्पना), भारतीय संस्कृति और समाज (ज्ञानोदय) आदि अुल्लेखनीय हैं। अिस प्रकार कहा जा सकता है कि हिन्दीमें अुत्तर प्रान्तीय साहित्यका अध्ययन, अनुसन्धान और आलोचन जिस गतिसे हो रहा है, वह अुज्ज्वल भविष्य का द्योतक है।

★ कल्पना मासिक ★

पढ़िये

जिसमें अुच्चकोटिके साहित्यिकों और कलाकारोंकी रचनाअें आपको मिलेंगी

प्रत्येक अंकमें अेक रंगीन चित्र

स्थायी स्तम्भः—

* **कला प्रसंग**— विनोद बिहारी मुकर्जी
* **सांस्कृतिक टिप्पणियाँ**— दिनकर कौशिक
* **साहित्य धारा**— अिस स्तम्भके अन्तर्गत पाठकों, लेखकों आदिद्वारा अुठाये गये साहित्यिक प्रश्न आदि हैं।

पुस्तक समालोचना—

कल्पना अपनी निर्भीक समीक्षाके लिये प्रसिद्धि है।

पृष्ठसंख्या ८०, वार्षिक मूल्य १२), अेक प्रतिका १)

पता—८३१, बेगम बाजार, हैदराबाद

❀ अुद्यम ❀

हिन्दी और मराठी भाषामें प्रकाशित होता है।

प्रतिमास १५ वीं तारीखको पढ़िये।

अुद्यममें निम्न विषयोंके लेख छपते हैं:—

लाभदायक अुद्योगधंधोंकी जानकारी अनाज तथा सब्जीकी खेती व रोगोंका निवारण, पशु-पालन, दुग्धव्यवसाय व ग्रामोद्योग संबंधी लेख, विद्यार्थियोंके लिये वैज्ञानिक व अन्य जानकारी आरोग्य, घरेलू औषधियों संबंधी लेख, हिंदुस्थानके वैज्ञानिक और औद्योगिक क्षेत्रकी अुपयोगी जानकारी, कृषि, औद्योगिक और व्यापारिक क्षेत्रमें काम करनेवाले लोगोंकी मुलाकात तथा परिचय

अुद्यमके विशेष स्तंभ

महिलाओंके लिये अुपयुक्त, रुचिकर खाद्य-पदार्थ बनानेकी विधि, घरेलू मितव्ययिता, अुद्यमका पत्रव्यवहार, खोजपूर्ण खबरें, आर्थिक तथा औद्योगिक परिवर्तन, जिज्ञासु जगत्, व्यापारिक हलचलोंकी मासिक समालोचना, नित्योपयोगी वस्तुअें स्वयं तैयार कीजिये।

वार्षिक चन्दा ७ रु. और प्रति अंक १२ आना

पताः— 'अुद्यम' मासिक, धर्मपेठ, नागपुर (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होलीके दिन

: श्री गोपाल शर्मा :

पात्र--

विभ्रान्त : अुम्र ४०— "आतंक" साप्ताहिकका सम्पादक

बेघर जौनपुरी : अुम्र ३०—कवि

रामकिशन : अुम्र ५०--कपड़ोंका व्यापारी

महेश-शंकर : अुम्र ४०--अवसरवादी नेता और शिकारी

शोभना : अुम्र ३०--विभ्रान्तकी पत्नी

मल्लिका : अुम्र २५–शोभनाकी सहेली

चपरासी और मशीन–मैन

[**स्थान** :-- 'आतंक' पत्रका कार्यालय। रंगमंचके बायें पार्श्वमें सम्पादककी मेज है। अुसपर आवश्यक कागज, कलम, दावात, टेलिफोन, दो-तीन, समालोचनार्थ आयी हुअी पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाअें, अित्यादि सब व्यवस्थित रूपसे रखे हैं। मेजके पास ही अेक किताबोंकी अलमारी है अुससे सटा हुआ अेक सोफासेट रखा है। अिस सेटके पीछे ठीक अूपर अेक बड़ी खिड़की है जिसमें परदा नहीं। बाहर किसी मकानका अूपरी हिस्सा दीखता है जिसे किसी वृक्षकी डाल छुपानेका प्रयास करती मालूम होती है।

समय प्रातःकाल ९ बजे। पर्दा अुठते ही विभ्रान्त रिसीवर लिये खड़ा किसीसे बातचीत करता हुआ दिखायी देता है। अुसके चेहरेपर घबराहटके चिन्ह हैं।]

विभ्रान्त—हलो,–हलो ! –अैं ?–मैं 'आतंक' का सम्पादक विभ्रान्त बोल रहा हूँ !–जी–यह सार्वजनिक बीमा कंपनी है न ? – जी--आप–आप क्या मैनेजर साहब बोल रहे हैं ? देखिये मैनेजर साहब, मैं–मैं बीमा करवाना चाहता हूँ !—जी ?–नहीं, न मेरे पास मोटर है और न मकान.....मैंSSSअपने कपड़ोंका बीमा करवाना चाहता हूँ ! शहरमें काफी बदतमीजी फैली हुअी है और मैं दो अेक मित्रोंके यहाँ जाना चाहता हूँ !–जरूरी कामसे हलो ! क्या कहा ?– कपड़ोंका बीमा नहीं होता ? अयँ ? —नहीं होता तो न सही— आजसे आप ही शुरू कर दें !—हलो--यह सामाजिक क्रान्तिके क्षेत्रमें अेक नया कदम होगा !–मैं कहता हूँ आप काफी बिजनेस कर सकेंगे ! क्या कहा ?—भाँग, मैं भाँग कभी सूंघता भी नहीं, ज्यादा पीनेकी बात तो दूर रही ! अरे भाअी मैं सेन्सेशनकी खोजमें रहता हूँ सेन्सेशनकी ! आपको मैं अेक सेन्सेशनल योजना सुझा रहा हूँ !—अैसे बीमे कैसे नहीं होते ? अमरीकामें तो टाँगों और दाँतों तकका बीमा होता है फिर ये तो कपड़े हैं ! हलो !–सुनिये !–हलो !--(हताश होकर रिसीवर रख देता है) अुफ, अब मैं शहर कैसे जा सकूंगा ?..... (अिधर-अुधर चलता है। — कविका प्रवेश)

कवि :—(झिझकता-सा) नमस्ते सम्पादकजी !

विभ्रान्त :— (अेकदम चौंककर पलटता है, नम्रतासे झुककर नमस्ते करते-करते तनकर अुपेक्षा भरी मुद्रासे खड़ा हो जाता है) नमस्ते, आप हैं ! मैंने समझा कोअी विज्ञापन देनेवाला आया है ! ..... (कवि धीरेसे मुस्कुरा देता है) कहिये आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ?

कवि :—(संकोच भरा) यदि आप SSS कविताका पारिश्रमिक.....

विभ्रान्त :—(तमतमा कर) पारिश्रमिक ?—आपकी कविता, होलिकांकमें नहीं गयी !

कवि :—(हताश होकर) जी ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभ्रान्त :—जी; –अुससे मुझे कोअी अुत्तेजना नहीं मिली। समझे ? मैं सेन्सेशनल कविता चाहता हूँ — जो सनसनी अूपरसे नीचे तक पैदा कर दे !

कवि :— (साश्चर्य) सेन्सेशनल कविता ?

विभ्रान्त :—जी हाँ सेन्सेशनल कविता ! आज कल कविताअें कवियोंको छोड़कर पढ़ता और समझता कौन है ? लोग चाहते हैं आश्चर्य-जनक घटनाअें..... (चल फिर कर) आपने किसी अैसी गायका वर्णन किया है जिसने आदमीका बच्चा जना हो ? किसी बड़े आदमीके फर्शकी दरी अुठायी है कि तलघरमें शक्करके बोरे मिल जायँ ? चांदनीमें झिलमिलाती हुअी रेतमें थोरियम और यूरेनियमकी विभीषिका देखी है ?

कवि :— (किंकर्तव्य विमूढ़-सा) जी नहीं।

विभ्रान्त : कोअी अैसा नया छन्द अीजाद किया है जिसमें पंक्तिकी आगेकी तुक पीछे मिलती हो ?—और फिर भी गीतका संतुलन न बिगड़े ?—कोअी अैसा नया रस पैदा किया है जिससे कि आदमीके शरीरमें अेक-अेक नयी अिन्डोक्रीन-याऽऽने भीतर बहनेवाली ग्राँठ पैदा हो जाये ?

कवि : जी नहीं।

विभ्रान्त : तो आप अपनी लेखनीको विश्राम करने दें !

कवि : मेरे लिये तो जीवनमें केवल तीन ही सेन्सेशन हैं रोटी, कपड़े और मकान ! अिन्हींको मैं कविताका विषय बनाता हूँ !

विभ्रान्त : आप दयाके पात्र हैं ! जब तक कवितामें आतंक वादकी प्रतिष्ठा न हो तब तक वह कविता बेकार सिद्ध होगी !

कवि : क्षमा कीजिये, मैं चन्द्रकान्ता और भूतनाथकी महाकाव्योंमें नहीं बदल सकता संभ्रान्त-जी !

विभ्रान्त : (चिढ़कर) संम्भ्रान्त नहीं – विभ्रान्त कहो !

कवि : भूल हो गयी विम्भ्रान्तजी, मैं आपको सम्भ्रान्त समझता था ! आप सचमुच ही,....सचमुच ही कुम्हारके चक्केकी मिट्टीके समान हैं ! दो हाथ लगाकर आपको अुपयोगी घड़ा बनानेकी जरूरत है, (स्वाभिमानसे) मैं आतंकवादकी कविता नहीं कर सकता...

विभ्रान्त : अिसीलिये मैंने आपसे कहा कि आप कविता लिखना छोड़ दें ! मैं मनुष्यके स्वभावको अच्छी तरह जानता हूँ ! वह चाहता है सेन्सेशन !— आश्चर्य ! आतंक !! अगर आप यह पैदा नहीं कर सकते तो स्कूली किताबें लिखिये ! समझे ? मैं अपने अखबारकी अेक हजार बीस प्रतियाँ छापता हूँ और अेक नहीं बचती ! लोगोंको अैसी चीज़ चाहिये जो अुनका रोमरोम थर्रा दे ! कागज़ फाड़कर, अक्षरोंको अिधर-अुधर ढकेलता हुआ कोअी बेताल या काला पहाड़ प्रकट हो जाय ! जिसे लोग आँख फाड़कर देखें और पढ़ें ! अुठते पढ़ें—सोते पढ़ें ! खाते पढ़ें—जाते पढ़ें ! मैं सम्पादक हूँ अेक लोक-प्रिय साप्ताहिकका !

कवि : अिसके लिये मुझे कोअी नयी प्रेरणा खोजनी होगी ! (नेपथ्यमें होहल्ला–चीख–अित्यादि) मगर...मगर (आँख फाड़कर नेपथ्यकी ओर देखता हुआ)....मगर वो....आ ही गयी सम्म....विभ्रान्तजी !

विभ्रान्त : (घबराकर) कौन ?

कवि : अेक आतंककारिणी प्रेरणा ! ठीक आपके ही पीछे !

विभ्रान्त : (चौंककर पीछे देखता हुआ) ठीक मेरे ही पीछे ?

कवि : (तन्द्रासे) हां ठीक आपके ही पीछे अेक बैताली प्रेसकी शान्तिको चीरकर लोगोंको झिंझो अुधर भड़काती हुअी अेक आतंकमय सौन्दर्यकी तरह ठीक आपके पीछे . अुफ !

विभ्रान्त : बैताली ? (शोभनाका प्रवेश-रंग भरी है, बाल अस्तव्यस्त हैं) ...बैताली ?—अरे...तुम कौन हो ? कहाँसे किसलिये...प्रकट हुअी हो बोलो !—तुम्हारी ये लाल आँखें !—काला चेहरा—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिखरे हुअे बाल !—बोलती क्यों नहीं ? तुम देवी हो या दानवी ! मैं तुम्हा...आपकी क्या सेवा ..

शोभना : डरो नहीं, मैं तुम्हारे ही पास आयी हूँ ! (आगे बढ़ती है)

विभ्रान्त : (पीछे हटता हुआ) हाँ हाँ सो तो देख ही रहा हूँ ! मैं डरता नहीं—बिलकुल नहीं डरता ! कवि ?—कवि ? कहाँ हो ? जरा मेरे सामने आ जाओ !—दुर्गा स्तोत्र पढो !

कवि : याद नहीं !

विभ्रान्त : याद नहीं—तो कोअी बेतुकी कविता ही अिस देवीकी प्रशंसामें सुनाना शुरू कर दो !—(कांपते स्वरसे)—शुरू करो— माते !—भयंकरी जन्म जाते ! ..

शोभना : (विभ्रान्तके पास आकर) तुम्हें मुझे माता कहते शर्म नहीं आती ! देखते नहीं मेरी क्या हालत की है अिन लोगोंने ?

विभ्रान्त : (चौंककर) कौन शोभना ?— मेरी शोभना ?—हाय हाय, तुम्हें कराला किसने बना दिया ? तुम्हें पूतना किसने बना दिया मेरी राधे? —चपरासी! ...

शोभना : चपरासीको मत बुलाओ !—अपनी खैरियत चाहते हो तो फौरन निकल भागो यहाँसे ! मेरी सहेलियाँ तुमसे होली खेलने आ रही हैं !

शोभना : मगर अिसमें कौनसा आतंक है ?—क्या मजा है ? मैं अैसा मजाक बिलकुल पसंद नहीं करता ! यह नेशनल-वेस्ट है। राष्ट्रीय हानि है !... मैं ..मैं.. (दूरपर कुछ भागती हुअी स्त्रियोंकी खिल-खिलाहट)...अुफ ! मुझे भागना ही पड़ेगा ! ..मगर मेरे "अंक" का क्या होगा ! (कविसे गिड़गिड़ाकर) प्यारे बन्धु ! मैं तुम्हें काफ़ी पारिश्रमिक दूंगा। जरा 'अंक' की देख-भाल कर लो...

कवि : मैं...मैंने प्रेसमें कभी काम नहीं किया सम्म...विभ्रान्त जी !

विभ्रान्त : बेवक्तपर जैसे बने वैसे निभा ले जाओ मेरे बन्धु ! (स्त्रियोंकी खिलखिलाहट पास ही सुनायी देती है)—अुफ ! मुझे भाग जाना चाहिये !—देखो शोभना, मैं घरके पिछवाड़ेसे पेड़पर चढ़कर अूपरके कमरेमें पहुंच जाअूंगा !...और तुम—(कविसे) तुम निभा लेना मेरे भाअी...(प्रस्थान साथ ही दूसरी ओरसे मल्लिकाका प्रवेश–)

मल्लिका : (पिचकारी अुठाये हुअे) कहाँ हैं जीजाजी ?

[रामकिशनका "सम्पादकजी ! सम्पादकजी !" कहते हुअे प्रवेश। सामने पिचकारी अुठाये हुअे मल्लिकाको देखकर अेकदम पलट जाता है ! मल्लिका अुसे विभ्रान्त समझकर अुसकी ओर झपटती है]

मल्लिका : कहाँ भाग रहे हो ! (पिचकारी छोड़ना चाहती है कि शोभना रोक देती है)

शोभना : ठहरो, ये तो रामकिशनजी हैं कपड़ोंकी दूकानवाले !

रामकिशन : (अकड़कर) मैं भाग नहीं रहा हूँ ! सामना करने आया हूँ ! कहाँ हैं विभ्रान्तजी ? मेरा नुकसान हो गया है— मैं शिकायत करने आया हूँ !

शोभना : कैसी शिकायत ? वे काम से बाहर गये हैं आप अपनी शिकायत अिनको लिखवा दीजिये (कविकी ओर अिशारा करती है।)

कवि : हाँ..हाँ...मैं अिसी 'अंक' में निकलवा दूंगा !

रामकिशन : मुझे अुन्हींसे शिकायत है ! मेरे कपड़ोंकी गठानोंपर रंग ही रंग फैल गया है। गोदामके अूपरकी मंज़िलमें अितनी धमाचौकड़ी मचायी है आपने, कि सारा रंग बहकर मेरी गठानोंपर आ गिरा है। आपको यह नुकसान भरना पड़ेगा ! वरना मैं विज्ञापन तो वापिस लूंगा ही और जो पचास कापियाँ 'आतंक' की खरीदता हूँ वो भी बन्दकर दूंगा ! और ..और ..

शोभना : हमें बड़ा रंज है ! मगर आपने तो यह कभी नहीं बताया कि हमारी बैठकके नीचे ही आपका गोदाम है !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामकिशन : हाँ ..हाँ . यह क्यों मालूम होगा आपको ? मकानका आधा हिस्सा मेरे पास है और आधा आपके पास ! मगर किराया मैं ही डचोढ़ा देता हूँ ! अुसमें मैंने अभी कुछ दिन पहले– साड़ियोंकी गठानें...अुफ़ !

शोभना : (अुत्सुकतासे) साड़ियोंकी गठानें ?

मल्लिका : साड़ियोंकी गठानें ? साड़ियाँ ! शोभना दी ऽ दी साड़ियाँ !

शोभना :– कल ही तो कहा था आपने कि हमारे पास अेक भी पीस नहीं है ! और देवीकी कसम भी खायी थी !

रामकिशन :— (हकलाता हुआ) भाऽऽभी गलतीसे साड़ियोंका नाम निकल आया ! दुर्गा माअीकी कसम अुसमें बिछानेकी चादरें हैं !

मल्लिका :—शोभना दीदी ! (अेक आँख दबाकर) चादरें भी तो चाहिये थीं हमें ! चलकर देख ही न आयें ?

शोभना :—हाँ,–चलो नुकसानका अंदाज भी हो जायेगा हमें !

रामकिशन :––नहीं, मैं आऽऽपको वहाँ नहीं ले जा सकता ! मैंने माल फिलहाल अुठवाकर कहीं और रख दिया है !

मल्लिका :—कहीं भी हो ! अब तो हम जाकर देखेंगे ! (आगे बढ़ती है)

रामकिशन :–(रास्ता रोककर) ना, मैं आपको हरगिज़ वहाँ नहीं ले जा सकता !

शोभना :—तो अैसा मालूम होता है वह छुपाया हुआ माल है ! कवि अिस समय मुझे तुम्हारी मददकी जरूरत है !

कवि :––मगर किसी व्यक्तिके लिये अेक ही वक्त पति-पत्नी दोनोंकी मदद कर सकना असम्भव है ! और फिर कवियोंके पूर्व पुरुषोंमें शेयरलाक होम्सका नाम भी सुननेमें नहीं आया ।

रामकिशन :––(तनकर) किसी मालको रोक रखना कोअी गुनाह है ? हुं––व्यापारी मौकेका गुलाम होता है ! अिसमें कैसा पाप ?

कवि :–– (बनावटी प्रसन्नतासे) अरे वाह, भाअी साहब वाह ! आपको पापी कौन कहता है ? आप तो योगी हैं —अर्थ-योगी !

शोभना :––माल छुपानेको आप पाप नहीं समझते ?

रामकिशन :–बिलकुल नहीं ! तिजारतका आधार होता है मौका । मैं व्यापार करता हूँ अपने लिये ! ज्यादा लेता हूँ, माल रोक रखता हूँ अपने बुरे दिनोंके लिये, यह तो जरूरतोंका खेल है ! कोअी माहवारी तनख्वाह तो मिलती नहीं मुझे और न मैंने सदावर्त ही खोल रखा है । मैं आपके अखबारकी मदद किसलिये करता हूँ ?

कवि : अिसलिये कि आप गजाननको अुल्लूपर बैठायें और लक्ष्मीको चूहेपर ! ह ह ह ..! तिजारतमें भी कितना आतंक भरा तर्क होता है !...

मल्लिका : मगर हमारी भी कुछ सांस्कृतिक जरूरतें हैं और वे भी अवसरोंकी गुलाम होती हैं !.. होलीका रंग... (पिचकारी अुठाती है)

(खबरदार ! खबरदार ! ! कहते हुअे विभ्रान्तका प्रवेश) सब चौकन्ने हो जाते हैं !)

विभ्रान्त : (प्रसन्नतासे छाती फुलाता हुआ)– आज मिला है मुझे अेक बहुत बड़ा सेन्सेशन !

(विभ्रान्तके पीछे दो आदमी अेक कपड़ोंकी गठान लाते हैं और रंगमंचके ठीक बीचों-बीच रखकर चले जाते हैं ! गठानोंपर रंग पड़नेके चिन्ह हैं ! मल्लिका और शोभना अुनपर–– ' साड़ियाँ ! साड़ियाँ !! ' कहती झपटती हैं और अेक-दूसरेकी ओर पीठ करके बैठने ही को होती हैं कि विभ्रान्त चिल्लाता है।)

विभ्रान्त : ठहरो !

रामकिशन : (अुतावला और घबराया-सा) ये... ये . कपड़ोंकी गठान हैं आप अिसे क्योंकर... कहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुठा लाये ?--किसलिये अुठा लाये ? क्या करेंगे आप अिसका ?

विभ्रान्त : अभी मुझे अिन बातोंका अुत्तर देनेकी फुरसत नहीं--कवि !

कवि : जी सम्म--विभ्रान्त जी !

विभ्रान्त : फार्म रुकवा दो,...अभी... अिसी वक्त ! मैं अेक नयी सनसनी खेज खबर छापना चाहता हूँ !...अिसी अंकमें

कवि : अच्छी बात है (मुस्कराते हुअे प्रस्थान)

रामकिशन : मगर ये तो...कपड़ों...साड़ियों... कपड़ोंकी गठानें ह...

विभ्रान्त : आप जरा चुप रहिये !...कपड़ोंकी गठानें हैं...ये तो मैं भी देख रहा हूँ !...शोभना तुम टेबलपर आकर लिखो... (शोभना झिझकती है) सुना नहीं यहाँ आकर बैठो...और जो मैं बोलता जाता हूँ लिखती जाओ। (शोभना कुर्सीपर बैठकर हाथमें कलम ले लेती है)

रामकिशन : मगर...मगर आप कर क्या रहे हैं सम्पादकजी ? ये...ये... (फिर मल्लिका और शोभनाकी ओर देखकर झिझकता हुआ) येऽऽऽ

विभ्रांत : (खीझकर) येऽ्येऽऽ क्या कर रहे हो भाअीजी ! अेक मिनिट तो ठहर जाओ-- हाँ शोभना लिखो-- "अेक सुन्दर रहस्य ! फूलोंके बीच दबा हुआ माल !"

रामकिशन : (तमतमाकर) यह दबाया हुआ माल नहीं है !

विभ्रांत : मैं सिद्ध कर सकता हूँ कि यह छुपाया हुआ माल है !

मल्लिका : और अिसमें साड़ियाँ दबाकर रखी क्यों हैं !

रामकिशन : (दृढ़तासे) यह दबा-या-मा-ल नहीं है ! और अगर आप सिद्ध करेंगे तो नुकसान अुठायेंगे !

विभ्रांत : (हड़बड़ाकर) नुकसान ?....हां....क्यों?

रामकिशन : क्योंकि यह मेरा माल है !

विभ्रांत : (हतप्रभ-सा)
शोभना : (प्रफुल्लित होकर) } --आपका माल?

[शोभना अेकदम कलम फेंककर गठानकी ओर झपटती है और मल्लिका टाट फाड़नेकी कोशिश करती है]

विभ्रांत : ठहरो !

रामकिशन : आपकी अिन देवियोंने, रंग डालकर गठानका नुकसान किया है ! मैं आपको आगाह किये देता हूँ कि अिसके टाटका अेक कोना भी फटा तो...

विभ्रांत : (हकलाता-हड़बड़ाता-सा) आप नाराज मत होअिये भाअीजी !

रामकिशन : तो.... मैं नालिश कर दूंगा !-- (प्रस्थान)

विभ्रांत : भाअीजी--भाअीजी सुनिये.... (कहता हुआ पीछे-पीछे प्रस्थान करता है)

[शोभना और मल्लिका गठानका टाट खींचनेकी कोशिश करती हैं मगर खिचता नहीं। अितनेमें ही कविका प्रवेश]

कवि : सम्पादकजी ! सम्पादकजी !

मल्लिका : कविवर, हमारी मदद करो !

कवि : फार्म छप चुका है ! कवर.....

शोभना : भाड़में जाने दो फार्म, अिधर आओ ! अिसे खींचो।

कवि : यह काम मुझसे न होगा !

मल्लिका : (हाथ पकड़कर खींचती हुअी) कैसे न होगा ! शोभना दीदी अुठाओ तो पिचकारी !

कवि : नहीं-नहीं- (कहते हुअे खिचता जाता है और शोभना पिचकारी दिखाती हुअी धमकाकर अुसे आगे बढ़ाती है) मुझ गरीबके पास कुल ये ही कपड़े हैं ! नहीं.... नहीं.... मुझे तुम्हारी छीटोंके बुशशर्ट बनवाना पड़ेंगे ?

[अेकाअेक बंदूकका धड़ाका होता है और महेश-शंकर बंदूक लिये प्रवेश करता है। दोनों महिलायें चीखें देती हुअी भाग जाती हैं]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महेश : यह क्या गोलमाल मचा रखा है !

कवि : (आतंकित-सा) कौन हैं भगवन् आप ? बन्दूक लिये आजके दिन किस शक्तिका आव्हान कर रहे हैं ! क्या आपका भी अिस आतंक-मण्डलीसे कुछ बाहरी-भीतरी सम्बन्ध है ?

महेश : मैं रंग, भंग, कुछ पसन्द नहीं करता ! राजनीतिज्ञ जनताको सही रास्तेपर लानेके केवल दो ही तरीके जानता हैं—बात या बन्दूक । पहले मैं बातोंसे आपको समझाअूंगा कि रंग, पानी और कपड़ोंकी राष्ट्रीय-बरबादी क्यों नहीं करनी चाहिये ! अगर आप समझदार हैं जैसा कि मैं आशा नहीं करता तो मेरी बात मानकर आप अिस पागलपनको छोड़ देंगे ! वरना. . . बन्दूक है ही !

कवि : मगर महोदय, आपको तो अहिंसावादी होना चाहिये !

महेश : मैं पूरा अहिंसावादी हूँ; मगर मेरी अहिंसाकी परिभाषा अलग है ! जहाँ हिंसा होती है वहाँ मेरी अहिंसाकी आँखें लाल हो जाती हैं !

कवि : मगर यहाँ कौनसी हिंसा हो रही थी !

महेश : आप लोग अिस गठानको फाड़ने और कपड़ोंपर रंग डालनेमें लगे हुअे थे ! अेक समाज-सुधारकके नाते नागरिकोंके सच्चे कर्तव्य और अुत्तर-दायित्वको बताना मेरा काम है । आप जिस मनोरंजनमें लगे थे वह असामाजिक है, हेय है ! यह कहाँकी संस्कृति और सभ्यता है ! आप जानते हैं देवियो और सज्ज..... मेरामतलब है मेरे भाअी तुम जानते हो कि चित्रकलाका अितना— अितना ह्रास क्यों हुआ है ? जानते हो ?

कवि : नहीं

महेश : तो मैं बताता हूँ आपको— आप सारेके सारे रंग होलीके दिनों गलीकूचोंमें बहा देते हैं ! बेचारे चित्रकारके लिये कुछ बचता ही नहीं !

कवि : वाह !– वाह ! अैसी आतंककारी बात तो मैंने पहले कभी नहीं सुनी ! धन्य है भगवन् चित्र-कारोंकी कठिनाअी समझनेके लिये किसी आप ही जैसे विचित्रकारकी जरूरत थी !— शोभना देवी !

[नेपथ्यमें विभ्रांतकी "दूर रहो, दूर रहो" आवाजें और मल्लिकाकी खिलखिलाहट ! और "अब कहाँ छुपोगे" शब्द रंगमंचपर खिड़कीसे दीखनेवाली डालके पत्तोंकी खड़खड़ाहट !]

महेश : यह और क्या गोलमाल है ? (अुस ओर देखता है)

कवि : (बिना सुने) शोभना देवी, आपके मेहमान आये हैं ! शोभना देवी !

शोभना : (रोष भरी हुअी) तुम किसी कामके आदमी नहीं कपिराज !— अरे महेशलाला ?

महेश : (चौंककर) क्या कहा भाभी कपिराज ? (बन्दूक अूंची करता है)

शोभना : (आतंकित-सी) क्यों क्या बात है ? देखो बन्दूक फिर न दाग देना ।

महेश : बताओ कहाँ है कपि ? मैं गोली मार दूंगा ! बन्दर मारना मेरा राष्ट्रीय कर्तव्य है !

कवि : अहा– अगर आप त्रेतामें होते तो भारतकी राजधानी कोलम्बो होती !

शोभना : आप लोग यह अधर्म करनेपर क्यों तुले हैं !

महेश : (बन्दूक साधे अपनी धुनमें अिधर-अुधर देखता हुआ) चुप रहो, राजनीति केवल काल-धर्म जानती है ! लोग दाने-दानेको तरस रहे हैं । मैंने कअी दिन मूंगफली और केलेके छिलके खा-खाकर गुजारे हैं ! जानते हो ये बन्दर क्या करते हैं ?

कवि : और शोभना—नहीं ।

महेश : ये तुम्हारी फसलें खा जाते हैं, पेड़-पौधोंको नष्ट कर देते हैं और अन्तमें आपको, अिन स्त्रियोंको माताओं और बहिनोंको भूखा रहना पड़ता है ! (खिड़कीसे दीखनेवाली शाखाके पत्तोंमें फिर खड़-खड़ाहट होती है और मल्लिकाकी खिलखिलाहट सुनायी देती है ।)– तो आपलोग अिस गठानको जहाँ की तहाँ पहुँचा दें और मैं अुस बन्दरकी खबर लेता हूँ ! (खिड़कीकी ओर देखता है)

शोभना : (घबरायी-सी) आपको अिस गठानसे क्या मतलब है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवि : शोभना देवीका मतलब है कि राजनीतिका अर्थ-वाणिज्यसे क्या ताल्लुक है !

महेश : (बिना विचलित हुअे) दोनों अेक दूसरेपर अवलम्बित हैं। (फिर अेकाअेक अुत्तेजित होकर) वो देखो ! वो देखो !! मिल गया ! (निशाना लगाता है)

शोभना : (चीखती हुअी) बन्दूक मत दाग देना लालाजी ! (नली पकड़कर नीचे कर देती है)

महेश : (छूटकर अलग होता हुआ) हट जाओ भाभी ! मैं राष्ट्रीय कार्योंमें नारीकी दस्तन्दाजी पसन्द नहीं करता !

कवि : मगर महोदय जरा पक्का तो कर लीजिये कि वह बन्दर ही है या अुसका विकास पाया हुआ रूप ?

महेश : मुझे अपने लक्ष्यके विषयमें कभी भ्रम नहीं होता ! (फिर निशाना लगाता है) मैं सैद्धान्तिक बातोंमें मजाक पसन्द भी नहीं करता !

शोभना : नहीं बन्दूक मत दाग देना ! गजब हो जायगा ! कवि जरा देखो तो वहाँ जाकर ! कहीं वे ही तो नहीं बैठे हैं वहाँ ?

[नेपथ्यमें किसीके जमीनपर धम्म गिरनेकी आवाज और मल्लिकाकी हँसी; खिड़कीसे दीखनेवाली डालके पत्ते हिलते हैं। कविका सिर खुजलाते हुअे प्रस्थान और दूसरी ओरसे विभ्रांत कीचड़में सना हुआ हाँफता हाँफता प्रवेश करता है ठीक अुसके पीछे मल्लिका भी पिचकारी लिये हुअे आती है। बन्दूक लिये महेशको देखकर दोनों ठिठक जाते हैं]

विभ्रांत : महेश। ओहो बड़ी चोट आ गयी है पैरमें...अंह....कहिये मैं आप....

मल्लिका : ये बना रहे हैं शोभना दीदी !

महेश : तो तुम थे अुस पेड़पर ! अच्छा हुआ जो मैंने गोली नहीं चलायी वरना शहीद हो जाते ! खैर, आपने मेरा स्टेटमेन्ट मुखपृष्ठपर निकाला या नहीं !

विभ्रांत : (चौंककर) अच्छी याद दिलायी ! कवि !– कवि ! कहाँ गया ? मैंने ब्लाक तो दे ही दिया था ! मगर स्टेटमेन्ट लिख नहीं पाया ! — कवि !– कहाँ गया ?

शोभना :—मैंने अुसे आपको देखने भेजा है !

विभ्रान्त :—क्या था तुम्हारा स्टेटमेन्ट ?

महेश :—(भाषण देता-सा) "दिल रंगो, कपड़े नहीं" केवल शीर्षक दिया था मैंने, बाकी आपको लिखना चाहिये था !

विभ्रान्त :—मैं अिस गड़बड़ीमें भूल ही तो गया। मगर शीर्षक तो दिया है मैंने–(मशीन–मैन–प्रवेश करके) लीजिये साहब अंक तैयार हो गया !

विभ्रान्त :—(प्रसन्नतासे आगे बढ़कर) लाओ [मल्लिका बीच ही में अंक छीन लेती है। मशीन–मैनका प्रस्थान। मल्लिका अंकको भीड़ी आँखोंसे देखती हुअी खिलखिला कर हँसते हँसते रुक जाती है]

महेश :—अंक अिधर लाओ ! (बढ़ता है)

विभ्रान्त :–(सशंक-सा) क्या बात है मल्लिका ? (अंक छीनने बढ़ता है)

मल्लिका :–(पीछे हटती हुअी) शोभना दीदी ! देखो...खि ...खि...खि...

शोभना :— (अंक लेकर भेड़ी निगाहसे देखती हुअी)—खि...खि...खि...

विभ्रान्त :—(बौखला कर) यह क्या मजाक है तरुणियो, बताती क्यों नहीं• क्या बात है !

शोभना और मल्लिका :—खि–खि–खि–खि !

महेश :—तुम लोग जासूसी अुपन्यासकी तरह अुत्सुकता क्यों बढ़ा रही हो.....

विभ्रान्त :—अिधर दो अुसे (छीन लेता है फिर देख कर) हाय ! हाय ! यह क्या हुआ ? (सिरपर हाथ ठोकता है) मैं लुट जाअूंगा, बदनाम हो जाअूंगा लाला ! अिसमें तुम्हारा ब्लाक...पहले ही...कवर पर अुलटा छपा है ! ...

महेश :—(अंक छीनकर अुत्सुकतासे देखता है) हैं ? (फिर फेंक कर) मैं देख लूंगा ! .....यह मजाक महँगा पड़ जायगा विभ्रान्त ! (मुंह पलटकर तना हुआ खड़ा हो जाता है)

विभ्रान्त :—(अंक अुठाकर सिर ठोकता हुआ पढ़ता है)–कपड़े रंगो-दिल रंग जायगा ' अिस अंकको विभ्रान्तकी मानसिक बीमारीकी हालतमें बेघर जौनपुरीने सम्पादित किया " –हाय हाय•कवि..... (कुर्सीपर हताश बैठ जाता है) (शोभना और मल्लिका ठहाका मारकर दोनोंपर रंग डालने पिचकारी अुठाती है)

(पटाक्षेप)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुजराती भाषा और साहित्य

: श्री पांडुरंग गणेश देशपांडे :

अर्वाचीन युग—

ओस्ट अिंडिया कंपनीने बम्बअीको अपनी राजधानी बनाया, अुस वक्तसे सूरतका महत्त्व दिनपर दिन घटता गया और बम्बअी ही व्यापार और विद्याका केंद्र बना, कुछ हद तक महाराष्ट्रके लिये भी। और शिक्षा, समाज-सुधार, ज्ञानप्रसार अित्यादि प्रवृत्तियोंको वहींसे प्रेरणा मिलने लगी। अैसा प्रतीत होता है कि वहाँका सार्वजनिक जीवन अुस जमानेमें प्रान्तीयता और फिरकापरस्ती वगैरहसे बिल्कुल मुक्त था। कारण वहाँके जीवनमें महाराष्ट्री ब्राह्मण, प्रभु, अन्यान्य जातियोंके गुजराती सज्जन और पारसी, अिसाअी और अंग्रेज भी अुसमें काफी भाग लेते थे। १८१४ में बम्बअीमें "राज्यके गरीबोंको शिक्षा देनेके लिये अेक सोसाअिटी" की स्थापना हुअी। पेशवाओंका अंत आनेपर १८२० में अुसने गुजराती अेवं मराठी पाठ्य-पुस्तकें प्रकाशित करनेकी प्रवृत्ति शुरू की। १८२५ में नेटिव अेज्युकेशन सोसाअिटीकी स्थापना हुअी और १८४० में नेटिव बोर्ड ऑफ अेज्युकेशनकी। १८५४–५५ में सरकारी शिक्षा विभाग (डिपार्टमेन्ट ऑफ पब्लिक अिन्स्ट्रक्शन्) की स्थापना हुअी। अिस तरह नयी शिक्षाका प्रसार बड़ी तेजीसे शुरू हुआ।

शिक्षाके अिस कार्यमें पारसी और महाराष्ट्रीय प्रभु अग्रणी थे। अिसलिये गुजरातीकी पाठ्यपुस्तकें अुस प्राथमिक अवस्थामें मराठीके अनुवादोंके रूपमें तैयार की गयीं। अिस हद तक कि, गुजराती व्याकरणकी जगह भी मराठी व्याकरणका अनुवाद काममें लाया गया। 'होप वाचनमाला' के नामसे सुविज्ञान प्राथमिक पाठ्यपुस्तकोंकी माला तैयार करनेके लिये जब १८५७–५८ में स्वतंत्र समितिकी रचना हुअी, तब अुसमें महीपतराम रूपराम नीलकंठ, कवि दलपतराम डाह्याभाअी, महेताजी दुर्गाराम मंछाराम जैसे आदमियोंकी नियुक्ति की गयी। १८५७ में बम्बअी युनिवर्सिटीकी स्थापना हुअी। अिसी जमानेमें आधुनिक गुजराती साहित्यका और गुजराती गद्यका प्रारंभ हुआ। 'होप वाचनमाला' के अलावा 'कोलंबसनु चरित्र', 'चरित्र निरूपण', 'मिस्रनो अितिहास' अित्यादि ग्रंथ और गणित, भूमिति, बीजगणित, विज्ञान वगैरह अन्यान्य विषयोंपर पुस्तकें लिखी जाने लगीं। बम्बअीमें ज्ञान प्रसारक मंडली और बुद्धिवर्धक सभाके सामयिक शुरू हुअे। अहमदाबादमें फार्बस साहबकी प्रेरणासे गुजरात वर्नाक्युलर सोसाअिटीकी स्थापना हुअी और अुसका सामयिक पत्र 'बुद्धिप्रकाश' शुरू हुआ। और लम्बे अरसेके बाद नयी स्थिर और व्यवस्थित राजकीय सत्ता स्थापित होनेकी वजहसे सब जगह अुत्साहकी लहर दौड़ गयी।

दुर्गाराम मंछाराम महेता (१८०९–१८७८) बम्बअीसे प्रेरणा लेकर निकले हुअे और श्री रणछोड़लाल गिरधरभाअीकी निगरानीमें जो शिक्षकोंके और नवयुवक तैयार हुअे, अुनमें दुर्गाराम मंछाराम महेता अग्रणी थे। अुनका जन्म १८०९ में हुआ। १८२६ में बम्बअीसे शिक्षा पाकर वे सूरत वापस आये और तबसे १८७८ तक अुन्होंने अज्ञान अंध विश्वास (सुपरस्टीशन), अित्यादि पर हमला करके अपने समाज सुधारके प्रयत्न अविरत जारी रखे। अुनके लिये अुन्होंने समाज-सुधारकोंका अेक मंडल कायम किया। महेताजीने मानव-धर्म सभा नामक अेक संस्थाकी स्थापना की और पुस्तक प्रसारक मंडली द्वारा लोगोंमें शिक्षाके लिये पुस्तकें प्रसिद्ध करनेके अुद्देश्यसे अेक शिला-छापाखाना (लीथो प्रेस) भी खरीदा। सुधारके हिमायती होनेकी वजहसे कअी बार अुनकी जान खतरेमें पड़ी थी। अज्ञान, अंधविश्वास और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामाजिक कुरीतियोंके विरुद्ध अुन्होंने जो जिहाद शुरू की थी, अुसमें अुनको काफी अनुयायी मिले। अुनमें महीपतराम रूपराम नीलकंठ प्रमुख थे।

अहमदाबादमें भी अिस नये आंदोलनकी हवा शुरू हुअी थी। आगे बताया गया है कि फार्बस साहबकी प्रेरणासे गुजराती भाषा और साहित्यकी सेवा और ज्ञानप्रसारके अुद्देश्यसे गुजरात वर्नाक्युलर सोसाअिटीकी स्थापना हुअी। श्री. फार्बस जब अहमदाबाद आये थे। अुन्हें गुजरातके अितिहास, पुरातत्त्व, साहित्य, अित्यादि विषयोंमें काफी दिलचस्पी थी। आगे चलकर अुन्होंने रासमाला नामसे गुजरातका अितिहास भी लिखा। भोलानाथ साराभाअीके द्वारा अुन्होंने कवि दलपतरामको अपनी मददके लिये बुलाया। और अुस समयसे जो अुनकी दोस्ती हुअी वह बढ़ती ही गयी, जिसे 'फार्बस विलास' और 'फार्बस विरह' की रचनाओं द्वारा कविने अमर बना दिया।

अिस वैचारिक और सांयोगिक भूमिकाके तैयार हो जानेपर साहित्यके नव सृजनको भी अच्छा वेग मिला। अिस जमानेमें जिस अेक जोड़ीने सारे गुजरातका और साथ-साथ बम्बअीका भी ध्यान अपनी तरफ खींचा था, वह थी कवि दलपतराम और कवि नर्मदाशंकरकी। ये दो आधुनिक गुजराती साहित्यके प्रथम निर्माता कहे जा सकते हैं। दोनों समाज सुधारके हिमायती थे। सामाजिक कुरीतियोंके विरुद्ध जिहादके लिये दोनोंका अेकसा आग्रह था। किन्तु स्वभावभेदके कारण वह कार्य करनेकी दोनोंकी दृष्टि और पद्धतिमें फरक था। दलपतराम पुरानी परम्परामें शिक्षा पाये हुअे थे। और अुसी परम्पराके अनुसार कार्य करनेकी अुनकी वृत्ति थी। समाज सुधारका पूरा लड्डू लाखों चींटियोंपर अगर अेकदम रक्खा जाय, तो वे सब मर जायँगी, किन्तु अुसके कण अलग-अलग फैलाये जायँ, तो वे आसानीसे खा सकेंगी—अैसी सुधारके प्रसारमें अुनकी लाक्षणिक दृष्टि थी। दूसरी ओर नर्मदाशंकर अंग्रेजी शिक्षा—जिसे महाराष्ट्रके विष्णु शास्त्री चिपळूणकर 'शेरका दूध' कहते थे—पाकर निकले थे। अुन्होंने "याहोम करीने पडो, फतेह छे आगे" (सरफरोसीकी तमन्नासे अेकदम कूद पडो, आगे जीत निश्चित है), अैसी गर्जना की और पूरे जोरसे वे कूद पड़े। अिस तरह दोनोंके गठनमें ज़मीन आसमानका फरक था, जिसका नतीजा यह हुआ कि दोनोंके अलग-अलग दल बन गये।

दलपतराम डाह्याभाअी (अि. स. १८२०–१८९८) दलपतराम सौराष्ट्रके श्रीमाली ब्राह्मण थे। व्रज और संस्कृत भाषाके अच्छे जानकार थे। १८४८ में वे फार्बसके बुलानेसे अहमदाबाद आये। १८५५ में वे गुजरात वर्नाक्युलर सोसाअिटी (अब गुजरात विद्यासभा) के असिस्टेंट सेक्रेटरी बने। जगह-जगह घूमकर अुन्होंने सोसाअिटीके लिये धन और मकान प्राप्त किया। लगभग तीस बरस तक अुन्होंने सोसाअिटीकी सेवा और 'बुद्धिप्रकाश' का सम्पादन किया। आँखें बिगड़नेके कारण वे १८७८ में सोसाअिटीकी सेवामेंसे निवृत्त हुअे। और १८९८ में अुनका देहान्त हुआ। तबतक अुन्होंने विविध और विपुल साहित्य रचना की। नाटक, निबन्ध, काव्य वगैरा क्षेत्रोंमें अुन्होंने अपनी कलम चलायी। हिन्दीमें भी अुन्होंने काव्यरचना की है (अुदा०—श्रवणाख्यान)। 'होप वाचनमाला' के लिये अुन्होंने काफी कविताअें लिखी थीं और अुनके नीचेके अपने व्यक्तिगत हस्ताक्षर 'क. द. डा.'के नामसे वे सारे गुजरातमें सुविख्यात हैं। अुनके लेखोंमें समाजसुधार, धीरे-धीरे किन्तु स्थिर कदमसे स्वातंत्र्य प्रेम, और स्वदेशवात्सल्य— अिन तीन चीजोंका प्राधान्य है। कविताके क्षेत्रको अुन्होंने खूब विस्तृत बनाया। तज्ञोंका अैसा अभिप्राय है कि, अुनमें सभारंजनी चातुरी काफी है, किन्तु अूंची और गहन कल्पना अुनकी कवितामें नहीं दीख पड़ती।

कवि नर्मदाशंकर—(१८३३–१८८६) कवि नर्मदाशंकरका जन्म सूरतमें नागर कुटुम्बमें हुआ था। अुनके जन्मके समय अुनके पिताजी बम्बअीमें नौकरी करते थे। अिससे अुन्हें बम्बअीके नये जमानेके संस्कार प्राप्त हुअे थे। अुन्होंने दो तीन बरस कॉलेजकी शिक्षा भी पायी थी और अँग्रेजी साहित्यका अुन्हें अच्छा परिचय था। अिसके अलावा संस्कृत, मराठी और हिंदी साहित्य भी अुन्होंने पढ़ा था। 'प्रेम और शौर्य' अुनका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवनमंत्र था। अुनकी यह मान्यता थी कि कवि होनेके लिये जीवन सब प्रकारके बन्धनोंसे मुक्त होना चाहिये और अुनका आचरण भी अिसके अनुसार ही था। अुन्हें गरीबीका खूब सामना करना पड़ा था। तथापि १८५५ में अुन्होंने अपने आपको साहित्य सेवाके लिये अर्पण कर दिया और "कलमकी गोदमें अपना सिर रक्खा"। अिस वजहसे लक्ष्मी और सरस्वतीका अ-मेल अुन्हें हमेशा ही सहना पड़ा था। ट्यूशन करके, नाटक लिखकर और कथा कहकर गरीबीका दुःख टालनेका अुन्होंने काफी प्रयत्न किया, किन्तु अुसमें कामयाब न हो सके। अुनके कुछ पारसी मित्रोंने, और कुछ हदतक सरकारने भी अुनके ग्रंथोंकी प्रतियाँ खरीदकर, अुन्हें सहायता दी। यह सब मुसीबत सहते हुअे भी अुन्होंने अपने अविरत अुद्योग और साहससे 'नर्मकोश' और 'नर्मकथाकोश' जैसे ग्रन्थ तैयार किये और गुजराती भाषाको अपना ऋणी बनाया। अुन्होंने कविताअें लिखकर सामाजिक सुधारकी प्रवृत्तिको वेग देनेकी खूब कोशिश की। बादमें 'राज्यरंग' लिखनेके लिये दुनियाके अन्यान्य देशोंका अितिहास पढ़नेका मौका मिलनेसे अुन्हें अैसा महसूस होने लगा कि किसी भी देशकी संस्कृति या जीवनमें अेकदम और जल्दी-जल्दी परिवर्तन करना अिष्ट नहीं है, और अुनके विचार पलट गये। ये विचार अुन्होंने अपने 'धर्मविचार'में व्यक्त किये हैं।

नर्मदका साहित्य विपुल है। अुनकी रचनाओंकी संख्या ५० के भी अूपर है। अिनका बड़ा हिस्सा 'नर्मकविता' और 'नर्मगद्य' नामक दो ग्रन्थोंमें संकलित किया गया है। अुस परसे अुनके साहित्यका मूल्य आँका जा सकता है।

नर्मदाशंकरका 'जोस्सो' (जोश) अनोखा था। भूतसंचार (अेलिमेन्टल फोर्स) की तरह जो भी चीज वे हाथमें लेते, अुसके पीछे पड़ जाते। फिर भी अुनकी रचनाओंमें घमंड, दूसरोंकी भावनाओंके प्रति अनादर और ग्राम्य मानी जाने लायक हीन कोटिकी रसवृत्ति दिखायी देती है।

अुनकी कवितामें प्रकृतिका वर्णन कहीं कहीं अच्छा पाया जाता है। और अिस शैलीकी आत्मलक्षी (सब्जेक्टिव्) कविता रचनेवालोंमें वे सबसे प्रथम व अर्वाचीन कवि हैं। मुनशीजीने अुन्हें अर्वाचीनोंमें आद्य कहा है, वह बिल्कुल ठीक है।

नवलराम लक्ष्मीराम पंड्या (१८३६-१८८८) कवि नर्मदकी ही परंपराके गिने जानेवाले किन्तु अुनसे ज्यादा स्थिर बुद्धिके, विवेकी और संस्कार-संपन्न, अुनके समकालीन और चरित्र लेखक नवलराम लक्ष्मीराम पंड्या थे। किसी व्यापारीके यहाँ गुमास्तेका काम करनेवाले पिताके घर सूरतमें अुनका जन्म हुआ था। मैट्रिक तक अुन्होंने शिक्षा प्राप्त की थी। अठारह बरसकी अुम्रमें शिक्षककी नौकरी ली, अुस वक्तसे लेकर जीवनके अंततक विद्याकी अुपासना जारी रखकर अुन्होंने शिक्षक, ग्रंथकार और पत्रकारकी हैसियतसे अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त की। संस्कृत, गुजराती और अंग्रेजी अिन तीन भाषाओंका अुन्होंने अच्छा अभ्यास किया और हिन्दीमें भी स्वतंत्र पद्यरचना करनेकी योग्यता प्राप्त की (अुदा. 'अकबर बीरबल निमित हिन्दी काव्यतरंग')।

नवलरामने 'कवि जीवन' यानी नर्मदका चरित्र, 'अंग्रेज प्रजानो अितिहास', मोलियरके अँग्रेजी अनुवाद परसे रूपान्तरित 'भटनुं भोपाळुं,' 'मेघदूतनुं भाषान्तर,' अित्यादि चौदह पुस्तकें लिखी हैं। अिसके अलावा, समाजसुधारका अितिहास रूप विवेचन और साहित्य विवेचन अित्यादि विषयक कअी निबंध लिखे हैं। 'गुजराती शाला पत्र' के सम्पादककी हैसियतसे लिखी हुअी समालोचनाअें अिस प्रकारके आलोचनात्मक वाङ्मयमें आज भी खास स्थान और योग्यता रखती हैं। वे साहित्यकी समीक्षा करनेवालों और विद्यार्थियोंके लिये अध्ययन करने लायक हैं। और अेक अच्छा आदर्श अुनके आगे रखती हैं। अुनकी शैलीमें नर्मदाशंकरका अेकांतिक 'जोस्सो' नहीं है। भाषा सरल और सीधी है। समीक्षाओं द्वारा लेखकोंका मार्गदर्शन करनेका काम अुन्होंने अच्छा किया है।

भोलानाथ साराभाअी और महीपतराम रूपराम—बम्बअीसे ही प्रार्थना समाजकी जो प्रवृत्ति शुरू हुअी थी, अुसकी गुजरातमें स्थापना (१८७१)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करनेवालोंमें भोलानाथ साराभाअी दिवेटिया (१८२३-१८८६) और महीपतराम रूपराम नीलकंठ (१८२१-१८९२) प्रमुख थे। दोनों अुच्च संस्कारसंपन्न नागर ब्राह्मण कुटुम्बके थे। दिवेटिया संस्कृत और फारसीके अच्छे विद्वान थे। अँग्रेजी और मराठी भी जानते थे। अुनकी रची हुअी 'अीश्वर प्रार्थना माळा' के दो खंड गुजराती साहित्यमें अनोखा स्थान रखते हैं। अुसकी खासियत तो यह है कि अुसमें न तो किसी संप्रदायपर हमला है, और न नये पंथके संस्थापकका अभिनिवेश या विवेकहीन जोश है। अिससे सारे संप्रदायोंने अुसे मान्य किया है।

महीपतरामका साहित्यमें विशेष स्थान है। अैतिहासिक अुपन्यास 'वनराज चावड़ो', 'अिंगलेंडनी मुसाफरी', 'दुर्गाराम महेताजीनुं जीवन', 'करसनदास मूळजीनुं जीवन' के अलावा अुन्होंने और भी कअी ग्रंथ लिखे हैं और 'भवाअी संग्रहका' संपादन करके कअी प्रचलित भवाअियोंको ग्रंथके रूपमें लोगोंके सामने रखा है। अन्यथा वे सुप्तप्राय होनेके ही मार्गपर थीं। गुजराती साहित्यका पहला अुपन्यास 'करण घेलो' अिसी जमानेमें शिक्षा विभागके अेक अंग्रेज अिन्स्पेक्टर श्री रसेलकी प्रेरणासे नंदशंकर मेहताने लिखा। आज भी यह पठनीय है।

रणछोड़भाअी अुदयराम (१८३७-१९२३) ने नाटक लिखनेका प्रारम्भ अिसी समय किया। अुनकी रचनाओंमें शेक्सपियरके नाटकके आधारपर लिखा हुआ 'ललितादुःखदर्शक' नाटक और 'जयकुमारी नाटक' खास अुल्लेख करने लायक हैं। रणछोड़भाअीके पहले भी कुछ पारसी नाटक कंपनियाँ नाटक करती थीं। किन्तु अुन नाटकोंका साहित्यमें कोअी स्थान न था। बम्बअीमें मराठी रंगभूमिके नाटक गुजरातियोंमें भी खूब लोकप्रिय थे। अैसा कहा जा सकता है कि रणछोड़भाअीने ही गुजराती नाट्यसृष्टिकी नींव डाली। नाटकोंके अुपरान्त अुन्होंने और भी कअी प्रकारके ग्रन्थ लिखे हैं। अुसमें सघुकौमुदीका भाषान्तर, रणपिंगलका संग्रह जैसे ग्रन्थ भी हैं।

अिसी अरसेमें कुछ पारसी लेखकोंने भी शुद्ध गुजराती भाषामें साहित्य रचना की। तल्वारखानकी 'रत्नलक्ष्मी' और 'कुलीन अने मुद्रा' अिसके अच्छे अुदाहरण हैं।

अंग्रेजी शिक्षाने समाज सुधारकी प्रवृत्तिको जो वेग दिया, वह जरूरतसे कुछ ज्यादा और अुल्टे ले जानेवाला था। जो कुछ नया वह सब अच्छा और पुराना सो सब फेंक देने लायक, अिस प्रकारकी मान्यता पढ़े लिखे वर्गमें सार्वत्रिक हो गयी थी। किन्तु युनिवर्सिटीकी स्थापनाके बाद अुसके द्वारा पढ़ायी जानेवाली अन्यान्य विद्याओंमें संस्कृत साहित्यका भी अध्ययन अध्यापन शुरू हुआ और अुससे अूपर कही हुअी मान्यताको कुछ धक्का पहुँचा। अिस युनिवर्सिटीसे जो विद्वान तैयार होकर निकले, अुनमें मनसुखराम और गोवर्धनराम त्रिपाठी, मणिलाल नभुभाअी अित्यादि प्रमुख कहे जा सकते हैं। अिनमें गोवर्धनराम सबके अग्रणी जैसे थे। अुन्होंने साहित्यके क्षेत्रमें जो असरकारक और विपुल भाग लिया, अुसपरसे यह काल यानी १८८५-१९१५ तकका समय गुजराती साहित्यके अितिहासमें 'गोवर्धन-युग' के नामसे परिचित है।

गोवर्धनराम त्रिपाठी-(१८५५-१९१) गोवर्धनरामका जन्म १८५५ में हुआ। वह नडियादके नागर ब्राह्मण थे। अुनकी प्राथमिक शिक्षा बम्बअीमें और माध्यमिक शिक्षा नडियादमें हुअी। २० बरसकी अुम्रमें वे बम्बअीके अेलफिन्सटन कॉलिजसे बी. अे. हुअे। १८८३ में अुन्होंने वकालत शुरू की। बीचमें करीब चार बरस तक सौराष्ट्रके भावनगर राज्यके दीवानके ही मंत्री रहे। अिस काठियावाड़ निवाससे रियासतोंके तंत्रका अुन्हें अच्छा परिचय और अनुभव हुआ जो सरस्वती चंद्रके लेखनमें अुनके लिये बहुत अुपयोगी सिद्ध हुआ।

करीब १५ बरस बम्बअीमें वकालत करके अुन्होंने पिताका ऋण चुका दिया और ४२ वर्षकी आयुमें हेतुपूर्वक शुद्ध साक्षर (साहित्यिक) जीवन व्यतीत करनेका निश्चय करके अुन्होंने अपना जोरोंसे चलता हुआ वकालतका धन्धा छोड़ दिया और अपने वतन नडियादको लौटकर आमरण साहित्यकी सेवा की। अुन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चार खंडोंमें 'सरस्वतीचन्द्र', 'स्नेहमुद्रा काव्य', 'लीलावती जीवनकला', 'दयाराम तो अवधरदेह', 'सावषर जीवन' (अेक निबंधात्मक अधूरा ग्रंथ) और 'क्लासिकल पोयेट्स ऑफ गुजरात' अित्यादि अनेक पुस्तकें लिखी हैं। अिनमेंसे आखिरी पुस्तकका निर्देश हम आगे कर चुके हैं।

गोवर्धनरामका सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ 'सरस्वतीचन्द्र' है। अुसका स्वरूप अेक अुपन्यासका है। किन्तु वह अिस नये जमानेका अेक गद्य महाकाव्य ही कहा जा सकता है और कहा भी गया है। नयेका विवेकपूर्वक स्वीकार और प्राचीनका संस्करण करके अुसका पुनः स्थापन, यही सूत्र अिस ग्रंथमें अनुस्यूत है। 'सरस्वतीचंद्र' का पहला खंड प्रकाशित हुआ, तबसे लगभग अेक पीढीतक गुजरातकी साहित्यिक दुनिया अुसीसे प्रभावित रही और अिसी कारणसे वह काल 'गोवर्धन युग' के नामसे प्रसिद्ध है। अिसके पहले दो खंड बड़े चावसे गुजरात भरमें पढे जाते हैं। अब अिन चारों खंडोंका अेक संक्षिप्त संस्करण भी अुपलब्ध है। अिस ग्रंथकी छोटी मोटी समालोचनायें जितनी हुअीं अुतनी शायद ही और किसी गुजराती ग्रंथकी हुअी हो।

मणिलाल मनुभाअी द्विवेदी (१८५८-१९८८) ये गोवर्धनराम त्रिपाठीके गाँवके यानी नडियादके ही वतनी थे। अुन्होंने 'कान्ता' नामका अेक स्वतंत्र नाटक और संस्कृत नाटक 'रामचरित' का गुजराती भाषान्तर किया है। अुन्होंने कुछ कवितायें भी रची हैं और 'गुलाबसिंह' नामक अेक अुपन्यास लिखा है। 'प्रियंवदा' और 'सुदर्शन' नामक मासिकोंका संपादन किया। गद्य लेखक और तत्वज्ञके नाते अुन्होंने अच्छी ख्याति प्राप्त की। भारतके बाहर भी अुनकी ख्याति फैली थी। अुनका गद्य-खासकर निबंध-अुच्च कोटिका माना जाता है। साहित्य समीक्षाका काम भी अुन्होंने अच्छा किया है। अुनके गद्यलेख 'सुदर्शन गद्यावलि' में संकलित हैं। ये प्राचीन संस्कृतिके ज्यादातर पक्षपाती थे।

नरसिंहराव भोलानाथ दिवेटिया (१८५९-१९३७) भोलानाथ साराभाअीके पुत्र, असलमें अहमदाबादके निवासी थे, किन्तु सरकारी नौकरीसे निवृत्त होनेके बाद बम्बअीमें जा बसे थे। अँग्रेजी शिक्षाके फलस्वरूप अिनका पहला काव्यसंग्रह कुसुम-माला १८८७ में प्रकाशित हुआ। वर्डस्वर्थ, शैली वगैराकी शैलीके अिन काव्योंने गुजराती कवितामें अेक नया युग शुरू किया। अिनका स्वागत भी अनेक प्रकारसे हुआ। मणिलाल मनुभाअीने अिन काव्योंको सुवासहीन विलाती फूल कहकर अुनकी निन्दा की; जब कि रमणभाअी नीलकंठ अिनपर मुग्ध हुअे थे। अिसी प्रकारके अन्य दो काव्य संग्रह 'हृदय वीणा' और 'नूपुरझंकार' नरसिंहरावने लिखे। पुत्रवियोगसे प्रेरित 'स्मरणसंहिता' अिनका श्रेष्ठ काव्य माना जाता है। अुसपर अांग्ल कवि टेनीसनके 'अिन मेमोरियम' की गहरी छाया है अैसा माना जाता है। नरसिंहराव विद्याके बड़े अुपासक थे। साहित्यसमीक्षा, संशोधन, निबंध, अित्यादि विविध प्रकारका अुनका साहित्य है। गुजराती भाषाके विषयमें अुनके दिये हुअे विल्सन फायलोलोजिकल लेक्चर्स अिस विषयमें बहुत महत्वके गिने जाते हैं। सरकारी नौकरीसे निवृत्त होनेपर भी अुन्होंने अपनी दीर्घ आयु अध्ययन अध्यापन और साहित्य सृजनमें व्यतीत की। अुनका अेक भजन "मंगल मंदिर खोलो" महात्मा गांधीजीके अपनानेसे सारे देशमें प्रसिद्ध हो गया है। अेडविन आरनोल्ड रचित लाअिट ऑफ् अेशियाके कुछ हिस्सेका अिन्होंने 'बुद्ध चरित' नामसे अच्छा अनुवाद भी किया है।

केशव हर्षद ध्रुव (१८५९-१९३८) संस्कृत विद्याके, खास कर ललित साहित्यके ये बड़े रसिक थे। अुन्हें संशोधनका काफी शौक था। अुन्होंने गीत-गोविन्द, अमरुशतक, अित्यादि काव्य और मुद्राराक्षस, विक्रमोर्वशीय और भासके कअी नाटकोंके सुंदर अनुवाद किये हैं। अुनकी भाषा संस्कृतप्रचुर होनेकी वजहसे अुनके बड़े नाटक कुछ दुर्बोध अवश्य हैं। अुनके भाषान्तरों और नाटकोंकी प्रस्तावनाअें संशोधनकी दृष्टिसे बड़े महत्वकी हैं।

रमणभाअी नीलकंठ (१८६८-१९२८) साहित्य समीक्षामें नवलरामके बाद विशेष योग्यता रखनेवाले और ख्याति प्राप्त किये हुअे रमणभाअी नीलकंठ महीपतराम रूपरामके सुपुत्र थे। समतुला अुनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यका विशेष गुण था। आप प्रार्थना समाजी और समाजसुधारक थे। सच्ची धार्मिक वृत्तिके थे। अुन्होंने 'भद्रंभद्र' (सामाजिक अुपन्यास) लिखकर सनातनियोंका खूब अुपहास किया है। अुनका लिखा हुआ 'राअीनो पर्वत' नाटकका गुजराती साहित्यमें विशेष स्थान है। अुनका गद्यलेखन विपुल और अुच्च कोटिका है। 'कविता अने साहित्य', 'धर्म अने समाज' के नामसे अुनके संग्रह प्रसिद्ध हुअे हैं। 'वसंत'का संपादन अुन्होंने बरसों तक किया था। अहमदाबादके नागरिक जीवनमें अुनका बड़ी प्रतिष्ठाका स्थान था।

'कान्त' और 'कलापि'—कान्त और कलापि अिस जमानेके दो खास अुल्लेखनीय कवि हैं। अिनमेंसे कान्त (मणिशंकर रत्नजी भट्ट) (१८६७-१९२३) का व्यवसाय शिक्षकका था। अुन्होंने शिक्षण शास्त्रका अितिहास भी लिखा है। काव्य थोड़ा है, किन्तु अुसकी गुण-सम्पदा और सौन्दर्य विपुल है। भावानुसारी विविध वृत्तोंकी योजनावाले अिनके खंडकाव्योंने गुजराती साहित्यमें स्थायी स्थान प्राप्त किया है। 'वसंत विजय', 'क्रौंच मिथुन', और 'कचदेववानी' ये अिनके काव्य प्रसिद्ध हैं।

कलापि (सूरसिंहजी मोहिल) (१८७४-१९००) सौराष्ट्रकी अेक रियासत लाठीके ठाकोर थे। मणिलाल नभुभाअी और कान्तसे अुन्होंने साहित्यिक प्रेरणा प्राप्त की थी। २६-२७ की अुम्रमें ही वे अिस दुनियासे चल बसे; किन्तु अिस अल्प अवधिमें अुन्होंने विपुल काव्य-रचना की। अिनका काव्य संग्रह 'केकारव' के नामसे प्रसिद्ध और लोकप्रिय है। अिनके काव्योंका स्थायी भाव करुण है। भावनाका आवेग भी प्रबल है। अिनके जीवनमें भी अिन चीजोंका बहुत असर हुआ था। प्रकृति सौन्दर्यका वर्णन अिन्होंने अच्छा किया है। 'केकारव' में संग्रहीत काव्योंके अुपरांत अिन्होंने काश्मीरके प्रवासका वर्णन, कुछ संवाद, और पत्र लिखे हैं। अिनके पत्रकी शैली सीधी, सरल और आकर्षक है।

आचार्य आनन्द शंकर ध्रुव (१८६९-१९४२) धर्म और तत्वज्ञानके बड़े अभ्यासी और संस्कृतके अच्छे पंडित थे। महात्मा गांधीके खास आग्रहसे अुन्होंने बनारस हिन्दू युनिवर्सिटीके प्रो-वाअिस-चान्सलरका पद स्वीकार किया और अखिल भारतीय ख्याति प्राप्त की। अुनका विद्यारस सर्वज्ञ होनेसे ये किसी भी विषयके अध्यापकका पद बहुत आसानीसे ले सकते थे। गुजरातके साहित्य, शिक्षा और सार्वजनिक जीवनमें भी अुनका विशिष्ट स्थान था। अिसका मानी सार्वजनिक जीवनमें अुनका जो स्थान था अुसका बहुत कुछ श्रेय महात्मा गांधीको है। 'वसंत' मासिक अिनके विचारोंका वाहन था। धर्म और नीतिके शिक्षणके लिये अुन्होंने छोटे बड़े चार ग्रंथ लिखे हैं। अुनकी 'हिन्दू धर्मनी बालपोथी' पर महात्मा गांधी मुग्ध हो गये थे। 'आपणो धर्म' अिनका श्रेष्ठ ग्रंथ माना जाता है। अुनके अभिप्राय साहित्यकी दुनियामें खूब कीमती माने जाते हैं। अिनकी भाषा संस्कृतप्रचुर होते हुअे भी क्लिष्ट नहीं है। अंग्रेजी साहित्यका अिन्हें खूब शौक था। और वसंतके अंतिम पृष्ठपर अपने विशाल वाचनमेंसे सुन्दर सुन्दर कंडिकाअें चुनकर वे प्रतिमास वाचकोंको परोसा करते थे। दुर्भाग्य अितना ही था कि ये कंडिकाअें अंग्रेजीमेंही अुतारी जाती थीं। गुजराती साहित्य और वाचकोंकी दृष्टिसे यह बड़ा नुकसान और अन्याय कारक हुआ। पुराने और नयेका वैचारिक मेल साधनेके लिये ये हमेशा प्रयत्नशील रहते।

बलवन्तराव क. ठाकोर (१८६९-१९५२); अिन्होंने काव्य, नाटक, निबंध, साहित्य समीक्षा, अितिहास, अित्यादि साहित्यके अनेक क्षेत्रोंमें अपना हिस्सा दिया है। ८० बरसकी आयु होनेपर भी अिनका अुत्साह किसी नौजवान जैसा था। काव्यमें विचार और अर्थ-गांभीर्यपर अिनका खास जोर था। छंदोंमें अिन्होंने कुछ प्रयोग किये हैं। पृथ्वी छंदमें कअी सॉनेट लिखे हैं। वे अनेक तरुण कवियों और साहित्य सेवकोंके मार्गदर्शक थे। किन्तु अुनकी अपनी भाषा और कवितामें आकर्षक और रोचक तत्व बहुत कम प्रतीत होता है। साहित्य और विद्याके वे परम अुपासक थे। किन्तु साहित्यके द्वारा गुजरातके जीवन विकासमें अुन्होंने क्या हिस्सा लिया, वह कहना मुश्किल है।

अरदेशर फरामजी सबरदार पारसियोंमें खास अुल्लेखनीय साहित्यिक हैं। युनिवर्सिटीमें संस्कृतके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अध्ययनसे गुजराती भाषामें जो नया तत्व दाखिल हुआ और गुजरातीसे पारसी गुजराती नामसे अेक अलग भाषा पैदा हुअी, अुससे बचकर अुन्होंने शुद्ध गुजरातीमें काव्य-रचना की है। अिनकी भाषा मधुर, आलंकारिक और प्रसाद युक्त है। अिनके कअी काव्यसंग्रह प्रसिद्ध हैं। अुनमेंसे राष्ट्रिकामें स्वदेशाभिमानके कअी सुन्दर गीत हैं।

कवि नानालाल दलपतराम (१८७७-१९४६) की साहित्यसृष्टि विपुल है, सुन्दर है। अुनके रचे हुअे छोटे-छोटे रास, गरबियाँ और लघुकाव्य बहुत ही लोकप्रिय हैं। और अैसे छोटे-छोटे काव्य द्वारा ही अिन्होंने साहित्यके क्षेत्रमें पदार्पण किया। अुदात्त आर्य भावोंको अुतनी ही अुदात्त भाषामें व्यक्त करनेका विरल सामर्थ्य अुन्होंने बताया है। अुनकी कृतियोंमें 'जयाजयन्त', 'अिन्दुकुमार', 'विश्वगीता' और लघुकाव्योंने गुजराती साहित्यमें स्थायी स्थान प्राप्त किया है। अपने डोलन-युक्त गद्यमें (अपद्यागद्यमें) अुन्होंने जिस प्रकार शब्दयोजना की है, अुसमें अुन्होंने खूब कामयाबी हासिल की है। किन्तु अुनकी यह शैली अनुकरणीय नहीं है। कुछ राजकीय घटनाओंकी वजहसे वह केवल ध्येयवाद और कल्पनाविहारमें अुड़ने लगे और जीवनसे अलग पड़ गये। किन्तु अुनकी साहित्यविषयक भक्ति और निष्ठा आमरण अखंडित रही और अुनके साहित्यका प्रवाह आखिर तक बहता रहा। अुनके गद्यमें कअी जगह (अुदा० अुषा अेक सृजनजूनी वार्ता) शब्दप्रचुरता और अर्थवरलता दिखायी देती है। आर्य भावोंको सुन्दर रीतिसे व्यक्त करनेकी अनोखी कला अुन्होंने प्राप्त की थी। पुराण और अितिहास दोनोंमेंसे प्रसंग चुनकर अुन्हें सजीव रुपमें वे प्रस्तुत कर सकते थे। अिनके कुछ शब्द प्रयोग मुहावरे जैसे भाषामें रूढ़ हो गये हैं।

तमिल :

स्वर्गीय सुब्रह्मण्य भारतीका स्वातंत्र्य गीत !

(तमिल)

अडुवोमे पळ्ळु पाडुवोमे
आनन्द सुतन्तिरम् अडविंद
विट्टोमेन्द्र आडुवोमे।
येंगुम्, सुतन्तिरम् यनबदे पेचु
यल्लोरुम् सनम् यनबदे अुर्दियाचु
वेट्टि कोंडे शंग अुद्वोमे
तरणिक यल्लाम् यडत्त ओडुवोमे--ओडुवोमे.
अुळ्ळबुकम् तोमिळ्ळकुम् वन्दने शैवोम्
विहलिक्क णरि पाअिचि वाळमाटुम्
इनि वीणरक्क अुळ्ळयित अुड़ळम्
आयमाटुम्—आडुवोमे !

(भावार्थ :--हम स्वतंत्र हो गये हैं। आओ नाचें, गायें। सुनो अिस 'स्वातंत्र्य शब्दको' हम सब अेक हैं। आओ सब मिलकर शंख भेरी बजावें और अिस स्वातंत्र्य-सन्देशको सारे संसारमें गुंजा दें। हम श्रमित पीड़ित किसानोंका सम्मान करें और शोषण करनेवालोंको धिक्कारें। अब हम अुन घमंडी लोगोंकी धमकीमें कभी न आयेंगे जो हमें दबाते हैं, जो कंजूस मक्खीचूस हैं और गरीबोंका खून चूसते हैं। हम आजाद हो गये हैं। अब हम कभी किसीसे नहीं दबेंगे।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[सूचना—'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिये।]

साहित्य, शिक्षा और संस्कृति

समीक्षक:—श्री विनय मोहन शर्मा:

राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसादका यह सद्य: प्रकाशित ग्रन्थ है जिसमें अुनके समय-समयपर दिये गये भाषणोंका संग्रह है। अिन भाषणोंको तीन खंडोंमें बाँटा गया है। पहले खंडमें 'भाषा और साहित्य', दूसरे खंडमें 'शिक्षा' और तीसरे खंडमें संस्कृति सम्बन्धी भाषण दिये गये हैं। विभाजीकरणके बावजूद ये विषय सर्वथा अविभाजनीय हैं; क्योंकि अुनमें परस्पर तारतम्य है। भाषा साहित्यकी अभिव्यक्तिका वाहन है। वह शिक्षासे संस्कारित होती है और संस्कृतिको प्रतिबिम्बित करती है। यद्यपि लेखकके विचार भाषण रूपमें कुछ वर्ष पूर्व अभिव्यक्त हुअे हैं तो भी अुनकी आधुनिकता लेशमात्र भी कम नहीं हुअी। देशके सामने वे आज भी समस्या-रूपमें विद्यमान हैं। प्रथम खंडका प्रथम भाषण अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन (विशेष) अधिवेशन काकिनाडा (आन्ध्र) में सन् १९२३ में दिया गया था। अुसमें लेखकने राष्ट्रभाषाके जिन प्रश्नोंपर विचार किया है, अुनपर आज भी मनन करनेकी आवश्यकता है। राष्ट्रभाषा या राजभाषाका क्या स्थान है? प्रादेशिक भाषाओंका अुसके साथ क्या सम्बन्ध हो सकता है? अुसे किस प्रकार सारे राष्ट्रके लिये व्यावहारिक बनाया जा सकता है आदि प्रश्नोंपर बहुत ही युक्तिसंगत मनन किया गया है। अिससे तो किसीको अिन्कार नहीं हो सकता कि राष्ट्रीयताके निर्माणके लिये और देशमें अेकताके स्थापनके लिये "अेक भाषाकी नितान्त आवश्यकता है। देशका अुद्धार अिसी राष्ट्रीयता और अेकतापर निर्भर है।" हमारे देशमें अनेक बोलियाँ हैं—भाषाअें हैं और बहुतोंका साहित्य सम्पन्न है। लेखकके शब्दोंमें 'हिन्दीको जो राष्ट्रभाषा बनानेका प्रयत्न किया जा रहा है अुसका अर्थ अितना ही है कि राष्ट्रीय और अन्तर्प्रान्तीय कामोंके लिये अेक सर्वव्यापी भाषा हो। अिसका यह अर्थ कदापि नहीं कि प्रान्तिक भाषाओंका लोप कर दिया जाय अथवा अुनके स्थानपर हिन्दी स्वीकृत हो जाये। यदि किसीके मनमें अैसा विचार हो भी तो यह असंभव है। न बंगाली बंगलाके सुन्दर साहित्यको छोड़ सकते हैं, न गुजराती अपनी गुजरातीके साहित्यको। कोअी अन्य भाषा-भाषी अपने साहित्यको छोड़नेके लिये बाध्य नहीं किया जा सकता। साथ ही, यह भी स्वीकार करना होगा कि अेक भाषाके विना राष्ट्रका काम नहीं चल सकता। "हिन्दीको समस्त देशमें प्रचारित करनेके लिये लेखकका मत है कि देवनागरी लिपिमें सभी देश-भाषाअें लिखी जायें। हिन्दीको सरल बनानेके सम्बन्धमें अुनके सुझाव हैं:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) हिन्दी और अुर्दूको अलग भाषायें नहीं मानना चाहिये। न तो हिन्दी अत्यधिक संस्कृतसे बोझिल बनायी जाये और न अुर्दूको अरबी फारसीसे लादा जाये। (२) जिन प्रान्तोंमें हिन्दी तो नहीं बोली जाती; पर वहांकी प्रचलित शब्दावली मूल संस्कृत भाषा ही है; वहाँ संस्कृत शब्दोंको हिन्दीसे बहिष्कृत कर अुनके स्थानपर फारसी-अरबी शब्दोंका व्यवहार करना हिन्दी अुर्दूको मिला तो देगा; पर अिन प्रान्तोंमें हिन्दीका प्रचार दुष्कर हो जायगा। अतः यहाँ हमें मध्यम मार्ग ग्रहण करना होगा। संस्कृत, अरबी, फारसीके प्रचलित शब्दोंको अपनानेसे समस्या हल हो जायगी। (३) हिन्दी भाषाका व्याकरण शिथिल कर दिया जाय। अ-हिन्दी भाषा भाषियोंके लिये लिंगानुशासनकी समस्या भाषासे भी कठिन है। क्योंकि हिंदी-व्याकरणमें अिस विषयमें कोअी रूप स्थिर नहीं हो सका है। अ-हिन्दी ही क्यों, हिन्दी-भाषी प्रान्तोंमें भी लिंगकी अेकरूपता नहीं पायी जाती। बिहारमें दही खट्टी है; पर मध्य प्रदेशमें वह खट्टा है। अिसी तरह मुगलसरायमें गाड़ी खुलती है और जबलपुरमें छूटती है। तो अैसी स्थितिमें लिंग, मुहावरों आदिमें विभिन्नता रहनेमें किसीको आपत्ति नहीं होगी। (४) प्रान्तीय भाषाओंसे व्यावहारिक शब्दोंको हिन्दीमें लाना चाहिये। प्रचलित शब्दोंका अेक राष्ट्रभाषा-व्यावहारिक कोश बनाया जाय। प्रान्तीय भाषाओंको, हिन्दीको राष्ट्रभाषा या राजभाषाका पद मिल जानेसे चौंकनेकी लेशमात्र आवश्यकता नहीं है। हिन्दी तो राष्ट्रकी अेकताकी रक्षाके लिये अंग्रेजीका स्थान ग्रहण करेगी। प्रान्तोंका काम प्रान्तीय भाषाओं द्वारा ही सम्पन्न होगा। राजेन्द्र-बाबूने आदिम निवासियोंमें भी हिन्दी प्रचारकी ओर अुचित संकेत किया है। अुन्हें केवल हिन्दी सिखानेसे वे प्रान्तीय-भाषाके बोझसे बच जायेंगे।

साहित्यकारोंके प्रति लेखकका सन्देश है कि वे समाजमें चेतना अुत्पन्न करनेवाले साहित्यका निर्माण करें। ग्रंथके प्रथम खंडमें हिन्दी भाषाकी सभी समस्याओंपर संतुलित विचार व्यक्त किये गये हैं। साथ ही अुनका योग्य हल भी सुझाया गया है।

दूसरे खंडमें 'शिक्षा-समस्या' पर आजकी दृष्टिसे विचार किया गया है। अिस खंडके लेख विभिन्न भारतीय विश्व-विद्यालयों-- विद्यापीठोंमें दिये गये भाषण हैं। स्वतंत्रता मिलनेके पश्चात् शिक्षाके ढाँचेमें आमूल परिवर्तनकी आवश्यकता है। विश्वविद्यालयोंके सामने शिक्षाके माध्यमकी विकट समस्या है। शिक्षाका माध्यम क्या हो? प्रादेशिक भाषा, राष्ट्रभाषा या अन्तर्राष्ट्रीय भाषा (अँग्रेजी)? अिस प्रश्नपर लेखकने यूनिवर्सिटी कमीशनकी— सिफारिशोंके साथ अपनी सहमति प्रदर्शित की है।

तीसरे खंडमें भारतीय संस्कृतिसे सम्बन्धित तीन व्याख्यान संकलित हैं। महात्मा गाँधीके समान लेखकने भी संस्कृति अथवा सामूहिक चेतनाको भारतका प्राण माना है। क्योंकि "अिसी नैतिक चेतनाके सूत्रसे हमारे नगर और ग्राम, हमारे प्रदेश और सम्प्रदाय, हमारे विभिन्न वर्ग और जातियाँ आपसमें बँधी हुअी हैं।" देशकी सांस्कृतिक अेकताके लिये किन प्रयत्नोंकी आवश्यकता है, अिसपर विद्वान लेखकके विचार मननीय हैं। भिन्न-भिन्न अवसरोंपर अेक ही विषयको लेकर भाषण देनेके कारण विचारोंकी पुनरावृत्तियाँ स्वाभाविक हो गयी हैं। पर अिससे विषयमें स्पष्टता भी आ गयी है। हिन्दी भाषा और राष्ट्रलिपिकी समस्याओंपर प्रत्येक दृष्टिसे विचार किया गया है; साहित्यपर यह संभव नहीं हो सका है। परन्तु साहित्यकी भावी दिशाकी ओर प्रेरणात्मक संकेत अवश्य मिल जाते हैं। हिन्दी-अुर्दू भाषाकी अेकता प्रतिपादित करते समय लेखकने दोनों भाषाओंके साहित्यका तुलनात्मक दृष्टि-कोण प्रस्तुत किया है।

\+ \+ \+

नया समाज—(परिवार नियोजन अंक-जनवरी ५३)--सम्पादक-- श्री मोहनसिंह सेंगर। संचालक---नया समाज ट्रस्ट, ३३ नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता। पृष्ठ-१२०। मूल्य १ रु.।

आज परिवार नियोजन अथवा वृद्धिका सामाजिक, धार्मिक या सांस्कृतिक महत्व घटकर राष्ट्रकी परि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थितिके अनुरूप अुसकी शक्ति बढ़ानेमें, आर्थिक संतुलन करनेमें अेक हथियारके रूपमें अिस्तेमाल किया जा रहा है। यह सर्वविदित है कि पिछले वर्ष नवम्बरमें अखिल विश्व तृतीय परिवार नियोजन परिषद बम्बअीमें हुअी थी। अिसके निमित्त की गयी जाँचसे पता चलता है कि भारतमें नगर-निवासी ही नहीं ग्रामीणतक संतति-निग्रहके लिये अुत्सुक हैं। किन्तु हमारा अन्दाज है कि निश्चित मार्ग, सही मार्गदर्शनके अभावमें पति पत्नी अन्धेरेमें ही भटकते हैं; फलतः संतति-नियमनके बदले वृद्धिका ही परिणाम निकलता है। अतः प्रथम, परिवार नियोजनकी पर्दाप्रथाको हटाना होगा। अिस दिशामें "नया समाज" का यह कदम स्वागतार्ह है।

प्रस्तुत अंकमें विभिन्न क्षेत्रोंके देश तथा विदेशके विद्वानोंके चित्र-सहित विभिन्न पहलुओंपर प्रकाश डालनेवाले लेख, परिवार नियोजन परिषदकी जानकारी, भाषण तथा मुलाकातें, शास्त्रीय जानकारी पूर्ण सचित्र लेख हैं जिससे क्यों, कब, कैसे, कहाँ आदि प्रश्नोंका समाधान होता है। यही नहीं; अन्तमें पत्रका महत्वपूर्ण अंग "हमारा दृष्टिकोण" भी मननीय है जो सारे देशों, कालों और अुपायोंपर प्रकाश डालता है।

— श्रीराम अट्रावलकर

साभार प्राप्त

निम्नांकित पुस्तकें "राष्ट्रभारती" में समीक्षार्थ प्राप्त हुअी हैं। अिनकी समीक्षाअें समीक्षकोंके द्वारा प्राप्त होतेही प्रकाशित की जायेंगी।

आत्माराम अेंड सन्स, काश्मीरी गेट, नअी दिल्ली द्वारा प्रकाशित पुस्तकें— (१) काश्मीरकी लोककथाअें, ले० – श्री नंदलाल चत्ता, (२) सरल कहानियाँ, ले० – श्री संतराम 'विचित्र', (३) सभा शास्त्र, ले० – श्री न. वि. गाडगील, (४) शक्तिपूजा. ले० – श्री वी. मुखर्जी 'गुंजन', (५) पगध्वनि, ले० – श्री चतुर्सेन शास्त्री, (६) सफरकी साथिन, ले० – श्री रामसरन शर्मा, (७) जीवनके मोड़, ले० – श्री महावीर अधिकारी, (८) भारतका वैधानिक अेवं राष्ट्रीय विकास, ले० – श्री गुरुमुख निहालसिंह, अनु० – श्री सुरेश शर्मा, (९) प्रगतिवादकी रूपरेखा, ले० – श्री मन्मथनाथ गुप्त, (१०) हिन्दी साहित्य और अुसकी प्रगति, ले० – श्री विजयेंद्र स्नातक और श्री क्षेमचंद्र सुमन, (११) सुभद्रा परिणय, ले० – श्री वीरेन्द्रकुमार गुप्त, (१२) कारावास, ले० – श्री यश, (१३) अेकांकी समुच्चय, ले. – श्री प्रो. जगन्नाथ 'नलिन', (१४) मानव प्रताप, ले.–श्री देवराज 'दिनेश', (१५) अगले पांच साल ले.– श्री जी. अेस. पथिक।

राजकमल प्रकाशन लिमि, बम्बअी द्वारा प्रकाशित पुस्तकें– (१) बचपनकी कहानियाँ ले.– श्री शरत्चंद्र चट्टोपाध्याय, अनु०– महादेव साहा, (२) चमचम चमके चंदामामा, ले.– श्री बाबूराम पालीवाल, (३) दशकुमार चरित, अनु०– श्री निरंजनदेव आयुर्वेदालंकार, (४) पंच तंत्र, ले –श्री वासुदेव शरण अग्रवाल।

अग्रवाल प्रेस मथुरा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें— (१) सूर बालकृष्ण पदावली, ले०–श्री प्रभुदयाल मीतल, (२) सूर रामचरित्र, ले०–श्री प्रभुदयाल मीतल।

भारतीय ज्ञानपीठ, बनारस द्वारा प्रकाशित पुस्तक– (१) रेखाचित्र, ले०–श्री बनारसीदास चतुर्वेदी।

साहित्य रत्नमाला कार्यालय बनारस द्वारा प्रकाशित पुस्तक––(१) कोशकला, ले०– श्री रामचन्द्र वर्मा।

हिमालय अेजंसी कनखल, अु. प्र. द्वारा प्रकाशित पुस्तकें–– (१) अच्छी हिन्दी, ले०– श्री किशोरीदास वाजपेयी, (२) काव्यमें रहस्यवाद, ले०–श्री किशोरीदास वाजपेयी।

(शेष पुस्तकोंकी प्राप्ति सूचना आगामी अंकमें दी जायेगी।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन पीढ़ियों तक चलनेवाली अेक-शती कन्नड़-कथावस्तु :

कन्नड भाषा दक्षिणकी अेक समुन्नत ओजस्वीनी और साहित्य-सम्पन्न भाषा है। जहाँ अुसका प्राचीन साहित्य--भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और नीतिका साहित्य--गौरवशाली मध्ययुगीन भारतीय साहित्यके समान समृद्ध है; वहाँ अुसका अर्वाचीन साहित्य भी अपने कविता, कहानी, अुपन्यास, नाटक, समालोचना आदि विविध अंगोंमें कलात्मक प्रौढ़ताकी चोटीपर पहुँचनेको अग्रसर है। कन्नडके आधुनिक वयोवृद्ध और तूफानी तरुण कलाकार अिस ओर बड़े ही जागरूक हैं। अुनकी बहुमुखी प्रतिभा साहित्यके विभिन्न अंगोंकी पुष्टि कर रही है। कर्नाटकके आधुनिक प्रौढ़ साहित्यकारोंमें श्रीयुत शिवराम कारन्तका अेक विशिष्ट तथा महत्वपूर्ण स्थान है। मनीषी कारन्तने कन्नड़में क्या क्या नहीं लिखा! अनेक अुपन्यास, अनगिनती कहानियाँ, नाटक, गीति-नाट्य, व्यंग्यात्मक और विचारात्मक सुन्दर निबन्ध, और ललित लेख लिखे हैं। बालकोंके लिये लोरियाँ और कहानियां लिखी हैं। अेक "बाल-प्रपंच" का निर्माणकर बच्चोंकी निराली दुनिया ही अुन्होंने आबाद कर दी है; और साथ ही कन्नड़ भाषाका अेक समृद्ध बृहत् कोश भी निर्माण किया।

अैसे समर्थ साहित्यकारकी अेक अमर कृति--अुपन्यास--"धरतीकी ओर" को, जो भारतीय साहित्यकी शाश्वत कलाकृति है, जिसे भारतीय साहित्यका प्रतिनिधित्व करनेवाली राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, पुस्तक रूपमें शीघ्र ही प्रकाशित करने जा रही है। अुसका सम्पूर्ण हिन्दी-रूपान्तर प्रस्तुत है और अुसे भारतीय साहित्यके महापंडित राहुल संस्कृत्यायनजी भी देख चुके हैं। यह अेक क्रान्तिकारी महान् अुपन्यास है। अिसलिये महान् है कि अुसमें पीड़ित, अवहेलित और अुपेक्षित ज़ीवनकी दर्द भरी और तीन पीढियों तक चलनेवाली लंबी कहानी है और जिसमें श्री कारन्तने सन् १८४० से लेकर १९४० तकके दरमियानकी गरीबीकी कहानीका मार्मिक चित्रण किया है। सहनशीलता, स्नेहवात्सल्य और सौज़न्यकी मूर्ति ममतामयी माताको लेखकने अपनी यह कृति अर्पण की है। कथावस्तुका वातावरण, आवरण, मुहावरे, भाषा, शैली, विचार, सबका निर्वाह अपने जन्मस्थान देहात पातूर ग्रामको और अुसके आस-पासके प्रदेशको लेकर ही किया गया है। दक्षिण कर्नाटकके पश्चिमी घाट, सृष्टि-सौन्दर्य, घने जंगल, घाटियां, और अेक ओर भारतकी धरती माताके चरणोंको अपनी अुमंग और अुल्लास-भरी अुछलती नील जल-तरंगोंसे प्रक्षालन करनेवाला नीलाभ सागर है। अिस प्रकृतिकी गोदमें पूरी अेक सदी तक पूरी तीन पीढी तक, यही दारुण मूक गरीबी अिस अुपन्यासमें अत्यन्त वेगसे मुखर हो अुठी है। यह तीन पीढ़ियोंका अुपन्यास है जो हिन्दी-जगत्में शीघ्र ही आनेवाला है। यह मर्मस्पर्शी बड़ा अुपन्यास मूल कन्नडमें "मरळि मण्णिगे" नामसे प्रख्यात है।

—ह० श०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रभाषा और हमारे विश्व-विद्यालय:

यह सन्तोषकी बात है कि विद्यापीठोंके संचालकोंका ध्यान भाषाके अति महत्वके प्रश्नपर गया है। भारतीय भाषाओंके और खासकर राष्ट्रभाषाके विकास, अध्ययन आदिके प्रश्नपर वे अब विचार करने लगे हैं। शिक्षाके माध्यमका प्रश्न भी अुनके सामने है। और राष्ट्रभाषाके सम्बन्धमें हिन्दीतर भाषी प्रान्तोंमें अुसका प्रचार और प्रसार किस प्रकार हो अिसका भी विचार होने लगा है।

अभी हालहीमें केन्द्रीय सरकारके शिक्षा-विभागकी ओरसे दिल्लीमें विभिन्न विश्व-विद्यालयोंके प्रतिनिधि अथवा जिनमें हिन्दी विभाग हैं अुनके अुस विभागके अध्यक्षोंको अेकत्र किया गया था और अुनके सामने ये प्रश्न रखे गये थे। वहाँ कुछ विचार-विनिमय भी हुआ, यद्यपि हमारे सामने अुसका परिणाम कुछ अुत्साहवर्धक नहीं आया है। तीन अुपसमितियाँ बनाकर अभी तो अिन प्रश्नोंको अुन्होंने टाल ही दिया है। परन्तु अधिक दिनोंतक यह स्थिति कायम नहीं रह सकेगी। आखिरको अिनका निर्णय तो करना ही होगा और वह भी शीघ्र ही। अिसी कारण आगरा युनिवर्सिटीने अिसपर विचार करनेके लिये अेक परिषद् बुलायी है जो मार्चके प्रथम सप्ताहमें होनेवाली है। पूना यूनिवर्सिटीने भी अेक भारतीय भाषा विकास परिषद् मअीके तृतीय सप्ताहमें करना निश्चय किया है। विभिन्न विश्वविद्यालयोंके तथा साहित्यिक अेवं भाषा विषयक कार्य करनेवाली संस्थाओंको और विभिन्न राज्य तथा केन्द्रीय सरकारके प्रतिनिधियोंको अुसमें सम्मिलित होनेके लिये अुसने निमन्त्रण भेजा है और अुनके सामने तीन प्रश्न रखे हैं:—

१. विश्वविद्यालयोंमें संशोधन कार्य-रिसर्च और पोस्ट ग्रेज्युअेट अध्ययनके स्तरतक पहुँचनेके लिये आवश्यक विद्याध्ययनमें अंग्रेजीके माध्यमका स्थान प्रादेशिक भाषाअें ग्रहण कर सकें अिस अुद्देश्यको दृष्टि समक्ष रखते हुअे अुसका विकास करना और अखिल भारतीय भूमिकापर अिसे सिद्ध करनेकी कार्य-पद्धतिका अवलंबन।

२. संघकी भाषा-हिन्दीके सम्बन्धमें प्रादेशिक भाषाओंका स्थान क्या रहेगा।

३. राष्ट्रभाषाके रूपमें संघीय भाषाका विकास।

परिषद्में निम्न लिखित विषयोंपर जो प्रतिनिधि चाहे अपने निबन्ध मी हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत अथवा मराठीमें पढ़ सकेंगे।

१. पारिभाषिक शब्दोंकी रचना और अुन्हें किस प्रकार सिद्ध किया जाय।

२. संघकी राजभाषाके विकासका रेखांकन किया जा सकता है और यदि किया जा सकता है तो किस दिशामें और किस मार्गपर चलना होगा।

३. भारतके विभिन्न प्रदेशोंमें विभिन्न भारतीय भाषाओंका ज्ञान बढ़ानेके अुपाय।

शिक्षाका माध्यम :

अिस सम्बन्धमें यह जान लेना भी आवश्यक है कि पूना युनिवर्सिटीने विद्यालयोंकी शिक्षाके लिये भी मराठीको ही शिक्षाका माध्यम स्वीकार किया है। परन्तु वे अिस बातका अनुभव करते हैं कि संशोधन-रिसर्च तथा पोस्ट ग्रेज्युअेट अध्ययनके लिये अंतर प्रान्तीय भाषाका ही व्यवहार होना चाहिये ताकि सारे भारतमें अुसमें जो कार्य किया जाय अुसका स्तर अेक-सा अूँचा रहे और अुनमें अेक रूपता आ सके। वह अंग्रेजी न होगी—अर्थात् राष्ट्रभाषा हिन्दी ही होगी। परन्तु अिस स्तरपर हिन्दी अंग्रेजीका स्थान कहाँ और किस प्रकार लेगी यह अेक प्रश्न ही है।

यह भी याद रखना चाहिये कि अिसीको ध्यानमें रखकर गुजरात युनिवर्सिटी तथा बडौदा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युनिवर्सिटीने विद्यालयोंके लिये शिक्षाका माध्यम गुजराती तथा हिन्दीको समान रूपसे स्वीकार किया है। परन्तु अैसे भी राजनैतिक नेता तथा विद्वान लोग हैं जो चाहते हैं कि विद्यालयोंकी सारी शिक्षा हिन्दीके माध्यम द्वारा ही होनी चाहिये। शिक्षाका स्तर, अुसकी अेकरूपता, राष्ट्रीयता आदिको कायम रखनेके लिये वे अिसे अत्यन्त आवश्यक समझते हैं। परन्तु प्रान्तोंके विद्वानोंसे अिसका स्वीकार कराना आसान नहीं प्रतीत होता। यह अेक प्रश्नही है जिसका निर्णय बहुत विचारपूर्वक तथा शान्त चित्तसे करना होगा।

अभी हालहीमें अेक विद्वान विचारकने अिस प्रश्नको अिस प्रकार रखा था:—

कोअी व्यक्ति केवल अेक प्रान्तीय भाषाही जानताहो, हिन्दी या दूसरी कोअी भाषा न जानताहो तो भी अुसका कार्य राज्यके किसी भी स्तरपर, विश्व-विद्यालयमें या न्यायालयमें कहीं भी रुकना नहीं चाहिये। यह सुझाव अच्छा है। परन्तु अिसमें भी कअी कठिनाअियाँ हैं। तमाम क्षेत्रोंमें अुच्च स्तरपर हमें अखिल भारतीय दृष्टिसे—राष्ट्रीय दृष्टिसे-विचार करना होगा। यह हमें कभी नहीं भूलना चाहिये और जिनका काम-काज अुस स्तर तक पहुंचता होगा अुन्हें राष्ट्रभाषा हिन्दीको सीख लेनेमें कोअी कठिनाअी भी न होगी।

मातृभाषाका अपना अलग ही महत्व है:

अभी-अभी राष्ट्रपति श्री राजेन्द्र बाबूने भी कहा है:—

"यह समझना गलत है कि हिन्दी अिस देशकी विभिन्न प्रादेशिक भाषाओंके विकासके मार्गमें रोड़ा है।

अगले १२ सालमें हिन्दी अंग्रेजीके स्थान-पर भारतकी राष्ट्रभाषा होगी।

हिन्दीको जारी करनेसे देशकी विभिन्न प्रादेशिक भाषाअें कमजोर या खत्म नहीं होंगी।"

अन्तर्प्रान्तीय व्यवहारोंमें जो अंग्रेजीका स्थान है वह राष्ट्रभाषा हिन्दीको देनेकी बात जो कही गयी है वह अुचित होनेपर भी, प्रान्तीय भाषाओंके अभिमानी नेताओंको अुसमें कअी प्रकारकी शंकाअें होती हैं। अिसका कारण भी है। अंग्रेजोंने अपने राज्यकालमें अंग्रेजी अैसे-अैसे स्थानोंमें चला दी थी कि जहाँ मातृभाषाका होना ही स्वाभाविक तथा औचित्य पूर्ण था। कहीं-कहीं तो प्राथमिक शिक्षाका आरम्भ भी अंग्रेजीसे ही कराया जाता था। अैसी परिस्थितिमें वे चाहते हैं कि मातृ-भाषाका जो स्वाभाविक स्थान है वह अुसे प्रथम प्राप्त होना चाहिये; फिर अन्तर्प्रान्तीय व्यवहारमें हिन्दीका भले ही अुपयोग हो।

परन्तु अेक बहुत बड़े शिक्षित वर्गका अंग्रेजीके प्रति जो आकर्षण है अुसके कारण भी वे हिन्दीका विरोध करते हैं। वे अैसा क्यों करते हैं यह समझना कठिन नहीं। कुछ समय पहले २२ ख्याति-प्राप्त विद्वानोंने अंग्रेजीकी शिक्षा वैसी ही कायम रखनेकी विज्ञप्ति निकाली तबसे अंग्रेजीके पक्षमें अेक प्रकारसे आन्दोलन ही चल पड़ा है। अभी बम्बअीकी युनिवर्सिटीने विद्वानोंकी राय अंग्रेजीका स्थान हिन्दीको देनेके प्रश्नपर प्राप्त की तो ८३ प्रतिशत विद्वानोंने अुसके विरुद्ध अभिप्राय दिया। सम्भव है प्रान्तवादके कारण भी लोगोंमें हिन्दीका विरोध हो। परन्तु यह स्थिति बड़ी ही चिन्ता-जनक है। सरकार तथा देशके नेताओंको अिस प्रश्नपर अब अपना अन्तिम निर्णय करना ही होगा। आज जो अिस सम्बन्धमें विचारोंकी अनवस्था दिखायी देती है और चारों तरफ जो मनमानी चल रही है वह यदि अैसी ही चलती रहेगी तो अिससे राष्ट्रभाषा, राष्ट्र तथा हमारी स्वाधीनताको भी बड़ी हानि पहुँचेगी, और दुनियामें हमारी कहीं भी प्रतिष्ठा न रहेगी।

— मो० भ०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने प्रचारक भाई-बहनोंसे

राष्ट्रभाषा प्रचार समितिका परिवार बहुत विशाल है। अिस परिवारमें ३३०४ से अूपर प्रमाणित-प्रचारक हैं और लगभग २००० केन्द्र-व्यवस्थापक भी। हमसे सहानुभूति और प्रेम रखनेवालोंकी संख्या भी बहुत बड़ी है।

'राष्ट्रभारती' समितिकी अन्तरप्रान्तीय (भारतीय) साहित्य और संकृतिकी प्रतिनिधि मासिक पत्रिका है। अिसकी अुपयोगिता और अुपादेयता आप लोगोंसे छिपी नहीं है। अपनी अितनी सस्ती, विविध विषय-सम्पन्न, अेवं सुरुचिपूर्ण सुन्दर पत्रिकाको अगर आप लोग चाहें तो बहुत ही शीघ्र स्वावलम्बी बना दे सकते हैं। यह अितनी नियमित है कि प्रतिमास १ ली तारीखको पाठकोंके हाथमें पहुँच जाती है। वार्षिक मूल्य ६ रुपया, अर्धवार्षिक ३॥) और अेक अंकका दस आना है।

प्रत्येक प्रचारक और केन्द्र-व्यवस्थापक 'राष्ट्रभारती' का अेक-अेक ग्राहक बना दे, तो अिसकी सन्तोषजनक ग्राहक-संख्या बढ़ जायगी। सिर्फ आर्थिक लाभकी दृष्टिसे ही हमें नहीं सोचना है; भारतीय साहित्य और संस्कृतिके अुच्च अुद्देश्यको भी पूरा करनेके लिये अिस पत्रिकाके पाठकोंकी संख्या बढ़ाना, ग्राहक बनाना अत्यन्त आवश्यक है। यह मुश्किल नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि आप लोग 'राष्ट्रभारती'के ग्राहक खुद बनेंगे, दूसरोंको बनायेंगे और 'राष्ट्रभारती'की पाठकसंख्या बढ़ानेमें अपनी समितिकी सहायता करेंगे।

मोहनलाल भट्ट

मंत्री, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

फ्रेंच भाषा सीखिये!

'फ्रेंच स्वयं शिक्षक'

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धाका यह नवीनतम प्रकाशन है। अिसके लेखक हैं प्रख्यात गुरुकुल (युनिवर्सिटी) काँगड़ी हरद्वारके विद्वान स्नातक डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार डी. लिट. (पैरिस)।

राजधानी नयी दिल्लीमें भारत-स्थित फ्रांसके राजदूत श्री काअुन्ट आस्ट्रोरोग भारतके तरुणोंको शीघ्राति-शीघ्र फ्रेंच भाषा सीखनेकी सलाह देते हैं। फ्रेंच भाषा सारे यूरोपमें बहुत आमफहम और कूटनीतिज्ञ भाषा है। फ्रेंच भाषा बोलनेमें शान समझी जाती है।

बड़ी सरलतासे अिस पुस्तककी सहायतासे आप फ्रेंच भाषा सीख सकते हैं।

बढ़िया छपायी, साफ-सुथरी जिल्द, **कीमत ५ रुपया मात्र**

मिलनेका पता:--

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा [म. प्र.]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रजिस्टर्ड नं० ना० १९८

'राष्ट्रभारती' के बारेमें

हम आपसे कुछ कहना चाहते हैं !

'राष्ट्रभारती' का तीसरा वर्ष अिसी जनवरी '५३ से शुरू हो चुका है, और तीसरे वर्षका यह तीसरा (मार्चका) अंक आपके हाथमें है।

'राष्ट्रभारती'के जिन प्रेमी ग्राहकोंका वार्षिक चन्दा अिस अंकके साथ पूरा हो जाता है, अुनसे हमारा नम्र निवेदन है कि वे अपना अगले वर्षका चंदा ६ रु. मनीआर्डर द्वारा तुरन्त भेजनेकी कृपा करें। वार्षिक या छह माही चंदा हर हालतमें मनी आर्डर द्वारा भेजना ही ठीक होगा। अिससे हमको और आपको सुविधा होगी। आपको अंक समयपर मिलेगा। वी. पी. और 'रजिस्ट्री' चार्जकी झंझटसे आप और हम दोनों बचेंगे। आशा है, आप हमारी अिस प्रार्थनापर जरूर ध्यान देंगे।

दूसरा निवेदन यह भी है कि कमसे-कम अपने किसी अेक-दो पड़ोसी मित्रोंको भी ग्राहक अवश्य बना दें और अुनका सालाना चंदा मनीआर्डरसे भिजवा दें। यह 'राष्ट्रभारती' सचमुच सस्ती सुन्दर साहित्यिक-सांस्कृतिक पत्रिका है जो ठीक समयपर हर १ ली ता० को निकलती है।

मनी आर्डरसे वार्षिक चंदा ६ रु. और छह माही चंदा ३ रु. ८ आ.

पता :— व्यवस्थापक— 'राष्ट्रभारती', हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

अपने कृपालु लेखकोंसे निवेदन !

(१) 'राष्ट्रभारती'में प्रकाशनार्थ रचना आदि सामग्री स्वच्छ सुवाच्य नागरी लिपिवर्णमें ही भेजनी चाहिये। प्रकाशन योग्य सामग्री जो कुछ भी आप भेजें वह बहुत भारी और खूब लंबी चौड़ी नहीं होनी चाहिये, कृपया अिसका खयाल रखें। आपके हार्दिक सहयोगके लिये राष्ट्रभारती बहुत आभारी होगी।

(२) अच्छी तरह ध्यानमें रहे कि राष्ट्रभारतीमें प्रकाशनार्थ भेजी हुअी आपकी रचना अिसके पूर्व किसी हिन्दी पत्र-पत्रिकामें प्रकाशित न हुअी हो; और जो कुछ सामग्री भेजें वह 'राष्ट्रभारती'के लिये ही भेजें।

(३) अनुवादक महाशय किसी अनूदित रचनाको भेजनेसे पूर्व अुसके मूल-लेखकसे पत्र द्वारा अनुमति अवश्य प्राप्त कर लें।

(४) अपनी अस्वीकृत रचनाको वापस मंगानेके लिये डाक टिकट अवश्य भेजें अथवा अपने अुसकी प्रतिलिपि अपने पास सुरक्षित रखें।

(५) लेख, रचना आदि प्रकाशन योग्य सम्पादकीय सारा व्यवहार अिस पतेपर करें:—

संपादक : 'राष्ट्रभारती'
पोस्ट — हिन्दीनगर, वर्धा (मध्यप्रदेश)

प्रकाशक:— मोहनलाल भट्ट, मन्त्री—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा।
मुद्रक— गुरुराम शर्मा, राष्ट्रभाषा प्रेस, वर्धा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

अप्रेल १९५३

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्रभारती' बिहार, राजस्थान, मध्यभारत, हैदराबाद और भोपाल राज्यके शिक्षा-विभागों द्वारा स्कूलों, कालेजों और वाचनालयोंके लिये स्वीकृत हो चुकी है।

[सूचना:—'राष्ट्रभारती'में, सर्वश्री डॉ. बाबूराम सक्सेना, आचार्य काका कालेलकर, महामहोपाध्याय दत्तो वामन पोतदार, स्वर्गीय किशोरीलाल मशरूवाला और उत्तर प्रदेशके वर्तमान राज्यपाल श्री क०मा०मुन्शीजी आदि विशेषज्ञोंकी अेक 'समिति' द्वारा १९३६ में निर्णीत नागरी लिपिका प्रयोग होता है:—अि, अी, अु, अू, अे, अै (इ, ई, उ, ऊ, ए और ऐ की जगह) और ञ, ण और क्ष (ञ, ण और क्ष अक्षरोंके लिये) —सं०]

विषय		लेखक	पृ० सं०
१. वर्तमान शिक्षा प्रणाली	...	श्री डा. राजेन्द्र प्रसाद	२४१
२. दो सम्बद्ध कविताअें (कविता)	...	श्री धर्मवीर भारती	२४२
३. महाभारत (मैथिली)	...	श्री प्रो० हरिमोहन झा अनु०— सुश्री सीता सिन्हा	२४३
४. आधुनिक पंजाबी साहित्य	...	श्री डा. हरदेव बाहरी	२४७
५. विश्व अितिहासकी झलक	...	श्री भगवतशरण अुपाध्याय	२५१
६. 'विश्वभारती' के प्रति विद्वानोंका आकर्षण	...	श्री भदन्त शान्ति भिक्षु	२५४
७. दया ! (कविता)	...	श्री लक्ष्मीकांत वर्मा	२५७
८. पाँच मालाअें	...	श्री व्योहार राजेन्द्रसिंह	२५८
९. साहित्यका अुद्गम स्रोत	...	श्री ब्रिजलाल बियाणी	२६४
१०. नारे और जीवन	...	श्री डा. सोमनाथ गुप्त	२६५
११. पथ-रेखा (कविता)	...	श्री केदारनाथ मिश्र 'प्रभात'	२६६
१२. ब्रिटेनकी सांस्कृतिक विरासत: जनवादी ललित कलाओंके अुद्गम और विकास	...	श्री ओमप्रकाश आर्य	२६८
१३. वर्षों बाद (गुजराती कहानी)	...	श्री रमणलाल वसंतलाल देसाअी अनु०— श्री गोरीशंकर जोशी	२७४
१४. भक्तकवि वाणी (कन्नड)	...	श्री स. स. माळवाड अनु०— श्री गुरुनाथ जोशी	२८०
१५. जागरण (लघुनिबंध)	...	श्री 'भिक्खु'	२८३
१६. अेक प्यासी आत्माका गीत (कविता)	...	श्री सर्वेश्वरदयाल सक्सेना	२८६
१७. निर्धनता व्यंजक कुछ भोजपुरी कहावतें	...	श्री हर्षनाथ	२८७
१८. अष्टावधान (तमिळ)	...	श्री सर टी. विजय राघवाचारियार अनु०— कु. लक्ष्मी—कृष्णन	२८९
१९. हिन्दीकी अेक शक्ति:श्री रघुवीर सहाय (अिंटरव्यू)	...	श्री ललित सहगल	२९१
२०. प्रलय (मराठी कहानी)	...	श्री गंगाधर गाडगीळ अनु०— श्री अनिलकुमार	२९७
२१. चौराहा (लघुकथा)	...	श्री बैकुण्ठनाथ मेहरोत्रा	३०३
२२. वदन चौधरीकी शोक-सभा (बंगला)	...	श्री परशुराम अनु०— श्री महेशकुमार मूँधड़ा	३०५
२३. आधुनिक तमिल साहित्यमें अुपन्यासका विकास	...	श्रीमती 'गुहप्रियै' अनु०— श्रीमती सरस्वती रामनाथन	३०९
२४. साहित्यालोचन	....	श्री 'लोकचक्षु'	३१४
२५. सम्पादकीय	... ...		३१७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

* वर्ष ३ * वर्धा, अप्रैल १९५३ * अंक ४ *

वर्तमान शिक्षाप्रणाली

: श्री डॉ. राजेन्द्र प्रसाद :

आजके शिक्षाक्रममें चरित्र-गठनका कोअी स्थान नहीं है और न अुसको कोअी महत्व दिया जाता है। हमारी संस्कृतिम गुरु और शिष्यका सम्बन्ध बहुत ही सुन्दर और मीठा हुआ करता था। अिसका कारण यही था कि दोनोंका अेक दूसरेपर विश्वास हुआ करता था। गुरु शिष्यको पुत्रवत् मानते थे और अुसपर स्नेह रखते थे। शिष्य गुरुको पिता तुल्य पूज्य और विश्वसनीय समझता था। गुरुका शिष्यके जीवनपर गहरा प्रभाव पड़ा करता था और गुरु शिष्यके बीच केवल व्यापारी सम्बन्ध, जिसमें पैसेके बदलेमें कुछ पुस्तकें पढ़ा देने मात्र तकका सम्पर्क होता है, न रहकर आध्यात्मिक सम्बन्ध हो जाता था जो बहुत घनिष्ट हुअे बिना रह नहीं सकता था। आज आये दिन समाचार-पत्रोंमें पढ़नेको मिलता है कि कहीं विद्यार्थियोंने शिक्षकोंके विरुद्ध हड़ताल कर दी तो कहीं शिक्षकोंमें ही दलबन्दियाँ हो गयीं और विद्यार्थी भी कुछ अेक दलमें और कुछ दूसरे दलमें शरीक हो गये और अेक या दूसरेका समर्थन करने लगे। हालमें अेक भयंकर दुर्घटना भी सुननेमें आयी कि शिक्षकके परीक्षा-सम्बन्धी कड़ाअी करनेसे असन्तुष्ट होकर कुछ विद्यार्थियोंने शिक्षकके प्राण भी ले लिये। यदि दूसरे किसीने भी अुसकी बुराअी की या अुनके किसी बुरे कामका विरोध किया तो अुसके साथ भी लड़ने-झगड़नेसे बाज़ नहीं आते। अगर कोअी अेक विद्यार्थी अैसी कोअी बात करे तो वह समझमें आ सकती है। पर जब किसी स्कूल या कालेजके विद्यार्थी अेक गोल बनाकर अैसे काममें लगते हैं तो यह चिन्ताका विषय हो जाता है। जहाँ तक मैं देख और समझ सकता हूँ अिसका मौलिक कारण चरित्र-गठनपर ध्यान नहीं देना और छात्रगणपर शिक्षकवर्गके नैतिक प्रभावका न होना ही है। मेरा यह कथन किसी प्रदेश विशेषके लिये नहीं है। साधारणतया यह समस्या तो सारे देशमें वर्तमान है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो सम्बद्ध कविताएं

: श्री धर्मवीर भारती :

(१)

गुलाम बनानेवाले

और भी पहले वे कअी बार आये हैं।

अेक बार
जब अुनके हाथोंमें भाले थे
घोडोंकी टापोंसे खैबरकी चट्टानें काँपी थीं।

अेक बार
जब बजाय भालोंके
अुनके हाथोंमें तिजारती परवाने थे
बगलमें संगीनें थीं।

लेकिन अिस बार और चुपकेसे आये हैं।

आधे हैं
जिनके हाथोंमें हैं
केमरे
थैलियाँ
टूअरिस्ट पासपोर्ट
सिक्के
औ' रंगबिरंगी बिल्ले :

आधे हैं
जिनके पास
रंगबिरंगी चेहरे
(जिनको वे हुक्मके मुताबिक बदल देते हैं !)
दो दो आनेवाले
(दूर किसी नगरीमें छपे हुअे) पैम्फलेट
रोटी और पैम्फलेटके ढेरोंमें
ढंक ढंककर आयी हैं
दूर किसी नगरीमें ढली हुअी जंज़ीरें।

ढंग है नया ज़रूर
बात पर पुरानी है
घोडोंपर लदकर, या थैलोंमें भरकर,
या रोटीसे ढंककर, या फिल्मोंमें रंगकर
वे जंज़ीरें केवल जंज़ीरें ही लाये हैं !

और भी पहले वे कअी बार आये हैं।

(२)

अेक वाक्य

चेक बुक हो पीली या लाल—
दाम–सिक्के हों या शोहरत,
कह दो अुनसे
जो खरीदने आये हों तुम्हें
हर भूखा आदमी बिकाअू नहीं होता है !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाभारत

: प्राध्यापक श्री हरिमोहन झा :

समय प्रातःकाल। मैं कुछ स्तुति-स्तोत्रके श्लोक गुनगुनाता चला जा रहा था :—

"पुण्यश्लोको नलो राजा,
पुण्यश्लोको युधिष्ठिर :।" अित्यादि

—कि रास्तेमें खट्टर काका मिल गये। बोले—क्या सुबह-सुबह पापियोंका नाम लेते हो ?

मैंने कहा—खट्टर काका, धर्मराज.....

खट्टर काका टोकते हुअे बोले—धर्मराज नहीं, बूड़िराज। अैसा बूड़ि आज तक संसारमें दूसरा कोअी नहीं हुआ, जो द्यूतके पीछे अपना राजपाट और स्त्रीको भी दावपर हारकर वन-वन भटकता फिरे ? अुनके जोड़का राजा तो अेक ही है—राजा नल। वे भी वैसे ही थे। जुअेके पीछे अपना सर्वस्व गँवाकर जंगलमें फूट-फूटकर रोने गये और अुस जगह भी अपनी पत्नी दमयंतीको निद्रावस्थामें ही छोड़कर भाग निकले। जैसे युधिष्ठिर अथाह, वैसे नल नकडुब्बा ! दोनों अेक ही जूअेमें जोतने योग्य। अिसलिये जिसने यह श्लोक बनाया है अुसने खूब जोड़ी बनायी है।

मैं—खट्टर काका, ये लोग महाभारतके आदर्श महापुरुष हैं, जिनकी जीवनीसे असंख्य लोग शिक्षा ग्रहण करते हैं।

ख०—हाँ, सो तो मैं भी करता हूँ। युधिष्ठिरके जीवनसे तीन बातोंकी शिक्षा मिलती है। प्रथम तो यह कि जुआ नहीं खेलना चाहिये। दूसरे—अगर बेअीमानी करना नहीं जानते हों, तब तो नहीं ही खेलना चाहिये; अगर खेलें ही तो स्त्रीको बाजी (दाव) पर नहीं चढ़ाना चाहिये। अिसके अतिरिक्त और भी कअी अुपदेश मिलते हैं। जैसे—संसारमें झूठसे कोअी नहीं बचे हैं। जो धर्मराज कहलाते हैं अुनको भी "अश्वत्थामा हतः नरो वा कुंजरो वा" कहकर छल करना पड़ा। संसारमें शुद्धसे शुद्ध व्यक्तिका भी विश्वास नहीं करना चाहिये। सबसे बड़ी शिक्षा तो यह मिलती है कि कुलमें अेक बुरा आदमी पैदा होकर सम्पूर्ण देशका संहार कर देता है। यदि युधिष्ठिर जुआरी नहीं निकलता तो महाभारतका युद्ध क्यों होता ?

मैं—खट्टर काका, आपकी तो सभी बातें विचित्र ही होती हैं। सब लोग कहते हैं कि कौरवोंके अन्यायसे महाभारतका युद्ध हुआ और आप अुल्टे युधिष्ठिरको दोष देते हैं !

ख०—तुम्हीं विचार करके देखो। यदि युधिष्ठिर महाराज जुआ खेलने नहीं जाते तो यह सब होता ही क्यों ? और हार गये, अिसमें दूसरेका क्या दोष ? ललकारपर पासा भाँजते गये। अजी ! बुद्धूको तो लोग अुकसावा देते ही हैं। अिसमें दुर्योधन और शकुनीका क्या दोष ? और जब हार ही गये तो अपनी बातपर जमे रहते। यह क्या कि हार भी जायेंगे और राज्य भी चाहेंगे ?

मैं—खट्टर काका, द्रौपदीका कितना अपमान किया, चीर हरण किया ; और आप कहते हैं.....

ख०—द्रौपदी थी ही वैसी। अुसको कभी ज्येष्ठ (पतिके बड़े भाअी) का विचार रहा ! शीशमहल जो बनवाया था। दुर्योधन देखने आये। संगमरमर अैसा झलक रहा था कि देखनेपर अुनको भ्रम हुआ कि यह पानी है या स्थल। अिसमें हँसनेकी कौनसी बात थी ? परन्तु द्रौपदी खिलखिला अुठी। अितना ही नहीं, सुना कर व्यंग बाण छोड़ा—"अन्धेका बेटा अन्धा ही होता है"। कहो तो, यह कैसा मर्मवेदी वाक्य था। वृद्ध ससुर धृतराष्ट्रके प्रति अुसको अैसी बात बोलनी चाहिये थी ? और कौरव लोग तो पांडवों जैसे बुद्धू थे नहीं कि अपमानका कड़ुवा घूंट पी लेते। वे सब तो अगिया-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैताल थे। द्रौपदी खुद ही भिड़ोंके छत्तोंमें खोंचा देने गयी। तब अुन लोगोंने जो कुछ किया ठीक ही किया। सच तो यह कि महाभारतकी जड़ द्रौपदी ही है।

मैं—खट्टर काका, आप पांडवोंको बुद्धू क्यों कहते हैं ?

ख०—बुद्धू तो थे ही। भरी सभामें द्रौपदीके शरीरसे साड़ी खींचकर नंगी कर दिया और पाँचों पांडव सिर झुकाये बैठे रह गये। अुस क्षण भीमकी गदा और अर्जुनका धनुष-बाण कहाँ चला गया था ?

मैं—खट्टर काका, अुस जगह मौका नहीं था।

ख०—अच्छा ! अब अुससे बढ़कर कैसा मौका होता ? समझो तो पांडव लोग भारी दब्बू थे।

मैं—परन्तु अर्जुन और भीम कैसे थे ?

ख०—अर्जुन सच्चे पुरुष होते तो मूँछ-दाढी मुड़ा, साड़ी पहन, स्त्री बनकर राजकन्याको नाच सिखानेपर ही क्यों रहते ? अिससे तो घोड़ेकी सहीसी करो तो अच्छा। अपनी जिन्दगीमें ही द्रौपदीको दूसरेके महलमें रह नौकरानीका काम करते देखकर जिनके गलेके नीचे अन्न अुतरे वे पांडव धन्य थे। भीम तो सीधे रसोअिया ही थे। **"भोनू भाव न जाने पेट भरन सों काम"**। सिर्फ मोटा होनेसे क्या होगा ?

मैं—खट्टर काका, वे लोग अज्ञात-वासमें थे।

ख०—अज्ञात-वास करना था तो अैसी जगह जाते जहाँ कोअी अुनका मुँह नहीं देखता। अजी, ये लोग वास्तवमें मुँह दिखाने लायक थे ही नहीं।

मैं—खट्टर काका, अर्जुन जैसे वीरके बारेमें आप अैसा बोलते हैं ?

ख०—अै भाअी, मछली और चिड़ियापर ही निशान लगानेसे यदि लोग वीर कहलाने लगे तो मछुआ* भी वीर है। यदि अर्जुन सचमुचमें वीर होते तो ग्वाले अहीर सब मिलकर अुस तरह स्त्रियोंको घेरकर छीन लेते ? अुस समय गांडीवका घमंड कहाँ चला गया था ?—वही धनुष, वही पार्थ; हरि बिना कौन करे परमार्थ ?

असलमें अर्जुन कृष्ण के बलपर कूदते थे। जैसे खूँटेके बलपर भैंसका बच्चा कूदता है। यदि कृष्ण जैसे सारथी न मिलते तो कर्णके हाथसे अर्जुनके प्राण कभी बचते ? कर्ण सचमुच वीर था। परन्तु अुसके साथ जो अन्याय हुआ, वह क्यों और किसीके साथ होगा ? अर्जुनको अुसने कभी कुछ समझा ? और धर्मयुद्ध होनेपर दिखा देता। परन्तु छलिया कृष्णने नहीं होने दिया। कुन्ती जैसी मुँहदेखी करनेवाली माँ भगवान किसीको न दे। अेक बेटेका प्राण बचानेके लिये दूसरेके साथ घोर अन्याय किया। अगर वह कर्णका कवच कुण्डल धोखा देकर नहीं ले लेती तो अर्जुन कभी भी कर्णसे नहीं जीत सकते थे। परन्तु यह बात जानकर भी वीर कर्णने अपना अमोघ अस्त्र स्वार्थी माँके हाथमें दे दिया। सच्ची वीरता तो यह है। कर्ण जैसा वीर पुत्र और कुन्ती जैसी कुल-घातिनी माँ न आजतक हुअी, और न होगी। अर्जुनने जिस प्रकार धोखा देकर जयद्रथकी हत्या की, यह संसार जानता है। यदि अुस दिन कृष्ण अपनी चक्र-चाल नहीं चलाते तो अर्जुनको जलकर भस्म हो जाना पड़ता। परन्तु अुनके लिये क्या-क्या नहीं किया गया। और जिस कृष्णने अर्जुनके लिये अितना किया—गीता जैसा अुपदेश दिया—अुसीकी बहन सुभद्राको अर्जुन हरण करके ले आया। यह भी नहीं विचार किया कि मामाकी पुत्री ममेरी बहन है। अैसे ही आदमीकी तुम प्रशंसा करते हो ? अै भाअी, पांडव जैसा पतित कोअी हुआ ? अर्जुन अपनी ममेरी बहनको ले आया और भीम अपनी मौसेरी बहन (माँकी बहनकी पुत्री)को। सो भी द्रौपदी जैसी पत्नीके रहते!

मैं—मौसेरी बहन कैसे ?

ख०—अजी ! शिशुपालकी माँ और कुन्ती दोनों सहोदरा बहनें। भीमने शिशुपालकी बहनसे विवाह किया। सो ममेरी बहन हुअी कि नहीं ? अिन लोगोंमें कोअी विचार था !

* नाव खेकर जीविका अुपार्जन करनेवाली जाति।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख० (पुनः)—विचार रहता कैसे ? पांडवोंका तो खानदान ही अैसा था। ये लोग जारज संतान थे। पांडु तो जन्मभरका रोगी। अुसको विवाह करनेका ही क्या शौक हुआ ? सो भी दो दो। कुन्ती और माद्रीसे। अजी, जिसको अेक सौ भतीजे हों अुसे भला वंश बढ़ानेकी अितनी चिन्ता ? सो भी दूसरोंके भरोसे। यदि पांडु भीष्मकी तरह अविवाहित रह जाते तो राजगद्दीके लिये झगड़ा ही नहीं होता। धृतराष्ट्रके वंशज राष्ट्रको धारण किये रहते। परन्तु पांडुकी वर्णसंकर संतानने देशको चौपट कर दिया। कुलमें दाग लगानेसे यही परिणाम होता है। परन्तु कुन्ती और माद्रीका क्या दोष ? पांडुका अपना भी जन्म तो नियोगसे ही हुआ था। **"यद्यदा चरति श्रेष्ठस्तत्र देवेत रोजनः"**। जिस पांडवके पूर्वज ही विचित्रवीर्य थे, अुसके वंशमें अैसा हुआ तो क्या आश्चर्य !

खट्टर काकासे कौन बहस करे ! मैं अपना प्रातः श्लोक पढ़ते-पढ़ते आगे बढ़ा—

अहल्या द्रौपदी तारा कुन्ती मन्दोदरी तथा।
पंचकन्याः स्मरेन्नित्यं महापातक नाशनम् ॥

खट्टर काकाने टोक दिया—केवल श्लोक ही पढ़ते हो या अर्थ भी समझते हो ? अहल्या, द्रौपदी, तारा, कुन्ती, मन्दोदरी—पाँचों तो विवाहिता थीं। तब पंच 'कन्या' क्यों कहते हो ? और किस बातको लेकर अिन लोगोंको प्रातः स्मरणीय समझते हो ? अहल्याने अैसा कर्म किया जो कि शिला-पत्थर ही हो गयी। तारा और मन्दोदरीने फिरसे विवाह किया। कुन्तीने कौमार्यावस्थामें ही पाँच-पाँचका आह्वान किया। और द्रौपदी महारानी बराबर पाँच पुरुषोंकी प्यारी बनी रहीं। जब सास ही वैसी शीलवन्ती थीं तो ये क्यों नहीं पाँच जनोंको सन्तुष्ट रखतीं !

पंचभिः कामिता कुन्ती पंचभि द्रौपदी तथा।
सती वदति लोकोऽयं यशः पुण्यैरवाप्स्यते ॥

अिन लोगोंकी देखादेखी तुम्हारी काकी करेंगी तो मैं करने दूंगा ? देखो, कहे देता हूँ, मेरे आँगनमें यह श्लोक नहीं पढ़ना।

मैं—खट्टर काका, मालूम पड़ता है कि अुस समय स्त्री जातिको कुछ अधिक स्वतंत्रता थी।

ख०—कुछ क्यों ? बहुत अधिक। आज हमारी बेटी यदि सावित्रीकी तरह करे तो मैं जीने दूंगा ? मान लो मैं अुसको वैद्यनाथधाम ले जाअूं और अुसी जगह तपोवनमें किसी विद्यार्थीको देखकर वह अड़ जाय कि मैं विवाह करूँगी तो अिसीसे, चाहे जो हो जाय, तो मुझे कैसा लगेगा ? अिसीलिये मैं सती सावित्रीका अुपाख्यान अुसको नहीं पढ़ने देता हूँ। सती वा सावित्री, किसीने अपने पिताकी बात मानी ? अै भाअी, मेरी लड़की अगर आज द्रौपदी या दमयन्तीकी तरह स्वयंवरा होकर जीमें आवे अुसीको माला पहना दे, तो मेरा सिर अूंचा रहेगा ? वह अगर दमयन्तीकी तरह कौमार्यावस्थामें ही दूसरोंसे चिट्ठी-पत्री करने लगे तो मुझे अच्छा लगेगा ? अिसीलिये मैं सावित्री या दमयन्ती की कथा अपने घरमें नहीं होने देता हूँ।

मुझे टकटकी लगाये देखकर खट्टर काका बोले—महाभारत पढो तो बहुत बातोंका पता लगेगा। अुस जमानेमें कन्याका खूब यवती होनेपर विवाह होता था। देखो, अम्बा, अम्बिका, अम्बालिका—तीनों बहनें कैसी समर्थ थीं, तभी हरण हुआ। द्रौपदी स्वयंवरके समय पूर्णयौवना थीं। सुभद्रा भी खूब सयानी थीं। विराट राजाकी लड़की अुत्तराके विवाहके सात ही महीने बाद परीक्षितने जन्म लिया और कुंतीका तो संतान हो जानेपर विवाह हुआ। अुस समय अेक से अेक प्रौढ़ कन्या रहती थीं। शकुन्तला अैसी सयानी थीं कि पहले मिलनमें ही गर्भवती हो गयीं। देवयानी और शर्मिष्ठा अैसी निडर थीं कि कच और ययातिको हैरान परेशान करके छोड़ा। महाभारतके शल्यपर्वमें तो अेक अैसी कुमारीकी कथा आयी है, जिसने युवावस्था ढलनेके बाद ही स्वेच्छासे अपना विवाह किया। भाअी ! अुस जमानेमें किसी तरहके पर्देका बन्धन तो था नहीं। सभी कुमारी कन्याअें स्वच्छन्द होकर घूमती थीं। सुभद्रा रैवतक पर्वतपर मेला देखने गयी थीं, अुसी जगह हरण हुआ। अेक बार द्रौपदी बाल खोलकर बाहर खड़ी थीं, अुसी समय जयद्रथ हरण करने लगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिनदहाड़े हरण कर लिया जाता था..... । और अेक बात कहें ? कुमारियोंको स्वयं प्रायः वही अच्छा लगता था। सुभद्राका हरण हुआ मेलेमें ही। रुक्मिणीका भी हरण अुसी तरह हुआ। भाअी रोकने गये तो अुनको रथके पहियेमें ही बँधवा दिया। समझो तो अुस जमानेमें सब कन्याअें विवाहके लिये लालायित रहती थीं। महाभारतके अनुशासन पर्वमें तो साफ ही लिखा है.....

मैं—खट्टर काका, कहीं आप व्यास गद्दी लगाकर महाभारतका पाठ करें तो अनर्थ ही हो जाय।

ख०—अै भाअी, व्यासका नाम मत लो। अुन्होंने आदिसे अन्ततक पांडवोंका ही पक्ष लिया है।

मैं—अिसका कारण ?

खट्टर काका मेरे कानके नजदीक आकर धीरे-धीरे बोले—कारण यही कि व्यास अपने भी तो अुसी श्रेणीके थे। **व्यासो मत्स्योदरीयः** तब वर्णसंकरका पक्ष क्यों नहीं लेते ?

मैं—खट्टर काका, आपकी तो सभी बातें अद्भुत ही होती हैं।

ख०—परन्तु कहता हूँ यथार्थ ही। सम्पूर्ण महाभारत देखनेसे यही पता चलता है कि कुरुक्षेत्रमें धर्म-युद्ध नहीं हुआ। पांडवोंने सभी जगह अन्याय और छल-कपटसे काम लिया है। कर्ण, द्रोण, भीष्म, जयद्रथ—सबका वध तो अधर्मसे ही किया गया। और अिसी पर व्यास कहते हैं—यतो धर्म स्ततो जयः। (धर्मकी ही जीत होती है—) अभी, मुझे तो महाभारत देखनेपर यही मालूम पड़ता है—यतोऽधर्म स्ततो जयः (अधर्मकी ही जीत होती है)। खट्टर काका कुछ देरतक चुप रहकर पुनः बोले—परन्तु अुतना अन्याय जो करता है वह अन्तमें गल ही जाता है। तभी तो ये लोग हिमालयमें जाकर गल गये। युधिष्ठिरके साथ राज-पाट तो गया नहीं, केवल अेक कुत्ता साथ गया ! भ्रातृ विरोध करनेसे क्या फल मिला ? परन्तु अिसपर भी तो हम लोगोंकी आँखें नहीं खुलती हैं।

यह कहकर खट्टर काका स्नान करनेके लिये तालाबकी ओर बढ़ गये।

(मैथिलीसे अनुवादिकाः—श्रीमती सीता सिन्हा)

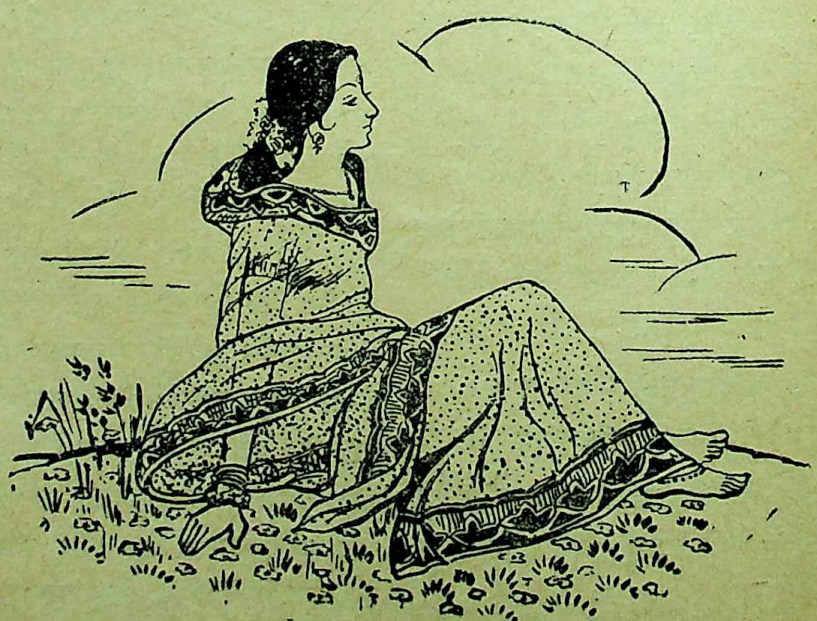

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक पंजाबी साहित्य

: श्री डॉ. हरदेव बाहरी :

(१)

ई. सन् १८४९ में पंजाबका पतन हुआ। पंजाबमें सिखोंके राज्यका अन्त हुआ और अंग्रेजी राज्यकी नींव पड़ी। अिससे विचारोंमें कुछ स्वतन्त्रता, साहित्यमें थोड़ी-सी अैहिकता और भावनाओंमें प्रगतिशीलता शुरू हुअी। अिससे पहले पंजाबकी राजभाषा फारसी थी। महाराजा रणजीतसिंहने भी भाषा-नीतिमें कोअी परिवर्तन करना अुचित न समझा। शिक्षाका माध्यम फारसी ही रहा। राज दरबार और कचहरी-कार्यालयोंमें फारसी हीका आधिपत्य रहा। अिस लिये अुस समय तक पंजाबी साहित्य प्रायः लोक-गीतों, सूफी-कविताओं और सिखोंके धार्मिक शब्दों तक सीमित था। लोक-साहित्यमें कुछ-अेक प्रबन्ध-काव्य भी थे जिन्हें बादमें वारिसशाह, पीलू, बरखरदार, हामद, हाशम, कादरयार, फजलशाह, शाह मुहम्मद, अहमदयार आदिने अपने-अपने व्यक्तित्वकी छाप देकर ललित साहित्यका रूप दिया।

सिख राज्यके अन्तके साथ सिखोंमें असन्तोष और रोष बढ़ने लगा। सन् १८५७ में कुछ आशाकी किरण दिखायी दी, परन्तु तुरन्त ही अन्धकार छा गया। राज-सत्ताके ह्रासके साथ साथ सिखोंकी मनःस्थिति बिगड़ने लगी। अुन्होंने भाषा, धर्म, संस्कृति आदिके सम्बन्धमें कुछ अैसे निश्चय किये जिनके कारण पंजाबी साहित्य संकुचित और अेकांगी हो गया। निरंकारी लहर, नामधारी लहर तथा सिंह-सभा लहरमें बहकर पंजाबी भाषा गुरमुखी बन गयी—पंजाबी साहित्य गुरमुखी साहित्य बन गया। और अिस साम्प्रदायिकताके रेलेमें पंजाबके प्रायः मुसलमानोंने अुर्दूको और प्रायः हिन्दुओंने हिन्दीको अपनी मातृभाषा कहना शुरू किया। आर्य-समाज, ब्राह्म समाज, अहमदिया जमाअित और दूसरी जमाअितोंका आपसमें प्रतिद्वन्द्व चला। अिधर अकालियोंने सिखोंको हिन्दुओंसे अलग करनेकी लहर चलायी। अिन सब बातोंका प्रभाव पंजाबी भाषा और साहित्यपर यह पड़ा कि अिस क्षेत्रमें अिसिखोंका प्रवेश अेक पर-देशमें प्रवेशके समान समझा जाने लगा। संकीर्ण राजनीतिने पंजाबी भाषा और पंजाबी साहित्यका बड़ा अपकार किया।

आधुनिक पंजाबी साहित्य सिखोंका साहित्य है। जिस प्रकार आधुनिक हिन्दी साहित्य हिन्दुओंकी देन है और अुसमें प्रायः हिन्दू-समाज तथा हिन्दू-संस्कृतिका प्रतिनिधित्व हुआ है, अिसी प्रकार आधुनिक पंजाबी साहित्य मुख्यतः सिखोंकी देन है, और अुसमें सिखीपनको अधिक स्थान मिला है। धार्मिक असहिष्णुता, साम्प्रदायिकता और राजनीतिके पचड़ेमें पड़कर पंजाबी साहित्य निश्चय ही पिछड़ कर रह जाता, परन्तु कुछ अेक कारण अैसे अुपस्थित हुअे जिनसे पंजाबी साहित्यको प्रोत्साहन मिला।

सन् १८६० में पंजाबमें प्रान्तीय शिक्षा विभाग खुला। स्त्रियोंके लिये पंजाबी भाषाके माध्यमसे शिक्षा देनेकी व्यवस्था की गयी। अिसके अुपरान्त लाहोरमें ओरियंटल कालेजकी स्थापना हुअी। यही कालेज बादमें पंजाब यूनिवर्सिटी बना। कालेज और यूनिवर्सिटीके मूल अुद्देश्योंमें पंजाबी तथा अन्य प्राच्य भाषाओंको प्रोत्साहित करनेकी बात थी। पंजाबीकी परीक्षाअें—विद्वान, बुद्धिमान और ज्ञानी—प्रतिष्ठित हुअीं। अिन कारणोंसे पंजाबीमें कुछ साहित्य लिखा जाने लगा—कुछ अनूदित, कुछ अनुकृत, कुछ सम्पादित और कुछ मौलिक। पंजाब टैक्स्ट बुक कमेटीने पुरस्कारोंकी योजना बनायी जो लगभग ६० वर्ष तक सफलतासे चलती रही। पुरस्कारके लालचसे अथवा किसी परीक्षाके पाठ्यक्रममें आ जानेके विचारसे सिखोंके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतिरिक्त असिखोंने भी साहित्यकी सर्जना की। सिखोंमें पंजाबी साहित्य अेक धर्म रहा है। अिस नाते अुन्होंने बड़ी श्रद्धा-साधना और लगनसे अुसकी श्रीवृद्धिके लिये प्रयत्न किये। पाठकोंकी संख्या बहुत कम होते हुअे भी सिख साहित्यकारोंने जो साहित्य पैदा किया है वह निश्चय ही श्लाघनीय है। सिखोंमें अनेक अैसे हुअे हैं जिन्होंने साम्प्रदायिकतासे अूपर अुठकर सर्वसाधारणकी भावनाओंका काव्यमें चित्रण किया, पंजाबी समाजका सच्चा चित्र अुपस्थित किया, पंजाबकी जोशीली जिंदगी, पंजाबी जीवनके गुणों और दोषोंका निरूपण किया और कुछ अैसे भी हैं जिन्होंने सारे देशके व्यापक जीवनका प्रतिनिधित्व किया।

(२)

आधुनिक युगमें पंजाबीके काव्य-क्षेत्रमें अनेक नये प्रयोग हुअे हैं। अिससे पहले काफी, बैत, सी-हरफी आदि चार-पांच छंद काव्योपयुक्त समझे जाते थे। परन्तु अब संस्कृत, हिन्दी और अुर्दूके बीसियों छंद पंजाबी काव्यमें आ गये। पहले 'अिश्क' (प्रेम)— हकीकी और मजाजी—बस अेक ही काव्य-विषय था। गुरु ग्रन्थ साहब, हीर, सस्सी पुन्नू, मिर्जा साहिबां, लैला मजनूं, और सोहनी महींवाल आदि ग्रन्थोंका तथा नानक, बुल्हेशाह, पीलू, कादिर और अहमयार सबका भावपक्ष अेक ही है। अिसके अतिरिक्त पंजाबीमें पुराना वीर-काव्य है जो 'वारों' में मिलता है। परन्तु अब प्रकृति, देशभक्ति, मानव-हृदय, समाज-सुधार, अिह-लोक और अन्य विषय भी काव्यमें आने लगे। आदर्शवाद, यथार्थवाद, स्वच्छन्दतावाद, छायावाद, प्रगतिवाद, व्यक्तिवाद आदि वाद भी पंजाबी काव्यमें अुठे और साहित्यिकताकी दृष्टिसे आधुनिक काव्यमें आशातीत प्रगति हुअी। आधुनिक काव्यका भाषा-पक्ष भी सुधरा है। बोली अब ठेठ हो गयी है। जहां पहले अिसका रूप संस्कृत अथवा फारसीसे आक्रान्त था और व्याकरण हिन्दीसे, वहां अब जनताकी भाषा आती गयी—स्वच्छ; सुन्दर और प्राकृतिक।

अिस समयके आदि कवि भाअी वीरसिंह माने जाते हैं। अुनका 'राणा सूरतसिंह' (१९१५) अेक प्रबन्ध काव्य है। अिसमें सिरखंडी छन्दका प्रयोग हुआ है जो अतुकान्त है। भावोंकी स्वतन्त्रता अिसमें कम है। अिस काव्यका अुद्देश्य है सिख-सिद्धान्तोंकी प्रतिष्ठा। कथामें प्रचार है, अिसलिये रोचकता कम है। भाअी वीरसिंहके अन्य काव्योंमें भी सिख-भक्तिका निरूपण है। अुनकी दूसरी रचना 'लहरां दे हार' (१९२१) में रुबाअियाँ हैं। विषय है हठ-योगकी निन्दा और प्रेम-योगकी श्लाघा। अिसमें रहस्यवादका प्रतिष्ठित रूप मिलता है। कवि प्रेमपात्रके दीदार (दर्शन) के लिये तड़पता है। गंगा, यमुना, गोदावरी अुसी दीदारके लिये तड़पती चली जा रही हैं। हर चीज़ जोगीकी तरह खोजमें घूमती फिरती है अुस तत्वकी खोज़में जिसकी प्राप्तिके बिना प्रत्येक वस्तु विलाप करती फिरती है। अुसीकी राह देखता नरगिस आँख रूप रह जाता है और जमुना अुसकी खोजमें कभी हवा और कभी पानीका रूप धारण करती है। कविकी तीसरी पुस्तक 'मटक हुलारे' (१९२५) में कश्मीरके अनेक प्राकृतिक दृश्योंका चित्रण है। अुसे प्रकृतिमें सुख मिलता है। कहीं-कहीं छायावादके सुन्दर दृष्टान्त मिलते हैं। परन्तु भाअी वीरसिंहमें न तो अितनी करुणा है न अितनी निराशा। प्रेम और सौंदर्यके सम्बन्धमें अुसके भाव मौलिक हैं। अुसे प्रत्येक वस्तुमें प्रेमकी सुगन्धि आती है। प्रेम ही पत्थरको शीशा बनाता है और हीरा बननेका सामर्थ्य प्रदान करता है। प्रेम ही से लैला और मजनूंमें, हीर और रांझामें, प्रेमी और प्रेमिकामें, भक्त और भगवानमें कोअी अन्तर नहीं रहता। सुन्दरता स्वर्गसे अुतरती है और 'सुन्दर' पर पड़कर चमकती है। "बिजलियाँ दे हार" में कविका जीवन-दर्शन और देश-प्रेम व्यक्त होता है। अुसे देशके प्राचीन अितिहासमें बड़ी आस्था है। स्वतन्त्रतासे बड़ा प्रेम है। "गंगाराम" अुसकी प्रसिद्ध व्यंगात्मक कविता है।

भाअी वीरसिंहकी-सी छन्दालंकार शैली, कोमल-कान्त-पदावली, छायावादी भक्ति-भावना, रहस्यवादके साथ आशावादिता और प्रफुल्लता १९१५-२७ के हिन्दी साहित्यमें भी अितनी विशदतासे प्राप्त नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रो. पूरनसिंहकी कवितामें वेदान्ती, जापानी, बौद्ध विचारोंका गूढ़ प्रभाव है। अंग्रेजी प्रभाव तो अत्यन्त स्पष्ट है। प्रो. पूरनसिंह हिन्दीके भी प्रतिष्ठित साहित्यकार माने गये हैं। अंग्रेजीमें भी अुन्होंने बहुत कुछ लिखा है। प्रो. पूरनसिंहकी-सी साहित्यिक अुदारता अन्य भारतीय साहित्यकारोंमें नहीं मिलती। अिनकी विशेष देन है सैलानी छन्द। अिसके द्वारा कवि विविध मण्डलोंमें सैर करता है। यह छन्द अुन्होंने अमरीकन कवि वाल्ट ह्विटमैनसे लिया है। अिसमें न तौल है न तुकान्त। पूरनसिंहके अलंकारों और विचारोंमें भी मौलिकता है।

धनीराम चात्रिक अेक और मौलिक पंजाबी कवि हैं। अुनमें अैहिकता है। वे धरतीसे अूपर अुठकर प्रतिभाके लोकमें रहना पसन्द नहीं करते। अुनकी आरम्भिक कविताओंमें किस्से-कहानीकी परम्परा है। अुनके 'भरथरी हरि' और 'नल दमयन्ती' में पुरानी शैली है, पुराने विचार हैं, पिष्टपेषण-सा है। बादकी कवितामें चात्रिकने शहरी जीवनका चित्रण किया। अुन्होंने प्रकृतिको भी शहरी जीवनसे सम्बन्धित किया है। वे किसानको लाये हैं तो पूंजीपति-मायाधारियोंके सामने जो अुनका लहू चूसते हैं, वे जाटको लाये हैं तो भी किसी शहरी मेलेमें। अुनकी नायिकायें भी अपने अुन प्रेमियोंके विरहमें तड़पती हैं जो किसी शहरमें बैठे हैं। कवि चात्रिक समाजवादके हामी हैं। अुनके यथार्थवादमें आदर्शवाद मिला हुआ है, अुसमें जवानोंका-सा रोमान्स तो है, पर बूढ़ोंकी-सी निराशा भी बहुत अधिक है।

पंजाबी साहित्यकी अेक विशेषता यह है कि अिसमें भेड़ चाल कम है, मौलिकता अधिक है। हिन्दीमें जहाँ अेक समयमें प्रायः सभी कवि देशका रोना रो रहे थे, अथवा समाज-सुधारकी रट लगाये हुअे थे, अेक समयमें सभीपर द्विवेदीजीकी छाप थी, अेक समयमें सब छायावादी बन गये थे और अेक समयमें प्रायः सबके सब किसानों और मजदूरों, शोषकों और शोषितोंके अलाप अलापते थे, वहाँ पंजाबीमें यह बात नहीं है। वीरसिंह मुख्यतः छायावादी हैं, पूरनसिंह स्वच्छन्दतावादी, धनीराम यथार्थवादी, परन्तु किसी अेकमें किसी वाद विशेषके लिये पक्षपात नहीं है।

प्रो. मोहनसिंहके काव्यमें मौलिक विचारोंकी प्रचुरता है। अुसमें परम्पराके विरुद्ध विद्रोह है। अीश्वरको वह अेक विकट समस्या समझता है। अैहिक सौंदर्य और मानव-जीवन अुसका विषय है। वह कर्ममें विश्वास करता है। वह अेक जीते-जागते अत्याचारीको मुरदा भक्तसे अच्छा समझता है। वह अन्धविश्वासी मोमिनकी अपेक्षा खोजी काफ़िरको अच्छा मानता है। अिसीलिये देश-प्रेम और मनुष्य-प्रेमसे हीन भक्तिको वह पाखण्ड कहता है। शहरी जीवनसे अुसे घृणा है। शहरके फिसाद, घृणित वातावरण और रूखेपनसे घबड़ाकर वह या तो ग्रामीण जीवनको देखता है या प्रकृतिका आश्रय चाहता है। कविने पंजाबके सिपाही, पंजाबकी सुन्दरी, पंजाबके नवयुवक, पंजाबके बच्चे-बूढ़े, सबपर कविताअें लिखी हैं। बच्चोंसे अुसे प्यार है—बच्चा अेक अैसा मेवा है जो जितना ही कच्चा होता है, अुतना ही अधिक मीठा होता है। माँ अेक बेल (लता) है, परन्तु शेष पौधे तो जड़के सूखनेसे मुरझा जाते हैं, माँकी बेल फूलोंके सूखनेसे मुरझा जाती है। कवि प्रेमके सम्बन्धमें भी अछूते विचार रखता है—प्यारके बिना पूजा-पाठ करती हुअी दादी, अथवा प्यारके बिना तपस्या करता हुआ साधु अुसे नहीं भाता। अुसे वह प्यार भी अच्छा नहीं लगता जिससे किसीको दुःख पहुँचे। वह ताज-महल जिसको बनानेमें हजारों मजदूर दुःखी हुअे मानवताका परिहास है, लांछन है। 'सावे पत्तर' और 'कमुम्भडे' का मोहनसिंह शरीरवादी और मानववादी कवि है। अबवाटमें वे समाजवादी और छायावादी बनकर आते हैं। मोहनसिंह गीतकार भी हैं और शैलीकार भी। अुन्होंने नवीन अलंकारों और छोटे-छोटे नवीन छन्दोंको भी जन्म दिया है।

गोपालसिंह दर्दी समाजके पापोंको चित्रण करनेमें दक्ष हैं। चत्रणसिंह जेठूवालिया, जिन्होंने ५५ वर्षकी अवस्थामें कविता आरम्भ की, पिछले १० वर्षोंमें अध्यात्मवादकी सुन्दर सृष्टि कर रहे हैं। डा. सोहन-सिंह सूफी-काव्यसे प्रभावित हैं। अुनकी कविताओंमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शेखसादी, हाफ़िज़ अुमर खैयाम, आदि बहुतसे पुराने कवियोंकी छाप है। अवतारसिंह स्वतन्त्र वस्तुवादी हैं। भावोंकी अपेक्षा विचार अुनमें अधिक हैं। फीरोजदीन शरफ़ और हमदम परम्पराको निभाते आये हैं। बलवन्त क्रांतिवादी कवि हैं। अेस. अेस. चरनसिंह और अीशर-सिंह हास्यरसके कवि हैं। अुनका व्यंग अुर्दूसे प्रभावित है और हिन्दी-काव्यके हास्यसे अधिक सभ्य और मनोरम है। करतारसिंह दुग्गल समाजवादी हैं। अिनके अतिरिक्त विधातासिंह तीर, तेजासिंह साबर, अवतारसिंह दलेर, केदारनाथ तेवाड़ी, हरिन्दरसिंह 'रूप', प्रीतमसिंह सफीर, प्यारासिंह सहरायी, हरभजनसिंह, करतारसिंह शमशेर, अिन्दरसिंह नीलम, परमजीत, गिरदाब आदि कवि पंजाबी साहित्यको समृद्ध बनानेमें लगे हैं।

कवयित्रियोंमें अमरकौर, हरनाम कौर, अमृतकौर प्रसिद्ध हैं। अमृतकौरमें मौलिकता सबसे अधिक है।

नवीनतम पंजाबी काव्यका झुकाव छोटे-छोटे और भावपूर्ण गीत लिखनेकी ओर है।

(३)

पंजाबी भाषाका गद्य अभी बहुत अुन्नत नहीं कहा जा सकता। जिस प्रकार हिन्दी गद्यके विकासमें अुपन्यास, कहानी, नाटक, अेकांकी, निबंध सबपर अंग्रेजीका प्रभाव है, अुसी प्रकार पंजाबी गद्यमें भी अनुवाद, अनुकरण और बैदेशिकता अधिक है। मौलिक साहित्यकार हैं तो सही; परन्तु अुनकी संख्या बहुत ही कम है। अेक दो सफल प्रतिष्ठित कहानी-लेखक, अेक दो या तीन अेकांकीकार, पांच-छः निबन्ध-लेखक अच्छे निखरे हुअे कहे जा सकते हैं। निबन्ध लिखनेवालोंकी संख्या अच्छी खासी है—अिनमें भाअी वीरसिंह, पूरनसिंह, करमसिंह, बाबा प्रेमसिंह, मास्टर तारासिंह, भाअी जोधसिंह, हीरासिंह दर्द, शेरसिंह, भोलानाथ, मंगलसिंह, मोहनसिंह वैद और सं. गुरबख्छासिंह (प्रीत लड़ीवाले) हैं। अिनमें गुरबख्शसिंहकी देन बहुत अधिक है।

हिन्दीकी तरह पंजाबीका नाटक-साहित्य बहुत पिछड़ा हुआ है। पंजाबमें भी अपना रंगमंच नहीं है। वैसे तो सामाजिक, साहित्यिक, अैतिहासिक, राजनैतिक, मनोरंजक सब तरहके नाटक पंजाबीमें लिखे जा चुके हैं, परन्तु वे अुच्च कोटिके नहीं हैं। नाटककारोंमें डा. चरनसिंह, भाअीवीर, अखड़सिंह, अिन्दरसिंह चक्रवर्ती, ब्रजलाल शास्त्री, अीश्वरचन्द्र नन्दा, हरचरनसिंह, संतसिंह सेखों, डा. मोहनसिंहके नाम गिने जा सकते हैं।

पंजाबीके मुख्य अुपन्यासकार नानकसिंह हैं जैसे हिन्दीके प्रेमचन्द। बहुतसे अुपन्यासकार साधारण कोटिके हैं। हिन्दी ही की तरह पंजाबीमें कहानियोंकी बाढ़ सी है, और हिन्दी ही की तरह हम यह नहीं छाँट सके कि अुत्कृष्ट कहानीकार कौन-कौन हैं। प्रेमचन्दकी तरह नानकसिंह पहला मौलिक कहानीकार है और प्रेमचन्द ही की तरह अुसे जितनी सफलता अुपन्यासोंमें मिली है अुतनी कहानियोंमें नहीं। पंजाबीका दूसरा सफल और अुत्कृष्ट कहानीकार गुरबख्शसिंह है और अुसकी कहानियाँ किसी साहित्यमें भी साहित्यिकताकी दृष्टिसे अुच्च स्थान प्राप्त कर सकती हैं।

नवीन पंजाबी साहित्यकी मुख्य-मुख्य प्रवृत्तियां भारतीय साहित्योंमें सामान्य रूपसे मिलती हैं—कहीं आदर्शवाद, कहीं यथार्थवाद, कहीं दोनोंका समन्वय, कहीं छायावाद, कहीं प्रगतिवाद, कहीं श्लीलता और कहीं नग्न अश्लीलता, कहीं कलापक्षकी प्रधानता, कहीं भावपक्षकी प्रधानता, शैलीमें नये-नये प्रयोग, भाषामें कहीं अुर्दूका प्राधान्य और कहीं हिन्दीका, कलामें पश्चिमीपन। पश्चिमी साहित्यका ऋण सभी भारतीय भाषा-साहित्योंपर है। कअी बार यह प्रश्न अुठता है कि क्या बंकिमचन्द्र, राखालदास, प्रेमचन्द, पन्त, जैनेन्द्र, पूरनसिंह, गुरबख्शसिंह, करतारसिंह, दुग्गल आदि साहित्यकार अंग्रेजी साहित्यके प्रभावके बिना अिस प्रकारके साहित्यकी सृष्टि कर सकते थे?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व अितिहासकी झलक

: श्री भगवतशरण अुपाध्याय :

दुनिया अैसी ही नहीं रही है जैसी आप अुसे आज देख रहे हैं। अेक दिन था जब जमीनकी तरहकी कोअी चीज न थी। आसमानमें तारे टूट रहे थे, बेतहाशा दौड़ रहे थे, नाच रहे थे। पुराणोंमें लिखा है कि पहाड़ोंके पहले पंख थे, वे अुड़ा करते थे। जब जिन्दगी अुनके अुड़नेसे खतरेमें पड़ गयी तो देवताओंकी प्रार्थनापर अिन्द्रने अुनके पंख काट दिये और वे अचल हो गये। वैसा ही आसमानके बड़े-बड़े तारों और ग्रहोंका भी हाल था। यकायक सूरजका बड़ा गोला टूटा और अुससे चाँद-पृथ्वी छटककर अपनी धुरीपर घूमने लगे—चाँद पृथ्वीके चारों ओर, पृथ्वी सूरजके चारों ओर।

पृथ्वी सूरजकी ही तरह जलती-बलती थी, आगका अेक बड़ा गोला जिसके चारों ओर भाप और कोहरेकी घनी-मोटी दूरतक चली गयी चादर थी। भाप बादल बनी, बादल अपनी ही जमीनपर बरस पड़े। जमीन ठंडी हो चली तथा ठोस। अुसपर परतकी परत पड़ गयी, परतें चट्टानें बनीं। जलजले आये—अूंचे पहाड़ खड़े हो गये, हजारों मील लम्बे-चौड़े गढे जिनमें अितना पानी बरसा—सैकड़ों, हजारों, लाखों बरस—कि वे भर गये, समुन्दर कहलाने लगे।

जमीनकी ठंडी परतोंपर धीरे-धीरे गरम जिंदगी साँस लेने लगी। पानीमें मछलियाँ तैरीं, भीगी जमीन पर मेढक अुछले, केचुयें रेंगे। फिर धीरे-धीरे सुअर, रीछ और शेर, सैकड़ों जीव-जन्तु, फिर बन्दर, बनमानुष और अन्तमें आजकी दुनियाका राजा आदमी।

पर दुनियाका राजा आदमी केवल आज है, तब न था। तब भला वह राजा कैसे होता जब वह निहत्था था। सुअरके दाढ़ थे, शेरके पंजे, घड़ियालके दाँत, हाथीको कूवत मिली थी, पर अिन सबसे लोहा लेनेवाला आदमी पतली चमड़ीवाला निहत्था। सर्दी अुसको व्याप जाती, गर्मी अुसे झुलस देती। अेक बार तो अैसी सर्दी पड़ी कि लगा, अुसका सर्वनाश हो जायेगा। तब वह दक्खिन भागा अुन जंगलोंमें जो जीवोंसे भी पहले जमीनपर जन्मे थे।

आदमी मारकर मछली खाता, मारकर जंगली जीव-जन्तु, खोजकर जंगली फल फूल, बनैले कच्चे, अन्न। पर अिसे पता था कि कैसे मौसम बदलता है, वही मौसम फिर-फिर लौटता है और अुसके लौटते ही फल-फूल निझा जाते हैं, फिर अेकाअेक कलियाँ खिल अुठती हैं, पेड़-पौधे फलोंसे लद जाते हैं। यह जानकारी बड़ी बात थी। क्योंकि गिरे बीजके जमे अंकुर और मौसमके सहारे आदमीने नयी खेती खड़ी कर ली। मनुष्यके अितिहासमें वह पहली बड़ी बात थी। जैसे अुसने डालोंकी रगड़से आग पैदा होते और अुससे जंगलको जलते देखा था, अुसे देख खुद आग बनाना सीखा था, जंगली आगमें जले जानवरोंके गोश्तका जायका जाना था और माँस राँधकर खाना सीखा था, वैसे ही अुसने खेती करनी सीखी। पत्थरके हथियार फेंक अुसने धातुके हथियार गढे, हल बनाये, खेती बोयी और काटी। जिन्दगी नये अुल्लाससे चंचल हो अुठी। अुसके गाँव और खलिहान हिन्दुस्तानमें सिन्धु, गंगा और नर्मदाके किनारे खड़े हुअे, मिस्रमें नील नदीके किनारे, अीराकमें दजला-फ़रातके किनारे, चीनमें याँगहसी और पीली नदीके किनारे।

पहले पंचायती राज, फिर सरदारोंके राज और फिर राजाओंके राज्य और साम्राज्य। सिन्धमें द्रविड़ोंकी अचरज भरी सभ्यता खड़ी हुअी। अुन्होंने सुन्दरसे सुन्दर मूरतें कोरीं, संसारका पहला नगर बसाया, पकायी अींटका अिस्तेमाल किया, नहानेके तालाब बनाये, गन्दे पानीकी नालियाँ। मुहरोंका अिस्तेमाल किया, पहले पहल लिखावट लिखी। लिखावट अैसी जो आजतक पढी न जा सकी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिस्रमें सरदार धीरे-धीरे पुरोहित और राजा बना, फेरो यानी 'बड़े मकानमें रहनेवाले'। क्योंकि अुसका बड़ा मकान गरीब किसानों और कंगाल मजूरोंकी छोटी झोपड़ियोंके बीच अूँचा खड़ा था। तबका मिस्री जिन्दगीकी नहीं मौतकी पूजा करता था। वहाँके सम्राटोंने अूँचे पिरैमिड बनाये, दुनियाकी सबसे अूँची और भारी अिमारतें, जिनके चार-चार पाँच-पाँच सौ फूट अूंची चोटीतक हजार-हजार मनके पत्थर मजूर अपनी बाँहोंपर टाँग ले जाते। लाखों मर गये और तब वे मौतके घर, दुनियाके अचरज पिरैमिड खड़े हुअे। अुनमें आसपासके, और दूर दजला-फ़रात तकके देशोंको जीतकर अुनके सोनेसे सम्राटोंने अपने पिरैमिड भर दिये। अुन्हीं कब्रोंमें मरनेपर मिस्री राजाओंके मुर्दे रखे गये। अुनको अुन्होंने अैसे मसालोंसे तर किया कि वे आज ५,००० बरस तक गले नहीं। यह मरकर भी जिन्दा रहनेकी साध थी।

अुधर दजला-फरातकी घाटीमें, तराओंमें, अेक दूसरी दुनिया बस रही थी। वहाँकी सभ्यता गाँवकी सभ्यता थी। धीरे धीरे वहाँ भी नगर खड़े हुअे। अेक बार वहाँ बड़ी बाढ़ आयी। आदमी, जीव-जन्तु सब नष्ट हो गये। वह जल-प्रलय था। ज़िअुदिस्रने नावके अूपर जीवोंके जोड़े और अपना परिवार बचा लिया। जिन्दगी फिर लहलहा अुठी क्योंकि जिन्दगीको मारना भी आसान नहीं। वही जल-प्रलयकी कहानी संसारकी जातियोंके अपने-अपने अितिहासमें अपने-अपने तरीकोंसे लिखी गयी। सुमेर और अक्कादके रहनेवालोंने अीराकमें पहले अुसी तरहकी चित्रकी लिखावट लिखी जैसे मिस्र, हिंदुस्तान और चीनमें लिखी गयी थी, फिर कच्ची गीली अींटोंपर कीलनुमा अक्षर लिखे जिससे बहुत दिनों बाद अरबी लिखावट निकली और अीब्रानी, फिनीशी, जिससे फिर ग्रीक और अन्तमें आजकी रोमन लिपि। बाबुलमें बड़े-बड़े साम्राज्य कायम हुअे, खल्दियोंके, असुरोंके, अीरानियोंके। हम्मुराबीने अपने कानून वहीं जारी किये, दुनियाके पहले कानून, असुर नजीरपालने और असुर बनीपालने संसारका पहला पुस्तकालय वहीं खड़ा किया। वहाँके सम्राटोंकी कब्रोंमें भी सोना पिरैमिडोंकी तरह ही भरा गया। लोग ज़िन्दा दफना दिये गये जिसमें वे परलोकमें भी अपने बादशाहकी सेवा कर सकें। बड़ा भयानक जमाना था वह।

वहीं फिलिस्तीनमें, जुरूसलमके पास, हज़रत मूसाने अपने अुपदेश और कानूनका प्रचार किया। जुरूसलमके अुस पुराने नगरको, जहाँ बाअीबिलवाले अिब्राहीमकी औलाद आबाद थी, मिस्र और अीरानके सम्राटोंने कितनी ही बार लूटकर अुजाड़ डाला। अुसकी यहूदी जनताके नेताओंको नेबूखद नेज़ार बाबुल पकड़ ले गया और अुसी बाबुलकी कैदमें बाबुलके ही नामसे यहूदियोंकी धर्म पुस्तक बाअिबिलका नाम पड़ा। अुसकी वह नयी पोथी महात्मा अीसा और अुसके चेलोंके अुपदेशसे भरी है। अीसा हमारे बुद्धकी तरह महान् और लोगोंका भला चाहनेवाला था, शान्तिका पुजारी, पर अफ़सोस कि आज अुसीके धरमका दम भरनेवाले दुनियाके अीसाअी राज शान्तिको मिटा देनेवाली खूनी लड़ाअियोंके दावेदार हो गये हैं।

अुधर ग्रीसके दक्खिन क्रीटके टापूमें जो सभ्यता अुठी वह ग्रीसके अुत्तरतक फैल गयी। प्रायः तभी जब फिनीशी सौदागरोंने भूमध्य सागरके पूर्वी तटपर अपना माँझी राज्य खड़ा किया था। पर धीरे-धीरे दुनियामें अेक नया तूफान अुठा, जिसने अिन सारी पुरानी सभ्यताओंको बर्बाद कर दिया। अुनके अूपर अपनी सभ्यता की अिमारत खड़ी की। वह नयी सभ्यता पराक्रमी आर्योंकी थी। हिन्दुस्तानमें अीरान और अीराकमें ग्रीस और रोममें फिलिस्तीन और मिस्रमें आर्योंकी शक्ति जमी।

आर्योंका बोलबाला विशेषकर हिन्दुस्तान, अीरान ग्रीस और रोममें हुआ। सिन्धकी नगरकी सभ्यतापर आर्योंने अपने गाँवके बल्ले गाड़े, वेदोंकी ऋचायें गायीं। वे पूरब फैले, अुन्होंने बड़े-बड़े साम्राज्य खड़े किये, दर्शन और धर्मकी नींव डाली। वर्णाश्रम धर्म चलाया, धर्म शास्त्रोंके आधारपर समाजकी रचना की। बुद्ध और महावीरने फिर वहाँ शान्ति और प्रेमका सन्देश सुनाया। अिनसानकी आपसी बराबरीका दावा किया। मौर्य साम्राज्य सारे हिन्दुस्तानपर काबिज हुआ, पंचायती राजोंको जीता, अुनको भी जिन्होंने विजयी सिकन्दरकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कदम-कदमपर राह रोकी थी, अुसे घर लौट जानेको मजबूर कर दिया था। अशोकने शान्तिके अपने लेखोंमें दुनियामें भाअी-चारेका बीज बोया, शान्तिके संदेश दुनियाके सारे सभ्य देशोंमें भेजे। मौर्योंके बाद ब्राह्मण राज्य खड़े हुअे; फिर विदेशी ग्रीक, शक-कुषाण राज्य। अन्तमें गुप्तोंका विशाल साम्राज्य खड़ा हुआ जब राजा विक्रमने अपना प्रसिद्ध न्याय किया, कालिदासने अपनी 'शकुन्तला' रची। अुस साम्राज्यके विलासी जीवनको चीनके हूणोंने तोड़ डाला।

ग्रीसमें आर्योंके बनाये नगर पंचायती राज कभी खूब फले। अीरानके आर्य राजने अुन दाराओंका भी मुक़ाबला किया जिन्होंने अेक ओर हिन्दुस्तान और दूसरी ओर अीराक और मिस्र तक को जीत लिया था। पेरिक्लिज़, सुक़रात, अफ़लातून और अरस्तूकी अिस दुनियापर पहले सिकन्दरका बाप हावी हुआ फिर सिकन्दर और फिर रोम। सिकन्दरने अीरानी साम्राज्यको शुरूमें ही ठोकरोंसे तोड़ डाला। अुधर रोमके पंचायती नगरने यूरोपकी दुनियाको जीत लिया और आगुस्तुसके साम्राज्यमें होरेस और बर्जिलके-से कवियोंने साहित्यकी चोटी छूअी। पर अिस विशाल साम्राज्यको भी अुन्हीं हूणोंने तोड़ डाला जिन्होंने गुप्तोंका साम्राज्य हिन्दुस्तानमें अुसी काल तोड़ा था।

चीनका अितिहास बहुत पुराना है। शांग और चाउ, चिन और हान, सुन और तांग, मंगोल और यिंग और मंचू अपनी-अपनी सभ्यता लेकर खड़े हुअे। चीनने जहाँ कनफूशस और लाओत्सेके संसारको दर्शन दिये वहाँ ही काग़ज और बारूद भी दिये। दुनियाके अितिहासमें काग़ज़ और बारूद दोनोंका असर हमें मालूम है।

यूरोपमें नयी सभ्यता जन्मी और बिकसी। राजपर राज खड़े हुअे, लड़े-मरे, फिर खड़े हुअे। फ्रान्सकी राज्यक्रान्तिने दुनियाको स्वतंत्रताका अेक नया पैग़ाम दिया। दुनियामें राजतंत्रोंकी जगह प्रजातंत्र, यानी पंचायती राज खड़े हुअे। अुधर यूरोपके अिंगलैंड आदि राज्योंने पूर्वी संसारपर अपना साम्राज्य कायम कर लिया, सारे अेशिया और अफ्रीक़ापर चीन, अिरान और हिन्दुस्तानपर भी, अमेरिकापर भी, जो शीघ्र ही स्वतंत्र हो गया।

अेक ज़माना था जब यूरोपके पूर्वी भागोंपर अिस्लामका झंडा फहराता था। अिस्लाम जिसकी चिंगारी मोहम्मदके पैग़ामसे पहले अरबके रेगिस्तानमें फूटी फिर सारे अेशिया और आधे यूरोपतक फैल गयी। अरबोंने कागज़का अिस्तेमाल यूरोपको सिखाया और अपने बचाये अफलातून और अरस्तूकी बेलें वहाँ लगायीं। यूरोपकी सभ्यता अरबी नींवपर खड़ी हुअी।

हिन्दुस्तानपर भी अिस्लामका झंडा फहराया। अच्छे-बुरे दोनों तरहके राजाओंने यहाँ राज किया। अकबरकी तरहका बुद्धिमान राजा भी यहाँ हुआ, पर अुसीके पिछले वंशजोंसे, अुनसे लड़ते मराठोंसे, अंग्रेज़ सौदागरोंने हिन्दुस्तानका राज छीन लिया और यहाँ डेढ़ सौ साल तक मनमानी की। हिन्दुस्तान आजादीके लिये लड़ता रहा— सन् ५७ के ग़दरसे सन् ४७ की स्वतंत्रता तक। गांधीके नेतृत्वमें हिन्दुस्तान आज़ाद हो गया।

यूरोपके राज्य लड़ते रहे, यूरोपमें भी, यूरोपसे बाहर भी। और दो पिछली लड़ाअियाँ जो अुन्होंने लड़ीं अुन्होंने तो दुनियाको बर्बाद कर दिया। आज भी अुनके बादल तीसरे महासमरके डरके रूपमें मंडरा रहे हैं। अुन्हीं लड़ाअियोंके बीच अिटली, जर्मनी और जापान अुठे और गिरे, अुन्हींके बीच, जारशाहीका अन्त और नये सोवियतका आरम्भ हुआ, जिसने निर्माण और बलिदानमें अपना सानी न रखा। अुसी बीच चीनने कोमिनतांगको देशसे बाहर कर अपने नये अचरज भरे पंचायती राजके सायेमें अैसे-अैसे निर्माण किये जो महान् चीनी दीवारको आज तुच्छ कर देते हैं।

यही दुनियाके अितिहासकी कहानी है। साम्राज्योंके पाये अुखड़ गये हैं। आज़ादीकी लड़ाअियाँ आज भी जारी हैं जो नये पुराने दोनों साम्राज्योंसे टक्कर ले रही हैं। जंगबाज आज तीसरे महायुद्धकी तैयारीमें हैं; पर शान्ति भी अपनी गहरी शीतल छाया आकाशपर डाले हुअे है, जंगबाजोंकी कमर तोड़ देगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'विश्वभारती' के प्रति विद्वानोंका आकर्षण

: भदन्त शान्ति भिक्षु :

स्व. गुरुदेव टैगोर द्वारा शान्तिनिकेतन-आश्रममें विश्वभारतीकी स्थापना १९२१ में हुअी और १९५१ अी० में वह राजकीय विश्वविद्यालय बन गयी। अिसके प्रतिष्ठाता आचार्य (प्रेसिडेन्ट) गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुरकी महिमासे आकृष्ट होकर देशदेशान्तरके विद्वान शान्तिनिकेतनमें आते रहते थे। १९४२ में गुरुदेवके दिवंगत होनेके अनन्तर बाहरके विद्वानोंका आकर्षण विश्वभारतीके प्रति कम न हुआ। प्रत्युत अुनके प्राणोंके अिस मूर्तरूपमें रमकर वह और भी विविध रूपमें गोचर होने लगा। पश्चिमके विद्वानोंने अिस संस्थाके विषयमें विविध रूपसे अपने विचारोंको व्यक्त किया है। कहीं वे विचार विगुण हैं और कहीं सगुण। अिस सभी खरी-खोटी विचारधाराके पीछे जहाँ बौद्धिक विश्लेषण और भाव निरपेक्ष विवेचन-पद्धतिका हाथ है वहाँ वह ध्यान देने योग्य है। पर जहाँ कोरी भावुकता-वश प्रशंसा है, वहाँ अुसपर फूलकर कुप्पा होनेकी आवश्यकता नहीं तथा जहाँ जातीय पराधीनताके कारण निन्दा की गयी है वहाँ पूर्णतया शीतल अेवं शान्त बने रहनेकी आवश्यकता है।

मैं गुरुदेवके परिनिर्वृत होनेके अनन्तर अुनकी बरसीसे कुछ पहले शान्तिनिकेतन पहुँचा। आज दस वर्षसे अूपर हो चुके हैं। अिस दीर्घकालमें अध्ययन-प्रसंगसे पश्चिमसे यदि कोअी विद्वान् आया तो अेकमात्र डा. लिबेन्थल (Walter Liebenthal)। डाक्टर लिबेन्थल विद्यावृद्ध भी हैं और वयोवृद्ध भी। मैंने अेक दिन अुनसे पूछा कि क्या समझकर आप शान्तिनिकेतन आये हैं? तो अुन्होंने अुस दिन तो अुत्तर नहीं दिया पर कुछ दिनो बाद अेक टाअिप-लिखित पत्र स्वयं आकर मुझे दिया। मैं अुस पत्रके अेक अंशका अनुवाद नीचे दे रहा हूँ।

"आदरणीयेषु! आपने मुझसे पूछा है कि किन परिस्थितियोंके वश मैं यहाँ आया और यह स्थान मुझे कैसा लगा? यहाँ आकर मैंने अपने आरंभिक व्याख्यानमें अिन बातोंका अुत्तर दिया है। जो कुछ मैंने पहले कहा है अुसकी यहाँ पुनरावृत्ति कर रहा हूँ। मैंने अपना देश (जर्मनी) १९३३ में नाजियोंके प्रकोपके कारण छोड़ा। हारवर्ड विश्वविद्यालयने पेकिंगमें चीन-भारत अध्ययन संस्था (Sino Indian Institute) स्थापित की थी। अुसके आमन्त्रणपर मैं चीन गया और पेकिंग विश्वविद्यालयमें काम करने लगा। युद्धके समय विश्वविद्यालयको जो बुरे दिन देखने पड़े अुनमें मैं भी अुसका साथी रहा। अुन दिनों विश्वविद्यालयको दक्षिणमें अुठ आना पड़ा था। विजयके अनन्तर पेकिंगमें कुछ वर्ष शान्तिके साथ बीते और मैं चीनी बौद्ध धर्मके अध्ययनमें लगा रहा। मैं चीनकी सभ्यताका प्रशसक हूँ। अुसमें अनेक तत्त्वचिंतक, कवि और धर्मकी खोज करनेवाले महापुरुष हुअे हैं। पर जब फिरसे शासनमें परिवर्तन हुआ तो वहाँ रहनेका नया आज्ञा-पत्र न मिल सका और भविष्य फिर अनिश्चित-सा दिखायी पड़ने लगा। मेरा यह परम सौभाग्य है कि मेरी अवस्थाका पता विश्वभारतीके अधिकारियोंको चल गया और अुन्होंने मुझे आश्रय देना स्वीकार किया। अिस प्रकार मेरा पुराना स्वप्न सफल हुआ क्योंकि अपने यौवन कालसे ही मैं भारतीय सभ्यतासे अपना निजका सम्बन्ध स्थापित करनेका प्रयत्न करता आ रहा था।.... विश्वभारतीके अुद्यानमें जीवन शान्तभावसे समृद्ध हो सकता है। यह स्वयं शान्त है और अपनी नैसर्गिक दिव्य छटासे प्रकाशमान है। साथ ही साथ अिसके विद्याभवनान्तर्गत क्षेत्रमें चारुरूपसे अध्ययनका कार्य चल रहा है, जिसमें चीन-भारतीय-अध्ययन सम्बन्धी मेरे अनुभवोंका भी अुपयोग हो सकता है।.... अिस क्षेत्रमें वर्षोंका काम है। मेरे विचारसे अध्ययनके अिस क्षेत्रको व्यापक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनाना होगा और अिसमें अनेकों विद्वानोंको दीक्षित होना पड़ेगा। आशा है अितनेसे आपकी बातका अुत्तर मिल सकेगा।"

डा.लिबेन्थल गत अक्तूबरमें यहाँ आये हैं और लगभग पाँच वर्ष तक रहनेका अुनका विचार है। अिनके अतिरिक्त यहाँ पिछले दिसंबरमें ही डा. राव (Dr. Rao Wilhelm) आये हैं। ये अपने देश जर्मनीसे डा०की अुपाधि लेकर तथा वहींसे संस्कृतका अध्ययन करके आये हैं। यहाँ मुझसे पाणिनीय व्याकरणका अध्ययन कर रहे हैं। अुनपर सबसे अधिक प्रभाव अिस बातका पड़ा है कि भारतमें संस्कृत अुस प्रकारकी मृतभाषा नहीं, जैसी कि यूरोपमें लेटिन या ग्रीकभाषा। अिन अल्पवयस्क संस्कृतज्ञ पंडितसे आगे बहुत आशा है।

भारतमें प्राचीन ढंगसे संस्कृतका अध्ययन अविच्छिन्न रूपसे चलता आया है। परंपरागत जो संपत्ति हमें संस्कृत द्वारा मिली है वह अुस युगकी है जब कि प्राचीनतर शास्त्र भूले जा चुके थे। वेदोंको कंठस्थ करनेवाले वेदपाठी जब वेदार्थको प्रायः भूल चुके थे; वेदोंके अर्थज्ञानकी कुंजी जब खो गयी थी, शायद वेदके विषयमें हम आज पूर्ण अंधकारमें होते यदि कहीं सायणने भूली हुअी प्राचीन अर्थज्ञान परम्पराको किसी न किसी रूपमें अपने भाष्योंमें आँक न डाला होता और पश्चिमके विद्वानोंने अुसे अूहापोह करके परिष्कृत न किया होता। वैदिक साहित्यकी भाँति बौद्ध साहित्य भी आज अंधकारमें होता यदि अशोक-लिपियोंके पढ़नेसे लेकर ग्रंथस्थ बौद्ध साहित्यको प्रकाशमें लानेके लिये अिन विद्वानोंने यत्न न किया होता। भारतमें बौद्ध साहित्यके अध्ययनका कार्य जिन स्थानोंमें हो रहा है अुनमें विश्वभारती अेक है। अिसके अिन कार्योंकी ओर संकेत करते हुअे अिटली देशके संस्कृत विद्वान् गुस्सेव तूचीने कहा है—"जब कभी आधुनिक भारतका अितिहास लिखा जायगा तो अुसके अत्यन्त रोचक अध्यायोंमें अेक अध्याय विश्वभारतीके वृत्तान्तके लिये रखना आवश्यक होगा, क्योंकि वहीं मानवीय अेवं सार्वजनीन संस्कृतिकी नींव रक्खी गयी है, जिसने प्राच्यचिन्तनकी आधारभूत अेकतापर प्रकाश डाला है। अिस बातमें किसीको कुछ ननु-नच नहीं हो सकता कि विश्वभारतीने भारतीय पंडित-मंडलीका ध्यान बौद्ध धर्मकी ओर आकृष्ट किया तथा खोजबीन करके अेशिया भरमें व्यापक अुस बौद्ध धर्मके विभिन्न अुतार-चढ़ाव अेवं अुसकी अत्यन्त महत्वपूर्ण घटनाओंके मुख्यव-स्थित अध्ययनकी ओर अुनकी प्रवृत्तिको जागरूक किया है; जो जहाँ पहुँचा वहाँ भगवान बुद्धके प्रवचनोंके साथ भारतीय ज्ञानको ले गया और जिसने अेशिया महाद्वीपके बहुत बड़े क्षेत्रमें अध्यात्मिक अेकताका सृजन किया। दो वर्ष हुअे, विश्वभारती विश्वविद्यालयके रूपमें प्रतिष्ठित हुअी है। अब अिसका कार्यक्षेत्र और प्रभाव दोनों ही और भी प्रकर्षपर पहुँच चुके हैं। अिसकी देखरेखमें जो ग्रन्थ प्रकाशित हुअे हैं अुनसे जान पड़ता है कि अुतनी प्रतिष्ठाके समय अिसका जो सहज रूप था अुससे यह च्युत नहीं हुअी है। सब प्रकारकी संस्कृतियोंके अध्ययनकी ओर अिसकी प्रवणता रही है तथा बौद्ध धर्मके अध्ययनकी ओर अिसने विशेष ध्यान दिया है। अबतक अिसके चार अेनल्स (Annals) छप चुके हैं, अुनमें बौद्ध धर्म सम्बन्धी अध्ययनकी ही प्रधानता है। अिनमेंसे कुछका यहाँ अुल्लेख करना होगा। स्वामी शास्त्रीने भाव विवेकके करतलरत्न शास्त्रका, जो बहुत ही जटिल ग्रन्थ है, चीनीभाषासे संस्कृतमें अुल्था किया। बापट महोदयने 'अट्ठकवग्ग' पालिके चीनी रूपान्तरका (अंग्रेजीमें) अनुवाद किया। सावधान तुलनात्मक अध्ययन द्वारा अुपस्थित अिसकी प्रस्तावना प्रशंसाके योग्य है।...दो चीनी अनुवादोंकी सहायतासे संशोधित चित्तविशुद्धि प्रकरणका पुनः प्रकाशन...। गत शताब्दीके अन्तमें पहलेपहल अिस ग्रन्थका पता हरप्रसाद शास्त्रीने दुनियाको दिया। वज्रयान और अुसके सिद्धान्तोंके अध्ययनकी दृष्टिसे यह अेक बहुत महत्वपूर्ण कृति है। अेक पृथक् ग्रन्थमें भदन्त शान्ति भिक्षुने हिन्दी माध्यमसे महायान बौद्ध धर्मपर हुअे आधुनिक शोधोंका समावेश करते और हुअे हीनयानसे तुलना करते हुअे अुसकी प्रधान विशेषताओंपर प्रकाश डाला है।" [East and West, Vol. III No. I]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह सब कथा आजकी है जब कि अध्ययनके क्षेत्रमें विश्वभारतीकी विशेषता लक्ष्य हुअे बिना नहीं रहती। पर १९२१ में जब अिसका आरम्भ हुआ था तब वह सचमुच बहुत मंगलमय आरम्भ था। आरम्भके समय ही सिलवाँ लेवीने अपना योगदान विश्वभारतीको दिया। लेवीके शान्तिनिकेतन सम्बन्धी अुच्चावच अुद्गार अुनकी डायरीमें जिसको अुनकी पत्नीने प्रकाशित किया था, दर्ज हैं। 'सबुजपत्र' में भी कितनी ही अुतार-चढ़ावकी बातें हैं। पर अिस रम्य और आनन्दके अवसरपर जब कि हम पश्चिमके योगदानकी चर्चा कर रहे हैं, अुन बातोंका अुठाना ठीक न होगा। लेवीने अुस समय जो सक्रिय योग दिया अुसका हमें अध्ययन क्षेत्रमें बहुत सुखद फल मिला है। अिनकी प्रेरणासे व्युत्पन्न महामहोपाध्याय विधुशेखर भट्टाचार्य और डाक्टर प्रबोधचन्द बागची दो सुयोग्य विद्वान हमें प्राप्त हुअे हैं। भट्टाचार्य महोदय प्राचीन परम्परासे शिक्षित संस्कृतके विद्वान् हैं। लेवीसे नयी प्रेरणा पाकर अुन्होंने जो भी कार्य किया है अुसमें पाश्चात्य विवेचना शैलीका अुपयोग होनेके कारण वह बहुत ही बुद्धि-सम्मत हुआ है। अिन कार्योंमेंसे आगमशास्त्रकी समीक्षा जो पहले अंग्रेजीमें ही थी अब संस्कृतमें भी अनूदित हो गयी है; अिससे प्राचीन ढंगकी पंडित-मंडलीको अनेकों नयी सूचनाअें मिलेंगी। बागची महोदयका चीन और भारतकी संस्कृतिके संबंधमें बहुत व्यापक ज्ञान है। अुनकी कृतियाँ भी विविध और बहुरूप हैं। अुसके अेक अंश विशेषको देशकी भाषाओंमें रूपान्तरित होनेकी आवश्यकता है। पर बागची महानुभावके पीछे लेवीकी अुत्कट प्रेरणा है। वे आज भी कहा करते हैं कि प्रो. लेवी न मिले होते तो मैं जो हूँ वह न हो सकता। भट्टाचार्यजीने शांतिनिकेतनकी ३२ वर्ष सेवा की है। और सन् ४५ से बागची महोदय यहाँ हैं तथा आजकल 'विद्याभवन'के अध्यक्ष हैं।

लेवीके अनन्तर प्रो. मॉरिस विन्टरनित्ज़ (Maurice Winternitz) शांतिनिकेतन आये। सन् २२ और २३ में वे यहाँ थे। शांतिनिकेतनके सांस्कृतिक वातावरणसे प्रभावित होकर वे अेक स्थानमें कहते हैं — "शांतिनिकेतनमें मैंने आश्चर्य और आनन्दसे देखा कि मुद्राराक्षस और अुत्तर रामचरित जैसे अलंकृत शैलीमें लिखे नाटक सीधे-सादे रंगमंचपर खेले जाते हैं। दर्शक और दर्शिकाअें अुन्हें समझ भी लेते हैं तथा वे अुनके मनको भी भाते हैं।" (भारतीय वाङ्मय भाग १ पृष्ठ ४५) शांतिनिकेतनमें संस्कृतके अिस रमणीय रूपको तथा भारतके पंडित समाजमें संस्कृत द्वारा व्यवहार प्रवणता देख वे कहते हैं— "आज भी संस्कृत मृत भाषा नहीं है।" (वही पृष्ठ ४५)।

अिनके अनन्तर स्टेन कोनो (Sten Konow) और कार्ल फारमिची (Carls formichi) कोनो अमेरिका देशसे आये थे और यहाँ सन् २४-२५ में थे। अिनका कर्पूरमंजरीका संस्करण पुराना पड़ गया है पर फिर भी अुसको बिना देखे कर्पूरमंजरीका अध्ययन पूर्ण नहीं हो सकता। मनमोहन घोषके कलकत्ता विश्वविद्यालयसे प्रकाशित अिस ग्रंथके संशोधित संस्करणके होते हुअे भी कोनोके दुर्लभ संस्करणकी खोजमें अध्यापक और छात्र दोनों ही रहते हैं। फारमिची महोदयने अिटलीकी भाषामें बुद्ध चरितका अनुवाद कर बड़ी ख्याति कमायी है। अिन दोनों विद्वानोंमेंसे कितने ही लोग कोनोको यहाँ आज भी नहीं भूलते। अुनका कहना है कि यहाँपर जितने भी विदेशी विद्वान् आये अुन्होंने शांतिनिकेतनके सम्बन्धमें जब मनमें आया अच्छा कहा और जब कुछ मनको न भाया तो दो कड़ी बातें भी सुना दीं। पर कोनोने न तो शांतिनिकेतनमें अपने निवासके समय ही कुछ खरा-खोटा कहा और न बाहर जा कर ही। वे सदा ही शांतिनिकेतनके प्रशंसक रहे।

अिटलीके भारतीय तत्त्ववित् गुस्सेप तूचीका आगमन फारमिचीके कुछ बादमें हुआ। तूची और फारमिची कितने ही समय साथ-साथ रहे भी। तूची कुल ११ मास थे, आसपास सन् २६-२७ अी. में यहाँ रहे। अिसी समय गुरुदेवकी यूरोप यात्रा हुअी। अिटलीमें अुस समयके भाग्य विधाता मुसोलिनीसे गुरुदेवकी भेंट भी हुअी। पर संयोग कुछ अैसा हुआ कि तूचीका शान्तिनिकेतनके साथ निजी संबंध दूर गया। अुसकी यहाँ चर्चा नहीं करेंगे। गत दो वर्षोंमें कितने ही छात्र अेवं पंडित पश्चिमसे आये और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ रहे हैं। अिनसे हुअे संबंधकी प्रतिक्रियाका पता बादमें चलेगा। जो कुछ हो। विश्वभारतीने सबके लिये अपना द्वार खोल रखा है। अुसने घोषणा की है और वह अुस घोषणाकी बराबर आवृत्ति करती है कि—"यह विश्वभारती है। जहाँ यह विश्व अेक नीड़ हो जाता है। अिसके प्रयोजनकी संक्षेपसे व्याख्या करनी है। हमारा यह विश्वास है कि सत्य अेक है। पर अुसकी प्राप्तिका मार्ग अेक नहीं है। विविध मार्गोंसे विविध देशके लोग अेक तीर्थपर पहुँचते हैं। यह जानी हुअी बात है। प्राची और प्रतीची विद्याकी दो धाराअें हैं। अिन दोनों ही के द्वारा अखिल विश्वके आश्रयभूत सत्यकी अभिन्नता प्राप्त की जा सकती है। यह हमारा संकल्प है। अिस अुद्देश्यकी प्राप्ति ही मनुष्यका परमलाभ, परमशान्ति, और परम कल्याण है। यह हमारा विचार है। विविध देशोंमें गूँथी गयी विविध विद्याकी पुष्प-मालाओंसे हमारी अिस विश्वभारतीकी अुपासना होनी चाहिये। अेतदर्थ प्राची और प्रतीचीके सभी अुपासकोंका हमारी ओरसे आह्वान है"—

अत्रेयं विश्वभारती।
यत्र विश्वं भवत्येक नीडम्॥

प्रयोजनमस्याः समासतो व्याख्यास्यामः। अेवनः प्रत्ययः। सत्यं ह्येकं पन्थाः पुनरस्यनेकः। विचित्रैरेव हि पथिनिः पुरुषानेकदेशवासिन अेकं तीर्थमुपासर्पन्ति। अिति हि विज्ञायते। प्राचीच प्रतीची चेति द्वे धारे विद्यायाः। द्वाभ्यामप्येताभ्यामुपलब्धव्यमैक्यं सत्यस्याखिल लोकाश्रयभूतस्य। अितिनः संकल्पः। अेतस्यैवैक्यस्योपलब्धिः परमो लाभः परमा शान्तिः परमं कल्याणं पुरुषस्य। अिति हि वयं विजानीमः। सेयनुपासनीया नो विश्वभारती विविधदेशग्रथिताभि विचित्रविद्याकुसुममालिकाभिः। अिति हि प्राच्याश्च प्रतीच्याश्च सर्वेऽप्युपासकाः सादरमाहूयन्ते॥

दया !

: श्री लक्ष्मीकांत वर्मा :

दया !
अेटम बममें
संगीनोंमें, फौलादोंमें
जर्मवारके अुपकरणोंमें
दाँत पीसकर नाखूनोंमें क्रोध छिपाये
लाल नेत्रसे अेक हाथमें मनुज खोपड़ीका खप्पर ले
जीभ निकाले,
थके सिपाहीके पैरोंके
हेवी बूटके नीचे नीचे
मुर्दोंकी ठण्डी छातीपर
अुगे हुअे चट्टानी टीले—
पर हिंसक-सी कौन खड़ी है ?

हाथ बढ़ाओ
सब अपनाओ
.....
.....
.....
नहीं.....नहीं...
ओ.....भागो
.....भागो
रक्त चूसकर सुधा पिलाने
दया खड़ी है.....दया खड़ी है !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाँच मालाअें

: श्री व्योहार राजेन्द्रसिंह :

बीस वर्ष पूर्व मैंने शेक्सपियरका अेक सुन्दर सुनहरी जिल्दवाला छोटासा संस्करण खरीदा था। वह छः भागोंमें था और अपने ही बराबर फिट होनेवाली छोटीसी संदूकमें रखा था। संदूकपर कवि सेक्सपियरके स्वाक्षर अंकित थे। मैं सदा अुसे अपनी आँखोंके सामने रखता था। अुसमेंसे अेक भाग अपने पाकेटमें रखकर मैं अपनी मद्रास-यात्रामें साथ ले गया था। अेक दिन अुठाया तो वह हल्कासा लगा। खोलकर देखा तो छहों भाग गायब। बहुत पता लगाया पर किसीने नहीं बताया। आश्चर्य हुआ कि कौन ले गया होगा। पत्र पत्रिकाओंका टेबिलपरसे गायब होना तो नित्यकी घटना है पर यह शेक्सपियरका प्रेमी कौन है? अवश्य ही वह शेक्सपियरसे अधिक अुनकी सुनहरी जिल्दोंपर मुग्ध होकर अुन्हें ले गया होगा। पाकिट अेडिशन था ही। अुसके ले जानेमें अधिक श्रम भी न हुआ होगा और कोअी देख भी न पाया होगा। जैसे हम अपने हृदयोंमें पाप छिपाये रहते हैं वैसे ही कोअी वह पुस्तक छिपा ले गया। कभी ले जानेवालेपर क्रोध और कभी अपनेपर क्षोभ होता।

अेक बार मैंने रात भर जागकर नाटक लिखा। जब विचार दिमागको तंग करते हैं तब अुन्हें कागजपर अुतारकर ही मनको शान्ति मिलती है। सबेरे देखा तो वह गायब। चारों ओर खोजा। अंतमें छतके नीचे कुछ टुकड़े पड़े हुअे दीखे। अुठाकर पढ़ा तो वह नाटक था! पता लगाया तो मालूम हुआ 'जवाहर' (मेरे नाती) ने ४ बजे रातको अुठकर यह नाटक किया था! फिर दुबारा सब लिखना पड़ा।

दूसरी बार "मोती" (दूसरे नाती) ने मेरी नोटबुकोंपर कृपा की थी। जिनमें मैं पठित पुस्तकोंके नोट तथा सुभाषित लिख रखता हूँ। वे नोटबुक अुसके हाथमें पड़ गयीं। अुसने लिखे हुअे पत्रोंको फाड़कर अलग फेंक दिया और कोरे-कोरे पन्ने निकाल लिये! बड़ी कठिनाअीसे मैं अपने लिखे हुअे पत्रोंको जमा कर पाया। न्यूटनके कुत्तेने जब मोमबत्ती लुढ़काकर अुसके लिखित नोटोंको जला डाला था तब वह यही कहकर रह गया था कि—"वह बेचारा क्या जाने कि अिनका क्या मूल्य है।" सचमुच करेन्सी नोटोंसे भी अधिक मूल्यवान अिन नोटोंको रात-रात लिखनेवाला ही समझ सकता है। पढ़ा था रूपवती भार्या शत्रु होती है—

"भार्या रूपवती शत्रुः" पर यहां रूपवती सुनहरी पुस्तक शत्रु हो गयी। फटी हुअी जिल्दकी अच्छी पुस्तक भी कोअी नहीं छूता—सुनहरी जिल्दकी रद्दी पुस्तक भी खप जाती है। गोस्वामी तुलसीदासजीने कहा है—

सुंदर केकी पेखि भूलहिं मूढ़ न चतुर नर।

किंतु सुंदर पुस्तकपर पढ़े-लिखे भी रीझ जाते हैं। निश्चय हो गया कि अभी तक गुणकी अपेक्षा रूप ही में अधिक आकर्षण है। पढ़े-लिखे लोग भी कुलवधूकी अपेक्षा सिनेमा स्टारपर ही अधिक रीझते हैं।

अुसी कमरेमें अेक फूल-माला, अेक सूतकी माला और अेक तुलसी-माला टंगी हुअी थी। फूल-माला सूखकर झड़ने लगी थी। दोनों मालायें यथास्थान थीं किंतु चोरने तुलसीकी मालाको अुसी खाली बकसमें रख दिया था। मैं सोचने लगा—विद्वान् चोरने अैसा क्यों किया? (पुस्तक चुरानेवालेको मैं विद्वान् चोर ही कहूँगा।)

क्या अुसने यह सोचा कि अिन पुस्तकोंका अब अुपयोग नहीं कर रहे हैं तो मैं ही क्यों न अुपयोग करूं? मगर पढ़ना ही था तो अुसने मुझसे मांगकर पुस्तकें क्यों नहीं ले लीं? शायद अुसने सोचा होगा—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मंगबो भली न बापको जो विधि राखे टेक" सच बात यह है कि यदि मुझसे पूछिये तो मैं तो मांगने-पर भी ये पुस्तकें अुसको न देता। शायद अुसने मेरे मनकी कंजूसी जान ली थी। अन्य पुस्तकोंके समान ये भी 'परहस्त गता गता' हो जातीं। अिसलिये मैं अिन्हें प्राणके समान रखता था।

पाँच मालायें मेरे सामने थीं--गलेमें पड़ी हुअी, स्वर्ण माला, खूंटी पर टंगी हुअी सूखी-सूखी पुष्पमाला सूतकी माला, संदूकमें रखी हुअी तुलसी-माला और चोरी गयी हुअी पुस्तक-माला। शायद अुसने सोचा होगा- पुष्पमालाका तो अब कोअी अुपयोग है नहीं; वह तो सामयिक व अस्थाअी चीज है। किसीने मेरा स्वागत सत्कार करनेके हेतु मेरे गलेमें डाल दी होगी- जूठी और रूखी सूखी फूल मालाका अब क्या प्रयोजन? जो माला हमारा सम्मान बढाती है अुसका हम क्या सम्मान करते हैं? या तो वह धूलमें फेंक दी जाती है और लातों तले रौंदी जाती है अथवा अिसी प्रकार खूंटीपर टंगी रहती है। अुसका यह टंगा रहना भी किसी सम्मानके कारण नहीं; किंतु अुपेक्षाके कारण है। वह सोचती होगी अिस अुपेक्षासे तो अुसका अपमान ही अच्छा था। वह खाद बन कर ही सही, किसीके काम तो आती।

तुलसीकी माला भी अुपेक्षित होकर खूंटीपर टंगी थी। मैं नित्य अपनी अंगुलियोंसे सेवा करूंगा यही प्रतिज्ञा कर अुसे लाया था; किन्तु अब अुसका अेकता-सूत्र टूट जानेसे वह डब्बेमें बन्द है। अंगुलियोंपर थिरकनेवाली वह जड़ अुपेक्षित धूलिधूसरित पड़ी हुअी थी। यदि गलेमें भी पड़ी रहती तो अुसे यह संतोष तो अवश्य होता रहता कि वह अँगुलियोंके पास नहीं तो मेरे हृदयके पास तो है। पर अुसे यह सौभाग्य भी न मिल सका। और वह सूतकी माला जिसे गांधीजी फूलमालासे अधिक पसन्द करते थे, वस्त्र बनकर मेरे शरीरके आलिंगनके लिये अुत्सुक है।

हाँ, तो चोरने क्या सोचकर अुस मालाको पुस्तक मालाके स्थानपर रख दिया होगा? शायद अुसने सोचा होगा— पुस्तकें पढ़ना तो विद्यार्थियोंका काम है; अब मुझे अैसा काम करना चाहिये जिससे मुझे जन-सम्मान की प्रतीक पुष्पमाला मिले। चोरने शायद यह सोचा होगा कि सम्मानकी पुष्पमाला तो क्षणिक होती है— वह दूसरे ही दिन सूख जाती है। तुलसीदासजीने कहा ही है—

"तुलसी गाड़रकी घसनि जड़ जनता सन्मान।"

तुलसीदासजीने जनताको गाड़रोंकी अुपमा दी है,यह सुनकर शायद जनतन्त्रके अुपासक चिढ़ जायेंगे। मगर जनसम्मान कितना अस्थायी होता है यह वे भी जानते होंगे। यदि अेकने फूलमाला डाली तो दूसरा भी फूलमाला डालनेको अुत्सुक होता है, पर कभी-कभी फूलके बदलेमें धूल, सड़े अण्डे भी सहने पड़ते हैं और जूतोंकी माला भी पहननी पड़ती है। फूलमाला चाहनेवालेको जूतोंकी माला पहननेके लिये भी तैयार रहना चाहिये। अतः भाअी अैसी पुष्पमाला नहीं चाहिये। यही सोचकर शायद चोरने पुस्तकमालाके स्थानपर पुष्पमाला नहीं रखी।

अगर मुझसे कोअी पूछे कि यदि मैं पुस्तकमाला चुराता तो अुसके बदले अुसकी जगह क्या रखता? तो अिसका अुत्तर यह है कि मैं अिस पुस्तकमालाके बदले अुसीके वजनकी अपनी सोनेकी माला रख देता। बल्कि यह कहना चाहिये कि पुस्तकका मूल्य किया ही नहीं जा सकता। ज्ञानको सोनेसे तौलना अेक मूर्खता ही होगी। कहा भी है—"विद्याधन अनमोल है दामन बिना विकाय"। पर मेरे चोरने "दामन बिना विकाय" वाली दूसरी लकीरको गलत साबित कर दिया। अुसने पुस्तकोंको चुरा ही तो लिया। केवल 'पुस्तकस्था-विद्या' हीको चुरा पाया। अिसीलिये पुस्तकमें रहने-वाली विद्याकी निन्दा की गयी है—

"पुस्तकस्था तुया विद्या परहस्त गतं धनम्।"

चोरने धनकी तरह विद्याधनको भी हस्तगत कर लिया। हमारे पूर्वजोंने अिसी डरसे अपनी विद्याको कंठस्थ और हृदयंगम कर लिया था। बख्तियार खिलजी नालन्दाके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालयको जलाकर भी भारतीय ज्ञानको नेस्त नहीं कर सका था। और आजकी यह दशा है कि मैं शेक्सपियरके ग्रन्थ चोरी जानेसे अितना दीन हो गया हूँ। हमारे पूर्वजोंने चारों वेदोंको कंठस्थ कर रखा पर मुझे तो शेक्सपियर, कालिदास या तुलसीदासका अेक नाटक या काव्य भी याद नहीं।

आप पूछेंगे कि अिस छापेके जमानेमें आप अिन पुस्तकोंके लिये अितने दीन क्यों हो रहे हैं? अेक पुस्तकके बदले दूसरी पुस्तक ले लीजिये। मगर मेरी समझमें पुस्तक कोअी वस्तु नहीं है कि अेकके बदले दूसरी ले ली जावे। अेक कोटके बदले दूसरा कोट या अेक जूतेके बदले दूसरा जूता ले लिया जावे। पुस्तक तो अेक मूर्तिके समान है जिसकी हम पूजा करते हैं। अुसके साथ हमारी विचारधारा और भावना भी संबंधित हो जाती है। फिर मैं तो बिना पेन्सिलके पुस्तक पढ़ ही नहीं सकता। यदि किसी काव्यको पढ़ता हूँ तो अुसे चित्र काव्य बना डालता हूँ। यदि किसी नाटकको पढ़ता हूँ तो अुसपर लकीरोंका रंगमंच बना डालता हूँ। जिस प्रकार पूजाकी मूर्ति या पत्नीके बदले दूसरी स्त्री अुसके स्थानकी पूर्ति नहीं कर सकती, अुसी प्रकार पढ़नेकी पुस्तक भी नहीं बदली जा सकती। संस्कृत कविने ठीक ही कहा है—

पुस्तकं लेखनी दारा पर हस्तगता गता।
आगता दैव योगेन नष्टा भ्रष्टा प्रमर्दिता॥

अब पाँचों मालाओंके चक्रमें मेरा मन घूमने लगा—किसे फेंकूँ किसे ग्रहण करूं! पुस्तक चोर चाहता है कि मैं पुस्तक मालाको भूलकर तुलसी माला जपूं जो अुसने शेक्सपियरके स्थानपर रख दी है। खूंटी-पर टंगी हुअी पुष्पमाला कहती है कि तुलसीमाला छोड़-कर मुझे प्राप्त करो—भजन पूजन छोड़कर मानसम्मान-के पीछे पड़े रहो। स्वर्णमाला कहती है कि अिस पूंजीवादी युगमें मेरी अुपासना करो। पुष्पमालासे भूख थोड़ेही बुझ सकती है। पुस्तक-माला भी भूख नहीं बुझा सकती। कहा भी है—

"पिपासितैः काव्य-रसं न पीयते।
बुभुक्षतैः व्याकरणं न भुंजते॥"

फिर तुलसी-मालाके लिये तो कहा ही है—

"भूखे भजन न होय गोपाला।
यह लो अपनी कण्ठी माला॥"

सूतकी माला कहती है, मैं तुम्हारी भूखकी नहीं, वस्त्रोंकी आवश्यकताओंकी पूर्ति कर सकती हूँ। अतः मुझे ही ग्रहण करो। स्वर्णमाला कहती है कि अन्य मालाओंको छोड़कर केवल मेरी ही अुपासना करो जिससे बहुत-सी पुस्तक-मालाअें खरीदी जा सकें, देशों पुष्पमालाअें पहनी जा सकें और तुलसीमालावालोंको भजन करनेमें प्रवृत्त किया जा सके।

किंतु स्वर्णमालामें अनेक दोष हैं। अेक तो वह दूसरोंमें अीर्ष्या बढ़ाती है। फिर चोर अुस मालाके साथ अुसे पहननेवालेके गले ही के ग्राहक बन जाते हैं। वह स्वयं भी पहननेवालेके हृदयमें अभिमान जागृत कर देती है। पुराणोंमें कहा है कि सोनेमें कलिका निवास है। स्वर्ण मुकुटने यदि राजा परीक्षितकी मति भ्रष्ट कर दी थी तो स्वर्णमाला भी मेरे हृदयको भ्रष्ट करनेमें कसर न करेगी जो कि सदा अुसके पास रहता है। महाभारतमें कथा है कि राजा नलने खूंटीसे अपनी स्वर्णमाला टाँगी और खूंटी ही मालाको निगल गयी। कलियुगमें सब बातें विपरीत होती ही हैं। मुझे डर है कि कहीं स्वर्णमाला मेरे गले ही को न निगल जाय।

अब रही पुष्प माला। सौंदर्य और सुवासके लिये फूलसे बढ़कर कोअी वस्तु संसारमें नहीं है। कवि गण अुसके गुण गाते हुअे नहीं थकते। यदि स्वर्ण मालामें कलिका निवास है तो पुष्पमालामें लक्ष्मीका निवास है। पहले जमानेमें वह परिधानका अंग समझी जाती थी। लोग वस्त्राभूषणके साथ पुष्पमाला भी धारण कर निकलते थे। जिस प्रकार पुष्पमालाएं हमारे कण्ठकी शोभा बढ़ाती हैं, अुसी प्रकार पुस्तक मालाअें भी हमारे पुस्तकालयोंकी शोभा बढ़ाती हैं। जिस प्रकार रंगबिरंगे फूल गूंथकर पुष्पमालाअें बनाअी जाती हैं, अुसी प्रकार विविध विषयोंको गूंथकर पुस्तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालाएँ निकाली जाती हैं। सभी रुचिवालोंके अनुकूल कोअी न कोअी ग्रंथ अुसमें मिल ही जाता है।

मैंने भी पुष्पमालाओंके समान अनेक पुस्तक-मालाएँ अपने गलेमें डाल रखी हैं। पुष्पमालाएँ नित्य मुरझा जाती हैं; किन्तु पुस्तकमालाएँ नित्य नवीन होती जाती हैं। अुनकी सुवास कभी मंद नहीं पड़ी; वरन् ज्यों ज्यों समय जाता है वे अधिकाधिक सुगंधित होती जाती हैं। पुष्प मालाओंकी क्षणिक सुवाससे संतुष्ट न होकर भक्त जनोंने काष्ठ मालाओंका आविष्कार किया। तुलसीकी मंजरी झड़ जाती है किंतु तुलसीकी माला स्थायी रहती है। पुष्पमालामें केवल क्षणिक आनंद है— तुलसीमालामें स्थायी शाश्वत आनंद है।

बीस वर्षसे मेरे पास शेक्सपियरकी पुस्तकमाला सुरक्षित है, किंतु मैंने अभीतक अुसका अुपयोग नहीं किया। केवल सुनहरी जिल्दोंके दर्शन कर चित्तको तृप्त कर लेता था। रवीन्द्र ग्रंथावलीको अलमारियोंमें सजी देखकर संतोष कर लेता हूँ। पढ़नेका अवसर न मिलनेके कारण ठंडी सांस लेकर रह जाता हूं। यह भी अेक प्रकारका पूंजीवाद है, परिग्रह है। जिस वस्तुका हम अुपयोग नहीं कर सकते अुसे संचित कर हम दूसरोंको अुसके अुपयोगसे वंचित कर देते हैं। भर्तृहरिने ठीक ही कहा है--

"दानं भोगो नाशः तिस्रो गतय भवंति वित्तस्य।
यो ददाति न भुंक्ते तस्य तृतीया गतिर्भवति॥"

जिस वस्तुका दान या अुपभोग नहीं किया जाता अुसकी तीसरी गति होती है। वस्तुओंकी तीन ही गतियाँ होती हैं—दान, भोग और नाश। मैंने स्वयं पुस्तक मालाका न अुपयोग किया और न अुसे किसी पुस्तकालयको दान दिया। अतः, यदि अुन्हें कोअी चुरा ले गया तो अुसने प्रकृतिके साधारण नियम ही की पूर्ति की। मेरी दृष्टिसे तो अुनका नाश हो गया किन्तु कोअी न कोअी अुनका अुपयोग अवश्य करेगा। यदि नहीं करेगा तो अुसकी भी यही गति होगी। अिस अटल नियमको कोअी टाल नहीं सकता।

फिर मैंने सोचा—पुस्तक मालाके स्थानपर तुलसीकी माला रख दी गयी अिसका क्या तात्पर्य हो सकता है?

मालाका अुपयोग है अुसे बारबार फिराना। अिसी प्रकार पुस्तक मालाओंको भी बारबार दोहराना (फिराना) होना चाहिये।

शास्त्रं सुचिंतितमपि प्रति चिंतनीयम्।
\+ \+ \+
शास्त्रे नृपेच युवतौ च कुतो वशित्वम्।

तुलसीदासजीने अिसी भावको अपनी चौपाअीमें कितनी सुंदरतासे बांधा है—

शास्त्र सुचिंतित पुनि-पुनि देखिय
भूप सुसेवित वस नहीं लेखिय।
राखिय यद्यपि सदा मन माहीं
युवती शास्त्र नृपति वस नाहीं।

जब अेक राजा, अेक युवती और अेक शास्त्रको वश करना अितना कठिन है तब अितनी ग्रन्थ मालाओंको वश करनेमें अनेक जन्म लेने पड़ेंगे। जब कि अुन्हीं ग्रन्थोंको बारबार पढ़ना और अुन्हींका चिंतन करना है तो फिर अनेक ग्रंथ-मालाओंको गलेमें लटकानेसे क्या होगा? वह तो अुसी गधेके समान होगा जो चंदनका भार अपने अूपर लादे रहता है, पर अुसकी सुगंधको नहीं जानता—

यथा खरश्चन्दन भारवाही
भारस्य वेत्ता नतु चन्दनस्य।

सचमुच आज हम विविध ज्ञानका भांडार अपने मस्तिष्कोंमें ढोते हुअे भी सुखी, संतुष्ट व समृद्ध नहीं हैं। अिसीलिये कविने हमें अेकनिष्ठ होनेका अुपदेश दिया है --

"अेको देवः केशवो वा शिवो वा
अेकं मित्रं भूपतिर्वा यतिर्वा।
अेको वासः पत्तने वा वनेवा,
अेका नारी सुंदरी वा दरी वा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिसीलिये कहा है –

गीता सुगीता कर्त्तव्या
किमन्यैः शास्त्र विस्तरैः।"

अेक ही कवि अथवा लेखक या अुसके अेक ही ग्रंथको लेकर मनुष्य अपना और समाजका जीवन सुधार सकता है। अनेक ग्रंथोंको पढकर हम Jack of all but master of none रह जाते हैं। अिसीको "पल्लवग्राहिपाण्डित्यं" कहा गया है।

अिसीलिये बाअिबिलमें कहा है—

Of making many books there is no end कुछ मित्र पूछते हैं – अितना पढ़ते हो पर कुछ आचरणमें भी लाते हो? अुसका अुत्तर मैं हिलियर बैलोकके शब्दोंमें देता हूं—

When I am dead I hope it may be said
His sins were scarlet but his books were read.

(रेड् शब्दमें श्लेष है--read और red)

पुस्तक पढना भी अेक विज्ञान है। पुस्तकें तो बहुत-सी पढी जाती ह, पर सभी अेक प्रकारसे नहीं पढी जातीं। बेकनने अुसकी प्रणाली बतायी है—अधिकांश पुस्तकोंको तो केवल चखना चाहिये, दूसरोंको निगल जाना चाहिये और कुछ ही को अच्छी तरह चबाना और हजम करना चाहिये।

Some books are to be tasted,
Others to be swallowed and
Some few to be chewed and digested

मैं अितना और जोड़ना चाहता हूं कि कुछको चबाकर थूंक देना चाहिये। हजम करने लायक पुस्तकें बहुत थोड़ी ही होती हैं। पुस्तकोंके चुनावमें भी हमें हंसके समान नीर-क्षीर-विवेकसे काम लेना चाहिये। आजकलके दूधके समान पुस्तकोंमें भी ज्ञान-दुग्धकी अपेक्षा अुथला पानी ही अधिक रहता है और वह भी शुद्ध गंगाजल नहीं बल्कि नलों या नालोंका पानी।

जान पड़ता है मुझे बहुत सी ग्रंथ-मालाओंमें अुलझे न रहकर अेकनिष्ठ करने ही के लिये बुद्धिमान चोरने पुस्तक-माला चुरा ली है। मुझे अुसका अुपकार ही मानना चाहिये।

चोरने पुस्तक मालाके बदले तुलसीमाला रख दी, अिसका अुद्देश्य यह भी हो सकता है कि मेरी अवस्था पुस्तक पढ़नेकी नहीं रही। विद्यार्थी अवस्था बीत चुकी, और पुष्प-मालाका शौक भी समाप्त हो गया। अब मुझे पुस्तक मालाके बदले तुलसीमाला ग्रहण करना चाहिये। यदि चोर साम्यवादी होता तो पुस्तकके बदले हँसिया हथौड़ा रख देता और गांधीवादी होता तो सूतकी माला रखकर मुझे श्रम द्वारा अपनी रोटी कमानेकी सलाह देता। पर वह अवश्य ही परम भक्त होगा जो कि यह अुपदेश करता जान पड़ता है—

"पतवारी माला पकरि, और न कछू अुपाव।
तरि संसार पयोधिको, हरि नाम करि नाव।"

किंतु अुसकी बात मैं कैसे मानूं जब कि अुसी कविने आगे चलकर अपनी बात काट दी है और कहा है—

"जप माला छापा तिलक सरै न अेकौ काम,
मन कांचे नाचे वृथा सांचे रांचे राम।"

कबीरदासजी मेरे ही पक्षका समर्थन करते हैं, जब वे कहते हैं—

मनका फेरत जग मुवा
गया न मनका फेर।
कर का मनका छाँड़कर
मनका मनका फेर।

मैं तो गांधीजी और कबीर दोनोंका सम्मिलित अुपासक हूं। सूतकी मालाके साथ तुलसीमाला अवश्य फेर सकता हूं। अन्यथा--

करमें तो माला फिरै
जीभ फिरै मुंह माहिं
मनुवा तो दस दिसि फिरै
यह तो सुमिरन नाहिं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शेक्सपियरके अनुसार अन्य मालाअें आपसमें अुलझी हुअी हैं, अत : वे त्याज्य हैं :—

The aim of all is but to nurse the life
With honour, Wealth and ease in Waning age
And in this aim there is such thWarting strife,
The one for all or all for one We gage
As life for honour in fail battle's rage.
Honour for Wealth and oft that Wealth doth cost
The death of all and alltogether lost.

कि अिंग्लेंडके राज्यके बदले भी मैं शेक्सपियरको छोड़नेके लिये तैयार न होअूंगा। अैसे ही पद्योंके कारण कार्लाअिलने कहा था कि मानके लिये धन, धनके लिये मान, धनके लिये श्रम, श्रमके लिये मान अथवा—

" धनते धरम धरमते अधरम
अकरम करम करै । "

स्वर्ण-माला धनकी, पुष्पमाला मानकी, तुलसीमाला धर्मकी, सूतमाला श्रमकी और पुस्तकमाला ज्ञानकी प्रतीक है। वह द्रव्ययज्ञ, श्रमयज्ञ, जपयज्ञ या मान-यज्ञसे अुतना प्रसन्न नहीं हो सकता जितना कि ज्ञान यज्ञसे " **ते नाहं ज्ञान यज्ञेन तुष्ट : स्यामिति मेमति :** " (गीता)

अत: अुस सर्वेशके गलेमें स्वर्णमाला, पुष्पमाला या सूत्रमाला न डालकर पुस्तकमाला ही डालना चाहता हूँ। मुझे भय है कि यदि मैं अुनको स्वर्णमाला पहनाअूं तो आज विद्वान चोरने पुस्तकमाला चुरायी है पर अुसका बकस छोड़ दिया है किन्तु वह भक्त चोर स्वर्ण मालाके साथ मेरे ठाकुरजीको भी चुरा ले जायेगा। यदि मैं पुष्पमाला चढ़ाअूंगा तो वह सूख जायेगी और यदि सूतमाला अर्पण करूंगा तो वह भी कोअी अुपयोगितावादी चुरा ले जायेगा। अत:, पुस्तकमाला ही अर्पण करूँगा यदि अेक चोरी चली जाये भी तो दूसरी लाकर रख दूंगा। अुसके सुन्दर रूपपर कोअी मोहित होकर चुरा न ले जाये अिसलिये सुनहरीके बदले फटी हुअी जिल्द लगा दूंगा किन्तु मेरी पूजाकी माला पुस्तक माला ही होगी। यदि वह भी नहीं बचेगी तो अुन पुस्तकोंसे लिये हुअे विचारोंकी माला ही अर्पण कर दूंगा। जिसे न कोअी चुरा सकेगा, न समयका जल ही गला सकेगा, न द्वेषकी आग ही जला सकेगी और न निंदाकी धूल ही अुड़ा सकेगी। वह तो गीताकी आत्माके समान अजर-अमर है। भगवानने स्वयं कहा है कि द्रव्ययज्ञकी अपेक्षा ज्ञानयज्ञ श्रेष्ठ है। फिर पुस्तक तो ज्ञानमय द्रव्य है अत: अुसका महत्व दोनोंसे अधिक होना चाहिये। यदि अिसे यज्ञकी हवि बनाया जावे तो देव पितर ऋषि और मनुष्य अधिक तृप्त होंगे। अिसके द्वारा हम ऋषि ऋणको भी चुका देंगे, पितरोंका तर्पण भी कर देंगे, देवोंको भी हविर्भाग मिल जायेगा और मनुष्योंको भी यज्ञ शेष हाथ लग जायेगा। यह अैसी निधि है जिसके वितरण करनेसे ही वृद्धि होती है। अन्य निधियाँ तो वितरण करनेसे शेष हो जाती हैं। किन्तु यह निधि वितरणसे अशेष हो जाती है। वह चोर मेरी अनिच्छासे पुस्तकमाला चुरा ले गया पर अब मैं अपनी अिच्छासे अुसे कृष्णार्पण करता हूँ।

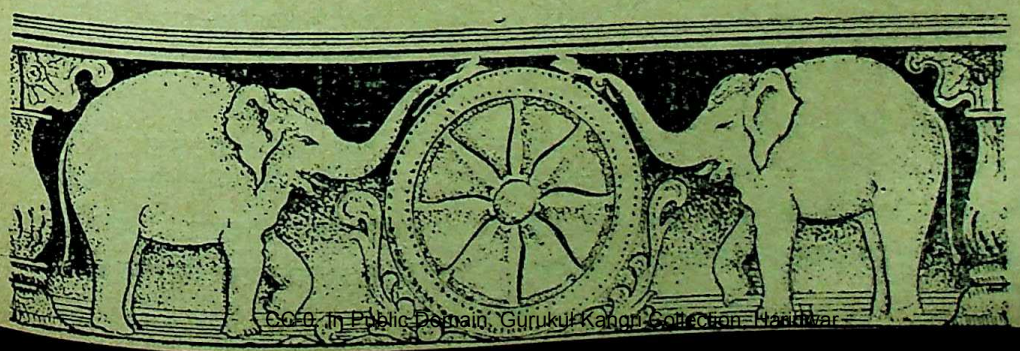

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यका अुद्गम स्रोत

: श्री ब्रिजलाल बियाणी :

[वर्धा जिला हिन्दी-साहित्य सम्मेलनका अुद्घाटन समारंभ करते समय दिये भाषणका अेक अंश।]

साहित्यका अुद्गम मानवताकी भावनाओंको प्रगट करनेकी अुत्कट प्रेरणाके कारण हुआ है। अतः साहित्यकी ओर देखनेकी सच्ची दृष्टि मानवी या विश्वव्यापी हो सकती है। सारे विश्वके महान् साहित्यको यदि अेकत्रित कर अुसका निचोड़ निकाला जाये तो यही निकलेगा कि सारी दुनियाकी मानवता अेक है और अुसका अेक ही लक्ष्य है। मानवताकी शक्तियाँ विभिन्न परिस्थितियोंके अनुसार संघर्षमें व्याप्त होकर भी विश्वको शान्ति, समता और सुखकी ओर ले जानेका प्रयत्न कर रही हैं। अिस साहित्यिक अेकतामें विभिन्नताके भी दर्शन होते हैं। अेकता मानव-समाज व्यापी है और विभिन्नता स्थान, परिस्थिति और समयके अनुसार है। अुस अेकताका प्रदर्शन भी है। नदी अेक ही रूपमें अुद्गमसे अन्ततक बहती है। आदि अन्तमें अुसकी अेकता है; किन्तु विभिन्न स्थानोंमें अनेक प्रवाहोंमें वह बह जाती है। अुसकी सरलता टेढी भी दिखायी पड़ती है। वह बड़ी-बड़ी शिलाओं और पाषाण खंडोंमेंसे गुजर कर बहती है। किस्म-किस्मकी अुसकी आवाज भी सुनायी पड़ती है। और समतल जमीनकी गहराअीमें बहती हुअी वह अत्यन्त गंभीर व प्रशान्त मालूम होती है। नदीकी तरह साहित्य भी भिन्न-भिन्न प्रवाही रूपमें दिखायी पड़ता है।

साहित्यकारोंका यह कर्तव्य है कि वे साहित्यके मूल लक्ष्यको कल्पना-सृष्टिमें रखते हुअे स्थान और सीमाकी परिस्थितिके अनुसार अुस मूल कल्पनाको साकार बनावें जिससे अेकतामें विविधताका निर्माण हो, और वह विविधता या विभिन्नता सबल होते हुअे भी अेकताकी ओर हमें ले जानेमें गतिशील हो। जो साहित्य अिस आदर्श व्यवहारका समन्वय कर सकता है, वही स्थायी साहित्यका निर्माता होता है। जिस साहित्यमें अिन दोनों मात्राओंकी जिस प्रमाणमें कमी होती है अुसी प्रमाणमें साहित्य भी न्यूनतम श्रेणीका होता चला जाता है।

किसी भी देश या जातिका अुत्थान अुस देशके साहित्यिकोंकी विशाल कल्पना, अुच्च ध्येय और प्रदर्शन सामग्रीकी अुत्तमतापर निर्भर होता है। कअी शताब्दियों तक गुलामीमें पड़े हुअे भारतने स्वतन्त्रताके प्रभातको देखा। अुसके प्रगतिसूर्यको आगे अम्बर मध्य चढ़ना है और सारे भारतको अैसा प्रकाश देना है जिससे अिस देशका हरअेक व्यक्ति प्रकाशमान् हो। वह अपने जीवनका मार्ग खोजे और अंधकारके किसी भी खतरेका भय न रखते हुअे सुखी जीवन व्यतीत करे। भारतके साहित्य-निर्माणमें दूसरा विचारणीय प्रश्न राष्ट्रभाषाके साहित्य-निर्माणका और प्रादेशिक भाषाओंके साहित्य निर्माणका भी है। यह सही है कि पद और गौरवके हिसाबसे राष्ट्रभाषाके आसनको ग्रहण करनेके कारण हिन्दीका भाषाओंके क्षेत्रमें अग्रस्थान बन गया है; परन्तु साहित्यकी पूँजीके हिसाबसे यह भी मान्यता है कि कुछ प्रादेशिक भाषाओंकी साहित्य-पूंजी हिन्दीकी संचित धनराशिसे अधिक है। लेकिन यह भी निर्विवाद कहा जा सकता है कि अनेक प्रादेशिक भाषाओंका साहित्य भंडार भी हिन्दी-साहित्यके कोशकी बराबरीका है। हिन्दीको यदि सच्ची राष्ट्रभाषा बनना है, भारतकी समस्त जनताकी आवाज बनना है, तो अुसके साहित्यको भी भारतव्यापी बनना होगा। अुसके साहित्य-भंडारको अितना विकसित करना होगा कि प्रादेशिक भाषाअें अुसकी निधियोंसे कुछ ग्रहण कर सकें। हिन्दीको अिस स्थिति तक पहुँचानेमें हमारा यह कर्तव्य है कि प्रादेशिक भाषाओंके भंडारमें जो रत्न भरे पड़े हैं, अुन्हें हम राष्ट्रभारती हिन्दीको अर्पण करें और विश्व-साहित्यमें भी जिन महान् विचारोंकी धनराशि संचित रही हुअी है अुसे भी हम राष्ट्रभारतीके भंडारमें अेकत्रित करें और वहांसे आयी हुअी पूँजीके साथ हिन्दीके साहित्यका मौलिक निर्माण करें और अपनी निधिसे भी हिन्दीके भंडारको भरपूर करें। हमारी अपनी कमायी हुअी पूंजी, विश्वके धनसे लायी हुअी राशि और प्रादेशिक भाषाओंसे प्राप्त भावराशिका अंश, अिन तीनोंके संमिश्रणसे ही राष्ट्रभाषा और साहित्यके क्षेत्रमें हिन्दी महान् होगी, अुपयोगी होगी और अन्य भाषाओंके लिये मार्गदर्शक होकर आकर्षणका स्थान बनेगी। हिन्दीके साहित्यकारोंका कार्य महान् है, अुनका अुत्तरदायित्व भी महान् है और अुनकी सफलता भी अुनकी महती साधनापर निश्चित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारे और जीवन

: डा. सोमनाथ गुप्त :

आज हम अेक विचित्र युगमेंसे होकर गुजर रहे हैं। हमारी स्थिति सचमुचमें विचित्र है। देश हमारा है, धर्म हमारा है, धरती हमारी है, राज हमारा है, यहाँ तक कि प्रायः सब तरहके अधिकार हमारे हैं; परन्तु विचित्रता यह है कि सब कुछ हमारा होते हुअे भी वास्तवमें हमारा कुछ नहीं। हम कहनेके लिये हिन्दू हैं, परन्तु हिन्दुत्वकी कौनसी बात हममें रह गयी है। हिन्दुत्वके दो प्रधान लक्षण थे आश्रम धर्म और वर्ण धर्म। अेकका सम्बन्ध व्यक्ति और अुसके व्यक्तिगत विकाससे था। अिस विकासमें अुसे पूर्ण स्वतंत्रता थी। किसी भी धर्मका अनुयायी होकर व्यक्ति अपनी आत्माको अुन्नत बना सकता था और बिना किसी प्रकारकी रुकावटके अपने जीवनको अपनी अभिरुचिके अनुकूल, सफल बनानेका अधिकारी था। अितना ही नहीं, समाजमें रहकर अुसे संसारका जीवन व्यतीत करनेका भी पूरा अवसर था और पारमार्थिक सिद्धिके लिये भी पूरी स्वतंत्रता थी। 'वर्गों' में समाजका विभाजन भी अेक अैसी ही व्यवस्था थी जिससे समाजमें व्यक्तिकी रक्षा हो सके और अुसके लिये जीवनके अैसे अुपकरण प्रस्तुत किये जा सकें जिनको अपनाकर मनुष्य, परस्पर सहायता द्वारा, सांसारिक सुख और वैभवको प्राप्त करनेमें सफल हो। 'वर्ण' की सत्तामें जहाँ मानसिक और आत्मिक विकासकी भिन्नता निहित थी; वहाँ व्यक्तिके गुण और शक्तिके अनुसार धनोपार्जन तथा जीवनकी सामान्य स्थितिकी आवश्यकताओंकी पूर्तियोंकी भी सुगम व्यवस्था थी। वर्ण-धर्मका निर्माण व्यावहारिकताकी दृष्टिसे ही अधिक किया गया था।

अिस युगका प्रधान नारा है 'हम वर्गहीन समाजकी स्थापना करना चाहते हैं' ठीक है। परन्तु प्रश्न यह है कि 'वर्गहीन' से अभिप्राय क्या है? यदि वर्गहीनका अभिप्राय केवल मात्र यह है कि हिन्दू प्रणालीका वर्ण धर्म दूर हो जाना चाहिये तो अिससे वर्ग हीनताकी स्थिति कैसे पैदा हो सकती है? व्यक्तियोंका टोलियोंमें विभाजन शासनकी व्यवस्था और जातीय अेकताकी दृष्टिसे अिस प्रजातंत्र युगमें भी आवश्यक है। अिस नारेका फिर केवल यही अर्थ हो जाता है कि अेक व्यवस्थाके प्रति विद्रोहकी भावना और अुसके स्थानपर दूसरेकी स्थापना और वह भी किसी विशेष भावनाके आधारपर। दूसरे कहते हैं हमारा अभिप्राय वर्गहीन समाजसे यह है कि अुसमें केवल अुत्पादक और शासक ही रहें, तीसरा वर्ग न हो। यह भी ठीक है, परन्तु प्रश्न यह अुपस्थित होता है कि अुत्पादक तो स्वयं ही भिन्न-भिन्न पदार्थोंके होंगे जिनकी शारीरिक, मानसिक और आर्थिक परिस्थितियाँ और अुत्पादनकी आवश्यक सामग्रियाँ भी भिन्न होंगी। अैसी अवस्थामें समान व्यवस्थाकी सम्भावना किस प्रकार हो सकती है? यह व्यवहारिक कठिनाअी है। फिर शासक वर्गके अूपर ही यह कैसे विश्वास किया जा सकता है कि वह अपने स्वार्थोंको छोड़कर सबके स्वार्थोंपर पूर्ण ध्यान देगा। यदि यह कहा जाय कि सबके स्वार्थोंके अूपर ध्यान न देनेवाले शासनको जनता द्वारा मिटाया जा सकता है तो यह तर्क सत्य होते हुअे भी प्रश्नका समाधान नहीं कर पाता; क्योंकि अिस प्रकारकी परिस्थितियोंमें शासन और शासितका संघर्ष छिड़ा ही रहता है। जीवनकी शांति भंग होती ही रहती है।

अतअेव हम अिस परिणामपर पहुंचते हैं कि सभी प्राणियोंको अपने विकासके लिये अुचित और समान अवसर देना आवश्यक है। अवसरकी अिस अवस्थाके पश्चात् अुन्हें अुनके विकासके अनुसार विभिन्न भागोंमें अुत्पादनके लिये प्रविष्ट करा देना चाहिये। मानवताकी दृष्टिसे अुनमें अूंच-नीचका कोअी भेद न रहे, आर्थिक विषमताओंको दूर अवश्य किया जाय, परन्तु किसी नारेके आधारपर अुनके स्वप्नोंका अपहरण अथवा अुनके अधिकारोंकी अवेहलना अवांछित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे तो अैसा दिखायी देता है कि आजकलकी राजनीतिक धारणायें अधिकांशमें जीवन संबंधी ठोस व्यवस्थायें नहीं हैं, ये जीवनके साथ खिलवाड़ हैं, जिनके पीछे स्थायित्वका स्वप्न भले ही हो; परन्तु शान्तिका असीम माधुर्य नहीं। जिस योरुपने जीवनके अिन नारोंको अूँचा अुठाया है और मानवके मनमें आर्थिक समस्याओंको अुत्पन्नकर अुसे भौतिकवादकी ओर ले गये हैं, स्वयं अुसमें जो अशान्ति चारों ओर छायी है, वह अुसकी असफलता और अुन विचारधाराओंकी अनित्यताका स्वयं प्रमाण है।

अिसका अभिप्राय यह नहीं कि हम रूढ़िवादी ही बने रहें। हमें जहाँ परिवर्तन और परिवर्धनकी आवश्यकता है, वहाँ वैसा कर लेना चाहिये; परन्तु किसी भी विचारधाराका आँख मींचकर अनुचर होना बुद्धिवादका अपमान है।

राजनीति, धर्म, संस्कृति और साहित्य सभीमें समय समयपर अनेक नारोंने जन्म लिया। अुनकी क्षणिक चमकने हजारोंको मिटा दिया; परन्तु अितिहास बताता है कि मानव अपनी क्रूरतामें भी अेक ही सूत्रका आधार देखता है। समस्त विश्व अेक है। विज्ञान समस्त तत्वोंकी अेकता सिद्ध करके अुस सत्यको प्रमाणित करता है और धर्म व्यक्तिगत साधना द्वारा अुसकी अनुभूति। भारतका मार्ग प्रयोगका मार्ग न हो कर साधनाका मार्ग रहा और अिसीलिये अुसने वसुधैव कुटुम्बका मार्ग ग्रहण किया। अुसकी राजनीति, धर्म, संस्कृति सभीमें अद्वैतकी भावना रही, अुसने सभी युगोंमें करुणा और मैत्रीका संदेश दिया और चलते-चलते हमारे राष्ट्रपिता भी अुसी मार्गका प्रदर्शन कर गये।

तो क्या केवल 'नारों'से जीवनकी रक्षा हो सकती है?

कविता :

पथ-रेखा

: श्री केदारनाथ मिश्र 'प्रभात', अेम.अे. :

वाणी आज खुली कल्याणी
वाणी आज खुली

कल प्रभात था अेक विभाका खंड
किन्तु आज बन गया प्रकाश अखंड
मेरी चारों ओर तैरती आत्मा पंख पसार
जैसे स्वर्ण-विहंग
लहराती, गाती, बरसाती अूर्म्मिल स्वर-मधु-धार
जैसे बीन अभंग
आत्माका स्वर
अुठता अूपर
बढ़ता है जैसे अनन्तकी नील लहर
अूपर अुठता, बढ़ता प्रतिपल
अपने अंचलमें कल अुज्ज्वल
नीरव असीमको लेता भर
बढ़ता नीचे करुणाको पृथ्वीपर
पुलकित-पुलकित आत्माका स्वर
खोल रहा जो मेरे सपनोंमें भविष्यका हास
यह प्रभात बन गया जिसे पा अेक अमिट अितिहास
आत्माका स्वर सुन वरदानी
वाणी आज खुली

झंझाओंके व्यूह !
तुम्हारे आगे वह जो बढ़ता जाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी आत्माकी पुकारपर
लिखा-सा अुज्वल विचार वह
राशीभूत अनन्त प्यार वह
महाकालके चंचल जलमें
नील-कमल-सा जो मुस्काता
ज्वालामुखियोंके गौरव !
लपटोंपर वह जो निर्भय चलता
वह भी मेरा ही विचार है
विष पीकर जो अमृत बाँटता
अुस शिवशंकरका सिंगार है
महानाशके अन्ध-तिमिरमें
चिर-अखंड दीपक-सा जलता
लहरोंके ताण्डव ! बड़वानल !
देखो, बढ़ता है विचार वह
ज्यों प्रकाशका ज्वार.....और
कहता पुकारकर अखिल शून्य—

युग-युगकी जानी-पहचानी
वाणी आज खुली

नवषत्र रहें अुस नभमें ही
प्रिय ! मुझे यही तिनके अपने
मैंने न आजतक दिया कभी
लाकर अुधार जगको सपने
यह मेरी आत्मा तैर रही है आस-पास
अूपर, नीचे, अिस ओर, अुधर,
गतिसे मंथर
कोअी कहता अम्बर महान
कोअी कहता सागर महान
भूखंड और पर्वत महान
मेरी आत्मा कहती पुकार—
"मेरे प्रभात ! तू ही महान
पाकर तेरा अभिराम स्पर्श
क्या नभ न बन गया गीत-लोक
क्या बना न मारुत मधुर-छन्द
क्या खिले न नदियोंमें अनन्त
गीतोंके शत-शत स्वर्ण-कोक
क्या ह वट पर्वत भीमकाय ?
पत्थर—मुट्ठी-भर शिला-खंड
क्या है वह ज्वालामुखी-पुंज
मुट्ठी-भर ज्वाला-कण अखंड
सबमें तेरा ही गौरव है
सब तेरे गौरवसे महान
तू व्यक्ति, सही, पर है समष्टि
तेरी ही मृदुमुस्कान, गान
काल-क्रम तेरी तूलीसे
अंकित पतली-सी रेखा है
आगतके लिये समस्या-सी
जिसने तेरा बल देखा है
देखा है तेरा अमर रूप
वह संस्कृति लिये अनागतको
मुट्ठीमें खड़ी तपस्या-सी !"

सजा आरती समय-दीपकी
वाणी आज खुली कल्याणी
वाणी आज खुली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रिटेनकी सांस्कृतिक विरासत : जनवादी ललित कलाओंके अुद्गम और विकास

: श्री ओमप्रकाश आर्य :

अिस लेखमालाके पिछले लेख "राष्ट्रभारती" दिसम्बर १९५२ में हमने आँग्ल साहित्यके सन्दर्भमें संस्कृति और श्रममें सम्बन्ध स्थापित करनेका प्रयत्न किया था और आँग्ल साहित्यकी कुछ चुनी हुअी अुत्कृष्ट परम्पराओंकी चर्चा की थी। अिस लेखमें हम अुस सम्बन्धको ललित कलाओं और अुनके विकासके संदर्भमें देखनेकी कोशिश करेंगे।

जब हम ललित कलाओंके अुद्गमकी बात करते हैं तो हमें यह समझनेपर बाध्य होना पड़ता है कि कलाकृतियाँ किस प्रकार विचार व्यक्त करती हैं। और अुनका स्थायित्व या बड़प्पन अुसी अनुपातमें होता है जिसमें वे अैसे स्थायी विचार व्यक्त कर पाती हैं। मैं जानता हूँ कि कलाके बारेमें अिस विज्ञान-रूपी सिद्धान्तको माननेके लिये बहुतसे लोग आज तैयार होते नहीं दीखते, परन्तु ज़रा-सा गहराअीसे सोचनेसे ही हमें पता चल जाता है कि कला और विज्ञानके मूलमें अेक ही भाव है, जिसे हम **कल्पना**की संज्ञा देते हैं। **मैं तो यहाँ तक कहता हूँ कि गणित-विज्ञान जैसे ठोस और तर्क-पूर्ण शास्त्रके मूलमें भी कल्पनाका ही प्राधान्य है।** मसलन ज्यामितिको लीजिये। अुसके जितने सिद्धान्त और नियम हैं वे सबके सब कुछ मान्य-धारणाओंपर आश्रित हैं। यह "बिन्दु" है। यह "अेक सीधी रेखा है।" बिना अिनकी कल्पना किये ज्यामिति आगे नहीं चल सकती है। अुसका सारा महल अिन्हीं कल्पनाकी पक्की नींवोंपर खड़ा किया गया है। अिस प्रकार विचारोंकी कल्पना ही वास्तवमें हमारे समस्त कलामूलक और विज्ञानमूलक ज्ञानकी कुंजी है। जब यह सूत्रों और सिद्धान्तोंमें लिखी जाती है तो हम अुसे विज्ञान कह देते हैं और जब यह ललित शब्दोंमें, आकारोंमें, रंगोंमें, स्वरोंमें बद्ध होती है, तब हम अुसे साहित्य या ललित कलाओंकी संज्ञा दे देते हैं। अिसलिये मूलतः अुनका बड़प्पन या स्थायित्व अुनके द्वारा व्यक्त किये जानेवाले या यों कहें अुनके द्वारा अुठाये जानेवाले भावों और विचारोंकी गहराअी, अूंचाअी और ठोसपनेपर ही निर्भर करता है। जैसे न्यूटनके भौतिक सिद्धान्तों या आअिन्स्टाअिनके सापेक्षताके सिद्धान्तकी महत्ता और अुनका स्थायित्व अुनके द्वारा व्यक्त किये विचारोंसे है, वैसे ही लियोनार्डो डा. विंचीकी "**मोना लीसा**" और होमरकी "**ओडिसी**" की महत्ता भी।

अिस स्थलपर आकर सवाल पूछा जा सकता है कि अगर कल्पनाको कला और विज्ञानके मूलस्रोतके रूपमें मान भी लिया जाय तो क्या यह सच नहीं है कि कलाकारकी कल्पना स्वप्नमय और अवास्तविक होती है और वैज्ञानिककी कल्पना वास्तविक और तथ्यमूलक? मेरा अुत्तर है "नहीं।" सब तरहकी कल्पनायें अेक जैसी होती हैं। आप कहते हैं कि दो और दो चार होते हैं। पर ये दो क्या हैं? आप कह सकते हैं कि दो और दो आदमी चार आदमी होते हैं। पर कहीं चार आदमी आपने अेक जैसे देखे हैं? जब आप आदमियोंकी बातें करते हैं, तो अुनकी दाढ़ियों, नासिकाओं, कानों, अुनके रंग रूप, अुनकी नैतिक मान्यताओं, अुनकी मानसिक क्षमताओं या अुनके चरित्रों आदिके बारेमें न सोचकर आप अुनकी आदमियतके बारेमें सोचते हैं। पर यह आदमियत क्या है? अिसे आप अपनी आँखसे देख सकते हैं? क्या अिसे स्पर्शसे जान सकते हैं? अुत्तर है नहीं। यह आदमियत असलमें आपकी कल्पनाका करिश्मा है। अिसे आप वैज्ञानिककी कल्पना कहते हैं। वास्तविक और तथ्यमूलक कहते हैं। परन्तु अिसमें और कलाकारकी कल्पनामें कोअी गुण-भेद नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब हम अपने पहले सवालका जवाब भी पा सकते हैं कि कलाकृतियाँ कैसे विचार व्यक्त करती हैं। जैसे अुनका अुद्गम कल्पनामें होता है वैसे ही अुनका प्रभाव भी कल्पनामें ही होता है। जब आप कोअी सुन्दर चित्रकारी देखते हैं या सुन्दर नृत्य देखते हैं या सुन्दर मूर्ति देखते हैं या सुन्दर संगीत सुनते हैं तो आपके अन्दर अेक अनुभूति पैदा होती है। कल्पना पैदा होती है, विचार अुठते हैं। कलाकृतियोंकी अूंचाअी अिन्हीं कल्पनाओंको पैदा करनेकी क्षमतामें विचारोंके व्यक्तीकरणमें समझी जाती है। आपके अन्दर अेक संतोष, तृप्ति, आनन्द और सौन्दर्यका अनुभव होता है जो कि आपकी चेतनाको अूर्ध्वमुखी होनेमें मदद देता है।

जब-जब और जहां-जहां ये कलाअें जनवादी भावनाओंको अूंचा अुठानेमें, श्रमकी प्रक्रियाओंको कल्पनाओंके साथ संबद्ध करनेमें, हमारी मदद करती हैं, तभी हम अिन्हें जनवादी ललित कलाअें कहते हैं। हम अिन्हीं कलाओंकी संक्षिप्त चर्चा अिस लेखमें करेंगे।

सामान्यतः चित्र, संगीत, नृत्य, वास्तु, मूर्ति और काव्य कलाअें ही ललित कलाओंमें गिनी जाती हैं। अिस लेखमें हम काव्यकलाका जिक्र नहीं करेंगे क्योंकि वह साहित्यका अंग भी है और अुसका जिक्र आंशिक रूपसे पिछले लेखमें किया जा चुका है।

वास्तु-कलासे प्रारंभ करें तो हम देखते हैं कि ब्रिटेनमें जब नौर्मन शासक आये तभी अुन्हें अेक विकसित हुअी भवन-निर्माण-कला यहां देखनेको मिली। आज भी पुराने सेक्सन, नौर्मन और गौथिक शैलीमें बनाये गये गिरजाघर नयनाभिराम लगते हैं। दुनियाकी भवन-निर्माण-कलामें अुनका अूंचा स्थान है। यह ठीक है कि योरोपके दूसरे देशोंकी भवन-निर्माण-कलाका प्रभाव भी अिनपर स्पष्ट रूपसे दीखता है, तो भी वह तथ्य संपूर्ण बर्त्तानवी संस्कृतिके लिये सच है। डरहम, नौर्विच, पीटरबोरो, सोल्सबरी, यौर्क, लिंकन, वैल्स, अेक्जीटर, ग्लौस्टर, मैंचेस्टर आदि नगरोंमें आज भी अुन पुराने गिरजाघरोंको देखा जा सकता है। अिन सबमें अुन युगोंकी अन्तर्भावनाअें दौड़ती दीखती हैं, जो कि ब्रिटेनकी अपनी अहमियत है।

दो लिहाजोंसे ब्रिटेनके गौथिक गिरजाघर अपनी खास विशेषता रखते हैं। सबसे पहली बात तो यह है कि अुनकी छतें अिमारती लकड़ीमें संगतराशीकी शैलीपर और अुन्हें चित्रित कर आजकी मुरल शैलीपर बनायी गयी हैं। और दूसरी यह कि शीशे और पत्थरके अद्भुत मिश्रणसे जो सामंजस्य पैदा किया गया है, वह चमकते हुअे पिंजड़ोंकी भांति बनाया गया दीखता है। दुनियामें और कहीं यह शैली नहीं देखनेमें आती। ये गिरजाघर अधिकतर अींस्ट अिंग्लिया और वेस्ट कन्ट्रीके अून अुत्पादन करनेवाले जिलोंमें पाये जाते हैं जिन्हें अपने युगके महानतम कलाकारोंने सर्जित किया था और जिनका खर्च अूनका व्यापार करनेवाले व्यापारियोंने अिसलिये दिया था ताकि वे दोजखकी आगको अपनी अिस "**धार्मिक श्रद्धा**" के सहारे खरीद सकें। पांच-सौ लम्बे सालों तक अिसका बोलबाला रहा।

यह सामन्तवादी समाजकी बात थी। अुनका युग गया तो सामन्त-युगीन भवन-निर्माण-प्रणाली भी बदल गयी। योरोपमें पुनरुत्थानका युग आया। तब अुन्हीं अूनके व्यापारियोंने स्वर्गिक-कल्पनावाले गिरजाघर और महल न बनवाकर बड़े बड़े "ग्रामीण महल" बनवाये; नगर बसाये। अिस युगके गौरव "**ब्लैनहाअिम पैलेस**" जैसे भवनोंमें ही सीमित न रहकर लन्दन, अेडिनबरा, बाथ, स्टौकटन और अैसे ही कुछ दूसरे छोटे-छोटे व्यापारी नगरोंमें देखनेको मिलते हैं। राजपथ, गलियां, बाजार नगर-भवन, आदि बनाये गये। अुस जमानेके बारेमें टौमस शार्पका कहना है कि "अंग्रेजोंने नगर-निर्माण-कलामें पूर्णत्व प्राप्त कर लिया था।" अपने युगमें सारी दुनियामें ब्रिटेनकी अिस कलाकी तूती बोलती थी।

बर्तानवी संस्कृतिका ये महल औद्योगिक क्रान्तिने और १८ वीं सदीकी गला काट व्यापारिक प्रतियोगिताने नष्ट कर दिये। अुन्होंने ही सबसे पहले ब्रिटेनकी कमकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जनताके लिये जमीनपर नरक बनाना शुरू किया। अुस युगके सबसे बड़े प्रतीक वे औद्योगिक प्रतिष्ठान हैं जिन्होंने अिन्सानको गन्द और धूलसे मिलाकर अेक कर दिया था। वे पुराने कारखाने अभी भी यहाँ देखे जा सकते हैं। यहाँपर ब्रिटेनकी वास्तुकला दो अलग-अलग धाराओंमें विभक्त हो गयी। अेक ओर तो अैसे घर बनाये गये जहाँ अेक कमरेमें दस-दस व्यक्ति रहें या रहनेपर मजबूर हों और दूसरी तरफ नग्न मूर्तियोंसे भरे बड़े-बड़े महल बनाये गये जिनकी अन्तर्भावना आज पलायनवादके नामसे जानी जाती है। और चूँकि पलायनवाद अेक स्थिर रूपमें, अेक स्थिर शैलीमें नहीं प्रकट होता है अिसलिये अिसने कोअी स्थिर पैटर्नका अनुगमन नहीं किया।

दूसरी तरफ अुस गलाकाट जमानेमें भी ब्रिटेनकी वास्तु-कलाकी अुत्कृष्ट परंपराअें भी कायम रहीं। चाहे क्षीण रूपमें ही सही। अुनका निदर्शन अधिकतर पुलों, बांधों, सड़कों, गुफाओं, सुरंगों, रेलवे-स्टेशनों आदि सामाजिक और सार्वजनिक स्थानोंमें मिलता है। रैनी, टैलफर्ड, वुनेल और पैक्सटन अुस जमानेके बड़े-बड़े नाम हैं। पैक्सटनका "क्रिस्टल पैलेस" आज भी अुस कलाकी भव्यता आँखोंके सामने चाँदनीकी तरह बिखेर देता है।

धीमे-धीमे सदी समाप्त होनेको आयी, ब्रिटेनका मज़दूर आन्दोलन प्रबल हो चला। और अुसका असर वास्तु-कलापर पड़े बिना नहीं रह सकता था, अुसी समय विलियम मौरिसका आविर्भाव हुआ। मौरिसने देखा कि कलाकृतिकी महत्ता केवल परंपराओंकी रक्षा करनेमें ही नहीं वरन् आम कमकर जनता द्वारा अुसकी श्री-वृद्धि किये जानेमें है। और वह श्री-वृद्धि तबतक नहीं हो सकती है जबतक समाजवादी समाज कायम नहीं हो जाता। अिसीलिये अुसने कला-साधना छोड़कर राजनीतिक कार्य अपना लिया और वह अपनी वास्तु-कलाके द्वारा भी प्रचार कार्य करने लगा।

मौरिसके बाद आजतक कोअी सृजनात्मक वास्तुकार ब्रिटेनने पैदा नहीं किया है। आज जो कुछ ब्रिटेनमें वास्तु-कलाके नामसे जाना जाता है वह यहाँ फ्रांस और जर्मनीसे आया है। दूसरी कलाओंके समानान्तर आन्दोलनने भी आजकी बर्तानवी वास्तु-कलाको प्रभावित किया है, जैसे चित्रकलामें पोस्ट अिम्प्रेशनिज्म (अुत्तर-प्रभाववाद) वस्तुतः जो वास्तु-कला आज यहाँ देखनेको मिलती है वह अधिकतर क्यूबिज्द (घनवाद) की देन है, और अिस वादके सबसे बड़े महन्त फ्रांसीसी वास्तुकार **लकौर्बुजिअे** हैं। जैसे दूसरी कलाओंमें, वैसे ही वास्तु-कलामें भी वास्तविकतासे पलायनके ये बुर्जुआ विद्रोह आजके बुर्जुआ-विश्वकी कुंठा, हीनता, वीभत्सता और गंदकी अस्वस्थ मानसिक प्रतिक्रियायें भर ही हैं, जो कि दिमागी कला-बाजियाँ खानेमें मजा लेती हैं और अपने-अपने छोटे तंग-दायरेमें जाकर बाहरकी दुनियाकी, साम्राज्यवादी शोषणकी कुरूपतासे बचनेका प्रयत्न करती हैं।

अिसके मुकाबिलेमें अेक क्षीण-धारा अुस वास्तु-कलाकी भी बहने लगी है जो अपनी देशीय संस्कृतिकी स्वस्थ और सुन्दर वास्तु-परंपराओंको लेकर कमकर जनताका प्रतिनिधित्व करेगी। वास्तु-कलाका काम केवल भौतिक सुख ही नहीं वरन् मानसिक सुख पहुँचाना भी है और वह सुख यह तभी पहुंचा सकेगी जब कि अिसका संबन्ध बुर्जुआ, कंठाको छोड़कर सर्वहाराकी स्वस्थ, आशा-वादिता और स्वर्णिम भविष्यके साथ होगा। आज यह खुशीका विषय है कि वास्तु-कलाके मामलेमें वह काम यहाँका मज़दूर-आन्दोलन प्रारंभ कर रहा है।

सुविधाके लिहाजसे हम चित्र और मूर्ति-कलाओंको साथ-साथ देखनेका प्रयत्न करेंगे। अपना सामान्य क्रम तोड़कर अगर हम कुछ सवाल अपनेसे पूछनेकी कोशिश करें तो शायद हम अधिक आसानीसे सचाअीके पास पहुंच सकेंगे।

चित्र और मूर्ति-कलाके मामलेमें ब्रिटेनकी राष्ट्रीय विरासत क्या है? आज ब्रिटेनके समाजका अेक हिस्सा अुस विरासतकी कद्र क्यों नहीं करता है? आज ये कलाअें ब्रिटेनमें शांति, राष्ट्रीय आजादी और समाज-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वादकी लड़ाअी सही तरीकेसे लड़नेमें क्या और मदद दे सकती हैं ?

ब्रिटेनकी अिन कलाओंका अितिहास अधिकतर १८वीं सदीके महान बर्त्तानवी कलाकार विलियम होगर्थ के समयसे लिखा हुआ मिलता है। परन्तु मेरी समझमें अुनसे पहले भी बहुतसे अज्ञात कलाकारोंने चित्रकारों और मूर्त्तिकारोंने, अपनी-अपनी बड़ी कायदेकी देन अपने देशके सामने रखी हैं। मेरा मतलब अुन गुम-नाम कलाकारोंसे है जिन्होंने हस्तलिखित पुस्तकोंको अपने हाथों चित्रित किया था, जिन्होंने गिरजाघरोंके बाहर "माअिजिरीकोर्ड" (गरीबोंकी मूर्त्तियां) रचे थे। अुन मूर्तियोंमें हास्य और व्यंग्यका अेक अद्भुत सम्मिश्रण मिलता है। अिन सबने ब्रिटेनकी चित्र और मूर्ति-कलाओंकी परंपराओंके निर्माणमें योग दिया। अिनके बारेमें विलियम मौरिसने लिखा है—

"अिस्पाहानसे नौर्थम्बर लैंडतक ७ वीं और १७ वीं सदीके बीचमें बनायी गयी कोअी अिमारत अैसी नहीं है जो कि अुस जमानेके दलित और बेसहारे छोड़े गये लोगोंके श्रमसे प्रभावित नहीं हुअी हो। अुन अनजाने कलाकारोंमें कोअी प्लेटो, शेक्सपीयर या माअीकेल अेंजेलो नहीं था तो भी अुनके बिखरे हुअे विचार कितने मजबूत थे, कितनी देरतक आज भी असर कर रहे हैं और कितनी दूर चलकर आये हैं, यह हम आज देख सकते हैं..."

साहित्यकी तरह ही चित्र और मूर्ति कलाओंमें ब्रिटेनकी परंपराअें यथार्थवाद और सत्यकी खोजकी ही रही। अिसीमें होगर्थकी महत्ता छिपी है। हालांकि बचपनमें अुन्होंने संग-तराशी और धातुतराशीका काम सीखा था तो भी अूंची अुम्रमें आकर अुन्होंने बहुतसे व्यंग्यात्मक चित्र बनाये जिनमें अुन्होंने सड़ती हुअी सामन्तशाही, बदनाम चुनाव-आंदोलन, आलसी-पनकी, शराबीपनकी और वेश्यावृत्तिकी बुराअियां और राजनीतिक धांधलीके जीते जागते नक्शे पेश किये। अिनके मुकाबिलेमें अुन्होंने पाकीजगी, साफगोअी और कठिन श्रमके गुणोंके गान भी गाये। नैतिकताकी अिन भावनाओंको अुनके चित्र देखते ही पहचाना जा सकता है। परन्तु धर्मकी नैतिकता स्वीकार करनेके बावजूद भी अुनके चरित्र सदा अपने भौतिक रूपोंमें ही सामने आते हैं यानी अुनके चारों तरफ आविष्कार, भ्रमण, खोज और भौतिक समृद्धिके नक्शे भी पृष्ठभूमिमें अुभरकर दीखते हैं, अिसलिये अुनकी नैतिकता आध्यात्मिक न होकर भौतिकवादी नैतिकता है, जो कि अधिक स्वस्थ है। अुन्हींकी अिस धाराको रौलेन्सन और कुकशैंकने कायम रखा। रौलेन्सनने बुर्जुआ-समाजकी अुथली मान्यताओंका मजाक अुड़ाया और कुकशैंकने डिकेन्सके अुपन्यासोंको चित्रित किया।

पूंजीवादके विकासके साथ वर्ग-संघर्षकी वृद्धि हुअी। और अुस समय फोर्ड मैडौक्स ब्राअुनके नेतृत्वमें कलाकारोंके अेक समझदार गुटने मजदूर श्रेणीके जीवनको लेकर अपनी कूंची चलायी। अिन्हीं कलाकारोंने १८६० के आसपास "ग्रैफिक" और "अिलस्ट्रेटेड लन्डन न्यूज" जैसे नामी पत्रोंमें अपनी सामाजिक रचनाअें भी छपवायीं। अिन्हींमेंसे अेक कलाकार हौटन-ब्रौयेडने अपने चित्रोंकी अेक माला प्रकाशित की, जिसका शीर्षक था "ग्रैफिक अमेरिका", जिसपर अुस देशमें बड़ा हो-हल्ला मचा और वहांसे शिकायतें आयीं। आज जब कि ब्रिटेनके सब हवाअी अड्डोंपर अमेरिकी हवाअी सेनाका शासन है, अुस समय अेक बार फिर हौटन ब्रौयेड जैसे कलाकारकी अुन्हें जरूरत आ पड़ी है।

प्रकृतिका चित्रण करनेमें ब्रिटेनके चित्रकारोंकी परम्पराअें बहुत ही अधिक दृढ़ रही हैं। टर्नर और कौन्सटेबल अिस शिल्पके विश्व-विख्यात कलाकार आज भी गिने जाते हैं। टर्नरने औद्योगिक क्रान्तिका रूमानी और काव्यमय चित्र खींचा है। और कौन्सटेबलके चित्रोंमेंसे ब्रिटिश ग्रामीण सौन्दर्य मुंह निकालकर झांकता है। अिन दो महान ब्रिटिश कलाकारोंका प्रभाव दुनियाके दूर-दूरके देशोंतक पहुँचा है। अिन्हींके साथ ब्रिटेनकी चित्रकलाकी परम्परामें यहांकी नौरफौक-शाखाका जिक्र करना भी अुचित ही होगा। अिस शाखाके कलाकार अधिकतर पानीके रंगोंसे चित्र खींचते रहे। अुनकी कला आज भी दुनियामें लासानी है। अिसी तरहसे कितने ही दूसरे यथार्थवादी कलाकारोंके नाम और अुनके काम गिनाये जा सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलामें सत्यकी खोज और यथार्थवादकी परंपराअें ब्रिटेनकी जान रही हैं, परन्तु आज ? आज ब्रिटेनके अधिकतर कलाकार आकारवादी और कौस्मोपौलिटन यानी जड़-विहीन हो गये हैं। अैसा क्यों ? अेक जमाना था जब कि अुठती हुअी पूंजीपति श्रेणी सचाअीसे नज़र लड़ाकर चल सकती थी। अुनके सामने नये क्षितिज खुल रहे थे। नये विकास और नयी खोजें हो रही थीं। सचाअी निगली जा सकती थी। परन्तु आज सब कुछ बदल गया है। आज यहाँ भयानक आर्थिक संकट है। राष्ट्रकी सम्पत्तिको बेकार पुनः शस्त्रीकरणको योजनाओंको पूरा करनेमें खोया जा रहा है। अुपनिवेशोंमें महँगे और खूनी युद्ध चल रहे हैं। अमेरिकी नेतृत्वमें अेक तीसरे युद्धकी तैयारी की जा रही है। अिसलिये आजकी ब्रिटिश बुर्जुआअी सचाअीका मुकाबिला करनेमें असमर्थ है; अशक्त है। सचाअी यह है कि पूंजीवादी-विश्व सिकुड़ता जा रहा है। अेक-तिहाअी दुनिया समाजवादके झंडेके नीचे आगे बढी जा रही है। अिसीलिये यह कोअी आश्चर्यकी बात नहीं कि आज ब्रिटेनमें शासक-श्रेणी अंधकार, घबराहट, निराशा, रिक्तता, कुरूपता, कुत्सा और बीभत्सतासे भरी कलाको प्रश्रय दे रही है, अिसीलिये आजके अधिकतम चित्रोंमें कोअी चरित्र नहीं है। कोअी स्वरूप नहीं है।

अिसके मुकाबिलेमें यहांके मज़दूर आन्दोलनने "पीपुल्स प्रिंट्स" जनताके चित्र शीर्षकसे आम मज़दूरोंकी, कमकरोंकी, जिन्दगीके सही चित्र पेश करने प्रारम्भ किये हैं, जिनके अुद्देश्य स्पष्ट हैं; सीधे हैं; आसानीसे समझमें आ सकनेवाले हैं। अिनका अुद्देश्य शान्ति और जनवादकी लड़ाअीको आगे बढ़ाना है। और अिस दिशामें प्रयास किया जा चुका है। सुन्दर परम्पराओंका मेरुदंड अुन्हें जीवित ही नहीं रखेगा वरन् आगे बढ़नेकी शक्ति भी देगा। अिन चित्रोंमें हौगर्थ और वौयेडकी यथार्थता झाँकती है; जीवनकी यथार्थता झाँकती है; राजनीति और अर्थ-शास्त्रकी यथार्थता झाँकती है; बर्त्तानवी अिन्सानकी कलात्मक चेतना झाँकती है।

दूसरी कलाओंके साथ ही संगीत-कलाकी ब्रिटिश परम्परा भी बहुत स्वस्थ रही है। सन् १४०० से पहलेके ब्रिटिश संगीतका पता अधिकतर स्कौटलैंड और वेल्सके जनगीतोंसे ही हमें लग पाता है। अुस समयके संगीतका पूरी तरहसे शास्त्रीय विवेचन अभीतक नहीं हो सका है। अिसलिये अधिकृत रूपसे कुछ कहना अभी असम्भव है। परन्तु फिर भी अितना कहा जा सकता है कि अुन गीतोंमें अधिकतर अुस जमानेके श्रमिकोंकी सामूहिक भावनाओंका ही संग्रह मिलता है। अुनके सुरों और ध्वनियोंमें अेक वन्य सौंदर्य है, जो बड़ी आसानीसे सुननेवालेको अभिभूत कर लेता है।

सन् १४०० से लेकर लगभग सन् १८२५ तकके ब्रिटिश संगीतको तीन भागोंमें बाँटा जा सकता है- (१) गिरजाघरका संगीत (२) दरबार संगीत या वह संगीत जो शासक श्रेणियोंके आनन्दके लिये रचा गया और (३) जन-संगीत।

गिरजाघरोंका संगीत प्रारंभसे ही पादरियोंके प्रभावमें रहनेके कारण अेक प्रकारका आकारवादी संगीत रह गया। जब-जब अुसमें लोकप्रिय सुरोंने घर करना शुरू किया तभी-तभी पोप और गिरजाघरके अधिकारियोंने अपनी धार्मिक घोषणाओंके सहारे अिसे रोक दिया। अिस दृष्टिसे ब्रिटेनमें (और अैसे दूसरे देशोंमें) वास्तु, चित्र और मूर्तिकलाओंके अनुरूप संगीत-कलाका विकास नहीं हो सका। क्योंकि जहां अन्य कलाओंमें सर्जनात्मक अुछाह अपेक्षाकृत छोटे समूह तक सीमित रहा, वहाँ संगीतके साथ और खासकर जन-संगीतके साथ अैसी बात नहीं रही। अिसीलिये पादरियोंको अपना शासन और अनुशासन कायम रखनेके लिये प्रारंभसे ही कलात्मक दमनका सहारा लेना पड़ा।

फिर भी दूसरे योरोपीय देशोंकी अपेक्षा अिंग्लैंडमें अुस जमानेमें भी संगीत रचनेवालोंको अधिक छूट मिली हुअी थी। अिसीलिये गिरजाघरके लिये ही सही, टौमस टौलिस, क्रिस्टोफर टाअी, विलियम बर्ड, जौन हॉलैंड, औरलैंडो गिबन्स प्रभृति ब्रिटिश संगीतज्ञोंने अमर तानोंकी रचना की।

अेक समय आया जब अिंग्लैंडमें भी गिरजाघरोंमें गाये जानेवाले संगीतपर पादरियोंका कब्जा हो गया और अुसका फल यह हुआ कि अुन्नीसवीं सदीके आते-आते वह संगीत संगीत न रहकर व्यवस्थित शोर हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया। अुन्नीसवीं सदीमें तो अुसमेंसे आत्मा ही निकल गयी। यहाँपर अेक बार फिर पूंजीवादकी गला काट प्रतियोगिताकी ओर अिशारा करना शायद असंगत न होगा, अुस समयके गिरजाघरोंके संगीतमें अेक ही नया विकास हुआ जो "रिवाबलिस्टहिम्स" के नामसे जाना जाता है। अिसकी नवीनता केवल अिसमें थी कि लैंगिक भावनाओंको जबरदस्ती दबानेसे जो अेक अजीब किस्मकी भावुकता पैदा होती है। यह कुछ अुसीका ध्वनिमूलक प्रतिबिम्ब था।

अुस युगके दरबारी संगीतमें गिरजाघरोंके संगीतसे कहीं अधिक स्वस्थ भावनाअें देखनेको मिलती हैं। अिसका अेक कारण शायद यह भी था कि अधिकतर संगीतज्ञ गरीब घरानोंके हुआ करते थे जो अपने अन्न-दाताओंको खुश करनेके लिये दिलको लुभानेवाले और अुनकी अुद्दाम वासनाओंको अुभारनेवाले संगीतकी रचना अवश्य कर पाते थे तो भी वे सदा अपनी अुत्पत्ति और अपने परिवारको भूल नहीं पाते थे। और अिसीलिये अुनमें जनताकी भावनाअें भी झांककर देखती हैं, चाहे दबे और छिपे रूपमें ही सही। **पर यह बात ध्यान देने योग्य है अुस समयमें योरोपके अन्य देशोंके बाख, बीथुवेन, मौत्सार्ट आदि महान सर्जकोंकी तरह ब्रिटेनमें कोअी नामी सर्जक नहीं पैदा हुआ।**

अेक छोटी-सी शासक श्रेणीको ही संगीतका आनन्द लेनेकी सुविधा होनेके कारण यहाँके संगीतज्ञोंमें अेक प्रकारकी नपुंसकता घर कर गयी, जो कि कमो-बेश आज तक चली आती है। अिसका यह मतलब नहीं कि ब्रिटेनमें संगीतज्ञोंमें प्रतिभा नहीं रही। यहाँ कितने ही प्रतिभाशाली संगीतज्ञ हुअे, परन्तु दरबार और गिरजाघरोंकी नौकरी करनेके कारण वे अूँचे किस्मके संगीतकी रचना अिसलिये नहीं कर पाये कि अुनके अन्नदाताओंने अपनी रुचियोंके अनुसार अुनके सर्जनात्मक कार्यको वक्र, कुटिल और सीमित कर दिया था।

अिसीकी अेक प्रतिक्रिया जन-संगीतको फिरसे खोजनेकी दशामें हुअी। आज भी जब मैं सार्डीनियन गड़रियेके अुस गानको सुनता हूँ जिसके साथ वह प्रभातका और पहाड़ोंके अूपर चढ़ते सूरजका आह्वान करता है तो असीमित प्रतिभा क्या कुछ कर सकती है और कर सकती थी अिसका कुछ अनुमान हो पाता है। दरबारी संगीतके मुकाबिलेमें जन-संगीतका प्रचार आम जनतामें और खासकर नयी मध्यवित्त श्रेणीमें होता गया। आखिरकार तो वह जनताके कहीं अधिक निकट था। यह दुःखका विषय है कि औद्योगिक क्रान्तिका प्रभाव संगीतकी स्वस्थ और सुन्दर परंपराओंको नष्ट करनेमें ही हुआ। अुनकी जगह अुसने किसी कुरूप तत्वका सर्जन भी नहीं किया। **दया, करुणा, धैर्य, दुःख, शोषण आदि भावोंका प्रतिबिम्ब अुस समयके किसी नाम लिये जानेवाले संगीतमें हम ब्रिटेनमें नहीं देख पाते हैं।**

अुन्नीसवीं सदी यों ही बीत गयी। परन्तु बीसवीं सदीमें सामाजिक क्रान्तिके विस्तारके साथ और मजदूर आन्दोलनकी प्रबलताके साथ ब्रिटेनमें सर्जनात्मक तत्व काफी परिमाणमें आये। अिसी जमानेमें यहांका विशाल "वर्कर्स म्युजिकल अेसोसियेशन" मजदूर संगीत संघ कायम किया गया जिसके द्वारा अुत्तरोत्तर संगीतकी सर्जनात्मक प्रतिभाओंने ब्रिटेनको अेक बार फिर विश्वके सर्वोच्च संगीतके समकक्ष बैठा दिया। डाक्टर राल्फ वौधन विलियम्स और प्रोफेसर अेलेन बुश अिसी ब्रिटिश युगके जीवित और विश्वमें सम्मानित संगीतज्ञ हैं। अेलेन बुशका पिछले साल लिखा औपेरा संगीत नाट्य "वाट टाअिलर" अेक चौदहवीं सदीकी दन्त कथाका आधार ले आजके ब्रिटिश जीवनके संघर्षका बहुत ही सुन्दर और अुन्नायक चित्र पेश करता है। अुसको सुनकर आप आत्मविभोर हुअे बिना नहीं रह सकते हैं। परन्तु आजके सर्जकोंमें सबसे अधिक सफल वे ही हुअे हैं जो जमकर जनताके पास रहे हैं। अुनसे जिन्होंने प्रेरणा ली है। और श्रम और संगीतके संबन्धको और संस्कृतिके संबंधको ठीक तरह समझा है।

अिस प्रकार हम देखते हैं कि आंग्ल साहित्यकी तरह ही ब्रिटेनकी जनवादी ललित कलाओंका विकास भी अपनी स्वस्थ परंपराओंके अनुरूप जीवनकी यथार्थता और सत्यकी खोजके साथ या यों कहिये अुसके अंकमें हो रहा है। अिनमें हमारा युग बोलता है। युगकी हुंकार बोलती है। युगकी चेतना बोलती है। युगकी स्वर्णिम आशाअें बोलती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्षों बाद

: श्री रमणलाल वसन्तलाल देसाअी :

मेरी और गजराकी अुम्र लगभग समान थी। शायद मेरे पैंतालीस वर्ष होंगे और गजराके भी करीब-करीब अितने ही वर्ष। बचपनमें हम पड़ोसीके नाते साथ-साथ खेले थे और साथ-साथ पढे थे। गजरा बड़ी तूफानी लड़की थी तब। अुसकी धींगा-मस्तीका कोअी पार न था। वह मजाक भी अितना करती कि हम हँस-हँसकर लोट-पोट हो जाते। खेलनेमें, गानेमें, पढनेमें और गरबा नृत्यमें वह बेजोड़ थी। तूफानी तो वह थी, मगर अुसका दिल बड़ा साफ था। पड़ोसमें जब कभी कोअी बीमार होता, तो गजरा अुसके हाल-चाल पूछे बिना नहीं रहती और जरूरत होती, तो अुसकी तीमारदारी भी करती। अिस तरह गजरा सारे मुहल्लेकी प्यारी लड़की थी। मुझे वह अपनी बहन जैसी प्रिय लगती और वह मुझे भाअी जैसा मानती।

वही गजरा आज वर्षोंसे शून्य जैसी बन गयी है, अेकदम स्तब्ध, सुनसान स्वभावकी। अुसकी आँखोंमें अब वह पुरानी चमक नहीं रही। बोलना तो अुसने सभीके साथ बन्द कर रखा है। वैसे वह न तो कभी किसी तरहका पागलपन करती और न कभी अुसे फिट ही आती। जब बोलती है तब भी किसी तरहकी विचित्रता नहीं दीखती। वह घरमें बताया गया काम-काज चुपचाप किया करती। लेकिन अब वर्षोंसे वह बचपनकी गजरा नहीं रही। कहा जाता है कि अुसके माता-पिता और भाअी बड़ी कठोर प्रकृतिके आदमी थे। लेकिन गजराके प्रति अुनकी कोमलता कुछ अद्‌भुत थी। अुन लोगोंने अनेक अुपाय किये, लेकिन गजराकी शून्यता किसी भी तरह कम न हुअी। शुरू-शुरूमें तो शून्यताके साथ-साथ विकलता भी होती थी, लेकिन बादमें यह विकलता धीरे-धीरे लुप्त होती गयी और दिन-ब-दिन चेहरेपर शून्यता ही अधिक प्रसरती गयी।

यदि वह किसीके साथ अधिक से अधिक बात करती थी, तो केवल मेरे साथ। रक्षा-बन्धनके दिन मैं स्वयं अुसके पास जाता और बड़े चावसे राखी बँधाकर अुसे भेंट देता। पहले तो मुझे देखकर वह खूब रोती, लेकिन बादमें तो अुसका यह रुदन भी पहलेका-सा नहीं रहा और धीरे धीरे बातचीत भी कम होती गयी। मगर राखी बँधानेकी क्रिया यंत्रवत् जारी रही। वह घरका काम-काज करती रहती, भाअी-भौजाअी अुसे बातोंमें लगानेका प्रयत्न करते, अुसे घूमने-फिरने और देव-दर्शनको ले जानेकी कोशिश करते, लेकिन गजरा जहाँ तक बनता घरसे बाहर न निकलती। अुसका तो बस अेक ही स्थान था, और वह था अुसके घरका अेक छोटा-सा छज्जा। ठंड हो, गरमी हो या बारिश हो, जब भी वह थोड़ी फुरसत पाती, छज्जेमें आकर बैठ जाती, खड़ी रहती और रातको तो वहीं पर सो भी जाती।

गजरा जैसी सबकी प्रिय थी वैसी ही वह सुन्दर भी थी। आज पैंतालीस वर्षका मैं बदसूरत बन गया हूँ, लेकिन गजरा तो अब भी पहलेकी-सी ही सुन्दर है और पचीस-छब्बीस-सी ही लगती है। छज्जेमें बैठी गजराको देखनेके लिये कुछ किशोर, नौजवान और प्रौढ़ व्यक्ति किसी-न-किसी बहाने अुस रास्ते निकलते। कुछ मनचले युवक तो फब्तियाँ भी कसते लेकिन गजरा तो अपनी आसपासकी दुनियासे बिलकुल बेखबर होकर अिस तरह शून्यवत् बैठी रहती अथवा खड़ी रहती जैसे कुछ हो ही न रहा हो। आदर या तिरस्कारका कहीं अेक भी भाव अुसके चेहरे, आँखों या वाणीमें नहीं दीखता। जैसे रोज होनेवाले सूर्य, चाँद, तारों और रात्रिका अुदय तथा अस्त किसीका ध्यान खास तौरपर अपनी ओर नहीं खींचते वैसे ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप-लोभी मनुष्योंके आने-जाने और अुनकी दृष्टिमें गजराको कुछ भी नही दीखता ।

पन्द्रह वर्ष पहलेकी बात है । गजराके माता-पिताका अन्तकाल हो गया था । तब अुसकी आँखें अवश्य भर आयी थीं । माता-पिताने मृत्युके समय गजराको अपने पास बुलाया, सिरपर हाथ फेरा और अुसे किसी तरहकी तकलीफ न हो, अिस बातका ध्यान रखनेकी अुसके भाअीको ताकीद की । साथ-ही-साथ अुन्होंने मुझे भी बुलाया और गजराकी देखरेख रखने तथा अुसके लिये अलग रखी गयी रकमके व्यवस्थापकके नाते अुसके भाअीके साथ काम करनेका अनुरोध किया । अेक समयके कठोर माने जानेवाले माता-पिता और भाअी वर्षों बाद अितने नम्र बन गये थे कि गजराकी बात अुठते ही अुनकी आँखें भर आती थीं । अुनके प्रत्येक व्यवहारसे अैसा लगता मानो गजराकी शून्यताके लिये वे ही स्वयं जिम्मेदार हों ।

[२]

बात भी दरअसल कुछ अैसी ही थी । स्वभावसे कठोर होते हुअे भी लड़कीके प्रति अत्यधिक कोमल रहनेवाले माता-पिता गजरापर अेक ही बार अैसे सख्त बिगड़े कि गजराका दिल टूटकर चूर-चूर हो गया । लगभग अट्ठाअिस-तीस वर्ष पहलेकी बात है । जब गजरा सोलह-सत्रह वर्षकी हुअी, तो स्वाभाविक ही माता-पिताको अुसके विवाहकी चिन्ता हुअी । जब-जब घरमें विवाहकी बात चलती, तब-तब गजरा अुसे हँसीमें टाल देती । कभी-कभी तो वह अपने प्यारके अधिकारके नाते माँ और भाभीसे कह भी देती कि अपना विवाह वह खुद कर लेगी । वाचाल लड़कीको मजाकमें बुजुर्ग लोग डाँट देते और बाज़ वक्त हँस भी देते । गजराके अिस कथनमें कभी किसीको कोअी गंभीरता नहीं लगी ।

और जब अेकाअेक अेक दिन गजराके माता-पिताने अुसके विवाहकी तिथि निश्चित कर दी, तो अुसने अपनी मर्यादा तोड़कर माता-पितासे कह दिया—"मैंने अपना विवाह कर लिया है ।"

"क्या कहती है ? थोड़ी भी हया है या नहीं ?" माँने कहा ।

"किस लिये लजाअूं ? जो सही बात है वही कह रही हूँ ।" गजराने अुत्तर दिया ।

"कैसी बेहया हो गयी है ! किसके साथ किया ?"

"वसंतके साथ ।"

"वह लम्पट ..... जो गाता, नाचता और बजाता फिरता है ?"

"हाँ, माँ ।"

"अब जो कभी यह बात मुंहसे निकाली, तो तेरी जीभ ही खींच लूंगी । हमें बिना बताये और बिना हमारे कन्यादानके विवाह होही कैसे सकता है ?"

"शिव-पार्वतीको साक्षी रखकर हमने अपना विवाह कर लिया है और अुसे छः माह हो गये ।"

"गजरा, तूने यदि कुछ हँसी-मजाकमें किया हो तो अुसे भूल जा और हम कहते हैं वैसा कर ।" "और यदि मैं वैसा न करूँ तो ?" गजराने अुद्धत होकर प्रश्न किया ।

"तो मैं तुझे चीरकर रख दूंगी ।" माँने कहा ।

"वह आप जैसा चाहें करना । लेकिन मैंने जो किया है वही अन्तिम है । अब मैं फिर किसी दूसरेके साथ विवाह नहीं कर सकती ।" गजराने कहा । और बस तबसे सारा परिवार अुसका दुश्मन बन गया ।

गजराके माता-पिता तथा भाअी-भौजाअीको पहले तो यह बात सच नहीं लगी । लेकिन जब गजराको समझानेकी सारी कोशिशें बेकार साबित हुअीं, तो अुन्होंने अुसपर हर तरहकी सख्ती शुरू कर दी । गजराको घरकी चारदीवारीमें बन्द कर दिया गया । अुसे बाहर निकलनेकी भी मनाअी कर दी गयी । सब लोगोंने अुसके साथ बोलना-चालना बन्द कर दिया और लगभग चौकी-पहरेकी-सी हालत बन गयी । जिस छज्जेमें आजकल वह बैठती है, वहाँसे अेक दिन भाग जानेकी योजना भी वसंत और गजराने बनायी थी । लेकिन चौकी-पहरेका काम करती हुअी कुटुम्बियोंकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आँखें अुस षड्यंत्रका पता पा गयीं। मध्य रात्रिने अन्तिम प्रहरमें प्रवेश किया और छज्जेमें बिल्लीके जैसी ताकमें खड़ी गजरा नीचेसे वसंतके फेंके हुअे रस्सेको छज्जेके कठघरेसे बाँधकर हिम्मतके साथ अुसके सहारे नीचे अुतरनेको तैयार हुअी।

अेकाअेक अुसे किसीने पीछेसे पकड़ा। वह अुसका भाअी था। कठघरेके अूपर चढी हुअी गजराको अुसने बलपूर्वक जोरसे घरके अन्दर खींच लिया। अुसी क्षण नीचेसे वसंतके ये शब्द गूंजे: —

"गजरा, जरा भी न डरना। मैं तुम्हें किसी न किसी दिन आकर अवश्य ले जाअूँगा।" वसन्तके ये शब्द गजराके दिलमें बस गये। लेकिन माता-पिता और भाअीने अुसे बहुत पीटा। जिस लड़कीको भयंकरसे भयंकर गुनाह करने पर भी किसीने कभी स्पर्श तक नहीं किया था, अैसी निर्दय मारसे अुसका दिल टूट गया और अुसकी ज़गह भयानक शून्यताने ले ली। माता-पिताको शुरू-शुरूमें गजराकी यह गम्भीर मनःस्थिति कुछ समझमें नहीं आयी। गाँवके प्रतिष्ठित व्यक्तिके नाते अुन्होंने वसन्तको गाँवसे निकाल दिया। नाक काटने, खून करने और जिन्दा जला देनेकी केवल धमकियाँ-ही अुसे नहीं दी गयीं, बल्कि जब अुसने अुनके पीछे सचाअी देखी, तो अुसे गाँव छोड़कर भाग जाना पड़ा। और वह अैसा भागा कि फिर वर्षों अुसका किसीको पता ही न चला।

वसन्त अपने परिवारमें अकेला ही था। मृत माता-पिता थोड़ी बहुत जो कुछ सम्पत्ति छोड़ गये थे, अुसीके बलपर अुसका गुजर-बसर चलता था। बुद्धि तेज नहीं होनेसे पढ़ने-लिखनेमें मन लगानेके बजाय वह खेल-कूद और गाने-बजानेमें ही तल्लीन रहता। वैसे वह कोअी खराब लड़का नहीं था। मगर अुसके आगे पढ़नेकी बहुत आशा नहीं थी। गाँवके बाहर रहनेवाले अेक साधुकी संगतसे अुसने संगीत-खासकर सितारपर अद्भुत् कमाल पा लिया था। मैं और वह साथ ही साथ पढ़ते थे। मुझे अिस तरहकी शंका भी हुअी थी कि वसंतका सितार गजराके लिये बड़े आकर्षणकी चीज बन रही है। भाअीके नाते मैंने अेक दिन अुसे कहा भी कि, "गजरा, क्या यह सच है कि जहाँ वसन्त होता है वहाँ तुम बहुत ज्यादा बैठती हो।"

"हाँ भाअी, सही है। लेकिन अिसमें मैं कोअी बुरा काम तो नहीं करती? अुसका सितार सुनकर मेरी हृदतंत्रीके तार बज अुठते हैं और मैं भाव-विभोर हो जाती हूँ।" गजराने कहा।

"अिससे कोअी अनसोचा परिणाम आ सकता है गजरा!" मैंने कहा।

"मैं और वसन्त यदि शादी कर लूँ, तो फिर कौन-सा अनसोचा परिणाम आ सकता है?" गजराने बहुत ही निर्भय होकर कहा। मैं थोड़ा चौंका। बात यहाँ तक बढ़ गयी होगी, अुसकी मुझे जरा भी कल्पना नहीं थी। मैंने केवल अितना ही कहा कि जो भी करना हो, अपनी भाभीसे पूछकर करना। दूसरी जगह तेरे विवाहकी बातचीत चल रही है।

वसंतके संबंधमें गजराके साथ मेरी केवल अितनी ही चर्चा हुअी थी। और अिसके बाद तो, जैसा कि अूपर बताया है, गजराके बहुत कुछ जुल्म हुअे और वसंतको गाँव छोड़कर चले जाना पड़ा। भागकर वह कहाँ गया, अिसका मुझे भी कहीं पता न चला। लेकिन भागनेके पहले वह मेरे घर आया था और अपना सितार हिफाजतसे रखनेके लिये आरजू-मिन्नतके साथ छोड़ गया था।

अेक ओर तो वसन्त भाग गया और दूसरी ओर गजराकी शून्यता दिनोंदिन बढ़ती गयी। गाँवमें घटित घटना कहीं किसीसे छिपी रहती है! गजराका किसी लड़केसे प्रेम था, अुसके साथ अुसने सच्ची-झूठी शादी भी कर ली थी, अुसके माँ-बापने अुसे मानने अिन्कार कर दिया, अिसलिये अुसका मन अिस हो गया है— अैसी-अैसी अनेक बातें चारों ओर होने लगीं। दूसरे गाँवके जिस युवकके साथ गजराके माता-पिताने अुसका विवाह निश्चय किया था, अुस युवक तथा अुसके परिवारके लोगोंने गजराकी मनःस्थिति बारीकीसे जाँच की। जाँचमें वे लोग अिस नतीजे पहुँचे कि गजराका मन किसी शून्यता भरे पागलपन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवेश कर चुका है, और अुस युवकने और अुसके रिश्तेदारोंने विवाह करनेसे अिनकार कर दिया।

आखिर माता-पिताने समझ लिया कि अब गजराके साथ कोअी भी युवक शादी नहीं करेगा। अुन्हें और गजराके भाअीको घोर पश्चात्ताप होने लगा और जैसे-जैसे गजराने अपने मनको बाह्य जगत्के सम्बन्धोंसे खींचकर शून्यतामें अेकाग्र करना शुरू किया, वैसे-वैसे अुनका पश्चात्ताप कटारकी धारका-सा तीव्र बनकर अुनके हृदय और जीवनको काटता चला गया। अुन्होंने गजराके अिलाजमें कोअी कसर बाकी नहीं रखी। काफी पैसे खर्च किये; व्रत, अुपवास और मानताअें कीं तथा अन्तमें तो अुन्होंने वसन्तको ढूंढ निकालनेका भी सच्चा प्रयत्न किया। लेकिन न तो गजराका मानस स्थिर हुआ और न वसन्तका ही कोअी पता चला।

वर्ष बीता, पाँच वर्ष बीते, दस वर्ष बीते। रोती-रोती माँ गुजर गयी। दिलमें घाव लेकर पिता भी चल दिये। मृत्युके अिन प्रसंगोंपर कुछ अैसा आभास-सा हुआ था कि गजराके मनपर अिनका असर हुआ है, लेकिन वह केवल भ्रम ही साबित हुआ। दिनपर दिन गजरा अपनी सुध-बुध खोती गयी। भाअी अथवा भाभीको अुससे कोअी खास तकलीफ नहीं थी। घरका कामकाज भी वह अपने ढंगसे किया करती। लेकिन अुसकी अिस अवस्थाने भाअी-भाभीके मनमें अुसके प्रति जबरदस्त दया पैदा कर दी। वे दोनों अुसकी पूर्ण सद्भाव और सहानुभूतिपूर्वक देखभाल करते।

[३]

और अिस तरह सालके साल बीत गये। अच्छेसे अच्छा और नयेसे नया प्रसंग भी आखिर पुराना बन जाता है। गजराकी बात भी अब पुरानी हो चली और लोग अुसे धीरे-धीरे भूलने लगे। अेक समयकी खिलाड़ू, आकर्षक और सबके मन भानेवाली गजरा अब अुदासीन पागल प्रौढ़ा बन गयी। अुसके प्रति ध्यान रखनेवालोंमें अुसके भाअी-भौजाअी और मैं ही बचा था। मेरे साथ भी अब वह अधिक नहीं बोलती थी। हमें वह केवल पहचानती भर थी। रक्षाबन्धनके दिन जब मैं अुसे राखी बाँधनेके बाद भेंट देता, तो अुसकी आँखोंसे न थमनेवाली धार बहना शुरू हो जाती। अपना काम पूरा करके वह चुपचाप रातको छज्जेमें आकर बैठ जाती अथवा सो जाती। कौन जाने कैसे अुसकी सुन्दरता अब भी पहले जैसी ही आकर्षक बनी हुअी थी। यदि अुसकी आँखोंमें शून्यता न होती, तो आज भी कितने ही तरुण अुससे प्रेम करनेको लालायित होते।

अब अुसे बाहर घूमने-फिरनेकी कोअी मनाही नहीं थी, लेकिन फिर भी वह क्वचित् ही बाहर निकलती। कभी-कभी वह अपने भाअी-भौजाअीके आग्रहसे देव-दर्शनको जरूर जाती, लेकिन वह भी अैसा लगता जैसे स्वप्नवत् ही हो रहा हो। अिस तरह गजराका जीवन शनैः-शनैः स्वप्नमय बन गया। लेकिन आखिर वह किस स्वप्नके आधारपर जीती है, यह किसीकी समझमें नहीं आया। सब लोग यह अनुभव करने लगे कि अिस शून्यताकी अपेक्षा तो मृत्यु ही श्रेष्ठ है। फिर भी आश्चर्य कि गजरा जीवित थी। अुसने अिस भयंकर शून्यतामें कितने वर्ष बिताये होंगे, यह तो किसीको पता नहीं था, लेकिन हम सब अितना जरूर जानते थे कि अुसने दस वर्ष, बीस वर्ष और अन्तमें तीस वर्ष भी पूरे कर दिये। और वह जिन्दा थी। मुझे और गजराको अिस तरह पैंतालीस वर्ष हो गये।

अेक दिन ठीक मध्य रात्रिको किसीने मेरे घरके दरवाजेपर दस्तक दी। आधी रातके समय मिलने आये अैसा अब कोअी मेरा मित्र नहीं रहा। हवासे दरवाजा खटका होगा, यह मानकर पहले तो मैंने अुस ओर खास ध्यान नहीं दिया। लेकिन जब दरवाजेपर लगातार, थप्थप्की आवाज होती रही और अुसके साथ धीरे-धीरे मेरा नाम भी सम्बोधा जाने लगा, तो आवाज न पहचाननेके बावजूद मुझे अुठकर दरवाजा खोलना ही पड़ा। दरवाजा खुलते ही मैंने अेक पहचानमें-न-आने-जैसे प्रौढ़ पुरुषको खड़ा देखा। अेकाअेक मुझे अुसके मुखकी रेखाओंका कुछ खयाल-सा आया और मैंने कह दिया—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"कौन वसन्त ?"

"हाँ ! आपने तो मुझे पहचान लिया, लेकिन गजराने अभी तक नहीं पहचाना।" वसन्तने कहा।

"कैसे पहचाने ? तुम कितने बदल गये हो ? लेकिन यह तो बताओ कि तुम आये कब ?

" दो दिन हुअे। गजराके घरके आसपास घूम रहा हूँ, लेकिन न तो गजरा पहचान सकी और न अुसका भाअी ही। गाँवमें दूसरे लोग भी पहचानते हों, अैसा नहीं लगता। आज रातको तो मैंने दो बार गजराको आवाज भी लगायी। लेकिन या तो वह सुन नहीं पाती या मुझे पहचानती नहीं।" वसंतने चिन्ता-ग्रस्त होकर कहा।

"वह तुम्हें क्या पहचाने और सुने ? ३० साल जो बीत गये। और तुम्हारे जानेके बादसे गजरा स्वयं अपने आपको भी कहाँ पहचानती है ?" मैं बोला।

"तीस वर्षकी अवधि मुझे भुला देगी अिसकी कभी मैंने कल्पना भी नहीं की थी। मैंने तो अुसे पहचान लिया। बिलकुल वैसी ही यथापूर्व वह दीखती है। लेकिन अब मैं क्या करूँ ?"

" भाअी वसन्त ! तुम जरा बैठो और आराम करो। यहाँ आये दो दिन हो गये और अब तक मुझे कोअी खबर भी नहीं दी। अिन तीस वर्षोंमें आखिर तुम क्या करते रहे ? " मैं अुसे आश्वासन देनेकी कोशिश करने लगा। लेकिन अुसके चेहरेपर विषादकी कालिमा फैल गयी। अुसने कहा :—

"मुझे न तो बैठना है और न आराम ही करना। तीस साल तक जो हुआ सो हुआ। लेकिन अिन सारे बरसोंमें अेक भी दिन अैसा नहीं गया कि मैं गजराको भूला हूँ। यह मानकर कि गजराके बिना भी मैं रह सकता हूँ अितने वर्ष मैंने बिताये, लेकिन अब मुझे लगता है कि मैं केवल अुसीके साथ जिन्दा रह सकता हूँ. . . . यदि आप चाहते हों कि मैं जिन्दा रहूँ, तो कोअी अैसी युक्ति दिखाअिये कि वह मुझे पहचान ले।"

मैं गहरे विचारमें डूब गया। वसन्तकी मुखाकृति निश्चित रूपसे बदल गयी थी। गजरा अुसके भाअी-भाभीके सिवा केवल मुझे ही पहचानती थी—और वह भी शून्यतासे भरी हुअी पहचान। वसन्तका नाम सुनकर शायद गजरामें कुछ चेतना आये। मगर यदि वह अुसे न पहचान पाये और अुसकी शून्यतामें अुलटे बढ़ती हो तब क्या ? तेजीसे विचार करते हुअे अेकाअेक मुझे याद आया—

" वसन्त, तुम अपना सितार मेरे पास रख गये हो न ? अुसके छज्जेके पास जाकर यदि तुम सितार छेड़ो तो कैसा हो ? "

" अजी हाँ, यह अन्तिम अुपाय भी आजमा देखूँ। मैंने आवाज लगायी, पत्र लिखे, अुसके सामने रास्तेपर खड़ा भी रहा, लेकिन गजरा है, जो न बोलती है, न हिलती है शायद सितार कुछ काम कर जाये। कहाँ है वह "

मैंने अपनी पत्नीको जगाया और तीस वर्षसे अेक ही जगह पर कोनेमें रखा हुआ सितार ढूँढ निकाला। अुसपर धूल तो नहीं थी, लेकिन अुसके तारों पर जंग जरूर चढ़ गयी थी। भाग्यसे सितारकी पेटीमें दो-चार तारके बण्डल और पुराने 'सेण्ड पेपर' पड़े थे। मानो किसी अमानुषी तत्त्वने वसन्तकी देहमें प्रवेश किया हो, अिस तरह रातको अुसी समय अुसने तार साफ किये, नये बैठाये और जैसे-तैसे अेक घंटेके बाद अपना सितार तैयार कर लिया। अब अँगुलियाँ तारोंसे खेलने लगीं और अुसके मुँहपर प्रसन्नताकी लहर दौड़ गयी। वह बोला :—

" देखिये, तीसँ साल बाद आज पहली बार सितार हाथमें लिया है, लेकिन देखता हूँ अँगुलियोंने अपना रियाज अेकदम खोया नहीं।" वह खड़ा हुआ; सितार हाथमें लिया और मुझे भी पकड़कर अपने साथ बाहर ले गया। मेरा और गजराका घर अेक-दूसरेसे बहुत दूर नहीं था। घरके बरामदेसेही हमने गजराको अंधेरेमें छज्जेमें बैठे देखा। अुमंग और अुत्साहमें आकर वसन्त जल्दीसे गजराके छज्जेके सामने जाकर धूलमें बैठ गया और अपना सितार बजाना शुरू कर दिया। अंधकार जाग अुठा। साथ ही गजराकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्रसृष्टि भी जाग अुठी। सितारकी आवाज सुनते ही वह अुठ बैठी, छज्जेके कठघरेपर जाकर अुसने अपना हाथ रखा, रास्ते पर गर्दन झुकायी और अत्यन्त स्वस्थ मनसे सितार सुना।

वसन्तकी कलाकार आत्माने कोअी दसेक मिनट सितार बजाया होगा। गत बन्द होते ही, जैसा कि अुसने सोचा था, छज्जेमेंसे गजराकी मधुर आवाज सुनायी दी।

"वसन्त, तुम सचमुच आ गये.....तुमने सच कहा था। तुम झूठे नहीं हो। रस्सा डालो, मैं नीचे अुतर आअूँ।"

पागलकी तरह दौड़कर मैं अपने घरसे अपनी पत्नीकी अेक मजबूत और लम्बी साड़ी ले आया। वसन्तने अुसे किसी तरह छज्जे पर फेंका और गजराने अुसे झटसे कठघरेसे बाँध दिया। मेरा और वसन्तका श्वास तेज हो गया। पैंतालीस वर्षकी प्रौढा मानी जानेवाली गजरा अेक चपल सिंहनीके माफिक अुस साड़ीके आधारसे नीचे अुतर आयी और मैं पास ही खड़ा हूँ, अिसका भान भूल कर वह वसन्तको देहसे लताकी तरह लिपट गयी। अुसके मुंहसे केवल यही अुद्गार निकला--

"वसन्त, तुम आ गये! अब हम दोनों जी सकेंगे। आज तक मैं मरी हुअी थी।"

मैं अपनी आँखोंको, जो भर आयी थीं; पोंछने लगा। छज्जेमें मैंने गजराकी भाभीको खड़े देखा। वह भी अपनी आँखें पोंछ रही थीं। यदि वह चाहती तो गजराको नीचे अुतरनेसे रोक सकती थी। लेकिन अुसने वैसा नहीं किया। वसन्तकी आँखोंमें भी आँसू अुमड़ आये थे, यह तो जब गजराने हमें बतलाया तभी मालूम हुआ। वसन्तकी देह और हाथोंको गजराने अपने दृढ़ आलिंगनमें अिस तरह कसकर पकड़ रखा था कि वह अपने हाथसे आँसू पोंछनेमें असमर्थ था। गजराने जब गरम-गरम बूँदोंका अनुभव किया, तो अपना अलिंगन थोड़ा ढीला करके वह सहज भावसे हँसकर बोली—

"वसन्त तुम रोते हो?.....अच्छा अब तुम्हें कभी नहीं रोने दूंगी।" अितना कहकर वह अपनी साड़ीके आंचलसे वसन्तके आँसू पोंछते-पोंछते बोली--

"वसन्त, तुम अैसे क्या बन गये? तुम्हारे बालोंमें यह सफेदी कैसी? और मुंह तो देखो कितना लम्बा हो गया है! चार दिनके वियोगमें अैसे बूढे बन गये? यह क्या पागलपन है?"

केवल मनुष्य ही नहीं सारी सृष्टि यह दृश्य देखकर रो अुठी।

अिसके बाद क्या हुआ यह कहनेकी जरूरत नहीं। वसन्त और गजरा अेक सुन्दर घरमें साथ-साथ रहने लगे। गजराकी आँखोंमें पुराना तेज वापस लौट आया, वसन्तकी देहमें फिर यौवनका संचार हुआ और अुसका सितार रोज रातको गूंजने लगा।

अिसमें सिर्फ अेक ही हँसने जैसी या रोने लायक घटना हुअी। और वह यह कि गजराके भाअी-भौजाअीने अिस पैंतालीस वर्षकी अुम्रके प्रेमियोंका सीधे सादे ढंगसे विवाह कर दिया। अिस विवाहमें वसन्त, गजरा, गजराके भाअी-भाभी, ब्राह्मण और मेरे सिवा कोअी नहीं था। किसीको बुलाया ही नहीं गया। लेकिन बात कोअी छिपी रहती है? वर्षों पहले जो चीज हो जानी चाहिये थी, वह बादमें भी हुअी तो क्या? हँसी लायक होनेपर भी मुझे यह विवाह पसन्द आया।

(गुजरातीके प्रसिद्ध लब्धप्रतिष्ठ अुपन्यास-लेखक श्री रमणलाल देसाअीकी अेक कहानीसे)

अनुवादक:— **श्री गौरी शंकर जोशी**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भक्तकवि वाणी

: श्री स. स. माळवाड़ :

[धारवाड़के कर्नाटक कालेजमें श्री माळवाड़ कन्नड़ भाषाके प्राध्यापक हैं। आप अच्छे समालोचक अेवं कन्नड़-गद्य लेखक हैं। भक्ति-साहित्यकी ओर आपकी अपार रुचि हैं। आपकी रचना "साहित्य-संस्कृति-दर्शन" बहुत प्रसिद्ध है। आपने 'भक्तकवि वाणी' पर गदग रोटरी क्लबमें जो व्याख्यान दिया था अुसका सार हम यहाँ दे रहे हैं। —सं०]

आद्य शंकराचार्यजीकी मायावाद विचार प्रणालीने करीब-करीब सं० ८०० से ११०० तक भारत भरमें अपना प्रभाव जमाया। कोरे मायावादसे जनता अूबसी गयी थी। १२ वीं सदीके रामानुजाचार्य और १३ वीं सदीके मध्वाचार्य, अिन दोनों द्वारा विष्णुभक्ति पथका श्रीगणेश हुआ और प्रसार भी। बड़ी सरलतासे अिस मतने जनताको अपनी ओर खींच लिया। अिन दोनोंकी कर्मभूमि कर्नाटक देश ही रही। १२ वीं शताब्दीके मध्यभागमें बसवेश्वरके द्वारा कर्नाटकमें अेक अद्‌भुत समाज-व्यापी क्रांति हुअी जिससे भक्तिमार्गको विशेष बल प्राप्त हुआ। अिसके पहले ही तामिळनाड़के शैव भक्तोंने शिवभक्तिकी पराकाष्ठा दिखायी थी। बसवेश्वर और वीरशैव संतोंने अैसी अुत्कट भक्तिके संप्रदायकी नींव दर्शनके द्वारा डाली। साधारणतः शैव-वैष्णव भक्ति मार्ग दक्षिणमें ही फूले और फले। भक्त कवियोंकी वाणी तो समूचे भारतमें अेक ही तरहसे अंकुरित होकर निकली है। अिसके लिये प्रमाण हैं, बंगालके चैतन्य, गुजरातके नरसी, महाराष्ट्रके ज्ञानेश्वर, तुकाराम, आंध्रके त्यागराज, पोतण्ण, कर्नाटकके पुरंदर और कनकदास अिनकी और हिंदीमें सूर तथा तुलसीकी भक्ति रसपूर्ण वाणी हैं।

आज प्रसिद्ध हिन्दी संत कवियोंके साथ कुछ कन्नड भक्त कवि समालोचनाके लिये ले लिये हैं। कन्नड़में वैष्णव भक्तिके गीतोंका आरंभ यद्यपि १३ वीं सदीमें हुआ तथापि विजयनगर साम्राज्यके समयमें करीब १६ से १८ वीं सदी तकके भक्ति-गीतोंमें नया प्रवाह, अुमंग और नयी शोभा भर गयी थी। हिन्दी साहित्यमें भी १५ से १८ वीं सदी तक विष्णुभक्तिके गीत कअी हिन्दीके संतकवियोंने सुनाये। जब कर्नाटकमें दासपंथ शुरू था तब हिन्दीमें भी अुसी तरहका कार्य हुआ। १५ से १७ वीं सदी तकका समय यानी कबीरसे तुलसीदासके समयतकका काल हिन्दी-साहित्यमें अत्यंत महत्वपूर्ण काल है। कर्नाटकके मध्वाचार्य या व्यासरायके समकक्ष रामानंद नामक गुरु अुत्तर भारतमें हुअे। अुनकी शिष्य-मंडलीने विष्णुभक्तिके सुंदर पद हिन्दीमें सुनाये और बढ़ाये। कर्नाटकमें जो कार्य दासकूटसे हुआ वह हिन्दीके अिन संत कवियों द्वारा हुआ।

हिन्दी भक्तिगीतोंमें राम-भक्ति, कृष्ण-भक्ति शाखायें और सगुण अेवं निर्गुण भक्ति शाखायें गोचर होती हैं। कबीर और तुलसी तो राम-भक्ति शाखाके ही हैं। सूरदास और मीरा कृष्ण-भक्ति शाखाके मान्य हैं। किन्तु मीराके गीतोंमें कभी-कभी रामका नाम भी आता है। मूर्तिपूजाका विरोध करनेवाले कबीर निर्गुणोपासक हैं। किन्तु तुलसीदासजी तो दशरथ-तनयकी साकार मूर्तिकी पूजा-अुपासनाकी ओर झुके हैं। अपढ़ होकर भी कबीर पंडितोंके पूज्य बने। प्रसिद्ध नानापुराण निगमागम-पंडित तुलसीदासने पामरोंमें भी प्रतिष्ठा प्राप्त की। कहा जाता है कि सूरदासजी अन्धे थे। किन्तु अैसा लगता है कि कृष्ण-दर्शनके अुपरान्त अन्धेकी भाँति व्यवहार किया होगा अुन्होंने जैसे बसवेश्वरने परमात्मासे प्रार्थना की थी कि 'चारों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घूमकर न देखनेवाले अन्धेकी तरह मुझे बनाओ प्रभु !' अत्यन्त अुत्कट अध्यात्म शृंगार अपने भक्तिगीतोंमें जैसे मीराबाअीने व्यक्त किया है वैसे कर्नाटकमें अक्कमहादेवीने किया है। भक्तिरससे पूर्ण भक्तिगीतोंको गानेवाले सूरदास हमें कर्नाटकके कनकदासकी याद दिलाते हैं। पत्नीसे नसीहत लेनेवाले तुलसीदासजीका जीवन कुछ अंशोंमें कर्नाटकके पुरंदरदासजीके जीवनसे मेल खाता है। कबीरके कट्टर सांप्रदायिकताके विरोध और कटु व्यंग्योंको जब हम देखते हैं तब कन्नड़ कवि 'सर्वज्ञ' की याद आती है। जीवनी और गीतोंमें व्यक्त अिस समानताका समर्थन करनेके लिये कन्नड़के वचनों, दासोंके गीतों और हिन्दी सन्तकवियोंकी वाणियोंमें कअी अुदाहरण-प्रमाण मिलते हैं।

जीवनकी नाना वृत्तियोंका अध्यात्मके रूपकमें निरूपण करनेवाली अुक्तियाँ हरिहर कवि और शिवशरणोंके पद्योंमें पायी जाती हैं। तालाब बनवानेके संभ्रममें जो सिद्धराम थे, अुनको आत्मज्ञानी अल्लम प्रभुने जो अुपदेश दिया वह अिस प्रकार है:—

'तन रूपी तालाबका मन रूपी चबूतरा और आचार रूपी सोपान बनाकर परमानन्दरूपी जल भरकर तालाब बना सकनेवालोंको मैं नहीं जानता। ज़मीन खोदकर जल निकालनेकी थकावटको देखो।'

कबीर वृत्तिसे जुलाहे थे। अध्यात्मके रूपकमें अपनी वृत्तिको अुन्होंने देखा— 'भू-व्योमको करघा बनाकर सूर्य चन्द्रको सिर बनाकर, हज़ारों विचारोंके धागे पिरोते कर्मको कर्मसे मिलाते बुनता हूँ।' 'झीनी-झीनी चदरिया' गीत भी अुनका कितना रहस्यपूर्ण है।

कबीर १५ वीं सदीके प्रसिद्ध हिन्दी सन्त कवि हैं। अिनकी कवितामें अलंकार-चमत्कार न होनेपर भी हिन्दी-संसारमें कबीरकी कविताका स्थान अूंचा है। अिससे हिन्दीके भक्ति-गीत जनप्रिय बने। अुन्होंने अन्तरंग और सदाचारका अुपदेश बार-बार दिया है:—

पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुवा, पंडित भया न कोअि।
अेकै अक्षर प्रेमका, पढ़ै सो पंडित होअि ॥१॥

मथुरा जावै द्वारका, भावै जा जगनाथ।
साधु संगति हरि भजन बिन, कछू न आवै हाथ ॥२॥

तेरा साअीं तुज्झमें, ज्यों पुहुपनमें बास।
कस्तूरीका मृग ज्यों, फिर फिर ढूंढै घास ॥३॥

पानी केरा बुदबुदा अिसी हमारी जाति।
अेक दिना छिप जाहिगे, तारे ज्यूं परभाति ॥४॥

मांगन मरन समान है, मत कोअी मांगो भीख।
मांगन तें मरना भला, यह सतगुरुकी सीख ॥५॥

पानी मिलै न आपको, औरन बकसत छीर।
आपन मन निश्चल नहीं, और बंधावत धीर ॥६॥

धीरे धीरे रे मना, धीरे सब कुछ होय।
माली सींचै सौ घड़ा, ऋतु आये फल होय ॥७॥

जाति न पूछो साधुकी, पूछि लीजिये ज्ञान।
मोल करो तरवारका, पड़ा रहन दो म्यान ॥८॥

अैसी वाणी आत्म-साधनाके मार्गमें हमारा अमूल्य पाथेय बन जाती है। हम देखते हैं कि कर्नाटकके बसवेश्वरकी विचार-प्रणाली भी अिसी तरहकी थी। अूपर दी हुअी कबीरकी अुक्तियाँ बसवेश्वरकी निम्न-लिखित अुक्तियोंसे मिलाकर देखिये—कितना साम्य है!

१. पढ़नेसे क्या, सुननेसे क्या, जब तक शिव-पथ न जाने। तोता भी पढ़ चुका था। किंतु पढ़नेका लाभ हमारे मादार (चमार) चैन्नय्याको हुआ था।

२. कदम-कदमपर स्थान निधि, पग-पगपर दिव्य क्षेत्र।....अुसका निवास ही अविमुक्त क्षेत्र कूडल संगमदेव...।

३. शशिमध्यके सौंदर्यकी भाँति कलीके अंदरके परिमलकी भांति, कूडल संगमदेव, कन्याके स्नेहकी तरह था परमात्माका अस्तित्व। शिवभक्त जहाँ हो वही देवलोक है। भक्तका आंगन ही वारणासी है।

४. संसार तो हवाके बीचमें रखे हुअे दीपककी भाँति और संपत्ति-हाटके लोगोंकी भांति जानोजी; अिसपर भरोसा रख अपनेको मत बरबाद करो, बिना भूले कूडल संगमदेवकी पूजा करो।

सारयुक्त सज्जनोंका संग करना चाहिये। अन्तरंग-शुद्धिहीनोंका संग करना कालकूट विष है, कूडल संगमदेव।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. संसारका टेढ़ापन तुम क्यों ठीक करने जाओगे ? अपने-अपने तनको शांत कर लो। पड़ोसीके दुःखके लिये रोनेवालोंको कूडल संगमदेव न चाहेगा।

६. ताड़वृक्षके सामने हाथ पसार कर अूपर देख गर्दनमें दर्द पानेवालोंकी बात कूडल संगमदेव न सुनेगा।

विश्वात्मासे तादात्म्य पानेके लिये निकली हुअी वाणी कन्नड़में हो तो क्या ? हिन्दीमें हो तो क्या ? भाषा-भेदके परे रहनेवाला भाव अेक ही तो है। पतिके भावसे परमात्माकी खोज करने निकली हुअी अक्क-महादेवीकी वाणी यों है :—

चिन्न मल्लिकार्जुनकी भोंकी हुअी छुरी पेटमें कैसे घुसेगी, अिसे माताओ, तुम कैसे जानोगी।

अिस प्रकारकी वाणीमें मीराबाअीकी अुक्ति भी प्रस्फुटित है। माधुर्य, तल्लीनतासे भरे गीतों और जीवनकी विरक्तिमें साम्य है। मीराबाअीका गीत देखिये :—

खान न भावै विरह सतावै नींद न आवै मोय।
घायल सी घूमत फिरूँ रे, मेरा दरद न जाणे कोय॥

परमात्माके पीछे पगली बनकर अुसकी निरीक्षा-प्रतीक्षामें व्याकुल होकर और कभी-कभी निराश बन तड़पनेवाली मीराकी आर्त्तध्वनिमें अक्क महादेवीकी वचन-वाणी फूट पड़ती है, छिटकती है। राजवैभवको लात मारकर स्त्री-सहज लज्जा तजकर परमात्माकी सान्निध्यके लिये व्याकुल अिन दोनोंके जीवनमें भी साम्य है।

हिन्दी काव्य-गगनमें सूर-शशिके समान चमकने-वाले सूरदास और तुलसीदासजीके बारेमें भी कुछ विचार करें। कमल-जल, मीन-नीर अिनमें जो स्नेहका भाव है, अुसकी तुलना भक्त-परमात्माके बीचके स्नेहके साथ सूरदासजीने अपने गीतोंमें की है। प्रभु तो पूर्ण पावन सखा है, वही प्राणनाथ है, दयालु है, कृपालु है। अुसीके हाथमें हमारा जीवन है। वह हमारा जीवन-साथी है। अैसेको आदमी आसानीसे भूल जाता है। अिस तरहकी विचार-धारा सूरदासजीके गीतोंमें प्रवा-हित है। ये १६ वीं सदीमें थे।

१६-१७ वीं सदीमें तुलसीदासजी थे। अुनकी रामायण भारतके श्रेष्ठ काव्योंमें अेक है। अिनकी काव्य-वाणी कल्याणकारिणी बन गयी है। अैसा मालूम होता है कि अिनकी सम्मतिमें निर्गुण-पूजा अेकदेशीय है। अिसीलिये अिन्होंने व्यक्त संसारमें रामरूपी तरंगको पहचाना। बसवेश्वरने जैसे 'अधरके लिये कटु, अुदरके लिअे मधुर' कहा है अुसी प्रकार तुलसीदासकी अुक्ति भी मिलती है। वह यह है :—

जहाँ राम तहाँ काम नहीं, जहाँ काम नहिं राम।
तुलसी कबहूँ होत नहिं, रवि रजनी अिक ठाम॥

यह तुलसीकी वाणी सरल अेवं अर्थपूर्ण है:—

सब संगी बाधक भये, साधक भये न कोय।
तुलसी राम कृपालु तें, भली होय सो होय॥

अिस गीतकी सार्थकता अनेकोंको अपने जीवनमें प्रतीत हुअी होगी।

मानव-स्वभावका निरूपण करनेवाले दो सुन्दर दोहे यों हैं:—

दुर्जन दर्पन सम सदा, करि देखौ हिय गौर।
सम्मुखकी गति और है, विमुख भये पर और॥
तुलसी संत सुअंब तरु, फूलि फलहिं परहेत।
अितते ये पाहन हनत, अुतते वे फल देत॥

क्या अिन दोहोंका अर्थ-रस तथा कल्पना-सौंदर्य विशद् रूपसे बतानेकी जरूरत है ?

वचन वेषतें जो बनै, सो बिगरै परिनाम।
तुलसी मनतें जो बनै, बनी बनायी राम॥

तुलसीके अिस दोहेकी तुलना कन्नडके पुरंदरदास जीके 'अुदर वैराग्य है, यह वेषभूषा, अिसमें किंचित् भी भक्ति नहीं।' वाले गीतसे की जा सकती है।

कन्नडके शिवशरणोंकी, संतोंकी वाणियाँ और हिन्दीके संत कवियोंकी वाणियाँ अगर हम देखें और अुनका अध्ययन करें और विचार-धारापर विचार करें तो अैसा प्रतीत हुअे बिना नहीं रहेगा कि ये अेक दूसरेके अुल्था हैं। कितना साम्य गोचर होता है, अिनकी वाणियोंमें ! अिस प्रकार हमारे अुत्तर दक्षिण देशमें भक्त-कविवाणी अेक रूप होकर प्रवाहित हुअी है।

(अनुवादक :— श्री गुरुनाथ जोशी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जागरण

: श्री 'भिक्खु' :

पर्वताकार बाधाअें, घनीभूत विपदाअें, अनिश्चित जीवन, अनिर्दिष्ट मग, व्यथाओंका प्रकम्प, मनोवेगोंका अुत्पीड़न, आहोंका अन्धड़, भ्रमित बुद्धि, शून्य हृदय, विकलांग, निराशा भरी आँखें, जड़ीभूत चेतना और मैं.. अेक अनुभवहीन गृहस्थ, कर्मक्षेत्रमें लुंज-पुंज-सा पड़ा हुआ, कोलाहलसे आतंकित, संघर्षसे त्रस्त, चिर अतृप्त, और अशान्त। अिच्छा होती कि परमाणुकी शक्तिसे भर अुठूँ मेरी अिच्छा रह जाय मात्र—पर्याय शक्ति, स्फूर्ति, जाग्रतिकी। बाधाओंके पर्वतोंको लाँघ जाअूं। विपत्तिकी घटाओंमें बिजली बनकर कड़क अुठूँ। दुर्गम पथोंमें बयार-सा बहूँ, मनोवेग राग बन जाअें, आहें अुठ न सकें, प्रज्ञा स्थिर, मन प्रशान्त, अंग दृढ़, नेत्र आशाकी ज्योतिसे दीप्त, परम चैतन्य !

पर मेरी शक्तियाँ संगठित न हो सकीं। बाधाअें, विपदाअें मेरे पौरुषपर व्यंग्य बनकर बरसती रहीं। मैं प्रयत्नोंसे परास्त अुन सबके चरणोंमें नत होता गया। जब जगत् दिन भरकी परिश्रम-क्लान्ति संध्याके द्वारपर रखकर रात्रिके कक्षमें निद्रासे अभिसार करता, तब भी मैं अपने भुक्त अभुक्त कष्टोंकी तालिका बनाया करता। जगत् निद्राकी रात्रि अभिसार पूर्णकर पुनः अुषाका अनुराग ले कर्मकी कठोरताको प्रयत्नकी सिद्धियोंसे मधुर बनाने लगता, तब मैं जहरीली कटुताओंसे अपने सुखको भी दुःख बना डालता। संभव भी तब असंभव ही जान पड़ता।

चिन्ताके गर्त्तमें अुतरता हुआ सोचा करता .. सुख, दुःख अेक अुद्देश्यके दो पथ। जो कभी साथ-साथ चलते हैं, कभी दूर-दूर, फिर भी बढ़ते हैं अेक ही दिशामें। दोनों ही पथोंसे आनन्दकी वीणा झंकृत करता हुआ स्थिर बुद्धि असंमूढ पथचारी कौन ?

मेरे मन—आत्माका शून्य "कौन" की कोटि-कोटि प्रतिध्वनियोंसे मुखर हो अुठा ! पर वह "कौन" मेरे चक्षुओंके समक्ष प्रत्यक्ष हो ही न सका। चक्षुओंके शून्यमें आँसुओंके तारे हँसते रहे।

तब मैंने अधरमें टँकी दो बड़ी-बड़ी आँखोंको देखा। अुन आँखोंकी लम्बी-लम्बी बरौनियोंमें आँसुओंके मोती गुंथे थे। किसकी थीं वे आँखें ! कौन थी वह ! अुन आँखोंमें छिपी मेरे प्यारकी परी आँसुओंकी ओटसे हँसकर पूछने लगी—अरे नहीं पहचाना मुझे ?

वे दो आँखें, प्यारी-प्यारी आँखें निरन्तर बड़ी होती गयीं, और मैंने अुन्हींके विस्तारमें अपने सुखको विस्तार पाते देखा। आँसू भरी आँखोंमें विस्तार पानेवाला सुख भी कैसा सुख। और वे आँखें, सुख, दुःख, मोहसे मनको अेक साथ भर देनेवाली आँखें भी कैसी ! त्रिगुण लेखा। प्राप्तिमें सुख, अप्राप्तिमें दुःख, वियोगमें मोह ! धीरे-धीरे वे आँखें मेरी कल्पनाकी प्यार भरी आकृति लेकर प्रेम-प्रतिमा नारी बन गयीं। मानों त्रिगुणात्मिका प्रकृतिने ही अवतार ले लिया हो। अपने प्यारसे पैदा करके भी अुस प्रतिमाको मैं पहचान न पा रहा था। आकुल व्याकुल-सा पूछ ही तो बैठा .. सत, रज, तम की त्रिवेणी ओ री ओ ! तू कौन ?

अुस प्रतिमाके होंठ भी न हिले, कंठ भी मुखर न हुआ, फिर भी मधुर, अति मधुर, परिचित, चिर परिचित स्वरमें मैंने सुना, शायद वही तो कह रही थी, अपने पुरुषार्थसे पूछो।

मैं विकल पुरुष वह मुझे अविकल पुरुषार्थकी प्रेरणा दे रही थी। मैं कैवल्यका साधक होकर भी वैकल्यसे हीन हो रहा था। काश, वह प्रेरणामयी ही मेरी साधना-शक्ति बन जाती।

पुनः अुस त्रिगुणमयीने मुझ चंचल-सा करते हुअे कहा—त्रिगुणमयीको तो केवल पुरुष पा सकता है। पुरुषत्व प्राप्त करो ! पुरुष बनो !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छाया नारी लुप्त हो गयी और मैं पुरुषका आदर्श लिये वन, पर्वत, ग्राम, नगरोंमें भटकता रहा। मेरा आदर्श पुरुष था, त्रिगुणातीत, विवेकी, विशेष, चेतन, अप्रसवधर्मी, अविकारी, कूटस्थ, नित्य, सर्वव्यापी, अकर्त्ता, निरीह और कैवल्य धाम, जिसके चरणोंमें त्रिगुणमयी प्रकृति नारी लीला विलासके पुष्प अर्पित करती रहे। पर कहाँ मिला वह आदर्श ?

मैंने अुस आदर्शको अपनेमें ही स्थापित करनेकी चेष्टा की। गंगाकी बालुका वेला पर रमते-रमते क्षण भरके लिये ही जो मैं अपनी सत्ता त्रिगुणसे विलक्षण समझ सका तो लगा कि यह संघातमय जगत् मात्र मेरे ही अुपयोगके लिये है। मैं त्रिगुणसे विलक्षण पुरुष, भोक्ता। मैं असंघात संघातका भोक्ता। त्रिगुण-मयी, संघातमयी, प्रकृति भोग्या। मुझसे विरहित त्रिगुण जड़। मेरे सान्निध्यसे जड़में चेतना, मेरी चेतनासे यह विराट् सृष्टि। मैं निरीह पुरुष फिर भी अिच्छामयीसे प्रबल। मैं कैवल्य धाम, फिर भी सर्व-च्छायी। मैं पुरुष और विलक्षण पुरुष ! अक्रिय होकर भी सभी क्रियाओंका स्वामी।

तभी जाने कहाँसे बादल घिर आये और अैसे बरसे कि मेरी काया अुनकी धाराओंकी मारसे सुन्न हो गयी। मेरा पुरुषत्वका स्वप्न भंग हो गया और प्रकृतिके भोक्ता पुरुषके अहंकार-शिखरसे दीनताके निम्नतम अन्धविवरमें जा पड़ा।

मनके अुसी तिमिरमें गोधूलिकी धुंध पार कर रजनीके गहनतममें भटकता हुआ अुसी प्रकार रोता रहा ! मेरे स्वप्नादर्श मेरी असमर्थताकी ठोकरसे चूर-चूर होकर यथार्थकी भूमिपर कंकड़-पत्थरोंसे रुलते रुलते नभके असंख्य तारोंके साथ-साथ मेरी आंखोंके आंसू अुन कंकड़ों-पत्थरोंकी गिनती कर-करके हारते गये।

अुस अन्धकारमें निद्राने जाने कब अपना जादू छोड़कर मुझे अपने आंचलमें ले लिया। मेरी चेतनाके साथ-साथ मेरी चिन्ताअें भी दुःस्वप्नोंमें जागती रहीं। अुनसे मस्त होकर मैं स्वप्नमें भी सचमुच रो अुठा। पर मेरे आंसू आंखोंकी सीमा लांघ भी न पाये थे कि मैंने प्यार-दुलारसे कोमल आज्ञात्मक स्वरमें किसीको सान्त्वना देते सुना था। स्वर जैसे मेरा जन्म-जन्मका सुपरिचित था। मेरे स्वर्गस्थ पिताकी ही तो यह आकाश-वाणी थी।

अुस देववाणीने अुद्बोधन किया—अुद्वेगका निरोध करो पुत्र ! अितने दीन न बनो। संसारके प्रश्नोंका हल दुर्बल हीन पुरुष नहीं कर सकते। अपने पौरुषको पहचानो !

पुरुष, पौरुष! मैंने आर्त स्वरमें कहा—अिन्हींकी साधनामें तो मैं जीवनका वषय कर रहा हूँ, तात ! पर अुस कैवल्य धाम पुरुषकी छाया तक नहीं मिली मुझे कहीं !

पुनः मैंने सुना—तुम शब्दोंकी मायामें जा पड़े पुत्र ! कर्म-प्रसूनोंकी सुरभिसे सुरभित धरतीके प्राणी होकर तुम किस कैवल्य धामके लोभी हो। तुम मिट्टीके मानव हो, मिट्टीका बना मानव ही तुम्हारा आदर्श हो सकता है। जिस मिट्टीकी मूर्तिसे तुम्हें कर्मकी सबसे पुष्ट प्रेरणा मिले,अुसीको आदर्श मानकर अग्रसर होवो। दार्शनिक पुरुषका पुरुषार्थ वसुंधरामें घासका अेक तिनका भी पैदा करनेकी क्षमता नहीं रखता। अुसकी श्रेष्ठता और अमरता तभी तक है जब तक हम बुद्धिविलासी दार्शनिकोंके कल्पना-लोकमें ही स्थित हैं। मिट्टीकी धरतीको छूते ही वह पुरुष मर जायेगा। जागो बेटा जागो। काल्पनिक श्रेष्ठताके लोभमें अपनी वास्तविक श्रेष्ठतासे क्यों वंचित हो रहे हो।

मैंने अविश्वासके साथ कहा— जिसके सान्निध्य मात्रसे प्रकृति विश्वके अिस विराट् आयोजनकी क्षमतासे भर गयी, भला वह आदर्श बनाकर क्यों नहीं अिस लोकमें अुतारा जा सकता। ना तात, मुझे मेरी मिट्टीका ध्यान न दिलाओ। जिसे तुम वास्तविकता कहते हो अुसकी ज्वाला सहन करनेकी शक्ति मुझमें नहीं।

वत्सलता भरी वाणीने मेरे मनके निकट आकर समझाया—वत्स ! जिसे तुम ज्वाला समझते हो वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हारी असमर्थता है, जो किसी भी वास्तविकताका सामना नहीं कर सकती। वचनोंका विलास त्याग दो। जीवनसे भागकर कोओी सुखको नहीं पा सका। अैसा सुख जिसकी स्पृहा तुम्हारा कैवल्यधाम भी करेगा, अिस धरतीमें ही कर्मके द्वारा अुपजाया जा सकता है। निरीहता और अकर्त्ताकी मिथ्या भावना दूर कर दो। बिना अिच्छा किये कोओी कुछ न पा सका। अिच्छा करके भी यदि पुरुषार्थ न दिखाया तब भी कोओी सफल न हो सका। अिच्छाके साथ पुरुषका कर्तृत्व भी हो तभी न मनाभिलिषितका अुदय होगा! अकर्त्ता आकारहीन और अस्तित्वहीन ही हो सकता है। पर तुम तो आकारकी सीमामें अस्तित्वका भोग करनेवाले भूचारी प्राणी हो। फिर भला कर्मका त्याग करनेसे कैसे काम चलेगा, विरोधोंसे डरो नहीं, अुनसे शक्ति लो। संघर्षका वोरा न समझो, अुसीसे होकर तुम्हारा आकार परिमार्जित होगा, अस्तित्व बल पायेगा। अिस सत्यको न चीन्होंगे तो तुम्हारा अभिभव कभी विभवमें परिवर्तित नहीं होगा।

मेरे मनका तिमिर हटता जा रहा था। अिच्छाओंके किसी सुदूर क्षितिजपर आशा-अुषा हल्की लाली ले प्रकट हुआ ही चाहती थी, पिताजी कह रहे थे मनुष्यकी धरतीको मनुष्यकी कर्म चेतनासे संजीवित करनेके अुद्योगमें लग जाओ। कर्मका प्रवर्तन ही पुरुषार्थीकी सबसे बड़ी साधना है। हमारे लोकका ध्रुव कर्मयोगी पुरुष ही हो सकता है। कर्मठता ही अुसका कैवल्य है। सभी ऋद्धियाँ-सिद्धियाँ कर्मठकी ही सेवाको अुत्सुक रहती हैं। अुठो जागो! कर्मप्रवर्तनमें अब विलम्ब न करो। मनुष्यकी धरतीको तुम्हारे अुद्योगोंकी आवश्यकता है।

मैंने आँखें मलते हुअे देखा कि प्रकाश-मार्गसे पिताजी जा रहे हैं। मेरे मनकी निराशा और निरीहता भी अुन्हींके साथ-साथ जा रही थी। मेरी विकलता स्वप्न सदृश हो गयी। अुत्साह जागरण बन गया। शैयासे अुठकर कपाट खोल कमरेसे बाहर आया। जाने कबसे मेरी अधीर प्रतीक्षा करता हुआ मलय समीर मुझसे अकुला कर मिला! विहंगोंकी प्रभातीसे जाग अुठी अुषा निद्रित जगत्को जगाती हुअी कर्मका अनुराग-मय संदेश दे रही थी।

तब पुलकोंमें अपनी आत्माके हर्षको अभिव्यक्त करते हुअे मैंने माना कि आजतक तो मैं निरन्तर सो ही रहा था। मेरे जीवनमें यह पहली जागरण वेला आज ही आयी। अब मुझे अपने अनारम्भ कार्योंका तत्काल प्रारम्भ कर देना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता :

अेक प्यासी आत्माका गीत

: श्री सर्वेश्वरदयाल सक्सेना :

मैं तुम्हारे लिपस्टिक लगे होठोंकी
विकृति अरुणिमामें भी
पंख खोलकर तैर सकता हूँ,
यदि तुम, थकावटके पालेमें
झुलसकर गिरे हुअे अिस काफिलेको,
भोरकी सुनहरी धूपकी तरह
अुठनेकी आवाज दो ।

मैं तुम्हारे भद्दे होठोंकी
काली दरारोंमें भी जी सकता हूँ,
यदि तुम, थककर गिरे हुअे
किसी चरणके घाव चूम लो
और हर दर्दको
सपनोंकी जयमाल पहना दो ।

मैं तुम्हारे मुरझाये हुअे पीले होठोंकी
दम तोड़ती हुअी गर्मीका कफन ओढ़कर
सदाके लिये सो सकता हूँ,
यदि तुम, दीपके अंतिम लौसे
अुमगकर बुझे हुअे, किसी भी प्रयत्नके,
कपोलपर, अपने अधर रखकर दुआ दो ।

क्योंकि मैं—
अिस युगके अेक कविका गीत हूँ,
अेक अभागे कविका गीत —
जिसपर हर आँधीने थकावटकी पर्त ही जमायी,
जिसके घावोंको हर झोकेने गहरा ही किया,
और जिसके अंतिम घड़ीके, अंतिम प्रयत्नको भी,
प्यार करना तो दूर रहा किसीने दुवातक नहीं दी ।

मैं अुस भटकती हुअी प्यासी आत्माका
दर्दभरा संगीत हूँ,
जो मुझे, अपने सफरमें
अिस वीरान राहकी
अंधी चट्टानोंपर
खामोशीका ताज बनाकर
छोड़ गयी है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्धनता-व्यंजक कुछ भोजपुरी कहावतें

: श्री हर्षनाथ :

[कहावतें किसी भी भाषा या बोलीकी क्यों न हों, अुनके अन्दर युगोंकी ज्ञानधारा, समवेदना, भावुकता, हर्ष, विषाद, दुखदर्द भरा रहता है। कहावतें ज्ञानका भंडार हैं, वे अनुभव रूपी पुष्पकी चटकती कलियाँ हैं। किसी जातिकी प्रतिभा, कुशलता और समृद्धिका पता अुसकी कहावतोंसे लगता है। श्रीयुत हर्षनाथजीके अिस लेखमें भोजपुरी बोलीकी कहावतोंका आस्वाद पाठक लेलें। --सम्पादक]

कहनेके लिये तो हिन्दी भाषा-भाषियोंकी संख्या अठारह करोड़के आसपास है, किन्तु यह क्षेत्र विभिन्न बोलियोंमें विभाजित है, जिनमें वहांके निवासी अपने विचारोंको व्यक्त करते हैं। अिन क्षेत्रोंमें हिन्दी या तो पुस्तकोंकी भाषा है या कुछ पढे-लिखे लोगोंकी। अिन बोलियोंके अूपर हिन्दी तो अेक अभिभावक-सी है। अिन बोलियोंका अपना साहित्य, अपना व्याकरण और अपनी परम्परा है। अिनमेंसे कुछ बोलियां तो काफी घनी हैं। कुछ बोलियोंका समूचा साहित्य ही मौखिक है, यद्यपि वह नगण्य नहीं। भोजपुरी अिसी तरहकी बोली है, जिसका प्रभाव पश्चिमी बिहार और पूर्वी अुत्तर प्रदेशको लेकर प्राय: ढाअी करोड़ जनताके अूपर है। साहित्य भी काफी प्रचुर है, किन्तु अधिकांश अलिखित। जिस बोलीमें ढाअी करोड़ जनता अपने भावोंका आदान-प्रदान करती हो, सुख दु:खका व्यक्तीकरण करती हो, जो बोली ढाअी करोड़ जनताके सुख दु:ख, हर्ष-विमर्ष, घृणा-प्रेमकी वाहक हो, लक्षाधिक बच्चे जिस बोलीमें तुतला-तुतला कर अपनी पहली वाणी बोलते हों, नववधुअें अपने लजीले स्वरसे माधुर्यकी वर्षा करती हों, मां अपने स्नेह और ममताको जिस बोलीमें बिखेरती हो, रोष और क्रोध, वीरता और दर्प, त्याग और तपस्या जिस बोलीमें अपने भावोंके अनुरूप शब्दों और ध्वनियोंमें व्यक्त की जाती हो, आश्चर्य है कि अुस बोलीका साहित्य भी अलिखित ही है। निसन्देह यदि अिन बोलियोंके माध्यमसे जनताको शिक्षित करनेका कार्य किया जाय तो सफलता निश्चित है।

भोजपुरी भाषा जहां अपने अन्य अुपांगोंमें धनी है, वहां अिसमें कहावतों और मुहावरोंका खुलकर प्रयोग हुआ है। ये कहावतें और मुहावरे नीति संबंधी, व्यंग्य संबंधी आदि सभी तरहके हैं। हम यहांपर भोजपुरी भाषा-भाषियोंकी निर्धनता-द्योतक कुछ कहावतोंका अुल्लेख करेंगे।

१-अंगनामें भूसी दामाद बड़ा खूसी

दामादकी सर्वत्र ही बड़ी आवभगत होती है। अुसके ससुरालमें पहुंचनेपर घरके प्राय: सभी व्यक्ति अुसकी सुख-सुविधाका ध्यान रखते हैं। अुसे अच्छे खाने पीनेकी और अुसकी सुख-सुविधाकी ओर, अुसकी रुचिकी पूर्तिकी ओर तत्परतासे लगे रहते हैं, किन्तु पूरी खातिरदारी तो तब हो पाती है जब सम्पन्नता हो। यह क्षेत्र कृषिजीवी है और कृषि जीवनमें हजार बाधायें हैं, सूखा, पानी, पाला सभी कुछ। किसानोंको दो जून भर-पेट भोजन भी सुलभ नहीं। अैसी स्थितिमें भी जब दामाद घरपर आया तो अुसकी खातिरदारी तो होगी ही चाहे कर्जके बलपर की जाये या पड़ोसियोंसे अुधार लेकर। अैसे ही गृहस्थ घरमें जब दामादकी, आंगनमें धानकी भूसीपर नजर पड़ी तो वह अुछल पड़ा। दामाद भी कृषक ही था, अुसे भी तो नित्य भर पेट भोजन अुपलब्ध नहीं। वह जिस क्षेत्रका है, वहांकी मुख्य फसल जौ, गेहूं, चना, बाजरा आदि थी। धान बहुत कम पैदा होता था। चावल तभी बनता था जब घरमें पाहुने आये हों, अथवा कोअी तीज-त्यौहार। अैसी स्थितिमें जब अुसने चावलकी भूसी देखी तो अुसने सोचा चलो आज भर पेट चावलका भोजन तो मिला। अैसे ही प्रसंगको व्यक्त करती हुअी यह कहावत है।

२-तर घरी न अूपर तरी

अिस कहावतका शाब्दिक अर्थ है सर्वहारा। हमारे अधिकांश किसान अैसे हैं जिन्हें दोनों जून भर-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेट अन्न मयस्सर नहीं। खाने-पहननेकी सुविधा नहीं। रहनेकी सुविधा नहीं, जिन्दगीकी सभी आवश्यकताओंसे वंचित। पैरके नीचे धरती नहीं और छाया प्रदान करनेके लिये घरकी व्यवस्था नहीं। मात्र खुला आकाश। अिन्हीं भावोंको यह कहावत व्यक्त कर रही है।

३-मेहरीके लुगरी ना बिलारीके गाँती

यह कहावत यद्यपि मूलतः नीति सम्बन्धी है और कुछ-कुछ व्यंग्यकी द्योतक है, किन्तु अपने अिस आवरणके बावजूद भी गरीबी स्पष्टतः परिलक्षित हो रही है। मेहरी (पत्नी) के लिये अच्छे अथवा साबुत कपड़ेकी बात तो जाने दें, लुगरी (फटी पुरानी साड़ी) भी मयस्सर नहीं और अिसपर भी बिल्लीके लिये गांती (अेक प्रकारकी ओढ़नी) की व्यवस्था पति महोदयने कर दी, चाहे यह प्रबन्ध दूसरोंकी नजरोंमें अपनेको बड़ा दिखानेके अुद्देश्यसे हो, चाहे परोपकारकी भावनासे। अिस भावकी व्यंजक हिन्दी भाषामें भी कअी कहावतें हैं, जैसे 'आगे आत्मा पीछे परमात्मा' अथवा 'घरमें दिया जलाकर तब मन्दिरमें दिया जलाया जाता है।'

४-पितरीके नथपर अेतनी गुमान, जब सोनवा क रहत त चलतीं अुतान

यह कहावत मूलतः व्यंग्य प्रगट करती है, किन्तु अिसमें भी गरीबी स्पष्ट रूपसे परिलक्षित हो रही है। ग्रामीण औरतोंके लिये गहना अेक प्रिय वस्तु है। सबकी अितनी सामर्थ्य कहाँ कि सोने-चाँदीके गहने पहन सकें। पीतल और गिलटके गहने मिल जायं तो यह भी कम सौभाग्य नहीं। अैसी ही किसी नवविवाहिताने जिद करके अपने पतिसे पीतलकी नथ बनवा ली और अुसके पहननेके बाद वह गर्वसे फूल अुठी। आखिर यौवनकी अुमंग जो ठहरी। शौक तो पूरा हुआ, क्या पीतल और क्या सोना! किन्तु अुसकी पड़ोसिनको अुसका यह दर्प नहीं सुहाया। अुसने तुरन्त अुपर्युक्त फबती कसी।

५-रांड मांड अचेत

हिन्दू घरोंमें विधवाओंकी जो दुर्गति होती है वह सर्वविदित है। बहुत कम घरोंमें अुनकी स्थिति सम्मान-जनक है। अुनके खाने-पहननेका भी ठिकाना नहीं। अच्छे-अच्छे भोजन और अच्छे वस्त्रकी कल्पना भी अुनके लिये सम्भव नहीं। न किसीसे वह कोअी शिकायत कर सकती है न कोअी माँग। अुनका अधिकार ही क्या। अैसी स्थितिमें विधवाओंका अल्पसंतोषी हो जाना स्वाभाविक ही है। भात न सही, माँड़ (चावलका पानी) ही मिल जाय, यही गनीमत है।

६-छान्ह पर करोअिन ना

अिस कहावतमें गरीबी अपनी सम्पूर्ण विभीषिकाके साथ परिलक्षित हो रही है। पक्का या खपरैलका मकान तो दूरकी बात, हर साल फूसका छाजन बदल जाय यही गनीमत है। अेक तो छान्ह (फूसका छाजन) और वह भी कअी बरसातें सहकर अितना सड़ गया है कि अेक चिन्दी भी साबुत नहीं।

७-रीनन देह बिकाय गअिल

किसानोंकी अुन्नतिमें सबसे बड़ी बाधा अुनकी निर्धनता है। हल, बैल और अच्छे बीज खरीदनेके लिये अुनके पास पैसे नहीं। खाद खरीदनेके लिये तो सोचना भी अुनके लिये कठिन है। अिसके अलावा सूखा और बाढ़ दोनों ही अुनकी दुश्मन है। अैसी दशामें अपनी भयावह स्थितिसे निस्तार पानेके लिये अुन्हें महाजनोंके पास जाना ही पड़ता है। महाजन अुनकी मजबूरीको खूब समझता है और अिस कमजोरीका फायदा अुठाना अुसकी नस-नसमें समाया रहता है। अेकका डेढ़ लेना तो कुछ मुश्किल नहीं। अेक बार अुनके फंदेमें फंसे कि अुबरना आसान नहीं। घरके बर्तन-भाँड़े भी गिरवी रख देने पड़ते हैं। यह कहावत हमारे समाजपर अेक तरहसे अभिशापके ही रूपमें है।

८-मुंहमें मांछी आवत जात हव
९-सोलहो घड़ी तीसो दिन अेकादशी

यह दोनों कहावतें भी यही भाव व्यक्त कर रही हैं कि घरमें अन्नका अेक दाना भी नहीं। जो किसान अन्न पैदा करके सारी धरतीका पेट भरता है, अुसे भी पेटमें डालनेके लिये अन्नका अेक भी दाना नहीं। निःसन्देह यह स्थिति क्षण भरके लिये भी सह्य नहीं।

अिसी तरह भोजपुरी बोलीमें गरीबी, व्यंग्य अुपहास, नीति संबंधी कहावतें भरी पड़ी हैं, जिनका व्यवहार हिन्दी भाषामें धड़ल्लेसे किया जा सकता है। भावोंको व्यक्त करनेमें ये कहावतें पूर्णतया समर्थ हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अष्टावधान

: सर. टी विजयराघवाचारियार :

आपके मनकी बात जब कोअी अन्य व्यक्ति तुरन्त कह दे तो अुसके बारेमें आप क्या सोचते हैं ? अिसका आपको कभी अनुभव हुआ है ? मेरा अैसा ही अेक अनुभव सुनिये। घटना १९२२ की है। लन्दनके पास, वेम्बलीमें तब ब्रिटिश साम्राज्य-प्रदर्शिनी हुअी थी। मैं भारतकी ओरसे प्रदर्शिनीका कमिश्नर था। अेक पारसी सज्जन लन्दनमें भारतके हाअीकमिश्नर थे। अुन्हें भोज देनेमें बड़ा ही मजा आता था। पारसी नये वर्षके अुपलक्ष्यमें अुन्होंने अेक शानदार भोजका आयोजन किया। सौसे अूपर लन्दनके भद्र लोग अुसमें शामिल हुअे। भोजन और वार्तालापके बाद संगीतका भी कार्यक्रम था। जब वह पूरा होनेको आया तो दूसरोंके मनकी बात बतानेवाली अेक बेलजियम महिला सामने आयी। हम हॉलके अेक कोनेमें बैठे थे। हम लोगोंको देखकर वह बोली — "आप जो कुछ सोचते हैं अुसे अेक कागजके टुकड़ेपर लिखकर अपनी जेबमें रख लीजिये। मैं यहींसे बता दूंगी कि अुसमें क्या लिखा है।"

अुस बेलजियम महिलाने, पासहीमें बैठे हुअे सज्जनके पूछनेपर कि अुनकी जेबमें क्या है, बतलाया कि लन्दन और वेम्बलीका अेक सीजन टिकट है और अुसका नम्बर.....अिस प्रकार हर अेकका ठीक-ठीक अुत्तर दिया। अुपस्थित निमन्त्रित सभी लोग दाँतों तले अुंगली दबाकर रह गये। आखिर मेरी बारी आयी। मैंने कागजपर अपना नाम और जन्म दिनांक लिखकर जेबमें रख लिया। पश्चिमके लोगोंको मेरा लम्बा चौड़ा नाम याद नहीं रह सकता, यह औरत भी मेरे नामका अुच्चारण नहीं कर सकेगी। मैंने सोच लिया था। लेकिन वह बोल अुठी : "मैं आपके नामका अुच्चारण नहीं कर सकती; किन्तु अुसका अेक-अेक वर्ण बतला सकती हूँ।" अुसने पूरा नाम बता दिया और कहा : "कार्डमें आपने अपने जन्म दिनकी तिथि— २७–८–१८७५ लिख रखी है !"

मैं अेक महाराजाके यहाँ दीवान था। महाराजाका जन्म-दिन था। भोजनोपरान्त महाराजा और अुनकी पत्नीके साथ बागमें जा बैठा। अितनेमें महाराजासे मद्रासके गवर्नर महोदयका अेक सीलबन्द लिफाफा लेकर अेक सज्जन मिलनेको आये। पत्रमें लिखा था, "अिस पत्रको लेकर आपके पास आनेवाले महाशय अपने दिलकी बात ज्योंकी त्यों बता देते हैं। मैंने अिनकी परीक्षा ली है। आपके पास मैं अिन्हें भेज रहा हूँ।"

हम तीनोंने प्रश्न तैयार किये। मैंने प्रश्नोंको अंग्रेजीमें लिख लिया और अिन महाशयको बुलाया। आश्चर्य ! मैंने जो १३ प्रश्न जेबमें लिखकर रख लिये थे ज्योंके त्यों अुन्होंने बता दिये।

हम लिखकर जो कुछ जेबमें रख लेते हैं; अुसे ये लोग किस प्रकार बताते हैं। अिस प्रश्नका अुत्तर देना जरा टेढी खीर है। लेकिन मेरे बचपनमें देखी हुअी बात आज भी अच्छी तरह याद है। शतावधान और अष्टावधान हमारे दक्षिण भारतमें चलता है। अिसीके बारेमें कहता हूं। अष्टावधान करनेवाले व्यक्ति बड़े पंडित होते हैं। ये लोग अपनी स्मरण-शक्ति और मनकी अेकाग्रताको अितनी तेज और अूंची रखते हैं कि बड़ी-बड़ी परीक्षाओंमें पहली श्रेणीमें अुत्तीर्ण होनेवाले भी अिनसे जलते हैं।

मद्रास हाअीकोर्टके न्यायाधीश स्वर्गीय जास्टिस रामेशम पंतुलु और प्रयागके स्वर्गीय सी. वाअी. चिन्तामणि दोनोंकी स्मरण-शक्ति अद्भुत थी। पहले महायुद्धमें जर्मनीने अनगिनती व्यापारिक जहाजोंको और युद्धपोतों को समुद्रमें डुबो दिया था। जस्टिस रामेशम अपनी स्मरण-शक्तिके बलपर तब जलमग्न अुन जहाजोंकी संख्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठीक ठीक बता दिया करते। सी. वाअी. चिन्तामणि महाशय देश-विदेशके सभी प्रसिद्ध व्यक्तियोंके जन्मके दिनांक ठीक-ठीक बतला दिया करते थे।

मैं जब अिलाहाबादमें था, श्री चिन्तामणिजीकी तबियत बहुत बिगड़ गयी थी। अुन्हें देखनको जब मैं वहाँ पहुँचा तो अुनकी पत्नीसे पूछा कि क्या मुझे अन्दर जानेकी डॉक्टर अिजाज़त देंगे ? मेरी आवाज सुनते ही श्री चिन्तामणि बोल अुठे—"मैं जानता हूँ कि कौन आये हैं, अन्दर चले आअिये।" फिर डाक्टरसे कहने लगे—"आप कहते हैं कि मेरी स्मरण-शक्ति क्षीण होती जा रही है। मैं बतलाता हूँ कि ये कौन हैं ? ये महाशय हैं सर टी. विजयराघवाचारियार। अिनका जन्म २७-८-१८७५ अी० में हुआ था। अिसी वर्षमें सर तेजबहादुर सप्रू और अेच. अेच. आगाखां, दोनोंका जन्म हुआ था।" अितना कहकर सी. वाअी. ने दोनोंके जन्म-दिनांक बतलाये।

अष्टावधानमें अेक ही समयमें आठ विभिन्न व्यक्तियोंके प्रश्नोंका अुत्तर देना पड़ता है। प्रत्येक व्यक्ति अपना अेक प्रश्न रखता है। जो अिस कलामें प्रवीण होता है, अुस व्यक्तिके आगे अुदाहरणके लिये अेक बजाता है, दूसरा गणित शास्त्रका अेक जटिल सवाल पूछता है तीसरा व्यक्ति संस्कृतका अेक अैसा श्लोक अुससे पूछता है जिसकी पन्द्रह पंक्तियाँ हों और अुन पंक्तियोंका पहला शब्द वही हो जो अन्तमें भी आये। चौथा आदमी अेक अंग्रेजी गीत, तमिळ, तेलगु, कन्नड़ और मलयालम, अिन चारों दाक्षिणात्य भाषाओंमें अनुवाद करनेको कहता। पाँचवेंने पूछा कि खिड़कीकी तरफ नज़र डालकर यह बताओ कि सड़कपर कितने आदमी या गाड़ियाँ जा रही हैं। अिस तरह कोअी 'समस्यापूर्ति', कोअी व्यक्ति कुछ तो कोअी कुछ। और ये अष्टावधानी पंडित अुन पूछे गये प्रश्नोंको ध्यानमें रखनेकी जो कोशिश करते थे, अुसे देखकर मुझे परिताप हुआ। अुनकी जैसी अेकाग्र शक्ति हमारे पास नहीं है। परीक्षाके बाद सब चले गये तो मैंने अुनसे पूछा, कि "परीक्षा काफी कठिन थी न ?" अिसके अुत्तरमें वे बोले कि जब-जब अैसी परीक्षा होती है, परीक्षाके बाद अर्सेतक अुनके सरमें दर्द रहता है और दो तीन दिनतक नींदसे हाथ धोना पड़ता है। *

---

* भारतके राजकाजमें कुशल और हमारी पुरानी पीढ़ीके सर टी. वि. राघवाचारीयारका अभी हालहीमें मद्रासमें देहान्त हो गया। —अनुवादिका

'(तामिळसे अनुवादिका— कु. लक्ष्मी कृष्णन, 'राष्ट्रभाषारत्न')

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दीकी अेक शक्ति : श्री रघुवीरसहाय

: श्री ललित सहगल :

और अुस समय वह पलंगपर लेटे रेडियोके लिये लिखी हुअी अेक 'स्क्रिप्ट' देख रहे थे। मुझे देखते ही बोले :--

"आअिये, आप बड़े मौकेपर आये। मैं याद ही कर रहा था।"

अचानक अुस कमरेकी ओर, जो आठ फीट लम्बा और आठ फीट ही चौड़ा था, मैंने दृष्टिपात किया। दरवाजेसे प्रविष्ट होते ही दायीं ओर वह पलंग था, जिसपर वह लेटे हुअे थे। दरवाजेके सामनेकी दीवार पर अेक 'ब्रेकेट' लगा हुआ था जिसपर राजमर्रा अिस्तेमालकी वस्तुयें रखी हुअी थीं। दरवाजेसे बायीं ओर अेक कुर्सी, जो लकड़ीके डिब्बेका रूपान्तर थी, रखी हुअी थी। सामनेवाली दीवारके साथ ही अेक 'रेक' रखा हुआ था जिसमें कुछ सोवियत, अंग्रेजी, बंगला अेवं हिन्दीका साहित्य था तथा अेक कोनेमें 'प्रतीक' की चंद प्रतियां थीं। दीवारोंपर चित्रोंके स्थानपर पेड़की सूखी टहनियां टँगी हुअी थीं। फिर भी वह छोटा-सा कमरा सुरुचिपूर्ण ढंगसे सुसज्जित था—जो अुनकी सुरुचिका द्योतक था।

"क्या देख रहे हैं, सहगलजो?" फिर स्वयं ही हंसते हुअे बोले, "कहीं अिन सूखी टहनियोंका 'अिन्टरव्यू' में अुल्लेख न कर दें।"

और फिर 'सिगरेट केस' मेंसे अेक सिगरेट निकालते हुअे बोले, "चलिये, पहले चाय पी आयें, फिर आप जो चाहें, पूछें।"

* * * *

चाय पीकर जब हम वापस लौटे तो मैं अुसी कुर्सी (डिब्बेके रूपान्तर) पर बैठ गया और वह भी अुसी प्रकार पलंगपर लेट गये।

"शुरू करें" रघुवीरजीने कहा।

हमारी बातचीतका सिलसिला यों शुरू हुआ।

"आपने 'कब' और 'क्यों' साहित्यिक क्षेत्रमें प्रवेश किया?" मेरा पहला प्रश्न था।

"अिसमें 'क्यों' का अुत्तर देना तो कठिन ही क्या, बल्कि असंभव ही है। 'कब' की बात भी अेकदम निश्चित नहीं कही जा सकती क्योंकि प्रथम रचनाका समय या प्रथम रचनाके प्रकाशित होनेका समय प्रायः साहित्यिक क्षेत्रमें प्रवेश करनेके बराबर नहीं होता... सच पूछा जाय, तो बात यह है कि काफी कुछ लिखने और लिखनेकी चेष्टा करनेके बाद अब मुझे अैसा लगता है कि लिखनेमें जीवनकी साधना अपेक्षित है। रचनाको दृष्टिमें रखकर जीवनकी साधना करना तो मैंने अभी वर्ष दो वर्ष पहले ही आरम्भ किया है। अिस प्रकारसे, जैसा साहित्यिकका कर्त्तव्य मैं समझता हूं, मैंने तभी ही साहित्यिक क्षेत्रमें पदार्पण किया।"

अपनी सर्वप्रथम रचना और रचनाके सर्वप्रथम प्रकाशमें आनेकी बात बताते हुअे अुन्होंने कहा :

"सर्व प्रथम रचना तारीखके हिसाबसे तो कोअी तुकबन्दी रही होगी। हां, वह अेक कहानी थी—जो किसीसे अेक चुटकुला सुनकर मैंने अुसके आधारपर लिखी थी। वह जनवरी सन् छियालीसमें लखनअूके रेडियो-केंद्रसे बच्चोंके प्रोग्राममें प्रसारित हुअी थी। अिससे पहले अेक कहानी 'बानर' से नकल कर जैसीकी तैसी मैंने अुसे अपनी रचना कहा था। मुझे याद है कि जब वह कहानी पिताजीने देखी तो अुन्होंने बहुत डाँटा था। प्रकाशित रचनाओंमें फिर वही तारीखके हिसाबसे 'हिन्दीपर बंगलाका प्रभाव' शीर्षक अेक लेख था जो 'कान्यकुब्ज अिन्टरमीडियेट कॉलिज मैगजीन' में छपा था। यूं जिसे मैं रचना कह सकता हूँ, वह 'आदिम संगीत' शीर्षक कविता है जो सन् ४७ में 'आजकल' में छपी थी।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किन-किन लेखकोंका अुनपर प्रभाव पड़ा, देशी-विदेशी दोनोंमेंसे कौनसे लेखक अुनको अच्छे लगे—अिस प्रश्नके अुत्तरमें अुन्होंने बताया :

"आधुनिक देशी लेखकोंमें मुझे निराला, प्रेमचंद, अज्ञेय, यशपाल और सभी समकालीन प्रतिभावान लेखक अच्छे लगते हैं; अर्थात् अपने-अपने गुणोंके कारण वे सभी बहुधा अुच्चकोटिकी रसानुभूति कराते हैं। प्राचीन कवियोंमें सभी रीतिकालीन कवि हैं—जो मुझे अच्छे लगते हैं।"

अुन्होंने फिर कहना आरम्भ किया—"पाश्चात्य लेखकोंमें अधिकांश मेरे प्रिय पुराने लेखक हैं। जैसे गद्यमें डिकन्स और जॉनसन; पद्यमें कीट्स, रॉबर्ट ब्राअुनिंग; गद्य-पद्य दोनोंमें डी० अेच० लॉरेन्स। अन्य विदेशी लेखकोंमें हैं, अुदाहरणार्थ फ्रेंचमें आंद्र मोरुवा, आंद्र गीद और जाँ पॉल सार्त्र। अिनकी रचनायें मैंने अंग्रेजीमें अनूदित रूपमें ही पढी हैं। मूल बंगलामें पढे साहित्यमें शरत्चन्द्र और आधुनिकोंमें ताराशंकर बंद्योपाध्याय, बुद्धदेव वसु और बनफूल जंचते हैं।"

"प्रभाव?—प्रभाव तो अेक अैसी वस्तु है, जो यदि वास्तवमें हो तो अत्यन्त अप्रत्यक्ष और निहित रूपमें हमें मिलता है। अतअेव अपनेमें किसीके प्रभावके लक्षण नहीं देख पाता। अभीतक जिन-जिनको पढ़ चुका हूँ, वे सभी मेरी भाषा और शैलीको बनानेमें अधिक सहायक रहे हैं, विचारोंको बनानेमें कम। विचारोंके विकासमें मेरे समकालीन, मेरी ही पीढीके लेखक-बंधु मुझपर किसी कदर अिस शक्लमें प्रभाव डालते हैं, कि अपने सत्यको मैं अुनके अुद्गारोंकी अपेक्षामें देख पाता हूँ। अिसके अतिरिक्त वे सभी अेक ही-सी सामाजिक परिस्थितिमें अन्वेषण करते हैं—अिससे वे मेरे लिये मान्य हैं। चुनांचे यदि आप पूछें कि आपपर किसका अधिक प्रभाव पड़ा तो अुसका यही अुत्तर है कि अधिक तो दूर—मुझपर प्रभाव ही किसीका नहीं पड़ा। मैं अपना सत्य स्वयं खोजता हूँ, वैसे वह चाहे कअी लोगों द्वारा पाया जा चुका हो।"

"क्या आपका भी यही मत है कि जब आप विकल होते हैं, रंजमें डूबे होते हैं—अुस समयकी कृतियाँ ही श्रेष्ठ बन पाती हैं या आल्हादमें?"

"देखिये, मैं यह समझता हूँ कि जब कलाकार विकल होता है तो अुसे विकल होना चाहिये और बहुत अधिक विकल होना चाहिये। जब वह अुल्लसित होता है तो केवल अुसे अुल्लसित होना चाहिये और बहुत अधिक अुल्लसित होना चाहिये। रचनाका क्षण तो अेक निराकुल, निरावेग समय होता है। जब अपनेसे थोड़ी दूर खड़े होकर कलाकार अपनेको विकल अथवा आह्लादित देखता है, अुसी क्षणमें—या अुन्हीं क्षणोंकी अेक शृंखलामें कलात्मक स्तरपर कोअी तथ्य पकड़ा जा सकता है, अन्यथा नहीं। व्यक्तिगत बात कहूँ तो यह सत्य है कि विकलता अर्थात् पीड़ाके अनुभवोंमें मैंने अधिक बार कुछ कहनेको पाया है, आह्लादके क्षणोंमें कम। सम्भव है अिसका कारण यह हो कि आजके हमारे जीवनमें विकलताके ही क्षण अधिक हैं। यों प्रत्येक बार अैन रचनाके समय, मुझे अच्छी तरह याद है, न मैं विकल होता हूँ और न प्रसन्न। परन्तु वैसी निर्विकार परिस्थितिमें भी अेक विकलता है। यह विकलता अपने अनुभवके स्वार्थको त्याग करनेकी पीड़ा है जो निर्वैयक्तिक होनेकी चेष्टामें निहित रहती है, अपने शरीरको मिले हुअे सुख अथवा दुःखको थोड़ी देर भूल जानेकी पीड़ा है। यह वह विकलता नहीं जिसका आपने अपने प्रश्नमें अुल्लेख किया है।"

"रघुवीरजी! क्या आपके लिखित और प्रकाशित साहित्यपर आलोचकोंने कभी मत प्रकट किया है?"

"हाँ, किया तो है। यद्यपि जहाँतक बन पड़ा है अुन्होंने मेरी प्रकाशित रचनाओंकी अुपेक्षा ही की है। वैसे तो कुल प्रकाशित रचनाओंकी संख्या लगभग ढाअी सौसे अधिक ही होगी, पर अेक तो वे सब आलोचनाके योग्य हैं भी नहीं, अिधर हालकी रचनाओंको छोड़कर, दूसरे हिन्दीमें नियतकालिक पत्रों प्रकाशित साहित्यको कोअी महत्त्व ही नहीं दि जाता। 'दूसरा सप्तक' और अुसके बादकी प्रकाशि रचनाओंपर यत्रतत्र लोगोंने अपनी नाराज़गी प्रकट है। आशा करता हूँ कि शीघ्र ही प्रकाशित होनेवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरे कविता-संग्रहके बाद अुन्हें अपना मत प्रकट करनेमें अधिक रुचि होगी।"

"अप्रकाशित रचनायें रसिकोंमें तो आदर पाती ही हैं, यद्यपि रसिकोंकी संख्या लिखनेवालोंसे भी कम है, क्योंकि हिन्दीमें तो जो रसिक होता है, वह तुरन्त लेखक बन जाता है, समुदायोंमें-- जैसे कवि-सम्मेलन आदि-- सदा लोग मेरी गम्भीर-से-गम्भीर रचनापर या तो (क्या कहते हैं अुसे) निर्विकार भावसे बैठे रह जाते हैं-- या हँस देते हैं।"

"आपके साहित्य-प्रकाशनका अुद्देश्य क्या है-- केवल स्वान्तःसुखाय या लाभ अुठानेकी वृत्ति ?"

"लाभ-वृत्ति तो नहीं है, या यूं कहिये कि फ़िल-हाल नहीं है, या यूं कहिये कि ये सब कुल मिलाकर अेक बहुत बड़ा संघर्ष है। जो साहित्यिक अपनी सामाजिक और सांस्कृतिक ज़िम्मेदारी मानता है, वह रचनाको अेक कर्त्तव्य समझता है! अिस कर्त्तव्यकी पूर्त्तिके हेतु वह अनेक प्रकारके अनुभवोंमेंसे गुजरता है, अनेक प्रकारके अुत्पीड़न (शारीरिक और मानसिक दोनों), अनेक प्रकारके द्वन्द्व अपने तनमनपर झेलता है। अिस कर्त्तव्यमें लगे रहकर वह कोअी अैसा कार्य भी करता चले जो तत्कालीन सामाजिक व्यवस्थाम अर्थलाभ कराता हो--असंभव है। अिस प्रकार साहित्य-सृजन ही अुसकी जीविकोपार्जनका साधन होना चाहिये; पर यह हो नहीं पाता। अेक तो साहित्यकार सर्वदा तत्कालीन सामाजिक व्यवस्थाके विरुद्ध होता है, दूसरे अपने आदर्शोंका संसार पृथक् बनाकर अुसमें रहना जीवनसे मुँह मोड़ना है। अिसलिये द्वन्द्व यह हुआ कि जो हमारा कर्त्तव्य है, वह समाजमें कर्म नहीं है। फिर क्या किया जाये! कोअी समझौता? समझौतेके स्वरपर जीवनको सम्पन्न अवश्य बनाया जा सकता है, खूब खाया-पिया जा सकता है, परन्तु अुसमें साहित्यकारकी करुणाका बलिदान हो जाता है। अिसलिये मैं यह कहूँगा और यह मेरी अपनी बात है, मुझ तक ही सीमित है कि अेक सामाजिक अुद्देश्य अर्थात् सकल जीवनको समृद्धतर बनानेके अुद्योगमें योग देनेके लिये मैं लिखता हूँ। अुससे जो धन प्राप्त होता है, अुसीसे संतोष करना पड़ता है। जब कभी किसीकी जरूरतपर कुछ लिखता हूँ तो अपने अनुभवके बाहरकी अर्थात् अपने पाये हुअे सत्यके विरुद्ध कुछ नहीं लिखता। कभी-कभी ये दोनों बातें अेक साथ हो सकती हैं कि अीमानदारीके साथ लिखा भी जाय और अुससे आय भी हो। पर यह स्थिति अुन दोनों स्थितियोंसे भिन्न है जहां (१) रुपया कमानेके लिये बाजारू चीजें लिखी जायें और (२) निष्ठाके साथ अपनी बात कहनेके पक्षमें धनका मोह बिलकुल छोड़ दिया जाय।"

"क्या आप स्वयंको शत प्रतिशत साहित्यिक समझते हैं?"

"नहीं क्योंकि शत प्रतिशत साहित्यिक होनेका अर्थ है शत प्रतिशत जीवन जीना। यह किससे संभव हो पाता है? हां, जितना संभव हो पाता है, अुतना ही यदि किसीको साहित्यिक माना जाये तो कहूंगा कि लगभग पचास प्रतिशत अपनेको साहित्यिक मानता हूँ। अिसमें अेक बात और है कि साहित्यिक पूरी तौरसे जीवनका अनुभव ही नहीं करता बल्कि रह-रहकर अपने सारे अनुभवोंकी मांसलताका त्याग करता है। शारीरिक अनुभवकी तहमें जो सूक्ष्म सत्य होता है, अुसे कह पानेके लिये वह अुसके स्थूल रूपका मोह छोड़ दिया करता है। यह सब मुझसे बहुत कम हो पाता है। अनेक अैसे अनुभव हैं जिन्हें बहुत तीव्रतासे, झकझोर देनेवाली तीव्रतासे, अपने तनमनपर झेलकर फिर मैं अुन्हें दोबारा न याद कर पाया हूँ, न कह पाया हूँ। अवश्य ही अैसे अनुभव मुझमें कुछ जुड़ गये होंगे-- यही अेक सान्त्वना है।"

"आपकी दृष्टिसे, रघुवीरजी, साहित्यका अुद्देश्य क्या है?"

"साहित्यका अुद्देश्य" रघुवीरजी पलंगपरसे अुठ बैठे थे और कोटको निकालकर 'हैंगर' पर टांगते हुअे बोले, "जिस समाजमें रहकर वह लिखा गया है अुसका, सब समाजोंका और सकल जीवनका विकास करना है। सुधार, क्रांन्ति अथवा निर्माण--ये सब साहित्यके, अलग-अलग अवस्थाओंमें अलग अलग अभिप्राय हैं। मनोरंजन या आत्म-तुष्टि साहित्यका अुद्देश्य कदापि नहीं है। ये दोनों तो केवल प्रासंगिक प्राप्तियाँ हैं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"और वैसे तो सहगलजी, अिस विषयपर अेक पोथी भी लिखी जा सकती है हालाँकि मैंने लिखी नहीं है, फिर भी यह काफी होगा।"

अिधर घड़ीने टन-टन करके बारह बजाये। काफी वक्त गुजर गया था, और बातोंका क्या, वे तो द्रौपदीका चीर हैं,जो कभी समाप्त नहीं होता। दूसरे दिन नौ बजेका फिर समय निश्चितकर, क्योंकि दूसरे दिन शामको रघुवीरजीको लखनअू जाना था, मैं घर चल पड़ा।

* * * *

दूसरे दिन मैं ९ बजे ही पहुँच गया। रघुवीरजी बाहर मैदानमें धूप ले रहे थे। सर्दियोंमें धूप कितनी सुखद होती है, यह मैंने वहाँ बैठते ही जाना क्योंकि रास्तेभर साअिकिलपर आते-आते हाथ हिम समान ठण्डे और जम-से गये थे और नाकसे पानी बह रहा था। रघुवीरजी हाथमें अखबार और मुँहमें पाअिप लिये कुर्सीपर बैठे थे। सामने अेक कुर्सी और पड़ी थी— मैं वहीं जाकर बैठ गया।

गत प्रश्नोंकी श्रृंखला जोड़ते हुअे और रघुवीरजी-का स्वीकारात्मक 'मूड' देखकर मैंने पूछा, "आपने अपनी रचनाओंमें किस धाराको जान व अनजानमें प्रश्रय दिया है?"

"मैंने आपके किसी पिछले प्रश्नके अुत्तरमें कहा था कि लेखक स्वयं अपने लिये देखकर और सोचकर किसी नतीजेपर आता है, अुसमें और अितना जोड़ना चाहता हूँ कि वह अिस अनुसंधानमें आजीवन लगा रहता है। यद्यपि अिसका यह अर्थ नहीं कि वह कभी भी किसी निश्चयपर नहीं आता तथापि अिसका यह भी अर्थ नहीं कि वह हर समय क्षणमति रहता है। अिसमें मैं यह निष्कर्ष निकालना चाहता हूँ कि विचारधारा तो लेखककी बनती रहती है। अैसे भी लेखक हैं जो किसी प्रचलित धाराको पकड़कर अुस विचारधाराके पोष-कोंका बखान करने लगते हैं, अैसे भी हैं जो किसी प्रचलित धाराको अपने अनुभवोंकी कसौटीपर जाँचते हैं। अिन दोनोंमें अन्तर यही है कि पहलेवाले भाट हैं, और दूसरेवाले कवि। कुछ अिस मर्य्यादाका ध्यान रखकर मैंने जानमें तो किसीको नहीं, और अनजानमें भी शायद ही किसीको अपनी विचारधारा बनाया हो।"

फिर हंसते हुअे बोले, "अिस सम्बन्धमें यदि पहले मैंने कुछ घोषणा की हो तो वह रद्द समझी जाय।"

मैंने पूछा, "'दूसरा सप्तक' में जो आपकी कवितायें संकलित हैं, अुसके सम्बन्धमें क्या आपने कभी आलोचक, प्रकाशक और अपने पाठकोंकी अनुभूति यहण करनेकी चेष्टा की है?"

"अुस पुस्तकपर तो काफी कुछ कहा गया है, मेरे विषयमें अुतना नहीं। अधिकांश आलोचकोंने मेरी अुन कविताओंमें कोअी विशेष रस नहीं प्राप्त किया। आलोचकोंमेंसे कुछ हैं—डॉ. देवराज, प्रकाशचन्द्र गुप्त, प्रभाकर माचवे, नामवरसिंह, गोपालकृष्ण, डॉ. रामकुमार वर्मा, और अिलाहाबादकी गोष्ठी परिमल, लखनअू लेखक-संघ और दिल्लीके शनिवार-समाजमें भी 'दूसरा सप्तक' अेक आलोच्य पुस्तक रही है। यह सब मुझे याद नहीं कि किसने क्या-क्या कहा। कुल मिलाकर यह कह सकता हूँ कि समूची पुस्तककी प्रशंसा कम हुअी है, निन्दा अुससे अधिक हुअी है और चिन्ता सबसे अधिक।"

"क्या आपका यह विश्वास है कि कलाकार और साहित्यिक जन्मजात ही होते हैं?"

"हां भी और नहीं भी। यानी अेक सीमातक हां और अेक अुससे बड़ी सीमा तक नहीं। क्योंकि प्रत्येक मनुष्यमें अभिव्यक्तिकी शक्ति और व्यापकतर अभिव्यक्तिकी संभावना रहती है। कलात्मक स्तरपर वस्तुओंका अनुभव करने और अुस अनुभवके सत्यको कह पानेकी क्षमता कुछमें ही होती है। जिनमें होती है, वे भी बिना रस-ग्रहण सीखे अर्थात् बिना अपने आपको कलाबोधकी शिक्षा दिये साहित्यिक नहीं बन जायगे। अिसलिये शिक्षा और वातावरणके प्रभावसे किसी व्यक्तिकी कलाकुशलता बढ़ती है, अनुभव और साधनासे वह विचारवस्तु पाता है।"

"तो साधनाका आपकी दृष्टिसे क्या महत्व है?"

"साधना जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें अुतरने और अुसमें रमकर भी थोड़ा निर्लिप्त रहनेको कहते हैं। जिस सीमा तक वह निर्लिप्ति किसीके द्वारा सम्भव रहती है अुस सीमा तक वह (थोड़ा रुककर) अपना सामाजिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभिप्राय समझ पाता है। अुसी सीमा तक वह दूसरोंके लाभके लिये अुसे प्रचारित भी कर पाता है।"

"जब आपने लिखना आरम्भ किया था, अुन प्रारम्भिक दिनोंकी पत्र-पत्रिकाओंकी विचारधारा और मान्यताओंमें आज कितना अन्तर हुआ है?"

अुन्होंने तुरन्त अुत्तर दिया, "ज़मीन-आसमानका। आज जितनी अच्छी पत्रिकायें हैं, वे बन्द होती जा रही हैं। अुनके पढ़नेवालोंकी संख्या बढ़नेके सब कारण मौजूद होते हुअे भी बिक्री अैसी ही चीजोंकी अधिक हो रही है जो आजके जीवनके अभाव और कटुतासे साधारण पढ़नेवालोंको कोअी सस्ती-सी युक्ति दे सकें। जैसे यौन सम्बन्धी--ग़लत-सही, संभव-असंभव, नितान्त काल्पनिक अथवा घोर यथार्थ, सब प्रकारके किस्से--अपराध, हत्या, सुगमंवग पहेली अित्यादि। हिन्दी पढ़नेवालोंकी संख्या दिन-दिन बढ़ रही है। अैसे व्यक्तिके लिये जिसका साहित्य, कला, संस्कृति, समाज, विज्ञान, दर्शन आदिका ज्ञान शून्यके समान है और जिसके पास व्यापारमें लगानेके लिये पूंजी है, बढ़ती हुअी संख्या, शोषणका अेक अच्छा क्षेत्र है। जिस व्यक्तिकी परिभाषा मैंने अभी बतायी है, अुसका पर्यायवाची शब्द है हिन्दीका प्रकाशक। 'माया', 'मनोहर कहानियाँ' की ज्वलंत परम्परामें हज़ारों भौंडे, कुरुचिपूर्ण अुपन्यास और पत्रिकायें आज बाज़ारमें फैलकर सन्तुलित और सदुद्देश्य साहित्यको ग्रसती जा रही हैं। मैं समझता हूँ कि अिसका प्रतिकार हमारे हाथमें है। 'सरस्वती', 'चाँद', 'सुधा' और 'माधुरी' की १५-२० वर्ष पुरानी फाअिलें अुठाकर देखें तो अुस प्रतिकारका नुस्खा हाथ लगेगा। हम सभी अभिजात लेखकोंका आभिजात्य हमारे समाजकी अैतिहासिक अुत्पत्ति नहीं है। वह बहुत करके विदेशी या अर्द्ध-विदेशी परम्पराओंसे निकला है। अिसीसे हम सामान्य पाठकके मर्मको नहीं छू पाते। हमारे पुरखे पत्रकार अिसी मिट्टीकी पैदावार थे। वह सहज भावसे 'सरस्वती' जैसी शुद्ध साहित्यिक पत्रिकामें जनसाधारणके दैनन्दिन जीवनकी तुच्छ समस्याओंपर अुत्साहके साथ विचार-विमर्श करते थे। हम आज अैसा कोअी काम या तो असाहित्यिक मानेंगे या घटियापन। आवश्यकता अिस बातकी है कि अिस पूर्वग्रहको त्यागकर हम अेक अैसा पत्र निकालें जिसमें पाठकके प्रति हम मिलनसार, समवेदनशील और सहज हों।"

"आपकी दृष्टिसे वर्तमान दिशाको देखते हुअे क्या आजका साहित्यकार दुःखी है?"

"अवश्य" अुन्होंने संक्षिप्त-सा अुत्तर दिया।

मैंने पूछा, "तो आजका साहित्यकार किस प्रकार अेक सच्चा साहित्यिक बना रहकर जीवित और सुखी रह सकता है?"

फिर संक्षिप्त-सा अुत्तर मिला, "अपने दायित्वको समझकर और कर्त्तव्यको निभाकर।"

"यदि आप अपनेको साहित्यिक-क्षेत्रमें सफल मानते हैं, आपको यश, कीर्ति और अन्य कोअी लाभ किसी भी प्रकारका हुआ है तो अुसका रहस्य क्या है?"

"बात यह है, मित्र! कि यह सब अभीतक मेरे लिये रहस्य ही है।"

"साहित्यमें व्यक्तित्व और कृतित्वमें साम्यताका भी कुछ महत्व है?"

"हाँ, वास्तवमें, समाजमें जो व्यक्ति साहित्यकार है, वह केवल अुसके साहित्यिक व्यक्तित्व तक पहुँचनेका माध्यम है। हमारा शरीर, अिन्द्रियाँ और तनरक्षाकी बुद्धि मिलकर हमारा सांसारिक व्यक्तित्व बनता है। परन्तु हमारा आदर्श व्यक्तित्व हमारी रचना अथवा परोपकारमें व्यक्त हुआ करता है। अतअेव साहित्यिक-व्यक्तित्व नामकी चीज साहित्य-स्रष्टाके लिये अनिवार्य है। अिस प्रकार दो चेहरे रखना साहित्यकारके लिये क्षम्य है क्योंकि वहाँ अेक चेहरेसे वह अपना कर्म करता है और दूसरेसे कर्त्तव्य।"

मैंने पूछा, "आपकी दृष्टिसे राजनीति और साहित्यका क्या कुछ सम्बन्ध है?"

"बहुत गहरा सम्बन्ध है, लेकिन सीधा नहीं। अैसा कह सकते हैं कि वही सम्बन्ध है जो किसी स्त्रीमें और अुस पुरुषमें होता है जिससे अुसका विवाह तो नहीं हुआ है पर जो अुसका प्रिय है। राजनीति जीवनका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेक अंग है और साहित्य जीवनका सर्वांग। अिस प्रकार साहित्यकारके अनुभवोंमें राजनीतिक चेष्टा भी आती है। पर साहित्य तक पहुंचनेकी अुसकी पद्धति अितनी सीधी नहीं जितनी कि राजनीतिक पार्टियोंका प्रचार करनेवाले लेखकोंमें दिखायी देती है।"

अभी रघुवीरसहाय प्रश्नका अुत्तर दे ही पाये थे कि चिर-परिचित हमारे वकील साहब आ गये और लगे बच्चोंकी तरह शोर मचाने : "भूख लगी है। चलिये, पहले चाय पी लें ? हां, और देखिये सहगलजी, आप 'अिन्टरव्यू' भी वहीं लेते रहिये। चाय भी पी जाये और साथमें आपका सिलसिला भी चलता रहे। कहिये, कैसी रही ?" और अितना कहकर वह हमें 'रेस्तोरां' की ओर ले चले।

'रेस्तोरां' में पहुँचकर और बॉयको चायका आर्डर देते हुअे मैंने रघुवीरजीको संबोधित करते हुअे पूछा, "रहस्यवादसे लेकर प्रगतिवाद तकके वादोंके विषयमें आपका क्या अभिमत है ?"

"रहस्यवाद और छायावाद अनजान व्यथाकी अभिव्यक्ति है। प्रगतिवादमें आदर्श तो यह है कि हम अपनी व्यथाका सामाजिक कारण और मुक्तिका मार्ग ढूँढें, पर अैसा हो नहीं सका। हिन्दीमें जिन लोगोंने मार्क्सवादको अपने या औरोंके जीवनमें घटित होते देखा भी नहीं, अुन्होंने मार्क्सवादी पार्टी और अुसके बताये रास्तोंका गुणगान करना ही प्रगतिवाद समझ लिया। अिस प्रकार सामाजिक अत्याचारका दर्द अुठाये बिना ही तीक्ष्ण समवेदनावाले व्यक्ति भी भागकर पार्टीकी दुहाअी देने लगे हैं। अिस प्रकार प्रगतिवाद भी अुतना ही सामाजिक बन गया है जितना कि रहस्यवाद था।"

वकील साहब, जिनका चायका प्याला रिक्त हो चुका था, बोले, "सहगलजी, अिनसे यह पूछिये कि ये अब काफीसे ज्यादा हँसते क्यों नहीं ?"

"भअी, मैं खुद ही बता देता हूँ कि यह आदत बदल रही है।" लेकिन साथ ही अिसके वह धीरेसे हँस पड़े।

वकील साहब बोले, "गाजरका हलुआ खायेंगे ?"

रघुवीरजी बोले, "आप जो चाहें, मंगा लें।"

प्रश्नोंकी शृंखला ठीक करते हुअे मैंने अुनसे साहित्यके प्राचीन मान-मूल्यों और स्थापनाओंका वर्तमान साहित्यमें क्या कुछ मूल्य है, अिस संबंधमें पूछा।

वह बोले, "बहुत बड़ा मूल्य है। हमारी साहित्यिक समवेदना और प्रतीतिको बनानेमें पिछला साहित्य महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है, परन्तु किसी पिछले साहित्यिक कृतित्वको अर्थात् अुसके विषयवस्तु और शैलीको आजके लिये अन्यान्य या अनिवार्य बताना मूर्खता है।"

"आपकी दृष्टिसे हिन्दी-साहित्यमें किस प्रकारका साहित्य अपेक्षित है ?"

"अच्छे प्रकारका।" अेक संक्षिप्त-सा अुत्तर मिला।

"अेक साहित्यिकके लिये जिस प्रकार लिखना अनिवार्य है, अिसी प्रकार दूसरोंकी कृतियोंको पढ़ना भी क्या अनिवार्य है ?"

"बिल्कुल। क्योंकि रचना नामक क्रियाके दो आनुषंगिक हैं— लिखना और पढ़ना। आजके बड़े-बड़े साहित्यिक अपने यशपर जी रहे हैं या घटिया लिख रहे हैं, पढ़ते कुछ नहीं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रलय

: श्री गंगाधर गाडगीळ :

स्टेशनकी घड़ीमें १० बजकर २५ मिनट हो गये थे। घड़ीकी छोटी सुओ, डाँटनेके लिये अूपर अुठायी गयी तर्जनी * की तरह दिखायी दे रही थी। कोड़ा फटकारते ही नीची गर्दनसे निश्चित काम करनेवाले सरकसके खूँखार जानवरकी तरह रेल स्टेशनमें दाखिल हुओ। और सफेदपोश लोगोंका अेक बड़ा-सा रेला नियमित प्रवाहसे बहने लगा। स्टेशनसे बाहर जाते समय भीड़ हो गयी कि सब पंक्ति बाँधकर खड़े हो गये! अेक महिला आयी और सबने अपने शरीर संकुचित कर अुसको जानेके लिये रास्ता बना दिया। खट्-खट्-खट् स्टेशनका चक्करदार फाटक घूम रहा था। अेक-अेक आदमी बाहर अुगला जा रहा था। कलमें अिकन्नी डालते ही प्लैटफॉर्मका टिकट बाहर आता है न, ठीक अुसी तरह।

अिसी समय अेक आदमी जोरसे चिल्लाकर बोला—"बाबूलाल! ओ बाबूलाल! अरे ठहरो। अिन्दूकी शादीकी बात कहाँ तक पहुंची है?" और सबकी आँखोंमें कुतूहल खेलने लगा। कुछ अेकके गालोंपर हँसी लड़खड़ाने लगी थी। यह सब देखकर रघुनाथने मन ही मन विश्वास किया कि ये आदमी ही हैं और भीतर ही भीतर अुसको मतली-सी आने लगी। तलवोंके नीचेकी मिट्टी खिसकने लगी।

—अेक धब्बा-सा पुलिस चौराहेके बीचोबीच खड़ा था और अुसके आसपास आवागमनकी जाली-सी बुनी जा रही थी। झट् पुलिसने हाथ अूपर अुठाया—अितना-सा माचिसकी तीली-सा! और अेकाअेक मोटरोंका ताँता जहाँका तहाँ रुका तथा आदमियोंकी आवागमन रूपी अवरुद्ध नदी अुस ओर बहने लगी। सबके कदम जल्दी-जल्दी अुठ रहे थे। साढे दस बजे दफ्तरके हाजिरी-रजिस्टरमें हस्ताक्षर हो ही जाना चाहिये—बराबर दस तीसको!

रघुनाथ आश्चर्यविमूढ़ होकर सारा दृश्य देख रहा था। सुव्यवस्था पहरा दे रही थी। पुलिसका जरासा हाथ हजारों आदमियोंकी गतिविधि नियंत्रित कर रहा था। घड़ीकी वह कुरूप सुओ सबको अुंगली दिखाकर डाँट सकती थी। नारीकी छींटदार साड़ी देखते ही मार्ग देनेके लिये सबके शरीर संकुचित हो जाते थे। राह चलते आदमियोंकी आँखोंमें आतंक और पागलपन नहीं था। किसीके मुखपर द्वेष और अुत्पीड़नकी रेखा नहीं थी। वासनाका निर्लज्ज अेवं बीभत्स प्रदर्शन कहीं नहीं हो रहा था। दमकते शस्त्रोंसे आदमीके टुकड़े बनाकर कोओ खिलखिला नहीं रहा था।

सारा व्यवहार परस्पर विश्वास और निर्भयतासे चल रहा था। कोओ 'टिफिन कैरिअर' लटकाकर निर्द्वन्द्व चला जा रहा था। मानों सोच रहा हो कि दोपहरमें कामसे फुर्सत पाते ही दो कौर खाकर समाधानकी साँस लूँगा! जीवनकी गतिविधिपर जैसे किसीको संदेह ही नहीं। रास्तेके बीचोबीच, अेक दूकानके शोकेसमें, जरासे शीशेकी आड़में हजारोंकी कीमतके आभूषण पड़े थे। लोग निर्विकार दृष्टिसे शीशेसे नाक चिपकाकर अुनकी ओर देख रहे थे। किसी महिलाका आँचल हवासे अुड़ा और लोगोंमें कितना बड़ा कहकहेका तूफान-सा अुठ खड़ा हुआ। चलते-चलते अेक आदमी गलतीसे दूसरेसे टकरा गया और अुस समय जो निरर्थक तू-तू मैं-मैं हो गयी अुसे देखकर रघुनाथ अुदासीसे मुसकुरा दिया।

मनुष्य-जीवन अितना सादा और निरीह हो सकता है! कल्पना मात्रसे रघुनाथको बड़ा अचरज हुआ—लेकिन मनको काफी तसल्ली मिलने लगी। अुसे

* अंगूठेके पासवाली पहली अुंगली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगा कि अब तकियेमें सिर देकर निश्चिंत मनसे गहरी नींद लेलें। वह अितना थक गया था।

गत दो-तीन महीनोंमें अुसे जो तजरबा हुआ अुससे जीवनकी जड ही अुखड़ चुकी थी। अितने भयंकर अनुभव आदमी पा सकेगा—आदमीका मन अैसा तनाव सह लेगा—अिसमें जैसे अुसका विश्वास ही नहीं बैठ रहा था। ज्वालामुखीका विस्फोट, धरतीके अुदरमें कितनी बड़ी आग जल रही है और अुसपर पड़ा हुआ मिट्टी-पत्थरका आवरण कितना कमजोर है, अिसकी कल्पना देता है। मानवी मनोवृत्तिका वह विस्फोट, वह प्रलय देखकर हमारा यह दैनिक जीवन कितनी निर्बल नींवपर आधारित है अिसका अनुमान रघुनाथको हो गया था। हवामें वह अुछाल दिया गया था और हर पल जैसे गिरगिराते हुअे नीचे आ रहा था। अबतक पाँव धरतीपर नहीं टिके थे और धरतीपर सही-सलामत आ जायगा यह विश्वास भी वह खो चुका था।

क्योंकि, अुसकी अनुभूतिका सत्य नग्न था; बीभत्स, भयानक, रौद्र सब कुछ था। देखते-देखते हँसने-बोलनेवाले आदमी पागल बन गये थे। अिन पागलोंका झुंड बवंडरकी तरह दौड़ता-गरजता अुसकी बस्तीमें घुसा था। दरवाजे तोड़कर वे लोग बेधड़क घरोंमें घुस पड़े। लोगोंके चित्कारसे दिमाग टुकड़े-टुकड़े हो गया। खिड़कियोंसे अुछालकर बच्चे बाहर फेंके गये। देखकर आँतोंमें बल पड़ने लगा। बड़े-बड़े आदमी जहांके तहाँ दिङ्मूढ थे। अेक युवतीपर निष्प्राण होने तक, अेकके बाद अेक—अनेकोंने अत्याचार किया जिसे देखकर देहका रक्त नीला पड़ गया। मनकी भावनामें सड़ाँध पैदा हो गयी। अुन शैतानोंकी आँखें अुखाड़कर जहरीले कीड़ोंसे नुचवानेकी अिच्छा हो गयी। और मानो वैसा कर ही डाला हो अिस भावनासे रघुनाथ बार-बार हाथोंको धो डालनेका-सा कर रहा था। अुसे असंभव-सा प्रतीत हो रहा था कि वह अुन्हीं हाथोंसे मुँहमें कौर डाल सकेगा। वश चलता तो वह अुन हाथोंको काट डालता। ये हाथ अुसीके हैं अिसमें भी सन्देह था। अिन्हीं हाथोंसे खाना खाते-खाते मतली सी आती और वमन हो जाता। तभी तो अुसकी बूढी माँ अुसे अपने हाथों भोजन कराती..... ...

हाँ, तो अुसी समय किसी आततायीने श्याम-सुन्दरकी मूर्तिपर पेशाब कर दी। दूसरे दो-तीन आदमियोंने सारी औरतें अिकट्ठी कीं और ढोरोंकी भाँति अुन्हें हाँकते हुअे ले गये। क्रन्दन, चीत्कार रहित, निःशब्द-सी वे चुपचाप चली गयीं। वे तब किसीकी मातायें नहीं थीं, बहनें नहीं थीं, गृहिणियाँ भी नहीं थीं। क्षणिक रावषसी काम-वासनाके हाथोंमें खेलने-वाली रंगीन पुतलियाँ थीं।

दूसरे कुछ लोगोंने सारे पुरुष अिकट्ठे किये और फिर अुनसे वे अपना मन बहलाने लगे। अेककी आँखें भालेकी नोक चुभाकर फोड़ी गयीं और वह अंधा बनकर टटोलने लगा तो सब हँस पड़े। किसीसे वह टकरा गया और अुसने लतियाकर अुसकी कमर ही तोड़ दी। पीड़ाका अन्त करनेवाली मृत्युका आगमन हो, तबतक भाग्यके भरोसे, वहीं धूलमें मुंहकी खाये पड़ा रहना पड़ा। अुसकी चीख-पुकार और व्याकुलता देखकर रघुनाथको अनुमान होने लगा जैसे अुसका सारा लहू नीला पड़ता जा रहा है अथवा दिमागके पिछले हिस्सेका खून सड़कर पस (पीप) बन गया है। बाहर चू रहा है।

अुन पकड़े गये आदमियोंमेंसे अेक गरम तबीयतका आदमी विरोध करने लगा तो सबने मिलकर अुसे नीचे गिराया। अुसके मुँहमें पेशाब की, जबर्दस्ती निगलनेके लिये दबाया और पत्थरसे कुचल-कुचलकर अुसे मार डाला।

और यह देखकर बचे हुअे आदमी जिन्दा लाश बन गये। अुनको लातोंसे कुचला, भाले चुभाये, तब भी मामूली केचुअें जितनी भी छटपट अुन्होंने नहीं की। तब अुन्हें छेड़नेमें अुन शैतानोंको कोअी मजा नहीं आया तो अेक रस्सीसे सबको बाँधकर, अुनपर घासलेट अुंडेलकर आग लगा दी। छटपटाकर भागनेका अुनका प्रयास देखकर शायद अुन शैतानोंको बड़ा मजा आया!

और फिर सबके चेहरे गंभीर हुअे। लूट अिकट्ठी की गयी। अेक ही गाँवसे आये हुअे वे दंगायी सारी लूटी हुअी चीजें आपसमें बाँटनेकी तैयारी करने लगे। न्याय भी तो कोअी चीज है। लुटेरोंसे भी न्याय कभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छूटा है ? तभी लूटकी कोअी कीमती चीज अेक लुटेरा सबकी आँखें बचाकर चुपचाप जेबमें डालने लगा। दूसरेने देखा और वह अुसपर टूट पड़ा और सभी अुसपर पिल पड़े। वह अधमरा हो गया।

अिसी समय अेक डेढ़ सालका सुन्दर बालक कहींसे बाहर निकल आया और निर्भयतासे अेक आदमीके कुर्तेका छोर खींचकर बोला— "चाचा ! चाचा !"

सबने विस्मयसे बच्चेको देखा। जिसका कुर्ता बच्चेने खींचा था, वह आदमी स्नेहगद्गद हो गया। अुसने बच्चेको गोदमें अुठाया और प्यारसे सहलाकर बोला— "कितना प्यारा बच्चा है ! अिसे मैं ले जाअूँगा। अिस काफिरके बेटेको ....."

पर दूसरे आदमी सुनकर शोर मचाने लगे— 'क्या वे बच्चे बटोरनेके लिये आये हैं ?' अुन्हें लूटना है— अस्मत, धन और शायद अिन्सानियत भी ! अनिच्छासे अुसने बच्चेको गोदसे अुतार दिया और फिर अुछलकर बोला— "खबरदार ! अिसको किसीने मारनेकी कोशिश की तो अुसकी लाश गिरा दूँगा।" वह अितनीसी बात अिस तरह बोला कि अुसके साथी चौंक पड़े। सबकी ओर पीठ फेरकर वह अकेला ही आगे बढ़ा और बीचमें कराहते हुअे अेक अधमरेके सीनेमें खच्चसे अपना भाला गाड़ दिया। अुसका वात्सल्य अितना आरपार हो गया था।

रघुनाथ साँस रोककर यह सब अपने कमरेसे देख रहा था। कहीं भाग जाना भी असम्भव था। शरीर अिस तरह जड़ बन गया था मानों मनोंका बोझ पाँवोंमें बँधा हो। आतंकसे शरीरकी नसें तन गयी थीं और डरका गिरमिट मन खोखला करता जा रहा था। रघुनाथने सिर खुजलाकर देखा - हाथ हिला सकनेकी शक्तिपर अुसे आश्चर्य हुआ। अितना सब सहकर भी वह जीवित था। अुसका अेक मित्र भी साँस रोककर अुसके पास ही खड़ा था। दोनोंको अेक दूसरेकी ओर देखनेकी अुत्कट अिच्छा हो रही थी, लेकिन आँखें मिलानेकी हिम्मत नहीं पड़ी। दोनों परस्पर विरोधी दिशाओंको मुँह मोड़कर बुत बने खड़े थे।

रुककर लुटेरोंने दूसरा हमला किया; रघुनाथ छिपा था अुसी मकानपर। सब चीखने लगे। दोनोंकी देह काँपने लगी। पसीनेसे भींग गयी। पीछे घूमकर दोनोंने अेक दूसरेकी ओर देखा। अेक दूसरेके मुखोंपर अंकित भयंकर परिवर्तन देखकर अुनके होश अुड़ गये। हमलावरोंकी धूम बढ़ती ही गयी। रघुनाथका साथी अुस्तरा निकाल लाया और गर्दनपर घुमाकर खूनसे लथपथ गिर पड़ा। साथीके हाथमें रक्त रंजित अुस्तरेको देखकर भयंकर आतंककी सनसनी रघुनाथकी देहमें थर्रा अुठी। क्षणभरके लिये दुनिया डोल गयी और बेहोश होकर वह भी गिर पड़ा।

अनेक यंत्रणायें सहकर रघुनाथ भाअीके पास बम्बअी आया था। कअी रोज तक शून्य मनस्थितिमें डूबा रहा। मनपर काबू रखनेवाली ताकत ही मिट गयी थी। और मन हवा, पानी और लूसे चपत खानेवाला बंजर बन गया था। वह घंटों चुपचाप पड़ा रहता। कभी-कभी दिमागमें तूफान अुठता कि हर आदमीका गला घोटकर ज़र्रे-ज़र्रेको तहस-नहस कर डाले और अुस विनाशके ढेरपर पंजा रखकर, गुर्राकर दुनियाको ललकारते हुअे खड़ा रहे। कभी आतंककी अनुभूतिसे अुसका रोम-रोम टूटने लगता और असहायताकी तलहीन कंदरामें वह बार-बार जा गिरता। रह-रहकर कै होती। लगता कि अँतड़ियाँ अुखड़कर बाहर निकल आयेंगी। अबतक अुसको विश्वास नहीं हो रहा था, कि अितना कड़वा अनुभव और तप्त भावना आदमी सह लेगा। लेकिन आश्चर्य है, अितना सब भुगतकर भी वह जीवित था--पागल भी नहीं बना।

समय बीत गया। अुसने सारा हलाहल हजम कर लिया। अब आपबीती दूर की और अनुभूति परायी प्रतीत होने लगी। जीवन अनपेक्षित रूपसे बनी हुअी लकीरपर पूर्ववत् चलने लगा। वह भटकने लगा, बोलने लगा, हँसने लगा और सबकी तरह गुस्सा भी करने लगा। मिटी हुअी अुम्मीदें फिर हरी होने लगीं। वह खूब भटकने लगा, सिनेमा देखने लगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दस-बीस कप चाय पीने लगा, सुबहसे रात १० बजे तक।

अुसे अिस विशाल नगरमें अपना स्थान खोजना था। अुसको नौकरी चाहिये। रहनेके लिये मकान चाहिये। सौभाग्यसे, बाल-बच्चोंको अुसने अिधर पहले ही भिजवा दिया था और अब अुसको नये सिरेसे जिन्दगीकी शुरूआत करनी थी। चार आदमियोंकी तरह वह भी अिस कोशिशमें लग गया और यथासमय अुसकी कोशिश पूरी भी होगी।

लेकिन रघुनाथ जब काममें अुलझा होता तो अुसके मनका अेक कोना दुनियाको कुतूहलसे देखता। क्योंकि अुसका अनुभव भयंकर था। मानवी वृत्तियोंका महाप्रलय अुसने देखा था जिससे सिहरकर वह भौचक्का रह गया था। अबतक बनायी गयी अपनी जीवनकी कल्पनाओंके बारेमें वह सशंक था। राह चलतोंको देखकर वह सोचता—'अिन शान्त दिखायी देनेवाले लोगोंके हृदयमें कितनी पाशवी आकांक्षायें दबी पड़ी हैं। जब अुसके लड़के गले मिलते, अुसकी पत्नी प्रेम-पुलकित चुंबनोंकी वर्षा करती तब अुसे महसूस होता कि ये सारे सम्बन्ध कितने नक़ली हैं। क्योंकि अुस महाप्रलयमें पति पत्नीको भूल गया था। नवजात शिशुका गला दबाकर माँ प्राण ले रही थी। प्रेम-गद्गद होकर जब वह पत्नीको हृदयसे लगाता तब अेक विचार जागकर कहता, कि यही हालत बेकाबू होनेपर आदमी आदमीकी आँखें खींच लेता है। अुसके हाथ-पाँव काटकर खुश होता है और अैसे ही कअी विचार अुसके दिमागमें टहलते रहते।

और अन्तमें अेक प्रश्नके भँवरमें पड़कर वह रुक जाता। मानवी-जीवनका यह रेला कहाँ बह जानेके लिये व्याकुल है? हजारों सालसे आदमीने जितने भगवान पैदा किये हैं, जो समाज-रचना बनायी, जिन गीतोंको अलापा और अपनी भावना और विचारोंको जिन नये-नये सुन्दर रूपोंसे सजाया, यह सबका सब क्या यों ही किसी महाप्रलयमें तहस-नहस हो जानेवाला है? मनुष्यकी मूल प्रकृतिको सन्तुष्ट करनेमें क्या यह सब असमर्थ है? क्या संहार मनुष्य-जीवनका अपरिहार्य अंश है? आखिर आदमी जा कहाँ रहा है? जनम-मरणके अर्थहीन चक्करमें घूमना यही मनुष्य जीवनका प्रयोजन है? क्योंकि अुस महाप्रलयमें दोनोंका सत्य अबाधित था।

दार्शनिक ज्ञानकी प्यास बुझानेके लिये नहीं बल्कि जैसे कोअी बच्चा माँसे पूछ बैठता हो—'आसमानके अुसपार क्या है माँ?' अैसे ही मुग्ध कर देनेवाले प्रश्न अुसने अपने आपसे पूछे थे।

अिन प्रश्नोंका अुत्तर पाना असंभव था बल्कि अबतक किसीके लिये यह संभव नहीं हो सका। लेकिन किया क्या जाय? जबतक मनुष्य स्वयं ही अिन प्रश्नोंका अुत्तर पानेके लिये प्रयत्नशील नहीं होगा तबतक जीवन पूर्णता नहीं ग्रहण करेगा।

ये प्रश्न अुसके दिमागमें मँडरा रहे थे और अैसी हालतमें जब-जब वह मनुष्य जीवनमें संयम और अनुशासनके दर्शन पाता, जीवनके प्रति अुसका खोया हुआ विश्वास पुनर्जागृत होता। सबेरे साढे दस बजे अुसने जो देखा अुससे अुसका विश्वास अैसा ही पुनर्जागृत हुआ।

बड़े आनन्दसे वह कदम बढ़ाने लगा। अुसकी कृतिमें स्फूर्तिका संचार हुआ। वह अपने आपसे बोला—"बहुत हुआ यह सन्देह और विचार! It Was a World temporarily gone mad. वह सब मर गया—समाप्त हुआ। अुसे भूलकर आगे बढ़ना होगा।" और भीड़को चीरकर वह आगे बढ़ने लगा।

अुसने देखा—युवक अेक युवतीसे कह रहा था—"कहिये, क्या छिपा रही हो? ओ हो! हलुआ* है! हमें दीजिये न!!"

युवतीने नखरेसे गर्दन मटकायी। युवककी हिम्मत दुगुनी हुअी। वह बोला—'हलुआ न सही। (हलुवेकी तरह) केवल मीठी बातें ही करो तो पा गये।'

---

* हलुआ तिलपर शक्करकी कंगूरेदार पर्त चढ़ाकर चनेके बराबर बनायी गयी महाराष्ट्रकी अेक विशेष मिठाअी। आपसी मेल-जोल बढ़ानेके लिये नारियाँ अपने परिचितोंको मकर-संक्रांतिके त्यौहारपर देकर सालभर मधुर बोलनेके लिये अनुरोध करती हैं: तिळ गूळ घ्या— गोड-गोड बोला। —अनु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युवतीने कंधे अुठाकर कहा—"तो जैसे मैं कड़वा बोलती हूँ !"

युवकने बात बढ़ायी—"अैसी बात नहीं, मैं जैसी मीठी बात सुनना चाहता हूँ, अुसका स्वाद कुछ और ही होता है !"

युवती लजाकर गुलाब बन गयी। युवक मुस्कराया। और आसपासकी पाँच-पचास आँखें अुनपर केन्द्रित हो गयीं।

यह सब कितना सरल, स्वाभाविक, मधुर अेवं कोमल था !

अिसी समय रास्तेके किनारे गाड़ी रोककर चाय पीनेवाले विक्टोरिया ड्राअिवरने दूसरे विक्टोरिया ड्राअिवरको पुकारा। और तुरन्त आवागमन रोकते हुअे, वह अपनी गाड़ी, पहलेसे खड़ी विक्टोरियाके पास ले आया। सिंगल चायमेंसे आधी चाय, चीनी रकाबीमें अुंडेलकर, पहला ड्राअिवर दूसरेको देने लगा। और आपसमें घिनौना मजाक करते हुअे दोनों पीने लगे।

दूसरा ड्राअिवर पहले ड्राअिवरका नया कोड़ा लेकर भागने लगा तब दोनोंके अुजड्ड प्रेमका नकली वाग्युद्ध देखकर रघुनाथका मन तृप्त हुआ। अुसके मनके वीरान बंजरमें सुनहले बालोंवाला अेक सुन्दर बालक रेंगने लगा।

वह अिसी तरह बड़ी देर तक भटकता रहा। रास्तेमें अुसने दस-पंद्रह कुलियोंका समूह देखा। अुनमेंसे अेक आदमी गँवारू प्रेमगीत गा रहा था और दूसरे सब अपनी-अपनी टोकरीमें बैठकर बड़े मनोयोगसे सुन रहे थे। सबके पसीनेसे तेलिया और चट्टानी चेहरोंपर हँसीके बन-फूल खिल गये। वह गँवारू गीत समाप्त होते ही सबके सब हुल्लड़ मचाने लगे और दो-चारने तो गानेवालेको अेक साथ सीनेमें समेट लिया।

ट्राममें सफर करते हुअे रघुनाथने देखा—अेक मूँछवाला पारसी छोकरा अपनी आयु बारह सालसे कम बताकर कंडक्टरसे आधी टिकट माँग रहा था। कंडक्टरने पूछा—"बारह सालमें कभी किसीके मूँछ निकल आती है रे ?"

छोकरा बोला—"क्या करूँ, चाचाकी गंजी खोपड़ीपर मलनेकी दवा, गलतीसे नाकके नीचे लगा ली थी। कंडक्टर तो बिगड़ खड़ा हुआ, लेकिन अुस पारसी छोकरेके दोस्त खिलखिलाकर हँस पड़े। झगड़ा गंभीर रूप धारण करने लगा तो कोनेमें बैठे हुअे बूढ़े पारसीने अिकन्नी कंडक्टरकी हथेलीपर रखकर झगड़ा निपटा दिया।

किसी गुजराती मुसाफिरका पाँव धोखेसे मराठी बाबूके पाँवपर पड़ गया। मराठी बाबू कड़ुआ मुँह बनाकर बोला—"ये गुजराती, रणछोडभाअी, काला बाजार करके मालदार और गुस्ताख बन गये हैं।"

गुजरातीने जवाब दिया, "अरे तात्या ! तू कायकू गड़बड़ करता। राशन दफ्तरमें काम करनेवाले तेरे जातभाअी क्या पैसे नहीं खाते ? नहीं तो अपने भतीजेके जनेअूमें पचास आदमी किस प्रकार जिमाता ?"

मराठी बाबू स्पष्टीकरण करने लगा—"हमारे लोग पैसे खाते भी हैं तो पेट भरनेके लिये; लेकिन तुम लोगोंकी तरह मालदार बनकर हवेलियाँ खड़ी करनेके लिये नहीं।"

और अिसी तरह आपसी तू-तू मैं-मैं काफी बढ़ने लगी। कअी आदमियोंने गाल बजाये। अन्तमें निष्कर्ष यही निकला कि मराठी लोग पेट भरनेके लिये रिश्वत लेते हैं और गुजराती लोग व्यापार करते हैं. अिसलिये अुन्हें कालाबाजार करना पड़ता है; किन्तु दूसरोंकी बहू-बेटियाँ भगानेवाले मुसलमान लोग महा नीच हैं। अुनको बम्बअीसे जरूर भगा देना चाहिये। लेकिन गरम तबीयतके नौजवान आगे बढ़कर यह काम क्यों नहीं करते, अिस बातपर वे निरीह लोग आश्चर्य व्यक्त करने लगे।

ट्रामसे अुतरते हुअे होनेवाली भीड़का फायदा अुठाकर अेक आदमी पासवाली महिलाको दबाने लगा। स्त्रीने कोनेसे पीछे मुड़कर देखा। आदमीकी हरकतपर दो-चार आदमी अुसको फटकारने लगे। किसी दूसरेने तो अुठाकर अेक तमाचा रसीद कर दिया। वह बेचारा घिघियाकर मिनमिनाने लगा—"नहीं.....नहीं, मुझे जरा जल्दी थी अिसलिये गलतीसे धक्का लग गया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगा । मैंने जानकर अैसा नहीं किया । आखिर मेरी भी अपनी अिज्जत है या नहीं ?"

अेक समझदार आदमीने बीच-बचाव कर अुसे दूर ठेलते हुअे कहा—"अैसा ही करना है तो पाकिस्तान चला जा !"

रघुनाथ निर्लिप्त भावसे आधुनिक जीवनका प्रत्येक दृश्य देख रहा था। अुसने जिन पाशवी वृत्तियोंकी नग्नता देखी थी, वे सबकी सब यहाँ मौजूद थीं लेकिन अुसकी तुलनामें अिनका स्वरूप कितना निरुपद्रवी और सौम्य था ! आदमीकी अच्छाअियोंके साथ ये वृत्तियाँ किस मजेसे घुल-मिल गयी थीं ! तो अुन प्रवृत्तियोंका समाजमें अिस तरह घुल जाना सचमुच संभव था ! रघुनाथका डर कमजोर पड़ने लगा। जीवनके अैसे ही प्रवाहमें वह अपने जीवनका बहाव मिला देनेके लिये तैयार था। जीवन यदि अितना आसान और सादा है तो रघुनाथको अुससे कोअी विरक्ति नहीं। डूबते सूर्यका स्वर्णिम अिन्द्रजाल अुसके हृदयपर बिखरने लगा। वह सब जो नकली, भयानक और कुरूप था अब आकर्षक और मजेदार भासित होने लगा। गृहस्थीका घोंसला जीवनके अिस पेड़पर बनानेकी आकांक्षा अुसमें जाग अुठी। रोज सवेरे अुठकर मजदूरी करने वह बाहर जायगा। लौटते हुअे अपनी भोली पत्नी और बच्चोंके लिये चावल ले आयेगा। अब न वह अपनेसे प्रश्न पूछेगा, न किसी प्रकारका विचार ही करेगा; न पुरानी स्मृतियोंको अुकसा कर वर्तमान सुखमें नमक पड़ने देगा।

भीड़में रास्ता बनाता हुआ रघुनाथ भटक रहा था। लेकिन अेका-अेक भीड़ फटी। चीत्कार कानोंसे टकराने लगी। आदमी तितर-बितर भागने लगे। हाथोंमें हाथ देकर झूमते हुअे जानेवाले युगल प्रेमी हाथ झटक कर भागने लगे।

और रास्तेके बीचोबीच खड़ा अेक अुन्मत्त गुरखा, जो सामने पड़ता अुसीको संगीनसे भोंक रहा था।

[अनुवादक :—**श्री. अनिलकुमार,** साहित्यरत्न]

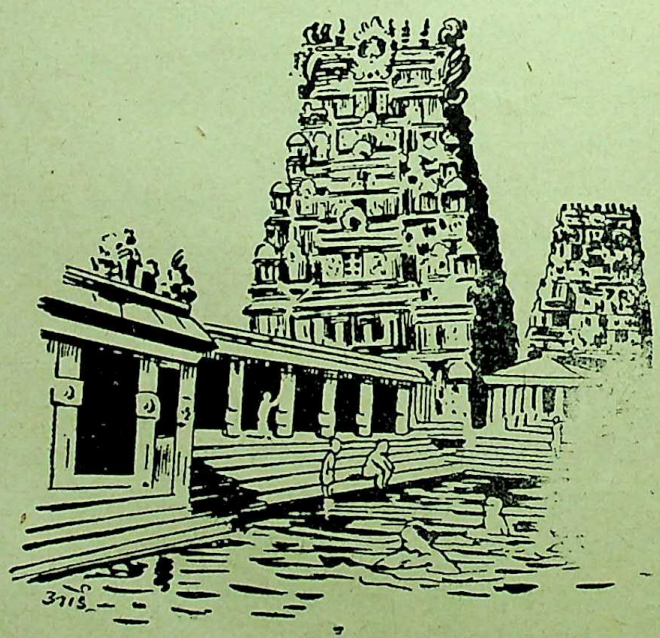

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लघुकथा:—

"चौराहा"

: श्री वैकुण्ठनाथ मेहरोत्रा :

अनन्त-पथका अेकाकी पथिक चलते-चलते थक गया था। अुसका क्लान्त और शिथिल शरीर कोअी आश्रय चाहता था, और अुसकी केन्द्रित भावनायें विकेन्द्रित होना चाहती थीं--अहम्को छोड़कर अन्य दिशाओंमें बिखर जानेको आतुर थीं। अुन्हें अपने अतिरिक्त कोअी अन्य आधार भी अपेक्षित था। पर सामने दृष्टिपात किया तो वही निर्जन अेकाकी पथ--जिसका न कोअी ओर था और न छोर। क्षितिजकी धूमिल रेखापर अुसने न जाने कितनी बार अपने लक्ष्यकी कल्पना की; अपनी मंज़िलके छोरको देखा। पर वह केवल अुसका भ्रममात्र ही था। समीप पहुँचनेपर अुसने सदा वहाँ मृगमरीचिकाका ही वास पाया। सीमाहीन अेकाकी पथ और अेकमात्र प्रेरणा—तू अकेला आया है; तुझे अकेले ही जाना है—यही अुसका वातावरण, संबल और पाथेय था।

अेक क्षणको वह अनमना-सा चौराहेपर रुक गया। तभी नेपथ्यमें किसी स्त्रीका दुलार भरा कोमल और मधुर स्वर सुनायी पड़ा, "अितने अुद्विग्न और हताश क्यों होते हो पथिक!.....आओ न...मैं तो तुम्हारे साथ हूँ"

पथिकको जैसे अंधकारमें प्रकाश-किरण दिखायी दे गयी हो। आतुर-सा वह चिल्ला पड़ा, "कौन हो देवी तुम?.....मेरे सामने आओ न!"

"मैं हूँ, ममता!" अेक सुन्दर नारीने अुसके कंधेपर अपना कोमल कर रखते हुअे मुस्कराकर अुत्तर दिया। "पर देवी!...तुम भी तो मृगमरीचिका नहीं हो?" अुसने हताश स्वरमें प्रश्न किया।

"नहीं! मेरे अबोध पथिक!...मैं निरन्तर तुम्हारे साथ रहूँगी...विश्वकी कोअी भी शक्ति तुम्हें मुझसे पृथक् नहीं कर सकती" ममताने अुसे अपने अंकमें खींचते हुअे कहा।

अिस दुलार भरे अवलम्बको पाकर अुसके नेत्रोंमें कृतज्ञताके आँसू छलछला आये; हृदयमें नवीन आशा और ढाढसका संचार हो अुठा।

और वह वहीं चौराहेके अेक सुरम्य किनारेपर ममताके समीप बैठ गया। निर्जन पथ अुसकी पृष्ठभूमिमें छूट गया।

तभी ममताने वात्सल्य बिखराते हुअे कहा —

"सुनते हो पथिक!...हमें नियतिका यह कुटिल क्रम जरा भी अच्छा नहीं लगता – अितना क्रूर, अितना कठोर। मैं तो अनन्त कालसे ही अिसका विरोध कर रही हूँ।"

पथिकके नेत्रोंमें अनुमोदनकी मुद्रा स्पष्ट झलकने लगी। तभी खिलखिलाहट भरे कंठस्वर सुनकर वह पुनः चौंक पड़ा। बहुत-सी अपरिचित मूर्तियाँ अुसके समीप आकर बैठ गयीं।

"ये लो पथिक!...तुम्हारे अकेलेपनको दूर करनेके लिये कितने साथी आ गये..ये देखो...'स्नेह' है....."

"और ये, देवि?"

"ये हैं 'बन्धुत्व'!"

"और...ये?"

"ये 'दुलार' हैं, पथिक!"

अितने स्नेही बन्धुओंको अपने समीप पाकर पथिकका हृदय आनन्दसे गद्गद् हो अुठा।

और फिर तो अुसका परिचय बढ़ता ही गया। वह चौराहा अितना गुलजार होगा अिसकी अुसने कभी स्वप्नमें भी कल्पना न की थी। 'माया', 'मोह', 'अैश्वर्य', 'समृद्धि', 'सुख', 'दुःख', 'आशा', 'निराशा', 'क्रोध', 'अनुराग' और न जाने कितनोंसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुसका परिचय बढ़ता ही गया। और अुसके बीच वह अनन्त यात्राकी बात बिलकुल भूल ही गया।

अेक दिन वह अकेला बैठा न जाने किन मधुर कल्पनाओंमें लीन था कि अेकाअेक संगीतके समान मधुर और मादक कंठस्वर सुनकर चौंक पड़ा — "कौन हैं देवि, आप ? " सौन्दर्यकी प्रतिमूर्ति सामने खड़ी देखकर वह सकुचा गया।

"मुझे नहीं जानते पथिक?" युवतीने सुस्मित कटाक्ष किया।

"नहीं... मैं तो..." हतबुद्धि पथिकने अुत्तर देना चाहा। तभी अुसने और समीप आते हुअे कहा--

"मेरा नाम रति है" और अितना कहकर धीरेसे मुस्करा दी।

अधीरतासे अुसके कोमल करोंको अपने करोंमें लेते हुअे पथिकने आतुरतासे कहा--

"मेरे साथ निरन्तर रहोगी न, देवी !... मैं अनन्त पथपर चलते-चलते थक गया हूँ... निर्जनता तथा अेकाकी वातावरणसे मुझे भय लगता है....."

"मैं तो तुम्हारे साथ हूँ, पथिक !.... अनन्त कालके लिये। फिर अेकाकी रहनेका क्या प्रश्न। और यह देखो.... मेरे साथ और कौन-कौन है.... यह है 'शृंगार'..... ये 'मादकता'..... वो 'आनन्द'..... ये 'असन्तुष्टि'.... और ये 'भ्रम'.... अितनोंके बीच भला तुम अेकाकी कैसे रह सकते हो.... !" 'रति' ने मुस्कराते हुअे अुसका परिचय अपने साथवालोंसे कराया।

और अिस प्रकार मृगमरीचिकामें अुलझा हुआ वह अपने लक्ष्यका ध्यान ही भूल गया। पर सहसा अेक दिन अुसका चित्त अुद्विग्न हो अुठा। अनन्त तथा निर्जन पथकी विस्मृत-स्मृति अुसके मानस-पटलपर फिर लौट आयी। अुसने देखा— सामने निर्जन पथ पड़ा था.... अेकान्त.... शान्त; और अुसके मध्यमें अेक भयानक छायामूर्ति-सी खड़ी अुसको अिंगितसे बुला रही थी, "आओ पथिक ! तुम्हारा लक्ष्य अभी बहुत दूर है.... यहाँ कहाँ मृगमरीचिकामें अुलझे हुअे हो?" "मृगमरीचिका ! ! !" पथिक घबरा अुठा। अुस भयानक छायामूर्तिके प्रत्येक शब्द अुसको गरलके समान कटु लग रहे थे। फिर भी अुसने साहस बटोरकर कहा— "स्वयं मृगमरीचिका होती हुअी तुम मुझे अिस अनन्त सुखसे बाहर खींचकर फिर निर्जन पथका अेकाकी पथिक बना देना चाहती हो.... नहीं ! नहीं !!.... तुम्हारी कामना कभी भी सफल नहीं हो सकती... मैं तुम्हारे फुसलानेमें कदापि नहीं आ सकता.... अितने स्नेही बन्धुओंने मुझे आश्वासन दिया है.... वे मेरा साथ कभी भी नहीं छोड़ेंगे..."

"तुम अिन्द्रजालमें फँस गये हो, पथिक!" छायामूर्त्तिका कर्कश स्वर फिर सुनायी दिया, "जिसे तुम अनन्त कहते हो वह क्षणभंगुर है... जिसे तुम सत्य और यथार्थ समझते हो वही तो वास्तविक मृगमरीचिका है... मेरे साथ आओ.... मैं तुम्हें लक्ष्यकी ओर ले चलूंगी..."

"नहीं ! नहीं !! तुम मुझे अन्धकारमें फिर नहीं घसीट सकतीं..." पथिक चीत्कार कर अुठा।

"यह तो अटल नियम है, पथिक !...तुम्हें मेरे साथ आना ही होगा" छायामूर्ति अट्टहास कर अुठी।

पथिक चेतनाशून्य-सा होने लगा। अुसने विचलित होकर अपने चारों ओर देखा। सभी वस्तु समीप ही खड़े थे, पर अुनकी आकृतियाँ धुंधली-सी होती जा रही थीं। अुसने असहाय स्वरमें चिल्लाकर कहा-

"'ममता'...'स्नेह'...'रति'...मेरे समीप आओ न...मुझे अपने पाशमें जकड़ लो...मुझे अुस छायामूर्ति... अुस निर्जन पथसे भय लगता है..." अितना कहते-कहते अुसका कंठ अवरुद्ध होने लगा। चारों ओरका वातावरण और भी धूमिल होता जा रहा था...क्षीण होता जा रहा था...अनन्तमें विलीन-सा होता जा रहा था। वह पीड़ासे छटपटा अुठा; पर दूसरे ही क्षण यन्त्र-चलित-सा छायामूर्तिके समीप बढ़ गया। सामने वही निर्जन और अेकाकी पथ था, और चारों ओर अन्धकार !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वदन चौधरीकी शोक-सभा

: श्री परशुराम :

[बंगलाके श्री 'परशुराम' असली नाम श्री राजशेखर बसु, हास्यरसके अत्यन्त प्रसिद्ध लेखक हैं। अुनकी गड्डालिका' (–भेड़ियाधसान) और 'कज्जली' नामक कहानी-संग्रहोंके हिन्दी-अनुवादसे पाठक परिचित होंगे। असके अलावा बंगलामें 'हनुमानेर स्वप्न', 'गल्पकल्प' और 'धुस्तुरी माया' (–धतूरेकी माया) नामक संग्रह भी निकल चुके हैं। 'लघुगुरु' नामक निबन्ध-संग्रहके अलावा रामायण और महाभारतके अनूठे अंशोंका अनुवाद अुन्होंने मूलके साथ प्रकाशित किया है। 'चलन्तिका' नामक अुनका बंगला कोश बहुत ही प्रसिद्ध है।

वे विज्ञानके विद्यार्थी रहे हैं। बहुत दिनोंतक अुन्होंने 'बंगाल केमिकल' में संचालकका काम किया नौकरीसे अवसर ग्रहण करनेके बाद आज करीब ८० वर्षकी अवस्थामें भी आधुनिक जीवनकी मुसीबतोंसे परेशान पाठकोंको कुछ देरके लिये गुदगुदी पैदा करते और हास्य-रसका शरबत पिलाते रहते हैं। अुनकी कहानियोंके कितने ही वाक्य बंगाली जनताके रोजमर्राकी भाषाके अभिन्न अंग बन गये हैं।]

वदनचन्द्र चौधरी अेक नवागत नारकी हैं, अभी हालमें वे रौरवमें भर्ती हुअे हैं। यमराज आज नरकका निरीक्षण करने पधारे हैं। अुन्हें देखकर वदन चौधरी हाथ जोड़, घुटने टेक, नत मस्तक हो गया।

यमने कहा— क्या चाहिये तुम्हें ?

—जी, दो घण्टेकी छुट्टी।

—कब आये यहाँ ?

—आज अेक महीना हुआ।

—अिसी बीच छुट्टी क्यों ? छुट्टी लेकर क्या करोगे ?

—जी, अेक बार मर्त्य-लोकमें जाना चाहता हूँ। आज शामको पाँच बजे यूनिवर्सिटी अिन्स्टिट्यूटमें मेरे लिये शोक-सभा होगी, अेक बार देख आनेकी बड़ी अिच्छा होती है।

यमलोकके निबन्धक अर्थात् रजिस्ट्रार चित्रगुप्त निकट ही थे। यमने अुनसे पूछा, अिस प्रेतका पुराना नाम क्या है ?

चित्रगुप्तने कहा, अिस प्रेतका पुराना नाम वदनचन्द्र चौधरी है, पेशा वकालत, तिजारत और नाना प्रकारके दूसरे काम थे। प्रायः दस वर्षतक कार्पोरेशनका काअुंसिलर और पाँच वर्षतक विधान-सभाका सदस्य था। अेक महीना हुआ यहाँ आया है, हर तरहके कुकर्मोंके लिये अिसे हजार वर्ष नरकवासका दण्ड मिला है। अिस वक्त रौरव नरकके 'ग' विभागमें है। वर्तमान आचरण अच्छा ही है। दो घण्टेके लिये छुट्टी मंजूर की जा सकती है। शोक-सभामें अुसके मित्र और स्तावक गणोंमें कौन क्या कहता है, अुसे सुननेके लिये अुत्सुक होना अुसके लिये स्वाभाविक है।

—अुसे खबर कैसे मिली कि आज शोक-सभा होगी ?

—खबरकी कौनसी कमी है, धर्मराज, रोज कितने ही आदमी मरकर सीधे नरकमें आते हैं। अुन्हींसे अुसे यह खबर मिली है।

यमने आज्ञा दी, अच्छा दो घण्टेके लिये अुसे छोड़ दो, साथमें अेक पहरेदार रहना चाहिये।

चित्रगुप्तने आवाज दी, काकजंघ, तुम अिस पापीके संग मर्त्यलोक जाओ। देखना कोअी नया पाप न करे। ठीक दो घण्टे बाद वापस लाना।

जो आज्ञा, कहकर यमदूत काकजंघ वदन चौधरीका हाथ पकड़ यमलोकसे चला गया।

तुरन्त यमराज अेक दूसरे भागमें आये अुन्हें देख कर घनश्याम घोषालने कृतांजलिपुट दण्डवत की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यमने कहा, अब तुम्हें क्या चाहिये ?

—जी, दो घण्टेकी छुट्टी। अेक बार मर्त्यलोकमें जाना चाहता हूँ।

—तुम्हारी भी शोक-सभा होगी क्या ? यहाँ कब आये ?

—दो साल हुअे यहाँ आये, रौरवके 'थ' विभागमें हूँ। मेरे लिये किसीने शोक-सभा नहीं की, प्रभु, दोस्त बड़े ही नमकहराम हैं। मेरी मृत्युके बाद मेरे ही 'कालकेतु' अखबारमें केवल आधा कालम छपा था। अेक अच्छी तस्वीर तक नहीं दी। बदन चौधरी मेरे मित्र थे, अुन्हींकी शोक-सभामें जानेके लिये छुट्टी चाहता हूँ।

चित्रगुप्तने अपनी बही देखकर कहा, तुम बहुत ही बुरे प्रेत हो, यमलोकमें आकर भी झूठ बोल रहे हो। अपने अखबारमें तो सदा बदन चौधरीको गालियाँ दी हैं तुमने।

—जी, सम्पादकके कठोर कर्त्तव्यके तौरपर यह करना पड़ा है; लेकिन पहले बदनसे मेरी बड़ी दोस्ती थी, बादमें मनमुटाव हुआ। अब मरनेके बाद शत्रुताका अन्त हुआ है, "मरणान्तानि वैराणि", हम फिर मित्र हो गये हैं।

यमने चित्रगुप्तसे कहा, जाने दो, दो घण्टेके लिये अिसे भी छोड़ सकते हो। साथमें अेक पहरेदार रहना जरूरी है।

चित्रगुप्तके आदेशपर यमदूत भृंगरोल घनश्यामके साथ गया।

\+ \+ \+

परलोकवासी बदन चौधरीकी शोक-सभामें काफी भीड़ है। जनता हजारोंकी संख्यामें अेकत्रित हुअी है। वेदीपर सभापति अवसर प्राप्त डिस्ट्रिक्ट अेण्ड सेशनजज रायबहादुर गोवर्धन मित्र हैं। अुनके दाहिनी ओर प्रधान वक्ता प्रवीण अध्यापक आंगिरस गांगुली हैं। बायीं ओर बदनके मित्र और सभाके आयोजक बैरिस्टर कोकिल सेन हैं। और भी कअी गण्यमान्य व्यक्ति पास ही बैठे हुअे हैं। वक्ताओंके लिये दो माअीक्रोफोन रखे हुअे हैं और सभाके भिन्न-भिन्न स्थानोंमें कअी लाअुड स्पीकर लगे हुअे हैं।

बदन चौधरी अपने पहरेदार यमदूतके साथ मंचपर ही खड़े हुअे थे। घनश्याम घोषालको देखकर बोले, तुम किस अिरादेसे यहाँ आये हो? सभाको बर्बाद करना चाहते हो क्या ?

घनश्यामने कहा, अरे, नहीं-नहीं, बर्बाद क्यों करूँगा, तुम ठहरे मेरे पुराने मित्र। तुम्हारा गुण-कीर्तन सुन हृदयको शीतल करने आया हूँ ! देखता हूँ, यमराज आज बहुत सदय हैं, दो नारकीयोंको छुट्टी दे दी है।

प्रधान वक्ता आंगिरस गांगुलीके पीछे बदन चौधरी और सभापति गोवर्धन मित्रके पीछे घनश्याम घोषाल खड़े हुअे। दोनों यमदूत अपने-अपने बन्दीके कन्धेपर हाथ रखे रहे। सभाके किसी भी आदमीको अिन चारोंके अस्तित्वका पता नहीं चला।

सबसे पहले श्रीमती भूपाली वसुके संचालकत्वमें गान हुआ।—"आज स्मरण करें पुण्यचरित बदनचन्द्र चौधरीका, अुस स्वर्गगत राजर्षिका; लोकमान्य, अग्रगण्य, कर्मयोगी, धर्मवीर ... आदि।" गाना समाप्त होनेपर बंसी और मृदंगकी करुण संगतके साथ कुमारी लुलु चटर्जीने अेक समयोचित शोकनृत्य किया। अिसके बाद सभापतिके आदेशानुसार अध्यापक आंगिरस गांगुली मृत महात्माकी कीर्ति-कथा विस्तार-पूर्वक कहने लगे।

आज जिनके स्मृतितर्पणके लिये हम यहाँ जमा हुअे हैं, वह हमें शोक-सागरमें निमज्जित करके दिव्य-धाम चले गये किन्तु मैं स्पष्ट अनुभव कर रहा हूँ कि अुनकी मृत आत्मा अिस सभामें अुपस्थित रहकर हमारी श्रद्धांजलि ग्रहण कर रही है। स्वर्गीय बदनचन्द्र चौधरी आकर चरित्र, कर्मधर्ममें अेक लोकोत्तर महान् पुरुष थे। अुनके अिस तैलचित्रकी ओर देखिये, कैसी दिव्य सौम्यमूर्ति है ! निविड़ श्यामवर्ण, शाल प्रांशु विशाल वक्ष, पद्मपलाश नेत्र, आवक्षलम्बित श्मश्रु। वह अेक ही साथ कर्मयोगी, धर्मयोगी और ज्ञान-योगी थे, अुन्होंने कमाया अुसी तरह कितने ही प्रकारके सत्कार्योंमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया। संक्षेपमें वह अेक सच्चे राजर्षि थे, अिसमें रंच मात्र भी संदेह नहीं। आशा करता हूँ कि अुनके अुपयुक्त पुत्रगण अपने पुण्यश्लोक पितृदेवका पदानुसरण करेंगे।.... अिस तरह बहुतेरी बातें आंगिरस बाबूने घण्टे भर सुनायीं। घनश्यामने स्वगत अुक्ति की, अहा, कानोंमें मानो मधु अुड़ेल दिया, क्यों वदन ?

अिसके बाद अेक तरुण कविने अेक गद्य-कविता पढी—आकाशमें सुनहली लीक पड़ी है। यह कैसी लीक है ? दिव्यरथके टायरका कर्षण है। अुसी सड़कसे वदनचन्द्र देवलोक गये हैं। कौन अुनके लिये प्रतीक्षा कर रहा है ? अुर्वशी या आफरोदिते ?...आदि।

और कअी आदमियोंके भाषणके बाद बैरिस्टर कोकिल सेन खड़े हुअे। पूर्ववर्त्ती वक्ताओंने जो कुछ बाकी रखा था अुसे निःशेष वर्णनकर वे बोले—मैं प्रस्ताव करता हूँ कि अुस स्वर्गीय महापुरुषकी अेक संगमर्मरकी मूर्ति देशबन्धु या देशप्रिय पार्कमें स्थापित की जाय और अिसके लिये चन्दा जमा करने तथा दूसरी व्यवस्था करनेके लिये अमुक, अमुक, अमुकको लेकर अेक कमेटी बनायी जाय।

पिछली बेंचसे अेक श्रोताने कहा. वदन चौधरीको हमलोग भली-भाँति जानते हैं। मरे आदमीको जिन्दा नहीं करना चाहता, मगर अुसकी मूर्तिके लिये हममेंसे कोअी भी अेक पैसा चन्दा नहीं देगा।

सभामें ताली बजी। पहले थोड़ी, मानो डरते हुअे, अिसके बाद खूब जोरोंसे। गड़बड़ी शान्त होनेपर कोकिल सेन बोले, हमें अश्रद्धाका दान नहीं चाहिये। मृत महात्माके पुत्रगण ही सारा खर्च देंगे। मंचपरसे अेक आदमीने धीरे-धीरे कहा, hear, hear (हियर ! हियर!!)

अब सभापति गोवर्धन मित्रकी भाषण देनेकी बारी थी। जजगीरी करते समय अुन्होंने लम्बे-लम्बे फैसले दिये थे, दो-चार फांसियोंका हुक्म भी अुनके मुँहसे निकला था। लेकिन सभामें कुछ बोलना पड़ता तो वे nervous (शिथिल) हो जाते थे। अुनका भाषण कोकिल सेनने ही लिख दिया था। गोवर्धन बाबू खड़े होकर अपना भाषण पढ़नेका अुपक्रम कर ही रहे थे, कि अिसी समय अचानक घनश्याम घोषाल तड़से कूदकर अुनके कन्धेपर चढ़ बैठा। यमदूत भृंगरोलने अुसे रोकना चाहा मगर घनश्यामने पलभरमें ही गोवर्धन बाबूके कानके अन्दरसे अुनके हृदयमें प्रवेश किया।

मनुष्यके शरीरमें जितनी जगह है, अुसमें अेक आत्मा किसी तरह रह सकती है लेकिन अेक साथ दो आत्माओंके लिये जगह नहीं। घनश्यामके घुस पड़ते ही गोवर्धनबाबूकी अपनी आत्मा अेक कोनेमें जा दुबकी। अुसे दबाकर घनश्यामकी प्रेतात्माने गला फाड़कर भाषण देना शुरू किया।—भद्रमहिलाओ और भद्रमहोदय गण, मुझे अधिक कुछ कहना नहीं है। अन्तिम बेंचके अुस सज्जनने जो कुछ कहा है वह बिल्कुल खरी बात है। वदन चौधरीको हमलोग भली भाँति जानते हैं। जब तक जिन्दा था तब तक अुसने अपनी ढोल खुद पीटी अब वह मर गया है, फिर भी हमें छुटकारा नहीं मिला। अुसके खुशामदी सम्बन्धी स्वजन अुसे देवता बनानेके लिये कुछ अुठा नहीं रख रहे हैं। मगर अब आगे धोखा-धड़ी नहीं चलेगी। वदन स्वर्गमें नहीं गया है, नरक ही में गया है। अैसा जुआचोर, छिछोरा, हरामजादा अब नहीं होगा। महाशयो, कितने ही मुवक्किलोंका सर्वनाश किया है, कार्पोरेशन और असेम्बलीमें रहते हजारों रुपये रिश्वतमें—घूसमें खा गया है, परमिट और चोरबाजारीमें तो लाखों रुपये—

वदन चौधरीसे चुप नहीं रहा गया। यमदूत काकजंघको अेक धक्केसे हटाकर वह अध्यापक आंगिरस गांगुलीके शरीरमें समा गया। दूसरे माअिक्रोफोनको खींचकर चिल्लाने लगे। —आप लोग समझ ही रहे हैं कि हमारे माननीय सभापति महाशय आपेमें नहीं हैं। जो आदमी पुण्यश्लोक राजर्षि वदनचन्द्रका घोर शत्रु था अुसी notorious (बदमाश) अखबारी गुण्डे 'कालकेतु' सम्पादक घना घोषालका प्रेत ही सभापतिकी गर्दनपर सवार हो गया है और अिस असहाय गो-भद्र व्यक्तिके मुंहसे अ-श्राव्य बातें कह रहा है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभापतिकी जबानी घनश्याम बोले, सोलहों आने झूठी बात है। अुसी बदजात वदनका भूत ही हमारे श्रद्धेय अध्यापक आंगिरस गांगुली महाशयपर हावी होकर अण्टसण्ट बक रहा है—

आँगिरस गांगुलीके मारफत वदन चौधरी बोले, आप लोग क्या अुस blackmailer, शैतान घना घोषालको भूल गये हैं? बेटा रुपये खाकर अपने अखबारमें चोर बाजारियोंकी तारीफ छापता था, रुपये न मिलनेपर गाली देता था। मंत्रियोंको डर दिखाकर वह अपने worthless (निकम्मे) लड़के-लड़कियों, साले-सालियोंको अच्छी-अच्छी नौकरियाँ दिलाता था। स्वर्गीय महात्मा वदन चौधरीने अुसे घूस नहीं दी थी। अिसी गुस्सेमें घना घोषालका भूत आज नरक कुण्डसे आकर यहाँ निन्दा कर रहा है। अुसकी दुर्गन्धसे सभा भर गयी है, पता नहीं चल रहा है? भूतकी बातोंपर आप लोग कान न दें।

सभामें घोर कोलाहल मच गया। अेक मुस्तण्ड आदमीने कुर्सीपर खड़े होकर कहा, मैं भूत-प्रेत नहीं मानता. मेरा नाम है रामलालसिंह। असल बात यह है कि - हमारे गोवर्धनबाबू और आंगिरसबाबू बड़े महाशय व्यक्ति हैं, लेकिन दोनों ही काफी चढ़ाकर आये हैं, नशेमें चूर होकर लेक्चर झाड़ रहे हैं। वदन चौधरी मर गया है, सभी मिलकर शोक सभा कर रहे थे, यह तो अच्छी बात है। तुम लोग गाना सुनोगे, नाच देखोगे, दो-चार बार 'हाय, हाय' करोगे, छाती-पीट कर रोओगे, यह और भी अच्छी बात है। लेकिन यह कैसा माजरा है, दो हजार आदमियोंके सामने मसखरी दिखा रहे हो। छिः छिः। हम लोग जो कुछ करते हैं अपने अड्डेपर करते हैं, सभामें खड़े होकर अैसा बिलल्लापन नहीं करते। जी हाँ महाशय, खरी बात कहूँगा।

अिसी समय दोनो यमदूतोंने गोवर्धन मित्र और आंगिरस गांगुलीके कानोंमें कहा, निकल आओ जल्दी, दो घण्टे हो गये हैं। दोनों प्रेतात्माअें सटसे निकल आयीं, यमदूत अुन्हें लेकर फौरन रफूचक्कर हो गये।

शरीरसे प्रेत निकलते ही गोवर्धनबाबू और आंगिरसबाबू मूर्च्छित होकर गिर पड़े। सौभाग्यसे अेक डाक्टर अुपस्थित थे जिनकी कोशिशसे ये लोग शीघ्र ही चंगे होकर अुठे।

डाक्टरने कहा, अिन दोनों गिलासोंका शर्बत अिन्होंने पिया था। जाँच करनी जरूरी है। जरूर ही किसी बदमाशने भांग या धतूरा मिला दिया था।

प्रेततत्व विशारद हाराधन दत्तने गर्दन हिलाकर कहा, नहीं, भांग, गांजा, धतूरा नहीं, शराब भी नहीं। अिनकी मैं काफी जाँच कर चुका हूँ। यह असल भौतिक मामला है, महाशयो! आज आप लोगोंने अपने कानोंसे दो भूतोंका झगड़ा सुना है— अिसका फल बहुत खराब होता है, घर जाकर कानोंमें थोड़ासा तुलसी पत्रका रस डाल लें। शीघ्र ही यह सभा समाप्त हो गयी।

बंगलासे अनुवादक :— **श्री महेशकुमार मूँधड़ा**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक तमिळ साहित्यमें अुपन्यास-विकास

: श्रीमती "गुहप्रिये"

साहित्य वह सुन्दर पुष्प-वाटिका है, जिसमें ऋतुके विविध परिवर्तनोंके अनुकूल किस्म-किस्मके सुन्दर सुरभित फूल खिलते रहते हैं और साहित्य रूपी पुष्प-वाटिकाको नयनाभिराम बनाते हैं। साहित्य-वटिकामें कभी महाकाव्य रूपी मनोहर फूल खिलते हैं तो कभी नाटककी कलियोंका विकास होता है। कभी अुपन्यास अपनी महकसे मनको मुग्ध करते हैं, तो कभी कहानियोंकी कलियाँ चटकती हैं। अहा! अुपन्यास भी कितने प्रकारके हैं—घटना प्रधान, भावना प्रधान, अन्तर्द्वन्द्व प्रधान, बहिर्द्वन्द्व प्रधान, अितिहास प्रधान, समाज प्रधान! और कहानियोंका कहना ही क्या? रंग-बिरंगे सुन्दर वन-फूलोंके समान दर्शकोंको आकर्षित करती रहती हैं। साहित्य-वाटिकाकी अेक खूबी यह है कि अन्य वाटिकाओंमें तो पुष्प अुसी मौसममें खिलते हैं जब प्रकृति अुनको विकसित कराती है या अुनके खिलनेका समय आता है। पर साहित्य-वाटिकामें हर मौसममें हर प्रकारके फूल सदाबहारकी नाअीं खिलते रहते हैं। अमुक समयमें ही अमुक फूलको खिलना है—यह पाबन्दी नहीं। अतः, रसिक पाठक भी जब चाहें, जिसका चाहें, अपने मन-पसन्द रसास्वादन कर सकता है।

मान लीजिये कि महाकाव्य या लंबे-लंबे अुपन्यासोंका रसास्वादन करनेका अवकाश रसिक पाठकोंको नहीं मिलता तो वे छोटी-मोटी कहानियों या कविताओंका रसपान कर सकते हैं। आजका जमाना मशीनका जमाना है। आदमीको अपने अुदर-पोषणके लिये मशीन ही की नाअीं काममें जुट जाना पड़ता है। अतः, अुसको लंबे-लंबे साहित्यग्रन्थोंके पठन-पाठनके लिये समय ही नहीं मिलता। पर मनुष्य और मशीनमें अितना तो फ़र्क़ अवश्य है कि मनुष्य अपनी मेहनतकी थकावटको दूर करनेके लिये मनोरंजन चाहता है। जब कभी थोड़ा अवकाश मिलता है तो अपने मनके भारको अुतारकर हल्का करनेके लिये वह कुछ-न-कुछ सामग्री चाहता है। अिसी जरूरतने छोटी-छोटी कहानियोंके पौधे लगानेके प्रयत्न किये। आदमीकी आवश्यकता और झुकावको देखकर लेखक गल्प-साहित्यकी रचनामें लगा जिसके फलस्वरूप कथा-कुसुम प्रचुर मात्रामें आज हमें देखनेको मिल रहे हैं। अुपन्यासके क्षेत्रपर लेखकका ध्यान बहुत ही कम जाता है।

आज हम तमिल-साहित्यमें देखते हैं कि कहानियाँ प्रचुर मात्रामें सृजन हो रही हैं और तमिल भाषाका लेखक अुसकी खेती करते-करते अितना सिद्धहस्त हो गया है कि कहानीके सुन्दर-सुन्दर फूल खिलानेमें वह यह गर्व कर सकता है कि हमने भी अिस क्षेत्रमें प्रशंसनीय कार्य किया है।

पद्य-साहित्यमें महाकवि भारती जैसे महान कवियोंकी समता करनेवाला कोअी कवि अभी तक अवतरित नहीं हुआ। अिसका अर्थ यह नहीं है कि काव्य-धारा कहीं रुद्ध हो गयी है या समाप्त हो गयी है। भारती तक की काव्य-धारा, जैसे दोनों कूलोंको छूती हुअी लबालब भरी नदी प्रवहित होती है वैसे प्रवाहित होती रही, पर बादको ग्रीष्म-कालीन नदीकी तरह क्षीण हो गयी। न जाने क्यों, वैसे ही अमर अुपन्यासोंके सृजन-प्रवाहमें भी अत्यन्त क्षीणताका ही दर्शन होता है।

आधुनिक कहानियोंके जैसे ही अुपन्यास भी हमारे अपने देशकी चीज या अुपज नहीं हैं; विलायतसे आयी वस्तु ही हैं। तमिल-साहित्यमें अुपन्यासोंका सृजन अुतना नहीं हुआ, जितना कहानियोंका हुआ है। तमिल भाषाके मौलिक श्रेष्ठ अुपन्यास अुंगलियोंके पोरपर गिने जा सकते हैं। तमिल-साहित्यमें अुपन्यासके तीन तरहके पौधे देखनेको मिलते हैं। पहला पौधा वह है जो विदेशी मिट्टी तथा बीजसे प्रस्फुटित हुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरा स्वदेशी मिट्टी तथा बीजसे अुत्पन्न है। तीसरा जिसे कलमी कहना अनुचित न होगा, जिसका बीज विदेशका है, पर स्वदेशकी खाद पाकर बढ़ा है। अिन तीनों तरहके फूलोंको ज़रा गौरसे देखें तो विदित होगा कि अिन तीनोंमें कितना तारतम्य या भेद है ?

अुत्तर भारतीय साहित्यके साहचर्यसे तमिल भाषाका साहित्य संपन्न हुआ। बंगला, मराठी, गुजराती आदि भाषाओंसे अनुवादित साहित्य तमिलमें प्रचुर मात्रामें देखनेको मिलता हैं। अिसका पहले पहल श्रीगणेश करनेवाले श्री महेशकुमार शर्मा हैं। आनन्द-मठ, चन्द्रशेखर, दुर्गेशनन्दिनी आदि अुपन्यास अिन्हींके द्वारा अनूदित हुअे। बकिम बाबूके 'आनन्दमठ' के समकक्ष, जिसने भारतको 'वन्देमातरम्' का तेजस्वी तारक मन्त्र प्रदान किया, आजतक तमिलमें कोअी अुत्तम अुपन्यास नही निकला।

तमिलनाड़की साहित्य-भूमिमें विदेशी तथा स्वदेशी खाद यथेष्ट मात्रामें डाली गयी है। फिर भी अुपन्यासका पौधा अच्छी तरह नहीं पनप सका। न जाने, क्या कारण है ? पर साहित्यके कुछ महारथियोंने अिस ओर जो सफल प्रयत्न किया वह प्रशंसनीय है। अैसे महारथियोंकी कुछेक रचनायें सार्वदेशिक तथा सार्वभौमिक महत्वको प्राप्त करनेके योग्य हैं।

अुपन्यास लिखना अुतना आसान नहीं, जितना कहानियाँ लिखना। कहानीके लिये तो अेक छोटी घटना, कुछ चिट्ठियाँ, कोअी मनोनीत कल्पना, कोअी प्रचारात्मक अुद्देश्य मिल जाय तो काफी है। कल्पना और अनुभूतिके आधारपर अुत्तम कहानीका सृजन हो सकता है। जहाँ कहानीके लिये अितनी सामग्री काफी है, वहाँ अुपन्यासके लिये और भी ठोस चीजकी जरूरत पड़ती है।

अुपन्यासकी अपनी अलग जीव-नाड़ी होती है। मुख्य घटनामें कअी अुपघटनायें आकर मिलती हैं, जिस प्रकार महानदीमें अुपनदियाँ आकर मिलती हैं, और नदीका रूप वृहदाकार हो जाता है। कथानायक, अपने सहायकोंकी सहायतासे अुपन्यासको अैसा शोभायमान, रोचक और मनोमुग्धकारी बना देता है कि पढ़नेवाला अुसमें गोता लगाकर अपना आपा भूल जाय। जितनी अुपघटनाअें और अुपकथा-नायक नायिकाअें हैं, सब अुपन्यासके विषयको पुष्ट करते हुअे दिखायी देते हैं। अुपन्यास फूलोंका वह हार है, जिसमें तरह-तरहके सुन्दर सुगन्धियुत फूल गुंथे हुअे होते हैं, जिसकी सुगंधसे सारा समाज महक अुठता है। यही नहीं, अुपन्यासके आदर्श व सन्देश अुसके अंदर अैसे अंतर्निहित होते हैं जैसे फूलोंकी मालाके अन्दर डोरे अंतर्निहित होते हैं। बिना डोरेके, माला कैसे बन सकती है ? वैसे ही बिना आदर्शके अुपन्यास किस कामका ?

कथाके पात्रों और रोचक घटनाओंकेने मात्रसे अुपन्यास सफल नहीं हो जाता। परन्तु कथाके पात्रोंके गुण वैशिष्ट्य, परिस्थितियोंके घात-प्रतिघातोंसे होनेवाले परिवर्तन, चारित्र्य गठनकी खूबियाँ और कमियाँ आदि अुपन्यासको अुच्च कोटिका बनानेके विषयमें अत्यन्त सहायक सिद्ध होते हैं। अुपन्यासकी सफलताके लिये अिन बातोंके अलावा और कुछ सूक्ष्म विषयोंपर भी ध्यान देना पडता है। हरेक परिच्छेदका आदि मध्य अंत अितना रोचक हो कि चित्तको आल्हादित कर सके और अपनेमें तल्लीन रख सके। कथोपकथन स्वाभाविक सजीव शैलीमें हो. यह भी ध्यान रखने योग्य बात है। तभी अुपन्यासका कथानक कुतूहलता, जिज्ञासा, अुत्कंठा आदि अन्याय भावोंकी अुत्पत्ति कर सकता है। अिन खास बातोंके अलावा, जातिगत-देशगत रीतिरिवाज, वातावरण, अुपन्यासकी पृष्ठभूमि आदि पर भी ध्यान दिया जाना चाहिये। कथा-पात्रको कठ-पुतली या निरा छाया-पात्र नहीं बनना चाहिये बल्कि समाजका जीता-जागता, चलता-फिरता अंग बनना चाहिये और मनुष्यका आत्मीय बनना चाहिये। सफल अुपन्यास वही कहा जायगा, जिसके पात्रोंके सुख-दुःखमें पाठक भी अपनेको सुखी-दुखी अनुभव करें, अुनके अुत्साह अपना अुत्साह देखें, अुनकी दीनता पाठकोंके मनमें सहानुभूति पैदा करे और अुनकी अधीरता हमको भी अधीर बना दे। अिन सब बातोंसे कथाकी रसानुभूति होती है, कहानी मध्यभागमें पहुँचते-पहुँचते रसकी पराकाष्ठा तक पहुँच जाय, फिर रस परिपक्वताके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राप्त करे। कुछ लेखक अुपन्यासका अन्त नाटकीय ढंगसे करते हैं। यही सफल लेखककी सफल कृतिका लक्षण कहा जा सकता है।

अुपन्यास-साहित्य दो भागोंमें बाँटा जा सकता है, प्राचीन और अर्वाचीन नामसे। अुपन्यासकी अुस प्राचीन परम्पराकी कृतियाँ आधुनिक आलोचनाकी कसौटीपर कसनेसे मुश्किलसे खरी अुतर सकेंगी। तमिलमें अुपन्यास-साहित्यके सूत्रधारोंमें श्रीमान् मायूरम् वेदनायकम् पिल्लै ही अग्रणी हैं। आपका 'प्रताप-मुदलियार चरित्रम्' तमिलका सर्वप्रथम अुपन्यास है। अिसके बाद राजम् अय्यरका 'कमलाबाल चरित्रम्', माधवय्याका 'पद्मावती चरित्रम्', 'विजय मार्तण्डम्', 'मनोन्मणीयम्' काव्यके सुप्रसिद्ध रचयिता सुन्दरम् पिल्लैकी 'स्वर्णलता' आदि अुपन्यास सुप्रसिद्ध हैं। मगर यहाँपर अेक बात कह देना अुचित है कि गंगाकी अुत्पत्ति-स्थानको देखकर अुसकी महत्ताको आँका नहीं जा सकता या दोष नहीं लगाया जा सकता। आज भी तमिल जनता अिन अुपन्यासोंको बड़े चावसे पढ़ती है। ये अुपन्यास यद्यपि आजकी आधुनिक आलोचनाकी कसौटीपर खरे अुतर नहीं पायेंगे तथापि अितने रोचक तथा मनोमुग्धकारी हैं कि अुपन्यासके सृजनमें पथ-प्रदर्शकका काम करते हैं। अिनका अनुकरण करके अुपन्यास-रचना करनेवालोंमें श्री च. म. नटेशशास्त्री और दि. म. पोन्नुस्वामी पिल्लै आदि प्रमुख हैं और अिनका नाम भी तमिलके अुपन्यास-साहित्यमें आदरसे लिया जाता है।

कवि भारतीके बाद ही तमिल साहित्यमें आधुनिक कालका विकास हुआ। और आजके साहित्य-कार साहित्यके विभिन्न अंगोंको अपने ग्रन्थ-रत्नोंसे परिपुष्ट कर रहे हैं। भारतीका अन्तिम अुपन्यास अधूरा है, जिसका नाम 'चन्द्रिका' है। काश, कविने अुसे पूरा किया होता! संसारके साहित्यमें सर्वोच्च स्थान अुसको मिला होता।

आजके नवीन युगके लेखक अपने रचना-कौशलसे दो लघुकथाओंको धागेमें गूँथकर अनूठे अुपन्यासका कलेवर प्रदान करनेमें सिद्धहस्त हैं। कुछ समय पूर्व, अेक पत्रमें प्रकाशित 'भवानी' नामकी रचना अिसी ढंगकी थी। कहानीकी कसौटीपर कसनेसे यह जितनी खरी अुतरती है, अुतनी अुपन्यासकी कसौटीपर कसनेपर खरी नहीं अुतरेगी।

पहले कहा जा चुका है कि तमिलमें अुपन्यासोंकी संख्या बहुत कम है। पर कअी अेक मौलिक अुपन्यासों-को साहित्यके संसारमें विशिष्ठ स्थान प्राप्त है, जो लोक-साहित्यमें अच्छा नाम पाने योग्य है।

तमिलके सर्वोच्च साहित्यकार श्री रा. कृष्णमूर्ति 'कल्की' के दो अैतिहासिक अुपन्यास 'पार्तिपन कनवु' और 'शिवकामियिन शपथम' संसारके साहित्यके सामने अुच्चतम स्थानपर रखने योग्य हैं। चोल साम्राज्यकी पृष्ठभूमिपर 'पोन्नियिन शेल्वन' नामसे अेक बृहद अुप-न्यास साप्ताहिक 'कल्की' में अब धारावाहिक रूपसे प्रकाशित हो रहा है, जिसकी लाखोंकी तादादमें लोग प्रति सप्ताह प्रतीक्षा कर रहे हैं। अुनके सामाजिक अुपन्यासोंमें 'मुकुटपति', 'कल्वनिन् कादलि' और 'त्याग भूमि' आदि बहुत प्रसिद्ध हैं। अिनमें 'कलवनिन कादलि' का अपना विशिष्ठ स्थान है। यह सर्वमान्य बात है कि 'कल्की' की कृतियोंको ही तमिल साहित्य-संसारमें सर्वोच्च स्थान प्राप्य है। कहीं कहीं पर 'कल्की' सुप्रसिद्ध विदेशी साहित्यकार 'स्काट' को भी मात कर देते हैं। अिनका 'शिवकामियिन् शपथम्' लिखते-लिखते बहुत लंबा हो गया है, अिसलिये कुछ जगहोंमें ढीला-पन-सा दिखायी देता है। लेकिन अितना रोचक है कि वह ढीलापन ढीलापन नहीं दिखायी देता। अिसलिये अेक विद्वान समालोचकने अुनके रचनाकौशलकी प्रशंसा करते हुअे कहा था कि बंदरकी पूँछ बहुत लंबी हो तो असुन्दर दीखेगी, पर मोरका पंख जितना ही लंबा होता है अुतना ही भला दीखता है। 'शिवकामियिन शपथम्' मोरके लंबे पंखके समान ही सुन्दर है। पर जहाँ अुपमेयकी दृष्टिके लिये अुपमाका सहारा लेना पड़ गया तो समझना चाहिये कि अुपन्यासकी लंबाअी अवश्य कुछ खटकती है।

हमारे देशकी यह परिपाटी अनादि कालसे रही है कि साहित्य-सृजनके पीछे कोअी-न-कोअी अुद्देश्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Harid

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवश्य हो। कोअी अुपन्यास मनोरंजनकारी है तो कोअी किसी सिद्धान्तके प्रचारमें लगा हुआ होता है। कोअी कलाकी नींवपर हो तो कोअी नीतिको लेकर चलनेवाला हो। अिस दृष्टिसे देखा जाय तो 'कल्की'का 'पार्तिपन कनवु' चिरंतन कालकी शिल्पकलाकी कीर्त्तिका यशोगान करता है और 'शिवकामियिन शपथम्' भरत नाट्यको अपना केंद्र मानकर अुसके अिर्दगिर्द घूमता है और अुसीसे संबद्ध घटनाओंका जाल बुनता चला जाता है। लेखककी कल्पना-शक्ति हमको अुसी अैतिहासिक कालमें पहुँचा देती है और हम पाठक अुसी लोकमें विचरने लगते हैं।

श्रीमती लक्ष्मीके अुपन्यास 'पेण मनम्' (नारीका हृदय) का साहित्य-संसारमें विशिष्ट स्थान है। नारी हृदयकी सूक्ष्म विवेचना करके अुनके मनोगत भावोंको चित्रित करनेमें श्रीमती लक्ष्मीकी लेखनी अपना कमाल दिखाती है। मनस्तत्वको मनोवैज्ञानिक ढंगसे पाठकोंके समक्ष रखनेसे लक्ष्मीको अच्छी ख्याति प्राप्त हो चुकी है। 'नारण दुरैक्कण्णन' के 'अुयिसेवियम्' और 'चिरंजीवी' की 'शूरावलि' अिसी श्रेणीके अुपन्यास कहे जा सकते हैं।

अेक लेखकने अपना यह मत प्रगट किया कि अुपन्यासोंकी ओर लेखकोंका ध्यान न जानेका कारण यह है कि मानवका प्रकृतिसे अेक प्रकारसे सम्बन्ध-विच्छेद हो गया है। ग्रामीण जनतासे पढे-लिखे लोग दूर हो गये हैं। लोगोंमें यह धारणा जोर पकड़ गयी है कि ग्रामीण जनताके साथ जीवनमें निर्वाह होना कठिन हो गया है ओर होता जा रहा है। बिना पत्र-पत्रिकाओंको पढे, अुपन्यासके सृजनके लिये लेखनी नहीं अुठानी चाहिये। अिसलिये मनुष्य-मनुष्यके बीचकी खाअीं बढ़ती ही जा रही है। यही कारण है कि अुपन्यासके सृजनमें ढीलापन आ गया है।

लेकिन कुछ अैसे भी लेखक थे और हैं जिन्होंने ग्राम्य जीवनसे निकट संपर्क प्राप्त करके अिस ओर अपनी लेखनी केवल अुठायी ही नहीं, बल्कि सफलता भी प्राप्त की है।

अिनमें स्वर्गीय श्री के. अेस. वेंकटरमणीजी अपने ढंगके अेक हैं। अिनकी रचनाओंमें प्रचारकी बू आती है। 'देश भक्तन् कन्दन' और 'मुरुगन अेस. अुड़वन्' ये दोनों देश भक्तिके सन्देशवाहक हैं। कन्दनके सभी पात्रोंको हम तमिलनाड़के गांव-गांवमें पा सकते हैं और वे हमारे अत्यन्त परिचितोंमेंसे हैं। कुछ लोग यह तर्क पेश करते हैं कि बिना किसी प्रेमकी घटनाके, कहानी या अुपन्यासका सृजन असम्भव या कठिन नहीं है, तथापि रुचिकर नहीं हो सकता और सफल अुपन्यास भी नहीं कहा जा सकता। 'मुरुगन अेक किसान है' यह अुपन्यास अुन तर्कवादियोंके अिस तर्कको हवामें अुड़ा देता है। यह अुत्कृष्ट रचना पहले अंग्रेजीमें लिखी गयी थी बादको ही अिसका तमिलमें अनुवाद हुआ।

वेंकटरमणीके बाद ग्राम्यजीवनको लेकर अुपन्यास रचनेवालोंमें 'शंकर राम' का नाम श्रद्धासे लिया जाता है। रोजमर्राके जीवनमें अपनी आँखों देखी घटनाओंका अनुभूतिपूर्ण वर्णन अिनके अुपन्यासोंमें मिलता है। अिनका अुपन्यास 'मण्णाशै' कल्पना और अनुभूतिकी भित्तिपर खड़ा है। अेक टुकड़ा जमीनके लिये हजारों रुपयोंको पानीकी तरह बहानेवाले अेक आत्माभिमानी मिरासदारसे हमारा परिचय करा देते हैं और हम अुपन्यासको समाप्त करते-करते अपने आपसे यह पूछ बैठते हैं कि अेक टुकडा जमीनकी तृष्णामें पड़ना कितना भयावह है।

जमानेकी रफ्तारमें हम मनुष्य भी बहते जाते हैं। जीवनके वातावरण कितने ही प्रकारके अुतार-चढ़ाव देखते हैं और अुसके अनुकूल हमारे मनोगत भाव भी परिवर्तित होते जाते हैं। लेखकोंकी परिवर्तित भावनाओंका प्रतिबिंब साहित्यपर भी पड़ता है। जिन्दगी साहित्यका अुद्गम-स्थान है और साहित्य ही जीवनको ठीक मार्गपर ले जाता है तथा अुसे श्रेयस्कर बनाता है। जीवन और साहित्यमें अटूट अन्योन्याश्रय संबन्ध है। तमिल भाषाभाषी यह गर्व अनुभव करते हैं कि संघ कालका साहित्य अत्युत्तम है। अुसका अध्ययन करनेपर पता चलेगा कि प्राचीन कालमें तमिल लोग कैसे परा-क्रमी प्रेमके पुजारी और अनन्य अुपासक थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संभवतः यही कारण है कि तमिलमें प्रेम, शोक, आदि रसोंसे परिपुष्ट अुपन्यास और कहानियाँ प्रचुर मात्रामें रची जा रही हैं। पर वीर रस प्रधान अुपन्यास बहुत ही कम देखनेको मिलते हैं।

यह कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं माना जायगा कि तमिलमें हास्य रस प्रधान चीजें अधिक मात्रामें लिखी जाती हैं, पढी जाती हैं। भारतीय साहित्यमें तमिल ही अेक अैसी भाषा है, जिसमें सुष्टु और शिष्ट हास्यका प्रयोग किया जाता है। अेस. वी. वी. के प्रायः सभी अुपन्यास हास्यरस प्रधान ही हैं। 'आनन्द विकटन' के प्रमुख संपादक श्री 'देवन' के अुपन्यास भी अिसी श्रेणीके हैं। अुनका 'जोमतियिन् कादलन' शिष्ट हास्यरस प्रधान अुपन्यास है। श्री देवनने कअी अुपन्यास लिखे हैं, जिसका प्रधान रस हास्य है और पाठक अुसे पढ़ते हुअे हंसते-हंसते लोटपोट हो जाता है।

तमिलमें अुपन्यास-रचनाकी ओर लेखकोंकी बेपरवाही देखकर सुप्रसिद्ध मासिक पत्रिका 'कलैमहल' हर साल अेक अुपन्यास-प्रतियोगिता चलाती है और श्रेष्ठ मौलिक सामाजिक रचनाको पारितोषिक भी देती है। पहले सालका प्रथम पुरस्कार 'अखिलन' नामके नवयुवक लेखकको अुनके अुपन्यास 'पेण्' अर्थात् 'नारी' पर मिला। अुनकी भाषा-शैली विलक्षण व अनूठी है और कथा सुनानेका ढंग भी हृदयग्राही तथा मर्मस्पर्शी है। मगर कहीं-कहींपर अेक बात खटकती है कि वे बार-बार अेक ही बातको दुहरा देते हैं। अिनकी लंबी कहानी 'मंगिव तिलयु' अर्थात ढलती चांदनीमें अुपन्यासकी सी सुगन्ध महक अुठती है।

दूसरे सालकी प्रतियोगितामें 'पुदुअुलहम्' अर्थात् 'नयी दुनिया' नामक अुपन्यासको पुरस्कार मिला। शुरू-शुरूमें तो लेखकने कमाल कर दिखाया। पर मध्यान्तरको पार करते-करते अुपन्यास शिथिल सा पड़ जाता है।

तमिल भाषाके महाकवि भारतीने अेक स्थानपर कहा है:—

जाअिये आगे दिशाओंमें
लाअिये कला-धनको तमिलमें।

और अेक जगहपर अुन्होंने कहा कि विदेशके विद्वानोंके अनमोल ग्रन्थोंका तमिलमें अनुवाद होना चाहिये और तमिलका साहित्य-भंडार भरना चाहिये। महाकविकी अिस अुक्तिको तमिलके-साहित्य-सेवियोंने चरितार्थ करके दिखला दिया। हिन्दी, गुजराती, मराठी, बंगला, रूसी आदि भाषाओंके ग्रन्थ-पुष्प तमिल माताकी वेणीमें सजाये हुअे हैं। हिन्दीके प्रेमचन्द, सुदर्शन, कौशिक, भगवतीचरण वर्मा, अिलाचन्द्र जोशी, मराठीके वि. स. खांडेकर, गुजरातीके के. अेम. मुन्शी बंगलाके ठाकुर, शरत्चन्द्र, बंकिमचन्द्र, हरिदास मुकर्जी, ताराशंकर बनर्जी आदि लेखक तमिलमें आदरणीय स्थान पा चुके हैं। टाल्स्टायसे लेकर प्रसिद्ध अुपन्यास लेखिका वाण्डा वालवस्का, चेखव, गोर्की आदि साहित्यकारोंको भी तमिल-साहित्यमें प्रशंसनीय स्थान प्राप्त हुआ है। भाषाके विकास और साहित्यकी समृद्धिके लिये अैसे अनुवाद अत्यन्त आवश्यक हैं।

आजकल लोग यह चर्चा करते हुअे पाये जाते हैं कि यह जनतंत्रात्मक युग है। समाजवाद और अभेद-वादकी लहरें अुठ रही हैं। अतः अैसे ही साहित्यका विकास हो सकता है जो जनताके दिलमें बैठ सके और हिला सके। आजकल कलाअें अपने प्रभुत्वकी ममतामें पड़कर आसन मारे गौरीशंकरकी चोटीपर नहीं बैठ सकतीं अर्थात् अमीरोंकी दासता नहीं कर सकतीं। अुनको अुतरकर जनताके सामने समाजके मेलेमें आना चाहिये।

अिस बातमें तथ्य अवश्य है। अुदाहरणार्थ चित्र—पटको लीजिये या संगीतको। ये दोनों जनताके मनो-रंजनकी वस्तुअें हैं। ग्रामीण किसानसे लेकर रिक्शेवाले मजदूरतक अिस कलाका रसास्वादन करते हैं। पर यह विचारनेकी बात है कि क्या अिसको मापदण्ड मानकर अुसे श्रेष्ठ और अुच्च कोटिकें संगीतकी अुपाधि दी जा सकती है? अैसा करनेसे कलाकी अपनी आत्मीय महत्ता कम हो जायगी। अतः, अिस बातका ख्याल रखना जरूरी है कि कलाका स्तर भी बना रहे और साधारण जनताको भी मनोरंजन प्राप्त होता रहे।

हमारे पूर्वजोंने अिसी प्रणालीको अपनाया है। जनतन्त्रात्मक तत्वोंसे अनभिज्ञ होते हुअे भी अुस जमानेमें चित्रकला, शिल्पकला, संगीतकला आदि मन्दिरोंके ज़रिये साधारण जनताके संपर्कमें आयी। अिन कला-वस्तुओंके अन्दर छिपी हुअी कथा ही जनताकी कला है और अैसी अुत्कृष्ट कलात्मक कहानियोंकी श्रेणीकी ही चीज़ अुपन्यास है।

आज तमिल-साहित्य अुपन्यासके अंगकी श्रीवृद्धि करनेमें लगा है और निकट-भविष्यमें ही अुसको अिस कलामें सर्वग्राह्य स्थान प्राप्त होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[सूचना--'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिये।]

"मध्य कालीन प्रेम साधना" : [लेखक: श्री परशुराम चतुर्वेदी...प्रकाश : साहित्य भवन लिमिटेड, अिलाहाबाद....मूल्य तीन रुपया]

हिन्दी-साहित्यके भक्त कवियोंके बारेमें श्री परशुरामजी चतुर्वेदी, अेम. अे., अेल.अेल. बी.; आज अेक बड़े विशेषज्ञ अेवं अनुसन्धानक माने जाते हैं, जो कि मैं समझता हूँ कि बहुत सही है। अुनकी विशाल कृति "अुत्तर भारतकी संत परंपरा"के बाद यह आकारमें छोटी रचना होकर भी बहुत महत्वपूर्ण है, अिसमें लेखकके दस निबन्धोंका संग्रह है, जिनका संबन्ध तमिलके आळवार भक्त कवियों तथा मीराबाअी, जायसी, हित हरिवंश, नन्ददास और रसखानसे है। वे अपनी प्रस्तावनामें लिखते हैं:—

"...प्रेम वस्तुतः अेक अैसा भाव है जो किसी अलौकिक या अद्वितीय प्रेमास्पदके प्रति होता हुआ भी अेकसे अधिक रूप धारण कर सकता है और वह कभी-कभी वात्सल्याभाव, सख्य-भाव अेवं दास्य-भावके साथ भी अुसी प्रकार पाया जा सकता है, जैसा दाम्पत्यभावके साथ देखा जाता है। किन्तु जैसा मैंने अन्यत्र भी दिखलाया है, अिन तीनों प्रकारके भावोंमें अुस अुन्मद अेवं अुन्मुक्त रूपके दर्शन नहीं होते जो दाम्पत्यभावमें रहा करता है..."

पुस्तक पढ़ जानेके बाद अिस कथनकी गहराअी और सच्चाअी भली प्रकारसे हृदयंगम हो पाती है।

हिन्दीमें आजकल शोध-साहित्य बड़ी कसरतसे प्रकाशित हो रहा है, परन्तु पायेकी पुस्तकें, जो अध्ययन, मनन, विवेचन और शोधके प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोणके साथ लिखी गयी हों, कम ही देखनेको मिलतीं हैं। अुक्त पुस्तक अिस कोटिकी है, यह हर्ष और संतोषका विषय है। हम लेखककी आगामी रचनाओंकी अुत्कंठाके साथ प्रतीक्षा करेंगे।

\+ + +

"मध्यकालीन धर्म साधना" [लेखक: डॉ. आचार्य हजारीप्रसादजी द्विवेदी : प्रकाशक : साहित्य भवन लिमिटेड, अिलाहाबाद...मूल्य...तीन रुपया]

यदि यह कहा जाय कि भारतीय जीवनके मध्यकालकी समस्त धार्मिक और सामाजिक चेतना, परंपरा, विश्वास और रीति-रिवाजों जैसे विशाल विषयको आचार्य द्विवेदी जीने २३८ पृष्ठोंकी छोटीसी पुस्तकके ३७ निबन्धोंमें सजा कर रख दिया है, जो कि गागरमें सागर भरनेसे कम नहीं, तो शायद कोअी अत्युक्ति नहीं होगी, अुनकी पैनी कलम, गहरा अध्ययन, सरल भाषा और रोचक शैली, गंभीर विषयको भी सहज बना देती है, कहना न होगा कि अुक्त पुस्तक अिसके अनुरूप ही है, मध्ययुग शब्दका विवेचन करते हुअे वे लिखते हैं:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मध्य-युग शब्दका प्रयोग कालके अर्थमें अुतना नहीं होता जितना अेक खास प्रकारकी पतनोन्मुख और बदली हुअी मनोवृत्तिके अर्थमें होता है, मध्य-युगका मनुष्य धीरे-धीरे विशाल और असीम ज्ञानके प्रति जिज्ञासाका भाव छोड़ता जाता है तथा धार्मिक आचारों और स्वतः प्रमाण माने जानेवाले आप्त-वाक्योंका अनुयायी होता जाता है।"

यह अुद्धरण अूपर लिखे मेरे विचारोंको ही स्पष्ट नहीं करता वरन् अिस पुस्तकके आधारको भी, स्पष्ट करता है। दूसरे शब्दोंमें यह पुस्तक अपने देशके धार्मिक और सामाजिक ह्रासका अेक विश्लेषण है। बस, विश्लेषण मात्र नैरन्तर्यके साथ लिखा अितिहास नहीं, यह शायद अिसकी सीमा है, परन्तु वैज्ञानिक विश्लेषणके रूपमें अिसकी अुपादेयतामें सन्देह नहीं किया जा सकता। यों यदि अिस धार्मिक ह्रासके अध्ययनके साथ तत्कालीन भारतीय अर्थ-व्यवस्थापर भी कुछ संदर्भात्मक प्रकाश डाला जाता तो अिसकी अुपादेयता कहीं अधिक बढ़ सकती थी, अैसा मेरा मत है। हालांकि परिशिष्टमें विज्ञ लेखकने भारतीय समाजकी जातियोंका पेशेवर (आर्थिक) विभाजन अेक तालिकाके रूपमें दिया है, तो भी अिस दृष्टिकोणसे सामाजिक अर्थ-व्यवस्था तथा सामाजिक विचार (धर्म-साधना) देखनेकी कोशिश अिस पुस्तकमें कमसे कम नहीं की गयी। मैं आशा करता हूँ अगली किसी पुस्तकमें वे अैसा प्रयत्न अवश्य करेंगे।

अूपर यह सब लिखनेका यह तात्पर्य कदापि नहीं कि जो चित्र आचार्य द्विवेदीजी पेश करते हैं, वह कोअी बहुत अधूरा चित्र है, यह अेक मुरलके कथानककी तरहसे है, जिसके कअी अध्याय अभी कहजानेके बाकी हैं, शायद रचे जाने बाकी हैं।

× × ×

'संस्मरण'— [लेखक : श्री बनारसीदासजी चतुर्वेदी : : प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ काशी, पृष्ठ संख्या २५१ मूल्य तीन रुपये]

हिन्दीके वयोवृद्ध साहित्य-सेवियोंमें और नीर-क्षीर विवेकी अुच्चस्तरके हिन्दी-पत्रकारोंमे श्री पण्डित बनारसीदासजी जितना अधिक अपने संपादनके कारण जाने जाते हैं, अुतना अधिक शायद अपने लेखनके कारण नहीं। परन्तु मूलतः वे अेक बड़े ही संवेदनशील लेखक हैं। अुनकी पैनी नज़र और चुभती शैली आलोचक या पण्डितका गुण न होकर अुनकी अुन्नत कला-चेतनाकी ही निखार है। अिसका यह मतलब कदापि नहीं कि अुनकी कला-चेतना आलोचन-जटित और पांडित्यपूर्ण नहीं होती। परन्तु कहनेका यह मतलब अवश्य है कि वे मूलतः अैसे कलाकार हैं जो जीवनकी सच्ची घटनाओंमें अपनी नजरके जरिये अैसे चित्र पेश कर पाते हैं जिनको पेश करनेके लिये किसी दूसरे कम प्रतिभावाले कलाकारको कल्पनाका अत्यधिक सहारा लेना पड़ता। अुनके अिन २१ संस्मरणोंमें अुनके घटनामय जीवनके चित्र ही नहीं हैं, वरन् अपने देशके साहित्यिक और कलामूलक अितिहासके तथ्य भी प्रचुर संख्यामें बिखरे पड़े हैं जो आजसे दो तीन दशाब्द बाद शोधके विद्यार्थियोंके संबल बनेंगे।

अिन २१ चित्रोंके सहारे श्री बनारसीदासजीकी लेखन-कला ही नहीं; वरन् अुनकी मान्यताअें, आस्थाअें, आदतें, आकर्षण-विकर्षणके तत्व, अुनके अपने चरित्रकी विशेषताअें जैसे अद्धा और नम्रता, बोलती हैं—मुखर हो पाती हैं। और मैं समझता हूं कि यह अिस पुस्तककी अपनी निजी अुपादेयता है। दूसरोंके जीवनके सहारे अपने जीवनपर प्रकाश डालना कुछ सहल नहीं। परन्तु शायद कठिनाअी या परेशानी नामक शब्द श्री बनारसीदासजीके जीवनकोशमें अपना अर्थ खो चुका है। मैं समझता हूं कि अब समय आ गया है जब कि हिन्दी-जगत् अुनसे साधिकार अेक विस्तृत आत्म-चरितकी मांग कर सकता है। मेरा पूरा विश्वास है कि जब भी वह चरित्र लिखा जायगा तब वह हिन्दी-साहित्यकी अेक अमर कृति तो होगी ही, साथ ही हम आजके विश्व-साहित्यमें भी अुसके जरिये हिन्दीको प्रतिष्ठित करवा सकेंगे।

— लोक-चक्षु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साभार प्राप्त

[निम्नांकित पुस्तकें "राष्ट्रभारती" में समीक्षार्थ प्राप्त हुई हैं। अिनकी समीक्षाएँ समीक्षकोंके द्वारा प्राप्त होते ही प्रकाशित की जायेंगी।]

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद— द्वारा प्रकाशित पुस्तकें— (१) गांधी चरित मानस, ले०— वालजी गोविन्दजी देसाअि, (२) बापूके पत्र–२, संपा०— श्री मणिबहन पटेल।

कांचनमुक्ति प्रकाशन, लखनअू— द्वारा प्रकाशित पुस्तक— (१) कांचनमुक्ति, ले०— श्री गंगाधर पांढरे।

पीपुल्स पब्लिशिंग हाअूस लि., बम्बअी— द्वारा प्रकाशित पुस्तक— (१) अुदय पथ, ले०–शील।

हिन्दी साहित्य समिति, बेलगांव— द्वारा प्रकाशित पुस्तक— (१) छः अेकांकी, ले०— श्री भैरुलाल व्यास।

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास– द्वारा प्रकाशित पुस्तकें— (१) दशमी, (२) आदर्श चरित्र, ले०— श्री रघुवरदयालु मिश्र, (३) रानी लक्ष्मीबाअी, ले०— श्री व्रजनन्दन शर्मा, (४) भगवान भला करे, ले०— श्री अे. रमेश चौधरी, (५) कबीर दोहावली, सं०— श्री महेंद्रकुमार जैन।

अकेला प्रकाशन मन्दिर, तिनसुकिया, असम— द्वारा प्रकाशित पुस्तक— (१) बरदलै स्मृतिग्रंथ।

साहित्य प्रकाशन मन्दिर, ग्वालियर—द्वारा प्रकाशित पुस्तकें— (१) भारतीय संस्कृतिकी रूपरेखा, ले०— श्री गुलाबराय, (२) भूमिकी अनुभूति, ले०— श्री मिलिन्द, (३) गौतमनन्द, ले०— श्री मिलिंद।

विज्ञान नौका कार्यालय, लश्कर, मध्यभारत— द्वारा प्रकाशित पुस्तक— (१) आद्य-गीता, टीकाकार- डा आनन्द चैतन्य।

साहित्य भवन लिमि; अिलाहाबाद— द्वारा प्रकाशित पुस्तकें— (१) बापूका सपना, ले०— श्री नर्मदेश्वर चतुर्वेदी, (२) भारतवर्षमें जातिभेद, ले०- श्री क्षितिमोहन सेन, (३) हिन्दी काव्यशास्त्र, ले०— श्री शांतिलाल बालेंदु।

शारदा प्रकाशन मन्दिर शिवपुरी, मध्य-भारत— द्वारा प्रकाशित पुस्तक— (१) आचार्य शुक्ल और चिंतामणि।

ओसवाल प्रेस, कलकत्ता ७ द्वारा प्रकाशित पुस्तक—(१) बिखरे क्षण, ले०—कुमार।

नवभारत प्रकाशन, शनिवार, पूना २ द्वारा प्रकाशित पुस्तक—(१) गीताकर्मयोगसत्याग्रह, अनु०- श्री श्रीपाद जोशी।

अत्तरचन्द कपूर अेंड संस, देहली द्वारा प्रकाशित पुस्तक–(१)हिन्दी साहित्य, ले०–डा. हजारी-प्रसाद द्विवेदी।

कल्पना कुटीर मधेपुरा, भागलपुर द्वारा प्रकाशित पुस्तक—(१) मधुयामा, ले०—अशान्त।

रामप्रसाद अेंड संस, हास्पिटल रोड, आगरा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें—(१) झपकियाँ, ले०- श्री ओंकार शरद, (२) चरितनायक, ले०—श्री ओंकार शरद।

मानस मन्दिर, जबलपुर द्वारा प्रकाशित पुस्तक—अनजाने जाने पहिचाने, ले०–श्री रामनारायण अुपाध्याय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

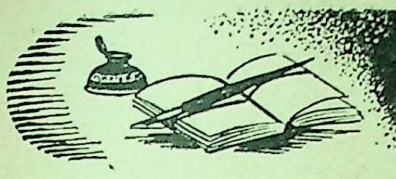

संपादकीय

हिन्दीके डाक्टर बननेके लिये अिंग्लैण्ड !!

संसद्में कुछ दिन हुअे यह प्रश्न अुठा था। अेक भाअी हिन्दीमें 'डाक्टर' की डिग्री प्राप्त करनेके लिये अिंग्लैंड गये हैं। अब तो यह प्रश्न शायद पुराना हो गया, परन्तु जो हिन्दीके हितका ध्यान रखते हैं, अुन्हें अिस प्रश्नपर बार-बार विचार करना ही होगा। जिसने भी अिसे सुना अुसे आश्चर्य हुआ होगा कि हिन्दीमें 'डाक्टर' की डिग्री हासिल करनी हो तो अुसके लिये अुपयुक्त स्थान प्रयाग या काशी हो सकते हैं, लन्दन कैसे ? परन्तु यहाँ अैसी आश्चर्यकारक घटना घटित होना कोअी नयी बात नहीं। अभी तक हमारे मानस-पटलपर अिंग्लैंड और अंग्रेजीका गहरा रंग चढ़ा हुआ है।

परन्तु अिसका अेक दूसरा पहलू भी है। अुत्तर प्रदेशके राज्यपाल श्री क. मा. मुन्शीने आगरा युनिवर्सिटी द्वारा संयोजित हिन्दी-परिषद्के अध्यक्षीय भाषणमें अिस सम्बन्धमें कहा कि :—

"अभी हमने सुना कि अेक हिन्दीका विद्यार्थी हिन्दीकी विशेष शिक्षा प्राप्त करनेके लिये योरोप गया है। गुजरातीके अेक प्राध्यापक लन्दन-युनिवर्सिटीमें डा० टर्नरके पास गुजरातीके भाषाविज्ञानकी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। अिस देशमें भाषा-विषयक अुच्च शिक्षाके जो केन्द्र हैं, यह अुनपर अेक प्रकारकी टीका ही है और अुचित टीका भी। अिन विद्यार्थियोंको पश्चिमके प्रति मोह है, यह कहना ठीक नहीं। हमें यह समझ लेना चाहिये कि भारतीय भाषाओंके सम्बन्धमें भाषा-विषयक अुच्च शिक्षापर जितना ध्यान देना चाहिये, अुतना हमारे विश्वविद्यालय अभी नहीं दे रहे हैं।"

हमारे विश्वविद्यालयोंकी यही तो सबसे बड़ी त्रुटि है कि वे भारतीय-भाषाओंकी शिक्षाके प्रति अुचित ध्यान नहीं दे रहे हैं। अंग्रेजीके मोहके कारण अिस दिशामें अुन्हें क्या करना चाहिये, अिसपर वे विचार तक नहीं करते। वस्तुस्थितिपर यदि विचार करेंगे तो हमें अिन दो विद्यार्थियोंका अिंग्लैंण्ड जाना शायद अितना अखरेगा नहीं। हिन्दी तथा गुजरातीका अिंग्लैण्डमें विशेष अध्ययन नहीं हो सकता, यह माना, परन्तु भाषा विषयक अुच्च शिक्षाके प्रकार तथा शिक्षा-पद्धतिके ज्ञानको डा० टर्नर जैसे भाषावैज्ञानिक शिक्षाशास्त्री द्वारा अवश्य प्राप्त किया जा सकता है। फिर भी भारतीय भाषाओंके सम्बन्धमें अुच्च शिक्षाका प्रबन्ध न होनेसे विद्यार्थियोंको अिंग्लैंड जाना पड़ा, अिसमें हम जो लज्जा अनुभव करते हैं, वह किसी प्रकार कम नहीं हो सकती और अिसके लिये हम अवश्य हृदयसे खिन्न भी हैं।

आगराका हिन्दी-अिन्स्टीट्यूट

अूपर जिस हिन्दी-परिषद्का अुल्लेख किया गया है, अुसमें अेक ही निर्णय हुआ और वह यह कि आगरा-विश्वविद्यालयके तत्वावधानमें अेक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी-अिन्स्टीट्यूटकी स्थापना की जाय। अुसमें चार विभाग होंगे।

१. परीक्षा-विभाग:– जिसमें सरकार अथवा विश्वविद्यालयोंसे सम्बन्ध न रखनेवाली, परन्तु जिन्होंने बरसोंसे हिन्दी-प्रचारका कार्य किया है और जिनकी परीक्षाओंकी प्रतिष्ठा है, राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति तथा दक्षिण भारत-प्रचार-सभा, जैसी संस्थाओंकी अुपाधि-परीक्षा-अुत्तीर्ण विद्यार्थियोंको भी युनिवर्सिटीकी डिग्री प्राप्त करनेकी सुविधा देनेकी व्यवस्था होगी।

२. शिक्षण-विभाग:– हिन्दीकी अुच्च शिक्षाका तो अिसमें प्रबन्ध होगा ही, साथ-साथ बंगाली, गुजराती, मराठी, तमिल, तेलगु आदि प्रान्तीय भाषाअें तथा संस्कृतकी शिक्षा देनेका भी आयोजन होगा।

३. प्रकाशन-विभाग:–अिसके द्वारा साहित्य-निर्माणका कार्य होगा। सब प्रकारके ज्ञानका विश्वकोश और दुनियाकी अन्य भाषाओंके ग्रंथोंका अनुवाद आदि कार्य अिसके द्वारा किये जायँगे।

४. संशोधन-कार्य:–भाषा सम्बन्धी संशोधन-कार्य तथा भाषा-विज्ञान आदिकी शिक्षाका प्रबन्ध अिस विभागके अन्तर्गत होगा।

अिस प्रकार चार विभागोंमें अिस नयी संस्थाका कार्य बाँटा जायगा। युनिवर्सिटी अपनी सुविधा तथा प्राप्त बजटके अनुसार अिन विभागों-में जितने कार्य प्रथम किये जा सकते है, अुनको आरम्भ करेगी। क्रम जो अूपर दिया हैं, वही रहेगा।

यह तो परिषद्के निर्णयकी बात हुअी। परन्तु परिषद्में जो विचार-विमर्श हुआ वह अधिक अुपयोगी भी था और आह्लादक भी। हिन्दी राज्य भाषा और राष्ट्रभाषा बनी है, अिससे हिन्दीके सेवक तथा अध्यापक, प्राध्यापक सभीकी जवाबदारी बढ़ी है, अिसे वहाँ अेकत्र हुअे सभी लोग अनुभव करते थे। श्री मुन्शीजीने अपने अध्यक्षीय भाषणमें राष्ट्रभाषा-प्रचारका क्षेत्र और कार्य-क्षमतापर प्रकाश डालते हुअे कहा कि हिन्दीकी शक्ति बढानेके लिये अुसके दो स्वरूपोंका विचार करना होगा। (१) लोक-भाषा और (२) अुच्च अभिव्यक्तिका माध्यम। अुसके प्रथम रूपमें हिन्दीका शब्दभंडार अभि-व्यक्तिकी शैली तथा मर्यादा देशके भिन्न-भिन्न प्रदेशोंमें कुछ भिन्नता लिये हुअे होंगे। लेकिन जैसे-जैसे लोकभाषाका व्यवहार करते जायेंगे, देशकी भिन्न-भिन्न प्रदेशीय भाषाओंसे अुसकी समृद्धि बढ़ती जायगी। दूसरे राष्ट्रीय अभिव्यक्तिके शक्तिशाली भाषा-माध्यमके रूपमें अुसका शब्द भंडार अैसा होना चाहिये कि जिसको देशके अधिकतर लोग स्वीकार करते हों। अुसमें नये शब्द तथा मुहावरें निर्बन्ध प्रवेश पा सकेंगे। भारतीय भाषाओंके ही शब्द तथा मुहावरे नहीं, विदेशी भाषाओंके भी ग्राह्य होंगे। वह अितनी स्वतन्त्र तथा लचीली होना चाहिये कि नये तत्वोंको केवल आत्मसात ही न करे वरन् विचार तथा सौन्दर्यकी अभिव्यक्तिके लिये अुच्च प्रकारका साधन बन सके। अिसलिये हिन्दीका राष्ट्रभाषाके रूपमें स्वीकार करना ही पर्याप्त नहीं, अुसे आधुनिक व्यवहारकी अभिव्यंजना-शक्तिसे युक्त तथा समृद्ध भी बनाना होगा।

राष्ट्रभाषाको जिस ओरसे भय है अुसके प्रति भी अुन्होंने संकेत किया– "हिन्दीके विकासके लिये हिन्दी भाषी प्रदेशकी हिन्दी और हिन्दीतर भाषी प्रदेशोंकी राष्ट्रभाषामें भेद करनेसे अधिक विघातक और कोअी बात नहीं हो सकती।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दीके विकासके अुद्देश्यसे अुन्होंने अपने भाषणमें रचनात्मक कार्यकी दृष्टिसे दो-तीन कार्योंके सुझाव भी दिये जिनमें महाभारत तथा रामायणके सर्वसुलभ सरल और भाववाही आधुनिक हिन्दीमें किये गये अनुवादोंका प्रचार करना भी अेक था। परन्तु हम अिसकी यहां चर्चा नहीं करेंगे। अूपर जो अवतरण दिये गये हैं, वे भी स्पष्ट हैं और अुनपर अधिक टीका-टिप्पणीकी आवश्यकता नहीं।

हम आगरा-विश्वविद्यालयके अिस प्रयत्नका हार्दिक स्वागत करते हैं और आशा करते हैं कि शीघ्र ही निर्धारित कार्य आरंभ कर दिये जायेंगे।

हिन्दी-शिक्षा अनिवार्य होनी चाहिये

दिल्ली प्रान्तीय हिन्दी-सम्मेलनके अध्यक्ष स्थानसे श्री गाडगिलजीने हिन्दीके प्रचारकी अेक योजना प्रकट की है। हम अुसका स्वागत करते हैं। अिसकी दो विशेषतायें हैं। अेक तो हिन्दीतर भाषी विद्वानके द्वारा अुसका आयोजन हुआ और दूसरी विशेषता यह कि वह दिल्ली-भारतके केन्द्र-स्थानसे प्रकाशित हुअी।

योजनाके दो अुद्देश्य भी हैं। केन्द्रीय सरकारके हिन्दीतर भाषी कर्मचारियोंको हिन्दी सिखाना और साथ ही हिन्दीका देशव्यापी प्रचार करना।

प्रथम अुद्देश्यकी पूर्तिके लिये अुन्होंने जो योजना रखी है, अुसके द्वारा प्रत्येक कर्मचारी ८॥ वर्षकी हिन्दी-शिक्षाके बाद हिन्दीमें कार्य करनेकी योग्यता प्राप्त कर लेगा। यह समय कुछ लम्बा है। परन्तु दिल्लीमें जिस गतिसे कार्य चल रहा है अुसको देखते हुअे अुनकी यह आशा भी पूरी हो तो यह सन्तोषका विषय होगा। दिल्लीमें राष्ट्रभाषा-प्रचार-समितिके वर्ग चलते हैं अुसमें शिक्षा पानेवाले तमिळ तेलुगु-भाषी, सज्जनोंको भी जो हिन्दीका अेक शब्द नहीं जानते, प्रारंभिक या प्रवेशकी योग्यताकी शिक्षा प्राप्त करनेमें ६ महीनेसे अधिक नहीं लगते। परन्तु सरकारकी ओरसे जो वर्ग चल रहे हैं, अुनमें सुना है कि ६ महीनेमें कर्मचारी-विद्यार्थी केवल वर्णमालाकी शिक्षा ही प्राप्त कर सके। अिस प्रगतिको देखते हुअे श्री गाडगिलजीकी योजना व्यावहारिक ही गिनी जायगी।

देशव्यापी सामान्य प्रचारके कार्यके सम्बन्धमें अुन्होंने जो सुझाव रक्खा है, अुसमें अुन्होंने शाला तथा विद्यालयोंमें हिन्दीकी शिक्षा देनेका क्रम निर्धारित किया है। सभी राज्य-सरकारोंको अब तक शाला, विद्यालयोंमें हिन्दीकी शिक्षाको अनिवार्य कर देना चाहिये था। परन्तु अब भी कुछ विलम्ब नहीं हुआ। शीघ्र ही शालाओं तथा विद्यालयोंमें हिन्दी-शिक्षा दाखिल करा देना चाहिये। विश्व-विद्यालयोंमें शिक्षाका माध्यम क्या हो सकता है, अिसके सम्बन्धमें मतभेद हो सकता है। कअी विद्वानोंका अभिप्राय है कि मातृभाषा द्वारा-क्षेत्रीय भाषा द्वारा कालेजोंमें शिक्षा दी जानी चाहिये। परन्तु दूसरे विद्वान नेताओंका यह भी अभिप्राय है कि कालेजोंकी शिक्षाका माध्यम राष्ट्रभाषा हिन्दी ही हो सकती है। अिसका निर्णय आज करना आसान नहीं। परन्तु हिन्दीकी शिक्षाको विद्यालय-महाविद्यालय आदिमें अनिवार्य तो करना ही होगा और अिसमें कोअी मतभेद भी नहीं।

—मो० भ०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस घरमें आरोग्य प्रकाश नहीं, वहाँ सुख शान्ति कहाँ ?

आरोग्य, स्वच्छता और चिकित्सा का सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ

भारत-प्रसिद्ध श्रीवैद्यनाथ आयर्वेद भवन लिमिटेडके अध्यक्ष वैद्यराज पं० रामनारायणजी वैद्यशास्त्रीने ५-६ वर्ष बड़ी मेहनतसे स्वयं अिस ग्रंथको लिखा है। ग्रंथका अेक-अेक वाक्य हजारों रुपयेका काम देता है। व्यायाम, ब्रह्मचर्य, भोजन, सदाचार, अुत्तम विचार आदि पूर्वार्द्ध विषयोंको पढ़कर और तदनुसार चलकर सदा बीमार रहनेवाला रोगी बिना दवाके नीरोग (तन्दुरुस्त) हो जाता है। ग्रंथके अुत्तरार्द्धमें शरीरमें पैदा होनेवाले सभी रोगोंकी अुत्पत्ति, कारण, निदान, रोगके लक्षण, चिकित्सा, पथ्यापथ्य आदि बड़ी ही सरल भाषामें लिखे हैं जो पढ़कर विद्वान्से लेकर साधारण पढे-लिखे दोनों समान भागसे लाभ अुठा सकते हैं। अिसमें दवाओंके जो नुकसे लिखे गये हैं वे बहुत बार परीक्षित, कभी भी फेल न होनेवाले और शास्त्रानुमोदित हैं। शहर हो या देहात, सब जगह अिस पुस्तकके घरमें रहनेसे रोगीको तत्काल लाभ पहुँचाया जा सकता है। औषध तैयार करनेका विधान तो अिस पुस्तकमें श्रेष्ठ है क्योंकि लेखक अिस विषयके निर्णयात्मक ज्ञाता हैं। अिसके आठ संस्करणोंमें ७१००० प्रतियां छपकर बिक चुकी हैं। यह नवां संस्करण १५ हजार का अभी छप रहा है। अिससे अिसकी लोक-प्रियता और अुपयोगिता स्पष्ट मालूम होती है। हिन्दीमें अैसी अुत्तम पुस्तक दूसरी नहीं है, यह कहा जाय तो अनुचित न होगा। प्रचारकी दृष्टिसे मूल्य भी बहुत कम रखा गया है। ५१५ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य सिर्फ १।।।), डाक खर्च ।।≠), हमारी चार निर्माणशाला, ५० विक्री केन्द्र, १५००० अेजेन्सियोंसे प्रत्यक्ष खरीदनेपर डाक खर्च नहीं लगेगा।

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लिमिटेड, कलकत्ता, पटना, झांसी, नागपुर।

—: अुद्यम :—

हिन्दी और मराठी भाषामें प्रकाशित होता है।

प्रतिमास १५ वीं तारीखको पढ़िये।

अुद्यममें निम्न विषयोंके लेख छपते हैं :—

लाभदायक अुद्योगधंधोंकी जानकारी, अनाज तथा सब्जीकी खेती व रोगोंका निवारण, पशुपालन, दुग्धव्यवसाय व ग्रामोद्योग संबंधी लेख, विद्यार्थियोंके लिये वैज्ञानिक व अन्य जानकारी, आरोग्य, घरेलू औषधियों संबंधी लेख, हिन्दुस्थानके वैज्ञानिक और औद्योगिक क्षेत्रकी अुपयोगी जानकारी, कृषि, औद्योगिक और व्यापारिक क्षेत्रमें काम करनेवाले लोगोंकी मुलाकात तथा परिचय।

अुद्यमके विशेष स्तंभ

महिलाओंके लिये अुपयुक्त, रुचिकर खाद्यपदार्थ बनानेकी विधि, घरेलू मितव्ययिता, अुद्यमका पत्रव्यवहार, खोजपूर्ण खबरें, आर्थिक तथा औद्योगिक परिवर्तन, जिज्ञासु जगत्, व्यापारिक हलचलोंकी मासिक समालोचना, नित्योपयोगी वस्तुअें स्वयं तैयार कीजिये।

वार्षिक चन्दा ७ रु. और प्रति अंक १२ आना

पता :— 'अुद्यम' मासिक, धर्मपेठ, नागपुर (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने प्रचारक भाओ-बहनोंसे

राष्ट्रभाषा प्रचार समितिका परिवार बहुत विशाल है। अिस परिवारमें ३३०४ से अूपर प्रमाणित-प्रचारक हैं और लगभग २००० केन्द्र-व्यवस्थापक भी। हमसे सहानुभूति और प्रेम रखनेवालोंकी संख्या भी बहुत बड़ी है।

'राष्ट्रभारती' समितिकी अन्तरप्रान्तीय (भारतीय) साहित्य और संकृतिकी प्रतिनिधि मासिक पत्रिका है। अिसकी अुपयोगिता और अुपादेयता आप लोगोंसे छिपी नहीं है। अपनी अितनी सस्ती, विविध विषय-सम्पन्न, अेवं सुरुचिपूर्ण सुन्दर पत्रिकाको अगर आप लोग चाहें तो बहुत ही शीघ्र स्वावलम्बी बना दे सकते हैं। यह अितनी नियमित है कि प्रतिमास १ ली तारीखको पाठकोंके हाथमें ही पहुँच जाती है। वार्षिक मूल्य ६ रुपया, अर्धवार्षिक ३॥) और अेक अंकका दस आना है।

प्रत्येक प्रचारक और केन्द्र-व्यवस्थापक 'राष्ट्रभारती' का अेक-अेक ग्राहक बना दे, तो अिसकी सन्तोषजनक ग्राहक-संख्या बढ़ जायगी। सिर्फ आर्थिक लाभकी दृष्टिसे ही हमें नहीं सोचना है; भारतीय साहित्य और संस्कृतिके अुच्च अुद्देश्यको भी पूरा करनेके लिये अिस पत्रिकाके पाठकोंकी संख्या बढ़ाना, ग्राहक बनाना, अत्यन्त आवश्यक है। यह मुश्किल नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि आप लोग 'राष्ट्रभारती'के ग्राहक खुद बनेंगे, दूसरोंको बनायेंगे और 'राष्ट्रभारती'की पाठकसंख्या बढ़ानेमें अपनी समितिकी सहायता करेंगे।

मोहनलाल भट्ट
मंत्री, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

फ्रेंच भाषा सीखिये!

'फ्रेंच स्वयं शिक्षक'

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धाका यह नवीनतम प्रकाशन है। अिसके लेखक हैं प्रख्यात गुरुकुल (युनिवर्सिटी) काँगड़ी हरद्वारके विद्वान स्नातक डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार डी. लिट. (पैरिस)।

राजधानी नयी दिल्लीमें भारत-स्थित फ्रांसके राजदूत श्री काअुन्ट आस्ट्रोरोग भारतके तरुणोंको शीघ्रातिशीघ्र फ्रेंच भाषा सीखनेकी सलाह देते हैं। फ्रेंच भाषा सारे यूरोपमें बहुत आमफहम और कूटनीतिज्ञ भाषा है। फ्रेंच भाषा बोलनेमें शान समझी जाती है।

बड़ी सरलतासे अिस पुस्तककी सहायतासे आप फ्रेंच भाषा सीख सकते हैं।

बढ़िया छपायी, साफ-सुथरी जिल्द, **कीमत ५ रुपया मात्र**

मिलनेका पता:--

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा [म. प्र.]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रजिस्टर्ड नं० ना० १३८६

हम आपसे कुछ कहना चाहते हैं !

'राष्ट्रभारती' का तीसरा वर्ष अिसी जनवरी '५३ से शुरू हो चुका है, और तीसरे वर्षका यह चौथा (अप्रैल) अंक आपके हाथमें है।

'राष्ट्रभारती'के जिन प्रेमी ग्राहकोंका वार्षिक चन्दा अिस अंकके साथ पूरा हो जाता है, अुनसे हमारा नम्र निवेदन है कि वे अपना अगले वर्षका चंदा ६ रु. मनी. आर्डर द्वारा तुरन्त भेजनेकी कृपा करें। वार्षिक या छहमाही चदा हर हालतमें मनीआर्डर द्वारा भेजना ही ठीक होगा। अिससे हमको और आपको सुविधा होगी। आपको अंक समयपर मिलेगा। वी. पी. और 'रजिस्ट्री' चार्जकी झंझटसे आप और हम दोनों बचेंगे। आशा है, आप हमारी अिस प्रार्थनापर जरूर ध्यान देंगे।

दूसरा निवेदन यह भी है कि कमसे-कम अपने किसी अेक-दो पडौसी मित्रोंसे भी ग्राहक अवश्य बना दें और अुनका सालाना चंदा मनीआर्डरसे भिजवा दें। यह 'राष्ट्रभारती' सबसे सस्ती, सुन्दर साहित्यिक-सांस्कृतिक पत्रिका है जो ठीक समयपर हर १ ली ता० को निकलती है।

मनीआर्डरसे वार्षिक चंदा ६ रु. और छहमाही चंदा ३ रु. ८ आ.

पता :— व्यवस्थापक — 'राष्ट्रभारती', हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

अपने कृपालु लेखकोंसे निवेदन !

(१) 'राष्ट्रभारती'में प्रकाशनार्थ रचना आदि सामग्री स्वच्छ सुवाच्य नागरी लिखावटमें ही भेजना चाहिये। प्रकाशन योग्य सामग्री जो कुछ भी आप भेजें वह बहुत भारी और खूब लंबी चौड़ी नहीं होनी चाहिये, कृपया अिसका खयाल रखें। आपके हार्दिक सहयोगके लिये राष्ट्रभारती बहुत आभारी होगी।

(२) अच्छी तरह ध्यानमें रहे कि राष्ट्रभारतीमें प्रकाशनार्थ भेजी हुअी आपकी रचना अिसके पूर्व किसी हिन्दी पत्र-पत्रिकामें प्रकाशित न हुअी हों; और जो कुछ सामग्री भेजें वह 'राष्ट्रभारती'के लिये ही भेजें।

(३) अनुवादक महाशय किसी अनूदित रचनाको भेजनेसे पूर्व अुसके मूल-लेखकसे पत्रद्वारा अनुमति अवश्य प्राप्त कर लें।

(४) अपनी अस्वीकृत रचनाको वापस मंगानेके लिये डाक टिकट अवश्य भेजें अथवा अपनी अुसकी प्रतिलिपि अपने पास सुरक्षित रखें।

(५) लेख, रचना आदि प्रकाशन योग्य सम्पादकीय सारा व्यवहार अिस पतेपर करें:—

संपादक : 'राष्ट्रभारती'
पोस्ट — हिन्दीनगर, वर्धा (मध्यप्रदेश)

प्रकाशक:— मोहनलाल भट्ट, मन्त्री–राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा।
मुद्रक— गुरुराम शर्मा, राष्ट्रभाषा प्रेस, वर्धा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

राष्ट्र भारती

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्रभारती' बिहार, राजस्थान, मध्यभारत, हैदराबाद और भोपाल राज्यके शिक्षा-विभागों द्वारा स्कूलों, कालेजों और वाचनालयोंके लिये स्वीकृत हो चुकी है।

[सूचनाः— 'राष्ट्रभारती'में, सर्वश्री डॉ. बाबूराम सक्सेना, आचार्य काका कालेलकर, महामहोपाध्याय दत्तो वामन पोतदार, स्वर्गीय किशोरीलाल मशरूवाला और अुत्तर-प्रदेशके वर्तमान राज्यपाल श्री क०मा०मुन्शीजी आदि विशेषज्ञोंकी अेक 'समिति' द्वारा १९३६ में निर्णीत नागरी लिपिका प्रयोग होता है: —अि, अी, अु, अू, अे, अै (इ,ई, उ, ऊ, ए और ऐ की जगह) और ञ, ण और क्ष (ञ, ण और क्ष अक्षरोंके लिये) —सं०]

विषय		लेखक	पृ० सं०
१. बंगालके अेक बाअुल संतकी वाणी	...	श्री आचार्य क्षितिमोहन सेन	३२१
२. भारतीय संस्कृतिमें द्राविड़ जातियोंका योग	..	श्री डॉ. अनंत सदाशिव अल्तेकर	३२२
३. युगकवि निराला	...	श्री प्रेम कपूर 'कंचन'	३२५
४. हंगेरियन आजादीकी लड़ाअीका नायक और कवि सैन्डोर पैटोफी	...	श्रीमती कमल आर्य	३२९
५. तेलुगु साहित्यमें हास्य	...	श्री प्रोफे. वा. राममूर्ति 'रेणु'	३३२
६. अितिहास न मेरा बदलेगा (कविता)	...	श्री नर्मदाप्रसाद खरे	३४०
७. देवनागरीका नया रूप कैसा हो ?	...	श्री सुजानसिंह	३४१
८. तीन निबंध	...	श्री शिवनाथ	३४३
९. मनमें महर्षि (कन्नड़ कहानी)	...	श्री अ. न. कृष्णराव अनु०—श्री गुरुनाथ जोशी	३४५
१०. परिचय (कविता)	...	श्री राजकुमारसिंह 'कुमार'	३५२
११. वह खूनी था ?	..	श्री प्रो. रंजन	३५३
१२. यू. अेन. ओ. यानी राष्ट्रसंघका गठबंधन	...	श्री महात्मा भगवानदीन	३५६
१३. तुम ! (कविता)	...	श्री 'अंचल'	३६४
१४. तमिळ नाटकोंके सूत्रधार—श्री सम्बन्ध मुदलियार	..	श्री रा. वोलिनाथन्	३६५
१५. मेहमान	...	श्री जहूरबख्श	३७०
१६. बंगालकी स्त्रियोंके व्रत—अेक मूल्यांकन	...	श्रीमती माया गुप्त	३७५
१७. श्री मर्ढेकरजीकी मराठी कविता (कविता)	..	अनु०—श्री अनिलकुमार	३७९
१८. तपोबल (अेकांकी)	...	श्री देवराज दिनेश	३८१
१९. साहित्यालोचन	....	श्री 'लहरी'; श्री मदनमोहन शर्मा	३९०
२०. सम्पादकीय	...	...	३९३

वार्षिक चंदा ६) अर्धवार्षिक ३।) अेक अंक १० आना

पताः— राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (मध्यप्रदेश)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

वर्ष ३ वर्धा, मअी १९५३ *अंक ५*

बंगालके अेक बाअुल सन्तकी बाणी

: आचार्य श्री क्षितिमोहन सेन :

"तोमार पथ ढाकाअियाछे मन्दिरे-मस्जदे ।
तोमार डाक शुनि साँअि, चलते ना पाअि,
रुकाअिया दाँड़ाय गुरुते मुर्शेदे ।

डूबाअिया याते अंग जुड़ाय, तातेअि यदि जगत पुड़ाय
बलतो गुरु कोथाय दाँड़ाय,
तोमार अभेद साधन मरलो भेदे ।

तोर दुबारेअि नानान ताला, पुरान कोरान तसबी माला
भेख पखअि ते प्रधान ज्वाला,
काँद्येअि 'मदन' मरे खेदे ।। तोमार०"

[मन्दिरों और मस्जिदोंने तुम्हारी राह ढक दी है, हे साँअी (स्वामी) ! तुम्हारी पुकारपर मैं चल नहीं पाता; गुरु और मुर्शिद (अुत्तम बातोंका बतलानेवाला अुपदेशक) रोककर खड़े हो जाते हैं। जिसमें डूबनेसे शरीर जुड़ा जाना चाहिये—तर हो जाना चाहिये, अुसीसे अगर संसार जलने लगे, तो हे गुरु, हम कहाँ खड़े हों ? हाय तुम्हारी अभेद साधना भेद-भावसे मारी गयी ! तुम्हारे ही द्वारपर ये अनेक ताले—पुराण, कुरान, तसबीह (सौ दानोंकी वह माला जिससे मुसलमान खुदाका नाम जपते हैं), माला अित्यादि लगे हुअे हैं। भेष और पक्ष ही तो प्रधान ज्वाला है। 'मदन' (अिस नामका अेक बंगाली बाअुल सन्त) खेदसे रोकर मर रहा है।]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय संस्कृतिमें द्राविड़ जातियोंका योग

: डॉ. अनन्त सदाशिव अल्तेकर :

अनेक जातियोंकी संस्कृतिके समन्वय, मेलजोल या योगसे भारतीय संस्कृति बनी है। योरोप, अमेरिका, आस्ट्रेलियामें ख्रिस्ती संस्कृति है, वहां किसी और दूसरी संस्कृतिका अल्पांश भी अिस समय दिखायी नहीं देता। मध्यपूर्वके अीजिप्त, सीरिया, अिराक, अरेबिया, अीरान आदि देशोंमें केवल मुस्लिम संस्कृति ही है। भारत ही शायद अैसा अेकमात्र देश है जहाँ हिन्दू, जैन, बौद्ध, ख्रिस्ती, यहूदी, अीरानी और मुस्लिम संस्कृतिके लोग मिल-जुलकर और प्रेमसे रहते हैं। भारतीय संस्कृति अेक सुंदर गलीचेके सदृश है, जिसके विभिन्न रंग आर्य, द्राविड़, मंगोल, मुंड, कोलारियन, ग्रीक, शक, पार्थियन, कुशान, हूण अित्यादि वंशोंकी संस्कृतियोंसे आकर्षक और मनोरम बन सके हैं। अिस लेखमें हम द्राविड़ संस्कृतिसे भारतीय संस्कृति किस प्रकार सुसमृद्ध हुअी है, अिस सम्बन्धमें कुछ विचार करेंगे। किंतु यह प्रश्न अत्यंत जटिल है। मुस्लिम संस्कृति और हिंदू संस्कृतिके अेक दूसरेपर क्या प्रभाव हुअे हैं, यह कहना कठिन नहीं है, चूंकि हम दोनों संस्कृतियोंके परस्पर संपर्कके पहिलेका और पीछेका स्वरूप जानते हैं। किंतु द्राविड़ संस्कृतिका आर्योंके आगमनके पूर्व क्या स्वरूप था, अिसके बारेमें हमें कुछ भी ज्ञान नहीं है। न हमें अुस प्रागैतिहासिक कालके कुछ शिलालेख मिले हैं, न ग्रंथ, जिनके सहारे हम द्राविड़ संस्कृतिका रूप निर्धारण कर सकें। वैदिक वाङ्मयमें अनार्योंका वर्णन आता है, किंतु वह अत्यंत संक्षिप्त और छिटपुट रूपमें है। हिन्दुस्तानमें खश, कोलारियन, गोंड, मुंड, द्राविड़ अित्यादि अनेक आर्येतर लोग थे। अुनमेंसे किनके बारेमें वेदोंने अनास, गृध्रवाच: अित्यादि लिखा है, यह कहना भी कठिन है। द्राविड़ लोग कौन थे, अुनकी संस्कृति कहां तक फैली थी, अिसके बारेमें भी अत्यंत मनोरंजक और आश्चर्यजनक मत-वैचित्र्य है। जस्टिस पार्जिटर महोदयने अनेक वर्षोंतक पुराणोंका अध्ययन किया, अुसके फलस्वरूप वह अिस नतीजेपर पहुंचे कि भगवान् रामचंद्र द्राविड़ वंशके थे और अन्य ब्राह्मण जाति भी अुसी वंशकी थी। दूसरोंका कहना यह है कि द्राविड़ लोग न केवल दक्षिण देशमें थे, वरन् अुन्होंने बलूचिस्तान, अीरान, मेसोपोटेमिया तक भी अपने अुपनिवेश कायम किये थे। बलूचिस्तानके ब्रहुअी लोग अीरानके लूरी और मेसापोटिमियाके सुमेरियन ये सब द्राविड़ वंशी थे। सिंधु घाटीकी संस्कृति भी द्राविड़ थी, अैसा अनेक विद्वान् मानते हैं। द्राविड़ वाङ्मयसे द्राविड़ संस्कृतिका स्वरूप निश्चित करना आसान नहीं; क्योंकि सबसे प्राचीन द्राविड़ी वाङ्मय केवल २००० सालका पुराना है, और अुस समय आर्य और द्राविड़ संस्कृतियोंका समन्वय पूर्णतया हो चुका था। द्राविड़ लोग अपने व्याकरणका भी निर्माता आर्य ऋषि अगस्त्यको मानते हैं। यदि हम कुछ जातियोंमें दिखायी देनेवाली मातृसत्ताक कुटुंब-पद्धतिको छोड़ दें तो अुनकी समाज-स्थिति भी बिलकुल आर्योंकी तरहकी है। सब सुसंस्कृत द्राविड़ लोग आर्य देवताओंकी ही पूजा करते हैं; वेद, वेदान्त, पुराण, स्मृति आदिको ही धर्मके आधारभूत ग्रंथ मानते हैं। अिसलिये द्राविड़ धर्म या संस्कृतिका मल स्वरूप निर्धारित करना और अुनसे भारतीय संस्कृतिको कौन-सी देन मिली है, यह निश्चित रूपसे कहना आसान नहीं है।

पर कुछ अैसा अैतिहासिक तथ्य है जिनसे कुछ निर्णयोंपर हम पहुंच सकते हैं। जिनकी पूजाके बिना हम कोअी भी संस्कार या धार्मिक कार्य अब भी नहीं शुरू करते, । गणेशजी द्राविड़ देव हैं, वैसे ही अुनके पिता शिवजी। पुराणोंमें अनेक कथाअें मिलती हैं जिनसे यह मालूम होता है कि शिवजीको वैदिक यज्ञोंमें अनेक दशकोंतक प्रवेश नहीं मिला था। अुनके अनुयायियोंने दक्षके यज्ञका विनाश भी किया था। शिव और विष्णुके झगड़ेका वर्णन अनेक स्थलपर पुराणोंमें आ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। किंतु आखिरमें शिवजी और विष्णुजी अेक दूसरेके प्रशंसक बन गये। अितना ही नहीं, हरि व हरको अेक देवतामें मिलाकर अेक नये हरिहर देवताका निर्माण हुआ। जो देव शिवजी और गणेशजीकी तरह अुच्च देवताओंमें प्रवेश न कर सके, वे म्हसोबा, विरोबा अित्यादिके रूपमें ग्रामदेवता बनाये गये। अुनकी पूजा आज भी दक्षिणमें सब लोग करते हैं। वैदिक सूक्तोंमें पुनर्जन्मके सिद्धांतका अुल्लेख भी नहीं है। अेक हजार सालके पश्चात् अुपनिषत्कालमें वह दृष्टिगत होने लगता है। कुछ विद्वानोंका मत है कि यह सिद्धांत हमने द्राविड़ लोगोंसे लिया है। सगोत्र विवाह-निषेध-कल्पना भी द्राविड़ संस्कृतिसे ही शायद लायी गयी है। वैदिक कालमें तो अिसका अस्तित्व भी नहीं था। भक्ति मार्गका अुदय निःसंशय आर्योंमें हुआ था, किंतु अुसे जनतामें सर्वत्र फैलानेका श्रेय हमें द्राविड़ लोगोंको देना पड़ेगा। वैसे तो पुराण भगवद्गीता अित्यादि ग्रंथोंने भक्तिमार्गको लोकप्रिय बनानेका प्रयत्न किया, किंतु द्राविड़ देशके आलवार साधुओंने लोकभाषा अर्थात् तमिलमें भक्ति रसके स्तोत्र बनाकर सर्वसामान्य जनतामें अुसका प्रचार किया। द्राविड़ देशसे रामानंदजी काशीमें आये और वहाँ अुन्होंने हिंदीमें भक्ति स्तोत्रोंकी रचना शुरू की। अुनके शिष्य प्रशिष्य कबीर अित्यादिने भक्तिसंप्रदायको अुत्तर प्रदेशमें और सूरदास, नंददास अित्यादिने मथुरा वृंदावनमें लोकप्रिय बनाया।

अिस सिद्धांतका सत्यत्व भागवत ग्रंथने भी स्वीकार किया है। भक्तिरूपी बाला नारदजीको कहती है—

अहं भक्तिरिति ख्याता अिमौ मे तनयौ मतौ।
ज्ञानवैराग्यनामानौ काल योगेन जर्जरौ॥
अुत्पन्ना द्राविडे साऽहं वृद्धि कर्नाटके गता।
क्वचित् क्वचिन्महाराष्ट्रे गुर्जरे जीर्णतां गता॥
वृंदावनं पुनः प्राप्य नवीनेव सुरूपिणी।
जाताहं युवती सम्यक् प्रेष्ठरूपा तु सांप्रतम्॥

जब ज्ञानमार्ग या वैराग्यमार्गसे मोक्षसाधना करना लोगोंको कठिन मालूम पड़ने लगा और जब मध्ययुगमें विधर्मियोंके आघातसे हिन्दू-धर्मपर अनेक संकट आ पड़े, तब अुसमें जीवन और चैतन्य डालनेका श्रेय भक्ति-मार्गको और अुसके नवप्रचारक द्राविड लोगोंको देना पड़ेगा।

आर्योंने अुपनिषदादि ग्रन्थोंमें तत्वज्ञानके अनेक सिद्धांतोंकी चर्चा की है, किन्तु वह सुसम्बद्ध और तर्काधिष्ठित नहीं है। शास्त्रीय दृष्टिसे भाष्य लिखकर सर्वसिद्धान्तोंको सांगोपांग प्रस्थापित करनेकी प्रथा द्राविड़ देशीय शंकराचार्यजीने आरम्भ की और पीछे अुसी देशके रामानुजाचार्यजीने अुसका अनुकरण किया। मध्वाचार्य और वल्लभाचार्य भी दक्षिणके थे।

यह अेक मार्केकी बात है कि करीब-करीब सब विद्वान् आचार्य जैसे शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, वल्लभाचार्य सब द्राविड़ देशके ही थे। हिन्दू तत्वज्ञानके द्वैत, अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, शुद्धाद्वैत अित्यादि अनेक संप्रदायोंकी स्थापना करनेका श्रेय हमें अिन दाक्षिणात्य द्राविड़ोंको ही देना पड़ेगा। आर्योंके वैदिक मन्त्रोंका संगोपन द्राविड़ोंने ही सबसे अच्छा किया। आर्योंके वैदिक मन्त्रोंका स्पष्ट और दोषरहित पाठ यदि आप सुनना चाहें तो द्राविड़ ब्राह्मणोंके मुखसे निकलनेवाले वेद-मन्त्रोंको ही आपको सुनना पड़ेगा। अुत्तर हिन्दुस्थानके आर्य ब्राह्मण जब वेद मन्त्रपाठ करते हैं तब वे व, ब, श, ष, स अित्यादि वर्णोंका स्पष्ट अुच्चारण नहीं कर सकते हैं, पुरुषको पुरुख, वेदको बेद और सप्तको शप्त, भाषाको भाखा या भासा, यज्ञको जग्य कहते हैं। हमलोग अेक्काके 'अे' को और अेकान्तके 'अें' को अेक ही तरहसे हिन्दीमें लिखते हैं, यद्यपि अेक ह्रस्व 'अे' है और दूसरा दीर्घ। और ह्रस्व 'ओ' और दीर्घ 'ओ' अलग चिन्होंसे दिखाये गये हैं।

यदि सिन्धु घाटीकी संस्कृति द्राविड़ी हो, जैसा कि मालूम पड़ता है, तो यह मानना पड़ेगा कि द्राविड़ लोग नगर निर्माणशास्त्रमें अत्यन्त प्रवीण थे। नगरमें चौड़े रास्ते, ठीक तरहकी नालियाँ और सार्वजनिक स्नानगृह बनानेका महत्व वे जान चुके थे। वास्तुविद्यामें भी वे अत्यन्त प्रवीण थे। आगे चलकर अैतिहासिक कालमें भी अुन्होंने दक्षिण हिन्दुस्थानमें तंजोर, तिरुशतपल्ली, श्रीरंगम्, चिदम्बरम्, मदुरा, रामेश्वर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अित्यादि तीर्थोंमें जो प्रचंड गोपुरके हज़ार-हज़ार खंभोंवाले देवालयोंका निर्माण किया है, अुससे-अुनकी, भवन-निर्माण कलाका प्रेम, प्रावीण्य और प्रभुत्व विदित होता है। अेलोरामें द्राविड़ोंने पत्थरोंकी प्रचंड चट्टानमें खुदाअी करके जिस सुन्दर कैलास मन्दिरका निर्माण किया, वह अेक विश्वविस्मयकारी कृति है। अिन सब मन्दिरोंमें अत्यन्त अूँची कोटिकी पच्चीकारीका काम दिखायी देता है।

व्यापार और नौकानिर्माणमें द्राविड़ लोग अग्रसर थे। आर्योंने अिन क्षेत्रोंमें द्राविड़ोंसे ही सबक सीखे हैं। वैदिक आर्य तो व्यापार और व्यापारियोंको घृणाकी दृष्टिसे देखते थे। समुद्रसे विशेष संपर्क न होनेके कारण नौकानयनमें अुनकी विशेष प्रगति नहीं हुअी थी। किन्तु कोंकण, मलबार, कोरोमंडल अित्यादि समुद्रतटपर रहनेवाले द्राविड़ लोग समुद्रमें अति प्राचीन कालसे नौकानयन करते थे। पता चला है अीसा पूर्व ३००० के समयमें भी अुनका बेबिलोनियासे व्यापार चलता था जिसके फलस्वरूप अनेक द्राविड़ी शब्द पश्चिमी भाषाओंमें प्रचलित हुअे हैं। हिब्रू भाषामें मोरके लिये तुकिर, अिराणीमें तविस् और ग्रीकमें है तोफास शब्द, वे सब तामिल मलयालमके तकअी शब्दसे सम्बद्ध हैं। चावलके लिये ग्रीक भाषामें oruzu लैटिनमें oryza जो शब्द हैं अुनकी तमिळ 'आरसि' से अुत्पत्ति हुअी है। अंग्रेजीका rice शब्द भी अुससे ही अुत्क्रान्त हुआ है। दक्षिणपूर्व अेशियासे भी द्राविड़ोंका व्यापारिक और सांस्कृतिक सम्बन्ध था। वहाँ हिन्दू या बौद्ध संस्कृतिके फैलाव करानेका श्रेय द्राविड़ोंको पर्याप्त मात्रामें देना पड़ेगा। जावा द्वीप समूहको चीनी लोग किलिंग याने कलिंग कहते हैं, अिसका कारण यह था कि वहाँ आनेवाले भारतीय कलिंग देशसे प्रायः आते थे। कलिंग देशसे २०००० कुटुंब आकर जावामें कैसे बस गये अिसके बारेमें अेक जनश्रुति जावामें अब भी प्रचलित है। बर्मा, मलाया द्वीपकल्प, चंपा, बोर्नियो अित्यादि देशोंमें जो प्राचीन लेख मिलते हैं, अुनकी लेखन-शैली द्राविड़ी है। अुससे भी यह सिद्ध होता है कि दक्षिण पूर्व अेशियामें आर्य संस्कृतिको फैलानेका श्रेय द्राविड़ लोगोंको पर्याप्त अंशमें देना अुचित है।

द्राविड़ोंके सहयोगसे भारतीय संस्कृतिको बहुत लाभ हुआ। अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, द्वैत अित्यादि जो तत्वज्ञान पद्धतियाँ आर्य संस्कृतिमें विकसित हुअी, वे द्राविड़ोंके सहयोगका ही परिणाम हैं। भारतीय वास्तुशास्त्र भी अत्यन्त साधारण होता, यदि द्राविड़ोंकी सहायता हमें न मिली होती। आजकल सुदूर पूर्व अेशिया और दक्षिणपूर्व अेशियासे जो हम सांस्कृतिक सम्बन्ध अनुभूत करते हैं अुसका भी श्रेय जितना आर्योंको है अुतना ही द्राविड़ोंको भी।

अनेक संस्कृतियोंके मधुर सरस समन्वयसे हमारे पूर्वजोंने भारतीय संस्कृतिको स्वरूप दिया है। आधुनिक भारतको अेक कदम आगे बढ़ाकर आधुनिक अिस्लामी, अीसाअी अित्यादि संस्कृतियोंका भारतीय संस्कृतिसे समन्वय करके अेक विश्वव्यापी या मानवी संस्कृति निर्माण करनेका काम अिस स्वतन्त्र भारतको करना है, जिससे विश्वमें विद्वेषकी भावना नष्ट होकर शान्ति विश्वबन्धुत्वकी भावना सर्वत्र प्रचलित हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं अुनसे नहीं मिला :

युगकवि निराला

: श्री प्रेमकपूर 'कंचन'

मैंने निरालाका सब कुछ पढ़ डाला है; फिर भी मैं निरालासे मिला नहीं हूं। केवल अेक झलक दूरसे देख सका हूं, अुस वर्ष जब हिन्दी साहित्य सम्मेलनमें अुनकी ५४ वीं वर्षगांठ मनानेका आयोजन था। अुस भरी सभाके बीच मैंने अुन्हें देखा और घण्टों देखता रहा। मशाल-से जलते नेत्र, शुक नासिका, अुन्नत ललाट अेक बार ही देखनेवालोंको अपनी ओर खींच लेते हैं।

सोचा यह निरालाजीसे ही पूछूँगा कि किसने अुन्हें निराला बना दिया। निरालाजी आज भी प्रयाग में हैं पर यह मेरा दुर्भाग्य है कि मैं अुनसे आज तक नहीं मिल सका। अुस क्षण मनमें और भी खीझ आयी जब श्री भदन्त आनन्द कौसल्यायनजीका नोट पढ़ा—"जिसने श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' को देख लिया, वह आजके समाजको जिसका चौखटा सरासर चर्रा रहा है—समझनेमें समर्थ हो गया।

मैं अभागा हूँ जिसने आज तक न प्रेमचन्दका 'गोदान' या 'कफ़न' पढ़ा, न प्रसादकी 'कामायनी'। निरालाका अेक प्रकारसे कुछ भी नहीं पढ़ा। फिर भी मैंने निरालाको देखा है।"

और कौसल्यायनजीने देखा होगा आंखोंसे, मनसे, लेकिन मैंने निरालाको देखनेका प्रयास किया है निरालाजीके लिखे शब्दोंमें झलकते हुअे निराला रूपको! अुपनिषदमें कहा गया है—

"सूर्यो यथा सर्व लोकस्य चक्षुः"—सूर्य जनताका नेत्र है। पतित, हताश तथा अशान्त विश्वको अैसे ही नेत्रकी आवश्यकता है। फिर जो स्वयं सूर्यकान्त हो अुसके शब्द, अूसकी वाणी, अुसकी बोली, अुसकी आत्मा क्या नहीं रचेगी। सत्य स्वयं-भू बनकर अुस नेत्रके सन्मुख तनकर खिंच आयेगा जो श्रीकृष्णदासके शब्दोंमें—

वह सहज विलम्बित मंथर गति, जिसको निहार,
गजराज लाजसे राह छोड़ दें अेक बार
काले लहराते बाल देव-सा तन विशाल,
आर्योंका गर्वोन्नत, प्रशस्त अविनीत भाल
इंकृत करती थी जिसकी वाणीमें अमोल,
शारदा सरस वाणीके सधे बोल!

और अुस वाणीके सधे बोलको देखा 'बादल राग' में, रागकी शक्ति पूजामें, जो हिन्दी साहित्यकी अमर निधि बन चुकी है। अुन्होंने कहा है :—

जागो फिर अेक बार
प्यारे जगते हुअे हारे सब तारे तुम्हारे
अरुण परत तरुण किरण
खड़ी खोल रही द्वार।

और अुनके अस्तित्वका, व्यक्तित्वका नग्न रूप-दर्शन मिलता है—

मेरा जो अन्तर वज्र कठोर,
देता जो भरसक झकझोर।

बहुत चेष्टा की कि अैसे अलग-अलग गीत मिलें, जहां 'निराला' का अेक भावरूप हो, दूसरेमें कल्पनारूप हो, तीसरेमें बुद्धिरूप। तीनों भाव, कल्पना और बुद्धिको अलग-अलग पढ़नेके लिअे कोअी भी गीत न मिला। जहां भी देखा तीनों अेक साथ हैं नर-नारायण और माया। तीनोंको वे तीव्रतम रूप प्रदान किये हैं निरालाने अेक ही शब्दमें। अेक गीतका अंश देखिये :—

चूर्ण अूर्मि चेतन जीवन रख
हृदय-निकेतन सुस्वर कर दो
अेक दिवसके जीवनमें जय
जरा-मरण-जय हो निस्संशय,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Harid

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जागे करुणा तप, संयम
अेक कालके लिअे सुकर हो
मेरी अलक-धूलि पग पोंछे
श्रम शरीरका पलक अँगोछे
अुठे अुर्ध्व मनमें जो ओछें
मिले निलयमें अेक प्रभा दो ।

अिस गीतकी अेक कड़ी भी अलग कीजिये । मन आपको शब्दोंके साथ खींच ले जायगा—"श्रम शरीरका पलक अंगोछे ।" दिलमें अेक तूफानकी कुरेद पैदा कर देता है । अेक जगह कहा गया है—"वह तन और मन दोनोंसे विराट् है। यह विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि अगली पीढ़ियाँ निरालाके विशाल शरीरकी लम्बाअी-चौड़ाअी तथा अुनके कोमल मनकी अतल गहराअी सुन-समझ कर आश्चर्यचकित हो जायेंगी ।"

सच मानिये अिन शब्दोंको पढ़कर आँखोंमें आँसू आ गये । अिसी शब्दके साथ-साथ तीन स्थल और देखिये—"सूर्यकान्त त्रिपाठी दानी है, दीवाना है, पागल है । अुसे पैसा मत दो, अुसकी रचनायें मत प्रकाशित करो, अुसे भूखे मार दो ।"

"फिर होशियार पागलका शीर्षक देकर अुग्रजी लिखते हैं—"लो ! मैंने कहा था न कि निराला पागल नहीं है । वह होशियारीमें पूरा कनौजिया है । अुत्तर प्रदेशकी सरकारने अुसे २१००) रु. दिये । अुसने अुन रुपयोंको 'मतवाला-मण्डल' में स्वर्गीय प्रसिद्ध सदस्य मुन्शी नवजादिकलाल श्रीवास्तव के चि० पुत्र को दान दे दिया । मैं अिसे दान नहीं, समाजसे असंतुष्ट कलाकारका बदला लेना मानता हूँ । दूसरी बात यह मुट्ठी भर चांदीके टुकड़ोंपर सरकारने अपना विज्ञापन कराना चाहा था । मियाँकी मियाँके ही सरपर जड़कर कलाकारने अपना विज्ञापन कर लिया । और अैसे अुस्तादोंको लोग पागल समझते हैं, सो भी तब जब निरालाकी होशियारीका छन्दोबद्ध प्रमाण अुसकी विविध कलाकृतियाँ सबके सामने हैं । अैसे ही वक्त मुझे अैसा लगता है कि कम अक्ल या प्रतिभाहीन लोग प्रतिभाशाली कलाकारोंसे चिढ़कर ही अुन्हें पागल या गैरजिम्मेदार बतलाकर स्वयंको गौरवान्वित समझते हैं ।"

'विद्रोही-कलाकार' शीर्षकमें महापंडित राहुलजी लिखते हैं—" निरालाको भूख लगती है, प्यास लगती और अुसके साथ कभी चिन्ता भी हो सकती है । मगर अुसको दूर करनेके लिये स्वर्ण राशि भी निरालाको पर्याप्त नहीं होगी । निरालाके हाथ अुस स्वर्णराशिका लेखा-जोखा रखनेके लिअे नहीं है ?"

अिन तीन टिप्पणियोंसे आजका सारा वातावरण स्पष्ट नहीं हो जाता; क्योंकि ये सारी टिप्पणियाँ निरालाके विगत जीवनपर लिखी गयी हैं । जैसे गांवमें अेक कहावत प्रचलित है–"मरे बैलकी बड़ी-बड़ी आँखें—" आनेवाली पीढ़ियाँ.....चकित हो जायेंगी और आज ? आज क्या है ?

अिस प्रश्नका अुत्तर यों है—आज भी निराला दारागंजके गंदे खपरैलवाले मकानमें रहते हैं । अपने मनको यों समझा लीजिये कि वे वहाँ साहित्य-सृजनका अलख जगा रहे हैं या धूनी रमाये बैठे हैं; पर वस्तु-स्थिति कुछ और ही पढ़नेको मिलती है; क्योंकि पुष्टि-काय दिग्गजोंकी जातिके निरालाका शरीर अब शिथिल हो चुका है । सौटंच सोनेका-सा तपकर अब ताँबे जैसा हो गया है । अमिताभ चेहरेपर झुर्रियाँ भी दिखायी देने लगी हैं । मगर निरालाका माथा अुतना ही अूँचा है, छाती अुतनी ही चौड़ी है । अुनके पाँव अुतने ही तेज हैं । साठ पैंसठ पुस्तकें लिखनेके बाद भी निराला आज भी फक्कड़ हैं । निरालाके प्रकाशक लखपती हो चुके हैं ? अिसका अुत्तर देगा कौन ?

अिसीलिअे निरालाजी लिखते हैं –

सुखका दिन डूबे डूब जाय
तुमसे न सहज मन अूब जाय ।

और गीतके अंतमें—

अुलटी गति सीधी हो न भले
जन जनकी दाल गले न गले
यह बात न टले कभी टले
यह जान जाय तो खूब जाय ।

और आज भी पीढ़ियाँ गुनाहगार हैं । लोग बाप-खोर हो गये हैं ना ? जिसका खाओ अुसीको गाली दो ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर क्या यह ठीक लिखा गया है--निरालाकी अव्यवस्थित भावनाओंका हृदयरूप है जिसे संसारकी संकीर्णता न तो समझ सकी है और न शायद समझ ही सकती है। सागरकी अुन्मत्त लहरोंमें डूब जानेवाला अंग्रेजी भावुक कवि शैली आज भी पूजनीय है। अस्तव्यस्त गधेपर सवार स्टीटेन्सन अंग्रेजी साहित्यका आज भी अद्वितीय कवि है। घृणा-पात्र, अंग्रेजी साहित्यका विराट लेखक जानसन प्रीतिभोजमें साथ बैठकर खाना खानेमें अंग्रेज महिलाओंका आज भी आदरका पात्र है फिर निराला जैसे व्यक्तिको जिसके पास हृदय है, भाव है, कविता है, संगीत है, वाणी है, प्राण है, अुसे स्वीकार करना या न करना व्यक्ति अथवा वर्ग विशेषकी बात नहीं। निरालाकी यही अुक्ति तो लोगोंको खटकी थी--"जिस समय कवीन्द्र रवीन्द्रका घोड़ा बंगालसे छूटा तो अुसकी रासको थामनेकी हिम्मत किसीमें न थी। मैंने अुस घोड़ेको थाम लिया।"

रवीन्द्र बंग साहित्यके अमर नक्षत्र हैं। और आज हिन्दीका हर कवि बड़ा और बूढ़ा रबड़ छन्द लिखनेमें अपना गौरव समझता है। अिसलिअे निरालाको हेय समझना संस्कृत सभ्यताके गौरवको हेय समझना है। सुमनजीके शब्दोंमें—

तुम सोच रहे हो संभवतः
आधे जीवनके पार खडे
आजीवन समरारूढ़ झेलते वार
आनपर रहे अड़े
फिर भी तुम ज्यों का त्यों प्रशस्त
मानवकी आह पड़ी हुअी।

कहनेवाले कह जाते हैं निरालाका जीवन विकटसे विकट परिस्थितियोंसे गुजरा है। कौसल्यायनजीके शब्दोंमें ही समझना अधिक अुचित होगा—"मैं अुस भारतीय-प्रतिभाको जो हमारे रूढ़िवादकी चतुर्मुखी श्रृंखलाको तोड़नेके प्रयत्नमें स्वयं टूट गयी है, शतशः प्रणाम करता हूँ।" क्योंकि यह निरालाका ही कलेजा है जो अिस तरहकी ललकार दे सकता है —

अबे सुन वे गुलाब
मत भूल गर पायी खुशबू रंगो आब
खून चूसा खादका तूने अशिष्ट
डालपर अितरा रहा है कैपिटलिस्ट
कितनोंको तूने बनाया है गुलाम
माली कर रहा सताया जड़ा घाम।

लेकिन अुस ललकारके बाद हमने पढ़ा -- "मेरे जीवनका अब अंत निकट है। मैं आप लोगोंके हाथमें कार्य सौंप कर बिदा लेता हूँ। .. यह समस्त विश्व मेरा है और मैं अिस समस्त विश्वका हूँ। मेरा साहित्य सबका है। अुसे भाषाकी या राष्ट्रीयताकी सीमामें नहीं बांधना चाहिअे। साहित्य सारे संसारका होता है और साहित्यकारकी चेतना सारे लोकमें व्याप्त होती है। कोअी भी साहित्यकार किसी अेक भाषा और राष्ट्रकी निधि नहीं है। वह सारे संसारका है। रंग और जाति, समय और कालकी दीवार साहित्यकारके लिअे नहीं है? "पर राहुलजीने अेक प्रश्न किया था कि फिर भी आज निरालाको पहिचाननेवालोंकी अितनी कमी क्यों है?"

अिस प्रश्नके अुत्तरका अिशारा आज अुन्होंने दिया है--"....अिसपर हमें अफसोस नहीं है। ... अफसोस अिस बातका है कि हम अुस प्रतिभासे पूरा पूरा लाभ नहीं अुठा रहे हैं। यदि मुझसे पूछा जाय तो मैं निरालाके लिअे अुनके योग्य अनुचर देता, अैसा अनुचर जिसके लिअे निरालाके हृदयमें कोमल स्थान बन जाता। वह अुनकी शरीर आजका भार अपने अूपर लेता। वह अुन्हें अुन दृश्योंतक पहुँचाता जहाँ अुनकी वाणी झंकृत होने लगती। अैसा दृश्य चाहे हिमालयका हो या गंगा सागरमें या शहरके गन्दे मुहल्लेमें....और अिस तरह निरालाजीको आजकी अवस्थापर अेक अिंगित मात्र राहुलजीसे मिलता है।

कुछ भी हो निरालाजीने नयी पीढ़ीको स्वचेतना दी है। अुनका कहना था—"यद्यपि मनुष्य पूर्ण! आदर्श वादी नहीं बन सकता फिर भी अुसे आदर्शका अनुसरण करना चाहिअे। आदर्श नियमोंका लक्ष्य भी यही है।

दर पर मारा-मारा न फिरेगा फिर
युगका सर्वोत्तम कलाकार
यों धूल-धूसरित मलिन वस्त्र
पैरोंमें फटी बेवाअी ले
बेचता फिरेगा नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखनीका अमूल्य सर्वाधिकार
स्वागतमें कलियाँ बिहसेंगी
सौरभ देगा अंचल पुकार.....

फिर भी याद आता है श्री दासजी ने लिखा है—'निराला' के पास कानी कौड़ी भी नहीं है। पहले निराला अपनी अिकलौती बेटी सरोजके कफनका भी अिन्तजाम न कर पाये थे। आज युग प्रतिनिधि, युग पुरुष और महाकवि होनेपर भी स्वयं अुसके कफनका अिन्तजाम नहीं ! निराला गर्वीला स्वाभिमानी निराला किसी भी दयाका, करुणाका भिखारी नहीं।....निरालापर दया-करनेकी हिम्मत करना प्रगति, जनवाद और न्यायकी सबल सचेष्ट और सतेज शक्तियोंपर दया करनेकी कुचेष्टाके समान है।"

फिर भी निरालाका कोअी गुट नहीं और निराला जिंदा है। आज वह जिस दशामें भी हो बहने और लिखनेवाले तो भविष्य देखते हैं कि आनेवाली पीढ़ियाँ .....चकित हो जायंगी।" सचमुच चकित होनेकी बात ही है।

पिछले दिनों अेक पत्रिकाके सम्पादकजीने लिखा कि मैं यह चाहता हूँ कि कवियोंकी रचनायें अुनके ही लिखे हुये शब्दोंका ब्लाक बनवाकर छापूँ। तो बड़ी कृपा होगी, आप निरालाजीकी कविता भेज दीजिये।

मैंने अुत्तर दिया—क्यों आप अुनसे नहीं मंगा सकते ?

अुनका अुत्तर आया और लोग तो अेक पत्रमें भेज देते। पर निराला निराला ही हैं; वे क्यों भेजने लगे। यह काम आपही के किये होगा।

पर सच मानिये, अभी तक रास्ता ढूंढ रहा हूँ। परन्तु मुझे विश्वास है कि वह धारणाअें जो फैली हैं गलत हैं और अेक बारमें ही वह सहर्ष कविता दे देंगे। वह असंतुष्ट होंगे अपनी पीढीसे नयी पीढीके लिअे। सुमनजीने ठीक ही कहा है—

आ रही नयी पीढी युवकोंकी साथ-साथ
तव चरणोंपर निज झुका माथ, अुत्सुक आनन्द
दृग्वती सजग सोचती हुअी, जिस जगह
गिरेगा देव तुम्हारा स्वेद बिन्दु
हम तौल देंगे शत-शत शिर रक्तस्नात...।

यह बात शब्दोंमें ही सच नहीं है; कार्यमें भी सच होगी। हम आगे आनेवाली पीढीके लिअे अुलहना नहीं छोड़ जायंगे। यह सब कुछ निरालाके दिव्य दर्शनके पूर्वकी बातें हैं। दर्शनके बाद बातोंका रंग कुछ और होगा; वस्तुओंका भाव कुछ दूसरा।

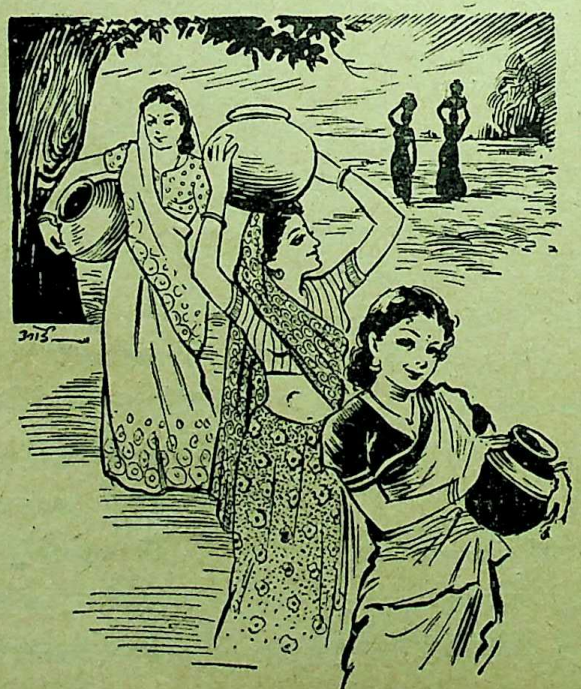

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हंगेरियन आज़ादीकी लड़ाओका नायक और कवि सैन्डोर पैटोफी

: श्रीमती कमल आर्य :

हंगेरियन कवियोंके बारेमें लिखे गये अपने पिछले दो लेखोंमें राष्ट्रभारती दिसम्बर १९५२ और फरवरी १९५३ में मैंने सैंडोर पैटोफीका ज़िक्र आंशिक रूपसे किया था। अिस लेखमें मैं अुनके जीवन और काव्यपर हंगेरियन साहित्यके संदर्भमें कुछ अधिक विस्तृत रूपसे विवेचन करना चाहूँगी।

आज केवल हंगरीमें ही नहीं वरन् समूचे समाजवादी भू-खंडमें सैंडोर पैटोफीका नाम बड़ी श्रद्धा और आदरके साथ लिया जाता है। क्योंकि यह वह आदमी था जिसने अपनी युवावस्थाकी अुम्रमें अपनी भावनाओं और विचारोंके साथ अपने देशकी सच्ची सेवा की थी। अुनकी बहुतसी कड़ी परीक्षाअें ली गयीं। बहुतसी मुसीबतें अुन्हें सहनी पड़ीं। परन्तु अपने यशकी और गौरवकी चरम सीमापर पहुँचकर भी अुन्होंने कभी अपने देशकी जनताका साथ नहीं छोड़ा और अपनी मृत्युतक सदा अुसके प्रति वफादार रहे।

अुस जमानेमें हंगेरीपर हैप्सबर्ग शासन था, जिसके साथ सब सामन्ती कुरूपताअें सन्नद्ध थीं। राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक दुराचार और अनाचार अुस समयके हंगेरीकी फिजा थी। रौबिस्पीयरकी तरह पैटोफीने भी यह दिखलाया कि हंगेरियन राष्ट्रकी आजादीकी लड़ाअी लड़नेवाली जनताके लिअे और देशमें सच्ची क्रान्ति लानेके लिअे अिन तीनों क्षेत्रोंमें शुद्ध नैतिकता ही सच्चा आधार बन सकती है। अपने निःस्वार्थ जीवन और कार्योंसे अुन्होंने वह कर दिखाया, जिसका वे प्रचार किया करते थे। साथ ही १८४८ में जब समूचे मध्य योरोपमें आज़ादी और जनवादकी लहर दौड़ रही थी तब अुन्होंने अपने देशकी आजादीकी लड़ाअीको विश्वके दूसरे देशोंकी आजादीकी लड़ाअियोंके साथ मिलाकर अेक रूपमें देखनेकी कोशिश की। आज अन्तर्राष्ट्रीयताके प्रचारके बाद अिस दृष्टिकोणकी गहराअी और अूँचाअी भले ही न समझमें आ सके, परन्तु आजसे सौ साल पहले अुसका बहुत बड़ा महत्व था।

सैंडोर पैटोफीका जन्म १ जनवरी १८२३ को हंगेरीके किस्कोरोस नामक गाँवमें हुआ था। अुनके पिता अेक छोटेसे किसान थे और अुनकी माँ भी अेक किसान परिवारकी ही लड़की थीं। अपनी गरीबीके बावजूद भी सैंडोरको अुस जमानेमें विद्यालयकी शिक्षा प्राप्त करनेका मौका मिल सका। १६ बरसकी छोटी अुम्रमें अकस्मात अुनके माता पिताका स्वर्गवास हो गया और तबसे अुन्हें अकथनीय भौतिक मुसीबतोंका सामना करना पड़ा। अुनका पढ़ना छूट गया। दो जून भोजन मिलना दूभर हो गया। परन्तु अुनकी अदम्य ज्ञान-पिपासा बनी रही। वे अुस समय कविता लिखना शुरू कर चुके थे।

घर नहीं रहा। माँ-बापका साया अुठ गया। अिसलिअे अुन्हें बदन काटती हुअी सर्दी और फफोले अुठानेवाली गरमीमें भी अेक गाँवसे दूसरे गाँवमें भ्रमण करते रहनेके लिअे मजबूर होना पड़ा। अिसी अरसेमें अुन्होंने अपने देशको अच्छी तरह देखा और साथ ही राजनीति और अितिहासका गहरा अध्ययन किया, खासकर फ्रांसीसी क्रान्तिका।

अिन्हीं भ्रमणोंमें अुन्होंने सुख और दुःख, आज़ादी और गुलामी नामक शब्दोंके सच्चे अर्थ सीखे। यहीं अुन्होंने भूमिहीन किसानोंको दिनरात अपना खून-पसीना अेक करके भूखे और नंगे मरते देखा। यहीं अुन्होंने अुनको संघटित करके अुनकी अनन्त शक्ति पहचानी। अुनके गीतोंमें अिसीलिअे सुधारकी जगह क्रान्तिकी पुकार भर गयी। जमींदारों, पादरियों और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नौकरशाहोंके प्रति बिखरी हुअी घृणा सिमटकर अेक तीव्र हुंकारमें बदल गयी ।

अभी अुनकी अुम्र बीस सालकी भी नहीं हुअी थी कि समूचे हंगेरीमें अुनकी कविता बड़े प्रेम और चावसे पढी जाने लगी । अुन्हें अेक मशहूर साहित्यिक पत्रिकाका संपादक बना दिया गया । और १८४० के आसपास अुनके चारों ओर अेक अैसा लेखक समूह जुट गया जो अपनेको हंगेरियन जैकोबिन कहता था और जिसका कार्यक्रम सुधारवादी कार्यक्रम समाप्त करके क्रान्तिकारी परिवर्तन लाना था । अिसी क्रान्तिकारी परिवर्तनके अन्तर्गत दास प्रथाका अन्त, नागरिक अधिकारोंकी व्यवस्था और हंगेरियन राष्ट्रकी पूरी आजादीकी बात तय पायी गयी ।

मार्च १५, १८४८ पैटोफीके जीवनका सबसे बड़ा दिन था; सबसे बड़ा मोड़ था । समूचे हंगेरीके अितिहासमें यह दिन स्वर्णिम अक्षरोंसे लिखे जाने योग्य है । पेरिस और वियेनाकी क्रान्तियोंके अिसी दिन हंगेरियन राजधानीमें वहाँकी जनताने पैटोफीके नेतृत्वमें बगावतका झंडा बुलन्द किया था । अुन्होंने सेन्सरशिप खत्म कर दी । अेक बारह सूत्री घोषणामें जनताके आधारभूत अधिकारोंकी घोषणा की और हंगेरियन बैस्टिल (जेल) यानी बुदाके महलके दरवाजे तोड़ डाले और राजनीतिक बन्दियोंको छोड़ दिया ।

अिसका असर हंगेरियन पार्लमेंटपर ही नहीं वरन् औस्ट्रियन राज दरबारपर भी पड़ा और अुन्होंने कुछ संविधानीय अधिकारोंकी घोषणा की । परन्तु हंगेरीको पूरी आज़ादी नहीं मिल सकी । अिसपर पैटोफीने १० मअी, १८४८ को फिर बगावतका झंडा बुलन्द किया और "समानता समाज" [अिक्वैलिट सोसायटी] को राजनीतिक रूपसे सामने रखा । अुस समयके हंगेरीमें यह समाज देशकी सबसे बड़ी और अेक वामपक्षीय राजनीतिक संस्था थी । परन्तु अुसी समय बुदाके औस्ट्रियन कमान्डरने जनतापर गोलियाँ चलाना शुरू कर दिया और अिस प्रकार प्रतिक्रान्तिका प्रारंभ हुआ। अिस समय पैटोफीकी समझमें आया कि बिना शस्त्रोंके क्रान्ति संभव नहीं । अिसीलिअे अुन्होंने हंगेरियन फौजोंमें विद्रोहका प्रचार करना शुरू किया ।

अपने देशके संघर्षमें अितनी बुरी तरहसे व्यस्त होनेके बावजूद भी अुन्होंने कभी भी योरोपीय आजादीकी लड़ाअीसे ध्यान नहीं खींचा । जिस समय वियेनामें क्रान्ति हुअी तो अुन्होंने हंगेरियन पार्लमेंट और जनरल स्टाफसे यह माँग की कि वियेनाके क्रान्तिकारियोंकी भौतिक मदद की जाय। अुसी तरह जब हैप्सबर्ग-शासकोंने अितालवी क्रान्तिको कुचलनेके लिअे हंगेरियन पार्लमेंटसे मदद माँगी तो पैटोफीने अुसका तीव्र विरोध किया। वह पैटोफीके कारण ही संभव हो सका कि हंगेरियन आजादीकी लड़ाअीके बाद महान हंगेरियन जन-नेता कोसूथ और हंगेरियन जनरल अितालवी नेता गैरीबाल्डीसे जा मिले थे । अितालवी और हंगेरियन संघर्षकोंकी अेकता देखनेका सबसे अधिक श्रेय पैटोफीको ही है।

हंगेरियन आजादीकी लड़ाअी हथियारोंके जरिये लड़ी जाने लगी । अपनी कविताके बलपर हजारों रंगरूट पैटोफीने अुसके लिये भर्ती किये । और बिना अपने अनुगामियोंके विचारोंकी चिन्ता किये हुअे पैटोफीने स्वयं अपने हाथमें भी बन्दूक संभाली । यह कवि सिपाही महान पोलिश जनरल बैमका सबसे बड़ा जंगी दोस्त हो सका । हंगेरियन जनताकी अिस लड़ाअीमें अिस पोलिश जनरलने बहुत बड़ा योग दिया । परन्तु दुःखकी बात है कि विरोधी सेना शस्त्रोंमें अधिक ताकतवार थी। अिसीलिअे न केवल हंगेरियन जनताकी सामयिक हार ही अुसमें हुअी, वरन् वे २६ बरसकी छोटी अुम्रमें ३१ जुलाअी, १८४९ को सैंगेस्वेरके दलदलोंमें दुश्मनकी गोलीके शिकार हुअे ।

पैटोफीकी कविता चेतना की ओर अग्रसर होती हुअी जनताकी आवाज है । पैटोफीके काव्यमें सदियोंके हंगेरियन साहित्यने अपनी चरम सीमा प्राप्त की । अुनके जीवन और काव्यपर अपने दशके कवियोंके साथ ही विदेशी कवियोंका भी पर्याप्त प्रभाव पड़ा । वे फ्रांसीसी क्रान्तिके गायक और अुन्नायक फ्रेंच कवि बेरान्जको अपना आदर्श मानते थे । वैसे अुन्हें जर्मनीके आजादी प्रिय कवि हाअिने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अंग्रेजीके शेली तथा बायरनकी रचनाओंसे भी पूरा परिचय था। तो भी पैटोफीके काव्यमें अेक नवीनता दिखती है क्योंकि यह जनताके बीचमें अुनकी सीधी प्रेरणासे लिखी गयी है। अिसके सुर और तानोंमें अपनी नवीनता है, पैटोफीके पूर्व हुअे हंगेरियन कवि और अुसके समकालीन विदेशी कवि यदा-कदा ही जनताकी ओर प्रवृत्त होते थे, परन्तु पैटोफी तो जनताका बेटा था।

अुनकी कवितामें जनता अपने देश और अपनी दुनियाको नये रूपमें, नये रंगमें, नये आकारमें देख पाती है। अुनके जनगीत और अुनकी वर्णनात्मक कविताअें जनताकी अिच्छाअें और जनताकी आशाअें प्रकट करती हैं। कविताको अुन्होंने अपने नये यथार्थवादकी जो देन दी वह हंगेरियन छंदमयी कवितामें क्लासिक हो गयी, स्थायी हो गयी।

पैटोफीके आजादीके गीतोंमें अेक शक्ति और अुछाह है जो कि अुनका केन्द्रीय विषय है। अिनका स्रोत हंगेरीकी जनता है। यह कुछ वैसी ही अजेय शक्ति है, जो दुनियामें सब तरहकी दिक्कतों और मुसीबतोंको जीत सकती है—पछाड़ सकती है। यहींपर आजादीके बारेमें पैटोफी और शैली अेवं बायरनकी भावनाओं और विचारोंमें भेद साफ झलक जाता है। हाअिनेके निराशावादसे तो पैटोफी कोसों दूर है। पैटोफीका काव्य अुन्नीसवीं सदीके अुन क्रान्तिकारी जनवादी रूसी कवियोंकी कृतियोंके बहुत निकट है, जिन्हें जारशाही रूसमें रहना पड़ा था। अुस समयके रूस और हैप्सबर्ग शासनके अन्तर्गत हंगेरीकी जनताकी दशा लगभग अेक जैसी थी। सामाजिक पृष्ठभूमिकी अिस समानताके कारण जो आत्मिक अेकता अिन दो देशोंके तत्कालीन कवियोंमें दिखायी देती है, वह पैटोफी और रूसी नेक्रासोवकी कविताओंको अेक साथ मिलाकर भलीभाँति देखी जा सकती है, जैसे पिछली सदीका महान रूसी जनवादी कवि नेक्रासोव सोवियत जनतामें आज अधिक अच्छे रूपमें जीवित है, वैसे ही पिछले कअी शताब्दीसे अुसी जनतामें पैटोफी भी। सोवियत जनताने बहुत प्रेम और श्रद्धाके साथ पैटोफीके काव्यको अपनाया है।

हंगेरियन मस्तिष्कमें छंदीय यथार्थवाद और पैटोफी आज पर्यायवाची शब्द समझे जाते हैं। अुनकी अनुभूतिकी तीव्रता, भाषाकी सरलता, वर्णनकी रंगीनती, अभिव्यंजनाकी शक्ति, चित्रणकी सूक्ष्मता और भावोंकी प्रवणताने अुन्हें आज अमर बना दिया है। कहते भी हैं "कीर्तिर्यस्य स जीवति"।

अुनकी नौ वर्णनात्मक कविताअें अपने अपने अलग अर्थ रखती हैं। **"गाँवका हथौड़ा"** जहांपर हास्य और व्यंग्यसे ओतप्रोत कविता है, वहीं **"देवता"** (अेपोस्टल) में केवल दर्शन ही दर्शन है। **"जैनोस विटेज"** (नेता जौन) अुनकी वर्णनात्मक प्रतिभाकी चरम सीमा है।

पैटोफीने स्वयं कविता लिखनेके साथ ही कअी विदेशी कवियोंकी कविताओंका अनुवाद भी अपनी भाषामें किया है। अिनमें फ्रांसीसी कवि बेरान्ज और जर्मन कवि हाअिने हैं। अुन्होंने शेक्सपीयरकी महान कृति "कौर्नेलियस" का अनुवाद भी अपनी भाषामें किया है, जो कि आज हंगेरियन अभिनय कलाका हीरा बन गया है। यहाँ केवल अितना ही कहा जा सकता है कि हंगेरीमें साहित्यिक अनुवादोंकी अेक सुन्दर परंपरा कायम है तो भी आजतक किसीने "कौर्नेलियस" का दुबारा अनुवाद करनेकी कोशिश नहीं की।

पैटोफीका काव्यकाल पाँच-छह सालोंसे अधिक नहीं है, परन्तु ये पाँच-छह साल बड़ी कठिनाअी और संघर्षके रहे। अिनका काव्य हंगेरियन साहित्यमें ही नहीं वरन् विश्व-साहित्यमें अूंचे-अूंचे काव्योंके समकक्ष रखा जाने योग्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेलुगु साहित्यमें हास्य

: श्री वा. राममूर्ति 'रेणु' :

'तनुगनि योक्कयेत्तुननि दक्षजयुन्
निटलाक्षुडुन् मुदं–
बुन निरुचेक्कुलं गदिसि मुद्द गोनंग
नेकित नेम्मेगं–
बनुवुग वेन्ककुन् दिगिचि यत्न
विहीन परस्परास्य चुं–
बनमुलु तल्लिदंड्रुलकु बन्नुग
गूर्चु गजास्यु नेन्नेदन्।'

—श्री अप्पकवि

'शिव और पार्वती निजपुत्र गजाननको गोदमें बिठाकर प्यार करने लगे। सहसा अुन्हें लगा कि दोनों अेक ही साथ पुत्रके दोनों कपोलोंका कसकर चुम्बन लें, तो मजा आये। अपनी अिच्छा पूर्ण करने ज्यों ही दोनों झुक पड़े, झटसे गणेशजीने अपना मुखडा जरा-सा पीछेकी ओर खींच लिया और अपने माता पिताको यन्त्रविहीन परस्पर 'मुख चुंबन' लाभका दान कर बैठे! अैसे गजमुख गणेशकी मैं वन्दना करता हूँ।'

जीवनके प्रति सरस, कलात्मक अेवं अुदार दृष्टिकोण रखनेवाले आन्ध्र कवितिलक अपनी अनुपम कृतियोंका श्रीगणेश अैसे स्वस्थ-हास्य-संवलित मंगलाचरणों द्वारा संपन्न कर, निज सहज विनोदशीलताका परिचय दिया करते थे। प्राचीन अेवं अर्वाचीन तेलुगु साहित्य गगन, अैसे ही सुन्दर हास्यके शारदीय किरण जालसे, सर्वत्र दीप्त हो अुठा है। अिस लेखमें हम प्राचीन कवियोंकी हास्य पटुताकी अेक झांकी मात्र 'राष्ट्रभारती' के सहृदय पाठकोंके समक्ष रखनेका यत्न करेंगे।

भारतीय आलंकारिकोंने रसराज शृंगारके बाद हास्य ही को द्वितीय स्थान दिया है। यह क्रम-निर्णय यों ही नहीं किया गया था। नवों रसोंका चारों पुरुषार्थों–धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष—के साथ न्यूनाधिक मात्रामें सम्बन्ध अवश्य पाया जाता है। अुनमेंसे 'काम' या 'रति' भाव समस्त चेतन प्राणियोंके लिअे सहज संवेद्य होनेके कारण, अुससे निष्पन्न शृंगार सर्वोच्च माना गया है। अुसी शृंगारसे निःसृत हासके लिये दूसरा स्थान दिया जाना अुचित ही था। 'रति' के बाद सर्वाधिक अेवं सार्वत्रिक प्रभाव लिये रहनेवाला भाव यही 'हास' है। 'हास' शब्द 'हस्' धातुपर 'घञ्' (अ) प्रत्ययके लगनेसे बना है। और अुसका भावार्थक तद्धित रूप हास्य है––हासस्य भावः हास्यम्। 'हास' यानी हँसना मानव मात्रका सहज गुण है। मानव हृदय स्वभावतः सांसारिक चिंताओंसे कलुषित रहता है। अुस चिंता-कर्दमसे मानसका क्षालन कर अुसे स्वस्थ अेवं स्वच्छ बनाये रखनेवाला 'साबुन' यही हास है। अिसका वर्ण भी श्वेत माना गया है। और श्वेतता स्वस्थ सुन्दर तथा सत्याश्रित जीवनका परिचायक है। शरन्नीरद, नीहारपटल, मरालगण, मल्लिकाहार, रजताचल, कुसुमित काशवन, सुधापयोधि, सुरनदी, पूर्णेंदु अेवं पुण्डरीकवन अित्यादि बाह्य जागतिक विभूतियाँ अिसी आन्तरिक वैभव हासके प्रतीक छाया मात्र हैं। अुन बाहरी दृश्योंके दर्शनसे यदि अतीव सुख मिलता है तो अुससे कहीं बढ़कर शान्ति मुक्त हास्यानुभूतिके द्वारा मानव पा सकता है। जो व्यक्ति खुलकर हँस नहीं सकता अुससे बढ़कर अभागा कौन होगा!

किसी पाश्चात्य विद्वान्ने ठीक ही कहा है कि हास्य मानवको देवत्वके स्तरपर आसीन कराता है। यहां देवत्वका अभिप्राय, सांसारिक चिंताओंसे मुक्त किसी अुदात्त अेवं लोकोत्तर आनन्दमय स्तरसे है। वह आनन्दानुभूति भले ही अल्पकालिक हो; किन्तु अितना तो निश्चय है कि अुसकी लपेटमें आकर प्राणी अेक अनोखी रसदशामें आत्मविस्मृत हो अुठता है।

आचार्य विश्वनाथके अनुसार विकृत आकार, अुक्ति, वेषभूषा, चेष्टा वगैरह हास्यको अुत्पन्न कर देते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं [१]। यहाँपर विकृतका आशय असुन्दर लगा लेना ठीक नहीं। हम जिस प्रकारके जीवन-यापनके अभ्यस्त होते हैं अुससे विपरीत पद्धति अवश्य ही हमारे चित्तको गुदगुदाकर अेक चमत्कृति पैदा करती है। यह चमत्कार मनमें विकास ला देता है जिसे हास कहते हैं [२]।

प्राचीन तेलुगुमें गद्यकी अपेक्षा पद्यरचना अधिक हुअी है। अतअेव हम यहाँपर जो भी हास्यके अुदाहरण देंगे वे पद्योंमें ही रहेंगे। यहाँपर प्रबन्ध काव्यों तथा महाकाव्योंमें प्रसंगानुसार हास्यका समावेश यथोचित मात्रामें कर दिया गया है। किन्तु केवल हास्यप्रधान रचनाअें निर्माण करनेकी परिपाटी प्राचीन आन्ध्र साहित्यकारोंने नहीं चलायी है। फिर भी प्रबन्ध काव्योंके अतिरिक्त विभिन्न कवियोंकी मुक्तक रचनाओंमें तथा फुटकल छंदोंमें तो हास्यकी सामग्री प्रचुर मात्रामें अुपलब्ध होती है। अिस सिलसिलेमें सर्वश्री नाचन सोमनाथ, तिक्कना, पोतना श्रीनाथ भट्ट, तेनालि-रामकृष्ण चेमकूर वेंकन्ना वगैरह प्रबन्धकार श्री कासुल पुरुषोत्तम कवि, वेमना आदि शतककारोंके नाम सादर लिये जा सकेंगे। अिनके अलावा कितने ही अज्ञातनामा कवियोंकी फुटकल सरस हास्योक्तियाँ मिल रही हैं। अिन सभीके अुदाहरण हम लेखके बढ़ जानेके डरसे नहीं दे रहे हैं। किन्तु अैसा अेक भी अुदाहरण छूटने न पायेगा जिससे यह स्पष्ट हो जायगा कि प्राचीन कवि हास्यके प्रायः सभी रूपोंकी परख रखते थे और अुनका प्रतिपादन सफलता पूर्वक अपनी वाणी द्वारा कर सकते थे। अुनका यह आदर्श रहा कि गंधरहित प्रसून, सज्जन-शून्य नगर, गुणहीन पुत्र, अविश्वासिनी, सदभ्यास रहित विद्या, अेवं प्रतिफलशून्य सेवाकी भाँति हास्य प्रसंगसे विहीन वचन भी व्यर्थका प्रयास है।

---

१. विकृताकार वाग्वेष चेष्टादेः कुहकाद् भवेत्।
हास्यो हासस्थायिभावः श्वेतः प्रमथ दैवतः
--सा. द. ३-२१३.

२. वागङ्गादिविकार दर्शन जन्मा विकासाख्यो हासः।
—रसगङ्गाधर

" वासनलेनिपुव्वु, बुधवर्गमुलेनि
पुरंबु नित्य वि-
श्वासमुलेनि चार्य गुणवंतुडु
कानि कुमारुडुन् सद-
भ्यासमुलेनि विद्य परि--
हास प्रसंगमुलेनि वाक्यमुन
ग्रासमुलेनि कोल्बु कोरगानिवि
पेम्मय सिंग धीमगी।"

—चाटुपद्यमणिमंजरी पृ० १०२

सबसे पहले हम आन्ध्र कवि सार्वभौम श्रीनाथ भट्ट (अी.सन् १३८०-१४५०) को लेंगे। ये अपने समयके सर्वश्रेष्ठ कवि माने जाते थे। आन्ध्र देशमें सर्वत्र अिनका यशोडिंडिम बजता रहा। देशके कोने-कोनेमें भ्रमणकर वहाँके नरेशों तथा विद्या-प्रेमियोंसे सम्मानित, पुरस्कृत हो चुके थे। ये भ्रमण सर्वदा अुनके लिअे सुखकर ही सिद्ध हुअे हों, सो बात नहीं। कअी बार अिन्हें सांसारिकताके कटु आघात सहने पड़े थे। अैसे दुखद प्रसंगोंपर अपनी बदकिस्मतीके साथ समझौता कर लेनेमें 'हास्यप्रियता' ने अिनका खूब साथ दिया था। जीवनके वे कड़ुवे घूँट, ये हँसीके 'अनुपान' के साथ गलेकी राह अुतार लेते थे। अपनी खिसियाहट, झुंझलाहट हास्यपूर्ण वाग्विलासकी आड़में भुला देते थे। आन्ध्रका अेक हिस्सा 'पलनाडु' नामसे प्रसिद्ध है। वहाँकी जमीन अूबड़खाबड़, पहाड़ी और अूसर रहनेके कारण, वह अुन दिनों अभाव व अकालका अखाड़ा बना रहा। प्रजा वहाँकी, गरीब अनपढ़ व अनाड़ी रही। स्वयं श्रीनाथ राजकवि थे, समूचे राज्यके शिक्षाधिकारी अेवं रसिकशिरोमणि! अैसे ठाठबाटमें पले हुअे व्यक्तिका मन, 'पलनाडु' जैसे प्रदेशमें कब लग सकता था? फिर भी वे अपनी घुमक्कड़तासे बाज न आते थे। अेक समय 'पलनाडु' में बड़ा भारी पानीका अकाल पड़ा था। सभी ताल-तलैया सूख चले। कुँओंमें मुश्किलसे पीने भरके लिअे पानी मिलता था। अुस भयंकर स्थितिका सामना अिन कविराजको भी करना पड़ा। गला सूखा जा रहा था, तो चुल्लूभर पानी पिलानेवाला न मिला! बेचारे करते ही क्या? कोअी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरा होता अपनी किस्मतको रो देता ! किन्तु ये ठहरे अत्यन्त विनोदी कवि। अपनी सारी खीज अुतार बैठे गंगावल्लभपर ! कसकर खबर ली अुन आदिभिक्षु महादेवकी !

"सिरिगल वानिकि जेल्लुनु,
तरुणुलु पदियारुवेल दग बेंल्डाडन्।
तिरिपेमुन किद्दरांड्रा ?
परमेशा ! गंग विडुमु पार्वति चालुन् !"

जिसके यहाँ श्री (संपत्ति) हो, अुसीको अेककी जगह १६००० पत्नियाँ कर लेना सोहता है ! हे परमेश्वर ! आपका पेशा तो ठहरा भिक्षाटन ! अुसपर तुर्रा यह कि दो-दो स्त्रियाँ कर बैठे ! बस, बहुत हो चुका ! अब तो गंगाजीको छोड़ दीजिये। (आपकी देखभालके लिअे) पार्वतीजी पर्याप्त हैं !

कैसी हास्य पूर्ण विदग्ध पुकार है !

अिससे शायद यह प्रकट होगा कि शिवजीकी अपेक्षा, कृष्ण अिनकी दृष्टिमें अधिक सामर्थ्यवान हैं। किन्तु यह बात नहीं। अुसी पलनाडुका अेक मजेदार किस्सा है; अेक बार ये किसी ब्राह्मणके घर भोजन करने बैठ गये थे। गरीब होनेके कारण वे लोग ज्वार ही खाते थे। किन्तु सदा शालि अन्नके प्रेमी श्रीनाथ कविकी आँख जब पत्तलपर पड़ी तो अुनके देवता कूच कर गये ! पकाये ज्वारके पीले पीले पिण्ड भाफ अुगल र थे पत्तलपर ! अुनपर हाथ रखना मुश्किल था। देखते ी देखते गृहिणी 'तिंत्रिणी पल्लव' (अिमलीकी पत्ति५) तथा अेक और पत्तेका बना अुबलता रसदार साग ला कर ज्वारके भातपर अुँडेल गयी ! बेचारे कवि महोदय बैठ गये हतबुद्धि हो कर ! आँखें अिधर अुधर फेर दीं। बगलमें बैठा गृहस्वामी गरमीकी परवाह न कर, साग और भात मिलाकर अुसके गोले तावडतोब निगलता जाता था ! अुसकी क्षुधाग्निके आगे जैसे वह आँच कोअी चीज ही न थी ! अब हाथ समेटे बैठना श्रीनाथके लिअे अभद्र व्यवहार-सा लगा, तो सारी शक्ति अिकट्ठीकर किसी तरह 'लावा' जैसे अुस सागमें थोड़ा-सा भात मिला दिया। अुसकी जलती हुअी अेक गोली ज्यों ही मुँहमें डाल ली, तो कण्ठतक तालु और जबान जल अुठे ! सागमें मिर्च भी कुछ अधिक पड़ गयी थी। फिर पूछना ही क्या ? अँतड़ियों तक अेक तीखी जलनकी लहर दौड गयी। विचारेके मुँहसे हलकी-सी चीख निकली, आँखोंसे आँसुओंकी धारा ! ज्वारकी जलती गोली अटक गयी गलेमें, न नीचे अुतरती थी और न अूपर ही निकाल पाते थे ! तुरन्त लोटेभर पानी पी गये तो कौर खिसक गया। अितना सारा अुत्पात पलक मारते घट गया। अेक मिनट बाद सँभलकर गला सहलाते हुअे पूतनाका विष पान करनेवाले प्रभुको यों चुनौती देने लगे !

"फुल्ल सरोजनेत्र ! अल पूतन
चन्नुल चेदु द्राविना-
नल्ल दवाग्नि म्रिंगिति नटंचुनु
निक्केद वेल तिंत्रिणी-
पल्लव युक्तमौ नुडुकु बच्चलि
शाकमु जोन्न कूटितो
मेल्लग नोक्क मुद्द दिग म्रिंगुम
नीपस गाननटचेडिन् !"

हे फुल्लसरोजनेत्र, कृष्ण, यह काहेको अैंठ रहे हो, कि मैंने अुस दिन पूतनाका विष-स्तन्य पिया था और फलाँ दिन दावानल ही निगल गया था ! अपनी शेखियाँ जरा अलग रखो। अब वक्त आ पडा है। दिखाना अपनी मर्दूमी ! यह अुबलता तिंत्रिणी पल्लव युक्त 'बच्चलि' साग ज्वारके भातमें मिलाकर अुसका अेक कौर किसी तरह गलेकी राह अुतारो तो तुम्हारा लोहा मान लूँ ! करोगे भी कुछ हिम्मत प्रभु !

जीवनके कटु प्रसंगोंको अिस तरह सरस और सह्य बना लेनेके अतिरिक्त, अिन महाकविने जागतिक व्यापारोंके सजीव चित्रांकनमें भी हास्यप्रियतासे काम लिया था। खुद खिल-खिल हँसकर दूसरोंको हँसाते रहे। अपनी अेक अमर 'वीथी' (रूपक) रचना क्रीडा भिराममुमें दो 'सजीवद्यूतों'—कुक्कुट युद्ध तथा भेडोंकी टक्कर—के जैसे चलते चित्र अंकित किये हैं, वह अिनकी अपूर्व प्रतिभाका परिचायक है। दोनों मुर्गे देर तक प्रचंड क्रोध और प्रतापके साथ लड़कर लहूलुहान हो गिरते हैं। अुन म्रियमाण प्रतिस्पर्द्धियोंके अभिनन्दनमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपमें कविका अपूर्व हास्य संवलित शोक-गीत (मरसिया) भी पढ़ लीजिये।

"हा ! कुमारस्वामि यौपवाह्यमुलार !
हा ! मन्त्रदेवता स्वामुलार !
हा ! कालविज्ञान पाक कोविदुलार !
हा ! भूतमुक्ति कुंभार्हुलार !
हा ! अहल्या जार अमयहेतुवुलार !
हा ! बलात्कार कामांधुलार !
हा ! निरंकुश महाहंकार निधुलार !
हा ! कामविजय काहळमुलार !
हा ! खगेंद्रंबुलार ! कय्यमुन नोलिग
पोवुचुन्नारे, देवता भुवनमुलकु !
मीरु रंभातिलोत्तमा मेनकाऽदि
भोग कार्यार्थमै कोडिपुंजुलार !"

हे कुमारस्वामीके वाहनो ! हे मन्त्रदेवता स्वामीगण ! * हे कालविज्ञान पाक कोविदो ! (बाँगसे मुर्गे समय सूचित करते हैं।) हे भूतमुक्तिकुंभके योग्य प्राणियो ! (मुर्गे पकाकर लोग खाते हैं।) हे, अहल्याजार (अिन्द्र) को अभय देनेवालो, हे, बलात् काम क्रीडामें अन्धे रहनेवालो ! हे, अतीव अुच्छृंखल अहंकारके निलय ! हे खगश्रेष्ठ ! हाय हाय ! अिस प्रकार रणमें गिरकर तुम लोग देवलोकोंमें चले जा रहे हो ! कदाचित् वहाँ रंभातिलोत्तमा आदि देव-रमणियोंके भोग कार्योंके लिअे तुम्हारी सेवाअें अपेक्षित हुअी हों ! चले चलो ! शुभा : सन्तु ते पंथानः !

अिसे पढ़कर कौन अैसा गंभीर व्यक्ति होगा जिसके होठोंपर, कमसे कम, हास्य-स्मितकी रेखाअें न खिच जायँ ? अैसे पद्योंमें हास्य, अर्थके साथ-साथ शब्दविन्यासका भी आश्रय लिये चलता है।

संस्कृतके महाकवि हर्षकी कृति नैषधीयचरितका अिन श्रीनाथने तेलुगुमें सरस सुन्दर अनुवाद प्रस्तुत किया है। अुसमें नलदमयंतीके विवाह सम्बन्धी प्रीतिभोजके प्रसंगपर सरस हास्यका वर्णन है। भोजन करते समय बरातियोंमें बैठा अेक धूर्त परिवेषण करनेवालियोंमेंसे अेक युवतीको बार-बार 'अेमें ! ओमे ! अेमेमे ! ओमेमे ! मेघपुष्पंबु देवेमे !' (अरी, अेरी, ओरी, अरीरी, जल क्यों नहीं लाती है री !) अैसे अुद्धत सम्बोधनों द्वारा बुलाकर जल (मेघपुष्प) माँगने लगा। वह युवती भी कच्ची गोलियाँ खेली नहीं थी। थी तो बलाकी हाजिर जवाब ! अुसके संबोधनोंमें 'मे मे मे' की बहुलता पाकर औरोंकी तरफ देख कह अुठी – 'अरे ! यहाँ तो कोअी 'मेक' (बकरा) कहींसे छूटकर आ गया है ! पकडो पकडो !'

अितना सुनना था, सब खिलखिलाकर हँस पड़े। धूर्तपर घड़ों पानी पड़ गया।

प्राचीन तेलुगु कवियोंमें तेनालि रामकृष्ण सबसे हास्यप्रिय, प्रत्युत्पन्नमति तथा प्रौढ़ कविता रचना चतुरीण माने जाते हैं। कअी दन्तकथाओंके अनुसार ये आन्ध्र भोज श्री महाराज कृष्णदेवराजके दरबारी कवि समझे जाते हैं। किन्तु अन्य सबल प्रमाणोंसे अुनके परवर्ती निकलते हैं। अपनी दुर्वार परिहास चातुरीके कारण ये 'विकटकवि' भी कहलाते थे। अिनकी अनुपम रचना 'पाण्डुरंग माहात्म्य' तथा अन्य कअी फुटकर

---

* १. मुर्गेके लिये प्रयुक्त अिस नामकी अुपपत्ति अिस प्रकार समझ लेना ठीक होगा। सभी मंत्राक्षरोंके प्राण स्वर होते हैं--ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत। अुनसे रहित मन्त्रपाठ अुद्दिष्ट प्रयोजन सिद्ध नहीं कर सकता और अुलटे अनर्थकारी भी बन जाता है। अिसके कुछ अुदाहरण अुपनिषदीय गाथाओंमें मिलते हैं। अिस प्रकार यदि दैवी-शक्तियाँ मन्त्रोंके अधीन हैं तो वे मन्त्र अपनी शक्तिमत्ताके लिअे स्वरोंका आश्रय लेते हैं। कहा जाता है कि अिन स्वरोंका स्वरूपनिर्णय करनेमें कुक्कुटोंने आचार्य पाणिनिकी मदद की थी !

२. स्वर-रूपनिर्णय सम्बन्धी सूत्र बनाने वे महर्षि ब्राह्ममुहूर्तमें ध्यानमग्न बैठे रहे तो देरतक अुपक्रम न सूझा। सहसा कहींसे मुर्गेने बाँग दी--'कुकुडूँ कूँअूँअूँ !' महामुनिके मेघाच्छन्न मस्तिष्कमें जैसे बिजली कौंध गयी। तुरत लिख गये –'अूकालोज्झस्वदीर्घप्लुतः ! अिस प्रकार स्वर-रूपनिर्णयके लिअे अुन्हें सहायता मिली थी मुर्गों ही से। कदाचित् अिसीलिअे वे मन्त्रदेवता स्वामी कहलाये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Harid

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छंदोंमें हास्य रचना सम्बन्धी अिनकी अनुपम क्षमताके प्रमाण मिलते हैं। यहाँ सिर्फ अेक अुदाहरण देकर आगे बढेंगे।

अेक दफा ये अपने सामयिक किसी 'तिरुमलराय' नामक राजाके यहाँ गये थे। वह राजा चाटुकार कवियोंकी झूठी खुशामदसे बेहद चिढ़ता था। रामकृष्णको देखकर अुसने आदेश दिया--'मेरा ज्योंका त्यों वर्णन कर डालो। कोअी अतिशयोशक्ति न आने पावे! तिरुमलराय अेक आँखका काना था। रामकृष्ण आशुकवि थे ही, खट्से अपनी निर्भीकवाणी सुना बैठे!

"अन्नातिगूड हरुडवु
अन्नातिनिगूड कुन्न नसुर गुरुंडौदन्ना!
तिरुमलराया! कन्नी क्कटि लेदुकानि कंतुडवे कदा!"

अुस (अपनी) स्त्रीको साथ लिये रहो तो हर (त्र्यंबकेश्वर) बन जाते हो और अुसे छोड़ दो तो असुर-गुरु (शुक्राचार्य)! वाह भाअी! तिरुमलराय! अेक आँख ही नहीं रह गयी है! (अेक आँखने ही तुम्हें चौपट कर दिया है!) वरना तुम कामदेवसे क्या कम होते?

यह सुनते ही राजा खिसियाकर रह गया।

तेलुगु साहित्यके गौरव महाकवि पोतना बड़े भक्त अेवं संत-प्रकृतिके हो गये हैं। अुन्होंने श्री भागवत पुराणका सर्वांग सुंदर अनुवाद प्रस्तुत किया था। प्रकृत्या साधु होते हुअे भी अपनी रचनामें आपने प्रसंगानुसार सुंदर हास्यका समावेश किया अवश्य था। हेमंत ऋतुका वर्णन करते समय शीतके आतंकका वर्णन अिस प्रकार किया गया है। त्रिमूर्ति देव--ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर सतीयुक्त शरीरवाले क्यों बने हैं, अुसका कारण जरा सुन लीजिअे :—

"ई हेमंतमुराक जूचि रमणी-
हेला परीरंभ सत्--
साहाय्यंबुन गानि दीनि गेलुवन्
शक्यंबु कादंचुदा—
रूहापोह विधिन् त्रिमूर्तुलु सती-
युक्तांगुलैनारुगा--
कोहो! वारलदेमि संतत वधू-
योगंबु रागंदुरे!"

"अिस हेमंतका आगमन देख त्रिमूर्ति कहीं चिंतामें पड़ गये थे कि अिसे कैसे जीता जाय! काफी देर सोचनेके बाद अिस निर्णयपर पहुँचे कि 'रमणी हेला-परीरंभ सत्साहाय्य'के बिना वह काम असंभव है। तभी तो वे सतीयुक्त शरीरवाले हो गये हैं। (ब्रह्माने वाणीको मुँहमें रख लिया। विष्णुने वक्षमें लक्ष्मीको जगह दी, तो शिवजी अपनी आधी देह ही पार्वतीजीके हवाले कर बैठे!) यदि हेमंत ऋतुका अुत्पात न होता तो भला, वे महानुभाव अिंद्रियविजयी 'संतत वधूयोग' के शिकार बन जाते?"

'विजय विलासमु' तेलुगुका अेक और अुत्तम प्रबंध काव्य है, जिसके कवि वेंकन्नाका यह दावा रहा कि मैं अपनी रचनाके प्रत्येक छंदमें कोअी-न-कोअी चमत्कार अवश्य दिखा दूँगा। अुस कृतिमें कअी जगह सरस हास्यका समावेश हो गया है। कपटी सन्यासीके वेषमें अर्जुनको सहसा पहचान कर, अुसकी सेवाके लिये भेजी गयी सुभद्रा, घरसे भाग खड़ी होती है। अुसकी घबराहट देख चतुरा सत्यभामा अिन शब्दोंमें चिंताका अभिनय करती है!

'क्रागियुन्नदि मिगुल नंगंबु चूड
कलवरिंचुचु नुन्नदि कलदो येमो
सोकुडल्ल सन्यासिके चूपवलयु!'

हाय हाय! (आज तो मेरी लाडली) ननदकी देह तवेकी भाँति जल रही है! रह रहकर प्रलाप भी करने लग गयी है! कहीं कोअी भूत तो नहीं लगा! अैसी दशामें अुन्हीं सन्यासीको दिखा देना ठीक होगा। (वही आवश्यक झाड़-फूँक करके अिसका भूत अुतार सकेंगे।)

भाभीकी ये बातें सुन स्वयं सुभद्रा मन-ही-मन हँस दी होगी। अैसा हास्य अत्यंत कोमल और हृदयहारी हुआ करता है। अिस तरह प्राचीन प्रबंध काव्योंमें शिष्ट हास्यके कअी अेक अुदाहरण दिये जा सकते हैं। शतककार कवियोंके अेकआध नमूने पाठकोंके समक्ष रखेंगे।

तेलुगु शतककार संत कवियोंमें आंध्र देशके कबीर 'श्री वेमना' का स्थान सर्वोपरि है। अिनकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रचनाओंमें हास्यके कितने ही नमूने जगह-जगहपर भरे पडे हैं। ये कविवर हास्यकी शक्ति तथा अुपयोगितासे भली भाँति परिचित थे। अपने अुपदेशोंके प्रचार-कार्यमें आपने अुसे अेक सुंदर और अचूक साधन बना लिया था। अपने अुक्ति-वैचित्र्यके कारण पहले लोगोंको हँसाकर, अुनकी सहानुभूति पाते थे और तुरंत अपने अभीष्ट अुपदेशको हँसीकी ओटमें ही पहुँचा देते थे। अिस प्रकार जनताके रूढ़ अंध-विश्वासोंपर निर्मम आघात कर डालते थे। अेक अुदाहरण देखें—

हम लोग सभी धार्मिक कर्मोंके पहले सिर मुड़ा लेना आवश्यक मानते हैं। किंतु अुसका आशय समझनेकी न तो हमें अिच्छा होती है और न अवकाश ही। अैसे अर्थहीन मुण्डन-कर्मको वेमना कवि व्यर्थका प्रयास मानते थे। देखिअे अपनी बात वे किस सफाअीसे हमारे सामने रखते हैं—

"सकल तीर्थंबुल सकल यज्ञंबुल
तललु गोरुगकुन्न फलमुलेदु
मंत्र जलमुकन्न मंगलि जलमेच्चु।"

सभी पवित्र तीर्थों तथा यज्ञ आदि शुभ कर्मोंमें शिरोमुण्डन कराये बगैर फलप्राप्ति नहीं होती। अतअेव यह निष्कर्ष निकला कि मंत्र जलसे कहीं बढ़कर 'मंगलि' यानी नाअीका जल महत्व रखता है'*—

अिसे सुनकर कैसी ही गंभीर-मुहर्रमी सूरतका आदमी क्यों न हो, हँसे बिना न रहेगा। अुपदेश व नीतिसे भरपूर अैसे शिष्ट हास्यके पचासों अुदाहरण अिन संत कविवरकी रचनाओंमें बिखरे पड़े हैं।

निंदा-स्तुतिसे पूर्ण रचनाओंमें भी हास्यके सुंदर छींटे हम पाते हैं। तेलुगुके 'आंध्रनायक' शतककार लब्ध प्रतिष्ठित कवि श्री पुरुषोत्तमजीको अैसी रचनाअें प्रस्तुत करनेमें आशातीत सफलता मिली है। अुनके कृति-रत्नके प्रत्येक पद्यसे हास्यकी अेकाध स्निग्ध किरण अवश्य फूटती रहती है। कवि अपनी अगाध भक्तिका प्रदर्शन, भगवानको गालियाँ सुनाकर (निंदाकी आड़में) कर देते हैं।

निंदा और स्तुति अिस अनुपम गंगा-जमुनीके साथ हास्यकी सरस्वतीका सुंदर योग प्रत्येक पद्यके 'पग-पग' को 'प्रयाग' बना देता है। अेक अुदाहरण पर्याप्त है—

"आलु निर्वाहि कुरालु भूदेवियं
यखिल भारकुडन्न नाख्य देच्चे!
अिष्ट संपन्नुरालिंदिर भार्ययं
कामितार्थ दुडन्न धनतदेच्चे!
कमलगर्भुंडु सृष्टिकर्त तनूजुडं
बहुकुटुंबिकुडन्न बलिमि देच्चे!
कलुष विध्वंसिनि गंग कुमारियं
पतित पावनुडन्न प्रतिम देच्चे!
आंडु बिड्डलु देच्चु प्रख्याति गानि
मोदटिनुंडियु नीवु दामोदरुडवे!"

'हे भगवन्! आप कहीं अिस धोखेमें न रहें कि मैं बहुत ही बड़ा व्यक्ति हूँ, क्यों कि मेरे नामके पीछे 'अखिल भारक', 'कामितार्थद', 'बहुकुटुंबीक', 'पतित पावन' आदि अुपाधियाँ लगी हुअी हैं! हम भली भाँति जान गये हैं कि ये 'डिगरियाँ' आपको कैसे मिल गयी हैं। लीजिअे आपके बड़प्पनकी पोल खोल रहे हैं।

क्षमाकी प्रतिमा भूदेवीने आपका पत्नीत्व ग्रहण कर 'अखिल भारवाहक' की अुपाधि दिला दी है। अिसी प्रकार संपत्तिकी अधिष्ठात्री अिंदिराने 'कामितार्थ प्रदायक' का सेहरा आपके सिर बाँध दिया है। स्रष्टा ब्रह्माने पुत्र बनकर आपको 'बहुकुटुंबी' के अुच्चासन पर बिठा दिया है। कलुषविध्वंसिनी गंगाजीने पुत्रीका संबंध स्वीकार कर, आपको 'पतितपावन' की विरुद दिलायी है! अिस प्रकार सच कहा जाय, तो आपका सारा यश 'बीबी और बच्चों' की ही गाढी कमायी साबित होती है! आप तो आरंभ ही से मुफ्तका माल अुडानेवाले दामोदर ठहरे! यही न है आपके बड़प्पनका रहस्य!*

---

* और अुदाहरणोंके लिअे, देखिअे मेरी पुस्तक 'आंध्र देशके कबीर वेमना', प्रकाशक—हिं० सा० सम्मेलन, प्रयाग। —लेखक।

* अिस सुंदर कृतिका विशेष परिचय जाननेके लिअे, देखिअे नागपुरकी 'भारती' मासिक पत्रिकाके अक्टूबर १९५० वाले अंकमें प्रकाशित मेरा लेख—ले०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राचीन कवियोंने 'समस्या-पूर्ति' के रूपमें भी हास्यका पोषण कर दिया था। अुन दिनों आंध्रमें कविताकी आशुधारा प्रवाहित करनेवालोंकी बाढ़-सी चल पड़ी थी ! विद्या-प्रेमी आश्रयदाताओंके यहाँ साहित्यके अखाड़े बराबर जमे रहते थे जिनमें कवियोंको बड़ी ही बेतरतीब और अूटपटांग समस्याअें दी जाती थीं और अुनकी प्रतिभा तथा प्रत्युत्पन्नमतित्वकी परीक्षा ली जाती थी। अैसे अखाड़ेबाजोंमेंसे कभी-कभी अैसे प्रतिभावान भी निकल पड़ते थे जो कि देशका कोना कोना छानकर वहाँकी परिषदोंमें सम्मानित होते थे। कभी कभी अुन्हें अैसे प्रतिस्पर्द्धियोंसे भी निबटना पड़ता था जो कि या तो अचतुर अुद्धत होते थे अथवा गुणग्राहकतामें बिलकुल ही कच्चे। अैसी ही किसी अेक परिषदमें पहुँचकर अेक प्रतिभाशाली दिग्गजने अुन्हें स्वयं अेक समस्या दी थी। अुसकी पूर्ति करनेमें असमर्थ रह जब वे अेक दूसरेका मुँह ताकने लगे तो, अुन कविने (तेनालि रामकृष्ण ?) अुसका पूरण यों कर डाला। समस्या यह थी—"अंदरुनंदरे मरियु नंदरुनंदरे अंदरंदरे !" "सब सभी हैं, सभी सब हैं और सब सब (बराबर) हैं !" यानी यहाँ सब अेकसे हैं, कोअी किसीसे कम नहीं। अिसकी पूर्ति प्रशंसात्मक और निंदात्मक, दोनों प्रकारसे की जा सकती है। अुन कविने अिसे यों पूरा कर दिया। --

"कोंदरुं भैरवाश्वमुलु, कोंदरु
विष्णु तृतीय जन्ममुल्,
कोंदरु पार्थुटेक्केमुलु, कोंदरु
कालुनि येक्किरितलुन्,
कोंदरु कृष्ण जन्ममुन कूसिन
वारलु नीसदस्सुलो
नंदरु नंदरे मरियु नंदरु नंदरे
अंदरंदरे !"

"यहाँ अुपस्थित सदस्योंमेंसे कोअी किसीसे कम नहीं, सब बराबर हैं। अिनमेंसे कुछ तो भैरवजीके वाहन (कुत्ते !) हैं, कुछ तो भगवान विष्णुके तीसरे अवतार (सुअर !) हैं, कुछ लोग पार्थके ध्वजलांछन (बंदर !) हैं, और कुछ काल (यमराज) के वाहन (भैंसे !) हैं। शेष सभी कृष्ण जन्मके समय बोलने-वाले * हैं (गधे !)।"

अुक्ति वक्रतासे प्रकट किया गया यह भाव अुन तथाकथित पण्डितोंके दिमागमें अुतर न पाया, और कहा जाता है, कि वह कविजी सम्मानित भी होकर वहाँसे बच निकले थे !

हास्यका अेक और प्रकार भी है जिसे अंग्रेजीमें पैरोडी (Parody) कहा जाता है। 'पैरोडी' या भडौआ अुस कविताको कहते हैं जो अन्य किसी कविकी रचनाका अुपहास करनेके अुद्देश्यसे, अुसीके अनुकरण-पर बनायी जाती है। कअी आंग्ल भाषाविद् देशी भाअियोंका यह दावा है कि यह रचना-विधान अभारतीय और अंग्रेजीकी देन है। अैसे जेंटलमैन बंधुओंसे निवेदन है कि अपनी आँखोंपरसे वे विलायती काले चश्मे अुतारकर, आँखें खूब मलकर, १६ वीं शतीके किसी विनोदी कविकी यह तेलुगु रचना देख लें जिससे, अुन्हें कुछ सच्ची 'रोशनी' मिल सके।

अी० सन् १४ वीं शतीके परम भक्त कवि श्रीपोतनाने गजेंद्रकी आर्त व करुण पुकारका चित्र अिन शब्दोंमें अंकित किया था --

"लावोक्किकतयु लेदु धैर्यमु विलो-
लंबय्ये प्राणंबुलुन्
ठावुल् दप्पेनु मूर्च्छ बच्चे
तनुवुन् डस्सेन् श्रमंबय्येडिन्
नीवे तप्पनित: परंबेरुग मिन्न-
पन् दगुन् दीनुनिन्,
रावे ! ओश्वर ! काववे ! वरद !
संरक्षिचु भद्रात्मका !"

---

* कहा जाता है कि जब भादोंकी काली निशामें श्रीकृष्णका जन्म हो रहा था, बंदीगृहके पास बंधा अेक गधा रेंगने लग गया ! बेचारे वसुदेव घबड़ा गये थे कि कहीं पहरेदारोंकी आँख न खुले और वे पुत्र-जन्मकी खबर तत्काल नृशंस कंसको न दे बैठें। अतः वसुदेवजीको अुस गधेके पाँव पकड़कर अुसे चुप करना पड़ा था ! भाग्यका मारा क्या न करता ! अिसी आशयको प्रकट करनेवाली अेक कहावत भी आंध्रमें आज प्रचलित है।--लेखक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मेरी सारी शक्ति जवाब दे गयी है, धीरज डगमगाने लगा, पाँचों प्राण नाखूनोंमें समा गये हैं, मूर्च्छा आ गयी, देह थकानसे चूर हो चली। अिस दशामें तुम्हें छोड़ और किसीको नहीं पुकार सकता हूँ। सो हे अीश्वर ! वरदायक ! भद्रात्मक प्रभु ! आ जाओ ! मुझे बचा लो स्वामिन् !'

यह पद्य अपने भावावेग धाराशुद्धि और प्रासादिकताके कारण अितना लोकप्रिय हो चला कि अुसीकी देखादेखी किसी परवर्ती कामज्वरपीड़ित कविने यह भड़ौआ लिख डाला--

"पूविल्कानि सरोजबाणमुल
नंभोजारि मैचायलन्,
भावंबेंतयु डस्से मेनु वडलेन्
तापंबु रेट्टिंचे ने
नीवाडन् मधुराधरंबोसगवे !
निक्कंब नन्नैलवे !
रावे ! मानिनि ! कावे ! तरुणि !
संरक्षिचु चन्द्रानना !"

"पुष्पधन्वाके सरोजवाणोंसे तथा अंभोजारि (चंद्रमा) की शरीर कांति (ज्योत्स्ना) के प्रसारके कारण मेरा सारा भाव (हृदय) थककर चूर-चूर हो चला है, देह मुरझा गयी तथा ताप दुगुना हो अुठा ! अब बचनेकी कोअी सूरत नहीं रही ! सो हे मानिनि ! तरुणी ! चन्द्रानने ! आ जाओ न ! मुझे बचा लो ! सच कहता हूँ, मैं तुम्हारा सेवक हूँ, मधुराधर प्रदानकर अपनी शरणमें लो देवि !"

अैसी अनुकृतियाँ हमेशा मूललेखकोंके प्रति अुपहास-प्रकाशन ही नहीं करती, बल्कि प्रशंसात्मक भी रह सकती हैं। किन्तु शर्त यह कि अुनका प्रधान आशय हास्य अुत्पन्न करना ही रहे।

मनुष्य अपने आसपास दीखनेवाली वस्तुओं, जानवरों तथा व्यक्तियोंके सहारे ही अपनी सहज परिहासतृष्णाका अुपनयन करना चाहता है। मोटे, ठिगने कदके, पेटू आदमी, मच्छर, खटमल, मूषक, मार्जार वगैरह प्राणी तथा तमाखू, भंग आदि वस्तुअें अपनी विशेषताओंके कारण, अुसके मनोरंजनके अुपादान बन जाते हैं। अिन सुपरिचित अेवं साधारण वस्तुओंके स्वरूप-स्वभावका सच्चा किन्तु असाधारण शब्दयोजनासे पूर्ण वर्णन प्रस्तुतकर प्राचीन कवि स्वयं हँसकर दूसरोंको हँसाया करते थे। हिन्दी साहित्यमें भी अैसी रचनाअें मिलती हैं, जैसे खटमल-बाअीसा आदि *। किन्तु बहुधा तेलुगुकी अिन फुटकल रचनाओंके स्रष्टा अपनेको अज्ञात ही रखते आये हैं। हम यहाँपर सिर्फ दो अुदाहरण-- तमाखू और बिल्लीको लेकर--प्रस्तुत करके यह लेख समाप्त करेंगे।

तमाखू भारतमें करीब ३०० वर्ष पूर्व पुर्तगालसे लाया गया है। थोड़ेसे समय ही में अुसकी आशातीत लोकप्रियता देख किसी मौजी कविने अुसकी प्रशंसामें अपनी कलम तोड़ दी !

"दंतलूटी घोरदन्ति हर्यक्षंबु !
कुष्टरोगाचल कुलिशधार !
पीनखांडज भूरि व्रणतेयस्वामि !
वाताटवी दाववह्निकील !
जलदोषहिमपूर चण्डार्कररोचि !
बहुळकासांबोधि बाडबंबु !
गुरुतराजीर्णेण गुहतरव्याघ्रंबु !
मुखरोगनिखिल जीमूतपवन,
मनग वार्तकुनेक्किति वखिल जनुल
जीवरक्षण दिव्य संजीवि वगुचु,
प्रस्तुतिपग सकल दिक्षतुल सभल
नूजितंबगु नीराक यो पोगाक !"

'अै तमाखू, तुम्हारे आगमनसे सभी राजा महाराजाओंके दरबारोंमें रौनक आ गयी है। समस्त जीवोंकी रक्षा करनेवाली संजीवनौषधिके रूपमें तुमने अपूर्व लोकप्रियता प्राप्त कर ली है। 'दन्तलूटी-घोरदन्ति' के लिअे तुम हर्यक्ष (सिंह) हो; कुष्टरोगाचलके लिअे कुलिशकी धारा हो ! पीनस रोग रूपी

---

* मध्यप्रदेशके महावाग्मी साहित्यकार और कविवर डॉ. बलदेवप्रसाद मिश्रने खटमल मच्छर आदिपर सुन्दर हास्यपूर्ण कविताअें लिखी हैं।—लेखक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Harid

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुरगके लिअे भयानक गरुड़ हो ! वात (रोग) अटवीके लिअे भयानक दावानल हो ! जलदोष रूपी बर्फको गलानेवाले चण्डार्क किरणसमूह हो ! बहुलकास (खाँसी) सागरको सुखानेवाले बडवानल हो ! गुरुतर अजीर्ण (हिरन) के लिअे भयंकर व्याघ्र हो ! निखिलमुखरोग जीमूत पवन हो ! तुम्हारा गुणगान और कहाँतक करें ! धन्य है तुम्हें !

लगे हाथ मार्जार चक्रवर्तीकी भी प्रशस्ति सुन लीजिये--

"क्षीरघटांबुधिस्थिति कुंमसंभव !
बहुमूषकोरग पक्षिराज !
शुककुलमत्तेमनिकर कण्ठीरव !
शलभ संकुलवन ज्वालि कील !
वृश्चिकदानव विष्णु सुदर्शन !
वायस मेघदुर्वार पवन !
कुक्कुट पर्वत घोर वज्रायुध !
रौद्रांधकार मार्तांडतेज !
व्याघ्रकुलमातुलस्वामि ! शीघ्रगमन !
पैनमुलदोत्ति [१] दोत्तुलपालिमित्ति [२].
रम्यतरमूर्ति ! नखरसंप्राप्त कीर्ति !
सकलगृहवर्ति ! मार्जाल चक्रवर्ति !

अिस प्रकार हम देखते हैं कि प्राचीन तेलुगु कविगण हास्यके प्रायः सभी प्रकार व प्रयोजन भली भाँति जानते थे और अपनी पुष्ट वाणीके द्वारा अुसे साहित्यमें विशिष्ट स्थान प्रदान कर गये। हास्यका अितने व्यापक रूपमें ग्रहण व प्रसाधन अन्य किसी भारतीय भाषामें है या नहीं, मैं तो नहीं कह सकता हूँ। किन्तु हिन्दीके प्राचीन कवियोंने अैसी बहुमुखी विदग्धता नहीं दिखायी है, अितना तो, अेक साधारण हिन्दी विद्यार्थीके नाते कह देनेका मेरा यह साहस पाठक बंधु क्षंतव्य मानेंगे ही। आधुनिक साहित्यकी तो बात मैं नहीं कहता। अुसकी चर्चा भविष्यमें कभी अुठाअूंगा।

---

१. यात्रामें बाधा डालनेवाली।

२. छीकों व सिकहरोंके लिअे मृत्यु-रूपिणी।

अितिहास न मेरा बदलेगा

—: श्री नर्मदा प्रसाद खरे :—

अितिहास न मेरा बदलेगा।
अितिहास बदलते आये हैं, अितिहास न मेरा बदलेगा।

पथमें कितने ही फूल मिलें,
पथमें कितने ही शूल मिलें,
है दूर सामने लक्ष्य अेक--
मैं अुसको निकट बुलाअूंगा,
या स्वयं लक्ष्य बन जाअूंगा,

विश्वास बदलते आये हैं, विश्वास न मेरा बदलेगा।

कब रुकता अरे समयका रथ,
कब रोक सकी चट्टानें पथ,
रुकना जीते जी मरना है—
मृत्युञ्जय बन विष पी लूंगा,
काँटोंमें फूल खिला दूंगा,

मधुमास बदलते आये हैं, मधुमास न मेरा बदलेगा।

मंजिलपर कोअी डोल रहा,
चिरमौन मुखर हो बोल रहा,
मैं मधुर मिलनकी चाह लिये,
रवि शशिके दीप, जलाता हूँ,
दिशि-दिशि आलोक लुटाता हूँ,

आकाश बदलते आये हैं, आकाश न मेरा बदलेगा।
अितिहास बदलते आये हैं, अितिहास न मेरा बदलेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवनागरीका नया रूप कैसा हो ?

: श्री सुजानसिंह :

आधुनिक समयमें कअी सज्जनोंने देवनागरी लिपिका सुधार करनेकी चेष्टा की है। परन्तु अिन यत्नोंका परिणाम वही हुआ जो अेक शांत तालाबमें छोटा-सा कंकड़ फेंकनेका होता है, अेक-दो लहरें अुठीं और फिर बस। किन्तु वर्तमान लिपिमें और आधुनिक भावोंके अनुसार जो लिपिका स्वरूप होना चाहिये अुसका अन्तर अितना है कि तालाबमें अेक और कंकड़ फेंकनेकी चेष्टा रोकेसे नहीं रुकती।

देवनागरी लिपिके सुधारमें मुख्य प्रयोजन दो हैं। अेक तो यह है कि आजकलकी छपाअीके ढंग अैसे हैं (और छपाअीमें टायपिंग भी शामिल है) कि लिपि जितनी सरल हो अुतनी ही सुविधा है। दूसरे आजकल पढ़ना-लिखना अेक संकुचित श्रेणीका काम नहीं, यह समस्त जनगणकी आवश्यकता है। और लिपि जितनी सरल हो अुतना ही वह अिस राष्ट्रीय आवश्यकताको अच्छा निभा सकती है।

किन्तु लिपिके सुधारमें अेक बातका ध्यान होना चाहिये—अक्षरोंके विशेष स्वरूपमें कोअी परिवर्तन नहीं होना चाहिये। हमारी अेक पुरानी सभ्यता है जिसमें हमारे साहित्यका स्थान अूंचा है। लिपिका रूप बदलनेसे हम अपने आपको अिस विशाल धनसे वंचित कर बैठेंगे जो हमारे लिअे असह्य है।

सो अिस लेखका प्रयोजन यही है कि अक्षरोंका विशेष स्वरूप सुरक्षित रखते हुअे भी लिपिको सरलसे सरल रूप दिया जाय। अिस हेतुसे हम पाँच प्रस्ताव पेश करते हैं।

(१) शिरोरेखा नहीं होनी चाहिये

शिरोरेखाका अक्षरोंके विशेष रूपसे कोअी संबंध नहीं। अक्षरोंकी पहचानसे अिसका कोअी संबंध नहीं, बल्कि यह व्यर्थ टाअिपको बड़ा कर देती है। देवनागरीके १८ पाअिंट और रोमनके १८ पाअिंटकी तुलना कीजिये। रोमन बड़ा प्रतीत होगा। रोमन छोटा पाअिंट भी देवनागरी बड़े पाअिंटसे अधिक सुपाठ्य है। कारण? अुसको शिरोरेखाका अनावश्यक बोझ नहीं अुठाना पड़ता। शंका हो सकती है कि शिरोरेखा न हो तो 'म' से 'भ' की पहचान कैसे होगी? अिस शंकाका समाधान सरल है। गुजराती, जो देवनागरीका ही दूसरा रूप है, अुसमें शिरोरेखा नहीं है; फिर भी 'म' और 'भ' की पहचानमें कोअी गड़बड़ नहीं होती। 'भ' के आरम्भमें अेक मोड़ है जो 'म' में नहीं। अिसी प्रकार 'ध' और 'घ' का भी अन्तर सरलतासे पहचाना जा सकता है।

(२) आ, अि, अी, अु, अू, अे, अै का प्रयोग नहीं करना चाहिये

अिस समय हमारे पास अेक ही ध्वनिके दो दो चिह्न हैं। अुदाहरण मात्र:—आ—ा, अि—ि, अी—ी अित्यादि। यह देवनागरी सीखनेवालोंपर और छपाअीकी सामग्रीपर व्यर्थका भार है। रोमनसे अेक बार फिर तुलना कीजिये। बाप और आप लिखनेमें रोमन लिपिमें बापका 'b' हटाकर 'आप' रह जाता है। किन्तु हमारे यहाँ 'ब' को हटाकर अेक नया अक्षर (अ) और लगाना पड़ता है, तब 'आप' होता है। या न भी लगावें तो क्षति नहीं। ाप (आप), ैसे (अैसे) स्वयं बड़ी सुविधासे पढे जा सकते हैं। आवश्यकता केवल 'अ' की है, बाकी काम सभी, ा, ि, ी, ु, ू, े, ै, ो, ौ, की मात्राओंसे निभ सकता है।

शंका केवल 'ि' वाली मात्राके प्रयोगमें हो सकती है। हमारे प्रस्तावके अनुसार हम 'अिस' को 'सि' करके लिखेंगे। अिसको 'सि' पढ़ा जानेकी संभावना हो सकती है। किन्तु नोट कीजिये 'सि' (अिस) में 'ि' 'स' अक्षरसे हटकर है, जैसे अेक स्वतंत्र अक्षर हो। और देखिये यदि हम 'अिसम' लिखना चाहें तो अिस प्रकार लिखेंगे, ि सम—(१)। और यदि हम 'सिम' लिखना चाहें तो अिस भांति लिखेंगे, सिम (२)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) में ि और स का अन्तर दो स्वतंत्र अक्षरों का है। परन्तु (२) में ि और स का रिश्ता दो संयुक्त अक्षरोंके समान है। (१) से (२) में ि 'स' के अधिक निकट है।

(३) संयुक्त अक्षरोंका प्रयोग अनावश्यक है।

अब भी देवनागरी लिपिमें अेक चिह्न है,जिसकी अुपस्थितिसे अक्षरका अुच्चारण आधा रह जाता है : जैसे 'पृथक्' में 'क' का। संयुक्त शब्द लिखनेमें अिस चिह्नका प्रयोग करनेसे देवनागरी सीखनेवालोंको और छापेखानेवालोंका काम सरल हो सकता है। अब हमारे पास अर्ध 'र' के तीन चार चिह्न हैं। ' ् ' के प्रयोगसे यह सब निर्मूल हो जायेंगे। अुदाहरणः--

अर्ध- अर्ध, प्राय-प्राय, ट्राम-ट्राम, पभु-प्रिभु।

अिस चिह्नके प्रयोगसे 'ऋ' का भी प्रयोग हट जायगा। यह अक्षर कुछ गिने-चुने शब्दोंमें ही आता है परन्तु है अनावश्यक।

(४) अनुनासिक चिह्न केवल "ं" होना चाहिये।

अिस समय हम ङ, ञ, ण, न और म--पांचोंको अनुनासिक अुच्चारणके लिअे प्रयोग करते हैं। "ं" के प्रयोगसे ञ और ङ की आवश्यकता रहती ही नहीं।

" ँ " का प्रयोग अब काफी बढ़ रहा है। हमारा यह प्रस्ताव पृथक् लिखनेका अुद्देश्य यह है कि अब भी जो अिसके प्रयोगमें संकोच है, वह अुड़ जाय। अिससे लिपिमें सरलता अधिक आ जायेगी अुदाहरण.-

अङ्क	अंक
अम्बु	अंबु
अञ्जन	अंजन
अन्त	अंत

(५) अक्षरोंके साथवाली सीधी डंडियोंका प्रयोग न ही हो तो अच्छा है।

अिस प्रस्ताव के अनुसार
स को स लिखना चाहिये,
ग को ग लिखना चाहिये,
क को क लिखना चाहिये अित्यादि।

हो सकता है कि जो सज्जन अूपरवाले चार प्रस्तावोंसे सहानुभूति रखते हों अुनके लिअे भी यह प्रस्ताव स्वीकार करना कठिन हो। और वह दो बातोंपर विप्रतिपत्ति करेंगे।

१. यह प्रस्ताव अक्षरोंके स्वरूपको बदलता है अिसलिये यह आपके अपने सिद्धान्तके प्रतिकूल है।

यह अक्षरोंके विशेष स्वरूपको नहीं बदलता। अब भी ल, न, त, प, ग, श आदि देवनागरीके प्रायः सभी अक्षर डंडीहीन रूप स्वरूपमें आते हैं और अति सरलतासे पहिचानमें आते हैं।

२. ये अक्षर अिस स्वरूपम आते तो हैं, किन्तु केवल संयुक्त अक्षरोंमें। अिनको अकेले अुच्चारणके लिअे प्रयोग करना अेक नयी प्रथा चलानेके समान होगा।

जब हमने संयुक्त अक्षरोंका प्रयोग ही अुड़ा दिया (देखिये प्रस्ताव ३) तो डंडी-हीन अक्षरोंको पूर्ण अुच्चारणके चिह्न बनानेमें कोअी क्षति नहीं।

आप कहेंगे, "क्षति न भी हो तो लाभ क्या है?" लाभ यह होगा कि अेक तो डंडी अितने अक्षरोंके साथ लगती है कि अिसका अक्षरके वास्तविक रूपसे संबंध कम ही है और अिसके अुड़ानेसे अक्षर निज-स्वरूपमें सरल स्पष्ट प्रतीत होंगे और नये सीखनेवालोंको सुविधा होगी। दूसरे अिस अनावश्यक लकीरके हटानेसे अक्षर अेक दूसरेके निकट आ जायेंगे। पंक्तियोंमें अधिक शब्द आ सकेंगे और अिस भांति कागजकी बचत हो जायगी।

यह जन-शिक्षाका युग है। अिस युगके धर्मके अनुसार हमें अपने लाखों करोड़ों भाअियोंको पढ़ना-सिखाना है। लिपि जितनी सरल होगी, अुतना ही नये पढ़नेवाले भाअियोंको कष्ट कम करना पड़ेगा। फिर हमें लाखों करोड़ों पुस्तकें छपवानी हैं और जितनी कागजकी बचत कर सकें अुतना ही अिस निर्धन देशके हितके अनुकूल है।

यह संपूर्ण लेख अिसी भावसे प्रेरित होकर लिखा गया है। हम निरक्षरता दूर करनेका जो भी यत्न करें वह कम है। लिपिका वास्तविक स्वरूप सुरक्षित रखते हुअे हम अिसको जितना भी सरल और संक्षिप्त बना सकें यह आगामी पुश्तोंपर ही नहीं, वरन् पढ़ना-लिखना सीखनेके लिअे अुत्सुक लाखों करोड़ों नर-नारियोंपर परोपकार है। बल्कि यह अेक अुनके प्रति हमारा ऋण है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन निबंध

: श्री शिवनाथ :

भारतेंदु युगके प्रमुख कथात्मक निबंधकार और निबंध ये हैं—भारतेंदु श्री हरिश्चंद्रका 'अेक अद्‌भुत अपूर्व स्वप्न', राजा शिवप्रसादका 'राजा भोजका स्वप्न', श्री तोतारामका 'स्वप्न', श्री बालकृष्ण भट्टका 'अेक अनोखा स्वप्न' (हिन्दी प्रदीप जिल्द २० संख्या ५-६-७, सन् १८९७), और श्री केशवप्रसादसिंहका 'आपत्तियोंका पर्वत' (श्री श्यामसुन्दरदास संपादित हिंदी-निबंधमाला, पहला भाग) ये सभी निबंध किसी-न-किसी लक्ष्यको प्रतिपादित करनेके अुद्देश्यसे ही लिखे गये हैं।

'अेक अद्‌भुत अपूर्व स्वप्न', 'स्वप्न' तथा 'राजा भोजका स्वप्न' के लेखकोंके विषयमें हिंदी-साहित्यमें कुछ भ्रम है। अतः अिसके निवारणका भी कुछ प्रयत्न होना चाहिये। 'राजा भोजका स्वप्न' के लेखक राजा शिवप्रसाद माने जाते हैं; परन्तु बात अैसी नहीं है। यह अुनकी मौलिक रचना नहीं है, अुनके द्वारा अनूदित है। अिसकी मौलिक लेखिका है मिस सी. अेम. टकर। मेरी बात सन् १९०५ में प्रकाशित 'राजा भोजका स्वप्न' (तृतीय संस्करण) नाम्नी पुस्तिकाके मुख-पृष्ठको देखनेसे स्पष्ट हो जायगी, जो अिस प्रकार है—

"राजा भोजका स्वप्न"
राजाज़ ड्रीम
बाअी, मिस सी. अेम. टकर
ट्रांस्लेटेड बाअी, राजा शिवप्रसाद
सी. अेस्. आअी.
फॉर
अेच. सी. टकर, अेस्क्वायर, बी. सी. अेस.

यह तो निश्चित रूपसे कहा जा सकता है कि राजा शिवप्रसादने अिसका अनुवाद अँगरेजीसे किया होगा। परन्तु अिसकी मूल लेखिकाको अिसको लिखनेकी प्रेरणा किसी संस्कृत-रचना द्वारा अवश्य मिली होगी, अिसमें भी कोअी संदेह नहीं जान पड़ता। कारण यह है कि निबंधमें भारतीयताकी छाप आद्योपांत है।

'अेक अद्‌भुत अपूर्वस्वप्न' के लेखकके विषयमें भी विचित्र धारणाका प्रचार है। कुछ लोग अिसे भारतेंदु हरिश्चन्द्रकी रचना बताते हैं और कुछ लोग श्री तोतारामकी। कभी-कभी तो अेक ही लेखक अिसे लिखा बताते हैं श्री तोतारामका और अुद्धृत करते हैं भारतेंदु हरिश्चन्द्रके नामसे। जहाँ तक हिन्दीके संग्रह-ग्रंथोंकी बात है, यह निबन्ध भारतेंदु हरिश्चन्द्रके नामसे ही अुद्धृत मिलता है। और, अिस बातका प्रचार भी है कि यह रचना अुन्हींकी है। अिस निबन्धके संबंधमें अेक और बात भी जान लेनी चाहिये। वह यह कि अपने मूल स्थानके अतिरिक्त यह सर्वत्र अधूरे रूपमें ही मिलता है। बात यह हुअी कि सबसे पहले यह संग्रह-ग्रंथमें लाया गया लाला श्री भगवानदीन और श्री रामदास गौड़ द्वारा अुस संग्रह-ग्रंथका नाम है 'हिन्दी-भाषा-सार', जो संवत् १९७३ में प्रकाशित हुआ था। अिस संग्रहमें यह निबंध जिस अधूरे रूपमें संग्रहीत है अुसी अधूरे रूपमें अिसका प्रचार अन्य संग्रहों द्वारा भी हुआ। अिस प्रकार 'अेक अद्‌भुत अपूर्व स्वप्न' लोगोंके संमुख पूरा न आ सका। अध्यापक पुगवोंके व्याख्यानोंका अंश 'हरिश्चन्द्र मैगज़ीन' में ही पड़ा हुआ है।

'अेक अद्‌भुत अपूर्व स्वप्न' भारतेंदु हरिश्चन्द्रकी ही रचना है, अिसमें किसीको संदेह नहीं होना चाहिये। यह रचना अुन्हींके नामसे प्रचलित है, जो निराधार नहीं कही जा सकती। अिसके अतिरिक्त भी कुछ और प्रमाण हैं, जिनके द्वारा यह निबंध अुन्हीं द्वारा लिखा गया सिद्ध होता है। यह हरिश्चन्द्र मैगजीन, भाग १, संख्या ५ (फरवरी, सन् १८७४) में प्रकाशित हुआ था। अुपर्युक्त पत्रिकामें प्रकाशित सभी रचनाओंके साथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुनके लेखकोंके नाम है, परन्तु 'अेक अद्‌भुत अपूर्व स्वप्न' के साथ किसीका नाम नहीं है। अिससे प्रतीत होता है कि यह संपादककी रचना है और संपादक थे भारतेंदु हरिश्चन्द्र।

निबंधमें कुछ अैसे स्थल आये हैं जिनका संबंध स्पष्टतः काशीसे है। काशीमें कार्तिक मासमें गंगा-स्नान तथा अन्य धार्मिक कृत्योंका बड़ा माहात्म्य है। अुसीको दृष्टिमें रखकर निम्नलिखित अंश लिखा हुआ प्रतीत होता है—

"परन्तु फिर भी अिनकी (पंडित पाखंडप्रियकी) बुद्धिपर पूरा विश्वास है कि अेक कार्तिक मास भी अिनको लोग स्थिर रह जाने देंगे तो हरिकृपासे समस्त नवीन धर्मोंपर चार-पाँच दिनमें पानी फेर देंगे।"

निबंधमें काशीका भी अुल्लेख है—

".. हमने कल संध्याको यह पुनीत संवाद अेक अँगरेजी पढ़े बंगाली महाशयसे कलकत्ते और काशीके बीचमें सुना था।"

निबंधमें कुछ अैसे शब्दोंका भी प्रयोग है, जिनका प्रचार काशीकी व्यावहारिक भाषामें विशेष है। जैसे—कमती, लल्लोपत्तो, आदि शब्द।

अिस विवेचना द्वारा निश्चित रूपसे यह कहा जा सकता है कि 'अेक अद्‌भुत अपूर्व स्वप्न' भारतेंदु हरिश्चन्द्रकी ही रचना है।

फिर अिस निबंधके साथ श्री तोतारामके नामको जोड़नेका भ्रम कैसे हुआ? वस्तुतः यह भ्रम ही भ्रम है। बात यह है कि 'हरिश्चंद्र मैगजीन', भाग १, संख्या ७ (अेप्रिल १८७४) में 'स्वप्न' शीर्षक अेक कथात्मक निबंध प्रकाशित हुआ। यह 'अेक अद्‌भुत अपूर्व स्वप्न' के ही ढंगका है, यद्यपि अिसका लक्ष्य दूसरा है। अुपर्युक्त पत्रिकाके अेक ही अंकमें यह पूरा प्रकाशित नहीं हो सका, और अिसके पश्चात् 'हरिश्चंद्र मैगजीन' 'हरिश्चंद्रचंद्रिका' हो गयी। 'चंद्रिका' में भी यह निबंध फिर प्रकाशित हुआ नहीं दिखायी पड़ता। अिस प्रकार यह अधूरा ही रह गया, अैसा प्रतीत होता है। यद्यपि "हरिश्चंद्र मैगजीन" में निबंधके अंतमें लिखा है—'शेष आगे', 'तटस्थ', 'टुबी कंटिन्यूड'। निबंधके अंतमें 'तटस्थ' क्यों लिखा गया? 'तटस्थका' अर्थ यह हो सकता है कि अिसका संबंध संपादकसे नहीं है; और संपादकको भारतेंदु हरिश्चंद्र 'तटस्थ' लिखनेका अेक अर्थ यह भी हो सकता है कि निबंधमें कही गयी बातोंका अुत्तरदायी संपादक नहीं है, क्योंकि अिसमें अँगरेजोंपर कड़े व्यंग्य कसे गये हैं। अिस प्रकार संपादकने अपने बचावके लिअे संभवतः अैसा लिखा हो, जिससे अुसपर सरकारकी अधिक कुदृष्टि न पड़ सके। तब, 'स्वप्न' शीर्षक निबंधका लेखक कौन हो सकता है? अैसा प्रतीत होता है कि अिसके लेखक श्री तोताराम हैं। अिसे स्वीकार कर लेनेसे अैसी स्थिति तो अुत्पन्न ही हो जाती है कि अुन्होंने अेक कथात्मक निबंध लिखा था, परन्तु भ्रमवश अुनका नाम अुनकी रचनाके साथ न जोड़ा जाकर दूसरेकी रचनाके साथ जोड़ दिया गया। 'स्वप्न' नामक निबंधको श्री तोतारामका रचा हुआ माननेका सबसे ठोस आधार यह है कि अिसके आधेसे अधिक अंशमें हिंदी, फारसी, अँगरेजी, संस्कृत आदि भाषाओंकी अुच्चता-नीचताका अँगरेजों द्वारा ही बखान कराया गया है और यह सभीपर विदित है कि श्री तोताराम हिंदीके प्रचारके लिअे जी-जानसे प्रयत्नशील रहते थे। अतः अुनके निबंधमें भी अिसकी चर्चा प्रधानतः हुअी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी :

मनमें महर्षि

: श्री अ. न. कृष्णराव :

महर्षिजीका नाम दुनियाभरमें प्रसिद्ध हो गया था। अुनपर कअियोंने कअी पुस्तकें लिखीं। गौतम बुद्ध, अीसामसीह, श्री रामकृष्ण परमहंससे अुनकी तुलना की। अितना ही नहीं फ्रांस, नार्वे, स्वीडन् तथा अमरीकाके जिज्ञासुओंने अपने देशकी पत्रिकाओंमें अद्भुत लेख भी लिखे थे। महर्षिजीकी पुस्तकोंके अनुवाद फ्रेंच, अंग्रेजी, अिटैलियन भाषाओंमें ही नहीं; अपितु जर्मन और रशियन भाषाओंमें भी प्रकाशित हो चुके थे।

मैंने महर्षिजीकी पुस्तकें पढी थीं। अुनपर जो लेख लिखे गये थे अुनका भी अध्ययन किया था। अुनकी कीर्ति तथा साधनाके बारेमें, आध्यात्मिकता तथा तपकी महिमाके बारेमें अपने भारतीय अेवं विदेशी मित्रोंसे भी सुना था।

कहा जाता है कि करुणाकर महर्षिजीपर अुनकी आठ वर्षकी अवस्थामें ही परमात्माका अनुग्रह हुआ था। आठवें वर्षमें वैशाख पूर्णिमाकी रातमें न जाने किसीने अुनको जगाया। लड़का वैसा ही अुठा और बाहर गया। लंबी दाढीवाला अेक सन्यासी अुनका हाथ पकड़कर अुनको अपने साथ ले गया। लड़केको अपनी सुध नहीं थी। सन्यासीके पीछे मंत्रमुग्धकी भाँति चला गया वह लड़का।

दूसरे सबेरे अुनके माता-पिता अुठे और अपने लड़केको खोजा, किन्तु प्रयत्न निष्फल। करुणाकरका पता नहीं लगा। गाँवके तालाब, कुअेंके अंदर भी खोजा गया। दूसरे गाँवोंमें रहनेवाले नातेदारोंके यहां, मित्रोंके यहां पूछताछ की गयी। खोज सब निष्फल। सबके सामने यही बड़ी समस्या हो गयी कि करुणाकर कहां गया।

चौबीस वर्ष बीत गये। अिस बीचमें अुनके पिताजीका देहान्त हो गया था। माता तो अवस्था अेवं दुखके मारे बिलकुल पक गयी थीं।

अुनकी ओरसे अेक महर्षिजीका समाचार पेरूर नामक देहात तक आया करता था जहाँ करुणाकर की माँ रहती थीं। महर्षिजी तो दक्षिणापथके हैं, तामिळ प्रांतके निवासी हैं—महान् प्रतिभाशाली हैं—योगद्रष्टा हैं और अुनकी दृष्टिके पड़नेपर सबका दुख दर्द और समस्यायें अपनेआप दूर हो जाते हैं, अैसी खबरें आया करती थीं।

कोअीमतूरमें करुणाकरके मामा अेक पेंशनदार थे और अुनका नाम था नटेश अय्यर। वे जब कभी पेरूर आते तो यह सब समाचार सुनाया करते थे। अुनकी बड़ी बहन यह सब सुनकर कहती—नटेश, क्या महर्षि हमारा करुणाकर ही तो नहीं है?

बड़ी बहनकी यह बात सुनकर नटेश अय्यर अपनी बहनकी अज्ञानतापर हँसते हुअे कहते— बहन, चौबीस वर्ष तो गुज़र गये। अब कहाँ है करुणाकर? अब भी तुम्हारा भ्रम दूर नहीं होता?

बहन कहती—नहीं भैया, जब तक यह जान रहेगी तब तक न जायगा। मेरा भ्रम नहीं जायगा। मुझे तो अैसा लगता है कि मेरा करुणाकर अब भी जीवित है।

अेक दिन दुपहरको पेरुंदेवी चावलका धोवन-जल बाहर फेंकने गयी तो सामने अेक तेजस्वी युवा सन्यासीको द्वारपर खड़ा पाया। बरतनको नीचे रख पेरुंदेवी अुसकी ओर अेकटक देखती हुअी मूर्तिसी खड़ी रही। सन्यासीने पूछा—'अम्मा, मुत्तुकृष्ण अय्यरका घर यही है?'

'जी हाँ।

'अुनकी स्त्री पेरुंदेवी भी है?'

'मैं ही हूँ पेरुंदेवी, साअी!'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्यासीने पेरुंदेवीके दोनों चरणोंपर अपना मस्तक रख प्रणाम किया। पेरुंदेवी चकित हुअी। सन्यासी अपने पैरोंपर पड़ रहा है, यह क्या ? किंतु अुसके मनमें अेक तरहकी शांति थी, अेक अनिर्वचनीय आनंद समाया था। 'आँखें जिसे नहीं देख सकती थीं अुसे हियने देखा।'

सन्यासीने खड़े होकर कहा 'अम्माँ,.....मैं तुम्हारा पुत्र करुणाकर हूँ।'

पेरुंदेवीने पुत्रको छातीसे लगा लिया। सुख-दुख-मिश्रित अुसके आँसुओंने सन्यासीके कंधोंको भिगो दिया।

सन्यासीको अंदर ले गयी और अेक चटाअी बिछा कर बिठा दिया।

यह समाचार बातकी बातमें गाँवमें फैल गया। लोग झुंडके झुंड पेरुंदेवीके पुत्रको देखने आने लगे।

'चौबीस वर्ष बीत गये' पेरुंदेवीने कहा। करुणा-करने कहा 'हाँ माँ, जब घरसे निकला था तब आठ वर्षका ही था।'

'कहाँ गये थे स्वामीजी अितने साल ?"

'माँ, तुम्हारे लिअे मैं स्वामी नहीं हूँ..... मैं तुम्हारा बेटा हूँ। सन्यासीका कोअी संसार नहीं होता। पूर्वजनमकी वासना अुसे तज देनी चाहिये। किंतु वासना समुच्चयमें माँ नहीं आती। वह तो प्रत्यक्ष देवी है, देवता है। आप मुझे तो करुणाकर ही कहकर पुकारें।'

'वैसा ही हो बेटा....यदि तुमको संतोष होता हो तो...अितने दिनोंपर तो तुमको घरकी याद आयी और मरनेके पहले तुमको देखनेका सौभाग्य तो मिला न !'

'सौभाग्य मेरा है--मेरी साधनाको सफल बनाने के लिअे माताका आशीर्वाद चाहिये।'

माताने अपने भरे हृदयसे सन्यासी पुत्रपर आशीश बरसाया।

'और कहीं न जाना; अब घरमें ही रहो।'

'माँ, सन्यासीको घरमें नहीं रहना चाहिये। किंतु मैं पेरूरमें ही बस जाता हूँ, मुझे तो गुरुकी कृपा यहीं मिली। गुरुने भी आज्ञा दी है कि मैं यहीं रहूँ।'

माँको अिस वचनसे तसल्ली हुअी कि पुत्र घरमें न सही, गाँवमें तो रहेगा।

गाँवसे थोड़ी दूरपर अेक बागमें अेक छोटा-सा घर था। मालिक पळिनियप्पा मुदलियारने अुसे स्वामीजीको सौंप दिया। पेरूरके लोग अिन स्वामीजीके दर्शनके लिअे आने-जाने लगे। चारों ओरके देहाती भी आने लगे। स्वामीजीकी कीर्ति धीरे-धीरे कोयमत्तूर, सेलम, अिरोड़ तक फैल गयी। भक्त लोग 'ना ना' कहने पर, मना करनेपर भी स्वामीजीको कअी भेंटें लाकर देने लगे।

बड़ी बहनको देखनेके लिअे जो नटेश अैयर आये थे वे अपने भानजेकी प्रसिद्धि सुनकर अुनके पास जा पहुंचे। दर्शनार्थी लोगोंका आना, अुनका भेंट, धन आदि का देना देखकर नटेश अैयरको अेक बात सूझी कि यहीं रहकर भानजेकी देखभाल क्यों न करूँ ? नटेश अय्यरकी सूचना सुनकर पेरुंदेवीने खुश होकर पुत्रको भी राजी कर लिया।

नटेश अैयर अपने परिवारको लेकर यहाँ आये और रहने लगे। बहनके यहां डेरा जमा दिया। स्वामीजीके यहाँ आनेवालोंकी देखभाल करते और वे जो भेंट पूजा देते अुसको अय्यरजी ही स्वीकार करने लगे।

नटेश अैयरके अिनकम टैक्स अफसर जॉन डेविस भी सेवा-निवृत्तिके अुपरांत अूटी (अुटकमंड) में घर बनाकर रहने लगे थे। डेविसको भी पहलेसे भारतीय दर्शनशास्त्रपर अधिक अभिरुचि, आसक्ति थी। अुसके बारेमें अभिमान भी था। नटेश अैयर अक्सर अुन्हें गीता, अुपनिषद पढ़कर सुनाते और विवेचन भी करते यानी अर्थ समझाते। पूरी तरह निश्चय करनेके बाद अेक दिन नटेशने डेविसको पत्र लिखकर पेरूर बुला लिया। करुणाकर महर्षिजीके दर्शन पाकर, कुछ दिन वेदांतकी चर्चा करते रहनेके अुपरांत डेविसको अुनके बारेमें श्रद्धा-भक्ति आदि अुत्पन्न हुअी। वापस जानेके पहले अुन्होंने नटेश अैयरको पास बुलाकर कहा-'महर्षिजीके दर्शनसे मुझे बड़ी खुशी हुअी। यह तो अिस लोकके अद्भुत जीव हैं। कअी लोगोंको शांति, मुक्ति देनेकी महाशक्ति महर्षिमें है।'

CC-0. Prof. P. Kalle Pannaiya Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डेविससे स्वामीजीकी प्रशंसा सुनकर अैयरने यही समय अच्छा जानकर कहा--'महर्षिको देखने बहुतसे लोग यहाँ आते हैं। अुनका प्रबंध भी अच्छी तरह नहीं होता है न महर्षिजीका।'

'वह बाग किसका है जिसमें स्वामीजी रहते हैं?'

'यहाँके अेक मुदलियारका है।'

'क्या वे बाग बेचनेके लिअे तैयार हैं?'

'पूछकर देखना चाहिये।'

'आअियें, पूछकर देखें।' कहकर पलिनियप्पा मुदलियारसे मिलने गये। बहुत विचार करनेके बाद मुदलियारने अंतको अपना १० अेकड़ बाग साहबको तेरह हज़ार रुपयेमें बेचना कबूल किया।

डेविसने बाग खरीदकर महर्षिजीको भेंटके रूपमें अर्पण कर दिया।

डेविसकी सेवा यहींतक नहीं रुकी। अूटी रहने-वाले अपने हजारों अंग्रेज मित्रोंको हजारों रुपये दान करनेकी प्रेरणा दी। अुन्होंने भारतके प्रधान अंग्रेजी पत्रोंमें महर्षिपर कअी लेख भी लिखे और लंडन अेवं अमरीकाकी पत्रिकाओंमें लेख प्रकाशित करवाये।

चार-छः महीनोंमें 'करुणाश्रम' की योजना तैयार हुअी और नटेश अैयर आश्रमके सर्वाधिकारी बनकर सभी काम निबाहने लगे। धनकी अपार वर्षा होने लगी आश्रममें।

बागके कुछ भागमें सुंदर भवन बनवाये गये। आश्रममें प्रवेश करते ही सामने सुब्रह्मण्य स्वामीका मन्दिर, मन्दिरके दाहिनी ओर विशाल सभा-भवन, अुसके बगलमें अेक पुस्तकालय तथा सभा-भवनके पिछवाड़ेमें महर्षिजीका निवास।

मन्दिरके बाअीं ओर भोजन-शाला, गो-शाला, भंडार-गृह, अतिथि-भवन, विदेशियोंके लिअे अलग अतिथि-गृह शोभायमान थे। देशी अतिथि-शालाकी जमीन गोबरसे लीपी जाती अेवं चटाअियाँ बिछी रहतीं। विदेशियोंकी अतिथि-शालामें कमरे बढ़िया 'फर्निचर' से सजाये हुअे थे। हरअेक कमरेमें नहानेकी व्यवस्था भी थी और भोजन अनके कमरेमें भेजा जाता। देशी अतिथियोंको तो आम-भोजनशालामें आना पड़ता।

पहले पहल तो नटेश अैयरने दो भोजन-शालाओंकी व्यवस्था की थी--अेक तो ब्राह्मणोंके लिअे, दूसरी ब्राह्मणेतरोंके लिअे। महर्षिजीको भोजन अुन्हींके निवास पर भेजा जाता। महर्षिजीने यह रूढ़ि बन्द कर दी और अेक ही भोजनशालामें सबके भोजनकी व्यवस्था की और खुद भी सबके साथ दोनों जून भोजन करने लगे। सभी धर्मावलंबियोंके लिअे अेक पंक्तिके भोजनका प्रबन्ध हो जानेसे विदेशी अतिथि भी स्वामीजीके साथ भोजन करनेका लाभ पानेके लिअे आम-भोजनशाला हीमें आने लगे। किन्तु पारसी अतिथि तो अपना भोजन अपने ही कमरेमें मंगा लेते थे।

महर्षिजीकी यह अिच्छा थी कि जो कोअी जब कभी भी भूखे आवे तो आश्रममें अुसको भोजन मिले। किंतु नटेश अैयरने महर्षिजीसे निवेदन किया कि अैसा करनेसे बाकी सभी कामोंमें अव्यवस्था होगी और अिसलिअे जो भोजनके समयपर आवेंगे अुन्हींको भोजन दिया जायगा। स्वामीजीने अैयरकी प्रार्थना मंजूर की।

आश्रमके लिअे जैसे धनसंग्रह होता वैसे ही जन-संग्रह भी होने लगा। कुछ विधवाअें आश्रमकी सेवामें लग गयीं और भोजनगृहमें काम करने लगीं। कुछ निराश्रित भी आये और अतिथिसेवा, गोशालाका प्रबंध, लीपना-पोतना, बगीचेका काम आदि अपने जिम्मे लेकर करने। और आश्रमका काम अेक बड़े कुटुंबकी तरह चलने लगा।

महर्षिजी सुबह चार बजे अुठकर पहाड़पर जाते और फिर सात बजे लौटकर फिर नहाकर सभा-भवनमें बैठते। भक्तोंकी भेट स्वीकार करते, अुपदेश देते और अुनके कष्टोंके बारेमें पूछताछ करते। करीब दस बजे अेकांतवासी होकर बारह बजेतक ग्रंथाध्ययन करते थे। महर्षिजी ठीक बारह बजे अुठकर स्नान करते, भगवानके दर्शन करके भक्तों और अतिथियोंके साथ प्रसाद स्वीकार करते थे। शामके चार बजे तक अध्ययन करना, ग्रंथ-रचना करना, शामको अेक घंटा भक्तोंको अुपदेश देना, फिर पहाड़पर जाकर आना और फिर रातके आठ बजे तक भक्तोंकी सेवा स्वीकार करना आदि कार्य पूरा करके स्नान करते। अिसके अुपरांत भगवानके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दर्शन देकर सबके साथ भोजन करते थे और अेकांत-वासी होते। रातके बारह बजे तक फिर अध्ययन करते और अुसके बाद आराम करते थे। यह महर्षिजीका नित्यका कार्यक्रम था।

बड़े बड़े विद्वान्, वक्ता, संगीतकार, शिल्पकार आदि पेरूर आते और महर्षिजीके दर्शनका लाभ पाकर सेवा आदिकी भेंट अुनके चरणोंपर अर्पण कर देते। महर्षिजी अुन्हें अुचित मंगल कामना सहित आशीर्वाद देकरके भेजते।

महर्षिजीके दर्शन करने आनेवालोंको सभाभवनमें प्रवेश करनेके पहले अपने जूते बाहर ही छोड़ अच्छी तरह पैर धोकर अंदर प्रवेश करना पड़ता। अंदर आते ही साष्टांग नमस्कार करके नीरव होकर बैठना पड़ता। वे महर्षिजीसे स्वयं बोल नहीं सकते थे। किन्तु ये नियम आमतौरसे पारसी, विलायती अतिथियोंको लागू नहीं होते। अगर देशीय लोग अिन नियमोंका पालन अच्छी तरह न करते तो नटेश अैयर अुन्हें कठोरतासे दण्ड देते।

आश्रममें जानेवाले अतिथियोंको पहले ही सर्वाधिकारीका लिखित परवाना लेना पड़ता था। दो-चार दिन अतिथिगृहमें ठहरनेमें अुन्हें कोअी मनाअी नहीं थी। जानेके पहले सर्वाधिकारी अुन्हें अेक डिब्बा दिखाते थे। अतिथियोंको अपनी योग्यताके अनुसार अुसमें भेंट डालनी पड़ती थी। भेंट अर्पण न करनेवालों और कम भेंट करनेवालोंको सर्वाधिकारीकी लाल आँखें भी देखनी पड़ती थीं। यह भी अेक रिवाज ही सा बन गया था।

महर्षिने सब प्रबंधका भार सर्वाधिकारीको सौंप दिया था। वे मुस्कुराते हुअे सभा-भवनमें ही अलंकृत भद्रासनपर बैठ जाते। अपने सामने बैठे हुअे भक्त-समूहको देख अपनी मंद-हास बिखेरते। भक्त-समूहका कहना था कि महर्षिजीकी मुस्कुराहटसे हमारे कष्ट दूर हो जाते हैं और समस्याअें सुलझ जाती हैं। अक्सर दो गिलहरियाँ अुनके पास जातीं और स्वामीजीके दिये हुअे काजू खाकर मजेमें निर्भय चली जातीं। कभी कभी महर्षिजी गोशालामें जाते और बछड़ोंको पुचकारते। आडंबरहीनता, अनासक्ति, सदा मंद हास ये महर्षिजीके विशिष्ट गुण थे।

ज्यों-ज्यों दिन बीतते गये त्यों-त्यों आश्रम बड़ी संस्थाका रूप धारण करने लगा। अमरीका, फ्रान्स, स्वीडन, आस्ट्रेलिया आदि देशोंसे भी भक्त आने लगे। कअी गाँवोंमें महर्षिजीके भक्त अुपसंस्थाअें चलाने लगे। महर्षिजीके आश्रममें जाना नागरिकता-सभ्यताकी पहचान मानी जाने लगी थी। दीन, दुखी, मरीज, जिज्ञासु झुंडके झुंड आश्रममें आने लगे।

अिस तरह आश्रममें आनेवालोंमें संगप्पा भी अेक था। संगप्पा बीजापुर जिलेमें अेक्सैज़ विभागका अिन्स्पेक्टर था। अुसे अेक धर्मकी समस्या सता रही थी। अुसका मित्र शंकरप्पा अुसे आश्रम अिसलिअे बुला लाया था कि अुसकी समस्याका हल 'करुणाश्रम' में हो जायगा।

संगप्पा छोटा अधिकारी था, तथापि अुसकी धाक काफी थी। बदनाम अेक्सैज़ विभागमें निर्मल तथा धीर पुरुष वही अकेला था। अुसकी प्रामाणिकतासे सभी डरा करते थे। अुसके अूपरी अधिकारी अुसके साथ गौरवके साथ पेश आते थे। अिसका अेक कारण था। अेक बार संगप्पाको ख़बर मिली कि बीजापुरमें दर्जीके कामका बहाना करनेवाला अेक आदमी रातको शराबकी भट्ठी अुतारता है। तुरन्त संगप्पा अपने सिपाहियोंके साथ दर्जीके यहां गया और अुसे कैद कर लाया और अदालतमें अुसपर नालिश की। दर्जीको किरायेपर मकान जिसने दिया था अुसका नाम था मुदकप्पा। अुसने आकर अदालतमें कहा—'हुजूर! वह तो अैसा आदमी नहीं है। बेचारा गरीब है। सच है कि वह शराब पीता है। लेकिन शराबकी भट्ठी नहीं अुतारता। अुससे जिसकी नहीं पटती अुसने आकर आपको यह झूठी ख़बर दी है।'

संगप्पाके मनमें खलबली मच गयी। तुरंत मुकदमा हाथमें लेकर पूरी जांच करनेपर साबित हुआ कि दर्जी निरपराधी है।

दूसरे दिन अदालतमें अेक घटना हुअी। संगप्पाने मैजिस्ट्रेटके सामने हाथ जोड़कर कहा—'मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपराध किया है। यह निरपराधी है। अच्छी तरह विचार, जांच किये बिना मैंने अिसे आपके सामने ला खड़ा किया। अिसपर जो अपराध लगाये गये थे मैं अुन्हें वापस लेता हूँ। अिसके साथ ही साथ मेरी अेक प्रार्थना है कि मेरी बेवकूफीके लिअे मुझे सजा दी जाय।'

मैजिस्ट्रेट सुनकर दंग रह गये। वे संगप्पाके सद्गुणके सामने हार गये। अितना ही नहीं, दर्जीको छुटकारा देकर अुन्होंने संगप्पाके अधिकारियोंको पत्र भेजा जिसमें यह लिखा गया था संगप्पा बड़े सद्गुणी हैं। यह पत्र अुसके गुणोंका प्रमाण-पत्र है। फिर भी संगप्पाको तृप्ति नहीं हुअी। दर्जीको आपने अेक महीनेका वेतन दिया और अुससे क्षमा मांगी। संगप्पाको अपने महकमेकी अपेक्षा वेदांत अधिक प्रिय था। अिसी वेदांतकी अभिरुचिने गविमठके शंकरप्पासे दोस्ती करा दी थी। शंकरप्पा तो वृत्तिसे अध्यापक थे। किंतु प्रवृत्तिमें वेदांती थे। 'अिह-पर' की अैक्य-साधना करनेवाला ही ज्ञानी है' अिस तत्त्वके पारखी निजगुण शिवयोगीका आराधक था। निजगुणके वेदांत की व्याख्या शंकरप्पाके मुंहसे सुननेमें संगप्पाको बड़ा आनंद मिलता। शंकरप्पा संगप्पाका मित्र ही नहीं था, अपितु अुसका हितैषी, मार्गदर्शक, दार्शनिक भी था। शंकरप्पाकी सलाह लिये बिना संगप्पा किसी काममें हाथ न डालता था।

संगप्पाके सहवाससे शंकरप्पाको करुणाकर महर्षिजीके ग्रंथोंका परिचय हो गया था। अुसके ग्रंथों और अुनपर लिखे हुअे ग्रंथोंको पढ़नेसे संगप्पाको महर्षिजीके प्रति अपार भक्ति अेव गौरव था। महर्षिजी और निजगुणके ग्रंथोंका तुलनात्मक अध्ययन दोनोंने किया था और कअी रातें अध्यात्मके अनन्त आनन्दमें बितायी थीं।

कमसे कम अेक बार पेरूर जाकर महर्षिजीके दर्शन करनेकी अुत्कट अिच्छा दोनोंमें थी। किन्तु जब संगप्पाको छुट्टी होती तो शंकरप्पाको हाथभर काम रहता। शंकरप्पाको फुरसत जब मिलती तो संगप्पाको शराबकी चोर-भट्टियोंकी तलाशीका काम आ पड़ता। दोनोंको अनुकूल समय ही न मिला था।

अेकाअेक संगप्पासे मुझे अेक तार मिला धारवाड़से--

"रातको यहाँसे रवाना होते हैं मैं और शंकरप्पा; आप भी शीघ्र 'करुणाश्रम' को रवाना होनेके लिअे तैयार रहें।"

मैंने अपने आपसे प्रश्न किया कि अितनी तावड़-तोड़--जल्दबाजी क्यों? दूसरे दिन रातको संगप्पा और शंकरप्पा दोनों आ ही गये। अुन्होंने पूछा--'कल सुबह रवाना होंगे न?'

'अितनी हड़बड़ी क्यों? अभी आये हैं, अेक दिन पूरा सफर किया है। कुछ आराम कर लीजिये। अेक-दो दिन बाद जायँ तो न चलेगा।'

'नहीं जी। आश्रम जाकर हो आवें। पीछे दो-तीन दिन यहाँ ठहरकर फिर हम अपने गाँव जायेंगे।' कहकर शंकरप्पाने आग्रह किया।

'क्या है मास्टरजी--अितनी गड़बड़ी क्यों?'

'संगप्पाकी बात तो आप जानते ही हैं।'

'क्या बात?'

'अुसकी शादीकी बात।'

'शादी तो हुअी है न?'

'हुअी है। जबसे वह आयी है, तबसे बिस्तर नहीं छोड़ा है। डाक्टरोंने कहा है--क्षयकी बीमारी है। बचनेकी अुम्मीद नहीं।'

'तो क्या दूसरी शादीकी बात है?'

'संगप्पाको भोजन मिलना भी दू-भर हुआ है। काफी कमाते भी हैं--किन्तु मनको तसल्ली नहीं।'

'अिसपर संगप्पाजी क्या कहते हैं?'

'जिद्द पकड़े हैं--शादी ही नहीं चाहिये। अुनके घरके सब लोगोंने बहुत कुछ समझाया। बीमार स्त्रीने भी काफी समझाया, कहा। किन्तु संगप्पा किसीकी बात नहीं मानता और न सुनता है।'

'अुनकी दृष्टि सही मालूम होती है मास्टरजी।'

'सही कैसे कहेंगे? अभी नयी अुम्र है। अिसी तरह वह कितने दिन गुजारे?'

'आपके अुनकी शादी कराते ही बीमार स्त्री गुजर जाय तो?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'अुसका जीना असंभव ही है।'

'डाक्टरोंकी बातोंपर भरोसा ? मास्टरजी, अुसको तो यही बात अब तक जिला रही है कि अुसका पति अुसमें अनुरक्त है। आप जरा सोचिये कि आप सब मिलकर संगप्पाकी शादी करा देंगे और अुसी समय अुनकी स्त्री मर जाय तो संगप्पाके दिलपर क्या बीतेगी ? क्या वे यह नहीं सोचेंगे कि मैंने ही अपने हाथसे स्त्रीकी जान ली ?'

'आपका कहना तो सच है। अुसने तो वह बात स्पष्ट ही कह दी है।'

'तो आप क्या करना चाहते हैं ?'

'कुछ दिनोंके पहले यह बात फिर निकली। संगप्पाने अूबकर कहा--मास्टरजी, मुझे क्यों तंग कर रहे हैं ? परमात्माकी अिच्छा मुझे सुख देनेकी नहीं है। मैंने कहा--अगर परमात्मा तुमसे शादी करनेके लिअे कहें तो मानोगे ? अुसने हँसकर कहा-- मेरे छोटेसे कामके लिअे यहाँ परमात्मा क्योंकर आवें ? अुसपर मैंने कहा--देखो संगप्पा, तुम तो करुणाकर महर्षिजी को भगवान समझ पूजा कर रहे हो। अुनके आश्रम अेकबार जायँ और अुनसे अिस बारेमें अेक बात पूछें। यदि वे शादी करनेके लिअे कहें तो तुम मानोगे न ? अुसने जवाब दिया--वे अिसे मानेंगे ही नहीं। मैंने कहा--वे क्या कहते हैं, अिसपर अब बहस करना अुचित प्रतीत नहीं होता। लेकिन अुन्होंने शादी करनेके लिअे अनुमति दी तो तुमको दूसरी शादी करनी होगी। अगर वे नहीं दें तो तुम चाहे जैसा करो। मैं फिर शादीकी बात नहीं अुठाअूंगा। संगप्पाने कुछ देर विचार करके कहा--हाँ, तुम बेंगलोर अेक तार कर दो रायजी को, कि शीघ्र निकलें। अिसके अनुसार हम दोनों यहाँ आये हैं।'

शंकरप्पाकी मुग्ध वाग्-धारा देख मुझे हंसी आयी। अुसने समस्याके परिहारका जो अुपाय सोचा था अुसे सुनकर विचित्र-सा लगा। जैसा भी हो, अिस बातका निर्णय अेक बार हो जाय, अिस विचारसे अुनके साथ करुणाश्रम जानेके लिअे मैं तैयार हो गया।

दूसरे दिन सुबह रवाना हुअे और शामको कोअीमत्तूर पहुँच गये। रातके आठ बजे पेरूरको जानेवाली अेक 'बस' थी। अुससे हम पेरूरके लिअे निकले। 'बस' बीच-बीचमें बिगड़ती रही, अुसकी मरम्मत भी होती रही। आखिर जब हम पेरूर पहुँचे तब रातके साढे ग्यारह बज गये थे।

अितनी रातको आश्रम जाकर सबको जगाना अुचित न समझकर धर्मशालाकी खोजमें निकले। वह भी मिल गयी, किन्तु अुसके नौकरको जगाकर स्थान माँगनेमें करीब आधा घंटा लग गया। नौकरने अन्दरसे ही जवाब दिया--'जगह नहीं है।' फिर हमारे लिअे आश्रम जानेके आंतरिकचारा हीन हीं रहा। अेक वाहनकी खोज करके अुसकी बगलमें सोये हुअे वाहकको जगाया और अुससे गालियाँ भी खायीं। पाँच रुपया किराया तय करके 'करुणाश्रम' की ओर निकले। जब आश्रम पहुँचे तो रातके दो बज चुके थे।

गाड़ीवालेने ही हमें देशी अतिथिशालाके अधिकारीको जगाकर अुसमें सोनेके लिअे जगह दिलवायी। हम पेटभर पानी पीकर सो गये।

सुबह ६ बजे ही आश्रमाधिकारीने हमें पीठपर थपथपाकर जगाया क्योंकि आश्रमका यह नियम था कि कोअी छः बजेके बाद न सोवे !

मुखमार्जन, स्नान आदि समाप्त करके हम धर्माधिकारीके पास गये और आश्रममें भर्ती हुअे। ठीक ७।। बजे गरम-गरम अिडली* कॉफीका नाश्ता हुआ। तब कहीं हमारे जीमें जी आया।

आश्रमके नियम रटकर महर्षिजीके दर्शनके लिअे जाते थे। दो दिन कट गये। बीचमें अेक दो-बार महर्षिजीसे बोलनेकी कोशिश भी की, किन्तु धर्माधिकारीने अवसर नहीं दिया।

आश्रमका बढ़िया भोजन और नाश्ता खा खाकर दिल अूबने लगा, लेकिन जिस कामके लिअे आये थे वह

---

* दक्षिणकी यह खाद्य वस्तु बड़ी लोकप्रिय, सुस्वादु और सर्वसुलभ होती है। मद्रासके अिडली-डोसे का तो नाम सुना है न ? कभी तो खाये भी होंगे पाठकोंने।--सं.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं हुआ था, न होनेकी संभावना ही रही। संगप्पा और शंकरप्पा भी तंग आये। 'आज आप भी कुछ प्रयत्न करके देखिये रावजी, आज महर्षिजीसे बातचीत न हो जाय तो हम लौट जायँ।' संगप्पाने कहा।

मैं धर्माधिकारीजीका सहारा लेने लगा। लेकिन युरोपीय और पार्सी अतिथियोंके बीचमें देशी अतिथियों-की तूती कैसे सुनायी पड़े? दुपहरको धर्माधिकारीजीसे राहमें ठहराकर कहा, 'मेरे मित्र धारवाड़से आये हैं। महर्षिजीसे अेक प्रश्न पूछना चाहते हैं। हमें आये दो दिन हो गये। आज आप अितना काम कर दें तो आज शामको हम अपने गाँव लौट जायेंगे।'

मेरी धृष्टतासे चकित होकर धर्माधिकारी घूरने लगे और फिर कहा--'प्रश्न लिखकर दीजिये--शामको महर्षिजीसे मिलकर बात करनेका मौका दिलवा दूंगा।'

प्रश्न लिखवाकर दिया और सांझकी प्रतीक्षा करने लगे।

महर्षिजीका संध्याकालीन दरबार शुरू हुआ। भक्त लोग आने और नमस्कार करके बैठने लगे। हम भी गये। धर्माधिकारीने प्रश्न महर्षिजीके हाथमें देकर न जाने अुनसे क्या कहा। अुन्होंने चिट्ठी देखकर कुछ सूचना दी। धर्माधिकारीने हमें जिस प्रकार बुलाया जैसे हेडमास्टर साहब शालाके अुद्दंड लड़कोंको बुलाते हैं। हम महर्षिजीके सामने हाथ जोड़कर खड़े हो गये। महर्षिजीने पूछा--'यह किसका प्रश्न है?'

संगप्पाने कहा--'मेरा है।'

'जो होनेवाला है, वह होगा। कोअी काम मनुष्य के प्रयत्नसे नहीं होता। सभी सुब्रह्मण्य स्वामी, प्रभुकी लीला है।' महर्षिजीने अितना कहा। धर्माधिकारीने हमें आगे बोलनेका अवसर दिये बिना कह दिया--"चलिये।"

हम वहाँ नहीं ठहरे। अपनी जगहपर आये और बिस्तर बाँधकर धर्माधिकारीसे मिलने गये। कुछ भेंट देनेका अिरादा था।

धर्माधिकारीजी संध्याके दरबारके अुपरांत अपने दफ्तरमें बैठे हुअे थे। हम तीनों जाकर अुनके सामने बैठ गये। अुन्होंने सिर अुठाकर हमारी ओर देखनेका कष्ट नहीं अुठाया। हमारी ओर तनिक भी अुनका ध्यान नहीं गया। हमें तो 'बस' से जाना था, देरी हो रही थी। अधिक देरतक बैठके धर्माधिकारीका 'प्रत्यक्ष साक्षात्कार' करनेका समय नहीं था। मैंने तमिळमें कहा--'अब हम जा रहे हैं। आपको सूचना देनेके लिअे आये हैं।'

धर्माधिकारीने चूं तक नहीं की।

फिर मैंने कहा कि 'मैं और मेरे मित्र कुछ भेंट देकर जानेके लिअे आये हैं।'

'भेंट' की बात कानपर पड़ते ही धर्माधिकारीजीने हमारी ओर आँख अुठा कर देखा और कहा 'दीजिये।'

हमने कुल साठ रुपये अुनके हाथमें रख दिये और अुन्होंने मुनीमसे अुन्हें हिसाबमें लगा लेनेके लिअे कहा। हमने खड़े होकर 'नमस्ते' कहा। किन्तु अुन्होंने हमारी तरफ नहीं देखा न प्रति नमस्कार भी किया।

फौरन हम वहाँसे निकले और कोअीमतूर होते हुअे दूसरे दिन सवेरे बेंगलोर पहुँचे।

संगप्पा और शंकरप्पा महर्षिजीका संदेश सुन अवाक् हुअे थे। अेक दिन भी अुनसे अिस बातकी चर्चा ही नहीं निकली। रातके भोजनके अुपरांत मैंने गप्पें मारते हुअे अुनसे पूछा--'क्यों मास्टरजी, महर्षिजीसे आपको कुछ प्रकाश मिला?'

संगप्पाने सिर झुका लिया और शंकरप्पाने कोअी जवाब नहीं दिया।

'यह अुत्तर पानेके लिअे क्या पेरूर जानेकी जरूरत थी? मैं ही यहाँ यह अुत्तर दे सकता था न?' कहकर व्यंग्य किया।

दोनों चुप ही रहे।

'मास्टरजी, महर्षिजीको देखकर आपको कैसा लगा?'

'अुनके सामने बैठनेसे अेक तरहकी शांति मिला करती थी। यह तो मेरे लिअे अेक विचित्र अनुभव है।'

'आपको संगप्पाजी?'

'मुझे भी वही अनुभव हुआ।'

'मास्टरजी, शांति आत्मजन्य है ना? बाहरके लोग कितने भी बड़े हों, क्या वे शांति दे सकते हैं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर अेक मानवको अपना संस्कार आप कर लेना चाहिये। चाहे महर्षिजी हों, चाहे कोअी, हमे शांति देंगे, हमारी समस्याअें हल करेंगे अैसा मानना अज्ञानका लक्षण तो नहीं है ? हर अेकको मनमें महर्षि बनना चाहिये --तभी अुसको शांति मिलेगी।"

मैं नहीं जानता कि मेरी बातका अुन दोनोंपर असर पड़ा कि नहीं। दो दिन ठहरकर दोनों अपने गांव गये। कुछ दिनोंके अुपरांत शंकरप्पाका मुझे अेक पत्र मिला। अुसमें लिखा हुआ था--"संगप्पाने अंतिम निर्णय कर लिया है। वह दूसरी शादी कर लेनेसे अिनकार कर चुका है। कह दिया है कि अुसकी बीमार स्त्री अगर मर भी जाय तो भी दूसरी शादी वह कदापि नहीं करेगा। अब अुसको तंग करनेसे कोअी फायदा नहीं। 'करुणाश्रम' हमारा जाना बेकार सिद्ध होनेपर भी बेंगलोर आना बेकार नहीं हुआ।"

दोनों मित्रोंने मेरी बातको मूल्य दिया। अिससे मेरी आँखें गीली हो गयीं। 'करुणाश्रम' में सुख, शांति, प्रकाश प्राप्त करनेकी आशासे, भ्रमसे जानेवाले दीन-दुखियों और बेकसोंके लिअे मेरे प्राणोंने आँसू बहाये।

[कन्नड़से अनुवादक : श्री गुरुनाथ जोशी]

कविता :

परिचय

: श्री कुमार :

लहर भी मैं सिन्धु भी मैं।

मैं किनारा, धार भी मैं, धरा भी मैं, धूल भी मैं,
सन्धि भी, विस्तार भी मैं, सूक्ष्म भी मैं, स्थूल भी मैं,
मृत्यु भी हूँ, जिन्दगी भी, साध्य भी मैं, साधना भी,
रूप भी, शृंगार भी मैं; शाख भी मैं, फूल भी मैं;
गगन भी मैं, अिन्दु भी मैं।
लहर भी मैं, सिंधु भी मैं।

प्राण भी मैं, देह भी मैं, मैं किरण भी, मैं नलिन भी,
मैं विजन हूं, गेह भी मैं, अग्नि भी मैं, मैं तुहिन भी,
शुष्क धरतीका हृदय हूँ, मैं तरल हूँ नीर जैसा,
और नभका नेह भी मैं; वज्रसे हूँ मैं कठिन भी;
कामना हूँ, द्वन्द भी मैं।
लहर भी मैं, सिन्धु भी मैं।

मौन हूं मैं, मैं मुखर हूँ, मैं चिरन्तन भी, क्षणिक भी,
मैं मधुर हूँ, मैं प्रखर हूँ, पंथ हूँ मैं, मैं पथिक भी,
जिन्दगीकी शान्ति हूँ मैं, विश्वका मैं हूँ नियन्ता,
जिन्दगीका मैं समर हूँ, विश्वका मैं नागरिक भी;
वृत्त भी मैं, बिन्दु भी मैं।
लहर भी मैं, सिन्धु भी मैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह खूनी था ?

: श्री. प्रो० रंजन, अेम. अे. :

नैनी-सेन्ट्रल जेलकी दीवारोंसे आवाज़ आती "वह खूनी है"; कैदी आपसमें बातें करते समय कहते 'वह खूनी है।' अुसके हिस्ट्री-टिकटपर लिखा था 'वह खूनी है; मिलता वह किसीसे न था। भयंकर कैदियोंकी वह बैरक और बैरककी छोटी मुँहवाली, कोठरियाँ-अिससे बाहर अुसे किसीने न देखा था। अेक, दो, पाँच और दस, पूरे दस वर्ष अुसने अिसी कोठरीमें काट दिये। बैरकके मुख्य द्वारकी ओर अुस कोठरीकी सामनेवाली लाअिनमें मेरी कोठरी थी जहाँ 'विशेष दण्ड' के तौरपर अंग्रेजी सरकारने मुझे रखा था। रोज सुबह अिस बैरकका ताला खुलता और अुसकी झनझनाहटके साथ ही अपने-अपने तसले लेकर कोठरियोंमें बन्द कैदी अपने जंगलेदार द्वारके सामने खड़े हो जाते। पशुताके झरोखोंसे झाँकती मानवता अेक स्वच्छ, ठंडी हवामें निकलनेको व्याकुल हो अुठती। कोठरियोंके ताले झमाकेके साथ नीचे गिरते। द्वार खुलतेकी खनखनाहट होती और बाहर मानव-समुद्र अुमड़ पड़ता। अपने-अपने तसले लेकर लोग टट्टियोंकी ओर दौड़ते-प्रकृतिकी अवरुद्ध माँग जोर पकड़ती। थोड़ी देरमें कोठरियोंके बन्द पंछी बाहर अुड़ जाते। बैरक सूनी हो जाती। पर देखता कि अेक कोठरीका ताला नीचे लटक जाता, वह न खुलता। अेक दिन देखा! दो दिन देखा-देखता रहा। अुत्सुकता जब सीमा तोड़ने लगी तो अेक दिन अेक सन्तरीसे पूछ बैठा—"अिस कोठरीमें क्या कोअी नहीं रहता?" संक्षेपमें अुत्तर आया 'अेक खूनी है।' खूनी और दुनियाकी कशमकशसे अितनी दूर? अुत्सुकता और अुलझ गयी। प्रायः मैं मिलनेवाले प्रत्येक कैदीसे अुसके विषयमें पूछता। सभी अेक ही अुत्तर देते 'आदमीका खून किया है।' कभी-कभी अुसकी कोठरीसे संगीतके मीठे स्वर सुबह निकलकर बैरकमें गूँज अुठते। अुसी समय कुटी हुअी मूँज अुस कोठरीकी ओर जाती और रोज शामको बटे बानोंका गुच्छा अुधरसे निकलकर आता। धीरे-धीरे टहलनेके बहाने मैं अुस कोठरीकी ओर जाने लगा। संतरीको हुक्म था, ये राजनैतिक लोग आम कैदियोंसे बात न करें। अुधर जाते समय देखा, कोठरीमें बिछे कम्बलपर अेक अति दुबली-पतली देह कभी पुस्तकपर झुकी रहती, कभी चुपचाप बान बटती रहती। कुछ लोग अिस खूनीको 'मीर-साहब' के नामसे पुकारते थे। सबसे बड़ी बात और सबसे बड़ा त्याग जेलमें होता है—मौका मिलनेपर भी कोठरीसे बाहर न आना, और अिजाजत होनेपर भी किसीसे बात न करना—मनके संयमका यह रूप और अिन्सानका खून दोनोंमें क्या संबन्ध है? मनमें प्रश्न अुठता पर अुत्तर कौन दे? कोठरीकी सजाके बढ़ते दिनोंके साथ ही मेरी अुत्सुकता और जिज्ञासा भी बढ़ती गयी। और अुसके साथ ही जेलके नियम और पाबन्दियाँ भी ढीली पड़ती गयीं। अब प्रायः शामको अपने साथी साथ ले मैं अुसकी कोठरीके सामने १-२ मिनट तक खड़ा रहता, अुसे देखता पर वे आँखें अवकाशके समय हमेशा किताबमें गड़ी या अिबादतमें डूबी ही दिखायी देतीं। विचित्र जीव है यह, और विचित्र है अिसका अपराध! अेक दिन मैं अुस कोठरीके सामने रुका तो अुसकी आँखें अूपर अुठीं और मौका पाते ही मैंने पूछ डाला 'क्या आ सकता हूं?' और अुधरसे आवाज आयी 'आअिये, तशरीफ लाअिये!' अुत्तरके साथ ही हमने अन्दर प्रवेश किया। जेलमें और आतिथ्य ही क्या? कम्बल अधिक लम्बा हुआ और अुसीपर हम तीनों बैठ गये। बैठना आसान था, पर बात कैसे छेड़ें? थोड़ी देर अिसी पसोपेशमें रहे आखिर कुछ हाथ न आते हुअे मैं पूछ बैठा—'यह कौन किताब है?'—'कुरान शरीफ'—"खाली वक्तमें अिसीसे बड़ी राहत मिलती है।" फिर मैंने पूछा—'मीर साहब, कभी बाहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साफ हवामें क्यो नहीं निकलते ? —"वक्त ही अितना कहाँ है–बँधे काम, बँधा वक्त।" अुत्तर संक्षिप्त था पर अुसमें अेक टीस थी। अुत्सुकता और तीव्र हो गयी, पर अुसे हल न मिला। थोड़ी देर बैठकर हम चले आये। अुस दिन हमसे अधिक कोअी बात नहीं हो सकी। पहले दिनकी हमारी भेंटने केवल आने–जानेका रास्ता खोल दिया था पर यहाँ तो जाना ही जाना था—मीर साहब तो किसीके यहाँ जाते न थे। अब अक्सर दूसरे-चौथे दिन मैं वहाँ जाकर बैठने लगा। कुछ काम निकालनेके लिअे मैं अुनसे कुरान-शरीफको रागके साथ सुनानेको कहता। वह रस, वह निष्ठा, वह तन्मयता और राग, कुरानकी वे आत्मविभोर करने वाली आयतें फिर सुननेको न मिलतीं - मेरे बार-बार वहाँ जानेसे तकल्लुफका पर्दा धीरे-धीरे दूर होता जाता। हमारे बीच आत्मीयता भी बढ़ रही थी। अब बातोंके छींटे कभी-कभी सियासत और खिलाफतके किनारे तक पहुँच जाते। सत्याग्रह और गान्धीजीके बारेमें भी वे बड़ी अुत्सुकतासे पूछते। पर अपनी अुत्सुकताका जवाब मुझे अब तक न मिला था। कभी कभी वे कुरानकी व्याख्या करने लगते तो पता चलता कि अुनके अन्दर सहिष्णुता और मुहब्बतका कितना बड़ा खजाना छिपा है ! फिर मुसलमान अितने कट्टर क्यों होते हैं, यह न सोच पाता। अक्सर कुरान पढ़ते समय मैं अुनके चेहरेको पढ़नेकी कोशिश करता और मन ही मन प्रश्न करता—'आखिर आपसे यह खून कैसे हुआ ?' पर खुलकर अबतक न पूछ सका था। दिन रातोंमें और रातें दिनमें बदलती चली गयीं। मुझे यहाँ आये दो माह हो चुके थे। हमारा परिचय अब कुछ गहरा होता जा रहा था, फिर भी अुनके कदम कभी मेरी कोठरी तक नहीं आये। वे निष्ठावान् मुसलमान थे पर अुस निष्ठामें दूसरे धर्मोंके प्रति घृणाको स्थान नहीं था। अेक दिन मजहबकी चर्चा छिड़ गयी और अुस सिलसिलेमें अुनके द्वारा दिया गया अुत्तर मुझे आज भी ज्योंका त्यों याद है—"भाअीजान, मैं जबान बोलता हूं, पढ़ता हूं, तो क्या अिसके यह माने हैं कि मैं बंगाली या हिन्दीसे नफरत करता हूं ?" अुत्तर छोटा-सा था पर अिसमें पूरा दर्शन भरा था—सचमुच 'धर्म' किसी शक्लमें अेक माध्यमसे अधिक और क्या है। (Medium of Expression) प्रतिदिन अुनकी गहराअी और गहरी होती जाती। और तब बापूके वे शब्द याद आते कि अपने धर्मके प्रति निष्ठा दूसरे धर्मोंके प्रति घृणाका कारण नहीं बनती।

समय गुजरता गया। जेलका यांत्रिक जीवन भी चलता रहा। सोना, अुठना, काम, और फिर सोना। खुलना और बन्द होना। अुड़े हुअे परिन्दोंके समान 'खन् खन्' की आवाजसे कैदियोंकी कोठरियाँ फिर मुखरित हो अुठतीं। सूनी सराय जिन्दगीकी हिलोरसे हिलने लगती—यह अजीब जिन्दगी और अजीब सराय! पर मेरे दिमागके खाली क्षणोंमें भी प्रायः यही अेक बात घूमती रहती कि क्या सचमुच मीर साहबके हाथ अिन्सानके खूनसे रंगे हैं ? अेक दिन निश्चय करके अुठा–आज पूछकर ही रहूँगा—राज अब नहीं रहने दिया जायगा।

दूसरे दिन अवसर मिलते ही मैं कोठरीमें गया और बैठ गया। अब औपचारिक शिष्टाचारकी विशेष आवश्यकता न होती थी। बहुत अुलझनेके बाद मैं डरते-डरते मीर साहबसे पूंछ ही बैठा—"मीर साहब यह खून आपने कैसे किया !" मेरे सरसे अेक बोझ-सा अुतर गया पर देखा मीर साहब अेकदम किसी ख्याल में डूब गये। वे स्वयं अचानक अिस प्रश्नसे कुछ भूलसे गये और अुनके चेहरेपर मानो सैकड़ों बीती तस्वीरोंके रंग अुतरे और डूबे ! फिर मुसकराते हुअे वे बोले—"खून कैसे किया जाता है, यही, छुरीसे, गँड़ासेसे, तलवारसे" यह कहकर वे मुस्करा दिये। मानों प्रश्नको यहीं रोक देना चाहते थे। पर अिस बार मोर्चा सख्त था और डिगनेवाला नहीं था— प्रश्न फिर दुहराया गया और जब प्रश्नकर्ताकी जिदका अन्दाज मीर साहबको हुआ तो बचनेका कोअी रास्ता न देख अेक लम्बी साँस अुनके भीतरसे निकलकर बाहर फैल गयी। चेहरा गम्भीर हो गया जिसके अूपर आक्रोष और संतोष दोनोंके रंग मिले थे। 'खूनको तो मैंने खुद कबूल किया है'। मैं बड़ी देरतक चुपचाप अुनके चेहरेके चढ़ाव-अुतारको देखता रहा। अैसा प्रतीत होता था कि किसी बातको बाहर निकालनेमें अुन्हें बड़ी पीड़ा हो रही है। थोड़ी देर बाद अुनके मुंहसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ शब्द बाहर आये—"यह बात आज पहिली बार तुमसे कह रहा हूँ।" अितने दिनोंमें यह 'तुम' शब्द अुन्होंने प्रथम बार अिस्तेमाल किया था। थोड़ी देरके विरामके बाद अेक लम्बी साँस फिर अूपर आयी और अिसके साथ हृदयके भीतरसे अुनके नपे-तुले शब्द निकले—

"मेरे वालिदके अेक दोस्त थे। अच्छे खाते-पीते घरके थे। अुनके अेक लड़का जिसकी अुम्र २० वर्ष और अेक १४ वर्षकी लड़की थी। मेरे वालिद और अुनके बड़े गहरे ताल्लुक थे। हिन्दू होते हुअे भी वे अक्सर मेरे वालिदके साथ अेक ही दस्तरखानपर खाना खाते। दोनों रोज घंटों साथ-साथ अुठते बैठते। मानो दोनों अेक माँके दो बेटे थे। मेरे वालिदकी वफातके चन्द दिन बाद ही काका (वालिदके दोस्तको मैं अिसी तरह पुकारता था) भी अुनके हम सफीर हुअे। वे अपने पीछे काकी और अुन दो औलादोंको छोड़ गये थे। हमारे गांवमें ही 'अजीब' नामका अेक बदमाश रहता था। काकाकी मौतके बाद वह अक्सर काकीकी बेटीसे बुरे ताल्लुक कायम करना चाहता था। कभी-कभी मौके बेमौके वह बेजा हरकतें किया करता। गाँववाले अुसकी गुंडअीसे काफी परेशान थे और वे कुछ न बोलते थे। गुंड़ागीरीमें हमारे गाँवके पठान मशहूर थे—धन-दौलत भी अुनके पास कम न थी। मैंने खुद अुसे कअी बार बेजा हरकतें न करनेको कहा। जब वह किसी तरह अपनी बदमाशीसे बाज नहीं आया तो मैंने काकाके लड़केसे मिलकर गाँवके अुस कलंकको खत्म करनेकी ही बात सोची। अुसने न मालूम गाँवकी अैसी कितनी कुमारियोंकी अस्मत खराब की थी। हमारी वह तजवीज कामयाब हुअी। और अेक दिन रातके अंधेरेमें हम दोनोंने जबकि वह खाली 'वस्ल' के शौकमें डूबा आ रहा था—अुसे वहीं पर खत्म तो कर दिया पर 'लाश' को वहीं छोड़ दिया। काकाके लड़केकी जिद थी कि वह खुद जाकर पुलिस को खबर दे और खूनका सारा गुनाह अपने अूपर ले ले। भला अैसे कैसे हो सकता था। अुसके लिअे 'काकी और हमशीरा' दोको पालनेका सवाल था। बड़ी मुश्किलसे मैं अुसे अैसी हरकत न करनेसे रोक सका। पर सवेरा होते-होते बात फैल गयी थी। मैंने पुलिसमें जाकर सारी कहानी कह दी। खूनको मैंने कबूल किया। आगे जो होना था हुआ। पुलिसको अेक खूनी चाहिये था। मैं मिल गया था। खानापूरी हो गयी। अदालतने अपना काम किया और मैंने अपना। १४ वर्ष की यह मियाद खत्म होनेको आयी है। पर मुझे खुशी है कि काकाके अहसानातका बोझ मैं कुछ हल्का कर सका। मेरी वह बहिन भी आज अपने शौहरके घर सुखसे है। अिन खुशियोंके आगे यह १४ सालकी सजाकी क्या कीमत। यह खुशी और सब्र मुझे हमेशा ताकत देते रहते हैं।—"किस्सेके आखिर तक पहुँचते-पहुँचते मीरसाहब का गला भर आया था। भावनाके अुस असरको मैं समझ सकता था और यह भी जानता था कि अिस पाक और नेक दिलको हर समय अेकान्तकी जरूरत है। मेरे लिअे वहाँ और रुक सकना मुश्किल था—बाहर आया मेरी आँखें मीर साहबकी अिस हस्तीकी चमकसे गीली थीं और मैं कुछ कह न सका। दरवाजेपर आते-आते अनायास कुछ शब्द निकल पड़े—"मीर साहब, काश तुम्हारे जैसे खूनी देशमें और होते।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यू. अेन्. ओ. यानी राष्ट्रसंघका गठबन्धन

: महात्मा भगवानदीन :

सन् १९१४ में जब पहली बड़ी लड़ाअी छिड़ी तो अुसमें दुनियाके बहुत देशोंने हिस्सा लिया। अुस लड़ाअीकी आग सर्वियामें भले ही भड़की हो पर अुसपर तेल छिड़ककर बढ़ानेका काम जर्मनीके शाहंशाह विलियम कैसरने ही किया था। अिस तरहसे वह लड़ाअी भी जर्मनीके खिलाफ ही थी। और जो मुल्क जर्मनीके खिलाफ अुसमें शामिल होता था अुसका यही नारा होता था कि "हम लड़ते हैं लड़ाअीका अन्त करनेको।"

सन् १८ के ११ वें महीनेकी ११ तारीखको ११ बजकर ११ मिनटपर लड़ाअी थमी जरूर, पर लड़ाअीने मिटनेकी जगह और जड़ जमा ली और लीग ऑफ नेशन्स जो लड़ाअीका अन्त करनेके लिअे बनी थी, वह अेक तरहसे लड़ाअीकी बेलको अगर सींचती नहीं रही तो हवा और रोशनी जरूर देती रही। अुसकी नाकके नीचे अिटलीके मुसोलिनी हब्शको निगल गया और जापानने कोरियाको चट कर लिया। यह लीग ऑफ नेशन्स नामकी बड़ी पर कामके लिअे निकम्मी साबित हुअी। लीग ऑफ नेशन्समें शामिल होनेवाली रियासतें बराबरीका दावा करती थीं सबको बराबरके अख्तियार थे और सबसे बड़ी बात तो यह थी अुन्हें कि विटो Veto का अख्तियार था। विटोके लिअे हिन्दुस्तानी शब्द "बैठो" ठीक रहेगा। आजकल भी गांवकी पंचायतमें कोअी अकड पंच अक्सर कह बैठता है "बैठो" भी, हम तुम्हारी नहीं मानते। अिसलिये गांवके अिस "बैठो" शब्दमें "विटो" का पूरा भाव समाया हुआ है। हाँ, तो अुस लीग ऑफ नेशन्सकी हरअेक रियासतको "बैठो" कहकर लीगके किसी निश्चयको हवामें अुड़ा देनेका हक हासिल था। और अिसी हकने न अुसे बढ़ने दिया न कुछ करने दिया। यही हक लड़ाअीकी बेलके लिअे हवा और रोशनी बनकर अेक तरहसे अुसे सींचने-सा लगा।

दूसरी लड़ाअी सितम्बर सन् ३९ में छिड़ी। और अिस लड़ाअीको तो सीधेही जर्मनके तानाशाह हिटलरने छेड़ा। यह सन् ४५ तक चली। अिस लड़ाअीके बीचमें ही किसी वक्त लीग ऑफ नेशन्स मर गयी। यह पता न चला, कब मरी? कैसे मरी? क्यों मरी? मरी या नहीं मरी?

यू. अेन्. ओ. गर्भमें आयी शान्तिकी जरूरत और लड़ाअीके डरके मिलनेसे यानी यह डर और जरूरत पैदा हुअी है। डर और जरूरतके मिलनेके ब्रह्मा थे अमेरिकाके रुजवेल्ट। पर वे अिसके जन्मसे पहले ही चल बसे। शान्ति चाहनेवाली यू. अेन्. ओ. के गर्भाधानके समय शान्ति कहीं नामको न थी। चारों तरफ डर छाया हुआ था। सानफ्रान्सिस्कोमें जब यू. अेन्. ओ. का गर्भाधान संस्कार हो रहा था तब लन्दनपर जर्मनीके अुड़न बम बरस रहे थे। अिसके गर्भमें रहते हुये हिटलरने अपनी जान आप लेली और मुसौलिनीकी जान अिटलीके अेक नौजवानने ले ली। अुधर रूस बढ़ते-बढ़ते बर्लिन पहुँच गया और स्टालिनने बर्लिनके तलेपर रूसी झंडा गाड़ दिया। जिस संस्थाके गर्भाधानके समय अैसी बलायें दुनियापर आयें और जिसके गर्भमें रहते अैसे अैसे अशान्तिसे भरे काम हो जायं अुस संस्थासे कैसे आशा की जा सकती है कि वह लड़ाअीका अन्त कर सकेगी? भले ही अुस संस्थाकी मां शान्तिकी अिच्छा रही हो पर बाप तो लड़ाअीका डर था। डर और शान्ति मिलकर अविश्वास पैदा करते हैं और लड़ाअीके खत्म होनेके लिअे विश्वास बेहद जरूरी है।

यह तो यहाँ याद ही रखना चाहिये कि यू. अेन्. ओ. को जगत-पंचायतका नाम नहीं दिया जा सकता। और यह डरसे पैदा हुअी जगत-पंचायत बन भी नहीं सकती। जगत-पंचायत बननेकी अयोग्यता अिसमें पैदा यशी है और मरते दमतक रहेगी। यह ठीक है कि अिसमें जगत-पंचायत बननेकी कमसे कम अयोग्यता है, अिस वास्ते यह कुछ मुल्लोंकी आँख नहीं चढ़ती। तभी तो अिससे ज्यादा अयोग्य संस्था अटलांटिक पैक्टका जन्म हुआ; जिसकी अेक शर्त यह है कि अुसमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोअी और मुल्क सब मुल्कोंकी सलाहके बिना शामिल नहीं हो सकता। अेक तरहसे अटलांटिक पैक्ट लीग आफ नेशन्सका अवतार है। यानी अिसमें भी सब मुल्कोंको "बैठो" कहनेका अख्तियार है।

यू. अेन्. ओ. की सनद (चार्टर) जब लिखी जाने लगी तो अुसमें शान्तिका जिक्र था और अेकसे ज्यादा बार था। सारा जोर शान्तिपर ही दिया गया था। छोटे-छोटे देशोंकी ही नहीं अमेरिका, बर्तानिया, फ्रांस, रूस, चीन जैसे बड़े देशोंकी भी नजर शान्तिपर ही थी। और अिस शान्तिकी धुनमें वे अुससे भी जरूरी चीजें भूले हुअे थे। जिस तरह रोते हुअे बच्चेको मांका ध्यान सबसे ज्यादा अुसको किसी तरह चुप करनेकी तरफ ही होता है, वह यह जाननेकी कोशिश ही नहीं करती कि वह क्यों और किस वजहसे रो रहा है, किस बातमें अुसके साथ न्याय नहीं हुआ कहाँ अुसका निरादर हुआ? कोअी आदमी चपत खाकर चपतकी तकलीफसे अितना नहीं रोता कि चपत अुसे मारा ही क्यों गया? और अिस तरहकी बेअिज्जती अुसकी की गयी? और यही वजह है कि आज मनुकी औलाद पशुकी औलादसे मार खाकर कहीं ज्यादा देर-तक रोती रहती है। पशुके सामने अिज्जतका सवाल नहीं होता। अिसलिये कुत्ता बड़ीसे बड़ी चोट खाकर कुछ सेकण्ड "कीं कीं" कर चुप हो जाता है। ठीक अिसी तरह वे बड़े मुल्क जो यू. अेन्. ओ. की सनद तैयार कर रहे थे सब जीतमें थे। अुनकी अिज्जतको कोअी धक्का नहीं लगा था। अुनकी साखको भी कोअी बट्टा नहीं लगा था। अुनकी हालत अुस वक्त ठीक अुस मां जैसी थी जो बच्चेको सिर्फ चुप करना चाहती है। अुनके सामने न हारे हुअे मुल्क थे और न वे मुल्क थे जो अिस लड़ाअीमें पड़कर बरबाद हो गये थे या जो बेमतलब ही लड़ाअीमें घसीट लिये गये थे। अुनमेंसे अेक तो हमारा हिन्दुस्तान भी था। अैसे सब मुल्कोंके साथ कितना अन्याय हुआ था अुस ओर किसीका ध्यान ही नहीं था। न जाने क्यों चीनका ओरिया (प्रतिनिधि) अेकदम न्यायकी बात सोच बैठा और अुसने सनद तैयार करनेवाले बड़े मुल्कोंका ध्यान अिस ओर खींचा और फिर किसी तरह न्यायको भी अुस सनदमें जगह दी गयी। यू. अेन्. ओ. के अपने शब्दोंमें ही अुसका अुद्देश्य है—"**आनेवाली पीढ़ियोंको अुस लड़ाअीकी बलासे बचाना जो हमारे जीवन-कालमें दो बार मानव समाजपर न कहीं जानेवाली आफतें ला चुकी है।**" अिस अुद्देश्यमें घनता बहुत और गहराअी थोड़ी है। पहली लड़ाअीके बाद भी बड़े देशोंपर अिसी तरहका मुरदघाटी वैराग छाया था और अैसे वैरागसे जो प्रतिज्ञा निकलती है वह अटिकाअू तो ही होती है, बहुत बार तो पलक मारनेमें बिला जाती है और भुला दी जाती है। पहली लड़ाअीके बादमें दुनियाके देश आजसे बहुत कम स्वार्थी थे और अिसलिये आजसे बहुत ज्यादा सुखवादी थे। अुनको दुनिया ज्यादा भली दिखायी देती थी क्योंकि वे खुद भी किसी हदतक भले थे और अिस भलाअीकी जड़में थी अुस समयका तिजारती फैलाव और मारकाटके बढ़िया औजारोंकी कमी। दूसरी लड़ाअीके बाद वह नक्शा नहीं रहा जो सन १८ में था। अिस वक्त तो अमेरिका अपने अेटम बमके चमत्कारकी वजहसे आपेसे बाहर था, और बर्तानिया अमेरिकाका साथी होनेके नाते घमण्डसे फूला हुआ था। कुछ अिसी तरहका हाल फ्रांस और चीनका था। रूसको बर्लिन जीतकर अिन सबसे कहीं ज्यादा फूल जाना चाहिये था पर अेटमबम की धाकसे दबकर अुसको अपना जी दुखाकर जापानसे लड़ना पड़ा था अिस वजहसे वह फूलनेकी जगह अिन सबसे और ज्यादा पिचक गया और वह अपनी होशियारीसे अपनी पिचक और डरको नम्रताका जामा पहनाये हुअे था। जिस तरह फलदार दरख्त अपनी डालियाँ झुकाकर अपनी नम्रता दिखाते हैं, अिसी तरह रूस भी सबसे पहले बर्लिनकी जीतका फल अपनी डालीमें लटकाकर अपनी नम्रताका ढिंढोरा पीट रहा था। वह और करता भी क्या? अिसलिये यू. अेन्. ओ. की सनदमें वे सब अैब छिपे हुअे हैं जो अुस समय अिन बड़े मुल्कोंके मस्तकोंमें जगह पाये हुअे थे।

लीगमें अमेरिका शामिल नहीं हुआ था। अिसलिये नहीं कि वह शामिल नहीं होना चाहता था, पर अिसलिये कि वह अुसमें शामिल होकर बर्तानियाकी चालाकीका मुकाबला नहीं कर सकता था। और अुसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शामिल न होना था तो असुगनपर बर्तानियाने अँठमें आकर अुसकी कोअी पर्वाह नहीं की। असलमें अुसकी यह नियत ही नहीं थी कि लड़ाअीका अन्त किया जाय। वह तो हारे हुअे जर्मनीसे पूरी तरह बदला लेनेकी फिक्रमें था। अुसे यह घमण्ड था कि लड़ाअी अुसने जीती है। वह जीतके यशको पूरी तरहसे अपनाना चाहता था। पर बात अैसी थी नहीं। अगर जीतका यश बांटा ही जाय तो तीन हिस्सोंमें बंट सकता था और वह भी अिस तरह। सबसे ज्यादा हिस्सा फ्रान्सको, क्योंकि अुस लड़ाअीके सर्वेसर्वा फ्रान्सीसी जेनरल फोच थे। अुससे कम अमेरिकाको क्योंकि वुडरो विल्सनके चौदह सिद्धान्तोंने कैसरकी कमर तोड़ दी थी और जर्मनीके समाजवादियोंमें जान डाल दी थी। अुसके बाद कहीं बर्तानियाका नम्बर आता। फिर भी बर्तानिया पहली लड़ाअीके जीतके सारे यशको हड़प कर गया। और अुसीका नतीजा यह हुआ कि लीगपरसे धीरे-धीरे सबका विश्वास अुठ गया और अुसे छोड़-छोड़कर मुल्क अपनी आपाधापीमें लग गये। ठीक वही यू. अेन्. ओ. का हाल हो रहा है। यू. अेन्. ओ. आजकल अमेरिकाके हाथका खिलौना बनी हुअी है। अेक ओर अैटम बमका धाक, दूसरी ओर दुनियाभरके सोनेका ढेर। अिन दोनोंने अमेरिकाको आपेसे बाहर कर रखा है। यू. अेन्. ओ. में यों तो लगभग सभी देश शामिल हैं, पर कहाँ रूस और कहाँ हंडोरास, कहाँ अमेरिका और कहाँ हेटी। हेटी और हंडोरासकी कोअी आवाज हो सकती है? यह देखकरही यू. अेन्. ओ. ने सुरक्षासमिति (Security Council) बना दी और दुनियाभरकी सुरक्षाकी जिम्मेदारी पाँच बड़ोंके सिर थोप दी। पांच बड़ोंमें भी आपसी विश्वास कहाँ था? अिसलिये अुनको "बैठो" की ताकत भी देदी गयी। अिसलिये वह पाँच पंचोंकी चीज अेक अैसा खिलौना बन गयी कि अुनमेंसे कोअी अेक पंच जब जीमें आये तो अुसके बने बनाये खेलको "बैठो" कहकर खत्म कर दे। अिस तरह पंचायत अपने आप अपंचायत हो गयी। बननेके दिनसे आजतक कअी बार "बैठो" कहकर कअी बने बनाये खेल बिगाड़े गये हैं। "बैठो" के बिना पंचायत नहीं बन सकती थी। और "बैठो" ने ही अुसकी जान लेली। "बैठो" की ताकतके बिना रूस कभी शामिल नहीं होता और रूस शामिल नहीं होता तो दुनियाभरकी सुरक्षाकी जिम्मेदारी कैसे ली जाती? अिसलिये जो यूनो बनी वह न बनी जैसी ही रही।

यूनोने छोटे-मोटे काम किये हैं, पर किसी अेकमें भी अुसे सफलता नहीं मिली। कोरियाको हाथमें लिया अुसका काम ज्योंका त्यों लटका हुआ है। काश्मीरका अभीतक कुछ नहीं हो पाया। फिलस्तीनमें कहीं शान्ति नहीं। हिन्दअेशियाका जो हाल है वह सबके सामने है। कोरिया अभीतक दो हिस्सोंमें बँटा हुआ है। अेक रूसी कोरिया और अेक अमरीकी कोरिया। वे अेक होना भी चाहें तो नहीं हो सकते। क्योंकि पांच पंचोंमेंसे दो पंचोंका अलग-अलग स्वार्थ है और तीसरे पंचकी डांवाडोल हालत है। बस, दुःखी मुल्कोंके लिअे यूनो बहती नदीमें निरा तिनका है। डूबते मुल्क अुसकी तरफ हाथ बढ़ाते हैं, पर जब देखते हैं कि वह अुन्हें डूबनेसे नहीं बचा सकता तो अपने पाँव खटपटाने लगते हैं, तब फिर अुसी तिनकेकी तरफ हाथ फेंकते हैं।

अमेरिका अुपनिवेश रह चुका है और अुसकी तकलीफोंसे वाकिफ है। अुसीका यह भी सिद्धान्त है— "जनता द्वारा जनतापर राज करे।" रूस भी जारशाहीका मजा चख चुका है और जनताके राजमें विश्वास करता है। फिर ये दोनों देश मिलकर क्यों नहीं बैठते? फटा हुआ कोरिया दोनोंके मन फाड़ रहा है। जुड़ा हुआ कोरिया दोनोंके मन जोड़ देगा, पर यह बात दोनोंमेंसे किसीको नहीं सूझती। यही सबब है कि हम यह कहनेके लिअे मजबूर हैं कि सुरक्षा-समिति सुरक्षा करनेका नाटक भले ही खेलती रहे।

यूनोमेंसे अगर अमेरिका और रूस ये दोनों अलग हो जायँ तो यह कुछ भी नहीं रह जाता। यही अिस बातका सबूत है कि यूनोमें और मुल्क अपनी कोअी जगह नहीं रखते। अगर किसी वजहसे युनोमेंसे रूस अपनेको अलग कर ले तो दूसरे ही दिन कितने ही और मुल्क अुसे छोड़ते हुअे दिखायी देंगे और तीसरे दिन दुनिया लड़ाअीका शंख बजता सुन लेगी। अमेरिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यूनोको छोड़नेकी बात कभी सोच ही नहीं सकता क्योंकि वह अुसकी चीज है। अगर आप रेखागणितके सिद्धान्तके बलपर यह कह ही बैठें कि मान लो, अमेरिका अुसे छोड़ देता है तो क्या होगा, तो हम भी जवाब दिये देते हैं कि यूनो अेकदम टूट जायगा। साथ ही साथ अटलांटिक पैक्टमें जान पड़ जायगी और अेशियाटिक कान्फ्रेन्समें बल आ जायगा। हो सकता है, अेक नया गुट पूर्वी योरपका और बन जाय पर चीनके लाल हो जानेसे अैसे नये गुटकी जरूरत नहीं। अेशिया कान्फ्रेन्स ही यूरेशिया कान्फ्रेन्स नाम रखकर नये गुटको बननेसे रोक देगी। अिसलिये यूनोके बिखरनेकी जल्दी कोअी संभावना नहीं है। पर यूनोके रहते न शान्तिदेवी दुनियामें कदम रख सकती हैं और न अशांन्तिका भूत ही अपना नंगा नाच नाच सकता है। अब तो रूस और अमरीका बराबरके हो गये हैं। दोनोंकी कमरोंसे अैटमबम बंधे हुअे हैं। अिन दोनोंके खुश-नाखुश आमने सामने बैठनेमें ही भला है। ये रूठकर अगर कहीं मुँह मोड़ बैठे तो अैटमबम भड़क अुठें, यह अचरजकी बात न होगी।

नासमझोके लिअे अमेरिका और रूस भले ही दूर-दूर हों पर समझदारोंके लिअे तो वे अिस पृथ्वी नामी शहरके दो मुहल्ले हैं। मारू बाजा बजते ही अिसके बम अुसके सरपर होंगे और अुसके बम अिसके सरपर।

तीसरी लड़ाअीके लिअे लड़नेवाले मुल्क बिलकुल तैयार हैं। जिस तरह भरी बन्दूकमें घोड़े दबानेकी जरूरत पड़ती है, अिसी तरह तीसरी लड़ाअीके लिअे घोड़े खींचनेवालोंकी जरूरत है। और ये होंगे वे जवान जो सन् ४५ में १५ से १८ वर्षके थे। अिनके २६ वर्ष के होनेपर लड़ाअी रोके नहीं रुक सकेगी। अिसलिये सन् ५० में नहीं तो मशहूर सन ५७ में लड़ाअी होकर ही रहेगी। यह लड़ाअी पहली लड़ाअीसे हजारगुना और दूसरी लड़ाअीसे सौ गुना भयानक होगी।

लड़ाअीके बाद दुनियाका क्या होगा? अिसके बारेमें विद्वानोंकी अलग-अलग राय है। पर हम तो यही कहेंगे कि तीसरी लड़ाअी हैवानियतके सौ अंशोंमेंसे ९० अंश खा जायगी और अिन्सानियतके सौ अंशोंमेंसे ९० अंशको मिट्टीमें मिला देगी और अिसलिये लड़ाअीके बाद ३० अंश अिन्सानियतको १० अंश अुस हैवानियतसे टक्कर लेनी पड़ेगी जो जर्जर हो चुकी होगी और थरथर कांप रही होगी और हैवानियत होते हुअे भी अिन्सानियतके पैरोंमें पड़नेके लिअे तैयार होगी। अिसलिये अिन्सानियतको न दुनिया संभालनेमें कठिनाअी होगी न दुनियाको अेक बनानेमें।

तीसरी लड़ाअी शुरू होनेसे चार-पांच बरस पहले जर्मनी और जापानका आजाद हो जाना जरूरी है। अगर अिस काममें देर लगती है तो लड़ाअीकी तारीख कुछ और भी आगे बढ़ सकती है। तीसरी लड़ाअीमें जर्मनी पूरी तरह हिस्सा लेगा। जापानके बारेमें हमारी यह राय है कि वह हिस्सा नहीं लेगा। शायद लेले पर अुसके लेने न लेनेसे दुनियाके नक्शेमें कोअी फरक नहीं पड़ेगा और अुसके जवान लड़ाअीके भेंट होनेसे भी नहीं बच सकेंगे।

दूसरी लड़ाअीके बीज जिस तरह लीगमें छिपे हुअे थे, अुसी तरह तीसरी लड़ाअीके बीज युनोंमें मौजूद हैं। युनोका विधान पढ़नेकी चीज है। अुसे जितनी बार पढ़ा जायगा अुतनी ही साफ-साफ तीसरी लड़ाअी अुसमें दिखलायी देने लगेगी। आअिये, अुसकी बानगी लें। अुसके पहले आर्टिकिलका निचोड़ यह है--

१. अन्तर-कौमी शान्ति और सुरक्षा बनाये रखना।

२. जबरदस्तीके कामों और अैसे कामोंको दबाते रहना जिनसे शान्ति भंग होती है।

युनोको बने बरसों हो गये पर दुनियाके किसी हिस्सेमें कभी अमनचैन न हो पाया। न जबरदस्ती रुकी और न शान्ति भंग होनेसे बची। अब अगर कोअी अैसी शक्ति हो जो यूनोसे भी जवाब तलब कर सके और अुसको अिस बातकी सजा दे सके कि जब अुसके सुपुर्द दुनियामें अमनचैन रखनेका काम बहुतसे मुल्कोंने सौंप दिया था तो क्यों अुसने अपना कर्तव्य ठीक-ठीक पालन नहीं किया? तभी दुनियामें अमनचैनकी आशा की जा सकती है। पर अैसी न कोअी शक्ति है और न यह कहा जा सकता है कि नहीं है। नहीं है अैसा क्यों नहीं कहा जा सकता? अैसा यों नहीं कहा जा सकता कि यूनोकी वह अन्तर्कौमी मशीन जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुनियाके अमन-चैनकी जिम्मेदार ठहरायी गयी है, दो हिस्सोंमें बंटी हुअी है। अेक असेम्बली और दूसरी सुरक्षा कौन्सिल। सुरक्षा कौन्सिलका नाम ही बताता है कि वह सुरक्षाकी जिम्मेदार है। अब अगर असेम्बली अपने आपको असेम्बली समझे और अिस सुरक्षा समितिसे समय-समय पूछती रहे और मुनासिब समझे, तो डांटती रहे और भी मुनासिब समझे तो अुसको बदलती रहे, तब कुछ-कुछ आशा की जा सकती है कि सुरक्षा कौन्सिल अपना काम ठीक करेगी। पर अिस तरहका कोअी अिन्तजाम यूनोके विधानमें नहीं किया गया। विधानका आर्टिकल ४३ सुरक्षा कौन्सिलको सुरक्षाके हथियारोंसे लैस तो करता है पर अुससे आगे कुछ नहीं करता। "असेम्बली पहली जिम्मेदारी या अन्तर्कौमी सुरक्षा बनाने" का काम सुरक्षा कौन्सिलको सौंपती है और अुसे यह अधिकार भी देती है कि वह जिस तरह चाहे समझा-बुझाकर कौमोंको लड़नेसे रोके और अगर वैसा करनेसे काम न चले तो हथियारोंकी मदद ले। हथियारोंकी मदद वह किससे ले, कैसे ले, अिसका विधानमें कुछ अिन्तजाम तो है पर वह बहुत ढीले ढंगका। अुसका होना न होना बराबर है। वह विधानके आर्टिकल ४३ में कुछ अिस तरह दिया गया है। "हम यूनोके सब मेम्बर यह काम अपने सिर लेते हैं कि सुरक्षा कौन्सिलको अैसे साधन मिलते रहेंगे" जिससे सुरक्षा कौन्सिल जो तय करे अुसे अमलमें लानेके लिअे अुसको कोअी दिक्कत न हो। अिसी सिलसिलेमें अैसा भी जिक्र है कि वह किस तरह अपना फौजी अमला रक्खे और किस तरह अन्तर्कौमी फौजें जुटाये।

दूसरे शब्दोंमें यह कहा जा सकता हैकि सुरक्षा कौन्सिलसे असेम्बलीने यह वायदा कर लिया कि वह अुसे शान्ति रखनेके काममें आनेवाले साधनोंको जुटाती रहेगी। पर वह अैसा न कर सकी और अिस वास्ते अब वह अुससे पूछताछ करनेकी हकदार नहीं रह गयी। असेम्बली अैसा क्यों न कर सकी अिसमें भी विधानका ही कुसूर है। विधानसे सुरक्षा कौन्सिल यूनोमें शामिल होनेवाले सब मुल्कोंको किसी मुल्कके खिलाफ हथियार अुठानेको मजबूर कर सकती है और अुन मुल्कोंकी कौमी फौजको अपने हाथमें ले सकती है। यानी जबरदस्ती करनेवाले मुल्कके खिलाफ वह कभी भी लड़ाअी छेड़ सकती है। अिस तरहकी बात जितनी आसानीसे कही और लिखी जा सकती है अमलमें नहीं आ सकती। मजबूत से मजबूत सुरक्षा कौन्सिल किसी मुल्ककी कौमी फौजको अुस मुल्ककी जनताकी मरजीके खिलाफ सिर्फ अुस मुल्ककी सरकारके कहनेपर अव्वल तो काममें नहीं ले सकती और अुसे लेना चाहिये भी नहीं, क्योंकि अगर वह ले ले तो वे फौजें जीसे काम नहीं करेंगी। यही वजह हुअी कि सुरक्षा कौन्सिल अपने अधिकारोंको अपने काबूमें न ला सकी। सुरक्षा कौन्सिलमें खुद भी तो अलग-अलग मुल्कोंके मेम्बर थे। वे खुद ही यह ठीक न समझते थे कि अपने मुल्ककी फौजको अपनी जनताकी मर्जीके खिलाफ हम अपने यानी अपनी सरकारके राजी हो जानेसे सुरक्षा कौन्सिलके हाथों सौंप दें।

अब सुरक्षा कौन्सिलको विधानने सीधे तरीकेसे किसी मुल्कसे अुसकी जनताकी मर्जीके खिलाफ अुसकी सरकारकी राय रहते हुअे भी फौज लेनेसे रोक दिया और यह रोका यानी "बैठो"का अधिकार देनेसे। अिसलिये यह "बैठो" जहाँ लड़ाअीका बीज है वहाँ लोकशाहीको जीते रखनेका साधन है।

यहां यह कह देना बेजा न होगा कि दुनियाके सब मुल्कोंकी सरकारें जितना ज्यादा लोकशाहीका गीत गाती हैं, अुतनी ही ज्यादा बेलगाम बनी हुअी लोकशाहीको कुचलती रहती हैं। वे बड़ेसे बड़े काम कर डालती हैं। और पीछे अिस्तीफा देकर रूठ बैठनेकी धमकी के जरिये असेम्बलीसे यानी सारी जनतासे जबरदस्ती अपनी बात मनवा लेती हैं। हिन्दुस्तानमें यह बात अक्सर दिन देखनेको मिलती रहती है। यहाँ यह भी याद रहे कि यूनोके विधानमें "बैठो" के अधिकारको जन्म देनेमें अितना लोकशाहीकी रक्षाका ध्यान नहीं है जितना लड़ाअीके बीजको बनाये रखनेका। आदमीके जानवर अभी सोया भी नहीं है, मरनेकी तो बात ही न कहिये। और जबतक वह जागा हुआ है, न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोकशाहीकी बात सोच सकता है और न लड़ाओंको बंद करनेकी।

सुरक्षा कौन्सिलके सब सदस्य भी अगर किसी तरह समझौता कर लें और अेक हो जायँ तो जहाँ तक हमारा ख़याल है किसी देशकी फिर चाहे वह कितना ही बड़ा क्यों न हो, यह हिम्मत नहीं हो सकती कि वह किसी मुल्कपर फिर वह चाहे कितना ही छोटा क्यों न हो चढ़ बैठे या वैसा करनेकी हिम्मत कर सके। छोटा मुल्क कितना ही कुसूरवार होनेपर भी बड़े मुल्कको अैसा मौका हरगिज नहीं देता और न दे सकता है कि बड़ा मुल्क अपने आपको अुसपर चढ़ बैठनेका हकदार साबित कर सके। पर यह सब हो तभी सकता है जब सुरक्षा कौन्सिल अपनेको सच्चे मानोंमें सुरक्षा कौंसिल साबित कर सके।

हां, तो यह पता चला कि सुरक्षा कौन्सिल किसी वजहसे बेहद कमजोर है और यूनोकी बदनामीका कारण बनी हुअी है, जब कि यूनोने अुसे वह सब ताकीद दे दी है जो अुसने चाही थी या जो अुसे चाहिये थी। यूनो सचमुच शान्ति चाहता है पर यह अितनी बड़ी संस्था है कि वह अपने आप सुरक्षाका हथियार नहीं बन सकती। और न कोअी अैसा तेज हथियार तैयार कर सकती जो दुनियाकी सुरक्षाके बहाने दुनियाकी मालिक बन बैठे और यूनोको धता बता दे। अिसलिये वह चुपचाप अपनी अयोग्यताकी बदनामी सह लेती है और किसी दिन चुपचाप लीगकी मौत मर जायगी।

यूनो संस्था बड़ी जल्दी बूढ़ी हो गयी। अुसने दो बच्चे जन दिये। अेक अटलांटिक पैक्ट और दूसरा अेशियाटिक कान्फ्रेन्स। और यह सुनकर आपको अचरज नहीं होना चाहिये कि बहुत जल्दी ही वह फिर अेक नहीं अेकसाथ कअी बच्चोंको जन्म देगी और लुत्फ तो यह है कि अुनमेंसे कोअी भी विधान किससे नाजायज नहीं समझा जायगा। पैक्ट और कान्फ्रेन्स ही कब नाजायज हैं? पैक्ट जब नाजायज नहीं है तब विधानका हिस्सा है तब वह यूनोके सामने जवाबदेह क्यों नहीं? यह पहेली है और सुरक्षा कौन्सिल ही अिसका कोअी जबाब बता सकती है। अगर यह मान लिया जाय कि पैक्ट विधानके खिलाफ बना तो अुनसे जवाब तलब किया जाय जिन्होंने अिसे बनाया। अेक मुल्क पैक्ट और यूनो दोनोंमें अैसे ही शामिल न हो सके जिस तरह हिन्दुस्तानमें जो सूबेकी असेम्बलीका सदस्य होता है वह सेन्टरकी असेम्बलीका सदस्य नहीं होता। और जबतक सुरक्षा कौन्सिल अिस तरहकी सरहीपर अुतारू नहीं होती तबतक यूनो अपनी अिज्जतको बट्टा लगाये बिना नहीं रह सकती। पैक्ट और कान्फ्रेन्स अुन्हींकी तो सूझ है जो यूनोके मेम्बर हैं। फिर वे अैसी बातोंपर क्यों अमल करने लगे जिससे पैक्ट या कान्फ्रेन्स कमजोर हो या यूनोको जवाब देनेके लिअे मजबूर हो।

अब जरा पैक्टको लीजिये। पैक्टकी भी कितनी ही कमेटियां हैं। और अुन सबके अूपर अेक केन्द्रीय कमेटी है जिसमें अमेरिका, बर्तानिया और फ्रांस शामिल हैं। यह कमेटी और सब कमेटियोंकी देखभाल करती है। पर कैसे मजेकी बात है कि अिस केन्द्रीय कमेटीको न अपनेको हुक्म देनेका अख्तियार है और न और कमेटियोंको हुक्म देनेका अख्तियार है, कि वे अुस मुल्कके खिलाफ लड़ाअी छेड़ सकें जिसने जबरदस्ती की है। यानी पैक्टमें शामिल हुअे किसी मुल्कपर अगर कोअी चढ़ाअी कर दे तो पैक्टकी कमेटी अुस मुल्कको भी जिसपर चढ़ाअी हो रही है, लड़नेका हुक्म नहीं दे सकती और वह मुल्क ही अिनके हुक्मकी क्या बाट जोहेगा! अब कहिये यह पैक्ट कैसे लड़ाअी रोकेगा? बस यह पैक्ट दस्तखत करनेवाले मुल्कोंको जबरदस्ती करनेवालेके खिलाफ अिकट्ठा तो करता है पर अिकट्ठे होनेके लिये मजबूर नहीं करता।

आजकी अन्तरकौमी अवस्थामें कोअी अैसी केन्द्रीय कमेटी बन ही नहीं सकती जो किसी मुल्कको लड़ाअी करनेका हुक्म दे सके या लड़ाअी करनेसे रोक सके। काश्मीरके मामलेमें हिन्दुस्तान और पाकिस्तान कुछ भी नहीं। ये दोनों लड़ पड़े तो सुरक्षा समिति देखती रह गयी और जब दोनों अपनी-अपनी जगह खड़े गुर्रा रहे हैं तो सुरक्षा समिति खड़ी देख रही है। आप यह कहेंगे कि पहली जनवरी सन ४९ को सुरक्षा समितिकी मददसे ही तो दोनों मुल्कोंमें थोड़ी देरके लिअे सुलह हुअी। पर जब आप अिस सुलहकी तहमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जायंगे तो आपको पता चलेगा कि यह सुलह न तो सुरक्षा समितिके हुक्मसे हुअी और न अुसके जोरसे हुअी, यह तो हिन्दुस्तान और पाकिस्तान दोनोंकी मजबूरी रजामन्दीसे हुअी। तभी तो आज ३६६ दिनके बाद काश्मीरके मोर्चोंपर डटे हुअे हैं। हां, तो यूनोकी केन्द्रीय कमेटीको "बैठो" अख्तियार देनेसे जो नतीजे निकलने चाहिये थे वही निकल रहे हैं। और अिन नतीजोंसे भले ही कुछ लोग यूनोंकी तरफ अुंगलियाँ अुठाते हों पर युनो अुस तरफ आँख अुठाकर नहीं देखती और वह बाहर नहीं तो अन्दर जरूर खुश है क्योंकि वह अैसा ही चाहती थी। राजनीतिक मैदानमें आये हुअे दोनों नये बच्चे–हिन्दुस्तान और पाकिस्तान– तभी तो हिम्मत कर जाते हैं और कह बैठते हैं हम अैसा नहीं करेंगे। असल बात यह है कि वे लोग जो आज अपनेआपको दुनियाका नागर मानते हैं, वे यह चाहते ही नहीं कि कोअी अेक अैसी संस्था कायम हो जाय या कोअी अेक अैसा संघ बन जाय जो अपने संधियोंको लड़ाअी करनेसे रोक सके या लड़ाअी करनेका हुक्म दे सके और यह बात भले ही किसीको बुरी जंचती हो पर है असलमें भली। तानाशाहीको कौन बुरा नहीं कहता। पर अिस जमानेमें कौनसा अैसा देश है जो अिसकी पूजा नहीं करता? ठीक अिसी तरहसे लड़ाअीको सब लोग दुरदुराते हैं। पर कौनसा अैसा देश है जिसके यहां लडाअी देवीकी पूजा नहीं होरही? लड़ाअी हमेशा तो रहती नहीं। लड़ाअीके सिपाही भी हमेशा सिपाही नहीं रहते। वे भी अपने बच्चोंको प्यार करते-करते शान्ति देवीके पक्के भक्त बन जाते हैं। ठीक अिसी तरहसे आज भी शान्तिदेवी जगह-जगह खेलती फिरती है। पर लड़ाअीका शंख बजते ही वह दुर्गाका रूप धारण कर बैठेगी और यूनो अुस दुर्गाकी ओर देखकर मुस्कायगी और जनताकी तरफ देखकर अैसा मुंह बनायगी मानो वह दुर्गाके कामको पसंद ही नहीं करती।

मोहल्लेकी रक्षा कमेटीका यही अर्थ होता है कि अुसे दूसरे मुहल्लेका डर है और यह कि दूसरे मुहल्लेको अुसपर चढ़ आनेसे कोअी रोकनेवाला नहीं है। अब अगर नगर-कम्बा कमेटीके रहते कोअी मोहल्ला कमेटियां कभी अुस नगर-रक्षा-कमेटीको बलवान् नहीं बनने देंगी। नगर रक्षा कमेटी अगर बलवान होगी तो वह कोअी अैसी मोहल्ला कमेटी न बनने देगी जो पूरीतरह अुसके अधीन न हो। अिसलिये पैक्ट और कॉन्फ्रेंस यूनोके निर्बल होनेका सबूत हैं। यूनो सब मुल्कोंकी नहीं है, अिसलिये कमजोर तो है ही, खतरनाक भी है। जगत-पंचायत बननेसे पहले यूनो बलवान नहीं हो सकती। और जगत-पंचायत बननेके लिअे छोटे-बड़े सब मुल्कोंका अुसमें शामिल होना जरूरी है और सब मुल्कोंके शामिल होनेसे पहले सब मुल्कोंका आजाद होना जरूरी है। और सब मुल्कोंके आजाद होनेसे पहले दुनियाकी नागरता या नागरिकताका महत्व बढ़ना जरूरी है। दुनियाकी नागरताका महत्व बढ़नेपर ही जगतकी शान्तिकी सम्भावना हो सकती है। टूटी शान्ति अशान्ति नाम पाती है। लड़ते हुअे घरमें सन्यासी मां या बापकी शान्ति शान्ति नहीं कहलाती। हिंदुस्तान औल्वीनकी मुठभेड़ हो जानेपर अमेरिका सुखकी नींद नहीं सो सकता। कौन नहीं जानता कि मुहल्लेके किसी घरमें आग लग जानेपर दूरदूरके घरवाले अपने-अपने छप्परोंपर पानी डालने लग जाते हैं, मानो अुन्हींके छप्परमें आग लग गयी है।

यूनोने हथियारबन्द हमलेको हमला मानकर तो कमाल ही कर दिया है। आजकल तो ठंडी लड़ाअियां गरम लड़ाअियोंसे ज्यादा दुखदाअी होती हैं। अिस विज्ञानके युगमें जबर्दस्ती क्या-क्या रूप धरकर नहीं आ सकती। अिसलिये आजकल तो यूनो तभी शान्तिकी ओर बढ़ती हुअी मानी जा सकती है जब वह दुनियाभरके न सही कमसेकम अुन देशोंके बीचमें जो अुसकी गुटमें शामिल हैं किसी तरहका बैर न बढ़ने दे और यह तभी हो सकता है जब यूनो बढ़ते हुअे बाजारपर अंकुश रख सके और यह अुसकी ताकतसे बाहर है। अिसके लिअे चाहिये सुरक्षा कौन्सिल अैसे मुल्कोंकी जो फाके मस्त हो और जिनकी मुठ्ठीमें जाड़ा रहता हो। जो चुल्लूसे पानी पी लेते हो और बांहकी तकिया लगा लेते हो। कोअी कह सकता है न नौ मन तेल होगा, न राधा नाचेगी। पर शान्ति तो राधासे बहुत बड़ी है। अुसके लिअे ९९ मन तेल चाहिये। और अुसकी खातिर अितना तेल जुटाना तेल फेंकना नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमेरिका समझ रक्खे, अमेरिकासे ही हम यों कह रहे हैं कि अिस वक्त दुनियामें सबसे मालदार वही है कि तीसरी लड़ाओके बाद सबसे वही ज्यादा टोटेमें रहेगा। और यह तो हम अुस वक्तकी बात कह रहे हैं जब हम यह मान लेते हैं कि तीसरी लड़ाओमें अमेरिकाकी ही जीत होगी और अगर यह मानकर कहें कि अमेरिकाकी हार होगी तब तो हम यही कहेंगे कि अमेरिका तीसरी लड़ाओके बाद अींटसे अींट बजा बैठेगा और बर्बाद हो जायगा। और अिस पिछली बातकी ज्यादा सम्भावना है क्योंकि बर्तानियाको लूटकर लुटेरे मुल्क अगर कुछ सामान पा सकते हैं तो रूसको लूटकर तो निरी राख ही हाथ पड़ेगी फिर वे अैसी बेवकूफी क्यों करने लगे? अमेरिकाके तरफदार मुल्क अैसे ही अमेरिकाके दुश्मनसे जा मिलेंगे जिस तरह चांगकाओी शेकके जनरल माडसे जा मिले थे और अमेरिकाका दिया हुआ पैसा चांगके हाथोंमें होता हुआ नेशनलिस्ट चीनके जेनरलोंकी मार्फत मास्कोतक पहुँच जाता था। अिसमें शक नहीं कि अगर अिस वक्त दुनियामें शान्ति नहीं है तो अिसका सबसे ज्यादा जिम्मेदार अमेरिका है। बर्तानिया दूसरे नंबरपर है और रूस तीसरे नंबर। हम सिर्फ गिनानेके लिअे दे रहे हैं।

दुनियाको अमरीकी दुनिया या रूसी दुनियामें बाँटना बुरा काम है। जो अैसा चाहते हैं वे अिसकी बुराओसे नावाकिफ हैं; नहीं तो वे अैसा नहीं करते। यह ठीक है कि वे यह कहकर अुसी बोलीमें बोल रहे हैं जिस बोलीमें हिन्दुस्तान यह कहकर बोलता है कि कहाँ राजा भोज और कहाँ गंगुआ तेली। यानी वे यह कहना चाहते हैं कि अिस वक्त दुनिया दो हिस्सोंमें बँटी हुओ है। अेक पूंजीदारोंमें और दूसरी नादारोंमें। यानी अुनमें जिनके हाथ और पाँव ही अुनकी पूंजी है और यह बेशक ठीक है। पर अुनकी जगह अमरीकी और रूसी शब्द अपनाकर वे लड़ाओको जाने अनजाने पास ला रहे हैं। यह ठीक है कि यह ख्याल भी वक्तकी देन है और तभी तो हम कहते हैं कि यूनो लड़ाओ नहीं रोक सकती। क्योंकि अुसके अन्दर लड़ाओका बीज छिपा है और वह बीज है आपसी अविश्वास। अुसे अब चाहे आप अमरीकी-रूसी अविश्वास कह लीजिये या पूंजी श्रम अविश्वास कह लीजिये।

अविश्वास है और अिसे मिटाना होगा। पूंजीदार श्रमीके सामने असलमें पूंजी नहीं पटकता। पूंजी श्रमके सामने पटकी जाती है। श्रमके कब्जेमें रहती है। पूंजी और श्रमके बीचमें रत्तीभर भी बेअेतबारी नहीं। श्रमसे पूंजी और पूंजीसे श्रम यह सिलसिला अनादि और अनन्त है। पूंजीदार और श्रमी ये दोनों मिलकर बेअेतबारी पैदा करते हैं और यही अधर्म है। और अिसी अधर्मको दूर करनेके लिअे भगवान अवतार लेते हैं, रिषियोंको ज्ञान होता है, पैगम्बरोंपर वही अुतरती है और ज्ञानियोंका ज्ञान जागता है और अुसीमेंसे कहीं समताका फूल खिल अुठता है तो कहीं वही फूल समाजवाद नामसे पुकारा जाता है। दोनोंमें अन्तर है पर अन्तर अितना ही है कि अेक साधुके हाथमें है और अेक सिपाहीके हाथमें। हिन्दुस्तानमें पूंजीदार और श्रमी हमेशासे रहे हैं। पर वजह कोओी भी हो अुनमें बेअेतबारी नहीं थी। अेकको दूसरेपर पूरा विश्वास था। तभी तो यहाँ लेनदेनमें कोओी लिखा-पढ़ी न थी। रजिस्ट्रीकी तो बात ही क्या? आज वह चीज हिन्दुस्तानमें नहीं। अबसे पचीस बरस पहले गांवमें ज्यादा और शहरोंमें कहीं-कहीं थी। ५० बरस पहले शहरोंमें काफी थी। सौ बरस पहले बहुत थी पर घटतीपर थी और २०० बरस पहले वह खूब फलफूल रही थी। आज हिन्दुस्तानमें क्यों नहीं, अिसका कारण सब जानते हैं। हम कहकर क्या करें? हम तो सिर्फ यही कहना चाहते हैं कि आज दुनियामें शान्तिकी स्थापनाके लिअे पूंजीपतिको श्रमीका पूरा विश्वास करना होगा और खजानेकी चाबी श्रमीके हाथमें देनी होगी और हमें विश्वास है कि श्रमी कभी पूंजीपति नहीं बनेगा। वह तो पूंजीको पूंजीपतिकी थाती ही समझता रहेगा। कुंजी हाथमें आनेसे श्रमका अुसे पूरा विश्वास हो जायगा। अितना आनन्द आने लगेगा कि वह चाबी खुशीसे पूंजीपतिके सामने फेंक देगा और कह देगा कि अिस बलाको तूही संभाल और सुख चाहे तो अिसे समुद्रमें फेंक दें। अमेरिका हमारे अिस आशयको समझ ले और अमरीका और रूस अेक दूसरेपर विश्वास करने लगें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम !

: श्री 'अंचल' :

(१)

मनकी पूजाके गीतोंका तुमको पुण्य प्रताप कहूँ
या बरसाती शैल-शिखरका निर्झर कहूँ—विलाप कहूँ
मेघों भरे क्षितिजमें डूबी छाँहोंवाली भाम कहूँ
अपनी आवारा आँखोंका तुमको मधुर विराम कहूँ
यह दर्पण सा रूप तुम्हारा मैं सुखकर वरदान कहूँ
कविका स्वप्न कहूँ या तुमको पावनताका प्राण कहूँ

(२)

अितनी ऊँची हो तुमको देवत्व-शिखा साकार कहूँ
अितनी अुज्ज्वल हो मैं तुमको किरणोंकी मीनार कहूँ
हो तुम अितनी दग्ध तुम्हें मरुका जलता पाषाण कहूँ
हो अितनी सुनसान अुमंगोंका तुमको बीरान कहूँ
तुमको कितना प्यार करूँ मैं मनसन्तोष न पाता क्यों
तुम्हें अुचित आदर दे पाया मैं न कभी कह पाता क्यों

(३)

बेसुध अपनेमें डूबा था दर्पभरा मेरा मन था
था गतिमें विश्वास अकम्पित यौवनका पागलपन था
मैंने भी जीवन देखा था किन्तु न था तुमको देखा
अबतक या न लिया सपनोंने पंख कटे दुखका लेखा
तुमको जीवित कब्र कहूँ अधफूंके शवका दाह कहूँ
धधक रही जिसकी प्रतिहिंसा वह लावेकी राह कहूँ

(४)

जाग अुठी मेरे मनमें शतशत जन्मोंकी व्याकुलता
तुम युग युगकी पहचानी हो नित्य नयी जिसकी ममता
शक्ति भरी बाहें ये तुमको घेर रुकी रह जाती हैं
अिस अनुगत मनकी तृष्णाअें अुठ न अधर तक पाती हैं
भव्य अुषाके प्रात पवनका केशर-रंजित राग कहूँ
तुमको होमानलमें डूबी अंजलियोंकी आग कहूँ

(५)

डोल अुठा संकल्प, हुआ अस्थिर सुखका विश्वास अचल
मेरी अविनाशी क्षमतामें जाग अुठी है क्षुब्ध अनल
जी कराना है कह दूं तुमको नयी भक्तिका अुदयाचल
तुम्हें विजित जीवनपर छाअी कहूँ अमरताकी हलचल
या अपने जूठे जीवनका तुमको पूजाथाल कहूँ
हों पुनीत ये मेरी आँखें मैं तुमको जयमाल कहूँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तमिळ नाटकोंके सूत्रधार-श्री सम्बन्ध मुदलियार

: श्री रा. वीलिनाथन :

कहा जाता है कि 'ग्रेट मेन थिंक अेलाअिक' (Great men think alike) यानी बड़े लोग अेकमतके होते हैं। अिस कहावतको सत्य सिद्ध करनेके लिये अेक कहानी भी प्रचलित है। वह बादशाह अकबरकी है या किसी अन्य बड़े सम्राटकी—अिसका अन्वेषण करनेका प्रयत्न मैं यहाँ नहीं करूंगा। जो हो, मैंने अपनी अुक्त कहानीका नायक अकबरको बना लिया है। वह कहानी अिस प्रकार है :—

अेक दिन बादशाह अकबर अपने दरबारी दोस्त सलाहकार बीरबलके साथ बागमें टहल रहे थे। बादशाहको बहुत दिनोंसे अिस विषयपर संदेह था कि बड़े लोग कैसे अेकमत हो सकते हैं : वे अुस दिन भी अिस विचारमें निमग्न होकर बीरबलके साथ यन्त्रवत् घूम रहे थे। अेकाअेक विचारोंकी शृंखला टूटी तो अुन्होंनें बीरबलसे कहा, "बीरबल, मैं बहुत दिनोंसे तुमसे अेक बात पूछना चाहता था। वह यह है कि....."

बादशाह अपना वाक्य पूरा कर भी नहीं पाये थे कि बीरबल बीच हीमें बोल अुठे, "जहाँपनाह! आपका चेहरा देखते ही मैं जान गया था कि आप मुझसे कुछ पूछना चाहते हैं। वह बात यह है कि..."

बीरबलके अिस जवाबसे बादशाहका आश्चर्य और भी बढ़ गया। अुन्होंने पूछा, "तुमको यह कैसे मालूम हुआ?"

बीरबलने जवाब दिया, "अिसलिये कि आप भी बड़े हैं और मैं भी कम बड़ा नहीं हूं। बड़े लोगोंका अेकमत होना स्वाभाविक ही है।"

बादशाहने कहा, "मैं तो तुमसे यही सवाल करने जा रहा था कि बड़े लोग कैसे अेकमतके हो सकते हैं?"

"अिसलिये कि वे बड़े हैं!"—बात काटकर बीरबलने जवाब दिया।

"मुझे अिसी बातपर विश्वास नहीं हो रहा है कि बड़े दिमागवाले अेकमत भी हो सकते हैं?"—अकबरने आज्ञा भरे स्वरमें कहा।

बीरबलने विनयसे अुत्तर दिया, "सम्राट, जब आप बड़ोंके अेक मत होनेकी बात नहीं मान रहे हैं तो मुझे लाचार होकर आपके बड़े होनेमें शक करना पड़ रहा है"

बादशाहको अिसपर गुस्सा तो आया पर अुन्होंने अुसे होंठोंमें दबाकर ही कहा, "क्या तुम अिस बातका कोअी सबूत पेश कर सकते हो कि बड़े लोग अेकमतके होते हैं?"

बीरबलने बेखौफ होकर जवाब दिया, "हाँ, जरूर!"

बीरबलने अुसी वक्त बादशाहसे अिजाजत लेकर दरबार बुलवाया। जब सभी दरबारी हाजिर हो गये तो बीरबलने खड़े होकर बादशाहकी तरफसे कहा कि बादशाहकी यह हार्दिक अिच्छा है कि कल श्री अेकलिंग महादेवजीका दूधका अभिषेक हो। अगर बादशाह चाहें तो अुनकी तरफसे सारीका सारा अिंतजाम किया जा सकता है। पर बादशाह चाहते हैं कि अिस पवित्र काममें अपने दरबारियोंका भी हाथ हो। अिसलिये वे आप लोगोंसे यह चाहते हैं कि अपने दरबारियोंमें हर अेक अेक अेक-लोटा दूध लाये। महलके बगीचेमें जो बडा चबूतरा है, वहाँ अेक अूँची जगह पर अेक घड़ा रखा रहेगा, अुसमें भोर होनेसे पहले वह अपना लाया हुआ दूध डाल दे। आशा है दरबारी अितना जरूर करेंगे।

सबनें नतमस्तक होकर बादशाहका यह हुक्म माना और अपने-अपने घर चले गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरे दिन सबेरे-सबेरे सब दरबारी अेक-अेक करके दूध भरे लोटेके साथ महलके बगीचेमें गये और अपने-अपने लोटेका दूध घड़ेमें अुड़ेलकर चले आये।

दस बजेके करीब दरबार लगा और दूधका घड़ा अुठाकर दरबारमें लाया गया। देखा तो अुसमें दूधकी जगह पानी भरा था। अेक लोटा भर भी दूध अुसमें नहीं मिला था।

यह देखकर बादशाह आश्चर्यमें पड़ गये और बीरबलकी तरफ प्रश्नवाचक दृष्टिसे देखा तब बीरबलने अुठकर कहा, "बादशाह सलामत! आपको यह अजीबो-गरीब वाकया देखकर ताज्जुब हो रहा है कि दूधकी जगह पानी कैसे आया? यह कोअी जादू-टोना तो नहीं है? सच बात तो यह है कि हमारे दरबारके सभी दरबारी बडे और अक्लमंद हैं। अिसलिये अुनमें हर अेक अपने दिलमें यही बात सोची कि बाकी सब तो जरूर दूध ही ले जायंगे, हम फिजूल अपने घरका अेक लोटा दूध क्यों बरबाद करें? दूधके बदले अेक लोटा पानी डाल दें तो भी किसीको कानोंकान खबर न होगी। और अपनी सोची बातको अमलमें भी ला दिया। यही वजह है कि घड़ेमें दूधकी जगह पानी भरा है। यह हमारे दरबारियोंका दोष नहीं, बल्कि अुनकी तीक्ष्ण बुद्धिका प्रमाण है। अब कहिये, मेरी बात सच निकली कि नहीं?"

अपनी आँखों देखी अिस घटनाके कारण बादशाह अकबरको यह झख मारकर मानना ही पड़ा कि बड़ोंकी बुद्धि अेक ही तरह काम करती है और अिसलिये अुनका अेकमत होना भी स्वाभाविक है।

अूपरसे देखनेमें तो यह कहानी हास्यरससे ओत-प्रोत मालूम देती है, पर गहराओमें पैठकर देखनेसे मालूम होगा कि अिसमें अेक महान तथ्य छिपा हुआ है. विचार-स्वातन्त्र्यके साथ-साथ आजकल हम देखते हैं कि हमारे देशमें बड़े-बड़े बुद्धिमान लोगोंकी तो कोअी कमी नही है; किन्तु अुनमें अेकमत कहीं भी नहीं दिखता। "मुंडे-मुंडेर्मतिभिन्ना" वाली कहावत लागू होती है। अिससे हमारे देशमें अैसे-अैसे विचित्र राजनीतिक दावपेंच, अुलझनें और गुटबन्दियाँ दिखलाअी दे रही हैं, जिससे देशकी हानि होनेकी ही अधिक सम्भावना रहती है।

देशकी स्थितिको देखते हुअे जमानेसे चली आती हुअी 'ग्रेट मेन थिंक अलाअिक' वाली कहावतपरसे हमारा विश्वास अुठता ही जा रहा है। यह हाल केवल अेक प्रान्त या भारतका ही नहीं; सारे संसारका है। हो सकता है कि भिन्न मत कोअी भलायी लाये, पर अुसमें देशके हानिकी मात्रा ही अधिक निहित मालूम होती है। वैसे अेकमतसे कहीं हानि हो जाय भलाअीकी मात्रा ही अधिक सम्भव है। और तो और राजनीतिके दलदलमें फँसे हुअे बुद्धिमान नेताओंको देखते हुअे यह विश्वास भी नही हो पाता है कि ये लोग अेक दिन अेकमत होकर देशका कुछ हित करेंगे या अलग-अलग डेढ़ चावलकी खिचड़ी पकाना बन्द करेंगे।

\+ \+ \+

अभी-अभी गत पहली फरवरीको मद्रासके तिरुवल्लिक्केणी (ट्रिप्लिकेन) में अेक अनोखी तथा अनहोनी घटना घटी। जिसको देखनेपर पतझड़में पेड़पर नवपल्लव लगे-से मालूम हुअे। तमिलनाडुके सभी बड़े-बडे नेता, जो राजनीतिक दाँवपेंचमें पड़कर भिन्न-भिन्न गुटबन्दियोंमें बँट हुअे हैं, अपनी विचार-विभिन्नताको भूलकर अेकमत होकर, तिरुवल्लिक्केणीके नॅशनल गर्ल्स हाअीस्कूलके कला-मण्डपमें आकर अेक हो रहे थे।

अेक तरफसे किसी भी दल विशेषसे दूर रहनेवाले सर. सी. पी. रामस्वामी अय्यर आये तो दूसरी तरफसे मद्रास सरकारके महान् कर्णधार श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य प्रवेश कर रहे थे। अेक ओरसे तमिलके अनन्य अुपासक स्वनाम धन्य श्री. वि. कल्याण सुन्दर मुदलियार दाखिल हुये तो दूसरी ओरसे 'द्रविड प्रगतिशील संघ' के अद्वितीय नेता और अपनी भाषण-पटुताके कारण प्रास-अनुप्रास-सम्राटकी अुपाधि प्राप्त किये हुये श्री अण्णादुरै महाशयने पदार्पण किया। अेक राहे तमिल राज्य संघके जन्मदाता और घनेबनकी शंका करनेवाले घंटेके समान अपने मधुर भाषणोंसे मनको मोहितकर मन्त्रमुग्ध-से करनेवाले श्री. म. पो. शिवज्ञान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रामणिजी आये तो दूसरी तरफ़से बड़े-बड़े पत्रकार, नाटककार, मुप्रसिद्ध अभिनेता आदि अन्दर आकर अपने अपने आसनोंपर बैठे। अुस समय वहाँ अेकत्रित सबके दिलमें अेक ख्याल, अेक विचार छोड़ और कुछ नहीं था।

यह दृश्य देखा तो मनमें आया कि यह सब क्या हो रहा है? कहीं तमिलनाड़का भाग्य सूर्य तो अुदय नहीं हो गया? अहा! तमिलनाड़के भाग्यका क्या कहा जाय? तमिलनाड़ आगेसे राजनीतिकी गुटबंदीमें न पड़ेगा। राजनीतिक दांवपेंचके कारण हानि न अुठायेगा।

अिन विचारोंका मनमें आना था कि मेरे मनमें अन्दर जाकर देख आनेकी अुत्कंठा लहरें मारने लगी। अन्दर जाकर क्या देखता हूँ कि आधुनिक तमिल नाटकके अेकमात्र सूत्रधार पम्मल श्री संबन्ध मुदलियारका अस्सीवाँ जन्मदिन, जिसे 'शताभिषेकम्' कहते हैं, धूम धामसे मनानेका अत्युत्तम ढगसे आयोजन किया गया है और अुनके प्रति सम्मान-प्रदर्शन करनेके लिये यह सर्व दल सम्मेलन हुआ है अर्थात् सभी राजनीतिक दलोंके नेता भाग ले रहे हैं। अिससे अनुमान किया जा सकता है कि साहित्यकार संबन्ध मुदलियार कैसे लोकप्रिय हैं तथा तमिलनाड़की साहित्य-सेवी जनताके हृदमें कितना स्थान पा चुके हैं।

तमिलनाड़के जन-समूहने यह निरूपण कर दिया कि चाहे हम राजनीतिके मामलेमें भिन्न मत हों पर साहित्यके पोषणमें हम अेकमत हैं। हम कभी भिन्न-मत न थे, न हैं और न होंगे। काश, राजनीतिके मामलोंमें भी यह रास्ता अख्तियार किया जाता।

\+ + + +

प्राचीन तमिल-साहित्य मुख्यतया तीन अंगों (विभागों) में विभाजित है। वे तीनों अंग अिस प्रकार हैं:—अिथल, अिशै, नाटक अर्थात् साहित्य जिसमें गद्य-पद्य शामिल है, संगीत और नाटक। नाटकको अलग अंगके रूपमें माननेसे ही यह अनुमान किया जा सकता है कि तमिलनाड़ में बहुत प्राचीन कालसे ही नाटकको अेक प्रधान तथा विशिष्ट स्थान प्राप्त है। अुस जमानेमें तमिलनाड़के राजे महाराजाओं और राव-रअीसोंने तमिल साहित्यके अिन तीनों अंगोंकी पुष्टि करनेमें खुल कर हाथ बँटाया।

पर अब वे प्राचीन नाटक ग्रन्थ देखनेको नहीं मिलते और अगर मिलते भी तो शिलप्पधिकारम् या चिंतामणि जैसे महाकाव्योंमें केवल प्राचीन नाटकीय ढंग या रूपमें ही। अुनका अवलोकन करने पर यह अनुमान किया जा सकता है कि अेक जमानेमें तमिल नाटक साहित्य अत्यन्त अुन्नतिके शिखरपर रहा होगा। तमिल साहित्यमें महाकाव्योंके कालके बाद या तो नाटक-साहित्य अप्राप्य हो गया था या नाटक-सृजनका कार्य ढीला पड़ गया था। अुसे देखने पर शंका होती थी कि तमिल-साहित्यके प्रधान तीन अंगोंमें जो नाटक-साहित्य है, अुसका तंतु टूट तो नहीं गया?

श्री. प. संबन्ध मुदलियारने अिस आशंकाको निर्मूल कर दिया तथा अुन्होंने अिस बीसवीं सदीके प्रारंभमें ही नष्टप्राय नाटक-साहित्यको पुनर्जीवन प्रदान किया। श्री संबन्ध मुदलियार अब अपने अिक्यासीवें वर्षमें पदार्पण कर चुके ह। अुन्होंने अिस अरसेमें अुन्नासी नाटक रचे। अुनमें कअी अेक तो संस्कृत और अंग्रेजी नाटकोंके आधार पर लिखे गये हैं या अनूदित हैं। अुन्होंने अनेक मौलिक नाटकोंका भी सृजन किया है। अेक जगह पर अुन्होंने सगर्व और निर्भय होकर कहा है कि संस्कृत साहित्य-भंडार अमूल्य ग्रन्थ-रत्नोंसे भरा है। मैंने अठारह वर्ष तक संस्कृतके ग्रन्थरत्नोंका अच्छा अध्ययन किया, तभी मैं नाटक लिख पाया।

संबन्ध मुदलियार केवल नाटक-रचयिता ही नहीं, वरन् अच्छे कलाकार तथा अभिनेता भी हैं। अुन्होंने अपने नाटकोंमें अेक सौ से अधिक नाटकोंकी भूमिकामें पांच सौ से अधिक बार भाग भी लिया। अब, कहनेकी आवश्यकता नहीं कि वे कितने अूंचे अभिनेता हैं।

अेक ज़माना वह था, जब कि अच्छे कुलीन लोग नाटकोंमें भाग नहीं ले पाते थे। अगर किसीने भाग लिया तो वह चरित्रहीन समझा जाता था, नीची नज़रसे देखा जाता था। यही कारण था कि कोअी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुच्च कुलवाला नाटकोंमें भाग नहीं लेता था। अतः अुस ज़मानेमें अैसा अेक दल था, जो नाटकोंके ज़रिये ही अपना जीवनोपार्जन करता था। अुस दलका समाजमें कोअी स्थान न था और अत्यन्त अवहेलनाकी दृष्टि से देखा जाता था।

श्री. प. संबन्ध मुदलियारने अिस विषयमे अेक क्रान्ति ही खड़ी कर दी। वे अेक कुलीन मुदलियार वंशमें पैदा हुअे। अुनके पिता श्री. विजयरंग मुदलियार स्कूलोंके डेपुटी अिन्स्पेक्टर थे। संबन्धम् अपने सुयोग्य पिताके सुयोग्य पुत्र सिद्ध हुअे। अुन्होंनें कानून पढ़ा, परीक्षा अुत्तीर्ण की और वकालतका पेशा भी शुरू किया। वकालत भी खूब चली थी। वे वकीलसे जज बने। अुच्च कुलमें अुत्पन्न होकर, अुच्च पदवीमें रहते हुअे भी अुस कट्टर पन्थीकालमें भी अुन्होंने नाटकोंमें अभिनेता बनकर भाग लिया। अुन्हींके प्रयाससे बीसवीं शताब्दीके अुस प्रारंभकालमें मद्रासमें 'सुगुण विलास सभा' नामसे अेक अमेच्यूर नाटक मण्डलीकी स्थापना हुअी। अुसके सभापति अुच्च कुलमें अुत्पन्न सर. सी. पी. रामस्वामी अय्यर थे और अुसके संरक्षकोंमें थे श्री. बी. बी. श्रीनिवास अय्यंगार जैसे सुप्रसिद्ध मेधावी।

आधुनिक तमिल साहित्में नाटकोंके सृजनका बीजारोपण करनेवाले श्री संबन्ध मुदलियार ही हैं। अिन्हीं सूत्रधारके कारण नाटक-साहित्य आज फूल-फल रहा है। हो सकता है कि अिनके नाटक साहित्यकी कसौटीपर खरे न अुतरते हों, पर अभिनयकी दृष्टिसे देखा जाअें तो अत्यन्त अुत्तम हैं।

\+ \+ \+

प्राचीन कालसे ही हमारे भारतमें यह परिपाटी चली आ रही है कि षष्ठि अब्द-पूर्ति अस्सी वर्षकी पूर्ति जिसे 'शताभिषेकम्' कहते हैं, साधारण से साधारण व्यक्ति भी अपनी हैसियतके मुताबिक मनाये। अिस प्रकार जो निरोग लंबा जीवन बिताता तो वह महान समझा जाता था। अुसी परिपाटीका अवलंबन कर तमिल नाटकके महान कर्णधार श्री. प. संबन्ध मुदलियारकी अस्सी वर्ष पूर्त्तिका अुत्सव मनाया गया। अुस अवसरपर मद्रासके मुख्य मन्त्री राजाजीने स्वर्ण-वस्त्रकी खिलअत अुन्हें अपने हाथों पहनाअी तथा अपने भाषणमें कहा कि श्री संबन्ध मुदलियारने अुस जमानेके नाटकोंकी दुरअवस्थाको देखकर अुनके सुधारका भार अपने अूपर लिया और अपने नाटकों तथा अभिनयद्वारा अुन्हें लोक-कल्याणकारक बनाया। वे अपने व्यवस्थित जीवन तथा अच्छी चाल-चलनके कारण अबतक बिना कोअी दवा-दारूका सेवन किये दीर्घ जीवन बिता रहे हैं। हमारी प्रार्थना है कि वे चिरजीव रहीं तथा अपने साहित्य-सृजन द्वारा समाजका भला करते रहें।

अुत्सवके सभापति श्री सी. पी. रामस्वामी अय्यर ने श्री संबन्ध मुदलियारकी सादगी, सुधारक-वृत्ति तथा साहित्य-सृष्टिकी महत्ता आदिका वर्णन करते हुअे कहा कि श्री सम्बन्ध मुदलियारके नाटकोंकी भूमिकामें अभिनय करनेके लिये, अुस जमानेमें कोअी स्त्री तैयार न होती थी। कोअी पेशेवर स्त्री तैयार होती तो अुसका अभिनय काफी सन्तोषजनक नहीं होता था। अतः, श्री संबन्ध मुदलियारको अपने कुछ पुरुष साथियोंको स्त्री बनाना पड़ा याने स्त्रियोंका भेष धारण कर अभिनय योग्य बनाना पड़ा। अुस जमानेमें श्री रंगवडिवेलु जैसे पुरुष स्त्रियोंका भेष धारण कर रंगमंचपर आ जाते तो स्त्रियाँतक अुनकी वेश भूषा देखकर लोट-पोट हो जाती थीं।

अिस प्रकार सर्व दलके नेताओंने मुक्तकण्ठसे अेक मत होकर श्री संबन्ध मुदलियार की सराहनाकी। यह कहना अत्युक्ति नहीं होगा कि तमिल नाड़में श्री संबन्ध मुदलियार ही अेक अैसे व्यक्ति निकले जिनकी दक्षिणके सभी राजनीतिक दलोंने अेक मंचपर सराहना यह दृश्य देखनेपर हर व्यक्ति साहित्यकी महत्ता और शक्तिको माने बिना रह नहीं सकता। साहित्यहीमें वह अपूर्व शक्ति है कि सब दलोंकी टूटी कड़ीको मिला दे

श्री संबन्ध मुदलियारने अिस प्रोत्साहनके लिये सबको धन्यवाद देते हुअे कहा कि यह मेरा अहोभाग्य है कि श्री. वी. वी. श्रीनिवास अय्यंगार, सर. सी. पी.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामस्वामी अय्यर, राजाजी, श्री. वी. कल्याण सुन्दर मुदलियार जैसे महारथियोंके मध्यमें रहते हुअे साहित्य-सेवा करनेका सुवर्ण सुयोग प्राप्त हुआ। मैं अिस आनन्द-मय क्षणमें, सर्व शक्तिमान भगवानसे प्रार्थना करता हूँ कि अगर मुझे दूसरा जन्म लेना पड़े तो मेरा जन्म अिसी तमिल भूमिमें हो, आजके दोस्त ही तब भी मेरे सहयोगी बनें, अिस जन्मके माता-पिता ही दूसरे जन्ममें भी मेरे माता पिता बनें और मैं अिस जन्मकी ही भांति अुस जन्ममें भी साहित्य खासकर नाटककी सेवा करूँ। हृदयके अिन अुद्गारोंसे पता चलता है कि साहित्य-सेवाके प्रति अुनके हृदयमें कितना लगाव और अपार आकर्षण है।

अुनके बाल मित्र श्री वी. वी. श्रीनिवास अय्यंगारने कहा, "यद्यपि श्री संबन्धम् बूढे हो गये हैं, तो भी आज हम कड़े-से-कड़ा परिश्रम करते हुअे अुनको पाते हैं। ये बूढे लोग क्या कर सकते हैं?—अिस प्रकारका विचार मनमें लाना जरा भी अुचित नहीं।

"क्योंकि कुछ फल अैसे होते हैं जो धीरे-धीरे ही पकते हैं और भलीभांति पकने ही पर भूमिपर गिरते हैं, तब अुनका स्वाद भी कअी गुना बढ़ जाता है। अतः, संबन्धमसे तमिलनाड़को और क्या-क्या चीजें प्राप्त होंगी—अिसकी भविष्यवाणी करना अत्यन्त कठिन है।"

अंधा क्या चाहे, दो आँखें। समस्त भारतकी साहित्य-सेवी जनताकी भी यही हार्दिक कामना है कि श्री सम्बन्ध मुदलियार शतायु ही नहीं, सहस्रायु हों और अपने सुगंधित ग्रन्थ-पुष्पोंसे साहित्य-वाटिकाकी शोभा बढ़ाते अेवं महकसे सारे संसारको आकर्षित करते रहें।

हम क्या करें?

तुम पूछते हो कि 'हम क्या करें?' क्या तुम नहीं देख सकते कि अभी सारा काम करनेको पड़ा है। जन-समूहने जो महत्वपूर्ण कार्य अुठाया है, वह अितना विशाल है कि अुसमें हजारों लाखों नौजवानोंको अपनी तरुणाअीकी समस्त शक्ति, अपनी बुद्धिमत्ता और अपनी योग्यताको काममें लगाकर सर्वसाधारणकी सहायता करनेका चाहे जितना मौका मिल सकता है।

—'प्रिन्स कोपाटकिन'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेहमान

: श्री जहूरबख्श :

[श्री शौक़त थानवी अुर्दू भाषामें हास्यरसकी कहानियाँ लिखनेके लिअे तो प्रसिद्ध हैं ही, वे विभिन्न विषयोंपर मनोरंजक लेख भी खूब लिखते हैं। 'मेहमान' अुनके अेक अैसे ही लेखका स्वतन्त्र, परिवर्तित और परिवर्द्धित हिन्दी रूपान्तर है।--लेखक]

हम गरीब हिन्दुस्तानियोंके पीछे जितनी मुसीबतें, जितनी बलाअें हाथ धोकर पड़ी रहती हैं अुनमेंसे अेक मेहमान भी है। हमें खयाल भी नहीं होता, और वह हमारे सरपर अेकदम खुदाअी क़हरकी तरह फट पड़ती है। हमारा यह मतलब हरगिज नहीं कि हमें मेहमान बुरे लगते हैं या हम अुनसे अपनी जान बचाना चाहते हैं। हाँ, यह जरूर है कि हम हिन्दुस्तानी रीति-रिवाजके सुधारके लिअे खुदासे दुवा माँगते हैं कि अिन हिन्दुस्तानियोंको मेहमान बनना सिखा दे, और अगर ये मेहमान बनना नहीं सीखना चाहते, तो कम-से-कम, मेजवानोंमें ही अितनी समझ-बूझ पैदा कर दे, जिससे वे मेहमानोंकी आदतें बिगाड़नेकी कोशिश तो न किया करें। जरा अिस तमीजपर--अिस तहजीबपर ध्यान दीजिये--

रात आधीसे ज्यादह गुज़र चुकी है। दुनिया नींदकी गोदमें पड़ी आरामकी साँसें ले रही है। मगर वह देखिये, मेहमान साहब बगैर अित्तिला दिये खुदाअी कहर या भूचालकी तरह आ धमके और लगे अितने जोरोंसे चिल्लाने और किवाड़ पीटने कि अड़ोस-पड़ोस तो क्या, मोहल्ले-भरके लोग जाग अुठे। घर-मालिक घबराकर दरवाजेपर दौड़ा कि हे अीश्वर, यह कौन-सी बला आ टपकी? मगर देखता क्या है कि मेहमान साहब अेक बिस्तरे और अेक ट्रंकके साथ 'अस्सलाम अलैकुम' करते हुअे ताँगेसे नीचे कूद रहे हैं। सच बताअिये, अैसे मौकेपर अुस बेचारे मेज़वानकी क्या हालत होगी, जिसके घरमें अिन मेहमान साहबको न तो ठहरानेके लिअे जगह है और न सुलानेके लिअे चारपाअी। मगर वह दिलका दर्द दिलहीमें छिपा लेता और मेहमानकी आव-भगत करनेके खयालसे मुसकराते-मुसकराते कहता है--'अक्खाह, आप हैं! भअी, आज कहाँ रास्ता भूल पड़े?'

मेहमान साहब भी हँसते-हँसते जवाब देते हैं--'अरे भअी, तुम क्यों आने लगे! हमीं बेहया हैं, जो दौड़े-छूटे चले आते हैं। झाँसी जा रहे थे, दिल न माना कि आगरेसे गुज़रें और तुमसे न मिलें! अच्छे तो रहे? भाभी साहबाके मिजाज़ कैसे हैं? अुनसे हमारा सलाम तो बोल दो। और हाँ, बच्चे खैरियतसे हैं न? भअी, हम तो अुन्हें देखनेके लिअे तरस-तरस कर रह गये। अच्छा, अिस ताँगेवालेको क्या दे दें?'

घर-मालिक यह अिशारा समझ लेता और ताँगेवालेको किराया देनेके लिअे आगे बढ़ता है। मेहमान साहब 'पैसे हैं तो, दिये देते हैं' कहते हुअे जेब बजाते रह जाते हैं। मगर घर-मालिक 'वाह अैसा कैसे हो सकता है' कहते हुअे ताँगेवालेका हिसाब साफ कर देता है।

अब घर-मालिककी खोपड़ीपर अिस बातका भूत सवार होता है कि मेहमानको आराम पहुँचानेके लिअे क्या अिन्तजाम किया जाय? वह ताबड़तोड़ घरमें दाखिल रखता है और बीबीको झकझोर कर कहता है--'अे अुठो भी! देहलीसे छक्कन भाअी आ गये हैं। न हो, तुम बाल-बच्चोंको लेकर बावर्चीखानेमें चली जाओ। वहीं यहीं मेरी चारपाअीपर सो रहेंगे। घरमें ले-देकर अेक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यही कमरा कुछ अच्छा है और चारपाअी तो क़सम खानेके लिअे भी दूसरी नहीं है।'

बीवी आँखें मलते-मलते जवाब देती है—'भाड़में जाअें तुम्हारे अच्छन भाअी! जब देखो तब, हमारी छातीपर मूँग दलनेके लिअे आसमानसे यहाँ फट पड़ते हैं; जैसे हम अुनके बापके कर्जदार हों। खुदा मौत भी नहीं देता अैसे खाअूखप्पको!'

घर-मालिक गिड़गिड़ाकर कहता है—'चुप-चुप! मेरी अच्छी मलिका, खुदाके वास्ते चुप! कहीं अुनके कानोंमें भनक पड़ गयी, तो मेरा फजीता हो जायगा—नाम धूलमें मिल जायगा। अितना भी नहीं सोचतीं, वे दरवाजेपर खड़े हैं।'

बस, घरमें जैसे भूचाल आ जाता है। बच्चे चीख़ते-चिल्लाते हैं, रोते-कलपते हैं, बीवी अुनको डाँटती-डपटती है, मारती-पीटती है और खींचती-घसीटती बावर्चीख़ानेमें ले जाती है। अब घर-मालिक जल्दी-जल्दी चारपाअीपर अपना बिस्तर ज़रा क़रीनेसे लगाता है। अच्छन भाअीको अन्दर बुलाता है और कहता है—'आअिये तशरीफ़ रखिये!'

अच्छन भाअी चारपाअीपर बैठते-बैठते फ़रमाते हैं—'बड़ा शोर-गुल मचा! क्या भाभी साहबाकी तबीयत कुछ नाराज़ है? माफ़ करना भअी, तुम्हारे घरका कण्ट्रोल हमें जँचा नहीं। कण्ट्रोल देखना हो, तो हमारे घरका देखो। खुदाकी क़सम, पचास मेहमान भी आ जाये, किसीको कानों-कान पता न चले, और आनन-फानन कुल अिन्तजाम हो जाये। क्या मजाल, जो किसी बातकी कमी रह जाय।'

मगर घर-मालिकको अिन बातोंकी फ़िक्र नहीं है, फ़िक्र है अच्छन भाअीको खिलाने-पिलानेकी। अिसलिये वह बार-बार बावर्चीख़ानेमें जाता और आख़िर अच्छन भाअीके सामने खाना चुन देता है। ज़रा ग़ैर कीजिये, रातके दो बज चुके हैं, मगर अच्छन भाअी बड़ी बेतकल्लुफ़ीसे खाना खाने बैठते हैं और अितने शौक़से खाते हैं, गोया यहीं खाना खानेकी क़सम खाकर घरसे आये हैं। खाना खानेके बाद अच्छन मियाँ तो बिस्तरपर लेटे रहते हैं, मगर बेचारे घर-मालिकको अभी छुट्टी मिलना मुश्किल है। वह अच्छन भाअीके पास बैठ जाता और यहाँ-वहाँकी फ़ालतू बातें करने लगता है। कभी पानके लिअे पूछता है, कभी हुक्केके लिअे, और कभी यह भी—'कोअी तकलीफ़ तो नहीं है? देखिये, शर्म-लिहाज़की कोअी बात नहीं है- यह आपहीका घर है।'

अच्छन भाअी मन-चाही बात हाथ लगनेसे बहुत खुश होते और कहते हैं—'यार, बगैर चायके खानेका मज़ा किरकिरा ही रहा। ठण्ढके मौसममें अगर अेक प्याला भी गरम-गरम चाय पी लो, तो खानेका रंग जम जाता है।'

घर-मालिक घबराकर जवाब देता है—'चायका भी अिन्तज़ाम हो जाता, मगर अितनी रातको दूध मिलना तो मुश्किल है।'

अच्छन भाअी फिर अुसी बेतकल्लुफ़ीसे फ़रमाते हैं—'अैसी चीज तो हमेशा घरमें रखनी चाहिअे; मालूम नहीं कब किस मौकेपर जरूरत पड़ जाय! क्या अड़ोस-पड़ोसमें किसीके यहाँ गाय, भैंस, बकरी नहीं है? लगाओ न पता, शायद जरा-सा दूध मिल जाये, तो.....'

घर मालिक बैठी हुअी आवाजमें जवाब देता है—'जरा सोचिअे, अैसे जाड़ेमें अिस वक्त कौन हमारे लिअे दूध दुहे देता है? कोअी बाहर तक तो निकलेगा नहीं!'

अच्छन भाअी अफ़सोससे हाथ मलते-मलते कहते हैं—'च् च् च् च्, बुरे लोग हैं तुम्हारे यहाँके! हमारे यहाँ आओ, चाहे जिस वक्त जबान हिलाओ और घड़ों दूध ले लो घड़ों दूध! क्या मजाल, कोअी टाला-टूली कर जायँ।'

सच मानिअे, जो बर्ताव अिन महेमान साहबने अिस गरीब हिंदुस्तानी घर-मालिकके साथ किया, अगर वही किसी अँगरेजके साथ किया जाता, तो मजा आ जाता। पहले तो कोअी मेहमान आधी रातके वक्त किसी अंगरेजके घर जानेकी ढिठाअी करता ही नहीं; दूसरे दिमागी फितूरकी वजह अैसी ढिठाअी कर भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैठता, तो अितनी बुरी तरह बंगलेसे निकाला जाता, कि फिर शायद जिन्दगी भर मेहमान बननेका नाम न लेता। अँगरेजोंपर यह मेहमानवाला खुदाअी कहर* १ नाजिल*२ नहीं होता, और अगर कभी नाजिल होता भी है, तो हफ्तों पहले घर-मालिकको अित्तिला देकर और अुसकी मंजूरी लेकर। अँगरेज अपने किसी दोस्त या रिश्तेदारके यहाँ बगैर किसी जरूरत या वजहके नहीं ठहरते। वे होटलमें ठहरना ज्यादा पसन्द करते हैं। अगर किसी दोस्त या रिश्तेदारके यहाँ ठहरना भी होता है, तो बहुत पहले अित्तिला देकर। मंजूरी मिल गयी, तो ठीक; नहीं तो सीधे होटलका रास्ता पकड़ते हैं। अगर होटल न हो, तो फिर डाक-बंगला तो कहीं गया नहीं। अँगरेज मेहमान अैसे बदतमीज नहीं होते कि जबर्दस्ती मेजबानके सरपर भूतकी तरह सवार हो जायँ, और न अँगरेज मेजबान ही अैसे बेहूदेपनके पुजारी होते हैं कि खुद तकलीफ भोगें और फजूलकी अिल्लत सरपर लादे फिरें।

यह खूबी तो हिन्दुस्तानी मेहमानोंमें ही दिखाअी देती है कि वह जरा-सा सामान लाद-लूदकर बड़ी आजादीके साथ चाहे जिसके दरवाजेपर जा खड़े होते हैं। जिससे अेक बार जान-पहिचान भर हो जाय, फिर तो अुसे अितनी तकलीफ पहुंचाते हैं कि वह बेचारा दुनियाके तमाम गुनाहोंसे जिन्दगी भरके लिअे छुटकारा पा जाता है। जिस वक्तसे तशरीफ लाते हैं, और जिस वक्त तक वापिस नहीं चले जाते, घर-मालिककी यह हालत होती है कि बेचारा अपने होश-हवाससे भी हाथ धो बैठता है। और तो क्या, अुसके घरके सब आदमी—क्या बच्चे, क्या बूढे, क्या औरत क्या मर्द सिर्फ मेहमान साहबकी ही फिक्रमें दुबले रहते हैं; जैसे मेहमान साहब कोअी बड़े सरकारी ऑफिसर हों और अुन्होंने अुनके घरमें आकर अपना दफ्तर खोल दिया हो। कोअी पान बना रहा है, कोअी हुक्का गरमा रहा है। वक्तपर खाना तैयार करनेके लिअे तो बावर्चीखानेमें पूरा स्टाफका स्टाफ जुटा हुआ है। घर-मालिक बदहवासकी तरह बार-बार अन्दर आता और कुल कामकी जाँच पड़ताल करता है। कभी-कभी गुस्सेमें आकर कहता है—'लाहौलविला कूवत! अभी तक मुर्ग भी साफ नहीं किया गया! वह मगरिबके बाद ही खाना खाते हैं और हमारे यहाँ अभी चावल तक नहीं चढे! खुदाके वास्ते तुम लोग कहीं मेरी नाक न कटवा देना। क्या कुछ बाजारसे भी मँगवाना पड़ेगा?'

अिसके जवाबमें कुछ काम करनेवाले तो चुप्पी साध लेते हैं, कुछके होंठोंपर बड़बड़ाहटके निशान दिखायी देते हैं, मगर घरकी मालकिन कब तक अैसी नुक्ता-चीनी बर्दाश्त कर सकती है? फौरन् गुस्सेमें आकर किसी बर्तनको पटकते-पटकते कहती है—'वाह! हाथ-पैर फुलाये देते हैं। कोअी कहाँसे चार हाथ लाये—कोअी कैसे हथेलीपर सरसों जमाये? खबर है, सौदा कब आया है? कह दो मैं ही बाज़ार चली जाती। फिर अभी कअी बाँस तो सूरज बाकी है और आप अैसी तोबा-तिल्ला मचा रहे हैं, जैसे वह हफ्तों भूखों मरते हुअे आये हैं।'

अब अगर घर-मालिक जवाब देता है तो यही सिलसिला वह शकल अख्तियार कर सकता है कि चूल्हा ही ठंडा हो जाय, खाना बाज़ारसे आये और मेहमान साहबको कैफ़ियत देनी पड़े—'क्या बतायें, घरमें तबीयत कुछ अैसी नासाज है कि सब लोग परेशान हैं।' अिसके खिलाफ अगर घर-मालिकने घर-मालकिनकी बात पीकर अक्लमन्दीका सुबूत दिया, तो खाना वक्तसे पहले तैयार होकर रहेगा।

मुख्तसर यह कि अेक मेहमानके आ जानेसे सारे खानदानका अिन्तजाम अिस तरह बदल जाता है, जैसे कयामत बरपा हो गअी हो। अुधर मेहमान साहब अपने रणमें कुछ अैसे दबे रहते हैं कि अुनके कानपर जूं भी नहीं रेंगती। अगर ज़रा हमदर्दी अुमड़ अुठी, और मनमें आ गया, तो घर-मालिकसे यों ही कह देते हैं—'अरे भअी, अितने तकल्लुफ़की क्या ज़रूरत थी! क्या हम कोअी गैर हैं? जो पक जाता, वही खा लेते।' मगर सचाअी यह है कि अगर मेज़बान बेचारा यह ढोंग न रचे, तो यही मेहमान साहब अुससे अितने नाराज़ हो जायं कि जहाँ पहुँचें, वहीं अुसका मज़ाक अुड़ायें। अुसकी खूब नुक्ता-चीनी करें। और अुसकी मेहमा-

*१ कहर—प्रलय। *२ नाजिल होना—आ पड़ना।

CC-0. In Public Domain: Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवाजीकी सारी खामियाँ कुरेद-कुरेदकर लोगोंको दिखाते फिरें।

मेहमान भी अलग-अलग मिजाजके और अलग-अलग दर्जेके होते हैं।

पहले दर्जेके वे हैं, जो अपनी साहब बहादुरीकी वजह मेजबानको तकलीफ पहुँचाते हैं। सुबह होते ही अुनके लिअे चायके साथ-साथ नाअीका अिन्तज़ाम करना पड़ता है। गुस्लखानेके साथ-साथ, जैसे बने वैसे, कमोड़का अिन्तज़ाम भी करना पड़ता है। नहीं तो सारी खातिर-तवाजोंपर धूल पड़ जाती है।

दूसरे दर्जेके वे हैं, जो अपनी अक्लमन्दीसे मेज़बानका नाकों-दम कर डालते हैं। अुनके लिअे मेजपर खाना लगाया गया, मगर वह कुर्सी आनेसे पहले और मेज़बानका अिन्तज़ार किये बगैर ही मेजपर जा बैठते और खाना खाने लगते हैं। अब न तो अुनको मेजपरसे हटाते बनता है और न अुनके साथ मेजपर चढ़कर खाना खानेको दिल चाहता है। अुनको पाख़ाना फिरनेके लिये गुस्ल-ख़ानेमें भेजिये, मगर वह कमोडको ठोक-बजाकर वापिस आ जायेंगे और कहेंगे– 'अरे साहब, यह क्या मज़ाक है! वहाँ पाख़ाने फिरने लायक जगह ही कहाँ है?' अुनके सोनेके लिअे अच्छे-से-अच्छा अिन्तजाम कीजिये और पलङ्गके चारों तरफ़ हज़ारों-लाखों पीकदान या थूकदान रख दीजिये। फिर सवेरे अुठकर देखिये; खुदा झूठ न बुलावे, आपको कमरेके सारे फ़र्श और दीवारों पर पानकी लाल-लाल पीक नदी-नाले बनाते नजर आयेगी।

अुनको अपने कमरेका चार्ज देकर दफ्तर चले जाअिअे, तो शामको कमरेकी हालत अिस तरह मिलेगी कि हुक्का कुर्सियोंके बीच गद्देपर औंधा पड़ा होगा, चिलम टुकड़ोंकी शकलमें दिखायी देगी, कालीन चिलम-राखसे रँगा और हुक्केके पानीसे भींगा नजर आअेगा और खुद मेहमान साहब लापता होंगे। अब अुनका अिन्तजार हो रहा है, लौंडी बार-बार खाना खानेके लिअे कह रही है, मगर खाना कैसे खाया जाय, मेहमान साहब तो गायब हैं। घर-मालिक बेचारा झूठे अखलाक के ढोंगसे दुखी है, भूखे पेटपर हाथ रखकर बैठा है और अुनकी बाटमें दरवाजेपर नजर गड़ाये हुअे है। वे रातको किसी भी वक्त जब जी चाहेगा आ धमकेंगे और अुनको अिस तरह देर करनेपर पछतावा तो जरा भी न होगा, अुलटे घर-मालिकपर अिलजाम थोपेंगे कि अुसने अिस आवारागर्दीमें अुनका साथ क्यों नहीं दिया।

अेक तीसरा दर्जा अुन मेहमानोंका है, जो ज्यादह-तर मेजबानके यहाँ आकर मुस्तकिल तौरसे डेरा डाल देते हैं। कअी-कअी महीने बीत जाते हैं, मगर जानेका नामतक नहीं लेते। मेजबान थोड़े दिन आव-भगत करनेके बाद अुनके साथ वही बर्ताव शुरू कर देता है, जो रोजाना आनेवालोंके साथ किया जाता है। मतलब यह कि अुनके लिअे न कोअी खासियत रहती है, न अुनके खाने-पीनेकी परवाह होती है। और न अुनसे दिन-भरमें पचास हजार बार यही पूछा जाता है कि आपको कोअी तकलीफ तो नहीं है? मगर तारीफ है अुनकी कि वे अितना होनेपर भी मेजबानके घरको हर तरह अपना घर समझकर बराबर जमे रहते हैं। शायद अपने दिलमें यह खयाल कर लेते हैं कि हमारी वजह घर-मालिक बड़े मजेमें हैं। अिस तीसरे दर्जेमें कुछ हजरत अैसे भी होते हैं, जो अेक मुद्दत तक मेहमान रहनेके बाद अपनेको अुस कुटम्बका मेम्बर समझने लगते हैं और फिर मेज-बानके घरवालोंपर अिस तरह हुक्म चलाना शुरू कर देते हैं जैसे सब कुछ अुन्हींका है। खानेमें देर हुअी, तो तकाजा कर दिया। तरकारीमें नमक तेज हुआ, तो नाराजी जाहिर कर दी। कोअी अैसी चीज बन गयी, जो खुदको पसन्द न आयी, तो अुसे आअिन्दह न बनानेके लिअे हुक्म दे दिया। मतलब यह कि वह अब अिस तरह रहने लगते हैं, जैसे यह घर अुन्हींके बाप-दादोंका है और वह पैदा भी अिसी घरमें हुअे हैं।

अीमानकी बात तो यह है कि हमने मेहमानोंके जितने दर्जे बताये हैं, वे सब किसी तरह काबिले-बर्दाश्त हैं। मगर आखिरी और बदतर दर्जा तो वह है, जिसका खयाल आते ही कलेजा काँप अुठता है, खून सूख जाता है और दिमाग चकराने लगता है। अब हमारे पागल होनेमें क्या शक है जब कि हमने अिस दर्जेवाले भी अपने मेहमान बनाये हैं और हमें खुद अपने अूपर ताज्जुब होता है कि क्यों बनाये–– किस तरह बनाये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़रा यह बेबकूफी मुलाहिजा फ़रमाअिये। अेक दिन किसीने हमसे कहा--"तुम्हारे यह देहलीवाले दोस्त जिनके चेहरेपर चेचकके दाग हैं और जो कविता भी करते हैं, फलाँ धर्मशालामें ठहरे हुअे हैं।" यह सुनते ही हम बेचैन हो अुठे, हमारे दोस्त और हमारे रहते धर्मशालामें ठहरें। बस, हम अुसी वक्त धर्मशालामें पहुँचे और अुनको अुनके सामान सहित अपनी कुटीमें ले आये। हमारी तरफसे यह अेक छोटा-मोटा नहीं, बहुत बड़ा पाप हो गया और दूसरे दिन सवेरा होते ही हमें अिसकी सजा मिलने लगी। मेहमान दोस्तने कहा--"हकीमजीने बादामका हलुवा और फल ही बता रक्खे हैं। दूध तो खैर, चलेगा ही, सेब और आँवलेके मुरब्बे के सिवाय पपीतेकी तरकारी और मूंगकी दाल भी ले सकते हैं। अिसलिये आप किसी तरहकी परेशानीमें न पड़िये--सिर्फ हकीमजीके बताये मुताबिक खाने-पीनेका थोड़ा-सा अिन्तजाम कर दीजिये।'

दो-अेक दिन बाद बीमार दोस्तने कहा--'आपके यहाँ न तो दाल अच्छी बनती है, न तरकारी अच्छी तैयार होती है। आज दाल और तरकारी दोनों मिलवा कर पकवाअिये। जरा घी ज्यादह डलवाअिये। 'अच्छा साहब, यह भी सही,और अुन्होंने जो हुक्म दिया, अुसका पालन किया गया, अब आपने फरमाया--'अुस खैरनगर वाले मोचीसे, जिससे आपने जूता बनवाया था, हमें भी अेक जोड़ा बनवा दीजिअे। दाम हम घर पहुँचकर भेज देंगे। अेक बार मनमें आया, जरा पूछें--' क्या हकीमजीने नुस्खेमें जूतेका जोड़ा बनवाना भी बताया है, मगर खामोश रह गये, अिसलिये कि हम जूतोंके झगड़ेमें नहीं पड़ना चाहते थे।

अिसी तरह किसी दिन कपड़ेकी, किसी दिन सिनेमा देखनेकी और किसी दिन भेड़ाघाटका सफर करनेकी फरमाअिश बहरे कानों सुनी गयी। मगर साबुन, तौलिया, तेल, आअिना, कंघा, सेफ्टी रेजर वगैरहकी फरमाअिश तो बहरे कानों नहीं सुनी जा सकती थी; अिसलिये कि अिन्हें हमारे लायक दोस्त कहीं खो आये थे और अब अिनके बिना अुनका काम चल भी नहीं सकता था। फिर भी हम अपने दोस्तको खुश नहीं रख सके। अेक दिन जब शामको मकानपर आये, तो देखते क्या हैं कि वह अिन सब चीजोंके साथ ही नहीं, बल्कि हमारी चुनी-चुनी ढेर भर किताबोंके साथ भी गायब हैं। अलबत्तह मेजपर अुनका अेक पत्र पड़ा हुआ है, जिसमें लिखा है--'भअी तंग आ गया मैं अिस मेहमाननवाजीसे। तुम्हारे यहाँ क्या बादामका हलुवा बनता है! तौबा! अिससे बेहतर तो हमारे यहाँ दलिया पकता है! यह दूधका अिन्तजाम किया है तुमने। खुदाकी कसम, अिससे तो कहीं गरम पानी पीना भला मालूम होता है। सचाअी यह है कि तुमने मुझे अपने मकानपर ठहराकर मेरे साथ जो बर्ताव किया है, वह कोअी भला आदमी बर्दाश्त नहीं कर सकता। अिस तरह मेहमान बननेके बजाय मैं किसी धर्मशालामें रहना ज्यादह पसन्द करता हूँ; अिसलिये तुमसे रुखसत होता हूँ।'

यह पत्र पढ़ते ही हमने कहने-भरके लिअे कसम खा ली कि अब हम न तो किसीके यहाँ मेहमान बनेंगे, न किसीको अपने यहाँ मेहमान बनायेंगे। हमारे मेहमान दोस्तको हमारी हैसियतका--हमारी हालतका अिल्म होना चाहिये था और अगर वह अपनेको बहुत बड़ा आदमी समझते थे, तो अुनको हमारे यहाँ मेहमान बननेकी जरूरत ही नहीं थी। बेहतर तो अब यह है कि हिन्दुस्तानसे मेहमानी और मेजबानीके अिस ढोंगको जल्दीसे जल्दी खतम कर देना चाहिये। आखिर ये बढ़ते हुअे होटल और रेस्टोरांट किस मर्जकी दवा हैं?

यह समझना गलत होगा कि मेहमान हमें बुरे लगते हैं। जी नहीं, मेहमान हमें भी अच्छे लगते हैं। मगर अैसे, जो होटलमें ठहरनेके बाद हमसे मिलने आ जाया करें। अगर वह हमारे ही यहाँ ठहरना चाहें, तो पहले हमसे मंजूरी ले लें और फिर अेकाध दिन ठहरकर चले जायँ। अुनकी जिन्दगी भी अैसी ही हो, जैसी कि हम बिताते हैं। मान लीजिये, हम पाखाना फिरनेके लिअे कमोड अिस्तेमालमें लाते हैं तो वह भी कमोड पसन्द करें। अगर हम अिस कामके लिअे मैदानमें जाते हैं, तो वह भी मैदानमें जानेके लिअे आनाकानी न करें। अगर हम शामके वक्त खाना खाते हैं, तो वह भी हमारे वक्तका खयाल रक्खें और अगर हम रातके दो बजे खाना खाते हैं, तो वह भी हमारे साथ अितनी तकलीफ बर्दाश्त करनेके लिअे तैयार रहें। मतलब यह कि अुनके आ जानेसे हमें अपने घरके आसमानको जमीन और जमीनको आसमान न करना पड़े।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बंगालकी स्त्रियोंके व्रत—अेक मूल्यांकन

: श्रीमती माया गुप्त :

आधुनिकताके आक्रमणके कारण जीवन बहुत तेजीसे परिवर्तित होता जा रहा है। जो बातें पहले जीवनका अपरिहार्य अंग समझी जाती थीं, अब अुनका महत्व घटते-घटते नहींके बराबर हो गया है। यों तो बंगालके हिन्दू अन्य प्रान्तोंकी तरह सनातनधर्मके त्योहारोंको मानते हैं, पर आजके बीस वर्ष पहले बंगाली स्त्रियोंके कुछ अैसे अनुष्ठान, व्रत और त्यौहार थे, जो केवल अुसी प्रान्तकी विशेषता थे। आज भी देहाती अिलाकोंमें अिन त्योहारोंका महत्व बहुत कुछ विद्यमान है। यह निश्चित है कि कुछ ही दिनोंमें ये व्रत और त्योहार भूतकालकी बातें हो जायँगी।

अवनीन्द्रनाथ ठाकुरने बंगाली स्त्रियोंके अिन व्रतोंके सम्बन्धमें लिखा है—"ये व्रत मानव मात्रकी साधारण सम्पत्ति हैं, किसी धर्म विशेष या दल विशेषसे बँधे हुअे नहीं। यह भी समझमें आता है कि ऋतु परिवर्तनके साथ-साथ परिस्थितियोंमें जो परिवर्तन होते थे, अुन्ही पर रोक-थाम करनेके लिये जो प्रयास किये जाते थे, अुन्हींसे अिन व्रतोंकी अुत्पत्ति हुअी। व्रतका अन्तर्निहित विचार विचित्र अनुष्ठानोंके जरिये विचित्र कामनाओंकी पूर्ति है। यह अिच्छा पुराणोंसे भी पुरानी है, वेदकी समसामयिक होगी, या अुससे भी पहलेके मनुष्योंमें पायी जाती होगी।"

अेक स्थानपर आचार्य अवनीन्द्रनाथ अिसी विषय-पर कहते हैं—"वैदिक, सूक्तों तथा व्रतोंमें गायी जाने-वाली कविताओंके साथ हमारी लोक-कथाओंमें वर्णित चिड़ा और चिड़ियाकी तुलना की जा सकती है। दोनों अिसी पृथ्वीके हैं पर वेदके सूक्त मुक्त और स्वतंत्र हैं, जैसे वनकी हरियालीपर नील आकाशका संगीत है, अुदार पृथ्वीके गान हैं, और व्रतमें गायी जानेवाली कवितायें मानो घोसलेके पास हरियाली के झुरमुटमें बैठी हुअी पक्षीमाताकी मधुर तान है, पर ये दोनों ही संगीत पृथ्वीके सुर और लयमें बंधे हुअे हैं।"

अिन व्रतोंका विश्लेषण करनेपर ज्ञात होता है कि अिनमें आकर सब मतमतान्तरों तथा धर्मोंका समन्वय हुआ है। अिनपर आर्य संकृति साथ ही अनार्य संस्कृतिकी भी छाप है। मुसलमानोंकी भी छाप अिनपर है। बौद्धोंका प्रभाव भी स्पष्ट है। अिस लेखमें अिन सब प्रभावोंका अलग-अलग विश्लेषण करना सम्भव नहीं, पर अितना बता दिया गया है कि जो लोग गहराअी तक जाकर संस्कृतिकी जड़ोंतक जाना चाहते हैं, अुन्हें अिन व्रतोंके अध्ययनमें बहुत महत्वपूर्ण अुपादान मिलेंगे।

अिन व्रतोंमें लक्ष्मीकी पूजाके पहले अलक्ष्मी या अलाय-बलायकी अपदेवीकी पूजा भी होती है। यह अलक्ष्मी सम्भवतः अनार्योंसे ली हुअी है। अिसकी पूजामें टूटा हुआ सूप, जाला और करिखा लगता है—

अलक्ष्मीर पूजा हय मा लक्ष्मीर आगे
मांगा कुलो, झुल कालि पडे तार मागे।

बंगालमें सत्यपीरकी पूजा भी चली। हिन्दुओंके सत्यनारायण और मुसलमानोंके पीर दोनों मिलकर सत्यपीर बन गये। यद्यपि अिसमें मुसलमानी अुपादान बिल्कुल स्पष्ट है, फिर भी पूजाके समय हरिबोल कहा जाता है, प्रसाद बाँटा जाता है, पुरोहित आकर बाकायदा घंटा बजाता है, अिस प्रकारसे किसीको कानो-कान ख़बर नहीं होती कि अिसमें कोअी असनातनी अुपादान है। जो लोग यह कहते हैं कि बुद्धको अपना अवतार मानकर अपने अन्तर्गत कर लेनेके बाद प्राचीन भारतीय संस्कृतिकी परिपाक शक्ति घट गयी, और अुसने बाहरी प्रभावोंके विरुद्ध कछुआ-वृत्ति धारण कर ली, अुनके लिये सत्यपीर-पूजामें खोज करने तथा समझने बूझनेके लिये यथेष्ट अुपादान मिलेगा, अैसा मेरा विश्वास है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिन व्रतोंके सम्बन्धमें सबसे बड़ी बात यह है कि खेती-बारीसे अिनका सम्बन्ध बहुत गहरा है। यह स्वाभाविक भी है; क्योंकि खेती-बारी करनेवाले लोगोंमें ही अिनका प्रचलन था और अब भी कुछ न कुछ है। खेती-बारी मूलक; बल्कि खेती बारी प्रधान सभ्यताके ह्रासके साथ-साथ अिन व्रतोंका ह्रास भी स्वाभाविक ही है। जब आधार ही नहीं रहा, तो नीवकी अींट कैसे रहेगी? अिन व्रतोंमें भक्तोंकी तरफ़से जो वर देवतासे माँगे जाते थे, आज अुन्हें माँगनेकी भी कोअी ज़रूरत नहीं। जैसे अेक बातको लीजिये, पहले बहुपत्नीत्व अेक साधारण बात थी, और स्वाभाविक रूपसे कुमारियाँ यह कामना करती थीं कि सौतका नाश हो। आजकलकी कोअी कुमारी अिस प्रकार सौतका नाश चाहनेके बजाय अैसे व्यक्तिसे शादी ही नहीं करेगी, जिसके कअी पत्नी हों। अिसके लिये वह देवी-देवताओंके पास न जाकर अपनी सहायता आप करेगी। पर अुस युगमें जिनका प्रतिपादन अिन व्रतोंकी कविताओंमें है, बहुपत्नीत्वको मानकर ही कुछ किया जाता था।

बहुपत्नीत्व तथा सौत-प्रथा चिरंतन प्रथा मानी जाती थी। अुसपर प्रश्न करने या अुसे तोड़नेका कोअी प्रश्न ही नहीं था, प्रश्न केवल अितना ही था कि देवी-देवताओंकी सहायतासे सौतपर विजय प्राप्त की जाय, और अुसका सत्यानाश कराया जाय। अिसी कारण नौ वर्ष या अुससे भी कम वयकी कुमारियाँ अैसा पद्य कहकर व्रत करती थीं—

मैना मैना मैना
सौतिन जैनो हयना
हाता हाता हाता
रवा सौतिनरे माथा

अर्थात् मैना मैना मैना, सौत न हो।
कलछुल, कलछुल, कलछुल, खा सौतका सिर।

बंगलामें अिस पद्यमें जो घरेलूपन है, वह मेरे गद्यानुवादमें नहीं आ सका। विचार यह है कि सामने पड़ी हुअी किसी भी चीजका नाम लिया जाय, और किसी प्रकारसे तुक मिलाकर अगली पंक्तिमें सौतको कोसा जाय, अेक और पद्य लीजिये—

पाखी पाखी पाखी
सौतिन मागी मरते गेलो
छादे अुठे देखि

याने चिड़िया चिड़िया चिड़िया, सौतिन चुड़ैल मरने जा रही है, मैं छतपर अुठकर देखती हूँ।

पर अिससे भी बीभत्स रूपमें सौतके सम्बन्धमें कहा गया है—

असत केटे बसत कोरि
सौतिन केटे आलता पोरि

याने असतको काट करके अपनी बस्ती बसाती हूँ, और सौतको काट कर महाबर लगाती हूँ, अपने पाँवों में।

पर यह न समझा जाय कि व्रतोंमें केवल अिसी प्रकारकी बातें होती थीं। स्त्रियाँ व्रत करती थीं, अिस नाते स्त्रियोंके सुख-दुःखका प्रतिफलन होना अनिवार्य था, पर व्रत करनेवाली स्त्री अेक किसान स्त्री होती थी, अिस कारण किसान-जीवनकी अिच्छाअें अिन व्रतों में व्यक्त होती थीं। गर्मियोंमें पुण्य-पोखरा नामसे अेक व्रत किया जाता था, जिसका अुद्देश्य यह था कि गाँव के लोगों को जल-कष्ट न हो। व्रत करनेवाली स्त्रियाँ अिस व्रतको वैशाखमें करती हैं। बेलकी डालसे थोड़ी-सी जगह घेर ली जाती है, फिर अुसमें अेक गड्ढा खोदकर पानीसे भर दिया जाता है, और अुसके चारों तरफ फूल डालते-डालते स्त्रियाँ कहती थीं—

पुन्निपुकुर पुष्पमाला
के पूजेरे दुपुर बेला
अमी सती लीलावती,
भाअियेंर बोन, पुत्रवती
हय पुत्र मोरबना,
पृथ्वी ते धोरबेना

अर्थात "कौन दोपहरके समय पुष्पमालासे पुण्य पोखराका व्रत कर रही है?" अिसके अुत्तरमें वह स्त्री कहती है, "मैं हूँ लीलावती सती, भाअियोंकी बहन और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुत्रोंकी मां। पुत्र होकर मरेंगे नहीं, और वे अितने होंगे कि पृथ्वीपर अँटेंगे नहीं।"

अिस कवितामें हम मध्य युगके बंगालकी बल्कि प्राग आधुनिक युगके बंगालकी अेक कुलवधूका चित्र देख सकते हैं। अिसमें अुसके सुख-दुःखकी सा ी बातें बहुत स्पष्ट होकर सामने आ जाती हैं। आजकी बंगाली शहरी स्त्री यह कभी नहीं चाहेगी कि अुसके बहुत-से पुत्र हों, पर खेती-बारी मूलक सभ्यताकी बात और थी। अुस युगमें लोगोंके पास खानेके लिये अन्न था और रहनेके लिये घर होता था। अिसी प्रकार हम जिस व्रतको भी लें, अुसीमें हमें अुस युगकी सभ्यताकी छाप दृष्टिगोचर होती है।

शीतके आरम्भमें स्त्रियाँ "तोषला" व्रत करती हैं। प्रातःकाल अुठकर गाँवकी कुलवधूअें हरे खेतोंमें टोली बाँधकर निकल जाती हैं और अुस समय चहचहानेवाली चिड़ियोंके साथ सुर मिलाकर गाती हैं:—

तुष तुषलि तुमि के ?
तोमार पूजा करे जे,
धने धाने बाडन्त
सुखे थाके आदि अन्त

अर्थात् "तोषला व्रत करनेवाली तू कौन है ? मैं वही हूँ, जो तुम्हारी पूजा करती है। और तू वही है तो धन और धान्यसे बढ़ती आदिसे अन्त तक सुखसे रह।" ये तो मामूली बातें हुअीं, अिससे चित्र स्पष्ट नहीं हुआ, अिसलिये अिस व्रतका पारायण करती हुअी स्त्रियाँ कहती हैं:—

कोदाल काटा धान पाबो,
गोहाल-आलो गोरू पाबो,
दरबार-आलो बेटा पाबो,
सभाआलो जमाअी पाबो,
आड़ि मापा सिन्दूर पाबो।
घर कोरबो नगरे,
मरबो गिये सागरे।
तोमार काछे मांगी अेअीवर,
स्वामी पुत्र निये जैनो सुखे कोरि घर।

अर्थात् "अितना धान पाअूँ कि अुसे फावड़ेसे काट-काटकर निकालना पड़े, अैसी गाय पाअूँ कि जिससे घरकी गोशाला चमक जाय, अैसा बेटा पाअूँ कि दरबार दमक जाय, अैसा दामाद पाअूँ कि सभाके लिये रौनक हो, सिन्दूरका ढेर पाअूँ, नगरमें घर बसाअूँ, और मरूं जाकर गंगासागरमें। तुम्हारे पास यह वर माँगती हूँ कि पति-पुत्र लेकर सुखसे गृहस्थी चलाअूँ।"

अिसमें यह द्रष्टव्य है कि अुस समय गाँवकी स्त्रियोंमें शहरमें आकर घर बसानेकी कमजोरी थी। शहरके लोग अुस समय भी अधिक सुखसे रहते थे, कम-से-कम गाँवकी स्त्रियोंकी यह धारणा थी। जबतक शहर और गाँवके बीचका भेदभाव दूर नहीं हो जाता, तब तक यह भावना स्वाभाविक है।

अिन व्रतोंके साथ-साथ प्रातःकाल अुठना, अुसी समय नहाना-धोना, अुपवास रखना आदि कअी बातें अैसी थीं, जिनकी महत्ता अस्वीकार करना असम्भव है। भले ही कोअी अीश्वर और परलोकको न माने, पर अिन व्रतोंके कारण स्त्रियोंमें अनुशासन, त्याग और तपस्याकी जो भावना जाग्रत होती थी, वह तो बिल्कुल अैहिक अुपयोगकी वस्तु है। ये अैसे गुण हैं, जिनके बिना गृहस्थी कभी सफल नहीं हो सकती। यह मानना पड़ेगा कि अिन व्रतोंसे जो शारीरिक और मानसिक अनुशासन अुत्पन्न होता था, वह अुस युगके समाजके लिये बहुत अुपयोगी था। विचारोंकी दृष्टिसे भी देखा जाय, तो अिन व्रतोंके अवसरपर गायी जानेवाली कविताओंसे जो मानसिक ढांचा बनता था, वह तत्कालीन समाजको जीवित रखनेके लिये अुपयोगी था। यह कहा जा सकता है कि किसी सामाजिक ढांचेको बनाये रखना तथा अुसके पहियोंमें तेल पहुँचाना ही यथेष्ट नहीं, अुसे बदलना और अुसके सड़े-गले हिस्सोंको नष्ट करना आवश्यक है। यह बात ठीक है, और अुस दृष्टिसे देखनेपर ये व्रत गतानुगतिकताको जारी रखनेके यंत्रके रूपमें दृष्टिगोचर होंगे जैसा कि सभी धार्मिक अनुष्ठान होते हैं। यदि ये व्रत अुस प्रकार न होते, तो अुन्हें धार्मिक रंग प्राप्त न होता।

पर अुस बातको अलग छोड़कर यदि हम देखें, तो हमें अेक तो अिन व्रतोंकी कथाओं तथा कविताओंमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुस संस्कृति तथा सभ्यताका चित्र मिलता है, जिसमें ये प्रचलित रहे हैं, दूसरे हम अिनमें कअी प्रगतिशील अुपादानोंको भी पा सकते हैं। पहले ही बतलाया जा चुका कि सत्यपीरके व्रतमें हिन्दू और मुसलमानोंमें समन्वय किया गया। मुसलमान आ चुके थे, और बहुत जोरसे आ चुके थे। बंगालके बौद्धोंने सामुदायिक रूपमें अिस्लाम ग्रहण कर लिया, यह क्यों और कैसे, अिसे यहां पर बतानेका अवसर नहीं। अिसका नतीजा यह हुआ कि बंगालमें मुसलमानोंकी संख्या बहुत अधिक हो गयी। यह तो हो नहीं सकता था कि अुनके साथ हमेशा लडाअी होती रहती, अिसी कारण समन्वयकी कोशिश हुअी। कबीर, नानकने जिस बातका बीड़ा अुठाया था, और वे जिस बातको करनेमें असफल रहे, यों तो कोअी भी अच्छा प्रयास असफल नहीं रहता; (क्योंकि वह तो सफलताके सौधकी अेक अींट बनाकर तो अवश्य चला जाता है), हम देखते हैं कि अिन ग्राम्य अनुष्ठानोंके जरिये वह समन्वय अेक हद तक प्राप्त कर लिया गया। अितिहासका शुष्क सत्य तो यह है कि जब तक ब्रिटिश साम्राज्यने कृत्रिम रूपसे आपसमें लड़ाना शुरू नहीं किया, तब तक यह समन्वय काम देता रहा।

आज लोगोंकी अिन व्रतोंमें श्रद्धा नहीं रही; जो कुछ है, वह भी दिनबदिन लुप्त होती जा रही है। पर अिसके लिये अफसोसकी जरूरत नहीं। जो संस्थायें भूतकालकी हो चुकी हैं, अुन्हें बचानेकी चेष्टा व्यर्थ है। कल्पना कीजिये कि आज कोअी नौ वर्षकी लड़की खड़ी होकर यह कहे कि मैना, मैना, मैना, सौतन हो, कलछुल, कलछुल, कलछुल, खा सौतका सिर, तो वह हास्यरस ही अुत्पादन करेगी। यदि वह फिर भी गम्भीरताके साथ अुस बातकी पुनरावृत्ति करेगी, तो लोग अुससे घृणा करेंगे क्योंकि आज यह जरूरी नहीं माना जाता कि सौतके रहते हुअे गृहस्थी चलायी जाय। आज परिवार-नियंत्रणके युगमें यह तो सभी स्त्रियां चाहेंगी कि कोअी सन्तान हो तो, वह जीवत रहे और फलेफूले पर यह कोअी नहीं चाहेगी कि अितने पुत्र हों कि धरती पर अुनके लिये जगह न हो। भूतकालकी अिच्छायें आकांक्ष्यायें भूतकालके साथ गअीं। अब तो वे अनुसन्धानकी वस्तु हैं।

भारतकी विरासत !

"अगर मुझसे पूछा जाय कि भारतके पास सबसे बड़ा खज़ाना कौनसा है और अुसकी सबसे बढ़िया विरासत क्या है तो मैं निस्संकोच अुत्तर दूंगा कि वह संस्कृत भाषा, साहित्य और अुसका भंडार है। यह अेक शानदार विरासत है। जबतक वह कायम रहेगी तबतक भारतकी मूल प्रतिभा बनी रहेगी। यह अेक भूतकालीन निधि होनेके अलावा अेक सजीव परम्परा भी है, जो अैसी प्राचीन भाषाके लिये अितनी मात्रामें होना आश्चर्यकी बात है। मैं संस्कृतके अध्ययनको प्रोत्साहन देना चाहूँगा और चाहूँगा कि हमारे पंडित अिस भाषाके दबे हुअे साहित्यकी, जिसे लगभग भुला दिया गया है, खोज करें और अुसे प्रकाशमें लायें.....।"

—जवाहरलाल नेहरू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री मर्ढेकरजीकी मराठी कविता

मराठी

(१)

कुणि मारावे, कुणी मरावे,
कुणी जगावे खाअुनि दगड
वितळवून कुणी आयुष्यांना
ओतावे अन सोन्याचे घड।

कुणी रडावे, रडवावे कुणि
कुणी हंसावे पिअून वायू,
कुणी दाबुनी जखम आजची
जरा अुद्यांचा काढावा पू।

हचा जगण्यांतुन, हचा मरण्यांतुन,
हंसण्यांतुन अन् रडण्यांतुन हचा,
अशाश्वताच्या मुठी वळूनी
अपाप वरती चढ़तिल बाहचा।

अखेर घेता टक्कर जरि मग
युगायुगांचे फुटेल भाल,
अशाश्वताच्या समशेरीवर
शाश्वताचिही तुटेल ढाल।

(२)

जशि धोब्याची मअू अिस्तरी
तलम फिरावी सुतावरूनी
फाल्गुनांतली चंद्रकोर तशि
मलिन मनांच्या धाग्यांवरूनी

शिणेल धोबी यदाकदाचित,
पडेल खाली चंद्रकोर अन्
सुरकुतलेल्या मनोवृत्तिना
पुनश्च कोठें भट्टी भगवन्।

(३)

अजून येतो वास फुलांना
अजून माती लाल चमकते,
खरटचा बुंधावरी चढून
अजून बकरी पाला खाते।

हिन्दी

(१)

मारना किसीने और किसीने मरना,
कभी किसीने पत्थर खाकर जीना;
अुमर गलाकर कहीं किसीने
सोनेके घट गढ़ना !

या कि रुलाना, और किसीने रोना
पीकर हवा किसीने हँसना;
और किसीने निपट आजका घाव
दबाकर भावी कलकी पीप काढ़ना।

अिस जीनेमें मरनेमें अिस,
रोनेमें और हंसनेमें अिस,
अस्थिरकी मुठ्ठियां बंधेंगी
और आस्तिनें स्वयं चढ़ेंगी;

यद्यपि टक्कर खाकर आखिर
युग-युगका माथा फूटेगा;
किन्तु खड्गपर अस्थिरके भी
स्थिरका चर्म यहां टूटेगा।

(२)

धोबीकी वह नरम अिस्तरी
ज्यों घूमे कोमल तागेपर,
त्यों फागुनकी मधुर चन्द्रिका
मनके शिथिल मलिन धागेपर।

शायद धोबी अूब थकेगा,
और चंद्रिका टूट पड़ेगी,
सिकुड़ी मनोवृत्तियोंको फिर
भगवन् ! भट्टी कहां मिलेगी

(३)

अबतक आती गंध सुमनमें,
अबतक मिट्टी लाल दमकती;
नाटे पेड़ तनेपर चढ़कर
अबतक बकरी पत्ती खाती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४)

अस्मानावर भगवा रंग
आणि नागवे समोर पोर,
अजून डुलक्या घेत मोजते
हचा दोहोतिल अंतर ढोर ।
भूकंपाचा अिकडे धक्का
पलीकडे अन् युद्ध नगारे;
चहूंकडे अन् अेकच गिल्ला
जुन्या शवांवर नवे निखारे ।
फत्तरातला देव पाहतो
कुठे जाहली माझी फत्ते;
माणुस म्हणतो चिरंतनाचे
मनांत माझ्या अस्सल कित्ते ।
चढेल तुसडी तेढी नातीं
नश्वरतेतहि चिरका नखरा,
शिजल्या मासामधून कोणी
स्वर्ग हुंगतो बुलंद बहिरा
सटीक मानवतेची टिपणी
पुन्हा वाचली अर्थ तोच तरी,
आभाळाच्या पल्याड स्पंदन
टिपरी त्याची हचा मडक्यावरी ।

(५)

जगून थोडे अखेर मरणें
अुघडझांप ही डोळ्याचीच,
अंधारातुन राडाराचा
किरत चालला सलत पुढेंच ।
कार्तिकातले गव्हाळ अून
जरी मनाची अशा रितीने,
फाडुनि बघते ढिली कातडी
जखम आंतली जुन्या भितीनें;
तरीहि येतो वास फुलांना,
तरीहि माती लाल चमकते;
खुरट्या बुंधावरी चढून
तरीहि बकरी पाला खाते;
अस्मानावर भगवा रंग
आणि नागवे समोर पोर
तरीहि डुलक्या घेत मोजतें
हचा दोहोंतिल अंतर ढोर !

(४)

रंग गेरुआ आसमानमें
और सामने नंगा लड़का
झूम झूम नापता अभीतक
ढोर अेक अंतर दोनोंका ।
अिधर कंपसे धरती हिलती
और युद्धके अुधर नगाड़े;
चारों तरफ वही होहल्ला,
गत मुर्दोंपर नये अंगारे ।
पत्थरका भगवान देखता
मेरी फतह हुअी कहांपर;
वह असली आदर्श चिरंतन
मानव कहता मेरे मनपर ।
अड़ियल गर्विल टेढ़े रिश्ते,
नश्वरतामें फटियल नखरा;
कोअी पकते हुअे मांसमें
स्वर्ग सूंघता बुलंद बहरा ।
सटीक मानवताकी टिप्पणि
अर्थ वही, यदि पढ़ ली फिर-फिर;
स्पन्दन है अुस पार गगनके
चटका जिसका अिस मटकेपर

(५)

पल भर जीवन मौत अंतमें
यह आँखोंकी आँखमिचौनी;
निपट अंधेरेमें राडरकी
चली सामने किरण कसकती ।
यही कार्तिकी धूप गेहुंआ
यद्यपि मनकी अिसी तरहसे...
ढीली चमड़ी फाड़ देखती
घाव भीतरी संचित डरसे;
फिर भी आती गंध सुमनमें,
फिर भी मिट्टी लाल दमकती;
नाटे पेड़ तनेपर चढ़कर
बकरी फिर भी पत्ती खाती;
रंग गेरुआ आसमानमें
और सामने नंगा लड़का,
झूम झूम नापता आज भी
ढोर अिन्हीं दोनोंका अंतर !

"अहो बत महद्भाग्य द्रष्टुं व्यवसिता वयम्"

मूल मराठी कवि : श्री. बा. सी. मर्ढेकर अनुवादक : श्री अनिलकुमार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तपोबल

: श्री देवराज दिनेश :

पात्र-परिचय

१. विश्वामित्र — ब्रह्मर्षि
२. अिन्द्र — स्वर्गाधिपति
३. नारद — देवर्षि
४. शची — अिन्द्रकी पत्नी
५. मेनका — स्वर्गकी अप्सरा
६. वसन्त — ऋतुराज

(प्रथम दृश्य)

स्थान : नन्दन कानन

(नन्दन काननमें अिन्द्र शची रानीके साथ प्रकृतिका आनन्द लेते हुअे घूम रहे हैं, पक्षियोंका कल-रव झरनोंका मधुमादक स्वर :)

अिन्द्र : (अुल्लाससे) वास्तवमें देवि, संसारमें स्वर्गकी समता कठिन है ।

शची : स्वर्ग, अिस नाममें ही बड़ा आकर्षण है देवेश, यह सब आपकी साधनाका फल है ।

अिन्द्र : अिस स्वर्गके कारण ही हम संसारमें सब से अधिक सम्मानित गिने जाते हैं ।

शची : और अिसीलिये पृथ्वीवाले आप जैसे देवताओंकी पूजा करते हैं ।

अिन्द्र : पर कभी-कभी कोअी कोअी मानव हमसे भी आगे बढ़ जानेका दुस्साहस कर बैठता है, (हंसते-हंसते) पर अिन्द्र अिन्द्र ही है, हम किसीको अूपर अुठनेका अवसर नहीं देते देवि ।

शची : (व्यंग्यसे) वह तो मैं अच्छी तरह जानती हूँ । आअिये तनिक निर्झरणीके तटपर चलें । प्रकृति आज बड़ी ही सुहावनी लग रही है ।

अिन्द्र : प्रकृतिकी शक्ति भी अद्‌भुत है, प्राणि-मात्रको अुन्मादी बना देती है, पुष्पोंकी कितनी मनहर सुगन्ध आ रही है, आओ, निर्झरणीकी ओर चलें ।

[चलनेको अुद्यत होते हैं, तभी नैपथ्यमें नारायण नारायणकी ध्वनि गूंज अुठती है ।]

शची : संभवतः देवर्षि नारद आ रहे हैं ।

अिन्द्र : लगता तो अैसा ही है ।

नारद : (आते हुअे) नारायण, नारायण, नारायण !

अिन्द्र : प्रणाम करता हूँ देवर्षि ।

नारद : यशस्वी बनो, देवेन्द्र !

शची : मेरा भी प्रणाम स्वीकार हो, भगवन् !

नारद : सौभाग्यवती रहो, देवी !

अिन्द्र : कहिये, अिस समय किधरसे आना हुआ देवर्षि ।

नारद : ब्रह्मर्षि, विश्वामित्रके पाससे, अुनकी तपस्याका प्रभाव देखकर चला आ रहा हूँ, देवाधिदेव !

अिन्द्र : (चौंककर) क्या कहा ? विश्वामित्रके पाससे, तो क्या अुन्होंने फिर कोअी नयी तपस्या प्रारंभ की है; कुछ कारण ज्ञात हुआ कि अुन्होंने यह तपस्या किस प्रयोजनसे आरम्भ की है ।

नारद : अुनकी बातें वेही समझें, विश्वामित्र, विश्वामित्र ही हैं, अुन्हें आजतक कोअी भी नहीं जान पाया ।

अिन्द्र : हूँ, तो यह बात है, अब फिर विश्वामित्र से संघर्ष करना पड़ेगा। अिसका अुपाय शीघ्र ही सोचना होगा ।

शची : आप तो व्यर्थ ही छोटी-छोटीसी बातोंसे घबरा अुठते हैं, अिससे भला आपका क्या बनता-बिगड़ता है ?

अिन्द्र : वाह, यह भी तुमने अेक ही कही कि मेरा कुछ बनता-बिगड़ता ही नहीं, मैं अिन ऋषियों और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राक्षसोंके तपोबलसे बहुत डरता हूँ। साधना पूर्ण होने-पर कुछ कहा नहीं जा सकता कि ये लोग क्या कर बैठें, अिनकी सूझ अपनी ही होती है, शिवसे वर पाकर रावणने हमें पराजित किया, स्वर्गश्रीका अुसीके हाथों अपहरण हुआ, अुसने अेक बार अिस अमरावतीको खंड-हरमें परिवर्तित कर दिया था। तुम तो सब कुछ जानती हो।

शची : यह तर्क बुद्धिमानोंके लिअे अुचित नहीं हैं, देवेश, रावणने अपनी शक्ति और अपने वैज्ञानिक यन्त्रोंसे स्वर्गको जीता था, (कुछ रुककर) और देवता अिसलिये पराजित हुअे कि अुनमें विलासिता चरम सीमापर पहुँच चुकी थी, सुरा और सुन्दरीके अतिरिक्त देवताओंके पास कोअी और भी कार्य रहा है, ये दोनों वस्तुअें स्वर्गके लिअे अभिशाप हैं।

अिन्द्र : देवी, यही तो स्वर्गकी विशेषताअें हैं, स्वर्गकी कीर्तिलताको पुष्पित करनेका श्रेय अिन्हींको है, तुम अिन्हें अभिशाप कहकर हम देवताओंका अपमान कर रही हो।

शची : कटुवचनोंके लिअे क्षमा स्वामी, किन्तु आपको मानना पड़ेगा कि देवासुर-संग्राममें देवताओंकी बार-बारकी पराजयका मुख्य कारण ये दो वस्तुअें ही थीं।

अिन्द्र : देवि, तुम स्वयं स्वर्गकी सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी हो, तुम्हारे मुखसे यह बात शोभा नहीं देती।

शचि : किसी बातका शोभा देना या न देना सुननेवालेके सिद्धान्तोंपर भी तो निर्भर है। आप देवा-धिदेव हैं, आप महाबली हैं, आपको अिन छोटी-छोटी बातोंसे अूपर रहना चाहिये। किसमें अितनी क्षमता है कि आपका अनिष्ट कर सके। जब आप अपनेमें जाग-रूक हैं तो.....

अिन्द्र : वास्तवमें जबतक मैं जागरूक हूँ, तबतक मेरा अनिष्ट कोअी नहीं कर सकता, मैं विश्वामित्रकी तपस्याको भंग कर देना चाहता हूँ, क्योंकि मैं जाग-रूक हूँ।

नारद : वह भी अपनी धुनके अेक ही प्राणी हैं अुनसे शत्रुता मोल लेना आपके पक्षमें अच्छा नहीं होगा, देवेन्द्र !

अिन्द्र : (हंसता है) महर्षि नारद, आप अिन्द्रको अेक तपस्वीका भय दिखला रहे हैं, वह अिन्द्र जिसने कभी भी किसीके गर्वको स्थिर नहीं रहने दिया, अेक साधारण तपस्वीसे डर जायगा ! (अट्टहास) देवर्षि ! आश्चर्यकी बात है कि आपका हमारी शक्तिपर विश्वास नहीं रहा।

नारद : (व्यंग्यसे) शक्ति, मैं वास्तवमें अिस समय आपकी शक्तिका अर्थ नहीं समझा, क्या आप अुनसे शस्त्र लेकर युद्ध करेंगे, या समाधिमें लीन अचानक अुनपर अूपरसे वज्र फेंक देंगे। यह विश्वामित्रका अनिष्ट न होकर सम्पूर्ण मानव जातिका अनिष्ट होगा। अुसी प्रबल मानव जातिका—जिसके महान् वीरोंने असुरोंके विरुद्ध अनेक महायुद्धोंमें आपकी सहायता की है, विश्वामित्रसे अुलझनेमें शीघ्रता करना ठीक नहीं है देवेन्द्र, अिस कार्यको सोच-समझकर करना चाहिये।

शची : लेकिन, देवर्षि, अेक बात मेरी समझमें नहीं आती, कि किसीका अपनी अुन्नतिके लिअे साधना करना आप लोगोंको अखरता क्यों है ? क्या आवश्यक है कि विश्वामित्रकी तपस्या भंग की जाय ?

अिन्द्र : नितान्त आवश्यक है देवि, नितान्त आवश्यक।

नारद : देवेन्द्र ठीक कहते हैं देवि, विश्वामित्रकी बढ़ती हुअी शक्ति हमें नष्ट करनी ही चाहिये; नहीं तो किसी दिन भी हम लोगोंके पथमें वे चट्टान बनकर अड़ सकते हैं।

अिन्द्र : आजतक मेरे पथमें किसी भी वर्गके किसी भी प्राणीने अड़नेकी चेष्टा नहीं की, लेकिन ये विश्वामित्र अनेक बार मेरे पथमें अड़े हैं आज भी त्रिशंकुवाली घटना ज्यों-की-त्यों मेरे नेत्रोंके सम्मुख घूम रही है। दूसरे स्वर्गके निर्माणके लिअे वे अुद्यत हुअे हैं अुसे पूरा करके ही रहे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारद : अुन्होंने तो स्वर्गका निर्माण ही नहीं, बल्कि त्रिशंकुको वहांका अधिपति भी बनाया। वह तो आपके और महर्षि वशिष्ठके सतत् प्रयत्नोंके फलस्वरूप अुस स्वर्गका विनाश हुआ।

अिन्द्र : हमीं जानते हैं कि हमें अुस स्वर्गके विनाशके लिअे कितना प्रबल संघर्ष करना पड़ा था। हम विश्वामित्रके विरोधी अवश्य हैं, किन्तु हृदयसे अुनके प्रशंसक भी हैं। हमें कभी भी अुनकी महानतामें कोअी सन्देह नहीं हुआ।

शची : फिर आप व्यर्थ ही विघ्न स्वरूप अुनके पथमें क्यों अड़ रहे हैं ?

अिन्द्र : फिर वही बात, तुम भी बड़ी सीधी हो देवि, यह नीतिके प्रश्न हैं, अुन्हें सुलझाना हमारा कर्तव्य है। हम अुनके पथमें विघ्न अुपस्थित नहीं कर रहे, अिसके द्वारा अपना पथ प्रशस्त कर रहे हैं। क्यों देवर्षि ठीक है न ?

नारद : सत्य वचन राजन्, अपने पथको निष्कलंक बनाना ही व्यक्तिमात्रका ध्येय होना चाहिये, और है भी।

शची : यह तो स्वार्थकी चरम सीमा हुअी, देवर्षि!

नारद : आप जो भी समझें, पर देवि, जीवनमें, अपना अस्तित्व बनाये रखनेके लिअे यही आवश्यक है कि अुनसे पहले ही शत्रुका सिर कुचल दिया जाय।

शची : (व्यंग्यसे) कितनी हास्यास्पद सी कल्पना है, कि देवाधिदेव अिन्द्रके अस्तित्वको अेक साधारण प्राणीसे आशंका है।

नारद : (हंसते हुअे) अपराध क्षमा हो देवि, विश्वामित्र और साधारण प्राणी, यह कल्पना भी अपनेमें बड़ी हास्यास्पद-सी है।

अिन्द्र : (व्यंग्यसे) हम अुस विश्वामित्रकी बातें कर रहे हैं, जिसने सम्राटके रूपमें दिग्–दिगन्तको अपने धनुषकी टंकारसे थर्रा दिया था, अद्वितीय योद्धा भी जिसके सामने शस्त्र डाल गये थे, ब्रह्मर्षि वशिष्ठसे अनबन होनेपर जिसने स्वयं अेक दिन राज्यपदको छोड़कर ब्रह्मर्षि बननेकी ठानी, और ब्रह्मर्षिकी अुपाधि ली। स्वयं वशिष्ठको अपने मुखसे ब्रह्मर्षि कहना पड़ा अब समझीं देवि, हम अुसी प्रबल विश्वामित्रकी बात कर रहे हैं।

शची : मैं सब कुछ समझती हूं, देवेन्द्र किन्तु, अेक बात मेरी समझमें नहीं आती कि बैठे-बिठाये किसीसे शत्रुता क्यों मोल ली जाय। जब वे आपके पथमें नहीं अड़ रहे तो आप ही अुनके पथमें क्यों आयें ?

अिन्द्र : (खीझकर) ओ हो, हमें फिर कहना पड़ रहा है देवि कि यह राजनीतिकी बातें हैं। तुम्हारी समझसे अूपर है।

शची : अच्छा तो मैं चलती हूं। प्रवंचनाकी बातें मुझे रुचिकर नहीं हैं।

[जाती है।]

अिन्द्र : देखो देवि ! हमारे सारथीसे कहना कि तुम्हें छोड़कर लौटती बार मेनकाको कहे कि हम अुसे यहां याद कर रहे हैं, और साथ ही ले आये। देखा देवर्षि देवि रुष्ट होकर चली गयीं। [हंसते हैं] शान्तिकी पोषिका शची समझती है कि हम हर कार्य वज्र द्वारा ही कराना चाहते हैं। नहीं, देवर्षि वज्रके अतिरिक्त भी हमारे पास अैसे-अैसे मादक मधुर विष भरे शस्त्र हैं कि जिनके सम्मोहनसे सृष्टिका कोअी भी प्राणी न बच सके। फिर विश्वामित्र किस गणनामें है।

नारद : (चापलूसीसे) मानता हूं प्रभो, जानता हूं। आप समर्थ हैं, आपसे सब कुछ सम्भव है। [हंसते हैं।] यहां कौनसा शस्त्र-प्रयोग करनेका विचार किया है ?

अिन्द्र : अभी वह शस्त्र साकार तुम्हारे सम्मुख अुपस्थित हो जायगा देवर्षि, सारथी द्वारा मेनकाको अभी बुलवाया है न ? क्यों अुपयुक्त शस्त्रका चुनाव किया है न ?

नारद : धन्य हैं, देवेन्द्र आप धन्य हैं। आपका चुनाव वास्तवमें सराहनीय है। पर अेक आशंका फिर भी है राजन्।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिन्द्र : क्या ?

नारद : हो सकता है कि मेनकाको अिस महत् कार्यमें सफलता न मिले ।

अिन्द्र : (अट्टहास) देवर्षि, आप भी कभी-कभी बालकोंकी-सी बातें करते हैं । अप्सराके सम्मोहनसे विश्वामित्र बच नहीं पायेंगे । यह मेरा दृढ़तम विश्वास है । हम स्वर्गकी वारांगनाओंका प्रयोग वहीं करते हैं जहाँ हमें तथा हमारे वज्रको सफलता नहीं मिलती ।

[नेपथ्यमें घुंघरुओंका शब्द]

नारद : ज्ञात होता है कि मेनका आ रही है । (खिसियानी-सी हंसी) अच्छा तो फिर मुझे आज्ञा हो देवेश, मैं फिर कभी आपके दर्शन करूँगा । (चलते हैं) नारायण, नारायण ।

(नारद जाते हैं)

मेनका : (प्रवेश करके) श्री चरणोंमें मेनकाका प्रणाम स्वीकार हो ।

अिन्द्र : आओ शुभे, हम तुम्हारी ही प्रतीक्षा कर रहे थे ।

मेनका : मुझे प्रभोने किस कारणसे स्मरण किया ।

अिन्द्र : कारण अत्यधिक महत् और परमावश्यक है ।

मेनका : वह तो मैंने भी अनुभव किया नहीं तो अिस असमयमें बुलानेकी आवश्यकता ही क्यों होती ?

अिन्द्र : मेनका ! तुम्हें भूलोककी यात्रा करनी होगी । आर्यावर्तमें जाना होगा । कार्य टेढ़ा है । चतुर नायिकाके वशका ही है तभी तो हमने तुम्हें चुना है । मैं जानता हूँ कि जो कार्य अुर्वशी और रम्भा नहीं कर पाती अुसे तुम्हीं कर सकती हो ।

मेनका : प्रभुकी सेविकापर विशेष अनुकम्पा है । आपकी दुश्चिन्ताओंको दूर करना ही हमारा कर्तव्य है । मुझे मेरा कार्य बतलाया जाय ।

अिन्द्र : पृथ्वीपर ऋषि विश्वामित्र महान् तप कर रहे हैं । हमें अुनके तपसे कुछ आशंका हो रही है । हम अुनका तप भंग करना चाहते हैं ।

मेनका : वह तो बहुत क्रोधी हैं देवाधिदेव ! यदि अुन्होंने क्रोधमें आकर शाप दे दिया तो ?

अिन्द्र : (अट्टहास) बस, घबरा गयीं मेनके ! हम तुम्हारे सहायक हैं । हमारे होते हुअे तुम्हें किसीके शापसे नहीं डरना चाहिये । हमारे और स्वर्गके हितके लिअे तुम्हें यह कार्य करना ही होगा ।

मेनका : पर प्रभु.....

अिन्द्र : (बात काटकर) अिसमें सोच-विचारकी कोअी बात नहीं शुभे । जो कार्य करना ही है अुसमें तर्क-वितर्क शोभा नहीं देता । हम तुम्हारे कार्यकी कठिनतासे परिचित हैं । हम तुम्हें प्रत्येक प्रकारका सहयोग देंगे ।

मेनका : जैसी प्रभुकी अिच्छा । आशीर्वाद दीजिये कि मेरा पथ मंगलमय हो ।

अिन्द्र : हमारा आशीर्वाद सदैव तुम्हारे साथ है । तुम स्वर्गकी अप्सरा हो । तुम्हें मानवसे भयभीत न होना चाहिये । जाओ अपने जानेकी तैयारी करो । वसन्तको भी हम तुम्हारी सहायतार्थ भेजते हैं । अभी अुसे सूचना भिजवाते हैं कि वह तुम्हारे साथ जाये ।

मेनका : जैसी स्वामीकी अिच्छा ।

अिन्द्र : जाओ अपना कार्य प्रारम्भ करो । विपत्तिमें सदैव हमें अपने साथ पाओगी । नारीके सौन्दर्यके आगे अच्छों-अच्छोंकी तपस्या डोल जाती है । वर्षोंकी साधनाअें समाप्त हो जाती हैं । जाओ, शुभे । तुम्हारी यात्रा शुभ हो । (मेनका जाती है ।) अभागा विश्वामित्र हमारी शक्तिसे परिचित नहीं है । हम वज्रसे प्रहार नहीं करते । हम अुसे अेक कोमल तन्तुसे काटनेकी कला जानते हैं ।

[अट्टहास करते हुअे प्रस्थान ।]

(द्वितीय दृश्य)

स्थान : तपोवन

(विश्वामित्र तपस्यामें लीन हैं । मेनका और वसन्तका आगमन)

मेनका : (स्वगत) कैसी दिव्य तेजस्वी मूर्ति है । मन अपनेआप श्रद्धासे नत हुआ जा रहा है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अैसा अनुभव होता है जैसे सत्य शान्ति साकार होकर तपमें तल्लीन हो।

वसन्त : प्रकृतिको मैंने पूर्ण रूपेण रसवती कर दिया है, शुभे !

मेनका : फिर भी और जितना अुन्माद प्रकृतिमें भर सकते हो भरो। प्रखर गन्धवाले पुष्प चारों ओर और अधिक मात्रामें खिला दो।

वसन्त : कुछ ही क्षणोंमें सुगन्धिकी निर्झरणी बहाये देता हूँ। पाषाण-खंड भी अुन्मत्त हो जायंगे। यह तो बेचारा मानव है। बस अब तुम अपना नृत्य आरम्भ करो।

(मेनकाका नृत्य फिर कुछ देर बाद रुककर)

मेनका : ओह ! मेरे तो पाँव भी दुखने लग गये; किन्तु अिनकी अेकाग्रता नष्ट नहीं हुअी।

वसन्त : फिर क्या हुआ। कुछ क्षण बाद फिर सही।

(फिर नृत्य शुरू तथा गीत भी। विश्वामित्रका अंगड़ाअी लेना।)

मेनका : (हर्षसे) मेरा प्रयोग सफल हो गया दीखता है। ऋषिकी समाधि भंग हुअी। अब तुम लौट जाओ। मैं भी अिस पहाड़ीकी ओटमें जाकर देखूं। अिसकी प्रतिक्रिया क्या क्या होती है।

[दोनों जाते हैं]

विश्वामित्र : हैं यह क्या ? यह सब क्या था ? कहीं स्वप्न तो नहीं था। नूपुरोंकी पगध्वनि वीणाकी लहरियोंपर थिरकता हुआ अभिनव संगीत (सोचकर) क्या मैं वास्तवमें स्वप्न देख रहा था। नहीं, नहीं वह स्वप्न नहीं हो सकता। अवश्य किसी मायावीकी माया है। मुझे भ्रष्ट करनेके लिअे, साधनासे विरत करनेके लिअे ही यह षड्यन्त्र रचा गया है।

प्रकृति अचानक ही कितनी मधुर हो अुठी है, चारों ओर कितने मादक पुष्प खिल अुठे हैं, मेरा अनुमान सत्य होना चाहिये, वास्तवमें यह अच्छी तरह निश्चित किया हुआ किसीका कार्यक्रम है, पर यह कौन हो सकता है, मैं तो किसीका विरोधी नहीं ? कौन है जो मेरी साधनाकी प्रगतिमें अपना अनिष्ट देख रहा है, कुछ समझमें नहीं आया कि यह है क्या ? मन अपने आप विचलित हुआ जा रहा है। (कुछेक देर ध्यान-मग्न हो जाते हैं)। हूँ तो यह बात है, मायावी अिन्द्र अपनी मायाका प्रसार कर रहे दीखते हैं, तब तो अवश्य ही यह किसी अप्सरीकी मधुर पगध्वनि थी। हूँ, तो यह स्वर्गीय संगीत चन्द्र-किरणोंके साथ अठखेलियाँ कर रहा था। चन्द्रमा कितनी विलासिताके साथ आकाशमें मुस्करा रहा है, मूर्ख यह समझता है कि हम विश्वामित्रको परास्त कर लेंगे। देखता हूँ कौन किसको परास्त करता है, अवश्य ही वह अप्सरी यहीं कहीं किसी आस-पासके निकुंजमें छिप गयी दीखती है। (अूंचे स्वरोंसे) कौन है ? और हमसे क्या चाहता है, शीघ्र ही सामने आकर अपना अभिप्राय प्रकट कर दे (कोअी अुत्तर नहीं आता) नहीं आते तो ठहरो। अभी यह सारी प्रकृति हमारे अभिशापसे जल अुठेगी, बस अब अेक क्षणका ही और अवसर दिया जा रहा है।

[मेनका भयभीत-सी सामने आ जाती है।]

मेनका : अपराध क्षमा हो प्रभु, मैं दासी श्री चरणोंमें प्रणाम करती हूँ।

विश्वामित्र : कौन हो तुम ? क्या चाहती हो, और किसकी आज्ञासे यहाँ आयी हो ?

मेनका : (कोमल स्वरोंसे) आज्ञा, आज्ञा किसीकी नहीं प्रभो, अिधरसे निकल रही थी, प्रकृतिको अुल्लास-मय पाया, कुछ देरके लिअे यहीं ठहर गयी, अपनेआप ही पग थिरकने लगे। स्वर सहराने लगा, और मुझसे यह अपराध बन पड़ा। प्रकृतिके प्रांगणमें आप जैसे पुरुषके दर्शन हुअे, यह अपना सौभाग्य है (लक्ष्य करके) प्रकृति पुरुषका कितना सुन्दर सम्मिश्रण हुआ है यहां।

विश्वामित्र : (कुछ-कुछ समझते हुअे भी अनजानसे) वह तो है ही, प्रकृति अपने पूर्ण यौवनपर है, चन्द्र अपनी ज्योत्स्नासे पृथ्वीपर अपनी मादकता लुटा रहा है। अच्छा शुभे ! अब तुम जाओ, हमारी साधनामें तुम्हारी अुपस्थितिसे बाधा पड़ रही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेनका : अतिथिके प्रति अितनी क्रूरता आपको शोभा नहीं देती महर्षि ! मैं बहुत दूरसे आयी हूँ ! थक गयी हूँ, अब तो यहाँ कुछ देर विश्राम करूँगी ! विश्वास रखिये मेरे कारण आपको कोअी विशेष कष्ट नहीं होगा ।

विश्वामित्र : अच्छा बैठो विश्राम करो, तुम अतिथि हो ।

मेनका : मैं अतिथि बादमें हूँ, पहले विश्वामित्रकी सेविका हूँ ।

विश्वामित्र : (हंसते हैं) चतुर नायिका हो, यह तो कहो अतिथि, तुम्हारा नाम क्या है और आयी किस प्रदेशसे हो ?

मेनका : मेरा नाम मेनका है, प्रभो, और अिसी प्रदेशकी रहनेवाली हूँ, समवयस्क तरुण तरुणियोंके समूहके साथ वन-विहारको निकली थी, अेक मृगशावकके पीछे-पीछे पर्वतकी अिस अुपत्यकामें पथ भूल गयी, अेकाकी चलती-चलती यहाँ आ निकली । यहाँ आपको देखा । साधारणतः आकांक्षा हुअी, किसी मानवसे बात करूँ, अिसी विचारसे आपकी तपमुद्राके खुलनेकी प्रतीक्षा करने लगी । तभी पग स्वयं थिरक अुठे, कंठ लहरा अुठा, और मैंने देखा कि मेरे गानके साथ-साथ प्रकृति भी गा रही है, अितनेमें देखा कि आपकी तपमुद्रा खुल रही है । आपके शापसे भयाकुल मैं पासके निकुंजमें छिप गयी ।

विश्वामित्र : (हंसते हैं) आह, तो तुम मुझसे भयभीत हो गयीं, क्या मैं अितना भयानक प्राणी हूँ कि मुझे देखनेवाला भयविह्वल हो जाय ।

मेनका : अब अैसी कोअी बात नहीं प्रभो, किन्तु तब तो वास्तवमें ही भय हुआ । भगवान शंकरके ताण्डवकी मुद्रामें जब आपने अंगड़ाअी ली, तो मैं सिहर अठी, आपका अधर-अुधर क्रोधित होकर देखना ही मुझे डरा देनेके लिअे पर्याप्त था, पर अब आपसे बातें करते हुअे अैसा अनुभव हो रहा है जैसे आपके हृदयमें प्रेमकी स्रोतस्विनी बह रही है ।

विश्वामित्र : सुन्दरी ! तुम्हारे बातचीत करनेका ढंग हृदयग्राही है, अतिथि तुम्हारे माता-पिता हैं न ?

मेनका : नहीं, प्रभो, मैं अपने जीवनमें अेकाकिनी हूँ ।

विश्वामित्र : पर अब अिसके पश्चात् तुम जाओगी कहाँ ?

मेनका : मन तो कहता है कहीं भी न जाअूं, पर कहीं न कहीं जाना तो होगा ही । अच्छा, प्रभो, यदि मैं यहीं रहूँ तो क्या हो ?

विश्वामित्र : नहीं, नहीं, यह कैसे हो सकता है । विश्वामित्रके आश्रममें नारीका होना वर्जित है ।

मेनका : क्यों नारी हिंस्र जीव तो नहीं, जिससे आपको किसी प्रकारका भय हो ?

विश्वामित्र : (हंसते हैं) हम हिंस्र जीवोंसे कभी नहीं डरते । हम तपस्यामें लीन होते हैं । सिंह पास आकर बैठे रहते हैं, सर्प फुंकारते हुअे साथ लिपटे रहते हैं ।

मेनका : फिर नारी नामके निरीह जीवसे ही अितने बड़े तपस्वीको भय और आशंका क्यों ?

विश्वामित्र : भय और आशंका ? वह भी मुझे ! (हंसते हैं) तुम गाधि-पुत्र विश्वामित्रसे बातें कर रही हो ? मैं वह विश्वामित्र हूँ जिसने कभी सम्राटके रूपमें सारी पृथ्वीको अपने बाहुबलसे जीता । चक्रवर्ती सम्राट बनकर पृथ्वीपर शासन किया, लेकिन अुस अजस्र रक्त-धाराको देखते-देखते अेक दिन अूब अुठा और अिस रूपमें तपस्वी बना । मैंने पृथ्वीपर स्वर्ग बसाया किन्तु मेरा साथी त्रिशंकु असमर्थ निकला । मेरा स्वर्ग नष्ट हो गया । पर मुझमें अभी भी आकांक्षा बाकी है । मुझे अपनी साधना और शक्तिपर सदैव विश्वास रहा है । मैं अेक दिन फिर स्वर्गका निर्माण करूँगा । मुझे मानवके अुस भूतलको स्वर्गसे अधिक आकर्षक बनाना है । मैं अपनी साधनामें लीन हूँ । अिसलिये मैं नारीसे नहीं डरता शुभे ! मैं अपने समयके अभावसे डर रहा हूँ । मेरी देवताओंसे होड़ लगी हुअी है ।

मेनका : जीवनमें पहली बार मुझे अेक रहस्यमय प्राणीके साथ रहनेका सौभाग्य प्राप्त हो रहा है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं अिस सौभाग्यको छोड़ना नहीं चाहती। मैं आपके पथकी बाधा न बनकर आपकी सहायिका बनूंगी।

विश्वामित्र : (हंसते हैं) नारी और मेरी सहायिका बनेगी। और वह भी रहस्ययुक्त छलनामय नारी। विश्वास नहीं होता। मुझे न जाने क्यों रह-रहकर अिस बातका आभास हो रहा है कि तुम किसीकी दूतिका बनकर मेरी साधनामें बाधा अुपस्थित करने आयी हो (आवाज़ अूंची हो जाती है।) सचसच बोलो कि तुम कौन हो और किसकी प्रेरणासे आयी हो ?

मेनका : (सिहर अुठती है) जो व्यक्ति जीवनभर अविश्वासी रहा हो, स्वयंके प्रति भी जिसे विश्वास न हो, वह अेकदम किसीपर विश्वास कैसे कर सकता है?

विश्वामित्र : (शान्तभावसे) जिन्हें जब-जब भी भावावेशमें अपना कहा, वह अपने न निकले जीवनमें अविश्वास घर न कर ले तो और क्या हो, निरन्तर संघर्षोंमें रत मानव (कुछ सोचते हुअे) चिन्ता मैंने अपने जीवनमें अिसलिये कभी नहीं की, क्योंकि संघर्षोंका अभ्यस्त हो चुका हूँ, विगतके लिअे खीझता नहीं और आगतके लिअे अधिक विचार-विमर्श नहीं करता, क्योंकि अुसे अेक-न-अेक दिन वर्तमान बनकर मेरे पास आना ही है, अच्छा देवी, अब कुछ समय आराम कर लो, फिर प्रातः बातें करेंगे।

मेनका : प्रातःकाल आनेमें अब देर ही कितनी है प्रभो, प्रातः काल हुआ ही चाहता है, पौ फट रही है। यदि आपको कोअी कष्ट न हो तो अिस पूनमकी सुखद चाँदनीमें कुछ देर घूमें।

विश्वामित्र : (सोचते हुअे) हूँ, हूँ विचार तो बुरा नहीं है, किन्तु नहीं, मेरी अिच्छा नहीं है, तुम्हें जाना हो तो जाओ, घूम आओ, कुछ देर मुझे अेकान्तमें रहने दो। अतिथि, जाओ कुछ क्षणोंके लिअे तुम जाओ।

मेनका : जैसी आपकी अिच्छा ! (मेनका जाती है।)

[मित्रवामित्र अपनी तपमुद्रामें बैठे हैं।]

विश्वामित्र : (स्वगत) हृदय चंचल हो अुठता है, तपमें ध्यान ही नहीं लगता, कितना ही प्रयत्न करता हूँ पर सब व्यर्थ। शून्यमें भी प्रतिक्षण मेनका ही मेरे नेत्रोंके सम्मुख घूमती है। अच्छा कुछ देर शान्त रहकर सोचूँ, कि यह सब क्या है ? विचारमग्न हो जाते हैं। तभी मेनका आती है।

मेनका : (स्वगत) अिनके हृदयमें प्रबल संघर्ष मचा हुआ है, अिस व्यक्तिकी शान्ति मैंने हरण कर ली है, (फीकी हँसी) पर अिससे तुझे दुःख क्यों हो मेनके ! तेरा और काम ही क्या है। तुझे अपने कार्यमें सफलता मिलती दीख रही है। (प्रगट) ब्रह्मर्षि !

विश्वामित्र : हैं कौन मेनका !

मेनका : क्षमा प्रभो, मैंने आपकी साधनामें विघ्न डाला (कुछ देर बाद) प्रकृति नटीकी छवि देखनेकी अिच्छा, थी, सोचा यदि आप भी साथ चलें तो .....

विश्वामित्र : मैं : (सोचते हुअे) चलो, अतिथि, तुम्हारी अिच्छा, तो हमें पूर्ण करनी ही होगी।

मेनका : अहोभाग्य ! (दोनों जाते हैं।)

--तीसरा दृश्य--

[दृश्य वही है। कुछ महीने बीत गये हैं।]

विश्वामित्र : यह क्या हो गया है मुझे। कुछ समझमें नहीं आ रहा है, मेनकाने मुझपर जादू कर दिया है। मैं ब्रह्मर्षि, राजर्षि कहलानेवाला विश्वामित्र अेक गृहस्थ बनकर रह गया हूँ, अुद्विग्नता निरन्तर मेरे हृदयमें बढ़ती जा रही है। न जाने अिसका अन्त कब होगा। साधना और तपस्या ही नहीं जाती। समझमें नहीं आता कि यह मेनका कौन है, मानवी तो नहीं दीखती, पर स्वर्गकी अप्सरा भी नहीं है। अप्सरामें अितनी करुणा कहाँ, प्रेमकी अजस्र स्रोतस्विनी कहाँ ? (नीरस हँसी) वाहरे समयके फेर। तपस्वी विश्वामित्र आज पिता बनने जा रहा है। मैं पिता बनने जा रहा हूँ। मेनका माँ बननेवाली है। कहाँ गया मेरा तपोबल ? कहाँ गयी मेरी ब्रह्मर्षि कहलानेवाली साधना शक्ति ? मन आशंकाओंसे घिर रहा है। (अूंचे स्वरसे) देवी, देवी, मेनके।

मेनका : (दूरसे) अयी स्वामी !

विश्वामित्र : कहाँ हो, क्या कर रही हो ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेनका : (आती हुअी) अिस पासके निकुंजमें फल-फूल बीन रही थी।

विश्वामित्र : मुझसे कहतीं, यह सब कुछ में ले आता। तुम यह कष्ट मत किया करो। तुम्हारे दिन अब अिस तरहके नहीं हैं। कहीं पांव अिधर-अुधर फिसल जाय तो.....

मेनका : आपका भी तो पांव फिसल सकता है, स्वामी !

विश्वामित्र : (अुदासीसे) मेरा पांव तो फिसल ही चुका है देवि, अब और शेष क्या रह गया है। मेरी साधना, मेरा तपोबल, कअी बार अनुभव होता है कि में पथभ्रष्ट हो गया हूं।

मेनका : जबसे आयी हूं यही बात सुनती आ रही हूं, आपकी साधना, आपका तपोबल, तो क्या मैं आपकी साधना नहीं हूं। आपकी मुझमें और अिस आनेवाले शिशुमें कोअी ममता नहीं, आपको पति बनकर कोअी हर्ष नहीं हुआ, आपको पिता बनकर कोअी आह्लाद नहीं होगा क्या ? तो क्या मेरी साधना, मेरी तपस्या निरर्थक ही है ?

विश्वामित्र : बस, बस, बस, अब अधिक मत बोलो, मुझे क्षमा करो, तुम्हें मेरी बातोंसे आघात पहुंचा है।

मेनका : आप पथभ्रष्ट हो गये हैं। हो गये होंगे, अपने-अपने विचार हैं पर मैं तो अपनी साधनामें सफल होने जा रही हूं। आपको पितृत्व देना ही मेरे जीवनका चरम लक्ष्य था।

विश्वामित्र : और स्वयंके लिअे मातृत्व प्राप्त करना, साथ ही यह भी कहो, देवि !

मेनका : यह भी अुचित ही है, फिर भी आनेवाला शिशु आप जैसे नीरस व्यक्तिके हृदयमें अधिक सरसता भर देगा। निर्मोही के हृदयमें मोहका संचार होगा। सन्यासी सन्तानके स्नेहमें बंध जायगा।

विश्वामित्र : भविष्यकी बातें भविष्यके लिअे छोड़ो देवि !

मेनका : दो चार दिन बादकी बात भविष्य कहां तक रह गयी, ब्रह्मर्षि।

विश्वामित्र : अच्छा बैठो, विश्राम करो। यह बटुक कहां गया हुआ है, प्रातःकालसे ही नहीं दिखा।

मेनका : (हंसती है) अितनी शीघ्र भूल गये। आप ही ने तो कल अुसे कहा था कि पासके किसी आश्रमसे कोअी दुधारू गौ ले आना। आज प्रातः ही मैंने अुसे महर्षि कण्वके आश्रममें भेज दिया था। बस आनेवाला ही होगा।

[नेपथ्यसे बछड़े तथा गौके रंभानेका स्वर]

मेनका : लो गौ लेकर वह आ गया दीखता है।

विश्वामित्र : यह आवश्यकता भी पूरी हुअी। मुझे पूरी आशा थी कि वे नाहीं नहीं करेंगे। मैं अभी आया। देखूंगा किस जाति की है।

[जाना]

मेनका : (स्वगत) कितना भोला है यह मनुष्य। अिसे क्या पता कि अिसके साथ कैसा छल और प्रवंचना मय खेल खेला जा रहा है। बस अब अेक-दो दिनमें ही अिसकी आँखें खुल जायेगी। (अट्टहास) ब्रह्मर्षि, तपोबल, साधनाकी मुझसे कुछ भी तो रक्षा नहीं कर पायी अिसकी।

[बटुकका प्रवेश]

ब्रह्मर्षि क्या कर रहे हैं ?

अिन्द्र : (हंसकर) ब्रह्मर्षि नहीं अपने हाथकी कठपुतली कहो। गौ और बछड़ेका निरीक्षण कर रहे हैं। मूर्ख कहींका हमसे होड़ करने चला था। पर हमारे अेक ही शस्त्रसे पराजित हो गया। तुम धन्य हो मेनके ! देव जाति सदैव तुम्हारी ऋणी रहेगी।

मेनका : किन्तु देवेन्द्र ! मेरा यह पतन .....

अिन्द्र : यह तुम्हारा पतन नहीं देवि, अपनी जातिके लिअे बहुत बड़ा बलिदान है। हम लोग सदैव तुम्हारे आभारी रहेंगे। बस अब कुछ ही दिनोंकी बात और है। हम शीघ्र ही अपने देशको प्रस्थान करेंगे और यह ब्रह्मर्षि अपनी सन्तानको गोदमें खिलाता हुआ अपनी मूर्खतापर पछताकर स्वयं ही समाप्त हो जायगा। (अट्टहास) ब्रह्मर्षि ! (अट्टहास)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वामित्र : (आते हुअे) अरे बटुक, क्या बात है? अिस तरह पागलोंकी तरह क्यों हंस रहा है?

अिन्द्र : आज मैं बहुत प्रसन्न हूँ, ब्रह्मर्षि ! (अट्टहास)।

विश्वामित्र : पागल ! जा, जाकर अपना काम कर।

—चौथा दृश्य—

[कुछ दिन अुपरान्त दृश्य वही है। विश्वामित्र अेक नवजात शुशुको गोदमें लिये हुअे हैं। शिशुका रोना पास मेनका भी है]

विश्वामित्र : (पुचकारते हुअे) कितनी सुन्दर बालिका है। लघु रूपमें तुम्हीं दीख रही हो मेनके। लो अिसे चुप कराओ।

मेनका : क्यों? क्या तनिक-सी देरमें ही थक गये। अिसे खिलानेका अभ्यास करो ब्रम्हर्षि, तुम नहीं खिलाओगे तो और कौन खिलाअेगा?

विश्वामित्र : (हंसकर) और तुम कहाँ जाओगी?

मेनका : अपने देश।

विश्वामित्र : जब जाओगी तब देखा जायगा। यह भी अपनी ननिहाल जायंगी। हो सका तो मैं भी साथ चलूंगा।

मेनका : आप, (अट्टहास) आप और यह बालिका मेरे साथ जायेंगे। असम्भव। मैं तब नहीं, अब जा रही हूँ। विश्वामित्र! अब और अिसी समय। अपनी सन्तानको तुम संभालो। तुम यह भी नहीं समझ पाये कि मैं?

मेनका : कौन हूं।

विश्वा० : कौन हो तुम (क्रोधसे) शीघ्र बताओ कि तुम कौन हो?

[बालिकाकी चीख]

अिन्द्र : (अट्टहास) अितना भी न पहचान पाये विश्वामित्र कि हम कौन हैं। यह स्वयं स्वर्गकी अप्सरा मेनका है और मैं बटुकके वेशमें स्वयं अिन्द्र हूं। (अट्टहास) कहां है तुम्हारा तपोबल। कहां है तुम्हारी साधना। (अट्टाहास)

विश्वामित्र : (चीखकर:) चुप रहो, दूर हो जाओ, मेरी आँखोंके आगेसे, अधम और निर्लज्ज प्राणियो, छलछिद्र यही तुम्हारे जीवनका ध्येय है, अिसके अतिरिक्त और भी कुछ तुम्हें आता है। ले जाओ मेनके। अपनी अिस सन्तानको भी साथ ही ले जाओ।

मेनका : अिसकी आपको ही आवश्यकता है। सूनेपनमें हृदय बहलानेके लिअे यह अेक खिलौना है।

विश्वामित्र : ओह, दुष्टे मातृत्वको लजानेवाले शब्द बोलते हुअे तुझे लज्जा नहीं आती। तुम माँ नहीं माँके नामपर कलंक हो। अिसकी तुम्हें चिन्ता नहीं तो क्या हुआ। अिसका लालन-पालन तो कहीं न कहीं होगा ही। (क्रोधसे काँपते हुअे) पर अिन्द्र यह कह दूँ अपनी भूलपर तुम्हें अेक दिन पछताना होगा। अेक तो क्या तुम्हारी अनेक अप्सरियाँ मेरा तपोबल नष्ट नहीं कर सकतीं। मैं मानता हूँ आज अिस क्षण पतनकी खाअीमें हूँ, तो कल फिर अुत्थानके शिखरपर पहुँच सकता हूँ। साधना मेरे जीवनका चरम अुद्देश्य है। मुझे अपने पथपर निरन्तर आगे बढ़ना है। यह छोटी-छोटी बाधाअें मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकतीं। दूर हो जाओ मेरी आँखोंसे।

[अिन्द्र तथा मेनका अट्टहास करते हुअे जाते हैं।]

विश्वामित्र : विश्वामित्र, यह तेरे जीवनकी प्रबल हार थी, किन्तु शीघ्र ही तुझे अपनी हारको विजयमें परिवर्तित करना होगा। चल अबोध शिशु तुझे महर्षि कण्वके आश्रमके समीप छोड़ आअूं। तुझे कोअी न कोअी पालेगा ही। मेरी देवताओंसे होड़ लगी है। मुझे तपस्या करनी है। चिन्ता न कर। मैं तुझे देखता रहूँगा। तुझे अपना स्नेह देता रहूँगा। चल शीघ्र ही चलें।

[प्रस्थान]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यालोचन

[सूचना—'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिये।]

चक्की — [लेखक : श्री मन्मथनाथ गुप्त, प्रकाशक—आशा प्रकाशन, हजारीबाग। पृष्ठ संख्या—२०५, मूल्य रु. ३-४-०]

प्रस्तुत अुपन्यासका कथानक भारतके विभाजन और अुसके मूलकी साम्प्रदायिक दुर्भावनासे संबद्ध है। अितिहास प्रमाण और साक्षीकी बैसाखीपर चलता है; अिसलिये वह अुस सत्यको अंगीकृत नहीं कर सकेगा, जिसे अुपन्यासका रूप दिया गया है। हिन्दू-मुसलमानके बन्धुत्वका नाश करके मनुष्यकी बर्बर-प्रकृति कितने निंद्य रूपमें प्रकट हुअी है—अिसका चित्रांकन 'चक्की' अुपन्यासमें है। धर्म अथवा मजहब जब पत्थर हो जाता है, तब मनुष्य अुसपर अपनी पैशाचिक-प्रकृतिका अूपरी पाट रखकर सरल साधारण जनोंको पीसनेमें जुट जाता है। यह चक्की युग-युगसे नाना प्रकारकी नृशंसताओंका साधन बनती आयी है।

चक्कीकी विशेषता यह है कि हिन्दू-मुसलमानके बीभत्स हत्याकांडका वर्णन भी सम्प्रदाय-विशेषके प्रति आक्रोश अथवा स्थायी घृणाको जन्म नहीं देता। पढ़ते-पढ़ते पाठकको रहमतका करुण परिवर्तन, शकूरकी अिसानियत, बलदेव नाअीका सहज वाक्चातुर्य और सुधांशुकी कातरता हृदयको छू जाती है। पुरोहितजीका अद्भुत निष्ठावान चरित्र "चक्की" की धुरी है। यह अैसा पात्र है जो श्रद्धासे हमारा चित्त भर देता है।

परिमल और रेनुकाको अुपन्यासका प्रधान चरित्र माननेका यत्न किया गया है। किन्तु दंगेकी भीषणता तथा अुससे लगी अनगिनती भयानक घटनाओंका रेला अपनेआप अितना अुभर आता है कि अुक्त दोनों पात्रोंका महत्व ओझल हो जाता है। तथापि चक्कीके चलते रहनेका घर्घर कभी मंद नहीं होता और अगली घटनाकी जिज्ञासा निरन्तर क्रियाशील बनी रहती है। अुपन्यासके अिस जिज्ञासा-तत्वकी रक्षामें परिमल और रेनुकाका सूत्र अंततक जुड़ा रहता है और अिसीलिये अिन दोनों पात्रोंकी प्रधानता बरबस सिद्ध हो जाती है।

श्री मन्मथनाथ गुप्तका यह अुपन्यास वास्तवमें अेक सजीव मार्मिक कृति है। अगली पीढ़ी अिस पुस्तकको पढ़कर भारतीय अितिहासके अुस अध्यायकी झलक पा सकेगी जो शायद कभी लिखा नहीं जा सकेगा और जिसे पढ़ लेनेपर धर्मजनित कटुता-कुटिलताका ह्रास ही होगा।

अच्छी हिन्दी—[लेखक : श्री किशोरीदास बाजपेयी, प्रकाशक—हिमालय अेजेंसी, कनखल (उ० प्र०) पृष्ठसंख्या—१५७, मूल्य—रु० २ आ. ८]

हिन्दीके स्वरूप और अुसके व्यवहारपर "अच्छी हिन्दी" जैसी पुस्तक निराली है। यत्न किया गया है कि हिन्दीके लिखने-पढ़नेवालोंको अिस भाषाकी प्रकृति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अुसके व्यवहारका सरल विवेचन अुपलब्ध हो। अिसी अुद्देश्यसे श्री वाजपेयीजीने अुन चित्य और अनगढ़ प्रयोगोंको स्थान-स्थानपर अुधृत किया जो आजकल बिना-सोचे-समझे छपते रहते हैं। हिन्दीके राष्ट्रव्यापी व्यवहारकी घड़ीमें भाषाकी बनक और अुचित गठनका ध्यान विस्मृत-सा हो गया है। प्रतिदिन जितना हिन्दी प्रकाशन दृष्टिगत होता है, वह साक्षी है कि हिन्दीके भक्तोंके अुत्साहका तरंगाघात अुसके अंग-प्रत्यंगके आकार-प्रकारकी अवहेलना कर नाकका गहना कानमें और हाथकी चूड़ी पाँवमें पहनानेमें नहीं हिचकते। अैसे भाषा-बवंडरके मुहूर्तमें श्री वाजपेयीजीके प्रस्तुत ग्रंथका स्थान जागृत प्रहरीके समान अुद्बोधक है।

"अच्छी हिन्दी" के आरंभिक कुछ पृष्ठ खूब मजेमें लिखे गये हैं—अुनमें चटाटापन और मार्गदर्शन दोनों हैं। किंतु अिसके बादका प्रतिपादन यत्किंचित शुष्क है। मेरा विश्वास है कि जिस धुनमें आरंभका अंश लिखा गया है, यदि अुसे अंत तक निभाया जाता, जो संभव था, तो पुस्तक अधिक रुचिकर होती। "अच्छी" शब्द हिन्दीके पहले रखकर अेक सस्ता और अनिश्चित अर्थवाची प्रयोग न किया जाता तो शोभा देता। अच्छी हिन्दीके स्थानपर "स्वाभाविक हिन्दी" कहना अधिक सार्थक होगा।

—'लहरी'

साहित्य-विवेचन—(लेखकद्वय : क्षेमचन्द्र सुमन तथा योगेन्द्रकुमार मल्लिक, प्रकाशक : आत्माराम अॅण्ड सन्स, दिल्ली। पृष्ठ-संख्या : ३५१, मूल्य : सात रुपये)

हिन्दी साहित्यमें समालोचनाके क्षेत्रमें यद्यपि कअी पुस्तकें निकल चुकी हैं, फिर भी 'साहित्य-विवेचन' का अपना अेक विशेष स्थान है। साहित्य-समालोचनाके सिद्धांतोंके सम्यक् विवेचनके साथ-साथ अुसकी अद्यतन गतिविधिका अैतिहासिक परिचय दे देनेसे विद्यार्थियोंको विषयकी पूरी जानकारी हो जानेमें बड़ी सहायता मिलती है। प्रत्येक विषयको बड़ी ही सरल अेवं सरस भाषामें अत्यन्त रोचक ढंगसे समझाया गया है।

प्रस्तुत पुस्तकको साहित्य, कविता, अुपन्यास, कहानी, नाटक, निबन्ध, गद्यगीत, जीवनी, आत्मकथा, संस्मरण, रेखाचित्र-स्केच, रिपोर्ताज, समालोचना आदि अध्यायोंमें बांटा गया है।

सभी विषयोंपर अत्यन्त गंभीरतापूर्ण विवेचन प्रस्तुत किया गया है और सर्वत्र अतिवादसे बचनेका प्रयत्न किया गया है। हां! कविताके अन्तर्गत आने-वाले रसनिष्पत्ति, साधारणीकरण आदि विषयोंके संबंधमें भी जानकारी दे दी जाती तो और अधिक अच्छा होता। फिर भी अुससे पुस्तककी अुपादेयतामें किसी प्रकार अंतर नहीं आता।

पुस्तक निश्चय ही साहित्यके अंगोपांगोंका अध्ययन तथा अुसकी प्रगतिकी जानकारी रखनेवाले विद्यार्थियोंके लिअे बहुत ही कामकी चीज है।

हिन्दी काव्य-धारामें प्रेम-प्रवाह— (लेखक–श्री परशुराम चतुर्वेदी, अेम. अे., अेल-अेल. बी. प्रकाशक–किताब महल, अिलाहाबाद। पृष्ठ संख्या–२९६, मूल्य रु. ३–१२–०)

प्रेम बिना जीवन सूना रहता है, भक्ति पूरी नहीं हो पाती और न मुक्ति ही प्राप्त हो सकती है। प्रेमकी अमर वेलिकी छत्रछाया जिसे प्राप्त नहीं हुअी अुसका जीवन भी क्या कोअी जीवन है? जिन-जिन लोगोंने प्रेमके अिस अथाह समुद्रमें गोते लगाये अुन्होंने अपने अपने अनुभवोंको भिन्न-भिन्न ढंगसे व्यक्त करनेका प्रयत्न किया; कहीं वह कार्य काव्यके रूपमें हुआ, कहीं किस्से कहानीके रूपमें, कहीं नाटकोंके माध्यमसे तो कहीं अुपन्यासके रूपमें।

राष्ट्र, देश, जाति अेवं धर्म, प्रेमके भिन्न-भिन्न क्षेत्र कहे जा सकते हैं। प्रेमका अर्थ अधिकांशतः लौकिक प्रेमतक ही माना जाता है। हां, सन्त-साहित्यमें वह अवश्य दिव्य और अलौकिक हो अुठा है पर जैसा कि पुस्तकके नामसे ही विदित हो जाता है अिसमें हिन्दी काव्य-धारामें प्रवाहित होनेवाले प्रेम-प्रवाहकी चर्चा की गयी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी साहित्यके अितिहासमें किये गये काल-विभागको ध्यानमें रखते हुअे तत्कालीन रचित प्रेम-काव्यकी चर्चा की गयी है। 'प्रेम-परिचय' नामक प्रथम अध्यायमें प्रेमकी व्याख्या करते हुअे अुसके दो भेदों–लौकिक अेवं अलौकिककी सुन्दर चर्चा की गयी है। काम और प्रेमका अन्तर अध्ययन करने योग्य है। अिसके अनन्तर आदिकालीन हिन्दी-काव्य, मध्यकालीन श्रृंगार-काव्य और सूफी-काव्य, मध्यकालीन सन्त-काव्य, मध्यकालीन कृष्ण-काव्य और राम-काव्य, मध्यकालीन अन्य काव्य, आधुनिक कालका भारतेन्दु युगीन काव्य, वर्तमान कालीन विविध काव्य, वर्तमान कालीन छाया-वादी काव्य, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और अुपसंहार आदि अध्यायोंमें पुस्तक बाँटी गयी है।

लेखकने सभी कालोंमें प्रदर्शित प्रेमकी धाराका मूल्यांकन करनेका प्रयत्न करते हुअे सम्बन्धित अुद्धरणोंको भी यथास्थान दिया है।

लौकिक प्रेमकी वह चर्चा जिसे श्रृंगारके अन्तर्गत लिया जा सकता है, रीतिकालमें सबसे अधिक हुअी किन्तु अुसी काव्यके बोधा, रसखान, घनानन्द आदि कवियोंने अलौकिकके प्रति भी अपना प्रेम व्यक्त किया है जो आज भी सहज ही में हमारा ध्यान आकृष्ट करता है।

प्रेमके व्यक्तिकरणके आधुनिकतम ढंगका नाम भी छायावाद कहा जा सकता है। अिन्हीं सब तथ्योंकी चतुर्वेदीजीने विस्तारपूर्वक चर्चा की है।

अपने ढंगका प्रथम प्रयत्न होनेपर भी पुस्तक प्रेमियोंकी अैतिहासिक जिज्ञासाका समाधान करनेमें समर्थ होगी, अैसी आशा है।

वाद समीक्षा— (लेखक : श्री कन्हैयालाल सहल, अेम. अे., प्रकाशक : आत्माराम अॅण्ड सन्स। पृष्ठ-संख्या ६८, मूल्य बारह आने)

किसी भी साहित्यको पूरी तरहसे समझनेके लिअे अुसमें प्रकट की गयी भावनावों तथा प्रमुख धाराओंको समझना अत्यन्त आवश्यक है। अिधर हिन्दी-साहित्यमें छायावाद, रहस्यवाद, प्रगतिवाद, पलायनवाद, प्रयोग-वाद, प्रतीकवाद आदि कअी वाद प्रचलित हो गये हैं, जिन्हें ठिकानेसे समझ लेनेपर सम्बन्धित लेखकोंकी रचनाअें अेवं विचारधाराअें स्पष्ट रूपसे समझमें आ जाती हैं।

प्रस्तुत पुस्तक अैसे ही वादोंकी अेक विवेचनात्मक 'हेण्ड बुक' है। अिसमें छायावाद, रहस्यवाद, द्वंद्वात्मक भौतिकवाद और प्रगतिवाद, अभिव्यंजनावाद तथा हिंदी की प्रयोगवादी कविता आदि विषयोंपर विचार प्रकट किये गये है।

हिन्दी-साहित्यके अिन वादोंसे परिचित होनेके अिच्छुक विद्यार्थियोंको तत्सम्बन्धी जानकारी करा देनेमें पुस्तकसे काफी सहायता मिल सकती है, अेवं अिसी दृष्टिसे अुसकी अपनी अुपयोगिता है।

—मदनमोहन शर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

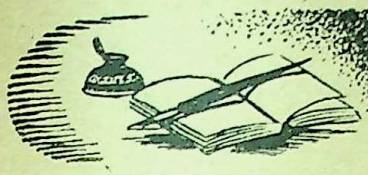

संपादकीय

'नया जीवन'का "नया साहित्यिक कंट्रोल" !!

"अितनी ही दुशवार अपने अैबकी पहचान है।
जिस क़दर करनी मलामत औरको आसान है।"

मुझे गत अप्रैलके अंकमें सम्पादकीयमें कुछ लिखना था; किन्तु नहीं लिख सका। विवश था। पूरे दो महीने—मार्च और अप्रैल—अत्यन्त अस्वस्थतामें बीते। मेरा और मेरी श्रीमतीका स्वास्थ्य खराब हो गया। मन जब स्वस्थ होता है, पढ़ने, लिखनेमें जी लगता है। कहा है 'स्वस्थे चित्ते बुद्धयः संस्फुरन्ति।' अिधर लगभग दो महीनोंसे वर्धा भी नहीं गया हूँ कि सहयोगी पत्र-पत्रिकाओंको अुलटता-पलटता कि कहाँ क्या-क्या निकला है। अप्रैल और मअीके अंकोंका सम्पादन-कार्य नागपुरसे ही साधा है।

मार्चके पहले हफ्तेकी बात है। हर्बर्ट कालेज कोटा (राजस्थान) के प्रोफ़ेसर मेरे साहित्यिक मित्र श्री रामचरण महेन्द्रका अेक पत्र मिला जिसके साथ सहारनपुरके मासिक पत्र 'नया जीवन' की सम्पादकीय कटिंग भी नत्थी थी। अपने पत्रमें श्री महेन्द्रजीने रेखांकित जिज्ञासा प्रकट की थी कि यह "लाखका सवा लाख" का क्या मामला है ?

आगरासे भी मेरे साहित्यिक तरुण मित्र श्री राजेन्द्र यादव अेम. अे. ने अेक कार्डमें थोड़ासा संकेत किया कि सहारनपुरके 'नया जीवन' के सम्पादक श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' मुझसे नाराज़ हैं। अपने सम्पादकीयमें अुन्होंने मुझे आड़े हाथों लिया है।

अभी पूरे १६-१७ महीने ही हुअे हैं राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धाने कृपापूर्वक मुझपर 'राष्ट्रभारती' के सम्पादनका भार रखा था, तबसे अेक सचेष्ट सजग प्रहरीकी तरह श्रद्धा विश्वासपूर्वक समग्र भारतीय साहित्यकी सेवाके राजपथपर आस्थाके साथ चुपचाप चला जा रहा हूँ। अिस थोड़ेसे कालमें ही 'राष्ट्रभारती' को बढ़िया शोहरत नसीब हुअी, अच्छी ख्याति मिली, वह लोकप्रिय बनी। मैं भी बलन्द तक़दीरवाला हूँ कि मुझ अकिंचन जनपर हिन्दीके तथा प्रान्तीय भाषाओंके अुदीयमान लब्ध-प्रतिष्ठ मनीषी कृपालु लेखकोंने कृपा की और लेखनीका हार्दिक सहयोग दिया। 'राष्ट्रभारती' जिस प्रशस्त मार्गपर चल रही है, अुसे अुन्होंने पसन्द किया। 'राष्ट्रभारती' के लिअे जो कुछ हो रहा है अुन हृदयवानों द्वारा हो रहा है जिनकी सहृदयताकी लम्बाअी-चौड़ाअी बहुत बड़ी है।

\+ + +

सहारनपुरसे 'नया जीवन' नामक अेक हिन्दी मासिक-पत्र निकलता है। श्री कन्हैयालाल मिश्रजी 'प्रभाकर' अुसके सम्पादक हैं। अैसा हम समझ लें कि वे अेक प्रखर मनचले आलोचक हैं। नोंकझोंक या छेड़छाड़ करनेकी गरजसे कभी-कभी वे दिल्लगीकी फुलझड़ियाँ अपने 'नया जीवन' में छोड़ते रहते हैं; खुद मजा लेते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अपने मित्रोंको भी मज़ाकका मज़ा चखाते हैं। और मिश्रजी आवश्यकतासे अधिक तर्कशील भी हैं। तो अुन्होंने अपने गुणकर्म स्वभावके अनुरूप अेक मजेदार सम्पादकीय टिप्पणी अपने विनम्र सहयोगीपर 'नया जीवन' में "नया साहित्यिक कंट्रोल" अिस सिरबन्धसे लिख डाली है, गत फरवरीके अंकमें।

बात अितनी-सी थी कि कुछ दिन हुअे 'राष्ट्रभारती' में हमने सम्पादककी हैसियतसे अेक छोटी-सी सूचना अिस आशयकी निकाली थी कि अगर कोअी महाशय राष्ट्रभारतीमें प्रकाशित किसी मनपसन्द रचनाको अुद्धृत करना चाहें तो अवश्य वैसा करें; किन्तु जरा सम्पादकसे भी पूछ लिया करें अथवा अुसका अुल्लेख कर दें। अिस स्वल्प शिष्टाचारके पालनसे किसीकी शान नहीं बिगड़ती। लेखकोंको अपनी रचनापर पूरा अधिकार रहता है। वे अपनी रचनाको किसी पत्र-पत्रिकाको भेजें या न भेजें। सम्पादकको अधिकार रहता है कि किसी रचनाको छापे या न छापे। मगर अेक बात तो नैतिक बन्धनके रूपमें हमें माननी होगी। अुदाहरणार्थ—श्रीमती गुर्टूने, श्री अनन्त गोपाल शेवड़ेने या श्री अुदयशंकर भट्टजीने या राजेन्द्र यादवजीने हमारी प्रार्थनापर 'राष्ट्रभारती'के लिअे ही कोअी रचना भेजी, और अुस प्रकाशित रचनाको गुजराती, मराठी, तामिल या पंजाबीमें अनूदित करके कोअी साहित्यिक महाशय अपने यहाँके पत्रोंमें प्रकाशित करना चाहते हैं तो 'राष्ट्रभारती'के सम्पादकका क्या फर्ज होगा, अिस मामूली व्यवहारको 'नया जीवन'के सम्पादकजी अवश्य जानते हैं।

\+ \+ \+

"लाखकी आय सवा लाख"?

"राष्ट्रभारती'के सम्पादकके मस्तिष्कमें जो बात कभी न आयी अुसकी ठोस कल्पना भी 'नया जीवन' के सम्पादकके दिमागने कर ली आपका आशय यह जान पड़ता है कि वर्धाकी राष्ट्रभाषा प्रचार समिति अपनी 'राष्ट्रभारती' मासिक-पत्रिकाके जरिये लाख रुपयेका सवा लाख रुपया कमा रही है! अगर मैं भूल नहीं करता हूँ तो मेरा सोचना सही है और यह सही-सही हालत है, हिन्दीके प्रायः सभी अुच्च कोटिके मासिक-पत्रोंकी, कि वे बेहद घाटेपर चल रहे हैं। अुन दो-अेक साप्ताहिक, मासिक-पत्रिकाओंकी बात छोड़ दीजिये जो निरी व्यापारिक कुशलताके बलपर चलायी जा रही हैं। 'नया जीवन' के संपादक और संचालक खुद अपने 'लाखके सवा लाख' का लेखा जोखा देखें। राष्ट्रभाषा प्रचार समितिको गत दो वर्षोंमें 'राष्ट्रभारती' के मुद्रण, प्रकाशनमें २५ हजार रु० का घाटा हुआ है। राष्ट्रभाषा हिन्दी और भारतकी अन्यान्य अन्तर्प्रान्तीय भाषाओंके सर्वोदय समन्वयके लिअे भारतकी संविधान-सम्मत सभी भाषाओं और विभाषाओंको अेक दूसरेके निकट लानेके लिअे और अुन-अुन भाषाओंमें जो सत्यं शिवं सुन्दरं है, अुससे अेक दूसरेको अवगत करनेके लिअे अिस घाटेको समितिने नगण्य ही समझा है और समग्र भारतीय साहित्यकी सेवाको ही अपना मुख्य लक्ष्य माना है। प्रतिमास १८–२० विविध मौलिक अथच अनूदित लेखों और ४–५ कविताओंके लिअे अपने लेखकोंकी सेवामें 'राष्ट्रभारती' की ओरसे कितना पत्रपुष्प-पुरस्कार जाता होगा, अिसका अन्दाज 'नया जीवन' के सम्पादक स्वयं लगावें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'नया जीवन' की अुस सम्पादकीय टिप्पणीमें महात्मा गान्धी, गुरुदेव रवीन्द्रनाथ, प्रेमचंदजी और पंडित बनारसीदासजी चतुर्वेदीका भी अुल्लेख हुआ है। पूज्य बापू और गुरुदेवके कापी राअिटके पीछे कुछ तथ्य ज़रूर है। गान्धीजीने पहले, वर्षों तक अपने लेखोंके अुद्धरणों और अनुवादोंके लिअे छूट दे रखी थी, अधिकसे अधिक प्रचार हो, अुनके विचारोंका अिस लिअे। परन्तु जब अुन्होंने देखा कि अुनकी भाषाका, अुनके विचारोंका अनुवादक और प्रकाशक दुरुपयोग करते हैं, अर्थका अनर्थ होता है, गलत-सलत अनुवाद होते हैं और प्रकाशक मनमाना लाभ अुठाते हैं; तब अहमदाबादका "नवजीवन ट्रस्ट" क्यों न अंकुश लगावे--क्यों न कंट्रोल करे? गान्धीजीको जो कुछ करना पड़ा मजबूर होकर। रही पंडित बनारसीदास चतुर्वेदीकी बात। सो हम चतुर्वेदीजीको अवढरदानी साहित्यकार मानते हैं-- जापर दीनानाथ ढरे! हम अुनके बारेमें चूँ तक न करेंगे। पर अितना जरूर कहेंगे और बड़े दर्दके साथ कि स्वर्गीय प्रेमचंदजीके लेखोंको छापकर कुछ लोग जरूर 'लाखका सवा लाख' बनाकर लखपति बन गये। बनारसमें वे कैसे दुखी रहते थे। अुनकी मृत्युके बाद अुनकी स्मृति-रक्षाके लिअे हमने क्या किया? प्रेमचंदजीके साथ हम हिन्दीवालोंने कितनी बेअीमानी की, कितनी अुपेक्षा की, अन्ततक जब वे खूनकी अुल्टी कर रहे थे! 'लाखका सवालाख' बनानेवाले हिन्दीके बड़े-बड़े साहित्यिक लिमिटेड कहाँ मुंह छिपाकर भाग गये थे तब? अलम् अति प्रसंगेन!

—ह० श०

+ + +

हिन्दी आगे बढ़ रही है

यह आनन्दकी बात है कि हिन्दीके प्रति संसदमें जो रुख था अुसमें धीरे-धीरे परिवर्तन हो रहा है। संसदके कुछ सदस्य अब हिन्दीमें बोलने लगे हैं। हिन्दीतर भाषी सदस्य भी हिन्दीमें बोलनेका प्रयत्न करते हैं और मन्त्रिमण्डलकी ओरसे भी हिन्दीमें जवाब दिये जाने लगे हैं। परन्तु अभी हमारा अंग्रेजीके प्रति जो मोह है, वह कम नहीं हुआ। कुछ लोग अैसे भी हैं जो अच्छी हिन्दी बोल लेते हैं फिर भी वे अंग्रेजीमें ही बोलना पसन्द करते हैं। अंग्रेजी बोलनेमें वे भद्दी गलतियाँ करते हैं फिर भी वे अंग्रेजी बोलनेमें कुछ गौरव-सा अनुभव करते हैं। हम आशा करते हैं कि धीरे-धीरे हमारा यह मोह भी छूट जायगा। परन्तु अिसमें समाचारपत्रों तथा संसदके कार्यालयकी सक्रिय सहानुभूतिकी आवश्यकता है। समाचारपत्रोंके प्रतिनिधियोंको हिन्दी भाषणोंकी भी वैसी ही विस्तृत रिपोर्ट लेनी चाहिअे जैसी कि वे अंग्रेजी भाषणोंकी लेते हैं। संसदके कार्यालयकी ओरसे भी भाषणोंकी रिपोर्ट, सवाल-जवाब आदि जैसे अंग्रेजीमें बाँटे जाते हैं, अुसी प्रकार हिन्दीमें भी बाँटे जाने चाहिअे। अिसमें कुछ खर्च बढ़ेगा अवश्य, परन्तु खर्चकी ओर ध्यान देकर राष्ट्रभाषा हिन्दीका सन्मान कम हो, यह किसी प्रकार सहन करने योग्य बात न होगी।

समाचारपत्रोंमें अक्सर यह देखा गया है कि संसदकी जो रिपोर्ट छापी जाती है, अुसमें हिन्दीके भाषणोंकी रिपोर्ट या तो छपती ही नहीं अथवा छपती है तो बहुत ही संक्षेपमें। अति महत्वके प्रश्नोंपर महत्वके भाषण भी यदि हिन्दीमें हों तो अुनकी भी यही दशा की जाती है। स्वाभाविक है कि अिससे हिन्दीमें बोलनेवालोंका अुत्साह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं बढ़ता। हम मानते हैं कि समाचारपत्रोंकी कुछ कठिनाअियाँ हैं। अंग्रेजी पत्रोंके लिअे हिन्दी भाषणोंका अंग्रेजीमें अनुवाद करना पड़ता है और हिन्दीमें टेलीप्रिन्टर न होनेसे समाचार-संस्थाओंको भी भाषणोंका अंग्रेजी करके ही भेजना पड़ता है। अैसी स्थितिमें अंग्रेजीके भाषण छापने तथा अुनको टेलीप्रिन्टरपर भेजनेमें जो आसानी होती है, वैसी आसानी हिन्दी भाषणोंको छापने-छपवानेमें नहीं हो सकती। परन्तु दिल्लीके स्थानीय हिन्दी पत्र तो अैसे भाषणोंकी पूरी रिपोर्ट ले ही सकते हैं। दुखकी बात है कि वे अधिकतर अंग्रेजी पत्रोंका अनुकरण करते हैं। हिन्दीके पत्रोंका हिन्दीके प्रति विशेष कर्त्तव्य है, यह अुन्हें कभी नहीं भूलना चाहिअे। सरकारको भी हिन्दी टेलीप्रिन्टर जैसे भी हो शीघ्र ही बनानेका प्रयत्न करना चाहिअे। सुनते हैं कि अिसका प्रयत्न हो तो रहा है, परन्तु कार्य बड़ी मंद गतिसे चल रहा है। हम चाहते हैं अिस कार्यमें जहाँ भी ढिलाअी हो अुसे सत्वर दूर किया जाय।

संसदके सदस्योंके लिअे तमिल वर्ग

हिन्दीतर भाषी संसदके सदस्योंके हिन्दी सीखनेके लिये दिल्लीमें चार स्थानोंपर वर्ग चलाये जा रहे हैं। अुसका लाभ यद्यपि बहुत ही थोड़े सदस्य लेते हैं फिर भी अुन वर्गोंकी अुपयोगिता स्वतःसिद्ध है। बड़ी खुशीकी बात है कि अिन वर्गोंका लाभ लेनेवाले कोअी १२ सदस्य रा. भा. प्र. समितिकी प्रारंभिक परीक्षामें बैठ रहे हैं। अुनका अनुसरण करके संसदके बहुसंख्यक हिन्दीतरभाषी सदस्य भी अुनके लिअे चलनेवाले वर्गोंका अधिकाधिक लाभ अुठायेंगे और अपनी हिन्दी-योग्यताका प्रमाण-पत्र प्राप्त करेंगे। सच्चा प्रमाण अुनकी हिन्दीकी योग्यताका तो यही होगा कि वे संसदमें हिन्दीमें भाषण दे सकें या सवाल-जवाब कर सकें।

हिन्दीतरभाषी लोगोंकी यह शिकायत रही है कि हम तो हिन्दी पढ़ते हैं क्यों कि वह राजभाषा—राष्ट्रभाषा बनी है, परन्तु हिन्दीभाषी लोग हमारी प्रादेशिक भाषाओंके प्रति अनुराग व्यक्त नहीं करते। यदि वे हमारी प्रादेशिक भाषाओंके प्रति सहानुभूति नहीं रखते और हिन्दी राजभाषा बन जानेसे अब दूसरी भारतीय भाषाओंका अुनकी दृष्टिमें कोअी महत्त्व नहीं तो यह हमारे ममत्वपर प्रहार करनेवाली बात होगी। अुनकी अिस शिकायतमें कुछ तथ्य अवश्य है। परन्तु हमारा विश्वास है कि अपनी जवाबदारी समझनेवाला प्रत्येक हिन्दीभाषी प्रादेशिक भाषाका गौरव अक्षुण्ण रखना चाहेगा क्योंकि वह यह स्पष्ट देख पा रहा है कि प्रादेशिक भाषाके विकाससे ही राष्ट्रभाषाके विकासको बल मिलेगा और राष्ट्रभाषा हिन्दीके विकाससे प्रादेशिक भाषाअें समृद्ध होंगी। राष्ट्रभाषा प्रचार-समितिकी ओरसे नागपुर, पूना आदि स्थानोंमें हिन्दी-भाषियोंके लिये मराठीके वर्ग चलाये जाते हैं। हिन्दी-विद्यापीठ, प्रयागने भी कुछ प्रादेशिक भाषाओंके अध्ययनकी व्यवस्था की है। प्रयाग विश्वविद्यालयने भी अपने यहाँ प्रादेशिक भाषाओंके अध्ययनकी सुविधा दी है और अभी आगरा युनिवर्सिटी द्वारा आमंत्रित हिन्दी-परिषद्ने भी अिस बातका निर्णय किया गया कि प्रादेशिक भाषाओंके अध्ययनकी व्यवस्था युनिवर्सिटीके द्वारा प्रस्थापित होनेवाले हिन्दी अिन्स्टीट्यूटमें होनी चाहिये। अिसी अुपलक्ष्यमें संसदीय हिन्दी परिषद् द्वारा संसदके हिन्दीभाषी लोगोंको तमिल सीखनेके लिअे दिल्लीमें जो तमिल वर्ग खोले गये हैं, अुनका हम स्वागत करते हैं। यह बहुत ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुचित है कि अिस समय पारस्परिक विश्वासको बढ़ानेवाला अैसा कार्य आरम्भ किया गया है हम आशा करते हैं कि संसदके हिन्दीभाषी सदस्य बड़े अुत्साहसे अिस वर्गका लाभ अुठाकर तमिलभाषी तथा अन्य हिन्दीतरभाषी लोगोंकी सहानुभूति प्राप्त करेंगे। अिसके परिणामस्वरूप राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा प्रादेशिक भाषाअें-सबका बड़ा हित होगा।

साहित्यिकोंका प्रश्न

कुछ समयसे साहित्यिकोंके आर्थिक प्रश्नपर बड़ी चर्चा हो रही है। संसदमें भी विद्वान, साहित्यिक प्रतिनिधियोंने अिस प्रश्नपर बड़ी ही सारगर्भित तथा मनोरंजक चर्चा की है। साहित्यिकोंको आर्थिक लाभ किस प्रकार, कितना मिलना चाहिये और अुसमें सरकारकी ओरसे क्या सहायता की जा सकती है, यह प्रश्न बड़ाही गंभीर किन्तु अुलझा हुआ है। हम यह स्वीकार करते हैं कि अच्छेसे अच्छे साहित्यकारको आर्थिक कष्ट अुठाना पड़ता है, अुनकी रचनाओंसे जो आय होती है, अुसका बहुत बड़ा हिस्सा प्रकाशकोंकी जेबमें चला जाता है और आज रायल्टीके सम्बन्धमें जो कानून है, अुसमें लेखकोंके हितकी दृष्टिसे सुधार होनेकी आवश्यकता है, परन्तु हमें यह ध्यान रखना होगा कि हम अैसा कोअी कदम न अुठायें जिससे –

(१) साहित्यिकोंकी स्वतन्त्रतापर किसी प्रकारका अंकुश आ पड़े और अुनकी स्वतन्त्र रचनाकी शक्ति कुंठित हो।

(२) सरकारको अैसा कोअी अधिकार न दिया जाय कि जिससे सरकारकी अिच्छानुसार अमुक प्रकारके विचारोंकी 'छापवाला' साहित्य ही प्रकाशित हो और दूसरे प्रकारके अच्छे साहित्यके लिअे किसी प्रकारका अवकाश न मिले।

(३) यों तो आज भी साहित्यिकोंमें कुछ अंशमें दलबन्दियाँ हैं, परन्तु वे अितनी प्रबल नहीं हैं। अैसा न हो कि आगे चलकर ये दलबन्दियाँ संगठित रूप ग्रहण करें और साहित्य और समाज दोनोंमें विकृति पैदा हो।

आयोजना होनी चाहिअे

हमारा मतलब यह नहीं कि साहित्यिकोंका संगठन न हो और अुसमें सरकारकी सहायता न ली जाय। हमने तो केवल आर्थिक पहलूको देखकर किये गये संगठनमें जो भयस्थान है, अुसीके प्रति निर्देश किया है। हमने पहले अपनी अेक टिप्पणीमें लिखा था कि पंचवर्षीय योजनामें समाज-जीवनके सभी पहलूपर विचार कर यह योजना बनी है। परन्तु साहित्य, संस्कृति तथा राष्ट्रभाषा, जो राष्ट्र-निर्माणके लिये आवश्यक हैं, अुनके लिये कोअी योजना नहीं बनायी गयी। अिसे हम अिस योजनाकी सबसे बड़ी कमी मानते हैं। परन्तु हम सरकारपर ही सब भार डालकर निश्चिंत नहीं हो सकते। हमें भी तो कुछ करना चाहिये। कुछ बिखरे हुअे प्रयत्न अिस दिशामें हो रहे हैं, परन्तु प्रयत्न अधिक संगठित तथा अखिल भारतीय दृष्टिसे होने चाहिये।

पारिभाषिक शब्द-कोश

पारिभाषिक शब्द-कोशका ही दृष्टांत लें। अिसके लिये संगठित प्रयत्नकी आवश्यकता है और अुसमें अखिल भारतके सभी प्रदेशोंके विद्वानोंकी सहानुभूति तथा सहायताकी आवश्यकता है। जो पारिभाषिक कोश हो वह तो सभी प्रदेशोंके विद्वानोंको मान्य होना चाहिये। केन्द्रीय शिक्षा-विभागने अिस कामको अपने हाथमें लिया है और अुसके लिये सब प्रदेशोंका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिनिधित्व करनेवाली अेक समिति भी बनायी है। परन्तु अुसने अिस कामको खटाअीमें डाल रक्खा है। समितिने अभी कुछ समयके लिअे अंग्रेजी या अन्तरराष्ट्रीय पारिभाषिक शब्दोंका ही अुपयोग करनेकी सिफारिश की है। अुसके बाद अुस समितिने क्या किया, अिसका कुछ भी हाल मालूम नहीं। संसदमें अभी अेक प्रश्न भी अिस संम्बन्धका पूछा गया था। अिसका जो अुत्तर दिया गया वह सन्तोषजनक नहीं था। कुछ काम हुआ है, किसी अेक शास्त्रीय विषयके पारिभाषिक शब्द तैयार किये गये हैं। परन्तु अुनकी परिभाषाका आधार क्या है, यह हम नहीं जानते। हमें जो कार्य करना है वह तो समग्र रूपसे करना होगा। यों देखा जाय तो डा. रघुवीरने अपने ही प्रयत्नसे अेक पारिभाषिक कोश तैयार कर दिया है। वह कोश सबको मान्य नहीं हो सका, यह दूसरी बात है। परन्तु अुनके अिस प्रयत्नसे अब हमें जो सर्वसामान्य पारिभाषिक कोश तैयार करना है, अुसमें कुछ सरलता अवश्य हो गयी है।

सरकार या सरकार नियुक्त समिति कुछ करे या न करे, परन्तु यदि अिस कार्यको आवश्यक समझा जाता है, तो देशव्यापी साहित्यिक तथा सार्वजनिक संस्थाओंको अिस कार्यमें योग देना चाहिये। वे अुसके लिअे प्रतिनिधि विद्वानोंकी अेक समिति बनायें और पारिभाषिक शब्द किन नियमोंके अनुसार बनें, अिसका निर्णय कर लें।

जैसे :—

शब्द अैसे हों जो आसानीसे बोधगम्य हों और सरलतासे लोगोंकी जबानपर चढ़ सकें।

वे राष्ट्रभाषा तथा प्रादेशिक भाषाओंमें समान रूपसे चलनेवाले हों।

शास्त्रीय परिभाषाका अचूक निर्देश करनेवाले हों।

अधिकतर शब्द संस्कृतसे ही लिये जायँ, परन्तु विदेशी भाषाओंसे आये प्रचलित शब्द लेनेमें भी कोअी आपत्ति न हो।

अिसी प्रकारके और भी नियम बनाये जा सकते हैं। फिर अँग्रेजी परिभाषा कोश, डा० रघुवीरका कोश आदि सामने रखकर अेक-अेक शब्दको बनाये गये नियमोंपर कसकर निर्णय किया जा सकता है। अिस प्रकार काम आसानीसे होगा और जब अेक सर्वमान्य कोश बन जायगा तो अुसे सरकारको भी स्वीकार करना होगा।

हिन्दी-साहित्य सम्मेलनने भी परिभाषा निर्माणके कार्यमें अपनी ओरसे कुछ प्रयत्न किया था। परन्तु वह प्रयत्न भी अधूरा रह गया। अब यदि वह चाहे तो फिरसे अिस काममें हाथ लगा सकता है, परन्तु वह कार्य पृथक प्रयत्न न होकर समग्र दृष्टिसे किया हुआ कार्य हो तो अच्छा होगा।

राष्ट्रभाषाका प्रचार

राष्ट्रभाषाके प्रचार-कार्यके सम्बन्धमें कुछ अव्यवस्था-सी दिखायी देती है। सरकारके द्वारा अिस कार्यके लिअे बड़ी रकमें मंजूर की जाती हैं और अनेक संस्थाओंको दी जाती हैं। परन्तु यह आश्चर्यका विषय है कि राष्ट्रभाषा प्रचार-समिति वर्धा, जो राष्ट्रभाषाका प्रचार अखिल भारतमें कर रही है और जिसका कार्य बहुत सफल सिद्ध हुआ है, अुसे सरकारकी ओरसे आजतक कभी कुछ सहायता अिस कामके लिये नहीं मिली। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास तथा राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा ये दो संस्थाअें राष्ट्रभाषा प्रचारका कार्य वर्षोंसे कर रही हैं। राष्ट्रभाषा प्रचार समितिने, स्वावलंबी रहकर आजतक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरकारकी सहायताकी अपेक्षा नहीं की, परन्तु यदि आज सरकार राष्ट्रभाषाके कार्यको सुचारु रूपसे करना चाहती है और अुसके लिअे धन भी खर्च करना चाहती है--तो अुसे समितिके कार्य तथा अुसके अनुभवका भी लाभ अुठाना चाहिये।

राष्ट्रभाषाके सम्बन्धमें भी मतभेद तथा खींचातानी पर्याप्त प्रमाणमें हो रही है। बम्बअी सरकारने अेक कमेटी राष्ट्रभाषाकी शिक्षाके सम्बन्धमें सिफारिशें करनेके लिअे नियुक्त की थी। यह कमेटी पोद्दार कमेटीके नामसे प्रसिद्ध है। अुसने अेक नया ही सिद्धान्त कायम किया है और अुसके अनुरूप विधानकी धारा ३५१ का अर्थ भी तोड़ा-मरोड़ा गया है। अिस कमिटीका अभिप्राय है कि प्रादेशिक भाषा हिन्दी तथा राष्ट्रभाषा हिन्दी-दो भिन्न भाषाअें हैं। बम्बअी सरकारने अिस दो भाषाओंकी बातको स्वीकार किया है! अिससे राष्ट्रभाषाके प्रचार और प्रसारको बहुत बड़ी हानि होनेकी सम्भावना है। केन्द्रीय शिक्षा विभागकी ओरसे अभीतक अिसके बारेमें कोअी अुचित निर्देश नहीं मिला है। केन्द्रीय शिक्षा-विभाग सबको राजी रखना चाहता है, अिसलिअे वह कुछ भी नहीं कर रहा है--यह बड़े दुखकी बात है। परन्तु अिससे निराश होनेका कोअी कारण नहीं। हम चाहते हैं कि अिस प्रश्नका निर्णय देशके विद्वान मिलकर करें। हम यह जानते हैं कि बम्बअी सरकारकी भाषा नीति दूसरे किसी भी प्रदेशको स्वीकार न होगी, परन्तु आज तो बम्बअी सरकार अपनी गलत भाषा-नीतिके कारण राष्ट्रभाषाको पर्याप्त हानि पहुँचा रही है। यह संक्रान्ति-काल है, अिसलिअे अिस तरहकी अव्यवस्थाका होना हम स्वाभाविक मानते हैं, परन्तु राष्ट्रभाषाको लोकप्रिय बनाना जिनका कर्तव्य है और जिनके सिर अुसकी जिम्मेदारी है, अुन्हें स्पष्ट निर्देश करना होगा और अुसके अनुसार आदेश भी देना होगा।

भूमिदान-यज्ञ

चांदिलके सर्वोदय सम्मेलनमें विनोबाजीने भूमिदान-यज्ञके बारेमें जो स्पष्टीकरण किया है, वह सभीके लिये विचारणीय है। भूमिदान-यज्ञका जो क्रांतिकारी आन्दोलन चल रहा है अुसके प्रति अब साहित्यिक भी अुदासीन नहीं रह सकते। श्री विनोबाजीने बार-बार जोर देकर यह कहा है कि अुनके अिस कार्यकी आधार-शिला अुनके विचारोंमें है। भूमि लेने-देनेका कार्य अुतने महत्वका नहीं है जितना कि अुसके मूलमें निहित क्रान्तिकारी विचारोंका है। भूमिदान-यज्ञके द्वारा वे ग्राम-जीवनमें--समाज-जीवनमें, समग्र रूपसे क्रान्ति लाना चाहते हैं। जो अहिंसक क्रान्ति वे समाजमें लाना चाहते हैं, अुसका आरम्भ वे भूमिदान-यज्ञसे करना चाहते हैं। यदि अुनका यह अहिंसक क्रान्तिका प्रयोग सफल न हुआ तो हिंसक क्रान्तिको कोअी रोक न सकेगा! वे चाहते हैं कि अहिंसक क्रान्तिकी यह भावना तथा समाजमें समग्र रूपमें क्रान्ति लानेका अुनका विचार, अुसे भूमिदान-यज्ञमें भाग लेनेवाले सब लोगोंको समझ लेना चाहिये और अुसे गाँवोंमें तथा जहाँ भी मौका मिले दूसरे लोगोंको समझाना चाहिये। साहित्यिक यदि सच्चे साहित्यिक हैं, और अुनके दिलमें दर्द है, सौन्दर्यानुभूति तथा कोमल मधुर पदावलीके स्वामी हैं, सनातन सत्य तथा शिवके वे अुपासक हैं, तो अुनको अपनी शक्ति दिखानेका अिससे अच्छा दूसरा मौका नहीं मिल सकता। श्री विनोबाजीने सबको अपना-अपना काम छोड़कर अिस सर्वव्यापी और सर्वहितकारी कार्यमें योग देनेका आह्वान किया है। हम आशा करते हैं कि लेखक तथा साहित्यिक भी अिस आह्वानका स्वीकार कर स्वागत करेंगे।

--मो० भ०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"प्रेरणा"

हिन्दीका कोअी भी महत्वपूर्ण विषय केवल अेक टुकड़ेमें न छपकर अपनी सम्पूर्णताके साथ निरन्तर स्वतन्त्र रूपसे प्रेरणाके प्रत्येक अंकमें प्रकाशित होगा। हिन्दीके समग्र अुच्च-कोटिके मासिक पत्रोंके बीचमें, केवल प्रेरणा ही की यह अपनी विशेषता है, अपनी अुपयोगिता है। प्रेरणासे संपर्क न रखनेका स्पष्ट मतलब है--महत्वपूर्ण विषयोंकी सम्पूर्ण जानकारीसे वंचित रहना।

मूल्य—वार्षिक १४) अर्द्ध वार्षिक ७) अेक प्रति १।)

प्रेरणाके वार्षिक ग्राहकोंसे विशेषांकका अतिरिक्त मूल्य नहीं लिया जायेगा। अुनको डाक खर्च माफ है।

★ प्रत्येक माहका दूसरा सप्ताह-प्रेरणाकी प्रकाशन तिथि है।

★ अेजेंसीके नियम तथा विज्ञापनके दरके लिअे पत्र-व्यवहार कीजिअे।

★ प्रेरणाकी अुपयोगिताको दृष्टिमें रखते हुअे लिखिये--

"प्रेरणा" प्रकाशन, सोजती गेट, जोधपुर, (राजस्थान)

"जयभारती" में "हिन्दी साहित्यका प्रवाह"

अिस विषयको लेकर "आकाशवाणी" के बंबअी केन्द्रसे हिन्दीके प्रसिद्ध विद्वानोंके व्याख्यान प्रसारित किये गये थे। हिन्दीके प्रचारमें अिस प्रकारके व्याख्यान बहुत ही महत्त्व रखते हैं।

अिस व्याख्यान-प्रालाको मअी ५३ से "जयभारती" में क्रमश : प्रकाशित किया जायगा।

अिन संग्रहणीय भाषणोंको प्राप्त करनेके लिये आज ही "जयभारती"के ग्राहक बन जाअिये।

"जयभारती"का वार्षिक मूल्य १) रु. है।

जनवरी ५३ का अंक शेष नहीं है।

फरवरी ५३ से ग्राहक बन सकते हैं।

पता:-- श्री संपादक, "जयभारती"

८६६, सदाशिव पेठ, पुणे—२

हिन्दीकी साहित्यिक-त्रैमासिक पत्रिका

'राष्ट्रवीणा'

संपादक-जेठालाल जोशी,

संचालक—गुजरात प्रां. रा. भा. प्र. समिति।

विद्वज्जनोंके चिन्तनप्रधान अेवं गुजरातीके सांस्कृतिक लेख, कलापूर्ण रसभरी कविताअें, प्रवास-वर्णन, परीक्षोपयोगी ठोस लेख आदि सामग्री, चयनिका, संस्कृति-स्रोत, साहित्य समीक्षा आदि कअी स्तम्भ प्रकाशित होते हैं।

वार्षिक मूल्य ४) रु. अेक प्रति १) रु.

शीघ्र ग्राहक बनकर लाभ अुठाअिये।

व्यवस्थापक "राष्ट्रवीणा"

गुजरात प्रां रा भा प्र. समिति, कार्यालय,

कालूपुर, खजूरीकी पोल

अहमदाबाद १

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पं. किशोरीदास वाजपेयीकी लिखी अुत्तम पुस्तकें

अच्छी हिन्दी

(अु० प्र० सरकार द्वारा पुरस्कृत)

वाजपेयीजीकी यह पुस्तक अुन्हें अवश्य पढ़ लेनी चाहिये, जो अच्छी हिन्दी लिखना चाहते हैं। अपने विषयकी सर्वमान्य पुस्तक है। **मूल्य ढाअी रुपये**

"प्रस्तुत पुस्तक विद्यार्थियोंके लिअे अत्यन्त अुपादेय है।"

—'सम्मेलन-पत्रिका'

"This is a very useful manual for those Who Want to learn the niceties of a chaste Hindi style. The author is a Well—known critic and his books on grammar have brought him ample recognition in scholarly circles.

The book is divided into four portions – in the first, the author discu-sses the elements of a good style and language, in the second, Hindi as a language comes up for discussion; Sematics is discussd in detail in the third part, and the fourth discusses the various aids to style. The book should prove useful to students of Hindi.

Although the book fills a gap, there is as yet need of a first class volume in Hindi, like those of the Fowler Brothers or that of Eric Partridge in English. It is hoped that at least one of the many learned Hindi socieities would leave 'party politics' for some time and take up this urgent Work."

—'अमृतबाजार-पत्रिका'

हिन्दी निरुक्त

(अु० प्र० सरकार द्वारा पुरस्कृत)

हिन्दीका विकास समझनेके लिअे सर्व-श्रेष्ठ पुस्तक है। भाषा-विज्ञानकी अन्य किसी भी पुस्तकमें अैसी सामग्री न मिलेगी। वाजपेयीजीने सुलझे हुअे मौलिक विचार प्रकट किये हैं।

मूल्य सवा दो रुपये

अच्छी हिन्दीका नमूना

हिन्दी-परिष्कारपर वाजपेयीजीकी सुप्र-सिद्ध पुस्तक है; अिसलिये अिसका विशेष परिचय देना जरूरी नहीं।

मूल्य पौने तीन रुपये

राष्ट्रभाषाका प्रथम व्याकरण

हिन्दीका आधारभूत मौलिक व्याकरण। अु० प्र० सरकार द्वारा पुरस्कृत।

मूल्य चार रुपये

साहित्य-निर्माण

(अु० प्र० सरकार द्वारा पुरस्कृत)

हिन्दीमें साहित्य-निर्माण करनेवालोंके लिअे।

मूल्य सवा दो रुपये

व्रजभाषाका व्याकरण

अपने विषयकी अेकमात्र प्रौढ़ रचना।

मूल्य तीन रुपये

डाक-खर्च पृथक् लगेगा। मंगानेका पता:—

हिमालय अेजेंसी, कनखल (अुत्तर प्रदेश)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस घरमें आरोग्य प्रकाश नहीं, वहाँ सुख शान्ति कहाँ ?

आरोग्य, स्वच्छता और चिकित्सा का सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ

भारत-प्रसिद्ध श्रीवैद्यनाथ आयर्वेद भवन लिमिटेडके अध्यक्ष वैद्यराज पं० रामनारायणजी वैद्यशास्त्रीने ५-६ वर्ष बड़ी मेहनतसे स्वयं अिस ग्रंथको लिखा है। ग्रंथका अेक-अेक वाक्य हजारों रुपयेका काम देता है। व्यायाम, ब्रह्मचर्य, भोजन, सदाचार, अुत्तम विचार आदि पूर्वार्द्ध विषयोंको पढ़कर और तदनुसार चलकर सदा बीमार रहनेवाला रोगी बिना दवाके नीरोग (तन्दुरुस्त) हो जाता है। ग्रंथके अुत्तरार्द्धमें शरीरमें पैदा होनेवाले सभी रोगोंकी अुत्पत्ति, कारण, निदान, रोगके लक्षण, चिकित्सा, पथ्यापथ्य आदि बड़ी ही सरल भाषामें लिखे हैं जो पढ़कर विद्वानसे लेकर साधारण पढे-लिखे दोनों समान भागसे लाभ अुठा सकते हैं। अिसमें दवाओंके जो नुकसे लिखे गये हैं वे बहुत बार परीक्षित, कभी भी फेल न होनेवाले और शास्त्रानुमोदित हैं। शहर हो या देहात, सब जगह अिस पुस्तकके घरमें रहनेसे रोगीको तत्काल लाभ पहुँचाया जा सकता है। औषध तैयार करनेका विधान तो अिस पुस्तकमें श्रेष्ठ है क्योंकि लेखक अिस विषयके निर्णयात्मक ज्ञाता हैं। अिसके आठ संस्करणोंमें ७१००० प्रतियां छपकर बिक चुकी हैं। यह नवां संस्करण १५ हजार का अभी छप रहा है। अिससे अिसकी लोक-प्रियता और अुपयोगिता स्पष्ट मालूम होती है। हिन्दीमें अैसी अुत्तम पुस्तक दूसरी नहीं है, यह कहा जाय तो अनुचित न होगा। प्रचारकी दृष्टिसे मूल्य भी बहुत कम रखा गया है। ५१५ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य सिर्फ १।।।), डाक खर्च ।।≈), हमारी चार निर्माणशाला, ५० विक्री केन्द्र, १५००० अेजेन्सियोंसे प्रत्यक्ष खरीदनेपर डाक खर्च नहीं लगेगा।

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लिमिटेड, कलकत्ता, पटना, झांसी, नागपुर।

—: अुद्यम :—

हिन्दी और मराठी भाषामें प्रकाशित होता है।

प्रतिमास १५ वीं तारीखको पढ़िये।

अुद्यममें निम्न विषयोंके लेख छपते हैं :—

लाभदायक अुद्योगधंधोंकी जानकारी, अनाज तथा सब्जीकी खेती व रोगोंका निवारण, पशुपालन, दुग्धव्यवसाय व ग्रामोद्योग संबंधी लेख, विद्यार्थियोंके लिये वैज्ञानिक व अन्य जानकारी, आरोग्य, घरेलू औषधियों संबंधी लेख, हिन्दुस्थानके वैज्ञानिक और औद्योगिक क्षेत्रकी अुपयोगी जानकारी, कृषि, औद्योगिक और व्यापारिक क्षेत्रमें काम करनेवाले लोगोंकी मुलाकात तथा परिचय।

अुद्यमके विशेष स्तंभ

महिलाओंके लिये अुपयुक्त, रुचिकर खाद्यपदार्थ बनानेकी विधि, घरेलू मितव्ययिता, अुद्यमका पत्रव्यवहार, खोजपूर्ण खबरें, आर्थिक तथा औद्योगिक परिवर्तन, जिज्ञासु जगत्, व्यापारिक हलचलोंकी मासिक समालोचना, नित्योपयोगी वस्तुअें स्वयं तैयार कीजिये।

वार्षिक चन्दा ७ रु. और प्रति अंक १२ आना

पता :— 'अुद्यम' मासिक, धर्मपेठ, नागपुर (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने प्रचारक भाओं-बहनोंसे

राष्ट्रभाषा प्रचार समितिका परिवार बहुत विशाल है। अिस परिवारमें ३३०४ से अूपर प्रमाणित-प्रचारक हैं और लगभग २००० केन्द्र-व्यवस्थापक भी। हमसे सहानुभूति और प्रेम रखनेवालोंकी संख्या भी बहुत बड़ी है।

'राष्ट्रभारती' समितिकी अन्तरप्रान्तीय (भारतीय) साहित्य और संकृतिकी प्रतिनिधि मासिक पत्रिका है। अिसकी अुपयोगिता और अुपादेयता आप लोगोंसे छिपी नहीं है। अपनी अितनी सस्ती, विविध विषय-सम्पन्न, अेवं सुरुचिपूर्ण सुन्दर पत्रिकाको अगर आप लोग चाहें तो बहुत ही शीघ्र स्वावलम्बी बना दे सकते हैं। यह अितनी नियमित है कि प्रतिमास १ ली तारीखको पाठकोंके हाथमें ही पहुँच जाती है। वार्षिक मूल्य ६ रुपया, अर्धवार्षिक ३॥) और अेक अंकका दस आना है।

प्रत्येक प्रचारक और केन्द्र-व्यवस्थापक 'राष्ट्रभारती' का अेक-अेक ग्राहक बना दे, तो अिसकी सन्तोषजनक ग्राहक-संख्या बढ़ जायगी। सिर्फ आर्थिक लाभकी दृष्टिसे ही हमें नहीं सोचना है; भारतीय साहित्य और संस्कृतिके अुच्च अुद्देश्यको भी पूरा करनेके लिये अिस पत्रिकाके पाठकोंकी संख्या बढ़ाना, ग्राहक बनाना अत्यन्त आवश्यक है। यह मुश्किल नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि आप लोग 'राष्ट्रभारती'के ग्राहक खुद बनेंगे, दूसरोंको बनायेंगे और 'राष्ट्रभारती'की पाठकसंख्या बढ़ानेमें अपनी समितिकी सहायता करेंगे।

मोहनलाल भट्ट
मंत्री, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

फ्रेंच भाषा सीखिये!

'फ्रेंच स्वयं शिक्षक'

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धाका यह नवीनतम प्रकाशन है। अिसके लेखक हैं प्रख्यात गुरुकुल (युनिवर्सिटी) काँगड़ी हरद्वारके विद्वान स्नातक डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार डी. लिट. (पैरिस)।

राजधानी नयी दिल्लीमें भारत-स्थित फ्रांसके राजदूत श्री काअुन्ट आस्ट्रोरोग भारतके तरुणोंको शीघ्राति-शीघ्र फ्रेंच भाषा सीखनेकी सलाह देते हैं। फ्रेंच भाषा सारे यूरोपमें बहुत आमफहम और कूटनीतिज्ञ भाषा है। फ्रेंच भाषा बोलनेमें शान समझी जाती है।

बड़ी सरलतासे अिस पुस्तककी सहायतासे आप फ्रेंच भाषा सीख सकते हैं।

बढ़िया छपायी, साफ-सुथरी जिल्द, **कीमत ५ रुपया मात्र**

मिलनेका पता:--

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा [म. प्र.]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम आपसे कुछ कहना चाहते हैं !

'राष्ट्रभारती' का तीसरा वर्ष अिसी जनवरी '५३ से शुरू हो चुका है, और तीसरे वर्ष [illegible] यह पाँचवाँ (मअी) अंक आपके हाथमें है।

'राष्ट्रभारती'के जिन प्रेमी ग्राहकोंका वार्षिक चन्दा अिस अंकके साथ पूरा [illegible] जाता है, अुनसे हमारा नम्र निवेदन है कि वे अपना अगले वर्षका चंदा ६ रु. [illegible] आर्डर द्वारा तुरन्त भेजनेकी कृपा करें। वार्षिक या छहमाही चंदा हर हालतमें मनीआर्ड द्वारा भेजना ही ठीक होगा। अिससे हमको और आपको सुविधा होगी। आपको अंक समयपर मिलेगा। वी. पी. और 'रजिस्ट्री' चार्जकी झंझटसे आप और हम दोनों बचेंगे। आशा है, आप हमारी अिस प्रार्थनापर जरूर ध्यान देंगे।

दूसरा निवेदन यह भी है कि कमसे-कम अपने किसी अेक-दो पडौसी मित्रोंसे भी ग्राहक अवश्य बना दें और अुनका सालाना चंदा मनीआर्डरसे भिजवा दें। यह 'राष्ट्रभारती' सस्ती, सुन्दर साहित्यिक-सांस्कृतिक पत्रिका है जो ठीक समयपर हर १ ली ता० को निकलती है।

मनीआर्डरसे वार्षिक चंदा ६ रु. और छहमाही चंदा ३ रु. ८ आ.

नमूना अंकके लिये दस आना मात्र

पता :– व्यवस्थापक––'राष्ट्रभारती', हिन्दीनगर, **वर्धा** (म० प्र०)

अपने कृपालु लेखकोंसे निवेदन !

(१) 'राष्ट्रभारती'में प्रकाशनार्थ रचना आदि सामग्री स्वच्छ सुवाच्य नागरी लिखावटमें ही भेजनी चाहिये। प्रकाशन योग्य सामग्री जो कुछ भी आप भेजें वह बहुत भारी और खूब लंबी चौड़ी नहीं होनी चाहिये, कृपया अिसका खयाल रखें। आपके हार्दिक सहयोगके लिये राष्ट्रभारती बहुत आभारी होगी।

(२) अच्छी तरह ध्यानमें रहे कि राष्ट्रभारतीमें प्रकाशनार्थ भेजी हुअी आपकी रचना अिसके पूर्व किसी हिन्दी पत्र-पत्रिकामें प्रकाशित न हुअी हो; और जो कुछ सामग्री भेजें वह 'राष्ट्रभारती'के लिये ही भेजें।

(३) अनुवादक महाशय किसी अनूदित रचनाको भेजनेसे पूर्व अुसके मूल-लेखकसे पत्रद्वारा अनुमति अवश्य प्राप्त कर लें।

(४) अपनी अस्वीकृत रचनाको वापस मंगानेके लिये डाक-टिकट अवश्य भेजें अथवा अुसकी प्रतिलिपि अपने पास सुरक्षित रखें।

(५) लेख, रचना आदि प्रकाशन योग्य सम्पादकीय सारा व्यवहार अिस पतेपर करें:–

संपादक : 'राष्ट्रभारती'
पोस्ट — हिन्दीनगर, वर्धा (म[illegible])

प्रकाशक:— मोहनलाल भट्ट, मन्त्री–राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा।
मुद्रक — गुरुराम शर्मा, राष्ट्रभाषा प्रेस, वर्धा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

जून १९५३

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्रभारती' बिहार, राजस्थान, मध्यभारत, हैदराबाद और भोपाल राज्यके शिक्षा-विभागों द्वारा स्कूलों, कालेजों और वाचनालयोंके लिये स्वीकृत हो चुकी है।

[सूचना:—'राष्ट्रभारती'में, सर्वश्री डॉ. बाबूराम सक्सेना, आचार्य काका कालेलकर, महामहोपाध्याय दत्तो वामन पोतदार, स्वर्गीय किशोरीलाल मशरूवाला और उत्तर-प्रदेशके वर्तमान राज्यपाल श्री क०मा०मुन्शीजी आदि विशेषज्ञोंकी अेक 'समिति' द्वारा १९३६में निर्णीत नागरी लिपिका प्रयोग होता है:—अि, अी, अु, अू, अे, अै (इ,ई, उ, ऊ, ए और ऐ की जगह) और ञ, ण और क्ष (ञ, ण और क्ष अक्षरोंके लिये) —सं०]

विषय	लेखक	पृ० सं०
१. सचमुच मानव-हृदय अत्यन्त विलक्षण है !	... श्री रा. कृष्णमूर्ति 'कल्कि'	४०१
२. गीत	... श्री 'नीरज'	४०२
३. रहस्यमुग्ध मनुष्य	... श्री शान्ति भिक्षु	४०३
४. भारतके राष्ट्रपति और प्रधान-मंत्री	... श्री प्रा. जगदीशप्रसाद व्यास	४०६
५. गीत	... श्रीमती विद्यावती मिश्र	४१०
६. संस्कृतके कुछ कवियोंकी गर्वोक्तियाँ	... श्री प्रभात शास्त्री	४११
७ गंगोत्री	... श्री बालमुकुंद मिश्र	४१४
८. श्री खांडेकरकी 'अुल्का'	... श्री नर्मदाप्रसाद खरे	४१८
९. सुबहसे पहले (अुर्दू कविता)	... श्री मजहर अिमाम अनु०—श्री हर्षनाथ	४२१
१०. कवि	... श्री महेन्द्र भटनागर	४२२
११. आँसूकी अेक बूँद (तमिल)	... श्री 'नाडोडी' अनु०—श्री रा. वीलिनाथन्	४२३
१२. भारतीय लोक-नाट्य	... श्री प्रा. रामचरण महेन्द्र	४२७
१३. प्रार्थना (विचार-कणिकायें)	... श्री देवदूत विद्यार्थी 'शिशुहृदय'	४३३
१४. हरिजन और कबीर	... श्री परशुराम चतुर्वेदी	४३५
१५. गीत	... श्री वृन्दावन-नामदेव	४३८
१६. पिंजड़ा (तेलुगु-कहानी)	... श्री अमरेन्द्र अनु० श्री चावलि सूर्यनारायण मूर्ति	४३९
१७. दर्पणकी साध	... श्रीमती शान्ति	४४५
१८. ब्रिटेनकी सांस्कृतिक विरासत : वैज्ञानिक देनकी अैतिहासिक पार्श्वभूमि	... श्री ओमप्रकाश आर्य	४४७ ४५२
१९. विश्व-वेदना (गद्य काव्य)	... श्री "भृंग" तुपकरी	४५५
२०. जीवनने मुझे क्या सिखाया है? (अंग्रेजी)	... श्री बट्रेण्ड रसेल अनु०— श्री राजेन्द्रप्रसाद भट्ट	४५८
२१. संसारकी सबसे बड़ी पुस्तकोंकी दूकान—'फोयल्स'	... कुमारी मोहिनी शर्मा श्री महेन्द्र 'राजा'	४६२
२२. कोलम्बसको किनारा मिला (रशियन कहानी)	... श्री अिल्या अिल्फ तथा यूजेन पेट्रोव अनु०— श्री प्रताप विद्यालंकार	४६७
२३. आधुनिक मराठी अुपन्यास (मराठी)	... श्री प्राध्यापक वि. बा. आंबेकर अनु०— श्री न. चिं. जोगलेकर	४७५
२४. सास बहूका बधावा (राजस्थानी गीत)	... प्रेषक—श्री प्रा. कन्हैयालाल सहल	४७७
२५. साहित्यालोचन	श्री गोपाल शर्मा, श्री मदनमोहन शर्मा, श्री ज. चं सिन्हा	४८१
२६. सम्पादकीय ...	... ...	

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

— : सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

वर्ष ३ वर्धा, जून १९५३ *अंक ६*

सचमुच मानव-हृदय अत्यन्त विलक्षण है !

: श्री रा. कृष्णमूर्ति 'कल्कि' :

"मानव-हृदयकी भी प्रवृत्ति कैसी विलक्षण है ! जिनके प्रति प्रेमकी कोओी सीमा नहीं, अुन्हींपर हमें बेहद क्रोध भी आ जाता है। जिनका नाम सुनते ही हृदय स्निग्धतासे द्रवित हो अुठता है, वही जब हमारे सामने आते हैं तब हमारे मुँहसे कठोर वचन निकलते हैं। जिनको देखनेके लिये हमारे शरीरकी नस-नस तरसती रहती है, अुनके सम्मुख आनेपर बरबस हम अैसा दुर्व्यवहार करते हैं, मानों अुनका आना हमें बिलकुल अप्रिय लगा हो। जिनके बिछुड़नेसे हमें अत्यन्त असह्य पीड़ा होती है, अुनके मिलनेपर हमारा दिल हमें अैसी बातें करनेके लिये लाचार करता है कि जिनके कारण मिले हुअे प्रेमी-जन बिछुड़ जाते हैं।

सचमुच मानवका हृदय अत्यन्त विलक्षण है !

(तमिळसे)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीत

: श्री 'नीरज', अम. अे. :

बिजलीकी पायल पहने दिशा ठुमुकती है,
शायद नभ बादल-राग सुनानेवाला है ।।

अुल्काओंके रथपर सवार हो गयी हवा
डस लिया तिमिर-अजगरने तारोंका राजा,
ज्वालामुखियोंका ताज पहन हँस रही धूल
है बजा रहा तूफान समुन्दरका बाजा,
डगमगा रहे पर्वत-पठार, लगता मुझको
नाराज धराको नाश मनानेवाला है ।
बिजलीकी पायल पहने दिशा ठुमुकती है,
शायद नभ बादल-राग सुनानेवाला है ।।

जुड़ रही हलोंकी भीड़ गली-चौराहोंपर
खिल रहे नग्न डालोंमें फूल अंगारोंके,
हसियोंमें चमक, हथौड़ोंमें आ गयी जान
गा रही कुओंपर गगर गीत मल्हारोंके,
आँधीका झूला डाल जवानी झूल रही
शायद यौवन सावन बन जानेवाला है ।
बिजलीकी पायल पहने दिशा ठुमुकती है,
शायद नभ बादल-राग सुनानेवाला है ।।

धरतीपर पड़े मुकुट, सिंहासन काँप रहे
महलोंपर चीलोंके बादल मँडराते हैं,
हँसोंका मेला लगा हुआ झोंपड़ियोंमें
खेतों ग्रामोंमें फूल नाचते गाते हैं,
करवट लेता है वक्त, बदलती है जमीन
शायद श्रम नव अितिहास बनानेवाला है ।
बिजलीकी पायल पहने दिशा ठुमुकती है,
शायद नभ बादल-राग सुनानेवाला है ।।

आ रहा पसीना ठंडे शान्त हिमालयको
कोरिया, मलाया, चीन सभीमें हलचल है,
है अुगा रही अिन्सान अेशियाकी जमीन
नेपाल, श्याम, बर्माकी भौंहोंमें बल है,
श्रमने अंगुलीपर अुठा लिया पूंजी-पहाड़
फिरसे युग कोअी रास रचानेवाला है ।
बिजलीकी पायल पहने दिशा ठुमुकती है,
शायद नभ बादल-राग सुनानेवाला है ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहस्यमुग्ध मनुष्य

: श्री शान्ति भिक्षु :

रहस्यकी बात करना मनुष्यके ज्ञानका चिह्न है या अज्ञानका ? कोअी कदाचित् ही अिसका अुत्तर दे सके। पर जबसे मनुष्यने सोचना-विचारना शुरू किया है तबसे अुसका मन रहस्यकी बातोंमें अुलझा ही रहा है।

अेक युग था, जब वह अिस जगत्के भीतर पहले पहले दैवत्वभावको देखनेके लिये व्याकुल था। अुसने अुस युगमें अनेक देवताओंके दर्शन किये पर पहले-पहल अुसमें देवताओंके आकार-प्रकार और रूपरंगके प्रति विशेष अुत्सुकता न थी। पर बादमें वह शायद निराकार, निःप्रकार, निरूप, निरंग देवताओंसे अूब गया। वह स्वयं जैसा था अुसने अपने देवताको वैसा बना डाला।

वह स्वयं प्रभु होकर रहना चाहता था अिसलिये अुसने अपने अिंद्रको प्रभुके रूपमें चित्रित किया। वह पत्नी और पुत्रके बिना अपनी सार्थकता नहीं मानता था अिसलिये अुसने अपने अिंद्रको पत्नी और पुत्रके बिना निरर्थक मान अुसे सपत्नीक और सपुत्र चित्रित किया। वह विजेता अेवं समर्थ था और विजेता अेवं समर्थ होकर रहना चाहता था अिसलिये अुसने अपने अिन्द्रको शक्र (शक्नोतीति शक्रः) कहा, अुसकी पत्नीको शची (शक्=शच्+अी) कहा, तथा दोनोंके पुत्रको जयन्त (=जीतनेवाला) कहा। वह स्वयं मनन-शील था अिसलिये अुसने जिन वचनों द्वारा अपने देवताकी स्तुति की अुनका नाम मन्त्र रक्खा।

पर शक्र (=बलशाली) अुसे सब जगह न मिल सकता था। और मिलता भी कैसे ? अुसका निवास स्वर्गमें था। धरतीपर आनेमें अुसे सबसे अलग होना पड़ता था। शची जैसी पत्नीसे, सुधर्मा जैसी देव सभासे, नन्दन जैसे मनोहर अुद्यानसे और जयन्त जैसे बेटेसे तथा वैजयन्त जैसे प्रासादसे। फिर आनेमें कम खटराग नहीं। अुच्चैःश्रवाः नामक घोड़ेकी पीठपर बैठनेका क्लेश, शुभ्रवर्ण अैरावत हाथीकी सवारीमें झूमते हुअे आना, सारथि मातलि द्वारा चलाये जाते हरि-वाजियों द्वारा धावित रथको झकझोर या दचके।

अपने देवताको अपनेसे अलग करके देखनेमें अितने झंझट बढ़ जाते हैं; यह अुसने शायद पहले न सोचा था, और जब अुसने सोचा तब अुसे यह अच्छा न लगा कि अितनी मेहनतसे बनाये देवताको बिगाड़ डाले। अिसलिये अुसने अिन्द्र तथा अन्य देवताओं-को यथास्थान रहने दिया और ज़रा आगे बढ़कर कहा मैं ही अपना देवता हूँ– मुझ पुरुषसे अलग और कुछ नहीं– पुरुष अेवेदं सर्वं [ऋग्वेद, पुरुषसूक्त]। अपने पुरुष भावको, अपने आत्मभावको जब अुसने अितना बढ़ा-चढ़ाकर देखा तब वह कोरा आत्मा या पुरुष न रह गया पर ब्रह्म (=बृहत्, महान्) बन गया।

जहाँ तक अुसकी पहुँच थी अुसने सबको अपना ही रूप समझा और अुसे ब्रह्म माना–अपना बृहद्रूप समझा। अुसने अन्यको ब्रह्म कहा, प्राणको ब्रह्म कहा, मनको ब्रह्म कहा, विज्ञानको ब्रह्म कहा, आनन्दको ब्रह्म कहा। पर यह सब करके भी अुसे आनन्द न मिला। और मिलता भी कैसे ? दुखमय जगत्से मोक्ष हो– कष्टोंकी अिस दुनियासे छुटकारा हो तब न !

अुसके सोचनेमें भूल कहाँ है ? यह तो अुसने कभी न सोचा और आगे बढ़ता गया। पर अिस बढ़ा-चढ़ीमें वह रोगी हो गया। भला जिसने अपने आत्मामें सब कुछ भर लिया तथा आत्मासे बाहर कुछ रहने नहीं दिया वह रोगी न होता तो क्या होता ? अुसे अपना यह ब्रह्मभाव वैसा ही लगने लगा जैसे जलोदर रोगीको पेट।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिस रोगसे छुटकारा पानेके लिये अुसने जो कुछ देखा, जहाँतक अुसकी पहुँच थी सबको आत्मासे बाहर निकालना शुरू किया। सबको अनात्माके पदसे विभूषित किया। और अपनी अिस बुद्धिमत्ताके कारण अुसने अपनेको बुद्ध कहा।

वह अिस बुद्धभावमें भी अपने सामर्थ्य और विजय भावनाको न भूल सका। अिसलिये अुसने अपने बुद्धको जिन (=विजेता) कहा, शाक्यमुनि (समर्थ मुनि) कहा। अितना ही नहीं, अुसे अर्हन् (=अरि+हन्=शत्रुध्वंसक) भी कहा। आत्मभाव प्रवर्तक ब्रह्मभावके चक्करमें पड़कर अुसने सब कुछ आत्मसात् कर लिया था और अब अनात्मभाव प्रवर्तक बुद्ध भावके करण अुसने आत्मासे सभीका अुद्गमन करना आरम्भ किया। पहले वह दुष्पचके कारण परेशान हुआ था और अब खाली पेट होनेसे अुसकी परेशानी बढ़ने लगी। अुसे फिर ज्ञान हुआ और अपनेको अुसने बोधिसत्त्व, महासत्त्व कहना शुरू किया।

अुसमें बोधि थी, बूझ थी कि वह अपने परायेका भेद नहीं करता था। वह महान् भी था क्योंकि अिस महती जनताके लिये भलाअी करनेको तैयार था। वह सबके लिये दुःख सहने लगा। लोग लगे अुसे लूटने। अुस महासत्त्वको खूब सताया जाने लगा। अुसकी धन-धरती ही नहीं, बीवी-बच्चोंको भी दुनिया हड़पने लगी। अन्तमें अुसपर नौबत यह आयी कि अुसके अंगप्रत्यंग भी नोचे जाने लगे। अुसका सर्वसत्वार्थ त्यागव्रत डिग अुठा। वह दुनियामें कोरी भलाअीके लिये बार-बार आता था और आता था निरस्त्र होकर। पर अब अुसने सोचा कि मैं बार-बार आअूंगा पर अेक पन्थ दो काजके लिये। सज्जनोंका तो हित करूँगा पर दुर्जनोंका नाश भी बिना किये न रहूँगा (परित्राणाय साधूनां विनाशायच दुष्कृताम् –गीता)। अब वह हाथमें अस्त्र लेकर आने लगा।

अिस आवागमनमें अुसने बोधिसत्त्वकी भाँति ही अनेक बार चोले बदले। मछली, कछुआ, सुअरसे लेकर वह कभी नर बना और कभी नरसिंह। जैसेको तैसाका पाठ अुसने दुनियाको खूब सिखाया और सब दुनिया अुसके पीछे चलने लगी। पर अिस तरह सारी दुनियाको अपने पीछे बटोरकर भी वह चैन न पा सका। कितने ही अुसे छली कहते। कितने ही अुसपर हत्याका दोष लगाते। धीरे-धीरे अुसके दूषणोंको लोगोंने अुभारना शुरू किया। अुसके बल और प्रभावकी परख होने लगी। किसे भगवन्त (अैश्वर्यवान्) माना जाये अिसकी जाँच होने लगी। अेकने चुटकी लेते कहा--

गोबर्धन धारे किसन दोना गिरि हनुमन्त।
सेस सृष्टि सिर पै धरी अिनमें को भगवन्त॥

अेकने जिज्ञासाके भावसे पूछ लिया—

प्रभु जे मुनि परमारथ दादी।
कहहिं राम कहुँ ब्रह्म अनादी॥
सेस सारदा बेद पुराना।
सकल करहिं रघुपति गुन गाना॥
तुम्ह पुनि राम राम दिनराती।
सादर जपहु अनंग-अराती॥
रामु सो अवधनृपति सुत सोअी।
की अज अगुन अलख गति कोअी॥

जौं नृप तनय त ब्रह्म किमि नारि बिरह मति भोरि।
देखि चरित महिमा सुनत भ्रमति बुद्धि अति मोरि॥

अित्यादि-अित्यादि दोष, आक्षेप और कटाक्षोंसे पीड़ित होकर वह चिन्तामें पड़ गया।

अुसके मनमें आया कि चलो फिर पीछे लौटूं। पर कहाँ? क्या फिर अुसी ब्रह्मभावमें या बुद्धभावमें या कहीं अन्यत्र? 'नेति' 'नेति' की शरण लेनेसे भी काम चल सकता है। यह जो कुछ है अुससे परे जब पहुँच गये तो झगड़ा ही क्या? कोअी कह ही क्या सकेगा? अिस तरह वह दुनियाके लिये निकम्मा बन गया।

पर दुनिया तो निकम्मी बैठ नहीं सकती। अुसने अुसे गालियाँ देना शुरू कीं। आखिर दुनियाको अपने कामसे मतलब। दोषहीन निकम्मे पुरुषसे सदोष काम-काजी कहीं अच्छा है। अन्तमें अुसकी आत्माने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर जोर मारा। अुसने कह दिया, जीवन तो प्रयोग-शाला है। प्रयोगमें भूलचूक हो सकती है। गुण-दोष कहाँ नहीं रहते ! हाँ, सत्य और अहिंसाको साथ लेकर चलना चाहिये।

चारों ओर सत्य और अहिंसाकी दुहाअी मच गयी। सत्य क्या है ? अहिंसा क्या है ? अिसे कोअी न जानता और न जाननेका जतन ही करता। बस, सत्यके नामसे असत्यकी दूकानें खुल गयीं। अहिंसाको हिंसाकी कालकोठरीमें बंद कर दिया गया। सत्य और अहिंसाके प्रवर्तक युगमें नये-नये शब्द अपने भयंकर अर्थके साथ प्रकट होने लगे। 'कृष्णविषणि' और 'अणु बम' से दुनियामें आतंक छा गया।

दुनियाकी फजीहतमें अिस तरह पड़कर वह अब भी हारा नहीं है। वह शान्तिः शान्तिः शान्तिः के स्वरसे अब भी अपनी चेतना प्रकट करता है। वह चाहता है कि अुसका स्वरूप शान्तिमय हो। पर शान्ति अुसे कैसे प्राप्त होगी ? देवतासे, ब्रह्मसे, बुद्धसे, सगुणसे, निर्गुणसे ? शायद नहीं। क्योंकि वह अपने अिन रूपोंसे तो गुजर चुका है और तरह-तरहकी परेशानी अुठा चुका है। तब किससे ? शायद जब वह मनुष्यसे परे सब रहस्योंको भूल जाये और मनुष्यको अिस भौतिक-जगत्से पृथक् समझ अुसकी अवहेला न करे। अब तक वह अपनी अवहेलाके कारण ही भुगतता रहा। जब वह मनुष्य मात्रको अेक अविभक्त रहस्य समझ अपने भेदोंको भूल जायगा तब अुसे अुस मोक्ष, अुस स्वर्ग, अुस निर्वाण, अुस आनन्द और अुस शान्तिकी प्राप्ति होगी जिसे वह अपने विगत तथा विविध ब्रह्म-बुद्धादि आत्मभावोंमें ढूँढ़ता रहा है।

नीति-सूक्ति

१. कबीरः—

"जो तोकूं कांटा बुवै, ताहि बोअि तू फूल।
तोकूं फूलके फूल हैं, वाकूं हैं तिरसूल॥

जो तेरे लिअे काँटा बोये अुसके लिये तू फूल बो। परिणाममें तुझे फूल (सुख-शान्ति) मिलेंगे और काँटा बोनेवालेको त्रिशूल अर्थात् घोर कष्ट।"

२. रहीमः—

"बसि कुसंग चाहत कुसल, यह रहीम जिय सोस।
महिमा घटी समुद्रकी, रावन बस्यो परोस॥

बड़े शोककी बात है कि कुसंगमें रहकर भी मनुष्य अपनी कुशल चाहता है। भला दुष्टके साथमें कुशल कहाँ ? रावणके पड़ोसमें रहनेसे समुद्रको अपमानित होना पड़ा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतके राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री

: श्री प्रा. जगदीशप्रसाद व्यास, अेम. अे. :

भारतीय संविधानके कार्यान्वित होनेमें असल कशम-कशका प्रसंग राष्ट्रपति और प्रधानमंत्रीके बीचके संबंधोंमें है। अमरीकी संविधानकी नाअीं भारतवर्षका संविधान अधिकारोंकी विभाज्यता अथवा बन्धन और संतुलनकी प्रणालीपर आधारित नहीं है। अिंग्लैण्डमें दीर्घकालीन राजनैतिक प्रगतिके फलस्वरूप प्राअिम मिनिस्टर और सम्राटके बीचकी लड़ाअीका फैसला हो चुका है; और प्रधानमंत्रीके पक्षमें देशने विजय भी स्वीकार कर ली है। भारतका संविधान विश्वकी संवैधानिक प्रगति और विकासका सबसे अगला कदम है, अिसलिये अुसमें अन्य संविधानोंका संयुक्तीकरण स्वाभाविक है। भारतीय संविधान यद्यपि प्रेसीडेंशल और रिपब्लिक है तथापि यहाँपर मंत्रिमंडलीय प्रथावाला प्रजातंत्र चला है।

सरकारकी मंत्रिमंडलीय प्रथाके दो मौलिक आधार होते हैं। अेक तो यह कि कार्यकारिणी दुहरी होती है। दूसरा यह कि अेक कार्यकारिणी समवेत रूपमें विधानसभाके प्रति जवाबदार होती है। भारतीय संविधानमें ये दोनों आधार मौजूद हैं। राष्ट्रपति राष्ट्रके सर्वोच्च अधिकारी हैं; सारी कार्यकारिणी सत्ता अुनके हाथमें है, तथा प्रत्येक कार्यकारी कदम अुनके नामसे अुठाया जाता है। परन्तु असल कार्यकारिणी तो मंत्रिमंडल है जो समवेत रूपमें भारतीय संसदके प्रति जिम्मेदार है। अिस दुहरी कार्यकारिणीमें कानूनन राष्ट्रपति ही प्रधान कार्यकारी अधिकारी है। अिसलिये अनेक अवसरोंपर शंका की जाती है कि कहीं अैसा न हो कि हमारा राष्ट्रपति तानाशाह बन जाय? अेक तो कानूनने अुसे सारे अधिकार दे रखे हैं, और अिन सब कानूनोंका कायल भारतीय अदालतोंको अनिवार्यतः होना पड़ेगा; दूसरे प्रधान तथा अन्य मंत्रियोंकी पदासीनता राष्ट्रपतिकी मर्जीपर निर्भर है, और तीसरे राष्ट्रपति अुनकी सलाह माननेके लिये कानूनन मजबूर भी नहीं। अिसलिये भारतीय संविधानकी सारी कशमकश अिन दोनोंके आपसी संबंधोंका निबटारा करनेकी ओर अुन्मुख रहेगी। फ्रांसमें अिसका निबटारा हो चुका है, रूसमें भी हो चुका है और वहाँके प्रेसीडेंटोंने अपना गौण पद स्वीकार भी कर लिया है। अमरीकामें प्रेसीडेंटके अपने व्यक्तित्वपर ही निर्भर रहता है कि असल शासन प्रेसीडेंट करे, अथवा अमरीकी काँग्रेस? वहाँ कोअी नियम अथवा परम्परा नहीं कायम हुअी। जो परम्परा है वह प्रेसीडेंटके व्यक्तित्वपर निर्भर रहती है। अिसी तरह अिंग्लैण्डमें भी प्राअिम मिनिस्टर अिस कशमकशके विजेता हो चुके हैं। अब भारतमें राष्ट्रपति अथवा प्रेसीडेंटकी क्या पोजीशन होगी, अिसपर विचार करना प्रासंगिक है।

यदि परंपरानुगत पार्लिमेंट-प्रणाली भारतमें चलायी गयी तो अिसमें संदेह नहीं कि हमें अिंग्लैंडका अनुसरण कर भारतीय राष्ट्रपतिको अेक कठपुतली कार्यकारी रूपमें ही स्वीकार करना होगा। समस्त कानूनी और औपचारिक अधिकारोंका अुपयोग अेवं अुपभोग, जो कि अुसे संविधान द्वारा दिये गये हैं, वह अपने मंत्रिमंडलकी सलाहके मुताबिक ही करता जायगा; और अुसका अपना निजी विवेक अथवा विवेकाधिकार लगभग कुछ भी नहीं होगा। जैसा हमारा संविधान अभी है, अुसके मुताबिक राष्ट्रपतिको अपने कर्तव्योंकी विशाल राशि निभानेके लिये मंत्रिमंडलकी सलाह और मदद लेना लगभग अनिवार्य है। परन्तु राष्ट्रपति अिस मदद और सलाहसे ही मजबूर होकर काम करें अेसा कोअी संकेत संविधानमें नहीं। यह बात निस्संदेह सच है कि जब संविधान राष्ट्रपतिको अपने कर्तव्य निभानेके लिअे प्रधान मंत्री और मंत्रिमंडलकी मदद अेवं सलाह लेनेका विधान करता है तो अुसमें यह

CC-0.In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्वनि जरूर निकलती है कि आम तौरपर वह अुस सलाह और मददके अनुरूप काम किया करे; तथा हलकी-पतली वजहपर अुस सलाह और मददको अस्वीकार न करे। संविधानके सख्त अर्थोंमें राष्ट्रपति भले अिस सलाह और मददसे मजबूर न हो, तो भी यदि वह अिनको अस्वीकार करेगा तो संवैधानिक खतरेके संकटमें भी पड़ सकता है। बात यह है कि यदि मंत्रिमंडलकी सलाह और मदद राष्ट्रपतिने न मानी तो मंत्रिमंडल अिस्तीफा दे देगा। यदि मंत्रिमंडलको अभी भी संसदमें बहुमतका विश्वास हासिल है तो राष्ट्रपतिके लिअे संसदके सम्मुख दूसरा मंत्रिमंडल बनाना असंभव हो जायगा। संसद अपने विश्वासपात्र मंत्रिमंडलके अपदस्थ होनेके लिअे राष्ट्रपतिको जिम्मेवार ठहराकर अुसे नीचा दिखानेकी भी ताकत रखती है कि जो आगे पीछे बड़े और भारी झगड़ेका बायस हो सकती है। अिस तरह जिस बातको संविधानने साफ-साफ नहीं लिखा, वही बात और वही बंधन, राष्ट्रपतिके अूपर संसदमें बहुमतका विश्वासोपभोग करनेवाला मंत्रिमंडल बड़ी आसानीसे लाद सकता है।

अिस अप्रत्यक्ष बंधनके बावजूद भी राष्ट्रपतिको अपने मंत्रिमंडलकी सलाह मंसूख करनेके पहिले अपनी सारी विवेक-बुद्धि और न्याय-प्रतिभाकी आवश्यकता होगी। बड़ी सावधानी और निगरानीसे अुसे अिस निश्चय पर पहुँचना होगा कि कानून और संविधान द्वारा दी गयी अुसकी मर्जी अेवं अुसके विवेकाधिकारके अुपयोगका अुपयुक्त मौका अब आ गया है। अुसे यह निश्चय करना होगा कि अिस मौकेपर यदि अपने विवेकाधिकारका मंत्रिमंडलकी सलाहके विरुद्ध अुपयोग नहीं किया तो वह पद ग्रहणके समयकी शपथको भंग कर देगा। शुरूमें राष्ट्रपति अेकदमसे तो विवेकाधिकारका अुपयोग करेंगे नहीं। वे पहले अपने मंत्रिमंडलका स्वयमेव अपनी प्रतिभाके बलपर अुसका मत-परिवर्तन करनेमें सफल होनेकी चेष्टा करेंगे; फिर बादमें असल प्रश्न व्यक्तित्वका रहेगा। अिसलिये जब तक अुचित और सम्माननीय परंपराअें रूढ़ नहीं हो जातीं तब तक हमें अिसे व्यक्तित्वका ही प्रश्न मानना चाहिये। यही बात अिंग्लैंडमें हुअी है। कानूनन सम्राट मंत्रिमंडलकी सलाह मंजूर करनेके लिअे मजबूर नहीं परन्तु व्यावहारिक रूपमें अुन्होंने अब लगभग दो सौ सालसे अुस सलाहको मंसूख नहीं किया।

यह बात जरूर है कि हमारे राष्ट्रपति और अंग्रेजी सम्राटमें फर्क है। जहाँ अिंग्लैंड अेकात्मक राष्ट्र है, वहां भारतवर्ष संघात्मक। सम्राट वंशोत्तराधिकारसे पदस्थ होता है, राष्ट्रपति चुनावोंके आधारपर। अिस तरह यदि हमारे संविधानने राष्ट्रपतिकी सलाह मंजूर करनेके लिये स्पष्टतः मजबूर नहीं किया तो कोअी गलती नहीं हुअी। यह तो संविधानने निश्चित कर ही दिया कि अिसमें अुसका विवेकाधिकार भी कायम रखा जाय, पर साथ ही अुसपर अंकुशकी परिस्थितियाँ बरकरार रखी जा सकें। अंग्रेजी सम्राटकी तुलनामें भारतका निर्वाचित राष्ट्रपति मंत्रिमंडलसे स्वतंत्रतापूर्वक निश्चय और निर्णय करनेके योग्य है क्योंकि अुसके पदका आधार जन्मका काकतालीय न्याय (Accident) न होकर प्रजातंत्रकी निर्वाचनात्मक प्रणाली है। अिस तरह संविधानने हमारे राष्ट्रपतिके विवेकाधिकारकी रक्षा मंत्रिमंडलकी संभव तानाशाहीसे की है क्योंकि शासनमें अैसे मौके अवश्य ही आनेवाले हैं जिनमें हमें सिवा राष्ट्रपतिकी विवेक-बुद्धिके और कोअी भी बचा नहीं सकता। और वे मौके स्पष्ट हैं।

समझ लीजिये कि लोक-सभामें किसी भी दलका अेकांत बहुमत नहीं और वहांपर संयुक्त मंत्रिमंडल कायम किया गया है। आम चुनावोंके कुछ ही दिन बाद संयुक्त मंत्रिमंडलकी लोकसभामें पराजय होती है। बात अैसी हुअी कि सभाका अेक दल जिसके समर्थनपर मंत्रिमंडल कायम हुआ था, अचानक मंत्रिमंडलके विरुद्ध होकर किसी अेक मसलेके अूपर अुसके साथ मत नहीं देता। अैसे मंत्रिमंडलके हारनेपर बहुत संभव है प्रधान-मंत्री सदन-भंगकी सलाह राष्ट्रपतिको दें। तब क्या राष्ट्रपति अिस सलाहको मानें अथवा अपनी विवेक-बुद्धिको काममें लाकर किसी दूसरे प्रधानमंत्रीकी अुसी लोकसभामें खोज करें जो आवश्यक समर्थक हासिल कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरकार बना सके। कहनेकी जरूरत नहीं कि अैसे मौकोंपर राष्ट्रपतिका कर्तव्य है कि वह अपने विवेकाधिकारका ही अुपयोग करे, हारे हुअे प्रधानमंत्रीकी सल्लाह अुसे मजबूर करनेके लायक नहीं हो सकती। यह भी कभी-कभी संभव होता है कि मंत्रिमंडल और अुसका प्रधान फैसिस्ट मनोवृत्तियोंवाली पार्टीका प्रोग्राम कार्यान्वित करना चाहते हों। अिस तरह वे प्रजातंत्रीय संविधानकी जड़ें काटनेमें लगे हुअे हैं। तब क्या राष्ट्रपतिका यह कर्तव्य है कि वे मंत्रिमंडलकी सलाह मानें अथवा अपने विवेकाधिकारका अुपयोग कर मंत्रिमंडलको डिसमिस करें और सदन-भंगका हुकुम दे दें।

फैसिस्ट प्रवृत्तियोंका प्रदर्शन मंत्रिमण्डल कअी रूपोंमें कर सकता है। अनेक बार वह संसदकी कार्यावाहीको बारबार, कहीं अिस बहाने, कहीं अुस बहाने बढ़ाता जाता है और अिस बीच अपने फैसिज्मकी जड़ोंको पुख्ता बना प्रजातन्त्रके आक्रमणोंसे नाकाबन्दी किया करता है। दूसरे वह निर्वाचन-क्षेत्रोंकी सीमाओंका भी कुछ अैसा रद्दोबदल किया करता है जिससे पार्टी विशेषके अुम्मीदवारोंकी चुनावमें सफलताके चांस बढ़ जाते हैं तथा अन्य पार्टीवाले घपलेमें पड़ सकते हैं। यह सब तानाशाही वृत्तियाँ हैं और अिनपर अंकुश रखना संविधानके अभिभावक राष्ट्रपतिका धर्म है। अतः, अिन मामलोंमें राष्ट्रपतिका मंत्रिमंडलसे सहमत होना सरासर अप्रजातन्त्रीय होगा। आमतौरसे पूछा जाय तो राष्ट्रपति प्रधानमन्त्रीकी ही सलाहपर सदन भंग कर देंगे, परन्तु जब दूसरा मंत्रिमंडल बनाना संभव हो सकता है तो वे प्रधानमन्त्रीकी सलाह माननेके लिअे बाध्य नहीं। भारत जैसे सत्रह करोड़ मतदाताओंके देशमें आम चुनावकी रगड़ बहुत ही विशाल और घोर होगी। अिस तरह पार्टियोंकी जहरीली हवामें रहनेवाले मन्त्रिमण्डल और प्रधानमन्त्रीके अूपर भी राष्ट्रपति अंकुश रख सकें तो अच्छा।

प्रधानमन्त्री और मंत्रिमंडलकी अमोघताका सिद्धान्त प्रतिपादन करनेवाले अक्सर अिंग्लैंडके मन्त्रिमण्डलकी अमोघताकी मिसाल दे देते हैं। परन्तु यह तुलना भ्रामक है, जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है। अिंग्लैंडका प्रधानमन्त्री, सम्राट मात्रके प्रति वफादारीकी शपथ लेता है, जब कि भारतका राष्ट्रपति संविधानके प्रति वफादारीकी शपथ तो लेता ही है, अुस मशीनरीके पालनकी भी शपथ लेता है कि जिसके जरिये संविधानकी अवहेलनाका दण्ड देनेके लिअे वह जिम्मेवार है अर्थात् संविधानको कार्यान्वित करनेके लिअे संविधानने राष्ट्रपतिको मन्त्रिमण्डलकी मशीनरी और अुसकी सामूहिक जिम्मेवारीके धाराका आदेश दिया है। अतः, अिस मशनरीके पालनकी शपथ भी अुसका संवैधानिक कर्तव्य है; तो अुसे मंत्रिमंडलकी सामूहिक जिम्मेवारीका संरक्षण करना होता है। और साथही अिंपीचमेंट (महाभियोग) की मशीनरीका भी। शर्त यह है कि अिसका निर्णय वह स्वयं विवेकसे करता है कि अब संविधानकी अवहेलना प्रारंभ हो गयी है। बात यह है कि यदि राष्ट्रपति संविधानकी अवहेलना करता है तो अुसके महाभियोग (अिंपीचमेंट) की सारी मशीनरी चलने लगती है और अुसे चलानेके लिये पूरी लोक-सभाके सिर्फ चौथाअी सदस्यों द्वारा चौदह दिनोंका लिखित नोटिस मात्र काफी है। बादमें अुसे पास होनेके लिअे अलबत्ता दो तिहाअी मत जरूरी होंगे जो तभी संभव हो सकता है जब कि वास्तवमें राष्ट्रपतिने संविधानकी अवहेलना की हो।

परन्तु मान लो कि मंत्रिमंडलकी समर्थक लोक सभाने राष्ट्रपतिपर झूठमूठ महाभियोगकी कारवाअी चलानेकी कोशिश की। अब राष्ट्रपतिके पास तो सदन भंगका अधिकार है; वह मंत्रिमंडलको डिसमिस करके दूसरा चुनाव, आर्डर कर सकता है। फिर यदि अुसके मनका मंत्रिमंडल बन गया और अिस प्रकार राष्ट्रपतिकी तानाशाहीका कायल भी कहलाया गया तो अिसमें कोअी संवैधानिक आपत्ति नहीं होनी चाहिये क्योंकि जनमतसे ही तो आखिर राष्ट्रपतिने अपने मनका मंत्रिमंडल कायम कराया। तब वह स्पष्ट रूपमें निरंकुश तानाशाहीकी मिसाल न पेशकर संविधानके वफादार संरक्षणकी ही मिसाल पेश कर रहा है। सच पूछिये तो यदि हमारी संसद हमारी राष्ट्रीय आकांक्षाओंका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिनिधित्व करती होगी तो राष्ट्रपतिके लिये डिक्टेटर बनना संभव ही नहीं। वह जब कभी भी अिन आकांक्षाओंको मिटाने अथवा अुनका विरोध करनेको तैयार होगा, तब वह अनेक मामलोंमें अपने वास्ते मुसीबतोंको न्योता देता दीख ही पड़ेगा। जिन मामलोंके लिये अुसपर महाभियोग किया जा सकता है, अुनका क्षेत्र बहुत व्यापक है। जब हम संविधानकी अवहेलनाकी बात कहते हैं तो हमारा अुद्देश्य संविधानके अुन मौलिक सिद्धान्तोंकी अवहेलनासे है जो संविधानके प्रीअेम्बल (Preamble) अर्थात् प्रारम्भिक अध्यायमें लिखे हुअे हैं। और मन्त्रियोंकी सामूहिक जिम्मेदारीका अुल्लंघन करना भी संविधानकी अवहेलना है। यह कानूनकी बात है, किसी परम्परा मात्रकी बात नहीं। परन्तु अिसका यह मतलब नहीं कि हमलोग अपने राष्ट्रपतिके अूपर जब चाहें तब महाभियोग ही चलाते रहा करें। अपने राष्ट्रके सर्वोच्च अधिकारीपर कोअी भी सभ्य और सम्मान्य राष्ट्र अिस तरह हरवक्त मुकदमें चलानेकी बेअिज्जती गवारा नहीं कर सकता। यदि अेकके बाद दो और दोके बाद तीन राष्ट्रपतियोंका अिस तरह अिंपीचमेंट होता गया तो अिसका मतलब सिर्फ अेक ही है। वह यह कि यह राष्ट्र स्वतन्त्र शासनके लिये बिलकुल नालायक है। अिसका मतलब यही है कि वक्तके अूपर अिस राष्ट्रमें अैसा नेता अुत्पन्न करनेका माद्दा नहीं जो अुसकी अेकताका प्रतीक बन, अुसकी राजनैतिक कशमकशका केन्द्र-बिन्दु और राज्यका मूर्त आलंबन बन सके।

अिस प्रसंगमें यह स्मरण रखना नितान्त आवश्यक है कि महाभियोगका अस्त्र अेक असाधारण अस्त्र है। अुसे असाधारण परिस्थितियोंमें ही लाचारी दर्जा आपद्धर्मके रूपमें काममें लाया जा सकता है और अिसी दर्जेमें लाना भी चाहिये। अिंग्लैंड और अमरीकामें अिस अस्त्रका प्रयोग अब लगभग निषिद्ध-सा ही है। हमारे संविधानने भी अिसे अितना कठिन, लंबा-चौड़ा, भारीभरकम, अुलझा हुआ और अुकताहट पैदा करनेवाला बनाया है कि साधारण परिस्थितियोंमें अुसका अुपयोग नहीं हो सकेगा। राष्ट्रपतिकी मामूली-सी गलती या भूलपर अुसे अिंपीच करना ज्यादती समझी गयी है। जिस विशाल बहुमतके बल अिंपीचमेंटका प्रस्ताव स्वीकृत हो सकता है वह भी अत्यन्त कठिनाअीसे अुपलब्ध हो सकेगा। सही बात तो यह है कि दैनिक कार्यवाहियोंकी साधारण-सी गलतीको संविधानकी अवहेलना भी तो नहीं माना जा सकता है और न अैसा मुकदमा चलानेवालेका अभियोग टिक ही सकेगा। अेकमात्र दलील जिसके आसरे अिंपीचमेंटका अिल्जाम ठहर सकता है वह है संविधानकी अवहेलना। अिसमें शक नहीं कि अिंपीचमेंटके मामलेमें अन्य राजनैतिक वजूहात भी अवश्य घुसे हुअे मिलेंगे, परन्तु अिसमें किसे शक होगा कि अितनी बड़ी संसदमें अेक तिहाअी सदस्य भी अैसे न मिलें जो मसलेको तटस्थ और पक्षपातहीन दृष्टिकोणसे न देखें और नीरक्षीर विवेकके बल खामख्वाहकी ज्यादती न रोक सकें? अिसका तो मतलब यह होगा कि या तो अपराध बहुत बड़ा है, या अिस देशके अिन्सान, स्वतन्त्रता, अुत्तरदायित्व और स्वशासनके लिये बिलकुल निकम्मे हैं।

अिस तरह आम तौरसे यदि विधान सभाअें लोकसभा या राज्यपरिषद् राष्ट्रपतिपर मुकदमे चलानेसे सदा खौफ खाया करेंगी तो यह भी अुतना ही अभीप्सित है कि राष्ट्रपति मौके-बेमौकेकी परवाह किये बिना ही लोकप्रिय मंत्रिमंडलके अूपर अपने विवेकाधिकारकी आड़में जबरदस्तीका ठेंगा न लगाया करें; अन्यथा आगे-पीछे घोर संवैधानिक गतिरोध आ खड़ा होगा। अिसलिये राष्ट्रपतिके विवेकको बरकरार रखा जाय — यह आवश्यक है। विशेषतः मंत्रिमंडलकी पक्षपातपूर्ण नीतिसे राष्ट्र और संविधानकी रक्षा करनेके अुद्देश्यसे। अक्सर अैसा मौका किसी बड़ी नियुक्तिके मामलेमें अवश्य ही आया करेगा। मंत्रिमंडल अपनी पार्टीके प्रति वफादारीकी बख्शीसमें किसी जज, राजदूत अथवा अैसे ही अन्य पदपर अपने आदमीको नियुक्त कराना चाहेगी, और राष्ट्रपति साफ-साफ अुसमें तरफदारीके कलंककी बू देखते होंगे। राष्ट्रपतिके हाथों अैसा कोअी काम नहीं होना चाहिये जिसमें अुनमें किसी पार्टीके प्रति विशेष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पक्षपातका अिल्जाम खुले आम लग सके। अैसा मौका भी आयगा जब कि केन्द्रकी सरकार किसी और पार्टीकी होगी और किसी राज्य विशेषकी सरकार किसी और पार्टीकी। अैसी हालतमें केन्द्रीय मंत्रिमंडल को अिस बातका बराबर लोभ होगा कि वह अपनी पार्टीके स्वार्थोंकी पूर्ति करनेके अभिप्रायसे राष्ट्रपतिको यह सिफारिश करें कि वे अपनी आकस्मिक (अिमर्जेंसी पावर्स) शक्तियोंका अुपयोग कर राज्यमें राष्ट्रपति का अथवा गवर्नर (राज्यपाल) का शासन कायम करें। कहनेकी जरूरत नहीं कि मंत्रिमंडलकी अैसी सलाह बदनीयतीसे प्रेरित है; अेतदर्थ राष्ट्रपतिको संविधानकी रक्षाके हेतु अपने विवेकाधिकारका प्रयोगकर मंत्रिमंडलकी सलाह नहीं माननी चाहिये।

राष्ट्रपतिको विवेकाधिकारका अुपयोग करते समय बस अिस आदर्शसे प्रेरित होना चाहिये कि अुसके कदमकी लोकमतपर क्या प्रतिक्रिया होगी। अिन प्रतिक्रियाओंको वह ठीक तरहसे तौले और फिर सावधानीसे कदम अुठाये। अुसे अिस बातका पूरा यकीन हो सकना चाहिये कि विवेकाधिकारके अमुक-प्रसंगमें अुपयोग करनेसे वह लोकमतके द्वारा भी अपने कदमका समर्थन करा सकता है। जिन अुपरोक्त परिस्थितियोंमें केंद्रीय मंत्रिमंडल राज्य सरकारको भंग करनेकी सलाह देगा, अुन परिस्थितियोंमें यदि राष्ट्रपतिने केन्द्रीय मंत्रिमंडलकी सलाहको मंसूख किया तो राष्ट्र अवश्य ही राष्ट्रपतिका साथ देगा। अिस प्रसंगमें भी अंग्रेजी सम्राट और भारतीय राष्ट्रपतिकी पोजीशनोंमें फ़र्क है। क्योंकि राष्ट्रपति निर्वाचित पदाधिकारी है, सम्राट् वंश परम्परानुगत। अर्थात् राष्ट्रपतिको अपने मंत्रिमंडलकी सलाहोंपर अपने विरोधी विवेकाधिकारका अुपयोग तभी करना चाहिये जब कि अुसे यह भरोसा हो जाय कि मंत्रिमंडलकी सलाह लोकमतसे दूर और अुसके विरोधमें है।

गीत

: श्रीमती विद्यावती मिश्र :

किसी भी हाथों चढ़ें सुमन !
बस अभिलाषा यही तुम्हारा हो पूजन अर्चन !
किसी भी हाथों चढ़ें सुमन !!.

समझी जाअूं नहीं पुजारिन अिसका शोक नहीं,
फीका मन्दिरकी देहरीका हो आलोक नहीं,
पल भर भी रुक सके न भक्तोंका गायन-वादन !
किसी भी हाथों चढ़ें सुमन !!

मन्दिरकी प्रतिमा नित नूतन मर्यादा पाये,
अनुगत हो जाये भ्रमवश भी जो पथपर आये,
पुज-पुजकर पावनसे पावन-तम हो दिव्य चरण !
किसी भी हाथों चढ़ें सुमन !!

प्रभु मुझको अिसमें ही सुख जग तुमको पूज्य कहे,
पद-रज छूनेको नयनोंका अक्षय नीर बहे,
बनो विश्वके प्राण चिरंतन मेरे जीवन-धन !
किसी भी हाथों चढ़ें सुमन !!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कृतके कुछ कवियोंकी गर्वोक्तियाँ

: श्री प्रभातशास्त्री, साहित्याचार्य, साहित्यरत्न ।

समयके परिवर्तनके साथ-साथ मानवकी मानसिक प्रवृत्तियोंमें भी परिवर्तन होता है। अेक समय था जब कि संस्कृतके पूर्ववर्ती कवि व्यास, वाल्मीकि और कालिदासमें अपने तथा अपनी कविताके सम्बन्धमें कुछ भी लिखनेकी प्रवृत्ति नहीं पायी जाती। अिन कवियोंकी काव्यकी किसी भी पंक्तिसे अिनके अहंभावका आभास नहीं मिलता; प्रत्युत अिसके विपरीत महाकवि कालिदासने "मन्द कवियश प्रार्थी" लिखकर विनम्रता प्रकट करनेके शिष्टाचारमें अपनेको 'मूढ़' तक कह डाला। यह था विश्व-कविका "विद्या ददाति विनयम्" का वास्तविक स्वरूप। कुछ कालके पश्चात् संस्कृतके अुत्तरवर्ती कवियोंमें अहंभाव-प्रकाशनकी भावनाका अुद्रेक हुआ। फिर अुन्होंने अपने कुलकी प्रशंसा तथा अपनी कविताके सम्बन्धमें चमक-दमकदार भाषामें गर्वोक्ति लिखना आरम्भ कर दिया। प्रसिद्ध नाटककार महाकवि भवभूति अिस परिपाटीके जन्मदाता हैं। ये ७०० अी. स. के आसपास हुअे थे। अिन्होंने बड़ी संयत भाषामें, व्यञ्जनात्मक शैलीमें कहा--

ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञाम्,
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैषयत्नः।
अुत्पत्स्यते हि मम कोऽपि समान धर्मा,
कालोह्ययं निरवधि विपुलाच पृथ्वी ।

जो लोग मेरा अिस विषयमें तिरस्कार करते हैं, वे समझें कि मेरा यह प्रयत्न अुनके लिये नहीं है। कारण कि यह विशाल पृथ्वी और काल असीम है, अतः मेरा सहधर्मी, मेरी दाद देनेवाला, तो कोअी अवश्य पैदा होगा।

अिसके बाद संस्कृतके कवियोंमें गर्वोक्ति लिखनेकी प्रणाली चल पड़ी। अुनमेंसे कुछ कवियोंकी गर्वोक्तियाँ बड़ी रोचक हैं। कविके संक्षिप्त परिचयके साथ कुछ गर्वोक्तियाँ नीचे दी जा रही हैं।

मुरारि

ये संस्कृतके महान् प्रख्यात नाटककार हैं। अिनका बनाया हुआ "अनर्घ राघव" नाटक संस्कृतके अुच्च-कोटिके नाटकोंमें गिना जाता है। अिनका जन्म ८०० अी. स. के लगभग हुआ था। अिनके पिताका नाम श्री. वर्धमानक तथा माताका तन्तुमती था। अिन्होंने अपने आपको "बाल वाल्मीकि" कहा है। पाठक जरा अिनकी भी गर्वोक्तिका रस पान करें।

देवीवाचमुपासते हि बहवः सारन्तु सारस्वतम्,
जानीते नितरामसौ गुरुकुलक्लिष्टो मुरारिः कविः।
अब्धिर्लङ्घित अेव वानरभटैः किन्त्वस्य गंभीरता-
मापातालनिमग्नपीवरतनुर्जानाति मन्याचलः ॥

देवी सरस्वतीकी अुपासना तो बहुतसे कवि करते हैं, किन्तु विद्याविषयक वास्तविक मर्मको गुरुकुलमें रहकर (अध्ययनके लिये) कठिन कष्ट सहनेवाले मुरारि कवि ही जानता है। योद्धा वानरोंसे समुद्रका लङ्घन भले ही कर लिया हो अिससे क्या; पर अुसकी गंभीरताका--गहराअीका ज्ञान पातालकी सीमा तक अपने विशाल शरीरको डुबानेवाले मन्दराचल पर्वतको ही है।

राजशेखर

यह कन्नौजके राजा महेन्द्रपालकी राजसभाका अत्यधिक देदीप्यमान नक्षत्र था। यह महाराष्ट्र चूड़ामणि दुर्दुकका पुत्र था। माताका नाम शीलवती था। ये महाराष्ट्रसे कन्नौज आये थे। महेन्द्रपालकी स्थिति अितिहासकार लोग ८५० अी. स. से लेकर ९१० तक मानते हैं। अतः राजशेखर भी ९०० अी. के आसपास वर्तमान रहे होंगे। ये संस्कृत साहित्यके सबसे बड़े-चढ़े प्रतिभाशाली समालोचक थे। अिनकी बनायी हुअी 'काव्य मीमांसा' अिनकी कृतियोंमें सर्वश्रेष्ठ है। अिसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिनकी मौलिक सूझबूझका पिटारा कहना चाहिये। संस्कृत और प्राकृत भाषापर अिनका अपरिमित अधिकार था। अिन्हें छोड़कर संस्कृत भाषाके किसी अन्य समालोचकने अुपनिषद् शैलीके गद्यका प्रयोग नहीं किया। अिनके बनाये हुअे कअी नाटक भी हैं। अुनके नाम निम्नलिखित हैं— कर्पूर मञ्जरी, विद्धशाल भंजिका, बालरामायण, प्रचंड पांडव। अिनकी गर्वोक्ति देखिये—

> वभूव वल्मीकभवः कविः पुरा,
> ततः प्रपेदे भुवि भर्तृभेष्ठताम्।
> स्थितः पुनर्यो भवभूति रेखया,
> स वर्तते संप्रति राजशेखरः।

प्राचीन कालमें वल्मीक जन्मा 'वाल्मीकि' नामके कवि हुअे। कुछ कालके पश्चात् (अुन्होंने) पृथ्वीपर कवि 'भर्तृभेष्ठ' के रूपमें जन्म लिया। फिर कुछ समयके बाद जो (महाकवि) भवभूतिके नामसे स्थित थे, वही अिस समय राजशेखरके रूपमें वर्तमान हैं। (भर्तृभेष्ठ काश्मीरी कवि हैं।)

श्रीहर्ष

कान्यकुब्ज नरेश जयचन्द्र अिनके आश्रयदाता थे। अिनके पिताका नाम श्रीहरि था। जयचन्द्रका राज्यकाल अितिहासकारोंके मतसे ११७० अी० से लेकर ११९५ तक था। अिसीके सहारे श्रीहर्षका बारहवीं शताब्दीके अुत्तर भागमें वर्तमान रहना सिद्ध होता है। अिनका बनाया हुआ "नैषधचरित" महाकाव्य है। अिसमें २२ सर्ग हैं। यह संस्कृत भाषाका अन्तिम सफल अेवं अत्यन्त प्रौढ़ महाकाव्य है। अिस महाकाव्यके सम्बन्धमें अेक समालोचकने लिखा है कि—"शब्दोंके सुन्दर विन्यासमें, भावोंके समुचित निर्वाहमें, कल्पनाकी अूंची अुड़ानम तथा प्रकृतिके सजीव चित्रणमें और अर्थ गांभीर्यमें, यह महाकाव्य काव्य जगत्में अपना सानी नहीं रखता"। श्रीहर्ष 'दर्शन शास्त्र' के भी प्रकाण्ड पण्डित थे। कवियोंमें ये सबसे बड़े दार्शनिक तथा दार्शनिकोंमें ये सबसे बड़े कवि हैं। अिनका बनाया हुआ 'खंडनखाद्य' ग्रन्थ दर्शन शास्त्रके अुच्च कोटिके ग्रन्थोंमें गिना जाता है। अिनकी गर्वोक्ति पढ़िये—

> ताम्बूलद्वयमासनञ्च लभते यः कान्यकुब्जेश्वरात्,
> यः साक्षात् कुरुते समाधिषु परंब्रह्म प्रमोदार्णवम्।
> यत्काव्यं मधुवर्षि घर्षितपरास्तर्केषुयस्योक्तयः,
> श्री श्रीहर्षकवेः कृतिः कृतिमुदे तस्याभ्युदीयादियम्॥

जो कान्यकुब्ज नरेशसे दो पान-बीड़े और आसन प्राप्त करता है; जिसे समाधिस्थ होनेपर ब्रह्मानन्दरूपी समुद्रका प्रत्यक्ष दर्शन होता है, जिसका काव्य मधुकी वृष्टि करनेवाला और जिसकी तर्कशास्त्रकी अुक्तियां प्रतिद्वन्द्वियोंको पराजित कर देती हैं, अुस श्रीहर्षकी यह कृति पुण्यवानोंको आनन्ददायक हो।

जयदेव

ये गीतगोविन्दके रचयिता जयदेवसे भिन्न हैं। अिनके पिताका नाम महादेव तथा माताका सुमित्रा था। ये विदर्भ देशके रहनेवाले थे। अितिहासकार अिन्हें अनुमानकी भित्तिपर १३०० अी. के समीप मानते हैं। अिनके बनाये हुअे दो ग्रन्थ हैं—चन्द्रालोक और प्रसन्न राघव नाटक। ये बड़े भारी तार्किक भी थे। अिनकी गणना संस्कृतके श्रेष्ठ कवियोंमें होती है। अिनके नाटकीय छन्दोंमें शब्दनाद अधिक पाया जाता है। प्रसन्न राघव नाटकसे महाकवि तुलसीदास अत्यधिक प्रभावित थे। यही कारण है, रामचरित मानसकी कुछ चौपाअियाँ अिस नाटकके श्लोकोंसे पूर्णरूपेण अनुप्राणित हैं। अिनकी रसपूर्ण गर्वोक्ति पढ़कर हृदयके रग-रगमें रसकी धारा बह अुठती है—

> येषां कोमलकाव्यकौशलकलालीलावती भारती,
> तेषां कर्कशतर्कवक्रवचनोद्गारेऽपि किं हीयते।
> यैः कान्ताकुच मण्डले कररुहाः सानन्दमारोपिताः,
> तैः किं मत्तकरीन्द्रकुम्भशिखरे नारोपणीयाः शराः॥

अर्थात् जिनकी भारती (वाणी) कोमल कलापूर्ण कुशलताके साथ, काव्यकी लीला (रचना) करनेकी शक्तिसे संपन्न हो, क्या (अुनकी वाणी) तर्कशास्त्रके कठोर, टेढ़े-मेढ़े वाक्य विन्यासके निर्माणमें अशक्त हो सकती है? जो लोग अपनी प्रियतमाके वक्षःस्थलपर आनन्दके साथ प्रेमसे अपनी अुंगलियोंको लगाते हैं वे ही अुन्हीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंगुलियोंसे मदोन्मत्त हाथियोंपर क्या बाणोंकी वर्षा नहीं करते।

पण्डितराज जगन्नाथ

ये संस्कृतभाषाके सबसे सफल समालोचक और कुशल कवि और महान् अुद्दंड पंडित थे। अिनके पिताका नाम पेरम भट्ट तथा माताका लक्ष्मीदेवी है। ये दक्षिण भारतके तैलंग ब्राह्मण थे। दक्षिण भारतीय होते हुअे भी अिनका सारा जीवन प्रायः अुत्तर भारतमें ही व्यतीत हुआ। तरुणावस्थामें ये मुगल सम्राट शाहजहाँके दरबारमें थे। अिन्हींसे अिन्हें 'पण्डितराज'की अुपाधि मिली थी। ये अिनके पुत्र दाराशिकोहके संपर्कमें भी कुछ समयतक थे। अिनकी प्रशंसामें अिन्होंने "जगदाभरणम्" नामक अेक काव्य लिखा है। अिनका कुछ काल शाहजहाँके सरदार आसफखाँके आश्रयमें भी बीता था। अिनके सम्बन्धमें अिन्होंने आसफविलास नामसे अेक पुस्तक लिखी है। अिन मुस्लिम शासकोंके संपर्कके आधारपर १६५० अी. आसपास अिनका वर्तमान होना सिद्ध होता है। पण्डितराजने संस्कृतमें कअी ग्रन्थ लिखे हैं- जिनमें 'रसगंगाधर', 'भामिनी विलास' और "गंगा लहरी" अधिक प्रसिद्ध है। रसगंगाधरमें रस, ध्वनि और अलंकारोंका पाण्डित्यपूर्ण विवेचन है। ये समालोचकके साथ-साथ अुच्च कोटिके कवि भी थे। रसानुकूल अिनके छन्दोंके कोमल शब्दबन्ध जयदेवके गीतके समान पढ़ते समय पाठकके हृदयको झंकृत कर देते हैं। अिनकी गर्वोक्ति देखिये—

मधुद्राक्षा साक्षादमृतमय वामाधर सुधा,
कदाचित् केषांचिन्नखलु विदधीरन्नपि मुदम्।
ध्रुवं ते जीवन्तोप्यहह! मृतका मन्दमतयः,
न येषामानन्दं जनयति जगन्नाथ भणितिः॥

मधु (शहद), द्राक्षा (अंगूर), साक्षात् सुधा तथा तरुणियोंके मधुर अधरामृत, कदाचित् किसीको सुखदायक न हों; किन्तु (पण्डितराज) जगन्नाथकी (रसभरी) अुक्तियाँ यदि किसीको आनन्द देनेवाली न हों तो खेदके साथ कहना पड़ता है— निश्चय ही वह जड़-बुद्धि पाठक जीवित दशामें भी मृत पुरुषके समान है।

मनको सरल और तरल कर देनेवाली अिनकी दूसरी गर्वोक्तिका भी रस पान करें—

आमूलाद्रेस्तनसानोर्मलयवलयितादाच कूलात्पयोधेः,
यावन्तःसन्तिकाव्यप्रणयनपटवः ते विशङ्क वदन्तु।
मद्वीकामध्यनिर्यन्मसृणरसझरीमाधुरीभाग्यभाजाम्,
वाचामाचार्यताया पदमनुभवितुं कोऽस्ति धन्यो मदन्यः।

जहाँसे सुमेरु पर्वत प्रारम्भ होता है वहाँसे लेकर मलयाचल पर्वतसे घिरे हुअे समुद्रकी सीमातक—अर्थात् सारे भारतवर्षमें काव्य रचना करनेमें निपुण जितने लोग हैं; वे सब निर्भीक होकर कहें कि अंगूरके अंदरसे निकलनेवाली स्वच्छ रसधाराकी मधुरिमासे पूर्ण वाणीकी आचार्यताके पदका अनुभव कर्ता मुझसे भाग्यशाली अन्य कौन है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गंगोत्री

: श्री बालमुकुंद मिश्र :

गंगोत्री तक पहुँचनेके तीन सरल मार्ग हैं।

हरिद्वार हृषीकेशसे देवप्रयाग, टिहरी होकर धारासूसे यमुनोत्री होकर गंगोत्री।

हरिद्वारसे मंसूरी होकर यमुनोत्री और वहांसे गंगोत्री।

नरेन्द्र नगरसे टिहरी होकर गंगोत्री।

गंगोत्रीमें पवित्र गंगाका अेक मन्दिर है जो अेक विशाल लम्बे मैदानमें स्थित है। अुस स्थानके चारों ओर हिमालयसे घिरी गंगाकी बहुत पतली धारा मध्यमें बहती है। यहां अेक छोटी-सी बस्ती है, जिसमें कुछेक धर्मशालायें हैं। मन्दिरमें गंगाजीकी स्वर्णमंडित प्रतिमा है। गंगोत्री स्थानसे अेक मील नीचे गौरी कुंड है, जहां केदार गंगा और पातंगनी नामक स्थान हैं। गंगोत्रीसे दस मील आगे "गोमुखी धारा" है। यहीं श्री जाह्नवीका अुद्गम-स्थल है। गोमुख द्वारा गंगाकी धारा पर्वतसे बाहर प्रकाशमें आती है। हिमकी प्रचुरतावश अिस स्थानपर साधारण मनुष्यका आना-जाना सहज सरल नहीं। श्रावण या भाद्रपदमें ही दृढसंकल्प भक्त बड़ी कठिनाअीसे अिस स्थानपर पहुंच पाते हैं। गंगोत्रीकी अूंचाअी लगभग दस हजार फीट है। गंगोत्रीके चारों ओर अूंचे-अूंचे पर्वत हैं। यदि वहाँसे पूर्वाभिमुख होकर देखें तो श्वेत हिमसे आच्छादित विशाल पर्वतका दृश्य अितना मनोरम प्रतीत होगा जिसका वर्णन करना सरल नहीं।

गंगोत्रीसे गोमुखका मार्ग है। गोमुख, भागीरथी श्री गंगाके अुद्गम स्थानका नाम है। गोमुख तक पहुंचनेका पथ अति कठिन और टेढ़ामेढ़ा है। यथार्थ बात तो यह है कि गोमुखतक पहुंचनेका पथ निर्मित नहीं हुआ। वह तो अेक प्रकारसे विशुद्ध नैसर्गिक अेवं प्राकृतिक है। गंगोत्रीसे गोमुख तकका मार्ग अन्दाजन पन्द्रहसे बीस मीलकी अन्तरका है। यह पथ अैसा है कि पार करना कठिन हो जाता है। हिमसे आच्छादित अूबड़-खाबड़ और दुष्कर भी।

गोमुखमें, जहांसे पवित्र गंगा प्रकाशमें आती है, गौकी मुखाकृति जैसी कोअी आकृति दृष्टिमें नहीं आती। अपितु अुस स्थानकी समता तो किसी 'टनल' (सुरंग) से की जा सकती है। पर्वतका आधुनिक नाम है 'गलेशर'। वहां दो स्थानोंसे 'टनल' से पवित्र गंगा प्रकट होती दिखायी देती है। गंगोत्रीसे गोमुखतकके मार्गमें अनेक नदी-नाले लांघने पड़ते हैं और कअी धारायें तो ठोस हिमके रूपमें प्रारम्भिक ग्रीष्मके दिनोंमें भी बनी रहती हैं। कुछ नदियां वेगके साथ कहीं भागी जाती दिखायी देती हैं। वेगसे जाती सरिताओंवाले स्थानोंसे अूंचे नीचे शिलाखंडों और पत्थरोंपर छलांग लगाकर ही पार अुतरना पड़ता है। अिससे भिन्न अन्य कोअी अुपाय नहीं। यदि आपने हिम-प्रदेशकी कभी यात्रा नहीं की, तो आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि हिम-प्रदेशमें सरिताओंपर हिम-सेतु स्वयं बनते-बिगड़ते रहते हैं। यह हिम-सेतु भी पार जानेके साधनके रूपमें काम आते हैं। हिमानी पथको लांघकर गोमुख पहुंचनेपर हम समुद्र स्तरसे तेरह हजार मीलकी अूंचाअी-पर होते हैं।

गोमुखके समीप पहुँचनेपर सामने अेक कुंडल कलश दिखायी देता है। अैसा लगता है जैसे कलशको चाँदीसे मढ़ दिया गया हो, और श्वेत रजत कलशपर गिरती सूर्य देवकी किरणें तो अुसके रूप-दर्शनको और अधिक प्रोत्साहित करती हैं। यही शीतल सौन्दर्य पूर्णिमाकी प्रकाशमयी रात्रिको अति मनोरम प्रतीत होता है।

गंगोत्रीमें मअीसे सितम्बर तक यात्रियों और सन्त, सिद्ध, महात्मा तथा तपस्वीजनों अेवं पंडितों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदिकी चहल-पहल रहती है। शेष कालमें पूर्ण शान्तिका साम्राज्य छाया रहता है। सभी यात्री वहाँसे नीचेकी ओर आ जाते हैं।

यात्रा-संस्मरणमें तपस्वी श्री अवधूतजी तथा श्री मुनिजीकी बतायी वार्ताको, यहाँ विस्मृत नहीं किया जा सकता। अुपर्युक्त दोनों ही परम जिज्ञासु साधकोंने निश्चय किया कि वे शीत और ग्रीष्म ऋतु अर्थात् अेक वर्ष तक गंगोत्री ही में वासकर, वहाँकी स्थितिका अध्ययन कर अपनी साधनामें सफलता प्राप्त करें।

निश्चयानुसार वे वहाँ रहे और अुनकी संचित दैनन्दिनीके अगणित पृष्ठोंमेंसे कुछ बातें अिस प्रकार प्राप्त की जा सकी हैं—

विजया दशमीके पश्चात् "अवधूतजी और मुनिजी" अपनी-अपनी गुफासे चलकर प्रज्ञानाथ आश्रमकी कुटियामें पहुँच गये। "अवधूतजी" रसोअी-गृहमें ठहरे और "मुनिजी" लकड़ीकी अेक कुटियामें।

माघ मासतक कोअी अुल्लेखनीय घटना नहीं घटी। हाँ, शीत निरन्तर बढ़ती रही, गंगाजल अति शीतल हो चला और धार क्षीण होती गयी।

माघकी अेकादशीका दिन था, वे अपने स्थानपर चले गये। अर्ध रात्रिके समय हिम कण अनायास गिरने लगे और अितने बरसे कि कुटियाका द्वार खोलना कठिन हो गया। अवधूतजीने मुनिजीको पुकारा तो अुत्तर आया:

"आपतक कैसे आअूँ ?"

अवधूतजीसे मुनिजीकी कुटियाका अन्तर लगभग २०,२५ डगका होगा। मुनिजीने ज्यों-त्यों कर कुदालसे हिमको काटकर हटाया, तब कहीं द्वार अनावृत हुअे। बाहर निकलकर हिमपर जो पैर रखे तो धँस गये। पाँव जैसे गहरी कीचमें फंस गये हों। जैसे-तैसे करके "अवधूतजी" के पास पहुँचे और अुनके आगें जमी हिम हटाकर अुन्हें मुक्ति दिलायी।

तीन दिन तक हिम निरन्तर बरसता रहा। पीनेका जल भी अग्नि प्रज्ज्वलितकर पीने योग्य बनाना पड़ा, क्योंकि गंगा तक पहुंचनेका मार्ग रुक चुका था। पच्चीस दिन तक यही क्रम रहा।

अिधर सारा वातावरण हिममय हो गया और देखो हिम ही हिम। नीचे पर्वत और धरतीके अूपरका सब कुछ हिममय था। फिर तरल हिम ठोस हो चला, जिसपर अब अच्छी प्रकार पाँव धरकर चला जा सकता था।

फावड़े और कुदालसे पथ निर्माणकर वे दोनों साधक "श्री काली कमली" वालेकी धर्मशालामें पहुँचे। दोनोंने धर्मशालासे गंगा तकका मार्ग ठीक किया। पौषका महीना था, गंगाके दोनों 'कूलों' पर जल जम चुका था। मध्यमें गंगाकी क्षीण धारा बहती थी। थोड़े दिनोंके अन्तरसे हिमपात होता रहा।

साधकोंने अपने अनुभवोंमेंसे अेक स्थलपर बताया—

"हिम गिरनेका समाचार अेक चिड़िया द्वारा प्राप्त हो जाया करता था। माघमें प्रथम बार जब भारी हिम पड़ी अुस समय दो दिन पूर्व नन्हीं-सी चिड़िया चीं-चीं कर चिल्लायी। अुस समय अुसकी चीखका अुद्देश्य हम न जान सके। पर दूसरी बार वह चिड़िया तीव्र स्वरमें चीखी-चिल्लायी। तब यह समझनेमें देर न लगी कि वह तो हिम वर्षाकी सूचना देनेवाली सन्देशवाहिका है। जब-जब वह सचेतक चिड़िया चेतावनी देती तब तक हम सावधान हो जाते और आगामी दिवसोंके लिये गंगाधारसे जल संचितकर सुरक्षित कर लेते।"

"फागुन मासमें हिम और भी तीव्रता और बाहुल्यसे गिरा। अुस समय गंगाधार अेकदम पाषाण-सी प्रतीत हुअी और अिसी मासकी अेक रातको तो वह रात्रिभर गतिरहित रही। प्रातः सूर्यके भली प्रकार निकल आनेपर चाँदीकी पतली रेख-सी बह चली। तब लगभग ८ बजेका समय होगा।"

चैत्रमें नव-रात्रके अेक दिन, अम्बरमें सघन बादल-दल झूम रहे थे। गोधूलीकी बेला थी, अेक भीषण और भारी घोष सुनायी दिया, जिसके विषयमें कुछ भी न जाना जा सका। अुत्सुकता होनेपर भी कुछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोच-समझ न सके। रहस्यका सन्धान न किया जा सका। रात्रिकी नीरवतामें यदाकदा गंगाके प्रवाहसे अुभरते हुअे मधुर स्वर अैसे प्रतीत होते थे जैसे वेद-पाठी अति मधुर कल कंठसे सधे हुअे स्वरोंमें अस्फुट मंत्र पाठ कर रहे हों।"

"माघसे चैत्र तक हर दिशामें हिमका साम्राज्य था। धूनी अहर्निश प्रज्वलित रहती। अकल्पनीय भीषण शीतमें भी कोअी कष्ट प्रतीत नहीं हुआ। हाँ, शारीरिक कष्टसे तो मुक्ति कहां थी। निद्रा तो स्वयमेव बहुत ही कम आती थी। जिसका आना न आना समान था, और हमारे लिये महत्वहीन भी।"

"चैत्रमें हिमके गलनेका दृश्य अनुपम था। श्वेत मुक्त माल सम हिमकण टँगे हुअे वृक्षोंपर भले सुन्दर प्रतीत होते थे। वायुके तीव्र बहाव और सौम्य बिखेरती सूर्यकी प्रथम किरणोंके आगमनके समय तो अुनका सौन्दर्य अंगनाकी अंगड़ाअी जैसा लुभावना रहता था।"

"वैशाखके अुत्तरार्द्धमें बर्फ कुछ हटी और भूमि-परके पत्थर दिखायी देने लगे। मार्गपरसे बर्फ पिघलकर अिधर-अुधर जल रूपमें बह चली और मासके अन्तमें सर्वप्रथम दो महात्मा, दो यात्री तथा दो पंडित गंगोत्री पधारे। गंगोत्री मन्दिरके द्वार श्रद्धा भक्ति सहित खोले गये। छः सात माससे मौन साधता रहा वातावरण मुखरित हुआ। जंगलमें मंगलस्वरूप अिन पुण्यात्मा जनोंके चरणोंसे धरित्री पुनः चर्चित हुअी।

आषाढ़ मासमें गंगोत्रीकी ऋतु ग्रीष्म-सी हो जाती है। यात्रा चलती रहती है, अिस प्रकार गंगोत्रीके वातावरणमें जीवन-जागृतिके चिह्न अुमड़ पड़ते हैं। यात्राके दिनोंमें गंगोत्रीमें अेक दो हलवाअियोंकी दूकानें भी लगने लगती हैं और पहलेसे वातावरण भी भिन्न होता जाता है।"

श्रद्धारिक्त, भावनामुक्त यात्रियोंके कारण गंगोत्रीकी शान्ति शनैः शनैः घटती-सी चली जा रही है। सम्भवतः अिसीलिये कुछ साधक गंगोत्रीसे भी अूपर पहुँचनेकी चेष्टामें हैं। यदि यह बात— धारणा-ध्यान द्वारा प्राप्त हुअी है तो वह निरी कल्पना नहीं कि भविष्यमें गंगोत्री "अुत्तर काशी" बन जायेगी। "अुत्तर काशी" "हृषीकेश" का रूप धारण कर लेगा और "हृषीकेश" को हरिद्वारका रूप धारण करनेमें संकोच न होगा।

पर्वतपर आठ मास तो गंगाकी धारा निर्मल रहती है और चार मास हिम गलनेके कारण मटमैला रेतीला रूप धारण कर अिठलाती है।"

अवधूतजी खंखारकर बोले—

"आप तो जानते ही हैं कि मेरी कुटिया गंगोत्री मन्दिरसे लगभग आध मील अूपर स्थित है; जिसकी रचना गतवर्ष ही की गयी थी। अिस वर्षकी शीत ऋतुमें, मैं अुसीमें रहा।"

"वहाँके शीत ऋतुके बाह्य (शारीरिक) अनुभवोंसे तो आप कुछ परिचित हो चुके हैं। अुन दिनोंकी आत्म-साधनाकी बात भी सुन लीजिये।" वह थोड़े हंसते हुअे बोले।

"गंगोत्री मन्दिरके कपाट बन्द हो जानेपर सभी पथिक प्रस्थान कर जाते हैं और सन्त महात्मा अुत्तर काशी पहुँचते हैं। तब अिस निर्जन हिमस्थानमें चिलचिलाती शीत आ जाती है। गंगा धार शिथिल और क्षीणकाय हो जाती है। कल-कल ध्वनि भी मन्थर-सी हो जाती है। वातावरण अेकदम शान्त और सहमा-सा हो जाता है।"

"समाधि-अवस्थाके लिये शान्त वातावरण ही अुपयुक्त होता है; तब चित्तवृत्तियोंको नियंत्रित करनेमें श्रम प्रतीत नहीं होता।"

जितने भी सज्जन दर्शन देने आये हैं अुनका अेक नया प्रश्न मेरे सम्मुख अधिक जिज्ञासासे आया। सुख और आनन्दकी प्राप्ति कैसे हो? अिस प्रश्नका अेक ही अुत्तर है। यह संसार मृगतृष्णा है। अिससे अिसका कोअी अस्तित्व नहीं। आत्म-दर्शन ही सुख और आनन्दका महान् पंथ है जिसपर चलकर जीवनकी मंगलकामना सफलीभूत हो सकती है। प्राणीके निर्वाण मोक्षकी कल्पना भी सदाके लिये मिल सकती है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यह सत्य है कि सांसारिक पदार्थोंको त्यागकर शारीरिक जीवन अधिक कालतक रक्षित नहीं रह सकता। पर सांसारिक पदार्थ ही तो हमारे लिये ऊँचे अुठनेके लघु अुपकरण और साधन हैं। अुन्हें जीवनका मूलभूत साधन मानना निरा भ्रम है।"

मनकी बात बतानेके अुपरान्त अपनी शीतकालीन मानसिक अवस्थाकी गाथा सुनाते हुअे अुन्होंने कहा :—

"वातावरणमें शान्ति आ जाने, अेकाकी रह जानेपर चित्तमें अेक विचित्र प्रकारकी शान्त भावना प्रकाशित हुअी। मन भय और शंकासे रहित हो चला। तनके वषय और शान्त हो जानेकी चिन्तासे मुक्ति मिली। यहाँ तक कि हिम, ज्वार, तूफानके बुरी तरह अुमड़ आनेपर जब भोजनकी व्यवस्था भी डगमगा चली तब भी क्लेश न हुआ। कअी बार तो मन मृत्युके लिये मचल पड़ा। मृत्युके वे स्वर्णिल विचार सन्त-वाणीकी सात्विक लयमें अिस प्रकार थे :

"जा मरने ते जग डरै, मेरे मन आनन्द।
कब मरिहौं कब पाअिहौं, पूरन परमानन्द॥"—कबीर

शरीरपर शीत और हिमका प्रभाव तो यदा-कदा किसी न किसी रूपमें अनुभव हो ही जाता, था पर मनकी दृढ़ताके कारण घबराहटसे तो मुझसे घृणा हो चुकी थी।"

मैं सहिष्णुताकी अिस चरम सीमापर पहुंच गया था कि द्वन्द्व-साधनामें सफलताने हमारा साथ दिया। हम अब भूख-प्यास, शीत और आधि-व्याधिके भयसे निर्लिप्त थे। आत्मबल पूर्णतः जागृत हो चुका था। अब तो हम थे और हमारे सामने था लक्ष्य। निद्रा देवी तो अुन दिनों हमसे रुष्ट हो गयी थी, पर अुसकी कसर ग्रीष्मकालमें कसकर निकल रही है।"

"आनन्दावस्थामें बुद्धि निर्मल होती है और शरीरमें सत्व गुण प्रधान भावना अूर्जस्वित होती तो ध्यानमें बैठ जाता। योग साधनामें अिसी प्रकार अपनेको अनेक बार लीन पाता। तन्मयताकी अुस अवस्थामें ज्योतिके दर्शन हुअे, जिसका प्रकाश अितना बढ़ा कि बढ़ता ही चला। अैसा लगा कि हममें चेतना समा रही है। वह विकास तथा प्रकाश प्राप्त कर रही है। प्रकाशके मध्यमें अेक कृष्ण (श्याम) बिन्दुको देखा। जिसपर मेरा ध्यान जम गया। ध्यानावस्थाकी स्थितिमें खो गया। और मैं निर्विकल्प समाधिकी स्थितिमें था। अुसके आगेकी.....अुसके आगेकी स्थितिका वर्णन करनेमें असमर्थ हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री खांडेकरकी 'अुल्का'

:श्री नर्मदाप्रसाद खरे:

'अुल्का' मराठीके यशस्वी कथाकार श्री वि. स. खांडेकरके सुप्रसिद्ध अुपन्यासका हिन्दी रूपान्तर है। अिसके रूपान्तरकार हैं श्री प्रभाकर माचवे।

मेरी दृष्टिमें अुपन्यासकारकी सबसे बड़ी सफलता कथा-रसके निर्वाहमें निहित है। जिस अुपन्यासको पाठक अेक बार हाथमें लेकर, समाप्त किये बिना न छोड़े, वही अुपन्यास अुपन्यास है। चुम्बकीय आकर्षण जिस कथामें हो, वही कथा, कथा है। यदि मैं यह कहूँ कि अुल्काको मैं अेक साँसमें पढ़ गया तो कोअी अत्युक्ति न होगी। 'अुल्का'को पढ़कर मुझे कथा-रसका जो आनन्द प्राप्त हुआ, वह बहुत कम अुपन्यासोंमें मिला। शरद और प्रेमचंदके अुपन्यासोंके बाद मैं 'अुल्का' को ही अेक साँसमें पढ़ सका। बहुत कुछ अैसी ही रसानुभूति मुझे भगवतीचरण वर्माके 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते', यशपालके 'मनुष्यका रूप' और अंचलके 'चढ़त धूप' को पढ़कर हुअी थी।

जब कथाकार हमारे जीवनके सुख-दुःख, आशा-निराशा, भय-क्रोध और प्रेम-घृणासे अेक सहज तादात्म्य स्थापित कर लेता है, तब हम अपने-आप कथामें डूब जाते हैं, खो जाते हैं, रम जाते हैं। कथामें तनिक-सी भी अस्वाभाविकता अथवा अतिरंजनाका आभास होते ही सब गुड़ मिट्टी हो जाता है। यह सत्य है कि जीवनकी सच्ची घटनाओंका संकलन मात्र अुपन्यास नहीं हो सकता। यथार्थको कल्पना और कलाका परिधान तो पहनाना ही होगा। यथार्थ और कल्पनाका जो कथाकार जितना स्वाभाविक और सुन्दर समन्वय करता है, वह पाठकोंके हृदयमें अुतना ही गहरा स्थान बना लेता है। 'अुल्का' की कथावस्तु यथार्थ और कल्पनाके युगल-कूलोंको चूमती हुअी, गंगाकी धाराके समान समगतिसे आगे बढ़ती है। अिसीलिये 'अुल्का' हमारे घरकी, हमारे परिवारकी, हमारे पड़ोसकी 'अुल्का' प्रतीत होती है।

कुछ शब्दोंमें 'अुल्का' का परिचय देदूँ। अुल्का अेक मध्यम श्रेणीके परिवारकी नयनतारा है, अेकमात्र संतान है। पिता अेक स्कूलमें साधारण मास्टर हैं। परन्तु वे आदर्शवादसे अनुप्राणित हैं। अुन्हें वाणीका वरदान प्राप्त है– वे अच्छे कवि हैं। अपने आदर्शों और समाज-सुधारकी भावनाओंसे प्रेरित होकर ही अुन्होंने विधवा-विवाह किया था। अिस विधवा-विवाहके बाद ही 'अुल्का' का जन्म हुआ था। 'अुल्का' पर बचपनसे ही पिताके आदर्शों और सुसंस्कारोंका प्रभाव पड़ता है। अिसलिये वह अपने नामके अनुकूल ही कुछ कार्य अपने जीवनमें करना चाहती है। परन्तु अेक निर्धन पिताके घर, अेक विधवा माँकी संतान बननेका अुसे जीवनमें बड़ा भारी मूल्य चुकाना पड़ता है। वह जीवनके अुषाकालमें दो बार दो युवकोंके द्वारा छली जाती है। जीवनके मध्याह्न-कालमें अुसे बाबूराव नामक अेक धनी विधुरकी पत्नी बननेका सौभाग्य प्राप्त होता है! किन्तु यह अुल्काके शरीरका विवाह था— मनसे अब भी वह कुंआरी ही थी। अुसने समता और मानवताका पाठ बचपनसे ही पढ़ा था। बाबूराव अेक गांवके स्वामी थे। धन-वैभव अुनके चरण चूमता था। भला अुनका समता और मानवतासे क्या नाता हो सकता है? अर्थ और विलास ही अुनके देवता थे! अिस विषमताका कोअी हल नहीं था। अैसे कितने विवाह नित्य गा-बजाकर नहीं होते? परन्तु 'अुल्का' को तो अपना नाम सार्थक करना था। अुसने अपने पतिकी अिच्छाके विरुद्ध नमक-कानून-भंग करनेमें हाथ बँटाया। अुसे छः माहकी जेलकी सजा हुअी। अुसकी यह जेल-यात्रा अुसके लिये अभिशाप बन गयी। 'अुल्का' अपने पतिकी आँखोंसे सदाके लिये अुतर गयी। नारीको अेक मात्र खिलौना समझनेवाले बाबूराव अब नित नये खिलौनोंसे खेलने लगे। अपने गाँवकी अेक सुन्दरीपर डोरे डालनेमें ही अुन्हें प्राणोंसे हाथ धोना पड़ा। अुल्क

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पच्चीस वर्षकी कच्ची अुम्रमें विधवा हो गयी। अुसकी गोदमें अेक नन्हीं बच्ची थी। अुल्का समाजके सामने अेक अैसा प्रश्न बनकर खड़ी थी, जिसकी समाजने कोअी व्यवस्था नहीं की है। 'अुल्का' ने अपनी जीवन-कथाके आरम्भमें ही अिसीलिये लिखा है—"सन्त तुकारामके शब्दोंमें मैंने अपना मरना अपनी आँखोंसे देखा है। परन्तु केवल अपना मरण देखकर चुप रहनेकी मेरी आदत नहीं। मरणके बाद पुनर्जन्म होना चाहिये न? मेरे मनकी सारी बेचैनी पुनर्जन्मके पूर्वका गर्भा-वास ही नहीं तो और क्या है?"

लेखकने अुल्काका अैसा करुणा-कलित चरित्र अपने अिस अुपन्यासमें अुपस्थित किया है, जो भुलाये नहीं भूलता। सामाजिक और आर्थिक विषमताओंकी लौह-शृंखलाओंको तोड़नेकी 'अुल्का' मानो अेक चुनौती है। अिस वैषम्यने 'अुल्का' जैसी जाने कितनी नारियोंको नारकीय यातनाओंके अग्नि-कुंडमें झोंक दिया है। अिसका हल श्री. खांडेकरके शब्दोंमें केवल यही है कि "स्त्रीका नव-निर्माण तो तभी होगा, जब सर्वस्पर्शी समताका पुरस्कार करनेवाली सामाजिक क्रान्ति अवतार धारण करेगी।"

श्री खांडेकरको केवल 'अुल्का' के चरित्र-निर्माणमें ही सफलता प्राप्त नहीं हुअी है। अुल्काके पिता भाअूसाहब और अुल्काके बालसहचर चन्द्रकान्तके चरित्र भी हमें आदर्शोंपर मर मिटनेका सन्देश देते हैं। भाअूसाहबके समान पिता और चन्द्रकान्तके समान सच्चे साथीसे ही देश और समाजका नव-निर्माण सम्भव है। भाअूसाहबके चरित्रकी विशेषतापर स्वयं लेखकने अुपन्यासकी पार्श्वभूमिमें प्रकाश डालते हुअे लिखा है—"अिस बातमें कोअी आश्चर्य नहीं कि जिस समाजमें भगवान मानकर रुपयोंकी अर्चना की जाती है, अुसी समाजमें आदर्शवादीके सिरपर पत्थरोंकी ही वर्षा होती है। अिस करुणोदात्त कल्पनासे मैं कअी वर्ष पूर्व प्रभावित हो चुका था और अिसीसे महाराष्ट्रमें तिलक तथा आगरकरके द्वारा समाज-सेवाके लिये स्फूर्ति प्राप्त जो पीढी थी, अुसमेंके प्रामाणिक कार्यकर्ताकी मनोव्यथाका चित्रण भाअूसाहबके चरित्र द्वारा अंकित करनेकी चेष्टा मैंने की।" अिसी प्रकार चन्द्रकान्त भी समता और मानवताकी देशमें प्राण-प्रतिष्ठा करनेका बीड़ा अुठाकर ही अेक क्रान्तिदूतके समान जीवनके कर्मक्षेत्रमें अुतरता है। अेक पुरोहितके घर जन्म लेकर, गरीबीकी गोदमें पलनेवाला चन्द्रकान्त बचपनमें ही जीवनसे हताश होकर समुद्रमें डूबकर अपने प्राण-विसर्जन करने जाता है। भाग्यसे अुसी समय भाअूसाहब 'अुल्का' को घुमाने समुद्र तटपर ले आते हैं। वही अुसे मरनेसे बचाते हैं। भाअूसाहबकी स्नेह-छायामें 'अुल्का' और चन्द्रकान्त खेलने-पढ़ने लगते हैं। चन्द्रकान्त और 'अुल्का' में बड़ी घनिष्ठता हो गयी। चन्द्रकान्तके पिता नहीं थे। वह अपनी माँके साथ अपने मामाके यहाँ रहता था। अुसके मामा अेक भोजनालय चलाते थे। अिसलिये चन्द्रकान्त ब्राह्मण होते हुअे भी समाजमें हीन समझा जाता था। चौथी अंग्रेजीके बाद चन्द्रकान्तने स्कूल छोड़ दिया। वह खद्दर पहनकर देश-सेवामें जुट गया। अुसी समय अुसने भाअूसाहबको अेक पत्रमें लिखा था—"मेरी मृत्यु जेलमें है, ऐसा जान पड़ता है। मां पर गुस्सा होकर मैं समुद्रमें प्राण देने गया, अुस वक्त आपने ही मुझे बचाया, परन्तु अब मुलशीके अिस धरणमें मैं अपनी जानकी बाजी लगाअूंगा। गरीब किसानोंके लिये, कंगाल अिसानोंके वास्ते—यह आन्दोलन है। मेरी कुर्बानीसे यदि देशकी कुछ भलाअी हुअी तो यह सब आपकी कृपाका फल होगा। आपसे अुस रोज समुद्र-किनारे मुलाकात न हुअी होती तो.....।" अिस प्रकार चन्द्रकान्तका क्रान्तिकारी जीवन प्रारम्भ होता है। मुलशी-आन्दोलनमें अुसे छः माहकी सजा होती है। वहाँसे लौटकर वह मराठी पढ़ानेके लिये शान्ति-निकेतन बुलाया जाता है। फिर वह बंगालके क्रान्तिकारीदलमें सम्मिलित होता है। अेक अँग्रेज आफिसरके षड्यन्त्रमें फँसकर अुसे भागना पड़ता है। वह बम्बअी पहुँचकर गुप्त वेषमें मजदूर बनकर अेक मिलमें काम करता है। अन्तमें पकड़ा जाता है। बारह वर्षकी कठोर सजा अुसे होती है। परन्तु पत्र-व्यवहार द्वारा अुसका अुल्कासे बराबर सम्पर्क बना रहता है। वह अुल्काको अपने पत्रोंमें सर्वस्पर्शी समताकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थापनाकी प्रेरणा देता रहता है। वह मन-ही-मन अुल्काको प्यार करता है। परन्तु अुसने प्यारको कभी फूटने नहीं दिया, क्योंकि वह जानता था कि अुसे 'अुल्का' अिस जीवनमें कभी प्राप्त नहीं हो सकती। अिसलिये अुसने कभी भूलकर भी अपनी आसक्ति अथवा दुर्बलताको प्रकट नहीं होने दिया। अुल्काके स्नेहमें मोम-दीप-सा जलता-घुलता रहा और अपने हृदयके अडिग-अकम्प प्रेमके आलोकसे अुल्काको सदा सत्पथ दिखाता रहा।

अिस प्रकार सर्वस्पर्शी समता और मानवताका महान् संदेश ही खांडेकरके अिस अुपन्याससे पाठकोंको मिलता है। केवल कथा-विलासके लिये अिस अुपन्यासकी रचना नहीं हुअी। लेखकने अुपन्यासके घटना-चक्रमें आर्थिक और सामाजिक विषमताका अैसे सुन्दर ढंगसे गुम्फन किया है कि प्रत्येक घटना आपबीती-सी लगती है और प्रत्येक पात्र परिचित ज्ञात होता है। अनुभूतिके साथ कलाका अैसा सुन्दर सामंजस्य विरले लेखक ही कर पाते हैं। खांडेकरजीने स्पष्ट शब्दोंमें स्वीकार किया है कि वे राजनीतिक अुपन्यासकार नहीं; फिर भी 'अुल्का' अेक सफल राजनीतिक अुपन्यास है। अिस सफलताका मुख्य कारण यही है कि लेखकने आत्मानुभूतिको रसानुभूतिका सुन्दर वासन्ती परिधान पहिना दिया है—कलाकी कायामें अनुभूतिके प्राणोंकी प्रतिष्ठा की है। वह किसी 'वाद' अथवा प्रचारके चक्करमें नहीं पड़ा। अिस बातको लेखकने स्वीकार करते हुअे अुपन्यासके प्रारम्भमें लिखा है—किसी तरहके 'वाद' का अभिनिवेशके साथ प्रचार करनेकी प्रवृत्ति और अुसके लिये आवश्यक पांडित्य, अिन दोनों चीजोंमेंसे अेक भी, सौभाग्यसे मुझे प्राप्त नहीं है। अिसे मैं स्वीकार करता हूँ कि अनुभूति कलाकी जन्मदात्री—माता है, लेकिन अनुभूतिका अर्थ कोरा प्रचार नहीं होता। अनुभूति अन्तर्मुख होती है और प्रचार बहिर्मुख। और यही कारण है कि 'अुल्का' कथावस्तु, कथा-निर्वाह और कथा-रस— सभी दृष्टियोंसे अेक अुत्कृष्ट अुपन्यास है। हम खांडेकरजीके अिस अुपन्यासके हिन्दी रूपान्तरका हृदयसे स्वागत करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुबहसे पहले जीनेकी अभिलाषा

उर्दू : श्री मज़हर इमाम :

शामे वामादा[1] की आर्जुदा[2] खिज़ां[3]-सामानो
अपनी खूंगश्ता[4] तमन्नाओंका अंबार लिये
चुपके चुपके मेरे गमखानेमें दर आयी है।
दश्ते[5]-वीरांमें अुतरने लगे जुलमत[6]के अकाब[7]।
हो गयी बारे[8]-खामोशीसे फिज़ायें बोझिल
शमां खामोश है तारीक[9] है अैवाने[10] हयात
दुखसे भरपूर है शोरीदा[11] जवानीका अयाग[12]।
अपने चेहरेप फिसाने है गिरांबारी[13] के
मरकदे[14] चश्ममें है सोख्ता आंसू मदफूं[15]।
कल्बे[16] मजरूह[17], गमे वक्तका गहवारा[18] है।
मौजे तूफाने हवादिस[19] के तमाचे खाता,
जीये जाता हूँ कि जीनेकी भी पाबन्दी है।

× × ×

मेरी ही तरह सिसकती हुअी रूहोंका हुजूम,
जिये जाता है कि मरना भी नहीं है बस में।
कहीं शिकवा है रेवायात[20] की दीवारोंका।
चीरा[21]-दस्तीये मजाहेबकी शिकायत है कहीं।
खुश्क[22]-साली है कहीं और कहीं बेकारी।
कहीं अमराज[23] की भट्टी में सुलगते हुअे जिस्म।
कहीं अनफास[24] के होठोंपर सिसकते नगमे।[25]
मुंजमिद[26] है कहीं अेहसासकी पलके प लहू।
कहीं तपते हुअे, जलते हुअे लब नौहा[27]-कनां।
तिश्नगी[28] अपनी किसी लबसे बुझानेके लिये।
कहीं नाकाम तमन्नाअें दरीदा[29] दामन
अपनी तिफलाना[30] खताओं की सजा पाअी हुअी।

हिन्दी : हर्षनाद :

अुदास और बोझिल संध्या अपनी असफल अेवं अपूर्ण कामनाओंका ढेर लिये मेरे दुखसे भरे वातावरणमें समा गयी है। सुनसान मैदानमें अँधेरेके गिद्ध धरतीपर अुतरने लगे हैं। वातावरण जैसे अेकान्त नीरवताके बोझसे और भी बोझिल हो अुठा हो। चिराग़ गुल है और जिन्दगीका महल अंधेरेमें डूबा हुआ है। परेशान जवानीका प्याला दुःखसे भरा हुआ है। मेरे चेहरेपर थकावट और परेशानीकी कहानियाँ जैसे स्पष्ट हो अुठी हों। मेरी आंखों रूपी कब्रमें मेरे सूखे हुअे आंसू जैसे अतृप्त अभिलाषाओंकी याद लिये दफन हो चुके हैं। मेरा ज़ख्मी हृदय समयके गमका झूला है, जमानेका दुःख दर्द जैसे मेरे हृदयपर अपना अधिकार जमाये हों। मुसीबतोंके तूफानकी लहरोंके थपेड़े खा-खाकर भी मैं जिन्दा हूं, क्योंकि जीवित रहनेकी अनिवार्यता है।

मेरी ही तरह दुःख और परेशानियोंके थपेड़ोंको बरदाश्त करते हुअे अनेक आत्मायें जी रही हैं, क्योंकि मृत्यु अुनके बसकी बात नहीं। कहीं कोअी परम्पराओंकी दीवारमें जकड़ा हुआ है। कहीं जीवनके मार्गमें धर्म आ खड़ा हुआ है। कहीं अकाल है और कहीं बेकारी। कहीं रोगोंकी भट्टीमें मनुष्योंका शरीर झुलस रहा है। कहीं श्वासोंके ओठोंपर जैसे गीत सिसक रहे हैं। कहीं भावनाओंकी पलकोंपर लहू जमा हुआ है। कहीं जलते हुअे ओठ फरियाद कर रहे हैं, ताकि अपनी प्यास किसीके होठोंसे लगकर बुझा सकें।

---

१. थकी हुअी। २. ग़मगीन। ३. पतझरकी तरह। ४. नष्ट हुअी। ५. मैदान। ६. अंधेरा। ७. गिद्ध। ८. बोझ। ९. अंधेरा। १०. महल। ११. परेशान। १२. प्याला। १३. थकावट। १४. कब्र। १५ दफ़न किये हुअे। १६. दिल। १७. घायल। १८. झूला। १९. मुसीबतें। २०. परम्परा। २१ हस्तक्षेप। २२. अकाल। २३. बीमारियाँ। २४. श्वासों। २५. गीत। २६. जमा हुआ। २७. फरियाद करते हुअे। २८. प्यासा। २९. फटा हुआ। ३०. बचकाना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और ज़रोसीम की नागन सी ये जंजीरें गिरां
मुजमहिल[३१] आहो, थकी सांसोंका सैलाब[३२] लिये
दिले अय्याम को डसती ही चली जाती है।

× × ×

बात सच ही सही, अज्मे[३३] जवांसाल[३४] तो है।
दिलमें शोले न सही, अेक शरर[३५] काफी है।
य जो चाहे तो य माहोल बदल सकता है।
ख्वाब ताबीर[३६] के सांचेमें भी ढल सकता है।

कहीं अपूर्ण कामनाओंका दामन अपनी बच्चोंकीसी मासूम गलतीकी सजा पाकर फट चुका है। कहीं दुःखसे भरी आहों और थकी श्वासोंकी बाढ़ लिये समयके दिलको, सोने और चांदीकी नागिन रूपी जंजीर, डसती चली जा रही है।

यह बात सच है। किन्तु (मेरे हृदयमें अिस जिन्दगीकी रक्षा करनेके लिये) यौवनकी दुर्दान्त दृढ़ अिच्छा शक्ति है। मेरे हृदयमें धधकती ज्वाला भले न हो, किन्तु अेक छोटी चिंगारी भी यथेष्ट है। वह चाहे तो वातावरण बदल सकती है और यह स्वप्न वास्तविकतामें परिवर्तित हो सकता है।

---

३१. थका हुआ। ३२. बाढ़। ३३. दृढ़ अिच्छा। ३४. जवानीकी। ३५. चिंगारी। ३६. वास्तविकता।

कवि

: श्री महेन्द्र भटनागर, अेम. अे. :

युग बदलेगा कविके प्राणोंके स्वरसे,
प्रतिध्वनि आयेगी अुस स्वरकी घर-घरसे।
कविका स्वर सामूहिक जनताका स्वर है,
अुसकी वाणी आकर्षक और निडर है!
जिससे दृढ़ राज्य पलट जाया करते हैं,
शोषक, अन्यायी भय खाया करते हैं,
अुसके आवाहनपर, नत शोषित पीड़ित,
नूतन बल धारण कर होते अेकत्रित!
जो आकाश हिला देते हुंकारोंसे,
दुःख-दुर्ग ढहा देते तीव्र-प्रहारोंसे
कविके पीछे अितिहास सदा चलता है,
ज्वालामें रविसे बढ़कर कवि जलता है!

कवि निर्मम युग-संघर्षोंमें जीता है,
कवि है जो शिवसे बढ़कर विष पीता है!!
अुर-अुरमें जो भाव-लहरियोंकी धड़कन,
मूक प्रतीक्षारत प्रिय भटकी गति बन-बन,
स्नेह भरा जो आंखोंमें मांकी निश्छल,
लहराया करता कविके दिलमें प्रतिपल!
खेतोंमें जो बिरहा गाया करता है,
या कि मिलनका गीत सुनाया करता है,
अुसके भीतर छिपा हुआ है कविका मन!
कवि है जो पाषाणोंमें भरता जीवन!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आँसूकी अेक बूँद

: श्री "नाडोडी" :

अुस दिन भारती-दिवस मनाया जा रहा था।

"तण्णीर विट्टो वळर्त्तोम्, सर्वेशा
अिप्पयीरैक् कण्णीरार् कात्तोम्।"

अर्थात् "हे अीश्वर ! क्या हमने यह पौधा पानी देकर बड़ा किया ? क्या हमने अपने आँसू सींचकर अिसकी परवरिश की ?"

भारतीके अिस अुपरोक्त गीतको कोअी विद्यार्थी अैसी गद्गद् तड़पनके साथ गा रहा था कि सुनकर पत्थर भी पानी-पानी हो जाय। भला हुआ कि वह मकान पत्थरका नहीं था, सीमेन्ट-कान्क्रीटका बना था और पानी-पानी होकर बहनेसे बाल-बाल बच गया तथा गिरकर भूमिसात् होनेसे भी अुसकी सुरक्षा हो सकी। लेकिन सच तो यह है कि गीत गानेवाले अुस विद्यार्थीकी आँखोंसे कहनेतकको भी आँसूकी अेक बूँद नहीं छलकी।

लेकिन अिसके लिये अुसको किसी प्रकार दोष नहीं दिया जा सकता। अुसने अपनी आँखोंमें अेक बूँद आँसू लानेका अिस क़दर कड़ा परिश्रम किया कि क्या कहा जाय ? अुसके वे सारेके सारे प्रयत्न निरर्थक साबित हुअे। अुसके मनमें यह धारणा कर गयी थी कि आँखोंकी कोरमें कमसे कम अेक बूँद आँसू आकर जमा हो जाय, तभी लोगोंको यह विश्वास होगा कि अिसने जो गाया, भावके समुन्दरमें गोता खाकर गाया। 'कण्णीर' अर्थात् 'आँसू' के शब्दपर अुसने अितने अुतार-चढ़ाव और आरोहण-अवरोहण दिये कि सुननेवाले दंग रह जायं, 'वाह, वाह' कर अुठें; और मुँह बाकर निश्चल बैठ जायं। अूहूँ ! तब भी वह बेमुरव्वत आँसूकी अेक बूँद भी अुसकी मददके लिये दौड़ी हुअी नहीं आयी। अुस बेरहम आँसूने यह भी नहीं सोचा कि गायककी मान-रक्षा ज़रूर करनी चाहिअे।

विद्यार्थीने सोचा कि भारत परतन्त्रताके बन्धनमें जकड़ा हुआ है और अनेक कष्टोंके बीचसे गुज़र रहा है। अुन कष्टोंका हम अपने मनःचक्षु द्वारा दर्शन करें और आर्द्र-मन होकर गीतको गायें तो हो सकता है कि आँसू आ जायं। अिसलिये अुसने बन्दरकी नायीं आँखें बन्द कीं, खोलीं; बन्द कीं, खोलीं। अूहूँ ! तब भी आँसूकी अेक बूँद आँखोंकी कोरमें नहीं झलकी !

तब अुसके ख्यालमें आया कि अिन गुलाम हिन्दुस्तानियोंको देखकर गानेसे कुछ नहीं होनेका। अूपर लटकती बिजलीकी बत्तीको देखकर गायें तो रुपयेमें पन्द्रह आना सम्भव है आँसू आ जायं। अिसलिये आँखें अूंची करके बिजलीकी बत्तियोंको देखते हुअे गाने लगा। पर फ़ायदा कुछ नहीं हुआ तो सामनेके खंभोंपर दृष्टि गड़ाये हुअे गाना गाया। तब भी कोअी नतीजा नहीं निकला। फिर नीची नजर करके जमीनकी ओर देखते हुअे गाया। अुसका भी कोअी फल नहीं निकला।

विद्यार्थीकी समझमें ही नहीं आया कि क्या किया जाय ? दूसरे ही क्षण अुसके मनके आकाशमें यह विचार बिजलीकी तरह कौंध गया कि हम अपनी दिवंगत प्यारी बूढ़ी दादीकी याद करें और घुलघुलकर गायें तो सौ फी सदी मुमकिन है कि आंसू आ जायं। अुसने अपने अुस विचारको पंचवर्षीय आयोजन नहीं बनाया, तुरन्त ही कार्यान्वित भी कर दिया। लेकिन अुससे फ़ायदा हो, तब न ? तुम दादीकी याद करो, या दादीकी दादी अथवा अुसकी परदादीकी याद क्यों न करो, मैं तुम्हारी मददके लिये आनेको तैयार ही नहीं हूँ— अिस प्रकार आँसूने कट्टर सत्याग्रहीकी भांति धरना देना शुरू कर दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिसे देखनेपर मुझे अैसी कितनी ही घटनाअें याद हो आयीं, जिनके कारण मुझे बड़ी-बड़ी मुसीबतें झेलनी पड़ी हैं।

न जाने क्यों, मैं भी तबसे देखता आ रहा हूँ, जबसे मेरी स्मरण-शक्ति जागरूक बनी है। जब-जब आँसू बहानेके मौके आये तब-तब मेरी आंखोंमें आँसूकी अेक बूंद तक नहीं ढुलकी! आंसू बहानेके मेरे सारेके सारे प्रयत्न निष्फल ही रहे।

जहाँ तक मेरा ज्ञान जाता है, मैं यही कहूँगा कि अिस निगोड़े आँसूमें अेक अैब है कि यह अेक तरफ़ा अिन्साफ़ ही बरतता है! स्त्रियोंको देखनेपर अुनका हुक्म मर्द ही सर-आखों बजा लाते हैं या अुनके पीछे-पीछे बेवकूफीका आलम साथ लिये, अुनका दामन पकड़कर जाते हैं– यह बात नहीं; यह आँसू भी अैसी ही चीज़ है। सच पूछा जाय तो अुन मर्दोंसे भी कअी क़दम आगे है। आँसूकी करतूत देखिये। अगर कहीं स्त्रियाँ बुलायें, चाहे वे बेमतलब ही क्यों न बुलायें, "आया, बाअीजी," आवाज देते हुअे आनेवाले आज्ञाकारी नौकरकी तरह आँखोंके द्वारपर आकर झांककर देखता है। अगर कोअी पुरुष बुलाये, चाहे वह कितना ही जरूरी काम ही क्यों न हो, सिर निकालने या हिलने तकका नाम नहीं लेता, अैसा पक्षपाती जीव आपने कहीं देखा है?

दैहिक तत्वके जानकार विशेषज्ञोंका कहना है कि आँसूके आधार भूत 'लैग्रिमल ग्लैंड्स्' स्त्रियों और पुरुषोंमें भगवानने बराबर-बराबर ही बनाये हैं।

छुटपनमें मेरी और मेरी छोटी बहन पारूकी यह आदत रही कि हम दोनों मिलकर कोअी भी खेल खेला करते। बच्चे मिलकर खेलें तो बिना झगड़ा-फिसाद अुठे, कैसे रहे? बिला किसी वजहके, पारू मुझे पीट देती। क्या मैं अुससे कुछ कम था? अतः, जितनी मारें खायीं, अुन्हें हाथोंहाथ मय सूदके वापस भी कर दिया करता था!

मेरे हाथों पिटनेपर पारू चीखती चिल्लाती है, बिलखती है या हाय-हाय मारकर रोती है अथवा चुप्पी साध लेती है– यह तो अिस बातपर निर्भर है कि पासमें माता-पिता हैं या नहीं! पासमें अगर माँ-बापमेंसे कोअी हो तो पारू अिस क़दर रोने लग जाती कि किसी बिच्छूने जैसे जोरसे डंक मार दिया हो।

यदि माँ-बापमेंसे कोअी पास न हो तो रोनेका नाम न लेती। चाहे अिसे मार खाये, अेक घंटेसे अूपर ही क्यों न हो गया हो, माँ या बापको देखते ही अिस क़दर जोरसे रोने लग जाती जैसे अभी-अभी अुसने जोरके तमाचे खाये हों। तिसपर विशेषता यह है कि पारूकी पिटाअी मेरी मारसे दुगुनी तिगुनी वजनदार व जोरदार होती। अितना कुछ होनेपर भी मेरे नेत्रोंसे अेक भी बूंद आँसूकी नहीं निकलती। क्या करूँ?

पारू रोती और मैं न रोता तो माँ-बाप समझते कि कसूर अिसीका है और आपसमें तय करके अेक-तरफ़ा फैसला सुना देते कि अपराधी मैं ही हूँ। पारूके पक्षमें होकर अुसे लाड़प्यारसे चुमकारते-पुचकारते और मेरी खूब फ़जीहत व पिटाअी भी होती थी।

केवल घरमें ही यह बात है, सो नहीं; मदरसेमें भी यही बात है। मेरे हिसाब-किताब (गणित)के अध्यापक शायद पिछले जन्ममें हो सकता है **नाट्टुक्कोट्टैके चेट्टियार** रहे हों। नाट्टुक्कोट्टै चेट्टियार बड़े ही किफ़ायतशार व पैसे-पैसेका हिसाब रखनेवाले हुआ करते हैं। अधिकतर अिनका पेशा लेन-देनका होता है। वे अैसे ही हिसाब हल करनेको दिया करते थे कि अमुक रुपयोंको अमुक महीनोंके लिये अमुक सूदपर देते तो कितना सूद मिलता या मय सूदके, पूंजी कितनी होती? पर मैं क्या करूँ? वह निगोड़ा सूदका हिसाब करना मुझे आता ही नहीं था।

न आया तो अब मेरा कौनसा नुकसान हो गया? अब क्या मैं किसी बैंकमें गुमाश्तागीरी कर रहा हूँ? या पैसा तिजोरीमें रखते हुअे अिस विचारमें पड़ा हूँ कि किसको पैसा ब्याजमें दूँ?

लेकिन मेरे हिसाबके मास्टरको अुस समय क्या मालूम था कि पीछे चलकर सूदका यह हिसाब मेरे किसी काम आनेका नहीं है। अतः हिसाब ठीक न लगा सकनेके कारण मास्टर अपनी छड़ीसे मेरी अैसी पूजा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते कि अब भी याद करता हूँ तो छठीका दूध याद आ जाता है; हड्डी-पसलियाँ चकनाचूर सी हो जाती हैं। पिटनेपर दर्द करता ही है न ? दर्द करता है—यह दर्शानेके लिये मैं रोनी सूरत बनाता और रोनेका भी अुपक्रम करता। लेकिन मेरी आंखोंसे अेक भी बूंद आँसूकी न बहती देखकर अध्यापक अिस ग़लतफ़हमीमें पड़ जाते थे कि अुनकी छड़ीकी मारसे मुझे दर्द ही नहीं हुआ, और पूरे जोर-शोरसे अपनी छड़ीसे मेरी पूजा करने मुझपर टूट पड़ते।

मैं तो यह कहूँगा कि ये आँसू केवल पक्षपाती ही नहीं, बल्कि बड़ी ही व्यवस्थाहीन तथा आवारा वस्तु भी हैं। क्योंकि मनस्तत्वके आचार्योंका कहना है कि आंसू सिर्फ गमीके वक्त ही नहीं, खुशीके वक्त भी आँखोंमें लहराने लगते हैं।

अैसा भी कभी नहीं हुआ। ग़मीके वक्त आँसूने मेरी मदद करनेकी कोशिश नहीं की। ग़मीके वक्तको छोड़ दिया जाय तो भी खुशीके वक्त अुनको मेरी मददके लिये दौड़ आना चाहिये था न ? अिस आँसूने तब भी बड़ी लम्बी चुप्पी साध ली। आड़े वक्तमें सहायताके लिये आये ही नहीं। ग़मी-खुशी दोनों वक्तोंपर मैंने बहुत पाससे अुसे देख लिया। पर अुनके कानोंमें जूँ तक नहीं रेंगी।

मेरी शादीके वक्त बहुत खुश कौन होता ? मैं ही न ? चाहे खश न रहूँ तो भी कमसे कम दिखावेके लिये तो मुझे खुश रहनेका स्वांग रचना चाहिये न ? अिसलिये मैं खुशीके आँसू बहानेके लिये अैसा भगीरथ प्रयत्न कर रहा था; अैसा भगीरथ प्रयत्न कर रहा था कि क्या कहा जाय ? पर आँसूकी अेक बूँदतक मेरी आँखोंमें झलकीतक नहीं। ठीक अुसी वक्त मेरी सास घड़ों खुशीके आँसू बहा रही थी कि मैं देखकर दंग रह गया। ज़रा कल्पना कीजिये तो कि अुस वक्तकी मेरी दशा कैसी हुअी होगी ? सासकी बात छोड़िये। क्योंकि हो सकता है कि अुसके दिलके समुन्दरमें खुशीका अैसा ज्वार अुठा होगा कि लहर दो बूँदें आँसू बनकर आँखोंमें थिरकने लगी हो। अुसको अिस बातकी अवश्य खुशी हुअी होगी कि अुसकी बुद्धू बिटिया...[हाय, हाय ! हे सरसू मुझपर टूट न पड़ना। यों महज़ खेल-तमाशेके लिये लेखमें अैसा लिख रहा हूँ। मुझे तो अच्छी तरह मालूम है कि तुम जैसी कुशाग्र-बुद्धिवाली चीज़ अिस दुनियामें कोअी नहीं।]...अुसकी बुद्धू बिटियासे शादी करनेके लिये कोअी बुद्धू दामाद तो मिल गया ! लेकिन सासकी देखा-देखी दूसरी स्त्रियाँ आँसूकी अैसी वर्षा करने लगी कि बेचारी सासको भी मुंहकी खानी पड़ी। यह सारा-का-सारा दृश्य देखकर मेरा हृदय कैसा करता रहा—अिसे शब्दोंमें रखनेका ताव मुझमें बिलकुल नहीं।

जहाँ अिस प्रकारके साधारण आँसू बहानेमें ही अितनी सारी तकलीफोंका सामना करना पड़ रहा है, वहाँ लोग कहते हैं कि कुछ लोग अैसे भी थे – थे ही नहीं, अब भी हैं, जो देशकी दशापर जार-जार होकर खूनके आँसू बहाते हैं और बहाये भी हैं। जब कभी मैं अिस बातकी कल्पना करता हूँ तो मेरा सिर चकरा जाता है और गश-सा आने लगता है। मेरी समझ ही में नहीं आता कि वे लोग अैसे कैसा करते होंगे। न जाने, भगवान भी जानता है कि नहीं ?

मनस्तत्वके बालकी खाल खींचनेवाले विश्लेषणके विशेषज्ञोंका कहना है कि अिच्छा करने मात्रसे कोअी आँसू नहीं बहा सकता। कोअी दुःख या सुख हो तभी आँसू बहाया जा सकता है। मैं भूलता नहीं हूँ, तो कहूँगा कि अिन लोगोंने मेरी धर्मपत्नी सरसू याने सरस्वतीको नहीं देखा। अगर देखा होता; तो अैसे नतीजेपर पहुँचते ही नहीं और यह बात मुंहमें लाते भी नहीं।

क्योंकि मेरा जहाँ तक ज्ञान है और सरसूके साथ नाता जुड़ा है, मैं यही कहूँगा कि सरसू अपने मनोगत भावोंको मुझे बतलानेके लिये अपने आँसूओंको ही भाषाके रूपमें व्यवहार करती है। यह मेरी अनुभवगम्य बात है, अिसलिये कोअी मेरी ओर अंगुली-निर्देश नहीं कर सकता। मैं तो यहाँ तक कहनेके लिये तैयार हूँ कि घर-घरकी यही दशा है।

दुनिया भरकी स्त्रियाँ रीति-रिवाज, रहन-सहन, हाव-भावमें, चाहे हजार विभिन्न रहें, फिर भी भाषाके विषयमें अभिन्न हैं। संसारकी समस्त स्त्रियोंकी अपनी अलग भाषा है; अपनी अलग संस्कृति है। सभी स्त्रियाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिस आँसूकी भाषाकी कुशल जानकार हैं– अिसमें जरा भी सन्देह नहीं।

अिंगलिस्तानकी अनिंद्य सुन्दरी मेरी अपने आशिक जार्जसे प्रेमालाप करती है, अिसी अश्रु-भाषामें।

चीनकी चित्ताकर्षक सुन्दरी चिङ् चाङ् अपने चित्तचोर चाङ् चुङ्चू के साथ बोलती है, अिसी अश्रु-भाषामें।

अेथियोपियाकी हसीन परी मडिस मबाबा अपने दिलके राजा माअिली मलासीके साथ अिश्कके चार बोल बोलती है, अिसी अश्रुभाषामें।

अितना सब कुछ होनेपर भी प्रतीत होता है कि अब तक किसी पुरुषने यह भाषा नहीं सीखी। जब अितने अरसेके बाद भी कोअी पुरुष अश्रु-भाषाका अेक भी शब्द नहीं सीख पाया तो हमें मजबूरन कहना पड़ता है कि पुरुष शायद सीख ही नहीं सकेगा।

जबसे शादी हुअी, तबसे सरसू मेरे साथ हर रोज अिसी भाषामें बोला करती है। फिर भी मैं अब तक यह भाषा नहीं समझ पाया हूँ, जिसकी वजहसे मुझे अनगिनत तकलीफोंका सामना करना पड़ रहा है। भाषा समझमें न आनेके कारण अिस कदर परेशान भी रहा हूँ कि सरसू क्यों अिस तरह बिना कारण फिजूलके आँसू बहाकर अपने आँसूकोशका अपव्यय कर रही है। पर क्या किया जाय, मेरी आँखोंसे परेशानीके चार आँसू तक नहीं निकले।

किसीने बड़ी खोज-खबर और छिद्रान्वेषणके बाद हिसाब लगाकर बताया कि आँसूमें नमककी मात्रा अिस हदतक है और पानीकी मात्रा अमुक हदतक। अुस छिद्रान्वेषककी ये बातें पढ़कर कोअी नातजुर्बेकार और अज्ञानी-जन यह सवाल कर सकता है कि अिस खारे पानीको देखकर हम डरें क्यों?

अैसे सवाल करनेवाले, अपनी-अपनी देवियोंकी आँखोंसे आँसू बहते देखकर निश्चल तथा निष्कंप रहें तो मैं मानूंगा कि ये भी पुरुष हैं; अिनके हृदय पत्थरसे नहीं, पत्थरसे भी कट्ठोर धातुसे बने हैं।

यह मसल मशहूर है कि गरीबोंके नेत्रोंसे बहनेवाले आँसू तेज धारवाली तलवारसे रत्ती भर कम नहीं हैं। लेकिन मुझसे पूछिये तो मैं कहूँगा कि सरसूके आँसूसे बढ़कर तेज खूनी तलवार कोअी अिस दुनियामें होही नहीं सकती। यह भी कहूँगा कि पहले न थी, न अब है और न आगे होगी।

अिस तलवारको काममें लानेके विषयमें भी सरसू अपना अलग रास्ता अख्तियार करती है। अिसे वह अैसी खूबीके साथ काममें लाती है कि जिस चीजके लिये जितना चाहिये, अुससे अेक बूँद कम या ज्यादा वह आँसू नहीं बहाती। अिसलिये मैं सोचता हूँ कि अुसने अपने मनमें अिसके लिये अेक अलग ही माप-दंड तैयार कर रखा है। अितने दिनोंके सहवासके बाद क्या मैं अितना नहीं समझ सकूँगा?

सरसू अेक बूँद, दो बूँद, तीन बूँद करके जब अेक हिसाबसे आँसू बहाती है तो अुसे देखकर मुझे कभी-कभी अैसा प्रतीत होता है कि शायद हो सकता है कि सरसूने आँसू बहानेके लिये निम्नलिखित ढंगसे कोअी सूची तैयार कर रखी हो:—

सिनेमा जाना हो तो आँसूकी अेक बूंद।
जाकेट खरीदना हो तो आँसूकी दो बूंदें।
साड़ी खरीदनी हो तो आँसूकी तीन बूंदें।
गहने खरीदने हों तो आँसूकी चार बूंदें।
मायके जाना हो तो आँसूकी दस बूंदें।

क्या कहूँ? तीन महीनेकी मेरी बिटिया अनुराधा भी अपनी माँका अनुकरण करके आँसू बहाकर रोने लग गयी है। अपना कोअी काम कराना हो तो अुसने ठान लिया है कि झट रोना शुरू कर दे, काम पूरा हो ही जायेगा। लेकिन अुसकी माँगें और अुसमें अितना अंतर है। वह माँकी तरह आँसू बहानेमें किफायतशारी नहीं करती; घड़ों आँसू बहाने लग जाती है। पर अिसमें जरा भी शक नहीं कि वाकअी वह माँकी बिटिया निकलेगी।

यह सारा दृश्य देखकर, जरा दूरकी सोचने लगता हूँ तो मेरा शिरकंपन होता है कि अिसके लिये जो दामाद कहीं पैदा होकर बढ़ रहा है, अिसके हाथमें पड़नेपर अुसकी कैसी गति होगी। अुसको अपनी हमदर्दी दर्शानेके लिये अभी मैं अेक बूँद आँसू बहानेको तैयार हूँ। पर आँसू आये, तभी न?

[मूल तमिळसे– अनुवादक:–श्री. रा. वीलिनाथन्]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय लोक-नाट्य

: श्री प्रा. रामचरण महेन्द्र, अम. अे. :

मनोवैज्ञानिक दृष्टिसे, मानव आत्माभिव्यंजन करनेवाला प्राणी है। अुसके अन्तस्तलमें सागरकी अुत्ताल तरंगोंकी भाँति जिन सूक्ष्म अुमंगों, भावनाओं तथा कटु-मृदु अनुभूतियोंका आवर्त्तन चलता रहता है, वह अुस भावोद्वेगको नृत्य, संगीत, कायिक हलचल, मुखके विभिन्न हावभावों, अंग प्रत्यगोंके तोड़-मरोड़ तथा आन्तरिक-भाव विन्यासके अनुसार गतिशील अभिनयके द्वारा व्यक्त करता है। बिना क्रियाओं, मुख-मुद्राओं या कायिक अभिनयके अुसे परितुष्टि नहीं होती। जब हम किसी मर्मस्पर्शी घटनाका वर्णन करते-करते शब्दोंको अभिव्यक्तिके लिये अपूर्ण पाते हैं, तो स्वभावतः हाथोंसे स्थितिको अभिनय द्वारा प्रकट कर देते हैं।[१] आदि निवासी नाच अुठते हैं; भावुक और कलात्मक रुचिके व्यक्ति सबके समक्ष हाव-भाव, मुख-मुद्राओं, नृत्य, स्वर-संधान तथा अभिनय द्वारा भावाभिव्यंजन करते हैं। ग्रामीणोंके नृत्योंमें अभिनय ही भाषाका रूप ग्रहण कर लेते हैं। मानवकी यह अदम्य आत्माभिव्यंजनकी प्रवृत्ति ही लघु अभिनयोंका आदि स्रोत है।

आदि जातियोंमें प्रकृतिका साहचर्य, नाना ऋतुओंका साहचर्य और अुनके द्वारा अन्तस्तलमें अुठे हुअे नाना विकार अभिनयकी प्रेरणाके केन्द्र बने थे। ऋतुओंके परिवर्तन द्वारा प्रकृतिके प्रांगणमें खेलनेवाली सरिताअें, लहलहाते खेत, शीतल अुन्मुक्त समीर, सौरभमय पुष्प, हरित लतिकाअें, सर, निर्झर अेक अपूर्व आकर्षण अेवं मादकताका संचार कर देते हैं। ये मादकता, अुत्साह अेवं आनन्द कायिक अंग-परिचालनके रूपमें प्रकट होते हैं। अन्य वृत्तियोंके अतिरिक्त प्रणय-वृत्ति विशेष रूपसे अभिनय, गान, नृत्य अित्यादिका कारण बनी।

भारतीय अभिनयोंकी अुत्पत्ति धार्मिक समारोहों तथा पर्वोंपर विशेष रूपसे हुअी। हमारे प्रारम्भिक अभिनय धार्मिक थे क्योंकि अभिनयके प्रयोगसे धार्मिक आख्यान प्रभावोत्पादक बन जाते थे।[२] धार्मिक-सांस्कृतिक प्रेरणाओंसे अुद्भूत लोक-नाट्यका लोकप्रिय और सार्वजनिक रूप शनैः-शनैः शास्त्रीय नाट्योंमें विकसित हुआ। नृत्य, संगीत, और अभिनय तीनों तत्त्व विलग न होकर अेक सामूहिक अिकाअीके रूपमें हमारे सम्मुख आये। अिनके अुदाहरण आज भी हमें अनेक प्राचीन लोक-नाट्योंमें मिलते हैं।[३] मानव-हृदयकी निगूढ़तम अनुभूतियाँ—काम, क्षुधा, आनन्दातिरेक, अुत्साह, भय तथा धर्मभावना नृत्योंके रूपमें आदि ज्ञान-प्रभात से आजतक भावनाओंके प्रत्यक्षीकरणके माध्यम बनकर हमारे समक्ष आती रही हैं। नृत्य मानवकी अेक प्रबल अुद्दाम प्रेरणाकी कलापूर्ण अभिव्यक्ति है। नृत्योंका अुपयोग देवोंकी पूजा तथा प्राचीन धार्मिक पौराणिक अुपाख्यानोंकी अभिव्यक्तिके लिये हुआ। आदि नर्त्तकके मूक अभिनय, विविध हाव-भाव, कायिक वाचिक क्रियाअें, मुखमुद्राअें, स्वर-संधान प्रारम्भिक अभिनयोंके आदि रूप हैं।

भारतीय लोकनाट्यके प्रकार

खुले रंगमंचपर लघु अभिनयोंका प्रारम्भिक स्वरूप धार्मिक लीलाअें हैं। अेक धार्मिक कथानकको अभिव्यक्त करनेके लिये अेकके स्थानपर अनेक नर्त्तक-नर्त्तकियोंका समावेश किया गया। भारतीय नृत्य-नाट्योंकी परम्पराजन्य कथावस्तु पौराणिक है। रामायण तथा महाभारत आदि धर्मग्रन्थोंसे सहायता

१—जे. डब्लू- मेरियट "वन अेक्ट प्लेज ऑफ टुडे" पृष्ठ २९२

२—वही

३—श्री देवीलाल सामर अेम्. अे. "राजस्थानी लोक-नाट्य" नया समाज (मार्च १९५२) पृष्ठ २१९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकर नाना कथानक लोकनाट्यका विषय बने हैं। नर्त्तक स्वतः अपनेको नाना देवी-देवता, भक्त, संत, अप्सरा, असुर अित्यादि विभिन्न रूपोंमें प्रस्तुत करते थे।

भारतीयोंका परम्परानुगत विश्वास है कि ब्रह्मान वेदोंसे सार लेकर नाटकोंकी सृष्टि की थी। वेदों और विशेषतः ऋग्वेदमें अैसे मंत्र विद्यमान हैं जिनमें अिन्द्र, सूर्य, अग्नि, मरुत आदि देवी-देवताओंसे प्रार्थनाअें की गयी है। साथ ही ऋग्वेदमें विश्वामित्र, वशिष्ठ, सुदास आदि अनेक ऋषियों तथा नृपतियोंका यशोगान भी है। सरमा तथा पणिस, यम और यमीं, पुरूरवा और अुर्वशी आदिके गीतोंमें कुछ कथोपकथन या संवाद हैं। अिनमें अभिनयके तत्त्व विद्यमान हैं। अिसी आधारपर मेकडानल और कीथ आदि विद्वानोंने यह स्थिर किया है कि संसारमें सर्वप्रथम रूपकों या लघु अभिनयोंका प्रारंभ भारतमें हुआ था। मेक्समूलर, पिशल, लेवी आदिका भी यही मत है।

रामलीला

भारतीय लोक-नाट्यका प्रथम प्रकार रामलीला है। प्रायः सम्पूर्ण भारतमें, (विशेषतः अुत्तर भारतमें) रामलीला दशहरेके अवसरपर लोकप्रिय अभिनयका केन्द्र रही है। आधुनिक कालमें अिसका स्वरूप परिष्कृत हो गया है किन्तु प्रारम्भिक अवस्थामें यह अपरिपक्व अभिनय, संगीत अेवं कथोपकथन द्वारा सभी वर्ग अेवं समुदायके व्यक्तियोंका मनोरंजन करती थी। दो खुले रंगमंच निर्मित किये जाते थे, जिनमें अेक पर राम-लक्ष्मण तथा दूसरेपर रावण कुंभकर्ण अित्यादिके वर्गके व्यक्ति बैठते थे। परिधान चटकीला रहता था। कहीं-कहीं राम तथा रावण अित्यादि पात्र चौपाअियोंमें वर्णित संकेतोंके अनुसार साधारण अभिनय भी करते थे। भारतकी पौराणिक, धार्मिक तथा अैतिहासिक परम्पराओंकी रामलीला द्वारा सुरक्षा होती थी। रामलीलाके प्रभावसे जिस अभिनय-कलाका विकास हुआ, अुसमें संवाद मात्र हुआ करता था, सो भी काव्यमें। यह परिपाटी बहुत दिनोंतक हिन्दी नाटकोंमें चलती रही है।[1]

यात्रा

बंगालमें कृष्णके अुपासक विशेष अुत्सवोंपर रामचरितकी भाँति कृष्ण-चरितका अभिनय किया करते थे। अुपासकगण विशेष अुत्सवोंपर अपने आराध्यकी विभिन्न लीलाओंके संगीत नृत्य प्रधान-अभिनय करते हुअे, नृत्य संगीतसे विभोर गलियोंमें होते हुअे मंदिरके आंगनमें पहुँचा करते थे। कालक्रमसे धार्मिक तत्त्वोंका ह्रास होकर शृंगार प्रधान तत्त्वोंकी विशेष प्रधानता हो गअी। १९ वीं शताब्दीके अुत्तरार्द्धमें कृष्णकमल गोस्वामीने ह्रासोन्मुख यात्रामें पुनः परिष्कार किया। प्रारम्भिक यात्राका स्वरूप बहुत कुछ संगीतात्मक अेवं भावोंको जाग्रत करनेवाला था। यत्र-तत्र संक्षिप्त कथोपकथनका भी विधान था। अुसकी अभिव्यंजना अर्द्ध नाटकीय हुआ करती थी; आशुकवित्व या अंचिंतित कथनोंका प्राचुर्य रहता था। नियंत्रण अेवं निर्देशनके अतिरिक्त यात्रावाले सदैव सामने बैठे रहते थे और आवश्यकतानुसार विवरणात्मक गद्यांशों द्वारा सूत्रोंका निबंधन किया करते थे। प्रारम्भिक यात्रामें गीतात्मकता अिस मर्य्यादातक विद्यमान थी कि कथोपकथन तथा समस्त कार्यकलाप गीतोंके माध्यमसे ही प्रस्तुत किये जाते थे। आधुनिक यात्रामें आधुनिक रंगमंचके अनुकूल नाटकीय पृष्ठभूमिका भी निर्माण किया जाता है, फिर भी अिसका आदि रूप काव्यात्मक, संगीतात्मक अेवं धार्मिक ही है।[2]

रास

भारतीय लोकनाट्यका अेक लोकप्रिय प्रकार ब्रजमें प्रचलित रास है। रास आधुनिक अेकांकीके कअी तत्वोंसे परिपूर्ण है। यह खुले रंगमंचका अेक लघु अभिनय है, जिसमें ब्रजसंस्कृति, साहित्य, संगीत और नृत्यका समन्वय था। मथुरामें रासका प्रथम अभिनय संवत् १५५०–१६०० विक्रमीमें हुआ था। ब्रजमें भागवतका प्रचार श्री. वल्लभाचार्यने, जो संवत् १५४८ विक्रमीमें पधारे थे, किया। अिस किंवदंतीके अनुसार

१—गोपालप्रसादका "जिह्वादंत" तथा शुकदेव मुनिका "रंभाशुक संवाद" का कथोपकथन छन्द शैलीका है।

२—डाक्टर डे, श्री कामेश्वर शर्मा अेम. अे. "खुला रंगमंच"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"रास" का यह स्वरूप ४०० वर्षसे अधिक प्राचीन ठहरता है। ब्रजमें, जो सर्वसाधारणकी भाषा थी, वही "रास" का माध्यम बन गयी। भागवतसे मूल प्रेरणा, अष्टछापसे गान, नृत्यकारोंसे नृत्य तथा कलाकारोंसे अभिनय और नटनागर कृष्णके जीवनका रस लेकर "रासलीला" ने रंगमंचका निर्माण किया। "रास" का रंगमंच सरल आडम्बरविहीन था। अेक आयताकार छोटा-सा मंच जिसपर राधाकृष्णका अेकछोटा-सा सिंहासन तथा पार्श्वमें गोपिकाओंके लिये चौकियाँ लगी होती हैं। आगे अेक पर्दा तथा पीछे अेक "पिछवअी" (Back Curtain) यही पर्याप्त होता है। मंचके सामने नट आदिके नृत्योंके लिये स्थान होता है। "रास" अेक प्रकारका ओपेरा होता है, जिसमें संगीत और वाद्यका भी महत्व रहता है। "रास" में कथोपकथन काव्यमय होते हैं; गद्यका प्रयोग केवल कविताके अर्थोंके रूपमें ही रहता है। कभी-कभी संस्कृत श्लोकोंमें जयदेवकी कोमल कान्त पदावली भी सुननेको मिलती है। "रास" में विभिन्न मुद्राओं, मुखाकृतियों द्वारा शरीरका अंग परिचलित अभिनयपूर्ण हो जाता है। रासमें अभिनयके सभी अंगोंकी पूर्तिके साथ सहज ही रसकी निष्पत्ति हो जाती है। खेद है कि हिन्दी नाट्य समाजने अिस रंगमंचकी ओर कुछ ध्यान नहीं दिया।१

ललित

ललित महाराष्ट्रका सर्वाधिक प्रचलित मध्य युगीन रंगमंच है, जहाँ साधारणतः दशावतारको नाटकीय रूपमें प्रस्तुत किया जाता है। अिसपर तेजोरी नाटकोंका यथेष्ट प्रभाव है। यह केवल दो यवनिकाओंकी सहायतासे, विशेषतः मंदिरोंके कवपों या सरायोंमें, ही अभिनय किया जाता है। अिसका अेक सूत्रधार रहता है तथा अेक विदूषक भी, जो अिच्छानुसार भीतर-बाहर आता-जाता रहता है। अभिनयका प्रारंभ नान्दीसे होता है तदुपरान्त गणपतिका प्रवेश होता है। सूत्रधार प्रशस्तिमें गीताका गीत गाता है तथा आशीर्वाद प्राप्त करता है। कथोपकथन नहींके बराबर रहता है। सम्पूर्ण कथानककी अभिव्यक्ति कायिक वाचिक हाव-भाव द्वारा की जाती है। मंचपर युद्ध भी प्रदर्शित किया जाता है जिसमें मराठे अत्यधिक रुचि लेते हैं। युगकी प्रगतिसे ललितमें भी धार्मिक प्रेरणाओंका ह्रास होता गया। अब अुसके स्थानपर यथार्थ जीवन तथा व्यंग्यने लेली है। ब्राह्मण जो प्रारंभमें अिसके कर्णधार थे अब भी रुचि लेते हैं।२

भवाअी

गुजरात प्रदेशमें लोक-नाट्यका अेक और प्रकार प्रचलित है, जिसे भवाअी कहते हैं। यद्यपि प्रारम्भमें गणपतिका आगमन अनिवार्य है, तथापि अभिनय अन्त तक धर्मनिरपेक्ष होता है। नगर ब्राह्मण गणपति और देवी अम्बाका गुणगान करते हैं तब अभिनय प्रारंभ होता है। यह प्रहसनके ढंगका अभिनय है जिसका अभिनय सड़कों या मन्दिरोंके आंगनके खुले स्थानपर हुआ करता है। कोअी विशेष प्रकारका रंगमंच आवश्यक नहीं समझा जाता। न कोअी विशेष कथानक रहता है, न घटनाओंका क्रमिक नियोजन। कतिपय साधारण घटनाअें, जैसे बेमेल दम्पतीका झगड़ा, भ्रष्ट साधु, सास-पतोहू अित्यादिके झगड़े आदि, अभिनयका विषय बनते हैं।

नौटंकी और सांग

अुत्तर भारत, पंजाब तथा राजस्थानमें लोक नाट्यका यह आडम्बरविहीन रूप पर्याप्त लोकप्रिय रहा है। अिनका कथानक जनतामें प्रचलित मध्ययुगीन रोमांचकारी कहानियोंपर आधारित रहता है। भक्तपूरन, वीर हकीकतराय, राजा गोपीचन्द भरथरी अित्यादिके स्वांग पर्याप्त लोक-प्रियता प्राप्त करते रहे हैं।

आधुनिक युगके प्रारम्भमें मध्ययुगकी हास-परिहासमय अभिनयकलाके अवशिष्ट चिह्न रासलीला, रामलीला, स्वांग, नौटंकी आदिका प्रचलन था, जिनमें चारों ओरसे खुले रंगमंचपर, जिसके चारों ओर दर्शक बैठे रहते थे और जिसपर वाद्य-यंत्र भी रहते थे, भड़कीले वस्त्र धारण किये हुअे तथा खड़िया और लाली मुँहपर पोते हुअे, अेवं मुकुट कुंडल धारण किये अभिनेता पद्यात्मक संवादके साथ नृत्यमिश्रित

१ श्री. रामनारायण अग्रवाल–"रामलीलाअे"

२ श्री. कामेश्वर शर्मा "मंचहीन रंगमंच"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभिनय किया करते थे। अुनका यह अभिनय हाथ पैर चलाने, मटकाने, रोने हँसने, धड़ामसे गिर पड़ने और सभी व्यापारोंकी अितनी अतिरंजना कर देनेमें था, जिससे अुपहास अुत्पन्न होकर मनोरंजन हो सके।[1]

राजस्थान, यू. पी. तथा अन्य प्रान्तोंके ग्रामोंमें अभी तक लोक नाट्यके ये स्वरूप असंख्य भीड़ आकृष्ट करते रहते हैं। "राजा गोपीचन्द भरथरी" का स्वांग राजस्थानमें आज तक प्रसिद्ध है। अिसका रंगमंच साधारण होता है। प्रायः दो पात्र संगीतमय कथोपकथनमें कथासूत्रको आगे बढ़ाकर संगीतसे परिपूर्ण वातावरणमें रसवृष्टि करते हैं। यद्यपि अभिनय ग्रामीण होता है, तथापि अिसके द्वारा हमें नाटककी आज भी पायी जानेवाली लोकप्रियताका ज्ञान हो जाता है। आधुनिक सिनेमाके प्रचारका विष जहाँ-जहाँ अभी नहीं पहुँच पाया, वहाँ नौटंकी तथा सांग जनताको स्वस्थ मनोरंजन प्रदान कर रहे हैं। आवश्यकता अिस बातकी है कि लोक-रंगमंचके अिस स्वरूपको प्रयत्न द्वारा परिष्कृत किया जाय। यदि अिसमें कुछ पर्दोंका अुपयोग हो सके, या रंगमंच ही आधुनिक ढंगका बन सके, तो सांग हमारे यहाँ रंगमंचका नव निर्माण कर सकता है।[2]

पुत्तलिका-नृत्य और छायानाटक

लोक-नाट्यका अेक प्रकार पुत्तलिका-नृत्य (कठपुतलीका नाच) है। डा० पिशलेके अनुसार, "अेकांकी नाटककी अुत्पत्ति पुत्तलिका नृत्यसे ही हुअी है।" पुत्तलिका-नृत्य सर्वप्रथम भारतमें प्रारंभ हुआ। "सूत्रधार" शब्दकी व्युत्पत्तिसे सिद्ध होता है कि जिस प्रकार पुत्तलिका नृत्यमें सूत्र किसी संचालकके हाथमें रहता, जिससे वह कठपुतलियों द्वारा अभिनय कराता है, अुसी प्रकार नाटकमें सूत्रधार नाटक तथा अभिनयका संचालन करता है। कठपुतलीके नाटकोंमें कथानकका चुनाव रामायण, महाभारत, पुराण या अितिहासकी कोअी घटना रहती है। डा० रिज़वेका मत है, 'नाट्यकलाकी अुत्पत्ति वीर पूजासे सम्बन्धित है। नाटक-प्रणयनकी प्रवृत्ति वीर पुरुषोंके प्रति आदर-भाव प्रदर्शित करनेके लिये हुअी।" लोकनाट्य तथा लोकनृत्यके विकासमें पुत्तलिका नृत्यका घनिष्ठ सम्बन्ध है। भारतमें दो प्रकारके पुत्तलिका नृत्य प्रचलित हैं। पहली प्रकारका नृत्य राजस्थान और मध्यभारतमें प्रचलित है और अिसीका प्रतिरूप लंका, बर्मा और चीनमें मिलता है। यह सूत्र-संचालन द्वारा होता है। सूत्रधार डोरोंकी सहायतासे विभिन्न कथानकोंको प्रकट किया करता है। दूसरा रूप वह है जो दक्षिण भारतमें होता है तथा जिसका प्रतिरूप जावा, बाली और सुमात्रामें मिलता है, अिनकी कठपुतलियाँ पहलीकी अपेक्षा बड़ी रहती हैं, नीचेसे लम्बे बाँस जिनमें होते हैं। कठपुतलियोंकी छाया अेक पर्देपर अुतारी जाती है और अिन्हींके द्वारा सम्पूर्ण नाटकका अभिनय होता है।

नाटक तथा छाया नाटक दोनोंमें विशेष साम्य है। नाटकके विकासमें छाया नाटकोंका निजी महत्व रहा है। सिनेमाकी भाँति अविकसित रूपमें ये पूर्व कालमें प्रदर्शित होते थे। संस्कृतमें "दूतांगद" नाटक छाया नाटकके सिद्धान्तोंपर आधारित है। दक्षिण भारतके मलाबार प्रदेशमें छाया नाटकको "पवाकुथु" कहा जाता है। अिसमें रामायण और महाभारतकी घटनाअें अभिनीत की जाती हैं—जैसे ताड़का-वध, सेतु-बन्धन, लंकादहन, रामरावण-युद्ध, जयद्रथ-वध, दुर्योधन भीम-युद्ध, अित्यादि। ये छोटे-छोटे अेकांकियों जैसे अभिनय हैं क्योंकि अिनमें अेक ही घटना नाटकीय कौशलसे कौतूहलका संचय करते हुअे चरम सीमापर पहुँचती है। विषम परिस्थिति और घटनाओंका घात-प्रतिघात प्रमुख है। अिनका अेक ही सुनिश्चित सुकल्पित लक्ष्य है। अिनकी वृत्ति धार्मिक रहती है। पवाकुथुका अधिकतर मंदिरोंमें ही अभिनय किया जाता है। अभिनेताओंको वहाँसे आर्थिक सहायता प्राप्त होती है।

अेक छोटा-सा रंगमंच बाँसोंके सहारे तैयार कर लिया जाता है तथा आठ-दस फुट लम्बे दो बाँसोंके सहारे प्रमुख यवनिका तनी रहती है। ३-४ फुट पीछे वाली दूसरी यवनिकासे पुतलियोंका संचालन होता है। पात्रोंके अनुसार पुतलियोंका पहनावा रहता है। दो

१— ड्रेमटिक डान्सेज़ आफ दी युरोपियन रेसेज़"
२— होने लगा है। सं.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चार धागोंके संचालन द्वारा पुतलीके विभिन्न अंगोंका यथाविधि संचालन होता है। आधुनिक अेकांकीमें जो जो तत्त्व मिलते हैं, सूक्ष्म रूपमें वे सभी अिस अभिनयमें प्राप्त हो जाते हैं। पात्रोंके आगमन तथा कथानकके विकासका अेक सुनिश्चित क्रम मिलता है।

अुदाहरणके लिये राजपूताना तथा मध्यप्रान्तमें पुत्तलिका अभिनय-क्रम अिस प्रकार है— अभिनय प्रारंभ होनेसे पूर्व रंगमंचपर अेक भी कठपुतली नहीं रहती। सर्वप्रथम ढोलक बजानेवाला—अभिनयकी सूचना देनेवाला—आता है। तत्पश्चात् मेहतर रंगमंचकी सफाअी करता है और चोबदार आता है। चोबदारका कार्य अन्य आनेवाली पुतलियोंको अुनका निर्दिष्ट स्थान सूचित कर बैठनेका क्रम नियत करता है। क्रमानुसार अेक-अेक कर तीसमारखाँ, आगरेका नवाब, लखनअूके नवाब, आसफद्दौला, वजीर, बीरबल, राजा मानसिंह, बीकानेर नरेश रामसिंह, अमरसिंह, शाहंशाह अकबर, मरोड़खां, नाचनेवाले, आगरेवाली मुन्नाजान, चक्करवाले पठान (ढाल तलवारका अभिनय करनेवाली कठपुतली) नाचु, सरदार दुलामाटी (घोड़ेका नाच अभिनय करनेवाली पुतली) ढोल, पीला अूंट, दो मंत्री, दिल्लीके पिलपिली साहब। (विदूषकके अभिनयके हेतु, लक्कड़नाथ और साँप (सँपेरेका खेल दिखानेवाली पुतली) तेजा धोबी और मगरका अभिनय करनेवाली पुतली आती है। अिन सब कठपुतलियोंके आनेके पश्चात् अमरसिंहका नवाबोंसे युद्ध होता है। सब नवाब मारे जाते हैं और शाहंशाह अकबर भाग जाते हैं। यहाँ अभिनय समाप्त होता है। प्रायः अिसमें राजपूतोंका शौर्य और छोटे-मोटे मतभेदोंपर युद्धमें प्रवृत्त होनेका चित्रण होता है। १

पुत्तलिका नृत्यमें अेक व्यक्ति सूत्र संचालन क्रिया करता है, दूसरा ढोलकपर वातावरण अेवं परिस्थिति निर्माणके लिये ताल और लयसे सब वीर गाथाओंका गान करता है। मानवकी स्वर लहरी संगीत कथोपकथन और वातावरणका निर्माण करती है, जब कि अभिनयका कार्य पुतलियों द्वारा होता है। सूत्र संचालन करनेवाला व्यक्ति पुत्तलियोंके हाथ-पाँव क्रिया-कलापका संचालन करता है। मानव अभिनयके अतिरिक्त हमें पुत्तलिका नृत्यमें अेकांकीके प्रायः सभी तत्त्व मिल जाते हैं। प्रसंगानुसार पात्र-परिचय और कथासूत्रका संचालन भी कुछ अिस प्रकार दिया जाता है:—

"जयपुर नरेश राजा मानसिंह—मौज तुम्हारी मानसिंह, दर्याव दहले मेक डरे बासक डरे और धरती तरसल्ले, पोता भगवानदासका तेरी बड़बंडे भाले।"

कथोपकथनका नमूना देखिये—

अमरसिंह—"अमरकी कमरमें काहेकी कटारी
जोधपुर गढ़वायी बीकानेर सरवायी
कतरा अमराव दुख दे गयी
अमरसिंह कटारी रंग ले गयी"

बीरबल—"अटक चटकसे लगी लिये हटकनहार
रंगराव हंस खेलिया गिया बीरबल साथ
गोकुलसे गंगा बही पाछे खड्या वजीर
सोब्या सब दरबारकी लेग्यो बीरबल वजीर।"

अिन नाटकोंके कथानक धार्मिक तथा अैतिहासिक गाथाओंसे सम्बन्धित होते हैं। जैसे रामायण महाभारतकी कथायें, अमरसिंह चौहानकी वीर गाथा, पृथ्वीराज चौहान द्वारा संयोगिता हरण, रानी पद्मावती, आल्हा-अूदलका शौर्य। राजस्थानी गीतों, कथोपकथन, ढोलककी ताल, तालबद्ध संचालन अिन अभिनयोंको अेकांकीके समीप ले आता है। पुत्तलिका-नृत्य अत्यन्त पुराना है और भारतमें अिसका विशेष प्रचार रहा है। अेकांकीके विकासमें पुत्तलिका-नृत्यका विशेष हाथ है।

भारतीय लोक-नाट्यके अुल्लिखित प्रचलित भेद-अुपभेदोंके अन्तर्गत हमें हिन्दी अेकांकीके पूर्वज अुपलब्ध हो सकते हैं। अिन सभी प्रकारोंमें अेक साधारणसे कथानकका विधान है, जो नैतिक आदर्शवादी अुद्देश्यकी ओर सतत गतिशील है। भारतकी पौराणिक, धार्मिक तथा अैतिहासिक परम्पराओंको कथोपकथनके

१ श्री प्रकाशकुमार "भारतीय पुत्तलिका नृत्य"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माध्यमसे प्रस्तुत करना सुरक्षाका विधान था। अिन जन नाटचोंमें भाग लेना जनता अपना सामाजिक अेवं धार्मिक कर्त्तव्य समझती थी और अिनके द्वारा असंख्य जनसमुदायका ज्ञान-वर्द्धन और मनोरंजन होता था। १

अिन लोकनाटचों द्वारा साहित्य, संगीत, और नाटचकलाकी अभिनयके रूपमें, नाना प्रकारके हस्त कौशलकी रंगमंच निर्माणके रूपमें तथा वेश और मुख-विन्यासकी पात्रोंके सजीव शृंगारके रूपमें रक्षा होती रही है। धार्मिक या अैतिहासिक कथानकको स्पष्ट करनेके लिये अिन सभीमें थोड़े-बहुत कथोपकथनका प्रयोग है, जो कथासूत्रको विकसित करता है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अिनमें अेकांकीके मूल तत्त्व (संक्षिप्तता, अभिनय, रंगमंच और कथोपकथन) अविकसित रूपमें मिल जाते हैं। यद्यपि अिनके कथानक निर्माणमें कोअी विशेष चातुर्य नहीं, संकलनत्रय या चरित्र विकासकी ओर नाटचकारोंका ध्यान नहीं है, किन्तु अुद्देश्यके प्रति सजगता है। आजकी भाँति प्राचीन नृत्य नाटचसंगीत और नृत्यसे विलग अेक स्वतन्त्र अिकाअीके रूपमें कभी नहीं रहा। हिन्दीमें यह अेकांकीका स्रोत बहुत क्षीण-सा है। अिन लोकनाटचों द्वारा जनताका मनोरंजन करनेवाले अुन कलाकारोंको यह ज्ञात न था कि आगे चलकर वे अेकांकी जैसे शक्तिशाली माध्यमके विकासमें सहयोग देंगे।

---

१ "भारतीय जन-जीवनमें अैसे पर्व वर्षमें कअी बार आते थे जिनमें राजासे लेकर रंकतक भाग लेते थे। समाजके सभी व्यवसायोंके लोग अिन लोकनाटचोंमें सहयोग देते थे। राजा धन तथा अन्य अमूल्य अप्राप्य सामग्री देकर, व्यापारी रंगमंचके लिये वस्त्रादि देकर, लुहार बढ़अी आदि रंगमंचका निर्माण करके, चित्रकार और शिल्पकार सजाव शृंगार द्वारा तथा धनीमानी कलाकारोंको सुस्वादु भोजन खिलाकर अपना सक्रिय सहयोग प्रदान करते थे। सम्पूर्ण रात्रिको नाटच प्रदर्शन होते थे....अिन प्राचीन जीवनदायक मनोरंजनोंके स्थानपर गश्ती फिल्म कम्पनियोंने भद्दे और गन्दे फिल्म दिखलाकर हमारे जन-जीवनको काफी मात्रामें भ्रष्ट किया गया है....लोकनाटचके और प्रकार आज भी बिखरे मिलते हैं। दक्षिण भारतके "कुचपुड़ी" "यक्षगान", "कथकली" आदि मनोरंजक लोक--नाटचोंके ज्वलन्त अुदाहरण हैं। अुत्तर भारतमें भी लोकनाटचकी अनेक शैलियाँ विद्यमान हैं।" —श्री देवीलाल सामर, अेम. अे. "राजस्थानी लोकनाटच"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रार्थना

: श्री देवदूत विद्यार्थी "शिशु-हृदय" :

धार्मिक जीवनकी बुनियाद और ओश्वर-भक्तिकी कसौटीमें प्रार्थना मेरी धारणाके आदर्श जीवनका अंग नहीं। मुझे अज्ञेयवादी या नास्तिक कहा जा सकता है। क्योंकि क्या महात्माओंने जिनका दुनिया आदर करती है, प्रार्थनाके महत्व और आवश्यकतापर जोर नहीं दिया ?

लोग मुझे पाखंडी, दम्भी, कह सकते हैं। किन्तु मैं प्रार्थनाके लिये बैठे बिना ही सर्वथा सुखी और सन्तुष्ट हूँ। हाँ, मेरे सम्मुख भी अैसे क्षण आते हैं जब मैं अश्रुपात करता हूं और मेरा हृदय भी शोक, सन्ताप, समवेदनासे विदीर्ण होने लगता है; लेकिन मैं अुन्हें धैर्यसे सहन करता हूं। क्योंकि मैं जानता हूं कि वे सब मेरे कर्मोंके फल हैं। अिस तरह प्रार्थनाकी आवश्यकता अनुभव किये बिना मेरा अेक-अेक दिन कट रहा है।

स्वतन्त्र होनेके लिये प्रार्थना करनी चाहिये, वे कहते हैं; किन्तु मैं अपनेको बन्धनमें नहीं पाता। पाप-रहित होनेके लिये प्रार्थना करनी चाहिये, किन्तु मैं अपनेको पापी होनेका अनुभव नहीं करता। विनम्र होनेके लिअे प्रर्थना करनी चाहिये, किन्तु मैं गर्विष्ठ होनेका भी अनुभव नहीं करता। तब मैं प्रार्थना करूं क्यों ? मैं कहता हूं, प्रार्थना शब्द भ्रामक है। अिससे प्रार्थना करनेवाला व्यक्ति समझने लगता है कि वह दूसरोंसे अधिक पवित्र है और अिसीलिये ओश्वरको अधिक प्रिय भी। वह प्रार्थनाके लिये आसन जमाकर बैठनेको ही जीवनके पुरुषार्थको सिद्धिका मार्ग समझने लगता है। अुसकी दृष्टि संकुचित और स्वार्थपूर्ण हो जाती है। अिस प्रकारका जीवन मेरे लिये आकर्षक नहीं। मैं अपने ओश्वरको प्यार करता हूं और अुसके नियमपर सबसे अधिक अवलम्बित रहता हूं। किन्तु मैं अुसके पीछे दौड़नेकी आवश्यकता नहीं समझता। अुसीको मेरे पीछे दौड़ना चाहिये, जैसे अेक मानव पिता अपने बच्चेको ठीक रास्तेपर रखनेके लिये अुसके पीछे दौड़ता है।

मेरे लिये पवित्र हृदयोंके दर्शन पर्याप्त हैं, जो मुझे "अुसका" स्मरण दिलाते हैं। जब मैं दुःखी आत्माओंके साथ मन्द मुस्कानका आदान-प्रदान करता हूँ, तब मुझे अैसा लगता है, मैं "अुसके" साथ सम्पर्क स्थापित कर रहा हूं। मैं प्यार-भरे हृदयोंकी कोमल आँखोंमें 'अुसे' प्रतिबिंबित पाता हूं।

मेरे सम्बन्ध मेरे ओश्वरसे अिसलिये है कि मैं आनन्दकी चाह रखता हूँ। आनन्द-अनुभूतिकी ही मैं आकांक्षा करता हूँ और अुसीको अपने जीवनमें व्यक्त करना चाहता हूँ। अेक तो सौन्दर्यके द्वारा और दूसरे प्रेमके द्वारा। मेरे लिये सौन्दर्य सृष्टिमें ओश्वरकी अभिव्यक्ति और प्रेम अुसका प्रकाश है।

आनन्द तन्मयताकी चेतनाका ही दूसरा नाम है और तन्मयता आसन लगाकर प्रार्थना करनेसे नहीं अुपलब्ध होती, प्यार करनेसे होती है, प्रेमसे सबको अपना हृदय दान करनेसे होती है।

(२)

बहुत दिन हुअे, दो दशकसे भी अधिक, जब कि अुपर्युक्त विचार मेरे मनमें आविर्भूत हुअे थे। अुसके बाद प्रातः और सायं प्रार्थना करनेका मेरा क्रम टूट गया। संध्याके मन्त्र मैं भूल गया। ओश्वरका नाम लेना मैंने छोड़ दिया और अपने सुख-दुःखमें भी ओश्वरका स्मरण न करनेका मैंने निश्चय किया। किन्तु, प्रार्थना मेरे जीवनमें फिरसे अवतरित हुअी। नवीन रूपमें आयी, नवीन सन्देश लेकर आयी : मैं पहलेकी तरह फिर प्रार्थनाके लिये तो नहीं बैठा, लेकिन ओश्वरको स्मरण करना, अुसका नाम लेना मेरा सबसे बड़ा काम हो गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब अुसकी स्मृति मेरे अवचेतन मनमें सदा जागृत रहती है। मैं 'अुस' से कुछ माँगता नहीं, सिवाय अिसके कि मैं अुसे कभी नहीं भुलाअूं। मैं 'अुस' से कुछ चाहता नहीं, सिवाय अिसके कि मैं अुसे हमेशा याद रखूं। अुसका नाम मेरे लिये विद्युत्-शक्तिका स्रोत हो गया है। अुसका अुच्चारण करते ही मैं अेक नयी स्फूर्ति अनुभव करता हूँ। अुसके स्मरण मात्रसे मेरी अुत्साहहीनता दूर हो जाती है और अन्धकारमें प्रकाशकी झलक मिल जाती है। अुसका स्मरण करना ही मेरे लिये अुसका नाम लेना है और अुसका नाम लेना ही प्रार्थना है। मैं अब मानता हूँ कि अुसके नामके सहारेकी मुझे हर क्षण, पग-पगपर आवश्यकता है, अुसके बिना मैं अपनेको अति दीन, निःशक्त और निराधार-सा पाने लगता हूँ। मैं मानता हूँ, जीवनकी सार्थकता कर्ममें है, और कर्मकी सार्थकता कल्याणमें। मैं अिस परिणामपर पहुँचा हूँ कि प्रार्थनाकी सार्थकता जीवनको सशक्त और कर्मको आनन्ददायक बनानेमें है।

प्रभुका प्रकाश

(गुजराती कविता)

सिन्धु दे वारि निज शोशवा सूर्यने,
ने सदा अुछड़तो मोज मारे।
मेघ आपी बधूं खाली पोते थतो,
तोय पाछो गगन गाजी अुठे;
सूर्य सर्वस्व आ जगतने आपतो
रेलतो त्याँज प्रभुती प्रभावी॥

(अर्थात् सिन्धु यद्यपि सूर्यको अपना जल सोखने देता है, फिर भी वह मौजसे अुछलता रहता है। देनेवाला देकर मुक्त हो जाता है। मेघ जल बरसाकर खाली (रिक्त) हो जाता है, फिर भी वह आकाशमें चढ़कर गरजता है। सूर्य अपना सर्वस्व प्रकाश जगत्को दे डालता है, फिर भी वह प्रभुके प्रकाशसे चमकने लगता है।)

गुजरातीके महान् विद्रोही कवि स्व० श्री 'खबरदार' की कविताका अेक अंश जो १९३० में, मद्रासमें कविके मुखसे अुनके निवासस्थानपर, अेक दिन प्रभात-बेलामें सुना था। —ह० श०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरिजन और कबीर

: श्री परशुराम चतुर्वेदी, अेम. अे., अेल-अेल. बी.

कबीरकी रचनाओंमें 'हरिजन' शब्दका प्रयोग कअी बार हुआ है, किन्तु वह वर्तमान रूपमें अछूतोंके लिये स्पष्ट रूपमें कहीं भी प्रयुक्त नहीं। 'कबीर ग्रन्थावली' की सर्वप्रथम साखीके अन्तर्गत जो—'हरिजी संगनको हितू, हरिजन सअीं न जाति' कहकर अुन्होंने हरिजनोंकी जातिको सर्वश्रेष्ठ बतलाया है, वह भी वर्तमान अछूतोंसे सम्बन्ध नहीं रखता। कबीरके हरिजन, वास्तवमें वे लोग हैं जिनके मुख्य गुण अुनके नीचे लिखे पद्योंमें दी गअी परिभाषाके अन्तर्गत व्यक्त किये गये है, जैसे—

रोड़ा हवै रहौ बाटका, तजि पाषंड अभिमान।
अैसा जो जन हवै रहै, ताहि मिले भगवान ॥१४॥

रोड़ा भया तो क्या भया, पंथीको दुख देअी।
हरिजन अैसा चाहिअे, जिसी जिमीकी खेह ॥१८॥

खेह भअी तो क्या भया, अुड़ि अुड़ि लागे अंग।
हरिजन अैसा चाहिये, पाणी जैसा रंग ॥१९॥

पाणी भया तो क्या भया, ताता सीता होअि।
हरिजन अैसा चाहिये, जैसा हरि ही होअि ॥२०॥

हरि भया तो क्या भया, जासौं सब कुछ होअि।
हरिजन अैसा चाहिये, हरि भजि निर्मल होअि ॥२१॥[1]

अर्थात् "यदि चाहते हो कि तुम्हें अीश्वरकी प्राप्ति हो तो तुम पाखंड और अभिमान-भरी मनोवृत्तिका त्याग कर मार्गमें पाये जानेवाले साधारण कंकड़ोंके समान पददलित बन जाओ। परन्तु रोड़े बननेपर भी कदाचित् चलनेवालोंको बाधा पहुँचे, अतअेव हरिजन होनेके लिये पृथ्वीकी धूलि ही बन जाना अधिक अुचित होगा। किन्तु धूल हो जानेपर भी तो लोगोंके शरीरपर लगते रहनेकी संभावना है, अिसलिये अुत्तम होगा कि हरिजन पानीकी तरह सरल अेवं तरल होनेकी चेष्टा करे। परन्तु, पानी हो जानेपर भी बहुधा गर्म या ठण्डा होते रहनेका अवसर अुपस्थित होता रहता है, अतअेव सच्चे हरिजनको स्वयं भगवानके लिअे समान अेक रस बना रहना ही अच्छा है। परन्तु हरि बन जानेपर भी सब कुछका कर्त्ता-धर्त्ता होना पड़ेगा, अतअेव सबसे अुत्तम हरिजन वही होगा जो भगवानका भजन करता हुआ अपना जीवन सब प्रकारसे निर्मल अर्थात् दोष-रहित बना ले। कबीरके हरिजन, अिसीलिये वे लोग ठहरते हैं जिन्हें वे दूसरे शब्दोंमें जीवत मृतक (जीवन्मुक्त) संत अथवा हंस कहा करते हैं। हरिजनको हंस पक्षीका रूपक देकर अेक पदमें वे अिस प्रकार भी कहते हैं—

हरिजन हंस दसा लिये डोलै, निर्मल नांव जस बोलै ॥टेक॥
मान सरोवर तटके वासी, राम चरण चित आन अुदासी॥
मुकताहल बिन चंच ना लावैं, मौनि गहैके हरि गुन गावैं॥
कअूआ कुबुद्धि निकट नहिं आवै सो हंसा निज दरसन पावै॥[2]

अर्थात् हरिजन हंसोंकी भाँति भ्रमण करते हुअे हरिनामका वर्णन किया करते हैं, अुनका ध्यान सदा अपने मूलस्थानपर ही रहता है और वे रामको छोड़ दूसरोंके प्रति अुदासीन वृत्ति धारण करते हैं, वे मुक्तिके सिवाय अन्य वस्तुकी अिच्छा नहीं करते और न हरि-यशके अतिरिक्त और कुछ कहनेको तैयार होते हैं, अतअेव अपने अुद्देश्यमें सिद्धि केवल अुन्हीं हरिजनोंको प्राप्त हो सकती है जिनके निकट कुबुद्धिरूपी कौवा नहीं आने पाता। कबीरके हरिजनकी विशेषता अिसी कारण जीवनकी निर्मलता और निरभिमानतामें निहित है जिनके कारण अुसमें अेक अपूर्व सहनशीलताका प्रादुर्भाव होता है और कबीरको कहना पड़ता है: -

---

१. 'कबीर ग्रंथावली' (का. ना. प्र. सभा) पृ. ६५

२. वही, पृष्ठ २०४ (पद ३४४)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुसबद तो हरिजन सहै, दूजै सह्या न जाओ [3]॥

अर्थात् "दुष्टोंके वाग्वाणकी चोट हरिजन ही सह सकता है, यह दूसरे किसीकी शक्तिकी बात नहीं।"

निरभिमानताका सच्चा पोषक होनेके ही कारण कबीरने अपनेको 'दासनिका परदास' तक कह डाला। वे अभिमान अथवा मानको अेक बड़े भयंकर शत्रुके रूपमें देखते हैं, क्योंकि

माया तजी तौका भया, मानि तजी नहि जाअि।
मानि बडे मुनिवर मिले, मानि सबनिको खाअि॥[4]

अर्थात् "मान अथवा अहंकार ही अेक अैसी वस्तु है जो मायाको त्यागनेवाले मुनिवरों तकको भी नहीं छोड़ती और अुन्हें बलात्कार पटक देती है।" कुलाभिमान भी अिस मानका ही अेक अन्यतम रूप है जिसके प्रभावमें पड़कर लोग अेक ही मानव जातिके अन्तर्गत अनेक प्रकारकी अूंची-नीची श्रेणियाँ बाँधा करते हैं। वे नहीं समझते की "अूंचै कुल क्या जनमियां, जे करणी अूंच न होअि"[5] अुनको केवल यही सूझता है कि वर्णाश्रम धर्म अथवा किसी नियम-परंपराके अनुसार यदि अुनका कुल श्रेष्ठ समझा जाता है तो वे निःसन्देह औरोंसे अुत्तम हैं। अिसी कारण वे समाजमें अनेक प्रकारके स्वत्वोंके अधिकारी बने फिरते हैं और यदि कोअी अनुचित कार्य भी कर डालते हैं तो अुन्हें पूर्ण विश्वास रहता है कि समाज अुस ओर कभी ध्यान नहीं देगा। परिणामस्वरूप समाजके भीतर अनेक प्रकारकी कुरीतियाँ चल पड़ती हैं और भिन्न-भिन्न अत्याचारोंके नित्य प्रति होते रहनेके कारण समाज विशृङ्खल होकर अन्तमें नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है। कबीर अिसीलिये कुलाभिमान और वर्ण-व्यवस्थाकी घोर निन्दा करते हैं। वे भिन्न-भिन्न वर्णोंके समझे जानेवाले लोगोंको जन्मसे ही अभिन्न अर्थात् अेक समान समझते हैं। अिसका वास्तविक कारण बतलाते हुअे कहते हैं:

अल्ला अेकै नूर अुपजाया, ताकी कैसी निन्दा।
ता नूर मैं सब जग कीया, कौन भला कौन मन्दा॥[6]

अर्थात्, "जब परमेश्वरने अेक ही ज्योतिसे सारे संसारका निर्माण किया तो अुसमें किसीको भला और किसीको बुरा कहनेके लिये स्थान ही कहाँ रह जाता है।"

अथवा,

अेक बून्द अेकै मल मूतर, अेक चाम अेक गूदा।
अेक जोति मैं सब अुतपनाँ, कौन बाम्हन कौन सूदा॥[7]

अर्थात्, "जब अेक ही प्रकारके साधनों द्वारा मानव शरीरकी सृष्टि होती है और सभी भिन्न-भिन्न व्यक्तियोंका मूल अेक ही ज्योतिमें निहित समझा जाता है तो ब्राह्मण अेवं शूद्रके वर्गीकरण स्वरूप भिन्नताकी दीवारें खड़ी करना निरी मूर्खताके सिवाय और कुछ नहीं।" अुनका तो यह भी कहना है:—

जोपै करता बरण विचारै,
तौ जनमन तीनिडांडि किन सारै॥[8]

अर्थात् "वर्णव्यवस्थाका विचार यदि सृष्टिकर्ताके मनमें रहा होता तो वह जन्म देते ही ब्राह्मणोंके ललाट पर तीन-तीन लकीरें खींचकर ब्राह्मणत्वकी निशानी क्यों नहीं बना देता।" अथवा:—

जो तू बामन बमनी जाया,
तौ आन बाट है काहे आया॥[9]

अर्थात् "हे ब्राह्मण ब्राह्मणीके अुदरसे अुत्पन्न होनेके कारण अुच्च बनते हो तो तुम्हें अुचित था कि जिस प्रकार अन्य लोगोंकी अुत्पत्ति होती है अुसी प्रकारसे जन्म न लेकर किसी विशेष रूपसे अवतार धारण करते।" सच्ची बात तो यह है—

३— वही, पृ० ६३ (साखी, २)।
४— वही, पृ० ३४।
५— वही, पृ० ४८ (सा. ७)।
६— वही, पृ० १०४ (पद ५१)।
७— वही, पृ० १०६ (पद ५७)।
८— वही, पृ० १०१ (पद ४१)।
९— वही, पृ० १०२।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं को अूंचा नहीं को नीचा ।
जाका प्यंड ताही का सींचा ॥१०॥

अर्थात् "वस्तुत: न तो कोई अुच्च होता है न नीच होता है क्योंकि साधन और साध्य सबके समान ही हुआ करते हैं।" अतअेव, किसी मनुष्य को निकृष्ट श्रेणीका समझकर, अुसे अस्पृश्य मानना और छुआछूत का मनमाना ढोंग कर अुसके साथ दुर्व्यवहार करना ठीक नहीं। यदि छुआछूतका आधार पवित्रताका अभाव माना जाय तो वैसी अपवित्रता हमारे जन्मके दिनसे ही अनुभवमें आया करती है। कबीर साहब कहते हैं—

काहें को कीजे पांडे छोति विचारा ।
छोति ही तें अुपज्या सब संसारा ॥ टेक ॥
हमारैं कैसै लोहू तुम्हारे कैसें दूध, ।
तुम कैसै बाम्हन पांडे हम कैसै सूद ॥
छोति-छोति करता तुम्ह ही जाअे, ।
तौ ग्रभवांस काहें कौ आअे ॥
जनमत छोति मरत ही छोति ।
कहै कबीर हरिकी निर्मल जोति ॥४२॥ ११

अर्थात् "हे ब्राह्मण छुआछूतका विचार करनेकी आवश्यकता ही क्या है। जब हम देखते हैं कि यह भूतकी भाँति अुत्पत्तिके समयसे ही पिंड नहीं छोड़ती। जब ब्राह्मणीके स्तनसे निकलनेके ही कारण दूध, दूध नहीं समझा जाता और न शूद्राका दूध लोहूकी भाँति निंद्य समझा जा सकता है तो ब्राह्मण अेवं शूद्रकी विभिन्नताका आधार क्या होगा? छुआछूतका दोष मानना था तो गर्भमें आना ही ठीक नहीं था। छूत तो जन्म-मरण दोनोंमें लगी रहती है, परन्तु अुसके कारण, परमेश्वरकी निर्मल मूल ज्योतिमें किसी प्रकारका दोष नहीं आ सकता।" अिस कारण काल्पनिक पवित्रता का नाम लेकर, किसीको अस्पृश्य कह देना अुचित नहीं। अैसी पवित्रता यदि जीवनका लक्ष्य हो तब तो—

कहु पांडे कैसी सुचि कीजै,
सुचि कीजै तो जनम न लीजै ॥ १२

कबीरके छुआछूत विषयक सिद्धांत बहुत अूंचे आदर्शोंको दृष्टिमें रखते हुअे स्थिर किये गये हैं। मानव जातिके अन्तर्गत आनेवाले प्राणियोंके कर्त्तव्य अेवं अधिकार, अुनके मूलत: अेक ही अीश्वरीय ज्योतिके प्रतिरूप होनेके कारण, समान समझे जाने चाहिये। अतअेव वर्णव्यवस्था अथवा पवित्रताके काल्पनिक आधारोंके अनुसार मनुष्य-मनुष्यके बीच विभिन्नता दर्शानेके लिये भिन्न-भिन्न श्रेणियोंमें बाँधना अुचित नहीं प्रतीत होता। वास्तवमें वह बड़ा नहीं हो सकता जिसका कुल बड़ा समझ लिया गया है; बल्कि वही बड़ा समझा जाने योग्य है, जिसके कर्म अुच्च हैं और जो परमात्माको अपना आराध्य समझता है। सबको समान समझनेपर ही निरभिमानता आ सकती है और तभी अपना जीवन निर्मल बन सकता है। अिस प्रकार देखनेपर कबीरका हरिजन मानव जातिके लिये आदर्श स्वरूप है।

१०– वही,

११– वही, पृ० १०१, पादटिप्पणी।

१२. वही, पृ० ११३, पादटिप्पणी (पद ५०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीत

: श्री. वृन्दावन-नामदेव, साहित्यरत्न :

अन्तर पुकारता है ।

सुन्दर अजान मेरे ! अन्तर पुकारता है ॥
यादें अुभर रही हैं, कुछ तार हिल रहे हैं;
आँखें भरी-भरी हैं, नक्षत्र गल रहे हैं ।
रीते हृदय-गगनमें मनके विहग तिरे हैं
गीली कथा छिपायें, कुछ श्याम घन घिरे हैं ॥
करुणा भरे युगोंकी, 'केकी' पुकारता है ।
अन्तर पुकारता है,
सुन्दर अजान मेरे, अन्तर पुकारता है ॥

अुर-पीर यह हमें दे, करके विकल गये हो;
किस सान्ध्य-घन-घटामें छिपकर निकल गये हो।
अनजानसे विलग हो तुम सो गये कहां हो ?
किस दूरतम निलयमें तुम खो गये कहां हो ?
'टूटे-क्षितिज-किनारा, बनकर प्रलय समाअूं ।'
'कैसे कहां रमे हो ? कुछ तो पता लगाअूं'
मेरे विकल विरहका हर क्षण कराहता है ।
अन्तर पुकारता है;
सुन्दर अजान मेरे, अन्तर पुकारता है ॥

मेरे गुलाब सुन्दर, किस देशमें खिले हो ?
मेरे बहार मनहर, किस वेशमें मिले हो ?
तुम बोल दो कहीं भी, मैं ध्वनि समेट लूंगा ।
स्वरकी लहर लहरसे, मैं पुण्य भेंट लूंगा ॥
मेरी तनिक समझ लो, यह पीर है पुरानी
रह जाय मत प्रलय तक, मेरी व्यथा कहानी !
अन्तर-निनाद मेरा भर-भर पुकारता है
अन्तर पुकारता है;
सुन्दर अजान मेरे, जीवन पुकारता है ॥

आँचल पसार कलियाँ, परिमल लुटा रही हैं।
परियाँ प्रभात भरकी मधु गुनगुना रही हैं॥
सुकुमारिया मलयकी तरु झनझना रही हैं।
फूटी किरण क्षितिजसे भू-नभ जगा रही है।
'शबनम' अुघाड़ घूंघट, सावन मना रही है,
पलकें कमल कमलकी खुल-खुल लुभा रही है।
पर हाय! मन-भँवर क्यों रह-रह गुंजारता है?
अन्तर पुकारता है।
सुन्दर अजान मेरे—जीवन पुकारता है॥

जी चाहता तुम्हें पा दिलकी लगी बुझा लूं।
मन बीनपर चढ़ाकर, झनझन तुम्हें बजा लूं॥
कुछ प्राण-गीत गाकर, रूठे तुम्हें मना लूं
'अन्तिम-प्रलय' मिलनका, दीपक सँवारता है॥
सुन्दर अजान मेरे अन्तर पुकारता है ॥

अन्तर पुकारता है॥

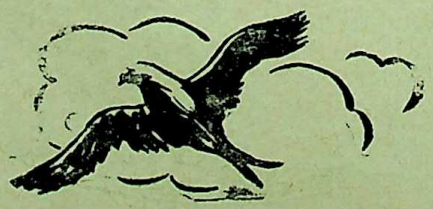

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिंजड़ा

: श्री अमरेंद्र :

विश्वेश्वरराव अपने खेतकी मेंडपर बैठा हुआ सन्ध्याके धुंधले प्रकाशमें अपने अतीत जीवनके पृष्ठोंको अुलट रहा था। अिन बारहों वर्षोंमें अुसकी अश्रुधाराकी गति कभी रुकी नहीं, शायद अिस दुःखाग्निमें झुलसनेवाले अुसके मनमें कोअी न कोअी आशा टिमटिमाती रही होगी। वह बीती घटनाओंको याद करके रोना ही जानता है। अुसने कभी यह नहीं समझा कि वह कभी अितना सुखी होगा कि जिसकी कल्पना स्वप्नमें भी नहीं की जा सकती। अुसके अनंत दुःख-समुद्रका भी कहीं किनारा है, यह अुसने कभी नहीं सोचा। अब भी अुसे अैसी आशा नहीं।

अिस टनाको गुजरे बारह वर्ष हुअे। लेकिन अुसका स्मरण हो आनेपर ताजी मालूम होती है। अुस दिन शहरसे अंधेरा होनेके बाद घर आया। अुसको कोअी भूत-सा लगा था। घरमें पैर रखते ही गरज अुठा, 'रजनी'! रजनी अुषाको झूलेमें लिटाकर लोरी गाती हुअी सुला रही थी। पतिका गर्जन सुनकर अेकदम सहम कर तुरन्त अुठ खड़ी हुअी। विश्वेश्वरराव की आँखें आग अुगल रही थीं। अुस दिन वह अेक नालिशमें हार गया था जिससे अुसे दस हज़ार रुपयेका नुकसान हुआ। जबसे अुसने फैसला सुना पागल-सा हो गया था। चिड़चिड़ाता हुआ घर आया। अपना सारा क्रोध और चिड़चिड़ापन रजनीपर अुतारने लगा। रजनीने पूछा, "अितनी देर क्यों हुअी आनेमें?" अुसके कानोंने कुछ सुना ही नहीं। क्रोधसे कांपते हुअे गलेसे गरज पड़ा, "तुम्हारा बाप जिंदा है या नहीं?" रजनी स्तब्ध रह गयी। मुंहसे बात न निकली। "बोलती क्यों नहीं? मेरे घरसे बाहर जाती है कि नहीं। अपने पितापर निकलनेवाले मेरे रुपये ला। जब तक रुपये नहीं लायेगी, मेरे आंगनमें पैर नहीं रख सकती। हाँ, जाती क्यों नहीं? जा बाहर।" रजनीको कुछ नहीं सूझा। मुंहसे बात तक न निकली। पति गर्दन पकड़कर निकालनेको तैयार हो गया। डरके मारे कांपती हुअी आवाजसे, "अुषा,....." कहा। "क्या? अुषा? हम दोनों मिलकर डूब मरें!" "बाहर जाती क्यों नहीं?" अैसा कहता हुआ विश्वेश्वर अुसपर टूट पड़नेको तैयार हो गया। कांपते हुअे हाथोंसे दस महीनेके शिशु अुषाको अुठाकर भयभीत और दीन नेत्रोंसे पीछे घूमकर देखती हुअी रजनी अुस घन अंधकारमें लीन हो गअी। ठकसे दरवाजा बंदकर विश्वेश्वरराव आरामकुर्सीपर पड़े ससुरपर मन ही मन खीझने लगा। रजनीके आभूषणोंके लिअे ससुरालसे मिले हुअे आठ हजार रुपये रजनीके पिताने खर्चकर डाले। अुनकी हालत बिगड़ गअी। तभीसे विश्वेश्वरराव रुपये लानेके लिये रजनीको सताने लगा। पतिसे बहुत पीड़ित होकर रजनी पितासे रुपया वसूल करनेके लिये मायके जाती और वहाँ अुनकी आर्थिक दशा देखकर कुछ कह न सकती, खाली हाथों पतिके पास लौट आती। रजनीकी परिस्थिति अुसके पितासे छिपी नहीं थी। लेकिन धनका प्रबन्ध न कर सकनेके कारण मन ही मन कुढ़ता रहता था। अपना सिर देकर भी रजनीके कष्टोंका निवारण करनेका अुसने निश्चय किया। अबकी बार विश्वेश्वरराव को यह आशा हुअी कि रजनी किसी न किसी तरह पितासे रुपये वसूल कर लायेगी। अेक महीना बीता, दो महीने बीते, लेकिन रजनीका कहीं पता नहीं। यद्यपि अुस दिन क्रोधावेशमें अुसने अुषाको भी बाहर निकाल दिया, परन्तु शांत होते ही अुसे दूसरा ध्यान आने लगा। सोचता ननिहालमें गिरती-पड़ती चलती होगी। तोतली बातें बोलती होगी। 'अम्मा' 'नान्ना' (पिताके लिये संबोधन) कहती होगी। घुंघराले बालोंके साथ खिल-खिलाकर हंसती होगी। "जाने भी दो, रजनीको लौट आनेके लिये पत्र लिख दूं।" यह खयाल आते ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ससुरके प्रति क्रोध फन फैलाकर फुत्कारने लगता। क्या वह अितना भी नहीं जानती कि अपने घर लौट आवे। कितने दिन रहेगी मायकेमें। जल्दी पितासे रुपये लेकर क्या अब तक वापस नहीं आना था ? अितने दिनोंमें अुसने अेक पत्रतक क्यों नहीं डाला ?

तीन महीने बीत गये। अेक दिन सुबह विश्वेश्वररावके जागनेके पहले ही किसीने दरवाजा खटखटाया। विश्वेश्वररावने अुठकर दरवाजा खोला तो अुसके ससुर सामने खड़े थे। विश्वेश्वररावने कुछ नहीं कहा। खुद वे ही अन्दर आये और अपनी थैली खूंटीपर लटकाकर जेबसे नोटोंका बन्डल निकालते हुअे, "बेटी रजनी!" कहकर बुलाने लगे। सूना घर अुस पुकारसे गूंजने लगा। वह पुकार सुनते ही विश्वेश्वरराव मानों पागल हो गया। "यह क्या है, रजनी मायकेमें है तो अुसका पिता यहाँ आकर अुसे क्यों पुकारता है।" ससुरने पूछा, "बेटी कहाँ गयी ?" विश्ववेश्वरके शरीरमें काटो तो खून नहीं। लड़खड़ाती बोलीमें कहा, "क्या वहाँ नहीं पहुँची ?" ससुरने अुत्तर दिया, "नहीं तो, वहाँ नहीं आयी। कब गयी थी ?" किसी तरह विश्वेश्वररावने धीमी आवाजसे कहा, "तीन महीने हो गये।" यह सुनते ही ससुर अेकदम ढेर-सा हो गया। अुसके हाथोंसे नोटोंका बण्डल छूट विश्वेश्वररावके पैरोंके समीप गिर पड़ा। अुसकी आँखोंसे अेकदम आँसू बहने लगे।

× × ×

विश्वेश्वरावने रजनी और अुषाके लिये देशका कोना-कोना छान डाला, लेकिन सब व्यर्थ ! घोर निराशा हुअी। सारा जीवन दुःखमय बीतने लगा। रजनी कहाँ गयी ? अुषाका क्या हो गया ? अिस जीवनमें क्या वह कभी अुनको देख सकेगा ? क्या कभी अुसका दुःख शान्त होगा ? क्या अुसके आँसुओंमें अितनी शक्ति है कि अुसके पापोंको धो सके ?"

खेतकी मेड़पर बैठकर विश्वेश्वरराव न जाने क्या-क्या सोच रहा था। पासमें अेक छोटा झरना कलकल नाद करते हुअे बह रहा था। सूर्यास्तके समयकी विचित्र किरणें अुस झरनेकी छोटी लहरोंपर नाचने लगीं। आकाश प्रशान्त था। पश्चिम दिशामें लाल बादल खूनसे लथपथ विजित सैनिककी भाँति स्थिर थे। अैसा मालूम हो रहा था मानों भीषण समरके बाद अेक प्रकारकी भयानक निस्तब्धता छायी हो। जाड़ोंकी ठंडी हवा अिस प्रकार शरीरको हिला देती थी मानों पुरानी स्मृतियाँ हृदयको झकझोरती हों। अपनेको अुत्तरीयसे ढककर विश्वेश्वरराव मेंडपर बैठा था। अुसके सामने पीपलके विशाल वृक्षके नीचे लम्बाड़ियोंकी झोंपड़ियाँ थीं। अुसी ओर अेक टक देख रहा था। भेड़ोंके झुंड खेतमें अिधर-अुधर चलते हुअे बीच-बीचमें चिल्ला रहे थे। नायकका बेटा अुनके बीचमें खड़ा होकर धमका रहा था।

पीपलके नीचे चूल्हा सुलग रहा था। घड़ेमें अुबलते चावलकी 'कुत् कुत्' की आवाज आ रही थी। अुन लम्बाड़ियोंका कुत्ता ठंडसे बचनेके लिये चूल्हेके पत्थरोंसे लगकर टाँगे फैलाये, दुम हिलाता हुआ लेटा था। लम्बाड़ियोंके बच्चे अपनी बोलीमें बातचीत करते हुअे झोपड़ीके बाहर खेल रहे थे। नायककी स्त्री चूल्हा फूंक रही थी। नायक चूल्हेके पास ही बैठकर शरीर गरम कर रहा था।

पासमें ही अेक बड़ा अलाव जल रहा था जिसके चारों ओर आसपासके खेतोंकी रखवाली करनेवाली लम्बाड़ी स्त्रियाँ आकर कुछ गाती हुअी गोलाकारमें घूमने लगीं। गानेके साथ-साथ वे थोड़ा नाचती भी थीं। अुनके पैरोंके नूपरोंकी रुनझुन और चूड़ियोंकी झंकारकी आवाज अेकसाथ सुनाअी पड़ती थी। नाचनेवाली स्त्रियोंके आकार मंद वायुमें धीरे-धीरे हिलनेवाली सुन्दर लताओंके समान थे, अुनके हाथ बड़ी फुर्तीसे अिधर-अुधर घूमते हुअे अुनके मुखोंपरसे अूपर-नीचे जाते थे। अुनके हाथोंकी अंगलियाँ पुष्पकी पखुड़ियोंके समान खिल जाती थीं। गाते और नाचते समय घूमनेमें ज्वालाके प्रकाशमें प्रति बार अेक स्त्री का मुख चमकता था। विश्वेश्वरराव यह सब अेकटक देख रहा था। वह चकित हो गया। अुस अलावके प्रकाशमें अेक स्त्रीके वस्त्रोंमें जड़े काँच अेकदम चमक अुठे। लटोंसे भरा अुसका मुख अेक बार दमक अुठा। कोमल होठोंपर मुस्कुराहट दौड़ गयी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौन है ? वह कौन है ? अपना पश्चात्ताप ही जलनेवाला अभाव है। वह चेहरा किसका है ? रजनीका है ? अुषाका है ? नहीं; नहीं; यह केवल भ्रम है। अितने वर्षोंतक रजनी कैसे जीवित रह सकती ? क्या मुझ जैसे नीचको अुषाको फिरसे देखनेका सौभाग्य मिलेगा ? सब भ्रम है। तो, वह मुख देखते ही मुझमें यह चंचलता पैदा क्यों हुअी ? क्या मेरा पश्चात्ताप देखकर विधाता करुणापूर्वक मेरी पत्नी और पुत्रीको वापिस देगा ? कभी नहीं, जो हो गया अुसपर किसीका बस नहीं।

अितनेमें किसीके जोरसे रोनेकी आवाज आयी। सब खेल-कूद बंद करके झोपड़ीके पास जमा हो गये। कांखमें अेक गठरी दबाये अेक बूढी वहाँ आयी। आते ही अेक लड़कीको गले लगाकर रोने लगी। लड़कीने भी अुसे गले लगाया और दोनों जोरोंसे रोने लगीं। यह देखकर सभी रोने लगे।

यह रोना सुनकर विश्वेश्वरराव अपने कल्पना-लोकसे लौट आया। अुसने पूछा, "नायक, क्या है यह ?", वह बोला, "कुछ नहीं बाबूजी, मेरी बूढी बहिन बहुत दिनोंके बाद मिली है।" आश्चर्यके साथ विश्वेश्वररावने पूछा, "फिर मिलनेपर खुश होनेके बजाय रोते क्यों हैं ?" नायकने जवाब दिया, "यह हमारे यहाँका शिष्टाचार है, बाबूजी। यदि अेक दलका कोअी आदमी छूट जाय तो फिर अिस जीवनमें न मिल सकेगा। यदि भगवानकी कृपासे फिर मिला तो अतिशय आनन्दसे सब रो पड़ते हैं।" विश्वेश्वररावको मालूम हुआ कि आनन्द और दुःखमें कितना सामीप्य है। वहाँसे अुठकर घरकी ओर चला लेकिन वह चेहरा अुसको भूलता नहीं था।

प्रतिदिन शामको विश्वेश्वरराव खेतपर जाया करता था। वह चेहरा देखते ही अुसका मन शांत हो जाता। कोअी अकथनीय सुख मानों अुसके हृदयको स्पंदित कर देता। अेक दिन रातको किसी तरह विश्वेश्वररावको नींद नहीं आयी। सामने दीवारपर अुषाका छः महीनेकी अुम्रमें खिचवाया हुआ माताके-साथका फोटो लटक रहा था। क्यों ? क्या नहीं हो सकता ? दुनियामें कितनी विचित्रताअें घटित नहीं होतीं ?....."छी यह भ्रम किसलिये ? मृग-मरीचिकाके पीछे क्यों दौड़ रहा है ? जीवनभर पश्चात्तापकी अग्निमें जलते रहना ही अपराधका अुचित दंड है अैसे पापियोंके लिये विधिके हृदयमें कभी दया नहीं होगी।" अिस तरह अुसका मन ही भर्त्सना करने लगा। अपनी व्यर्थकी आशापर लज्जित हो वह भारी हृदय लेकर सो गया।

सुबह हुअी। कितने दिनोंतक यह दुविधा ! अेक बार पूछ लेनेपर सब मालूम न हो जाता ? लेकिन पूछे भी तो कैसे ? क्या वे अुसको पागल नहीं समझेंगे ?

दिन काफी चढ़ आया। बाहरसे किसीने पुकारा, "बाबूजी" ! अुसके मनमें अुस पुकारकी अेक विचित्र गूंज हुअी। वह स्वर किसी पूर्व जन्मका परिचित-सा लगा; मानों रजनीने किसी दूसरे लोकसे पुकारा हो। बाहर आकर अुसने देखा। टकटकी लगाकर नयन भरकर देखा। अेक दूसरेसे सटी भौंहें, लच्छेदार बाल, सुन्दर नाक, चौड़ा ललाट, शीशेके समान स्वच्छ मुख, भालपर नाचनेवाली अलकें—कितना ही देखें, तृप्ति नहीं, होती। विश्वेश्वररावके मुंहसे बात नहीं निकलती। अुसकी दृष्टिसे बचनेके लिये लंबाड़ी लड़कीने अपना घूंघट खींच लिया। अुस बालिकाको क्या मालूम था कि अुसकी दृष्टिके पीछे किसीके हृदयमें नूतन भाव मचल रहे थे ?

"बाबूजी ! मेरे मामाने अनाज लानेको भेजा है" अुस लड़कीने आँगनमें खिले मन्दार पुष्पोंकी तरफ देखते हुअे कहा। बड़े यत्नके बाद विश्वेश्वररावने पूछा, "तेरा नाम क्या है ?" लड़की शरमा गयी। अुसने कहा, "सोनी।" विश्वेश्वरराव सोनीको देखते हुअे मन्दारके फूल तोड़ने लगा। अेक-अेक करके सब फूल तोड़कर अुसने सोनीको दिये। अुसका मुख अेक दम खिल अुठा। अुसको देखकर मानों विश्वेश्वररावके हृदयपरसे अेक भार अुतर गया। सोनीने बहुतसे फूल बालोंमें खोंस लिये और कुछ आँचलमें बाँध लिये। अुसका भोलाभाला आनन्द देखकर विश्वेश्वररावका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हृदय पिघला जा रहा था। सोनी अनाजकी बात नहीं भूली। अुसने फिर पूछा। जवाब मिला, "तू अुतना बोझ नहीं अुठा सकेगी, बेटी! अपने मामाको भेज।"

थोड़ी देरके बाद लंबाड़ियोंका नायक और पिछले दिनों आयी हुअी बूढी, दोनों आये। विश्वेश्वररावने निश्चय किया कि अुनसे पूछकर वास्तविकता जान ली जाय। लेकिन अुस बातको कैसे चलाया जाय? अुसने प्रश्न किया—

"सोनी क्यों नहीं आयी तुम्हारे साथ?"

"झोंपड़ीके पास भेड़ोंको देखती है, बाबूजी! वह और मेरा बेटा खेतमें भेड़ें चराते हैं।" लंबाड़ी नायकने कहा। अिसपर बूढीने अनपेक्षित भावसे कहा, "दोनों कबूतरोंकी जोड़ीके समान खुश रहते हैं। भूख-प्याससे बेखबर होकर भेड़ें चराते हैं।"

"सोनी कितने सालकी है?"

"शायद ग्यारह सालकी होगी, बाबूजी।" नायकने अुत्तर दिया। "नहीं बाबूजी बारह सालकी होगी... ना, ना, तेरह सालकी बाबूजी! अुस समय वह चन्द महीनोंकी बच्ची थी।" बूढीने प्रतिवाद करते हुअे कहा। यह सुनकर विश्वेश्वररावका मन अेकदम अुछल पड़ा। झट अन्दर जाकर अुषा और रजनीका फोटो अुठा ले आया। आँखोंके नजदीक रखकर बूढीने अुसे गौरसे देखा और कहा, "नायक! यह तो सोनीका-सा मालूम होता है। यह फोटो और वह दोनों अेक ही हैं।" नायकने भी ध्यानसे देखकर कहा, "बाबूजी! सोनीका फोटो कब खिचवाया?"

विश्वेश्वररावको मालूम नहीं हुआ कि क्या कहना चाहिये। बारह वर्षके पहले अुस रातको अुसने जो गुरुतर अपराध किया, क्या वह अुससे कहते नहीं बना। अंतमें पूछा, "सोनी कहाँ पैदा हुअी?" नायक बोलनेमें हिचकिचा रहा था। अितनेमें बूढीने कहा, "हमको अनाज देकर भेज दीजिये, बाबूजी!"

"हाँ अनाज दूँगा। लेकिन सोनीके बारेमें कुछ पूछूंगा।"

"जो बीत गया सो बीत गया। अब अुसका क्या, बाबूजी?"

"नहीं, तुम्हें बताना होगा। सच कहो तो बड़ा अिनाम दूंगा।" विश्वेश्वररावने लोभ बताया।

बूढीने अपने कपड़ेकी जेबसे अेक छोटा-सा काला रेशमी वस्त्र निकाला। गरदनके पास सुनहले धागेसे दो अक्षर सिले हुअे थे, "अुषा!" "हाँ वही नाम है। अुषा ही तो है। यह रजनीके हाथसे सिला नाम है।" सारा भूतकाल विश्वेश्वररावपर अेकदम टूट पड़ा। अुस रातको अुषाके शरीरपर वही गौन था।

अुसका शरीर पुलकित हो रहा था। बूढी सारी कहानी बड़ी कुशलतासे कहती जा रही थी।

वह रात्रि – जब अुसने रजनीको घरसे निर्वासित किया स्थिति यहाँ तक आयेगी, विश्वेश्वररावने अिसकी स्वप्नमें भी कल्पना नहीं की। नालिशमें हार जानेकी चिढ़ और ससुरके रुपये न देनेका क्रोध अुस दिन रजनीपर अुतर पड़ा। वह यह नहीं सोच सका कि अुस क्रोधका अितना भीषण परिणाम निकलेगा।

× × ×

लंबाड़ियोंने अपना बोरा-बिस्तरा बाँधकर अुसदिन तड़के ही अुस गाँवसे जानेका निश्चय किया। रात अधिक बीत गयी। कहींसे रोनेकी अेक आवाज आयी। बूढी तंद्रामें करवट बदलते हुअे आवाज सुनकर अेकदम अुठ बैठी। दलके सब बच्चे सो रहे थे, खुर्राटे लेकर। फिर कहाँसे आयी यह आवाज? आवाज और भी जोरसे सुन पड़ी। वह अुत्तर दिशाकी ओर चल पड़ी और झरनेके पास पहुँची। बाढ़के कारण झरनेमें पानी बड़े वेगसे बह रहा था। किनारेपर ओसेसे भींगी घुटनों तक लंबी हरी घास शरीरमें लगनेसे शरीर ठिठुरा जा रहा था। सफेद बादलोंसे छनकर चाँदकी मंद किरणें ओसकी बूंदोंपर पड़ रही थीं। पैरमें 'ठक्' सा लगा। मीलका पत्थर था। जिसपर अेक छोटी बच्ची जोरोंसे रो रही थी। बच्चीका सुनहला मुख, काली अलकें, काला वस्त्र, अिन सबने बूढीके मनको विवश कर दिया। तुरन्त अुसे अुठाकर हृदयसे लगा लिया। बच्चीको लेकर अुस गाँवसे तड़के ही चली गयी। तबसे अुसे बड़े प्यारसे पाला और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोनी नाम रखा। यह बात बारह साल पहलेकी थी। अितनी लम्बी अवधिमें अुस दलके लम्बाड़ी विश्वेश्वर-रावके गाँवमें दुबारा नहीं आये। अिसी साल आये थे।

× × ×

अब विश्वेश्वररावसे रहा नहीं गया। आंसुओंकी धारा बाँध तोड़कर अुमड़ पड़ी। कम से कम अुषाको अपने लिये बचानेके कारण मनमें विधाताको बहुत धन्यवाद दिया। बच्चीके मिलनेके साथ प्रिय पत्नीकी मृत्युका ज्ञान होनेसे दुःख भी बहुत हुआ।

"मेरी बेटी अुषा! आओ। मुझे मालूम नहीं था कि मैं अितने दिनों तक क्यों जीवित रहा। अब मालूम हुआ कि किस टिमटिमाती आशाके सहारे रोते हुअे मैंने अितने दिन बिताये। पता लगा कि भविष्यमें किसके लिये मुझे जिन्दा रहना होगा।"

सोनी विश्वेश्वररावके घर आ गयी, मानों बारह लम्बे वर्षोंके बाद अुसके अंधकारमय घरमें अुषाने झाँका हो। विश्वेश्वररावने अुसके लिये तरह-तरहकी साड़ियाँ, विचित्र-विचित्र अलंकार आदि सारी सामग्री प्रस्तुत कर दी। यह सब सामग्री देखकर सोनी चकरायी। लम्बाड़ियोंका रंग-बिरंगा मोटा घाघरा अुतारकर साड़ी पहनते हुअे अुसको कुछ अखरा। अितने दिनोंका झोपड़ा छोड़ अेकदम अलग पड़ गयी। साड़ी पहनी, गहने पहने; अलकोंसे लटकनेवाली कौड़ियां निकालकर बाल सँवारे; सामनेके शीशेमें अपना चेहरा देखा तो अैसी डर गयी मानों अपना लोक छोड़कर दूसरे लोकमें आ गयी हो। बोरोंके समान मोटे कपड़ोंको दोनेके अभ्यस्त शरीरपर ये महीन कपड़े नहींके बराबर थे। अैसा मालूम हो रहा था कि मानों वह नंगी हो। पहलेकी तरह लंबाड़ी लोगोंके समान ही रहती तो कितना अच्छा होता। अितने दिनों तक जिस लंबाड़ीके यहाँ पली, अुसको छोड़कर अिस अपरिचित व्यक्तिके पास क्यों आयी? अिसके कहनेपर ही अिसे पिता कैसे मान लिया जाय?

सोनीके अुषाके रूपमें आगमनसे विश्वेश्वर फूला न समाता था। लंबाड़ी लड़कीकी तरह पली हुअी अपनी बेटीको अेकदम वह नव युगकी युवती बनाना चाहता था। अिस आतुरतामें अुसे सोनीके हृदयमें झाँकनेका अवसर नहीं मिला।

दिन बीत रहे थे। अिस गाँवसे दूर किसी अैसे प्रदेशमें जाकर जहाँ मेरी बेटीका पूर्व अितिहास अज्ञात हो, अुसे विद्या, संगीत आदि सिखलाअूँगा। अच्छे वरको देखकर अिसका विवाह कर दूंगा। दामाद और पुत्रीके यहाँ सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करूँगा। अितने दुःख और कष्टोंके बीच भी मैं जिस सुखके लिये जीवित रहा अुसका पूरा अुपभोग करूँगा। विश्वेश्वरके मनमें अैसी कल्पनाअें घर करने लगीं। लेकिन अुषा- कितना भी प्रयत्न किया जाय- अुसके साथ नहीं हिलती। 'बाबूजी'! कहती थी। प्यारसे 'अुषा' नहीं 'सोनी' कहनेपर अेक ही पुकारमें बोलती थी। 'अुषा' कहकर दस बार पुकारनेपर भी नहीं बोलती। लंबाड़ियोंकी झोपड़ीमें रहते समय अुसके मुखपर जो आनंद खेलता था, अब वह गायब हो गया था। अुसके मुखपर यह साफ दीखता था कि अुसके हृदयमें कोअी पीड़ा क्रीड़ा कर रही है।

वह पीड़ा क्या है? बड़ा महल, पिताका असीम प्रेम, पर्याप्त धन, आवश्यकतासे अधिक अलंकरण सामग्री अिन सबके होते हुअे भी पीड़ा किसलिये? खेतोंमें स्वतंत्रतासे विहार करनेवाले तोतेको पिंजड़ेमें बंदकर अुसे यदि मीठा दूध-भात खिलाया जाय, मीठे और स्वादिष्ट फल खिलाये जायँ,—तो भी कअी दिनों तक पंखोंसे, चोंचसे और नाखूनसे पिंजड़ेकी शलाकाओंमें टपटप चोंच मारता ही रहता है। मौका मिल जाय तो फूरंसे अुड़ जाना चाहता है। क्या पिंजड़ेमें सुख नहीं? नीले आसमानके बीच नयी-नयी कोंपलोंसे भरे खेतों और कलकल नाद करनेवाले झरनोंके निकट विहार करनेवाले तोतेको ही सोनीकी पीड़ा विदित हो सकती है। तोतेकी सहानुभूतिमें ही सोनीको अपनी वेदना दिख सकती है।

ठुमुक-ठुमुक चलती तोतली बोलीमें माँ' कहती हुअी, वह अुस लंबाड़ी बूढ़ीके चारों ओर घूमती थी। अुसने आँखोंमें बिठाकर अुसकी रक्षा की थी। बचपनसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी ही अुमरके नायकके बेटेके साथ खेतोंमें अुछली-कूदी। अेक वर्षणके लिये भी अेक दूसरेको नहीं छोड़ा– दोनों दिनभर भेंड़ें चराते और आकाशपर आनंद-विहार करनेवाले पक्षियोंकी तरह खेतोंमें घूमा करते। जबतक नायकका बेटा नहीं खाता तबतक सोनीके गलेके नीचे अेक कौर भी नहीं अुतरता। धूपमें, वर्षामें, अेक साथ गाँव-गाँवमें घूमनेवाले, अुन दोनोंमे गहरा स्नेह हो गया। छोटा नायक जब खेतमें खाद बिखेरता रहता, तब सोनी अुसके पीछे भेड़ोंकी देखरेख करती। नायक जब भेड़ोंको लौटाता रहता, तब वह अुन्हें डराकर अिधर-अुधर दौड़ाती और जब नायक अुनको अेकत्र करनेको दौड़-धूप करता तो वह खिलखिलाकर हंस पड़ती। जब सोनी भेड़ोंके बाल कैंचीसे काटती रहती तब नायकका बेटा मोटर हार्नकी आवाज करता। भेड़ें घबराकर सोनीके हाथसे छूट भाग जातीं। सोनी पकड़नेका प्रयत्न करती। नायकका बेटा ठठाकर हंस पड़ता। अिस प्रकार दोनोंके मन आपसमें लिपट गये।

\+ + + =

जिस दिन सोनी गयी अुसी दिन बूढी लंबाड़ीने खाना-पीना छोड़कर खाटकी शरण ली। छोटा नायक पागल-सा हो गया। काममें जी नहीं लगता। याद दिलानेपर न जाने क्यों आँखोंसे आँसू बहाता। मानों अुसके हाथ-पैर टूट गये हैं।

शामको विश्वेश्वर अुषाके साथ लंबाड़ियोंकी झोंपड़ियोंकी तरफ सैर करनेके लिये निकला। अिस नये वेषमें सोनीको सब लंबाड़ी अेक टक देख रहे थे। अुस बूढी लंबाड़ीने धीरेसे सोनीको अेक बार गले लगाया और जोरोंसे रोने लगी। सोनी भी रोने लगी। यह देखकर विश्वेश्वरके हृदयकी धड़कन बढ़ गयी। अुसने पुकारा "अुषा ! चल घर चलें।" पुकार सुनकर सोनी डरके मारे कांप अुठी। अुसकी आँखें छोटे नायकको ढूंढ रही थीं जो अेक पेड़की आड़में खड़े होकर आँसू पोंछता सोनीको देख रहा था। अुसका चेहरा देखते ही अुषाकी आँखोंसे आँसू बहने लगे। अुसको लगा कि वह सारा वेष अुतारकर अेकदम छोटे नाककी आँखें पीछेसे बंद कर ले।

अितनेमें पीछेसे विश्वेश्वरने फिर पुकारा, "बेटी अुषा ! आओ अंधेरा हो रहा है। घर चलें।" पुकारनेको तो अुसने पुकारा, लेकिन अुसका मन व्यथित हो गया। सोचा अिस झोंपड़ीके सब लोगोंको कितना दुःख पहुँचा रहा हूँ। बचपनमें पाल-पोसकर जिसने बड़ा किया, अुस बूढीका हृदय कितना दुःखी हो रहा है। अिस झोंपड़ीको छोड़कर आनेमें खुद अुषाको कितना दुःख होता है।

\+ + +

अुषा कमरेमें शीशेमें देखकर बाल सँवार रही थी। पीछेसे आकर विश्वेश्वरराव खड़ा हो गया। अुषाने अुसको नहीं देखा। शीशेमें अुसने अुषाका मुंह देखा। अुसकी दोनों आँखें अश्रुपूरित थीं। कोअी दुःख अुसके रूपको ढँके हुअे था। यह देखकर विश्वेश्वररावके हृदयमें मानों किसीने बर्छी मार दी। अुसे लगा कि अुषाके अिस दुःखका कारण खुद वही है। दोषीकी भाँति चुपचाप सिर झुकाये बाहर चला गया।

विचारोंकी श्रृंखलाने विश्वेश्वररावका सिर चकरा दिया। जब कोअी पिता यह अनुभव करे कि अुसकी संतानके दुःखका कारण वह स्वयं है, तो अुससे कैसे सहा जाय ? सारा जीवन जिसने दुःखमें बिताया अुसको आनंद न मिले तो न सही, लेकिन तितलीके समान आनंदसे विचरनेवाली अपनी बेटी सोनीको दुःख पहुँचाना कितना भीषण कार्य है। अपनी बेटीको सुख पहुँचानेके लिअे ही तो सब कुछ करता हूँ। लेकिन मेरा सारा प्रयत्न अुसके दुःखका कारण बनता है। तब मैं क्या करूँ ?

न जाने कितनी देरतक अिस प्रकारके विचारोंमें अुलझा रहा। अुठकर अुषाके कमरेमें गया। कमरेके अेक कोनेमें लंबाड़ी कपड़े अलंकार आदि पड़े थे। अुषा अुनको प्यारसे देखती अुनपर हाथ फेरती फूट-फूटकर रो रही थी। अविरल अश्रुधारा बह रही थी। तुरंत विश्वेश्वररावने बेटीको अपने हाथोंमें अुठाकर गले लगाया। अपने दुपट्टेसे अुसके आँसू पोंछे। दुःखमें भी विचित्र रूपसे सुन्दर दीखनेवाले अुसके मुखपर प्यारसे हाथ फेरा। अलकें हटायीं और अुसे चूम लिया। कहा, "रोती हो बेटी !" न जाने अुषा जानती है या नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि अुस चुंबनमें पिताका संतप्त हृदय छिपा हुआ है। पिताका प्रेम अुसे पिंजड़ा बनाकर कैद नहीं करेगा। अुसको पंख फैलाकर फुर्रसे अुड़ने देगा।

पिंजड़ेके टुकड़े-टुकड़े हो गये। अन्दर तड़फानेवाला तोता फुर्रसे अुड़ गया। आनन्दसे अपनी जोड़ीके साथ किलकारियाँ मारता हुआ अुड़ गया।

अुषा फिरसे सोनी बन गयी। सोनी और छोटे नायककी शादी हो गयी। शादीके दिन बूढी लंबाड़ी फूली न समायी। अुनको आशीर्वाद देकर स्वर्ग सिधारी।

× × ×

विश्वेश्वररावने अपनी सारी जायदाद बेटीको दे दी। अुसको कृत्रिम सभ्यतासे भरा यह संसार अेक बड़े पिंजड़ेके समान जान पड़ा। "बेटी मुझे अपने साथ नहीं ले चलेगी? अब मैं अिस पिंजड़ेमें नहीं रह सकता।" यह कहता हुआ विश्वेश्वरराव भी लंबाड़ियोंमें शामिल हो गया। अपनी बेटीका मुख देखकर न जाने अुसे कितना आनन्द मिलेगा। न जाने किस हरे खेतकी मेंडपर पेड़ोंकी शीतल छायामें अपनी प्यारी बेटीका मुँह देखता हुआ सुखसे प्राण त्यागेगा। बेटीने अपने लिये जो आँसू गिराये अुनकी प्राण पणसे रक्षा करके अुस लोकमें यदि कभी रजनी मिले तो दीनतासे प्रार्थना—करेगा, 'देख रजनी! मेरी बच्चीने मुझे क्षमा कर यह आँसूका अुपहार दिया है। ये देख मेरे 'पापा' * की आँखोंके मोती! क्या तुम भी कभी मुझे क्षमा नहीं करोगी? बोलो ना।"

* तेलुगूमें बच्चोंके लिये प्यारका संबोधन।

(तेलुगुसे अनूदित, अनु०— श्री चावलि सूर्यनारायण मूर्ति साहित्य-रत्न)

दर्पणकी साध

: श्रीमती शान्ति, अेम. अे. :

वह लड़की थी
भंगिनकी,
साँवरी, सलोनी;
यौवन अुसपर अनुरक्त था!
वह चलती तो लगता
मानों कोअी नर्त्तकी
जाती हो अुड़ी-अुड़ी
संगीतके तालपर!
जब वह देखती
आस-पास
सजी बनी तरुणियोंको
लेती वह ठंडी साँस;
अुसके मनमें
अुठती जाग
अेक विचित्र आग,
थी वह आतुर-सी
यह देखनेको
कि वह दिखती है कैसी!
ले आयी थी वह
दर्पण अेक
पैसे चार फेंक;
जिसमें मुंह कभी
चौड़ा दिखता,
कभी लंबा,
कभी तिरछा।
अुसके घरके पास ही
था अेक बंगला,
फूलोंसे सजा;
वह झाँक-झाँककर
देखती थी भीतर;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रह जाता था
स्तब्ध अुसका अंतर
देख अुतने वैभवको !
अेक दिन
जलती थी दोपहर
लू थी झुलसाती लहर
फिर भी वह अुठी सिहर
और कंपित चरणोंसे
चल दी बंगलेकी डगर !
"हाँ ! हाँ ! देखा अिसी ओर
किन्तु हाय हो न शोर।"
अिसलिये दबाके पाँव
बढ़ी वह कमरेकी ओर;
सामने दर्पण था
बड़ा-सा।
अुसने मुग्ध होकर
मुख देखा,
देखी पतली कमर;
अंग-अंग देखा
विस्मयसे निहारकर।
तब ही अुधरसे
चोरीकी ताकमें
निकली अेक बालिका।
जिसका मन अुलझा था
फलोंकी टोकरीमें।
देख लिया अुसने
भंगिनको
और चिल्लायी वह
जोरसे
"चोर है।"
जमा हो गये वे
जो सोये थे
पंखोंके नीचे चैनसे।
"सामान देख लो !"
"कुछ ले तो नहीं लिया ?"
"नहीं; किन्तु लेती कुछ अुठा !"
"न जाने क्या ?"
"दुष्टा है और चोर !"
कहकर लिया अुसे घेर
डांटा, दी गालियाँ।
किन्तु हाथसे
न मारा अुसे।
क्या वे दयालु थे ?
कभी नहीं !
क्योंकि अुसे छूनेसे
घिनाते थे !
वह किशोरी
लांछित होकर भी
संतुष्ट थी।
आंखें थीं भरी-भरी
किन्तु अधरोंसे
अुलझती मुस्कान थी।
दर्पणमें देख वह
अपनी छबिको,
भूल गयी ग्लानि सब
भागकर
पहुँची घर
माँके गलेमें डाल
दुलारसे दोनों कर
बोली बड़े प्यारसे,
"माँ री ! मैं कितनी सुन्दर !"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रिटेनकी सांस्कृतिक विरासत—३ :

वैज्ञानिक देनकी ऐतिहासिक पार्श्वभूमि

: श्री ओमप्रकाश आर्य :

ब्रिटेनकी सांस्कृतिक विरासतमें वैज्ञानिक देनका अेक बड़ा स्थान रहा है और है। आज जिसे हम पश्चिमी सभ्यता या "नयी रोशनी" कहते हैं, अुसके लानेमें ब्रिटेनने बहुत मदद दी है। जैसा कि हम अिस लेख-मालाके पहले दो लेखोंमें बता चुके हैं, संस्कृतिके दो महान् स्तम्भोंमें कला और विज्ञान साथ-साथ आते हैं और अिन दोनोंका मूल स्रोत मानवीय कल्पना–शक्ति है। अुस दृष्टिसे ब्रिटेनमें वैज्ञानिक प्रगतिकी अनिवार्यता और पारस्परिक अेकता स्वतः सिद्ध हो जाती है। परन्तु यदि आप आजके ब्रिटेनपर नज़र डालें तो आपको आश्चर्य होगा कि यहाँ विज्ञान और कला दोनोंको अलग-अलग करके देखनेका प्रयत्न किया जाता है। मैं समझता हूँ कि सड़नशील पूंजीवाद ही जनताके मस्तिष्कोंमें विज्ञान और कलाके सामंजस्यताको पनपने नहीं देना चाहता और दोनोंको अलग-अलग रखकर अुनपर अपना नियन्त्रण रखना चाहते हैं। परन्तु यदि हम ब्रिटेनकी सांस्कृतिक विरासतको ठीक तरहसे समझना चाहते हैं तो हमें अुन्हें अेक ही पार्श्वभूमिमें देखना होगा।

अिसका यह मतलब कदापि नहीं कि विज्ञान और कलामें कोअी भेद ही नहीं। विज्ञानका अुपयोग प्रकृतिका पुनर्निर्माण करनेमें और कलाका मनुष्यका पुनर्निर्माण करनेमें होता है। विज्ञानका अुपयोग बाह्य होता है, कलाका आन्तरिक। अिसलिये समाजके सामान्य गतिशील आन्दोलनमें विज्ञान कलासे कुछ भिन्न दूरीपर स्थित होता है। विज्ञानका सम्बन्ध हमारे आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक रद्दोबदलके साथ बहुत घनिष्ठ है। विज्ञान हमारी अुत्पादक शक्तियोंके विकासमें सीधी मदद पहुँचाता है, परन्तु कलाके साथ अैसी बात नहीं। अिसी कारण हम विज्ञान और कलाके अुपादानोंको अेक स्तरपर, अेक रूपमें, अेक गहराअीके साथ नहीं देख पाते। अिनका सामंजस्य और अिनकी अेकता मानव जीवन और सामाजिक प्रगतिकी सम्पूर्णतामें ही है।

अिस बातको ज़रा और गंभीरताके साथ देखिये। अेक बढ़ी हुअी पूंजीवादी या समाजवादी अथवा साम्यवादी अर्थव्यवस्थाओंमें, आर्थिक अुत्पादनमें जो औद्योगिक परिवर्त्तन होते हैं, वे अधिकतर विज्ञानके द्वारा ही संभव हैं। अिस प्रकार विज्ञान जीवनके भौतिक आधारोंके द्वारा समाजमें प्रवेश पाता है। जिन वस्तुओं और सेवाओंका हम अुपयोग करते हैं, अुनमें मूर्त्त रहता है। नये-नये पदार्थ, नये कपड़े, नयी दवाअियाँ, ताप, शक्ति और यातायातके नवीन साधन रेडियो और टेलीविजन आदि घरोंमें और कारखानोंमें हम बिना वैज्ञानिक अुपादानोंसे परिचय प्राप्त किये नहीं रह सकते हैं। साथ ही कलाकी अपेक्षा विज्ञान मानवीय चेतनासे अधिक दूर रहता है। कला आँख और कानके सामने सीधे तरीकेसे बोलती है परन्तु विज्ञान अेक अपर माध्यम द्वारा, अपने पदार्थोंके प्रभावोंके द्वारा अपने विचार व्यक्त करता है, और कितनी ही दफे अिन वैज्ञानिक अुपादानोंका प्रयोग करनेवाले या प्रचारक यह जान नहीं पाते कि अिनके लानेमें कितना अधिक और किस किस्मका वैज्ञानिक ज्ञान काममें लाया गया है।

अितना जान लेनेके बाद हम अपनी कहानी आसानीसे शुरू कर सकते हैं। आज दुनियामें जो आधुनिक विज्ञान और औद्योगिक प्रगति देखी जाती है अुसके लानेमें ब्रिटेनका बहुत हाथ है। ब्रिटेनका अितिहास देखनेसे अिसके मुख्य कारणका पता चलता है। गिरजाघरों और सामन्तोंके तत्वावधानमें जो वैज्ञानिक प्रगति हुअी वह अुस समयकी आर्थिक प्रणालीसे संबद्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं थी। परन्तु आधुनिक औद्योगिक समाज पूंजीवादी नवपरिवर्त्तनके साथ आगे बढ़ा। विज्ञान यद्यपि ब्रिटेनने पूंजीवादके जन्म या प्रारंभिक निर्माणमें कोअी बड़ा भाग अदा नहीं किया तो भी प्रारंभमें पूंजीवादके प्रगतिशील और परंपराविरोधी होनेके नाते अुसके ढाँचेमें बहुत अच्छी तरह फिट हो गया। ब्रिटेनमें सबसे पहले व्यापार और अुद्योगने ही नैतृत्व संभाला। विज्ञान पीछे आया।

मोटे तौरसे यह कहा जा सकता है कि १७ वीं और १८ वीं सदीमें विज्ञानने अुद्योगसे नये पाठ सीखना शुरू किया। १९ वीं सदीमें अुस सबकने कुछ मुनाफा देना शुरू किया और २० वीं सदीमें विज्ञान हमारी संपूर्ण अुत्पादन-मशीनका अेक आवश्यक अंग बन गया। चूँकि पूंजीवादी अुत्पादनकी शुरूआत सबसे पहले ब्रिटेनमें हुअी और सबसे पहले अिसने ही दुनियाके बाजारोंपर अपना रोब गालिब किया, अिसलिअे ब्रिटेनमें ही सबसे अधिक वैज्ञानिक प्रगति भी हुअी।

यहाँ आकर हमें अेक बड़े तथ्यका सामना करना पड़ता है। अेक ओर जहाँ साहित्य और कलाओंकी प्रगतिमें पुरानी परंपराओंके रहते हुअे भी बुर्जुआ विचारधाराओं और आशा-आकांक्षाओंने मुख्य कार्य किया वहाँ ब्रिटेनमें विज्ञानके क्षेत्रमें अैसी बात नहीं हुअी। अपेक्षाकृत यह अधिकतर जनताकी कृति ही रहा।— मल्लाहों, किसानों और कारीगरोंकी कृति। पूर्व-वर्ग-समाजमें यद्यपि कार्य-विभाजनमें विशेषता थी तो भी ज्ञानका विभाजन या वर्गीकरण नहीं किया गया। संपूर्ण ज्ञान और कारीगरी समूची जातिकी बपौती अेवं थाती थी। जबसे वर्गवादी समाजका आविर्भाव हुआ तबसे यह बात नहीं रही। अेक वर्गने अलग होकर दूसरोंकी मेहनतपर जीवन बसर करना शुरू कर दिया। अुस वर्गने राजनीतिक ताकत अपने हाथमें संभाली और दर्शन तथा धर्मके अुच्चतर ज्ञानका ठेका ले लिया। फिर भी बाह्य प्राकृतिक जगत्का ज्ञान और व्यावहारिक नियन्त्रण अिनके हाथमें न रहकर कारीगरों और किसानोंके हाथमें रहा? यह हालत तबतक रही जबतक बृहदाकार अुद्योगोंका सूत्रपात नहीं हुआ।

अिन अुद्योगोंके आनेके साथ कारीगरों और किसानोंकी व्यावहारिक शक्ति अधिक बढ़ी। अुसी अनुपातमें समाजकी शोषक श्रेणीको अुनकी विशेष सलाह माननेको मजबूर होना पड़ा। अिस विशेषज्ञ श्रेणीका ज्ञान अधिक नहीं था फिर भी व्यवहारमें अिसकी जरूरत बहुत अधिक पड़ती थी और आज भी पड़ती है। यह सही है कि अुस समय भी खगोल, चिकित्साशास्त्र और रसायनशास्त्र जैसी चीजें शासक वर्गके हाथमें केन्द्रित थीं, तो भी जैसे-जैसे समाजकी अुत्पादक शक्तियोंका गुणमूलक विकास हुआ, वैसे-वैसे ज्ञानके ये अंग बाहरी तड़क-भड़कके रूपमें शासक वर्गके हाथमें होते गये और अिनका वास्तविक अुपयोग रोज़-बरोज़ कम होता गया। जैसे-जैसे पूंजीवादी अुत्पादन बढ़ा वैसे-वैसे व्यावहारिक ज्ञान भी बढ़ा और अिसीलिअे आधुनिक विज्ञानके विकासका प्रेरणास्रोत मज़दूर या कामगार श्रेणी रही। यह बात जैसे १९ वीं सदीमें सच थी वैसे ही आज भी है।

विज्ञानका अेक बहुत अधिक प्रयुक्त मार्ग शक्तियों अेवं पदार्थोंके परीक्षणात्मक अध्ययनका है जो दूसरे शब्दोंमें ज्ञानके क्षेत्रमें हस्त-कार्य या हस्त-कौशलका पर्याय कहा जा सकता है। अिसीलिअे विज्ञानने सदा कारीगर और कामगारका अनुसरण किया। यह कोअी आकस्मिक घटना नहीं थी। आधुनिक विज्ञानका सबसे पहला विकास १४ वीं सदीमें अिटलीके फ्लेरेंस नामक नगरमें सम्भव हो सका जहाँ कि अुस जमानेमें अेक संगठित कामगार श्रेणी थी, जो कि कुछ अरसेतक राज्य भी कर चुकी थी। जब सामन्ती शक्तियोंने अुस संगठनको नष्ट कर डाला तो विज्ञान खिसककर अुन देशोंकी ओर चला गया जहाँ कारीगरों और कामगारोंकी अिज्जत अधिक थी। सबसे पहले अिटलीसे जर्मनी गया, वहाँसे बेल्जियम और हालैंड और तब कहीं सोलहवीं सदीमें अिसकी नींव ब्रिटेनमें पड़ी।

ब्रिटिश विज्ञानमें हम तीन महान् युगोंको ले सकते हैं। पहला युग था १७ वीं सदीका हार्वे से न्यूटनका युग। रायल सोसाअिटीकी स्थापनाका युग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरा युग प्रारम्भ हुआ १८ वीं और १९ वीं सदीमें जब कि अुद्योग और कृषिमें क्रांतिकारी परिवर्त्तन हुअे। प्रीस्टले, वाट, डार्विन और फैराडे अिसके कुछ मुख्य नेता थे। तीसरा युग आजके ब्रिटिश विज्ञानका युग है। रदरफोर्ड, डिरेक, हौपकिन्स और शैरिंगटनका युग। जीवित और जड़ पदार्थोंकी प्रकृति, आंतरिक रचना, आकार और विकारको समझनेका युग। परमाणु और कीटाणुका युग।

परन्तु अिन तीन युगोंसे पहले भी ब्रिटेनमें विज्ञानका अेक आदरणीय पूर्वकाल था। मध्य युगमें ब्रिटेनने रोगर बैकन, डन स्कौटस, विलियम औफ औछेन जैसे वैज्ञानिक विचारक पैदा किये जिन्होंने टौमस अेविवनासकी अरस्तूनुमां विचारधाराका सख्त विरोध किया। अिन विचारकोंने विश्वको जैसा है अुसे वैसा ही मान लेनेसे अिन्कार किया। अिन्होंने कहा कि मनुष्य प्रकृतिमें परिवर्त्तन कर सकता है। अिसी प्रकार आज जिसे हम आधुनिक काल कहते हैं, अुसके प्रभात-कालमें ज्यौफरी चौसर नामक अेक महान् व्यक्ति हुआ। दुनिया अुसे अेक महान् कविके रूपमें जानती है जिसने "कैन्टरबरी टेल्स" नामक पुस्तक लिखी। परन्तु वह तो लोकप्रिय विज्ञानका अेक बहुत बड़ा सूत्रधार भी था। हाल ही में अुनकी लिखी अेक हस्तलिपि प्रकाशमें आयी है। नाम है "अिक्वेटोरियल प्लेनेटरी" आंग्ल भाषामें यह विज्ञानकी पहली लोकप्रिय पुस्तक समझी जाती है। यह सरल भाषामें आम जनताके व्यावहारिक अुपयोगके लिये लिखी गयी थी। आज हम देखते हैं कि चौसर राष्ट्रीय संस्कृतिके अुन अुन्नायकोंमें था जो जनताकी भाषाका सच्चा महत्त्व समझ पाते हैं। अुस भाषामें अुन्होंने अुस समयतकका समस्त सुप्त ज्ञान और जीवनकी सार्थकता भरनेकी कोशिश की— वह सार्थकता, साहित्य, ललित कलाओं, विज्ञान या प्रयोग चाहे किसी सांस्कृतिक क्षेत्रमें क्यों न हो। चौसरने अिंगलैंडमें वह किया जो पीछे जाकर लीबनित्जने जर्मनीके लिये या लोमोनसोवने रूसके लिये—

ब्रिटिश विज्ञानके प्रथम परिणाम १६ वीं सदीके अन्तमें और १७ वीं सदीमें दिखने शुरू हुअे। ब्रिटेनके अेलिजाबेथन युगको अपनी कारीगरी और चातुरी दुनियापर जाहिर करनेके लिये वैज्ञानिकोंकी वैसी ही जरूरत थी जैसी अुस युगके सम्बन्धमें गानेके लिये कवियोंकी। ग्रेशम कॉलेज जो कि वास्तवमें पहला लन्दन विश्वविद्यालय था, सन् १५७५ में स्थापित किया गया। अिसमें नाविकोंको नौ-परिवहनकी शिक्षा अंग्रेजी माध्यमसे दी जाती थी, अुस जमानेमें ब्रिटिश विज्ञानके दो स्रोत थे नौ-परिवहन और व्यापार। ब्रिटिश वैभवके भी ये ही दो स्रोत थे।

प्रसिद्ध ब्रिटिश साहित्यिक चिन्तक गैब्रियल हार्वे लिखते हैं:—"जो गणितज्ञ यन्त्रवेत्ता हम्फ्री कोल, जहाजशास्त्रवेत्ता मैथ्यू बेकर, वास्तुकार जौन शूट, नौ-परिवहक रोबर्ट नौर्मन, बन्दूक विशेषज्ञ विलियम बोर्न, रसायनज्ञ जौन हैस्टर, और अैसे ही चुस्त चालाक लोगोंको याद रखता है, समझदार आदमी है। जो अिन विशेषज्ञ कारीगरोंको धता अिसलिअे बताता है कि अिन्हें स्कूलोंमें लैक्चर नहीं मिले या अिन्होंने बहुत-सी किताबें नहीं पढीं, वह बहुत बड़ी गलती करता है।... हर आदमीको अपना सही स्थान पानेका हक है, अपने शिल्पके हर कारीगरको और अपने रहस्यके हर पंडितको जनता और अुद्योगकी सेवाके अनुपातमें नाम हासिल करनेका अधिकार है।"

अर्थात् अुस समयके साहित्यिक भी वैज्ञानिककी महत्ता स्वीकार करते थे। परन्तु सबसे पहला शासक श्रेणीका आदमी, जिसने विज्ञानकी महत्ताको समझा, वह फ्रांसिस बैकन था, वह अिंगलेंडका लॉर्ड चांसलर था और यद्यपि वह स्वयं वैज्ञानिक या कामगार श्रेणीका नहीं था तो भी अुसने बड़े साफ तौरसे देखा था कि ब्रिटेनका भविष्य वैज्ञानिकों और हाथसे काम करनेवाले कारीगरोंके हाथमें है और सबसे बड़ी जरूरत अिस सच्चाअीको पहचाननेकी है। यद्यपि अपने समयमें बैकनको सफलता नहीं मिली तो भी गृहयुद्ध और ब्रिटिश ताजके पुनः स्थापनाके बाद, जब नयी बुर्जुआ श्रेणी ताकतमें आयी तो ब्रिटेनमें मानव कल्याणके लिये प्रकृतिके रहस्योंको खोजकर अुपयोगमें लानेका दरवाजा खुल गया। अुसी समय रायल सौसाअिटीकी स्थापना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुअी, जिसने कुछ सालोंके आधुनिक विज्ञानकी नींव ब्रिटेनमें डाली, अिसकी स्थापना बौयल, रैन, पैपीज, और कवि ड्राअिडेनके आर्थिक सहयोगमे संभव हो सकी, परन्तु अिसकी असली शक्ति यन्त्रवेत्ता हुक था, जो पहले बौयलका सहायक था और पीछे स्वतन्त्र वैज्ञानिकके नामसे मशहूर हुआ।

अपने जीवनके आदि कालमें रायल सोसाअिटीने केवल विज्ञानको ही विकासमें मदद नहीं दी वरन् अुसने तात्कालीन ब्रिटिश साहित्यको भी अेक नयी शैली दी। पुराने पुनर्जागरणकालके आलंकारिक वातावरणसे निकालकर रायल सौसाअिटीने अंग्रेजी गद्यको यथार्थवादका ठोस आधार दिया। अिसके बारेमें विशप स्प्रैट लिखते हैं:—

गुंथा हुआ, नग्न, बोलनेका प्राकृतिक तरीका, साकार अभिव्यक्ति, स्पष्ट संवेदनशीलता, स्थानीय सरलता—अिन सब चीजोंका यथासंभव स्वाभाविकताके गणितीय स्तरपर लाया जाना और पंडितों अेवं बुद्धिमान कहे जानेवाले व्यक्तियोंकी भाषाकी अपेक्षा व्यापारियों, गंवारों और कारीगरोंकी भाषाका प्रयोग करना।

ब्रिटिश विज्ञानका दूसरा प्रस्फुटन लन्दनके व्यापारी केन्द्रोंके जरिये नहीं, वरन् अिसका प्रस्फुटन अुत्तर और पश्चिमी ब्रिटेनके औद्योगिक क्षेत्रसे और कोयलेकी खानोंसे हुआ। बरमिंघम और स्टोक, लीड्स और मैंचेस्टर, न्यूकासल और ग्लासगो, ब्रिस्टल और साअुथ वेल्समें नये यन्त्रमूलक और रासायनिक अुद्योग खड़े हुअे। अिस नये प्रस्फोटका कारण वे कामगार लोग थे जिन्होंने अपने हाथसे काम करके विज्ञानका प्रभाव देखा था। जैम्स वाट, जिसने भापका इंजिन बनाया, स्वयं अेक मजदूर इंजीनियर था। प्रीस्टले और डाल्टन, जिन्होंने मिलकर समूचे रसायनशास्त्रको बदल डाला, बुनकरोंके बेटे थे। वे सब बड़े इंजीनियर, जिन्होंने आजके अुद्योगके लिये यंत्र और औजार बनाये, अपनी-अपनी बड़ी कामयाबियोंके पहले महज सीधे-सादे मजदूर थे। मेरा मतलब है, ब्रमाह, मौडस्ले, स्टीफेनसन, व्हिटवर्थ, नैस्पिथसे।

जैसे-जैसे १९ वीं सदी समाप्त होती गयी वैसे-वैसे मुनाफेकी खोजमें विज्ञान द्वारा पाअी हुअी नयी ताकतोंको पूंजीपतियोंने अिस तरह अिस्तेमाल किया कि संपूर्ण औद्योगिक ब्रिटेन हाहाकार कर अुठा। अिसीलिये ब्रिटेनमें कुदरती तरीकेसे पूंजीवादके विरुद्ध प्रारंभिक विद्रोह अुठे। ओवेन और चार्टिस्ट नेताओंसे लेकर रस्किन और विलियम मौरिस तक कितने ही अूंचे-अूंचे नेताओंने अेक अच्छी चीजके बुरे अुपयोगके विरुद्ध आवाज अुठायी। आन्दोलन चलाये। वे लोग नाकामयाब रहे क्योंकि वे सही तरीकेसे यह नहीं समझ पाये कि किस प्रणालीके विरुद्ध लड़ रहे हैं या किन ताकतोंको वे अपनी तरफ कर सकते हैं। परन्तु जहाँ अुन्हें असफलता मिली वहाँ दूसरे लोग सफल भी हुअे।

ब्रिटेनकी विज्ञानकी सबसे बड़ी देन, जिसमें जर्मनी और फ्रांसका भी पर्याप्त हिस्सा रहा है, मार्क्स और अेंजेलसका कार्य है। यह कार्य मुख्यतः ब्रिटेनमें ब्रिटिश अुद्योग, ब्रिटिश विज्ञान और ब्रिटिश मजदूर-आन्दोलनके अनुभवोंके आधारपर ही अधिकतर संभव हो सका। यहीं पर अिन दो महापुरुषोंने पहले वास्तविक समाज-विज्ञानकी नींव डाली। अुन्होंने ही पहले-पहले यह अनुभव किया कि अेक दफे पूंजीवादी हथकंडोंसे निकल जानेपर प्राकृतिक विज्ञानकी क्षमताअें कितनी अधिक विस्तृत हो सकती हैं। अुन्होंने ही सिखाया कि विज्ञानको जनहितके लिये अुपयोगमें लानेवाली श्रेणी श्रमिक श्रेणी ही हो सकती है। १८५६ में "पीपुल्स पेपर"के वार्षिक भोजके अवसरपर बोलते हुअे मार्क्सने कहा था।

...अेक बहुत बड़ी सच्चाअी है जो हमारी अिस अुन्नीसवीं सदीकी अेक विशेषता है। यह अेक अैसी सच्चाअी है जिसे कोअी दल अस्वीकृत नहीं कर सका। अेक तरफ जीवनमें अैसी औद्योगिक और वैज्ञानिक शक्तियाँ अुठ रही हैं जिनकी आजतकके मानव अितिहासमें कभी कल्पना भी नहीं थी और दूसरी तरफ सड़ांधके लक्षण दिख रहे हैं जो कि रोमन साम्राज्यके अुत्तरकालके खौफनाक कार्योंसे भी बढ़े हैं...हम जानते हैं कि समाजकी नयी शक्तियोंका अच्छी तरहसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुपयोग करनेके लिये अुनके अूपर नये किस्मके आदमियोंका शासन होना चाहिये। अैसे ही आदमी हैं ये कामगार। वे अपनेमें मशीनोंकी तरहसे ही अेक तरहके नये आविष्कार हैं.....अंग्रेज कामगर श्रेणीके लोग आधुनिक अुद्योगके प्रथम बच्चे हैं। अुद्योगोंने जो सामाजिक क्रान्ति प्रारंभ की अुसे सहायता पहुँचानेमें वे पीछे नहीं रहेंगे...मेरा मतलब अैसी क्रान्तिसे है जिसका अर्थ होगा कामगार श्रेणीकी सारी दुनियामें आजादी।

ब्रिटिश समाजने मार्क्सकी कामना पूरी नहीं की। वहाँपर आज भी बुर्जुआ श्रेणीका शासन है। पर अिस बीच ब्रिटिश विज्ञानने बहुत-सी विजय प्राप्त की है। बिजलीकी शक्ति, आन्तरिक विस्फोट अिंजिन (मोटर-कार) हवाअी जहाज, बेतारके तार वार्त्ताविहन और अन्तमें परमाणु शक्ति। ये सब प्राप्तियाँ ब्रिटिश समाजको पूंजीवादी समाजके अन्तर्गत प्राप्त हुअीं-और अिसीलिये अिनका अधिकतर अुपयोग साम्राज्यवादी पूंजीवादने मुनाफे और युद्धके लिये किया।

आजका ब्रिटिश समाज अुसी दिनकी प्रतीक्षामें है, वही दिन निकट लानेके लिये संघर्ष कर रहा है, जब विज्ञान पूंजीवादके चंगुलसे निकलकर मानवहितके लिये सही अर्थोंमें प्रयुक्त हो सकेगा। अुसके सामने रूसी, चीनी और पूर्वी योरोपकी जनक्रान्तियोंके अुदाहरण हैं। अुसके सामने समाजवादी नवनिर्माणके अुदाहरण भी हैं। अुसके सामने विज्ञान और कलाओंको अेक सूत्रमें गठित करने और अुन दोनोंको कामगार श्रेणीके साथ मिलानेके अुदाहरण हैं। आजका कामगार अुन अुदाहरणोंको अपने देशमें चरितार्थ करनेमें दत्तचित्त है।

बंगला :

निर्लज्ज सभ्यता !

(स्व० गुरुदेवकी अेक कविता)

शताब्दिर सूर्य आजि खत्तमेघ माँझे।
अस्त गेलो-हिसार-अुत्सवे आदि बाजे।
अस्त्रे शस्त्रे मरशारे अुन्माद रागिनी।
भयंकरी! दयाहीन सभ्यता नागिनी।
तुलेछे कुटिल फण चक्षरे निमिषे।
गुप्त विष दन्त तार, भरी तीव्र विसे।
स्वार्थ-स्वार्थ वेधे थे संघात लोगे लोगे।
छूटे छे संग्राम, प्रलय मंथन ओघे।
भद्रवेशी बर्बरता अुठियाछे जागी।
पंकशय्या होते लज्जा शरम तेयागी।

(रक्तवर्ण मेघोंमें आज शताब्दियोंके सूर्य अस्त हो रहे हैं। आज हिंसाके अुत्सवमें शस्त्रोंकी झनकारके साथ ही साथ मृत्युकी भयंकर अुन्माद रागिनी बज रही है। निर्भय सभ्यता नागिनी अपने विषाक्त दांतोंमें तीखा जहर भरकर क्षण-क्षणमें अपना कुटिल फन खोल रही है। स्वार्थ-से-स्वार्थका संघात हो रहा है। लोभके साथ लोभका संघर्ष मचा हुआ है — मथकर प्रलयको ला खड़ा करनेके अुद्दाम रोषसे। भद्रवेशिनी बर्बरता अपनी पंकशय्यासे जगकर अुठती है। लाज शर्मसे हाथ धो, जाति-प्रेमके नामपर प्रचंड अन्याय धर्मको अपने बलकी आड़में बहा देना चाहता है)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व-वेदना

: श्री "भृंग" तुपकरी :

अहो अपरिचित प्रिय मेरे !
तुम मुझसे परिचित नहीं
और मैं भी तुम्हें नहीं जानता ।
मैं अिस विशाल संसारके अतल सागरम
अेक लघुतम बिन्दुकी भाँति अेक जगह पड़ा हूँ,
और तुम संसारके न जाने किस छोरपर हो ।
हे मेरे अपरिचित प्रिय !
तुम्हारी भौतिक दूरी मेरी समीपताकी कल्पना भी नहीं कर सकती ।
किन्तु अिस भौतिक दूरीके बावजूद
अगर तुम्हारे कानोंको मेरी आवाज....मेरा स्वर सुनायी दे सके...
तो सुनो ।
हमारे नन्हें-नन्हें शरीर बनानेवालेने
हमारे शरीरको अुल्लासकी स्वतंत्रतामें
हँसने खेलने, नाचने गाने, और दूरीके खिंचावमें
भावोंकी डोरीसे बँधे रहनेकी आवश्यकता अनुभव करनेके लिये
हमारे शरीरके बीच यह दूरीका मैदान छोड़ रखा है,
किसी बुजुर्गने दरअसल सच ही कहा है,
कि हमारे मन, हमारी आत्मा,
अेक ही तन्तुसे बने हैं...अेक ही तन्तुसे बँधे हैं...
और यह दूरी भी हमारी समीपताकी अनुभूतिको
अधिक तीव्रतासे अभिव्यंजित करनेके लिये ही है ।
अिसलिये हे अपरिचित मित्र !
अब तुम जान लो, और जानकर
अनुभव करनेकी बेचैनीके आनन्दसे अभिभूत हो जाओ;
क्योंकि दरअसल तुम मेरे मनके समीप हो,
क्योंकि तुम्हारे मानसकी पीड़ाओंसे, व्यथाओंसे,
मेरी करुणाकी पहिचान है ।
मेरी सहानुभूति तुम्हारे अस्तित्वसे चिरपरिचित है...
मेरे अपरिचित !
और अिस प्रकार मैं तुम्हें पहचानता हूँ !
तुम मुझे नहीं जानते होगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किन्तु मैं तुमको जानता हूं।
और हे मेरे अनजान प्रिय !
तुम संभवतः नहीं जानते
कि मुझमें और तुममें अनेक बार
आदान-प्रदान भी हुआ है,
हम भावनाओंके देशमें
मनके व्यापार करते हुअे कअी बार
परस्पर मिल चुके हैं...
तुमने मुझसे कुछ पाया है
और मैंने तुमसे कुछ पाया है।
तुम पूछोगे क्या ?
मैं बतला दूं, सुनो,
मेरे मानसमें तुम्हारे मानसकी ही तरह
अेक अनुराग-सरोवर है,
अुसमें अनेक बार स्नान करनेके लिये
तुम्हारी व्यथाअें आयी हैं।
अनेक बार तुम्हारी पीड़ाओंने
मेरे अनुरागके जलसे अपने पवित्र अंगोंको
धोकर चमकाया है।
और अनेक बार
तुम्हारी व्यथाकी मलिनता छुड़ाकर
मेरी करुणाने सान्त्वनाका सुख पाया है।
पीड़ाकी शक्तिसे तो तुम अपरिचित नहीं होगे ना ?
दूरियोंके पर्दोंको चीरकर;
भौतिकताके बड़ेसे बड़े पहाड़,
गहरीसे गहरी खाअियाँ,
चौड़े-से-चौड़े समुद्र लांघकर,
और ठोस धरातलकी सारी बाधाओंको छेदकर,
वह वेदना काँचके पारदर्शी टुकड़ेके और पार देख सकनेवाली पारदर्शी
दृष्टिकी तरह...
बल्कि कहना चाहिये कि "औथर"की लहरोंसे भी
अधिक शक्तिसे ठोस धरातलके आर-पार हो जाती है।
और फिर सैकड़ों मोटी-मोटी परतोंसे ढंके हुअे
मनुष्यके दिमागमें सूराख बनाकर
स्पन्दनशील हृदयकी भाव-भूमिमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेकल कोकिलकी गूंजती हुओ पुकारोंकी तरह
गूंज अुठती है;
और तब अुस पीड़ाकी गूंजोंके आकुल आघात
मनकी तंत्रीको झनझना-से देते हैं।
और यह पीड़ाकी पैनी शक्तिका ही काम है, मेरे दोस्त !
और यह पीड़ाकी शक्ति ही
हमारे बीच आदान प्रदान करवाती रही है, मेरे अपरिचित !
और अिसीके कारण मैंने तुमसे कुछ पाया है,
तुमने मुझसे कुछ पाया है !
और अिसीने अपनी प्रेरणाकी अंगुलियोंसे
मेरे मानसके कपाट खोले हैं,
मुझे जगाया है !
और हे मेरे अनजाने प्रिय !
अिसीने तो तुम्हारे परिचयकी पहली रेखा
मेरे मानस-पटपर खींची है !
और अिसीकी कृपासे, अिसीकी दयासे,
अिसीकी करुणासे तुम मेरे लिये अपरिचित नहीं हो !
मैं तुमसे भली भांति परिचित हूँ !

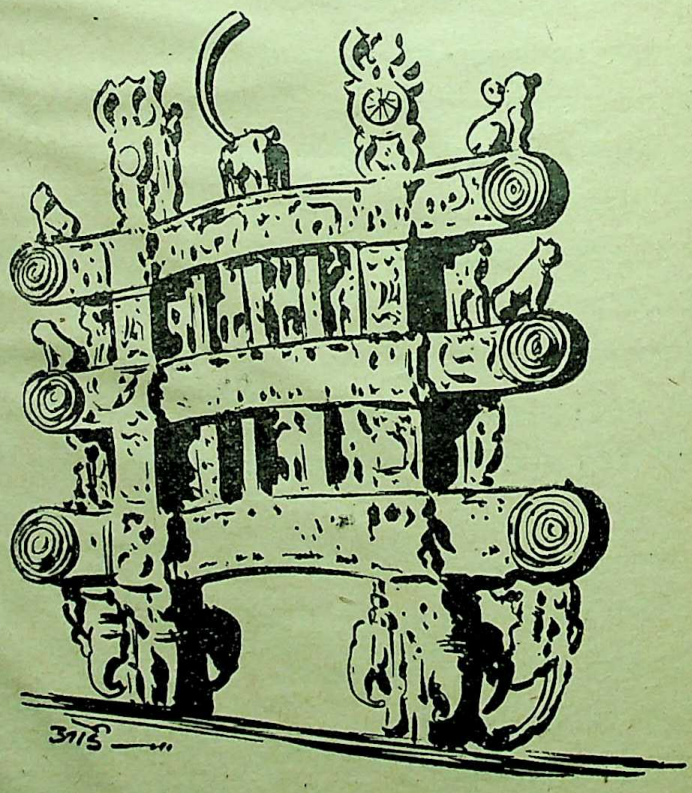

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवनने मुझे क्या सिखाया है ?

: श्री बट्रेण्ड रसेल :

मेरे जीवनका बहुत-सा अंश तर्कशास्त्र, गणित और अनुभवमूलक विश्वके अमूर्त रूप आकाश दिक् अेवं काल आदि पर केन्द्रित रहा। अिन विषयोंमें जीवन कोअी शिक्षा नहीं देता; अिसके विपरीत मुझे अैसा लगता है कि निष्पक्षता और अलिप्त रहनेकी भावना हमें अिस बातकी शिक्षा देती है कि जीवन कैसे व्यतीत करना चाहिये।

जिस जीवन-प्रणालीने मुझे प्रभावित किया वह मेरी प्रारम्भिक स्थितियोंका फल है। यदि मेरा पालन-पोषण किसी भिन्न वातावरणमें हुआ होता तो यह प्रणाली भी भिन्न होती। जेज्विट कहा करते थे कि मनुष्य जीवनके पहिले सात वर्ष निर्णायक होते हैं; कभी-कभी मनोविश्लेषक भी अैसे विचार प्रकट करते हैं, जिनसे प्रतीत होता है कि बालकके जीवनके प्रथम तीन वर्षोंमें जो घटनाअें घटित होती हैं, वे ही अुसके चरित्रका निर्माण करती हैं। कुछ भी हो, मैं अिसे स्वीकार करता हूँ कि जब मेरी आयु १६ वर्षकी हुअी अुस समय मेरे चरित्र, मेरी रुचि और आदर्श अिन तीनोंका निर्माण हो चुका था। जहां तक व्यावहारिक जीवनका सम्बन्ध है, मुझे १९ वीं सदीमें प्रचलित स्वातन्त्र्यवादकी शिक्षा मिली; जिसमें सहिष्णुता, लोकतन्त्र, विचार-स्वातन्त्र्य और व्यक्ति सम्मानके तत्व भी सम्मिलित हैं। अिस जीवनादर्शके किसी भी अंशको त्याग देनेका मुझे कोअी कारण नहीं प्रतीत होता, कभी कभी मुझे अुसकी अस्थायी सीमाओंका अवश्य अधिक अनुभव हुआ। सन् १९१४ तक मैं भी अुसी आशावादसे प्रेरित था जो अुस समय अुचित प्रतीत होता था। अिसके बादके वर्षोंमें मुझे जो अनुभव हुअे अुन्होंने जीवनकी आवश्यक प्रणालीके सम्बन्धमें मेरे मनमें कोअी परिवर्तन नहीं किया। हाँ, अुन्होंने यह अवश्य सिद्ध किया कि १९ वीं शताब्दीकी आशाओंकी पूर्तिका मार्ग जैसा दिखलायी पड़ता है, वास्तवमें अुससे अधिक लम्बा और कठिन है। मूर्खता, नासमझी, विचारहीनता, निर्दयता और निष्ठुर युद्धकी शक्तियोंने यह सिद्ध कर दिया कि वे व्यवस्थित प्रगतिके मार्गमें, विश्वास अुत्पन्न करनेमें भले ही कुछ समयके लिये सहायक क्यों न हों, बाधा पहुँचानेमें समर्थ हैं। स्वतन्त्रताकी रक्षाके लिये जो युद्ध होता है अुसमें विजयके बावजूद भी, कुछ अुन तत्वोंका त्याग अनिवार्य हो जाता है, जिसके लिये युद्ध किया जाता है। आज हम जिस दुनियामें हैं वह १९३३ की अपेक्षा हिटलरके स्वप्नोंके अधिक अनुकूल है। अिस प्रकार अेक तरहसे वह अुसकी विजयका कुछ अंश है। अिस सम्बन्धमें अेक ही अुदाहरण पर्याप्त है। आज इंग्लैण्ड और अमेरिकामें यहूदी विरोधी-भावना अुस समयसे अधिक है जबकि हिटलर द्वारा यहूदियोंका अुच्चाटन और विनाश आरम्भ हुआ था। हमसे कहा गया कि पहिला विश्व-युद्ध युद्धोंका अन्त करनेके लिये है। अेक क्षणके लिये यह मालूम होता था कि यह अुद्देश्य पूरा हो जायगा। दूसरे विश्व युद्धके सम्बन्धमें कोअी यह नहीं कह सकता था कि अुसका परिणाम अितना भीषण होगा। अणु-बमोंसे यह प्रतीत होता है कि निकट भविष्यमें, सुख शांतिकी सब आशाअें व्यर्थ हैं।

अिस निराशापूर्ण स्थितिका अनेक प्रकारसे सामना किया जा सकता है। सबसे सरल और स्वाभाविक मार्ग यह है कि आज तो हम जी भरकर खा-पी लें, क्योंकि कल हमें मर जाना है। यदि यह रुख सर्वत्र अपना लिया जाय तो अिसमें संदेह नहीं कि कल हम मर जायेंगे और हमारे साथ ही यूनानियों और रोमनों द्वारा निर्मित सारी सभ्य जीवन-प्रणाली-अीसाअी धर्म अेवं विज्ञानका भी अन्त हो जायगा। सम्भवतः अब बहुत देर हो गयी है। स्थिति यह है कि नैतिकतावादियों द्वारा दमन न की जा सकी, अनि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यंत्रित अधिकार लिप्साकी भूमिमें मृत्युके जो बीज बोये गये अुन्हें फलने-फूलनेसे नहीं रोका जा सकता। शायद विवेकपूर्ण सभ्यताका अुदय होनेके पूर्व अन्धकार-युगका अनुशासन आवश्यक है। यदि यह बात सही है, तो 'खाओ पिओ आनन्द करो' का विचार रखनेवाले ठीक रास्तेपर हैं, परन्तु जब तक अिस भीषण निराशावादको अनुचित ठहराये जानेकी सम्भावना है, तब तक मैं यह रुख अपनाना स्वीकार नहीं करता। सर्वनाशसे बचनेका अभी भी अवसर हमारे हाथोंमें है। और जो लोग मनुष्यके प्रति अपने अुत्तरदायित्वको महसूस करते हैं, अुन सबको चाहिये कि वे अिस मौकेका सबसे अधिक अुपयोग करनेकी कोशिश करें।

वर्तमान शताब्दीमें जीवनने मुझे जो पाठ सिखाये वे सुखद नहीं। मुझे स्वीकार करना चाहिये कि मानव समाजमें जो निर्दयताका घाव है वह मेरी कल्पनाके परे था। मुझे यह स्वीकार करना पड़ता है कि जब वर्तमान काल दुःखद है तब अधिकांश मनुष्य अुसका निराकरण करनेके लिये भली भाँति सोचे समझे हुअे अैसे अुपाय अमलमें नहीं लायेंगे जिनसे स्थितिमें धीरे-धीरे सुधार हो। वे अैसी कल्पनाओंसे प्रभावित होंगे जो घृणा और शक्तिकी राक्षसी महत्वाकांक्षाओंसे प्रेरित हैं। फल-स्वरूप हिंसाका विस्फोट होता है तथा ये बुराअियाँ और बढ़ जाती हैं। मुझे स्वीकार करना पड़ता है कि जब कष्टका अतिरेक हो और सामने विशाल कार्य-क्षेत्र फैला हो तो अुपेक्षाकी भावना पैदा होती है। आजके बहुतेरे बड़े अत्याचार और निर्दयतापूर्ण कार्य, जिनका ५० वर्ष पूर्व विश्व भरमें विरोध किया जाता था अुनकी ओर प्रायः कोअी ध्यान नहीं देता। मेरे सामने तो यह अेक समस्या है कि शायद ज्ञान दुर्भाग्य है और केवल अज्ञान ही मनुष्योंको पारस्परिक विनाशसे बचा सकता है।

हमें अिन तथ्योंका ध्यान रखना है। फिर भी अिनके आधारपर यह तर्क नहीं अुपस्थित किया जा सकता कि वे जिन आदर्शोंको कठिन सिद्ध करते हैं, अुनकी हमें आवश्यकता नहीं। हम मानते हैं कि सच्चा लोकतन्त्र असंभव नहीं, क्योंकि कअी देश अैसे हैं जहाँ वह प्रचलित है। हम यह भी जानते हैं कि अिसी आधारपर सहिष्णुता सम्भव है। अिस विश्वमें अेक प्रकारके अैसे व्यक्ति हैं जो किसी भी मूल्यपर अपना प्रभाव जमाना चाहते हैं और जो भलाअी नहीं कर सकते तो बुराअी करनेमें ही सन्तोष अनुभव करते हैं। यदि कोअी व्यक्ति डाअिनामाअिट बनाना जानता है, परन्तु घर बनाना नहीं जानता तो वह खड़ी अिमारतोंको गिरा देगा। लोकतन्त्र कठिन सिद्ध होनेपर अधिनायक अुत्पन्न होते हैं और वे जितना ही अधिक आशाओंका अुन्मूलन करते हैं, अुतना ही अुनका अभिमान बढ़ता है। यदि मुझे तरुणोंके लिये नैतिक आदर्श-वाक्य बनाने पड़ें तो मेरा पहिला वाक्य यही होगा कि "बहुत अधिक हानि करनेकी अपेक्षा थोड़ी भलाअी करना अुत्तम है।"

मानवीय सम्बन्धोंमें आज जो घृणा और हिंसा व्याप्त है, अुसका बहुत-सा अंश अुस समय दूर हो सकता है, जब मनुष्य अुस गुणको अपनावे जिसे मैं व्यक्तिका आदर कहता हूँ। मुख्यतः अिसका अर्थ किसी व्यक्तिका अपमान करनेकी तीव्र अनिच्छा है। शिक्षाके क्षेत्रमें बालकके प्रति आदरताके लिये यह आवश्यक है कि विद्यार्थी और शिक्षकमें सहयोगकी भावना रहे। यह भी आवश्यक है कि बालकको जिन विचारोंकी शिक्षा दी जाय वे अुसके कल्याणके लिये हों; न कि केवल अधिकार-सम्पन्न व्यक्तियोंकी सुविधाके लिये। वह अिस प्रकारकी भी न हो कि जब कोअी आक्रमणकारी सरकार अुसे मरवाकर अपना अुद्देश्य पूरा करना चाहे तब वह चुपचाप मरण स्वीकार कर ले। अिन्हीं विचारोंके कारण मैं 'प्रगतिशील शिक्षा' में विश्वास करने लगा हूँ। मैं यह भी स्वीकार करनेके लिये बाध्य हूँ कि बहुतसे 'प्रगतिशील' शिक्षाशास्त्री व्यक्ति-स्वातन्त्र्यवादके अुत्साहमें अैसी बातें भुला देते हैं, जो अधिक महत्वपूर्ण हैं। हम केवल व्यक्ति ही नहीं, समाजके सदस्य भी हैं। अतः, यह आवश्यक है कि शिक्षा केवल मनुष्यको अुन्नतिशील ही न बनावे, अुसे समाजका अुपयोगी सदस्य भी बनावे।

यह आवश्यक है कि हम शालाओंमें अैसे आदर्शोंकी शिक्षा दें जो हमारे राष्ट्रसे अधिक अुच्च हों। वह राष्ट्रवाद ही है जिसने विश्वमें वर्तमान भयानक स्थिति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैदा की है और जो अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओंका हल खोजनेमें बाधक है। आज मनुष्यके प्रति निष्ठाकी आवश्यकता है—अैसा मनुष्य नहीं जो जीवशास्त्रका ही विषय है; अपितु जहां तक हमें ज्ञात है, वह कुछ मूल्योंका भी प्रत्यक्ष रूप है। मनुष्य सुन्दर वस्तुओंकी सृष्टि और प्रशंसा कर सकता है; वह कुछ सीमाओंके अन्दर ज्ञान प्राप्त कर सकता है; वह प्रेम और आनन्दका अनुभव कर सकता है। यह सच है कि वह अिनके विरोधी आवरणोंको भी प्रदर्शित करता है, फिर भी मेरा विश्वास है कि मनुष्य अपने अुत्तम गुणोंका विकास कर विकारोंकी तीव्रता कम कर सकता है। शालाओंमें संकुचित राष्ट्रवादकी नहीं, विश्वासकी शिक्षा दी जानी चाहिये और अुसे ही सामाजिक अुत्तरदायित्वका आधार बनाना चाहिये।

अिस समय सर्वाधिक महत्वपूर्ण समस्या यह है कि युद्धका अन्त हो। यदि यह समस्या हल हो जाय तो यह आशा करना अुचित होगा कि अन्य समस्याअें भी समयपर हल हो सकती हैं; परन्तु यदि ये आगामी कुछ वर्षोंमें हल न हो सकीं तो कमसे कम पश्चिमी युरोप तथा ग्रेट ब्रिटेनका भविष्य तो सर्वथा निराशापूर्ण है। यह आवश्यक है कि युद्धकी भावनाका अन्त किया जाय और वह भी शीघ्र।

अणु-बमोंके कारण अिस समस्याका शीघ्र समाधान अनिवार्य है। अिस बमने अिस समाधानका मार्ग बहुत सरल भी कर दिया है। यह बम अितना भयानक है कि यदि वह अन्तर्राष्ट्रीय संगठन द्वारा नियंत्रित कर दिया जाय तो वह संगठन युद्धोंको व्यर्थ कर सकता है। आज संसारको अिस बातकी आवश्यकता है कि अेक अन्तर्राष्ट्रीय अधिकारसम्पन्न संगठन निर्माण कर राष्ट्रोंके बीच युद्धोंका अन्त किया जाय। अिस संगठनके पास अैसी शक्ति हो जिसका सामना न किया जा सके और वह अिस शक्तिका सर्वसम्मत अन्तर्राष्ट्रीय विधानोंके अनुसार अुपयोग करे। अिस अुद्देश्यके लिये अणु शक्तिका अन्तर्राष्ट्रीय नियंत्रण हो जाना सर्वप्रथम आवश्यक है।

विज्ञानके कारण आज विश्वको अैसा सामान्य समृद्धि और सामान्य विनाशके बीच मार्ग निर्धारित करना है। परन्तु समाज अभी भी अव्यवस्था-ग्रस्त और शासन-रहित है। वह घृणा और सन्देहसे पीड़ित है। वह अुस प्राचीन विश्वाससे प्रभावित है जिसमें अेक व्यक्तिका लाभ दूसरे व्यक्तिकी हानि है। दुर्भाग्यके थपेड़ोंसे मानव-जातिके भावोद्वेग अधिक तीव्र हो गये हैं और भयने पारस्परिक सन्देहमें वृद्धि कर दी है। यहूदी और अरब, हिन्दू और मुसलमान, चीनी कम्यूनिस्ट और चीनी राष्ट्रवादीने, अपने-अपने क्षुद्र संघर्ष जारी किये हैं जब कि वाशिंगटन और मास्कोके बीचका विवाद अुन सभीके नाशका मार्ग अुपस्थित कर रहा है। यह संकट अितना बड़ा भीषण है कि मनुष्य स्वयं अुसकी भीषणता अनुभव नहीं कर पाते। वह यह स्वीकार नहीं करता कि प्राचीन शत्रुता अेवं तीव्र वादविवाद आज अुसी प्रकार करुण और क्षुद्र हैं जिस प्रकार कि नौका डूबते समय किसी नाविकका अुतराअीकी छोटी रकमपर विवाद करना।

आज मानव-समाजको केवल कानून अथवा स्वतंत्रताकी आवश्यकता नहीं। अुसे अपने-अपने क्षेत्रमें अिन दोनोंकी आवश्यकता है। कानूनकी आवश्यकता आक्रमण और अत्याचारकी प्रवृत्तियोंका अनुरोध करने और स्वतंत्रताकी आवश्यकता अुन प्रवृत्तियोंके विकासके लिये है जो रचनात्मक या सबके पास पहुँचानेके लिये हैं। अिसके मार्गमें कुछ मनोवैज्ञानिक अेवं अन्य बाधाअें हैं। दूसरे वर्गमें राष्ट्रीय शस्त्रास्त्र सबसे भयानक और खतरनाक हैं। यदि अिनका भय दूर हो जाय तो अुसके फलस्वरूप संसारको जो समृद्धि और भयसे मुक्ति प्राप्त होगी, अुससे विवेककी वृद्धि होगी और निर्दयता, अीर्ष्या, लालच तथा अधिकार-लिप्साकी मनोवैज्ञानिक बाधाओंको दूर करनेके अुपाय खोजे जा सकेंगे। ये अुपाय कुछ तो मनोवैज्ञानिक, कुछ शैक्षणिक और कुछ आर्थिक होंगे। सुखद विश्व-निर्माणकी समस्याका हल असम्भव नहीं। आवश्यकता केवल अिस बात की है कि मानव-समाजमें अुसे हल करनेकी दृढ़-शक्ति हो। मनुष्य विनाश अधिक पसन्द करेगा या अनिच्छापूर्वक कल्याणका मार्ग अपनावेगा ?

(अंग्रेजीसे—अनुवादक :—श्री राजेन्द्रप्रसाद भट्ट)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसारकी सबसे बड़ी पुस्तकोंकी दूकान–'फोयल्स'

: कुमारी मोहिनी शर्मा और श्री महेन्द्र 'राजा' :

ठण्डका मौसम हो या गरमीका, युद्धकाल हो या शान्तिकाल, लन्दनका अेक स्थान अैसा है, जहाँ हमेशा भीड़ लगी रहती है। वह स्थान 'फोयल्स' के नामसे संसार-भरमें मशहूर है। 'फोयल्स' संसार-भरमें सबसे बड़ी पुस्तकोंकी दूकान है। किसी किताबी कीड़ेके लिये अुसका महत्त्व स्वर्गसे कम नहीं।

३० लाख पुस्तकें

अिस दूकानकी अलमारियोंको मिलाकर यदि अुनकी लम्बाअी नापी जाय तो ३० मीलसे कम नहीं होगी। पूरी दूकानका क्षेत्रफल नौ अेकड़ होगा और पुस्तकोंकी संख्या ३० लाखसे कम नहीं। साथ ही अिस दूकानसे लगा हुआ अेक लम्बा दालान है जहाँ चित्रोंका भण्डार है। दूकानसे अेक व्याख्यान-भवन, दस्तावेजोंका संग्रहालय और मासिक क्लब भी है। अिस दूकानमें २० से ३० हजार तक चिट्ठियाँ प्रतिदिन आती हैं, जिनमें दूर-दूर देशोंके भेजे हुअे पुस्तकोंके ऑर्डर भी शामिल हैं।

सारी पुस्तकें जमीनसे लेकर छत तक अूंची-अूंची अलमारियोंमें सुव्यवस्थित ढंगसे रखी हुअी हैं। भण्डार-गृहमें पुस्तकोंके पहाड़ छंटनीकी प्रतीक्षा करते रहते हैं। प्रति सप्ताह चार टन पुस्तकें (विशेषतः औषधि तथा कानून सम्बन्धी पुस्तकें) छकड़ोंमें भरकर कागजकी मिलोंमें गूदा बननेके लिये भेजी जाती हैं। लेकिन दूकानके ७०० कर्मचारी कभी भी पुस्तकोंकी कमी नहीं देखते।

पुस्तकोंके बेचनेवालोंकी भीड़

सुबहसे शामको अंधेरा होने तक नर-नारियोंकी कतार 'फोयल्स' की पुस्तकें बेचनेके लिये लगी रहती है। संसारके विभिन्न भागोंसे प्रतिदिन पुस्तकोंके ढेरों सन्दूक यहां आते हैं, फिर भी फोयल्सकी ट्रकें सारे लन्दन और आसपासके शहरोंमें और भी अधिक पुस्तकें प्राप्त करनेके लिये फेरी लगाती रहती हैं। फोयल्सके कर्मचारी किसी भी पुस्तकको वह चाहे जिस स्थितिमें हो, या चाहे जिस विषयकी हो, ले लेनेसे नहीं चूकते।

किसी समाचारपत्रमें यदि यह सूचना छपती है कि अमुक बाअिबिलके लिये बड़ी कीमत चुकायी जायगी, तो वह सूचना नगरके अन्य बाअिबिलोंके मालिकोंको बाअिबिल बेचनेके लिये मीलों दूरसे फोयल्सतक खींच लाती है। किन्तु अिसका अर्थ यह नहीं समझना चाहिये कि मालिकोंको पुरानी पुस्तकोंकी कीमत कम मिलती होगी। अेक बार अेक लेखक जिसकी पुस्तकों की कीमत बाजारमें गिर रही थी, अपनी कुछ पुस्तकें बेचनेके लिये फोयल्समें आया।

"पांच शिलिंग।" फोयल्सके कर्मचारीने पुस्तकके दाम बतलाये।

"मैं सोच रहा हूं कि प्रस्तुत पुस्तकपर अपने हस्ताक्षर कर दूं।" लेखकने कहा।

"छः शिलिंग!" तुरन्त ही ग्राहकने कहा। और अिस प्रकार लेखकको अपनी पुस्तकोंका आशासे अधिक मूल्य मिल गया।

जहां चर्चिल भी चोरीसे घूमते हैं

चेरिंग क्रास रोड़पर फोयल्सकी ग्यारह बड़ी-बड़ी जर्जरित अिमारतें हैं। "फोयल्स" जगह-जगहपर दरारें पड़ी हुअी दीवालों, नीचो छतों और जगह-जगह टूटे-फूटे फर्शवाला स्थान है। फिर भी कोअी-न-कोअी हमेशा वहां आता-जाता रहता है। वहांका कोलाहल कभी भी शान्त नहीं हो पाता। रानी मेरी भी कभी-कभी वहाँ आती-जाती रहती हैं। विंस्टन चर्चिल वहां चोरीसे घूमते हुअे देखे गये हैं। नोअिल कम्पर्टन कहना है कि "केवालकेड" का कथानक अुन्हें फोयल्सके अेक पुरानी पत्रिकाकी फाअिलके पन्ने अुलटते हुअे सूझा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। आर्नल्ड बेनेट वहां बड़ी अत्सुकतापूर्वक अिस आशासे घूमते रहते थे कि वे किसीको अपनी पुस्तकें पढ़ते हुअे देख पायें। अुनका कहना था कि वे अैसे पाठकोंको भेंट करनेके लिये अपनी जेबमें हमेशा सौ पौंडका नोट रखे रहते थे, किन्तु अुन्हें कभी अैसा पाठक नहीं मिला।

अेक बार अेक सज्जन फोयल्समें अेक अैसी पुस्तक लेनेके लिये गये जिसे ट्रेनमें पढ़ते-पढ़ते वे अपना सफरका समय काट सकें। फोयल्सकी अेक महिला विक्रेताने अुनसे "दि फार अीस्ट सागां" पढ़नेके लिये कहते हुअे सिफारिश की—"मैंने स्वयं अभी-भी बहुत ही आनन्दके साथ यह पुस्तक समाप्त की है। पुस्तक सचमुच बड़ी मनोरंजक है!" अुक्त सज्जनने वह पुस्तक खरीद ली। पर कुछ ही मिनट बाद वे लौटे और वही पुस्तक अुसी महिला-विक्रेताको वापिस दे दी। पुस्तकके अन्दरके प्रथम पत्रपर अुन्होंने लिख दिया था—"अुस नवयुवतीको जिसे मेरी पुस्तक पढ़कर बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ—जान गालसवर्दी।" कहनेकी आवश्यकता नहीं कि वे सज्जन गालसवर्दी ही थे और पुस्तक भी अुन्हींकी लिखी हुअी थी।

हफ्तों तक पुस्तकें पढ़िये

फोयल्स आनेवाले अधिकांश व्यक्ति साधारण वर्गके ही हुआ करते हैं, जो प्रतिवर्ष ५० लाख डालर तककी पुस्तकें या तो स्वयं जाकर या डाक द्वारा खरीदते हैं। लेकिन किसी भी आगत सज्जनसे पुस्तकें खरीदनेका आग्रह नहीं किया जाता। कुछ सज्जन तो अपना प्रतिदिनका भोजन भी वहीं ले जाते हैं और हफ्तों तक पुस्तकें पढ़ते हैं। न तो फोयल्सके विक्रेता ही अुनसे कुछ कहते हैं और न अुन्हें ही कुछ चिन्ता रहती है। कालेजके विद्यार्थी जिनकी अितनी सामर्थ्य नहीं कि पाठ्य-पुस्तकें खरीद सकें, वहींपर आकर अध्ययन करते रहते हैं। अेक दिन फोयल्सके व्यवस्थापकको मजदूर पार्टीके प्रसिद्ध नेता श्री हर्बर्ट मारिसनका अेक पत्र मिला जिसमें अुन्होंने अपनी गरीबीकी अवस्था में भी अध्ययनमें व्यवधान न होने देनेके अुपलक्ष्यमें व्यवस्थापकको धन्यवाद दिया था।

अेक दूसरेको किसी प्रकारसे विघ्न न पहुंचे अिसके लिये वहां नियमोंका अितनी सख्तीसे पालन किया जाता है कि जब कभी किसी प्रकारकी गड़बड़ी अुत्पन्न हो जाती है, तो पाठक व्यवस्थापकपर बहुत क्रुद्ध हो अुठते हैं। अेक सज्जन नियमित रूपसे वहाँ दो बजे दिनको आया करते थे और दूकान बन्द होने तक वहीं पुस्तक पढ़ा करते थे। अेक दिन अुन्हें ज्ञात हुआ कि वे जो पुस्तक पढ़ रहे थे, वह बेच दी गयी! बस, गुस्सेमें तिलमिला अुठे और यह शपथ खाते हुअे वापस चले गये कि वे अब वहां कभी नहीं आयेंगे।

"फोयल्स" के मालिक

फोयल्सकी कहानी अुसके स्वामी अेवं संस्थापक विलियम अल्फ्रेड फोयल—अेक साठ वर्षीय श्वेत देशोंवाले सज्जनकी कहानी है, जो कि हाअीस्कूल भी पास न कर सके! वे स्थूल, पुष्ट और भरे हुअे बदनवाले पुराने व्यावहारिक मजाकिये हैं। अुनके दफ्तरमें या तो आपको अेक पैर टूटी हुअी कुर्सीपर बैठना पड़ेगा या फिर अुनके प्रवेश करनेके बाद आप अपनी जेबमें जवाहिरातोंसे जड़े हुअे मखमलके केसमें पुरानी मछलीकी हड्डीका अेक छोटा-सा टुकड़ा पायेंगे!

पुस्तक बेचनेके कार्यमें श्री फोयल सिद्धहस्त अेवं कुशल व्यवसायी हैं। जब हिटलर पुस्तकें जलवा रहा था, अुस समय श्री फोयलने सभी प्रसिद्ध पत्रोंमें विज्ञापन निकलवाया कि वे अूँची कीमतोंमें प्रत्येक विषयकी पुस्तकें लेनेको तैयार हैं। जब बमबाजी हो रही थी तब अपनी दूकानकी छतपर रेतके बोरे अिकट्ठे करनेके बजाय अुन्होंने 'मेन केम्पु' (हिटलरकी आत्म-कथा) के ढेरके ढेर फैला दिये।

यदि आप अुन्हें पत्र लिखकर किसी पुस्तककी कीमत पूछेंगे तो आपको अपने पत्रका अुत्तर कभी नहीं मिलेगा, हां पुस्तक आपको मिल जायगी। नब्बे प्रतिशत मनुष्योंको घर बैठे पुस्तकें मिलती देखी गयी हैं।

४० वर्ष पूर्वकी बात

कुछ अन्य बातें भी हैं जिनके कारण "विलीयम फोयल" अिंगलैंडके सबसे ज्यादा सफल अेवं अुन्नतिशील पुस्तक-विक्रेता माने जाते हैं:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब श्री फोयल १७ वर्षके थे, तब अुन्होंने और अुनके छोटे भाअी गिल्बर्टने सिविल सर्विसकी परीक्षाके लिये कोअी १५ या २० पुस्तकें खरीदीं। दुर्भाग्यसे वे दोनों ही परीक्षामें असफल रहे। अपनी आशाओंके विनाशके बाद थोड़ी बहुत सम्पत्ति बचानेके विचारसे अुन्होंने अपनी पुस्तकें बेचनेका विचार किया और अेक समाचारपत्रमें विज्ञापन निकलवाया। अुस समय पुरानी पुस्तकोंका व्यवसाय करनेवाली कोअी भी संस्था नहीं थी। अतः, विज्ञापनके अुत्तरमें फोयल बन्धुओंके पास सैकड़ों पत्र आये। परिणाम यह हुआ कि अुन्होंने न केवल अपनी ही पुस्तक बेच डाली वरन् सारे शहरको छानकर पुरानी पुस्तकें अिकट्ठीकर बेचीं और खूब पैसा कमाया।

बस अब दोनों भाअियोंको यह काम जँच गया। कुछ समय बाद अुन्होंने अिस प्रकारकी पुस्तकोंका व्यवसाय शुरू किया और अुन्हें माल रखनेके लिये गोदाममें स्थान किरायेपर लेना पड़ा। जब काम और भी अधिक बढ़ा तो अुन्हें वह स्थान छोड़ना पड़ा और अुन्होंने अेक दूकान खोल ली। दूकान यदि अधिक बड़ी नहीं थी तो छोटी भी न थी। यह आजसे करीब ४० वर्ष पहलेकी बात है।

वास्तवमें फोयल्स पुस्तकोंकी दूकानोंमें शिरोमणि हैं। अुनके खास पुस्तक भण्डारमें अेक ओर औषधि सम्बन्धी पुस्तकोंका दुनिया भरमें सबसे विशाल संग्रह है, तो दूसरी ओर अुनकी "ओरियण्टल" दूकानमें संसार भरकी सभी पुस्तकें अुपलब्ध हैं। फोयल्सका अेक भाग विशेषतः जादू सम्बन्धी पुस्तकोंके लिये सुरक्षित है। दुर्लभ पुस्तकों और हस्ताक्षरोंका विभाग तो सारे संसारमें अपने ज्ञानका अेक ही है।

पुस्तकें अुधार दी जाती हैं

'फोयल्स' के अन्तर्गत अेक पुस्तकालय भी है। यहाँसे करीब सारे संसारके देशोंको पुस्तकें अुसी प्रकार अुधार भेजी जाती हैं, जिस प्रकार हम लोग स्थानीय पुस्तकालयोंसे पढ़नेके लिये घर ले आया करते हैं। अिस पुस्तकालयमें दस लाखसे अूपर पुस्तकें हैं। अिस पुस्तकालयका निकास अिंगलैण्ड तथा ब्रिटिश अधिकृत २,००० प्रदेशोंमें है, जिनके अन्तर्गत रायलनेवीके जहाज तथा अन्य संस्थाअें भी शामिल हैं। "फोयल्स" का अेक मासिक क्लब भी है, जिसके संरक्षणमें अेक अत्यन्त सुन्दर और सस्ता मासिक-पत्र निकलता है। अिस पत्रके करीब २,५०,००० ग्राहक हैं। साथ ही अिस क्लबकी ओरसे अेक ग्रन्थमाला भी निकल रही है, जिसके अन्तर्गत 'हाअू टू डू अिट' (अिसे कैसे करें) शीर्षकसे बहुत ही सस्ती पुस्तकें प्रकाशित हुअी हैं। महीनेमें अेक बार वेस्ट अेण्ड होटलमें फोयल्सकी अेक साहित्यिक संस्थाके रूपमें बैठक होती है। जिसमें २,००० से अधिक व्यक्ति अुपस्थित रहते हैं। विशेष रूपसे आमन्त्रित व्यक्तियोंमें लेखक वर्ग हुआ करता है। करीब २० वर्षसे श्री फोयल लेखकों और नयी पुस्तकोंका अिस प्रकार 'प्रतिमास स्वागत' करते आ रहे हैं। अब तो अेक प्रकारसे अिस बैठकने अेक संस्थाका रूप ले लिया है, जिसकी बैठक प्रतिमास नियमित रूपसे हुआ करती है। करीब-करीब सभी प्रसिद्ध लेखक अुसके सदस्य हैं।

"दुर्लभ पुस्तकोंका शिकार-स्थान"

फोयल्स दुर्लभ पुस्तकें अिकट्ठी करनेवालोंके लिये अेक प्रकारसे 'शिकार स्थान' ही कहा जा सकता है। अेक बार अेक पुस्तक संग्रहकर्त्ताने दस सेण्टमें ली और अेक सप्ताह बाद वही पुस्तक बेचकर ५०० कमाये। लेकिन अिसका अर्थ यह नहीं कि श्री फोयल घाटेमें रहे या रहते हैं। अेक बार केले डोनियर मार्केटमें जहाँ पुरानी पुस्तकें बिकती हैं, अुन्होंने कुछ पुस्तकोंका बण्डल कुछ पेन्समें खरीदा। भाग्यसे अुस बण्डलमें अुन्हें फिटजराल्डकृत अुमर खैयामके अनुवादका पहला संस्करण मिल गया, जिसे अुन्होंने कअी हजार डालरमें बेच दिया। अेक दिन अेक ग्राहक यह शिकायत करते हुअे फोयल्समें आया कि अेक प्रार्थना-पुस्तक जिसे अुसने फोयल्समें खरीदी थी, अस्पष्ट है और अुसमें जगह-जगह घसीटकर लिखा गया है। फोयल्स ने अुसका मूल्य अुसे वापस दे दिया गया। कुछ समय बाद श्री फोयलने वह पुस्तक अेक प्रसिद्ध विद्वानको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिखायी। अुसने अुस लिखावटकी परीक्षा की और अन्तमें यह निष्कर्ष निकाला कि वह लिखावट वेन जानसनकी है। अिसका परिणाम यह हुआ कि श्री फोयलको अुस पुस्तकके पहलेकी अपेक्षा कअी गुने अधिक दाम मिले।

बर्नार्ड शाके पत्र

फोयलसकी कअी प्रसिद्ध घटनाओंमें केवल अेक-दो घटनाअें और लिखकर यह लेख समाप्त होगा। अेक बार प्रसिद्ध नाटककार स्वर्गीय जार्ज बर्नार्ड शाके पत्रोंका संग्रह फोयलने ८०० डालरमें बेचा। ग्राहकको बादमें पता चला कि वे पत्र जाली हैं। श्री फोयलने ग्राहकको मूल्य लौटा दिया। बादमें वह संग्रह ग्राहककी शिकायतके साथ श्री शाके पास भेजा। श्री शाने अेक पत्र लिखकर श्री फोयलको बतलाया कि किस कारणसे अुन पत्रोंकी लिखावटमें कुछ भिन्नता हो गयी है। श्री फोयलने बादमें वह संग्रह और श्री शाका बादवाला पत्र भी १,००० डालरमें बेच दिया।

अभी कुछ ही समय पहलेकी बात है कि अेक प्रसिद्ध व्यवसायीने श्री. फोयलको दस लाख पौंडसे भी अधिकका चेक भेजा और चाहा कि वह फोयलसको अुन्हें बेच दें। पर श्री फोयलने वह चेक लौटाते हुअे लिखा "मैं अपनी किताबों और किताबी कीड़ोंके बिना कैसे रह सकूँगा ?"

वाचनालय

: श्री वि. दा. सावरकर :

युवकोंको चाहिये कि वाचनालयमें जाकर जितने प्राप्य ग्रंथ हों और जितना अधिक संभव हो, पढें। किन्तु अिसके साथ-साथ यह समझ लें कि किसी भी ग्रंथमें दुनियाके सभी प्रश्नोंका सभी दृष्टियोंसे विचार नहीं रहता। अिसका कारण है। जो ग्रंथ आज हम देखते हैं, वे ग्रंथ देशकी तत्कालीन परिस्थितियोंमें लिखे हुअे होते हैं। विद्यार्थी अुन सबको पढें किन्तु अुसके सिद्धान्त शुद्ध सत्य हैं अैसा मानकर न चलें। कारण वे अपनी सीमामें मर्यादित होते हैं। अतः आप अुस विषयके दीगर पहलुओंपर प्रकाश डालनेवाली पुस्तकें भी पढ़िये और फिर सभी पहलुओंका विचार करके अुसका सिद्धान्त अपनी बुद्धिकी कसौटीपर कसकर ही आप अपना मत बनायें। आप मार्क्सका तत्वज्ञान पढ़िये किन्तु यह भी देखिये कि अिसके दूसरी ओर क्या है। मैं हिन्दू-संगठनका अभिमानी हूँ अिसलिये आप भी आँख मूंदकर हिन्दू संगठनाभिमानी बनें अैसा मैं नहीं कहूँगा। अिसपर आप विचार कीजिये और फिर आपको यह बात सही लगी तो अुस कार्यमें हाथ बँटाअिये। हाथमें जो पुस्तक लगे अुसे पढ़कर अुस विषय सम्बन्धी अेकदम मत बनाना ठीक नहीं है। संतति नियमन संबंधी पुस्तकें आपने पढीं तो कोअी आपत्ति नहीं, किंतु अुसीके साथ-साथ 'अष्टवीराभव' आशीर्वाद क्यों दिया जाता है अिसपर भी विचार कीजिये। और तदनंतर निश्चय कीजिये कि अुपर्युक्त विषय संबंधी क्या अुचित और क्या अनुचित है, क्या सही और क्या गलत है। किसी भी प्रकारके पढ़नेपर बंदी नहीं होनी चाहिये। किंतु अिस ओर भी ध्यान आकर्षित करना चाहिये कि आत्मसात् नहीं कर सकते, हजम नहीं कर सकते, अुसे न पढें। वाचनालयमें सभी विषयोंकी पुस्तकें संग्रहीत करनी चाहिये। फलाँ विषय बुरा है अतः अुस संबंधकी पुस्तकोंको स्थान नहीं ही दें, यह ठीक नहीं है।

दूसरी अेक सूचना यह है कि वाचनालयके साथ ही वाद-विवेचन-माला होनी चाहिये। तभी यह कहा जा सकता है कि वाचनालय पूर्ण हुआ।

(मराठीसे)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोलम्बसको किनारा मिला

: श्री अिल्या अिल्फ तथा यूजेन पेट्रोव :

"जमीन ! जमीन !" मस्तूलकी अूँचाओपर चढ़ा हुआ अेक नौजवान मल्लाह प्रसन्नतासे चिल्ला पड़ा। क्रिस्टोफर कोलम्बसकी चिन्ता और अनिश्चिततासे भरी हुअी कठिन यात्रा समाप्त हुअी। जमीन दिखायी दे रही थी। काँपते हाथोंसे कोलम्बसने अेक दूरबीन अुठायी।

"अेक पर्वत श्रेणी दिखायी दे रही है" अुसने अपने साथियोंसे कहा। "लेकिन कितना विचित्र है, अुसमें खिड़कियाँ कटी हुअी हैं। आज प्रथम बार मैं अैसे पर्वत देख रहा हूँ जिनमें खिड़कियाँ हों।"

"अेक छोटी-सी नावमें आदिवासी बैठे हैं।" कोअी बोला।

अपने कलगीवाले हैटोंको घुमाते और लम्बे लबादोंको पीछे छोड़ते हुअे ये अन्वेषक ऋतु-परिचायक यंत्रके पास पहुँचे।

अेक विचित्र हरित परिधानमें दो आदिवासी जलयानपर चढ़ आये और शान्तिपूर्वक कोलम्बसके हाथोंमें अेक लम्बा कागज थमा दिया।

"मैं आपके देशका अन्वेषण करना चाहता हूँ, कोलम्बसने सगर्व कहा।" स्पेनकी रानी अीसाबेलाकी ओरसे मैं यह घोषणा करता हूँ कि अिन देशोंका स्वामी....."

"अुसमें फर्क ही क्या है ? पहले यह प्रश्नावली भर डालो।" अेक आदिवासीने खीझते हुअे कहा। "अपना नाम और अुपनाम लिख डालो, यह भी निर्देश करो कि तुम किस राष्ट्रके निवासी हो, विवाहित हो या कुंवारे हो ? आँखोंमें रोहे तो नहीं हैं; अमेरिकन सरकारको अुलटनेका षड्यंत्र तो नहीं कर रहे और यह भी बताओ कि तुम कोअी मूर्ख तो नहीं हो।"

कोलम्बसका हाथ तलवारतक जा पहुँचा। पर क्योंकि वह मूर्ख नहीं था अतः तुरन्त शान्त हो गया।

"हमें आदिवासियोंको नाराज नहीं करना चाहिये" अुसने अपने साथियोंसे कहा। आदिवासी तो बच्चोंकी तरह होते हैं। कभी-कभी तो अुनके रीति-रिवाज बड़े ही विचित्र होते हैं। यह मैं अनुभवसे जानता हूँ।"

"क्या तुम्हारे पास वापिसी टिकट और पांच सौ डॉलर हैं ?" आदिवासीने पूछना प्रारम्भ किया।

"डॉलर क्या ?" अुस महान् नाविकने बड़ी अुलझनमें पड़कर पूछा।

"तुमने अभी प्रश्नावलीमें लिखा है कि तुम मूर्ख नहीं हो और तब भी तुम यह नहीं जानते कि डॉलर किस चिड़ियाका नाम है ? यहाँ रहकर तुम्हारी क्या करनेकी योजना है ?"

"मैं अन्वेषण करना चाहता हूँ।"

"क्या तुम कोअी प्रचार करोगे ?"

"प्रचार ? यह तो मैं पहली बार सुन रहा हूँ।" आदिवासीने कोलम्बसको सिरसे पैर तक देखा, बहुत धीरे-धीरे और अन्तमें कहा :—

"तुम नहीं जानते प्रचार क्या बला है ?"

"न—नहीं।"

"और तुम्हारी योजना है अमेरिकाके अन्वेषणकी? मिस्टर कोलम्बस तुम्हारी जगह मैं होता तो किसी भी शर्तपर अैसा करनेको तैयार न होता।"

"क्या ? क्या तुम सोचते हो कि मैं अिस समृद्ध और अुपजाअू धरतीका अन्वेषण न कर सकूंगा ?" अेक घबराहट और गुस्सेके साथ अुस महान् पुरुषने पूछा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर आदिवासी पहले ही दूर चला गया था और अपने आपमें गुनगुना रहा था।

"प्रचारके बिना समृद्धि कहाँ ?"

तब तक बेड़ा बन्दरगाहमें प्रवेश कर चुका था। अिन अक्षांशोंमें पतझड़ बहुत आभापूर्ण होता है। सूर्योदय हुआ और समुद्रके किनारेके पक्षी जहाजके पिछले भागकी ओर चक्कर लगाने लगे। नयी जमीन-पर कदम रखते ही कोलम्बस हक्का-बक्का हो गया। अुसके अेक हाथमें छोटी-सी मणिमालाओंकी पोटली थी जिसे अुसने सोना और हाथी दाँतके बदलेमें बड़े लाभके साथ आदान-प्रदान करनेकी योजना बना रखी थी, और दूसरे हाथमें स्पेनका झण्डा था। परन्तु जहाँ कहीं भी अुसने देखा मिट्टी, घास अथवा वृक्ष आदि कुछ भी नहीं दिखायी दिये जैसा कि वह प्राचीन शान्त यूरोपमें देखा करता था। यहाँ तो पत्थर, सीमेन्ट, फौलाद और कंक्रीटके अतिरिक्त कुछ था ही नहीं।

आदिवासियोंकी अेक बहुत बड़ी भीड़ हाथमें पेन्सिल, नोटबुक और कैमरा लिये हुअे अुसके पाससे गुजरी। अुन्होंने अेक प्रसिद्ध बौक्सिंग लड़नेवालेको चारों ओरसे घेर लिया जोकि किसी पासके जहाजसे अभी-अभी अुतरा था। अुसके कान फूलगोभीकी तरह चिमड़े हुअे थे और गर्दन असाधारण रूपसे मोटी थी। कोलम्बसकी ओर किसीने किंचिन्मात्र ध्यान भी न दिया। केवल पाअुडर पोते चेहरेवाली दो आदिवासी स्त्रियाँ अुसके पास तक आयीं।

"हाथमें झंडा लिये विचित्र परिधानवाला यह व्यक्ति कौन है ?" अुनमेंसे अेकने कहा।

"संभवतः किसी स्पेनीय-आहारगृहका विज्ञापन होगा" दूसरी बोली।

और तब वे दोनों भी अुस फूलगोभीकेसे कानोंवाले प्रसिद्ध व्यक्तिको आश्चर्यसे देखनेके लिये चल दीं।

कोलम्बस अपने झण्डेको अमेरिकी जमीनमें गाड़नेमें असफल रहा। पहले अुसे अवश्य किसी पैने औजारसे छेद करना पड़ता। अुसने अपनी तलवारसे रास्ता खोदना चाहा और अन्ततः वह टूट गयी। अतः अुसे अुस भारी और सोनेसे कसीदा किये झण्डेको अुठाये-अुठाये गलियोंमें घूमना पड़ा। सौभाग्यवश अुसे अुन मालाओंका बोझ नहीं ढोना पड़ा। ड्यूटी अदा न करनेके कारण वे कस्टममें जब्तकर ली गयी थीं।

लाखों आदिवासी अपने कामोंमें व्यस्त बढ़े जा रहे थे, जमीनके अन्दर घुसे चले जा रहे थे, खा पी रहे थे और अपना काम कर रहे थे और अिसका भान भी नहीं था कि अुन्हें किसने खोज निकाला है।

कोलम्बसने दुखके साथ सोचा —"यात्राके लिये धीरे-धीरे पैसा अिकट्ठाकर तूफानी समुद्रोंपर नाव खेकर और अपने जीवनको संकटमें डालकर मैं यहाँ पहुँचा हूँ और कोअी मेरी ओर नजर भी नहीं अुठाता।"

वह अेक आदिवासीके पास दयार्द्र भावसे पहुँचा और सगर्व बोला:—

"मैं क्रिस्टोफर कोलम्बस हूँ।"

"क्या कहा तुमने ?"

"क्रिस्टोफर कोलम्बस ?"

"हिज्जे करो" आदिवासीने अधीरतासे कहा।

कोलम्बसने हिज्जे कर दिये।

"मुझे कुछ अनिश्चित-सा स्मरण तो होता है।" आदिवासीने अुत्तर दिया। "हलकी मशीनोंका व्यापार करते हो क्या ?"

"मैंने अमेरिकाको खोज निकाला है।" कोलम्बसने धीरेसे कहा।

"क्या मतलब तुम्हारा ? आखिर कब ?"

'अभी-अभी। लगभग पाँच मिनट पहले।"

"है तो बड़ी मजेदार बात। अच्छा मिस्टर कोलम्बस, ठीक-ठीक बताओ, तुम चाहते क्या हो ?"

"मेरा विचार है" अुस महान् नाविकने नम्रता पूर्वक कहा कि अिससे मैं कुछ यशभागी तो अवश्य हुआ।

"पर क्या डॉकपर मिलने तुमसे कोअी गया था ?"

"कोअी तो नहीं" आदिवासियोंको अिसका ख्याल कहाँ, मैंने ही अुन्हें ढूंढ निकालनेका अिरादा किया था।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

" तुमने तार कर दिया होता । कहीं अैसे काम किया जाता है ? जब तुम कोअी नयी जमीन खोजनेकी योजना बनाओ तो पहले अेक तार कर दो, रिपोर्टरोंको देनेके लिये दो हँसनेवाले किस्से पढ़ लो और सौ या अिससे कुछ कम-अधिक फोटो तैयार रखो । अन्यथा कुछ नहीं होनेका । तुम्हें जिस चीज़की आवश्यकता है अुसका नाम प्रचार है । "

" प्रचार ! " यह दूसरी बार है जब मैं अिस शब्दको सुन रहा हूँ । आखिर अिसके माने क्या है ? यह कोअी धार्मिक अनुष्ठान है अथवा मूर्तिपूजकोंकी कोअी बलि-प्रथा ? "

आदिवासीने नवागन्तुकको दयार्द्र भावसे देखा ।

" बच्चे मत बनो मिस्टर कोलम्बस ! प्रचार, प्रचार है । मैं प्रयत्न करूंगा कि तुम्हारे लिये कुछ कर सकूँ । मुझे तुम्हारी दशापर दुख होता है । "

वह कोलम्बसको अेक होटलमें ले गया और अुसकी पैंतीसवीं मंजिलपर अुसे अेक कमरा दिला दिया । यह कहते हुअे कि देखें, वह अुसके लिये क्या करता है । वह अुसे कमरेमें अकेला छोड़कर चला गया ।

आधे घण्टे बाद द्वार खुला । अुस कृपालु आदिवासीने दो अन्य आदिवासियोंके साथ कमरेमें प्रवेश किया । अुसमेंसे अेक तो हर समय कुछ न कुछ चबाता रहता था । दूसरेने अेक त्रिपाद और अुसीसे संलग्न अेक कैमेरा निकाला और बोला—

" अब मुस्कराअिये ! हंसिये ! आप नहीं समझे ! अच्छा तो जैसे मैं करूँ वैसा ही आप भी करिये "--

" हा-हा-हा ! " और फोटोग्राफरने बिना मुस्कराये अपने दाँत काढ़ दिये और हिनहिनाया ।

क्रिस्टोफर कोलम्बस सकपका गया और अुन्मत्तकी तरह हँस पड़ा । अेक तेज चमक हुअी, कॅमरा क्लिकसे बोला और फोटोग्राफरने कहा, " धन्यवाद " ।

अब दूसरे आदिवासीने कोलम्बसको अपनी ओर घुमाया । अब भी कुछ चबाते हुअे अुसने अेक पेन्सिल निकाली और पूछा—

" आपका नाम ? "

" कोलम्बस । "

" हिज्जे तो करिये । को-ल-म्ब-स ? बहुत अच्छा । यह बहुत आवश्यक है कि नाम मिल न जाय। मिस्टर कोलमैन अमेरिकाकी खोज किये आपको कितना अर्सा बीत गया ! आज ही । बहुत अच्छा । अमेरिका आपको कैसा लगा ? "

" आप तो जानते ही हैं कि अिस शस्य श्यामला भूमिको पूरी तरहसे देखनेका अभी मुझे अवसर ही नहीं मिला । "

रिपोर्टर गम्भीर विचारमें लीन हो गया ।

" यह बात है ? अच्छा तो मिस्टर कौलमैन मुझे यह बताअिये कि न्यूयार्ककी प्रथम कौनसी चार वस्तुअें आपको अच्छी लगीं ? "

" भअी, आप तो जानते हैं कि यह कहना कठिन है । " रिपोर्टर पुन : गम्भीर विचारमें लीन हो गया। वह बॉक्सिंग लड़नेवालों और चल-चित्रके अभिनेताओंसे भेंट करनेका आदी था । अेक अैसे गूंगे और चुप्पे छोकरेके साथ जैसा कि कोलम्बस था, अुसे बड़ी कठिनाअी पड़ रही थी । अन्तत: अुसने अपने आपको अेक ओर आक्रमणके लिये तैयार किया और निम्नलिखित बड़ा ही मौलिक प्रश्न खोज ही निकाला ।

" मिस्टर कोलम्बस, क्या आप दो अैसी चीजें बता सकते हैं, जो आपको पसन्द न आयी हों । "

कोलम्बसने अेक गहरी आह भरी । अिस प्रकारकी नाजुक परिस्थितिमें वह कभी नहीं पड़ा था । अुसने माथा पोंछा और अपने आदिवासी मित्रकी ओर साहस-हीन होकर मुड़ा ।

" क्या अैसा नहीं हो सकता कि बिना प्रचारके ही हमारा काम चल जाय ? "

" तुम पागल हो " अुस कृपालु आदिवासीने लाल-पीला होकर कहा—" तुमने अमेरिकाको ढूंढ़ निकाला अिस बातका कोअी अर्थ नहीं । अमेरिकाके लिये तो तुम्हें ढूँढ निकालना ही महत्वपूर्ण है । "

दिमागपर बहुत अधिक दबाव डालनेपर रिपोर्टरको यह प्रश्न पूछनेकी प्रेरणा मिली ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अमेरिकन स्त्रियाँ आपको कैसी लगीं ?"

अुत्तरकी प्रतीक्षा किये बिना ही अुसने व्यस्त होकर लिखना आरम्भ कर दिया। समय-समयपर वह अपनी जलती हुअी सिगरेट मुँहसे हटाकर कानके पीछे खोंस लेता। अिन क्षणों वह पेन्सिल अपने मुँहमें ले लेता और प्रेरणा प्राप्त करनेके लिये छतकी ओर देखने लगता। तब पुनः लिखने लगता। लिखना समाप्त कर चुकनेपर अुसने "बहुत ठीक" कहकर भयभीत कोलम्बसकी फीतेसे बँधी, मखमलसे आवृत्त पीठ थपथपायी और अुससे हाथ मिलाकर चल दिया।

"बस, अब सब ठीक है" दयालु आदिवासीने कहा। "आओ, चलो, शहर घूमने चलें। क्योंकि तुमने अिस देशका अन्वेषण किया है; अतः तुम्हें भी अिसे देख लेना चाहिये। केवल ब्राडवेपर तुम अिस झण्डेको लेकर नहीं चलने पाओगे। अच्छा हो कि अिसे यहीं छोड़ दो।"

ब्राडवेका भ्रमण वहीं समाप्त हुआ जहाँ पैंतीस सेंटका टिकिट लेकर हम लोग अेक आमोद-गृहमें गये। वहाँसे महान् किन्तु झेंपू क्रिस्टोफ़र अैसे भगे जैसे कि बिल्लीपर गरम पानी डाल दिया हो। वह गलियोंमेंसे होकर लोगोंसे टकराते और चिल्लाते हुअे भागे। अपने कमरेमें जाकर धम्मसे चारपाअीपर गिर पड़े और आती-जाती गाड़ियोंकी खड़खड़ाहटकी लोरियोंमें गहरी नींद सो गये।

अगले दिन कोलम्बसका आश्रयदाता अपने हाथमें अेक अखबार घुमाता प्रसन्न वदन कमरेमें घुसा। अुस दैनिकके ८५ वें पृष्ठपर अुस त्रस्त नाविकने अपनी अट्टहासकी मुद्रावाली आकृति पहचानी। परिचय-लेखका सारांश यह था कि वह अमेरिकन औरतोंके प्रति, जिन्हें वह विश्वकी सर्वाधिक सुसंस्कृत नारी समझता था, दीवाना था और प्रसंगवश वह हार्वर्ड विश्वविद्यालयमें भूगोलपर व्याख्यान देनेवाला था।

वह योग्य पुरुष यह शपथ खानेवाला था कि अुसने अैसा कुछ नहीं कहा पर अिसी बीचमें नवागन्तुक आ गये।

नम्रता अथवा शिष्टाचारमें समय न खराब करते हुअे अुन्होंने कामकी बात छेड़ी। प्रचारका जादू अपना काम कर चुका था, कोलम्बसको हॉलीवुड्के लिये आमन्त्रित किया जा रहा था।

"मि. कोलम्बस आप जानते ही हैं" नवागन्तुकोंने समझानेकी चेष्टा करते हुअे कहा। "हम चाहते हैं कि आप अैतिहासिक चित्र अेमेरिगो वेसपुसीमें नायकका अभिनय करें। जरा सोचिये तो कि वास्तविक क्रिस्टोफर कोलम्बस "अेरिगो वेसपुसी" के रूपमें। जनता अिसे देखनेके लिये टूट पड़ेगी। असली बात यह है कि अिसका कथोपकथन ब्राडवेकी जनभाषामें होगा। समझे ? तो हमें बिल्कुल शुरूसे समझाना पड़ेगा। हमारी कथावस्तु अलेग्ज़ेण्डर डयूमाके अुपन्यास 'दि काअुन्ट ऑव मॉन्टे क्रिस्टो' पर आधारित है—पर यह कोअी महत्वपूर्ण बात नहीं है। हमने काट-छाँटकर अिसमें अमेरिकाकी खोज भी मिला दी है।

कोलम्बस चकरा गया, अुसके होठ हिले; मगर आवाज़ नहीं निकली। सच पूछिये तो वह अपने अिष्ट देवका स्मरण कर रहा था। परन्तु हॉलीवुडके आदिवासी अपनी धुनमें मस्त कहे ही चले जा रहे थे।

"और अिस प्रकार, मिस्टर कोलम्बस, तुम अुस 'अेमेरिगो वेसपुसी'के रूपमें सामने आओगे जिसके प्रेममें स्पेनकी रानी दीवानी है। ठीक अुसी प्रकार वह स्वयं रूसकी साम्राज्ञी ग्रिश्काके प्रेममें अन्धा है। परन्तु कार्डिनल रिचलू महोदय वास्को डि गामाको रिश्वत देते हैं और लेडी हैमिल्टनकी सहायतासे तुम्हें अमेरिका भेजनेका प्रबन्ध कर देते हैं। अुसकी धूर्त्ततापूर्ण योजना बिल्कुल सीधी सादी और स्पष्ट है। समुद्रमें समुद्री डाकू तुमपर आक्रमण करते हैं। तुम शेरकी तरह लड़ते हो। यह क्रम ३०० मीटर लम्बा है। मुमकिन है तुम अभिनय न कर सको; पर यह कोअी महत्वपूर्ण बात नहीं है।"

"आखिर महत्वपूर्ण क्या है ?"

"प्रचार ! जनता तुम्हें पहलेसे ही जानती है और तुम्हारी तरहके सुयोग्य वैज्ञानिक पुरुषको समुद्री डाकुओंसे लड़ते देखनेके लिये टूट पड़ेगी। यह सब तुम्हारी अमेरिकाकी खोजमें समाप्त होता है। पर यह कोअी महत्वपूर्ण बात नहीं है। .....असली चीज तो समुद्री डाकुओंसे युद्ध है। समझे गँड़ासे, लम्बे लम्बे कुल्हाड़े, गुलेलें, पानीमें आग लगा देनेके यूनानी तरीके, घुड़सवार सैनिकोंकी दोनों ओर मुड़ी हुअी तलवारें—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संक्षेपमें कहेंगे कि हॉलीवुडमें मध्यकालीन रंगमंचकी पर्याप्त सामग्री है। अेक बात है, तुम्हें हजामत तो बनवानी ही पड़ेगी। दाढी मूँछें कतअी नहीं। जनता रूससे सम्बद्ध चित्रोंमें अितने दाढी मूँछ देख चुकी है कि अब वह अुनसे अूब चुकी है अिसलिअे सबसे पहले तो तुम हजामत बनवाओ और तब छः सप्ताह काम करनेके अिस पट्टे (कन्ट्राक्ट) पर हस्ताक्षर कर दो ! स्वीकार है ? "

"ठीक है" कोलम्बसने कहा। अुसका शरीर काँप रहा था।

अुस दिन काफी रात गये वह अपनी डैस्कपर बैठा स्पेनकी रानीको पत्र लिख रहा था:--

'मैंने बहुत दूरकी यात्रा की, पर यहाँ जैसे मौलिक आदिवासी कहीं नहीं मिले। शांति तो अिन्हें मंजूर ही नहीं और अिसलिअे अधिकसे अधिक होनेवाले शोर-गुलका आनन्द लेनेके लिअे अिन्होंने सारे शहरमें विशेष प्रकारकी सड़कें बनवा रखी हैं। यह सड़कें कुछ अूँचाअीपर लोहेके खम्बोंपर बनी हैं (रेलवे लाअिन) और अिनपर दिन-रात लोहेकी गड़ियाँ दौड़ा करती हैं। अिससे जो शोर मचता है, वह आदिवासियोंको बहुत प्रिय है।

"अभी मैं अिस निश्चयपर तो नहीं पहुँच सका कि ये नरभक्षी हैं या नहीं, पर जो भी हो ये लोग कुत्तेका मांस अवश्य खाते हैं। अपनी आँखोंसे मैंने बहुतसे अैसे रुकनेके स्थान देखे हैं जहां जानेवाले पकाया हुआ कुत्ता खाते हैं। और अुसके स्वादकी प्रशंसा भी करते हैं।

"यहाँपर हर आदमी अेक गंधयुक्त धुआं अुड़ाता जाता है, जिसे कि यहाँके लोग गैसोलिन कहते हैं। यहांकी सभी सड़कोंपर अिसकी गन्ध छायी रहती है, जोकि अेक यूरोपियन नाकको बड़ी अप्रिय लगती है। यहाँ तक कि अिनके सौन्दर्यमेंसे भी गैसोलिनकी बू आती रहती है।

"यह मैं अवश्य प्रतिपादित करनेमें समर्थ हो गया हूँ कि ये आदिवासी मूर्तिपूजक हैं। अिनके बहुत-से देवी-देवता हैं जिनके नाम अिनके झोपड़ोंपर आगेसे लिखे हुअे हैं। अैसा लगता है कि सर्वाधिक कोकाकोला देवी, ड्रगिस्ट सोडा देव, शीघ्रभोजन दात्री (कैफेटिरिया) देवी और गैसेलिनकी गन्धके महान् देवता फोर्डके अुपासक हैं। यह तो अिनका कामदेव-सा लगता है।

"ये आदिवासी बड़े पेटू हैं और हर समय कुछ न कुछ चबाते रहते हैं।"

"दुर्भाग्यवश, सभ्यताका प्रभाव अिनपर नहीं पड़ा है। आधुनिक स्पेनीय जीवनकी तीव्र प्रगतिकी तुलनामें यहाँके लोग बहुत ही धीरे-धीरे चलते हैं। यहां तक कि अेक स्थानसे दूसरे स्थान तक जानेके लिये पैदल चलना भी अिन्हें बहुत तीव्रगामी साधन लगता है। अिस प्रक्रियाको समाप्त करनेके लिअे अुन्होंने बहुत बड़ी संख्यामें अैसी चीजें बनायी हैं जिन्हें स्वयंचालित गाड़ियां (ऑटोमोबाअिल्स) कहते हैं। अब वे अुसपर कच्छपगतिसे आते जाते हैं और अुन्हें बहुत आनन्द मिलता है।

"ब्राडवे कहलाये जानेवाले क्षेत्रमें हर शामको होनेवाले अेक अुत्सवने मुझे भयमिश्रित आश्चर्यमें डाल दिया। आदिवासी अेक बहुत बड़ी झोपड़ीमें अेकत्र होते हैं जिसे आमोद-भवन कहते हैं। कुछ आदिवासी स्त्रियाँ मंचपर जाकर टमटमकी अनियन्त्रित धातु और सैक्सोफोनकी दुःखभरी आवाजके साथ अपने वस्त्र अुतारने लगती हैं। वहाँपर अुपस्थित सभी बच्चोंकी तरह तालियाँ बजाते हैं। जब स्त्रियाँ लगभग नग्न हो जाती हैं और कक्षमें अुपस्थित आदिवासियोंको ज्वरकी-सी अुष्णताका अनुभव होने लगता है तब अिस आश्चर्यजनक धार्मिक अनुष्ठानका सबसे अधिक न समझमें आनेवाला अंश प्रारम्भ होता है, पता नहीं किस वजहसे पर्दा गिर जाता है।

"मैं आशा करता हूँ कि अिस अनूठे देशमें अन्वेषण जारी रखूँगा और आगे देशके और अन्दरतक जाअूँगा। यहाँ मेरा जीवन संकटमें नहीं है। आदिवासी आवभगत करनेमें पटु, सहृदय और अजनबियोंके प्रति अुदार हैं।"

(रशियन भाषासे-- अनुवादक : श्री प्रताप विद्यालंकार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मराठी :

आधुनिक मराठी अुपन्यास

: श्री प्राध्यापक वि. वा. आंबेकर :

(१)

पिछले तीस वर्षोंका मराठी अुपन्यास-साहित्य व्यापकताकी दृष्टिसे बहुत विशाल है। यदि गिनती लगाकर अनुमान लगानेका प्रयास भी किया जाय तो अिन तीस वर्षोंमें अुपन्यास-साहित्यका निर्माण बहुत बड़े पैमानेपर हुआ दिखायी देता है। लेखकोंकी दृष्टिसे यदि देखा जाय तो विभिन्न अभिरुचिके और मनोवृत्तिके लेखकोंने अिसमें भाग लिया है अैसा सहज ही हमारे ध्यानमें आ जाता है। अवलोकनके विषय, चिंतनके क्षेत्र, अभिरुचिके दायरे, चुनावोंकी व्यापकता, मनोविश्लेषणकी आजमाअिश, समाज परीक्षणकी अीर्ष्या, राजनीतिकी जानकारी, मानवकी प्रगतिके बारेमें आस्था आदि अनेक अैसे विषय और क्षेत्र हैं जिन्हें विविध रूप-रंगोंमें मराठी अुपन्यास लेखकोंने समेटा है। अिसके अतिरिक्त विभिन्न शैलियोंमें साहित्य निर्माण करनेकी अभिलाषा तथा नयी भाषा शैलीके प्रयोगोंसे अुसे सजाकर अुसका संवर्धन करनेकी अिच्छा वा रुचि आदि अनेक बातें अुनके स्वभाव-धर्मोंके अनुसार विविध रूपमें अभिव्यक्त हुअी हैं। स्व० वामन मल्हार जोशी, मामा वरेरकर, फडके, खांडेकर, माडखोलकर, स्व० साने गुरुजी, वा. वि. जोशी आदि अनेक समर्थ लेखक अपनी बौद्धिक और कलात्मक सामग्री लेकर अिसी कालमें क्रान्तिकारी कार्य करनेके लिये तैयार हुअे। गत तीस वर्षोंमेंसे पहले पन्द्रह वर्षोंमें अिन लेखकोंने अपनी निश्चित शैलियाँ निर्माण की हैं। अुपन्यास-साहित्यका सृजन कितने प्रकारोंसे, कितने परिमाणमें सर्वव्यापी और जीवन व्याप्त सभी अंगोंको समेटकर किया जा सकता है तथा सामाजिक जीवनके कौनसे अंगोपांगोंका अुत्कट रीतिसे अंतर्भाव किया जा सकता है अिसका प्रत्यक्ष वस्तुपाठ अिन लेखकोंके लेखनमें व्यक्त हुआ है और विकसित हुआ है। अिन्हीं तीस वर्षोंमें भारतीय जीवनकी कालावधिकी कुछ क्रियाअें अनेक सामाजिक व राजकीय संवेदनाओंसे मंथनकर निकली हैं। भारतके जीवनकी अिस कालखण्डकी कुछ क्रियाअें स्वयं प्रेरित हैं और कुछका स्वरूप प्रतिक्रियात्मक है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि प्रतिक्रियात्मक आंदोलनका हिस्सा अुसमें अधिक है।

यह विधान कुछ अजीब जान पड़ेगा; किन्तु महात्माजी जैसे बड़े व्यक्तिके व्यक्तिगत अुदाहरणोंसे यह दिखायी भले ही दे कि सामाजिक व राजकीय जीवन क्षेत्रके जीवन मूल्योंकी नयी मिलावट हो गयी है; फिर भी अन्य राष्ट्रोंकी नयी परंपराओं और परिपाटियोंसे हमारी बुद्धिपर जो नयी हिलोरें टकरायीं, अुन सबकी हमने जो प्रतिक्रिया आरंभ की अुसीका महत्व अिन तीस वर्षोंमें पूर्ण रूपसे जारी रहा। प्रथम महायुद्धके बाद अिंग्लैंड, अमरिका अिन देशोंने अपने विजय-अुत्कर्ष कालमें अपने सामाजिक जीवनमें जो परिवर्तन अनुभवके रूपमें लिये या परिवर्तन किये--अुनका अनुकरण करनेका यहाँ भी प्रयत्न किया गया। अिसी कालमें रूसने अपने देशमें सामाजिक जीवनका अेक प्रयोग किया। अुसका भी अनुकरण हमने काफी परिमाणमें किया है। न्याय, नीति, सदाचार, सदभिरुचि, धनोत्पादन, वैवाहिक जीवन, संतान संगोपन, शिक्षा कलाक्रीड़ा आदि अनेक बातोंमें अिन विदेशी राष्ट्रोंने जो प्रयोग किये और अुनसे अुत्पन्न होनेवाले परिणामों तथा विचारोंको समझकर हमने भी अपने समाज जीवनमें अुन सबको ग्रहण किया। अितना ही नहीं तो सामाजिक जीवनकी तात्विक मीमांसा करते हुअे अुन सबका घोष और व्यवहार भी जारी रहा; अिसे कोअी भी आसानीसे ध्यानमें ला सकता है।

भिन्न-भिन्न स्थानोंसे विचार और मतोंको अेकत्रित कर साथ ले आना योग्य ही है। किन्तु आचरण पद्धति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और मत प्रचार अिनका अुद्गम स्वयं प्रेरणामेंसे कितना हो और अनुकरणके मार्गसे कितना हो अिसपर जो अूहापोह तथा वितंडावाद मचा वह भी अिस तीस वर्षोंके काल-खंडकी ही बात है। अिंग्लैंड, अमरीका, फ्रान्स आदि राष्ट्रोंके सामाजिक जीवनके व्यक्ति स्वातंत्र्यके नामपर होनेवाला स्वेच्छाचारका अतिरेक, जर्मनी, अिटली आदि राष्ट्रोंके सामाजिक जीवनकी अेक सांचेमें ढाली हुअी अनुशासन युक्त सैनिक ढांचेपर बनी हुअी बनावट और रशियाके वर्गविहीन क्रान्तिके लिये तत्पर रहनेवाली परंपरागत संस्कृतिकी तहस नहस अिन सबके संमिश्रित संस्कारोंका रंग भारतीय जीवनपर अिन्ही तीस वर्षोंके कालमें विशेष रूपसे पड़ा है। अिसके साथ ही गांधीवादकी प्रेरणासे स्वयं विकासी अंतः-प्रेरणाको भी साहित्य सृजनमें स्थान मिला। अेक ओरसे सुखासीन विलास वैभवको भोगनेकी अुपभोग प्रधानता आयी तो दूसरी ओरसे मानव केवल अेक प्रयोगात्मक यंत्र मात्र है, अिस कल्पनाका प्रचार हुआ। कहींसे अन्न-क्षुधा और कामक्षुधाकी परितृप्ति ही जीवनका अेकमात्र लक्ष्य अुद्घोषित हुआ और मानव जीवनकी सफलता भी अिसीमें मानी गयी। कहींपर केवल संयमित मनोविकारोंका नीतिमय जीवन और आचरणका बखान किया गया। अिस तरह अिन अनेकों अेकांगी प्रवृत्तियोंको लेकर मराठी साहित्यकी प्रगति हुअी है। मराठी अुपन्यासोंमें अिन सब संस्कारोंकी झांकी हमें दिखायी देती है।

अिस अुपन्यास साहित्यमें आपको सर्वहारा वर्गका चित्र मिलेगा, राजकीय संघर्षका वर्णन मिलेगा, हड़तालें, सत्याग्रह, मजूदूरोंका संघर्ष, वैवाहिक जीवनकी चिकित्सा, प्रणयकी रंगीनियाँ, साम्प्रदायिक दंगोंका दर्शन, मध्यवर्गकी गरीबीका दैन्य, स्त्रियोंकी परवशता, लैंगिक स्वैराचारका स्वातंत्र्य व अुसका महत्त्व आदि बहुत-सी बातें मिलेंगी। सुप्त मनकी कुंठाओंका तांडव, व्यावहारिक जीवनके आचरणका भ्रष्ट स्वरूप, भ्रष्टताका समर्थन भी कहीं-कहीं मिलेगा। कहीं नीति व अनीतिके क्षेत्र अेक दूसरेमें मिल गये हैं अिसका प्रतिपादन आप पायेंगे तो कहीं स्त्री यह केवल अुपभोगकी सामग्री है अैसा दृश्य आपको मिलेगा। कहीं तलाककी मांग है तो कहीं अेक पत्नीव्रतका महत्त्व, तो कहीं पतिव्रत भंगका औचित्य भी सामने आया है। कहींपर विवाह और प्रेम समानार्थक हैं, भिन्न नहीं, अिसकी अभि-व्यक्ति हुअी है; तो कहीं शरीर संभोग और मनोधर्म अिनका किसी प्रकार कोअी संबंध नहीं अिस प्रकार तात्विक मीमांसा भी दिखायी देगी। मराठी अुपन्यासोंके ये विविध विषय हैं जिनको अुपन्यासकारोंने अिन तीस वर्षोंमें छुआ है। अुपन्यासकारोंकी लेखनीके ये विचित्र रंग-बिरंगे चित्र हैं। अिस प्रकार अिन कृतियोंका अुचित मूल्यांकन हो अैसा आग्रह यदि ये अुपन्यास करें तो अिसमें कोअी आश्चर्यकी बात नहीं है। पाठक जैसा चाहते हैं वैसा यदि वे माँगें तो अुनका भी कहना सही है। पर यहाँ तो सौदा करनेवाले और सौदागर दोनों ही अिस विचित्र व्यापारमें अैसे अुलझे हुअे दिखायी देते हैं कि अच्छे-अच्छे पारखी भी स्तब्ध होकर सोचने लगते हैं। तीस वर्षोंमेंसे अिधरके पन्द्रह वर्ष विशेष अंधड़-से परिपूर्ण दिखायी देते हैं। पहले लेखकोंकी श्रेणीमें, दिघे, बोरकर, शिरवाडकर, श्रीधर देशपांडे, विभावरी शिरूरकर, गीता साने, शांता शेळके, ठोळल, मर्ढेकर, पेंडसे, बिवलकर, प्रेमा कंटक आदि अनेक लेखक व लेखिकाअें अपनी औपन्यासिक कृतियोंसे अुपन्यासोंके स्वरूपोंमें, शैलियोंमें, रचनामें कथोपकथनमें कथानकोंमें वैचित्र्यपूर्ण परिवर्तन करनेवाले सिद्ध हो चुके हैं। यह परिवर्तन अुन्होंने बुद्धि पुरस्सर किया है।

अिस परिवर्तनको ध्यानमें रखना होगा। यह मराठी भाषाके क्षेत्रमें ही मर्यादित भले ही रहा हो पर अिसके भीतरकी कला सर्वंगामी और सार्वकालीन कसौटियोंपर परखनेपर वह सोलहों आने खरी अुतरे अिसका जान बूझकर प्रयत्न व प्रचार किया गया। लेखन-शैली पाठकोंकी अभिरुचिको विशेष रूपोंसे आकृष्ट कर सके अिसको ध्यानमें रखते हुअे वह सरल बनती गयी। अुसमें अर्थ व्यंजकता और संग्राहकता दिखायी देने लगी। पात्रोंका वर्णन और घटनाओंके प्रसंग मूर्त रूपसे साकार व सजीव बनाकर पेश करनेकी कला मराठी साहित्यिकोंने आत्मसात् की। कथानकोंके विषयोंमें विविधता और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यापकता भी आने लगी। पिछड़ेसे-पिछड़े हुअे और अुपेक्षित मानव जीवनकी सुख-दुख भरी कहानी निवेदित होने लगी। अुनकी दुख भरी व्यथा मौन न रहकर अपना क्रंदन अभिव्यक्त करने लगी। समाज जिनको पतित मानता है, जो पापी हैं, अमंगल हैं, निरक्षर हैं तथा जंगली अेवम् असभ्य हैं अैसे लोगोंके जीवनकी व्यथा, दर्द सामुदायिक जीवनको किस प्रकार ग्रस रहा है अिसका मनोज्ञ वर्णन मराठी अुपन्यासोंमें मिलेगा। "बळी" अुपन्यासकी माँग, गारुड़ी तथा अन्य अपराध करनेवाली जातियोंकी सामाजिक परिस्थितिपर हृदयविदारक प्रकाश डाला गया है। अिस जातिके सुख-दुखपर या प्रगति अेवं ह्रासद्वारा सारा सामाजिक जीवन किस प्रकार निर्भर है—यह जानकारी अिस अुपन्यासमें देखनेको मिलेगी। बोरकरका 'भावीण' फडकेका 'झंझावात', खांडेकरका 'क्रौंचवध', ठोकळका 'गावगुण्ड' अिन अुपन्यासोंमें आप यह देखेंगे कि जिन्हें हम गुण्डा, मुफ्तखोर या असभ्य समझते हैं, अुनमें भी मानव-हृदयकी सार्वजनीन सहानुभूतिपूर्ण भावनाअें विद्यमान रहती हैं और वे योग्य प्रसंग आनेपर समाज पोषक कार्योंमें सहायक हो सकती हैं अिसका मनोहारी चित्रण किया गया है। अिनसे भी हमें मानवताके स्रोत मिल सकते हैं। अन्य तथाकथित सभ्य मानवोंसे ये भिन्न नहीं हैं। राजनैतिक जीवनमें लोकशाही जिस प्रकार प्रविष्ट हो रही है अुसी तरह साहित्य-क्षेत्रमें भी लोकतंत्र शीघ्रतासे घुसता हुआ दिखायी देता है। विभिन्न जातियाँ, विभिन्न वर्ग, विभिन्न प्रदेश विभिन्न भौगोलिक सीमाअें रहनेपर भी, भिन्न-भिन्न व्यवसाय करनेवाले, भिन्न भिन्न राजनैतिक व सामाजिक तथा आर्थिक आन्दोलनोंसे अेक ही मानव समाजमें ढलकर भिन्न-भिन्न राहोंसे विकसित हो रहे हैं। फिर भी जीवन संघर्षमें जीवनको बनाये रखनेके लिये कौनसे मूल्य पोषक होते हैं, और कौनसे शोषक होते हैं अिनकी मूलग्राही जानकारी अिस कालमें होती रही है। यह परिवर्तन अिन अुपन्यासोंका विषय बनकर सामने आता रहा है। विराट आन्दोलनोंसे मंथन होकर जीवनकी विविध स्फोटक घटनाओंका ज्ञान तथा लाखों लोगोंके सामुदायिक जीवन धारणा शक्तिके लिये प्रगतिपर शक्तियोंका दर्शन अिन अुपन्यासोंके माध्यमसे सामने आया है तथा यह प्रमाण जितने अधिक रूपमें अिस साहित्यमें दिखायी दिया है अुतना अन्य किसी भी साहित्यके क्षेत्रमें नहीं अपनाया गया है। जीवनकी बहुव्यापिनी मानवताका धरातल छूकर अुसको बड़े पैमानेपर अभिव्यक्त करनेका साधन अुपन्यास ही है।

वाङ्मयमें सर्वांगीण जीवनके दर्शन हों यह आकांक्षा सदाके लिये बन गयी है। महाराष्ट्रका सामाजिक जीवन चाहे अन्य किसी दृष्टिसे चाहे जितना भी पिछड़ा हुआ हो, तो भी अुसका कलात्मक ढंगसे वर्णन करनेका जो प्रयास किया गया है वह आकर्षक, वैचित्र्यपूर्ण तथा संघर्षात्मक है। अिस समाज-जीवनकी बनावट, आर्थिक नियोजनकी दृष्टिसे चाहे जितनी जटिल रही हो, फिर भी अुस समाज जीवनके व्यावहारिक मनोभावनात्मक पृष्ठ भूमिपर अंकित करते हुअे अुसकी नाट्यात्मकता बड़ी दिलचस्प बन गयी है। सामाजिक-वर्गोंकी दृष्टिसे महाराष्ट्रीय जीवन विविधता पूर्ण है। प्रादेशिकताकी दृष्टिसे महाराष्ट्रीय जीवन वैचित्र्यमय है। विभिन्न कलाओंकी कारीगरीसे वह जीवन रसमय बन सका है। धार्मिक संकेतोंकी दृष्टिसे अिस जीवनमें श्रद्धाके बीज दिखायी देते हैं। सामाजिक व राजनैतिक जीवनकी प्रगतिकी दृष्टिसे प्रक्षोभक विद्रोहके सामर्थ्यका जोश पूर्णरूपसे दिखाअी देगा। लोकतंत्रकी दृष्टिसे यह जीवन स्वातंत्र्यप्रिय है तथा जनताकी शक्तिको संघटितकर अुसका सामूहिक बल सजग करनेकी दक्षता व तत्परता अुसमें है। राष्ट्र-प्रेमकी दृष्टिसे वह चैतन्य युक्त है। किसी भी प्रकारका साहस करनेमें वह आगे है। संघर्षप्रिय जीवन आप अिसमें देखेंगे। अुत्सव प्रियता, मुँहफट होना, पलायनवादी वृत्ति, समाजपर चिढ़कर अुससे अलग रहनेकी प्रवृत्ति आदि बातें भी अिसमें मिलेंगी। किसी ध्येयको वा किसी बातको अेकबार मान लेनेपर अंत तक अुसका निर्वाह करनेकी वृत्ति भी आप देखेंगे। मराठी अुपन्यासोंका ढाँचा अिस प्रकारका है।

श्री केळकर, माडखोलकर, फडकेसे लेकर विवलकरने जैसे मराठी अुपन्यास लेखकोंने राजनैतिक आंदो-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लनोंके प्रक्षोभ तथा राजनैतिक प्रगतिपूर्ण कथानकोंका अुपयोग करनेमें कोअी कसर अुठा नहीं रखी। अिसके सिवा अिन बीस-पचीस वर्षोंके कालमें राजकारणकी स्थूल रूपसे जानकारी समाजमें किस प्रकार फैल रही है--अिसका विश्वास अुत्पन्न करानेका कार्य करके तथा भारतमें राजनैतिक समस्याअें कौनसी अुत्पन्न हुअी हैं, अुनका हल दिखानेके लिये समाजको कौनसे बलिदान करने पड़े आदिका कलात्मक रीतिसे परिणामपूर्ण विवेचन करके पाठकोंको पर्याप्त मात्रामें अिन अुपन्यासकारोंने रिझाया है। महाराष्ट्रका व भारतका अेक भी आन्दोलन या समस्या अैसी नहीं है, जिसे मराठीके अुपन्यासकारोंने अछूता रखा हो। हमें अिस बातका अभिमान है कि अिन सबको अुपन्यासका विषय बनाकर अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभाका अिन मराठी-अुपन्यासकारोंने परिचय दिया है। अिन आन्दोलनोंके फलस्वरूप निर्माण होनेवाली भावनाओंकी लहरोंका लालित्यपूर्ण प्रदर्शन व अंकन पृथक्-पृथक् रीतिसे मराठी अुपन्यासोंमें किया गया है। अिस दृष्टिसे फडके-माडखोलकरजी जैसे प्रसिद्ध लेखकोंके अुपन्यासोंमें प्रतिबिंब न्यायके रूपमें आनेवाले राजनैतिक जीवनके साथ ही, हमें श्री बिवलकरके "सुनीता" नामक अुपन्यासमें बंगालके हिन्दू-मुस्लिम संघर्षसे अुत्पन्न विभेदका चित्र भी देखनेको मिलता है। अिसमें अेक कुटुंबके अेक व्यक्तिसे लेकर समाजके लाखों मानवों तक अेक ही वातावरणकी अेक ही शलाका कितनी बारीकीसे, हमारे अनजाने ही अत्यन्त प्रक्षोभक ढंगसे फैलती जाती है अिसका प्रतीकात्मक वर्णन अिस अुपन्यासकी अपनी विशेषता है। अुससे भी बढ़िया अेवम् अधिक कलात्मक अुपन्यास श्री पेंडसेका "अेलगार" नामक है। अिस अुपन्यासमें सर्वसाधारण व्यक्तिको अलग निकालकर या कुछ पात्रोंको जबरदस्तीसे राजनैतिक क्षेत्रमें प्रविष्ट नहीं कराया है, बल्कि राजनैतिक आन्दोलन अपनेआप अिसमें आ बैठा है। अेक ही स्कूलमें दो लडकोंकी मैत्री हो जाती है और वे अपने भावी जीवनमें भी मित्र बने रहते हैं। अुनके जीवनके प्रसंग कौटुंबिक तथा अपने-अपने हैं। पर अेक हिन्दू है व दूसरा मुसलमान है; अिसलिये जब हिन्दू-मुसलमानोंका दंगा होता है तब दोनोंकी मनोरचना कैसे परिवर्तित होती गयी और अिस तरह द्वेषकी अग्नि झुलसते-झुलसते आखिर मित्रताके स्वाभाविक धागोंसे खिंचते-खिंचते कितनी विचित्रतासे मृत्युकी छायामें दोनों अेकत्रित होते हैं, अिसका हृदयस्पर्शी वर्णन श्री पेंडसेने किया है। भारतीय जीवनकी कोअी भी सामाजिक या राजनैतिक अवस्था अिस आधुनिक युगमें समाजके छोटे-से-छोटे व्यक्ति तक स्पर्श किये बिना नहीं रहती। यह प्रवाह अितना तेज होता है कि वह जबरन् अुस छोटेसे व्यक्तिका जीवन अुसमें समेटकर चलता बनता है। महाराष्ट्रीय अुपन्यासोंमें यह टैकनिक दिन-प्रतिदिन बढ़ती हुअी नज़र आती है।

जिस ग्रामीण जीवनपर सारे सामाजिक तथा राजनैतिक क्रान्तियोंकी प्रतिध्वनियाँ ध्वनित होनेवाली हैं,अुस ग्रामीण जीवनका दर्शन मराठी अुपन्यास-साहित्यमें पर्याप्त रूपमें मिलता है। चुनावके क्षेत्रमें जबसे मतदाताका साक्षर होना आवश्यक है अैसा लगने लगा तबसे ग्रामोद्धारके आन्दोलन शुरू हुअे। भारतके भविष्यकालीन ग्रामीण जीवनमें राजनैतिक और आर्थिक दृष्टिसे बहुत महत्वपूर्ण परिवर्तन होनेवाले हैं। अुनमें ग्रामीण जीवनको विशेष महत्व प्राप्त होगा। जनतन्त्रका यह सूत्र, विज्ञ लेखकोंने समझकर ही मार्मिकताके साथ अपनाया है। ग्रामीण जीवन बहुत सुन्दर साफ़-सुथरा, आरोग्यपूर्ण, निष्पाप, सुखी और सन्तोषसे परिपूर्ण होता है। अिन्हीं सीधी-सादी कल्पनाओंसे अपने अुपन्यासोंको अभिव्यक्त करके महाराष्ट्रीय ग्रामीण जीवनका आरम्भ हम देखते हैं। हमारे अुपन्यासकार यहींपर रुके नहीं; किन्तु वे जीवनकी वास्तविक सुख-दुख पूर्ण परिस्थितियोंको अभिव्यक्त करनेमें सूक्ष्म जान पड़ते हैं। श्री ना. ह. आपटे तथा श्री फडकेके अुपन्यासोंमें जो ग्रामीण जीवन अभिव्यंजित है, वह ठोस, गम्भीर या अेक विशिष्ट प्रकारका गुणधर्म लिये हुअे अेवं अेक ही प्रकारके सांचेमें ढला हुआ जान पड़ता है। परन्तु पिछले पंद्रह वर्षोंसे अिस ग्रामीण जीवनकी अभिव्यंजनामें अुपन्यासकारोंने अपनी दृष्टिसे जो कुछ लिखा है अुसकी शैली भले ही अुनका वैयक्तिक दृष्टिकोण व्यक्त कर रही हो, किन्तु हमें यह तो मानना पड़ेगा कि अिन अुपन्यासोंमें जीवनका यथार्थ दर्शन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ है। रामतनय वा कवठेकरके 'साखरगोटी" या "रेशमी गाँठी" अुपन्यासोंमें ग्रामीण जीवन बहुत अच्छी तरहसे वर्णित है। अैसा जान पड़ता है; कि लेखकोंको अिस जीवनके प्रति विशेष अभिरुचि रही है अिसलिये अुसी परिमाणमें शहरी जीवनके प्रति अेक प्रकारकी व्यक्तिगत अनिच्छा प्रगट की गयी जान पड़ती है। अिसलिये ग्रामीण जीवन जैसा हम देखते ह, अुससे भी अधिक आकर्षक है और अुसकी संस्कृति सर्वथा निर्दोष है; अैसा आभास अुत्पन्न हुअे बिना नहीं रहता।

ग्राम और ग्रामीण जीवनके प्रति अेक प्रकारकी अवास्तविक कल्पनाका यह चित्रण अब कम हो गया है। हम श्री. पेण्डसेके "हद्दपार", श्री. बिवलकरके "शुभा" अुपन्यासोंमें तथा शान्ता शेळकेके अुपन्यासोंमें आधुनिक युगकी प्रवृत्तियोंके शिकंजेमें फंसी हुअी ग्रामीण संस्कृति किस प्रकारकी है आदिका वर्णन तथा संघर्ष, हर्ष-अमर्षके प्रसंग आदिका कलात्मक बोध मिलता है। मर्ढेकरके "पाणी" और 'तांवडी माती" अुपन्यास अिनसे भी अधिक अन्तर्मुख गहराअीको लिये हुअे, प्रतीकात्मक और मानवी संस्कृतिके मूलभूत जीवन तत्वोंकी पहचान करानेवाले हैं। विशेषतः अिन नये अुपन्यासोंके शब्द ग्रामीण अन्तःकरणको, अुनकी भावनाओंको, अभिव्यक्त करनेमें अितने साकार हो अुठे हैं कि नित्य नूतन आघातोंसे तथा नवीन प्रगमनशील वृत्तियोंकी प्रक्रिया किस प्रकार नये-नये प्रश्न अुपस्थित कर रही है अिसका दर्शन हमें मिलता है। अिस तरहकी लेखनशैली महाराष्ट्रके नये अुपन्यासोंका अेक आवश्यक अंग बन गयी है। अितना ही नहीं तो आगे चलकर वह शैली रूढ़ हो जायगी अैसा जान पड़ता है। अेक ही विशिष्ट पात्रको मुख्य केन्द्र-बिन्दु बनाकर अुसके अन्तःकरणके सूक्ष्मसे सूक्ष्म तन्तुओंको गूंथकर अुनको अेक ही विशिष्ट प्रकारकी कल्पनाकी ओर ले जानेकी शैलीमें जब अुसमें चढ़ाव-अुतार नजर आते हैं तो अुसकी मनोरंजकता बड़ी सुन्दर लगती है। श्री स्व. वामन मल्हार जोशी, फडके आदि लेखकोंने अिस शैलीको विशेष रूपसे आत्मसात्कर अुसे प्रगतिशील बनाया। आज संसारमें अितने अुत्पात हो रहे हैं कि अुनकी प्रतिक्रियाअें अुनमें विचरण करनेवाले तथा अुनका आघात सहन करनेवाले सामान्यसे सामान्य व्यक्तिपर पड़े बिना नहीं रहतीं। अैसी परिस्थितिमें अुसके अपने ध्येय या मतको जैसे कोअी अदृश्य शक्ति खींच रही है अैसा जान पड़ता है। अिसका तनाव अितना अधिक है कि कब टूटकर वह औंधे मुंह फिसल पड़ेगा-- अिसका कोअी ठिकाना नहीं है। अुससे अुत्पन्न होनेवाली वेदनाओं और संवेदनाओंका बोझ अुस बेचारेको सहन करना पड़ता है। प्रत्यक्ष शारीरिक क्रियाके बदले यह मानसिक प्रक्रिया ही बड़ी गतिमान और सजग हो अुठी है। अिसीलिये आधुनिक मराठी अुपन्यासोंके प्रसंग और अुसकी घटनाअें मनोविश्लेषणात्मक तरंग तांडवोंके ज्वार-भाटोंसे युक्त बन गयी है। भविष्यकालीन अुपन्यासोंका यही अेक प्रमुख अंग बन जायेगा अैसा प्रतीत होता है। श्री बिवलकरका 'शुभा और श्री दिघेका 'सराअी' नामक अुपन्यास ग्रामीण जीवनके सुन्दर नमूने बनकर हमारे सामने आये हैं। अुसमें किसान, ठाकुरसे लेकर कालाबाजार गर्म करनेवाले आधुनिक ठेकेदारोंतक तथा नाक कटवा देनेवाले मारवाड़ी साहूकारोंसे लेकर कर्जकी अदाअी पूरी करनेवाले जमींदारोंतककी नयी पुरानी संस्कृति प्रतिबिंबित हो गयी है। 'बली' नामक अुपन्यासमें अपराध करनेवाली जातियोंका अुपेक्षित सामाजिक जीवन व व्यक्तिगत जीवन चित्रित है। वे अपराधी जातियोंके होनेसे समाजने अुनकी सदैव अुपेक्षा की, जिससे अिन जातियोंका जीवन कितना गंदा तथा भद्दा बन गया है, अिसको लेखकने व्यक्त किया है। कोअी यदि अिन अविकसित जीवनकी परिस्थितियोंमेंसे अपना मार्ग निकालना चाहे भी, तो अुसे वह मार्ग नहीं मिलता; बल्कि अगतिक होकर पुरानी रूढ़िगत बुरी आदतोंसे परिपूर्ण वातावरणका जीवन अपनाना पड़ता है, यह अत्यन्त मार्मिकतासे लेखक व्यक्त कर सका है। हमारे सामाजिक नियम ही अितने जटिल हैं कि अुनके संकेतोंकी दीवार ढहाना सरकारी कानून, राजनैतिक आन्दोलन आदिके द्वारा भी कठिन काम दिखायी देता है। अैसी परिस्थितिमें केवल अेक ही अुपाय है और वह यह है कि अिस समाजके लोग स्वयम् ज्ञानी बनकर अपने रूढ़िगत संस्कारोंका परित्याग करें तभी अुनके ये अूपरी कवच टूटेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैमानिक जीवन, सागर पर्यटन करनेवालोंका जीवन, सैनिकी जीवन आदि मराठी अुपन्यासोंके विषय बन गये हैं। अुपन्यासकारोंने आँखें खोलकर साक्षात् वास्तविक अनुभवोंपर आधारित और यथार्थवादी भावनाओंके घात-प्रतिघातोंका आलेखन करके हृदयके मर्मको छुआ है। प्रादेशिक वर्णनोंके अुपन्यास, तटस्थ रहकर अंतर्मुख दृष्टिसे आत्मनिरीक्षण करनेकी कला भी अिनमें विद्यमान है। विभिन्न जातियोंका, संप्रदायोंका परिचय करा देनेवाले कथानक, ग्रामीण तथा शहरी जीवनके कथानक, दो महासमर, स्वातंत्र्य आन्दोलन आदि अनेक प्रश्न तथा समस्याओंसे भरे हुअे कथानक नये-नये रूपोंमें हमारे अुपन्यासकारोंने संवारे हैं। कुटुंब-संस्था, विवाह संस्था तथा राज्य-संस्था अिनपर टिकी रहनेवाली पुरानी संस्कृतिमें अनेक दरारें पड़ गयी हैं। अब वह नष्ट होकर नयी संस्कृतिका महल खड़ा होनेवाला अैसा विद्वान लोगोंका मत है। अिस कसौटीपर अिन अुपन्यासकारोंके अुपन्यास यदि कसे जायँ तो यह मानना पड़ेगा कि ये अुपन्यासकार चाहते हैं कि मानवताकी प्रगति भावनात्मक तथा बौद्धिक सामर्थ्यकी सहायतासे ही संभव है। अिसी ध्येयको लेकर ये नये कलाकार समाजको प्रेरणा तथा संदेश देने चले हैं। अुनमें जैसे होड़-सी लगी है कि अिस फनका अुस्ताद कौन बनता है? अप्टन सिंक्लेअर या अेच. जी. वेल्स आदिके द्वारा दुनियाभरके अुपन्यासकारोंको नया जीवन व प्रेरणा प्राप्त हुअी है। यही नया जोश मराठी अुपन्यासकारोंने भी लिया है। अुसे हम साधारण नहीं मान सकते।

अब कलाकार मानसिक व शारीरिक विच्छेदन करनेमें कोअी बुरी बात नहीं देखते। निस्संकोच होकर वे अिस प्रकारकी अभिव्यंजनामें आगे बढ़ गये हैं। मानवके सुप्त मनके संज्ञा-प्रवाह व्यक्त कर सच्चा मानव किस प्रकारका है और वही वस्तुतः अुसका यथार्थ रूप है तथा अुसे ढंकनेके लिये सांस्कृतिक मूल्योंका आच्छादन कितना कृत्रिम है, अशास्त्रीय है अेवं अप्राकृतिक है यही बतलानेका कार्य अुपन्यास साहित्यकारोंका अेक संप्रदाय आजकल करता हुआ दिखायी दे रहा है। सारे राष्ट्रोंके समाजमें यही कार्य चल रहा है अैसी अभिव्यंजना ये कलाकार प्रकट करते हैं। मनुष्यका यह यथार्थ ज्ञान बड़ा चमत्कारपूर्ण है। पाप, अमंगल, स्वार्थ, विद्रोह और कामुकताका समाजके स्वास्थ्यके लिये निरंतर जप करके अपने आपको तथाकथित सभ्य कहलानेवाला यह मानव स्वभावसे स्वयं कितना जघन्य है, अुसे कोअी भी पाप करनेमें कोअी डर नहीं है। अथवा हम यह कह सकते हैं कि नये मनोविज्ञानके अनुसार अुसकी शारीरिक तथा मानसिक प्रक्रियायें अुन्हींकी ओर झुकी हुअी हैं जिन्हें हम पाप कहते हैं। वस्तुतः यह मनोविज्ञान पुराना ही है। अुसका अनुसरण कर जो व्यवहार करते समय प्रत्यक्ष सामाजिक मनोविज्ञान हममें (Social Psychology) तैयार किया था वही गलत था तथा दंभसे युक्त था अैसा प्रतीत होना यही नया मनोविज्ञान है। ये जो सामाजिक मूल्य आजकल हम मानते रहे, वही हमारे अधःपतनके कारण बने। अिसका स्वानुभविक ज्ञान याने जागी हुअी मानवता है। अैसी सच्ची मानवताका दर्शन लेनेके लिये जेम्स जॉअीस्ने वाङ्मय सृजन किया। पाखंडी समाज, अिस प्रकारके साहित्यपर जो मुकदमे चलाये गये अुन्हें देखता रहा व अुनके निर्णय सुनता रहा। लेखक अपराधी करार दिया गया या निर्दोषी घोषित किया गया, अिसका अुसे कोअी मूल्य नहीं। मानवके मनोविकारोंका दर्शन करा देना अनुचित नहीं है। आधुनिक जनतंत्रके युगमें लेखन-स्वातंत्र्यके मूलभूत स्वत्वको ध्यानमें रखते हुअे लेखकको अश्लील या वीभत्स लिखनेकी स्वतंत्रता चाहिये, यह बात अेकदम स्पष्ट है। अिस प्रकारकी छूट चाहनेवाले बहुत कम लोग हैं। क्योंकि अन्य बहुत-सी सुन्दर चीजें, सुन्दर वस्तु, सुन्दर विषय और सुन्दर आशय कलाका माध्यम बननेके लिये बचे हुअे हैं। अिसलिअे सभी लेखक वीभत्सकी ओर ही प्रेरित होंगे, अैसा भय निरर्थक है।

विशेषतः मराठी वाङ्मयमें मर्ढेकर जैसे लेखकका अपवाद छोड़कर अनभ्यस्त और नये लेखक वर्गोंकी यह शैली अेक फैशन बन गयी है। अिसको केवल अेक फैशन मानकर अपने अधकचरे ज्ञान व अनुभवपर आधारित या पश्चिमके साहित्यसे जो भी जानकारी मिले अुसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बलपर अिस प्रकारका प्रयास करना अिस प्रकारके संप्रदायका अुपमर्द करने जैसा कार्य माना जावेगा। अिस संप्रदायके प्रवर्तक कहते हैं कि अुनका यह संप्रदाय वैज्ञानिक है। अुसके कुछ सुनिश्चित तत्त्व व सिद्धान्त हैं और वे अुसकी अेक संहिता निश्चित करनेमें लगे हुअे हैं। संज्ञा प्रवाह किसे कहते हैं ?, मनोगत क्या है ?, काम क्षुधा व काम वासनाका क्या अंतर है ? आदि अनेक बातोंका प्रायोगिक मनोविज्ञानका आश्रय लेकर अुन्होंने अुसका अूहापोह किया है। प्रत्येक लेखक धीरे-धीरे अपने अनुभवोंके बलपर प्रयोग करते हुअे कुछ सिद्धान्त स्थिर कर सकता है। पर अिसमें जल्दबाजी अच्छी नहीं। विश्वविद्यालयीन या महाविद्यालयीन डिग्रियां प्राप्त होते ही मनोगाहनकी क्रीड़ामें पारंगत बन गये अैसा मानकर संज्ञा प्रवाहकी यह विज्ञापनबाजी बीभत्सताकी ओर ले जाती है। मढेंकरी संप्रदायमें यथार्थमें बीभत्सता नहीं है। जल्दबाजी करके सबको सनातनी, दकियानूसी कहना यही अिन सांप्रदायिकोंका अेकमात्र व्यवसाय बन गया है। अिनको कहना चाहिये, अनुभवोंपर आधारित बीभत्सता चाहे जितने स्पष्ट और खुले रूपमें आप लिखें हम पाठक वह सब पढ़नेके लिये तैयार हैं, अितना ही नहीं तो वे अुसका प्रचार व प्रसार भी करेंगे। तुमको अितना ध्यान रहे कि अिस बातमें तुमसे भी अधिक जानकार और अिस विषयका महत्व समझनेवाले विद्यमान हैं। मनोविज्ञानके बड़े-बड़े ग्रंथोंका अध्ययनकर तथा अनेकों वर्षों तक प्रायोगिक ज्ञान प्राप्तकर मनोगाहनकी कीमिया लोगोंको अुपन्यासके जरिये स्पष्ट करनेवाला कोअी महान महाराष्ट्रीय अुपन्यासकार पैदा हो जानेपर महाराष्ट्रके वाचक अुसे शेक्सपीयर वा बर्नर्डशॉकी तरह सरपर अुठा लेंगे। महत्व किसी भी विषयकी नवीनतापर निर्भर नहीं है। वह तो अुसके ज्ञानविषयक आधारपर है। संस्कृतिका व प्रगतिका ज्ञान यह मंगलसूत्र है। अुसके कमजोर हो जानेपर संस्कृतिकी रीढ़ टूट जायेगी और मानवता मर जायेगी।

संज्ञा-प्रवाहकी कल्पना १८८४ में विल्यम् जेम्सने प्रथम अपनायी। अपने मनोविज्ञानकी पुस्तकमें १८९० में अुसने अुसका विवेचन किया। प्रत्येक विचारके पीछे अेक अगोचर और मूर्त जानकारीकी स्पष्ट प्रतिमा रहती है। अुसका महत्व तर्कशुद्ध विचार प्रणालीकी अभिव्यक्तिमें बहुत रहता है। प्रसंग, घटना, क्रिया, कार्य-व्यापार आदि बातें अूपरी हैं। मनोव्यापारमें चमकनेवाली प्रतिमाकी शलाका ही अुसकी प्रेरक शक्ति है। अिसीलिअे पात्रोंके स्वभावका विश्लेषण ही तर्कशास्त्रसे संमत विशुद्ध युक्तिवादकी परंपरा नहीं है, तो वह मनके गहरे कार्योंमें फौरन् अुदभूत होकर विलीन होनेवाली प्रतिक्रियाओंके प्रतिमाओंकी संगति है। अुसे स्पष्ट करनेका कार्य कलाकारको करना पड़ता है। हृदय क्रियाकी तरह मनुष्यका मस्तिष्क चौबीस घंटे थर्राता रहता है। अिसलिअे अुसकी हरअेक क्रियाके पीछे मस्तिष्ककी प्रतिक्रिया भी गहरे रूपमें मिली रहती है। जो लेखक मस्तिष्ककी अिस संज्ञाको समझकर प्रत्यक्ष अनुभवसे और प्रयोगसे ठीक जान लेता है तथा अनेकविध रूपोंसे अुसके वस्तुस्थितिकी परख कर लेता है, वही अुसे कर सकेगा। शब्दोंमें वह अुनकी अभिव्यक्ति अिस तरहसे करता है कि जिससे पाठक अुन सब परंपराओंकी पुनरावृत्ति तर्कके सहारे नहीं करता; बल्कि मनकी संवेदनाओंके जरिये अुसे पुनः अनुभव करता है। ये नये साम्प्रदायिक अैसा कहते हैं कि हम तुम्हें केवल शब्द देते हैं, अन्वयार्थ नहीं। अन्वयार्थ लगानेका कार्य पाठकपर निर्भर है और वह जैसा चाहे वैसा अुसे लगा सकता है। तर्कशुद्ध शब्दोंके द्वारा निर्मित विचार-परंपराओंमें संवेदनाओंसे मनःपटलपर पहलेसे ही अेक विचार-प्रणाली निर्माण हो जाती है। फोटोग्राफीकी निगेटिव्ह काँचको हम संज्ञा प्रवाहकी संगति मान सकते हैं और प्रत्यक्ष पॉझिटिव्ह फोटो अुसका कलात्मक दर्शन माना जायगा। अिसके लिये आवश्यक यह है कि निगेटिव्ह सही रहे। अुसका प्रतिबिम्ब फोटोमें जैसा रहता है वैसा ही अुतरेगा। अिसीलिअे बाह्यरूपसे दिखनेवाली हलचलके पीछे सुप्त संवेदना शक्ति रहती है जिसे कागजपर अभिव्यक्त करनेका महान प्रयत्न आधुनिक लेखक करता रहता है। हम अूपर जिस प्रकार कह आये हैं अुस बातका संपूर्ण ज्ञान लेखकमें आवश्यक है। किसी चीजका चाव रहना अेक बात है और मनपसंद वस्तुका यथायोग्य ज्ञान रहना दूसरी बात है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मराठी अुपन्यासोंमें यह बात यदि पूर्ण अध्ययनके बाद आयी, तो मराठी अुपन्यास साहित्य अवश्यमेव सामर्थ्यवान हो जावेगा। किन्तु यह वैशिष्ट्य मराठी अुपन्यास साहित्यमें आना जरूरी है अैसा मानकर यदि लेखक प्रयत्नशील होंगे तो सम्यक और समर्पक मानवताका दर्शन हो सकता है। गत तीस वर्षोंकी प्रगति अिस दृष्टिसे स्पृहणीय है। भाषामें गहराअी है; वर्णनोंमें समर्पकता है; मनोविश्लेषणमें मार्मिकता है और मर्मभेदनकी भी कुशलता साफ-साफ हो रही है। प्रादेशिक जीवनका वर्णन करनेमें सफाअी तथा बारीकी नज़र आती है। समाजके भिन्न-भिन्न वर्गोंके सूक्ष्मसे-सूक्ष्म संकेतोंको भी चिकित्सापूर्वक वर्णन करनेकी शैली गतिमान हो रही है। मनुष्यका अन्तर्बाह्य स्वरूप प्रगट करनेकी पटुता अुपन्यासकारोंमें आ रही है। अनुभव अिकट्ठा करनेकी सचाअी अेवं कौशल्य अुनके पास है। अुसके लिये अपेक्षित तरल संवेदन क्षमता लेखक संपादन कर रहे हैं। अुपन्यास-लेखनका बनावटी ढाँचा, और तंत्र आदिका अध्ययनके साथ कार्य हो रहा है। पाश्चात्य-साहित्यका आँखें खोलकर अनुकरण करनेकी लालसा ही नहीं तो, अीर्ष्या भी दिन प्रतिदिन समर्थ बनती जा रही है। लेखक विराट् सामाजिक आन्दोलनोंका अुपन्यासोंमें अुपयोग करनेमें सिद्धहस्त बनते जा रहे हैं। व्यक्तिगत व्यथाकी अपेक्षा सामूहिक वेदना और व्यक्तिगत दुःखोंकी अपेक्षा सामूहिक व्याकुलताको अधिक आश्रय देना अिन कलाकारोंकी प्रवृत्ति बन गयी है। प्रो० फडके जैसे लेखक गत तीस वर्षोंके आरंभमें, "जादूगार", "दौलत"-जैसे मनोरंजक अुपन्यास लिखते रहे किन्तु अुनके आजके अुपन्यास 'झंझावात', 'अंजलि', 'भरतीची लाट', 'अुजाडलें पण सूर्य कोठें आहे' अिनमें वे सामूहिक, व्यापक सामाजिक जीवनका आवाहन करते हुअे प्रतीत होते हैं। शुचिता, भक्ति, प्रीति और समन्वयकारकता ये गुण साने गुरुजीके द्वारा मराठी अुपन्यासको मिल गये हैं जो अुसे व्यापक बनाते हैं। खांडेकरकी सहानुभूति, फडकेकी कलात्मकता, माडखोलकरकी अभिजात रसिकता, स्व० वा. म. जोशीकी तत्व चिकित्सा और डॉ० केतकरका विराट समाजदर्शन आदि अैसी बातें हैं जिनसे मराठी अुपन्यास साहित्यकी समृद्धि प्रभावपूर्ण बन गयी है।

अितना होनेपर भी अीमानदारी अेतद्देशीय जीवनसे समरसता अपनी परम्पराके प्रति सचाअी और कुछ कहनेकी स्वयं प्रेरित जिज्ञासा अिस स्वातंत्र्य कालमें अुत्पन्न होना आवश्यक है। बिना अिनके साहित्य ज़िंदा नहीं रह सकता। हम सचमुच क्या चाहते हैं, हमें अैसा क्यों कहना चाहिये अिसकी अुपपत्ति स्वयं कलाकार यदि न लगा सका तो सब बेकार है।

पुस्तकीय पांडित्य, देश-देशोंके अनुभवका भंडार और विदेशियोंके नमूने अिनका मार्गदर्शन अपेक्षित है ही किन्तु स्वार्जित, स्वयं प्रेरित अनुभवकी अपेक्षा अुसका मूल्य कम है अिसे हम नहीं भूल सकते। सिनेमाके परदेपर चमकनेवाली बिजलीको देखकर हमें कलात्मक समाधान भले ही हो जाय किन्तु साक्षात् रूपसे आकाश पटलपर विद्युत् दर्शन करनेका आनंद और अुसकी अनुभूति बहुत बड़ा महत्व रखती है। स्वतंत्र मन और स्वातंत्र्य प्रेमी लोग बिना अनुभूतिके संप्राप्त आनन्दको प्राप्त किये अपना जीवन सफल नहीं मानते हैं। महाराष्ट्रके अुपन्यास-लेखक अपने समाजके जीवन-साफल्यको प्राप्त करा देनेके लिये अिस प्रकारका आनन्द कब निर्माण करनेवाले हैं ? अिस बातकी प्रतीक्षा मराठी रसिक वाचक वर्ग कर रहा है।

मराठीसे अनुवादकः--श्री प्राध्यापक न. चिं. जोगलेकर, अेम. अे., साहित्यरत्न

('महाराष्ट्र साहित्य परिषद, पुणें'के सौजन्यसे)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सास बहूका बधावा

[राजस्थानी भाषा-साहित्यमें कितना माधुर्य है, कैसी लोच-लचक है और संस्कृति सभ्यताका अुच्च स्तरका स्रोत प्रवाहित है, अिसका नमूना निम्नलिखित गीतमें झंकृत हो अुठा है। प्राध्यापक श्री कन्हैयालाल सहलजी अिस गीतके प्रेषक हैं। मारवाड़की महिलायें अिस गीतको विवाह तथा अन्य त्यौहार आदिके अवसरोंपर मीठे स्वरोंमें गाती हैं। गीतमें सास बहूके शुभकामनापूर्ण हृदयोद्गार मुखरित हो अुठे हैं। हमें अिसमें भारतके राजस्थानकी सभ्यता और संस्कृतिके दर्शन होते हैं। अर्थ सरल है। —सम्पादक]

मधुबनरो अे.आँबो मौरियो, ओ तो पसरयो अे सारी मारवाड़,
सहेल्यां अे आँबो मौरियो ।।

बहू रिमझिम महलांसे अूतरी, कर सोला सिणगार ।
सासूजी पूछ्यो अे बहू थारो गैणो अे म्हाने पहर दिखाय ।।
सहेल्यां अे आँबो मौरियो ।।

सासू थे गैणांने के पूछो, गहणो म्हारो सो परिवार ।
म्हांरा ससुराजी गढ़रा राजवी, सासूजी म्हांरी रतन भंडार ।।
सहेल्यां अे आँबो मौरियो ।।

म्हांरा जेठजी बाजूबँद बाँकड़ा, जेठाणी म्हांरी बाजूबँदकी लूंब ।
म्हांरो देवर चुड़लो दाँतको, द्योराणी म्हांरी चुड़लां री चूंप ।।
सहेल्यां अे आँबो मौरियो ।।

म्हांरो कंबरजी घर रो दीवलो, कुलबहू अे दिबलेकी जोत ।
म्हांरी धीयज हाथरी मूंदड़ी, जवाअी म्हारो चँपेलीरो फूल ।।
सहेल्यां अे आँबो मौरियो ।।

म्हांरी नणद कसूमल काँचली, नणदोअी म्हांरो गजमोत्यांरो हार ।
म्हांरो साहब सिररो सेवरो, सायवाणी म्हे सेज्यांरा सिणगार ।।
सहेल्यां अे आँबो मौरियो ।।

म्हे तो वारी बहूजी थांरे बोल नैं, लड़ायो म्हांरो सौ परिवार ।
म्हे तो वारी सासूजी थांरी कूख नैं, थे तो जाया अर्जुन भीम ।।
सहेल्यां अे आँबो मौरियो ।।

म्हे तो वारी बाअीजी थांरी गोद नैं, थे खिलाया लिछमण-राम ।।
सहेल्यां अे आँबो मौरियो ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थ देखिये—

मधुवनमें आम बौरा है। यह सारे मारवाड़में फैल गया है। हे सहेलियो, आममें बौर आया है।

बहू सोलह शृंगार करके रिमझिम-छमछम—करती हुअी महलसे नीचे अुतरकर आयी। सासने पूछा—हे बहू, अपने गहने पहनकर मुझे दिखा।

बहूने कहा—हे सासजी, मेरे गहनोंके बारेमें क्या पूछती हो ? सारा परिवार ही तो मेरा गहना है। मेरे ससुरजी घरके राजा हैं और सास रत्नोंकी भंडार हैं।

मेरे जेठजी मेरे बाजूबन्द हैं और जेठानी अुसकी लूँम है। मेरा देवर हाथी दाँतका चूड़ा है और देवरानी अुसकी चूँप है।

मेरा पूत (बेटा) घरका अुजियारा है और कुलवधू दीपककी ज्योति है। मेरी पुत्री हाथकी अँगूठी है और मेरा जँवाअी चमेलीका फूल है।

मेरी ननद कुसुम्मी चोली है और ननदोअी गजमोतियोंका हार है। मेरा प्रियतम सिरका सेहरा है और मैं अुनकी सेजका सिंगार हूँ।

अिसपर अत्यन्त खुश होकर सासने बहूसे कहा—

बहू, मैं तुम्हारे अिन अमृत भरे वचनोंपर निछावर हूँ। तूने मेरे सारे परिवारको प्यार किया है।

बहूने अुत्तर दिया—सासजी, मैं तो तुम्हारी कूँखपर निछावर हूँ जिसने कि अर्जुन और भीम जैसे पूत पैदा किये हैं। और हे ननद ! मैं तुम्हारी गोदपर भी निछावर हूँ, कि तुमने राम-लक्ष्मण जैसे भाअियोंको अपनी गोदमें लेकर खिलाया है।

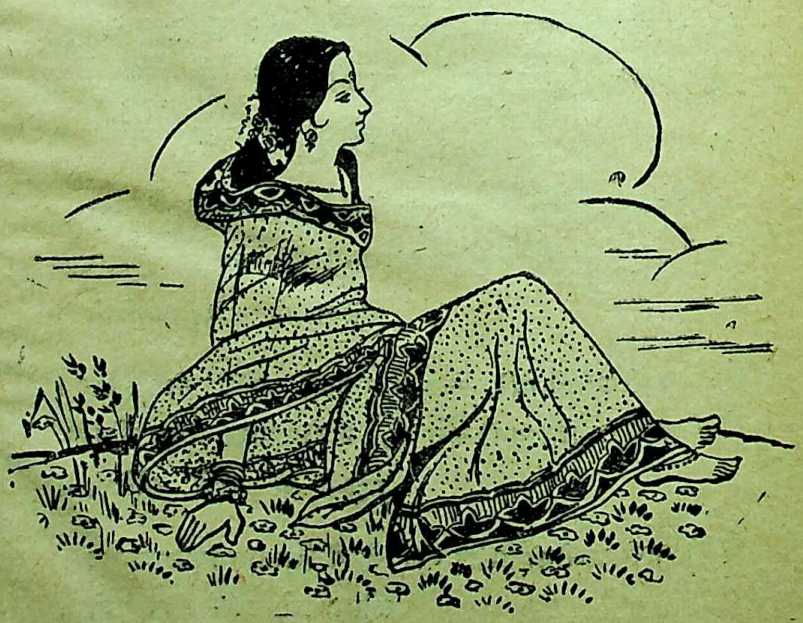

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[सूचना—'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिये।]

स्वर-पाथेय—[रचयिता : श्री नर्मदाप्रसाद खरे, प्रकाशक; रामनारायणलाल, अिलाहाबाद, पृष्ठ-संख्या ११२, मूल्य—दो रुपये]

'स्वर-पाथेय' श्री नर्मदाप्रसाद खरेके ५३ गीतोंका संग्रह है। खरेजी हिन्दी-जगत्के प्रतिभाशाली तरुण कवि हैं। मध्यप्रान्तके तो प्रतिनिधि कवियोंमें अुनकी गणना होती है। वे सन् १९३० से अेक अेकान्त-साधककी भाँति साहित्य-साधना कर रहे हैं। अुनकी कविताओंका संग्रह बहुत पहले प्रकाशित हो जाना चाहिये था। अिस दृष्टिसे 'स्वर-पाथेय' का प्रकाशन अपना अेक अलग महत्व रखता है।

स्वर-पाथेयके गीत सुकुमार कल्पना और हृदयकी निर्मल अभिव्यक्तिसे अभिभूत हैं। कल्पना और भावनाका सरस समन्वय अिन गीतोंमें है। सरलता और सरसता खरेजीकी कविताकी सबसे बड़ी विशेषता है; अिसीलिये अुनके गीत सीधे हृदयपर चोट करते हैं और हम अुनके भावोंके धूपछाँही बितानेमें जीवनके सच्चे दुख-सुखका अनुभव करते हैं। अिन गीतोंको पढ़नेके बाद कोअी भी साहित्य-मर्मज्ञ यही कहेगा कि नर्मदाप्रसाद खरे न तो दार्शनिक हैं, न राजनीतिज्ञ हैं और न क्रान्ति-द्रष्टा हैं; वे विशुद्ध कवि हैं— सुकुमार भावनाओंके कवि। अंचलजीके शब्दोंमें "सरसता, स्वाभाविकता, भावोंकी निष्कपट, सरल अभिव्यक्त और प्रवाहमयी भाषा अिन गीतोंको आघातकारिणी शक्ति प्रदान करती है।" अेक गीतकी कुछ पंक्तियाँ देखिये—

साथी, विष प्रतिदान न माँगो।
अमर जलन लेकर तन-मनमें,
अमर लगन लेकर जीवनमें,
मोम-दीप-से जलो-घुलो तुम, बुझनेका वरदान न माँगो।
ले लो मेरा स्नेह-समर्पण,
ले लो जीवनका आकर्षण,
मंगल हास अुषाका ले लो, सन्ध्याकी मुसकान न माँगो।

स्वर-पाथेयके प्रायः सभी गीतोंमें रस-सिक्त प्रेमी मनकी क्रिया-प्रक्रियाओंकी प्राणवान अभिव्यक्ति हुअी है। प्रेम, समर्पण, अुल्लास, विश्वास और वेदनासे ये गीत अपने-आपमें आकाशगंगाकी भाँति दीप्त हैं। अवसादके क्षणोंमें भी जीवनके संघर्षों और कष्टोंको झेलनेकी ही प्रेरणा अिन गीतोंमें मुखर हुअी है, जैसे—

रे मन, तू प्यार लुटाये जा।
झंझावातों-आघातोंमें भी स्नेह-प्रदीप जलाये जा।।

अथवा

जीवन-वीणा मुखरित कर दो।
प्रलय-प्रभंजन, घन-गर्जनमें
हँसकर गानेकी अभिलाषा;
आँसूके छन्दोंमें लिख दूं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भू के भाव, गगनकी भाषा;
नूपुर-शिञ्जित मृदुल चरण तुम मेरे अुर-शतदलपर धर दो !

स्वर-पाथेयके गीत प्रेमकी मधुरिमा और सौन्दर्यकी वासन्ती शोभासे ओत-प्रोत होते हुअे भी प्रच्छन्न वासना-जन्य लालसाओंसे मुक्त हैं।

प्रकृतिके आलम्बनों द्वारा कविने विरह-मिलन, सुख-दुख, अशा-निराशा, भ्रम-विश्वास और रुदन-हासकी जीवन्त अनुभूतियोंको अिन गीतोंमें साकार कर दिया है। कविपर किसी वाद विशेषका प्रभाव नहीं दीखता। वह अपनी अन्तर्मुखी अनुभूतियोंमें ही खोया-डूबा ज्ञात होता है। किन्तु समाज तथा युग-संघर्षसे अुसका मन व्याकुल न हुआ हो, अैसी बात नहीं है। कुछ पंक्तियाँ देखिये:—

युग बदल, बदल दे दुनियाको,
अपनी हुँकार-पुकारोंसे।
... ...
प्रलय-पंथपर अग्नि-चरणधर, बदलें जीवनकी परिभाषा,
हम दुनियाकी नींव हिला दें, बदलें हम दुनियाकी भाषा।
... ...
मैंने धरतीके गीत सुने, अम्बरकी बातें क्या जानूं ?

अिस प्रकार 'स्वर-पाथेय' के गीत सपनोंकी सुषमा और जीवनकी कठोरताओं—दोनोंसे अेक-से प्रभावित हैं। अुनमें प्राणोंका आवेग है, प्रेमका विश्वास है और प्रतिभाकी प्राण-प्रतिष्ठा है। कविकी भाषा सरल, सरस और प्रवाहमयी है।

—गोपाल शर्मा

हिन्दी-कथा-साहित्य—[लेखक : श्री गंगाप्रसाद पांडेय, प्रकाशक—भारती भण्डार, लीडर प्रेस, प्रयाग; पृष्ठ-संख्या २३७, मूल्य तीन रुपये।]

पांडेयजी हिन्दी-साहित्यके सुलझे हुअे समीक्षकोंमेंसे हैं। अिससे पहले आपकी काव्य कलना, नीरक्षीर, निबन्धिनी, छायावाद रहस्यवाद, महादेवी वर्मा, कामायनी : अेक परिचय, साहित्य-संतरण आदि मौलिक समीक्षात्मक रचनाअें प्रकाशमें आ चुकी हैं।

हिन्दी-साहित्यकी आधुनिक गति-विधियोंपर विश्लेषणात्मक ढंगसे दृक्पात करनेपर हमें यह मालूम होगा कि 'आज गद्यका ही युग है और कहानी अुसकी सशक्त कलात्मक आभा। अुच्च श्रेणीकी कलाका अुत्पादन आज कथा-साहित्यके द्वारा ही हो रहा है। और फिर आज तो 'साहित्यमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण स्थान कहानियोंका ही है'।

अिस युगमें व्यक्तिगत जीवनकी सफलताओं, अफलताओंका साहित्यमें विशेष महत्व नहीं। साहित्यमें अब समूहगत समस्याओंपर विचार-विनिमय प्रधान हो अुठा है और लेखक सामूहिक कल्याणकी चिन्ताके जितना अधिक निकट होनेका प्रयत्न करता है, अुतना ही अधिक लोकप्रिय हो सकता है। आधुनिक युग व्यक्ति स्वातंत्र्यकी सीमाको पारकर मानव-महासमाजके स्वातंत्र्यका पक्षपाती हो गया है; कवि अुपन्यासकार बन गया है। और यही अेक मात्र कारण है कि 'आजकल महाकाव्यकी अपेक्षा अुपन्यासका महत्व बढ़ गया है।' अिसे ही यदि और स्पष्ट रूपसे कहना चाहें तो कह सकते हैं कि व्यक्तिबोधने विश्वबोधका रूप धारण कर लिया है।

कथा-साहित्यमें कहानी और अुपन्यास दोनों हीका समावेश हो जाता है। हिंदीके कथा-साहित्यके अधिकांश लेखकोंने दोनों ही दिशाओंमें अपनी प्रतिभाका परिचय देकर अिसे समृद्ध किया है।

प्रस्तुत पुस्तकमें सर्वश्री प्रेमचंद, प्रसाद, निराला, जैनेन्द्र, वृंदावनलाल वर्मा, भगवतीप्रसाद वाजपेयी, भगवतीचरण वर्मा, अज्ञेय आदि सभी प्रधान-प्रधान अुपन्यास लेखक तथा कहानी लेखकोंके संबंधमें विस्तार पूर्वक समीक्षात्मक जानकारी दी गयी है।

हिंदीके कथा-साहित्य अेवं अुसके लेखकोंकी सर्वांग रूपसे जानकारी प्राप्त करनेके जिज्ञासुओंके लिये पुस्तक निस्संदेह बड़ी ही अुपयोगी है।

पुस्तकका गेट अप आकर्षक अेवं छपाअी सुंदर है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलोचक रामचन्द्र शुक्ल—[संपादक द्वय–सर्वश्री गुलाबराय और विजयेंद्र; प्रकाशक–आत्माराम अँड सन्स दिल्ली। साअिज– ½ डेमी, पृष्ठ-संख्या २५८; मूल्य–६ रु.]

हिन्दी-साहित्यके आलोचना-क्षेत्रमें गंभीर अेवं प्रौढ़ समालोचना पद्धतिका पुरस्कार कर स्वर्गीय आचार्य रामचन्द्र शुक्लजीने अपना अेक अैसा स्थान बना लिया है जिससे अुनके आचार्यत्वकी सार्थकता सहज ही सिद्ध हो जाती है।

श्री शुक्लजीने जिस पद्धतिको अपनाया था वह आज भी हिन्दी-साहित्यके आलोचकोंके लिये अक्षुण्ण रूपसे मार्ग-प्रदर्शनका कार्य कर रही है। कहना न होगा कि अुनकी शैलीमें भारतीय तथा पश्चिमी शास्त्र-मीमांसाका मधुर सम्मिलन था।

यह भी नितांत सत्य है कि 'हिन्दी साहित्यका अितिहास'के रूपमें अुनकी अभूतपूर्व देन आज भी सर्वोत्कृष्ट है। फिर भी जिस परिमाणमें शुक्लजीपर लिखा जाना चाहिये था, नहीं लिखा गया है।

अिस पुस्तकसे पहले श्री शिवनाथ अेम. अे. की 'आचार्य रामचंद्र शुल्क' नामक पुस्तक बहुत पहले प्रकाशित हो चुकी है। किन्तु फिर भी अेक अैसी पुस्तककी नितांत आवश्यकता थी जो भिन्न-भिन्न दृष्टियोंसे शुक्लजीपर प्रकाश डालती। प्रस्तुत पुस्तक बहुलांशमें अिसी कमीको पूरा करनेका प्रयत्न दिखायी देता है।

पुस्तक तीन खंडोंमें विभाजित है। प्रथम खण्ड 'जीवन-वृत्त' में स्वयं शुक्लजी द्वारा लिखित आत्म-संस्मरण अुन्हींके चिरंजीव पं. केशवचंद्र शुक्ल द्वारा लिखित 'जीवन-वृत्त और डॉ. श्यामसुन्दरदास द्वारा लिखा हुआ जीवन-परिचय दिया गया है। दूसरे खंडमें भिन्न-भिन्न मान्य समालोचकों— सर्वश्री गुलाबराय, डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी, नंददुलारे वाजपेयी, डॉ. नगेन्द्र, प्रो० विनयमोहन शर्मा आदि द्वारा समय-समयपर लिखे गये लेखोंको संग्रहीत किया गया है। तीसरे खंडमें शुक्लजीकी प्रमुख-प्रमुख कृतियोंपर विभिन्न लेखकों द्वारा की गयी चर्चा संग्रहीत है।

यद्यपि ये सभी निबंध अिससे पहले भिन्न-भिन्न पत्र-पत्रिकाओंमें प्रकाशित हो चुके हैं तथापि संगृहीत रूपमें विद्यार्थियोंकी दृष्टिसे अुनकी अुपादेयता और भी बढ़ गयी है।

छपाअी गेट-अप अेवं दी हुअी जानकारीकी दृष्टिसे पुस्तकका मूल्य अधिक नहीं लगता।

—मदनमोहन शर्मा, अेम. अे., साहित्य-रत्न

राजनीतिसे दूर—[लेखक—श्री जवाहरलाल नेहरू प्रकाशक— सस्ता साहित्य मंडल, नयी दिल्ली—पृष्ठ-संख्या १७३–मूल्य रु. २ आ. ८]

आलोच्य पुस्तकमें पंडित नेहरूके कुछ अैसे लेखोंका संग्रह है जो पाठकोंको 'मेरी कहानी', 'हिन्दुस्तानकी समस्यायें', 'कुछ समस्यायें' आदिमें भी देखनेको मिले होंगे। दो अेक लेखोंके अलावा अधिकांश लेख ३६-४० के आसपासके लिखे हैं, जिनमें हमारी तत्कालीन सामाजिक आर्थिक, भाषा और लिपि सम्बन्धी समस्याओंपर लेखकके अपने विचार अंकित हैं।

सन् '३९ के अगस्तमें पंडित नेहरू समझ गये थे कि "कोमिंगतांग (भगोड़े चांगकाअी शेककी जेबी संस्था जे. चं. सि.) कोअी ज्यादा जनतंत्रीय संस्था नहीं है, चाहे वह कहलाती जनतंत्रीय ही है"— (पृ. सं. ३७)

दस वर्ष बाद चीनकी महान् जनताने अिस तथा-कथित जनतन्त्रीय संस्थाको अपने देशसे निकाल बाहर किया और आज यह अमरीकी डालरकी कृपासे टापूमें अन्तिम सांस ले रही है।

आलोच्य पुस्तकमें संगृहीत लेखोंका लेखक आज देशकी केन्द्रीय सरकारका प्रधान-सचिव भी है। भारतमें तीसरे दर्जेके यात्रियोंके साथ, जिनके कारण रेल-विभागको बहुत बड़ी आय होती है, जो व्यवहार किया जाता है, वह बड़ा अपमानजनक और बदनामीका कारण बना हुआ है। (पृ. ४१) लेखक द्वारा चित्रित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह स्थिति आज भी जहाँकी तहाँ है; बल्कि तीसरे दर्जेके यात्रियोंपर आर्थिक बोझका दबाव कुछ बढ़ा ही है।

अिसी तरह गढ़वालका दौरा करते हुअे लेखकने अेक तरफ वहाँकी गरीबी और 'बंजरपन' का दृश्य अंकित किया है तो वह दूसरी तरफ 'गढ़वालके शक्तिशाली साधन' को भी छिपा पाया है।

कुल मिलाकर अिन लेखोंमें व्यक्त विचारोंमें अितनी सारी चीजें भरी पड़ी हैं, जिन्हें कार्यान्वित करनेसे हमारी अधिकांश मौजूदा समस्याओंका हल निकल सकता है, चाहे वह आर्थिक हों या अन्य तरहकी।

अेक जगह लेखक किसानोंकी शिक्षाके लिये बनाये गये सोवियत रूसके अद्भुत अजायबघरोंकी याद करते हैं; तो दूसरी जगह अपने "देशमें सबसे महत्वपूर्ण समस्या, जमीनकी समस्या तथा अुससे बहुत निकट सम्बन्ध रखनेवाली अुद्योग धन्धोंकी समस्या" का अुल्लेख करते हैं।

छपाअी सफाअी साधारणतः अच्छी ही है। परन्तु कहीं-कहीं भद्दी भूलें रह गयी हैं। 'अिच्छा' के बदले अिछा (पृ. १६७) 'गतिहीन' को 'गीतहीन' (पृ. १६६) और 'अपना' के लिये अपता जैसे शब्दोंका छप जाना ठीक नहीं जँचता।

लेखक नेहरूके अेक समयके विचार और प्रधान मंत्री नेहरूके आजके कार्यकी तुलना करनेमें आलोच्य पुस्तक कुछ हद तक सहायक हो सकती है।

—ज. चं. सिन्हा

साभार प्राप्त

(निम्नांकित पुस्तकें "राष्ट्रभारती" में समीक्षार्थ प्राप्त हुअी हैं। अिनकी समीक्षाअें समीक्षकोंके द्वारा प्राप्त होते ही प्रकाशित की जायँगी।)

कासि— ले०– बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'। प्रकाशक–राजकमल पब्लिकेशन लिमि., १ फैज बाजार, दिल्ली। पृष्ठ सं. डिमाअी १२०। मूल्य ३॥)

आय-कर विधान अेवं हिसाब लेखे— ले०–चन्द्रकान्त गुप्त, अेम. अे. बी. कॉम.। कॉलेज ऑफ कॉमर्स, देहली विश्वविद्यालय प्रकाशक–रामप्रसाद अेण्ड सन्स, हॉस्पिटल रोड, आगरा। पृष्ठ सं. १७६। मूल्य ५)

हमारी आर्थिक समस्याअें ले०–गिरिराजप्रसाद गुप्त, अेम. कॉम.। प्रकाशक–रामप्रसाद अेण्ड सन्स, हॉस्पिटल रोड, आगरा। पृष्ठ सं. ३५९। मूल्य ५)

आँखों देखा रूस— मूल ले०–श्री सत्येंद्रनाथ मुजूमदार। अनु०–विष्णुदत्त 'विकल'। प्रकाशक–आत्माराम अेण्ड सन्स, काश्मीरी गेट, दिल्ली ६। डिमाअी साअिज, पृष्ठ सं. १०७। मूल्य २)

प्रेरणा (मार्च ५३ का अंक)। संपा०–कोठारी। प्रकाशक–प्रेरणा प्रकाशन, सोजती गेट, जोधपुर। रायल साअिज, पृष्ठ सं. ९६। मूल्य १) वार्षिक १४)

लड़खड़ाते कदम— (कहानी संग्रह) ले०– महेन्द्र भटनागर, आनन्द महाविद्यालय, धार (म. भा.) प्रकाशक–स्वरूप बदर्स, खजूरी बाजार, अिन्दौर (म.भा.) पृष्ठ सं. ७८। मूल्य १)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

76028

मराठी 'गीताओ' की ढाओ लाख प्रतियाँ !

आज सारे सभ्य संसारकी आशा-भरी दृष्टि भूदान-यज्ञके महान् अध्वर्यु–(अिसका अर्थ होता है यज्ञमें मंत्रोंको पढ़नेवाला, होमकर्ता, यज्ञ-मंडपमें यज्ञकुंडकी रचना करनेवाला और यज्ञ-सम्बन्धी सारी सामग्री समिधा, पात्र, घृत आदिको अेकत्रित करनेवाला और यज्ञकी अग्निको प्रज्ज्वलित करनेवाला)–आचार्य विनोबाजीकी ओर लगी हुअी है। वे न केवल भारतकी ही, बल्कि विश्वकी पीड़ित, त्रस्त, मानवताकी रक्षाके लिये अेक बृहत् अनुष्ठान, अेक महान् अद्भुत् प्रयोग कर रहे हैं। अुनका वह प्रयोग या कर्मयोग फलीभूत हो रहा है। अुनके 'भू-दान यज्ञ' में कअी लाख अेकड़ भूमि खप चुकी है। भू-दान यज्ञके अध्वर्युकी तरह वे वाक् यज्ञके भी अध्वर्यु हैं। अुनका वाक्-यज्ञ, वाणीका, वाङ्मयका स्वाध्याय ज्ञान-यज्ञ भी लोक-मंगलकारी सिद्ध हुआ है। अुनके अपने वाङ्मय यज्ञमें अुनके 'आवडते'––(अिस मराठी शब्दका यहाँ हमने जान-बूझकर प्रयोग किया है, जिसका अर्थ 'अत्यन्त प्रिय' होता है)–ग्रन्थोंमें तीन ग्रन्थोंका, यूक्लिड अेलिमेंट्स, अीसपकी अमर कहानियाँ और भगवद्गीताका– महत्वपूर्ण स्थान है। अिन तीनोंने विनोबाजीको बहुत प्रभावित किया है। यहाँ हम अुनकी गीताके ही सम्बन्धमें कुछ कहना चाहेंगे। और हमारा यह साहस दुस्साहस है–गमिष्याम्युपहास्यताम्। फिर भी स्वान्तःसुखाय साहस है हमारा। विनोबा विश्वके सबसे बड़े विचारक हैं। संस्कृत भगवद्-गीताका अुन्होंने कअी वर्षों तक गहरा चिन्तन और मनन किया है। अनुभवकी कसौटीपर गीताको श्रद्धामय पुरुषकी तरह कसा है और तब वे गीताके अनुसार "सुख-दुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ" के रूपमें स्थित-प्रज्ञ बने। गीतामें आचार्यने ज्ञानकी गंगामैयाको बहते देखा कि अुससे निरन्तर अमृत-रसकी अनन्त आनन्द धारा बह रही है। अुसमें अुन्होंने कर्म, ज्ञान, भक्तिकी त्रिवेणीके रूपमें सुन्दर तीर्थराज प्रयागके दर्शन किये। सर्व देश, सर्व काल, सबको सुलभ और सर्व लोकमंगलकारी संस्कृतके ७०० श्लोकों और १८ अध्यायोंवाली छोटीसी-गागरमें सागर गीताको संत विनोबाने संसारकी समस्त दल-बन्दीके दलदलसे कोसों दूर पाया और तब महाराष्ट्रके बहुजन हिताय–बहुजन सुखाय मराठीमें सरल सुबोध समश्लोकी छन्दमें "गीताअी" के रूपमें दिया। मराठीमें "आअी" माँको कहते हैं। गीता हमारी माता है। अिसका ज्ञान शुष्क ज्ञानवाद नहीं है। गीतामें निरूपित कर्म कोरा कठोर कर्मकांड नहीं है और गीतोक्त भक्ति-निरूपण पाखंड मिथ्याचार नहीं है। छह-सौ अुनसठ वर्ष पहले सन्त ज्ञानेश्वरने संस्कृतकी गीताको मराठीमें "ज्ञानेश्वरी"के नामसे अेक महामहिम महारानी सम्राज्ञीके रूपमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराष्ट्रके मानस-सिंहासनपर आसीन किया और आज अुनके छहसौ अुनसठ साल बाद, अी. स. १२९५ के बाद, अी० स० १९५३ में, विनोबाने महाराष्ट्रको मांताके रूपमें-गीताको मराठी 'गीताअी" दी। संस्कृत जैसे संत तुलसीने हिन्दीमें रामचरित मानसको लक्ष-लक्ष जनमानसमें विराजमान किया। विनोबाजी महाराजकी "गीताअी" मराठीकी अनुपम श्रेष्ठ कृति तो है ही, वह भारतीय साहित्यको भी अुनकी अमर दैन है। गीताअीकी ढाअी लाख प्रतियाँ खप गयी हैं। यह सौभाग्य भारतकी अेक श्रेष्ठ भाषा मराठीको मिला। वह सुदिन शीघ्र आवे कि ढाअी करोड़ मराठी भाषियोंके कंठोंमें 'गीताअी' विराजे! आचार्य विनोबाकी 'गीताअी' का गुजरातीमें अवतार हो गया है। राष्ट्रकी भारती हिन्दीके स्वनाम-धन्य कवि मनीषी सियारामशरणजी गुप्तने भी हिन्दीमें अुसका भावानुवाद किया। हम शीघ्र ही सभी भारतीय भाषाओंमें 'गीताअी' के लक्ष-लक्ष संस्करण देखनेको लालायित हैं, नपेतुले शब्दोंमें बड़ी मधुर 'गीताअी' के।

मराठी 'गीताअी' का दो लाख सत्तर हजारका १७ वाँ संस्करण गत १९५२ के दिसम्बरमें प्रकाशित हुआ था।

गीताअी और विनोबा

गीता माँ है और विनोबा बालक हैं--

"गीताअी माअुली माझी तिचा मी बाळ नेणता।
पडतां रडतां घेअी अुचलूनि कडेवरी॥"

अर्थात् गीता मेरी माता है और मैं अुसका अबोध बालक हूँ। जब मैं गिरता हूँ, रोता हूँ तब वह मुझे अुठाकर निर्भय गोदमें ले लेती है।

येथें समत्व बुद्धीने टळे सुकृत दुष्कृत।
समत्व जोड हयासाठीं तेंचि कर्मांत कौशल॥

अिस संसारमें समत्व बुद्धिसे सुकृत और दुष्कृत टलता है; अिसलिये समत्वका अनुसंधान करना चाहिये; यही कर्मकी कुशलता है। योगः कर्मसु कौशलम्!

योगी तत्पर राहूनि दोष जाळित जाळित
अनेक जन्मीं संपूर्ण होअूनी मोक्ष पावतो॥

अुक्त योगी तत्पर रहकर, अपने दोषोंको दग्धकर कअी जन्मोंमें संपूर्ण होकर मुक्त हो जाता है।

दैवी संपत्ति :

अर्थ सरल है।

निर्भयत्व मनःशुद्धि योग-ज्ञानीं सुनिश्चय
यज्ञ निग्रह दातृत्व, स्वाध्याय ऋजुता तप॥
अहिंसा शांति अक्रोध त्याग सौजन्य सत्यता
अलुब्धता दया भूतीं मर्यादा स्थैर्य मार्दव॥
पवित्रता क्षमा तेज धैर्य अद्रोह नम्रता
हे त्याचे गुण जो आला दैवी संपत्ति घेअुनी॥

—हृ० श०

× × ×

वैशाखी पूर्णिमा!

'राष्ट्रभारती' के अिस अंकके प्रकाशन समय सौभाग्यवश वैशाखी पूर्णिमा भी आयी। कोअी २,५१० वर्ष पहले, और अीसासे ५५७ वर्ष पूर्व, भारतवर्षके कपिलवस्तु नगरमें तथागत भगवान् बुद्ध अेक महान् राजकुमारके रूपमें अवतरित हुअे थे। होनहार पूतके पाँव पालनेमें ही दिखायी पड़ते हैं। राजकुमार पाँच वर्षकी बाल्यावस्थासे ही सहज धीर, गंभीर, कोमल, दयालु स्वभाव और चिन्तनमग्न रहते थे। राजकुमार राजघरानेके समस्त सुख, भोग-विलासोंसे अुदासीन ही रहे। वे २९ वर्षके प्रौढ़ युवा थे, तभी अेक दिन आधी रातके समय राजपरिवार और सर्वसंगका परित्याग कर घरसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकल पड़े। प्रव्रज्या की। दुनियाको सच्चा रास्ता दिखानेके लिये दुनियासे मुँह मोड़ा, गृहस्थजीवनके और अैश्वर्यके चोचले झमेले छोड़े और राजकुमारने अपनेको अेक जीर्ण-शीर्ण चीवरधारी भिक्षुके रूपमें बदल लिया। लगातार चालीस वर्षोंतक घोर तपस्या और आत्म-चिन्तनके बाद अेक दिन अुन्हें 'बुद्धत्व' की प्राप्ति हुअी। पीड़ित मानवताकी मंगल-कामना के लिये, बहुजन सुखाय, बहुजन हिताय, बुद्धने मध्यम मार्ग द्वारा (बीचका सरल रास्ता निकाल कर) संयम, शील-सदाचार और लोककल्याण– अिन तीन सूत्रोंमें अपने अुपदेशका सार भर दिया। अुनका अुपदेश स्त्री-पुरुष, धनी-कंगाल, छोटे-बड़े, ब्राह्मण-शूद्र, सभीके लिये समान है। बुद्धका संसारकी मानवजातिके लिये अेक संदेश है– "हे मनुष्यो! मैं जो कुछ कहता हूँ वह परम्परागत है, अैसा समझकर अुसे सच मत मान लो। अपनी पूर्व परम्पराके अनुसार है यह समझकर भी सच मत मानो। अैसा होनेवाला है, यह समझकर भी सच न मानो। लौकिक न्याय समझकर भी तुम अुसे सच न मान लो। मैं प्रसिद्ध साधु हूँ, पूज्य हूँ, यह समझकर भी सच न मान लो। तुम्हें अपनी विवेक बुद्धिसे ही मेरा अुपदेश सच लगे तभी तुम अुसे स्वीकार करो!"

भगवान् बुद्धने जीवनकी अन्तिम निर्वाण वेला तक शान्ति, शील, सदाचार और विश्व-प्रेमका प्रचार किया। वे निर्वैरः सर्व भूतेषु थे। शान्ति, प्रेम, मैत्री और करुणाके वे प्रतीक थे। अपने विरोधियोंके प्रति भी अुनकी अुदार क्षमा भावना थी। अेक बार अुन्होंने अुनको गालियां देनेवाले अपने विरोधीको स्वच्छन्दतापूर्वक और भी अधिक गालियाँ देनेके लिये हँसते-हँसते प्रोत्साहित किया था।

बौद्ध भिक्षुओंका संघ, जिसे भगवानने अपने पुनीत हाथों द्वारा स्थापित किया था, विश्वकी अेक सर्वतो अधिक सुदृढ़ संस्था है जो विश्वमें शान्ति और विश्व-बन्धुत्वकी भावनाका प्रचार करती है। जो अिस संघमें प्रविष्ट होता है अुसे तीन बार यह कहना पड़ता है :—

१. मैं बुद्धकी शरणमें जाता हूँ।
२. मैं बौद्ध धर्मकी शरणमें जाता हूँ।
३. मैं संघकी शरणमें जाता हूँ।

वैशाखी पूर्णिमाको जन्म लिया! वैशाखी पूर्णिमाको महाभिनिष्क्रमण किया और वैशाखी पूर्णिमाको ही महापरिनिर्वाण प्राप्त किया। समस्त अेशियाके बौद्ध प्रतिनिधि अिस वैशाखीकी शुभकामनायें लेकर बुद्ध गयामें समवेत हुअे हैं। धन्य वैशाखी पूर्णिमा!

—ह० श०

× × ×

भारतीय भाषाविकास परिषद :

पुणें यूनिवर्सिटीके आयोजनसे पुणेमें ता. २३, २४, २५ मअीको जो 'भारतीय भाषा-विकास परिषद'की बैठक हुअी वह अेक प्रकारसे बहुत ही सफल परिषद कही जा सकती है। अिस परिषदका आयोजन करनेके लिये पूना युनिवर्सिटीको धन्यवाद देना चाहिये और परिषदकी विशेष सफलताके कारण अुसका अभिनंदन भी करना चाहिये। सबसे बड़ी बात जो अिस परिषदके बारेमें कही जा सकती है वह है अिसमें अच्छे-अच्छे प्रसिद्ध विद्वानोंका योग देना। केन्द्रीय सरकारकी ओरसे श्री हुमायूँ कबीर प्रतिनिधित्व कर रहे थे। मद्रासके शिक्षा-मंत्री स्वयं अुपस्थित थे। अुत्तर-प्रदेश, मध्य-प्रदेश, पंजाबकी राज्य सरकारोंने अपने प्रतिनिधि भेजे थे। ग्यारह यूनिवर्सिटियोंने अपने प्रतिनिधि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भेजकर अुसमें योग दिया था और राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा आदि कअी संस्थाओंके प्रतिनिधि अुसमें सहयोग दे रहे थे। श्री जदुनाथ सरकार, डॉ० मुनीतिकुमार चट्टरज्या, डॉ० रघुवीर जैसे विद्वानोंके मार्ग-दर्शनमें परिषदने कुछ निर्णय किये और प्रसन्नताकी बात यह है कि विभिन्न मत धारण करनेवाले प्रतिभाशाली प्रतिनिधि परिषदमें अेकत्र हुअे, अेक दूसरेके निकट परिचयमें आये और परिषदके जुदे-जुदे विभागोंमें खुलकर विचार विनियम करनेके बाद अुन्होंने जो निर्णय किये वह सर्वसम्मतिसे हुअे। कुछ लोगोंको भय था कि अैसे विभिन्न अभिप्रायके आग्रही विद्वानोंकी अिस परिषदमें सम्भवतः कटु आलोचना होगी, किसी प्रकारका निर्णय न हो सकेगा और कटुता और विद्वेष बढ़ेगा। परन्तु अुनका यह भय निर्मूल सिद्ध हुआ। अिसका कारण यह था कि सभी प्रतिनिधि यह अनुभव कर रहे थे कि अब समय आ गया है जब कि राष्ट्रभाषा हिन्दीके विकासके लिये तथा मातृभाषा या प्रादेशिक भाषाओंको अपना स्वाभाविक स्थान दिलानेके लिये सबको प्रयत्नशील होना होगा। अिस कारण वे पुणेमें कुछ-न-कुछ निर्णयपर पहुँचना चाहते थे, केवल वादविवाद या वाग्विलासका संतोष प्राप्त करना नहीं।

परिषदके निर्णय :

परिषदका कार्य तीन विभागोंमें विभक्त किया गया था। "अे" विभागमें पारिभाषिक शब्दोंकी रचना किस प्रकार हो अिसपर विचार करना था। "बी" में राष्ट्रभाषा हिन्दीके विकासका पथांकन किया जा सकता है? और यदि किया जा सकता है तो अुसका विकास किस दिशामें होना चाहिये यह विचारणीय प्रश्न था। और तीसरे "सी" विभागमें प्रादेशिक भाषाओंके विकासके लिये क्या किया जाना चाहिये, अुसका निर्णय करना था। श्री सुनीतिबाबूकी अध्यक्षतामें प्रथम विभागने जो सर्वसम्मत निर्णय किये वे संक्षेपमें अिस प्रकार हैं--(१) तमाम पारिभाषिक शब्द जहाँतक सम्भव हो, संस्कृतसे बनाये जायँ; सिम्बोल, साअिन तथा फोरमूला-अनेक प्रकारके चिह्न या संक्षेप जो विज्ञानमें प्रयोगमें आते हैं वे आज हैं वैसे ही आंतरराष्ट्रीय रहें, जहाँ योग्य भारतीय शब्द न मिले वहाँ आंतरराष्ट्रीय पारिभाषिक शब्द ही कायम रक्खे जायँ और सारे भारतकी शास्त्रीय परिभाषा अेक हो।

संभव है, कुछ लोगोंको अिसके विरुद्ध कुछ कहना हो। डॉ. रघुवीरको तो अिसके विरुद्ध बहुत कुछ कहना है यह अुन्होंने परिषदके आगे स्पष्ट भी कर दिया। अुनकी दलीलें भी सारगर्भित थीं, फिर भी हमारा अभिप्राय है कि आजकी परिस्थितिमें परिषदने जो निर्णय किये, वे अभिनन्दनीय हैं। अितना ही नहीं अिससे हम अपने ध्येयकी ओर कुछ अग्रसर ही हो रहे हैं। परन्तु अब मुख्य प्रश्न तो यह है कि अिन निर्णयके साथ अुस निर्णयको कार्यान्वित करनेके लिये क्या प्रयत्न किया जायगा?

राष्ट्रभाषा हिन्दीका प्रश्न :

"बी" विभागने जो निर्णय किये वे भी सर्वसम्मतिसे किये गये थे। परन्तु यहाँ काफी गरमा-गरमी रही। मतभेदोंके कारण विवाद अच्छा हुआ। अपने विचारोंको प्रतिनिधियोंने आग्रह तथा दृढ़तापूर्वक रखा; परन्तु कहीं सुजनता और शिष्टताका भंग नहीं होने पाया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिस विभागका सर्वप्रथम निर्णय यह है कि भिन्न-भिन्न प्रदेशोंमें वहाँके तमाम कार्य वहाँकी प्रादेशिक भाषामें ही किये जायँ। हिन्दी भारतकी राजभाषा मानी गयी है अिसलिये प्रादेशिक राज्योंको भी अुसके प्रचार तथा प्रसारके लिये कार्य करना चाहिये और विधानके अनुसार हिन्दीका विकास यह सभी भाषा-भाषियोंके प्रयत्नपर आधार रखता है अिसलिये तमाम युनिवर्सिटियाँ, शिक्षा-संस्थाअें और भाषा तथा साहित्य सम्बन्धी संस्थाओंसे अनुरोध किया गया कि वे अुसके लिये कोअी ठोस कार्य करें। परन्तु अुसके साथ-साथ यह चेतावनी भी दी कि अैसे प्रयत्नोंके कारण वर्तमान हिन्दी भाषामें जो परिवर्तन हो वह अैसे ही हों जो अुसकी आत्मा (Genius) के प्रतिकूल कभी न हों।

ग़लतफहमियाँ :

अिस विभागमें तथा "सी" विभागमें जो चर्चायें हुअीं अुसमें यह देखा गया कि कअी प्रकारकी ग़लतफहमियाँ काम कर रही थीं। सबसे बड़ी ग़लतफहमी तो यह थी कि हिन्दी प्रादेशिक भाषाओंको दबा देगी और अुनका विकास रुक जायगा। हिन्दीके आक्रमणकी और अुसके साम्राज्यवादकी भी बातें कही गयीं। परन्तु अुसके मूलमें हिन्दीके प्रति किसी प्रकारकी दुर्भावना नहीं थी; वरन् अैसा कहनेवालोंका अपनी मातृभाषाके प्रति प्रेम था और हिन्दीके कारण अुसको हानि पहुँचेगी अैसा काल्पनिक भय था। हिन्दी-भाषी प्रतिनिधि जो परिषदमें अुपस्थित थे अुन्होंने अुसको समझ लिया और बड़ी ही तत्परतासे अुन्हें आश्वासन दिया कि वे नहीं चाहते कि हिन्दी प्रादेशिक भाषाओंका स्थान ले और अुनको किसी प्रकारकी हानि पहुँचावे। प्रादेशिक भाषायें ही अपने-अपने प्रादेशिक शिक्षा तथा शासनकी भाषा बननी चाहिये और शालाओंमें भी हिन्दीकी शिक्षा अनिवार्य की जाय अैसा हम आग्रह नहीं करते। यदि प्रदेशको अुसकी शिक्षा आवश्यक प्रतीत हो ओर वे अुसको अनिवार्य शिक्षाका विषय बनायें तो यह अुनकी अपनी बात होगी। प्रतिनिधियोंपर अिसका अच्छा प्रभाव पड़ा। हमारा मानना है कि अिस ग़लतफहमीके कारण ही हिन्दीतरभाषी प्रान्तोंमें हिन्दीका विरोध होता दिखायी देता है और अुनकी यह ग़लतफहमी यदि दूर हो जाय तो हिन्दीका विरोध ७५ फी सदी तो कम हो ही जायगा। हम आशा करते हैं कि हिन्दीतरभाषी प्रान्तोंके जो प्रतिनिधि अिस परिषदमें अुपस्थित थे, और करीब-करीब सभी प्रदेशोंके प्रतिनिधि अिसमें थे, वे अपने अपने प्रदेशमें अिस ग़लतफहमीको दूर करनेका यथासंभव प्रयत्न करेंगे। अेक-दो अैसी दूसरी भी बड़ी गंभीर ग़लतफहमियाँ देखी गयीं परन्तु अुसपर हम अन्तमें कुछ कहेंगे।

प्रादेशिक भाषाओंका महत्व तथा विकास :

"सी" विभागमें अिसपर अच्छी चर्चा हुअी। सभी प्रतिनिधियोंने प्रादेशिक अर्थात् मातृभाषाका महत्व स्वीकार किया और प्राथमिक शालासे लेकर यूनिवर्सिटीतककी शिक्षा मातृभाषा द्वारा ही दी जानी चाहिये अिसपर जोर दिया। साथ-साथ यह भी निर्णय हुआ कि सभी माध्यमिक शालाओंमें हिन्दीकी शिक्षाका प्रबन्ध होना चाहिये--ध्यान रखिये, हिन्दीकी शिक्षा अनिवार्य नहीं करना चाहिये, परन्तु अुसकी शिक्षाका प्रबन्ध होना चाहिये। अुसने यह भी निर्णय किया कि जहाँ सम्भव हो वहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरी अेक प्रादेशिक भाषाके अध्ययनका भी प्रबन्ध होना चाहिये। प्रादेशिक भाषाओंके विकासके अुद्देश्यको ध्यानमें रखकर अुसने निम्न-लिखित सिफारिशें भी की हैं:--

तमाम यूनिवर्सिटियोंमें भारतीय भाषाओंके अुच्च शिक्षण तथा अनुसंधानके कार्यके लिये प्रबन्ध होना चाहिये।

राज्यके शिक्षामंत्रणालयों, युनिवर्सिटियों तथा भाषा अेवं साहित्य सभाओंमें अेक अनुवाद समिति भी होनी चाहिये और वह अेक भारतीय भाषाके साहित्य तथा शास्त्रीय ग्रंथोंका दूसरी भारतीय भाषाओंमें अनुवाद करनेका कार्य करेगी।

भारतीय भाषाओंके व्याकरण, बातचीत ग्रन्थ तथा कोष तैयार किये जायँ।

प्रत्येक प्रदेशमें अेक अैसी पत्रिका होनी चाहिये जिसमें दूसरी तमाम भाषाओंकी साहित्यिक प्रगतिकी संपूर्ण जानकारी दी जाय। (वर्धासे "राष्ट्रभारती" आंशिक रूपमें अिसी अुद्देश्यको लेकर सम्पादित की जाती है।)

केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों द्वारा शालाओंके योग्य शिक्षक तैयार करनेके केन्द्र खोले जायँ और अुनके द्वारा अुपरोक्त कामको करनेके लिये यूनिवर्सिटियोंको, लेखकोंको तथा सभाओंको अुत्साहित करनेको पुरस्कार, सहायता और फंड आदिका प्रबन्ध किया जाय।

राष्ट्रभाषा हिन्दी :

अिस परिषदके सम्बन्धमें जो सबसे बड़ी दुःखद बात हमें प्रतीत हुअी वह कुछ विद्वान् प्रतिनिधियोंका "राष्ट्र" शब्दका विरोध था। परिषदके 'बी' विभागके अध्यक्ष श्री व्यंकटेश आयंगरने ही अिस प्रश्नको अुठाया। यह मानना कि हिन्दीको राष्ट्रभाषा नाम देनेसे दूसरी प्रादेशिक भाषायें अराष्ट्रीय हो जाती हैं, विचित्र मनोवृत्तिका सूचक है। भारतकी सब प्रादेशिक भाषायें राष्ट्रीय भाषायें हैं; परन्तु सब तो भारत राष्ट्रकी राष्ट्रभाषा नहीं हो सकतीं। अिसके लिये विधानने हिन्दीको मान्य किया है और संसारके विभिन्न देशोंके, राष्ट्रोंके समक्ष यदि हमें अेक राष्ट्रके तौरपर अुपस्थित रहना है तो भारत ही अेक राष्ट्र होगा और अुसकी राष्ट्र-भाषा हिन्दी होगी। परन्तु प्रान्तवाद, अपनी भाषाका अभिमान, हिन्दीके प्रति संशय-वृत्ति, राष्ट्रके प्रति अेकनिष्ठताका अभाव आदि विभिन्न भावनाओंकी प्रबलताके कारण हमारे विचारोंमें भयंकर अुलझनें पैदा हो गयी हैं और कोअी बात अुसके सुलझे हुअे रूपमें समझना या रखना हमारे लिये असम्भव-सा हो गया है। अेक प्रतिनिधिने तो अपने प्रदेशको ही अपना राष्ट्र कहा और अुसकी प्रादेशिक भाषाको ही अपनी राष्ट्रभाषा बताया। सम्भवतः वे यह भूल गये कि स्व. श्री जिन्नाकी दो राष्ट्रकी भावनाने भारतके दो टुकड़े कर दिये और कितना रक्त बहाया।

राष्ट्रभाषा शब्दका भी अपना अितिहास है। आज नहीं परन्तु बरसों पहले हमारे राष्ट्रीय नेताओंको भारतकी अेक राष्ट्रभाषा न होना खटका और सम्भवतः बंगालसे ही अुसके लिये प्रथम आवाज़ अुठी। बंगालके ही प्रतिभा-सम्पन्न विद्वानोंने हिन्दीको अिसके लिये अुपयुक्त माना। फिर तो राष्ट्रभाषाका और राष्ट्रभाषा हिन्दीकी अनिवार्यताका आन्दोलन चला और गांधीजीने राष्ट्रनिर्माणके लिये राष्ट्रभाषाको अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रचनात्मक कार्यका अेक अंग बना दिया। अलग-अलग प्रदेशोंमें यदि अेकता स्थापित करना है, केवल राजकीय अेकता ही नहीं; अपितु सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक अेकता भी स्थापित करना है तो राष्ट्रभाषाकी आवश्यकता होगी ही। यही अेक साधन है जो अैसी अेकताकी दृढ़ आधारशिला बन सकती है। अिसी कारण अुसे राष्ट्रभाषाका नाम दिया गया है और वह सर्वथा अुपयुक्त नाम है। हम केवल राजकीय अेकतापर जोर नहीं देते, हमारा तो अुद्देश्य हमारी राष्ट्रीय अेकताको सिद्ध करना है और राष्ट्रका अर्थ है अुसकी जनता भिन्न-भिन्न प्रदेशोंकी जनता अेक दूसरेके निकट आवे, अुनमें राजकीयके साथ-साथ सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक संपर्क बढे, अुनकी शिक्षा-दीक्षामें भी नाना विभिन्नताके मूलमें अेकरूपता हो, और हमारा राष्ट्र अिस प्रकार दृढ़ सांस्कृतिक बन्धनोंमें अेकात्म्य अनुभव करने लगे, अिस अुद्देशको लेकर राष्ट्रभाषाके अेकनिष्ठ सेवक अपने जीवनका बहुमूल्य समय अुसकी सेवामें लगा रहे हैं! हम आशा करते हैं कि अिन सेवकोंकी लगनको दूसरे लोग भी समझेंगे और अपने मनमें किसी प्रकारका संशय हो तो अुसका त्याग कर देंगे।

टालटूलकी मनोवृत्ति :

कुछ प्रतिनिधियोंमें टालटूल करनेकी मनोवृत्ति भी पायी गयी। हमारा अँग्रेजीके प्रति जो मोह है वह अुसका मुख्य कारण था। वे खुल्लमखुल्ला तो अंग्रेजीका पक्ष नहीं ले सकते थे। अँग्रेजीका जो आज स्थान है वह स्थान सदा कायम नहीं रह सकता है, यह तो वे भी समझते थे। परन्तु अँग्रेजीका स्थान भारतीय भाषायें लें भी तो अुसमें जितना विलम्ब हो अुतना अच्छा होगा अैसी मनोवृत्ति भी कुछ लोगोंकी थी। वस्तुतः अुनकी दलील अेक ही प्रकारकी थी। राष्ट्रभाषा हिन्दी तो अभी होनेवाली है, जबतक वह बन न जाय तबतक सब काम अँग्रेजीके द्वारा होना चाहिये, अथवा हिन्दी तथा दूसरी प्रादेशिक भाषाओंमें विज्ञान सहित सब विषयोंकी अुपयुक्त पुस्तकें तैयार न हो जायँ तबतक अँग्रेजीको ही कायम रखना चाहिये। परन्तु अधिकांश प्रतिनिधि शिक्षाके क्षेत्रमें अँग्रेजीके स्थानपर प्रादेशिक भाषाओंको शिक्षाका माध्यम बनानेके पक्षमें थे। कअी स्थानोंपर तो अुसका सफल प्रयोग हो रहा है अिसलिये अुनके मनमें अिस संबंधमें कोअी सन्देह नहीं रहा है। पुणें यूनिवर्सिटीने भी तो अुच्चसे अुच्च शिक्षा मराठीके माध्यम द्वारा देनेका निर्णय किया है। परिषदके निर्णयसे अुनके अिस निर्णयकी पुष्टि ही मिली है। परन्तु यह टालटूलकी भावना जो पायी गयी वह हमारे लिये बड़ी ही हानिकारक है अिसमें कोअी शक नहीं। कुछ शिक्षा-संस्थाओंके अनुभवोंका परस्पर आदान-प्रदान करके जिनमें किसी प्रकारका सन्देह या संशय रह गया हो अुसे दूर करनेका प्रयत्न करना चाहिये। पुणेकी परिषदका सबसे बड़ा लाभ जो हम मानते हैं वह यही है कि अुसके द्वारा कअी प्रकारकी ग़लत-फहमियाँ दूर करनेका अवसर प्राप्त हुआ।

दो भाषकी बात :

कुछ लोगोंके मनमें यह भ्रम था कि राष्ट्रभाषा हिन्दी अुत्तर प्रदेशमें बोली जानेवाली हिन्दीसे भिन्न होगी और अभी वह बननेवाली है और हिन्दीतर भाषी प्रान्तोंको हिन्दीको जिस प्रकार चाहें बिगाड़नेका अधिकार होगा। वे यह भूल जाते हैं कि संविधानमें जिस हिन्दीको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजभाषाके पदपर स्थापित किया है वह अेक सुगठित तथा सम्पन्न भाषा है। अुसका अपना व्याकरण और परंपरासे अुसके अभिव्यक्तिके प्रकारोंको सहजता, मनोरमता और शक्ति प्राप्त हुअी है। वह अेक प्राणवान् भाषा है और अिसलिये अुसके साथ निर्दयताका खेल खेलना अुचित नहीं। कुछ वक्ताओंने अिसलिये यह स्पष्ट कर दिया कि यदि हिन्दीको लेना है तो अुसे अुसी रूपमें हमें लेना होगा कि जिस रूपमें अुत्तर प्रदेशके हिन्दीके विद्वान् अुसका अुपयोग करते हैं। परिषदके प्रतिनिधियोंमें बहुमत अिसी पक्षमें था और अुसका प्रतिबिंब अुसके निर्णय-पर पड़ा भी है। यह तो सभी स्वीकार करते हैं कि जैसे राष्ट्रका विकास होता जायगा, भिन्न भिन्न प्रदेशोंका परस्पर सांस्कृतिक आदान-प्रदान होगा वैसे वैसे भाषामें कुछ न कुछ विकासकी दृष्टिसे परिवर्तन होगा। परन्तु वह विकासके रूपमें होगा और अैसा होगा जिसमें भाषाकी आत्मा (Genius) को किसी प्रकारकी हानि न पहुँचे। पर्याप्त विचार-विनिमयके बाद परिषद अिस निर्णयपर पहुँची है और यह सिद्धि हमारी दृष्टिमें बड़े ही महत्त्वकी है।

परिषद अुपयुक्त अवसरपर बहुत अुपयोगी कार्य करनेके लिये मिली थी। प्रसन्नताकी बात है कि अुसने वह अुपयोगी कार्य सम्पन्न किया और अुसमें सच्चे अर्थमें सारे भारतके प्रतिनिधियोंका योग रहा। अब जिन-जिन सरकारों तथा संस्थाओं या यूनिवर्सिटियोंके प्रतिनिधियोंने परिषदमें योग दिया है, वे सरकारें या संस्थायें आगे चलकर परिषद द्वारा किये गये मार्ग-दर्शनके अनुसार कौन-सा कितना कार्य करते हैं यह देखना होगा। यदि वे किसी कार्यका आरम्भ करें तो वे अुसकी सूचना दूसरी संस्थाओंको दें तो अुन संस्थाओंका भी अुत्साह बढ़ेगा। और हम तो यह भी मानते हैं कि समय-समयपर अिस तरह विद्वानों तथा संस्थाओं तथा राज्य सरकारोंके प्रतिनिधिगण मिलते रहें और आपसमें विचार-विनिमय करते रहें तो राष्ट्र-भाषा हिन्दी तथा प्रादेशिक भाषाओंके विकासमें बहुत बड़ी सहायता मिलेगी।

—मो० भ०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पं. किशोरीदास वाजपेयीकी लिखी अुत्तम पुस्तकें

अच्छी हिन्दी

(अु० प्र० सरकार द्वारा पुरस्कृत)

वाजपेयीजीकी यह पुस्तक अुन्हें अवश्य पढ़ लेनी चाहिये, जो अच्छी हिन्दी लिखना चाहते हैं। अपने विषयकी सर्वमान्य पुस्तक है। **मूल्य ढाअी रुपये**

"प्रस्तुत पुस्तक विद्यार्थियोंके लिअे अत्यन्त अुपादेय है।"

—'सम्मेलन-पत्रिका'

"This is a very useful manual for those Who Want to learn the niceties of a chaste Hindi style. The author is a Well-known critic and his books on grammar have brought him ample recognition in scholarly circles.

The book is divided into four-portions—in the first, the author discusses the elements of a good style and language, in the second, Hindi as a language comes up for discussion; Sematics is discussd in detail in the third part, and the fourth discusses the various aids to style. The book should prove useful to students of Hindi.

Although the book fills a gap, there is as yet need of a first class volume in Hindi, like those of the Fowler Brothers or that of Eric Partridge in English. It is hoped that at least one of the many learned Hindi societies Would leave 'party politics' for some time and take up this urgent Work."

—'अमृतबाजार-पत्रिका'

हिन्दी निरुक्त

(अु० प्र० सरकार द्वारा पुरस्कृत)

हिन्दीका विकास समझनेके लिअे सर्वश्रेष्ठ पुस्तक है। भाषा-विज्ञानकी अन्य किसी भी पुस्तकमें अैसी सामग्री न मिलेगी। वाजपेयीजीने सुलझे हुअे मौलिक विचार प्रकट किये हैं।

मूल्य सवा दो रुपये

अच्छी हिन्दीका नमूना

हिन्दी-परिष्कारपर वाजपेयीजीकी सुप्रसिद्ध पुस्तक है; अिसलिये अिसका विशेष परिचय देना जरूरी नहीं।

मूल्य पौने तीन रुपये

राष्ट्रभाषाका प्रथम व्याकरण

हिन्दीका आधारभूत मौलिक व्याकरण। अु० प्र० सरकार द्वारा पुरस्कृत।

मूल्य चार रुपये

साहित्य-निर्माण

(अु० प्र० सरकार द्वारा पुरस्कृत)

हिन्दीमें साहित्य-निर्माण करनेवालोंके लिअे।

मूल्य सवा दो रुपये

व्रजभाषाका व्याकरण

अपने विषयकी अेकमात्र प्रौढ़ रचना।

मूल्य तीन रुपये

डाक-खर्च पृथक् लगेगा। मंगानेका पताः—

हिमालय अेजेंसी, कनखल (अुत्तर प्रदेश)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेरणा

आवश्यक व महत्वपूर्ण विषयोंको केवल अेक टुकड़ेमें न छापकर
अपनी सम्पूर्णताके साथ स्वतंत्र रूपसे प्रत्येक अंकमें
प्रकाशित करनेवाली मासिक पत्रिका।

मौलिक कहानियों व कविताओंके अन्यथा कुछ समय तकके स्थायी विषयोंकी पहली किश्तः

१. **आलोचनात्मक लेख**— आचार्य हजारी प्रसाद (निबंधकारके रूपमें), प्रेमचंदके पात्र, शरत बाबू, मीरा, कहानियोंका यशपाल, हिन्दीकी मासिक पत्रिकाअें।

२. **अनुवाद**—क्रिस्टोफर कॉडवेलकी पुस्तक Studies in dying culture का क्रमशः अनुवाद, अेन्टम चेखवकी अेक कहानीका अनुवाद, कामायनीका राजस्थानीमें अनुवाद, मेघदूतका राजस्थानीमें अनुवाद।

३. **राजस्थानके लोक-गीत**— राजस्थानी मुक्तक, राजस्थानके जीवनसे संबंध रखनेवाले चित्र।

सम्पादक	मूल्यः	पताः
कोमल कोठारी	अेक प्रति १।)	सोजती गेट,
	वार्षिक १४)	जोधपुर (राजस्थान)

सम्पादक:
ज्यो. राधेश्याम द्विवेदी
स. सम्पादक:
वैजनाथ दाणी

देशबन्धु का ब्रज संस्कृति अंक

विशेषांकका मूल्य ।।।) मात्र
४) भेजकर ग्राहक बननेवालोंको विशेषांकके लिअे अतिरिक्त मूल्य नहीं देना पड़ेगा!

अिस विशेषांकमें ब्रजकी ललित कलाअें, लोकगीत, लोक कहानियाँ, ब्रजकी वेशभूषा, ब्रजकी सभ्यता आदि–आदिपर सुन्दर-सुन्दर लेख होंगे। यह अंक अगस्त ५३ में प्रकाशित होगा!

अिस अंकके कुछ लेखक—

१. डा. वासुदेव शरण अग्रवाल
२. पं. रविशंकर रावल
३. डा. सत्येन्द्र अेम. अे.
४. श्री अगर चन्द्र नाहटा
५. पं. अुदयशंकर भट्ट
६. पं. कृष्ण दत्त वाजपेयी
७. वा. गुलाब राय अेम. अे.
८. पं. अुदयशंकर शास्त्री
९. वा. प्रभुदयाल मीतल

अिस अंकका प्रचार भारतके कोने-कोनेमें किया जा रहा है। देशबन्धु द्वारा विज्ञापन दाता अपनी वस्तुओंका प्रचार समस्त भारतमें कर सकते हैं। विशेष विवरणके लिअे लिखिये—

व्यवस्थापक
'देशबन्धु' मथुरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके, आपके परिवार के प्रत्येक सदस्य के, प्रत्येक शिक्षा-संस्था तथा पुस्तकालय के लिअे अुपयोगी

हिन्दीका अपने ढंगका पहला पत्र

गुलदस्ता

(हिन्दी डाअिजैस्ट)

वार्षिक मूल्य १०)
पृष्ठ संख्या १२५

नमूने की प्रति
अेक रुपया

३९३८ पीपलमंडी, आगरा

अंग्रेजी डाअिजैस्ट पत्रिकाओंकी तरह दुनियाकी तमाम भाषाओंके साहित्यसे जीवनको नयी स्फूर्ति, अुत्साह और आनन्द देनेवाले लेखोंका सुंदर संक्षिप्त संकलन देनेवाला यह पत्र अपने ढंगका अकेला है, जिसने हिन्दी पत्रोंमें अेक नयी परंपरा कायम की है। हास्य, व्यंग, मनोरंजक निबंध तथा कहानियाँ अिसकी अपनी विशेषता है।

गुलदस्ता पर लोकमत

स्वामी सत्यदेव परिव्राजक
"गुलदस्ताकी टक्करका मासिक-पत्र अभीतक प्रकाशित नहीं हुआ। मैं अिस पत्रिकाको आद्योपांत सुनता हूँ।"

बाबू गुलाबराय, अेम. अे.
"अिसमें शिक्षा और मनोरंजन दोनोंके अच्छे साधन अुपस्थित रहता हैं।"

जैनेन्द्रकुमार, दिल्ली
"गुलदस्ता अच्छी जीवनोपयोगी सामग्री दे रहा है।"

प्रो. रामचरण महेंद्र
"गुलदस्ता विचारोंका विश्व-विद्यालय है, जिसे घरमें रखनेसे सभी व्यक्ति लाभ अुठा सकते हैं।"

हिन्दीका स्वतंत्र मासिक

'नया समाज'

संचालक: नया समाज-ट्रस्ट ★ **संपादक: मोहनसिंह सेंगर**

वार्षिक चन्दा ८) : अेक प्रति ।।।) : विदेशोंमें १२) वार्षिक

'नया समाज' व्यक्तिमें स्वतंत्र चिन्तना, समाजमें अन्ध विश्वास और रूढ़ियोंका अन्तकर स्वस्थ सदाचरण और राजनीतिमें भ्रष्टाचार, जन-द्रोह अेवं आततायीपनका पर्दाफाशकर स्वस्थ जनतंत्रका प्रतिपादन करता है।

'नया समाज' में हर मास साहित्य, संस्कृति, समाज, अन्तर्राष्ट्रीय हलचलों और विशिष्ट व्यक्तियोंकी अुपादेय चर्चा रहती है।

'नया समाज' किसी दल या वाद–विशेषसे बँधा न होनेके कारण स्वतंत्र, संयत और स्वस्थ पाठ्य-सामग्री प्रस्तुत करता है। हिन्दीके चोटीके लेखकोंका सहयोग अिसे प्राप्त है। अिसी कारण पिछले पाँच वर्षोंमें ही अिसने हिन्दी संसारमें अपनी धाक जमा ली है।

आप यदि ग्राहक नहीं हैं, तो आज ही बन जाअिये। यदि हैं, तो अपने अिष्ट-मित्रोंको भी बनाअिये। यदि किसी कारण आप ग्राहक नहीं बन सकते, तो चेष्टा कीजिये कि 'नया समाज' आपके पड़ोसके पुस्तकालयमें मँगाया जाय।

आज ही नमूनेके लिये लिखिअे:

व्यवस्थापक 'नया समाज', ३३, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता– १

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस घरमें आरोग्य प्रकाश नहीं, वहाँ सुख शान्ति कहाँ ?

आरोग्य, स्वच्छता और चिकित्सा का सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ

भारत-प्रसिद्ध श्रीवैद्यनाथ आयर्वेद भवन लिमिटेडके अध्यक्ष वैद्यराज पं० रामनारायणजी वैद्यशास्त्रीने ५-६ वर्ष बड़ी मेहनतसे स्वयं अिस ग्रंथको लिखा है। ग्रंथका अेक-अेक वाक्य हजारों रुपयेका काम देता है। व्यायाम, ब्रह्मचर्य, भोजन, सदाचार, अुत्तम विचार आदि पूर्वार्द्ध विषयोंको पढ़कर और तदनुसार चलकर सदा बीमार रहनेवाला रोगी बिना दवाके नीरोग (तन्दुरुस्त) हो जाता है। ग्रंथके अुत्तरार्द्धमें शरीरमें पैदा होनेवाले सभी रोगोंकी अुत्पत्ति, कारण, निदान, रोगके लक्षण, चिकित्सा, पथ्यापथ्य आदि बड़ी ही सरल भाषामें लिखे हैं जो पढ़कर विद्वान्से लेकर साधारण पढे-लिखे दोनों समान भागसे लाभ अुठा सकते हैं। अिसमें दवाओंके जो नुकसे लिखे गये हैं वे बहुत बार परीक्षित, कभी भी फेल न होनेवाले और शास्त्रानुमोदित हैं। शहर हो या देहात, सब जगह अिस पुस्तकके घरमें रहनेसे रोगीको तत्काल लाभ पहुँचाया जा सकता है। औषध तैयार करनेका विधान तो अिस पुस्तकमें श्रेष्ठ है क्योंकि लेखक अिस विषयके निर्णयात्मक ज्ञाता हैं। अिसके आठ संस्करणोंमें ७१००० प्रतियां छपकर बिक चुकी हैं। यह नवां संस्करण १५ हजार का अभी छप रहा है। अिससे अिसकी लोक-प्रियता और अुपयोगिता स्पष्ट मालूम होती है। हिन्दीमें अैसी अुत्तम पुस्तक दूसरी नहीं है, यह कहा जाय तो अनुचित न होगा। प्रचारकी दृष्टिसे मूल्य भी बहुत कम रखा गया है। ५१५ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य सिर्फ १।।।), डाक खर्च ।।≈), हमारी चार निर्माणशाला, ५० विक्री केन्द्र, १५००० अेजेन्सियोंसे प्रत्यक्ष खरीदनेपर डाक खर्च नहीं लगेगा।

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लिमिटेड, कलकत्ता, पटना, झांसी, नागपुर।

—: अुद्यम :—

हिन्दी और मराठी भाषामें प्रकाशित होता है।

प्रतिमास १५ वीं तारीखको पढ़िये।

अुद्यममें निम्न विषयोंके लेख छपते हैं :—

लाभदायक अुद्योगधंधोंकी जानकारी, अनाज तथा सब्जीकी खेती व रोगोंका निवारण, पशुपालन, दुग्धव्यवसाय व ग्रामोद्योग संबंधी लेख, विद्यार्थियोंके लिये वैज्ञानिक व अन्य जानकारी, आरोग्य, घरेलू औषधियों संबंधी लेख, हिन्दुस्थानके वैज्ञानिक और औद्योगिक क्षेत्रकी अुपयोगी जानकारी, कृषि, औद्योगिक और व्यापारिक क्षेत्रमें काम करनेवाले लोगोंकी मुलाकात तथा परिचय।

अुद्यमके विशेष स्तंभ

महिलाओंके लिये अुपयुक्त, रुचिकर खाद्यपदार्थ बनानेकी विधि, घरेलू मितव्ययिता, अुद्यमका पत्रव्यवहार, खोजपूर्ण खबरें, आर्थिक तथा औद्योगिक परिवर्तन, जिज्ञासु जगत्, व्यापारिक हलचलोंकी मासिक समालोचना, नित्योपयोगी वस्तुअें स्वयं तैयार कीजिये।

वार्षिक चन्दा ७ रु. और प्रति अंक १२ आना

पता :— 'अुद्यम' मासिक, धर्मपेठ, नागपुर (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संक्षिप्त राष्ट्रभाषा कोश

(सम्पादक—महापंडित राहुल सांकृत्यायन)

शब्दसंख्या--२५०००

[मूल्य ५) डाक-व्यय अलग]

भाषाके अध्ययनमें कोशकी अपनी अेक अुपयोगिता है।

राष्ट्रभाषाके विद्यार्थियोंके लिअे राष्ट्रभाषाका अध्ययन सुगम बनानेकी दृष्टिसे ही अिस कोशका निर्माण किया गया है। राष्ट्रभाषाकी परिधिमें आनेवाले लगभग २५००० महत्वपूर्ण शब्दोंके अर्थ अिसमें दिये गये हैं।

अिस कोशकी अन्य विशेषताअें—

१. शब्दोंके अर्थके साथ प्रचलित मुहावरोंका समावेश भी किया गया है। २. हिन्दी, अुर्दू, संस्कृत, अरबी, फारसी तथा अन्य भाषाओंके प्रचलित शब्दोंके रूप भी अर्थ सहित दिये हैं। ३. विशेष शब्दोंके साथ अुनकी परिभाषाअें, अुनका अैतिहासिक खोजपूर्ण विवरण तथा संक्षिप्त रूपमें भेद-प्रभेद दिये गये हैं। ४. महीन टाअिप, सुन्दर छपाअी, आकर्षक गेट-अप तथा पक्की जिल्द।

राष्ट्रभाषा प्रेमियों, विद्यार्थियों, संस्था तथा सरकारी कार्यालयों आदिके लिअे यह कोश बहुत अुपयोगी अेवं संग्रहणीय है।

मिलनेका पता:—

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, पो०—हिन्दीनगर (वर्धा, मध्यप्रदेश)

फ्रेंच भाषा सीखिये !

'फ्रेंच स्वयं शिक्षक'

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धाका यह नवीनतम प्रकाशन है। अिसके लेखक हैं प्रख्यात गुरुकुल (युनिवर्सिटी) काँगड़ी हरद्वारके विद्वान स्नातक डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार डी. लिट. (पैरिस)।

राजधानी नयी दिल्लीमें भारत-स्थित फ्रांसके राजदूत श्री काअुन्ट आस्ट्रोरोग भारतके तरुणोंको शीघ्रातिशीघ्र फ्रेंच भाषा सीखनेकी सलाह देते हैं। फ्रेंच भाषा सारे यूरोपमें बहुत आमफहम और कूटनीतिज्ञ भाषा है। फ्रेंच भाषा बोलनेमें शान समझी जाती है।

बड़ी सरलतासे अिस पुस्तककी सहायतासे आप फ्रेंच भाषा सीख सकते हैं।

बढ़िया छपायी, साफ-सुथरी जिल्द, **कीमत ५ रुपया मात्र**

मिलनेका पता :--

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा [म. प्र.]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम आपसे कुछ कहना चाहते हैं!

'राष्ट्रभारती' का तीसरा वर्ष अिसी जनवरी '५३ से शुरू हो चुका है। तीसरे वर्षका यह छठा (जून) अंक आपके हाथमें है।

'राष्ट्रभारती' के जिन प्रेमी ग्राहकोंका वार्षिक चन्दा अिस अंकके साथ पूरा हो जाता है, अुनसे हमारा नम्र निवेदन है कि वे अपना अगले वर्षका चंदा ६ रु. मनीआर्डर द्वारा तुरन्त भेजनेकी कृपा करें। वार्षिक या छहमाही चंदा हर हालतमें मनीआर्डर द्वारा भेजना ही ठीक होगा। अिससे हमको और आपको सुविधा होगी। आपको अंक समयपर मिलेगा। वी.पी. और 'रजिस्ट्री' चार्जकी झंझटसे आप और हम दोनों बचेंगे। आशा है, आप हमारी अिस प्रार्थनापर जरूर ध्यान देंगे।

दूसरा निवेदन यह भी है कि कमसे-कम अपने किसी अेक-दो पडोसी मित्रोंसे भी ग्राहक अवश्य बना दें और अुनका सालाना चंदा मनीआर्डरसे भिजवा दें। यह 'राष्ट्रभारती' सबसे सस्ती, सुन्दर साहित्यिक सांस्कृतिक पत्रिका है, जो ठीक समयपर हर १ ली ता० को निकलती है।

मनीआर्डरसे वार्षिक चंदा ६ रु. और छहमाही चंदा ३ रु. ८ आ.

नमूना अंकके लिअे दस आना मात्र।

पता:– व्यवस्थापक—'राष्ट्रभारती', हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

अपने कृपालु लेखकोंसे निवेदन!

(१) 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ रचना आदि सामग्री स्वच्छ सुवाच्य नागरी लिखावटमें ही भेजना चाहिये। प्रकाशन योग्य सामग्री जो कुछ भी आप भेजें वह बहुत भारी और खूब लंबी चौड़ी नहीं होनी चाहिये, कृपया अिसका खयाल रखें। आपके हार्दिक सहयोगके लिये राष्ट्रभारती बहुत आभारी होगी।

(२) अच्छी तरह ध्यानमें रहे कि राष्ट्रभारतीमें प्रकाशनार्थ भेजी हुअी आपकी रचना अिसके पूर्व किसी हिन्दी पत्र-पत्रिकामें प्रकाशित न हुअी हो; और जो कुछ सामग्री भेजें वह 'राष्ट्रभारती' के लिये ही भेजें।

(३) अनुवादक महाशय किसी अनूदित रचनाको भेजनेसे पूर्व अुसके मूल-लेखकसे पत्रद्वारा अनुमति अवश्य प्राप्त कर लें।

(४) अपनी अस्वीकृत रचनाको वापस मंगानेके लिये डाक-टिकट अवश्य भेजें अथवा आप अुसकी प्रतिलिपि अपने पास सुरक्षित रखें।

(५) लेख, रचना आदि प्रकाशन योग्य सम्पादकीय सारा व्यवहार अिस पतेपर करें:—

संपादक : 'राष्ट्रभारती'

पोस्ट— हिन्दीनगर (वर्धा, मध्यप्रदेश)

प्रकाशक:— मोहनलाल भट्ट, मन्त्री–राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा।

मुद्रक— गुरुराम शर्मा, राष्ट्रभाषा प्रेस, वर्धा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

जुलाई १९५३

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची, जुलाओ १९५३

'राष्ट्रभारती' बिहार, राजस्थान, मध्यभारत, हैदराबाद और भोपाल राज्यके शिक्षा-विभागों द्वारा स्कूलों, कालेजों और वाचनालयोंके लिये स्वीकृत हो चुकी है।

[**सूचनाः**— 'राष्ट्रभारती' में, सर्वश्री डॉ. बाबूराम सक्सेना, आचार्य काका कालेलकर, महामहोपाध्याय दत्तो वामन पोतदार, स्वर्गीय किशोरीलाल मशरूवाला और अुत्तर-प्रदेशके वर्तमान राज्यपाल श्री क०मा०मुन्शीजी आदि विशेषज्ञोंकी अेक 'समिति' द्वारा १९३६ में निर्णीत नागरी लिपिका प्रयोग होता है: —अि, अी, अु, अू, अे, अै (इ,ई, उ, ऊ, ए और ऐ की जगह) और ञ, ण और क्ष (ञ, ण और क्ष अक्षरोंके लिये) —सं०]

विषय		लेखक	पृ० सं०
१. मैत्रेयीकी प्रार्थना (बंगला)	...	स्व. गुरुदेव कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ अनु०—श्री शंकरदेव विद्यालंकार	४८९
२. अुतरो भूपर हे नव जलधर (कविता)	...	श्री रामेश्वर दयाल दुबे	४९२
३. पंजाबका जातीय महाकाव्य 'हीर-राँझा'	...	श्री भदन्त आनन्द कौसल्यायन	४९३
४. जल बरसाओ (कविता)	...	श्री नर्मदाप्रसाद खरे	५०४
५. कवि-जीवनपर युग-प्रभाव : भक्त कवि	...	श्री डा. रामकुमार वर्मा	५०५
६. प्रधान सम्पादकसे भेंट (कहानी)	...	श्री मोहनसिंह सेंगर	५१०
७. आधुनिक गुजराती कवितापर अेक नजर	...	श्री गौरीशंकर जोशी	५१३
८. शाओन राते (बंगला कविता) सावनकी रातमे	...	श्री काजी नजरुल अिस्लाम अनु०—श्री मन्मथनाथ गुप्त	५२०
९. अिन्सानका बच्चा (कहानी)	...	श्री नन्दकुमार पाठक	५२१
१०. भारतेंदुसे 'अश्क' तक	...	श्री गोपालकृष्ण कौल श्री रामगोपाल सिंह चौहान	५२८
११. जादूगर (कविता)	...	श्री आसाराम वर्मा	५३७
१२. ओपिन अेयर थियेटर्स (खुले रंगमंच)	...	श्री कुसुमाकर दीक्षित	५३९
१३. चार हजार वर्ष पुराने चीनी लोक-गीत	...	श्री परदेशी	५४२
१४. म्याअूंकी मुसीबत (लघु निबंध)	...	श्री प्रभाकर माचवे	५४६
१५. भारतीय भाषाओंका वैज्ञानिक अनुसंधान	...	श्री प्रा. श्रीनिवास नारायण बनहट्टी	५४९
१६. कालके पथपर (तमिळ)	...	श्री "सोमु" अनु०—कु. लक्ष्मी कृष्णन	५५१ ५५३
१७. शेयर बाजार	...	श्री प्रा. कृष्णचंद्र गुप्त	५५७
१८. मजबूर (कहानी)	...	श्री वसु व्यास 'अनल'	५६०
१९. साहित्यालोचन	...	... ...	५६४
२०. सम्पादकीय	...	... ...	

वार्षिक मूल्य ६) : छह माहका ३॥) : अेक अंकका १० आना

पताः—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

* वर्ष ३ * वर्धा, जुलाअी १९५३ * अंक ७ *

मैत्रेयीकी प्रार्थना

: स्व० गुरुदेव कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ :

अुपनिषद् भारतवर्षके ब्रह्मज्ञानकी वनस्पति है। यह केवल सुंदर, श्यामल और छायादार वनस्पति नहीं, अपितु बृहत् और कठिन भी है। अिसमें केवल सिद्धिकी प्रचुरता ही पुष्पित और फलित नहीं हुअी, वरन् तपस्याकी कठोरता भी अुर्ध्वगामी बनी। अैसी अभ्रभेदी, सुदृढ़ अटलताके बीचमें, अेक मधुर फूल खिल रहा है। अुस फूलकी सुवास हमको आकुल-व्याकुल कर रही है। यह फूल है, मैत्रेयीका कहा हुआ, वह प्रार्थना मंत्र।

जिस समय महर्षि याज्ञवल्क्यने अपना घर छोड़ते हुअे अपनी दोनों पत्नियोंको अपना सर्वस्व दान करनेकी बात कही, तब मैत्रेयीने प्रश्न किया—"मुझे बताअिये, अिस सबसे क्या मैं अमर हो सकूँगी ?"

याज्ञवल्क्यने कहा—"नहीं, यह तो नहीं हो सकता! तथापि यह तो सत्य है कि तुम अेक साधन-संपत्तिवाले व्यक्तिकी तरह अपना जीवन व्यतीत कर सकोगी। जिस प्रकार सांसारिक लोग अपने घरबार, गाय-गोरू, अन्न-वस्त्र आदि द्वारा आनन्दपूर्वक अपने दिवस व्यतीत करते हैं,अुसी तरह तुम भी अपना जीवन चैनसे बिता सकोगी।"

तुरन्त ही मैत्रेयीने कहा—"**येनाहं नामृता स्याम, किमहं तेन कुर्याम**"—"जिसके द्वारा मैं अमर न हो सकूँ, अुसे लेकर मैं क्या करूँ ?" यह कोअी कठोर ज्ञानकी बात नहीं। नित्य और अनित्यकी विचार-धारा या ध्यान द्वारा अुसने विवेक-पुरःसर ये वचन नहीं कहे। अुसके मनमें कसौटीका अेक अद्भुत पत्थर था, जिसपर संसारके समस्त अुपकरणोंको घिसकर वह कह सकी—"मुझे जो चाहिये वह तो यह नहीं है।"

अुपनिषद्के सभी पुरुष ऋषियोंकी ज्ञानगंभीर वाणीके बीच स्त्री कंठका अेक यही वाक्य ध्वनित हो रहा है। और अभी तक अुसकी ध्वनि विलीन नहीं हुअी। अुसके मेघमन्द शांत स्वरमें अभी तक हम कोअी अपूर्व अश्रुपूर्ण माधुर्य अनुभव कर सकते हैं। अुपनिषद्में अनेक स्थलोंपर अनेक प्रकारसे मानवमें रहे पुरुषका हमने परिचय पाया। वहाँ अेकाअेक दूरके अेक कोनेसे हमको यह ज्ञात हुआ कि मानवमें जो नारी विद्यमान है, अुसका सौन्दर्य भी चहुँओर व्याप्त है।

हमारी आंतरिक प्रवृत्तिमें अेक नारी बसी हुअी है। हम अुसके समक्ष अपना संचय प्रस्तुत करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुसे धन लाकर हम देते हैं। ख्याति लाकर अुसे सौंपते हैं। और हमारे भीतर रहा हुआ समस्त पुरुष जीवन प्राणपर्यन्त श्रम करके न जाने कहाँ-कहाँसे, कितनी-कितनी वस्तुअें लाता है और अुस नारीसे कहता है— अिस सबसे तू अपना घर चला और सुख-पूर्वक रह ! हमारे भीतरकी तपस्विनी अभी तक स्पष्टतया यह नहीं कह सकती कि अिससे मेरा कुछ भी नहीं होगा। अुसके मनमें विचार आया करता है कि कदाचित् मैं जो चाहती हूँ वही यह है। अैसा होनेपर भी अुसका मन यह नहीं मानता कि वह सब कुछ पा गयी ! नारी पुनः विचार करती है— प्राप्त करनेका परिमाण कदाचित् बढ़ाना पड़ेगा ! अभी अधिक द्रव्य (धन) चाहिये ! ख्याति चाहिये ! विशेष शक्तिकी आवश्यकता पड़ेगी। परन्तु "अिस अधिक"का कभी अंत नहीं आता ! वास्तवमें अुसे अमृतकी आकांक्षा होती है ! और अेक दिन तो अुसे वह बात समझमें आ जानेवाली है कि ये सब अुपकरण अमृत नहीं हैं। किसी अेक दिन, किसी शुभ क्षणमें, समस्त जीवनके ढेरके ढेर संचयको झाड़-झूड़कर, साफ करके, कहना पड़ेगा-- "येनाहं नामृता स्याम किमहं तेन कुर्याम।"

परन्तु जब मैत्रेयीने यह कहा कि जिससे मैं अमर न हो सकूं, अुसका मुझे क्या काम, तब अुसका सच्चा अर्थ क्या समझना चाहिये ? अमर होनेका अभिप्राय अिस पार्थिव शरीरको अनन्तकाल तक टिकाये रखना, या मृत्युके पश्चात् किसी प्रकार, जन्मभर में या अवस्थातरमें टिके रहना, समझा जाय ? मैत्रेयीने शरीरकी अमरताकी कामना नहीं की थी। और आत्माकी अमरताके विषयमें भी अुसकी कोअी अुलटी धारणा नहीं थी, यह बात भी स्पष्ट है ! तब विचार यह अुठता है कि अुसने जिस अमरताकी कामना की थी, वह किस प्रकारकी है ?

अुसने बताया कि संसारमें हम लोग अेकसे दूसरेमें स्थानान्तरित हो रहे हैं, हम कहींपर स्थिर नहीं रह सकते ! हमारे मनके विषय डिग जाते हैं, मन भी डिग जाता है, जिसके आश्रयपर हमारा चित्त टिका है, जब हम अुसका त्याग करते हैं, तो हमारी मृत्यु हो जाती है। अिस प्रकार अेक मृत्युसे हम क्रमशः दूसरी मृत्युमें जारहे हैं, और अिस परम्पराका कोअी अंत नहीं जानता।

यह सब कुछ होते हुअे भी हमारा मन कोअी अैसी वस्तु प्राप्त करना चाहता है, जहाँ जाकर फिर वह खिसकना नहीं चाहता। जिसे पाकर वह बता सके कि बस, अब मुझे किसी वस्तुकी कामना नहीं। अुस वस्तुके प्राप्त हो जानेपर फिर खींचतान नहीं रहती। अैसा ज्ञान होनेपर ही मृत्युके हाथसे बचा जा सकता है। अैसा कौनसा मानव या अुपकरण है, जिसके पालनेपर हम कह सकें, कि बस, अब मुझे अपने चिर-जीवनका पाथेय मिल गया, अब कुछ भी नहीं चाहिये !!

अिसी कारण अपने स्वामी द्वारा त्यागी हुअी समस्त संपदाको ठोकर मारकर मैत्रेयीने कहा--"यह सब कुछ लेकर मैं क्या करूँ ? मुझे तो अमृत चाहिये !"

अच्छा, अुपकरणमें तो अमृत है नहीं ! तो फिर अमृत है किसमें ? अुसका हमें पता है ! अैसा नहीं कि अिस पृथ्वीपर अुसका स्वाद हम सर्वथा नहीं प्राप्त करते। यदि वह स्वाद प्राप्त न हुआ होता तो अुसके लिअे अितनी रेलपेल न होती ! संसारके प्रत्येक विषयमें, हम लोग केवल अुसे ही खोज रहे हैं, क्योंकि क्षण-क्षणमें वह हमारा स्पर्श कर जाता है !

मृत्युके बीचमें अमृतका यह स्पर्श हमें कहाँ होता है ? जहाँ हमारा प्रेम होता है वहाँ ? अिस प्रेममें हमको अनंतका आस्वाद मिलता है ! सीमाके बीचमें असीमका वातावरण खड़ा करके, वह पुरातनको नवीन बनाता है और मृत्युको किसी प्रकार स्वीकार नहीं करता ! अिस संसारके कुछ विषयोंमें प्रेमका आभास मिलते ही हम लोग मृत्युसे परे जो परम पदार्थ है, अुसका परिचय प्राप्त करते हैं। अुसका स्वरूप प्रेम-स्वरूप है, अुसे समझ सकते हैं। जब हमारी अंतरात्मामें अुस प्रेमको ही परिपूर्ण रूपमें प्राप्त करनेकी सच्ची आतुरता जागती है, तब सब अुपकरणोंको सरलतासे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फेंक, हम कह सकते हैं--"येनोहं नामृता स्याम किमहं तेन कुर्याम !"

जब यह वाणी अेक रमणीके मुखसे निकली है, अिसलिअे कितनी स्पष्ट, कितनी साफ और कितनी मधुर बन गयी है। सभी विचारों और सभी युक्तियोंको छोड़कर, कितने सहज भावसे अुसकी यह ध्वनि निकलती है।

"अरे, मुझे घर-बार नहीं चाहिये, मुझे धनमाल नहीं चाहिये, मुझे तो प्रेम चाहिये"--कैसा आतुर क्रन्दन है।

मैत्रेयीका यह क्रंदन जिस प्रकार प्रार्थना रूपमें परिणत हो गया, वैसी आश्चर्यपरिपूर्ण प्रार्थना अिस संसारमें क्या कहीं सुनायी दी ? समस्त मानव हृदयकी यह अेक प्रार्थना, जो अिस रमणीके व्याकुल कंठ द्वारा चिरंतन कालके लिअे वाणीके रूपमें प्रकट हुअी है।

हममेंसे प्रत्येककी यही प्रार्थना है और विश्व-मानवके विराट अितिहासमें युग-युगमें यही अुच्चरित होती रही है।

'येनाहं नामृता स्याम, किमहं तेन कुर्याम"--अिस प्रकार वेगपूर्वक बोलकर ब्रह्मवादिनी नारी शीघ्र ही हाथ जोड़कर जिस प्रकार खड़ी हो गयी और अश्रुओंसे भीगा हुआ अपना मुख आकाशकी ओर अुठाकर बोली—

असतोमा सद्गमय,
तमसोमा ज्योतिर्गमय,
मृत्योर्मा अमृतंगमय।
आति रावीर्मे अेधि रुद्र,
यत्ते दक्षिणं मुखं तेन मां—
याहि नित्यम् ।।

अुपनिषद्में पुरुषोंके कंठसे हम अनेक गंभीर अुपलब्धियोंकी बातें प्राप्त करते हैं, परन्तु अैसी गंभीर प्रार्थना तो अुस नारीके कंठसे ही प्राप्त हुअी। हम वास्तवमें क्या चाहते हैं और क्या नहीं चाहते, अुसकी अेकाग्र अनुभूति अेक प्रेमातुर रमणी-हृदयमें अन्यत्र सहज-भावसे प्रकट हुअी।

हे सत्य, समस्त असत्योंमेंसे मुझे अपनेमें अुत्तीर्ण करो, नहीं तो मेरा प्रेम अुपवासी रहेगा। हे ज्योतिर्मय, प्रगाढ़ अन्धकारमेंसे मुझे अपने अन्दर ले जाओ, नहीं तो मेरा प्रेम कारावासमें रुंध जायगा। हे अमृत, निरन्तर मृत्यसे मुझे तुम अपनेमें लेलो, नहीं तो मेरा प्रेम समीप आयी रात्रिके पथिककी तरह आश्रय-विहीन होकर चारों ओर भटकता रहेगा। हे प्रकाश, तुम मेरे समीप प्रकट हो तभी मेरा समस्त प्रेम सार्थक हो सकता है। "आवि रावीर्म अेधि"--हे प्रकाश, तुम तो चिर प्रकाश हो, परन्तु अेक बार तुम मेरे बन जाओ, मेरे बनकर तुम प्रकाशित बनो, मुझमें तुम्हारा प्रकाश पूर्ण हो ! हे रुद्र, हे भयानक, तुम पापरूपी अन्धकारमें, विरह-भावमें, दुःसह रुद्र हो ! "यत्ते दक्षिणं मुखं"—जो तुम्हारा प्रसन्न सुन्दर मुख है, जो प्रेमका मुख है, अुसे मुझे दिखलाओ ! "तेन मां याहि नित्यम्"—अपने अुस मुखसे, अुसके दर्शनसे मेरी रक्षा करो ! मुझे बचाओ ! तुम्हारे प्रेमके प्रकाशमें, तुम्हारी प्रसन्नतामें ही मेरा अनन्तकाल तक परित्राण है।

हे तपस्विनी मैत्रेयी, संसारके अुपकरणोंसे पीड़ा पाते हुअे हृदयमें, अपने पवित्र चरण स्थापित करके आज पधारो, अपनी वह अमृतकी प्रार्थना, अपने मृत्यु-विहिन कंठसे, मेरे हृदयमें अुच्चरित करो ! सदाके लिअे रक्षण किस प्रकार प्राप्त हो सकता है, अुसके विषयमें मेरे मनमें लेशमात्र भी सन्देह न रहे !!

[बंगलासे अनुवादक—श्री शंकरदेव विद्यालंकार]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुतरो भूपर हे नव जलधर !

: श्री रामेश्वर दयाल दुबे :

अुतरो भूपर, हे नव जलधर !
ताप-तप्त अिस व्यथित धरापर, करुणा कर रख दो शीतल कर ॥

आज युगोंके बाद क्षितिजपर,
नये मेघ तुम आये ।
प्राण-प्राणकी आर्त तृषा पर,
करुणा-पन बन छाये ।
बदली बनकर जब आये हो, बदलो अवनी, बदलो अम्बर ॥

सूखा कंठ हृदय भी रूखा,
निरस भावकी भाषा ।
नभ निरभ्रने निपट निराशा-
में बदली प्रति आशा ।
रिमझिमके सरगमपर गाओ, अवरोहमका कोअी मृदु स्वर ॥

देर नहीं, अुर्वरा धराका,
अंचल होगा धानी ।
कल-कल जल, अविरल गायेगा,
तेरी तुयष कहानी ।
सिहर अुठेंगे स्वासोंके स्वर, पुलक अुठेंगे प्राण पुलक भर ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंजाबका जातीय महाकाव्य 'हीर-राँझा'

: भदन्त आनन्द कौसल्यायन :

जिन महान ग्रंथोंको अपने प्रचारके लिअे न किसी समालोचनाकी आवश्यकता है और न किसी विज्ञापनकी, अुन तुलसीकृत रामायण सदृश ग्रंथोंमें मैं वारित्शाहके "हीर-राँझे" की गिनती करता हूँ।

हम सामान्यतया किसी अैसे काव्यको ही जातीय अथवा राष्ट्रीय विशेषणसे विभूषित करनेके अभ्यस्त हैं जिनमें हथकड़ियाँ हों, बेड़ियाँ हों, जेलखाना हो, फाँसी हो, शहादत हो, और अिन्कलाब ज़िन्दाबाद हो। 'हीर-राँझा' अिस संकुचित अर्थमें जातीय महाकाव्य नहीं है। अुसमें पंजाबका यथार्थ चित्रण है, पंजाबी भावनाओंका अभूतपूर्व व्यक्तीकरण है, प्रत्येक पंजाबी काव्य-प्रेमीके ही नहीं; प्रत्येक पंजाबी समझनेवालेके अन्तस्तलको भी छूनेकी अद्भुत सामर्थ्य है। मैंने 'हीर-रांझे'को पढ़ते समय हिन्दू-मुसलमानोंकी आँखोंको समान रूपसे सजल होते देखा है। अिसीसे 'हीर-राँझा' पंजाबका जातीय महाकाव्य है।

साहित्यिक समालोचनाके माप-दण्डके हिसाबसे 'महाकाव्य' की अेक विशेष परिभाषा स्वीकृत है। अुसमें अितने सर्ग हों, अितने परिच्छेद हों, आदि। काव्य वह भूमि नहीं है जिसे फुटों और गजोंसे नापा जा सके। काव्यकी जान अुसका रस है, अुसकी अुठान है, अुसकी अुड़ान है। 'हीर-राँझा' असाधारण तौरपर अिन्हीं अलंकारोंसे अलंकृत होनेके कारण महाकाव्य है। अिसकी रचना अबसे लगभग १९० बरस पूर्व – १८२० विक्रमी संवतकी है।

हीर-रांझाका मंगलाचरण, काव्यारम्भ आदि काव्य-परम्पराके अनुसार है। वारित्शाहको अपनी प्रतिभापर विश्वास है। तभी तो वह आरम्भमें ही कहता है—

"बागमें बुलबुल बनकर चहकना चाहिये। रहस्यपूर्ण बात बोलनी चाहिये। मुंडेरपर बैठकर काँव-काँव करनेवाले कौओंकी तरह व्यर्थ मगज नहीं खाना चाहिये। सफेद कागजोंको काला करके काव्यको यूं ही बदनाम नहीं करना चाहिये।"१

किस्सा अथवा कथानक तख्त हजारेका है। चिनाबके अन्दर किसी नगरका। अुस नगरके संबन्धमें कविका कथन है—

"हजारेकी क्या प्रशंसा करूँ। स्वर्ग ही जमीनपर अुतर आया है।"२

अुसी नगरमें मौजू चौधरीका परिवार रहता है। आठ बेटे हैं, दो बेटियाँ। आठोंमें अेक रांझा है—पिताका बहुत ही प्यारा पुत्र।

आठों भाअियोंमें परस्पर प्रेम नहीं। बहुत खींचातानी है। अुसका वर्णन करते हुअे कवि कहता है—

"वे माथेपर त्योरियाँ डालकर बात करते थे, और जो भी बात करते वह सीधी बात न होकर लड़ाअी-झगड़ेकी ही बात होती। सगे सम्बन्धी सभीकी अपेक्षा आदमीको अपना स्वार्थ बड़ा ही प्यारा है।"३

---

१. बुलबुल होके चहकिये बाग अन्दर
सुरवन रम्ज़ दे नाल अलाअिये जी
कावाँ वाँग अडार बनेरियाँ दी
अेवें कूड़ न मग्ज़ खपाअिये जी
करके कालयाँ बग्गयाँ कागज़ानूं
अेवें शेर नूं लीक न लाअिये जी।

२. वारिसकी हज़ारे दी सिफ्त आखाँ
गोया बहिशत जमीन ते अयाअी।

३. पा त्योरियाँ मत्थे ते गल्ल करदे,
बोलन बोल अवलदे जंग देनी
वारित्शाह अे गरज़ हैं बहोत प्यारी
हीर साक न सैन न अंग देनी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बापका देहान्त हो जाता है। भाअी और भी "परमस्वतन्त्र" हो जाते हैं। वे जमीनका बँटवारा करते समय काजीको रिश्वत देकर अच्छी-अच्छी जमीन खुद ले लेते हैं और रांझेको मिलती है बन्जर जमीन।

भाअी और भाभियाँ दोनों मिलकर रांझेको तरह-तरहके ताने मारते हैं। किंतु राँझेको विशेष शिकायत अपनी भाभियोंसे ही है। रांझा कहता है—

"मुझे तुमने सगे भाअियोंसे पृथक् कर दिया। मेरे कलेजेमें काँटा चुभो दिया। हम जिगर और जानकी तरह अिकठ्ठे थे। तुमने हमें पृथक-पृथककर दिया।"१

भाभियोंको राँझेसे और भी अधिक शिकायत है। वे कहती हैं--

"अेक हमीं हैं, जिन्हें तू कलंक लगा रहा है। और हमारी सभी सहेलियाँ सुखसे दिन गुजार रही हैं। यदि तू घरसे निकले तो भूखा मर जाय और तेरी सारी ख़र-मस्तियाँ भूल जाअें।" २

राँझा और भाभियोंकी बातचीतने कअी पृष्ठ ले लिये हैं। सारी बात-चीतकी चाशनी अैसी रंगीन है कि कुछ न पूछो !

अंतमें भाभियोंसे तंग आकर राँझा तख्त-हजारेसे चल देता है। अुसके प्रस्थानकी चर्चा करता हुआ 'कवि' कहता है :—

"जिस प्रकार आत्मा शरीरको छोड़कर चल देता है, अुसी प्रकार यह दरवेश चल दिया। अुसने हज़ारेका अन्न-पानी ग्रहण न करनेकी कसम खायी और झंग-स्याल जानेका निश्चय किया। राँझेको रिज़कने अुदास कर दिया। अुसका जीव चलो-चलो ही पुकारने लगा। राँझा बगलमें बाँसुरी लेकर देश तथा वतनको भूलकर चल दिया।" ३

राँझेके भाअियोंको खबर लगी कि राँझा वतन छोड़ चला जा रहा है। भाअियोंने ही नहीं, भाभियोंने भी राँझेको रोक रखनेका बहुत आग्रह किया। अुसने अेक न मानी। हज़ारेसे निकल ही पड़ा। रातको अेक मसजिदमें विश्राम किया, तो सभी तरहके लोग अिकठ्ठे हो गये। कवि अुनके बारेमें कहता है—

"गाँवमें कोअी भी स्त्री-मर्द नहीं रहा, सभी मसजिदके गिर्द आ अिकठ्ठे हुअे। सबसे आखिरमें झगड़ोंकी गठड़ी अर्थात् मसजिदका मुल्ला था, वह भी वहाँ आ पहुंचा।" ४

अिसके आगे मसजिदका वर्णन है। अरबी-फारसी की पुस्तकोंकी नामावली है। पढ़ाअीके सामानका वर्णन है।

यहाँ मुल्ला और राँझेकी बातचीत बड़ी ही शानदार है। अेक किताबके दीनका पक्षपाती है और दूसरा अिश्कके मजहबका। मुल्लाओंकी चर्चा करते हुअे कवि कह ही तो देता है—

"ये मुल्ला नहीं हैं, यह तो खुदाके खानोंको लगी हुअी बलायें हैं।" ५

---

१. सक्यां भाअियां नालों बिछोड़ मैं नूं
कण्डा बिचॅ क्लेजे दे पोडया जे
भाअी जिगर ते जानसां असीं कठ्ठे
वक्खो वक्ख ही चा विछोड़या जे

२. अिकतूं कलंक है असां लग्गा।
होर सब्य सुखालियां वसदियांनीं
घरों निकलें ते पेया मरें भुखा
सभे भुल जाण खर मस्तियांनीं

३. रूह छड कलबूत जूं विदा हुंदा
तिवें अेह दरवेश सिधारयाअी
अन्न-पानी हजारे दा कस्म करके
कसद झंग स्यालां दा धारयाअी
कीता रिजकने आन अुदास रांझा
चलो चल अेह जीव पुकारदाअी
कच्छे वञ्झली मारके रवां होया
वारिस देस ते वतन विसारदाअी।

४. रन्त मर्द न पिण्ड दे बिंच रेहा कोअी,
सब गिर्द मसीद दे आया अी
वारित्शाह मियाँ पिंड झगडयां दीं,
पिच्छो मुल्लाँ मसीददा आया अी।

५. वारित्शाह खुदा दे खानयां तूं,
अेह मुल्लाँ न चिम्मड़े हैंन बलायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राँझा मसजिद छोड़ देता है । प्रातःकालका समय है । वर्णन पढ़ते समय अैसा लगता है कि घड़ीमें सुबहके चार-पाँच बज रहे होंगे ।

राँझा चलकर नदीके तटपर पहुंचता है--चिनाब नदीके । वह चाहता है कि मल्लाह अुसे नदीके पार अुतार दें । मल्लाह अिनकार करते हैं । राँझा बैठकर बाँसुरी बजाने लग जाता है । गांव भरके लोग अिकठ्ठे हो जाते हैं । राँझाको देख और अुसकी बाँसुरीको सुनकरके मनमें खटका होता है कि कहीं राँझा अुनकी औरतोंको ही न भगा ले जाय ।

राँझा तैरकर नदी पार करना चाहता है । लोग अुसे जबरदस्ती नौकापर चढ़ा देते हैं । वहाँ 'हीर' का पलंग बिछा है । राँझा अुसीपर जा बैठता है और पलंगके बारेमें प्रश्न करता है । लोग कहते हैं—यह हुस्नकी देवीका पलंग है ।

लोग राँझासे घर छोड़ आनेका कारण पूछकर जान लेते हैं ।

'हीर' का आगमन होता है । कविने 'हीर' के सौन्दर्यके वर्णनमें कलम तोड़ दी है । 'हीर' आते ही मल्लाहोंसे पूछती हैं कि हमारे पलंगको किसने खराब किया । मल्लाह कहते हैं कि यह हमारा मेहमान नहीं है और तू भी हुस्नका अितना गुमान न कर । राँझा मुंहसे कपड़ा अुतारता है । हीर देखते ही अुसपर कुर्बान हो जाती है । कहती है--

"अच्छा हुआ कि मेरा हाथ तुझपर नहीं अुठ गया, क्योंकि मेरे पलंगपर आकर तेरा सोना मेरी शानके खिलाफ नहीं हुआ । जब चार आँखोंकी घमासान लड़ाअी हुअी, तो फिर वारित्शाह कहता है कि दम मारनेको भी जगह नहीं मिली ।" १

'हीर' तथा 'रांझा' का कौल-करार । 'हीर' राँझेको अपने पिताके पास ले जाती है । और राँझेका परिचय देती है । 'हीर' के कहनेसे पिता 'राँझेको' भैंसोंकी देखभाल करनेके लिअे नौकर रख लेता है । अपनी माँसे 'हीर' कहती है—"मैंने मधुर-वाणीसे राँझेको फँसा लिया और हमें अपने डँगर चरानेके लिअे अेक योग्य चरवाहा मिल गया है ।"२

राँझा डँगर चराने जाता है । रास्तेमें अुसकी पाँच पीरोंसे मुलाकात होती है । राँझा अुनसे अेक ही वरदान माँगता है—अुसे 'हीर' मिल जाय । पाँच-पीर राँझेसे 'तथास्तु' कहते हैं ।

रांझा 'हीर' के डँगर चराने जाता है । कविका 'हीर' के डँगरोंका वर्णन काव्यकी वर्णनात्मक शैलीका अेक श्रेष्ठ नमूना है ।

'हीर' चरागाहमें ही राँझेके पास जाती है । वहाँ बातचीतमें राँझा कह अुठता है कि "स्त्री जैसा कोअी मक्कार नहीं ।" हीर अुत्तर देती है—"जितने वली गौस हुअे हैं, वे सब स्त्रियोंसे ही पैदा हुअे हैं । अिसलिअे स्त्रियोंकी निन्दा न कर ।" दोनोंके कौल-करार होते हैं । 'हीर' अपना प्रेम निवेदन करती है—

"मैं अल्ला और नबीको गवाह बनाकर तुझे अपना वचन देती हूँ कि जब तक मेरी जानमें जान है तबतक यदि तू चाहे तो मुझे बाजारमें खड़ी करके बेच ले सकता है ।" २

भाअियोंको राँझाके झग-स्यालमें होनेकी खबर मिलती है । वे 'हीर' के पिताको राँझाको लौटा देनेके लिअे लिखते हैं । चोचक अुत्तर देता है—

"भाअी अपनी भाभियोंके पास जन्म-जन्मांतर तक जाय । हमने अुसे रोककर नहीं रखा । हमारे साथ वह प्रसन्नतापूर्वक रहता है । हम अुसे अेक घड़ीके

---

१. भला होया तैनूं न मार बैठी,
कोअी नहीं सी गैल बेशान होअी ।
वारित्शाह न था दम मारने दी,
चार चशम दी जदों घमसान होअी ।

२. अल्ला सच्च ते नबी बरहकमियाँ
मैं तो आपना देयाँ अिकरार तैं नूँ ।
तेरी बन्दी हैं जिच्चर हैं जान मेरी,
खडी बेच लै हट बाजार मैं नूँ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिअे भी पृथक नहीं करते। हमने हजारेके बागमेंसे अेक गुलाबका फूल तोड़ा है।" १

भाभियोंने 'हीर'को भी खत लिखा। 'हीर' ने रांझेसे चर्चा की। रांझेका अिनकार अिनकार ही था। 'हीर' और' रांझे' की भाभियोंका पत्रोत्तर गृहस्थ-जीवन-की अनुपम तस्वीर है।

'हीर' 'रांझे' के प्रेममें गहरी अुतरती चली जाती है। दोंनोंका प्रेम सार्वजनिक चर्चाका विषय बनने लगता है। माँ 'हीर'को समझाती है।

'हीर'का लंगड़ा चाचा फकीरका भेस बना रांझेसे अुस चूरी (घी, शक्कर और रोटीका मलीदा) में से जो 'हीर' अुसे ले जाकर खिलाती थी, कुछ माँग लाता है। यह 'चूरी' दोनोंके प्रेमका सर्टिफिकट थी।

'हीर' अपनी सखियोंकी सहायतासे अपने लँगड़े चाचेको बुरी तरह पीटती है। कीदो आकर चोचकसे शिकायत करता है। चोचक विश्वास नहीं करता। अपने विश्वासको व्यक्त करता हुआ कवि अनायास अपने युगके मिथ्या-विश्वासोंको कह जाता है। कविका कथन है—

"भंगीका लड़का कभी सैयद नहीं हो सकता, बकरियोंके बेटे कभी घोड़े नहीं बनते। जाटों, मोचियों और तेलियोंके लड़के कभी फकीर नहीं बनते" २

कीदो 'हीर'के पिताका विश्वास न करते देख, 'हीर'की माँसे शिकायत करता है। माँ 'हीर'को झिड़कती है और 'हीर'के पितासे शिकायत करती है। रांझा चोचकका घर छोड़ चल देता है। चलते समय कहता है कि "खत्रीका खाता खत्रीके घर रहा और हिसाब-किताब यूं ही पहाड़ हो गया। तुम्हारी लड़की तुम्हारे घर रही और यूं ही बात बढ़ गयी।"३ पंजाबमें लेन-देनका कारोबार करनेवाले खत्रियोंपर क्या तीखा व्यंग्य है!

राँझा बारह बरस तक 'हीर'की भैंसे चराता रहा और असर चल देनेपर भैंसोंने खाना-पीना छोड़ दिया। लोगोंमें भी चर्चा थी कि बिना कुछ लिये दिये बारह वर्ष तक मुफ्तमें काम लिया।

'हीर'के पिताने 'हीर' की माँसे कहा—"किसी-न-किसी तरह रांझेको फिर फँसा लिया जाय। संसारका काम अैसे ही चलता है। हम भी कोअी मकरफरेब बना लें। रांझा हमारी लड़कीका कुछ बिगाड़ता तो है ही नहीं। हम अुससे सब सेवा-टहल करवा लें।' ४

हीरकी माँ राँझेको समझाती है कि "चोचकके साथ जो बोल-चाल हो गया अुसका वह मनमें ख्याल न करे। माँ-बाप तथा पुत्रोंमें कभी कहीं लड़ाअी होती है? तुम कमानेवाले और हम खानेवाले।" ५

'तुम कमानेवाले और हम खानेवाले' शब्दोंके पंजाबी रूपमें क्या ग़जबकी मिठास है!

---

१. जाय भाअी भाबियाँ पास जम-जम,
किसे हरकाया ते नहीं होअियाअी।
सादे नाल रहे दिन रात हसदा,
अिक घडी न असीं बिछोडयाअी।
वारित्शाह हजारे दे बाग विच्चों,
असाँ फुल्ल गुलाबता तोड़याअी।

२. नहीं चूहडे दा पुत्त होवे सैयद,
घोडे होण नहीं पुत्त लेलयाँ दे।
वारित्शाह फ़कीरन होण हरगिज़,
पुत्र जहाँ ते मोचियाँ तेलियाँ दे।

३. बही खत्री दी रही खत्री ते,
लेखा गया है हो पहाड़ मियाँ।
तेरी धी रही तेरे घर बैठी,
झगड़ा मुफ्तदा ले याअी झाड़ मियाँ।

४. अेस जग मक्कार दा कँम अेहो,
कोअी मकर-फरेब बना लअिये।
साड़ी धी दा कुझ न लाह लैंदा,
सब टहल-टकोर करा लअिये॥

५. मिलकी आखदी लड़योंजे नाल चोचक,
कोअी सुखन न जीव ते लावनाअीं।
केहा माप्याँ पुत्राँ लड़न हुँदा,
तुसाँ खहना ते असाँ खावनाअीं॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राँझेने 'मिलकी' का कहना मान घरमें रहना स्वीकार किया।

अुसी अवसरपर राँझेने पाँचों पीरोंका ध्यान किया, जिन्होंने राँझेको अिश्कमें साबित-कदम रहनेके लिअे कहा।

अिश्कका और अक्लका, गोपियोंके प्रेमका और अूधोके अुपदेशका सदासे वैर चला आया है।

हीर-राँझेके अुपाख्यानमें भी काजी बारबार शरीयतकी दुहाअी देता हुआ वहाँ अुपस्थित होता है। काजीकी नसीहतके जवाबमें 'हीर' को कहना पड़ता है—

"आम्र-रसका दाग़ नहीं जाता, अुसी प्रकार अिश्कका दाग भी नहीं जाता।"१

हीर-राँझेके स्नेह-सूत्रोंके मजबूत बनते जानेसे माता पिताकी चिन्ता बढ़ती जाती है। पिता तो अफसोसके मारे सोचने लगता है कि पैदा होते ही 'हीर' को विष क्यों न दे दिया?

काजी शमशुद्दीन जब हीरको बारबार नसीहत करनेसे बाज नहीं आता, तो 'हीर' साफ-साफ कहती है—

यदि दुनियाँकी खुशी चाहते हो तो राँझेसे 'हीर' की शादी कर दो। हमने अिश्कके मुआमले अुठा लिये हैं। परमात्मा चाहेगा तो हम अन्त तक अिन्हें निभायेंगे। बातें करनी तो बहुत आसान है, लेकिन अिश्कके रास्तेपर चलना बहुत कठिन है। वारित्शाह प्रार्थना करता है कि परमात्मा आदमीको अुसी प्रकारका जौक तथा शौक दे जैसी 'हीर' की राँझेके प्रति।" २

---

१. दाग़ अँब दी रसा लहे नहीं,
दाग अिश्कदा भी नहीं जा मियाँ
२. जेकर खुशी जहान दी चाँहदे हो,
देहो राँझे तूं हीर ब्याह मियाँ
अैसा अिश्क दे मुआमले चुंक लये,
रँब चाहे ते तोड़ निया मियाँ
गल्लाँ करनियाँ बहुत सुखालियाँ नी,
औखा अिश्क दे चलना राह मियाँ
वारित्शाह रँब जौक ते शौक देवे,
जेही 'हीर' नूँ चाकदी चाह मियाँ।

वारित्शाहकी यह विशेषता है कि वह प्रायः हर सुखनके अन्तमें अपनी बात अपने ढँगपर कह देता है।

जब 'हीर' के भाअी, माता-पिता और काजी सभी 'हीर' को धमकियाँ देने लगे, तो 'हीर' ने राँझेके पास सन्देश भेजा कि वह अुनके कष्टोंको दूर करनेके लिअे कोअी दुआ करे। राँझेने पाँचों पीरोंको याद किया।

वारित्शाहने पाँचों पीरोंके दरबारमें राँझेके गानका जो विस्तृत वर्णन किया है, वैसा कोअी अूँचे दर्जेका संगीत-शास्त्रज्ञ ही कर सकता है।

पाँचों पीरोंने राँझेपर खुश होकर दुआ दी कि 'हीर' अुसीकी होकर रहेगी।

राँझेने मिट्ठी नाअिनसे अिश्कके प्रकारों और अुनमें कौन-सा श्रेष्ठ है प्रश्न किया। जब मिट्ठी नाअिनके विस्तृत विवरणसे अुसे अुसकी योग्यताके सम्बन्धमें पूरा विश्वास हो गया तो अुसने 'हीर' को सलाह दी कि वह मिट्ठी नाअिनको अपनी दूती बना ले। 'हीर' ने मिट्ठी नाअिनको पाँच मोहरें दीं और कहा—

"लड़कियोंके सामने किसी भी तरह अिस भेदको प्रकट न होने देना। अुसे अपने जीभमें ही छिपाकर रखना। वारित्शाहका कहना है कि अपना ही गुड़ खाओ, तो भी अुसे भी दुनियासे छिपाकर ही खाना चाहिये।"

और 'मायाके प्रभाव' के बारेमें कविका कहना है—

"मिट्ठीने जब माया देखी तो अुसे संकोच हुआ, किन्तु अुसे बहुत खुशी भी हुअी। माया बुरोंकी बुराअी को छिपा लेती है, और माया सभी जगह लाज ढक लेती है।"

अब 'हीर' और 'राँझा' नाअियोंके घर खूब मिलने-जुलने लगे। चिनाब 'नदी' पर पहुँच यथा अवसर अेकसाथ तैरने भी लग गये।

'हीर' का लंगड़ा चाचा 'हीर' के पीछे पड़ा था। अुसने शिकायत की। 'हीर' की सखियोंको जब कीदोकी अनेक करतूतोंका पता लगा तो अुन्होंने 'कीदो' को पीटनेकी सलाह की। जनाब 'कीदो' बुरी तरह पिटे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब 'कीदो' ने चोचकसे शिकायत की, तो 'हीर' के बापने अुल्टे अुसे ही धमकाया और कहा कि व्यर्थ झगड़े लगाता फिरता है ।

'कीदो' पीछे पड़ा ही रहा । अुसने पंचोंसे शिकायत की । पंचोंने 'हीर' की सहेलियोंसे पूछ-ताछ की । सभीने 'कीदो' को ही बुरी तरह दोषी ठहराया । 'कीदो' पंचोंके सामने रोता-गाता रहा । अन्तमें पंचोंने कीदोको यह कहकर तसल्ली दी कि जिस ओरसे तेरी झोंपड़ीको अिन्होंने जला दिया है, अुसे हम फिर बनवा देंगे । तुझे पोस्त तथा अफीम भी मँगवा देंगे और भी जो कुछ अिन्होंने तेरा नुकसान किया होगा ।"१

'कीदो' ने पंचोंको आश्वासन दिया कि अेक-न-अेक दिन वह अुन्हें सब कुछ आँखसे दिखा देगा । अेक दिन अुसका मौका लग ही गया । हीर तथा राँझा दोनों चिनाबके तटपर साथ लेटे थे, कीदोने जाकर हीरके पिताको सूचना दे दी । चोचकने देखा तो 'हीर' को जानसे मार डालनेकी धमकी दी । 'हीर' ने क्षमा-प्रार्थना करते हुअे पितासे निवेदन किया—

"चुप करें, कहीं, की हुअी बात जहाँमें फैल न जाय ।"२

चोचकने पंचोंसे 'हीर' की शादीके सम्बन्धमें विचार किया । अेक भी पंच अिस पक्षमें न था कि 'हीर' और 'राँझे' का विवाह कर दिया जाय ।

तब घरवालोंने 'हीर' की अन्यत्र शादी करनेकी तैयारी की । 'हीर' ने माँको बहुत बुरा-भला कहा । 'हीर' की सहेलियोंने पहले तो राँझेके साथ सहानुभूति व्यक्त की, बादमें 'हीर' को खूब आड़े हाथों लिया । 'हीर'ने राँझेकी शिकायत की । मैंने अुसे बहुत समझाया कि मुझे लेकर भाग चल । मैं क्या करूँ, वह मूर्ख समझता नहीं ।

सखियाँ राँझेको छिपाकर ले आयीं । 'राँझे' और 'हीर' की बातचीत ।

अुधर जोर-शोरसे शादीकी तैयारियाँ होने लगीं । मिठाअियाँ, गहनों तथा कपड़ोंका वर्णन वारित्शाहके बहुश्रुत होनेकी अद्भुत गॅरंटी है । जब बरात आयी, तब राँझा बुरी तरह चिन्तित हो अुठा । कहता है—

"आज राँझे 'प्रेमी' को कौन पूछता है ! आज तो 'हीर' बेगम हो चली है और 'खेड़ा' नवाब हो चला है । अिस जिन्दगीसे तो मौत अच्छी । बिना यारके जीना मुसीबत हो गयी है । दुनिया कहती है कि चोचकने बड़ा भारी जुल्म किया । वह अपना कौल हारा और अीमान खराब किया । राँझा 'हीर' के लिअे ही भैंसे चराता था, यह बात सारे पंजाबमें फैल गयी थी ।"३

शादीकी तैयारी हो चुकी है । काजी निकाह करानेके लिअे आता है । 'हीर' और 'काजी' की बातचीतमें वारित्शाहको अेक बार फिर 'अुघोके अुपदेश' को पूरी फटकार सुनानेका अवसर मिलता है । काजियोंके बारेमें 'हीर' के कठोरतम शब्द वारित्शाहकी अपनी सम्मति मालूम होती है । 'हीर' कहती है—

"जब सारी दुनियाँमें शोक मनाया जाता है, तब अिन काजियोंके घर शादियाँ होती हैं ।.....अिनकी शक्ल मोमिनोंकी है, किन्तु काम मूजियोंके हैं, ये तो शैतानके अवतार हैं । जोर-जबर्दस्ती किसीका निकाह करा देना, यह किस धर्म-ग्रंथमें लिखा है ! वारित्शाह

---

१. तेरी झुग्गी नूँ फेर बनवा देसाँ,
जेहड़ी लाम वल्लों अेन्हां साड़या वे ।
तैंनूं पोस्त अफीम ते भँग देसाँ,
हीर जो कुछ चा बगाड़या वे ।।

२. कर चुप न बोल तूं बाबला वे,
जाय खिण्ड जहान विच गॅल कीती ।।

३. अज कौन पुच्छे राँझे चाक ताअीं,
बेगम 'हीर' ते खेड़ा नवाब होया ।
भली मौत आखे राँझा जिन्दगी तों,
जीवन यार दे वाज्ह अज़ाब होया ।
लोक आखदे चोचकने जुल्म कीता,
हारे कौल अीमान खराब होया ।
रांझा 'हीर' पिच्छे महीं चार दासी,
मशहूर-सी विच पंजाब होया ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहता है कि जिन आशिकोंको, जिन प्रेमियोंको भगवानने ही स्वतन्त्र बनाया अुन्हें कौन कैद कर सकता है।"१

'हीर' को किसी भी तरह शादीके लिअे तैयार न होते देख काजी जोर-जबर्दस्ती अुसका निकाह करा देता है। खेड़े 'हीर' को जबर्दस्ती ले चलते हैं। जाते-जाते 'हीर' को राँझेसे मिलनेका अेक मौका हाथ लग जाता है। अुस समय हीर कहती है—

"आ राँझे, जाते समय दोनों अेक बार गले मिल लें। अब तो सारी अुमर आँखें तरसती रहेंगी। अेक दूसरेको आखरी बार देख लें।"२

जाते-जाते 'हीर' राँझेको सलाह दे जाती है कि किसी 'जोगी' का भेस बनाकर वह अुससे आ मिले।

"हीर' के चले जानेपर 'राँझे' की भाभियाँ फिर अुसे वापिस लौट आनेके लिअे चिठ्ठी भेजती हैं। राँझेका अुत्तर है—

आयु और समय अेक बार चले जानेपर फिर वापिस नहीं आते। कर्म और भाग्य भी वापिस नहीं लौटते। समुद्रकी लहर भी लौटकर नहीं आती। अेक बार छूटा हुआ तीर भी लौटकर नहीं आता। मरे हुअे भी लौटकर नहीं आते। समय भी नहीं लौटता। जबानसे निकली हुअी बात वापिस नहीं आती। शरीर-मेंसे निकला हुआ 'आत्मा' वापिस नहीं आता। कअी बुद्धिमान कहते हैं कि जहानको छोड़कर गयी हुअी जान भी वापिस नहीं आती। यदि ये जब वापिस आ जायँ तो राँझे यार भी वापिस आ सकते हैं। अभीतक पशुओंको चरानेमें जीवन बरबाद करते रहे। अब अिश्कमें जीवन बरबाद करेंगे। राँझे यार अब अिस स्थानको छोड़ कहीं (किसी जोगीके पास) जाकर कानोंमें छेद करायेंगे। या तो अपना जीवन ही समाप्त कर देंगे, अथवा 'हीर' जट्टीको ही बाँध लायेंगे।"१

भाभियोंको निश्चय हो गया कि अब राँझा कभी वापिस न आयेगा।

'हीर' अपनी ससुरालमें जाकर कैद हो गयी। वारित्शाहने बारह-मासामें 'हीर' के वियोग-संतापका अद्भुत वर्णन किया है।

अेक जट्टी 'हीर' और 'रांझे' के बीचमें मध्यस्थ बनती है, परिणामतः, राँझे जोगी बाल-नाथका शिष्य बन जाता है। स्वामी रामतीर्थका अेक गीत प्रसिद्ध है कि "बाबा! मौज फकीरां दी।" जरा वारित्शाहके सन्यासी-जीवनके वर्णनको पढ़िये—

---

१. जदों जँग जहान् ते सोग होवे,
तदों काजियाँ दे घर शादियाँ वे।
वाक्ल मोमनाँ दी, कँम मूजियाँ दे,
अेहताँ असल शैतान दियां वादियां वे।
चोरी पठन नीकाह ते जबर्दस्ती,
कदो लिखिया हुक्म अेह हादियां वे।
वारिस आशिकों नूं कौन कैद करदो,
जिन्हाँ वशशियां रँब अनादियाँ वे।

२. 'हीर' आख्या आखां रांझया वे,
गली लग मिलिये जांदी वार दोवे
नैन तरसदे रहणगे अुमर सारी,
कीत्ये दीदना आखरी बार दोवें॥

१. गयी अुमरते वक्त फिर नहीं मुड़दे,
गये कर्म ते भाग न आँवदेनी
गयी लयी लहर समुंदरों तीर छुट्टा,
गये मरनेसे समय न आँवदेनी
गयी गल जबान थीं नहीं मुड़दी,
गये रूह कलबूत न आँवदेनी
गयी जान जहान थीं छड जुस्सा,
कअी होर सयाने फरमाँवदेनी
मुड़ अैतने फेरजे आँवदेनी,
रांझे यार हुदी मुड़ आँवदेनी
अयो वाहियो चा गवायोने,
हुन अिश्क थीं चा गँवावदेनी
रांझे यार हुराँ अेहा थां दड्डी,
किते जाके कँन पाँरवदेनी
अिक्के अपनी भिन्द गवाँवदेनी,
अिक्के 'हीर' जट्टी बन्ह लयाँवदेनी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह सारे गाँवको आह्वान करता फिरता था कि यदि कोअी फकीर होना चाहे तो आये। माँगकर खाना है। काम-काज कुछ नहीं करना है। न किसी पशुको चराना है, न किसीको चोना है। जरा कान फड़वाकर राख भर मल लेनी है। फिर सारे जहानका गुरु बन जाना है। किसी प्रकारका भी कोअी रोजगार नहीं करना पड़ेगा। मुफ्तमें ही 'नाढ़-शाह' बन जायगा। न फिर किसीके जन्म लेनेपर दुहाअी देनी है और न किसी मरे हुअेको ही रोना है। माँग खाना है और मसजिदमें सो रहना है। न किसीका कुछ देना है, और न किसीसे कुछ लेना है। दिलको दुनियाँके मैलसे पाककर लेना है। अीर्ष्याके दागको दिलसे मिटा देना है। कमर कसकर किसीकी हाजरी नहीं देनी। किसीके सामने हाथ जोड़कर खड़ा नहीं होना। हर किसीसे अपनी सेवा करा लेनी है और 'वली', 'पीर' तथा फकीर कहलाना है। (मियाँ वारिस कहते हैं) कि अपनी खुशी अुठना है और अपनी नींद सोना है।"१.

राँझे और गुरु बालनाथकी बातचीतके विस्तृत वर्णनसे वारित्शाहकी योग-परम्पराकी जानकारीपर खासा प्रकाश पड़ता है। गुरु बालनाथ राँझेको दीक्षा देनेको तैयार हो जाते हैं। चेले आपत्ति करते हैं। कहते हैं— हम अधिकारियोंको तो 'दीक्षा' नहीं दी जा रही है, अेक नवागन्तुकको 'दीक्षा' दी जा रही है। बालनाथ अपने निश्चय पर दृढ़ रहते हैं और राँझेको दीक्षा दे देते हैं। जब वे वैराग्य और विशेष रूपसे अेकाकी जीवनका आग्रहपूर्ण अुपदेश देते हैं, तब राँझेसे बिना आपत्ति किये नहीं रहा जाता। कहता है—

"यदि मैं जानता कि तू मुझे बादमें अिश्कमें मना करेगा, तो मैं तेरे टीलेपर पैर न रखता।"२

गुरु बालनाथने राँझेके 'सत्य' से प्रभावित होकर भगवानसे राँझेके लिअे प्रार्थना की। भगवानने स्वीकार कर ली।

गुरुका आशीर्वाद ले राँझा खेड़ोंकी ओर चल दिया।

राँझा 'हीर' की ससुराल पहुँचा तो वहाँ भेड़ चरानेवाले 'पाली' ने अुसे पहचान लिया। अुसने सलाह दी— "किसीको पता लगनेसे पहले भाग जाओ।" राँझे और 'पाली' की बातचीतमें राँझा कहता है—

"भाअी बैठ, किसीका भेद प्रकट करना अच्छा नहीं। मर्द वही है जो देखकर भी दम घुटा रखे। वारित्शाह कहता है कि चाहे जानका ताला टूट जाय किन्तु भेद रूपी सन्दूक नहीं खुलना चाहिये।"३

पाली भी कहता है—

---

१. हॉका फिरे देदाँ पिण्डाँ विच सारे,
आओ किसे फकीर जे होवना जे
मँग खावना कँम न काज करना,
न कुझ चारना ते न कुझ चीवनाजे
ज़रा कँन पड़ाके सवाह मलनी,
गुरु सारे जगत दो होवना जे
न दहाड़ी न कसब रोजगार करना,
नाठू शाह फिर मुफ्त दे होवना जे
न देनी दोहाओ फेर जँमने दी,
किसे मोये नूं मूल न रोवना जे
मँग खावना अते मसीत सोना,
न कुझ देवनाते न कुझ लेवनाजे
दिलों मैल जहान दी पाक करनी,
दाता हिरस प्लीतदा धोवनाजे
कमर कँसके हाज़री नहीं देनी,
हत्थ बन्दके नहीं खलोवनाजे
हर किसे तों टहल करा लेनी,
वली पीर फकीर सदौना जे
खुशी अपनी अुठना मियां वारिस,
अते अपनी नींदरे सोवना जे।

२. जे मैं जानदा अिश्क थीं मना करना,
तेरे टिल्ले ते धार न धारदा मैं।

३. राँझे आख्या अयालीनूँ बैठ भाअी
भेत किसे थी मूल न फट जावे।
भेत दसँना किसे दापला नाहीं,
मर्द ओही जो देख दम घुट जावे।
वारित्शाह न भेद संदूक खुल्ले
भावें जानदा जिन्दरा टूट जावे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हमने राँझे यूँ ही मजाक किया था। जा देखले यदि तेरा दाँव लगता हो, तो लगा ले।"१

राँझा रंगपुर पहुँचता है, तो स्त्रियाँ आ घेरती हैं। सभी अपनी-अपनी मुराद बर आअी देखना चाहती हैं। 'हीर'के यहाँ भी राँझेकी खबर पहुँच गयी। 'हीर' अन्दर ही अन्दर ज़ारोज़ार रोती है। जब 'हीर' के आग्रहसे 'हीर'की सखियाँ राँझेको घर चलनेको कहती हैं, तो राँझा 'योगी' के ठाठमें अुत्तर देता है—

"लोग तो शरबत और भँग छानते हैं। हम आदमियोंको ही अपनी नजरमेंसे छानते हैं।"२

जब हीरकी सहेलियोंने राँझेके 'परिचय'के लिअे आग्रह किया, तो 'योगी' ही बोला—

"मुझे हैरान न करो। शेर और साँपका देश कैसा? कूजोंकी तरहसे हमने अपना देश छोड़ दिया। हमारी जाति सिकात और भेष क्या? हमारा वतन हमारी जानके साथ है। हमारी जाति जोगी है। हमारा रिश्ता-सम्बन्ध कैसा? जो 'वतन' और 'जात' की बात सोचे, वह तो दुनियादार है, वह कोअी दरवेश नहीं है। हमारा दुनियासे क्या सम्बन्ध? सरेशसे कहीं पत्थर जुड़ सकता है! जो खाकमें मिलनेवाले हैं अुनके लिअे अैश-आराम कैसा?" ३

लड़कियोंके लाख आग्रह करनेपर भी 'जोगी' अुनके साथ नहीं जाता। लड़कियाँ जाकर 'हीर' को सूचना देती हैं। 'हीर' को बुरा लगता है। लड़कियाँ और 'हीर' आपसमें विस्तृत चर्चा करती है।

आखिर राँझा अेक दिन भीख माँगने निकलता है। 'हीर' के आँगनमें पहुँचता है तो वहाँ 'हीर' की ननद सहेलीसे बातचीत होती है। सहेली 'नास्तिकता' का पूरा अवतार है। वारित्शाहने 'सहेली' के मुँहसे जो स्त्री-पक्षकी वकालत करायी वह अेकसे अधिक बार पढ़ने लायक है। जोगी भी 'सहेली' से किसी तरह कम नहीं। पृष्ठ दर पृष्ठ अिसी वार्तालापको जारी रखकर 'कवि' ने अपने काव्य-कौशलका अनुपम परिचय दिया है। 'जोगी' अेक स्थलपर कहता है—

"कश्मीर जैसा कोअी मुल्क नहीं। चन्द्रमाके प्रकाश सदृश प्रकाश नहीं। प्रेम-पात्र (माशूक) आँखके सामने हो तभी मजा है। ढोलकी आवाज दूरसे ही सुन्दर लगती है। हींग जैसी और दूसरी बदबू नहीं। कचूर जैसी कोअी गन्ध नहीं। कबर (में) की (प्रतीक्षा जैसी कोअी) प्रतीक्षा नहीं। मौतके रास्ते जैसा कोअी अनिवार्य रास्ता नहीं। मार=काम जैसा कोअी मूजी नहीं। सूअर जैसा कोअी बेगैरत नहीं। वारित्शाह जैसा कोअी गुनहगार नहीं। भगवान् जैसा कोअी क्षमावान नहीं।" ४

---

१. असां राँझया अिसके गल्लकीली
जा देख लैदाँजे लग दाअी।
२. लोग छान दे भँगते शरबताँनूं
असी आदमी नजर विच छान दे हाँ।
३. राँझे आख्या ख्याल न पओ मेरे,
शीहे सँप फकीर दा देस केहा
कुंजां बाँग ममुलियाँ देस छड्डे
असाँ जात सफातते भेस केहा
वतन दमा देनाल ते जात जोगी
साडा साक कबीलड़ा ख्वेश केहा
जेहड़ा वतन ते जात बँल ध्यान रँख
दुनियाँदार है ओह दरवेश केहा
दुनियाँ नाल पेवँद है असाँ केहा
पत्थर जोड़नाँ नाल सरेश केहा
जिन्दाँ खाक डर खाक फनाह होना
वारित्शाह फिर तिन्हाँनूं अैश केहा।

---

४. कशमीर जेहा कोअी मुल्क नाहीं,
नहीं चानणा चन्द्र दे नूर जेहा
अगे नज़र दे मज़ा माशूक दा अे
अते ढोल सुहावना दूर जेहा
हींग जेद न होर बदबू कोअी
बाँसदार न हीर कचूर जेहा
कबर जेद नाहीं अितजार कोअी
पन्ध मौत दा दुरन जरूर जेहा
मूजी नफस दे जेद पलीद नाहीं,
बेगैरता बुरा न सूर जेहा
वारित्शाह जेहा गुनहगार नाहीं,
बख़शनहार न रँब गफूर जेहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'हीर' और 'सहेली' की रहस्यभरी बातचीत सुनते-सुनते 'हीर' ने राँझेको पहचान लिया। 'सहेली' दोनोंके सम्बन्धको समझ गयी। अिसलिये और भी कठोर हो गयी।

'हीर' ने 'जोगी' को अिशारा किया कि वह चुप रहे और स्वयं 'सहेली' के साथ दो चार हुअी। 'सहेली' 'जोगी' के बारेमें कहती है—

"यदि यह अपने आपको छैल समझता है, तो हम भी नरोंके मुकाबलेकी नारियाँ हैं। यदि यह ज़िद्दकी छुरी है, तो हम स्त्रियाँ भी तेज कटारियाँ हैं। अिस चाककी क्या सामर्थ्य है! हम राजा भोजसे भी नहीं हारी हैं। वारित्शाह कहता है कि सफेद-पोशोंके बीच हम होलीके रंगकी पिचकारियाँ हैं।" १

अंतमें 'जोगी'को किसी-न-किसी तरह घरसे बिदा करनेके अिरादेसे सहेलीने बाँदीसे कहा कि जा अुसके ठूठेमें कुछ डालकर अुसे बिदा कर दे। बांदी नहीं गयी। तब सहेली स्वयं पहुँची। 'जोगी'के हाथसे 'कासा' गिर पड़ा और टूट पड़ा। 'जोगी' ने 'सहेली'पर कासा फोड़ देनेका अिलजाम लगाया। सहेलीका अुत्तर था—

"जो कोअी पैदा हुआ है वह अेक-न-अेक दिन अवश्य मरेगा। जो कुछ गढ़ा गया है वह टूटेगा ही। सभी प्रवाह बहेंगे ही। जब अीश्वर कर्मोंका हिसाब-किताब पूछेगा, तब हाथ-पैर ही साक्षी देंगे।"

ठूठेको लेकर 'सहेली' और 'जोगी'की बातें हो ही रही थीं, कि 'हीर' भी बीचमें अुलझ पड़ीं। अब सहेली बहुत अुत्तेजित हो गयी। अुसने 'हीर' को तो कमरेके अन्दर बन्द कर दिया और बाँदीको साथ ले 'जोगी'को खूब पीटा। राँझेने भी 'सहेली' और 'बाँदी' दोनोंको अेक साथ पीटा। तब दोनोंने पडोसियोंको बुला लिया। अुन्होंने भी आकर 'जोगी'को बहुत पीटा।

निराश 'जोगी' तपस्या करने बैठा। लड़कियों नें आकर अुसकी 'धूनी' बरबाद कर दी। राँझा अुन्हें मारनेके लिअे अुठा। सभी भाग गयीं। अेक 'सहेली' काबूमें आ गयी। राँझेने अुसका हाथ पकड़ लिया। लड़कीने मिन्नत करके जान बचायी और राँझेका कामिद बनना स्वीकार किया।

जब लड़कीने 'हीर' तक राँझेका सन्देश पहुँचाया तो 'हीर' का अुत्तर था—

"लड़की! देख, राँझेने बड़ी कच्ची बात की, दिलकी बात खोलकर फैला दी। मंसूरने अिश्कका भेद प्रकट होने दिया था। अुसे तुरन्त सूलीपर चढ़ना पड़ा। अिस जहानकी रीति यही है कि आदमी चुप रहे। जो मुंहसे बोलता है, वही मारा जाता है।"१

लड़कीने 'हीर' को 'राँझे' के पास जानेको कहा। 'हीर' जाय तो कैसे जाय? अुसने 'सहेली' की खुशामद शुरू की। खुशामदसे 'सहेली' धीरे-धीरे बदल गयी। अुसने थालमें खाँड-मलाअी रखी और नकद पाँच रुपये। 'जोगी' के साथ पूर्ववत् ही बात करते हुअे 'सहेली' ने पूछा—अच्छा, बता तो अिस थालमें क्या है? जोगीने जवाब दिया—"पाँच लाल-लाल पैसे तथा चावल और खाँड।"

पाँच पीरोंकी बरकतसे 'सहेली' जो कुछ थालमें रखकर लायी थी, वह पाँच पैसे और चावल खाँड ही बन गया था।

---

१. अेह आपनूं छैल सदांवदाअे,
असीं नराँ दे नालदियाँ बीत्याँ हाँ।
जे यह जिद्दडी छुरी है हो बैठा,
असी रन्नाँ भी तेज कटारियाँ हाँ।
अैस चाकदीकी मजाल है नी,
राजे भोजकी असीं न हारियां हां।
वारित्शाह विच हक़ सफैद पोशां,
असीं होली दे रंग पिचकारियां हां।

---

१. कुड़िये देख रांझे टड़े कॅच कीता,
भेद जीव दा खोल पसारयाअी।
मँसूरने अिश्क दा भेद दित्ता,
ओहनूं तुरत सूली अुत्ते चाढ़याअी।
रसम अेस जहानदी चुप रहना,
मूहों बोल्या सोअी ओह मारयाअी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सहेली'की जोगीमें अडिग श्रद्धा हो गयी। अुसने अपने अभी तकके सारे व्यवहारके लिअे 'योगी' से बहुत क्षमा प्रार्थना की और भविष्यमें अुसकी हर तरहसे आज्ञाकारिणी बने रहनेका विश्वास दिलाया।

राँझेने 'सहेली' को अपना कासिद बनने और 'हीर' से मिला देनेकी कही। सहेलीने 'जोगी' को अुसे क्षमाकर देने और अपने यार 'बलोच' से मिल सकनेकी मुराद माँगी। 'जोगी' ने 'तथास्तु' कहा।

जब 'सहेली' ने 'हीर' को रांझेका सन्देश पहुंचाया तो हीर बोली—

"राँझा मारे फिराकके मरा पड़ा है। मैं अुसे अीसाकी तरह जिलाअूँगी। देख, पतंगको शमापर अंग लगाकर जलाअूँगी।"१

'हीर' और राँझेके मिलनका चित्र जरा वारित्शाह-की नजरोंसे देखिये—

"दौलतके मालिकको वह सारी दौलत पृथक्-पृथक् करके दिखा रही है। वह अीमानके साथ अमानतको जैसी की वैसी ही वापस ले आयी है।२. पहले अुसने विश्वासपूर्वक राँझेके पैर पकड़े, फिर कलेजेसे लग गयी। क्या अद्भुत दृश्य दिखायी दिया। पतंगेपर आग जल मरी।"३

---

१. मोया पेया है नाल फिराक राँझा,
ओसा वांग मुड़ फेर जगाअुंगी हाँ।
वारित्शाह पतंग नूं शमा अुत्ते,
अँग लायेके देख जलवनी हाँ॥

२. मालक माल दे नूं सभ खोल
दौलत वखो वखकर चा वखाँवदीअे
अेवें अमन अमान अभानताँदी,
सावतनाल अीमान ले आंवदीअे।

३. अव्वल पैर पकड़े अेतकाद करके,
फेर नाल कलेजे दे लँग गयी।
नवां तौर अजूबे दा नज़र आया,
देखो जल पतंग ते अँग गयी।

अब 'हीर' और 'सहेली' ने मिलकर अेक षड़यन्त्र रचा। सब सहेलियोंको साथ ले वे खेतमें कपास चुनने गयीं। जैसे-तैसे माँको समझा-बुझाकर सहेली 'हीर' को भी साथ ले चलनेमें सफल हो गयी थी। वहाँ 'हीर' को काँटा चुभ गया। 'साँप-साँप' का हल्ला मचा दिया। साँपको किसीने देखा न था। सभीने हल्ला किया कि साँपने काट खाया, साँपने काट खाया।

'हीर' बेहोश अवस्थामें घर लायी गयी। सहेलीने 'जोगी' वैद्यको बुलानेकी सलाह दी। हीरके पति सैयदाको ही 'जोगी' को ले आनेके लिअे भेजा गया। अुसे खास ताकीद कर दी गयी कि बहुत ही मिन्नतसे काम ले।

बेचारे सैयदाने बहुत ही मिन्नत समाजतसे काम लिया। 'जोगी' को विश्वास दिलाया कि 'हीर' अनछुआ फूल है। लेकिन फिर भी राँझेने अुसके साथ जाना स्वीकार नहीं किया। झगड़ा बढ़ाकर अुसने 'सैयदा' को खूब पीटा।

सैयदा जाकर पिताके पास रोया। 'सहेली' ने अुल्टा अुसीका दोष ठहराया कि अिसने 'योगी' के साथ अदबका बरताव नहीं किया होगा। अुसीका अिसे दण्ड मिला है।

तब सैयदाका पिता स्वयं योगीके दरबारमें हाजिर हुआ। अुसके बहुत मिन्नत समाजत करनेपर 'जोगी' 'हीर' की चिकित्सा करने चला आया।

योगीका चिकित्सा-क्रम था—अकेली कोठरीमें 'हीर' का पलंग बिछाकर, अुसके पास मंत्रोच्चारणकी व्यवस्था की जाय।

मौका पाकर 'सहेली', 'हीर' और 'राँझा' अेक साथ भाग खड़े हुअे। रास्तेमें अेक शेर मिला। पाँचों पीरों-का भरोसा रख राँझेने अुसका काम तमाम कर दिया।

आगे चलनेपर राँझेको अूंघ आयी। अुसने सोना चाहा। हीरने अुसे सोनेसे बहुत मना किया। राँझा अेक न माना। सो ही गया। सोतेमें 'हीर', 'रांझा' और सहेली तीनों अेकसाथ पकड़े गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राँझेने राजाका नाम लेकर शोर मचाया। राजा-ज्ञासे खेड़े पकड़े गये। खेड़ोंने राजाके पास रोना-धोना किया। राँझेने जवाब दिया। काजीके फैसलेके अनुसार 'हीर' खेड़ोंको सौंप दी गयी।

'हीर' और 'राँझे' दोनोंने शाप दिया।

आशिकोंके अभिशापमें बड़ा असर होता है। सारे नगरमें आग लग गयी। ज्योतिषियोंसे जब कारण पूछा गया, तो अुन्होंने बताया कि 'हीर' और राँझाके साथ न्याय नहीं हुआ, अुसीका यह भयानक परिणाम है। राजाने 'हीर' और 'रांझे' को दरबारमें हाजिर कराया और खुले दरबार 'हीर' से कहा--

"बीवी। जिसका भी तू अपने अूपर पक्का हक समझती हो, अुसका पल्ला पकड़ ले और अीमानको साफ करके असन्दिग्ध हो अुसकी बाँह पकड़कर ले जा।"

'हीर' तथा 'राँझे' ने राजाको लाख-लाख दुआअें दीं। दोनों रयाल गये। 'हीर' के मां-बापने राँझेको बारात लाकर बाकायदा शादी कर ले जानेके लिअे कहा।

राँझा तख्त हजारे चला गया।

'हीर' के लंगड़े चाचा कीदोको चैन न थी। अुसने 'हीर' को सूचना दी कि राँझेको तो मार डाला गया है। हीर राँझेकी याद करती-करती मर गयी। कीदोने ही जाकर राँझेको 'हीर' की मृत्युकी सूचना दी। राँझा 'हीर' को याद करता-करता मर गया।

यह हीर-राँझेका अनन्त मिलन हुआ अथवा अनन्त बिछुड़न? सुखान्त कथानक अेकाअेक दुखान्त हो गया-अेक टीस-सी हृदयमें पैदा करके।

जल बरसाओ

: श्री नर्मदाप्रसाद खरे :

जल बरसाओ—
सजल श्याम वर्षाके बादल जल बरसाओ!
मत तरसाओ॥

झुलस गया सब तन-मन मेरा,
टूट रहा धीरजका घेरा,
पंखहीन मैं दूर बसे तुम--
छाया चारों ओर अंधेरा,
नष्ट करो दूरीके बन्धन, पास बुलाओ!
या तुम छाओ॥

सूख चुका है हृदय-सरोवर,
सूख चले नयनोंके निर्झर,
छातीमें पड़ गयीं दरारें,
टूक-टूक है यह अुर-अन्तर,
हे घनश्याम! पसीजो अब तो, तपन मिटाओ!
मत तड़पाओ॥

अब न और तुम तृषा जगाओ,
रूम-झूम मत छवि दिखलाओ,
मेरे अिन सूखे प्राणोंमें
अेक बार रसधार बहाओ,
मनभावन, सावन बन बरसो, झर-झर गाओ!
जीवन लाओ॥

मैं धरती युग-युगकी प्यासी,
आज स्वयं बन गयी अुदासी,
कण-कण, तृण-तृण हरे करो फिर
हे जलधर, हे गगन-प्रवासी,
हे मेरे करुणा-घन बरसो, गले लगाओ!
प्राण जुड़ाओ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवि-जीवनपर युग-प्रभाव : भक्त कवि

: डा० रामकुमार वर्मा, अेम. अे., पी. अेच. डी. :

कवि युग-निर्माता होता है। अपने अनुभव और जीवनगत अन्तर्दृष्टिसे वह न केवल अपने युगकी प्रवृत्तियोंका ही नियामक होता है; प्रत्युत शताब्दियोंकी विचारधाराकी गति-विधि भी देख सकता है। अिसका कारण यह है कि कवि मानव जगत्का पूर्ण अधिकारी है, मानव जीवनके संपूर्ण मनोविज्ञानमें गतिशील है, अुसे जीवनकी विविध परिस्थितियोंमें होनेवाले मनके सूक्ष्मातिसूक्ष्म स्पन्दनका पूर्ण ज्ञान है और अुसकी श्रवणेन्द्रिय मानवताके रक्तकी पुकारसे परिचित है। अतः वह जानता है कि किन परिस्थितियोंमें मानव, पुरुष हो या स्त्री, किस प्रकार क्रियाशील अथवा प्रतिक्रियाशील होकर आचरण करेगा। मनुष्यकी प्रवृत्तियाँ अेक हैं, प्रेम, घृणा, हर्ष, शोक, प्रसन्नता, अवसाद, अुत्साह, निराशा, क्रोध, शांति प्रत्येक मनुष्यके हृदयमें आन्दोलन मचाया करती है। मनुष्य चाहे भारतका हो, चाहे अमेरिकाका, चाहे दक्षिण अफ्रिकाका हो, चाहे अुत्तरी जापानका, अुसकी अभिव्यक्तिमें कुछ अंतर भले ही हो; किन्तु मूलतः प्रवृत्तियाँ अेक हैं। अतः जब कवि अिन मानव प्रवृत्तियोंपर पूर्ण अधिकारके साथ अपनी लेखनी अुठाता है, तो अुसकी कृति समस्त संसारमें जहाँ तक मानवताका क्षेत्र है, आदर और श्रद्धाका निर्माल्य बनती है। यही कारण है कि सूरदासकी यशोदा संसारमें समस्त माताओंका प्रतिनिधित्व करती हैं और बालकृष्ण संसारके समस्त बालकोंके साथ क्रीड़ा कर सकते हैं। तुलसीके राम संसारके किसी भागमें लोक-मर्यादाकी स्थापना कर सकते हैं और भरत आत्मीयताकी अपार संपत्ति लिये हुअे किसी भी स्नेहप्रवण छोटे भाअीका प्रतिनिधित्व। मीराके 'गिरधर नागर' का प्रतिबिंब किसी भी, प्रेमी पतिमें देखा जा सकता है। कबीरकी 'विरहिन' किसी भी विरहिणीके आँसुओंमें अपनी स्मृतिके चित्र देख सकती है। अैसे कवियोंकी रचनाओंमें विश्वजनीनता अनन्त कण्ठोंसे मुखरित होती है और वे शताब्दियोंके मानवको दया क्षमा, अुपकार, आत्मसमर्पण और विश्वकल्याणका संदेश दे सकते हैं। अिस विश्वजनीनताके साथ ही साथ जैसा मैंने पहले कहा, कवि अपने युगकी प्रवृत्तियोंका नियामक भी होता है। वह अपने विशाल अनुभव और जीवनगत अन्तर्दृष्टिसे समाज अथवा युगके समस्त कार्य, व्यापारोंको भी समझाता है, देखता है। वह अपने युगके समाजकी बिखरी हुअी अींटोंसे मानवताके राजभवनका निर्माण करता है। अतः, यह भी संभव है कि वह अपने युगमें अुठनेवाली या समाजको आन्दोलित करनेवाली प्रत्येक प्रगतिको हृदयंगम करे, अुससे लाभ अुठाये। यह भी संभव हो सकता है कि वह अुनसे प्रभावित भी हो। कवि समाजका प्राणी है, अतः समाजकी परिस्थितिका प्रभाव अुसपर पड़े बिना नहीं रह सकता। यह बात अलग है कि वह अुस प्रभावको अपने निर्माणका अेक अंग बना ले या अुसी प्रभावको अपना शक्तिशाली आयुध बनाकर समाज या युगमें समूल परिवर्तन ला दे। पश्चिमके आलोचकोंने साहित्यको अैसा पुत्र कहा है जो पितृहन्ता है। यह साहित्यरूपी पुत्र समाजरूपी पितासे अुत्पन्न होता है और आगे चलकर अुसी समाजमें परिवर्तनकर अुसकी हत्या करता है। किन्तु मैं अिससे सहमत नहीं। साहित्यमें हिंसा नहीं। जिस साहित्यमें हिंसा होती है, वह साहित्य मानवको कल्याणके पथपर अग्रसर नहीं कर सकता। साहित्य-समाजका विनाश नहीं अुसे सुधार संवारकर प्रगतिके पथपर अग्रसर करता है। साहित्यकी महत्ता पिताकी महत्ता है, वह अपने समाज रूपी शिशुकी प्रवृत्तियोंको देखकर अुनमें परिष्कार अेवं मानवताके श्रेष्ठ गुणोंसे समन्वितकर बल देकर शताब्दियोंके लिअे कर्मठ बना देता है। अतः, मैं साहित्यको पुत्र नहीं, पिता समझता हूं। साहित्यकी विचारधारा अनन्तकाल और समाजका निर्माण तो युगके प्रभावोंसे है। अिसलिअे मैं समाजको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुतना महत्व नहीं देता जितना साहित्यको। साहित्य प्रधान है, समाज गौण।

समाजका और युगका प्रभाव साहित्यपर पड़ता है, यह किसी न किसी अंशमें सत्य अवश्य कहा जा सकता है। परन्तु साहित्य समाजमें निवास करता है, अतः समाजकी प्रवृत्तियाँ अुसके संपर्कमें अवश्य आती हैं और जो प्रवृत्ति शक्तिशाली होती है, वह साहित्यकारके दृष्टिकोणमें किसी न किसी प्रकार परिवर्तन अवश्य लाती है। आजके युगकी असुविधाओंने ही तो प्रगतिशीलता अथवा प्रयोगवादिताको जन्म दिया है और आजका कवि अपनी विपन्नतामें कहता है।

'जी हाँ, हुजूर, मैं गीत बेचता हूँ।'

हिन्दी साहित्यके भक्ति-कालमें भी युगका प्रभाव कवियोंकी रचनाओंपर देखा जा सकता है। भक्तिकालका आरंभ संवत् १३७५ से हुआ और अुसका विस्तार संवत् १७४० तक रहा। किसी कालके साहित्य-सृजनमें जिन शक्तियोंका हाथ रहता है, वे सभी किसी न किसी रूपमें अुस काल विशेषके साहित्यसे संबंधित रहती हैं। वे सीधे साहित्यसे संबंधित हों, अैसा नहीं कहा जा सकता। परन्तु वे अुस काल विशेषके वातावरणको अिस प्रकार निर्मित करती हैं, जिससे साहित्य प्रभावित हुअे बिना नहीं रहता। अिस विषयमें राजनीति, धर्म, समाज और साहित्यका सामूहिक प्रभाव हमारे भक्तिकालके विकासपर अिस प्रकार हुआ कि किसी अेकको छोड़ देने अथवा किसी अेकको अधिक महत्त्व प्रदान करनेसे हमारे सामने विकासका रूप स्पष्ट नहीं होगा। अिनका अलग-अलग वर्णन करना आवश्यक होगा।

राजनीतिः—चारण-कालके कवियोंकी मनोवृत्ति किसी अंशमें अिस कालके कवियोंमें भी रही। स्वतंत्र शासकोंकी वीरता और स्वाधीनताकी भावना काव्यकी सामग्री बनी। अिसके अतिरिक्त अुनकी श्रृंगार-प्रियताने कवियोंको अन्तःपुरके जीवनकी चित्रशाला अुपस्थित करनेकी प्रेरणा प्रदान की। यह श्रृंगारकी श्रृंखला गुप्तकालीन वैभवके विकृत भग्नावशेषके रूपमें समझी जा सकती है। विद्यापतिकी पदावलीमें राजा शिवसिंह और लखिमा देवीकी श्रृंगार-भावनाको संतुष्ट करनेके लिअे ही राधाकृष्णकी क्रीड़ा अत्यन्त श्रृंगारिकताके साथ अुपस्थित की गयी।

दूसरी बात यह भी है कि भारतीय जनता सदासे राजनीतिक परिवर्तनोंके प्रति अुदासीन रही और अुसमें धार्मिक चेतना ही अधिक प्रभावशील रही है। भारतीय जनसमाजका अितिहास जितना धार्मिक और दार्शनिक विकाससे सम्बधित है, अुतना ही वह राजनीतिक क्षेत्रसे अलग भी; क्योंकि केन्द्रीय सत्ताओंके परिवर्त्तनसे प्रान्तीय अथवा स्थानीय सत्ताओंमें अधिक परिवर्त्तन नहीं होते थे। प्रजा और राजाका संबंध राजनीतिक दृष्टिकोणसे अुतना अधिक नहीं था, जितना धार्मिक दृष्टिकोणसे। प्रजा अपने राजाके धार्मिक गुणोंपर अधिक ध्यान देती थी। राजनीतिक संबंधोंकी दृष्टिसे प्रजा अन्य क्षेत्रोंमें राजासे बहुत दूर थी। राजकर्मचारियोंसे कर प्राप्तिकी सीमातक ही अुसका संबंध समझना चाहिये। अेक बार अकबर बादशाहके बुलानेपर अष्टछापके प्रसिद्ध कवि कुंभनदासको राजधानी फतहपुर सीकरी जाना पड़ा। वहाँ अुनका बड़ा सम्मान तो हुआ परन्तु वे अिससे बड़े दुःखी रहे। अिस पदमें अुन्होंने कहा:—

संतनको कहा सीकरी-सों काम।
आवत जात पनहियाँ टूटीं,
बिसरि गयो हरि नाम।
जिनको मुख देखे दुख अुपजत,
तिनको करबे परी सलाम।
कुंभनदास लाल गिरिधर बिनु,
और सबै बेकाम॥

महाकवि तुलसीदासजीने राजनीतिक परिस्थितियोंका चित्रण अपने व्यापक दृष्टिकोणसे अवश्य किया।

धार्मिकः—भक्ति-साहित्यके अिस जन-व्यापी आन्दोलनमें जिसकी अुत्ताल तरंगोंसे हिन्दी-साहित्य आलोकित है, सबसे महत्वपूर्ण कार्य धार्मिक स्थितिका किया। दर्शनका संबंध तो धर्मके चिन्तनसे है, किन्तु कारण जन-समाज अुसके प्रति अधिक सचेष्ट नहीं रह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकता। परन्तु धर्मके कर्मकांड और भक्ति-पक्षसे जनसाधारणका बहुत निकट संबंध है। कर्मकांड और भक्ति-पक्षके कारण बहुत-सी अैसी बातें भी आ मिलीं जिनका प्रयोग केवल आडंबर और बाहरी दिखावे-सा था। अिधर अनेक शताब्दियोंमें अनेक जातियाँ आ-आकर हिन्दू धर्ममें मिल चुकी थीं, अतः अुनके द्वारा भी कर्मकांड और आचारमें अितनी बातें आ गयी थीं जिनकी व्यवस्था प्राचीन धर्म-ग्रंथोंमें नहीं थीं। अिन समस्त विशृंखलताओंके नियमन और व्यवस्थाकी आवश्यकता थी। अिसीलिअे धर्मके दंभ और आडंबरको दूर करनेके लिअे कबीरको अपना स्वर तीव्र करना पड़ा।

सामाजिकः—बौद्ध धर्मकी विजयके अुपरान्त भी जन-साधारणमें अुसकी सर्वमान्य प्रतिष्ठा नहीं हो सकती थी। वैदिक वर्णाश्रम-व्यवस्थाको समाज ठीक ढंगसे ग्रहण नहीं कर सका। समाजके मेरुदंड समझे जानेवाले ब्राह्मण न तो स्वयंही अितने शक्तिशाली थे कि वे समाजके विभिन्न अंगोंको समुचित रूपमें संचालित कर सकते थे और न राज सत्ताही अुनके अिंगितपर चल सकती थी। परिणाम यह हुआ कि जिस प्रकार धार्मिक मत-मतान्तरोंमें घोर अुच्छृंखलता बढ़ गयी, अुसी प्रकार समाजकी व्यवस्था भी जन-रुचिकी सुविधापर चलने लगी। वर्ण-व्यवस्थाकी शृंखला टूट गयी थी; परन्तु वह अपने बाहरी रूपमें अधिकाधिक विषमता अुपस्थित कर रही थी। अनेकानेक जातियाँ और अुपजातियाँ बन गयी थीं और अुनमें परस्पर बहुत भेद बढ़ गया था। नीच अूँचका भाव भी चरम सीमा तक पहुँच चुका था और समाजमें स्त्रियोंका स्थान निम्न हो गया था। अिस सम्बन्धमें तुलसीदासने विशेष रूपसे प्रकाश डाला है।

अुपर्युक्त विवेचनाके आधारपर भक्त कवियोंके जीवनमें जो युग-प्रभाव लक्षित हुअे, अुन्हें देखियेगा—

राजनीतिः—शैव कवि विद्यापतिने राजाओंकी शृंगार-प्रियताकी परम्परामें राधाकृष्णके मिलनके अनेक चित्र खींचे, साथही साथ शृंगारके समस्त अुद्दीपन भी अुन्होंने अेक स्थानपर अेकत्रित कर दिये :—

सरस वसंत समय भल पाओलि
दछिन पवन बहु धीरे।
सपनहु रूप बचन टाक भाविय,
मुखसे दूरि करु चीरे॥
तोहर वदन सम चांद हो अथि नहिं
जे यो जतन विह देला।
के बेरि काटि बनावल नव कय
ते यो तुलित नहिं भेला।
लोचन तूअ कमल नहिं भे सक
से जगके नहिं जाने।
से फिर जाय लुके नह जलभय
पंकज निज अपमाने॥
भनहि विद्यापति सुनवर जीवति
अी सम लछमि समाने।
राजा सिवसिंह रूपनरायण
लखिया देह प्रति भाने॥

शोभा और सौन्दर्यकी परिपाटियोंके आधारपर कविने राजा और रानीकी सौन्दर्योपासनाका आकर्षक चित्र अुपस्थित किया है।

संत कबीरने भी अपने समयमें राजनीतिक अत्याचारोंको दृष्टिमें रखते हुअे सिकन्दर लोदीकी असहिष्णुतापर प्रकाश डाला :—

गंगरू गूसाअिलि गहिर गंभीर।
जंजीर बांधि कर खरे कबीर॥
मनु न डिगै तनु काहे कअु डराअी।
चरन कमल चितु रहिओ समायी॥
गंगाकी लहरि मेरी टुटी जंजीर।
प्रिय छालापर बैठे कबीर॥
कहि कबीर कोअु संगन साथ।
जल थल राखन है रघुनाथ॥

अिसी प्रकार 'भुजा बान्धि मिला करि डारिओ। हसती कोपि मूंह महि मारिओ।' का प्रसंग है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियोंका चित्रण गोस्वामी तुलसीदासने 'दोहावली' में स्पष्ट रूपसे किया है :—

गोंड गंवार नृपाल महि,
यमन महा महिपाल ।
साम न दाम न भेद कलि,
केवल दंड कराल ॥

'कवितावली' में वे कहते हैं :—

अेक तो कराल कलिकाल सूलमूल तामें,
कोढ़में की खाजु सी सनीचरी है मीन की।
वेद धर्म दूरि गये, भूमि चोर भूप भये,
साधु सीदमानजानि रीति पाप मीनकी ।

'विनय पत्रिकामें' तुलसीदासजीने लिखा है :—

राज समाज समाज कोटि कटु
कल्प-कल्प कलुष कुचाल नयी है ।
नीति प्रतीति प्रीति परिमिति
रति हेतुवाद हठि हेरि हओ है ॥

मीराने भी अपने जीवनमें घटित होनेवाले राजनीतिक प्रसंगोंका अुल्लेख किया है, यद्यपि अिनका सम्बन्ध अिनके पारिवारिक जीवनसे ही था। वे लिखती हैं :—

राजा बरजै राणो बरजै
सब बरजै परिवारी ।
कुंवर पाटवी सो भी बरजै
और सेहल्या सारी ॥

तथा—

सांप टिपारो राणाजी भेज्यो
दयो मेड़तणी गलड़ार
हंस-हंस मीरा कंठ लगायो
यो तो म्हारै नौसर हार ।
विष को प्यालो राणाजी भेज्यो
द्या मेड़तनीने प्याय ।
कर चरणामृत पी गयी रे
गुण गोविन्दरा गाय ॥

धार्मिक संत कबीरने अपने समयके दंभी और आडंबर फैलानेवाले बनारसके साधुओंका व्यंग्यपूर्ण वर्णन निम्नलिखित पदमें किया है :—

गज सादे तै तै धोतीआ
तिहेरे पाहनि तग ।
सकी जिन्हा जप मालीआ,
लोटे रथि निबग ॥
ओअि हरिके संत न आखी
अहि, बानरसिके ठग ॥
अैसे संत न मोकअु भावहि ।
डाला सिअु पेडा गटकावहि ॥ आदि

महात्मा सूरदासने अपने गुरु श्री वल्लभाचार्यकी स्तुति अिस प्रकार की :—

भरोसो दृढ़ अिन चरनन केरो
श्री वल्लभ नख चन्द्र छटा बिनु
सब जग मांझ अंधेरो ॥ आदि

महाकवि तुलसीदासने अपने समयकी धार्मिक स्थितिका वर्णन अिस प्रकार किया है :—

आस्रम बरन धरम विरहित जग,
लोकवेद मरजाद गयी है ।
प्रजा प्रतित पाखंड पाप
रत अपने-अपने रंग रंगी है ॥
भाँति सत्य सुभ रीति गयी
घटि बढ़ी कुरीति कपट कलअी है ।
सीदत साधु, साधुता सोबति,
खल विलसत हुलसेति खलअी है ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमारथ स्वारथ साधन भये,
अफल-सकल, नहिं सिद्धि सअी है।
कामधेनु धरनी कलि गोबर
विवस विकल जायति न बअी है॥

मीराने भी अपने गुरु रैदासका निर्देश किया है:—

गुरु मिलिया रैदासजी दीन्ही ज्ञानकी गुटकी।

अथवा—

रैदास सन्त मिले मोंहि
सतगुरु दीन्हीं सुरत सहदानी॥

अिसके अतिरिक्त अुन्होंने अपने पूर्व भक्तोंका भी निर्देश किया है :—

घनी भगत पीपा पुन सबरी
मीराकी हू करो गनना।

अथवा—

दास कबीर घर बालद जो लाया
नामदेवकी छानद छन्द।
दास धनाको खेल निपजायो
गजकी टेर सुनन्द॥

अिसके बाद सामाजिक परिस्थितियोंका अुल्लेख देखिये। कबीरने समाजमें हिन्दू मुसलमानोंके परस्पर भेद और वैमनस्यपर घोर प्रहार किया। वे कहते हैं:—

अलहु अेक मसीति बसतु है
अवस मुलुकि किसुकेरा।
हिन्दू मूरति नाम निवासी
दुअि महि ततु न हेरा॥
अलह राम जीवअु तेरे नाअी।
तू करि मिहरामति साअी॥
दखन देस हरीका वासा
पछिमि अलह मुकामा।
दिल महि खोजि दिलै खोजहु
अेसी ठअुर मुकामा॥

तुलसीदासजीने भी तत्कालीन समाजका चित्रण अिस प्रकार किया है:—

बादहिं सूद्र द्विजन सन हम
तुम तें कछु घाटि।
जानहिं ब्रह्म सो विप्रवर
आँखि देखावहिं डाँटि॥

और "कवितावली" में कहते हैं:—

बबुर बेरेको बनाया बाग लाहयत,
रूँधवेको सोअी सुरतरु काटियत हैं।
गारी देह नीच हरिचन्द्र हूँ दधीचहूको;
आपने चना चबाअी हाथ चाटियत है॥

अिस प्रकार हमारे भक्त कवियोंकी रचनाओंमें युगके प्रभाव लक्षित होते हैं, यद्यपि अिन प्रभावोंसे अुनके विश्वजनीन काव्य-प्रभाव किसी प्रकार कम नहीं होता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रधान सम्पादकसे भेंट

: श्री मोहनसिंह सेंगर :

अिसे आप मेरा कसूर समझिये या मेरे भाग्यका कि जिस-जिस पत्रमें मैंने काम किया या तो अर्थाभावसे वह बंद हो गया या मुझे ही कअी महीनोंतक वेतन न मिलनेके कारण अुसे छोड़ देना पड़ा। अिधर जबसे सेठोंने पत्रोंको खरीदना या नये-नये पत्र निकालना शुरू किया, अुनके पत्रोंमें नौकरी पानेके लिअे पत्रकारिताकी योग्यता या अनुभवसे भी ज्यादा जरूरत होने लगी है, नाते-रिश्ते या तगड़ी सिफारिशकी। सो अपने राम अिस सौभाग्यसे भी वंचित हैं, क्योंकि अपने सभी मित्र टुटपुँजिये और सभी नाते-रिश्तेदार निरे दिवालिये हैं। फिर भी चेष्टा करनेमें मैंने अपनी ओरसे कोअी कसर नहीं रखी। पर दुर्भाग्यसे जरूरतसे ज्यादा आबादीवाले अिस देशमें पत्रकारोंकी भी भला क्या कमी है? बहर-हाल अपने रामको भी कअी जगहोंसे निराशाके सिवा कुछ भी हाथ न लगा।

पर पत्रकारिताका चस्का अेक अैसी बीमारी है, जिसका अिलाज कुछ और कहीं भी नहीं। अिसके मरीजको पत्रका दफ्तर छोड़कर कहीं भी राहत नहीं मिल सकती। अिसलिअे मैंने फिर चक्कर लगाना शुरू किया। सोचा, हर पत्रके प्रधान सम्पादकसे सीधा मिला जाय और अुन्हें सुझाया जाय कि क्या-क्या नयी बातें देनेसे अुनके पत्रका प्रचार और लोकप्रियता बढेगी। जब वे कहेंगे कि 'पर अिनके लिखनेके लिअे?' बस, तब अपने राम अीरानके जादुअी कालीनकी तरह अपना दिल अुनके सामने बिछा देंगे और फिर कराअेंगे अुन्हें अेक नयी दुनियाकी सैर। अिस प्रयोगको भी करके देखा, पर दुर्भाग्यवश कहीं तो 'सोचकर बादमें आपको सूचित करेंगे' कहकर अपने रामको टाल दिया गया और कहीं अत्यधिक कार्यव्यस्त होनेकी बात कहकर प्रधान सम्पादकसे मिलने ही न दिया गया। फिर अपने राम डबल निराश हो चले।

अेक दिन सुना कि हमारे नगरसे अेक नया पत्र निकलने जा रहा है। और अिसे निकालनेवाले हैं नगरके अेक धन्ना सेठ, जिनके यहाँ चोर-बाजार और अिनकम-टैक्स-चोरी आदिका अनलिमिटेड अेवं पचासों लिमिटेड कंपनियोंका कारबार होता है। लाख चेष्टा करनेपर भी यह न जान सका कि अुसके प्रधान संपादक कौन होंगे। आखिर प्रार्थनापत्र लिखकर डाकसे ही भेज दिया। तीसरे दिन अुत्तर आया कि 'स्टाफ रखा जा चुका है। भविष्यमें कोअी जगह खाली हुअी, तो आपको सूचना दी जायगी।' अिस तरह यहाँ भी अपने राम चूक गये! परन्तु भाग्यसे विद्रोह कैसे किया जाता?

और जब यह पत्र निकला, तो पहले अंकने ही रही सही आशापर भी तुषारपात कर दिया। नाम था "विश्व-कल्याण" और मुखपृष्ठपर भारत-सरकारके प्रधान मंत्री तथा राष्ट्रपतिसे चौगुना बड़ा चित्र छपा था अिसके मालिक बदसूरत सेठजीका, जिसके नीचे था मोटे टाअिपमें विश्व-कल्याणके लिअे सेठजीका शुभ और मार्मिक संदेश! पत्रको देखकर बड़ी झुँझलाहट हुअी; पर पेटके लिअे नौकरी करना भी तो जरूरी था। अगर वह मिल सकती थी, तो शायद अिसीमें क्योंकि अन्य पत्रोंके द्वार स्थायी स्टाफके कारण बंद हो चुके थे। देखा कि अिसके प्रधान सम्पादक कौन हैं। प्रिंट लाअिनके साथ जरा मोटे टाअिपमें छपा था—**प्रधान सम्पादक: डा० निरंजन निर्विकारकर,** अेम० अे०। अेक मिनट तक मैं सिर खुजलाकर सोचता रहा कि आखिर ये सज्जन किस जाति और किस प्रान्तके हो सकते हैं? पहला नाम तो किसी हिन्दूका-सा लगा, पर मेरा भौगोलिक ज्ञान अुस 'निर्विकार' गाँवका पता नहीं लगा सका, जिसके ये महाभाग 'कर' थे।

अन्तमें यही तय किया कि अिन्हें पत्र लिखा जाय-मिलनेके लिअे। पर नौकरीकी बात लिखी, तब तो मिलनेका समय मिलना ही कठिन है। अिसलिअे सोचा, 'अिंटर व्यू' के लिअे समय माँगा जाय। सो अेक अच्छे-से लेटर-हेडपर टाअिप करके अेक पत्र लिखा और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथमें अपना पता-लिखा हुआ टिकट-लगा लिफाफा भी अुत्तरके लिअे रख दिया। तुरन्त अुत्तर आया—'शनिवारको २।। बजे दिनके समय मैं आपकी प्रतीक्षा करूँगा।'

यह अुत्तर मेरे लिअे मानो आशाका अेक नया संदेश था। मैंने सोचा कि बस आधा मैदान तो मार ही लिया; बाकी रहा आधा, सो अपनी वाक्-चातुरी सहजबुद्धि, खुशामद और प्रशंसासे आदमीके भूखे मनको गुदगुदानेकी कला द्वारा अवश्य ही जीता जा सकता है!

—२—

शनिवार तकके समयका अुपयोग मैंने 'विश्व कल्याण' के प्रधान सम्पादकसे भेंट करनेकी तैयारीमें लगाया—अेक अच्छा-सा सूट धुलवाकर अिस्तरी करवाकर रखा; नये जूतोंपर चमाचम पॉलिश की; मोजे भी नये लाया; टाअी भी नयी; कोटके अूपरकी जेबमें लगानेको अेक नफीस रेशमी रूमाल जुगाड़ा और अेक सुनहरे क्लिपका फाअुन्टेनपेन। फिर अेक कागजपर वे प्रश्न लिखे, जो प्रधान सम्पादकजीसे पूछने थे। कअी तरहके पैड देखनेके बाद अेक बढ़िया कागजका पैड चुना। यह सोचकर कि कहीं वे यह न पूछ बैठें कि आप किस पत्रके प्रतिनिधिकी हैसियतसे 'अिंटरव्यू' ले रहे हैं, अिसलिअे यह भी ठीक कर लेना चाहिये। किसी भारतीय या बहुत प्रसिद्ध विदेशी पत्रका प्रतिनिधि बतानेसे तो पोल खुल सकती है, अतः क्यों न अन्तर्राष्ट्रीय पत्रकार-संघके मुखपत्र 'दि जर्नलिस्ट' का ही प्रतिनिधि अपने आपको बतलाया जाय? अिसमें बचतकी गुंजाअिश अिसलिअे थी कि न तो अिस नामका कोअी संघ है और न अुसका कोअी मुख-पत्र ही। बस, सम्पादकजी भी फूल कर कुप्पा हो जाअेंगे!

नियत समयपर मैं 'विश्व-कल्याण' के दफ्तर पहुँचा और अपना कार्ड भीतर भेजवाया। सम्पादकजीने तुरन्त मुझे बुलवाया। मेरे कमरेमें पांव रखते ही अुन्होंने आगे बढ़कर हाथ मिलाया और अपनी मेजके सामने पड़ी कुर्सीपर बैठनेका अिशारा करते हुअे बोले—"आपने जो कष्ट किया, अुसके लिअे मैं आपका बड़ा आभारी हूँ। पर आपने अितने बड़े-बड़े नेताओं, समाज-सेवियों और अन्य प्रमुख व्यक्तियोंको छोड़कर भला मुझसे 'अिंटरव्यू' लेनेकी जरूरत क्यों समझी?"

मुझे लगा, बातचीतकी शुरूआत तो ठीक ढंगसे ही हुअी। मैंने पैड मेज़पर रख कलाअीपर बँधी घड़ीकी ओर देखकर कहा—"जी, यही तो अेक बात है, जिसकी ओर अन्तरराष्ट्रीय पत्रकार-संघने विशेष ध्यान देनेका निश्चय किया। यानी जिन्हें आप बड़े नेता, समाज-सेवी और प्रमुख व्यक्ति मानते हैं, अुन्हें आखिर बड़ा बनाया किसने है? अुनकी रीति-नीतिका, अुनके राजनीतिक ज्ञानका और पेचीदा समस्याओंके हलका स्पष्टीकरण तो आखिर आप और हम ही करते हैं न। तब फिर जिन पत्रोंको चौथी स्टेट माना गया है, क्या अुसके कर्ता-धर्ताका क्या कुछ भी महत्व नहीं? मुश्किल तो यही है कि आप-हम कार्य और कर्त्तव्य-पालनमें अितने व्यस्त रहते हैं कि अपनी ओर देखनेकी फुरसत ही कहाँ?"

"हाँ, बात तो कुछ अैसी ही है।"

"अैसी ही नहीं, बिलकुल यही है, साहब। अब अुदाहरणके लिअे आप 'विश्व-कल्याण' को ही लीजिये। आप यदि मुझपर खुशामद या झूठी प्रशंसाका दोषारोपण न करें, तो मैं स्पष्ट कह सकता हूँ कि आपके अग्रलेखों और टिप्पणियोंने शान्ति, समृद्धि और लोक-कल्याणका जो अेक नया मार्ग भारत ही नहीं, विश्वको दिखाया है, वैसा आजतक कोअी भी राजनीतिक नेता या विशेषज्ञ नहीं दिखा सका।"

"अरे साहब, आप भी क्या कहते हैं?"

"बस, मुश्किल तो यही है कि सच बात सुनने और माननेमें भी हम हीन-भावनाका अनुभव करते हैं। अिसे दुर्भाग्यवश हम विनय और शालीनता मान बैठे हैं।"

"जी हाँ, कुछ-कुछ तो अैसा है ही। पर आपने मेरी लिखी..."

"क्या-क्या चीजें पढी हैं, यही न? भला, मैंने आपकी लिखी हर चीज़ और अुसका हर शब्द गौरसे न पढ़ा होता, तो क्या अिस अिंटरव्यूके लिअे आपको कष्ट देता? भाषापर आपका जो अधिकार है, जैसी साफ़-सुथरी आपकी शैली है और जैसे निष्पक्ष अेवं स्वतंत्र आपके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचार हैं, मैंने तो भारतीय पत्र-संपादकोंमें आजतक अन्यत्र कहीं नहीं देखे। अधिकांश संपादक पेटके लिअे अपनी आत्मा और मस्तिष्क बेच चुके हैं।"

"आपने मेरी विधान..."

"—सम्बन्धी पुस्तक देखी है,यही न? अरे साहब, अुसे तो मैं पाठ्य-पुस्तककी तरह ६-७ बार पढ़ गया हूँ और हर पृष्ठपर लाल-नीली पेंसिलसे अितने निशान लगाये हैं कि सफे-के-सफे रंग गये हैं।"

"और मेरी 'अिंडियन अिकनॉमी'?"

"लीजिये, आपने भी खूब याद दिलायी। मैं तो अभी अुसीका जिक्र करने जा रहा था। आप कुछ और न समझें, क्योंकि है यह ज़रा छोटे मुँह बड़ी बात, पर साहब, सच तो यह है कि कौटिल्यके 'अर्थशात्र' के बाद मैं तो 'अिंडियन अिकनॉमी' का ही कायल हूँ। अिस विषयपर बड़े-बड़े विषेशज्ञों और प्रोफेसरोंकी अिधर जो-जो भारी-भरकम पोथियाँ निकलीं, करीब-करीब मैं सब पढ़ गया हूँ। पर मुझे तो अुन सबसे आपकी चीज़ अधिक वजनदार और अध्ययनपूर्ण लगी। आपने तो अुसमें भारतीय अर्थनीतिका अबतकका क्रमबद्ध विकास ही नहीं, अुसकी भावी संभावनाओं तकका खाका-सा अुपस्थित कर दिया है।"

"पर साहब, हम लोगोंकी सुनता कौन है?'

"अजी, यह न कहिअे। आपको अभीतक अपनी ताकत और अुसके प्रभाओंका ठीक-ठीक अेहसास ही नहीं। आपको शायद मालूम नहीं कि आपके पत्रमें अिस वर्षके बजट और पंचवर्षीय योजनाकी जो आलोचनाअें निकलीं, सरकारने अुनकी कतरनोंको फाअिल करवाया और अुन्हींके अनुसार सारे कामोंमें रद्दोबदल भी हुआ।"

"अच्छा! लेकिन भला ये भीतरी खबरें आप तक कैसे पहुँच जाती हैं?"

मैंने अेक जोरका कहकहा लगाया और कहा—"देखिये साहब, यह हमारा ट्रेड सीक्रेट है, जिसे न बतानेके लिअे मैं क्षमा चाहता हूँ। पर अेक मोटा तथ्य तो यह है ही कि हमारे देशके अधिकांश पत्रकारोंको तो यह तमीज भी नहीं कि कौनसी खबर कहाँसे कैसे प्राप्त की जाय? यह बात जुदा है कि अेक विदेशी पत्रका प्रतिनिधि होनेके नाते मुझे कुछ विशेष सुविधाअें प्राप्त हैं; पर साहब, गाँठकी पूँजी भी तो कुछ होनी चाहिये अपनी अक्लकी।"

"जी हाँ, बेशक।"

मैंने अपनी जेबसे प्रश्नोंकी सूची निकालते हुअे कहा—"अच्छा, ये सब बातें तो बादमें होती रहेंगी; अभी मैं आपसे जो प्रश्न पूछने आया हूँ, पहले अुन्हें खत्म कर लूँ।"

अुन्होंने बड़े अित्मीनानसे कुर्सीकी पीठपर अपनी पीठको टिकाकर जरा आरामसे बैठते हुअे कहा—"लेकिन अुससे पहले मैं अेक निवेदन कर दूँ, ताकि आपके और मेरे समयका व्यर्थ खून न हो।"

"समयका खून!"—मैंने फिर कहकहा लगाया—"मैं समझा नहीं आपका आशय?"

"मैं समझाये देता हूँ। देखिअे, सच बात यह है कि मैं कोअी पत्रकार नहीं, सेठजीका कानूनी सलाहकार-भर हूँ। जब अुनकी शर्तोंपर कोअी सम्पादक काम करनेको राजी नहीं हुआ, तो अुन्होंने प्रधान सम्पादककी जगह मेरा नाम दे दिया। न मैं अग्रलेख लिखता हूँ, न टिप्पणी, और न लिख ही सकता हूँ। हमारा पत्र शान्ति और लोक-कल्याण नहीं, यथार्थमें शीत-युद्ध जारी रहे, यह चाहता है; ताकि बाजार तेज हों और सेठजीको लाभ हो। भारतीय विधान या अर्थनीतिपर मेरी कोअी किताब नहीं। बजट और पंचवर्षीय योजनाकी हमारे पत्रमें कोअी आलोचना नहीं, बल्कि बिना पढ़े समर्थन ही हुआ है। सेठजीके आदेशानुसार पत्रको यह नीति अपनानी पड़ी, जिसके कारण अुसका प्रचार लाख चेष्टा करनेपर भी काफी नहीं हो पाया। अिसके बाद अब आप जो भी कुछ पूछना चाहें, शौकसे पूछें।"

—३—

मुझे याद नहीं आ रहा कि 'विश्व-कल्याण'के ऑफिससे मैं कैसे निकला और कैसे घर पहुँचा। याद सिर्फ अितना ही आ रहा है कि आनेकी हड़बड़ीमें अपना फाअुन्टेनपैन और पैड मैं सम्पादकजीकी मेजपर ही छोड़ आया, जिन्हें जाकर लानेका साहस अब मुझमें नहीं था!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक गुजराती कवितापर अेक नजर

: श्री गौरीशंकर जोशी :

राष्ट्रका अुत्थान-काल जब निकट आता है, तब कोअी महापुरुष जन्म लेता है और वह अपने अद्‌भुत व्यक्तित्व तथा अदम्य अुत्साहसे सारे अितिहासको और विश्वके घटना-चक्रको बदल देता है। अुस युगकी प्रत्येक घटनामें अुसीकी वाणी और राष्ट्रोत्थानकी ओर अुठाये गये प्रत्येक चरणमें अुसीकी पदचाप सुनायी देती है।

राष्ट्रके जीवनमें जब कोअी अैसी धीरोदात्त घटना होती है, तब साहित्यमें भी अेक नया प्रवाह शुरू होता है। कवि अपनी नित नयी कल्पना द्वारा अुस युग-पुरुषके साथ स्वरमें स्वर मिलाकर गाता है।

गांधीजी अिस युगके सबसे बड़े क्रांतिकारी और भारतकी आज़ादीके जनक हो गये। अुनके आनेसे पहले देशकी स्थिति बड़ी दयनीय थी। लोग दबे-पिसे और भयभीत दशामें किसी तरह अपने दिन काट रहे थे। गांधीजी आये और देशकी हवा बदल गयी। अुन्होंने आज़ादीका शंख फूंका। लोगोंमें अुत्साह तथा जाग्रतिकी लहर दौड़ गयी। भारतकी अन्य भाषाओंके साहित्यके साथ-साथ गुजराती-साहित्यके लिअे भी वह काल असाधारण महत्वपूर्ण साबित हुआ, जब राष्ट्रपिता गांधीने गुजरातको अपने कार्यक्षेत्रका गौरव प्रदान कर अपने सान्निध्यसे लोगोंको पहले-पहल मौलिक ढंगसे सोचने-विचारनेकी दृष्टि प्रदान की। गुजरातके साहित्यिकोंने आदर्शको मूर्त रूप देनेकी कोशिश की। प्रयोग और साहसको जीवनमें स्थान मिला। गोवर्धन-युगके बाद गुजरातके कवियोंने, जो अबतक केवल परमेश्वर, प्रेम और प्रकृतिके ही गीत गाते रहे थे, जीवनकी कठोर वास्तविकताका अनुभव किया। वे परियोंके देशमें विचरण और कल्पनाकी तरंगोंमें बहना छोड़कर जन-साधारणकी ओर मुड़े। जैसा कि स्वाभाविक था, शुरू-शुरूमें तो केवल नवीनताके लिअे ही नवीनताकी अुपासना की गयी। धोबी, भंगी, दीमक, पालिशवाला आदि कविताके विषय बने। लेकिन अिससे बड़ा लाभ यह हुआ कि अिस दृष्टि-परिवर्तनसे जीवनमें जिस नवीनता और अुत्साहका अनुभव हुआ, अुसने विशालता और अुदारता भी प्रदान की। नतीजा यह हुआ कि दीन, हीन, दुःखी, शोषित और पीड़ितके प्रति सहानुभूति पैदा हुअी और गुजरातके कवियोंने अुनकी हमदर्दीके गीत गाये।

सन् १९३० से ५० तकका काल गुजराती काव्यका समृद्धि काल माना जाअेगा। अिन पिछले दो दशकोंमें जो काव्य-संग्रह प्रकाशित हुअे, अुनमें शैली और विषयकी दृष्टिसे काफी विविधता दिखायी देती है। अुनमेंसे कुछ मुख्य हैं— श्री न्हानालालका 'कुरुक्षेत्र', श्री अरदेशर फरामजी खबरदारका 'कल्याणिका' और 'राष्ट्रिका', श्री रामनारायण पाठकका 'शेषनां काव्यो', श्री झीणाभाअी 'स्नेहरश्मि'का 'अर्घ्य' और 'पनघट', श्री सुन्दरम्‌का 'काव्यमंगला', 'वसुधा' और 'यात्रा' (१९५१में), श्री अुमाशंकर जोशीका 'विश्व शांति', 'गंगोत्री', 'निशीथ', 'प्राचीना' और 'आतिथ्य', श्री लक्ष्मीनारायण व्यास 'स्वप्नस्थ' का 'अचला', स्व. श्री. झवेरचन्द मेघाणीका 'अेक तारो', श्री चन्द्रवदन महेताका 'रतन' और 'अिला-काव्य', श्री पूजालालका 'पारिजात', श्री मनसुखलाल झवेरीकी 'आराधना', श्री भानुशंकर व्यास 'बादरायण' का 'केडी', श्री डोलरराय मांकडका 'भगवाननी लीला', श्री मुकुन्दराय पट्टणी 'पाराशर्य' का 'संसृति', श्री अिंदुलाल गांधीका 'गोरसी' और 'शतदल', श्री प्रह्लाद पारेखका 'बारी बहार' और 'सरवाणी', श्री मगनलाल देसाअी 'कोलक' का 'सांध्यगीत', श्री अनामीका 'काव्य संहिता', श्री मगनभाअी पटेल 'पतील' का 'प्रभात नर्मदा' और गोविन्द स्वामीका 'प्रतिपदा' आदि।

यद्यपि पहला महायुद्ध समाप्त हो चुका था, लेकिन लोगोंके दिलसे युद्धका भय कम नहीं हुआ था। युद्धसे पीड़ित जनता शांतिके लिअे छटपटा रही थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमेशा सिरपर मंडराते हुअे युद्धके भयानक बादलोंके बीच दुनियाने पूर्वमें आशाकी अेक नयी किरण देखी और गुजरातके कविने गाया :—

"अुरे अुरे संजीवनी स्फुरे छे
प्राणे अहो ! चेतन संचरे छे ।
दीपे नवयुगनी भव्य दिगंतरेखा,
वेगे पडे नव नवी पंक्तिलेखा ।"

भावार्थः—अितिहास बड़ी तेजीसे बदल रहा है और वह विश्वके पटपर अत्यन्त तीव्रतासे नयी-नयी रेखाअें अंकित कर रहा है, जो स्पष्ट ही नये युगके अुज्ज्वल भविष्यका संकेत करती हैं । अतः स्वाभाविक ही हरेक मनुष्यके हृदयमें अुत्साह और अुमंग पैदा हो रहे हैं और सबके प्राणोंमें जागृतिकी लहर दौड़ गयी है ।

गांधीजीके पूर्व और अुनके समयके बीच जो आदर्श भेद था, अुसका स्पष्ट दर्शन हमें श्री अुमाशंकर जोशीकी 'विश्वशांति' में होता है । 'कंकाल तांडव' नामक कवितामें कविने गांधीजीकी दांडी-कूच और बारडोली-सत्याग्रहमें मिली अहिंसाकी अपूर्व सफलतापर लिखा—

"घूम्या घेला रसबसअुरे गुर्जरीना सपूतो,
ने गर्जाव्युं जगतभरमां गौरवे बारडोली;
खेल्या वीरो नवल रमणे क्षेत्र धारासणामां,
नाच्यां रंगे अुरअूलटथी तांडवो मृत्यु केरां;
अेना गीतो निज मुख घटे हिन्दीओअे न गावां,
अे तो गाशे जगत जनता हर्ष थी कोटि कंठे ।"

भावार्थः—देशमें जो राष्ट्रीय आन्दोलन हुअे अुनमें गुजरातके वीर सपूतोंने अुत्साहपूर्वक भाग लिया । देश-प्रेममें दीवाने बनकर और हृदयमें रसका अखूट भण्डार लेकर वे आगे बढ़े । बारडोलीके सत्याग्रहकी सफलताका गौरव तो सारे संसारमें गूँज अुठा; और धारासणामें भी अुन बहादुरोंने बड़ा कमाल दिखाया । वे मृत्युके तांडव नृत्यमें बड़े अुमंग और जोशके साथ नाचे । अिनका यशोगान करना हिन्दुस्तानियोंको अपने मुँह शोभा नहीं देगा । अुन्हें तो दुनियाके सारे लोग करोड़ों कंठोंसे खुशीसे गायेंगे ।

और संसारने जिस चीजके बारेमें अबतक कुछ देखा और सुना नहीं था, वही गांधीजीने अहिंसाके द्वारा व्यावहारिक सिद्ध कर दिखायी:—

"संसारे जे कदी नव दीठुं के सुण्युं, ते बन्युं त्यां,
निर्दोषोनां विशुध बलिदाने हसी त्यां अहिंसा ।"

मराठी और बंगला साहित्यमें युद्ध और अुसके भीषण परिणामोंका जैसा चित्रण दिखायी देता है, वैसा गुजरातीमें नहीं । अलबत्ता कुछ कवियोंने प्रयत्न जरूर किया है । श्री 'स्नेहरश्मि'के 'पनघट' नामक काव्य-संग्रहमें 'अग्निस्नान', 'खात मुहूर्त', 'घडाता विश्वनुं पानुं' और 'जनता' आदि कविताओंमें युद्ध दावानलके बीच कविका हृदय शांतिके लिअे छटपटाता मालूम होता है । 'अग्निस्नान' नामक कवितामें बमवर्षाका कैसा सजीव वर्णन है, देखिये:—

"दूर दूरनी क्षितिजो वींधी,
अूंचा नभनो गुंबज भरतो,
आघेरा को घनना घेरा गर्जन जेवो,
अन्तरिक्ष मां तरतो तरतो,
सूर्य तेजमां
हळहळ हळहळ हळहळ थातुं
पणछ थकी छूटेला शर शुं,
सर सर सरतुं,
फर फर फरतुं,
तीव्र वेग थी
ते खेतरनी वचमां मोटा
धूम धड़ाके,
माटीनो कैं रची फुवारो,
धण धण धण धण धरा ध्रुजावी,
फूटचूं अिडुं ।

भावार्थः— कवि बमवर्षक हवाअी-जहाजोंका वर्णन करता है । भोले-भाले किसान दूर-दूरसे क्षितिज को चीरते हुअे और आकाशको गुँजाते हुअे हवाअी-जहाजोंको आता देखते हैं । पहले-पहल वे अुन्हें देखकर आश्चर्य करते हैं कि भयंकर बादलोंकी-सी गर्जना करते हुअे अन्तरिक्षमें तैरते-तैरते ये क्या चले आ रहे हैं !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या यह सूर्यकी रोशनीमें कोलाहल करता हुआ किसी धनुषकी प्रत्यंचासे छूटा हुआ बाण है ! या यह कोअी सफेद नये ढंगका बड़ा अण्डा है । पर अितनेमें वे देखते हैं कि वह अण्डा तीव्र वेगसे खेतमें आकर बीचो-बीच सारी धरतीको कँपाते हुअे बड़े जोरके धड़ाकेके साथ फूट जाता है और चारों ओर मिट्टीका बड़ा फव्वारा-सा बन जाता है ।

और कवि मनुष्यके अिस आत्म-विनाशक पागलपन-पर हैरान होता है । क्या अिसका कभी अन्त होगा ?

शमशे अे ये !
आत्म-विनाशक घोर घेलछा
दूर थशे अे !
ज्यारे कर जे आजे रोषे
बॉम्ब बनावे,
ने वर्षावे,
ते जागीने जोशे
निजनी आत्मविनाशक
घोर घेलछा !"

भावार्थ :— कवि आगे सोचता है कि क्या मनुष्यका यह आत्म-विनाशक पागलपन कभी दूर होगा या नहीं ? मनुष्यके भीतर रही हुअी अच्छाअीके प्रति कविकी अपार श्रद्धा है । अिसलिअे अुसे विश्वास है कि अेक दिन जब वह जागेगा, तब अपने हाथों होनेवाले अिस आत्म-विनाशक पागलपनको, जो आज गुस्सेमें आकर बम बनाता और बरसाता है, निश्चयही देखेगा।

लेकिन मनुष्यके अन्दर रही हुअी अच्छाअीके प्रति कविको अपार श्रद्धा है । वह सोचता है, अिन्हीं युद्धोंमें-से अन्तमें विश्वअैक्यका अमृत प्रकट होगा और तब कहीं कोअी विसंवाद या प्रेमका त्रिकोण नहीं होगा--

"थातांज भेगां अुर बे, बधां ये
अेकत्व पाम्यां अुर विश्वकेरां,
त्रिकोण ना क्यां य रह्यो ज प्रेमनो !"

भावार्थ:—जब सबके हृदय अेक हो जाअेंगे और अुनके बीच किसी प्रकारका भेद नहीं रह जायगा, तब कहीं कोअी प्रेमका त्रिकोण नहीं होगा।

दुनियाके दुःखोंकी जड़ बहुत हदतक आर्थिक असमानता ही है, यह बात कविकी दृष्टिसे बाहर नहीं । अतः, 'घडाता अितिहास नुं पानुं' में कविने अेक कॉम-रेडके मुँहसे अपने समाजवादी विचार प्रकट कराये हैं । वर्तमान कालेबाजारके सम्बन्धमें भी कविकी कलम चली है । परन्तु अिन सब दुःखद परिस्थितियोंके बीच भी 'स्नेह रश्मि'का कवि मानवके प्रति कहीं भी अश्रद्धा प्रकट नहीं करता । 'जनता अने कवि' में वे स्पष्ट कहते हैं--

"अनन्त अनादि अेवी तृष्णा छे मानवनी,
तेनां मारे गावां कहो क्यां नवां गीत ?
आवा संहारमांय मानव मानव रहे,
अे छे मारी कवितानुं मोंघुं नवनीत ! "

भावार्थः—मानवकी तृष्णा तो अनन्त और अनादि कालसे चली आ रही है । अिसलिअे कवि कहता है कि अुसके बारेमें मुझे कोअी नये गीत नहीं गाने हैं । लेकिन अिस संहारमें भी मनुष्य मनुष्य रहे, वह अपनी मनुष्यता न छोड़े; बस, यही मेरी कविताका मूल्यवान मधुर कोमल नवनीत है ।

नये युगमें नयी दृष्टिके कारण प्रकृतिके प्रति भी कवियोंका दृष्टिकोण बदला । अतः, प्राचीन कवियोंमें नर्मद, नरसिंहराव और कलापीके काव्योंमें प्रकृति और मनुष्यके बीच जो विरोधाभास दिखायी देता था, वह अब नहीं रहा और प्राणिमात्र कवियोंकी सहानुभूति तथा प्रेमका पात्र बन गया । बिल्ली, कुत्ते, मक्खी और आमकी गुठली जैसी चीजें भी काव्यका विषय होनेसे न बच सकीं । श्री सुन्दरम् लिखते हैं, "हमारी नयी कविता विषयोंकी पसंदगीकी दृष्टिसे सर्वतोमुखी बनी है । अुसने सारे जगतको (जड़ चेतन सभी) अपने अंकमें लेकर अुसके अुत्तमोत्तम और अुन्नत तत्त्वोंको स्पर्श करनेका और अुसके गूढ़ सौंदर्यके रसको प्राप्त करनेका प्रयत्न किया है । जीवनके समस्त विभागों और सभी आविर्भावोंको अुसने अेक-सा पवित्र और अेक-सा आदरणीय माना है । और अनुचित या अनिष्ट माने जानेवाले विषयोंके पीछे रहे हुअे मानवता, संस्का-रिता और जीवनकी अुन्नत अथवा गहन गतिके छिपे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

या प्रकट सौन्दर्य और सत्यकी धड़कनकी आवाज सुननेकी कोशिश की है। अुसने जीवनके प्राकृत और भव्य, क्षणिक और सनातन, स्थूल और सूक्ष्म, कुरूप और सुन्दर सभीको स्पर्श करने, समझने तथा गानेका प्रयत्न किया है।"

यह कहना अनुचित नहीं होगा कि पिछला युग भारतवर्षके लिअे सबसे महत्वपूर्ण और संघर्षका काल साबित हुआ है। अितिहासमें अिस युगके बारेमें बहुत-कुछ लिखा जायगा। सन् १९४२ का अगस्त आन्दोलन, श्री सुभाषचंद्र बोसके नेतृत्वमें आजाद हिंद फौजकी हल-चल, बंगालका भयंकर अकाल, साम्प्रदायिक दंगे, देशकी आजादी और विभाजन आदि कअी बातें अिसी युगमें हुअीं। अिसी युगमें भारतने अपनी आजादीके संग्राममें मुख्य पार्ट अदा किया। परिणामस्वरूप देशने आजादी हासिल की। अिस प्रकार कुल मिलाकर यह युग संघर्ष-पूर्ण घटनाओंसे परिपूर्ण रहा। ये सब बातें अैसी थीं, जो देशके हरअेक व्यक्तिके दिलको स्पर्श करने और भावनाओंको अुभाड़नेवाली थीं। साहित्य देश और समाजका प्रतिबिम्ब होता है, अिस नियमके अनुसार अिस युगकी साहित्यिक रचनाओंमें अिन महत्वपूर्ण घटनाओंका काफी असर दिखायी देना चाहिये था। लेकिन ताज्जुब यह कि अिनसे पूरी तरह प्रभावित होनेके बावजूद भी हमारे देशके साहित्यिकोंकी कलम अिन घटनाओंको अपना विषय न बना सकी। सन् १९२० और '३० के आजादी-आन्दोलनमें तमाम जनता और साहित्यिकोंमें जो अुत्साह, अुमंग और भावनाका जोश दिखायी दिया, वह अिस बार कुछ अपवादोंको छोड़कर अवश्य नहीं दीखा। क्या अिसका कारण दूसरे विश्वयुद्धके परिणामस्वरूप पैदा होनेवाला आर्थिक संकट और जीवनकी विषमता थी? कुछ भी हो, अिस सचाअीसे अिनकार नहीं किया जा सकता कि विश्वके अितिहासमें अहिंसक आन्दोलनके विजयकी जो अितनी अभूतपूर्व और महान् घटना घटी, अुसपर हमारे लेखकों और कवियोंकी कलम पूरे जोशके साथ नहीं चली।

गुजरातीमें श्री अुमाशंकर जोशीके आतिथ्य और 'स्नेहरश्मि' के 'पनघट' जैसे काव्य-संग्रहोंमें जरूर अिस युगकी धड़कन सुनायी देती है। लेकिन समग्र साहित्यकी दृष्टिसे तो ये चीजें बहुत ही अपर्याप्त मानी जाअेंगी। हालाँकि यह सच है कि जिन परिस्थितियोंमें और जिन भयानक परिणामोंके साथ हमें आजादी मिली, अुसके कारण लोग अुसका खुशी-खुशी स्वागत नहीं कर सके, अुलटे लोगोंमें मुक्तिके अुल्लासके बजाय विषाद, कटुता, रोषकी भावनाअें ही अधिक अुभर रही थीं--

"हैयें चढे जुवाल विशाल !
अूंडी वेदनाना—आज आ मुक्तिदिने !
छे आ मुक्ति ? के केवल मुक्ति-आभास ?"

भावार्थः—देशको आजादी प्राप्त हुअी, लेकिन विभाजन आदिके परिणामस्वरूप जो खून खराबी और मारकाट हुअी अुसके कारण लोगोंके दिलोंमें गहरी वेदना छायी हुअी थी। अिसलिअे कविको सन्देह होता है कि दरअसल क्या आजका दिन मुक्ति-दिन है या केवल अुसका आभास मात्र है ?

'स्नेहरश्मि' का कवि तो अुस दिन मुक्तिका स्वागत करेगा, जिस दिन अेककी पराजय दूसरेकी विजय और अेकका दुःख दूसरेका सुख न होगा, बल्कि सबको समान रूपसे अुसका लाभ मिलेगा--

"अेकनी भरती, अन्यनी ओट
अेवो विश्वक्रम पलटाय जे दी,
अेक नो जय, अन्यनो पराजय
अेवुं शके न बनी जे दिने धन्य,
ते दी हशे दिन साचो मुक्तिकेरो।"

अिसीलिअे वर्षोंकी तपस्या पूरी हुअी, सारी दुनिया आश्चर्यसे चकित होकर देखती रह गयी, लेकिन हमारे साहित्यके पृष्ठोंमें वह केवल अेक साधारण-सी घटना बनकर रह गयी। कुछ सामयिक पत्रोंमें छुटपुट रचनाओं और 'स्वातंत्र्य प्रभात' जैसी पुस्तकको अपवाद मानें, तो कह सकते हैं कि गुजराती कवियोंने भी हिन्दीके कवियोंकी भाँति ही स्वातंत्र्य-देवीका स्वागत पूरे अुत्साहसे नहीं किया।

यह सच है कि जब कलाकारके सामने कोअी अुच्च आदर्श होता है, तब वह अूँची कृतिका सृजन करता है। जब-जब कविने अुच्च आदर्श ग्रहण किया, तब-तब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुसने साहित्यमें अभिनव ग्रन्थ दिये। ध्येयकी प्राप्तिके लिअे त्याग और बलिदानकी आवश्यकता होती है, लेकिन यही अुसे अुत्साह और प्रेरणा भी देते हैं। अिसलिअे हम देखते हैं कि आजादीके बाद जिस अुत्साह और तत्परतासे देशके साहित्यिकोंको साहित्य-सृजन द्वारा देशके नव-निर्माणमें जी जानसे जुट जाना चाहिये था, वह नहीं हुआ।

आजकी गुजराती कविताकी प्रेरक शक्ति है प्रणय, भक्ति और प्रकृति। आजकल लगभग सभी काव्य-संग्रहोंमें प्रकृति और प्रणय सम्बन्धी गीत ही अधिक मात्रामें पाये जाते हैं। प्रकृतिके सौन्दर्य-निरूपणमें जिस तरह भिन्न-भिन्न कवियोंने अपनी स्वतंत्र दृष्टिसे काम लिया, अुसी तरह प्रेम-सम्बन्धी गीतोंमें भी काफी स्वतंत्रता बरती गयी। लेकिन यह बात भी स्वीकार करनी होगी कि आजकलके अधिकतर प्रणय-सम्बन्धी गीतोंमें दाम्पत्य-जीवनकी निर्मलता, प्रौढ़ता तथा गंभीरताकी अपेक्षा तरुणाअी. मस्ती, अुच्छृंखलता, चंचलता, अशांति और निराशाके भाव ही विशेष रूपसे पाये जाते हैं।

यह सच है कि आज जीवनमें आचार-विचारोंका मूल्य तेजीसे बदल रहा है। पुरानी धारणाओंको नया दृष्टिकोण मिल रहा है। आज हमारी दृष्टि मानवके बाह्य स्वरूपसे हटकर आंतरिक स्वरूपका मूल्यांकन करने लगी है। अैसे संक्रांतिकालमें समाजकी स्थिति कुछ विचित्र-सी हो गयी है। स्वाभाविक ही अिन परिस्थितियोंका असर साहित्यिकोंपर भी हुआ है। आखिर वे भी विश्व और समाजके ही अेक अंग हैं। लेकिन वर्तमान सामाजिक और आर्थिक विषमताके बावजूद अुनकी प्रतिभा कुंठित हीं हुअी और वे अपनी कलासे साहित्य-को अभिसिंचित करते रहे, यही कम आश्चर्यकी बात नहीं। फिर गुजराती कविताओंमें जहाँ अेक ओर अिस वैषम्यसे पैदा हुअी साम्यवाद और विश्व-बन्धुत्वकी भावनाओंका निरूपण हुआ, वहाँ दूसरी ओर अुसमें भक्ति और अध्यात्म जैसे विषयोंका भी अभाव नहीं। अेक ओर कवि न्हानालाल 'कुरुक्षेत्र' जैसे भक्तिकाव्यके साथ-साथ 'सोहागण' और 'पानेतर' में दाम्पत्य प्रेमकी निर्मलता व्यक्त करते हैं, तो दूसरी ओर श्री सुन्दरम् और पूजालाल जैसे कवि योगी अरविन्दके प्रभावके फलस्वरूप 'यात्रा' और 'पारिजात' में गहरी आत्मानुभूति। श्री सुन्दरमकी 'यात्रा' की अधिकांश कविताओंमें अध्यात्मका पुट मिलता है। 'अहो गांधी!' नामक कवितामें कविको लगता है कि क्या गांधीजीकी मृत्यु भी प्रभुकी ही करुणा नहीं? और वह अिस दारुण व्यथाको दूसरे ही ढंगसे शान्त करना चाहता है।

'तमोने बींधी गै सनन, करुणा अे शुं प्रभुनी?
मनुष्ये झंखेलां प्रणय-सतनो सिद्धि-पथ आ
असत् हस्ते थावुं सतत हत, अे अंतिम पथ?'

जिस मृत्युसे गांधीजीको, तबको मोहः कः शोकः— स्वयं अफसोस न होता, अुसके लिअे वह क्यों अफसोस करे। तब प्रश्न है कि क्या सत्य हमेशा असत्के हाथों अिसी प्रकार नष्ट होता रहे? सत्यके अुपासकका शहीद होना ही क्या सत्यके विजयका मार्ग है? नहीं। अेक और मार्ग भी है। तब कवि अध्यात्मका सहारा लेता है:—

"पूर्णथी पूर्ण अे तारा सत्य आनन्दनो घट
अक्षुण्ण, धरतीतीरे प्रगटाव, महा नट!"

श्री अिन्दुलाल गांधी 'गोरसी' और 'शतदल'में प्रकृतिके मोहक सौन्दर्यके गीत गाते हैं। स्व. मेघाणी, प्रह्लाद पारेख और सुधांशु प्राचीन भजनोंका राग अलापते हैं। साथ ही विश्ववंद्य महाकवि रवीन्द्रका रहस्यवाद श्री मेघाणी और नगीनदास पारेखके द्वारा अनुवादके रूपमें गुजरातीमें आया और अुसने अेक नयी धारा बहायी।

गुजराती कवितामें छन्दोंकी दिशामें भी काफी नये-नये प्रयोग हुअे हैं। कह सकते हैं कि नर्मद-युगमें मात्रिक छंदोंका जो प्रयोग शुरू हुआ, गोवर्धन-युगमें वह स्थान वर्णिक छन्दोंने ले लिया। बादमें धीरे-धीरे श्री अुमाशंकर जोशी, 'स्नेह रश्मि', सुन्दरम, मनसुखलाल, पाराशर्य, 'स्वप्नस्थ' और कोलक आदि कवियोंने अपनी भिन्न-भिन्न शैलियों तथा नये-नये प्रयोगों द्वारा अिस ओर काफी विकास किया। कवि न्हानालालकी डोलन शैली, केवल शब्दजालके भारसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दबी हुअी नहीं, बल्कि अर्थ और विचारप्रधान श्री ब. क. ठाकोरकी शैलीके दर्शन हमें भिन्न-भिन्न कवियोंकी रचनाओंमें होते हैं। लयकी दृष्टिसे बंगला गीतोंका और गीतिकाव्यकी दृष्टिसे अंग्रेजी साहित्यका भी गुजराती कवितापर काफी असर दीखता है। श्री प्रल्हाद पारेख, रतिलाल छाया और नाथालाल दवेकी कविताओंमें बंगला कविताकी कोमल-कान्त पदावलीके मधुर स्वर सुनायी देते हैं। श्री प्रह्लाद पारेखके 'बारी बहार' और 'सरवाणी' में अधिकांश गीत ही हैं, जिनपर स्पष्ट ही बंगला लय और संगीतका बहुत-कुछ प्रभाव मालूम होता है। खासकर वर्षा-गीतोंमें कविका संगीत मुखर हो अुठा है। देखिये अुनका अेक गीत :—

आवे छे मेहुलियो,
दक्षिण दिशना पर्वत कूदी
नादे गगन गजावे छे।
वीज-मशाल लअीने निज अे
तिमिरे मार्ग बनावे छे।
झरमर झरमर वरसीने अे
माटीने महेकावे छे।
वरसीने झड़ीओ, सर सरिता
झरणांने गहेकावे छे।

श्री रामनारायण पाठक, सुन्दरम्, अुमाशंकर जोशी, 'स्नेहरश्मि' और अनामीने गुजरातीमें सॉनेट और ब्लैंक वर्स (मुक्त छंद) की दिशामें सफल प्रयास किया। 'शेषनां काव्यो', 'पनघट', 'आतिथ्य', 'यात्रा' और 'काव्य-संहिता' में बीच-बीचमें सॉनेट और मुक्त छंद पाये जाते हैं। श्री अुमाशंकर जोशीने 'गुले पोलांड' में पूरी अेक सॉनेट माला ही दी है। यह पुस्तक मिन्सिकिये विचके 'क्रीमियन सॉनेट्स' का अनुवाद है।

कवि न्हानालाल, खबरदार और बोटादकरके भावपूर्ण रासोंसे प्रेरित होकर बहुतसे नये कवियोंने भी रास लिखनेकी कोशिश की, मगर सफल बहुत कम हुअे हैं। रासोंमें श्री न्हानालालका 'न्हाना न्हाना रास भाग-३', श्री खबरदारका 'रासचन्द्रिका', श्रीमती ज्योत्स्नाबहन शुक्लके 'आकाशनां फूल' और 'मुक्तिना रास' और श्री खंडेराव पवारका 'रास विलास' अुत्कृष्ट रचनाअें मानी जा सकती हैं।

गीतिकाव्यकी दृष्टिसे श्री अुमाशंकर जोशी, सुन्दरम् और 'स्नेहरश्मि' आदिने काफी अच्छे गीत लिखे हैं, फिर भी यह कहा जा सकता है कि श्री ब० क० ठाकोरकी धाक और दबदबेके कारण अुनके युगमें गुजरातीमें अर्थ और विचार-प्रधान कविताओंका ही अधिक विकास हुआ। श्री ब. क. ठाकोरकी गुजराती साहित्यपर ठीक वैसी ही द्दाक रही जैसी कि डा० जानसनकी अंग्रेजी साहित्य और श्री महावीरप्रसादजी द्विवेदीकी हिन्दी-साहित्यपर रही। अिसके बादकी तरुण पीढीमें आनेवाले कवियोंमें श्री नाथालाल दवे, प्रह्लाद पारेख, राजेन्द्रशाह, बालमुकुन्द दवे, वेणीभाअी पुरोहित और निरंजन भगत आदि अुदीयमान कवियोंने तो गीतोंकी ही दिशामें काफी प्रगति की है। अिस दृष्टिसे कहें तो आजकल गुजरातीमें कवि न्हानालाल, खबरदार, बोटादकर और स्व० मेघाणीके बादसे रुके हुअे गीति-काव्यका प्रवाह फिरसे प्रारम्भ हो गया है।

सच पूछा जाय तो गुजरातीमें खंडकाव्यों और महाकाव्योंकी बड़ी कमी है। यह कमी खटकती भी है। यद्यपि कवि न्हानालालने 'कुरुक्षेत्र' नामक महाकाव्य और श्री अुमाशंकर जोशीने 'विश्वशांति', श्री 'स्वप्नस्थ' ने 'अचला' और श्री चन्द्रवदन महेताने 'रतन' नामक खण्डकाव्य अवश्य लिखे हैं, लेकिन अुनमें महाकाव्य और खंडकाव्यके गुण सचमुच हैं या नहीं, यह तो कोअी गुजरातका समर्थ आलोचक ही बता सकेगा। हां, आजकल जिस अेक नयी पद्धतिका विशेष रूपसे विकास हो रहा है, वह है पद्यमय रेडियो संगीत रूपक। गुजरातके सफल नाटककार श्री चन्द्रवदन महेताकी प्रतिभा रेडियो-रूपकोंमें अधिक खिल अुठी है। 'काल रात्री', 'अेक डायरो', 'यम सावित्रि' और 'माघनुं मृत्यु' अुनके श्रेष्ठ रूपक माने जा सकते हैं। श्री अुमाशंकर जोशीने भी अिस ओर स्तुत्य प्रयास किया है। अुन्होंने अपनी 'प्राचीना' में अैसे पद्यबद्धरूपक दिये हैं। अिसके सिवा, कुछ छुटपुट संगीत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपक श्री वेणीभाअी पुरोहित, अिन्दुलाल गांधी, अविनाश व्यास और बालमुकुन्द दवे आदि कवियों द्वारा लिखे गये हैं। अभी अिस दिशामें विकासकी काफी गुंजाअिश है।

दूसरी अुल्लेखनीय बात यह मानी जायगी कि जाने-अनजाने गुजरातके कवि अब यह महसूस करने लगे हैं कि कविता सर्वभोग्य और लोक-रंजनकी चीज होनी चाहिये। अिसका अेक बड़ा कारण प्राचीन लोक-गीतों और भजनोंके सिवा सिनेमा, रेडियो और हिन्दीके कवि-सम्मेलन तथा मुशायरा आदि हो सकते हैं। नतीजा यह हुआ कि गुजराती काव्यने अेक नयी दिशाकी ओर मोड़ ली और अब धीरे-धीरे गुजरातमें आम सभाओं, मुशायरों और रेडियोपर काव्य-गानकी प्रथा जोर पकड़ती जा रही है। अिस ओर श्री अुमाशंकर जोशी, मनसुखलाल, बादरायण, कोलक, श्रीमती ज्योत्स्ना बहन शुक्ल आदिने काफी अुत्साह और दिलचस्पी दिखायी है। अिसके प्रति कुछ लोगोंने अपनी नाराजगी और नापसन्दगी भी जाहिर की है। मगर फिर भी यह मानना होगा कि सार्वजनिक रूपमें गुजरातमें श्री दलपतराम और मेघाणीके काव्य-गानकी शैलीका विकास फिरसे शुरू हो गया है। बेशक, अिस शैलीके प्रवर्तकोंमें श्री शयदा, अमीन आजाद, नसीम, आबूवाला, पतील, माणेक, वेणीभाअी, बालमुकुन्द दवे और निरंजन भगत ही मुख्य माने जा सकते हैं।

लेकिन अभी यह निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सकता कि अिन मुशायरों और रेडियोपर होनेवाले गीतोंने गुजरातकी लोकरुचिको परिष्कृत और परिमार्जित करके अुसे कोअी अुच्च स्तर प्रदान किया है। आधुनिक युगमें लोकरंजनके अिस पहलूको भी अेकदम भुलाया नहीं जा सकता। अिस सिलसिलेमें यहाँ अेक बात और कह देना जरूरी है। वह यह कि जहाँतक हिन्दी काव्यका सम्बन्ध है, अुसपर रेडियोसे प्रसारित होनेवाले फिल्मी-गीतोंका कोअी बहुत अच्छा असर नहीं पड़ा; अुलटे, हलके दर्जेके अिन बेढंगे गीतोंने जनताकी सुरुचि और तरुण पीढ़ीके कवियोंके दिमागोंको काफी विकृत बना दिया है। दूसरे, आये दिन होनेवाले कवि-सम्मेलनोंने विद्यार्थियोंमें कविताकी भूख पैदा करके कुछ हदतक काव्य-निर्माणको गति तो अवश्य दी, लेकिन अुनमें जो गंभीरता और शालीनता होनी चाहिये, वह कम पायी जाती है। अधिकतर अुच्छृंखलता ही पैदा हुअी और आजके कवि-सम्मेलन कवि-सम्मेलन न रहकर दंगलके अखाड़ोंका रूप ग्रहण कर रहे हैं। अिसलिअे हमें डर है कि सस्ती लोकप्रियता प्राप्त करनेके जोशमें कहीं गुजरातके कवि भी अिन दोषोंके शिकार न बन जाअें।

दो शब्द और। आजकल गुजरातीमें 'क्लान्त' और 'कलापी' की गजल शैलीका अच्छा विकास हो रहा है। श्री अमीन आजाद 'सबरस' नामक काव्यसंग्रहमें गीतोंकी अपेक्षा गजल लिखनेमें ही अधिक सफल हुअे हैं। अिस शैलीका आभास श्री सुन्दरम्, अुमाशंकर जोशी, मनसुखलाल, बादरायण, बेटाअी आदि कवियोंके नये काव्य-संग्रहोंमें भी मिलता है। लेकिन जिन कवियोंने शुद्ध रूपमें गजलें ही लिखीं, अुनकी अधिकांश गजलोंमें अुर्दूकी हू-ब-हू नकल दिखायी देती है। यदि वे अिस तरहकी नकलके बजाय अपनी मौलिकता, भाव, भाषा और संस्कृति—की रक्षा करते हुअे लोकरुचिके वशमें होकर नहीं, बल्कि अुसे परिष्कृत करनेकी दृष्टिसे अिस शैलीका अुपयोग अेवं विकास करें, तो वह गुजरात और गुजराती साहित्यके लिअे विशेष गौरव और शोभा प्रदान कर सकेगी।

अिस तरह कुल मिलाकर अपनी समस्त अच्छाअियों और बुराअियोंके साथ गुजरातीका आधुनिक काव्य सतत प्रगतिशील और अुन्नत है। अिस युगकी कृतियोंका आनेवाली पीढ़ियोंपर काफी गहरा असर होनेवाला है। आजकी नयी पीढ़ीके गुजराती कवियोंसे हम काफी आशा रख सकते हैं, क्योंकि वे अपने साथ अेक नयी चमक, अेक नयी ज्योति ला रहे हैं, जो निश्चित ही आनेवाले युगको दीर्घ काल तक प्रकाशित करती रहेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बंगला कविता :

शाओन राते

: श्री काजी नज़रुल अिस्लाम :

शाओन राते यदि स्मरणे आसे मोरे
वाहिरे झड़ वहे नयने वारि झरे ॥

भुलिओ स्मृति मम, निशीथ स्वप्न सम
आंचलेर गांथा माला फेलिओ पथ परे ॥
झरिवे पूवाली वाय गहन दूर वने
रहिवे चाहि तुमि अेकेला वातायने ॥

विरही कुहु केका गाहिवे नीप-शाखे
यमुना-नदी पारे शुनिवे के येन डाके ॥
विजलि दीप-शिखा खुंजिवे तोमाय प्रिया
दुहाते ढेको आंखि यदि गो जले भरे ॥

अनुवाद :

सावनकी रातमें

अनुवादक :— श्री मन्मथनाथ गुप्त

श्रावणकी रातमें यदि याद पड़ जाऊं मैं
बाहर चले आंधी और नयनोंसे जारी हो वारिधारा
तो निशीथ स्वप्नकी भांति जाना भूल मेरी स्मृतिको,
आंचलसे गूँथी हुओ मालाको देना फेंक राहमें।
गहन दूर वनमें चलेगी पुरबैया
और तुम रहोगी ताकती झरोखेमें अकेली।
नीपकी शाखामें विरही कोयल और मोर गायेंगे,
अैसा मालूम होगा मानो यमुनाके अुसपारसे कोअी रहा पुकार।
बिजलीकी दीप-शिखा खोजती फिरेगी तुम्हें सजनि,
यदि आंसू न रोक सको तो दोनों हाथों ढक लेना आंखोंको।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिन्सानका बच्चा

: श्री नन्दकुमार पाठक :

सोचा, बीमा कम्पनीकी अेजेन्सी ले लेने मात्रसे ही जीवनकी अष्ट-सिद्धियाँ हाथमें नहीं आ जातीं। कुछ दौड़-धूप भी करनी पड़ेगी। पहाड़ी गावोंमें रहकर अिस अेजन्सीसे क्या लाभ अुठाया जा सकता है? यहाँके लोग जिन्दगीके बीमा करानेके फायदेको क्या समझ सकते हैं! अनागत जीवनकी संभावित संकटकालीन अवस्थाओंसे मुकाबला करनेका यह आयोजन या नुस्खा अुनके दिमागमें ठूँसना अपने दिमागको पंचर करना है। अब यहाँ हाथ-पाँव मारनेसे कहीं और चला जाना अच्छा है। मन-ही-मन तमाम जगहोंका सिंहावलोकन किया, तो अेक जगह जँची—मदनपुर। कालिजका साथी रंजीत भी वहीं रहता है। अुससे भी मदद मिलेगी। अतअेव मैं वहाँ जा पहुँचा।

सुबहके आठ बजे होंगे। बाहरके बरामदेमें रखी जीर्ण और अनेक प्रकारकी मरम्मतवाली बेंतकी अेक कुर्सीपर चुपचाप बैठ बरामदेके छोटे हिस्सेमें लगे मौसमी फूलोंको देख रहा था। अितने लम्बे अरसेके बाद जब मिलेंगे तो आवाज देकर, बुलाकर मिलना भी कोअी मिलना है। मिले तो अैसा कि आनन्द आ जाय। आकस्मिक और अप्रत्याशित मिलनेसे अुसका अुल्लास और प्रेम बेकाबू हो जाय। मैं अुसके बाहर निकलनेका अिन्तजार कर ही रहा था कि भीतर, दाहिनी ओरके कमरेमें, चिकके अुस पार अेक विचित्र अभिनय शुरू हो गया।

दो स्वर अेक साथ सुनायी दिये। अेक स्वर बच्चेका था और दूसरा स्त्रीका कंठ। समझनेमें जरा भी देर न लगी कि ये माँ-बेटे हैं। फूल और फल हैं। दोनों खेल रहे हैं। लुका-छिपिका खेल, दौड़की प्रतियोगिता, सियारकी बोली, बिल्लीकी आवाज, शेरका दहाड़ना, कुत्तेका भूँकना, घोडेकी सवारी, राजा बननेका नाट्य। सभी काममें मां हारती गयी। राजा बेटा जीतता गया। राजा बेटाकी किलक और माँकी पुलक तथा ममतासे भरे स्वरको सुनकर मैं कल्पना और विचारमें डूब गया। यह नारी वह मौसमी फूल नहीं जो नयनाभिराम होकर भी फल नहीं दे सकता और मुर्झा कर बिखर जाता है। मैं सोच ही रहा था कि चिकके अुस पारकी नारी जो खेलके हर पैंतरेमें अपने राजा बेटासे बड़ी मासूमियतसे हारकर बार-बार चूम रही है और जैसे वह अपनी अवस्थाओंके तमाम व्यवधानोंको पारकर अपनी ही शिशुतामें लौट आयी है, वह लावण्यवती है या नहीं? अितनेमें ही हवाका अेक हल्का झोंका आया। अुसने चिकको फहराकर अुड़ा दिया। कमरेकी पृष्ठभूमि जिसपर माँ-बेटेका निःशंक बाधा-व्यवधान रहित खेल हो रहा था, खुल गयी। देखा कि माँ हारकर फर्शपर गिर पड़ी है और राजा बेटा अुसके सीनेपर चढ़कर बैठा हाँफते स्वरमें पूछ रहा है—"अब बोलो तो?"

मैंने अुस अवस्थाके चित्रको देख लिया। परास्त माँके सीनेपर विजयी राजा बेटाको आसीन। अुसके बाल अस्त-व्यस्त थे। साड़ी जो हल्का जर्द रंग लिये थी, फर्शपर बिछी हुअी थी। दोनों हथेलियोंपर अुसका अूर्द्धमुख सिर टिका था। सीनेके अुभारके निकट बैठा हुकूमतकी भाव-भंगिमा बनाये, गर्दन तक छितराये बाल वाला राजा बेटा। पराजिताकी आँखोंमें विजयीके प्रति अथाह ममता और प्यारकी लहरें हिलोरें ले रही थीं। अुसने भी मुझे देख लिया। देखते ही सहमकर, बच्चेको गोदमें लेते हुअे खड़े होकर तपाकसे अेक ओर हो गयी। खेल हठात् बन्द हो गया। खामोशी छा गयी। मैं झेंपकर अेक क्षणभरके लिअे शिथिल-सा हो गया। वह क्या सोचेगी! मैं भी कोअी मनचला हूँ! भद्र मनुष्य कहीं अैसा भी करता है कि अनजान किसीके घरमें बैठकर भीतर झाँका करे। अपने घरमें औरतें किसी भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवस्थामें हो सकती हैं। अरे, जरा खाँसही दिया होता ! आवाजही दे दी होती। यह कैसी बात है ? संकटमें पड़ी हुअी अपनी कुलीनताकी रक्षाके लिअे अब जो कुछ बन पड़े वही किया जाय अिसलिअे मैंने पुकारा–"सुनो, बेटा, जरा बाहर आओ तो। तुम्हारे बाप कहाँ हैं ? रंजीत ? मैं अुनका दोस्त हूँ। कबसे बैठा अिन्तजार कर रहा हूँ। आओ, सुनो।"

कोअी अुत्तर नहीं। निस्तब्ध शान्ति। मैं अपने शंकित और शिथिल मनको समझाता जा रहा था। लेकिन यह कहीं रंजीतसे कह दे तो। लेकिन, नहीं, यह रंजीतसे कह नहीं सकती। नारी तो चाहती ही है कि अपने अस्तित्वका प्रभाव पुरुषकी आहत और मचली हुअी निगाहोंमें देखे। अिसीलिअे तो वह अपने सरके बालोंमें लहरें और भूलभुलैयाँ बना अपने शरीरके अुतार-चढ़ावके अनुरूप अिन्द्रधनुषी दुपट्टेसे सजाकर पुरुषोंकी नजरोंपर तैरना चाहती है। अिसमें अुन्हें बड़ी आत्म-तृप्ति मिलती है। फिर मन-ही-मन विरोध अुठता, नहीं, यह अुक्ति घरमें रहनेवाली अेक माताके साथ चरितार्थ नहीं हो सकती। वह अपने घरेलू काम-काजके बोझ और अुलझनोंमें व्यस्त रहती है। चितवनोंका आदान-प्रदान और मुस्कानोंका विनिमय तो घरेलू झंझटोंसे अुन्मुक्त और स्वच्छन्द वायुमें चौकड़ियाँ भरनेवाली नील गायों और हिरनियोंमें ही हो सकता है। नहीं, यह नारी शर्मा गयी है। जरूर शर्मा गयी है। मेरा यहाँ अनजाने अचानक आ जाना अिसे परेशान कर रहा है। अुफ् ! क्या हो गया यह !

देखा, चिकके निकट, बच्चा आकर खड़ा हो गया है। बच्चेको देखते ही मातृत्व और शैशवके अभिनयका वह चित्र मेरी आँखोंमें नाच गया। मैंने बच्चेको प्यारसे पुकारा—"आओ, बेटा, मेरे पास आओ।" वह अेक कदम आगे बढ़ा। फिर अेक कदम आगे बढ़ा। और फिर अेक कदम आगे बढ़ा। पलकें झुकी हुअीं। दाहिने हाथकी तर्जनी दाँतोंके बीच दबाये। फिर प्यारसे पुकारा तो अेक कदम आगे बढ़कर, बस, ठिठककर खड़ा हो गया। मैंने कअी बार बुलाया; लेकिन अुत्तरमें वह निश्चेष्ट ही बना रहा। अन्तमें मुझे ही अुठकर अुसे अपनी गोदमें अुठा लेना पड़ा। अब हम दोनोंकी बात-चीत कैसे शुरू हो ? अुससे नाम पूछा तो बताये नहीं। बापका नाम पूछा तो वह भी नहीं। बहुत कोशिश करनेपर अपना नाम बताया, फिर बापका नाम। फिर माँके साथ खेलनेकी बातें। बस, हम दोनों दोस्त बन गये। खुलकर बातें होने लगीं। बरामदेके बाहर अहातेमें मौसमी फूलोंको अुसने मुझे दिखलाया। और अन्तमें कहा, बाजारमें चाकलेट मिलता है। अुसके साथ अेक चाँदी और सोनेका कागज रहता है। कागजमें फूल बना होता है, जिसे पानीमें भिगोकर किताबमें छाप दिया जाता है। वह यह भी कह गया कि अुसके कुछ दोस्तोंके पास अैसे बहुत फूल, चाकलेट और चाँदी-सोनेके कागज हैं। बड़े अच्छे। बड़े सुन्दर। अितने सुन्दर, अितने सुन्दर कि वह नहीं बता सकता। फिर बोला कि वह भी चाकलेट, पानीसे अुतारा जानेवाला फूल और चाँदी-सोनेवाला कागज चाहता है। लेकिन अुसे मिलता नहीं। अुसके पिताजीके कअी दोस्त आये। अुनसे अुसने फूल ला देनेकी बात कही। अुन लोगोंने वायदे किये, लेकिन फिर लाये नहीं। चले गये। अिसपर मैंने कहा —"हम जरूर ला देंगे, बेटा", वह बोला—'मेरे पिता-जीके अेक और दोस्त भी अैसा ही बोल गये थे।"

"अच्छा, यह तो बताओ कि तुम्हारे पिताजी कहाँ गये, बेटा ?"

"पीपलकी पूजा करने और चीटियोंको गेहूँका चून देने गये हैं।" बच्चेने कहा। विस्मयमें आकर मैंने पूछा—"अरे, अैसा क्यों ?" बच्चा अुधेड़बुनमें पड़ गया। अुत्तर ढूंढ़नेकी कोशिशमें बोलने लगा।

अँ. अँ अँ...अँ अँ, अच्छा, मैं पिताजीसे पूछकर बताअूँगा।"

"अरे, यार वाह !! खूब आये रतन ! कबसे आकर जमे हो दोस्त ! अच्छा यह तो बताओ कि मेरे पीठ पीछे क्या मेरे लड़केको फुसला रहे थे, घरमें अितनी माँ अकेली है; क्या अिरादा है, तुम्हारा ?" प्यारके अुल्लास और अुद्रेकमें रंजीत अेकही साँसमें बोलता-बोलता भीतर पहुँच गया। बच्चा गोदसे कूदकर माँके पास चला गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने पूछा—"रंजीत, यह क्या तमाशा है, भाअी ? पीपलकी पूजा और चीटियोंका राशन कबसे शुरू किया है ? कितने पीपल और कितनी चीटियोंका ठेका ले रखा है, तुमने ?"

रंजीतने बात टालते हुअे कहा—"छोड़ो, यार, यह औरतोंका झमेला है।"

"जरा बताओ भी तो, क्या झमेला है। क्यों है ? मैं कबसे बैठा हूँ ? अितनी देर कैसे लगी ?"

रंजीतने मुस्कराते हुअे कहा—"आज सोमवार है। पीपलके तनेसे अेक सौ आठ बार लाल कच्चा धागा लपेटना पड़ता है। और चींटियोंकी माँदमें गेंहूका आटा और चीनी मिलाकर डालना पड़ता है। यह न करूँ तो घरमें खाना न मिले। अभी कलका तमाशा देखना तो बाकीही है। देख लेना।"

\+ \+ \+

दूसरे दिन सौभाग्यसे मंगलवार था। नियमके अनुसार गंगा किनारेपरके अेक जीर्ण मन्दिरके निकट जाना पड़ा। रंजीतके परिवारके साथ मैं भी गया। और देखा, पति-पत्नीने गंगामें स्नानकर लोटेमें गंगाजल ले, तटपर स्थित पीपलके पेडके नीचे जो पहाड़-सा शिवलिंगोंका समूह खड़ाकर दिया गया था, अुसे चढ़ाया। मनौतीके अनुसार पतिकी चादरके छोरसे पत्नीकी चादरके कोनेमें गाँठ बाँध दी गयी। दोनोंने प्रदक्षिणा की। मैं अितना तो जरूर समझ गया था कि अिनकी अिस भक्ति-भावनाके पीछे कोअी अत्यन्त पवित्र भावना है।

अुसी दिन रातको रंजीतसे मेरी बहुत बातें हुअीं। अुसने अपने जीवनका हाल बयान किया—"अिसके पहले भी मेरे अेक लड़का हुआ था। तीन बरसका हो गया होगा, अेक बार बीमार पड़ा। औकातके मुताबिक मैंने दवा करायी। अवस्था जब कुछ बिगड़ने लगी तो डाक्टरने कहा, अिसे अस्पतालमें भर्ती कर दो। रेलवेके अस्पतालमें जाकर बड़े डाक्टरसे आरजू मिन्नत की तो वे बोले, "यहाँ सिर्फ रेलवे-कर्मचारियोंको सुविधा दी गयी है। जो रेलवे-कर्मचारी नहीं, अुन्हें बीस रुपये देना पड़ता है। कम-से-कम अेक सौ रुपया पेशगी देना होगा। अब बोलो, अितनी रकम कहाँसे आये ? दूसरे अस्पतालमें गया तो वहाँ भी कुछ अिसी तरहकी बात सुननेमें आयी। यह मिलिटरीका अस्पताल था। यहाँ सेनामें काम करनेवाले ही भर्ती किये जा सकते हैं। दूसरे नहीं। सरकारी अस्पताल जानेको कहा गया। लेकिन सरकारी अस्पतालके डाक्टरने देखते ही कहा, अिसे अिंजेक्शन देना होगा। और प्रति अिंजेक्शनका दाम कम-से-कम बारह रुपया होगा; जो मुझे देना ही पड़ेगा। हाँ, खानेकी कुछ दवाअियाँ डाक्टरसाहब अवश्य कृपाकर अस्पतालसे दे देंगे। अब क्या कहूँ ? अन्यमनस्क भावसे डाक्टरसाहब जो दवा देते गये, अुसे पिलाता गया और चार-पाँच दिन तक पिलाया, फिर.....। देखा गले तक आये बेबस आँसुओंको पीकर रंजीत स्वरको संभाल अुसे तौलने लगा। मैं कतरा गया। पूछा—"तो आजकल करते क्या हो रंजीत ? छोड़ो, जो बात बीत गयी अुसीको लेकर क्या करोगे ?"

अपने ओठोंको दबा, भरे हुअे गलेको संभालकर अुसने कहा,—"नहीं, ठीक कहते हो। बीती हुअी बातको लेकर क्या करना है ! लेकिन जानते हो, बीती हुअी बातें अुत्तराधिकारमें अपना बुनियादी तत्व छोड़ जाती हैं। मुझे बार-बार यह ख्याल आता है कि अुसकी मौत चिकित्साके अभावके कारण हुअी। जीवनको खण्डित करके अुसका मोल-तोल करनेका यही नतीजा होगा। यह रेल विभागका आदमी है; यह सेना विभागका है; यह शासन-तन्त्रका। अिसलिअे अुसके जीवनका मूल्य भिन्न होना चाहिये। अिसका क्या अर्थ ? जीवन तो अखण्ड है। अेकके जीवनकी अशान्ति दूसरेके जीवनकी शांतिको किस हदतक खतरेमें डाल सकती है, अिस बातको हम नहीं समझते। तुम कहोगे यह सब खामख्यालियाँ हैं। होंगी। मुझे कोअी आपत्ति नहीं। अपने-अपने विचार हैं। अब मेरी पत्नी ही को लो। वह गरीब समझती है कि बच्चेकी मौत मेरे अदृष्ट ग्रह नक्षत्रोंके कुपित हो जानेका परिणाम है। सो वह ग्रहों और अुपग्रहोंको प्रसन्न करनेके लिअे मुझसे यह सब करवाती है। खुद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी क्या-क्या करती है, सो देख ही रहे हो। यह सब पूजा-अुपासना अुसकी ही प्रेरणासे हो रही है।" अुसके होठोंपर अत्यन्त करुण मुस्कराहट फिर गयी।

मैंने अुसके जिस स्थलको अनजानेमें छू दिया था, अुस स्थलसे दूर हट जानेकी कोशिशमें था। पूछा--"छोड़ो, आजकल कर क्या रहे हो?"

वह बोला--"जमालपुर पोष्ट-ऑफीसकी छतके नीचे बरामदेमें बैठकर रोजी कमाता हूँ। कारखानेमें काम करनेवालोंके पत्र और मनिऑर्डरके पते लिखता हूँ। और भी अिसी तरहके काम। मजूरी कुछ बँधी मिलती है, कुछ रोजाना भी।"

मैं--"क्यों? नौकरीके लिअे कोअी कोशिश नहीं की?"

वह--"तो तुम क्या समझते हो? मैं कोअी शौकसे वहाँ बैठता हूँ? या यह काम करनेमें कोअी गौरव है? कालिजमें जो महत्वाकांक्षा कल्पनाके घेरेमें विहार करती थी, अुसे जब स्थूल वास्तविकतासे वास्ता पड़ा, तो घूमते-घूमते यहीं आकर पनाह लेनी पड़ी। रेलवेमें नौकरीके लिअे बहुत दौड़-धूप की, लेकिन प्रकारान्तरसे सब जगह यही सुनना पड़ा कि कम-से-कम पाँच सौ रुपये नैवेद्य चढ़ाअूँ तो नौकरी मिल सके। अबरखके कारखाने और आफिसमें जहाँ-तहाँसे सिफारिशें पहुँचवायीं; परन्तु व्यर्थ। आखिर यही रास्ता निकला। यहींपर आकर टिका हूँ।" अुसने अपने सीनेमें अेक लम्बी साँस लेकर हवा भरी। मैंने फिर कतरा जाना चाहा। अुसके मर्मस्थलके दूसरे पहलूमें चोट लगी। अैसा लगा मानो यह अुसके दर्द-भरे छन्दका अन्त्यानुप्रास है और अुसका छन्द पूर्ण हो गया।

तीसरे दिनकी बात कहता हूँ। रंजीतने कहा, "आज पोस्ट ऑफीस जाना ही पड़ेगा। आज कारखानेमें तनख्वाहें मिलेंगी। वहाँ भीड़ होगी। बँधी आमदनी तो आजही होती है।" मैं सबेरे ही निकल गया। शामको वाटर-पिक्चरवाले चाकलेट लेकर लौटा तो देखता हूँ कि रंजीत मन मारे अुदास बैठा है और बच्चा चारपाअीपर लेटा है। बोला--"अब तुम आ गये। जरा मुझे डाक्टरके पास जाना है। मेरे आ जानेतक यहीं बैठो।" रंजीतकी बीवी मेरे सामने नहीं आती थी। लेकिन आज रंजीतके चले जानेपर वह दरवाजेके निकट आकर धीमे और सलज्ज स्वरमें बोली--"सुनते हैं? आपही से कह रही हूँ। आपके दोस्तको मेरे लड़केकी क्या परवाह! ये सड़े-गले डाक्टरको लगा लेते हैं। और वह हमारे बच्चेकी जान ले लेता है। आप जरा ध्यान देकर समझ-बूझवाले डाक्टरको ही लगाअिये।" मैं खामोश बैठा रहा। कुछ नहीं बोला। बच्चेको लहूकी सूअी दी गयी और कहा गया कि प्रति दूसरे दिन अुसे अेक औषधिका अिन्जेक्शन दिया जाना चाहिये। कमसे कम दस अिजक्शन। यह लहू और अुष्णता पैदा करनेकी दवा थी। हर अिन्जेक्शनकी कीमत बत्तीस रुपये। यानी कुल मिलाकर तीन सौ बीस रुपये। अपनी बँधी आमदनीकी तहसील--बसूली करके भी तीन अिन्जेक्शन देते-देते अुसका साहस टूट गया। बच्चेकी दशा कुछ सुधरी देख, अुसने डाक्टरसे आरजू-मिन्नतकर खाने और पीनेकी दवाकी फेहरिश्त बनवाकर अिलाज जारी रखा। बच्चेको जरा स्वस्थ देखकर मैंने अुसे चाकलेट और चित्र दिखलाया और कहा कि जब-जब वह अच्छा हो जायगा तो अुसे दे देंगे। अभी वह बीमार है और चाकलेट खा जानेसे अुसकी बीमारी बढ़ सकती है।

नवें दिन बच्चेका शरीर पीला पड़कर सर्द होने लगा और अुसपर अेक शिथिल तन्द्रा छाने लगी। वह बेहोशीमें डूब गया। बहुत बोलनेपर जरा आँखें खोल देता और फिर पलकें बन्दकर डूब जाता। मेरी जेबमें पड़ी चाकलेटकी गोलियाँ मेरी देहमें लोहेकी सलाकोंकी तरह चुभने लगीं। दोपहर होनेके पहलेही बच्चा बुझ गया।

माँने अेक रेगिस्तानी तूफानकी तरह खड़ी होकर रंजीतको झंझोड़कर पूछा--"मैं कहती थी न? तुम अिसे भी अेक दिन मार डालोगे? बोलो अब कौन रहेगा अिस घरमें?" बच्चेको अुठाकर सीनेमें चिपकाये दूसरे कमरेमें चली गयी। और बच्चेसे बात करने लगी--"तुम्हारे बाप बड़े खराब हैं। अुन्होंने ही तुम्हें मार डाला। अब तुम अुनके पास न जाओ। चलो हम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोग साथ रहेंगे।" बच्चेको निश्चेष्ट देख, चारपाअीपर अुसे रख, पूजाकी कोठरीमें गयी—रेगिस्तानी हवाकी तरह थकी, सूखी और प्रचण्ड वेगसे। सिंहासनमें सजी देवताओंकी मूर्तियोंको अेक बार देखकर बोली—"अब तुम्हारा यहाँ कोअी काम नहीं। अिस घरमें रहकर तुम हमारा क्या करते हो।" मूर्तियोंके सहित सिंहासनको अुठाकर आंगनमें ला, हवामें अुछाल दिया। मूर्तियाँ आँगनमें बिखर पड़ीं। मैं खामोश था। रंजीत भी शिथिल निश्चेष्ट चुपचाप बैठा तमाशा देखने लगा।

मैंने अबतक बच्चेकी माँके चेहरेको नहीं देखा था। मुझे डर लगता था। लेकिन जब अेक मर्मभेदी करुण चीख अुसके गलेके कहीं बहुत नीचेसे आकर अेक खौफनाक स्वर छोड़ते-छोड़ते अटक गयी तो मैंने अुसके चेहरेकी ओर देखा। अुसका चेहरा अवसन्न और विमूढ़ बन गया था। ममतामें लिपटी सलज्ज सरलता अुसके चेहरेसे अुड़ गयी थी। मातृत्व अुजड़ चुका था। अुसपर अेक थकी हुअी मर्मस्पर्शी निराशा छा गयी थी। अुसकी डबडबायी आँखोंको देखते ही मेरी आँखोंके सामने पहले दिनका अभिनय नाच अुठा। अुस दिन तो अुसकी तरल आँखें देखकर कुछ सोच नहीं सका था लेकिन आज सोचता हूँ—सौन्दर्यकी आँखें तो सदा ही डबडबायी रहती हैं। मैं मन ही मन बोलने लगता हूँ "हे नारी तुम्हारी तरह आज रचना शक्ति, मातृत्व और सुन्दरताकी आँखें आँसुओंसे तर हो रही हैं, क्योंकि मनुष्योंका विनाश-कार्य अुनकी रचनाको ध्वस्त किये दे रहा है। आज अिस संक्रान्ति कालमें अुस बच्चेकी मृत्युके साथ तुम्हारे जीवनके महाकाव्यकी मौत हो गयी है। किन्तु यह आनेवाले युगकी अेक प्रसव-व्यथा भी हो सकती है।"

\+ \+ \+

बारहवें दिनकी बात क्या कहूँ? चाकलेटकी गोलियाँ जो अितने दिनों तक मेरी जेबमें पड़ी थीं, अुन्हें अपनी अटैचीमें रख दिया। चुपचाप बैठा सिगरेट फूँक रहा था। सोच रहा था, मनुष्य अपनी ध्वस्त वास्तविकताओंपर ही कल्पनाकी अिमारत खड़ी करता चलता है। रंजीत चाहे जो कुछ हो, आजिज आकर भी जिन्दगीकी दौड़-धूप जारी रखे हुअे है। अुसका राजा बेटा दवाअीके अभावमें मौतका कलेवा बन गया। दवाअियाँ डग हाअुसोंमें सजी-सजायी भरी पड़ी हैं। लेकिन अुन दवाअियोंका अुपयोग अुन्हीं लोगोंको करनेका अधिकार है जो दवाको अुचित मुनाफा देकर खरीद सके। मतलब कि दवाअियोंका अुपयोग मुनाफा कमाना है न कि प्राण बचाना। फिर सोचने लगा, आदमीकी पसलियोंमेंसे अेक हड्डी निकालकर खुदावन्द करीमने अेक नारी 'अीव' की रचना की थी। अिंसानियतकी अेक हड्डीसे ही अिंसानियत फूटी थी। क्या आजकी निर्मम परिस्थितियाँ जो अिंसानोंके प्राण, खून और हड्डियोंका अितने बड़े पैमानेपर टैक्स वसूल कर रही हैं, अुनसे भी क्या कोअी अिन्सान बनाया जायगा जिसमें शुद्धता होगी सुचिता होगी, और होगी संसार जीवन तथा जीवोंको प्यार करनेकी प्यास! अितनेमें रंजीतकी पत्नी मेरे निकट पीछे आकर खड़ी हो गयी। बोली—"बड़ी आशा लेकर अेक बात कहने आयी हूँ। आप मेरी बात मानेंगे?" मैं खामोश न रह सका। रंजीत बाहर जाते समय ताकीद कर गया था कि मैं अुसकी हरकतोंपर निगरानी रखूँ। मैंने बिना अुस ओर देखे ही पूछा—"क्या बात?"

बोली—"कहती हूँ कि जरा मेरे राजा बेटाके पास जाकर देख आअिये तो, अब वह कैसा है। या नहीं तो, मुझे ही ले चलिये। मैं देखूँगी। बात करूँगी। पूछूँगी।"

मुझे अुसकी ओर देखना पड़ गया। वह चुप हो गयी। अुसके वाक्यकी व्याकुलताको तो अुस समय मैं नहीं पकड़ सका लेकिन अुसकी आँखोंकी सूनी, बुझी हुअी चमकके बहुत भीतरकी वाक्यहीन व्याकुलताने मेरे अन्तःप्रदेशको झकझोर दिया। अुसकी सकरुण निर्निमेष आँखोंमें हृदय हिला देनेवाला खौफनाक मूक प्रश्न था। वह मुझसे कुछ पूछ रही थी लेकिन मैं खामोश था। अुसकी आँखें मानो अनादिकालसे चलकर असंख्य महाशून्योंकी तहोंको भेदते हुअे सीधे अनन्त कालसे कुछ पूछ रही थीं। मैं समझ गया अुन बुझी हुअी अुजड़ी बेरौनक आँखोंके सामने मैं नहीं ठहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकता। भागना पड़ेगा। जरूर भाग जाना पड़ेगा। यहाँ नहीं रहा जा सकता। सो मैं अुस बारहवें दिन वहाँसे भाग आया। वह अितना ही जानती है कि मैं शायद अुसके राजा बेटाके पास अुसका समाचार लेने गया हूँ। शायद वह मेरा अिन्तजार कर रही होगी।

परसों तक मेरे साथ चाकलेटकी वे गोलियाँ और वाटर पिक्चर साथ थे। और मैं अपने पेशेमें मशगूल था। अब मेरे पास वे गोलियाँ और चित्र नहीं। और मैं अपने पेशेको भी छोड़ चुका हूँ। कैसे? यह भी सुन लीजिये।

मैंने अुसके बाद अनेक लोगोंके जीवनका बीमा किया। पेशेमें बहुत बरक्कत हुअी। मैंने अेक वकीलकी जिन्दगीका बीमा किया जो पैसा कमानेके लिअे अेक मुकदमेमें जिरह और प्रश्नोंकी झड़ी लगाकर यह प्रमाणित कर दिया करता था कि अेक निर्दोष स्त्री कुल्टा है। दण्ड पाने योग्य नर-पिशाच जिसने अुसके चरित्रके अूपर आक्रमण किया था मुक्त करवा दिया। फिर मुर्दा खाकर जिन्दा रहनेवाले गीध जातिके अेक डाक्टरकी जिन्दगीका बीमा किया जो पैसेके लिअे अेक जमीन्दारसे मिलकर अुसके भाअीकी चिकित्सा करते समय अुसे जहरकी सूअी देकर अुसे मौतके घाट अुतार चुका था। बादमें जब मालूम हुआ कि अुस भाअीकी बीबी गर्भवती है, तो अुसे भी दवाके साथ जहर पिलाकर अुस गर्भस्थ शिशुकी भी हत्या करा डाली। और अुस जमीन्दारकी जिन्दगीका भी बीमा किया जिसने अपने भाअीके धनको ले लेनेके लिअे यह सब किया। अेक और श्रीमानकी जिन्दगीका बीमा किया अपनी मिलमें आटेके साथ घास, भूसा, पत्थर और अिमलीके बीज पीसकर रुपया पैदा करता है। राजनीतिके नेताकी जिन्दगीका बीमा किया जो अपनी नीतिकी घोषणाकर प्रत्येक दूसरे दिन अिसे भूल जाता है और अपने मनके मुताबिक अपनी नीतिका स्वर, ताल, लय सब बदल देता है। अेक मास्टरकी जिन्दगीका भी बीमा किया है, जो अपने सरपर सफेद बालोंकी चाँदनी ओढ़कर बड़े ही लच्छेदार शब्दोंमें आदर्शपर व्याख्यान झाड़कर सभामें तालियाँ पिटवा लेता है लेकिन घरमें आकर घोर अनैतिकताकी अुपासना करता है। अेक सम्पादककी जिन्दगीका बीमा किया जो धन कमानेके लिअे सदा सनसनीखेज बातोंकी ही खोजमें रहता है और गोपनीय बातोंको छाप देनेका डर दिखाकर पैसा वसूल करता है। निन्दा-स्तुतिका ताना-बाना फैलाता है।

सो मुझे अुनकी जिन्दगियोंका बीमा करना पड़ा है, जो दूसरोंकी जिन्दगीको हराम बनाते रहते हैं। दूसरोंकी जिन्दगीकी छीछालेदर कर अपनी जेबें भरा करते हैं। दूसरोंकी बहारोंको अुजाड़कर अपने चमनको आबाद करते हैं। मैंने अुन जोंकोंकी जिन्दगीका बीमा किया है जो दूसरोंके खूनको पीकर मोटे बनते हैं। मुझे अिनकी जिन्दगीसे वास्ता पड़ता रहा और चाकलेटकी गोलियाँ और चित्र मेरे साथ रहे। मनुष्योंकी अैसी भीड़ और कोलाहलमें भी मुझे अुस भूरे रेशमीबालवाले बच्चेकी याद आती है, जिसकी अेक साधारण-सी आरजू साथ चली गयी। अुसके बापके कितने ही दोस्त थे, जिन्होंने वायदे करके भी पूरे नहीं किये। मैं भी अुसी जमातमें आ जाता हूँ। मुझे लगा कि मैं अुन लोगोंकी जमातमें खड़ा हूँ जो अिन्सानियतको धोखा देकर अपने पेटकी आगको भरते रहते हैं।

मैं अुन चाकलेटकी गोलियों और चित्रोंको जेबमें रखकर सोचने लगा कि अिनको क्या मैं अुन लोगोंमें बाँट दूँ जो आजकी संस्कृतिके निर्माता हैं जो हैवानियतके सिक्कोंपर अिन्सानियतकी खरीद-फरोख्त कर रहे हैं। फिर सहसा खयाल आया, नहीं। यह पवित्र नैवेद्य मानवात्माके अुन गुनहगारोंको नहीं दिया जा सकता। वे अिसके हकदार नहीं। अिनका हकदार मर गया। जेबमें पड़ी गोलियाँ और चित्र मानो मुझसे बोलने लगे, मानवताके अिस महाप्रलय कालमें वह महान् मनुपुत्र मर गया।

× × ×

तो मैं अिन चाकलेटों और चित्रोंको रखके क्या करूँ? मेरे दिमागमें फिर वही धड़कती बीरान सुनसान सन्ध्या अुभर आयी जब हम बस्तीसे दूर, कटी हुअी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फसलके खेतोंके अुस पार अुस अिन्सानके बच्चेकी ठंढी लाशको मिट्टीके नीचे सुलाकर छोड़ आये थे। मैं फिर अेक बार वहाँ जानेको सोचने लगा। और वहाँ गया। देखा, खेतोंकी बेरौनक और अुदास नग्नता हरी-भरी फसलोंके आवरणोंमें सजकर मुस्करा रही है। अपनी पहचानी हुअी मिट्टीके अुस ढेरके निकट पहुँचा। अिसी समय पश्चिमके क्षितिजको छूते ही किसीने दिनमणिका खून कर दिया। शोक विह्वला सन्ध्याने अपने लम्बे काले बाल बिखरा दिये, देखा, मिट्टीके ढेरके गिर्द हरी-हरी मखमल-सी मुलायम दूब अुग आयी है। अुस दूर्वामें मादक जवानी फूट रही थी।

वहाँ पहुँचते ही मैंने अेक दीर्घ निश्वास लिया। चाकलेटों और चित्रोंको जेबसे निकालकर मैंने अुस ढेर पर बिखरा दिया और मन-ही-मन अुस भूरे रेशमी कोमल बालवाले बच्चेको याद कर कहा— "मैं अिन्सानोंके मचलते अस्त-व्यस्त समूहोंको घूम-फिर कर देख आया हूँ। ये टूट-फूट गये हैं। खण्डित हो गये हैं। फिर भी मैं मनुष्यपर सरासर विश्वास नहीं खो बैठा। बच्चे, मैं हताश नहीं हुआ हूँ। मुझे अभी भी आशा है कि आजकी सभ्यताके ढहते हुअे खण्डहरकी भूमिपर स्वस्थ और शुद्ध अिन्सान पैदा होंगे, जो अपनी खोयी हुअी, लूटी हुअी, खण्डित, अिन्सानियतको जीत कर वापस ले आयेंगे। मिट्टीके नीचे सोये हुअे तुम्हारे कंकालको मैं ये चीजें अर्पित कर रहा हूँ।"

यह परसोंकी बात है। वहाँसे मैं सीधे यहीं वापस लौट आया हूँ। मदनपुर नहीं गया। सोचा जरूर था, अेक बार चलना चाहिये। लेकिन मैं डर गया। मुझे अुस नारीकी वे करुण आँखें याद आ गयीं, जो किसी निरुत्तर शून्यसे मूक प्रश्न कर रही थीं। मैं सदा चाहता रहूँगा कि कोअी मुझे मदनपुरके अेक घरमें रहनेवाली अुस नारीकी खबर लाकर दे।

संत तुलसीदासः—(रामायणमें)

सच्चा मित्र

कुपथ निवारि सुपंथ चलावा।
गुन प्रगटअि अवगुनहिं दुरावा।
देत लेत मन संक न धरअी।
बल अनुमान सदा हित करअी।
विपति काल कर सतगुन नेहा।
स्रुति कह सत्य मित्र गुन अेहा।

जो मित्रको कुमार्गसे बचाकर सुमार्गपर चलाता है, अुसके अवगुणोंको छिपाकर गुणोंको प्रकट करता है, देते-लेते मनमें शंका नहीं करता, अपने बल और विचारसे सदा हित ही करता है और विपत्तिके समय सौगुना प्रेम करता है, वही सच्चा मित्र है!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतेन्दुसे 'अश्क' तक

: श्री गोपालकृष्ण कौल : श्री राम गोपालसिंह चौहान :

अुपेन्द्रनाथ अश्क किस साहित्यिक परम्पराके लेखक हैं, अुनके साहित्यकी विषय-वस्तु और अुसके रूप-विधानकी क्या विशेषता है, ये विशेषताअें साहित्यकी किस महत्वपूर्ण परम्पराकी छायामें विकसित हुअी हैं, अुनकी अैतिहासिक पृष्ठभूमि क्या है ? और वर्तमानको अुन्होंने क्या दिया है— अिन सब बातोंको जाननेके लिअे आवश्यक है कि विगतके अुन पृष्ठोंको खोलकर देखा जाय जिनमें वर्तमान हिन्दी-साहित्यके विकसित और पल्लवित रूपके अंकुर अपनी भवितव्यता लिये हुअे अुदय हुअे--वे अंकुर जिनमें आजके महान् विटपोंकी तमाम सम्भावनाअें छिपी थीं।

'अश्क'के नाटकोंमें जिस यथार्थवादी सामाजिक चेतनाकी झलक है, वह हिन्दी-साहित्यकी अुस राष्ट्रीय प्रगतिशील परम्परासे सम्बन्ध रखती है, जिसका अुदय भारतेन्दुके समयमें हुआ था। अुन्नीसवीं शताब्दीके अुत्तरार्द्धमें हिन्दीके आधुनिक युगका प्रारम्भ हुआ, जब कि देशमें अंग्रेजी साम्राज्यकी जड़ें जम गयी थीं और अंग्रेजी शिक्षाका प्रचार शुरू हो गया था। अिस प्रकार अेक दूर देशके राजनीतिक दबाव और सांस्कृतिक प्रभावमें देशकी सांस्कृतिक और साहित्यिक परम्पराअें भी करवट बदल रही थीं। साहित्यकी दरबारी और रीतिवादी परम्पराका अन्त हो रहा था और खड़ी बोली हिन्दीके नये साहित्यमें—क्रान्तिकारी परिवर्तन हो रहे थे। साहित्यमें अेक राष्ट्रीय सामाजिक चेतनाकी झलक दिखायी देने लगी थी। अुस समय धर्मकी रूढ़िगत प्रथाओं और मान्यताओंके विरुद्ध विद्रोह हो रहा था, जिसने साहित्यमें सामाजिक क्रान्तिकी सुधारवादी भावनाओंको प्रेरणाका स्रोत बनाया। स्वामी दयानन्दने अुस समय धार्मिक और सामाजिक रूढ़ियों और अन्य धार्मिक प्रचारोंके विरुद्ध जो धार्मिक आन्दोलन शुरू किया था, अुसका सामाजिक-सुधारवादी क्रान्तिका पक्ष साहित्यमें विशेष रूपसे प्रतिबिम्बित हुआ। भारतेन्दुने अपने साहित्यमें– विशेषकर मौलिक नाटकोंमें- दुर्भिक्ष, महामारी, अनुचित करोंके विरुद्ध कलम अुठायी। "भारत-दुर्दशा" नामक अुनके नाटकमें पराधीनताजन्य भारतकी दुर्दशाको दिखाया गया। "वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति" में मांसभक्षियोंका मजाक अुड़ाया गया और "अँधेर नगरी" नाटकमें अुस समयके कुशासनपर चोट की गयी। यद्यपि ये नाटक आधुनिक विकसित नाटक कलाकी दृष्टिसे सफल नाटक नहीं हैं, तो भी अिनमें जिस राष्ट्रीय और सामाजिक चेतनाकी झलक है, वह अुस युगकी विशेषता थी। अिस विशेषताने ही हिंदी-साहित्यके वर्तमान युगकी नींव रखी। अिसलिअे कलाकी वर्तमान कसौटीपर अुस युगके नाटक भलेही खरे न अुतरें, किन्तु अुनका अैतिहासिक मूल्य और महत्व है और वे हिंदीमें अेक नयी परम्पराका सूत्रपात करते हैं।

× × ×

भारततेन्दु हरिश्चन्द्रको हम निःसंकोच अिस नयी परम्पराका सूत्रधार कह सकते हैं। अुनसे पहले हिन्दीमें जो दो-चार नाटक मिलते भी हैं—जैसे महाराज जसवन्तसिंह द्वारा १७०० अी० में किया गया संस्कृत नाटक 'प्रबोध चन्द्रोदय' का ब्रजभाषानुवाद अथवा 'वाजिदअली शाह' के दरबारी कवि अमानत द्वारा १८५३ में लिखा गया रहस 'अिन्दरसभा' या फिर गिरधरदासका "नहुष" अथवा रीवाके महाराज विश्वनाथसिंहका "आनन्द रघुनन्दन"--ये सब हिन्दीमें किसी नयी साहित्यिक परम्पराकी नींव नहीं बन पाये। मौलिक नाटकोंकी परम्परा भारतेन्दुहीने शुरू की। "वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति" अुनका सर्व-प्रथम मौलिक नाटक है।

हिन्दीके प्रारम्भिक नाटकोंपर संस्कृत-शैलीका प्रभाव अधिक है। भारतेन्दु भी अिस प्रभावसे नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बचे। लेकिन अुनपर यह प्रभाव बाह्य या अूपरी नहीं वरन् स्वाभाविक था। प्रारम्भके हिन्दी-नाटककारोंके सामने संस्कृत-नाटक-साहित्य और नाट्य-सिद्धान्तका विशाल भण्डार अुनकी नाट्य-रचनाकी अेकमात्र आधारभूमि था, अुसे सहज रूपसे अपनाकर ही वे हिन्दी-नाटक परम्पराकी नींव डाल सकते थे। अिसलिअे वह केवल प्रभाव ही नहीं, अुनकी प्रतिभाके विकासके लिअे साहित्यकी भारतीय परम्पराकी अेक विरासत था, जिसे साथ लेकर ही वे हिन्दीके नवयुगका द्वार खोल सकते थे। फिर भी भारतेन्दुने संस्कृत-शैलीका ही पूर्णरूपसे अनुकरण नहीं किया। अुनका परिचय बंगला-नाटकों और अंग्रेजी-साहित्यसे भी था। अिसलिअे संस्कृतकी प्राचीन नाट्य-शैलीमें अनेक नवीन परिवर्तनोंके साथ अुन्होंने हिन्दी नाटकोंकी रचना की। भारतेन्दुने "नाटक" शीर्षक निबन्धमें लिखा है :—

"अब नाटकमें कहीं "आशीः" प्रभृति नाट्यालंकार, कहीं "प्रकरी", कहीं "विलोभन", कहीं "संकेत", पंचसंधि वा अैसे ही अन्य विषयोंकी कोअी आवश्यकता नहीं रही। संस्कृत-नाटककी भांति हिन्दी नाटकमें अिनका अनुसन्धान करने वा किसी नाटकांगमें अिनको यत्नपूर्वक रखकर हिन्दी नाटक लिखना व्यर्थ है, क्योंकि प्राचीन लक्षण रखकर आधुनिक नाटकादिकी शोभा संपादन करनेसे अुल्टा फल होता है और यत्न व्यर्थ हो जाता है। संस्कृत-नाटकादि रचनाके निमित्त महामुनि भरत जो सब नियम लिख गये हैं, अुनमें जो हिन्दी-नाटक-रचनाके नितांत अुपयोगी हैं और अिस कालके सहृदय सामाजिक लोगोंकी रुचिके अनुयायी हैं, वे ही नियम यहाँ प्रकाशित होते ह।"

अिस बातसे स्पष्ट है कि भारतेन्दु निपट प्राचीनपन्थी नहीं थे और न नवीनताके ही अन्धभक्त! अुनके "सत्य हरिश्चन्द्र", "चन्द्रावली", "वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति", "विषस्य विषमौषधम्", "भारत जननी" आदि नाटकोंमें संस्कृत नाटकोंकी तरह भरत-वाक्य, प्रस्तावना, नांदी-पाठ मौजूद हैं। "चन्द्रावली" में विष्कम्भक और अंकावतार भी है। भारतेन्दुने नाटकोंमें "स्वगत" का प्रयोग बहुत किया है। "सत्य हरिश्चन्द्र" में महाराज हरिश्चन्द्रने काशी नगरी और गंगाके वर्णनमें तीन पृष्ठका और 'स्मशान' में छह पृष्ठका स्वगत भाषण किया है। अितना लम्बा स्वगत-भाषण संस्कृतके प्राचीन नाटकोंमें भी मिलना कठिन है। * किन्तु रचनाक्रमके अनुसार अुनके बादके नाटकोंमें संस्कृतका जो प्रभाव हिन्दीमें आकर दोष बन गया था, काफी कम हो गया। "नीलदेवी" और "विद्या सुन्दर" में ये दोष कम हो गये और समयके अनुसार अुन्हें नवीन रूप प्रदान करनेका प्रयत्न किया गया। अिन नाटकोंका दृश्य-विधान भी नये ढंगका है और अिनमें 'भरतवाक्य', नांदी-पाठ और प्रस्तावना भी नहीं हैं। अुन्होंने नाटकोंके गद्यमें खड़ीबोली और पद्यमें ब्रजभाषाको अपनाया। स्पष्ट है कि भारतेन्दुने अपने प्रारम्भिक नाटकोंमें जिस संस्कृत-शैलीको प्रधानता दी थी, वह अुनके बादके नाटकोंमें कम हो गयी और अुन्होंने अुनमें अपने युगके अनुसार अधिक आधुनिकता पैदा करनेका प्रयत्न किया। यद्यपि अिस दोतरफे प्रयत्नसे अुनके नाटकोंमें कलाकी दृष्टिसे गुणकी बजाय दोष ही अधिक आ गये, फिर भी अुनके नाटकोंने हिन्दी-नाटक-साहित्यके युग-द्वारका अुद्घाटन करके अेक अैतिहासिक महत्वका काम अवश्य किया।

अिस प्रकार भारतेन्दुने अपने नाटकोंमें राष्ट्रीयता, अुत्कट देश-प्रेम, सामाजिक सुधार, अत्याचारपूर्ण कुशासनकी निन्दा आदि अुदात्त भावनाओंको पृष्ठभूमि बनाकर हिन्दी-साहित्यमें अेक नयी राष्ट्रीय अेवं सामाजिक चेतनाका आलोक फैलाया।

अुनका दृष्टिकोण संकुचित नहीं था। अुन्होंने अैतिहासिक, पौराणिक, काल्पनिक और प्रत्यक्ष सामाजिक जीवनसे सम्बन्ध रखनेवाले पात्रों और कथानकोंको अपनाया; श्रृंगार, हास्य, करुण और वीर रसोंको ग्रहण किया तथा सुखान्त अेवं दुःखान्त दोनों प्रकारके नाटक

---

* शेक्सपियरके यहाँ अितने लम्बे स्वगत-भाषण मिलते हैं और शायद वहींसे भारतेन्दुने प्रभाव ग्रहण किया हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखे। अुन्होंने अनेक साहित्यगत और समाजगत रूढ़ियोंको तोड़कर विचार और कला, वस्तु और शिल्प, जनता और साहित्यके व्यापक सम्बन्धोंको समझते हुअे तात्कालिक सीमाओंके बावजूद साहित्यमें अेक सामाजिक परम्पराको आगे बढ़ाकर नये युगकी नींव भी रखी।

× × ×

भारतेन्दुके व्यक्तित्व और अुनकी रचनात्मक प्रतिभासे अुनके युगके लगभग सभी हिन्दी-लेखक प्रभावित हुअे और प्रेमघन, राधाकृष्णदास और प्रताप-नारायण मिश्र आदि लेखकोंने भी अनेक नाटक लिखे, किन्तु वे हिन्दी-नाटकके विकासमें विशेष योग न दे सके। अिस युगके अधिकांश नाटक प्राचीन संस्कृत शैलीपर ही लिखे गये, अुनमें कथा-वस्तुका चुनाव अितिहास, पुराण और वर्तमान जीवनसे किया गया। भारतेन्दु द्वारा चलायी गयी प्रहसन लिखनेकी परम्पराको भी आगे बढ़ाया गया। अधिकतर प्रहसनोंमें वर्तमान जीवनमें व्याप्त मद्य-पान, वेश्या-वृत्ति आदि अनीतिपूर्ण दुर्व्यसनों और अनाचारोंके विरुद्ध, हास्य और व्यंग्यके साथ,सुधारवादी प्रहार करनेका प्रयत्न किया गया। अिन प्रहसनोंके हास्य और व्यंग्य अुच्चकोटिके यथार्थवादी और स्वाभाविक नहीं बन पाये; फिर भी अुस सामाजिक चेतनाकी झलक अिनमें है, जो नाटकको जनताके निकट लाने और अुसे लोकतान्त्रिक रूप देनेके प्रयत्नमें नाटककारकी सहायक बनती है।

× × ×

भारतेन्दुके बाद और प्रसादसे पहले तकका समय अनुवादका युग है। अिस समय अनेक अंग्रेजी और बंगला नाटकोंका अनुवाद हुआ। यद्यपि अिस बीच अुच्चकोटिके मौलिक नाटकोंकी सृष्टि नहींके बराबर हुअी, फिर भी अनुवादोंके द्वारा हिन्दीके नाटककार अंग्रेजी और बंगला नाटकोंकी नयी रचना शैलीके सम्पर्कमें आये। बंगलाके द्विजेन्द्रलाल राय और गिरीशचंद्र घोषके, अंग्रेजीके शेक्सपियर और फ्रांसके नाटककार मौलियरके नाटकोंका हिन्दीमें अनुवाद हुआ। * दूसरी ओर अिस युगमें रंगमंचीय नाटककारोंने व्यावसायिक नाटक मण्डलियोंके लिअे नाटक लिखे। अिस समय नाटककारोंके दो वर्ग स्पष्ट दिखायी देते हैं—अेक तो वह जो केवल रंगमंचको सामने रखकर नाटक नहीं लिखते थे और दूसरे वह जो नाटक-मण्डलियोंके निर्देश पर केवल रंगमंचीय नाटक ही लिखते थे। अिस भेदने नाटकके साहित्यिक और सामंजस्यपूर्ण रंगमंचीय—दोनों दृष्टियोंसे समन्वित और कलात्मक अेवं यथार्थवादी—विकासमें बड़ी बाधा पहुंचायी।

× × ×

अिस अनुवाद युगके बाद ही हिंदी-नाटक क्षेत्रमें प्रसाद जैसी मौलिक प्रतिभाका अुदय होता है। प्रसादकी प्रतिभाने हिन्दी-नाट्य-रचनाको अधिक मौलिकता और कलात्मक प्रौढता प्रदान की। अिस समय तक भारतके राजनीतिक और राष्ट्रीय जीवनमें अेक क्रान्तिकारी जागरणका शंखनाद गूंज चुका था। भारतेन्दुके समयकी धार्मिक राष्ट्रीयता अब धर्मका जामा अुतारकर राजनीतिक रूप धारण कर चुकी थी। विदेशी गुलामीसे भारतीय राष्ट्रीयताका संघर्ष तीव्र हो चुका था और राष्ट्रीय गौरवकी भावना साहित्यका प्राण बन गयी थी। "प्रसाद" ने हिन्दी नाटकोंको भारतेन्दु युगीन धार्मिकता तथा पौराणिक रूढियोंसे मुक्ति देनेका प्रयत्न किया। यद्यपि अुन्होंने "कामना" और "अेक घूंट" को छोड़कर बाकी सभी नाटकोंमें प्राचीन अितिहासके (महाभारतसे लेकर हर्षवर्धनके समय तक) पृष्ठोंसे कथावस्तु और पात्रोंका चुनाव कर भारतकी तत्कालीन राष्ट्रीय चेतनाको प्राचीन सांस्कृतिक गुरुतासे सुसज्जित किया है; फिर भी अुनके नाटकोंमें वर्तमान कालकी अनेक समस्याओंकी छाया दिखायी पड़ती है। अुन्होंने वर्तमानके प्रतिबिम्बको अतीतके दर्पणमें देखनेका प्रयत्न किया। यही अुनके नाटकोंकी सांस्कृतिक चेतना है।

---

* मौलियरके नाटकोंको हिंदी जामा पहनानेमें हास्य-रस-लेखक श्री. जी० पी० श्रीवास्तवका नाम अुल्लेखनीय है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अजात शत्रु" में बौद्धकालीन, "चन्द्रगुप्त" में मौर्यकालीन, "स्कंदगुप्त" और "ध्रुवस्वामिनी" मे गुप्तकालीन और "राज्यश्री" में हर्षवर्धनकालीन तथा "जन्मेजयके नागयज्ञ" में महाभारतकालीन भारतीय संस्कृतिके गौरवके विभिन्न मानवीय रूपोंको व्यापक दृष्टिकोणसे प्रस्तुत किया गया है।

प्रसादके नाटकोंमें भारतीय नाट्य-रचना-शैलीके अनुसार कथानक, अर्थप्रकृति, पताका, सन्धियाँ, नायक, प्रतिनायक, रस आदि सभी शास्त्रीय तत्व मिलते हैं; साथ ही पश्चिमी नाट्य-रचना-शैलीकी अनेक विशेषताअें भी। अिनमें रसके परिपाकके साथ कार्य-व्यापार और अन्तर्द्वन्द्व भी है, व्यक्ति वैचित्र्य और चरित्र-चित्रण भी है। भारतेन्दु युगीन नाटककारोंने अैतिहासिक कथानक और पात्र तो अपने नाटकोंके लिअे चुने, किन्तु वे अुनमें पात्रोंका अन्तर्द्वन्द्व और चरित्र-चित्रणके द्वारा स्वाभाविक कलात्मक विन्यास न प्रस्तुत कर पाये। प्रसादने भारतेन्दुयुगीन अिस कलात्मक कमीको नाटकोंसे दूर किया। दूसरी ओर प्रसादने अुन रंगमंचीय नाटककारोंको, जो केवल व्यावसायिक नाटक-मण्डलियोंके लिअे नाटक लिखते थे, नाटककी स्वतन्त्र लोक-तान्त्रिक कलाके स्वाधीन प्रयोग द्वारा बताया कि नाटककी कला केवल रंगमंचकी गुलाम नहीं। यद्यपि अिस प्रतिक्रियाने अुनको रंगमंचकी अितनी अुपेक्षा करनेपर मजबूर कर दिया, जितनी अेक नाटककारको न करनी चाहिये, फिर भी अुनके कुछ नाटकोंके लिअे रंगमंचको अनुकूल बनाया जा सकता है और कुछ नाटकोंको थोड़ेसे परिवर्तनसे ही रंगमंचपर खेला जा सकता है। प्रसादने अिस संबंधमें हिन्दीके अेक विद्वान् आलोचकसे कहा था—"मेरी रचनाअें तुलसीदत्त शैदा या आगा हश्रकी व्यावसायिक रचनाओंके साथ नापी-तौली नहीं जा सकती। मैंने अुन कंपनियोंके लिअे नाटक नहीं लिखे, जो चार-छह चलते अभिनेताओंको अेकत्रकर, कुछ पैसा जुटाकर, चार पर्दे मंगनी माँग लेते हैं और दुअन्नी-अठन्नीके टिकटपर अिक्केवाले, खोंचेवाले और दूकानदारोंको बटोरकर जगह-जगह प्रहसन करती फिरती हैं। "अुत्तर राम चरित", "शकुंतला" और "मुद्राराक्षस" नाटक कभी न अैसे अभिनेताओंके द्वारा अभिनीत हो सकते हैं और न जन-साधारणमें रसोद्रेकके कारण बन सकते हैं। अुनकी काव्यप्रधान-शैली कुछ विशेषता चाहती है। यदि परिष्कृत बुद्धिके अभिनेता हों, सुरुचि-संपन्न दर्शक हों और पर्याप्त द्रव्य काममें लाया जाय तो ये नाटक अभीष्ट प्रभाव अुत्पन्न कर सकते हैं।" १

स्पष्ट है कि प्रसादने रंगमंचीय नाटककारोंकी रचना-शैलीका विरोध किया और नाटकोंमें अेक सांस्कृतिक गाम्भीर्यकी स्थापना की, जिसका अनुकरण प्रसादोत्तर-कालीन कअी नाटककारोंने भी किया। प्रसाद रंगमंचकी अधीनता स्वीकार करनेवाली सस्ती नाटकीय कलासे चिढ़ते थे। नाटकोंके साहित्यिक स्तरको गिरानेवाली अिस प्रवृत्तिके विरोधमें अुन्होंने लिखा था :—

—"नाटकोंके लिअे रंगपंचकी रचना होनी चाहिये न कि रंगमंचके लिअे नाटकोंकी।"

अपने अिस मतके बावजूद भी प्रसादने "ध्रुवस्वामिनी" जैसा सफल अभिनेय नाटक लिखा।

अिस प्रकार प्रसादने कला और वस्तुकी दृष्टिसे हिन्दी-नाटकोंको प्रौढ़ता प्रदान की। भारतेन्दुयुगीन नाटकोंमें, जो धार्मिकता रंगमंचीय दासता, संस्कृत-शैलीकी रूढ़िग्रस्तता और भावुक सस्तापन था, अुससे मुक्ति पानेका प्रयत्न करते हुअे प्रसादने मौलिक नाटकोंकी परम्पराको आगे बढ़ाया, नाटकोंको अधिक लोकतान्त्रिक रूप दिया, अुन्हें राष्ट्रीय और सांस्कृतिक गुरुता प्रदान की और बावजूद अपनी भाषा-क्लिष्टता, संस्कृत-निष्ठता, अतीत-प्रियताके साहित्यके वर्तमान प्रवाहको आगे बढ़ाया।

× × ×

हिन्दी-नाटकोंका प्रसादोत्तर काल कलाकी दृष्टिसे, संस्कृत रचना-शैलीकी रूढ़ियोंसे और कथावस्तुकी दृष्टिसे शनैः शनैः पुराण और अितिहास और अतीतोन्मुखतासे मुक्तिका काल है। अिस युगमें राष्ट्रीयता और देशभक्तिकी भावनाने नाटकोंमें अैतिहासिक कथावस्तुको संजोकर रखा। केवल अन्तर अितनाही है

---

१. "प्रसादके नाटकोंका शास्त्रीय अध्ययन"—लेखक-जगन्नाथ प्रसाद शर्मा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि प्रसादके नाटक और प्रसादकालीन दूसरे नाटकोंमें कथावस्तुका चयन भारतीय अितिहासके प्राचीनकालसे किया गया है और प्रसादोत्तरकालीन नाटकोंमें अिति-हासके मध्ययुगसे। मध्ययुगीन सामन्ती वातावरणमें अपने समयकी देशभक्तिकी राष्ट्रीय भावनाको प्रति-बिम्बित करनेका प्रयत्न किया गया। परम्परागत राष्ट्रीय नैतिकताके अनेक मूलरूपोंको अिस समयके नाटकीय पात्रोंके कार्य-व्यापार और संवादोंमें प्रत्यक्ष विकसित किया गया। हिन्दू मुस्लिम अेकताकी भावनाको लेकर हरिकृष्ण प्रेमीने "शिवा-साधना", "रक्षा-बन्धन" और "स्वप्नभंग" आदि नाटक लिखे। अुग्र स्वाधीनताकी जातीय भावनाको लेकर मिलिन्दने "प्रताप-प्रतिज्ञा", स्वामिभक्तिकी भावनासे गोविन्द वल्लभपन्तने "राज-मुकुट", कुल और वर्णकी समस्याको लेकर सेठ गोविन्ददासने "कुलीनता" और अुदयशंकर भट्टने 'दाहर' तथा राजपूतोंके हठ और सामन्ती प्रजा प्रेमकी भावनाको लेकर "अश्क" ने "जय-पराजय" जैसे नाटकोंकी रचना की।

अिन नाटकोंकी विशेषता यह है कि अेक प्रधान पात्रके रूपमें सामन्ती व्यक्तित्वके विकासकी छायामें पूरे नाटकका भाव-विन्यास होता है। "जय पराजय" अश्कका पहला नाटक था, किन्तु अुसमें ही अुनकी प्रतिभा और कला-चातुर्यके दर्शन हो गये। अुस समयके मध्ययुगकी अैतिहासिक कथावस्तुके आधारपर लिखित राष्ट्रीय नैतिकताकी विभिन्न भावनाओंपर आधारित नाटकोंमें केवल अेक यही अैसा नाटक था, जिसमें अन्य नाटकोंकी अपेक्षा नाटक-शिल्प श्रेष्ठ और नवीनता लिये हुअे था, अभिनयकी योग्यता अधिक थी और अुद्देश्यमें राष्ट्रीय भावनासे अभिभूत होकर नैतिकताका अधिक प्रचार नहीं किया गया। "अश्क" की दृष्टि वर्तमानकी ओर अधिक थी, अिसीलिअे अुन्होंने धर्म-अधर्म और नीति-अनीतिको अतीतवादियोंकी तरह मानव-समाजके अुत्थान-पतनके साथ जोड़कर पौराणिक आख्यानोंको अपने नाटकोंका आधार नहीं बनाया। "जय-पराजय" अुनकी रचनाओंके क्रमसे सबसे पहला नाटक है। अिस नाटकमें यदि मध्यकालीन भारतीय राजपूत जीवनकी अेक आदर्शवादी झाँकी है, तो साथ ही साथ वर्तमानकी सजग दृष्टिसे अुस समयके हठी और सनकी सामन्ती जीवनकी प्रच्छन्न आलोचना भी।

अिस युगके नाटकोंमें विशेष परिवर्तन अुनकी कथावस्तु, भावभूमि और शिल्पवस्तु आदि सभीमें हुआ। अितिहासका स्थान वर्तमान जीवनने ले लिया। पहले मौर्यगुप्तकालीन अितिहाससे नाटकोंकी कथावस्तु चुनी जाती थी। फिर मुगलकालीन और राजपूत-अिति-हाससे कथावस्तुका चुनाव होने लगा और फिर अिति-हासके अतीत-बन्धनोंसे नाटककी कथावस्तुकी मुक्ति हो गयी और वर्तमान-जीवन ही नाटकोंका आधार बन गया। अिस प्रकार नाटक अतीतके कल्पनालोकसे निकलकर जीवनकी यथार्थ पृष्ठभूमिपर खड़ा हुआ। हिन्दी नाटकके विकासका यह क्रम अनोखा नहीं, अधि-कांश देशोंके नाटक-साहित्यका विकास-क्रम बहुत कुछ अिसी प्रकारसे हुआ है। अतीतसे वर्तमानकी ओर, अितिहास-पुराणकी राष्ट्रीय नैतिकतासे अुपस्थित जीवनकी समस्याओंकी ओर और विकास प्रायः सभी देशोंमें होता रहा है।

हिन्दी नाटकोंमें यह युग अिस क्रमके तृतीय अुत्थानका समय है, जिसके प्रारंभमें अधिकांश नाटक-कारोंने काफी संख्यामें अैतिहासिक नाटक लिखे। किन्तु अश्क अिस क्रमके प्रथम पहरकी अतीतवादी राष्ट्रीय नैतिकताके आदर्शवादी प्रभावसे कम प्रभावित हुअे और अिसीलिअे अुन्होंने केवल अपना पहला और अन्तिम नाटक अैतिहासिक लिखा।

× × ×

अतीतकी रूढ़ियोंसे—चाहे वे वस्तुगत हों या शिल्पगत विद्रोहके रूपमें समस्या-नाटकोंका अुदय हुआ। वैसे कुछ न कुछ समस्या तो पिछले नाटकोंमें भी रहती थी, किन्तु वे नाटक समस्याकी आधार-भूमिपर अपना विन्यास नहीं करते थे। समस्या अुनके लिअे गौण वस्तु थी, भावुकता और वर्गीय रोमांस प्रमुख। नाटकोंमें समस्याके आधारको बौद्धिक युगके विकासकी देन है। प्रत्यक्ष जीवन सम्पर्कमें आते ही नाटकोंका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवनकी जाग्रत समस्याओंसे निकट सम्बन्ध स्थापित होना स्वाभाविक था। जीवनकी सामाजिक और वैयक्तिक--सभी प्रकारकी समस्याओंको आधार-भूमि बनाकर नाटककारोंने अुनका मनोवैज्ञानिक सामाजिक और वर्गीय विश्लेषण करनेका प्रयत्न किया। अिन प्रयत्नोंमें जहाँ हमें अुनसे अपने जीवनका प्रतिबिम्ब, या स्वाभाविकता दिखायी पड़ती है, वहाँ कहीं-कहीं पात्र समस्याके विभिन्न अंगोंके प्रतीक भी प्रतीत होते हैं। जहाँ विश्लेषण अधिक है, वहाँ समाधान नहीं और जहाँ समाधान है, वहाँ विश्लेषण न्यून हो गया है। अिन नाटकोंमें गीत और नृत्योंका प्रयोग प्रायः समाप्त हो गया। 'स्वगत' कम कर अुसका स्वाभाविक स्थितिमें प्रयोग किया गया है।

× × ×

हिन्दी समस्या-नाटकोंका प्रारम्भ लक्ष्मीनारायण मिश्रके नाटकोंसे होता है। अुनके अधिकांश नाटकोंकी मूल समस्या है सेक्स। अुनके "सन्यासी", "राक्षसका मन्दिर", "मुक्तिका रहस्य", "आधी रात" और "सिन्दूरकी होली" आदि नाटकोंकी समस्याका केन्द्र घुमा-फिराकर नारी या सेक्स, सेक्स या नारी है। और अिसपर ही नाटकोंकी सारी परिधिका विश्लेषणात्मक विस्तार होता है, जिनमें ट्रेजिडीका स्वर प्रधान है। नाट्य-शिल्पके प्रयोगमें अुन्हें अधिक सफलता नहीं मिली, यद्यपि पिछले नाटकोंसे अपेक्षाकृत अुनका नाट्य-शिल्प आधुनिक और विदेशी प्रभावसे प्रभावित है। अुनके अधिकांश नाटक तीन अंकोंके हैं; किन्तु अंक-विधानमें सन्तुलनका अभाव है। अंकके बीचमें ही पर्दा अुठ जाता है। और दूसरा दृश्य शुरू हो जाता है। यदि प्रत्येक अंक ही अेक दृश्य हो तो रंगमंचपर दृश्य प्रस्तुत करनेमें कठिनाअी नहीं होती और नाटकका सहज प्रवाह भी भंग नहीं होता। दृश्योंके बदलनेमें समयके सन्तुलनका बिलकुल ध्यान नहीं रखा गया। कार्य-व्यापारकी शिथिलता है, क्योंकि मानसिक-विश्लेषणकी प्रवृत्तिके कारण पात्रोंमें आन्तरिक संघर्ष तो अधिक है, किन्तु अुसकी बाह्य अभिव्यक्ति नहीं होती, अिसलिअे अभिनयमें सहज प्रभाव पैदा होना कठिन है। संवादोंमें कहीं-कहीं वाक्य बीचमें ही टूटते-से नज़र आते हैं। सबसे बड़ी बात यह है, कि अुनकी कथा-वस्तु स्वयं अपनेमें अेक नाटकीय अिकाअी नहीं होती। अिस प्रकारके समस्या-नाटक, जिनमें व्यक्ति-मन और नारी-सेक्सकी समस्याको आधार बनाया गया, दूसरे नाटककारोंने भी लिखे। किन्तु वे नाट्य-शिल्पके विकासमें विशेष देन नहीं सिद्ध हुअे। किन्तु सामाजिक समस्याओंपर लिखे गये नाटक शिल्पकी दृष्टिसे अधिक सफल रहे। यह स्वाभाविक भी था। नाटक स्वयं अेक सामाजिक या लोकतान्त्रिक कला है, अुसकी शिल्पचेतनाका संबंध सामूहिक चेतनाको प्रभावित करनेसे अधिक रहता है। अुसकी अिकाअी या व्यक्तिचेतनाके सामुदायिक होनेपर ही वह अधिक स्वाभाविक और प्रभावशाली बनता है।

अिस युगमें समाजिक तथा राजनीतिक समस्याओं-पर नाटक लिखनेवाले नाटककारोंमें सेठ गोविन्ददासका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम पहले आता है। अुनपर गांधीवादी राजनीतिका प्रभाव है। वे समस्याओंको सामाजिक धरातलपर सरल और स्पष्ट ढंगसे प्रस्तुत करके सुधारवादी आदर्श-वादसे अुसके समाधानका प्रयत्न करते हैं, अिसलिअे अुनके पात्रोंके अन्तर्द्वन्द्वमें मनोवैज्ञानिक गहराअी कम है। वैसे अुन्होंने भी प्रारम्भमें अैतिहासिक और पौराणिक नाटक ही लिखे हैं। आपका पहला नाटक सन् १९३५ में प्रकाशित हुआ था। अिस समय तक हिन्दीका नाटक-साहित्य काफी विशाल हो चुका था। वे अुसकी कमियों और खूबियोंसे लाभ अुठा सकते थे, किन्तु अुन्होंने पिछले अनुभवोंसे नाट्यशिल्पमें कोअी विशेष प्रयोग नहीं किये। दृश्य-विधानकी दृष्टिसे अुनके नाटक सरल और स्पष्ट हैं और अिसीलिअे अभिनेय भी हैं, पर नाटकीयता, द्वन्द्व और सम्वादोंकी संतुलनकी कमीके कारण सपाट और फिसफिसे हो जाते हैं।

अिनके अितिरिक्त अन्य छोटे-मोटे नाटककारोंने भी सामाजिक नाटक लिखे। किन्तु समस्याओंके साथ ही प्रदर्शनमें अुलझकर अिन नाटकोंका अन्त हो गया।

अिस युगमें अश्ककी दृष्टि केवल वर्तमान जीवनकी समस्याओंपर केन्द्रित थी। अुन्होंने केवल प्रथम और अेक ही अैतिहासिक नाटक—"जय पराजय" लिखा। अुनके बाकी सभी नाटक सामाजिक हैं और वर्तमान जीवनकी यथार्थ समस्याओंसे सम्बन्धित हैं। अश्क अिस यथार्थवादी शैलीके जौहरी हैं और अिस शैलीमें अुन्होंने कुछ बड़े ही अुच्चकोटिके नाटक हिंदीको दिये हैं। "अश्क" का "स्वर्गकी झलक", "छठा बेटा", "कैद", "अुड़ान", "अलग अलग रास्ते", "भंवर", "अंजो दीदी" और "पैतरे" में वर्तमान जीवनकी समस्याओंको यथार्थवादी अथवा प्रतीकात्मक ढंगसे प्रस्तुत करते हैं। "कैद" और "अुड़ान" नारी-जीवनकी दो समस्याओंके प्रतीक हैं। "कैद" में अवांछित पतिके साथ दाम्पत्य जीवन बिताते हुअे अप्पीकी जिन्दगी अेक घुटन और मर्यादाकी शृंखलामें कैद है, मन अुसका अुड़-अुड़कर दिलीपके चारों ओर मंडराता है। और "अुड़ान" में स्त्री-पुरुषके संबंधोंका समाधान है। लेखकने संकेतसे स्पष्ट कर दिया है कि आधुनिक नारी न तो पूजाकी सामग्री बनना चाहती है, न संभोगकी वस्तु या सम्पत्ति। वह बनाना चाहती है केवल संगिनी। अिस युगमें पुरुषके मनमें नारीके प्रति अनेक परम्परा-विरोधी भावनाअें हैं—अुनके प्रतीक अिस नाटकमें तीनों पुरुष पात्र हैं जो नारीकी वास्तविक आवश्यकता समझनेमें असमर्थ रहते हैं। अिसी प्रकार "स्वर्गकी झलक" आधुनिक नारीपर अेक सामाजिक व्यंग्य है। "छठा बेटा" वर्तमान समाजके मध्यवर्गीय परिवारोंके स्वार्थी संबंधोंपर कठोर किन्तु हास्यपूर्ण व्यंग्यका प्रहार है, जिसे पढ़कर या देखकर पाठक और श्रोता स्वयं अपनी कमजोरियोंपर खीझ अुठता है। "अलग अलग रास्ते" में विवाहकी समस्या अपनी सारी अुलझनोंके साथ विद्यमान है। अपने अिस नाटकमें अश्कने मध्य-वर्गीय धारणाओंपर बड़े जोरदार प्रहार किये हैं। जहाँ यथार्थ स्थितिका चित्रण किया है, वहाँ आधुनिक नारीके मार्गका निर्देश भी कर दिया है। अिस नाटकमें अपूर्व द्वन्द्व, नाटकीयता और वेदना है। "अंजो दीदी" में अश्कने सनककी खिल्ली अुड़ायी है और निर्देश किया है कि माता-पिताको चाहिये कि वे अपने बच्चोंको अुनकी रुचिके अनुसार जीवन-पथपर बढ़ने दें। अपनी कुण्ठाओंको अुनपर न लादें। "पैतरे" में फिल्मी जीवनकी हास्य-व्यंग्यभरी झलक है, लेकिन जैसा कि अेक आलोचकने लिखा है, अिसके अन्तरमें बड़ी ही गहरी दारुण ट्रेजिडी छिपी है। "भंवर" आधुनिककी कुण्ठाका अपूर्व चित्रण प्रस्तुत करता है और चरित्र-चित्रणकी दृष्टिसे बड़ा ही सफल नाटक है।

कलाकी दृष्टिसे "अश्क" के नाटक हिन्दी-नाट्य-कलाके विकासमें अेक सीमा-चिन्ह हैं। यद्यपि अुनकी कला अेकदम आधुनिकतम है और अुसपर संस्कृत नाट्य-रचनाके सिद्धान्तोंका प्रभाव नहीं है, फिर भी अुन्होंने हिन्दीके पिछले नाटकोंके गुण-दोषोंके अनुभवसे कला-चातुर्य द्वारा हिन्दी नाटक 'टैकनिक' को नयी देन दी है। अुनके नाटकोंमें दृश्य और श्रव्य-दोनों काव्य-तत्व हैं। वे जितने रंगमंचकी कलाके गुणोंसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभूषित है, अुतने ही सुपाठ्य भी। हास्य और व्यंग्य अुनकी यथार्थवादी शैलीको और भी शक्ति-शाली बना देता है। "छठा बेटा" टैकनिककी दृष्टिसे हिन्दीमें अपने ढंगका अेक-मात्र सफल प्रयोग है, जिसमें अेक पात्रका स्वप्न ही पूरा नाटक बन जाता है और अन्तमें दर्शकोंको पता चलता है कि यह तो स्वप्न था, किन्तु स्वप्न होते हुअे भी हास्य और व्यंग्यके पुटसे समस्याका जो यथार्थ चित्रण नाटकमें हुआ है, वह बहुत स्वाभाविक और प्रभावशाली है। 'अंजो दीदी' का हास्य और भी खुला है, लेकिन अुस हास्य व्यंग्यके आवरणमें ढकी समस्या और भी गंभीर है। यही हाल 'पैंतरे' का है। "जय पराजय" को छोड़कर अुनके शेष सभी नाटकोंमें स्थान, काल और कार्यकी अेकताका सहजरूपसे निर्वाह किया गया है।

"अश्क" के नाटकोंमें स्वगतका प्रयोग बहुत कम है और जितना है वह बहुतही स्वाभाविक तथा नाटककी गतिके अनुकूल है। अुनके नाटकोंके दृश्य-विधानमें विविध और पूर्ण रंग-निर्देश होते हैं, जिनमें अन्य लेखकोंकी रचनाओंकी अपेक्षा यह विशेषता रहती है कि वे न केवल निर्देशकके लिअे दृश्य संकेत प्रस्तुत करनेमें सहायक होते हैं, बल्कि पाठकके दिमागमें भी नाटकके वातावरणकी सृष्टि कर देते हैं। अुनमें औपन्यासिक वर्णनका रस भी होता है। कौतूहल, आकस्मिकता कार्य-व्यापार और प्रभावशाली अन्त अश्कके नाटकोंमें बड़े संतुलनके साथ रहते हैं। चरित्र-चित्रण यथार्थवादी है और अुसके अुभारके लिअे संकेतोंका प्रयोग भी है। १.— हल्की-हल्की फबतियों, सांकेतिक कार्य्यसम्पादन और पात्रोंकी अनजाने कमजोरियोंके हल्के-से अुभारसे, बिना अति रंजनाका सहारा लिये अश्क बड़ी सफलतासे अपने पात्रोंका चित्रण कर देते हैं।

नाटकके विविध तत्वोंके विकासके साथही साथ अश्कके नाटकोंमें चरित्रका विकास होता है, अुनमें अेक प्रकारका परस्पर समन्वय रहता है। पिछले कुछ समस्या-नाटकोंमें यह दोष रहा है कि चरित्रके मनोवैज्ञानिक विश्लेषणके फेरमें पड़कर नाटकीय प्रवाहमें ही शिथिलता पैदा हो गयी। अेक बातपर विशेष ध्यान दिया, दूसरेकी अुपेक्षा हो गयी। किन्तु "अश्क" अिस सन्तुलनको कमही खोते हैं और कमसे कम समयके लिअे आनेवाले पात्रका चरित्र भी वे संवाद या संकेतके हल्के स्पर्शसे अुभार देते हैं।

× × ×

अिस युगमें अेकांकी नाटकोंका विकास हिन्दी-नाट्य रचनाके विकासका अेक और नवीन रूप है। यद्यपि भारतीय नाट्य-शास्त्रमें "अंक", व्यायोग, वीथी आदि नाटकोंके विभिन्न भेद गिनाये गये हैं, जो केवल अेक अंकके होते हैं, किन्तु आधुनिक अेकांकी की कला अुनसे अेकदम स्वतन्त्र कला है। भारतेन्दुका "वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति" और प्रसादका "अेक घूंट" हिन्दीके आदि अेकांकी हैं। अुसके बाद प्रसादोत्तर कालमेंही भुवनेश्वर, अुग्र, गणेशप्रसाद द्विवेद्वी, रामकुमार वर्मा, जगदीशचन्द्र माथुर, अुदयशंकर भट्ट और अुपेन्द्रनाथ "अश्क" आदिने हिन्दी अेकांकीको विकसित किया। अिनके बादके नये लेखकोंमें विष्णुप्रभाकर, लक्ष्मीनारायणलाल आदि प्रमुख हैं। अेकांकीके प्रारम्भिक विकासमें भुवनेश्वर, रामकुमार वर्मा, और "अश्क"का योगही सर्वाधिक है।

भुवनेश्वर अेक सफल टेकनीशियन हैं। अुनपर शाकी तार्किक कटुता और व्यंगोक्तिकी शैलीका प्रभाव है, आकस्मिकता अुनके अेकांकियोंका विशेष गुण है, अुनके नाटकोंकी मूल-समस्या सेक्स और अर्थ है।

रामकुमार वर्माकी कलामें भावनाओंकी निगूढ़ सूक्ष्मता है। अुनके अेकांकियोंमें कविता जैसी भाव-प्रवणता है। सूक्ष्म स्पर्शोंसे चरित्रोंको अुभारनेमें वे पटु हैं। अुनके अेकांकियोंमें "लिरिक" (Lyric) जैसा संक्षेप, गठाव और गाम्भीर्य रहता है।

"अश्क" ने अेकांकीके शिल्पमें बहुतसे प्रयोग करके अुसे अधिक विकसित किया है। वे स्टेजकी टेकनिकको खूब समझते हैं; अुनकी कलामें अिसका सन्तुलित समन्वय होता है। नाटकीय गुणोंका अुनकी

१. "अंजो दीदी" में घड़ीका, "कैद" में किंग-कोंगका आदि आदि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रचनाओंमें क्रमिक विकास होता है। चरित्र चित्रणमें वे यथार्थवादी हैं। हास्य और व्यंग्यका अुन्होंने सफल प्रयोग किया है। सबसे बड़ी विशेषता है अुनकी कथा-वस्तुके चुनावमें यथार्थवादी नाटकीय शिल्पदृष्टि! नाटककी सृष्टिका यह मूलाधार है। टी० रोअिमरने लिखा है:—

"नाटचकार पात्र तो नैतिक दार्शनिकोंसे ले सकते हैं, विचार अुन्हें साहित्य-शास्त्रसे मिल सकते हैं और व्यंजना वे व्याकरणके जाननेवालोंसे पा सकते हैं, परन्तु कथानकके चुनावमें ही अुनकी मौलिकता और कला है।" —(नाटककी परख)

अश्ककी कथावस्तु ही अपनेमें अेक नाटकीय अिकाअी होती है और यह अुनके चुनावकी खूबी है। जैसा कि अेक आलोचकने लिखा, "जीवनकी सतत प्रवाहशील धाराका क्षणिक ठहराव ही अश्कके अेकांकीमें मूर्तमान होकर अुतरता है।" पर अुस क्षणके चुनाव और अुसे अुसकी पूरी भव्यता और बारीकीके साथ अेकांकीमें सजा देना बड़ी ही सूझ-बूझ, तैयारी, तराश और नाप जोखकी अपेक्षा रखता है। और यही वे गुण हैं जो अश्क नाटकोंको अितना सजीव और जीवनकी गतिसे स्पन्दित बना देते हैं। "अश्क" मैगलिक, स्ट्रिअेडवर्ड और ओ-नील जैसे विदेशी नाटककारोंसे प्रभावित हुअे हैं। वे अुनकी तीव्रता और गम्भीरता तो पसन्द करते हैं, किन्तु अुनके निराशावादको अपने निकट नहीं फटकने देते।

× × ×

अिस प्रकार भारतेन्दुसे "अश्क" तक हिन्दी-नाटकका विकास कअी धाराओंमें होकर गुजरा है। भारतेन्दुने साहित्यमें अेक राष्ट्रीय परम्पराको जन्म दिया, प्रसादने अुसमें सांस्कृतिक गुरुताकी वृद्धि की और अश्कने अुसे यथार्थवादी कला, शिल्प और दृष्टिकोण देकर और आधुनिकता, सामाजिकता और अुपादेयतासे विभूषित कर, अुसका समुचित विकास किया। अिस तरह ये तीनों नाटककार अपने-अपने युगकी विकास-प्रवृत्तियोंके समर्थ प्रतीक हैं।

नोट:—"पिछले कुछ वर्षोंसे रंगमंचके अभावमें हिन्दी नाटकोंका संरक्षण रेडियोके हाथमें रहा और जैसा कि जगदीशचन्द्र माथुरने लिखा है अिससे नाट्य-रचनाको पथ भी मिला और पाथेय भी और साहित्यमें "ध्वनि रूपक" की अवतारणा हुअी। हालांकि अश्कके लगभग सभी नाटक रेडियोपर सफलतासे खेले गये हैं, पर अुन्होंने अेक भी ध्वनि-रूपक नहीं लिखा। लिखा तो अुसे प्रकाशित नहीं किया। जैसा कि अुन्होंने १९३८ में 'हंस' के अेकांकी नाटक अंकमें लिखा था, वे बड़े सन्तोष और मेहनतसे रंगमंचके पुनर्जागरणकी बाट देखते रहे और अुस दिनके लिअे बड़े और छोटे नाटक तैयार करते रहे और आज जब अेमेचोर रंगमंच जाग रहा है, कस्बे-कस्बे और शहर-शहर अव्यवसायिक रंग-मंचपर अश्कके नाटक खेले जा रहे हैं...। राष्ट्रभारती मार्च ५३ के अपने लेख 'हिन्दी नाट्य रचनाकी प्रगतिका अेक वर्ष'—१९५२—में श्री जगदीशचन्द्रजी माथुरने लिखा:—

"अुपेन्द्रनाथ अश्कके समान हिन्दीमें शायद ही किसी दूसरे आधुनिक नाटककारको वर्तमान नाटकके अवयवोंकी अितनी अधिकारपूर्ण जानकारी हो। अिधर १९४७ के बाद अेमेचोर नाटक मंडलियोंमें नवस्फूर्तिका संचार होनेसे सामाजिक समस्याओंका यथातथ्य निरूपण करनेवाले, सरल और बोलचालकी भाषासे सम्पन्न और आडम्बरयुक्त रंगमंचके झंझटोंसे मुक्त नाटकोंकी मांग बढ़ने लगी और अश्ककी प्रतिभाको अपने विकासका यथेष्ट अवसर मिला है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जादूगर !

: श्री आसाराम वर्मा, साहित्यरत्न :

देख रहा हूँ—
मैं जादूगर
अंधकार पर
पानीके कुछ दिये जलाकर
बजा रहा हूँ
अपना डमरू
डिम-डिम
डिम-डिम ।
बजा—
बांसकी बंसी मादक
अन्धकारकी लहरोंके-
काले-काले
नाग भयानक
नचा रहा हूँ
नचा रहा हूँ ।
रोप आमकी गुठली भूमें
क्षणभरमें ही
अुगा रहा हूँ
मन्जु-मन्जरित वृक्ष आमका ।
देख रहा हूँ--
हाथीके-से
गेंडेके-से
भारी-बलधारी मल्लोंको
अुच्चाटनके सम्मोहनसे
मैं मिट्टीमें मिला रहा हूँ ।
देख रहा हूँ--
फेंक गगनमें
निद्राजालकी रेशम-रस्सी
अुस रस्सीका
स्तंभ मनोहर
बना रहा हूँ शून्य गगनमें ।
देख रहा हूँ--
स्तंभ-शिखरसे
मेरे सन्मुख अुतर रही है
मनुज-देह धर
छम-छम करती
चारु-चन्द्रमाके चीनीकी सु-रस चाशनीमें डूबी-सी
नीले-नभकी धवल कामिनी
शुक्र-तारिका !
देख रहा हूँ—
अष्ट-सिद्धियाँ मान रही हैं मेरा बन्धन
मैं मिट्टीसे स्वर्ण
स्वर्णसे महल स्वर्णके बना रहा हूँ
स्वर्णोत्सव मैं मना रहा हूँ ।
किन्तु
रंगमें हुआ भंग अब
देख रहा हूँ--
प्रात-सूर्यने
अरुण-करोंसे
किरण-शरोंसे
मेरे निशिके स्वप्न-कलशमें
किये सत्यके छिद्र सहस्त्रों
नहीं रहा मैं वह जादूगर ।
देख रहा हूँ--
रूप लिये सुर-सुन्दर
जिसके गर्भालयसे लिया जन्म है
अुस अपनी पावन जननीपर
कोअी कामी-कुटिल पुत्र
कर रहा घृणास्पद बलात्कार है
भोली भूने
अुस पापीका नाम—
कदाचित् वत्सलता-वश
धरा स्वर्ण है ।
देख रहा हूँ—
नर्कालयका कोअी वन-पशु
शासक बनकर
स्वर्ण-दंतसे
मानिक, मूंगा, मोतीकी अिस खड़ी फसलको
काट रहा है
पाट रहा है ।
देख रहा हूँ—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेक स्वर्णकी मकड़ी मोहक बुन-बुनकर सुवर्णका जाला
कुसुम-वाटिकाकी श्रमजीवी मधुमक्खीको
स्वर्ण-जालमें फँसा रही है
मधुमक्खी कसमसा रही है।
देख रहा हूँ—
जिस लोहेसे
सरस्वतीकी रस-तंत्रीके
बन सकते हैं तार-सुरीले
अुस लोहेसे
चंचल लक्ष्मी
बना रही है स्वर्ण-करोंसे शस्त्र-युद्धके
मनु-पुत्रोंके मुंड काटने।
देख रहा हूँ—
ये जन-नायक
बने हुअे हैं नृपति परीक्षित
अपनी काली-करतूतोंसे
जिला रहे हैं मृत-तक्षकको
क्योंकि अुन्होंने किया शीशपर धारण
कलिका स्वर्ण-मुकुट है।
देख रहा हूँ—
यह कांचन-मृग
वैदेहीसे दूर
रामको
लिये जा रहा निर्जनमें
क्योंकि
स्वर्ण-मृगके माध्यमसे
रावणने षड्यंत्र किया है
जग-जीवनकी ज्योति हरणका।
देख रहा हूँ—
अिस भूतलपर
जो मिट्टीको स्वर्ण बना दें
अैसे अद्भुत सिद्ध-पुरुष हैं
वैज्ञानिक हैं—
जादूगर हैं—
किन्तु
स्वर्णको कर दे मिट्टी
अैसे पुरुषार्थी जादूगर
जगतीमें
किसने हैं देखे ?
सोच रहा हूँ—
जागृतिमें भी
होता यदि मैं स्वप्न-लोकका-सा जादूगर
तो निश्चय ही
जिसने जगको किया नर्क है
अुस पिशाचके पुत्र स्वर्णको
भस्म-भूत कर मरण-मंत्रसे
घोल हलाहलकी गागरमें
अर्घ्य चढ़ाता
लोक-रुद्रको।
किन्तु--
आज भी नहीं असंभव
नहीं कठिन कुछ
यदि हम
अपने
श्रम-मृदंगपर
स्वर्ण-नर्तकीके
ये नूपुर
ये--
छनन-छनन
छन-छन
बजते सिक्के
नहीं थिरकने दें क्षणभर भी;
नहीं कुचलने दें
जीवनकी हरियालीपर
कर्म-कलशसे छलक-छलक कर झलक रहे जो—
श्रमके मोती;
नहीं लूटने दें
सुवर्णके सहस्त्र बाहुको
अपने श्रमकी —
कामधेनुअें
तो—
निश्चय ही
मिट्टीकी अिस
मंगल भूपर
बह सकती है नहर दूधकी
अुग सकते हैं
कल्पवृक्ष फिर
बन सकते हैं
हम—
जादूगर !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओपिन अेयर थियेटर्स (खुले रंगमंच)

: श्री कुसुमाकर दीक्षित :

भारतमें रंगमंच पुराने समयमें भी थे परन्तु अुनका रूप अधिक व्यवस्थित होनेपर भी आजसे भिन्न था। भरत मुनिने अपने 'नाट्य-शास्त्र' में रंगमंच निर्माण-कलापर विस्तृत रूपसे प्रकाश डाला है। आज जिन्हें अंग्रेजीमें 'ओपन अेयर थियेटर्स' कहा जाता है, अुनका भी अुस समय अभाव न था। लोकरंजनमें अुनका विशेष रूपसे प्रयोग होता था। 'अिंसक्लिपशन्स अिन सी. पी. अेण्ड बरार' पुस्तकमें सरगुजाके अम्बिकापुर स्थानसे ३५ मील दूरीपर रामगढ़ स्थानमें अेक अैसे ही रंगमंचका जिक्र किया गया है, जिसका समय स्वर्गीय काशीप्रसाद जायसवालने अीसासे ३०० वर्ष पूर्व माना है। रामलीला, रासलीला और कृष्णलीलाके अभिनय खुले मैदान या 'ओपन अेयर थियेटर्स' में ही होते थे। रासलीला नृत्य-प्रधान होती है, जिसमें अधिकतर गुजरातीके 'गर्बा-नृत्य' की शैलीके नृत्य होते हैं, शास्त्रीय पद्धतिके 'भरत नाट्यम' या 'कत्थक' का प्रयोग नहीं होता था। अुनका प्रयोग सम्भव भी नहीं था क्योंकि रासलीलामें अधिकतर राधा और कृष्ण अथवा गोपिकाओंकी प्रेम-लीला ही चित्रित होती थी। कभी-कभी कृष्ण द्वारा गोपिकाओंका दही लूट लेना, और चीरहरण आदिके दृश्य भी आते थे। गायन भी होता था। चीरहरण होनेपर गोपिकाअें गाती थीं:—

ले गये चीर मुरारी ! मैं केसी करौं।
लेकर चीर कदम चढ़ि बैठे !
हम जल मांझ अुघारी !

आजकल नृत्य-प्रधान अभिनयोंका महत्व बढ़ रहा है। प्रख्यात नृत्यकला-विशारद श्री अुदयशंकर तो आधुनिक समस्याओंको भी नृत्य द्वारा प्रदर्शित करने लगे हैं। अेक नृत्यमें अुन्होंने मिल मजदूरोंकी भी दशा दिखलायी है। आपकी 'कल्पना' फिल्म अैसी ही भावनाओंको लेकर तैयार की गयी। आपके भाअी श्री शचीनशंकरने नृत्यमें 'रामलीला' का प्रदर्शन भारतके कअी प्रमुख नगरोंमें किया, जिसका आरम्भ अेक मधुर गीतसे होता है, जिसे ग्रामवासी नृत्यके साथ गाते हैं। गीतकी प्रथम पंक्ति है :—

" जय बोलो सियावररामकी जय बोलो !
जय बोलो ! "

श्री देवीलाल सामर आदि भी 'मारीच वध' तथा 'सीताहरण' को नृत्य द्वारा जनताके समक्ष अुपस्थित कर चुके हैं। यद्यपि ये अभिनय अधिकतर नाट्य गृहमें होते हैं, परन्तु अिन्हें खुले मैदानमें भी खेला जा सकता है। महाकवि रवीन्द्रनाथकी नृत्यप्रधान नाटिका 'नटीर पूजा' भी खुले मैदानमें खेलनेके योग्य है।

विश्व स्वयं अेक बृहत मनोरम रंगशाला है। अिसपर सबसे बड़ी अभिनेत्री प्रकृति है, जो अपने माधुर्यसे प्राणियोंको जाने-अनजाने मोहती रहती है। अिस रंगशालाके विशाल वक्षःस्थलपर सूर्य प्रातःकाल अपनी सुनहरी किरणें बिखेरता है, चांद धवल चांदनी बरसाता है, पंछी कलरव करते हैं, कलित कोमल कुसुमोंका समूह मुस्कराता है, वृक्षोंकी डालियाँ हिल-हिलकर मानव मात्रका स्वागत अपनी स्नेह-सिक्त वल्लरियोंसे करती हैं और भ्रमर-वृन्द कलियोंके कर्णकुहरोंमें अपनी गुंजारसे मधुरस अुडेलता है। ये सब खुलेआम होता है, पर्देके पीछे नहीं। पर्दा है, नीले वितानका परन्तु सामने नहीं, अूपर, जो अनन्त आनन्दकी वृष्टि करता है। जिसमें अनुभूति है; प्रेरणा है और है मानव अेवं प्रकृतिको समझनेकी शक्ति, वह सब कुछ स्पष्ट देख सकता है, सुन सकता है।

अँग्रेजीके सुप्रसिद्ध नाटककार स्वर्गीय जार्ज बर्नार्ड शाका कहना था कि नाटकोंकी अुत्पत्ति हमारी दो अुद्दाम प्रवृत्तियोंके मिलनसे होती है। अेक तो नृत्य देखनेकी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरी कहानी सुननेकी; परन्तु वास्तवमें नाटकोंमें जीवनका जो तदात्म्य मिलता है, वह अन्यत्र सुलभ नहीं। नाटक हमारी रागात्मक प्रवृत्तियोंसे घनिष्ठतम सम्बन्ध स्थापित करनेमें बहुत अधिक सहायक होता है और अिसीलिअे अिलियट जैसे लेखक नाटकोंकी प्रवृत्तियाँ साहित्यके अन्य अंगोंसे भिन्न मानते हैं। अपनी लोकप्रियताके कारण हार्ली ग्रैनविल बार्कर नाटकोंको "सबकी कला" मानते थे। है भी यह ठीक। कारण, अन्य ललित कलाअें श्रव्य और दृश्य काव्यका न तो अितना सुन्दर समन्वय कर सकती हैं, न जीवनके साथ अूहापोह।

अँग्रेजीमें खुले मैदानके नाटकोंका प्रयोग दिनपरदिन बढ़ता जा रहा है और अिसे सरकारकी ओरसे प्रोत्साहन भी मिलता है। अिसके पूर्व यूनानमें नाटकोंका अभिनय अिसी प्रकार होता था और आजके 'ओपिन अेयर' थियेटर्स, यूनानी परम्पराके सुधरे हुअे रूप हैं। अबसे लगभग १६ वर्ष पूर्व सिडनी करोलने अिंग्लैण्डके रीजेंट पार्कमें जिस प्रकारके 'ओपिन अेयर थियेटर्स' का प्रचलन किया था अुनमें तीव्र रफ्तारसे परिवर्तन होता चला जा रहा है, जब कि हमारे यहाँकी रामलीलाअें और रासलीलाअें दिनपर दिन अधोगतिकी ओर जा रही हैं। अिसके दो कारण हैं, अेक तो हम कलाओंको परम्परागत बन्धनोंसे कुछ भी मुक्ति नहीं देना चाहते। दूसरे भारतीय जनताका सांस्कृतिक धरातल विदेशी शासनके प्रभाव और धार्मिक रूढ़ियोंके कारण अूँचा नहीं अुठ सका। आज जनताको जो आनंद 'खिड़की', 'शहनाअी' और 'मि. सम्पत' जैसी फिल्मोंमें मिलता है, वह रामलीला या रासलीलामें नहीं। जनता आँखोंके सामने काव्य अथवा साहित्य नहीं, चमत्कार चाहती है!

अिंग्लैण्डमें शेक्सपियरके 'टेम्पस्ट' अथवा 'अेज यू लाअिक अिट' जैसे नाटकोंका अभिनय खुले रंगमंचोंपर होता है। अैसी हालतमें श्री जयशंकर प्रसाद, श्री लक्ष्मीनारायण मिश्र, श्रीअुदयशंकर भट्ट और सेठ गोविन्द दासके नाटक खुले मंचपर क्यों नहीं खेले जा सकते? श्री अुदयशंकर भट्टके नाटक तो अुसके लिअे बहुत ही अुपयुक्त हैं। आपके रेडियो रूपक 'मदनदहन' और 'अेकला चलोरे' भी कुछ परिवर्तनोंके साथ खुले रंगमंचपर खेले जा सकते हैं। श्री सुमित्रानन्दन पंतके काव्य रूपक 'रजत-शिखर' तथा 'शिल्पी' का भी यही हाल है, परन्तु वह 'कल्पना' की भांति सर्वसाधारणके लिअे क्लिष्ट सिद्ध होगा। ये तो अेक प्रकारके 'गीत रूपक' हैं।

अिंग्लेन्डमें 'ओपिन अेयर थियेटर' को राज परिवारका भी पूर्ण सहयोग मिला और वहांके कुशल अभिनेता स्टर रावर्ट अेटकिन्स तक अभिनयके लिअे मंचपर आ गये। ये महाशय सन् १९४४-४५ में शेक्सपियरकी जन्मभूमि 'स्ट्रेटफोर्ड आन अेवन' में 'शेक्सपियर मेमोरियल थियेटर' में खेलोंके मुख्य निर्देशकका कार्य करते थे। अिस नाट्यशालाकी स्थापना लगभग ९० वर्ष पूर्व हुअी थी।

लंदनका 'सरकारी थियेटर' जिस सफलताके साथ काव्य-रूपकोंके अभिनयमें संलग्न है, वह हमारे लिअे अनुकरणीय है। वहाँका 'आर्टस् थियेटर' भी अिस ओर अग्रसर हो रहा है और "द ल्पे ब्वाय आफ द वेस्टर्न वर्ल्ड" का अभिनय तो अुसकी सफलताकी चरम सीमाका द्योतक था। हिन्दीमें रंगमंचकी कमी तो है ही, खुले रंगमंचोंका अभाव-सा है अिस क्षेत्रके लिअे योग्य रचनाअें भी तैयार करनी पड़ेंगी।

जहाँ तक रचनाओंका प्रश्न है। खुले रंगमंचके अुपयुक्त रचनाअें तैयार हो सकती हैं। रामलीला, रासलीला और कृष्णलीलाको भी अुस रंगमें ढाला जा सकता है—पुरानी परिपाटीमें कुछ परिवर्तन करके। अिंग्लेण्डमें तो 'माअिक्रोफोन' 'अेस्पलीफायर' का प्रयोग होता है और प्रेक्षकगण कथोपकथन मजेसे सुन सकते हैं।

अभिनयके साथ-साथ कथानक और कथोपकथन पर अैसे नाटकोंमें विशेष ध्यान देना चाहिये। नाटकको दृश्य काव्य माना है, परन्तु यह आवश्यक नहीं कि वह कवित्वपूर्ण हो। भवभूतिका 'अुत्तर रामचरित्र' कवित्वकी दृष्टिसे नाटकत्वसे गिर जाता है। भारतेन्दु की 'चन्द्रावली' भी कवित्व प्रधान हो गयी। अुसे तो काव्य रूपक ही कहा जायगा। ये काव्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपक भी खुले रंगमंचपर खेले जा सकते हैं। परन्तु अिस प्रकार खेले जानेवाले नाटकोंमें विशेष शैली या 'टेकनीक' अपनाना पड़ेगी। कथोपकथनमें कविता न रखकर गद्यमें ही कविताका आनन्द देना होगा। शाके नाटकोंकी यही तो विशेषता है। गाल्सवर्दीमें भी कुछ सीमा तक अिसमें सफलता पायी है। चीट्स और अिलियटकी शैली भी योग्य है। अीट्सके 'द शेडो आफ द ग्लेन', 'द प्ले ब्वाय आफ द वेस्टर्नवर्ल्ड' में कवित्व और नाटकत्वका जो समन्वय है, वह अनुकरणीय है। टी. अेस. अिलियटका 'माडर्न अिनके-थाड्ल' की सफलता अिस दृष्टिसे अत्यन्त गौरव-पूर्ण है।

खुले रंगमंचपर खेले जानेवाले नाटकोंमें प्रकृतिका सहारा अधिक लिया जा सकता है। अिसके लिअे 'रामलीला' और 'कृष्णलीला' की पुरानी परिपाटियोंके नये युगके अनुसार ग्रहण करना अनुचित न होगा। बंगालमें ये प्रचलित 'यात्राओं', अुत्तरप्रदेशकी 'नौटंकियों', कथा और मध्यप्रदेश 'माच' आदिसे भी बहुत कुछ रस मिल जाता है। ये सब भारतीय लोक-मंचकी कलापूर्ण साधनाअें हैं, भले ही अिनका विकास न हुआ हो। अिस युगमें प्रकृतिको जिस रूपमें देखा और समझा गया है, अुससे रंगमंचोंको अुपयुक्त बनानेमें सहयोग मिलेगा।

वैसे तो सभी लोक-रंगमंचों, विशेषकर खुले रंगमंचोंपर खेलनेके लिअे नाटक नाटिकाओंमें भाषाका विशेष ख्याल रखना चाहिये। अैसी भाषा लिखी जाय जो स्वाभाविक और सरल हो, भाषाके द्वारा नाटकका ध्येय जनताके हृदय-पटलपर अंकित करनेमें कठिनाअी न हो परन्तु विषयोंका चुनाव भी विविधताके साथ हो सकता है। राजनीतिक अेवं सामाजिक समस्याओंपर बड़े मजेमें प्रकाश डाला जा सकता है—अेकतात्मक, प्रतीकात्मक अेवं व्यंग्यात्मक शैलीसे। पिछले दिनो वर्धामें खुले मंचपर "भारतकी कथा" का अभिनय सफलतासे हुआ था जिसमें स्वयं पंडित नेहरूजीने भाग लिया। वर्णनात्मक शैलीमें घटनाओंकी ओर विशेष ध्यान देना होगा। नाटकीय घात-प्रतिघात भी दिखाये जा सकते हैं। काव्यकी प्रधानता भी अरुचिकर न होगी परन्तु यह ध्यान रहे कि नाटकत्वहीन कवित्व प्रेक्षकोंपर प्रभाव नहीं डाल सकेगा। वैसे तो नाटकोंमें कवित्व आवश्यक है। यदि प्रेमचन्द अपनी कवित्वहीनताके कारण नाटकोंमें सफल नहीं हुअे, तो मैथिलीशरण गुप्त कविताके अतिरेकके कारण।

अभी गत ९ मअीको बम्बअीके माटुंगा स्थानमें बम्बअी तमिळ संघ द्वारा आयोजित नाट्य महोत्सवका अुद्घाटन करते हुअे बम्बअी हाअीकोर्टके मुख्य न्यायाधीश श्री अेम. सी. छागलाने कहा कि "जनतामें समाज सुधारकी आवश्यकताके विचार पैदा करनेके लिअे रंगमंच अेक आदर्श साधन है। नाटक सामाजिक जीवनका दर्पण होता है।" नाटकोंका अुपन्यास और कवितासे अन्तर बताते हुअे आपने कहा कि "अुपन्यास अधिक बड़ा होता है और कविता बहुत छोटी परन्तु नाटकमें अुस कालके सामाजिक जीवनमें व्याप्त शक्तियोंका चित्रण सम्भव है।" वास्तवमें सामाजिक जीवनपर प्रभाव डालनेका नाटक सर्वोत्तम साधन है। अिसीलिअे अन्य देशोंमें सरकार द्वारा नाट्यकलाको प्रोत्साहन प्राप्त होता है। हमारे यहाँ तो अनेक सामाजिक समस्याअें हैं। हमें समाजमें क्रान्ति करनी है। यह कार्य नाटकों द्वारा सुगमतासे हो सकता है। हर स्थानपर बड़े-बड़े रंगमंचोंका निर्माण सम्भव नहीं। अैसी स्थितिमें यदि यह कार्य छोटे-छोटे खुले रंगमंचों द्वारा किया जाय तो बहुत कुछ सफलता मिल सकेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चार हजार वर्ष पुराने चीनी लोक-गीत

: श्री परदेशी, साहित्यरत्न :

सभ्यता और संस्कृतिके महान्तम चीन देशके प्राचीन लोकगीत संत कन्फुशियस द्वारा प्रथम बार सम्पादित हुअे थे।

कन्फुशियस साधारण सुधारक-प्रचारक नहीं था। वह चीनी जातिका प्रथम पैगम्बर था। समाजके विभिन्न वर्गोंको अेकता और अनुशासनके सूत्रमें अुसीने आबद्ध किया। अुसीने जातीय जीवनको मार्गदर्शन दिया। अितना ही नहीं, कन्फुशियसने चीनी-जन जीवनको अमर विश्वास और प्रेमकी गहराअी दी—यही कारण है कि चीनी लोगोंमें अदम्य जीवन-शक्ति और रसानुरक्ति पायी जाती है। अुनकी रसवृत्ति प्रसिद्ध है। कन्फुशियसने सर्वप्रथम जनताको रहन-सहन और दैनिक कार्यक्रम सिखाया। बादमें, अनुशासित लोक-व्यवहारकी महत्ता बतलायी। अिस प्रकार, विशृंखल चीनी जनता अेक अविभक्त, अविजेय राष्ट्रके रूपमें प्रकाशमान हुअी।

सद्व्यवहार और मर्यादित जीवन-यापन यद्यपि, कन्फुशियसके अुपदेशों और सक्रिय सुधारके आवश्यक अंग हैं, तथापि जन-जीवनकी जागृत भावनाओंको अुसने पर्याप्त महत्व प्रदान किया। अिस संतकी समस्त सुधारवादी परम्पराओं, भक्ति पवित्रताकी नैतिक रीतियोंके मध्य लोक-मानसकी सूक्ष्मतम अनुभूतियोंकी अध्यनात्मक विशेषता प्रतिष्ठित है। साधारणसे साधारण व्यक्तिके अन्तरतमसे अभिव्यक्त भावोंका सन्तने न केवल अनुभव ही किया; वरन् अुन्हें अपने मन-मानसके रसस अनुप्राणित भी किया। यही कारण है कि चीनी लोग सन्त कन्फुशियसमें अपने प्राणोंकी प्रतिध्वनियाँ पाते हैं!

आजके वैज्ञानिक विकास और सामाजिक अुत्थानकी दृष्टिसे भले ही, आलोचक नेता अिस सन्तपर संकुचित नैतिकता और भले ही मर्यादित मानवताका दोषारोपण करें, परन्तु अपने युग और कालकी जिन विराट जन शक्तियों और भावनाओंका परीक्षण-प्रतिनिधित्व अुसने किया, अुनके प्रति वह सदैव अुत्तरदायी रहा।

लोक-लास-विलास और विषादका प्रतीक जन साहित्य है, जिसमें लोकान्तरकी अश्रुराशियाँ और सरल स्मृतियाँ प्रतिबिम्बित होती हैं। काव्य अिन भावनाओंका जीवन-गीत है। काव्य युगान्तरोंकी आत्माकी वाणी है। वह काल और लोककी समस्त व्यथा-कथा और गौरव-गाथाका सबल साक्षी है। अैसे काव्यमें, आजसे चार हजार वर्ष पूर्वके चीनी नारी-जीवनकी झलक हमें मिलती है। सन्त कन्फुशियसने, बावजूद अपने सारे ज्ञान-गाम्भीर्य और विरागी बुद्धि-वैभवके, अिस अनन्त भावोन्मेषिनी अगम रसधाराका अपने संग्रह 'शि-किंग' में अवगाहन किया है।

'शि-किंग' में प्राचीनतम चीनी काव्यके विविध वृत्त प्राप्त हैं। गीतोंकी जो बहार "शि-किंग" में लहरा रही है, वह विश्वके गीति–नन्दनवनमें अन्यत्र दुर्लभ है। चार सहस्रवर्ष पहले चीनी नारी, जिस अुच्चतम भाव-भूमि और सांस्कृतिक सोपानपर प्रतिष्ठित थी, अुसकी सुस्पष्ट रूप-रश्मियाँ अिन गीतोंमें अुपलब्ध हैं। संक्षेपमें, यों समझ लेना चाहिये कि चीनकी नारीके जिस स्वर्गीय जीवन-संगीतने कन्फुशियस-जैसे राग-रहित तापसको भावोर्म्मियोंसे अुद्वेलित कर दिया था, वह अवश्य असाधारण है!

राजा 'वान' की परिश्रमी रानी :

अज्ञात नाम कविने अिस कवितामें प्रथम प्राकृतिक सौंदर्यका वर्णन किया है। काव्यकी नायिका रानी नैहर लौटनेवाली है। गाती है :—

दूर दूर तक फैल रहे हैं फूल हजारों
ढकी हुअी है नीली घाटी
अूपरसे नीचे तक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लहरे-गहरे पत्ते अूपर
अपने ही हाथोंसे मैंने
वसन अेक तैयार किया है।
आप सिया है
देख चकित रह गये पिया हैं।
नरम नहीं, बारीक नहीं है
वेश खुरदरा—
पर मैं सचमुच खुश हूं अिसको पाकर,
अपने हाथों आप बनाकर !
अब मैं जाती नैहर अपने
जिसके देख रही हूं सपने।
माँ औ बाप जहाँ हैं मेरे
अपनी दाअीसे मैं बोली—
करो तैयारी घर चलनेकी।
तब तक मैं खुद अपने कपड़े
अपने हाथोंही धोती हूँ····
प्यारे माअितसे मिलनेको
मैं अपने नैहर जाती हूं !

यह है चार हजार वर्ष पूर्वकी श्रमशालिनी आदि-राजरानीका हाल। और आजकी रानियाँ तो सब खत्म हो चुकीं, श्रीमन्त-घरोंकी सेज-रुग्णा प्रमादिनी देवियाँ हैं, जिनकी कथा सबको विदित है।

दूसरी कविता है 'दूल्हनकी प्रशंसामें'। आँगनमें सतालूका नया और खुशनुमा नाजुक पौधा खड़ा है। चमकते हुअे अुसके फूल जरा देखिये, कितने भाग्य-शाली हैं :—

और दूल्हन अपना घर जगमगा रही है।
पूरे भवन और कक्षको वह सजायेगी।
नया और खुशनुमा सतालू लहरा रहा है
नन्हे फलोंकी फसल यह जल्दही झलकायेगा !
और दूल्हन अपना कक्ष सजा रही है···
नया और खुशनुमा सतालू लहरा रहा है।
अुसकी घुंघराली डालियोंका रूप देखो—
दूल्हन अपना घर संवार रही है और
घरवाले अुसका शासन स्वीकार करेंगे !

अिस गीतकी सतालू-बेल और युवती दूल्हनकी तुलना कीजिये। अंतिम पंक्तिमें चार सहस्र वर्ष पूर्व देशमें चीनकी महिलाकी जो सम्माननीय स्थिति थी, वह स्पष्ट विदित होती है। सारा घर नयी दूल्हनका शासन स्वीकार करनेको प्रस्तुत है !

युवतियोंकी मर्यादा :

दखिनके गाछ बहुत अूंचे और
अंकड़ बंकड़ हैं !
न वे छाया देते हैं,
न वे शरण देते हैं।
कुमारियाँ हान मैयाके किनारे-किनारे
भटक रही हैं,
और ओंधन बीन रही हैं।
कुमारियाँ अुस प्रशस्त हानके समान हैं,
जिसमें कोअी डुबकी नहीं ले
सकता।
ये नन्ही अलबेली कुमारियाँ,
दूल्हनके रूपमें,
नये घरोंकी तलाशमें हैं।
हमने अिन्धन बटोरा है
और गठ्ठर बाँध लिये हैं।
और लड़कियाँ अुस चौड़ी हान नदी-सी हैं,
जिसमें न कोअी तैर सकता है
न कोअी नैया खे सकता है,
न कोअी थाह ले सकता है !

चौथा गीत है अेक श्रमिकके विषयमें 'खरगोश पकड़नेवालेका आल्हा' अिसका नाम है :—

चौकन्ना होकर वह भैया अपनी
जाली फैलाये !
रे अपनी जाली फैलाये !
छंग छंगके सुर अुठते हैं,
अिधर अुधरसे, दायें बायें-दायें बायें !
जवाँमर्द मजबूत बड़ा यह खेलनहारा,
साखी अुसकी काया-छाया
कहती है यूं—
चीनदेशकी रखवाली हित
यह अजेय दीवार बनेगा !
सावधान होकर वह अपना जाल रचाये,
वार बचाये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जहाँ भयावह भारी वनमें,
बड़े सघन पेड़ोंके नीचे —
राह देखती छाँह छबीली
वहीं रँगीला, जाल रचाये
बच ना पाये, कहीं न जाये,
अरहा, खरहा, अरहा खरहा !
घर हाँ, घर हाँ !!

यह गीत जालवालेकी अेकाग्र तन्मयता और कुशलताका दर्पण है !

जू नदीके प्रति चीनी महिलाओंका स्नेह :

नदिया जूके अूंचे–अूंचे कगार
और अुनके पार,
मेरा बलमा बसे, परदेस गया जो !
मेरा प्रियतम पति प्राणेश्वर ।
पर न जान पाया वह मुझको अभी
सोचा अुसने कि मेरा बिरहा,
बिरहाकी जलन
भूख–प्यासकी तडप है ।
नदिया जूके अुत्तुंग कगार
पिया बसे जिनके पार,
मैंने देखा है अुसे,
और अभी भी मुझे वह
अपने जीसे जुडाये हुअे हैं !

राजकन्याकी पूजा :

चीनी देशकी राजकन्या अितिहासमें ही नहीं, देश-देशान्तरोंकी दंत कथाओंमें नायिका रही है; लेकिन अुसका स्वरूप अुतना काल्पनिक नहीं, जितना विदेशियोंने चित्रित किया है । प्रस्तुत गीत अिसका प्रमाण है: —

वहाँ दूरपर अुस नालेके पास,
फुर्तीसे वह काट रही रे
दखिन देशकी गोरी, घास
बलिवेदीके लिअे संग्रहीत
समिधा-हित वह करे सहाय,
और देशके राजपुत्रके
मनमें गोरी बसबस जाय !
सर पर अूंचा मौर बाँधकर,
मन्दिर जाये बड़ी भोर वह ।
लौटे अपने रंगमहलमें,
हृदय चुराये बिना शोर वह !

अेक अैसी युवतीका गीत है, जिसके मनमें ब्याहकी अुत्कट अभिलाषा है ।

डाल रही है डाल बेर जो, पके हुअे हैं,
पके हुअे हैं ।
शेष बचे हैं अब केवल आधे ही
अुसपर ।
हृदय मुग्ध ही मेरा जिसपर
कहती हूँ मैं अुससे,
मेरा मोहन है जो!
आजा, आजा ।
यह समय है, बेकल हूँ मैं ।
पके बेर झर रहे डालसे,
(झरते हैं ये टपटप आँसू !)
पाव भाग अब शेष रहा है,
और तू कि जो मुझे चाहता,
पा लेनेको, आ जा !
आना तेरा नहीं अकारथ रे जायेगा !
अब न शेष हैं बेर शाखपर,
(मनके सपने हाय, राखपर !)
भरी हुअी हैं मेरी डलिया,
तू जो मुझको प्यार करे है
बिना सोच-संकोच रखे सब
कह रे मनकी बात, मनोहर !
पके बेर झर रहे निरन्तर !

और अिस गीतमें किसी नादान नवयुवक प्रेमीकी व्यग्रता देखिये :—

राह देखता हूं
अुस कोनेमें मैं तेरी !
सिर चकराये, सोच रहा हूँ
तेरे लिअे जगत्में रानी,
क्या कर दूं मैं, क्या कर दूं ?
अरी सुकन्ये, जीवनधन्ये !
तुम्हें याद है, दिया गुलाब मनोरम था
अुस दिन री तुमने !
मिलन-वचनका साखी था वह !
ओ मेरी मुस्कान !
फूल गुलाबी नहीं, अधिक तुम रूपवती हो !
मेरे मानसमें, सपनोंमें
रास रचाती, तुम रमती हो !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और याद है चरागाहमें—
भेंट दिया था तन्वि, तुमने
नयी घासका तिनका कोमल !
किंतु, सरल, मेरे सपनोंमें
नरम घासका वास नहीं है,
बसी हुअी है मात्र, वहाँ तो
भेंट घासकी देनेवाली
गोरी गोरी, भोली बाला !

च्याँग कियाँग अैतिहासिक नायिका है। अपने पतिकी निठुरतापर विलाप करती है :—

हवा भयावह और सर्द है,
और निठुर 'वह' भी अैसा ही !
मुस्कायेगा खड़ा सामने
बड़ा वीर है,
तीर व्यंग्यके बरसायेगा !
धनी हठीली अुसकी रे मुस्कान, मनोहर—
मेरे मनमें विंधा सूत्रसे
बँधी हुअी है !
पवन प्रवाहित धूलि-मेघ हो
वैसाही वह !
मुझको पानेको बेकल है
और निकट मेरे आता है,
आता पर रुक-रुक जाता है।
आता नहीं, नहीं जाता है।
अपने मान गर्वमें अैठा,
और हृदयमें मेरे अींधन—
बनकर चाहें सुलग रही हैं !
आहें और कराहें अुठतीं
(मेरी दुनिया लुटती)
बड़ी ज़ोरकी पवन बह रही
मघवा दूर पलायन करते।
और अंधेरा घिर-घिर आता,
भयके मारे दिन छिपता है !
जगी हुअी मैं, नींद न आये,
(कौन दूरपर मुझे बुलाये
रह-रह करके मुझे रुलाये ?)
आहें और सिसकियाँ भरकर
अुसकी निर्ममतापर कुढ़ती !
तौर तरीका कैसा अुसका
कैसी निष्ठुर चाल अजब यह !
मेघ भरा यह आसमान है,
घोर अंधेरा, कोअी न मेरा,
बादल गरजे, बिजली तरजे,
(कौन मिलनसे मुझको बरजे !)
बादल-बिजली और आँधियाँ
मेरे मनकी जलन-पीरकी
अेक नयी तस्वीर बनी है,
नींद गयी मैं सो न सकूंगी।
(रोते-रोते नहीं थकूंगी !)
बेगानापन परदेसीका
मेरे मनमें सुलग रहा है
निर्मोही रे, आज रात भर,
होली धधकायेगा, अुरमें !
(सो न सकूंगी, रो न सकूंगी !
कैसा मेरा हाल हुआ है ?

और प्राचीन चीनका 'प्रेम-गीत' देखिअे :—

गगनमें मगन, चाँद है नया
हृदय मेरा बरबस कर गया !
यही क्या, 'वही' नार रसवंती ?
(चाँद ही क्या मेरी प्रेयसी है ?)
बाँधा गोरीने हृदय प्रेम-साँकलसे।
मेरी चाहें सब बेकार
असह यह दुखका भारी भार !
सुहाना चाँद सामने जगा,
रोग यह मनको कैसा लगा ?
चाँदसे अुजली मेरी बाल
सपनोंकी राजपरी !—
व्यथामें मेरी बसी हुअी,
दूर न होगी अुरकी पीर
व्यर्थ मैं करूँ लाख तदबीर,
हृदयमें सुलगे ठंडी आग !

अुपरोक्त गीतोंसे हमें यह तथ्य मिलता है कि पुरातन चीनियोंकी हृदयस्थ भावनाओंका अुद्गम स्त्रोत 'प्रकृति' है। जीवनमें अमित आनंदकी अैसी निर्मल रसधारा जिस जातिको सुलभ थी, अुसके सांस्कृतिक विकासका अन्दाज लगाना आसान नहीं ! अपनी प्रत्येक स्मिति-लहर और अश्रु-बूंदको जो जाति युग-युग तक प्रकृतिमें प्रकट देखती आअी है, अुसकी अपराजित अमरतामें किसे अविश्वास हो सकता है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar
रा. भा. ८

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

म्याअूँकी मुसीबत

: श्री प्रभाकर माचवे, अेम. अे. :

हमारी बिल्ली और हमसे ही म्याअूँ ? जी हाँ, आजकल यही जमाना आ गया है। क्या बताअूँ मैं अपनी मुसीबत ! कहांसे यह बिल्ली पाली ! अेक आफतकी परकाला हो गयी। आपको बिल्ली और अुसके बच्चे बहुत अच्छे लगते हैं। जरा मुझसे सुनिये, क्या-क्या गुण अिस बिल्लीके हैं।

आप पूछते हैं मैंने बिल्ली पाली ही क्यों ?

बात यह है कि मैं अेक दिन अपनी पुरानी किताबें निकालकर देख रहा था। देखता हूँ कि "संस्कृत कविचरित्र" किताबके बजाय छोटे-छोटे कुतरे हुअे कटेफटे कागजोंके टुकड़ोंका अेक ढेर-सा मौजूद है। आगेकी सब किताबें अच्छी करीनेसे रखी हुअी हैं। मगर खुली हुअी आलमारीके पीछेके कोनेमें, चूहे महाराज "संस्कृत कविचरित्र" किताबको ही चट कर गये। मुझे चूहे और अुसके खानदानपर अैसा गुस्सा आया, अैसा गुस्सा आया कि सच मानिये सामने कोअी चूहा पा जाता तो मैं अुसका क्या न कर डालता। पर जनाब चूहा पा जाना क्या आसान बात है ! जिन्दा चूहा अैसा तेज तर्राट जानवर कि आप हजार तरकीबें कीजिये अुसे पकड़ नहीं सकते। पींजरा ! जी हाँ, वह भी रखके देखा। चूहा जब अैसे अच्छे बड़े-बड़े पोथे चाट जाय, तो अुसकी अक्ल क्यों न पैनी हो जाय। वह पींजरेकी तरफ अब जाता ही नहीं। आखिर अडोसी-पड़ोसीने राय दी कि अेक बिल्ली पालो। और पता नहीं किस बुरी साअितमें मैंने अुनकी राय मान ली। अब यह रोज-रोजकी परेशानी सिरपर आ पड़ी।

बिल्ली पालनेकी पहली वजह चूहे थे। सुनता हूँ, चूहेका अेक जोड़ा सालमें ११४ चूहे बन जाता है। बड़ी आफत है। सुना था कि हमारे देशमें हर साल न जाने कितने लाख टन या मन अनाज ये मूषक महाराज खा जाते हैं। चूहा हमारा शत्रु नम्बर अेक है। अिस शत्रुका नाश करनेके लिअे यह बिडालास्त्र मैंने चुना। पर देखता हूँ, अिस बिल्ली मौसीको अुस गन्दे जानवरके पीछे दौडने और अुसे पकड़नेकी जरा भी अिच्छा नहीं। चूहे अेक कोनेमें लोट-पोट लगा रहे हैं, दूसरे कोनेमें बिल्ली चुपचाप समाधि लगाये बैठी है। देखती है, फिर भी हिलती-डोलती नहीं। जान पड़ता है जैसे व्रत कर रही हो। नहीं-नहीं, शायद यह भी हो सकता है कि चूहेने लाआत्सू नामके चीनी दार्शनिककी अहिंसा और प्रेमकी फिलासफीकी किताब कुतर ली और अुसका असर बिल्लीपर हो गया। कहावत कहावतकी ही जगह रही, 'हज़ार चूहे खायके बिल्ली चली हज्जको' यहाँ बिल्ली रानीका हज्ज और तीर्थ हमारा घर हो रहा था।

अेक दिन सबेरे मुन्नेने पूछा कि आप बिल्लीको अितना कोसते हैं,बुरा भला कहते हैं,परंतु यह तो बाघकी मौसी है। कहीं जाकर जंगलमें बाघसे शिकायत कर देगी तो और मुश्किल हो जायगी। फिर मुन्ने भी अैसे-अैसे सवाल पूछते हैं कि अुनका जबाब देना बहुत मुश्किल हो जाता है। पूछने लगा.. बाघके बदनपर तो धारियाँ होती हैं, बिल्लीके कहाँ हैं ? क्यों नहीं हैं ? हमारी बिल्लीके बदनपर और दाअी आंखभर काले धब्बेसे क्यों हैं ! अुन्होंने मेरी जान बचा ली। मैंने कहा भगवान जानवरोंको बना रहे थे तो अुन्होंने चीतेको तो काले रंगमें डुबो दिया, अुसीकी धारियाँ शेरपर बन गयीं। स्याही जब पूरी खत्म हो गयी तब पहुँची बिल्ली। अुसका मन रखनेके लिअे भगवानने स्याहीमें भरी अुंगलियोंसे दो तीन छाप दे दिये और कहा... "जाओ।" और वही बिल्ली सीधे अपने घरमें आ गयी।

बिल्लीके घरमें आते ही पहला सवाल यह अुठा कि अिसका नाम क्या रखा जाय। बिल्लीका पहलेसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोअी नाम रहा ही होगा, मगर हमें वह नाम पसन्द नहीं था। हम सबने बाकायदा सभा बुलाकर तय किया कि अुसका नाम पूसी रखा जायगा। और भी नाम सुझाये गये थे, किसीने मिनी कहा, किसीने नीना कहा, किसीने मोमो बताया। सब तरहके बेमानी नाम सुझाये गये। पर मुन्नू और मीराने तय किया कि पूसी नाम ही अच्छा है। हमने जो बिल्ली पाली थी वह कुछ बहरी नहीं तो अूंचा सुननेवाली जरूर रही होगी। हम पुकारते जाते थे पूसी, पूसी! डांटकर, पूसी! पुसी! पुचकार कर, पूसी, सी!! पर वहाँ कोअी जवाब ही नहीं मिलता था। पहला अचरज तो हमें यही हुआ बिल्ली पाली सो भी बहरी।

चूहोंको न सतानेवाली, बहरी पूसी हमारे घरमें अेक और भार बन गयी। अंग्रेजोंका विश्वास है कि बिल्लीके नौ जन्म होते हैं। पता नहीं नौ ही क्यों मानते हैं। अिसमें कोअी रहस्यवाद जरूर छिपा होगा। वैसे तो 'म्याऊँका मुंह कौन पकड़े', पर अंग्रेजी जबान भी खूब है। चूहे और बिल्लीका सम्बन्ध सोचकर ही दोनोंके नामके हिज्जे अेकसे कर दिय। सी० अे० टी०, कैट, आर० अे० टी०, रैट।

यह हमारी पूसी हर वक्त, हर जगह हमारा रास्ता काटने लगी। मैं सगुन असगुन नहीं मानता; परन्तु चाचा और चाचीजी घरसे बाहर निकलनेको हुअे कि पूसी रानी राहमें आ गयी। और अैसे रास्ता काट गयी जैसे कोअी तीर हो। बस सारा काम ठप हो गया। पता नहीं अिसे कैसे पता लग जाता है अिसी वक्त रास्ता काटना है।

अेक दिन पानी 'कुत्ते बिल्लियोंमें बरसा' माफ कीजिये जरा अंगरेजी मुहावरेका तरजुमा करके बोल रहा हूं, मतलब खूब मूसलधार पानी बरसा। और मैं अेक नाविल पढ़ रहा था, जिसमें बड़ा रस आ रहा था। बड़ी ही सजीव कहानी थी। हम सब सोच रहे थे कि 'बिल्ली किधर कूदती है बजाय नाविलकी कहानीमें' 'बिल्ली झोलीसे कूद पड़ती है! सचमुचमें बिल्ली कहींसे आयी' अुसने मोमबत्ती लुढ़का दी। मेजपोश जल अुठा और अुसपर रखे कागज भभक अुठे। और खासा हंगामा मच गया। मैं न्यूटनकी तरह सोचता ही रह गया कि यहीं पूसी आध घंटे पहले अुस खिड़कीसे चली गयी थी। खिड़की मैंने बन्द कर दी थी। पता नहीं फिर कहांसे कूद पड़ी। बिल्लीकी राह बिल्ली ही जाने। बड़ी मुश्किलसे वह आग बुझायी गयी। पूसीसे हम तंग आ गये।

मैं यह सब सोच ही रहा था कि बिल्लीको किस तरहसे अिस घरसे बाहर किया जाय कि बिल्ली देवी माता हो गयीं। फिर अड़ोस पड़ोसके बच्चे जमा हो गये और बिल्लीके बच्चोंको ले जाने तथा पालनेके सवालपर अेक दूसरेमें लड़ाअी झगड़ा होने लगा। हमने कहा .. "बाबा ये सब बच्चे भी ले जाओ, और अुसकी माँको भी ले जाओ।" पर पूसीको कौन ले जाय। बड़ी मुश्किलसे हमने शहरके दूसरे मुहल्लेमें रहने-वाले अपने मामाके यहां पहुंचाया। चौथे दिन देखता क्या हूं कि कैसे अितने मकान, रास्ते, गलियाँ, सडकें पार करके पूसी रानी फिर हमारे घरमें मौजूद हैं। वही जूते रखनेकी जगहपर चुपचाप थकी-मांदी सोयी हैं।

लोग-बाग कहते कि बिल्लीके बच्चे बड़े प्यारे होते हैं। टैगोरने बच्चोंपर कविता लिखी है, जिसमें कानाअी नामका लड़का मास्टर बन जाता है। बिल्लीके बच्चोंको अपने स्कूलके पढ़नेवाले लड़के बनाकर बैठाता है और क ख ग घ ङ पढ़ाता है। वह कहता है।

आप बोले—चो छो जो झो
ओअी बोले—म्याऊं म्याऊं!

बिल्लीकी हरकतें कभी आपने देखी हैं। अेक बार तो अुसके पंजोंके निशान तो लिये। न देखते तो मुमकिन था नौकरको मार-पीटकर घरसे निकाल देते। अच्छा अुफना ताजा दूध आधा सेर चीनीके बड़ेसे बर्तनमें ठंडा होनेको रखा था। घरकी मालकिन जरा बाहर क्या गयीं; देखते हैं कि रसोअीघरसे दूध गायब! बहुत कसमें हमारे नौकरने खायीं। कहा कि अुसने दूध देखा भी नहीं पर वह रसोअीघरमें आया जरूर था। पूसीका हमें खयाल भी न आया। मजा यह कि पूसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मजेसे सब पीकर मूंछें चाटकर, पूँछ अुठा, बदन, फुलाकर चुपचाप पिछली खिड़कीसे बिना आवाज किये, चोरकी तरह छप्पसे कूद पड़ी और बगीचेके रास्तेपर धूप लेने बैठी। दूधकी चोरीका अिलजाम नौकरपर लग चुका था। पूसी बिलकुल बेदाग छूट गयी थी।

हम अुसे पकड़ भी लेते, तो क्या सजा दे सकते थे। हमने कुछ दिन तक पूसीको कुछ भी खानेको न देनेका प्रयोग भी करके देखा। पता नहीं वह कहाँ कहाँसे क्या-क्या चुराकर खाकर आ जाती थी।

पाँच महीने बाद अुसने फिर बच्चे दे दिये। बड़ीही अजीब हालत थी। बिलौटा घरमें आ रहा है। खाँव-खाँव लड़ाअी हो रही है। कभी कुत्ते और बिल्लीके बीचमें लड़ाअी हो रही है। पूरा घर जाग रहा है।

अिस बिल्लीके मारे नाकमें दम आ गया। मुझसे मत पूछिये। बिल्लीसे क्या-क्या मुसीबत होती है और कुछ नहीं तो मुन्नु आकर कहानी पूछ रहे हैं, दो बिल्ली और बन्दरकी क्या कहानी है बाबा! होगी कुछ भी कहानी, दो बिल्लियोंको खोआ मिला या मिठाअी! बिल्लीसे तो हम आजिज आ गये।

हम अुसे टालनेकी जितनी कोशिश करते अुतनीही वह फिर हमारे घरसे चिपकती जाती। मुझे पता लगा कि बिल्लीकी जबानमें काँटे भी होते हैं और अुसकी आँखें अँधेरेमें भी बड़ी दूरकी चीजें देख लेती हैं। अब तो हमारी यह हालत हो गयी है कि बिल्ली तो बिल्ली, बिल्ली जैसी कंजी-हरी आँखोंके आदमियों और औरतोंसे भी हमें डर लगने लगा है।

हाथ जोड़ते हैं हम तुम्हें पूसी रानी! फिर आ गयी कहींसे।

(म्याअूं म्याअूं)

चंचलं हि मनः कृष्ण !

मन अत्यन्त चंचल, प्रबल और बड़ा ही ढीठ है। वह कभी स्थिर नहीं रहता। शरीरके अन्दर बन्द रहता हुआ भी दुनिया भरमें घूमता है। बहुत दूर, बहुत पास, बहुत छोटी और बहुत बड़ी, कौन-सी वस्तु है संसारमें जहाँ यह मन न पहुँच पाता हो? जब हम सोते हैं तब यह घूमता फिरता है न जाने कहां-कहां! मनको रोकना, वशमें करना, किसीके बूतेमें नहीं। अिसको काबूमें रखना सरल नहीं। बड़े, बड़े योगी, महान् पुरुष-व्रती संयमी मनसे हार मान चुके हैं। यह मदोन्मत्त हाथीसे भी अधिक दुर्निग्रह है। मनको जहाँसे रोकोगे वहीं जायगा। जिसे करनेके लिअे मना करोगे अुसीको यह करेगा। विषय-विलासमें यह अैसा निमग्न हो जाता है कि मान-अपमानका अिसे ख्याल तक नहीं रहता। शर्मको यह तोड़ देता है। मन बड़ा बेमुरव्वत है। बड़ा बलिष्ठ और स्वेच्छाचारी है। अिसलिअे अुसपर विजय पाना बड़ी भारी सिद्धि प्राप्त करना है। मन बड़ा चपल चंचल है, कभी विश्राम नहीं लेता। बड़ा ही वेगवान है। "तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् !"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय भाषाओंका वैज्ञानिक अनुसंधान

: श्री प्रा० श्रीनिवास नारायण वनहट्टी, अेम. अे. :

अभी-अभी पूनामें भारतीय भाषाओंके सम्बन्धमें दो परिषदें हुअी थीं। अेक थी "भारतीय भाषा-विकास-परिषद्" जो पूना-विश्वविद्यालयकी ओरसे आमंत्रित की गयी थी और जिसमें केन्द्रीय सरकार, विभिन्न राज्यसरकारोंके तथा कअी विश्वविद्यालयोंके प्रतिनिधि सम्मिलित हुअे थे। अिस परिषद्के सम्बन्धमें अखबारोंमें कुछ-न-कुछ समाचार आ चुके हैं और अिसका अुल्लेख 'राष्ट्रभारती' के गत मअीके अंकमें, सम्पादकीय विचारोंमें भी किया गया है। किन्तु अुक्त परिषद्के बाद जो दूसरी परिषद् पूनाके डेक्कन कालेजमें हुअी अुसका वृतान्त देशी भाषाके पत्रोंमें कहीं नहीं आया। बम्बअीके अंग्रेजी अखबारोंमें जो थोड़ा बहुत आया, वह लोगोंका ध्यान खींचनेमें समर्थ नहीं हुआ। अिस अप्रसिद्धिका कारण था अुस परिषद्का अनौपचारिक स्वरूप। अुसमें सिर्फ ३५ व्यक्ति बुलाये गये थे और लगभग अुतने ही अुपस्थित थे। आयोजन भी अैसी शक्लका था जैसे कहीं अेक जगहपर मित्रोंका स्नेह-सम्मेलन हो रहा हो। चर्चा और बातचीत भी वैसी ही चली जैसी कि मित्रोंमें या पारिवारिक व्यक्तियोंमें चलती है। निर्णय भी वैसे ही हुअे; जिनको अमलमें लाना हरअेक अुपस्थित सज्जनने अपना कर्तव्य समझा।

अिससे अैसा न समझा जाय कि अिस परिषद्का महत्व, जो व्यक्ति वहाँ निमंत्रित थे, अुनके दायरे तकही सीमित था और अुसमें हमारे राष्ट्रकी प्रगतिकी कोअी भी झलक नहीं थी। नहीं, मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि असल अहमियत तो अिसी परिषद्की थी। क्योंकि यह परिषद् कुछ ठोस काम करनेकी गरजसे आमंत्रित की गयी थी और यह अुद्देश्य पूरी तरह सफल भी हुआ।

अिस परिषद्की सबसे बड़ी विशेषता थी अिसकी वैज्ञानिकता। सभी निमंत्रित सज्जन भाषा-विज्ञानके विशेषज्ञ थे, जिनमें भारतके सबसे महान् भाषा-वैज्ञानिक डॉ. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, डॉ. धीरेन्द्र वर्मा और डॉ. बाबूराम सक्सेना आदि भी थे। परिषद्के अध्यक्ष थे डॉ. सर राल्फ टर्नर महाशय, जो अिंग्लैंडके सबसे बड़े 'लिंग्विस्ट' यानी भाषाशास्त्री कहलाते हैं। लंदन विश्वविद्यालयके अन्तर्गत प्राच्य और आफ्रिकन भाषा-विज्ञानका जो जगद्विख्यात विद्यालय है, सर राल्फ अुसके अध्यक्ष हैं। परिषदके मंत्री और संचालक थे डॉ. सुमित्र कत्रे जो सचमुच वहाँपर निमंत्रित सभी लोगोंको अेक सुमित्रकी भाँति अपना अनुभव दे रहे थे।

अिस परिषद्का अुद्देश्य था भाषा-विज्ञानकी बुनियादपर भारतीय भाषाओंके लिअे क्या किया जा सकता है, अिसपर विचार करना। यह अुद्देश्य दो भागोंमें बाँटा गया। अेक भाग था ध्येयका निरूपण यानी भाषाओंके वैज्ञानिक अध्ययन अनुशीलनके लिअे क्या-क्या करना चाहिये। यह निर्विवाद है कि भाषा-विज्ञानका अध्ययन-अध्यापन हमारे देशके विश्वविद्यालयोंमें बहुत ही अल्प मात्रामें होता है। कलकत्ता और पूना अिन दो विश्वविद्यालयोंको छोड़कर भारतवर्षके अन्य किसी विश्वविद्यालयमें भाषा-विज्ञानके अध्ययन अध्यापनका समुचित प्रबन्ध नहीं है। अितना ही नहीं, विश्वविद्यालयोंके संचालकों और अन्य समितियोंको अिसका ख्याल भी नहीं कि वैज्ञानिक जगत्में भाषा-विज्ञानका स्वतंत्र और महत्वपूर्ण स्थान है और अुसके अध्यापनका स्वतंत्र रूपसे प्रबन्ध करना अत्यन्त आवश्यक है। अभी तो अेम. अे. जैसी अुच्च परीक्षामें भाषा-विषयक अभ्यासक्रममें साहित्यके अध्ययनके साथ व्याकरण और भाषा-विज्ञानका अेक-आधे प्रश्न-पत्र रख देना ही काफी समझा जाता है। परिणाम यह होता है कि साहित्यके अध्ययनशील लोग भाषा-विज्ञानको अेक निरर्थक बोझ समझते हैं और अुसके लिअे अुनके मनमें अरुचि बनी रहती है।

डेक्कन महाविद्यालयकी परिषद्ने अिस खेदजनक परिस्थितिकी तरफ विश्वविद्यालयोंका ध्यान खींचनेकी कोशिश की। अुसने अपने प्रस्तावों द्वारा जोरदार सिफारिश की कि सभी भारतीय विश्वविद्यालय भाषाओंका वैज्ञानिक अध्ययन-अध्यापन स्वतंत्र रूपसे बी० अे० और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेम० अे० के पाठ्यक्रममें रखें तथा प्रायोगिक अुच्चारण विज्ञान (Phonetics) के अभ्यासके लिअे प्रयोग-शालाअें स्थापित करें ।

भारतीय भाषा-विज्ञानकी बुनियादी जरूरतें (Fundamental needs of Indian linguistics) कौन-सी हैं, परिषद्ने अिसपर गहरा विचार-विनिमय किया । प्रस्तावके रूपमें जो आवश्यकताअें बतलायी गयी हैं, वे अिस प्रकार हैं:--

(अ) प्रमुख भारतीय भाषाओंके अैतिहासिक व्याकरणकी अेक रूपमालिका (सिरीज) के रूपमें तैयार करायी जाय ।

(आ) सर्व साधारण और भारतीय भाषा-विज्ञानके प्रमाणभूत ग्रंथोंका, जो विदेशीय विभिन्न भाषाओंमें लिखे गये हैं, भारतीय भाषाओंमें अनुवाद कराय जाय ।

(अि) बोलियोंके अितिहास और बोलियोंके — भूगोलको सर्वप्रथम स्थान दिया जाय, क्योंकि अिस अभ्यासकी सामग्री द्रुतगतिसे नष्ट होती जा रही है ।

(अी) प्रमुख भारतीय भाषाओंके महत्वपूर्ण ग्रन्थोंकी आवृत्तियाँ तैयार कराअी जाअें ।

(अु) भारतीय भाषाओंकी जाँच आधुनिक और व्यापक रूपसे करायी जाय ।

(अू) भाषा-विज्ञान सम्बन्धी ग्रन्थोंकी अेक प्रामाणिक नामावली तैयार करायी जाय ।

यह तो हुआ अुक्त परिषद्के अुद्देश्यका अेक विभाग जिसपर किया गया विचार सिफारिशोंके रूपमें परिषद्के सामने रखा गया और परिषदने अुसे मंजूर किया ।

अुद्देश्यका दूसरा विभाग था भारतीय भाषाओंकी सर्वसामान्य "शब्दावली" (Common vocabalaries of Indian languages) तैयार करवाना । यह बात तो प्रत्यक्ष और प्रयोग रूपमें कार्यकर दिखानेकी थी; न कि बोलने या प्रस्ताव मात्र स्वीकार कर लेनकी । डॉ. कत्रे महाशयने अिस कार्यका अेक ब्यौरा तैयारकर निमंत्रित सज्जनोंके पास सूचनार्थ भेजा था । परिषद्ने अुसे मंजूर किया और अिस कार्यको बड़ी तत्परता या लगनके साथ हाथमें लेनेका अपना निश्चय अुत्साहपूर्वक प्रकट किया ।

अगर हम सर राल्फ टर्नरके शब्दोंको लेकर अिस कार्यका स्वरूप वर्णन करें तो " Rapprochement of the Indian languages by directed selection of vocabalaries, especially in schools "— अिसका अर्थ होगा निर्दिष्ट रीतिसे शब्द-समूहका चुनाव या चयन करके स्कूलोंकी पाठ्य-पुस्तकोंमें अुसका अुपयोग करना और अिस रीतिसे भारतीय भाषाओंमें अधिकाधिक निकटता लानेका प्रयत्न करना ।

वैज्ञानिक प्रद्धतिके आधारपर ही अिस कामको पूरा करना है । शुरूमें ही प्रमुख भारतीय भाषाका बुनियादी शब्द-संग्रह (Basic vocabalary) तैयार करना होगा । वह अुपलब्ध कोशों, लोक-प्रचलित व्यवहार और खासकर प्रचलित पाठ्य-पुस्तकोंसे तैयार किया जायगा । साथ ही, आर्य और द्राविड़ भाषाओंके समानार्थी शब्दोंके कोश भी बनाये जाअेंगे । प्रत्येक भाषाका बुनियादी शब्द-संग्रह अिस समानार्थक शब्द-कोशसे और दूसरी भारतीय भाषाओंके बुनियादी शब्द-संग्रहसे मिलाया जायगा । अिसके फलस्वरूप समान शब्दोंके समूह (Common vocabalaries) तैयार किये जाअेंगे, जिनमें शब्दोंकी लोक-प्रियताके आधारपर समानार्थी शब्दोंका अनुक्रम निर्धारित किया जायगा । जब हम अैसे समान शब्दोंके कोश (Common vocabalaries) तैयार कर पायेंगे तब आगेका रास्ता आसान हो जाअेगा । पाठ्य-पुस्तकोंमें शब्दोंका प्रयोग करते समय समान शब्द-कोशोंसे ही भाषाकी प्रकृतिसे मिलता-जुलता शब्द चुनकर अिस्तेमाल किया जाअेगा । अिससे भाषाकी प्रकृतिको बाधा न पहुंचाते हुअे हम भारतीय भाषाओंको अेक दूसरेसे अधिक समीप ला सकेंगे और प्रत्येक भाषाकी शब्द-संपत्ति बढ़ा सकेंगे ।

कार्य है तो बड़ा सुन्दर और आदरणीय है । लेकिन जितना सुंदर अुतना ही कठिन और जिम्मेदारीका भी है । परिषद्ने अेक स्थायी समिति बनाकर अुसके बलिष्ठ और कुशल हाथोंमें अिस कार्यको सौंपा है । स्थायी समितिमें सर राल्फ टर्नर, डॉ. सुमित्र कत्रे, डॉ. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, डॉ. बाबूराम सक्सेना और प्रा. टी. अेन. श्रीकण्ठय्या जैसे मनीषी लोग हैं । ये जैसे भाषा विज्ञानके प्रौढ़ जानकार हैं, वैसे ही असाधारण कार्यकर्ता भी । समितिमें अिनका अस्तित्व ही कार्यसिद्धिका सबसे बड़ा प्रमाण है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तमिळ :

कालके पथपर

: श्री "सोमु" :

अुस पथमें, जिसे काल कहते हैं, पांच यात्री आगे बढ़े जा रहे थे--कालके पथमें ।

अिन पांच हमराहियोंमेंसे अेकका नाम था आकाश, दूसरेका वायु, तीसरेका अग्नि, चौथे यात्रीका नाम जल और पांचवेंका संसार था ।

कालके अिस अन्तहीन टेढ़े-मेढ़े रास्तेसे ये पांच यात्री बहुत दूर निकलकर चले जा रहे थे । ये अपनी अिच्छानुसार नहीं चल रहे थे; अिन लोगोंको अज्ञात रूपमें कोअी शक्ति कहीं खींचे ले जा रही थी । वह थी नियति ।

काल-पथमें जहाँ-तहाँ पत्थर--पाषाण, शिला खंड--पड़े हुअे थे । तीस छोटे पाषाणोंके बाद अेक बड़ा पाषाण ! अैसे बारह बड़े पाषाणोंको पार करनेके बाद अेक बहुत अूँचा महाकाय पाषाण, जिनको संसार दिन, महीना और वर्षके नामसे पुकारता आ रहा है ।

यात्री चले जा रहे थे बिना किसी अन्तकी मंजिल पर । अुन्हें थकावट महसूस हो रही थी । "न जाने यह पथ अन्तहीन कबसे चला आ रहा है ।"— संसार मन ही मन कुढ़ रहा था । कभी-कभी वह अूब जाता । अुसके डग आगे बढ़नेसे अिन्कार कर देते । फिर भी संसार पैर घसीटता हुआ चला जा रहा था । किन्तु अन्य चार यात्रियोंने अिस ओर ध्यान नहीं दिया । और वे आगे बढ़ते चले गये—'नियति ! नियति !' कहते हुअे । संसार भी अुनका अनुगमन करने लगा ।

अिनकी आँखोंसे ओझल रहकर जो नियति अिन्हें ले जा रही थी, वह खड़े-खड़े मुसकुरा रही थी ।

यह देखिये बड़ा पाषाण ! अेक यात्रीने कहा "प्यास लगी है", वह था जल ! संसार खिल-खिला पड़ा । "मित्र जल ! तुम्हें प्यास लगी है ?' संसारने जलकी पीठ ठोंकी । अपने पक्षका समर्थक पाकर संसारको खुशी हुअी ।

अितनेमें अग्निने अुन दोनोंकी ओर अेक नजर डाली । "नियति ! नियति !" कहते हुअे हाथमें हाथ लेकर संसार और जल आगे बढ़े ।

अदृश्य, अरूप नियति फिरसे मुसकरायी । मुसा-फिर फिर आगे बढ़ने लगे ।

काल-पथपर जा रहे यात्रियोंको संसारके समान थकावट सताने लगी । "थकावट अब तो नहीं सही जाती । मैं पसीनेसे तर हो गया हूँ ।" अग्निने कहा ।

कुछ दूर जानेके बाद वायु कहने लगा—"मैं अेक पग भी आगे नहीं बढ़ सकता, बहुत थक गया हूं ।" वायुका कहना पूरा नहीं हुआ था कि आकाश—"मेरी आँखोंमें अन्धेरी छा रही है" कहता हुआ वहीं दिल मसोसकर बैठ गया ।

संसार आग बबूला हो अुठा । बड़बड़ाने लगा—"कौन है वह मूर्ख, जो हमें अिस अनजाने रास्तेसे ले जा रहा है ?" अिसपर जल बोल अुठा—"मैं पहले ही जानता था कि तुम बड़े झगड़ालू हो, अिस तरह झगड़ा करोगे । पर मैं क्या करता । अिस अग्निने ही मुझे डराया धमकाया आँखें फाड़-फाड़कर ।" अग्नि दांत पीसने लगा—"मैं रुक जानेवाला था; लेकिन यह वायु माने तब ? वह तो मुझे अेक पल भी आराम करनेका अवसर दिये बिना खींचे ले जा रहा है ।"

भला आप ही कहिये । अिन सबकी बातें सुनकर वायु कहाँ तक चुप रहता ? अपने पक्षका समर्थन करते हुअे बोला--"मैं क्या करूं ? अिस आकाशने मेरे नाकमें दमकर रक्खा है । मुझे मुँह खोलनेकी भी स्वतंत्रता नहीं है ।"

आकाश अिन चारोंको परिताप भरी नजरसे देखने लगा— "दोस्तो ! मैं स्वयं नहीं जानता कि हम कहाँ जा रहे हैं ?"— गंभीर आवाजमें जोरसे हँस पड़ा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब संसारको बल मिला। सिरपर हाथ फेरते हुअे बोला—"तो साथियो! हम किसलिअे अेड़ी चोटीका पसीना बहाते हुअे अिस टेढ़े-मेढ़े रास्तेपर चले जा रहे हैं?"

अिन पाँचों आकाश, वायु, अग्नि, जल और संसारको अिनके अनजाने पथपर ले चलनेवाली वह नियति फिर अेक बार मुसकुरायी।

अपना प्रश्न बेजवाबही रहा, यह बात संसारको खटकने लगी। जोशमें आकर वह जलसे पूछ बैठा—"क्या तुम नहीं जानते हम कहाँ जा रहे हैं?" अग्निसे जलने गुस्सेमें आकर सवाल किया—"क्या तुम नहीं जानते!" अग्नि वायुसे सवाल करने लगा—"क्या तुम भी नहीं जानते?" वायु आकाशके अूपर आक्रमणकर बैठा। आकाशने चारोंको शान्त रहनेके लिअे कहा परन्तु साथमें अदृश्य रूपमें चलनेवाली नियति अिन शेखचिल्लियोंकी बातें सुनरखिलखिलाकर हंस पड़ी।

आकाश अगर अपने बलका प्रयोग करता तो वायु दब जाता, अगर कहीं वायु अेक ही दीर्घ निःश्वास ले लेता तो आकाश चूर-चूर हो जाता; अग्नि अपनी तीव्रतासे प्रज्ज्वलित हो अुठता, तो जल भाप बन जाता; जल अेकाअेक बाढ़के रूपमें अुमड़ पड़ता तो अग्नि राखका ढेर हो जाता। अेसी परिस्थितिमें अिन पाँचोंने आपसमें लोहा लेनेकी ठानी। अुस महायुद्धका अन्त ही कहाँ? संसारको कुचलते हुअे, अिन चारोंने अिस अनन्त महायुद्धमें अपना अपना कदम आगे बढ़ाया।

चारों– आकाश, वायु, जल और अग्नि–के पैरों तले दबा-दबोचा संसार छठी आवाज सुनकर चौंक अुठा। अुसी वक्त चारोंने अपने हाथ ढीले कर दिये। "यह खिल–खिलाकर कौन हंस रहा है?" संसारने पूछा। चारोंने अुसी सवालको दुहराया। "मैं हूँ वह छठी आवाज"—नियतिने कहा।

"क्या! छठी आवाज तुम? तुम तो आँखोंसे दिखायी भी नहीं पड़तीं?"–संसारने फिर पूछा।

दूसरे चारोंने आँखोंको मसलते हुअे अच्छी तरह देखा चारों ओर। "मैं भी अेक हूं। काल-पथमें तुम लोगोंकी मैं पथ-प्रदर्शिका हूँ।" नियतिने अुत्तर दिया।

दूसरेही क्षण पाँचों जोशमें आकर अुठ खड़े हुअे। अुन्होंने अेक साथ प्रश्न किया– "तो तुम्हारा पथ-प्रदर्शक कौन है?"

नियति धीरे-धीरे अुत्तर देने लगी—"दोस्तो! वह शक्ति, जिसका वर्णन पांच प्रकारसे किया जाता है। प्यारा आकाश, प्यारा जल, प्यारा अग्नि, प्यारा वायु और प्यारा संसार"—मुझे भी लिये जा रहे हैं, मुझ नियतिको भी। वही नियति है।

"तो फिर....." संसारने वाक्य पूरा नहीं किया।

"अैसा कुछ भी नहीं, कि हम चलते हैं; हम दूसरी शक्तिसे चलाये जा रहे हैं। अिस परिस्थितिमें थकावट कैसी? हमको ले चलनेवाली शक्ति ही जब थकती नहीं!" नियतिने शान्त स्वरमें अुत्तर दिया।

आकाशने कहा—"तो फिर आगे बढ़ें।" थकावट, मनमुटाव, कलह खतम हुआ। प्रेमका सबमें अुदय हुआ।

कालके पथमें प्रेमपाशमें बँधे हुअे पाँच मुसाफिर पृथ्वी (संसार) जल, वायु, अग्नि और आकाश चले जा रहे हैं चिर अनन्त काल तक भूत, वर्तमान और भविष्य रूपमें।

अनुवादिकाः कुमारी लक्ष्मी कृष्णन्, राष्ट्रभाषा-रत्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शेयर-बाजार

: श्री प्रा. कृष्णचन्द्र गुप्त, अेम. काम., अेल-अेल. बी. :

शेयर-बाजार अेक अैसा शब्द है, जो प्रत्येक व्यक्तिके हृदयमें कौतुहल अुत्पन्न करता है। अधिकांश व्यक्ति यह नहीं समझ पाते कि वह है क्या वस्तु ? कुछ समझते हैं कि वह अेक दिनमें धनवान बननेका सरल साधन है—"केवल भाग्य साथ दे तो, शेयर बाजारमें जाते ही रुपयोंकी वर्षा होने लगती है।" परन्तु दूसरे कुछ लोगोंके विचारमें शेयर-बाज़ार अेक अैसा दूषित स्थान है, जहाँ पहुँचकर भले-से-भले व्यक्तिका पतन हो जाता है। अिस तरहके विचार केवल जन-साधारण तक ही सीमित नहीं हैं, बड़े-बड़े विद्वानोंने भी अिसी प्रकारके विचार प्रगट किये हैं। लन्दन-शेयर-बाजारको जहाँ अेक ओर श्री चार्ल्स डुग्यूअिडने भूमंडलका व्यापारिक केन्द्र तथा संसारकी सम्पन्नता अथवा विपन्नताका मापदण्ड कहा है, दूसरी ओर अेक विचारकने अुसे लन्दनका अनल गर्त अेवं सबसे बड़ा नरक बताया है। डाक्टर जानसनने अपने कोशमें शेयर-बाजारके दलालकी व्याख्या अिन शब्दोंमें की है—"अेक पतित दुष्ट जो शेयरोंके क्रय-विक्रयसे धन-अुपार्जन करता है।" दोनों प्रकारके विचारोंमें कुछ न कुछ सत्य अवश्य है। लन्दन-शेयर-बाजारमें न केवल संसार भरके बड़े-बड़े अुद्योगधन्धोंके शेयर बेचे और खरीदे जाते हैं, वरन् अनेक राज्यों, रेलवे-कम्पनियों, बन्दरगाह-प्रबन्धक-समितियों अित्यादिके द्वारा जनतासे ऋण लेनेकी व्यवस्था भी की जाती है। तभी तो लन्दन जाते हुअे अेक युवक राजनीतिज्ञसे बिस्मार्कने कहा था "यदि तुम ब्रिटेनकी वास्तविक स्थिति जानना चाहते हो तो वहाँकी लोकसभाका अध्ययन न करके लन्दनके शेयर-बाजारका निरीक्षण करना।" किन्तु शेयर-बाजारका दूसरा पहलू भी है और वह अवश्य ही हृदयमें घृणा अुत्पन्न करता है। वह है वहाँ अैसे व्यक्तियोंका जमाव जिनका लक्ष्य व्यापार करना न होकर केवल दूसरोंकी पसीनेकी कमाअीको कुटिल नीतिसे हड़पना होता है। ये व्यक्ति जन-मार्गमें खड़े अुन लुटेरोंके सामान होते हैं, जो अबोध यात्रियोंकी राह ताकते रहते हैं। जहाँ अेक दिनमें धनवान होनेवाले शिकारने बाजारमें कदम रखा कि ये लोग आपसमें होड़ लगाकर अुसपर टूट पड़ते हैं। अिनके जालमें पड़ जानेवाला अबोध व्यक्ति सर्वस्व खोकर ही अिनसे मुक्ति पाता है। अिसके अतिरिक्त शेयर बाजार पेशेवर जुवारियोंके अड्डे बन गये हैं। साधारण जुवारी अपना तथा अपने कुटुम्बका ही नाश करते हैं परन्तु शेयर-बजारके जुवारी सारे देशके लिअे घातक सिद्ध होते हैं।

शेयर-बाज़ारके गुण-दोषोंकी चर्चा करनेसे पूर्व यह जानना आवश्यक है कि शेयर-बाजार क्या होता है ? शेयर-बाजार अेक अैसी मंडी है, जहाँ भिन्न-भिन्न कम्पनियोंके शेयर, राष्ट्र-ऋण-प्रमाणपत्र, नगरपालिकाओं तथा बन्दरगाह-प्रबन्धक समितियोंके ऋण-प्रमाणपत्र आदिका क्रय-विक्रय होता है। शेयर-बाजार अनाज, कपड़ा अित्यादिकी मंडियोंसे भिन्न होते हैं। साधारण मंडियोंमें किराना, अनाज, आदि विक्रय-सामग्री अेकत्रित रहती है और अुसका क्रय-विक्रय होता है, परन्तु शेयर-बाजारमें शेयर जमा नहीं रहते। वह तो अैसा स्थान है, जहाँ शेयर, ऋण-प्रमाणपत्र अित्यादिका क्रय-विक्रय करनेवाले अथवा अुनके प्रतिनिधि अिकट्ठे होकर सौदे करते हैं। शेयर-प्रमाणपत्रोंका आदान-प्रदान तो बादमें होता रहता है। शेयर-बाजारके सदस्य अथवा अुनके प्रतिनिधि बहुत बड़ी संख्यामें जमा होकर प्रतिदिन करोड़ों रुपयोंके प्रमंडल-अंशों तथा ऋण-प्रमाण-पत्रों आदिका क्रय-विक्रय करते हैं। यद्यपि बम्बअी-शेयर-बाजारके भवनमें केवल अुसके सदस्यों अथवा अुनके अधिकृत प्रतिनिधियोंको ही प्रवेश करनेका अधिकार है; फिर भी वहाँ कितनी हलचल रहती है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वहाँ अेक बार गये बीना अिसका अनुमान करना कठिन है। यदि कोअी अनजान व्यक्ति अचानक शेयर-बाजार-भवनके सामनेसे जा निकले, तो यही अनुमान करेगा कि कोअी भीषण दंगा हो गया है। फिर कहीं अुसके अन्दर प्रवेश कर ले तो समझेगा कि बहुतसे पागलोंको अेक स्थानपर जमा करके बन्द कर दिया गया है। वहाँ अितना शोर मचता है कि किसी व्यक्तिकी साधारण रीतिसे कही बातको समझना और सुनना असम्भव हो जाता है। प्रत्येक व्यक्ति जोरसे बोलनेमें दूसरोंसे बाजी लगाता जान पड़ता है। पास-पास खड़े व्यक्ति भी अेक दूसरोंसे संकेतोंसे बातें करते हैं, भिन्न-भिन्न प्रकारकी मुद्राअें बनाते हैं, जिन्हें देखकर हँसी रोके नहीं रुक सकती। अैसी अस्त-व्यस्त स्थितिमेंही लाखोंके वारे-न्यारे हो जाते हैं। दो व्यक्तियोंमें जहाँ संकेतोंसे सौदा निश्चित हुआ, फिर चाहे कितनीही लाभ-हानि क्यों न हो, कोअी अुस सौदेसे पीछे नहीं हट सकता। जब व्यक्तिको, जो शेयर बाजारका सदस्य नहीं, शेयर क्रय-विक्रय करना होता है तो वह शेयर बाजारके किसी सदस्य द्वाराही यह कार्य कर सकता है। शेयर बाजार-भवनमें प्रवेश करनेका अधिकार केवल अुसके सदस्यों तथा अधिकृत प्रतिनिधियोंको ही है। प्रत्येक शेयर-बाजार-कार्यालयमें विभिन्न कम्पनियोंके अंशों तथा अनेक ऋण-प्रमाण-पत्रोंकी सूची रहती है। अिस सूचीमें लिखे हुअे प्रत्येक शेयर अथवा ऋण-प्रमाण-पत्रके क्रम-विक्रय करनेवाले बाजारमें सदा अुपस्थित रहते हैं। किसी शेयर अथवा ऋण-प्रमाण-पत्रका भाव कुछ अंश तक अुसकी अभियाचना (Demand) अेवं प्रदाय (Supply) पर निर्भर है, परन्तु और भी अुचित तथा अनुचित कारण अुत्पन्न हो जाते हैं या सटोरियों द्वारा अुत्पन्न कर दिये जाते हैं, जिनसे भाव घटते-बढ़ते रहते हैं।

प्रायः प्रश्न अुठता है कि शेयर बाजारकी आवश्यकता क्या है? क्या समाजके लिअे यह कोअी अुपयोगी संस्था है? बहुतसे लोगोंका मत है, यह अनुपयोगी संस्था है और अिसमें केवल सुधार करनाही पर्याप्त नहीं, अिसे समूल नष्ट कर देना चाहिये। कुछ वर्ष पूर्व भारतीय-विधान-सभामें कुछ प्रभावशाली सदस्यों द्वारा समस्त-शेयर-बाजारोंको बन्द करनेका प्रस्ताव भी रखा गया था।

शेयर-बाजार आधुनिक पूंजीतन्त्रीय समाजका अेक आवश्यक अंग है। यदि शेयर-बाजार नष्ट करना है, तो आवश्यक है कि शेयर बाजारपर प्रहार करनेके पूर्व आधुनिक पूंजीवादका नाश किया जाय। समामेलित अुपक्रम (Corporate enterprise) आधुनिक पूंजीवाद सबसे महत्वपूर्ण अंग है। अिसके द्वारा समाजके सहस्रों व्यक्तियोंका संचित धन अेक स्थानपर अेकत्रित करके अुसे अुद्योग-धन्धोंके विकासके काममें लाया जाता है। चाहे कितनाही धनी व्यक्ति क्यों न हो, अुसके लिअे यह संभव नहीं कि वह अेक बड़ी रेलवे कम्पनी अथवा बड़ा लोह-अुत्पादन-अुद्योग केवल अपने धनसे चला सके। अुसके लिअे अुसे अेक अैसी संस्था बनानी पड़ेगी, जिसमें सहस्रों व्यक्तियोंके हिस्से होंगे। अिसी प्रकार वर्तमान कालमें किसी भी राज्य-सरकारका रचनात्मक कार्य बिना जनतासे ऋण लिये नहीं चल सकता। यही दशा बड़ी-बड़ी नगरपालिकाओं तथा बन्दरगाह-प्रबन्धक-समितियोंकी है। यदि कोअी व्यक्ति अेक बार किसी कम्पनीके शेयर अथवा ऋण प्रमाण-पत्र खरीद लेता है, तो अुसके लिअे यह आवश्यक नहीं कि वह सदाके लिअे अुन्हें अपने पास रखे रहे। अुन्हें किसी भी समय बेचनेकी आवश्यकता पड़ सकती है। सुसंगठित शेयर बाजार हो अथवा न हो, आवश्यकतानुसार शेयर तथा ऋण-प्रमाण-पत्रोंका क्रय-विक्रय अवश्य होगा। यदि देशमें सुव्यवस्थित अेवं सुगठित शेयर-बाजार होंगे तो क्रय-विक्रय नियमित रूपसे होगा अन्यथा अव्यवस्थित रूपसे; परन्तु होगा अवश्य। अव्यवस्थासे देशके अुद्योग-धन्धों तथा सारे देशको ही हानि पहुँचेगी, व्यवस्थासे लाभ। शेयर बाज़ारोंको मिटा देनेसे समस्या हल न होगी वरन् और भी जटिल हो जाअेगी।

सुगठित अेवं व्यवस्थित शेयर-बाजार देशके आर्थिक विकासके लिअे अत्यन्त अुपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। जैसा कहा जा चुका है कि देशमें बड़े-बड़े अुद्योग-धन्धोंकी स्थापना समामेलित अुपक्रमके द्वाराही हो सकती है, शेयर बाजार अिन अुपक्रमोंके लिअे पूंजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेकत्र करनेमें बहुत बड़ा सहायक है। जब किसी नये कारोबारकी स्थापना होती है, तो साधारण जनता अुसके शेयर लेते घबराती है। अुस दशामें केवल अभिगोपक-सार्थ (Under Writing firms), निर्गमन-ग्रह (Issue house) अथवा दूसरे सिद्धहस्त व्यापारी ही अुस कारोबारके अंश लेनेका साहस कर सकते हैं। परन्तु अुनका लक्ष्य यह नहीं होता कि सदाके लिअे अुन अंशोंको अपने पास रखें। अुनका ध्येय तो अुनको कुछ समय तक अपने पास रखकर अन्तमें वास्तविक विनियोजक (Real inVestor) के हाथ कुछ लाभपर बेच देना ही रहता है। अिन संस्थाओंकी आर्थिक स्थिति ठोस होती है तथा ये संस्थाअें देशके अुद्योग अेवं व्यापारसे भली भाँति परिचित रहती हैं। यदि कोअी नया कारोबार असफल हो जाय, तो ये अुससे होनेवाली हानिको झेलनेकी सामर्थ भी रखती हैं। परन्तु साधारण विनियोजकके लिअे यह सम्भव नहीं। जब कारोबारकी सफलताके लक्षण स्पष्ट हो जाते हैं, तब साधारण विनियोजक अुसके अंश लेनेके अिच्छुक होते हैं और अिन्हीं संस्थाओंसे अुन्हें खरीद लेते हैं। बिना सुगठित शेयर-बाजारके यह क्रय-विक्रय संभव नहीं। अिस प्रकार अंशोंके क्रय-विक्रयके साधन जुटा कर शेयर-बाजार देशके आर्थिक निर्माणमें महान् योग देते हैं। विकास योजनाओंकी पूर्तिके लिअे भी राष्ट्र-ऋणकी अुपलब्धिमें शेयर बाजारका सहयोग आवश्यक होता है।

अंशों तथा ऋण-प्रमाण-पत्रोंका सही मूल्य निर्धारित कराने अेवं जनताके धनका सफल अुद्योगमें विनियोग करानेके सद्अिच्छित वातावरणमें सब शेयर बाजार बहुत सहायक होते हैं। सुव्यवस्थित शेयर बाजारके कारण विनियोजकको यह आश्वासन रहता है कि वह जब चाहे तब अुचित मूल्यपर अपने शेयरोंको खरीद सकता है। अिस प्रकार शेयर बाजार द्वारा धन-संचय करने तथा अुसे अुद्योग-धन्धोंमें लगानेकी प्रवृत्तिको प्रोत्साहन मिलता है। हमारे देशकी पूँजीके बारेमें यह बात जगत-प्रसिद्ध है कि वह अुद्योग-धन्धोंमें न लगायी जाकर निरर्थक पड़ी रहती है। अिधर पूँजीकी कमीके कारण अुद्योग-धन्धे नहीं पनप पाते तथा विकास योजनाअें अधूरी रह जाती हैं; अुधर दूसरी ओर व्यर्थके सोने-चाँदीके आभूषणोंमें लगाकर अथवा पृथ्वीके गर्भमें दबाकर पूंजीको बर्बाद किया जाता है। सुगठित अेवं व्यवस्थित शेयर बाजार भारतीय पूंजीकी अिस समस्याको हल करनेमें बहुत बड़ा सहायक हो सकते हैं।

जहाँ अेक ओर सुव्यवस्थित शेयर बाजार देशके आर्थिक विकासमें महान् योग दे सकते हैं, वहीं दूसरी ओर अव्यवस्थित तथा असंगठित शेयर बाजार देशके लिअे अभिशाप भी बन जाते हैं। शेयर-बाजारका अुद्देश्य पूरा होना तो दूर, अव्यवस्थित बाजारका प्रभाव अुल्टा होता है। फल यह होता है कि निरे सटोरिये जो पेशेवर जुवाड़ियोंसे किसी प्रकार कम नहीं, शेयर बाजारपर अपना प्रभुत्व जमा लेते हैं। दूसरोंकी जीविका छीननेवाले व्यक्ति पनपने लगते हैं। अंशोंका सही मूल्य निर्धारित करनेमें सहायता मिलनेकी बात तो स्वप्नमात्र ही रह जाती है। किसी कम्पनीकी आर्थिक स्थिति कितनी ही अुत्तम क्यों न हो, अुसके शेयर अिन मंदीवालोंके चंगुलमें तनिक भी फँसे कि अुनका मूल्य आधा चौथाअी रह जाता है। अिसी प्रकार तेजी-वालोंकी कुटिल नीतिसे रद्दी-से-रद्दी कम्पनियोंके अंशोंका मूल्य आकाशसे बातें करने लगता है। अंशोंके क्रय-विक्रयमें प्रतिभूति (Security) का तो नाम ही मिट जाता है। वास्तविक विनियोजक सदाके लिअे बरबाद हो जाते हैं और अुनकी बरबादीपर जुआड़ियोंके विशाल भवन खड़े होते हैं। निराधार अफवाहें फैलाकर भाव अूंचे नीचे किये जाते हैं। अिस विषयमें २५ अक्टूबर १९३५ के 'अिन्डियन फाअिनैन्स' में दी हुअी अेक वास्तविक घटनाका अुल्लेख करना अप्रासंगिक न होगा। "जिस समय अेक-अेक प्रसिद्ध (कम्पनी) समूहके अंशोंका मूल्य बराबर चढ़ता जा रहा था, अेक अफवाह फैलानेवाला व्यक्ति समाचार लाया कि समूहके अेक साझीदारने आत्महत्या कर ली। जरासी देरमें समाचार दावानलकी भाँति फैल गया तथा अुस समूहके अंशोंका मूल्य अिस प्रकार गिरा जैसे कोअी चतुर गोताखोर जलमें गोता लगाता हो। अेक दूसरे व्यक्तिके यह समाचार लाने तक कि आत्महत्याकी बात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिलकुल निराधार है महान् अनर्थ हो चुका था।" अैसे व्यापारका देशके अुद्योग-धन्धों तथा वाणिज्यपर क्या प्रभाव पड़ सकता है अिसका अनुमान लगाना कठिन नहीं। अिसी भाँतिके विभिन्न हथकंडोंका प्रयोग करके अकारण ही भाव अुठाये और गिराये जाते हैं। भावोंके अिस प्रकार अुठने-गिरनेसे कम्पनियोंके वास्तविक स्वामी मारे जाते हैं तथा शेअर बाजारके हिंसक पशु पनपते हैं। अिन परजीवियोंके कारण ही विनियोगी-कारणसे जनताका विश्वास अुठ जाता है तथा वह राष्ट्र-हितके लिअे आवश्यक अुद्योगोंमें भी अपना संचित धन लगानेसे दूर भागने लगती है। देशमें पूंजी-निर्माणके कार्यको भारी धक्का लगता है तथा अुत्तमसे अुत्तम अुद्योग-धन्धोंके लिअे पूंजी अुपलब्ध नहीं होती।

अिस पर्यालोचनका केवल अेक ही निष्कर्ष निकलता है—वह यह कि यद्यपि शेयर-बाजारोंको समूल नष्ट करना देशके अुद्योग अेवं वाणिज्यके हितमें सहायक न होगा, तथापि अुनपर कठोर नियन्त्रण रखना परम आवश्यक है। सारे देशके शेयर बाजारोंपर पर्याप्त नियन्त्रण तभी हो सकता है जब कि अुसके लिअे देश-व्यापी विस्तृत विधान बने। प्रादेशिक सरकारोंको नियंत्रणका भार सौंपनेसे समस्या हल नहीं हो सकती। विधान बनाने तथा अुसका पालन करानेका भार केन्द्रीय शासनपर ही होना चाहिये। तभी शेयर बाजार देशके लिअे अुपयोगी संस्था-बन सकते हैं, अन्यथा अुनसे लाभकी अपेक्षा हानि ही अधिक हो सकती है।

"आयु और समय अेक बार चले जानेपर फिर वापस नहीं आते। कर्म और भाग्य भी वापस नहीं लौटते। समुद्रकी लहर भी लौटकर नहीं आती। अेक बार छूटा हुआ तीर भी लौटकर नहीं आता। मरे हुअे भी लौटकर नहीं आते। गया वक्त भी नहीं लौटता। जबानसे निकली हुअी बात भी वापिस नहीं आती। शरीरसे निकला हुआ 'आत्मा' वापस नहीं आता। कअी बुद्धिमान कहते हैं कि जहानको छोड़कर गयी हुअी जान भी वापस नहीं आती।"

—अेक महात्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी :

मजबूर

: श्री वसु व्यास 'अनल' :

बम्बअीकी कोलाहलपूर्ण सड़क। वर्षा ऋतु हो या ठंड पडती हो अथवा ग्रीष्मकी तपती हुअी किरणें पृथ्वीको भस्मीभूत करनेका दावा करती हों, लेकिन वह भिखारी अपने लंगड़े-लूले पैरोंको समेटकर, सड़ककी बाजूमें पुलके किनारे बैठे-बैठे गीत गाता है। पेटकी ज्वाला अुसके गीतोंसे झरती है और आँखोंसे टपकती है बेबसी तथा अुदासीनता। जीवनके क्रमसे त्रसित और अपनी भाग्य-रेखाको गीतोंके स्वरसे सुलझानेवाला वह भिखारी प्रतिदिन राह चलनेवाले लाखों व्यक्तियोंको दुआयें देता है, मिन्नतें करता है और भूखे पेटकी आगको नंगे हाथोंपर फैलाकर, पैसा, दो पैसा पानेकी अपेक्षा करता है। वह सबका भला चाहता है। देनेवालेका और न देनेवालेका भी।

रुपये, दो रुपये। अेक दिनकी कमाअी ! बम्बअीकी मंहगाअी !! फिर वह अकेला नहीं। अुसकी अेक छोटी बहन है। आठ सालकी नन्हीं, लाडली और सुन्दर बहन। वह अपनी अिस लाडली बहनके भावी जीवनमें सुखके सपने देखता है। यही कारण है कि वह चम्पाको अपने जीवनकी गति-विधियोंसे अेकदम दूर रखना चाहता है। वह नहीं चाहता कि अुसकी भोली बहनपर अुसके दरिद्रतापूर्ण जीवनकी छाया पड़े। वह चम्पाको समाजमें आदरणीय, अुच्चत्तम और अुन्नतिशील नारीके रूपमें देखनेके लिअे मरमिटना चाहता है। अुसका दृढ़ निश्चय है कि वह अपने जीवनके अन्तके साथ-साथ अपने खानदानके अिस भिखमंगे पेशेको भी समाप्त कर देगा। अिसी अुद्देश्यसे वह चम्पाको पढ़ा रहा है। चम्पा स्कूल जाती है। अच्छे कपड़े पहनती है और अपनी अवस्थाके बालक-बालिकाओंके साथ खेलती-कूदती है।

दिन भर भीख मांगनेके पश्चात् लल्लू जब अपनी टूटी-फूटी झोपड़ीमें लौटता तो चम्पा अुसके शरीरसे लिपट जाती। फिर बिना पूछे वह स्कूलकी दिनभरकी गतिविधियोंका वर्णन करती। लल्लूकी दिनभरकी थकावट चम्पाकी अिस चंचलता, भोलेपन और बचपनकी नादानीसे अेकदम दूर हो जाती।

अुस रात लल्लूको नींद नहीं आ रही थी। पासमें चिपटी हुअी चम्पा दिनभरकी पढ़ाअी खेल-कूद और घरके छोटे-मोटे काम-काजकी थकावटके बाद गहरी नींदमें थी। लल्लूका मन अिधर-अुधर भटक रहा था। अेका-अेक अुसे अपनी स्वर्गवासिनी माँकी स्मृति हो आयी। मृत्युशय्यापर पड़ी हुअी माँके मुखसे निकले हुअे पश्चातापके स्वर अुसके कानोंमें गूंजने लगे। माँ सिसकियां भर-भर कह रही थी "बेटा ! मैं किस मुँहसे तुम्हें बेटा कहूं ? माँ होकर भी मैंने तुम्हारे साथ अन्याय, अत्याचार और अैसा दुर्व्यवहार किया, जो माँके लिअे शर्मकी बात है। तुम्हारे पिता अेक भिखारी थे और मैं भी अेक भिखारिन थी। अेक दिन भीख माँगते-माँगते अचानक मेरी अुनसे मुलाकात हो गयी। तुम्हारे पिता जन्मसे अन्धे थे, किन्तु अुनकी मधुर आवाजसे आकर्षित होकर मैं अुनकी पत्नी बन गयी। दोनों भीख माँगकर पेट भरने लगे। तुम्हारा जन्म होनेसे पहले अेक दिन तुम्हारे पिता मोटरसे टकराकर मर गये। मैं अकेली भीख माँग-माँगकर भटकती रही। मुझे पेटभर खानेके लिअे भीख भी नहीं मिलती थी। भटकते-भटकते मेरी अेक भिखारिनसे भेंट हुअी। अुसका अेक छोटासा बच्चा था। आँखसे अन्धा और पैरोंसे लूला। अुस भिखारिन बहनको मुझसे ज्यादा भीख मिल जाती थी। शायद अिसलिअे कि लोग अुसके अन्धे और लंगड़े बच्चेको देखकर अुसपर दयाकी अधिक वर्षा करते थे। अुसकी रोजाना भीखकी अधिकताको देखकर मेरे मनमें अीर्ष्या हुअी और अेक दिन अपने दिलपर पत्थर रख कर मैंने तुम्हें लंगडा कर दिया। अितना होनेपर भी मुझे भीख अधिक नहीं मिलती थी। तुमने मुझे कअी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बार रोते देखकर मुझसे मेरे आँसुओंका कारण पूछा, लेकिन मैं अपनी दुष्टता तुमसे छिपाती रही। आज मरते वक्त चम्पाके जीवनका बोझ तुम्हारे सिरपर डालकर मैं तुम्हें अेक बात और बताना चाहती हूँ कि तुम्हारे पिताकी मृत्युके पश्चात मैं वासनाकी शिकार बनी और चम्पाने मुझ अभागिन दुष्ट स्त्रीकी कोखसे जन्म लिया। लेकिन तुम अुसे दूसरा न समझना। तुम दोनों अेक ही मांके बेटा-बेटी हो। चम्पाको अिस भिख-मंगे जीवनसे दूर रखकर अुसके जीवनका अुद्धार करना, ताकि वह समाजमें अिज्जतके साथ रह सके। भिख-मंगोंकी यह परम्परा जमानेके साथ चली जा रही है लेकिन चम्पापर अुसकी छाया भी न पड़ने पावे... .. यही मेरी अिच्छा है।"

लल्लू मानों नींदसे चौंक अुठा। अुसके कानोंमें मांके शब्द गूँज रहे थे। "तुम जन्मसे लंगडे नहीं हो, दुनियाकी मजबूरियोंने तुम्हारे जीवनका सत्यानाश कर दिया। पिताकी मृत्युके बाद वासनाके शिकंजेमें फँसकर चम्पाने मेरी कोखमें जन्म लिया। अुसके जीवनपर भिखमंगे जीवनकी परम्पराकी छाया भी न पड़ने पावे, अिस बातका ख्याल रखना।"

लल्लूका शरीर थर्रा गया। दिल दहल अुठा। भिखमंगोंकी परम्परा!! कितनी मजबूरियाँ हैं दुनियामें जिन्दा रहनेके लिअे! अुफ्!!!

चम्पाके जीवनका अुद्धार, माँकी अन्तिम अिच्छा, अुसके जीवनका दैनिक क्रम और दुनियाकी बेढंगी रफ्तार ..सारी बातें अुसके मस्तिष्कमें अेक साथ घूम गयीं। वह बेचैन हो गया। नहीं! नहीं!! वह चम्पाके लिअे जीवनकी बाजी लगा देगा और चम्पाको अिस नारकीय जीवनमें नहीं सड़ने देगा।

वह अपने विचार और चिन्ताओंमें अुलझा था कि अेकाअेक चम्पाकी आँख खुल गयी। अुसने देखा कि लल्लू खुले बदन सोया हुआ है और चादर अुसके पैरोंके तले दबी पड़ी है। आँख मलते हुअे अुसने कहा... "भैया, अभी तक सोये नहीं?" और अुसने लल्लूके शरीरपर चादर डाल दी।

लल्लूने मनकी बेचैनी दबाते हुअे कहा... "नहीं चम्पा, अभी पानी पीने अुठा था। अब तुम सो जाओ।"

चम्पा सो गयी और लल्लू भी थोड़ी देर बाद चिन्ताके स्वर अलापते हुअे सो गया। सपनेमें लल्लूने देखा...चम्पा बड़ी हो गयी है। साअिकलपर बैठकर नौकरीपर जा रही है। अंग्रेजी स्कूलमें अध्यापिका है। १५० रु० माहवार कमाती है। दोनों बहन-भाअी सुखसे रहते हैं। माँका सपना सत्य होते देख वह आनन्दसे फूला नहीं समाया। आँख खुलनेपर देखा तो बाहर गहरा अन्धकार फैला हुआ था। लल्लू फिर सो गया।

सुबह अुठकर चम्पा और लल्लूने चाय पी। चम्पा कपड़े पहनकर स्कूल जाने लगी तो लल्लूसे कह गयी..."भैया हमको अेक साड़ी ला दो। चमेली कितनी अच्छी साड़ी पहनती है। अुसकी साड़ीका रंग हरा है, लेकिन भैया, मैं तो नारंगी रंगकी साड़ी लूँगी। आज ला दोगे न!"

लल्लू चम्पाकी स्नेहभरी बातको सुनकर बहुत खुश हुआ। कहने लगा..."हाँ, आज शामको जरूर लाअूँगा।"

लल्लू रोजकी भाँति चौपाटीपर सड़ककी बाजूमें पुलके किनारे बैठकर गीत गाने लगा। अुस दिन अुसके गीतोंमें अधिक सरसता और मधुरता थी। क्यों न हो? वह रोजसे अधिक पैसा चाहता था। कम से कम चार रुपये। वह दो रुपयेका अनाज और अन्य खाने-पीनेकी वस्तुअें खरीदेगा और बाकी दो रुपयोंको अपने पास जमाकी हुअी कुल आठ रुपयेकी पूंजीमें मिलाकर चम्पाके लिअे साड़ी खरीदेगा, अिस अभिप्रायसे लल्लू आज दिल खोलकर गा रहा था। बहनके स्नेह-पर भगवानने दया की और लल्लूको दिनभरकी मेहनतके बाद कुल चार रुपये छह आनेकी आमदनी हुअी।

घर लौटते समय अुसने बाजारमें जाकर चम्पाके लिअे नारंगी रंगकी सुन्दर साड़ी खरीदी। रास्तेमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुसकी आँखोंके सामने वे सुन्दर दृश्य नाच रहे थे जब चम्पा नयी साड़ी पहनकर बहुत खुश होगी। हमेशाकी तरह अपनी अिच्छा पूरी होते देख चम्पा कहेगी... "भैया, तुम कितने अच्छे हो। मेरे भैया, तुम कितने अच्छे हो?" मेरे भैया, तुम कितने अच्छे हो।" अुसके अिन शब्दोंकी कल्पनाने लल्लूके मनको खुशीसे निहाल कर दिया।

झोपड़ीपर पहुँचा तो देखा कि चम्पा घरपर नहीं है। कहाँ गयी होगी। अभी तक घर क्यों नहीं लौटी? क्या वह भूल गयी होगी कि अुसका भाअी आज अुसके लिअे नयी साड़ी लानेवाला था। नहीं, नहीं। वह यहीं कहीं होगी। ठीक है, आतीही होगी अिसी तरह विचारोंमें अुलझकर लल्लू पास पड़ी हुअी टूटी खटिया-पर बैठ गया।

किसीके आनेकी आहट हुअी। क्या चम्पा है? नहीं। यह तो बाजूकी झोपड़ीमें रहनेवाली बिन्दी है। अकेली आ रही है।

बिन्दीने पास आकर रोते हुअे कहा "शामको चम्पा स्कूलकी सीढ़ियोंपरसे अुतरते-अुतरते गिर पड़ी। पैर फिसल गया था। अुसे जल्दीसे अस्पताल ले जाया गया। अब वह होशमें आ गयी है। लेकिन डाक्टर कहता है कि अुसके दोनों पैरोंकी हड्डियाँ टूट जानेके कारण वह जन्म भर लंगड़ीही रहेगी।"

लल्लूने सुना तो अुसके होश गुम हो गये। "चम्पा, जन्म भर लंगड़ीही रहेगी। चम्पा जन्म भर लंगड़ी रहेगी"...बिन्दीके शब्द अुसके कानोंमें गूँजने लगे, भरीने लगे। वह जोरसे चीख अुठा..."चम्पा! चम्पा!!"

लल्लू चम्पासे मिलनेके लिअे अस्पताल जा रहा था कि रास्तेमें चम्पाके भावी जीवनकी दुःखद कल्प-नाओंसे अुसकी हृदय-क्रिया बन्द हो गयी। लल्लू चम्पासे न मिल सका और अुसकी मृत्युके साथ-साथ चम्पाके भावी जीवनका सुख स्वप्न भी मिट्टीमें मिल गया।

आज भी चम्पा लल्लूके नियत स्थानपर बैठकर रोज गीत गाती है। किसी तरह पेट भरनाही अुसका अुद्देश्य है। मजबूर है अपनी किस्मतपर और दुनियाकी बेरहमीपर। अिस विशाल संसारमें अकेली चम्पा अब अपनी किस्मतपर रूठती है और संसार भी बेफिक्र है अुस असहाय भिखारिनके जीवन अुसके अरमानों और गतिविधियोंसे। सब अपने-अपने स्वार्थमें लगे हैं। बहुत हुआ तो पैसे दो पैसेकी दया दिखाकर लोग अपनी सहानुभूतिका डंका पीटते हैं; लेकिन अुसकी मजबूरियोंकी कहानी सुननेके लिअे समय किसीके पास नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[सूचना —'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिये।]

चोरकी प्रेमिका—श्री. रा. कृष्णमूर्ति 'कल्कि' रचित 'कलविन कादलि' नामक तमिल भाषाके सुप्रसिद्ध अुपन्यासका हिन्दी रूपान्तर। अनुवादक—श्री सोमसुन्दरम् प्रकाशक—आत्माराम अेण्ड सन्स दिल्ली। मूल्य—चार रुपये।

तमिल भाषियोंके सुपरिचित 'कल्कि' को हिन्दी भाषियोंसे परिचित करानेके लिअे प्रकाशक महोदय धन्यवादके पात्र हैं और अुनका यह प्रयास स्तुत्य है। अनुवाद बहुत सजीव और सरल हुआ है।

'चोरकी प्रेमिका' अेक अैसे व्यक्तिकी कथा है, जो सामाजिक परिस्थितियोंके आघातसे ही समाजघाती बन गया है। संक्षेपमें कथा अिस प्रकार है—

मुत्तय्यन अेक नेक बालक है, जो बहनके प्रति अपने कर्तव्यपालनके कारण कल्याणीके प्रेमको ठुकरा देता है और लम्पट शंकु पिल्लैके कपट-जालमें फँसकर चोरी-डकैतीका जीवन अपनानेपर विवश हो जाता है। शंकु पिल्लै तथा मुत्तय्यनको कानून-भंग करनेके लिअे प्रेरित करनेवाले रत्नम् पिल्लै तथा चट्टनाथ अुडैयर जैसे व्यक्ति समाजमें प्रतिष्ठित और कानूनकी दृष्टिमें निरपराध ठहरते हैं। अुनके षडयन्त्रोंका निःसहाय शिकार मुत्तय्यन जंगली पशुकी भाँति पुलिसकी गोलीका निशाना बनता है। पार्श्वमें मुत्तय्यन और कल्याणीकी हृदयद्रावक प्रेम-कहानी चलती जाती है और समाजकी नैतिकता तथा कानूनके खोखलेपनका पर्दाफाश होता है।

हिन्दीके व्यापक प्रचारके लिअे अैसे अनुवादोंकी नितान्त आवश्यकता है। हिन्दीके मौलिक अुपन्यासोंमें अभी तक चित्रोंका समावेश देखनेमें नहीं आया। प्रस्तुत अुपन्यासमें अनेक रेखाचित्र हैं। अिनसे विषय-वस्तुको हृदयंगम करनेमें सहायता मिलती है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि प्रकाशकोंको अिस अनुवाद योजनाका श्रेय मिलेगा और हिन्दी-भाषी प्रान्तीय भाषाओंके अनूदित साहित्यकी प्रतीक्षा करेंगे।

—जी. ना.

'क्वासि'—श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के गीतोंका संग्रह; प्रकाशक—राजकमल प्रकाशन बम्बअी। मूल्य—तीन रुपये आठ आने।

सन् १९३० और १९४८ के बीच लिखे गये पचपन गीत पुस्तकमें संग्रहीत हैं। १९५२ में लिखी गयी २५ पृष्ठोंकी "क्वासिकी यह टेरी मेरी" शीर्षक विद्वत्तापूर्ण रसवंती 'भूमिका' में कविने प्रगतिवादके संबन्धमें अपनी धारणाअें स्पष्ट की हैं और अपने पक्षके प्रतिपादनके लिअे मार्क्स, अेंगेल्स और लेनिनके अुद्धरण दिये हैं। मार्क्स, अेंगेल्स और लेनिनके अिस सिद्धान्तसे कि श्रेणीबद्ध समाजमें कोअी कला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अैसी हो ही नहीं सकती, जो प्रत्यक्ष या गौण रूपसे किसी श्रेणी विशेषके हितोंका प्रतिबिम्ब न करती हो, नवीनजी सहमत नहीं हैं। अुनकी मान्यता है कि अुपर्युक्त पक्षपावलम्बी सिद्धान्त भारतीय साहित्यकी धाराओंपर लागू नहीं होता; यों वे पक्षपावलम्बी साहित्यके विरोधी नहीं हैं।

साहित्यस्रष्टाके लिअे नितान्त आवश्यक गुणोंका अुल्लेख करते हुअे कविने लिखा है कि साहित्यिक-कृतियोंकी आलोचना करते समय देशकी विचार-विशेषताओंकी ओर ध्यान देना ही चाहिये। अिस संबंधमें भी भूमिकामें स्तालिनलिखित अेक अुद्धरण दिया गया है।

कविके मतसे हमारे देशकी विचार-विशेषता अथवा गुणात्मक विशेषता—भारतीय परम्पराकी जिज्ञासा-भावना है, जो अन्तर्मुखी है। यही जिज्ञासा भारतकी और भारतीय साहित्यकी आत्मा है। वर्तमान विज्ञान-जिज्ञासा अिससे भिन्न है, क्योंकि वह बहिर्मुखी है।

अिस तरह भारतीय साहित्यकी आत्माका दर्शन करते हुअे नवीनजीने भारतीय साहित्यके परम अुद्देश्यकी चर्चा की है। अुनका कथन है कि मानवको मुक्तिका संदेश देना, अुसे सुसंस्कृत बनाना, यही भारतीय साहित्य तथा हिन्दी-साहित्यका ध्येय रहा है और है।

यहाँ कविने प्रश्न किया कि संस्कृति क्या है? और अुत्तरमें कहा—संस्कृति है आत्म-विजय, राग-वशीकरण तथा भाव अुदात्तीकरण। जो साहित्य मानवको अिस ओर ले जाय, वही सत् साहित्य है।

अिस भूमिका और अिन गीतोंको मनोयोगसे देख जानेके बाद यह बात स्पष्ट हो जाती है कि दार्शनिक नवीनको सामाजिक यथार्थसे कोअी सरोकार नहीं। वे तो किसी अदृश्यको पुकारते हुअे भौतिक धरातलसे बहुत अंचे अूठ गये हैं और नीचे रह जानेवालोंकी ओर दृक्पात करनेका अुन्हें अवकाश नहीं।

—जी. ना.

सर्वोदय तत्व दर्शन—ले.-गोपीनाथ धावन। प्रकाशक— सस्ता-साहित्य-मंडल, नयी दिल्ली; मूल्य-७)

अिस पुस्तकका अपना महत्व अिसीमें है कि अिसमें सर्वोदयकी मीमांसा वैज्ञानिक ढंगसे की गयी है। सर्वोदयका वैज्ञानिक दृष्टिबिंदुसे विवेचन करके लेखकने अुसे अेक अैसे रूपमें प्रस्तुत किया है, जो सहजहीमें पाठकको अपनी ओर आकर्षितकर अुसपर सोचनेके लिअे बाध्य कर देता है।

बापूके सिद्धांतोंको जीवनमें अुतारनेवाले जिज्ञासुओं और विशेषतः आधुनिक सभ्यताके रोगसे आर्थिक मुक्ति पानेवालोंके लिअे अिसमें यथेष्ट प्रेरक विचारोंका संग्रह है।

राजनीति-शास्त्रकी पुस्तकोंमें निश्चयही अिसका अपना अेक विशिष्ट स्थान होगा।

पुस्तककी छपाअी अेवं 'गेटअप' सुन्दर तथा आकर्षक है।

—मदनमोहन शर्मा

भारतीय राष्ट्रीयता किधर?—लेखक रघुवीर-शरण दिवाकर। प्रकाशक—मानव साहित्य सदन, मुरादाबाद; पृ. सं. ७८—मूल्य १ रु.।

दूसरे विश्वयुद्धके बाद सारी दुनियामें लोक-जागरणकी अेक नयी लहर आयी। सदियोंसे सामन्ती साम्राज्यवादी अुत्पीड़नसे पीड़ित अेशियायी देशोंकी जनताने भी करवट ली। हिन्दुस्तानका आन्दोलन भी अिससे अछूता नहीं रहा। सन् ४६ के अुन अैतिहासिक दिनोंकी याद आज भी ताजी है।

जन-आन्दोलनकी अूँची अुठती लपटसे अपनेको बचानेमें असमर्थ ब्रिटिश सामाज्यवाद राजनीतिक हथकंडोंका सहारा लेने बाध्य हुआ। समझौतेका स्वाँग रचा गया और फलस्वरूप १९४७ के १५ अगस्तको देशके दो हिस्से करके दो "राष्ट्रीय सरकार" की घोषणा की गयी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिस घटनाके बादसे साम्प्रदायिकताके विषका खुलकर अुपयोग किया गया—जिसके परिणामस्वरूप आज भी हाथमें भिक्षापात्र लिये अपने अनिश्चित भविष्यकी चिन्तामें दर-दर भटकनेवाले शरणार्थियोंका हजूम हमारे सामने है।

प्रस्तुत पुस्तकमें विद्वान् लेखकने प्रमाणोंका सहारा लेते हुअे साम्प्रदायिक, प्रतिक्रियावादी शक्तियोंकी थोथी दलीलोंका मुँहतोड जवाब दिया है।

अिन प्रतिक्रियावादियोंकी तरह-तरहकी दलीलोंका खंडन करनेके साथ-साथ विद्वान् लेखकने आध्यात्मिकताके पोथा-पंथियोंकी भी खबर ली है। लेखकके ही शब्दोंमें—"आज देशमें लाखों करोड़ों लोगोंके पास तन ढकनेके लिअे कपड़ा और पेट भरनेके लिअे अन्न नहीं है, रहनेके लिअे स्वच्छ व हवादार मकान नहीं है, बच्चोंके लिअे दूध नहीं है, बीमारोंके लिअे दूध नहीं है, प्यासोंके लिअे पानीकी भी कमी है, गरीबी और कंगालीने देशको जर्जर कर रखा है। जीवन-निर्वाहका स्तर अूँचा क्या होगा, कोअी स्तर ही नहीं है।" (पृ. ६३)। अैसी हालतमें ये अध्यात्मवादी जब जीवन-स्तरको अूँचा अुठानेकी बातोंमें 'भौतिकवादके भूत' का दर्शन करके विचलित हो जाते हैं—तो लेखकके साथ मिलकर हमें भी कहना पड़ता है कि "ये लोग जीवन-निर्वाहका स्तर अूँचा करनेकी बातसे जब चौंकते हैं तब यही समझमें आता है कि अिन्हें शोषणमयी व्यवस्थाके विनाशका, दलित व त्रस्त वर्गोंके जागरण व अुत्थानका भय है।"

पुस्तक पठनीय है और अुसका आरम्भ ही प्रश्न चिह्नसे होता है। पुस्तकका नाम ही हमसे प्रश्न करता प्रतीत होता है। और पुस्तकका अन्त भी प्रश्नवाचक चिह्नसे ही।

—जगदीशचन्द्र सिन्हा

साभार प्राप्त

(निम्नांकित पुस्तकें "राष्ट्रभारती" में समीक्षार्थ प्राप्त हुअी हैं। अिनकी समीक्षाअें समीक्षकोंके द्वारा प्राप्त होते ही प्रकाशित की जायेंगी। —सं०)

राष्ट्रभाषाका अितिहास—ले०—किशोरीदास वाजपेयी, हिमालय अेजन्सी, कनखल (सहारनपुर) प्रकाशक—जनवाणी प्रकाशन १६१।१ हरीसन रोड, कलकत्ता ७। पृष्ठ सं. २३२। मूल्य २)

भारतीय जीवन—(होलिकांक) संपादक—हरिवंश शास्त्री, १७७ अे. चित्तरंजन अेवेन्यू, गोपाल भवन, कलकत्ता ७। पृष्ठ सं. ड. क्राअून—४०। मूल्य वार्षिक ५) अेक अंकका ।।)

नये नगरकी कहानी—(अुपन्यास) ले०—रावी, कैलास आश्रम, सिकंदरा—आगरा। प्रकाशक—राजपाल प्रकाशन, राजपाल प्रेस—आगरा। पृष्ठ सं. २३८। मूल्य १।)

अुदय-पथ—कवि०—श्री शील। प्रकाशक—पीपुल्स पब्लिशिंग हाअुस लिमि०, १९० बी., खेतवाडी मेन रोड, बम्बअी ४। पृष्ठ सं. ६४। मूल्य १)

चाणक्य—कवि०—श्री शान्ति, अेम. अे.। प्रकाशक—अवध पब्लिशिंग हाअुस, पानदरीबा, लखनअू। पृष्ठ सं. ९६। मूल्य १।)

हिमालय परिचय—भाग १—ले०—राहुल सांकृत्यायन। प्रकाशक—अिलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस, प्रयाग स्ट्रीट, अिलाहाबाद। पृष्ठ सं. ५७०) मूल्य १)

हिन्दी शीघ्रलिपि—प्रथम भाग-सिद्धांत खंड आविष्कर्ता—श्री मुरलीधर सबनीस। प्रकाशक—दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास। पृष्ठ सं. ८०। मूल्य २)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोकमान्य—ले०-श्री भालचन्द्र आपटे 'शास्त्री'। प्रकाशक-दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास। पृष्ठ सं. १३२। मूल्य १।)

यूरोप—ले०-श्री देवेशचन्द्रदास। प्रकाशक-आत्माराम अँड सन्स, काश्मीरी गेट, दिल्ली ६। पृष्ठ सं. १६७। मूल्य ३)

चोरकी प्रेमिका—ले०-श्री रा. कृष्णमूर्ति 'कल्कि'। अनु०-श्री सोम सुन्दरम्, सहकारी सं०-नवभारत टाअिम्स। प्रकाशक-आत्माराम अँड सन्स, दिल्ली ६। डिमाअी पृष्ठ सं. २११। मूल्य ४)

भारतका चित्रमय अितिहास-(प्रथम भाग)-ले०-श्री महावीर अधिकारी, प्रकाशक-आत्माराम अँड सन्स, दिल्ली ६। डिमाअी पृष्ठ सं. ३४२। मूल्य ६)

आयुर्वेदीय क्रिया शरीर—भाग १-ले०-श्री वैद्य रणजितराय देसाअी, अुपाचार्य श्री ओच्छवलाल, नाझर आयुर्वेद महाविद्यालय, सुरत। प्रकाशक-श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि. झाँसी। तृतीयावृत्ति। साअिज पृष्ठ सं.-८१२+७७। मूल्य ११)

निबंध-प्रदीप—ले०-श्री रामयतनसिंह 'भ्रमर', अध्यक्ष-हिन्दी विभाग, रामनारायण रूअिया कॉलेज, बम्बअी १९। प्रकाशक-किताब महल, ५६ अे जीरो रोड, अिलाहाबाद। पृष्ठ सं. ४३२। मूल्य ४)

अेकांकी कला—ले०-श्री रामयतनसिंह 'भ्रमर'। अध्यक्ष-हिन्दी विभाग, रामनारायण रूअिया कॉलेज, बम्बअी १९। प्रकाशक-किताब महल, ५६ अे जीरो रोड, अिलाहाबाद। पृष्ठ सं. १९०। मूल्य २॥)

मराठी हिन्दुस्तानी कोश—भाग १-संपादक-श्री श्रीपाद जोशी। प्रकाशक-हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, वर्धा। क्राअून साअिज $\frac{1}{16}$, पृष्ठ सं. ३८६। मूल्य ४॥)

हार या जीत—ले०-श्रीमती भारती विद्यार्थी और श्री देवदूत विद्यार्थी। प्रकाशक-राजहंस प्रकाशन, रूअी मण्डी, सदर बाजार, दिल्ली ६। पृष्ठ सं. १०६। मूल्य १॥।)

स्मरण यात्रा—ले०- श्री काका कालेलकर, अनु०-श्री खुशालसिंह चौहान और श्री श्रीपाद जोशी। प्रकाशक—नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद। पृष्ठ सं. ३७०। मूल्य ३॥)

चलो क्रीडांगण—प्रकाशक-शिशु विहार, गोखले ज्ञान मंदिर, कृष्णनगर, भावनगर डबल क्राअून, पृष्ठ सं. ४८। मूल्य १)

गुनाह बेलज्जत—ले०-श्री द्वारकाप्रसाद अेम. अे०। प्रकाशक-अंतरराष्ट्रीय प्रकाशन मंडल, मसूरी (अुत्तर प्रदेश)। पृष्ठ सं. १६६। मूल्य २॥)

महल और मकान—ले०-श्री यज्ञदत्त अेम० अे०। प्रकाशक-आत्माराम अँड सन्स, काश्मीरी गेट, दिल्ली ६। पृष्ठ सं. १८४। मूल्य ३)

आपका मुन्ना—ले०-श्री सावित्री देवी वर्मा। प्रकाशक-आत्माराम अँड सन्स, दिल्ली ६। पृष्ठ सं. २०२। मूल्य ३॥)

सेवाग्राम गांधी लोक—ले०-श्री क्लीअर वोफोर्ड और हेरिस वोफोर्ड। अनु०-श्री खुशालसिंह चौहान। प्रकाशक-हिन्दुस्तानी तालिमी संघ, सेवाग्राम वर्धा। पृष्ठ सं. ४२। मूल्य पांच आने,

सन्तति निग्रह क्यों और कैसे ? ले०—डॉ० पी० अेल० चोपरा। प्रकाशक-निर्माण प्रकाशन, ५१ राअिट टाअून, जबलपुर। पृष्ठ सं. ८८। मूल्य १॥।)

बाल विकास—ले०-डॉ० पी० अेल० चोपरा। प्रकाशक-निर्माण प्रकाशन, ५१ राअिट टाअून, पृष्ठ सं. ९०। मूल्य १।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वर्गीय डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी :

'स्वर्गीय' शब्द हमें तुरन्त लगाना ही पड़ेगा, अिस बातका खयाल तक न था। बड़े ही मनस्ताप और पश्चात्तापकी दुर्घटना है कि कश्मीरके अेक 'नर्सिंग होम' में, अिसी जूनकी २३ वींको आधी रातके बाद, ३ बजे, नज़रबन्दीकी हालतमें, डॉक्टर श्यामाप्रसाद मुकर्जीका दुखद देहान्त हो गया। ज़िन्दगी और मौतके बीच, आठ नौ घंटे घोर संघर्ष हुआ। असह्य हृदय-पीड़ा अुठी, दर्द बढ़ा, रक्तचाप बढ़ा और दर्द बे-दवा हो गया। अेक वीर शहीद आत्माकी तरह वे अुस लोकको चले गये--यद्गत्वा न निवर्तन्ते ! आपकी अिस असामयिक मृत्युसे देशकी बड़ी हानि हुअी। केवल ५२ वर्षकी अल्पायुमें, भारतके अेक बलवान, विद्वान, निर्भीक स्पष्टवक्ता देशभक्त सुयोग्य पुत्रकी मृत्यु हुअी ! यह अेक अैसी गहरी क्षति है, जिसकी निकट भविष्यमें पूर्ति नहीं हो सकती। डॉ. श्यामाप्रसादजी कलकत्ता विश्वविद्यालयके महान् निर्माता सुप्रसिद्ध शिक्षा-शास्त्री और न्यायमूर्ति स्वर्गीय सर आशुतोष मुकर्जी महाशयके सुयोग्य पुत्र थे। डॉक्टर श्यामाप्रसादजीकी विचारधारासे किसीका कितना भी मतभेद क्यों न हो, अुनकी विशुद्ध देशभक्ति, देशवासियोंकी दुर्दशापर अुनकी व्याकुलता और स्पष्टोक्तियाँ, अुनका त्याग और अुनका व्यक्तित्व, यह सब बहुत शालीन और भव्य था। भगवान अुनके शोक-सन्तप्त परिवारको शोक-सहनकी सामर्थ्य दें !

अपनी कला और साहित्यकी दृष्टिको बदलिये :

जनसमाजके विचारोंमें अेक बड़ी क्रान्ति बढ़ती चली आ रही है। बड़े-बड़े विचारकोंके मनमें मन्थन हो रहा है और वे अपने मस्तिष्कपर अुँगली रखकर सोच रहे हैं। वे सोच रहे हैं अिस क्रान्तिका स्वागत किस प्रकार किया जाय। वे चिन्तित हैं। आचार्य विनोबा आज सबसे बड़े विचारक हैं--क्रान्तिदर्शी हैं, ऋषि हैं। हमारे कलाकारों और साहित्यकारोंको अुनके निर्माण किये क्रान्ति-पथके बारेमें सोचना होगा। विनोबा चाहते हैं कि देशमें न कोअी किसीसे शोषित हो और न कोअी किसीका शोषक; शोषणहीन अहिंसक समाजकी नवरचनाके लिअे अुन्होंने भू-दान यज्ञका आयोजन किया है। यह यज्ञ युगकी क्रान्तिका अुज्ज्वल प्रतीक है। वह मनुष्यके मनमें नयी कल्पनाअें और भावनाअें अुत्पन्न कर रहा है। मनुष्यकी कल्पना और भावना आज पीड़ित है, दबी हुअी है, दुखी है, और दबोची हुअी है। मनुष्यको दुख-दर्दसे अुन्मुक्ति देनेका जो यह आवाहन है विनोबाका, अुस ओर कलाकार और साहित्यकारको ध्यान देना होगा। यह क्रान्ति अुन लोगोंको पुकारती है जो कला और साहित्यके सृजनमें लगे हुअे हैं। देशके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलोपासक और साहित्यसाधक अिससे तटस्थ या अुदासीन नहीं रह सकते। जनतासे वे जुदे नहीं रह सकते। आज जो समस्याअें अुत्पन्न हो रही हैं, कलाकार और साहित्यकारपर भी वे लागू होती हैं। जनताकी समस्या रोटी-कपड़ेकी समस्या है और धरतीकी समस्या है। यह समस्या अुनके सामने भी है। वे--कलाकार और साहित्यकार--तीन लोकसे न्यारी अपनी मथुरामें अब नहीं रह सकते। अब निरे कल्पना-लोकमें विहार करनेसे काम नहीं चलेगा। कलाकारों और साहित्यकारोंको सोचना होगा। अब अुनकी कला और साहित्यको अिस क्रान्तिका प्रतिबिम्ब बनना होगा। अुनके स्वरूपमें परिवर्तन करना होगा। दुनियामें अन्नवस्त्र और धरतीकी समस्या अुग्र रूप धारण कर रही है। दुनियामें राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियाँ भी पल-पलपर बदल रही हैं; भीषण बन रही हैं। कला और साहित्यपर अिन परिस्थितियोंका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहेगा। अब अिस 'रससिद्धांत' से हमारा काम नहीं चलेगा कि साहित्यका अुद्देश्य केवल आनन्दका प्रदान करना ही है। यह आनन्द किस स्वर्गीय कल्पना-काननका कुसुम है? हमारी विलासिताको भड़कानेवाला या दिमागी अैयाशीको अुभाड़नेवाला कलाकार या साहित्यकार अब ज्यादा दिन नहीं टिक सकेगा। कला और साहित्यको मानवकी सांस्कृतिक चेतनाका प्रतीक बनाना होगा। मरते मनुष्यके जीवनमें प्राण फूँककर अुसको जीवित रखना होगा। महात्मा गान्धी और कार्ल मार्क्सने मनुष्यके हृदयमें चेतनाकी चिनगारी चेता दी है। अुस चिनगारीपर अब कोअी ठंडा पानी नहीं डाल सकता। यह हमारे कलाकारों और साहित्यकारोंको सोचना होगा। संगीत, वाद्य और नृत्य, और कलमकी कल्पना या अनुभूति, अिन सबकी रूढ़िगत मान्यताओंको मिटाकर, अिस क्रान्तिमें, नव-रचना और नव-निर्माण करना होगा जो संगीत, जो वाद्य या नृत्य जनमानसमें चेतनाका जागरण न लाकर वासनाको अुद्दाम बनानेवाला हो; कलाकारकी कला -- तबला, मृदंग, सरोद, सितार या बांसुरी या खंजरी अुस बोल-द्वारा या कण्ठके स्वरोंके शास्त्रीय आरोह अवरोह कलेजेमें ज़िन्दादिलीकी चेतना या कसक न पैदा कर सकें; सुननेवाले और सुनानेवालेके शीलको भव्य न बना सकें, अुस कलामें या कलममें क्रान्ति करनी होगी। निराशासे दबी हुअी जनता, भूखसे पीड़ित गरीब जनता अुसी कलाकार और अुसी साहित्यकारको अपना सच्चा सखा या सहायक समझेगी, जिसकी कलासे या साहित्यसे अुसकी समस्या हल होगी और अुसे शान्ति मिलेगी। अुसी कलाकार और साहित्यकारका अिस जगमें बोलबाला होगा।

—ह० श०

राष्ट्रभाषा हिन्दीका आयोजन होना चाहिये:

पुणें युनिवर्सिटीकी ओरसे बुलायी गयी भारतीय भाषा विकास-परिषद्के निर्णयोंके बारेमें गतांकमें बहुत कुछ लिखा जा चुका है। अिस परिषद्के साथ ही डेक्कन कालेज पुणेमें विश्वविख्यात भाषाशास्त्री टर्नरकी अध्यक्षतामें अेक दूसरी परिषद् भी हुअी थी। वह विशेषकर भाषा-शास्त्रियोंकी ही परिषद् थी। अुन्होंने जो कार्य किया है, अुसका परिचय अिस अंकमें नागपुर युनिवर्सिटीके भू०पू० प्राध्यापक श्री बनहट्टीजीने कराया है। अिस परिषद्में भी बड़ा महत्वका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्य हुआ। हमारा तो मत है कि जब तक विद्यापीठ, साहित्यिक संस्थाअें और भारतीय भाषाओंके विकासके लिअे प्रयत्नशील परिषदें—सबके द्वारा विचारपूर्वक किसी दिशाकी ओर सम्मिलित मार्गदर्शन नहीं किया जाता और अेक आयोजना बनाकर कार्य करनेका प्रयत्न नहीं होता, तब तक राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओंके विकासका कार्य सुचारु रूपसे कभी नहीं हो सकेगा।

अंग्रेजीका मोह :

हम यह स्वीकार करते हैं—सुशिक्षित भारतीयोंका अंग्रेजीके प्रति जो मोह है, अुसे दूर करना आसान काम नहीं। हम यह भी मानते हैं कि हमारे बीचमें अनेक प्रकारके मतभेद हैं। आजकल तो अंग्रेजीको कायम रखनेके लिअे अेक आन्दोलन भी चल पड़ा है। अभी हालहीमें भारत-सेवक-समाज (सर्वन्ट आफ अिण्डिया सोसायटी) के प्रतिष्ठित नेता श्री कोदण्डरावने अंग्रेजीके पक्षमें बहुतसी दलीलें अुपस्थित की हैं। अंग्रेजी पढ़े-लिखे शिक्षितोंके सिवा अन्य लोगोंपर अुसका कुछ भी असर नहीं होगा, यह जानते हुअे भी अिस प्रकारके प्रयत्नोंके प्रति हम अुदासीन नहीं रह सकते। दुर्भाग्यसे आज केन्द्र या विभिन्न राज्योंमें, जिनके हाथोंमें सत्ताका सूत्र है, वे सब अंग्रेजी पढ़े-लिखे हैं और परिस्थिति अैसी है कि जो अंग्रेजीमें निष्णात न हों अुनकी अधिकारयुक्त स्थानों तक पहुँच भी नहीं हो पाती ! फिर भी पुणेमें हुअी दोनों परिषदोंमें यह देखा गया कि हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओंके प्रति अब अुदासीन नहीं रहा जा सकता, लोग अिस बातका अनुभव करने लगे हैं। वास्तवमें यह हमारे लिअे बड़े सन्तोषकी बात है।

हिन्दी तथा अन्य भाषाओंके विकासके लिअे क्या करना चाहिये अिसपर अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोग भी अब विचार करने लगे हैं, यह कम महत्वकी बात नहीं। परन्तु राष्ट्रभाषा हिन्दीका क्या स्थान होना चाहिये और अन्य सब भारतीय भाषाओंका अपने-अपने प्रदेशमें कौन-सा स्थान हो अिस सम्बन्धमें काफी मतभेद हैं और तरह-तरहकी शंकाअें भी अुठायी जा रही हैं। प्रान्तीयताकी भावना भी कुछ प्रबल हो रही है। भाषानुसार प्रान्तरचनाका राजनीतिक आन्दोलन चल रहा है, अैसी हालतमें यह स्वाभाविक ही है कि अुसका असर भाषा तथा साहित्यिक अेवं सांस्कृतिक क्षेत्रोंपर भी पड़े। परन्तु जो लोग भारतकी आध्यात्मिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक अेकताको कायम रखना चाहते हैं अुन्हें अवश्य यह ध्यानमें रखना होगा कि यह 'भाअी भाअी ठांअी ठांअी' की प्रवृत्ति हमारी अिस अेकताको किसी प्रकारकी हानि न पहुँचाये। हाँ, राज्य प्रबन्धके लिअे भाषानुसार प्रान्तरचना हो, अिसका हम विरोध नहीं करते। हम यह मानते भी हैं कि अिस प्रकारका विभागीकरण स्वाभाविक होगा और जनताको भी अुससे सभी प्रकारकी सुविधाअें मिलेंगी, परन्तु अिसके साथ-साथ भारतकी जो राजनीतिक अेकता और अुस अेकताके मूलमें जो सांस्कृतिक और आध्यात्मिक राष्ट्रीयता है, हमें अुन्हें अक्षुण्ण रखना होगा। आध्यात्मिक शब्दका प्रयोग हम साम्प्रदायिक अर्थमें नहीं कर रहे हैं। भारतकी आन्तरिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेकता जो प्रत्येक भारतवासी, कश्मीरसे लेकर कन्याकुमारी तक अनुभव करता है, अुसी अेकताको हम आध्यात्मिक अेकता कहते हैं और अुसे कायम रखनेका अेक साधन राष्ट्रभाषा हिन्दीका प्रचार है। भारतकी राष्ट्रीय अेकताकी दृष्टिसे राष्ट्र-भाषाके प्रश्नपर विचार किया जाय तो अुसका महत्त्व बड़ी आसानीसे ससझमें आ जायगा और आज अिसके प्रचारका आयोजन कितना आवश्यक है, अिसका भी विश्वास होगा। जितना शीघ्र हो, अिसकी योजना बननी चाहिये; यह बात हम यहाँ पुनः दुहराते हैं।

सरकारकी अुदासीनता :

सरकारने पंचवार्षिक योजना बनायी, और अुसमें सब बातोंका विचार किया, परन्तु राष्ट्रभाषा तथा अन्य सांस्कृतिक कार्यक्रमोंका विचार नहीं किया गया। हम पहले भी लिख चुके हैं और आज भी कहते हैं कि यह अुसकी अेक बड़ी त्रुटि है। सरकारकी ओरसे अिस प्रकारके आयोजनका प्रयत्न किया जाता तो, कम से कम अितना तो अवश्य होता कि आज भारतके विभिन्न प्रदेशोंमें जो अलग-अलग शंका-कुशंकाअें अुठायी जा रही हैं, वे न अुठतीं; प्रान्तीय भावनाअें जो बुरा असर पैदा कर रही हैं, वे वैसा असर न पैदा कर पातीं और सबको अुचित मार्ग-दर्शन मिल जाता। परन्तु जान पड़ता है अिस सम्बन्धमें भारत सरकार अुदासीन है। वह समुचित मार्ग-दर्शन नहीं करना चाहती। अिससे भिन्न-भिन्न विचारोंके आपसमें टकराकर विचित्र अव्यवस्था तथा कटुताकी परिस्थिति ही पैदा होनेकी अधिक सम्भावना है।

विधानमें हिन्दीको केन्द्रकी राज्यभाषा मान लिया गया। आंतरप्रान्तीय व्यवहारकी भी भाषा वही होगी; यह भी स्वीकार कर लिया गया। अितना ही नहीं, सभी भारतवासियोंका, अुनकी मातृभाषा चाहे कोअी भी क्यों न हो, यह कर्तव्य माना गया कि वे राष्ट्रभाषाके प्रचार-प्रसारमें सहायता करें। भारत सरकारके समस्त राजकाजमें १५ वर्षकी अवधिमें हिन्दीका अुपयोग होने लगे अिसके लिअे भी वह संविधानके द्वारा बंधी हुअी है। अैसी परिस्थितिमें अुसका कर्तव्य था कि वह अिसके प्रचार-प्रसारकी योजना बनाकर अुपस्थित करती और जो शंका-कुशंकाअें अुठायी जा रही हैं, अुनका समाधान करती; परन्तु सुननेमें आया है कि वह अैसा कुछ भी नहीं करना चाहती। वह तो चाहती है, जो गैर-सरकारी संस्थाअें अिस क्षेत्रमें कार्य कर रही हैं, अुन्हींके द्वारा यह कार्य हो, अर्थात् वह किसी प्रकारकी जवाबदारी अपने अूपर लेना नहीं चाहती। फिर बम्बअी राज्यकी सरकार तो अति अुत्साहमें आकर अपने अूपर तमाम जवाबदारी लेकर अैसा निर्णय करती है कि जिससे राष्ट्रभाषाके कार्यको अुल्टे हानि पहुंच सकती है, लाभ नहीं। केन्द्रीय सरकार अुसके अिस रुखपर अपना अभिप्राय भी नहीं प्रकट करना चाहती! अितना ही नहीं हिन्दीका भारतव्यापी कार्य करनेवाली संस्थाओंका सहयोग प्राप्त करनेमें भी न्याय नहीं बरता जाता। पक्षपातसे काम लिया जा रहा है। भारत सरकारने जो केन्द्रीय शिक्षा समिति बनायी अुसमें राष्ट्रभाषा समिति जैसी अखिल भारतीय संस्था, जिसका कार्य विदेशों तकमें फैला है, अुसे प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया। कुछ लोग अिसका अनुचित लाभ अुठानेके प्रयत्नमें भी हैं। अिसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिणाम अेकही हो सकता है और वह यह कि हिन्दीके प्रचारका कार्य बहुत कम होगा, अुसके विपरीत अिस क्षेत्रमें परस्पर विरोध और कटुता की भावना बढ़ेगी, जो हमारे राष्ट्रके लिअे कभी हितकर नहीं। आजकी परिस्थितिमें सरकारसे कुछ आशा रखना व्यर्थ प्रतीत होता है। परन्तु हिन्दी-प्रचारके कार्यके लिअे अेक योजना तो बनानी ही होगी, जो शंका-कुशंकाअें फैली है अुन्हें दूर करना होगा और राष्ट्रभाषा हिन्दीके कार्यको जो अपने संस्थावाद या प्रान्तवादके कारण हानि पहुँचाना चाहते हैं, अुन्हें अैसा करनेसे रोकना होगा। यह काम अब राष्ट्रभाषा प्रचारका कार्य करनेवाली गैर-सरकारी संस्थाओंको आपसमें मिलकर करना होगा।

पंचवर्षी योजना :

सुना गया है कि संसदीय हिन्दी परिषद् हिन्दीके विकास तथा प्रचारके लिअे अेक पंच-वार्षिक योजना बनानेका विचार कर रही है। हम अिस प्रयत्नका हार्दिक स्वागत करते हैं। योजना बन जानेपर वह केन्द्रीय शिक्षा-विभाग या स्वयं प्रधान मन्त्रीके समक्ष रखी जायगी। हम आशा करते हैं कि अिस योजनाके बन जानेसे राष्ट्रभाषाके कार्यको द्रुतगति मिलेगी और जो शंकाशील हैं, अुन्हें अुसके द्वारा अुचित मार्गदर्शन भी प्राप्त होगा। हम चाहते हैं कि योजना बनानेवाले राष्ट्रभाषा, अुसका स्वरूप, अुसका स्थान, अुसका प्रचार-प्रसार, शैक्षणिक संस्थाओंमें अुसका प्रयोग तथा अुपयोग आदि सभी पहलुओं-पर सम्पूर्ण रूपसे विचार करके योजना बनायें ताकि सभी प्रश्नोंका अुत्तर अुसमें तर्कोंके रूपमें नहीं, परन्तु कार्ययोजनाके रूपमें मिल जाय।

परमुखापेक्षी न बनें :

हमारी यह आदत-सी पड़ गयी है कि हम किसी भी कार्यके लिअे परमुखापेक्षी अधिक रहते हैं। सरकार योजना बनाये, सरकार रुपया दे और शायद कार्यकी व्यवस्था भी वही करे, यही हमारी भावनाअें होती हैं। साहित्यिक तथा भाषाविषयक क्षेत्रमें भी हम अिसी प्रकारकी आशा रखते हैं। अिस क्षेत्रमें हमारा तो मत है कि जो साहित्यिक, भाषाशास्त्री या विद्वान अपने-अपने कार्यमें लगे हैं, अुन्हें ही अपनी ओरसे कार्यारम्भ कर, कार्यको प्रेरणा देनेमें अग्रसर होना चाहिये। अिसका यह मतलब नहीं कि सरकारके सहयोग अथवा सहायताको हम अना-वश्यक मानते हैं। सरकारको भी कुछ करना होगा, परन्तु हम सरकारकी ओर ही दृष्टि लगाये बैठे नहीं रह सकते। सरकारको साहित्यिक संस्थाओं तथा लेखकोंकी मदद करनी चाहिये, अिस सम्बन्धमें बहुत कुछ पढ़ने-सुननेको मिलता है। अभी-अभी राजस्थानमें-भोपालगढ़में हुअी अ. भा. कुमार साहित्य परिषद्ने भी कुछ अैसी ही मांगें की हैं। हम भी कहते हैं कि सरकारको साहित्यिक संस्थाओंको तथा लेखकोंको आर्थिक सहायता देनी चाहिये। साथ ही हम यह भी पूछते हैं कि साहित्यिक संस्थाअें तथा लेखक हिन्दीका साहित्य बढ़ानेके लिअे क्या आवश्यक कार्य कर रहे हैं? वे देशके लिअे कितना श्रम और कौन-सा त्याग कर रहे हैं? क्या वे परस्पर की सहायता तथा सहयोगसे देशकी साहित्यिक तथा सांस्कृतिक समृद्धिके लिअे किसी अैसे कार्यमें नहीं जुट सकते जिससे हमारी साहित्यकी बड़ीसे बड़ी त्रुटियाँ दूर की जा सकें। भूमिदान-यज्ञ,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रमदान-यज्ञ आदि दानयज्ञोंका यह जमाना है तो क्या हम अपने लेखकों, भाषाशास्त्रियों, विद्वानोंसे यह आशा करें कि वे भी कुछ समय निकालकर हिन्दी-साहित्यकी समृद्धिके लिअे साहित्यिक श्रम-दान यज्ञ, अथवा ज्ञानदान-यज्ञमें अपना कुछ हिस्सा प्रदान करेंगे। यह हम अिसलिअे कह रहे हैं कि सरकारका मुख ताकते बैठे रहनेसे कार्य कुछ नहीं होनेका। साहित्यिक, लेखक अेवं विद्वान यदि चाहें तो वे अपने पारस्परिक सहयोग और सहायतासे बहुत बड़ा काम कर सकेंगे। अुसके लिअे आवश्यक धनकी सहायता तो जनतासे भी प्राप्त हो सकती है, यह हमारा विश्वास है। धनके अभाव या कमीके कारण कोअी आवश्यक और अुपयोगी कार्य रुक नहीं सकता, यह हमने गांधीजीके नेतृत्वमें अनुभव किया है, परन्तु शर्त यह है कि हममें सच्चाअी और सेवा-भाव हो।

—मो० भ०

"जगजीवनराम-अभिनन्दन ग्रन्थ":

सम्पादक—श्री बनारसीदास चतुर्वेदी आदि १४ विशिष्ट साहित्य-सेवियोंका अेक मंडल। 'जगजीवनराम-अभिनन्दन-ग्रन्थ' समिति नयी दिल्लीसे, गत अप्रैलमें, प्रकाशित। ग्रन्थकी पृष्ठ-संख्या ३१८ और मूल्य १२ रुपया है।

हमारे देशमें कुछ अैसे विशिष्ट व्यक्ति विराजमान हैं जिनका व्यक्तित्व सहज सरल, वेशभूषा सुसंस्कृत निराडंबर, स्वभाव निरहंकार और जीवन सेवा-परायण है। अुन व्यक्तियोंमेंसे स्वतंत्र भारतके संचारमन्त्री माननीय जगजीवनरामजी भी हैं। आज वे जिस अूँचे स्थानको सुशोभित कर रहे हैं अुसपर पहुँचनेके लिये अुन्हें तपस्या करनी पड़ी है, त्याग करना पड़ा है और अनेक बार बलिदान करने पड़े हैं। जगजीवनरामजीका सारा जीवन ही देशकी सेवामें और हरिजनोंकी दुःस्थितिको सुधारनेमें समर्पित हुआ है, जो अिस देशके नौजवानोंके लिये बड़ा ही प्रेरणाशील और अुत्साह भरनेवाला है। खरी देशभक्ति, योग्यता, सचाअी और परिश्रमके बलपर श्री जगजीवनरामजी अितने अुच्च पदपर प्रतिष्ठित हुअे हैं।

देशकी जनता कृतघ्न नहीं है, और हमारे साहित्यकार भी कृतघ्न नहीं हैं। जब जनता और साहित्यकार अेक हृदय हो जाते हैं तब देशके कल्याणके लिये किसी-न-किसी शुभ अभिनन्दन समर्पणका मांगलिक आयोजन होता है। श्री जगजीवनरामकी ४६ वीं वर्षगाँठके अुपलक्ष्यमें राजधानी दिल्लीमें अैसाही अेक सुन्दर समारोह हालहीमें सम्पन्न हुआ था। हिन्दीके, हिन्दके और हरिजनोंके हितसाधनमें अपना समूचा जीवन अर्पण करनेवाले साहित्य-साधक आचार्य काकासाहेब कालेलकरकी अध्यक्षतामें यह ग्रंथ समर्पित हुआ और जगद्विख्यात दार्शनिक उपराष्ट्रपति डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णनने समर्पण किया। ग्रंथके संपादकोंमें सर्वश्री लब्धप्रतिष्ठ बनारसीदासजी चतुर्वेदी, डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल, चन्द्रगुप्त विद्यालंकार, सत्यव्रत सिद्धांतालंकार, श्रीमती शचीरानी गुर्टू, श्रीमती चन्द्रावती लखनपाल, अिन्द्रनारायण गुर्टू और प्रभाकर माचवे जैसे समर्थ साहित्यकार हैं। हम अिस "अभिनन्दन ग्रंथ" की क्या प्रशंसा करें? यह सुन्दर, सुरुचिपूर्ण सचित्र ग्रंथ है। देशके अनेक प्रतिभाशाली ख्यातिप्राप्त साहित्यकारोंने अपनी-अपनी कृतियाँ अिस ग्रंथको अर्पित की हैं। जिल्दबाह्य आवरण अभिराम और अिसमें विविध विषयोंकी जो अनुक्रमणिका है अुसीसे अुक्त ग्रंथकी महत्ता और अध्ययनोपयोगिता अधिक प्रमाणित होती है। 'राष्ट्रभारती' के सम्पन्न अेवं समर्थ पाठकोंसे, जो १२ रु० व्यय कर सकते हैं, हमारा अनुरोध है कि "जगजीवनराम-अभिनन्दन ग्रंथ" की अेक प्रति अपने अध्ययन-कक्षमें अवश्य रखें—रखने योग्य है।

—हृषीकेश शर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके, आपके परिवार के प्रत्येक सदस्य के, प्रत्येक शिक्षा-संस्था तथा पुस्तकालय के लिअे अुपयोगी

हिन्दीका अपने ढंगका पहला पत्र

गुलदस्ता

(हिन्दी डाअिजैस्ट)

वार्षिक मूल्य १०)
पृष्ठ संख्या १२५

नमूने की प्रति
अेक रुपया

३९३८ पीपलमंडी, आगरा

अंग्रेजी डाअिजैस्ट पत्रिकाओंकी तरह दुनियाकी तमाम भाषाओंके साहित्यसे जीवनको नयी स्फूर्ति, अुत्साह और आनन्द देनेवाले लेखोंका सुंदर संक्षिप्त संकलन देनेवाला यह पत्र अपने ढंगका अकेला है, जिसने हिन्दी पत्रोंमें अेक नयी परंपरा कायम की है। हास्य, व्यंग, मनोरंजक निबंध तथा कहानियाँ अिसकी अपनी विशेषता है।

गुलदस्ता पर लोकमत

स्वामी सत्यदेव परिव्राजक
"गुलदस्ताकी टक्करका मासिक-पत्र अभीतक प्रकाशित नहीं हुआ। मैं अिस पत्रिकाको आद्योपांत सुनता हूँ।"

जैनेन्द्रकुमार, दिल्ली
"गुलदस्ता अच्छी जीवनोपयोगी सामग्री दे रहा है।"

बाबू गुलाबराय, अेम. अे.
"अिसमें शिक्षा और मनोरंजन दोनोंके अच्छे साधन अुपस्थित रहते हैं।"

प्रो. रामचरण महेंद्र
"गुलदस्ता विचारोंका विश्व-विद्यालय है, जिसे घरमें रखनेसे सभी व्यक्ति लाभ अुठा सकते हैं।"

हिन्दीका स्वतंत्र मासिक

"नया समाज"

संचालक: नया समाज-ट्रस्ट ★ **संपादक: मोहनसिंह सेंगर**

वार्षिक चन्दा ८) : अेक प्रति ।।।) : विदेशोंमें १२) वार्षिक

'नया समाज' व्यक्तिमें स्वतंत्र चिन्तना, समाजमें अन्ध विश्वास और रूढ़ियोंका अन्तकर स्वस्थ सदाचरण और राजनीतिमें भ्रष्टाचार, जन-द्रोह अेवं आततायीपनका पर्दाफाशकर स्वस्थ जनतंत्रका प्रतिपादन करता है।

'नया समाज' में हर मास साहित्य, संस्कृति, समाज, अन्तर्राष्ट्रीय हलचलों और विशिष्ट व्यक्तियोंकी अुपादेय चर्चा रहती है।

'नया समाज' किसी दल या वाद–विशेषसे बँधा न होनेके कारण स्वतंत्र, संयत और स्वस्थ पाठय-सामग्री प्रस्तुत करता है। हिन्दीके चोटीके लेखकोंका सहयोग अिसे प्राप्त है। अिसी कारण पिछले पाँच वर्षोंमें ही अिसने हिन्दी संसारमें अपनी धाक जमा ली है।

आप यदि ग्राहक नहीं हैं, तो आज ही बन जाअिये। यदि हैं, तो अपने अिष्ट-मित्रोंको भी बनाअिये। यदि किसी कारण आप ग्राहक नहीं बन सकते, तो चेष्टा कीजिये कि 'नया समाज' आपके पड़ोसके पुस्तकालयमें मँगाया जाय।

आज ही नमूनेके लिये लिखिअे:—

व्यवस्थापक 'नया समाज', ३३, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता– १

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस घरमें आरोग्य प्रकाश नहीं, वहाँ सुख शान्ति कहाँ ?

आरोग्य, स्वच्छता और चिकित्साका सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ

भारत-प्रसिद्ध श्रीवैद्यनाथ आयर्वेद भवन लिमिटेडके अध्यक्ष वैद्यराज पं० रामनारायणजी वैद्यशास्त्रीने ५-६ वर्ष बड़ी मेहनतसे स्वयं अिस ग्रंथको लिखा है। ग्रंथका अेक-अेक वाक्य हजारों रुपयेका काम देता है। व्यायाम, ब्रह्मचर्य, भोजन, सदाचार, अुत्तम विचार आदि पूर्वार्द्ध विषयोंको पढ़कर और तदनुसार चलकर सदा बीमार रहनेवाला रोगी बिना दवाके नीरोग (तन्दुरुस्त) हो जाता है। ग्रंथके अुत्तरार्द्धमें शरीरमें पैदा होनेवाले सभी रोगोंकी अुत्पत्ति, कारण, निदान, रोगके लक्षण, चिकित्सा, पथ्यापथ्य आदि बड़ी ही सरल भाषामें लिखे हैं, जो पढ़कर विद्वान्से लेकर साधारण पढे-लिखे दोनों समान भागसे लाभ अुठा सकते हैं। अिसमें दवाओंके जो नुकसे लिखे गये हैं वे बहुत बार परीक्षित, कभी भी फेल न होनेवाले और शास्त्रानुमोदित हैं। शहर हो या देहात, सब जगह अिस पुस्तकके घरमें रहनेसे रोगीको तत्काल लाभ पहुँचाया जा सकता है। औषध तैयार करनेका विधान तो अिस पुस्तकमें श्रेष्ठ है क्योंकि लेखक अिस विषयके निर्णयात्मक ज्ञाता हैं। अिसके आठ संस्करणोंमें ७१००० प्रतियां छपकर बिक चुकी हैं। यह नवां संस्करण १५ हजारका अभी छप रहा है। अिससे अिसकी लोक-प्रियता और अुपयोगिता स्पष्ट मालूम होती है। हिन्दीमें अैसी अुत्तम पुस्तक दूसरी नहीं है, यह कहा जाय तो अनुचित न होगा। प्रचारकी दृष्टिसे मूल्य भी बहुत कम रखा गया है। ५१५ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य सिर्फ १।।।), डाक खर्च ।।≈), हमारी चार निर्माणशाला, ५० विक्री केन्द्र, १५००० अेजेन्सियोंसे प्रत्यक्ष खरीदनेपर डाक खर्च नहीं लगेगा।

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लिमिटेड, कलकत्ता, पटना, झांसी, नागपुर।

—: अुद्यम :—

हिन्दी और मराठी भाषामें प्रकाशित होता है।

प्रतिमास १५ वीं तारीखको पढ़िये।

अुद्यममें निम्न विषयोंके लेख छपते हैं :—

लाभदायक अुद्योगधंधोंकी जानकारी, अनाज तथा सब्जीकी खेती व रोगोंका निवारण, पशुपालन, दुग्धव्यवसाय व ग्रामोद्योग संबंधी लेख, विद्यार्थियोंके लिये वैज्ञानिक व अन्य जानकारी, आरोग्य, घरेलू औषधियों संबंधी लेख, हिन्दुस्थानके वैज्ञानिक और औद्योगिक क्षेत्रकी अुपयोगी जानकारी, कृषि, औद्योगिक और व्यापारिक क्षेत्रमें काम करनेवाले लोगोंकी मुलाकात तथा परिचय।

अुद्यमके विशेष स्तंभ

महिलाओंके लिये अुपयुक्त, रुचिकर खाद्यपदार्थ बनानेकी विधि, घरेलू मितव्ययिता, अुद्यमका पत्रव्यवहार, खोजपूर्ण खबरें, आर्थिक तथा औद्योगिक परिवर्तन, जिज्ञासु जगत्, व्यापारिक हलचलोंकी मासिक समालोचना, नित्योपयोगी वस्तुअें स्वयं तैयार कीजिये।

वार्षिक चन्दा ७ रु. और प्रति अंक १२ आना

पता :— 'अुद्यम' मासिक, धर्मपेठ, नागपुर (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुत्तर प्रदेशीय सरकार द्वारा पुरस्कृत

भारतीय ज्ञानपीठ काशीके महान् प्रकाशन

१. वर्द्धमान	श्री अनूप शर्मा	६)
२. हमारे आराध्य	श्री बनारसीदास चतुर्वेदी	३)
३. संस्मरण	श्री ,, ,,	३)
४. पथचिन्ह	श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी	२)
५. वैदिक साहित्य	श्री रामगोविन्द त्रिवेदी	६)
६. शेर-ओ-शायरी	श्री अयोध्याप्रसाद गोयलीव	८)
७. शेर-ओ-सुखन	श्री ,, ,,	८)
८. मिलनयामिनी	श्री 'बच्चन'	४)
९. रजतरश्मि	श्री रामकुमार वर्मा	२॥)

ज्ञानोदय [मासिक]

वार्षिक ६) अेक प्रति ॥=)

भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुण्डरोड, बनारस ५

साहित्यिक-त्रैमासिक-पत्रिका

"राष्ट्रवीणा"

संपादकः – जेठालाल जोशी

विद्वानोंसे प्रशंसा प्राप्त राष्ट्रवीणामें––

विद्वानोंके चिंतन प्रधान लेख अेवं गुजरातीके साहित्यिक, सांस्कृतिक, कला विषयक लेख, कविताअें, प्रवास वर्णन, परीक्षोपयोगी लेख, गुजराती, मराठी, बंगाली तथा हिन्दीकी समानार्थी शब्दावली आदि सामग्री, चयनिका, संस्कृति स्रोत, साहित्य समीक्षा, गुजरात, सौराष्ट्र और कच्छके राष्ट्रभाषा प्रचार समाचार आदि कअी स्तंभ प्रकाशित होतें हैं।

वार्षिक मूल्य ४) **अेक प्रति १)**

वर्धा समितिके सक्रिय प्रचारकों और केन्द्र-व्यवस्थापकोंको पत्रिका आधे मूल्यमें भेजी जाती है।

– व्यवस्थापक "राष्ट्रवीणा"

गुजरात प्रां. रा. भा. प्र. समिति, कालूपुर खजूरीकी पोल, **अहमदाबाद।**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेरणा

'मेघदूत' अंक

प्रेरणाका यह चौथा अंक सम्पूर्ण रूपसे मेघदूतपर ही है।

★ मूल काव्यका राजस्थानीमें अनुवाद

★ मूल काव्यका हिन्दी गद्यमें भावानुवाद

★ विश्व कवि कालीपास और अुनके अिस अद्वितीय काव्यमे सम्बन्धित निबंध

राजस्थानीमें अिस अतुलनीय कलाकृतिका काव्यमय अनुवाद स्वयं अेक अतुलनीय प्रयास है।

अनुवादक : नारायणसिंह

अिस अंकका भी वही साधारण मूल्य

वार्षिक १४) अेक प्रति १।)

सम्पादक : कोमल कोठारी,

सोजती गेट, जोधपुर (राजस्थान)

सम्पादक :
ज्यो. राधेश्याम द्विवेदी
स. सम्पादक :
वैजनाथ दाणी

देशबन्धु का

विशेषांकका मूल्य ।।।) मात्र।
४) भेजकर ग्राहक बननेवालोंको विशेषांकके लिअे अतिरिक्त मूल्य नहीं देना पड़ेगा !

ब्रज संस्कृति अंक

अिस विशेषांकमें ब्रजकी ललित कलाअें, लोकगीत, लोक कहानियाँ, ब्रजकी वेशभूषा, ब्रजकी सभ्यता आदि–आदिपर सुन्दर-सुन्दर लेख होंगे। यह अंक अगस्त ५३ में प्रकाशित होगा !

अिस अंकके कुछ लेखक—

१. डा. वासुदेव शरण अग्रवाल
२. पं. रविशंकर रावल
३. डा. सत्येन्द्र अेम. अे.
४. श्री अगर चन्द्र नाहटा
५. पं. अुदयशंकर भट्ट
६. पं. कृष्ण दत्त वाजपेयी
७. वा. गुलाब राय अेम. अे.
८. पं. अुदयशंकर शास्त्री
९. वा. प्रभुदयाल मीतल

अिस अंकका प्रचार भारतके कोने-कोनेमें किया जा रहा है। देशबन्धु द्वारा विज्ञापन दाता अपनी वस्तुओंका प्रचार समस्त भारतमें कर सकते हैं। विशेष विवरणके लिअे लिखिये—

व्यवस्थापक
'देशबन्धु' मथुरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रानी

गत १५ वर्षोंसे हिन्दी प्रेमियोंके घरकी पत्रिका बनी हुअी है। हिन्दीके सुप्रसिद्ध कहानी लेखक श्री यशपालजी आजकल अपनी रूस-यात्राके अनुभव लिख रहे हैं। सुन्दर कहानियाँ और लेख।

आप भी आज ही ग्राहक बन जाअिये और अेक सालमें दो अनूठे विशेषांक मुफ्त लीजिये — चन्दा मनीआर्डरसे ही भेजें।

रानीका वार्षिक चंदा केवल चार रुपये है।

"रानी" कार्यालय,
१२१ चित्तरंजन अेविन्यू,
कलकत्ता ७

सरस्वती संवाद

(हिन्दीका परीक्षोपयोगी आलोचनात्मक)
मासिक पत्र

अिसकी विशेषताओंके संबंधमें विद्वानोंकी सम्मतियाँ

१. अिसको अुच्चकोटिके लेखकोंका सहयोग प्राप्त है। २. अिसमें अनावश्यक सामग्रीका समावेश नहीं है। ३. यह पत्र विद्यार्थियोंकी ठोस सेवा कर रहा है। ४. अिसका प्रत्येक लेख विद्यार्थियोंके कामका होता है। ५. सरस्वती संवाद अच्छी प्रगति कर रहा है। शीघ्र ही वह अपने लिये सुदृढ़ स्थान बना लेगा। ६. यह पत्र अुन्नति कर रहा है और लोक-प्रिय हो रहा है।

वार्षिक मूल्य केवल ४) नमूनेकी प्रति ।।) में

पता:--सरस्वती संवाद कार्यालय-
मोती कटरा, आगरा।

गुजराती भाषाका निराला साप्ताहिक-पत्र

निर्माण

[सम्पादक : हरिलाल पंड्या]

समस्त भारतकी शैक्षणिक, सांस्कृतिक और प्रजाजीवनके नव-निर्माणकी प्रवृत्तियोंका ज्योतिर्धर।

निर्माणमें आप देखेंगे :—

आनंद, अुत्साह और चेतनाप्रद लेख, कहानियाँ अेवम् अपने ही ढंगसे चुने हुअे समाचार। राष्ट्र-भाषासे सम्बन्धित सभी प्रवृत्तियोंका विवरण और किसी भी वादसे परे रहकर तटस्थ और स्पष्ट मंतव्य प्रकट करना निर्माणका ध्येय है।

विज्ञापनका अत्युत्तम साधन।

आज ही पत्र लिखकर नमूनार्थ प्रति मंगवाअिये।

वार्षिक मूल्य ५)
छः माही ३)
अेक प्रति दो आना

निर्माण कार्यालय
स्वस्तिक प्रिन्टरी
धर्मेन्द्र मार्ग
राजकोट (सौराष्ट्र)

महाराष्ट्र रा.भा. प्रचार समिति, पुणेके तत्वावधानमें

राष्ट्रभाषा प्रचारकों अेवं परीक्षार्थियोंके अुपयोगकी हिन्दीकी अभिनव साहित्यिक मासिक पत्रिका

"जयभारती"

सम्पादक अेवं प्रकाशक:--श्री पं. मु. डांगरे

प्रारम्भिकसे लेकर अूँची परीक्षाओंतककी परीक्षोपयोगी सामग्री; साहित्य, परंपरा, संस्कृति विषयक लेख, शंका समाधान; साहित्य परिचय; मधुसंकलन; हिन्दी जगत्; परीक्षा विषयक सूचनाअें, आवश्यक जानकारी, कहाँपर कौन क्या पढें? आदि नाविन्यपूर्ण अेवं समयोचित रचनाओं अेवं विशेषताओंसे भरपूर।

मनिआर्डरसे वार्षिक मूल्य १) अेक रुपया भिजवाकर शीघ्र ग्राहक बन जाअिये।

पता:—८६६ सदाशिव, पो. बॉ. नं.५५८, पुणे २.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ श्री ॥

सा. न. वि. वि.––आहिताग्नि शंकर रामचंद्र राजवाडे यांचीं खालीलप्रमाणें पुस्तकें छापून तयार आहेत.

(१)	नासदीयसूक्त भाष्य, उत्तरार्ध– खंड १ ला.	किंमत २० रुपये
(२)	नासदीयसूक्त भाष्य, उत्तरार्ध– खंड २ रा.	,, ३० ,,
(३)	नासदीयसूक्त भाष्य, उत्तरार्ध– चरम खंड.	,, १० ,,
(४)	नीटशेचा ख्रिस्तांतक आणि ख्रिस्तांतक नीटशे.	,, १० ,,
(५)	ईशावास्योपनिषद्भाष्य.	,, १५ ,,
(६)	षड्दर्शन समन्वय आणि पुरुषार्थ मीमांसा.	,, १५ ,,
(७)	सनातन वैदिक धर्मावरील व्याख्यान माला भाग १ ला– २० व्याख्यानें.	,, ३ ,,

(सर्वत्र टपाल हंशील वेगळा.)

आपणांस सदरहू ग्रंथापैकीं जे विकत घेणें शक्य आहे ते विकत घेण्यांत यावे अशी विनंति आहे. म० ऑ० माझ्या नांवें पाठवावी. व्ही० पी० नें ग्रंथ पाहिजे असल्यास तसें कळवावे. तसदीची माफी असावी. कळावे ही विनंति.

आपला,
राजाराम शंकर राजवाडे
व्यवस्थापक.

सनातन वैदिक धर्मकार्यालय,
२८६ सदाशिव पेठ, पुणें २.

नयी धारा

याद रखिये पत्रिकाके लिअे } १ अेक निश्चित अुद्देश्य चाहिये !
२ अुसका अपना व्यक्तित्व चाहिये !

अैसी ही अेक मासिक पत्रिका है। कहानियाँ, कविताअें, शब्द-चित्र, संस्मरण, नाटक-आलोचना, निबन्ध आदि। हिन्दीमें नयी धाराके प्रतीक श्री रामवृक्ष बेनीपुरी अिसका सम्पादन कर रहे हैं। जिनकी सहायताके लिअे साहित्य-महारथियोंका अेक सम्पादक-मण्डल संगठित किया गया है। प्रादेशिक सरकारोंके शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत।

नयी धाराके पुराने प्राप्य अंक आधी कीमतमें प्राप्त होंगे। पोस्टेज फ्री। रंगमंच अंककी थोड़ीसी प्रतियाँ शेष हैं। ग्राहक शीघ्रता करें।

डिमाअी आठ पेजीके १०० पृष्ठ, पक्की जिल्द, आकर्षक कवर, सचित्र, सुसज्जित।

अेक अंक १)] **[वार्षिक १०)**

पता:— प्रबंधक, नयी धारा, अशोक प्रेस, पटना ६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

DUTCH MERCEDES

WITH OR WITHOUT PILE DELIVERY-

SIZE $15\frac{3}{4}$" x 22" and $20\frac{7}{16}$" x $26\frac{3}{4}$"

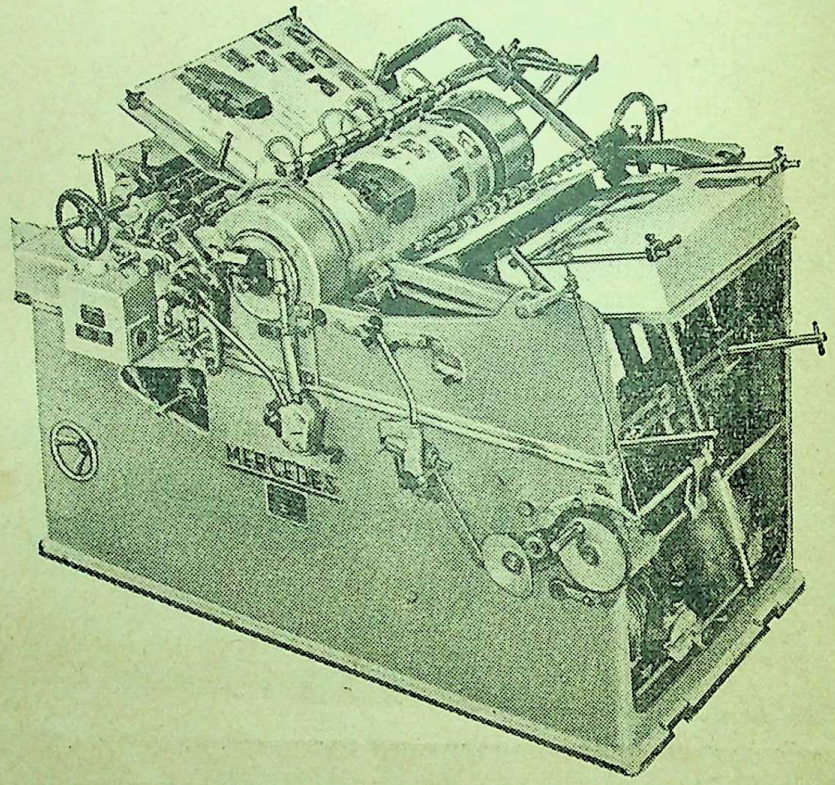

WRITE FOR SPECIAL FEATURES

SOLE DISTRIBUTORS IN INDIA

AND GUARANTORS FOR AFTER SALES SERVICES

THE EAST ASIATIC Co. (INDIA) Ltd.

MADRAS
P.O. Box 146

BOMBAY
P. O. Box 639

CALCUTTA
P. O. Box 364

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संक्षिप्त राष्ट्रभाषा कोश

(सम्पादक—महापंडित राहुल सांकृत्यायन)

शब्दसंख्या--२५०००

[मूल्य ५) डाक-व्यय अलग]

भाषाके अध्ययनमें कोशकी अपनी अेक अुपयोगिता है ।

राष्ट्रभाषाके विद्यार्थियोंके लिअे राष्ट्रभाषाका अध्ययन सुगम बनानेकी दृष्टिसे ही अिस कोशका निर्माण किया गया है । राष्ट्रभाषाकी परिधिमें आनेवाले लगभग २५००० महत्वपूर्ण शब्दोंके अर्थ अिसमें दिये गये हैं ।

अिस कोशकी अन्य विशेषताअें—

१. शब्दोंके अर्थके साथ प्रचलित मुहावरोंका समावेश भी किया गया है । २. हिन्दी, अुर्दू, संस्कृत, अरबी, फारसी तथा अन्य भाषाओंके प्रचलित शब्दोंके रूप भी अर्थ सहित दिये हैं । ३. विशेष शब्दोंके साथ अुनकी परिभाषाअें, अुनका अैतिहासिक खोजपूर्ण विवरण तथा संक्षिप्त रूपमें भेद-प्रभेद दिये गये हैं । ४.महीन टाअिप,सुन्दर छपाअी,आकर्षक गेट-अप तथा पक्की जिल्द ।

राष्ट्रभाषा प्रेमियों, विद्यार्थियों, संस्था तथा सरकारी कार्यालयों आदिके लिअे यह कोश बहुत अुपयोगी अेवं संग्रहणीय है ।

मिलनेका पता:—

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, पो०—हिन्दीनगर (वर्धा, मध्यप्रदेश)

फ्रेंच भाषा सीखिये !

'फ्रेंच स्वयं शिक्षक'

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धाका यह नवीनतम प्रकाशन है । अिसके लेखक हैं प्रख्यात गुरुकुल (युनिवर्सिटी) काँगड़ी हरद्वारके विद्वान स्नातक डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार डी. लिट. (पैरिस) ।

राजधानी नयी दिल्लीमें भारत-स्थित फ्रांसके राजदूत श्री काअुन्ट आस्ट्रोरोग भारतके तरुणोंको शीघ्राति-शीघ्र फ्रेंच भाषा सीखनेकी सलाह देते हैं । फ्रेंच भाषा सारे यूरोपमें बहुत आमफहम और कूटनीतिज्ञ भाषा है । फ्रेंच भाषा बोलनेमें शान समझी जाती है ।

बड़ी सरलतासे अिस पुस्तककी सहायतासे आप फ्रेंच भाषा सीख सकते हैं ।

बढ़िया छपायी, साफ-सुथरी जिल्द, **कीमत ५ रुपया मात्र**

मिलनेका पता :--

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा [म. प्र.]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम आपसे कुछ कहना चाहते हैं!

'राष्ट्रभारती' का तीसरा वर्ष अिसी जनवरी '५३ से शुरू हो चुका है। तीसरे वर्षका यह सातवाँ (जुलाअी मासका) अंक आपके हाथमें है।

'राष्ट्रभारती' के जिन प्रेमी ग्राहकोंका वार्षिक चन्दा अिस अंकके साथ पूरा हो जाता है, अुनसे हमारा नम्र निवेदन है कि वे अपना अगले वर्षका चंदा ६ रु. मनीआर्डर द्वारा तुरन्त भेजनेकी कृपा करें। वार्षिक या छहमाही चंदा हर हालतमें मनीआर्डर द्वाराभेजना ही ठीक होगा। अिससे हमको और आपको सुविधा होगी। आपको अंक समयपर मिलेगा। वी.पी. और 'रजिस्ट्री' चार्जकी झंझटसे आप और हम दोनों बचेंगे। आशा है, आप हमारी अिस प्रार्थनापर जरूर ध्यान देंगे।

दूसरा निवेदन यह भी है कि कमसे-कम अपने किसी अेक-दो पडोसी मित्रोंको भी ग्राहक अवश्य बना दें और अुनका सालाना चंदा मनीआर्डरसे भिजवा दें। यह 'राष्ट्रभारती' सबसे सस्ती, सुन्दर साहित्यिक, सांस्कृतिक पत्रिका है, जो ठीक समयपर हर १ ली ता० को निकलती है।

अिस पत्रिकाके प्रचारमें आप अवश्य अपना सहयोग बढ़ावें।

मनीआर्डरसे वार्षिक चंदा ६ रु. और छहमाही चंदा ३ रु. ८ आ.

नमूना अंकके लिअे दस आना मात्र।

पता:— व्यवस्थापक—'राष्ट्रभारती', पो०—हिन्दीनगर (वर्धा, म० प्र०)

राष्ट्रभारतीके लेखकोंसे निवेदन!

(१) 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ रचना आदि सामग्री स्वच्छ सुवाच्य नागरी लिखावटमें ही भेजना चाहिये। प्रकाशन योग्य सामग्री जो कुछ भी आप भेजें वह बहुत भारी-बोझिल और खूब लंबी चौड़ी नहीं होनी चाहिये, कृपया अिसका खयाल रखें। आपके हार्दिक सहयोगके लिअे राष्ट्रभारती बहुत आभारी होगी।

(२) अच्छी तरह ध्यानमें रहे कि राष्ट्रभारतीमें प्रकाशनार्थ भेजी हुअी आपकी रचना अिसके पूर्व किसी हिन्दी पत्र-पत्रिकामें प्रकाशित न हो चुकी हो; और जो कुछ सामग्री भेजें वह 'राष्ट्रभारती' के लिअे ही भेजें।

(३) अनुवादक महाशय किसी अनूदित रचनाको भेजनेसे पूर्व अुसके मूल-लेखकसे पत्रद्वारा अनुमति अवश्य प्राप्त कर लें; तभी अनूदित रचना हमारे यहाँ भेजें।

(४) आपकी स्वीकृत रचना किस मासके अंकमें छपेगी, अिसकी सूचना संपादक द्वारा आपको १५ दिनमें दे दी जायगी और छपने तक आपको प्रतीक्षा करनी होगी।

(५) अपनी अस्वीकृत रचनाको वापस मंगानेके लिअे डाक-टिकट अवश्य भेजें अथवा आप अुसकी प्रतिलिपि अपने पास सुरक्षित रखें।

(६) लेख, रचना आदि प्रकाशन योग्य सम्पादकीय सारा व्यवहार अिस पतेपर करें:—

संपादक : 'राष्ट्रभारती'

पोस्ट — हिन्दीनगर (वर्धा, मध्यप्रदेश)

प्रकाशक:— मोहनलाल भट्ट, मन्त्री–राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा।

मुद्रक— गुरुराम शर्मा, राष्ट्रभाषा प्रेस, वर्धा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

अगस्त १९५३

"सावनका वर्षा मंगल"

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची, अगस्त १९५३

'राष्ट्रभारती' बिहार, राजस्थान, मध्यभारत, हैदराबाद और भोपाल राज्यके शिक्षा-विभागों द्वारा स्कूलों, कालेजों और वाचनालयोंके लिअे स्वीकृत हो चुकी है।

[**सूचना:**—'राष्ट्रभारती'में, सर्वश्री डॉ. बाबूराम सक्सेना, आचार्य काका कालेलकर, महामहोपाध्याय दत्तो वामन पोतदार, स्वर्गीय किशोरीलाल मशरूवाला और उत्तर-प्रदेशके वर्तमान राज्यपाल श्री क०मा०मुन्शीजी आदि विशेषज्ञोंकी अेक 'समिति' द्वारा १९३६ में निर्णीत नागरी लिपिका प्रयोग होता है: —अि, अी, अु, अू, अे, अं (इ,ई, उ, ऊ, ए और ऐ की जगह) और ञ, ण और क्ष (ञ, ण और क्ष अक्षरोंके लिअे) –सं०]

विषय	लेखक	पृ० सं०
१. मनभावन सावन !	... ...	५७१
२. मेघेर परे मेघ जमेछे (बंगला कविता) बादलपर बादल जमे हैं	... श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर ... अनु०— श्री मन्मथनाथ गुप्त	५७२
३. अेक अपराध (कहानी)	... श्री अुदयशंकर भट्ट	५७३
४. कन्नडके युग प्रवर्तक नाटककार कैलासं	... श्री हिरण्यम	५७६
५. आजि श्रावण घन गहन मोहे (बंगला कविता) आज श्रावण घनके	... श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर ... अनु०–श्री मन्मथनाथ गुप्त	५७८
६. आषाढ़स्य प्रथम दिवसे	... श्री व्योहार राजेन्द्रसिंह	५७९
७. आधुनिक भारतीय साहित्य विचारधारा	... श्री लक्ष्मीशंकर व्यास	५८३
८. तमिळ साहित्यमें वर्षा ऋतु	... श्री रा. वीलिनाथन	५९०
९. वरसातपर अुर्दु कवि	... श्री हर्षनाथ	५९५
१०. प्राक्-मुस्लिम बंगला और अुसका साहित्य	... श्री मन्मथनाथ गुप्त	६००
११. श्री अुदयशंकर भट्टसे अेक भेंट	... श्री रामचरण महेन्द्र	६०८
१२. वर्षा ऋतु (कविता)	... श्री महाराज जयसिंह देव	६११
१३. बहुमुखी प्रतिभाका धनी-गोर्की	... श्री वीरेन्द्र त्रिपाठी	६१२
१४. तुलसीदास और देवता	... श्री रामनरेश त्रिपाठी	६१६
१५. नरभक्षक (कहानी)	... श्री विष्णु प्रभाकर	६१९
भारतीय साहित्यमें वर्षा मंगल !		६२३
१६. वाल्मीकि रामायणमें वर्षा (संस्कृत)	.. ...	६२४
१७. श्री मद्भागवतमें वर्षा (संस्कृत)	... ...	६२५
१८. रामचरित मानसमें वर्षा (अवधि)	... ...	६२६
१९. मीराका वर्षा मंगल (राजस्थानी)	... ...	६२६
२०. राजस्थानीका मनचातक भयो (राजस्थानी)	...	६२७
२१. वर्षा ऋतु (कन्नड़)	... श्री 'आनंदकंद' अनु०— श्री गुरुनाथ जोशी	६३२
२२. मेघमु (तेलुगु)	... श्री रामप्रोलु सुब्बाराव अनु०— श्री राममूर्ति 'रेणु'	

(शेष कवर पृष्ठ ३ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रभारती

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

* वर्ष ३ * वर्धा, अगस्त १९५३ * अंक ८ *

मनभावन सावन !

तीव्र तपती ग्रीष्म ऋतुके अन्तमें दलबलके साथ आनेवाले मनभावन सावन, तुम्हारा स्वागत !—स्वागतं वो महाभागा: ! तुम्हारे आनेसे अभी-अभी पहले, हमने तुम्हारे साथी सहचर 'आषाढस्य प्रथम दिवसे' का स्वागत किया था और अुस प्रथम दिवसपर, आजसे दो हजार वर्ष पूर्व कविकुल-गुरुने अपनी कोमल कमनीय कल्पना द्वारा सौभाग्यवती गन्धवती भारतवसुन्धराके सांस्कृतिक सुवर्ण पीठपर आसीन भारती सरस्वतीके कंठमें अनमोल पूर्वोत्तर अेक सौ अठारह नीलम मणियोंका सुन्दर अलंकार रूप हार 'मेघदूत' अर्पण किया था। अेक बहुत छोटी-सी घटना और शापित प्रताड़ित अेक विरहीकी, जो प्रकृतिकृपण और चेतन-अचेतन ज्ञान-शून्य था,—प्रणय भावना ! जनक-तनया-स्नान पुण्योदक, स्निग्ध शीतलच्छाय रामगिरिसे लेकर महान् हिमालय पर्यन्त भव्य भूगोल, अितिहास व पुराण— सब कुछ ही जिसमें बड़ी शानके साथ विशाल ताज-महलकी तरह खड़ा हुआ है। अुस महामहिम मेघकी सृष्टि-सौन्दर्य-माधुरी, रम्य गंभीर स्मृति और सावनकी साधना समस्त भारतीय साहित्यमें मुखरित हो अुठी है। हमने 'राष्ट्रभारती'के अिस अंकमें धीर गंभीर मेघश्यामकी घनीभूत घटाओंके आडम्बरका वर्षा-मांगलिक आयोजन किया है। यथाप्रयत्न अुपलब्ध सामग्री-सम्पन्न भारतीय भाषाओंके अर्घ्य, पाद्य, पुष्प-पूजोपहार रूपमें माँ भारतीके चरणोंमें समर्पित है !

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय साहित्यमें वर्षामंगल

मेघेर परे मेघ जमेछे

:श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर:

मेघेर परे मेघ जमेछे
आँधार कोरे आसे
आमाय कैनो बसिये राखो
अेका द्वारेर पाशे ।

काजेर दिने नाना काजे
थाकि नाना लोकेर माझे
आज आमि जे बोसे आछि
तोमारि आश्वासे ।

आमाय कैनो बसिये राखो
अेका द्वारेर पाशे ।
तुमि जोदि ना देखा दाओ
करो आमाय हेला
कैमोन करे काटे आमार
अैमोन बादल बैला ।

दूरेर पाने मेले आँखि
केवल आमि चेये थाकि
पराण आमार कैंदे बेड़ाय
दुरन्त बाताशे

आमाय कैनो बसिये राखो
अेका द्वारेर पाशे ।

बादलपर बादल जमे हैं

अनुवादक :श्री मन्मथनाथ गुप्त:

बादलपर बादल जमे हैं,
अंधेरा होता आ रहा है,
मुझे क्यों रखते हो बैठा
अकेला, दरवाजेके बगलमें,

कामके दिन तरह-तरहके कामोंमें,
अुलझा रहता हूँ तरह-तरहके लोगोंमें,
पर आज तो मैं बैठा हुआ हूँ
तुम्हारे ही आश्वासमें ।

मुझे क्यों रखते हो बैठा
अकेला दरवाजेके बगलमें ।
यदि तुम न दो दर्शन,
और मेरी अवहेलना करो,
तो फिर मैं कैसे काटूं
अिस प्रकारकी बादल-वेला ।

दूरकी ओर आँखें विस्फारित कर,
मैं सिर्फ ताकता रहता हूं,
मेरा प्राण रोता फिरता है
दुरन्त वयारमें ।

मुझे क्यों रखते हो बैठा
अकेला दरवाजेके बगलमें ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेक अपराध

: श्री अुदयशंकर भट्ट :

मनपर जो कभी-कभी अेक बोझ-सा आकर जम जाता है, अुसकी नाप-तोल काफी कठिन काम है। फिर भी लगता है, वह बोझ शायद गाड़ीके नीचे दब-जानेसे कम नहीं। अिसलिअे चिन्ताका बोझ या अनैतिकताका भार जीवनमें बहुत बड़ा हो जाता है। अंग्रेजीमें जिसे 'डिप्रेशन' कहते हैं, वह भी अेक प्रकारका बोझ ही है। अिसलिअे कभी-कभी जो हम नहीं चाहते, जब अुसके आ जानेका बोझ पड़ जाता है, तब साढ़े तीन हाथका आदमी भी अुस अदृश्य बोझसे दब जाता है और मनकी अुन्मुक्ततामें तापमान बढ़ जाता है। मुझे भी अेक दिन अिसी प्रकारका तापमान हो गया; जो याद आनेपर बुखारकी तरह लगने लगा। बात यों हुअी कि मेरे अेक मित्र अस्पतालमें बीमार पड़े थे। साधारण बीमार नहीं-बहुत बीमार, डाक्टरोंको अुनकी बीमारीका पता नहीं लग रहा था। कोअी कहता अिनको पेटका कैंसर है और किसीका मत था अिनके पेटमें 'लंप' है, मांसका अेक लोथड़ा बढ़ गया है। दर्दसे वे कराहते, चिल्लाते और जब नहीं सहा जाता तब रोने लगते। अैसे दर्दमें मनुष्य चाहे जितना चाहे, कोअी सहायता नहीं कर सकता। ज्यादासे ज्यादा बस अितना ही कि डाक्टर अैसे आदमीको मार्फियाका अिंजेक्शन दे दे और और सुला दे। पर वह सही अिलाज नहीं। जब तक अुसका नशा रहा तबतक आदमी चुप पड़ा रहा बेहोशीमें, और बादको फिर अुसका चिल्लाना शुरू हो जाता।

तो अैसे थे मेरे अेक मित्र, जो अस्पतालमें थे। वैसे हम बहुत दिनोंतक अेक दूसरेके साथ रहे हैं, दुःख-सुखमें अेक दूसरेकी किस्मत बँटाते रहे हैं। बस अुन्हें, ही देखने जाना था। अेक आदमीने आकर खबर दी कि डाक्टर आज अुनका आपरेशन करना चाहते हैं। हो सकता है अुनका आपरेशन सफल हो जाअे पर अधिक संभावना यह है कि आपरेशन हो और वह सफल न हो। यह तो आप जानते ही हैं कि जीवित व्यक्तिको मार डालनेका कोअी कानून नहीं। फिर भी आपरेशन अेक मात्र अिलाज तो है ही।

मैंने यह सुना तो कअी आवश्यक काम छोड़ देनेका निश्चय किया। कामकी करणीयताका भी अेक 'ग्रेडेशन' है। रेलगाड़ीमें बैठनेका वक्त हो गया हो तो आप पढ़ना लिखना यहाँ तक कि खाना भी छोड़ देते हैं। और आपको रेलवे स्टेशनकी ओर दौड़ना पड़ता है। मैंने भी सब काम छोड़ दिये और चल दिया अपने अुस मित्रकी खोज खबर लेने। पैर बढ़ रहे थे, मन अुससे भी आगे पहले ही दौड़ रहा था, चिन्ता अुसके संबन्धमें पूरे वेगसे सोचनेका काम कर रही थी। आशा और निराशामें झगड़ा हो रहा था। अिस तरह मैं चला जा रहा था। पैरोंसे जल्दी बस चलती है यही सोचकर मैं बसमें बैठ गया पर बस क्या वहाँतक जाती थी! अेक जगह जाकर मैंने बस छोड़ दी और तांगा करके चलने लगा कि अचानक अेक और मित्र मेरी तलाशमें परेशान मुझे मिल गये। तांगा रुकवाकर बोले तुम्हें ही ढूंढ़ रहा हूँ। टेलीफोनपर नहीं मिले तो स्वयं टेलीफोन बना आ रहा हूँ। चलो।

कहाँ?

अेक बड़ा जरूरी काम है। बहुत जल्दी।

पर मैं तो अेक जरूरी कामसे जा रहा हूं।

तो अुससे और जरूरी काम कोअी नहीं हो सकता?

तो आखिर कहां चलना होगा?

घर!

घर, भअी मैं अेक मरीजको देखने जा रहा हूँ, बहुत बीमार है।

मरीजको फिर देख लेना, वह मरा नहीं जा रहा है। घर चलो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अितना कहकर वह तांगेपर आ बैठा। अुसने तांगे-वालेको आर्डर दिया अपने घर चलनेका। तांगा चल पड़ा। मैंने अेक दो बार फिर आग्रह किया। मरीजकी अवस्था बतायी पर मित्रने सुना नहीं या फिर सुना तो अनसुना कर दिया। घर पहुँचा तो देखा कअी लोग वहाँ बैठे हाहा-हूहू कर रहे हैं। चायके मीठे धुअेंका नशा अुनपर छा रहा था। मिठाअियाँ हाथोंके क्रेनसे अुठायी जाकर सीधे मुँहमें अुडेली जा रही थीं। नमकीन चूनेका काम देकर मिठाअियोंकी तह जमा रहा था। मेरे पहुँचते ही वह सब सामान मेरे सामने रख दिया गया। मैं चुपचाप खाने लगा। पर हैरान था, मनमें अेक प्रकारकी ग्लानि थी। अिसी समय सब लोग अुठकर बाहर चलने लगे। मैंने अेक दो बार पूछा भी कहाँ जाया जा रहा है, आखिर मुझे तो अेक बीमारको देखने जाना है। पर कोअी सुने तब न, अुनकी अुल्लास तरंगोंमें प्रश्नकी अहमियत खो गयी। और मैं अुनके साथ चल दिया। मैं जानता था अिनसे कहनेसे कोअी फायदा नहीं, अब तो अिन्हें जहाँ जाना होगा जाअेंगे ही; मुझे छोड़ेंगे नहीं। मैं हारकर चल दिया।

बाहर निकलते ही मालूम हो गया कि सिनेमा देखनेकी तैयारी है। टिकट ले लिये गये हैं, सीटोंका रिजर्वेशन हो गया है। पिक्चर भी बिलकुल नयी और बहुत अच्छी है। मनने विद्रोह किया; मैंने अुसे अपने पूरे रूपमें अुभरने दिया। मैं मानता हूं वह पूरे बलके साथ नहीं अुठा था। अुसमें कमजोरी थी और वह कमजोरी थी तसवीर देखनेकी अेक हलकी-सी अिच्छा। जो कुछ कमी रह गयी थी, अुसे मैंने अपने मनसे लड़कर अुभारा। काफी झाड़-झपट हुअी। कर्तव्य-अकर्तव्यके, मानवता-पशुताके गुण-दोष दिखाये, पर कुछ भी नहीं बना। मुझे जाना पड़ा। मित्र लोग पकड़कर ले गये। अुस समय मैंने देखा अपने मनके दो रूप। अेक मन तसवीर देखनेकी अिच्छाका साथ दे रहा था और दूसरा विद्रोह कर रहा था। दोनोंमें लड़ाअी तो कअी बार देखी थी पर अिस लड़ाअीमें नये दाव-पेंच काममें लाये जा रहे थे। मनके अुथल-पुथलका प्रभाव बुद्धिपर पड़ रहा था। नेकी-बदीके प्रश्न अुठ रहे थे। सिनेमा-घरमें पहुंचते ही हम लोग बैठ गये। तसवीर शुरू हुअी पर मनमें जैसे अुल्लास नहीं अुठ पा रहा था। अेक प्रवृत्ति अुसे अुठा रही थी और दूसरी दबा रही थी। अिसलिअे या स्वभावतः तसवीरका चमत्कार अपने पूरे यौवनपर नहीं आ रहा था।

तसवीर शुरू हुअी। मैंने अपनेको बिलकुल निरपेक्ष बना लिया। भूल जाना चाहा कि मित्रका आपरेशन होने जा रहा है या वह बीमार भी है। सभी कुछ भूल जाना चाहता था पर तसवीर मुझे अुठा नहीं पा रही थी। अुसके बेसुरे, बेमौके गीत, भद्दा संवाद, कृत्रिम कथानक देखकर मैं रह-रहकर भूल जाता कि मैं सिनेमा-गृहमें बैठा हूँ। यह मैं नहीं कहता कि तसवीरमें सबकुछ बुरा था। निश्चय ही कुछ अच्छा भी था। पर रह-रहकर जो मनमें अपने अूपर अेक प्रकारकी ग्लानि-सी छा जाती थी, अुससे फिल्मका सारा रस फीका और निर्जीव लग रहा था। अुस समय मुझे लगा मित्र-का दुःख देखनेकी अपेक्षा यह फिल्मका सुख मात्रामें हीन है, अनुपातमें कम रसदायी है और रस वस्तुतः बाहर होते हुअे भी अुसकी ग्राहिका-शक्ति मनके भीतर है। या अुस जगह है जहां बाहरकी अिंद्रियोंका समन्वय मनके चेतना तन्तुओंसे होता है। मुझे सचमुच सारा चित्र कड़ुआ और फीका लग रहा था, जहाँ अैसे प्रसंग आते कि और अवस्थामें होनेपर अुनका आनन्द ले सकता था वह सब मुझे चुभ रहा था। मुझे लग रहा था मैं यहां बैठा चित्र देख रहा हूं, पात्रोंके प्रेमा-लापमें विह्वल हो रहा हूं और मेरा मित्र अिस समय कौन जाने कष्टसे कराह रहा या चिल्ला रहा होगा या मेरी यादमें रो रहा होगा। यदि आपरेशनकी तैयारी हो रही है तो निश्चय ही वह अिन शब्दोंमें सोच रहा होगा— "कौन जाने मेरा आपरेशन सफल होगा या नहीं। कहीं मैं मर तो नहीं जाअूंगा। तो क्या वह मित्र, अन्तरंग मित्र, जीवनके सुख-दुःखका साथी आपरेशन होनेके पहले मुझसे मिल भी सकेगा! अेक बार अन्तमें अुसके दर्शन हो सकते!" आदि-आदि। मुझे लगा वह बेचैनीसे आँखें फाड़कर रोता हुआ मेरी प्रतीक्षा कर रहा है। हो सकता है अुसके पास अिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय सभी जान पहचानके मित्र हों या अुसके परिवारके लोग भी हों, पर मेरी याद तो अुसे अवश्य आती होगी और मैं यहाँ बैठा फिल्म देख रहा हूँ। अिसी तरहके बहुतसे विचार दिमागमें आते रहे। कभी जी करता अुठकर भाग जाअूँ। चला जाअूं और जाकर मित्रको देखूं पर वैसा कर सकना मेरे लिअे संभव नहीं था। अिन मित्रोंको मेरे हृदयकी अुथल-पुथलका ज्ञान न था और ज्ञान होता भी तो भी वे लोग मेरी बातको अधिक महत्व नहीं दे पाते। यह बात नहीं कि अुनमें हृदय नहीं था और सभी हृदयहीन थे, पर अुस समयके आवेगमें तसवीर पूरी तरह पसन्द न आनेपर भी मेरा साथ देनेको तैयार नहीं थे। सहृदय होते हुअे भी अुनमें वातावरणको पूरी तरह अपनाकर मेरी बात मान लेनेकी क्षमता नहीं थी, यह मुझे विश्वास था। मेरे मनमें आया– मेरे ये साथी मित्र जिनके साथ मैं सिनेमा-गृहमें बैठा हूँ, क्या ठीक अुस आलोचककी तरह नहीं हैं जो लेखकके द्वारा निर्मित वातावरणको पूरी तरहसे अपनाये बिना ही आलोचना करनेकी चेष्टामें लेखकको साधारण और अुसकी कृतिको महत्वहीन सिद्ध करता है। और अुसके साथ ठीक न्याय न करके भी अपनेको अधिक सजग, अधिक तीक्ष्ण और पैनी दृष्टिवाला मानता है। क्योंकि प्रत्येक कृतिका महत्व अुसके वातावरणपर भी निर्भर करता है। और यह भी अिस प्रकार कि कविके साथ आलोचक या पाठक तन्मय हो जाअे, अेक हो जाअे।

और भी बहुतसे विचार मेरे मनमें अुठ रहे थे। रह-रहकर ख्याल आता कि क्या कारण है कि ये लोग मेरी स्थितिको ठीक-ठीक नहीं समझ पाते। या तो मेरी स्थिति अपनेमें कमजोर थी। जो कुछ भी हो, मैं मिलने नहीं गया था तो अुसमें मुझे अपनी कमजोरी ही लगी। जैसे-तैसे तसवीर समाप्त होनेपर बाहर निकला। मनमें आया कि अब मैं अुसको देख आअूं। पर समय बीत चुका था। रातके समय वहाँ जा सकना असम्भव समझकर मैं लौट गया। सवेरे घूमने न जाकर रोगीका समाचार पूछने अेक पासके परिचितके यहाँ गया। अुसने बताया– "आपरेशन कल नहीं हुआ शायद आज हो। रातको अुसे बेचैनी बहुत थी, रोगी बार-बार रोता-चिल्लाता रहा। अुसकी वजहसे पासके रोगियों को भी नींद नहीं लगी। सब लोग चिल्लाने लगे, जो किसी वजहसे सो गये वे भी जग गये और लगे कराहने। सारे वार्डमें अेक हंगामा मच गया। नर्सें परेशान थीं। जैसे-तैसे कुछको मार्फियाके अिंजेक्शन देकर सुलाया गया। रोगी मित्रको भी नर्सने चीखकर अेक अिंजेक्शन दिया। अिसके बाद मुझे मालूम नहीं; मैं चला आया। लेकिन अेक बात है चिल्लाते हुअे भी अुसे तुम्हारी याद आ रही थी।"

मैंने निश्चय किया कि घरपर नहा-धोकर पहले रोगीको देखनेका प्रयत्न करूंगा फिर दफ्तर जाअूंगा। देर हो जाअेगी तो अेकाध घंटेके लिअे किसीसे कह दूंगा। यह सब सोचकर मैं अुठा ही था कि अेक आदमी दौड़ा हुआ आया और अुसने खबर दी कि रोगीका देहान्त हो गया। कब अुनके प्राण निकले यह किसीको नहीं मालूम। सबेरे भंगीने देखा तो नर्सको बुलाकर दिखाया। अुसने अिधर अुधर बातें करके अुसको लाशघरमें भिजवा दिया है, वह वहीं पड़ी है।

मैं अुठते-अुठते बैठ गया। मनपर धकसे अेक सदमा हुआ। सिरसे पैरतक सारे शरीरमें ग्लानिकी अेक बिजली-सी दौड़ गयी। मैं नहीं समझ पाया क्या करूं?

पर अब क्या हो सकता था। सब बात वशके बाहर हो गयी थी। जो अवसादकी छाया मेरे मनपर आकर जमी वह आज भी अितने दिनों बाद भी ज्यों की त्यों है। लगता है दूर मेरा मित्र चिल्लाकर याद कर रहा है और मैं बार-बार चौंक अुठता हूँ। मुझे मालूम हो रहा है मनुष्यताके कलंक रूप जिन लोगोंने बड़े-बड़े अपराध किये होंगे अुनमें मेरा यह अपराध भी कम दोषपूर्ण नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कन्नडके युगप्रवर्तक नाटककार कैलासं

: श्री हिरण्यम, अेम. अे., साहित्यरत्न :

स्वर्गीय टी. पी. कैलासं आधुनिक कन्नड साहित्यके युगप्रवर्तक नाटककार थे। आपका पूरा नाम था— त्यागराज परमशिव कैलासं। कैलासंकी प्रतिभा बहु-मुखी थी। वे नाटककार, कवि और अभिनेता भी थे।

यों तो कैलासंने अनेक नाटकोंकी रचना की किन्तु अबतक अुनके लगभग अठारह नाटक ही प्रकाशित हुअे हैं। अिनमेंसे कुछ अेकांकी हैं। कैलासंके सभी नाटक सामाजिक हैं, जिनमें प्रधानतया मद्रास, मैसूर, बेंगलोर जैसे बड़े शहरोंमें रहनेवाले परिवारों अेवं व्यक्तियोंका चित्रण किया गया है। अिसलिअे अिन नाटकोंमें जिन समस्याओंकी तरफ संकेत किया गया है, अुन्हें शहरोंमें रहनेवाले ही भलीभांति हृदयंगम कर सकते हैं।

कैलासंके नाटकोंका प्रधान रस हास्य है। अुनका हास्य केवल मनोरंजन या हास्यके लिअे ही नहीं है; बल्कि अुसमें समाजकी बुराअियों तथा त्रुटियोंके प्रति तीव्र व्यंग्य भी छिपा रहता है। हास्य शिष्ट और गंभीर है। कहीं भी अश्लीलताकी गंध तक नहीं। अुनके नाटकोंके पाठक तथा प्रेक्षक अवश्य ही हँस-हँस कर लोट-पोट हो जाते हैं; साथ ही, गहरी वेदनासे व्याकुल भी होते हैं। कैलासंके हास्यका अुद्देश्य व्यक्तियोंकी कमजोरियों, समाजकी बुराअियों और त्रुटियोंपर लोगोंको हँसा देना मात्र नहीं, किन्तु समाजके पतितों और अपराधियोंको लज्जित या दुःखित किये बिना सुधार देना है। अुनके हास्यमें किसीके प्रति क्रोध या भर्त्सना नहीं; है केवल अेक निर्मल हृदयकी सहानु-भूतिपूर्ण समवेदना। पतितको नीचे न गिराकर, धीरेसे अूपर अुठाना और अुसको स्वयं ही अूपर अुठने देना, कैलासंके समाजसुधारका अनूठा तरीका है।

जनताकी बोलचालकी भाषामें नाटक रचकर कैलासंने कन्नड-साहित्यमें अेक नूतन शैलीका सूत्रपात किया। अुनकी भाषा अैसी बोलचालकी मिलीजुली भाषा है कि अुनके नाटक पढ़ते या देखते समय अैसा लगता है मानो हम कहीं घरमें बैठे-बैठे यार-दोस्तोंके साथ बात-चीत कर रहे हैं या कहीं लोगोंके बीच बाजारमें खड़े हैं। अुनकी भाषामें अंग्रेजी, तेलुगु, तमिल, हिन्दी, अुर्दू, मलयालमके शब्द अितनी स्वाभाविकताके साथ प्रयुक्त होते हैं कि दंग रह जाना पड़ता है। न केवल शब्दोंका प्रयोग ही बल्कि स्वाभाविक बोलचालके अुच्चारणकी छटा भी छहराती रहती है। भाषा बड़ी सजीव, सरस और प्रवाहमयी है। अनुप्रासकी छटा तो देखते ही बनती है। यह बात नहीं है कि कैलासं शुद्ध साहित्यिक भाषामें लिखना नहीं जानते थे। अुनका 'बहिष्कार' अैसा ही अेक नाटक है जिसमें बड़ी ही शुद्ध साहित्यिक भाषा प्रयुक्त की गयी है।

कैलासं जिस तरह अुच्च कोटिके नाटककार थे अुसी तरह अूँचे दर्जेके अभिनेता भी। वे अपने नाटकोंका अभिनय करके दिखाते थे। सब पात्रोंका अकेले ही अिस तरह अभिनय करते थे कि प्रत्येक पात्र अुनके शरीरमें प्रतिबिम्बित होकर अपने सहज स्वरूपमें हमारी आँखोंके सामने मूर्तिमान होकर नाचने लगता। कैलासंकी अेक आनोखी बात यह भी थी कि अुनके रचे सभी नाटक अुनकी जीभपर थे, अुनकी रग-रगमें अुनकी सृष्टिके पात्र व्याप्त होकर जीवित थे। जहाँ कहीं वे अपने नाटकोंका अभिनय करते वहाँ लोगोंकी असाधारण भीड़ लग जाती।

आप कअी साल तक अिंग्लेण्डमें रह चुके थे और आपपर अंग्रेजी-नाटक-रचना-कलाका खूब प्रभाव पड़ा था। अंग्रेजी भाषापर तो अुनका अद्भुत अधिकार था। अंग्रेजीमें अुन्होंने "अेकलव्य" और "कर्ण" नामक दो नाटक भी रचे थे। जिस तरह मोलियर, शेरिडान आदि अंग्रेजीमें हास्यरसपूर्ण नाटक-प्रहसन लिखकर लोगोंके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवनके विभिन्न पहलुओंपर प्रकाश डाला, अुसी तरह कैलासंने कन्नडमें हास्यरसपूर्ण नाटक-प्रहसन रचकर अेक नयी परिपाटी चलायी जिसका अनुकरण आजकलके कअी कन्नड़-लेखक करने लगे हैं।

कैलासंने कन्नडकी नाटक-रचना-कलामें जो सुधार किया वह कुछ कम महत्वका नहीं। हमारे यहाँ नाटकोंमें मौके-बे-मौके पात्रोंके मुंहसे गाना गवाना बहुत पुराने जमानेसे चली आती रूढ़ि है। कैलासंने "नं कंप्नी" (हमारी कंपेनी) नामक नाटकमें अिस त्रुटिको बड़े ही सुंदर ढंगसे दरसाया है। अिसमें मंत्री और राजा दो पात्र हैं। मंत्री राजाको प्रजाके बारेमें जब समाचार सुनाता है तब प्रजाकी हर बातको स्वयं अभिनय करके दिखाता है। राजाके मूच्छित होकर गिर पड़नेके समय अेक छंद गाना और जब प्रेक्षक लोग पुनर्वार (once more) कहें तब फिरसे जाग्रत होकर फिर मूच्छित हो जाना, अैसी बातें हैं कि हास्यरसके फौवारे फूट निकलते हैं। कथावस्तु तथा पात्रोंका सूत्रधारके द्वारा नाटकके आरंभ में परिचय करानेकी प्रथा भी हमारे यहाँ अेक लम्बे जमानेसे चली आती है। अिस विज्ञापनबाजीकी कैलासंने खूब धज्जियाँ अुड़ायीं। कैलासंने जितने नाटक लिखे, रंगमंचपर खेले-जानेके लिअे ही लिखे। बड़ी सफलताके साथ सभी नाटक खेले भी जा चुके हैं। कैलासंका प्रत्येक नाटक समाजकी किसी न किसी बुराअीको दिखानेके लिअे या किसी सामाजिक समस्याको सुलझानेके लिअे ही लिखा गया है। 'बहिष्कार" नाटकमें दहेज प्रथाके दुष्परिणामोंका करुणाजनक चित्र अुतारा गया है। रंगण्णा नामक ग़रीब ब्राह्मण अपनी पुत्री "नरसु" का विवाह धनाभावके कारण योग्य वरके साथ नहीं कर पाता। लड़की सयानी हो जाती है और रंगण्णाको जाति-भाअी जातिसे बाहर कर देते हैं। अुसके पिताके श्राद्धमें गाँवके ब्राह्मण भाग लेनेसे अिनकार कर देते हैं। अिसीलिअे रंगण्णकी बूढ़ी माता अपनी पोतीको शाप देती हुअी मर जाती है। कुछ सालके बाद रंगण्णकी आर्थिक दशा कुछ सुधर जाती है। अुस समय पैसेके मोहसे वे ही ब्राह्मण, जो पहले अिनकार कर गये थे, श्राद्ध-क्रियामें शरीक होते हैं। लड़कीका ब्याह नहीं हो पाता। लड़कीके भाअी "किट्टू" का ब्याह निश्चित हो जाता है परन्तु वह 'नरसु'के कारण ही रुक जाता है। नरसूको अपने जीवनके प्रति घृणा पैदा होती है और अिसी वेदनासे घुलघुलकर क्षीण हो अन्तमें आत्म-हत्या कर लेती है। अिस प्रकार अिस नाटकमें दहेज-प्रथासे होनेवाली बुराअियोंका मार्मिक दृश्य अुपस्थित किया गया है।

"टोळ्ळुगट्टि" कैलासंका दूसरा अेक प्रसिद्ध नाटक है, जिसमें आधुनिक शिक्षाके खोखलेपनका रोचक चित्र खींचा गया है। हमारे नवयुवक-युवतियाँ किस तरह किताबोंके कीड़े बनकर बड़ी-बड़ी डिग्रियाँ प्राप्त करनेके मोहमें पड़े रहते हैं और वे किस तरह दुनियाके जीवन-संग्रामके लिअे अयोग्य साबित होते हैं, अिन बातोंका सुन्दर वर्णन किया गया है। माधु और पुट्टु दो भाअी हैं। माधु पढ़ने लिखनेमें मन नहीं लगाता, लेकिन अपने माँ-बापकी सेवा-टहल तथा घरके काम-काजमें होशियार है। किन्तु पुट्टु चौबीसों घंटे अपनी पढ़ाअीमें मग्न रहता है। न अपने माँ-बापका खयाल रखता है, न घरके काम-काजकी ओर ही ध्यान देता है। दुनियादारीकी बातें तो बिलकुल नहीं जानता। जब घरमें आग लगती तब सब लोग घरका सामान बाहर निकालनेमें व्यस्त रहते, लेकिन पुट्टु सिर्फ अपनी किताबें बगलमें दबाकर बाहर भागता है। अुसे अन्य किसी बातकी चिंता नहीं रहती। वह चीनका अितिहास, साअिबेरियाका सस्यवृंद, अबसिनियाके गहने अपने दिमागमें भरकर फिरता है, लेकिन अपने घर या देशकी कोअी बात नहीं जानता।

कैलासंके अन्य प्रसिद्ध नाटक हैं:—"अम्माव्र गण्ड", "ताळिकट्टोके कूलीने", "बंडवाळ विल्लद बडाअी", "होमरूल", "सत्तवन संताप", "गण्डस्कत्रि", "सूळे"। 'सूळे' का अर्थ है वेश्या। अिस नाटकमें कैलासंने वेश्यावृत्तिसे होनेवाली बुराअियोंका मर्मबेधी वर्णन किया है। अुनके दिलमें स्त्री जातिके प्रति कैसी श्रद्धा और सहानुभूति है अिसका परिचय सभी नाटकोंमें मिलता है। "नम् ब्राह्मणके", "नम क्लब", "वैध न व्याधि", "अनुकूल क्कोब्बण्ण", "सीकरणे सावित्री"—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके अेकांकी हैं । प्रत्येक नाटक हास्य-रसकी पिचकारी है। अिस हास्यके अंन्तर्गत सामाजिक समस्याओंकी तीव्र आलोचना है । पैसेवालोंका अत्याचार, अनाचार, पण्डे-पुजारियोंका पाखण्ड आदि न जाने कितनी ही बातोंपर प्रकाश डाला गया है ।

कैलासं कलमके धनी थे । कलाके सच्चे अुपासक थे । अुन्होंने अपने अुच्च कोटिके नाटकोंके द्वारा कन्नड साहित्यके भण्डारमें अनमोल रत्न भर दिये और कर्नाटकका मस्तक अूंचा किया । कैलासंने अपनी कृतियोंमें जिन भावोंकी व्यंजना की है, वे देश-कालसे परे होकर सार्वभौम हैं । कैलासंमें प्रखर बुद्धि और असाधारण प्रतिभा थी। हाजिर जवाबीमें अुनकी बराबरी करनेवाले कम ही मिल सकते हैं। अगर कैलासं कर्नाटकमें पैदा न होकर यूरोपमें पैदा होते, कन्नडमें अपनी कला-कृतियोंका निर्माण न करके अंग्रेजीमें करते, अगर अुनको अपने जीवनमें वे ही सुविधाअें प्राप्त होतीं जो बर्नाडशा जैसे कलाकारोंको प्राप्त थीं, तो संभवतः वे बर्नाडशा ही नहीं, अपितु बर्नाडशासे भी बढ़कर जगतके महान आधुनिक नाटककार होते !

आजि श्रावण घन गहन मोहे

:श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर:

आजि श्रावण-घन गहन-मोहे
गोपन तव चरण फेले
निशार मतो नीरव ओहे
सबार दिठि अेड़ाये अेले

प्रभात आजि मुदेछे आँखि,
बातास वृथा जेतेछे डाकि
निलाज नील आकाश ढाकि
निविड़ मेघके दिलो मेले ?

कूजनहीन कानन भूमि
दुयार देवा सकोल घरे
अेकेला कोन पथिक तुमि
पथिकहीन पथेर परे ?

हे अेका सखा, हे प्रियतम
रयेछे खोला अे घर मम
समुख दिये स्वपन सम
जेयो ना मोरे हैलाय ठेले ।

आज श्रावण घनके

:अनु०—श्री मन्मथनाथ गुप्त:

आज श्रावण घनके गहन मोहमें
गोपन अपने चरण डालकर
निशाकी तरह नीरव अजी
सबकी दृष्टि बचाकर तुम आये ।

आज प्रभातने आँखें बंद कर लीं,
बयार व्यर्थमें पुकार-पुकारकर जा रही है
निलेज्ज नील आकाशको ढककर
किसने ला दिये निविड़ बादल ।

कानन भूमि कूजनहीन है;
सब घरोंके दरवाजे बन्द हैं;
अेकाकी कौन पथिक हो तुम
(जो चल रहे हो) पथिकहीन पथपर।

हे अेकाकी सखे, हे प्रियतम,
मेरा यह प्रकोष्ठ खुला हुआ है,
(अिसलिअे) सामनेसे स्वप्नकी तरह
मुझे अवहेलनामें ढकेलकर न चल देना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आषाढ़स्य प्रथम दिवसे

: श्री व्योहार राजेन्द्रसिंह :

पचमढ़ी क्लबके पीछे जो पहाड़ी है, अुसे पचमढ़ी पहाड़ीके नामसे पुकारते हैं। नित्य प्रातःकाल अिसीके नीचे अर्घ्यदान तथा सन्ध्या किया करता था। सोचा कि अूपर जाकर भी देखना चाहिये। कहीं-कहीं पत्थरकी विशाल चट्टानोंको पकड़-पकड़कर चढ़ना पड़ा। अिसलिअे पादत्राणोंका नीचे ही परित्याग कर दिया। समतलपर जो त्राणोंका काम करते थे वे ही अुच्च स्थलपर बाधा बन गये थे। हम सभ्यताकी कृत्रिमतामें अिन वस्तुओंके अितने आदी हो गये हैं कि अुनके बिना अेक पग भी नहीं चल सकते। अेक बार नागपुर जाते समय रेलमें सोते समय किसीने मेरा नया जूता अुड़ा दिया। विधान-सभाकी बैठकमें जानेका समय हो गया था अतः नंगे पैर ही वहाँ चला गया। बस आफ़त आ गयी। सब लोगोंको कैफियत देते-देते तंग आ गया। चाहे कोमल कालीनपर ही क्यों न चलना पड़े, पर नंगे पैर कैसे चलें! अिसलिअे फर्शी जूते बनाये गये। अितने कोमल कि कभी फर्शके बदले सिरपर भी पड़ जायं तो असर न करें। नंगे पैर नंगे सिर और नंगे बदन रहना असभ्यताकी निशानी समझी जाती है। भयानक गर्मीमें भी अूनी मोजेसे लेकर अूनी कमीज पहिने तक लोग देखे गये हैं।

मगर मैं पर्वतारोहणको छोड़कर जूता-रोहणकी ओर बहक गया। क्षमा करें। हाँ, तो पगोंका कोमल स्पर्श पाकर कर्कश पत्थर रास्ता देने लगे। हम अुनको जड़ कहते हैं किन्तु मुझे अैसा लगा मानों वे चेतन हो अुठे हैं। मेरे नंगे पैरोंका स्वागत करनेके लिअे अपनी कर्कशता छोड़कर कोमलता धारण करते जा रहे हैं। गोस्वामी-तुलसीदासजीकी पंक्ति याद आयी। श्री रामके नंगे पैरोंके स्पर्शसे भूमि संकुचित हो रही है।

"परसत मृदुल चरन अरुनारे।
सकुचति महि जिमि हृदय हमारे॥"

अिस अेक ही पंक्तिमें कविने हमारे हृदय-हीको नहीं; पृथ्वीके हृदयको भी स्पर्श किया है। पृथ्वीके संयोगसे चरण अरुण हो अुठे हैं और चरणोंके स्पर्शसे पृथ्वी अरुण हो अुठी है। चेतनके मृदु स्पर्शसे जड़ भी अपनी कठोरता छोड़कर मृदुता धारण करता जा रहा है।

सचमुच हमने कृत्रिम सभ्यताके वश होकर अपने शरीरको सूर्यकी दिव्य किरणों, अपने हाथोंको वायुके मुक्त विहार तथा पैरोंको पृथ्वी माताके मृदु स्पर्शसे वंचित कर रखा है। जूतोंके साथ मैंने कपड़े भी अुतारकर फेंक दिये। मुक्त वातावरणमें गहरी साँसें लेता, सूर्य-किरणोंके साथ खेलता मैं आगे बढ़ता जाता था और विचार करता जाता था। जहाँ दुर्गम पत्थर सामने आते, तेनसिंह शेरपाकी याद कर अुसपर कूदकर चढ़ जाता। बल प्राप्त करनेके लिअे सुन्दरकाण्डका पाठ करता जाता।

हनूमान तेहि परसकर,
पुनि-पुनि कीन्ह प्रणाम।
राम काज कीन्हे बिना,
मोंहि कहाँ विश्राम॥

सोचा,–मैनाकको स्पर्शकर फिर अुन्होंने प्रणाम क्यों किया। जान पड़ता है कि अूपर अुड़नेके कारण पहिले चरणसे स्पर्श किया होगा अिसीलिअे अुसका परिहार करनेके लिअे प्रणाम किया। पर्वतको भी भगवानकी अेक विभूति माना गया है। कहा भी है—"स्थावराणां हिमालयः।" अिसलिअे मैंने भी अुसको चरणसे स्पर्श करनेके लिअे प्रणाम कर लिया। आप अिसे मूर्ति पूजामें अन्धविश्वास या चाहे जो कुछ कह सकते हैं; पर मैं अिस विश्वासमें गर्व करता हूं। मैं तो पलंगसे नीचे पैर रखते ही कह अुठता हूं—

In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डले ।
विष्णुपत्नि ! नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ।

मातृभूमिकी पूजा भी प्रकृति-पूजा ही तो है। अुक्त श्लोकमें पर्वतको मातृभूमिका स्तन कहा गया है। अिसमें कोअी आश्चर्य नहीं क्योंकि अुसीसे दूधकी धाराके समान जीवन-दात्री नदियोंका अुद्गम होता है।

गुरुदेवने तो हिमालयको मातृभूमिका मस्तक कहकर मुक्त कण्ठसे अुसके गुणगान किये हैं। मैं अुन्हींके स्वरोंमें गा अुठा—

"नील सिन्धु जल धौत चरण तल
अनिल विकम्पित श्यामल अंचल
अम्बर चुम्बित भाल हिमांचल
शुभ्र तुषार किरीटिनी
अयि भुवन मनमोहिनी ।"

अिस पर्वतकी हिमालयसे कोअी तुलना नहीं हो सकती; किंतु जिसने हिमालयकी अुच्चताका अनुभव नहीं किया, अुसके लिअे यह पर्वत भी हिमालय ही के समान है। अुसीकी जातिका होनेके कारण यह भी पवित्र है। माताके भालपर चरणपात करनेके लिअे कौन क्षमा याचना न करेगा। अस्तु। **शनैः पन्था शनैः गुन्था शनैः पर्वतरोहणम्।** का स्मरण करता हुआ धीरे-धीरे अूपर चल रहा था। माथेपर सूर्यताप और परिश्रमके कारण पसीना आने लगा था, किन्तु शीतल पवन अुसे क्षणभरमें विलीन कर देता था। कालिदासका श्लोक याद आ गया। ठहरकर जोरोंसे मैंने अुसका अुच्चारण करना शुरू कर दिया—

पृक्तस्तुषारैर्गिरिनिर्झराणामनोकहा कम्पित पुष्पगन्धी ।
तमातपक्लान्त मनातपत्र-माचार पूतं पवनः सिषेवे ॥

चोटीपर पहुँचते ही सारा श्रम चला गया। शीतल वायुके झोंकोंने नयी शक्ति अुत्पन्न कर दी। अुच्चतापर केवल भौतिक दृष्टिका ही विस्तार नहीं होता। आन्तरिक दृष्टि भी विस्तृत और अुदार बन जाती है। जिन राजभवन और मन्त्रियोंके बंगलोंको हम नीचे आदरकी दृष्टिसे देखते हैं, वे ही यहाँ तुच्छ और नगण्य जान पड़ने लगे। कितने आये और चले गये—बंगले ज्यों-के-त्यों खड़े हैं। ये बंगले भी गिरकर मिट्टीमें मिल जाअेंगे पर यह पर्वत अचल-अटल युगोंसे खड़ा है और युगोंतक खड़ा रहेगा। गीतामें हिमालयको जो स्थावर कहा गया है वह ठीक ही स्थावर (स्थायी) है। बाकी सब जंगम (चल) और अस्थायी है।

हमारे यहाँ सब महान् विभूतियोंको अीश्वरका अंश मानकर देवता माना गया है। अिसलिअे जब कि विदेशी लोग हिमालय-विजयकी बात करते हैं, तब तेनसिंह हिमालयके चरण-दर्शनकी लालसा रखकर आरोहण करता है। यही भारतीय और विदेशी मनोवृत्तिमें अन्तर है।

हमारे काव्य और नाटक, वेद और अुपनिषद् वन-पर्वतोंके वर्णनसे भरे पड़े हैं। अरण्योंमें रचित होनेके कारण अुनका नाम ही "आरण्यक" पड़ गया है। मेरु और मलय, विन्ध्य और सह्याद्रि, महेन्द्र और मंथर हमारे साहित्यके अभिन्न अंग बन गये हैं। अरण्य और पर्वत विदेशियोंके लिअे केवल क्रीड़ास्थल या शिकारगाह हो सकते हैं, किन्तु हमारे लिअे वे तपके स्थल हैं। यदि परशुराम तपके लिअे जाते हैं तो महेन्द्र पर्वतपर, यदि बुद्ध भगवानको तपका कोअी स्थल प्रिय है तो गृद्धकूट दत्तात्रेयकी तपोभूमि है। गिरनार और पार्श्वनाथजीकी तपोभूमि है शिखरजी। अिस प्रकार हमारे धर्म और संस्कृतिमें पर्वतोंका विशेष स्थान है। वाल्मीकि और कालिदास, भवभूति और भारवि तथा हिन्दीमें सूरदास और तुलसीदास, हिमालय और रामगिरि, दण्डकारण्य तथा गिरिराज और चित्रकूटका वर्णन करके भी नहीं अघाते। हिमालयका वर्णन करते हुअे कालिदास कहते हैं—

आमेखलं संचरतां घनानां
छाया मधः सानुगतां निषेव्य ।
अुद्वेजिता वृष्टिभिराश्रयन्ते
शृंगाणि यस्यातपवन्ति सिद्धाः ॥

अर्थात् जिसकी कमरतक मेघोंका संचार होता है। जहाँ सिद्ध लोग अुसके शृंगोंकी छायामें विश्राम लेते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। फिर वृष्टिसे व्याकुल होकर आतपयुक्त शिखरोंका आश्रय लेते हैं।

यह अेक बड़े गौरवकी बात है कि कैलाशपतिको महादेव तथा हिमालय-कन्या पार्वतीको अुनकी पुत्री बताकर देवीकी अुपाधि प्रदान की गयी।

नीचेसे देखनेपर पर्वतपर बड़े-बड़े अलग-अलग शिलाखंड दीखते हैं। पर अूपर जानेपर जान पड़ता है कि अुनके काले शरीरके भीतर सरस हृदय छिपा हुआ है; जिनमेंसे हरीतिमाका अंकुर निहित है, जो अूपरसे वर्षाका सिंचन पाकर वृक्षादिके रूपमें प्रगट होता है। अपने शरीरको दो टूककर वह अिस अंकुरको स्थान देता है; अुनकी जड़ोंके कारण अुसकी छाती फटती जाती है पर वह आह तक नहीं करता। अिसपर भी आश्चर्य है कि लोग अिन जड़ोंको तो चेतन समझते हैं और सरस हृदयवाले शिलाखण्डको जड़ मानते हैं।

पर्वत केवल तपोभूमि ही नहीं है; किन्तु अनाश्रितों का आश्रयस्थल भी है। यदि वनवासके समय श्री रामचन्द्रजीको चित्रकूट आश्रय न देता तो वे कहाँ जाते? अिसीको लक्षकर रहीमने कहा था—

चित्रकूटमें रमि रहे, रहिमन अवध नरेश।
जापर विपदा परत है, सो आवत अिहि देश॥

अितना ही नहीं किन्तु सीताकी खोज करते हुअे ऋष्यमूक पर्वतपर ही सुग्रीवसे अुनकी मैत्री हुअी और वियोगकालमें भी माल्यवान गिरिमें ही अुन्होंने आश्रय लिया। सीताको पुष्पक विमानसे पर्वत दिखलाते हुअे अुन्होंने कहा भी था—

अेतद्गिरेः माल्यवतः पुरस्ताद
दाविर्भवत्यम्बरलेखि शृंगम्।
नवं पयो यत्र धनैर्मयाच
त्वद्विप्रयोगाश्रु समं विसृष्टम्॥

पाण्डवोंको भी वनवासमें आश्रय देनेवाले पर्वत ही थे। कालिदासके निर्वासित यक्षको भी रामगिरिने आश्रय दिया। आधुनिक कालमें राणा प्रतापको भी अरावलीकी गिरि-कन्दरोंने आश्रय दिया था और शिवाजीकी रक्षा भी गिरिदुर्गोंने की थी। आज हवाअी जहाजके युगमें अुनकी चाहे जितनी अुपेक्षा की जावे किन्तु भारतीय अितिहासमें अिन गिरिदुर्गोंका विशेष महत्त्व रहा है।

वैसे तो सभी ऋतुओंमें पर्वत सुन्दर दीखते हैं किन्तु वर्षा ऋतुमें अुनकी छटा विशेष सुहावनी हो जाती है। तुलसीदासजीने भी वर्षा ऋतुहीमें चित्रकूटके सौन्दर्यका वर्णन किया है।

सब दिन चित्रकूट नीको लागत,
वर्षा ऋतु प्रवेश विशेष वन देखत मन अनुरागत॥१॥
चहुं दिसि वन सम्पन्न, विहंग मृग शोभा पावत
जनु सुनरेस देस पुर प्रमुदित प्रजा सकल सुख छावत॥२॥
सोहत स्याम जलद मृदु घोरत धातु रंगमगे सृंगनि
मनहुं आदि अंभोज विराजत सेवित सुरमुनि भृंगनि॥३॥
सिखर परस घन घटहिं,
मिलति वग पांति सो छवि कवि बरनी
आदि बराह बिदरि वारिधि मनो अुठयो है
दसन धरि धरनी॥४॥
जल जुत विमल सिलनि झलकत नभ,
वन प्रतिबिंब तरंग
मानहु जग रचना विचित्र विलसति विराट अंग-अंग॥५॥
मंद कितहिं मिलत झरना, झरि-झरि,
भरि-भरि जल आछे,
तुलसी सकल सुकृत सुख लागे,
मानौ राम भगतिके पाछे॥६॥

सूरदासजीने भी वर्षाहीमें पहिले गिरिराजका अभिषेक किया है—

बरसत मेघवर्त धरनीपर
मूसलधार सलिल वरषतु है, बूंद न आवत भूपर
चपला चमक-चमक चकचौंधति करति सब्द आघात
अंधाधुंध पवन गर्तक घन करत फिरत अुत्पात
निसि सम गगन भयौ आच्छादित वरषि-वरषि झर अिंद
ब्रजवासी सुखचैन करत सब, धरे गिरिवर गोविंद
मेघ वरषि जल सबै बढ़ाने दिवि गुन गये सिराअि
वैसोअि गिरि वैसे ब्रजवासी दूनौ हरष बढ़ाअि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सात दिवस जल वरषि निसा-दिन ब्रज-घर-घर आनंद
सूरदास ब्रज राखि लियो धरि, गिरिवर कर नंद-नंद ॥

आदि कवि वाल्मीकिजीने भी वर्षाही में गिरि-राज प्रवर्षणकी छटाका वर्णन किया है—

महान्ति कूरानिमही धराणां
धाराविधूजन्यधिकं विभात्रि ।
महाप्रमाणैः विपुलैः प्रपातैः
मुक्ताकलापैरिव लम्बमानैः ॥

(अर्थ—पर्वतोंके बड़े-बड़े शिखर वारि-धारासे धुले हुअे अधिक शोभित हो रहे हैं। बड़े आकारके बहुत-से जलप्रवाहोंके कारण वे अैसे जान पड़ते हैं मानों मोतियोंकी मालाअें लटक रही हों)

* * *

पचमढ़ीमें वैसेही जल-प्रपातोंकी अधिकता है, फिर वर्षामें अुनका कहना ही क्या ?

और कालिदासने भी "आषाढ़स्य प्रथम दिवसे" अपनी प्रिया-प्रियतमाको संदेश भेजा है—

चारों ओर जो आँख फैलाकर देखा तो पर्वत मालाओंका विचित्र समारोह दृष्टिगोचर हुआ—दाहिनी ओर महादेवका पर्वत अपनी महिमा बता रहा है। अुसके आगे चौड़ागढ़ गर्वके साथ सिर अूँचा किये खड़ा है। सामने मैदान फैला है जिसपर पाण्डव गुफाकी नीची पहाड़ी है। बाअीं ओर सतपुड़ा पर्वतमाला दीवार-सी बनाये खड़ी है। किसी पहाड़पर बादलोंसे छन-छनकर सूर्य किरणें आ रही हैं। किसीपर धुआँसा छाया हुआ है और किसीपर सजल मेघ हाथीकी तरह पानी पीनेके लिअे अुतर रहा है—

आषाढ़स्य प्रथम दिवसे
मेघमाश्लिष्ट सानुम्
वप्रक्रीडा परिणतगज
प्रेक्षणीयं ददर्श ॥

अिस पर्वतकी सर्वोच्च शिलाके सिंहासन पदपर बैठकर मैं अपनेको सबका अधिराज समझ रहा था। अूपर मेघछत्र धारण किये हुअे हैं। पवन मानों व्यजन और चवर डुला रहा है। कोयल और पपीहा विरुदावली गा रहे हैं—

सोचने लगा कि सब सामग्री अुपस्थित है; केवल अभिषेककी आवश्यकता है। देखते-देखते सिरके अूपर काली बदलीने रिमझिम-रिमझिम बरसना शुरू कर दिया। मानो मेरा मनोरथ समझकर अभिषेकका कार्य पूरा कर रही हो। फिर मैंने सोचा अिस नवकार्य अभिषेकको ग्रहण करनेका पहिला अधिकार अिस पर्वतको ही है जिसने शीतके बाद आतपका दुसह अुत्ताप सहन किया है। मैं तो अेक आक्रमणकारीके समान अिसपर चढ़ आया हूँ और दूसरेके अनधिकृत भागको स्वयं ग्रहण करने लगा हूँ। तो भी वारिधाराने बिना किसी भेदभावके पर्वतके साथ मेरा भी अभिषेक किया। अुस नवीन वारिधारासे तन-मनही नहीं; आत्मा भी तृप्त हो गयी। मैं अुस पर्वतराजकी सहनशीलताको सराहता हुआ अिस लेखको बंदकर नीचे अुतरने लगा। जोकि शीतके हिमपात, ग्रीष्मके प्रखर आतपके बाद अिन बूंदोंका प्रबल आघात सहन करता है।

बूंद अघात सहहिं गिरि कैसे
खलके बचन संत सह जैसे।

अिस पर्वतराजके चरणोंमें प्रणामकर घरका रास्ता लिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक भारतीय साहित्य विचारधारा

: श्री लक्ष्मीशंकर व्यास, अेम. अे (ऑनर्स) :

[संस्कृत, हिन्दी, असमिया, गुजराती, मराठी, तमिळ, तेलुगु, अुड़िया, पंजाबी और कश्मीरी भाषाओंकी गतिविधि]

साहित्य, कला और संस्कृतिका जन्म-स्थल भारत चिरकालसे चिरनूतन भावों, विचारों अेवं अभिव्यंजनाओं-का संगमस्थल रहा है। आदिकालसे यहाँ पुण्यपावन अेवं मंगलमय विचारोंकी सृष्टि होती रही है, जिससे विश्वकी पीड़ित मानवताको शान्ति, साहस अेवं स्फूर्ति प्राप्त होती रही है। भारतीय साहित्यकी यह गौरव परम्परा आज भी अक्षुण्ण है और देशकाल तथा दूरीके तत्वोंमें अेकता स्थापित करनेका मुख्य आधार है। संस्कृत साहित्यने विश्व-साहित्यको अपनी अमर देन प्रदान की है और भारतीय साहित्यका तो वह मूलाधार तथा शक्ति-स्रोत ही है। अेक समय था जब संस्कृत भाषा, काव्यभाषा मात्र न थी अपितु देशके सभी शिक्षित अेवं सुसंस्कृत जनोंकी भाषा थी। संस्कृतके पश्चात् प्राकृत तथा अन्य प्रान्तीय भाषाओंके विकासका क्रम आता है। और अुनकी अपनी लम्बी कहानी है। जो भी हो, सभीपर संस्कृत भाषा और साहित्यका जितना प्रभाव आज भी दृष्टिगत होता है, अुतना अन्य किसी भाषा अथवा साहित्यका नहीं। संस्कृत और राष्ट्रभाषा हिन्दीको छोड़कर अिस विशाल देशमें प्रभूत प्रान्तीय साहित्यका निर्माण और विकास हो रहा है। प्रस्तुत निबन्धमें संस्कृत, हिन्दीके अतिरिक्त विभिन्न प्रान्तीय साहित्योंकी गतिविधिपर विचार किया जाअेगा।

संस्कृत भाषा और साहित्य

संस्कृत भाषा और साहित्यके विकासके विचारसे अिधर कुछ संगठित अुद्योग बनारसमें द्वितीय विश्व-संस्कृत सम्मेलनमें हुआ। अिस सम्मेलनकी अध्यक्षता राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्रप्रसादजीने की और अपने भाषणमें अिस अमर भाषाके अध्ययन, मनन तथा प्रचारपर जोर दिया। हिन्दीकी अुन्नतिके लिअे भी संस्कृतका ज्ञान आवश्यक है, यह बताते हुअे आपने कहा कि अिसके बिना हम अपने धर्म, संस्कृति और सभ्यताको नहीं समझ सकते। अिस सम्मेलनकी समस्त कार्रवाअी संस्कृतमें हुअी। अिसमें देशके लगभग ३०० प्रतिनिधि आये थे। अिन्होंने अपने-अपने प्रदेशमें संस्कृत-की गतिविधिका लेखा प्रस्तुत किया। संस्कृत भाषा और साहित्यकी कितनी अुपेक्षा हो रही तथा अिसके साधक कितने कष्टमें हैं, यह भी स्पष्ट किया गया। सम्मेलनके महत्त्वपूर्ण प्रस्तावोंमें निश्चिय किया गया कि (१) अेक संस्कृत विश्वविद्यालय स्थापित किया जाय, (२) संस्कृतका अध्ययन स्कूलों तथा कालेजोंमें अनिवार्य हो, (३) सभी प्रान्तीय भाषाअें देवनागरी लिपिका व्यवहार करें, (४) देशमें संस्कृत अध्ययनको प्रोत्साहन देनेके निमित्त विद्वान भेजे जाअें। अिस सम्मे-लनमें भाग लेनेके लिअे अुत्तरप्रदेशके राज्यपाल श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी तथा माननीय मन्त्री श्री सम्पूर्णानन्दजी भी आये थे। सम्मेलनकी सफलताका अधिकांश श्रेय आपको ही है। कहना न होगा देववाणी संस्कृतके अधिकाधिक प्रचार-प्रसारमें अिस सम्मेलनके निश्चयोंका अनुकूल प्रभाव पड़ेगा। संस्कृत भाषा और साहित्यमें नवीन अनुसंधानकी भी व्यवस्था विचाराधीन है। प्रमुख रूपसे यह निश्चित किया गया कि संस्कृत अध्यापकोंकी आर्थिक स्थितिमें सुधार किया जाय।

काशीके कुछ संस्कृत विद्वानोंने अैसी पाठशाला खोली है, जिसमें छः मास अध्ययन करनेसे संस्कृतका भली प्रकार ज्ञान हो जाता है। श्री ब्रह्मदत्त जिज्ञासु अिस पाठशालाके आचार्य हैं। श्री गोपालशास्त्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दशनकेसरीका भी अुन्हें पूर्ण सहयोग प्राप्त है। संस्कृत ज्ञान, अल्पसे अल्प कालमें करानेमें पाणिनी विद्यालय अभिनव और अभिनन्दनीय प्रयोग कर रहा है, अिसमें सन्देह नहीं।

संस्कृत साहित्यमें विज्ञान शास्त्रपर पिछले महीनोंमें कअी विद्वानोंने लेखमालाअें लिखीं; अिनमें महामहोपाध्याय श्री नारायण शास्त्री खिस्तेके लेख विशेष अुल्लेख्य हैं। आपने यन्त्र-निर्माण सम्बन्धी लेख-माला भी प्रस्तुत की है, जो शीघ्र प्रकाशित होगी। अिधर 'पंचतन्त्र' के कअी सुन्दर संस्करण प्रकाशित हुअे। अिसमें डाक्टर मोतीचन्दके 'पंचतन्त्र' की अपनी विशेषताअें हैं। श्री गुरुप्रसाद शास्त्री द्वारा सम्पादित 'पंचतन्त्र' भी विभिन्न टीकाओंसे युक्त निकला है। यह ग्रन्थ विश्व-साहित्यकी अमर कृतियोंमें अेक माना जाता है। अिसके सम्पादन तथा अर्थ स्थिर करनेमें अनेक भ्रमपूर्ण धार-णाअें काम करती रही हैं। अिस संस्करणमें अुन त्रुटियोंको दूर करनेका प्रयत्न किया है। 'पंचतन्त्र' के अिस संस्करणके सम्बन्धमें अेक प्रसिद्ध विद्वानका कथन है कि यदि हार्वर्ड विश्व विद्यालय द्वारा प्रकाशित पंच-तंत्रके पाठान्तर अेवं अधिक कथाओंका संग्रह भी परि-शिष्ट रूपमें अिसमें जोड़ दिया जाअे तो आजतक भारतमें मद्रित 'पंचतंत्र' के सभी संस्करणोंमें यह अेक ही गिना जाअेगा।

अिधर हालमें गौड़ीय महाकवि श्री चन्द्रशेखरके अेक अप्राप्य महाकाव्यका प्रकाशन हुआ है। अिस संस्कृत महाकाव्यका नाम है "सुर्जन चरित" महाकाव्य और अिसके सम्पादक हैं काशी विश्वविद्यालयके डाक्टर चन्द्रधर शर्मा। यह महाकाव्य, महाकवि कालिदासके रघुवंशको आदर्श मानकर लिखा गया था और अुसकी स्पष्ट छाप अिसपर अंकित है।

हिन्दी साहित्य

राष्ट्रभाषा हिन्दीके अधिकाधिक प्रचार तथा अध्ययनके लिअे अिस वर्ष अनेक सम्मेलन हुअे। अिसी अुद्देश्यको लेकेर हिन्दी-विद्वानोंका अेक सम्मेलन प्रयागमें हुआ। अिसमें विभिन्न विश्वविद्यालयोंके प्राध्यापक प्रतिनिधि रूपमें आये। भाषाकी अेकरूपता, ग्रन्थनिर्माण तथा लोकसाहित्यके विभिन्न पक्षोंपर अिसमें विचार-विमर्श हुआ। आचार्य नरेन्द्रदेवने भी अिस सम्मेलनमें भाग लिया। मअी मासके अन्तिम सप्ताहमें भी अेक अैसा ही सम्मेलन पूनामें आयोजित किया गया था। अेकाध सम्मेलन और भी हुअे जिनमें दक्षिणके हिन्दी विरोधकी समस्यापर विचार हुआ और अुसके निराकरणके अुपाय प्रस्तुत किये गये। अिस दिशामें राजधानी दिल्लीमें महत्त्वपूर्ण कदम अुठाया गया। संसदके अहिन्दी भाषी सदस्योंके लिअे हिन्दीकी कक्षाअें खोली गयीं तथा हिन्दीभाषी सदस्योंके लिअे तमिलकी कक्षाअें।

अिन सम्मेलनों और गोष्ठियोंके अतिरिक्त हिन्दी-का साहित्य, प्रतिमास प्रकाशित होनेवाली मासिक पत्रिकाओंमें अपने नये रूपमें हमारे सम्मुख आ रहा है। 'नया समाज' में गम्भीर राजनीतिक प्रश्नों और साहित्यिक समस्याओंपर लेख रहते हैं। कथा साहित्य और चुनी हुअी कविताअें भी अिसके प्रत्येक अंकमें रहती हैं। गत अप्रैलके अंकमें सर्वश्री चन्द्रबली पाण्डेय, जगदीशचन्द्र जैन, जैनेन्द्रकुमार तथा मोहनसिंह सेंगरके लेख नये अध्ययनकी सामग्री प्रस्तुत करते हैं। मअीके नया-समाजमें सर्वश्री दिनकर, राहुल सांकृत्या-यन, अम्बिकाप्रसाद बाजपेयी, वासुदेवशरण अग्रवाल तथा चन्द्रगुप्त विद्यालंकारने मननीय-पठनीय सामग्री प्रस्तुत की है। डाक्टर अग्रवालके 'सार्थवाह' में प्राचीन भारतीय व्यवसायका प्रामाणिक विवरण अुपस्थित किया गया है। श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकारने लाला चिरंजीवलालका अैसा सजीव संस्मरण प्रस्तुत किया है जो हृदयपर अपनी छाप छोड़ जाता है। नया-समाजके प्रत्येक अंकमें हमारे साहित्यकार स्तम्भके अन्तर्गत साहित्य साधकोंका परिचय भी अभिनन्दनीय है।

हिन्दीकी प्राचीन और प्रसिद्ध मासिक पत्रिका 'सरस्वती' का कलेवर अब नया हो गया है, सामग्री-के विचारसे भी और सफाअी-छपाअीकी भी दृष्टिसे। जनवरीके अंकमें सर्वश्री सन्तराम, सोहनलाल द्विवेदी, सुशीलकुमार दिवाकर, कलाकुमारकी रचनाअें ध्यान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देने योग्य हैं। सन् '५२ के हिन्दी साहित्यका सिंहावलोकन तथा साहित्यके दस वर्षके अतिरिक्त स्थायी स्तम्भ मणिमालामें चार्ल्स डिकिन्सकी रचना अुल्लेख्य है। अिसी प्रकार फरवरीके अंकमें स्वतन्त्रतापर मिलके विचार, शाके पत्रोंका विश्लेषण, तरुणोंका त्योहार, बसन्त तथा रामदहिन और रूप नारायण पाण्डेय विषयक लेख अध्ययनकी सामग्री अुपस्थित करते हैं।

'आजकल' और 'विश्वदर्शन' भी प्रतिमास चुनी हुअी श्रेष्ठ पाठ्यसामग्री अुपस्थित करते हैं। विभिन्न विषयोंका आग्रह निर्वाह करते हुअे भी अिस पत्रिकामें साहित्य और अुसकी नवीनतम प्रवृत्तियोंका परिचय कराया जाता है। साहित्यके साथ-साथ संस्कृति और कलाका दिग्दर्शन भी अिस पत्रका मुख्य अुद्देश्य है। 'विश्वदर्शन' में विदेशी और अन्तरराष्ट्रीय राजनीतिपर अधिकारी विद्वानोंके लेख प्रकाशित होते रहते हैं। पर यह कोरा राजनीतिक ही नहीं, देश-विदेशकी सांस्कृतिक अेवं साहित्यिक झांकी भी अुपस्थित करता है। मार्चके अंकमें जैनेन्द्रकुमारपर महावीर अधिकारीका मूल्यांकन, हिन्दी आलोचनाकी नयी प्रवृत्तियाँ, कर्मयोगी ठक्करबापा, कथाकार प्रेमचन्द, आधुनिक राजस्थानी कविता व नीमाड़ी लोकगीत अुल्लेखनीय रचनाअें हैं। विश्वदर्शनमें नये चीनकी औद्योगिक स्थिति, मिश्रमें कृषिकरण तथा जापानके कुटीर अुद्योगपर मननीय लेख हैं। अिसी अंकमें 'रूसकी आधुनिक कला' शीर्षक लेखपर भी पाठकका सहज ही ध्यान आकृष्ट हो जाता है।

हिन्दी मासिक-पत्रोंमें 'नया जीवन' स्फूर्तिमय और चरित्र निर्माण करनेवाला साहित्य देता है। अिसके फरवरी–मार्चके अंक सामने हैं। कहानी, स्केच और संस्मरणके अतिरिक्त जीवन निर्माण सम्बन्धी सामग्री भी अिसमें रहती है। सर्वश्री 'प्रभाकरजी', जहूरबख्श, अवनीन्द्र, रामचरण महेन्द्रकी रचनाअें अुल्लेख्य हैं। मार्चके अंकमें 'जब मेहमान आये, यह किसका सिनेमा है, मोहनसिंह सेंगर-अेक भेंट' शीर्षक रचनाओंमें विचारोत्तेजक सामग्री प्रस्तुत की गयी है। 'क्या आपको खर्च करना आता है' निबन्ध अपने ढंगका विशेष भावपूर्ण, तर्कपूर्ण और मार्मिक निबन्ध है जिससे जीवन-निर्माणमें सहायता मिल सकती है। अिस पत्रकी अेक और विशेषता है। वह यह कि अिसमें प्रति मास हिन्दीके साधकों और कलाकारोंका सचित्र परिचय प्रकाशित होता है। चित्र तो रहते ही हैं, जो शब्द-चित्र प्रस्तुत किया जाता है वह भी अनूठा और अनोखा होता है।

'राष्ट्रभारती' में समग्र भारतीय साहित्यका संगम देखनेको मिलता है। अिसमें भारतीय ही नहीं विदेशी साहित्य और संस्कृतिका परिचय भी होता है। प्रत्येक अंकमें विभिन्न भारतीय साहित्यकी चुनी हुअी रचनाअें प्रकाशित होती हैं। तमिल, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम साहित्यकी चुनी हुअी सामग्रीका हिन्दी रूपान्तर प्रस्तुत करती है राष्ट्रभारती। अप्रैलके अंकमें महाभारत (मैथिली), आधुनिक पन्जाबी साहित्य, तमिल साहित्यमें अुपन्यासका विकास, ब्रिटेनकी सांस्कृतिक विरासत आदि लेख भारतीय लोक-साहित्यका विधिवत परिचय कराते हैं। कन्नड़, तमिल और गुजराती भाषासे अनूदित अनेक रचनाअें भी अिस अंककी शोभा बढ़ाती हैं। मअीके अंकमें आचार्य क्षितिमोहन सेनकी कविता प्रकाशित की गयी है। देवनागरी लिपिमें मूल बंगला देकर अुसके नीचे हिन्दी आशय अेवं अर्थ दिया गया है। यही पद्धति अिस पत्रिकामें अन्य प्रान्तीय भाषाओंकी रचनाओंके प्रस्तुत करनेमें भी अपनायी जाती है। अिसका महत्त्व विशिष्ट है और अिससे संपूर्ण भारतीय साहित्यको देवनागरी लिपिमें प्रस्तुत करनेकी प्रेरणा मिलना स्वाभाविक है। मअीके अंकमें श्री राममूर्ति रेणुकी 'तेलगू साहित्यमें हास्य', डाक्टर अल्तेकरकी 'भारतीय संस्कृतिमें द्रविड़ जातियोंका योग' विशिष्ट महत्वकी अध्ययन योग्य रचनाअें हैं। अिसी प्रकार श्री मर्ढेकरकी मराठी कविता तथा तमिल नाटकोंके सूत्रधार आदि भी अिस अंककी पठनीय रचनाअें हैं। राष्ट्रभाषा हिन्दीके प्रचार-प्रसारको मुख्य ध्येय बनाकर चलनेवाली अिस पत्रिकाका योगदान अैतिहासिक महत्वका प्रमाणित होगा, अिसमें सन्देह नहीं।

'नअी धारा' भी साहित्य प्रधान मासिक पत्रिका है। अिसके विभिन्न स्तम्भ साहित्यके विविध स्वरूपोंपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाश डालनेवाले होते हैं। देशी-विदेशी साहित्यके अतिरिक्त अिसमें लोक-साहित्यको भी प्रधानता दी जाती है। संस्मरण और स्केच अिसकी अपनी विशेषता है। साहित्यिकोंके पत्र भी अिस पत्रिकामें छपते हैं। मार्चके अंकमें विष्णु प्रभाकर, भगवतशरण अुपाध्याय और अप्रैलमें आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, राजाराधिकारमणप्रसाद, बेनीपुरीजीकी रचनाअें पठनीय हैं। राधाकृष्णकी कहानी और डाक्टर रामकुमार वर्माकी कविता अपना अलग ही आकर्षण रखती है।

असमिया साहित्य

असमिया भाषामें सन् १९०९ से 'बट्रि' के माध्यमसे जो साहित्यिक जागृति लक्ष्मीनाथ बेजबरूआने की, वह अुनके जीवन पर्यन्त १९३८ तक अबाध गतिसे चलती रही। अिसके बाद अिसमें व्यवधान आ गया। विगत पाँच वर्षोंसे असमिया साहित्यमें अुच्चस्तरकी सामग्री प्रस्तुत करनेवाली पत्रिका 'रामधेनु' है। श्री वीरेन्द्रकुमार भट्टाचार्य अिसके सम्पादक हैं। अिस पत्रिकाको सुप्रसिद्ध असमिया साहित्य साधकोंका सहयोग प्राप्त है जिनमें हेमबरुआ, वेणुधर शर्मा, अम्बिका गिरिराज, प्रफुल्लदत्त गोस्वामी अुल्लेख्य हैं। अिस पत्रिकाका पिछला विशेषांक 'शारदीय अंक' के रूपमें निकला है, जिसमें विशिष्ट रचनाअें हैं। अिसमें 'ब्रह्मपुत्र' पर प्रकाशित कविताकी काफी चर्चा हुअी है। असमिया साहित्यकार श्री ज्योतिन दुयाराके गीतोंके पुनर्मुद्रणका भी विशेष महत्त्व है। अिनके गीतोंमें और शैलीकी कविताओंमें बहुत साम्य है। गतवर्ष जो असमिया सांस्कृतिक सम्मेलन हुआ अुसमें सांस्कृतिक विचारोंके आदान-प्रदानके साथ प्रदर्शन भी हुअे। अिस सम्मेलनमें जो अेक विशेष सफलता मिली वह यह है कि शताब्दियोंसे चले आते दामोदरिया और महापुरुषियाके मतभेद समाप्त हो गये।

बंगला साहित्य

बंगला भाषामें अुच्चकोटिकी सामग्री प्रस्तुत करनेवाली पत्र-पत्रिकाअें हैं। सम्प्रति हम अुनमेंसे कुछका अुल्लेख करेंगे। विश्व-भारतीमें विभिन्न रुचिकी सामग्री यथा कला-संस्कृति आदि प्रकाशित होती है। विशेष मार्च-मअीके अंकमें रवीन्द्रके ज्येष्ठ भ्राताके पत्र तथा कवि गोविन्दचन्द्रदासके जीवन-चरित्र पठनीय हैं। अिसी अंकमें श्री योगेशचन्द्र बघलका वह लेख भी छपा है जिसमें अुन्होंने राजनीतिक नवचेतनाके प्रसारक देशभक्तोंके योगदानकी चर्चा की है। बंगभाषाकी पत्रिकाओंमें पाश्चात्य साहित्यके श्रेष्ठ कविताओंके अनुवाद बराबर प्रकाशित होते रहते हैं। अिन्हींके आधारपर शान्तिनिकेतनमें अेक दिन कविगोष्ठी हुअी। अिसमें 'कविता', 'कवितापत्र' तथा 'साहित्यपत्र' के आधारपर जर्मन, फ्रेंच, स्पेनिश, अंग्रेजी तथा चीनी कवियोंकी रचनाअें प्रस्तुत की गयीं। जर्मन कवियोंमें रिल्के, गेटे और हेनी; फ्रेंचमें रेवां, अेपोलिनी, अेलाल्ड; स्पेनिशमें लाटका और नेरूठाकी; अंग्रेजीमें ब्लेक, अिलियट, यीट्स, स्पेण्डर और सैसूत्रकी; तथा चीनी कवियोंमें वांगवी, अमि-चू तथा फेंगलीकी कृतियां सुनायी गयीं। अिसमें सन्देह नहीं कि बंगाली भाषाकी यह स्थिति अुनके अुन्नत अेवं विकसित दृष्टिकोणकी परिचायिका है।

गुजराती साहित्य

नवसारीमें गुजराती साहित्य सम्मेलनके १८ वें अधिवेशनमें महत्वके निर्णय हुअे। अिसकी प्रमुख विशेषता यह रही कि वर्षोंसे चले आते हिन्दू और पारसी लेखकोंका मतभेद दूर हो गया। अध्यक्षीय भाषण भी अत्यन्त सारगर्भ और महत्वपूर्ण रहा। अिसमें प्राचीन-अर्वाचीन गुजराती साहित्यके विभिन्न अंगोंपर प्रकाश डाला गया। विभिन्न परिषदोंके अध्यक्षीय भाषणोंमें गुजरातके साहित्य और अुसकी सर्वतोमुखी प्रवृत्तिका परिचय प्रस्तुत किया गया। सभी विचार मंथनोंमें अेक ध्वनि स्पष्ट थी। 'वर्तमान भौतिकतासे असन्तोष और आर्थिक अेवं आध्यात्मिक प्रगतिके निमित्त संघर्षपर सभीमें जोर दिया गया। अिस सम्मेलनमें निश्चय किया गया कि (१) मूल गुजराती शब्दावली, (२) प्रामाणिक गुजराती व्याकरण तथा (३) अेक वैज्ञानिक कोश तैयार किये जाअें। गुजरातके सांस्कृतिक कार्यकर्ता भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिन्दुलाल और सुप्रसिद्ध पत्र 'नवचेतन' के सम्पादक श्री चम्पशी भाअी अुदेशीकी हीरक जयन्तीने भी अेक साहित्यिक अेवं सांस्कृतिक समारोहका रूप ले लिया। गुजराती भाषा तथा साहित्यके प्रख्यात निर्माता श्री के. अेम. झवेरीके सभापतित्वमें जो समारोह हुआ, अुसमें 'नवचेतन'को गुजराती साहित्यकी विशिष्ट देनपर प्रकाश डाला गया। प्रसिद्ध गुजराती साहित्यकार रविशंकर रावल, चुन्नीलाल शाह, धूमकेतू आदिने अिस अवसरपर 'नवचेतन' और चम्पशी भाअीकी सेवाओंपर प्रकाश डालते हुअे साहित्यिक भाषण प्रस्तुत किये।

मराठी साहित्य

मराठी 'केसरी' की परम्परा विशेषताओं और विशिष्ठताओंसे युक्त रही है। अिस पत्रमें पिछले दिनों विभिन्न भारतीय भाषाओंपर अेक लेखमाला प्रकाशित की गयी। अिसमें हिन्दी साहित्यके अतिरिक्त कन्नड़, गुजराती और बंगला साहित्यपर अधिकारी लेख निकले। कन्नड़ साहित्यपर श्री डी. आर. बेन्द्रेने, गुजरातीपर श्री दाण्डेकरने और बंगाली साहित्यपर श्री नन्द-गोपाल सेनगुप्तने लेख लिखे। पूनासे प्रकाशित होनेवाली मराठी पत्रिका 'नवभारत' में "गीता : तिलक और गान्धी" पर अेक विचारगोष्ठी हुअी जिसमें गान्धीजीके शान्तिवादी ढंगको श्रेष्ठ बताया गया। तिलक युद्धके पक्षमें थे किन्तु गान्धीजीने युद्धके सम्पूर्ण बहिष्कारका मत प्रचारित किया। यह व्याख्यानमाला पुस्तकाकार भी प्रकाशित हो गयी है। अुपन्यासकार, कथा-लेखक अेवं समालोचक प्रोफेसर ना. सी. फडकेने अेक व्याख्यान-मालामें महाराष्ट्रके पाँच प्रमुख नाटककारों किर्लोस्कर, देवल, खाडिलकर, गडकरी और अत्रेपर प्रकाश डाला, जो अत्यन्त लोकप्रिय रहा। पूनाकी महाराष्ट्र साहित्य-परिषद अब पुनः जाग्रत होकर साहित्य चेतनाके प्रसार कार्यमें लग गयी है। सन् १९४६ में अिस संस्था द्वारा आयोजित वार्षिक व्याख्यानमाला स्थगित कर दी गयी थी, अब पुनः प्रारम्भ की गयी है। अिस संस्थाका अुद्देश्य साहित्य-प्रेमियों और सर्वसाधारणको मराठी साहित्यकी गतिविधिसे परिचित कराना है।

तमिल साहित्य

तमिल साहित्यकारोंकी जागृति और सक्रियता आदर्श अेवं अनुकरणीय है। लेखकों और साहित्य साधकोंकी सहायताका अुन्हें बड़ा ध्यान है। मद्रासका 'तमिल लेखक संघ' अिस बातके लिअे सचेष्ट रहता है कि अुसके साहित्यकार अभावसे पीड़ित न हों। अिस वर्षके प्रारम्भमें संघकी वार्षिक बैठकमें परस्पर सहयोग और आर्थिक सहायताकी योजना प्रस्तुत की गयी। तमिल साहित्यमें देशभक्तिकी भावनासे युक्त साहित्यका सर्जन करनेके लिअे भारतीको श्रद्धांजलि अर्पित की गयी। प्रसिद्ध लघुकथा लेखक पदुमअी पिथनके परिवारकी सहायताके लिअे आठ हजार रुपयोंकी राशि अेकत्र की गयी है। तमिल पत्रोंमें कहानी लिखनेवाले स्वर्गीय वसन्तन्के परिवारके लिअे भी कोष अेकत्र किया गया है। वार्षिक अधिवेशनमें तमिल साहित्य-साधकोंका ध्यान अिस बातकी ओर आकृष्ट किया गया कि वे शान्ति स्थापनामें योगदान तथा प्रेरणा देनेवाले साहित्यका निर्माण करें। अिस अवसरपर रंगमंच, लोक-साहित्य, आधुनिक शैली आदिपर भी साहित्यकारोंमें महत्त्वपूर्ण विचार-विमर्श हुआ।

तेलुगु साहित्य

तेलुगु लोकभाषामें 'महाभारत' की रचना साहित्यके अितिहासमें विशेष अुल्लेख योग्य है। अिस वर्षके प्रारम्भमें बोलचालकी तेलुगु भाषाके गद्यमें 'महाभारत' को प्रस्तुत करनेवाले प्रसिद्ध साहित्यकार श्री पुरिपन्द अप्पलस्वामी हैं। अिस महान कार्यके लिअे आपका सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया। अिस अवसरपर हुअे साहित्यिक समारोहमें अनुवाद और अनुवादककी विशेषताओंपर प्रकाश डाला गया। श्री अप्पलस्वामी आन्ध्रके प्रख्यात कवि अेवं साहित्यकार हैं। आपने ही सर्वप्रथम तेलुगु भाषा भाषियोंके लिअे लोकभाषामें 'महाभारत' का अनुवाद प्रस्तुत किया। यह साधारण जनताकी भाषामें लिखी गयी है; यह अिसकी विशेषता है। तेलुगु भी दो प्रकारकी है। अेक तो वह जो साहित्यमें प्रयुक्त की जाती है और जिसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्वान अेवं विदग्ध जन ही समझ पाते हैं और दूसरी वह जिसे सर्वसाधारण जनता समझ सकती है। 'महाभारत' पंचम वेद माना जाता है। अिस महाकाव्यको सर्वसाधारणके लिअे सुलभ बनाकर अेक महान अुपयोगी कार्य किया गया है। अिसके लिअे आन्ध्रकी जनता ही नहीं, सभी साहित्य प्रेमियोंकी ओरसे अिस प्रसिद्ध कविको हार्दिक बधाअी है।

अुड़िया-साहित्य

अुड़िया कथा साहित्यके जनक 'व्यास कवि' फकीर मोहनका स्थान साहित्यके अितिहासमें विशिष्ट है। अेक शताब्दी पूर्व कथा साहित्यके अिस अमर निर्माताने अेक नयी रूह फूंकी। अिनकी कहानियों और अुपन्यासोंमें कल्पनालोकके नहीं; अपितु वास्तविक जगतके चरित्रोंके चित्रण हैं। वस्तुतः अिन्होंने अपने चिरस्मरणीय साहित्यमें 'सत्यं-शिवं-सुन्दरम्' की अभिव्यंजना की है। देशकी अनेक साहित्यिक संस्थाओंमें अिस वर्ष आपकी ११० वीं जयन्तीका समारोह मनाया गया। अिस अवसरपर आपके कृतित्वको स्मरण कर अुससे प्रेरणा लेनेका प्रयत्न किया गया। 'व्यास कवि' के जन्मस्थान कालसोरमें भी यह अुत्सव मनाया गया। कला और संस्कृतिके केन्द्र शान्तिनिकेतनमें यह अुत्सव विशिष्ट ढंगसे मनाया गया। व्यास कवि फकीर मोहनकी रचनाअें अिस अवसरपर पढ़कर सुनायी गयीं। व्यास कविके गद्य-पद्य तथा आत्मकथाके अंश सुनाये गये और अुनके हिन्दी, बंगला और अंग्रेजी रूपान्तर भी प्रस्तुत किये गये। यथार्थमें व्यासकवि फकीर मोहन अपने युगके महान साहित्यकार हो गये हैं जिनकी छाप आज भी भारतीय वाङ्मयपर विद्यमान है। अुनकी कहानियों और अुपन्यासोंमें जनसाधारणके चित्रण प्रचुर मात्रामें मिलते हैं और अुनसे विदित होता है कि 'वर्तमान प्रगतिशीलता' के कितने पूर्व अुन्हें समाजके अुपेक्षितों और पीड़ितोंका ध्यान था। व्यासकविने अपने साहित्यमें जिस भाषाका प्रयोग किया है, वह जनसाधारण द्वारा बोली जानेवाली भाषा है। आपकी सरस, सरल और बोधगम्य लेखन शैली अुसमें और चार चांद लगा देती है। आपकी आत्मकथामें युग और युग-जीवनकी कलात्मक झांकी मिलती है। अुड़िया कहानी, अुपन्यास तथा साहित्यके विभिन्न अंगोंके निर्माता अिस अमर साहित्यकारकी तुलना रूसी साहित्यकार निकोलाअी गोगलसे की जाती है।

पंजाबी साहित्य

पंचनदका देश सौन्दर्य और सुषमाकी जीवन-स्थली रहा है, जहाँ प्रकृति और धरतीमाताने अपने वैभवको बिखेर दिया है। पंजाबी भाषामें जहाँ 'शब्द' के रूपमें आध्यात्मिक भावोंके परिदर्शन होते हैं, वहीं करुणा, श्रृंगार, प्रेम, मृत्यु तथा अमर जीवन भी कविताके विषय रहे हैं। आधुनिक पंजाबी साहित्यके क्षेत्रमें भाअी वीरसिंहजीका नाम सर्वप्रथम आता है। पहले अिनकी वृत्ति काव्य-मुखी थी, बादमें सिख संस्कृति और अितिहासकी ओर भी ये प्रवृत्त हुअे। फिर भी अिनका कवि प्रधान है। भाअीवीरसिंहजीने युगधर्म को पहचानकर नये वातावरण और नयी आवश्यकताके अनुरूप देवनागरी लिपिमें भी साहित्य साधना प्रारम्भ की है। आपके अिस प्रशंसनीय प्रयत्नका स्वागत हुआ है और काशी नागरी प्रचारिणी सभाने आपको अिस निमित्त पुरस्कृत भी किया है। पंजाबी साहित्यका सर्जन देवनागरी लिपिमें अन्य रूपमें भी हो रहा है। होशियारपुरसे प्रकाशित होनेवाली पत्रिका 'विश्व ज्योति' में स्वर्गीय 'दिलशाद' की पंजाबी रामायणका हिन्दी रूपान्तर प्रस्तुत किया जा रहा है। साथही पाद-टिप्पणीमें कठिन हिन्दी पंजाबी शब्दोंकी सूची अेवं अर्थ भी दिये गये हैं। आधुनिक पंजाबी साहित्यमें प्रोफेसर मोहनसिंह, कर्तारसिंह दुग्गल, श्रीमती अमृता प्रीतम, गुरूमुखसिंह मुसाफिर, प्रीतमसिंह सफीर, देवेन्द्र सत्यार्थी, बाबा बलवन्त आदिके नाम अुल्लेख्य हैं। आधुनिक पंजाबी साहित्यके अिन साधकोंने पूर्वसे चली आती साहित्य धारामें नवजीवनका संचार किया है। भाषा जन साधारण और बोलचालकी व्यवहृत हुअी है और अभिव्यक्ति अेवं व्यंजनामें व्यंग अेवं वक्रता आयी है। कवि परम्पराके अनुसार सौन्दर्य वर्णनके स्थानपर नयी कवितामें वास्तविकताको महत्त्व दिया गया है। अमृता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रीतमाके गीतोंका अधिकाधिक प्रचार हो रहा है। अिसका कारण है कि यह प्रतिभाशालिनी कवियित्री समाजके दीन-हीन, तिरस्कृत-अुपेक्षितोंके कष्टोंका चित्रण अपनी कवितामें कर अुनके अुद्धार और विकासका हृदयमें स्पन्दन कराती है। श्री देवेन्द्र सत्यार्थीजीने व्यापक साहित्यिक भ्रमण कर पंजाबी लोक-गीतोंका अद्भुत संग्रह किया है, जिसमें धरती और धरतीके लालोंके भावोंका मार्मिक चित्रण है।

कश्मीरी साहित्य

आधुनिक कश्मीर साहित्यको कवि मजहूरने जन्म दिया, यदि यह कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी। कवि मजहूरने जहाँ 'मृत्युलोकमें स्वर्ग' कश्मीरके प्राकृतिक विराट सौन्दर्य वैभवका स्वरूप कवितामें अंकित किया है तो किसानोंके पौरुष अेवं किसान कन्याके रूपका भी चित्रांकन किया है। मजहूरके बाद 'आजाद', 'आरिफ', 'रोशन' और 'नादिम' ने कश्मीर राष्ट्रीय आन्दोलनोंके चित्र अपनी कवितामें खींचे हैं। साम्प्रदायिक संकीर्णताका अिनमें सर्वत्र तिरस्कार किया गया है। अिन नयी धाराके कवियोंने देशभक्ति, सामाजिक अेवं आर्थिक साम्यका नारा बुलन्द किया है, शताब्दियोंसे शोषित-पीड़ित मानवको नयी संज्ञा, नवीन चेतना और नव स्फुरण प्रदान करनेके लिअे 'आजाद' ने काव्य रचना की। अेक स्थानपर वह कहता है—"तू भयसे दलदलमें धँस गया है, बरसाती कीड़ोंकी तरह लेटा पड़ा है, अुठ, रे शाहमार, बल खाता हुआ निकल मेरे देश भाअी ! अुठ जाग जरा।" 'आरिफ' ने "कश्मीर छोड़ो" आन्दोलनकी प्रतिध्वनि कवितामें अंकित की और तत्कालीन राजनीतिक अुथल-पुथलका सजीव चित्र खींचा। जनताके त्याग, बलिदान और राजसत्ताके दमनकी कहानी अिसमें लिखी है। सामन्तवादी व्यवस्थासे त्रस्त होकर समाजवादी भावधाराकी ओर प्रकृतिका चित्रण कश्मीरी कवि मास्टर जिन्दा कौलने किया है। १९४७ के बाद कश्मीरके अितिहासका अेक नवीन अध्याय प्रारम्भ होता है और अिससे भला साहित्य कैसे अछूता रह सकता था। अिसी लिअे "नादिम" तथा अन्य कवियोंने क्रान्तिके गीत गाये। जन-जनमें नयी शक्ति और नयी भावनाओंका स्फुरण किया, निशातबागकी सौन्दर्य वर्षा, डल-झीलके स्वर्गीय सपने, कश्मीरी कविता और साहित्य धाराकी अभिव्यक्तिके मार्गमें अवरोधक नहीं बने; अपितु अुन्होंने देशमें नये जागरण तथा नयी चेतनाको बल देनेमें ही योगदान किया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तमिळ साहित्यमें वर्षा ऋतु

: श्री रा. वीलिनाथन् :

तमिळ साहित्यका अध्ययन करनेवाले अवश्य यह अनुभव करेंगे कि तमिळ साहित्यमें वर्णित विषयोंके अनुसार वही देश अधिक समृद्धिशाली माना जाता है, जिस देशमें महीनेमें तीन-तीन बार वर्षा हो। प्राचीन-कालके रंगमंचपर राजा और मन्त्री आकर खड़े होते थे, तब राजाका पहला सवाल यही होता था, "क्यों मन्त्रीजी ! हमारे राज्यमें नियमित रूपसे महीनेमें तीन बार पानी बरसता है या नहीं ?"

मन्त्रीका यह जवाब होता था, "हाँ, महाराज ! श्रीमानके राज्यमें क्या पानीकी भी कोअी कमी हो सकती है ? हमारा राज्य धन-धान्यसे परिपूर्ण है। नियमित रूपसे हर महीने तीन बार पानी बरसा करता है !"

कहनेका तात्पर्य है कि पानीके बिना संसारके समस्त जीव सुख-समृद्धिसे नहीं रह सकते। पर अीश्वरीय कोप कहिये या प्रकृति माताका कोप; अिधर सालोंसे तमिल-नाडमें बादलोंने पानी बरसाना बंद कर दिया। वे बरसनेका नाम तक नहीं लेते। अतः, चारों तरफ 'त्राहि, त्राहि' की पुकार मची हुअी है। लोग अिस ढंगसे पानीकी बाट जोह रहे हैं कि चातक पक्षी तक मात खा जाअे। वरुण-भगवानकी पूजा अिस कदर हो रही है कि क्या कहा जाअे ! पर अुनके कानोंपर जूं तक नहीं रेंगती ! यह कहना अत्युक्ति नहीं माना जायगा कि आठ-दस सालका बच्चा आजकल यह भी नहीं जान पाता कि पानी कैसे बरसता है ? बादल कैसे आसमानपर छाते हैं ? बिजली कैसे कड़कती या चमकती है ? अध्यापक वर्षाका पाठ पढ़ाते हैं तो बालक विस्मय भरे नेत्रोंसे आसमानकी ओर देखने लग जाते हैं ! बालक ही क्यों, बड़े लोग भी यह नहीं समझ पाते या भूल-से गये हैं कि बादलका रंग कैसा होता है ?

पाठक पूछ सकते हैं कि अैसा भी कहीं हो सकता है ? मैं तो कहता हूं कि अैसा हुआ है। कहाँ हुआ है, मालूम है ? मेरी ही कल्पनामें ! सुनिअेगा ?—

अेक पति-पत्नी थे। अत्यन्त आनन्दमय दांपत्य-जीवन बिताते थे। अुन दोनोंमें अैसी अैक्य-भावना थी कि पत्नी बाजारसे तिल ले आनेको कहती, तो पति महाशय तेल ही ला देते। अेक दिन पत्नीके मनमें यह अिच्छा हुअी कि हम मेघवर्ण-साड़ी पहनें तो कैसा हो ? पति महाशय आफिससे आये तो पत्नीने अुनको गरम-गरम काफी पिलायी और अितनी आवभगत की, कि पति महाशय मुग्ध हो गये और पूछा क्या हम आज बाजारकी सैर कर आवें ? सोच रहा हूं, तुम्हारे लिअे अेक साड़ी भी खरीदूं।

पत्नीने सहर्ष अुत्तर दिया, "हाँ, हाँ ! आपने खूब याद दिलाया ! मेरी बहुत दिनोंसे यह अभिलाषा है कि अेक बादली रंगकी साड़ी खरीदें। आअिये, अभी बाजार हो आअें !"

पत्नीकी यह बात सुनना था कि पति महाशयका सिर चकरा गया। वे सिर पकड़कर बैठ गये ! पत्नीने पतिकी यह दशा देखकर अुदास स्वरमें पूछा, 'क्यों स्वामी ! आप मुझपर नाराज तो नहीं हो गये ?"

पति महाशयने बात काटकर जवाब दिया, "नाराज होनेकी कौन-सी बात तुमने कह दी ? मैं तो अिस सोच-विचारमें पड़ गया हूं कि बादली रंग होता कैसा है ? क्या तुमको अिसका पता है ?"

पत्नीने केवल यह सुन रखा था कि बादली रंगकी भी साड़ियाँ आती हैं। पर अुसे भी विस्मृतिने दबा रखा था। अुसकी समझमें भी नहीं आया कि बादलका रंग कैसा होता है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काफी सोच-विचारके बाद पति-पत्नी दोनों अिस नतीजेपर पहुँचे कि बादलके रंगकी साड़ी खरीदना तब-तकके लिअे स्थगित कर दिया जाय जबतक बादल अुमड़-घुमड़ न आअें और अुनका रंग-रूप न देख लिया जाअे !

अिधर मेरी भी समझमें नहीं आया कि वर्षाके बारेमें क्या और कैसे लिखा जाअे । जब मेरा विस्मय जरा कम हुआ तो सोचा कि हो सकता है, तमिलनाडके बादल हिन्दी जो राष्ट्रभाषा बन रही है, सीखने अुत्तर भारत गये हों और वहीं जम गये हों या रम गये हों । महाकवि कालिदासने तो बादलोंको दूतका काम सौंपकर 'मेघदूत' नामक काव्य ही रच डाला था । पर यहाँसे तो बादल रूठकर ही चले गये । अुनको कैसे मनाया जाय और तमिल भूमिमें लाया जाअे ताकि तमिलनाड फिरसे हराभरा हो जाअे ।

आखिर बहुत सोच-विचारके बाद सुविज्ञ पाठकों-को ही रूठे बादलोंको मनानेके लिअे दूत बना रहा हूँ । बादलोंको पुरानी याद दिलानेके लिअे कुछ तमिल पद भी भावार्थ सहित दे रहा हूँ जिसमें रूठे बादलोंको मनानेमें पाठक-दूतोंको कुछ सहूलियत हो । क्या मैं आशा करूँ कि रूठे बादल तमिल भूमिमें वापस आकर पानीकी वर्षा करेंगे तथा देशको धन-धान्यसे समृद्ध करेंगे ?

* * *

वर्षाकी महिमा गाते हुअे प्राचीन तथा अर्वाचीन कवियोंने भी लिखा है । पाँचवें वेद तमिल तिरुक्कुरळके रचयिता तिरुवल्लुवर, रामायण-काव्यके सर्वश्रेष्ठ रचयिता कंबर, तमिलनाडकी मीरा आंडाल, शिलप्पधिकारम्के महान् रचयिता अिलंगो अडिगल और अर्वाचीन साहित्यके महान् कर्णधार राष्ट्रकवि स्व० सुब्रह्मण्य भारती आदि कितने ही तमिल साहित्यके महारथियोंने अच्छे-अच्छे सुन्दर पद लिखे हैं । अुनमेंसे कुछके नमूने नीचे भावार्थ सहित दिये जा रहे हैं ।

तमिल वेद 'तिरुक्कुरल' के रचयिता तिरुवल्लु-वरने 'अीशवन्दना'के बाद दूसरा स्थान 'वान्शिरय्यु' अर्थात् वर्षाकी महिमाको प्रदान किया है । वे पानीका महत्व यहाँ तक बढ़ा देते हैं कि बिना पानीके, अीश्वरकी पूजा नहीं होगी और कोअी अीश्वरको पूजनेवाला तक नहीं रहेगा । आअिये, अुन दसों कुरलोंका रसास्वादन करें, जिनमें अुन्होंने वर्षाकी महिमा गायी है :—

(१) वानिन्ड्रुलकम् वळंगि वरुदलार
तानमिऴद मेन्ड्रुगरर्पाट्टु ।

संसारके समस्त जीव पानीके आधारपर ही जीवित रहते हैं । पानी समस्त जीवराशिको जीवन देकर मृत्युसे बचाता है, अिसलिअे पानीको अमृत मानना चाहिये ।

संस्कृत भाषामें पानीका दूसरा नाम है, जीवन ! समस्त जीवोंको 'जीवन' देनेसे अुसका नाम जीवन पड़ा । तिरुवल्लुवर तो और अेक सीढ़ी अूपर चढ़कर कहते हैं कि आकाशसे अमृत-वर्षा करके गरमीसे जले-झुलसे हुअे मृतप्राय जीवोंको पानी अमरत्त्व प्रदान करता है । अिसलिअे पानीका अमृत नाम सार्थक ही है ।

(२) तुप्पार्कु त्तुप्पाय तुप्पाक्कि त्तुप्पार्कु
त्तुप्पाय तूड मळै ।

पानी अन्नका आहार करनेवालोंके लिअे अन्न ही पैदा नहीं कर देता, बल्कि स्वयं भी जीवोंका भोज्य पदार्थ बन जाता है ।

छांदोग्य अुपनिषद आदिमें बताया गया है कि जलका सूक्ष्म भाग प्राण बनता है तथा मध्यम भाग रक्तके रूपमें परिणित होता है । पानीसे औषधि और औषधिसे अन्न अुत्पन्न होता है । अुसका सूक्ष्म भाग मन होता है, मध्यम भाग मांस बनता है ।

अिससे विदित होता है कि पानीमें ही अमृतमय अन्नको अुपजानेकी शक्ति है, जिससे जीवराशि जीवित रहती है ।

(३) विण्णिन्ड्रु पोय्पिन विरिनीर वियनुलकत्
तुण्णिन्ड्रु अुड्रुम पशि ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समयपर मेघ जल बरसाना बन्द कर दें तो समुद्रसे घिरी हुओ अिस विशाल भूमिके समस्त जीव प्यासों मरने लगेंगे ।

यही कारण है न, कि लोग **'काले वर्षतु पर्जन्यः'** की प्रार्थना करते हैं ? आजकलके अकालका मूल कारण तो पानी न बरसना ही है ।

(४) अेरिनुऴाअ रुऴवर् पुयलेन्नुम्
वारि वळंकुन्ड्रिक्काल ।

बरसातका पानी न मिलनेपर कृषक लोग खेतोंपर हल कैसे चला सकते हैं ? और हल चलाअें तभी न अन्न अुत्पन्न हो ?

तात्पर्य है कि वर्षा धोखा दे दे तो अन्न न अुपजेगा और समस्त जीवोंको क्षुधा व्याधिका शिकार बनना पड़ेगा ।

(५) केडुप्पदूअुङ् केट्टार्कु चारनाय् मट्रांगे
अेडुप्पदूड मेल्ला मळै ।

पानीमें अैसी ताकत है कि वह दुनियावालोंको तकलीफमें डाल दे तथा तबाहीकी ओर ले जाअे । वैसेही तकलीफ़में पड़े हुओंका सहायक बने और अुनकी रक्षा करे । अर्थात् समस्त जीवोंको सुख और दुःख देनेकी शक्ति बादलोंमें है ।

(६) विशुंवि ट्रुळि वीऴि नल्लान् मट्रांगे
पशुंपुर् तलै काण्बरिदु ।

यदि बादलोंसे पानीकी बूंदें न गिरें तो भूमिपर हरी दूबका अुगना भी मुश्किल हो जाअे ।

तिरुवल्लुवरका कहना है कि केवल जीव ही पानीके बिना तकलीफमें नहीं पड़ते । बल्कि हरी दूब जैसी वस्तु भी विनाशके गर्तमें पड़ जाती है ।

(७) नेडुं कडलुम् तन्नीरमै कुंड्रुम् तडिन्देऴिलि
वान्हा दाहि विडिन् ।

बादल अगर समुद्रके पानीको पीकर अुसे घटा न दे या संसारको पानी देनेसे हड़ताल कर दे तो विशाल समुद्र भी अपने प्राकृतिक गुणसे हीन हो जाअेगा ।

विज्ञान बताता है कि समुद्रका पानी ही भाप बनकर बादल बनता है और पानी बरसता है, जिससे संसार सुखानुभव करता है । बादल अपना स्वभाव छोड़ दे तो समुद्रको भी अपना स्वभाव छोड़ देना पड़ेगा । अिससे यह संभव है कि अेक दिन समुद्रसे कोअी लाभ न होगा; पर यह कहीं संभव है, पानीके 'जीवन' और 'अमृत' नाम रहते हुअे ?

(८) शिर प्पोडु पूशनै शेल्लाटु वानम्
वरक्कु मेल् वानोर्कु मीण्डु ।

यही नहीं, बादल पानी बरसना बन्द कर दे तो अिस दुनियामें देवताओंकी भी पूजा धूमधामसे न हो सके ।

तिरुवल्लुवर कहते हैं कि न केवल जीव और प्रकृति ही पानीके अभावमें दुःख भोगेंगे, बल्कि देवताओंको भी कष्टोंका भीषण सामना करना पड़ेगा ।

(९) दानम् तनमिरंडुम् तंगा वियनुलहम
वानम् वळंगादेनिन ।

पानी यदि न बरसे तो अिस विशाल संसारसे दान और तप दोनों मिट जाअेंगे ।

जब कोअी खुद खानेको तरसे तो कहाँसे दान दे ? कैसे तपस्या करे ? तिरुवल्लुवर कहते हैं कि पानीमें ही वह शक्ति है, जो आदमीको दान और तपमें लगा सके और नेक रास्तेपर ले जाअे ।

(१०) नीरि न्ड्रमैया दुल हेनिन् यार यार्कुम्
वानि न्ड्रमैया दोळुक्कु ।

यह कहें कि बिना पानीके, किसीका भी सांसारिक कार्य ठीक तरहसे नहीं चल सकेगा तो यह भी मानना पड़ेगा कि बिना बादलके, अिस संसारमें पानीका प्रवाह नहीं हो सकता ।

तमिळ संत कवि तिरुवल्लुवरका कहना है कि संसारके लिअे वर्षा अत्यन्त आवश्यक है । तभी अिस संसारके कार्य हो पाअेंगे और अुस संसारके प्रति भी लोगोंकी श्रद्धा बढ़ेगी । पानी बरसे और वह भी ठीक वक्तपर, तो भूमि धन-धान्यसे समृद्ध होगी तथा दान और तप होते रहेंगे, जिससे समस्त जीव सुख-संतोषके साथ जीवन-यापन कर सकेंगे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊपर हमने कुछ प्राचीन तमिल वेदके आचार्य संत तिरुवल्लुवरके "कुरल" का रसास्वादन कराया, जिसमें वर्षाकी महिमा तथा अुसकी अुपयोगिता वर्णित है। अब आअिये, कविकुलश्रेष्ठ कंबरके कुछ पदोंका आस्वादन करें। कंबर 'आट्रु पटलम' याने नदी वर्णन नामक अध्यायमें बादलोंके स्वरूपका अनुभूतिपूर्ण वर्णन करते हुअे कहते हैं:—

नीरणिन्द कडवु णिरत्तवा
नार णिन्दु शेन्ड्रार कलि मेयन्दहिर
चेर णिन्द मुलै त्तिरु मंगै तन्
वीर णिन्दवन मेनियिन् मीण्डदे।

पानीसे रिक्त होनेके कारण बादलोंका रंग सफेद हो जाता है न? कवि अुन बादलोंको देखता तो अुसके मनःचक्षुके सामने श्वेत भस्म [विभूति] रमाये हुअे भगवान शिवजीकी मूर्ति आ खड़ी होती है। अतः, वह कहते हैं कि भगवान शिवजीकी तरह श्वेत वर्णवाले बादल आकाशके रास्तेसे झुण्डके झुण्ड बनाकर समुद्रकी तरफ पानी भरने जा रहे हैं। बादलोंका अुस प्रकार जुलूसमें निकलनेका दृश्य देखने योग्य है। आदमी अेक बार अुस सुन्दर नजारेपर आँख गड़ा दे तो फिर अुठाअेगा ही नहीं। आँखमिचौनी खेलते हुअे अेक दूसरेके दामनमें लुकते-छिपते अुनका आकाश-वीथीसे जाना मनोमुग्धकारी है। लहरोंको अुठा-गिराकर शोर मचानेवाले, समुद्रमें जाकर श्वेत बादल पेट भर पानी पी लेते हैं, तब अुनका स्वरूप ही बदल जाता है और अितने काले पड़ जाते हैं कि श्याम वर्णवाले भगवान विष्णुका स्मरण हो आता है। वे विष्णु भगवान भी कैसे? अरगजा अगरु-चन्दन आदि लेपनोंसे अपने स्तनद्वयोंको सदा सर्वदा सुगंधित रखनेवाली महालक्ष्मी-का अपने हृदयस्थलमें प्रतिष्ठापन करनेवाले!

महालक्ष्मी तो धवलवर्णवाली मानी जाती हैं न? श्याम वर्णके विष्णु भगवानके हृदय-स्थलमें धवलवर्णवाली महालक्ष्मी जैसे विराजमान हैं, वैसे ही श्यामवर्णके बादलोंके हृदयमेंसे धवलवर्णवाली विद्युत्-रेखा आँखोंको चौंधियाती हुअी चमकती है। कविने घनश्याम बादलोंके हृदयमेंसे बिजलीको चमकते हुअे देखा तो पानी पीकर लौटनेवाले बादलोंमें भगवान विष्णुका ही रूपक भर दिया

कहनेका तात्पर्य यह है कि पानीसे रिक्त बादल जो श्वेत वर्णके हैं, पानी भर लेनेपर श्यामवर्णके हो जाते हैं। कविकी कल्पना अितनी अूंची अुठ जाती है कि वे आकाशके अुन बादलोंमें भस्म लगाये भगवान शिवजी और घनश्याम वर्णके विष्णुका ही रूप देखते हैं।

पानी भर लेनेके बाद वे बादल हिमालयकी ओर चले जाते हैं, तो कवि कहते हैं:—

पंवि मेघम् परन्ददु भानुवा
नंबन मातुलन वेम्मैयै नण्णिना
नंबि नाट्टु मेन्ड्रहन् कुन्ड्रिन्मे
लिंबर वारि येळुन्ददु पोन्ड्रदे।

वर्षा ऋतुमें वाष्पगर्भित बादल हिमालय पर्वतके शिखरपर छत्र-छायाकी भांति छा जाते हैं, तो कविके कल्पना-चक्षु दूरकी सोचने लगते हैं। हिमवान् कौन? पार्वतीके पिता। पार्वती तो भगवान शिवजीकी पत्नी है। ग्रीष्मकालके सूरजकी तपती गरमी तो अितनी कष्टदायक है कि 'अुफ़' भी मुँहमें कैसे लाया जा सकता है! समुद्रराजने देखा कि हिमवान् दहकती जलती गरमीसे अुत्पन्न दुःख भोग रहा है। वह शिवजीका ससुर है। यही नहीं, अेक तरहसे देखा जाअे तो समुद्रराजका भी ससुर है। अुसीकी गोदीहीमें तो गंगा-जमुना आदि नदियाँ, जो समुद्रराजकी पतिव्रता पत्नियाँ हैं, जन्मी हैं। अैसी हालतमें समुद्र हिमवानका कष्ट किन आँखोंसे देख सकता है? अतअेव, हिमवानके कष्ट दूर करनेके लिअे, याने सूरजके तापको कम कर शीत पहुँचाने और आराम देनेके लिअे बादल बनकर हिमालय पर्वतपर छा जाता है!

हिमालय पर्वतके शिखरोंपर बादलोंके छा जानेका कारण बतानेपर कवि यह बताता है कि पानी कैसे बरसता है!

पुळिळ माल वरै पोन्नेन नोक्किवान्
वेळिळ वीळिडै वीळ्त्तेन त्तारैकळ्
डळिळ डळ्ळ वेलाम् अुबन्दीयुमव्
वळिळ योरिन वळंगिन मेघमे।

"कुमार संभवम्' में महाकवि कालिदासने कहा है:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्या
हिमालयो नाम नगाधिराज : ।
पूर्वापरौ तोमनिधी वगाह्य
स्थित: पृथ्व्या अिव मानदंड : ।।

हिमवान गौरववान है और स्वर्ण वर्णका है। आकाशने अिस स्वर्ण-मेरुको देखा तो अुसका भी मन ललचा गया। स्वर्णको देखकर किसका मन ललचता नहीं ? आकाशने सोचा कि हिमालयकी समस्त स्वर्ण राशिको खोदकर निकाल लेना चाहिये। अुसनें झट अपने विचारको कार्यान्वित भी कर दिया। अर्थात् पानीकी झड़ी रूपी अपने रौप्य वर्णवाले औजारको हिमालयकी छातीपर चलाना प्रारम्भ कर दिया ! यह तो सब जानते हैं कि वर्षाकी बूंदें चाँदीके रंगकी होती हैं और तारकी भाँति दिखायी देती हैं। यही कारण है कि कविने पानीकी झड़ीको सोना खोदनेवाले औजारका रूप दे दिया। पर कविकी आँखें कहीं वर्षाको अितना स्वार्थमय देख सकती हैं ? बादल क्या करता है ? अपनी आखिरी बूंद तक लोककी भलाअीके लिअे अर्पण कर देता है, न कि अुसे अपने लिअे जमा कर रखता है। अत: कवि कहता है कि बादल तो अैसा दाता है कि स्वयं रीता हो जाता है, अपने लिअे कुछ भी अेकत्र कर नहीं रखता। सच्चा दानी, अपने पास जो कुछ है, वह सर्वस्व दान कर देगा, अपने लिअे कुछ नहीं बचा रखेगा। अपना सब कुछ देकर अुससे किंचित् कीर्तिलाभकी भी आशा नहीं करेगा। दान देकर अुसके बदलेमें कुछ आशा करे तो दानी कैसा ? कवि कम्बर कहते हैं कि बादल भी अैसा ही दानी है। वह किसीकी आशा नहीं करता। कवि अिस पदमें अिस बातको स्पष्ट करता है कि हिमालयपर पानी कितनी जोरका बरसता है तथा बादलका स्वभाव सिद्ध गुण क्या है ?

हिमालयपर घनघोर घटाओके छाने और मूसलधार वर्षा करनेका वर्णन करनेके बाद कवि कहता है कि बरसातका पानी किस प्रकार बहता है !

मार नेर्न्दर नोक्कि मनुनेरि
पोन तण्कुडै वेंदन् पुकळेन
ज्ञान मुन्निय नान्मरै याळर् कैन्
तान मैन्न त्तळैत्तदु नीत्तमे।

कवि कहता है कि मान-सम्मान सहित धर्म-कर्मपर भक्ति श्रद्धा करते हुअे मनुधर्मके नीति-नियमोंका आचरण करनेवाले सुशासकको कीर्ति जैसे दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती है, ज्ञानके रास्तेको ग्रहण करके, चतुर्वेदोंके पठन-पाठनके अधिकार रखनेवाले सच्चरित्र ब्राह्मणोंके हाथमें दिये जानेवाले दान, जिस प्रकार दाताका नाम अुज्ज्वल करते हैं, वैसे ही बरसातका पानी बहता-बढ़ता वर्षा ऋतुका कीर्ति-गान करता जाता है।

* * *

'शिलप्पधिकारम्' तमिल साहित्यके पाँच महाकाव्योंका शिरोभूषण माना जाता है। अुसके रचयिता हैं, राजकुलोत्पन्न योगिराज अिलंगो अडिगळ। "शिलप्पधिकारम्" के मंगलाचरणहीमें अुन्होंने प्रकृतिको भगवानसे अूपर और अधिक मुख्य स्थान दिया है। क्योंकि प्रकृति ही भगवानका स्वरूप दिखलाती है, स्मरण दिलाती है।

तिरुवल्लुवरने भी तो कहा है कि अगर बादल पानी बरसना बंद कर दें तो देवताओंकी पूजा भी ठीक तरहसे नहीं हो पाअेगी। कवि अैसी शक्तिशाली प्रकृतिको भूलकर भगवानकी वन्दना पहले कैसे करे ? अिसीलिअे अिलंगोने पहले चन्द्र, फिर सूर्य, बादको वर्षा-आदि आँखोंसे देखे जानेवाले प्रकृति-देवताओंकी महिमाका गान किया। तमिल भाषाके राष्ट्रीय गीतके रूपमें प्रकृति वर्णनसे ये पद लिये जा सकते हैं। कवि वर्षाके सम्बन्धमें कहते हैं:--

मामळै पोट्रुदु मामळै पोट्रुदुम्
नाम नीर वेलि युलहिर कवनळि पोल्
मे निन्ड्रु तान शुरत्तलान्।

हम मूसलधार वर्षाकी वन्दना करें। हम मूसलधार वर्षाकी वन्दना करें। अपने गर्जन-तर्जनसे हृदयको दहलानेवाले, चारों तरफ पानी ही पानीसे प्रलयकी तरह लबालब भरे रहनेवाले विशाल समुद्रको भी आकाश मार्गसें आकर वर्षाके मेघ पानीका अितना दान देते हैं कि देखनेवाले दंग रह जाअें। जिस समुद्रके लिअे पानीकी कोअी कमी नहीं, अुसी समुद्रको बादल जब अितना पानी दान कर देता है, तो साधारण सांसारिक जीवोंके लिअे, वह कितना जल प्रदान करता होगा ?-- यह कल्पनाकी चीज है।

जो कुछ भी नहीं चाहता, अुसीको कोअी अमृत स्वर्ण वर्षा कर दे तो चाहनेवालोंको वह कितना नहीं देगा ? ध्यान देनेकी बात है कि बादल अुन रिश्तेदारोंमें नहीं, जो धनवान रिश्तेदारोंको अपनी खातिरदारीसे तृप्त कर दें और दरिद्र बन्धुकी बाततक न पूछें। अैसे दानी बादलकी वन्दना कवि क्यों न करे ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बरसातपर अुर्दू कवि

: श्री हर्षनाथ :

कवि अिस धरतीका सर्वाधिक भावनाशील प्राणी है। अुसका सुख-दुख, हास-रुदन, अीर्ष्या-द्वेष, घृणा-व्यंग और प्रेम आदि अितर प्राणियोंकी भावनाओंसे ज्यादा सशक्त होता है, ज्यादा पुरअसर होता है। अुनका प्रभाव ज्यादा स्थायी होता है। कविके हृदयको स्पर्श करके अुसकी वाणीके माध्यमसे जो कुछ भी प्रकट होता है, अुसकी प्राणशक्ति अधिक पुष्ट होती है। अुसकी वाणी अपनेमें अेक अलौकिक सौन्दर्य छिपाये रहती है। अुसमें लोकोत्तर आनन्दका संवहन होता है। अुसकी घृणा लाख-लाख हृदयोंमें घृणाका भाव भर देती है। अुसका प्रेम लाख-लाख हृदयोंको प्रेमोन्मत्त कर देता है। अुसकी अुपेक्षा लाख-लाख हृदयोंमें अुपेक्षा पैदा कर देती है। अुसकी वीर-वाणी अगणित हृदयोंको वीर रससे भर देती है। कवि अपने ढाँचेमें जनताको ढाल देता है। अुसका स्वर जनताका स्वर हो जाता है। प्रकारान्तरसे हम यह भी कह सकते हैं कि अितर प्राणियोंके हृद्गत भावोंको वाणी देनेमें कवि समर्थ है।

किन्तु कविकी कुछ सीमाअें हैं, जिनका वह अतिक्रमण नहीं कर सकता। वह अिस धरतीका प्राणी है। समाजके अन्तर्गत रहता है। फलतः जहाँ समाज कविकी वाणीसे प्रभावित होता है, वहाँ किसी हदतक कवि भी समाजकी मान्यताओंके बीचसे गुजरता है। अिसी तरह धरतीकी सीमाअें भी अुसे प्रभावित करती हैं। देश-कालकी परिस्थितियाँ अुसपर अपना प्रभाव डालती हैं। भौगोलिक स्थितियाँ अुसे अपनी सीमामें बांधती हैं। यह बात दूसरी है कि कवि अुनपर भी अपनी छाप लगा देता है। किन्तु वह देश, काल, समाज और भौगोलिक स्थितियोंकी सर्वथा अुपेक्षा नहीं कर सकता। अुनसे वह प्रभावित होता है। अुनसे अुद्दीपन ग्रहण करता है। यही कारण है कि हिमालयकी छायामें बसे कवियोंकी वाणीमें हम नगाधिराजकी प्रतिष्ठा स्थापित देखते हैं। अुसकी महत्तासे गौरवान्वित होते हैं। अुसके मौन-मूक गंभीर सन्देशसे अपने हृदयको पूर्ण पाते हैं। क्षितिजके छोरतक फैले अतल महासागरकी गोदमें बसे देशोंके कवियोंकी वाणीमें महासागरकी लोल लहरियोंका गान पाते हैं। अुसकी गगनचुंबी तरंगोंका अुद्घोष सुनते हैं। अिसी तरह बर्फानी मैदानोंने, लंबे-चौड़े रेगिस्तानोंने भी वहाँके कवियोंको आकर्षित किया है। ज्येष्ठकी प्रचंड धूप, रगोंका खून जमा देनेवाली शीत और सजल बरसातने कवियोंको प्रभावित किया है। अुनको आन्दोलित, अुद्वेलित किया है और अुनके माध्यमसे कविके हृदयगत भाव व्यक्त हुअे हैं।

अुर्दूके शायर भी बरसातकी काली घटाओंसे प्रभावित हुअे हैं। अुसकी रिमझिमके सरगमसे अपने हृदयके तारोंकी झंकारको मिलाया है। अुसकी कड़क और चमकसे चौंके और चौंधियाये हैं। यद्यपि यह सही है कि बंगला और हिन्दीके कवियोंको बरसात जितना आनन्द और अुद्दीपन दे सकी है, अुतना अुर्दूके कवियोंको नहीं। अिसका कारण स्पष्ट है। जिस मनमोहनी रूपमें बरसातने बंगालकी धरतीपर नृत्य किया है, बंगालके आसमानमें काली घटाओंने अपने सौन्दर्यका जितना प्रदर्शन किया है, बिजलीने जितना लास किया है, छोटे-छोटे बादलोंके टुकड़ोंसे हवाने जितनी छेड़छाड़ की है, हिन्दुस्तानके अन्य प्रान्तोंमें प्रकृतिका यह सौन्दर्य अिस रूपमें प्रदर्शित नहीं हो पाया। अिसलिअे बरसात बंगलाके कवियोंके लिअे सदा ही प्रेरणा देती रही और लगभग यही स्थिति हिन्दीके कवियोंकी भी रही। हिन्दीके कवियोंने भी काली घटाओंके माध्यमसे अपनी नायिकाके सघन श्याम केशोंका सौन्दर्य आँका है। बिजलीकी चमकमें अपनी प्रियतमाके शरीरकी सुवर्णी आभाका आभास पाया है। अुड़ती हुअी बक-पातोंने अुन्हें अपनी प्रेयसीके मोतियोंके हारकी स्मृति दिलायी

रा. भाCC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। किन्तु अुर्दूके कवियोंको बरसात अितनी प्रेरणादायक नहीं हो पायी; अिसके कअी कारण हैं। यद्यपि अुर्दू कविताका जन्म अुसका लालन-पालन सब कुछ हिन्दुस्तानकी धरतीपर हुआ; किन्तु कुछ तो धार्मिक और कुछ अन्य कारणोंसे अुर्दूके कवियोंने किन्हीं अंशोंमें अरब और फारसके वातावरणसे अपनी कवितामें प्रेरणा ग्रहण की। अुसकी अुपमाअें और अुद्दीपन प्रायः सब वहींसे लिये गये। फलतः अुन्हें कोयलके बजाय बुलबुलने ज्यादा प्रभावित किया, गंगाके बजाय दजला और फरातने। साथ ही अुर्दूके मुख्य केन्द्र दिल्ली, लखनअू, हैदराबाद, लाहौर और पटनामें केवल लखनअू और पटना ये ही दो स्थान अैसे हैं, जहाँ बरसात अपने पूरे सौन्दर्यके साथ धरतीपर अवतीर्ण होती है।

किन्तु अिसका यह अर्थ नहीं कि अुर्दू कवितामें बरसातपर कुछ है ही नहीं। है, और खूब है। अुर्दूके प्रायः सभी ख्यातनामा कवियोंने बरसातके सौन्दर्यपर रीझकर कविताअें रची हैं। अिस शताब्दीके सिवा पिछली शताब्दीके महान् कवियों गालिब, मीर, जौक, मोमिन आदिने अपनी गजलोंमें बरसातकी शोभाका वर्णन किया है। अुर्दू साहित्यकी सबसे बड़ी हस्ती गालिब साहब फरमाते हैं:--

है यह बरसात वो मौसिम कि अजब क्या है अगर,
मौजे हस्तीको करे फैजे हवा मौजे शराब।

और

अेक आलमप है तूफानीअे कैफ़ीयते फसल,
मौजअे सब्जअे* नौखेजसे ता मौजे शराब।

अिसमें कोअी ताज्जुब नहीं कि गालिब साहब अपनी प्रिय वस्तु शराबसे बरसातके आनन्दकी तुलना करते हैं।

अुर्दू कवितामें नजीर अकबराबादीने बरसातपर काफी लिखा है और बहुत सुन्दर तरीकेसे। काली घटाको घुमड़ते देखकर जैसे मोर नाच अुठता है, अुसी तरह बरसातके लुभावने नजारोंसे नजीरका दिल नाच अुठा है। कुछ बानगी लीजिये:--

सावनके बादलोंसे फिर आ घटा जो छायी।
बिजलीने अपनी मूरत फिर आनकर दिखायी।
हो मस्त राद[1] गरजा कोयलकी कूक आयी।
बदलीने क्या मजेकी रिमझिम झड़ी लगायी॥
आ यार चलके देखें बरसातका तमाशा॥

जिन साहबोंके दिलको कुछ अैशसे है बहरा।
वो अिस हवामें जाके देखें है कोहो सेहरा[2]।
हर तरफ आब सब्जा और गुलबदन सुनहरा।
जंगलमें आज मंगल किस किस तरहका लहरा।
आ यार चलके देखें बरसातका तमाशा॥

किन्तु यही बात नहीं है कि कवि बरसातमें अपनी रंगीनियोंमें ही मस्त रहे। वह अपने आसपासके वातावरणसे अुदासीन नहीं है। जहाँ बरसातकी हरियालीने अुसके मनको मोह लिया है वहां बरसातमें गरीबोंकी दिक्कतोंकी ओर भी अुसका ध्यान जाता है। "बरसातकी बहारें" शीर्षक कवितामें नजीर साहब किस सहानुभूतिसे गरीबोंके टपकते हुअे झोंपड़े, हवाके झोंकेसे अुजड़ते हुअे मकान और बरसातसे बैठती हुअी छतोंका जिक्र करते हैं:—

छत गिरनेका किस जा गुलशोर हो रहा है।
दीवारका भी धड़का कुछ होश खो रहा है।
दर दर हवेलीवाला हर आन रो रहा है।
मुफलिस सो झोपड़ेमें दिलशाद सो रहा है।
क्या क्या मची है यारो बरसातकी बहारें॥

मुद्दतसे हो रहा है जिनका मकां पुराना।
अुठके है अुनको मेहमें हर आन छत पै जाना।
कोअी पुकारता है टुक मोरी खोल आना।
कोअी कहे है चल भअी क्यों हो गया दीवाना।
क्या क्या मची है यारो बरसातकी बहारें॥

कोअी पुकारता है लो यह मकान टपका।
गिरती है छत कि मिट्टी औ सायबान टपका।

---

* हरियाली

१. बादल। २. पहाड़ और जंगल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छलनी हुअी अटारी कोठा निदान टपका।
बाकी था अिक अुसारा सो वह भी आन टपका।
क्या क्या मची है यारो बरसातकी बहारें॥

महाकवि देवकी तरह नजीर साहब भी "रँगराती हरी हहराती लता" और "वन भूमि भअी दल दूकनि मो" सौंदर्यपर मुग्ध हैं। धरतीपर बिछी हरी मखमल अुन्हें भी बहुत पसन्द है।

खुल रहे हैं दरोदीवार पै अब्बाबे बहिश्त।
आ रही है चमने खुल्द[1] की हर घरमें हवा।
कोहोसेहरा में वह सब्जी[2] है कहूँ क्या गोया।
मखमले ताजा किसीने याँ दी है बिछा॥

हजरत दाग भी बरसातके छींटेसे नहीं बच सके—

कोअी छींटा पड़े तो दाग कलकत्ता पहुँच जाय।
अजीमाबादी[3] में हम मुंत्तजिर सातनके बैठे हैं॥

दाग साहब यहाँ कुबूल करते हैं कि बरसातका जो मजा कलकत्तामें है वह पटनामें नहीं है।

अमीर मीनाअी साहब बरसातकी 'रुत' में विरहिणी नायिकाकी बेबसीका अनुभव करते हैं—

हाय बरसातकी रुतमें वो सिधारे घरको।
फूंक दे, फूंक दे अे बर्क[4] हमारे घरको॥

हाँ, ठीक है। आखिर बेचारी विरहिणी अकेले कैसे बरसात काटे। आखिर बरसातमें अुसे सतानेके लिअे हजार चीजें हैं। अेक हिन्दी कविके अनुसार—

अब केहू नहिं बचहिंगे, पावस पवन कराल।
फुफुकारत आवत चल्यौ, मानहु विषधर व्याल॥

अुर्दूके प्रसिद्ध शायर अिकबाल साहब भला बरसातकी फुहारोंसे कैसे बच सकते थे। अुनके बरसातके वर्णनमें अेक विशेषता है। बंगाल, बिहार, आसाम और पूर्वी अुत्तर प्रदेशकी तरह पंजाबमें बरसात अपने पूरे यौवनपर नहीं आ पाती। राजस्थान और पंजाब वगैरहमें पानीसे भरे हुअे काले-काले बादल आकाशमें तैरते हुअे चले जाते हैं। प्यासी धरती आशा भरी नजरोंसे अुनकी ओर देखती रह जाती है। किसानोंकी आंखें स्वागतमें निर्निमेष ताकती रह जाती हैं; पेड़-पौधे और लताअें अिशारे करके बुलाते रह जाते हैं किन्तु बिना बरसे ही बादल चले जाते हैं। अैसी स्थितिमें अगर बारिश हो जाती है तब लोगोंकी खुशीका क्या पूछना। बारिशके मौकेपर अिकबालने अिसी खुशीका अिजहार किया है।

जो फूल मेहर[5] की गर्मीसे सो चले थे, अुठे।
जमींकी गोदमें जो पड़के सो रहे थे अुठे।
हवाअें जोरसे अुभरा, बढ़ा, अुड़ा बादल।
अुठा वो और घटा लो बरस पड़ा बादल।
अजीब खेमा है कुहसारके निहालोंका।
यहीं कयाम हो बादी[6] में फिरनेवालोंका॥

अेक और जगह अिकबाल साहब फरमाते हैं—

है बलंदीसे फलक बोस नशेमन मेरा।
अब्रे कोहसार हो गुलपाश है दामन मेरा।

× × ×

मुझको कुदरतने सिखाया है दुर-अफशां[7] होना।
नाकअे[8] शाहिदे रहमतका हदी-खां होना।
गम जबाअे दिले अफसुर्दअे देहकां होना।
कौमके बज्मे जवानाने गुलिस्तां होना।

यहांपर बादल खुद अपने मकसदका अिजहार करता है। अपनी तारीफ करता है कि मैं मोती बरसानेवाला हूँ। प्रकृतिके गीत गाता हूँ; किसानोंके निराश हृदयोंमें आशाका संचार करता हूं और नौजवानोंकी महफिलोंको गुलजार करना हमारा काम है।

और

सब्जअे मज्रअे नौखेजकी अुम्मीद हूं मैं।
जादअे[9]-बहर हूं, परवर्दअे[10]-खुरशीद हूं मैं॥

---

१. स्वर्ग, २. हरियाली, ३. पटनाका अेक नाम, ४. बिजली।

५. सूर्य, ६. घाटी, ७. मोती बिखेरनेवाला, ८. प्रकृतिके गीत गानेवाला, ९. समुदसे पैदा हुआ, १०. सूर्य द्वारा पोषित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शायरे अिनकलाब जोश मलीहाबादीने बरसातपर अेक दो नहीं, कअी कविताअें लिखी हैं। बरसात अुनको बहुत भाती है और अिस मौसममें वे अपनेको भी भूल जाते हैं।

अिस फस्लमें अिस दरजा रहा बेखुदो सरशार।
मयखानेसे बाहर मुझे देखा न किसीने॥

अपनी बरसातकी पहली घटा शीर्षक कवितामें आप किस जोशके साथ फरमाते हैं।

आरजूमें है तलातुम[1] जोश अरमानोंमें है।
हसरतोंमें बलबले हैं ताजगी जानोंमें है।
नौजवानीका तवस्सुम सर्द मैदानोंमें है।
रोशनी है दश्तमें खुशबू बयावानोंमें है।
झूमकर बरसी है क्या बरसातकी पहली घटा॥
माह[2]-पैकर लड़कियां रंगीनियोंपर तुल गयीं।
रंगकी पुड़ियां हजारों अेक दिनमें घुल गयीं।
ली जो गहरी साँस दिलकी कुलफते सब घुल गयीं।
गर्द कुछ अिस तरहसे बैठी कि आंखें खुल गयीं।
झूम कर बरसी है क्या बरसातकी पहली घटा॥

कहनेकी जरूरत नहीं कि जोश साहबने बरसातका पूरा लुत्फ अुठाया है। अब गीत-लेखक सागर निजामी साहबके बरसातपर लिखे गीतोंका स्वाद लीजिये--

आओ मेरी जान, आ भी जाओ।
सावनकी घटामें छुपके आओ।
यह सर्द हवा, यह मस्त बारिश।
आओ वरना हमें बुलाओ।
\+ + +
रिमझिम सावन बरस रहा है।
छमछम करते चले भी आओ।
\+ + +
यह झींगुर क्यों साज छेड़ते हैं।
अिस साजका राज़ तो बताओ।
ये बिजलियां क्यों मुस्तरब[3] है पैहम।[4]
अिनकी बेचैनियां बताओ।
ये बादल क्यों घिरके रो रहे हैं,
अिनकी हालत पै रहम खाओ।
हस्तिये गुल अिन्तजारमें है,
मकसूदे हयात बनके आओ।
सारा आलम बुला रहा है,
लेकिन तुम मेरे पास आओ।
आओ, मेरी जान, आ भी जाओ॥

१. लहर, २. चन्द्रमुखी, ३. बेचैन, ४. लगातार।

सागर निजामी सावनकी यह रिमझिम, झींगुरोंकी झनकार, बिजलियोंकी बेचैनियाँ और बादलोंका रोना देखकर किसे बरसातके प्रति आकर्षण नहीं होगा। यद्यपि अुर्दू शायरोंकी अिस बरसातकी बहारमें किसी अन्य कविको ला खड़ा कर देना कुछ अुचित नहीं किन्तु सागर निजामीकी अुपर्युक्त कविताको पढ़ते भोजपुरी-बोलीके विरही कवि बिसरामका अेक विरहा यहाँ अुद्धृत कर देना शायद अच्छा लगे। ग्रियर्सन साहबने भोजपुरियोंकी लाठीकी सराहना की है किन्तु बरसातके दृश्यका वह वर्णन भी सहृदयोंकी सराहना पा लेता है--

आयल बाटे सावन कअँ महिनवाँ मोरे भअिया,
रहि रहि अुठे बदरवा घनघोर।
अुड़ेला पपीहा आपन गितिया[5] सुनावत,
चलैले बयार जियराके[6] लहरावता,
जोन्हरीक[7] पात हिल्ले, मड़ुआ कै चोटी,
रहि रहि घहराली अुखिया ज मोटी मोटी।
अुड़ैलै बकुलवा जअिसे बेअिलीकै गजरा,[8]
बदरा कय टुकड़ी नभवामें[9] करे झगरा।
पड़ल बाटे झुलवा,[10] ओप्पर झुल्लत बाटीं नारी,
रहि रहि हिल्लै वोही पेड़वा कै डारी,
चारों ओरसे कजरी सुनाले मोरे भअिया,
जेहि सुन फाटेला करेज[11] मोरे दअिया,
कहे 'बिसराम' दुनिया करत बाय अराम,
नाचत बाटे बनवामें मोर।

५. गीत, ६. हृदय, ७. ज्वार, ८. माला, ९. आकाशमें, १०. झूला, ११. हृदय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम मोरी रानी भअिलीं स्वाती कय पानी,
मोर करकेला[1] करेजवा कय कोर ।।

अब बरसातपर अुर्दूके कलकत्तेके मशहूर शायर जनाब अश्क अमृतसरीकी अेक कविता अुद्धृत करके यह लेख समाप्त कर देना चाहता हूँ ।

रिमझिम पानी बरसे, पत्ता पत्ता धुल जाय ।
शाखें 'झूमें' सब्जा[2] नाचे हंसीका बन्धन खुल जाय ।
बागसे बूअे[3] गुल आये मयखानेसे मौजे भुल जाय ।
अिश्क जुनूकी हदसे बढ़े औ हुस्न वफापर तुल जाय ।
बरसात यही बरसात है, गर यह बात नहीं,
बरसात नहीं ।

सही बात है । बरसातमें पत्ता-पत्ता खुशीसे नाच न अुठे, धरती मखमली सारी न ओढ़ ले और लोगोंके दिल अुमंगसे भर न जाअ तो फिर बरसात कैसी ?

अेक दूसरी जगह आप फिर कहते हैं:—

काले काले बादल जैसे जुल्फ[4] किसीकी लहराये ।
दूर कहीं बिजली चमके या घूंघट कोअी सरकाये ।
कलियाँ चटके फूल बने, फूलोंका सीना तन जाये ।
धरती नाचे सब्जा लहके गर्द मोती बरसाये ।
हरीभरी अिक शाख प बुलबुल वही कहानी दुहराये ।
वही कहानी दुहराये औ गयी जवानी लौट आये ।

हाँ, तो बरसातका मौसम ही अैसा है कि प्रकृतिमें नयी जवानी लौट आती है फिर मनुष्यका दिल अुमंगोंसे क्यों न भर जाअे !

---

१. कसकना, टीसना । २. हरियाली । ३. सुगन्ध ।

४. केश ।

कविका हृदय !

"कविका हृदय वह निर्मल दर्पण है, जिसमें संसारका प्रत्येक दृश्य अुतने ही सुन्दर और सजीव रूपमें चित्रित हो सकता है, जितना कि अुसका अपना रूप है । यही नहीं; अुसके भीतर अिससे भी बढ़कर रहस्यमय अेक और शक्ति छिपी हुअी है । किन्तु अिस शक्तिका परिचय मिलता है केवल अुन लोगोंको, जो हृदयके साथ दिमागको जोड़ सकते हैं; जो दिलके साथ दिमागको लगा सकते हैं । मुँहकी बात कानतक पहुँचती है । हृदयकी आवाज हृदयतक पहुँचती है । मस्तिष्कका अेक कम्पन दुनियाके वायुमंडलमें अेक अैसी गति अुत्पन्न कर देता है कि वे कम्पनकी लहरें गौरीगुरु हिमालयके सर्वोच्च शिखरतक टकराती हैं । कविके दिल भी होता है और दिमाग भी । अुस कविको वही समझ सकता है जो दिलके साथ दिलको मिला सकता है । जो बहना जानते हैं, वे स्थिर होना भी जानते हैं । जो तैरना जानते हैं, वे डुबकी लगाना भी जानते हैं । किन्तु कविकी मनोरम मन्दाकिनीमें बह जाना अेक बात है और अुसमें डुबकी "लगाकर", अुसकी तहका पता लगाना दूसरी बात है—

"अब्धि लंघित अेव वानर भटैः किन्त्वस्य गंभीरताम् आपाताल निमग्न पीवर तनुर्जानाति मन्थाचलः ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राक्-मुस्लिम बंगला और अुसका साहित्य

: श्री मन्मथनाथ गुप्त :

ग्यारहवीं शताब्दीमें बंगलाका निजी अस्तित्व स्थापित हो चुका था। डा० सुनीतिकुमार चटर्जीका यह कथन है कि ग्यारवीं शताब्दीमें भी बंगलाके साथ अुड़ियाका पृथक्करण अभी असम्पूर्ण था। कुछ प्रमाण अैसे हैं कि प्राचीन बंगलाके युगमें अर्थात् दसवीं, ग्यारहवीं तथा बारहवीं शताब्दियोंमें पश्चिमी बंगलाकी ओर झुकाव हुआ, जिससे कि आधुनिक स्टैंडर्ड बंगलाको अपना निर्दिष्ट चरित्र प्राप्त हुआ और पड़ोसकी अुड़िया तथा अन्य बोलियोंसे अुसका पृथक्करण हुआ।

बंगलाके जो सबसे प्राचीन अुदाहरण प्राप्त हैं, वे ये हैं—

(१) प्राचीन पुस्तकोंमें तथा अभिलेखोंमें कुछ स्थानोंके नाम आते हैं। अिन नामोंमें जिस ढंगसे बादको चलकर परिवर्तन हुअे हैं, अुससे यह पता लगता है कि अुच्चारण आदिमें परिवर्तन कौनसी दिशामें जा रहा था। अिस सम्बन्धमें जो सामग्री प्राप्त है, वह अितनी थोड़ी है कि वह दूसरे अुपकरणोंके साथ ही कुछ काम दे सकती है। शिलालेखों तथा प्राचीन पुस्तकोंमें कुछ स्थानोंके नाम पांचवीं शताब्दीमें पाये जाते हैं, बादको ग्यारहवीं शताब्दीकी रचना "रामचरित" में अुनसे मिलते-जुलते नाम पाये जाते हैं। "रामचरित" सन्ध्याकर नन्दीकी रचना है।

(२) सर्वानन्द नामक अेक बंगाली पंडितने अमरकोशपर अेक टीका लगभग ११५९ अी० में लिखी थी। अिसमें पण्डित प्रवरने अपने भाष्यको सुबोध्य बनानेके लिअे कोअी तीन सौ अैसे शब्द डाल दिये, जो संस्कृत नहीं थे और बंगला मालूम होते हैं। अिस टीकाका नाम टीका सर्वस्व था। मजेकी बात यह है कि यह टीका बंगालसे लुप्त हो गयी, पर यह सुदूर मलाबारमें सुरक्षित रही और वहींसे यह सम्पादित होकर प्रकाशित हुअी। अिस पुस्तकको बंगला भाषाके अितिहासकी दृष्टिसे बहुत अधिक महत्व दिया गया है और अिसमें जो असंस्कृत शब्द आते हैं, वे प्राचीन बंगलाके शब्द हैं। अिस विशेष अुपकरणका अैतिहासिक तथा भाषाशास्त्रगत मूल्य बहुत अधिक होनेपर भी हमें अिससे केवल शब्दोंका ही ज्ञान होता है; पर किसी भाषाको जाननेके लिअे अुसकी वाक्यविन्यास-पद्धतिसे परिचय बहुत जरूरी है, जिसका अिसमें अभाव है।

(३) चर्यापद या चर्या साहित्यमें अिस सम्बन्धमें ४९ गीत प्राप्त हैं। यद्यपि पुस्तकमें ५० गीत थे, पर बीचके कुछ पृष्ठ अुड़ जानेके कारण केवल ४९ गीत ही प्राप्त हुअे। महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्रीने अिन गीतोंका आविष्कार नेपालमें किया। अुनके अनुसार ये बारहवीं शताब्दीके प्रारम्भके हैं, परन्तु श्री राखालदास बनर्जीने अिन्हें चौदहवीं शताब्दीके अन्तकी रचना बताया है।

भाषा और साहित्य दोनोंके अितिहासकी दृष्टिसे अिन गीतोंका बहुत महत्त्व है। अिसके अतिरिक्त अुस समयकी परिस्थितिका भी पता चलता है। 'सहजियापंथ' के सिद्धोंने अिनकी रचना की। यहां अिस पंथके सम्बन्धमें कुछ बतानेकी आवश्यकता नहीं, क्योंकि 'सहजियापंथ" के गुरू गोरखनाथ और मत्स्येन्द्रनाथ आदिके सम्बन्धमें हिन्दी-साहित्यके अितिहासोंमें भी बहुत कुछ आता है। यहांपर अितना ही बताना यथेष्ट होगा कि यद्यपि अिन गीतोंको बंगला भाषाके कुछ अितिहासकारोंने बंगला बताया है, पर अुन्हें समानरूपसे हिन्दीकी रचना भी कहा जा सकता है और अैसा कहा भी गया है। हम पहले ही बता चुके हैं कि भाषाकी दृष्टिसे ह्यूनसांगके समयमें ही बंगाल और बिहार अेक हो चुके थे। फिर प्राक् बंगला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रचनाओंको या बंगलाकी आदिम रचनाओंको हिन्दी कहना या हिन्दीकी अुस समयकी रचनाओंको बंगला समझना कोअी आश्चर्यकी बात नहीं ।

दोहाकोष नामक दो रचनाअें भी बंगला भाषाके अितिहासकी दृष्टिसे बड़े महत्वकी हैं, पर अुनका महत्व चर्यापदोंसे कुछ कम अिस कारण है कि वे अपभ्रंशमें हैं और अुनमें अभी बंगलाकी विशेषताअें दृष्टिगोचर नहीं, जैसी कि चर्यापदोंमें। अिनका भी विषय वही है जो चर्यापदोंका ।

"चर्याचर्यविनिश्चय" नामसे अेक प्राचीन ग्रन्थ प्राप्त हुआ है, जिसमें प्राकृत भाषामें कविताअें हैं और संस्कृतमें अुनकी टीका है। टीकाके अन्दर यत्र-तत्र प्राचीन बंगला तथा पश्चिमी अपभ्रंशमें कुछ अुदाहरण दिये गये हैं। अिनमें भी रहस्यमय विषयोंका वर्णन है। सुनीति बाबूके कहे अनुसार चर्यापदों और दोहाकोषोंमें दो विभिन्न बोलियाँ हैं। चर्यापदोंमें सम्बन्धकारकका अेर और अर, सम्प्रदानका रे, अधिकरणका त, सम्बन्ध स्थापित करनेवाले शब्द मांझ, अन्तर, सांग हैं, साथ ही बिहारी अल और अबके बदले क्रमशः भूत और भविष्यके लिअे क्रियापदके बाद अिल और अिब अित्यादि हैं। दोहाकोषोंमें बोली तो वही है, जिसे अेक तरहका पश्चिमी या शौरसेनी अपभ्रंश बताया गया है।

चर्यापदोंकी भाषाके सम्बन्धमें सुनीति बाबूका यह सुनिश्चित मत है कि वे प्राचीन बंगलामें हैं। वे अिस मतके समर्थनमें भाषाशास्त्र सम्बन्धी बहुत लम्बे प्रमाण देते हैं, अुनका यह भी कहना है कि चर्यापदोंकी भाषा पश्चिमी बंगालकी किसी बोलीपर आधारित है। भाषागत प्रमाणके अतिरिक्त पूर्वी बंगालके लोगोंपर भी दो जगहपर विचार हैं, जो किसी भी प्रकार प्रशंसात्मक नहीं हैं। अिस बातका भी प्रमाण है कि अुस युगमें भी पश्चिमी बंगालके अन्य साहित्यकार पूर्वी बंगालके लोगोंके विरुद्ध कटाक्ष करते थे, जैसे कि बारहवीं सदीके विद्वान सर्वानन्दने 'अमरकोश' पर टीका लिखते हुअे किया था। अुसमें अुन्होंने सूखी मछली खानेवाले अितर बंगालियोंपर कटाक्ष किया था।

चर्यापदोंमें मात्रावृत्तका प्रयोग है, पयार छन्दका नहीं, जो बंगालका विशेष छन्द है। अभी तक पयारका विकास नहीं हुआ था। हो सकता है कि देहातोंमें पयारका प्रचलन हुआ हो, परन्तु साहित्यमें अुसका प्रवेश नहीं हुआ।

चर्यापदोंका समय क्या है ? अिस सम्बन्धमें डा० चटर्जीका मत यह है कि भाषाशास्त्रकी दृष्टिसे यह लगभग १२०० अी० की रचना होगी। अेक बात यह भी स्मरण रहे कि 'चर्यापद' विभिन्न व्यक्तियोंकी रचनाअें हैं। अिनके रचयिताओंकी संख्या २२ हैं और ये २२ रचयिता अुन ८४ सिद्धोंमें आ जाते हैं, जो तिब्बत और नेपालके महायान बौद्धोंमें पूजित हैं। नेपालमें अब भी ये गाये जाते हैं। तिब्बती भाषामें भी अिनका अनुवाद है। अिन सिद्धोंमेंसे अेक लुअीपाय लुअीपाद दीपंकर श्रीज्ञानके समसामयिक थे और

MOST POPULAR PEN
प्लेटो ६६
रू. ४)
एक का
PLATO
REGD.
FOUNTAIN PEN
Sole Distributors:
BEST FOUNTAIN PEN DEPOT, BOMBAY 2
A Mhatre Pen's Product

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुनके सम्बन्धमें यह ज्ञात है कि वे ५८ सालकी अुम्रमें १०३८ अी० में तिब्बत गये। अिस कारण लुअिपायाके साहित्यिक जीवनके समयको १० वीं शताब्दीका अुत्तरार्द्ध बताया गया है। अभी तक चर्यापदोंमें अुन्हींकी रचनाओंको सबसे प्राचीन माना गया है। जो कुछ भी हो चर्यापदोंको १२०० अी० के माननेमें किसी गलतीकी सम्भावना नहीं।

प्राक् बंगलाके अन्य अवशेषोंमें प्राकृत पैंगलकी रचनाअें और कविताअें अुल्लेखनीय हैं। अिस संग्रहमें ९०० अी० से लेकर १४०० अी० तककी प्रचलित कविताअें संग्रहीत हैं। यह संग्रह अपभ्रंश तथा प्राक्-बंगला रचनाओंका है। अिस संग्रहको अन्तिम रूप चौदहवीं शताब्दीमें प्राप्त हुआ। अिसमेंसे कुछ ही कविताओंके सम्बन्धमें यह दावा किया गया है कि वे प्राक्-बंगलामें हैं, परन्तु अैसा मालूम होता है कि भले ही ये कविताअें बंगलामें रही हों, अिनको जिस रूपमें अिस संग्रहमें स्थान दिया गया, वह कुछ बदला हुआ है। स्मरण रहे कि अभी तक भाषाओंके विकासका वह सोपान था। कुछ विभक्ति प्रत्यय बदल देनेपर ही अेक भाषाकी रचना दूसरी भाषाकी रचना बन सकती थी।

बंगला भाषाके विकासके सम्बन्धमें जयदेवके "गीत गोविन्द"का भी अुल्लेख किया गया है। 'गीत गोविन्द' संस्कृतमें प्राप्त है और यह बारहवीं सदीके अुत्तरार्द्धकी रचना है। भला अेक अितने सुप्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थका बंगला भाषासे क्या सम्बन्ध हो सकता है, यह पूछा जा सकता है। पर सम्बन्ध यों निकल आता है कि कुछ विद्वान जैसे जर्मन विद्वान पिशल और मजुमदार यह सन्देह करते हैं कि "गीत गोविन्द" पूर्वमें प्रचलित पश्चिमी अपभ्रंशमें या प्राचीन बंगलामें लिखा गया था और अुसे बड़ी जनप्रियता प्राप्त हुअी थी। पूर्वोल्लिखित "प्राकृत पैंगल" में जयदेवसे मिलती जुलती कुछ अवहत्त कविताअें पायी गयी हैं। अिससे अिस अनुमानकी पुष्टि होती है।

अैसा अनुमान किया जाता है कि जयदेवकी लिखी हुअी कविताअें पंडित समाजको अितनी पसन्द आयीं कि अुन्होंने अुसे थोड़ा बहुत परिवर्तित करके संस्कृत बना दिया। स्मरण रहे कि अुस समयकी लौकिक भाषा संस्कृतसे बहुत दूर नहीं थी और अुसमें मामूली परिवर्तन करनेपर वह संस्कृत बन सकती थी। अिस सम्बन्धमें अुदाहरणके तौरपर यह बताया गया है कि जैसे प्राचीन अिटैलियनको थोड़ा बदलनेपर ही वह लैटिन बन सकती थी, अुसी प्रकारसे अुस समयकी लौकिक-भाषामें की गयी रचना स्वल्प परिश्रमसे संस्कृत बन सकती थी।

जयदेवकी ये संस्कृती कृत कविताअें सारे भारतमें "गीतगोविन्द" नामसे प्रसिद्ध हुअीं। वे संस्कृत साहित्यमें अनूठी मानी जाती हैं। बादमें जब सोलहवीं शताब्दीमें वैष्णव धर्मका जोर हुआ, तो "गीतगोविन्द" को धार्मिक महत्व प्राप्त हुआ। यह रचना अुन दिनों की हालतको देखते हुअे बहुत जल्दी प्रसिद्ध हुअी और १४९८ तक अुसे अितनी मर्यादा प्राप्त हो गयी कि अेक अभिलेखमें यह अुल्लेख मिलता है कि पुरीमें जगन्नाथकी मूर्तिके आगे अिसका गायन जरूरी था।

यह बताया गया कि जयदेवकी शैलीका बंगला गीति कवितापर बहुत अधिक असर पड़ा; साथ ही यह भी माना गया कि जयदेवने जिस भाषामें मौलिक रूपसे अिसकी रचना की थी, अुसमें वह हमतक नहीं पहुंच सकती थी। संस्कृतमें हो जानेके कारण ही अुसकी रक्षा हुअी। जो कुछ भी हो 'गीतगोविन्द' को बंगला भाषाके अितिहासमें अूपर बताये हुअे कारणोंसे बहुत महत्व है। यह भी बताया गया है कि यदि "गीतगोविन्द" अपने मौलिक लौकिक रूपमें होता, तो वह हम तक पहुंचता भी तो बहुत परिवर्तित होकर, जैसा कि बादके कअी ग्रंथोंकी दशा हुअी है। जो भी नकल करता गया, वही समयानुसार अुसकी भाषाका "सुधार" करता गया, नतीजा यह हुआ कि प्राचीन बंगलाकी रचनाअें अितनी परिवर्तित होकर हमारे सामने आयीं कि अुन्हें प्राचीन करके पहिचानना असम्भव है।

चर्यापदोंके सम्बन्धमें यह बात नहीं हो सकी या "श्री कृष्ण कीर्तन" का अिस प्रकार आधुनिकीकरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं हो सका, अिसका कारण जैसा कि मुनीति बाबूने बताया है, यह था कि ये रचनाअें पुरानी पोथियोंमें दबी पड़ी रहीं और नकल करनेवाले सुधारकोंके प्रकोपसे बच गयीं। अिस प्रकार "श्रीकृष्ण कीतन" हमें मौलिक रूपमें प्राप्त है। अिसके रचयिता चंडीदास हैं। यहींसे हम बंगला साहित्यके अैसे सोपानमें प्रवेश करते हैं, जहांसे अुसका बंगला होना किसी प्रकार संदिग्ध नहीं। अस्तु आगेके अितिहासका वर्णन करनेके पहले हम अेक बार फिर पीछेकी ओर लौटेंगे।

"डाकार्णव" नामका अेक ग्रंथ अिस प्रसंगमें अुल्लेखनीय है। डाक नामके किसी व्यक्तिने या सम्भव है बहुतसे व्यक्तियोंने अिसकी रचना की। डा० दिनेश सेनके अनुसार अिसमें दसवीं शताब्दीकी बंगलाका अुदाहरण मिलता है। अैसा मालूम होता है कि अिस ग्रन्थके कअी रूप प्राप्त हैं। कुछ पंक्तियां अैसी हैं, जिसका कोअी अर्थ ही पल्ले नहीं पड़ता। शायद अिसके रचयिता बौद्ध थे। मजेकी बात यह है, कि अिसमें बौद्ध पुटके साथ-साथ चार्वाककी प्रसिद्ध अुक्तियोंके ढंगकी वाणी भी मौजूद है। धार्मिक ढंगके वचन अिस प्रकार हैं:--

धर्म करिते जबे जानि, पाखरि दिया राखिब पानि।

गाछ रुअिले बड़ों धर्म .....

जे देअि भातशाला पानिशालि, से न जाअि यमेर पुरी।

अर्थात् "जो धर्म करना चाहता है, वह पोखरा खुदावे। पेड़ लगाना बहुत बड़ा धर्म है। जो अन्नक्षेत्र या पौशाला स्थापित करता है, वह यमपुरी नहीं जाता।"

यह स्पष्ट है कि यहाँ यमपुरीसे मतलब नरकसे है। अूपर जो वचन अुद्धृत किये गये, वे धार्मिक ढंगके हैं, परन्तु अिन्हें देखिये--

भालो द्रव्य जखोन पाबो, कालिकारे तुलिया ना थोबो।
दधि दुग्ध करिया भोग, औषध दिया खंडाबो रोग।
बले डाक अेओ संसार, आपन मअिले किसेर आर ?

अर्थात् "जब अच्छा माल मिलेगा, तो अुसे कलके लिअे नहीं रख देना है। दही-दूध भोग करके यदि कोअी रोग हो गया, तो दवासे अुसे मारेंगे, डाक कहता है कि यही तो संसार है, जब आप ही मर गये, तो फिर और कौन-सी बात है ?"

यह स्पष्ट है कि डाकके वचनोंमें हर तरहका संग्रह है और वह किसी अेक मतवादकी पुस्तक नहीं। डाकके वचनोंकी तरह खनाके वचन भी प्राचीन बंगला-साहित्यकी अेक अमरनिधि अिस अर्थमें है कि अब अितनी शताब्दियोंके बाद भी अुनके वचन लोगोंमें कहावतोंके रूपमें अनायास प्रचलित हैं। हाँ, वे अपने प्राचीन रूपमें प्रचलित न होकर सुधरे हुअे रूपमें प्रचलित हैं। खनाके वचन मुख्यतः खेती सम्बन्धी हैं। कुछ नमूने अिस प्रकार हैं—

दिने रोद राते जल, ताते धानेर बाडे बल।

याने यदि दिनको धूप रहे और रातको पानी बरसे, तो धान जोर करता है।

यदि बरे आगने, राजा नामेन मांगने

याने **यदि अगहनमें बरसे, तो राजा रोटीको तरसे।**

अूपरके अुदाहरणोंसे यह ज्ञात होगा कि खनाके वचन क्यों जनप्रिय थे। मकान बनानेके सम्बन्धमें भी खना अपनी राय बता गये हैं--

पूबे हांस, पश्चिमे बांस
अुत्तरे बाग, दक्खिणे फांक

याने पूरबकी तरफ तो हंस हो याने तालाब रहे, पश्चिमकी तरफ बांसोंकी झाड़ रहे, अुत्तरमें बाग हो और दक्षिणमें खुला रहे।

अुस युगकी सामाजिक धारणाअें भी डाकके वचनोंमें पढ़ी जा सकती हैं, जैसे अेक स्थानमें लिखा है कि "जब पति घरमें बैठता है और स्त्री बाहर बैठकर मुस्कराती रहती है, अैसी स्त्रीके साथ जिसका वास है, अुसके जीवनकी कोअी आशा नहीं। जो स्त्री घरके अन्दर चूल्हा होनेपर भी बाहर खाना पकाती है, बालोंको कुछ फुलाकर बांधती है, बार-बार अुलट-अुलट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर पीछेकी ओर देखती है, राहगीरको तिरछी निगाहसे देखती है, अित्यादि; अुस स्त्रीको घरमें नहीं रखना चाहिये।"

डाकके वचनोंमें दवा-दारू, पथ्य-कुपथ्यका भी वर्णन है, जैसे अेक बारहमासी है, जिसमें कहा गया है कि कातिकमें जिमीकन्द और अगहनमें बेल, पूसमें कांजी, माघमें तेल, फागुनमें अदरक, चैतमें कड़वी चीज वैशाखमें नीम और नालिता नामकी अेक वस्तु, जेठमें मट्ठा और आषाढ़में दही, सावनमें खील, भादोंमें ताड़ और आश्विनमें खीरा लाभदायक होता है।

यह द्रष्टव्य है कि साहित्य अुस समय लोगोंकी किसी न किसी प्रकारकी आवश्यकताकी पूर्ति करता रहा है। खना और डाकके वचन अितने अधिक प्रचारित हैं कि अिसके साथ किसी और रचनाकी अिस सम्बन्धमें तुलना करना अुचित नहीं ज्ञात होता।

खनाको अुज्जयिनीके राजा विक्रमादित्यके दरबारके वराहमिहिरकी स्त्री बतलाया गया है, पर यह बात सही नहीं मालूम होती। अिसी प्रकार डाक अेक ग्वाला माना गया है, जो सम्भव है, सही हो। असली बात यों है कि अिनका पूर्ण परिचय तो क्या कुछ भी परिचय अुपलब्ध नहीं।

बंगालमें हिन्दू धर्मके साथ-साथ बौद्ध धर्मका भी बहुत दिनों तक जोर रहा। पर धीरे-धीरे बौद्ध धर्मका प्रचार घटने लगा और अुसके स्थानपर हिन्दू धर्मका प्रचार बढ़ने लगा। साहित्यमें अिसका अेक प्रभाव यह हुआ कि कअी बौद्ध ग्रंथ हिन्दू धर्म-ग्रंथोंके रूपमें बदल गये। बुद्धको शिवके रूपमें बदल दिया गया। और धर्मके स्थानपर धर्मठाकुरकी पूजा होने लगी। संघको शंखमें बदल दिया गया। पर अितना बदलनेपर भी जैसा कि श्री दिनेश सेनने बताया है, साहित्यमें कअी अैसे अंश रह गये, जिनसे प्रमाणित होता है कि ये ग्रंथ मौलिक रूपसे बौद्ध ग्रंथ थे। फिर भी अिन असंगतियोंके बावजूद धर्मठाकुरकी पूजा प्रचलित हुअी और धर्ममंगल आदि कअी ग्रंथ प्रचलित रहे, जिनमें धर्मठाकुरकी पूजाका प्रचार किया गया।

धर्मठाकुरकी पूजाके सम्बन्धमें शून्यपुराणमें अेक पंक्ति अैसी आती है, जिससे स्पष्ट हो जाता है कि धर्मराज यज्ञकी निन्दा करते हैं। अिसके अलावा और भी अन्य अैसे अुल्लेख हैं, जिनसे अिस पुराणपर चढ़े हुअे बौद्ध रंगका पता लगता है। अेक स्थानपर कहा गया है "सिंहले श्री धर्मराज बहुत सम्मान" यानी सिंहलमें श्री धर्मराजका बहुत सम्मान है। अिससे स्पष्ट हो जाता है कि अिस पुराणका सम्बन्ध पहले किस धर्मसे था।

शून्यवाद बौद्धधर्मसे अुत्पन्न बल्कि बादके दिनोंमें अुसीके अन्तर्गत अेक मतवाद था, जिसमें सब चीजोंकी अुत्पत्ति शून्यसे बतायी गयी है। धर्ममंगलमें अिसी मतवादका प्रचार मिलता है। धर्मठाकुरके मन्दिरोंमें हाड़ी, डोम आदि कथित नीच जातिके लोग पुरोहित थे, और हम पहले ही बतला चुके हैं कि ये कथित नीच जातिके लोग प्राक् आर्य युगके हैं; अिससे मैं समझता हूं धर्मठाकुरकी पूजामें केवल बौद्ध ही नहीं, कुछ प्राक्आर्य या आर्येतर प्रभाव भी होंगे।

अेक बहुत मजेकी बात यह है कि यद्यपि धर्मठाकुरकी पूजाको सम्पूर्ण रूपसे हिन्दू साँचेमें ढाल दिया गया, फिर भी डा० दिनेश सेनने बतलाया कि कमसे कम १६४० अी० तक ब्राह्मणोंको यह हिम्मत नहीं हुअी कि धर्मठाकुरके अुपासकोंके साथ विशेष हेल-मेल बढ़ावें। बात यह है कि अुस समय तक धर्मठाकुरकी पूजा हिन्दू धर्मके बाहर समझी जाती थी। मैं समझता हूं कि अिस बातकी व्याख्याकी जरूरत है कि धर्मठाकुरकी पूजाको प्रायः सम्पूर्ण रूपसे हिन्दू बना लेनेपर भी ब्राह्मण अुससे अलग क्यों रहे तथा वे अैसा क्यों समझते रहे कि अिन अुपासकोंके साथ मिलनेसे धर्म नष्ट हो जाअेगा या जाति चली जाअेगी। मेरी समझसे अिसकी व्याख्या यही हो सकती है कि सिद्धांत रूपसे धर्मठाकुरकी पूजा बहुत कुछ हिन्दू हो जानेपर भी अिसके पुरोहित वर्गके साथ ही अिसका वातावरण अेक बहुत बड़ी सीमा तक अहिन्दू रहा, अिसी कारण ब्राह्मण अिससे अलग रहते रहे।

बंगालमें धर्मपूजाके सबसे बड़े प्रतिपादक रामाअी पंडित माने गये, जो शून्यपुराणके रचयिता थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामाअी पंडितका जन्म वैशाख शुक्ल पंचमीके दिन हुआ था, पर वर्षका ठीक पता नहीं। कुछ प्रमाण अैसे मिले हैं, जिनसे यह कहा जा सकता है कि वे दशवीं शताब्दी अी० के अन्तमें पैदा हुअे। रामाअी पंडितके वंशधर यह दावा करते हैं कि रामाअी ब्राह्मण थे, पर यह बात विश्वसनीय नहीं। रामाअी पंडितके वंशधर अब भी मैना नामक स्थानके अेक मंदिरमें पौरोहित्य करते हैं और वे डोम पंडित कहलाते हैं। अुनकी अिज्जत किसी ब्राह्मणसे कम नहीं, परन्तु वे ब्राह्मण नहीं माने जाते। कअी बार अैसा हुआ कि किसी संतकी मर्यादा बढ़ानेके लिअे अुसे ब्राह्मण बता दिया गया, पर वस्तुस्थिति कुछ और ही थी।

रामाअी पंडित ब्राह्मण थे, तो अुनके वंशधर डोम कैसे हो गये, अिसकी व्याख्या करनेके लिअे धर्म-ठाकुरके अुपासकोंमें कअी प्रकारकी अनुश्रुतियां प्रचलित हैं। अेक यह कि स्वयं धर्मठाकुरने रामाअी पंडितको शाप दिया कि अूंची जातिका कोअी व्यक्ति तुम्हारा पानी नहीं पिअेगा। दूसरी यह कि रामाअी पंडितने अपने पुत्र धर्मदासको यह शाप दिया था कि तुम जातिच्युत होकर डोम हो जाओ। यह कहीं नहीं बताया गया कि आखिर यह शाप किस अपराधपर दिया गया। अिन बातोंसे यह स्पष्ट है कि रामाअी पंडितके ब्राह्मण होनेवाली बात मनगढ़न्त और बादकी अुपज है। शून्यपुराणमें जो कहीं-कहीं रामाअी पंडितके साथ द्विज शब्द आता है, वह क्षेपक है।

रामाअी पंडितका कोअी प्रामाणिक जीवन-चरित्र नहीं मिलता। यह कहा जाता है कि अुन्होंने ८० वर्षकी अुम्रमें शादीकी और अुनके धर्मदास नामसे अेक पुत्र हुआ, जिसके चार पुत्र हुअे। शून्य-पुराणमें आदिम शून्यका वर्णन अिस प्रकार किया गया है–

नही रेख, नही रूप, नही छिल वन्न, चिन
रवि, शशि नहि छिल, नही छिल राति दिन।
नहि छिल जल, थल, नहि छिल आकाश,
मेरु मन्दार ना छिल, ना छिल कैलाश।
नहि छिष्टि छिल, आर नहि सुर, नर,
ब्रह्मा, विष्णु ना छिल, न छिल आंबर।

जो अुद्धरण दिया गया, अुसमें यदि यह बता दिया जाअे कि 'छिल' शब्दका अर्थ क्या है तो अुसे समझनेमें कोअी विशेष दिक्कत न होगी।

शून्य पुराणमें शिव, विष्णु, ब्रह्मा आदि पौराणिक देवताओंके नाम आते हैं, पर अुनका चेहरा बदला हुआ है और अुनके काम भी भिन्न हैं। अिस पुस्तकमें कुछ गद्य-अंश भी आते हैं, जिनसे अुस समयकी भाषाका और भी विशद् ज्ञान होता है। बादको क्षेपकके रूपमें अिसमें अेक अध्याय जोड़ा गया, जिसमें बौद्ध धर्मके पतन, हिन्दू-धर्मके अुत्थान, यहाँ तक कि ब्राह्मणों और मुसलमानोंकी अेक लड़ाअीका भी अुल्लेख आता है। यह लड़ाअी जाजपुरमें हुअी बतायी जाती है। अिस युद्धके वर्णनकी विशेषता यह है कि अिसमें मुसलमानोंको देवी और देवताओंका अवतार बतलाया गया है, जो ब्राह्मणोंको अिसलिअे सजा देने आये कि अुन्होंने सत-धर्मियों याने बौद्धोंपर अत्याचार किया था।

अैसा अनुमान है, यह क्षेपक ३०० वर्ष बाद सहदेव चक्रवर्तीके द्वारा रचकर जोड़ा गया। सहदेव चक्रवर्ती धर्ममंगलके अन्यतम रचयिताओंमें माने गये हैं। अिस युद्ध-वर्णनमें यह बताया गया है कि धर्म जब वैकुंठमें ब्राह्मणोंके अत्याचारोंसे दुखी हुअे, तो वे यवनका रूप धारण कर, काली टोपी लगाकर खुदा नाम धारण कर आगे बढ़े। सब देवता पायजामा पहिने हुअे थे। ब्रह्मा मुहम्मद बन गये, विष्णु पैगम्बर बने, शिव आदम बने, गणेश गाजी बने, कार्तिक काजी बने, नारद शेख बने और अिन्द्र मौलाना बने। चंडिका हयाबीबी बनी और पद्मावती नूर बीबी बनी। सबने मिलकर मन्दिरों और मठोंको लूट लिया।

अिसमें अिस जाजपुरकी लड़ाअीका अुल्लेख है, जिसका कुछ अैतिहासिक पता नहीं मिलता। जो कुछ भी हो अिस अुल्लेखकी अन्तर्निहित बातें सत्य मालूम देती हैं। अिसकी पहली बात तो यह है कि बंगालमें ब्राह्मणोंने बौद्धोंपर अितना अत्याचार किया कि जब मुसलमान आये, तो बौद्धोंने मुसलमानोंका साथ दिया। विदेशी मुसलमान त्राणकर्ताके रूपमें नहीं आये थे, अिसलिअे अुनका भी दमन-चक्र चला, पर बौद्धोंने हिन्दू बननेके बजाय मुसलमान बनना स्वीकार किया। यही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण है कि बंगालमें मुसलमानोंकी संख्या अधिक हो गयी। बौद्ध हिन्दुओंसे बहुत चिढ़े हुअे थे।

पहले ही धर्ममंगल कविताओंका अुल्लेख कर चुके हैं। यह अेक संग्रह है। जिन कवियोंकी कविताअें अिसमें संग्रहीत हैं, अुनमें मयूर भट्ट सबसे प्राचीन हैं। मयूर भट्टका काल निर्णय अभी नहीं हुआ, पर वे मुसलिम विजयके कुछ पहले रहे होंगे। मयूर भट्टके संबंधमें कहा जाता है कि वे ब्राह्मण परिवारमें थे। धर्ममंगल सम्बन्धी कविताओंमें ग्यारहवीं सदीके अेक राजा लाअूसेनकी वीरताकी कहानियाँ वर्णित हैं। यह कहानी मोटे तौरपर अिस प्रकार है। सोम घोष नामका गौड़ेश्वरके राजमहलमें अेक नौकर था। वह राजाका प्रियपात्र हो गया और अुसे ठाकुरमें अेक जागीर मिली। सोम घोषका लड़का अिचाअी घोष कालीका पूजक था। वह अेक नामी योद्धा बन गया। धीरे-धीरे वह अितना शक्तिशाली हो गया कि अुसने गौड़ेश्वरके विरुद्ध विद्रोह कर दिया। सोम घोष लड़केको समझाते रहे, पर अुसने पिताकी बात नहीं मानी। मजबूरीसे गौड़ेश्वरने अुसके विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया और मैनागढ़के राजा कर्णसेनको अुसके विरुद्ध लड़नेको भेजा। कर्णसेन युद्धमें हार गया और अुसके चार पुत्र मारे गये। जब वह हारकर अपनी राजधानीमें पहुँचा, तो रानी भी पुत्रशोकसे मर गयी। अिसी हालतमें कर्णसेन गौड़ेश्वरके पास गया, तो गौड़ेश्वरको बड़ा दुःख हुआ और अुसका दुःख दूर करनेके लिये गौड़ेश्वरने अपनी सुन्दरी सालीका ब्याह कर्णसेनसे कर दिया। अिसी विवाहसे लाअूसेन अुत्पन्न हुआ। जब लाअूसेन बड़ा हुआ, तब अुसने कामरूपके राजा तकको हराया। लाअूसेनने गौड़ेश्वरकी आज्ञासे राजा हरिपालको भी हराया। हरिपालपर चढ़ाअीका कारण यह था कि अुसने गौड़ेश्वरसे अपनी कन्याकी शादी करनेसे अिनकार किया था। अिस लड़ाअीमें स्वयं राजकुमारी सेनाका संचालन कर रही थी।

पर वह हार गयी और यद्यपि लड़ाअीका आरम्भ गौड़ेश्वरको कन्यादान करनेसे अिनकार करनेपर हुआ था, फिर भी गौड़ेश्वरने विजयकी खुशीमें राजकुमारीका ब्याह लाअूसेनसे कर दिया। लाअूसेन अितना प्रबल हो गया कि गौड़ेश्वरके प्रधानमंत्रीने भी अुसके विरुद्ध षड्यंत्र करना शुरू किया। काव्यमें अिन षड्यंत्रोंके लम्बे वर्णन भरे पड़े हैं और यह दिखाया गया कि किस प्रकार लाअूसेन हर बार बचते रहे। धर्मठाकुरको लाअूसेनने किस प्रकार अत्यन्त कठिन व्रतोंसे रिझाया, अिसका भी वर्णन बहुत विस्तृत है। लाअूसेनके अतिरिक्त कालूडोमकी स्त्री लोखा डोमनी और अुसके पुत्र शककी भक्ति और त्यागकी कहानी भी अिसमें आती है। लाअूसेनके चरित्रको अुभारकर सामने लानेके लिअे अुसे जिन प्रलोभनोंका सामना कराया जाता है अुससे भी अुस युगके जीवन, विशेषकर राजाओंके जीवनपर रोशनी पड़ती है।

लाअूसेन, अिचाअी घोष आदि व्यक्ति अैतिहासिक थे और अुनके राजमहलोंके खंडहर अभी देखे जा सकते हैं। जैसा कि हम पहले बता चुके, धर्ममंगलके कवियोंमें मयूरभट्ट सबसे प्राचीन हैं और डा० दिनेश सेनके अनुसार मयूर भट्टका समय बारहवीं शताब्दी है। भाषाकी दृष्टिसे धर्ममंगलकी कविताअें जिस रूपमें हमें मिलीं, वे बादकी ठहरती हैं, परन्तु अिस कारण कि हमें जो रूप देखनेको मिला वह बहुत कुछ परिवर्तित और आधुनिकीकृत है। आधुनिकीकरणके बावजूद अिन कविताओंमें अैसे आन्तरिक प्रमाण मौजूद हैं, जिनसे ज्ञात होता है कि अुनका कमसे कम अेक बहुत बड़ा अंश, अुससे कहीं प्राचीन है। अध्ययनसे यह भी ज्ञात होता है कि मौलिक रूपमें वे और प्राचीन रहे होंगे।

"माणिकचन्द्र राजार गान" ग्यारहवीं शताब्दीकी रचना मालूम पड़ती है। कविताकी दृष्टिसे यह कोअी अूँची रचना नहीं। अिसमें हाड़ी सिद्धके करिश्मोंका वर्णन है और अलिफ लैलाकी तरह यत्र-तत्र असम्भव वीरताका वर्णन। देवता और मनुष्य हेलमेलसे विचरते और रहते हुअे दिखाये जाते हैं। अिन असम्भव बातोंके होनेपर भी जहाँ-तहाँ समसामयिक समाजके सम्बन्धमें सूचनाअें प्राप्त हो जाती हैं, जैसे अुन दिनों व्यापार विनिमयसे होता था और लगान कौड़ियोंमें अदा किया जाता था। धनी लोग सोनेकी थालीमें पचासों तरहके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पकवान खाते थे। अिस पुस्तककी अुपमाओं आदिसे भी डा. सेन यह निष्कर्ष निकालते हैं कि अिसके कवि संस्कृत-साहित्य आदिसे अपरिचित थे। अुदाहरण स्वरूप राजा गोपीचंद्रकी रानीके दाँतोंकी अुपमा शोलेसे दी जाती है। अुस समयकी भाषाका कुछ नमूना यों है--

जिस समय गोपीचंद्र यती बनकर अपनी स्त्री अुद्नाको छोड़ने लगता है, तो वह कहती है--

ना जाअियो ना जाअियो राजा दूर देशान्तर,
कारे लागिया बान्दिलाम शीतल मन्दिर घर।
निदेर स्वपने राजा हबौ दरिशन,
पालके फैलाअिब हस्त नाओी प्रानेर धन
आमिनारि रोदन करिब खाली घर मन्दिरे
अमाके सगे करि लअिया जाव।

याने "हे राजा दूर देशान्तरमें चले न जाओ, जो तुम चले जाओगे, तो मैंने किसके लिअे शीतल मन्दिर घर बनवाया। जो तुम चले जाओगे तो नींदमें कभी कभी दर्शन हो जाया करेगा, पर जब नींदमें पलंगपर हाथ डालूँगी, तो देखूँगी कि मेरे प्राणोंका धन जा चुका। मैं अबला नारी खाली घरमें रोती रहूँगी, मुझे साथ ले चलो।"

बादके साहित्यमें कहीं-कहीं राजा गोपीचन्द्रका अुल्लेख गोविंदचन्द्रके रूपमें किया गया है। बादके युगके दुर्लभ मल्लिक नामक अेक कविने भी अिसी नामसे राजाका अुल्लेख किया है। दुर्लभ मल्लिकके काव्यमें शून्यवादका प्रभाव यथेष्ट मात्रामें देखा जा सकता है। अिसमें हाड़िपासिद्ध शून्यवादका प्रचार करते हुअे दिखाया गया है। राजा गोपीचन्द्रके संसार-त्यागकी कथा बहुतसे कवियों द्वारा गायी गयी, यहाँतक कि दूसरी भाषाओंमें भी अुसकी प्रतिध्वनि सुनी जा सकती है।

कमसे कम बंगालमें तो शैव मतवादके आगे ही बौद्ध धर्म परास्त हुआ, अिसलिअे शिवके सम्बन्धमें भी प्राचीन बंगला साहित्यमें बहुत अुल्लेख हैं। शिवके सम्बन्धमें जो कथाअें अन्यत्र प्रचलित हैं, अुनके अतिरिक्त शिवको अक्सर प्राचीन बंगला कविताओंमें धानकी खेतीमें हाथ बँटाते हुअे और स्वयं खेती करते हुअे दिखलाया गया है। शून्य पुराणमें भी अेक प्रसंग आता है, जिसमें शिवसे कहा जाता है- भीखपर जीवन निर्वाह करनेके कारण अक्सर तुम्हें भूखों मरना पड़ता है, अिसलिअे तुम अैसा क्यों नहीं करते कि अेक अच्छी-सी जमीन लेकर खेतीमें जुट जाते। यदि अच्छा खेत न मिले तो पानी देकर अुसे ठीक कर सकते हो। जब घरमें चावल होगा, तो रोज खाना खानेमें आनन्द आअेगा। भगवन् भूखकी ज्वाला कबतक सहोगे? तुम कपासकी खेती क्यों नहीं करते? बाघकी खाल पहिनकर कबतक चलोगे? अपने शरीरपर भभूत क्यों लगाते हो? अिसके बदले सरसों और तिलकी खेती क्यों नहीं करते, जिससे लगानेके लिअे तेल मिल जाय? तरकारियाँ भी काफी बो लेना। केला लगाना न भूलना, जिससे कि धर्मठाकुरकी पूजाके सब सामान मिल जाअें।

बादके युगके साहित्यमें शिवका यह खेतिहर रूप बार-बार आता है और शिव खेतीके सम्बन्धमें बहुत व्यौरेवार अुपदेश देते हैं, जैसे कब खेत तैयार किया जाअे, कैसे किया जाअे, निराअी कैसे की जाअे, अित्यादि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री उदयशंकर भट्टसे अेक भेंट

: श्री प्रो. रामचरण महेन्द्र, अेम. अे. :

कवि और नाटचकार पं. उदयशंकर भट्ट शहरमें आ रहे हैं, यह जानकर मन-मयूर नृत्य कर अुठा। मनमें आया, अेक दिन अिस साहित्य-साधकके साथ रहकर कटेगा तो हिन्दी भाषा, साहित्य, अेवं स्वयं अुनके नाटकों अेवं कविताओंके विषयमें अनेक अुपयोगी तत्त्वों-पर प्रकाश पड़ सकेगा, भ्रान्तियोंका निवारण होगा, और भविष्यके लिअे पथ-निर्देश भी। स्टेशनपर ही भट्टजीसे भेंट हो गयी और सौभाग्यकी बात देखिये, 'अिन्टरव्यू'का समय भी प्राप्त हो गया। भट्टजी किसी जातीय धार्मिक सम्मेलनमें पधारे थे। अतः, सम्मेलनके कार्यमें व्यस्त रहते हुअे भी कुछ अवकाश मुझे प्राप्त हो गया। अिस साहित्यिक वार्तालापमें मुझे जो ज्ञान प्राप्त हुआ वह अिस प्रकार है :—

भट्टजीने लगभग २० बड़े नाटक अेवं ३५-४० अेकांकी नाटकोंका निर्माण किया है। अतः मैंने प्रथम प्रश्न किया, आपके समग्र साहित्य (कविता, नाटक, अुपन्यास) का मूल भाव क्या है ?

भट्टजी बोले, "कविता, नाटक, अुपन्यास विचार तथा दृष्टिकोणकी अभिव्यक्तिके भिन्न-भिन्न माध्यम हैं। कवितामें भावनाका प्राधान्य होनेके कारण कला और कल्पनाका संक्षिप्तिकरण होता है। नाटक अपने रंगमंचीय सौन्दर्यके साथ जीवनकी विस्तृत अभि-व्यक्तिका माध्यम है। अुपन्यासमें और भी अधिक विस्तार है, पर अेक सुविधा यह है कि अुपन्यासकारको स्वयं भी कुछ न कुछ कहनेकी स्वच्छन्दता है। नाटकोंमें अुसे स्वयं कहनेका अधिकार नहीं। मुझे अपनी भावनाकी तीव्रता और विस्तारकी आवश्यकताके अनुसार समय-समयपर भिन्न-भिन्न माध्यम अपनाने पड़े हैं। अपने रागतत्त्वसे सम्मिलित होनेके कारण जो दृश्य जगत् या जीवनके प्रतीक आ जाते हैं, अुन्हें मैं कविताके द्वारा अभिव्यक्त करता हूँ। जहाँ-जहाँ रागात्मक तथ्योंका सम्बन्ध है, अुसके लिअे कविताका माध्यम ही मुझे रुचा है। जहाँ-जहाँ सूक्ष्मता अधिक है, भावोद्वेग और हृदयाकर्षण है, जीवनके शाश्वत सत्य जो हमको रागोंसे बाँधे हुअे हैं, अुनके चित्रणका प्रश्न है, मैंने कविताका माध्यम ही पसन्द किया है। जहाँ जीवन और समाजके प्रति मेरा यथार्थवादी दृष्टिकोण रहा है, वहाँ मैंने नाटक लिखे हैं। जहाँ मुझे जीवन समस्याओंके चित्रणमें विस्तारकी आवश्यकता हुअी, वहाँ अुपन्यास लिखना प्रारंभ किया। मेरे 'वह जो मैंने देखा' (दो भाग) तथा 'नये मोड़'का विस्तार काफी बढ़ गया है।"

भट्टजीने आधुनिक काव्यमें भी समुचित योगदान दिया है। कहीं रोमांटिक हैं, तो कहीं प्रगतिशील, कहीं दार्शनिक गुत्थियोंमें अुलझे हुअे। "राका", "मानसी", "विसर्जन" 'यथार्थ और कल्पना', 'युगदीप'– अित्यादि काव्य-संग्रह महत्त्वपूर्ण हैं। वस्तुतः, मैंने प्रश्न किया, कवितामें आपका क्या दृष्टिकोण रहता है ? आप किन विषयोंमें तन्मय हुअे हैं ?

वे बोले, "मैं जीवन, समाज, और सृष्टिके प्रति यथार्थवादी रहा हूँ। कवितामें कल्पनाको अुतने ही अंशोंमें स्वीकार करता हूँ, जितनेमें जीवनके यथार्थको वह विकृत न कर अुसे छविमय बना दे। जहाँ मुझे जीवनके कटु सत्योंके निर्देशका अवसर मिला है, वहाँ मैंने मुक्त छन्दोंका प्रयोग किया है, जैसे "अमृत और विष"में। विषयोंकी दृष्टिसे, सृष्टिकी शोभा, प्राकृतिक सौन्दर्य, नारीके शुभ्र और सात्त्विक रूपने मुझे आकृष्ट किया है। अधिकसे अधिक सृष्टिके सुन्दरतम रूपकी खोजमें मेरा मन रहा है। मैं सौन्दर्यका पुजारी हूँ किन्तु अपनी रचनाओंमें मैंने आन्तरिक सौन्दर्यका विशेष ध्यान रखा है। मैं बाह्य सौन्दर्यकी अुपेक्षा नहीं करता, आन्तरिक सौन्दर्यकी विशेषताओंको देखता हूँ। मैं कुरूपके रूपकी प्रतिष्ठा करनेके पक्षमें नहीं; हाँ, वानमें अन्तस–सौन्दर्यको खोजनेका प्रयत्न करता हूँ। कवितामें अिस प्रकारकी जिज्ञासा मिलती है। जैसे "युगदीप"की दो पंक्तियाँ देखिये—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"विजयनि ! यह वर दान तुम्हारा
आज मुझे अभिशाप बन गया।"

मैंने न केवल सौन्दर्य प्रत्युत दार्शनिक तत्त्वोंको भी छन्दोंमें बांधनेका प्रयत्न किया है; जैसे–"विसर्जन" की ये पंक्तियाँ लीजिये– "पंख खोले अुड़ रहा है, आदि मेरा, अन्त मेरा"। गीतोंमें मैं गेय तत्त्वका विशेष ध्यान रखता हूँ। मेरे प्रतीक व्यक्तिसे सम्बन्धित न होते हुअे सामान्य (General) हैं।"

मेरा अेक प्रश्न था, "अिस राजनीतिके युगमें रहकर क्या राजनैतिक समस्याओंसे आप प्रभावित नहीं हुअे हैं?"

वे बोले, "राजनीतिसे मैं अछूता नहीं रहा हूँ। मुक्तवृत्तकी कविताओंमें मैंने चीन और जापानके सम्बन्धोंपर अेक लम्बी कविता लिखी है– "लुओ शुओ शंकाओं"। कुछ वर्णनात्मक कविताअें भी लिखी हैं, जैसे "रिफ्यूजी", "सैनिक", "बंगालका अकाल" अित्यादि। ये सब यथार्थवादी हैं। अपनी "५० वर्षका सिंहावलोकन" कवितामें मैंने गत पचास वर्षकी राजनैतिक घटनाओंका चित्रण किया है। मेरी "यथार्थ और कल्पना" में राजनैतिक क्रान्तिके विस्फोटका चित्रण है।

भट्टजीका मुख्य क्षेत्र नाटक है। 'विक्रमादित्य', दाहर, अम्बा, सगर विजय, मत्स्यगंधा, विश्वामित्र, कमला, राधा, अन्तहीन अंत, मुक्तिपथ, शक विजय, कालिदास, मेघदूत, विक्रमोर्वशी नाटकोंके अतिरिक्त आपने ५०-६० अेकांकी नाटकोंकी रचना की है। मैं अुनके नाटकोंके सम्बन्धमें जाननेको अुत्सुक था। अतः, मैंने पूछा, "आप अपने नाटकोंमें किन-किन तत्त्वोंका विशेष ध्यान रखते हैं? अपने नाटकोंके विषयमें कुछ बतलाअिये?"

वे बोले, "पौराणिक अेवं अैतिहासिक विषयोंसे मैं प्रभावित हुआ हूँ। मेरे नाटक-जीवनका प्रारंभ पौराणिक नाटकोंसे हुआ है। बड़े नाटक प्रायः चरित्र प्रधान हैं। चरित्रोंके चुनावमें मैं किसी वैशिष्ट्यका ध्यान रखता हूँ। मेरी दूसरी दिलचस्पी तत्कालीन वातावरण और पृष्ठभूमिकी सचाअी है। आप देखेंगे "दाहर" में मैंने परिस्थितिकी विवशताका चित्रण किया है, कमजोरियोंपर प्रकाश डाला है। यह दिखाया है कि शत्रुने कैसे अुन दुर्बलताओंसे लाभ अुठाया। मेरे "दाहर" और "विक्रमादित्य" वियोगान्त शैलीसे प्रभावित प्रथम नाटक हैं।"

मैंने पूछा, "शैलीमें आप संस्कृत साहित्य अथवा पाश्चात्य किस साहित्यके सिद्धान्तोंसे प्रभावित हैं?"

वे बोले, "संस्कृतकी अपेक्षा मैं ग्रीक तथा अंग्रेजी नाट्य सिद्धान्तोंसे प्रभावित हुआ हूँ। शैक्सपीयरके सीजर व हैम्लेटका प्रभाव मेरे "दाहर" पर देखा जा सकता है। मैंने कथानक-विकासकी ओर विशेष ध्यान दिया है और गतिके क्रमिक विकास द्वारा चरम सीमा (climax) को खूब पुष्ट किया है। क्षिप्र संवादोंमें मुझे दिलचस्पी है। वातावरण निर्माणके लिअे मैं भाषाकी लोच, वेशभूषा और रंगमंच-निर्देश तथा अभिनेयताका विशेष ध्यान रखता हूँ। मेरे नाटक रंगमंचपर सफलतापूर्वक खेले गये हैं। "अम्बा", "सगर विजय", "दाहर", "कमला" अित्यादि नाटकोंको तो कअी बार खेला जा चुका है और अेकांकी तो प्रायः सभी खेले जा चुके हैं।"

मेरा अगला प्रश्न नाटकीय पात्रोंके विषयमें था। मैंने पूछा, "अैतिहासिक या पौराणिक पात्रोंमें आपने दिलचस्पी कैसे अुत्पन्न की?"

वे बोले, "मुख्य पात्रोंको लचकाया नहीं जा सकता। मैंने गौण पात्रोंको अपनी रुचिका विषय बनाया है। प्रमुख पात्रोंको गन्तव्य लक्ष्यकी ओर ले जानेके लिअे मैंने अनेक काल्पनिक पात्रोंका निर्माण किया है। अैतिहासिक पात्रोंको तोड़ने-मोड़नेका बहुत कम प्रयत्न किया है। वैसे कहीं-कहीं तोड़ा भी है, जैसे "अम्बा", "सगर विजय" में। अेकांकी नाटकोंमें मेरा क्षेत्र सामाजिक नाटक हैं। अिन सामाजिक यथार्थवादी अेकांकियोंमें मेरे पात्र नित्य-प्रतिके जाने पहिचाने व्यक्ति हैं। मेरे "मनुष्यके रूप" नाटकका सेठ मूर्त-आधारपर खड़ा किया गया है।

मेरे नाटकोंमें दो प्रकारके पात्र रहते हैं। (१) हलके व्यक्ति जिनकी बात केवल Surface तक ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहती है। वे जीवनके अूपरी स्तरपर ही निवास करते हैं; (२) वे पात्र जो जीवनकी गहराअीमें प्रविष्ट होते हैं। पात्रोंकी गहराअी जीवनकी संवेदनासे अुत्पन्न होकर वातावरणकी गहनतामें वृद्धि करती है। मेरे पात्र अपनी समस्याअें अपने भीतरसे लेकर चलते हैं। अिनमें मेरी दृष्टि मनोवैज्ञानिक विश्लेषणकी ओर अधिक रहती है। सामाजिक नाटकोंमें मैं तर्क पसन्द करता हूँ और परिस्थितिको प्रधान मानता हूं। वह पात्रोंके साथ चलती है। मेरे अेकांकियोंमें अेक मूल समस्या रहती है।"

मेरा प्रश्न था, "आप नाटक लिखना कैसे प्रारंभ करते हैं?"

भट्टजी बोले, "मैं समस्या अुठाकर नाटक प्रारंभ करता हूँ। फिर नाना प्रकारके पात्रोंको फिट करता जाता हूँ। पहले मैं स्वगतमें विश्वास नहीं रखता था, अब मनोवैज्ञानिक अन्तर्द्वन्द्व चित्रित करनेके लिअे अुसका अुपयोग करता हूँ। मेरी दृष्टि मूल भावपर रहती है। मैं टेकनीकको वहीं तक अुपयोगी मानता हूँ जहाँ तक वह मूल भाव या समस्याको अुद्दीप्त करे और यथार्थ-वादिताको नष्ट न करे। मैं टेकनीकके कृत्रिम बन्धनोंमें नहीं बंधना चाहता। मेरे आरम्भिक नाटकोंमें संगीत और पद्य अधिक रहते थे; अब मैं अिन्हें आवश्यक नहीं मानता। जब मुझे गाना ही देना होता है, तो मैं गीति-नाट्य लिखता हूँ।"

नाटकोंपर पर्याप्त बातचीत करनेके अुपरान्त मैं अुनके अुपन्यासोंपर आया। "वह जो मैंने देखा" (दो भाग); "नये मोड़" अित्यादि अुपन्यास लिख-कर भट्टजीने अिस नये क्षेत्रमें प्रवेश किया है। "वह जो मैंने देखा" हजार पृष्ठोंका वृहत् अुपन्यास नये ढंगका है। अिसके अन्य भाग लिखे जा रहे हैं। कुछ अुपन्यास अप्रकाशित हैं। मैंने पूछा, 'आपके अुप-न्यासोंका मूल ध्येय क्या है?

वे बोले, "मेरे अुपन्यासोंका मूल आधार मानव जीवनकी आन्तरिक जटिलताअें हैं। मेरे "वह जो मैंने देखा" अुपन्यासका प्रधान नायक अजय है जो जीवनके भिन्न-भिन्न पहलुओं, जटिलताओंपर विचार करता है। बचपनसे यौवन तक आनेवाले अनेक मनोभावोंका सर्वांगीण चित्रण अिसमें रहा है; अिसमें सामाजिक-राजनैतिक समस्याओंके विश्लेषणके साथ-साथ विकृत तथा दलित सेक्सका भी चित्रण है। प्रतीक रूपमें बालक, युवक, प्रौढ़की जटिलताअें चित्रित हैं। "नये मोड़" में परिस्थितियोंका चित्रण है। शेफाली सेक्ससे युद्ध करती है; कहाँसे कहाँ पहुँच जाती है। अिनमें जीवनका विस्तार है।"

मेरे अन्य प्रश्न भट्टजीके जीवन-दर्शनके सम्बन्धमें थे। कवि तथा साहित्यकारके मनकी स्थिति क्या रहती है? वह क्या मनःशान्तिका अनुभव करता है? भट्टजी हँसमुख प्रसन्नचित्त व्यक्ति हैं। अतः मैंने अुनकी मनः-स्थितिके बारेमें ही प्रश्न कर डाला।

वे बोले, "जीवनमें आजतक कभी अैसा नहीं हुआ जब कोअी अुथल-पुथल मेरे हृदयमें न होती रही हो। यह मेरी व्यक्तिगत नहीं, प्रत्युत राजनीतिसे प्रबुद्ध समाजकी है, कुछ मनुष्यकी आचारगत है। अिसलिअे मैं अैसा मानता हूँ कि जहाँ हमारी आर्थिक समस्याओंका हल हो, वहाँ मनुष्यके भीतर जो पशु है, अुसमें भी अेक प्रकारका परिवर्तन आना चाहिये। यह परिवर्तन मनुष्य मात्रके लिअे कल्याणकारी हो। यह परिवर्तन आत्माके अन्दरसे अुत्पन्न होगा, केवल भौतिक सम-स्याओंके हलमात्रसे नहीं। अुसे हमें मनुष्यको मनुष्यके वास्तविक रूपमें विकासमें देखना चाहिये। अिसलिअे मैं आत्मामें विश्वास करता हूँ। मनुष्यके गुण-अवगुण भीतर हैं। जबतक अवगुणोंका प्रक्षालन नहीं हो जाता, वे गुण नहीं बन सकते। अिसलिअे मनुष्यकी आत्माको समझने, परिष्कार करनेका प्रयत्न करना चाहिये।"

मेरा अेक प्रश्न था, "व्यक्ति अेवं समष्टिमेंसे आप किसे महत्त्व देते हैं?"

वे बोले, मैं "मनुष्यको समाजसे पृथक प्राणी नहीं मान सकता, लेकिन मैं समाजको भी सब कुछ नहीं मानता। वैसे मैं व्यक्ति और समष्टि दोनोंके अस्तित्वको स्वीकार करके चलता हूँ; क्योंकि समाजके परिष्कारमें समष्टिका सबसे बड़ा हाथ है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय पर्याप्त हो चुका था। अतः मैंने भट्टजीसे अंतिम प्रश्न अुनके साहित्यकी भावी योजनाओंके विषयमें किया। आगे आपका साहित्य किस दिशामें मुड़ेगा ?

भट्टजीने बताया, "मैं बड़े सामाजिक नाटक और अुपन्यास और लिखना चाहता हूँ, क्योंकि मेरे हृदयमें बड़ा संघर्ष होता रहता है, जैसे गहरी नदीमें नीचेका प्रवाह बड़ा तीव्र होता है, अूपरसे शान्त। अिन दोनों साहित्यिक माध्यमोंके द्वारा मैं और कुछ कहना चाहता हूँ। कविता अिस समय मुझे अपील नहीं करती। मुझे स्वयं मेरी ही कविता अपील नहीं करती, किसी अन्यकी भी नहीं करती। अैसा लगता है कि हम शब्दोंके साथ खिलवाड़ मात्र करते हैं। या तो कवितामें अपील करनेकी शक्ति नष्ट हो गयी है या कविता कविताके लिअे लिखी जा रही है। अुसमें प्राण नहीं है। फिर भी मैं यह नहीं मानता कि कविता मर जाअेगी। अुसके लिअे नये ज्वालामुखी विस्फोटकी आवश्यकता है। मैं कुछ स्केच, जैसे मैंने कुछ लिखे भी हैं (शादीलाल, टालगुरु, नया नौकर) और लिखना चाहता हूँ।"

भट्टजीसे हिन्दीके भविष्यके विषयमें जो चर्चा हुअी, अुसका निष्कर्ष यह था कि हिन्दीका भविष्य, जैसा लोग कहते हैं, अुज्ज्वल नहीं है। अुसे अंग्रेजीसे तो लड़ना है ही, प्रान्तीय भाषाओंको सुरक्षित रखकर स्वयंको अपनानेके लिअे प्रयत्नशील होना है। रेडियो-पर बोली जानेवाली हिन्दी और पक्के गानोंपर भट्टजीने कुछ भी कहनेसे अिन्कार कर दिया।

भट्टजी गत ३६ वर्षसे निरन्तर हिन्दी सेवामें संलग्न हैं। हिन्दीके प्रति अुनकी अिस जागरूकता, सतत साहित्य साधना और तन्मयताको देखकर हमारा मस्तक श्रद्धासे नत हो जाता है। अैसे साहित्य-साधकको शत-शत प्रणाम !

वर्षा ऋतु !

: श्री महाराज जयसिंह देव :

आयी वर्षा-ऋतु सुखद, जग-जन जीवन हेत।
नभ-मंडल मंडित किये, घन-घमंड छवि देत॥
गरजि गरजि घन नभ धुनि धारहिं।
जनु दाता याचकनि पुकारहिं॥
फूटि फूटि घन फिरि जुरि जाहीं।
जिमि धन जुरै दानि घर माहीं॥
बरसि-बरसि वारिद महि तोषहिं।
भूप अुदार प्रजा जिमि तोषहिं॥
× × ×
नाचहिं मोर घन ओर निहारी;
जिमि दाता लखि छुधित भिखारी॥
× × ×
अुमड़ि नदी-नद तट तरु नासत;
खल भूपति जिमि सुजन निकासत।
× × ×
सुर-धनु गहि जिहि तडित करि,
सलिल धार सर पैन;
भारत विरही चतुर मृग,
मेह अहेरी अैन॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुमुखी प्रतिभाका धनी—गोर्की

: श्री वीरेन्द्र त्रिपाठी :

गोर्कीकी महानताके बारेमें दो मत नहीं। सभी अेक स्वरसे अुन्हें विश्व-साहित्यकी अेक निधिके रूपमें स्वीकार करते हैं। अिसलिअे १८ जूनको प्रति वर्ष विश्वभरमें अुनकी बरसी मनायी जाती है और अुनकी विशेषताओंको आत्मसात करने और अुनकी सीखोंपर चलनेके लिअे कटिबद्ध होनेकी प्रेरणा ताजी की जाती है।

दूसरे कथाकारोंकी तरह गोर्कीने भी अपना साहित्यिक जीवन लघुकथाओंसे आरम्भ किया। लघु-कथाओंमें अेक अजनबी-सा गैरमामूली 'थीम' और घटना संजोयी जाती है और अुसमें अिस प्रकार चरित्र-चित्रण होता है कि वह घटना पात्रोंकी लपेटमें आकर विशिष्ट रूप धारण कर लेती है। यही विशिष्टता कहानी-कलाको नवीन और पुरातन काल दोनोंमें लोक-प्रिय बनाये रही है। पर गोर्कीने बंधी लीकसे कुछ छिटककर अपनी कहानियोंमें और भी आवश्यक तत्वोंका प्रवेश किया; विशेषतः समस्यात्मक घटनाचक्रोंका जो कि तत्कालीन कथा-साहित्यमें अप्राप्य थे। जीवनकी समस्याओंमें जितना ही अुलझाव होगा, अुतनी ही कठिनाअी होगी मानवीय चित्रणमें, पर गोर्कीकी पकड़ने अुनके कथा-साहित्यमें अुलझावकी कोअी गुंजाअिश ही नहीं छोड़ी।

प्रारम्भमें गोर्की स्वयं रोमानी थे, जो अुनके जीवनकी कठिनाअियोंकी प्रतिक्रियाके फलस्वरूप अुनमें जन्मा था, पर अुनका सतर्क ध्यान अुन दिनों भी पीड़ा और दमनके प्रति निस्पृह विद्रोही नहीं था, विद्रोहके सिलसिलेमें वे सदैव क्रियात्मक रहे।

गोर्कीकी तरुणाअी नाना प्रकारके छुट-पुट कामों-को करते बीती। वे काम करनेपर विवश हुअे क्योंकि अुनके माता-पिता अुन्हें काफी छोटी अुम्रमें छोड़कर मर गये थे। अुस दौरमें गोर्कीको रूसकी जिन्दगीके अनेक अनुभव हुअे, जिनकी आधारशिलापर अुन्होंने अपना जीवन-दर्शन बनाया और जीवनके पहिले हिस्सेमें अुन अत्याचारों और पीड़ाओंके प्रति विद्रोह भी प्रकट करते रहे। अक्तूबर क्रान्तिसे पहले अुनके जीवनका मूल अुद्देश्य जारशाहीके अत्याचारोंका आमूलचूल विनाश रहा और अुनकी यह प्रवृत्ति अुनकी अिस कालसे पूर्वकी सभी रचनाओंमें प्रतिध्वनित है।

जारशाहीने रूसको पददलित किया हुआ था। सांस्कृतिक और भौतिक अुन्नतिके सभी द्वार जनताके लिअे बन्द थे। भला जनताका हिमायती गोर्की कैसे अिसे सहन कर सकता था? अुसकी अिन्सान पसंदगी, जिसकी बुनियाद अुसकी खुदकी अनुभूतियां थीं, कैसे न विद्रोह करतीं?

हिन्दीके बहुत कम अैसे पाठक होंगे, जिन्होंने रूसी अुपन्यास "माँ" न पढ़ा हो। "माँ" अिस युगकी दस्तावेज है जो सामूहिक जन-शक्ति और चरित्रकी अूँचाअीके लिअे अुत्तरोत्तर प्रेरणा तथा स्फूर्ति प्रदान करती है। अिस अुपन्यासमें व्यक्ति और समाजका अेक नया सम्बन्ध दिग्दर्शित है। अिसमें व्यक्तियोंमें संघर्ष नहीं, अुन व्यक्तियोंमें जो अपने अेकान्त स्वार्थके वशीभूत होकर अपने सीमित स्वार्थोंके लिअे झगड़ते हैं, बल्कि है समुदायोंका संघर्ष जिन्दगीमें नया निखार लानेके लिअे, बुनियादी अुद्देश्यों और आदर्शोंके लिअे।

गोर्कीकी सभी रचनाओंका मुख्य थीम 'केन्द्र' यही है कि अिसान जिस पीड़ित अवस्थामें पहिले रहा था, अब नहीं रहेगा। गोर्कीने अपना लेखन जीवन परित्यक्तों और दुखियोंके बारेमें लिखनेसे प्रारम्भ किया। गोर्कीने अपना अधिक समय पीड़ितोंके चित्रणमें लगाया, न कि पीड़कोंके, जैसा कि अुनके कअी युगीन लेखकोंने किया। अपनी अिसी विशेषताके कारण वे साहित्यमें अेक निश्चित धारा प्रवाहित कर सके। अुन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी रचनाओंमें अुनका चित्रण किया जो पूंजीवादके विकासके फलस्वरूप अपने सामाजिक वर्गसे बेसहारा हो गये थे। अुनकी रचनाओंमें समाजके वर्गोंका यह विकृतीकरण अपने पूरे आवेगसे प्राप्य है। अुनका चित्रण चतुर्मुखी है।

अुनका आदर्श गिरे हुअेको और गिराना नहीं, बल्कि गिरकर अुठनेवाले अिंसानकी सहायता करना था। अुनके अिसी आदर्शने अुनकी रचनाओंमें अिसी प्रकारके जीवनचरित्र विश्व-साहित्यको प्रदान किये हैं। गोर्की महान मानवतावादी थे। पर अुनकी मानवताकी नींव दयापर नहीं, अुत्साहपर आश्रित थी। अुनमें और साधारण मानवतावादी लेखकोंमें यही बुनियादी अन्तर है। साधारण मानवतावादी दुःख, पतन और क्रोधका चित्रण करके सन्तुष्ट हो जाता है, पर गोर्की जैसा मानवतावादी अुस दुःख, पतन और क्रोधको तार्किक आधार देकर संसारके नये निर्माणके लिअे आह्वान करता है। साधारण मानवतावादी स्वप्नप्रिय और निष्क्रिय तटस्थ सत्योंका अुद्घाटन करते हैं, जब कि गोर्की जैसा मानवतावादी नये सत्योंका निर्माण करता है, क्योंकि वह सत्यको भी समाजकी जड़ोंमें खोजता है, वातायनमें नहीं। अिसीलिअे गोर्कीका मानवतावाद सर्वहारा मानवतावाद है।

अुनके सर्वोत्कृष्ट अुपन्यास "माँ" में अुनकी यह ध्वनि सदैव ही गूंजती रही। अिसमें व्यक्ति अेक "सक्रिय" नायक है, अेक समुदाय नायक है और अुसके आदर्श और संयुक्त विचार नायक हैं। अिसमें अुन्नीसवीं सदीके अुपन्यासकारोंमें व्यक्तिकी पीड़ा और अुसकी निरन्तर ह्रासोन्मुखी प्रतिभाका "सजीव" चित्रण है, पर गोर्कीने अुपन्यासोंको अेक नयी दिशा दी और वह दिशा थी समुदायका नायक होना। व्यक्तिके रोमानी विद्रोहसे पूरे समाज वर्गका विद्रोह। गोर्कीने बड़ी कुशलता और प्रभावपूर्ण मनोवैज्ञानिक ढंगसे यह दिखाया कि समुदायकी आशा आकांक्षाअें व्यक्तिको अूंचा अुठाती हैं और अुसके लिअे अुनका मूल्य अमोल हो जाता है। "माँ"के पात्र मस्तिष्ककी खिलवाड़ नहीं, रोमानी कल्पनाके शिकार नहीं, बल्कि वे जीवन्त अैतिहासिक कालकी अुपज हैं और यथार्थ जीवनसे लिये गये हैं। वे रूसके तत्कालीन नर-नारियोंके अरमानोंको प्रकट करते हैं।

गोर्कीके अुपन्यासोंमें और भी कअी विशेषताअें परिलक्षित होती हैं। अुनके अेक दूसरे अुपन्यास "क्लिम समागिनका जीवन" में अुन्होंने मरणोन्मुख समाजके पात्रोंमें और नये अुठे अुभरते "सक्रिय" नायकोंका संघर्ष चित्रित किया है। अुन्होंने व्यक्तिको तो अूंचा अुठाया ही, साथ ही समाजको भी बहुत अूंचा अुठा दिया। समागिन अेक अैसा बुद्धिजीवी है, जो अपनेको जनताके विरुद्ध जमाता है और समझता है कि वह "सांस्कृतिक मूल्योंका स्वतंत्र निर्माता" है। गोर्कीने सांगोपांग रूपसे अुसका पतन दिखाया है, अुसके जीवन-दर्शनका खोखलापन चित्रित किया है, अुसके व्यक्तित्वकी व्यर्थता प्रदर्शित की है और जनतासे स्वतंत्रताकी लड़ाअीसे अलग-अलग होकर सांस्कृतिक रचनाकी शक्तिका क्षय प्रस्तुत किया है।

गोर्की हर प्रकारके सामाजिक और जातीय अुत्पीड़नके सक्रिय विरोधी थे। वे अुन सब जीवन-दर्शनोंका डटकर मुकाबला करते थे, जो जनसाधारण और स्वतंत्रता तथा लोकतंत्रके विपरीत थे। वे सदैव ही सामाजिक बुराअियोंके विरुद्ध कड़ा और सतत संघर्ष करनेके हामी थे। अुनके अनेक नाटकोंमें अेक बहुत प्रसिद्ध नाटक "अतल गहराअियाँ" कथित मानवतावाद, प्रभावहीन सहानुभूति और आत्माको थपकियाँ देकर विभ्रान्त और अुनिद्र करनेवाली प्रत्येक धारणाको नंगा करता है। अिस नाटकमें गोर्कीने धैर्यकी "दासीय आचारवृत्ति" ('जेहि विधि राखे राम तेह विधि रहिये') 'कोअि नृप होय हमें का हानी' जैसी वृत्तियाँ) आत्मसमर्पण, बुराअीके प्रति संघर्ष न छेड़नेकी वृत्ति और सहते ही रहने तथा कुछ न करनेकी प्रवृत्तिके विरुद्ध ललकारा है।

गोर्की बहुमुखी प्रतिभाके लेखक थे। अुन्होंने आलोचनाअें लिखीं, कविताअें लिखीं और नाटक, कहानी तथा अुपन्यासके लिअे तो वे अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। अुनकी आलोचनाओंसे रूसमें आगेकी पीढ़ीके साहित्यकारोंने बहुत कुछ सीखा है और परवर्ती साहित्यकारोंपर अुनका यथेष्ट प्रभाव है। वे चाहते थे कि सोवियत साहित्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"नस्लभेदसे दूर जाति वर्ग विभेदोंसे विमुख" अेक अैसे अिंसानको जन्म दे, जो मानवताका अुत्कृष्ट नमूना हो। अिसीलिअे अुन्होंने अेक बार रोमाँ रोलाँको लिखा था। "हम जनताको नायक बनना सिखाना चाहते हैं"। अेक अैसे व्यक्तिका निर्माण जो निस्वार्थी हो, जो वीर हो, निस्वार्थी हो और किसी आदर्शका प्रेमी हो, अीमानदार हो और महान कार्य करनेकी हौंस रखता हो"। अिसी धारणासे नये कलात्मक प्रकटीकरणकी, खोज प्रारम्भ हुअी, क्योंकि "शौर्यके काम शौर्यमयी भाषा चाहते हैं और जीवन शौर्यमयी कविता चाहता है"। गोर्कीने सोवियत लेखकोंका आह्वान किया, अेक अैसी कला निर्मित करनेके लिअे जो हमारे युगके अुस अिंसानका चित्रण कर सके जो "अितनी सुन्दर और अितनी अजूबा" वस्तुओंकी रचना कर रहा है। अिस रचनात्मक प्रतिभाकी प्रशंसा ही सोवियत लेखकोंका मुख्य अुद्देश्य होना चाहिये। अुन्होंने सुन्दरताके प्रति कभी अवहेलना नहीं दिखायी, बल्कि वे सदैव ही "सुन्दरता की प्यास" और अिंसानमें "पृथ्वीको सुन्दर बनाने" के हौंसको केन्द्रीय स्थान प्रदान करते रहे।

अुन्होंने अिस नयी कलात्मक अभिव्यक्तिको समाजीय यथार्थवादके नामसे पुकारा है। अन्धारको नष्ट करना, मानवोन्नतिमें बाधक सभी प्रवृत्तियोंको नयी यथार्थताके गुम्कनसे अभिभूत कलात्मक छविचित्रों द्वारा परास्त करना अिसका मूल अुद्देश्य है। भूतकाल और वर्तमानकी ही आलोचनात्मक तस्वीर देना अिसका काम नहीं बल्कि प्रथमतः देशमें प्राप्य क्रान्तिकारी कारनामोंकी अुचित काव्यात्मक सहायता और समाज वादी भविष्यके अुच्च लक्ष्योंपर प्रकाश डालना अिसका लक्ष्य है।

गोर्की यह चाहते थे कि सोवियत कलाकार अपनी पुरातन परम्पराको पुनर्जीवित करें और ग्राम-साहित्यसे संबंध स्थापित करें। गोर्कीने स्वयं सोवियत परिस्थितियोंके अनुकूल, जन-गीतोंको पुनर्जीवित किया; हालाँकि वे समाजवादी संस्कृतिके बहुत बड़े अपवाद थे, तो भी अुन्होंने प्राचीन रूसी और विदेशी साहित्यके बीच गहरा संबंध बनाये रखा।

अुनका कहना था कि सच्ची कला वहीं अुत्पन्न हो सकती है जहां, लेखक और पाठकके बीच पूरा-पूरा विश्वास स्थापित होता है। लेखकका काम यह है कि वह अिंसानकी आत्माकी बुलन्दियोंको प्रकट करे। जब लेखक हमारे जीवनके सुख-दुःखोंके बारेमें कुछ कहता है, अच्छी या बुरी चीजोंके बारेमें, अूलजलूल अथवा घृणित वृत्तियोंके बारेमें लिखता है, तब अगर वह अीमानदारीसे प्रकट करता है अपने तत्वको, मानों दोस्त कुछ सलाह दे रहा हो, बता रहा हो, तो पाठक अुसे सहज समझ लेगा और सचमुच ही अुसे अपना मित्र समझेगा।

लेखकका कार्य बहुत कठिन होता है। लोगोंके बारेमें कहानियां लिखना, सिर्फ ताना बुनना ही नहीं। शब्दोंके सहारे, जैसे कि कलाकार रंगोंसे चित्र भरता है। चित्र प्रस्तुत करना लेखकका परिश्रम है। अैसा कर सकनेके लिअे विषय-वस्तुकी मुख्य बारीकियोंको पकड़ना, कार्यकलाओंका गहन अध्ययन और फिर अुन्हें शब्दोंमें सजीव रूपमें लिखना कि पाठक अुन छापेके अक्षरोंकी ओटसे हाड़-मांसका जीवित पात्र टटोल सके, अुसके कामोंमें अैसी तन्मयता और सरलता हो जो पाठकके तन्तुओंको झकझोर सके और वह समझे कि वह घटना अिसी प्रकार हो सकती थी और किसी दूसरे ढंगसे नहीं।

गोर्कीकी रचनाओंमें यह सहज सुलभता, गहराअी और भावोद्रेक अुत्पन्न करनेकी क्षमता पग-पगपर विद्य-मान है। अिसीलिअे सोवियत साहित्य और विश्व-साहित्यमें अुनका यथेष्ट सम्मान किया जाता है और अुनकी डाली लीकपर चलनेमें साहित्यकार अपना मान समझते हैं।

गोर्कीका अुद्देश्य मानवकी प्राणप्रतिष्ठा करना था। सत्य, शिव और सुन्दरके अुपासक मानवकी सांस्कृ-तिक, भौतिक और आत्मिक अुन्नतिके लिअे निरन्तर संघर्षमें रत रहना ही अुनका मूल मंत्र था और यही मंत्र वे पाठकों और लेखकों, दोनोंके लिअे, समान रूपसे छोड़ गये। समाजके प्रति सही और स्वच्छ दृष्टिकोण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यक्तिका अुसके निर्माणमें योग और अुसका स्थान क्या है, अिसपर अुन्होंने नये लेखकोंको चेतावनी देते हुअे कअी बार कहा था कि साहित्य क्या है, अिस पचड़ेमें मत पड़ो, साहित्य अपने लिअे नहीं होता, दुनियामें कोअी भी वस्तु अपने लिअे ही नहीं, हर वस्तु किसी अन्तके लिअे (अुद्देश्यके लिअे) है और अेक न अेक रूपमें आश्रित, संबंधित और गुम्फित है। कलाकार अुस सत्यका निर्माण करता है, जो मनुष्यको अुन्नत करता है।

गोर्की सौन्दर्यशास्त्रमें अेक नयी पद्धतिके जन्मदाता थे। क्योंकि अुन्होंने सुन्दरताके विचारको अेक नये रूपमें गूँथनेकी प्रथमावृत्ति की। काव्यका प्रमुख आधार कल्पना पूंजीवादी समाजमें छिन्नभिन्न हो जाता है, क्योंकि यथार्थता स्वप्नके मुकाबले हमेशा कटु रहती है। समाजीय यथार्थवाद काव्यगत कल्पनाके लिअे महान संभावनाओंके द्वार खोलता है। समाजीय यथार्थवादके सत्यकी परिभाषा करते हुअे गोर्कीने लिखा था :— "सच्ची कलाको अतिशयोक्तिका अधिकार होता है, हरकुलीज, प्रोमेथ्यूज, दोन क्विक्जोट और फास्ट मात्र "कल्पनाके फल" नहीं, बल्कि पूर्ण न्याय-संगत और आवश्यक काव्यगत अुन अुपादानोंमेंसे हैं, जो सत्य है। हमारा सत्य और जीवित नायक वह अिन्सान है जो समाजवादी संस्कृति बना रहा है, हमारी कहानियों और अुपन्यासोंके नायकोंसे कहीं अधिक बड़ा और सुशील है। साहित्यमें अुसका चित्रण और भी महान और प्रभावशील होना चाहिये। यह सिर्फ जीवनकी ही मांग नहीं, बल्कि समाजीय यथार्थवादकी मांग है क्योंकि अिसका आधार यह मानकर चलना है कि अैसा है और अैसा है की मान्यता अतिशयोक्तिकी बहिन ही तो है।

अिन्सानमें निरन्तर बढ़नेकी आकांक्षा और अुनके लिअे आवश्यक समाधानके प्रति सतर्कता ही साहित्यकारका रचनाओंमें मूल अुद्देश्य हो, यही गोर्कीका व्यक्तित्व अूजागर करता है।

जास्टिस सैयद हसन साहब क्या फरमाते हैं ?

कलकत्ता हाअीकोर्टके भूतपूर्व न्यायाधीश जनाब सैयदहसन अिमामने कलकत्तेमें अेक सभामें मीर मजलिस (सभाध्यक्ष) की हैसियतसे फरमाया:—

"कुछ लोगोंने हिन्दी अुर्दूका झगड़ा खड़ा कर रखा है। पर यह बेमतलबकी बात है। मेरी रायमें हिन्दी भाषा हिन्दुओंकी ही नहीं; बल्कि सारे हिन्दुस्तानकी ज़बान है। अरब और फारस यहांके मुसलमानोंको 'हिन्दी' ही कहते हैं। फिर हिन्दीकी तरक्कीके लिअे अगर कुछ कहा जाअे तो मुसलमानोंकी नाराज़गीकी मैं कोअी वजह नहीं देखता। और ज़बानें अेक-अेक सूबेकी हैं; पर हिन्दी तो हिन्दुस्तानकी ज़बान है। अुर्दू भी यहीं पैदा हुअी है। मुसलमान अुसे अपने साथ अरब-फारससे यहाँ नहीं लाये। अिसलिअे अुन्हें हिन्दीसे नफरत नहीं करनी चाहिये; बल्कि सबके साथ मिलकर अुसकी तरक्की करनी चाहिये।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसीदास और देवता

: श्री रामनरेश त्रिपाठी :

तुलसीदासजीको देवताओंसे न जाने क्यों अितनी चिढ़ थी कि रामचरित मानसभरमें और अुनके दूसरे काव्योंमें भी, जहाँ कहीं अुन्हें मौका मिला, अुनकी विचित्र आकृतियों और कुटिल प्रवृत्तियोंका अुपहास करनेमें अुन्होंने कोअी कोर-कसर नहीं रखी। कुछ अुदाहरण लीजिये :—

विष्णु भगवानने नारदका अभिमान नष्ट करनेके लिअे विवाहकी अेक रचना रची, जिसमें नारद खूब मूर्ख बने। अिसपर अुनको क्रोध आया और अुन्होंने विष्णु भगवान्‌को खासी खोटी-खरी सुना दी :—

पर संपदा सकहु नहिं देखी।
तुम्हरे अिरिषा कपट बिसेखी॥
मथत सिंधु रुद्रहि बौरायहु।
सुरन्ह प्रेरि बिष पान करायहु॥
असुर सुरा बिष संकरहिं,
आपु रमा मनि चारु।
स्वारथ साधक कुटिल तुम्ह,
सदा कपट व्यवहार॥
परम स्वतंत्र न सिरपर कोअी।
भावअि मनहिं करहु तुम्ह सोअी॥
भलेहि मंद मंदहि भल करहू।
बिसमय हरषन हिय कछु धरहू॥
अुहँकि अुहँकि परिचेहु सब काहू।
अति असंक मन सदा अुछाहू॥
करम सुभासुभ तुम्हहिं न बाधा।
अबलगि तुम्हहिं न काहू साधा॥
भले भवन अब बायनु दीन्हा।
पावहुगे फल आपन कीन्हा॥

तुलसीदासने यहाँ नारदके मुंहसे विष्णुकी पोल खुलवायी है, तो सप्तर्षियोंके मुँह नारदका भी भंडा-फोड़ कराया। नारद अिधरसे अुधर भिड़ानेमें बड़े प्रवीण थे। अुनके अिस गुणका कथन सप्तर्षियोंसे अिस प्रकार कराया गया है:—

सुनत बचन बिहँसे रिषय,
गिरि संभव तव देह।
नारद कर अुपदेस सुनि,
कहहु बसेअुको गेह॥
दच्छ सुतन अुपदेसेन्हि जाअी।
तिन फिरि भवन न देखा आयी॥
चित्रकेतु कर घर अुन घाला।
कनक कसिपु कर पुनि अस हाला॥
नारद सिषजे सुनहिं नरनारी।
अवसि होहिं तजि भवन भिखारी॥
मन कपटी तन सज्जन चीन्हा।
आपु सरिस सबहीं चह कीन्हा॥

दोहेमें 'गिरिसंभव' शब्द है। अिसमें पार्वतीका भी मजाक है। अर्थात् गिरि (पहाड़) जैसे जड़ होता है, वैसे ही तुम भी जड़ बुद्धि हो।

लगे हाथों सप्तर्षियोंने शिवजीका भी वीभत्स रूप सामने कर दिया है:—

सिवहिं संभुगन करहिं सिंगारा।
जटा मुकुट अहि मौर सँवारा॥
कुंडल कंकन पहिरे ब्याला।
तन बिभूति पट केहरि छाला॥
ससि ललाट सुंदर सिर गंगा।
नयन तीनि अुपवीत भुजंगा॥
गरल कंठ अुर नर सिर माला।
असिव बेष सिव रूप कृपाला॥
कर त्रिसूल अस डमरु बिराजा।
चले बसह चढि बाजहिं बाजा॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखि सिवहिं सुरतिय मुसुकाहीं।
बरलायक दुलहिन जग नाहीं॥

सुर समाज सब भाँति अनूपा।
नहिं बरात दुलह अनुरूपा॥

अब सुख सोवत सोच नहिं।
भीख मांगि भव खाहिं॥

सहज अकाकिन्हके भवन।
कबहुँ कि नारि खटाहिं॥

राम जब जनकपुर गये, तब जनकपुरकी युवतियाँ रामके रूपकी अुपमा खोजने लगीं। अुस अवसरपर मौका पाकर तुलसीदास त्रिदेवोंके विकृत शरीरकी हँसी अुड़ाये बिना न रहे। अेक युवती कहती है:--

विष्णु चारिभुज बिधि मुख चारी।
बिकटबेष मुख पंच प्रारी॥

अपर देअु अस कोअ न आही।
यह छबि सखि पटतरिअ जाही॥

देवताओंके नेत्र भी समान संख्याके नहीं थे। अिस विचित्र बनावटको देखकर तुलसीदास कुछ छेड़-खानी किये बिना कैसे रहते? जैसे वे मौका ही ढूँढ रहे हों, और अुन्होंने राम-विवाहके अवसरपर अिन्द्र आदि देवताओंको अिकट्ठा ही पकड़ लिया। रामकी बरात जा रही है। राम घोड़ेपर सवार हैं। देव-गण अपनी अनेक आँखोंसे छवि देख-देखकर आनन्द-मग्न हो रहे हैं:--

संकर रामरूप अनुरागे।
नयन पंचदस अति प्रिय लागे॥

निरखि राम छवि बिधि हरखाने।
आठहि नयन जानि पछिताने॥

सुर सेनप अुर बहुत अुछाहू।
बिधि ते डेवढ़ सुलोचन लाहू॥

रामहिं चितव सुरेस सुजाना।
गौतम साप परम हित माना॥

देव सकल सुरपतिहिं सिहाहीं।
आजु पुरंदर सम कोअु नाहीं॥

देवराज अिंद्रके पीछे तो तुलसीदास हाथ धोकर ही पड़े जान पड़ते हैं। अुन्होंने अुसे कौवा, कुत्ता सब कुछ तो कह डाला। नारदकी तपस्यासे डरे हुअे अिन्द्रके लिअे वे कहते हैं:--

सूख हाड़ लेअि भाग सठ।
स्वान निरखि मृगराज॥

छीनि लेअि जनि जानि जड़।
तिमि सुरपतिहि न लाज॥

भरत जब रामको मनाने चित्रकूट गये थे, तब भी अिन्द्रने बाधा डालनेकी अिच्छा प्रकट की थी। अिसपर तुलसीदास कहते हैं--

देखि प्रभाव सुरेसहि सोचू।
जग भल भलेहि पोच कह पोचू॥

× × ×

वचन सुनत सुर गुर मुसकाने।
सहसनयन बिनु लोचन जाने॥

सामूहिक रूपसे तो समस्त देवताओंको तुलसी-दासने तिकड़मी, स्वार्थी, प्रपंची और धूर्त कहा है। कुछ अुदाहरण लीजिये:--

रामको युवराज-पद देनेकी चर्चा चल रही है। पर देवता अुसमें विघ्न डालना चाहते हैं:—

सकल कहहिं कब होअिहि काली।
बिघन मनावहिं देव कुचाली॥

रावणसे रामका बैर करा देनेमें देवताओंका भीतरी हाथ था। वे रावणसे बहुत डरते थे, अिससे खुल्लम-खुल्ला रामका साथ नहीं देते थे। पर जब अुन्होंने देखा कि रावण अकेला ही बच गया है, अब राम तो अुसे मार ही लेंगे, तब अुनके मनमें रामको रथहीन देखकर पीड़ा पैदा हुअी। अुसके पहले वे लुक-छिपकर रामकी सहायता करते थे।

रावन रथी बिरथ रघुबीरा।
देखि भअी देवन अुर पीरा॥

देवन्ह प्रभुहि पयादे देखा।
अुर अुपजा अति छोभ बिसेखा॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुरपति निज रथ तुरत पठावा ।
हरष सहित मातलि लअि आवा ।।

जब-जब रावण रामके बाणोंसे व्यथित होता था, तब-तब देवगण आकाशसे अट्टहास करते थे । यह देखकर रावण बहुत बिगड़ा और अुनकी ओर झपटाः--

सठहु सदा तुम मोर मरायल ।
अस कहि गगन पंथ कहँ धायल ।।
हाहाकार करत सुर भागे ।
खलहु जाहु कहँ मोरे आगे ।।

अंतमें रावण जब मारा गया और राम विजयी हुअे, तब देवता रामकी स्तुति करने आये । अिसपर तुलसीदास अुनकी हँसी अुड़ाते हैंः--

आये देव परम स्वारथी ।
बात करहिं जनु परमारथी ।

अिस अेक चौपाअीसे ही देवताओंके स्वरूपका पूरा चित्रण हो जाता है ।

राम चरितमानसके पात्रोंमें तीन ही पात्र सीता, भरत और हनुमान अैसे हैं जिनके चरित्र और आकृतिमे तुलसीदासने कहीं कोअी दोष नहीं दिखलाया है । राम भी जो अुनके परम अुपास्य देव थे, अुनकी तीखी नजरोंसे नहीं बच पाये हैं । राम साँवले रंगके थे, अिसपर तुलसीदास अुनकी चुटकी लेते हुअे कहते हैंः—

गरब करहु रघुनन्दन जनि मन मांह ।
देखहु आपनि मूरति सिय कै छांह ।।

रामकी महिमा गानेमें तुलसीदासने यद्यपि अपने ज्ञानका प्रत्येक बूंद निचोड़ दिया है, पर जो बात अुन्हें खटकी, अुसे भी कह डालनेमें अुन्होंने संकोच नहीं किया है । जैसे,

जेहि अघ हतेअु व्याध जिमि बाली ।
सोअि सुकंठ पुनि कीन्हि कुचाली ।।
सोअि करतूति विभीषन केरी ।
सपनेहूँ सो न राम हियँ हेरी ।।

अिसमें युद्ध, कुचाली और करतूति शब्दोंसे प्रकट होता है कि वे बालि, सुग्रीव और विभीषणके कार्योंको सुदृष्टिसे नहीं देखते थे; रामको तो अपना काम निकालना था, अिससे वे अुधरसे आँख दबाये रहे ।

सारे रामचरित मानसमें तुलसीदासने देवताओंको केवल दोही काम सौंप रखे हैं—दुंदुभी बजाना और फूल बरसाना । जहाँ कोअी अद्भुत घटना घटी, चाहे जंगल हो या बस्ती, घरके भीतर हो या बाहर, देवता झट फूल बरसा देते और दुंदुभी बजा देते थे, जैसे यह अुनकी कोअी ड्यूटी थी और वे गलेमें फूलोंकी झोली डाले और दुंदुभी लटकाये घूमते ही रहते थे । कहीं-कहीं देवताओंकी स्त्रियोंको तुलसीदासने गवाया और नचाया भी है । देवताओंके स्वरूपका चित्रण जैसा तुलसीदासने किया है, वह अुनके मनमें किसी न किसी द्वेष मूलक भावका परिणाम जरूर रहा होगा ।

मेरी समझमें द्वेषका कारण यही रहा होगा कि देवताओंने रामको वन भेजनेका षड्यंत्र रचा था और जबतक कुंभकर्ण और मेघनाद मारे नहीं गये, तबतक वे रामके साथ कपट-पूर्ण सहानुभूति दिखाते रहे, खुलकर सामने नहीं आये । तुलसीदासको देवताओंकी यह चारित्रिक कायरता प्रिय नहीं लगी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नर-भक्षक

: श्री विष्णु प्रभाकर :

नरेशकुमारका मन अुसी दिनसे अुखड़ रहा था, जिस दिनसे नीला अुसकी वामांगी बनकर आयी थी। नीलाके पिताने जी खोलकर दहेज दिया; पर वे कोठी नहीं दे सके। कअी बार परोक्षरूपसे कहनेपर अुन्होंने कार दी थी, पर वह पुरानी थी। नरेशकुमारके पिता बैरिस्टर श्रीरामकी अुपेक्षा अुसी क्षणसे जाग्रत हो अुठी। अुन्होंने सब-कुछपर पानी फेर दिया। 'मैं ठगा गया' – हर अेकसे वे यही अेक वाक्य कहते थे। यदि वे शिक्षित-कानूनवेत्ता न होते तो शायद वे ठगीका प्रत्यक्ष बदला लेनेको प्रस्तुत हो जाते, परन्तु कानूनके ज्ञानने अुन्हें क्रियासे दूर रखा। नरेश कानूनवेत्ता नहीं था। रुड़कीसे परीक्षा पास करके वह सीधा ट्रेनिंगपर चला गया। नीला साथमें थी। वह सुन्दर नहीं थी पर सुशिक्षिता थी। अुसका स्वभाव सरल और सौम्य था। समझती थी– नरेश आफीसर है, अुसीके अनुसार आचरण करनेकी चेष्टा करती थी, पर नरेशकी समझमें कुछ नहीं आता था। वह बार-बार चिनचिना पड़ता था, वस्तुतः नीला अुसकी खीझ और रुष्टताका प्रतीक बन गयी थी। अैसा कोअी अवसर वह नहीं चूकता था, जिसमें नीलाकी किसी भी साधारण-सी बातपर भर्त्सना की जा सके। प्रति क्षण वह अुसे कड़वी भाषामें अुपदेश सुनाता रहता था। अर्थात .....नीला, तुम तो निरी बुद्धू हो।" "नीला, भारत अब स्वतंत्र है।" 'नीला, नारी अब महलोंकी रानी नहीं। पुरुषकी सहधर्मिणी है.....।"

नीला थी, सुन लेती। कअी बार अुसने अशक्त भाषामें विद्रोहका स्वर अुठाया, पर नरेश और भी तीव्र भाषाका प्रयोग करने लगा। और जैसे-जैसे समय बीतता गया, अुनके बाहिरी जीवनके नीचे बहनेवाली प्राणधारामें रूक्षता बढ़ने लगी। वे अूपरसे शान्त रहते। अफसरोंके सामाजिक जीवनकी तड़क-भड़कको निभाते, पर नरेशकी दृष्टि जब भी नीलापर पड़ती, अुसका मन कड़वा हो जाता। वह अुसे परखने लगता। "नीला कुरूपा है। हाँ, कुरूपा तो है ही। सांवला रंग बहुधा प्रिय होता है, पर नीलाके स्निग्धता रहित रंगमें रसका पूर्ण अभाव है। अुसपर आँखें कितनी मोटी हैं। नासिका निस्सन्देह सुन्दर है, पर मस्तक अितना संकीर्ण कि बालोंको यदि अेक विशेष प्रकारसे न बनाया जाअे तो वह निस्सन्देह कुरूप लगेगी। .....

"छी-छी वह कहाँ जा फंसा। न रूप मिला, न रूपा (धन)। ससुरने जो कार दी है, वह नीलाके समान ही शिथिल और कुरूपा है। बंगला देनेसे अुन्होंने किस चतुराअीसे अिन्कार कर दिया। ठगीकी विद्यामें ये लोग कैसे चतुर होते हैं। वचनका कोअी मूल्य वे नहीं मानते। सस्ती चीजोंकी संख्या बढ़ाकर लोगोंकी आँखोंमें चकाचौंध पैदा करना चाहते हैं। वस्तुतः अुनकी अिच्छा कुछ भी देनेकी नहीं थी, लेकिन नीलाके रूपमें वे खोटा सिक्का चलाना चाहते थे। अुसीकी यह रिश्वत है। .....

"पर रिश्वतमें भी तो धोखा दिया गया। चुभन यही कि अिसकी फरियाद किस जजकी अदालतमें की जाअे। कौन अिस ट्रेजेडीको समझेगा। कौन अिसका सच्चा न्याय देगा।"

अुस नीर-क्षीर विवेकी हंसको नरेश बहुत ढूंढ़ना चाहता, पर वह है कि आ-आकर चला आता है। यह अन्याय है, बुरा है; अिसलिअे और भी बुरा है कि अुसका प्रतिवाद कुछ नहीं हो सकता।

यह भूल भूलैया है। नरेश अिसके मार्गको नहीं जानता। अिसलिअे भड़कता है और फिर अुससे जो थकान और झुंझलाहट पैदा होती है, वह अुसके दिलको कड़ुवा कर देती है। वह सारी कड़ुवाहट नीलाके तन-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनमें विष बनकर रम जाती है। वह जानती है कि अुसके पिताने कितना कुछ दिया है, परन्तु विवाहके अवसरपर कार न मिलनेके कारण ये लोग कितना बिगड़े थे। अुसकी कितनी अुपेक्षा की थी और जब पिताने अपनी कार अुन्हें दे दी तब भी अुनके व्यवहारमें कोअी विशेष अन्तर नहीं पड़ा। "अुनका वायदा व्यूकका था वह अुन्हें पूरा करना था"—नरेश कभी कभी नीलासे तर्क करता था। नीला अुत्तर देती—"आजकल कितनी महंगाअी है। जितना सोचा था अुससे दुगुना-तिगुना अुन्हें देना पड़ा।"

"अरे वे सेठ हैं। फिर ठेकेदारी करते हैं; लक्ष्मी अुनके घर खेलती है।"

"सो तो मुझसे क्या छिपा है। हर बातकी सीमा होती है। मैं अकेली नहीं हूँ।"

"हां-हां। मैं जानता हूँ"—नरेश तेजीसे बोल अुठता—"याद रख लेना तुम्हारे पिता तुम्हारी प्रत्येक बहनको तुमसे ज्यादा देंगे।"

"कैसे देंगे, आप कैसे जानते हैं।"

"बस जानता हूँ।"

"आप तो हर बातमें अुन्हें नीचा दिखाना चाहते हैं।"

नीलाकी आँखें गीली हो आयीं। नरेशने व्यंग्य कसा—"पितासे अितना प्रेम था तो शादी क्यों की?"

"अिसलिअे कि लड़कियोंके भाग्यमें शादी करना ही लिखा है।"

"अब तो वे शक्तिशाली बनती जा रही हैं। भाग्यको पलट क्यों नहीं देतीं?"

"अगर पुरुष जाति अिसी तरह अत्याचार करती रही तो वह भी हो जाअेगा।"

नरेश तड़प अुठा; बोला—"अुस दिनकी राह देखूंगा पर जब तक वह नहीं आ जाता तब तक तुम्हें पुरुषकी अधीनता स्वीकार करनी ही पड़ेगी।"

नीलाका स्वर भी तीखा था; बोली—"वह तो प्रति क्षण कर रही हूँ।"

और फिर अुसका क्रोध ग्लानि बनकर बह निकला। अैसे झगड़े प्रायः हो जाते थे और फिर अुस दिन दोनोंमेंसे कोअी बाहर नहीं निकलता था। यद्यपि दूसरे दिन नींद खुलते ही दोनों फिर रोजकी तरह काम करने लगते थे, पर अुनके बीचकी खाअी बराबर बढ़ती जाती थी। विशेषकर नरेशका व्यवहार तो अेकदम सभ्यताके सबसे निचले स्तरसे भी नीचे अुतरता जा रहा था। पर अचानक कुछ दिनोंसे अुसने अेकाअेक अेक नया मार्ग पकड़ा है। वह चुप रहता है। कमसे कम झगड़ा करता है। हंसता भी है, और नीलाको सदाकी तरह दौरेपर साथ रखता है।

नीला अिस परिवर्तनका पूरा लाभ अुठा लेनेका प्रयत्न करती है। अुसका कृष्णवर्णी मुख अेक अनिवर्चनीय आनन्दसे चमकने लगा है। वह बुलबुलकी तरह चहकती है। सितारको अुसने फिर निकाल लिया है और अुसके तारोंको वह अपनी अुंगलियोंके संगीतसे साधकर कभी-कभी सन्ध्याके झौलबोलेमें जब झंकृत कर अुठती है, तो अुसका अपना अस्तित्व प्रकृतिके अव्यक्त संगीतमें लय हो जाता है। अैसे ही अेक दिन जब वे अेक नहरके किनारेके अेक निर्जन डाक बंगलेमें ठहरे थे, तब नरेशने कहा—"नीला! कोयल क्यों प्यारी लगती है, यह आज जाना है।"

"सच।"

"हाँ।"

"मेरी सौगन्ध खाओ।"

"तुम्हारी सौगन्ध। तुम्हारे संगीतमें शराबका नशा है।"

"तो शराब पीना छोड़ दो।"

"वह तो छोड़नी है। गांधी आज नहीं है, अुसकी विरासत मौजूद है।"

नीला बोली—"महापुरुषोंकी महानताका बोझ अुनकी विरासतसे ही होता है।"

"ठीक है, ठीक है। आओ घूम आवें।"

"चलो।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीला अुसी तरह अुठ चली। नरेशने मुस्कराकर कहा—"शीतको संगीतसे ज्यादा प्रेम नहीं है। कोट पहन लो।"

नीला हँसकर दूसरे कमरेमें चली गयी। अुस थोड़ेसे समयका अुपभोग करके तब नरेशने बहुत कुछ सोच डाला। वह क्या था—यह रविसे शक्तिशाली कविकी कल्पना भी नहीं जान सकी। अेक अक्षर भी अुसके मुखसे बाहर नहीं आया। केवल वह कअी बार काँपा। अुसकी आँखोंका रंग विवर्ण हुआ। अेक बार अुसने अपना ओवरकोट अुतारकर खूंटीपर टाँग दिया और टाअी खोलने लगा, पर हुआ यह कि अुसने टाअीको अच्छी तरह कसा। कोट पहना और छड़ी अुठाकर चलनेको तैयार हो गया। नीला भी कपड़े बदलकर आ गयी थी। अुसने तब नीला मखमलका सूट पहना था। सलवार सलूका और अुसी रंगका दुपट्टा, जो ओवरकोटके अूपरसे निकलकर गरदनके पृष्ठभागको ढक रहा था।

नरेश मुस्कराया, बोला—"नीला रंग तुम्हें सबसे सुन्दर लगता है।"

"तभी तो पहना है।"

नीला मुस्करायी। नरेश सिहरा और फिर वे दोनों कोठीसे निकलकर नहरके किनारे-किनारे पुलकी ओर चलने लगे। नरेशने पूछा—"नीला, तुम तैरना जानती हो।"

"नहीं।"

"अरे।" अचरजसे नरेश बोला—"तुमने अब तक कहा क्यों नहीं।" यह तो बहुत आवश्यक है। कारसे अधिक आवश्यक। तुम्हें याद होगा कि ३६ मील लम्बी अिंग्लिश चैनेल तैरनेका रेकार्ड अेक नारीने तोड़ दिया है।"

"सच।"

"हाँ, मैं चाहता हूँ तुम भी अैसा कर सको।"

नीला अविश्वाससे खुलकर हँसी। अुसके गालोंमें गड्ढे पड़ गये। अुसने कहा—"आप सिखाअिये तो सीखूंगी पर जो तपस्या करनी पड़ेगी अुसके लिअे शायद आप तैयार न हों।"

"मैं हर तपस्याके लिअे तैयार हूँ; विशेषकर तुम्हारे लिअे।"

"सच।"—नीलाको ये शब्द शरद्की धूपकी भाँति प्रिय लगे।

"हाँ—" नरेशने नीलाको अपने पास खींचते हुअे कहा।

मार्ग निर्जन था। पर फिर भी अेक ओवरसियर और दो ठेकेदारोंने अुन्हें प्रणाम किया। बताया- वे शहरसे लौट रहे हैं। फलादि ले आये हैं।

नरेशने कहा—"नौकरको दे दीजिये.....।"

अेक ठेकेदार शीघ्रतासे बीचमें बोल अुठा—"हुजूर। दो बोतल भी हैं।"

"अच्छा, अुन्हें संभालकर रखवा देना। कल शहरमें पार्टी है।"

"जी पार्टीकी चिन्ता आपको नहीं करनी है।"

"और कौन करेगा। सौ व्यक्ति आनेवाले हैं। बड़े साहब भी आअेंगे।"

"मैं जानता हूँ। अब तक यही तो करता रहा हूँ।"

सब हँस पड़े। ओवरसियरने अुसका समर्थन किया। वे लोग चले गये तो नरेश और नीला फिर आगे बढ़े। नीलाका मन डूबते सूर्यकी लालिमामें अुषाकी रक्ताभाको देख रहा था। वह पति-प्रेमके लिअे कोअी दुःख स्वीकार करनेको प्रस्तुत थी। यदि वे अुस समय भी अुससे तैरनेको कहते तो वह नहरमें कूद पड़ती। लेकिन नरेशने तैरनेकी बात तो फिरके लिअे अुठा रखी। कुछ देर कलकी होनेवाली पार्टीकी चर्चा करता रहा, बोला "देखो नीला! अिन अफसरोंको प्रसन्न करनेके लिअे क्या नहीं करना पड़ता। जानता हूं यह अविचार है और अिसके लिअे मुझे अपयशका बोझ ढोना पड़ेगा, पर करता हूँ।"

नीला समझती थी—कुछ दूर चुपचाप चलती रही फिर अेकाअेक बोली—"अेक बात पूछती हूँ। क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिसके किये बिना कोअी चारा नहीं। ठेकेदार जो तुम्हें रिश्वत देते हैं, वह क्या अपने पाससे देते हैं ?"

"नहीं। वे गरीबोंका गला काटते हैं।"

"तो क्या यह अच्छा है ?"

"नहीं यह पाप है।"

"फिर भी आप करते हैं।"

"करना पड़ता है। न करूँ तो राहका भिखारी बनूं। क्या तुम अिसके लिअे तैयार हो।"

अुत्तर देनेसे पहले नीला झिझकी। अेकबार पतिके मुखकी ओर देखा फिर साहस करके कहा—"मैं तैयार हूँ।"

नरेश ठहाका मारकर हंस पड़ा और वह ठहाका जैसे नीलाकी पसलियोंमें बज अुठा, अुसके पति अुसका अविश्वास ही तो कर रहे हैं। अुसने और भी दृढ़तासे कहा—"मैं जानती हूं यह कठिन है, पिताके घर अिसी पापमें मैं पली हूँ पर मैंने पढ़ा है.....।"

नरेशने तीव्रतासे हाथ हिलाकर कहा—"पढ़नेकी बात रहने दो, नीला। लिखनेवाले क्या कहना चाहते हैं अिसका स्पष्टीकरण कोअी नहीं कर पाया। आजाद भारतमें गांधीजीके लिखेकी पूजा सब करते हैं। मानता अुसे कोअी नहीं।"

और फिर कअी क्षण मौन रहकर बोला—"हम क्या अिस वितण्डावादके लिअे शरद्की अिस सन्ध्याको धूमिल करने निकले हैं। आओ कुछ देर अिस पुलपर बैठेंगे।"

आगे जो पुल था अुसके नीचे गहरी झाल थी। फेनिल जलका रौरव नाद दूर तक सुन पड़ता था। वह मानों यात्रीको पुकारता था—"ओरे राही ! मेरा नृत्य संगीत देखे सुने बिना तुम्हारा कल्याण नहीं।"

और तब प्रत्येक राहीको रुकना पड़ता था, यद्यपि अुस नृत्य-संगीतमें मृत्युका आवाहन था। राहीके अन्दरकी धड़कन अनायास ही तेज हो अुठती थी तो भी देखे बिना पैर आगे बढ़ते नहीं थे। क्योंकि फेनिल जाल और फिर व्याकुल गति मनुष्यके अपने मनकी प्रवृत्तियां हैं। वह जगत-जालमें फंसता है और फिर तेजीसे भागता है।

अिसलिअे नीला पुलपर बैठ तो गयी, पर अुसका दिल पानीकी गतिसे दौड़ने लगा। अुसने नरेशकी ओर देखा, वह तब मुस्करा रहा था और अेक टक जलके अुठते फेनको देख रहा था। और डूबते रविका रक्तिम किरण-जाल अुससे लिपटकर बुरी तरह कांप रहा था। नीलाको न जाने क्या हुआ अेकाअेक बोली—"डर लगता है।"

"तुम्हें!"—नरेशने अेकदम जागकर कहा—"तुम तो शक्ति हो।"

"नरेश.....।"

"नहीं, नहीं, डरनेकी बात नहीं है। अुधर देखो अुधर पश्चिम दिशामें...।"

नीला न जाने क्यों चीख पड़ी। अुसने अनुभव किया मानो अेक भयंकर पंजा अुसकी ओर बढ़ा आ रहा है। वह सिहरी। भयसे अुसने आँखें मींच लीं और फिर अुससे बचनेकी चेष्टामें वह झालमें गिर पड़ी। अुसका शरीर कअी बार जलके नृत्यतालपर अूपर-नीचे हुआ। फिर, फिर तीव्रधारमें बह गया।"

यह सब क्षणके सौवें हिस्सेमें हो गया पर नरेश कअी क्षण अुसी तरह हाथ फैलाये खड़ा रहा। फिर अेकाअेक गला फाड़कर चिल्ला अुठा—"अरे कोअी दौड़ो...दौड़ो.. कोअी है, मेम साहब नहरमें गिर पड़ी। दौड़ो...मेमसाहब गिर पड़ी।"

अुसे कअी बार पुकारना पड़ा, पुकारता रहा। अिधर-अुधर कुछ लोग आ-जा रहे थे, पुकार सुनकर दौड़े आये। कुछ ही देरमें ओवरसियर, ठेकेदार, मजदूर सब वहाँ अिकट्ठे हो गये। अुस समय तक नरेश कुछ होशमें था। बादमें गिर पड़ा और बेहोश हो गया।

अगले दिन दूसरे किसी पुलके पास नीलाका शव अटका हुआ मिला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय साहित्यमें वर्षा-मंगल

वाल्मीकि रामायणमें वर्षा

वाल्मीकि रामायणके किष्किन्धा कांडमें २८ वें सर्गमें, श्रीरामचन्द्र द्वारा वर्षा ऋतुका सम्पूर्ण सुन्दर वर्णन है। सर्ग काफी लम्बा है। अुसके कुछ चुने हुअे सुन्दर श्लोक पढ़िये :—

मेघोदरविनिर्मुक्ताः कल्हार दल शीतलाः।
शक्यमंजलिभिः पातुं वाताः केतकिगन्धिनः॥

क्वचित्प्रकाशं क्वचिदप्रकाशं नभः प्रकीर्णांबुधरं विभाति।
क्वचित्क्वचित् पर्वत संनिरुद्धं रूपं यथा शान्तमहार्णवस्य॥

विद्युत्पताकाः सबलाकमालाः शैलेन्द्रकूटाकृति सन्निकाशाः।
गर्जन्ति मेघाः समुदीर्णनादा मत्ता गजेन्द्रा अिव संयुगस्थाः॥

समुद्वहन्तः सलिलातिभारं बलाकिनो वारिधरा नदन्तः।
महत्सु शृंगेषु महीधराणां विश्रम्य विश्रम्य पुनः प्रयान्ति॥

बालेन्द्रगोपान्तर चित्रितेन विभाति भूमिर्नव शाद्वलेन।
गात्रानुवृत्तेन शुकप्रभेण नारीव लाक्षोक्षित कम्बलेन॥

क्वचित्प्रगीता अिव षट् पदौघैः क्वचित् प्रनृत्ता अिव नीलकंठैः।
क्वचित्प्रमत्ता अिव वारिणेन्द्रैर्विभान्त्यनेकाश्रयिणो वनान्ताः॥

षट्पाद तंत्री मधुराभिधानं प्लवंगमोदीरित कंठतालम्।
आविष्कृतं मेघ मृदंग नादैर्वनेषु संगीतमिव प्रवृत्तम्॥

मेघाः समुद्भूत समुद्रनादाः महाजलौघैर्गगनावलम्बाः।
नदीस्तटाकानि सरांसि वापीर्महीं च कृत्स्नामपवाहयन्ति॥

भावार्थः—मेघोंके भीतरसे निकला कमलदल शीतल और केतकीके गन्धसे सुगन्धित पवन अंजलि भरकर पिया जा सकता है। कहीं प्रकाश, कहीं अप्रकाश, मेघोंसे छाया आकाश जहाँ-तहाँ पर्वतोंसे रुद्ध होकर प्रशान्त महासमुद्र जैसा शोभायमान है। बिजली-रूपी पताका और बकपंक्ति-रूपी माला धारण किये शैल-शिखर तुल्य डीलवाले मेघ, रणमत्त गजेन्द्रोंके समान घोर नाद कर रहे हैं। बक-पंक्तियोंसे शोभित और गरजते मेघ, जलभारके कारण पर्वत-शिखरोंपर विश्राम करकरके चले जाते हैं। छोटी बीरबहूटियोंसे चित्रित नयी हरी-हरी घास पृथ्वीपर अैसी अच्छी खिल रही है, जैसे किसी नारीपर लाल बुंदकियोंवाली हरी ओढ़नी हो। कहीं भौंरोंका गुंजार, कहीं मयूरोंका नर्तन, कहीं मस्त हाथी, — सारा वनप्रदेश नाना कौतुकोंसे शोभित हो रहा है। भौंरोंका गुंजन मानों वीणाकी झंकार है। दादुरोंकी ध्वनि मानों कंठताल, मेघोंका गर्जन मानों मृदंग गमक है। अिस प्रकार वनोंमें संगीतोत्सव हो रहा है। मेघोंसे समुद्रकी तरह नाद निकल रहा है। वे जलराशि लेकर गगनमें मँडरा रहे हैं। नदी, तालाब, सरोवर, कूप-वापी, सारी पृथ्वीमें व्याप्त हो गये हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री मद्भागवतमें वर्षा : विस्फूर्जित नभस्तल

[दशम स्कन्ध : अध्याय २० वाँ]

ततः प्रावर्तत प्रावृट् सर्व सत्व समुद्भवा ।
विद्योतमानपरिधि विस्फूर्जितनभस्तला ॥

तड़ित्वन्तो महामेघाश्चण्डश्वसन वेपिताः ।
प्रीणनं जीवनं ह्यस्य मुमुचुः करुणा अिव ॥

तपः कृशा देवमीढा आसीद्वर्षीयसी मही ।
यथैव काम्यतपसस्तनुः सम्प्राप्य तत्फलम् ॥

निशामुखेषु खद्योतास्तमसा भान्ति न ग्रहाः ।
यथा पापेन पाखंडा न हि वेदाः कलौ युगे ॥

आसन्नुत्पथ वाहिन्यः क्षुद्रनद्योऽनुशुष्यतीः
पुंसो यथा स्वतंत्रस्य देह द्रविण सम्पदः ॥

हरिता हरिभिः शष्पै रिन्द्रगोपैश्च लोहिताः ।
अुच्छिलीन्ध्र कृतच्छाया नृणां श्रीरिव भूरभूत् ॥

सहिभ्दिः संगतः सिन्धु श्चुक्षुभे श्वसनोर्मिमान् ।
अपक्वयोगिनश्चित्तं कामाक्तं गुणयुग्यथा ॥

मार्गा बभूवुः सन्दिग्धास्तृणैश्छन्ना ह्यसंस्कृताः ।
नाभ्यस्यमानाः श्रुतयो द्विजैः कालहता अिव ॥

मेघागमोत्सवा हृष्टाः प्रत्यनन्दन् शिखंडिनः ।
गृहेषु तप्ता निर्विण्णा यथाच्युतजनागमे ॥

अर्थात्:—वह वर्षा ऋतु आयी, जिसमें सब प्राणियोंका जीवन हरा-भरा होता है और सब जीवोंकी अुत्पत्ति होती है। घन घटाओंसे आकाश छा गया है। प्रचंड झंझावातसे ताड़ित और दामिनीसे दमकित मेघ परोपकारी व्यक्तिकी तरह जीवन (जल) बरसाने लगे। ग्रीष्म ऋतुके तापसे सूखी हुअी पृथ्वी वर्षाके जलसे अभिषिक्त होकर फिर हरी-भरी हो गयी, जैसे अिष्ट-लाभ होनेपर तपःकृश तपस्वी पुरुषका शरीर फिर हृष्ट-पुष्ट हो जाता है। रात्रिके समय बादलोंके घोर अंधकारमें जुगुनुओंकी ज्योति चमकने लगी और ग्रह-नक्षत्रोंका दर्शन बन्द हो गया। —जिस तरह पापकी प्रबलताके कारण कलियुगमें पाखंडमतोंका प्रचार हो जाता है और वैदिक सन्मार्ग लुप्त हो जाते हैं। छोटी-छोटी नदियाँ, जो गरमीकी ऋतुमें सूखी पड़ी हुअी थीं, अुमड़-घुमड़कर अपनी सीमाका अुल्लंघन करके अिधर-अुधर बहने लगीं; जिस प्रकार असंयमी अजितेन्द्रिय पुरुषका शरीर, धन और सम्पदा कुमार्गमें ही लगते हैं। हरी-भरी घासके कारण हरी, बीरबहूटियोंके कारण लाल और छत्रक-पुष्पके कारण (यह वर्षा ऋतुमें सर्वत्र होता है।) छत्र-युक्त होकर पृथ्वी नरेशोंकी सम्पत्तिके समान सुशोभित होने लगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसकी वासनाएँ क्षीण नहीं हुई हैं, अुस योगीका चित्र जैसे विषयवासनाका संग होनेसे वासनामय हो जाता है; वैसे ही प्रचंड हवाके कारण तरल तरंगोंसे पूर्ण समुद्र, नदियोंके संगमसे क्षुब्ध हो गया। जिनकी कभी सफाअी नहीं की जाती, वे मार्ग घाससे ढ़क जानेके कारण सन्दिग्ध हो गये, पहचाने नहीं जाते; जिस प्रकार अभ्यास न करनेसे ब्राह्मणोंकी पढ़ी हुअी श्रुतियाँ (वेद ऋचाअें) कालक्रमसे विस्मृत हो जाती हैं। मेघोंका आगमन जिनके लिअे अुत्सवके समान आनन्ददायी है, वे मयूरहर्षित होकर अपनी प्रसन्नता प्रकट करने लगे, जैसे गृहस्थाश्रममें तापसे सन्तप्त होकर अुद्विग्न पुरुष भगवद्भक्तके आगमनसे प्रसन्न होते हैं।

"रामचरित मानस" में वर्षा

चौ०॥ वर्षाकाल मेघ नभ छाये। गर्जत लागत परम सुहाये।
दामिनि दमकि रही घन माहीं। खल कै प्रीति जथा थिर नाहीं।
बरषहिं जलद भूमि नियराये। जथा नवहिं बुध विद्या पाये।
बुंद अघात सहहिं गिरि कैसें। खलके वचन संत सह जैसें।
छुद्र नदी भरि चलीं अुतराअी। जस थोरेहु धन खल बौराअी।
भूमि परत भा ढाबर पानी। जिमि जीवहि माया लपटानी।
सिमिटि-सिमिटि जल भरहिं तलावा। जिमि सद्गुन सज्जनपहिं आवा।
सरिता जल जल-निधि महुँ जाअी। होहि अचल जिमि जिव हरि पाअी।

दो०॥ हरित भूमि तृन संकुल, समुझि परहिं नहिं पंथ।
जिमि पाखंड बाद तें, लुप्त होहिं सद्ग्रन्थ।

चौ०॥ दादुर धुनि चहुं ओर सुहाअी। वेद पढ़हिं जनु बटु समुदाअी।
नव पल्लव भये बिटप अनेका। साधक मन जस मिले बिबेका।
अस सम्पन्न सोह महि कैसी। अुपकारी कै सम्पति जैसी।
निसि तम घन खद्योत बिराजा। जनु दंभिन कर मिला समाजा॥
महावृष्टि चलि फूटि कियारी। जिमि स्वतंत्र ह्वै बिगरहिं नारी।
कृषी निरावहिं चतुर किसाना। जिमि बुध तजहिं मोह मद माना॥

दो०॥ कबहुं प्रबल चल मारुत, जहँ तहँ मेघ बिलाहिं।
कबहुं दिवस महँ निबिड तम, कबहुँक प्रगट पतंग।
बिकसै अुपजै ग्यान जिमि, पाअि कुसंग सुसंग॥

अर्थात्:—वर्षाकालमें बादल आकाशमें छा गये। गरजते हुअे वे बड़े सुहावने लगते हैं। बिजली चमककर बादलोंमें स्थिर नहीं रहती; जैसे, दुष्टोंकी प्रीति स्थिर नहीं रहती। बादल भूमिके निकट आकर बरसते हैं; जैसे, विद्या पाकर विद्वान नम्र होते हैं। बूंदोंकी चोट पर्वत कैसे सहते हैं; जैसे, दुष्टोंके वचन संत पुरुष सहते हैं। क्षुद्र (छोटी) नदियाँ भरकर (दोनों किनारोंको) तोड़ती हुअी अुमड़ पड़ीं; जैसे, थोड़े धनसे दुष्ट अितरा जाते हैं, मर्यादाका त्यागकर चलते हैं। पृथ्वीपर पड़ते ही जल गन्दा (गँदला) हो गया; जैसे, शुद्ध जीवको माया लिपट जाती है। जल सिमिट-सिमिट (अिकठ्ठा हो-हो) कर तालाबोंमें भर रहा है; जैसे, सज्जनके पास सद्गुण अेक-अेक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करके चले जाते हैं। नदीका जल समुद्रमें जाकर अिस प्रकार अचल हो जाता है; जैसे, जीव भगवानको पाकर स्थिर हो जाता है—आवागमनसे मुक्त हो जाता है। भूमि हरी-हरी घाससे परिपूर्ण हो गयी है, जिससे रास्ते समझ नहीं पड़ते, जैसे पाखंड मतके प्रचारसे सद्ग्रंथ लुप्त हो जाते हैं। चारों दिशाओंमें मेढ़कोंकी ध्वनि (आवाज) अैसी सुहावनी लगती है, मानों विद्यार्थी-समूह वेद पढ़ रहा है। अनेको वृक्षोंमें नये नये पल्लव निकल आये, जिससे वे अैसे हरे-भरे लगते हैं, जैसे साधकका मन विवेक-ज्ञान प्राप्त होनेपर हो जाता है। सस्य (शस्य) अन्नसे, लहलहाती खेती से हरी-भरी भूमि कैसी शोभित हो रही है, जैसी अुपकारी व्यक्तिकी सम्पत्ति। रातके घने अन्धकारमें जुगनू टिमटिमाते शोभित हो रहे हैं, मानों दम्भियों (पाखंडियों)का समाज जुटा हो। भारी वर्षा होनेसे (खेतों, बाग-बगीचोंकी) क्यारियाँ फूट चली हैं, जैसे स्वच्छन्द होनेपर स्त्रियाँ बिगड़ जाती हैं। चतुर किसान अपने खेतोंको निरा रहे हैं– अनावश्यक घास-पत्ती निकालकर हटा रहे हैं (निराना-निराकरण करना), जैसे विद्वद्‌ज्जन मोह, मद और अभिमान छोड़ देते हैं। कभी (बादलोंके कारण) दिनमें घोर अन्धकार छा जाता है और कभी सूर्य प्रकट हो जाता है, जैसे कुसंगति पाकर ज्ञान नष्ट हो जाता है और सत्संग पाकर अुत्पन्न होता है।

----:o:----

मीराका वर्षा मंगल

आनन्द मंगल गावनकी !

बरसै बदरिया सावनकी, सावनकी मनभावनकी,
सावनमें अुमड़्यो मेरे मनवाँ, भनक सुनी हरि-आवनकी।
अुमड़-घुमड़ चहुँ दिसिसे आयो, दामिनि दमके झर लावनकी।
नन्हीं-नन्हीं बूँदन मेहा बरखे, सीतल पवन सुहावनकी।
मीराके प्रभु गिरिधर नागर, आनन्द-मंगल गावनकी॥

राजस्थानीका मन चातक भयो !

मन चातग भयो

१. चहुँ दिस दामण, सघन घण, पीव तजी तिणवार।
मारु मन चातग भयो पिव-पिव करत पुकार॥

२. सावण आया, सायबा, हरिया-हरिया वन्न।
हरियो हुओ न अेकलो, प्यारी धण राँ भन्न॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कन्नड साहित्यमें वर्षा

वर्षा ऋतु

: कवि० श्री 'आनंदकंद' :

[कन्नड साहित्य-क्षेत्रमें श्रीकृष्ण बेटगेरीजी "आनंदकंद" के नामसे प्रसिद्ध हैं; जैसे हिन्दीमें प्रेमचंदजी। अिनकी प्रतिभा बहुमुखी है। आप श्रेष्ठ कहानीकार, अुपन्यासकार, गद्यकार हैं। फिर भी आपकी प्रसिद्धि कविके रूपमें ही अधिक हुअी है। चूंकि आपको साहित्यिक जीवनके आरंभ कालमें ही 'कविभूषणकी' की अुपाधि मिली थी। आप कर्नाटकके प्रसिद्ध 'देवराज बहादुर पारितोषिक' के विजेता हैं। आपकी भाषा मंजी हुअी, पद लालित्यसे भरी हुअी, अर्थ गांभीर्यसे युक्त, अुपमानोंसे अलंकृत अेवं हृद्य होती है। शैलीकी धारा मनोरम होती है। आपकी रचनाओंमें 'मुदन मातु, अरुणोदय, विरहिणी, ओडनाडी, कारहुण्णिवे' कविता-संग्रह प्रसिद्ध हैं; तो कहानी संग्रहोंमें 'संसार चित्र', 'नम्म बदुकु', 'माताडुव कल्लु' प्रसिद्ध हैं। अुपन्यासोंमें 'सुदर्शन, राजयोगी, अशांतिपर्व' प्रधान हैं। 'कर्नाटक जनजीवन' नामक संशोधनात्मक पुस्तक भी ख्याति प्राप्त है। आप कअी वर्षोंसे कन्नडकी 'जयंति' नामक सुंदर मासिक पत्रिकाका संपादन भी कर रहे हैं। कन्नड-साहित्यकी सेवा ही आपके जीवनका ध्येय है। —संपादक]

कवि वर्षा-ऋतुकी जननी जेठ-पूर्णिमाका आवाहन करता है—

कन्नड़	हिन्दी अनुवाद
बार कारहुण्णिवे,	आ आ जेठकी पूर्णिमा,
दैवद कारुण्यवे !	अदृष्टकी कारुण्या !
(१)	(१)
दूरदिंद निन्न वार्ते	दूर दूरसे तेरी वार्ता
हारि सारि बरुतलिदे...	अुड़ी आ रही है...
हारयिसुत निन्न बरव	कामना करते तेरे आगमनकी
दारिकाय्वेनेंदिनिंदे,	राह देख रहा हूँ कबसे
बार कारहुण्णिवे,	आ आ जेठकी पूर्णिमा,
नम्मेल्लर पुण्यवे !	हम सबोंकी पूर्ण पुण्या !
(२)	(२)
बड़वर बरियोड़लिनंते	गरीबोंके खाली पेट-सा
बरिदु बरिदु बानेल्ला...	खाली-खाली गगन सारा...
अुडिगे अिरद गरतियंते	आवरणविहीना कुलवधू-सी
तेरहु तेरहु बुवियेल्ला !	खाली-खाली पृथिवी सारी !
बार कारहुण्णिवे,	आ आ जेठकी पूर्णिमा,
वैभव संपूर्णवे !	वैभवकी संपूर्णा !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३)

सोगे-नविलु वैशाखद
बेगेगळुकि मिडुकुतिवे...
केगु कुणित मरेदु निन्न
आगमनके दुडुकुतिवे,
बार कारहुण्णिवे,
रसजन सन्मान्यवे !

(४)

रवि बेळगिद, बंदितेनु ?
शशि तोळगिद संदितेनु ?
हसिदातन कण्णु कुरुडु,
बेळगु बैगु समवे अेरडु !
बार कारहुण्णिवे,
क्षुधित जनशरण्यवे !

(५)

कर्मोड़द तेरेय बान
माड़ि निन्न कुणितदाण
कोलिंमचिन कत्ति हिड़िदु
गुडुगिन अड़िगेज्जे जड़िदु,
बार कारहुण्णिवे,
नटसंकुल गण्यवे !

(६)

हळेय हुल्लु-गिड़-मर होस
मळेगे तळिरलाशिसुतिवे,
नेलदि हुदुगिदेनितो बीज
मोळेतु बेळेयलेळसुतिवे...
बार कारहुण्णिवे,
प्रकृतिय चैतन्यवे !

(७)

अेदेयरळुव चेलुव सलिसि
ओड़ल होरेव बेळस बेळसि
गुरिय गेलुव नेलेय तिळिसि
धरेयोळे सुरलोक नेलसि
बार कारहुण्णिवे,
निनगंतह कण्णिवे !

(३)

पंखी-मोर बैसाखकी
गर्मीसे तड़प छटपटा रहे हैं...
काक, नृत्य भूल तेरे
स्वागत करनेको बढ़ रहे हैं,
आ आ जेठकी पूर्णिमा,
रस-जनोंकी सन्मान्या !

(४)

रवि अुगा, आया क्या ?
शशि गया, मिला क्या ?
भूसेकी आँख अंधी
सांझ सबेरा सम दोनों !
आ आ जेठकी पूर्णिमा,
क्षुधित जनोंकी शरण्या !

(५)

काले बादलका परदा गगन
बना तेरे नृत्यका स्थान
बिजलीकी असि धरकर
तडित्-घुंघरू पटक-पटककर
आ आ जेठकी पूर्णिमा,
नट — संकुलगण्या !

(६)

पुराने घास-पेड़-वृक्ष नयी
वर्षाका किसलय चाह रहे हैं,
भूमिमें न जाने कितने छिपे बीज
अंकुरित हो बढ़ना चाह रहे हैं...
आ आ जेठकी पूर्णिमा,
प्रकृति माताकी चैतन्या !

(७)

हृदय विकासक सौंदर्य दे
अुपजीवनकी फसल अुगा
ध्येय जीतका रहस्य जता
धरा पै सुरलोक जमा
आ आ जेठकी पूर्णिमा,
तुझे अैसी हैं आँखियाँ !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(८)

देवदिनवे नीनैतरे
जीवकुलद हसिवेय कोरे–
यारिसि बिडुवंथ बसिर
भूरमणियु पड़ेवळु, त्वर–
बार कारहुण्णिवे,
शांति सुखदरण्यवे !

(८)

देवदिन यदि तू लावे
जीवकुलकी भूखकी ज्वाला
मिटा देनेवाला गर्भ
भू-रमणी पावेगी सत्वर
आ आ जेठकी पूर्णिमा,
शांतिसुखदायी कानना !

कवि जेठकी पूर्णिमाका आवाहन करनेके अुपरांत वर्षा देनेवाले श्रावण-समीरको पुकारता है:—

कन्नड़

बा, श्रावण शुभ समीर बारा !
बारै श्रावण समीर,
कालनोलुमेयोलेकार,
सुखनाटक सूत्रधार,
बुविय बेटगारा !
बा, श्रावण शुभ समीर बारा ! ॥१॥

पडुगड़लिगे तेरेय हेरि,
जड़िय मुगिल केळेय सेरि,
निडुमलेगळ तलेयनेरि,
कणिवेयिळिदु बारा !
बा, श्रावण शुभ समीर बारा ! ॥२॥

तेंगु-कंगु बाळे-हलसु,
होंगेदगे बनद बेळसु,
निर्न्निदले अेल्ल हुलुसु !
सिरिय संचुगारा !
बा, श्रावण शुभ समीर बारा ! ॥३॥

बनद तरुवनोले दाड़िसि,
तोनेव लतेय नलिदाड़िसि,
बेळकिगु हसिरनु कूडिसि,
चतुर शिल्पधीरा !
बा, श्रावण शुभ समीर बारा ! ॥४॥

बांटदेरेदिदे बयलुनेल,
काय्दिदे अिदो बीजकुल,
बंदु सुरिसु चैत्यजल
मळेय मोड़िकारा !
बा, श्रावण शुभसमीर बारा ! ॥५॥

हिन्दी अनुवाद

आ, श्रावण शुभसमीर आ, !
आ जा श्रावण समीर,
कालका प्यारा सेवाकार,
सुखनाटक सूत्रधार,
भूमंडलका शबर !
आ, श्रावण शुभसमीर आ ! ॥१॥

पश्चिम-सागर पै वीचि लाद
मेघ गगन मित्रसे मिल
घने जंगलोंके सिर पै चढ़
खानसे अुतर आ जा !
आ, श्रावण शुभसमीर आ ! ॥२॥

नारियल-क्रमुक, कदली-कटहल,
सुनहली केतकी बनकी फसल,
तुझसे ही सर्व पैदावार
श्रीका पेशकार !
आ, श्रावण शुभसमीर आ ! ॥३॥

बनका तरु हिला-डुलाकर,
झूमनेवाली लता नचाकर,
प्रकाशसे हरियाली मिलाकर,
चतुर शिल्प-धीर !
आ, श्रावण शुभसमीर आ !! ॥४॥

मुँह खुला है मैदान-भूका,
राह देख रहा है कुल बीजका,
आकर बरसा चेतन जल
वर्षाका विलासकार !
आ, श्रावण शुभसमीर आ, ! ॥५॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेळुवळिगर बरिय मने—
नीनोलिदरे सिरिय तेने !
अलिदु नलिदु रुमुझुमु अेने
सुळि-सुळि सुखसारा !
बा, श्रावण शुभसमीर बारा ! ॥६॥

निन्न गतिय गेज्जेनाद
नल्ल-नल्लरेदेगे मोद
श्रंगारद सुखोन्माद—
सृष्टिगे सहकारा !
बा, श्रावण शुभसमीर बारा ! ॥७॥

अुपजाअू प्रदेशीका घर—
तू प्यार करे तो श्रीका भुट्टा !
संचार कर बहकर रिमझिम कर
बह बह सुखसार !
आ, श्रावण शुभसमीर आ ! ॥ ६ ॥

तेरी गतिका घुंघरुनाद
प्रेमी-प्रेमीका हृदम-मोद
श्रृंगारका सुखोन्माद—
सृष्टिका सहकारी !
आ, श्रावण शुभसमीर आ ! ॥ ७ ॥

सावनका आना क्या है, वर्षाऋतुका सम्पूर्ण आगमन ! सावनके आते ही, श्रावण समीरका परिणाम दृष्टिगोचर होते ही कविका हृदय आनंदसे नाचकर झूम-झूमकर गाने लगता है—

कन्नड़

अिदो, श्रावण बंदिदे भूवनके
जनजीवन पावन गैयलिके—
अिदो, श्रावण बंदिदे भारतके !

(१)

तेरळितु वैशाखद बिरुविसिलु,
सरियितु मृगजलदा हुसिहोनलु;
मरेयायितु सुट्टुरेगळ होयिलु,
बरिबानोळु तुंबिदे नीर्मुगिलु !
बरगालद बाधेय हणियलिके—
अिदो, श्रावण बंदिदे अी नेलके !

(२)

मुंगारिन कार्मोड़द कूट.....
मुन्नीरलेगळ तांडवदाट . ...
कंगेड़िसुव कोलिंमचिन काट.....
हिंगिदुओ सिड़िलिन गुडुगाट—
समयोगद सरियनु सुरिसलिके
अिदो, श्रावण बंदिदे भूतलके !

(३)

काडुव तगरिन कोंबनु कळेदु .
होरुव होरिय हम्मनु हिळिदु
हेण्-गंड़नु हुरूपिसि मनसेळेदु ..
रणहेड़ि अेड़िया तले तुळिदु
मृगराजन मैगुण मेरेसलिके—
अिदो, श्रावण बंदिदे अी नेलके !

हिन्दी-अनुवाद

लो, सावन आया है भुवनपर
जनजीवन पावन करनेको—
लो, सावन आया है भारत भूपर !

(१)

चल पड़ी बैसाखकी कड़ी गरमी
हट गयी मृगजलकी वह धार झूठी
ओट हुअी बवंडरोंकी प्रबल-धार
केवल भरा है गगनमें मेघ-माल !
अकाल-बाधा भगानेको—
लो, सावन आया है अिस भूको !

(२)

आरंभ-वर्षाका काला बादल-कुल...
सागरकी तरंगोंका तांडव खेल...
चकाचौंध करनेवाली कौंधकी पीड़ा...
गायब सब बिजलीकी कड़कड़ाहट—
समयोगकी वर्षा करनेको
लो, सावन आया है भूतलको !

(३)

पीड़ादायक मेघका सींग हटा...
लड़ाकू सांड़का अहम् मिटा ..
स्त्री-पुरुषको अुकसाकर मन मोहके...
डरपोक कर्कका सिर कुचल...
मृगराजका स्वभाव गुण दरसानेको—
लो, सावन आया है अिस भुविको !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४)

बानोळु तुंबिदे जीवन जलवु...
बुवियोळु तंगिदे बेळसिन बलवु...
'अेळलि अेळलि कृसिकर कुलवु'...
गाळि कूगुतिदे बेळदे अुलिवु ?
नम्मेल्लर हसिवनु तणिसलिके---
अिदो, श्रावण बंदिदे भूवनके !

(५)

बरत तोरेगळदो, सूसि हरिदिवे...
अरत केरेगळगो, तुंबि मेरेदिवे...
बरदु-बळ्लि-गिड्ड चिगिनु नगुतिवे...
बरि होल-नेल ससि-हसिरनुगुतिवे...
चेलुविंगे गेलव तानीयलिके—
अिदो, श्रावण बंदिदे भूतलके !

(६)

'बंदिदे गेळेयरे नल्मळेगाल...
'तंदिदे बल्-बेळसिगे हदगाल...
'अुळुमे-बित्तिगेगे अिदुवे सकाल...
'कळेदुकोळ्लदिरि निम्मय पाल'—
अिंतोरेदु जगव जागरिसलिके—
अिदो, श्रावण बंदिदे अी नेलके !

(७)

श्रावणदी शुभयोगवेंयदो
देवभाव तलेयनेत्ति निंतुदो !
हावु-हुळुवनू देवरू अेनुव...
भावनेयलि जन पूजिसुतिहुदो !
आ देवन महिमेय गायनके—
अिदो, श्रावण बंदिदे भूवनके !

(८)

कनसिरदा निद्देयनोड़िसुत...
मनदाशेगे कुसुरनु मूड़िसुत...
मनुकुलवने अुय्यलेयाड़िसुत...
कणसिन कतेगळ कोंडाडिसुत—
सवियोलवनु हंचुत मनमनके—
अिदो, श्रावण बंदिदे भूवनके !

(४)

गगनमें भरा है जीवन-जल...
भुविमें बसा है अुपज-बल...
'अुटे, अुटे, कृषकोंका कुल'...
वायु पुकार रहा है, सुनते नहीं आवाज ?
हम सबकी भूख मिटानेको—
लो, सावन आया है भूवनको !

(५)

लो, नदियाँ भर-भर बहती हैं...
रीते तड़ाग भर-भर खड़े हैं...
सूखे पत्ते-पेड़ पल्लवित हो हंसते हैं...
रीते खेत सस्य-श्यामला भये हैं...
सौंदर्यकी जीत देनेको—
लो, सावन आया है भूतलको !

(६)

'आयी है मित्रो प्रिय वर्षर्तु...
'लायी है अुपजका सुकाल...
'बोनेके लिअे है यह सकाल...
'मत गँवाओ अपना-अपना भाग'—
यों. कह दुनिया जगानेको—
लो, सावन आया है अिस भुविको !

(७)

सावनका यह शुभयोग किस भांतिका,
देव भाव सिर अुठा-अुठा खड़ा है !
साँप-कीड़ोंको देव समझनेवाली
भावनामें रे जन पूज रहा है !
अुस देवकी महिमा गानेको—
लो, सावन आया है भूवनको !

(८)

स्वप्नरहित निद्रा भगाते हुअे...
मनोकामनाको अंकुरित करते हुअे...
मनुकुलको झूलेमें झुलाते हुअे...
स्वप्नकथाअें सराहते हुअे—
मधुर-प्यार बाँटते हुअे मन-मनको—
लो, सावन आया है भूवनको !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(९)

बरलिदे मानवभिय बलराग...
करेदिदे गेलविन दसरेय भोग...
तरलिदे अिदे दीवळिगेय योग...
बेळकिन राज्यवे अिळेयोळगाग...
आ बेळकिन दारिय तिळुदलिके--
अिदो, श्रावण बंदिदे भूतलके !

× × ×

जन जीवन पावन गैयलिके
अिदो, श्रावण बंदिदे भारतके !

(९)

आनेवाला है महा नवमिका बल राग...
बुलानेवाला है जीतके दशहरेका भोग...
लानेवाला है यही दीपावलीका योग...
ज्योतिर्मय राज्य भूवलयमें तब...
अुस ज्योतिकी राह जतानेको—
लो, सावन आया है भूतलको !

× × ×

जन जीवन पावन करनेको
लो, आया है सावन भारतको !

(कन्नडसे अनुवादकः- श्री गुरुनाथ जोशी)

तेलुगुमें वर्षा गीत

मेघमु

: आचार्य श्री रामप्रोलु सुब्बाराव :

१. आकाशंबुन जीरुकाडे सोगसै याषाढ़योषा नितं--
बाकीर्णालक जालकंबुलन, पायल्पायलै मेघमुल्;
राकाचन्द्रविलासमुल् मुसुगुवारन् नैल्यमाल्यंबुलै
प्राकेन् जीकटिचेट्ल सोयगपु पूरंगुल् दिशांतम्मुलन् ॥

२. चिनुकु चिन्कुनकु जीलिनचिन्नरेकुल
तोड पद्मंबु लल्लाड दोडगे;
धार धारकुमापु तगिलिन चिगुरुल
तोड कोम्मलु सोंपु लोड गडगे;
जल्लु जल्लुनकु दृष्णलु सळ्ळु तीयम्मु
तोड चातकमुलरडि सागे ।
अुरुमुरुमुनकु नंकुरमैन मोलकल
तोड वेणुवुलु तू गाडनय्ये;
खेदमुनु मोदमवनिकि गीलुकोलिपि
प्रौढवयि नटियिंतु वाषाढलक्ष्म !
पल्कलेक प्रालमालु ना नाल्कगूड
क्रोत्त चक्किलिगिंतल गुस्तरिंप !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. अेंडिन वीळ्ळयंदु नुदयिंचिन पच्चिक कंड्लपंडुवै
युंडग जूडियालु तललूपुचु बोयेडिः क्रोत्त नीटिचे
निंडे दटाक गर्भमुलु, निष्कुटमुल्कडु श्यामलंबुलै
मेंडुकोनेन् विनिन्, मोगिलु मेसे प्रभातमुलंदु गोंडलन् !

४. नीडल् गट्टग भूमियंदु, जदलन् व्रेलाडु कादंबिनी–
चूडाकृष्णकलाप गुच्छमुलपै जूड्कुल्कटाक्षिपचि,ली
ला डोलासुखलालनीयरति सोलन् सागे नृत्योत्सव–
क्रीडोन्मादमुलै मयूरमुलु सारेन् पिञ्छमुल्विप्पुचुन्

५. कडलिमृललनुंडि पिक्कटिल लेचि
बोब्बरिल्लुचु मब्बुलु पोवसागे,
तोलकरिवयः पयस्सु पोंगुल विधान
गुव्वेतल विप्रलंभवागुरुल जिक्क !

(हिन्दी अनुवाद)

१. आषाढ़-रमणीके नितंबाकीर्ण अलक जालकी भाँति, असंख्य लटोंमें सुंदर बादल नभोदेशमें अिधर-अुधर मँडरा रहे हैं। राकाचंद्रकी शोभा अुनमें छिप जाया करती है। तमाल वृक्षोंकी सुंदरताअें जैसे नीलमके हार बनकर दिशांचलोंमें फैल गयी हैं !

२. बूँद-बूँद (के आघात) से विदीर्ण छोटी पँखुरियाँ लिये कमल अिधर-अुधर काँपते रह गये हैं। प्रत्येक धार (के स्पर्शसे) और भी चिकने लगनेवाले पल्लवोंसे शाखाअें सौन्दर्य बिखेर रही हैं। हर बौछारके साथ प्यासकी तीव्रता मंद पड़ती गयी, तो पपीहे किसी मादक सुखमें विहार करने लगे हैं।

बादलकी प्रत्येक गरजपर बाँसके झुरमुटोंसे नये अङ्कुर फूट रहे हैं और हवामें अुनका लहराना नयनाभिराम लग रहा है।

हे आषाढ़ लक्ष्मी ! तुम पृथ्वीको खेद और मोद प्रदान करती हुअी प्रौढ़ाकी भाँति नाट्य कर रही हो ! (तुम्हारे शीतल स्पर्शसे ग्रीष्म तापसे क्षीण अेवं) अवश बनी मेरी वाणी भी नयी गुदगुदी पाकर चपल व मुखर बन चली है !

३. सूखे मैदानमें हरी रेशम-सी घास निकल आयी है, दर्शकोंके मन बाग-बाग हो रहे हैं ! गाभिन गायें सिर हिलाती हुअी अुस ओर लपकी जा रही हैं। सभी तडाग नये जलसे पूर्ण हैं। धानके खेत शस्योंसे श्यामल बने लहरा रहे हैं। प्रभातके मेघ-समूह पहाड़ोंके सानुओंपर कलेवा कर रहे हैं !

४. पृथ्वीपर छाया फेंकते हुअे आसमानमें बादल अुड़ रहे हैं। अुनके काले कलाप समूहपर अपनी दृष्टियाँ गड़ाये, किसी अपूर्व सुखके हिंडोलेपर, भाव विह्वल दशामें, कलापी (मोर) झूल रहे हैं। अुनपर जैसे कोअी अुन्माद छा गया है ! कलाप (पुच्छ) आप ही खुल पड़े हैं, तनकर फैल गये हैं ! अहा ! अुनका नृत्योत्सव तो हमारा नेत्रोत्सव बन गया है !

५. सागरके गर्भसे, अेक बारगी झुण्ड-के-झुण्ड निकलकर, अपने दुर्दान्त गर्जन-तर्जनसे (दिशाओंको कंपाते हुअे) अुमड़-घुमड़कर ये बादल जा रहे हैं, जैसे विप्रलंभ रूपी फंदेमें फँसनेके लिअे नवोढ़ाके अुमड़ते वयः पय (अुग्र रूपी दूध) के अुबाल अुफनते जा रहे हों !

(अनुवादक : श्री राममूर्ति 'रेणु', अेम्. अे.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मराठी-कवितामें वर्षा

आला हा पाऊस !

: श्री. आ. रा. देशपांडे 'अनिल' :

येत हा पाऊस येत पाऊस
मातीचा सुटत सुस सुवास
झंझावात वाहे अुठे वादळ
आभाळास मिळे पृथ्वीची धूळ
मेघांनी भरून आकाश वाके
भूमीस आपल्या छायेंत झाके
अवचित लवे वीज लाजरी
होतसे मीलन अश्रूंच्या सरी
गरजे बरसे आसुसलेला
पहिला पाऊस अुल्हासलेला
आला हा पाऊस आला पाऊस
मातीचा भरला अुन्मत्त वास !

अर्थ— पावस आ रहा है, आ रहा है,
मिट्टीका छूटा है सुस सुवास।
झंझावात बहा, आँधी अुठी,
आसमानको जाकर पृथ्वीकी
धूल मिल गयी ।
मेघोंसे भरकर आकाश झुक आया।
वह भूमिको अपनी छायामें ढाँक रहा है;
अितनेमें अचानक लजीली बिजली लचकी,
मिलन हुआ और सुखके आँसू झरे,
गरजा, बरसा, अकुलाया हुआ
पहिला पावस, अुल्लाससे भरा ।
आ गया पावस आ गया, मिट्टीका—
अुन्मत्त बास भर गया ।

भूमि आशीर्वच बोले

: श्री. बा. भ. बोरकर :

गडद निळे गडद निळे जलद भरुनि आले
शीतलतनु चपल चरण अनिलगण निघाले
दिन लंघुनि जाय गिरी पद अुमटे क्षितिजावरि
पद्मरागवृष्टि होय माड भव्य न्हाले ।
रजत नील, ताम्रनील स्थिर पल जल, पल सलील
हिरव्या तटि नावांचा कृष्ण मेल खेळे
धूसर हो क्षितिज त्वरित ढोर पथीं अचल चकित
तृण विसरुनि जवळिल ते खिळवी गगनीं डोळे
टप-टप-टप पडति थेंब मनिवर्तिंचे विझति डोंब
वत्सल ये वास, भूमि आशीर्वच बोले ।

अर्थ— गाढ़े नीले-नीले जलद भर आये। शीतल चपल मरुत्गण निकल पड़े। दिन गिरि लांघकर गया, अुसके पैर क्षितिजपर अंकित हुअे, पद्मराग वृष्टि हुअी, नारियल वृक्ष नहाये। रजतनील, ताम्रनील, जल पलमें स्थिर, पलमें लीलायित होता है; हरे तटपर नौकाओंका कृष्ण मेला जुटा है। क्षितिज धूसर हुआ, ढोर सहम गये, घास चरना छोड़ आकाश ताकने लगे। टप-टप बूँदें गिरीं, मन और बनकी झार बुझी। वत्सल वास छूटा, भूमि मानो आशीर्वचन कहने लगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुजराती वर्षा-गीत

आवे छे मेहुलियो

: श्री प्रह्लाद पारेख :

आवे छे, मेहुलियो आवे छे,
वायु सजल वात अे लावे छे।

सागर साथे होड करी
दोटे तेने हंफावे छे,
दक्षिण दिशना पर्वत कूदी
नादे गगन गजावे छे।

सूरज ढांके, चाँदो ढाँके
तारा सर्व बुझावे छे,
वीज-मशाल लअीने निज अे
तिमिरे मार्ग बनावे छे।

झरमर झरमर वरसीने अे
माटीने महेकावे छे,
वरसीने झडीओ, सर-सरिता
झरणांने गहेकावे छे।

डोलावे दिल वन-वन केरां
कैंक पहाड हसावे छे,
पुलकित करतो धरतीने अे
मानव मन हरखावे छे।

सजल पवन यह सन्देश ला रहा है कि वर्षाके बादल आ रहे हैं, वर्षाके बादल आ रहे हैं।

सागरके साथ स्पर्धा करके और दौड़में अुसे थकाकर बादल दक्षिण दिशाके पर्वतोंको कूद-फाँदकर आ रहे हैं और सारे आकाशको अपनी घोर गंभीर आवाजसे गुंजा रहे हैं।

सूरज और चाँद ढँक जाते हैं और सारे तारे बुझ जाते हैं; फिर अंधकारमें बादल अपना मार्ग बिजली रूपी मशालको लेकर बनाते हैं।

झरमर-झरमर बरसकर ये मिट्टीको महकाते हैं और अपनी तेज झड़ी लगाकर नदी, तालाब और झरनोंको भर देते हैं।

ये वन-अुपवनोंका दिल झुलाते हैं और पहाड़ोंको हंसाते हैं, धरतीको पुलकित करते हैं और मनुष्यके मनको खुशीसे भर देते हैं।

मेघ माधुरी

: श्री बालमुकुन्द दवे :

सुखद धावड देअि वही रह्या
पवन शीतल मंद अषाढना,
चिर विजोग विषाद मनोहरा
मलकती धरती मिलनातुरा।

विहग रम्य कमान रची अूडे
अूतरती ज्यम होय न कांगसी,
नवल, सुन्दर, अद्धर आभथी
धरणीनी बिखरी लट ओळवा।

अषाढ़ महीनेका शीतल और मंद पवन (मेघके आगमनका) सुखद संदेश देते बह रहा है, अिसलिअे चिर वियोगके विषादसे मनोहर मिलनातुर धरती मंद-मंद हंस रही है।

आकाशमें पक्षी अिस प्रकार कमान बनाकर अुड़ने लगे मानो धरतीके बालोंकी बिखरी हुअी लटको संवारनेके लिअे आकाशमेंसे कोअी नये ढंगकी सुंदर कंघी ही अुतर रही हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुसवता, भणकार जगावता,
धणधणावी कमाड डरावता,
विरह व्याकुल अंतर शारता
स्मर भर्या मधु दख्खण वायरा।

सनसन आवाज करते और हृदयमें अेक प्रकारका दरवाजोंकी आवाजसे भय-सा पैदा करते हुअे तथा विरहसे व्याकुल अंतरको छेदते हुअे दक्षिण दिशाका कामसे परिपूर्ण सुमधुर पवन बहने लगा।

सघन मेघछटा, विजत्राटका,
गगनना सहु बंध वछूटता;
तृषित कंठ धरा परितोषतां
वरसतां नभ चोगम झापटां।

आकाशमें सघन बादलोंकी सुन्दरता शोभा दे रही है, बिजली चमकने लगी; मानो आकाशके सारे बन्धन खुल रहे हों! देखते-देखते चारों ओरसे धरतीके तृषित कंठकी प्यास बुझानेके लिअे मेघ बरसने लगे।

धन कुबेर अुदार सखावते
धन दिये ज्यम पाँश भरी-भरी,
परम वत्सल दीन दयालनी
अूतरती करुणा नभथी नरी।

जैसे कोअी अमीर अुदार दिलसे खुले हाथों धनकी खैरात बाँट रहा हो, वैसे ही परम वत्सल दीन-दयालु प्रभुकी करुणा स्वरूप आकाशमेंसे छूटसे पानी बरस रहा है।

छलकतां जल नेव लिये लही
कृषकनां हरखे अुर भोळडां;
कर धरे निज नाजुक होकली
नजर मां अुभरे ढग धान्यना।

मकानोंके छप्परसे गिरते हुअे पानीको देखकर किसानका भोला हृदय खुशीसे नाच अुठा। अपने हाथमें छोटासा हुक्का लेकर और संतोषसे दम लगाते-लगाते अुसकी आँखोंके सामने अनाजके ढेर खड़े हो गये।

अुचरता शुभवेद ऋचा यथा,
सतत वृद्ध पुरोहित बोखला,
फुलवता निज गाल सुगर्व थी,
डराडरा अुंक दादुर बोलता।

पोपले मुंहवाले वयोवृद्ध पुरोहित लोग जैसे यज्ञमें वेदकी पवित्र ऋचाअें बोलते हों वैसे ही दादुर गर्वसे अपने गाल फुलाकर ड्राँव-ड्राँव करके बोलने लगे।

घन तमिसु थकी भरती दिशा
निकष पत्थर जेम पडी निशा,
लिसरकी लअी तेपर पातळी
स्वर्णकाय धसी जती वीजळी।

दिशाओंको अपने गहरे अंधकारसे भर देनेवाली काले कसौटीके पत्थर जैसी रात पड़ी है और अुसपर बिजलीकी अपनी बारीक स्वर्ण-रेखा अंकित होने लगी।

नफट मेघल बेवड धार थी
पलळती शरमाळज प्रकृती,
अधिक ओढत पल्लव चुंदडी
अधिक रूपकला अुघडी जती।

कोअी प्रेमी अपनी प्रियतमाको परेशान कर रहा हो, अुसी तरह शर्मीली प्रकृतिके सारे अंग-प्रत्यंग बेशरम मेघ राजाकी मूसलधार वर्षासे भीग गये; जैसे-जैसे वह अपनी ओढ़नीसे सौन्दर्यको ढाँकनेका प्रयत्न करती है वैसे-वैसे अुसके रूपकी शोभा अधिक-अधिक प्रकट हो जाती है।

तरतनुं करी स्नान सलज्जको
धवल अंबर अंग लपेटती,
टपकती रूपनी गळती सभी
त्वरित जाय सरी रूप सुन्दरी—

जिस प्रकार कोअी असीम सौन्दर्यवती स्त्री स्नानके बाद तुरंत अपने सुन्दर और कोमल अंगोंको सफेद वस्त्रसे लपेटती हुअी लज्जासे तेजीसे चली जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तडितना क्षण ना झबकार माँ
नवल स्नात धरात्यम लाजती,
अघडतां निजनां रूप ढांकती
झडप थी तिमिरे सरकी जती।

परण गुच्छ विषेनिज नीडमां
विहग युग्म लपाओ परस्परे,
सभय स्नेज, सहर्षवळी जरी,
निरखतां गभरु नव मेघने।

नभतणां नील पद्म सरोवरे
निगळतुं मदथी गज झुंडको
विहरतुं निज सूंढ भरी भरी
दशदिशे जल जोशथी झापटी।

गगन धेन विराटनुं बावलुं,
धवल मोख फुटे पयनी रुडी;
चश चशी जग वाछरडुं पिये
मधुर शेडकडा पय घूंटडा!

अुसी प्रकार अभी-अभी स्नान की हुअी धरती भी बिजलीके क्षणिक प्रकाशमें शर्मसे अपने रूपको ढाँकती हुअी बहुत ही तेजीसे अंधकारमें विलीन हो जाती है।

वृक्षकी पर्णघटामें बाँधे हुअे अपने घोंसलेमें भोला-भाला पक्षियोंका जोड़ा अेक-दूसरेको लिपटकर कुछ भयसे और कुछ हर्षसे बादलोंको देख रहा है।

चारों ओर पानी अिस तरह बरस रहा है मानो आकाश-रूपी नील-पद्म-सरोवरमें मेघ रूपी हाथियोंका मस्तीसे झूमता हुआ दल अपनी सूँडमें पानी भर-भरकर दसों दिशाओंमें छिटकाता हुआ विहार कर रहा है।

आकाश मानो विराट गायका स्तन है और अुसमेंसे वर्षा-रूपी सुन्दर सफेद दूधकी धाराअें फूट रही हैं। जगत रूपी बछड़ा अुस ताजे दूधके मधुर घूंट चूस-चूसकर पी रहा है।

हिन्दीमें वर्षा-गीत

घटा

: श्री "भृंग" तुपकरी :

याद-सी अुमड़ी, घिरी गहरी घटा बरसातकी।
यह सलोनी-सी नमी है यादकी या रातकी?

वह जमाने जो गुजरकर यादके परचम हिलाते हैं,
वक्तके अिस धुंधलकेमें बिजलियोंसे कौंध जाते हैं,
फिर घने पेड़ों तले साये सिसकते, तिलमिलाते हैं,
और सहसा सैकड़ों बेहोशियोंको होश आते हैं!
बिजलियोंमें हां सनम, हमने तुम्हींसे बात की!
याद-सी अुमड़ी घिरी गहरी घटा बरसातकी!

बादलोंके स्याह पर्दोंपर लकीरें बिजलियां खींचें;
गो तुम्हारी लाज तड़पे, आंख खोले, खोलकर मींचे,
आसमां तक कामनाकी धूल अुड़ती थी जहां पीछे,
आज मेघोंने वही सूखे चमन जी खोलकर सींचे!
आज मानो प्यास भूली जा रही है चातकी!
याद-सी अुमड़ी, घिरी, बरसी घटा बरसातकी!

आंसुओंसे नम झकोरे हैं, हवा है आह-सी बोझल,
अेक नगमा टीस-सा अुठकर कलेजेमें हुआ ओझल,
दूर जंगलमें अकेली रो पड़ी बिछुड़ी हुअी कोयल,
जी मचलता है कि रो लूँ अिस अुदासीसे लिपट दो पल!
मैं अकेला, लाख सदमे, बात है सौ बातकी!
याद-सी अुमड़ी, घिरी गहरी घटा बरसातकी!

जो डुबो दे ख्वाबकी रंगीनियोंमें सारे आलमको,
प्यारसे झूमे, झुके, छू ले, अुठा ले, चूम ले हमको,
जगमगाते सर्द आंचलमें छिपा ले आतिशे ग़मको,
अुस घटाकी छांहमें मेरे वहम! खेलो, हंसो, चमको!
यह वहम भी है सचाअी मौसमे जज़्बातकी!
याद-सी अुमड़ी, घिरी गहरी घटा बरसातकी!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवमेघ-दर्शन

: श्री भगवान मिश्र :

फिर आज घटाअें छायी हैं !
कोमल-कोमल श्यामल-श्यामल ये घुँघराली काली-काली ।
बिजलीका भीषण नृत्य दिखा मुसकाती हैं ये मतवाली ।
घुँघराले अिनके केशजाल बिखरे हैं नभके आँगनमें ।
ये अुमड़ रहीं, ये घुमड़ रहीं घिरकर झरनेकी धुनवाली ।
प्यासी धरतीके अन्तरको शीतलता देने आयी हैं ।
लो, आज घटाअें छायी हैं !

जल रहा धराका हृदय, घूँटभर जलको होठ तरसते हैं ।
प्यासे वृक्षोंसे हूक अुठी, अम्बरके प्राण दहलते हैं ।
सूखीं नदियाँ, सूखीं झीलें, शोषणसे तृण-तरु सूख चले ।
अिन शोषित प्राणोंके क्रन्दन बादल बन आज घहरते हैं ।
नभ गूँज अुठा जिसकी गतिसे यह धरतीकी अँगड़ाअी है ।
घनघोर घटाअें छायी हैं !

ये दल-के-दल बादल झरकर जलधारा आज बहा देंगे ।
ये दल-के-दल बादल झरकर मुरझेको हरा बना देंगे ।
ये चट्टानें जो धाराकी गति रोक अडिग बन बैठी हैं--
धक्के दे अिन्हें ढहा-ढुलका कर चकनाचूर बना देंगे ।
अिनका अस्तित्व मिटानेको पुरजोर घटाअें आयी हैं ।
बेजोड़ घटाअें छायी हैं ।

तुम अिन्हें घटाअें कहते हो, ये अंगारोंका पानी हैं ।
तपती धरतीकी मूक व्यथा, संचयकी करुण कहानी है ।
ये क्रान्ति-दूत जलते तरुओंकी जलती हुअी जवानी हैं ।
दुनियाको झुलसानेवाली अिस गरमीकी हैरानी हैं ।
जब-जब धरतीमें आग लगी ये अुसे बुझाने आयी हैं ।
सन्तप्त प्राणमें आशाकी किरणें बन आज समायी हैं ।
फिर आज घटाअें छायी हैं !

कुहराम मचाती आती हैं ये नव रचना करनेवाली ।
धरतीकी गोद सजाती हैं ये झर-झरकर झरनेवाली ।
ये अेक हाथमें प्रलय अेकमें सृष्टि सँभाले चलती हैं ।
फूलोंकी सेज बिछाती हैं ये ओले बरसानेवाली ।
बिरहिन दुल्हनके परदेशीका संदेशा ले आयी हैं ।
अनमोल घटाअें छायी हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाते हुअे बादलसे !

: श्री रामकृष्ण श्रीवास्तव :

रुक रुक, ओ बादल ठहर ठहर !
जिसकी छायामें प्यास पले, वह क्या कहलाअेगा जलधर !

पानीकी पहली बूंद पड़ी,
जैसे बरखाका बीज अुगा
फुनगी-फुनगी हो गयी खड़ी !
क्यों बादल तू गागर बनकर, बिजलीके सिर चढ़ चला किधर ?

तूने आकर हौले-हौले,
पर्वतके कंधोंपर चढ़कर
सावनके सजा दिये डोले !
अब बहिनोंके अिन डोलोंको तू पहुँचा दे भाअीके घर !

आया है तो कुछ मँडरा ले,
धरतीके सुख-दुखमें घुल-मिल
हँस ले, रो ले, नच ले, गा ले !
यह समय नहीं शंकाओंका, क्या देख रहा है अिधर-अुधर !

तू भी धरतीका बेटा है,
धरतीकी गोदी छोड़ कहाँ,
तू आसमानमें लेटा है !
कुछ लाज शरम है तो गलकर, माँके चरणोंमें अुतर-अुतर !

तू सागरके गुन गाता है,
आकाश नहीं, वह धरती है
जिसपर सागर लहराता है !
धरतीके बिना कहाँ होगा, तू ही जाने तेरा सागर !

तू बहुत दिनोंमें आया है,
यह खून अिसी धरतीका है
जो पानी बनकर छाया है !
तेरी कुर्बानीपर तेरी माताका जीवन है निर्भर !
रुक-रुक, ओ बादल ठहर-ठहर !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बादल

: श्री. रा. ना. मिश्र :

मुझको सब कहते हैं बादल– पर मैं हूँ पंखोंवाला जल।
फैला अपने लंबे डैने– सावनमें घेरा नभ मैंने।
दिनमें नभसे भूपर आकर– छवि चकाचौंध-सी फैलाकर,
सागरपर सूरजकी किरनें– लगती हैं परियों-सी तिरने;
लौटतीं साँझको मुसकाती– कुछ बिन्दु विदाओमें पातीं;
अुनसे ही मुझको जन्म मिला–मैं रचता नभमें अेक किला।
अपने सतरंगी चोलेमें– मैं झूला हवा-हिंडोलेमें।
हँस बढ़े, लड़े फिर मेल किया–बहुरुपिया बन-बन खेल किया,
अुड़ चले रुओंके-से गाले– जुड़ चले शैल काले काले।
कड़के भड़के चमके दमके– निज गुरुतासे ही किंतु झुके।
हो द्रवित देख भूका तपना– भूला मुझको नभका सपना।
व्याकुलता पुलक फुहारोंमें– करुणा अुमड़ी जल-धारोंमें।
अनगिनती बाहें फैलाकर– अपना तन अंचल मैलाकर,
मैंने कण-कणसे भेंट किया– भू माँने मुझे समेट लिया।
वह सरस परस्पर आलिंगन–बन गया जगत्का नव जीवन
भू ने परिधान हरा पाया– मैं अुसके अंतरमें छाया।
फिर सिमिट-सिमिटकर रिस-रिसकर–कितनी चट्टानोंको घिसकर,
कितनी नदियोंमें नालोंमें– कितने सर निर्झर नालोंमें,
फिरता फिरता धीरे धीरे– मैं पहुँचा महासिन्धु तीरे।
अब कौन मुझे कहता बादल ? मैं महासिन्धुका नीर अतल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेघ-मिथुन : ओक प्रार्थना

: श्री नरेश मेहता :

मेघप्रिया ओशान दिशामें
नियुत अश्वकी नील हवाएं
जिन आकाशोंमें वे होवें
बादल चंवर डुलातीं आयें ।

अग आये नक्षत्र आर्द्रा
मृग खींचें लोहित रेखाएं
नयन संझाते आकाशोंमें
जलफूलों-सी खिलें दिशाएं

तुम्हें धेनुएं, सरस बलाका
खेतोंकी प्यासी सीताएं
आम्र मंजरी औ निमौलियाँ
गंध श्लोकके राग सुनायें ।

प्रसूत स्तना धेनु सरीखी
क्रुद्ध बिजलियाँ, मेघ सम्हाले
अुतर रहा विंध्या जंगलपर
प्रथम कलश लेकर जलवाले ।

सुन अषाढ़की अगवानी ही
पतिंवरा हो जातीं नदियाँ
मेघ पालकी जब आ जाती
दिशा द्वारपर,हंसती सखियाँ ।

यायावरकी मेघ वंशियाँ
परित्यक्ता झीलोंपर बरसें
झरनोंकी वह फेन कुमुदिनी
घाटीके कुन्तलमें सरसें ।

देवदार, सागौन, अमलियाँ
झुका माथ अभिषेक झेलतीं
हरिण चन्द्र का रोक-रोककर
मेघनियाँ रस-रास खेलतीं ।

मरुत, मेघके मिथुन हंस ये
ऋषिमंडलमें विचरण करते
जलकी नीलम ग्रीवावाले
हिमगिरिसे हैं अमृत भरते ।

अब न यहाँपर ऋषि है कोअी
सोम चषककी कथा रह गयी
यजमानोंकी यज्ञ अग्नि भी
राख ओढ़ आकाश बन गयी ।

शोषित पृथ्वीके हाथोंमें
मंगल घट, पर चील छाँह है
बिके हुअे चूल्हे, सीताएं
कापालिकके नगर गाँव हैं ।

ओ वैभवप्रिय मेघ ! शक्ति ले
जनको मुक्त करो बंधनसे
वर्गहीन हों हरे क्षितिज फिर
जन अभिनंदन हो चंदनसे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविकी भी बात न मानोगी !

: श्री 'अंचल' :

कविकी भी बात न मानोगी !
ओ मधुकंठिनि ! ओ गीतमयी ! कविकी भी बात न मानोगी !

तुम चिर वसन्तकी राका हो, मैं हूँ पतझड़का अन्धकार
जीवनके गीतोंकी ममता तुम, मैं संघर्षोंका प्रहार
मैं मानव-मानवके नूतन सम्बन्धोंकी संवाद-शिखा
तुम सपनोंकी मादकतामें नव-नव मधुचक्रोंकी पुकार
पर शोषणकी अिस हिंसासे तुम कब प्रतिहिंसा ठानोगी ?
कविकी भी बात न मानोगी !

तुमने देखा है मानवको मानवसे कुत्तों-सा लड़ते
तुमने देखा है श्रमिकोंको स्वामीके पैरोंपर पड़ते
तुमने तो और अधिक भी देखा है ओ मेरी कल्याणी !
भूखी माँकी गोदीसे सूखे शिशुको फूलों-सा झड़ते
साथिन ! सौंदर्य-साधना तज कब जन ज्वाला पहचानोगी ?
कविकी भी बात न मानोगी !

परपीड़न और विषमतामें तिल-तिलकर जनताका जलना
नंगे अभावके मरुपथमें पशु-सा जीवन-व्यापी चलना
है अुसके थके-रुके पैरोंपर सदियोंके श्रमका बोझा
हो गया आज पथका निर्णय-विद्रोह जगा टूटी छलना
अिस महाक्रान्तिको तुम अपनी पथ-ज्योति नहीं क्या मानोगी ?
कविकी भी बात न मानोगी !

लो अपने कंबु कंठसे फिर तुम समताका जयघोष करो
छोड़ो काकली और मानवमें वह बलिदानी होश भरो
लड़ते-लड़ते मर जाय भले ही खींच रक्त-रेखा पथपर
मानव न युद्धसे मुख मोड़े तुम वह भीषण आक्रोश भरो
सिरजनकी ज्वाला-सी अुठकर कब अपनी मुट्ठी तानोगी ?
कविकी भी बात न मानोगी !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यालोचन

[सूचना—'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिये।]

'सुखदा' हिन्दीके प्रसिद्ध अुपन्यासकार जैनेन्द्रकुमारकी सद्यः प्रकाशित कृति है, जिसमें अेक स्त्री-की अपने मुँहसे कही गयी कहानी है। गृहस्थीसे बाहर व्यापक क्षेत्रमें आकर वह अपनेको केन्द्रच्युत पाती है। मानसिक अुत्तापसे झुलसकर वह क्षय-ग्रस्त हो, अेक अस्पतालमें मृत्युकी प्रतीक्षा कर रही है और वहीं अुसकी स्मृति अपने अतीतको देखती है। यह अुपन्यास-लेखकके दस वर्षके मौनको भंग करता है। पढ़ते समय पहले तो अैसा जान पड़ता है, मानो ... "सुनीता" ही "सुखदा" बनकर अुसमें भर रही है। यह 'मानो' अिसलिअे खड़ा होता है कि सुखदाका क्रीड़ा-क्षेत्र वही है जो "सुनीता" का। दोनोंका "कैनवास" अेक-सा है, दोनोंके चित्र भी अेक-से हैं, पर दोनोंकी भाव व्यंजकता अेक-सी नहीं और दोनोंका अुपसंहार भी अेक-सा नहीं। हाँ, दोनों क्रान्तिकारीके अंगुलि-निर्देशपर बाहर निकलती हैं और अपनेको समर्पित कर देती हैं। दोनोंके पति स्नेह-पूरित हैं और अुनका विश्वास है—"हृदयकी रानीसे कभी कोअी अनर्थ नहीं हो सकता।" दोनोंमें अितनी समान्तर रेखा खिंची होनेपर भी जो "सुनीता" है वही "सुखदा" नहीं। सुनीतामें मानव-प्रकृति-को समझकर ज्योंकी त्यों रख देनेका आभास है, और "सुखदा" में काट-छाँट विद्यमान है। "सुनीता" स्वैराचारमें सुखान्त जीवन बिताती है; "सुखदा" स्वैराचारके परिणामको अस्पतालमें भोगकर दुःखान्त क्षणकी प्रतीक्षा करती है। "सुनीता" में यथार्थकी रक्षाका प्रयत्न है; "सुखदा" में आदर्शकी प्रतिष्ठाकी चिन्ता है। दोनोंके दृष्टिकोणमें अन्तर है। "सुनीता" को अुसका पति स्वयं घरसे बाहर जानेकी—बहिर्मुखी होनेकी—प्रेरणा देता है; "सुखदा" पतिके विरोधकी प्रतिक्रियामें स्वयं बहिर्मुखी बनती है। सुखदाके अन्त-र्मनपर अपने सौन्दर्यकी अहमन्यता छायी हुअी है। पतिकी परिमित आयके प्रति क्षोभ समाया हुआ है। पतिके मनमें सुखदा अेकान्त भावसे बसी हुअी है। वह अुसका विरोध करनेपर भी अुसकी स्वच्छन्द प्रवृत्तियोंको काटना नहीं चाहता, वह अुसकी हर अिच्छाके आगे सर झुका देता है। सुखदा अपनी अिच्छाओंका विरोध सुनकर पहले तो झुँझलाती है, पर जब पतिको अपने अनुकूल पाती है तब विशेष प्रसन्न भी नहीं होती। कहती है..." हम स्त्रियोंकी यह क्या गति है। चाहती है "कि पुरुषको झुकाअें। जब वह झुक जाता है तो अिसी दोषके लिअे अुससे नाराज होती है।" अिसके विपरीत जब क्रान्तिकारी लालसे वह प्रथमबार परिचित होती है तो अुसकी अुद्दण्डता और असामाजिक साहससे अुसे घृणा होती है पर जब वह लगातार अक्खड़पन और बेतकल्लुफीके साथ अुससे व्यवहार करता है तो अुसे अिसी गुण या अवगुणके कारण चाहने लगती है, यहाँतक कि पतिका गृह अुसीकी अनुमतिसे त्याग-कर अुसीके अिशारेपर अलग अेकाकी मकानमें रहने लगती है। क्रांतिकारी दलमें "लाल" को अपने औद्धत्यके कारण जब प्राणदंडकी सजा दी जाती है तो वह अुसकी रक्षाके लिअे अत्यधिक यत्नशील होती है। प्रारम्भमें सुखदाका आकर्षण "दल" के नेता "हरिदा"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की ओर होता है और वह अुन्हींकी खोजमें घरसे निकलती है पर जब अुसकी भेंट "लाल" से हो जाती है तो "लाल" ही अुसे अभिभूत कर लेता है। "हरिदा" के प्रति अुसकी श्रद्धा जमी ही रहती है और लालके प्रति प्रेम। वह ज्यों-ज्यों अुससे दूर भागना चाहती है, त्यों-त्यों वह अुसके निकट आता जाता है। पतिकी भी वह सर्वथा अुपेक्षा नहीं कर पाती। वह चाहती है, काश! वे भी लालकी तरह जरा कठोर बनते, अुसे डाँटते-डपटते। जब जब अुसे पतिसे झिड़की मिली है, वह भीतर ही भीतर भीग अुठी है। वह अपने स्वामीको खेलका मुहरा बना हुआ देखना नहीं चाहती। "सुखदा" अुस स्त्री स्वभावका प्रतीक है जो पौरुषको-बलको...प्यार करती है। गार्हस्थ्य धर्मके नाते भले ही वह पतिके साथ बँधी रहती हो पर वह अपने अन्तरके रसको अुसीपर अुड़ेलती है, जिसमें सदा कोमल समर्पण ही नहीं, कठोर विरोध भी होता है। क्रान्तिकारी "लाल" अुस साम्यवादी क्रान्तिका पोषक है जिसमें आदर्शको स्वप्न समझा जाता है और व्यवहारको सत्य समझकर सब कुछ माना जाता है। अिसलिअे वह नीति आचारको नहीं मानता। अुसके लिअे स्त्री, स्त्री है; पुरुष, पुरुष है, बाकी अूपरी है। "हरिदा" क्रान्ति तो चाहता है पर नीतिकी बलि देकर नहीं। अिस तरह अिस अुपन्यासमें दो विचार-धाराओंका संघर्ष भी सामने आया है। लेखकने बड़ी चतुराअीसे आदर्शकी प्रतिष्ठा स्थापित की है। पाठक "लाल" के लम्बे व्याख्यानोंसे अूब सकता है पर वे अस्वाभाविक नहीं। "लाल" बातूनी है, जब वह आवेशमें आता है तो बोलता ही जाता है। अुपन्यासमें जीवनके अतिरेकमें संतुलनकी कामना की गयी है...न तो अत्यधिक सामाजिकता ही वांछनीय है और न अत्यधिक वैयक्तिकता। आज नारी गृहस्थीका केन्द्र छोड़कर सर्वथा सामाजिक बननेको आतुर दीखती है, यह अुसके लिअे अन्तमें अभिशाप सिद्ध हो सकता है। "सुखदा" यह सन्देश नारीको दे रही है। आज पुरुष स्त्रीको गृहस्थीकी चहारदीवारीमें रुद्ध करनेकी चिन्ता करने लगा है, यह परिस्थिति अुसके गार्हस्थ्यको ही छिन्न-भिन्नकर देगी। "सुखदा" यह सन्देश पुरुषको दे रही है, यद्यपि प्रश्न पुराने हैं,...सनातन हैं...पर अुनकी समस्या और हल आधुनिक हैं। लेखक अपने अुद्देश्यमें सफल हुआ है। कहानी रोचक शैलीमें कही गयी है। जैनेन्द्रकी दार्शनिकता कहीं भी कहानीमें अुलझन नहीं पैदा कर सकी।

*

'प्रेमचंद साहित्यिक विवेचन' श्री नन्ददुलारे वाजपेयीकी प्रेमचंदपर प्रकाश डालनेवाली कृति है। पर अिसमें प्रेमचंदपर सर्वथा विहंगम दृष्टि है। अिससे प्रेमचंदकी कृतियोंके वैशिष्ट्यपर गहन अध्ययनकी अपेक्षा करनेवालोंकी तृप्ति नहीं होगी। प्रारम्भिक सोलह पृष्ठोंमें हिन्दी अुपन्यास-परम्परा और प्रेमचंदपर अत्यन्त संक्षिप्त कथन है, अुसके पश्चात, १३० पृष्ठोंमें सेवासदन, प्रेमाश्रम, रंगभूमि, कायाकल्प, कर्मभूमि, गबन, गोदान नामक बड़े अुपन्यासों और पांच पृष्ठोंमें छोटे अुपन्यास प्रतिज्ञा, निर्मला और मंगलसूत्रकी चर्चा है तथा अंतिम २३ पृष्ठोंमें अुनकी प्रमुख कहानियोंका वर्गीकृत परिचय है। प्रथम परिच्छेदमें प्रेमचंदके पूर्वकालीन अुपन्यासोंका अैतिहासिक वर्णन और विवेचन बहुत सामान्य पाठकोंके लिअे लिखा जान पड़ता है तभी लेखकको तत्कालीन अुपन्यासोंकी समानता दिखलानेके लिअे यहांतक कहना पड़ा कि अुपन्यास खड़ी बोलीमें और गद्यमें लिखे जाते थे और अुनमें क्रमबद्ध कथा होती थी। पर यह अत्यन्त सरल शैली कहीं-कहीं बहुत गंभीर, दुरूह भी हो गयी है। अुपन्यास और कविताका अंतर समझाते हुअे लिखा गया है जीवनकी व्याख्या कवि भी करता है और अुपन्यासकार भी, परन्तु अेकमें वह व्याख्या अनुभूतियोंके माध्यमसे होती है और दूसरीमें वह सामाजिक चित्रणोंके माध्यमसे। "अिस कथनसे यह भ्रम हो सकता है कि अुपन्यासमें 'अनुभूतियों" की आवश्यकता ही नहीं पर सत्य यह है कि कवि और अुपन्यासकार दोनों अनुभूतियोंके माध्यमसे अपनेको व्यक्तकर सार्थक होते हैं। प्रेमचंदके अुपन्यासोंकी विशेषताअें गिनाते समय अुसने बहुमान्यताका साथ दिया है। हम भी अुनके साथ सहमत हैं कि प्रेमचंदमें आदर्शवादिता है ध्येयोन्मुखता है, अिसीसे अुपदेशात्मकता है, पात्रोंके निर्णय करनेकी कुशलता है पर निर्वाह करनेकी नहीं अिसीसे अुन्हें अस्वाभाविक अकालमृत्युका शिकार बनना पड़ा है। अिसी अध्यायके अंतमें लेखकने प्रेमचंदके आदर्शोन्मुख यथार्थवादकी आलोचना की है। अुस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मतसे साहित्यमें यथार्थ और आदर्श ये ही दो वाद हो सकते हैं, दोनोंको मिलानेवाला कोअी पृथक वाद नहीं है। अिस मतपर आपत्ति हो सकती है। प्रेमचंदके ही अुपन्यासोंमें हम यथार्थ और आदर्शका समन्वय करनेवाला "वाद" देख सकते हैं जिसे स्वयं प्रेमचंदने "आदर्शोन्मुख यथार्थवाद" कहा है। यदि "वाद" शब्द अप्रिय हो तो अुसका भले ही नामोल्लेख न किया जाअे पर दो तत्वोंके समन्वित रूपके अस्तित्वसे कैसे अिन्कार किया जा सकता है।

प्रेमचन्दके अुपन्यासोंका विवेचन करते समय लेखकने कथा-भाग और पात्र वर्णनपर अधिक ध्यान दिया है, कला समीक्षापर कम। अन्तिम भाग कहानी-विवेचनसे सम्बन्ध रखता है। अिसमें प्रमुख कहानियोंका वर्गीकरण है और वर्गीकृत कहानियोंका अेक दो पैराग्राफोंमें सार है। अन्तमें समग्र रूपसे कहानियोंकी संक्षिप्त समीक्षा भी दे दी गयी है। पुस्तकसे यद्यपि प्रौढ़ पाठककी जिज्ञासा शान्त नहीं होती तो भी जिसे प्रेमचंदके साहित्यका परिचय मात्र प्राप्त करना अभीष्ट हो, अुसके लिअे यह अुपयोगी सिद्ध हो सकती है। पुस्तककी भाषा अधिकांशमें सरल और विवेचन-शैली सुबोध है।

—विनयमोहन शर्मा

"बलिका बकरा" — [लेखक : श्री मन्मथनाथ गुप्त, आशा-प्रकाशन, ११ तीमारपुर रोड, दिल्ली से प्रकाशित; पृष्ठ संख्या ९६; मूल्य १॥)]

मन्मथजी हिन्दीवालोंके लिअे अपरिचित नहीं हैं। अिसलिअे नहीं कि अुन्होंने दर्जनभर अुपन्यास लिखे हैं। अिसलिअे भी नहीं कि अुन्होंने दर्शन, विज्ञान और आलोचना सम्बन्धी अनेक पुस्तकें दी हैं—बल्कि अिसलिअे कि साहित्यकारके नाते अुन्होंने अपने दायित्वको खूब समझा और अुनकी रचनाओंमें अुनका अुद्देश्य स्पष्ट है। हमारे यहाँ लेखककी प्रसिद्धि अथवा पाठकोंका अुससे परिचय लेखककी रचनाओंकी संख्यापर अक्सर निर्भर करता है। यदि थोड़ी देरके लिअे अिसे ही सही मान लिया जाअे तो भी मन्मथजी पीछे नहीं हैं।

कुछ लोग शिकायत करते हैं, अुनकी शिकायत ठीक भी जान पड़ती है; क्योंकि वे साहित्यिक गति-विधिकी जानकारी रखते हैं—हिन्दीमें नये ढंगके अुपन्यास कम आ रहे हैं। अैसे लोग भी हैं जो नये अुपन्यासोंकी 'टैक्नीक' और अुनकी पात्र-कल्पनासे असंतुष्ट हैं—कुछ अैसे हैं जो पढ़नेकी आदतसे लाचार हैं और जो कुछ पढ़नेको मिला है अुससे अपने ही मुँहका स्वाद बिगाड़ बैठे हैं। अिन सबसे अलग वे लोग हैं जिन्हें साहित्य और जीवनकी यथार्थताका संबंध टूटता हुआ-सा जान पड़ रहा है—अिन तमाम लोगोंके लिअे **'बलिका बकरा'** पढ़ना जरूरी है।

बलिका बकरा—सोचकर देखें तो अेक दयनीय, निरीह पशु जिसे कुछ क्रूर, नृशंस हाथोंने अपनी अहमन्यताकी तुष्टिके लिअे मौतके घाट अुतारनेका बीड़ा अुठाया है—पर प्रस्तुत कथा किसी चौपायेकी नहीं, हाथ-पैरवाले अिन्सानकी कहानी है। अेकके माध्यमसे यह अनेककी कथा है—अेक पूरी जात और जमातकी जो राजनीतिक संगठनोंमें अथवा सामाजिक संस्थाओंमें बड़ी श्रद्धासे नेताको मन्चपर आसीन करती है, अुसके जयघोषपर गौरवान्वित होती है, अुसके कंठको पुष्पहारोंसे अलंकृत देख प्रसन्नतासे करतल-ध्वनि करती है। अुसके लिअे दुआअें माँगती है और अनुशासन-बद्ध अुसके पदचिन्होंपर सिर झुकाये चली जाती है। अिसी जनताकी दमसे नेताका नेतृत्व बनता है।

प्रस्तुत अुपन्यासका हजारीलाल अिसी वर्गका अेक मेम्बर है। वह सुनार होकर भी अीमानदार है अिसलिअे गरीब है, फिर भी आदमी बहुत अच्छा है। वह समझता है—सच्चाअी और अीमान ही अुसके कवच हैं—और अिसीलिअे जिन्दगी-भर धोखा खाता रहता है। पहिले घरवालोंसे, फिर रिश्तेदारोंसे और फिर बाबू रामचरित्र जैसे नेताओंसे। लेकिन अगर सच पूछिये तो अिनमेंसे कोअी अुसे धोखेमें रख नहीं सके। न अुसकी भौजाअी होमवती, न रिश्तेदार हेतराम, न ढोंगी बाबा रामदास और न नेताजी बाबू रामचरित्र। वह खूब समझता रहा पर बलिका बकरा, करे भी तो क्या? समझता रहा और सहता भी रहा... ..।

जहाँ हजारीकी कहानी समाप्त होती है वहींसे अेक दूसरी कहानी शुरू हो जाती है— 'मर्दुमखोर'।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह रामतेजकी कहानी है। रामतेज भी यों हजारीकी ही जातका है। अन्तर अितना है कि हजारी अन्याय सहता है, रामतेज अन्यायका प्रतिकार करता है। अुस-पर मुकदमा चलता है और अुसे फांसीकी सजा हो जाती है पर जीते-जी रामतेजने अन्यायियोंसे हार नहीं मानी, अुनके दांत खट्टे करता रहा। आखिरकार आदमखोर समाजके न्यायके आगे अुसकी चली नहीं तथापि अुस समाजके न्यायका रूप तो सामने आ ही गया।

'बलिका बकरा' सभी दृष्टियोंसे सफल कृति है। अिसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि कथानकका अुद्देश्य स्पष्ट होते हुअे भी अुसकी कलात्मकतामें कसर नहीं आने पायी।

—जी. ना.

'अेक था राजा'— [मूल पुस्तक Private life of a prince लेखक— श्री मुल्कराज आनन्द; अनुवादक— मुनीश सक्सेना। प्रकाशक— राजकमल प्रकाशन दिल्ली, बम्बअी। पृष्ठसंख्या ५४२, मूल्य ७॥ रु.]

अुपन्यासकी कथावस्तुका आभास जितना अंग्रेजीके शीर्षकसे होता है अुतना हिन्दीके शीर्षकसे नहीं। सारी कहानी सुनानेवाले हैं डाक्टर शंकर जो भारतके अुत्तरी-पहाड़ी अिलाकेकी रियासतमें राजाके निजी चिकित्साधिकारी थे। महाराजा दिलीपसिंहके भोग-विलास-मय जीवनका वर्णन जितने साहस और जितनी स्पष्टतासे अिस अुपन्यासमें किया गया है अुतना संभवतः किसी और हिन्दी अुपन्यासमें न मिले। देशी-राजाओंकी भोगविलास-वृत्तिका अैतिहासिक कारण देते हुअे लेखकने कहा है—जिस सययसे अिन गन्दी अश्वशालाओंसे, रथोंका युद्धके लिअे जाना बन्द हुआ है, जिस समयसे अिनको अेक दूसरेपर आक्रमण करनेका अधिकार नहीं रह गया है। क्योंकि अिनके राज्योंकी सीमाअें तो हमेशाके लिअे अुन विशेष सन्धियोंमें निश्चित कर दी गयी हैं, जो अिन लोगोंने हर ब्रिटैनिक मैजेस्टी क्वीन विक्टोरियाके साथ की थीं—अुसी समयसे अिन रजवाड़ोंके पास कोअी काम नहीं रह गया है। .....अब अिनके पास अलावा अेक मोर्चेको सर करनेके और रह ही क्या गया है? और वह है औरतोंका मोर्चा!"

महाराजा दिलीपसिंहके जीवनकी कहानी भारतके निकट भूतके संक्रान्ति-कालकी कहानी है। पूर्व स्वातंत्र्य-कालमें अुनका विलास निरंकुश है, परन्तु सरदार पटेलके गृहशासन कालमें अिन्हें संघर्ष और आपत्तिका सामना करना पड़ता है। राजनैतिक मोर्चेपर तो हार अवश्यं-भावी ही थी। परन्तु नारीके मोर्चेपर भी विलासकी अुद्दाम निरंकुशताने अुन्हें अवश्यम्भावी नियति-प्रतिकार "नेमेसिस" के दर्शन शीघ्र ही हुअे। अनेक नारियोंसे अुनका अुन्मुक्त सम्पर्क रहा परन्तु गंगादासीने अुन्हें अपने अिन्द्रजालमें फँसाकर अुनकी बेबसियोंका फायदा अुठाना चाहा और अन्तमें अैसी परिस्थितिमें ला पटका कि महाराजा साहबपर खूनके छींटे आ गिरे। वे परिस्थितियोंसे मुँह चुराकर यूरोप गये थे और अन्तमें रियासत विभागके आदेशपर पागल होकर भारत लौटे।

रियासतोंकी अैसी कहानियाँ तो बहुत पढ़ने और सुननेमें आयी हैं, परन्तु अिस ढंगसे, शैली, और मार्मिकतासे लिखी गयी कहानी यह अेकही पढ़नेमें आयी। सारे अुपन्यासमें व्यंग्यकी कहीं चुटकीली और कहीं तीव्र आघात करनेवाली अेक अन्तर्धारा निरंतर बहती जाती है। लेखकने वर्तमान युगकी घटनाओंको, सरदारके राजाओंको धमकाने, अुन्हें वशमें करनेके तरीकों, अुनकी राजनीति आदिका वर्णन बड़ी ही सूक्ष्मदर्शिता और साहससे किया है। जगह-जगहपर कम्यूनिस्ट, प्रजातंत्रवादी, कांग्रेसी और राजतंत्र सम्बन्धी टीकाअें भी बड़े अधिकारपूर्वक दी हैं। चरित्र-चित्रणमें तो जिस नग्न यथार्थतासे अुन्होंने कलम अुठायी है अुसे देखकर मोपासाँ, बालजाक, जोला आदिकी याद सहसा ताजी हो जाती है।

भारतका आदर्शवादी जनसमाज अपनी सांस्कृतिक सीमाओं और मान्यताओंसे घिरा होनेके कारण अिस अनुवादका स्वागत जरा हिचकिचाहटसे ही करेगा, अिसमें सन्देह नहीं। परन्तु फिर भी यह तो मानना ही पड़ेगा कि यह अुपन्यास हिन्दीमें कथाकी यथार्थता, शैलीकी व्यंग्यात्मक सजीवता और भारतके संक्रान्ति कालके सामाजिकीय-राजनैतिक (Socio-political) विवेचनकी दृष्टिसे अद्वितीय सिद्ध होगा। पुस्तकका गेटअप और छपाअी सुन्दर है।

—गो० श०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"भारतमें अंग्रेजी शिक्षाका अितिहास"– [लेखक–प्रोफेसर जगदीशप्रसाद व्यास, अेम्. अे., बी.टी., प्रकाशक–ज्ञानमंदिर, दीक्षितपुरा, जबलपुर। मूल्य ५) रु। पृष्ठ संख्या परिशिष्ट सहित ३११]

हिंदी भाषामें भारतीय शिक्षाके पूरे अितिहासका विवेचनात्मक पर्यवेक्षण पहली ही बार अिस पुस्तकके रूपमें प्रकाशित हुआ है। संविधानके अनुसार हिन्दी राष्ट्रभाषाके पदपर आसीन होकर वह हमारी शिक्षाकी विभिन्न अवस्थाओंमें अध्ययनका माध्यम बनती जा रही है अतअेव अैसे ग्रंथकी अुपादेयता स्वयंसिद्ध है। आजके भारतमें शिक्षाका स्वरूप अिंग्लेंडकी शिक्षा-व्यवस्थाकी प्रेरणासे निर्मित हुआ है। अिस शिक्षाको अंग्रेजी शासकोंने किस तरह भारतीय संस्कृति, साहित्य और लोक-जीवनकी पृष्ठ–भूमिमें अितनी दृढ़तासे स्थापित किया यह जैसा कि लेखकने बताया है, अंग्रेजी-चरित्रकी आश्चर्यजनक विशेषता है। क्या भारतीय चरित्र अिससे कुछ भी सबक ले सकेगा? शिक्षाके लगभग १५० बरस लम्बे अभियानमें जिस अुतार-चढ़ाव और धूप-छाँहका सामना अुन लोगोंने किया और अन्तमें लार्ड मेकालेकी भविष्यवाणीको मूर्त रूप देकर भारतीयोंके हृदयमें अंग्रेजी-शिक्षा, अंग्रेजी शासन-प्रणाली और अंग्रेजियतकी ओर सफलतापूर्वक तादात्म्य पैदा कर दिया, यह अितिहासकी अेक अद्वितीय प्रक्रिया है। अिन सबका दो टूक और शक्तिशाली विवेचनकर लेखकने शिक्षाव्रतियोंके लिअे अध्यवसाय, लगन और दृढ़ताकी रुचिकर गाथा प्रस्तुत की है। अिन गुणोंके बिना शिक्षा पंगुवत् प्रगतिशील हो तो, वह समाजमें नवनिर्माण और क्रान्तिका चैतन्य कदापि अुत्पन्न नहीं कर सकेगी। लेखकने अिस पुस्तकके २२ अध्यायोंमें मेकाले और कर्जन जैसे अंग्रेजोंकी कार्यव्यवस्थाको स्वस्थ दृष्टिकोणसे प्रस्तुत किया है। स्व० राजाराम मोहनराय, गोपाल-कृष्ण गोखले, रवीन्द्रनाथ और महात्मा गांधीकी शिक्षा-सेवाओंका विस्तृत और गंभीर विवेचन तथा मूल्यांकन अिस पुस्तककी अपनी विशेषता है।

प्रस्तुत ग्रंथ प्रत्येक पाठशाला, कालेज या युनिवर्सिटी अेवं पुस्तकालयोंके लिअे अनिवार्य और अुपयोगी संग्रहकी वस्तु है। हिन्दी माध्यमसे बी. टी. कक्षामें अध्ययन करने विद्यार्थियोंके लिअे तो यह बहुत अुपयोगी है।

लेखक शिक्षण-महाविद्यालयमें प्राध्यापक है, अिस नाते यह वस्तुतः प्रामाणिक है। आशा है, हिन्दी-जगत भारतमें शिक्षाके अितिहास लिखनेके प्रोफेसर व्यासके अिस प्रयत्नका अुत्साहसे स्वागत करेगा।

यह पुस्तक सुषमा साहित्य मंदिर, जबलपुर और मयूर प्रकाशन झांसीसे अुपलब्ध हो सकती है।

—हृषीकेश शर्मा

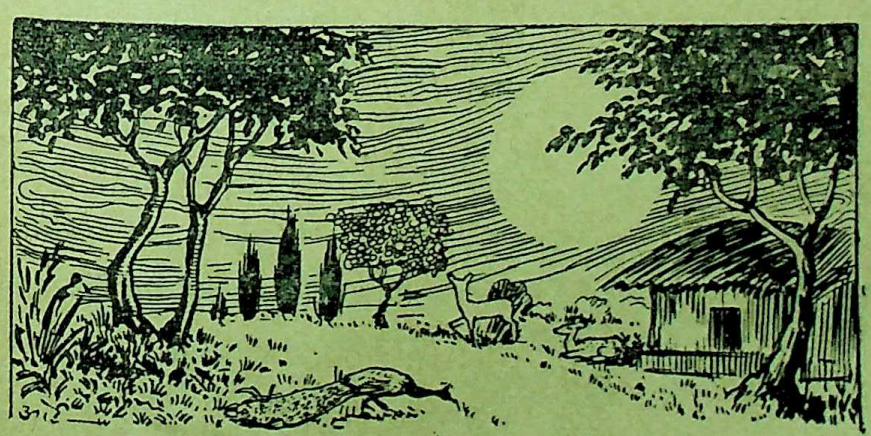

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युगके द्रष्टा और स्रष्टा तुलसीदास :

प्रतिवर्ष, श्रावण शुक्ला सप्तमीको हम गोस्वामी तुलसीदासका पुण्यस्मरण, पुण्यकीर्तन करने और श्रद्धांजलियाँ अर्पण करनेके हेतु 'तुलसी-जयंती' मनाते हैं। तुलसीदासजी हिन्दी-जगत्में ही नहीं, बल्कि अखिल भारतीय साहित्य-जगत्में अपना अेक विशिष्ट स्थान रखते हैं। यह बात अब किसीसे छिपी नहीं है। तुलसी अपने युगके प्रतिनिधि क्रान्तिकारी कवि थे। अुन्होंने जिस महान् क्रान्तिकारी ग्रन्थ 'रामचरित-मानस' की रचना की, अुसने भारतकी प्रसुप्त मूर्च्छित राष्ट्रीय शक्तियोंको जाग्रत करनेमें, राष्ट्रभाषा हिन्दीके निर्माणमें और हिन्दीको भारतव्यापी लोकप्रियता प्राप्त करानेमें बहुत बड़ा हाथ बटाया। तुलसीदास राष्ट्रके और राष्ट्रभाषाके निर्णायक और निर्माता थे। अपनी क्रान्तिदर्शी दृष्टिसे अुन्होंने भारतके और भारत-की भारतीके भव्य भविष्यको देखा था। अुनके मस्तिष्कमें, मानसमें और लेखनीमें भारतका भाग्य जागा। और जो कुछ अुन्होंने दिया, वह राष्ट्रके साहित्यमें ही नहीं, विश्वके अन्तर्राष्ट्रीय साहित्यमें भी अपना सर्वोच्च स्थान रखता है। अुनके भारतमें, भारतीय संस्कृतिमें अपावन अ-भारतीय तत्वोंका पूरा प्रवेश हो चुका था। भारतीयोंपर अ-भारतीयोंके भाँति-भाँतिके रोमांचकारी नृशंस अत्याचार हो रहे थे। देशमें फूटका फल फैला हुआ था। आये दिन धर्मपर घोर आघात होते, नारी-जातिका अपमान होता, निकृष्ट दर्जेकी पराधीनता गले बँधी थी और दयनीय शोचनीय दशा, यह सारे भारतकी साढ़े-सातौ गत तीन सौ वर्षोंकी करुण-कथा है। तुलसी-की 'रघुनाथ-गाथा' ने अुस सारी परिस्थितिपर पूरा प्रकाश डाला और राष्ट्रके अभ्युदयका राज-पथ 'रामचरितमानस' द्वारा निर्माण किया। यद्यपि तुलसीने अुस 'रघुनाथ-गाथा'को केवल 'स्वान्तः सुखाय' ही लिखा और लिखा होगा कहीं किसी कोने-आँतरेमें छोटी-सी कुटिया-कोठरीमें बैठकर ही; किन्तु वह कोटि-कोटि भारतीयोंके कंठोंमें कल-कल निनाद करती विराजमान है। 'अुपजहि अनत, अनत छवि लहही'। अपने रामचरित-मानसमें गोस्वामीजीने भारतके शक्ति, शील, और सौन्दर्यके मर्यादावाद, सर्वधर्म-समन्वयवाद और जगमंगल-काजकी साधनाके लिअे लोक-संग्रहकी पुनीत भावना, विशुद्ध ज्ञान, निष्काम कर्म और दास्य भक्तिकी भावनाका समन्वय स्थापित कर भारतको अपनी तुलसीकृत रामा-यण दी। सम्पूर्ण राष्ट्रकी भारती वाणी, अर्थ और रसके मंगलकर्ता तुलसीको श्रद्धा-विश्वास-पूर्वक प्रणाम करती है!

—ह० श०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रके विकासमें राष्ट्रभाषाका महत्व--

अभी हाल ही में अेक अुद्धरण पढ़नेको मिला है। अुसका हिन्दी-अनुवाद यहाँ दे रहे हैं।

"भाषाका अर्थ केवल शब्दोंका व्यवहार ही नहीं है। भाषाके हरअेक शब्दमें भावको जगानेवाली तथा विचारको प्रेरणा देनेवाली शक्ति होती है। भाषाके साथ विचार तथा भावोंका जो निकटका सम्बन्ध है अुसका विचार करनेपर यह स्पष्ट प्रतीत होगा कि किसी भी राष्ट्रके विकासके अितिहासमें स्वभाषाका कितना महत्व होता है। साधारणतः यह देखा गया है कि प्रत्येक राष्ट्रीय आन्दोलनका आरम्भ अुस राष्ट्रकी पुरानी राष्ट्रभाषाका पुनरुज्जीवन करके अुसे साहित्यका माध्यम बनानेके प्रयत्नसे ही किया जाता है। और यदि किसी राष्ट्रमें अपनी-अपनी भाषा बोलनेवाली छोटी-मोटी जमातें हुअीं तो अुन सबको राष्ट्रभाषामें ही बोलने-लिखनेका अनुरोध करनेकी प्रवृत्ति होती है। यहाँ यह माननेका कोअी कारण नहीं कि ये दोनों प्रवृत्तियाँ परस्पर विरोधी हैं।"

अिस कथनसे राष्ट्रभाषाका महत्व स्पष्ट होता है। अितना ही नहीं, राष्ट्रभाषाके विकासके लिअे, जैसे अेक राष्ट्रभाषाकी आवश्यकता होती है, अुसी प्रकार राष्ट्रभाषाके निर्माणके लिअे अुपयुक्त राष्ट्रीय भावों तथा विचारोंका होना भी अुतनाही आवश्यक है।

नागपुर रेडियोसे 'कलकी हिन्दी' पर ता. २२ जुलाअीको जो संवाद प्रसारित किया गया, अुसमें अिन पंक्तियोंके लेखकने भी भाग लिया था। अुसमें कहा गया कि :--

"प्राणवान प्रजाकी भाषाका विकास होता ही रहता है, अुसकी शब्द-समृद्धि बढ़ती जाती है, वाक्योंके सहज परन्तु चमत्कारिक प्रयोगोंमें प्रजाका जीवन अनुप्राणित होता रहता है। अुसका अैसा विकास देश-काल तथा अुस प्रजाकी अनेकविध-प्रवृत्तियोंपर ही आधारित होता है।

भारत आज क्रान्तिकालमें है। स्वतन्त्रताके बाद हिन्दीको भारतकी राज्यभाषाका पद प्राप्त हुआ है परन्तु हमारा प्रयत्न तो अुसे सच्ची राष्ट्रभाषा बनानेका है। काश्मीरसे लेकर कन्याकुमारी और अससे लेकर सौराष्ट्रतक हम सब भारतकी राष्ट्रीय अेकताका अनुभव करें, और अैसी अेकता अनुभव करते हुअे राष्ट्र-निर्माणकी जिन प्रवृत्तियोंको हम हाथमें लेंगे और अुन प्रवृत्तियोंमें जितना हिन्दीका व्यवहार होगा, अुतना और अुसीके अनुरूप अुसका विकास होगा।"

मौलिक साहित्य चाहिये--

केवल अनुवाद तथा अनुकरणके साहित्यसे भी राष्ट्रका काम नहीं चलेगा। हमें कुछ मौलिक प्रयत्न करना होगा, मौलिक साहित्यकी रचना करनी होगी और अुसके लिअे हमें अपने पूज्य नेताओंका मार्गदर्शन भी मिला है यह स्पष्ट करते हुअे अुसी संवादमें यह भी कहा गया :--

".....यह निश्चित है कि राष्ट्रभाषाके विकासका आधार हमारे अपने राष्ट्रनिर्माणके मौलिक प्रयत्नपर ही निर्भर है। साहित्य-निर्माण भी राष्ट्रनिर्माणके कार्यका ही अेक अंग है। यह भी यदि हो सके, तो योजनापूर्वक करना चाहिये। अिस सम्बन्धमें हमें अेक बात याद रखनी होगी। हम अपने राष्ट्रनिर्माणके कार्यको पश्चिमके ही क्यों, रूस या चीनके भी अनुकरण द्वारा नहीं कर सकेंगे? अंग्रेजी भाषा कितनी ही समृद्ध क्यों न हो, पश्चिमकी सभ्यता कितनी ही चकाचौंध पैदा करनेवाली क्यों न हो, अुसका परिणाम हम जानते हैं। दो विश्वयुद्धोंको देखकर आज सभी चौंक अुठे हैं। भारतको अपना नया मार्ग ढूंढना होगा। कितना भी संघर्ष क्यों न करना पड़े, कितना भी परिश्रम तथा तप क्यों न करना पड़े, हमें अपने राष्ट्रको अपने ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदर्शके अनुरूप बनाना है। गाँधीजीने दिशा-सूचन किया ही है और श्री नेहरू अुसका जो थोड़ा भी अनुसरण कर रहे हैं, अुसका परिणाम आज हमारे सामने है। अर्थात् केवल अंग्रेजी अथवा विदेशी साहित्यके अनुवादसे ही हमारा काम नहीं चलेगा। हमें कुछ मौलिक वस्तु देनी होगी, भाषाके गठनमें भी मौलिक योगदान करना होगा। अिसी प्रकार हमारी सच्ची राष्ट्र-भाषा बनेगी, जो सबल होगी, भाववाही होगी, और जनताकी देन होगी।"

सीमा-प्रान्तोंमें भाषाका प्रश्न-

किस प्रकार प्रान्तीय भावनाअें सिर अुठा रही हैं और हमारी अेक राष्ट्रीयताकी भावनाको हानि पहुँचा रही हैं, अिसका अन्दाज लगाना हो तो सीमा-प्रान्तोंमें जाना होगा। भाषानुसार प्रदेशरचनामें अपने-अपने प्रदेशोंकी सीमा बढ़ानेका सभी भाषाभाषी प्रयत्न कर रहे हैं। गुजरात और महाराष्ट्रके बीच डांगके प्रदेशका झगड़ा है। मध्यभारत तथा राजस्थानके साथ भी कुछ प्रदेशोंके लिअे गुजरातका विवाद है। मानभूमके प्रश्नको लेकर बंगालियों तथा बिहारियोंमें काफी कटुता फैल गयी है। आंध्रके सीमा प्रदेशोंके निर्णयमें भी अनेक प्रकारकी कठिनाअियोंका सामना करना पड़ रहा है। हैदराबाद राज्यको तोड़ देनेकी माँगें आ रही हैं तथा मध्यप्रदेशमें महाविदर्भ प्रान्त बनानेकी माँग की गयी है। यह सब तो है ही, परन्तु असम जैसे प्रान्तोंका प्रश्न अिन सब प्रान्तोंसे भिन्न है। वहाँ अनेक जातियाँ हैं, अुनकी अनेक भाषाअें हैं, जो विकसित भाषाअें नहीं गिनी जातीं। अहमी तथा बंगाली ही दो भाषाअें हैं, जिनका वहाँ प्राबल्य है। अुनमें भी बंगालीका साहित्य श्रेष्ठ होनेसे अुसका दावा अधिक प्रबल है और अहमी लोग अपने प्रान्तीय भावोंके कारण अपना तथा अपनी भाषाका वर्चस्व स्थापित करनेके प्रयत्नमें हैं। अैसी स्थितिमें खासी आदि जातियाँ क्या करें? अपनी भाषा छोड़ दें? अुसे छोड़कर भी वे कौन-सी भाषा सीखें? राष्ट्रभाषा हिन्दी सीखनेका प्रश्न भी अुनके सामने है। और मिशनरियोंने अिन जातियोंमें वर्षोंसे काम करते हुअे अुन्हें रोमनलिपि ही सिखायी है। पढ़े-लिखे लोग ज्यादातर अँग्रेजीमें ही अपना सब व्यवहार चलाते हैं और अर्द्धशिक्षित लोग रोमनलिपिमें लिखी अपनी भाषाका व्यवहार करते हैं। ये लोग कौन-सी भाषा सीखें और किस लिपिको अपनावें, यह प्रश्न है। श्री जवाहरलाल नेहरूने असमकी अैसी परिस्थितिको देखकर ही शायद सर्वप्रथम सब भाषाओंके लिअे अेक नागरी लिपिका व्यवहार करनेकी बात कही थी।

नागरी-लिपिमें हिन्दीकी शिक्षा—

खासी आदि जातियाँ अहमियाँ या बंगाली के झगड़ेमें पड़ना नहीं चाहतीं। असम प्रान्तमें सर्वत्र अहमिया भाषा चले, अिसका असम प्रांत-वाले आग्रह रखते हैं। अितना ही नहीं, वे तो मणिपुर, त्रिपुरा आदि प्रदेशोंको भी असम राज्य-के अन्तर्गत करना चाहते हैं। केन्द्रीय सरकारने अभी अुनकी अिस मांगका स्वीकार नहीं किया है। आज वे गवर्नरके शासनमें हैं और केन्द्रीय-सरकार शायद शीघ्र ही अुसके लिअे अेक कमिश्नर-की नियुक्ति करेगी। असमके लोग अिसका विरोध कर रहे हैं। वे अपनी भाषाका भी वर्चस्व तथा क्षेत्र-विस्तार चाहते हैं। परन्तु आज तो असममें अँग्रेजीका ही बोलबाला है। शालाओंमें सब जगह अँग्रेजीको ही महत्व दिया जाता है। छोटे-छोटे बालकोंके लिअे जो नया शिशु-सदन खोला गया है, अुसमें भी शिक्षण अँग्रेजीके-द्वारा ही दी जाती है। यह बड़े ही दुःख-की बात है, परन्तु जो वस्तुस्थिति है अुसको स्वीकार करना ही पड़ेगा। अबतक जितने शिशु-सदन काम करते थे, वे सब मिशनरियों द्वारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही खोले गये थे अिसलिअे स्वभावतः ही स्थानीय प्रयत्नसे जो शिशु-सदन खोला गया है, वह भी अिसीका अनुकरण करेगा। परन्तु हमें अिसपर गम्भीरतासे विचार करना होगा। खासी आदि जातियाँ भी अहमियाँ, बंगला आदि सीखने के बदले हिन्दी सीखना ही अधिक पसन्द करती हैं, क्योंकि वह राज-भाषा बनी है और राष्ट्र-भाषा बन रही है। असमकी अेक बहुत बड़ी जमींदारी (Estate) की रानी साहिबाने तो कहा था कि मेरे बच्चोंमेंसे किसीने अहमी या बंगाली सीखना पसन्द नहीं किया। अुन्होंने अंग्रेजीके साथ हिन्दी ही सीखी।

पहाड़ी जातियोंमें शिक्षा-प्रचार

असम जैसे प्रान्तोंमें, जहाँ रोमनलिपि तथा अंग्रेजीका अितना प्रभाव है, वहाँ हमें राष्ट्रभाषा के महत्वको प्रजाके दिलमें स्थान मिले, अैसे प्रयत्न हर प्रकारसे करने होंगे। पहाड़ी जातियोंमें मिशनरियोंने बहुत कार्य किया है। अिसके लिअे हम अुनके प्रति कृतज्ञता प्रकाशित करें, परन्तु हमारी राष्ट्रीय भावनाओंको देखते हुअे अब अुनकी शिक्षाका कार्य हमें अपने हाथोंमें लेना होगा। रोमनलिपि तथा अंग्रेजीके प्रभावमें अुन्हें हम अधिक दिनोंतक नहीं रहने दे सकते। और जब वे नागरी-लिपि तथा हिन्दी सीखनेके लिअे विशेष रूपसे अुत्सुक हैं, अुन्हें हिन्दी सिखानेके लिअे हमें विशेष रूपसे प्रबन्ध करना होगा। अिसमें कुछ विशेष खर्च भी करना होगा। परन्तु वह अति आवश्यक खर्च होगा। अिन जातियोंमें यदि कार्य किया जाअे तो सम्भव है केन्द्रीय तथा प्रांतीय सरकारें भी धनसे तथा दूसरे प्रकारोंसे सहायता करें। यह भी सम्भव है कि जो लोग वहाँ राष्ट्रभाषा-प्रचारके कार्यको कर रहे हैं, अुन्हें अुसके साथ प्रौढ़-शिक्षाका कार्य भी करना पड़े। अुसके लिअे अुपयुक्त पुस्तकें तैयार करनी होंगी और विशेष साधनोंका अुपयोग करना होगा। परन्तु यह कार्य अुन्हें करना अवश्य चाहिये।

राष्ट्रभाषाके प्रचार-प्रसारका कार्य—

कुछ लोगोंका यह कहना है कि राष्ट्रभाषा के प्रचार-प्रसारका कार्य अब बहुत हो चुका। अब साहित्य-निर्माणका ठोस कार्य होना चाहिये। परन्तु हमारा अनुभव कहता है कि राष्ट्रभाषाके प्रचार-प्रसारके कार्यकी आज जितनी आवश्यकता है अुतनी शायद पहले नहीं थी। पहले तो राष्ट्र-भाषाके स्वीकारका तथा राष्ट्रभाषाके प्रति रुचि पैदा करनेका ही अेक मात्र प्रश्न था। परन्तु अब तो वह कार्य आवश्यक शिक्षा देनेका कार्य बन गया है। अिसीलिअे अब हमें अपने शिक्षा-केन्द्रोंको व्यवस्थित करना होगा और केन्द्रीय स्थानोंमें राष्ट्रभाषाकी शिक्षाके लिअे विद्यालयों-महा-विद्यालयोंमें अनेक प्रकारके प्रयोग करने होंगे। आज जो प्रचारक अपना थोड़ा समय देकर राष्ट्रभाषाके प्रचारका कार्य कर रहे हैं, वे धन्य-वादके पात्र हैं। अुनकी सेवाकी राष्ट्र हमेशा कदर करता रहा है, परन्तु अब हमें कुछ अैसे प्रचारक भी तैयार करने होंगे जो अपना सारा समय सेवा-भावसे अिस कार्यमें लगा दें और नये-नये प्रश्न, जो अुठ रहे हैं, अुन्हें समझकर अुनका हल निकाल सकें।

हिन्दी-सेवक-मंडल—

साहित्य-निर्माणका ठोस कार्य भी होना चाहिये। परन्तु अुसे सब नहीं कर सकते। अुसे कुछ प्रतिभा-सम्पन्न लोग ही कर सकते हैं। परन्तु दुःखकी बात है अैसे सेवा-भावी साहित्यिक हिन्दी जगतमें बहुत दुर्लभ हैं। जिस प्रकार महा-राष्ट्रमें श्री गोखलेजीने अेक परिपाटी कायम की कि अच्छे प्रतिभाशाली विद्वान मात्र-जीवनकी आवश्यकताअें प्राप्त होनेपर आजीवन किसी सेवा कार्यमें लगे रहें, अुसी प्रकार हिन्दीके क्षेत्र-में भी अेक परिपाटी कायम करनेकी आवश्यकता है। अिसके लिअे यदि आवश्यक हो तो अेक हिन्दी-सेवक-मंडलकी भी स्थापना करनी चाहिये। अिस मंडलमें अैसे आजीवन सेवकोंको स्थान हो, जो हिन्दीके प्रचार-प्रसार, शिक्षा तथा अनुसंधान तथा अुच्च प्रकारके साहित्य-निर्माणमें अपना जीवन व्यतीत करना चाहें। राष्ट्रभाषाका कार्य छोटा कार्य नहीं। वह राष्ट्र-निर्माणके साथ अनिवार्य रूपसे संलग्न है, अिसलिये अिसके सेवकोंकी प्रतिष्ठा तथा गौरव भी कुछ कम न होगा।

—मो० भ०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नयी धारा

याद रखिये पत्रिकाके लिअे } १ अेक निश्चित अुद्देश्य चाहिये !
२ अुसका अपना व्यक्तित्व चाहिये !

अैसी ही अेक मासिक पत्रिका है। कहानियाँ, कविताअें, शब्द-चित्र, संस्मरण, नाटक-आलोचना, निबन्ध आदि। हिन्दीमें नयी धाराके प्रतीक श्री रामवृक्ष बेनीपुरी अिसका सम्पादन कर रहे हैं। जिनकी सहायताके लिअे साहित्य-महारथियोंका अेक सम्पादक-मण्डल संगठित किया गया है। प्रादेशिक सरकारोंके शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत।

नयी धाराके पुराने प्राप्य अंक आधी कीमतमें प्राप्त होंगे। पोस्टेज फ्री। रंगमंच अंककी थोड़ीसी प्रतियाँ शेष हैं। ग्राहक शीघ्रता करें।

डिमाअी आठ पेजीके १०० पृष्ठ, पक्की जिल्द, आकर्षक कवर, सचित्र, सुसज्जित।

अेक अंक १)] **[वार्षिक १०)**

पताः— प्रबंधक, नयी धारा, अशोक प्रेस, पटना ६

अुत्तर प्रदेशीय सरकार द्वारा पुरस्कृत

भारतीय ज्ञानपीठ काशीके महान् प्रकाशन

१. वर्द्धमान	श्री अनूप शर्मा	६)
२. हमारे आराध्य	श्री बनारसीदास चतुर्वेदी	३)
३. संस्मरण	श्री ,, ,,	३)
४. पथचिन्ह	श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी	२)
५. वैदिक साहित्य	श्री रामगोविन्द त्रिवेदी	६)
६. शेर-ओ-शायरी	श्री अयोध्याप्रसाद गोयलीव	८)
७. शेर-ओ-सुखन	श्री ,, ,,	८)
८. मिलनयामिनी	श्री 'बच्चन'	४)
९. रजतरश्मि	श्री रामकुमार वर्मा	२॥)

ज्ञानोदय [मासिक]

वार्षिक ६) अेक प्रति ॥=)

भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुण्डरोड, बनारस ५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ श्री ॥

सा.न.वि.वि.--आहिताग्नि शंकर रामचंद्र राजवाडे यांचीं खालीलप्रमाणें पुस्तकें छापून तयार आहेत.

(१)	नासदीयसूक्त भाष्य, उत्तरार्ध– खंड १ ला.	किंमत २० रुपये
(२)	नासदीयसूक्त भाष्य, उत्तरार्ध– खंड २ रा.	,, ३० ,,
(३)	नासदीयसूक्त भाष्य, उत्तरार्ध– चरम खंड.	,, १० ,,
(४)	नीटश्शेचा ख्रिस्तांतक आणि ख्रिस्तांतक नीटश्शे.	,, १० ,,
(५)	ईशावास्योपनिषद्भाष्य.	,, १५ ,,
(६)	षड्दर्शन समन्वय आणि पुरुषार्थ मीमांसा.	,, १५ ,,
(७)	सनातन वैदिक धर्मावरील व्याख्यान माला भाग १ ला– २० व्याख्यानें.	,, ३ ,,

(सर्वत्र टपाल हंशील वेगळा.)

आपणांस सदरहू ग्रंथापैकीं जे विकत घेणें शक्य आहे ते विकत घेण्यांत यावे अशी विनंति आहे. म० ऑ० माझ्या नांवें पाठवावी. व्ही० पी० नें ग्रंथ पाहिजे असल्यास तसें कळवावे. तसदीची माफी असावी. कळावे ही विनंति.

आपला,
राजाराम शंकर राजवाडे
व्यवस्थापक.

सनातन वैदिक धर्मकार्यालय,
२८६ सदाशिव पेठ, पुणें २.

प्रेरणा

'मेघदूत' अंक

प्रेरणाका यह चौथा अंक सम्पूर्ण रूपसे मेघदूतपर ही है।

★ मूल काव्यका राजस्थानीमें अनुवाद

★ मूल काव्यका हिन्दी गद्यमें भावानुवाद

★ विश्व कवि कालीपास और अुनके अिस अद्वितीय काव्यसे सम्बन्धित निबंध

राजस्थानीमें अिस अतुलनीय कलाकृतिका काव्यमय अनुवाद स्वयं अेक अतुलनीय प्रयास है।

अनुवादक : नारायणसिंह

अिस अंकका भी वही साधारण मूल्य

वार्षिक १४) अेक प्रति १।)

सम्पादक : कोमल कोठारी,

सोजती गेट, **जोधपुर (राजस्थान)**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके, आपके परिवार के प्रत्येक सदस्य के, प्रत्येक शिक्षा-संस्था तथा पुस्तकालय के लिअे अुपयोगी

हिन्दीका अपने ढंगका पहला पत्र

गुलदस्ता

(हिन्दी डाअिजैस्ट)

वार्षिक मूल्य १०) | पृष्ठ संख्या १२५ | नमूने की प्रति अेक रुपया

३९३८ पीपलमंडी, आगरा

अंग्रेजी डाअिजैस्ट पत्रिकाओंकी तरह दुनियाकी तमाम भाषाओंके साहित्यसे जीवनको नयी स्फूर्ति, अुत्साह और आनन्द देनेवाले लेखोंका सुंदर संक्षिप्त संकलन देनेवाला यह पत्र अपने ढंगका अकेला है, जिसने हिन्दी पत्रोंमें अेक नयी परंपरा कायम की है। हास्य, व्यंग, मनोरंजक निबंध तथा कहानियाँ अिसकी अपनी विशेषता है।

गुलदस्ता पर लोकमत

स्वामी सत्यदेव परिव्राजक

"गुलदस्ताकी टक्करका मासिक-पत्र अभीतक प्रकाशित नहीं हुआ। मैं अिस पत्रिकाको आद्योपांत सुनता हूँ।"

बाबू गुलाबराय, अेम. अे.

"अिसमें शिक्षा और मनोरंजन दोनोंके अच्छे साधन अुपस्थित रहते हैं।"

जैनेन्द्रकुमार, दिल्ली

"गुलदस्ता अच्छी जीवनोपयोगी सामग्री दे रहा है।"

प्रो. रामचरण महेंद्र

"गुलदस्ता विचारोंका विश्व-विद्यालय है, जिसे घरमें रखनेसे सभी व्यक्ति लाभ अुठा सकते हैं।"

हिन्दीका स्वतंत्र मासिक

"नया समाज"

संचालक : नया समाज-ट्रस्ट ★ **संपादक : मोहनसिंह सेंगर**

वार्षिक चन्दा ८) : अेक प्रति ।।।) : विदेशोंमें १२) वार्षिक

'नया समाज' व्यक्तिमें स्वतंत्र चिन्तना, समाजमें अन्ध विश्वास और रूढ़ियोंका अन्तकर स्वस्थ सदाचरण और राजनीतिमें भ्रष्टाचार, जन-द्रोह अेवं आततायीपनका पर्दाफाशकर स्वस्थ जनतंत्रका प्रतिपादन करता है।

'नया समाज' में हर मास साहित्य, संस्कृति, समाज, अन्तर्राष्ट्रीय हलचलों और विशिष्ट व्यक्तियोंकी अुपादेय चर्चा रहती है।

'नया समाज' किसी दल या वाद–विशेषसे बँधा न होनेके कारण स्वतंत्र, संयत और स्वस्थ पाठ्य-सामग्री प्रस्तुत करता है। हिन्दीके चोटीके लेखकोंका सहयोग अिसे प्राप्त है। अिसी कारण पिछले पाँच वर्षोंमें ही अिसने हिन्दी संसारमें अपनी धाक जमा ली है।

आप यदि ग्राहक नहीं हैं, तो आज ही बन जाअिये। यदि हैं, तो अपने अिष्ट-मित्रोंको भी बनाअिये। यदि किसी कारण आप ग्राहक नहीं बन सकते, तो चेष्टा कीजिये कि 'नया समाज' आपके पड़ोसके पुस्तकालयमें मँगाया जाय।

आज ही नमूनेके लिअे लिखिये :—

व्यवस्थापक 'नया समाज', ३३, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता– १

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरस्वती संवाद

(हिन्दीका परीक्षोपयोगी आलोचनात्मक)

मासिक पत्र

अिसकी विशेषताओंके संबंधमें विद्वानोंकी सम्मतियाँ

१. अिसको अुच्चकोटिके लेखकोंका सहयोग प्राप्त है। २. अिसमें अनावश्यक सामग्रीका समावेश नहीं है। ३. यह पत्र विद्यार्थियोंकी ठोस सेवा कर रहा है। ४. अिसका प्रत्येक लेख विद्यार्थियोंके कामका होता है। ५. सरस्वती संवाद अच्छी प्रगति कर रहा है। शीघ्र ही वह अपने लिये सुदृढ़ स्थान बना लेगा। ६. यह पत्र अुन्नति कर रहा है और लोक-प्रिय हो रहा है।

वार्षिक मूल्य केवल ४) नमूनेकी प्रति ।।) में

पताः--सरस्वती संवाद कार्यालय-
मोती कटरा, आगरा।

रानी

आपके मनोरंजनके लिये

नाना प्रकारके सचित्र लेख, कहानियाँ, छाया लोक और आलोचनाअें आदि आदि। वर्षमें होलिकांक और दीपावली अंक मुफ्त।

रानीका वार्षिक चन्दा केवल चार रुपये है। रानी १५ वर्षसे हिन्दी-पाठकोंको निरन्तर नवीन पाठ्य-सामग्री देती आ रही है।

"रानी" कार्यालय,
१२१ चित्तरंजन अेविन्यू,
कलकत्ता ७

गुजराती भाषाका निराला साप्ताहिक-पत्र

निर्माण

[सम्पादक : हरिलाल पंड्या]

समस्त भारतकी शैक्षणिक, सांस्कृतिक और प्रजाजीवनके नव-निर्माणकी प्रवृत्तियोंका ज्योतिर्धर।

निर्माणमें आप देखेंगे :—

आनंद, अुत्साह और चेतनाप्रद लेख, कहानियाँ अेवम् अपने ही ढंगसे चुने हुअे समाचार। राष्ट्र-भाषासे सम्बन्धित सभी प्रवृत्तियोंका विवरण और किसी भी वादसे परे रहकर तटस्थ और स्पष्ट मंतव्य प्रकट करना निर्माणका ध्येय है।

विज्ञापनका अत्युत्तम साधन।

आज ही पत्र लिखकर नमूनार्थ प्रति मंगवाअिये।

वार्षिक मूल्य ५) छः माही ३) अेक प्रति दो आना

निर्माण कार्यालय
स्वस्तिक प्रिन्टरी
धर्मेन्द्र मार्ग
राजकोट (सौराष्ट्र)

महाराष्ट्र रा.भा. प्रचार समिति, पुणेके तत्वावधानमें

राष्ट्रभाषा प्रचारकों अेवं परीक्षार्थियोंके अुपयोगकी हिन्दीकी अभिनव साहित्यिक मासिक पत्रिका

"जयभारती"

सम्पादक अेवं प्रकाशकः--श्री पं. मु. डांगरे

प्रारम्भिकसे लेकर अूँची परीक्षाओंतककी परीक्षोपयोगी सामग्री; साहित्य, परंपरा, संस्कृति विषयक लेख, शंका समाधान; साहित्य परिचय; मधुसंकलन; हिन्दी जगत्; परीक्षा विषयक सूचनाअें, आवश्यक जानकारी, कहाँपर कौन क्या पढ़ें? आदि नाविन्यपूर्ण अेवं समयोचित रचनाओं अेवं विशेषताओंसे भरपूर।

मनिआर्डरसे वार्षिक मूल्य १) अेक रुपया भिजवाकर शीघ्र ग्राहक बन जाअिये।

पताः-८६६ सदाशिव, पो. बॉ. नं.५५८, पुणे २.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुषमा

सम्पादक : कुंडलराय मोहेकर

या मासिकाचीं वैशिष्ठयें—

★ सुन्दर लघुकथा. ★ नामांकित लेखकांचें लिखाण. ★ जीवन, कला, साहित्य अित्यादि विषयांवर अुपयुक्त मजकूर. ★ या शिवाय चेतोहारी चित्र.

नियमित वाचण्यासाठी आजच वर्गणी पाठवून ग्राहक होणें फायद्याचें आहे.

वार्षिक वर्गणी ६ रुपये. किरकोळ अंकास आठ आणे.

सुषमा : पराग बिल्डिंगज्, धरमपेठ, नागपुर. (म. प्र.)

"दक्षिण भारत"

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभाका सांस्कृतिक त्रासिक पत्र

अिस पत्रके द्वारा:—दक्षिणकी प्राचीन और आधुनिक संस्कृति संबंधी जानकारी, दक्षिणके साहित्य, राजनीति, शिक्षा, कला, रचनात्मक कार्य क्षेत्रोंके विवरण और अुनके अुन्नायकोंका परिचय, दक्षिणकी तेलुगु, तमिल, कन्नड मलयालम और अुत्तरके विद्वानोंका साहित्य सृजनका परिचय पाअिये।

वार्षिक चंदा रु. ६-०-० अर्धवार्षिक रु. ३-८-०

अेक प्रति रु. ०-१०-०

अिस पतेपर लिखें:—

व्यवस्थापक, पत्रिका विभाग,
दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा,
त्यागरायनगर, मद्रास १७,

गोरक्षण

वार्षिक गोदान १।) अेक प्रतिका ।-)

[ग्राहकों और विज्ञापन दाताओंके लिअे सुनहला अवसर!]

"गोरक्षण" सचित्र मासिक पत्र हिन्दी भाषाका गोरक्षा-संबंधी अेक मात्र लोकप्रिय प्रथम श्रेणीका पत्र है। अिसमें देशके बड़े-बड़े विद्वानों, नेताओं, धार्मिक महापुरुषों और वर्तमान सरकारके अधिकारियोंके संदेश तथा सुन्दर लेखादि बराबर प्रकाशित होते रहते हैं। यह भारतके अिस छोरसे अुस छोर तक छोटीसी झोपड़ीसे लेकर बड़ेसे बड़े महलोंमें और यूरोप तथा अेशियाके प्रमुख नगरोंमें बड़े चावसे पढ़ा जाता है। 'गोरक्षण' पत्र की सहायता करके गो-माताके कल्याण साधनमें यशके भागी बनें। आज ही ग्राहक बनिये। व्यापारसे लाभ अुठाना चाहते हैं तो 'गोरक्षण'में विज्ञापन छपाअिये। पता:—

गोरक्षण साहित्य मंदिर, रामनगर, बनारस (अु.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घरका अंधकार दूर करनेके लिअे प्रकाश चाहिये

पर

घरको सुसंस्कृत और सुमुन्नत बनानेके लिअे

ज्ञानकी ज्योति

अुससे भी आवश्यक है।

हिन्दीका स्वस्थ, सात्विक अेवं सस्ता मासिक पत्र

'जावन-साहित्य'

वार्षिक शुल्क केवल ४)

चाहें तो पहले अेक कार्ड भेजकर नमूना मंगा कर देख लें।

जुलाअी और जनवरीसे ग्राहक बनाये जाते हैं।

पता:-- सस्ता साहित्य मण्डल, नअी दिल्ली

नव निर्माण

नयी पीढ़ीका सचित्र त्रैमासिक

[सम्पादक - नेमिचन्द जैन 'भावुक']

+ साहित्य, शिक्षा, संस्कृति और कलाका संगम + राजनीति-विज्ञान, + तारोंकी छायामें + चना जोर गरम + अिमनके आलोकमें + आप भी कहें, हम भी कहें + कसौटीपर + ये धूल भरे हीरे + आदि स्थायी स्तंभोंसे युक्त अपनी ही विशेषताओंसे प्रेरित प्रभावित।

अेक प्रति १) विशेषांक युक्त वा. ४)

कुमार साहित्य परिषद, जोधपुर

विशेष: - मार्च अंकको प्रतियां अप्राप्य, जूनको प्राप्य। निशुल्क प्रति भेजनेमें असमर्थ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस घरमें आरोग्य प्रकाश नहीं, वहाँ सुख शान्ति कहाँ ?

आरोग्य, स्वच्छता और चिकित्साका सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ

भारत-प्रसिद्ध श्रीवैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लिमिटेडके अध्यक्ष वैद्यराज पं० रामनारायणजी वैद्यशास्त्रीने ५-६ वर्ष बड़ी मेहनतसे स्वयं अिस ग्रंथको लिखा है। ग्रंथका अेक-अेक वाक्य हजारों रुपयेका काम देता है। व्यायाम, ब्रह्मचर्य, भोजन, सदाचार, अुत्तम विचार आदि पूर्वार्द्ध विषयोंको पढ़कर और तदनुसार चलकर सदा बीमार रहनेवाला रोगी बिना दवाके नीरोग (तन्दुरुस्त) हो जाता है। ग्रंथके अुत्तरार्द्धमें शरीरमें पैदा होनेवाले सभी रोगोंकी अुत्पत्ति, कारण, निदान, रोगके लक्षण, चिकित्सा, पथ्यापथ्य आदि बड़ी ही सरल भाषामें लिखे हैं, जो पढ़कर विद्वानसे लेकर साधारण पढे लिखे दोनों समान भागसे लाभ अुठा सकते हैं। अिसमें दवाओंके जो नुकसे लिखे गये हैं वे बहुत बार परीक्षित, कभी भी फेल न होनेवाले और शास्त्रानुमोदित हैं। शहर हो या देहात, सब जगह अिस पुस्तकके घरमें रहनेसे रोगीको तत्काल लाभ पहुँचाया जा सकता है। औषध तैयार करनेका विधान तो अिस पुस्तकमें श्रेष्ठ है क्योंकि लेखक अिस विषयके निर्णयात्मक ज्ञाता हैं। अिसके आठ संस्करणोंमें ७१००० प्रतियां छपकर बिक चुकी हैं। यह नवां संस्करण १५ हजारका अभी छप रहा है। अिससे अिसकी लोक-प्रियता और अुपयोगिता स्पष्ट मालूम होती है। हिन्दीमें अैसी अुत्तम पुस्तक दूसरी नहीं है, यह कहा जाय तो अनुचित न होगा। प्रचारकी दृष्टिसे मूल्य भी बहुत कम रखा गया है। ५१५ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य सिर्फ १।।।), डाक खर्च ।।≈), हमारी चार निर्माणशाला, ५० बिक्री केन्द्र, १५००० अेजेन्सियोंसे प्रत्यक्ष खरीदनेपर डाक खर्च नहीं लगेगा।

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लिमिटेड, कलकत्ता, पटना, झांसी, नागपुर।

—: अुद्यम :—

हिन्दी और मराठी भाषामें प्रकाशित होता है।

प्रतिमास १५ वीं तारीखको पढ़िये।

अुद्यममें निम्न विषयोंके लेख छपते हैं :—

लाभदायक अुद्योगधंधोंकी जानकारी, अनाज तथा सब्जीकी खेती व रोगोंका निवारण, पशुपालन, दुग्धव्यवसाय व ग्रामोद्योग संबंधी लेख, विद्यार्थियोंके लिये वैज्ञानिक व अन्य जानकारी, आरोग्य, घरेलू औषधियों संबंधी लेख, हिन्दुस्थानके वैज्ञानिक और औद्योगिक क्षेत्रकी अुपयोगी जानकारी, कृषि, औद्योगिक और व्यापारिक क्षेत्रमें काम करनेवाले लोगोंकी मुलाकात तथा परिचय।

अुद्यमके विशेष स्तंभ

महिलाओंके लिअे अुपयुक्त, रुचिकर खाद्यपदार्थ बनानेकी विधि, घरेलू मितव्ययिता, अुद्यमका पत्रव्यवहार, खोजपूर्ण खबरें, आर्थिक तथा औद्योगिक परिवर्तन, जिज्ञासु जगत्, व्यापारिक हलचलोंकी मासिक समालोचना, नित्योपयोगी वस्तुअें स्वयं तैयार कीजिये।

वार्षिक चन्दा ७ रु. और प्रति अंक १२ आना

पता :— 'अुद्यम' मासिक, धर्मपेठ, नागपुर (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(कवर–पृष्ठ २ से चालू)

२३. आ[illegible] हा पाअूस (मराठी)	...	श्री आ. रा. देशपांडे 'अनिल'	६३४
२४. [illegible] आषाढस्य प्रथम [illegible] (मराठी)	...	श्री बा. भ. बोरकर	६३४
२५. आ[illegible] नहुं कयों (गुजराती)	...	श्री प्रह्लाद पारेख	६३५
२६. [illegible]ध माधुरी (गुजराती)	...	श्री बालमुकुंद दवे	६३५
२७. घटा	...	श्री 'भृंग' तुपकरी	६३७
२८. नवमेघ-दर्शन	...	श्री भगवान मिश्र	६३८
२९. जाते हुअे बादलसे	...	श्री रामकृष्ण श्रीवास्तव	६३९
३०. बादल	...	श्री रा. ना. मिश्र	६४०
३१. मेघ-मिथुन : अेक प्रार्थना	...	श्री नरेश मेहता	६४१
३२. कविकी भी बात न मानोगी	...	श्री 'अंचल'	६४२
३३. साहित्यालोचन	...	सर्वश्री विनयमोहन शर्मा; जी. ना.; गो. श.	६४३
३४. सम्पादकीय	...	... ...	६४८

वार्षिक मूल्य ६) : छह माहका ३।) : अेक अंकका १० आना

पताः—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म. प्र.)

संक्षिप्त राष्ट्रभाषा कोश

(सम्पादक—महापंडित राहुल सांकृत्यायन)

शब्दसंख्या--२५०००

[मूल्य ५) डाक-व्यय अलग]

भाषाके अध्ययनमें कोशकी अपनी अेक अुपयोगिता है ।

राष्ट्रभाषाके विद्यार्थियोंके लिअे राष्ट्रभाषाका अध्ययन सुगम बनानेकी दृष्टिसे ही अिस कोशका निर्माण किया गया है । राष्ट्रभाषाकी परिधिमें आनेवाले लगभग २५००० महत्वपूर्ण शब्दोंके अर्थ अिसमें दिये गये हैं ।

अिस कोशकी अन्य विशेषताअें—

१. शब्दोंके अर्थके साथ प्रचलित मुहावरोंका समावेश भी किया गया है । २. हिन्दी, अुर्दू, संस्कृत, अरबी, फारसी तथा अन्य भाषाओंके प्रचलित शब्दोंके रूप भी अर्थ सहित दिये हैं । ३. विशेष शब्दोंके साथ अुनकी परिभाषाअें, अुनका अैतिहासिक खोजपूर्ण विवरण तथा संक्षिप्त रूपमें भेद-प्रभेद दिये गये हैं। ४.महीन टाअिप,सुन्दर छपाअी,आकर्षक गेट-अप तथा पक्की जिल्द ।

राष्ट्रभाषा प्रेमियों, विद्यार्थियों, संस्था तथा सरकारी कार्यालयों आदिके लिअे यह कोश बहुत अुपयोगी अेवं संग्रहणीय है ।

मिलनेका पताः—

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, पो०–हिन्दीनगर (वर्धा, मध्यप्रदेश)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
रजिस्टर्ड नं० ना० १३८

हम आपसे कुछ कहना चाहते हैं

'राष्ट्रभारती' का तीसरा वर्ष अिसी जनवरी '५३ से शुरू हो चुका है। तीस वर्षका यह आठवाँ (अगस्त मासका) अंक आपके हाथमें है।

'राष्ट्रभारती' के जिन प्रेमी ग्राहकोंका वार्षिक चन्दा अिस अंकके साथ पूरा हो जाता है, अुनसे हमारा नम्र निवेदन है कि वे अपना अगले वर्षका चंदा ६ रु. मनीआर्डर द्वारा तुरन्त भेजनेकी कृपा करें। वार्षिक या छहमाही चंदा हर हालतमें मनीआर्डर द्वारा भेजना ही ठीक होगा। अिससे हमको और आपको सुविधा होगी। आपको अंक समयपर मिलेगा। वी.पी. और 'रजिस्ट्री' चार्जकी झंझटसे आप और हम दोनों बचेंगे। आशा है, आप हमारी अिस प्रार्थनापर जरूर ध्यान देंगे।

दूसरा निवेदन यह भी है कि कमसे-कम अपने किसी अेक-दो पड़ोसी मित्रोंको भी ग्राहक अवश्य बना दें और अुनका सालाना चंदा मनीआर्डरसे भिजवा दें। यह 'राष्ट्रभारती' सबसे सस्ती, सुन्दर साहित्यिक, सांस्कृतिक पत्रिका है, जो ठीक समयपर हर १ ली ता० को निकलती है।

अिस पत्रिकाके प्रचारमें आप अवश्य अपना सहयोग बढ़ावें।

मनीआर्डरसे वार्षिक चंदा ६ रु और छहमाही चंदा ३ रु. ८ आ.

नमूना अंकके लिअे दस आना मात्र।

पता :– व्यवस्थापक—'राष्ट्रभारती', पो०—हिन्दीनगर (वर्धा, म० प्र०)

राष्ट्रभारतीके लेखकोंसे निवेदन !

(१) 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ रचना आदि सामग्री स्वच्छ सुवाच्य नागरी लिखावटमें ही भेजना चाहिये। प्रकाशन योग्य सामग्री जो कुछ भी आप भेजें वह बहुत भारी-बोझिल और खूब लंबी चौड़ी नहीं होनी चाहिये, कृपया अिसका खयाल रखें। आपके हार्दिक सहयोगके लिअे राष्ट्रभारती बहुत आभारी होगी।

(२) अच्छी तरह ध्यानमें रहे कि राष्ट्रभारतीमें प्रकाशनार्थ भेजी हुअी आपकी रचना अिसके पूर्व किसी हिन्दी पत्र-पत्रिकामें प्रकाशित न हो चुकी हो; और जो कुछ सामग्री भेजें वह 'राष्ट्रभारती' के लिअे ही भेजें।

(३) अनुवादक महाशय किसी अनूदित रचनाको भेजनेसे पूर्व अुसके मूल-लेखकसे पत्रद्वारा अनुमति अवश्य प्राप्त कर लें; तभी अनूदित रचना हमारे यहाँ भेजें।

(४) आपकी स्वीकृत रचना संबंधी सूचना संपादक द्वारा आपको दी जाअेगी और छपनेतक आपको प्रतीक्षा करनी होगी।

(५) अपनी अस्वीकृत रचनाको वापस मंगानेके लिअे डाक-टिकट अवश्य भेजें अथवा आप अुसकी प्रतिलिपि अपने पास सुरक्षित रखें।

(६) लेख, रचना आदि प्रकाशन योग्य सम्पादकीय सारा व्यवहार अिस पतेपर करें:–

संपादक : 'राष्ट्रभारती'

पोस्ट—हिन्दीनगर (वर्धा, मध्यप्रदेश)

प्रकाशक—मोहनलाल भट्ट, मन्त्री–राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा।

मुद्रक—गुरुदत्त शर्मा, राष्ट्रभाषा प्रेस, वर्धा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

सितम्बर १९५३

राष्ट्रभाषा प्रचार स[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची, सितम्बर १९५३

[अं

'राष्ट्रभारती' बिहार, राजस्थान, मध्यभारत, हैदराबाद और भोपाल राज्यके शिक्षा विभ
स्कूलों, कालेजों और वाचनालयोंके लिअे स्वीकृत हो चुकी है ।

[सूचनाः— 'राष्ट्रभारती'में, सर्वश्री डॉ. बाबूराम सक्सेना, आचार्य काका कालेलकर, महामहोपाध्याय
दत्तो वामन पोतदार, स्वर्गीय किशोरीलाल मशरूवाला और अुत्तर-प्रदेशके वर्तमान राज्यपाल श्री क०मा०मुन्शी
आदि विशेषज्ञोंकी अेक 'समिति' द्वारा १९३६ में निर्णीत नागरी लिपिका प्रयोग होता है: —अि, ओ, अु, अू, अे, अै
(इ,ई, उ, ऊ, ए और ऐ की जगह) और ज्ञ, ण और क्ष (भ्र, ण्य और क्ष अक्षरोंके लिअे) —सं०]

विषय		लेखक	पृ० सं०
१. मनकी बात	....	श्री गंगाप्रसाद पांडेय	६५३
२. नसेनी (कविता)	...	श्री 'नीरज'	६५५
३. जैनोंका आत्मनिरीक्षण पर्व—'पर्युषण'	...	श्री महेन्द्र 'राजा' श्रीमती मोहिनी शर्मा	६५६
४. शैतान और अिन्सान	...	श्री कुमार	६६०
५. संयम (मराठी)	...	स्व. साने गुरुजी अनु०—श्री यदुनाथ थत्ते	६६१
६. अपने मित्रको अेक पत्र	...	श्री डा. सिद्धेश्वर वर्मा	६६६
७. पंजाबीके संत कवि— सुल्तान बाहु	...	श्री घनश्याम सेठी	६६९
८. युग-प्रतीक (कहानी)	...	श्री श्रीराम शर्मा 'राम'	६७४
९. सत्य और सुखदुख	...	श्री महात्मा भगवानदीन	६८१
१०. शैक्षणिक लोकतंत्र	...	श्री मोरेश्वर रत्नाकर करंदीकर	६८७
११. अुनकी करुणा (कविता)	...	श्री अनिलकुमार	६९१
१२. मुक्त पुरुष	...	श्री रतन पहाड़ी	६९२
१३. नन्ददास	...	श्री आरसीप्रसादसिंह	६९६
१४. आसामके मनीषी स्व. डाक्टर काकति	...	श्री महेशकुमार मूंधड़ा	६९७
१५. महान रूमानियन लेखक कराजियाले	...	श्रीमती कमल आर्य	७०१
१६. अज्ञेयसे कुछ प्रश्न और अुनके अुत्तर	...	श्री ललित सहगल	७०४
१७. स्व शरद बाबू 'नारीके प्रति' अपने कुछ पत्रोंके प्रकाशमें	...	श्री रतनलाल बंसल	७०७
१८. जीवन रहस्य (गुजराती)	...	श्री लालजी मूलजी गोहिल अनु०— श्री रंजन परमार	७०७ ७०८
१९. स्व. सुब्रह्मण्य भारतीके कान्हा-गीत (तमिल)	...	श्री प्रो. के. अेस. चिदम्बरम् 'भारद्वाजन्'	७११
२०. ज्योति जगमगा रही (कविता)	...	श्री अरविंद जोशी	७१३
२१. वर्षाश्री (तेलुगु)	...	श्री विश्वनाथ सत्यनारायण अनु०—श्री प्रो. वा. राममूर्ति 'रेणु'	७१५
२२. साहित्यालोचन	सर्वश्री प्रो. विनयमोहन शर्मा, श्री अनिलकुमार, श्री श्रीराम अट्रावलकर		७१९
	...		...
मुद्र	...		...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

* वर्ष ३ * वर्धा, सितम्बर १९५३ * अंक ९ *

मनकी बात

: श्री गंगाप्रसाद पांडेय, अेम. अे. :

मनके मते न मानिये मनके मते हजार,
जो यह गुड़ मागें कबौ दीजै नमक अुधार ।

अूपरके दोहेमें मनके विषयमें चाहे जो भी धारणा बनायी गयी हो, अुसके प्रति व्यवहारकी जो भी रूपरेखा निर्धारित की गयी हो, अुसकी अपेक्षा नमक, वह भी अुधार देनेकी बात बड़े पतेकी है ।

देने-लेनेके विधानमें अुधारकी स्पष्ट तथा निश्चित मान्यता यह है कि वह वापस आ जाअे। मनसे अुधार वसूलीके ढंगकी खोज न भी की जाअे, तो भी अिस विषयमें अितना अवश्य ही विचारणीय है कि मनके साथ अिस संकल्पकी प्रक्रियाका प्रेरक कौन है ? क्या मनके भी कोअी मन है ?

मानव, जीवनकी गतिमें समयानुसार मनका विरोध तथा अनुसरण दोनों करता है । यह तो स्पष्ट है कि हम मनकी बात मानते हैं और नहीं भी मानते । साथ ही यह भी अनुभूत सत्य है कि मनका सम्यक् विरोध जीवनकी व्यवस्थाके लिअे आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है । भारतीय ऋषियोंने मनकी अिसी विरोध-प्रक्रियाको संयम तथा साधनाकी संज्ञा दी है; किन्तु यह प्रत्यक्ष है कि जीवनमें मनका विरोध तथा अनुसरण दोनों चलता है । अिन दोनों प्रथाओंके चलनने ही मनको अितना मनचला बना दिया अथवा मनके मनचले होनेके कारण ही जीवनकी अिस द्विधारी तलवार नहीं, तरलताको प्रश्रय देना पड़ा, यह प्रश्न बिलकुल दूसरा है ।

वस्तुतः अुपर्युक्त दोहेमें मनके विरोधकी बात मान लेनेमें किसीको कोअी आपत्ति नहीं होनी चाहिये; पर अुधार देनेकी सूझ किसने दी, अवश्य ही चिन्तनीय है ।

वास्तवमें मनकी द्विविधा अुसकी विभिन्न स्थितियोंकी सबल सूचना है । मनके विरोधमें मनको गुड़की अपेक्षा नमक और वह भी अुधार देनेकी सलाहका सूत्र निश्चय ही वह मन नहीं, जिसके विरोधकी बात कही गयी है, वह कोअी दूसरा मन है, कोअी और चेतन है । अैसा चेतन मनकी अेक संकल्पात्मक स्थिति ही भले हो; पर हमारी गु[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। कहना न होगा कि मनके अनेक स्तर तथा अुसकी अनेक स्थितियाँ हैं।

सृष्टिके विकासका क्रम मनके विकास और व्यवहारका प्रत्यक्ष प्रमाण है। यों तो मनुष्य सबसे छोटा पृथ्वीपुत्र है; पर मनका विकास अन्य सब प्राणियोंसे अधिक अुसीमें हुआ है। अिसीलिअे वह सृष्टिका श्रृंगार माना जाता है।

जीव-सृष्टिके पहले अुस जलजीवी सेलसे लेकर मत्स्य, कच्छप, बाराह, नरसिंह आदि चौरासी लाख योनियोंको पार करनेके पश्चात् प्राणी मनुष्य बनता है। अिन सभी विभिन्न प्राणियोंके मनका मनोभाव मनुष्यके मनपर लदा है। हवाके बोझकी तरह हम अुसका अनुभव नहीं कर पाते, पर अुसकी स्थिति आश्वस्त है। अस्तु। मनके विकास और मनुष्यके अवतरणकी मनकी सम्पूर्ण गुरुताका भार सजग होकर वहन करनेवाला मन ही मनुष्यका पूर्ण मन अथवा चेता होता है।

कला-सृष्टि अिसी चेताकी क्षमताका प्रतीक है। मनके अिस चरम चेतनके प्रति जो कलाकार जितना ही अधिक सजग और समन्वित रहेगा, वह अुतना ही अधिक महान कलाकार होगा, अिसमें सन्देह नहीं। अिसे यों भी कह सकते हैं—अपने Concious मनके द्वारा जो कलाकार अपने Unconcious मनमें अधिकसे अधिक दूरी तक पैठ सकेगा, वह अुतना ही अधिक अूँचा कलाकार होगा, विश्वजनीन होगा; क्योंकि मनकी आदि स्थितिसे आजतककी सभी स्थितियोंका पूर्ण परिचय अुसकी मनुष्यताका, अुसके कुल, का [illegible] यही कारण है विश्वके अितिहासमें मनके विकासकी, स्वर परिवर्तनकी और साधना तथा संकल्प द्वारा मनको अिसके निचले स्तरसे अुठाकर अुसे चेताके सिंहासनारूढ़ करनेकी आरती सदासे कलाकारों द्वारा ही अुतारी गयी है।

आशय यह कि साधारण मनका विरोध और अुसके चेता रूपका अनुसरण ही जीवनके विकासका सहायक और सम्बल है। कहते भी हैं—

मनसे बना चेता, जैसे वालंटियरका नेता।

सभी अपने मनके राजा हैं का भी रहस्य प्रत्यक्ष हो गया और केवल मनकी अेक बात समझमें आयी कि अुसे अपने विकासक्रममें चेता बनकर ही पूर्णता मिल सकती है; अन्यथा वह भिन्न-भिन्न प्राणियोंमें केवल भटकता रहेगा।

साध्य—मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार अलग-अलग सभी चेताके गौरव तथा स्थितिसे वंचित हैं। अिन सबके समन्वित स्वरूप अंतःकरणकी साधना तथा संकल्पसे ही चेताकी स्थिति ग्राह्य हो सकती है; अन्यथा नहीं। आत्मविश्लेषण अिस साधनाका प्रशस्त पथ है।

तो मनका राजा बननेके लिअे आत्मविश्लेषण शुरू कर दीजिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नसेनी

: श्री 'नीरज', अेम. अे. :

[नसेनी, निसैनी, निश्रेणी, अधिरोहिणी (सं०)=अूपर चढ़नेका साधन यानी सीढ़ी। कवि 'नीरज' ने नसेनीको जीवनका अेक रूपक माना है। दो बाँस—मन और बुद्धि हैं। तीन डंडे (सीढ़ियाँ) जीवनके तीन क्रमशः बचपन, यौवन और बुढ़ापा हैं। आँगन जहाँसे हम अिस आयुरूपी नसेनीपर चढ़ना आरम्भ करते हैं, जन्मका प्रतीक है और छत जहाँ पहुँचकर हमारी यह चढ़ाअी खतम हो जाती है और जहाँ जाकर अन्तमें हम वो जाते हैं, मृत्युका प्रतीक है। कवितामें आया हुआ 'घुन' दुखका प्रतीक है। घुन बाँस, लकड़ी आदिको लग जाता है तो वे नष्ट हो जाते हैं। अिन संकेतोंको ध्यानमें रखकर 'राष्ट्रभारती' के प्रेमी पाठक श्री 'नीरज' की अिस 'नसेनी' कविताको पढ़ेंगे। — सम्पादक]

दो बाँस, तीन डंडोंसे बनी नसेनी यह
जो खड़ी सहनका जोड़ रही छतसे नाता,
धरती-आकाश बने जबसे तबसे अिसपर
हर अेक यहाँ चढ़-अुतर, अुतर-चढ़ता जाता!
आँधियाँ घिरीं तूफ़ान चले, टूटे पहाड़
बदला जग, बदली सदियाँ, बदले सिंहासन,
पर अबतक बदल नहीं पाया है क्षण भरको
अिस नयी पुरानी सीढ़ीका संसृति-शासन!
कोअी आँगनमें, कोअी पहली सीढ़ीपर
कोअी हो खड़ा दूसरीपर पछताता है
पग धरनेको है कोअी विकल तीसरीपर
कोअी छतपर जाकर रह रह पछताता है!
अचरज होता है कैसे बस दो बाँसोंपर
है सधी सृष्टि अितनी विशाल, अितनी भारी!
कैसे केवल घुन लगे तीन अिन डन्डोंपर
चढ़ अुतर रही है युग-युगसे दुनियाँ सारी!
है यह भी अेक प्रश्न मैं पूछ रहा खुदसे
क्या सबका छतपर जाना यहाँ जरूरी है?
आना है क्या अनिवार्य सभीका आँगनमें?
क्या अेक नसेनी सिर्फ जिन्दगी पूरी है?
अुत्तर देता आकाश कि चढ़ना ही जीवन
औ' मृत्यु अुतरनेका ही अेक बहाना है
है जन्म-मरण बस तीन सीढ़ियोंकी दूरी
सबको अूपर जाना है, नीचे आना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैनोंका आत्मनिरीक्षण पर्व–'पर्युषण'

: श्री महेन्द्र 'राजा', अेम. अे. साहित्यरत्न और मोहिनी शर्मा, अेम. अे. साहित्यरत्न :

भारतवर्ष अेक धार्मिक देश है। जितने धर्म, पंथ भारतमें प्रचलित हैं, अुतने शायद संसारके किसी देशमें नहीं। यहाँके प्रत्येक धर्म, पंथके अपने अलग-अलग त्यौहार और पर्व हैं। अैसा भी है कि अेक ही पर्व या त्यौहार कअी फिरके अेक साथ मनाते हैं; पर अुनके मनानेकी विधियाँ अलग-अलग हैं। भारतमें जैन धर्मका अपना अेक विशिष्ट स्थान है। अिस धर्मके अनुयायी अपने पर्व, त्यौहार भी बड़ी ही शान शौकत अेवं विशिष्टतासे मनाते हैं। पर्युषण जैन समाजका अेक महत्वपूर्ण पर्व है। अुसके महत्वकी कल्पना केवल अिसी बातसे की जा सकती है कि अुसे प्रायः पर्वराजकी संज्ञा दी जाती है। यह पर्व प्रति वर्ष भाद्रपद शुक्ल पंचमीसे प्रारम्भ होकर भाद्रपद शुक्ल चतुर्दशी तक चलता है। अिन दस दिनोंमें मन्दिरोंमें खूब चहलपहल हो जाती है। अुनका महीनों पहलेसे ही नवनिर्माण-सा होने लगता है। देवी-देवताओंकी मूर्तियाँ स्वच्छ की जाने लगती हैं। पूजन-अर्चन आदिके लिअे पर्याप्त द्रव्य सामग्री जुटा ली जाती है। सहस्त्रों नर-नारी और बालक मन्दिरोंमें अिकट्ठे होकर पूजा-पाठ करते हैं, शास्त्र-सभाअें होती हैं, विशिष्ट जनोंके प्रवचन और सार्वजनिक सभाअें होती हैं। अुन सबको देखकर अैसा आभास होता है मानो भौतिक जीवनका प्रवाह अेक नयी दिशामें मुड़ गया, है। जहाँ सांसारिक जीवनकी महत्वाकांक्षाअें अथवा प्रलोभन नहीं; अपितु आत्मिक अुन्नतिकी अभिलाषा है। दुनियाका जीवन जैसे गौण हो अुठता है।

पर्युषणको दशलक्षण भी कहते हैं। 'दशलक्षण' शब्द साभिप्राय है। पर्वके दस दिनोंमेंसे प्रत्येक दिनका अपना अलग महत्व है और प्रत्येक दिन अेक विशिष्ट साधनाका अनुष्ठान किया जाता है। पर्वके अिन दस दिनोंमें क्रमशः क्षमा, मार्दव, आर्जव, शौच, सत्य, संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य और ब्रह्मचर्यकी साधना [illegible] दस दिनोंके बाद अेक दिन और अिस पर्वकी समाप्तिके रूपमें लिया जाता है। अिस दिन क्षमावाणी पर्व मनाया जाता है। अिस दिन सभी लोग आपसमें अेक दूसरेसे मिलते हैं व सालभरमें किये गये अपराधोंके लिअे क्षमा याचना करते हैं। साधना जीवनका सबसे बड़ा पुरुषार्थ है और सामूहिक साधना विश्वका सबसे बड़ा अनुष्ठान है। जैन धर्ममें प्रतिपादित दशधर्मोंकी जो साधना पर्युषण पर्वमें की जाती है, अुससे बड़ा विश्वमें संभवतः कोअी पुरुषार्थ नहीं है। साधनाका यह अुनुष्ठान कोअी अैसा विधि-विधान नहीं, जिसमें व्यक्तिकी निष्ठा किसी व्यक्ति, ग्रंथ या मंत्र या विधिके प्रति हो और जिसमें दृष्टि केवल सामग्रीकी पवित्रता और आहुतिकी ओर हो। यह तो व्यक्तिकी नैतिकताका क्रमिक विकास है, यह आध्यात्मिकताका अैसा मनोवैज्ञानिक चित्र है, जिसमें क्रमिक रूपसे नये-नये सुन्दर-सुन्दर रंग बढ़ते जाते हैं और अन्तमें अेक पूर्ण चित्र बन जाता है।

'पर्युषण' शब्द संस्कृत भाषाका है जिसकी व्युत्पत्ति "परितः समन्तात् अुष्यन्ते दह्यन्ते पापकर्माणि यस्मिन् तत्पर्युषणम्" अर्थात् जिसमें पूर्ण रूपसे पापकर्मोंको जलाया जाता है, अुसे पर्युषण कहते हैं। मूल शब्द 'पेज्जूषण' है जो प्राकृत भाषाका है। प्राकृतको ही संस्कारकर संस्कृतमें 'पर्युषण' बना है। पेज्जका अर्थ रागद्वेष और अुषनका अर्थ जलाना है, अर्थात रागद्वेषका जलाना पेज्जुषण है। अूपर हमने जिन १० धर्मोंके नाम गिनाये हैं, वे अैसे दस श्रेष्ठ कर्त्तव्य हैं जिनके द्वारा आत्म-पहिचान हो। धर्म आत्माका मुख्य स्वभाव है और वह अपने स्वभावकी पहिचान दस प्रकारसे कर सकती है अिसलिअे अिन्हें दस धर्म कहा जाता है। पर हम अिन्हें दस प्रकारसे आत्मधर्म मान सकते हैं। गृहस्थ दिन-रात माया मोहमें जकड़ा हुआ अपने कर्त्तव्यको भूल जाता है, अतः अिस पर्वमें वह कम-से-कम आरंभी परि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रही बन शांत और सरल स्वभावसे अपनी आत्माको पहिचाननेका प्रयत्न करता है।

अूपर हमने अिस पर्वके प्रारम्भकी जो तिथि दी है वह दिगम्बर मान्यतानुसार है। श्वेताम्बर मान्यतानुसार यह पर्व दिगम्बरोंसे पूर्व ही प्रारम्भ तथा समाप्त हो जाता है। भादों बदी १ से आश्विन बदी १ तक "सोलह कारण व्रत" माना जाता है, अुसीके बीचमें यह दशलक्षण या पर्युषण पर्व आ जाता है। साथ ही भाद्र शुक्ल ५ से ९ तक पुष्पांजलि व्रत तथा भाद्र शुक्ल १३, १४, १५ अिन तीन दिनोंमें रत्नत्रय व्रत भी माना जाता है। सोलह कारण व्रत करनेवाले धर्म प्रेमी लोग 'रत्नत्रयव्रत' या 'दशलक्षण' व्रत भी पालते हैं; क्योंकि ये अुसीके भीतर ही आ आते हैं और अनायास ही अुनका पालन हो जाता है। और जो यह भी नहीं कर सकते, वे 'पुष्पांजलि व्रत' ५ दिन तक करते हैं। पुष्पांजलि व्रत प्रायः कम अुम्रके बालक-बालिका ही करते हैं।

व्रत करनेकी यह पद्धति कहीं अधिक, कहीं थोड़ी है। कहीं-कहीं जैन समाजमें अिसका सार्वजनिक रूपमें प्रचार है। पर कहीं-कहीं लोग अिन दिनोंमें व्रत तो नहीं रखते, पर धर्माचारके रूपमें पूजन-स्वाध्याय, रस-त्याग, नृत्य-गायन-वादित्र द्वारा भक्ति स्तुति वन्दना-आदि धार्मिक कृत्य बड़े अुत्साहके साथ करते हैं। 'चतुर्दशी' को जो कि 'अनंत चतुर्दशी' के नामसे प्रसिद्ध है, भगवानका महाभिषेक होता है और अिस अुत्सवके साथ व्रतकी समाप्ति मानी जाती है।

यहाँ व्रतसे तात्पर्य अेकाशन (अेक बार भोजन) या अुपवाससे है। अनेक सामर्थ्य और श्रद्धावान व्यक्ति पूरे मास भरके सोलह कारण निर्जल अुपवासके द्वारा पूरा कर लेते हैं। अनेक धर्मात्मा अेकान्तर अुपवासके द्वारा अुसकी समाप्ति करते हैं और अनेक अेकाशनके द्वारा। अिसी प्रकार पर्युषणमें भी अनेक धर्मात्मा दसों दिनोंका अुपवास कर लेते हैं। व्रतके प्रति दृढ़ श्रद्धा और धर्मके प्रति प्रगाढ़ आस्थाके कारण अुन्हें अैसा करते कोअी कष्ट नहीं मालूम होता। वे अिस कार्यको करते हुअे बड़े प्रसन्न चित्त रहते हैं। दैनिक धार्मिक कृत्योंको सावधानीपूर्वक करते और यह मानते हैं कि अिस व्रतके द्वारा हमारे पूर्वसंचित पाप नष्ट होंगे तथा हम सातिशय धर्मका संचय कर रहे हैं।

जिस तरह जन्माष्टमी श्रीकृष्णजीके जन्मके निमित्त से, रामनवमी श्री रामचन्द्रजीके जन्म-निमित्तसे और दशहरा रावणपर विजयके कारण मनाया जाता है, अुसी तरह जैनपर्व किसी घटना विशेष या व्यक्ति विशेषके निमित्तसे नहीं मनाये जाते। जैनपर्व 'आत्मगुणोंके अुत्कर्ष' के निमित्त मनाये जाते हैं। अुपरोक्त तीनों व्रत केवल गुणोत्कर्षके लिअे ही रखे गये हैं। जैन सम्प्रदायकी यह अेक विशेषता है कि अुसमें गुणप्रतिष्ठा-के आश्रयसे पर्व या अुत्सव मनाये जानेका आदेश है। यह नमूना अन्य सम्प्रदायके पर्वोंमें प्रायः नहीं देखा गया है फिर भी यह मनुष्य मात्रके लिअे आदर्श व अनुकरणीय है।

अब प्रश्न यह होता है कि यह पर्व भादों मासमें ही क्यों मनाया जाता है? माघ, चैत्र और भाद्रपद अिन तीनों मासमें सोलहकारणादि तीनों व्रतोंके मनानेका शास्त्रीय विधान है। अनेक व्रतधारी वर्षमें तीनों बार अिन व्रतोंका परिपालन करते हैं, पर सर्वसाधारण जैन समाज संभवतः अिस परिपाटीसे सुपरिचित नहीं। वर्तमानमें प्रचलित परम्परा भादोंमें ही पर्युषण पर्व मनानेकी है और अिन दिनोंको अन्य पर्वोंके दिनोंकी अपेक्षा अधिक महत्व प्राप्त है। कहा जाता है कि वर्षा ऋतुमें व्रत करना कष्टकर नहीं होता, अतः अन्य मासकी अपेक्षा भादोंमें ही व्रत पालनेकी पद्धति पूर्वजोंने चलायी होगी। वर्षाके दिनोंमें अैसे व्रतोंका पालना न केवल धर्म है वरन स्वास्थ्यकी दृष्टिसे भी लाभदायक है। अिस ऋतुमें हमें जितना ध्यान अपने शरीरका रखना आवश्यक हो जाता है अुतना अन्य ऋतुओंमें नहीं होता। अिसी कारण अिस मासमें अुपवास और अेक बार भोजनका नियम रहा है। अिस पर्वका विश्लेषण करनेपर हम अिसी निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि जैन आचार्योंको जितना ज्ञान आत्माका था, अुससे कहीं अधिक अुन्हें शरीर-विज्ञानका था, जिसका विस्तारसे पन्नोंमें विवरण नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर्युषणके दस दिनोंमें जैन मदिरोंमें जो धर्मका बाजार लगता है, वह मननीय तो नहीं; पर दर्शनीय अवश्य होता है। वीतरागताके प्रतीक मंदिरोंमें सरागियों द्वारा सरागताका खासा प्रदर्शन होता है। सोने और चांदीसे मूर्तियाँ ही नहीं लेकिन मन्दिरोंकी दीवारें भी सजा दी जाती हैं (मानों अैसा करके जैन लोग अपने अैश्वर्यवान होनेका प्रमाण देते हों)। और अुन सरागियों - मानव देहधारी प्राणियोंकी तो कुछ न पूछिये। चमकदार रेशमी वस्त्र (जिनके अुत्पादनमें असंख्यात जीवोंकी बलि दी जाती है) और आभूषणोंसे अपनी देहको सजा लेते हैं, मानों पर्युषणका तथ्य अिसी सजावटमें निखर आया है।

पर वास्तविकताकी ओर किसीका लक्ष्यही नहीं जाता। जिनका वास्तविकताकी ओर लक्ष्य जाता है, अैसे अपवाद स्वरूप व्यक्ति बहुत कम होते हैं। यह किसे पड़ी है कि पर्युषणकी गहराअीमें अुतरकर जीवनका निर्माण किया जाअे। पर्व मनानेकी जो लोक-रूढ़ि सदियोंसे चली आयी है, अुसीकी अेक प्रकारसे रस्म अदा कर ली जाती है और पर्युषणकी समाप्तिके दूसरेही दिन आपको वह दृश्य भी देखनेको नहीं मिलेगा जो कलतक बिजलीकी चकाचौंधमें खुलखिलकर हँस रहा था और वह वैभव जो १० दिन तक मंदिरोंमें अपना चतुर्मुखी साम्राज्य स्थापित किये हुअे था बिल्कुल श्री-हीन कांतिहीन म्लानमुख फीका-सा लगता है, मानों वह ठाठ दस दिनोंके लिअे ही था।

वास्तवमें पर्युषण आत्मनिरीक्षणका पर्व है। अिसके दस दिन जीवनके लिअे दस स्वर्ण अवसर कहे जा सकते हैं। अिसका प्रारम्भ ही 'क्षमा' जैसे महान धर्मसे होता है। दूसरोंके साथ मधुर संबंधोंमें मनुष्य अेक कड़ी और जोड़ता है, जब वह प्रत्येकसे विनम्र व्यवहार करता है। धीरे-धीरे वह आगे बढ़ता जाता है। अुसका क्रमिक विकास होता है। अुसका दूसरोंके साथ निष्कपट व्यवहार रहता है; लोभ और झूठ अुसके व्यवहारमें स्थान नहीं पाते। वह प्रत्येक प्राणीके बारेमें विवेक और अिंद्रियोंपर नियंत्रण रखकर चलता है। दूसरोंके लिअे और अपने हितके लिअे वह कष्ट सहता है। तब वह त्यागकी राहपर चल देता है। दूसरोंके लिअे सर्वस्व समर्पण अुसका मंत्र हो जाता है। धीरे-धीरे वह अपनी कोअी वस्तु नहीं मानता। अुसकी सभी वस्तुअें दूसरेके लिअे हो जाती हैं और वह धनके संबंधमें ही ममताहीन नहीं हो जाता; बल्कि वह विश्वकी संपूर्ण स्त्रियोंको भी अत्यन्त श्रद्धाकी दृष्टिसे देखता है, साथही अुनसे रागहीन हो जाता है। अिस तरह अुसका व्रत और अनुष्ठान तो पूर्ण हो जाता है, किन्तु विश्व-बंधुत्व और विश्व-मैत्रीकी ओर अुसने जो पग अुठाया था, वह पूर्ण नहीं हो पाता जब तक कि वह विश्वके सम्पूर्ण प्राणियोंसे अपने अपराधोंकी क्षमा नहीं मांग लेता।

अिस प्रकार क्षमादानसे प्रारम्भ किया हुआ अनुष्ठान क्षमायाचनापर पूर्ण हो जाता है। दूसरे प्राणियोंसे अपने संबंध सुधारनेकी दिशामें अुठाया गया कदम विश्व-मैत्री तक पहुँचकर ही रुकता है। तब अुसके लिअे न कोअी अपना है, न पराया। अपना और पराया—अिसका अर्थ ही यह है कि अुसके और दूसरोंके बीच अेक दीवार है। अेक साधक अुस दीवारको ढहानेकाही प्रयत्न करता है। अिस प्रयत्नका नामही साधना है। व्यक्तिकी अिस साधनाका सामूहिक प्रयास ही पर्युषण पर्व या दशलक्षण कहलाता है।

पर्व अेक सामाजिक चीज है। अुसकी ओर मनुष्योंकी रुचि और आकर्षण विशेष होता है। जैन धर्मने धर्मको पर्वके रूपमें विश्वको दिया, जिससे मनुष्योंकी रुचि और अुत्साह धर्मकी ओर बढ़े। भौतिक साधनोंसे घिरे हुअे व्यक्तिको अेक अैसा पर्व मिला जिसमें न किसी अलौकिक शक्तिके प्रति निष्ठा है, न किसी विधि-विधानका आडम्बर है। बल्कि जिसमें व्यक्तिको अपने भीतर झांकनेकी प्रेरणा है, दूसरोंकी ओर देखनेकी बजाय अपनी ही ओर देखनेका प्रोत्साहन है। दूसरोंकी ओर देखना- अिसका अर्थ है, दूसरोंकी बुराअियाँ देखना और दूसरोंका अवलम्ब देखना। यदि दूसरोंकी बुराअी न देखी जाअे वरन अपनी ही बुराअी देखी जाअे तो अुससे अपनी बुराअियाँ और कमजोरियाँ दूर हो जाती हैं। यदि दूसरोंका अवलम्ब न लिया जाअे, अपना ही अवलम्ब रहे तो अुससे आत्मविश्वास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलता है। अिस प्रकार अपनी ओर देखनेसे सारी आत्मिक दुर्बलताअें दूर होती जाती हैं और व्यक्ति निरालम्ब आत्मनिष्ठ हो जाता है। यही चरम लक्ष्य है। पर्युषण अिसी चरम लक्ष्यको प्राप्त करानेवाला अेक साधन है। अिस पर्वका लक्ष्य केवल आत्महित नहीं, अिसका अेक अुद्देश्य व्यक्तिका विश्वके साथ मधुर संबंध स्थापित करना है और विश्वमैत्रीके रूपमें अिस अुद्देश्यकी परिसमाप्ति होती है।

लेकिन यह पर्व वास्तवमें अिस रूपमें नहीं मनाया जाता। पर्वके दिनोंमें बड़ी ही मनोरंजक बातें देखनेको मिलती हैं। पर्युषण पर्वके सिद्धांतके अनुसार अिन दस दिनोंमें हरी साग-सब्जी और पापड़ खानेका निषेध है। पर अिसके लिअे जैनी लोग पहलेसे ही पूरी व्यवस्था कर लेते हैं। देखा जाता है कि पर्वके दिनोंमें कुछ लोग भिन्डी, करेला, तोरअी आदि खाकर भी अुसके पापसे बचे रहते हैं! ये लोग करते क्या हैं कि पर्व प्रारम्भ होनेके दो तीन माह पहलेसे ही हरी शाक, सब्जीको धूपमें सुखा लेते हैं और फिर पर्वके दिनोंमें अिस सूखी हुअी सब्जीका अुपयोग करते हैं और अिस प्रकार हरी सब्जीको खानेके पापसे बचे रहते हैं। अिसी प्रकार और भी कअी बातें बड़ी ही मनोरंजक हैं। जो कुछ भी हो, सिद्धांतकी दृष्टिसे कहा जाअे तो यह पर्व मानव मात्रके लिअे आत्मनिरीक्षणका पर्व कहा जा सकता है। प्रत्येक जैनी अिन दिनों भरसक-धर्म पालनेकी चेष्टा करता है। अधिकसे अधिक अुपवास, अेकाशन करता है। मंदिरोंमें तीन-तीन बार पूजन होता है—सुबह, दोपहर व शाम (रात्रि)। मंदिरों व संस्थाओंके लिअे येही दिन बड़े लाभकारी होते हैं क्योंकि अिन्हीं दिनों लोगोंमें धर्म-भावना जाग्रत होती है और अिसी आवेशमें वे हजारों रुपयोंका दान करते हैं।

जिस प्रकार दीपावलीके अवसरपर हिन्दीके पत्रोंके विशालकाय विशेषांक निकलते हैं, अुसी प्रकार जैन-पत्र अिन दिनों अपने विशेषांक निकालते हैं, जिनमें तीन-चार पृष्ठ विविध संस्थाओंके लम्बे-चौड़े विज्ञापनोंसे भरे रहते हैं, जिनका अर्थ होता है कि अेक मात्र वह संस्था ही विश्वस्त तथा दानकी वास्तविक अधिकारिणी है। अिन दिनों प्रत्येक व्यक्ति अपना चरित्र निर्मल बनानेकी कोशिश करता है, यथाशक्ति धर्मसाधन करता है। लोग प्रतिदिन जल्दीसे जल्दी स्नान आदि क्रियासे निवृत्त होकर मन्दिर जाते हैं, पूजन प्रक्षालन करते हैं, सामाजिक स्वाध्याय करते हैं, तत्वार्थसूत्र और सहस्रनामका पाठ करते हैं, विद्वानोंके मुखसे शास्त्र-प्रवचन सुनते हैं, मौनपूर्वक अेकाशन करते हैं, तमाखू, बीड़ी आदिका सेवन छोड़ देते हैं, मण्डल विधान करते हैं, रात्रि जागरणकर अपने आराध्यका गुणगान करते हैं, ब्रह्मचर्यका पालन करते हैं और संचित धनका दान आदि सत्कार्योंमें अुपयोग करते हैं।

रात्रिको मंदिरोंकी रौनक ही और हो जाती है। अिन दिनों कोअी भी मंदिर रात्रिके समय अंधकारमय नहीं रह पाता, भले ही सालभर अुसमें दिया तक न जलता हो। हिन्दुओं और जैनियोंमें अेक अन्तर यह भी है कि हिन्दुओंके समान जैनी लोग अपने मंदिरोंमें रात्रिको प्रतिदिन आरती नहीं करते। केवल पर्वके अिन दस दिनोंमें मंदिरोंमें रात्रिको आरती और पूजन-अर्चन होता है और फिर सालभर अधिकांश मंदिरोंमें अंधेरी ही छायी रहती है।

"पर्युषण पर्वके समाप्त होते ही जीवनका वही पुराना क्रम पुनः आरम्भ हो जाता है। वही आपाधापी, वही अीर्ष्याद्वेष, मद-मत्सर, वही स्वार्थ-परायणता, वही दम्भ और वही दूसरोंको पीछे ढकेलकर आगे बढ़नेकी प्रवृत्ति, छलकपट, मुकदमेबाजी, कालाबाजारी वगैरा-वगैरा। हजार पीछे शायद ही अेक व्यक्ति अैसा मिले जो पर्युषण पर्वकी भावनाके अंशको भी अपने हृदयमें स्थायी रूप देता हो। अिसका अर्थ यह होता है कि अन्य त्योहारोंकी भांति अिस पर्वको भी बहुत कुछ यंत्रवत् मनाया जाता है।" 'जीवन-साहित्य' के संपादक श्री यशपालजीके अिन शब्दोंकी यथार्थतासे हम अिन्कार नहीं कर सकते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शैतान और अिन्सान

: श्री कुमार :

पशु निरन्तर विकास करता-करता अेक दिन मनुष्य बन गया।

मनुष्यकी सामूहिक चेतनाने विकास पाया और अुसकी अिस भावनाने परिवारोंकी स्थापना की। परिवारोंके समूह, कबीलोंके कबीले राज्योंके और राज्य राष्ट्रोंके रूपमें सामने आये। परम्पराअें सभ्यतामें, सभ्यताअें संस्कृतिमें समन्वित हो गयीं। विचारोंने ज्ञान और बुद्धिने विज्ञानका रूप ले लिया। वल्कल सुन्दर-सुन्दर आभूषणोंमें बदल गये। मिट्टीके दीपोंकी जगह विद्युतालोक हाथ बाँधे खड़ा हो गया।

ज्ञान और विज्ञानकी सम्पदा मनुष्यको विरासतमें मिलती गयी।

कल्पनाने स्वप्नका, स्वप्नने सत्यका आकार ग्रहण किया। जिन्दगी बढ़ चली हँसती, खेलती, मचलती, मनुष्यके साथेमें। भूत, भविष्य और वर्तमान आदमीके पंजोंमें सिमट गये।

और आदमी बढ़ता गया, अपनी ही धुनमें अपनी लगनमें...आगे...और आगे...

राज्योंने अधिकार-भावनाको तथा समृद्धिने मोहको जन्म दिया। ज्ञान कट्टरताका दामन पकड़कर रूढ़ि बन गया। विज्ञानने चोला बदला और संघर्ष पनपे। सभ्यताओंने संकीर्णताका जामा पहना और धर्मोंने असहिष्णुताका। मनुष्य अपने अधिकारोंकी सीमा बढ़ानेके फेरमें पड़कर दिन-ब-दिन संकुचित होता गया। मानव-संस्कृति कुरूपसे कुरूपतर होती गयी। आपसी वैर-भाव और घृणाका प्रचार-प्रसार होने लगा।

और आदमी पतनावस्थाकी ओर तेजीसे बढ़ चला।

राज्य राज्योंसे झगड़ने लगे। सभ्यताअें अेक दूसरेको निगलने लगीं। धर्म जहर अुगलने लगे। मनुष्य-मनुष्यका शत्रु बन बैठा।

अिन कुरूपताओंने अेक दिन अपना विराट् रूप दिखाया। संसार विश्व-युद्धकी अग्निमें झुलस अुठा। विश्व-मनुजको युद्धकी सुरसा चाहती थी कि निगल जाअे, हड़प जाअे ताकि अुसकी मज़बूत हड्डियाँ अुसके पैने दाँतोंमें पड़कर चरमरा अुठें! शैतान अट्टहास कर अुठा। मनुष्य निरन्तर गिरते-गिरते पशु बन चुका था।

\+ \+ \+

युद्ध ख़त्म हुआ। विजयी राष्ट्र अुन्मत्त हो गये, विजित राष्ट्र द्वेषान्ध।

मनुष्यने अपनी सारी शक्ति, ज्ञान, विज्ञान, कला-कौशल्य—द्वितीय-विश्व-युद्धकी तैयारीमें लगा दी।

और फिर दूसरी बार मानवता त्राहिमाम् कर अुठी।

मनुष्यने अपना सब कुछ खो दिया था।

\+ \+ \+

युद्धकी काल-रात्रि बीती। सबेरा हुआ।

मनुष्य युद्ध-भूमिमें आहत पड़ा था।

अुसने करवट बदली। बैठनेकी कोशिश करते हुअे वह कराह अुठा; अुसने कहा: नहीं; अैसे फैसला नहीं हो सकता, कभी भी नहीं हो सकता! हम विश्व-बन्धुत्वका मार्ग अपनाअेंगे। अब युद्ध नहीं होगा।

शैतान चीख़ अुठा—चुप रहो मूर्ख! अिस बारके युद्धमें फैसला अवश्य हो जाअेगा। फिरसे तैयारी करो।

लाखों मनुष्योंके कण्ठ-स्वर गूंज अुठे—नहीं, नहीं, नहीं!...हम ग़लतीपर थे। हम विश्व-बन्धुत्वका मार्ग अपनाअेंगे। फैसला हमें आपसमें नहीं करना है, बल्कि तुमसे करना है। युद्ध हमें आपसमें नहीं, तुमसे करना है!

शैतान काँप अुठा।

और अब शैतान मनुष्य-मात्रके विनाशपर तुला हुआ है।

यह अब मनुष्यपर निर्भर है कि वह विश्व-बन्धुत्वके मार्गपर कितना आगे बढ़ सकता है अथवा शैतानके हाथों विनष्ट हो जाना चाहता है!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संयम

: स्व० साने गुरुजी :

जीवनको संयममय बनाना चाहिये। संयमके बिना कोअी अुत्तम कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता।

संयम ही भारतीय संस्कृतिकी आत्मा है। यह वह नींव है, जिसपर भारतीय संस्कृतिका भवन खड़ा है। हम शिवके मन्दिरमें जाते हैं, तो क्या देखते हैं। मन्दिरमें प्रवेश करनेके पूर्व हमें कछुअेकी मूर्तिके दर्शन होते हैं। अिसके दर्शन किये बगैर मृत्युंजयकी ओर नहीं जाया जा सकता। यहाँ कछुअेसे क्या तात्पर्य है? यही कि वह संयमका प्रतीक है। कछुआ अपने सारे अंग-प्रत्यंग अेक क्षणमें समेट लेता है—"कूर्मोंगानीव सर्वशः।" अपने विकासका अवसर आनेपर वह सारे अवयव बाहर निकालकर काममें लाता है और धोखा हो तो सारे अवयव भीतरको समेट लेता है। अिस प्रकारका यह प्राणी कछुआ भारतीय-संस्कृति द्वारा गुरुतर स्थानपर प्रतिष्ठित किया गया है। देवत्वकी ओर अग्रसर होना हो तो कछुअे जैसा बन जाअिये। अिसके अनुसार अपनी अिंद्रियोंके आप स्वामी बनकर रहिये, जिससे अिंद्रियोंको स्वाधीन रख सकें। जो संसारको अपना बनाना चाहता है, अुसे प्रथम अपने आपका स्वामी बनना चाहिये। जो देवताको, देवत्वको अपनाना चाहता है, अुसे चाहिये कि वह प्रथम अपने मनपर काबू पा ले।

शंकरजीकी मूर्ति आँखोंके सामने लाअिये। शंकरजीके अेक तीसरा नेत्र है। दो आँखोंके बीचमें यह तीसरी आंख है। अिसका क्या काम है? अिस तृतीय नेत्रका काम है प्रहरीका। आँख, कान, जिव्हा आदि सब अिंद्रियोंपर अिसकी नजर रहती है। अिस तृतीय नेत्रमें अग्नि है। जीवन विकासमें जो-जो बात विरोधी होगी, अुसे भस्म करनेके लिअे यह अग्नि सदा तैयार है। यह तीसरी आँख खुली रखे बिना जीवनमें किसी तरहकी सिद्धि पाना संभव नहीं है।

मेरी आँखें अिधर-अुधर मनमाना न दौड़ें; मेरे कान व्यर्थ बात न सुनें; 'भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम'। मेरी जबानसे गलत-सलत, अनाप-शनाप वचन न निकलें, न चाहे जैसा खाया जाअे; न हाथ ही व्यर्थका काम करें; पैर अिधर-अुधर न भटक जाअें; अपने ध्येयके अनुकूल बातोंकी ओर ही हमारी अिंद्रियाँ जानी चाहिये। अिन अिंद्रिय रूपी घोड़ोंको चाहिये कि हमारा जीवन-रथ गड्ढोंसे बचाकर ठीक गन्तव्य स्थानपर ले जाअें।

ज्ञानेश्वरीमें योगका वर्णन करते हुअे अति सुन्दर ओवियाँ लिखी हैं संत ज्ञानेश्वरने। गीतामें अेक श्लोक है—

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा॥

अिस श्लोकके मतितार्थकी वे ओवियाँ हैं। जिसे कर्मयोग साधना है, अुसके लिअे यह संयम-योग अपनाना आवश्यक है।

नियम पाळावे। जरि म्हणसी योगी व्हावें॥

योगी याने कर्मयोगी। सतत कर्ममें लीन रहने और खूब सेवा करनेके लिअे क्या करना चाहिये?

प्रत्येक बात सोच-समझकर करनी चाहिये। खाना-पीना, बोलना-चलना और निद्रा आदि मर्यादित हो। अिंद्रियोंको जो कुछ आवश्यक हो, सब देना चाहिये किन्तु नाप-तौलके प्रमाणमें देना चाहिये। अैसा करनेसे जीवनमें प्रसन्नता रहेगी। यह बात केवल कपोल-कल्पना नहीं है, अनुभव-सिद्ध बात है।

मान लीजिये कि आपने डटकरके भोजन कर लिया। पकौड़ी थी तो खूब खा ली, बासुन्दी मिली चाट गये। पूरनपोली पेटमें ठूंस-ठूंसकर भर ली। अिससे क्या होगा? आलस्य आअेगा। अधिक खाया कि खूब लेटनेकी अिच्छा होगी। अिससे अधिक और

CC-0. Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कओी बुरी बातें होंगी। अनपच होगा। बद-हज्मी होगी। पेटमें दर्द होगा। हो सकता है आप, बीमार भी पड़ जाअें! जिव्हाने कुछ क्षणके लिअे थोड़ा-सा सुख अनुभव किया परन्तु अिसके बाद आठ-दस दिन तक अन्नमें रुचि नहीं मालूम होगी। और कओी दिन-तक विशेष कुछ कर-धर नहीं सकेंगे। तब कहाँका कर्म और कहाँका धर्म!

रातमें गाना-गम्मत है। बैठे जमकर दो बजे तक सुनते हुअे। तब फिर नींद कैसे पूरी हो? नींद पूरी नहीं हुअी तो खाना ठीक तरह हजम नहीं होगा। दूसरे दिन काम भी ठीक नहीं हो पाअेगा। काम करते-करते झपकियाँ आने लगेंगी। अिस प्रकार कर्मसिद्धि नहीं होगी।

जिसका जीवन किसी लक्ष्यकी साधनाके लिअे है—सेवाके लिअे है, अुसे चाहिये कि वह प्रत्येक बात सीमाके भीतर करे। सीमा-मर्यादामें सारी शोभा है। मर्यादामें सौंदर्य है। संयममें सौंदर्य है। कओी अविवेकी लोग संयमकी हँसी अुड़ाते हैं। कहते हैं, हमें यह बन्धन नहीं चाहिये; किन्तु वे लोग नहीं जानते कि खुशीसे अपने आपपर जो बन्धन लगाये जाते हैं, वे बंधन नहीं हैं। मिथ्या आहार-विहार और स्वैराचारके गुलाम बनना कोअी विचार-स्वातंत्र्य नहीं हैं। स्वातंत्र्यके माने स्वैराचार नहीं है। स्वातंत्र्यका मतलब है विकास। और बगैर संयमके कोअी विकास नहीं है।

सृष्टिभरमें देखिये। सर्वत्र संयम दृष्टिगोचर होगा। वृक्ष देखिये। वह ज़डोंके आधारपर खड़ा है। वृक्ष यदि यह कहे कि "क्योंकर मैं पृथ्वीसे बँधा रहूँ? अुड़ने दीजिये मुझे आसमानमें। तोड़िये मेरी जड़ें।" तो वह मर जाअेगा। अगर वृक्षकी जड़ें तोड़ देंगे तो क्या वह जी सकेगा? वह जड़ोंसे जकड़ा हुआ है। अिससे वह बढ़ता जाता है। और यही कारण है कि वह फूलता-फलता है। अुसकी अिस सम्पत्तिका रहस्य अुसके अुस दृढ़ संयममें सन्निहित है।

सितारको लीजिये। अुसमें तार लगे हुअे होते हैं। यें तार-मात्र नीचे जमीनपर रखिये और अुनपरसे अुंगलियाँ चलाअिये। अुन तारोंमेंसे कोअी ध्वनि नहीं निकलेगी, कोअी संगीत लहरी नहीं पैदा होगी। लेकिन अुन तारोंको सितारकी खूँटियोंसे संतुलनके साथ कसिये तो अुन कसे हुअे, बंधे हुअे तारोंमेंसे अैसी मनोमोहक सुरीली स्वर संगीत-लहरें निकलेंगी कि हम अुनका आनन्द लूट सकेंगे। वे अचेतन तार मानो चिन्मय हो जाते हैं। अुनसे माधुर्य बरसता है। संयमसे संगीतका निर्माण होता है।

नदीको देखिये। अगर पर्वत-पहाड़से पानी चारों ओर बहता गया तो अुसका प्रवाह नहीं बनेगा। लेकिन जब वह अेक विशिष्ट दशामें बहता है तो स्वभावतः प्रवाह बन जाता है। प्रवाहके लिअे दो तटोंके बीचसे गुजरनेका बन्धन रहता है। नदी दो किनारोंसे बँधी हुअी है। अगर तटोंके अिस बन्धनसें छुटकारा पानेकी वह कोशिश करेगी तो क्या होगा? पानी चारों ओर बह जाअेगा और चार दिनमें सूख जाअेगा। नदीके बन्धन हैं अिसीसे अुसकी गति है, गहरापन है, गंभीरता है। अुसके बन्धन हैं अिसीसे वह आगे बढ़ती है, सागरसे मिल सकती है। अुसके बन्धन हैं अिसीलिअे वह हजारों अेकड़ भूमिको सींच लेती है, सबकी प्यास बुझाती है। बन्धनके कारण ही वह अमर बन सकती है। संयमके कारण ही सागरसे वह मिल पाती है।

भापको लीजिये। अगर वह बंधनमें, संयममें नहीं है तो अुसमें कोअी ताकत ही नहीं है। स्वैर रूपमें संचार करनेवाली भाप दुर्बल होती है। बड़ी नलीमें बंधी हुअी भाप बड़े-बड़े कल-कारखाने चलाती है, लम्बी-लम्बी रेलगाड़ी खींचकर ले जाती है।

संयमको तुच्छ मत समझिये। विकासके लिअे अुसकी जरूरत है। संयम समाजके हितके लिअे है। अगर हम संयमका पालन नहीं करेंगे तो हमारे काम ठीकसे नहीं होंगे और अगर हमारा काम ठीक नहीं, तो समाजको गहरी ठेस पहुँचेगी। हम सिर्फ अपने ही लिअे नहीं हैं, हमारा अस्तित्व समाजके लिअे है, अिसका हमें हरदम ध्यान रहना चहिये। यह हमारी देह, हमारा जीवन सब समाजहीके लिअे है। हमारा पोषण भी तो सारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सृष्टि ही करती है। अधर सूरज रोशनी पहुँचाता है, अुधर मेह पानीकी वर्षा करते हैं, वृक्ष फलफूल दे देते हैं, किसान अनाज देता है, बुनकर कपड़ा देता है, पाठशालामें पढ़ाअी होती है। हम अिस पूरी सजीव तथा निर्जीव सृष्टिके अेहसानमन्द हैं। अिसलिअे हमारी जिंदगी अुनकी सेवामें अर्पित करना हमारा कर्तव्य हो जाता है। यह जीवन जिनका बनाया है अुन्हींकी सेवामें लगाना है।

अिसलिअे हमें सचेत रहना चाहिये, जिससे कि कोअी कीटाणु जीवनको खराब न कर सके। भगवानकी पूजामें हम बिना सूँघा हुआ फूल चढ़ाते हैं; न मुरझाया हुआ, न खराब हुआ; रसमय, खुशबूदार, साफ-सुथरा, सुहावना फूल हम चढाते हैं। हमें अपना जीवन पुष्प भी समाज रूपी भगवानको चढ़ाना है। अगर हम अपने जीवनको सरस सुगंधी बनाना चाहें तो संयमका सहारा हमें लेना होगा।

अिंद्रियोंको दिन-ब-दिन अुच्च अुत्तम आनंदका अभ्यास डालना चाहिये। खाने-पीनेका आनंद तो पशु-पक्षी भी लेते हैं। मानवका जीवन खानेपीने मात्रके लिअे नहीं है। अुसके लिअे खाना आवश्यक है, लेकिन और किसी ध्येयके लिअे वह होना चाहिये। खाना, पीना, सोना ये सब ध्येयकी पूर्तिके साधन भर हैं।

न्यायमूर्ति रानडेका अेक किस्सा है। अुनको कलमी आम बहुत प्रिय थे। अेक बार कहींसे आमकी डाली आयी। अुनकी पत्नीने आम चीरकर न्यायमूर्तिजीके सामने रख दिया। रानेडजीने अेक दो कौर खा लिये। रमाबाअी (अुनकी पत्नी) कुछ देरबाद आयीं। देखा कि काफी बचा हुआ है। अुनको ज़रा बुरा लगा। बोली, "आपको ये आम बहुत भाते हैं अिसीलिअे तो चीरकर ले आयी। आप खाते क्यों नहीं?" न्यायमूर्ति बोले: "आम भाता है अिसीलिअे क्या अुसीको चखता बैठूं? ले लिया अेक कौर। जीवनमें और भी कितने आनंद हैं।"

खाने-पीनेकी चर्चा आदिमें हम अपना कितना समय बर्बाद करते हैं? मानों जबानके गुलाम बन गये हों। लेकिन हमें समझना चाहिये कि आखिर मिठास चीजमें न होकर अपनेमें होती है। हम अपनी मिठास अुसमें भरते हैं और अुसको मीठी मानकर खाते हैं। सब तरहकी मधुरता अपने अंतरंगमें भरी होती है। जिसने अुसको पाया, अुसे कोअी भी चीज दीजिये, अुसे हर चीजमें मिठास ही नजर आअेगी।

संसारके सभी महापुरुष संयमी थे। वे बिल्कुल सादगीसे रहते थे। मुहमद पैगंबर रूखी-सूखी रोटी खाते थे। लेनिनका आहार भी सादा था। महात्मा-गांधी भोजन करते समय पाँचसे ज्यादा चीजें नहीं खाते थे। गांधीजी आहार-विहारमें अितने दक्ष न रहते तो अितना अधिक काम हर्गिज न कर पाते। देशबंधु चित्तरंजनदासजीकी पत्नी वासंतीदेवी देशबन्धु बाबूकी बहुत फिक्र रखती थीं। देशबंधुके भोजनपर वह चौकी पहरा करतीं और कहतीं—"अब काफी हो गया, अब अुठिये।"

लेकिन आहार-विहारके संयमसे महत्त्वका और भी संयम है। समाजमें आनंद कायम रहे अिसलिअे संयमकी जितनी महिमा हम गाअें वह कमही कही जाअेगी। हमारे देशमें प्राचीन कालसे सम्मिलित परिवारका सिलसिला चला आया है। वह बगैर संयमके नहीं टिक सकता। संयम न होगा तो दस लोगोंके मुंह दशदिशाओंमें मुड़े हुअे मिलेंगे। परिवारका हर अेक शख्स अगर अपनी ही हाँकता रहेगा तो सबका मेल कैसे होगा? सब ओर अनबन और मनमुटाव फैल जाअेगा।

सम्मिलित-परिवारका जो मुखिया होता है अुसपर कितनी जिम्मेदारी होती है। अुसको सबके मनका ख्याल रखना पड़ता है। अिसके लिअे अुसे बहुत त्याग करना पड़ता है। वह अपने बाल-बच्चोंके लिअे पहले गहने जेवर नहीं बनवाअेगा। अपनी पत्नीके लिअे पहले साड़ियाँ नहीं खरीदेगा। अपने भाअियोंके बाल-बच्चोंकी और छोटे भाअियोंकी पत्नियोंकी फिक्र वह पहले करेगा। पहले अुनके लिअे वस्त्रालंकार लाअेगा। वह अैसा करेगा तभी अुसके शब्दका कोअी मूल्य घरमें रहेगा। तभी अुसका आदर घरमें होगा, सबको अपनापन महसूस होगा। त्यागसे अिस तरह वैभव मिलता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संध्या विधिमें जो मंत्र गाये जाते हैं, अुसमें अेक पंक्ति है:—

सर्वेषाम विरोधेन ब्रह्मकर्म समारभे ।

अब किसीसे कोअी रुकावट मेरे मार्गमें नहीं है, मुझे अपने ब्रह्मकर्मका आरम्भ करने दें । सबका अविरोध ! ये शब्द बड़े महत्त्वके हैं । अिससे पहले कहाँका ब्रह्मकर्म ? कहाँकी स्नान-संध्या ? कहाँका देवतार्चन ? कहाँका जप-तप ? समाजमें पहले स्नेह तथा प्रेम पैदा करना चाहिये । मानवकी रगोंमें धँसे विरोधको दूर करना चाहिये । कलहको मिटाना चाहिये । द्वेष-मत्सरको हटाना चाहिये । अुसके बाद ही ब्रह्मकर्मका आरंभ हो सकता है ।

लेकिन यह अविरोध कैसे पैदा हो सकेगा ? प्रत्येक व्यक्ति कोशिश करके अपनी वासनाओं और अिच्छाओंको जरा काबूमें रखेगा तभी अविरोधका निर्माण होना संभव है । अगर हार्मोनियमका हर अेक सुर बजने लगे तो संगीत कैसे पैदा होगा ? अुन सुरोंको चाहिये कि अपनी अिच्छाओंको वे संयत करें । अुसी तरह जीवनमेंसे संगीत पैदा हो, अैसी मानव जातिकी सही अिच्छा हो तो मानव जातिको चाहिये कि वह अपने सुरोंपर काबू रखे । अिटली अिधरसे अपना सुर अलापेगा, जर्मनी अुधरसे चिल्लाअेगा, जापान अिधर दंगाफसाद करेगा तो संसारमें संगीत कैसे निर्माण होगा ?

भारतीय जीवनमें आज संगीत नहीं है । प्रान्तोंकी आपसमें अनबनसी है । मतभेद हो सकते हैं, लेकिन जब मतभेदोंसे द्वेष-मत्सरके भूत खड़े होते हैं तब डर लगता है । भारतका राष्ट्रव्यापक अेकत्र परिवार पद्धतिका प्रयोग है । भारत अेक राष्ट्र है । हमारे पुरखोंने भारतके टुकड़ोंकी कल्पना नहीं की थी । अपनी आँखोंके सामने अुन्होंने हरदम भारतीय अेकताकी भव्य कल्पना रखी थी । नहाते समय केवल अेक महाराष्ट्रीय केवल महाराष्ट्रकी नदियोंका स्मरण नहीं करता, सारे भारत वर्षकी नदियोंका स्मरण करता है—"हर गंगे, यमुने, नर्मदे, तापी, कृष्णे, गोदावरी, कावेरी ।" आदि । कलशको पूजा चढ़ाते समय अुस छोटेसे कलशमें हम सारे भारतवर्षको देखते हैं ।

गंगेच यमुने चैव गोदावरि सरस्वति
नर्मदे सिंधु कावेरी जलेऽस्मिन् संन्निधि कुरु ॥

कहकर भारतवर्षकी प्रमुख नदियोंको हम याद करते हैं । "अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, कांची, अवन्तिका, पुरी, द्वारावती चैव" अैसी ये सप्त नगरियाँ हमने देशकी चारों दिशाओंमें रख दी हैं । हमारे ऋषियोंने बड़े गौरवके साथ कहा है 'दुर्लभं भारते जन्म ।' हमारे बाप-दादाओंकी आँखोंके सामने अंग, वंग, कलिंग नहीं होते थे; न गुर्जर, विदर्भ, महाराष्ट्र ही होता था । अुनके सामने तो अेक भारत होता था ।

अिस विशाल भारतमें अनेक प्रान्त हैं । बड़े कुटुंबमें जिस तरह अनेक भाअी होते हैं, अुसी तरह अिस विशाल भारतीय कुटुंबमें बहुत भाअी हैं । अिन भाअियोंको चाहिये कि वे अेक दूसरेके साथ संयमसे बर्ताव करें । अगर अेक कुटुंबमें रहना है तो अपनी डफली अपना राग अलापनेसे काम नहीं चलेगा । यूरोपमें छोटे-छोटे देश अेक दूसरेसे अलग पड़े हैं और छीनाझपटी कर रहे हैं । अिस प्रकार भारतकी हालत न होने देनेकी अिच्छा हो तो हमें सदा सचेत रहना चाहिये । अेकत्र कुटुंबमें पहले दूसरेके सुख-दुखका ख्याल रखना पड़ता है । 'पहले मैं नहीं, पहले आप' कहना पड़ता है । यह बात हमें भारतीय परिवारमें पूर्णतया अपनानी होगी । महाराष्ट्र गुजरातसे कहे : "धन्य गुजरात ! महात्माजीको जन्म देनेवाला गुजरात धन्य है!" गुजरात महाराष्ट्रसे कहे : "धन्य महाराष्ट्र ! लोकमान्यको, शिव-छत्रपतिको जन्म देनेवाला महाराष्ट्र; शूरवीरोंका महाराष्ट्र धन्य है !" बंगालसे कहे : "हे बंगदेश, तुम धन्य हो ! कृतार्थ हो ! जगदीशचन्द्र, प्रफुल्लचन्द्र, रवींद्रनाथको जन्म देनेवाले ! देशबन्धु और सुभाषबाबूको जन्म देनेवाले ! श्री रामकृष्ण, विवेकानन्दको अुपजानेवाले ! अपनेको निछावर करनेवाले सैकड़ों पुत्र देनेवाले, धन्य हो तुम !" पंजाबसे कहे : "हे पंजाब, तुम दयानंदकी कर्म-भूमि हो ! स्वामी रामतीर्थकी जन्मभूमि हो ! श्रद्धानंद, लालाजी, भगतसिंहकी तुम माता हो ! तुम सचमुच बड़े हो !" और सरहद् प्रान्तसे कहे : "पच्चीस लाख आबादीसे सोलह हजार सत्याग्रही वीर प्रदान करनेवाले प्रान्त ! तुम भारतकी आशा और शान हो !" अिस तरह सब प्रान्त हृदयसे अेक दूसरेकी सराहना कर रहे हैं, अेक दूसरेका बड़प्पन गा रहे हैं अेक दूसरेसे रोशनी पा रहे हैं, अेक दूसरेसे स्फूर्ति ले रहे हैं, अेक दूसरेके कंधेसे कंधा मिला रहे हैं, अैसा दृश्य अिस देशमें दिखायी पड़ना चाहिये । लेकिन अिसके लिअे हृदय बड़ा चाहिये, संयम चाहिये और अपने अहंकारको अलग रख छोड़ना चाहिये ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो दूसरोंके सुख-दुखका विचार करता है अुसे संयम आसान मालूम होता है। मैंने अैसा किया तो अुसको कैसा लगेगा, मैं अैसा बोला तो अुसपर क्या असर होगा, अैसा लिखनेसे किसीके दिलको चोट तो नहीं लग जाअेगी, अगर पैर पटकते हुअे चला तो किसीकी नींद तो नहीं टूटेगी, रातको रास्तेसे गुजरते हुअे बड़े जोरकी आवाजमें बहस की या गाने गाअें तो किसीको कष्ट तो नहीं होगा, सभा-स्थानपर आपसमें बातचीत करनेसे सभामें आये अन्य सज्जनोंको व्याख्यान सुननेमें असुविधा तो नहीं होगी, अिस तरह अेक दो बातोंमें नहीं, हजारों बातोंमें दूसरेका ख्याल आना चाहिये। लेकिन अफसोस, हमारे देशमें यह आदत बहुत कम पायी जाती है। दूसरेके बारेमें हम पलभर भी नहीं सोचते हैं; क्योंकि सहानुभूतिकी कमी होती है। जहाँ सहानुभूति नहीं, वहाँ संयम काहेका ?

अपने बर्तावसे दूसरोंको नाहक तकलीफ तो नहीं होगी ? यह भावना ही हम लोगोंके दिलोंसे मानो मिट गयी है। मानों मैं ही अकेला जिन्दा हूँ और पास-पड़ोसमें दूसरा कोअी है ही नहीं। अिस तरह हमारा बर्ताव होता है। पाश्चात्य देशोंमें यह बात नहीं है। अुनके सार्वजनिक-जीवनमें अधिक संयम होता है। रास्तेसे गुजरते वे नाहक शोरगुल नहीं मचाअेंगे, दूसरोंको तकलीफ हो अैसी कोअी बात नहीं करेंगे। सर्वत्र अिसी प्रकार व्यवस्था नजर आअेगी। संयमके बिना व्यवस्था पैदा नहीं हो सकती। जहाँ संयम न होगा वहाँ शोरगुल होगा ! हमारी सभाओंको देखिये, जुलूस देखिये। स्टेशनपर टिकट-घरकी ओर निगाह दौड़ाअिये। सर्वत्र संयमहीन बर्ताव दीख पड़ेगा। और कोअी संयमकी बात निकालेगा तो सब अुसकी हँसी अुड़ाअेंगे। "भाअी जरा मन्दी आवाज़में बोलिये" अैसा अगर आप किसीको सुझाअेंगे तो झटसे वह कहेगा : "चुप रहो ! बड़े आये हैं सज्जन !" अैसी टीका-टिप्पणी सुननी पड़ती है।

अेकाध शब्द हमारे मुखसे अनजाने निकला कि मन-मुटाव हुआ। कहीं बातका बतंगड़ कर दिया और हमेशाके लिअे वैरके बीज बो दिये। अेकबार मनमुटाव हुआ तो फिरसे अुसे सुधारना असंभव-सा हो जाता है। दुनियामें जोड़ना बड़ा कठिन है, तोड़ना बड़ा आसान है। वृक्षको बढ़ाना कठिन है, अुसे तोड़ना आसान है। हम जीवनोंको जोड़ना चाहते हैं, वह संयमहीसे हो सकता है।

हम भैंसेको हेय मानते हैं क्योंकि अुसमें हमें संयमके दर्शन नहीं होते। वह अपने सींग सीधे अुठाकर, ताकता रहता है। जो पशु संयमी हैं, जो मुँहसे बाग पकड़ते हैं, गाड़ी ठीक खींचते हैं, हलमें ठीक जुतते, हैं अुन्हींका कुछ मूल्य होता है। पशुओंको बागसे बाँधना पड़ता है लेकिन आदमीको वैसी बागकी जरूरत नहीं होती। बुद्धि ही आदमीकी बाग है। मनुष्य विचारोंके बलपर चलता है। जो विचार करके नहीं चलता, वह आदमी नहीं है। संयमका होना आदमियतकी पहिली निशानी है, लेकिन यह निशानी कितने लोगोंके पास देखनेको मिलेगी ? आज आदमी वृकव्याघ्रोंका-सा बर्ताव करते पाये जाते हैं। मानो अेकदूसरेको खा जानेके लिअे ताक रहे हैं। अपनेको बड़ा मानकर दूसरोंको हेय समझते हैं। संयमका सब जगह अभाव दिखायी देता है।

दो पत्थरोंको जोड़नेके लिअे सीमेन्टकी जरूरत होती है। तद्वत् संयमरूपी सीमेंट होनेपर जीवन जोड़े जा सकते हैं; प्रत्येक प्रांत अन्य प्रांतोंसे, प्रत्येक राष्ट्र अन्य राष्ट्रोंसे जुड़ सकेंगे। किन्तु अहंकार हो, तो यह संभव नहीं होगा। किसी प्रांतका भूतकाल अुज्ज्वल रहा हो, किन्तु अुस अुज्ज्वल भूतकालसे अहंकार पैदा हो और वह औरोंको तुच्छ मानने लगे तो क्या फायदा ? तब अैसा लगता है कि अुज्ज्वल भूत न होता तो ठीक होता। हमें भूतकालीन-अितिहाससे स्फूर्ति मिलनी चाहिये लेकिन वह दूसरोंको चिढ़ानेके लिअे न हो, यह बात हमें ध्यानमें रखनी चाहिये।

संयमके माने शरणता नहीं है, न संयमका मतलब डरपोकता है। संयम माने सामर्थ्य। जीवनके विकासके लिअे वह है। कार्य अच्छा होने ही के लिअे वह है। समाजमें अधिक आनन्द, अधिक संगीत भरनेके लिअे वह है। संयम अेक सार्वभौम वस्तु है।

(मराठीसे अनुवादक : श्री यदुनाथ थत्ते, 'राष्ट्रभाषा-रत्न')

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय साहित्यके साधक डॉ. सिद्धेश्वर वर्माका अपने मित्रको अेक पत्र

नअी दिल्लीसे

सुहृद्वर,

लगभग पांच महीने बीत गये, आपकी पुस्तक "साहित्यावलोकन" (प्रका०– साहित्य भवन लिमिटेड, अिलाहाबाद) मुझे आपसे अेक प्रसाद रूपमें अुपलब्ध हुअी थी। देखते ही मुंहमें पानी भर आया ! परन्तु हाय री परिस्थितियां ! अुन्होंने मुझे हिलने न दिया, और दिलकी दिलमें ही रही।

अब कुछ दिन चुराकर अिस पुस्तक रत्नको देख पाया हूँ। आशा तो यह थी कि अिसपर अेक सविस्तार समालोचना लिखता, परन्तु बात तो यह है कि यह पुस्तक किसी लेखबद्ध समालोचनाके लिअे नहीं है, यह तो लम्बी चर्चाके लिअे है। यह तो अुस प्रकारकी द्विवार्षिक चर्चाके लिअे है, जैसी आपके साथ मैंने प्रसादके "आँसू" पर की थी। अस्तु; अब भी परिस्थितियोंके आगे सिर झुकाकर कुछ टूटे-फूटे शब्दोंमें अपने विचार प्रकट किये देता हूं:--

(१) यह कृति हिन्दीके सब पक्षोंपर अेक महत्वपूर्ण दिग्दृष्टि तो है ही, परन्तु अिसकी प्रमुख विशेषता वह सेवा है, जो अिसने हिन्दी समालोचनाके लिअे की है। हिन्दी समालोचना जगत्की स्थिति अिस समय दिमागको चकरा रही है। पहिले तो आश्चर्यजनक बात यह है कि समालोचनाके लिअे रुचि हिन्दी पाठक जगत्में अितनी भड़क अुठी है कि हिन्दीके सब अन्य पक्षोंको पीछे छोड़ गयी है; जैसा कि तीन दिन हुअे मुझे हिन्दीके प्रसिद्ध प्रकाशक राजकमल ब्रदर्स द्वारा विदित हुआ है। परन्तु हिन्दी पाठकोंके दुर्भाग्यसे समालोचनाके सिद्धान्तोंकी गड़बड़ी अेक भयंकर दशाको पहुंच गयी है। जैसा कि आपने पृष्ठ २९ में लिखा है "आजका हिन्दी-साहित्यकार गत्यावरोध मिटानेके लिअे वादोंकी खोजमें बुरी तरह व्यस्त है।" अिन पश्चिमी वादोंके गड़बड़झालेने अन्धेर मचा दिया है, जिसका वर्णन आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदीने अिन शब्दोंमें किया है--"यूरोपमें मनोविश्लेषण-शास्त्रकी नयी थ्योरी निकलती है और हिन्दुस्तानका अधकचरा साहित्यिक अुसको खाकर बिना पचाये ही वमन कर देता है ('आलोचना' जुलाअी १९५३, पृष्ठ ४५)।" अिस घटनासे स्पष्ट है कि साहित्यिक हिन्दी-जगत्में अेक बौद्धिक रोग अुत्पन्न हो रहा है, जिसके प्रतिविधानके लिअे आपकी पुस्तक अेक प्रारम्भिका है। अिस प्रारम्भिकाका अेक रूप तो आपका अध्याय "हिन्दीमें समालोचनाका विकास" (पृष्ठ ९६–११२) अिस शीर्षकपर है, जिसमें हमारे साहित्य-समालोचनाके विकासका मनोरंजक रूपसे वर्णन करते हुअे अुसके भयानक पक्षोंकी ओर अिन शब्दोंमें अुल्लेख किया है–"हिन्दीमें अैसे बहुत कम पत्र हैं, जिनकी समालोचनाओंपर पाठक भरोसा कर सकता है" (पृष्ठ १०६)। परन्तु जहां आप मित्रवत् अिन विभीषिकाओंको दिखाते हैं, वहां स्थान-स्थानपर समालोचनाके अुद्बोधक पक्षोंका भी वर्णन करते हैं, जैसे–द्विवेदीजीकी समालोचक-प्रवृत्तिका अुल्लेख आपने अिन सुन्दर शब्दोंमें किया है—"वे मित्र-अमित्रका बिलकुल ध्यान नहीं रखते थे और अपने विश्वासोंके अनुसार समालोचना किया करते थे।" (पृष्ठ १३४)।

अपने "दृष्टिक्षेप" (पृ. ४) में आपकी समालोचक-अुत्कृष्टनाके आपके ये शब्द हिन्दी पाठकोंके लिअे पथप्रदर्शक हैं-- "साहित्यके अवलोकनमें अपनी दृष्टिको वादग्रस्त होनेसे बचाया है," और पृष्ठ २१ में और भी बलपूर्वक बताया गया है--"वास्तवमें वादका नाम कविता नहीं है" तथा "साहित्य जब वादका क्रीत बन जाता है, तब अुसकी व्यापक अपील कम हो जाती है। (पृष्ठ ३३)" मेरे विचारमें स्थान-स्थान-पर आपने "वाद" शब्दके स्थानमें जो "प्रवृत्ति" का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शब्द प्रयुक्त किया है, यदि अिसीको दृढ़तासे निरन्तर चला दिया जावे, तो अनेक भ्रान्तियोंका निवारण तथा प्रतिविधान हो सकता है। अुदाहरणार्थ—मैंने आपके अिस सुन्दर "प्रवृत्ति" शब्दका प्रयोग अिन स्थलोंमें नोट किया है--

(क) "कवितामें रोमेंटिक प्रवृत्ति (पृ. ७)"

(ख) "प्रयोग और बिम्ववादकी जो मिली-जुली प्रवृत्ति (पृ. ३३)"

(ग) "युगकी काव्य-प्रवृत्तिकी ठीक-ठीक व्यंजना करनेवाले प्रतिनिधि (पृ. ६७)"

(२) आपकी अिस कृतिका दूसरा ठोस अुपकार साहित्यके मौलिक सिद्धान्तोंका प्रतिपादन है। अपने 'दृष्टिक्षेप' के पृ. ४ में आपने अनुभूतिके सहज प्रकाश-को साहित्यकी कसौटी मानकर, साहित्यका बीज बड़े सुन्दर शब्दोंमें दर्शा दिया है। बीजदृष्टिसे साहित्य अनुभूतिका प्रकाश है। परन्तु किसकी अनुभूतिका? क्या किसी व्यक्ति विशेषकी अनुभूतिका? अिसका अुत्तर आपने पृ. १५ में यों दिया है--"जिस कवितामें जीवनका शाश्वत-सत्य अभिव्यक्त होता है ....सब युगकी कृति होती है।" अर्थात् साहित्य किसी व्यक्ति विशेषकी अनुभूति नहीं, वरन् संसार भरकी अनुभूति है। साहित्यका सम्बन्ध किसी वाद अथवा पक्षसे नहीं, बल्कि जीवमात्रसे है, अिसका प्रतिपादन आपने 'निराला' के अिन महत्वपूर्ण शब्दोंमें किया है—"जीवनके साथ राजनीतिका नहीं, साहित्यका सम्बन्ध है" (पृ. १२१)। दूसरे शब्दोंमें साहित्य मनुष्यका प्राण है। अिसमें अतिशयोक्ति नहीं। अतिशयोक्ति यहाँ केवल अुसीको दिखायी देती होगी, जिसका साहित्यिक दृष्टि-कोण अभी कच्चा ही हो। परन्तु साहित्यके अनुभवि-योंको आम बातचीतमें, खेलकूदमें और सिनेमामें साहित्यके भिन्न-भिन्न रूप प्रतिभासित होते हैं। साहि-त्यके अिन रूपोंका अनुसन्धान भविष्यका विषय है और 'निरालाकी' यह अुक्ति दर्शाती है कि साहित्य-विचा-रकोंके आगे कितना असीम मैदान है, जिसका अभी स्पर्श तक नहीं किया गया।

(३) साहित्यके व्यापक पक्षपर जो आपके विचार हैं, अुनपर विशेष चर्चा अपेक्षित है। पृ. ११५ में आपने महादेवी द्वारा प्रतिपादित असीम सत्यके व्यक्त-अव्यक्त रूपोंका अुल्लेख किया है। साहित्य-तत्वकी दृष्टिसे यह सिद्धान्त अुपादेय है, क्योंकि साहित्य-क्षेत्रको किसी क्षेत्र विशेष जैसे 'जनता", 'प्रगति" आदिमें संकुचित करना सरस्वती-हिंसाके तुल्य है। यह संकोच मनुष्यकी अनन्तकी ओरकी प्रवृत्तिके विरुद्ध है। साहित्यकी अुड़ान तो मनुष्यकी साधारण अुमंगोंसे भी अूपर जाती है। जहाँ सांख्य दर्शनने दुख-निवृत्तिको मानवका सर्वोत्तम अुद्देश बताया था, वहाँ साहित्य तो कभी-कभी दुखके लिअे भी तड़पता है, जैसा कि अेक अुर्दू कविने कहा है—

"वह मजा दिया तड़पने, कि यह आरजू है यारब,
मेरे दोनों पहलुओंमें दिल बेकरार होता।"

अतः महादेवीके अुपर्युक्त वचनका अुल्लेख करके आपने साहित्यकी अेक अनिवार्य विशेषताको दर्शाया है। महादेवीके अिस वचनका समन्वय 'प्रसाद' द्वारा प्रतिपादित व्याख्यासे भी हो सकता है, जो पृ. ११४ में दिया गया है—प्रसादके वचनोंमें काव्यकी अनुभूतिका तात्पर्य है "आत्माकी मननशक्तिकी वह असाधारण अवस्था जो श्रेय-सत्यको अुसके मूल चारुत्वमें सहसा ग्रहण कर लेती है"। यह 'श्रेय-सत्य" सत्य ही नहीं है जबतक व्यापक न हो। परन्तु ३० पृष्ठमें आपने जो "साहित्य सृजनका अेक ही सूत्र" बताकर साहित्यको "मनुष्यके जीवन" तक बद्ध कर दिया है, अिसपर शंका अवश्य हो सकती है। साहित्य तो भूत प्राणिमात्र, सत् तथा असत्—सबके लिअे तड़पता है। साहित्यका रस संकुचित नहीं हो सकता। आपने पृ. ११८ में अलंकारों-पर 'पंत' की सम्मतिका अुल्लेख किया है। पंतजी अलं-कारोंको "रागकी पूर्णताके लिअे आवश्यक मानते हैं"। परन्तु साहित्य अिस प्रकारके बन्धनोंसे संकुचित हुआ, तो गया। आज हिन्दी कवितामें जो अलंकारोंकी भरमार है, वह हिन्दी काव्यरसके प्राण निकाल रही है, हिन्दी काव्यको केवल अेक वर्णनात्मक सूचीपत्र बना रही है। अिसके सम्बन्धमें अुर्दू पत्रिका अुर्दू अदब, अक्तूबर १९५१ पृ. १५३ में डाक्टर यूसफ हुसैन खानके ये शब्द अुल्लेखनीय हैं—"तुसव्वर (अलंकार) और दूसरे ख़ारजी (बाह्य) मुहर्रिकों (प्रेरकों) की तरह जजबेके ख़ला (शून्यता) को पुर नहीं कर सकते। यही वजह है कि तुसव्वरात (अलंकारों) की शाअिरीमें अक्सर औकात (समय) सपाटपन और बेलुत्फी पैदा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो जाती है"। यही हाल अुन अुपमाओंका है जिनकी प्रशंसा आपने २१ पृष्ठमें यों की है—"पीठकी अुपमा धोबीके पाटसे दी गयी है, जिनमें परम्परागत बासीपन बिल्कुल नहीं है"। क्या किसी अुपमाका महत्व अिसीमें पर्याप्त है कि अुसमें बासीपन न हो? क्या अिन अुपमाओंमें कालिदासकी "वागर्थाविव संपृतौ" के समान व्यापकता भी है?

(४) यथार्थवादकी व्याख्या आपने अिन शब्दोंमें की है—"प्रकृत वस्तुके हूबहू चित्रणका नाम यथार्थवाद कहलाता है"। परन्तु अिस प्रकारका प्रतिपादन विचारास्पद है। साहित्यक-यथार्थवाद फोटोचित्रणके समान हूबहू वर्णन नहीं कहा जा सकता, यह सर्वानुभवसिद्ध है। सर्वश्रेष्ठ अंग्रेजी कोशकार वैब्स्टरने यथार्थवादकी व्याख्या यों की है—"Realism. Fidelity to nature or real life; adherence to actual fact", अर्थात् वस्तुसे अनुकूलता, तत्त्वसे दूर न जाना; अिस अर्थमें "यथार्थवाद"का प्रयोग होता है। अब अिस संज्ञाके सम्बन्धमें यह प्रश्न अुपस्थित हो सकता है कि क्या वास्तवमें भारतेन्दुके साहित्य-क्षेत्रमें अवतीर्ण होते ही हिन्दी कवितामें प्रथम बार 'यथार्थवाद'ने प्रवेश किया (पृ. १)? यह किस अंशमें ठीक है कि रीतिकालीन कविताका "जीवनसे लगाव न रह गया था" (पृ.१)? क्या रीतिकालकी शृंगारप्रधान प्रवृत्ति मानव-तत्त्वसे बहुत दूर चली गयी थी? क्या आजकल यह प्रवृत्ति कुछ कम है? यदि शृंगार रसको साहित्यका प्राण न भी मानें, तो भी क्या अिसकी व्यापकता और प्रधानतापर प्रश्न भी हो सकता है?

(५) छायावादकी आपने जो व्याख्या "वक्र-शैली और अन्तर्मुखी प्रवृत्ति" (पृष्ठ १३) की है, बड़ी अुपपन्न और सुन्दर है। परन्तु अेक थोड़ी-सी कसर रह गयी है। यह दर्शाना अवश्य था कि अिन दो गुणोंमें "वक्र-शैली" बहुत ही प्रधान है, अितनी प्रधान कि अन्तर्मुखी प्रवृत्ति अुसके आगे बहुत ही गौण रह गयी है। अिस यथार्थ मूल्यांकनका अभाव विचारास्पद है। छायावादकी रोमेंटिक-प्रवृत्तिसे अिसीलिअे तुलना नहीं हो पाती क्योंकि छायावादका प्रतिपादन-प्रकार अर्थात् रीति मानव-सरलताके विरुद्ध है। केवल यही नहीं, वरन् यह शैली संस्कृतकी श्रेषात्मक कविताके समान अेक मदारीका खेल बन गयी है। अिसे कोअी विशेषज्ञ "चतुराअी" भले ही कहे, साहित्य-व्यापकतापर यह अेक भयंकर कुठाराघात है।

(६) कलाकृतिके चित्रका निरूपण करते हुअे आपने जो 'पूर्णता' शब्दका प्रयोग किया है ("कलाकारके मनमें कला-कृतिका चित्र पूर्णरूपसे अुतर आता है, तभी अभिव्यक्तिमें पूर्णता आती है" पृ. ११७), अुसे पढ़कर मैं चकित हो गया हूँ। क्या वास्तवमें कलाकृत अभिव्यक्तिमें पूर्णता आ जाती है? जिन-जिन कवियोंका मुझे अनुभव हुआ है अुनसे तो यह प्रतीत होता है कि कविकृत-प्रतिपादन केवल अेक झलक-सी होती है। अेक अुर्दू कवि कविताके तत्त्वपर विचार करते हुअे कहता है कि कविता परमार्थ-तत्त्वमें अेक बहुमूल्य लेखनीके पाँवोंकी कँपकँपी है, यह अेक बेचैनी है, यह होठोंका प्रस्पन्दन-सा है—

'कैफ़ (परमार्थ-तत्व) में अिक लग़ज़ेपा (पाँवोंकी कँपकँपी) किल्के गोहरबार (बहुमूल्य लेखनी) की।

अिज़्तरारी (बेचैनी) अेक जुंबश (प्रस्पन्दन) सी लबे-गुफ़्तार (बोलनेवाले होंठों) की।

(७) भारतेन्दुकी गद्य-भाषापर विचार करते हुअे आप लिखते हैं—"भाषा दोषके कतिपय अुदाहरण नीचे दिये जाते हैं—'कृपा किया है', "भअी=हुअी"। अेक साधारण पाठकको तो यह अुदाहरण दोषमात्र ही प्रतीत होते होंगे, परन्तु भाषा-वैज्ञानिकके लिअे आपने यहाँ अेक नया मैदान खोल दिया है। अिन अुदाहरणोंसे हमें अुपलब्ध हो जाता है कि हिन्दीके अेक प्रयोगके चालू होनेके पहिले कितने ही अन्य प्रयोग अुसी भावको जतलानेके लिअे चल पड़े होंगे। अिन भिन्न-भिन्न प्रयोगोंके संघर्षके पश्चात् ही सुनिश्चित रूप स्थापित कर दिये गये होंगे। आजकल भी हिन्दी अिसी प्रकार बन रही है। प्रत्येक सप्ताहमें समाचार-पत्रों, पत्रिकाओं और अन्य लेखोंमें विविध प्रयोग चलाये और निकाले जा रहे हैं। अिन प्रयोगोंकी "चलन्तिका" का अितिहास भविष्य-अनुसन्धानका विषय है, जिसके महत्त्वका सुझाव हमें आपके अिस लेखसे मिलता है। कुछ लज्जित-सा होकर अब अिस पत्रको समाप्त करता हूँ। अिसमें वह गहराअियां कहाँ जो आपके संवादसे प्राप्त हुआ करती थीं? आपके साहित्यिक-संसर्गको मैं अेक जीवन-साफल्य मानता हूँ। अिसी संसर्गकी स्मृति मुझे "साहित्यिक-भजन" करनेके लिअे प्रवृत्त करती रहती है।

भवदीय,

सिद्धेश्वर वर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंजाबीके संत कवि-सुल्तान बाहू

: श्री घनश्याम सेठी :

भारतके रहस्यवादी संत कवियोंमें, पंजाबके सुल्तान बाहुका अेक विशिष्ट स्थान है। अुनके जीवनके प्रारम्भिक कालसे ही, रहस्यवादी प्रवृत्तियां परिलक्षित होने लगी थीं। 'मनाकबे सुल्तानी' के रचयिताके कथनानुसार अुनकी मृत्यु ११०२ हिजरी (सन् १६९१) में अिकसठ वर्षकी आयुमें हुअी। अिससे हम अिस निर्णयपर पहुँचते हैं कि अुनका जन्म सन १६३० में आवान (पश्चिमी पंजाबमें, झंग जिलेका अेक ग्राम) में हुआ। अिनके पिता अरबी-फारसीके बड़े विद्वान् थे, माता बीबी रस्ती कुदसरा बड़ी ही सुशील अेवं आदर्श माता थीं।

अिनके बाल्यकालके विषयमें बहुतसे अुपाख्यान प्रसिद्ध हैं, परन्तु अुनका कोअी प्रमाण न होनेके कारण हम अुनकी चर्चा यहाँ नहीं करेंगे। अिनके परिवारका सम्राट शाहजहाँके दरबारमें बड़ा आदर था। सम्राटने अिनके पिताको [1] 'सुल्तान बाजिद कहर जानन अिन जागीर' की अुपाधि दी थी।

बाहुकी शिक्षा घरपर ही हुअी। आरम्भसे ही अिनकी प्रकृति सत्व-गुण प्रधान रही। ये सदा विनय और शीलके अवतार बने फिरते थे। परन्तु अुस समयके अधिकांश सूफियोंके समान, सांसारिक विषयोंसे अपनेको अलग हटाकर कष्ट-साध्य और अेकान्तिक जीवन बिताना ही अिनका आदर्श न था। यद्यपि साधकोंके लिअे आज भी जागतिक स्थूल व्यपारोंसे अपनेको हटाकर, क्लान्त जीवन बिताना रहस्यवादी प्रवृत्तियोंके प्रत्यक्षीकरणके लिअे अपेक्षित माना जाता है, [2] परन्तु बाहु थोड़े कालके लिअे भी अिस क्लान्त जीवनको व्यतीत करनेके रवादार न थे। अिन्होंने पहले हबीब अुल्ला कादरीसे दीक्षा ली। परन्तु अिनकी लगनको देखकर, हबीब अुल्ला कादरीने अनुरोध किया कि वे अुनके गुरु अब्दुल रहमानसे दीक्षा लें। तब बाहुने दिल्ली जाकर अुपरोक्त संतसे दीक्षा ली। [3] सम्राट औरंगजेब स्वयम् बाहुका बहुत आदर करता था। किन्तु बाहुको अुससे घृणा थी, क्योंकि वह सूफियोंका (जो अुस समय अधिकतर कादरी अथवा अहमदी मतके थे) कट्टर विरोधी था। सम्राट औरंगजेबका बड़ा भाअी दाराशिकोह भी कादरी मतमें विश्वास रखता था और अुस समयके सूफियोंमें बहुत लोकप्रिय था। यहाँ यह बता देना अनुचित न होगा कि औरंगजेबने दाराशिकोहको मरवाकर, भारतके सूफियोंको (विशेषकर पंजाबके) अपना शत्रु बना लिया था।

मृत्युके पश्चात अिनका शरीर कहर जाननमें दफनाया गया। परन्तु कुछ समयके पश्चात रावीकी धारा बदल जानेसे, जलके तीव्र बहावमें संतकी कब्र भी बह गयी। तब बाहुकी समाधिपर रहनेवाले मुरीद और अन्य भक्त रोने-धोने लगे—सहसा अुन्हें अदृश्य वाणी सुनायी दी, जिसमें कहा गया था कि अगले सवेरे अेक व्यक्ति बाहुका कफनमें लिपटा हुआ शव लेकर जलकी धारासे बाहर निकलेगा (अैसा तारीख सुल्तान बाहुमें अंकित है)। दूसरे दिन अैसा ही हुआ और अुपरोक्त व्यक्तिके आदेशानुसार, बाहुके शवको पुनः अेक भग्नावशेष मकानमें स्थित, पीपलके पेड़के नीचे दफना दिया गया। अिस विषयमें अेक और अुपाख्यान भी प्रचलित है कि रावीकी धारासे निकले हुअे व्यक्तिसे बाहुका शव नहीं, वरन् कफन मात्र ही प्राप्त हुआ था। और पीपलके पेड़के नीचे यही कफन दफनाया गया। [4]

---

१. मनाकबे सुल्तानी पृष्ठ ४०

२. राम पूजन तिवारी कृत 'सूफियोंका रहस्यवाद'

३. मनाकबे सुल्तानी पृष्ठ ३७.

४. मनाकबे सुल्तानी पृष्ठ १३०।

In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाहूने १४० पुस्तकोंकी रचना की; जिनमें अधिकतर फारसीमें लिखी गयी हैं। पंजाबी काव्यमें, बाहुकी अपनी अेक विशेष धारा है, अद्‌भुत् शैली है, जो पाठकका मन बरबस अपनी ओर आकृष्ट कर लेती है। बाहुकी काव्य-रचनाअें कव्वालियोंके रूपमें, अुर्सके अवसरपर गायी जाती हैं। अिन पंक्तियोंके लेखकको भी, अैसा अेक अुर्स देखनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है। बाहुके अधिकांश अनुसरण करनेवाले अपढ़ गंवार हैं; जिनको वर्तमान गद्‌दीनशीन (महन्त) तरह-तरहसे मूर्ख बनाकर, पैसा लूटते हैं। बाहुने सिहर्फियाँ और काफियाँ लिखी हैं। परन्तु बाहुकी काफियोंका कोअी संग्रह मेरी दृष्टिसे नहीं गुजरा। झंगके आस-पास भी, बुल्हाशाह और माधोलालहुसैनकी काफियाँ ही प्रचलित हैं—बाहुकी कोअी काफी मेरे सुननेमें नहीं आयी। यद्यपि 'मनकाबे सुल्तानी' के लेखकके कथनानुसार अिनकी काफियोंकी संख्या भी सैकड़ों तक पहुँची हुअी थी।

सिहर्फी पंजाबी साहित्यकी मौलिक अुपज है। अिसमें कवि, अरबी [१] की वर्णमालाके शब्दोंको यथाक्रम लेकर, प्रत्येक शब्दको लेकर, अुसी शब्दसे प्रारम्भ की गयी पंक्तिमें अपने विचार व्यक्त करता जाता है। अिसी प्रकारका काव्य सिक्खोंके आदि-ग्रंथमें भी मिलता है, जिसके रचियता गुरु अर्जुनदेव (पाँचवें गुरु) हैं। वहाँ अिसे सिहर्फी न कहकर बावन अखरी कहा गया है। वर्णमाला देव-नागरी है— अरबी नहीं। अिसी प्रकारका काव्य सिक्खोंके अन्य धार्मिक ग्रन्थोंमें भी मिलता है। [२] बहुतसे पंजाबी किस्से भी सिहर्फियोंमें कहे गये हैं। [३] सिहर्फी लिखनेकी कलामें बाहुकी टक्करका लेखक आजतक पंजाबी साहित्यको नहीं मिला।

बाहुकी विचारधारा और भक्ति-पद्धति अन्य भारतीय तथा पंजाबी सन्तों— कबीर, त्यागराज, शाह हुसैन, तुकाराम, छज्जू भक्त और बुल्हाशाहके विचारोंसे खूब मेल खाती है।

अिनका कहना था कि परमात्मा सर्वातीत है, सर्वगत है। वह सब कुछ जानता है, सब कुछ देखता है और अपनी अिच्छानुसार सबका संचालन करता है। सभी अुसकी अिच्छाके परिणाम हैं। सबका आदि वही है, सबका अन्त वही है। अिनमें परमात्मासे साक्षात्कार करने और अुसे पानेकी तीव्र आकांक्षा थी। अिनकी अनेक रचनाओं तथा अुपदेशोंसे अव्यक्त परोक्ष-सत्ताकी अुपलब्धिके लिअे, अिस प्रकारकी बेचैनीके हमें दर्शन होते हैं। वे जगतको टुकड़े-टुकड़े करके नहीं देखते थे, वरन् अुसी परम सत्तासे व्याप्त सारी सृष्टिको अेक सूत्रमें बँधा देखते थे। अिस प्रकारसे, खंड सत्यको छोड़कर अुनका अन्तर सम्पूर्ण ब्रह्मांडकी अेकताका दर्शन करता था। ये बातें कट्टर अिस्लामी सिद्धांतोंसे मेल नहीं खातीं, अिसलिअे स्थानीय मुसलमान तथा अधिकारी अिनके विरोधी हो गये। अुन्होंने संतको तरह-तरहसे सताना चाहा, परन्तु अिनकी सहनशीलताको देखकर अन्तमें अपने आप चुप हो रहे। अेक स्थानपर कवि लिखते हैं—

"जीम ज्यूंदयां मर रहना होवे, तां वेस फकीरां करिये हू,
जे कोअी सुट्टे गुद्दड़ कूड़ा, वांग अरूढ़ी सहिये हू,
जे कोअी कड्ढे गालां मेला, अुस नूं जी जी कहिये हू,
गिला अुलाम्हा, मंडी खवाड़ी, यार दे पासों सहिये हू।[२]"

१. जीम [यदि जीते जी ही हमें मरे हुओंके समान जीवन व्यतीत करना हो तो, सन्तोंका वेश धारणकर लेना चाहिये। यदि हमपर कोअी फूट चिथड़े अथवा कचरा अित्यादि फेंके, तो भी हमें अुसे फूलोंकी वर्षा समझकर सहन कर लेना चाहिये। जो

---

१. अरबी, फारसी और अुर्दूकी वर्णमाला अेक ही है।
२. पंच ग्रन्थी, पन्थप्रकाश अित्यादि।
३. फर्द फकीर-कृत रोशन दिल।

१, --अर्बी वर्णमालाके अक्षर।

२—'हू' का अर्थ पंजाबीमें भगवान होता है। बाहुकी प्रत्येक पंक्ति 'हू' शब्दपर समाप्त होती है। यह बाहुकी सिहर्फियोंकी अेक विशेषता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे लिअे अपशब्द मुँहसे निकाले, हमें अुसके सन्मुख 'जी-जी' का अुच्चारण करना चाहिये। गिले और अुलाहने, दुःख और कष्ट हमें अुस परम प्रियतमके लिअे सहन करने चाहिये।]

बाहु रहस्यवादी सन्त थे। रहस्यवादियोंको परमात्माकी अनुभूति कण-कणमें होती है तथा आत्मा और परमात्माका सम्बन्ध ही अुनके लिअे वास्तविक और सत्य होता है। जगत्के अन्य सम्बन्ध अुन्हें छलमय ठगनेवाले और तुच्छ प्रतीत होते हैं।

"चे चढ़ चन्नां तूं कर रोशनी ते झिक्कर कोंदे तारे हू,
तेरे जहे चन कअी सी चढ़ दे, सानुं सज्जना बाझ हनेरा हू,
जित्थे चन हैं साढ़ा चढ़या, कदर नहीं कुज तेरी हू,
जिस दे कारण अमां जन्म गवाया, बाहू यार मिल सी अिक वेरी हू,"

१. चे [चाँद अब आकशमें चमको, ताकि तारे तुम्हारी ज्योतिको देखकर (ईर्ष्यासे) जल जाते। तुम्हारे जैसे सैकड़ों चाँद भी यदि चमकें, तो भी प्रियतमके मिलनके बिना, मेरे लिअे अन्धेरा ही रहेगा। जहाँपर मेरा प्रियतम (परमात्मा) होगा, वहाँ तुम्हारी कोअी पूछ नहीं होगी। जिस प्रियतमके लिअे मैंने अपना जीवन गँवा दिया, अेक दिन तो अुससे मिलाप होगा ही।]"

अेक और सिहर्फी है—

"पे, पढ़-पढ़ अिलम हजार किताबां आलम होये सारे हू,
अिक्को हर्फ अिश्क दा ना पढ़, जन भुले फिरन बचारे हू,'

पे [हजारों पुस्तकोंका अध्ययन करके सांसारिक ज्ञान (अिलम) तो सभीने प्राप्त कर लिया है। परन्तु प्रेमके शब्दसे अनभिज्ञ होनेके कारण अुन्हें सूझ नहीं रहा है कि क्या करें।][२].

१—अर्बी वर्णमालाके अक्षर।

२. सुल्तान बाहु अन्य सूफियोंके समान मारिफ (आध्यात्मिक-ज्ञान) को अिलम (सांसारिक ज्ञानसे सर्वथा भिन्न वस्तु समझते थे। अुनके कथनानुसार "मारिफ अिन्सानको अीश्वरकी दयासे ही प्राप्त होता है, जब कि मनुष्य अपनी चेष्टाओं द्वारा सांसारिक शिक्षकोंकी सहायतासे सांसारिक ज्ञान (अिलम) प्राप्त कर सकता है।" (पृष्ठ ४४ मजमूआ कलाम सुल्तान बाहु)

सदासे ही रहस्यवादी साधक, प्रेमको परमात्माकी प्राप्तिका साधन मानते हैं। बाहु भी, जैसा अुपरोक्त अुद्धृत पंक्तिसे स्पष्ट है, परमात्माको ही अपना परम प्रियतम मानते थे। पूर्वोक्त अंकित पंक्तियोंसे यह भी स्पष्ट है कि वे यह भी मानते थे कि वह (परमात्मा) परम सुन्दर है और अुसकी विभूति अनन्त है।

सुल्तान बाहुका कहना है कि आध्यात्मिक-ज्ञान अग्निके समान प्रज्वलित होनेवाली वस्तु है और धार्मिक विश्वाससे विशिष्ट अेवं अलग है। जिस व्यक्तिको आध्यात्मिक-ज्ञान प्राप्त हो गया हो, वह परमात्माके साथ अेकमेक होकर देखता है—

"नून नाहीं जोगी नाहीं जटगम न मैं चिला कमाया हू,
नां मैं भज मसीतीं बड़या, न तस्बाखड़काया हू,
जो दम गाफिल सो दम काफिर, सानूं मुर्शिद यह फर्माया हू,
मुर्शिद सानूं सोहनी बीती, अिक्को पतविच चा बखशाया हू,

३. नून [न मैं योगी हूं और न जटाधारी साधु, न मुझे चालीस दिनोंका अुपवास ही रहता है। न मैंने भागकर मस्जिदमें प्रवेश किया, न ही ४. तस्बा बजा-बजाकर (तुम्हारा नाम) जपा। हमें तो गुरुने यह शिक्षा दी है कि जिस श्वासको लेते समय (तुम) गाफिल हो गये, वह श्वास काफिर है। गुरुने (हमें अिस बातका आभास करवाकर) हमारा बड़ा अुपकार किया।]

"मीम मजहवा वालें दरवाजे अुच्चे, राह रब्बदी है अिक मोरी हू,
पडतां ते मौलवियां कोलों चप-चप लंग दे चोरी हू,
अडियाँ मारन करन बखेड़े, दर्द मन्दयाँ दियाँ थोड़ी हू,
बाहू चल ओथे विसै जित्थे, दावा न किसीसे होरी हू,

५. मीम (धर्मके द्वार अूंचे हैं और भगवानकी ओर जानेवाला पथ अेक छिद्रके समान है। यह पथ पंडितों और मौलवियोंकी कल्पना और पहुँचसे बाहर

३. अुर्दू वर्णमालाका अेक अक्षर।

४. अेक प्रकारकी तश्तरी जिसे फकीर बजाते हैं।

५. अुर्दू-वर्णमालाका अक्षर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। वह तरह-तरहकी चेष्टाअें करके, अिस पथको अुलझानेका और नित-नयी जूंझलें अुत्पन्न करनेका प्रयत्न करते रहते हैं। परन्तु जिनकी लगन सच्ची होती है, अुनके लिअे ये बाधाअें निर्मल हैं। बाहू, आओ अुस स्थानपर चलें जहाँ किसी औरका स्वत्व न हो।)

"अैन अिश्क दी वाह, हड्डियाँ या बालम,
आशक बेह सकेन्दे हू,
कटके जान जिग्र विच आरे, वेख कबाब तलेन्दा हू,
सरग्रदां फिरन हर वेले, खून जिगरदा पीदां हू,
हो गये हजारां आशक बाहु, पर अिश्क नसीब कीदे हू!"

१. अैन [प्रेम अेक अग्नि है, हड्डियाँ अिसका बालम हैं और प्रेमी अिस अग्निकी आंचको सेंकते हैं। हृदयपर आरा चल रहा होता है और वे देखते रहते हैं कि कबाबके समान वे तले जा रहे हैं। (क्योंकि प्रेमकी अग्निमें, प्रेमियोंकी ही हड्डियाँ सुलग रही हैं) हजारों प्रेम करनेवाले हो गये हैं, परन्तु प्रेम किसको प्राप्त हुआ है?]

प्रियतम प्रेमीसे क्या माँगता है, निम्नांकित पंक्तियोंमें अिसका बड़ा सुन्दर वर्णन हुआ है--

"दाल दिल काले कोलूं, मुंह काला चंगा,
जे कोअी अुस नू जाने हू,
मुंह बाला दिल अच्छा, तां दिल थार पछाने हू,
राह दिल यारदा पिच्छे होवे, मत यारकी कदी संझावे हू,
बाहु, सत आलम छोड़ मसीतां नस्से,
जब लगोने दिल ठकाने हू।"

२. दाल [ज्ञानी पुरुष समझते हैं कि काले दिलसे काला मुँह अच्छा है। यदि मुंह काला है और हृदय स्वच्छ और निर्मल है तो, प्रियतम दिलको पहचान लेता है। यदि हृदयमें सदा प्रियतमकी लगन ही लगी रहे, तो सम्भव है कभी प्रियतम भी, हृदयकी अुस लगनको समझ ले। सैकड़ों ज्ञानी (सांसारिक ज्ञानके) मस्जिद छोड़कर भाग गये (अपने प्रियतमकी खोजमें) जिस समय अुनका हृदय अिस अवस्थाको पहुँच गया।]

"गुरु-अुपदेश बिना सत्यसाधन नहीं होता, अतः किसी भी कोटिका गुरु क्यों न हो अुपदेश अवश्य श्रवण करे, अिसीमें जीवका कल्याण है।" बाहू अपने गुरुको ही अीश्वर प्राप्तिका अेक मात्र साधन समझते थे।

"मीम मुर्शिद मक्का तालिब हाजी कावा अिश्क बनाया हू,
बिच हजूर सदा हर वेले, करिये हज सठाया हू,
अिक दम मैथों जुदा जे होते, दिल मिलने ते आया हू,
मुर्शिद अेन हयाते बाहु, मेरी लू-लू विच समाया हू,"

३. मीम [गुरु मक्का है, भक्त हाजी है और प्रेम कावा है। परन्तु आपके ध्यानमें तो मैं हर समय ही, अिससे भी अच्छा हज्ज करता रहता हूँ। यदि अेक क्षण भी आप मेरी आँखोंसे ओझल होते हैं तो हृदय मिलनेके लिअे तड़प अुठता है। गुरु ही मेरा जीवन है, और मेरे अणु-अणुमें समाया हुआ है।]

"सीन सुन फरियाद पीरां दया पीरा,
मैं आख सुनखाँ कीनु हू
तेरे जेहा मैं नु होर न कोअी,
मेरे जहे लख तैनुं हू,
फोल न कागज बदिणं वरले,
दर तों धकन मैनुं हू,
मैं विच राड गुनाह न हुन्दा,
बाहु तूं बखशीन्दो कान्हो हू,"

४. सीन [अै गुरुओंके गुरु, मेरी प्रार्थना सुनो, मैं और किसे सुनाअूं? मेरे लिअे तुम्हारे जैसा अन्य कोअी नहीं है। मेरे जैसे तुम्हारे लिअे लाखों हैं। मेरे बुरे कर्मोंके लेखे न देखो, अपने द्वारसे मुझे न हटाओ। यदि मुझमें अितने अवगुण न होते तो तुम मुझे क्यों क्षमा करते!]

जब तक मनुष्य "मैं" और "तू" के बन्धनसे अपनेको मुक्त नहीं करता, तब तक अुस-परम प्रियतमका पाना सम्भव नहीं है। प्रेमका मार्ग अति संकीर्ण है, अिसमें अेक साथ दो प्रवेश नहीं कर सकते। जब तक "अहं" बना हुआ है, तब तक अुनका पाना कठिन है, और जब वह मिल जाता है तो "अहं" नहीं रहता। प्रेमके अिस मार्गपर प्रेमीको अपनी सांसारिक वस्तुअों और कामनाओंका ही त्याग नहीं कर देना पड़ता, वरन् अुसे पूर्ण रूपसे अपना-आप अुस परम प्रियतमको समर्पण

---

१. २. अुर्दू वर्ण-मालाके अक्षर।

३. ४. अुर्दू वर्णमालाके अक्षर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर देना पड़ता है। बिना अैसा किये, वह अलौकिक प्रेमका अधिकारी नहीं बन सकता। सूफीवादके अिस सिद्धान्तको वह मानते थे। अपनी रचनाओंमें अुन्होंने अिस विषयपर बहुत कुछ लिखा है। वह मानते हैं, कि साधकको जब परमात्माकी विभूतिका, सौन्दर्यका, साहचर्यका, अनुभव होता है, तो वह अुससे विभिन्न हो जाता है--

"हे हूदा जाया पाये घर आया,
अिस कमावन जाती हू,
न ओथे कुफर अिस्लाम दी मंजिल,
न ओथे मौत-हयात रो हू,
शाहरग-सी नजदीक लंघीसी पा
अन्दूरे झाटी हू,
ओह असां विच, असीं ओन्हां विच,
दूर हुअी कुड़बाती हू"

अूपर दी गयी सिर्हफी, अुपरोक्त पक्तियोंका वर्णन बड़े सुन्दर अेवं कलात्मक ढंगसे करती है।

अेक और स्थानपर वे लिखते हैं--

"जो पाक बनन बिन पाक माही दे,
सो पाक हैं जन पलीतीं हू,
अिक बुत्त खाने जा वसल दो आये,
अिक खाली रहे मसीतीं हू।"

[जो अपने 'अहं' को साथ लिअे हुअे (प्रियतमके अभावमें ही) अपने आपको अरीफ़ (परमात्माका प्यारा) कहे, अुसे काफिर (अपवित्र) समझो। अेक वे हैं जिन्होंने बुतखानोंमें जाकर परमात्माका वसल (मिलन) पा लिया और अेक वे हैं जो मस्जिदोंमें भी असफल रहे।]

सन्त बाहु यह मानते थे कि भगवान स्वयम् प्रेम-स्वरूप है और अुन मनुष्योंको अपना रहस्य नहीं बताता, जो अुसके प्रेमको पानेके अधिकारी नहीं। जिन्होंने अपना समस्त कलुष धो नहीं डाला और जिन्होंने सांसारिक वस्तुओंके प्रलोभनका त्याग नहीं किया, अुन्हें अिस प्रेमको पानेका अधिकार नहीं है। विशुद्ध आत्मा परमात्माका ही अंश है। वे यह भी मानते थे कि भगवान संसारकी सभी वस्तुओं और पदार्थोंमें विद्यमान है। सभी दृश्य अथवा अदृश्य वस्तुओंका अुद्गम वही है। वह सब कुछ जानता है, सब कुछ देखता है, अुसका अेकत्व सर्वव्यापी है, अुसकी विभूतियोंका हम सर्वत्र दर्शन करते हैं, वह केवल 'वही' नहीं, वरन् सब कुछ है, वही परम सत्य है, सभी कार्य अुसीकी अिच्छाके परिणाम हैं, सबका आदि वही है, सबका अन्त वही है, वह सर्वातीत है, सर्वगत है, निरुपाधि है, निर्गुण है, असीम है — किन्तु अिस सिद्धान्तको माननेसे, कट्टर अिस्लामके अनुसरण करनेवाले अुनके कट्टर विरोधी हो गये और औरंगजेब अुनपर चुभती नजर रखने लगा; क्योंकि अिस्लामके सिद्धान्तोंसे अुपरोक्त सिद्धान्तका विरोध पड़ता है। परन्तु वह अपने पथपर दृढ़तासे चलते रहे तनिक भी विचलित नहीं हुअे। सम्भवतः निम्नांकित पंक्तियाँ अिसी विषयसे सम्बन्धित हैं —

"अेन अिश्क होवे ते अिश्क कमाते,
दिल रखे वांग पहाड़ां हू,
लख-लख बदियां, हज़ार अुलाहमें,
कर जाने बाग बहाराँ हू,
मन्सूर जहे चुक सूली दित्ते,
वाकिफ कुल अुसराये हू,
सिजदेयाँ सार दिल न चाहे,
बाहु तोर काफर केहून हजाराँ हू।"

१. अेन [यदि कोअी साधक हो और प्रेमकी साधना करता हो, तो अुसे अपने हृदयको पर्वतके समान स्थिर रखना चाहिये। लाखों अप-शब्द और हजारों अुलाहने अुसे फूलों जैसे कोमल प्रतीत होने चाहिये। मन्सूर जैसे ज्ञानी साधकोंको सूलीपर चढ़ा दिया गया। किसीके सामने सिर झुकाने (नियमित रूपसे सिजदे करने) को मेरा मन नहीं चाहता। चाहे हजारों मुझे काफिर कहें।]

पाखण्डी साधुओंके विषयमें वह लिखते हैं--

अेन अिलमवा झे कोअी फिक्र कमावे, काफिर मरे दिवाना हूँ,

---

१. अरबी वर्णमालाका अक्षर।

२. तवारीख सुल्तान बाहु पृष्ठ २२।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सअी बरयाँ दे करे अिबादत,
रहे अल्लाको लूँ बगाना हू,
गफलत कनूं न खुसलन पर्दे,
दिल जाहील बुतखाना हू,
में कुर्बान तिन्हां ते बाहु,
जिन्हां मिलया यार पगाना हू ।

अेन [अिलम (यहाँ अभिप्राय आध्यात्मिक-ज्ञानसे है) के अभावमें जो अपने आपको आरिफ (परमात्माका प्यारा) बतलाये, वह काफिर तत्क्षण ही मर जाना चाहिये । वह सौ वर्ष तक भगवानकी साधना करता रहे (सत्यके अभावमें) भगवानकी ओर जानेवाले पथसे अपरिचित ही रहेगा । अज्ञानके पर्दे अुसके मस्तिष्कपरसे न अुठेंगे और हृदय बुतखाना बना रहेगा । मैं अुनपर बलिदान हो जाअूं, जिन्होंने प्रियतमको पा लिया है ।]

अेक और सिहर्फीमें मृत्युके पश्चात्का भयानक दृश्य खींचते हुअे कहा गया है--

जीम ज्यून्देकी जानन,
सार मोयां दी सो जाने, जो मुर्दा हू,
कवरां दे निच अन्त नहीं पानी,
अुत्थे खर्च तुनेन्दा घरदा हू,
ओमान सलामत तिस दा बाहु,
जेढा रब अग्गे सिर धरेन्दा हू ।

"परमात्मा ही अेक मात्र सत्ता है" सबको अेक दिन कब्रमें जाना है (अिस शरीरका त्याग करना है)। अुससे अलग कोअी सत्ता नहीं--क्योंकि सबका पर्यवसान अुसी अेकमें होता है और मनुष्यके कर्मोंका विधायक भी वही है । यही, बड़े कलात्मक ढंगसे अुपरोक्त सिहर्फीकी अन्तिम पंक्तिमें कहा गया है।

तारीखे-सुल्तान बाहूमें अंकित है कि अिनकी कीर्त्ति दूर-दूर तक फैली हुअी थी । लोग अिनके पास दौड़े आते थे और अपने संतप्त जीवनकी शान्तिके अुपायका अवलम्बन करते थे और अिनके साथ भजनमें आनन्द-विभोर हो जाते थे । अिनके सामने जाति-पाँतिका भेद-भाव नहीं था । श्रोतागणमें सभीका अेक ही भक्ति-समन्वित-हृदय होता था और अेक ही आन्तरिक-भावना ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युग-प्रतीक

: श्री श्रीराम शर्मा 'राम' :

"जीवन और अुसकी साधना, गोष्ठीका प्रमुख विषय था। अनेक वक्ता थे, अुनके पृथक्-पृथक् जीवनके दृष्टिकोण थे। किसीके मतसे जीवन धार्मिक हो, किसीके अनुसार जीवन आर्थिक और राजनैतिक स्तरकी अूंचाअीपर बैठा हो। लेकिन वास्तविकता यह थी कि धार्मिक जीवनपर ही, अधिकांश व्यक्तियोंका मत था। गोष्ठी समाप्त हुअी और सभा-स्थलसे चलते हुअे, रास्तेमें मौन बनी लतिकाको अिंगित कर साहित्यिक तरुण सदानन्दने कहा--'दिखता है, तुम्हें सन्तोष नहीं हुआ?' अितना सुनकर, साथ चलते हुअे विपिनने कहा--'सन्तोषका विषय ही नहीं था। आजके मनुष्यको भी पुरानी लकीरपर चलनेके लिअे कहा जा रहा था।'

लतिकाने कहा--'राजनीति ही मानवका विकास मार्ग है।'

सदानन्दने कहा—'जहां वास्तविकता छिप जाती है। झूठ और छल ही सर्वोपरि हैं।'

लतिकाने कहा--'मैं पार्टियोंकी बात नहीं लेती। संघोंके संघर्षको भी महत्व नहीं देती।'

विपिनने कहा--'मनुष्यका आदर्श यह नहीं कि मन्दिरोंमें जाकर पत्थरोंकी पूजा करे। मनुष्यकी पूजा छोड़कर हमने दुर्नीतिका मार्ग ग्रहण किया है।'

सदानन्द बोला--'तुम्हारा अर्थ है देवता न पूजे जाअें। तुम्हारा मतलब यह भी है कि जातिका अितिहास न स्वीकार किया जाअे!'

विपिनने तुरन्त ही, अपने स्वरपर जोर देकर कहा 'महाशय, मैं जातिके अितिहासमें जीवन पाता हूँ। वही अितिहासकी नींव है कि जिसपर मानवके भवनको खड़ा देखता हूँ।'

अेक चौराहेपर जाकर सब पृथक् हो गये लतिका अपने घरकी ओर चल पड़ी। वह घर पहुँची, तो माँने अुसे देखते ही कहा—'तू कहाँ गयी थी री, प्रोफेसर अजय आकर बैठे हैं। देरसे आये हुअे हैं।'

लतिकाने कहा—'अेक गोष्ठीमें गयी थी, माँ! आज अच्छे भाषण हुअे। अुन स्वामीजी महाराजके प्रवचन भी सुननेको मिले।'

माँने पूछा–'क्या कहा स्वामीजीने?'–अुसने कहा–'बताया होगा कि जीवन कैसे बिताना चाहिये। अच्छा अुपदेश करते हैं। गीता कंठस्थ है।'

किन्तु अपने मनमें अुठती हुअी बातको लेकर लतिकाने कहा—'प्रोफेसर अजय आज कैसे आये हैं, माँ! क्या अुन्हें बुलाया है?'

माँने कहा—'तेरे पिताजीने बुलाया है। अभी बच्ची, बनी है न तू, जैसे जन्मभर बापके घरमें ही रहना चाहती है।'

लतिकाने सुना और मनमें अनायास विद्रोहका विचार लिये हुअे भी, अुसने माँसे कुछ नहीं कहा। वह पिताके कमरेमें गयी और सामने प्रोफेसर अजयको देख, नमस्ते करके कुर्सीपर बैठ गयी।

पिताने पूछा–गोष्ठीमें गयी थी, लतिका?

लतिकाने कह दिया– जी!

क्या सुना? स्वामीजीका भाषण सुना?

लतिकाने तब भी कह दिया– जी!

अुसी समय पिताने प्रोफेसर अजयकी ओर देखकर पूछा—'आपका क्या मत है, अिस धर्मके विषयमें?'

प्रोफेसर अजयने तुरन्त कहा–'मैं धर्मको प्रधानता देता हूँ। धार्मिक जीवन ही श्रेष्ठ मानता हूँ।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिताने बात सुनी और जरा रुककर कहा– 'यह बड़ी बात है ! आजका युवक जो योरोपमें रह आया है, वह धर्मकी जय कहता हो, मुझे यह विचार श्रेष्ठ लगता है।'

परन्तु लतिकान अितनी बातको सुना और अनायास मनमें हँस दिया। अिच्छा हुअी कि वह जोरका ठहाका मार दे, किन्तु अुसने विपरीत भाव लिये हुअे अपनेको पूर्ववत् गम्भीर बनाये रखा।

अुसी समय प्रोफेसर अजयने कहा– 'जीवनका प्रधान लक्ष्य धर्म है। धर्महीन मानव क्या जीवित रहता है ?'

'बेशक ! बेशक !' बरबस, आतुर भावमें लतिकाके पिताने कहा।

किन्तु लतिकाने अपने मनमें कहा– 'यह प्रोफेसर धूर्त्त है ! मूर्ख भी है ! मेरे पिताको प्रसन्न करनेकी बात कह रहा है !'

निदान, अुसने पिताकी ओर देखकर कहा— 'पिताजी, धर्मकी व्याख्या क्या है ? धर्म क्या है ?'

सुनकर, पिता चौंके, वे प्रोफेसर अजयकी ओर देखने लगे।

प्रोफेसरने कहा– 'धर्म वह है, जो जीवनकी व्यवस्था, आस्था हमें बताता हो। हमारा विवेक सन्तुलित रखता हो। नैतिक धरातल अूँचा अुठाता हो।'

लतिकाने पूछा–'और विवेक क्या है ?'

भावावेशमें प्रोफेसरने कहा– 'जिसे हमारी आत्मा स्वीकार करती हो।'

सुनकर, लतिका किंचित् हँसी। तदन्तर वह अपने पिताकी ओर देखकर बोली– 'पिताजी, अिस धार्मिक शब्दको,—धर्मवादको–सदियोंसे हम सुनते और समझते आये हैं। परन्तु अिसका जो व्यावहारिक स्वरूप है, अुसे कभी भी स्वीकार नहीं किया गया। निःसन्देह, धर्म-प्रवाहमें बहकर हमने जिस किसी देवताकी-पूजाकी, अुससे स्वर्ग-प्राप्तिकी कल्पनाको छोड़, और कुछ नहीं पाया गया। अुन क्षणोंमें हमने संसारको भुलानेका प्रयत्न किया। स्वार्थ-साधना ही हमारा ध्येय रहा। संसारका व्यक्ति, पृथ्वीपर चलता हुआ भी, आकाशमें अुड़नेकी कल्पनामें डूब गया....'

सदय भावमें पिताने कहा—'बेटी, जीवनका यही तो लक्ष्य है ; मनुष्यका यही है अुद्देश्य !

लतिकाने कुर्सीपर पीछे पीठ करके कहा—क्या। आजके युगका यही लक्ष्य है !

प्रोफेसर अजयने कहा—'हम धर्मको नहीं मानते, अिसीलिअे आजके युगमें परेशानी है, पीड़ा है, क्लेश है।'

सुनकर, लतिका हँस दी— 'आपकी बात भी अजीब है। या तो आप धर्मकी रूप-रेखा नहीं समझते, अथवा रूढ़िग्रस्त-भावनाओंके पीछे अुसे स्वीकार नहीं करते। अेक धनिक भी भूखे मानवसमाजको सुनाता है, भाग्यका खेल है; कर्म अपने-अपने।' कहते हुअे अुसका मुँह लाल हो गया।

प्रोफेसरने अितना सुना तो चौंक गया।

किन्तु अुसी समय पिताने लतिकाकी ओर देखकर, क्षुण्ण भाव लेते हुअे कहा—'न, बेटी ! प्रोफेसर अजयके पास विद्या है, अनुभव है। संसारकी आधेसे अधिक सैर कर चुका है।'

लतिकाने कहा—'आजका युवक अपने पितासे अधिक अनुभव रखता है, पिताजी ! वह जीवन-दर्शनको समझता है। अितना स्वीकार करनेमें मुझे क्या आपत्ति कि प्रोफेसर महोदय बड़े अनुभवी हैं। जो बात आपने की, अुसपर मेरा भी तो अेक मत हो सकता है।'

पिताने कहा—'हाँ, हाँ, तुम्हारा भी, मत हो सकता है।'

प्रोफेसरने कहा—आजके युगका यह भी दोष है कि अधिक मत चल पड़े हैं। अुनमें अधिकांश स्वीकार भी किये जाते हैं।' अितना कहते हुअे ही प्रोफेसर अुठा और बोला 'अब आज्ञा दीजिये। फिर मिलूँगा।'

पिताने कहा—'आपको देर हो गयी।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रोफेसर चल दिया। लतिकाके पिताने मकानके द्वारपर जाकर कहा—'रविवारके दिन भोजन यहीं कीजिये।'

प्रोफेसरने स्वीकार कर लिया और चल दिया। वह चला गया।

अुसी समय अपने कमरेमें जाकर लतिकाने बरबस ही, मेजसे अेक पुस्तक अुठायी, अुसके पन्ने पलटे और तुरन्त ही, अुसे जोरसे पटक दिया। तभी अुसने अपने माथेमें बल डालकर कहा—'यह भी अेक समस्या है... नारीकी समस्या है!'

'क्या .... ?.....क्या...?'

'यह विवाह! नारीका निर्वाह!'

खिड़कीके द्वारसे, सामने धूमिल आकाश दिख रहा था। अन्धेरा बढ़ रहा था। अुस आसमानमें ही, अपनी दृष्टि ले जाकर, लतिकाने जैसे नितान्त कातर तथा दीन भावमें अपने-आप कहा—'युग बीत गये हैं, विश्वके अनेक रूप परिवर्तित हो गये हैं, मनुष्य-समाजके काले और सुनहरे अितिहास बनकर बिगड़ गये हैं, परन्तु अिस नारी और पुरुषका सम्बन्ध—या पराश्रित अवलम्ब,—क्या आज तक बदला है,—परिवर्तित हुआ है!' लतिकाने स्पष्टतः रोष भरे स्वरमें कहा—'यह प्रोफेसर अजय, निश्चय ही बनावटी है, झूठा है! भला यह क्या मन्दिरोंमें गाकर देवताओंकी पूजा करता होगा! अिसने कभी अपनी आत्माके विवेकको भी स्वीकार नहीं किया होगा! पिताजीको प्रसन्न करनेके लिअे झूठ बोल गया। अेक वृद्ध भावनाके दुर्बल मनको प्रसन्न करनेका प्रयत्न कर गया...

अुसी समय कमरेके बाहर लटकते हुअे पिंजरेमें बैठे हुअे तोतेने आवाज दी 'लतिका!'

लतिकाने तोतेकी प्यारभरी वाणीको सुना। अुसका तोतेके पास जानेको मन हुआ। परन्तु तभी घरकी महरी वहाँ आयी। वह बर्तन माँजकर लौट रही थी, अुसके साथमें सात-आठ वर्षका लड़का था। अपेक्षाकृत कमरा गर्म था। हीटर जल रहा था। परन्तु लड़का काँप रहा था। अुसकी माँ भी काँप रही थी। महरीने आते ही कहा—'बीबीजी, तुमने तो अभी तक खाना नहीं खाया। माँजीने कहा है, तुम्हारा खाना चौकेमें ढँक रखा है। मैं जाअूँ?'

लतिकाने महरीकी बात सुन ली, पर मत नहीं दिया। अुसकी दृष्टि लड़केपर पड़ी, फिर अुसकी मां पर। शीघ्र ही, जाने कैसे अुसकी आँखोंके समक्ष कॉर्लमार्क्सका चित्र आ गया। वह बोली—'अुस ऋषिने ठीक कहा... धार्मिक-वृत्तिने हमारी बुद्धिपर अैसा पर्दा डाला कि विवेक चला गया. ढँक ही गया, हमारा जीवन! सदा स्वर्गकी कल्पनामें अुलझा रहा...जीवन और जगतके प्रति अुदासीन और अकर्मण्य ही बना रहा! हमने मानवको ठुकराया, देवताका पूजन किया,—हाय!' तभी दीन भावमें अुसने महरीसे कहा, 'अरी, हिरिया!'

हिरियाने कहा—'जी, बीबीजी!'

'तुझे जाड़ा नहीं लगता! अिस लड़केको नहीं!' देख, पाला पड़ रहा है। बर्फ कट रहा है।

हिरियाने कहा—'जाड़ा लगता क्यों नहीं, बीबीजी! पर लाचारीमें सभी कुछ सहन करना पड़ता है!'

लतिकाने ओढ़ा हुआ शाल अपने अूपरसे अुतारा और अुस लड़केको ओढ़ाकर कहा—'माँजीसे न कहना। अिस शालको यहाँ भी मत लाना। तू ले जा।'

शाल देख-सुनकर, हिरिया जैसे सहम गयी। बोली—'न, बीबीजी! मालिकोंसे चोरी करना क्या अच्छा है!'

लतिकाने कहा—'चीज मेरी है। पिताजीने मुझे लाकर दी है। यह शाल काश्मीरसे मंगायी है। गरम भी बहुत है।'

हिरियाने कहा—'मैं नहीं लूँगी—अैसे नहीं ले जाअूँगी'

अुसी समय कमरेके द्वारपर आकर लतिकाके पिताने कहा—'न, हिरिया! तू शाल ले जा। लतिकाने दी है, तो ले जा। लड़केको दी है, ठण्डमें सिकुड़ता देखकर दी है।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लतिकाने सुना और गद्‌गद् भावमें वृद्ध पिताके कन्धोंपर अपना मुँह रख दिया और अेकाअेक कहा – 'मेरे पिताजी !'

पिताने अुसके सिरपर हाथ रखते हुअे कहा— 'मेरी बिटिया अुदार हो, दयाका भाव रखती हो, पिताके रूपमें मेरी यही प्रतिष्ठा है। मेरा सम्मान है।'

लतिकाने बात सुनी और कुछ नहीं कहा, अुसका कण्ठ अवरुद्ध हो गया।

* * * *

दूसरे दिन सबेरे-सबेरे, जब लतिकाके पिता अुसके कमरेमें आये, तो लतिका मेजके अूपर तोतेका पिंजरा रखे हुअे अुसे चुगा रही थी। वहाँ आते ही पिता बोले--'जानवर भी ममता समझता है। यह तोता भी प्यार करता है।'

लतिकाने कहा--'प्रातःकालमें ही मेरा और अिसका वार्तालाप होता है। वैसे अब माँको भी पुकार लेता है।'

पिता हँसकर बोले--'तोता समझदार है।'

वह कुर्सीपर बैठ गये और बोले—'बेटी, कल रविवारका दिन है। प्रोफेसर अजयको भोजनपर बुलाया है। कल अुन्होंने मुझे योरोपके अनुभव बताये। वहाँके व्यक्ति-समाजका रंग-ढंग भी बताया--

बीचमें ही लतिका बोली--'पिताजी, वहाँ आर्थिक स्वतंत्रता है। राष्ट्र-प्रेम भी है।'

'जब आदमीका पेट भरा होता है, तो मस्तिष्क भी स्वस्थ बातें सोचता है। हमारा अितिहास धार्मिक पण्डितोंने बिगाड़ दिया है।'

पिता बोले--'लेकिन बेटी, धर्म जीवनको प्रकाश देता है।'

लतिकाने कहा--'धर्मकी अुस महानताका प्रायः लोप हो गया है। हमारे समाजने चांदी-सोनेमें भगवानका शृंगार किया है। अुसे सुन्दर भवनोंमें निर्मित किया गया है !'

पुत्रीकी बात सुनकर, पिता हँसे नहीं, गम्भीर बन गये।

लतिकाने फिर कहा–'पिताजी, धर्म-वृत्ति हमारी आत्मामें प्रकाश करती है, बल देती है। अुससे हमारा विवेक निखरता है। नैतिकताका स्तर भी अुच्च होता है। लेकिन हमने पत्थरोंकी पूजा क्या की, व्यक्तिका अनादर करना आरम्भ कर दिया! व्यक्तिका मोह भी त्याग दिया। अजीब बात है, मानवका शोषण भी किया और संसारको मिथ्या, प्रपंच भी मान लिया ! आज अवस्था यह है कि व्यक्ति जुदा है....आर्त्त-नाद गूंज रहा है, पीड़ाअें चीख रही हैं, मानवका रोदन चारों ओर भरा है, परन्तु क्या पत्थरीली दीवारोंके अन्दर बैठा हुआ पुजारी पत्थरकी पूजा करते हुअे, बजाते हुअे घंटे घड़ियालोंके स्वरमें कुछ सुन सकता है, हाय ! मूक-मानव वहाँ भी ठुकराया जाता है। लक्ष्मीका अैश्वर्य भगवानके मन्दिरमें, या राजाके महलमें ही दिखायी देता है.....

लतिकाके पिताने सांस भरी और अपना मुँह खिड़कीके बाहर हरे आसमानकी ओर अुठा दिया।

लतिकाने कहा—'मैं प्रोफेसर अजयको देखकर प्रभावित नहीं हुअी, बचपनसे ही सुनती आयी हूँ कि लड़कीको दूसरेके घर जाना पड़ता है। देखती हूँ मुझे भी जाना पड़ेगा। जहाँ भेजेंगे आप, चली जाअूंगी।'

झटका-सा खाकर पिता बोले—'हाँ, बेटी ! तुम्हें भी जाना पड़ेगा। जवान हुअी....तुम सयानी...'

सुनकर, लतिकाके होठोंपर विद्रूपकी रेखा दौड़ गयी। वह विपाक्त और निर्दय सदृश बन गयी। बलात बोली—'जाना आवश्यक तो नहीं, पिताजी ! यह अेक ही पुत्री है आपकी, पुत्र भी नहीं। मुझे सेवा करनी चाहिये। यहीं रहना चाहिये।'

गद्‌गद् भावमें पिता बोले—'पर अैसा निभा कहाँ है, लतिका !'

लतिकाने कहा—'आप चाहें तो निभेगा। लतिका आपकी है। यौन-तृप्तिका प्रश्न तो बेकारोंको सूझता है, पिताजी ! मेरे सामने तो विश्वका द्वार खुला है। मार्ग प्रशस्त है। लम्बा है। कर्म-क्षेत्र मेरा भी आवाहन कर रहा है। यह पढ़िये तो अखबार, देशपर मर-मिटनेवाले शहीदोंका मन्दिर बनाया गया है। याद है न वह सतीश, शहीदोंकी यादमें अुनका भी नाम लिखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। अुन्हींके खूनसे स्वतन्त्र भारतका अितिहास लिखा गया है।'

पिताने कहा—'सतीश भला था। होनहार था।'

'तभी तो वह फाँसीपर चढ़ गया। देशके लिअे जिया, देशके लिअे मर गया।'

'वह सार्थक जीवन था। महान था।'

'वह पूजनीय... वह देवत्वसे पूर्ण! वह गंगाकी धार कि जिसने देशको पखार दिया!'

पिता बोले—'निःसन्देह, देशको अैसे बच्चोंपर गर्व है।'

लतिका बोली—'जातियोंके अितिहास खूनसे लिखे जाते हैं, देश अपने युवकोंके कन्धोंपर ही खड़े होते हैं।'

पिता मौन थे। वे गम्भीर बन गये थे।

लतिकाने फिर कहा—'राष्ट्र-प्रेम सबसे बड़ा धर्म है। जाति और व्यक्तिका सम्मान करना ही धर्मकी सूक्ष्म व्याख्या है। खेद है कि हमारे देशने अिसे भूलनेका प्रयत्न किया है।'

पिताने कहा—'हमने धर्मका रूप ही गलत समझा है।'

लतिकाने कहा—'गलत समझाया गया है। देशने चाँदी-सोनेकी पूजा आरम्भ की तो विवेक नष्ट हो गया। कर्म-भाव मस्तिष्कपर छा गया। देखनेका दृष्टिकोण बदल गया।'

पिताने साँस भरकर कहा—'समय आ गया है, परिवर्तन आअेगा। रूढ़ियाँ बदलेंगी, अिन्सान भी बदल जाअेगा।' अुन्होंने कमरा छोड़ दिया। लतिकाने तोतेका पिंजरा बाहर टाँग दिया। अुसी समय वहाँपर माँ आयी और बोली—'अरी, रोटी खा ले। कालेजका समय हो गया।'

लतिकाने हँसकर माँका कन्धा पकड़ लिया और अुसपर अपना मुँह रखते हुअे कहा—'तुम्हें मेरी बड़ी चिन्ता रहती है, माँ!'

माँने कहा—'पैदा भी की है! बड़े कष्टसे पाली है।'

लतिकाने आलोड़ित होकर कहा—'मेरी अच्छी माँ!'

अुसी समय तोता चिल्लाया—'माँ!'

लतिकाने कहा—'तुम्हारा तोता और बेटा बन गया है, माँ!'

माँने कहा—'तूने सिखा दिया है।'

लतिका बोली—'तोता समझता है। अपना स्वार्थ देखता है।'

रसोअी-घरमें जाकर जब वह रोटी खाने लगी, तभी माँने कहा—'कल फिर आअेगा, प्रोफेसर! बोल, तुझे पसन्द आया?'

लतिकाने चिढ़कर कहा—'जो विषय मुझे पसन्द नहीं, तुमने वही छेड़ दिया माँ! मनुष्य सभी अच्छे हैं। प्रोफेसर अजय क्या बुरे हैं!'

'हाँ, बेटी! अब कोअी तो देखना ही था! तेरे माँ-बाप तो बूढ़े हुअे, पके आम हुअे, कभी भी डालीसे टूट सकते हैं।'

लतिकाने बात सुन ली और मत नहीं दिया। अुसने शीघ्रतासे थालीकी रोटी निबटायी, पानी पिया और खड़ी हो गयी।

माँने कहा—'बस!'

लतिकाने वहाँसे जाते-जाते कह दिया—'माँ, बस!'

यों, वह दिन भी चला गया। रविवारके दिन प्रोफेसर अजय आया और अुसने घरपर अतिथिके रूपमें सुन्दर भोजन किया। अुसने अपेक्षाकृत लतिकासे भी अपने लिअे सम्मान पाया। वह सुन्दर भावनाओंसे भरा, अुस घरसे विदा हुआ। अुस दिनसे वह अुस घरका अभिन्न अंग बन गया। नित-नित लतिकाके सम्पर्कमें आनेका सुयोग भी मिलने लगा। अुनका विवाह दिन भी निश्चित हो गया।

सन्ध्याका समय था। प्रोफेसर अजयने सिनेमा जानेका प्रोग्राम बनाया था। जब वह लतिकाको बुलाने आया तो अुसे सुनकर आश्चर्य हुआ कि लतिका घरपर नहीं थी। वह अुस मन्दिरमें गयी हुअी थी जहाँ देशपर मरनेवालोंका स्मारक बनाया गया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। निदान, प्रोफेसर वहीं पहुँचा। वह यह देखकर भी अचम्भित हुआ कि लतिका आँखोंमें आँसू लिये, अुस स्मारकको देख रही है, वह अेकाकी और अेकान्त बनी है।

प्रोफेसरने आवाज दी--'लतिका !'

लतिकाने अुस ओर देखा कि प्रोफेसरके मुँहपर हँसी है, जैसे अुस स्मारकके प्रति अुपेक्षा।

अुसी समय प्रोफेसरने कहा—'छोड़ो भी ! छोड़ो! सिनेमा चलो।' और वह फिर अुस स्मारककी ओरसे नाक सिकोड़कर अिसकी ओर देखने लगा।

किन्तु लतिकाने कहा—'तुम जाओ, चले जाओ !'

सुनकर प्रोफेसरने झटका खाया और चकित होकर पूछा--'सिनेमा नहीं चलोगी ?'

तब भी कठिन और कठोर स्वरमें लतिकाने कह दिया—'नहीं ! मैं नहीं-!' और बोली—'ओह ! तुम कठोर हो ! निर्दय हो ! तुम अिन्हीं शहीदोंके बलिदानोंपर स्वतंत्रताके दर्शन पाते हो और अिन्हींके प्रति अुपेक्षा रखते हो ! तुम पत्थरका देवता पूजना जानते हो !'

प्रोफेसरने कहा—'लतिका देवि, यह केवल भावनाओंका मोड़ है। लोग तो मरते हैं, जीते हैं ! हाँ, कुछ मार भी दिये जाते हैं।'

लतिकाकी आँखोंमें खून अुतर आया। अुसका रोम-रोम काँप गया। सिर घूम गया।

प्रोफेसर बोला—'आओ चलें। चलें।'

अनायास जाने कितने विषम-स्वरमें लतिकाने कह दिया--'मैं आपके साथ नहीं जाअूँगी।'

सन्दिग्ध बनकर प्रोफेसरने पूछा—'कल ? परसों ?'

निर्विकार भावसे लतिका बोली—'नहीं, कभी नहीं !' और वह तेजीके साथ अपने मकानकी ओर चल पड़ी। घर जाते ही, वह सीधी पिताके कमरेमें और अुनके सामने अवरुद्ध स्वरमें बोल पड़ी—'आप मुझे किसी भी लूले-अन्धेको अर्पण कर दीजिये, परन्तु अिस प्रोफेसरको नहीं ! वह समाजका द्रोही है,—मानवकी भावनाओंका द्रोही .. वह मूर्ख है ! पढ़ा हुआ व्यक्ति भी अँधेरेमें घूमता है। जिन्होंने देशको जीवन दिया... राष्ट्रका मुख अुज्ज्वल किया, वह अुन्हींके प्रति अुदासीन है,— ओह ! निकम्मा कहीं का !'

पिताने सुना और पुत्रीकी बातको बरबस स्वीकार कर लिया। अुन्होंने यह भी स्वीकार किया, घण्टे घड़ियाल बजाकर पूजा नहीं की जाती...मानवकी भावनाअें समझी भी नहीं जातीं, पीड़ाके आँसू नहीं देखे जाते...कंकालकी आर्त्त-वाणी...यह सब तो शहीदोंकी पूजा करके पाया जाता है और देखा जा सकता है...यही युग-धर्म है ..युग प्रतीक...।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्य और सुख-दुख !

: महात्मा भगवानदीन :

जब धर्मका अुपदेशक बोलना शुरू करता है, कहता है, "सब सुख चाहते हैं", दुःखसे बचना चाहते हैं, पर शायदही किसीने यह सोचा हो कि सुख-दुःख अैसे मिले हुये हैं जैसे दूध-पानी। सुख बिना दुःख हासिल नहीं होता।

जिसे देखो, दुःखसे भागना चाहता है। लोगोंने अीश्वरके नाम गिनाते अेक नाम बताया, दुःख मेटनहार। रोज मंदिरमें यह बिनती सुनी जा सकती है।

"सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान।
मो गरीबकी बीनती, सुन लेना भगवान॥

हमने छुटपनमें अिस बिनतीको खूब गाया है। अगर भगवानने सचमुच हमारी बिनती सुनली होती और हमारा दुःख मेट दिय होता तो आज ये पंक्तियाँ लिखनेके लिये हम जीवित न रहते। "दुःख-दर्दसे परे होगया" यह अेक मुहावरा है, जिसका मतलब है मरगया।" दुःख-दर्दका न रहना मौत है। पत्थरको दुःख-दर्द नहीं होता, क्योंकि अुसमें जान नहीं होती। दुःख-दर्द जानके साथ लगा हुआ है। वह जीवनका जरूरी गुण है। अुसके मेटने-मिटानेकी सोचना जीवन मिटानेकी सोचना है।

संस्कृतमें "दर्द"के लिये शब्द है "वेदना"। वेदना शब्द विद् धातुसे बना है जिसका अर्थ है जानकारी। वेदना दो तरहकी है—अेक अनुकूल, दूसरी प्रतिकूल। अिन्हींका नाम साता और असाता है। अनुकूल वेदनाका नाम सुख और प्रतिकूल वेदनाका नाम दुःख। अब सुख-दुःख दोनों अेक तरहकी जानकारी रह गये। कौन अैसा होगा जो यह चाहे कि अुसकी जानकारी अुससे छीन ली जाय? दुःख मिटनेका अिसके सिवाय क्या अर्थ है कि दुःखकी जानकारी मिट जाय। क्योंकि दुःख-दर्द अपने तनकी तकलीफसे ही नहीं होता, दूसरोंका दुःख देखकर और ज्यादा होता है—अेक कवि कह बैठा,

दर्दे दिलके वास्ते पैदा किया अिन्सानको
वर्ना ताअतके लिये कुछ कम न थे करोंबियाँ

अुस शायरके हवालेसे यह कहा जासकता है कि आदमी दर्दके लिये पैदा हुआ है, दर्दके लिये पैदा हुआ है।

बच्चा पैदा होते रोता है, नहीं रोता तो दाअी ठंडे पानीका छींटा देकर सताती है। न रोनेके माने हैं पैदा होनेका ज्ञान न होना। अब दुःख-दर्द जीवनकी जानकारीका दूसरा नाम रह जाता है। बच्चा रोता क्यों है? सिर्फ अिसलिये कि अुसे भूखकी तकलीफ होती है। अुसका रोना सिवाय अिसके कुछ भी नहीं कि वह रोकर बता दे कि वह भूखा है। अगर बच्चा भूखकी तकलीफ लिये पैदा न हो तो क्या वह कुछ दिन भी जी जाय? अिसे छोड़िये। अगर अुसकी माँ को अुसके पैदा होनेकी तकलीफ न हो तो बच्चा कहीं तारकर मर जाया बच्चेके पैदा होनेकी तकलीफ प्रकृतिकी अूँचे दरजेकी देन है। अिस तकलीफ और दुःखको अगर कोअी मूरख मिटानेकी सोचने लगे तो यही समझना चाहिये कि वह दुनियासे अुठ जानेकी बात सोच रहा है।

लकवा अेक बीमारी है। अुसे पक्षाघात भी कहते हैं। अुस बीमारीमें आदमीका आधा अंग सुन्न पड़ जाता है। अुसका वह अंग दुःख-सुख मानना छोड़ देता है। हमने किसीको नहीं देखा कि अुस बीमारीके होनेपर अुसने खुश होकर मिठाअी बाँटी हो या अुसके कुटुम्बियोंने खुशी मनाअी हो। क्या यह अुसके और अुसके कुटुम्बियोंके लिये खुशीका मौका न था, आधी देहका सुखदुःख मिट गया। हमने अैसी बीमारीको अेक बार अपनी आंखों देखा है। अुसकी पत्नीसे बातचीतकी। अुस बीमारका पाँव पास रखी अंगीठीकी आगसे जलने लगा। न अुसे पता लगा न हमें। जब माँसकी गंध आअी तब अिधर-अुधर नजर डालनेपर पता चला कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मरीजका पाँव जल रहा है। अब पढ़नेवालोंकी समझमें आगया होगा कि दुःख-दर्द आदमीको जीते रहने और सही सलामत रखनेके लिये कितना जरूरी है? अिस जरूरी चीजको मिटानेके लिये न जाने आदमीने कितने देवता तैयार कर लिये, कितनी देवियाँ बना लीं, कितनी प्रार्थनायें रच डालीं और अिस तरह वह अंधविश्वासके जालमें फंस गया जिससे निकलना मुश्किल हो रहा है।

जिस तरह तेल आमके अचारको बरसों बनाये रखनेके लिये जरूरी है, वैसे दुःख-दर्द आदमीको सौ-सवा सौ बरस जीते रखनेके लिये जरूरी है। दुःख-दर्दकी बात लेकर किसी दार्शनिकने अेक कथा गढ़ डाली जिसका भाव है-- अीश्वरने पहले आदमी बेदुःख-दर्दका पैदा किया। अुसको कोअी तकलीफ न होती थी। नतीजा हुआ कि आदमीकी नस्ल दुनियाके दर्दसे खतम होने लगी। अेक आदमी अीश्वरके पास पहुँचा और दुःख-दर्द मांगकर लाया। तभी तो आज दुनियामें अितने आदमी जीवित है। दुःख-दर्दका भाव समझानेके लिअे कथा सुन्दर है। सचमुच देहका दुःख देह बचाये रखनेके लिये जरूरी है। जबतक दुःख-दर्द देहको बचाये रखनेके लिये जरूरी बना रहेगा तब तक यह अितना दुखदाअी नहीं हो सकता कि आदमी सह न सके। आदमीने अिन्जिनमें भाफकी अेक नली रखी है जिस नलीसे वह ज्यादा भाफ निकाल देता है, अिन्जिनका बायलर फटनेसे बच जाता हैं। प्रकृतिने आदमी अैसा बनाया है कि जब तकलीफ ज्यादा होती है और अिन्द्रियाँ अुसे नहीं सह सकती तब अुसमें मूर्च्छा या बेहोशी आ जाती है, तकलीफ कम हो जाती है। रहा दुःख, वह बेहद जरूरी है। दुःख न होता तो वह कुछ करनेकी न सोचता। दुःख असलमें अलार्मका काम करता है। अलार्म सुनकर आदमी समझ जाता है अुसके जागने या काम करनेका समय हो गया और अुठ बैठता है। मान लीजिये, अेक बच्चेको मच्छरने काट खाया। अब अगर मच्छर काटनेसे अुसे दुःख न हो तो वह क्यों रोये और जब वह न रोयेगा तो अुसकी माँको कैसे पता चलेगा कि अुसे मच्छर काट रहा है और माँको पता न लगेगा तो बच्चा मलेरिया ज्वरसे कैसे बचेगा? अपनी जान खो देगा। अब बताअिये कौन अैसा बेवकूफ होगा जो यह चाहेगा कि अुसके बच्चेको दुःख न हुआ करे। दुःख-दर्द यह बताता है कि क्या नहीं होना चाहिये। बच्चा रोकर माँको बताना चाहता है कि अुसको मच्छर काट रहा है और यह अुसे नहीं काटना चाहिये। बताअिये अिसमें क्या बुराअी है?

अब दूसरी जगह लीजिये। बच्चा जितनी जोरसे रोता है अुतनी जोरसे आदमी नहीं रोता। बच्चेको बाहरी तकलीफ ज्यादा होती है। और प्रकृतिका यह प्रबन्ध बड़े मार्केका है। क्योंकि बच्चेको अपनी तकलीफ दूर करनेके लिये दूसरोंकी जरूरत पड़ती है। अब अगर वह जोर-जोरसे न रोवें तो अुसको दूसरोंकी मदद कैसे मिले। और जबतक अुसे तकलीफ ज्यादा न हो तबतक वह जोरसे कैसे रोवें। ज्यादा तकलीफ होना अुसके लिये जरूरी है।

बच्चेको बाहरी तकलीफ होती है, भीतरी नहीं। आदमीकी तरह अुसके मनके सितारका शायद वह भाग बिलकुल नहीं झंकारता। जरा पुचकारनेपर बच्चा रोना बंदकर देता है, हंसने लगता है। अुसे दूसरेके मददकी जरूरत थी, वह मिल गयी। बच्चोंको बचपनकी तकलीफें याद नहीं रहतीं। अुन्हें वह याद करनेकी कोशिश करे तो भी याद नहीं कर सकता। सचमुच बच्चेको रोते हुअे देख आदमी जितना दुःख मानता है अुसका सौवाँ हिस्सा बच्चेको दुःख नहीं हो रहा होता। अैसा क्यों होता है, यह हम आगे समझावेंगे। दुःख सुखका सारा भेद अिसीमें है। बच्चा हमारी नजरोंमें बहुत दुःखी है, अपने लिअे नहीं। असलमें नासमझोंको बाहरी तकलीफ बहुत होती है, अैसा न हो तो दूसरोंमें दया कैसे पैदा हो और क्यों दूसरे अुनकी मददके लिये दौड़ें।

समझ पैदा होनेपर बाहरी तकलीफ कम हो जाती है, भीतरी बढ़ने लगती है। सबको मालूम है, बच्चा जहाँ समझदार हुआ वहाँ अिस योग्य हुआ कि हँसी और गुस्सेके भावोंको अलग-अलग पहचान सके। अब तकलीफका केन्द्र बाहरसे अुठकर अन्दर पहुँच जाता है। अगर कोअी गुस्सा होकर बच्चेको थप्पड़ दिखाये या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आहिस्तासे मारे तब भी वह दुःख-मानेगा और रोदेगा। अगर हँसकर कोअी अुसे जोरसे थप्पड़ मार दे तब वह रोनेकी जगह हँस देगा। वह दुःख-सुख मनसे मानता है, देहसे नहीं। बस जैसे-जैसे आदमीमें बुद्धि-चेतना बढ़ती जाती है वैसे-वैसे दुःख सहनका अभ्यास होता जाता है।

दूसरोंकी तकलीफको आदमी तकलीफ मान सकता है, बच्चा नहीं। दूसरोंकी तकलीफका अनुभव तभी होता है जब दुःखका केन्द्र तनसे हटकर मन-मस्तकमें जाकर जगह ले लेता है। अुस समय आदमीके हाथमें यह ताकत आ जाती है कि वह दुःखको चाहे जितना बढ़ा ले, चाहे जितना घटाले। बढ़ानेकी हद है, घटानेकी हद नहीं। आदमी दुःखको घटाकर सुखमें बदल सकता है। यही कारण है कि आदमीका सिर कटा होता है और वह हँसता रहता है। किसने नहीं सुना कि कुछ आदमी फाँसीका हुकुम सुनकर फाँसी पाने तक कअी सेर वजनमें बढ़ जाते हैं। सिपाही अपने तनकी बड़ेसे बड़ी चीरफाड़ आँखों देख सकते हैं और हँसते रह सकते हैं। अपना सिर अपने आप काटकर दे डालनेकी बात देखी नहीं, सुनी है, पर झूठ नहीं हो सकती। आदमीके लिअे यह मुश्किल काम है, असम्भव नहीं। अब यह बताअिअे अिस दुःखके दूर करने और मिटानेके लिअे देवी देवताओंसे प्रार्थना किस लिअे? और अीश्वरकी खुशामद किस लिअे? छोटी-मोटी तकलीफ बड़े कामकी चीज है अगर वह देवी-देवता या अीश्वरसे मिटवा लेंगे तो मिट जायँगे। रही देहकी बड़ी-बड़ी तकलीफें, अुनके लिअे प्रकृतिमें प्रबंध है, बेहोशी आ जाती है। अब रही मानसिक तकलीफें, अुसकी कुँजी बुद्धि और आत्मचेतनाके हाथमें हैं, फिर किसीकी मददकी क्यों जरूरत?

दुःख-दर्द अुन्हींको बहुत होता है जो देहमें निवास करते हैं। यह देहका दुःख-दर्द अुन आदमियोंके क्यों कम नहीं होता जिनमें बुद्धि आगअी है? बुद्धि तो अिसलिअे है कि दुःखको कम करे। असलमें आदमी बुद्धिसे दुःख बढ़ानेका काम लेता है, कसूर अुसका है। वह दुःख बढ़ानेका कसूर करके देवी-देवताओंका जाल रचले तो क्या यह सत्यकी बेअिज्जती करना नहीं?

दूसरे शब्दोंमें आदमीके अन्दर दो बक्स हैं। अेकमें सुख भरा है, दूसरेमें दुःख, दोनोंके ताले बन्द हैं। दोनों कुंजिया आदमीके हाथमें हैं। वह आजाद है, चाहे सुखका बक्स खोलले चाहे दुःखका। अगर वह बारबार दुःखका बक्स खोले तो कोअी क्या करे? दुःख सुखके बारेमें जब आदमी अितना आजाद है तब यह अच्छा नहीं मालूम होता कि वह अुन चीजोंको हाथ फैलाकर दूसरेसे माँगे।

अगर आदमीसे दुःख-दर्द छीन लिया जाय तो वह फिर किसीको प्यार न करे। मौतकी अुसे कोअी जानकारी न रहे। फिर आदमी क्या रह जाय यह कहना मुश्किल है। जिसे देखो दुःख मेटनेकी बात सोचता है। सुख मेटनेकी कोअी नहीं सोचता। अगर वह जरा सोचे तो मालूम हो जाय कि वह सुख पानेकी बात कभी सोच नहीं सकता, अगर दुःखको सुख पानेकी बात न सुझावे। दुःख अुसके बड़े कामकी चीज है। दुःख अुसको सुखकी तरफ ढकेलता है। अगर अुसे भूखका दुःख न हो तो वह खानेकी बात न सोचे। सुखसे कहीं ज्यादा दुःख जरूरी है। सुख संसारसे अुठ जाय तो आदमीका कुछ न बिगड़े। दुःख खुद आदमीसे सुख जैसी कोअी और चीज तैयार करवाले। लेकिन अगर दुःख मिट जाय तो आदमी कहींका न रह जाय। भूखका दुःख न हो तो क्यों खाय? जब न खाय तब क्यों न मरे? जब मर गया तब सुख कौन भोगे? अिसलिये सुख मेटने-मिटानेकी प्रार्थना समझमें आती है, दुःख मेटने-मिटवानेकी नहीं। अब रही सुख मेटने-की प्रार्थना। सो सुख मेटने-मिटानेवाले दुनियामें बहुत है। दुनियामें हो ही क्या रहा है? हर प्राणी दूसरेके सुख मेटनेमें लगा है, अिसलिये प्रार्थनाकी क्या जरूरत है? फिर देवी-देवता किस कामके लिये?

सवाल हो सकता है, यह हुअी अपने दुःख-दर्दकी बात पर दूसरोंका दुःख देखकर जो हमको दुःख होता है वह कैसे मिटे? अुसके लिअे प्रार्थनाकी जरूरत रह जाती है। जहांतक हम समझते हैं दूसरोंका दुःखदर्द मिटानेके लिअे कोअी प्रार्थना नहीं करता। लोग कहेंगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर माँ अपने बेटेके दुःख दूर करनेके लिये प्रार्थना करती देखी गयी है। अिस स्पष्ट बातसे कैसे अिन्कार किया जा सकता है ? हम भी अिस स्पष्ट बातसे कहां अिन्कार करते हैं, पर कहना यह चाहते हैं कि हर अेक माँको अपने बेटेको दुःखी देखकर खुद दुःख होता है और वह बेटेके दुःख दूर होनेकी प्रार्थना करके अपना दुःख दूर करना चाहती है। अैसी माताअें भी मिल सकती है जो धर्मगुरुके कहनेपर अपने बच्चेके दुःख मिटानेके लिअे दूसरे बच्चेकी जान लेलें। तब यह नहीं कहा जा सकता कि दूसरोंके दुःख मेटनेके लिये प्रार्थनाकी जरूरत है—

रही यह बात, कि भूकंपमें सैकड़ों आदमी मर जाते हैं। यही हालत आग लग जाने, रेल लड़ जाने, बिजली गिर जाने या बाढ़ आजानेसे होती है। क्या अिसके लिअे भी प्रार्थना नहीं करनी चाहिये ? अिस सवालका जबाब देनेके पहले हम यह कहेंगे कि जब कभी अैसी दुर्घटनायें होती है तब नासमझ ही प्रार्थनामें लगते हैं। समझदार तो अेकदम अुन लोगोंकी मददके लिअे दौड़ते हैं जो दुःखमें घिरे होते हैं, और जहांतक बनता है अुन्हें आफतसे निकालकर अुनका दुःख दूर करते हैं। मान लीजिये सारे समाजने अेक आदमीका रूप लेलिया, तब भूकम्प जैसी बड़ी दुर्घटनाअें समाज रूपी अेक आदमीके लिहाजसे अितनी छोटी रह जाती हैं जितनी अेक आदमीके पाँवमें मामूली चोट। अैसे मौकोंपर आदमियोंमें दुःख सहनेका या दुःखको सुखमें बदलनेका बेहद बल आ जाता है। हमने बिहारके भूकम्पका हाल अपनी आँखों देखा है। वहांके लोगोंका कहना था कि लोगोने हंस-हंस कर जानें दीं। जो अचानक मरे, मर गये, जो बच रहे अुनमें न जाने कहांसे अितना बल आ गया कि अुस बलको पाकर रोनेकी जगह हंसने लगे। अैसा ही अनुभव किसी फारसी कविको हुआ। अुसने यह लिखा, "मिलकर मरनेमें बड़ा आनन्द आता है।" आनन्दको छोड़िये, आअिये दूसरी तरफ विचार करें।

अगर आज कोअी अैसा अिश्तिहार निकाले कि वह अैसी औरतसे शादी करना चाहता है जिसे वह रोज सौ जूते मारा करेगा, जब अुसके जीमें जी आयेगा, अुसका हाथ काटकर फेंक देगा, अुसके पाँव काटकर फेंक देगा, अुसका सिर काटकर फेंक देगा, या जो जीमें आयेगा करेगा, तो क्या दुनियामें अैसी औरत मिल सकती है ? अगर अूपर बताअी शर्तोंमेंसे कोअी शर्त न बताकर सिर्फ शादी करनेका अिश्तिहार हो और शादी हो जाय, बादमें वही बर्ताव करने लगे जो वह चाहता तो अुसकी औरत क्या करेगी ? चुपचाप बर्दाश्तकर लेगी, मार डालेगा, मर जायगी, ठीक अिसी तरह अगर आदमीसे यह कहा जाता, देखोजी, हम तुम्हें दुनियामें भेजते हैं पर यह बताअे देते हैं कि जब हमारे जीमें आयेगा हम तुम्हारे अूपर बिजली गिरा देंगे, तुम्हे जमीनमें दफनकर देंगे, तुम्हें पानीमें बहा देंगे, अित्यादि, तो क्या कोअी भी आदमी दुनियामें आना पसन्द करता ? पर चूंकि दुनियामें आनेके पहले अैसी कोअी शर्त नहीं होती, अिसलिअे सब आते हैं और अैसी तकलीफें आरामसे सह लेते हैं। दूसरे अैसी तकलीफें देखकर भी दुनियासे भागना नहीं चाहते। रेल दुर्घटनासे बचे हुअे आदमी दूसरे क्षण दूसरी रेलमें बैठकर चल देते हैं। कोअी अैसा न निकला जो रेलमें न बैठकर पैदल जानेकी सोचे। प्रकृतिने आगेकी बात न जाननेका अिन्तजाम सोच समझकर किया है, न जाने आदमी भविष्य जाननेकी बलामें क्यों फंसना चाहता है ? भविष्य कोअी जान नहीं सकता। पर आदमीको भविष्य जाननेकी कमजोरीसे हर कोअी फायदा अुठाना चाहता है। देवी-देवताओंकी तरह सगुन, जोतिष, रमल, और न जाने क्या-क्या बलायें चल पड़ी हैं। भविष्य जानकर प्रकृतिके प्रबंधमें अैसी बाधा डालना है, जैसे देवी-देवताओंसे दुःख मेटनेकी प्रार्थना करके नअी बला मोल लेनेकी सोचना।

अब यह समझमें आ गया होगा कि प्रकृतिने क्यों अैसा अिन्तजाम किया कि हम आगेकी तो क्या कलकी भी न जान सकें ? आगेकी बात जान लेनेसे क्या होता अिसपर किसीने कथा लिखी है, अुस कथाका सार है:—

अेक राजाके यहाँ अेक लड़का पैदा हुआ। सोहर घरकी पहरेदारीपर अेक साधु नियत थे। साधुको लाख-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर ब्रह्माजी सोहरघरमें लड़केका भाग्य लिखने नहीं जा सकते थे। अुन्होंने साधुसे कहा, हमें सोहरघरके लिअे रास्ता दीजिअे। साधुने पूछा, आप क्यों अन्दर जाना चाहते हैं? वे बोले, हम ब्रह्मा है, बच्चेका भाग्य लिखने आअे हैं। साधु बोला, मैं अेक शर्तपर आपको रास्ता दूँगा। यह यह कि आप अिसका भाग्य लिखकर मुझे बता दें कि आपने क्या लिखा है। ब्रह्मा बोले, यह बताना ठीक तो नहीं, पर तुम नहीं मानते तो बता देंगे। जब ब्रह्मा भाग्य लिखकर निकले तो अुन्होंने साधुको बताया, हमने अिसकी किस्मतमें लिखा है, यह हिरन पकड़ा करेगा और अुन्हींको बेंचकर अपनी रोजी कमायेगा। ब्रह्माजी यह कहकर चल दिअे। जब वह लड़का कमानेलायक हुआ तो साधुजी अुस लड़केको राजासे मांगकर ले गअे। वह लड़का भाग्यमें लिखे अनुसार जाल भी बनाने लगा और दो चार दिनमें हिरन पकड़ना सीख गया। अुन हिरनोंसे अपनी रोजी भी कमाने लगा। साधुजी बोले, "बेटा दूर जाकर क्या करोगे, यहीं पास जाल डाल दिया करो, यहीं हिरन पकड़ लिया करो। लड़का बोला यहाँ हिरन किस तरह आयेंगे? साधु बोला, अेक दिन देखो तो? लड़केने साधुकी बात मान ली। अुसने झोपड़ीके आगे जाल बिछा दिया। दो तीन घंटेमें अेक हिरन आ फंसा। अब लड़केने दूर जाना छोड़ दिया, और घर बैठे ही हिरन पकड़ना शुरू कर दिया। अेक दिन साधु बोला, बेटा आज अपना जाल अिस पेड़के नीड़पर डालो। लड़का अेकदम हँस दिया, बोला, बाबा हिरन पक्षी नहीं जो ताड़के पेड़पर चढ़कर मेरे जालमें फँसेगा। साधुजी बोले, अेक दिन देखो तो क्या होता है? लड़केने साधुजीका कहना मानकर ताड़के पेड़पर जाल डाल दिया और नहाने-धोने चल दिया। थोड़ी देरमें साधुजी क्या देखते हैं, अेक आदमी हिरनका बच्चा लेकर आता है वह अुस ताड़के पेड़पर चढ़ता है और अुस जालमें अुस बच्चेको फंसा देता है और चला जाता है। जब लड़का नहाकर आया तो देखा जालमें अेक हिरन फँसा हुआ है। अुसे बड़ा अचरज हुआ। वह जालको अुपरसे अुतारकर ले आया। हिरनको बेंच आया। अब रोज ताड़पर जाल पड़ने लगा और अुसीमें हिरन फँसने लगा। आठ रोजमें तंग आकर हिरन लानेवाला आदमी साधुजीके पाँव पड़ा और बोला, महाराज, मुझे माफ कीजिये! साधुजी बोले तुम क्या चाहते हो, तुमने क्या कसूर किया है, किस बातकी माफी चाहते हो?

वह आदमी बोला, मैं ब्रह्मा हूँ, मैंने यही कसूर किया है कि आपको अेक लड़केका भविष्य बता दिया और अब आपने मुझे आफतमें डाल दिया। अब मुझे अिस आफतसे बचाअिये।

साधुजी बोले, अिस लड़केकी तकदीर बदल दो और तुम आफतसे बच जाओ।

ब्रह्मा बोला, यह तो मैं कर दूँगा पर अेक शर्तपर।

साधु बोला, वह शर्त?

ब्रह्माजी बोले, वह शर्त यह कि आगे मैं तकदीरका लिखा नहीं बताअूंगा।

साधुजी हँस पड़े और बोले, मंजूर।

ब्रह्माने अुस लड़केकी तकदीर बदल दी और लिखनेवालेने अिस कहानीके द्वारा सबको कअी पाठ देदिये। अेक यह कि भविष्य जाननेकी जरूरत नहीं। दूसरा यह कि भविष्य जानकर प्रकृतिका काम अेक दिन नहीं चल सकता। तीसरे यह कि पुरुषार्थ भाग्यसे बहुत बलवान होता है। वह भाग्यको बदल सकता है।

दुःख-सुख जैसी चीज नहीं जिनके पहले जाननेकी जरूरत हो। आदमी जरा भी सोचे तो अुसकी समझमें यह बात आसकती है कि प्रकृतिके दुःख-सुख छोड़के जो सुख-दुःख है वे अैसे तो नहीं है, जो सहे न जासकें, पर अैसे भी नहीं हैं जो किसी सुख कि सूचना देते हों। फिर क्यों आते हैं? अुसकी अेक वजह है, आदमी बहुतसे सुख तो दूसरोंको दुःख पहुँचाकर मोल ले लेता है। यह किसे नहीं मालूम कि जब कोअी आदमी किसीको जान लेता है तब अुसे कअी रात अच्छी नींद नहीं आती। अिसे छोड़िये, अिसका हरअेकको अनुभव नहीं पर अिस बातका सबको अनुभव है कि माँ अपने बच्चेको पीटकर तुरन्त रोने लगती है। अिससे यह नतीजा निकलता है कि दुनियामें जो दूसरे बड़े-बड़े दुःख हैं, वे भी किसी औरके नहीं हमारे ही पैदा किये हुये हैं। अिसके लिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी यह नहीं कहा जा सकता कि दुःख किसी देवी-देवताके नाराज होनेसे या किसी महादेवताके बिगड़ बैठनेसे किसी देश या अुसके किसी हिस्सेपर आपड़ते हैं।

दुःख बिलकुल डरनेकी चीज नहीं। दुःख समझनेकी चीज है। जब वह समझमें आजायेगा तो अुसको मिटानेके लिये किसीकी प्रार्थना न करनी पड़ेगी। यह अेक बड़ी सचाअी है। जैसेही आप अपने आपको दुःख-रहित अवस्थामें ले जायँगे वैसेही पहली आफत आपपर यह आयेगी कि आप प्रकृतिके सारे नियम तोड़ डालेंगे। दुःख अेक अैसी चीज है जो आपसे अैसी भूल कभी नहीं होने देता। दुःखके बिना कोअी सत्यको पहचान नहीं सकता। कोअी अुन कायदोंका जानकार नहीं हो सकता, जिन कायदोंसे अुसका जीवन चल रहा है।

आदमीके दुःखी होनेका कारण है अुसकी यह दुविधा कि वह अुस काममें लगे या न लगे जो अुसकी भलाअीके लिअे बेहद जरूरी हैं। यह दुःख बेशक अैसा है जिसे मिटानेकी जरूरत है। पर अिसके लिअे किसी प्रार्थनाकी जरूरत नहीं, किसी देवी-देवताकी जरूरत नहीं, अिसके लिअे समझनेकी जरूरत है।

आदमीमें जब दुःखकी चेतना आ जाती है यानी यह कि मन दुःखका केन्द्र हो जाता है, तब अुसमें नअी बात पैदा होती है, वह यह कि अपनी भूलों और दूसरोंकी भूलोंमें अन्तर पैदा करने लगता है। अपनी भूलको भूल नहीं मानता, दूसरोंकी भूलोंको भूल समझता है। यही हाल अुसका अुन बुराअियोंके साथ होता है जो वह दूसरोंके साथ करता है। अुसका कोअी बुरा कर दे तो बहुत कम दुःख मानता है या बिलकुल नहीं मानता। भलाअीके बारेमें अुसका यही हाल है। औरोंसे अपने लिअे वह भलाअीकी जितनी आशा रखता है अुतनी आशा औरोंको अपनेसे नहीं रखने देता। यह अेक अैसी बुराअी है जो आदमीको अैसी मालूम होती है कि वह अुसको खुद दूर नहीं कर सकता, और अिसी अजानकारीकी वजहसे वह कभी-कभी दूसरोंको सुख पहुँचानेके बहाने दुःख पहुँचाने लगता है। जिसका नतीजा होता है, आदमियोंके जीते रहनेकी ताकतका कम हो जाना। अुसका असर खुद अुसपर पड़े बिना नहीं रहता, अिस तरह वह अपने और सबके लिअे दुःख पैदा कर देता है।

अगर जीवन अुस रस्सीके समान है जिसपर आदमी नट बनकर चलता है तो दुःख आदमीके हाथमें अेक बाँस है जो अुसके समतोलको बनाअे रखता है, अुसे गिरने नहीं देता, आगे बढ़नेमें मदद करता है। अगर जीवन अेक अँधेरी गली है तो दुःख आदमीके हाथमें लाठी है जो अुसे रास्ता टटोलनेमें मदद देती है। आदमीका अिधर-अुधर न गिरना और न भटकनाही सुख है। अिसलिअे दुःखके माने हैं आदमीको सुखसे न भागने देना। क्या दुःखके बराबर कोअी दूसरा दोस्त हो सकता है? किसीने ठीक कहा है—

विपद बराबर सुख नहीं, जो थोड़े दिन होय।
अिष्ट मित्र और बन्धुजन, जान पड़ें सब कोय॥

आदमी चाहे या न चाहे, दुःख हमेशा अुसके साथ है और हमेशा अुसका दोस्त है और दोस्तके नाते वह अुसे जीवनके सच्चे रास्तेकी तरफ ढकेलता रहता है, अुसे अिधर-अुधर नहीं भटकने देता। दुःख आदमीको अुस जगह ले जाना चाहता है जहाँ कोअी बाधा नहीं, जहाँ कोअी बुराअी नहीं, जहाँ भलाअीही भलाअी है और वह भलाअी अैसी है जो दिनदूनी और रात-चौगुनी बढ़ती है। क्योंकि अुसका आदि-अन्त नहीं।

दुख जीवनका अेक सत्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शैक्षणिक लोकतंत्र

: श्री मोरेश्वर रत्नाकर करंदीकर :

[श्री मोरेश्वर रत्नाकर करन्दीकर बी. अे. मराठीके सामयिक पत्रोंमें लिखा करते हैं। मराठीमें शिक्षा विषयक पाँच-छै लेख आपने लिखे। यह पहला लेख है जो स्वतन्त्र रूपसे आपने राष्ट्रभाषा हिन्दीमें ही लिखा। भविष्यके लिअे भी वे प्रयत्नशील हैं। शिक्षाके बारेमें वे नये दृष्टिकोणसे अपने विचार प्रस्तुत कर रहे हैं।--सं०]

ज्ञान जीवनकी खूराक है। राष्ट्रके विकासके सर्वांगीण कार्यक्रममें नवजीवन निर्माण करनेके लिअे देशके हरअेक व्यक्ति तक अुसका वितरण होना चाहिये। सन्तुलित जीवन (Balanced life) के लिअे सर्वस्पर्शी शिक्षा अिकट्ठा और अेकसाथ देनेके अति आग्रहको छोड़कर विकेंद्रित रूपमें सबके लिअे अुसका प्रबन्ध किया जा सकता है। मन, बुद्धि, हाथ और पाँवको तालीम देनेवाली सर्वांगीण शिक्षा लेनेकी किसीकी भी अिच्छाको कुचल न दिया जाअे। अिसलिअे आर्थिक और बौद्धिक दृष्टिसे वह हर अेककी पहुँचमें होनी चाहिये। ज्ञान-क्षेत्रकी परिधि बड़ी तेजीसे बढ़ रही है; अिसलिये विद्यापीठोंको चाहिये कि वे विद्यार्थियोंको विद्वत्ता देने या अुन्हें ज्ञानकोश बनानेकी अुम्मीद न रखें; बल्कि ज्ञान-सम्पादन--दृष्टि देनेका ही अुद्देश्य अपने सामने रखें। ज्ञान-प्रसारके साधन भी आज अितनी रफ्तारसे बढ़ रहे हैं कि शाला या कालेजोंमें हाजिर रहनेकी किसीपर भी सख्ती न करते हुअे भी शिक्षा लेनेकी अुम्र बीतनेसे पहले सभीको शिक्षा दी जा सकती है। जनताकी गरीबी परन्तु बढ़ती हुअी ज्ञानलालसाको ध्यानमें रखकर सरकार और विद्यापीठ खर्चीली शिक्षा-पद्धतिका आग्रह छोड़ देंगे, तो कम-से-कम पैसेमें ज्यादा-से-ज्यादा लोगोंको अधिक-से-अधिक शिक्षा दी जा सकती है। शिक्षाके द्वारा युवकोंकी शक्ति रचनात्मक कार्यमें लगायी गयी तो भारत शक्तिशाली बनेगा। हर अेकको मुफ्तमें भले ही न हो, परन्तु सस्ती शिक्षा मिले अिसलिअे चिन्तनशील सूज्ञोंके सामने कुछ सुझाव मैं पेश करना चाहता हूँ।

प्राथमिक शिक्षा : भारतके विधानमें, अमलमें आनेके बाद दस सालके अन्दर प्राथमिक शिक्षा सार्वत्रिक, लाजिमी और मुफ्तमें देनेका तय किया गया है। अिसलिअे हर देहातमें प्राथमिक शाला खोल देनी चाहिये। किसानोंको यदि शिक्षाका महत्व ठीक तरहसे समझा दिया जाअे तो देव-मन्दिरकी तरह ज्ञान-मन्दिरकी अिमारत खड़ी करनेके लिअे वे आर्थिक और शारीरिक सहायता देंगे। अिमारतके लिअे पैसे खर्च करनेके बदले सरकार अच्छी शिक्षा देने तथा शिक्षकोंको योग्य तनख्वाह देनेकी ओर अपना ध्यान दे। अनावश्यक पर्यवेक्षक और ज्यादह तनख्वाहवाले बड़े अधिकारी नियुक्त करनेकी अपेक्षा स्थानिक प्रतिष्ठित और सुशिक्षित लोगोंको यह काम बिना वेतन करनेके लिअे सरकार सम्मानपूर्वक निमंत्रित करे। आरोग्यकी दृष्टिसे तथा विद्यार्थी अपने पालकोंको रोजाना काममें मदद दे सकें, अिसलिअे देहातोंमें शालाका समय सुबह ७॥ से ११॥ तकका हो। वहाँ अुनका प्रमुख धंधा खेती लाजिमी विषय माना जाअे। ग्रांथिक ज्ञानसे शरीर-श्रमके बारेमें टालमटोलकी वृत्ति निर्माण न हो और माँ बापको भी खेतीके काममें मदद मिले, अिसलिअे देहाती शालाओंको गरमीके दिनोंके बदले खेतीके कामके दिनोंमें छुट्टी दी जाअे। देहातकी प्राथमिक शालाओंके शिक्षकोंको शास्त्रीय ढंगकी खेतीकी शिक्षा दी जानी चाहिये। अप्रमाणित (Uncertified) किन्तु खेतीका व्यवहारिक ज्ञान जिनको ठीक तरहसे है, अैसे लोगोंको खेतीका शिक्षक नियुक्त किया जाअे। शहरकी प्राथमिक शालाओंमें भी अुन हिस्सोंमें जो धंधा सुविधाजनक हो वह लाजिमी तौरसे पढ़ाया जाअे। किन्तु अुसका अुद्देश्य द्रव्यार्जनके बदले श्रम प्रतिष्ठा हो। विद्यार्थियोंको संगीत और चित्रकलाका भी परिचय कराया जाअे। किन्तु वे अिम्तहानके विषय न हों। प्राथमिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षा तीन सालकी हो और छै सालके अूपरके लड़के लड़कियोंके लिअे लाजिमी हो। माध्यमके रूपमें मातृ-भाषाको सर्वत्र स्वीकार किया जाअे और प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षाकी शालाअें सम्मिलित हों, जिनसे प्राथमिक शिक्षकोंका ज्ञान बढ़ेगा और अुनकी समाजमें प्रतिष्ठा भी बढ़ेगी।

अुपकरणनिष्ठ शिक्षा : युवकोंको दोष देनेकी अपेक्षा अुनकी अुपकरणनिष्ठ और औद्योगिक शिक्षाका बड़े पैमानेपर प्रबंध करना जरूरी है। मैट्रिकके हर विद्यार्थीको कोअी अुद्योग सीखे बिना प्रमाणपत्र न दिया जाअे। सरकार और विद्यापीठोंको चाहिये कि अपनी टुटपूंजी पूंजीमेंसे अेक भी पैसा ग्रंथनिष्ठ शाला और कालेजमें खर्च न करें, बल्कि औद्योगिक, यांत्रिक, वैज्ञानिक और खेती विषयक शाला या कालेज स्थापन करनेके लिअे खर्च करें। औद्योगिक शिक्षा देनेवाली संस्थाओंको सरकारकी ओरसे मदद मिलनी चाहिये। खेती विषयक सब शालाअें और कालेज देहातोंमें ही हों। अिससे विद्यार्थियोंको देहातके जीवनके बारेमें जानकारी होगी और अुनके अिस ज्ञानका फायदा खेतीके सुधारके लिअे अुठाया जा सकेगा। पैसोंकी कमीकी वजहसे औद्योगिक शिक्षा देनेमें विलंब करनेकी अपेक्षा अुसको माध्यमिक शिक्षामें आवश्यक माना जाअे, अिससे औद्योगिक शिक्षा देनेवाली खानगी संस्थाअें निर्माण होंगी। मिल, कारखाने और बड़े-बड़े औद्योगिक क्षेत्रोंमें विद्यार्थियोंको लेनेकी सख्ती की जाअे। देशकी गरजको पहचानकर अन्न, वस्त्र, बांधकाम, आरोग्य, पशु-संवर्धन और पशु-रोगचिकित्साकी शिक्षाके लिअे दो-दो तीन-तीन सालके पाठ्यक्रम बनाकर हर जिलेमें यह शिक्षा देनेका प्रबंध किया जाअे। पैसोंकी कमीकी वजहसे यांत्रिक शिक्षा देना अगर असंभव हो, तो फिलहाल निम्नलिखित अुद्योग सिखाये जा सकते हैं। खेती, दूध और दूधसे पैदा होनेवाली चीजें बनाना, बागवानी, फल और दूध डिब्बेमें हवा बंद करनेकी कला, मधुमक्खी पालन, भेड़-बकरियां और मुर्गी-पालन, रेशमका अुद्योग, कागज बनाना अित्यादि। गृह-अुद्योगके तौरपर रेशम और रेशमके कपड़ेकी पैदाअिश की जाअे तो चीन और जापानकी तरह हमारी भी कपड़ेकी समस्या हल होगी। प्राथमिक शिक्षाके लिअे आवश्यक स्टेशनरी, छपाअी, आदि तैयार करनेका काम अगर माध्यमिक शिक्षा पानेवाले विद्यार्थियोंको सौंपा जाअे तो प्राथमिक शिक्षा अल्प खर्चमें होगी। लड़कियोंके लिअे आवश्यक, किन्तु कम शरीर श्रमके ये अुद्योग दिये जा सकते हैं :—नर्सिंग, पाकशास्त्र, सिलाअी, बुनाअी, टायपिंग, शार्टहैंड, अध्यापनकला, फोटोग्राफी, गायन, वादन, नृत्य, चित्रकला आदि। अुपकरण-निष्ठ या औद्योगिक शिक्षामें अिन विषयोंका ज्ञान आवश्यक है, मगर प्रात्यक्षिक ज्ञानपर अधिक जोर दिया जाअे। कम खर्चमें और कम श्रममें अधिक मात्रामें टिकनेवाला माल पैदा करनेकी शिक्षा दी जाअे। यहाँ शिक्षा स्वावलंबी बनानेका अुद्देश्य नहीं है, परन्तु पढ़नेके बाद विद्यार्थी अुन अुद्योगोंसे स्वावलंबी बने यही अुद्देश्य है, अिसलिअे मालकी निर्मिति विद्याके साथ संगठन, बिक्री कला आदिकी दृष्टिसे भी शिक्षा दी जाय, जिससे औद्योगिक शिक्षा प्राप्त करनेके बाद भी सरकारका मुँह ताकनेकी किसीको कभी जरूरत न पड़े। खर्चकी दृष्टिसे सरकारको और बौद्धिक तथा आर्थिक दृष्टिसे विद्यार्थियोंको शिक्षा सुविधाजनक हो, अिसलिअे औद्योगिक शिक्षा ग्रंथनिष्ठ शिक्षासे अलग रखी जाअे। क्योंकि अुपकरणनिष्ठ शिक्षा घर बैठे नहीं ली जा सकती। अुपकरणनिष्ठ और ग्रंथनिष्ठ शिक्षा अेक साथ लेना यदि लाजिमी माना गया तो दुय्यम और अुच्च शिक्षा लेनेके लिअे अधिक खर्च भी होगा तथा वर्ष भी लगेंगे। फिर अुद्योग द्वारा शिक्षा सभी क्षेत्रोंमें नहीं दी जा सकती। ग्रंथनिष्ठ शिक्षापर सरकार तथा विद्यापीठोंका खर्च होता है वह बंद करके अुसके बदले अुपकरणनिष्ठ शिक्षा देनेवाले शाला, कालेज बढ़ाकर यह शिक्षा अधिक लोगोंको दी जा सकती है। माध्यमिक शिक्षाके साथ औद्योगिक शिक्षा लाजिमी करनेसे कअियोंके पेटका भी सवाल हल होगा। और अुच्च शिक्षामें जिन्हें दिलचस्पी नहीं है अैसे विद्यार्थियोंकी कालेजमें भीड़ कम होगी। औद्योगिक शिक्षा आवश्यकताके अनुसार अेक, दो या तीन सालकी हो। मैट्रिककी बौद्धिक परीक्षा पास होनेके बाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औद्योगिक शिक्षा लाजिमी रखनेसे विद्यार्थी, अुम्र और बुद्धिमें प्रौढ़ होनेकी वजहसे, अैसी शिक्षा सफलताके साथ प्राप्त कर सकेगा।

ग्रंथनिष्ठ शिक्षा :—औद्योगिक शिक्षाके साथ अगर ग्रंथनिष्ठ शिक्षा न दी तो सामान्य आदमी सहज कामगार बनेगा और अुसकी बौद्धिक गुलामी कायम रहेगी। ग्रंथनिष्ठ ज्ञान निकम्मा नहीं है। किसी अेक विषयका दूसरे शास्त्रोंके साथ कौनसा संबंध है, जीवनमें अुसका किन-किन क्षेत्रोंमें और किस तरह अुपयोग होता है, अिसका विवेचन क्रमिक पुस्तकोंमें विषयानुसार होना चाहिये। कुछ ज्ञान जीवनमें फौरन अुपयोगका नहीं होता, परन्तु विद्यार्थी दशामें अुसे पढ़ाना पड़ता है। हर चीज प्रयोग द्वारा पढ़ाना असंभव है। अिसका मतलब यह नहीं है कि बिना प्रयोगकी शिक्षा निकम्मी है। ग्रंथोंने मनुष्य जातिकी प्रगतिमें आजतक बड़ी मददकी है। ग्रंथनिष्ठ शिक्षा जरूरी है, साथ ही साथ वह स्वयं शिक्षा भी है। अिस महत्वको समझकर वह शिक्षा देनेमें जरा भी देर न की जाअे। विद्यापीठ और सरकारको चाहिये कि वे अपनी असामर्थ्य ध्यानमें लें, और ग्रंथनिष्ठ शिक्षाके लिअे शाला, कालेजमें हाजिर रहना आवश्यक न मानें और किसीको भी अिन परीक्षाओंमें शुल्क देकर खानगी तौरसे बैठने दें। माध्यमिक शिक्षाके लिअे मैट्रिककी परीक्षामें किसीको भी खानगी तौरसे बैठने दिया जाअे। सायन्स जैसे विषयोंका प्रॅक्टिकल नजदीकके गाँवकी प्रयोग-शालामें किया जा सकता है। माध्यमिक शिक्षा पाँच सालकी (मिडल स्कूल तीन साल और हाअीस्कूल दो साल) हो। मिडल स्कूलमें पाँच और हाअीस्कूलमें चार विषय हों। अुच्च शिक्षामें साहित्य (आर्ट्स), वाणिज्य (कॉमर्स) और कायदा (लॉ) जैसे ग्रथनिष्ठ अभ्यासक्रमकी परीक्षाओंमें शुल्क देकर खानगी तौरसे किसीको भी बैठने दिया जाअे। दूसरे विषय कच्चे होनेसे साहित्य (आर्ट्स) में मनपसंद विषयोंकी प्रगति न रुके, अिसलिअे अेक ही विषय लेकर कोअी भी सीधा अेम्. अे. हो सके अैसा प्रबंध हो। अेक विषयपर प्रभुत्व पानेसे आदमी दूसरे विषय भी ग्रहण कर सकता है। जिस विषयमें अेम. अे. होना हो अुस विषयकी अिंटर और बी. अे. की परीक्षाअें भी देनी चाहिये। सीधे अेम. अे. होनेसे देशमें तज्ञोंकी कमी नहीं होगी। ग्रंथ-निष्ठ-शिक्षा सबके लिअे खुली करनेके बाद खानगी विद्यार्थियोंको मदद की जा सकती है। ग्रंथालय, रेडियो, फिल्म्स, म्युज़ियम्स, ज्ञानवंतोंके दौरे, अल्पकालीन ज्ञानशिबिर, सुशिक्षित बेकारोंके वर्ग लेना, पर्याप्त रूपमें आदर्श शिक्षक तैयार करना, कौनसा अध्ययन कितने दिनोंमें और किस तरह किया जाअे तथा आदर्श जवाब किस तरह लिखे जाअें, अिस संबंधमें विद्यापीठोंकी ओरसे समय-समयपर और विस्तृत रूपसे मार्गदर्शन, शिक्षा विषयक पत्रपत्रिकाअें निकालने, शिक्षाके हेतुसे प्रवास करने, सरकारकी ओरसे विद्यार्थियोंको सहूलियत मिलने आदि कअी तरहसे ज्ञानका प्रसार हो सकता है। जिन्हें नौकरीके लिअे ही अुच्च शिक्षा लेनी हो अुनके लिअे सरकार अलग विभागीय परीक्षाअें ले, जिससे कालेजमें अिस तरहके लोगोंकी भीड़ कम होगी। खानगी विद्यार्थियोंको माध्यमिक दर्जेके अिल्काब देनेकी बौद्धिक वर्ण-भेदकी प्रवृत्तिका अुन्मूलन करना चाहिये। माध्यमिक और अुच्च शिक्षा समाज सुलभ होनेसे ही प्राथमिक शिक्षा देनेमें आसानी होगी। समाजमें विचारोंकी परिपक्वता होगी। संसार भरमें अुच्च शिक्षाको अधिक महत्व दिया जा रहा है। धन-हीन भारतमें अुसका प्रबंध करनेके लिअे वर्तमान कालेज और छात्रवृत्तियां अपर्याप्त हैं। अुच्च शिक्षामें निदान ग्रंथनिष्ठ शिक्षा सबके लिअे खुली रखनेके सिद्धान्तको दुनिया भरमें जैल्द ही स्वीकार किया जाअेगा। रूढ़ि-प्रियताको छोड़कर भारतको अुसे स्वीकार करना जरूरी है। जीवनके दूसरे आनंदोंका लाभ न हुआ तो भले ही न हो, कमसे कम जो गरीब, किसान, शरणार्थी, पिछड़ी हुअी जातियां हैं, अुनको ज्ञानानन्द मिल जाअे अिसलिअे सरकार और विद्यापीठोंको बौद्धिक पूंजीवादको छोड़ देना चाहिये। शिक्षामें लोकतंत्रको स्वीकार करनेसे आजके नौजवानोंका असंतोष और विफलता बहुतसी कम होगी। ग्रंथनिष्ठ शिक्षा सबके लिअे खुली रखनेसे लेखन, प्रकाशन, मुद्रण, पत्रपत्रिकाअें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रंथालय आदि क्षेत्रोंमें कअी सुशिक्षितोंको काम मिलेगा।

शारीरिक शिक्षण :–शाला, कालेजोंमें आजकी फिजिकल ट्रेनिंगके (पी. टी. के) तमाशेके बदले विद्यार्थियोंमें सच्चे व्यायामके प्रति रुचि निर्माण की जाअे। तभी सब लोग लष्करी शिक्षण लेनेके काबिल होंगे। खर्चकी दृष्टिसे भी बसमें हो, अिसलिअे ज्यादासे ज्यादा विद्यार्थियोंको लाजिमी तौरसे यह शिक्षा दी जाअे। सुंदरता मेकप (make-up) में नहीं है किन्तु नियमित व्यायाम करके निरोगी, सुगठित और चपल शरीर बनानेमें है। यह युवकोंको समझा देनेके लिअे समूचे देशमें वैसा वातावरण निर्माण करना जरूरी है। व्यायामके बारेमें आधिक्य या अुपेक्षा न की जाअे।

लाजिमी समाजसेवा : मैट्रिकके हर अुम्मीदवारको पंदरह दिनकी और विद्यापीठकी परीक्षामें बैठनेवाले हर अुम्मीदवारको अेक महीनेकी समाजसेवा लाजिमी मानी जाअे। विद्यार्थीके विद्यार्जनके कार्यमें रुकावट न हो, तो यह मियाद बढ़ायी जा सकती है। विविध ज्ञानशाखाके विद्यार्थी देहात, कामगार, सैनिक, भिखारी आदिवासी आदि क्षेत्रोंमें विविध प्रकारका समाज-कार्य कर सकेंगे। अिससे विद्यार्थी समाजाभिमुख बनेगा और समाजको लाभ भी पहुँचेगा। सब जगहपर समाज-कार्यके लिअे जानेवाले विद्यार्थियोंको चाहिये कि वे अपने कार्य और व्याख्यानोंकी रिपोर्ट विस्तृत रूपसे लिखें। अिससे अुनके बाद आनेवाले विद्यार्थियोंका मार्ग सुकर होगा। समाजकी विभिन्न बीमारियोंपर शास्त्रशुद्ध अिलाज सुझाये जाअेंगे, समाजकी गरीबी और दुःख दूर किया जा सकेगा। विद्यार्थी स्वेच्छासे समाज-सेवा न करें, तो सख्तीसे करानेमें कोअी हानि नहीं है।

भाषाका प्रश्न : शिक्षाकी सब श्रेणियोंमें मातृभाषा माध्यम हो। राष्ट्रीय अेकताके लिअे राष्ट्रभाषा हिन्दी माध्यमिक और अुच्च शिक्षामें लाजिमी हो। अंग्रेजी अैच्छिक हो, लेकिन अुसका अुद्देश्य बोलचाल तथा लेखन सीखना न हो, किन्तु पढ़ना और समझना हो। अिसलिअे परीक्षाओंमें अंग्रेजीमें पास होना लाजिमी न माना जाअे। अुसमें मिलनेवाले मार्क पूर्ण गुणोंमें न मिलाये जाअें। अखिल भारतीय स्वरूपकी सब शैक्षणिक संस्थाओं और संशोधन-शालाओंमें हिन्दी माध्यम हो। बहुजन समाज सुशिक्षित होनेके लिअे शिक्षाकी सब श्रेणियोंमें मातृभाषा माध्यम हो।

परीक्षाकी पद्धति : माध्यमिक शिक्षामें मैट्रिक और अुच्च शिक्षामें (मास्टर डिग्रीज छोड़कर) सब परीक्षाअें सालमें दो बार ली जाअें। अेक बार अेक ही विषयमें बैठनेकी छूट हो। किन्तु अुपके लिअे ६०% मार्क आवश्यक माने जायँ। पूरी परीक्षामें पास होना असंभव हुआ हो तो जिस विषयमें ५०% मार्क मिले हों अुस विषयमें आगेकी परीक्षामें छूट हो; जिससे पक्के विषयपर ज्यादा शक्ति फिजूल खर्च न होगी और कच्चा विषय पक्का होगा। कठोर परीक्षा सुशिक्षाका मापदण्ड नहीं है। विद्यार्थी शक्तिके अनुसार बौद्धिक विकास कर सके, अिसलिअे ज्ञानका दर्जा कम न होते हुअे भी परीक्षा-पद्धति सरल की जा सकती है।

विद्यार्थी बैंक : गरीब विद्यार्थियोंके स्वाभिमानको धक्का न पहुँचे, वे दूसरोंके सामने दबे हुअे न रहें, अिसलिअे सरकार शिक्षाके लिअे कर्ज देनेवाली शैक्षणिक या विद्यार्थी बैंक खोले। छोटी अुम्रमें खानगी तौरसे कर्ज मिलना असंभव है। बादमें पैसा हाथमें आता है। किन्तु शिक्षाकी अुम्र चली जाती है। शिक्षा लेनेकी योग्यता और अिच्छा जिन्हें है, अैसे गरीब विद्यार्थियोंके लिअे कर्जका प्रबंध होना जरूरी है। क्योंकि स्कालरशिप चाहे कितनी ही बढ़ाअी जाअें फिर भी सब गरीब विद्यार्थियोंकी शिक्षाका प्रश्न हल नहीं हो सकता। विद्यार्थी जब कमाने लगेगा तब कर्ज हफ्ते-हफ्तेसे अदा कर सकेगा।

खोज आदि : (१) अुपकरणनिष्ठ ज्ञानके देशी और परदेशी तज्ज्ञ, अुन शाखाओंके विशेषतः पोस्ट ग्रेज्युअेट कोर्सके विद्यार्थी, विद्यापीठ और संशोधन-शालाअें अिन सबका संशोधनके लिअे परस्पर सहकार्य चाहिये। वे खेती और ग्रामोद्योगकी अुन्नतिके लिअे छोटे सस्ते,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टिकाऊ और कम शक्तिमें ज्यादा माल पैदा करनेवाले यंत्रकी खोज करें, जिससे गरीब किसान अुसे खरीद सकें। स्वावलंबन और विकेंद्रीकरणको साथ करके बेकारीको नष्ट किया जा सकता है। (२) हर ज्ञानशाखामें हर साल सर्वोत्कृष्ठ निर्मितिको और विक्रम को मध्यवर्ती सरकार नोबुल पारितोषिककी तरह कोअी पारितोषिक या बहुमानका अिल्काब दे; जिससे सात्विक स्पर्धा शुरू होगी, संशोधन बढ़ेगा और अपने राष्ट्रको फायदा पहुंचेगा। (३) प्रायः सब भारतीय भाषाओंका भंडार संस्कृतसे व्युत्पन्न होनेके कारण अुनमें बहुतसा साम्य है। अिसलिअे वे देवनागरी लिपिमें लिखी जायं, जिससे वे आसानीसे पढ़ी जाअेंगी। (४) अंग्रेजी जागतिक कीर्तिकी भाषा है। वह पढ़नेमें आसान हो, अिसलिअे अुच्चारणकी तरह शब्दोंका स्पेलिंग लिखनेकी अमेरिकन पद्धतिको सर्वत्र स्वीकार किया जाअे।

प्रार्थना: भारतके पाँच लाख देहातों तक शिक्षा पहुंचे अिसलिअे हमारी शक्तिके अनुसार शैक्षणिक पुनर्रचना होनी चाहिये। कोअी भी शिक्षा सामान्य मनुष्यको सरलतासे अुपलब्ध हो अिस दृष्टिसे मैंने जो विचार अूपर लिखे हैं, अुन्हें सरकार और विद्यापीठ तुरन्त अमलमें लाअें अैसी मेरी अुनसे प्रार्थना है। शिक्षा जैसे जीवन-विकासके आर्द्धांगकी आगे भी अगर अुपेक्षा होनेवाली हो तो समाजके सब लोकहितवादी संगठन, सरकार और विद्यापीठोंको अुनके कर्तव्यकी जानकारी करवानेके हेतुसे लोकशाही साधनोंका प्रयोग करें अैसी मेरी जनता जनार्दनसे भी प्रार्थना है।

अुनकी करुणा

: श्री अनिलकुमार :

मेरी धरतीपर अुनकी करुणा बरसी !

नक्षत्र निलयके ओ रे
मृग, तेरे दृगमें आँसू !
मृगनैनी मैं अुनकी हूँ
पर्जन्यकाल पलकों में
पालूंगी और घुलूंगी
पल-पल अुर्मिल प्लावन सी।

वे नहीं न मैं अुनकी
रह सकीं, रहे मन ही
प्रिय प्रणय प्रतीति भरे
अुस सम्बलके पर्वतपर
अुरकी अिस विजन भूतिमें
पाता अपने प्रियतमको !

किस अशुभ केतुकी छाया
अुस अुदित सूर्यकी छविपर
मंडरायी, पड़ी ग्रहण-सी;
मैं क्षितिज-तिमिर-सी निर्जन
दुर्दिनकी बदली बन-बन
झरती ही रही अभागिन !

अुनके जीवनकी सुषमा
यौवन-श्री-सुखका सागर,
मेरी सीमित गागरमें
पीड़ाके प्लावन जल-सा
बादल बन सदा बरसता
सुधियोंके बीज अुगाने !

चातकी सखे मैं विरह-जरी
तुम मृगके बादर कारे
मदभरे नयन कजरारे
रे तुम्हें पुकारे आ रे !
तुम घिरे घुमड़, मैं हरसी
प्रिय तेरी करुणा बरसी !!

मेरी धरतीपर अुनकी करुणा बरसी !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुक्तपुरुष

: श्री रतन-पहाड़ी :

सौमनस भाव छन्दमें अुलझी गाथा
सर्वश्रेष्ठ अत्युत्तम सम्बोधनसे सजकर
वाणीकी ओजस्वी धारा
शत सहस्त्र स्त्रोतोंसे
फूट चुकी थी युग-युगान्तमें
सरल सौम्य मानवकी

\+ + +

मानवने सम्बोधनके अलंकारसे
धुँधले-धुँधले चित्र चारुसे
अपने मन-मस्तिष्क
और गौरव-गाथाकी गुहारसे
सर्वोन्नत-सी अेक प्रतिष्ठाकी श्रेणीपर चढ़कर
भाव प्रदर्शन हेतु
शत रूपोंसे
शत कूलोंसे
मनके भ्रमको शब्द सूत्रके
बन्धनमें बांधा
कागजकी अेक नाव बनाकर
अपनी आविष्कृत धारामें
जन-जनके मनमें
अपने आविष्कृत विचारको
विकसित करने
अतल जलधिके
कम्पित लोल लहर झोंकोंमें
निरुद्देश्य बलपूर्वक फेंका।

\+ + +

डूबी अुतरायी नौका
अगणित झंझा-पवन-झकोरे खाकर भी
कूल किनारा कब पा पायी
वह तो अब भी अुसी रसातलमें
जलनिधिके अन्धकारमें
दुर्गम-दुस्तर अगम थपेड़े
जीवनके जलते भाटे
भीषण रौरव महाज्वारमें
दुःख अुदधिकी महाधारमें
पड़ी रही युग-युगतक अुलझी
मानव लाखों बार
हर्ष और युगके जीवनके विषादसे
लाखों बार कूलपर आया
लाखों बार काठकी नौकापर आरूढ़ बना-सा
अपने जीवनके झोंकोंसे
झंझा प्रबल झकोरोंमें संसृति रूपी अुदधिधारमें
डूबा-अुतराया
जीवनकी अिस विकट धारमें

\+ + +

युगने-युग अवतार बादने
शुभ्र पुरुषने
अुद्बोधन आह्वाहन स्वरमें-करुणा स्वरसे
आदेशात्मक ओजस्वी फूत्कार स्वरोंसे
सुप्त पुरुषको जाग्रत करनेका व्रत ठाना
युग-निद्रासे
किन्तु चेतनाकी चंचलता
युगको अुस अवतार वादको
शुभ्र पुरुषको
अुद्बोधन आवाहन स्वरको
काल कराल गालमें लेकर
चली गयी अुस अन्तरिक्षमें
जहां शून्यमें माया रूपी कोअी ममता
जीवनके नर-मुण्ड सम्हाले
गिन-गिनकर गुण गौरव गाथा
चूर्ण विचूर्ण किये देती हो
जन-जीवनको युग गौरवको
मुक्त पुरुषकी नव गुहारकी

\+ + +

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर भी नाना संघर्षोंसे
पुरुष कालसे छूट गया था
यमकी अस तो माया छलनीके
पंजोंसे वह मुक्त हुआ था—
भीषणसे भीषण कष्टों पीड़ाको
दुस्तरसे दुस्तर जलनिधि वह
तैर गया था,
किन्तु
फूट-ईर्ष्या-विद्वेष
और अहंकी आकांक्षाकी
आंधी ऐसी आयी
जगके सब सहभाव-मनुजकी सौम्य भावना
आशा-आकांक्षा
जीवनकी सुखद सरल-सी परिभाषा
और मानवके वे सूक्ष्म तंतु
जिनके घेरेमें
मानवता अधिकार सजाये
जीवनका अस्तित्व लिये कुछ
ध्येय भावमें
रूप सजाती-सी रहती थी।
और जगतकी ज्योति-भावना
अपने रूप-विरूप भावमें
अुन्नत ध्येय लिये जीवनकी
ज्योति जलाती-सी रहती थी।
संघर्षोंसे बन्धनकी काराको
कलषकी दृढ़तर धाराको
चूर्ण विचूर्ण सदा करती थी।
मानवके अन्तस्तलकी
सजी सजायी
भाव साधको
मुक्त पुरुषकी नव गुहार को।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नन्ददास

: श्री आरसीप्रसादसिंह :

[यह काव्यांश कविके "नन्ददास" नामक खण्ड-काव्यका आरम्भ है। 'अष्टछाप' के प्रसिद्ध कवि "नन्ददास" की पृष्ठ-भूमि लेकर अिसका कथानक चलता है। घरसे विरक्त होकर अचानक अेक दिन नन्ददास कृष्णकी खोजमें वृन्दावनके पथपर चल पड़ते हैं। पर मार्गमें अेक वणिक्-रमणीके सौंदर्यपर मुग्ध होकर भटक जाते हैं। नन्ददास अुस तरुणीके घरपर तीन दिनों तक निराहार व्याकुल रहते हैं और जब चेतना जाग्रत होती है तब वृन्दावन पहुँचकर आचार्य श्री विठ्ठलनाथजीके चरणोंमें अुपस्थित होते हैं। आचार्य-- श्री के अुपदेशसे अुनका चंचल चित्त शान्त होता है और भगवान् कृष्णकी सेवामें शेष जीवन समर्पित करते हैं।]

जाता है कवि नन्ददास मधुपुर के पथपर ।
प्रायः तीन कोस वह पहुँचा घरसे चलकर।
था वैशाख महीना, शिरपर तपता दिनकर-
दोपहरीका, देख निकट अमराओ सुन्दर
नन्ददासने सोचा, चलकर करलें क्षण भर-
क्यों न यहीं विश्राम ? आम्र-वनछाया सुखकर
शीतल बुला रही थी पथिकोंको श्रम-चंचल।
अेक कुआँ भी था, जिसका था सरस-स्वादु जल।

❀

और कुअेंकी हरियाली पर थका, पिपासी
नन्ददास बैठा है— जगसे, दूर, अुदासी
मानो, रूठ किसी कारणसे वह आया है
घरसे, सोच रहा है, भ्रम है, जग माया है।
मिथ्या है संसार स्वप्न-सा, दृगके सम्मुख
यह जो भी प्रपंच फैला, जीवनमें सुख-दुख।

❀

आया है परिवार छोड़कर प्यारा घर पर
नन्ददास; सहसा यह मनमें अुठी प्रखरतर
किस प्रकार वैराग्य-कामना ? वह अकुलाया,
अुसे देखने, पता लगानेको, यह माया।
जिसे न छू तक भी पाती है ? वह योगेश्वर
जहाँ रास— लीला करता है नित्य अगोचर।

*

क्यों छोड़ा अुसने प्रपंचको ? गृहके सुखको ?
क्यों समझा आनन्द भटकनेके अिस दुखको ?
मिटी नहीं क्यों प्यास हृदयकी ? बन वैरागी ?
चला कहाँ ? किस ओर आज वह कुल-पुर-त्यागी?

*

नन्ददास घर छोड़ चला है, वनमें रमता।
चुम्बक बनकर खींच रही है फिर भी ममता।
वह ममता, जो युग-युगान्तसे पलती आयी।
वह ममता, जो अुसे सर्वदा छलती आयी।
घरके कोने-कोनेसे जो स्नेह जुड़ा था।
और व्योम वह, जिसमें मनका विहग अुड़ा था।
माता, पिता, बन्धु, प्रियवरगण, सखा-सहोदर;
जिनसे था सम्बन्ध मधुर, वे जीवन-सहचर,
चला अेक दिन छोड़ सभीको, जगत्-भँवरमें,
नन्ददास कवि किसे ढूँढने शून्य डगरमें ?

*

क्या अपनी अिन चर्म-चक्षुओंसे देखेगा
वह गीतापतिकी लीलाको ? अवलोकेगा
क्या साक्षात् कृष्णको सम्मुख ? वंशी-वादन
भुवन-विमोहन क्या मोहनका ? नूतन नर्तन
यमुना-तटपर, नीपकुंजमें, यौवन-थरथर
गोप-गोपियोंकी क्रीड़ा, सुन्दर, चिर-सुन्दर ?
मानस-पट पर नन्ददासके राधा-वल्लभ
आते शिखी-पुच्छ धारण कर, शशि ज्योतिःप्रभ,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप त्रिभंगी, मदन-मुग्धकर, पीताम्बर धर।
लहराता आता है मानो, छविका सागर।
मग्न अतल तक नन्ददास अुसमें हो जाता।
नयन बन्द हैं और किसीका पता न पाता।

*

क्या कालिन्दी आज वही भी? वही कुंजवन,
जहाँ कृष्णकी लीलाओंसे अंचित कण-कण।
वही लता? क्या वही पुष्प हैं? वही विटपवर,
पाते थे सुख श्याम-संगका जो निशि-वासर।
खिल अुठते थे अंग-अंग जिनके रोमांचित,
मधुर कृष्णका नाम श्रवण करते ही पुलकित।
होंगे क्या वे ही तमाल-तरु, गोपबन्धु-जन
जिनका करते थे हरिके भ्रममें आलिंगन?
वही माधवी-कुंज आज भी क्या भ्रमरोंसे
पुंज-पुंज गुंजित है? अपने कमल-करोंसे
स्वयं कृष्ण जिसकी सुगन्ध-छायामें शीतल
पद-पलोटते थे राधाके श्रान्त सुकोमल।
अरे! वही क्या वंशीवट है? जिसपर चढ़कर
कृष्ण बजाते भुवनमोहिनी वंशीका स्वर।
जिसकी मादक तान श्रवणकर क्या ब्रज गोकुल?
हो जाता संसार निखिल मर्माहत, व्याकुल।
ब्रजवनिता पथभ्रष्ट हुअीं तो क्या? विधि-हर भी
पड़े मोहमें। मूर्च्छित-से चर और अचर भी।
क्या होंगीं वे गौवें अब भी, कृष्ण दुलारी,
जिनके पीछे ले लकुटी पीताम्बर धारी
वन-वन फिरे, खिलाया जिनको नव-नव तृण-दल
अपने ही हाथोंसे हरिने कोमल-कोमल।

*

वृन्दावनके पत्र-पत्रपर नाम लिखा है
कृष्णचन्द्रका, जलती कोमल दीप शिखा है
अुसके मधुर रूपकी। अुज्ज्वल शरत् निशामें
बजता गोपीजनका नूपुर दिशा-दिशामें।
कुंज-कुंजमें दलित कुसुम बिखरे हैं कोमल
तरुणी गोप बधू—कबरीके लीला-चंचल।
मन्द-सुगन्ध-सुशीतल बहता त्रिविध समीरण।
ताल-तालपर थिरक रहा है रजका कण कण।
वीथि-वीथिमें पड़ी युगल-चरणोंकी रेखा।
नन्ददासने दिवा—स्वप्नमें अद्भुत देखा
दृश्य अेक, कालिन्दी-तटपर यौवन-अुत्सुक
शत—शत ब्रज-सुन्दरियाँ करतीं क्रीड़ा-कौतुक।
कहीं लगा हिन्दोल झूलती कोअी बाला।
पहनाती है कोअी माधवको वरमाला।
कोअी हँस-हँसकर प्रियतमसे बातें करती।
और कृष्णको कोअी भुजबन्धनमें भरती।
कोअी कामातुर ब्रजबाला सुखसे अुन्मन।
अहा! कृष्णकी छविछायाका करती चुम्बन।
कोअी युवती गाती, कोअी करती नर्त्तन।
और लगाती है ललाटपर कोअी चन्दन।
हाथोंमें मन्जीर किसीके पदमें कंकण।
लगा रही कोअी अधरोंमें ही अन्जन।
कृष्ण-प्रेममें मस्त बनी अितनी सुन्दरियाँ,
अुड़ती हैं आनन्द-प्रेम-सुखकी फुलझड़ियाँ।
सुध न किसीको तन-मनकी, कुछ होश नहीं है।
अमृत-सिन्धु है छलक रहा, सन्तोष नहीं है।
जितनी हैं सुन्दरियाँ, अुतने कृष्ण बने हैं।
हाव-भाव सर्वत्र अेक रस, स्नेह-सने हैं।
अिस प्रकार अभिराम रास-मण्डल है शोभित।
देख जिसे कल्पना-दृगोंसे है कवि विस्मित।

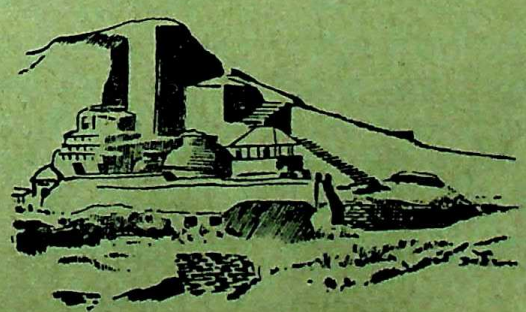

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आसामके मनीषी स्वर्गीय डॉक्टर काकति

: श्री महेशकुमार मूँधड़ा :

अेक ही वर्ष हुआ, डॉ. वाणीकान्त काकतिकी मृत्युसे असमिया भाषा, साहित्य और संस्कृतिका सबसे बड़ा विद्वान और कवि-मनीषी अुठ गया। १९१३ में कलकत्ता विश्वविद्यालयकी आर्ट्स अे. परीक्षामें सर्व-प्रथम आते ही अुनका नाम सारे आसाममें फैल गया। अुनके पहले यह सौभाग्य किसी भी असमिया छात्रको प्राप्त नहीं हुआ था। अिसके बाद १९१५ में बी. अे. और १९१८ में अँगरेजी (ग्रूप अे) में अुन्होंने अेम. अे. परीक्षा अुत्तीर्ण की। नवम्बर १९१८में वह कॉटन-कॉलेजमें लेक्चरर नियुक्त हुअे। १९२५ में अुन्होंने फिर अँगरेजी (ग्रूप बी) में अेम. अे. पास किया। प्रथम श्रेणीमें वे प्रथम आये। काकतिके गुरु अध्यापक सुनीति-कुमार चट्टोपाध्यायने अिस रत्नको पहचाना और भाषा-तत्वमें अुनकी दिलचस्पी पैदा की।

भाषा-तत्वके अध्ययनके साथ ही वह असमिया साहित्यपर आलोचनात्मक निबन्ध लिखने लगे। आगे चलकर अिन निबन्धोंका संग्रह भी छपा। १९१९ में मशहूर असमिया साहित्यिक श्री अम्बिकागिरिराय चौधरीने 'चेतना' नामक मासिक-पत्रिका निकाली। काकतिको प्राचीन असमिया साहित्यकी देखरेखका भार दिया गया। अिस पत्रिकामें प्रकाशित अुनके निबन्धोंने आसामवासियोंमें अपने प्राचीन साहित्यके प्रति गहरा प्रेम पैदा किया। अपने अिन कामोंकी बदौलत काकति अधिकारी आलोचक समझे जाने लगे। रघुनाथ चौधरी जैसे असमियाके समर्थ आशुकविको प्रकाशमें लानेका श्रेय अिन्हींको है। १९२० के करीब वैष्णव-धर्मके अध्ययनकी ओर अिनकी रुचि बढ़ी। आसामके सुप्रसिद्ध वैष्णव सन्त-कवि शंकरदेवपर अिन्होंने अँगरेजीमें अेक छोटी पुस्तक लिखी। भवानन्दके नामसे लिखे असमिया वैष्णव-धर्म तथा साहित्यपर अिनके निबन्ध असमियां समालोचना साहित्यकी अमूल्य निधि है।

साहित्यके अध्ययनके साथ ही काकतिका भाषा-तत्वका अध्ययन भी अध्यापक चट्टोपाध्यायकी देखरेखमें चलता रहा। १९३५ में 'असमिया : अिसकी अुत्पत्ति और विकास' नामक निबन्धपर कलकत्ता-विश्व-विद्यालयने अिन्हें पी. अेच. डी. की डिग्री प्रदान की। पंजाब-विश्वविद्यालयके स्वर्गीय डा. अे. सी. अुल्नर तथा पेरिस विश्वविद्यालयके डॉ. जे. ब्लॉक अुनके निबन्ध परीक्षक थे। अुन्होंने मुक्त-कण्ठसे काकतिके निबन्धकी प्रशंसा की। अिनके अलावा देश-विदेशके अधिकारी विद्वानोंने अुनके कामको कम नहीं सराहा है। काकति असम प्रान्तसे पी अेच. डी. करनेवाले पहले विद्वान् थे। १९१३ में आर्ट्स अे. परीक्षामें प्रथम आनेपर अुन्हें जो ख्याति मिली थी अिस बार अुससे भी अधिक ख्याति मिली। काकतिका यह निबन्ध निःसन्देह अपने क्षेत्रमें आजतक अद्वितीय है।

१९४७ के अन्तमें काकति कॉटन कॉलेजके अध्यक्ष बनाअे गअे। सालभर बाद सरकारने अुन्हें डायरेक्टर ऑफ पब्लिक अिन्स्ट्रक्शन का पद देना चाहा मगर अुन्होंने अिस पदको लेनेसे अिन्कार कर १९४८ में स्थापित गौहाटी विश्वविद्यालयमें असमियाका अध्या-पक होना अपने लिअे अधिक सम्मानपूर्ण समझा। गौहाटी विश्वविद्यालयमें अिन्हें कला-फैकल्टीका डीन बनाया गया। असमिया भाषा और साहित्यके अध्या-पनको सुव्यवस्थित करनेके लिअे काकति जो कुछ कर गअे हैं, वह पीढ़ियोंतक याद किया जायगा।

साहित्य-निबन्धावलिके अलावा 'कलिता जातिका अितिहास' (असमियामें) और 'कामाख्या देवी' (अंग्रेजी-में) छोटे होनेपर भी गंभीर ग्रन्थ हैं। अिसके अलावा कितनी ही पत्र-पत्रिकाओं और अभिनन्दन-ग्रन्थोंमें अिनके लेख बिखरे हुअे हैं। कुछ पाठ्य-पुस्तकोंकी भी अिन्होंने रचना की। असमिया भाषाकी विभिन्न पाठ्य-पुस्तकोंमें अिनके लेखोंको स्थान दिया जाता है।

डा. काकति अेक आदर्श विद्वान् और शिक्षक थे। पदका मोह और पैसेका लोभ अिन्हें कभी डिगा नहीं सके। अेक गरीब मध्यवर्गीय परिवारमें अिनका जन्म हुआ था। जनताके प्रति अिनकी गहरी सहानुभूति थी। अपने आदर्श गुरु अध्यापक सुनीतिकुमार चट्टोपा-ध्यायकी तरह वे बड़े ही छात्र-वत्सल थे। अिन्हीं गुणोंके कारण सारा आसाम अुन्हें बड़ी श्रद्धाके साथ देखता रहा। अुनसठ सालकी अुम्रमें १५ नवम्बर १९५२ को अुनकी मृत्युके बाद सारे आसामके स्कूल-कॉलेज, सरकारी दफ्तर आदि बन्द होगअे। सैकड़ों सभाओंमें अुनके प्रति श्रद्धाञ्जलियाँ अर्पित की गअीं। अिस तरहकी बात विद्वानोंके लिअे बहुत कम देखी जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महान रूमानियन लेखक कराजियाले

: श्रीमती कमल आर्य, बी. अे. :

रूमानियामें अियोन लूका कराजियाले अेक बहुत बड़े साहित्यिक लेखक हो गये हैं। रूमानियाके महान लेखकोंमें अुनका नाम बड़े आदर और बड़ी श्रद्धाके साथ लिया जाता है। आजके रूमानियामें विशाल समाजवादी निर्माणके केन्द्रोंमें, खेतों और कारखानोंमें, कमकर श्रेणी यह अनुभव करती है कि कराजियालेके मर्मभेदी व्यंग्य और हास्यमें, शोषकोंका पर्दाफाश करनेवाली अुसकी पैनी कलममें, सड़नशील समाजकी गंदगी फेंकनेके प्रयत्नों और सुख-शान्तिकी लड़ाअीमें कोअी निकटतम साथी अमर रूपसे अुनके साथ है।

कराजियालेका जन्म और विकास मध्य-योरोपकी १८४८ के बादकी बुर्जुआ-जनवादी क्रान्तिके समय हुआ जब कि क्रान्तिके आदर्शोंको धोखा देकर रूमानियाके बुर्जुआ समाजने बड़े-बड़े जमींदारोंके साथ गठबन्धन करके आम जनताको चूसना शुरू कर दिया था। हालांकि कराजियालेके समयमें बुर्जुआ और सामन्त श्रेणियोंमें अखबारोंमें, पार्लामेंटमें, राजनीतिक-सभाओंमें और अैसे ही अन्य अवसरोंपर बहुत कुछ जबानी लड़ाअी हुआ करती थी तो भी अुस समयके रूमानियाकी लिबरल और कन्जरवेटिव पार्टियाँ आधारभूत रूपसे अेक ही राजनीतिक सूत्रमें बँधी थीं। जिनका मुख्य ध्येय आम जनताको शोषण और शैक्षिक-अभावके बन्धनमें रखना था।

१९०७ में रूमानियामें अेक बहुत बड़ा किसान-विद्रोह हुआ था। अुसपर लिखते हुअे कराजियालेने दिखलाया था :

"यह शासक श्रेणी.....कोअी अुपयोगी कार्य करनेमें या कोअी जनहितकारी बात सोचनेमें असमर्थ है क्योंकि यह अपने लाभ और लालचसे अूपर नहीं अुठ सकती...यह दो अलग-अलग गुटोंमें बंटी हुअी है और अपनेको अैतिहासिक रूपसे लिबरल और कंजरवेटिव कहती है..पर ये दोनों गुट बर्बर हमलावरोंसे भी अधिक कट्टर हैं, जिसे कानूनकी कोअी परवाह नहीं, जिसे मानवताके प्रति कोअी दया नहीं, जिसे परमात्माका कोअी डर नहीं...यह शासक श्रेणी कानून बनाती है और न्याय करनेका दम भरती है...परन्तु वास्तवमें जो कानून अिसने कल बनाया था अुसे आज तोड़ देती है। जो बना रही है अुसे कल तोड़ देगी और जो कल बनायेगी अुसे परसों तोड़ देगी।"

कराजियालेका जन्म ३० जनवरी १८५२ को प्लोअेस्ती नामक नगरके पास हैमानाले नामक ग्राममें हुआ था। अुसकी प्रारंभिक शिक्षा प्लेओस्तीके अेक स्कूलमें हुअी। १८७० में, जब कि वह कुल १८ सालका था, अुसके पिताकी मृत्यु हो गअी। और अुस कच्ची अुम्रमें अुसे अपनी सारी गृहस्थीका खर्च चलानेपर मजबूर होना पड़ा। कठिनाअियोंके बावजूद भी कुछ सालोंके संघर्षके बाद पत्रकारिताके जरिये वह साहित्यिक-क्षेत्रमें पहुँच सका। १८७८ में अुसने अेक नाटक लिखा "**अेक शोर भरी रात**" जो रूमानियन-साहित्यकी-स्थायी कृतियोंमेंसे अेक है। परन्तु साथ ही आजके भारतीय जीवनमें भी अुसका कम महत्व नहीं।

अिस नाटकमें रूमानियाकी बुर्जुआ-श्रेणीका अेक बहुत-ही सुन्दर चित्र खींचा गया है। यह श्रेणी १८४८ की क्रान्तिके तीस बरस बादकी श्रेणी है जिसने क्रान्तिके बचे-खुचे आदर्शोंको, शोर करनेवाले अर्थविहीन वाक्योंमें बदल दिया था। ये वे वाक्य थे जो हर मौकों पर अिसलिये दुहराये जाते थे ताकि अुस श्रेणीके अन्दर "**जनवाद और प्रगतिकी**" भावनाअें दिखलाअी जा सकें और जो अुस श्रेणीके दैनिक जनविरोधी कामोंके अूपर लीपा-पोती कर सके। अुस बुर्जुआ श्रेणीने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शोषित जनताके सामने १८४८ की भाषामें बातें करके और १८४८ के कपड़े पहनकर अुसे बरगलाने, भुलावेमें डालनेकी पूरी कोशिश की थी। परन्तु १८८० और १८४८ में अन्तर था। अुस समय यह श्रेणी क्रान्तिके द्वारपर खड़ी थी। जनताका नेतृत्व कर रही थी। और १८८० में वह प्रतिगामिताकी चरम सीमा बन कर जनतापर दमनात्मक शासन कर रही थी। १८४८ के फटे कपड़ों और १८८० की अैयाशीमें महान अन्तर था। अुक्त नाटकमें हमारे देशकी आजकी स्थिति और रूमानियाकी १९ वीं सदीकी स्थितिमें अितना अधिक साम्य देखनेको मिलता है कि यदि नाम और स्थान बदलकर अुसे हिन्दीमें लिखा जाय तो अैसा लगेगा कि किसी आधुनिक भारतीय लेखकने अपने देशका चित्र खींचा है।

"**अेक शोरभरी रात**" के अभिनीत होनेके साथ ही कराजियाले और तात्कालीन शासक-श्रेणीके संबन्ध खुले रूपसे सामने आ गये। अुक्त श्रेणीके गुर्गोंने कराजियालेपर कीचड़ अुछालना शुरू किया और यह आक्रमण अितना तीव्र हुआ कि लेखकका जीना दूभर हो गया। परन्तु वह डटा रहा। जिस अुच्च चेतना और प्रतिभाके साथ अुसने "**अेक शोरभरी रात**" लिखा था वह अुसके आगेकी कृतियोंमें कायम ही नहीं रही, वरन् अुसमें और निखार आयी। परेशानियोंके कारण अगले छै सालोंतक वह कोअी बड़ी रचना नहीं कर सका। छोटे-छोटे अेकांकी लिखकर ही अुसने संतोष किया परन्तु जब १८८४ में अुसने "**अेक खोअी चिठ्ठी**" नामक नाटक लिखा तो रूमानियाके साहित्यिक-हलकोंमें तूफान आ गया। कहा जाता है कि यह कृति केवल रूमानियाकी ही नहीं वरन् विश्व-साहित्यकी अेक स्थायी कृति है।

अिसमें लेखकने अपने समयकी राजनीतिक प्रणाली का गहरा विश्लेषण पेश किया है। यहाँपर अुसने तात्कालीन शासनके किसी अेक पहलूकी आलोचना नहीं करके सम्पूर्ण समाजका कच्चा चिठ्ठा सामने रखा है जो कि बुर्जुआ सामन्ती-प्रणालीकी तीव्र भर्त्सना है।

अिस "**अेक खोअी चिठ्ठी**" नाटकका खुलता हुआ दृश्य १८८३ में पहाड़ी क्षेत्रके अेक बड़े नगरमें देशमें होनेवाले आम चुनावोंके समय शुरू होता है। सरकारी अुम्मीद्वारके चुनावमें जिन-जिन गुटबन्दियों और पारस्परिक षडयन्त्रोंका और विभिन्न-वैयक्तिक शक्तियोंकी खींचा-तानीका दृश्य सामने आता है वह अुस तरहकी राजनीतिक प्रणालीकी पोल भलीभाँति खोल देता है। अुस समयके चुनावोंका मतलब था सरकारी अुम्मीदवारको पिछले दरवाजेसे पार्लमेंटमें ले आना। क्योंकि चुनावमें सरकारी अुम्मीदवारकी जीत तो पहलेसे ही निश्चित रहती है। अुस समयकी सरकार कन्जरवेटिव दलकी की, अिसलिअे कन्जरवेटिव दलके सदस्य फरफुरीदीका ख्याल है कि सरकारी अुम्मेदवारी अुसे मिलेगी...लिबरल दलका अेक सदस्य कटावेन्कू अैसा नहीं सोचता। अुसका विचार है कि सरकारी अुम्मेदवारी या कमसे कम सहायता अुसे मिलनी चाहिये। अुसके पास सहायता प्राप्त करनेका अेक अस्त्र है ..अेक खोयी चिठ्ठी...यह चिठ्ठी कन्जरवेटिव मैजिस्ट्रेट तिपातेस्कूने स्थानीय कन्जरवेटिव दलके नेता त्राहनाशेकी पत्नीके पास भेजी थी, जिसमें कुछ प्यारकी बातें लिखीं थीं...अुधर अेक दूसरा कन्जरवेटिव सदस्य है अगामित्य दनदनाशे, अुसे फरफुरीदी और कटावेन्कूके दाँवपेचोका पता है। वह फरफुरीदीको रास्तेसे हटानेमें कटावेन्कूको अिस्तेमाल करता है और कटावेन्कूको रास्तेसे हटानेमें मदाम नामक अेक विवाहिता स्त्रीका अिस तरह अन्तमें स्वयं चुना जाता है। संक्षेपमें अुस नाटककी रूपरेखा यह है, परन्तु अुसकी भाषामें जो चोट करने तथा तीखे व्यंग्यकी ताकत है, वह तो पढ़कर या देखकर अनुभव करनेकी चीज है।

कराजियाले यहीं नहीं रुका। अुसे अपने समयकी अैतिहासिक धाराओंसे पर्याप्त परिचय था, अिसीलिअे अुसकी पिछली कृतियोंमें अुसके नाटकोंके नायक-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नायिकाअें तेलकी खानोंके मालिक, अखबारोंकी शृंखलाओंके मालिक और मन्त्री आदि रहे। अुनके सहारे अुसने बुर्जुआ समाजके विकासका चित्र भी पेश किया...अेकके बाद अेक कृतिमें अुसकी कलम अधिकाधिक पैनी होती गयी और अिसीलिअे शासक श्रेणीकी तरफसे अुसपर हमलेकी अधिकता अेव तीव्रता भी बढी।

१८९० में अुसने अपने अेक पत्रमें लिखा था:

"मैंने अपना किराया नहीं चुकाया अुसके लिअे मुझपर मुकदमा चल रहा है। मेरे पास जाड़ोंमें जलानेके लिअे न लकड़ी है और न पहननेके लिये कोअी कोट...मेरी पत्नीके किसी समय भी बच्चा हो सकता है...मेरे अेक बच्चेकी तबीयत खराब है. और अिन परिस्थितियोंमें मैंने अेक नाटक लिखना शुरू कर दिया है और चूँकि रातमें बहुत देरतक जागकर मुझे लिखना पड़ता है, अिसलिअे मुझे कन्जेक्टिवाअिटिस हो गया है...मैं कभी अिधर घूमता हूँ और कभी अुधर घूमता हूँ और मुझे पता नहीं कि मैं क्या करने जा रहा हूँ..."

मैं समझती हूँ कि यह चिठ्ठी अपनी कहानी आप ही कहती है और अिसपर मेरी टीका अपेक्षित नहीं।

अुस समयके "साहित्यिक क्षेत्रों" का कराजियालेके प्रति क्या दृष्टिकोण था, यह तो अिससे ही पता चल जाता है कि १८९१ में जब अुन्होंने अपनी दो कृतियोंको रूमानियन अेकेडेमीके सामने साहित्यिक पुरस्कारके लिअे पेश किया तो अुस अेकेडेमीने अिन्कार कर दिया। अुनकी नजरमें कराजियालेकी कृतियोंमें साहित्यिकता नहीं थी। अुस जमानेके "साहित्यिक" वहीं तक नहीं रुके। अुन्होंने कराजियालेको अितना तंग किया कि १९०४ में अुसे रूमानिया छोड़कर बर्लिनमें रहनेको मजबूर होना पड़ा।

घरसे दूर रहकर भी कराजियालेने अपने देशके आन्दोलनोंसे हाथ नहीं खींचा। १९०७ में रूमानियामें अेक बड़ा किसान-विद्रोह हुआ। अुसका दमन बुरी तरह किया गया। परन्तु कराजियालेने किसानोंका ही साथ दिया..अुसने '१९०७ बसन्तसे शिशिरतक" नामक पुस्तक लिखी। अुसमें कराजियालेने अुक्त विद्रोहका कारण तात्कालीन राजनीतिक और सामाजिक प्रणालीको दिखाया..११००० किसानोंके खूनसे लथपथ दृश्यने कराजियालेको अेक साहित्यिकसे राजनीतिक नेता बना दिया। वह धीमे-धीमे मजदूर-आन्दोलनके निकट आने लगा। अुस समय मजदूर-आन्दोलन रूमानियामें अेक स्थिर रूप ले रहा था। कहना न होगा कि कराजियालेने अुसके संपर्कमें आकर बहुत सी बातें सीखी। अिसका प्रतिबिम्ब १८९३ में देखनेको मिला। अुस जमानेमें कराजियाले "**मोफ्तुल रोमान**" पत्रिकाका संपादन करता था। अुस सालके मअी अंकमें अुसने लिखा:—

..."मजदूरोंके संघर्षोंमें और अिस पत्रिकामें अेक बहुत बड़ी बात है। दोनों अच्छे और साफ समय लानेके लिअे लड़ रहे हैं। मजदूरोंने अपने संघर्षके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिये अेक राजनीतिक रूप चुना है और हमने हास्य और व्यंग्यका रूप...खून चूसनेवाले शासकोंके प्रति जो दुनियापर राज करते हैं हमारी चोटें भी अुधर ही लगाअी जा रहीं है, जिधर मजदूरोंकी"

अिस प्रकार हम देखते हैं कि कराजियालेकी चेतनाका विकास जनवादी भावनाओंके साथ-साथ ही हो रहा था। परन्तु यह बहुत दिनों तक नहीं हो सका। २२ जून १९१२ को बर्लिनमें कराजियाले चल बसे... अपने देश लौटनेकी अदम्य साध दिलमें छिपाये...

अपने चालीस सालके सहित्यिक जीवनमें कराजियालेने बहुत कुछ लिखा, देखा, सुना और गुना। अुसने अपने समयकी बुराअियां देखीं। तत्कालीन राजनीतिक प्रणालीकी सडाँध देखी, बुर्जुआ प्रजातन्त्रका झूठ सुना, बुर्जुआ नैतिकताका खोखलापन गुना, और प्रतिभाशाली, पैनी, लोहेकी कलम अुसने अिनके विरुद्ध अेक महान अभियानमें समर्पित कर दी।

कराजियाले यह समझता था कि अेक सच्चे जनलेखकको अपनी कृतियोंमें संघर्षमयी भावनाअें प्रदर्शित करनी चाहिये और अिसीलिये वह "सरकारी" और सडनशील साहित्यके सदा विरोधमें रहा क्योंकि अेक तो वह दमनका विरोध नहीं करता था और जब करनेपर मजबूर भी होता था तो अेकदम पालतू तरीकेसे। कराजियालेको अैसे साहित्यसे नफरत थी। अिसका यह मतलब नहीं कि अुसने आम जनताकी कोमल भावनाओंका प्रतिम्बिब कभी खींचा ही नहीं। अगर अुसकी अेक दावातमें व्यंग्यकी रोशनाअी भरी थी तो दूसरी दावातमें 'मानवीयदयालुताका दूध।' अुसे जनतासे प्यार ही नहीं था वरन् अुसकी शक्तिमें आस्था, अुसकी विपत्तिमें सहानुभूति और अुसकी मानवताके प्रति आत्मीयता थी।

कराजियालेके प्रेरणा-स्रोत शोषित और पीड़ित आम व्यक्ति थे। अुसकी कृतियां समयसे अूपर अुठकर बोलती हैं। वे अमर हैं। कराजियालेको रूमानियन जनता अपने साहित्यिकोंमें अत्यधिक प्यार करती है। सम्मान देती है। अुसे अुन सब व्यक्तियों और शक्तियोंसे घृणा थी जिनसे अुसके समयकी जनता घृणा करती थी, जिसे आजकी जनता घृणा करती है। अिसलिये कराजियालेका व्यंग्य अपने देशके कैटावैंकुओं और तिगातैस्कुओंके प्रति ही नहीं वरन् सारी दुनियाके और खासकर भारतके, कैटावैंकुओं और तिगातैस्कुओंके प्रति अिंगित करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अज्ञेयसे कुछ प्रश्न और अुनके अुत्तर

: श्री ललित सहगल :

[साहित्य और जीवन सम्बन्धी 'अज्ञेय' के विचार अुनकी कृतियोंमें प्रत्येक स्थलपर प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूपसे व्यक्त हुअे हैं। फिर भी, जब १५ जुलाअी '५३ को काफी देरके लिअे मुझे अुनके पास बैठनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ, तब अुस भेंटका लाभ अुनसे कुछ प्रश्नोंके स्पष्टीकरण लेकर अुठाना चाहा। परिणाम निम्नांकित है। सम्भव है कि अे प्रश्न अिसी अनुक्रममें न पूछे गअे हों, परन्तु यहाँ अुन्हें अुचित क्रमसे दिया जा रहा है। —लेखक]

"भारतीय संस्कृतिके सम्बन्धमें आपका क्या मत है? कुछ लोग पुराने आदर्शोंके जीर्णोद्धार (Revival) को संस्कृति मानते हैं, तो दूसरी ओर कुछ लोग रूस, चीन आदि जनवादी देशोंके आदर्शोंको अपनानाही संस्कृति समझते हैं। साधारण नागरिक दिग्भ्रमित है। साहित्यके द्वारा सांस्कृतिक मूल्योंकी प्रतिष्ठापना कैसे हो सकती है?"

"संस्कृति न तो जीर्णोद्धार है और न रोपण। संस्कृति नाममें ही निहित है नअे जातिगत-अनुभवके आधारपर पुराने अनुभवसे बनी हुअी जीवन-परिपाटी या अुसकी मान्यताओंको सुधारते चलना। जीवित संस्कृति विकासशील होती है। जीर्णोद्धार यह मानकर चलता है कि हम स्थितिशील हैं— या नीचेकी ओर जा रहे हैं। जो लोग पुनरुद्धार करना चाहते हैं, वें जिस चीजका पुनरुद्धार करना चाहते हैं, वह भी विकास और परिवर्तनकी कअी सीढ़ियोंका नतीजा रही। साहित्य संस्कृतिका अेक मुख्य अंग है और अुसके मूल्य संस्कृतिके मूल्योंसे अलग होही नहीं सकते। हमारी आजकी अेक कठिनाअी यह भी है कि कुछ साहित्यकार अैसे मूल्य अपना रहे हैं जिनकी भूमिका हमारी संस्कृतिमें नहीं। अैसे मूल्य कृत्रिमही हो सकते हैं और दोहरे आचरणको प्रश्रय देते हैं।"

"भारतीय-संस्कृतिसे हमारे अधिकांश लेखक दूर क्यों जान पड़ते हैं? आलोचककी दृष्टिसे आप अिसके कारणोंपर प्रकाश डालेंगे?"

"बड़े-बड़े सामाजिक और आर्थिक-परिवर्तनोंके युगमें प्रतिष्ठित नैतिक प्रतिमानोंमें हमारी आस्था कुछ कम हो जाती है या हमें अुनकी फिरसे जाँच करनेकी जरूरत महसूस होने लगती है। अिसलिअे अैसे युगके कलाकार अपनी संस्कृतिसे कुछ कटे हुअे जान पड़ने लगते हैं। लेकिन अिससे वे जरूरी तौरपर दूर नहीं चले जाते। फिरसे नया समन्वय स्थापित करते हैं और अिस प्रकार संस्कृतिके नये निर्माता बन जाते हैं। कुछ अैसे भी होते हैं जो बिल्कुल दूसरी ही संस्कृतिसे नाता जोड़ते हैं या जोड़ना चाहते हैं, मानो अपनी ही संस्कृति की नदीमें परदेशी द्वीपके वासी हो जाते हैं। अैसे लोगोंकी देन कहाँतक अुपयोगी हो सकती है—यह तो भविष्य ही बतायेगा। अभी अितना कहा जा सकता है कि संस्कृतियोंमें आदान-प्रदान तो चलता ही है। और बाहरकी देनमें जो मूल्यवान होगा, वह धीरे-धीरे हमारी संस्कृति में समन्वित हो जायगा।"

"हिन्दीकी भूमि क्या है? यदि वह किसी प्रादेशिक संस्कृतिमें है, तो राष्ट्रभाषा हिन्दीके पीछे कौनसी विशाल संस्कृति होगी?"

"हिन्दीका दोहरा अुत्तरदायित्व है। वह अेक प्रदेशकी भावनाओंको भी प्रतिबिम्बित करती है और अेक राष्ट्रकी भावनाओंको भी, और हमेशासे करती आअी है। वह हमेशासे ही अेक व्यापक संस्कृतिकी सन्देशवाहिका और माध्यम रही है। यही अुसकी शक्ति रही है—और यही अुसकी आजकी सब समस्याओंका मूल है। अिधर राष्ट्रभाषाके नामपर जो अनर्थ होता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है—अुससे अैसा लगता है कि हमारी भाषा हमसे छीनी जा रही है। अगर हम प्रदेशोंकी तुलना करके देखें तो सारा दक्षिण और असम आदि बाहरी प्रभावोंसे असम्पृक्त हैं—यह हम अुनके खान-पान, रहन-सहन और वेशभूषा में देख सकते हैं; जब कि हिन्दीका प्रदेश अैसा असम्पृक्त कभी नहीं रहा। अिसके कारण अैतिहासिक, भौगोलिक और सांस्कृतिक सभी हैं। अिसीलिये हिन्दी हमेशासे अिन प्रभावोंको प्रतिबिम्बित करती रही है।"

"हिन्दीमें जो अनेक आवश्यक नये-नये शब्द गढ़कर प्रयुक्त किये जा रहे हैं—अुन्हें किस आधारपर गढ़ना चाहिये ?"

"अगर गढ़ना ही है तो आधार अनिवार्यतः संस्कृत ही है। लेकिन मेरा विचार है कि बहुत अनावश्यक शब्द भी गढ़े जा रहे हैं, जिनके स्थानपर प्रचलित देशज शब्द लेलेना अधिक अुपयुक्त होगा। प्रचलितको छोड़कर गढ़ा हुआ शब्द लेना कभी भी अुचित नहीं, फिर चाहे गढ़ा हुआ शब्द, कितना ही सुसंस्कृत क्यों न हो।।"

"डॉ० रघुवीर आदिके प्रयत्नोंसे भाषाकी दुर्दशाको कैसे रोका जाय ?"

"डॉ० रघुवीर ठीक दुर्दशा ही कर रहे हैं—अैसा तो नहीं है। भाषाकी दुर्दशा और संस्कार कोअी अेक अकेला आदमी नहीं कर सकता अुनके बनाये कोश यदि चलाअे जा रहे हैं तो अनेक राजकीय-विभागोंके बलपर। अिसका अुपाय ? अेक अुपाय यह है कि भाषा-नीतिका संचालन करनेवाले लोग निरे भाषा-शास्त्री ही न हों, बल्कि साहित्यिक-प्रवृत्तियोंसे और प्रचलित भाषाके स्वभावसे भी भलीभांति परिचित हों, यह अेक अुपाय है—सरकारी स्तर पर। दूसरा अुपाय यह है कि शिक्षाका अधिकसे अधिक प्रसार हो, क्योंकि जिस भाषासे हम अच्छी तरह परिचित हैं, अुसको सहसा अेक आदमी या संस्था नहीं बदल सकती, वह तो सहज भावसे बढ़ती है और नया संस्कार पाती है, जो भाषा अूपरसे रोपी जाती है, अुसके साथ तो खिलवाड़ क्रिया ही जा सकता है।"

"पिछले पन्द्रह-बीस वर्षोंमें आलोचकोंने अनेक 'वादों' का अुल्लेख किया है। क्या अितनी ही विचार-धाराअें अथवा दृष्टिकोण अिन वर्षोंके साहित्यिक कृतित्वमें वास्तवमें हैं ? आपकी अिस सम्बन्धमें क्या धारणा है ?"

"मैं तो यह समझता हूँ कि 'लेबिल' लगानेकी प्रवृत्ति आलोचकोंमें ज्यादा हो गअी है। भविष्यका आलोचक अिस युगको अितने 'वादों' का नहीं मानेगा और दो-चार प्रवृत्तियाँ ही मुख्य पायेगा। मेरा ख्याल है कि आजके आलोचककी दृष्टि पक्षीकी नहीं, चींटीकी है—वह मूर्त्ति नहीं, अुसकी रेखाअें या गड्ढे देखता है—अुस मूर्त्तिके परिपार्श्वकी तो बात ही क्या ! अैसे भी आलोचक हैं जिनके बारेमें यह बात सही नहीं है, लेकिन साधारणतया आलोचकोंमें यही प्रवृत्ति है।"

"सब आलोचकोंकी रायमें आपका नाम हिन्दी कवितामें प्रयोगवादके प्रतिपादक और अग्रणियोंमें माना जाता है। क्या आप स्वयं भी प्रयोगवादी हैं ?"

"प्रयोगवाद नाम बेमानी है। वैसे मैं प्रयोगकी आवश्यकता और अुपादेयत्ताको स्वीकार करता हूँ। कोअी भी कृतिकार यदि अपनी प्रतिभासे रूढ़िको बदलता है या नया संस्कार देता है तो वह प्रयोग ही है। प्रयोगके बिना नया कुछ आ ही नहीं सकता। जिस तरह नयापन अपने आपमें अिष्ट नहीं होता, प्रयोग भी अपने आपमें अिष्ट नहीं। दोनों साधक हैं– प्रयोग सत्यके शोधका, और नयापन आनन्दका।"

"मेरा विचार है कि आजकी कवितामें कोअी अेक स्वर नहीं। अनेक चेतनाअें रचनामें लगी हुअी हैं। शंका यह है कि सामाजिक कल्याण और साहित्यिक अुद्देश्य– अिन दोनोंपर अैसी स्थितिका कोअी अवांछित प्रभाव तो नहीं पड़ेगा ?"

"अेक स्वरता अपने आपमें अवांछनीय है। आज जो विविधता दीखती है, शायद आगे चलकर न भी दिखे। वैसे मैं यह सोचता हूँ कि साधारणतया आजकी साहित्यिक कृति जो है, अुसकी मूल प्रवृत्ति मानवकी प्रतिष्ठापना है। यह दूसरी बात है कि कुछ लोग अिसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लअे अुसकी नैतिक प्रवृत्ति और स्वातन्त्र्य-भावनापर जोर देते हैं, कुछ लोग अुसकी सामाजिकतापर, और कुछ लोग दूसरी चीजोंपर। विविधता और वैचित्र्यमें तब तक कोअी बुराअी नहीं है, जब तक कि वे निर्माणशीलताके पहलू हों।"

"अेक आलोचकका कथन है कि आप लेखन-प्रक्रियाका मानसिक हेत्विहास और कारण-परम्पराका विश्लेषण अधिक करते हैं, नैतिक-मूल्योंका विचार अुतना नहीं– यह कहाँ तक सही है ?"

"सम्भव है, आलोचनाके क्षेत्रमें अैसा रहा हो। वैसे मैं नैतिक-मूल्योंको बहुत अधिक महत्त्व देता हूँ और समझता हूँ कि यदि मेरी अपनी कृतियोंमें नैतिक-मूल्योंका विचार नहीं है तो कुछ भी नहीं।"

"प्रभाकर माचवे अपने पुस्तक 'समीक्षाकी समीक्षा'में अेक स्थलपर यह लिखते हैं कि आप योरोपीय-चिन्ताधाराके आधुनिकतम प्रवाहों को हिन्दीके निकट लाअे हैं। परन्तु अिसके साथ ही वे यह भी कहते हैं कि यह दृष्टिकोण अत्यन्त सीमित और व्यक्तिवादी दृष्टिकोण है। अपने युगमें अपने मर्यादावादी आग्रहके कारण जिस प्रकार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल कोसेके प्रति अन्याय कर गअे; अुसी प्रकार अिस युगमें प्रगतिशील दृष्टिकोणके प्रति आप भी वही कर रहे हैं। क्या आप अिस आपत्तिपर कुछ कहना चाहेंगे ?"

"अिस आपत्तिपर मैं कुछ नहीं कहनो चाहूँगा, क्योंकि मैंने जो भी लिखा है, अुससे स्पष्ट है कि यह भ्रान्त है, फिर प्रश्नसे यह ध्वनि होती है कि आधुनिक योरोपीय चिन्ताधाराका प्रवाह प्रगतिशील दृष्टिकोणका विरोधी है : अगर अैसा है तो फिर मेरे पूर्वग्रहोंका क्या सवाल ! अेक बात अवश्य है—जिन्हें योरोपीय चिन्ताधाराके प्रवाह कहा जाता है, अुन्हें मैं हिन्दीके निकट लाया हूँ, अैसा नहीं। बल्कि जिन्हें आधुनिकतम कहा जाता है, अुनसे मेरी सहानुभूति भी नहीं। अितना ही है कि साधारणतया हिन्दी-लेखकका आधुनिक चिन्ताधारासे जितना परिचय होता है, अुससे शायद मेरा, अधिक रहा है—क्योंकि परिस्थितियोंने मुझे अिसकी सुविधाअें दी हैं।"

"आपकी धारणा है कि साहित्य व्यक्तित्वका प्रकटीकरण तो है, परन्तु अुससे दूर रहकर मुक्ति पाना है। क्या आपको अपने साहित्यसे मुक्तिका आनन्द मिला है ?"

"साहित्य व्यक्तित्वकी अभिव्यक्ति भी है और अुससे मुक्ति भी प्राप्त होती है। मुझे दोनोंका ही आनन्द मिला है।"

"अपने साहित्यमें आप बार-बार 'दुःख सबको माँजता है' और 'वेदनाका दर्शन' आदि शब्दोंका प्रयोग करते हैं। क्या आपकी मान्यता है कि श्रेष्ठ साहित्य सदा दुःखका साहित्य होगा, आनन्दका नहीं ?"

"साहित्यमें दुःख और आनन्द विरोधी चीजें नहीं हैं। बिना गहरी अनुभूतिके श्रेष्ठ साहित्य नहीं रचा जाता। भोग और तृप्ति, सोचने या विवेचन करनेके प्रति अग्रसर नहीं करते। दुःख-बाधाअें और क्लेश ही भावनाओंका संस्कार और परिमार्जन करते हैं। व्यक्तिके **व्यक्तित्व** को तो सब तरहकी अनुभूतियाँ गहरा करती हैं, लेकिन दुःख और क्लेश व्यक्तिको **दूसरे व्यक्तियोंके निकटतर** लाते हैं और अिसलिअे अुसके द्वारा अच्छे साहित्यके निर्माणकी सम्भावनाओंको बढ़ाते हैं। यह ठीक है कि दुःख व्यक्तिको तोड़ भी दे सकता है, लेकिन जो टूट जाता है, वह फिर साहित्यकार नहीं बनता — अिसलिअे अुस पक्षका यहाँ कोअी महत्त्व नहीं।"

हिन्दी पाठकोंके लिअे कोअी सन्देश दीजिअे !"

"क्या सन्देश दूँ ?—जो कुछ लिखता हूँ, सभी संदेश है। बाकी यही कि वे सदैव पाठक बने रहें, खुले रहें-मगर बहें नहीं; सतर्क रहें–मगर पूर्वग्रही नहीं !'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्व० शरद्बाबू 'नारीके प्रति'—अपने कुछ पत्रोंके प्रकाशमें

: श्री रतनलाल बंसल :

भारतके आधुनिक कथा-लेखकोंमें श्रीशरद्का स्थान कुछ लोग स्व. गुरुदेवके पश्चात् दूसरा, कुछ गुरुदेवके ही समकक्ष और कुछ अुनसे भी अुच्च, सर्वोच्च मानते हैं। शरद्ने बीसवीं सदीके प्रथम दशकमें लिखना आरम्भ किया था, अुनके स्वर्गस्थ हुअे भी लगभग सत्रह वर्ष बीत गअे। समाजमें, राजनीतिमें, साहित्यमें, अर्थ-व्यवस्थामें और अिसीके आधारपर विचारों और रुचियोंमें भी कितना क्रान्तिकारी परिवर्तन तबसे हो चुका है, किन्तु शरद्की रचनाअें आज भी मनको अुसी प्रकार स्पर्श करती हैं। पाठकका मन यदि किंचित् भी संवेदनशील हो, तो शरद्की रचनायें पढ़नेपर दो बूँद आँसू अुसकी आँखोंमें छलक ही आते हैं। अुनकी कृतियोंकी मान्यताओंसे मन सहमत हो या न हो; किन्तु अुनमें रमता खूब है। शरद्की रचनाओंमें यह शक्ति सदैव रहेगी।

सैद्धान्तिक दृष्टिसे शरद्की रचनाओंको देखनेपर अुनकी अेक विशेषता है जो झटसे समीक्षककी पकड़में आ जाती है, नारीके प्रति लेखककी सोद्गोपाङ्ग श्रद्धा, विश्वास, सहानुभूति और पूज्य भावना है। अेक वेश्याके चरित्रको भी यदि शरद् चित्रण करने बैठते हैं तो अुसे परम श्रद्धामयी नारी बना देनेकी ओर ही अुनका प्रयास रहता है। अुनकी पात्राओंमें यों तो कर्कशा, कलहकारिणी, कुण्ठित बुद्धि और दुष्ट चरित्र महिलायें भी मिलती तो हैं, किन्तु नारीके प्रति श्रद्धा और विश्वासके अमृतकी जो प्रबल धारा अुनके साहित्यमें प्रवाहित होती है, वह अिस कड़वे जलकी क्षीण धारसे मानों और भी सुखद, मूल्यवान जान पड़ती है। अुनकी रचनाओंके पाठक या समीक्षकके मनमें यही प्रश्न बार-बार अुठता है कि आखिर शरद् कहांसे अितनी विराट् संवेदनशीलता पा सके जो वह अिस प्रकार नारी समाजको अर्पित कर गये हैं। विश्व—साहित्यसे सुपरिचित कुछ विद्वानोंकी तो राय है कि नारीके प्रति अैसी अुदार भावना विश्वके किसी भी अन्य साहित्यिकने प्रकट नहीं की। अिस सम्बन्धमें शरद् विश्वके सर्वोच्च आसनपर विराजते हैं।

नारीके प्रति अैसी श्रद्धा-भावना केवल शरद्की रचनाओंमें ही नहीं, बल्कि अुनके निजी पत्रोंसे भी प्रकट होती है। अिससे प्रतीत होता है कि शरद् अन्तस्तलसे भी नारीके प्रति वही दृष्टिकोण रखते थे, जो अुनकी रचनाओंमें प्रकट हुआ है। अिस सम्बन्धमें वे अेक असहिष्णु कहर सिद्धान्तवादीके भाँति थे। अुदाहरणार्थ, सन् १९१३–१४ में श्री मणीलाल गंगोपाध्याय नामक सज्जनकी 'बिन्दु' नामक कहानी प्रकाशित हुअी थी। अिस कहानीकी आलोचना करते हुअे बंगलाकी प्रसिद्ध-मासिक पत्रिका 'वसुमती'ने लिख दिया था कि गंगोपाध्याय महोदयने अपनी कहानीमें अेक हिन्दू विधवाको रात्रिमें दूसरेके घर जाते हुअे दिखा कर अुचित नहीं किया। शरद्ने अिसपर गंगोपाध्यायजीको लिखा था, "अिस बातको पढ़कर मुझे अैसा लगा कि अिस आदमीकी हिमाकतकी तरह मैं भी अेक घोर प्रतिवाद किसी पत्रिकामें छपवा दूं और अुसमें अत्यन्त-ही कटु शब्दोंमें कहूँ, "लेखककी रुचि बहुत अच्छी है, सिर्फ तुम ही अनुदार और बेवकूफ हो, अिसीलिये तुम्हें अिसमें दोष दिखाअी पड़ा।" बिन्दुने कौन-सा अपराध किया, यह मेरी समझमें किसी तरह भी नहीं आया। वह बेचारी अपने अेक निरुपाय, अभागे साथीको रातमें छुपकर देखने गयी थी, अगर जरूरत हो तो मुँहमें अेक बूंद पानी देदे या अिसी तरह कोअी काम करनेके लिये—बस यही न ?..... हो सकता है कि मन ही मन कुछ स्नेह भी करती हो—क्योंकि वह अुसका खेलका साथी था। क्या यह दोषकी या रुचि विरुद्ध बात है ? कारण वह विधवा है ? अर्थात्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दू विधवाके सामने अगर कोओी मर जाता है और यदि अुसकी अुँगलीका स्पर्श पाकर ही वह जीवित हो सकता है तो हिन्दू विधवाको यह भी नहीं करना चाहिये,...यही अिनकी हिन्दू विधवाका आदर्श है !... अिसी लिअे कभी-कभी मन होता है कि अेकदम अुच्छृंखल रचनाअें शुरू कर दूं। यानी केवल गुस्सेमें आकर जैसा-तैसा लिखने लगूँ।"

श्रीमती लीलारानी गंगोपाध्यायको अेक बार श्री शरद्ने लिखा था, "तुमने लिखा है, जिसने पतिको जाना नहीं, पहिचानाना हीं, अैसी बाल विधवाके ब्याहमें क्या दोष है ?....लेकिन मैं पूछता हूँ कि जिसने (पतिको) अेक बार जाना है पहिचाना है अर्थात् जो १६, १७ वर्षकी अुम्रमें विधवा हुअी है, अुसे क्या अपने लम्बे जीवनमें और किसीसे प्यार या ब्याह करनेका अधिकार नहीं ? क्यों नहीं ? जरा सोचकर देखनेपर पता चल जायगा कि अिसमें यही संस्कार छुपा हुआ है कि स्त्री पतिकी वस्तु है, स्त्रीके रूपमें नारीकी कोओी स्वतन्त्र सत्ता नहीं।"

"..... यहाँ तुम्हें अेक अुपदेश देना चाहता हूँ नारीके लिअे पति परम पूजनीय है, सबसे बड़ा गुरुजन है, लेकिन अिसका यह अर्थ नहीं कि नारी पुरुषकी दासी है। यह सस्कार नारीको जितना छोटा, जितना क्षुद्ध कर देता है अुतना और कुछ नहीं। ..... जब कभी पुस्तक लिखना अिस बातको याद रखनेकी चेष्टा करना। पतिके विरूद्ध कभी विद्रोहका स्वर मनमें नहीं लाना चाहिये। लेकिन पति भी मनुष्य है, मनुष्यकी भगवान्के रूपमें पूजा करना केवल निष्फल ही नहीं, अिससे वह अपनेको भी और पतिको भी छोटा बना देती है।"

शरद् विधवा-विवाहके कट्टर समर्थक थे, यद्यपि अुन्होंने अपनी रचनाओंमें कहीं विधवा-विवाह नहीं कराया। अुन्होंने लीलारानीजी को लिखा था," आपने मेरी समस्त पुस्तकें पढ़ी हैं या नहीं, मैं नहीं जानता। अगर पढ़ी हैं तो कम-से कम यह बात निश्चित रूपसे देखी होगी कि कितने बड़े और सुन्दर जीवन समाजमें केवल विधवा-विवाह नहीं होनेके कारण ही सदाके लिअे व्यर्थ तथा निष्फल हो गये :... "

अिस सम्बन्धमें अेक बात विशेष रूपसे स्मरणीय है। शरद् नारीके प्रति अितने श्रद्धालु होते हुअे भी अुसमें कृत्रिमता बर्दाश्त नहीं कर पाते थे। पाअुडर और लिपस्टिकसे लिपी-पुती लड़कियाँ जैसे अुनके मनमें आग लगा देती थीं, अिस बारेमें अपने विचारोंको प्रकट करते हुअे अुन्होंने अेक बार लीलारानीको ही लिखा था, "दीदी ! मैंने कभी भी खाने पीनेका परहेज नहीं किया किन्तु अिन महिलाओंके हाथोंका छुआ कुछ भी नहीं खाता। .....देखा है, अिन लड़कियोंमें साढ़े पन्द्रह आना कुरूपा होती हैं, सिर्फ साबुन-पाअुडर और कपड़े-लत्तोंसे और आनुनासिक गलेसे जहाँतक चल जाय ! ..... लड़कियोंकी निन्दा कर रहा हूँ, अिसलिअे शायद तुम्हें क्रोध हो रहा होगा। लेकिन जानती तो हो दीदी ? अन्दर-अन्दर तुम लोगोंके प्रति मुझमें कितनी श्रद्धा और कितना स्नेह है। केवल अुनका बनना, विद्याका प्रदर्शन और कुसंस्कारजनित रोशनीका दंभ और जो सच नहीं है, अुसका मान, अिन्हीं बातोंको देख कर मुझे अितनी अरुचि है।"

अिसका यह किंचित् भी अर्थ नहीं कि शरद् नारीको केवल चौके-चूल्हे तक ही सीमित रखना चाहते थे। यदि अुनके अैसे विचार होते, तो कहाँ मिलती हमको 'पाथेरदावी' की 'भारती' और 'सुमित्रा' और कहाँ आज हम 'शेष प्रश्न' की 'कमल' से ही परिचित होते? अनेकानेक अत्यन्त शिक्षिता विदुषी महिलाओंको अुन्होंने अपनी रचनाओंमें सम्मानके अूंचे आसनपर स्थान दिया है। आशय यह कि शरद् सरल कृत्रिमता-हीन आत्मसम्मानी महिला-समाजके प्रशंसक अेवं पूजक थे। अपनेको जबरदस्ती 'मौडर्न' सिद्ध करनेवाली 'सोसाअिटी गर्ल' जैसे अुनको महिला-समाजका अपमान करती जान पड़ती थी।

शरद् स्त्रियोंके प्रति अितने अधिक अुदार थे और सामाजिक अेवं साहित्यिक कार्योंमें अुनको भाग लेते हुअे देखनेके लिअे अितने आतुर थे कि अवकाश न रहनेपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी महिला-लेखिकाओंकी रचनाओंको सुधारते-सँवारते और अुनको प्रोत्साहित करते थे। बंगलाकी लब्ध प्रतिष्ठित साहित्य-निर्मात्री श्रीमती निरूपमादेवीको तो शरद् अपनी छोटी बहिनके समानही मानते थे। अेक पत्रमें शरद्ने लिखा था, 'मेरी सच्ची शिष्या और सहोदरासे अधिक अेक व्यक्ति है। अुसका नाम है निरूपमा।...यह लड़की अेक दिन जब सोलह वर्षकी आयुमें विधवा होकर सन्न रह गयी तो मैंने अुसे बार-बार यही बात समझाअी कि 'विधवा होना ही नारी जीवनकी चरम हानि और सधवा होना ही चरम सार्थकता है, अिन दोनोंमेंसे कोअी भी सत्य नहीं।' तबसे अुसे समग्रचित्त साहित्यमें नियोजित कर दिया। अुसकी सभी रचनाओंका संशोधन करता और हाथ पकड़कर लिखना सिखाता था– अिसी लिअे आज वह मानव बनी है। केवल नारी होकर नहीं। यह मेरे लिअे बड़े गर्वकी वस्तु है।"

महिलाओंकी साहित्य-रचना-सामर्थ्यपर शरद्को अगाध श्रद्धा, अगाध विश्वास था। 'आजकल अनगिनती बंगला अुपन्यास निकल रहे हैं। अुनमें दो चीजोंको मैंने लक्ष्य किया। पहली बात यह है कि पुरुषोंकी रचनाअें प्रायः सारहीन और अपाठ्य हैं। यही नहीं, अुनमें पन्द्रह आना दूसरोंकी चुराअी हुअी भी हैं।... स्त्रियोंकी रचनाओंमें और चाहे जो हो, कमसे कम वे दूसरोंकी चुराअी हुअी नहीं। अुनमें कृत्रिमता भी अधिक नहीं...।" यह श्री शरद्के अेक पत्रका अंश है और अिसीसे मिलती-जुलते विचार अुन्होंने अपने अनेक पत्रोंमें प्रकट किये।

श्री हरिदास शास्त्रीको अपने २९-३-२५ के पत्रमें श्री शरद्ने लिखा था, 'यथार्थ बात कहनेमें स्त्रियोंकी शक्ति और साहस पुरुषोंसे कहीं अधिक है। वे कुछ भी नहीं मानतीं। पुरुष जहाँ भयसे विह्वल हो जाते हैं, स्त्रियाँ वहाँ स्पष्ट बातें अुच्च स्वरसे घोषित करनेमें दुविधा नहीं करतीं।"

समाज जिनको पतिता कहकर तिरस्कृत करता रहा है, अुनके प्रति तो शरद्की समवेदनाका वारापार ही नहीं था। यह सब केवल सनक या भावुकता नहीं, बल्कि गहरे पर्यवेक्षणके पश्चात् अुनके अैसे विचार बने थे। शरद्के अेक पत्रका अंश अिस प्रकार है, "मैंने स्वयं लड़कपनमें अेक बार छः-सात सौ कुलत्यागिनी बंगालिनोंका अितिहास संग्रह किया था। बहुत समय, बहुत रुपये अिसमें नष्ट हुअे। लेकिन अुससे मुझे अेक विचित्र शिक्षा मिली थी। बदनामी देशभरमें फैल गयी, पर अिस बातको असंदिग्ध रूपसे जान सका कि जो कुल त्याग करके आती हैं, अुनमें अस्सी प्रतिशत प्रायः सधवायें हैं, विधवायें बहुत ही कम हैं। पतिके जीवित रहनेसे ही क्या और बड़े पहरेमें रहनेसे ही क्या? और विधवा होनेसे भी क्या? नारी अनेक दुःखोंसे ही धर्म नष्ट करनेके लिये तय्यार होती है और जिस लिये होती है, वह पर पुरुषका रत नहीं, किसी वीभत्स प्रवृत्तिका लोभ भी नहीं है। जब वह अपनी अितनी बड़ी वस्तुको नष्ट करती हैं, तो बाहर जाकर किसी आश्चर्य वस्तुको पानेके लोभसे नहीं, सिर्फ किसी बातसे अपनेको मुक्त करनेके लिये ही अितने बड़े दुःखको सरपर अुठा लेती है।"

श्री शरदकी ५१ वीं जन्मतिथिपर बंगालके अनेकानेक नारी-संघोंकी ओरसे अुनको अभिनन्दन-पत्र दिया गया था अुसमें कहा गया था,

"पराधीन देशके अधःपतित सामाजकी अन्तरप्रचारिणियोंके हृदयकी मूक आनन्द-वेदनाको तुमने भाषामें मूर्त्त कर दिया है। अुनके दुर्गतिपूर्ण-जीवनके सुख-दुःखोंकी सब अनुभूतियोंको निबिड़ सहानुभूतिमें ढालकर तुमने साहित्यमें सत्य करके प्रत्यक्ष करा दिया। तुम्हारी अनाविष्ट दृष्टि सूक्ष्म पर्यवेक्षण-सामर्थ्य, सुगम्भीर अुपलब्धि-शक्ति तथा विचित्र मानव चरित्रकी अतलस्पर्शी अभिज्ञताने निखिल नारी चित्रकी निगूढ़ प्रकृतिका गुप्ततम पता पा लिया है। हे नारी-चरित्रके परम रहस्यज्ञाता, हम लोग तुम्हारी वन्दना करती हैं।"

"सब तरहका आत्मापमान तथा सब तरहकी हीनताकी हालतमें भी नारीकी प्राकृतिक विशेषताअें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब देशके सब समाजमें मौजूद हैं। तुमने अुसके अकृत्रिम रूपको प्रत्यक्ष किया है, अुसकी सत्य प्रकृतिका अध्ययन किया है। हे सन्नारियोंके अन्तर्यामी, हम तुम्हारी वन्दना करती हैं।"

"आजके अिस विशेष दिनमें हम यही प्रकट करने आअी हैं कि हम तुम्हारी प्रतिभाको वरण करती हैं, तुमको श्रद्धा करती हैं, तुमको प्यार करती हैं। तुमको हम लोग अपना ही समझती हैं। हे नारियोंके परम श्रद्धेय मित्र! तुम हम लोगोंके परमप्रिय हो, तुम हम लोगोंके परम आत्मीय हो—हम तुम्हारी वन्दना करती हैं।"

और शरद् युग-युगों तक नारी समाजकी वन्दनाके अिसी प्रकार पात्र रहेंगे।[1]

---

१. लेखमें 'शरत्-पत्रावली' तथा 'शरत्चन्द्र अेक अध्ययन' पुस्तकसे अुद्धरण दिये गये हैं, जिसके लिये दोनों पुस्तकोंके लेखकों, प्रकाशकोंके प्रति आभारी हूँ। लेखक।

जीवन-रहस्य

: श्री रंजन परमार :

जो जीवनके मर्मको समझता है अुसके लिअे वह संपत्ति है और जो बिना समझे बूझे चलता है अुसके लिअे भयंकर विपत्ति। विश्व भी अैसा ही है। अिसके सब तत्व बँधी हुअी गठरी-से हैं अुसकी गाँठे खोलना आता हो तो अुसमेंसे बहुमूल्य जड़ जवाहरात और हीरे-मोती-माणिक प्रचुर मात्रामें प्राप्त होते हैं, अगर अैसा करना नहीं आता तो अह जीवन अेक भारी भरकम बोझ है। नीचे पड़ी रहने दे तो ठोकर खिलानेवाली आपत्तियाँ और सिरपर रखें तो भारसे दबानेवाली विपत्तियाँ हैं। जिसको जहाजके कलपुर्जोंको बनाना-सुलझाना तथा चलाना आता हो अुसके लिअे विकराल समुन्दर भी अेक राजमार्ग है वर्ना यह मार्ग-भीषण आपत्ति है। अग्निको सच्चा स्वरूप जान लें तो वह शक्तिदाता अेवं शुद्धिदाता-अमोघ शस्त्र है, वर्ना जलाकर भस्म कर देनेवाली भयंकर विपत्ति है।

जो लोग बिना कुछ समझे-बूझे निर्बुद्ध हो जीवनयापन करते हैं अुन्हें डग डगपर अुलझनों, मुश्किलें व आपत्तियोंके दर्शन होते हैं और वे अुसकी टक्करमें आ बुरी तरह जख्मी होते हैं—मर जाते हैं। लेकिन प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होती अुलझनों व आपत्तियोंको बुद्धिपूर्वक समझ जो अुसकी अनेक विद्यगुत्थियोंको सुलझाके ही दम लेता है--वह अनेक रहस्योंका स्वामी बन जाता है।

आपत्तियाँ अेक अंधकारमय खंडमें पड़ी हुअी वस्तु-सी हैं। अगर हम अुनमें प्रविष्ट होनेकी दरकार अथवा हिम्मत ही न करें तो वे चीजें हमें चित्रविचित्र तथा डरावनी अवश्य मालूम होंगी; अैसी परिस्थितिमें या तो दीया जलाकर अंधकारके छाये साम्राज्यको छिन्न-भिन्न करना चाहिये अथवा अंधकारमें प्रविष्ट होनेकी आँखोंको आदत-सी न पड़ जाय, तबतक धैर्य धारण करना चाहिअे।

कअी बार, आपत्तियाँ जीवन रूपी-कयारीमें अुगे फिजूलके पान-सी होती हैं, तो कित्येक दफे जीवन-पथके बीचमें पड़े कंटकके समान। अुन्हें तो जड़मूलसे ही अुखाड़ फेंकनेमें ही भलाअी है। पड़ी-पड़ी वे बड़ी होती हैं और जीवन-पौधेके लिअे आवश्यक खुराक छीन अुसे सर्वथा शुष्क बना देती हैं।

वैसे तो आपत्तियाँ, अूपर-अूपर बाह्यरूपसे तो नारियल-फलकी तरह कठोर लगती हैं, लेकिन अुसकी मजबूत ठोपरीको तोड़नेका श्रम अुठाया तो अुसमेंसे श्वेत-स्वादिष्ट मृदु-गूदा और अमृत-सा मीठा पानी प्राप्त होता है।

बिना कछु सोचे-समझे अपना व्यवहार दूसरोंसे करें तो संपत्ति भी आपत्तिमें परिवर्तित हो जाती है और समय आनेपर घात भी करती है। किसी भी परिस्थितिको अर्थ-शून्यमान अुसके प्रति अुदास रहना और बिना समझे-बूझे आगेकी ओर प्रस्थान करना--अिसमें आखिरकार हानिको ही गले लगाना पड़ेगा।

मूल गुजराती लेखक—श्री लालजी मूलजी गोहिल, बी. अे. ऑनर्स)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तमिळ साहित्य :

स्व० सुब्रह्मण्य भारतीके कान्हा-गीत ॥

: श्री प्रो. के. अेस. चिदम्बरम्, 'भारद्वाजन्', अेम. अे. :

४. कान्हा मेरी माँ ॥

स्वनामधन्य ऋषितुल्य वी. वी. अेस. अेयरका कविता संबन्धी अुद्घोष था —'अत्युन्नत कविताके लक्षणको संक्षेपमें कहें तो वही कविता हो सकती है जो मानव बुद्धिको व्यावहारिक दुनियाके संकुचित वातावरणसे अूपर अुठाकर, अखण्ड भाव-भूमिपर ले जाती हो। कोअी भी कवि, चाहे किसी भी भाव या रसका वर्णनकर सकता है; पर अुस भाव या रसको सुननेवालोंके हृदयमें अखण्ड भावकी छाया पड़नी चाहिये'। (भारती नागपुर-वर्ष १ अंक ७, पृष्ठ २९२) स्व० सु० भारतीकी प्रस्तुत कविता अुस निर्वचनका अमोघ अुदाहरण माना जा सकता है।

अिस कवितामें भारती जी, अपने आराध्य देव कृष्ण कान्हाको प्रेममयी माताके रूपमें चित्रित करते हैं। माता अपने लाड़लेको सभी प्रकारसे खुश रखनेके लिअे, अुसके मन बहलानेवाले कअी साधन तैयार रखती है, पर वे लौकिक चीजें परिमाणमें छोटी और अल्पकालीन हैं। अुनके कारण संभव है बच्चेका मन, जिसमें कि 'वसुधैव कुटुम्बकम्' वाली भावना होनी चाहिअे, अुन खिलौनों ही के समान, लघु ही, संकुचित घेरेका ही हो जाय। अल्पमें बहुतको, अेकमें अनेकको, जीवमें ब्रह्मको देखनेकी मानवी (मनुष्यता-पूर्ण) प्रकृति, तंब, बचपन ही में कुण्ठित हो जाती है। तभी तो वह वयस्क हो जानेपर निरा अहंमन्य और अहंयुः ही हो जाता है और निःसंकोच कहता है कि ब्रह्म मिथ्या है। अिसके विरुद्ध प्रकृतिकी गोदमें पलनेवाले, प्राकृतिक चीजोंको कृत्रिम लघु-रूपमें (In miniature) देखनेमें अनभ्यस्त पुरुषोंके मनमें ब्रह्मकी सत्तापर अटूट विश्वास हो जाता है। अुनके विचारोंमें विश्व-प्रेम अुमड़ता हुआ पाया जाता है। कविता जैसी अलौकिक चीजको प्रेरणा मिलती आयी है बहुधा अिन्हीं प्राकृतिक दृश्योंसे। सुनते हैं, अपने पिताके साथ-साथ, प्राकृतिक रमणीयतासे पूर्ण बंगालके वन-वनान्तरोंमें घूमते-फिरते समय ही, विश्वकवि टैगौरकी प्रतिभामें कविता स्फुटित हो अुठी थी। तमिल नाडके रवीन्द्रनाथ, (परलि शु० नेल्लैयप्प पिल्लैके शब्दोंमें) जीवन्मुक्त स्व० भारतीकी कविताअें भी वैसे ही प्रकृतिकी प्रेरणापर साकार हुअी थीं। अिस कवितामें वे, अुन्हीं प्राकृतिक महद्वस्तुओंको, अपने मातृरूप कान्हासे प्रस्तुत,अमिट खिलौनोंके रूपमें चित्रित करते हैं। 'ब्रह्म-रूपी माता कान्हाने अपनी संतान जीव' के मन बहलावके लिअे विस्तृत विश्वभरमें, प्रकृत्या ही पहाड़ नदी जैसी कअी चीजें प्रस्तुत कर रखी हैं, जिनके नाते, विश्वका हर जीव, हर दूसरे जीवमें अुस ब्रह्मको देखते हुअे शैल-सागर जैसे विस्तृत हृदयवाला हो जाता है। अिस दृष्टिकी अुनकी यह कविता बड़ी भावपूर्ण है:-

(नोण्डिक्किन्दु)

अुण्ण अुण्णत्ते विट्टादे-अम्मं
अुयिरेनुं मुलैयिनिल् अुणवेनुं पाल्;
वण्णमुर वैत्तेनक्के-अेन्ड्रन्
वायिनिक्कोंड्डूट्टूवोर-वण्मैयुडैयाळ्;
कण्णनेनुं पेयरुडैयाळ्-अेन्नै
कट्टि निरैवान् अेनुं तन् कैयिलणैत्तु
मण्णेनुं तन् मडियिल्वैत्ते-पल
मायमुरु कदै शोल्लि मन कळिप्पाळ् ॥१॥

मेरी माता (कान्हा) के प्राण-रूपी स्तनोंका ज्ञान-रूपी स्तन्य (दूध) जितना ही पी लूं अघाना तो कभी नहीं होता। मेरे लिये सब कुछ भले प्रकारसे प्रस्तुत कर मुंहमें देकर खिलानेमें वह बड़ी चतुर है। वह 'कान्ह' कहलाती है। मुझे गले लगाकर, विस्तृत आकाश-रूपी हाथोंमें ले, असीम पृथ्वी-रूपी गोदमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिटाकर, मायाजाल भरी विभिन्न कहानियाँ सुनाती हुअी वह, मन बहला लेती है ।

अिन्बमेनच्चिल कदैहळ्-अेन
ककेट्टमेन्ड्र वेट्रियेन्ड्र चिल कदैहळ्
तुन्बमेनच्चिल कदैहळ्-केट्ट
तोल्लियेड्र् वीष्च्चियेन्ड्र चिल कदैहळ्
अेन् परुवं अेन्ड्रन् विरुप्पं-अेनुं
अिवट्रिनु क्किकणंगवेन्नुळमरिन्दे
अन्बोडवळ् शोल्लि मरुवाळ्-अदिल्
अर्प्पुदमुण्डाय् परवशमडैवेन् ।। २ ।।

(अुनमें) कुछ कहानियाँ, मेरा मन खुश करनेवली होतीं, मेरी बड़ाअी और विजयकी होतीं, तो कुछ दिल दुखानेवाली भी होतीं, मेरी छोटाअी और हारकी भी होतीं । बड़े प्यारके साथ, मेरी अवस्था और अिच्छाओंके अनुसार, मेरे दिलकी चाव पहचानकर वे जो अैसी कहानियाँ कहती जातीं, अुन्हें सुनकर मैं स्तब्ध रह जाता और सुध-बुध भूल जाता ।

विन्दै विन्दैयाह् अेनक्के-पल
विद विदत्तोट्टंगळ् काट्टुविप्पाळ्;
चन्दिरन् अेन्ड्रोरु लोम्मै-अदिल्
तण्णमुदंपोल ओळि परन्दोयुहुम् ।
मन्दै मन्दैया मेघं-पल
वन्नमुरुं पोम्मैयदु मषै पोषियुम्;
मुन्द ओरु सूरियनुण्डु-अदन्
मुदत्तोळि कूरुदक्कोर् मोषियिलैये ।।३।।

वह मुझे निराले-निराले, रंग-बिरंगे दृश्य दिखायेगी । अुनमें अेक चाँदका खिलौना है । अुसमेंसे शीतल अमृत सरीखा प्रकाश वह निकलेगा । झुण्ड बाँधकर, अुड़-अुड़ जानेवाले काले बादल-रूपी सुन्दर खिलौने, कभी-कभी पानी बरसायंगे । अिनमें सर्वश्रेष्ठ खिलौना सूरज ही है, जिसके चेहरेकी आभाकी वर्णना करनेकी समर्थ, किसी भाषामें हैही नहीं ।

वानत्तु मीन्गळुण्डु-चिरु
मणिहळैप्पोल-मिन्नि निरैन्दिरुक्कुम्;
नानत्तैक्कणक्किडवे-मन
नाडि मिह मुयल्हिनु कूडुवदिल्लै ।
कानत्तु मलैहळुण्डु-अेन्दक्
कालमुमोरिडं विट्टु नहर्वदिल्लै;
मोनत्तिलेयिरुक्कुं ओरु
मोषियुरैयादु विळैयाडवरुकाण् ।।४।।

आकाश भरमें तारे, छोटे-छोटे मणियोंके समान टिम-टिमाते हुअे बिखरे पड़े हैं । मैं अुन्हें गिन लेनेकी जी लगाकर अत्यधिक कोशिश करता, फिर भी गिन नहीं पाता । घने-घने जंगलोंवाले पहाड़ भी प्रस्तुत हैं । वे, कहींसे कहीं कभी नहीं हो जाते, हमेशा अचल समाधिमें लीन हो, चुपचाप मेरे साथ खेला करते हैं !

नल्ल नल्ल नदिहळुण्ड्-अवै
नाडेंगुमोडि विळेयाडिवरुंकाण्;
मेल्ल मेल्लप्पोंयवैताम् विषुं
विरिकडर्प्पाम्मैयदु मिहप्पेरिदाम् ।
एल्लैयदिक्कणुवदिल्लै-अलै
एट्रिनुरैंकक्कियोरु पाट्टिशैक्कुम्;
ओल्लेनुमप्पाट्टिनिले-अम्मै
ओमेनुं पेयरेन्डुं ओलित्तिडुंकाण् ।।५।।

अच्छी-अच्छी नदियाँ भी हैं । वे, देश भरसे होकर अुछलती-कूदती हुअी बहती और धीरे-धीरे प्रवाहित हो, आखिर विस्तृत सागरमें लीन हो जातीं । समुद्र-रूपी वह खिलौना अितना बड़ा है कि अुसका आरपार दिखायी ही नहीं देता । लहरें फैलाकर फेन अुड़ाता हुआ वह अेक सुमधुर तान भरता है । गूंजते हुअे अुस गानमें, मेरी माताका प्रणवात्मक (ॐ) नाम हमेशा शब्दायमान रहेगा ।

चोलैहळू कानिनंगळ्-अंगु
चूष् तरुंपल निर मणि मलर्हळ्;
चालवुमिनियनवाय्-अंगु
तरुक्कळिल-तूण्डिडुं कनिवहेहळ्;
ज्ञाल मुट्रिलु निरैन्दे-मिह
नयन्तरु बोम्मैहळेनक्केनवे
कोलमुं शुवैयुमुर-अवळ्
कोडि पलकोडिहळ् कुवित्तु वैत्ताळ् ।।६।।

कअी बाग़-बगीचे और वन-वनांतर, अुधरके दिल लुभानेवाले रंग-बिरंगे सुन्दर फूल, पेड़ोंमें लटकनेवाले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अति-मधुर फलवर्ग– अेवं दुनिया भरमें, सब कहीं, भरे रहनेवाले सुन्दर तथा स्वादिष्ट, भले-भले खिलौने, अुसीने मेरे लिअे, करोड़ोंकी संख्यामें अेकत्रित कर रखे हैं।

तिन्ड्रिड प्पण्डंगळुं-चेवि
तेविहरक्केट्क नप्पहिहळुं
ओन्ड्रुरप्पलहुदक्के अरि-
कडैय मेटात्तोषरुमवळ् कोडुत्ताळ्।
कोन्ड्रिड्डुमेन अिनिदाय-अिन्वक्
कोडु नेरुप्पाय, अनच्चुवैयमुदाय
नन्ड्रियलका दलुक्के-अिन्द
नारियर तमै अेनैच्चूष वैत्ताळ् ॥७॥

खानेको विविध खाद्य सुननेको श्रुतिमधुर अच्छे-अच्छे गाने, बड़ी अेकताके साथ हिले-मिले रहनेके लिअे आप्त मित्र— ये भी मुझे अुसीने दिये। अुसीने मेरे चारों ओर अिन नारियोंको खड़ा किया, जिनका प्रेम मेरे लिअे हृदय-वेधक मधुरिमामय है, अतितप्त-सुख-पूर्ण है, और है तेज जायकेदार अमृत ही।

अिरहुडैप्परवैहळुं-तिंल
तिरिन्दिडुं विलगुहळ् अूर्वनहळ्
अरैकडल निरैन्दिडवे-अेण्णिल
अमैत्तिडर्क्करियपल् वहैप्पडवे
शुरवुहळ् मीन वहैहळ्-अेनत्
तोषर्हळ् पलरुमिङ् गेनक्कळित्ताळ्;
निरैवुर अिन्बम वैत्ताळ्-अदै
निनैक्कवु मुडुदिलूं कुडुवदिल्लै ॥८॥

पंखवाली चिड़ियाँ, भूमिपर विचरनेवाले पशु तथा सरीसृप, लहरें मारनेवाले असीम सागर तकको भर देनेवाली असंख्य और विविध मछलियाँ–अेवं विध कअी मित्रोंको अुसने अिस दुनियामें मुझे प्रदान किया है। आनन्द मनानेके जितने साधन अुसने भर दिये हैं अुनको पूर्णतः सोचना भी दूभर है।

शात्तिरं कोडि वैत्ताळ्-अवै
तम्मिनुमुयन्दंदोर ज्ञानं वैत्ताळ्;
मीत्तिडूं पोषदिनिले-नात्
वेडिक्कैयुरक्कण्डु नहैप्पदक्कें;
कोत्त पोय् वेदंगळुं—मतक्
कोलैहळुं अरशर् तम् कूत्तुक्कळुं
मूत्तवर् पोयन्नडैयुं--अिल
मूडर् तम् नवलैयुं अवळ् पुनैन्दाळ् ॥९॥

करोड़ों शास्त्रग्रन्थ और अुनसे बढ़े-चढ़े ज्ञान भी अुसने मेरे लिअे अिधर प्रस्तुत किअे। बचे-खुचे समयमें मैं तमाशे देखकर हँसलूं, अिसलिअे अुसने कभी झूठ-मूठके वेद ग्रं कये; मजहबी मारकाट, राजे-महाराजोंके खेल-तमाशे, बड़ोंके असद्व्यवहार और छोटे विमूढ़ोंकी तद्गत चिन्ता--आदिकी बातें भी अुसने रच रखीं॥

वेण्डिय कोडुत्तिडुवाळ्—अवै
विरुम्बु मुन् कोडुत्तिड विरैन्दिडुवाळ्:
आण्डरुळ पुरिन्दिडुवाळ्—अण्णन्
अरुच्चुनन् पोलेनैयाक्किडुवाळ्
याण्डुमेक्कालत्तिलुं—अवळ्
अिन्नरुळ् पाडुनट्रोषिल् पुरिवेन्:
नींडदोर् पुहष-दाष्डुम्—पिर
निहररु पेरुमैयुमवळ् कोडुप्पाळ् ॥१०॥

मनचाही सारी चीजें, वह मुझे देदेगी। मैं अपनी अिच्छा प्रकट करूं, अुसके पहले ही मेरी चाही सब कुछ वह, दौड़े-दौड़े ले आअेगी। वह मेरी सभी प्रकारसे रक्षा करेगी, मुझपर अपनी सारी कृपा बरसा देगी। भाअी अर्जुनके समान, मुझे भी वह (शूर-वीर) बना देगी। मैं चाहे कहीं भी होअूं, हमेशा अुसीकी सत्कृपाके गुणगानका काम करता रहूगा। वह मुझे दीर्घ यशोमय जीवन तथा अतुलनीय महत्त्व भी प्रदान करेंगी॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्योति जगमगा रही !

: श्री अरविन्द जोशी :

अंधकार मिट गया कि ज्योति जगमगा रही,

दिग्दिगन्त गूँजते नयी अुषा नयी निशा,
युग बदल रहा बदल रही दिशा-दिशा !
सिन्धुकी तरंग गा रही है गीत भर लहर,
पुष्प-कुंज लहलहा रहे डगर-डगर !
तम मिटा, गयी निशा, अुषा ये गीत गा रही,

अंधकार मिट गया कि ज्योति जगमगा रही !

तरंग अुठ रही मनुष्य बढ़ रहा सिहर-सिहर,
शताब्दियोंके बाद आज गा रहा हृदय लहर !
खिल रहीं कुमारियाँ दुलारियाँ विहँस रहीं,
युगोंके बाद हर्ष कर यूँ जिन्दगी मचल रही !
यही गगन, यही धरा, अिसीके गीत गा रही,

अंधकार मिट गया कि ज्योति जगमगा रही !

सहस्र दीप जल अुठे गगन भी मुस्करा अुठा,
घोर अंधकारमें प्रकाश-पुंज खिल अुठा !
बाल, वृद्ध, नौजवान अेक प्यार पा रहा,
शान्ति-दूत गाँव-गाँव बीच गीत गा रहा !
देश-भक्तकी लगन यही सन्देश ला रही,

अंधकार मिट गया कि ज्योति जगमगा रही !

बदल रहा है युग, बदल रही है हर घड़ी,
नगर-शहर अुठे 'औ' अुठ रही है झोपड़ी !
प्रशस्त राह पर प्रकाश जगमगा रहा,
नवीन युग, नयी दिशा, नया प्रवाह आ रहा !
द्वन्द्व मिट गया, मिटा कलह, सुलहके गीत गा रही,

अंधकार मिट गया कि ज्योति जगमगा रही !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जगमगा रही असंख्य रश्मियाँ, नयी किरण,
देश जग रहा कि धर रहा प्रथम चरण !
असंख्य प्राण अुल्लसित, खुशीसे कर रहे नमन,
प्रथम चरण अगाध प्रेम खिल रहे हृदय-सुमन !
सुमनकी मन्द यह सुगन्ध हर कहीं समा रही,

अंधकार मिट गया कि ज्योति जगमगा रही !

कौन गीत गा रहा अुधर नहीं अिधर चलो,
अेक, अेकसे नहीं, हरेकसे हिलो-मिलो !
संस्कृतिकी पीर ले "महान-देव" बढ़ रहा,
धर्म-कार्य "भूमियज्ञ" का प्रचार कर रहा !
दान-वीर देश यह कि संस्कृति बता रही,

अंधकार मिट गया कि ज्योति जगमगा रही ! *

---

* अिस होनहार बालक 'पुष्प' की मातृभाषा गुजराती है। और अपना जीवन-सौरभ हिन्दी-कवितामें भरने वह अभी-अभी प्रथम प्रयत्नसे मचल पड़ा है। शीघ्र ही वह राष्ट्रभारतीका कवि बने यह हमारी शुभेच्छा है।—सं०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्षा श्री

[तेलगु-गद्य सानुवाद]

: महाकवि विश्वनाथ सत्यनारायण, अेम. अे., तेलगु प्राध्यायक, विजयवाडा :

वर्षर्तुवु सकलमुखमुल विजृंभिचिनदि। गगन कूटपु टेल्ललयंदु गुंपुल गुंपुलै मव्वपु शंपल वंपुलु सोगसु चाळ्ळु हरिंचिनवि। मोगिळ्ळु रंपिलि नल्देसल मेरसिनवि। आकाशमुनंदु दूरमुनुंडि रिव्वुमन्न सव्वडि वरुसकट्टिन बलाकमुल रेक्कलदो, परुगेत्तु कोनिवच्चु वानजल्लुदो तेलियुट लेदु। वेडगळ्ळकै वेदकुलाडि योक चप्पनि वडगल्लु नोट वैचु कोनि पिल्ललु तमकु दगिलिन देब्बलु मरचिपोवुचुंडिरि।

अंदंदु जिन्न पडेलु पडेलुगा नैन वाननीळ्ळलो गोरंकलु दंपतियुक्तमुगा गीत्रुकीचुमनि रेक्कलु तडुपु कोनुचुंडेनु। शिशिरचन्द्रज्योत्स्न कलहांतरितवोले जलदांतर्निगूढबाष्पयै विमुक्का, मोगलि पोट्टललो नीरुनिलचि खण्डितासजलदीर्घसितापाङ्गभ्रांति गल्पिप, राजहंसि भीतयै प्रोषितभर्तृकवले तामरतीग गोडुगाकु क्रिंददलदाचुकोगा, नेम्मि पुरिविप्पि स्वाधीनपतिकवले नृत्याभिराममूर्तिका, मन्दारपूवुनु वदलि रालेक रालेक वच्चिन तुम्मेदयेड नेरंगन्नेरु ईर्ष्याकषायितका वासक-सज्जिकवोले नलडूरिंचुकोनि कडिमि मेघनाथुनकु स्वागतमुपुन, बलाकापाङ्ग मेघनीलपटपरिवृतयाकाश-लक्ष्मि कालपुरुषुनिनभिसरिंप, विप्रलब्धाकृशीभूत देहयष्टि वले वोकम्मानुपै मोव्वु लोनि याकुलवेंट गम्भीरुगार्च, वर्षाश्री सर्वरसाकृतिवले मोहनातिमोहन यय्येनु! नागलि-नर्रुन लागुचुन्न पोलमुकापुटेद्दुंडि युंडि तन मोगमुन निलचिन वाननीरु तलकदल्चि विदल्चुकोनु चुंडेनु। पेद्दचिनुकु रायि पेट्टि कोट्टिनट्लु पडगमीद विसरुकोनगा बुस्सुमनि येगिरि कोडेत्राचुलु गालि कवळमु प्रक्कवाटुगा गोरिकि दुन्निन मेट्टचालुलवेंट, पोलमु कोरडिवेंट गंचल-लोनि पुट्टलकु बरुवुलेत्तेनु। प्राचिपट्टिन पेद्दपोलमु बावुल नीटिमट्टपु कोंडराळ्ळु वेलिकि वच्चि प्रक्कदारुल बडियुन्नट्लु बावुरु कप्पलु, वर्षालक्ष्मि लंबाडि युवति वेषमु वेसि काल धरिंचिन नत्तगुल्लल गोलुमुल बोणुगुह रवमुवले रात्रिदिवमु लोकटे यरपुलरचिनवि।

हिन्दी-अनुवाद :

वर्षा पूरे अुभारपर है। नभोदेशकी सीमाओंपर झुण्ड बाँधकर विहार करनेवाली कोमल शम्पालताओंकी वक्रताअें सौन्दर्यकी रेखाओंका मानमर्दन कर बैठीं। काले बादल अुमड़ घुमड़कर अपने प्रचण्ड गर्जन तर्जनसे दसों दिशाओंको थर्राने लगे! सुदूर क्षितिज रेखासे आनेवाली सर्र्र्की आवाज, कतार बाँधकर अुड़नेवाले बगुलोंके पाँखोंकी है, अथवा वर्षाकी बौछारोंकी,—यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहना कठिन हो गया है। ----ओलोंके पीछे बेतरह दौड़नेवाले लड़के अेकाध ओला अुठाकर मुँहमें डाल लेते और मदरसेमें खाये बेतकी मार भूल जाते।

जहाँ तहाँ छिछले गड्ढोंमें पानी जमा हो गया। अुनमें दंपती सहित शारिकायें अपने पंख भिगो रही, व फुदक रही थीं, मारे अुल्लासके चहचहा रही थीं! चंद्रिका कलहांतरिता नायिकाकी भांति जलदांतर्निगूढ-बाष्पा बनी अपना मुँह फेर बैठी। केवड़ोंके पटलोंमें पानी ठहरकर खण्डिता नायिकाके सजलदीर्घसितापाङ्ग वीक्षणोंका भ्रम दर्शकोंके मनमें अुपजाने लगा। करकापातसे त्रस्त राजहंसी प्रोषित पतिकाकी भाँति किसी कमल-पत्रकी छत्रछायामें आश्रय ढूँढने लगी तो अेक ओर स्वाधीनपतिकाकी भाँति मुदिता मयूरी निज पंख फैलाकर नयनाभिरम्य नृत्य कर अुठी! बड़ी कठिनाअीसे प्रिया मंदारकी बाहुवल्लरीसे छूटकर अपनी ओर बढ़नेवाले मधुपकुमारको देखकर लाल कचनार अीर्ष्याकषायिता बन चली, तो कुसुमिता कदम्ब वासक-सज्जाकी तरह अपने स्वामी जीमूतपतिके लिअे स्वागताञ्जलि लिअे खड़ी रह गयी। मेघनीलपट परिवृता गगनलक्ष्मी निजबलाकापाङ्ग वीक्षण फेरती हुअी कालपुरुषका अभिसरण करने लगी, तो कृश-तनु-यष्टि पूग (सुपारी) विटपी विप्रलब्धाकी भाँति अपने अुन्नत पत्र-सम्पुटसे जलबिंदुओंके बहाने अश्रुमोचन करती रही। अिस प्रकार वर्षाश्री सर्वरसाकृति बनकर अपने मुग्ध विमोहक हाव-विलासोंसे संसारभरको लुभाती रही! सुदूर खेतोंमें खड़ा हलधर बैल निज माथेपर ठहरे हुअे जल-कणोंको, बीच-बीचमें, सर हिलाकर हटा रहा था। जंगलमें विहार करनेवाले महानागोंके फनोंपर वर्षाकी बड़ी-सी बूँदें कंकड़ोंकी तरह गिरतीं, तो वे खटसे फुंकार मार कर पूँछके बल सीधे खड़े हो ग्रीवा-भंग करके हवाको काट खाते और सरपट पासकी झाड़ियोंमें, खेतोंकी आरियोंसे होकर अपनी बाँबियोंकी ओर भाग खड़े होते। खेतोंकी भारी बावड़ियोंके अुपरितलपर जैसे कअी लगे भारी पत्थर निकल आये हों, बड़े बड़े दादुर दिनरात लगातार अपने प्रवचन सुनाने लगे। अुनकी टर्राहट वर्षाश्री रूपिणीलंबाडी रमणीकी पाजेबोंकी घर-घराहट-सी कर्णकटु लगती थी!

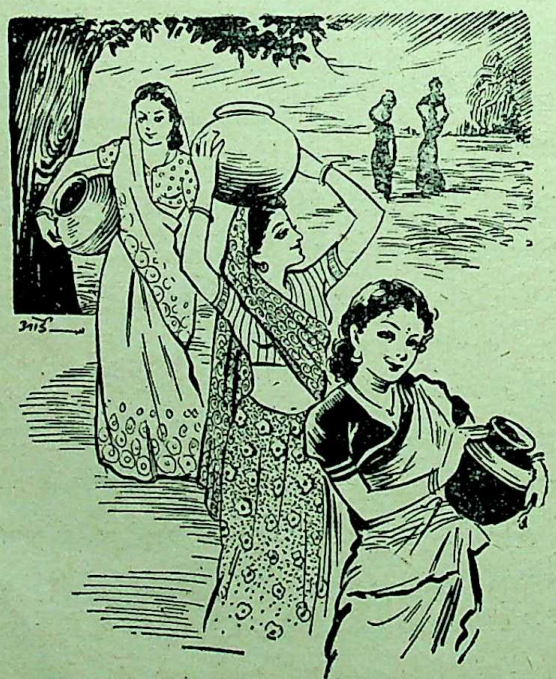

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[सूचना—'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ हो सम्पादकके पास आनी चाहिये।]

"आधुनिक हिन्दी-काव्य" प्रथम भाग। अिसके लेखक हैं श्री कमलाकान्त पाठक। आधुनिक हिन्दी-काव्यपर अिन दिनों बहुत कुछ लिखा गया है और लिखा जा रहा है। प्रस्तुत पुस्तक भी अिसी प्रकारका अेक प्रयास है। अिसमें आधुनिक-कालके आदि हिन्दी कवि हरिश्चन्द्र, हरिओध और मैथिलीशरण गुप्तकी कृतियोंकी समीक्षा है। तीन सौ दो पृष्ठोंकी पुस्तकके सरसठ पृष्ठ हरिश्चन्द्र और हरिऔधको दिये गअे हैं और शेष सब मैथिलीशरणको। वास्तवमें अन्तिम कविका अध्ययन ही प्रमुख हो गया है। अपने वक्तव्यमें लेखकने अिस ग्रंथमें श्री माखनलाल चतुर्वेदीको क्यों स्थान नहीं दिया जा सका, अिसकी कैफियत देनेके बहाने अुनके कृतित्वपर अितना कह दिया है कि अुन्हें स्थान मिल ही गया। अुनके काव्यके सम्बन्धमें लेखक लिखता है—"चतुर्वेदीजीकी काव्य-रचना प्रगीतात्मक, वक्तापूर्ण, वैदग्ध्यमयी और जीवनाशासे युक्त है। अुनकी राष्ट्रीयता विलक्षण है और अुक्ति वैचित्र्य असाधारण। वे भावुकताकी अतिशयताके कवि हैं।" अुन्हें अेक स्थानपर सूक्ति-प्रधान कवि भी कहा गया है। यदि अुनमें अुक्तिवैचित्र्य या सूक्ति-प्रधानताका अतिरेक है तो "भावुकताकी अतिशयता" कहाँ रह जाती है? अेक स्थलपर और कहा गया है, "वे काव्य-भावना-काव्य-रूप, और काव्याभिव्यंजना तीनों क्षेत्रोंमें नवीनता प्रदर्शित करते हुअे हिन्दीमें आये थे।" लेखकने काव्य-रूप और काव्य-अभिव्यंजनाको भिन्न मानकर पता नहीं अुनमें कौन-सी विभेदक रेखा खींची है। जो सूक्तिमय काव्यको भावातिरेकका कारण मानते हैं, अुनकी बात भी समझमें नहीं आती। मेरे मतसे सूक्तिमय काव्यको चिन्तनातिरेकका कारण मानना अधिक समीचीन होगा। प्रथम अध्यायमें भारतेन्दु हरिश्चन्द्रकी काव्य-समीक्षा है। अुनके काव्यमें युग-दर्शन होनेके कारण लेखकने अुनमें प्रगतिशीलताकी प्रथम झाँकी देखी है। "भारतेन्दु हरिश्चन्द्र अुपः-कालकी वह दुहरी आभा है जिसमें शृंगारकी निशाने अपने प्रसाधन समेट और नवयुगके प्रभातने जागरणकी भैरवी सुनाअी।" अुन्होंने प्राचीन नवीन सभी प्रकारकी काव्य-शैलियोंका प्रयोग किया, अिसलिअे वे प्रयोगवादी भी थे। लेखकने भारतेन्दुमें आजकी सभी काव्य-प्रवृत्तियोंका प्रदर्शन कर अुन्हें अुचित ही शीर्षस्थान दिया है। अुनकी तुलना, गुजरातीके कवि नर्मदाशंकरसे करनेका प्रयत्न किया गया है पर वह प्रासंगिक है। यदि लेखक तनिक विस्तारसे दोनों कवियोंके विचारोंको प्रस्तुत कर सकता तो अिस अध्यायकी विशेषता बढ़ जाती।

दूसरा अध्याय "हरिऔध" पर है। अुनकी कृतियों-पर विहंगम दृष्टि डालकर लेखक अिस निष्कर्षपर पहुँचा है कि 'यदि अुन्होंने अुपयोगितावादकी मनोवृत्ति न अपनाअी होती तो अुनकी काव्य-सर्जना अधिक प्रभावशालिनी हुअी होती।" अुपयोगितावादसे लेखकका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तात्पर्य संभवतः अुपदेशात्मकतासे है। पर जिस युगमें कविका आविर्भाव हुआ है अुसकी पृष्ठभूमिपर अुसे देखनेपर अुसका "अुपयोगितावादी" होना क्षम्य है। और आजके प्रगतिवादी युगमें तो अेक प्रमुख गुण भी।

क्या मैथिलीशरणकी कृतियोंमें युगानुरूप अुपयोगितावाद नहीं है? हरिश्चन्द्रकी तरह हरिऔधने भी काव्यशैलियोंके प्रयोग किये हैं। पुस्तकके अन्तिम अध्याय मैथिलीशरण गुप्तपर है। अुनके काव्यकी सहानुभूतिपूर्ण विवेचना की गअी है। प्रत्येक कृतिका समीक्षात्मक परिचय दिया गया है। यह अध्याय अितना बड़ा है, जो स्वयं अेक छोटी पुस्तक बन सकता था। मैथिलीशरणके काव्यके संबंधमें लेखकका मत है—"गुप्तजीके काव्यमें वास्तविक काव्योत्कर्ष विद्यमान है और यह प्रत्येक वर्गको आकर्षित करनेमें समर्थ है। अितना स्वस्थ काव्य अिस युगके अन्य कवियोंने नहीं लिखा।" लेखकने अिस कविमें विषय और शैलीके नूतन प्रयोगके दर्शन किये हैं। अिस पुस्तकमें कोअी चौंका देनेवाली बात न होते हुअे भी विवेचनमें अुलझन नहीं है। अपनी मान्यताओंको स्पष्ट शब्दोंमें प्रस्तुत करनेका प्रयत्न किया गया है। लेखकमें कृतिके अन्तरको पहचाननेकी आलोचक दृष्टि है।

—प्रो. विनयमोहन शर्मा

कोशा : [कवि—पोद्दार रामावतार 'अरुण'; प्रकाशक—किरणकुंज: समस्तीपुर (बिहार); पृष्ठ-संख्या ९५; मूल्य सजिल्द ३) अजिल्द २॥)]

मिथिलाके अिस तरुण कविका चौदहवाँ काव्य-ग्रंथ "कोशा" वास्तवमें काव्य, संगीत अेवं चित्रकलाका त्रिवेणी-संगम है।

कथा-प्रबंध पाटलिपुत्रकी अनुपम सुन्दरी वेश्याके जीवनपर आधारित है। कोशा, नन्दकालीन पाटलिपुत्रकी अत्यन्त सुन्दरी वेश्या है। स्थूलभद्र, राज्यसचिव शकडालका ज्येष्ठ कुमार अुसके प्रणय-बन्धनमें बँधकर १२ वर्ष व्यतीत करता है। अिन बारह वर्षोंमें पाटलिपुत्रमें अकाल पड़ता है। कोशा अकाल-पीड़ितोंकी मुक्त-हाथों सहायता करती और करवाती है। षड्यंत्रके कारण सचिव शकडालकी हत्या अुनका कनिष्ट पुत्र श्रेयक करता है। पिताके दाह संस्कारके अवसरपर, गंगातट-पर अेक संन्यासी स्थूलभद्रको संबोधित कर विरक्तिका अुपदेश देता है। भोगी जीवनकी असारताका भीषण चित्र प्रस्तुत करता है। निर्वेदकी भावनासे ओतप्रोत स्थूलभद्र बिना कोशासे मिले ही साधना करने चल देता है। रोकर विरहके आँसुओंमें डूबी कोशा बारह वर्ष व्यतीत करती है। साधनाकी अन्तिम कठिन परीक्षा देने स्थूलभद्र बारह साल बाद कोशाके कला-भवनमें आकर तपस्या करता है। और अन्तमें कोशाके सौंदर्यका मायाजाल तोड़कर अुसमें भी भोगके प्रति विरक्तिका संचारकर गुरु-संभूति विजयके पास लौट जाता है। कुछ दिन बाद अेक और योगीके कला-निकेतन में तपस्या करने आता है। परन्तु वह कोशाके शरीर सौंदर्यपर मुग्ध होकर तपभ्रष्ट होता है। कोशा अुसके संपूर्ण पतनसे अुसे बचा लेती है। वह गुरुके पास लज्जित लौट जाता है। कोशा साधारण कुटियामें अपना अन्तिम समय काट देती है। मृत्युके पहले अपने प्राणनाथकी अर्चनामें अन्तिम नृत्य करती हुअी अेकाकी लड़खड़ाकर गिर पड़ती है। स्थूलभद्र आकर अुसके शवको गंगा-धारामें बहा देता है।

कविने अिस कथाको नौ सर्गोंमें निबद्धकर खण्ड-काव्यका रूप दिया है। कथा-प्रवाहका निर्वाह करनेके लिअे किया गया मुक्तछन्दका प्रयोग सफल है। किंतु कथाकी आत्मा मूलतः भगवतीचरण वर्माकी 'चित्रलेखा' के तथ्योंसे प्रभावित है।

कविकी अभिव्यक्ति अेवं विचारोंमें प्रौढ़ता अेवं प्रांजलता है जिससे पुस्तककी पंक्ति-पंक्तिमें अद्भुत् काव्य माधुरी है। चित्रमयी भाषा द्वारा अनेक मनोरम रंग-बिरंगे चित्र अिसमें अंकित हुअे हैं।

यह निद्रित कोशाका चित्र देखिये—

"जल रहा शयन कक्षमें दीप
ज्योति लज्जा-सी लगती क्षीण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खुले कोशाके अमिल केश
स्वप्नमें बिखर गया है वेश
पड़ी है पाँच अंगुलियाँ वहाँ
नील कंचुकी जगी है जहाँ
छू रहे वे प्राणोंके तार
न आती है जिसकी झंकार !"

अथवा यह कोशाका प्राकृतिक स्नानागार देखिये—

"सरोवरमें शत नील सरोज
कमलिनीकी शोभा भी लाल
रूपके सजल भारसे लदे हुअे हैं,
सुन्दर हरित मृणाल
झुकी मृग-सी मृणालिनी मृदुल
शान्त जलके दर्पणपर मौन
हिल रही है मोहक पंखुड़ी
मत्त अलि करता मधु-गुंजार
स्नान करती कोशा चुपचाप"

और यह विचारोंकी अभिव्यक्ति कितनी प्रासादिक अेवं माधुर्यपूर्ण है—

"योगी है वह जो पचा सके सौन्दर्य-सत्य
भोगी है वह जो सुन्दरतापर जलता है
लेकिन मानव तो
दोनों पथके बीच-बीचसे चलता है !"

ओजस्विताके लिअे चतुर्थ सर्ग अुल्लेखनीय है। जीवन-विभीषिकाको लक्ष्यकर वर्तमानके प्रति संकेत भी किये हैं—

भूखे मानवको गीत सुनाकर क्या होगा
मनके पहले तनका भोजन देना होगा
अन्यथा कला प्रासादोंमें मर जायेगी
दुर्भिक्ष धरापर कौन नृत्य कर पायेगा ?

\+ + +

समताकी सृष्टि करो अपने ही हाथोंसे
सम्राट् तुम्हारी दुर्बलताका वैभव है।

सम्पूर्ण काव्यमें शृंगार प्रमुख है। सहायक रूपसे शान्त, करुण अेवं रौद्र रस आये हैं। काव्य कृतिमें कवि-कौशलकी सफलताके दर्शन होते हैं।

—श्री अनिलकुमार, सा. र,

बापूका सपना—ले०-श्री नर्मदेश्वर चतुर्वेदी। प्रकाशक-साहित्य भवन लिमि०, अिलाहाबाद। पृष्ठ सं. ६४। मूल्य १ रु.।

जन-साधारणके सपनेका साधारण अर्थ है कल्पना-विलास। बापू तो असाधारण मनुष्य थे। वे स्वप्नदर्शी क्या थे, दूरदर्शी, सत्यशोधक, कर्मयोगी थे, जिनके सपने अपने लिअे नहीं, मानव जातिकी सुख-शांतिके लिअे होते थे; लेखकके शब्दोंमें जिसे पूरा करनेका दायित्व हम सबपर है।

प्रस्तुत पुस्तकमें बापू द्वारा समय-समयपर प्रकट किये विचार जो हमारे लिये सूत्रका काम देते हैं अुनके स्पष्टीकरणके साथ लेखकने अपने विचार प्रकट किये हैं। बापूके विचारोंका यह मंथन लेखकने अपनी बेटीको समय-समयपर लिखे तथा प्रकाशित किये गये पत्रों (दोको छोड़) का संकलन है। अतः, ये समझदार लड़के-लड़कियोंके लिये सहज, सरल बन गये हैं। भाषा साहित्यिक, प्रौढ़, लम्बे-लम्बे वाक्योंकी न होकर सरल अेवं छोटे-छोटे वाक्योंवाली होती तो साधारण लड़के-लड़कियोंके लिये भी यह अधिक अुपयुक्त साबित होती। छपाअी-सफाअी अुत्तम है। फिर भी बढ़ाया हुआ मूल्य १ रु. अधिक ही प्रतीत होता है।

मानव-प्रताप :—ले०-श्री देवराज 'दिनेश'। प्रकाशक—आत्माराम अेंड संस, दिल्ली। पृष्ठ सं. १२३ मूल्य २ रु.।

मेवाड़के महाराणा प्रतापसिंहके शौर्य, वीर्य तथा देशाभिमानसे भारतके बच्चेतक परिचित हैं। प्रताप शूरवीर, गुणग्राही, स्वतंत्रता-प्रेमी, अच्छे संगठक तो थे ही, अुनका गौरव अिससे अधिक अुनकी अुदार मानवतामें है जिसे नाटककारने बड़ी सफलताके साथ चित्रित किया है। यह मौलिकता ही प्रस्तुत नाटकको अुच्च कोटिमें ला बिठाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रायः अैतिहासिक नाटकमें पात्रोंकी संख्या अधिक हो जाती है। अिसमें भी छोटे-बड़े बीस पुरुष पात्र और पाँच स्त्री पात्र हैं। भाषाकी दृष्टिसे पृष्ठ४१पर वीरसिंह (घबराया हुआ) द्वारा 'आशा है' का अनुचित प्रयोग, पृष्ठ ११५ में प्रताप द्वारा अेक ही वाक्यमें 'कभी' की पुनरावृत्ति, विरामचिन्होंकी अुपेक्षा या गड़बड़ जैसे कुछ मामूली दोष दिखाअी दिअे। अिसके बावजूद यह कहना होगा कि भाषा नाटकीय किंतु स्वाभाविकता लिअे हुअे अेवं पात्रानुकूल है। राष्ट्रीयता, मानवतापर ही नहीं, साहित्य अेवं भाषापर भी संवाद द्वारा (अुदा० पृष्ठ ९) प्रकाश डाला गया है। विनोद भी बड़े अच्छे रूपमें (अुदा०-पृष्ठ १०) घुला-मिला है। यह रंगमंच-पर बड़ी सफलताके साथ खेला जा सकता है।

छपाअी-सफाअी अच्छी है। फिर भी स्पष्ट है कि मूल्य अधिक रखा गया है।

बहती गङ्गा—ले०—श्री. शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र'। प्रकाशक–राजकमल प्रकाशन लिमि०, बम्बअी। पृष्ठ सं. १८०। मूल्य अेक रुपया चौदह आने।

'बहती गंगा' अेक अैतिहासिक अुपन्यास है जिसमें पिछले दो सौ वर्षोंकी काशीके मस्तीमय जीवनका स्वाभाविक, यथार्थता लिअे हुअे किंतु सरस विश्लेषण है। अिसमें अेक नअी मस्ती, नया तेज, नवीन कला यहाँतक कि अध्यायोंके लिये दिये गये शीर्षकोंमें भी अजीब नवीनता, अद्भुतता, सरसताके साथ-साथ लेखककी प्रतिभाके दर्शन होते हैं। देखियें कुछ शीर्षक—'घोड़े पै हौदा औ हाथी पै जीन', 'सूली अूपर सेज पियाकी', 'आये, आये, आये,'। कुछ अध्यायोंकी पृष्ठभूमिका विश्लेषण स्वयं लेखकने अलगसे 'सन्दर्शिका' में दिया है। प्रस्तुत अुपन्यासकी भूमिकाके रूपमें 'परिचय' के लेखक श्री. सीताराम चतुर्वेदीजीके शब्दोंमें 'अिसकी भाषा जिसमें तनिक मिलावट नहीं, बनावट नहीं; सीधी, मुहावरेदार सरस सूक्तियों और लहरिया-दार शब्दावलीसे भरी, भावोंके साथ अैसी झूमती, अिठलाती, बल खाती, लचकती, लहरें लेती, झूलती मचलती चलती है कि आप अेक-अेक वाक्यको दस-दस बार भी पढ़ें तो जी न भरे।'

—**श्रीराम अट्रावलकर,** 'साहित्यरत्न'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी और गुजरातीका सम्बन्ध :

हिन्दी और गुजरातीका सम्बन्ध नया नहीं; बहुत पुराना सम्बन्ध है। आर्य-समाजके संस्थापक स्वामी दयानन्दजी सरस्वतीका भारतकी राष्ट्र-भाषा हिन्दीपर महान् अुपकार है। वे दूर-द्रष्टा थे, ऋषि थे--युगप्रवर्त्तक थे। जन्मना गुजराती थे, अुनकी मातृभाषा गुजराती थी, गुजरात अुनका वतन था। किन्तु अुस महान् व्रती यतीने सारे भारतके लिअे हिन्दीको आर्य-भाषा--'राष्ट्रभाषा' का पद दिया। स्वामीजी हृदयसे हिन्दीके हित-चिन्तक थे। भावनगरके गुर्जर कवि स्व. गोविन्द गिल्लाभाअीने हिन्दीमें अेक दर्जनसे अूपर काव्य-ग्रन्थ लिखे। गुजरातीके अुच्च कोटिके कवि थे गोविन्द गिल्लाभाअी। हिन्दीकी अुन्होंने सेवा की। गुजरातमें हिन्दी भाषाकी जड़ जमानेमें महाप्रभु वल्लभाचार्यके भक्ति-सम्प्रदायने सीमेंट कांक्रीटका काम किया। ब्रजभाषा और ब्रजका समस्त वैभव गुजराती और गुजरातको कृष्ण-भक्त सूरदास और अुनके अनुयायी अष्टछापके कवियों द्वारा बड़ी सरसताके साथ प्रचुर मात्रामें मिला। महान् भक्त नरसी मेहताने हिन्दीमें कविता लिखी। गुजराती कवियोंने हिन्दीके छन्द, दोहा, चौपायी, सोरठा, छप्पय अपनाये। यहाँतक कि अेक कहावत भी गुजरातीमें चल पड़ी--"चौपायी तुलसीदासकी, छप्पय सामलदास।" सामलदास गुजराती कवि, अुनके छप्पयोंने काव्य-रसिकोंके क्षेत्रमें मान-सम्मान प्राप्त किया। कविवर दयारामने हिन्दीमें कविता की और तुलसीदासकी तरह अरबी-फारसीके शब्दोंका खुलकर यथास्थान प्रयोग किया। मतलब, ज़बाँ, खातिर, खुशामद, हरदम, गुनाह, माफ़, आखिर जैसे अनेक शब्द दयारामने कवितामें लिये। गुजरातके जैन धर्माचार्योंने अधिकांश धार्मिक साहित्य प्राकृतमें ही लिखा। प्राकृतसे ही हिन्दीका जन्म हुआ। गुजरातीके संस्कारी साहित्यकारोंने, नेताओंने, हिन्दीकी हमेशा हिमायत ही की। महाकवि प्रेमानन्दकी अेक तुक हमें अब भी याद है जिसपर हिन्दीके युगप्रवर्तक भारतेन्दुकी स्वच्छ छाया पड़ी हुअी है--"सूर्य चले, पृथ्वी चले, मेरु चले, नभ चले, पण आमारूँ वचन कदी चले नहिं।"--और आप फिर बार-बार स्मरण कीजिये मनमें आधुनिक हिन्दीके जन्मदाता भारतेन्दुजीके अिस वचनको--

"चंद टरै, सूरज टरै, टरै जगत व्यौहार।
पै दृढ़ श्री हरिचंदको, टरै न सत्य विचार।"--

यह सुन्दर गंगा जमुना संगम है दो भारतीय भाषाओंका !

आधुनिक हिन्दी-साहित्यकी अभिवृद्धि करनेमें गुजरातके समर्थ साहित्यकारोंने बहुत बड़ा हाथ बँटाया। आजसे सवासौ वर्ष पहलेके हिन्दीके अितिहासको देखिये। हिन्दीके श्रेष्ठ गद्य-लेखक श्री लल्लूलालजी, जिन्होंने "प्रेमसागर" को ब्रजभाषा-मिश्रित खड़ी बोलीके रसीले गद्यमें लिखा, और हिन्दीवाले जिन्हें वास्तविक आधुनिक गद्यका जन्मदाता मानते हैं, कौन थे--

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुजराती थे मूलतः। दयाशंकर, नर्मदाशंकर पंड्या आदि प्राचीन लब्धप्रतिष्ठ गुजराती साहित्यिक यह मानते थे कि अिस देशकी प्रान्तीय भाषाओंका भलीभांति विकास करनेके लिअे ब्रजभाषाका अध्ययन परम आवश्यक है। नर्मदाशंकर पंड्याके हिन्दीमें लिखे "बीरबल-विनोद" को पढ़कर आज भी भ्रम हो जाता है कि यह किसी गुजराती-भाषी लेखककी रचना नहीं है, शायद किसी भाषाकी मूल पुस्तकका हिन्दी-अनुवाद है। हिन्दी और गुर्जर गिराका स्नेह-सम्बन्ध नया नहीं, बहुत पुराना है। अुसकी अटूट परम्परा चली आ रही है। युगका परिवर्तन सर्वत्र समान रूपसे होता है। लल्लूलालके 'प्रेमसागर' के गद्यके बाद मोटे तौरपर श्री प्रेमचन्दजीके साहित्यकी बारी आयी। अुसी प्रकार गुजरातीमें 'सरस्वतीचन्द्र' आदिके बाद मुन्शी-युग अपने पूर्ण ओज-प्रवाहके साथ आया। अथवा यों कहें "गान्धी-युग" आया। राष्ट्रपिता भारत-भाग्य-विधाता गान्धीके पवित्र विचारोंका और सिद्धान्तोंका समस्त आधुनिक भारतीय भाषाओं और अुनके साहित्यपर गहरा प्रभाव पड़ा। गान्धी-युगका साहित्य अेक प्रकारसे जन-जीवन जाग्रतिका साहित्य है। गान्धीजी जो कुछ बोलते थे, सोचते थे और लिखते थे, अुससे भारतकी सभी भाषाअें बल और प्रेरणा पाती थीं। काठियावाड़के पोरबंदरमें जन्मे बापूके हाथोंने हिन्दीको सहारा देकर राष्ट्रके सिंहासनपर बिठाया। अुनके नामके जादूने हिन्दीका गौरव बढ़ाया। राष्ट्रभाषाको सबल बनाया। नयी पीढ़ीकी गुजरातीने, गुजरातके नये साहित्यिक किसनचंद चावडा और अिन्द्रवसावडा आदिने हिन्दीको सजाया है। आज सैकड़ों जेठालाल जोशी गुजरात और सौराष्ट्रमें राष्ट्रभाषाको सबल बना रहे हैं, गुजरात-सौराष्ट्रके गाँव-गाँवमें हिन्दीका सन्देश पहुँचा रहे है।

"रावणकी जय!":

अभी कल-परसों, श्रावण शुक्ला सप्तमी-को--१७ अगस्त सोमवारके दिन सारे देशमें तुलसी-जयन्ती मनायी गयी। अिस अवसरपर महात्मा, संत, कवि और रामभक्त तुलसीदास और अुनकी रचनाओंको लेकर विविध कार्य-क्रमोंका आयोजन होता है। तुलसी-जयन्ती अितनी कुछ लोकप्रिय अेवं श्रद्धा-निष्ठाकी वस्तु बन गयी है कि न केवल हिन्दी-भाषी प्रान्तोंमें ही, बल्कि सुदूर दक्षिण भारत आदि अहिन्दी क्षेत्रोंमें और गौहाटीसे लेकर पश्चिम सौराष्ट्रमें द्वारका तक तुलसी-जयन्तीका समारोह सम्पन्न होता है। होना ही चाहिये। और अिस वर्ष भी तुलसी-जयन्तीपर भारतके करोड़ों पढ़-अपढ़ श्रद्धालु हिन्दी-प्रेमीजनोंने तुलसीदासका पुण्यस्मरण किया। कहीं कवि-सम्मेलनोंका आयोजन हुआ, कहीं-कहीं निबन्ध पढ़े गये, तो इस अवसरपर 'वाद-विवाद' या वक्तृत्व स्पर्द्धाके भी आयोजन हुअे। अिन डिबेटोंमें कुछ विवादास्पद विषय बड़े मनोरंजक रूपमें रखे गये। कहीं बहसका विषय रखा गया "सीताने रावणके घरमें रहकर बहुत अुचित काम किया"--कहीं रखा गया विवादका विषय: "विभीषणने रामकी शरणमें जाकर अच्छा नहीं किया" और अेक जगह किसी सभामें विषय था--'रामसे रावण बड़ा था--"रावण वाज़ ग्रेटर देन राम"--और यह सब था अपनी वाक्चातुरीका, तर्कोंका, मनोरंजनका, कुछ मिनटोंके लिअे सभापर सिक्का जमा देनेके लिअे। और अैसा ही अेक वाद-विवाद अभी-अभी अिसी श्रावण शुक्ला सप्तमी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को, जिस दिन 'तुलसी तज्यो शरीर' अेक शहरमें हुआ। नव्वे प्रतिशत वोटवाले भाषण रावणकी श्रेष्ठताके पक्षमें हुअे। दस प्रतिशत वोट वेचारे मर्यादा पुरुषोत्तम रामको मिले। तुलसी-जयन्ती-का स्थल द्वन्द्व-युद्धका स्थल बन गया। रातके दो तीन बजे तक वहां धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र मचा रहा। अध्यक्ष थे कोअी वेचारे श्रद्धालु सनातनी वयोवृद्ध! सो हमारे अत्यन्त प्रगतिशील वक्ता-ओंने अवसरका लाभ अुठाकर अध्यक्षको भड़-कानेमें अग्निकुंडमें घीकी आहुतियाँ डालनेका काम किया। पुराने जमानेके शास्त्रार्थोंमें जिस प्रकार थुक्का-फ़ज़ीती होती थी, दरी जाजमके नीचेकी धूल चुटकीमें अुठाकर अेक दूसरेपर फेंकने और नीचा दिखानेको जी तोड़ मेहनत की जाती, वैसा ही समा अेक जगह पिछली तुलसी-जयन्ती पर बँध गया। किसी भी बातपर वाद-विवाद बढ़ा कि वक्ता और श्रोताके मनका सन्तुलन नष्ट हुआ। जैसे कि कभी-कभी, कहीं-कहीं, हिन्दी-कवि-सम्मेलनोंके समय कवियोंका और श्रोताओंका मानसिक सन्तुलन नष्ट हो जाता है। और यह बहुमत क्या है? यूरोपके अेक प्रसिद्ध विवेचक 'शिलर' का कथन बहुत ही सत्य है और हम अिससे पूरे-पूरे सहमत हैं, कि बहुमत बहुत ही वाहियात चीज़ है, समझदारी हमेशा अल्पमतके ही साथ रही है। तात्त्विक रूपसे और शान्तिके साथ हम तुलसी-जयन्तीको थोड़ी देरके लिअे अेक ओर रख दें और सन्तु-लनके साथ विचार करें तो समाजमें शान्ति स्थापनार्थ अनन्त असीम शान्तिमय सत्ताकी आवश्यकता है। बुराअी जब अपनी पराकाष्ठाको पहुँच जाअे और जब बुराअी ही भलाअी दिखायी पड़े तब समाजकी क्या दशा होगी? राम-रावण संघर्षमें दो विरोधी प्रबल शक्तियोंका संघर्ष है। भलाअी और बुराअीका। अदम्य अुत्साह राममें भी है और रावणमें तो अदम्य अुत्साह कूट-कूटकर भरा है और वह परले सिरेका कूट-नीतिज्ञ और नीति-निपुण भी है। समाजमें परस्पर सहयोग, शिष्टाचार, सदाचार, सभ्यता और सहानुभूतिपूर्ण आदान-प्रदान अपेक्षित हो तो भलाअीको सम्मानपूर्वक लाना होगा। बुराअीको छोड़ना होगा। रामके हाथसे अगर कोअी बुराअी होगी तो हम अुसका अुनसे डटकर विरोध करेंगे। समाजमें 'मातृदेवो भव', 'पितृदेवो भव', 'भ्रातृ-देवो भव', 'आचार्यदेवो भव', 'अतिथिदेवो भव' की भलाअी लानी होगी। बुराअी जब प्रबल शक्ति रूप हो जाती है तब अनेक अनर्थ होने लगते हैं। और तब समाजमें रिश्वतखोर, चोर, लबार, जुआरी, गुंड-दुराचारी, परधन लंपट और परदारा-लम्पट खल जन बढ़ जाते हैं और आज भी समाजकी भलाअीके लिअे रावणकी जय बोलिये चाहे रामकी जय! तुलसीदासकी "अन्धश्रद्धा" को भूल जाअिये और आदिकवि वाल्मीकि के 'पक्षपात" को भी। स्वयं सोचिये कि दुनियामें नादिरशाह, हिटलर और मुसोलिनी की ज़रूरत है या बुद्ध, गान्धी, गुरुदेव रवीन्द्र और जवाहरकी जरूरत है! और आज सचमुच रावणकी जरूरत हो तो हम प्रयत्न करें कि रावण महाराज हमारे बीच फिरसे पधारें! हमें कोअी अेतराज नहीं!

—ह० श०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके, आपके परिवार के प्रत्येक सदस्य के, प्रत्येक शिक्षा-संस्था तथा पुस्तकालय के लिअे अुपयोगी

हिन्दीका अपने ढंगका पहला पत्र

गुलदस्ता

(हिन्दी डाअिजैस्ट)

वार्षिक मूल्य १०)
पृष्ठ संख्या १२५

नमूने की प्रति
अेक रुपया

३९३८ पीपलमंडी, आगरा

अंग्रेजी डाअिजैस्ट पत्रिकाओंकी तरह दुनियाकी तमाम भाषाओंके साहित्यसे जीवनको नयी स्फूर्ति, अुत्साह और आनन्द देनेवाले लेखोंका सुंदर संक्षिप्त संकलन देनेवाला यह पत्र अपने ढंगका अकेला है, जिसने हिन्दी पत्रोंमें अेक नयी परंपरा कायम की है। हास्य, व्यंग, मनोरंजक निबंध तथा कहानियाँ अिसकी अपनी विशेषता है।

गुलदस्ता पर लोकमत

स्वामी सत्यदेव परिव्राजक

"गुलदस्ताकी टक्करका मासिक-पत्र अभीतक प्रकाशित नहीं हुआ। मैं अिस पत्रिकाको आद्योपांत सुनता हूँ।"

बाबू गुलाबराय, अेम. अे.

"अिसमें शिक्षा और मनोरंजन दोनोंके अच्छे साधन अुपस्थित रहते हैं।"

जैनेन्द्रकुमार. दिल्ली

"गुलदस्ता अच्छी जीवनोपयोगी सामग्री दे रहा है।"

प्रो. रामचरण महेंद्र

"गुलदस्ता विचारोंका विश्व-विद्यालय है, जिसे घरमें रखनेसे सभी व्यक्ति लाभ अुठा सकते हैं।"

हिन्दीका स्वतंत्र मासिक

"नया समाज"

संचालक: नया समाज-ट्रस्ट ★ **संपादक: मोहनसिंह सेंगर**

वार्षिक चन्दा ८) : अेक प्रति ।।।) : विदेशोंमें १२) वार्षिक

'नया समाज' व्यक्तिमें स्वतंत्र चिन्तना, समाजमें अन्ध विश्वास और रूढ़ियोंका अन्तकर स्वस्थ सदाचरण और राजनीतिमें भ्रष्टाचार, जन-द्रोह अेवं आततायीपनका पर्दाफाशकर स्वस्थ जनतंत्रका प्रतिपादन करता है।

'नया समाज' में हर मास साहित्य, संस्कृति, समाज, अन्तर्राष्ट्रीय हलचलों और विशिष्ट व्यक्तियोंकी अुपादेय चर्चा रहती है।

'नया समाज' किसी दल या वाद–विशेषसे बँधा न होनेके कारण स्वतंत्र, संयत और स्वस्थ पाठ्य-सामग्री प्रस्तुत करता है। हिन्दीके चोटीके लेखकोंका सहयोग अिसे प्राप्त है। अिसी कारण पिछले पाँच वर्षोंमें ही अिसने हिन्दी संसारमें अपनी धाक जमा ली है।

आप यदि ग्राहक नहीं हैं, तो आज ही बन जाअिये। यदि हैं, तो अपने अिष्ट-मित्रोंको भी बनाअिये। यदि किसी कारण आप ग्राहक नहीं बन सकते, तो चेष्टा कीजिये कि 'नया समाज' आपके पड़ोसके पुस्तकालयमें मँगाया जाय।

आज ही नमूनेके लिअे लिखिये :—

व्यवस्थापक 'नया समाज', ३३, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता– १

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस घरमें आरोग्य प्रकाश नहीं, वहाँ सुख शान्ति कहाँ ?

आरोग्य, स्वच्छता और चिकित्साका सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ

भारत-प्रसिद्ध श्रीवैद्यनाथ आयर्वेद भवन लिमिटेडके अध्यक्ष वैद्यराज पं० रामनारायणजी वैद्यशास्त्रीने ५-६ वर्ष बड़ी मेहनतसे स्वयं अिस ग्रंथको लिखा है। ग्रंथका अेक-अेक वाक्य हजारों रुपयेका काम देता है। व्यायाम, ब्रह्मचर्य, भोजन, सदाचार, अुत्तम विचार आदि पूर्वार्द्ध विषयोंको पढ़कर और तदनुसार चलकर सदा बीमार रहनेवाला रोगी बिना दवाके नीरोग (तन्दुरुस्त) हो जाता है। ग्रंथके अुत्तरार्द्धमें शरीरमें पैदा होनेवाले सभी रोगोंकी अुत्पत्ति, कारण, निदान, रोगके लक्षण, चिकित्सा, पथ्यापथ्य आदि बड़ी ही सरल भाषामें लिखे हैं, जो पढ़कर विद्वानसे लेकर साधारण पढे लिखे दोनों समान भागसे लाभ अुठा सकते हैं। अिसमें दवाओंके जो नुकसे लिखे गये हैं वे बहुत बार परीक्षित, कभी भी फेल न होनेवाले और शास्त्रानुमोदित हैं। शहर हो या देहात, सब जगह अिस पुस्तकके घरमें रहनेसे रोगीको तत्काल लाभ पहुँचाया जा सकता है। औषध तैयार करनेका विधान तो अिस पुस्तकमें श्रेष्ठ है क्योंकि लेखक अिस विषयके निर्णयात्मक ज्ञाता हैं। अिसके आठ संस्करणोंमें ७१००० प्रतियां छपकर बिक चुकी हैं। यह नवां संस्करण १५ हजारका अभी छप रहा है। अिससे अिसकी लोक-प्रियता और अुपयोगिता स्पष्ट मालूम होती है। हिन्दीमें अैसी अुत्तम पुस्तक दूसरी नहीं है, यह कहा जाय तो अनुचित न होगा। प्रचारकी दृष्टिसे मूल्य भी बहुत कम रखा गया है। ५१५ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य सिर्फ १।।।), डाक खर्च ।।≈), हमारी चार निर्माणशाला, ५० बिक्री केन्द्र, १५००० अेजेन्सियोंसे प्रत्यक्ष खरीदनेपर डाक खर्च नहीं लगेगा।

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लिमिटेड, कलकत्ता, पटना, झांसी, नागपुर।

—: अुद्यम :—

हिन्दी और मराठी भाषामें प्रकाशित होता है।

प्रतिमास १५ वीं तारीखको पढ़िये।

अुद्यममें निम्न विषयोंके लेख छपते हैं :—

लाभदायक अुद्योगधंधोंकी जानकारी, अनाज तथा सब्जीकी खेती व रोगोंका निवारण, पशुपालन, दुग्धव्यवसाय व ग्रामोद्योग संबंधी लेख, विद्यार्थियोंके लिये वैज्ञानिक व अन्य जानकारी आरोग्य, घरेलू औषधियों संबंधी लेख, हिन्दुस्थानके वैज्ञानिक और औद्योगिक क्षेत्रकी अुपयोगी जानकारी, कृषि, औद्योगिक और व्यापारिक क्षेत्रमें काम करनेवाले लोगोंकी मुलाकात तथा परिचय।

अुद्यमके विशेष स्तंभ

महिलाओंके लिअे अुपयुक्त, रुचिकर खाद्यपदार्थ बनानेकी विधि, घरेलू मितव्ययिता, अुद्यमका पत्रव्यवहार, खोजपूर्ण खबरें, आर्थिक तथा औद्योगिक परिवर्तन, जिज्ञासु जगत्, व्यापारिक हलचलोंकी मासिक समालोचना, नित्योपयोगी वस्तुअें स्वयं तैयार कीजिये।

वार्षिक चन्दा ७ रु. और प्रति अंक १२ आना

पता :— 'अुद्यम' मासिक, धर्मपेठ, नागपुर (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घरका अंधकार दूर करनेके लिअे प्रकाश चाहिये
पर
घरको सुसंस्कृत और सुमुन्नत बनानेके लिअे

ज्ञानकी ज्योति

अुससे भी आवश्यक है।

हिन्दीका स्वस्थ, सात्विक अेवं सस्ता मासिक पत्र

'जीवन-साहित्य'

वार्षिक शुल्क केवल ४

चाहें तो पहले अेक कार्ड भेजकर नमूना मंगा कर देख लें।

जुलाअी और जनवरीसे ग्राहक बनाये जाते हैं।

पता:-- सस्ता साहित्य मण्डल, नअी दिल्ली

नव निर्माण

नयी पीढ़ीका सचित्र त्रैमासिक

[सम्पादक - नेमिचन्द जैन 'भावुक']

+ साहित्य, शिक्षा, संस्कृति और कलाका संगम + राजनीति-विज्ञान, + तारोंकी छायामें + चना जोर गरम + अिमनके आलोकमें + आप भी कहें, हम भी कहें + कसौटीपर + ये धूल भरे हीरे + आदि स्थायी स्तंभोंसे युक्त अपनी ही विशेषताओंसे प्रेरित प्रभावित।

अेक प्रति १) विशेषांक युक्त वा. ४)

कुमार साहित्य परिषद्, जोधपुर

विशेष:- मार्च अंककी प्रतियां अप्राप्य, जूनकी प्राप्य। निशुल्क प्रति भेजनेमें असमर्थ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नयी धारा

याद रखिये पत्रिकाके लिअे } १ अेक निश्चित अुद्देश्य चाहिये !
२ अुसका अपना व्यक्तित्व चाहिये !

अैसी ही अेक मासिक पत्रिका है। कहानियाँ, कविताअें, शब्द-चित्र, संस्मरण, नाटक--आलोचना, निबन्ध आदि। हिन्दीमें नयी धाराके प्रतीक श्री रामवृक्ष बेनीपुरी अिसका सम्पादन कर रहे हैं। जिनकी सहायताके लिअे साहित्य-महारथियोंका अेक सम्पादक-मण्डल संगठित किया गया है। प्रादेशिक सरकारोंके शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत।

नयी धाराके पुराने प्राप्य अंक आधी कीमतमें प्राप्त होंगे। पोस्टेज फ्री। रंगमंच अंककी थोड़ीसी प्रतियाँ शेष हैं। ग्राहक शीघ्रता करें।

डिमाअी आठ पेजीके १०० पृष्ठ, पक्की जिल्द, आकर्षक कवर, सचित्र, सुसज्जित।

अेक अंक १)] [वार्षिक १०)

पताः— प्रबंधक, नयी धारा, अशोक प्रेस, पटना ६

अुत्तर प्रदेशीय सरकार द्वारा पुरस्कृत

भारतीय ज्ञानपीठ काशीके महान् प्रकाशन

१. वर्द्धमान	श्री अनूप शर्मा	६)
२. हमारे आराध्य	श्री बनारसीदास चतुर्वेदी	३)
३. संस्मरण	श्री ,, ,,	३)
४. पथचिन्ह	श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी	२)
५. वैदिक साहित्य	श्री रामगोविन्द त्रिवेदी	६)
६. शेर-ओ-शायरी	श्री अयोध्याप्रसाद गोयलीव	८)
७. शेर-ओ-सुखन	श्री ,, ,,	८)
८. मिलनयामिनी	श्री 'बच्चन'	४)
९. रजतरश्मि	श्री रामकुमार वर्मा	२॥)

ज्ञानोदय [मासिक]

वार्षिक ६) अेक प्रति ॥=)

भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुण्डरोड, बनारस ५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ श्री ॥

सा.न.वि.वि.--आहिताग्नि शंकर रामचंद्र राजवाडे यांचीं खालीलप्रमाणें पुस्तकें छापून तयार आहेत.

(१)	नासदीयसूक्त भाष्य, उत्तरार्ध– खंड १ ला.	किंमत २० रुपये
(२)	नासदीयसूक्त भाष्य, उत्तरार्ध– खंड २ रा.	,, ३० ,,
(३)	नासदीयसूक्त भाष्य, उत्तरार्ध– चरम खंड.	,, १० ,,
(४)	नीटश्शेचा ख्रिस्तांतक आणि ख्रिस्तांतक नीटश्शे.	,, १० ,,
(५)	ईशावास्योपनिषद्भाष्य.	,, १५ ,,
(६)	षड्दर्शन समन्वय आणि पुरुषार्थ मीमांसा.	,, १५ ,,
(७)	सनातन वैदिक धर्मावरील व्याख्यान माला भाग १ ला– २० व्याख्यानें.	,, ३ ,,

(सर्वत्र टपाल हंशील वेगळा.)

आपणांस सदरहू ग्रंथापैकीं जे विकत घेणें शक्य आहे ते विकत घेण्यांत यावे अशी विनंति आहे. म० ऑ० माझ्या नांवें पाठवावी. व्ही० पी० नें ग्रंथ पाहिजे असल्यास तसें कळवावे. तसदीची माफी असावी. कळावे ही विनंति.

आपला,
राजाराम शंकर राजवाडे
व्यवस्थापक.

सनातन वैदिक धर्मकार्यालय,
२८६ सदाशिव पेठ, पुणें २.

प्रेरणा

'मेघदूत' अंक

प्रेरणाका यह चौथा अंक सम्पूर्ण रूपसे मेघदूतपर ही है।

★ मूल काव्यका राजस्थानीमें अनुवाद

★ मूल काव्यका हिन्दी गद्यमें भावानुवाद

★ विश्व कवि कालीपास और अुनके अिस अद्वितीय काव्यसे सम्बन्धित निबंध

राजस्थानीमें अिस अतुलनीय कलाकृतिका काव्यमय अनुवाद स्वयं अेक अतुलनीय प्रयास है।

अनुवादक : नारायणसिंह

अिस अंकका भी वही साधारण मूल्य

वार्षिक १४) अेक प्रति १।)

सम्पादक : कोमल कोठारी,

सोजती गेट, **जोधपुर (राजस्थान)**

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुषमा

सम्पादक : कुंडलराय मोहेकर

या मासिकाचीं वैशिष्ठयें—

★ सुन्दर लघुकथा. ★ नामांकित लेखकांचें लिखाण. ★ जीवन, कला, साहित्य अित्यादि विषयांवर अुपयुक्त मजकूर. ★ या शिवाय चेतोहारी चित्र.

नियमित वाचण्यासाठी आजच वर्गणी पाठवून ग्राहक होणें फायद्याचें आहे.

वार्षिक वर्गणी ६ रुपये. किरकोळ अंकास आठ आणे.

सुषमा : पराग बिल्डिंगज्, धरमपेठ, नागपुर. (म. प्र.)

"दक्षिण भारत"

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभाका सांस्कृतिक मासिक पत्र

अिस पत्रके द्वारा:—दक्षिणको प्राचीन और आधुनिक संस्कृति संबंधी जानकारी, दक्षिणके साहित्य, राजनीति, शिक्षा, कला, रचनात्मक कार्य क्षेत्रोंके विवरण और अुनके अुन्नायकोंका परिचय, दक्षिणकी तेलुगु, तमिल, कन्नड मलयालम और अुत्तरके विद्वानोंका साहित्य सृजनका परिचय पाअिये।

वार्षिक चंदा रु. ६-०-० अर्धवार्षिक रु. ३-८-०

अेक प्रति रु. ०-१०-०

अिस पतेपर लिखें: —

व्यवस्थापक, पत्रिका विभाग,

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा,

त्यागरायनगर, मद्रास १७,

गोरक्षण

वार्षिक गोदान १।) अेक प्रतिका ।-)

[ग्राहकों और विज्ञापन दाताओंके लिअे सुनहला अवसर !]

"गोरक्षण" सचित्र मासिक पत्र हिन्दी भाषाका गोरक्षा-संबंधी अेक मात्र लोकप्रिय प्रथम श्रेणीका पत्र है। अिसमें देशके बड़े-बड़े विद्वानों, नेताओं, धार्मिक महापुरुषों और वर्तमान सरकारके अधिकारियोंके संदेश तथा सुन्दर लेखादि बराबर प्रकाशित होते रहते हैं। यह भारतके अिस छोरसे अुस छोर तक छोटीसी झोपड़ीसे लेकर बड़ेसे बड़े महलोंमें और यूरोप तथा अेशियाके प्रमुख नगरोंमें बड़े चावसे पढ़ा जाता है। 'गोरक्षण' पत्र की सहायता करके गो-माताके कल्याण साधनमें यशके भागी बनें। आज ही ग्राहक बनिये। व्यापारसे लाभ अुठाना चाहते हैं तो 'गोरक्षण'में विज्ञापन छपाअिये। पता: —

गोरक्षण साहित्य मंदिर, रामनगर, बनारस (अु.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरस्वती संवाद

(हिन्दीका परीक्षोपयोगी आलोचनात्मक)

मासिक पत्र

अिसकी विशेषताओंके संबंधमें विद्वानोंकी सम्मतियाँ

१. अिसको अुच्चकोटिके लेखकोंका सहयोग प्राप्त है। २. अिसमें अनावश्यक सामग्रीका समावेश नहीं है। ३. यह पत्र विद्यार्थियोंकी ठोस सेवा कर रहा है। ४. अिसका प्रत्येक लेख विद्यार्थियोंके कामका होता है। ५. सरस्वती संवाद अच्छी प्रगति कर रहा है। शीघ्र ही वह अपने लिये सुदृढ़ स्थान बना लेगा। ६. यह पत्र अुन्नति कर रहा है और लोक-प्रिय हो रहा है।

वार्षिक मूल्य केवल ४) नमूनेकी प्रति।। में

पताः--सरस्वती संवाद कार्यालय-
मोती कटरा, आगरा।

रानी

आपके मनोरंजनके लिये

नाना प्रकारके सचित्र लेख, कहानियाँ, छाया लोक और आलोचनाअें आदि आदि। वर्षमें होलिकांक और दीपावली अंक मुफ्त।

रानीका वार्षिक चन्दा केवल चार रुपये है। रानी १५ वर्षसे हिन्दी-पाठकोंको निरन्तर नवीन पाठ्य-सामग्री देती आ रही है।

"रानी" कार्यालय,
१२१ चित्तरंजन अेविन्यू,
कलकत्ता ७

गुजराती भाषाका निराला साप्ताहिक-पत्र

निर्माण

[सम्पादक : हरिलाल पंड्या]

समस्त भारतकी शैक्षणिक, सांस्कृतिक और प्रजाजीवनके नव-निर्माणकी प्रवृत्तियोंका ज्योतिर्धर।

निर्माणमें आप देखेंगे :—

आनंद, अुत्साह और चेतनाप्रद लेख, कहानियाँ अेवम् अपने ही ढंगसे चुने हुअे समाचार। राष्ट्र-भाषासे सम्बन्धित सभी प्रवृत्तियोंका विवरण और किसी भी वादसे परे रहकर तटस्थ और स्पष्ट मंतव्य प्रकट करना निर्माणका ध्येय है।

विज्ञापनका अत्युत्तम साधन।

आज ही पत्र लिखकर नमूनार्थ प्रति मंगवाअिये।

वार्षिक मूल्य ५) **निर्माण कार्यालय**
छः माही ३) स्वस्तिक प्रिन्टरी
अेक प्रति दो आना धर्मेन्द्र मार्ग
राजकोट (सौराष्ट्र)

महाराष्ट्र रा.भा. प्रचार समिति, पुणेके तत्वावधानमें

राष्ट्रभाषा प्रचारकों अेवं परीक्षार्थियोंके अुपयोगकी हिन्दीकी अभिनव साहित्यिक मासिक पत्रिका

"जयभारती"

सम्पादक अेवं प्रकाशकः--श्री पं. मु. डांगरे

प्रारम्भिकसे लेकर अूँची परीक्षाओंतककी परीक्षोपयोगी सामग्री; साहित्य, परंपरा, संस्कृति विषयक लेख, शंका समाधान; साहित्य परिचय; मधुसंकलन; हिन्दी जगत्; परीक्षा विषयक सूचनाअें आवश्यक जानकारी, कहाँपर कौन क्या पढें? आदि नाविन्यपूर्ण अेवं समयोचित रचनाओं अेवं विशेषताओंसे भरपूर।

मनिआर्डरसे वार्षिक मूल्य १) अेक रुपया भिजवाकर शीघ्र ग्राहक बन जाअिये।

पताः-८६६ सदाशिव, पो. बॉ. नं.५५८, पुणे २.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यिक त्रैमासिक-पत्रिका

"राष्ट्रवीणा"

संपादकः - जेठालाल जोशी

विद्वानोंसे प्रशंसा प्राप्त राष्ट्रवीणामें--

विद्वानोंके चिंतन प्रधान लेख अेवं गुजरातीके साहित्यिक, सांस्कृतिक, कला विषयक लेख, कविताअें, प्रवास वर्णन परीक्षोपयोगी लेख, गुजराती, मराठी, बंगाली तथा हिन्दीकी समानार्थी शब्दावली आदि सामग्री, चयनिका, संस्कृति स्रोत, साहित्य समीक्षा, गुजरात, सौराष्ट्र और कच्छके राष्ट्रभाषा प्रचार समाचार आदि कअी स्तंभ प्रकाशित होते हैं।

वार्षिक मूल्य ४) अेक प्रति १)

वर्धा समितिके सक्रिय प्रचारकों और केन्द्र-व्यवस्थापकोंको पत्रिका आधे मूल्यमें भेजी जाती है।

—व्यवस्थापक "राष्ट्रवीणा"

गुजरात प्रां. रा. भा. प्र. समिति, कालूपुर, खजूरीकी पोल, अहमदाबाद।

मद्रास तथा पंजाब सरकार द्वारा
समस्त शिक्षा संस्थाओंके लिअे स्वीकृत
देशबन्धु पुस्तकालय मथुराका प्रमुख साहित्यिक
मासिक-पत्र

देशबन्धु

प्रधान स. : कृष्णादत्त वाजपेयी, अेम. अे.
सम्पादक : ज्यो० राधेश्याम द्विवेदी
स. सम्पादक : बैजनाथ दाणी
वार्षिक मूल्य ४) * अेक प्रति ।=)

देशबन्धु अगस्त ५२ से अपने द्वितीय वर्षमें प्रवेश कर रहा है अिसकी खुशीमें ३० सितम्बर-तक केवल ३) रु० में वार्षिक ग्राहक बनाये जा रहे हैं और अुसका प्रथम अंक व्रज संस्कृति अंक विकल रहा है जो संग्रहीय वस्तु होगी।

पत्र-बिक्री [अेजैन्सी] तथा विज्ञापनके लिअे आज ही लिखिये।

पता—व्यवस्थापक, "देशबन्धु"
कार्यालय, मथुरा [यू० पी०]

सुन्दर टाअिप और बार्डर

अिस कारखानेके सुन्दर और मजबूत टाअिपको अनेक छापखानेवाले पसन्द करते हैं। हमारे यहाँ अंग्रेज़ी, मराठी, गुजराती तथा कानड़ी टाअिप और अनेक प्रकारके बार्डर तथा अिलेक्ट्रो ब्लाक्स हमेशा तैयार मिलते हैं।

अुसी प्रकार हमारे यहाँ मोनो सुपर कास्टरसे तैयार किये हुअे १२ पाअिंट हिन्दी और मराठी टाअिप भी तैयार हैं। केटलाग जरूर मँगावें।

पता—मैनेजर, निर्णय सागर प्रेस,
बम्बअी नं० २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अजन्ता

—: मासिक :—

प्रकाशक:— हैदराबाद राज्य हिन्दी प्रचार सभा, हैदराबाद दक्षिण

वार्षिक मूल्य ९ रुपया

किसी भी माससे ग्राहक बना जा सकता है।

१. अुच्च कोटिका साहित्य
२. सुन्दर और स्वच्छ छपाअी
३. कलापूर्ण चित्र

सम्पादक
श्री. वंशीधर विद्यालंकार
श्री. श्रीराम शर्मा

कुछ सम्मतियां

१. "अजन्ता" का अपना व्यक्तित्व है। —श्री. बनारसीदास चतुर्वेदी
२. "अजन्ता" सुन्दर और स्वच्छ पत्रिका है। — श्री. दिनकर
३. "अजन्ता" साहित्यका नया कल्पवृक्ष है। – श्री. वासुदेवशरण अग्रवाल
४. "अजन्ता" हिन्दीकी सर्वश्रेष्ठ मासिक पत्रिकाओंमेंसे अेक है। —श्री. कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी

"नया पथ"

हिन्दीकी नअी साहित्यिक चेतनाका प्रतिनिधि। हिन्दी साहित्यमें देशभक्ति, जनसेवा, स्वाधीनता और शान्तिकामनाकी महान और गौरवशाली परम्पराको आगे ले जानेवाला राजनैतिक–सांस्कृतिक मासिक पत्र।

विशेष स्तम्भ

* मासिक टिप्पणियां। * व्यंग और प्रहसन। * आजकी राजनीति। * मार्क्सवादकी पाठशाला। * आर्थिक लेखाजोखा। * कथा-कहानी और कविताअें। * विज्ञान और हम। * सिनेमा-जगत। * हमारी संस्कृति * पुस्तक परिचय।

"नया पथ" को नये और पुराने सभी साहित्यकारोंका सहयोग अेवं समर्थन प्राप्त है।

सम्पादक:— श्री. शिव वर्मा

वार्षिक चन्दा ६ रुपया — छः माही ३ रुपया
अेक प्रतिका मूल्य आठ आना — पृष्ठ संख्या ४८

पहली आगस्तको "नया पथ" का पहला अंक तुलसी अंकके रुपमें प्रकाशित।

अेजेन्सी लेनेवालोंको २५ % कमीशन और डाकखर्च मुफ्त।

"नया पथ" कार्यालय
राजभवन, सैण्डहर्स्ट रोड, बम्बअी ४.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ्रेंच भाषा सीखिये !

'फ्रेंच स्वयं शिक्षक'

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धाका यह नवीनतम प्रकाशन है। अिसके लेखक हैं प्रख्यात गुरुकुल (युनिवर्सिटी) काँगड़ी हरद्वारके विद्वान स्नातक डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार डी. लिट. (पैरिस)।

राजधानी नयी दिल्लीमें भारत-स्थित फ्रांसके राजदूत श्री काअुन्ट आस्ट्रोरोग भारतके तरुणोंको शीघ्राति-शीघ्र फ्रेंच भाषा सीखनेकी सलाह देते हैं। फ्रेंच भाषा सारे यूरोपमें बहुत आमफहम और कूटनीतिज्ञ भाषा है। फ्रेंच भाषा बोलनेमें शान समझी जाती है।

बड़ी सरलतासे अिस पुस्तककी सहायतासे आप फ्रेंच भाषा सीख सकते हैं।

बढ़िया छपायी, साफ-सुथरी जिल्द, **कीमत ५ रुपया मात्र**

मिलनेका पता :--

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा [म. प्र.]

संक्षिप्त राष्ट्रभाषा-कोश

(सम्पादक—महापंडित राहुल सांकृत्यायन)

शब्दसंख्या--२५०००

[मूल्य ५) डाक-व्यय अलग]

भाषाके अध्ययनमें कोशकी अपनी अेक अुपयोगिता है।

राष्ट्रभाषाके विद्यार्थियोंके लिअे राष्ट्रभाषाका अध्ययन सुगम बनानेकी दृष्टिसे ही अिस कोशका निर्माण किया गया है। राष्ट्रभाषाकी परिधिमें आनेवाले लगभग २५००० महत्वपूर्ण शब्दोंके अर्थ अिसमें दिये गये हैं।

अिस कोशकी अन्य विशेषताअें—

१. शब्दोंके अर्थके साथ प्रचलित मुहावरोंका समावेश भी किया गया है। २. हिन्दी, अुर्दू, संस्कृत, अरबी, फारसी तथा अन्य भाषाओंके प्रचलित शब्दोंके रूप भी अर्थ सहित दिये हैं। ३. विशेष शब्दोंके साथ अुनकी परिभाषाअें, अुनका अैतिहासिक खोजपूर्ण विवरण तथा संक्षिप्त रूपमें भेद-प्रभेद दिये गये हैं। ४. महीन टाअिप, सुन्दर छपाअी, आकर्षक सेट-अप तथा पक्की जिल्द।

राष्ट्रभाषा प्रेमियों, विद्यार्थियों, संस्था तथा सरकारी कार्यालयों आदिके लिअे यह कोश बहुत अुपयोगी अेवं संग्रहणीय है।

मिलनेका पता:—

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, पो०—हिन्दीनगर (वर्धा, मध्यप्रदेश)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रभारती-विज्ञापन दर

साधारण पृष्ठ	पूरा --	४०)	प्रतिबार
,,	आधा --	२५)	,,
द्वितीय कवर पृष्ठ	पूरा --	१००)	,,
,,	आधा --	५५)	,,
तृतीय कवर पृष्ठ	पूरा --	८०)	,,
,,	आधा --	४५)	,,
चतुर्थ कवर पृष्ठ	पूरा --	१२०)	,,
,,	आधा --	७०)	,,

राष्ट्रभारतीकी साअिज-- ९½"×७"

छपे पृष्ठकी साअिज-- ८"×५½"

'राष्ट्रभारती' में अपने व्यापारका विज्ञापन देकर लाभ अुठाअिये। क्योंकि यह कश्मीरसे लेकर रामेश्वरतक और जगन्नाथपुरीसे द्वारकापुरीतक १०-१२ हजार पाठकोंके हाथोंमें पहुँचती है।

★

राष्ट्रभारती-अेजेन्सी

१. प्रतिमास कम-से-कम पाँच प्रतियाँ लेनेपर ही अेजेन्सी दी जायगी।

२. पाँच प्रतियाँ लेनेपर २०) प्रतिशत कमीशन दिया जायगा।

३. छहसे अधिक प्रतियाँ लेनेपर २५) प्रतिशत कमीशन दिया जायगा।

४. पाँचसे अधिक ग्राहक बना देनेवालोंको भी विशेष सुविधा दी जायगी।

विशेष जानकारीके लिअे आज ही लिखियेः—

श्री प्रबन्धक, "राष्ट्रभारती" पो० हिन्दीनगर (वर्धा, म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्रभारती'का 'विशेषांक'

"राष्ट्रभारती" का अगामी अक्टूबरका अंक 'अखिल भारतीय राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलन पंचम अधिवेशन नागपुर'के अुपलक्ष्यमें 'सम्मेलन-विशेषांक' के रूपमें प्रकाशित होगा। अिस अंकमें अुत्तर और दक्षिणके लब्धप्रतिष्ठ लेखकोंकी अुच्च रचनाअें, संस्कृत, हिन्दी, बंगला, मराठी, गुजराती, पंजाबी, तमिळ, तेलुगू, कन्नड़, मलयालम, अुर्दू, सिन्धी, राजस्थानी, मैथिली आदि भारतीय भाषाओंकी विविध सुन्दर सामग्री सचित्र प्रस्तुत की जाअेगी।

★

यह अंक दर्शनीय होगा! पठनीय होगा! 'राष्ट्रभारती' भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी प्रतिनिधि पत्रिका है जो सबसे सस्ती किन्तु ठोस सामग्री देती है।

★

सालाना चंदा ६ रु. मात्र।

अक्टूबर अंकसे ग्राहक बन जाअिये।

व्यवस्थापक : 'राष्ट्रभारती'

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम आपसे कुछ कहना चाहते हैं !

'राष्ट्रभारती' का तीसरा वर्ष अिसी जनवरी '५३ से शुरू हो चुका है। तीसरे वर्षका यह नवाँ (सितम्बर मासका) अंक आपके हाथमें है ।

'राष्ट्रभारती' के जिन प्रेमी ग्राहकोंका वार्षिक चन्दा अिस अंकके साथ पूरा हो जाता है, अुनसे हमारा नम्र निवेदन है कि वे अपना अगले वर्षका चंदा ६ रु. मनीआर्डर द्वारा तुरन्त भेजनेकी कृपा करें। वार्षिक या छहमाही चंदा हर हालतमें मनीआर्डर द्वारा भेजना ही ठीक होगा। अिससे हमको और आपको सुविधा होगी। आपको अंक समयपर मिलेगा। वी.पी. और 'रजिस्ट्री' चार्जकी झंझटसे आप और हम दोनों बचेंगे। आशा है, आप हमारी अिस प्रार्थनापर जरूर ध्यान देंगे।

दूसरा निवेदन यह भी है कि कमसे-कम अपने किसी अेक-दो पड़ोसी मित्रोंको भी ग्राहक अवश्य बना दें और अुनका सालाना चंदा मनीआर्डरसे भिजवा दें। यह 'राष्ट्रभारती' सबसे सस्ती, सुन्दर साहित्यिक, सांस्कृतिक पत्रिका है, जो ठीक समयपर हर १ ली ता० को निकलती है।

अिस पत्रिकाके प्रचारमें आप अवश्य अपना सहयोग बढ़ावें ।

मनीआर्डरसे वार्षिक चंदा ६ रु. और छहमाही चंदा ३ रु. ८ आ.

नमूना अंकके लिअे दस आना मात्र ।

पता :– व्यवस्थापक—'राष्ट्रभारती', पो०—हिन्दीनगर (वर्धा, म० प्र०)

राष्ट्रभारतीके लेखकोंसे निवेदन !

(१) 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ रचना आदि सामग्री स्वच्छ सुवाच्य नागरी लिखावटमें ही भेजना चाहिये। प्रकाशन योग्य सामग्री जो कुछ भी आप भेजें वह बहुत भारी-बोझिल और खूब लंबी चौड़ी नहीं होनी चाहिये, कृपया अिसका खयाल रखें। आपके हार्दिक सहयोगके लिअे राष्ट्रभारती बहुत आभारी होगी।

(२) अच्छी तरह ध्यानमें रहे कि राष्ट्रभारतीमें प्रकाशनार्थ भेजी हुअी आपकी रचना अिसके पूर्व किसी हिन्दी पत्र-पत्रिकामें प्रकाशित न हो चुकी हो; और जो कुछ सामग्री भेजें वह 'राष्ट्रभारती' के लिअे ही भेजें।

(३) अनुवादक महाशय किसी अनूदित रचनाको भेजनेसे पूर्व अुसके मूल-लेखकसे पत्रद्वारा अनुमति अवश्य प्राप्त कर लें; तभी अनूदित रचना हमारे यहाँ भेजें।

(४) आपकी स्वीकृत रचना संबंधी सूचना संपादक द्वारा आपको दी जाअेगी और छपनेतक आपको प्रतीक्षा करनी होगी।

(५) अपनी अस्वीकृत रचनाको वापस मंगानेके लिअे डाक-टिकट अवश्य भेजें अथवा आप अुसकी प्रतिलिपि अपने पास सुरक्षित रखें।

(६) लेख, रचना आदि प्रकाशन योग्य सम्पादकीय सारा व्यवहार अिस पतेपर करें:—

संपादक : 'राष्ट्रभारती'
पोस्ट—**हिन्दीनगर** (वर्धा, मध्यप्रदेश)

मुद्रक व प्रकाशक :— मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस,— राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा ।
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

अक्टूबर १९५३

राष्ट्र भाषा प्रचार समिति, वर्धा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्रभारती' बिहार, राजस्थान, मध्यभारत, हैदराबाद और भोपाल राज्यके शिक्षा-विभागों द्वारा स्कूलों, कालेजों और वाचनालयोंके लिअे स्वीकृत हो चुकी है ।

[**सूचना:**— 'राष्ट्रभारती'में, सर्वश्री डॉ. बाबूराम सक्सेना, आचार्य काका कालेलकर, महामहोपाध्याय दत्तो वामन पोतदार, स्वर्गीय किशोरीलाल मशरूवाला और अुत्तर-प्रदेशके वर्तमान राज्यपाल श्री क०मा०मुन्शी आदि विशेषज्ञोंकी अेक 'समिति' द्वारा १९३६ में निर्णीत नागरी लिपिका प्रयोग होता है: —अि, अी, अु, अू, अे, अै (इ,ई, उ, ऊ, ए और ऐ की जगह) और ञ, ण और क्ष (ञ, ण और क्ष अक्षरोंके लिअे) —सं०]

विषय		लेखक	पृ० सं०
१. महामानव गांधीके प्रति (कविता)	...	श्री 'नीरज'	७२३
२. राजा भोजका सपना	...	श्री चन्द्रबली पांडे	७२४
३. बहुतेरे (कविता)	...	श्री महेन्द्र भटनागर	७२८
४. चीनके जनकवि छ्यु य्वान्	...	श्री डा. जगदीशचन्द्र जैन	७२९
५. चली आ रहो क्रांति पुजारिन-सी नवयुगका दीप जलाये ! (कविता)	...	श्री 'अंचल'	७३०
६. प्रेमचन्द और चीनी लेखक लु-हुन	...	श्री परदेशी	७३१
७. पागलोंका स्वर्ग 'घील'	...	श्री महेन्द्र 'राजा'	७३३
८. कन्नड़ साहित्यकी विचार धारा–२ आरम्भ (वीर गाथा) काल	...	श्री गुरुनाथ जोशी	७३६
९. प्रिय मन्दिरकी राह न बदले ! (कविता)	...	श्रीमती विद्यावती मिश्र	७४०
१०. हिन्दीका निर्माण तथा परिष्कार	...	श्री किशोरीदास वाजपेयी	७४१
११. "नाच" (कविता)	...	श्री गिरिधर गोपाल	७४३
१२. दवा-फरोश (कहानी)	...	श्री जहूरबख्श	७४४
१३. लोकप्रिय नाट्यकार हरिकृष्ण 'प्रेमी'	...	श्री प्रो. रामचरण महेन्द्र	७४९
१४. कल्पना (अेक भाव चित्र)	....	श्री सत्यव्रत अवस्थी	७५४
१५. अिसान न रुकता दुनियामें अिसान हमेशा बढ़ता है ! (कविता)	...	श्री वृन्दावन नामदेव	७५५
१६. कमजोरियोंकी अेक शृंखला (अेक रुमानियन कहानी)	...	श्री अियोन लूका कराजियाले अनु०— श्रीमती कमल आर्य	७५८
१७. स्रोत (मराठी कहानी)	...	श्री मनोहर देशपांडे अनु०—श्री अनिलकुमार	७६१
१८. सिंधी साहित्यका संक्षिप्त परिचय	...	श्री ला. अ. जगत्याणी अनु०—श्री कृष्ण टोपणलाल जैतली	७६४
१९. दक्षिण भारतके भोजन-संभ्रम	...	श्रीमती राजलक्ष्मी राघवन	७६६
२०. जीनेकी बात (गद्यकाव्य)	...	श्री 'भृंग' तुपकरी	७७०
२१. महात्मा गांधी : मिश्री कवियोंकी दृष्टिमें (दो अरबी कविताअें)	...	श्री अहमद यूसुफ 'बद्र' श्री अिब्राहीम अली 'बदवी' अनु०—श्री औशनारायण जोशी	७७३
२२. कवि (असमिया)	...	श्री नीलमणि फूकन अनु०—श्री जीतेन्द्रचन्द्र चौधुरी	७७६
२३. साहित्यालोचन	...	... ...	७७८
२४. सम्पादकीय	...	... ...	७८३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

* वर्ष ३ * वर्धा, अक्टूबर १९५३ * अंक १० *

महामानव गांधीके प्रति

: श्री 'नीरज' :

कौन कहता है कि तुमको खा गया है काल ?
रक्तसे तुम लिख गये वह मुक्तिका अतिहास,
भूमिका जिसकी बना खुद मृत्युका अट्टास,
काल जिसका पृष्ठ, अक्षर शब्द प्रति भूचाल !
कौन कहता है कि तुमको खा गया है काल ?

तुम चले, चलने लगे चिर अचल अजड़ पहाड़,
तुम रुके तो रुक गयी सकुचा समयकी बाढ़
तुम अुठे तो अुठ गया भूनत हिमालय-भाल !
कौन कहता है कि तुमको खा गया है काल ?

तुम अमर मनुजत्व वह देवत्व जिससे हीन,
वह सृजनके हास हो तुम नाश जिसमें लीन,
नाद वह तुम मूक जिसको सुन हुअे वाचाल !
कौन कहता है कि तुमको खा गया है काल ?

मृत्युजित तुम वह कि जिसका श्वास हर तूफ़ान,
ओठमें जिसके दबी ज्वालामुखी-मुस्कान,
भाल जिसका नभ, दिशाअें देह, पग पाताल !
कौन कहता है कि तुमको खा गया है काल ?

देह तजकर आज जो तुम मौन अन्तर्ध्यान,
अर्थ अिसका यह कि कण-कणमें हुअे लयमान,
गेह जिसका अब न मिट्टी किन्तु विश्व विशाल !
कौन कहता है कि तुमको खा गया है काल ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा भोजका सपना

: श्री चन्द्रवली पांडे :

'राजा भोजका सपना' हिन्दीकी अेक प्रसिद्ध रचना है। रचयिताका नाम प्रसिद्ध है 'राजा शिवप्रसाद सितारे-हिन्द' करके। किन्तु वास्तवमें राजा साहब अिसके रचयिता नहीं, अनुवादक हैं। अिसके रचयिताका पता है, हो सकता है। परन्तु अिसकी चिन्ता कोअी क्यों करे? अिसके बिना किसीका अहित क्या हो रहा है जो अैसा करे? पढ़ते समय अिस जनके मनमें अेक शंका अुठी थी। अुस समय अुसका समाधान न हो सका और स्वर्गीय डा० श्यामसुन्दरदास जैसे प्राणीने अुसका निराकरण न किया। बात यह थी और बहुत कुछ आज अुससे अधिक है भी कि लोग अध्ययन नहीं करते। हाँ, प्रायः लोग अध्यापनका काम अवश्य कर लिया करते हैं। सच तो यह है कि अिसीके अभावमें वास्तवमें हमारा राष्ट्र ही 'राजा भोजका सपना' बन रहा है। किन्तु फिर भी 'राजा भोजका सपना' रचा गया था 'राजा भोज' को जगानेके लिअे न? और वह राजा है क्या? राजा भोज है न हिन्दू राजाका प्रतीक? आप यदि वस्तुतः 'राजा भोज' और अुसके 'स्वप्न' के मर्मको समझना चाहते हैं तो सदाके लिअे टाँक लें कि आज़ यहाँ अुसके 'सपने' का मर्म है कुछ और ही। देखिये न अुसका रचयिता लिखता है--

"अुसके दानने राजा कर्णको लोगोंके जीसे भुलाया और अुसके न्यायने विक्रमको भी लजाया। कोअी अुसके राज्यभरमें भूखा न सोता और न कोअी अुघाड़ा रहने पाता। जो सत्तू माँगने आता अुसे मोतीचूर मिलता और गजी चाहता अुसे मलमल दी जाती। पैसेकी जगह लोगोंको अशर्फियाँ बाँटता और मेहकी तरह भिखारियों-पर मोती बरसाता। अेक-अेक श्लोकके लिअे ब्राह्मणोंको लाख-लाख रुपया अुठा देता और सवा लक्ष ब्राह्मणोंको षट्रस भोजन कराके तब आप खाने बैठता। तीर्थयात्रा, स्नान, दान और व्रत-अुपवासमें सदा तत्पर रहता। अुसने बड़े-बड़े चांद्रायण किये थे और बड़े-बड़े जंगल-पहाड़ छान डाले थे।" फिर भी अुसको भयंकर स्वप्नका सामना करना पड़ा।

फ्रायड-प्रियताका कहना क्या? हिन्दी आज अुसमें पीछे नहीं। परन्तु 'राजा भोजका सपना' अुसकी कसौटीपर कब चढ़ा? कोसनेसे लाभ क्या? कसककी बात यह है कि--

"निदान राजाने जो कुछ स्वप्न रातमें देखा, सब ज्योंका त्यों अुस पंडितको कह सुनाया। पंडितजी तो सुनते ही अवाक् हो गये, अुन्होंने सिर झुका लिया। राजाने निराश होकर चाहा कि तुषानलमें जल मरे, पर अेक परदेशी-सा, जो अुन पंडितोंके साथ बिना बुलाये घुस आया था, यों निवेदन करने लगा।"

क्या निवेदन किया? अभी आँखके सामने आता है। परन्तु पहले समझ तो लीजिये कि वास्तवमें यह 'अेक परदेशी सा' क्या दैव है जो अिस प्रकार बिन-बुलाये आ गया। क्या अभीतक अिसको परखनेका 'राष्ट्र' ने कोअी प्रयत्न किया? काश कभी हम अिस 'परदेशी सा' को परख पाते और अिस 'बिन बुलाये' आये हुअे की नीतिसे अनभिज्ञ न रह जाते!

अच्छा लीजिये। अुसका निवेदन है--

"महाराज! हम लोगोंका कर्ता अैसा दीनबंधु कृपासिंधु है कि अपने मिलनेकी राह आपही बतला देता है, आप निराश न हूजिये पर अुस राहको ढूँढ़िये। आप अिन पंडितोंके कहनेमें न आअिये पर अुसीसे अुस राहके पानेकी सच्चे जीसे मदद माँगिये।"

अुपदेश तो अच्छा मिला। बात किसीकी हो। अच्छी हो तो अपनानेमें क्षति क्या? तो भी दृढ़ देखिये तो सही, अिस 'परदेशी 'सा' का रहस्य क्या है। पूरा 'परदेशी' क्यों नहीं? अन्तमें रचयिताका निवेदन है--

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हे पाठकजनो ! क्या तुम भी भोजकी तरह ढूंढ़ते हो और भगवान्‌से अुस राहके मिलनेकी प्रार्थना करते हो ? भगवान् तुम्हें अैसी बुद्धि दे और अपनी राहपर चलाये, यही हमारे अंतःकरणका आशीर्वाद है।"

सो तो ठीक है, परन्तु भगवान्‌की अिस भूमिपर अितनी अकृपा क्यों, कि अिसको राह दिखानेवाला भी कोअी 'परदेशी सा' मिले ? कारण कुछ तो होगा ही। लीजिये। पतेकी बात है--

"अिसी अर्सेमें वह राजा अुस सपनेके मंदिरमें खड़ा-खड़ा क्या देखता है कि अेक ज्योति-सी अुसके सामने आसमानसे अुतरती चली आती है। अुसका प्रकाश तो हजारों सूर्यसे भी अधिक है, परंतु जैसे सूर्यको बादल घेर लेता है अुस प्रकार अुसने मुँहपर घूँघट-सा डाल लिया है; नहीं तो राजाकी आँखें कब अुसपर ठहर सकती थीं। अिस घूँघटपर भी वे मारे चकाचौंधके झपकी चली जाती थीं।" 'घूँघट' का रहस्य तो रहस्य-वादी कवितामें खुलेगा। प्रसंगवश अभी जानभर लें कि शामी समाजमें अिस घूँघटका महत्त्व अलग है। अधिकसे लाभ नहीं। आप किसी 'सुसमाचार' या 'बाअिबिल' में पढ़ भरलें कि 'पाल' को किसी अवसर पर किसी 'ज्योति' का कैसा सामना करना पड़ा और किस प्रकार वह अुसकी चकाचौंधसे अन्धा हो घोड़ेकी पीठसे भूतलपर आ पड़ा। और जगा तो फिर अैसा ज्योतिवाला हो गया कि अुसे 'प्रभु यीशु' के बादका महत्त्वका स्थान मिला। जी, अुसी ज्योतिका प्रसाद 'घूँघट' में राजा भोजको भी मिला। तो क्या राजा 'यीशुभक्त' किंवा 'अीसाअी' हो गया ? अितिहाससे प्रयोजन क्या ? मजहबकी पुकार है--

"अुस पुरुषने बादलकी गरजके समान गंभीर अुत्तर दिया कि मैं सत्य हूँ। और सपनेके भूले हुओंको नींदसे जगाता हूँ। हे भोज ! अगर कुछ हिम्मत रखता है तो आ, हमारे साथ आ और हमारे तेजके प्रभावसे मनुष्योंके मनके मंदिरोंका भेद ले, अिस समय हम तेरे ही मनको जाँच रहे हैं।"

हाँ, अुस पुरुषने अपने परिचयमें अितना और भी कहा था--

"अंधोंकी आँखें खोलता हूँ, मैं अुनके आगेसे धोखेकी टट्टी हटाता हूँ।" कह नहीं सकता कि 'प्रभु यीशु' के सेवकोंके शासनमें हमारी 'आँख खुली' अथवा अुसार और भी 'धोखेकी पट्टी' बँध गयी। 'धोखेकी टट्टी' तो अब भी आगे खड़ी है न ? भला अिससे बड़ा धोखा किसीको क्या होगा कि अिस 'परदेशी' रचनाके अनु-वादको राजा शिवप्रसाद 'सितारे-हिन्द'का प्रसाद समझा जाय ? कौन कहनेका साहस कर सकता है कि अिससे हमारी आँखपर 'परदेशी' पट्टी नहीं बँधती ?

हुआ, जो कुछ हुआ, हो गया। हम अुसकी भर्त्सनाके प्रेमी नहीं। परन्तु हम अपने देशके स्वदेशी 'राजाओं' और 'पंडितों' को क्या कहें जो वास्तवमें अितना भी नहीं समझते कि वास्तवमें 'राजा भोजका सपना' क्या है। हम भी अभी क्या कहें ? मूल अपने सामने कहाँ ? कभी संयोगसे स्व० मौलवी महेशप्रसाद आलिम फाजिलके प्रयत्नसे किसी पुस्तकमें पढ़ भर लिया था कि वस्तुतः यह 'सपना' है किसी अीसामसीही भगतिनकी देन। स्यात् सन १८८२ अी० के लगभग अिसकी रचना हुअी और अिसका अँगरेजीसे हिन्दीमें अनुवाद हुआ राजा शिवप्रसादके हाथों। हाँ, अिसकी भाषा आमफहम 'हिन्दुस्तानी' नहीं, प्रचलित 'हिन्दी' है। अर्थात् 'शासन' की भाषा नहीं 'पादरी' की भाषा है। अतअेव निष्कर्ष यह निकला कि--

१--वस्तुतः 'राजा भोजका सपना' राजा शिवप्रसादकी रचना नहीं। नहीं, यह तो अुनका अनुवाद है। मूलतः यह किसी मसीही कुमारी भगतिनकी रचना है, जो अँगरेजीमें रची गयी थी, हिन्दू-हित अथवा यीशु-प्रचारके लिअे।

२--वास्तवमें अिसमें सदाचार वा सत्यनिष्ठाका प्रचार नहीं। हाँ, हिन्दू-धर्माचारमें अनास्थाका विधान अिसमें अवश्य है।

३--अिसकी भाषा राजा शिवप्रसादकी भाषा-नीतिके सर्वथा अनुकूल नहीं। किन्तु अुसके सर्वथा विपरीत भी नहीं है। अुदाहरणके लिअे अितना पर्याप्त है--

"अिसी अर्सेमें चोबदारने पुकारा--"

"चौधरी अिन्द्रदत्त निगाह रूबरू।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चय ही यह राजा भोजकी भाषा नहीं। 'श्रीमहाराज सलामत' हिन्दुस्तानी ही तो है? 'अिन्द्रदत्त' के साथ 'निगाह रूबरू' का जलवा अुसीमें तो है?

सारांश यह कि अँगरेजी 'राजनीति' में अुलझ रहना ठीक नहीं। हाँ, अुसकी नीतिको समझ लेना अनिवार्य है। अुसके बिना सभी कुछ 'परदेशी' नहीं तो निश्चय ही 'परदेशी सा' हो रहा है। किन्तु हमारे देशके राजाभोजों और अुनके पंडितोंको अिसका पता कहाँ? क्या 'राष्ट्रभारती' के सेवक सचेत हो सकते हैं? कैसे कहें जब राष्ट्रके आगे अब भी धोखेकी टट्टी खड़ी है? फिर भी आशा तो सजीव है न?

तात्पर्य है कि हमें अपने अँगरेजकालीन अतीतका अध्ययन आँख खोलकर करना है और पद-पदमें देखना यह है कि वास्तवमें अुसकी तहकी विचार-धारा क्या है। अिसके अभावमें राष्ट्रका कैसा अमंगल होता अथवा होने जा रहा है अिसके अनेक अुदाहरण सामने आ चुके हैं। अुनकी मीमांसामें पड़ना व्यर्थ समझ राष्ट्रभारतीके सपूतोंके सामने अिस अवसरपर अितना निवेदन कर देना अिसलिअे अलं समझो कि अिससे आप ही अवगत हो जाअे कि वस्तुतः भाषाके द्वन्द्वमें पड़े रहनेका परिणाम कहाँतक अूपरी और सत्यसे विमुख हो सकता है। राजा शिवप्रसादको समझनेकी आज जितनी आवश्यकता है अुतनी ही अुनकी अुपेक्षा भी हो रही है। परिणाम यह हो रहा है कि हिन्दीके क्षेत्रमें मनमानी हाँकी जा रही है। हिन्दी ही नहीं, अन्य भाषा-भाषियोंको भी अपने अतीतका लेखा कुछ सावधान होकर लेना चाहिये और जमकर देखना यह चाहिये कि वास्तवमें हमारी आस्थाको अुलटने अथवा हमारे हृदयको जीतनेका मधुर और भीतरी प्रयोग क्या हुआ है। आशा है 'राजा भोजका सपना' अंजनका काम करेगा।

बहुतेरे

: श्री महेन्द्र भटनागर :

आज सबेरा होता है
पर, बहुतेरे सोते हैं,
काट रहे जन आज फसल
पर, बहुतेरे रोते हैं!

आज नयी गंगा बहती
पर, बहुतेरे प्यासे हैं,
चातक-से बन, अिस जलको
पीना घातक कहते हैं!

आज नयी जो चली हवा
अिन खेतों-खलिहानोंपर,
जन-जन लेते साँस मुक्त
पर बहुतेरे रहे सिहर!

आज नया संसार बना
पर, कुछ कलियुग समझ रहे,
डर अपनी परछाअींसे
अपनेमें ही अुलझ रहे!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चीनके जनकवि छ्यु ग्वान्

: डॉ. जगदीशचन्द्र जैन :

आजसे सवा दो हजार वर्ष पूर्व सामन्तवादी चीनमें बसनेवाले सामन्तोंमें निरन्तर युद्ध हुआ करते थे, जिसके कारण चीन सात युद्धकारी राज्योंमें बँट गया था। स्वार्थपूर्ण महत्त्वाकांक्षा, षड्यंत्र, छलछिद्र, झूठी प्रशंसा आदिने राजकर्मचारियोंकी भावनाओंको दूषित कर दिया था, जिससे प्रजामें निराशा फैल गयी थी। सरकारी टैक्स बढ़ा दिये गये थे; श्रम-जीवियोंसे सख्त मेहनत ली जाती थी और खेती-बारी अत्यन्त पिछड़ी हुअी दशामें थी। अैसी हालतमें चीन राष्ट्रको संगठित-कर अुन्नत बनानेकी आवश्यकता महसूस की जा रही थी। अिसी समय चीनके महान् देशभक्त कवि छ्यु ग्वान् (३४०–२७८ अी. पू.) का जन्म हुआ।

छ्यु ग्वान् छु राज्यके निवासी थे। वे राजमंत्री थे तथा राज्यकी वैदेशिक-नीतिका संचालन करते थे। चीनके अुत्तर पूर्वमें छिन् नामका अेक शक्तिशाली राज्य था तथा छु और छिन् दोनों राज्योंमें नेता बननेके लिअे संघर्ष चला करता था। कवि छ्यु ग्वान् किसी भी हालतमें नहीं चाहते थे कि छुके निवासी छिन्की अधीनता स्वीकार करें।

छिन् राज्यका प्रधान मंत्री छाङ् यि अेक कुशल राजनीतिज्ञ था। वह छुके राजा ह्वाअीसे भेंट करने आया और वहाँ ठहरकर कूट-नीतिके दावपेंच खेलने लगा। वह चाहता था कि ह्वाअी छि राज्यसे अपना सम्बन्ध विच्छिन्न कर छिन्के साथ मित्रता स्थापित कर ले जिससे पूर्वके राज्योंमें युद्ध छिड़ जाअे और फिर छिन् छहों राज्योंपर अधिकार कर ले। अिस मित्रताके अुपहार स्वरूप छाङ् यिने राजाको २०० मीलका अिलाका देनेका वादा भी किया था।

दुर्भाग्यसे ह्वाअी अनेक स्वार्थी और चापलूस राजकर्मचारियोंसे घिरा हुआ था जिनमें त्चू छियाव् और छिन् षाङ् मुख्य थे। ये दोनों मंत्री छाङ् यिसे रिश्वत लेकर राज्यका अनिष्ट करनेपर तुले थे और राजाको छाङ् यिकी सलाह माननेको विवश किया करते थे। आगे चलकर अपनी अिसी देशद्रोही मनोवृत्तिके परिणामस्वरूप ये दोनों मंत्री कवि छ्यु ग्वान्पर दुश्च-रित्रताका दोषारोपण कर अुसे राज्यसे पृथक् करनेमें सफल हो सके।

कहा जा चुका है कि छ्यु ग्वान् छि राज्यसे सम्बन्ध बनाये रखनेके पक्षमें था जिससे कि छिन्के आक्रमणसे अुसके राज्यकी रक्षा हो सके। राजा कविकी अिस बातका समर्थक था। अिस समय छाङ् यि जब अपने वतनको लौटने लगा तो अुसने रानीका विश्वास-भाजन बन अेक षड्यंत्र रचा।

छाङ् यिकी विदाअीके समय अेक भोज दिया गया और अिस प्रसंगपर अनेक गायकों और संगीतज्ञों-को आमंत्रित किया गया। छ्यु ग्वान्को विशेष रूपसे बुलाया गया। रानी और छ्यु ग्वान् अेक साथ बैठकर नृत्य देखने लगे। अितनेमें रानी अचानक बेहोशीमें आकर गिर पड़ी और अुसने छ्यु ग्वान्की गोदीमें सिर टेक दिया। छ्यु ग्वान्ने ज्यों ही रानीका स्पर्शकर अुसे अुठाना चाहा, वह रोषमें आकर कहने लगी, "कवि ! तुम्हारी अिस कुचेष्टापर मुझे आश्चर्य होता है। क्या तुम पागल हो गये हो कि सबके सामने अैसी धृष्टता कर रहे हो ?" अिस काण्डको अिस प्रकार रचा गया जिससे दूसरी ओर परदेके पीछे बैठे हुअे राजा, चाङ् यि, त्चू छियान् तथा छिन् षाङ् भी देख सकें। राजा यह काण्ड देखकर बहुत क्रुद्ध हुआ और अुसने छ्यु ग्वान्को अपने दरबारसे निकाल दिया।

छ्यु ग्वान्को अिस रहस्यको समझनेमें देर न लगी। अुसने राजाको बहुत समझाया कि वह षड्यंत्रका शिकार न बने, किन्तु जब अुसने अेक न सुनी तो कविने रोषपूर्ण शब्दोंमें कहा—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"राजन्! मुझे अपने मान-अपमानकी चिन्ता नहीं, किन्तु तुम्हें जनताके हितकी बात सोचनी चाहिये। लोग अब पशुका जीवन व्यतीत नहीं करना चाहते। वे आक्रमण और हिंसासे घृणा करते हैं और अुस दिनकी प्रतीक्षामें हैं जब कि चीन अेक लड़ाकू राज्यकी जगह अेक शान्त और संयुक्त राष्ट्र बन जाअेगा। यदि तुम छह राज्योंकी मित्रतापूर्ण संधिको भंगकर छिनको अपना राज्य सौंप दोगे तो तुम अपने राज्य, समस्त चीन और चीनी जनताके विध्वंसक समझे जाओगे। याद रखना, मुझे मृत्युकी जरा भी परवाह नहीं। हम दोनोंमें कौन सही रास्तेपर है और कौन गलतपर तथा कौन देशभक्त है और कौन देशद्रोही, अिसका निर्णय हमारी भावी संतान करेगी।"

छाङ् यिकी कूट-नीतिकी सफलताके कारण छु और छि राज्योंके मित्रतापूर्ण संबंध विच्छिन्न हो जानेपर ह्वाअीको कोअी अिलाका मिलना तो दूर रहा, अुसके राज्यपर आक्रमणकर अुसे कैद कर लिया गया। अुसके लड़केको छिन्की कन्याके साथ शादी करनेके लिअे बाध्य किया गया और छु राज्यको ध्वस्त कर दिया गया।

कवि छ्यु ग्वान्को २० वर्ष निर्वासित अवस्थामें व्यतीत करने पड़े। लेकिन फिर भी अुन्होंने अपनी मातृभूमिका परित्याग नहीं किया। अिस कालमें अुन्होंने "शोक" (लिसाव्) नामकी कविताकी रचना की; जिसमें अुन्होंने अपनी राजनीतिक विचार धाराका समर्थन करते हुअे, अुसके सही विचारोंको न समझकर अुसे पदच्युत करनेके कारण शासक वर्गको निन्दित ठहराया। दीर्घ-कालीन अेकान्तवासमें अपनी गंभीर वेदनाको अभिव्यक्त करनेके लिअे कविने अपनी कवितामें अनेक सुन्दर रूपकोंका प्रयोग किया है। आत्म-संतोषके लिअे कवि पंडितों और ज्योतिषियोंके पास पहुँचे परन्तु सबने अुन्हें राज्य छोड़कर चले जानेका ही अुपदेश दिया। लेकिन कवि फिर भी निराश न हुअे। अुन्होंने वायु, वर्षा, गर्जन, विद्युत् और मेघको अपना सारथी नियुक्त कर और नागराजको रथका वाहक बनाकर आकाशमें अुड़कर स्वर्गमें पहुँचनेकी चेष्टा की। संभवतः यहाँ भी द्वारपालने बिना लांच लिअे अुन्हें स्वर्गमें प्रविष्ट होनेकी अिजाजत नहीं दी। तत्पश्चात कविने विश्वके अुच्चतम शिखरपर परिभ्रमण करते हुअे अपनी मातृभूमिकी सौन्दर्य-गरिमाका निरीक्षण किया और फिर अपनी यात्राको स्थगित कर वे अपने देश लौट आये। अिस समय कविके हृदयमें जनताके अपार कष्टोंको देखकर जो अगाध सहानुभूतिका संचार हुआ अुसका पता कविके निम्न अुद्गारोंसे लगाया जा सकता है—

बहुत काल तक
मैं आहें भरता रहा-अपनें आँसू पोंछता रहा।
अपनी जनताको
दुःख और भयसे अवनत शिर देखकर।

आगे चलकर जब छिन् सेनापतिने कविकी मातृभूमिपर अन्तिम बार आक्रमण किया तो कविकी हिम्मत टूट चुकी थी। अैसी दशामें जब अुनके सामने जनताके कल्याणका कोअी मार्ग न रह गया तो अुन्होंने पाँचवें महीनेके पाँचवें दिन मिल (हूनान प्रान्त) नदीमें डूबकर प्राण त्याग दिये। शासक-वर्गके क्रूर अत्याचारोंसे पीड़ित अेक महान् कविने सत्य और न्यायके खातिर अपने प्राणोंकी आहुति दे दी।

शासक-वर्गके अन्यायका शिकार होनेके कारण छ्यु ग्वान् जैसे निःस्वार्थ और देशभक्त कविका अिस दुनियासे नाम ही मिट जाअे, अिस बातको चीनी जनता भला कैसे सहन कर सकती थी। जनताने तत्कालीन सामंती-समाज द्वारा किये गये अत्याचारोंके विरुद्ध घृणाका भाव प्रदर्शित करने और कविके त्यागके प्रति अपना आदरभाव सूचित करनेके लिअे ड्रैगन (नाग) नाव नामक त्योहार मनाना आरंभ किया, जिसका मतलब है कि चीनमें जहाँ-जहाँ नदियाँ मौजूद हैं, वहाँ कविके शरीरकी खोजमें नावें चक्कर लगाती हैं। चीनमें अिस वर्ष १५ जूनको यह त्योहार मनाकर कविकी २२३० वीं पुण्यतिथि मनायी गयी थी। आजके दिन चीनमें चावलों द्वारा बनाये गये अेक विशेष खाद्य पदार्थ (चीनीमें त्सुङ् त्व्)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को पत्तोंमें लपेटकर अुसे नदी-नालोंके नागों और सांपोंको खिलाया जाता है जिससे नदी-नालोंके जन्तु जनताके लिअे कविके शरीरको भक्षण न कर डालें। कोरिया, जापान, विअेतनाम और मलायामें बसनेवाले चीनी भी अिस त्योहारको बड़ी धूमधामसे मनाते हैं।

कवि छ्यु ग्वान्के हृदयमें अपनी मातृभूमि और जनताके प्रति अगाध प्रेम था तथा जीवन और प्रकृतिके प्रति गहरी अनुभूति। अपनी अधिकांश कविताओंकी रचना अुन्होंने राजदरबार छोड़नेके बाद ही की है। अबतक अुनकी २५ कविताअें अुपलब्ध हुअी हैं; जिनका संग्रह पीकिङ्के विदेशी भाषाके प्रेससे प्रकाशित "लि साव् तथा अन्य कविताअें" में किया गया है। चीनके प्रसिद्ध साहित्यकार और अन्तर्राष्ट्रीय स्तालिन शान्ति पुरस्कारके विजेता क्वो मो रो ने अिस कविके अूपर अेक सुन्दर मार्मिक नाटक लिखा है, जिसका अंग्रेजी अनुवाद अुक्त संस्था द्वारा अभी हालमें प्रकाशित हुआ है। चीनके अन्य विद्वानोंने भी अिस कविके संबंधमें खोजें की हैं।

चीनके महान् कवि छ्यु ग्वान्की कविताओंमें जगह-जगह शासक वर्गके भ्रष्टाचारके प्रति घृणा तथा जनताके प्रति सहानुभूति और प्रेम अभिव्यक्त किया गया है। नये चीनका साहित्यिक अिस जन कविकी कृतियोंसे पर्याप्त रूपमें प्रभावित हुआ है, यही कारण है कि आधुनिक चीनी साहित्यको जनहितकी भावनासे परिपूर्ण बनानेकी चेष्टा की जा रही है। और किसी भी लेखक या कलाकारको अपने भावोंको जनता तक पहुँचानेके लिअे जन-संघर्षमें हाथ बँटाना आवश्यक माना जाता है। क्वो मो रो के निम्न वक्तव्यसे आधुनिक चीनी साहित्यकी गतिविधिका अनुमान लगाया जा सकता है - "आखिर डाक्टरी पढ़नेसे भी कोअी लाभ है? आप अिससे कृमियोंका नाश अवश्य कर सकते हैं। परन्तु जरा सोचिये कि कृमि अुत्पादक घृणित सामाजिक व्यवस्थाका नाश अिससे कैसे हो सकता है? किसी धनिक पुरुषके पेट-दर्दका अिलाज करनेके लिअे आप अुसे कोअी रेचक औषधि दे सकते हैं, परन्तु जब आप देखते हैं कि कोअी दरिद्र व्यक्ति मोटरके नीचे आकर कुचला गया है और हजारोंकी संख्यामें आपके देशवासियोंकी सशस्त्र सैनिकों द्वारा हत्या की जा रही है, तो फिर अैसी हालतमें कोअी डाक्टर क्या कर सकता है?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चली आ रही क्रांति पुजारिन-सी नवयुगका दीप जलाये !

: श्री 'अंचल', अेम. अे. :

किसकी ज्वालामुखी प्रगतिने राकाकी जंजीरें काटीं
डूब रही लोहित किरणोंमें मरणशील तारोंकी घाटी
चीर चलीं अस्तंगत अन्धकारको किसकी तरुण शिखाअें
अेक महाज्वाला बन फूटीं किसकी बिजली-सी रेखाअें
किस शोषणविहीन अनदेखी-सी समताका प्रबल तकाजा
अुठा रहा घर-घरसे सदियोंकी हिंसाका रुका जनाजा
गूँज रही जनगणके कानोंमें जाग्रतिकी अरुण प्रभाती
अुगती चेतनतामें विप्लवकी चिनगारी अुड़ती आती
पेट काटकर भूखे तनने जो सपनोंका महल बनाया
अुसे रौंदती और ढहाती आती बड़ी नाशकी छाया
मिटनेसे स्वतन्त्र आदर्शोंमें है नये जन्मका नारा
अुमड़ रहीं संगीनोंके सिरहाने आजादीकी धारा
चली आ रही क्रान्ति पुजारिन-सी नवयुगका दीप जलाये
कौन प्रवर्तक है जो शोलोंके मौसममें आगे आये
दूर नहीं है दीख रहा जनसत्ताका मंदिर बलिदानी
जिसकी अींट-अींटके गारेमें लिपटीं असंख्य कुरबानी
कदम-कदम बलिदान चाहता पथकी धूल लहूकी प्यासी
बढ़ते ही आते हैं अुसपर ये परिवर्तनके अभिलाषी
समय बहुत कम—बिलकुल कम लिखनी है नये जन्मकी पाटी
किसकी ज्वालामुखी प्रगतिने राकाकी जंजीरें काटीं
जलते मनके गीत जला जाता अम्बर जलती है माटी
डूब रही लोहित किरणोंमें मरणशील तारोंकी घाटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेमचंद और चीनी लेखक लु-हुन

: श्री परदेशी 'साहित्य-रत्न' :

(१)

अुपन्यास-सम्राट प्रेमचन्द और चीनी कथा-सम्राट लु-हुन समकालीन हैं। अेक ओर भारत, प्रेमचन्द-कालमें अंग्रेजोंके आधीन था; दूसरी ओर चीन, लु-हुनके समय, जापान और चांगकाअीशेकके लुटेरोंके हाथों बन्दी था। दोनों लेखकोंने, अपने-अपने देशके तत्कालीन सामाजिक अेवं राजनीतिक जीवनका अितना सजग अेवं सफल चित्रांकन किया है कि पाठक चकित रह जाता है।

स्व० प्रेमचंदकी तुलना गोर्की, हॉथार्न, हार्डी, मौपासाँ, डिकेन्स, टॉल्स्टाय, दोस्तॉयवस्की आदि पाश्चात्य कलाकारोंसे अनेक बार की जा चुकी है और अवश्य ही प्रेमचंद अिनमेंसे किसीसे कम कभी नहीं अुतरे हैं। परन्तु पूर्वीय-अेशियाअी लेखक, कथाकारसे प्रेमचंदजीकी तुलना कम ही हुअी है। हाँ, रवीन्द्र और शरत् जैसे स्वदेशीय कथा-महारथियोंसे प्रेमचंदकी तुलनात्मक आलोचनाअें हिन्दीमें बारबार हुअी हैं। यहाँ शरत्के शब्दोंमें अितना ही लिख देना पर्याप्त होगा कि "भारतवर्षमें रविबाबूको छोड़कर, प्रेमचन्दके समान कथा साहित्यपर किसीका अैसा अेक-छत्र अधिकार नहीं है।" स्वयं गुरुदेव रविबाबूने अपने श्रीमुखसे प्रेमचंदके गुणगान गाये हैं। गुरुदेव कवीन्द्र प्रेमचन्दके महत्वको, अपने अन्तरतममें जानते थे। क्योंकि जहाँ रवीन्द्रने आभिजात्यों और सामन्तीय-वर्गोंकी वृत्तकथा कही; वहाँ प्रेमचंदने शोषित, दलित और सर्वहारा वर्गके अनाथोंका अितिहास पेश किया! भले ही, प्रेमचन्दके पास कवीन्द्रकी कल्पनाका वैभव न रहा हो परन्तु यह भी स्पष्ट है कि पात्रोंकी चरित्र-रचना और अुनकी प्रकृतिके तलमें जिस सहज, स्वाभाविकतापूर्वक प्रेमचन्द पैठे हैं, रवीन्द्र कदापि नहीं पैठ सके। रवीन्द्र कवीन्द्र थे। अुन्होंने चाँद-तारों और रूपके ज्योतिके गीत गाये हैं। प्रेमचन्द किसान थे। वे गाँधी-बापूकी तरह, जन-जीवनके कथाकार थे। जिस प्रकार बापूने सचेत किया था कि "गरीब भारतीयोंके सम्मुख अीश्वरकी नहीं, रोटीकी बात करो। परमात्मा भी अिनसे मिलना चाहे तो, अिन्हें दाल-रोटीके रूपमें ही दर्शन दे सकता है। दूसरे किसी अीश्वर की बात करना, अिनका मजाक करना है।" प्रेमचन्दने क्या अपने अुपन्यासोंमें यही सब नहीं लिखा? वे जीवनके, संघर्षशील, अपराजेय जीवनके अेक मात्र कथाकार थे। प्रेमचन्द गीत गाने नहीं आये थे, वे विद्रोह जगाने आये थे। जगाकर रहे। अिसीलिअे राजनीतिमें गांधीजीका जो स्थान है, भारतीय साहित्यमें प्रेमचन्दका वही स्थान है। देशमें महात्मा गांधीके बाद, सबसे बड़ा–महापुरुष प्रेमचन्द ही हुआ।

प्रेमचंद असाधारण प्रतिभाके स्वामी थे। भाषा और चरित्र निर्माण कलामें अुनके समान दूसरा सिद्धहस्त कौन हुआ? अुन्होंने जनताकी भाषामें, जनताका दुख-सुख, जनताके लिअे लिखा। 'मानव' और अुसकी शिव भावनाओं, अपराजित परम्पराओं और आकांक्षाओंको प्रेमचंदने खूब समझा। अुसीसे जीवन और मानवताका पक्ष अुन्होंने लिया। रोम्याँरोलाँ, टॉल्स्टाय और गाँधीकी तरह प्रेमचंद आजीवन शांति और मानवताकी अखंड मुक्तिके समर्थक रहे! अिसपर भी अपने सिद्धांतों और अधिकारोंके लिअे चुप रहना न अुन्होंने और न अुनके पात्रोंने सीखा। न्याय और अधिकार प्राप्तिके लिअे 'निवेदन-आवेदन अुन्होंने नहीं सीखा'—वरन् अुनके लिअे आवाज अुठाना और असहयोगके लिअे मैदानमें निकल आना प्रेमचंदकी महान् महत्ता है।

(२)

यह बड़ी विचित्र बात है कि चीनके लु-हुनमें प्रेमचंदके साहित्यिक अेवं निजी जीवनकी अनेक झलकें प्राप्त होती हैं। दोनोंके जन्म संवत्, लेखन, भाषा, शैली,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय और कथनोपकथन समानान्तर रेखाओंकी तरह चलते हैं।

जिस प्रकार हिन्दीमें जासूसी और अैयारीके राजत्त्व-कालमें अुपन्यास सम्राटका आविर्भाव हुआ, अुसी प्रकार चीनीके रोमांटिक, साहसवादी-कालमें लु-हुनका आगमन हुआ।

लु-हुनको 'चीनी-साहित्यका पिता' कहा जाता है। १९१८ में अुनके कथा-संग्रहोंने पर्याप्त प्रसिद्धि पायी। अिनमें 'पागलकी डायरी' और 'कल' पठनीय हैं।

प्रेमचंदकी तरह लु-हुन भी 'किसान' लगते हैं। परन्तु व्यवहारमें बर्तावमें दोनों नवाब थे। चीनी सरलता और भारतीय भोलापन दोनोंमें है। जन्म और देहावसानकी तिथियाँ लगभग अेक हैं!

कथा-सम्राट लु-हुनका जन्म १८८१ में हुआ था। परिवारने आपको डॉक्टरी शिक्षा-प्राप्तिके लिअे जापान भेजा। जिस प्रकार १९२१ के असहयोग आन्दोलनसे प्रभावित प्रेमचंदने सरकारी नौकरीको धता बतायी, अुसी प्रकार लु-हुनने जापानी डॉक्टरी ज्ञानको 'अंतिम प्रणाम' किया। क्योंकि जापान, चीन विरोधी था और अनेक प्रकारके जुल्म गरीब चीनियोंपर ढा रहा था। चीन-सम्बन्धी अेक फिल्म देखकर लु-हुनकी आत्मा विद्रोह कर अुठी और वे स्वदेश लौट गये। यहाँ आकर धीरे-धीरे पीपिंग-विश्वविद्यालयमें आचार्य बन गये।

कर्मयोगी लु-हुनकी प्राणवान् कथाओंमें अुन सड़े-गले सामाजिक सिद्धान्तों और कुरीतियोंके विरुद्ध अविजित विद्रोह है, जिन्होंने महान चीनको छोटे-से जापानका गुलाम बना दिया था। लु-हुनकी शैलीमें प्रेमचन्दकी भाँति तीव्रतम व्यंग्य है। प्रेमचन्दके समान ही लु-हुन अपने पात्रोंके बीच रहे हैं। कल्पना और रंगीनी अुन्हें नहीं आती। अुनके अकाट्य-व्यंग्यका यह अुदाहरण देखिये—"आदमीके रूपमें आपका विकास तब हुआ, जब आपने कीटाणुओंका लम्बा रास्ता पार कर लिया। किंतु, आज भी आपमें कीटाणुपन जीवित है। अेक समय था जब आप वानर थे किंतु आज भी आपमें वानरत्व शेष है।"

जिस प्रकार महान् प्रेमचन्दने पाखंडी साधु, संतों, महन्तों, ठाकुरों, जमींदारों, नकली नेताओंकी पोल खोली है, अुसी प्रकार लु-हुनने चीनके अनैतिक, असामाजिक तत्त्वों और पाखण्डियोंसे जनताको सचेत किया है।

चीनी कृषक-जीवनके अत्यन्त मनोरम चित्र अुन्होंने खींचे है। अैसा लगता है, हम किसी भारतीय भू-भागका हाल पढ़ रहे हैं। पुलिस और कचहरीसे डरनेवाले लु-हुनके किसान पात्र ठीक वैसे ही हैं जैसे प्रेमचन्दने चित्रित किये हैं। यों भी, चीन और भारतमें अन्तर क्या? शताब्दियों तक दोनों गले मिलकर रहे हैं। हमने देखा है चीन और भारतके रहन-सहन, रीति-रिवाज, लोक-व्यवहार, अतिथि-सेवा पूर्णरूपेण पारिवारिक-बन्धुओं जैसे हैं। यहाँ तक कि दोनों देशोंमें प्रयुक्त गालियाँ भी अेक हैं।

प्रेमचन्दकी कला 'जीवनके लिअे' थी। क्योंकि अुनकी आत्माने यही देखा-जाना था और बापू भी यही चाहते थे—"जीवन-कला—सभी कलाओंसे, महत्तर है। जीवनसे परे जानेवाली कला किस कामकी?" अिस दृष्टिसे प्रेमचन्द क्रांतिकारी थे और लु-हुनसे बढ़कर थे। क्योंकि लु-हुनके कथनानुसार—"कला समाज-सुधारककी संगिनी है।" सुधारमें लु-हुनका विश्वास था, अिसलिअे वह अपने साहित्यमें भी सुधारक, अुपदेशक-रूपमें आता है। प्रेमचन्दमें यह बात नहीं—वे समझौता-पसंद नहीं थे, सुधारकोंको अुन्होंने अपमानित नहीं किया परंतु अुनकी छद्म-छायाका अुद्घाटन अवश्य किया है। प्रेमचन्दके सभी पात्र लड़ाका हैं—संघर्ष द्वारा अपना अधिकार पाते हैं। अिस दृष्टिकोणसे अुनका नाम गोर्कीकी पंक्तिमें आता है। लु-हुनसे अनेक प्रकारकी समानताअें होनेपर भी प्रेमचन्द अुनसे आगे हैं।

प्रेमचन्द साहित्यमें सत्य और शिवके समर्थक थे और जन-जीवन विहीन 'साहित्य' को 'राहित्य' मानते थे। जन-जागरण और सामाजिक-संचेतनामें अुनका अखंड विश्वास था। 'देवता' में अुन्हें विशेष दिलचस्पी नहीं थी। परन्तु मनुष्य देवत्व पा सकता है, वही देवता है; अिसमें अुन्होंने कभी-संदेह नहीं किया। सम्पूर्ण प्रतिगामिताके वे अकेले ही, कट्टर शत्रु थे। मनुष्य जातिकी सतत प्रगतिशील परम्पराओंका यह परम पालनहार कुछ दिन और जीया होता तो हिन्दी कथा-साहित्य संसारमें सर्वोपरि सिंहासन प्राप्त करता!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पागलोंका स्वर्ग 'घील'

: श्री महेन्द्र 'राजा', अेम. अे., सा. र. :

अेन्टवर्प प्रदेशके अन्य नगरोंकी अपेक्षा घील नगर हमें प्रथम दृष्टिमें ही अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। वहाँ अेक टाअुनहाल, फ्लमिश ढंगका बना हुआ अेक सुंदर चर्च (गिरजाघर) तथा अच्छी अेवं साफ सड़कें हैं जिनके दोनों ओर छोटी-छोटी झोपड़ियाँ और दुकानें हैं। घीलकी स्वच्छताको देखकर अैसा मालूम पड़ता है मानो स्वच्छता व सुघराअीका देवता वहाँ निवास करता है। वहाँकी आबादी भी बेल्जियन फ्लैण्डर्सके किसी अुत्तम कृषि क्षेत्रके समान ही मालूम पड़ती है—लम्बे, दुबले किसान और चुप्पी साधे हुअे गुलाब-से गालोंवाली पर काफी प्रसन्न व नम्र तथा किसी मेहमानको देखकर प्रसन्न होनेवाली और अुचित आदर सत्कार करनेवाली औरतें! हरअेक चीज अितनी स्वाभाविक दिखती है कि कोअी भी बाहरी व्यक्ति शायद ही यह जान सके कि अुसके बगलसे ही निकल जानेवाले व्यक्तिके नेत्र कुछ विचारशून्य-से हैं; दूसरेके हाव-भाव अेवं चेष्टाअें बड़ी ही आकर्षक हैं अेवं सड़कके लोग अुसे बड़े गौरसे घूर रहे हैं। फिर अिस देशमें पहले-पहल आनेवाला कोअी भी व्यक्ति कभी भी यह कल्पनातक न कर सकेगा कि यह नगर पागलोंके लिअे अेक अुपनिवेश है।

अभी कुछ समय पहलेतक संसारमें अिस प्रकारका कोअी भी अुपनिवेश नहीं था। यहाँकी परम्परागत कथाअें अितनी प्राचीन हैं कि अुनका मूल अुपाख्यानों-पौराणिक कथाओंमें है।

राजा, जिसने अपनी लड़कीसे विवाह करना चाहा!

कहा जाता है कि प्राचीन कालमें आयर्लेण्डके किसी राजाने, जब वह विधुर हुआ, अपनी नवयुवती लड़की डिम्फनासे विवाह करना चाहा। अिधर डिम्फना अीसाअी धर्मको माननेवाली थी; अतः वह अपने अेक शुभेच्छुककी सलाहसे केम्फाअिन प्रदेशको भाग गयी। राजा लड़कीको ढूँढने निकला। बेल्जियमसे गुजरते समय अुसने अपने यजमानोंको कुछ आयरिश सिक्के दिये। यजमानोंने जब वे सिक्के देखे तो अुन्होंने राजासे कहा कि अैसे सिक्के अुन्हें पड़ोसके राज्यमें रहनेवाली अेक नवयुवतीसे भी प्राप्त हुअे हैं। अुनकी बात सुनकर राजा अुस राज्यमें गया और अिस प्रकार अपनी लड़कीको खोज लिया। पर लड़की अुससे शादी करनेको तैयार न थी अतः अुसके बार-बार मना करनेपर अुसने अुसे मार डाला और अुस स्थानपर गड़वा दिया जहाँ बादमें घील बसाया गया। अुस समयसे लोग अुस मकबरेके पास आते हैं और अुस स्थानको तीर्थ समझते हुअे अपनी प्रार्थनाअें पढ़ते हैं। अैसा कहा जाता है व लोगोंका विश्वास भी है कि अुस मकबरेकी मध्यस्थता द्वारा कअी व्यक्तियोंका पागलपन दूर हुआ है व होता है!

सचाअी अिसमें जो भी हो, पर यह तो निश्चित ही है कि पागलपनसे ग्रस्त व्यक्ति मध्य-युगसे बराबर यहाँ आया करते हैं और यहाँके निवासी अपने मेहमानके समान अुनका आदर-सत्कार करते हैं तथा अुनके साथ नम्रता और सहानुभूतिका व्यवहार करते हैं। पहले तो पागलपनसे ग्रस्त व्यक्तियोंको चर्चमें ठहराया जाता था और जब चर्चमें स्थान खाली नहीं होता था तो यहाँके निवासी अुन्हें अपने घरोंमें ठहराते थे। और यही कारण है कि शताब्दियोंसे अुसके सम्पर्कमें आते रहनेके कारण यहाँके लोग अभ्यस्त हो गये हैं और १७ वीं शताब्दीके बादसे तो अलग-अलग परिवार अिस कार्यमें बहुत ही दिलचस्पी लेने लगे तथा सेन्ट डिम्फनाके पास अपनी बीमारीसे मुक्ति पानेके लिअे जानेवाले व्यक्तियोंको अपने ही परिवारका सदस्य समझने लगे हैं। आपको संसारमें अैसा कोअी दूसरा स्थान निश्चय ही कहीं नहीं मिलेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पागलोंका देश

१८५२ में बेल्जियम स्वास्थ्य-समितिने अिस अुपनिवेशको, जो कि अभीतक सेन्ट डिम्फनाके चर्चके केनन (अधिकारी) के आधीन था, अपने अधिकृत कर लिया। आजकल यह अुपनिवेश अेक मेडिकल डायरेक्टरके आधीन है तथा १२ व्यक्तियोंकी अेक समिति ('कमेटी आफ अिन्सपेक्शन') के द्वारा अिसका प्रबंध, संचालन होता है। अिस कमेटीमें अेन्टवर्प प्रदेशके गवर्नर, घीलके बर्गोमास्टर, पेरिश-प्रीस्ट तथा अन्य अैसे लोग हैं जो मरीजोंकी देखभालमें रुचि रखते हैं और अुनके अिलाजके समय अुनके द्रव्य अेवं सम्पत्तिका प्रबंध करते हैं।

यहाँ वृद्धत्व और तीव्र सनकके अतिरिक्त हर तरहके पागलपन-अुन्मादका अिलाज किया जाता है। सबसे पहले रोगियोंकी परीक्षा कर यह पता लगाया जाता है कि अुनकी बीमारीका अिलाज होने योग्य है अथवा नहीं। और जब अिस बातका निश्चय हो जाता है कि अुनकी बीमारीका यहाँ अिलाज हो सकेगा तब कमेटी द्वारा 'रजिस्टर्ड' किये गये कुछ परिवारोंमें रहनेका अवसर दिया जाता है। ये रजिस्टर्ड परिवार 'पोषक-परिवार' कहलाते हैं। करीब ४००० परिवारोंमेंसे १८६९ परिवार अिस 'सम्मान' के योग्य समझे गये हैं—'सम्मान' अिसलिअे कि घीलमें अपने घरमें किसी मानसिक रोगीका आना लोग अपने लिअे आदर व सम्मानकी बात समझते हैं। और "सम्मानित-परिवार" की योग्यताका प्रमाण-पत्र अुन परिवारोंको ही मिलता है जो परिवार कमेटीको अपनी अीमानदारी, सफाअी, नैतिकता अेवं अुच्च सामर्थ्यका विश्वास दिलाकर सन्तुष्ट करते हैं।

जब अिस बातका विचार होने लगता है कि मरीजको किस परिवारमें भेजा जावे, तब अिस समय रोगीकी रुचि, प्रवृत्ति, अेवं अिच्छाओंपर भी विशेष ध्यान दिया जाता है और फिर अिन्हीं बातोंके आधार-पर परिवारका चुनाव किया जाता है। जब परिवारका चुनाव हो चुकता है तब रोगीको अेक निश्चित सीमाके अन्दर आने-जानेकी सुविधा प्रदान की जाती है। अुस सीमाके अन्दर वह चाहे जब घूम-फिर सकता व आ जा सकता है। जिन रोगियोंके लिअे औषधियाँ आवश्यक समझी जाती हैं, अुन्हें औषधियाँ भी दी जाती हैं। शारीरिक रोगोंका अिलाज सर्वसाधन-सम्पन्न 'फोली क्लिनिक' में किया जाता है। अक्सर देखा गया है कि रोगसे मुक्त होनेके पश्चात भी लोग घीलमें ही रहनेकी अिच्छा व्यक्त करते हैं जैसा कि सन् १९३० में वाशिंगटनमें हुअी "अिन्टरनेशनल साअिजियेट्रिक काँग्रेस" में घीलके डा० सानोने कहा था—'यह कहा जा चुका है कि अैसे परिवारोंके साथ रहनेका अनेकों मरीजोंका प्रबंध किया जाता है जिन्हें अिन कार्योंकी शिक्षा दी गयी है व जिन्हें अिन बातोंका अनुभव है कि रोगियोंसे किस प्रकार बात की जाय व कैसा व्यवहार किया जाय? अब प्रयत्न यह किया जाता है कि जितनी जल्दी हो सके अुतनी जल्दी मानसिक रोगी अुसकी सीमासे मुक्त किया जाय। अधिकांश स्थान अैसे लोगोंसे भरे रहते हैं जिनका आधा अिलाज किया हुआ रहता है और फिर बादमें सामा-जिक साधनोंके अभावके कारण जिनका अिलाज पूर्णतः नहीं किया जा सकता। व्यावसायिक औषधि शास्त्रकी अुपयोगिताको लोग अब जान गये हैं। अब यह आवश्यक है कि अुसे निरीक्षित स्वतन्त्रताकी प्रचलित पद्धति द्वारा पूरा किया जाय। क्योंकि जिन रोगियोंकी मानसिक शक्ति अत्यन्त ही कम हो जाती है अुन्हें अपने नगरोंमें अुसे पुनः प्राप्त करनेकी सुविधाअें नहीं मिलतीं। घीलमें मानसिक दुर्बलताअें अपने आपको पूर्णावस्थामें लानेके साधन ढूँढ़ती रहती हैं और सफल भी होती हैं।"

बाह्य संसारकी चिन्ताओंसे मुक्त और अैसे व्यक्तियोंके सरल व स्वस्थ परिवारिक जीवनमें रहते हुअे (जो कि अिस बातके अनुभवी हैं कि मानसिक-रोगियोंके बीच कैसे रहा जाय) ये रोगी व्यक्ति सुखी और यहाँ तक कि बड़ा ही अुपयोगी जीवन बिता सकते हैं। जो व्यक्ति स्वस्थ हैं, वे घरोंमें या खेतोंमें हलका काम कर सकते हैं, पर कमेटी अुनपर अिस बातकी पूर्ण निगरानी रखती है कि वे किसी भी रूपमें गलत रास्ते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर नहीं जा रहे या अपनी शक्तिका दुरुपयोग अथवा आवश्यकतासे अधिक अुपयोग तो नहीं कर रहे हैं। और यही अेक कारण है कि किसी भी व्यक्तिको घीलमें शायद ही कोअी व्यक्ति दुखी, बीमार या मुर्दनी भरे हुअे चेहरेवाला दिखे जैसा कि अन्य मानसिक अस्पतालोंमें अक्सर देखा जाता है।

सन् १९४२ के प्राप्त आंकड़ोके अनुसार घीलमें २०८० वयस्क रोगी व्यक्ति थे जो 'सम्मानित' परिवारोंमें रह रहे थे। अिनमेंसे सिर्फ १८६ 'पेअींग गेस्ट' (अपना खर्च स्वयं देनेवाले) थे, जो मध्यम वर्गके परिवारोंमें रह रहे थे व जिनके लिअे निजी अिन्तजाम था और जो फंडके लिअे कमेटी द्वारा निर्धारित राशिका १८ प्रतिशत दिया करते थे। अन्य 'स्थितियोंमें पब्लिक अेसिस्टेन्स कमीशन' अुस धनकी पूर्ति करता है जो रोगीका परिवार अुसके लिअे खर्च करनेमें असमर्थ होता है। यह रकम कमेटीको दी जाती है जो वस्त्र, औषधि और अस्पतालके अिलाज आदिके खर्चकी जिम्मेदार होती है और यह कमेटी सम्मानित परिवारको साप्ताहिक पेन्शनके रूपमें अेक निश्चित रकम देती है। अेक विशेष नियम द्वारा रोगियोंको अिस बातके लिअे बाध्य किया जाता है कि जबतक कमेटीकी रायमें वे पूर्ण स्वस्थ न हो जावें तबतक वे घीलमें ही रहें। अिस प्रकार प्रति वर्ष काफी तादादमें 'फ्री' रोगी जिनमें १६ वर्षसे नीचेके रोगी भी हैं। घीलमें अिस अद्वितीय ढंगके अिलाजसे लाभ अुठानेके लिअे आते हैं और बिना किसी प्रकारका खर्च किये पूर्ण स्वस्थ होकर अपने घर जाते हैं।

जब घीलका मेडिकल कमीशन किसी रोगीके सम्बन्धमें यह राय दे देता है कि वह पुनः अपना पूर्व जीवन प्राप्त कर चुका है तब सामान्यतः वह रोगी मुक्त कर दिया जाता है। कमेटी अुसे अपने घर जानेके लिअे-राह-खर्चके लिअे आवश्यक द्रव्य देती है और अुसे अैसे साधनोंसे सम्पन्न कर देती है जिससे कि वह अपने अिच्छित व्यवसायमें लग सके। सर्वप्रथम रोगमुक्त होनेके बाद, रोगीको तीन माहकी छुट्टी मिलती है और अिसी प्रकार बादमें तीन-तीन माह बढ़ते जाते हैं और अन्तमें अेक वर्ष बाद अुसे पूर्ण रूपसे अंतिम स्वतंत्रता प्राप्त होती है।

निर्वाह-व्यय बढ़ जानेके कारण और अुस भयानक युद्धके कारण जो वहाँ महायुद्धके बाद हुआ था तथा जिसके कारण अनेकों रोगी मर गये थे और क्षेत्रका काफी नुकसान हुआ था, घील अब वर्तमानमें विषम समस्याओंसे ग्रस्त है। और अब वहांके भावी नेताओं (नवयुवकों) को अिस बातके लिअे राजी करना भी कठिन हो गया है कि वे घीलके लोगों-अपने पूर्व पुरुषोंके परम्परागत कार्यको अपनावे व अपने परिवारोंमें ही रहें। फिर भी जो पद्धति अेवं परम्परा वहाँ सदियोंसे चली आ रही है, वह अभी भी यहाँ पहलेके ही समान है और बेलिजयम व नीदरलेंडमें अैसे हजारों स्त्री-पुरुष हैं जो आज अपनी व्याधियोंसे मुक्ति पाकर सुखी जीवन व्यतीत कर रहे हैं और अपने व्यवसायोंमें लगे हुअे हैं तथा जिन्हें घीलके 'सम्मानित परिवारोंकी' सरल व निःस्वार्थ सेवा द्वारा नवजीवन प्राप्त हुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कन्नड़ साहित्यकी विचारधारा-२

आरंभ (वीरगाथा) काल

: श्री गुरुनाथ जोशी :

भारतीय भाषाओंके साहित्यके अध्ययनसे विदित होता है कि कवियोंने अपने कालमें अपने प्रदेशमें जो राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक परिस्थिति थी और जन-जीवन था अुसीका चित्रण अपनी-अपनी रचनाओंमें किया है। वीरगाथा कालमें, करीब-करीब सभी प्रतिनिधि कवियोंने, यद्यपि भिन्न-भिन्न प्रांतोंमें वीरगाथा कालकी अवधिमें थोड़ा-बहुत अन्तर पाया जाता है, रामायण, महाभारतकी कथाको आधार बनाकर, अपने आश्रयदाता राजाओंको भीम और अर्जुन बनाकर काव्योंकी रचना की है और अपने प्रिय आश्रयदाता नरेशकी कहानी लिखी है तथा अुनके द्वारा तत्कालीन जनताके जीवनका चित्रण करके वीर रसकी धारा बहायी है और साथ ही साथ अपनी अन्य प्रकारकी रचनाओंसे जनताके जीवनको अुच्चतर बनानेकी चेष्टा की है। क्योंकि वीरगाथा कालमें भारतके बहुतेरे भागोंमें युद्ध हुआ करते थे और अुनका असर विशेषरूपसे जनतापर पड़ता था। डा. जोन्स अेम्. डी. ने अेक जगह कहा है जिसका सार यों है — अबतक यही विदित हुआ है कि युद्ध शायद मानवीय क्रियाशक्तिको सब दृष्टिसे चाहे वह बुरा हो चाहे अच्छा, खूब प्रेरक अुत्तेजना देता है। वह तो जीवनकी अत्युच्च अुत्तेजनाका, शक्तिका संक्षिप्त रूप है। वह तो आदमीके अन्दरकी सभी शक्तियोंका अुद्घाटन करता है और आदमी जहाँ तक जा सकता है वहाँ तक—अत्युच्च शिखर तक और अत्यन्त नीचे गहराअी तक—ले जाता है। पवित्र अिमारतोंको गिराते हुअे, मूल्योंमें पुनः परिवर्तन करते हुअे जीवनकी सत्यता—वास्तविकताके बिलकुल पास पहुँचाता है। अन्तमें वह आदमीको यह खोजने लगा देता है कि हर अेक मानवको किस चीजकी परवाह करना बेहतर है और वे अैसी चीजें कौनसी हैं जिनके लिअे वह अपने जीवनको खतरेमें डालनेके लिअे तैयार हो जावे। वह तो समूचे जीवनको गुरुतर, वैभवतर, पूर्णतर, बलत्तर, कभी-कभी अुदात्त-तर बनाता है। [War furnishes perhaps the most potent stimulus to human activity in all its aspects good and bad, that has yet been discovered, It is a miniature of life in general at its sharpest pitch of intensity. It reveals all the potentialities of man and carries humanity to the uttermost confines of the attainable; to the loftiest heights as well as to the loWest depths. It brings man a little closer to the realities of existance, destroying shrines and remoulding values. It forces him to discover What are the things that really matter in the end, What are the things for Which he is willing to risk his life itself. It can make life as a Whole greater, richer, fuller, stronger and sometimes nobler,]

कन्नड़ साहित्यमें वीरगाथा काल ५ वीं सदीसे १२ वीं सदी तक यद्यपि माना गया है तथापि वीररस-प्रधान रचनाअें १७ वीं सदी तकमें मिलती हैं। हिन्दीमें वीरगाथा काल १० वीं सदीसे १४ वीं सदी तक माना जाता है। गुजराती और अुड़िया साहित्यमें भी, करीब अिसी प्रकार काल विभाग किया जा सकता है। असमिया साहित्यमें भी यह काल वीरगाथा काल माना जा सकता है। अिस अवधिमें वीररस प्रधान रचनाअें अिन साहित्योंमें हुअी हैं। आसामी साहित्यकी समीक्षा करते हुअे श्री. विरिंचिकुमार बरुआने लिखा है कि १३ वीं सदीमें **हरिहर विप्रने** 'बब्रुवाहन युद्ध' का वर्णन किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है तो **कविरत्न सरस्वतीने** 'जयद्रथ वध' पर काव्य लिखा है जिनमें वीररसकी गंगा बही है। गुजराती साहित्यकी समालोचना करते हुअे दीवान बहादुर कृष्णलाल अेम्. झवेरीजीने यह लिखा है कि गुजरातीमें कुछ भाटोंने अपने राजाके गीत गाये हैं और श्री. पांडुरंग ग. देशपाण्डेने 'गुजराती भाषा और साहित्य' के प्राचीन युगका परिचय कराते हुअे लिखा है कि हरिभक्त महेता नरसिंहके पहलेकी सदीमें–१३ वीं सदीमें––**श्रीधर व्यासने** 'रणमल्ल छंद' की रचना की है और अुसके जैसा वीररसका खण्डकाव्य गुजरातीमें दूसरा नहीं है। अिस काव्यमें मुस्लिम आक्रमण-कारियोंका सामना करके अुनको परेशान करनेवाले ओडरके राठोर रणमल्लकी पराक्रम-गाथा वर्णित है। अुड़िया साहित्यका अितिहास लिखते हुअे राजबहादुर जी. सी. प्रहराजने लिखा है कि करीब १० वीं सदीसे १५ वीं सदीके दरम्यानमें 'राजा बलभद्र' की प्रेम कहानी लिखी गयी। किंतु बंगला और मराठी साहित्यमें अेवं काश्मीरी साहित्यमें क्रमशः अिस कालमें विशेष रूपसे कीर्तन, भक्ति-गीत, आध्यात्मवादी-अनुभूति साहित्यका निर्माण हुआ। पर बंगलामें १३९९ में **कृत्तिवास ओझा** कविने 'रामायण' लिखी, अैसा श्री. सुनीतिकुमार चटर्जीने बंगला साहित्यपर अपना विचार प्रकट किया है। श्री. आर. अेस्. जोगजीने मराठी साहित्यकी झांकी कराते हुअे लिखा है कि १३ वीं सदीमें भक्तिपर साहित्यका निर्माण हुआ। मगर शिवाजी महाराजके कालमें 'शाहीर गीत' के नामसे वीररसके साहित्यका निर्माण हुआ है। श्री. जे. अेल्. कौलजीके मतानुसार काश्मीरी भाषामें १४ वीं सदीमें अनुभूति साहित्यका निर्माण हुआ। हिन्दीमें जैसे रासोंकी रचनाअें हुअीं जो वीररससे ओत-प्रोत हैं, युद्ध और प्रसंगोंसे युक्त अेवं शृंगार-रससे मिश्रित हैं, अुसी प्रकार कर्नाटकमें कन्नड़ साहित्यमें वीरगाथा कालमें जो साहित्य निर्माण हुआ अुसकी समालोचना करनेका प्रयत्न यहाँ किया जाता है :––

५ वीं सदीसे १६ वीं सदीके अंत तक कदंब, राष्ट्रकूट, चालुक्य, गंग, होअीसळ और विजयनगरके राजाओंने कअी लड़ाअियाँ लड़ीं। अुन्होंने साम्राज्य भी स्थापित किये। कअी वीर पुरुष हुअे और कअी वीरांगनाअें भी चमक गयीं। किंतु अुनमेंसे किसी अेक अैतिहासिक व्यक्तिको काव्य-वस्तु बनाकर वीररससे लबालब भरी रचना नहीं हुअी। परंतु संस्कृतमें ९ वीं सदीमें चालुक्य वंशीय राजा विक्रमादित्यकी जीवनी **बिल्हण** कविके द्वारा संस्कृतमें लिखी गयी जो 'विक्रमांकदेव चरित' के नामसे प्रसिद्ध है। चालुक्य वंशीय राजा **सोमेश्वर द्वितीय** ने संस्कृतमें 'अभि-लिषितार्थ चिंतामणि' नामक ग्रंथ लिखा गया; अुसमें भी वीररसका प्रवाह काफी मात्रामें नहीं नजर आता। पर कन्नड़में यद्यपि वीरगाथा काल ५ वीं सदीसे १२ वीं सदी तक माना जाता है तथापि हिन्दीकी तरह १० वीं सदीसे काव्योंकी रचनाअें होने लगीं, जिनमें कुछ थोड़ी-बहुत मात्रामें वीररसकी धारा नजर अवश्य आती है।

पंप (अी. स. ९४१) ही कन्नड़का अेक प्रकारसे आदि कवि (प्रथम कवि) माना जाता है, क्योंकि अुसके पूर्वमें कन्नड़में काव्योंकी रचनाअें हुअी थीं, पर वे अब तक हमें अुपलब्ध नहीं है। पंप केवल कवि ही नहीं था, वीर योद्धा भी था। वह राष्ट्रकूट राजा अरिकेसरीके आश्रयमें था। अपने आश्रयदाता राजाकी प्रार्थनाके अनुसार कन्नड़में महाभारत लिखा और अुसका नामकरण किया 'विक्रमार्जुन विजय'। अुसमें अरिकेसरीकी तुलना अर्जुनसे करके अपने राजाके परा-क्रमका वर्णन किया है, पर कविका अुद्देश अर्जुनकी शूर-ताका वर्णन करना था। कर्णादिकी शूरताका भी वर्णन अच्छे ढंगसे किया गया है। अिसमें वीररसका अच्छा पाक मिलता है।

पंपकी परंपरामें **पोन्नने** (९५०) रामकी कथाको लेकर 'भुवनैक रामाभ्युदय' लिखा जिसमें वीर रसकी कुछ झांकी मिलती है।

पंपके बाद **रन्न** (९९३) ही कन्नड़का प्रधान कवि माना जाता है। अिसकी रचनाओंमें 'साहस भीम विजय' ही सर्वश्रेष्ठ रचना है जो 'गदायुद्ध' के नामसे प्रसिद्ध है। पंपकी रचना महाभारत पढ़नेके बाद रन्नको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रचनाकी अिच्छा हुअी और अुसने भीमके साहस वर्णन चुनकर काव्य लिखा, अुसमें सम्पूर्ण महाभारतका सार अैसा भर दिया है कि पढ़ते ही तबियत खुश हो जाती है।

नागचद्र या **अभिनव पंप**ने (११०५) रामायण लिखी जो 'पंप रामायण' के नामसे ही प्रसिद्ध है। अिसमें दुर्गोंका वर्णन बहुत ही सुन्दर ढंगसे किया गया है और वीरताका कुछ सुन्दर चित्रण हुआ है। अिस रामायणकी विशेषता यह है कि न दशरथके पुत्र कामेष्टी-यज्ञका जिक्र है, न वशिष्ट, वाल्मीकि, विश्वामित्रादिका अुल्लेख है। हनुमान विमानमें आरूढ होकर समुद्र पार करता है। रावणको मारनेवाला लक्ष्मण है, न कि राम। अिसमें रावणका चरित्र-चित्रण अत्यंत सुन्दर हुआ है।

रुद्रभट्टने (११८०) 'जगन्नाथविजय' और अग्गळने (११८९) 'चन्द्रप्रभ पुराण' लिखा। रुद्रभट्टने जगन्नाथ-विजयमें त्रिनेत्र नामक वीरबल्लाळके मंत्री चन्द्रमौळीकी प्रशंसा करते समय और अग्गळने अपनी रचनामें विपुलनगरके जयवर्मा नरेशकी लड़की शशिप्रभा-पर मोहित होकर, महेन्द्र नामक राजा विपुलनगरपर जब चढ़ाअी करता है तबकी लड़ाअीका वर्णन करते समय वीररसकी तेज धारा बहा दी है।

जन्न कन्नड़का अेक प्रसिद्ध कवि है। वह होअिसळ राजा गिरिदुर्गमल्लका जो वीरबल्लाळके नामसे प्रसिद्ध हुआ है और अुसके पुत्र नरसिंहका दरबारी कवि था और अुसे 'कवि चक्रवर्ती' अुपाधि मिली थी। वह भी पंपकी तरह केवल कवि ही नहीं था, योद्धा भी था। अुसने 'अनन्तनाथ पुराण' (१२२०) में वसुषेणकी चढ़ाअीका अैसा सुन्दर और वीररसका चित्रण खींचा है कि पढ़नेसे बाहें फड़कने लगती हैं।

गुणवर्माने (१२३०) 'पुष्पदंत पुराण' में दुर्गके अन्दरवालोंकी युद्धकी तैयारीका और शूरताका वर्णन अच्छे ढंगसे किया है। **कुमारव्यास**ने (१४३०) 'महाभारत' की रचना की। अिसमें वीररसकी धारा प्रचंड वेगसे बहती दिखायी पड़ती है।

चौंडरसने (१३००) 'अभिनव दशकुमार चरित्र' में वीररसका खासा अच्छा वर्णन किया है।

हिन्दीके अनुसार वीरगाथाकाल मानकर देखा जाय तो कन्नड़में वीररस प्रधान रचनाअें अूपर दर्शाये अनुसार मिलती हैं। लेकिन कन्नडमें वीरगाथा कालकी परंपरा १७ वीं सदी तकमें भी गोचर होती है। अुसका भी अुल्लेख यहीं कर देना अनुचित न होगा।

कर्नाटकके अेक विख्यात कवि, लेखक, कहानीकार और अुपन्यासकार श्री. बेटगेरी कृष्णशर्माजी अपनी अमूल्य रचना 'कर्नाटकका जनजीवन' में **तृतीय मंग-रस** को १५ वीं सदीका प्रतिनिधि कवि मानते हुअे लिखते हैं कि **मंगरस**ने (१५०९) 'सम्युक्त कौमुदी' में दुर्गयुद्धका वर्णन अच्छी तरह किया है। वारणासी राजधानीमें जितशत्रु नामक राजा राज करता था। अुसकी अेक सुन्दर लड़की थी। चक्रकोटापुरके राजा भगदत्तने अुसे अपने साथ व्याहनेके लिअे माँगा तो 'जितशत्रु'ने अिनकार कर दिया। भगदत्त वारणासीपर चढ़ आया और घमासान लड़ाअी हुअी। यह कहानी पृथ्वीराजकी कहानीसे कुछ मिलती-जुलती-सी है।

नंजुंड कविने (१५२५) विजयनगर साम्राज्यके समयके कुमारराम नामक अेक अैतिहासिक व्यक्तिपर अेक सुन्दर काव्य लिखा है जो 'कुमाररामकी कहानी'से प्रसिद्ध है। यह कुमारराम 'कर्नाट देशाधीश्वर कंप नृपतिका कुमार' था। कुमाररामकी तुर्कोंसे जो लड़ाअी हुअी अुसका सुन्दर वर्णन अुक्त काव्यमें पाया जाता है।

विरुपाक्ष पंडितने (१५८५) तो अपने 'चन्न बसव पुराण' में त्रिपुरके किलेकी लड़ाअीमें देवताओं और राक्षसोंकी शूरताका वर्णन किया है और लिखा है कि यह लड़ाअी आकाशमें हुअी और दोनों पक्ष-वालोंने विमानोंमें बैठकर युद्ध किया था।

गोविंद वैद्य नामक चारण कविने (१६४८) 'कंठीरव नरसराज विजय' नामक काव्य लिखा जो हिन्दीके खुमान रासो, बीसलदेव रासो और पृथ्वीराज रासोके समान और गुजरातीके 'रणमल्लछंद'के समान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। मैसूरका राजवंश 'ओड़ेयर' राजवंश कहलाता है। अुसी वंशमें कंठीरव नरसराज बड़े प्रतापी राजा हुअे। अुनकी राजधानी श्रीरंगपट्टण थी। अुन्होंने १६३८से १६५९ तक राज किया। वे अपनी 'विजय नारसिंह' नामक तलवारके बलसे मैसूर राज्यकी सीमा बढ़ा रहे थे। अिक्केरी, तंजाअूर, मधुराके राजा भयभीत हो गये और बीजापूरके बादशाह भी डरने लगे। अिसलिअे रणदुल्ला खान नामक सेनापतिके साथ बादशाह श्रीरंगपट्टणपर चढ़ आया और वह लड़ाअीमें हारकर अपने सिपहसालारके साथ जान लेकर भाग गया और अुसके बाद आनेवाले खानखान सेनापतिकी भी वही दशा हुअी। फिर मुस्तफा खानने हमला किया। अुसकी भी बुरी हालत हुअी, वह भी किसी तरह जान बचाकर भाग गया। कंठीरव नरसराजका अेक शूर सेनापति था- नंजराज। अुसका रणकौशल भी प्रशंसनीय रहा। कंठीरव नरसराजको 'रणधीर' अुपाधि मिली थी। अिसी राजाके दरबारमें गोविंद वैद्य कवि था। अुसने अपनी आँखोंसे देखी लड़ाअियोंका वर्णन अैसा किया है कि पाठकोंका हृदय वीरतासे भर जाता है और बाहें फड़कने लगती हैं। क्योंकि वीररसका परिपाक बहुत ही अच्छा हुआ है।

गंग कविने (१६५०) भी कुमार रामकी कहानीके आधारपर 'कुमटि रामकी कथा' लिखी है।

वीरगाथा कालके अिन कवियोंने अुपरोक्त रचनाओंके अतिरिक्त अन्य ग्रंथ भी लिखे हैं। अिनके अलावा और भी कअी कवि हुअे जिन्होंने अन्य प्रकारके साहित्यका निर्माण किया है और वे भी कन्नड़ साहित्याकाशके चमकते हुअे तारे हैं। अुपरोक्त कवियोंके अतिरिक्त कवियोंमें प्रधान कवि **चाअुंडराय**ने 'चाअुंडरायपुराण', **नागवर्मा**ने 'छंदोंबुधि' और 'कादंबरी', **नेमिचंद्र**ने 'लीलावति प्रबंध', **अन्डय्या**ने 'कब्बिगर काव—मन्मथ विजय', **जयबंधु**ने 'सूपशास्त्र', **चंडराज**ाने 'मदनतिलक' ग्रंथोंकी रचना की। अिस कालके बहुतेरे कवि जैन धर्मावलंबी थे। नागभट्ट, नागवर्माचार्य, दिवाकर, कर्पूरस, नारायण भट्ट, कमलादित्य आदि ब्राह्मण कवि भी अिस कालमें हुअे हैं।

अिस समयका साहित्य केवल राजस्थानमें ही विशेष रूपसे विद्यमान था और वह आम जनता तक नहीं पहुँच पाया था। ग्रंथकारों, कवियोंमें कुछ स्वयं राजा थे, कुछ सेनापति और कुछ मंत्री थे। बाकी अुनसे पोषित, आश्रित कवि थे। कअी ग्रंथ संस्कृतके आधारपर लिखित हैं, तो कुछ संस्कृतके अनुवाद हैं और कुछ मौलिक। कहीं-कहीं कन्नड़ छंदसका भी प्रयोग हुआ है। भाषा संस्कृत मिश्रित कन्नड़ है। चंपू काव्य ही अधिक मात्रामें मिलते हैं। अिस प्रकार अिस समयका कन्नड़ साहित्य भाषा, वस्तु, छंदस सब तरहसे संस्कृतका अनुगामी बना है। परंतु, १२ वीं सदीमें कन्नड़ साहित्य की धाराने अपना रुख बदल दिया है और अुसमें अेक नवीनता और कन्नड़पन विशेष आया है। वह साहित्य कन्नड़में वीरशैव साहित्यके नामसे प्रसिद्ध हुआ है। अिस वीरशैव साहित्यकी धारा यद्यपि १९ वीं सदीतक बहती आयी है तथापि अिसकी प्रखर तेजोमय धाराकी सीमा १६ वीं या १७ वीं सदी तक, भक्तिकालकी सीमातक मानी जा सकती है और अिसी वीरशैव साहित्यने भक्तिकालकी नींव डाली, अैसा कहा जाय तो औचित्यका अुल्लंघन न होगा।

[वीरशैव साहित्यका परिचय भी यथासंभव "राष्ट्रभारती" के अगले अंकमें दिया जायगा।]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रिय मन्दिरकी राह न बदले !

: श्रीमती विद्यावती मिश्र :

अिस जगका कण-कण बदले पर, प्रिय मंदिरकी राह न बदले !
पूजाका अुत्साह न बदले !!

अंकित हुअी यहीं पर मेरे
अंतरके भावोंकी भाषा,
अिसे स्वाति-सा समझ, तृषाको
तुष्टि समझता चातक प्यासा,
जीवनका कण-कण बदले पर दृगका पुण्य प्रवाह न बदले !
प्रिय मंदिरकी राह न बदले !!

यह अर्चनके फूल, सुकोमल
अक्षत, शुचि वंदन अभिनंदन,
श्वासोंकी रोली आँसूकी अंजलि
प्राणोंका आमंत्रण.....,
मन्दिरका कण-कण बदले पर, मेरे प्रभुकी चाह न बदले !
प्रिय मन्दिरकी राह न बदले !!

वहाँ पहुँचनेसे प्रिय मुझको
प्रतिदिन चलनेकी तैयारी,
और मधुर आशा आयेगी
अेक दिवस मेरी भी बारी,
मधुर मिलनका कण-कण बदले, किन्तु विरहकी आह न बदले !
प्रिय मंदिरकी राह न बदले !!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दीका निर्माण तथा परिष्कार

: श्री किशोरीदास वाजपेयी, साहित्याचार्य :

सन् १८८० के अनन्तर हमारे राष्ट्रने अुषःकालकी लालिमा देखी। राष्ट्रीय जागरणके सब लक्षण प्रकट हुअे। राजनैतिक-स्वतंत्रता, समाज-सुधार, राष्ट्रभाषाका निर्माण तथा परिष्कार और सांस्कृतिक अभ्युत्थानके विविध कार्यक्रमोंका अुपक्रम हुआ; या वैसे अुपक्रमोंकी भूमिका बँधी। कांग्रेसका जन्म हुआ; लोकमान्य तिलकका अुदय हुआ; भारतेन्दु हरिश्चंद्रके दर्शन हुअे और पं. दीनदयाल शर्मा आदिक अुद्योगसे 'भारतधर्म-महामण्डल' की स्थापना हुअी। हिन्दुओंके सभी वर्ग और सभी मत-सम्प्रदाय अेक जगह अिकट्ठे करनेके लिअे और फिर महान् हिन्दू जातिका अजेय संगठन करनेके लिअे आरम्भमें 'महामण्डल' बना था, जो आगे चलकर सनातन धर्म मात्रकी अेक संस्थाके रूपमें रह गया और अुसके आगे तो और भी सिकुड़ गया! राजनैतिक जागरणका विवेचन मैंने अन्यत्र किया है और हिन्दी राष्ट्रभाषा कैसे बनी, अिसका भी अितिहास लिखा जा चुका है। समाज-सुधारकी अधूरी कहानी लिखनेको बाकी है। पर यहाँ तो थोड़ेमें हिन्दी परिष्कारकी ही चर्चा की जाअेगी।

सन् १८८५—१९००

हिन्दी-परिष्कारका यह प्रथम प्रयास था, जो सन् १८८५ से १९०० तक हुआ। अिससे पहले पं. लल्लूलालजीने, राजा लक्ष्मणसिंह चौहानने तथा भारतेन्दु हरिश्चन्द्रने हिन्दीका स्वरूप सामने रख दिया था। अुसीका परिष्कार अब प्रारम्भ था। 'अुस्से' 'अुस्को' आदि प्रयोग तब तक देखनेमें आते थे। 'को' आदि विभक्तियोंका प्रयोग भी ठीक-ठिकाने न होता था। भाषा लुंजपुंज-सी दिखायी देती थी। अुसमें गति न थी! मुहावरे आदि निश्चित न थे। पद-प्रयोग व्यवस्थित न था!

यह सब ठीक करनेके लिअे अुस समय पं. महावीर-प्रसाद द्विवेदी, बाबू बालमुकुन्द गुप्त तथा पं. लज्जाराम मेहता आदि महारथी मैदानमें अुतरे। द्विवेदीजीने लाला सीताराम बी. अे. की कुछ पुस्तकोंमें भाषा-सम्बन्धी सुधार किये; अुन पुस्तकोंकी आलोचना की, जिससे भाषा-शुद्धिकी ओर लोगोंका ध्यान गया। बाबू बालमुकुन्द गुप्त भी भाषा-परिष्कारके काममें जुट गये। सन् १८८५ में राजा रामपालसिंह महोदयने अपने गाँव ('कालाकाँकर' अवध) से हिन्दीका प्रथम दैनिक 'हिन्दोस्थान' निकाला। अिसके सम्पादक थे मालवीयजी। बाबू बालमुकुन्द गुप्त और अुनके हिन्दी-गुरु पं. प्रतापनारायण मिश्र तथा पं. अमृतलाल चक्रवर्ती आदि विद्वान् सहकारी सम्पादक थे। द्विवेदीजी जैसे धुरन्धर विद्वान् अिस पत्रके प्रतिष्ठित लेखकोंमें थे। राजनीति, समाज-सुधार आदिके साथ-साथ भाषा परिष्कारका काम भी यहींसे प्रारम्भ हुआ। जब मालवीयजी वकालत पास करनेके लिअे प्रयाग चले गये, तो कुछ दिन बाद गुप्तजी भी अिस पत्रसे अलग हो गये। चक्रवर्तीजी कलकत्ते 'हिन्दी-बंगवासी' के प्रधान सम्पादक होकर चले गये। अुन दिनों 'हिन्दी-बंगवासी' हिन्दी-साप्ताहिकोंमें सर्व-श्रेष्ठ समझा जाता था। चक्रवर्तीजीने फिर गुप्तजीको भी अपने पास बुला लिया था। अुस समय हिन्दीका स्वरूप-निर्माण भी हो रहा था और परिष्कार भी चल रहा था। पं. प्रभुदयाल पांडे भी 'हिन्दी बंगवासी' में चले आये थे। पहले आप भी 'हिन्दोस्थान' में थे। चक्रवर्तीजी लिखते हैं:—

"मानो सम्पूर्ण हिन्दी भाषाके प्रतिनिधि-स्वरूप हम तीनों 'हिन्दी-बंगवासी' का सम्पादन करने लगे। 'हिन्दी-बंगवासी' में पूर्व भाषाकी काया-पलट हो गयी थी। अुस समयके व्यक्तियोंको भाषाका प्रतिनिधि अिसलिअे मानना पड़ता है कि तब तक हिन्दीके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक साहित्यका साँचा प्रायः अुन दिनोंके लेखकोंके मस्तिष्कमें ही था।

'हिन्दी-बंगवासी'का आर्डर देनेके दिनको,हम तीनों साथ रहकर, 'कतलकी रात' बनाते थे। भाषा-निर्णयके लिअे हमारी लड़ाअी अैसी गहरी होती थी कि किसी-किसी दिन सारी रात बीत जाती थी ! किस प्रान्तके किस शब्दको कहाँ जोड़नेसे भाषाका समुचित लालित्य होगा, अिसपर बड़ी जोरदार बहस होती थी। हम किसी भी प्रान्तके भावद्योतक शब्दका अनादर नहीं करते थे। केवल शब्द ही नहीं, नाना प्रान्तोंके भावपूर्ण मुहावरे भी हम भाषा (हिन्दी) में समाविष्ट कर लेते थे। अिसके अुपरान्त बंगला, अंग्रेजी, संस्कृत और फारसीके भी कितने ही मुहावरोंका रुचिर अनुवाद लगातार बरतते-बरतते आधुनिक हिन्दी साहित्यके वे अविच्छिन्न अंग बन गये।

आजकलके हिन्दी-लेखकोंको हमारी अुन चोरियों और डाकेजनियोंका पता तक नहीं और अुन सबको खालिस हिन्दी जानकर अब बेधड़क अपने काममें ला रहे हैं। यदि कोअी नीर-क्षीर परीक्षा-निपुण कभी भाषाके पूर्व-पश्चात् रूपोंको जाँचनेका कष्ट अुठाये तो अिससे लोग जान सकेंगे कि 'हिन्दी-बंगवासी' में आधुनिक साहित्य (भाषा?) का रूप ढालनेके लिअे क्या-क्या किया गया था। पं. बदरीनारायण चौधरी 'हिन्दी-बंगवासी' को 'भाषा गढ़नेका टकसाल' बतलाते थे।"

यह बात सन् १८८८ के पूर्व की है। १८८८ में गुप्तजी कलकत्तेके 'भारत-मित्र' में प्रधान सम्पादक होकर गये। भाषा-परिष्कारके सम्बन्धमें आपका अनुष्ठान आगे बढ़ा। द्विवेदीजी भी 'भारत-मित्र' में लिखते थे। वे 'सरस्वती' के सम्पादक तो सन् १९०३ में हुअे, जब कि यह अनुष्ठान अेक महान-यज्ञके रूपमें प्रगट हुआ। अुस समय अेक दूसरेकी भाषा-सम्बन्धी त्रुटियाँ दिखानेमें कोअी कसर नहीं रखी जाती थी। अपनी गलती आपको मालूम नहीं होती, जबतक कोअी बतलाये नहीं। बहुत सावधानी बरती जाती थी। तब भाषाका निखार हो सका। अेक-अेक शब्दपर शास्त्रार्थ चल पड़ता था। गुप्तजीने अेक बार 'भारत-मित्र' में कहीं 'शेष' शब्दका प्रयोग 'अन्त' के अर्थमें कर दिया था। 'अन्तिम' के अर्थमें यह शब्द चलता है। 'श्री वेंकटेश्वर समाचार' के सम्पादक पं. लज्जाराम मेहताने अिसे पकड़ लिया और फिर अिसपर खूब सागर-मन्थन हुआ। वैसा ही शास्त्रार्थ चला था, जैसा कि आगे 'अनस्थिरता' पर चला। अिससे समझा जा सकता है कि कैसे-कैसे प्रयत्न हिन्दीके रूप निर्माण तथा परिष्कारके लिअे हुअे हैं।

१९०१ से १९२०

यह दूसरा युग है हिन्दी-परिष्कारका। अिस समय आचार्य द्विवेदीने अकेले ही रहा-बचा सब काम पूरा किया। अिस समय तक ('हिन्दी-बंगवासी' तथा 'भारत-मित्र' में भी) 'ष्टेशन' 'ष्टाफ' 'ष्टोर' 'लण्डन' 'अिंगलैण्ड' जैसे प्रयोग चालू थे और बहु-वचनमें भी 'वह'–'यह' लिखे जाते थे। अिस तरहकी सभी गलतियाँ द्विवेदीजीने ठीक कीं और हिन्दी अपने विशुद्ध निखरे हुअे रूपमें प्रकट हुअी।

१९२१ से १९५२

आचार्य द्विवेदी जब साहित्य-क्षेत्रसे हट गये और अेकान्त वास करने लगे, तब फिर गदर मचा ! १९३० तक तो अैसी धमा-चौकड़ी मची कि मत पूछो ! अिस समय अेक अैसे व्यक्तिने कलम अुठायी, जिसका नाम लेनेकी आवश्यकता नहीं–हिन्दीके साहित्यकार अुसका नाम लेना ठीक नहीं समझते हैं ! अुसने पत्र-पत्रिकाओंमें शब्द-शुद्धि तथा भाषा-परिष्कारपर लेख लिखना शुरू किया। आचार्य द्विवेदीने अिस कामकी प्रशंसा की, आशीर्वाद दिया। तब अेक पुस्तक अिस व्यक्तिने लिखकर प्रकाशित करायी, छात्रोंके लिअे। अिसमें शतशः प्रचलित गलत शब्द-प्रयोगपर विचार किया गया। फल यह हुआ कि विकृति दूर हुअी और भाषामें पुनः निर्मलता आयी।

परन्तु ठीक अिसी समय काशीके कुछ विद्वानोंने हिन्दीका अन्तिम संस्कार कर देनेकी अिच्छासे बैठा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुद्योग शुरू किया और (हिन्दीमें) 'राष्ट्रीय राजनीतिक' 'अपनी अिच्छानुसार' आदिको गलत बतलाकर 'राष्ट्रीय' 'राजनीतिय' 'अपने अिच्छानुसार' जैसे प्रयोगोंको शुद्ध बतलाकर चलन प्रारम्भ किया। बाबू रामचन्द्र वर्माने 'अच्छी हिन्दी' नामकी अेक पुस्तक ही लिख डाली! अिस काशी-प्रयत्नसे हिन्दी फिर भ्रष्ट होने लगी। अिसका प्रतिसंस्कार करनेके लिअे सन् १९४८ के लगभग पुनः अुद्योग हुआ और 'राष्ट्रभाषा-परिष्कार-परिषद' ने काम पूरा किया। वह सब बवंडर शान्त हुआ। बाबू रामचन्द्र वर्मा आदि विद्वानोंने जन्म-भर हिन्दीका ही काम किया है, अुनके प्रति हिन्दी-जगत कृतज्ञ है। परन्तु कुछ गड़बड़ी आ गयी थी। अुसे दूर कर दिया गया। अब हिन्दीका स्वरूप अेकदम स्थिर तथा व्यवस्थित है। अब सजावट कीजिये, भाषाको अलंकृत कीजिये। यह अलग बात है कि न समझनेवाले गलत भाषा लिखते हैं। यह तो रहेगा ही। परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि हिन्दीका स्वरूप-निर्णय अभी-तक नहीं हुआ है।

सो, लगभग अस्सी वर्ष हिन्दीके स्वरूप-निर्माण तथा परिष्कारमें लगे। बड़ी तपस्या करनी पड़ी है। अब वह पूर्ण है, सफल है।

"नाच"

: श्री गिरिधर गोपाल, अेम. अे. :

महल-मन्दिरोंकी नगरीसे
दूर चला आया हूँ
यहाँ
जहाँ प्रकृतिके आंचलमें
संसार दुधमुँहे बच्चेकी तरह
मुख छिपा लेता है
मेरे दुख खो गये हैं
कुछ सुख पा गया हूँ मैं।
प्रकृतिके आँचलसे
दूर चला आया हूँ
यहाँ
जहाँ धरतीकी सीमाअें
टूट गयी हैं
और आदमी
अेक विशाल नदकी बूँद बन गया है।
मेरे सुख खो गये हैं
कुछ शांति पा गया हूँ।
सीमा असीमाकी संधि रेखासे
दूर चला आया हूँ
यहाँ
जहाँ प्रेमकी अुँगलियाँ
पूजा फूल बन गयी हैं
मेरी शांति खो गयी है
और जो पा गया हूँ
अुसे शब्दोंमें कैसे बांधूँ
अेक भावना मात्र हो गया हूँ मैं
अब तो
जिसे रूप रंग प्राण आकार
कोअी दूसरा देता है।
अुसकी अिच्छानुसार ही
रूप रंग रखनेका
खिलने मुरझनेका
मेरा जी चाहता है
वह मेरा प्रीतम है न!
निरदयी!
देखूँ अब कौन-सा नाच नचाता है
जीमें आता है
वह बाँसुरी बजाता जाअे बजाता जाअे
मैं नाचता जाअूँ नाचता जाअूँ
और यह नाच कभी खतम न हो
सच!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी :

दवा-फ़रोश

: श्री ज़हूरबख्श :

मसजिदसे कुछ दूर फुटपाथपर अेक शख्स खड़ा हुआ था– गेहुँआ रंग, अूंचा-पूरा कद, लम्बी नुकीली काली चमकीली दाढ़ी, नाकपर मोटे फ्रेमका चश्मा और हरे साफेके नीचे दोनों तरफ झूलती हुअी नागिन-सी जुल्फें। अुसके पास ही अेक कुर्सी पड़ी थी, जिसपर पानीका गिलास मौजूद था। सड़कपर लोग चलते-फिरते नजर आ रहे थे। अेकाअेक अुस शख्सने अूँची आवाजमें कहना शुरू किया—

'मैं तुम्हें कभी नहीं बुलाअूँगा। तुम अिसी रास्ते पर चलते-फिरते रहोगे और मैं अिसी कुर्सीपर बैठा रहूँगा। मैं तुम्हारी तरफ नहीं देखूँगा। मुझे गरज भी क्या है, जो तुम्हारी तरफ नजर अुठाअूँ? काम तुम्हें मुझसे है या मुझे तुमसे? बीमार तुम हो या मैं? कुआँ क्यों प्यासेके पास जाअे— प्यासा कुअेंके पास क्यों न आये? लानत है अैसी जिन्दगीपर!...जी हाँ, मैं अुन दवा-फरोशों की तरह नहीं हूँ, जो शेर पढ़ते और मजमा अिकट्ठा करते हैं, जो गला फाड़-फाड़कर गाते हैं, जो गलेमें साँप लपेटते और डुगडुगीसे बन्दर नचाते हैं, जो पिटारोंसे साँप-बिच्छू और साँडे निकालते हैं, जो ताशके खेल दिखाकर तुम्हें अुल्लू बनाते हैं और फिर अपना मतलब गाँठते हैं।'

ये बातें सुनीं, तो राह-चलते लोग ठहरने लगे और मजमा धीरे-धीरे बढ़ने लगा। अुसने मजमेपर अेक चुभती-सी नजर डाली और अुसकी आवाज और भी अूंची हो गयी—

'मैं मदारी नहीं, साधु नहीं, सन्त नहीं; जो आशिक और माशूकके मिलनेकी तरकीब बताअूँ, बिच्छूके काटेकी दवा दिखाअूँ और साँपके काटेका मन्त्र सिखाअूँ। मैं अुन चाल-बाज लुटेरोंमेंसे नहीं हूँ, जो लेक्चर देकर अनपढ़ लोगोंको फाँस लेते हैं, मजमेमें अपने आदमी रखते और अुनसे अपनी तारीफ करवाते हैं, और फिर लेक्चर खत्म होनेपर अुन्हींके हाथ दवाअें बेचना शुरू कर देते हैं। मैं यहाँ लेक्चर देने नहीं आया और लेक्चर देनेके लिअे मेरे पास रक्खा ही क्या है। तुम यहाँ क्यों आये? किसने बुलाया तुम्हें? चले जाओ यहाँसे। मैं संन्यासी नहीं, पण्डित नहीं, मौलवी नहीं, मैंने साधुओं जैसे कपड़े भी नहीं पहन रक्खे हैं। मैं देवताका मन्त्र नहीं जानता, चिल्ला खींचना भी नहीं जानता। मैं शराब भी नहीं पिये हूँ, मैं होशमें हूँ—जी हाँ, मैं होशमें हूँ।'

लोगोंको अुसकी बातोंमें मजा आ रहा था, अुनकी तादाद बराबर बढ़ती जाती थी और वह अपना लेक्चर ज्यों-का-त्यों जारी रक्खे हुअे था—

'मेरे पास अिन्सानी जिस्मकी हड्डियाँ नहीं हैं। मैं अिन्सानी खोपड़ियोंकी तिजारत नहीं करता। मैं बच्चोंको डराता नहीं, बूढ़ोंको हँसाता नहीं, गर्मी और सुजाककी दवाअियाँ बेचता नहीं; बल्कि अैसे दवा-फरोशोंपर लानत भेजता हूँ। मैं पचास सालसे अिसी दिल्लीमें रहता हूँ, दिल्लीके कोने-कोनेसे वाकिफ हूँ। अितना ही नहीं तुम सबको जानता-पहचानता हूँ। जब तुम छोटे-से बच्चे थे और अपने अब्बाकी अुंगली पकड़कर अिसी रास्तेसे गुजरते थे और तोतली जबानमें अुनसे पूछते थे– अब्बा, यह कौन है; और तुम्हारे अब्बा तुम्हें खींचकर आगे ले जाते थे—तबसे। अिन आँखोंके सामने तुम स्कूल गये, तुम जवान हुअे, तुमने शादी की और बच्चे पैदा किये और आज तुम अपनी कमरपर हाथ रखकर अिसी रास्तेसे गुज़रते हो। लेकिन मेरी तरफ देखो, मैं जैसाका तैसा हूँ। क्या कोअी शख्स मेरी अुमर बता सकेगा? तुम चुप क्यों हो–बोलते क्यों नहीं? बोलो न, बताओ मेरी अुमर!'

मजमेसे अेक आवाज अुठी– 'चालीस साल!'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अेक मीठी झिड़कीके साथ अुसका लेक्चर आगे बढ़ गया--

'कलके लौंडे भला तुम मेरी अुमर क्या जानो! मेरी अुमर अेक सौ दस सालकी है, अेक सौ दस सालकी! शायद तुम अिसे मज़ाक समझो- मेरे काले बाल देखकर यह कहो कि यह झूठ बोल रहा है। नहीं भाअी, अैसी बात नहीं है। तुम मेरे चेहरेकी चमक-दमक देखकरही चक्करमें पड़ रहे हो कि मेरी अुमर चालीस सालकी है।...नहीं भाअी, मेरे काले बाल देखो, मेरी काली भवें देखो और मेरा चेहरा देखो; जो झुर्रियोंसे दूर है- बहुत दूर है। मेरी आवाजमें जवानी है, मेरी बातचीतमें जवानी है, मेरी चालमें जवानी है; बुढ़ापा कसम खानेको भी नहीं और मेरी आँखोंमें फर्क न पड़ा है, न पड़ेगा। अिसकी वजह क्या है? सिर्फ यही कि मैं आज तक बीमार नहीं हुआ। मुझे न कभी बुखार चढ़ा, न कभी खाँसी आयी, न कभी नजले या पेचिशने सताया। सरका दर्द, आँखका दर्द, कानका दर्द, दाँतका दर्द, सीनेका दर्द, पेटका दर्द, गुर्देका दर्द, गरज कि किसी तरह दर्द मैं जानताही नहीं। प्लेग, हैजा, मिरगी, पागलपन और कब्ज कभी मेरे पास फटके भी नहीं। प्रमेह,गर्मी,सुजाक, पथरी,डाअिबिटीज वगैरह मुझसे हमेशा दूर-दूर भागते रहे। जी मतलाना, दिल घबराना, पेशाब ज्यादह जाना या कम आना वगैरह तो मेरी नजर देखतेही रूपोश हुअे। दिमागकी बीमारियाँ, सीनेकी बीमारियाँ, दिलकी बीमारियाँ और अैसी दीगर बीमारियाँ-जिनके नाम लेनेपर मैं अुतर आअूँ, तो तुम्हारे होश हिरन हो जाअें, मुझे देखते ही काँप-काँप अुठो। गठिया, तपेदिक और दीगर बीमारियाँ, जिनका नाम शामको लेना अच्छा नहीं, हमेशा मेरे कदमोंकी खाक बनकर रहीं। मतलब यह कि मैं तमाम बीमारियोंसे बराबर बचता रहा और आँखें खोलकर देख लो, अिस अुमरमें भी कितना हट्टा-कट्टा हूँ—बिलकुल जवान पट्ठा!'

'मैं दिल्लीके तमाम हकीमोंको जानता हूँ। मैं अुन मदारियों, सन्यासियों और दवाफरोशोंको अच्छी तरह पहिचानता हूँ, जो अिन सड़कोंपर खड़े होकर चिल्लाते हैं और अण्टसण्ट दवाअें देकर तुम्हारी जेबें खाली करा लेते हैं। मैं अुन चोरोंमेंसे नहीं हूँ, फिर मुझे किसीसे डरनेकी जरूरत? अिसलिअे कि मेरे हाथमें बरकत है--मेरी जबानमें रस है। मुझे तुम्हें बुलानेकी जरूरत नहीं; मेरे पास तुम खुद आओगे— अपनी गरजसे दौड़े चले आओगे। मैं पचास सालसे यहाँ बैठता हूँ---अिसी मसजिदके पास, अिसी जगह और अिसी कुर्सीपर। दिल्लीके तमाम हकीम मेरे शागिर्द हैं -मेरे चेले हैं। जाओ, किसीसे मेरा नाम पूछो। अगर अुसके चेहरेकी रंगत न अुड़ जाअे, तो मेरा नाम हकीम शम्सुद्दीन नहीं। अगर बोलते-बोलते अुसकी जबान न लड़खड़ा जाअे, तो अुलटे कदम वापिस चले आना और मुझसे मुफ्त दवा ले जाना।'

यह कहते-कहते अुसका चेहरा और भी दमक अुठा और अुसने बड़े रोबसे बोलना शुरू किया--

'मैंने तमाम हिन्दुस्तानका दौरा किया है; सिर्फ हिन्दुस्तानका ही नहीं, बल्कि पाकिस्तानका भी। यह वही मुल्क है, जो दो हिस्सोंमें बँट चुका है। अेक ही माँके दो बेटे आपसमें लड़ पड़े और घर-बार बाँटकर अलग-अलग हो गये। यह अँगरेजकी करामात थी। मैं अँगरेजकी अिस चालको जानता था। मगर कहता किससे— कोअी सुननेवाला भी था! अँगरेजका कोअी पिट्ठू मेरी बातें तो नहीं सुन रहा है! सुन रहा है, तो सुनता रहे; मुझे न अँगरेजका डर है, न जेलका। आज हिन्दुस्तान आजाद है, दिल्ली आजाद है, हिन्दू आजाद है, मुसलमान आजाद है और मैं हूँ कि खरी-खरी बातें सुना रहा हूँ। जाते हो, तो जाओ; मगर अितना सुने जाओ कि मैंने तमाम हिन्दुस्तानका दौरा किया है। काश्मीरसे लेकर बंगालतक और पेशावरसे लेकर कोलम्बोतक-- यानी हिन्दुस्तानके हर हिस्सेका सफर किया है। सभी शहरोंके नाम मेरी जबानपर है; पूछ देखो न! लाहौर, कराची, बम्बअी, कलकत्ता, मदरास, दिल्ली, हैदराबाद, अहमदाबाद, कानपूर, पटना, राँची, जबलपूर, सोनपूर, पूना, शेरगढ़, आजमगढ़, अमृतसर, जालन्धर, माण्टगोमरी, स्यालकोट, पूच्छ, जम्मूं, अिलाहाबाद, लखनअू— मैं किस-किसका नाम सुनाअूं, सुनाते-सुनाते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी जबान तो थकेगी नहीं, सुनते-सुनते तुम्हारे कान जरूर थक जाअेंगे। बड़े-बड़े राजाओं, नबाबोंके सर्टी-फिकेट मेरे पास हैं—बड़े-बड़े नेताओं-नुमाअिन्दोंकी सनदें मेरे पास हैं। जी हाँ, तुमने मुझे समझा क्या है, मैं कोअी मामूली आदमी नही हूँ!'

'तुम बीमार हो और तुम्हें कौन-सी बीमारी है—मुझे अिससे कोअी गरज नहीं। मुझे तो अपनी गरजसे गरज़ है। मुझे तो गरज है अपने अल्लाहसे, जिसने मुझे पैदा किया है, जिसने मुझे जबान दी है और जिसने मेरी जबानमें रस भरा है। फिर मैं अुसकी अिन नियामतोंसे क्यों न फायदा अुठाअूं? मैं तुम्हें अभी अेक अैसी चीज दिखानेवाला हूँ, जिसपर तुम यकीन करोगे, नकर सकोगे। अिसलिअे कि तुम अल्लाहको भूल चुके हो— अल्लाहकी करामतको भूल चुके हो। लेकिन मैं न अल्लाहको भूला हूँ— न अल्लाहकी करामतको भूला हूँ। जो अल्लाहको भूल जाता है, वह अपने-आपको भूल जाता है। जो अल्लाहपर यकीन नहीं रखता, वह अपने-आपपर भी यकीन नहीं रखता और अैसे शख्सका बेड़ा हरगिज-हरगिज पार नहीं लगता। आजकलके बाबू लोगोंका यकीन तो अंगरेजपर है, अंगरेजकी हैट पर है, अंगरेजकी कालरपर है, अंगरेजकी नेकटाअीपर है, अंगरेजकी जबानपर है, अंगरेजकी कुर्सीपर है। अिस यकीनका जो नतीजा निकला, सबके सामने है। मुल्क लुटा, जमीन खाक-स्याह हुअी, नहरें सूखीं, खेत बिगड़े, बाग अुजड़े, कहत पड़े, लोग घरसे बेघर बने, अस्मतोंपर डाके गिरे, भाअीने भाअीका खून पिया, हिन्दू-मजहब धूलमें मिला, मुस्लिम मजहबमें बट्टा लगा।'

'अे अल्लाहके बन्दो, अल्लाहके दरबारमें आओ। जिसे भूल गये हो, अुसे फिर याद करो। आज तक हर शख्स अल्लाहकी हकीकतको समझनेमें लाचार रहा है। लोग पैदा होनेसे मरने तक अुसकी हकीकतको समझनेकी कोशिश करते रहे, लेकिन अुसकी हकीकतको कोअी न पा सका। क्या तुम हो—क्या मैं हूँ। ये बातें तुम्हारी समझसे बाहर हैं। और बाहर ही रहेंगी। लेकिन यकीनसे बेड़ा पार होता है। जो करामातें हमारे बुजुर्ग दिखाते थे, वह झूठी नहीं थीं—मामूली नहीं थीं। पानीमें आग लगा देते थे, तीर मारकर जमीनसे पानीके चश्मे जारी कर देते थे, फूंक मारकर पहाड़ अुड़ा देते थे, आसमानपर अुड़ जाते थे, बैठे-बिठाये गायब हो जाते थे, तीन चुल्लूमें समुद्र पी जाते थे और अिस किस्मके हजारों-हजारों करिश्मे दिखाते थे। बात यह थी कि यह पूरे फकीर, सच्चे फकीर, पहुँचे हुअे फकीर थे। अुन्होंने चिल्ला खींचा था, तप किया था, अल्लाह का नाम लिया था, तस्बीहके दाने गिने थे। वे झूठ नहीं बोलते थे, दूसरोंकी औरतोंपर बुरी निगाह नहीं डालते थे, गरीबोंकी मददको तैयार रहते थे, अमीरोंसे प्यार रखते थे, डाकुओंको राहे-रास्तपर लाते थे। लेकिन यह सब कुछ किस तरह होता था और क्यों होता था? अिसलिअे कि लोग अुनपर यकीन करते थे और वह लोगोंपर यकीन रखते थे। आजकलके लोगोंको किसीपर यकीन नहीं रहा। वजह अिसकी यह है कि हर बदचलन शख्स अमीर बना बैठा है, हर चोर साहूकार बना बैठा है, हर हिन्दू देवता बना बैठा है, हर मुसलमान फरिश्ता बना बैठा है, हर सिक्ख गुरु बना बैठा है, हर अीसाअी मसीह बना बैठा है। जहाँ अितने देवता हों, अितने चेले हों, अितने मजहब हों, वहाँ यकीन कहाँ, अेतबार कहाँ? और जहाँ यकीन-अेतबार नहीं, वहाँ बीमारियाँ न होंगी, तो क्या होगा? अभी हुआ ही क्या है, आनेवाले जमानेमें बीमारियाँ बढ़ेंगी और बहुत बढ़ेंगी। मेरा दावा तो यहाँ तक है कि तुममेंसे हर शख्स बीमार है। यह जरूर है कि तुम्हें मेरी बातपर यकीन न होगा; क्योंकि तुम किसीपर यकीन करना जानते ही नहीं। मगर मैं यकीनसे कहता हूँ कि तुममेंसे हर शख्स बीमार है। तुम्हें मेरी बातपर यकीन करना ही पड़ेगा, क्योंकि मैं अल्लाहपर यकीन करता हूँ और जो अल्लाहपर यकीन करता है, अुसका बेड़ा पार होता है। अच्छा अब देखो वह अजीबो-गरीब चीज।'

यह कहते-कहते अुसने जेबसे कुछ काले धागे निकाले। अितनेमें मजेसे दो-तीन आदमी खिसकते हुअे नजर आये और वह बड़े तपाकसे बोला—

'जाते कहाँ हो? जरा ठहरो, अिन धागोंकी करामात तो देखते जाओ—अभी, अिसी वक्त, अपनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आँखों ··· अगर किसीके कानमें दर्द हो, आँखमें दर्द हो, दाँतमें दर्द हो, तो वह फौरन मेरे सामने आ जाअे।'

अिसपर अेक आदमी आगे बढ़ा और अुसके सामने आया। अुसने सवाल किया—

'कहाँ दर्द है ?'

'दाँतमें !'

'अिस काले धागेकी तरफ देखो ! देख लिया ?'

'देख लिया !'

'अब बताओ; दर्दका क्या हाल है ?'

'दर्दका तो कहीं पता भी नहीं है !'

'देखा ? अिसे कहते हैं हथेलीपर सरसों जमाना ! अगर यकीन न आये, तो खाली हाथ वापिस न जाना ! ··· और हाँ, अपनी जेब संभाले रहना। कहीं अैसा न हो कि कोअी जेब-कतरा अपने हाथकी सफाअी दिखाये और तुम्हारी जेब खाली हो जाय। दिल्लीके जेब-कतरे अैसी करामातें दिखाना खूब जानते हैं।'

लोग हँस पड़े और लगे कहकहे लगाने। तबतक दूसरा आदमी अुसके सामने पहुँचा और अुसने वही सवाल दोहराया—

'कहाँ दर्द है ?'

'कानमें !'

'ठहरो !'

अुसने धागा गिलासके पानीमें डुबोया, अुसकी दो-तीन बूंदें बीमारके कानमें डालीं और आवाजमें झटका देते हुअे पूछा—

'बोलो, दर्दका क्या हाल है ?

'दर्द बिलकुल गायब है !'

'देख ली अपनी आँखों अल्लाहकी करामात ? फिर भी यकीन न हो, तो अपने घर वापिस चले जाओ और दिल्लीके हकीमोंकी जूतियाँ चटखाते फिरो ! ··· और अगर यकीन हो अपने बुजुर्गोंकी करामातपर, तो अिस काले धागेको खरीद लो। अिससे हर बीमारी रफा हो जायगी। कोअी बीमारी हो, कैसी भी बीमारी हो, नयी हो या पुरानी, ताजी हो या बासी, अिस काले धागेसे फौरन दूर भागेगी। अिसे पानीमें डुबोकर, वह पानी बीमारको पिला दो, बीमार फौरन चंगा हो जायगा। जरा पूछो अिस धागेकी कीमत ! अिस धागेमें अल्लाह-पाकके कलमेकी करामात भरी हुअी है। है कोअी अिन्सानका बच्चा जो अल्लाह-पाकके कलमेकी कीमत अदा कर सके ? अिस धागेकी कीमत है— अेक करोड़ रुपये ! ·····अेक करोड़ रुपये !! ····· अेक करोड़ रुपये !!!'

'अच्छा अेक लाख ! ··· अेक लाख !! ··· अेक लाख !!!'

'जाने दो, अेक लाख; पचास हजार निकालो— पचास हजार !'

'पचास हजार भी नहीं ? अच्छा भाअी—लाओ अेक हजार।'

'अेक हजार भी नहीं ? अच्छा सौ ! ··· सौ !! ···सौ !!!'

'लाओ पचास ही निकालो ! पचास !! ··· पचास !!!'

'पचास नहीं तो पच्चीस ! ··· पच्चीस !!'

'जाने दो पच्चीस, दस ! ··· दस!! ···दस!!!'

'अच्छा पाँच ! ··· पाँच !! ···· पाँच !!!

'खैर, अेक ही सही ! ···· अब तो खुश हुअे ?'

लोगोंमें जैसे जान आ गयी और बहुतोंने जेबसे अेक-अेक रुपयेके नोट निकालकर अुसकी तरफ बढ़ा दिये। बस, अुसने गरजकर कहा—

'रहने दो ! चले जाओ यहाँसे ! अल्लाहके कलामकी कीमत देते हो तुम। जरा सूरत देखो अपनी। शर्म नहीं आती तुम्हें ? चले जाओ यहाँसे। जाओ, रण्डीके कोठेपर जाओ, अुसकी जूतियाँ चटखाओ, अुसकी चिलमें भरो। जाओ, बाजारसे साँडेका तेल खरीदो—ताकतकी गोलियाँ खरीदो। कमरमें लोहेकी पेटी लगाओ। पानी, भाफ, बिजलीका अिलाज कराओ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब तुम्हें चैन आअेगा। तुम्हें अल्लाहकी करामातसे क्या वास्ता? अल्लाहकी करामातकी कोअी कीमत नहीं होती दोस्तो! तुम क्या, तुम्हारे फरिश्ते भी अल्लाहके कलामकी कीमत अदा नहीं कर सकते। मैं चोर या ठग नहीं हूँ, जो अल्लाहको बाजारमें बेचता फिरूँ। अिस कलमेकी कोअी कीमत नहीं है, कीमत है धागेकी। वह भी बहुत थोड़ी– सिर्फ दो आने!...दो आने!!...दो आने!!!दो आने!!!..'

अब तो सभी लोग बहुत खुश हुअे और जेबसे पैसे निकाल-निकालकर लगे जोरोंसे धागे खरीदने। अितनेमें अेक कान्स्टेबुल आया और दवा-फरोशको घूरता हुआ अेक तरफ चल दिया। बस मजमेसे अेक आदमी निकला, कान्स्टेबुलके पास पहुँचा और अुसके साथ बातें करते-करते कुछ दूरतक चला गया। जब धागे बिक चुके और मजमा साफ हो गया, तो दवा-फरोश कुर्सीपर बैठकर बिक्रीके पैसे गिनने लगा। अितनेमें वह आदमी कान्स्टेबुलको टहलाकर वापिस आ गया और दवा-फरोशसे बोला—

'कितनी आमदनी हुअी अुस्ताद?'

'कुल अिक्कीस रुपये दस आने!'

'आज तो अच्छी आमदनी हो गयी! यह काला धागा खूब बिकता है, मेरे अुस्ताद!'

'बिकता क्या है, रोटियाँ चलाने भरके लिअे पैसे दिलवा देता है–यही गनीमत है। कान्स्टेबुलको कितने पैसे दिये थे तूने?'

'वही बँधे-बँधाये चार आने!'

'अिस कम्बख्तपर करामातका कुछ असर नहीं होता! साला हर रोज टाअिमसे आता और चार आने मार ले जाता है।'

'असल हरामी है, अुस्ताद!'

'अच्छा, यह सामान अुठा और चल!'

यह कहकर दवा-फरोश मसजिदकी तरफ चल दिया और वह आदमी भी सामान अुठाकर अुसके पीछे हो लिया।

[**नोट**—आजकल अुर्दू-भाषाके जितने प्रसिद्ध कहानीकार हैं, अुनमें श्री महेन्द्रनाथ भी हैं। प्रस्तुत कहानी अुन्हींकी अेक अुर्दू-कहानीका हिन्दी-रूपान्तर है।]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोकप्रिय नाट्यकार हरिकृष्ण "प्रेमी"

: प्रो. रामचरण महेन्द्र, अेम. अे. :

(१)

"मैं विजयवर्गीय महासभाकी कोटा शहरमें २५-२६ जुलाअीमें होनेवाली कार्य-कारिणीकी बैठकमें भाग लेने कोटा पहुँच रहा हूँ...मैंने आपको बहुत निराश किया है, अिसका मुझे क्षोभ है। वहाँ पहुँचनेपर आप मुझसे प्रत्यक्षमें अुत्तर पा सकेंगे।"

श्री हरिकृष्ण "प्रेमी"जीका अुपरोक्त पत्र पाकर मन-मयूर नृत्य कर अुठा। "प्रेमी"जीसे साधारण पत्र-व्यवहार तो कअी माससे चल रहा था किन्तु बहुत रुक-रुककर। वे अनेक कार्योंमें व्यस्त रहनेवाले साहित्यिक हैं। पत्रका अुत्तर दे देते हैं, यही बहुत करते हैं। बादमें ज्ञात हुआ कि 'मूड' में न होनेके कारण वे मुझे ही नहीं, अनेक निकट सम्बन्धियोंको भी कोप-भाजन बनाये हुअे हैं।

"प्रेमी"जीसे प्रथम संक्षिप्त भेंट "विजयवर्गीय महासभा"के अेक कक्षमें दस-पन्दरह मिनटको ही हो सकी। जातीय सुधारके ठेकेदार अुनपर बुरी तरह "मीनोपली" किये हुअे थे।

वह क्षण-भरकी भेंट मेरे मनपर अमिट छाप छोड़ गयी है। "प्रेमी" का अेक पृथक ही व्यक्तित्व है—श्वेत रंग, स्वस्थ शरीर, मुखपर थिरकती हुअी बालोचित मुसकान, गोलचन्द्र जैसा तेजस्वी मुख और मुहमेंसे चमकती-दमकती मोतियोंकी अेक माला। अुनकी सजीव भाव-भंगिमा अेवं धारा-प्रवाह बोलनेकी शक्ति और स्वस्थ सौंदर्य अनायास ही यह भ्रम अुत्पन्न कर देता है कि यह कोअी अभिनेता तो नहीं है! कवि वे नहीं मालूम होते। कवियों जैसे बड़े-बड़े बाल, मदहोश नशीली आंखें व आवाजमें दर्द या वियोगके चिह्न; या तो अुन्हें अभिनेता कहा जा सकता है या कांग्रेसका स्वयंसेवक। कितना सजीव, कितना सरल और कितना निरभिमानी है यह व्यक्ति!

"प्रेमी"जीके स्वभावकी जो बात मुझे सर्वाधिक रुचिकर प्रतीत हुअी, वह है अुनकी मिलनसारी, अुनकी निरभिमानता और अहंशून्यता। वे व्यस्तसे व्यस्त होते हुअे भी साहित्यिकोंसे मिलने, बातचीत करने, अपना दृष्टिकोण समझानेको सदैव प्रस्तुत रहते हैं। रुचिकर बातचीत करनेमें वे निपुण हैं। अुनके समक्ष बैठकर कोअी अेक क्षणको भी विरस अनुभव नहीं करता। अुनका व्यक्तित्व बरबस हमारी सहानुभूति प्राप्त कर लेता है।

(२)

अुनसे बातें कीजिये, जैसे अेक विस्तृत ज्ञान-कोष आपके समक्ष खुल गया! और ज्ञान भी कैसा? शुष्क पुस्तकों द्वारा संचित ज्ञान नहीं, जगतकी कठोर चट्टानोंसे जूझकर प्राप्त किया हुआ अनुभवका ज्ञान।

"प्रेमी" अेक अैसी सरिताकी तरह हैं, जो चट्टानों पत्थरोंसे टकराती-जूझती धीरे-धीरे अपनी गतिसे निरन्तर प्रवाहित होती चलती है। मार्गमें चट्टान आती है, तो अुससे संघर्ष न कर समीप ही से निकल चलती है। कभी रुकती नहीं, सूखती नहीं, बस निरन्तर बहती जाती है।

"प्रेमी" भावना-जीवी प्राणी हैं, हृदयमें अंगारे लिये जो अुनके नाटकोंके पन्नोंमें लपटोंके रूपमें प्रकट हुअे हैं। बाहरसे अुन्हें आप हंसते-खिलते देखेंगे किन्तु अुनका मन जैसे किसी निगूढ़ चिन्तनमें निमग्न रहता है।

हम दोनोंकी बातचीत लम्बी चली है; भिन्न-भिन्न विषयोंपर चली है। नाट्यकार बननेकी प्रेरणासे लेकर फिल्म-निर्माण, कांग्रेसकी गतिविधि, जातिगत-बन्धन, सुधार तथा हमारे साहित्यकी दशा, भविष्य—अनेक विषय समेट लिये हैं; और अुनमें मैंने पाया "प्रेमी"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने हर क्षेत्रमें गहराअी तक प्रविष्ट होकर बड़े व्यापक रूपमें सोचा है।

(३)

"आप नाट्यकार कैसे बन गये?"—प्रेमीके नाट्यकार बन जानेकी भी अपनी अलग ही अेक कहानी है।

वे बोले—"मैं भी नाटक लिख सकता हूँ।" यह बात हँसी-हँसीमें मैंने बचपनमें कह डाली थी। क्या पता था कि सचमुच ही नाट्यकारके रूपमें किसी दिन मुझे यश प्राप्त होगा?

बचपनकी वह घटना अिस प्रकार है। अुस समय मैं १०-११ वर्षकी अल्पायुका बालक था। मध्य भारतमें प्राकृतिक-सौन्दर्यके वैभवसे विभूषित नन्हा-सा अेक कस्बा गुना है; अुसमें मैंने जन्म लिया था और वहीं मैं रहता था। मैं अपने ५-६ साथियोंसे अपने घरके सायबानमें खड़ा बेपरकी गप्पें अुड़ा रहा था। बरसातके दिन थे; आसमानमें बादल छाये हुअे थे और हलकी-हलकी बूँदें पड़ रही थीं। हम सभी प्रसन्न मुद्रामें थे।

अेकने कहा—"अरे भाअी, सात दिनमें प्रलय होनेवाली है।" साथियोंने चौकन्ने होकर अुसकी ओर देखा। सबकी दृष्टिमें प्रश्न चिन्ह था—केवल मैं ही पूर्ण गंभीर था। कहा—"भाअी, सात दिनमें नहीं, प्रलय तो कल होनेवाली है।" पहला साथी बोला—"कल कैसे?" मैंने पूछा—"सात दिनमें कैसे?"

अुसने बुद्धिका चमत्कार दिखाते हुअे अुत्तर दिया—"रवि, सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि अिनमेंसे किसी अेक दिन प्रलय होगी।"

सभी साथी अुसके बुद्धि-चातुर्य्यपर प्रसन्न होकर खिलखिला अुठे। तब अुसने मुझसे पूछा—"आप बताअिये, कल प्रलय कैसे होनेवाली है?" मैंने अुत्तर दिया—"जिस दिन प्रलय होगी वह दिन अुससे अेक दिन पहिलेका कल होगा।"

साथियोंने तालियोंकी गड़गड़ाहटसे मेरी भी प्रशंसा की। अब मेरा पलड़ा भारी था। पहिले साथीने बातको बढ़ानेके लिअे कहा—"परमात्मा मेरे लिअे अेक जहाज भेजेगा जिसमें प्रलयके समय मैं अपने दोस्तोंको बैठा लूँगा; तुम्हें नहीं बैठाअूंगा। तुम डूब जाओगे।"

मैंने कहा—"मैं भगवानके भरोसे रहनेवाला नहीं। मैं तो अपने हाथसे तुम्हारे जहाजसे भी बड़ा मिट्टीका अेक घड़ा बनाअूंगा, जो पानीपर तरेगा। अुसीमें मैं अपने दोस्तोंके साथ बैठूंगा। तुम्हारे जहाजको अपने घड़ेसे टक्कर मारूँगा। तुम्हारा जहाज टूट जायगा।"

वह बोला—"हुँ" हमारा जहाज लोहेका होगा, तुम्हारा घड़ा मिट्टीका। फूटेगा तो घड़ा कि जहाज!"

मैंने कहा—"नहीं, मेरा घड़ा बड़ा होगा—तुम्हारा जहाज छोटा। बड़ी चीजसे छोटी चीज टूटती है।"

वह बोला—"नहीं, लोहेसे मिट्टी टूटती है।"

मैंने दोहराया—"नहीं, बड़ी चीजसे छोटी चीज टूटती है।"

हमारा यह कुतर्क अितना बढ़ा कि शब्दोंसे फैसला न हो सका और हम मुक्केबाजी करने लगे। हमने दो दलोंमें बंटकर महाभारत प्रारंभ कर दिया। तभी पासके कमरेसे—"अरे भाअी लड़ो मत।" कहते हुअे मेरे बड़े भाअी श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय प्रकट हुअे। अुनके "सीज़ फायर" का हमने पालन किया।

तब भाअी साहब बोले—"सुनो मैं अेक नाटक सुनाता हूँ।" अभी तक हमने जो कुछ कहा-सुना था, वह सब अुन्होंने सुन डाला था और पासके कमरेमें बैठे हुअे अुसे लिपि-बद्ध करते जा रहे थे। अेक अच्छा खासा बच्चोंका प्रहसन-सा बन गया था। हम लोग अपनी ही बातोंको अक्षरोंमें बंधा हुआ देखकर लोटन कबुतर हो रहे थे। मैंने भाअी साहबसे पूछा—"क्या नाटक अिसीको कहते हैं?" वे बोले—"और नहीं तो क्या? किसी घटनाको बातचीतमें लिख डालना ही नाटक लिखना है।"

नाटककी यह परिभाषा सही है या गलत—यह समझनेकी बुद्धि तो अुस समय मुझमें थी नहीं, लेकिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे अैसा जान पड़ा कि नाटक लिखना कोअी बड़ी बात नहीं। संसारमें जो क्रिया-कलाप हो रहा है, वह सब नाटक ही तो है। लेखक दर्शक बनकर, तटस्थ रहकर यदि अुसे लिपि-बद्ध कर ले तो नाटक तैयार हो जाय। मैंने सहज स्वरमें कहा — "तब मैं भी नाटक लिख सकता हूँ।"

'यह घटना सर्वथा साधारण और महत्त्वहीन-सी जान पड़ती है, लेकिन वास्तविकता यह है कि अिसने मेरे अतःकरणमें बीजरूपमें अेक नाटककारको स्थापित कर दिया था, जो सुअवसरका पानी पाकर अंकुरित होनेकी प्रतीक्षा करता रहा। कविता तो मेरे जीवनमें बाढ़की भाँति आयी जो अपने प्रवाहमें मेरे अस्तित्व और व्यक्तित्वको बहा ले गयी, लेकिन नाटक तो अुस बाढ़को बाँधकर अुसमेंसे निकली हुअी नहरकी भाँति हो आया। कवि बननेके पहले नाटककार बननेकी अिच्छा मेरे मनमें हुअी थी और नाटककार बननेका गुर भी भाअी साहबने मुझे बता दिया था, लेकिन फिर भी बहुत दिनोंतक मेरे प्राणोंपर अेक चट्टान-सी रखी रही, जिसके नीचे साहित्यिक-जीवनका स्रोत रुका पड़ा रहा। वैसे अुतनी छोटी अुम्रमें साहित्यका सृजन किया भी क्या किया जा सकता था।"

(४)

"प्रेमी" के नाटकोंकी अेक बड़ी विशेषता है, अुनकी अभिनेयता। वे अभिनयके लिअे लिखते हैं। अिनका जीवन कक्षामें पाठ्य-पुस्तकके रूपमें ही नहीं, रंगमंचोंपर अधिक है। मुझे अिसकी बड़ी जिज्ञासा थी, कि रंगमंचके सम्बन्धमें अिस नाट्यकारके अनुभव प्राप्त किये जाअें।

मेरा प्रश्न था—"जब आपने नाटक रचने प्रारंभ किये थे, आपको रंगमंचसे कितनी प्रेरणा प्राप्त हुअी?

"प्रेमी"जी बोले— "हिन्दीका रंगमंच अुस युगमें था ही नहीं, आज भी नहीं है, गुना जैसे छोटेसे स्थानमें तो अुसकी आशा की ही नहीं जानी चाहिये थी, लेकिन वहाँके लोक-जीवनमें रामलीला, रासलीला, नौटंकी आदि तो मौजूद थे। वहाँ अेक शौकिया नाटक-मंडली भी थी, जिसमें अेक मंदिरका पुजारी, अेक हलवाअी, अेक कचहरीका क्लर्क और अिसी स्तरके लोग थे। ये लोग स्वयं ही नाटक लिखते जिनमें कभी-कभी स्थानीय व्यक्तियों और घटनाओंका समावेश होता। जब अुन नाटकोंका अभिनय होता, तो दर्शक वास्तवमें बड़ा आनन्द लेते। मैं अुन नाटकोंके लेखनके समय अुपस्थित रहता, अुनकी तैयारीको देखता और अभिनय भी। अुन सबका प्रभाव मुझपर पड़ता रहा। न्यूनतम साधनोंसे भी किस प्रकार नाटक खेला जा सकता है, अिसका भी ज्ञान मुझे हुआ और सर्वसाधारणके अंतःकरण तक अपने विचार कैसे पहुँचाये जा सकते हैं, यह भी अज्ञात रूपमें मेरी बुद्धि पढ़ती रही, मानो मेरे भावी नाट्यकारको शिक्षा मिल रही हो। गुना शहरमें बाहरसे भी रामलीला, रासलीला, नौटंकी अेवं नाटक करनेवाली कम्पनियाँ आया करती थीं। वह युग था, जब सिनेमा प्रारम्भिक स्थितिमें था। कभी-कभी कोअी मूक-चित्र ही घूमता-फिरता वहाँ आ पाता था, अिस कारण जनताका मनोरंजन अधिकतर नाटकोंसे ही होता था। ये जो व्यवसायिक नाटक मंडलियाँ आती थीं अुनके पास स्थानीय नाटक-मंडलीकी अपेक्षा अधिक साधन होते थे, फिर भी अुनसे किसी अूँचे स्तरके सुरुचिपूर्ण नाटकके अभिनयकी आशा नहीं की जा सकती थी।

"अुन अभिनयोंको मैं भी देखता था पर अुनसे रंगमंच सम्बन्धी विशेष जानकारी पायी जा सकती थी, यह बात नहीं थी। अेक प्रसुप्त अथवा अर्द्ध-मूर्च्छित नाटककारको सचेत करने भरका काम ये अभिनय करते थे। मैं अुन लोगोंमें नहीं हूँ जो लोक-जीवनके मनोरंजनोंमें यह कहकर शामिल नहीं होते कि वह बहुत निम्नस्तरके हैं। मैं तो निम्न-मध्य श्रेणी अेवं निम्न श्रेणीके लोगोंमें अेक ही जाजमपर बैठकर अुनके ही हल्लेमें शामिल हो जाता हूँ। मैं अिन लीलाओंका आनन्द लेता रहा। मेरी अिच्छाके गर्भमें पलनेवाले अेक लोकप्रिय नाटककारको अनजानमें ही कुछ खूराक अवश्य मिलती रही और वह गर्भमें ही पुष्ट होता रहा।"

(५)

"आपपर किन देशी-विदेशी नाट्यकारोंका प्रभाव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे पड़ता रहा है?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेमीजीने कहा,—"पुस्तकें पढ़नेका शौक मुझे छोटी अुम्रसे हो गया था, लेकिन जब मैं १४–१५ वर्षका हुआ, तब तो मैं जब कभी भी समय पाता, पाठ्यक्रमके बाहरकी पुस्तकें पढ़ता। मेरे मुख्य विषय कविता, नाटक, कहानी और अुपन्यास थे। अपने अिस पढ़नेके शौकमें मैंने दो पुस्तकालय बर्बाद कर दिये। जब मैं मुरार हाअीस्कूलमें मैट्रिकमें पढ़ता था, तो मुझे पुस्तकालयका सेक्रेटरी बना दिया गया। मैं बिना रजिस्टरमें दर्ज किये १०–१०, २०–२० पुस्तकें अेक साथ ले लेता था। स्वयं तो पढ़ता ही लेकिन साथ ही मेरे कमरेके अन्य लड़के किताबें ले जाते थे; अतः अधिकांश पुस्तकें बँट गयीं। गुनाके सार्वजनिक पुस्तकालयका मन्त्री बना और अिस पुस्तकालयका भी वही हाल हुआ। दो पुस्तकालय बर्बाद हो गये लेकिन मेरे प्राणोंमें बसनेवाले साहित्यकारको जवानी मिली। अिन्हीं पुस्तकालयोंमें मैंने डी० अेल० रायके नाटक, मराठीके नाटकोंके हिन्दी अनुवाद, रविबाबूके नाटक, पंतका "वरमाला", गुजराती भाषाके कुछ नाटक आदि अेक नहीं अनेक बार पढ़े। डी० अेल० रायके कुछ अभिनय देखे; महाकवि कालिदासका "शकुन्तला" पाठ्यक्रममें ही पढ़ डाला था। ये मेरे प्राणोंमें बस गये। अँग्रेजी नाटक तो मैंने नाट्यकार बन जानेके बाद पढ़े। प्रारंभमें तो भारतीय-भाषाओंके नाटकोंको ही मैंने हृदयंगम किया था।"

"क्या आप तत्कालीन रंगमंचकी दशा अेवं प्रचारके विषयमें कुछ बतानेकी कृपा करेंगे? अिन रंगमंचीय नाटकोंसे आपको क्या प्रेरणा प्राप्त हुअी?"

वे बोले—"अुस समयतक मैं कविके रूपमें थोड़ा नाम पाने लगा था, लेकिन नाटक फिर भी अेक भी नहीं लिखा था। हिन्दीका कोअी रंगमंच होता, तो अुसके लिअे लिखता भी। अपने कस्बेमें अिस दिशामें निम्नस्तरपर जो चहल-पहल बचपनमें देखी थी वह भी कुछ वर्षोंमें विलीन हो गयी थी। तब नाटक लिखनेकी प्रेरणा कहाँसे पाता? रंगमंचकी आवश्यकताके अनुकूल नाटक लिखूँ—अैसी अिच्छा मनमें प्रबलतर होती जा रही थी। हिन्दीका रंगमंच कैसा होना चाहिये—यह भी जाननेकी मेरी तीव्र अुत्कंठा थी। अुस समय बम्बअी, कलकत्ता, जैसे बड़े नगरोंमें कुछ पारसी थियेट्रीकल कम्पनियाँ नाटक खेलनेका व्यवसाय कर रही थीं। वे कम्पनियाँ कभी-कभी दूसरे नगरोंमें भी नाटक खेलने जाया करती थीं। अुनमेंसे ही अेक कम्पनी आगरा आयी हुअी थी। अुन दिनों मैं अपने मित्र श्री जगन्नाथप्रसाद "मिलिन्द" के पास मुरारमें ठहरा हुआ था। समाचार-पत्रोंमें अुक्त थियेट्रीकल कंपनीका विज्ञापन पढ़कर हम दोनों मित्रोंने आगरा जाकर रंगमंच और अभिनय देखनेका निश्चय किया; आगरा गये। हम सफल नाट्यकार बननेके लिअे अधिकाधिक जानकारी पानेके लिअे प्रयत्नशील थे। खेल धार्मिक था, किन्तु अुसके धार्मिक प्लॉटकी आड़में निम्नकोटिके हावभाव, अश्लील नाच-गाने और रूप-यौवनके प्रदर्शनके अतिरिक्त कुछ न था। हमारे मनको बहुत ग्लानि हुअी। अुस भयानक और बीभत्स धार्मिक नाटकका अभिनय देखकर निश्चय किया कि युगकी माँगके अनुरूप, राष्ट्रकी नसोंमें जवानी भरनेवाले ओजस्वी और सुरुचिपूर्ण नाटक हम लिखेंगे।"

आगे मैंने प्रश्न किया—"आपके १४–१५ नाटक प्रकाशित हुअे हैं। ये रचनाअें किस क्रमसे लिखी गयीं?—अिस तथ्यपर कुछ प्रकाश डालिये।"

वे बोले—"सन् १९२७ में मैं अजमेर जा पहुँचा। पं. हरिभाअू अुपाध्यायने मुझे "त्यागभूमि" में सहयोग देनेका सुअवसर दिया। अुस समय महात्मा गांधी देशमें राष्ट्रीय-चेतना जाग्रत कर रहे थे। सन् १९२२ में सत्याग्रह छिड़ पड़ा। पं. हरिभाअू अुपाध्यायकी प्रेरणासे मैंने "स्वर्ण-विहान" पद्य नाटिका लिखी, जिसमें सत्याग्रहके सिद्धान्तों और शक्तिका निरूपण था। अुस समयकी विदेशी सरकारने अुसे जब्त कर लिया। जप्तीसे यश तो मिला ही, साथ ही विश्वास भी हुआ कि नाटककारके रूपमें भी मैं प्रभावपूर्ण लेखनी चला सकता हूँ।"

"स्वर्ण-विहान' यद्यपि नाटिका थी, किन्तु वह पद्यबद्ध थी। अेक घटना अैसी घटी जिसने मुझे सचमुच नाट्यकार बना दिया। सन् १९३१–३२ में मैं लाहौरमें 'भारती' का सम्पादन करता था। अुसमें मैंने कुछ रोमांटिक कविताअें लिखी थीं, जिन्हें नौजवानोंकी जमातने पसन्द किया था। पंजाब तो हीर राँझा और सोहनी महीवालका देश है। अुसे प्रेम सम्बन्धी कविताअें क्यों न पसन्द आतीं, लेकिन अिन कविताओंके सम्बन्धमें अुलाहना देकर पंजाबकी विदुषी महिला कु. लज्जावतीने मुझसे कहा:—

"तुम अैसी कविताअें लिखकर देशका क्या भला करते हो? कुछ अैसे नाटक लिखो, जो देशके जलते हुअे प्रश्नोंको हल करनेमें सहायक हों।"

अुनकी बात मेरे प्राणोंमें चुभ गयी और अेक महीनेमें ही मैंने "रक्षा-बन्धन" लिख डाला। यही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरा पहला वास्तविक नाटक है। देशमें राष्ट्रीय अेकता स्थापित करनेके लिअे गाँधीजी जोर लगा रहे थे। राष्ट्रीय अेकता ही हमारे स्वातत्र्य-संग्रामकी रीढ़ थी। विदेशी शासनने हमारी अिस रीढ़की हड्डीको कमजोर करनेका प्रत्येक संभव अुपाय किया था। अिसीको मजबूत करनेके लिअे मैंने "रक्षा-बन्धन" लिखा था। नाटकका जो स्वागत हुआ अुसने मुझे सचमुच नाटककार बना दिया। और अिसके बाद मैं 'शिवा-साधना" (१९३७); प्रतिशोध (१९३७); आहुति (१९४०); स्वप्नभंग (१९४०); छाया (१९४१), बन्धन (१९४१), मंदिर (१९४२), मित्र (१९४५), विषपान (१९४५), अुद्धार (१९४९), शपथ (१९५१) अित्यादि नाटक देता ही गया। राष्ट्रीय आदर्श, गाँधीवादी विचार-धाराकी पृष्ठभूमि अिनमें अनेक स्थानोंपर प्रकट हो गयी है।"

(६)

विषय चयन अेवं प्रेरणाकी पृष्ठ-भूमिपर चर्चा चली, तो "प्रेमी"जीने विस्तारसे अपने दृष्टिकोणको स्पष्ट करते हुअे कहा :—

"अैतिहासिक नाटक ही मैंने अधिक लिखे हैं। मुझे यह बात खलती है कि विदेशी शासन-कालमें हमारा अितिहास गलत रूपमें पढ़ाया जाता था, जिसके कारण हम पराजित मनोवृत्तिके बनते थे और हमारी राष्ट्रीय अेकता भी छिन्न-भिन्न होती थी। मैं अितिहासको राष्ट्रको बलवान बनानेवाले रूपमें अुपस्थित करना चाहता रहा हूँ। विदेशी शासन कालमें आधुनिक कथानक लेकर अैसी बात कह पाना कि जनता स्वाधीनता प्राप्तिके लिअे अुत्तेजित होकर अुठ पड़े, संभव नहीं था।" "स्वर्ण-विहान" का अनुभव मेरे सामने था। मैं जो कहना चाहता था, वह जनतातक पहुँचे, यह मेरी कामना थी। अिसलिअे मैंने अितिहासका आधार पकड़ा, लेकिन अुसमें भूतकालकी झारीमें वर्तमान गंगाजल ही है।"

मैंने प्रश्न किया— "आपके नाटक समस्या नाटक हैं? अुनमें कौन-कौन समस्याअें अुठायी गयी हैं?"

प्रेमीजी बोले—"मेरे नाटक किसी न किसी निश्चित अुद्देश्यको लेकर ही लिखे गये हैं। मानवताके अुच्च गुण हम लोगोंमें विकसित हों—यह मेरी मनो-कामना रही है। भारत सौ वर्षसे विभाजित रहा है, और अिसीलिअे पराजित होता रहा है। देशके विभाजित रहनेके जो कारण हैं, चाहे वे सांस्कृतिक हों, चाहे धार्मिक, चाहे सामाजिक और चाहे राजनैतिक, मैंने अुनपर प्रकाश डालनेका यत्न किया है। पराजित मनोवृत्तिसे अुबारनेके लिअे हमारी संस्कृतिके विकसित और बलवान पहलुओंको भी मैंने दिखाया है। आगे भी स्वाधीनताकी रक्षा करनेके लिअे अपना भौतिक अेवं आध्यात्मिक विकास किस प्रकार करना चाहिये—अिसका भी संकेत मने नाटकों द्वारा देनेका यत्न किया है। अपने सामाजिक नाटकोंमें मैंने आर्थिक-विषमता, नैतिक-पतन, रूढ़िवाद, मानवीय सद्गुणोंका जातिमें ह्रास—आदि अपने जातीय जीवनकी कमजोरियोंकी तसवीरें खींची हैं। देशके नवनिर्माणके लिअे हमें सामूहिक रूपसे क्या यत्न करना चाहिये, अिस ओर लोगोंका ध्यान आकर्षित किया है।"

मेरा अन्तिम प्रश्न प्रेमीजीकी कला (Technique) के विषयमें था। अपनी कलाके सम्बन्धमें प्रेमीजीने कहा—

"अपने नाटकोंकी कला (टेकनीक) के सम्बन्धमें मैं कुछ कहना नहीं चाहता। अितना अवश्य कहूँगा कि अमृतसरके हाअीस्कूलमें अपने कअी नाटकोंको छपनेसे पूर्व ही खेले जाते देख चुका हूँ और प्रकाशनके पूर्व रंगमंच सम्बन्धी कठिनाअियोंको मैंने दूर करनेका ध्यान रखा है। मेरे नाटकोंकी दृश्य-रचना अिस प्रकारकी है कि शौकिया खेलनेवाले भी सरलतासे कुछ परदोंकी सहायतासे ही अुन्हें खेल सकते हैं। नाटककारका नाटक जब रंगमंचपर आता है तो अुसे बड़ी प्रसन्नता होती है। मैंने अपने नाटक रंगमंचपर भी देखे, अुन्हें फिल्मोंके रूपमें भी बना हुआ देखा। अिस तरह बचपनमें हँसी-हँसीमें जो मैंने कह दिया था कि "नाटक तो मैं भी लिख सकता हूँ।" यह बात पूरी हो गयी।"

"प्रेमी" हमारे युगके सर्वश्रेष्ठ नाट्यकारोंमें हैं, जिनकी नाट्यकलामें राष्ट्रीय-आन्दोलनकी अुमंगें हैं, तो नवनिर्माणके लिअे प्रेरणा भी है, आर्य-संस्कृतिकी चेतना है, तो रूढ़िवादके विरुद्ध क्रान्तिकी चिनगारियां भी हैं। अुन्होंने अितिहास और कल्पनाके साथ भावना और रसका अैसा हृदय-स्पर्शी सम्मिश्रण किया है, जो अुन्हें चोटीका नाट्यकार बनाये हुअे है। अुनके गीतोंमें हृदयका स्पन्दन और जीवनकी झंकार है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेक भावचित्र :

कल्पना

: श्री सत्यव्रत अवस्थी :

कल्पना ही अेक अैसी वस्तु है, जिसके द्वारा कवि असुन्दरको भी सुन्दर बना देता है। भावोंके विषम जालको सरसता देना कल्पनाका ही कार्य है। कल्पनाके स्वप्निल पंखोंके सहारे कवि पृथ्वीसे दूर गगनमें अुड़कर विश्वके दर्शन करता है। किन्तु कविकी कल्पना असत्य नहीं होती; कारण वह विश्वसे पलायन नहीं करता; वरन् अपनी कल्पनाको कर्मका स्वरूप देकर अेक सुन्दर सृष्टि करता है। यही सुन्दर सृष्टि कविता कहलाती है, जिसे कवि अपने रक्तसे सींचता है।

कअी वर्ष पहले मैंने विश्व-विख्यात नृत्यकार अुदय शंकरका 'कल्पना' नामक चलचित्र देखा था। अुसे देखनेके पश्चात् मेरे मनमें अनेक कल्पनाअें अुठी थीं। प्रायः मेरे मानस-पटलपर कल्पनाका चल-चित्र नाच अुठता है। आज भी जब मैं सोनेका अुपक्रम कर रहा था, तब मेरी पलकोंकी छायामें अेक कल्पनाका चित्र नाच अुठा था। अिस चित्रमें मैंने क्या देखा ?

मैंने देखा कि मैं अेक निर्जन प्रदेशमें घूम रहा हूँ। सामने अेक सरोवर है। अुस सरोवरके चारों ओर अशोक और देवदारके सघन कुंजमे अेक अपूर्व सुन्दरी बालिका निकली और दूसरी ओरके अेक कुंजसे अेक बालक निकला। दोनों अेक दूसरेको देखने लगे। बालकने बालिकासे प्रश्न किया–"रूप कुमारी तुम कौन हो ?" बालिकाने अुत्तर दिया– "प्रकृति ! किन्तु आप कौन हैं ?" बालकने कहा– "पुरुष। लेकिन तुम किस...?" बालिकाने अुत्तर दिया–"तुम्हें खोजने।"

क्षणभरमें ही दोनों आलिंगन-बद्ध हो गये। मैंने कल्पनाका यह प्रेममय दृश्य देखा, किन्तु दूसरे ही क्षण कल्पनाने अुन्हें प्रौढ़ कर दिया। अुनके हृदय अेक दूसरेसे मिले थे। अुसी समय सरोवरमें सहस्रों कमल प्रस्फुटित हो अुठे। लताअें नीचेको झुक गयीं। वृक्षोंसे पुष्पवर्षा होने लगी। अचानक पुष्प-मार्गसे आता हुआ अेक वृद्ध दिखायी दिया। मैंने देखा प्रत्येक कमलमें दो-दो नयन दृष्टिगोचर हो रहे थे; जो अुस वृद्धको आशंकित हो अपलक देख रहे थे। वृद्ध वहीं आकर ठहर गया, जहाँ-पर पुरुष और प्रकृति प्रेम-क्रीड़ा कर रहे थे।

पुरुषने वृद्धसे पूछा--"तुम कौन हो ?" अुत्तर मिला–नारायण। पुरुषने कहा–और मैं...। नारायणने वाक्य पूरा किया–'नर हो', मैं जानता हूँ। पुरुषने पूछा– "तुम यहाँ किसलिअे आये हो ?" नारायणने कहा– "तुम्हें तुम्हारी सीमा बताने"। पुरुषने कहा– "मैं अपनी सीमा जानता हूँ। मैं कहीं भी स्वच्छन्दता-पूर्वक घूम सकता हूँ"। नारायणने कहा– तुम स्वतंत्र होते हुअे भी स्वतंत्र नहीं हो। पुरुष अुपेक्षा-भावसे बोला–"मैं क्या नहीं कर सकता ? मैंने ही तुम्हें असीम बनाया है। मेरी ही सत्य-कल्पनासे तुम अनादि और अनन्त बने हो" !

नारायणने मुसकराते हुअे कहा–"यह ठीक है, किन्तु दर्पसे दीप्त न हो। तुम्हारी स्वतंत्रताकी अेक सीमा है। पुरुषने कहा– "सत्यमें दर्पका स्थान नहीं ! मैं सीमित हूँ, यह तुम्हें सिद्ध करना होगा। ध्यानसे देखो कि तुम असीम होकर भी मुझमें सीमित हो"। नारायणने कहा–"यह ठीक है, किन्तु तुम्हारी भी अेक सीमा है"। पुरुष बोला– अिसे सिद्ध करो कि मैं सीमित हूँ।

नारायणने कहा– 'अच्छा ! तो अेक पैर अुठाकर खड़े हो जाओ'। नर अेक पैरके बल खड़ा हो गया। नारायणने अुसे देखकर कहा– 'ठीक है ! अब दोनों पैर वायुमें अुठाकर खड़े होओ'। नर दूसरा पैर अुठाते ही गिर पड़ा और अुसका सिर नारायणके पैरोंपर अपने आप जाकर रख गया। नारायणने नरको अुठाकर हृदयसे लगाते हुअे कहा– 'नर ! तुम्हारी स्वतंत्रता यहीं तक सीमित है।' नरने लज्जित होते हुअे कहा– "समझ गया देव ! मुझे अपने कर्मोंपर पश्चात्ताप है"।

नारायणने कहा–"तुम धन्य हो नर ! यहाँ तुम सीमित होनेके लिअे नहीं वरन् सीमितको असीम बनाने और बनने आये थे। आओ और अपने सीमित नारायण (नर+अयन) में प्रकृतिके साथ निवास कर व्यष्टिसे समष्टिका रूप धारण करो"।

मैंने देखा– नर, नारायण और प्रकृति तीनों अेक होकर अदृश्य हो गये। चारों ओर प्रकाश और शांति छा गयी। यही मेरी कल्पनाका अेक चित्र था। जिससे शान्ति और आनन्द पाकर मैं सो गया था !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्सान न रुकता दुनियामें इन्सान हमेशा बढ़ता है

: श्री वृन्दावन नामदेव :

इन्सान न रुकता दुनियामें इन्सान हमेशा बढ़ता है ।
युगकी हर मंजिल-मंजिलपर वह रोज इमारत गढ़ता है ॥

सूरजकी पहिली किरण देख जिस दिन उसने ली अँगड़ाई;
कलियाँ जागीं, बुल-बुल बोली, कोयलने भी वाणी पायी;
अन्तर-सौन्दर्यभरी वीणा तारों-तारों कुछ लहरायी;
भावोंमें स्वर थे फूट पड़े जग-जीवनमें हलचल आयी;
कुछ तेज कि आया ऐसा था, बिजली भी जिससे शरमायी;
दुनियाके आंगनमें उस दिन जड़ने भी चेतनता पायी ।
बस उन्हीं दिनों, उस पलसे वह, दिन-रात कि चलता रहता है;
हर ओर निकल, बढ़नेको नित, हर नयी सड़क वह गढ़ता है ।
इन्सान न रुकता दुनियामें इन्सान हमेशा बढ़ता है ।
युगकी हर मंजिल-मंजिलपर वह रोज इमारत गढ़ता है ॥

वह चला हजारों सालोंसे हिमवान गवाही भरता है;
गंगाके कूलोंसे पूछो, सागर न मनाही करता है;
इतिहासोंके पन्नोंवाले मीलोंसे यदि कुछ नाप सको—
तो नाप सको कुछ बातें भी, इन्सानी माया जान सको ।
कितना बल है ! कितनी कीमत !! कितनी की उसने कुरबानी !!!
ये चाँद थके सूरज डूबे, पर बात न उनने भी जानी ।
हर रोज क्षितिजके पार कहीं, वह दूर निगाहें भरता है;
पीढ़ीकी सीढ़ीपर पग धर वह रोज अजागर बढ़ता है ।
इन्सान न रुकता दुनियामें इन्सान हमेशा बढ़ता है;
युगकी हर मंजिल-मंजिलपर वह रोज इमारत गढ़ता है ।

वे खम्भ खड़े प्रियदर्शीके, वे खड़ी विजय दीवारें हैं;
ये महल अटारी किले खड़े वह ताजमहल, मीनारें हैं;
लिखती हैं नभके कागजपर इन्सान कि इतना आगे है
पुतली – अँगुली – जन-मन बल ले वह नयी बढ़न अनुरागे हैं;
संस्कृतियोंके आगे-आगे वह संस्कृति नयी सम्हाले हैं;
विस्मित "परिवर्तन-पंछी" भी "वह" स्मृति कितनी पाले हैं ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह सपनोंको साकार बना दिखलाता नयी प्रखरता है;
युग-नभमें कर्म-किरण साधे वह सूरज बनकर चढ़ता है।
अिन्सान न रुकता दुनियामें अिन्सान हमेशा बढ़ता है।
युगकी हर मंजिल-मंजिलपर वह रोज अिमारत गढ़ता है।

वह क्रान्तिदूत वह शांतिदूत पर भ्रान्त नहीं अपने पथसे;
अुद्भ्रान्त रहा बढ़नेमें ही अुतरा न कभी अपने रथसे।
वह शंख फूंकता रहा सदा, चलनेका ही, चढ़नेका ही;
दुर्धर गाण्डीव धनुष ताने व्रत लिये रहा बढ़नेका ही।
आँखोंका तेजानल अैसा प्रतिरोधी जिसमें क्षार हुअे;
दुनियाकी कौन बिसात वहाँ, प्रलयङ्कर शङ्कर हार गये।
यह पौध कि अैसी 'मानी' है हर ओर जमाये दृढ़ता है।
कह दें तो कछ बुरा नहीं भगवान तलक भी डरता है॥
अिन्सान न रुकता दुनियामें अिन्सान हमेशा बढ़ता है।
युगकी हर मञ्जिल-मञ्जिलपर वह रोज अिमारत गढ़ता है॥

कुछ अुसके अपने झण्डे हैं कुछ अुसके अपने नारे हैं;
कुछ अुसके चाँद सितारे भी कुछ जगते न्यारे-न्यारे हैं।
स्वासोंसे नभमें बादल छा भरता कुछ नयी तरलता है
मिट्टीके कण-कणको छूता कुछ प्राण अनोखे भरता है
जाने कैसा है मंत्र लिये वह नित्य नया कुछ रचता है।
अुसकी कैसी क्या दुनिया हो, बँध अुसमें नहीं विरमता है।
कुछ लक्ष्य कि अुसकी आँखोंमें दिनरात समाया रहता है;
अिसलिअे हमेशा बढ़नेको दिन-रात गजबका लड़ता है।
अिन्सान न रुकता है दुनियामें अिन्सान हमेशा बढ़ता है;
युगकी हर मंजिल-मंजिलपर वह रोज अिमारत गढ़ता है।

राजा आये रानी आयीं, सिंहासन अूँचे जरा हुअे;
चोचले जगे दुनिया भरके, रंगमहलोंके निर्माण हुअे।
रो पड़ी झोपड़ी जैसे ही, अिन्सान कि चौंका वैसे ही।
अुठ गया अेक भूकम्प, प्रलयकी घड़ियाँ आयीं वैसे ही।
मिट गये तख्त, मिट गये ताज, मिट गये वहीं राजा-रानी;
रह गये बुद्ध, अीसा, गान्धी, जिनवरकी दुनिया अिन्सानी।
अिसलिअे वही अिन्सान सन्देशा-युगका ढोये चलता है
हर ओर देख लो आंखें भर कारवाँ अुसीका बढ़ता है।
अिन्सान न रुकता दुनियामें अिन्सान हमेशा बढ़ता है,
युगकी हर मंजिल-मंजिलपर वह रोज अिमारत गढ़ता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह थका नहीं, वह रुका नहीं, वह दबा नहीं, वशमें न कहीं;
वह बना रहा, वह तना रहा, जाने-अनजाने झुका नहीं।
कुछ अुसकी अपनी मस्ती है कुछ अुसकी अपनी हस्ती है;
जी हाँ ! अुसके हर बोलोंपर अुठती अिन्सान-परस्ती है।
कैसी भी खुली चुनौती हो, वह रौंद कि आगे चलता है;
बस अिसीलिअे अुसके हाथों, अुसका सौभाग्य दमकता है।
यह गलत कि केवल रागी है, बागीकी अुसमें प्रभुता है;
यदि नये अँधेरे आते हैं तो नयी मशालें गढ़ता है।
अिन्सान न रुकता दुनियामें अिन्सान हमेशा बढ़ता है।
युगकी हर मंजिल-मंजिलपर वह रोज अिमारत गढ़ता है॥

कितना अुन्माद समाये वह, अूफान बढ़ाये चलता है
मनुका वह बाँका पूत कि सँग तूफान अुठाये चलता है।
आना न यहाँ पथमें बनकर कोअी बन्धन कोअी रोड़ा;
अुसने पलमें सब चूर किया मुँह अुसने है न कभी मोड़ा।
क्षण अड़ा कि बस भूकम्प हुआ, दुनिया टूटी सूरज फूटे,
रोड़ेवाले अुड़ गये अिधर कुछ अुधर दिखे लूटे-लूटे।
यह शक्ति तौलनेकी किसमें अब भी बाकी कुछ जड़ता है?
वह कौन बचा है शेष कि जो सम्मुख हो आज अकड़ता है?
अिन्सान न रुकता दुनियामें, अिन्सान हमेशा बढ़ता है।
युगकी हर मंजिल-मंजिलपर वह रोज अिमारत गढ़ता है।

अुसकी ही जय-जयकारें हैं, अुसके ही अुठे तराने हैं
भू से नभतक गूँजे-गूजें अुड़ रहे अुसीके गाने हैं।
अब कहना अमरोंके पुरमें अिन्सान वहाँपर पहुँचेगा;
कोअी होवे चाहे राजा, यशगान अिसीका गूँजेगा।
अिसलिअे छोड़ अपनी पदवी कुछ नीचे होकर वह आवे;
अपने भावी अधिशासकको अगवानी करके ले जावे।
युग-पुण्योंकी तलवार लिये वह देखो आज अुमड़ता है
पूजा कर लो अुसकी पहिले जब तलक कि अूपर चढ़ता है।
अिन्सान न रुकता दुनियामें अिन्सान हमेशा बढ़ता है।
युगकी हर मंजिल-मंजिलपर वह रोज अिमारत गढ़ता है॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेक रुमानियन कहानी :

कमजोरियोंकी अेक शृंखला

: श्री अियोन लूका कराजियाले :

मुझमें अेक कमजोरी है, जैसी हर व्यक्तिमें हुआ करती है। आखिर मैं भी तो अेक अिन्सान ही हूँ। मेरी दिली दोस्त मदाम जेल मारी पोपेस्कुकी सामान्य अिच्छाअें मेरे लिअे हुक्मकी तरहसे हुआ करती हैं। मुझे अुनको पूरा करनेमें अेक अजीब किस्मकी खुशी हुआ करती है। अिसका कारण यह भी है कि मेरे अूपर अुनका कितना असर है, कितना अधिकार है, यह जानते हुअे भी वे अिसका अधिक लाभ नहीं अुठाया करतीं। आअिये, देखें, अिस दफे क्या बात हुअी है, अेक चिट्ठी है :

प्यारे दोस्त,

मैं जानती हूँ कि तुम प्रोफेसर कौस्तिका अियोनेस्कुके बहुत अजीज़ दोस्त हो और वे तुम्हारी बात कभी नहीं टाल सकते।

मैं तुम्हारी बहुत शुक्रगुजार होअूँगी अगर तुम अुनके शिष्य मितिका ज्योर्मेस्कु, सेकेन्डरी स्कूल, अेक्स ४ थी जमातके लिअे लैटिनमें सात नम्बर दिलवा दो। बिना अितने नम्बर पाये वह फेल हो जाअेगा और अुसे दुबारा अुसी जमातमें पढ़ना पड़ेगा। यह अुसके परिवारके लिअे बहुत बुरा होगा। अुसका खानदान अच्छे खानदानोंमें गिना जाता है। वह मेरा नजदीकका रिश्तेदार है और अगर वह फेल हो गया तो मुझे बहुत तकलीफ होगी।

प्यार भरे आदरके साथ—
तुम्हारी सच्ची दोस्त,

—मारी पोपेस्कु

ओह ! क्या अदा है लिखनेकी !! क्या प्यारा हुक्म है !! और यह ठीक तरहसे फिट भी बैठ जाता है। आखिर अियोनेस्कु भी तो मेरी तरह ही अिन्सान है। अुसमें भी अिन्सानी कमजोरियाँ हैं। और फिर वह मेरा दोस्त भी है। वह मुझे कभी अिन्कार नहीं कर सकता। मैं घोड़ागाड़ी मंगाकर जल्दी ही लैटिनके अध्यापक अियोनेस्कुके पास जाता हूँ।

"कौस्तिका, मेरे अजीज़, मैं जानता हूँ कि जो बात मैं कहूँगा तुम अुसे टालोगे नहीं ! मैं जानता हूँ कि मैं तुम्हारी दोस्तीपर भरोसा कर सकता हूँ। और जैसा कि तुम जानते हो कि मौजूदा हालातमें, जब कि मैं अिस मामलेमें अितनी अधिक रुचि रखता हूँ, मुझे पूरा अेतबार है कि तुम अपनी दोस्ती निभाओगे और अुसके बदले.....मेरा मतलब है ..वैल...संक्षेपमें..."संक्षेपमें" अियोनेस्कुने कहा—"मैं समझता हूँ, तुम्हें अितनी बड़ी भूमिका बाँधनेकी जरूरत नहीं थी। तुम यहाँ अिस समय मेरे किसी आलसी शिष्यके बारेमें कुछ रियायत या खास माँग करने आये हो। क्यों ठीक है न ?"

"वह आलसी नहीं है कौस्तिका ! वह अेक अच्छे खानदानका लड़का है, मेरा रिश्तेदार है। "कौन जानता है कि वह आलसी है या केवल मोटी बुद्धिका बेवकूफ ?"

"यह सच नहीं है कौस्तिका, मेरे अजीज, लड़का बहुत अच्छे किस्मका है...देखो मुझे निराश मत करो। मैं अिस भरोसेके साथ आया हूँ कि मैं तुम्हारी दोस्तीपर पूरा भरोसा कर सकता हूँ; खासकर मौजूदा हालातमें जब कि तुम जानते हो कि मैं अिस मामलेमें बहुत अधिक दिलचस्पी रखता हूँ"

"अरे ! बस भी करो। तुम जानते हो कि मेरा लगाव तुमसे है। आपसदारीमें अितनी लम्बी-चौड़ी भूमिकाकी क्या जरूरत है ? सीधे बताओ कि तुम्हारी प्रेमिकाके लाड़लेको मैं कितने नम्बर दे दूँ ?"

"सात, कोस्तिका, प्यारे लड़के !!"

"और अगर वह कुछ नहीं जानता हो तो ? काला अक्षर भैंस बराबर हो तो ?..."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मान लिया कि वह कुछ नहीं जानता है। तो...? जेसे कि वह बिना पढ़ाअी-लिखाअीके पास करनेवाला पहला या आखिरी लड़का हो...मैं तुम्हारी मिन्नत करता हूँ, कौस्तिका - बड़े दोस्त...अगर अुस लड़केको फिर अुसी जमातमें रहने दिया गया तो अुसके परिवारके लिअे यह बहुत बुरा होगा...और अिससे मुझे भी बहुत तकलीफ होगी..."

"अेक दोस्तकी न रोकी जा सकनेवाली आरजू" कौस्तिका कहता है—'तुम हुक्म चलानेमें बड़े तेज हो—चलो ठीक है...मैं अेकबार फिर अुसे पास कर दूँगा मैं अुस मूर्खको सात नम्बर दे दूँगा..."

"धन्यवाद !! कौस्तिका, बड़े दोस्त...यह सच-मुच तुम्हारी बड़ी शालीनता है .."

"अुसका नाम क्या है ?"

मैं जल्दी-जल्दी अपनी जेबसे वह पुर्जी निकालनेकी कोशिश करता हूँ.. अरे वही मदाम जेल मारी पोपेस्कुकी चिट्ठी...यह तो नहीं है...कहाँ चली गयी ?...मैं कोस्तिकासे कहता हूँ :

"अेक मिनट ठहरो..."

मैं जल्दीसे बाहर आकर अेक घोड़ागाड़ीपर बैठकर घर जाता हूँ...पर जाकर भी वह चिट्ठी नहीं मिल पाती ...तब मैं जल्दीसे मदाम जेल पोपेस्कुके घर चला जाता हूँ...

"मेरी प्यारी दोस्त, सब कुछ ठीक है। अुस अध्यापकसे जितने नम्बर चाहिये अुनका वायदा मैं ले आया हूँ। अब केवल मुझे आपके लाड़लेका नाम चाहिये....अुस जवानका क्या नाम है...?"

"मैंने अपनी चिट्ठीमें तो वह नाम लिख दिया था .."

आपने लिखा तो था। परन्तु वह चिट्ठी घरपर दूसरे कागजातके साथ कहीं रखी गयी है और मामला बहुत जल्दीका है...मैंने घरपर अुसे खोजनेमें वक्त जाया करना ठीक नहीं समझा, अिसलिअे मैं सीधे आपके पास दौड़ा आया हूँ...क्या नाम है अुसका ..?"

"गौश...मुझे याद नहीं है" मेरी खूबसूरत दोस्त कहती है "सच्ची बात तो यह है कि मुझे मदाम प्रोअेटेस्कुने कहा था। वे मेरी अेक गहरी दोस्त हैं। मैं अुन्हें बहुत चाहती हूँ और मैं अुनकी कोअी बात नहीं टाल सकती। अुन्होंने ही मुझसे तुम्हारे पास चिट्ठी लिखवायी थी। अुनका कहना था कि तुम्हारा मुझसे लगाव है। और तुम मेरी कोअी बात नहीं टालोगे। और प्रोफेसर कौस्तिका अियोनेस्कुका तुमसे बहुत लगाव है और वे तुम्हारी बात नहीं टाल सकते .."

"तब किया क्या जाअे...?

'तुम मदाम प्रोअेटेस्कुके पास जाओ और अुनसे अुस लड़केका नाम पूछो जिसकी सिफारिश अुन्होंने तुमसे करनेके लिअे मुझसे की थी .."

"आपका खादिम हूँ सरकार !!!" और अिस प्रकार मैं दौड़कर मदाम प्रोअेटेस्कुके पास जाता हूँ।

"मदाम प्रोअेटेस्कु, मैं आपको तकलीफ देनेके लिअे बहुत दुःखी हूँ। आपने मेरी दोस्त मदाम जेल मारी पोपेस्कुसे किसी लड़केकी सिफारिश अिसलिअे की थी कि वे अुसकी सिफारिश मुझसे करें और फिर अुसकी सिफारिश मैं अपने दोस्त कौस्तिका अियोनेस्कुसे कर सकूं ....."

"हाँ ! ठीक है...मैंने अैसी सिफारिश की है..."

"अुस लड़केका नाम क्या है ?"

"मारीने अपने खतमें अिसका जिक्र नहीं किया था क्या...?"

"अुन्होंने किया तो था पर अुनकी चिट्ठी मुझसे कहीं खो गयी है और मदाम जेल पोपेस्कुको अुसका नाम भूल गया है... अिसीलिअे अुन्होंने मुझे आपके पास भेजा है कि मैं नाम जान सकूँ...

'तुम्हें सच-सच कहूँ...तो मैं भी अुसका नाम भूल गयी हूँ... मुझे अिस समय याद नहीं आ रहा है... मुझे अेक छोटेसे पुर्जेपर अुसका नाम लिखकर दिया गया था, वह पूर्जा मैं मारीके पास ही छोड़ आयी थी... तो भी घबराओ नहीं, हम अपनी पड़ौसिन मदाम डायाकोस्कुसे पता कर सकते हैं... असलमें यह विचार अुन्हींका था... वह जानती है कि मारी मुझे बहुत चाहती है और तुम मारीकी कोअी बात नहीं टालोगे और स्कूलमास्टर कौस्तिका अियोनेस्कु तुम्हारी बात कभी नहीं टाल सकता है..."

"तब", मैं कहता हूँ "हमें क्या करना चाहिये ?"

"जरा रुको...मैं मदाम डायाकोनेस्कुको बुला भेजती हूँ...वे पासके मकानमें ही रहती हैं .."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे ज्यादा देर रुकना नहीं पड़ता है,लो ये मदाम डायाकोनेस्कु आ गयी। पर नामका अुन्हें भी पता नहीं, अुन्होंने भी वह पुर्जा हस्बमामूल मदाम ओअेटेस्कुको दे दिया था और फिर भूल गयी।"

"तब किया क्या जाय.. ?"

"मदाम अिकोनोमेस्कुके पास दौड़कर जाओ"

मैं लपककर मदाम अिकोनोमेस्कुके पास पहुँचता हूं... वहांसे मदाम साचेलेरेस्कुके पास....अुसके बाद मदाम पिस्कुसेस्कुके पास... और आखिरमें वह नाम मुझे मिल गया... वह लड़का मदाम पिस्कुपेस्कुका भांजा है, अुनकी बहिनका लड़का...मदाम डास्कालेस्कुका लड़का : मितिका डास्कालेस्कु...

हम अेक दूसरेकी कोअी बात नहीं अुठा सकते हैं..... मदाम डास्कालेस्कुके लिअे मदाम पिस्कुपेस्कु। मदाम पिस्कुपेस्कुके लिअे मदाम अिकोनोमेस्कु। मदाम अिकोनोमेस्कुके लिअे मदाम साचेलेरेस्कु। मदाम साचेलेरेस्कुके लिअे मदाम डायाकोनेस्कु। मदाम डायाकोनेस्कुके लिअे मदाम प्रोअेटेस्कु, मदाम प्रोअेटेस्कुके लिअे मदाम जेल पोपेस्कु। मदाम जेल पोपेस्कुके लिअे मैं और मेरे लिअे मेरा दोस्त कौस्तिका अियोनेस्कु....मैं अुसके घर लपककर पहुँचता हूं...

"कौस्तिका, बडे दोस्त.. मुझे गतालखातेमें मत फेंक देना... मुझे पूरी अुम्मीद है कि तुम मेरी बात टालोगे नहीं... मुझे अेक लहमेके लिअे भी शक नहीं है कि तुम्हारी दोस्तीपर मैं कितना भरोसा कर सकता हूँ..

"यह फालतू बकवास बन्द कर..."

"तो अुसके सात नम्बर बना दो न.."

"तुम्हारा मतलब किससे है ?"

"मितिका डास्कालेस्कु !!"

"मितिका डास्कालेस्कु... मैं नहीं जानता हूँ कि अुस नामका कोअी मेरा शिष्य है..."

"हाँ-हाँ, है क्यों नहीं ?"

"अच्छा, तो आओ, हाजिरीका रजिस्टर देखें" और वह हाजिरीका रजिस्टर देखता है।

नहीं। नीचेकी जमातमें कोअी मितिका डास्कालेस्कु नहीं है। यह गल्ती है। वह जरूर अूपरकी जमातमें होगा।

अबकी बार मैं सीधे दौड़कर मदाम पिस्कुपेस्कुके पास जाता हूँ ..

'मदाम पिस्कुपेस्कु, आपका भांजा किस जमातका अिम्तिहान दे रहा है ?'

'छठी जमातका'

"आह्" मैं कहता हूँ "अब ठीक हुआ।"

मैं फिर लपककर अियोनेस्कुके घर आता हूँ।

'वह छठी जमातमें है, वह मेरा डास्कालेस्कु।'

'तब अुसकी कापी मेरे पास नहीं आवेगी। वह जार्जेस्कुके पास जावेगी। जार्जेस्कुको जानते हो ?'

'नहीं। पर तुम नहीं जानते क्या ? आखिर तो वह तुम्हारे साथ ही पढ़ाता है।'

'मैं अुसे अच्छी तरह जानता हूँ, वह मेरा दोस्त है। वह मेरी बात नहीं टाल सकता..'

"अच्छा तब" मैं कहता हूं "मेरा काम करवा दोगे न ?....मुझे पूरी अुम्मीद है कि मैं तुम्हारी दोस्तीका भरोसा कर सकता हूँ ....."

'फिर वही बकवास शुरू की...तुम्हारे पास गाड़ी है न.... जल्दी आओ, जार्जेस्कुके पास चलें..'

"अच्छा चलो"

हम जार्जेस्कुके घर जाते हैं। मैं गाड़ीमें बैठकर अियोनेस्कुका अिन्तजार करता हूँ। थोड़ी देरमें वह वापस आता है और कहता है :

"तुम बड़े भाग्यवान हो ! हम लोग ठीक समय-पर पहुंचे। अगर हम पन्द्रह मिनटकी देर करते तो वह नम्बरोंकी सूची स्कूल ले गया होता और रजिस्टरमें नंबर लिख चुका होता.....तुम्हारे लाड़लेको तीन नंबर मिले थे..."

"और अब ?"

"अब सात हो गये हैं।"

वहाँ मैं सोचने लगा कि कुछ मिनटोंकी देर क्या कुछ कर सकती थी। अेक जिन्दगी अुससे बरबाद हो जाती। मितिका डास्कालेस्कुको फिर अुसी जमातमें रहना पड़ता। हालांकि अुसकी मां मदाम डास्कोलेस्कु अुसको अितना प्यार करती है और मदाम पिस्कुपेस्कु मदाम डास्का-लेस्कुको, मदाम पिस्कुपेस्कुको, मदाम अिकोनोमेस्कु मदाम साचेलेरेस्कुको, मदाम डायेनेस्कु मदाम अिको-नोमेस्कुको, मदाम प्रोअेटेस्कु मदाम डायेनेस्कुको और मदाम जेल पोपेस्कु मदाम प्रोअेटेस्कुको अितना प्यार करती हैं.....मदाम जेल मारी पोपे...स्कुमेरी मारी.. जिसको मैं दिलसे चाहता हूं। जिसकी हर बात मेरे लिअे हुक्म है !!!

—[अनुवादिका : श्रीमती कमल आर्य, बी. अे.]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्रोत

: श्री मनोहर देशपांडे :

हथेलियोंके सम्पुटमें सिर रख टेबिलके निकट सदानन्द बैठा था । टेबिल लैम्प अेक कोनेमें धीमी रोशनीमें जल रहा था । अुस धुंधलमें कमरेका जो दृश्य दिख रहा था, विशेष आशाजनक नहीं था । वहाँकी सारी चीजोंपर बुढ़ापेकी-सी मुर्दनी छायी थी। शीशा औंधा पड़ा था और कंघा फर्शपर धूलमें सना हुआ ! मेजपर रखे हुअे कपसॉसरमें ठंडी चाय न जाने कबसे यों ही पड़ी थी । चायके ठंडे द्रवपर काअी-सी मटीले रंगकी सीढ़ जम गयी थी, जो लैम्पकी धुंधली रोशनीमें बड़ी अजीब लग रही थी । अुलझी हुअी लटोंको माथेपर समेटकर वह टेबिलपर सामने पड़ी हुअी अेक वस्तुको निहारने लगा । अजीब ढंगकी तरलतासे भरी हुअी अुस छोटी-सी बोतलके लेबिलपर जर्द-लाल अक्षरोंमें लिखा हुआ था—'जहर !'

सदानन्दकी दृष्टि केन्द्रित हुअी, शरीर और मनकी सारी चेतना समेटकर बड़ी हिम्मतसे अुसने हाथ बढ़ाया । (हाथ बढ़ाया कहनेकी अपेक्षा हाथ बढ़ानेका यत्न किया– कहना वस्तुस्थितिके अनुरूप होगा । क्योंकि अुसने अनुभव किया अुसका हाथ संज्ञाहीन हो गया है । अैसा संवेदन-शून्य जैसे बर्फीले आवरणमें पड़ा हुआ काठका डंडा ! शायद बड़ी विचित्र कल्पना है !)लेकिन वह ज्यों-ज्यों बोतलकी ओर हाथ सरकाने लगा, अुसने अनुभव किया, बर्फके आवरणमें अुसका हाथ धँसता जा रहा है । अुसने हाथ अुठानेका यत्न किया, झटकनेका यत्न किया, लेकिन व्यर्थ ! अुसका हाथ किसी अद्‌भुत शक्तिके प्रभावसे अधिकाधिक संज्ञाहीन हो रहा था । मनकी समस्त चेतना केन्द्रित कर अुसने हाथका संचालन करना चाहा । पर शरीरके अुस अंशके पास पहुँचते ही जीवनका प्रवाह जैसे रुक जाता था—चेतना मर जाती थी और जड़-दिङ्‌मूढ़ सदानन्द तड़पता रहता ।

घड़ीमें अेक घंटी बजकर गूँजती रही-टन्‌ ऽऽ ..। रातका अेक बजा था या डेढ़, जानना कठिन था । काल-प्रवाह जैसे अुस घंटीके पास ही रुक गया था । रातका पूर्वार्द्ध था या अुत्तरार्द्ध समझना सरल न था । यह साँझके बाद दबे पाँव आयी हुअी रात थी या भोर पहले टहलनेवाला भीषण अंधकार ?—कुछ भी समझमें नहीं आता था । सदानन्दने गर्दन अुठाकर घड़ीकी ओर देखनेका यत्न किया । अभी-अभी अुसने अेक या आधे घंटेकी सूचना सुनी थी । लेकिन अिस समय वह घड़ी अजीब व्यवहार कर रही थी । घंटा, मिनट और सैकिन्ड-की सुअियाँ लगातार अेक दूसरेके आसपास घूम रही थीं और घड़ीकी अुस परिधिमें विचित्र चक्राकार मंडल अुत्पन्न हुआ था । अपने अिद-गिर्द वे सब सूअियाँ अितनी शीघ्रतासे घूम रही थीं कि सदानन्दकी दृष्टि अुसपर स्थिर नहीं हो पाती थी । डरकी थर्राहट अुसके मनको छू गयी । अुसकी अिच्छा हुअी कि जोरसे चीखकर बता दें—"रोको...रोक दो ये चाल—यह विचित्र खेल !" पर अुसकी जबान जैसे तालूसे चिपक गयी थी और बोलनेका प्रयास असहाय, असफल और दयनीय हो रहा था ।

अुसने कसकर दाँत चुभा दिये और नीचेके ओठमें रक्तकी फुहार छूट पड़ी । जीभसे रक्तकी बूंदें चाटकर स्थिर दृष्टिसे सामने पड़ी हुअी बोतलकी ओर वह देखने लगा । शीशेकी बोतल, आकारमें छोटी थी । काग काँचका था । सुर्ख रंगके द्रवसे बोतल लबालब भरी थी । काँचके पारदर्शी शरीरमेंसे तरल ललाअीकी आत्मा सदानन्दकी ओर देखकर व्यंग्यसे मुस्कुरा रही थी । सदानन्द सब जानता था लेकिन विवश था । अुसके अवयव जड़, संवेदन-शून्य और चेतनाहीन थे । घड़ीमें अनिश्चित-समय-सूचक अेक घंटी बजी तभी अुसके मनमें अेक संवेदना दौड़ पड़ी कि हाथ बढ़ाकर झटपट वह बोतल हथिया ले और...और...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन वह संवेदना, अिच्छा-शक्तिकी क्षुद्र अुमंग दूसरे ही क्षण विलीन हो गयी और सदानन्द अुसी बधिर, संज्ञाहीन, विरूप-स्थितिमें लटकता रहा।

सदानन्दकी आँखें शून्यमें लगी थीं, बाल बिखरे थे, सुध खो गयी थी। किताबके असंख्य पन्ने हवाके झोंकेसे फड़फड़ाकर अुलटे जायँ—त्यों असंख्य पलोंके अगणित तिनके समयके स्रोतमें विलीन हो गये थे और अब मानो काल-मर्यादा समाप्त हो गयी थी; जिसका न आरंभ याद पड़ रहा था, न अंत मिल रहा था। यह काल-पुरुष कहींसे बीच ही में आकर रुका था और बर्फके समान जमकर यथावत् खड़ा था!

पलकें अुठाकर अुसने बोतलको देखा और विस्मय-से स्तब्ध रह गया। बोतलकी दिशामें रेंगता हुआ अेक कीड़ा बिलकुल पास पहुँच चुका था। साँस रोककर, निश्चल-दृष्टिसे वह कीड़ेकी ओर देखने लगा। धीरे-धीरे रेंगकर कीड़ा बोतलपर चढ़ने लगा। सदानन्दके दिलकी धड़कन बढ़ गयी। जैसे बोतलके तेज जहरकी अुस कीड़ेको जरा भी खबर न हो? अविचार, अनिश्चय, असहायताकी भी कहीं न कहीं हद होती ही है। पर विश्वका यह क्षुद्र जंतु प्राणोंका मोह त्यागकर बोतलके कागपर जा बैठा और देखते-देखते, सदानन्दकी पलक झँपकनेके अवकाशमें वह क्षुद्र जीव काग और बोतलके मुँहकी दरारमेंसे जो फिसला तो सीधा सुर्ख रंगके अुस तरल समुद्रमें!

सदानन्द जोरसे चीख पड़ा। वैसे वह बहुत जोरसे नहीं चीखा था; लेकिन अुस चीखकी प्रतिध्वनि अुसके अन्तर्मनमें अितनी जोरसे गूँजी कि अुससे वही भयभीत हुआ। अुसको भासित हुआ जैसे अुसकी चीख सुनकर पास-पड़ोसके लोग दौड़े चले आ रहे हैं, अुनकी पगध्वनि और बातचीतका शब्द क्रमशः निकट होता हुआ द्वारके पास आकर रुक गया। पड़ोसी अिस अविचारके कारण अुसे पुलिसको सौंप रहे हैं, गवाहें हो रहीं—प्रमाण पेश किये जा रहे हैं और सब लोग अुसकी ओर अँगुली दिखाकर आपसमें फुसफुसा रहे हैं। क्या ग़रीबीसे कभी कोअी हैरान नहीं होता? बेकारीसे मन संतप्त हो जाता है; यह क्या किसीको मालूम नहीं? किसीका क्या कभी प्रेम-भंग नहीं होता? फिर भी सदानन्दका गला सूख गया और अुसे लगा जैसे कोअी अुसका गला दबा रहा है। और अिस सबके लिअे गवाह है वह छोटी-सी जहरकी बोतल! अुस बोतलको देखकर अुसका मन आतंकित हुआ। अुसमें फिसला हुआ कीड़ा जीनेकी आशासे तड़प रहा था। सदानन्दकी दृष्टिमें दृश्य केन्द्रित होने लगा और देखते ही देखते अेक अनहोनी बात हुअी। बोतलका द्रव जैसे सड़ गया। अुसमें बिगड़े हुअे दूधकी तरह झाग अुठने लगा और बाढ़में बहनेवाली वेगवती नदीकी तरह वह द्रव बढ़कर धीरे-धीरे बहने लगा। पलभरमें पूरी टेबिलपर वह विषैला द्रव फैल गया, जिसमें डूबा हुआ कीड़ा छटपटाकर, तड़पकर सतहपर आनेकी कोशिश कर रहा था पर कबतक वह यह जीवन-संग्राम करेगा अिसका अंदाज सदानन्द नहीं लगा पा रहा था।

मनमें अेकाअेक करुणा अुमड़ी। हाथ बढ़ाकर बोतलको छूनेकी कोशिश की, पर बोतलके तरलको अपनी ओर बढ़ते देखकर अुसने अपना हाथ पीछे खींच लिया। प्रतिपल अपनी ओर बढ़ते हुअे अुस प्रवाहको देखकर अुसके प्राण भयकंपित हुअे। जोरसे चीखकर, टेबिल छोड़कर भाग जानेकी अुसकी अिच्छा हुअी; पर किसी अदृश्य खिंचावसे वह कुर्सीमें जमा रहा। शारीरिक-गतिविधि, मानसिक-मंत्रणा स्तब्ध थी—घनीभूत हो चुकी थी। अुसे क्षीण आभास हुआ—क्रमशः निकट आकर अुस स्रोतने घेर लिया और अुसके साथ धीरे-धीरे प्रवाह-पतित-सा वह बहता जा रहा है। देहके रोम-रोमसे भयंकर जलन अुभरने लगी। गर्दन अुठाकर अुसने आसपास देखा। वह कीड़ा दूर कहीं लुप्त हो गया था। स्रोतका बहाव काफी तेज था और अेक दूसरेको घेरनेवाले अनेक बहाव अुसमें चक्राकार विवर्त बना रहे थे; जिनमें अजीब खिंचाव था। वह बेचारा अनुमान नहीं लगा पा रहा था कि अिस अद्भुत स्रोतमें अुसे कबतक बहना होगा।

आँख अुठाकर अुसने किनारे खोजनेकी कोशिश की। दूरतक आदमियोंके धुँधले धब्बे दीख रहे थे। विराम चिन्होंकी तरह दिखनेवाली अुन अद्भुत आकृतियोंको वह तनिक कुतूहलसे देखता रहा। अुस अनंत बिन्दु-समूहके अेक धब्बेको धीरे-धीरे अपनी ओर बढ़ते देखकर सदानन्द घबरा अुठा। वह धब्बा—वह मानवी जन्तु अुसे विशेष प्रिय नहीं था, फिर भी अुसने कभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं सोचा कि अुसकी तरह वह विराम चिन्ह-सा धब्बा भी अुस विवर्तमें आकर अुलझे। अुसने हाथ अूपर और अूपर अुठाकर अुसको संकेत करनेका यत्न किया लेकिन वह आकृति अंधेपनसे पास और पास आ रही थी। अुसके निकट, अेकदम पासमें आकर वह निश्चल खड़ी हो गयी।

अुस आकृतिकी सूरत देखकर सदानंदको जोरका धक्का लगा। वे अुसके काका थे। अुसके पिताके ६ हजार रुपये हड़पकर अुसे कागजके पतंगकी तरह दुनियाके मुक्त आकाशमें भटकनेके लिअे छोड़ देनेके बाद अुनसे सदानन्दकी यह भेंट विचित्र थी। अुनकी मुद्रामें दयनीय करुणाका अैसा अद्‌भुत भाव विद्यमान था कि अुस परिस्थितिमें भी सदानन्दको अुनकी दया आ गयी। अुसने हाथ बढ़ाकर अुनकी देहको छूनेका प्रयत्न किया किन्तु अुसके हाथ बढ़ाते ही किसी मंत्र-शक्तिसे वे स्रोतकी तेज धारामें गिरकर विलीन हो गये।

अुसने दुखसे ठंडी सांस ली लेकिन अब दुखड़ा रोनेकी अपेक्षा अपनी प्राणरक्षा करना अधिक आवश्यक था। प्रवाहकी गति बढ़ गयी थी। ट्रामकी खड़-खड़, बसकी घर-घर और अनेक यंत्रोंके कर्णकटु स्वरोंकी सम्मिलित-ध्वनि जैसे अनेक आवर्तन-विवर्तन लेकर क्षिप्रगतिसे दौड़ने लगे—कुछ अैसा ही वेग अुस स्रोतमें आ गया था; जिसमें निरंतर नाद हो रहा था।

स्रोत संकुचित होने लगा। यही अुसकी आशाका अेकमात्र आधार था। बहावके दोनों किनारोंपर पूर्व परिचित चित्र-विचित्र अनेक आकृतियाँ मिलती थीं, जिसमें रअीसकी बेटी वह मेनका थी, जिसके दाँत बाहर झाँकते थे, रुपयोंके लिअे सब कुछ करनेका गुरुमंत्र देनेवाले अुसके निकटतम मित्र मधुसूदनकी आकृति भी आँखोंके सामने नाचती हुअी निकल गयी। सबके सब अुस वेगवान स्रोतमें विलीन हो रहे थे। कुछ तो अुसमें झांकते ही संतुलन खोकर चिर समाधि ले रहे थे।

अब तो अुसका सिर चकराने लगा। बेसुध होते ही मेरी भी अन्य मानवी धब्बोंकी-सी स्थिति होगी अिस डरावनी कल्पनासे अुसने अपने ओठ काट लिये। रक्तकी धार वह निकली। ओठ चूसकर वह अपनी सम्पूर्ण शक्ति केन्द्रित करने लगा। अिसी समय दूर वह साधारण कीड़ा देख पड़ा जो विनाशसे अभी भी संघर्षकर रहा था। अुसकी ओर देखते ही सदानन्दका मन और अुसकी आत्मिक-शक्ति अुमड़कर कीड़ेको बचानेके लिअे अुसकी ओर दौड़ने लगी। अुसे याद आया, कृष्णके पावन चरण-स्पर्शसे यमुनाका स्रोत विभाजित हुआ था। सीताको धरतीने अपनी गोदमें समेट लिया था, वह स्मृति सजीव हो अुठी। निश्चयकी कठोरताका प्रकाश अुसकी आँखोंसे छलकने लगा और हाथकी मर्यादामें आया हुआ कीड़ा अब आखिरी थपेड़ा खाकर पराजित होगा यह देखते ही प्रवाहके असीम स्रोतमें फटकार देकर अुसने हाथ बढ़ाया और अुस जंतुको स्रोतके बाहर अुठाकर रख दिया।

और अिसी समय वास्तवमें अेक आश्चर्य देखा गया। कहींपर रहस्यमय भयंकर शब्द हुआ और वह तेज धारवाला बहाव सूखने लगा। अन्तमें सूखकर पृष्ठभूमिका अेक स्थिर, गतिहीन, शुष्क टुकड़ा मात्र रह गया।

टन् ऽऽ! शब्दकी दिशामें सदानन्द देखने लगा। साढ़े चार बजे थे। सामने टेबिलपर गर्दकी मोटी पर्त जमी थी। पाँवके पास कोअी-सी काँचकी बोतल टूटकर पड़ी थी। टुकड़े अिधर-अुधर बिखरे थे, जिन्हें समेटकर अुसने कोनेमें डाल दिया। माथेपर झुकी हुअी लटोंको पीछे हटाकर खसखसी डाढ़ीपर हाथ फेरने लगा।—नहीं, नहीं, यह सब समेटना चाहिये अब! कलके लिअे कितना काम पड़ा है! निर्वासितोंकी परिषदमें गये हुअे लालाजी कल लौटेंगे, अुन्हें क्या अपना यह रूप दिखाअूँगा? मिलोंमें हड़तालकी हवा बह रही है और कल गेटके पास सभा है। वहाँ क्या यह मनहूस सूरत ले जाअूँगा?

सदानन्द झट् कुर्सी छोड़कर अुठ खड़ा हुआ और अुसने टेबिलपर पड़ी हुअी चीजें समेटकर बाथरूममें जानेके लिअे दरवाजेकी कुंडी खोली।

—(मराठी कहानीका रूपान्तर— अनु० : श्री अनिलकुमार, साहित्यरत्न)

CC-0, In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिन्धी-साहित्यका संक्षिप्त परिचय

: श्री लालचन्द अमरदिनोमल जगत्याणी, बी. अे. :

प्रागैतिहासिक काल

सिन्धी अेक पुरातन भाषा है। परन्तु अुसके विषयमें जो कहा जाता है कि–"यह संस्कृतसे प्रस्फुटित हुअी है", कुछ संदिग्ध बात है।१

कारण, आर्योंने जब सिन्धुमें पदार्पण किया अुससे पूर्व वहाँके निवासी (तत्कालीन सिन्धी) कोअी भाषा अवश्य बोलते तो होंगे ही ?

वह भाषा किस ढंगकी थी ? अुसकी रचना, अुसका डील-डौल कैसा था ? अिस विषयमें भी कोअी सप्रमाण अुल्लेख नहीं किया जा सकता।

परन्तु यह बात सिद्ध है कि–अति प्राचीन समयमें यहाँ कोल और संथाल रहते थे; जिनके विषयमें कहा जाता है कि–"सिन्धुमें आस्ट्रेलियासे आये होंगे"। कारण, अुस प्राचीन-कालमें दक्षिण-भारतका भाग पूर्व-दिशामें आस्ट्रेलियासे और पश्चिम-दिशामें आफ्रिका बल्कि अमरीका तक जुड़ा हुआ था। अपरंच आस्ट्रेलियाके आदि निवासी वर्ण तथा आकृतिसे कोल अेवं संथालोंके साथ मिलते-जुलते हैं। पुरातत्वज्ञ विद्वानोंका कथन है कि–"यह भू-भाग पूर्व-कालमें अेक महान् खण्ड था। जो कालके-चक्करमें आकर किसी महा भूकम्पके कारण अदृश्य हो गया, जिस स्थानपर आज अतलान्तक महा-सागर तथा हिन्द-महासागर अपनी अुत्ताल-तरंगोंसे लहरा रहा है।

अुस युगमें सिन्धुमें कोअी न कोअी साहित्य तो अवश्य होगा ही। परन्तु यह भी केवल अनुमान ही है। निश्चयसे तो तब कुछ कहा जा सकता है, जब कि अुस समयकी कोअी अेक-आध गद्य-पद्य पंक्ति हाथ लग जाअे। परन्तु सिन्धीमें अब भी कुछ अैसे शब्द प्रचलित हैं, जिनके लिअे निश्चयसे कहा जा सकता है कि–ये अवश्य कोल और संथालोंसे सिन्धीमें आये होंगे। जैसे–"कोरी" शब्द जिसका अर्थ है "बीस" (२०)-संख्यावाचक शब्द, न कपड़ा बुननेवाला जुलाहा।

सिन्धुका पठित चाहे अपठित वर्ग आज भी साठ (६०) को **तीन कोरी** कहता है। अिसके अतिरिक्त-भूँ-भूँ, म्याअू-म्याअू, चूँ-चूँ, टिकिलू-टिकिलू, घिणि-घिणि, झुणि-झुणि, ठकि-ठकि, ठा-ठा, अित्यादि शब्द कोल और संथालोंकी भाषासे ही सिन्धीमें आये हैं। कारण, अिस प्रकारके ध्वनि-अनुकरणात्मक शब्दोंका प्रयोग सबसे प्रथम अिन लोगोंने ही किया है।

किसी युगमें कोल और संथालोंपर द्रविड़ोंने आक्रमण किया। अिनकी भाषाका प्रभाव आज भी सिन्धीपर मौजूद है। जैसे–मोती, कुटिया, कटार, कोटु, खट, मुखिरी, पुष्प और नीर शब्द तामिलसे ही सिन्धीमें आये हैं।

खेतीमें धान पककर जब तैयार हो जाता है, तब 'टोयो' (अेक सेरभर माप करनेका लकड़ीका बना हुआ पात्र) भर-भरकर अुसका माप करते हैं। अुस समय 'हिकु' अर्थात् 'अेक' कहनेके बजाय **बरकतु** कहते हैं, जो कन्नड़के **बक्कु**का रूप है।

सिन्धी-बालक जब गुल्ली-डण्डा खेलते हैं, तब वकटु, रेण्डु, मून्, नार्, वअी आदि शब्दोंसे गिनती करते हैं। फिर ग्यारहसे सिन्धी-संख्याका आरम्भ करते हैं। ये वकटु आदि शब्द स्पष्ट तेलुगु–द्राविड़ी भाषाओंके वक्टु, रेण्डु, मूंडु, नालु आदिके रूप हैं।

सिन्धुमें आज भी ओड और माजर जातिके लोग द्राविड़ोंके अवशेष कहे जाते हैं।

---

१. "सिन्धी संस्कृतोत्पन्न भाषा है" अैसा अनुवादकका दृढ़ विश्वास है। अतः वह मूल लेखकके प्रागैतिहासिक-कालके कुछ अंशोंसे सहमत नहीं है।

–अनुवादक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्राविड़ोंके बाद आर्योंने सिन्धुमें पदार्पण किया। अुनकी भाषा संस्कृत थी। यद्यपि मुसलमानोंके आनेके बाद सिन्धीपर अरबी और फारसीका विशेष प्रभाव पड़ा, फिर भी व्याकरणकी दृष्टिसे यह संस्कृतोत्पन्न-भाषा मानी जाती है। अर्थात्—देशी-सिन्धीको संस्कृत-भाषाने अपनी गोदीमें भरकर अिस प्रकार लालन-पालन किया, मानो स्वकीया कन्यासे भी विशेष रूप अुसको दे दिया। यही कारण है जो सिन्धीको संस्कृतोत्पन्न माना जाता है।

सिन्धी-लिपि

अुस कालमें मुद्रणालय तो थे नहीं, जो पुस्तकें छपाकर अधिक अंशोंमें वितरण की जा सकती हों। परन्तु विद्वज्जनोंने ग्रन्थ लिखे तो अवश्य होंगे। अब प्रश्न यह अुठता है कि—वे लिखे किस लिपिमें गये?

अरबका प्रसिद्ध अितिहास लेखक अलबेरूनी दसवीं सदीमें सिन्धुमें आया था। ये महाशय अपनी यात्राके विवरणमें लिखते हैं कि—"सिन्धुमें अरबी और सिन्धी, दोनों लिपियाँ लेखन-व्यवहारमें आती थीं। सिन्धीके लिये देववागरी-लिपि व्यवहृत होती थी।"

ब्राह्मणावाद (नवाबशाह सिन्धुके जिलेमें) के खण्डहरोंसे प्राप्त मुद्राओं और लेखोंसे यह सिद्ध है कि—अुन दिनों देवनागरी-लिपिका व्यवहार था।

सिन्धीके लिअे अर्बीसिन्धी-लिपि तो १८५३ अी. में बनायी गयी। पाकिस्तानके अत्याचारोंसे सिन्धी-हिन्दू अपनी जन्म-भूमि छोड़कर भारतमें आ गये हैं। अब अुनमें साहित्यिक-मण्डली यह विचार कर रही है कि—सिन्धीके लिअे फिरसे देवनागरी-लिपि व्यवहारमें लायी जाअे। बहुतोंने तो यह व्यवहारमें ले भी ली है, जिससे विदेशी-लिपिके कारण सिन्धी-साहित्यको जो हानि पहुँची है, वह पुनः न होने पावे। अिससे सिन्धी-साहित्यकी श्री-वृद्धि ही होगी।

सिन्धी-शब्द-कोश

समयानुसार जैसे-जैसे परिवर्तन होता रहा है सिन्धी-भाषामें भी नवीन-नवीन शब्द और नवीन-नवीन कल्पनाअें आदि समाविष्ट होती रही हैं, अुन सबका यहाँ विस्तारसे वर्णन करनेका अवकाश नहीं है, परन्तु अितना अवश्य कहा जा सकता है कि—"सिन्धीकी भिन्न-भिन्न भाषाओंसे जो कोश-वृद्धि हुअी है, अुससे यह अेक हरी-भरी भाषा बन गयी है। अुदाहरणार्थ—"अूँट" शब्दको ही लीजिये, जिसके लिअे लेरो, मयो, चाँगो, करहो, तोदो, भूरु, तूरु, दाघो, दाची, गूनरो, बोतो बोदो और भटारो अितने पर्याय शब्द सिन्धीमें मिलेंगे। अिस प्रकार सिन्धके प्रसिद्ध सूफी-सन्त शाह अब्दुअल्लतोफने अपने काव्यमें स्त्रीके लिअे भी नारि, कामिणि, मुन्ध, औरत, स्त्री, भाटिया, ललना और जन आदि शब्दोंका प्रयोग किया है। बहादुरके लिअे भी—धीरु, दीरु, कूपो, जुंगु, जोधो, रहाअी, पातीरु, माँझी, सधरु, वरँकी, कुँअरु, बाँको, पाधँगु, घोटु, रावतु आदि मानो अेक विशेष सूची है। अिस प्रकार संस्कृतके अतिरिक्त शायद ही किसी अन्य भाषामें प्रत्येक शब्दके अितने पर्याय मिल सकते हों।

आगे कभी सिन्धी-साहित्यपर विचार करेंगे।

(क्रमशः)

(अनुवादक:- श्री कृष्ण टोपणलाल जैतली)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेक सुस्वादु लेख :

दक्षिण भारतके भोजन-संभ्रम

: श्रीमती राजलक्ष्मी राघवन :

जब आजकलकी तरह आर्थिक समस्याअें कठिन और भीषण न थीं, यानी १९३१ के पहले, तब दक्षिण भारतीय परिवारोंमें धनी और गरीबोंके घरोंमें शादियाँ पाँच दिन तक चलती थीं। अुसमें मनलुभानेवाली बात भोजन-संभ्रम अर्थात् विविध प्रकारकी भोजन सामग्रियोंकी थी। अिन पाँच दिनोंके बीचमें लगभग सभी तरहके भोजन तथा विशेष मिठाअियाँ आदि काममें लायी जाती थीं। और अिस प्रकारके विशिष्ट खाद्य-पदार्थोंका लक्ष्य केवल सम्बन्धियोंकी रुचिको तृप्त करना तथा प्रत्येकका दस पाअुण्ड वजन बढ़ाना था।

नुकीला बड़ा-सा केलेका पत्ता बिछाकर अुसपर किस्म-किस्मके खाद्य-पदार्थोंको परोसा जाता था। पहले फल, खासकर केला, आम, कटहल आते थे। द्रविड़ देशके कविगण अिसीको 'मुप्पलम्' के नामसे वर्णन करते हैं। अिन फलोंको मिलाकर 'पंचामृत' नामक अेक स्वादिष्ट पदार्थ तैयार किया जाता है। अिन तीनों फलोंको मुख्यतः पके हुअे केलोंको, छोटे-छोटे टुकड़े कर शहदमें भिगोकर मिश्री, किशमिश, खजूर, काजू आदिका मिश्रण करते हैं। अिलायची और थोड़ासा पच्चि कर्पूर (बरास) पीसकर अुसमें मिलाते हैं। वह खानेमें अमृतके समान मधुर होता है। क्योंकि अुसका नाम ही जब 'पंचामृत' है, तब अुसके स्वादका कहना ही क्या। दक्षिणके सुब्रह्मण्य देवता अर्थात् षड़ानन कार्तिकेयको पंचामृत अभिषेक और नैवेद्य दोनों बहुत प्रिय हैं, फिर देवाधिदेव श्री कार्तिकेय अिस देवामृतपर लट्टू हुअे बिना कैसे रह सकते थे ?

साग-सब्जियोंमें लगभग दस-बारह सब्जियाँ अुपयोगमें आती थीं। साधारणतया पकानेवाली सब्जियोंमें बैंगन, भिण्डी, पेठा (सफेद कुम्हड़ा), चचिण्डा, सेम, गँवारकी फली, केला, आलू, टमाटर, करेला, जमीकन्द, शकरकन्द, ककड़ी, खीरा तथा नारियल आदि होते हैं। अिन चीजोंसे बनाये जानेवाले पदार्थ कअी तरहके होते हैं; जिनमें कढ़ी, कुहू, कुट्टू, पच्चड़ि, अवियल अ दि मुख्य हैं। किसी भी फलीको छोटे-छोटे टुकड़ोंमें काटकर नमक लगाकर पकाते हैं। राअी और अुड़दकी दालको लाल मिर्चके टुकड़ोंके साथ तेल या घीमें छौंककर अुसमें पकायी हुअी सब्जी तथा कच्चे नारियलकी किस अुसमें मिला देते हैं। अिनमेंसे कुछ सब्जियाँ अिमली मिलाकर भी बनाते हैं। अुनमें हरी मिर्च, धनिया और मीठी नीमकी पत्ती भी डालते हैं। आलू, कच्चा केला, शकरकन्द आदिको पकाकर, अुसका छिलका निकालकर जीरा, राअी, मिर्च मसालेके साथ पीस देते हैं, अुसे 'पोडिमास' कहते हैं। वह देखनेमें 'अुप्पुमा' के माफिक लगता है। वह बहुत ही स्वादिष्ट होता है। 'वतकल्ल' नामसे आलू, केला आदिमें नमक मिर्च मिलाकर हींगके साथ भूनते हैं। अुसका गेहुंआ रंग देखकर जी ललचाता है।

अिनके अलावा "कुट्टू" नामसे अेक जरा रसीली चीज होती है। दालके साथ सब्जियोंके टुकड़े मिलाकर पकाते हैं फिर अुसमें मसाला, कच्चा नारियल, काजू, मूंगफली, किशमिश आदि घीमें भूनकर मिलाते हैं। अिमली मिलाकर भी "कुटटू" पकाया जाता है।

'तअिरपच्चिड़ी' यानी दहीका रायता कअी किस्मका होता है। यह कच्चा नारियल तथा अदरक लेकर हर सब्जीका पका या कच्चा तैयार किया जाता है।

अिसके बाद चटनीकी बारी आती है। चनेकी दालकी चटनी, नारियलकी चटनी, अदरककी चटनी, कच्ची अिमलीकी चटनी, बैंगनकी (भर्तेकी) चटनी, काली मिर्चकी चटनी, हरी धनियाकी चटनी, पोदीनाकी चटनी, आदि कअी तरहकी चटनियाँ बनाते हैं। अिनमें कअी बिना अिमलीकी और कअी अिमलीके साथ बनायी जाती हैं। दक्षिणमें चावलके साथ घी और चटनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलाकर खाते हैं या स्वाद बढ़ानेके लिअे जीभसे चाट लेते हैं। दोसा, अिड्लीके साथ मुख्य महत्व चनेकी दालकी चटनीका है।

फल, साग-सब्जी वगैरह परोसे जानेके बाद "कुलम्बु" या "सँभार" नामक अेक रसीला खट्टा पदार्थ परोसा जाता है। अिसमें भी कअी तरहकी तैयारियाँ होती हैं। अपनी ही भाषा (तमिळ) में मैं अिनके नाम बता रही हूँ। दक्षिण भारतीय "कोलम्बु" भी विष्णुसहस्रनामकी तरह अनेक रूप, अनेक नाम और अनेक स्वादसे प्रख्यात है। भातके साथ अिस कुलम्बुको मिलाकर और साथमें "पापड़"-फूल पापड़ लेकर खायें तो अुसका स्वाद ही अनोखा है। दोपहरकी स्वादिष्ट दावतके बाद रातमें अूपर बताये हुअे "कुलम्बु" के साथ हल्का खाना खानेसे मनको आराम, शांति और तन्दुरस्ती प्राप्त होती है।

दालका "सांभर" खास पदार्थ है। अेक कहावत तमिलमें है कि "दालके बिना शादी नहीं"। आलू और प्याजके साथ सांभर बना लें तो बड़ा ही स्वादिष्ट बनेगा। "सांभर" यानी "कुलम्बु" "कुट्टू" से थोड़ा रसीला मगर 'रसम्' से कुछ गाढ़ा होता है। मठ्ठेसे भी अेक तरहका कुलम्बु बनाते हैं। यह भी दो तरहका होता है। अेक खट्टे छाछमें हरा धनिया, हरी मिर्च, कच्चा नारियल आदिको पीसकर, मिश्रणकर, राअी, मीठी नीमकी पत्तीकी छौंककर। दूसरा पेठा, बैंगन, भिण्डी, आलू आदि सब्जियोंमें किसी अेकको अच्छी तरह पकाकर और चनेकी दाल, धनिया, मिर्च, कच्चा नारियल सब पीसकर अुबालते हैं फिर राअीकी छौंक देते हैं। "कुलम्बु" और पका चावल बहुत ही रुचिकर भोजन है।

हमारे यहाँ पापड़ भी कअी तरहके होते हैं। अुड़दके पापड़, चावलके पापड़, साबूदानेके पापड़, आलूके पापड़, कटहलके पापड़, कुलथीके पापड़, चार दालके पापड़ आदि-आदि। फूल-पापड़ चावल और साबूदानेकी मिलावटसे बनाये जाते हैं। चावलका आटा पका लेनेके बाद सेव बनानेवाली मशीनसे सेव बनाकर सुखा लेते हैं। आवश्यकतानुसार तेलमें तल लेते हैं। शादीमें अपने सम्बन्धी लोगोंमें नाम कमानेके लिअे अिन सब चीजोंका अुपयोग किया जाता है। अिनके साथ आलू, कच्चा केला, शकरकन्द, जमीकन्द आदिके चिप्स बनाकर अुनमें लाल मिर्च हींग, नमक पीसकर मिला देते हैं।

अिन पूर्व पीठिकाओंके बाद चावलके कितने रूप कैसे-कैसे तैयार किये जाते हैं, अिसपर ध्यान दीजिये। दक्षिणका मुख्य भोजन चावल है। चावलको बहुतेरे रूप, रस, रंगसे अलंकृत करके तैयार करते हैं। तमिळमें अिसके विभिन्न नाम यों हैं—वेण्पोंगल, शकरपोंगल, अुलुन्दोहोरे, अेल्लोहोरे, पुलिहोरे, तेंगापूशादम्, पट्टाणियात, अेलुमिच्चम्बकशादम्, मांगायशादम्, नार्थंगायशादम्, वांगोयात, केसरीयात, बगालायात, कदम्बम् अित्यादि कअी रंग-विरंगे मजेदार जायकेदार चीजें बनती हैं। यहाँ सिर्फ अेक-दो का वर्णन करती हूँ। अिमलीको पानीमें भिगोकर राअीको लाल मिर्चके साथ छौंककर अिमलीका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पानी अुसमें भिला देते हैं। थोड़ा-सा नमक डालते हैं। जब वह पानी अुबलकर चटनीके माफिक गाढ़ा हो जाता है, तब अुसको नीचे अुतारकर ठंडा कर लेते हैं और अच्छे चावलोंको पकाकर तिलका तेल हल्दी मलकर अुसके अूपर अिमलीकी चटनी और मसाला, खोपरा तथा मीठे नीमके पत्ते मिला देते हैं। फिर कढ़ाअीमें तिलका तेल गरम कर अुसमे काजू, मूँगफली, चना सबको कुचलकर अुस चावलमें मिला देते हैं। यही 'पोलियोरे' कहलाता है। दक्षिणमें बड़ीसे बड़ी दावत अिसके बिना संपूर्ण नहीं होती।

दूसरा स्थान है, 'कदम्बम्' यानी मिक्श्चरका। तूहरकी दालके साथ चावलको भी पकाकर अिमली, मसाला, खोपरा, घी, तेल सब मिला दें तो 'बिसिबे-हुलि चित्रान्न" नामक मैसूरका प्रमुख भोजन बन जाता है। अुसीका दूसरा नाम है "कदम्बम"। दालके साथ सब तरहकी सब्जियाँ पका लेते हैं। अिमली, पानी, मसला खोपरा, काजू छोटे-छोटे, 'बड़े' सबकी मिलावट होनेके बाद साँभरको अुबाल लेते हैं फिर छौंककर अेक नापसे पका चावल अुस साँभरमें मिलाते हैं। 'कदम्बम' में घी, तेल खूब दिल खोलकर लगाना चाहिये तभी वह हलुवेकी तरह हाथमें और बर्तनोंमें नहीं चिपटेगा। अिसी तरह मटर, आलू, बैंगन, आदिको घीमें भून लें फिर काजू, नीबूका रस, खोपरा, मसाला आदि मिलाकर नामतः आलूभात, वांगीभात, मटरभात आदि बनाते हैं। अब वेण्पोंगलको लीजिये। यानी अुत्तर भारतकी खिचड़ी। मूँगकी दाल और चावल मिलाकर पकाते हैं; फिर घीमें जीरा, काली मिर्च, हींग, काजू, खोपरा भूनकर छौंक देते हैं। छौंकनेके वक्त जो परिमल यानी खुशबू निकलती है, अुसे तो अनुभव करकेही समझा जा सकता है।

मूँगकी दाल और चावलको मिलाकर बिना नमककेही पका लें। चौगुना गुड़ डालें, अुसमें बादाम, पिस्ता, काजू, किशमिश आदि चीजोंको पावभर घीमें भूनकर खिचड़ीमें मिलाते समय खिचड़ीके अूपरही डालें तथा अिलायची भी डालें, अिस प्रकार अुसमें काफी घी देनेपर अुसे देखनेसे ही मन मुग्ध हो जाअेगा और मुँहमें पानी आ जाअेगा। यह हर त्यौहार-पूजामें खास-कर लक्ष्मीजी तथा कृष्ण भगवानकी पूजामें तैयार किया जाता है। यह "शकरपोंगल" है। आखिरी स्थान, "थदियन्न" का है। चावल पका लें। फिर नमक, दही, दूध, मक्खन मिला लेनेके बाद हरी मिर्च, हरी धनिया, अदरक, कच्चा आम-मगर ज्यादह खट्टा न हो, और खीरा वगैरह सबको धोकर छोटा-छोटा काटकर भातमें मिला दें। घीमें राअीको मीठे नीमके पत्तेके साथ छौंकना चाहिये। कहते हैं यशोदानन्दन कृष्ण जब वनमें गाय चराने जाते तब ममतामयी जसोदा माता शर्करान्न और दहिअन्न दोनों बनाकर वन-भोजनके लिअे छाक भेजती थीं।

पहले खाने योग्य "साँभर भात" है। अुसके बाद अूपर कहे हुअे मिश्रण। अन्नके पहले रसम् परोसा जाता है। 'रसम्' में भी कअी प्रकार हैं। यह दालका पानी और अिमलीका पानी मिलाकर नमक मसालेके साथ तैयार किया जाता है। परुप्पु रसम्, दाल रसम्, अिमलीका रसम्– अिसे बिना मसालेके लाल मिर्च, हींग और सरसोंसे छौंकते हैं। मिर्च-जीरा पीसकर अिमलीके पानीमें मिलाकर अुबालते हैं. फिर छौंकते हैं; अिसे "जीरा रसम्" कहते हैं। अिसका परहेजमें अुपयोग होता है। आम तौरपर ब्याहशादीके भोजमें "परुप्पु रसम्", "पनीर रसम्", "टमाटर रसम्", "मैसूर रसम्" आदि ही तैयार कर परोसे जाते हैं। हल्की-सी हींगकी सुगन्धके साथ पनीरसे मिला हुआ "पनीर रसम्" मन और नेत्रको बड़ा आनन्ददायक होता है।

अब मसालेदार चावलोंकी बारी है। अुसके बाद "पायसम्" यानी खीर परोसी जाती है। यह भी कअी तरह-की होती है। चावलको दूधमें पकाकर शकर मिलानेपर अुसे "पालपायसम्" कहते हैं। यह मलयालम् प्रदेशमें विशेष रूपसे खायी जाती है। साबूदाना दूधमें पका-कर चीनी, काजू, अिलायची मिलानेसे "साबूदाना पायसम", सिमअीको मिलाकर तैयार किया तो "शेमिया पायसम्" बनती है। पूरे नारियलके दूधमें गुड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिलायची मिला दें तो अुसे 'तेंगायपाल' यानी नारियलका दूध कहते हैं। खाली दूधको ही अुबालकर केसर, अिलायची, पचकपूर मिलायें तो "कुलम्बुपाल" कहते हैं। यह करीब-करीब वासन्तीके समान है। सूजी मिलाकर "रवा पायसम्" बनाते हैं। बादाम पीसकर अच्छे दूधमें मिलाते हैं अुसे "बादाम पायसम्" कहते हैं। पतली पूरी बनाकर अुसे चीनी, पिस्ता, किशमिश, अिलायची आदिसे तैयार किये हुअे दूधमें पका लें तो अुसे "पूरी पायसम्" कहते हैं। कच्चे नारियलको पीसकर पानीमें अुबालनेके बाद अुसमें अिलायची डालते हैं अुसे 'नारियल पायसम्' कहते हैं। मूंगकी दाल और चावलको घीमें भूनकर दूधमें अुबालकर पकाकर चीनी मिलाते हैं। काजू, अिलायची, बहुत-सा घी तथा केशर भी देते हैं। वह थोड़ा पतला होता है। अिसका नाम ही बड़ा शोभासम्पन्न है। "अक्कारिवडशल"। यह पूजा-पाठके नैवेद्यमें काम आता है। अिसका दर्शन भी अनोखा है। "केसरी भात" नामके चावलमें केसर मिलायी जाती है। बादमें दूधमें पकाये जाते हैं। अुसमें बादाम, काजू घीमें भूनकर काफी मात्रामें देते हैं।

अबतक भोजन ही हुआ, अब भक्ष्यपर ध्यान देंगे। नमकीन और मिठाअीके बहुत नमूने हैं। मसाल बड़ा, अुड़द बड़ा, दही बड़ा, अरिशि बड़ा (चावलमें बनाया जाता है), मटरका बड़ा, बोण्डा, पकोड़ा, तेन-कुलल, मुत्तसरिके, शीडं, मुरुकु, वाम्पोडि, मिक्श्चर आदि नमकीन चीजें, मिठाअीमें अतिरसम्, सोन्नियप्पम्, अपूप, मनोहरम्, सुहियन्, मूंगफलीका लड्डू, चनाकी दालका लड्डू, पोरिविलंगाय आदि होते हैं। अिसके बाद नवीन भक्ष्य आते हैं। ये सब दक्षिण और अुत्तरकी मिलावटें हैं। जैसे हलुवा, जलेबी, जाँगरी, लड्डू, घेवर, मैसूरपाक, बताशा, कोपरी मिठाअी, बूंदी, सूजी लड्डू, पूरी लड्डू, पोहन लड्डू, बर्फी, पेड़ा, शक्कर पूरी आदि। अैसे कअी तरहके भक्ष्य पदार्थ कअी रंगके मन और आँखोंको प्रसन्न करते हैं। अिसके अलावा मैसूरका ही अेक विशेष पदार्थ होता है जिसे "मण्डिगे" कहते हैं। बालसे भी पतली तार-सी सूजी घीमें भूनकर रखते हैं। केसर, बादाम, चीनी, अिलायची दूधमें अुबालकर "मण्डिगे" परोसकर अुसमें दूध मिला-कर खाते हैं। यह मुख्यतः मैसोर राज्यके लोग विवाह-कालमें बनाते हैं। अिसे हमारे तमिलनाडमें "पदरपणि" भी कहते हैं।

आपको अेक जी ललचानेवाली शादीकी बात बताअूंगी। दाक्षिणात्योंके विवाहमें मुख्य स्थान "काफी", "अिटली", "चटनी", "अुप्पुमा" और सूजीके हलुवाका है। काफीमें चूक हुअी कि आपको माफी न मिलेगी।

आगे कभी दक्षिण भारतकी शादीमें आपको निमंत्रण पहुचाअूंगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीनेकी बात

:श्री 'भृंग' तुपकरी:

जिन्दगी तीन रोज पहले मुझसे मिली थी,
और तीन रोज बाद मुझसे बिछुड़ जाअेगी,
दूर हो जाअेगी।
मेरी आरामतलबीने अेक रोज मुझसे
अपनी आसमानी अिच्छा जाहिर करते हुअे कहा था—
"काश, ये सात रोज बढ़कर
किसी कदर सात लाख, सात करोड़, सात अरब,
याने कि अनगिनत हो जाते; हो पाते!"
और अुसी रोज मेरी कर्मशीलताने तनिक लजाकर,
आँखें झुकाकर, सहमी-सी आवाजमें धीमे-धीमे
मेरे कानोंमें कहा था—
"काश, ये सातकी बजाय पाँच ही रह पाते।"
और अुस रोज मुझे दोनोंकी बातोंपर मुस्कुरा देना पड़ा था।
क्योंकि न वे सातसे बढ़कर अरब हो सकते थे,
और न घटकर पाँच रह सकते थे।
जब मैंने दोनोंकी बात अनसुनी कर दी
तो वक्त मुझसे कहने लगा—
"मैं अेक-अेक पलके बारीक रेशोंको जोड़कर,
घड़ी और पहरके बल डाल-डालकर,
रात और दिनकी रस्सी बँट रहा हूँ।
मैं अिस रस्सीके हर रेशेमें,
हर बलमें,
तुम्हारी जिन्दगीके जगमगाते नगीने गूँथना चाहता हूँ।
बहुतसे रेशे सूने चले गये,
अुनमें चमक भरी नहीं जा सकी!
वे अँधेरेमें खो गये,
डूब गये।
अुनका कोअी अस्तित्व बाकी नहीं!
तुम मुझे अपनी जिन्दगीके जगमगाते नगीने दो,
दो कि मैं अुनको अुन रेशोंमें पिरो दूँ।"
वक्तकी अिस बातपर पहले मुझे हँसी आयी,
हमेशाकी तरह।
हँसनेकी आदत होनेके कारण मैं हँस दिया,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने कहा--
"भला तुम्हारे पेटमें यह दर्द क्यों अुठ रहा है ?"
तो जनाब, मेरी अिस बातपर
वक्त गंभीर हो गया,
वो हँसा नहीं, मुस्कुराया नहीं,
बड़ी गंभीरतासें मन्द-मन्द बोला—
"ये जो रस्सी देख रहे हो,
ये बड़ी लम्बी है !
मगर तुमको कहाँ तक नज़र आती है ?"
मैंने चुपचाप आगे देखा, और चुप खड़ा रहा,
बिलकुल गुमसुम !
वो फिर बोला--
"ख़ैर, जहाँ तक भी नज़र आती हो
अिसमें पहलेसे कुछ नगीने गुँथे हुअे हैं ।
जिनसे अुजाला निकल रहा है
और अुस अुजालेके सहारे
तुम जाने या अनजाने
आगे बढ़ते चले जा रहे हो !
कअी जगह जहाँ पहले कोअी नगीना नहीं गूँथा गया,
अथवा पुराना होकर झड़ गया,
वहाँ चमक नहीं, अुजाला नहीं,
अँधेरा है; गहरा काला अँधेरा !
कितनी ही बार तुम अुस अँधेरेमेंसे गुजरे हो !
कितनी ही बार जाने या अनजाने
तुमने अुजालेकी जरूरत महसूस की होगी
और तुमको अँधेरेमें
अटकलोंके सहारे बढ़ना पड़ा होगा।
अब कान खोलकर सुनो,
दरअसल ये अँधेरे तुम जैसें हँसनेवालोंकी
लापरवाहीके ही अँधेरे हैं...
जो तुमसे आगे चले गये हैं,
चले जा रहे हैं !
और अगर तुम भी अिन अँधेरोंको
अपनी ज़िन्दगीके नगीनोंसे नहीं जड़ जाओगे
तो ये हमेशा अँधेरेही रहेंगे ।
तुम्हारे पीछे भी बहुत लोग आनेवाले हैं ।
कहीं-कहीं अँधेरेने तुमको जैसी तकलीफ़ दी है,
वैसी ही वे अुनको भी देंगे ।
और जिन नगीनोंके अुजालेमें तुम बढ़ रहे हो
अुनकी रोशनी भी अुनके लिअे मन्द पड़ जाअेगी !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुमसे पहले जानेवालोंने
तुम्हारे लिअे रोशनीके ये क़तरे छोड़कर
तुम्हारी जो मदद की है;
और जाने या अनजाने जिस अुजालेका तुमने फ़ायदा अुठाया है;
ज़रा सोचो,
अगर जानेवाले, तुम्हारे लिअे वो अुजालेके क़तरे न छोड़ जाते
तो तुम्हारा अस्तित्व अन्धे जंगलोंसे घिरा होता।
अँधेरेमें रास्ता खोजते हुअे
ज़मानेके दौरमें तुम कितने पीछे भटकते होते ?
मैं चाहता हूँ,
जिस तरह तुमसे आगे जानेवाले
तुमपर यह अुपकार लादकर भी
अपना अुपकार मनवानेके लिअे
बिना रुके,
आगे बढ़ गये, बढ़ते चले गये....
अुसी प्रकार तुम भी पीछे आनेवालोंके लिअे
चन्द नगीने छोड़ जाओ !
बिना ये आशा रखे हुअे आगे बढ़ जाओ
कि आनेवाले तुम्हारा अुपकार माने।
और कुछ नहीं, तो अुन अँधेरे रेशोंमें ही
नगीने टाँक दो,
ताकि तुम्हारी राहपर भी अुजाला हो जाय,
और आनेवालोंके लिअे भी अधिकसे अधिक
अुजालेके ये क़तरे रह सकें।
और मैं तुमसे यह बात अिसलिअे कह रहा हूँ
क्योंकि तुम्हारे पास अैसे नगीने हैं जो अंधेरेको जगमगा सकते हैं।
तुम अिनको गठरीमें बाँधकर
अपने साथ कहाँ ले जा रहे हो ?
अिनको कहाँ फेंकनेका, कहाँ गँवा देनेका अिरादा है ?
मगर याद रखो,
अगर तुम ये नगीने मुझे नहीं दे सके,
तो तुम भी अिनको अपने साथ नहीं लेजा सकोगे !
और मैं जानता हूँ कि तुम अुन्हें बेकार गँवा दोगे, गिरा दोगे।
और वो लापता हो जाअेंगे।
कुल तीन ही रोज़ तो और बाकी हैं।
और बहुतसे रेशे सूने गुज़र गये हैं;
और बहुतसे लोग अभी अिसी राहसे आनेवाले हैं
और महज़ अिसलिअे कहता हूँ,
ये नगीने मुझे दे डालो।"
और वक्तकी बात सुनते-सुनते, जाने कैसे,
चुपचाप मुझे सिर झुका लेना पड़ा॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो अरबी कविताअें

महात्मा गांधीने सन् १९३२ ओ. में जो अैतिहासिक व्रत किया था अुस अवसरपर लिखी गयीं दो सुप्रसिद्ध मिश्री कवियोंकी अरबी कविताअें जिनमें कवियोंने गांधीजीको अपनी आंतरिक श्रद्धांजलियाँ अर्पित की हैं।

: अेक :

: श्री अहमद यूसुफ 'बद्र' :

अरबी

१. बारकल्लाहो सौमा ग़ांदी वस्वानः,
वराअरूहूं व मद्दा जमानः ।

२. फ़हवालिश्शर्क़े अुद्दतुन् व मनारुन्,
क़ुव्वतुन्नफ़्से फ़ी ज़िआअिन् रुकानः ।

३. वहबल्हिन्द कुल्लशअिन् फ़मल्मालो,
जमीलुन्वलद्दुना फ़त्तानः ।

४. लावला हाज़िहिल्हयातो विमाफ़ीहा,
मिनल्लहवे तस्ताख़िफ़ो जनानः ।

५. जाहिदुन्लातराहो यत्लुबो हत्ता,
माबक़ा मिनल्अज़ा जिस्मानः ।

६. अिन्नमायब्तग़ी मिनल्अैशेशानम्,
हुवाअस्मामिनल्हाये मकानः ।

७. यब्तग़ी लिल्हुनूदे अिज्ज़न व अैशन्,
लैसफ़ीहे मज़िल्लतुन् वस्तकानः ।

८. यबतग़ी लिल्अनामे अैशन रखीयन्,
फ़ी रिहा बिल्रिजा व ज़िल्लिल अमानः ।

९. या शबाबल्बिलादे दहाकुम्मिसालन्,
लिजिहादिन् युकद्दिसुल्हक़्क़शानः ।

१०. हज्ज ग़ांदी बिअज़्महो महवरल्अर्जे,
अओहा मिनख़स्मे ही अर्कानः ।

हिन्दी

१. गाँधीके व्रतमें परमेश्वर सफलता दे और अुसे दीर्घ कालतक जीवित रखे ।

२. गाँधी ही पूर्वके लिअे शक्ति और प्रकाशका स्तंभ है, वास्तवमें वह आत्माकी शक्ति है ।

३. अुसने हिन्दुस्तानपर सब कुछ बलिदान कर दिया है, न द्रव्यका अुसकी दृष्टिमें मूल्य है, न दुनिया अुसे किसी मोह-जालमें फंसा सकती है ।

४. न जीवन अपनी सारी सुन्दरताओंके साथ अुसके दिलको लुभा सकता है ।

५. वह वैरागी है, यहाँतक कि अपने शरीरको कष्टसे बचानेवाली वस्तुओंकी भी अुसको अिच्छा नहीं है ।

६. वह जीवनसे जिस अुद्देश्यका अभिलाषी है वह स्वयं जीवनसे अूँचा, बहुत अूँचा है ।

७. वह हिन्दुस्तानियोंके लिअे अैसा सम्मान व जीवन चाहता है जिसमें न कभी अपमान हो, न विपत्ति ।

८. वह समस्त जनताकी भलाअीका अभिलाषी है, जो संतोष और विश्वासकी छत्र-छायामें है ।

९. देशके नौजवानो ! देखो तुम्हारे सामने संघर्षका अेक अहिंसात्मक नमूना है, जिसे सत्यने पवित्र बना दिया है ।

१०. गाँधीने अपने सतत महान् प्रयत्नोंसे अिस भूगोलका केन्द्र हिला दिया है और अपने प्रतिद्वंद्वीकी जड़ें कमजोर कर दी हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

: दो :

: श्री अिब्राहीम अली 'बदवी' :

१. मोले ग़ंदी मोलहूरामल्लूहद,
ओले ग़ँदी अब्हीवाक़ल्वुजूद ।

२. मालेहाज़िश्शेख़े माजार आ हू,
मादहा हो फ़दहा फ़ीहिल्हुनूद ।

३. नब्बेनीया बर्क़ो अन्शखिल्हिमा,
वहमिल्लिल आबा आकद आयल्लबरीद ।

४. मायुरीदुश्शेख़ो ख़ब्बिरनी क़द,
वरकल अफ़कारा हैरा मायुरीद ।

५. अतराहो ज़ाक़ाबिस्सिजने अिज़न,
अम्तराहो आक़ा अहकामल्कुयूद ।

६. अम्तराहो बादो आया तारिकन्,
अुम्महिल्हिन्द तुराअी हल्जुदूद ।

७. अिन्नहदुनिया शका अुन्दायमुन्,
तख्तोलुल्अहरारा बल्तहमिल अबीद ।

८. अिन्न हुज्जो हदो व ग़ंदी ज़ाहिदुन,
व यरल्माला व जीअन व ज़हीद ।

९. अिन्नहुस्सौमो फ़ना अुन्वबिला,
अिन्नहुस्सौमो लिक़ाअुन्वख़ुलूद ।

१०. ख़ुलुकुन् अज्बुन व नफ़सुन् मर्तुन्,
ला तरल्अैशा अलज्जुल्ले ज़गीद ।

११. हिम्मतुन्वसाबतुन् फ़ी अिज़्ज़तिन्,
हुर्रतुन् कुद्वत मिनस्सख़रिस्सलाद ।

१२. अी हिया ग़ाँदी फ़दल्का अुम्मतुन्,
तरतजीकल्ओना फ़िल्योमिश्शदीद ।

१३. तरजीकल कायदुल्मिक़दामो,
अिन्आवजल्अजनादा फ़ीहामिन्यकूद ।

१४. तरतजी कुन्नासिरुल्हक़्क़ो अिजा,
लम्यकुन् लिल्हक़्क़े फ़िद्दुनिया जुनूद ।

१५. अिश्ताया ग़ंदी शुजाअन सामियन्,
महबतल्हिकमते विर्राअियस्सदीद ।

१. गाँधीको क्या हो गया है कि कब्रकी खोज कर रहा है ? जीवन गाँधीसे तंग आ चुका है ?

२. अिस वृद्धको क्या हुआ है ? किस चीजने अिसे घबरा दिया है ? अुसपर कौनसी विपत्ति आ पड़ी है, कि सारा हिन्दुस्तान अुसके कारण विपत्तिमें पड़ गया है !

३ अै बिजली (टेलिग्राम) तू ही मुझे अुस नेताका कुछ समाचार दे; डाक तो थक चुकी है, तू ही यह बोझ अुठा ले ।

४. हाँ भअी ! बता, अुस नेताका क्या विचार है ? क्योंकि मेरी बुद्धि हैरान होकर रह गयी है, और कुछ नहीं समझती कि वह क्या चाहता है ?

५. क्या यह बात है कि वह बंधनोंसे तंग आ गया है ? या अुससे अब कारागारके बन्धन सहे नहीं जाते ?

६. या यह बात है कि वह थक गया है ? और भारतीय राष्ट्रको अुसके भाग्यके हवाले कर देना चाहता है ?

७. संसार महान् विपत्तिसे स्वतंत्र सज्जनोंको मुक्त करता और पराधीनोंको शरण देता है ।

८. असली वस्तु वैराग्य है और गाँधी वैरागी है, वह धनको तुच्छ और मिथ्या समझता है ।

९. गाँधीके व्रतका अंत है और वह घटता है, परन्तु व्रतका प्रभाव अमर और नाशहीन है ।

१०. गाँधीका व्यवहार मीठा और आत्मा स्वतंत्र है, वह दासताके जीवनको पसंद नहीं करता ।

११. गाँधीका धैर्य ससम्मान अूंचा है, वह अेक चट्टान है जो लौह पर्वतसे काटी गयी है ।

१२. अै गाँधी ! राष्ट्र तुझपर मर-मिटे, वह अपने कठिन दिनोंमें तुझसे सहायताका अिच्छुक है ।

१३. राष्ट्र तुझसे अुसका वीर नेता होनेकी अभिलाषा करता है, जब कि कोअी मार्ग-दर्शक नहीं है ।

१४. राष्ट्र तुझे सत्यका समर्थक मानता है, जब कि दुनिया सत्यसे खाली हो चुकी है ।

१५. अै गाँधी ! तू वीर और समुन्नत होकर जीवित रह, तू जो कि सत्यता और सद्बुद्धिका केन्द्र है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१६. अिश्तमा अिश्ता जअीमन मुखलिसन्,
तब्जुलुल्माला व विर्रुहे तजूद।

१७. कदहमल तल्अबआ शेखन् व फ़तन्,
बअूरुपतल्अबआ तिफ्लन व बलीद।

१८. बक़ज़अितुल्अमरा फीसोहाबिन्बहल,
युबरिकुल्मजदा सिबत्तफ़ें सहीद।

१९. व बलअुतल्हादि साते कुल्लिहा,
वहजम्तद्दहरा अुदम्बादअूद।

२०. वशरिबतल्मुर्रा वल्हुल्वाफ़मा,
ग़ैरकल वादो व मा खिल्तल्वअीद।

२१. अिश्तामन्सूरन व अिश्ता जाफ़िरन्,
व खलक्तल्हिन्द मिन् ख़ल्कन जदीद।

२२. व नशर्तल्आना फ़ीहा सफ़हतन्,
मिन्किता बिल्मजदे तावा अन्तबीद।

२३. मानकज़तल्अहदा योमन् व कज़ा,
यफअलल्हुर्रो व यू फी बिल्अुहूद।

२४. या अदूअल्असेर वल्कैदेमअन्,
व नसीरल्अदले मिन्अमदिन् वदूद।

२५. या तुअज्जिलबिर्रहील वस्तबिर,
व सिलिल्कोना व दा हाजिस्सुदूद।

२६. कुन जलीदन मुल्लमाकुन्तफमा,
फ़ाजफ़िद्दुन्निया सिवलहुरिल जलीद।

२७. या बनिल्हिन्देत आलओ अजमअू,
अम्रकुम फल्खुल्फ़ो युज़री बिल अुसूद।

२८. अिर्रहमुश्शेखा अिर्हयूहो वालम्,
अम्रशेखल् हिन्दे ज़ब्बारुल्अनीद।

२९. वअंबूस्सदआ अक्नू अिख्वतन्,
वाजुकुम्खिल्लिन् लिबाज़िन वदूद।

१६. तू जब तक जीवित रहे, अेक स्नेह करनेवाला शिष्ट नेता बनकर जीवित रह, धनको मिटाता और आत्माका बलिदान करता हुआ।

१७. तूने बुढ़ापेमें भी बोझ अुठाया है, और जवानीमें भी, बचपनसे मुसीबत झेलनेका अभ्यस्त रहा है।

१८. तूने सारा जीवन जागते काटा है, और जागनेवाली आँखही आदर पाती है।

१९. तूने अेक-अेक करके समयके परिवर्तनोंका अनुभव किया है, और दुनियाको बाल-बाल अच्छी तरह परख लिया है।

२०. तूने कड़ुवा व मीठा सब चखा है, अिसलिअे न कभी वचनोंने तुझे धोखेमें डाला, न धमकियाँ तुझे प्रभावित कर सकीं।

२१. तू विजेता व सहायक होकर जीवित रहा है और हिन्दुस्तानको तो तूने अेक नया जन्म दे दिया है।

२२. हिन्दुस्तानमें तूने अब आत्मसम्मानकी पुस्तकका वह पृष्ठ खोल दिया जो कभी मिट नहीं सकता।

२३. तूने कभी वचन भंग नहीं किया। सज्जन और स्वतंत्र पुरुष योंही वचन पूरे किया करते हैं।

२४. अै पराधीनता तथा बंधनके शत्रु! और सदासे समर्थन करनेवाले न्यायके!!

२५. विदा होनेमें जल्दी न कर, ठहर, संतोषकर, जीवनसे अिस तरह मुँह न मोड़।

२६. सदाकी तरह अपने निश्चयपर अटल रह, क्योंकि विश्वमें दृढ निश्चयी ही सफल होते हैं।

२७. अै भारतके सपूतो! आओ और परस्पर अेक हो जाओ। याद रखो आपसकी फूट शेरोंको भी परास्त कर डालती है।

२८. अपने वृद्ध नेतापर तरस खाओ, और हाँ, विश्वास करो भारतका यह बूढ़ा नेता बड़े दृढ निश्चयोंका अधिपति है।

२९. टूटे हुअे दिल जोड़ डालो, भाअी-भाअी बन जाओ और सच्चे प्रेमका हृदयमें संचार करो।

(अनुवादक—श्री अीशनारायण जोशी, धर्मशास्त्री)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"कवि"

: असमिया कवि चक्रवर्ती श्री नीलमणि फूकन :

असमिया

अन्तर्दृष्टि कविर चकुर चेतन अचेतन-अेअि दुअि बस्तुर बेलेग रूप नाअि। कवियें येतिया निजर अपरूप कल्प-लोक सृष्टि करिबलै व्याकुल है अुठे सेअि समयत अेअि दुअि बस्तुके तेंओ अेने दरे खांज खुवाअि निये जे तार जोरा लरोवा बा बिभिन्न अुपादानर समष्टि बुलि भाब करा टान है परे। अेअि खनिकरे गढ़ि जाओंतेअि प्रतिमार प्रति अंगते प्राण प्रतिस्था हैजाय। अिन्द्रिय-ग्राह्य बस्तुरे अतीन्द्रिय लोकत प्राणवन्त भाबराशि मूर्तिमान करि तोलात तेआँ सिद्धहस्त। अेअि जन शिल्पीर तुलिकाअि जिहते रहण दिये तातेअि सौन्दर्य आहि निजक बिलाअि दिये। तेओंर शब्द जोजनार लालित्यअि गछर शुकान नीरस डालतो तप-तप करे रस बोवाअि दिये। तेओंर मातत कुलि परास्त केतेकी निमात मअिना मातर लहरो तल परे। कविर प्राणतेअि बिश्व जगतर स्पन्दन है आछे। अेअि कारणेअि सृष्टिकर्ता प्रणयस्रष्टा आदि कवि।

कविर लगत प्राकृतिक जगतर व्यवधान निचेअि कम। सेअि कारणेअि कवि प्राकृतिक जगतर अन्तरंग बन्धु। प्रकृतिर मितरुवा कथा अैजन कविये जिमान खिनि जाने आन कारो पक्षे सिमान खिनि कथा जानिबर अुपाय नाअि। प्रकृतियेओ आन काको सेअि दरे बिश्वास करि हिआ अुबुरियाअि कथानकय। भोमोरार भर फुलर पापरि केअिटिये जे सहिबलै टान पाय सेअि कथा कविर कोमल प्राणत अनुभव करिबलै बेछि पर ना लागे। भ्रमर-बिद्ध पदुम पाहिटिर बेदनात कवि निज म्रियमान हय। मेघत डावर देखि डालत अकलशरीया

हिन्दी अनुवाद

अन्तर्दृष्टि-सम्पन्न कविकी आँखोंमें चेतन और अचेतन-अिन दोनों वस्तुओंके भिन्न रूप नहीं है। कवि जब अपने अरूप निराकार कल्पना—लोककी सृष्टि करनेके लिअे व्याकुल हो अुठता है तब अिन दोनों वस्तुओंको अपनी प्रतिभा द्वारा अिस प्रकार साकार कर देता है मानों ये वस्तुअें विभिन्न अुपादानोंकी समष्टि ही नहीं है। अिन्द्रिय-ग्राह्य वस्तुओं द्वारा अतीन्द्रिय लोकमें सजीव कवित्वको मूर्तिमान करनेमें वह सिद्धहस्त है। शिल्पीके तूलिका-स्पर्शसे सौन्दर्य मानो स्वयं आकर अपनेंको बिखेर देता है। कविका शब्द-योजना-लालित्य ही नीरस तरुकी शुष्क शाखाओंकी नस-नसमें रसका संचार कर देता है। अुसका शब्द-माधुर्य कोयलकी रागिनीको परास्त कर देता है, मैनाकी बोलीकी लहरोंको दबा देता है। कविकें प्राणोंमें विश्व-जगत् स्पन्दित होता है। तभी तो सृष्टिकर्ता प्रणवस्रष्टा जगदीश्वर हमारे आदि कवि माने गये हैं।

कविके साथ प्रकृति-जगत्का कुछ भी व्यवधान नहीं और अिसलिअे वह प्रकृति-जगत्का परम मित्र है। प्रकृतिकी अन्तर्निहित वाणी कवि जितना समझ सकता है अुतना और कोअी नहीं। प्रकृति और किसीको भी अुतना विश्वास करके अपनी वाणी नहीं सुनाती। भौरोंके पद-भारसे आक्रान्त फूलोंको पंखड़ियोंको कितना कष्ट होता है सो कविके कोमल प्राण सहज ही जान लेते हैं। भ्रमर-प्रहत कमल-पंखड़ियोंकी व्यथा अनुभव करके कवि म्रियमाण हो जाता है। नभमें मेघ-दर्शनसे पुच्छप्रसारित प्रमत्त मयूरकी केकाध्वनिकी प्रतिध्वनि द्वारा केकीको अपने प्रियतमके पास लाकर अपने कवि-हृदयमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चालिधरा मराटिर नृत्य-लीला सार्थक करिबलै कवियेकेकार वर ध्वनित प्रतिध्वनि तुलि मयुरिक माति आनि काष चपाअि दि प्राणत विमल आनन्द अुपभोग करे। कवि वर्ड्छवर्थे वैदिक जुगर ऋषि-सकलर लगते कव पारिछिल गछर ठाल ठेंगुलि कुंहिपात आलफुलकै-चुवा तातो बनस्पति देवताअि वास करिछे। वन अे डालिरो जे लाज-काज आछे चुलु लाजत हे जंअि परे बनर लता अेडालियेओ जे लज्जावती तिरोतार आचरण करिव पारे सेअि कथा विश्व-प्रेमिक कवियेअि प्रथमे अनुभव करे।

चारि मुठि जीवक जे अेकेटा सहानुभूतियेअि लै फुराअिछे जगतर आदि कवि वालिमकीर प्राणत अेअि सत्य आविर्भाव हय। सीतार हरण हल् चतुर्दिशे सन्धानर निमित्ते प्रजावृन्द दिहादिहि ओलाल। बालिमकीये मन करिले जे अेअि घटनात बाटर तरू-लता-तृण जअि परिछे। सीता आअिर बातरि सुधि अेने तरू-लता-तृण को तेंओ चकु-लो टोकाअिछिल। पाखी भगा जटाअुवेओ जे सीता देवीर सन्धान दिवलैके शेष निश्वास त्याग करा नाछिल सेअि कथा वालिमकीर चकुत हे परिछिल। नल नील सुग्रीव हनुमान आदि वीर सकलर ओपरत विश्वास स्थापन करि बनर बान्दर भालुकक लैओ बालिमकीये लंका जयर आशा करिब पारिछिल। कविर प्राणर अेअि महान् अनुभूतिर बारेअि लंका जय करा हल् रावण सबंशे निधन हल सीता आअिर अुद्धार सम्भव है अुठिल।

खला-बमा संसारत शान्तिर पथ बिचारी दिये कविये। अेअि कारणेअि महाभारतर जुद्धत ओठर अक्षौहिनी ध्वंस पोअा तयामया रणर माजतो व्यासदेवे शान्ति-पर्व्व अध्याय निलिखि नोवारिले। जगतर द्वन्द जुद्ध सदाय भांगि आहिछे कवियेअि। पाप-पुण्य बिचारत अेओं दोषिक शास्ति निदिये अुद्धार पराचित करि लय।

कविर आध्यात्मिक अनुभूतिर दाग जुअित पेलोवा-सोणर कमनीयतार दरे छाअिर माजतो तार अुज्जलता नकमे। कविर अन्तरत विश्वब्रह्माण्ड अुद्भासित है आछे। बिश्व ब्रह्माण्डर स्पन्दन कविर हृदयर रक्त-प्रवाह। कविर हृदय-तन्त्री बिश्व-बीणार लगत अेकेटा सुरत सदाय बन्धा थाके। विश्व-बीणार निचेअि सूक्ष्मतम तांर अेडालिओ जदि करबात बाजी अुठे तार ध्वनि कविर हृदय-तन्त्रीतो नाबाजि नाथाके।

अन्तर्दृष्टिरे चाले कवि जगतमय जगत कविमय।

विमल आनन्द अुपभोग करता है। कवि वर्डस्वर्थने वैदिक ऋषियोंके स्वरमें स्वर मिलाकर कहा था, "कोमल करोंसे तरुओंकी शाखा-प्रशाखा और पत्र-पुष्पोंको स्पर्श करना, कारण अुनमें वन-देवी-विराज रही है। प्रकृति-जगत्में भी लाज लज्जादिका अनुभव है। छूनेसे तरु-लतादि लज्जासे संकुचित हो जाते हैं। वनकी अेक तुच्छ-लता भी लजवन्ती रमणीका-सा आचरण जो करती है, यह विश्व-प्रेमी कवि ही पहले-पहल अनुभव कर सकता है।" जीव-जगत्में अेक ही सहानुभूति ओत-प्रोत है, वह अिस संसारके आदि कवि वाल्मीकिके प्राणोंमें ही सर्वप्रथम प्रतिभास हुअी थी। सीताहरण हुआ, चारों ओर वानर प्रजाको भेज दिया गया कि सीताजीको खोज निकालें। अेका-अेक वाल्मिकजीके मनमें आया कि अिस घटनासे वनके तरु-लता-गुल्मादि भी शोकाभिभूत क्यों न हों—वे भी सीताजीके लिअे आठ-आठ आंसू बहाने लग गये। छिन्न-भिन्न अंग पक्षी जटायुने भी सीता देवीका दुखद समाचार सुनानेके लिअे अब तक अन्तिम निश्वास नहीं छोड़ा था-सो कविके दृष्टिगोचर हुअे बिना न रहा। नल, नील, सुग्रीव, हनुमान आदि वानर वीरोंपर विश्वास स्थापन करके बन्दर, भालु आदिको लेकर लंका-विजयकी आशा कविवर वाल्मीकिने ही की थी। कवि-हृदयकी अिस महान अनुभूतिके द्वारा ही लंका-विजय सम्भव हुअी। सपरिवार रावण मर मिटा। सीताजीका अुद्धार हुआ।

कवि विषम संसारमें साम्य और मैत्रीका पथ दिखाता है। अिसीलिअे तो महाभारतके प्रचण्ड युद्धकी ध्वंसलीलाके बीच व्यासजीकी लेखनीसे शान्ति-पर्वका अध्याय व्यक्त हुआ था। कवि ही सर्वदा संसारके संग्राम और संघर्षको तोड़ता चला आ रहा है। पापियोंको कवि दण्ड देनेके बदले अुनसे कृतकर्मोंका प्रायश्चित्त करा लेता है।

कविका आध्यात्मिक अनुभव अग्नि-संतप्त सुवर्ण-तुल्य है जिसकी अुज्ज्वलता राखमें छिपाये रखनेसे भी नहीं घटती। कविके हृदयमें विश्व-ब्रह्माण्ड अुद्भासित होकर रहता है। विश्व-ब्रह्माण्डका स्पन्दन कवि-हृदयका रक्त-प्रवाह है। कविकी हृदय-तंत्री विश्व-वीणाके साथ अेक ही रागिनीसे बँधी रहती है। विश्व-वीणामें कहीं भी यदि कोअी अेक सूक्ष्मतम ध्वनि अुठती है तो वह कदापि कविकी हृदय-तंत्रीमें प्रतिध्वनित हुअे बिना नहीं रहती।

अन्तर्दृष्टिके नाते कवि जगत्मय है और जगत् कविमय है!

[अनुवादक : श्री जीतेन्द्रचन्द्र चौधुरी]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[सूचना—'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिये।]

शूद्रक—[ले०—श्री चन्द्रबली पांडे। पृष्ठ संख्या ३२४, डबल क्राअुन सोलह पेजी, मूल्य ४॥), प्रकाशक—मोतीलाल बनारसीदास नेपाली खपडा, बनारस।]

प्रस्तुत पुस्तकमें राजा तथा कवि शूद्रकके सम्बन्धमें लेखकने विद्वत्तापूर्ण गंभीर विचार प्रकट किये हैं। लेखकका कथन है कि शूद्रक 'अुत्तर' और 'दक्षिण'के मेलका प्रतीक है; परन्तु अुत्तर और दक्षिण कभी अलग-अलग रहे ही नहीं। समस्त भारतको अपनी दार्शनिक विचार-धारासे परिप्लावित करनेवाले आदि शंकराचार्य भी तो दक्षिणके ही थे। दक्षिण और अुत्तरका कलात्मक अेवं साहित्यिक सम्पर्क भी बराबर रहा है। 'मृच्छकटिक' जैसे ग्रंथके प्रणेता शूद्रकका संस्कृत साहित्यमें अूंचा स्थान है और 'मृच्छकटिक' नाटक ही संस्कृतका अेक अैसा नाटक है, जिसमें राजनीतिक द्वन्द्व और राजनीतिक घात-प्रतिघात तीव्रतम मात्रामें मिलते हैं।

कुछ लोगोंका मत है कि राजा और कवि शूद्रक दो पृथक् प्राणी हैं। परन्तु अिस पुस्तकके लेखकका मत अुसके विपरीत है। लेखकका कहना है कि "राजा शूद्रक ही कवि शूद्रक भी है। और अिस शूद्रकको हमने "मृच्छकटिक" में शर्विलकके रूपमें देखा है और अितिहासमें अुसे वासिष्ठीपुत्र श्री पुलुमावीके रूपमें पाया है, यह भी स्पष्ट है।" पांडेजीके अिस कथनके सम्बन्धमें मतभेद हो सकते हैं, परन्तु अुन्होंने मंथन करके जो सामग्री जिज्ञासु पाठकोंके समक्ष अुपस्थित की है, वह अुपेक्षणीय नहीं। अुससे अन्वेषणका मार्ग प्रशस्त होता है।

पुस्तकमें जो अुदाहरण दिये गये हैं, वे संस्कृतमें ही हैं। यदि साथ-साथ हिन्दी अनुवाद दे दिया जाता तो संस्कृत न जाननेवालोंके लिअे भी अिस पुस्तककी अुपयोगिता बढ़ जाती। पुस्तककी छपाअी-सफाअी सुन्दर और भाषा मँजी हुअी है। संस्कृत-साहित्यके सम्बन्धमें प्रकाश डालनेवाले अिस प्रकारके ग्रंथ स्वागत करने योग्य हैं।

—"अजातशत्रु"

महल और मकान— (अुपन्यास) [लेखक—श्रीयज्ञदत्त, अेम. अे.। पृष्ठ संख्या १८४, डबलक्राअुन सोलह पेजी, मूल्य ३), प्रकाशक—आत्माराम अेण्ड सन्स, काश्मीरीगेट, दिल्ली।]

आनेवाला युग महलों नहीं मकानों और झोपड़ियोंका है, यही दिखलाना अिस अुपन्यासके लेखकका ध्येय जान पड़ता है, परन्तु अुस ध्येयकी पूर्तिमें अुसे सफलता मिली है, अैसा कहनेमें संकोच होता है। अुपन्यासके प्रमुख नायक प्रकाश बाबू महलोंवाली सभ्यताके प्रतिनिधि हैं और प्रोफेसर सुधांशु मकानों और झोपड़ोंवाली सभ्यताके। प्रकाशके जीवनमें अमीरोंकी रंगरेलियाँ हैं और जैसा केतकी सोचती है, वह ठीक है कि "प्रकाश-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाबूके सम्पर्कसे किसी भी व्यक्तित्वका अेकांगी विकास सम्भव हो सकता है, सर्वांगी नहीं। 'जीवनके विभिन्न पहलुओंपर झाँकनेका अुनके पास अवकाश नहीं।" यही कारण है कि अपने सभी प्रयत्नों और कार्योंसे बड़ी-बड़ी महत्वकांक्षाअें लेकर भी वे असफल होते हैं। अुनका मिल भी असफल होता है और दसमंजिला मकान भी नहीं बन पाता। प्रकाशके खयालसे "स्त्री जीवनकी अेक आवश्यकता अवश्य है, परन्तु अुस आवश्यकताकी पूर्ति पैसेसे की जा सकती है। तराजूके अेक पलड़ेपर रुपया डालकर दूसरेपर संसारकी जो भी वस्तु तुम रखना चाहो अुपलब्ध हो सकती है।" अिसी भावनासे प्रेरित होकर आप विवाहिता पत्नी सुशीला रानीके होते हुअे भी कामिनी और केतकीपर डोरे डालनेमें संलग्न रहते हैं, लेकिन केतकीपर अिसका असर नहीं होता।

कामिनीपर अुन प्रोफेसर सुधांशुका प्रभाव पड़ता है, जो जन-शक्तिपर पैसेकी शक्तिसे अधिक विश्वास रखते हैं और सेवाकी भावनासे ओतप्रोत हैं। केतकी डाक्टरके नाते मरीजों और गरीबोंकी सेवा करना अपना मुख्य-कर्त्तव्य समझती है। कवि शून्यजी जैसे अधिकांश कवि होते ही हैं-- व्योहार शून्य। बच्चोंके मुण्डनसे लेकर पूर्णाहुतिके अन्तिम संस्कार तक अुनका भी अुपयोग होता है। कामिनी तो अुन्हें निरा मूर्ख असभ्य जानवर समझती है। अुनका स्वयंभी कहना है कि "नारीको समझनेकी क्षमता मुझमें नहीं।" परन्तु किसी भी सुन्दरीको देखकर अुसे 'कविता!' कहकर पागलकी तरह अुसके पीछे-पीछे फिरना अुनका स्वभाव है। वास्तवमें लेखकको पात्रोंका चरित्र चित्रण करनेमें सफलता नहीं मिली।

भाषाकी अशुद्धियाँ देखकर तो चकित हो जाना पड़ता है। अैसी गलतियाँ जिन्हें प्रूफकी नहीं कहा जा सकता। अुदाहणार्थ डाक्टरोंके पास रहनेवाले 'स्टेथ ऑस्कोप' को अेक नहीं अनेक स्थानोंपर टेलिसकोप लिखा गया है:—

(१) मिस केतकी 'टेलिस्कोप' सामने मेजपर रखकर अेक ओर खड़ी हो गयी।

(२) सामनेसे 'टेलिस्कोप' हाथमें लिये मिस केतकी दिखलायी दी।

(३) केतकीके गलेमें पड़ा हुआ 'टेलिस्कोप' अुस समय अुनके सौन्दर्यमें किसी आभूषणसे भी अधिक सौन्दर्य वृद्धि कर रहा था।

यही दुर्दशा अँग्रेजीके 'पोटिको' शब्द की है। हिन्दीमें जरजरित डपड़ी, खीजते, चिड़, खीज, धूर्ता, मृततृष्णा, मूढ़े, बचीकुची, स्पनिल आदि शब्दोंका प्रयोग भी विचित्र है। वाक्योंका भी यही हाल है—"प्रकाशबाबू अुल्टे ही पैरों लौटे लिअें", 'नियाज भैयाके अनर्थक परिश्रमने वनस्थलीको स्वर्ग बना दिया है, किसी देवीका भेंट हो जाय, और 'मिल लगानेवाले है" आदि। 'मोनो' और 'लाअिनो'के अिस युगमें भी कम्पोजीटरोंका साम्राज्यवाद ज्योंका त्यों है, अैसी हालतमें यदि ये गलतियाँ प्रूफकी होतीं तो शिकायतकी बात नहीं थी, परन्तु शायद 'पल्लव' युगके पन्तकी भांति अिस पुस्तकके लेखकको शब्दोंका यह प्रयोग प्रिय है।

—"अजातशत्रु"

पगध्वनि : (नाटक) [लेखक—आचार्य चतुरसेन शास्त्री; प्रकाशक—आत्माराम अेन्ड सन्स काश्मीरी गेट, दिल्ली ६; पृष्ठ ६८; मूल्य डेढ़ रुपया]

गांधी-जीवनपर आधारित छः लघु अंकोंकी अिस नाटिकामें गांधीजीका मुख्यतः वह काल चित्रित हुआ है जो अुन्होंने साम्प्रदायिक कत्ले— आमके दिनों नोआखालीमें बिताया था।

अपने प्रारंभिक अठ्ठाअिस पेजी "दो शब्द" के अनुसार नाटककारने यह नाटिका राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्रप्रसादकी प्रेरणासे लिखी है। अुन्हींको समर्पित की है और अुन्हींपर अपने लेखकत्वका रोष अिन शब्दोंमें अुतारा है "यह सरकार हम साहित्यकारोंका कोअी भला नहीं कर सकती। दिन-दिन हम अुससे और वह हमसे दूर होती जा रही है। हम अिस राज्यमें प्रतिष्ठित नागरिक नहीं हैं। प्रतिष्ठित नागरिक कदाचित वे कदाचार फैलानेवाली फिल्म तारिकाअें हैं, जिनके साथ खड़े होकर राष्ट्रपति फोटो खिचवाते हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

या वे मिनिस्टर, जिनके घर नित्य दिनमें ओद और रातमें दिवाली मनायी जाती है। अथवा वे घूसखोर और चोरबाजारी करनेवाले अुठाअीगीर जो आये दिन सरकारी दावतोंमें राष्ट्रपति भवनकी शोभा बढ़ाते हैं। हमलोग तो सड़कके अेक किनारे खड़े होकर अुनकी बड़ी-बड़ी मोटरोंको आते-जाते देखकर अपनी आंखें धन्य कर सकते हैं...यदि पुलिसके धक्के खानेकी जोखम बर्दाश्त कर सकें तो।"

नाटककारके रोषका तथा अुसके 'दो शब्द' का यद्यपि वर्तमान भारतवर्षसे अभेद्य सम्बन्ध है तथापि नाट्यमें प्रयोजित विषय वस्तुसे अुसका रंचमात्र भी सम्बन्ध नहीं। भूमिकाके विशाल आलेखपर नाट्यशिल्प प्रस्तुत किया होता तो अुसकी अुपयोगिता निःसन्देह बढ़ जाती।

लेखकके मतसे अुसने, "अिसमें सर्वथा नयी पद्धतिका प्रयोग किया है और पुरानी परंपराओंका अुल्लंघन किया है।" लेकिन हिन्दीके पूर्ववर्ती नाटकोंके अनुसार अिसमें अंकोंका विभाजन है। चालीससे अधिक पात्र हैं। प्रभावकी दृष्टिसे अिसके दृश्यनुमा अंक (तीसरा और चौथा अंक छोड़कर) नीरस हैं। संवादोंमें अत्यंत अूपरी स्तरका वार्तालाप है, जिसमें कहीं भी मर्मस्पर्शी वाक्य नहीं। गीत और कोरस यथास्थान रखे गये हैं, किन्तु रविबाबूके "गांधी महाराजेर शिष्य" अिस बंगला गीतको छोड़कर नाटकके किसी भी हिन्दी गीतमें दम नहीं। अेक अंकमें केवल अेक दृश्यवाली पद्धति अब नयी नहीं रही। अैसे प्रयोग हिन्दीमें "पगध्वनि" के पहले भी हो चुके हैं और अिससे प्रभावपूर्ण ढंगसे।

लेखकने कहा है "अंकोंमें परस्पर सम्बन्ध नहीं है।" परन्तु दूसरा, तीसरा और पांचवाँ अिन अंकोंको अेक क्रममें पढ़नेपर लेखकका कथन भ्रमपूर्ण प्रतीत होता है।

रसोद्रेककी दृष्टिसे चौथा अंक महत्वपूर्ण है जिसमें आगाखां महलमें राष्ट्रमाता कस्तूरबाकी मृत्युका दृश्य प्रस्तुत किया गया है। पहले और छठवें अंकमें केवल शाब्दिक चर्वण मात्र हुआ है। लेखक कहीं भी आत्मीयतासे नहीं रमा, जिससे नाटकके पात्र कठपुतलीसे लगते हैं। लेखकका "गांधी प्रेम और अुसके प्रिय-वियोगके आंसू" पाठकोंको स्पर्श करनेमें असमर्थ है। शैली और पद्धतिके सब दावोंके बावजूद भी नाटककार और हिन्दीके दुर्भाग्यसे यह नाटक भी हिन्दीके मंच-अनुपयोगी नाटकोंकी संख्यामें वृद्धि करता है।

—**अनिलकुमार**, सा. रत्न

भूमिकी अनुभूति [लेखक— जगन्नाथप्रसाद 'मिलिंद', प्रकाशक—साहित्य-प्रकाशन मन्दिर, हाअीकोर्ट रोड, ग्वालियर। पृष्ठ-संख्या १०४, मूल्य—ढाअी रुपया]

श्री मिलिन्दजी हिन्दीके नामी कवि माने जाते हैं। प्रस्तुत संग्रह अुनकी चौथी कविता पुस्तक है। अिसमें अुनकी २८ कविताओंका संग्रह है। जैसा कि पुस्तकके नामसे स्पष्ट है, अिसमें भूमि और अुससे सम्बन्धित विषयोंकी कविताओंका संग्रह है।

संग्रहकी अधिकांश कविताओंमें तीव्र अनुभूति और सधी हुअी लेखनीका आभास नहीं मिलता। लगता है, कविने अपनी अिन रचनाओंपर विशेष क्या साधारण श्रम भी नहीं किया। जल्दबाजीमें लिखी गयी हैं। 'भूमिकी अनुभूति' के अन्तर्गत जैसी सशक्त और अनुभूति सम्पन्न रचनाओंकी अपेक्षा मिलिन्दजीसे हिन्दी-जगतको थी, पूरी नहीं हुअी। भूमिकी अनेक समस्याअें, खेतिहरोंकी अुलझनें, अुनसे सम्बन्धित आजके प्रश्न किसी भी विषयपर संग्रहमें अेक भी जानदार कविता नहीं।

संग्रहको बारीकीसे देखनेपर अेक बात विशेष रूपसे ध्यानमें आती है। और वह है, कविकी व्यंग्योक्ति! जिन कविताओंमें विषम परिस्थिति या विडम्बनापूर्ण घटनाओंका अुल्लेख हुआ है, कविका स्वर अनायास ही व्यंग्यमय हो गया है। और अिससे रचनामें स्वाभाविक सौंदर्य अेवं ओजस्विताका प्रवाह आ गया है। "रह गयी चढ़ी बरात" और "श्रम-जीवीकी मर्मव्यथा" में वर्तमान नेता-जीवनके रूप और अभिशापपर करारा व्यंग्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह श्रमिक देखिये बदली हुओ परिस्थितिका कैसा रूप देख रहा है--

"गत राजा, अधिकारी शोषक थे, स्पष्ट समझमें आते थे,
जो मुझको सेवक, अपनेको मेरा स्वामी जतलाते थे।
अब जो शासक, जो अधिकारी हैं भूले-भटके आ जाते,
अपनेको सेवक और मुझे अपना स्वामी हैं बतलाते।
फिर भी मैं अपनेको दरिद्र सम्पन्न अुन्हें क्यों पाता हूँ ?
कहते तो हैं सब-भारतका अब मैं ही भाग्य विधाता हूँ ?"

और अन्तमें अुस मूर्ख और नंगे भूखे तथाकथित स्वामीकी हुंकृति है, जिसके सेवक कहलाकर जो अपना घर भरते हैं, अुन पाखंडियोंका पाखंड वह भविष्यमें नहीं चलने देगा।

'रह गयी चढ़ी बरात' में चुनावमें खड़े होनेवाले नेताकी चुनाव तैयारीका बड़ा नाटकीय वर्णन है।

'भूमिश्रमिककी पत्नी' कविता अच्छी होनेपर भी अुसमें भूमिश्रमिककी पत्नीका वास्तविक रूप कम है, कविके विचार वाहनके लिअे ही अुसका अभिनय प्रतीत होता है। वास्तवमें कविताके अन्तर्गत भूमिश्रमिककी पत्नीके मुखसे व्यक्त विचार कविके हैं।

"जिसका श्रम हो, भूमि अुसीकी,
अन्न, वस्त्र, घर हो अुसका;
शासन अुसका, संस्कृति अुसकी,
नवयुगका स्वर हो अुसका।"

अिन विचारोंमें शक्ति होनेपर भी भूमिश्रमिककी पत्नीकी अपेक्षा कविका अपना ही स्वर है, भूमिश्रमिककी पत्नी केवल माध्यम। अन्य रचनाओंमें 'वेदना और विद्रोह' ओजप्रधान और सशक्त है। जिस कृतिपर पुस्तकका नामकरण हुआ, साधारण रचना है। संक्षेपमें प्रस्तुत कृति अेक मिश्र प्रयास है जिसमें विफलता अधिक और सफलता अंश मात्र है।

--अनिलकुमार, सा. रत्न

अिन्दु— [लेखक- ब्रजबिहारीशरण, अेम.अे., बी. अेल., प्रकाशक- अनिलबिहारीशरण, अेम. बी. ओ. (मिलिटरी) बक्सर; साअिज-डेमी, सजिल्द पृष्ठ-संख्या-२२७, मूल्य-दो रुपये]

अिस अुपन्यासमें लेखकने आत्मकथाओं द्वारा पात्रोंका चरित्र-चित्रण किया है जो अुपन्यासोंके क्षेत्रमें अेक नयी चीज है।

कथानकमें कोअी नवीनता नहीं। जमींदार युवककी यूरोपियन युवतीके साथ होनेवाली प्रेम-कथाका अिसमें वर्णन है। किसी समय अैसे कथानक जनसाधारणकी रुचिके विषय भले ही रहे हों, किन्तु आज अैसे कथानकोंके प्रति पाठकोंको कोअी आकर्षण नहीं रह गया।

अुपन्यासकी भाषा अत्यंत शिथिल अेवं गतिहीन है। "वह कुछ लजाती सकुचाती मेरी ओर हाथको बढ़ाअी'; 'किंतु यह करनेके पहले मैं अेक दृष्टि चंद्रिकाकी ओर डाली'; 'अुसके दीवार खड़े थे'; 'जिन-जिन कपड़ोंका कभी भी पूषणने तारीफ की थी अुनमेंसे सबसे अच्छा चुनकर पहना' आदि प्रयोग बड़े ही खटकनेवाले हैं। शब्दोंके अैसे रूपोंका भी अिस अुपन्यासमें काफी संख्यामें प्रयोग किया गया है जो सदियों पुरानी भाषामें प्रयुक्त होते थे—कलके स्थानपर 'कल्ह' क्षमाके स्थानपर 'छमा' मुसाफिरके स्थानपर 'मोसाफिर' आदि।

प्रूफ संशोधनमें भी काफी भूलें रह गयी हैं, जिससे पढ़नेकी गतिमें काफी रुकावट आती है।

मदनमोहन शर्मा, अेम.अे., सा. र.

नये नगरकी कहानी—[लेखक— रावी, प्रकाशक— राजपाल प्रकाशन, आगरा; पृष्ठ २३६, मूल्य १।)]

मुखपृष्ठके नमूनेदार शहरके चित्रसे ही अंदरकी झलक दिखायी देती है। लेखक श्री रावीजी अिस बीसवीं शताब्दीमें अेक अैसे समाजका निर्माण करना चाहते हैं, जिसमें दुःख-दारिद्र्यका नाम नहीं, विषमताका पता नहीं और न सुविधाओंकी कमी है। और प्रत्येक व्यक्ति पूर्ण स्वतंत्र रहे; बशर्ते कि अेकका स्वातंत्र्य किसी दूसरेके हितमें बाधक न बने। लेखक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगराके पास अैसा आदर्श नगर बसानेका स्वप्न देख रहा है। प्रस्तुत लेखकने अपनी अन्य रचनाओंमें अैसे ही समाजका स्वप्न चित्रित किया है, जो सुखी, संपन्न, विलासी तथा पूर्ण स्वतंत्र है। नये नगरमें भिखारियों-तक सभीको खानेपीनेका, विलास करनेका पूर्ण स्वातंत्र्य है। लेखककी भाषा सीधी और सरल है। चरित्र-चित्रणमें मात्र कहीं-कहीं शिथिलता आ गयी है।

राष्ट्रभाषाका अितिहास—[लेखक—आचार्य पंडित किशोरीदास बाजपेयी, प्रकाशक – जनवाणी प्रकाशन, हरिसन रोड, कलकत्ता; प्राप्तिस्थान–हिमालय अेजेंसी, कनखल, अुत्तर प्रदेश, पृष्ठ २३२, मूल्य ३)]

अब हमारे देशकी राष्ट्रभाषा हिन्दी हो चुकी है। भारतीय संस्कृतिके अनुसार राष्ट्रभाषाके पदके योग्य 'हिन्दी' ही है। परन्तु फिर भी बीचमें 'हिन्दुस्तानी' नामका जो तूफान आया, वह कितना घातक था और अुसके पीछे जो राजनैतिक कुचक्र था, अिसका स्पष्ट चित्र लेखकने हमारे सामने रखा है। भाषाकी अुत्पत्तिसे लेकर १९४९ के १४ सितंबर तकका विस्तृत अितिहास दिया है। पं. नेहरूजी, राजर्षि टण्डनजी, सेठ गोविन्ददासजी अित्यादि भाषा-पंडितोंके संसदमें दिये गये भाषणका सारांश भी है। अंतमें चार परिशिष्ट दिये गये हैं, जिनमें हिन्दी-हिन्दुस्तानी-अुर्दूका फर्क; गांधीजी-टण्डनजी पत्रव्यवहार–अित्यादि बातोंपर प्रकाश डाला है।

—**कृ० पा० पाटील**, रा. भा. रत्न

चरितनायक— [अनु:– श्री ओंकार शरद। प्रकाशक– रामप्रसाद अेण्ड सन्स, आगरा। पृष्ठ सं. १९६। मूल्य दो रुपये, आठ आने]

महान रूसी लेखक अेम. लरमनतोभकी विख्यात रचना 'A hero of our time' का यह हिन्दी अनुवाद है। अिसमें चित्रित रूसके अेक युगीन कअी पीढ़ियोंकी बुराअियोंका यथार्थ चित्रण है, जो अेक कल्पित व्यक्ति "पेचोरिन" के माध्यमसे मानवके धोखेबाज चरित्रको नग्न रूपमें प्रस्तुत कर अिलाज ढूंढने–सोचनेके लिअे मजबूर करता है। अिस दृष्टिसे यह हिन्दी अनुवाद "चरित नायक" स्वागतार्ह है।

अिसके पात्र, स्थान वे ही हैं जिनके कारण नायकके साथ हम भी तिफलिससे आनेवाली 'डाक-की-सड़क'से यात्रा करते हैं और कोशौर, टेरेक, अुरमाल आदि पहाड़ तथा येरमोलोव जेनरल अलेक्सी पत्रोविच ज्यार्जियाका गवर्नर जेनरल (सन १८१७ से १८२७), मैक्सिमिच, ग्रुशिस्की, वेरा आदिको देखते हैं और देखते हैं रूसी शब्द (अुदा०–वोदका, वोजा = शराबके नाम। वेश्मेत–रूअी भरा हुआ कोट जैसा कपड़ा) और रूसी वातावरण। स्थल, काल, विषय, वस्तुके नाते यह स्वाभाविक ही है। अिसके होते हुअे कहना होगा कि यह अेक सफल अनुवाद है।

—**श्रीराम अट्रावलकर**, साहित्यरत्न

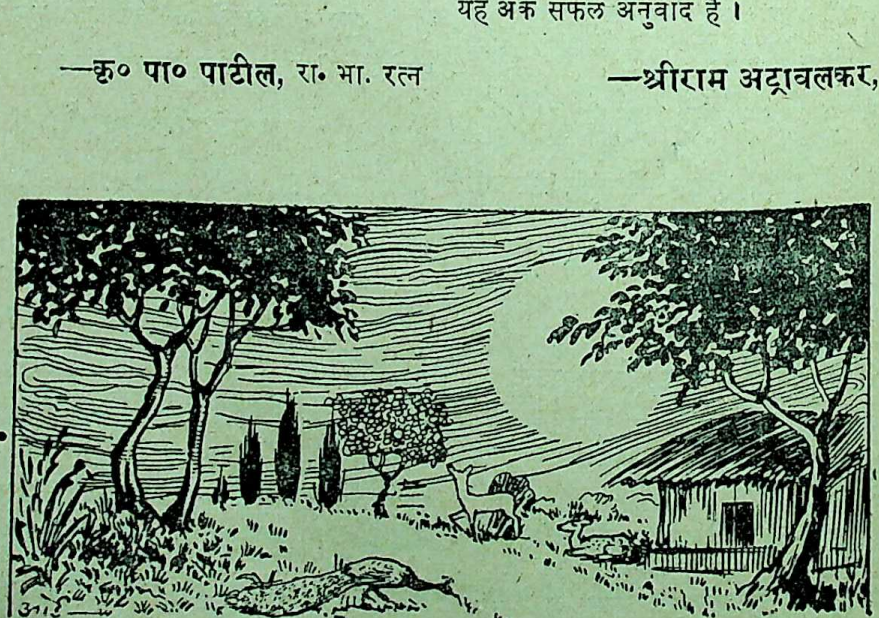

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

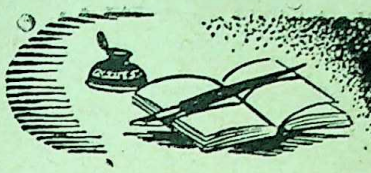

संपादकीय

आठ अक्टोबर--प्रेमचंद-दिवस :

प्रेमचंद, राष्ट्रभाषा-राजभाषा हिन्दीके औपन्यासिक-सम्राट प्रेमचंदका स्थूल शरीर--रूखे-सूखे मास और पतली पसली-हड्डियोंका वह जर्जर ढांचा पन्द्रह बरस हुअे, आठवीं अक्टोबरको अेक दर्दनाक लम्बी बे-दवा बीमारीके बाद नष्ट हो गया था, और अुनकी अकाटच, अच्छेद्य, अदाहच नित्य आत्मा किसी कल्पना-कल्पित स्वर्ग लोकमें न जाकर भारतभूमिके जन-जनके मनमें व्याप्त होकर समा गयी थी। अुस दिन अुनकी असामयिक मृत्युसे अुत्तर-दक्षिणके और पूरब-पच्छिमके करोड़ों हिन्दी-प्रेमी भारतवासियोंको बड़ा ही हृदयविदारक आघात लगा था। तबसे जो प्रेमचंदके लिअे हमारे शोकपूर्ण दिलोंमें समवेदना और दर्दभरी स्मृति भर गयी, वह आनेवाली पीढ़ियोंके दिलोंमें भी समायी हुअी रहेगी और शत-शताब्दियोंतक, जबतक हिन्दी अिस देशकी राष्ट्रभाषा-राजभाषा रहेगी भारतीय जनता अुनके समग्र भारतीय साहित्यको विश्व-साहित्यके बीच सर्वोच्च बराबरीके आसनपर बिठानेमें ही शहीद हो जानेवाले अपने अमर कलाकार प्रेमचंदको कभी न भूलेगी।-- अपनी श्रद्धांजलियां अुनकी स्मृतिको अर्पण करेगी। प्रेमचंदकी वाणी, कलम और अुनकी हस्ती हिन्दी साहित्यको प्रभावित करती रही। अितना बड़ा साहित्यकार--कलाकार, किन्तु साहित्यिक दंभ, आडम्बरसे हीन और अपनी ही महिमासे स्वयं अनजान, शरीरका आकार बहुत ही मामूली हैसियतका, जिसकी रहन-सहन भारतके सात लाख गांवोंका प्रतिनिधित्व करती, चेहरेपर जिसके कोअी महत्ताका निशान नहीं, बहुत ही सीधे स्वभावके थे प्रेमचंदजी। अुन्होंने कहानी-कलाको अूर्जस्वितापर बिठा दिया था। हम-प्रगतिशील लेखकगण प्रेमचंदको हिन्दीका गोर्की मानते हैं और कअी बातोंमें रूसके अुस महान् कलाकारसे अुनकी तुलना करते हैं। प्रेमचंदजी जीवनकी जटिल कठिनाअियोंमें पैदा हुअे, पालित-पोषित हुअे और मृत्युकी अन्तिम वेलातक कठिनाअियों-दुःखोंका कड़ुवा घूंट ही पीते रहे। अिन पंक्तियोंके लेखकको बंबअी-मलाबार हिलका वह अेक दिन अभीतक अच्छी तरह याद है जब प्रेमचंदजी अत्यन्त आर्थिक संकटके कारण अपने "हंस" मासिकको बनारससे बंबअी ले आये थे और भारतीय साहित्यके समर्थ अनुरागी गुजरातके महान् साहित्यकार मुन्शीजीकी गोदमें बड़ी आशा और अखंड विश्वासके साथ रख रहे थे और जब मुन्शीजी अंगरेजीमें, अपने अेक प्रख्यात मराठी साहित्यिक मित्रसे कह रहे थे प्रेमचंदजीके बारेमें: "प्रेमचंद महान् हैं, हिन्दीके औपन्यासिक-सम्राट हैं, किन्तु अैसे सम्राट कि जिनके पास कोअी पैसा-पूंजी स्वयंकी नहीं, कीमती कपड़े, जर-जेवरात नहीं, पर अिन्हींके बलबूतेपर हिन्दीके कुछ प्रकाशक और सम्पादक लखपती-पूंजीपति बन बैठे हैं और ये महामानव अत्यन्त आर्थिक संकटके शिकार ही रहे हैं। और अितना बड़ा साहित्यकार जो अपने जीवनका क्षण-क्षण भारतीय साहित्यको अूंचा अुठानेमें होम रहा हो हिन्दीवाले अुसकी अुपेक्षा करें, वह कठिनाअियोंके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीच गरीबी और निर्धनतामें कुटता-पिटता और पिसता रहे-- हिन्दीका दुर्भाग्य है।"

प्रेमचंद साहित्याकाशमें भारतीय साम्यवादके सन्देशवाहक, अेक अत्यन्त अुज्ज्वल नक्षत्रकी तरह प्रकाशमान हुअे थे। गोर्कीने महान् लेनिनकी साम्यवादी रूसी-संस्कृतिका अपनी लेखनीसे चित्रण किया, प्रेमचंद महात्मा गान्धीके सर्वोदय-युगकी भारतीय-संस्कृतिके जबर्दस्त प्रतिपादक हुअे। हमारा ही अभाग्य कि हम अुनका ठीक-ठीक मूल्यांकन नहीं कर पाये। वे हिन्दुस्तानकी आजादीपर और हिन्दीपर मर मिटे। आजभी अुनके वे शब्द हमारे कानोंमें गूँज रहे हैं, जो १९३६ में, लखनअूके अखिल भारतीय प्रगतिशील लेखक संघके वार्षिक आधिवेशनके अवसरपर सभापतिकी हैसियतसे अुन्होंने कहे थे--"साहित्य हमारे अन्दर बेचैनी पैदा करे, हमें सुलाये नहीं, क्योंकि ज्यादा सोना मृत्युका लक्षण है।"

प्रेमचंदकी याद, अुनकी बुलन्दी, अुनका बड़प्पन, अुनकी वाणी और अुनका साहित्य जिन्दाबाद !

शिव! शिव! अैसे धर्मका शीघ्र नाश हो!:

दीन-दुखियोंके हितकारी संत विनोबाजी अपने सहकर्मियोंके साथ जब बिहारके वैद्यनाथ धामके महादेवके दर्शनार्थ मंदिरमें प्रवेश करने लगे तो मन्दिरके पंडोंने बड़ी पामरताके साथ विनोबाजी और अुनके साथियोंपर हल्ला बोल-कर हमला कर दिया। यह नीच कर्म धर्मके नामपर हिन्दूधर्मको अत्यन्त कलुषित करनेवाला, अीश्वरके नामपर घोर कलंक और जगहँसाअी योग्य और निन्दनीय है। अुन पामर पंडों-पुरो-हितोंने धर्मकी रक्षा नहीं की; धर्मकी लुटिया डुबो दी। भारतीय धर्म और संस्कृतिको-ही कलं-कित कर डाला ! अिस ताजी दुर्घटनाके पीछे अैसा मालूम होता है, कोअी षड्यंत्र हो कि श्री विनोबा और अुनके सहयात्रियोंको बलि कर दिया जाअे। अुन पंडोंके सिरपर सत्यका, धर्मका नहीं; असत्य, अधर्मका कलियुगी--दंभ, पाखंडका भूत सवार हो गया था। अुस दिन अुन्होंने दुनियाकी नजरोंमें हिन्दूधर्मको कलंकित किया--नीचे गिरा दिया। अुसे चौपट कर दिया। अुस दिन भगवान वैद्यनाथकी आब्रह्मस्तम्ब पर्यन्त व्याप-कता नष्ट हो गयी। अुस दिनसे भगवान सम-दर्शी शरणागत रक्षक नहीं रहे। वे अपने पंडोंके स्वार्थ और मोहके वशीभूत होकर स्वयं नष्ट हो गये अविनाशी। अत्यन्त आश्चर्य, दुःख और भार-तीय संस्कृतिके लिअे कलंककी बात है। "सुरा-सुराराधितपादपद्मं श्री वैद्यनाथं तमहं नमामि" को भूतभावन भूतनाथके स्थानपर आजसे कहे-- जैसे नागनाथ वैसे साँपनाथ !

और अभी-अभी अुपरोक्त पंक्तियाँ समाप्त करते-करते, सारे संसारमें चारों ओर बिजलीके समाचार यह शुभसन्देश लेकर फैल गये कि वैद्यनाथ धामका शिवमन्दिर नष्ट नहीं हुआ, हिन्दूधर्म मरा नहीं--जीवित हो अुठा है और रुद्राक्षकी माला,हर के शिरपर विराजमान गंगा और गौमाता, गीता और गायत्री फिरसे पवित्र हो अुठी हैं। हरिजनोंने मन्दिरमें प्रवेश कर लिया, शंकरकी पूजा-अर्चनाकी और विनोबा सन्तने 'सर्वधर्मी समानत्व' तथा 'सर्वत्र भय वर्जन' का घोषकर धर्मकी रक्षा की। यतो धर्मःततो जयः !

'आजकल' का "कविता-अंक":

राष्ट्रभाषा हिन्दीके सौभाग्यसे आजकल हिन्दी-जगत्में जितने मासिक-पत्र निकलते हैं अुनमें हमारे सहयोगी और दिल्लीसे प्रकाशित "आजकल" का अपना अेक विशिष्ट स्थान है। सुन्दर विविध विषयोंसे सज्जित यह पत्र हिंदीकी कीर्तिको चार चाँद लगानेमें अग्रसर है। अिसके सुयोग्य सम्पादक श्री देवेन्द्र सत्यार्थीजी और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुनके साथी सम्पादकोंमें नयी कल्पना, नयी भावना और नयी प्रतिभा है। अभी-अभी दो तीन महीने हुअे, सहयोगी 'आजकल' ने अपना अेक विशेषांक "कविता अंक" निकाला था। प्रस्तुत अंकमें भारतीय भाषाओंकी रचनाअें और अुनकी गति-विधि-प्रगतिका दिग्दर्शन, देखकर सम्पादकवर्य सत्यार्थीजीको जितने भी साधुवाद दिये जाअें--वे थोड़े हैं। यह अंक अत्यन्त सुंदर, सुरुचिपूर्ण और सर्वांगसुन्दर बन पड़ा है! अिस अंककी सामग्री और संचयन पढ़कर चित्त प्रसन्न हो गया!

--हृ० श०

गांधी जयंती :

तिथिकी गणनासे भाद्रपद कृष्ण द्वादशीको तथा तारीखके हिसाबसे २ अक्टूबरको गांधी जयंती मनायी जाती है। अिन दो दिनोंके अन्तर्गत जितने भी दिन होते हैं, वे गांधी सप्ताहमें गिने जाते हैं, और अिन दिनों गांधीजीके अत्यन्त प्रिय खादी तथा चरखेके काम अथवा हरिजन-सेवा आदि रचनात्मक राष्ट्रीय कार्य बड़े अुत्साहसे किये जाते हैं। वर्षोंसे गांधीजीकी जयंती अिस प्रकार मनायी जाती है। अिस वर्ष भी अिसी प्रकार गांधी जयंती मनायी जाअेगी। परन्तु प्रश्न यह है कि क्या गांधीजीके सुझाये हुअे रचनात्मक कार्योंमें हमारा पहले जैसा अुत्साह कायम रहा है? गांधीजीने तो बार-बार अिस बातको स्पष्ट किया कि स्वराज्य मिलनेके बाद भी हमें अिन रचनात्मक कार्योंको खूब ध्यान लगाकर करना होगा। स्वराज्यको कायम रखनेके लिअे और जनताका सच्चा स्वराज्य लानेके लिअे अिसकी अत्यन्त आवश्यकता है। परन्तु खादी, ग्रामोद्योग आदि रचनात्मक कार्योंका प्रश्न छोड़ ही दें तो भी स्वदेशीमें भी अब जैसा पहले था वैसा हमारा विश्वास नहीं रहा। विदेशी-अमरीकी पूंजी देशमें बढ़ रही है और ग्रामोद्योगको छोड़कर बड़े-बड़े कल-कारखानोंपर ही विशेष ध्यान दिया जा रहा है। अभी हाल ही में संसदमें आचार्य श्री कृपालानीजीने भाषण करते हुअे कहा था कि अुनसे किसी अैसे नेताने, जिनका सरकारमें बहुत ही बड़ा महत्व है, यह कहा था कि अब स्वदेशीका कोअी सवाल ही नहीं रहता। अुन्होंने अुस नेताका नाम देना अुचित नहीं समझा परन्तु अुन्होंने अुनके महत्वके प्रति जो अिशारा किया है वह हमें सोच-विचारमें डाल देनेके लिअे पर्याप्त है। सरकारके महत्वशाली व्यक्तियोंका यदि यह रुख है तो सरकारका भी यही रुख होगा, यह समझ लेनेके बाद अभी रचनात्मक कार्यकी क्या परिस्थिति है, अुसपर विचार करना हमारे लिअे सुगम होगा।

सरकार नये-नये कार्यक्रम बनाती है, नयी संस्थाअें कायम करती है, परन्तु अुनकी अनिश्चित आर्थिक नीतिके कारण वह प्रजाको प्रेरणा तथा अुत्साह देनेमें सफल नहीं होती। भारत-सेवक-समाज रचनात्मक कार्यकी दृष्टिसे बहुत आगे नहीं बढ़ सका और सरकारकी पंचवर्षीय योजना भी, यद्यपि अुसका अितना प्रचार किया गया तो भी अेक प्रकारसे असफल-सी हो रही है। सरकारको स्वयं यह स्वीकार करना पड़ा है और बेकारीकी समस्या जिस प्रकार विकट रूप धारण करती दिखायी देती है अुसमें सरकारको भी आगे क्या करना चाहिये अिसका कोअी मार्ग दिखायी नहीं दे रहा है।

गांधी-जयंतीके दिनोंमें हम केवल गांधीजी को ही याद न करें, परन्तु अुन्होंने भारतको स्वराज्य दिलानेका जो समर्थ और सफल कार्यक्रम दिया, अुसपर भी विचार करें। अुन्होंने भारतकी राजकीय, आर्थिक तथा आध्यात्मिक-जिसमें नैतिकताका समावेश हो जाता है--अुन्नति तथा स्वतन्त्रताके लिअे हमें जो मार्गदर्शन कराया था अुस मार्गपर ही हम चल रहे हैं या अुससे पथ-भ्रष्ट हो गये हों अिसपर भी शांत चित्तसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनन करें। यदि हम सचमुच पथभ्रष्ट हो गये हों तो आज ही से सतर्क हो जाअें और शीघ्र ही सही रास्तेपर आनेकी कोशिश करें और तदनुसार हमारा जो कर्तव्य हो अुसका आज ही निर्णय कर लें। गांधीजीके प्रति गांधी-जयंतीके दिनोंमें अपनी श्रद्धा प्रगट करनेकी यही अेक सच्ची राह है और अिसीसे हम अपने प्रति भी सच्चे साबित होंगे तथा देशके प्रति भी अपने कर्तव्यका पालन करेंगे।

हमारी राष्ट्रभाषाको हमें अपनाना होगा :

अगस्तका अन्तिम सप्ताह राष्ट्रभाषा हिन्दीकी दृष्टिसे बड़े महत्वका था। संसदीय हिन्दी-परिषद्के वार्षिक समारोहमें संसदके दो हिन्दी-भाषी सदस्योंको राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धाकी प्रारम्भिक परीक्षा अुत्तीर्ण करनेके लिअे प्रमाण-पत्र देते समय भारतके प्रधान मंत्री पण्डित जवाहरलाल नेहरूने अेक बड़े महत्वका भाषण दिया। अुन्होंने स्पष्ट कहा—"हम अँग्रेजीको राष्ट्रभाषा नहीं बना सकते। यह हमारे देशकी शानके खिलाफ है। अभी हम अँग्रेजी चला रहे हैं, मजबूरीसे और जरूरतसे। मजबूरी अिसलिअे कि काफी लोग हिन्दी नहीं जानते। धीरे-धीरे अुन्हें हिन्दी सीखनी होगी। दूसरी मजबूरी है आजकलके विचारोंमें, विज्ञानमें, पचासों बातें हैं जिन्हें जानना जरूरी है।...कुछ अच्छी अंग्रेजी बोलनेवाले हैं, लेकिन अँग्रेजीसे हम आम लोगों तक नहीं पहुँच सकते। अिस तरह अंग्रेजी हमारे और लोगोंके बीच अेक दीवार है।"

अुन्होंने यह भी कहा कि "आखिर हिन्दी तो राष्ट्रभाषा बन ही गयी, बहसकी बात तो रही नहीं।' परन्तु अिसके साथ-साथ अुन्होंने यह भी कहा कि "मैं चाहता हूँ कि किसीपर वह लादी न जाअे, नहीं तो अुल्टा असर पैदा होगा, विरोधी पैदा हो जाअेंगे।" हिन्दी किसीपर लादनेका कभी किसीने प्रयत्न नहीं किया, फिर भी हिन्दीका खामोखा विरोध करना आज कुछ लोगोंने अपना पेशा बना लिया है। अुसके मूलमें प्रांतीय साम्प्रदायिक तथा कुछ राजकीय भावनाअें काम करती दिखायी देती हैं और अैसी भावनाओंके कारण जो दुराग्रह होता है, अुसे दूर करना आसान नहीं।

अुन्होंने अेक बहुत महत्वकी बात कही कि "कोरिया जानेवाले कुछ सैनिक अफसर मुझसे मिलने आये। विदेशोंमें आपसमें किस भाषामें बातचीत करनी चाहिये यह प्रश्न निकला। अुन्होंने बताया कि अुन सबने कोरियामें आपसमें हिन्दीमेंही बातचीत करनेका निर्णय किया है। विदेशोंमें आपसमें अंग्रेजीमें बात करनेमें शरम मालूम होती है। विदेशोंमें मैं भी भारतीयोंके साथ हिन्दीमें ही बात करता हूँ।" यह सही है कि विदेशोंमें जाकर जब हम भारतीय आपसमें हिन्दकी अपनी भाषामें बात नहीं कर सकते तो विदेशियोंके आगे हमारा मान नहीं रहता और अिसलिअे हमें शरम मालूम होती है। परन्तु देशमें हम आपसमें अंग्रेजीमें बातचीत करते हैं तो क्या वह हमारे गौरवकी बात होती है? श्री आचार्य कृपालानीजीने संसदीय-हिन्दी-परिषदके अिसी समारोहमें पं. नेहरूको अुत्तर देते हुअे कहा कि भारतमें अँग्रेजीमें बातचीत करनेमें हमें और भी अधिक शरम मालूम होनी चाहिये। अुन्होंने यह भी कहा कि बहुतसे बोलनेवाले अपने भाव गलत अँग्रेजीमें प्रगट करते हैं अुससे अच्छा तो यही है कि देशकी भाषामें हम अपने विचार प्रगट करें।

हिन्दी किसीपर लादी नहीं जाअेगी!:

दिल्लीमें अेक तमिल समारोहका अुद्घाटन करते हुअे राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसादने दक्षिण-भारतवासियोंको आश्वासन दिया कि "हिन्दीका विकास कभी भी प्रादेशिक भाषाओंको नुकसान पहुँचाकर न होगा। मैंने बहुधा लोगोंको कहते सुना है कि दक्षिणपर हिन्दी जबर्दस्ती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थोपनेका प्रयत्न किया जा रहा है किन्तु मैं आश्वासन दिला सकता हूँ कि अिस प्रकारका कोअी प्रयत्न नहीं हो रहा है।"

हिन्दीके राष्ट्रभाषा-स्वरूपकी चर्चा करते हुअे अुन्होंने आशा प्रकट की कि "भविष्यकी हिंदी केवल अुत्तरी भारतीयोंकी ही हिन्दी न होगी बल्कि राष्ट्रीय हिन्दी होगी जिसका निर्माण और पालन पोषण सब भारतीय करेंगे, चाहे वे किसी भागके हों और कोअी भी भाषा बोलते हों।"

बंगालियोंसे अनुरोध :

पश्चिम बंग राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके नवम समावर्तनोत्सवके अुपलक्ष्यमें अुसके सभापति पश्चिम बंगके राज्यपाल डा० हरेन्द्रकुमार मुखोपाध्यायने अपने अभिभाषणमें कहा:—"यह सच है कि हिन्दी भाषाको लेकर कुछ समय हुआ सारे देशमें कहीं-कहीं प्रबल वितर्क किये गये थे। अुन वितर्कोंके धूम्र-जाल तथा दूसरे कतिपय राजनैतिक कारणोंसे हिन्दीतर भाषी साधारण-जन और खासकर बंगाली लोग हिंदीके महत्वके सम्बन्धमें शंकाशील थे। परन्तु हर्षकी बात है कि हमारे देशवासियोंकी दृष्टिमें हिन्दी सीखनेकी आवश्यकता अब दिनके प्रकाश जैसी स्पष्ट हो गयी है। अन्यान्य प्रादेशिक भाषाओंकी तुलनामें हिन्दीकी साहित्य-समृद्धि कैसी भी क्यों न हो, विभिन्न भाषा-भाषियोंसे निर्मित अिस विशाल भारत देशके अैक्यके लिअे हिन्दी ही सबसे अधिक अुपयोगी भाषा है, यह निर्णय अनेक वर्ष हुअे भूदेव, बंकिम, केशवचन्द्र तथा राजा राममोहनराय जैसे महापुरुषोंने किया था। स्वतन्त्र भारतकी प्रतिनिधि सभाने अिसे राष्ट्रभाषाका गौरव दिया है। अिसलिअे आज हम अपना आत्माभिमान आगे करके अुसके प्रति अुदासीनता दिखाअेंगे तो वह अुचित न होगा।" अुन्होंने यह भी कहा कि "बंगाली यदि हिन्दीके प्रति विमुख रहेगा तो अुसका अर्थ यही होगा कि वह अपनी आत्मोन्नतिके पथको ही बंद कर रहा है।"

हिन्दीका संदेश :

अिसी समावर्तन समारोहके अवसरपर दीक्षान्त भाषण देते हुअे कलकत्ता विश्वविद्यालयके हिन्दी-विभागके अध्यक्ष डा. सत्येन्द्रने हिन्दीका संदेश देते हुअे कहा कि हिन्दीका संदेश जन्मसे ही प्रेम और त्यागका संदेश रहा है। "प्रेमरहित राष्ट्रभाषाका सूत्र हमारे राष्ट्रको सबल नहीं बना सकेगा।" अुन्होंने अुपाधिधारियोंसे कहा—"कि आप निश्चय समझें कि आप अेक महान् और पवित्रतम धर्मके मिशनरी हैं। आप राष्ट्रभाषाके लिअे राष्ट्रजनके हृदयको जीतें। मुझे पूरा विश्वास है कि आप अपने अिस पवित्र अुद्देश्यमें अवश्य सफल होंगे।" आपने यह भी कहा कि "हिन्दीका अेक महान् अुद्देश्य यह भी है कि वह समस्त देशकी विविध भाषाओंकी संकोचशीलता दूर करे और वह अेक अैसा माध्यम बन जाअे जिसके द्वारा साहित्यिक भूमिपर भाषाअें निकटसे निकट आती जाअें और प्रत्येक भाषाभाषी दूसरी भाषाओंकी प्रतिभाओंके प्रसादका समुचित लाभ अुठा सके। यह अेक बड़ा लाभ है।"

अिस प्रकार हम देखते हैं कि हिन्दीके सम्बन्धमें सब प्रकारके भ्रमोंको दूर करनेके लिअे तथा वायुमण्डलको शुद्ध करनेके प्रयत्न बड़े-बड़े स्थानोंसे हो रहे हैं। हम आशा करें कि जन-समाज तक ये सब सन्देश अुसके सच्चे रूपमें पहुँचेंगे। हिन्दीके सम्बन्धमें अब भ्रमका कोअी कारण नहीं रह गया, परन्तु जो लोग जान-बूझकर भ्रम अुत्पन्न करना चाहते हैं; अुनको समझानेका तो कोअी मार्ग ही नहीं है।

—मो० भ०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके, आपके परिवार के प्रत्येक सदस्य के, प्रत्येक शिक्षा-संस्था तथा पुस्तकालय के लिअे अुपयोगी

हिन्दीका अपने ढंगका पहला पत्र

गुलदस्ता

(हिन्दी डाअिजैस्ट)

३९३८ पीपलमंडी, आगरा

वार्षिक मूल्य १०)
पृष्ठ संख्या १२५

नमूने की प्रति
अेक रुपया

अजन्ता

सम्पादक—
श्री वंशीधर विद्यालंकार : श्री श्रीराम शर्मा

प्रकाशक:— हैदराबाद राज्य हिन्दी प्रचार सभा, हैदराबाद दक्षिण

१. अुच्च कोटिका साहित्य, २. सुन्दर और स्वच्छ छपाअी, ३. कलापूर्ण चित्र

वार्षिक मूल्य ९ रुपया

किसी भी माससे ग्राहक बना जा सकता है ।

"नया पथ"

हिन्दीकी नयी साहित्यिक चेतनाका प्रतिनिधि मासिक पत्र ।

विशेष स्तम्भ— मासिक टिप्पणियाँ, व्यंग और प्रहसन, आजकी राजनीति, मार्क्सवादकी पाठशाला, आर्थिक लेखाजोखा, कथा-कहानी और कविताअें, विज्ञान और हम, सिनेमा-जगत, हमारी संस्कृति, पुस्तक परिचय आदि ।

सम्पादक:— श्री शिव वर्मा

वार्षिक चन्दा ६ रु. : छः माही ३ रु.
अेक प्रतिका मू. ८ आना : पृष्ठ संख्या ४८

अेजेन्सी लेनेवालोंको २५% कमीशन और डाकखर्च मुफ्त ।

"नया पथ" कार्यालय,
राजभवन, सैण्डहर्स्ट रोड, बम्बअी ४.

हिन्दीका स्वतंत्र मासिक

"नया समाज"

संचालक: नया समाज-ट्रस्ट ★ संपादक: मोहनसिंह सेंगर

वार्षिक चन्दा ८) : अेक प्रति ।।।) : विदेशोंमें १२) वार्षिक

आप यदि ग्राहक नहीं हैं, तो आज ही बन जाअिये। यदि हैं, तो अपने अिष्टमित्रोंको भी बनाअिये । यदि किसी कारण आप ग्राहक नहीं बन सकते, तो चेष्टा कीजिये कि 'नया समाज' आपके पडोसके पुस्तकालयमें मँगाया जाय ।

आज ही नमूनेके लिअे लिखिये :—

व्यवस्थापक 'नया समाज', ३२, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता— १

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस घरमें आरोग्य प्रकाश नहीं, वहाँ सुख शान्ति कहाँ ?

आरोग्य, स्वच्छता और चिकित्साका सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ

भारत-प्रसिद्ध श्रीवैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लिमिटेडके अध्यक्ष वैद्यराज पं० रामनारायणजी वैद्यशास्त्रीने ५-६ वर्ष बड़ी मेहनतसे स्वयं अिस ग्रंथको लिखा है। ग्रंथका अेक-अेक वाक्य हजारों रुपयेका काम देता है। व्यायाम, ब्रह्मचर्य, भोजन, सदाचार, अुत्तम विचार आदि पूर्वार्द्ध विषयोंको पढ़कर और तदनुसार चलकर सदा बीमार रहनेवाला रोगी बिना दवाके नीरोग (तन्दुरुस्त) हो जाता है। ग्रंथके अुत्तरार्द्धमें शरीरमें पैदा होनेवाले सभी रोगोंकी अुत्पत्ति, कारण, निदान, रोगके लक्षण, चिकित्सा, पथ्यापथ्य आदि बड़ी ही सरल भाषामें लिख है, जो पढ़कर विद्वानसे लेकर साधारण पढ़े-लिखे दोनों समान भागसे लाभ अुठा सकते हैं। अिसमें दवाओंके जो नुकसे लिखे गये हैं वे बहुत बार परीक्षित, कभी भी फेल न होनेवाले और शास्त्रानुमोदित है। शहर हो या देहात, सब जगह अिस पुस्तकके घरमें रहनेसे रोगीको तत्काल लाभ पहुँचाया जा सकता है। औषध तैयार करनेका विधान तो अिस पुस्तकमें श्रेष्ठ है क्योंकि लेखक अिस विषयके निर्णयात्मक ज्ञाता हैं। अिसके आठ संस्करणोंमें ७१००० प्रतियां छपकर बिक चुकी हैं। यह नवां संस्करण १५ हजारका अभी छप रहा है। अिससे अिसकी लोक-प्रियता और अुपयोगिता स्पष्ट मालूम होती है। हिन्दीमें अैसी अुत्तम पुस्तक दूसरी नहीं है, यह कहा जाय तो अनुचित न होगा। प्रचारकी दृष्टिसे मूल्य भी बहुत कम रखा गया है। ५१५ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य सिर्फ १।।।), डाक खर्च ।।≈), हमारी चार निर्माणशाला, ५० विक्री केन्द्र, १५००० अेजेन्सियोंसे प्रत्यक्ष खरीदनेपर डाक खर्च नहीं लगेगा।

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लिमिटेड, कलकत्ता, पटना, झांसी, नागपुर।

—: अुद्यम :—

हिन्दी और मराठी भाषामें प्रकाशित होता है।

प्रतिमास १५ वीं तारीखको पढ़िये।

अुद्यममें निम्न विषयोंके लेख छपते हैं :—

लाभदायक अुद्योगधंधोंकी जानकारी, अनाज तथा सब्जीकी खेती व रोगोंका निवारण, पशुपालन, दुग्धव्यवसाय व ग्रामोद्योग संबंधी लेख, विद्यार्थियोंके लिअे वैज्ञानिक व अन्य जानकारी, आरोग्य, घरेलू औषधियों संबंधी लेख, हिन्दुस्थानके वैज्ञानिक और औद्योगिक क्षेत्रकी अुपयोगी जानकारी, कृषि, औद्योगिक और व्यापारिक क्षेत्रमें काम करनेवाले लोगोंकी मुलाकात तथा परिचय।

अुद्यमके विशेष स्तंभ

महिलाओंके लिअे अुपयुक्त, रुचिकर खाद्यपदार्थ बनानेकी विधि, घरेलू मितव्ययिता, अुद्यमका पत्रव्यवहार, खोजपूर्ण खबरें, आर्थिक तथा औद्योगिक परिवर्तन, जिज्ञासु जगत्, व्यापारिक हलचलोंकी मासिक समालोचना, नित्योपयोगी वस्तुअें स्वयं तैयार कीजिये।

वार्षिक चन्दा ७ रु. और प्रति अंक १२ आना

पता:— **'अुद्यम' मासिक, धर्मपेठ, नागपुर (म. प्र.)**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुषमा

सम्पादक : कुंडलराय मोहेकर

या मासिकाचीं वैशिष्ठ्यें—

★ सुन्दर लघुकथा. ★ नामांकित लेखकांचें लिखाण. ★ जीवन, कला, साहित्य अित्यादि विषयांवर अुपयुक्त मजकूर. ★ या शिवाय चेतोहारी चित्र.

नियमित वाचण्यासाठी आजच वर्गणी पाठवून ग्राहक होणें फायद्याचें आहे.

वार्षिक वर्गणी ६ रुपये. किरकोळ अंकास आठ आणे.

सुषमा : पराग बिल्डिंग्ज़, धरमपेठ, नागपुर (म. प्र.)

"दक्षिण भारत"

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभाका
सांस्कृतिक मासिक पत्र

अिस पत्रके द्वारा:—दक्षिणकी प्राचीन और आधुनिक संस्कृति संबंधी जानकारी, दक्षिणके साहित्य, राजनीति, शिक्षा, कला, रचनात्मक कार्य-क्षेत्रोंके विवरण और अुनके अुन्नायकोंका परिचय, दक्षिणकी तेलुगु, तमिल, कन्नड़ मलयालम भाषाओंके और अुत्तरके विद्वानोंका साहित्य सृजनका परिचय पाअिये।

वार्षिक चंदा रु. ६-०-० अर्धवार्षिक रु. ३-८-०
अेक प्रति रु. ०-१०-०

अिस पतेपर लिखें:
व्यवस्थापक, पत्रिका विभाग,
दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा,
त्यागरायनगर, मद्रास १७.

गोवध बन्द करनेके लिअे
३१ करोड़ हिन्दुओंकी माँग!
क्रान्तिकारी विचारोंके साथ।

* गोरक्षण *

मासिक-पत्रमें पढ़िये

गोसेवामें भाग लेनेके लिअे आज ही १।) रु. वार्षिक भेजकर ग्राहक बनिये। नमूनांकके लिअे पाँच आनेका टिकट अवश्य भेजिये। धार्मिक संस्थाओंको मुफ्त।

गोरक्षा प्रचारके लिअे हर प्रकारकी सहायता तथा दान नीचेके पतेपर भेजिये।

व्यवस्थापक —गोरक्षण साहित्य मन्दिर,
रामनगर, बनारस (अु. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मेघदूत' के महत्वपूर्ण प्रकाशनके बाद "प्रेरणा" का छठा-सातवाँ अंक

: प्रेमचन्दके पात्र :

विशेषांक होगा

★ अिस अंकमें प्रेमचन्दके अुपन्यासों और कहानियोंके सभी महत्वपूर्ण पात्रोंपर अधिकारपूर्ण लेख होंगे। ★ विशेषांकका मूल्य लगभग ४) होगा।
★ प्रेरणाके स्थाअी ग्राहकोंके लिअे वही मूल्य रहेगा। अग्रिम आर्डर भेजिये।

शीघ्र ही वार्षिक ग्राहक बनकर अिस सुविधाका लाभ अुठावें। वा. १४) रु.

सम्पादक : कोमल कोठारी,
सोजतीगेट, जोधपुर (राजस्थान)

पुस्तक-परिचय

अुत्कल साहित्य और साहित्यिकोंसे परिचय प्राप्त करना चाहते हैं तो निम्नलिखित पुस्तकें पढ़िये--

१—प्रतिभा—लेखक डा. श्री हरेकृष्ण महताब। प्रतिभा जो अुत्कल विश्वविद्यालयकी बी. अे. परीक्षाके पाठ्यक्रममें है, अुसीका यह हिन्दी अनुवाद है।

२—अुत्कल मणि पं० गोपबन्धु दास—पं० गोपबन्धु दासकी जीवनी है। मूल अुत्कल भाषाके लेखक पं. लिंगराज मिश्र अेम. पी. हैं।

३—धर्मपद--पं. अुत्कलमणि गोपबंधु दासका लिखित अुत्कल भाषाका खण्ड-काव्य है।

४—अुत्कल साहित्यकी श्रेष्ठ कहानियाँ—अिसमें अुत्कल भाषाके प्रसिद्ध आठ लेखकोंकी कहानियाँ संग्रहीत हैं।

५--राष्ट्रभाषा बन्धु और राष्ट्रभाषा सुबोधिनी--
अुत्कल भाषा सीखनेमें सहायक

६--क्या यह सुनी कहानी--लेखक पं० रामेश्वर दयालुजी दुबे हैं।

प्रकाशक--अुत्कल प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार सभा, कटक- १

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नयी धारा

याद रखिये पत्रिकाके लिअे } १ अेक निश्चित अुद्देश्य चाहिये !
२ अुसका अपना व्यक्तित्व चाहिये !

अैसी ही अेक मासिक पत्रिका है। कहानियाँ, कविताअें, शब्द-चित्र, संस्मरण, नाटक, आलोचना, निबन्ध आदि। हिन्दीमें नयी धाराके प्रतीक श्री रामवृक्ष बेनीपुरी अिसका सम्पादन कर रहे हैं। जिनकी सहायताके लिअे साहित्य-महारथियोंका अेक सम्पादक-मण्डल संगठित किया गया है। प्रादेशिक सरकारोंके शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत।

नयी धाराके पुराने प्राप्य अंक आधी कीमतमें प्राप्त होंगे। पोस्टेज फ्री। रंगमंच अंककी थोड़ीसी प्रतियाँ शेष हैं। ग्राहक शीघ्रता करें।

डिमाअी आठ पेजीके १०० पृष्ठ, पक्की जिल्द, आकर्षक कवर, सचित्र, सुसज्जित।

अेक अंक १) रु.] [वार्षिक १०) रु.

पता:— प्रबंधक, नयी धारा, अशोक प्रेस, पटना ६

वार्षिक मूल्य ४) **'माता'** अेक प्रति ।=)

श्री अरविन्द साहित्यकी अुत्तर भारतकी अेक मात्र मासिक पत्रिका चार वर्षसे नियमित रूपसे प्रकाशित होकर भारतवर्षके कोने-कोनेमें तथा अन्य देशोंमें आध्यात्मकी धारा बहा रही है।

कुछ विशेषताअें:— १. अुच्च कोटिके लेख, कहानी, कविताअें आदि।
२. सुन्दर और आकर्षक छपाअी।

प्रधान सम्पादक:— श्री मोहन स्वामी

—: कुछ सम्मतियाँ :—

१. 'माता' का मैं हृदयसे स्वागत करता हूँ। आशा है, यह हमारी सांस्कृतिक और आध्यात्मिक अुन्नतिमें सहायक होगी। **—श्री मैथिलीशरण गुप्त।**

२. अीश्वर करे अिस सुन्दर पत्रिकाके द्वारा श्री अरविन्द प्रतिपादित योग भारतीय लोक अेवं विश्वका कल्याण करे। **—डा. वासुदेवशरण, पी. अेच. डी. डी. लिट.**

पता:— **प्रबन्धक 'माता' (मासिक) श्री मातृकेन्द्र, गाजियाबाद (यू. पी.)**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दीका स्वस्थ, सात्विक अेवं सस्ता मासिक पत्र

'जीवन-साहित्य'

वार्षिक शुल्क केवल ४)

चाहें तो पहले अेक कार्ड भेजकर नमूना मंगाकर देख लें।

जुलाअी और जनवरीसे ग्राहक बनाये जाते हैं।

पता:-- सस्ता साहित्य मण्डल, नअी दिल्ली

नव निर्माण

[सम्पादक - नेमिचन्द जैन 'भावुक']

+ साहित्य, शिक्षा, संस्कृति और कलाका संगम + राजनीति-विज्ञान, + तारोंकी छायामें + चना जोर गरम + अिमनके आलोकमें + आप भी कहें, हम भी कहें + कसौटीपर + ये धूल भरे हीरे आदि स्थायी स्तंभोंसे युक्त अपनी ही विशेषताओंसे प्रेरित प्रभावित नयी पीढ़ीका सचित्र त्रैमासिक : अेक प्रति १) विशेषांक युक्त वा. ४)

कुमार साहित्य परिषद, जोधपुर

विशेष:— मार्च अंककी प्रतियां अप्राप्य, जूनकी प्राप्य। निशुल्क प्रति भेजनेमें असमर्थ।

मद्रास तथा पंजाब सरकार द्वारा
समस्त शिक्षा संस्थाओंके लिअे स्वीकृत
देशबन्धु पुस्तकालय मथुराका प्रमुख साहित्यिक
मासिक-पत्र

दे श ब न्धु

प्रधान सं. : कृष्णादत्त वाजपेयी, अेम. अे.
सम्पादक : ज्यो० राधेश्याम द्विवेदी
स. सम्पादक : बैजनाथ दाणी
वार्षिक मूल्य ४) * अेक प्रति ।=)

देशबन्धु अगस्त ५२ से अपने द्वितीय वर्षमें प्रवेश कर चुका है अिसकी खुशीमें ३० सितम्बर-तक केवल ३) रु० में वार्षिक ग्राहक बनाये जा रहे हैं और अुसका प्रथम अंक व्रज संस्कृति अंक निकल रहा है जो संग्रहीय वस्तु होगी।

पत्र-बिक्री [अेजेन्सी] तथा विज्ञापनके लिअे आज ही लिखिये।

पता—व्यवस्थापक, "देशबन्धु"
मथुरा (यू० पी०)

सुन्दर टाअिप और बार्डर

अिस कारखानेके सुन्दर और मजबूत टाअिपको अनेक छापखानेवाले पसन्द करते हैं। हमारे यहाँ अंग्रेज़ी, मराठी, गुजराती तथा कानड़ी टाअिप और अनेक प्रकारके बार्डर तथा अिलेक्ट्रो ब्लाक्स हमेशा तैयार मिलते हैं।

अुसी प्रकार हमारे यहाँ मोनो सुपर कास्टरसे तैयार किये हुअे १२ पाअिंट हिन्दी और मराठी टाअिप भी तैयार हैं। केटलाग जरूर मँगावें।

पता—मैनेजर, निर्णय सागर प्रेस,
बम्बअी, नं० २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रानी

आपके मनोरंजनके लिअे

नाना प्रकारके सचित्र लेख, कहानियाँ, छाया लोक और आलोचनाअें आदि-आदि। वर्षमें होलिकांक और दीपावली-अंक मुफ्त।

रानीका वार्षिक चन्दा केवल चार रुपये है। रानी १५ वर्षसे हिन्दी-पाठकोंको निरन्तर नवीन पाठ्य-सामग्री देती आ रही है।

"रानी" कार्यालय,
१२१ चित्तरंजन अेविन्यू,
कलकत्ता ७

सरस्वती संवाद

हिन्दीका परीक्षोपयोगी आलोचनात्मक मासिक पत्र

अिसकी विशेषताओंके संबंधमें विद्वानोंकी सम्मतियाँ

१. अिसको अुच्चकोटिके लेखकोंका सहयोग प्राप्त है। २. अिसमें अनावश्यक सामग्रीका समावेश नहीं है। ३. यह पत्र विद्यार्थियोंकी ठोस सेवा कर रहा है। ४. अिसका प्रत्येक लेख विद्यार्थियोंके कामका होता है। ५. सरस्वती संवाद अच्छी प्रगति कर रहा है। शीघ्र ही वह अपने लिअे सुदृढ़ स्थान बना लेगा। ६. यह पत्र अुन्नति कर रहा है और लोक-प्रिय हो रहा है।

वार्षिक मूल्य केवल ४) नमूनेकी प्रति ।।) में

पताः--सरस्वती संवाद कार्यालय,
मोती कटरा, आगरा।

महाराष्ट्र रा.भा. प्रचार समिति, पुणेके तत्वावधानमें

राष्ट्रभाषा प्रचारकों अेवं परीक्षार्थियोंके अुपयोगकी हिन्दीकी अभिनव साहित्यिक मासिक पत्रिका

"जयभारती"

सम्पादक अेवं प्रकाशकः--श्री पं. मु. डांगरे

प्रारम्भिकसे लेकर अूँची परीक्षाओंतककी परीक्षोपयोगी सामग्री; साहित्य, परंपरा, संस्कृति विषयक लेख; शंका समाधान; साहित्य परिचय; मधुसंकलन; हिन्दी जगत्; परीक्षा विषयक सूचनाअें; आवश्यक जानकारी, कहाँपर कौन क्या पढ़ें आदि नाविन्यपूर्ण अेवं समयोचित रचनाओं अेवं विशेषताओंसे भरपूर।

मनिआॅर्डरसे वार्षिक मूल्य १) अेक रुपया भिजवाकर शीघ्र ग्राहक बन जाअिये।

पताः-८६६ सदाशिव, पो. बॉ. नं.५५८, पुणे २.

गुजराती भाषाका निराला साप्ताहिक-पत्र

निर्माण

[सम्पादक : हरिलाल पंड्या]

समस्त भारतकी शैक्षणिक, सांस्कृतिक और प्रजाजीवनके नव-निर्माणकी प्रवृत्तियोंका ज्योतिर्धर।

निर्माणमें आप देखेंगे :—

आनंद, अुत्साह और चेतनाप्रद लेख, कहानियाँ अेवम् अपने ही ढंगसे चुने हुअे समाचार। राष्ट्रभाषासे सम्बन्धित सभी प्रवृत्तियोंका विवरण और किसी भी वादसे परे रहकर तटस्थ और स्पष्ट मंतव्य प्रकट करना निर्माणका ध्येय है।

विज्ञापनका अत्युत्तम साधन।

आज ही पत्र लिखकर नमूनार्थ प्रति मंगवाअिये।

वार्षिक मूल्य ५) छः माही ३) अेक प्रति दो आना

'निर्माण' कार्यालय
स्वस्तिक प्रिन्टरी
धर्मेन्द्र मार्ग
राजकोट (सौराष्ट्र)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम आपसे कुछ कहना चाहते हैं !

'राष्ट्रभारती' का तीसरा वर्ष जनवरी ५३ से ही शुरू हो चुका है। तीसरे वर्षका यह दसवाँ (अक्टूबर मासका) अंक आपके हाथमें है।

'राष्ट्रभारती' के जिन प्रेमी ग्राहकोंका वार्षिक चन्दा अिस अंकके साथ पूरा हो जाता है, अुनसे हमारा नम्र निवेदन है कि वे अपना अगले वर्षका चंदा ६ रु. मनीआर्डर द्वारा तुरन्त भेजनेकी कृपा करें। वार्षिक या छहमाही चंदा हर हालतमें मनीआर्डर द्वारा भेजना ही ठीक होगा। अिससे हमको और आपको सुविधा होगी। आपको अंक समयपर मिलेगा। वी.पी. और 'रजिस्ट्री' चार्जकी झंझटसे आप और हम दोनों बचेंगे। आशा है, आप हमारी अिस प्रार्थनापर जरूर ध्यान देंगे।

दूसरा निवेदन यह भी है कि कमसे-कम अपने किसी अेक-दो पड़ोसी मित्रोंको भी ग्राहक अवश्य बना दें और अुनका सालाना चंदा मनीआर्डरसे भिजवा दें। यह 'राष्ट्रभारती' सबसे सस्ती, सुन्दर साहित्यिक, सांस्कृतिक पत्रिका है, जो ठीक समयपर हर १ ली ता० को निकलती है।

अिस पत्रिकाके प्रचारमें आप अवश्य अपना सहयोग बढ़ावें।

मनीआर्डरसे वार्षिक चंदा ६ रु. और छहमाही चंदा ३ रु. ८ आ.

नमूना अंकके लिअे दस आना मात्र।

पता :– व्यवस्थापक—'राष्ट्रभारती', पो०—हिन्दीनगर (वर्धा, म० प्र०)

राष्ट्रभारतीके लेखकोंसे निवेदन !

(१) 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ रचना आदि सामग्री स्वच्छ सुवाच्य लिखावटमें अथवा अच्छी टाअिप की हुअी भेजनी चाहिये। प्रकाशन योग्य सामग्री जो कुछ भी आप भेजें वह बहुत भारी-बोझिल और खूब लंबी चौड़ी नहीं होनी चाहिये, कृपया अिसका खयाल रखें। आपके हार्दिक सहयोगके लिअे राष्ट्रभारती बहुत आभारी होगी।

(२) यह अच्छी तरह ध्यानमें रहे कि राष्ट्रभारतीमें प्रकाशनार्थ भेजी हुअी आपकी रचना अिसके पूर्व किसी हिन्दी पत्र-पत्रिकामें प्रकाशित न हो चुकी हो; और जो कुछ सामग्री भेजें वह 'राष्ट्रभारती' के लिअे ही भेजें।

(३) अनुवादक महाशय किसी अनूदित रचनाको भेजनेसे पूर्व अुसके मूल-लेखकसे पत्रद्वारा अनुमति अवश्य प्राप्त कर लें; तभी अनूदित रचना हमारे यहाँ भेजें।

(४) आपकी स्वीकृत रचना संबंधी सूचना संपादक द्वारा आपको दी जाअेगी और छपनेतक आपको प्रतीक्षा करनी होगी।

(५) अपनी अस्वीकृत रचनाको वापस मंगानेके लिअे डाक-टिकट अवश्य भेजें अथवा आप अुसकी प्रतिलिपि अपने पास सुरक्षित रखें।

(६) लेख, रचना आदि प्रकाशन योग्य सम्पादकीय सारा व्यवहार अिस पतेपर करें:—

संपादक : 'राष्ट्रभारती'

पोस्ट—हिन्दीनगर (वर्धा, मध्यप्रदेश)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्रभारती' का 'विशेषांक'

" राष्ट्रभारती " का अगामी अंक 'अखिल भारतीय राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलन पंचम अधिवेशन नागपुर' के अपलक्ष्यमें 'सम्मेलन-विशेषांक'के रूपमें प्रकाशित होगा। अिस अंकमें अुत्तर और दक्षिणके लब्धप्रतिष्ठ लेखकों की अुच्च रचनाअें, संस्कृत, हिन्दी, बंगला, मराठी, गुजराती, पंजाबी, तमिळ, तेलुगू, कन्नड़, मलयालम, अुर्दू, सिन्धी, राजस्थानी, मैथिली आदि भारतीय भाषाओंकी विविध सुन्दर सामग्री सचित्र प्रस्तुत की जाअेगी।

★

यह अंक दर्शनीय होगा! पठनीय होगा! 'राष्ट्रभारती' भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी प्रतिनिधि पत्रिका है जो सबसे सस्ती है किन्तु ठोस सामग्री देती है।

★

सालाना चंदा ६ रु. मात्र।

शीघ्र ग्राहक बन जाअिये।

व्यवस्थापक : 'राष्ट्रभारती'

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा

पढ़
अेवं
मनिअ
भिजवा
पता:-८६

था प्रकाशक:— मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस,— राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

नवम्बर १९५३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ३] राष्ट्रभारती, अक्टूबर १९५३ [अंक ११

'राष्ट्रभारती बिहार, राजस्थान, मध्यभारत, हैदराबाद और भोपाल राज्यके शिक्षा-विभागों द्वारा स्कूलों, कालेजों और वाचनालयोंके लिअे स्वीकृत हो चुकी है।

[सूचना:—'राष्ट्रभारतीमें, सर्वश्री डॉ. बाबूराम सक्सेना, आचार्य काका कालेलकर, महामहोपाध्याय दत्तो वामन पोतदार, स्वर्गीय किशोरीलाल मशरूवाला और अुत्तर-प्रदेशके वर्तमान राज्यपाल श्री क०मा०मुन्शीजी आदि विशेषज्ञोंकी अेक 'समिति' द्वारा १९३६ में निर्णीत नागरी लिपिका प्रयोग होता है: —अि, अी, अु, अू, अे, अै (इ,ई, उ, ऊ, ए और ऐ की जगह) और ञ, ण और क्ष (भ, ण और क्ष अक्षरोंके स्थानपर) –सं०]

—विषय-सूची—

१. लेख :		लेखक	पृ० सं०
१. 'काकासाहेब'	...	श्री गंगाधर अिंदूरकर	७८९
२. डॉ. भवानीशंकर नियोगी (परिचय)			७९२
३. कन्नड़ साहित्यके अितिहासकी अेक झाँकी	...	श्री वेंकटरामप्प अनु०–श्री प्रो. हिरण्मय	७९४
४. सम्पादकाचार्य बाबूराव विष्णु पराड़कर	...	श्री लक्ष्मीशंकर व्यास	७९७
५. श्री बाबूराव विष्णु पराड़कर–अेक भेंट	...	श्री कमलेश	८०३
६. मेरी दक्षिण-भारत-यात्राके दस दिन	...	श्री विनयमोहन शर्मा	८०७
७. सभ्यताका संकट (बँगला)	...	श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर अनु०–श्री मोहनलाल वाजपेयी	८१३
८. सरस्वती-पुत्रोंके प्रति !	...	श्री भदन्त आनन्द कौसल्यायन	८१५
९. सामाजिक प्रगतिके प्रणेता विश्वविद्यालय और शिक्षा-शास्त्री	...	श्री ओमप्रकाश आर्य	८२८
१०. सन्त-साहित्यकी अमूल्य विभूति-गुरु ग्रन्थ साहिब	...	श्री डॉ. हरदेव बाहरी	८४५
११. हिन्दीमें नगरवर्णनात्मक साहित्य	...	मुनि श्री कांतिसागर	८४९
१२. व्यासका आक्रोश	...	आचार्य श्री स. ज. भागवत श्री राजेन्द्रप्रसाद भट्ट	८५५
१३. कहावत और न्याय	...	श्री कन्हैयालाल सहल	८६०
१४. कलाचार्य श्री पंथे गुरुजी	...	श्री रामेश्वर दयाल दुबे	८६३
१५. अखॉमिया रामायण	...	श्री प्रो. रंजन	८७०
१६. बँगलाका पहला अुपन्यास	...	श्री मन्मथनाथ गुप्त	८७४
१७. कन्नड़ लिपिकी अुत्पत्ति और वर्णमाला	...	श्री गुरुनाथ जोशी	८७७
१८. सन्यासी कवि लोष्ठक भट्ट	....	श्री प्रभात शास्त्री	८८९
१९. अुत्कलका–'यात्रा, पाला, गोटिपुआ और दासकाठिया'	...	श्री अनुसूयाप्रसाद पाठक	९०६

(शेष पृष्ठ ३ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

* वर्ष ३ * वर्धा, नवम्बर १९५३ * अंक ११ *

"काकासाहेब"

: श्री गंगाधर अंदूरकर :

अखिल भारतीय राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनके अध्यक्ष श्री नरहरि विष्णु गाडगील अपने परिचितोंमें "काकासाहेब"-अिस नामसे ही अधिक प्रसिद्ध हैं। मैं समझता हूँ कि श्री गाडगील को भी यह नाम बहुत पसंद है। अिसका कारण शायद यह है कि 'काकासाहेब' अिस अभिधानसे व्यक्त होनेवाली आत्मीयता काकासाहेबके सार्वजनिक जीवनमें भी व्याप्त है। अच्छे नेताओंमें गिनती होनेपर भी अव्यवहार्य आदर्शोंका अुच्च आडंबर अुनमें नहीं है; और मोहके क्षण जनसाधारणको पतनाभिमुख करनेवाली मानसिक दुर्बलतासे भी वे बहुत दूर हैं। अिसीलिअे "काका"से परिचित लोगोंके मनमें मंत्रीतक और अब लोकसभाके अेक साधारण सदस्यके

आदर और आत्मीयता—दोनों ही भावनाअें हैं। जहाँतक मैं समझ पाया हूँ "काका" के जीवनका आदर्श वह स्वप्नकुसुम नहीं है, जो कभी व्यवहारमें दिखायी ही न दे और न वही है जो बिना किसी परिश्रम तथा बिना आयास प्राप्त हो जाअे। जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें "काका" मध्यममार्गी हैं और वास्तविक अर्थोंमें वे मध्यमवर्गका प्रतिनिधित्व करते हैं।

सन् १९२०में राष्ट्रीय आंदोलनमें भाग लेकर सार्वजनिक जीवनमें प्रवेश करनेके बाद जिला कांग्रेस कमेटीके मंत्रीपदसे लेकर केंद्रीय सरकारके अेक प्रमुख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपमें "काका" के सार्वजनिक जीवनने कअी अुतार-चढ़ाव देखे हैं। अुनका विश्लेषण करनेपर मुझे अेक बात बहुत ही महत्वपूर्ण दिखायी दी है। जनसाधारणकी तरह वे प्रतिक्षण "शुभ" की आकांक्षा करते हैं और किसी महान व्यक्तिकी तरह "अशुभ" का मुकाबला करनेके लिअे प्रस्तुत रहते हैं। शायद यही "काका" के सार्वजनिक जीवनमें सफलताकी कुंजी है। अनेक अन्य नेताओंकी तरह जीवनके अुतार-चढ़ावसे अुनका मन कभी भी निराशासे अभिभूत नहीं हुआ।

विचारोंकी स्पष्टता और व्यवहारमें आडंबरहीनता "काका" की विशेषता है। वे राष्ट्रभाषा प्रचार-सम्मेलनके अध्यक्ष हो रहे हैं, यह समाचार सुनकर मैं नयी दिल्लीमें अुनके निवास-स्थानपर अुनसे मिलने गया था। अेक पत्रकारके नाते मैंने अुनसे पूछा—"आप हिंदीको राष्ट्र-भाषाके अुपयुक्त क्यों समझते हैं?" "काका" का अुत्तर बहुत ही संक्षिप्त था— "संविधानने अुसे स्वीकार कर लिया है अिसलिअे अब यह विवाद व्यर्थ है।" विवादमें न अुलझकर कार्यपर ही दृष्टि रखनेकी "काका" की मनोवृत्तिका अुक्त संक्षिप्त अुत्तर अेक सुन्दर प्रतीक है।

पर पाठक भूलसे यह न समझ बैठें, कि संविधान द्वारा स्वीकृति प्राप्त होनेके पहले वे हिन्दीको राष्ट्रभाषाके अुपयुक्त नहीं समझते थे। महात्मा गांधी द्वारा संचालित काँग्रेस-आंदोलनका हिन्दी प्रचार भी अेक प्रमुख अंग था और अिस प्रकार "काका" भी हिन्दी-प्रचारके कार्यमें काफी समयसे दिलचस्पी लेते रहे हैं। सन् १९२८–२९ के पुणेके युवक आंदोलनमें "काका" का प्रमुख हाथ था और अुस समय अुन्होंने स्वयं हिन्दी पढ़ानेके लिअे कुछ वर्ग भी चलाये थे। आगे चलकर १९३४ में पं. ग. र. वैशंपायनके सहयोगसे पुणेमें अेक संस्थाकी नींव रक्खी गयी, जो "हिन्दी प्रचार संघ" कहलायी। आज भी महाराष्ट्रमें हिन्दीका प्रचार करनेवाली यह अेक प्रमुख संस्था है। अिस संस्थाके प्रारंभिक वर्ग "काका" के निवास स्थानपर ही चलते थे। राष्ट्रभाषाके साथ "काका" का संबंध बादमें भी बराबर बना रहा। पुणेमें हुअे राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनके तीसरे अधिवेशनका अुद्घाटन भी काकासाहेबने ही किया था।

"काका" को हिन्दी सीखनेके लिअे बहुत प्रयास नहीं करना पड़ा। पुणेके असल कोंकणस्थ महाराष्ट्र ब्राह्मण कुलमें जन्म होनेपर भी अुनकी जन्मभाषा अेक प्रकारसे हिन्दी ही कही जा सकती है। राजस्थान और मालवेकी सीमापर स्थित मल्हारगढ़ नामक स्थानमें १० जनवरी १८९६ के दिन आपका जन्म हुआ। यह स्थान मध्यभारतके नीमच जिलेमें है। अस समय आपके पिता वहाँ रेलवेमें थे। अिस प्रकार आपकी प्रारंभिक शिक्षाका श्रीगणेश ही हिन्दी-माध्यमके द्वारा हुआ है।

"काका"की बादकी शिक्षा पुणेके प्रसिद्ध फर्ग्युसन कालेजमें हुअी। पर वहाँ भी आपने हिंदीके साथ अपना संबंध बनाये रखा। १९१६–१७ में सरस्वतीमें प्रकाशित होनेवाले कुछ लेखोंका आस्वाद 'काका' अनुवादके द्वारा मराठी पाठकोंको चखाते रहे। १९२० में अेल. अेल. बी. की परीक्षा अुत्तीर्ण कर आपने जीवनमें अध्ययनका अध्याय समाप्त किया और पुणें जिला काग्रेस कमेटीके मन्त्रीके रूपमें आप सार्वजनिक क्षेत्रमें अुतरे। सार्वजनिक जीवनके प्रारंभसे ही 'काका' को हिन्दीमें बोलनेके अवसर बराबर आते रहे।

राजनीतिक नेताका व्यस्त जीवन बिताते हुअे भी काकासाहेबका मराठी-साहित्यमें अपना अेक विशिष्ट स्थान है। विवरणात्मक लेख लिखनेकी अुनकी अपनी शैली है और वह मराठीमें काफी लोकप्रिय भी है। लगभग सभी दल और विचारोंकी पत्र-पत्रिकाअें 'काका' का लेख छापनेके लिअे अुत्सुक रहते हैं और 'काका' भी राजनीतिक पक्षपात नहीं करते। 'केसरी' तथा 'विविध-वृत्त' जैसे कांग्रेस-विरोधी पत्रोंमें भी 'काका' के कुछ अच्छे लेख प्रकाशित हुअे हैं। दीपावली अंकके निमित्त तो कुछ पत्रोंके लिअे लेख लिखना अुनके लिअे अनिवार्य है और वे स्वयं-स्वीकृत अिस बन्धनको मंत्रित्व-कालमें भी निभाते रहे। थोड़ा भी अवकाश प्राप्त होते ही अुसका अुपयोग लिखने-पढ़नेमें करना, अुनका स्वभाव है। "काका" ने राजनीति तथा समाजशास्त्रपर मराठीमें कुछ पुस्तकें भी लिखी हैं।

हिन्दीमें भी "काका" लिखते हैं। कुछ स्वतंत्र लेखोंके रूपमें और कुछ अपने ही लेखोंका स्वयं हिन्दीमें अनुवाद किया है। अिनमेंसे अधिकाँश लेखभारतके प्रसिद्ध हिंदी दैनिक पत्र हिंदुस्तानमें प्रकाशित हुअे। 'सभा-शास्त्र" नामक 'काका" की अेक पुस्तक भी हिंदीमें प्रकाशित हो चुकी है और "हजार वर्षके बाद" नामक दूसरी पुस्तक भी प्रकशित होनेवाली है। (यह भी प्रकाशित हो गयी ह। सं.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह प्रसिद्ध है कि "काका" स्वर्गीय सरदार पटैलके अत्यन्त विश्वासभाजन थे और अिसीलिअे स्वातंत्र्य-प्राप्तिके बाद केन्द्रीय मंत्रिमंडलमें अुनका समावेश हुआ था। गत आम निर्वाचनके बाद, नये मंत्रिमंडलमें जब अुनका समावेश नहीं हुआ, कुछ लोगोंने कहा—'काका' की लोकप्रियताका सूर्य अब अस्त हो रहा है। यह भी प्रसिद्ध है कि मंत्री न बननेपर "अ" भागके अेक राज्यका राज्यपाल बनना काका' ने अस्वीकार कर दिया था। कुछ लोगोंको अिसमें भी 'काका' की राजनीतिक भूल प्रतीत हुअी। पर मुझे लगता है कि अुक्त दोनों ही बातें निराधार हैं। पिछले पौने दो वर्षके संसदीय जीवनमें कांग्रेस-दलके साधारण सदस्यकी हैसियतसे "काका" ने जो कुछ काम किया, अुससे अुनकी लोक-प्रियता मंत्रित्वकालकी अपेक्षाकृत कुछ बढ़ी ही है, घटी नहीं। अतअेव अिसी प्रकार राज्यपालका पद अस्वी-कार करनेमें अुनकी आर्थिक हानि भले ही हुअी हो और वह अुपेक्षणीय भी नहीं है, पर सार्वजनिक जीवनका मूल्य कभी भी रुपये-आने-पाअीमें नहीं आँका जाता। अिस प्रश्नका अेक दूसरा पहलू भी है। पुणेके जिन मत-दाताओंने श्री गाडगीलको लोकसभामें भेजकर अुनपर विश्वास प्रकट किया था, यदि गाडगीलजी केवल अपना लाभ और प्रतिष्ठाका ही विचारकर राज्यपालका पद स्वीकार कर लेते, तो वे मतदाता क्या सोचते! मतदा-ताओंके विश्वासको निभानेमें कुछ आर्थिक स्वार्थसे मुँह मोड़ना प्रत्येक निर्वाचित प्रतिनिधिके लिअे आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है।

केवल अितना ही नहीं, केंद्रीय सरकारके महत्व-पूर्ण मंत्री जैसे अूंचे पदपर रहनेके बाद लोकसभाके साधारण सदस्यका जीवन बितानेका अवसर आनेपर भी 'काका" के अुत्साहमें कोअी कमी नहीं आयी। फिरोजशाह रोडपर ही "काका" के दो जीवन—मंत्रिकालीन बड़ी कोठीका और आजका छोटे और साधारण बंगलेका—देखकर स्मरण हो आता है भर्तृहरिके अेक वाक्यका—"क्वचिद्भूमौ शय्या क्वचि-दपि च पर्यंक शयनम्"। पर अिस अवस्था-परिवर्तनसे 'काका' की जीवनकी गति और अुत्साहमें कोअी परि-वर्तन नही हुआ। पिछले मंत्रिमंडलके दो अन्य मंत्रियोंपर नये मंत्रिमंडलमें न लिये जानेका प्रभाव अितना अधिक रहा है कि दोनोंनेही संसदमें अपने मुँहपर ताला-सा लगा रखा है, पर श्री गाडगीलकी हलचलमें पहले जैसा ही अुत्साह और प्रसन्नताका वातावरण है। हाँ, अुनकी वाणी मंत्रित्वकालकी अपेक्षाकृत आज कुछ अधिक जनमुखी हो गयी है जो कि स्वाभाविक और अुचित भी है।

जैसा कि मैंने पहले लिखा है 'काका' के मनमें अपने परिचितोंके प्रति आत्मीयताकी अितनी भावना रहती है कि अुनके राजनीतिक विरोधी भी, जो मंचपर अुनको सभी प्रकारकी खरी-खोटी सुनानेमें नहीं हिचकते, अुनसे हार्दिक स्नेह करते हैं। अिसका अेक कारण और भी है। 'काका' अपने राजनीतिक विरोधियोंको अवसर मिलनेपर मुँहतोड़ अुत्तर अवश्य देते हैं; पर विरोधीके प्रति अपने मनमें कटुता अुत्पन्न नहीं होने देते। वे अक्सर कहा करते हैं कि अुनके प्रति कही गयी जली-कटी बातोंका संस्कार अुनके मनपर दूसरे दिन भी नहीं रहता। 'काका' का नयी-दिल्ली स्थित निवासस्थान दिल्ली आनेवाले अुनके सभी परिचित मित्रोंके लिअे खुला हुआ है। 'काका' का कभी-कभी विरोध करनेवाले मराठी साहित्यिक राजनीतिज्ञ और पत्रकार भी 'काका' के घरको अपनाही समझते हैं। यह स्थिति जब वे मंत्री थे तब तो थी ही; पर आज भी है। आजकी परिव-र्तित अवस्थामें यह आतिथ्यका बोझ अवश्यही अुनपर कुछ अधिक होता होगा; पर अुन्हें कभी किसीने शिका-यत करते नहीं सुना।

राजनीतिक क्षेत्रमें 'काका' भाषाके आधारपर राज्योंके निर्माणके समर्थक हैं और महाराष्ट्रीय होनेके कारण संयुक्त महाराष्ट्रके निर्माणमें अुनकी विशेष रुचि और प्रयत्न होना भी स्वाभाविक है; पर अपनी अिष्ट-सिद्धिके लिअे वे आंदोलनवादी नहीं; बल्कि समझौतावादी हैं। पिछले वर्ष हैदराबादमें अुन्होंने अिस संबंधमें कहा— संविधानकी चौखटमें रहकररही हमें यह समस्या हल करानी होगी। मारपीट अथवा अुपद्रवोंसे समस्या हल नहीं हो सकती। अन्य प्रांतोंको अप्रसन्नकर किसी अेक प्रांतका कल्याण नहीं हो सकता। अैसा कभी न समझिये कि जो महाराष्ट्रीय नहीं हैं; वे आपके दुश्मन हैं। हमें लोगोंको यह समझाना होगा कि जनतंत्रके विकासकी ही दृष्टिसे भाषाके आधारपर राज्योंका पुनर्गठन आवश्यक है।

अंतमें 'काका'के जीवनको यदि अेक वाक्यमें अभि-व्यक्त करना हो तो यह कहकर किया जा सकता है कि सिद्धांत और व्यवहारका सामंजस्यही 'काका'का जीवन है। अिस वर्ष अैसे सभापति नागपुर अधिवेशनके राष्ट्र-भाषा प्रचार सम्मेलनको प्राप्त हुअे, यह अवश्य ही संतोष और सुखकी बात है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ० भवानीशंकर नियोगी

(संक्षिप्त परिचय)

आंध्र देशके स्मार्त ब्राह्मण कुलमें ई० सन् १८८६ में जन्म। मध्यप्रदेशमें, १८६१ में ब्रिटिश सरकारको जमीनका बन्दोबस्त (रेंविन्यु सेटलमेंट) करनेके लिअे अँग्रेजी भाषा जाननेवाले कर्मचारियोंकी आवश्यकता पड़ी थी, तब अिस प्रदेशमें अिंग्लिश भाषा जाननेवाला नहीं मिलता था। अँग्रेज अमलदारोंने अुस समय मछली-पट्टमकी अुनकी फैक्टरीमें काम करनेवाले जिन कुछ अँग्रेजीदाँ कर्मचारियोंको यहाँ बुलाया, अुनमें श्री नियोगी जीके प्रपितामह भी आये थे। नाम अुनका "बैरागी बाबू" था। अिस विचित्र नामका कारण यों बतलाते हैं, कि जब अेक साधु पुरुष अुनके घर आया और माताने बालकको अुसके चरणोंमें रखा तो साधुने "चिरंजीव हो बच्चा" का आशीर्वाद दिया। अेक ही बच्चा, साधुका वचन और माता पिताकी—निष्ठा ! बच्चेका नाम "बैरागी बाबू" ही अुस परिवारमें चल पड़ा।

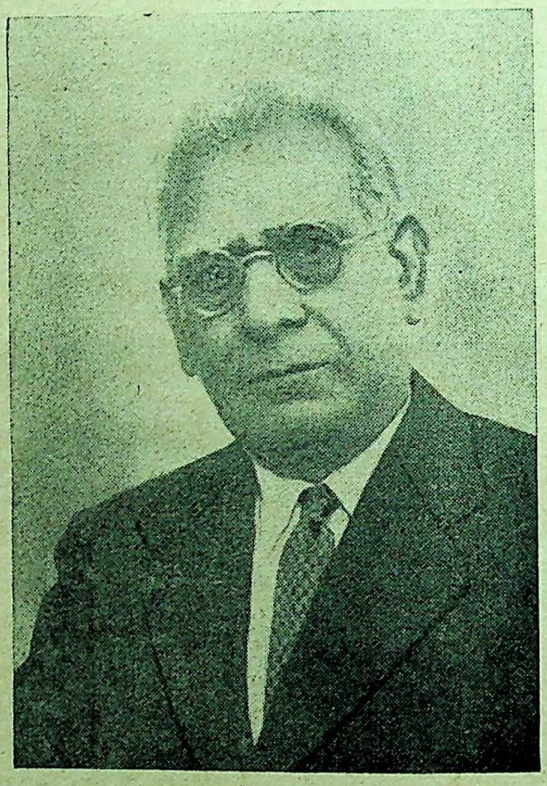

डॉ० भवानीशंकर नियोगी

श्री नियोगीजीके पितामहका नाम भी भवानीशंकर था वे रायपुरमें कमिश्नरके दफ्तरमें सुपरिंटेंडेंट थे। १८८५ में अुनका देहांत हुआ। जब १८८६ में डॉ. सर नियोगीका जन्म हुआ और यही अुस कालमें पहला बालक था, तो पितामहका नाम ही अुसको नामकरण संस्कारमें दिया गया। अिनके पिता नागपुरके सरकारी सचिवालयमें हेड क्लार्क थे। जब नियोगीजी ८ सालके थे, तभी अिनके पिताकी मृत्यु हो गयी। अिनकी माता, जब ये दो ढाअी सालके रहे होंगे, तभी मर चुकी थीं। काकापर बालकके पालन-पोषणका भार आ पड़ा। काका सीतारामजी नियोगी (नियोगी यह खानदानी नाम है) कट्टर सनातनी थे और थियासाफिस्ट भी थे। घंटों देवतार्चन और भजन-पूजन चलता। साधु-बाबा वैरागियोंपर अटूट श्रद्धा।

अिधर समाज सुधार प्रेमी छोटे चाचा श्री दुर्गाशंकर नियोगीने विधवा विवाह किया, तो अुन्हें जाति-च्युत किया गया। भाअी-बन्दोंने बहिष्कार किया। डॉ. नियोगीकी स्कूलमें पढ़ाअी हुअी। संगतका असर। बीड़ी पीना, स्कूलकी अपनी कक्षासे पलायन कर जाना, ताश खेलना—अिस प्रकारके शरारती चक्करमें आप पड़ गये। चौदह सालकी अुम्र। अिसी समय विवाहके लिये भी परिवारमें आग्रह हो रहा था जब कि मिडिलस्कूलमे ही पढ़ रहे थे। चाचा दुर्गाशंकरके साथ रहनेके कारण बिगड़ोंमें बिगड़े माने जाने लगे। चाचाने अिनकी आदतोंको सुधारा और पढ़वाया। अच्छी संगतिमें आये। 'सत्संगति मुद मंगलमूला।' मराठीके अुत्तम बोधप्रद ग्रंथोंका पाठ। सार्वजनिक कार्योंमें रुचि जाग्रत हुअी। १९०६ में नागपुरके हिस्लाप कालेजसे बी. अे. किया। कुछ कालतक आप नागपुरके पटवर्धन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाअीस्कूलमें अध्यापक रहें। १९१० में अेम. अे., अेल-अेल. बी. हुअे। वकालतका धंधा आरंभ किया। साथ ही अुस समयके काँग्रेसी कार्यकर्ता स्व० डॉ. मुंजे और बैरिस्टर अभ्यंकर आदिके साथ राष्ट्रीय कार्य करते। १९२० की प्रसिद्ध नागपुर काँग्रेसमें डॉ. मुंजे मंत्री थे और आप सहायक-मंत्री। १९२१ में अपनी वकालत स्थगित कर दी १९२२ से फिर शुरू की। नागपुरके कअी सांस्कृतिक, सामाजिक, शैक्षणिक कार्योंमें भी तन-मन-धनसे संलग्न। शुक्रवारी तालावके चौराहेपर लोकमान्य तिलक महाराजकी भव्य पाषाणमूर्तिकी स्थापना नियोगीजीके भगीरथ प्रयत्नोंका फल है। अनेक वर्षोंसे आप नागपुरमें अनेक अुच्च शिक्षण-संस्थाओंके जन्मदाता, संचालक, पोषक, प्रेरक रहे हैं और अब भी हैं। आज आप गोरक्षण सभा, सरस्वती महाविद्यालय, लेडी अमृताबाअी महिला महाविद्यालय, स्कूल ऑफ आर्ट तथा प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार समिति नागपुरके अध्यक्ष हैं। १९३३ से १९३६ तक आप नागपुर युनिवर्सिटीके वाअिस चान्सलर रहे और १९३६ से १९४६ तक नागपुर हाअी कोर्टके जस्टिस तथा चीफ जस्टिस रहकर सरकारी सेवासे निवृत्त हुअे। सी. आअी. अी. और 'सर' (नाअीट हुड) की अुपाधियाँ भी मिलीं और विश्वविद्यालयसे अेल-अेल. डी. की पदवी। जब देशमें काँग्रेस-सरकारका राज्य स्थापित हुआ तब काँग्रेसी सरकारका भी नियोगीजीने विश्वास सम्पादन किया। १९४८ से १९५३ तक आप म. प्र. सरकारके पब्लिक सर्विस कमीशन (लोक-सेवा-आयोग) के अध्यक्ष रहे।

सौभाग्यसे आपकी पत्नी श्रीमती डॉक्टर अिन्दिराबाअी नियोगी भी सच्ची सहचारिणी आपको मिलीं। वे बम्बअी विश्वविद्यालयकी अेम. बी. बी. अेस. हैं और कुछ समयतक आप पुणेकी सुविख्यात स्त्री-शिक्षण संस्था कर्वे महिला विद्यापीठमें हाअुस-सर्जनका काम करती रहीं। आज भी अितनी वृद्धावस्थामें श्रीमती अिन्दिराबाअीका कार्यक्षेत्र नागपुरमें बहुत व्यापक है। आप महाराष्ट्रीय हैं।

श्री नियोगीजीका दृष्टिकोण प्रजातंत्री है। सारे भारतकी अखंडताके समर्थक और पॉर्टी पावर पॉलिटिक्ससे दूर रहते हैं। मत-मतान्तरों तथा भाषावार प्रान्तोंकी रचनाओंकी धींगाधींगीका आप समर्थन नहीं करते। आपने संस्कृत-साहित्यका विशेषकर मीमांसा, प्राचीन न्याय, पातंजल योग-दर्शन, वेदान्त, बौद्ध-दर्शन आदिका मर्मज्ञतापूर्वक गहरा अध्ययन किया है और अुच्च कोटिके संस्कृत विद्वानोंकी सत्संगतिका लाभ अुठाते रहते हैं। आपकी अड़सठ (६८) बरसकी अुम्र है। रोज तीन-चार मील मैदानमें पैदल घूमते हैं। चुस्त, फुर्तीले और कार्यव्यस्त रहते हैं। श्री नियोगीजी मध्यप्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलन नागपुर अधिवेशनके स्वागताध्यक्ष हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कन्नड़ साहित्यके अितिहासकी अेक झाँकी

: श्री के. वेंकटरामप्प, अेम. अे., कन्नड़-प्राध्यापक, मैसूर विश्वविद्यालय :

लगभग पचहत्तर साल पहले स्वयं कन्नड़ भाषा भाषियोंको अिस बातका पता नहीं था, कि कन्नड़का साहित्य कितना प्राचीन है, अुसमें कौन-कौन कवि हुअे हैं और अुसकी क्या महत्ता है। अिस दिशामें सबसे पहले काम करनेवाले थे रेवरेण्ड अेफ. किट्टल साहब, जो जर्मन थे और मंगलोरमें आकर बस गये थे। रेवरेण्ड किट्टल गंभीर विद्वान थे और थे भाषा तथा साहित्यके अनन्य पुजारी। जैसेही वे कन्नड भाषाके सौष्ठवसे अवगत हुअे, वैसेही वे कन्नड़ भाषा अेवं साहित्यके अध्ययनमें लग गये। अल्प कालहीमें वे कन्नड़ भाषा तथा साहित्यके असाधारण पंडित बन गये। साहित्यके रसास्वादनसे तृप्त न होकर किट्टल साहबने कन्नड़के प्राचीन ग्रंथोंकी खोज अेवं प्रकाशनका कार्य शुरू किया। अुनका सबसे महान् कार्य कन्नड-अंग्रेजी-कोशका संपादन और प्रकाशन है। अब तक कन्नड़ भाषाके जितने कोश लिखे गये हैं, अुनमें किट्टलका कोश सबसे बड़ा और गवेषणापूर्ण है। किट्टल साहबने कोशके प्रकाशनके साथ-साथ "छंदोम्बुधि" नामक ग्रंथका संपादन करके कन्नड़ साहित्यके अितिहासपर अेक गवेषणापूर्ण निबन्ध लिखा, जिससे कन्नड़ साहित्यके अितिहासपर काफी प्रकाश पड़ा। अिस दिशामें काम करनेवाले दूसरे महानुभाव थे मि. बी. अेल. रैस जो मैसूरके प्राच्य-अनुसंधान विभागके प्रधान थे। रैस साहबने कअी शिलालेखोंका पता लगाकर जो कुछ प्रकाशित कराया, अुसके द्वारा कन्नड़के कअी अेक कवियों और राजाओंके बारेमें बहुत-सी बातोंकी जानकारी प्राप्त करनेमें मदद मिली। मिस्टर रैसने भट्टाकलंकके "शब्दानुशासन" के लिअे भूमिका लिखते हुअे कन्नड़ साहित्यके कअी पहलुओंपर प्रकाश डाला। साथ ही मैसूर गजैटियरमें अेक खोजपूर्ण लेख प्रकाशित किया, जिससे अनेक समस्याओंपर विचार करनेमें सुगमता हुअी। रेवरेण्ड किट्टल और रैस साहबने जो कार्य प्रारंभ किया था, अुसीको प्राच्य-विभागके सहायक अधिकारी श्री आर. नरसिंहाचार्यने अपने हाथमें लिया और आगे बढ़ाया। अुन्होंने अपने अेक बन्धु श्री अेस. जी. नरसिंहाचार्यके सहयोगसे "कर्नाटक कवि चरिते" नामक बृहद् ग्रंथका प्रथम भाग सन् १९०७ में प्रकाशित किया। यह बड़े ही दुर्भाग्यकी बात हुअी कि 'कर्नाटक कवि चरिते" का काम समाप्त होनेके पहले ही श्री अेस. जी. नरसिंहाचार्यका देहान्त हो गया, किन्तु आर. नरसिंहाचार्यने अपनी ढलती अुम्रकी परवाह न करके, निरंतर परिश्रम कर 'कवि चरिते' का दूसरा तथा तीसरा भाग प्रकाशित किया। अिस प्रकार चार विद्वानोंके अुद्योगके फलस्वरूप कन्नड़ साहित्यके अितिहासकी रूपरेखा ही नहीं अपितु अेक वृहत् ग्रंथ भी प्रस्तुत हो गया; जिससे कन्नड़की प्राचीनता तथा महत्ताका परिचय कन्नड़ भाषा-भाषियोंको प्राप्त हुआ।

"कर्नाटक कवि-चरिते", कन्नड़ साहित्यके अितिहासपर अबतक जितने ग्रंथ रचे गये हैं, अुनमें सबसे बड़ा है। अिसमें नवीं शताब्दीसे अुन्नीसवीं शताब्दीके अंत तकके कवियोंके नाम, अुनका काल तथा अुनकी कृतियोंके नाम दिये गये हैं। भूमिकामें कन्नड़ प्रदेशकी राजनैतिक, भौगोलिक तथा सामाजिक परिस्थितियोंका वर्णन करते हुअे कन्नड़ भाषाके विकासका बड़ा ही रोचक परिचय दिया गया है। लेकिन कवियों और अुनके ग्रंथोंकी आधुनिक ढंगसे आलोचना नहीं की गयी। पर हाँ, आलोचनात्मक अध्ययनके लिअे काफी सामग्री जुटायी गयी है।

छठी शताब्दीके कअी कन्नड़-शिलालेख प्राप्त हुअे हैं, जिनके आधारपर अिस बातका निर्णय हो गया है कि नवीं शताब्दीके आरंभमें लिखा हुआ "कविराजमार्ग" कन्नड़का आदि ग्रंथ है। यह अेक अुच्च कोटिका रीतिग्रंथ है। अिसके रचयिता थे राष्ट्रकूट चक्रवर्ती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजानृपतुंग। अब यह मालूम होने लगा कि अिसके पहले ही कन्नडमें साहित्यकी रचना हुआ करती थी। प्राचीनताकी दृष्टिसे भारतीय भाषाओंमें अगर संस्कृतका स्थान सर्वप्रथम है, तो तमिलका दूसरा और कन्नड़का तीसरा। कन्नड़का साहित्य जितना पुराना है अुतना ही बृहत् और सर्वांग-सुंदर भी है। "कर्नाटक कवि चरिते" में करीब १२०० कवियोंका अुल्लेख हुआ है। भाषाकी प्रौढ़ता, काव्य-सौष्ठव, रसाभिव्यजंना, विषयकी विविधता तथा रचना-कौशलकी दृष्टिसे कन्नड़का प्राचीन साहित्य दुनियाके किसी भी अूँचे दर्जेके साहित्यसे टक्कर ले सकता है। छंद, रस, अलंकार, व्याकरण आदि भाषा तथा साहित्य-शास्त्र सम्बन्धी कितने ही प्रौढ़ ग्रंथ बारहवीं शताब्दीके पहले ही लिखे गये थे।

यह सर्वविदित ही है कि भारतवर्षमे धार्मिक विचारोंके प्रचारके लिअे सबसे पहले भगवान् बुद्ध और अुनके अनुयाअियोंने देशी भाषाओंको माध्यम बनाया था। अिस तत्वकी महत्ताको समझकर जैनोंने भी बौद्धोंका अनुकरण किया। अिन दोनों धर्मोंके आचार्यों तथा प्रचारकोंने धर्म सम्बन्धी सभी ग्रंथोंका देशी भाषाओंमें अनुवाद किया। कन्नड़में भी धार्मिक तथा साहित्यिक ग्रंथ-निर्माण-कार्य जैनोंने ही सबसे शुरू किया। अिस बातका तो पता नहीं चलता कि बौद्धोंने कन्नड़में ग्रंथ रचे थे या नहीं, यद्यपि जैनोंके पूर्व ही बौद्ध धर्मका काफी प्रचार कर्नाटकमें हो चुका था।

जिस तरह आजकल विज्ञान (साअिन्स) का बोल-बाला है, अुसी तरह प्राचीन कालमें मानव-समाजमें धर्मकी प्रबलता थी और अिन धार्मिक भावनाओंसे समाज जितना मथित तथा प्रभावित हुआ था, अुतना शायद ही और किसीसे हुआ हो। अीसवी पहली-दूसरी शताब्दीसे बारहवीं शताब्दी तक कन्नड़ भाषा-भाषियोंपर जैन धर्मका काफी प्रभाव पड़ा। जैनोंने अपने धर्मके प्रचारके लिअे कन्नड़ भाषा और साहित्यको माध्यम बनाया। यद्यपि जैन कवियोंका प्रधान लक्ष्य अपने धर्मका प्रचार करना ही था, तो भी अुनके रचे हुअे काव्योंमें साहित्यिक सौष्ठवकी कमी नहीं। अिन जैन कवियोंने जैन-तीर्थंकरों तथा आचार्योंकी कथाओंको ही अपने काव्यकी वस्तु अवश्य बनाया; लेकिन लोगोंके जीवनके निकट आने और अुन्हें अपनी तरफ आकर्षित करनेके लिअे पौराणिक कथाओंसे भी अपने काव्योंको सजाया। अिन कवियोंने पौराणिक कथाओंमें अवश्य कुछ परिवर्तन कर लिया, किंतु कथाओंकी रोचकताको वैसे ही बनाये रखा, जैसी कि मूल कथाओंमें थी। यही कारण है कि अिन जैन कविओंके रचे गये भारत, रामायण और भागवतकी कथाअें कन्नड़ भाषा-भाषियोंके लिअे अुतनी ही प्रिय हैं, जितने संस्कृतके काव्य ग्रंथ। पम्पका "विक्रमार्जुन विजय" अथवा 'पम्प-भारत; रन्नका "साअिस भीम विजय" कन्नड़के अनमोल रत्न हैं; जिनमें कन्नड़के लोगोंके जीवनके रोचक चित्र अंकित हैं।

कन्नड़का आदिकाल, जो नवीं शताब्दीसे बारहवीं शताब्दी तक माना जाता है, जैन-कालके नामसे प्रसिद्ध है। अिसका कारण यही है कि अिस अवधिमें कन्नड साहित्यकी श्री-वृद्धि करनेमें जैनोंका विशेष हाथ रहा। जैन कवि संस्कृत भाषा तथा साहित्यके अच्छे ज्ञाता थे। अिसलिअे यह स्वाभाविक ही था कि कन्नड़ साहित्यके निर्माणके लिअे संस्कृतका साहित्य प्रेरक-शक्ति बन जाय। अिसलिअे अिस कालमें ग्रंथोंकी भाषा न केवल संस्कृतमय थी, बल्कि शैली, छंद, कथा-वस्तु आदि सभी बातोंमें संस्कृतका अंधानुकरण हुआ। अिस कालकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि सब ग्रंथ 'चम्पू' शैलीमें ही रचे गये। अतः अिसको चम्पू-काल भी कहते हैं। यह तो स्वाभाविक ही था, कि कन्नड़के अत्यन्त लोकप्रिय "त्रिपदि', 'षट्पदि' 'सांगत्य', 'रगले" आदि छंदोंका प्रयोग कम होने लगा। चूंकि संस्कृतके समृद्ध साहित्यका गहरा प्रभाव कन्नड़पर पड़ा, अिसलिअे भाषामें नयी जान आयी और अभिव्यन्जना-प्रणालीका चरम विकास हुआ। जैसा कि जगत्की सभी भाषाओंके आरंभिक कालकी समस्त रचनाअें पद्यमें ही हुअी हैं, अिस समयका सारा साहित्य पद्यमें ही निर्मित हुआ। यहाँतक कि सबके सब शास्त्र-ग्रंथ भी पद्यमें बनें। नृपतुंग केरिराज, नागवर्म नामक प्रसिद्ध कवियोंने अपने लक्षण ग्रंथोंका प्रणयन पद्यमें ही किया। गणितके महान् पंडित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजादित्यने 'लीलावती' का अनुवाद भी पद्यमें किया। अिसी कालमें कन्नड़में गद्य लिखनेका सूत्रपात हुआ। अैसे गद्य-ग्रंथोंमें "चाण्डराय-पुराण" अुल्लेखनीय है। यद्यपि अिस समय बड़े-बड़े कलात्मक प्रौढ़-काव्योंका निर्माण हुआ, तो भी समाजके सधारण लोगोंके जीवनके साथ साहित्यका संपर्क नहीं रहा। अिसका कारण यह था, कि आमतौरपर अिस कालमें कवि राजाओंके आश्रयमें रहते थे और वे जो कुछ लिखते थे या तो अपने आश्रयदाताओंका यश गानेके लिअे लिखते थे या दरबारके अन्य पण्डितोंके बीचमें वाहवाही लूटनेके लिअे अथवा अपने धर्मके प्रचारके लिअे। अिसका परिणाम यह हुआ कि न बोलचालकी भाषा साहित्यके सृजनके लिअे अुपयुक्त समझी गयी, न कन्नड़के छंदोंका ही प्रयोग किया गया। लेकिन 'चम्पू' शैलीमें बड़े ही प्रौढ़-काव्य रचे गये, जो मौलिकताकी दृष्टिसे संस्कृतके महाकाव्योंके टक्करके बने।

सन् १२०० से सन् १६०० तकका काल "वीर-शैव काल" माना जाता है। यद्यपि अिस कालमें अन्यान्य धर्मावलम्बियोंने भी साहित्यकी सेवा की; तो भी कन्नड़ साहित्यमें अेक क्रांतिकारी नूतन यगके निर्माणमें वीरशैव संप्रदायके अनुयाअियोंका ही विशेष हाथ रहा। बारहवीं शताब्दीके अंतमें कर्नाटकमें श्री वसवेश्वरका प्रादुर्भाव हुआ, जिनके व्यक्तित्वके प्रभावसे समस्त कन्नड़ भाषा-भाषियोंका ही नहीं, बल्कि दक्षिणापथके विशाल भू-भागके निवासियोंके धार्मिक, सामाजिक अेवं नैतिक जीवनमें बडी अुथल-पुथल मची। बसव तथा अुनके शिष्योंने अपने मतके प्रचारके लिये बोलचालकी कन्नड़ भाषाको माध्यम बनाया। बसवकी वाणी 'वचन' साहित्यके नामसे प्रसिद्ध है, जो अपने ही ढंगका अेक अनूठा साहित्य है। अिन वचनोंमें न केवल वीरशैव संप्रदायके सिद्धांतोंका निरूपण हुआ, बल्कि बड़ी ही सरल, सरस और चुस्त भाषामें भक्ति, ज्ञान, प्रेम लोकनीति सदाचार आदिका संदेश दिया गया। अिन वचनोंके द्वारा बसवके महान व्यक्तित्वकी गहरी छाप कन्नड़ जनतापर पड़ी। वचन-साहित्यके निर्माणके फलस्वरूप कन्नड़ भाषा और साहित्यमें नूतन शक्तिका संचार हुआ। पुरानी रुढ़ियोंका अेक तरफ बहिष्कार हुआ, दूसरी तरफ साहित्यमें लोक जीवनका सच्चा चित्र प्रतिबिम्बित हुआ। वचनकारोंकी संख्या दो सौसे भी ज्यादा है, जिसमें वसव, अल्लमप्रभु, सिद्धराम, चिन्नबसव और अवकमहादेवी अग्रगण्य हैं।

"वचन" साहित्यके साथ-साथ अिस कालमें और भी कअी प्रकारकी शैलियाँ प्रचलित रहीं। हम्पीनगरके हरिहरने "गिरिजाकल्याण" नामक चम्पूकाव्यकी रचना की और "रगळे" नामक छंदका प्रयोग करते हुअे कअी ग्रंथ रचे जिनमें शिव-भक्तोंकी जीवनियाँ बड़ी ही लोक-प्रिय हुअीं। अिस कारणसे हरिहरको "रगळे कवि" भी कहते हैं। हरिहरके बाद "रगळे" छंदमें लिखनेकी प्रणाली खूब चल पड़ी। अिसके अतिरिक्त 'षट्पदि' और 'सांगत्य' छंदोंकी शैलियाँ भी खूब प्रयुक्त होने लगीं। हरिहरके भतीजे और शिष्य राघवांकने 'हरिश्चंद्र काव्य, षट्पदीमें लिखा। कअी अेक वीरशैव कवियों और कुमार व्यास, कुमार वाल्मीकि, लक्ष्मीय, प्रभृति ब्राह्मण कवियोंने षटपदी छंदका बड़ी सफलताके साथ प्रयोग करते हुअे कअी महाकाव्योंका निर्माण किया। अिस प्रकार अिस आलोच्य-कालमें संस्कृतके छंदोंका अुपयोग करना कम होने लगा और शुद्ध कन्नड़के छंदोंकी अुपयोगिता सर्वत्र बढ़ने लगी। जैसा कि अूपर लिखा जा चुका है, अिस कालकी सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि साहित्य केवल राजदरबारोंकी वस्तु न रहकर, जन-साधारण लोगोंके रसास्वादनकी वस्तु बन गया।

जिस तरह वीरशैव भक्तोंने अपने लोकप्रिय वचनों के द्वारा कन्नड़-साहित्यको समृद्ध और जनप्रिय बनाया, अुसी तरह वैष्णव भक्तोंने अपने भजन और कीर्तनों द्वारा कन्नड़ भाषा व साहित्यको समुन्नत किया। अिन वैष्णव हरिदासोंका काल सोलहवीं शताब्दी तक बराबर चलता है। ये सारेके सारे हरिदास श्री मध्वाचार्यकी शिष्य परंपराके थे; जिनमें पुरंदरदास, कनकदास, जगन्नाथदास प्रधान हैं। अिन संतोंने कर्नाटकमें वही कार्य किया, जो काम अुत्तर भारतमें सूर, तुलसी, मीराबाअी आदिने किया। अपने सुन्दर भजनों द्वारा अिन हरिदासोंने कर्नाटकमें भक्ति-गंगा बहायी और प्रेम, ज्ञान वैराग्य, सदाचार, लोकनीति आदिका अमर संदेश घर-घर तक पहुँचाया। अिस भजन साहित्यके प्रचारसे कर्नाटक संगीतके विकासमें बड़ी सहायता मिली।

अठारहवीं शताब्दीके आरंभमें अेक अत्यंत लोक-प्रिय कवि हुअे, जिनका नाम था सर्वज्ञ। सर्वज्ञने

(शेष पृष्ठ-संख्या ९०३ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकाचार्य बाबूराव विष्णु पराड़कर

: श्री लक्ष्मीशंकर व्यास, अेम. अे. (आनर्स) :

आधी शताब्दीसे भारत, भारती और भारतकी सतत साधनामें संलग्न रहनेवाले तथा देशमें क्रान्ति अेवं अनेकानेक युग-परिवर्तनके स्रष्टा और द्रष्टा सम्पादकाचार्य पण्डित बाबूराव विष्णु पराड़कर राष्ट्रकी विभूतियोंमें प्रमुख हैं। विचारों द्वारा देशमें जिन महापुरुषोंने नव-जागरण और राष्ट्रीय-चेतनाका स्फुरण किया अुनमें श्रद्धेय पराड़करजीका विशेष अेवं विशिष्ट स्थान है। शब्दोंके अिस जादूगरने देशके लक्ष-लक्ष जनोंको मानवताका पाठ पढ़ाया, अपने अधिकारोंका बोध कराया और बताया है अुन्हें दासत्व शृंखलासे मुक्त होनेका मंत्र ! बीसवीं सदीके प्रारम्भसे कार्य-क्षेत्रमें अवतीर्ण होकर अबतक लाखों जनोंकी विचार-धाराको अुत्तेजित-आन्दोलित करनेवाले अिस सूत्रधारका जितना महान् व्यक्तित्व है अुतना ही महान् है अुसका कृतित्व। देशके समाज, अितिहास और साहित्य-संस्कृतिपर अिस महान् तपस्वीकी लेखनीने अपनी अमर छाप अंकित की है। यही नहीं, राष्ट्रभाषा हिन्दीके समाचारपत्रोंका मार्ग-दर्शनकर अुनका मापदण्ड बनाया है। सम्प्रति, देशके हिन्दी-समाचारपत्रोंके विकास तथा अुनकी रूपरेखाके वर्तमान रूपका अधिकांश श्रेय अिसी महारथीको प्राप्त है।

सम्पादकाचार्य पराड़करजी

बचपन तथा शिक्षा-संस्कार

महात्माओं, सन्तों, विचारकों तथा साहित्यके प्रवर्त्तकोंको जन्म देनेवाली अैतिहासिक काशी नगरीमें बालक बाबूराव पराड़करका जन्म कार्तिक शुद्ध षष्ठी मंगलवार, संवत् १९४० विक्रम तदनुसार १६ नवम्बर सन् १८८३ को हुआ। आपके पिताका नाम पंडित विष्णु शास्त्री था। आप बिहारके राजकीय स्कूलोंके हेडपण्डित थे। बालक बाबूरावका नामकरण 'सदाशिव' किया गया था किन्तु पिता स्नेह-भावसे अुन्हें 'बाबू' ही पुकारा करते थे। परिणाम यह हुआ कि यही 'बाबू' बाबूराव विष्णु पराड़कर हो गये। आगे चलकर बचपनका 'सदाशिव' नाम अेकदम ही विस्मृत कर दिया गया हो, अैसी बात नहीं। अपने सुदीर्घ पत्रकारिताके जीवनमें पण्डितजीने 'सदाशिव' के नामसे बहुतसे लेख लिखे हैं। अस्तु। बालक बाबूरावकी शिक्षा-दीक्षा सनातनी परिवारके बालकों जैसी हुअी। यज्ञोपवीतके पूर्व अुन्हें लंगोटी लगाकर वेदांगका अध्ययन करना पड़ा। बुद्धि पहलेसे ही कुशाग्र रही और अिसके परिणामस्वरूप यज्ञोपवीतके पूर्व ही वेदांग कंठाग्र हो गये, जनेअू हो जानेके बाद आपने वेदका अध्ययन किया। बाल्यकालकी अिस शिक्षाने पराड़करजीके संस्कारोंको सनातनी बनाया और जिसकी छाया अब भी अुनके व्यक्तित्वमें परिलक्षित होती है।

बाल्यकालकी विषम परिस्थितियाँ

आपके पिता श्री विष्णु पराड़कर बिहारके सरकारी हाअीस्कूलमें संस्कृतके हेडपण्डित थे। अिसलिअे परिवार सहित अुन्हें छपरा जाना पड़ा। यहीं बचपनमें बालक बाबूरावको रोमन अक्षरोंका संस्कार कराया गया। कठिनतासे अेक वर्ष बीता होगा कि आपके पिताजीकी बदली अन्यत्रके लिअे हो गयी। यही क्रम देख पण्डित विष्णु शास्त्री अपने परिवारको काशी पहुँचा गये। बालक पराड़कर अपनी माता तथा छोटे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाओके साथ पुनः काशी आ गये। श्री विष्णु शास्त्री अिस प्रकार छपरा, मुंगेर, भागलपुरके सरकारी हाअीस्कूलोंमें अध्यापन करते रहे और अिधर बाबूराव पराड़करका शिक्षाक्रम पुनः काशीकी गलियोंमें होने लगा। अुस समय बनारसकी दण्डपाणि गलीके निकट अेक स्कूल था, यहीं आप पढ़ने लगे। अिसके बाद आपका नाम हरिश्चन्द्र स्कूलमें लिखाया गया जो अुस समय बुलानालाके निकट सुड़िया मुहल्लेमें था। अिस समय आपकी संगत काशीके कुछ कबूतरबाज लड़कोंसे हो गयी। वे पैसा चाहते थे पर श्री बाबूरावके पास पैसा कहाँ? अेक दिन अुन्हींकी प्रेरणासे श्री बाबूरावको अपनी माताकी अंगूठी चुरानी पड़ी। अुसे अेक सर्राफके यहाँ बेचा गया। अेक ही दो दिन बाद आपकी माताजीने अुस अंगूठीकी खोज की तो अिस काण्डका रहस्योद्घाटन हो गया। बादमें वह अंगूठी भी सोनारको रुपये देकर प्राप्त कर ली गयी। अिस घटनाकी खबर आपके पिताजीके पास पहुँची जो अुस समय भागलपुर हाअीस्कूलमें हेड पंडित थे। वे काशी आये और बिना कुछ डांटे-फटकारे चुपचाप बालक बाबूरावको अपने साथ भागलपुर ले गये। भागलपुरके जिस स्कूलमें वे अध्यापक थे, अुसीमें अुनका नाम लिखाया गया। अंगूठी लेकर बेचनेकी घटना श्री बाबूरावजीके जीवनमें परिवर्तनकारिणी रही। अिसी कारण काशीकी गलियोंमें परम स्वतंत्र होकर कबूतर अुड़ानेवालोंके साथ घूमनेवाले अिस महान् बालकका जीवनक्रम अेक नयी दिशामें परिवर्तित हुआ। अभी श्री बाबूरावजी अिन्ट्रेन्स परीक्षा भी अुत्तीर्ण न हो पाये थे कि आपके पिताका दुखद देहावसान हो गया। परिवारमें बड़े होनेके नाते आप-पर अनेक नये भार अेवं अुत्तरदाअित्व आ गये। अिन्हीं परिस्थितियोंमें आपने सन् १९०० में अिंट्रेन्सकी परीक्षा अुत्तीर्ण की। आर्थिक साधनोंके अभावमें भी आपने अध्ययन न छोड़ा। अिसका अेक कारण तो यह था कि स्कूल कालेजमें आप अपनी प्रतिभाके बलपर सबके प्रिय छात्र बन गये थे। दूसरे भागलपुरके जमींदार पांडेजीके यहाँ जो आपके पिताजीके शिष्य थे, आपको पारिवारिक स्नेहका वातावरण मिला। अिसलिअे आअी. अे. कक्षामें भी आपने भागलपुरके टी. अेम. जुबली कालेजमें अपना नाम लिखाया। अभी आप अिस कक्षाका अध्ययन पूरा भी न कर सके थे कि सन् १९०३ में काशीमें प्लेगका भयंकर प्रकोप हुआ और आपकी माताजी अिस लोकसे चल बसीं। पन्द्रह वर्षके जब आप थे तभी पिताजी परलोकगामी हो गये थे और अब माताजी अिन्हें छोड़कर चली गयीं। पिताकी मृत्युके बाद छह-सात वर्षोंमें घरमें जो कुछ था समाप्त हो चुका था। काशी आकर श्री बाबूरावजीने देखा कि अब पढ़नेका अवसर नहीं रह गया था। परिवारके पोषणका दायित्व आ गया था और कमाने खानेका प्रश्न सामने था।

छात्रसे गृहस्थ बने

अिसी बीच काशीके संभ्रान्त जड़े परिवारमें आपका विवाह सम्बन्ध ठीक हुआ। यह परिवार अब भी काशीमें विद्यमान है। पंडितजीकी अिस पत्नीके देहावसानके बाद अुनके कअी विवाह हुअे पर स्त्री-सुख जो आपको पहली पत्नीसे प्राप्त हुआ वह किसी अन्यसे नहीं। वे आयीं और रोगका शिकार बनकर चलती गयीं। पंडितजीकी पहली पत्नीकी मृत्यु सन् १९१२-१३ में हुअी। अिस बीच कामकी तलाश जारी थी। और अिसी प्रसंगमें आपको काशीके लक्खीचौतरेके अेक परिवारमें ट्यूशन भी करना पड़ा। आपके श्वसुर भी आपके लिअे कामकी तलाश कर रहे थे और अिसमें सफलता भी मिली। डाक-विभागमें आपको नौकरी मिल गयी और कामपर अुपस्थित होनेका पत्र भी मिला पर सरकारी नौकरी न करनेका आपने निश्चय कर लिया था।

लोकमान्य तिलकसे सम्पर्क

गम्भीर आर्थिक परिस्थितियोंके रहते हुअे भी सरकारी नौकरी न करनेका विचार तथा संस्कार श्री बाबूरावपर पहले ही पड़ चुका था। आपके दूरके रिश्तेमें लगनेवाले मामा श्री सखाराम गणेश देअुसकर अपनी बड़ी लड़कीके विवाह-प्रसंगमें काशी आये थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री सखारामजीने बालक बाबूरावसे बातचीतके अनन्तर प्रश्न पूछा कि अकबर बड़ा था या औरंगजेब? श्री बाबूरावने जैसा अितिहासमें पढ़ा था, कह दिया 'अकबर महान्' था। श्री सखारामजीने छूटते ही पूछा—क्यों? अिस 'क्यों' का अुत्तर बाबूरावके पास न था। अिसपर सखारामजीने अुन्हें बताया कि अकबरकी नीतिसे हिन्दू संस्कृतिका अभ्युत्थान कैसे सम्भव था और अुस परिस्थितिमें शिवाजी कैसे अुत्पन्न होते। आपने बताया कि ठीक अुसी प्रकारकी नीति अंगरेजोंकी भी है जो हमारी सभ्यता और संस्कृतिको ही नष्ट कर देना चाहते हैं। यही बाबूरावजीके लिअे राष्ट्रीयता तथा देश-प्रेमका पहला पाठ था। अिस घटनाने आपका दृष्टिकोण ही बदल दिया। अिसके बाद सन् १९०५ में बनारसमें काँग्रेस हुअी तो आप कांग्रेस स्वयंसेवकके रूपमें अुसमें सम्मिलित हुअे। अिसी अवसरपर आपको लोकमान्य तिलकके दर्शन तथा सम्पर्कका सौभाग्य प्राप्त हुआ। लोकमान्य अिन्हें अपने साथ राजनीतिक कार्योंके लिअे ले जाना चाहते थे किन्तु पारिवारिक परिस्थितियोंके कारण बाबूरावजी काशी छोड़कर नहीं जा सकते थे। श्री सखारामजी, बनारस कांग्रेस और लोकमान्य तिलक अिन तीनोंकी प्रेरणा तथा प्रभाव श्री बाबूरावकी जीवनधाराको नयी दिशाकी ओर गतिवान करनेमें सहायक हुअे। आपमें देशप्रेम और राष्ट्रीयताकी भावनाका अुदय हुआ; जिनके परिणामस्वरूप आपने डाक-तार विभागकी नौकरी ठुकरा दी तथा राष्ट्रके नव जागरणके महान कार्योंमें प्रवृत्त हुअे। श्री सखारामजीके आदेशानुसार आपने प्रसिद्ध मराठी साप्ताहिक 'केसरी' पढ़ना प्रारम्भ कर दिया था।

पत्रकारीके क्षेत्रमें

विधाताने श्री बाबूरावको पत्रकारिताके लिअे बनाया था, तो भला वे किस प्रकार तार-विभागकी सरकारी नौकरी स्वीकार करते और किस प्रकार राजनीतिके क्षेत्रमें लोकमान्यके साथ अुतर पड़ते। अुन्हें तो सरकारी कर्मचारियोंकोही नहीं, सरकार बदलनेके लिअे कार्य करना था। राजनीतिक नेता बनकर भाषणकी अपेक्षा अुनका मार्गदर्शन करा, देशकी कोटि-कोटि जनतामें देशभक्तिकी भावना अुत्पन्न करनी थी। अिसलिअे जब कलकत्तेसे प्रकाशित होनेवाले 'हिन्दी बंगवासी' में सहायक सम्पादककी आवश्यकताका विज्ञापन आपने देखा तो अपने हाथसे आवेदनपत्र लिख भेजा। अिसके साथ किसीकी न तो सिफारिश थी, न कोअी सार्टीफिकेटही था।

श्री हरेकृष्ण जौहर 'हिन्दी बंगवासी' के सम्पादक थे। आवेदन-पत्रकी शैलीसे आप अितने प्रभावित हुअे कि बाबूरावजीको अुक्त पदके लिअे चुना और बुला भेजा। अुन दिनों दुर्गा-पूजाके अवसरपर दैनिक पत्रोंमें अेक सप्ताह और साप्ताहिकोंमें दो सप्ताहकी छुट्टियाँ होती थीं। अुसी वर्ष जौहरजी पूजावकाशमें काशी आये तो बाबूरावजीसे अुनकी भेंट हुअी। जौहरजी आपसे मिलकर बड़े प्रसन्न हुअे और आपकी लेखन-शैलीकी सराहना की। अिसी बीच बाबूरावजीने अपने मामा श्री सखारामजीको जिनका घर संथाल परगनामें था पत्र लिखा और अुनकी सम्मति मांगी। श्री सखारामजी अुस समय बंगला दैनिक 'हितवादी' के सम्पादक थे और कलकत्तेमेंही रहते थे। अस्वस्थ होनेके कारण वे अपने घर गये हुअे थे। बाबूरावजीका जब अुन्हें पत्र मिला तो अुन्होंने तत्काल सहमति दी और कहा कि कलकत्ता जानेके पूर्व मुझसे मिलते जाओ तथा घरकी ताली लेते जाओ। सन् १९०६ के पूजावकाशके बाद बाबूरावजीने काशीसे कलकत्तेकी ओर प्रस्थान किया। आप 'बंगवासी' में कार्य करने लगे लेकिन रहते थे श्री सखारामजीके निवासपरही। कुछही दिनोंके बाद आपके मामा श्री सखारामजी आ गये। बाबूरावजीकी मामी भी अुनके साथ आयी थीं। अिस प्रकार कलकत्तेमें पत्रकारिताके क्षेत्रमें आप अवतीर्ण हुअे। देशसेवाकी भावना तथा 'केसरी' के अध्ययन-मननके व्यवहारिक प्रयोगका समय अब आ गया था। अुस समय 'बंगवासी' का बड़ा प्रचार था। पर यह पत्र था प्रतिक्रियावादी नीतिका समर्थक। अिससे श्री बाबूरावका चित्त कुछ समयके लिअे हटने लगा; पर अपने मामाके आदेशका पालन करते हुअे वे यहाँ कार्य करते रहे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अध्ययन और मननके वे दिन

'हिन्दी बंगवासी'में सहायक सम्पादकके वेतन रूपमें अुन्हें पच्चीस रुपये मासिक प्राप्त होते थे। वेतन जिस दिन मिलता अुसी दिन मामा सखारामजीकी आज्ञानुसार २० रु० मनिआर्डर बनारस कर देना पड़ता था और रसीद अुन्हें दिखानी पड़ती थी। यही क्रम प्रत्येक मास चलता था। पाँच रुपये कपड़े-लत्ते अथवा हाथ खर्चके लिअे अपने पास रखनेकी श्री बाबूरावजीको आज्ञा थी। वे सदा अिसका पालन करते रहे। भोजन और निवासकी समस्त व्यवस्था मामा सखारामजीके यहाँ थी ही। पाँच रुपया जो बचता था अुसका अधिकांश भाग कलकत्ता स्थित अिम्पीरियल लाअिब्रेरीके आने-जानेमें व्यय होता था। कार्यालयसे लौटकर आनेपर श्री बाबूरावजीको सखारामजीके आदेशानुसार प्रायः नित्य ही अिम्पीरियल लाअिब्रेरी जाकर विभिन्न विषयोंका अध्ययन अेवं तथ्य-संग्रह करना पड़ता था। यह क्रम अितना नियमित हो गया था कि अुक्त देश-प्रसिद्ध पुस्तकालयके पुस्तकाध्यक्षने आपके लिअे स्थायी प्रवेश-पत्र तथा पृथक बैठकर अध्ययनकी समस्त सुविधाअें सुलभ कर दी थीं। काशीमें नागरी प्रचारिणी सभाके आर्य भाषा पुस्तकालयमें बैठकर वहाँकी अधिकांश पुस्तकोंको पढ़ जानेवाले बाबूरावजीने अिम्पीरियल पुस्तकालयमें भी अुसी वृत्तिसे काम लिया। अिसके अतिरिक्त श्री सखारामजी प्रायः नित्य ही अेक न अेक प्रश्न या समस्या सम्बन्धी विवाद छेड़ देते थे और जिस पक्षका बाबूराव समर्थन करते अुसका वे खण्डन पक्ष ग्रहण करते। अिस प्रकार बाबूरावजीको महान अध्ययन-मननके साथ तर्कशक्ति अेवं प्रश्नके दोनों पहलुओंपर व्यापक विचार करनेकी शैलीका अभ्यास हो गया। कलकत्तेमें अुस समय पण्डित गोविन्द नारायण मिश्र तथा पण्डित दुर्गाप्रसाद मिश्र हिन्दीके प्रख्यात विद्वान थे। आप अिनके पास जाकर हिन्दी-लेखकी शैली तथा व्याकरणकी बारीकियाँ समझने लगे। अिन दोनों विद्वानोंका श्री बाबूरावजीपर अत्यधिक प्रभाव पड़ा।

क्रान्तिकारी समिति और नजरबन्दी

बीसवीं शताब्दीके अुन प्रारम्भिक दिनोंमें बंगालके नवयुवक समाजमें गुप्त समितियों और क्रान्तिकारी भावनाओंका व्यापक प्रचार था। श्री सखारामजीके घर अनेक क्रान्तिकारी अेकत्र होते और परामर्श लेते। बाबूरावजीका भी सम्बन्ध अिन्हीं दिनों गुप्त समितिसे हो गया जिसका केन्द्र था चन्द्रनगर। अिधर अेक और घटना हुअी। कलकत्तेमें राष्ट्रीय शिक्षाके निमित्त नेशनल कालेजकी स्थापना हुअी और अिसके प्रधान थे श्री अरविंद घोष। अिस संस्थामें विनयकुमार सरकार, राधाकुमुद मुखर्जी जैसे देश-प्रसिद्ध विद्वान अध्यापन कार्य करते थे। श्री बाबूरावजीको भी यहाँ अध्यापन कार्य सौंपा गया। हिन्दी बंगवासीके सम्पादकको यह बात न रुची; फलतः बाबूरावजीने पत्रसे अिस्तीफा दे दिया। 'हिन्दी बंगवासी' से पृथक होनेपर आपको साप्ताहिक 'हितवार्ता' के सम्पादक पदपर बुलाया गया। अिस पत्रको आपने राजनीति प्रधान बनाया, जो अुस समयके हिन्दी-पत्रोंकी परम्परामें सर्वथा नवीन प्रयोग था। सन् १९०७ में आपने अिस पत्रका भार संभाला और लगभग चार वर्षोंतक अिसका सम्पादन किया। अिसके बाद नीति सम्बन्धी मतभेदके कारण 'हितवार्ता'से पृथक् होकर आप 'भारतमित्र' में चले गये जो दैनिक रूपमें निकलने लगा था और जिसके सम्पादक थे पण्डित अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी। सम्पादन-कार्यके साथ ही साथ आपका सम्बन्ध गुप्त समितियोंसे भी बराबर बना रहा। यह बात छिपी नहीं रही। फलतः सन् १९१६ की १ जुलाअीको सरकारने १८१८ के ३ रे रेगुलेशनमें आपको साढ़े तीन वर्षके लिअे नजरबन्द कर दिया।

'आज' सम्पादकः पराड़करजी

सन् १९२० अीस्वीमें जब ३॥ वर्षकी नजरबन्दीके पश्चात् श्री बाबूरावजी काशी लौटे तो अुनकी द्वितीय पत्नी यक्ष्मासे पीड़ित थीं। सन् १९१५ में यह विवाह बम्बअीमें हुआ था। विवाहके अेक वर्ष बाद ही श्री बाबूराव नजरबन्द कर लिये गये और जब १९२० में मुक्त होकर आये तो अुनकी पत्नीके स्वस्थ होनेकी कोअी आशा न थी। आते ही आप पत्नीकी सेवा-सुश्रूषामें लगे। किन्तु थोड़े ही दिन बाद आपको पुनः पत्नी-शोक सहना पड़ा। अिधरसे आप 'भारतमित्र' में जाने ही वाले थे कि बाबू शिवप्रसाद गुप्तने आपको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोक लिया और 'आज' निकालनेकी योजना बनायी। मअी सन् १९२० से श्री बाबूराव 'आज'के प्रकाशनकी व्यवस्थामें लगे। अिसी सिलसिलेमें आप लोकमान्य तिलकसे मिलने भी गये थे। तिलकसे आपकी यही अन्तिम मुलाकात थी। बनारसमें स्वयंसेवक रूपमें, कलकत्तामें पत्रकार रूपमें और पूनामें अेक नये समारम्भके प्रसंगमें आप अुनसे मिले। तिलकको श्री बाबूरावजी अुस समय अपना राजनीतिक गुरु मानते थे।

अिसी वर्ष जन्माष्टमीके दिन 'आज'का प्रथम अंक प्रकाशित हुआ और श्री बाबूरावजी श्री श्रीप्रकाशके साथ संयुक्त सम्पादक बनाये गये। अिस समय तक बाबूरावजी अपनी देशभक्ति, क्रान्तिकारी भावनाओं, गुप्त समितियोंसे सम्बन्ध आदिके कारण काफी प्रसिद्ध हो चुके थे। 'आज'के सम्पादक रूपमें तो आपने देशमें राष्ट्रीयताकी अैसी लहर फैलायी कि 'आज' और पराड़करजी समानार्थक हो गये। सन् १९२० से लेकर सन् १९५३ तक थोड़ेसे समयके अतिरिक्त आप निरन्तर 'आज'के सम्पादकके रूपमें कार्य कर रहे हैं। 'आज'के स्वरूप-अंकनके जन्मदाता आपही हैं। आप ही हैं अुसके पालक-पोषक और जनताके हृदयमें अुसका प्रतिष्ठापन करनवाले। आपने जब 'आज'का सम्पादन प्रारम्भ किया तो गान्धीजीका अुदय हो रहा था और अुसीके अेक-दो वर्ष बाद देशमें स्वाधीनताका आन्दोलन छिड़ गया। पराड़करजी गान्धीजीके भक्त बने और राष्ट्रको विदेशी आधिपत्यसे मुक्त करानेके लिअे अपनी लेखनीसे जनताके विचारोंमें क्रान्तिकी भावना भरने लगे। आपकी भक्ति, अन्धभक्ति न थी। अिसीका परिणाम था कि अनेक प्रश्नोंपर आपने गान्धीजीकी आलोचना भी की। आपने 'आज' में काँग्रेसके वार्षिक अधिवेशनमें अध्यक्षीय पदसे दिया गया पूराका पूरा भाषण प्रकाशित करनेकी व्यवस्था की। सन् '२२ और ३० के स्वदेशी आन्दोलनके देशके कोने-कोनेके समाचार छापने शुरू किये। दमन-चक्रमें पीसे जानेवाले तथा देशकी स्वाधीनताके निमित्त बलिदान होनेवाले देशभक्तोंके समाचार आपके 'आज'में छपते थे। यही नहीं, अग्रलेख और टिप्पणियों द्वारा आपने देशको, देशकी जनताका और देशके नेताओंका मार्गदर्शन किया। काँग्रेस तथा अुसके सूत्रधार गान्धीजीने अेकबार नहीं अनेकबार 'आज'के परामर्शानुसार ही आन्दोलनकी धारा मोड़ी और अन्तमें विजयी हुअे।

राजद्रोहका मुकदमा

आपपर कअी बार राजद्रोहका मुकदमा चला और कअी बार पत्रसे जमानत मांगी गयी। अुस समय बर्मामें भ्रमण करनेवाले बाबा राघवदासका अेक लेख छापनेके लिअे आपपर मुकदमा चला और छह मासकी कैद अथवा १००० रु० जुर्माना देनेकी आज्ञा हुअी। आपने जेल जाना ही पसन्द किया था बशर्ते कि घरका सामान आदि कुर्क न करानेका अधिकारियोंसे आश्वासन मिल जाअे। तत्कालीन बनारसके जिला मजिस्ट्रेट श्री ओवेनने अिस प्रकारका आश्वासन देनेसे अिनकार किया। अुधर श्री प्रकाशजी आदिकी सलाह भी यही हुअी कि जुर्माना दे दिया जाअे। यह घटना सन् १९३१ अीस्वीकी है।

'रणभेरी' का प्रकाशन

सन् १९३० में राष्ट्रीय आन्दोलनके समय 'आज' से जमानत माँगी गयी। सरकारी आर्डिनेन्सके विरुद्ध पराड़करजीने पत्र बन्द ही करना अुचित समझा। पर देशमें स्वाधीनताका संग्राम चल रहा था। जनता तथा नेताओंको राष्ट्रीय आन्दोलनकी गतिविधिसे अपरिचित रखना भी सम्भव न था। अिसीलिअे आपने "आजके" समाचार बुलेटिन साअिक्लोस्टाअिलपर निकाले। जब सरकारने अिसे भी बन्द करनेकी आज्ञा दी तो 'रणभेरी' नामकी गुप्त पत्रिका आप निकालते रहे। यह पत्रिका जनतामें प्रसिद्ध हो गयी थी। पुलिस परेशान थी पर लाचार थी। अुसकी सारी दौड़धूप और छान-बीन व्यर्थ जाती थी। अेक दिन चर्चामें श्रद्धेय पराड़करजीसे मैंने पूछा कि आप लोग पुलिसकी नजरोंसे कैसे बच निकलते थे, तो आपने बताया कि यदि हमारी लिपि और लिखावट देखकर पुलिस चाहती तो हमें तत्काल पकड़ सकती थी। पर यह बात अुसके ध्यानमें आयी ही नहीं। 'आज' के पुनः प्रकाशनपर आपने राष्ट्रीय आन्दोलनके समाचार ही प्रमुखतासे प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किये। सत्याग्रहियोंकी पूरी सूची 'आज' में छापी जाती रही हैं। अुस समयके हिन्दी-पत्रोंके लिअे यह सर्वथा नवीन और साहसका कार्य था।

पराड़करजीकी देन

श्रद्धेय पराड़करजीके चरणोंमें बैठकर कार्य करनेका सौभाग्य, अिन पंक्तियोंके लेखकको विगत दस वर्षोंसे प्राप्त है। अिस कालमें और अिसके पूर्वके दशकोंमें कुल मिलाकर विगत अर्ध शताब्दीमें अिस महान् साधक और युग-निर्माताकी सेवाअें चिरस्मरणीय रहेंगी। सर्वप्रथम अिस महान् तपस्वीने स्वाधीनता और राजनीतिक स्वतन्त्रताके लिअे जो प्रयत्न किया था वह सफल हुआ। 'आज'के अग्रलेखों और टिप्पणियोंने तत्कालीन परिस्थितियोंमें विचारोंकी कैसी क्रान्ति की है, अब भी सहजमें ही जाना जा सकता है। पराड़करजीकी टिप्पणियाँ बड़े-बड़े अंग्रेजी पत्रोंकी टिप्पणियोंको मात कर देती थीं और लोग अुनका लोहा मानते रहे हैं। आधुनिक समाचार-पत्रोंमें अग्रलेखोंका वह महत्त्व नहीं रह गया है, जो अुस समय था। अुस समय लोग साँस रोककर 'आज'के अग्रलेख-टिप्पणियाँ पढ़नेको आकुल-व्याकुल रहते थे। हिन्दी भाषाके पत्र तत्कालीन समयमें अत्यन्त हेय दृष्टिसे देखे जाते थे, किन्तु पराड़करजीने 'आज' द्वारा हिन्दी पत्रकारिता तथा भारतीय पत्रकारिताको नया मानदण्ड दिया और अुसका स्तर अितना अुन्नत किया कि लोग अिनका लोहा मानने लगे। यही नहीं, हिन्दीके समाचार-पत्रोंके सर्वांग सुन्दर रूपके लिअे 'आज' आदर्श पत्र माना जाता रहा है। यह सब कुछ पराड़करजीका ही चमत्कार रहा है और है आपकी सतत साधना। भारतमें हिन्दीके सभी समाचार-पत्रोंने 'आज'से प्रेरणा ली है और अुससे प्रभावित हुअे हैं, सहज भावसे यह कथन अन्यथा दृष्टिसे न देखा जाना चाहिये। अिन सबके मूलमें श्रद्धेय पराड़करजीकी कठिन तपस्या और साधना निहित है। प्रायः लोग पराड़करजीके साहित्यके सम्बन्धमें प्रश्न करते हैं और अुसे पुस्तकोंके रूपमें खोजते हैं। वस्तुतः पराड़करजीको 'आज' के सम्पादकीय लेख और सम्पादन कार्यके बाद अवकाश ही कहाँ मिला है कि वे पुस्तकोंका प्रणयन करें। 'आज' के अग्रलेख और बहुत-सी टिप्पणियाँ हिन्दी साहित्यकी स्थायी सम्पत्ति है, जिनकी ओर बहुत कम लोगोंका ध्यान अबतक गया है।

राजनीतिक स्वतन्त्रताके लक्ष्यमें सफलता प्राप्त करनेके अतिरिक्त जिस प्रश्नको लेकर 'आज'ने प्रारम्भसे ही आन्दोलन किया वह था कि हिन्दी राष्ट्रभाषा बनायी जाअे। सिद्धान्ततः अुसका यह लक्ष्य भी पूरा हो चुका है। अिसका भी सारा श्रेय पराड़करजीको ही है। पिछले वर्षों हिन्दीकी विशेषता बताते हुअे आप कहते रहे कि प्रायः सभी भारतीय भाषाओंमें दूसरी भाषावालोंके लिअे घृणा व्यक्त करनेवाले शब्द हैं पर हिन्दीमें नहीं। अिसके अुदाहरण स्वरूप आप मराठीका 'रांगड़ा', बंगलाका 'खोट्टा' आदि शब्द सम्मुख रखते। 'मिस्टर' के लिअे 'श्री' का प्रयोग सर्वप्रथम 'आज' ने ही चलाया और आज सरकारने भी अिसीको मान्यता प्रदान की है। अिसी प्रकार न जाने सैकड़ों-हजारों नये शब्द 'आज' के स्तम्भोंमें नये गढ़े गये होंगे, जिनका पहले कहीं पता भी न था; पर अब वे सर्वत्र प्रयोगमें आते हैं। व्याकरण सम्बन्धी आपकी मौलिक धारणाअें हैं, जिन्हें अभी तक किसी हिन्दी व्याकरणमें निबद्ध नहीं किया गया है। यह है 'को' के प्रयोगके सम्बन्धमें। हिन्दी भाषा तथा साहित्यकी अिन्हीं सेवाओंका समादर आपको सन् १९३८ में हिन्दी साहित्य सम्मेलनके शिमला अधिवेशनका सभापति बनाकर किया गया। समकालीन और निकट होनेके नाते व्यक्तिकी विशेषताओंका विवेचन-विश्लेषण प्रायः कठिन होता है। अिस स्थितिमें श्रद्धेय पराड़करजीकी विलक्षण और विशिष्ट अनेक विशेषताओंका दृष्टिसे ओझल होना स्वाभाविक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री बाबूराव विष्णु पराड़कर—अेक भेंट

: श्रीकमलेश :

पहले दिन जब अिन्टरव्यूके लिअे समय मांगनेके लिअे गया तो 'आज' के सम्पादक श्री बाबूराव विष्णु पराड़कर आराम कुर्सीपर बैठे थे। दुबला-पतला शरीर, ठिगना कद, नंगा बदन, पटलीदार धोती और निस्संकोच वार्तालाप सब मिलकर किसी भी व्यक्तिको अुनकी सादगी और तपस्याका भान करानेवाले अुपकरण थे। अिससे भी अधिक चश्मेके भीतरसे चमकनेवाली आँखें सहसा सामने बैठे व्यक्तिको यह अनुभव करा देती हैं कि यह व्यक्ति गहराअी तक देखनेकी क्षमता रखता है। देखते ही बोले—"जब मैं किसी मिलनेवालेको आते हुअे देखता हूँ तो मुझे विपत्ति-सी जान पड़ती है।"

अिस अप्रत्याशित शब्दावलीसे मैं चौंक पड़ा। मुझे लगा कि अिस व्यक्तिको व्यर्थ समय बरबाद करनेवालोंसे बहुत पीड़ित होना पड़ा है। लेकिन मैं समय बरबाद करने नहीं गया था। मैं गया था हिन्दी-पत्रकार-जगत्के अेक अनुभवी सम्पादककी जीवन गाथा जानने। अिसलिअे जब मैंने अपना अुद्देश्य बताया तो वे प्रसन्नतापूर्वक अिंटरव्यू देनेके लिअे राजी हो गये और दूसरे दिन तीन बजेका समय निश्चित कर दिया।

अिंटरव्यूका समय तो निश्चित कर दिया था पर अुस समय वे 'मूड' में थे। अिसलिअे घण्टे-डेढ़ घण्टे तक साहित्यकारोंके संस्मरण सुनाते रहे। अुन संस्मरणोंमें अधिकांश संस्मरण आचार्य पं. महावीरप्रसादजी द्विवेदीके थे। अुन संस्मरणों द्वारा द्विवेदीजीकी जागरूकता और साहित्य-सेवाकी लगनपर प्रकाश पड़ता था। स्वयं अुनसे सम्बन्धित अेक संस्मरण मुझे बहुत अच्छा लगा। अुन्होंने कहा—"अेक बार अैसा हुआ कि मैं सम्पादकीय लिखने बैठा। लिखनेके लिअे कोअी विषय नहीं सूझता था। बैठे-बैठे पर्याप्त समय बीत गया था और कम्पोजीटर सरपर सवार था। अिस बार मैंने 'क्या लिखें?' शीर्षक सम्पादकीय लिखा। वह आचार्य पं. महावीरप्रसाद द्विवेदीने पढ़ा और दूसरे ही दिन मेरे पास अुनका अेक पत्र आया। अिस पत्रमें मेरे अुस सम्पादकीयकी मुक्त कण्ठसे प्रशंसा की गयी थी। अुस समय मुझे द्विवेदीजीकी गुण ग्राहकताका परिचय मिला।" यह कहते-कहते वे गद्गद् हो गये।

वे अिसी प्रकार संस्मरण सुनाते रहे। और भी सुनाते परन्तु मैं अुनकी कठिनाअी और मनःस्थितिसे अुसी समय परिचित हो गया था जब मुझे देखकर अुन्होंने मिलनेवालोंको 'विपत्ति' बताया था। अिसलिअे अिच्छा न रहते हुअे भी विदा लेकर चला आया।

दूसरे दिन जब पहुँचा तो अपने पत्रकार-जीवनकी कहानी सुनाते हुअे अुन्होंने बताया—"मेरा जन्म काशीमें हुआ और बचपन भी काशीमें ही बीता। मेरे चार भाअी और अेक बहन थे। मैं सबसे बड़ा था। पढ़ाअीका क्रम अुस समय अुल्टा था। आजकलकी भाँति स्टैण्डर्ड (दर्जे) नहीं होते थे, क्लास होते थे। बारह वर्षकी अुम्रमें जब मैं पाँचवें क्लासमें था, मैंने अंग्रेजी पढ़ना प्रारम्भ किया। पढ़नेका मुझे अितना शौक था कि बचपनमें ही अठारह पुराण पढ़ डाले थे। कसरत करना और अखाड़ेमें जाना गुण्डापन समझता था पर फुटबाल खेलनेमें बड़ा मजा आता था। अुस मजेकी सजा भी मुझे अच्छी मिली। मेरी हँसलीकी हड्डी टूट गयी।"

"जब पन्द्रह वर्षका था तब मेरे पिता चल बसे। सन् १९०१-२ में प्लेगकी अैसी भयंकर बीमारी फैली कि गलियोंमें मुर्दे बिछे रहते थे। वह बीमारी माँको ले गयी। अुस समय मैं अेन्ट्रेन्समें था। परिवारमें सबसे बड़ा था। काशीमें रहना और बिना माता-पिताके सबको सँभालना कठिन कार्य था। अिस कारण नौकरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करनेकी सोची। संयोगकी बात है कि अुन्हीं दिनों स्वदेशी आन्दोलनके प्राण और हितवादके सम्पादक श्री सखाराम गणेश देअुसकर अपनी बड़ी लड़कीकी शादीमें काशी आये। वे मेरे दूरके मामा होते थे। नवयुवकोंको प्रोत्साहन देना अुनकी विशेषता थी। अुन्होंने मुझसे प्रश्न किया— "औरंगजेब अच्छा या अकबर ?"

मैंने कहा—"अकबर।"

अुन्होंने पूछा—"क्यों ?"

मैंने बताया—"अितिहासमें अैसा ही लिखा है।"

अिसपर अुन्होंने मुझे समझाया—"अैसा कहना ठीक नहीं है। अकबरको अच्छा लिखनेवाले वे अंग्रज हैं, जो अकबरकी नीतिपर चलकर शताब्दियोंसे भारतको गुलाम बनाये हुअे हैं। अच्छे-बुरेका निर्णय स्वयं करना चाहिये। अकबर बदचलन था, जब कि औरंगजेब सदाचारी था। अुसने अपने कार्यके द्रोहियोंका ही नाश किया, शेषको समादृष्टिसे देखा। अितनाही नहीं अुसने बहुतसे मंदिरोंको दान दिया था, जो बहुत दिनतक मिलता रहा।" अुन्होंने मुझे 'केसरी' मँगानेकी राय दी।

अुस दिनसे मेरी प्रवृत्ति देश-सेवाकी ओर हुअी; यहाँ तक कि मैं अेफ. अे. की परीक्षा भी न दे सका। मैंने कुछ दिन पोस्ट अेण्ड टेलीग्राफमें नौकरी की। लेकिन शीघ्रही मुझे देअुसकरजीका अेक पत्र मिला, जिसमें मुझे बंगवासीमें सहायक सम्पादक होकर आनेको लिखा था। मैं तत्काल कलकत्ते चल दिया। ठहरा भी अुन्हींके यहाँ। वहाँ मुझे खाने-पीनेका कोअी खर्च नहीं करना पड़ता था। फिर राजनीतिकी चर्चा भी वहाँ खूब होती थी। अुस वातावरणसे लाभ अुठाकर मैंने सप्ताहमें तीन दिन अिम्पीरीयल लायब्रेरी (अब नेशनल लायब्रेरी) में जाना आरंभ किया। चार महीने बाद मुझे अुसका स्थायी पास मिल गया। जो कुछ मैंने पढ़ा अिसी बीच पढ़ा। घरपर क्रियात्मक राजनीतिकी चर्चा और लायब्रेरीमें सैद्धांत्तिक ज्ञान दोनों प्रकारसे मेरा मानसिक गठन प्रौढ़ता प्राप्त करने लगा। देअुसकरजीका आतंकवादियोंसे भी सम्बन्ध था। अिसलिअे मेरा भी अुनसे सम्पर्क हो गया। यह सन् १९०६ की बात है। देअुसकरजी अुस समय बंगाल नेशनल कालिजमें अितिहास पढ़ाते थे। अुन्होंने मुझसे वहाँ मराठी पढ़ानेके लिअे कहा। 'बंगवासी' के प्रबन्धकोंने अिसपर आपत्ति करते हुअे कहा कि 'बंगवासी' में रहते हुअे अैसा नहीं हो सकता। मैंने अिसपर त्याग-पत्र दे दिया और दूसरे ही दिन 'हितवार्ता' का सम्पादक हो गया। हिन्दी समाचार-पत्रोंमें गंभीर राजनीतिका समावेश 'हितवार्ता'से ही हुआ। 'प्रताप' में गणेशजी तब अच्छा कार्य कर रहे थे। सन् १९१० में मैं 'दैनिक भारत मित्र' में गया, जहाँ श्री अम्बिकाप्रसाद वाजपेयीसे मेरा साथ हुआ।

सन् १९२० में काशीसे श्री शिवप्रसाद गुप्तने 'आज' निकाला और मुझे अुसका सम्पादक बनाया। फलस्वरूप मैं कलकत्ता छोड़कर काशी आया। काशी आनेके दो कारण थे— अेक तो काशी मेरी जन्मभूमि थी और दूसरे बाबू शिवप्रसाद गुप्तका यह कहना था कि हिन्दीके पत्र बंगालसे ही निकलते हैं, यू. पी. से नहीं। यू. पी. हिन्दीका अपेक्षत है; अतः वहांसे पत्र निकले और सफलतापूर्वक चले, यह नितांत आवश्यक है। 'आज' में आनेपर अेक मित्रने कहा—"यदि तुम पाँच वर्ष यहाँ टिक जाओ तो मेरी नाक काट लेना।" दस-पन्द्रह वर्ष बाद जब मैं अुनसे मिला तो मैंने अुनसे कहा—"देखिये, अभीतक मैं 'आज' में हूँ और आपकी नाक भी अपने स्थानपर है।" अिसपर वे लज्जित हो गये। यह मेरे पत्रकार जीवनकी कहानी है; पर मैं यह मानता हूँ कि कोअी अदृश्य शक्ति ही मुझे अिस ओर खींच ले गयी और राजनीतिमें गांधीजीके आनेके बाद तो पत्रकारिता ही मेरा जीवनाधार बन गयी।

"लेकिन देअुसकरजीके अतिरिक्त आपके पत्रकारके निर्माणमें किन-किन व्यक्तियोंका हाथ रहा ?" मैंने पूछा।

वे बोले—"देअुसकरजीके अतिरिक्त सर्वश्री गोविन्दनारायण मिश्र, दुर्गाप्रसाद मिश्र और अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी प्रमुख हैं। गोविन्दनारायण मिश्रने भाषा तथा साहित्यका दृष्टिकोण और वाजपेयीजीने परिश्रमका जो दान दिया वह मेरे जीवनकी सबसे बड़ी सम्पत्ति है। वाजपेयीजी तो मेरे भाअीकी ही भाँति हैं। आपको आश्चर्य होगा कि जब मैं आतंकवादियोंसे सम्पर्क रखनेके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण जेल गया तो वाजपेयीजीके पिता फूट-फूटकर रोये थे। यही नहीं मरते समय भी अुन्होंने मेरे विषयमें पूछा था।"

पत्रकार कला और सफल पत्रकार बननेका प्रसंग चला तो वे कहने लगे—'सफल पत्रकार बननेके लिअे सबसे पहली बात तो यह है कि पत्रकारमें कामकी लगन हो। अुसका हृदय काममें होना चाहिये। केवल नौकरीकी भावनासे काम करके कोअी सफल-पत्रकार नहीं बन सकता। सी. वाअी. चिन्तामणि, अमृतलाल चक्रवर्ती, श्री निवासन अिसके प्रमाण हैं कि कामकी लगन पत्रकार बननेमें कितनी सहायक होती है। अिसीलिअे जब कोअी युवक मेरे पास पत्रकार बननेकी अभिलाषा लिये आता है तब मैं अुससे कहता हूँ कि यदि तुममें कामकी लगन होगी तो नौकरी तुमको ढूँढ़ती आअेगी, तुम्हें नौकरी नहीं ढूँढ़नी पड़ेगी। काम करो, फल कभी न कभी अवश्य मिलेगा। दूसरी बात पत्रकारकी भाषाकी है। अुसकी भाषा शुद्ध और मुहावरेदार होनी चाहिये। (पहले मेरा आदर्श श्री गोविन्दनारायण मिश्रकी भाषा थी; पर वह जीवित भाषा न थी अिसलिअे मैंने अुसे छोड़ दिया और अपनी शैली स्वयं बना ली।) मेरा विचार है कि भाषा हृदयके भावोंके अनुकूल होनी चाहिये क्योंकि भाषा वही अच्छी है, जिसके शब्द कानोंको बुरे न लगें। शैली-निर्माणमें जानसनकी भाँति मैं भी यही मानता हूँ कि परिश्रमशीलता ही प्रतिभा है। तीसरी बात कभी शान्त न होनेवाली अधिकाधिक जाननेकी भूख है। मुझे स्वयं पढ़नेकी बड़ी आदत रही है। अच्छी किताब मिली और मुझे दो-तीन रात नींद नहीं आयी, अुसे ही पढ़ता रहा। देअुसकरजी मुझे रोकते थे पर अब मैं अनुभव करता हूँ कि पत्रकारके लिअे अध्ययन अत्यंत आवश्यक है। और पत्रकारको थोड़ा-थोड़ा सब जानना चाहिये तथा अुसे यह पता होना चाहिये कि अमुक विषय कहाँ मिलेगा। अिस प्रवृत्तिके वशीभूत होकर ही मैं 'सुश्रुत-संहिता' भी पूरा पढ़ गया था। 'आज' में आनेपर अिसीलिअे मैंने सबसे पहला कार्य यह किया कि 'अेन्साक्लोपीडिया ब्रिटानिका' खरीदवाया। कहनेका अभिप्राय यह है कि पत्रकारको 'स्कॉलर' नहीं होना चाहिये। यदि अैसा होगा तो वह जन-साधारण की रुचिकी चीज न लिख सकेगा। लेकिन थोड़ा जाननेके साथ अुसमें अितनी कला अवश्य होनी चाहिये कि कोअी अुसकी कमजोरी न पकड़ सके। चौथी बात यह है कि अनुवाद करते समय जिस भाषामें वह अनुवाद कर रहा है अुसकी अुसे पूरी जानकारी होनी चाहिये। अिसका मुझे निजी अनुभव है। मेरी मातृभाषा मराठी है हिन्दी नहीं, अिसलिअे पहले बहुत दिन तक मेरे अनुवादमें मराठीका प्रभाव आ जाता था। वर्षों मैं अनुवादको सही करनेके लिअे दूसरोंसे पूछता रहा और अनुवाद दूसरोंसे कराता रहा। मेरा विचार है कि अिन बातोंको ध्यानमें रखनेवाला अवश्य सफल पत्रकार हो सकता है।"

"आपके लिखनेका ढंग क्या है?" मैंने चर्चा आगे बढ़ायी।

अुन्होंने कहा—"मैं आज तक होल्डर-दावातसे लिखता हूँ। फाअुन्टेन पेनसे विचार विकृत हो जाते हैं। लिखनेके लिअे डैस्क या टेबुल होना आवश्यक है। अग्रलेख और टिप्पणी लिखनेके लिअे डिमाअी साअिजके कागजके आठवें हिस्सेवाले स्लिप बहुत अच्छे लगते हैं। मैं लाअिनदार कागजपर नहीं लिख सकता क्योंकि मुझे अैसा लगता है कि लाअिन अेक बाधा बनकर खड़ी है। बहुधा मैंने रातको लिखा है और दिनको पढ़ा है लेकिन आवश्यकता पड़नेपर रात और दिन दोनोंमें भी लिखा है। सन् २३-२४ में चश्मा लिया है, तबसे रातको लिखना बन्द कर दिया है। लिखते समय जब मस्तिष्क कुहासेसे ढका जान पड़ता है तब मैं कोअी अच्छी पुस्तक अुठा लेता हूँ और पढ़ने लग जाता हूँ। पृष्ठ-आधा पृष्ठ पढ़तेही मस्तिष्क स्वच्छ हो जाता है और मैं लिखनेकी स्फूर्ति अर्जित कर लेता हूँ। अिसके लिअे यह आवश्यक नहीं कि पुस्तक हिन्दीकोही हो, वह किसी भी भाषाकी हो सकती है। यह देअुसकरजीका मंत्र है, जो बड़ा लाभ-प्रद सिद्ध हुआ।"

पत्रकारोंकी आर्थिक स्थितिपर बातचीत होने लगी तो मैंने अुनसे हिन्दी पत्रकारोंके ट्रेड यूनियनके आधारपर हुअे संगठनका जिक्र किया और कहा कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिस समय मुझे तो यही अेक मार्ग पत्रकारोंके हितोंकी रक्षाका दिखायी देता है। पराड़करजी अिससे अपनी असहमति प्रकट करते हुअे बोले— "ट्रेड हो तो ट्रेड यूनियनकी जरूरत है। हिन्दीमें पत्र लाभकी दृष्टिसे नहीं निकाले गये। अनेक पत्र घाटेमें चले हैं और आज भी चल रहे हैं। अमेरिका और ब्रिटेनकी-सी स्थिति यहाँ नहीं है। वहाँ ट्रेड है अिसलिअे ट्रेड यूनियन भी है। मेरा निजी अनुभव है, जिसके आधारपर मैं कह सकता हूँ कि मालिकोंको कुछ भी नहीं मिलता। मुझसे खराब स्थिति बहुतोंकी नहीं है; पर मैं ट्रेड यूनियनके विरुद्ध हूँ। मेरी दृष्टिमें पत्रकारिता अेक मिशन है। मिशन मानता हूँ अिसीलिअे वृद्धावस्थामें भी मेरी यह दशा है कि मैं बिना पत्रका काम किये बीमार हो जाता हूँ। मुझे लगता है कि जब तक मैं यह काम कर रहा हूँ तभी तक जीवित हूँ।"

यहाँ वे कुछ रुके और सहज आवेशमें आकर कहने लगे—"पत्रकारोंकी जो स्थिति खराब है अुसका कारण है और वह यह कि वे बेकारीके कारण अिस पेशेको अपनाते हैं। पहले अैसी बात नहीं थी। पहले लोग नामके लिअे आते थे। दूसरी बात यह है कि अधिक पत्रोंका प्रकाशन भी बन्द होना चाहिये। चुनावोंके जमानेमें तो बरसाती मेंढ़ककी भाँति पत्र निकलते हैं और पत्रकार-कलाको कलंकित करते हैं। यदि अिसी प्रकारकी स्थिति रहेगी तो पत्रों और पत्रकारोंका स्तर कैसे अूँचा होगा। बीस वर्ष पहले पत्र-संचालकों और पत्रकारोंके सम्बन्धका पता अिससे लगता है कि 'आज' में रहते हुअे मैंने अपना वेतन घटाया था, क्योंकि 'आज' की स्थिति खराब हो गयी थी। अिसपर बाबू शिवप्रसाद गुप्तके आँसू आ गये थे।"

"लेकिन आजके अनेक पूंजीपति पत्र-संचालक बाबू शिवप्रसाद गुप्त नहीं है और अुनकी दृष्टि शोषणकी है। अुनसे कैसे भुगता जाअेगा ?"

"अिस सम्बन्धमें मैं यहीं कहूँगा कि पत्रकारोंको अपनी योग्यता और परिश्रम तथा 'मिशनरी स्प्रिट' से पत्र संचालकोंको यह अनुभव कर देना चाहिये कि बिना अुनके काम चलाना कठिन है।"

जब मैंने अुनसे हिन्दी समाचार-पत्रोंकी वर्तमान दशा और भविष्यकी संभावनाओंके विषयमें पूछा तो अुन्होंने कहा—"हमारे आजके पत्रोंका स्तर बंगला, मराठी और गुजरातीके पत्रोंसे अच्छा है। यह 'प्रताप' तथा 'आज' जैसे मिशनरी पत्रोंके कारण ही हुआ है। 'आज' का विश्वास तो अंग्रेजी पत्रोंसे भी अधिक किया जाता है और विरोधी तक अुसकी प्रशंसा करते हैं। भविष्य भी पत्रोंका बड़ा अुज्ज्वल है। कारण, राजनीतिज्ञोंमें ८० प्रतिशत अंग्रेजी न जाननेवाले हैं और हिन्दी पत्रोंको ही अपनाते हैं। पाठकोंकी संख्या भी बराबर बढ़ रही है। यह शुभ चिन्ह है।"

अन्तमें चाय पीते समय कम्यूनिज्मका जिक्र आ गया। अिस विषयमें अुनका मत था कि मार्क्सवादसे मनुष्य मशीन बनता जा रहा है, जिसमें मेरा विश्वास नहीं है। अर्थशास्त्रकी अतिसे, जिसका मार्क्सवाद हामी है, नैतिकताका ह्रास अवश्यम्भावी है। यदि अैसी व्यवस्था आयी तो आदमी आदमी न रहेगा। अिससे आर्थिक नियमोंको मानवीय नियमोंपर आधारित करना अिस देशके लिअे नितान्त आवश्यक है।

जब मैं चलने लगा तो अपनी जिन्दादिलीका सबूत देते हुअे मजाकमें अुन्होंने कहा—"आपने मुझे दोनों रूपोंमें देख लिया। कल दाढ़ी-मूँछके साथ देखा था, आज सफाचट। शायद आपको पता नहीं कि टांग टूट जानेसे पिछले ६-७ महीने बिस्तर पर पड़ा रहता था। हजामत बनवानेमें कठिनाअी होती थी अिसलिअे बनवाता ही न था। अब अच्छा हुआ तो अुसे साफ करा दिया।"

अिसपर मैं हँस पड़ा और प्रसन्न हृदयसे नमस्कार कर चला आया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी दक्षिण-भारत-यात्राके दस दिन

: प्राध्यापक विनयमोहन शर्मा, अेम. अे. :

दक्षिणके सम्बन्धमें हमारा ज्ञान कितना सीमित है, कितना अधूरा है ! हम हर दक्षिणवासीको जिसकी आकृतिपर श्यामल छटा दीख पड़ती है, 'मद्रासी' कह देते हैं और हर द्राविड़ भाषाको "मद्रासी"। कअी भाषा-विज्ञानकी पुस्तकों तकमें तमिळको तामिल लिखा मिलता है। दक्षिणकी भाषाओंका शुद्ध नामोच्चार तक हम नहीं कर पाते ! और हम कहते हैं "भारत अेक है, अविभाज्य है !" जिस दक्षिण भारतके आचार्योंने अुत्तर भारतमें पवित्र वैष्णव धर्मका संचार किया, जिनके कारण हिन्दीका भक्तिकाल 'स्वर्ण-युग' कहलाया, अुसी दक्षिणके प्रति हमारी अितनी अुदासीनता चिन्तनीय है। पुरानी सरस्वतीकी फाअिलोंमें राजा रविवर्माके चित्रोंकी बड़ी प्रतिष्ठा थी, अुनपर हिन्दी कवि भावमयी-कविताअें लिखते थे। मनमें बात अुठती थी— रविवर्माका वह कौन देश होगा, जहाँ अितनी मोहक कला पनपती है; कौनसे दृश्य चित्रकारके अन्तरमनपर अुल्लासपूर्ण प्रेरणामूर्ति अंकित करते होंगे ? लोगोंसे सुना, वह केरल है। फिर जब दर्शनकी ओर थोड़ी रुचि हुअी तो शंकराचार्यकी जन्मभूमिकी जिज्ञासा बढ़ी। अुसके सम्बन्धमें भी सुना—"वह केरल है।" वर्षोंसे मन केरलके दर्शनोंके लिअे भीतरही भीतर आकुल था। अिस वर्ष परिस्थितियोंने केरल-दर्शनका अवसर ला दिया—

"जो अिच्छा करिहौं मन माहीं।
रामकृपा कछु दुर्लभ नाहीं ॥"

हाँ, तो १३ अप्रैलको मद्रास-अेक्सप्रेससे श्रीमतीजी सहित दक्षिण जा रहा हूँ—गाड़ी चली जा रही है, गर्मी रंग ला रही है, फूलोंके पेड़ोंको देखकर पद्माकरकी पंक्ति याद आ रही है—

"किंसुक गुलाब कचनार औ अनारनकी
डारन पै डोलत अँगारनके पुंज हैं।"

यहाँ-वहाँ आमोंपर बौर लगे हुअे दिखलायी देते हैं और अुनमें छिपी कहीं बौराअी 'क्वैलिया' की कूक भी कानमें पड़ जाती है, पर अिससे तपनमें कमी नहीं मालूम पड़ती। राम-राम करते रात बीती। सवेरा होते ही 'बेजवाड़ा' पर गाड़ी रुक गयी। कृष्णा नदीका पुल काफी बड़ा है, नहर भी बड़ी है। छींद (खजूर) के पेड़ चारों ओर नजर आते हैं। बाँस या खजूरकी छतवाली झोपड़ियाँ खड़ी दिखायी देती हैं। खेतोंकी काली मिट्टी अुर्वरा प्रदेशकी शहादत देती है। अीटोंके पक्के मकान बहुत कम दृष्टिगोचर होते हैं। प्रातःकाल स्टेशनपर फूलोंकी वेणी (मालाअें) बिक रही हैं। सधवा स्त्रियाँ अुन्हें खरीदकर अपने केशोंको सँवार रही हैं। रेल्वे-स्टेशनोंपर शुद्ध हिन्दीमें विज्ञप्तियाँ लिखी हुअी हैं। 'Vegitarian Refreshment room' के नीचे 'शाक अुपाहार गृह' अंकित है। हमारे साथ अेक तमिल सज्जन भी यात्रा कर रहे हैं। टूटी-फूटी हिन्दी बोल लेते हैं। बातचीतके सिलसिलेमें जब मैंने अिनसे कहा कि त्रावनकोर-कोचीन राज्यमें हिन्दीके प्रति जनताका बड़ा अुत्साह है। वहाँ युनिवर्सिटीमें भी बहुत बड़ी संख्यामें छात्र हिन्दी पढ़ते हैं। अिसपर वे बोले— "आप जानते हैं, वे हिन्दी विषय क्यों लेते हैं ? हिन्दीमें अुत्तीर्ण होना बहुत आसान है। दूसरे विषयोंमें अधिक श्रम करना पड़ता है।" तो मैंने कहा "हिन्दी सीखना कठिन नहीं है"। "लेकिन, मलयाली हिन्दी सीखकर भी बोल नहीं पाते, केवल लिख लेते हैं।" ये महाशय मलियालियोंको श्रेय देनेमें बड़े कृपण जान पड़े। अिनके द्वारा दक्षिणके कअी स्थानों और व्यक्तियोंका ज्ञान हुआ। बेजवाड़ासे समुद्रसे दो मीलके अन्तरसे गाड़ी जा रही है। अिधर-अुधर बालूके मैदान हैं। खेतोंमें कुअे हैं। नजदीक पानी है। स्त्रियाँ अुतरकर अपनी गगरी भर लेती हैं। यह आन्ध्रका सम्पन्न भाग कहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता है। गाड़ी किसी स्टेशनपर रुक गयी। अेक भिखारी गाता चला जा रहा है—

"संसारम् प्रेम सुधा नवजीवन सारम्, संसारम्"

यह तेलुगु-भाषी भाग है। संस्कृत प्रचुर शब्दावलीसे भिखारीके स्वरका भाव हृदयंगम हो जाता है! बड़ी लोच है अुसके कंठमें! अिस ओर कच्चे और पके काजू प्लेटफार्मपर बिकते दिखायी देते हैं। गोल काजू, रसदार, कुछ मीठा पर अधिक कसैला होता है। चूसकर खाया जाता है। भुँजा हुआ काजू सौंधा और स्वादिष्ट लगता है। यद्यपि अिस हिस्सेमें यह बहुत पैदा होता है तो भी सस्ता नहीं है। जिस प्रकार नागपुरमें संतरे खूब पैदा होते हैं, परन्तु बाहर निर्यात होनेके कारण मँहगे बिकते हैं; वही हाल यहाँके काजुओंका है। विदेशी अेजेन्ट सब ढ़ो ले जाते हैं। स्टेशनोंपर छोटे पीले केलोंकी छौर भी बहुत दिखलायी देती है। सूर्यास्त होनेके पूर्व ही गाड़ी मद्रास स्टेशनपर खड़ी हो गयी। हमें त्रिवेन्द्रम जाना था। अतः हम यहाँसे अुतरकर मद्रासके मीटर गेजके स्टेशन अेगमोर पहुँचे। मद्रास स्टेशनपर अेक अपरिचित तरुणने बड़ा सौजन्य प्रदर्शित किया। वह हमें टेक्सी कराकर अेगमोर ले गया। टिकटघरमें प्रायः सभी महिला कर्मचारिणी थीं। अेकेने टिकिटकी चिट्ठी काटी, दूसरीने टिकिट दी, तीसरीने टिकिट नम्बर नोट किये और टिकिट कलेक्टरके नाम अेक चिट दी जिससे वह हमें सुरक्षित स्थानपर आसीन कर दे। प्लेटफार्मपर बहुत देरतक त्रिवेन्द्रम अेक्सप्रेस नहीं आयी। हम प्रतीक्षा कर ही रहे थे कि अेक लुंगी-धारी गौर वर्ण महाशय मेरे पास आकर पूछने लगे कि "आप ही शर्मा हैं न?" मैंने कहा, "जी हाँ"। "मेरी साली मीनाक्षीने आपके यहाँ आनेकी सूचना दी थी, मेरे लायक कोअी काम हो तो बताअिये"। मैंने कहा, "विशेष तो कुछ नहीं हैं"। फिर भी वे दौड़े-दौड़े दो चार चपातियाँ, शाक और फल ले ही आये। बड़ी आत्मीयता प्रदर्शित की। अुनकी साली मीनाक्षी मैसूरमें रहती हैं। अुन्होंने नागपुरसे हिन्दीमें अेम. अे. अुत्तीर्ण किया है। यही अुनकी आत्मीयताका कारण था।

रातभर त्रिवेन्द्रमकी ओर गाड़ी बढ़ती गयी। प्रातः मधुराय (मदुरा) आया। चारों ओर मंदिरोंके दर्शन हुअे। मदुराय मंदिरोंका नगर ही कहलाता है। बेजवाड़ाके पूर्व जहाँ धरती सूनी और सूखी दिखायी देती थी, वहाँ अुसके बादसे वह हरी-भरी हो जाती है। क्योंकि यहाँ तो—

"मेहा बरसिबो करे रे।
नान्ही नान्ही बूँद मेघ घन बरसे
सुखे सरवर भरे रे।"

अैसे मनोरम दृश्योंको देखकर मनमें अुल्लासकी सीमा नहीं रह जाती। पर जब यह कल्पना अुठती है कि यह सुन्दरता शीघ्र ही आँखोंसे ओझल हो जाअेगी, तब ये पंक्तियाँ स्मरण हो आती हैं—

"बहुत दिना पै पीतम पायो
बिछुरनको मोहि डर रे।"

त्रावणकोरकी सीमा लगते ही भूमि तृण और जनसंकुल हो जाती है। पग-पगपर खेत, खलिहान और छोटे-बड़े घर दिखलायी देने लगते हैं। हरे पहाड़-पहाड़ियों और मैदानोंको देखकर जी हरा हो जाता है। नारियल, कदली और खजूरके बड़े-बड़े बन खड़े हुअे हैं। हर मकानके आँगनमें नारियलके दस-पाँच पेड़ लगे हुअे हैं। ताड़, तमालकी जोड़ी भी भली लगती है। त्रावणकोरको दक्षिणका कश्मीर कहा जाता है। यहाँ नारियलके पेड़के विभिन्न अंगोंसे पूरा मकान बना लिया जाता है। कोलन स्टेशनसे बड़ी दूरतक समुद्रका जल पृथ्वीके भीतर प्रविष्ट होकर कोचीन 'हारबर' तक जाता है, जिसे 'बेक वाटर्स' कहते हैं। अिसके दोनों ओर नारियलके पेड़ोंकी कतारें लगी हुअी हैं। लोग नौका और छोटे जहाजोंमें कोचीन तककी यात्रा कर सकते हैं। संसारके रमणीक स्थानोंमें अिसकी गणना है।

मलयाली स्त्रियाँ श्वेत अुज्ज्वल रंगकी साड़ियाँ अधिक पसंद करती हैं और तमिल स्त्रियाँ लाल और हरे रंगकी। अिस प्रदेशके अधिकांश स्त्री-पुरुषोंको देखकर अैसा जान पड़ता है मानों अुन्होंने अपना समस्त सौंदर्य प्रकृति देवीको प्रदान कर दिया है। अिसीलिअे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो प्रकृति यहाँ अितनी अधिक मनमोहक बन गयी है कि—

"ज्यों ज्यों निहारिये नेरे ह्वै-नैनन
त्यों त्यों खरी निकसरै सुनिकाअी ।"

अैसा जान पड़ता है कि युगोंतक देखनेपर, भी हमारे नेत्रोंकी तृप्ति नहीं होती ।

जनम अवधि हम रूप निहारेल
नयन न तिरपत भेल-विद्यापति ।

शामको गाडी त्रिविन्द्रम पहुँच गयी । यहाँ हिन्दीके पुराने राष्ट्रभाषा हिन्दी प्रचारक प्राध्यापक बन्धुओंसे भेंट हुअी । अुनमें सर्वश्री चन्द्रहासन, चिदम्बरम्, कुमारी जोशुआ, विलायुधन, पी. के. केशवन नायर, अय्यर, अेब्रेहम आदि तो प्रायः हमारे साथ ही रहे । अिनकी हिन्दीके प्रति निष्ठा प्रशंसनीय है । अिन्होंने अपने मद्रास हिन्दी-प्रचार सभामें हिन्दी सीखनेके मधुर अनुभव सुनाये । अिनमें कअी तो 'राष्ट्रभारती' के सम्पादक श्री हृषीकेश शर्माके शिष्य थे, जो अपने गुरुके प्रति बड़ी श्रद्धा-भावना रखते थे । आजसे ३५ वर्ष पूर्व, अुत्तर-भारतके जिन सज्जनोंने राष्ट्र-सेवा भावनासे प्रेरित होकर दक्षिण भारतमें हिन्दी-प्रचार-कार्य किया अुनमें अिनकी बड़ी ख्याति है—पं. प्रतापनारायण वाजपेयी, पं. हृषीकेश शर्मा, पं. अवधनन्दन, पं. देवदूत विद्यार्थी, पं. रघुवरदयालु मिश्र, पं. रामानन्द शर्मा, पं. व्रजनंदन शर्मा, श्री जमुनाप्रसाद । मध्यप्रदेशके दो ही व्यक्ति थे,—अेक हृषीकेशजी और दूसरे जमुनाप्रसादजी (अिनका देहान्त हो गया है)। अिनके साथ दक्षिणके पं. हरिहर शर्मा, शिवराम शर्माकी भी हिन्दी-सेवाअें अत्यन्त मूल्यवान हैं । यहाँ लोगोंने बतलाया कि यों तो अुत्तरसे बहुतसे सज्जन दक्षिणमें हिन्दी-कार्यके सम्बन्धमें आये पर वे अधिक समय तक ठहर नहीं सके । पं. रघुवरदयालजी और अवधनन्दनजी तो अब तमिळ प्रान्तसे अितने अधिक अेकाकार हो गये हैं कि अन्हें भिन्न प्रान्तीय मानना ही अप्रस्तुत-सा है । दोनोंका तमिळ भाषापर अच्छा अधिकार है ।

त्रिविन्द्रममें दक्षिण भारत हिन्दी-प्रचार-सभाका कार्य बड़ी क्षिप्रगतिसे चल रहा है । केरलके ६०२ हाअीस्कूल और अिंटर-कालेजोंमें हिन्दी पढ़ायी जाती है । त्रावणकोर विश्वविद्यालयमें बी. अे. तक हिन्दी विषयका अध्यापन होता है; वहाँ अिसवर्ष केवल अिंटर-मीजियेट परीक्षामें लगभग पाँच हजार छात्र-छात्राअें अैच्छिक रूपमें हिन्दी विषय लेकर बैठी थीं । बी. अे. में पाँच सौ से अधिक विद्यार्थी हिन्दी लेकर बैठे । यहाँ बी. काम् और बी. अेम–सी में भी हिन्दीका अेक प्रश्न-पत्र अनिवार्य है । केरलमें सुदूर कन्याकुमारी तक हिन्दीके प्रति जनतामें बेहद अुत्साह है । हिन्दीका संस्कार संस्कृतिसे सम्बद्ध हो गया है ।

संभ्रान्त परिवारमें स्त्रियोंका हिन्दी सीखना अुतना ही आवश्यक है जितना संगीत और नृत्य । अिस-लिअे विनोदमें यहाँ कहा जाता है— 'हिन्दी ? अरे यह तो लड़कियोंका विषय है ।" त्रावणकोर-विश्वविद्यालयसे सम्बद्ध प्राध्यापकोंमें श्री चंद्रहासन हिन्दीके पुराने लेखक हैं । स्व. प्रेमचन्द और श्री कन्हैयालाल मुन्शी द्वारा सम्पादित 'हंस' में अिनके लेख छपते रहे हैं । अिधर दिल्लीके 'देवनागर' में भी अिनके मलयालम साहित्यके परिचयात्मक लेख छप रहे हैं । अिन्होंने केरलमें हिन्दी प्रचारका बड़ा स्तुत्य कार्य किया है । कुमारी जोशुआजी विश्वविद्यालयके महिला-महाविद्यालयकी वरिष्ठ प्राध्या-पिका हैं । पूर्ण खादीधारी और गांधीवादी हैं । वर्धामें गांधीजीके आश्रममें काफी समय तक रह चुकी हैं । हिन्दीमें अेम. अे. हैं । अिन्होंने श्री अिलाचन्द्रजीके 'सन्यासी', श्री रामकुमार वर्माके 'रेशमी टाअी' और श्री पृथ्वीनाथ शर्माके 'अपराधी' का मलयालममें अनुवाद किया है । मलयालममें अिन्होंने 'सेवासंघ' नामक अुपन्यास भी लिखा है । आप अीसाअी महिला हैं और सर्वथा निरामिष भोजी हैं । केरलमें कअी अीसाअी परिवार ब्राह्मणकी नाअीं सात्विक आहारी हैं ।

प्रा. चिदम्बरम्ने कअी तमिल कहानियोंका हिन्दी अनुवाद किया है । 'राष्ट्रभारती' में राष्ट्रकवि तमिळके सुब्रह्मण्य भारतीके 'कान्हा-गीत' छप रहे हैं । और 'प्रतिभा' में तमिलकी कहानी क्रमशः आ रही है । श्री अय्यरने भी कअी छात्रोपयोगी रचनाअें की हैं । श्री विलायुधनमें भी लिखनेकी प्रवृत्ति है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रिविन्द्रमके बाजारोंमें आपको बहुतसे स्त्री-पुरुष नंगे पैर चलते दिखलायी देते हैं। अिसका कारण यह है कि यहाँ प्रायः बारहों महीने बून्दा-बाँदी होती रहती है। अिसलिअे कीचड़से बचनेके लिअे लोग प्राकृतिक ढंगसेही नंगे पाँव चलते हैं। लुँगी, कुर्ता पुरुषोंका और अधिकांश शुभ्र साड़ी स्त्रियोंका परिधान है। विश्व-विद्यालयके कार्यसे निवृत्त होकर सबसे पहिले मैंने समुद्र-दर्शनकी अिच्छा की। प्राध्यापक चंद्रहासन और विलायुधनके साथ हम हवाअी अड्डेको छूते हुअे समुद्र तटपर गये। यहाँ समुद्र बड़ा अुग्र है। खूब आवाज करता है। सामने दूरसे लहरें छोटी-छोटी किश्तियोंके समान हिलती-डुलती चली आ रही हैं। अेकके बाद अेक अूपर अुठती जा रही हैं, पहाड़-सा बना रही हैं। अेकही समयमें न जाने कितने पर्वत बन रहे हैं—मिट रहे हैं। लहरें दौड़ती हुअी चली आ रही हैं, हमारे पैरोंको छूकर न जाने कितनी दूर पीछे चली गयीं। हम अुनमें घिर गये। वे हमें बहाना चाहती हैं, पैर जमीनसे अुखड़ना चाहते हैं, हम प्रयत्न कर अुन्हें जमाये हुअे हैं, बस वषणभरहीमें लहरें हमें छोड़कर भाग गयीं, हमारे गीले पैर पानीसे दूर हो गये-लगता है लहरें अब नहीं आअेंगी पर कुछही वषणोंमें फिर टकराकर झोंका आया और हमारे पैरोंपर बिखरकर हमें पुनः घेरकर पीछे और फिर तेजीसे आगे दौड़ गया। हम लहरें लेनेमें अभ्यस्त हो गये। पैर जमे रहते हैं। लहरें आती हैं—जाती हैं। अब भय नहीं लगता, आनन्द आता है। कुछ फासलेपर मछुअे अपनी नौका लहरोंमें डाल रहे हैं। वह देखो, दो मछुओंने अपनी कश्ती लहरोंमें फेंक दी, वे भयंकर समुद्रमें जाना चाहते हैं। लहरें कश्तीको बार-बार अूपर नीचे कर रही हैं। लगता है, डूब गये। बड़े संघर्षके बाद मछुअे समुद्रकी सतहपर नौका खेते दिखलायी दिये। प्रकृतिपर विजय पाकर ही मनुष्य दम लेता है। सामने बहुतसे मछुओंकी नावें समुद्रमें तैर रही हैं। समुद्र जब कुपित होता है तब न जाने कितने मछुओंकी वह समाधि बन जाता है। यों जब प्रातः मछुआ घरसे निकलता है, वह शामको वापस लौटनेकी शपथ नहीं ले सकता। वह समुद्रके गर्भमें नियतिकी लहरोंसे खेलता है जो अुसके सरपर मौत बनकर नाचती रहती है।

समुद्र-दर्शनके पश्चात् हम लोग अुस अजायब-घरमें गये जहाँ समुद्रकी तरह-तरहकी मछलियों, सर्पों, केकड़ों आदि प्राणियोंको रविषत रखा गया है। कहा जाता है कि भारतमें यह संग्रहालय अपने ढंगका अेक ही है। यहाँसे हम 'अनन्त शयनम्'का मंदिर देखने गये। मंदिरमें सिला हुआ वस्त्र या जूता पहनकर जाना निषिद्ध है। महिलाओंकी साड़ी सिला वस्त्र न होनेके कारण मंदिरमें प्रवेश पा सकती है। मंदिरमें मूर्तिकी विशालता दर्शनीय थी। वहाँ बड़ा भारी 'हाल' था जहाँ पहिले हजारों ब्राह्मण भोजन किया करते थे। दक्षिणके विशाल मंदिरोंकी कला अपना अलग ही वैशिष्ट्य रखती है।

त्रिविन्द्रमसे कन्या कुमारीतक लगातार बस्ती होनेसे अैसा जान पड़ता है मानो त्रिविन्द्रमही पचास मीलतक चला गया हो। अितनी घनी आबादी भारतके किसी भागमें नहीं। मार्गमें गाड़ीके पंचर हो जानेसे हम अेक निकटवर्ती कुअेपर गये जहाँ तमिल स्त्रियाँ ताड़की बनी हुअी बालटीसे पानी खींच रही थीं। अुन्होंने हमें प्यासा अनुमान कर स्वयं पानी पिलाया। अुन्हें हम अजनबियोंको देखकर कुतूहल होता था और हमें अुनके नीचेतक लटके फटे कानोंमें सोनेके कर्णफूल देखकर आश्चर्य होता था। अैसा जान पड़ता था कि कान अब अधिक भार न सहकर फट ही पड़ेंगे। दक्षिणमें मामूली स्त्रियाँ सोनेके आभूषण पहनती हैं। सभ्रान्त परिवारकी स्त्रियाँ हीरे, मोती, जवाहरातको काममें लाती हैं। सोना अुनके लिअे हलकी धातु है।

हम सूरज डूबनेके पहिले कन्या कुमारी पहुँच गये। समुद्रतीरपर भव्य दृश्य देखकर आनंदित हो गये। तीन समुद्रोंका मिलन! हमारे सम्मुख हिन्द महासागर, दायीं ओर अरब सागर और बायीं ओर बंगालकी खाड़ीका जल अुछल अुछलकर तरंगित हो रहा था। बहुतसे नर-नारी समुद्रमें सूर्यास्त देखनेके लिअे अुत्सुक थे; पर बादल सूर्यको रहरहकर ढाँप लेते थे। संसारमें यही स्थान है जहाँ सूर्य समुद्रमें डूबता और समुद्रसे अुगता है। हम सूर्यास्तका दृश्य देखनेके लिअे अस्त-दिशाकी ओर आँख गड़ाये रहे, पर बादलोंने सूर्यको अपने आंचलसे मुक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वहीं किया धीरे-धीरे आकाशमें चंद्रकी रेखा चमकने लगी। बादल सूर्यको डुबाकर ही छटे। निराश लौटकर हम कुमारी मंदिरमें पार्वतीके दर्शनके लिये गये। यहाँ भी 'अुधारे बदन' जाना पड़ता था। यहाँकी पार्वतीके सम्बन्धमें अेक कथा है कि जब अिनका शिवसे परिणय होनेवाला था, शिवजीकी बरात वहाँ तक नहीं पहुँच पायी। कुमारी पार्वती अुनकी खोजमें चली गयीं पर अुनका पता नहीं चला। सबेरा होनेपर ज्ञात हुआ कि शिवजी शुचिन्द्रम् तक आ गये हैं। पर विवाहका मुहुर्त रात ही में था। अतः पार्वतीजीको अुदास होकर अपने निवास-स्थानपर लौट आना पड़ा और तभीसे वे 'कन्या-कुमारी' कहलाकर अिस मन्दिरमें 'वास' करती हैं। मन्दिर समुद्रके किनारे है, जहाँ समुद्रकी शोभा अवर्ण्य है। रातको दूरसे आते हुअे जहाजोंका प्रकाश समुद्रपर तैरता हुआ दीपक-सा जान पड़ता है। कन्याकुमारीसे लौटते समय हमने शुचिंद्रम्के भव्य मन्दिरके दर्शन किये। अिसका 'गोपुरम्' (मन्दिरद्वार) काफी अूंचा है। भीतर काले पत्थरकी विशाल हनुमानकी मूर्ति है। यह मुख्यतः शिवमंदिर है। शिवका सजीव नांदिया भी दर्शनीय है। मन्दिरके अेक प्रस्तर-स्तंभकी यह विशेषता है कि अुसे हाथसे ठोकनेपर धीमी-धीमी सुरीली आवाज निकलती है 'सरगम' के समान।

त्रिविन्द्रम् जिसे तिसअनन्तपुरम् भी कहते हैं, रातको लौट आये। त्रिविन्द्रम् और कन्याकुमारीके बीचकी भूमि सुपारी, काजू, केला, नारियल, धान आदिसे अुर्वरा है। समय कम होनेसे मलयालमके कअी साहित्यकारोंसे भेंट नहीं हो पायी। पर यह जानकर हर्ष हुआ कि मलयालम् भाषामें भी तुलसी-कृत रामायणका अनुवाद हो चुका है। मलयालम साहित्यमें यौन-विषयक कृतियोंका चलन अधिक बढ़ा है, प्रगतिवादकी भी लहर है।

दूसरे दिन विश्राम कर रातको मदुरा रवाना हो गये। हमारे मित्र प्रा. चिदम्बरमने वहाँके हिन्दी-प्रचार-सभाके कार्यकर्ताओंको हमारे आनेकी सूचना दे दी थी। त्रिविन्द्रम्में चन्द्रहासनके अतिरिक्त श्री पी. के. केशवन नायर, कुमारी जोशुआ, चिदम्बरम् भारद्वाज और अेब्राहम्ने हमारे लिअे बहुत कष्ट अुठाये, जिसके लिअे हम अुनके कृतज्ञ हैं। मदुरामें या मधुराश्रीमें श्री गुरुस्वामी और अुनके सहयोगी श्री रत्नसभापतिने हमें वहाँके दर्शनीय स्थल दिखलाये जिनमें मीनाक्षीका मन्दिर देश-प्रसिद्ध है। यह बहुत विस्तीर्ण है जो कअी गोपुरमसे घिरा हुआ है। गोपुरम् अूँचा, गुंबदके समान "द्वार" है जिसमें अनेक मूर्तियोंमें पौराणिक गाथाअें अंकित हैं। मन्दिरके प्रत्येक खम्भेपर सिंह, हाथीके अूपर सवार दिखलाया है। ये बड़ी सजीव मूर्तियाँ हैं। यहाँ अेक हजार खम्भोंवाला बड़ा 'हॉल' है, जहाँ हजारों नर-नारी प्रसाद-पान कर सकते हैं। मन्दिरोंकी कलामें प्राचीन भारतीय संस्कृति बोलती है। दक्षिणके मंदिरोंमें कुछ दाक्षिणात्य सन्तोंकी प्रतिमाअें हैं, जो संख्यामें कदाचित ६३ हैं। मन्दिरोंमें अिनकी वाणियोंका अध्ययन, मनन होता रहता है।

शामको मदुरामें हिन्दी प्रचार-सभामें स्थानीय साहित्यिकोंकी अेक गोष्ठी भी हुअी जिसमें तमिल साहित्यके विद्वानोंने भी भाग लिया। ज्ञात हुआ तमिलके कवि कम्बरकी तुलना तुलसीके साथ हो सकती है। तमिल भाषा सर्वथा अपने पैरोंपर खड़ी हो सकती है, अुसे संस्कृतकी बैसाखी लेनेकी बिलकुल आवश्यकता नहीं। हिन्दीके प्रति यहाँ बड़ा अुत्साह पाया गया। नगरके कअी स्थानोंमें पुरुष और स्त्री-वर्ग चल रहे हैं, जहाँ शिक्षिता महिलाअें पढ़ती-पढ़ाती हैं।

वहाँसे रामेश्वरम् धनुष-कोटि भी गये। धनुष-कोटिसे लंका थोड़े ही फासलेपर रह जाता है। 'अगिन बोट' आती-जाती है। यहाँ तीर्थयात्री समुद्रकी लहरोंमें स्नान करते हैं। रामेश्वरम्में मंदिर तो विशाल है पर स्वच्छता नहीं। कअी तीर्थ-कूप हैं, जिनका पानी मीठा है। यहाँ भी हिन्दी जाननेवालोंकी कमी नहीं है। अेक होटलके स्वामी तो धड़ाकेके साथ हिन्दी बोलते थे। वे कअी भाषाओंके जानकार मालूम हुअे। रामेश्वरमसे लौटते हुअे हम त्रिचिनापल्ली गये। यहाँ हमने तमिल-नाड हिन्दी प्रचार सभामें श्री अवधनन्दनजीका आतिथ्य ग्रहण किया। यहाँ सभाका हिन्दी-कार्य बहुत प्रगतिपर है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रिचिनापल्लीके निकटही श्री रंगमका मंदिर दर्शनीय है। वह कावेरी नदीके द्वीपमें बना हुआ है। त्रिचिनापल्लीमें सहस्रों सीढ़ियाँ चढ़नेके बाद बहुत ऊँचाअीपर अेक विशालका मंदिर है। यहाँसे नगर और नदीका दृश्य बड़ा सुन्दर दिखायी देता है। यहाँकी धरती शस्यश्यामला है। धानकी सालमें तीन फसलें होती हैं। यह तमिलनाडका प्रमुख नगर है। यहाँ भी चर्चामें लोगोंने कहा, तमिल साहित्य बहुत प्राचीन है, अुसकी धारा अखण्ड रूपसे चली आ रही है। संस्कृतके सम्पर्कमें आनेसे अिसमें संस्कृत शब्द आ गये हैं। पर अब अुन्हें चुन-चुनकर बहिष्कृत किया जा रहा है। अवध्रनन्दनजी तमिल भाषा, साहित्य और संस्कृतिका विस्तृत अितिहास लिख रहे हैं। अिन्हींसे ज्ञात हुआ कि तमिलका जो व्याकरण अीसाकी चार शताब्दीपूर्व लिखा गया था वह आज तक चल रहा है। तमिलका अेक ही रूप सभी जगह बोला जाता है, अुसकी अुप-भाषाअें नहीं हैं।

त्रिचिनापल्लीसे मद्रास आये। यहाँ हमने हिन्दी प्रचार-सभाके संयुक्त मंत्री श्री रघुवरदयालु मिश्रके यहाँ अेक दिन ठहरकर आतिथ्य प्राप्त किया। सभामें श्री वेंकटाचल शर्मासे जो साहित्य-विभागमें काम कर रहे हैं और जो दक्षिणी भाषाओंके अतिरिक्त हिन्दीके अच्छे अध्ययनशील विद्वान हैं, भेंट हुअी। अिनके कअी निबन्धोंसे अिनकी हिन्दी साहित्यमें गतिका परिचय मिलता है। श्री सत्यनारायणजीकी, जो सभाके मंत्री हैं, कार्य कुशलता 'सभा' को दक्षिणमें हिन्दीके प्रमुख विद्यापीठका रूप प्रदान कर रही है। यहाँसे हिन्दीके कअी सौ अध्यापक-अध्यापिकाअें प्रतिवर्ष शिक्षा ग्रहण कर दक्षिणकी अनेक शालाओं तथा विश्वविद्यालयके कालेजोंमें हिन्दी-अध्यापन-कार्य कर रहे हैं। यहींपर श्री शास्त्रीजी तथा सिद्धनाथ पंतके दर्शन हुअे जो सभाकी विभिन्न प्रवृत्तियोंमें निःस्वार्थ भावसे सहयोग दे रहे हैं। श्री रघुवरदयालु मिश्र तो श्री सत्यनारायणके दाहिने हाथ ही हैं। महात्माजीने जब मद्रासमें हिन्दी प्रचारकी नींव रखी तब हृषीकेशजीके साथ-साथ रघुवरदयालुजी भी 'सभा' में पहुँचे थे। तबसे आजतक हिन्दीको राष्ट्रभाषाका अंग मानकर ये 'सभा' में कार्य कर रहे हैं। मद्रासमें मिश्रजीकी गृह-गोष्ठीमें ही 'दिनकर' जी और रामानन्दजीसे भेंट हुअी। दिनकरजीकी मुक्त हँसी बड़ी मधुर लगी; अुनकी कविताके समान ही। दक्षिणमें कअी अहिन्दी भाषाभाषी सज्जन हिन्दीकी सेवा कर रहे हैं। तेनालीके श्री अरलूरी वैरागी चौधरी हिन्दीमें अच्छी कविताअें लिखते हैं। अुनका 'पलायन' कविता संग्रह प्रकाशित हो चुका है। अिस समय प्रसिद्ध बालसाहित्यके पत्र 'चन्दामामा' के सम्पादकीय विभागमें कार्य कर रहे हैं। श्री अे. रमेश चौधरीने "भगवान भला करें" नामक कहानी संग्रह भी प्रकाशित किया है। ये कहानियाँ कलाकी दृष्टिसे अूँची हैं। श्री रघुवरदयालुजी मिश्रने बतलाया कि कि तंजोर पुस्त-कालयमें 'पणि प्रवाल' नामक बहुत पुराना हस्त-लिखित ग्रंथ है जिसमें अन्य भाषाओंके साथ-साथ हिन्दीमें भी रचना है। मलयालमके कोअी स्वातिति सवालने भी हिन्दीमें काव्य-रचना की है। मद्रास सरकारकी "दक्षिण भारती" अच्छी पत्रिका निकल रही थी, जिससे सम्पादक श्रीरामानन्द शर्मा थे।

मद्रासमें अडयार पुस्तकालय काफी सम्पन्न है। पर आज कार्यवश बन्द था। यहाँका जगप्रसिद्ध वट-वृक्ष दर्शनीय है। अिसकी लम्बाअी अुत्तरसे दक्षिणकी ओर २२० फुट और चौड़ाअी पूरबसे पश्चिमकी ओर २०५ फुट है। क्षेत्रफल ४०,००० वर्ग फुटसे भी अधिक है। अिसके नीचे अेनी बीसेन्टने थियासाफिकल सोसा-अिटीकी अनेक महत्वपूर्ण सभाअें की हैं। सहस्त्रों दर्शकोंका यह विश्रामस्थल बना हुआ है। अेनी बीसेन्टकी मृत्युके पश्चात् सोसाअिटी निस्तेज हो गयी है।

मद्रासका समुद्र-तट बहुत सुन्दर है। शामको मेला-सा लग जाता है। सैलानियोंको रातके ८ बजे तक मद्रासके रेडियो स्टेशनका भोंपू अपना कार्यक्रम सुनाता रहता है। जिन्होंने बम्बअीकी चौपाटी देखी होगी, अुन्हें मद्रासके समुद्र वेला-दृश्यमें जमीन-आसमानका अन्तर दिखायी पड़ेगा। अुधर पाश्चात्य तड़क-भड़क और वैभवके नजारें हैं और अिधर भारतीय सादगीकी चरम सीमा, जो हमें मुग्ध बनाती है।

संक्षेपमें, दक्षिण भारत साहित्य, कला, संगीत की रम्य स्थली है। सच बात तो यह है कि

"जिगर अब भी खाली नहीं है,
दुनिया बाकमालोंसे।
कोअी पैदा तो कर ले
देखनेवाली नजर पहले।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभ्यताका संकट

: श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर :

[स्व० गुरुदेव कविके अन्तिम जन्मोत्सव-समारोहपर दिये हुअे भाषणका सारांश]

आज मेरी अुम्रके अस्सी बरस पूरे हुअे। मेरे जीवन-वषेत्रकी विस्तीर्णता आज मेरे सामने फैली हुअी है। पूर्वतम दिगन्तमें जिस जीवनका आरम्भ हुआ था, अुसके दृश्यको दूसरे छोरसे आज निःसङ्ग दृष्टिसे देख पा रहा हूँ और अनुभव कर पा रहा हूँ कि मेरे जीवनकी तथा सारे देशकी मनोवृत्तिकी परिणति दो टुकड़ोंमें खण्डित हो गयी है। अिस विच्छिन्नतामें गहरे दुखका कारण छुपा हुआ है।

'सिविलिजेशन' का—जिसे हमने सभ्यता नाम देकर अनूदित कर लिया है--कोअी सच्चा प्रतिशब्द अपनी भाषामें पाना आसान नहीं। अिस सभ्यताका जो रूप हमारे देशमें प्रचलित था, मनुने अुसका नाम दिया था सदाचार। दूसरे शब्दमें वह कुछ-अेक सामाजिक नियमोंका बन्धन था। अिन नियमोंके सम्बन्धमें जो धारणा पुराने समयमें प्रचलित थी, वह भी अेक सँकरे भूगोलखण्डमें आबद्ध थी। सरस्वती और दृशद्वती नदियोंके बीचका जो देश ब्रह्मावर्तके नामसे प्रसिद्ध था, अुसी देशमें परम्परासे प्रचलित आचारको सदाचार कहा जाता था। अर्थात् अिस आचारकी नींव प्रचलित प्रथापर ही खड़ी थी--चाहे अुस प्रथामें कितनी ही निष्ठुरता, कितना ही अन्याय क्यों न हो। सदाचारके जिस आदर्शको अेक समय मनुने ब्रह्मावर्तमें प्रतिष्ठित देखा था, अुसी आदर्शने क्रमशः लोकाचारका सहारा ग्रहण किया। मैंने जिस समय जीवन प्रारम्भ किया था, अुस समय अंग्रेजी-शिक्षाके प्रभावसे अिस बाह्य आचारके विरुद्ध देशके शिक्षित मनमें विद्रोह फैल गया था। अिस सदाचारके स्थानपर हमने सभ्यताके आदर्शको अंग्रेज जातिके चरित्रके साथ मिलाकर अपना लिया था। हमारे परिवारमें यह परिवर्तन न्यायबुद्धिके अनुशासनपर--क्या धर्ममें और क्या लोकव्यवहारमें—पूर्णतया ग्रहण कर लिया गया था। मैंने अैसी ही भावनाके बीच जन्म लिया था और अिसीके संग हमारे स्वाभाविक साहित्यानुरागने अंग्रेजोंको अुच्च आसनपर प्रतिष्ठित किया था। यह हुआ जीवनका प्रथम भाग। अुसके बाद ही से कठिन दुखके बीच परिवर्तन होना शुरू हो गया। मैंने बराबर देखा कि जिन्होंने सभ्यताको चरित्रके अुत्ससे निकाली हुअी वस्तुके रूपमें स्वीकार किया था, वे ही रिपुकी प्रेरणासे किस प्रकार अुसे अुल्लंघन भी कर सकते हैं।

अेक दिन मुझे अेकान्त साहित्य-रसके अुपभोगके अुपकरणोंके घेरेसे बाहर निकल आना पड़ा था। अुस दिन भारतवर्षके जनसाधारणकी जो निदारुण दरिद्रता मेरे सामने स्पष्ट हुअी, वह हृदयविदारक थी। सभ्य संसारकी महिमाके ध्यानमें अेकान्त चित्तसे डूबा हुआ था, तब कभी किसी सभ्य नामधारी मानव आदर्शके अितने बड़े निष्ठुर, विकृत रूपकी कल्पना भी नहीं की थी। अन्तमें अेक दिन अिसी विकारके भीतरसे बहुकोटि जनताके प्रति सभ्य जातिकी अपरिसीम अवज्ञा-पूर्ण अुदासीनताको भी देखना पड़ा। भारतवर्ष अंग्रेजोंके सभ्य शासनकी भीमकाय चट्टानको छातीपर रखकर निरुपाय निश्चल होकर नीचे पड़ा रहा। किस प्रकार यूरोपीय जातिकी स्वभावगत सभ्यताके प्रति क्रमशः विश्वास खो गया, अिसीका शोचनीय अितिहास मुझे यहाँ आज दुहराना पड़ा।

सभ्य शासनकी चालनासे भारतवर्षकी जो सबसे बड़ी दुर्गति आज सिर अुठाये है, वह केवल अन्न-वस्त्र-शिक्षा और आरोग्यका शोकावह अभाव ही नहीं है, वह है भारतवासियोंके बीच अत्यन्त नृशंस आत्म-विच्छेद। अिस विदेशी सभ्यताने यदि अिसे सभ्यता कहते हो, हमारा क्या-कुछ लूट लिया, यह हम जानते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं ! अुसीके स्थानपर हाथमें दण्ड लेकर अुसने जिसकी स्थापना की है अुसका नाम दिया है LaW and order, विधि और व्यवस्था—जो अेकबारगी बाहरकी चीज है, अेक किस्मकी दरबानी मात्र है। पाश्चात्य जातिके सभ्यता-अभिमानके प्रति श्रद्धा बनाये रखना असाध्य हो अुठा है। अुसने अपना शक्तिरूप हमें दिखाया, मुक्ति-रूप वह नहीं दिखा सकी। अर्थात् मनुष्य-मनुष्यके बीच जो सम्बन्ध सबसे अधिक मूल्यवान् है, जिसे यथार्थ सभ्यता कहा जा सकता है, अुसीकी कृपणताने भारतीयोंकी अुन्नतिका रास्ता बिलकुल बन्द कर रखा है। फिर भी अपने व्यक्तिगत जीवनमें सौभाग्यसे बीच-बीचमें महदाशय अंग्रेजोंके साथ मेरा मिलन हुआ है, अिनका परिचय मेरे जीवनमें अेक श्रेष्ठ अैश्वर्यके रूपमें संचित रह गया है। यदि अिन्हें न देखता और न जानता तो पाश्चात्य जातिके सम्बन्धमें मेरी निराशा कहीं प्रतिवादही न पाती।

भाग्यचक्रके परिवर्तनसे किसी न-किसी दिन अंग्रेजोंको भारत-साम्राज्य त्याग करके जाना ही होगा। किन्तु अुस दिन वे किस भारतवर्षको—कैसी श्रीहीन दीनताके कूड़े-कर्कटको अपने पीछे छोड़कर जाअेंगे ! अेकाधिक शताब्दियोंकी शासनधारा जब सूख चुकेगी, तब यह कैसी विस्तीर्ण पङ्कशय्या दुर्विषह निष्फलताको ढोती रहेगी ! जीवनके प्रथम आरंभमें समूचे मनसे यूरोपकी सम्पद-अन्तरकी अिस सभ्यताके दानपर विश्वास किया था। और आज अपनी विदाके दिन वही विश्वास अेक-बारगी दिवालिया हो बैठा। आज यही आशा किये हूँ कि हमारी अिसी दारिद्र्यलांछित कुटियामें ही परित्राणकर्ताका जन्म दिवस आ रहा है; प्रतीक्षा किये रहूँगा कि सभ्यताकी देववाणीको लेकर वह आअेगा; मनुष्यके चरम आश्वासकी वाणीको वह मनुष्यके कानों-तक पहुँचाअेगा—अिसी पूर्व दिगन्तसे ही ! आज अुस पारकी ओर यात्रा शुरू कर दी है—पीछेके घाटपर क्या देख आया—क्या छोड़ आया—अितिहासके तुच्छ अुच्छिष्ट सभ्यताभिमानका कैसा परिकीर्ण भग्नस्तूप ! किन्तु मनुष्यके प्रति विश्वास खो देना पाप है, अुस विश्वासकी अन्ततक रक्षा करूँगा। आशा करूँगा कि महाप्रलयके पश्चात् वैराग्यके मेघमुक्त आकाशमें अितिहासका अेक निर्मल आत्मप्रकाश कदाचित् आरंभ होगा—अिसी पूर्वाचलके सूर्योदयके दिगन्तसे ! अेक दिन फिर अपराजित मानव अपनी विजय-यात्राके अभियानमें समस्त बाधाओंको लाँघता हुआ अग्रसर होगा—अपनी महान् मर्यादाको वापस पानेके पथपर ! मनुष्यके अन्तहीन प्रतिकारहीन पराभवको चरम मानकर। अुसपर विश्वास करनेको मैं अपराध समझता हूँ।

आज यही कहकर जाअूँगा—प्रबल प्रतापशालीकी क्षमता, मदमत्तता और आत्मम्भरिता भी निरापद नहीं—अिसके प्रमाणित होनेका दिन आज आ गया है, निश्चित रूपसे यह सत्य प्रमाणित होगा ही कि :

"अधर्मेणैधते तावत् ततो भद्राणि पश्यति।
ततः सपत्नान् जयति समूलस्तु विनश्यति॥"

: अनुवादक—श्री मोहनलाल वाजपेयी :

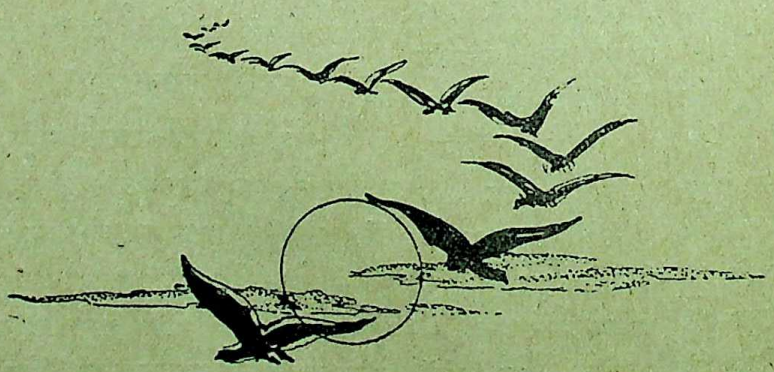

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरस्वती-पुत्रोंके प्रति !

: श्री भदन्त आनन्द कौसल्यायन :

बात काफी पुरानी है और यूं है भी अत्यन्त साधारण। १९३७ में मैं लगभग अेक महीना चटगाँवमें रहा। शायद कुछ अधिक ही। सारा अर्सा मलेरियासे पीड़ित। अेक विहारसे कुछ स्वस्थ होकर दूसरे पासके विहारमें जाता। वहाँ जाकर फिर गिर पड़ता। सेवा-सुश्रूषाकी कहीं भी कमी न थी। अेक विहारमें तो अेक श्रमणने बहुत ही सेवा की।

अेक दिन मैंने कृतज्ञताभिभूत होकर कहा —

"श्रमण ! मैं तुम्हारा कुछ और तो प्रत्युपकार कर नहीं सकता। पढ़ना चाहो तो कुछ पढ़ा सकता हूँ। बोलो क्या पढ़ोगे ?"

"अंग्रेजी।"

मैं अुठ-बैठ न सकता था। लेटे-लेटे बिना पुस्तकके अंग्रेजी पढ़ानी आरम्भ की। 'आअी' और 'वी' दो शब्द सिखाये अर्थात् 'मैं' और 'हम'। जब तीसरा 'यू' अर्थात् 'तुम' याद कराना आरम्भ किया, तबतक वह 'आअी' और 'वी' मेंसे अेक भूल चुका था। मुझे अच्छी तरह याद है, अनेक बार प्रयत्न करनेपर भी मैं अपने अुस श्रमण-बन्धुको तीनों शब्द अेक साथ नहीं ही याद करा सका।

अिस समय जो बात विशेष रूपसे याद आ रही है, वह यही कि जिसके दिमागका यह हाल था कि अंग्रेजीके तीन शब्द भी अेक साथ न याद रख सके, वह भी 'अंग्रेजी' ही पढ़ना चाहता था !

अिधर कुछ महीने पहले 'जेतवन' जाना हुआ। वर्तमान बलरामपुर (जि. गोण्डा, अुत्तर-प्रदेश) के पास जेतवन ही वह जगह है जहाँ भगवान् बुद्धने अपने जीवनके ४५ वर्षावासोंमेंसे २५ वर्षावास बिताये थे। कभी जहाँ श्रावस्ती जैसा बड़ा नगर बसा था, वहाँ आज सहेट-महेट नामके दो ग्राम मात्र हैं। वहीं जेतवनके पवित्र खण्डहरोंमें मेरी अेक बर्मी भिक्षुसे भेंट हुअी। वयोवृद्ध अू. महिन्द महास्थविरकी साधनाके परिणामस्वरूप यहाँ अेक जेतवन-विहार स्थापित है। आप अिसीमें रह रहे थे।

पूछा—"यहाँ किस अुद्देश्यसे आये ?"

"अंग्रेजी पढ़ने।"

अितने दिनोंके बाद आज मैं बैठा यह सोच रहा हूँ कि 'जेतवन' के खण्डहरोंमें भी अंग्रेजी ही पढ़ने !

यहीं जिस धर्मोदय-विहारमें बैठा मैं ये चन्द सतरें लिख रहा हूँ, अेक भिक्षु हैं, जो 'नेवारी' में कविता करते हैं, कुछ तिब्बती और खासी नेपाली भी बोल लेते हैं, सामान्य हिन्दी भी समझ और बोल ही लेते हैं, किन्तु वे अपने ज्ञानको अत्यन्त अधूरा समझते हैं, क्योंकि अुन्हें 'अंग्रेजी' नहीं आती !

पिछले बाअीस वर्षसे परिचित अेक दूसरे भिक्षु हैं जो सिंहल बोलते हैं, बर्मी बोलते हैं, तिब्बती बोलते हैं, कुछ पालि तथा कुछ संस्कृत भी जानते हैं; अच्छी खासी हिन्दी लिखते-पढ़ते हैं, कुछ जापानी भी जानते हैं – तब भी अुन्हें अपनी शिक्षा अत्यन्त अधूरी लगती है, क्योंकि वे 'अंग्रेजी' पूरी नहीं जानते।

सच तो यह है किसीको भी कोअी भाषा पूरी नहीं आती, अुन्हें खास तौरपर, किन्तु चिन्ता 'अंग्रेजी' की ही है।

अभ्याससे मैं बती हूँ राष्ट्रभाषाका, किन्तु आजकल मुझे यहाँ पढ़ानी पड़ रही है 'अंग्रेजी' ही 'अंग्रेजी' !

अिसमें कुछ सन्देह नहीं कि अंग्रेजोंने भारतपर अंग्रेजी लादी, किन्तु लदी हुअी अंग्रेजी जो आसानीसे अुतर नहीं रही है और कहीं-कहीं तो और भी सिरपर चढ़ी चली आ रही है, हमें स्वीकार करना ही चाहिये कि अिसके मूलमें है अंग्रेजीकी साहित्यिक-शक्ति।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुस दिन बात चलनेपर 'अंग्रेजी' की अेकदम अे. बी. सी. डी. जाननेवाले अेक भाअीने कहा, 'अंग्रेजी जान लेनेसे सब कुछ जाना जा सकता है।'

अंग्रेजीकी राजनीतिक-स्थितिकी यदि अुपेक्षा कर भी दें तो भी अंग्रेजी और अंग्रेजी-साहित्यके बारेमें जो यह सामान्य धारणा बनी हुअी है, जिससे अभिभूत होकर ख्वाहमख्वाह आदमी अुधर लुढ़क जाता है, अुसका लेखा-जोखा तो लेना ही होगा। अपनी अभ्यस्त शैलीमें कहूँ तो अुस धारणासे तो लोहा लेना ही होगा।

प्रश्न है कि अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजी-साहित्यकी अिस धाकके मूलमें क्या है? आप कहेंगे अंग्रेजी साम्राज्यके डेढ़ सौ साल। अुत्तर सही है, किन्तु अधूरा है। क्योंकि प्रश्न फिर पैदा होता है कि अंग्रेजी-साम्राज्यके मूलमें क्या रहा है? स्वीकार करना ही होगा कि अंग्रेजोंका अपना चरित्र। मेरा निवेदन है कि अंग्रेजी-साहित्यका भी मूलाधार वह अंग्रेजी चरित्र ही है, जिसे हम अंग्रेजी-साम्राज्यका मूलकारण मानते हैं।

प्रतिकूल परिस्थितियोंमें हिन्दी-सेवियोंने भी हिन्दीकी जैसी सेवा की है, वह किसी भी साहित्यके साहित्यिकोंके लिअे अभिमान करनेकी चीज है। किन्तु अुधरकी अनुकूलता तो जैसे प्रतिकूलता ही बन गयी है।

कवि अंचलकी अेक पंक्ति याद आती है--

'फूल काँटोंमें खिला था, सेजपर कुम्हला गया'

केन्द्रसे और कअी राज्य सरकारोंसे राष्ट्रभाषा तथा राज्य-भाषा हिन्दीके सम्बन्धमें जो घोषणाअें निकलती हैं, अुन्हें पढ़कर तबीयत प्रसन्न हो जाती है। काश! हम सबकी वह आँखें ही फूट जाअें जो अुन्हें कार्यान्वित हुआ देखनेकी भी अिच्छा रखती हैं!

स्वराज्यके छह साल बीत गये। आज भी केन्द्रीय सरकारके हर अेक मन्त्रालयका लगभग सारा कारोबार अंग्रेजीमें ही होता है। अभी और नौ वर्षोंके बाद तो अुसमें धीरे-धीरे परिवर्तन होना आरम्भ होगा! तबतक न जाने किस राजाका राज्य होगा!

केन्द्रीय सरकारकी बात जाने दो। वहाँ बड़े-बड़े लोगोंकी बड़ी-बड़ी बातें हैं। क्या आज भी अुन राज्योंकी जो अपनी राज्य-भाषा हिन्दी घोषित कर चुके हैं--सरकारोंमेंसे कोअी अेक भी सरकार यह कह सकती है कि अंग्रेजी ज्ञानसे सर्वथा शून्य कोअी व्यक्ति अुसके किसी भी महत्वपूर्ण पदको सुशोभित कर सकता है?

कमेटियोंपर कमेटियाँ बनी हैं और बिगड़ी हैं। क्या आज भी हम हिन्दीके किसी अेक भी टाअिपराअिटरके बारेमें कह सकते हैं कि यह हिन्दीका टाअिपराअिटर है?

हिन्दी टैलिप्रिन्टरोंकी भी चर्चा बीच-बीचमें होती है। क्या आज भी हिन्दी टैलिप्रिंटरके अभावमें हिन्दीसे अंग्रेजीमें और पुनः अंग्रेजीसे हिन्दीमें अनुवाद होनेके बाद ही दिल्लीकी किसी प्रेस अेजेंसी द्वारा भेजा गया हिन्दी समाचार भी हिन्दी-पत्रोंमें नहीं छपता?

यह सब यूँ चल रहा है और 'दिल्लीके देवता' बीच-बीचमें अुपदेश दे देते हैं कि राष्ट्रभाषाके प्रचार कार्यमें जल्दबाजीसे काम नहीं लेना चाहिये।

प्रान्तीय भाषाओंको आगे खड़ा करके अुनकी ओटमें अंग्रेजीके निहित-स्वार्थोंको सुरक्षित रखनेका अच्छा ढंग निकल आया है!

सरकारके पास--अुसके शिक्षा-विभागके पास-योजनाअें हैं, सूचनाअें हैं। कोअी अेक भी कार्यान्वित हो पाये तब न?

गैर-सरकारी साहित्यिक संस्थाओंके पास भी योजनाअें हैं, किन्तु साधन नहीं। किसी भी शहरकी अेक सड़ी-सी दूकानके पास जितनी पूँजी होती है, अुतनी भी पूँजी हमारे बड़े-बड़े प्रान्तीय साहित्यिक अनुष्ठानोंके पास नहीं दिखायी देती।

जिस मध्य-प्रदेशकी राजधानी नागपुरमें राष्ट्रभाषा प्रचार-सम्मेलनका पाँचवाँ अधिवेशन होने जा रहा है, वहींके मध्य-प्रदेश हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनकी पाँचवीं मासिक विज्ञप्ति मेरे सामने है-- कुल जमा छह पन्नेकी।

अिसी विज्ञप्तिमें सम्मेलनके प्रधान मन्त्री श्री रामगोपालजी महेश्वरीका वक्तव्य पढ़नेको मिला--

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यद्यपि **अर्थाभावके कारण** बीचके दो महीनोंमें विज्ञप्ति प्रकाशित नहीं की जा सकी, तथापि यह सिल-सिला बनाये रखनेका प्रयत्न किया जा रहा है।"

यह है हमारे अेक प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनकी पूँजी !

आप यदि साहित्यकार हैं और आपकी अपनी कोअी साहित्यिक-कृति है अथवा आपके किसी मित्रके ही पास कोअी साहित्यिक रचना है तो आज आपको अुसे प्रकाशित करने-करानेमें काफी कठिनाअीका सामना करना पड़ेगा। कोअी व्यवसायिक पूँजी-पति प्रकाशक अुसे अिसलिअे नहीं प्रकाशित करना चाहता, क्योंकि अुसे अपनी पूँजीके ही डूब जानेका डर लगा रहता है; और कोअी साहित्यिक संस्था अिसलिअे नहीं प्रकाशित कर सकती, क्योंकि अुसके पास पैसा नहीं।

साहित्यिक सौष्ठवकी दृष्टिसे जो कृति जितनी ही अधिक श्रेष्ठ है, आज दिन अुसके प्रकाशित करनेमें अुतनी ही कठिनाअी है।

प्रश्न गम्भीर है। अिस चक्र-व्यूहको कहाँसे और कैसे तोड़ा जाअे। हिन्दीको सचमुच कुछ साहित्यिक अभिमन्युओंकी आवश्यकता है।

मेरी विनम्र सम्मतिमें हिन्दी-साहित्यकी प्रगतिके जिस सन्धि-स्थलपर आकर हम खड़े-से हो गये हैं, अुसका अेक कारण यह भी है कि समाजका अपेक्षाकृत सम्पन्न वर्ग न हिन्दी पढ़ता है, न लिखता है और बद-बख्त खरीदता तक नहीं। अिस वर्गके दो हिस्से किये जा सकते हैं—

(१) धनवान किन्तु ज्ञान-शून्य

(२) ज्ञान-वान किन्तु विवेक-शून्य।

पहला वर्ग जितने पैसे पान-सिगरेटपर ही खर्च करता है, अुससे आधे पैसे भी यदि हिन्दी समाचार-पत्र खरीदकर पढ़नेमें खर्च करने लगे तो हर हिन्दी-समाचार-पत्रकी ग्राहक-संख्या लाखोंमें गिनी जाने लगे। आठ-करोड़की आबादीके जापानका 'असाही' पचास लाख प्रतियाँ रोज छापता है। चालीस करोड़ लोगोंके राष्ट्रकी राष्ट्रभाषाका कौन-सा अेक दैनिक है जो अेक लाखकी भी बात कर सके !

दूसरा वर्ग ज्ञान-वान् किन्तु सचमुच अत्यन्त विवेक-शून्य है। अुसीकी कृपासे कलकत्ते (और दूसरे शहरोंमें भी होगा) में अेक विशेष तरहका साहित्य रस-गुल्लोंकी तरह खरीदा जाता है, पढ़ा जाता है पढ़ाया जाता है। शीशोंमें आदमी अपना चेहरा देखना ही तो अधिक पसन्द करता है। अुन लोगोंके जीवनमें जो कुछ है और जितने अधिक विकृत रूपमें है, अुसे जब वे साहित्यमें भी देख पाते हैं तो अैसा साहित्य यदि अुन्हें अच्छा भी लगता है तो अिसमें आश्चर्यकी कौनसी बात है !

गजब यह है कि कहीं-कहीं तो अैसा साहित्य पुस्तकालयोंकी सदस्य-संख्या बढ़ानेके लिअे खास तौरपर रखा जाता है।

पैसेके साथ-साथ जबतक अैसे भयानक अविवेकका गठबंधन बना रहेगा तबतक अुससे लाभ अुठानेवाले 'साहित्यिक-ठग' भी प्रचुर मात्रामें रहेंगे ही। बुद्धिमान लोग बेवकूफ कहलानेकी अपेक्षा ठग कहलाना अधिक पसन्द करते हैं, किन्तु अुन्हें 'ठग' बनानेवाले बेवकूफ लोग ही तो हैं।

निस्सन्देह सभी भाषाओंमें सभी तरहका साहित्य है। किन्तु, जो साहित्य जिस कोटिका है वह अुस कोटिका ही समझा जाकर अपनी हैसियतसे अूँचा दर्जा तो न पाये।

आजके हिन्दी सेवीको कुछ अैसी ही संधी, बंधी हुअी स्थिति और परिस्थितिमेंसे गुजरना है। अिसमें तनिक सन्देह नहीं कि अुसका और अुसकी साहित्य-साधनाका भविष्य अुज्वल है, किन्तु चमकनेके लिअे अुसे शायद अभी भी काफी तपना है।

अपने अुन मसिजीवी बन्धुओंसे तो क्या कहा जाअे, जिनके पास पढ़नेके लिअे अपेक्षित पुस्तकें नहीं, अुन्हें खरीदनेके लिअे यथेष्ट पैसा नहीं और जिनकी आप लिखी हुअी पुस्तकें छापनेको कोअी प्रकाशक तैयार नहीं। "राष्ट्रभारती"के सौभाग्यसे वे तो आगे ही अितनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तपस्या कर रहे हैं कि कुछ न पूछो । अैसे बन्धुओंके सम्मुख तो वह सारा समाज अुत्तरदायी है, जिसकी अव्यवस्थाके परिणामस्वरूप हीरे कोयलोंके भाव बिकते हैं।

किन्तु साराका सारा साक्षर समाज अैसा ही नहीं है। निस्सन्देह देश दरिद्र है। किन्तु देशकी दरिद्रताके हिसाबसे देखा जाअे तो अिस देशके बहुतसे धनी बहुत-धनी हैं । अैसे समर्थ साक्षर लोगोंकी कअी श्रेणियाँ हैं ।

आर्थिक-दृष्टिसे विचार करनेपर हमारा ध्यान सबसे पहले देशके कालेजोंके कुछ प्रोफेसरोंकी ओर जाता है । अुनमेंसे अेक वर्ग तो प्रोफेसर बननेके साथ ही जैसे लिखना-पढ़ना बन्द कर देता है । अुनके पास हर साल 'नये वर्षके नये मूर्ख' आते ही रहते हैं । पढ़ने-लिखनेकी क्या जरूरत ।

अिन्हीं बन्धुओंका अेक दूसरा वर्ग है जो अपना अधिकांश समय पाठ्य-पुस्तकें लिखने, छपवाने, प्रकाशित कराने तथा अुन्हें भिन्न-भिन्न परीक्षाओंके लिअे स्वीकृत करानेमें ही खर्च करता है । यही अुसका बंधा-बंधाया पेशा है । अिनमें कोअी-कोअी तो स्वयं पुस्तकें लिखते तक नहीं । 'लड़े सिपाही नाम सरदारका' होता है । पुस्तकें किसी विद्यार्थीसे लिखायी जाती हैं— कुछ मेहनताना दे दिला दिया जाता है । किन्तु विज्ञापित नामकी पूरी कीमत जिसके भरोसे पुस्तक परीक्षा-विशेषके पाठ्य-क्रममें आती है— प्रोफेसर महोदयको मिलती है ।

साहित्यके क्षेत्रमें जहाँ दिन-रात यूँ ही सफेदको काला किया जाता है, यह अेक अैसा भयानक ब्लैक-मार्केट है, जिसकी सीमा नहीं !

अिन्हीं समर्थ बन्धुओंसे अनुरोध है कि आपपर कोअी भी दूसरा किसी प्रकारका अंकुश नहीं लगा सकता। अपनेपर रहम करें, अपने विद्यार्थियोंपर रहम करें और अपने साहित्यपर रहम करें और कुछ अैसा करें जिसे लेकर हर हिन्दी-प्रचारक, हर हिन्दी शिक्षक कुछ आगे बढ़ सके ।

पढ़ाने-लिखानेके पेशेसे बाहर भी पढ़े-लिखे लोगोंकी कमी नहीं । हमारे समाजका यही अेक बड़ा दुर्भाग्य है कि जो पढ़ाने-लिखानेके पेशेमें नहीं वे कुछ कहने-सुनने लायक पढ़ते-लिखते ही नहीं ।

अेक दिन अेक मित्र जापानी टैक्सीमें बैठकर किसीसे मिलने गये । आप भीतर चले गये । टैक्सी बाहर खड़ी रही । लौटकर देखा तो ड्राअिवर भारतीय भवन-निर्माण-कलापर पुस्तक पढ़ रहा था ।

यूं यह देश संत 'कबीर'का देश है, जिस जुलाहेके व्यक्तित्वमें अपनी जीविकाके साधन और अध्यात्मकी अूँचीसे अूँची साधनाका सुन्दर समन्वय हुआ था, किन्तु तब भी हमारा आजका कारोबारी व्यवसायी न जाने क्यों 'कल्याण' खरीदकर रखभर देनेसे आगे नहीं बढ़ पाता ?

हमारे योग्य व्यवसायपति चाहें तो अपने ज्ञान और हिन्दी-साहित्यकी वृद्धि अेक साथ कर सकते हैं। किन्तु समाजमें अुनके विषयमें कुछ अैसी निकृष्ट धारणा बन गयी है कि वे कुछ लिखें-पढ़ें भी तो कोअी विश्वास ही नहीं करता कि अुनका अपना लिखा-पढ़ा होगा ? यह सही भी है कि कभी-कभी होता भी नहीं । बिचारे धन कमाअें या ज्ञान ? लेकिन वह युग गया जब लक्ष्मीके वाहनका अुल्लू होना अनिवार्य माना जाता था । आज भी यदि वह अुल्लू ही बना रहेगा तो अपने साथ अपने समाज और अपने देशको भी ले डूबेगा ।

तीसरा वर्ग है अुन साक्षर लोगोंका जिनका न तो पढ़ना-लिखना पेशा ही है और न वे व्यवसायी ही हैं । भाग्यसे अुन्हें सभी सुविधाअें प्राप्त हैं । साधन-सम्पन्न हैं । अिस वर्गके लोग भी अपने देशमें यथोचित मात्रामें सरस्वती-आराधन नहीं ही करते । बंधी-बंधाअी नौकरी, नियमित मासिक आय, नियत निश्चित-काम और मौज । सरस्वतीके चरणोंमें श्रद्धाके दो फूल चढ़ानेमें क्या कम चैतसिक आनन्द है ? जिसने अिस रसको चखा हो, अुससे पूछो । वह बताअेगा—

'हाय कमबख्त । तूने पी ही नहीं ।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप कल्पना कीजिये किसी देशके गवरनरकी और कल्पना कीजिये अुसके पालि पढ़नेकी और कल्पना कीजिये अुसके पालिग्रन्थोंके सम्पादन और अनुवाद-कार्यकी।

श्री चामर्स सिंहल (सिलोन) के अैसे ही गवरनर थे!

'पालि-अंग्रेजी-कोश' के रचयिता और 'बुद्धिस्ट-अिण्डिया' के प्रसिद्ध लेखक श्री रीज रेविडस सिलोन सिविल-सर्विसके अेक योग्य पदाधिकारी ही थे।

अपने ही देशमें तीस वर्षतक पुराणोंका अध्ययन करके 'भारतीय अैतिहासिक परम्परा' को वैज्ञानिक अितिहासकी भित्तिपर ला खड़ा करनेवाले श्री डब्ल्यू. टी. पार्जिटर कलकत्तेके अेक बड़े न्यायाधीश ही तो थे।

हमारे अुच्च पदस्थ अधिकारी भी यदि चाहें तो क्या किसी न किसी शाखा-विशेषका अध्ययन करके 'राष्ट्रभारती' के चरणोंमें अनेक अमूल्य रत्न समर्पित नहीं कर सकते?

यहाँ कालिम्पोङमें प्रायः रोज ही अेक साठ वर्षीय महिलासे भेंट होती है, जो यूरोपकी कअी भाषाअें मातृभाषावत् बोलती हैं और अिस समय चीनी, तिब्बती और संस्कृतके अूँचे साहित्यिक ग्रन्थोंका तुलनात्मक अध्ययन कर रही हैं। अुस दिन अुन्हें अेक चीनी-कोश मिल गया। वे अैसी प्रसन्न दिखायी दीं, जैसे कोअी बालक कटी पतंग मिल जानेपर।

मध्यप्रदेशके भूतपूर्व गृह-मंत्री पं. द्वारकाप्रसाद मिश्रने अपने अवकाशके समयमें 'कृष्णायन'की रचना कर निस्सन्देह सब लोगोंका मार्ग-दर्शन किया। जो अिससे कुछ भी प्रेरणा लेना चाहते हों ले सकते हैं।

गोसाअीं तुलसीदासकी अेक चौपाअीके प्रचलित अर्थसे मैं किसी भी तरह सहमत नहीं हो पाया। गोसाअींजी कहते हैं—

"कीन्हे प्राकृत जन गुण-गाना
सिर धुनि गिरा लागि पछिताना"

[साधारण जनोंका गुणगान करनेसे सरस्वती अपना सर धुन पछताने लग जाती हैं।]

मेरा निवेदन है कि सरस्वतीका वरद-पुत्र जब और जिसके बारेमें भी लेखनी अुठाता है, वह साधारण जन रह ही नहीं जाता।

साधारणको असाधारण बनाना ही सरस्वती-पुत्रोंकी विशेषता है।

पर्लबर्कका 'गुड-अर्थ' अेक चीनी किसानकी कथा-मात्र ही तो है, किन्तु 'माटीका प्रेम' काहेको कहीं अन्यत्र अैसी तीव्रताके साथ अभिव्यक्त हुआ होगा?

हिन्दीमें क्या कुछ है, अिसकी सूची भी बहुत लम्बी है, क्या कुछ नहीं है, अुसकी सूची और भी लम्बी है। अुस लम्बी सूचीको पूरा करनेके लिअे लेखकों, प्रकाशकों, पुस्तकविक्रेताओं सभीके सम्मिलित सहयोगी प्रयत्नोंकी आवश्यकता है।

और आवश्यकता है लक्ष्मी-पुत्रोंके आगे आनेकी।

साहित्यकारोंने अिस युगको न जाने हिन्दीका कौनसा युग माना है। मुझे लगता है कि यह हिन्दीका संस्था-युग है। संस्थाअें किसी न किसी अूँचे अुद्देश्यको लेकर दो डग भी आगे नहीं चल पातीं कि अुद्देश्य पीछे पड़ जाता है और पद तथा विचार आगे आकर खड़े हो जाते हैं।

प्रेमचन्द हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनके सभापति न हुअे, न सही। वे हिन्दीके अुपन्यास-सम्राट कहला गये।

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी कहींके सभापति न बने, न सही, वे हिन्दी-गद्य-लेखकोंको बना गये।

साहित्यिकको संस्थाका सहयोग मिल जाअे, सोनेमें सुहागा है। अन्यथा कोअी भी संस्था किसी न किसी की छाया-मात्र ही तो होती है।

सरस्वतीके वरद-पुत्रोंको ही प्रणाम है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुमार दुरंजय

: श्री राहुल सांकृत्यायन :

दुनियाके बहुतसे भागोंमें सामन्तवादको खतम हुअे बहुत समय बीत गया। लेकिन भारतमें अुसे अंग्रेजोंने बहुत पाल-पोसके रखा था। भारतकी स्वतन्त्रताके बाद अुसका टिकना सम्भव नहीं था, जब कि अग्रली राजशक्ति अंग्रेज थैलीशाहोंके हाथसे निकल करके भारतीय थैलीशाहोंके हाथमें आ गयी। भारतके सबसे बड़े थैलीशाह जिस राजस्थानसे आते थे, वहाँ अपनी प्रजापर निरंकुश शासन करनेके लिअे अंग्रेजोंने राजाओंको छोड़ रखा था। पूजा-भेंटके सहारे अपना कुछ काम थैलीशाह जरूर बना लेते थे; लेकिन आखिर वहाँ कानून नहीं बल्कि अेक आदमीका मनमाना राज्य था। कमसे कम पूंजी लगाकर कारखाना खोलनेके लिअे तो कोअी सेठ तैयार नहीं था, अिसलिअे भारतके वास्तविक शासक भारतीय थैलीशाहोंकी आंखोंमें ये निरंकुश गुड़िया-राजा काँटेकी तरह खटकते थे। लेकिन, जब तक अंग्रेज यहां थे तबतक ही नहीं, बल्कि अुनके चले जानेके बाद भी थैलीशाहोंमें अितनी शक्ति नहीं थी कि केवल अपने बलपर अिन काँटोंको रास्तेसे दूर फेंक सकते। अिसके लिअे अुनको चिन्ता करनेकी आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि अंग्रेजोंके शासनके समय ही देशी राज्योंकी प्रजाने अनेक बार गोलियाँ खायीं, तो भी अपने संघर्षको नहीं छोड़ा। अुन्हींके डरके मारे अंतमें राजाओंको अपनी निरंकुशता नहीं, बल्कि अधिकारको भी छोड़ना पड़ा। अब वह सरकारके पेन्शनर भर रह गये, जिनमें गरीब प्रजाकी कमाअीपर फलाहार खूब किया जा रहा है। सैकड़ों वर्षों पुरानी रियासतोंको यद्यपि मृत्युकी पीड़ा झेलनेकी आवश्यकता नहीं पड़ी, अुनका हार्ट फेल कर गया, लेकिन शान्तिपूर्ण लूट खूब हुअी। कहीं होशियार राजा हुअे, तो अुन्होंने अपने निजी जेवर और पैसेको ही नहीं, बल्कि रियासती खजानेको भी झाड़-बुहारकर साफ कर दिया, बेकारकी अिमारतोंको छोड़कर बाकी सभी अिमारतोंको निजी सम्पत्ति बना लिया। और जहाँ नाबालिग या मूर्ख राजा हुअे, वहां चार्ज लेनेवालोंने "लूट सके सो लूट" का नारा लगाकर छीछड़े भर छोड़ दिये। कितनी ही जगहोंमें तो अिन नये स्वामियोंने अपने जुर्मका कोअी पता न रहने देनेके लिअे सैकड़ों वर्ष पुराने कागजोंकी होली खेली--अिस होलीमें कितने ही अैतिहासिक महत्त्वके दस्तावेज सर्वदाके लिअे नष्ट हो गये। चलते-पुर्जे राजाओंने या अपने नमकहलाल नौकरोंकी सहायतासे साधारण अन्नदाताओंने भी राज्यकी अधिकसे अधिक सम्पत्ति अपने हाथमें करनी चाही। कितनोंने हजारों अेकड़ अच्छे खेतोंके अपने फार्म बना लिये और ट्रेक्टर मंगाकर अुनमें खेती भी करनी शुरू कर दी। सरकार तो किसानोंके हकका वहीं ख्याल करती है, जहाँ अुसे अुसके लिअे मजबूर होना पड़ता है।

कुमार दुरंजय अिसी तरहके अेक रियासती कुमार थे। अुनके पिता--भगवान् भला करे, १९४७ की आंधी देखनेके लिअे रह नहीं गये, नहीं तो रियासतके साथ अुनका भी हार्ट फेल हो जाता--भारतके सबसे बड़े निरंकुश तानाशाह थे, जिनकी कीर्ति-सुगन्ध दूर-तक फैली हुअी थी, भलेही जुकामके मारे अंग्रेज प्रभुओंकी नाकतक वह नहीं पहुँचती थी। अुन्होंने खून करवाये, देशमें वावेला भी मचा, लेकिन अंग्रेज तो अपने अैसे अनन्य भक्तोंके सात नहीं साठ खून माफ करनेवाले थे। काफी बड़ी रियासत होनेपर भी महाराजका खर्च अुतनेसे नहीं चलता था और वह सेठोंसे कर्जा लेते रहते थे। अपने हरममें नयी सुंदरियोंके डालनेका तो अुन्हें मर्ज-सा था। जब पहाड़ोंमें अुनकी सवारी आती, तो अखबारों और शहरोंसे बहुत दूर पिछड़े युगमें रहनेवाले भोले-भाले पहाड़ियोंमें भी आतंक छा जाता : बहू-बेटियोंकी हिफाजत करो,.....वाला राजा आया है। लेकिन अिस तरह बहू-बेटियोंकी रक्षा होनेवाली नहीं थी। राजा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वयं हर जगह लूट करने नहीं जाता। पर अुन्होंने अपने कितने ही रंगरूटी अफसर छोड़ रखे थे, जो राज्य और बाहरकी सुन्दरियोंको जमा करनेका काम किया करते थे। प्रातःस्मरणीय मर्यादा पुरुषोत्तम रामके पिता प्रातःस्मरणीय मर्यादा पुरुषोत्तम दशरथकी सोलह हजार रानियाँ थीं। अिन महाराजाकी रानियोंकी संख्या सोलह हजार तक तो नहीं पहुँची थी, लेकिन हजारसे अूपर जरूर थी। चार दर्जनसे अूपर तो अुनकी राजकुमारियाँ थीं और राजकुमारोंकी भी अेक पलटन बन सकती थी। अिन्हींमेंसे अेक हमारे चरित्रनायक कुमार दुरंजयसिंह भी थे। देशों और भाषाओंके लिअे तो वैकुण्ठवासी महाराजाने अपने अन्तःपुरमें चिड़ियाखाना-सा बना रखा था। चाहे रानियोंकी संख्या कितनी ही हो और अुनमें अपनी सुन्दरता और आयुके कारण कितनी ही कुछ समय तक महाराजाकी चहैती भी रही हों, लेकिन जहाँतक गद्दीका सवाल था, वह कुलीन वंशीय रानीके बड़े पुत्रको ही मिल सकती थी। अिस प्रकार कुमार रिपुंजय जेठे होनेपर भी गद्दीसे वंचित रहे और अुनके दर्जनों अनुजोंमेंसे सबसे बड़े महाराज बने। लेकिन वैकुण्ठवासी अन्नदाताने अपने सर्वज्येष्ठ पुत्रके साथ और कुमारों जैसा कंजूसीका बर्ताव नहीं किया, अिसीसे मालूम होगा कि मधुपुरीमें दुरंजयको अुन्होंने दो-तीन बंगले और पैदावारवाली काफी जमीन पहले ही से दे रखी थी।

कुमार दुरंजयका रंग साँवला बल्कि कुछ हद तक काला था। वैसे शरीर छह फुटका बहुत लम्बा-तगड़ा था। रंग कोअी बिगाड़ न कर सकता, यदि रूप अच्छा होता—यह मालूम ही है, रंग सुन्दरताकी गारंटी नहीं है। कुमारके भारी-भरकम शरीर और अुसके अनुरूप ही सिरमें कुछ पीलो मज्जाकी कमी जरूर थी, लेकिन अुनको बेवकूफ हर्गिज नहीं कहा जा सकता था। वह युवराज नहीं थे, दर्जनों कुमारोंमेंसे अेक होनेके कारण हाथखर्च भी अुनको बहुत कम ही मिलता था। जब पिताको रियासतकी सारी आमदनी अपने ही हरमके चलानेके लिअे पर्याप्त नहीं होती, तो कुमार दुरंजयके साथ वह कितनी अुदारता दिखला सकते थे? बड़ी रियासतके आखिर कुमार थे, अिसलिअे कहाँ तक हाथमें संकोच करते? आखिर वह थे भी अेक राजाके साले और दूसरेके बहनोअी। दुनियामें बड़े कुमारके तौरपर आनेके कारण पिताने अुनके साथ प्रारम्भमें लाड़-प्यार भी अधिक दिखलाया था। अपने मुसाहिब और दूसरे लग्गू-भग्गू भी थे। राज्यसे खर्चके लिअे जागीर मिली हुअी थी, लेकिन अुतनेसे अुनका काम नहीं चलनेवाला था। तब भी पिता जब तक जीवित थे और खासकर अंग्रेज जब तक भारत छोड़कर नहीं गये, तब तक कुमार अभी वस्तुतः कुमार थे। मधुपुरीके अेक और बंगलेको लेनेका अुनको ख्याल आया। वे वहाँ गये। अुनके साथ तलवार और बन्दूक लिये हुअे अर्दली और मुसाहिब भी थे। घर बेचनेवाली महिलाने दूरसे जब अिस पलटनको देखा, तो वह सचमुच ही डर गयी। डाकू होनेका ख्याल तो अुसको नहीं हो सकता था। क्योंकि डाकुओंकी वर्दियाँ अितनी भड़कीली नहीं हो सकती थीं और न दिन-दहाड़े वे अिस तरह आ ही सकते थे, साथ ही मधुपुरीमें डाका क्या तब तक कभी चोरी भी नहीं सुनी गयी थी। पीछे जब मालूम हुआ, तो वह और अुसकी सहेलियाँ बहुत हँसीं। यह अुस समयकी बात है, जब कि मधुपुरी पूरी तौरसे अंग्रेजोंकी थी, अर्थात् वे अुसपर सारे हिन्दुस्तानकी तरह शासन ही नहीं करते थे, बल्कि अुसे अिंगलेण्डका अेक टुकड़ा बनाये हुअे थे। अुस वक्त कोअी गोरा या अधगोरा अिन राजाओंको काले हब्शीसे बढ़कर नहीं समझता था।

(२)

रियासतकी गद्दीपर छोटा भाअी बैठ चुका था, किन्तु थोड़े ही समय बाद आंधी आयी और अुसे भी पेन्शन लेकर अलग होना पड़ा। अुसके दर्जनों भाअियों और बहनोंने भी पेन्शन पायी। कुमार दुरंजय भी खाली हाथ नहीं रहे, बल्कि अपनी दुनियामें पहले आनेके कारण भारत सरकारने अुनके साथ खास रियायत बरती। जागीर अभी हाथसे नहीं गयी थी। नये प्रभु यद्यपि किसानोंको संतुष्ट करनेके लिअे जमींदारियोंकी तरह रियासतोंकी जागीरोंको भी अुठानेके लिअे मजबूर थे, लेकिन जागीरदारोंके साथ पूरी तौरसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनसा-वाचा-कर्मणा अहिंसात्मक बर्तावके साथ । वर्षोंसे अुनके साथ बातचीत हो रही है, मोल-तोल किया जा रहा है, दाम और बढ़ानेके लिअे जागीरदार कितनी ही बार रूठ भी जाते हैं, फिर अुन्हें मनाया जाता है ।— शायद नये महाप्रभुओंके समाजवादका रास्ता अिसी ओरसे है । कुमार दुरंजयकी जागीर भी अभी सरकारने अपने हाथमें नहीं ली थी, लेकिन सरकार सुस्त थी तो किसान अधिक चुस्त थे । कुमारका अपनी जागीरमें अब कोअी रोब नहीं रह गया था । हथियारबन्द तिलंगोंके साथ भड़कीली पोशाकमें जानेपर किसानोंपर रोब गाँठनेकी तो बात अलग, वे अुनके अुपहासके शिकार होते । कारतूस और बन्दूक रखते हुअे भी वे अुनका मुँह नहीं बन्द कर सकते थे, अिसके लिअे बेचारे हाथ मलकर रह जाते । यदि अिस समय वैकुण्ठवासी पिता महाराजा होते ! तब तो अेक-दो खून कर देनेपर कुमारका कोअी बाल बाँका नहीं कर सकता था । राज्य और जागीरमें अैसी स्थिति देखकर कुमार साहबने यही पसन्द किया कि अपना अधिकसे-अधिक समय मधुपुरीमें बिताअें । पहाड़ मकड़ी, बिच्छू या केंकड़ाकी शकलमें फैलते हैं, अेकके बाद दूसरी टेढ़ी-मेढ़ी बाहियाँ फूट निकलती हैं, और देखनेमें कुछ ही सौ गजोंपरके सामने स्थानपर पहुँचनेके लिअे मील-मीलका चक्कर काटना पड़ता है । अंग्रेजोंने सवा सौ वर्ष पहले जब मधुपुरीको अपने रहनेके लिअे चुना, तो अुस समय वह शीतलतासे आकृष्ट हुअे थे । छह-सात हजार फुट अूँचे पहाड़ोंपर शीतलताके साथ अुस समय घना जंगल भी था, जिसके कारण अिसका सौन्दर्य दूना हो गया था । चार चाँद लगाते अिसके बहुतसे स्थानोंसे सनातन हिमसे आच्छादित शिखर पंक्तियाँ दिखलायी पड़ती थीं । अंग्रेज प्रायः अपने बंगलोंको अैसे स्थानपर बनाना चाहते थे, जहाँसे हिमालय श्रेणियाँ अधिकसे अधिक दिखायी पड़ें । लेकिन जैसा कि आम तौरसे होता है, पहलेवाले बाजी मार ले गये और पीछे आनेवालोंको जैसे-तैसेपर संतोष करना पड़ा । अंग्रेज दूकानों और बाजारोंसे मीलों दूरके स्थानोंको अधिक पसन्द करते थे । वहाँ प्राकृतिक सौन्दर्य भी अधिक था और काले लोगोंकी परछाअी भी कम पड़ती थी । अेकान्तकी खोजमें कितने ही अंग्रेजोंने अैसी जगहोंमें भी अपने बंगले बनाये, जहाँसे हिमालय श्रेणियाँ नहीं दिखायी पड़तीं । दूसरे नम्बरके वे बंगले थे, जहाँसे हिमालय नहीं तो कमसे कम बीस मील दूर नीचेकी समतल भूमि दिखायी पड़ती थी । तीसरी श्रेणीके बंगले अिन दोनोंसे वंचित थे और हरियालीसे आच्छादित किन्हीं दो पर्वतवाहियोंमें पड़ते थे । अेक अैसा ही बंगला कुमार दुरंजयके भाग्यमें पड़ा था । मधुपुरीमें बंगले बनने यद्यपि सवा सौ वर्ष पहले शुरू हुअे, लेकिन अुनकी बहुनायत अेक शताब्दी पहले शुरू हुअी, फिर आधी शताब्दी तक तो नये बंगलोंके बनानेमें होड़ लग गयी थी । अुनकी गति रुकी, अिसी समय पहला महायुद्ध आ गया, जिसके बादसे तो अिस मधुर नगरीसे लक्ष्मीही रूठ गयी । बहुतसे अंग्रेज अपने बंगले बेचने लगे और भारतीयोंने, विशेषकर राजा-महाराजाओं और कुछ सेठोंने, अुन्हें खरीदना शुरू किया । कुमार दुरंजयको भी अिसी समय यह बंगला प्राप्त हुआ था । कहा नहीं जा सकता पिता महाराजाने खरीदकर अिसे अपने सुपुत्रको दिया था या अुन्होंने खुद खरीदा था । अन्तःपुरमें पैदा होनेवाले बुद्धिके सम्बन्धमें कुछ घाटेमें रहते ही हैं, अूपरसे अपने सारे काम अपने मुसाहिबों द्वारा कराते हैं, अिसलिअे यदि खरीद-फरोख्तमें वे और अधिक घाटेमें रहे, तो अिसमें आश्चर्य क्या ? हिमशिखरों और नीचेकी समतल अुपत्यकाके सुन्दर दृश्योंसे वंचित अिस बंगलेमें आकर अुन्हें अफसोस होना ही था, खासकर जब कि कभी-कभी वह जाड़ोंके आरम्भ तक भी यहाँ रह जाते। प्रायः सारे दिन सूर्यकी किरणोंसे वंचित अिस स्थानकी सर्दीमें अुनको तकलीफ भी होती थी । क्या करें, अब तो ढोल गलेमें पड़ चुकी थी ।

कुँअरानीको अपने बंगलेके गुण-अवगुणकी चिन्ता करनेकी फुर्सत नहीं थी । वे अेक रियासती राजाकी पुत्री थीं और कुमार साहब पिताके अुपेक्षित दर्जनों कुमारोंमेंसे अेक । कुँअरानीके पास कुछ पैसा भी था, पीहरसे कुछ और भी मिलता रहता था, अूपरसे राज-पुत्री होनेका अभिमान, अिसलिअे वे अपने पतिकी बहुत पर्वा करनेके लिअे मजबूर नही थीं । दूसरी तरफ कुमार भी मर्यादा पुरुषोत्तम अपने पिताजीके कदमोंपर चलनेके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिअे स्वतन्त्र थे, यदि अुसमें बाधा थी, तो यही कि हाथ तंग था और अिसीलिअे दूर-दूर तक निशाना नहीं लगा सकते थे। कुँअरानीको दुनिया-जहानकी पर्वा हो भी नहीं सकती थी, क्योंकि सवेरे छोटी-हाजिरीके समयही अुनकी मेजपर बोतल और चषक आ जाते, फिर अुनके प्यालोंका ताँता करीब-करीब रातको सोनेके वक्तही खतम होता। अुनका दिमाग चौबीसों घंटे नशेमें चूर रहता। शराबके प्यालोंसे गम गलत करती हुअी बेचारी कुँअरानी अेक दिन परलोक सिधार गयी। तब रियासत विलीन हो चुकी थी। यद्यपि कुँअरानी कहनेपर कभी अिसपर विश्वास करनेके लिअे तैयार नहीं थी।

कुमारको कुँअरानीके मरनेकी फिकर नहीं थी। सारे भारतके रजवाड़ोंकी तरह अुनके ससुरारपर भी पाला पड़ गया था, अिसलिअे अुधरसे कोअी आशा नहीं हो सकती थी। अपनी जो आमदनी थी, अुसमें छोटी चादरवाली हालत थी; सिर ढाँके तो पैर नंगा, पैर ढाँके तो सिर नंगा। अूपरसे यह सोच-सोचकर और भी दिल मरता जाता था, कि आमदनीके स्रोत सूखते जा रहे हैं, और सम्पत्तिको बेंचकर बहुत दिन काटे नहीं जा सकते। अुनके साले-राजा जब पहले आते, तो खूब हँसी-खुशीकी पान-गोष्ठी रची जाती और मालूम होता अुनको दुनियामें कहीं दुःखका पता नहीं। साले-राजा अब अपनी विपतामें पड़े हुअे थे। खर्च चलानेके लिअे अपनी सम्पत्ति बेंचनेके लिअे मजबूर थे। बहनोअीसे पहले सालेनेही अपने बंगलेको बेंचनेके लिअे दौड़-धूप शुरू करवायी थी। अुस समय अुन्हें अपने बंगलेके लिअे काफी रकम मिल रही थी, लेकिन राजा लोग बिना मुसाहिबोंके मशोरेके अपनी सम्पत्ति बेंच नहीं सकते थे। खरीदारको यदि अैसी सम्मति लेनी है, तो मुसाहिबोंके अूपर अच्छत-फूल चढ़ाना जरूरी है। अिसी गड़बड़ीमें राजा साहबका बंगला नहीं बिक सका और कुछ ही सालों बाद यह देखकर अुनको और अुनके मुसाहिबोंको बेड़ी निराशा हुअी कि मधुपुरीके बंगलों और कोठियोंका दाम अुस समयसे अब आधा भी नहीं रहा।

कुमार दुरंजय "योग्य पिताके" "योग्य पुत्र" थे, फर्क केवल परिमाणका था। पिताने अगर अेकसे अेक कीमती सैकड़ों कुत्ते पाल रखे थे, तो पुत्र दो-चार भी न पाले, यह कैसे हो सकता था? अुनके पास यूरोपीय नसलका सबसे बड़े कुत्ते ग्रेट डेनका अेक जोड़ा था, और अेक जोड़ा खूँखार भोटिया कुत्तोंका। ग्रेट डेन लम्बाअी-अूँचाअीमें बहुत बड़ा होनेपर भी भयंकर नहीं थे। वे काफी समझदार थे और जानते थे कि मनुष्य हमारा शिकार बननेके लिअे नहीं है। अपरिचित व्यक्तिपर वे कभी भूँक भाँक देते थे। लेकिन, भोटिया जोड़ेकी बात दूसरी ही थी। वे अपने लम्बे बालोंके कारण ग्रेट डेनसे कहीं अधिक भारी-भरकम दिखलायी पड़ते, शायद ताकतमें भी ग्रेट डेन अुनका मुकाबला नहीं कर सकते थे। परन्तु बाहरी आदमियोंके लिअे काल थे। अुन्हें देखकर या दूरसे अुनकी भयंकर आवाज सुनकर लोगोंकी रूह काँपती थी। कुमार साहबका बंगला अेक सुनसानसी जगहमें छोटी सड़कके किनारे था। यह अैसी सड़क थी, जिसपर बहुत कम लोगोंको जानेकी जरूरत पड़ती थी। जो भी अुधरसे गुजरता, पहलेहीसे देख लेता कि भोटिया कुत्ते अच्छी तरह बंधे हैं या नहीं। कुमार अैसे बेवकूफ नहीं थे, कि अपने अिन दरिन्दोंको छोड़े रखते, जो बिना काटे आदमीको छोड़ नहीं सकते थे।

बापकी राजधानी और जागीरके गाँवमें अभी भी कुमारके महल मौजूद थे। मधुपुरीमें सीजन बिताकर अभी वहाँ जाना अुनका बन्द नहीं हुआ था, विशेषकर राजधानीवाले महलमें वे अक्सर अपने जाड़ेको बिताते थे। अुनके पास यही दो जोड़े कुत्ते नहीं थे बल्कि घोड़े, दूसरे कुत्ते, चिड़िया, हिरन घरपर भी मौजूद थे। नौकर-चाकर तीनों जगहोंमें रहते थे—खर्चीला सौदा था। अूपरसे कुमारका अपना जीवन अभी चादरके अनुसार नहीं था। खाने-पीने और दावतोंमें साखर्ची बढ़ती जाती थी। मधुपुरीमें कोअी जलसा या फंक्शन होता, अुसमें कुमार अवश्य निमंत्रित होते और वहाँ जाकर वह अपनी साखर्ची भी बिलकुल भूलनेके लिअे तैयार नहीं थे। अच्छी-अच्छी शराबोंपर अुनका खर्च कम नहीं हुआ और न कुमार-पुत्र कम हैसियतमें रखे जा सकते थे। अंग्रेजोंके जानेपर भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंग्रेजीका राज्य तो अभी हिन्दुस्तानसे गया नहीं है, अिसलिअे कुमार अपने पुत्रोंको मधुपुरीके अेक अच्छे युरोपियन स्कूलमें पढ़ाते थे। पुत्रियाँ छोटी होनेसे अभी कान्वेन्टमें थीं। धीरे-धीरे पैसेका अितना ढाला पड़ गया था, कि स्कूलकी फीस तक नहीं दे पाते थे— या यों कहना चाहिये, कि कुमार अुसी खर्चको अदा करना चाहते थे, जिसके लिअे वैसा करना अनिवार्य था। खाने-पीनेकी चीजोंपर भी कुमारका काफी खर्च था, क्योंकि अेक तरफ सभी चीजें महंगी थीं और दूसरी तरफ मेहमानोंका आवागमन कम नहीं था। अपने और अपनी नयी प्रियतमाओंके लिअे कपड़ों और जेवरकी भी जरूरत पड़ती थी। सभी चीजें अुधारपर आती थीं। बनिये अिस बातकी हिम्मत नहीं करते थे, कि अुधार देना बन्द कर दें, क्योंकि अिससे सालमें कुछ रुपये लौट आते थे। अिस तरहके अुधार और बेबाकी कुमारके यहाँ चलती ही रहती थी और कितने ही बनिये तो पता नहीं पाते थे, कि कर्जेकी तमादी लग चुकी है।

लादूराम मनमाने दामपर कुमारको चीजें दिया करते थे। कभी-कभी नगद रकम भी अुधार दे देते थे, क्योंकि कुमार मनमाना सूद देनेके लिअे तैयार थे। लादूराम बेचारे १५-२० हजारके आसामी थे। अर्थात् पहिलेके चार-पाँच हजारके। कुमारपर चार हजार रुपया अुधार हो गया। तकाजा करनेका यही फल हुआ, कि कुमारने अुनके यहाँसे चीज खरीदनी छोड़ दी। कुछ दिनों तक नगद दाम और फिर अुधारपर, अुन्होंने लादूरामके किसी दूसरे पड़ोसीको पकड़ा। आदमियोंके साथ तकाजा करनेसे कोअी फायदा न होते देख लादूराम अेक दिन स्वयं कुमारके बंगलेपर पहुँचे। झाँक-झूँककर दूरसे ही अच्छी तरह देखा। दोनों मोटिया कुत्ते आज बंगलेके सामने नहीं बंधे थे। दिल अब भी डर रहा था, लेकिन अेक पुराने परिचित नौकरने अुन्हें विश्वास दिलाया, कि कुत्ते पीछेकी तरफ हैं। लादूरामके जानमें जान आयी। बड़े आदमियोंको मनमाने दामपर यों ही सौदा बेचा नहीं जा सकता, अिसके लिअे नौकर चाकरोंकी मुट्ठी गरम करनी पड़ती है, अतः कुमार साहबके नौकर यदि लादूरामके साथ सहृदयता दिखलानेके लिअे तैयार थे तो वाजिब ही था। लादूरामके कहनेपर अेक नौकरने जाकर कुमार साहबके पास अरज की—सरकार, अेक आदमी आया है?

—कौन-सा आदमी, बंगलेका खरीदार?

—नहीं हुजूर, लादूराम बनिया, पैसोंके लिअे।

लादूरामका नाम सुनते ही कुमारकी त्यौरी बदल गयी। अुन्होंने अपने नौकरको पुकारकर कहा:

—खियाली, मोटियेको छोड़ दे।

कुमारने कुछ अूँची आवाजसे कहा था, जिसकी जरूरत भी नहीं थी, क्योंकि लादूराम कुमारके कमरेसे बहुत दूर नहीं थे। मोटियेका नाम सुनते ही लादूरामके प्राण हवा हो गये। वे अुलटे पैर अपनी तौंद हिलाते बाहरकी तरफ लपके तुरन्त ही कुछ गजकी चढ़ाअी शुरू हो जाती थी, लादूरामको न जाने कहांसे अितनी ताकत पैदा हो गयी, कि दौड़कर चढ़ गये और फिर सड़क पकड़कर तब तक दुलकी ही भागते रहे, जब तक कि बंगला ओटमें नहीं चला गया। लादूरामको अपनी बेवकूफीपर झुँझलाहट हुअी। वकीलसे पूछकर अुन्हें मालूम हो गया था, कि नालिश करनेकी मियाद खतम हो चुकी है। कुमार अिस तरह तकाजेके मारे किसीका ऋण चुका देनेके लिअे तैयार नहीं थे। ज्यादासे-ज्यादा वह यही कृपा कर सकते थे, कि आगेके लिअे अुधार चीजें न मंगाअें। किसीको नालिश करनी है तो नालिश करता फिरे। कुमारके अूपर समनतामील होना संभव नहीं था। लादूरामको घर लौटनेपर अुस दिन १०३ डिग्री बुखार आ गया।

(४)

कुमार दुरंजयको अब अुधार भी मधुपुरीमें कोअी देनेवाला नहीं था। सभी जानते थे, कि अुनको अुधार देना रुपयेको पानीमें फेंकना है। मधुपुरीमें रहनेपर कुमारका खर्च भी अधिक बढ़ जाता था। अुन्हें अपने खर्चको कम करनेकी फिकर पैदा हुअी। जागीरके महलको अब अेक तरह अुन्होंने छोड़ दिया था और अधिकतर राजधानीके महलमें ही रहते थे। वे जानते थे, कि पसीनेमें तर होते लहू और अूमसमें दिन काटना मेरे लिअे बहुत मुश्किल होगा, लेकिन मधुपुरीके खर्चके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिअे अब पैसा कहाँसे आये ? मधुपुरी ही क्यों, राजधानीके महलमें भी रहकर खर्च चलाना अुनके लिअे मुश्किल था। कितनी ही जंगम और स्थावर सम्पत्ति बेंच चुके थे, अब मधुपुरीके अपने रहनेवाले बंगलेको भी बेंचनेके लिअे तैयार थे। लेकिन, अब अुसे कोअी मिट्टीके मोलपर भी लेनेवाला नहीं था। तीन वर्ष पहले जब अच्छा दाम मिल रहा था, तब तो मुसाहिबोंकी तिकड़मसे अुन्होंने भी सालेकी तरह अुसे नहीं बेंचा। मुसाहिब भले और बुरे दोनों ही तरहके होते हैं। जब भला होना लाभकी चीज हो, तो वह वैसा क्यों न बनें? कुमार अगर कोपीनधारी बन जाअें, तो अुन्हें कौन पूछेगा, अुनकी दाल-रोटी कैसे चलेगी? रियासतोंके टूटनेसे सभी जगह मुसाहिबों, खवासों, लौंडियोंको जवाब मिल रहे थे और अेक-से-अेक गुनी कौड़ीके तीन हो गये थे।

कुमार पैसोंके लिअे बड़े चिन्तित थे, और अिस बातके लिअे और भी चिन्तित थे कि जब सारी सम्पत्ति बेंचकर खा जाअेंगे, तो फिर कैसे गुजारा होगा? आखिर कुमारकी अुमर अभी ५० तक नहीं पहुंची थी। लड़के-बच्चोंकी फिकर न भी करें, तो अपनी फिकर तो अुन्हें थी ही। अेक दिन नमकहलाल मुसाहिबने कुमारको सलाह दी, कि मधुपुरीवाली कोठीको अमुक महाराजकुमारके फारमसे बदल लिया जाअे। कुमार अिस समय जाड़ोंमें राजधानीवाले अपने महलमें थे, जब कि मुसाहिबने यह सलाह दी। अुसी समय दुरंजयके रिश्तेदार अेक दूसरे महाराजकुमार भी नगरीमें आये हुअे थे। महाराजकुमारने रियासतके जानेके समय रियासती लूटमें हाथ बँटाया था और अपने लिअे दो हजार अेकड़का फार्म भी बना लिया था। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं, कि पीढ़ियोंसे अिस जमीनको जोतनेवाले गरीब किसानोंके खेतोंको छीन करके ही यह फार्म बना था। काँग्रेसी शासनको न्याय-अन्याय देखनेकी फुर्सत नहीं थी, क्योंकि यह तो सभी जगह अिसी तरह चल रखा था। फिर वह पुराने सम्भ्रान्त कुलोंकी मर्यादा भी गिरने देना नहीं चाहती थी। महाराजकुमारने जब अपना फार्म बनाया तो अुनके पास पैसे काफी थे। अुन्होंने दो ट्रेक्टर मंगवा लिये और फार्मपर अपने रहने लायक अेक बंगला भी तैयार करा लिया। अुस समय अितना अुत्साह था, कि खाकी कमीज और पैन्ट पहने हैट लगाये वे स्वयं ट्रेक्टर चलाते थे। आखिर जब मोटर अच्छी तरह चला सकते थे, तो ट्रेक्टर चलाना क्या मुश्किल था? फार्मके संबंधमें अमेरिका और अिंगलैण्डकी कितनी ही किताबें पढ़ीं, महँगेसे महँगे बीज और खाद भी मँगवायी। तथा किसी मुसाहिबके कहनेपर अुसके सम्बन्धीको कृषि-विशेषज्ञ बनाकर भी रख लिया। दो तीन सालतक फार्म अिसी तरह चलता रहा। पैसा कहाँसे कितना आ रहा है और किस तरह खर्च हो रहा है, अिसको देखना महाराजकुमार अपनी प्रतिष्ठाके विरुद्ध समझते थे। ट्रेक्टर भी बराबर बिगड़ने लगे। अक्सर कोअी-न-कोअी पुर्जा टूट जाता। महाराजकुमार मोटर ड्राअिव कर सकते थे, अिसलिअे ट्रेक्टर भी अच्छी तरह चला लेते थे, लेकिन मरम्मत और पुर्जा बदलना अुनके बसकी बात नहीं थी। तीसरा वर्ष बीतते-बीतते फार्मकी स्थिति देखकर अुत्साह मन्द हो गया। चौथे सालसे तो अुन्हें संकट सामने दिखायी पड़ने लगा। जितनी आमदनी होती, खर्च अुससे अधिक करना पड़ता और अुसे पूरा करनेके लिअे कर्ज लेना पड़ता या कोअी चीज बेंचनी पड़ती। महाराजकुमारको फार्मसे पिंड छुड़ाना मुश्किल हो गया और ट्रेक्टरवाज खेतिहरका जीवन कड़वा लगने लगा।

फार्म चलाते समय भी महाराजकुमार अपनी कुँअरानी और लग्गू-भग्गुओंके साथ गर्मी बिताने मधुपुरी या किसी दूसरे पहाड़ी स्थानपर चले जाया करते थे। वहाँ अुनका अपना कोअी बंगला नहीं था, पिताका जो था, अुसे बड़े भाअीने ले लिया था। पंगु और अन्धे जैसी बात हुअी। महाराजकुमार फार्मसे पिंड छुड़ाना चाहते थे और मधुपुरी जैसे स्थानमें अेक बंगला लेना चाहते थे। कुमार दुरंजय अपनी कोठी बेंचना चाहते थे। पहले अुनका ख्याल नकदपर बेंचनेका था, लेकिन स्वामिभक्त मुसाहिबने सुझाव दिया कि बेंचनेकी जगह अुसे फार्मसे बदल लेना अच्छा होगा। बेंचनेके लिअे खरीदार भी नहीं था और फार्म आमदनीका जरिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। कुमारको अपने मोटर और जीप चलानेके कौशल पर अभिमान था। अुनके मनमें अुमंग पैदा हुअी, मैं भी खाकी वर्दी पहनकर अमेरिकन किसान बन जाअूँ। कुमारके मुसाहिबने महाराजकुमारसे बातचीत की। महाराज कुमारने पूछा मधुपुरीमें कोठी कैसी और किस जगह है।

कुमारके मुसाहिबने बड़े अदबके साथ बतलाया—सरकार, वह मधुपुरीके अुस मुहल्लेमें है, जहाँ केवल साहब लोग रहा करते थे। बाथ-रूम है, ड्राअिंग और डाअिनिंग हाल हैं। बाहर भी चार कमरोंका प्राअिवेट सेक्रेटरी या मेहमानोंके रहनेके लिअे छोटा-सा बंगला है। चारों तरफ हरियाली है, बड़ी सुन्दर जगह है।

और वहाँतक मोटर भी जाती है?—महाराज-कुमारने पूछा।

मुसाहिबने नम्रतापूर्वक कहा—हुजूर, बिल्कुल बंगलेके भीतर तक जीप जाती है, थोड़ा रास्ता ठीक करनेसे मोटर भी वहाँ तक पहुँच जाअेगी।

यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि कुमार और महाराजकुमार दोनोंके मुसाहिबोंने पहलेहीसे बातचीत कर सौदेमें अपना हिस्सा भी निश्चित कर लिया था कुमार दुरंजयके पिता भी महाराजा थे, अिसलिअे अुन्हें महाराजकुमार कहना चाहिये, किन्तु संक्षेपके लिअे हमने यहाँ अुन्हें कुमार कहा है। महाराजकुमारके मुसाहिबने बीचमें बोलते हुअे कहा :

सरकार, मधुपुरीमें यदि जीप चली जाअे, तो वही बहुत है। वहाँके बंगले आप देखते ही हैं आराम, अेकान्तता और सुन्दरताको देखकर बनाये गये हैं। जीप जाती है, यही गनीमत है।

महाराजकुमारने विचार करके दो दिन बाद जवाब देनेके लिअे कहा। विचार क्या करना था, वह वे जानते ही थे कि कुमार दुरंजयको फार्म क्या अेक बला मिलेगी। अितना बड़ा बंगला मधुपुरीमें अुस चीजके बदले मिल रहा है, जिसे मैं किसी दामपर भी फेंकनेके लिअे तैयार था। अुसे खरीदनेके लिये क्यों न अुत्सुक हो जाते? अुसी जाड़ोंमें अुन्होंने अपने मुसाहिबको बंगला देख आनेके लिअे मधुपुरी भेजा, जिसने अुसकी प्रशंसाके पलड़ेको भारी रखते हुअे भी अिस बातको साफ कह दिया था, कि मोटर वहाँ हर्गिज नहीं जा सकती। बंगलेकी और बातें सुनकर महाराजकुमारके मुँहमें पानी भर आया। कुमारने भी फार्मको जाकर देख लिया। वे मन ही मन कहने लगे कि महाराजकुमार अपनी नातजर्बेकारीसे अिस सोनेकी चिड़ियाको हाथसे खो रहे हैं।

अुसी जाड़ेमें फार्मको मधुपुरीकी कोठीसे बदलनेकी बात ही नहीं तय हो गयी, बल्कि लिखा-पढ़ी भी हो गयी। अब कुमार दुरंजय फार्मके मालिक थे। अुनकी मोटर महलसे सत्तर मील दूरपर अवस्थित फार्मकी ओर दौड़ने लगी। अपने मुसाहिबोंके साथ मिलकर वह भविष्यका प्रोग्राम बनाने लगे। अुन्हें अिस बातकी प्रसन्नता होनी ही चाहिये थी, कि सड़ी-गली कोठीसे पिंड छूटा और अुसकी जगह सोनेकी चिड़िया हाथ आयी। सबसे अधिक प्रसन्नता अुन्हें अिस बातकी थी, कि अब मधुपुरीके कर्ज देनेवालोंके तकाजेसे पिंड छूटा। मनमें यह ख्याल करके और भी प्रसन्न होने लगे कि फार्मकी प्राप्तिके साथ-साथ कर्जके बीस हजार रुपये भी अुसी कोठीके दाममें हैं।

महाराजकुमारके अेक-दो आदमी पहले ही आकर मधुपुरीके नये बंगलेको तैयार करनेमें लग गये थे। वैसे होता तो दो-चार हफ्ते बाद महाराजकुमार मधुपुरी पहुँचते, किन्तु अबकी अुन्हें अपने नये मकानके देखनेकी बेकरारी भी थी, अिसलिअे जल्दी आ पहुँचे। अंग्रेजोंके शासनमें मधुपुरीमें अड्डेपरही मोटरोंको रुक जाना पड़ता था और लाट साहब तथा दो-चार और बड़े अधिकारियोंकोही मोटरसे अनुकूल सड़कोंपर गुजरने दिया जाता था। लेकिन अंग्रेजी राज्यके हट जानेसे अब यह सुभीता हो गया, कि कोअी भी कुछ रुपये देकर मोटर-लायक सड़कोंपर अपनी मोटर ले जानेके लिअे स्वतन्त्र है। महाराजकुमारको मालूम था, कि बंगले तक मोटर नहीं जाती, अिसीलिअे अपनी जीप लाये थे। परमिट लेकर बंगलेकी तरफ चले, लेकिन चार फर्लांग पहलेही जीपको रुक जाना पड़ा। लोगोंने बतलाया कि आगे जीपका रास्ता नहीं है। महाराजकुमारको कुछ झुंझलाहट पैदा हुअी लेकिन यह समझानेपर कि जीपके जानेमें कुछ मरम्मत करनेकी जरूरत है, अुनका टेम्परेचर ठीक हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया। अुतरकर अपने बंगलेकी ओर पैदलही बढ़े। बंगलेको नौकरोंने ठीकठाककर दिया था। अुससे अुनको अुतनी शिकायत नहीं हुअी। सभी चीजें वहाँ पुरानी थीं और फर्नीचर भी संख्यामें कम थे, तो अुनका फार्म भी तो कुछ अिसी तरहका था। दो चार दिन रहनेके बाद महाराजकुमारकी कुँअरानी और लड़के जंगलके भीतर दम घुटती सी जगहके अिस सुनसान बंगलेसे अुकता गये। अुन्होंने शिकायत करनी शुरू की। महाराजकुमारका भी अब मन भर गया। सबसे बड़ी शिकायत अुनकी अिस बातकी थी कि यहाँ जीप भी नहीं आ सकती। किसी समय अपने टूटे-फूटे घोड़ेको मधुपुरीकी सुन्दर कोठीसे बदलकर वह फूले न समाते थे; समझते थे, मैंने दुरंजयको खूब अुल्लू बनाया। लेकिन अब अुन्हें अिस बूढ़ी कोठी और अुसके आसपासका स्थान देखकर मालूम हुआ, कि दुरंजय बाजी मार ले गया।

महाराजकुमारको अब यह चिन्ता होने लगी, कि अिस कोठीको बेंचकर कोअी और जगह ली जाअे। मधुपुरीमें अुन्होंने कुछ जगहोंपर स्वयं घूमकर पता लगाया, तो मालूम हुआ कि २०-२५ हजारमें अिससे कहीं अधिक अच्छी कोठी मिल सकती है और अैसी जगहपर जहाँ मोटर भी पहुँच सकती है। अुन्होंने भारी कमीशनका लोभ दे अेजेन्टोंको कह रखा है, कि कोठी बिकवा दें। लेकिन मसूरीका कोअी निवासी आशा नहीं रख सकता, कि अिस कोठीको कोअी मिट्टीके मोलपर भी लेनेके लिअे तैयार होगा। हजार-पाँच सौ फर्नीचरके आ सकते हैं, किवाड़ और जंगले अलगसे अुखाड़कर बेंचे जाअें, तो अुससे भी कुछ पैसा मिल सकता है, लेकिन अिसमें सन्देह है, कि वह कामपर लगाये गये मजूरोंकी मजूरीके लिअे भी पर्याप्त होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रिटेनकी सांस्कृतिक विरासत—

सामाजिक प्रगतिके प्रणेता विश्वविद्यालय और शिक्षाशास्त्री

: श्री ओम्प्रकाश आर्य :

अिस लेखमालामें हमने अभी तक संस्कृति और श्रमका संबंध संस्कृतिके दो तत्व कला और विज्ञानकी मूलस्रोत-कल्पनाकी यर्थाथता और कलाकृतियों अेवं वैज्ञानिक अुपादानोंकी अैतिहासिक पार्श्वभूमि देखी है। परन्तु मैं समझता हूँ कि ब्रिटेनकी सांस्कृतिक विरासतका यह रूपरेखात्मक चित्र यहाँकी शिक्षा-संस्थाओंकी चर्चाके विना पूरा नहीं कहा जा सकेगा। हर देशकी संस्कृतिमें वहाँकी शिक्षा-संस्थाओंका अेक अपना ही स्थान होता है। हम जब अपने देशकी प्राचीन संस्कृतिकी चर्चा करते हैं तो गुरुकुलों और ऋषियोंके आश्रमोंकी बात किया करते हैं और सही तरीकेसे किया करते हैं। मैं समझता हूँ कि कुछ वैसी ही बात ब्रिटेनके साथ भी लागू होती है। और वैसे भी संस्कृतिकी चर्चामें यदि शिक्षाको निकाल दिया जाअे तो रह ही क्या जाता है ? **अितिहास अिस बातका साक्षी है कि हर विशिष्ट संस्कृतिकी प्रगति शिक्षाके विकासके साथ और अुसकी अवनति शिक्षाके ह्रासके साथ संबद्ध रही है।**

जब मैं शिक्षाकी बात करता हूँ तो कुदरती तरीकेसे अुसे साक्षरतासे भिन्न मान लेता हूँ। यह बतलाना मैंने अिसलिअे आवश्यक समझा कि आज अपने देशमें कितनी ही दफा लोग साक्षरता और शिक्षामें भेद करना भूल जाते हैं। अिसका सीधा परिणाम यह होता है कि विचारणीय विषयपर अेक अनावश्यक धुंध पड़ जाता है। मैं प्रारंभसे ही अुससे अलग रहना चाहता हूँ।

अितना मान लेनेके बाद अब ब्रिटिश विश्वविद्यालयोंकी चर्चा की जा सकती है। अधिकतर लोग सोचा करते हैं कि ब्रिटिश विश्वविद्यालय अपनी विचारधाराअेंमें अनुदार, कट्टर और परंपराओंमें बंधे होते हैं और अिसलिअे अुनके द्वारा जिस शिक्षाका प्रसार होता है वह नवीन युगके लिहाजसे, नये समाजकी प्रगतिके विचारसे, वांछनीय नहीं। मैं स्वयं अिस विचारको नहीं स्वीकार करता। जो लोग अुक्त विचार रखते हैं, वे यह भूल जाते हैं कि विश्वविद्यालय केवल सामाजिक संस्थाअें ही नहीं जो कि आजकी शासक श्रेणीकी मान्यताओंका दर्पणमात्र बने रहनेमें ही अपने कार्यकी अिति-श्री समझती हों। अिनमें जो लोग काम करते हैं अुनका कर्तव्य ज्ञानकी रक्षा और अुसका प्रसार भर ही न होकर नये ज्ञानकी अुपलब्धि हुआ करता है। नये ज्ञानकी खोजका यह तत्व ही विश्वविद्यालयोंको सांस्कृतिक जीवनमें वह अनिवार्य स्थान दिलवा पाता है जिसका जिक्र अूपर आया है।

अितिहासके संकटमय क्षणोंमें अतीतकी अुत्कृष्टतम परंपराओंकी रक्षा, ज्ञानका प्रचार और प्रसार तथा नये ज्ञानकी खोज, ये अैसे अुद्देश्य हैं जिनके सहारे कलाविद् और वैज्ञानिकगण समाजकी शासिका शक्तियोंके साथ संघर्षमें आ पाते हैं। क्योंकि यदि वे अपने मानवीय अुद्देश्योंके प्रति सच्चे हैं तो अन्हें शिक्षाके मामलेमें विशेष वर्गाधिकारका, शैक्षणिक स्वतन्त्रताओंके सीमाकरणका और खोजके अूपर लगनेवाले गोपनीयताके प्रतिबन्धका विरोध हर हालतमें करना ही पड़ेगा। हमने देखा है कि बराबर अुन लोगोंने अैसा किया। फिर अुनके कर्तव्य यहीं समाप्त नहीं हो जाते। अुन्हें यह भी देखना पड़ता है कि अुनके द्वारा जो नये ज्ञान प्राप्त किये गये हैं अुनका कैसा और क्या अुपयोग समाजमें किया जा रहा है ? क्योंकि बिना अिसके नयी खोजका नैरन्तर्य कायम नहीं रह सकता। अिस प्रकार विश्वविद्यालयोंमें पढ़ानेवाले बड़े-बड़े प्राध्यापक भी अेक बृहत्तर सामाजिक संघर्षके दायरेमें आते-जाते हैं, भले अचेतन रूपसे ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्यों न हो। आखिर तो अुन्हें यह देखना पड़ता है कि अुनके अपने कार्यके स्वार्थ किस ओर रहनेसे पूरे किये जा सकते हैं। यह ब्रिटेनमें जितना आज सही है अुतना ही पिछले युगोंमें भी सही था।

यह अंग्रेजी क्रान्तिके समय १७ वीं सदीमें लोगोंने जाना कि ज्ञानका अर्थ प्रकृतिपर मनुष्यकी विजय अथवा फ्रांसिस बेकनके शब्दोंमें "**मनुष्यकी जायदादका आराम**"। मिल्टन अँग्रेजीका नामी कवि हो गया है। परन्तु अुसका नाम और मान केवल अुसकी कविताके कारण ही नहीं वरन् अुसकी प्रगतिशील राजनीतिक विचारधाराके कारण भी है। अेक नौजवान विद्यार्थीके रूपमें ही अुसने कैम्ब्रिजमें मध्ययुगीन अध्ययनवादके विरुद्ध और अुसके अूपर आधारित शिक्षाके विरुद्ध अपनी आवाज बुलन्द की थी, क्योंकि अुनसे सच्चाअीपर पर्दा पड़ता था और आम जनताको संघर्षसे दूर किया जाता था। कैम्ब्रिज–विश्वविद्यालयसे शिक्षा प्राप्त करनेके बाद निकलते समय अपने विद्यार्थी जीवनके अन्तिम भाषणमें मिल्टनने अेक समयकी कल्पना की थी और वह यों थी: "...अेक समय आअेगा जब कि मनुष्यकी चेतना अितनी अधिक अुन्नत हो जाअेगी कि अुसकी आज्ञा सितारे तक मानने लगेंगे, अुसके हुक्मपर जमीन और समुद्र गाने लगेंगे और अुसकी सेवामें वायु और तूफानतक लगे रहेंगे और अन्तमें **माँ प्रकृतिने** अुसके सामने अिस प्रकार आत्म-समर्पण कर दिया होगा जैसे कि मानों परमात्माने विश्वका सिंहासन अपनी अिच्छासे छोड़ दिया हो और विश्वके अधिकार, कानून और प्रशासन मनुष्यके हाथमें दे दिये गये हों..." यह ठीक है कि मिल्टनका यह अुच्च विचार ब्रिटेनके विश्वविद्यालयोंमें पूरी तरहसे घर नहीं कर पाया, परन्तु अुसकी आन्तरिक प्रतिष्ठा बनी रही। अुसीके सहारे रॉयल सोसाअिटीकी स्थापना हुअी। आधुनिक विज्ञानोंके अितिहासकी नींवें पड़ीं। पीछे जब नये सुधारक लोगोंके लिअे अनुदारपूर्ण भावनाओंके सहारे और धार्मिक परखोंके कारण ऑक्सफोर्ड और केम्ब्रिजके दरवाजे बन्द हो गये तब अुन्हीं लोगोंने नये रूपमें बेकनकी-परंपराओंको कायम रखनेके लिअे और आगे बढ़ानेके लिअे नयी शिक्षा संस्थाअें खोलीं।

ब्रिटेनकी डिस्सेंटिंग अेकेडेमीजके नौनकौनफौर्मिस्ट संस्थापक लोग अैसेही थे, जिनका १८ वीं सदीमें खूब बोलबाला था। अुनके साथ अुस समयके अधिकतर प्रगतिशील विचारक संबद्ध थे। अिन्हींमें **अिरेस्मस डार्विन** थे—कवि, चिकित्सक, वैज्ञानिक और शिक्षा-शास्त्री। अिन्हींकी "**जूनोमिया**" नामक पुस्तकने विकासवादके सिद्धान्तकी सर्वप्रथम स्थापना की। अिन्हींमें **पर्सिवल** थे। मैंचेस्टरके अेक डाक्टर और समाज-शास्त्री, "मैंचेस्टर साहित्यिक और दार्शनिक समाजके" संस्थापक, जिन्होंने मैंचेस्टरमें अेक विश्वविद्यालय खोलनेका पहला प्रस्ताव रखा था। अिन्हींमें **जौन डाल्टन** थे—मैंचेस्टरके ही, जिन्होंने रसायनशास्त्रमें अणु-सिद्धान्तकी नींव डाली। वैसे ही **जोसेफ प्रीस्टले** थे, शिक्षक, दार्शनिक और व्यवहारिक वैज्ञानिक, जिनका घर बर्मिंघमके चर्चको माननेवालों और राजाके भक्तोंने अिसलिअे जला दिया था और वैज्ञानिक अुपकरणोंको अिसलिअे तोड़-फोड़ दिया था क्योंकि अेक चेतन विचारकके नाते अिन्होंने फ्रांसीसी क्रान्तिका समर्थन किया था।

अिन व्यक्तियोंने, जिनका जन्म नये औद्योगिक केन्द्रोंके अन्दर हुआ था, अपनी आँख सदा भविष्यपर रखी। ये अपने समयके सब अुन विचारोंसे केवल सहमत या अवगत ही नहीं थे वरन् अुनमें भाग लेनेवाले थे जिन्हें हम आजकी भाषामें क्रान्तिकारी कह सकते हैं। **अुन्होंने फ्रांसीसी क्रान्तिका खुले हाथों स्वागत किया। अुन्होंने सदा विचारों और खोजोंकी स्वतन्त्रताके लिअे संघर्ष किया और अिसका सदा विरोध किया कि परंपरागत विचारोंको बिना सवाल किये ही स्वीकृत कर लिया जाअे।** अिसलिअे अिसमें कोअी शक नहीं रह जाता है कि शासक वर्ग अिन संस्थाओंसे और अिन संस्थाओंको चलानेवाले व्यक्तियोंसे क्षुब्ध हो गया। बुर्कने हैकनी कालेजको "**खतरनाक**" घोषित कर दिया क्योंकि अुस कालेजके विद्यार्थियोंने टौमपेन जैसे क्रान्तिकारीको अपने कालेजमें सम्मानके साथ भोजन करवाया था और अपने लिअे स्वयं सोचनेके अधिकारका खुले-आम प्रतिपादन किया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिसी प्रकार स्काटलैंडमें भी जनवादी और अुदारवादी शिक्षाकी परंपराअें कायम हुअीं। स्काटलैंडके दार्शनिक स्कूल और चिकित्साके स्कूल अपने जमानेमें बड़े मशहूर हुअे जो पीछे जाकर आजकी स्कौटिश् यूनिवर्सिटियोंके बड़े-बड़े विभाग बन गये। यदि आप अुस जमानेके अुदारवादी ब्रिटिश समाजमें शिक्षाकी ओर देखें तो आपको पता चलेगा कि ब्रिटिश शिक्षा शास्त्री लोग स्कौटिश विश्वविद्यालयोंको, अमेरिकामें जैफरसन द्वारा खोले वर्जीनियाके नये विश्वविद्यालयको और बर्लिन और बौनके महान जर्मन विश्वविद्यालयोंको जो १८१३ के बाद जर्मन जनताके संघर्षके फलस्वरूप स्थापित हुअे थे, अपने सामने रखकर देखा करते थे। कहना न होगा कि अपना लन्दनका यूनिवर्सिटी कालेज १८२८ में स्थापित करते समय अुनके सामने अुक्त संस्थाअें ही थीं, जो अपनी कहानी आप कहती हैं।

लन्दनके यूनिवर्सिटी कालेजका संस्थापन कोअी आसान काम नहीं था। अिसके लिअे संस्थापकोंको काफी राजनीतिक जद्दोजहद करनी पड़ी। अुसका परिणाम यह हुआ कि १८३२ के शिक्षा सुधार विधेयकके पारित हुअे बिना अिसे रौयल चार्टर नहीं मिल पाया। ब्रिटेनमें सामाजिक प्रगतिके प्रणेता रूपमें यूनिवर्सिटी कालेज, लन्दनका बहुत बड़ा स्थान रहा है। **यहाँपर ही पहली दफे अेक कालेजमें कला, विज्ञान, शिल्प, प्रोद्योग आदिकी शिक्षा बिना धार्मिक आधारके दी जाने लगी। ब्रिटेनके अितिहासमें पहली दफे अेक कालेजमें दर्शनके प्राध्यापकका पद अेक अैसे आदमीको दिया गया जो कि पादरी नहीं था। अिन्हीं सब कारणोंसे अिसने गणितज्ञ डि मौर्गन, रसायनज्ञ विलियमसन, साहित्यिक मैसन, कवि मिल्टन, समाजशास्त्री बैन्थम, स्टुअर्ट मिल और जौर्ज क्रोटको मानसिक विकास पानेका अवसर दिया।** ब्रिटेनकी शासक श्रेणियोंकी घोर टोरी विचारधारापर वह अुदारवादी हमला अिसी कालेजके महान प्राध्यापकोंके कारण संभव हो सका।

लन्दनके यूनिवर्सिटी कालेजसे शिक्षा ग्रहणकर अुन्नीसवीं सदीके अुत्तरार्द्धमें ब्रिटेनके नये पर बड़े औद्योगिक केन्द्रोंमें नये-नये विश्वविद्यालय स्थापित किये गये। अिनके प्राध्यापक अेक कदम और आगे बढ़े। अिनमेंसे बहुतोंने समाजवादी आन्दोलनके साथ अपनेको देखा। प्रोफेसर बीजली कार्ल मार्क्सके दोस्त थे। मैंचेस्टर विश्वविद्यालयके मशहूर प्रोफेसर शौर्लमर, जिन्होंने अेंगेल्सको रसायन-शास्त्र पढ़ाया था, स्वयं अेक बड़े प्रगतिवादी विचारक थे। मार्क्सकी मृत्युके बाद अेंगेल्सने कहा था "मार्क्सके बाद निःसंदेह शौर्लमर ही यूरोपीय सोशलिस्ट पार्टीमें सबसे प्रमुख व्यक्ति हैं। मैंने जब आजसे बीस साल पहले अुन्हें जाना था तो वे पहलेसे ही कम्युनिस्ट हो चुके थे" कहना न होगा कि आज ब्रिटेनके विश्वविद्यालयोंमें अेक नहीं वरन कअी शौर्लमर मौजूद हैं। प्रोफेसर जे. डी. बर्नील, प्रोफेसर हाअीमन लेवी, डाक्टर मौरिस बैव, प्रोफेसर जे. बी. अेस. हाल्डेन आदि महान विचारक शौर्लमरकी सुन्दर और स्वस्थ परम्पराके ही अनुगामी हैं। आजके ब्रिटेनमें जो सांस्कृतिक प्रगतिकी अविच्छिन्नता नजर आती है, जो सामाजिक अुद्बोध दिखलायी देता है, अुसका अधिकतर श्रेय अुक्त श्रेणीके ब्रिटिश अध्यापकोंको ही है, जिन्होंने अपनी पदकी सुरक्षापर खतरा मोल लेकर भी, शासक श्रेणीसे वैर करके भी, श्रमिक जनतामें नये ज्ञानकी अलख जगाये रखनेका पूरा और भरसक प्रयत्न किया।

पिछले बीस सालोंमें जो ब्रिटेनमें शान्त सामाजिक-क्रान्ति हुअी है अुसने ब्रिटेनकी श्रमिक श्रेणीके बेटे-बेटियोंको विश्वविद्यालयोंके दरवाजे खटखटानेकी ओर संकेत किया। और आज अुनके अन्दर भी ज्ञानकी पिपासा अेवं सांस्कृतिक अुपादानोंको भोगनेकी तीव्र अिच्छा पायी जाती है। ब्रिटेनकी मजदूर सरकारने युद्धोत्तर कालमें यहाँके विद्यालयोंका और विद्यालयी शिक्षाका पुनःसंघटन किया है, जिसके अनुसार गरीब घरोंके भी प्रतिभाशील नौजवानोंको विश्वविद्यालयोंमें जानेका मौका मिल सका है, और फिर बड़ी-बड़ी ट्रेड यूनियनोंने अपने सदस्योंके बेटे-बेटियोंके लिअे भी कुछ विशेष छात्रवृत्तियोंका अिन्तजाम किया है। अुसीके साथ पिछले दस सालोंमें रातमें चलनेवाले प्रौद्योगिक और कलामूलक स्कूल और कालेजोंकी अप्रत्याशित वृद्धि भी यहाँ हुअी है, जिनमें लाखों कमकर व्यक्ति अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फुरसतके समय विशिष्ट शिक्षाओंके लिअे आते-जाते हैं। वैसे ही कअी बड़ी-बड़ी संस्थाअें बनी हैं, जैसे **"वर्कर्स अेजूकेशनल अेसोसियेशन"** जिनका काम औद्योगिक केन्द्रोंमें समाजशास्त्र, राजनीति, अर्थ-शास्त्र, प्रौद्योग आदि विषयोंपर बड़े-बड़े विशेषज्ञों द्वारा भाषणों और कोर्सोंका आयोजन करना है। अिनमें भी श्रमिक जनता बड़े अुत्साहके साथ भाग लेती है।

अिन सबके संश्लेषने अेक अैसी स्थिति पैदा कर दी है जिससे यहाँकी बुर्जुआ श्रेणियाँ काफी भयभीत होती जाती हैं। वे ज्ञान और संस्कृतिके प्रसारके अिन साधनोंको कम करना चाहती हैं। टोरी सरकारने और अधिकतर टोरी नीतियोंने प्रणाली रूपसे कमकर जनताकी अिन नयी न्यामतोंपर हमला करना शुरू कर दिया है। सरकारकी ओरसे शिक्षापर किया जानेवाला खर्च कम किया जा रहा है। नये स्कूलोंका निर्माण लगभग ठप्प है। हरसाल नये-नये विद्यार्थी स्कूलोंमें आते-जाते हैं, परन्तु अुनके लिअे नये स्थान नहीं, अिसलिअे जिस श्रेणीमें चालीसको जगह मिलनी चाहिये अुसमें पचास शिक्षार्थी बैठाये जाते हैं। कहना न होगा कि ब्रिटेनकी प्रगतिशील विचारधाराओंने अिस प्रवृत्तिका जमकर विरोध किया है।

आम जनतामें ज्ञानके अिस प्रसारने और संस्कृतिके अिस विस्तारने अुनको पुरानी और दकियानूसी विचारधाराको छोड़कर स्वस्थ और **जनवादी-तर्कवादी** विचारधाराओंकी ओर पुरस्सर किया है। यहाँपर भी टोरी-विरोध बहुत पक्का है। आज यह सर्वविदित है कि पूंजीवादके गढ़ अमेरिकामें केवल राजनीतिमें ही नहीं वरन् विज्ञानोंमें भी प्रतिक्रियावादी विचारधाराका बोलबाला है। ब्रिटिश टोरी समाजका अुद्देश्य यह है कि पूंजीवादी व्यवस्थाको बचानेमें अुन विचारधारओंका खुले आम अुपयोग होना चाहिये। अिसलिअे आज ब्रिटेनके विश्वविद्यालयोंमें **"प्रेतोंका शिकार"** प्रारंभ हो गया है। प्रगतिशील विचारधारा रखनेवाले लोगोंकी नियुक्ति मुश्किलसे ही होती है। क्योंकि आज भी विश्वविद्यालयोंकी शासिका संस्थाओंमें टोरी विचारधाराके लोगोंका लार्डों और सरके खिताबधारियोंका ही बोलबाला है। वे ही नये प्राध्यापक चुना करते हैं। परन्तु ब्रिटेनमें **'प्रेतोंका शिकार'** जरा छिपलुककर होता है। खुले आम नहीं, जैसा आज अमेरिकामें देखनेको मिलता है।

अिसने भी विश्वविद्यालयोंमें अेक संघर्षकी स्थिति पैदा कर दी है, जिसके अनुसार अुनमें बहलीके लिअे राजनीतिक विचारधाराओंकी परख अनावश्यक करार दी जाने लगी है। केवल योग्यताके ही आधारपर नियुक्तिका नारा आज ब्रिटेनके सब विश्वविद्यालयोंमें गूंज रहा है। क्योंकि यह संघर्ष भी विचारकी स्वतंत्रताका, खोजकी स्वतन्त्रताका संघर्ष है, जिसके सहारे वैज्ञानिक शोध-कार्यपर गोपनीयताका पर्दा न डालनेकी बात कही जाती है। कहना न होगा कि आजके प्रगतिशील प्राध्यापकगण ही अिस आन्दोलनका नेतृत्व भी कर रहे हैं। और वे जानते हैं कि अुन्हें यदि अपने संघर्षमें किसीसे सहयोग मिलेगा तो श्रमिक-श्रेणीसे ही, जोकि स्वयं टोरी नीतियोंके विरुद्ध है।

अिस तरह हम देखते हैं कि आजके ब्रिटिश-विश्वविद्यालय और अिसके महान शिक्षाशास्त्री अपनी स्वर्णिम परम्पराओंके अनुकूल ही ब्रिटिश-संस्कृतिकी रक्षा और अुसके विकासमें अुसी तरह दत्तचित्त हैं जैसे अुनके पुरखा १८ वीं और १९ वीं सदीमें थे। यह अुस स्वास्थ्यकी निशानी है जिसके सहारे ब्रिटेनके आगे आज भी ग्रेट [बृहत] का विशेषण लगाया जाता है, और मैं समझता हूँ कि सही तरीकेसे लगाया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तमिळ कहानी :

अेकताका अंत

: श्री शाण्डिल्यन् :

"बदमाश और बहादुरमें कौनसा फर्क है ? दोनों दूसरोंको मारते-पीटते ही तो हैं न ?"

वैद्यलिंगमजी पिल्लैने 'बड़ी हवेली' के मालिकसे जो 'छोटे मालिक' के नामसे मशहूर थे, सवाल किया। गाँवोंमें नित्य-प्रति होनेवाली चर्चाओंमेंसे यह भी अेक है।

यहाँपर अिस बातका स्पष्टीकरण जरूरी है कि छोटे मालिक सचमुच छोटे मालिक या बच्चे नहीं थे। अुनकी अुम्र लगभग छियालीस सालकी होगी। वे अन्नदानपुरमके सबसे बड़े रअीस थे। यही कारण है कि अुनका घर भी 'बड़ी हवेली' के नामसे पुकारा जाता था।

अन्नदानपुरमकी अुस बड़ी हवेलीके मालिक अर्थात् 'छोटे मालिक' के पिता जबतक जीवित थे, तब तक अुनके सुपुत्र सुन्दरेशन 'छोटे मालिक' के नामसे पुकारे जाते थे। अतः बड़े मालिककी मृत्युके बाद भी अुनका वही 'छोटे मालिक' नाम स्थायी हो गया। केवल वैद्यलिंगम् पिल्लैजीके लिअे ही नहीं, वरन् सारे गांववालोंके लिअे भी वे 'छोटे मालिक' ही बन गये थे।

वैद्यलिंगम् पिल्लै जब कभी बड़ी हवेलीके बड़े मालिकसे मिलने जाते, तब यही प्रश्न किया करते थे कि 'छोटे मालिक' क्षेम-कुशल-से तो हैं न ? अब वे ही छोटे मालिक सुन्दरेशन बड़े हो गये और सुन्दरेश अय्यरके नामसे हस्ताक्षर भी करने लग गये, फिर भी 'छोटे मालिक' की अुपाधि अुनसे अैसी चिपट गयी कि निकाले नहीं निकलती। हालाँकि छोटेके अेक छोटा-पैदा होकर, अुस छोटेके भी बहू भी आ गयी, फिर अय्यर अपने गाँववालोंकी दृष्टिके आगे, मार्कण्डेयकी तरह नित्यनिरंतर 'छोटे मालिक' ही बने रहे। गाँवकी दही-दूध बेचनेवाली ग्वालिन भी 'छोटे मालिक' ही कहा करती थी।

वैद्यलिंगमजी पिल्लैके सवालका जवाब छोटे मालिक तुरन्त नहीं दे पाये। अतः, आराम कुर्सीपर पड़े ही पड़े अुन्होंने अेक करवट बदली और पूछा, "क्यों, पिल्लैजी ! आपको अिसमें अैसा क्या सन्देह हो गया ?" फिर निकटवर्ती पानदानको हाथमें अुठा लिया और दो-चार पान निकाले तथा अुनमें चूना लगा, अुनकी नसें निकालकर घड़ी की और मुँहमें दबा लिया। झट किसी बातका अुत्तर देते न बन पड़ा तो अय्यर अैसी ही कोअी तरकीब निकाल लेते कि जवाब देनेसे पिंड छूट जाअे। अिस प्रकार, चुप्पी साधनेके लिअे स्वयं अपनेपर दफ़ा १४४ जारी करनेसे अय्यरका ख्याल था कि पिल्लैजीको हमने धोखा दे दिया और अुत्तर देनेसे हम साफ-साफ बच गये। हाँ, अैसे अवसरों-पर वे सचमुच छोटे अर्थात बच्चे ही बन जाते थे और जवान नहीं खोलते थे। अगर मजबूर होकर किसी हालतमें बोलना भी पड़े तो अैसी तोतली बोली बोलते कि सुननेवालेकी समझमें कुछ न आता। अैसे मौकोंपर अुनका ताम्बूल-चर्वण सच्चा मददगार साबित होता।

अय्यरको तो वैद्यलिंगम पिल्लै बचपनसे जानते थे। क्या अिस हालतमें वे आसानीसे अिन बातोंमें पड़कर धोखा कैसे खा सकते थे? पिल्लैजी फिर भी अपनी बातपर अड़े रहे और पूछा, "छोटे मालिक ! मेरे सवालका जवाब दिये बिना आप पान खानेमें लग गये ! यह क्या ?"

छोटे मालिकने अपने होठोंमें आधी हँसी लाकर अिस प्रकार दबाया, मानों अुनके सवालका तो अुत्तर मौजूद है, परन्तु मुँहके अन्दर पानकी पीक अड़चन डाल रही है। फिर 'हूँ' करते हुअे कुर्सीपरसे अुठे और बाहरी बैठककी अेक ओर जाकर मुँहकी पीक थूकी और अंदरकी ओर मुँह करके आवाज लगायी, "अजी, सुनती तो हो ! जरा अेक लोटा पानी लाना कुल्ला कर लें।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैद्यलिंगम पिल्लैजीको यह समझते देर न लगी कि अय्यर, अपनेको जवाब देनेसे पिंड छुड़ानेके लिअे अिस अुपायका प्रयोग कर रहे हैं। अय्यरकी यह दूसरी तरकीब थी। जब पिल्लैजीका मुँह बंद करनेमें पहली तरकीब कारगर न हुअी तो किसी बहाने अपनी देवीजीको बुलाकर और बातचीतका रुख दूसरी ओर मोड़नेकी चेष्टा करने लगे।

अिसपर भी पिल्लैजीने अुनको आसानीसे नहीं छोड़ा और कहा, "छोटे मालिक! अुम्र तो अब अितनी बीत गयी, मालकिनको क्यों नाहक तंग करते हैं? पोंगलके * लिअे बहूको अुसके मायकेवाले लाकर छोड़ गये हैं न? अुनसे कहिये तो वे पानी ला दें।"

पिल्लैजी जानते थे कि अय्यर अपनी बहूसे बात नहीं करेंगे। अतः अुन्होंने सोचा कि अुनको बातोंसे बचने न दें और किसी बहाने बातोंमें फँसा लें।

अय्यर और पिल्लै अिस प्रकार बातोंमें लगे कि अय्यरका बेटा बलराम सीढ़ी चढ़ता वहाँ आ पहुँचा। अुसकी सूरत देखते ही दोनों जरा ठिठके। अय्यरका मुँह अुद्विग्नता और चिंतासे फक् हो गया। लड़केके चौड़े माथेसे खूनकी धारा बह रही थी। लड़का अपने हाथसे माथेपरकी अुस चोटको दबाये हुअे था। अिसलिअे अय्यरको यह समझते देर न लगी कि चोट कहाँ लगी है? लड़केका हाथ हटाकर चोट देखनेके बाद ही अय्यरके होश-हवास ठिकाने आये। अेक लंबा निश्वास लेकर बोले, "परमात्माको धन्यवाद, कि लड़केको बाल-बाल बचा दिया। चोट जरा नीचे अूपर हो गयी होती तो क्या होता?"

थोड़ी देर अुस चोटको गौरसे देखनेपर अय्यरने पूछा, "क्यों, बलराम! यह क्या बात है? यह चोट कैसे लगी?"

बलरामने अुत्तर दिया, "कोअी बड़ी बात न थी, पिताजी! मन्दिरके पुजारी हैं न? अुनका बेटा अम्बी स्नान-संध्यासे निवृत्त होकर भगवानकी पूजाके हेतु जा रहा था। तब पिल्लैजीका पोता मारिमुत्तु अुससे जबर-दस्ती झगड़ा करने लगा। मैं अुसे रोकने गया तो मेरी यह दशा हो गयी!"

"किसने अैसा किया? वैद्यलिंगम पिल्लैके पोतेने?" यह प्रश्न अय्यरके मुँहसे और "किसने? मारिमुत्तुने?" यह सवाल वैद्यलिंगम पिल्लैके मुँहसे अेक साथ निकले।

"अै रामूकी माँ! लड़केका घाव धोकर 'अंदि मंदारै'*का पत्ता आगमें सेंककर लगा दो घावपर!" अपनी पत्नीको बुलाकर अय्यरने आदेश दिया और वैद्यलिंगम पिल्लैपर आँखें गड़ाकर अेकटक देखने लगे। यदि यही कार्य किसी दूसरे घरके लड़केने किया होता तो अुसको पकड़ पेड़से बंधवाकर अय्यरने अैसी मरम्मत की होती कि अुसकी चमड़ी अुधड़ जाती। लेकिन पिल्लै तो अरसेसे अुनके कुटुंबके मित्र तथा हितचिंतक थे। अुनके प्रति अैसा व्यवहार कैसे कर सकते थे? अिसलिअे अुनपर अेक आग्नेय दृष्टि फेरकर अय्यरने कहा, "पिल्लैजी, अब मैं आपके सवालका जवाब दे सकता हूँ। बलहीनको बलात् ललकारनेवाला बदमाश है। अपनी जानपर खेल बलहीन भी रक्षा करनेवाला बहादुर है। आजकल हमारे गाँवमें प्रथम श्रेणीके गुंडोंकी संख्या दिनों दिन बढ़ती जा रही है।"

अितना कहकर अय्यर अत्यन्त फुर्तीसे अन्दर चले गये। अय्यरका यह कथन केवल अुनके गाँव या अन्य गाँवोंके ही विषयमें नहीं, बल्कि सारे भारतके विषयमें सत्य प्रमाणित हो सकता है।

'बड़ी हवेली'से सीढ़ी अुतरते हुअे वैद्यलिंगम् पिल्लैने अपने गाँवपर अेक बार दृष्टि दौड़ायी। अुनकी आँखोंकी दोनों कोरोंमें दो बूँद आँसू छलछला आये। "ओह! कितना अच्छा गाँव था और आज कैसी दशाको

---

*मकर संक्रांतिका ही दूसरा नाम 'पोंगल' है। अुस दिन खेतसे नया अनाज लाते हैं और अुसीको पकाकर खाते हैं। अेक तरहसे कहा जाअे तो यह फसली त्योहार 'Harvest Festival' माना जाता है।

*'अंदि मन्दारै' अेक तरहका पौधा है जिसके फूल शामके वक्त ही खिलते हैं और पत्ते घावपर मरहमका काम करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राप्त हो रहा है !" यह विचार आतेही अुनकी नाकसे अेक गरम निश्वास निकल पड़ी ।

सचमुच अन्नदानपुरम् बहुत बड़ा सुन्दर गाँव था । प्रकृति माताने वहाँ खुले हाथों अपना सौदर्य-भण्डार बिखेर रखा था । गाँवके पूरबमें अेक बड़ा तालाब था, जिसके चारों किनारोंपर केतकी-केवड़ेके पेड़ लगे थे । तालाबके किनारे शिवजीका अेक मन्दिर था । पश्चिमकी दिशामें, कुमुदके पत्तों और फूलोंसे ढका अेक तालाब था । अुसके तटपर भगवान विष्णुका मन्दिर और अुत्तरमें ग्रामदेवता 'पिडारी'का मन्दिर था । दक्षिणके अेक कोनेमें 'मारि अम्मन' आर्थात् 'महामाया'का मन्दिर था । गाँवके चारों तरफ हरे लहलहाते खेत थे । बरसातके दिनोंमें गाँव अैसा नजर आता था कि जैसे कोअी ग्रामबाला हरे रंगकी मखमली चादर ओढ़े सुखकी मीठी नींद ले रही हो । कार्तिककी खेती अुस ग्रामबालाको सुन्दर सुनहरी साड़ी पहना देती । पौषके शुरू होनेके पहलेही खेतके चारों तरफ फसलके ढेर लग जाते । अुस समय अैसा मालूम होता कि मार्गशीर्षकी ठिठुरती सर्दीसे बचनेके लिअे, वह ग्रामबाला, ओढ़ी चादरको अुठा, अेक ओर फककर अुत्तरायणके सूर्यके गले लग गयी ताकि धूप लेकर सर्दीको भगा दे । अिस मंगलमय कार्यके शुभागमनका स्वागत करते हुअे ग्रामवासी नये धानसे शर्करान्न बनाकर सूर्य-भगवानको चढ़ाते, दावतें अुड़ाते और आनन्दमंगल मनाते । आनन्दोत्सवके अुपलक्षमें बड़ी धूमधामसे मन्दिरोंमें अभिषेक-आराधना की जाती । किसानके साथी गाय-बैल भी अिस आनन्दमें शरीक होते और अपने गलेकी कलकंठी घंटियोंके कल-कल निनादसे आकाशको भी गुंजा देते । कहनेका मतलब कि 'पोंगल'के त्योहारके दिनोंमें गाँवोंमें हँसी-खुशीका अैसा दौर चल पड़ता कि कुछ न पूछो !

अैसे आनन्दमय पोंगल-त्योहार बहुत दूर होते हुअे भी गाँव, अपनी सुस्ती भगा देते और अंगड़ाअी लेकर अुठ बैठते तथा बड़ी मुस्तैदी अेवं चुस्तीके साथ आनेवाले पोंगलका त्योहारका स्वागत करनेके लिअे तैयार हो जाते । गांवोंमें मस्तीका अैसा आलम छा जाता कि बड़े जोर और शोरसे खेतोंमें फसल काटना शुरू हो जाता और खलिहानोंमें अनाजके ढेर लगने लग जाते । जहाँ देखो, काममें लगे धूल-धूसरित कृषक ही देखनेको मिलते । गाँवके सभी मन्दिर साफ किये जाते और मन्दिरोंकी दीवारें चूनेसे सफेद की जातीं ।

सब प्रकारके अभिषेकके सामान और खर्चके लिअे रुपये 'बड़ी हवेली' हीसे सब मन्दिरोंको भेजे जाते । "बड़ी हवेली"के मालिक जातिके अय्यर हैं— अिस कारणसे विष्णुका मन्दिर या पिडारीका मन्दिर अथवा मारियम्मनका मन्दिर किसी सुविधासे अेक रत्तीभी वंचित नहीं रहता । अभिषेक और अुत्सव संबंधी सारा प्रबन्ध वैद्यलिंगम पिल्लैजीकी देख-रेख ही में होता । अय्यर या पिल्लैके मनमें कभी यह भेद भावना नहीं अुठी कि हम जातिके अय्यर हैं या पिल्लै ।

अय्यर अपने आचार-व्यवहारके विषयमें अितने कट्टर थे कि पिल्लैजीके साथ सामने बैठकर भोजन नहीं करते और दृष्टि-दोषसे बचते । पिल्लैजी भी अिस बातको बुरा नहीं मानते तथा अपने मनमें अिस बातके लिअे जगह भी न देते कि हमारे साथ अिस प्रकारका व्यवहार क्यों किया जाता ।

आहार-व्यवहारको छोड़ अन्य सभी कार्योंमें पिल्लैजी अय्यरके अपने घरके और अय्यर पिल्लैके घरके आदमी थे । पिल्लैजीके घरमें किसीकी अगर जरा भी तबीयत खराब होती, अय्यर सहायताके लिअे दौड़ पड़ते । अुसी प्रकार अय्यरके घरमें कुछ हो जाता तो पिल्लैजी तबतक चैनकी साँस न लेते जबतक अय्यर अुससे पूर्णरूपसे छुटकारा न पा जाअें । यद्यपि अय्यर और पिल्लैमें अिस कदर अूपरी भेदभाव था कि अय्यर पिल्लैका छुआ ही नहीं, देखा भी नहीं खाते थे और अुनके स्पर्शमें छुआछूत अनुभव करते फिर भी अुन दोनोंमें अितना विशुद्ध प्रेम था कि किसी भी प्रकारकी विषमताका विष न पड़ने पाता था । कहनेका मतलब कि दोनों दो शरीर अेक प्राण थे ।

लेकिन आजकल हम देखते क्या हैं कि वर्तमान पीढ़ी बदल रही है । पुराने जमानेके विपरीत आज अूपरी अेकता बढ़ गयी है और अन्दरकी अेकता घट गयी है । जिसे देखो, अुसीने चोटीके बाल कटवा डाले हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और तिलक-हीन शून्य मस्तकको ही सभ्यताकी निशानी माने हुअे हैं; जैसे-जैसे यह बाहरी अेकता बढ़ती जा रही है, वैसे-वैसे भीतरी वैषम्य-विभिन्नता भी बढ़ती जा रही है।

यही हाल अन्नदानपुरमका भी था। किसीकी समझमें न आया कि आपसका यह झगड़ा और मुनमुटाव क्यों ? लोग अिस दुविधामें पड़ गये कि क्या करें, क्या न करें ? कांग्रेसवालोंने झंडा फहराकर सभाअें कीं तो विपक्षी लोगोंने भी कुछ बलवान व्यक्तियोंको अपनी तरफ करके लंबे-चौड़े भाषण दिलवाये। जिला कलेक्टरों और तहसीलदारोंने गाँवके मुखियों और पटवारियोंका सहयोग प्राप्त किया और भिन्न-भिन्न प्रकारके प्रचारके चित्रपट दिखलाकर गाँवकी जनताको अपनी सरकारकी ओर आकृष्ट करनेका भरपूर प्रयत्न किया। अिस प्रकारके विभिन्न मतोंके चंगुलमें पड़कर जनता किंकर्तव्यविमूढ़ हो गयी तथा अपनी बुद्धिके अनुसार दल बाँधकर झगड़े-फिसाद और हाथापाअीपर अुतारू हो गयी। प्राचीन कौटुंबिक प्रेम-बंधन तथा गाँवकी मान-मर्यादा आदि अेक-अेक करके गांवसे रुखसत होने लगे और अुनके स्थानपर बदमाशी तथा गुस्ताखीने अपना आसन जमाया।

मारिमुत्तु और बलरामके मनमुटाव और हाथापाअीकी गहराअीमें अुतरकर देखा जाअे तो स्पष्टतया विदित होगा कि अुक्त भावनाका अदृश्य हाथ था। लेकिन अुच्चसे अुच्च आदर्शोंपर चलनेवाले वैद्यलिंगम पिल्लैजीके मनमें अिस विषयने बड़ी गहरी चोट पहुँचा दी। अन्न पानेकी आशासे आनेवाले सभी लोगोंको जो अन्न-दान-पुरम अन्न बाँटनेमें कोअी कसर अुठा न रखता था, वही दलबंदी और गुटबंदीके दलदलमें फँसकर, कच-हरियोंके आश्रयमें जा, पानीकी तरह पैसे बहाये और अन्नके दानेके लिअे दूसरोंका मुँहताज बन जाअे तो क्या हो ?– यह विचार वैद्यलिंगम् पिल्लैके मनको दीमककी तरह खाने लगा। आज 'बड़ी हवेली'के अिस छोटेसे फिसादमें वैद्यलिंगमजी पिल्लैको अच्छे लक्षण नहीं दिखायी दिये थे। वे भिन्न-भिन्न प्रकारके विचारोंमें डूबते–अुतराते और लंबी-लंबी अुसाँसें लेते हुअे अपने घरकी ओर चले।

\+ \+ \+

गुस्सेसे भरे हुअे फुर्तीसे अन्दर गये तो छोटे मालिक देखते हैं कि बलराम आँगनमें बैठा अपना घाव धो रहा है। अुन्होंने अुसके पास जाकर बड़े प्यारभरे शब्दोंमें पूछा, "क्यों रामू, चोट ज्यादा तो नहीं लगी ?"

बलराम अुत्तर देनेके लिअे मुँह खोले-अिसके पहलेही, अय्यरकी सहधर्मिणी, जो अपने बेटेको घाव धोनेमें पानी अुड़ेलकर मदद कर रही थीं, बोल अुठी, "मैं पूछती हूँ कि अुस दुष्ट लड़केको अितना साहस कहाँसे आ गया ? अिस विषयमें आपने पिल्लैजीसे पूछा ?"

"जब पोता अितना दुष्ट है, तो पिल्लैजी बेचारे क्या करते ?"–अय्यरने पिल्लैजीका पक्ष लिया।

अुनकी पत्नीने अुसका कोअी जवाब न दिया और मौन धारण कर लिया।

"चोट तो ज्यादा नहीं लगी। वह जाने लगा तो अेक कंकड़ अुठाकर फेंक दिया, नहीं तो चोट भी न लगती।"—बलरामने अपने पिताको समझाया।

अुसपर अय्यर बिना सवाल किये, सीढ़ी चढ़कर अूपर चले गये। जब बलराम अपना हाथ-मुँह तथा घाव धो चुका तो अुसकी माताने 'अंदिमन्दारै' का पत्ता चिराग़पर सेंका और चोटपर लगा दिया। थोड़ीही देरमें खूनका बहना बन्द हो गया।

अगर यही चोट शहरमें किसीके लगी होती तो चार-पाँच बार डाक्टर आते, पगड़ीकी भाँति सिरपर मरहम पट्टीका 'बाँडेज' बाँधते, दो चार 'अेंटी टिटानीस' अिन्जेक्शन देते और अेक बड़ा-सा बिल बनाकर भेज देते और अिस हाथ दे, अुस हाथ ले, की नीतिसे अेक अच्छी खासी रकम अेंठ लेते। पर यहाँ गाँवमें तो अिसका अिलाज अितनी आसानीसे हो गया कि जेबसे अेक पैसा निकालनेकी भी जरूरत न पड़ी।

बलराम फिर यह कहकर कि आज मुझे भूख नहीं है, बाहरी बैठकसे सटा जो कमरा था, अुसमें सोने चला गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'अच्छा ! भूख न हो तो जाओ और लेट रहो। मैं अभी दूध गरम करके लाती हूँ।" यह कहती हुअी अुसकी माँ भी रसोअीघरकी तरफ चली गयी।

बलरामका दिल अब चोट या चोटके दर्दसे हट गया और वहाँ चला गया, जहाँसे 'झन झन झनन' करके चूड़ियोंकी आवाज आ रही थी। वह चूड़ीवाली रसोअी-घरके द्वारपर धुंधलकेमें खड़ी थी। बलरामके दिलके साथ-साथ अुसके नेत्र भी अुस ओर लग गये।

कमरेमें लेटनेके बाद बलरामने अुच्च स्वरमें पुकारा, "कोअी दरवाजा तो बन्द करो !"

बलरामने यद्यपि 'कोअी' शब्दकाही अिस्तेमाल किया था, फिर भी अुस चूड़ीवालीने समझ लिया कि अुस 'कोअी' शब्दका आशय किससे है ? अुसने हंसिनीकी मन्द चालसे चलकर अुसकी आज्ञाका पालन किया और वैसीही चालसे वापस चली गयी। जब अुसके पैरोंकी नूपुर ध्वनि धीरे-धीरे मन्द पड़कर रसोअीघरकी तरफसे आयी तथा थोड़ी देरमें रुक भी गयी तो बलरामने अटकलसे जान लिया कि वह रसोअीघरमें चली गयी है और सिर पकड़कर अेक लंबी निश्वास छोड़ी।

\+ \+ \+

'बड़ी हवेली' का परिवार अुतना बड़ा न था। 'बड़े मालिक' के अेकलौते बेटे थे, 'छोटे मालिक'। बड़े लोगोंकी जायदाद बँटकर छोटे-छोटे टुकड़े न हो जाअे–अिस कारण, अिसे प्रकृतिकी नियति कहिये या और कुछ। बलराम 'छोटे मालिक' का अेकलौता बेटा था। बड़े मालिक और अुनकी देवीजीकी मृत्यु हो जानेसे, 'छोटे मालिक', अुनकी पत्नी और बलरामको छोड़ परिवारमें कोअी चौथा व्यक्ति नहीं था।

बलरामकी अभी-अभी नयी शादी हुअी थी। नववधू पोंगलका बरतन चढ़ानेके लिअे अेक हफ्ते पहले ही से मायकेसे ससुराल आ गयी थी। [तमिल-नाडका यह रिवाज है कि अिस प्रकारके तीज-त्योहारोंमें वधू अगर मायकेमें हो तो ससुराल आ जाअे] वधू तो आज-कलकी नवीन सभ्यतामें पली थी। लड़का कालेजकी शिक्षा पाया हुआ था। घर अितना बड़ा था कि नवीन दम्पती आसानीसे लुक-छिपकर मिल लें। अिसलिअे बलरामके मनमें प्रेम-मिलनकी लहरें और विरह-वेदनाकी हूक अेक साथ अुठने लगी तो आश्चर्य करनेकी कौनसी बात ?

मनुष्योंकी रोक-थाम या विघ्न-बाधाअें यद्यपि अिस घरमें अधिक न थीं तथापि प्राचीन सभ्यतामें पगी अय्यरकी सहधर्मिणी अपनी बहूको आँखोंकी ओट न होने देती थीं। अुनका यह खयाल था कि सुहागरातका मुहूर्त, चार जनोंके मध्य, जरा धूम-धामके साथ हो तथा बहूके मायकेसे कुछ बरतन-भांडे और रुपये-पैसे भी मिल जाअें। यही कारण था कि देवीजी बेटे और पतोहूके बीच दीवार बनी रहतीं।

कमरेका दरवाजा खुला तो बलरामने देखा कि हमेशाकी तरह माँ अन्दर आ रही हैं। अुसके मुँहपर वेदनाकी रेखा खिंच गयी। वह करे तो क्या करे !

माँ बलरामके पास आकर बैठ गयीं और बोली, "अभी दूध गरम नहीं हुआ है। पार्वतीसे कहा है कि दूध गरम कर लाओ।" यह वाक्य बलरामको अुस दूधसे भी मीठा लगा जो बादमें आनेवाला था।

"भोर होते, तो * 'भोगी' का त्योहार है। आज तुम सिर फोड़कर आये हो ! क्या कहूँ, तुम्हारी बद्धिको !" माँने अत्यन्त अुदास होकर कहा।

"क्या किया जाअे, माँ ? क्या तुम चाहती हो कि पुजारीजीके घरका लड़का मारिमुत्तुके हाथों पिटे और मैं चुपचाप हाथ बाँधे खड़ा देखता रहूँ ? यह मुझसे नहीं हो सका, माँ !"

"हम लोगोंको अिस प्रकारके लड़ाअी-झगड़ोंमें नहीं पड़ना चाहिये। आज-कलका जमाना बहुत खराब है। चोट हल्की लगी अिससे बचे ! नहीं तो क्या हुआ होता ? त्योहारके दिन तुम बिस्तरपर पड़े रहते। दुखकी मारी अकेली मैं तुम्हारी सुश्रूषा करूँ या

---

* 'भोगी' वह त्योहार है, जो संक्रान्ति यानी पोंगलके पहले दिन मनाया जाता है। अुस दिन लोग तैल अभ्यंग स्नान आदि करते हैं और सुस्वादु मिष्टान्न बनाकर आनन्दसे भोजन करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्योहारका काम संभालूँ । भगवानको शत-शत धन्यवाद है कि तुमको बाल-बाल बचा दिया ! "

"त्योहार-व्योहारकी बात छोड़ो, माँ ! तुमको मालूम है कि हमारे देशमें कितने लोग अन्नके दानेको तरस रहे हैं ? अैसी हालतमें केवल हमीं त्योहार मनाअें तो कैसे अच्छा होगा ? "

"अरे रे ! बस, बस ! तू फिर अपना वही पुराना देशभक्तिका पचड़ा सुनाने बैठ गया ! मुझे तेरी यह बकवास गवारा नहीं । क्या हमारे घर-द्वार नहीं; जमीन-जायदाद नहीं ? हम चार जनोंके मध्य बेमतलबकी बकवास क्यों किया करें ? तुम्हारी यह लेक्चरबाजी किसी दिन आफत ढा देगी । "

"हम केवल अपना ही काम देखें, दूसरोंका छोड़ दें, अिसको क्या अच्छा समझती हो, माँ ?" बलरामने माँसे प्रश्न किया ।

"हाँ, अच्छा क्यों नहीं ? याद रखो, तुमने किसीका हाथ पकड़ा है । अगर मेरी बात नहीं मानते तो जाओ, जेल जाओ, खुशीसे जाओ । मैं तुम्हें रोकनेवाली कौन होती हूँ ? मैंने शादी करायी, मेरे सिर अुसे लादे जाओ । कियेका फल मुझीको भोगना है न ?" माँने कुढ़कर कहा ।

अिसी समय पार्वतीने दायें हाथमें दूधका लोटा और बायें हाथसे साड़ीका लटकता दामन ठीक करते कमरेके अन्दर प्रवेश किया ।

"क्यों, पार्वती ! दूध बहुत गरम तो नहीं है ?" सासने सवाल किया तो बहूने बे-मतलब सिर हिलाया और दूधका बरतन सासके हाथमें दे दिया ।

"अरे ! बहुत गरम है ! जरा और ठंडा करो न !" सासने बहूको हुक्म दिया ।

बहूने खड़े ही खड़े दूधको जरा ठंडा करनेके लिअे, अिस लोटेसे अुस लोटेमें और अुस लोटेसे अिस लोटेमें अुडेलना शुरू कर दिया । अिसी समय बाहरसे किसीने आवाज लगायी, "माँजी, माँजी !" पुकार सुनकर देवीजी बाहरकी ओर गयीं ।

माँके, आँखोंके सामनेसे ओझल होते ही बलरामनें कहा, "बस, बस ! और ठंडा करनेकी कोअी जरूरत नहीं; लाओ अिधर ।"

नववधू लज्जासे जरा कुंठित हुअी । फिर अेक कदम आगे बढ़ी और दूधका लोटा पतिकी तरफ बढ़ाया । बाहरी बैठकमें देवीजी और आदमीमें किसी बातपर गरमागरम विवाद खड़ा हुआ और यहाँ कमरेके अन्दर नवदंपतीमें प्रेमकी जो अंतरंग बातें हुअीं, वे बाहर सुनायी नहीं दीं ।

दूसरे दिन और अुसके दूसरे पोंगलके दिन नव-दंपतीकी घनिष्ठता और भी बढ़ गयी । संक्रांतिके दिन सवेरे, जब बलरामने घरके अन्य लोगोंकी आँखें बचाकर अपनी पत्नीसे कुछ छेड़खानी शुरू की तो अुसने कहा, "शीःशी । न, न ! मैंने तो स्नान कर लिया है । छुओगे तो सोला बिगड़ जाअेगा । माँने आज मुझे पोंगलकी हाँडी चढ़ानेको कहा है ।"

अैसी चेतावनीसे अुसने बलरामको यह प्रकट कर दिया कि अिस घरकी भावी मालकिन मैं हूँ ।

❀ ❀ ❀

वैद्यलिंगम पिल्लै अुस दिन अकथनीय दुख और क्लेशके साथ घरकी तरफ बढ़े । अुनके दिमागमें भिन्न-भिन्न प्रकारके विचार आये और गये । छोटे मालिक जो अुनको अपने पितासे भी बढ़कर मानते थे और बिना अुनकी राय लिये कोअी काम न करते थे, वे ही अुनपर गुस्सा अुतारकर अंदर चले गये तो वैद्यलिंगमजी पिल्लैके मनमें दुखका कोअी पारवार न रहा । वे असहनीय वेदनासे तिलमिला अुठे । "मेरी ही गोदीमें खेले-पले 'छोटे मालिक' के मुँहसे अैसे शब्द कैसे निकले ?"—अिस बातका दिलमें आना था कि अुनके मनःचक्षुके सामने चित्रपटकी नाअीं अनुभवजन्य वे दृश्य अुभर आये, जिनमें अपनी और 'बड़ी हवेली' की तीन पीढ़ियोंके अटूट सम्बन्ध-का दृश्य साफ झलकता था । जब अिस विचार-शृंखलाकी कड़ी टूटी तो वैद्यलिंगम पिल्लैने अपने दिलको यह कहकर समझाया कि जब हमारे ही घरका लड़का अैसा आवारा बना फिरता है, तो दूसरोंको दोष क्या दिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाअे ? अिस विचारमें पड़ आखिर मारिमुत्तुको ही अिसका दोषी ठहराया।

फिर अुनकी विचार-शृंखला जुड़ी तो 'बड़ी हवेली' के बलराम और अपने घरके मारिमुत्तुके बचपनकी बातें स्मरण हो आयीं— जब वे दोनों बच्चे थे, अेक साथ गिल्ली-डंडा खेलते थे, अेक साथ तालाबमें नहाने जाते थे और पेड़की अूँची डालपर चढ़कर पानीमें कूदते-तैरते और अध्यापककी आँखोंमें धूल झोंककर खेल-तमाशे देखने खिसक जाते थे। अैसे अभिन्न मित्र आज कैसे परमशत्रु हुअे ?— अिस बातपर अुनका ध्यान गया। अुन्होंने 'गहरे पानी पैठ' कर देखा तो मालूम हुआ कि अिन सबका मूल कारण राजनैतिक दलबंदी और गाँवमें आनेवाले समाचार-पत्र ही हैं। अतः अुनका गुस्सा अुन दोनोंकी ओर मुड़ गया।

पिल्लैजीने अनुभव किया कि कौटुंबिक जीवनमें ननदें जितना खलल डालती हैं, अुससे दुगुनी-तिगुनी गाँवके जीवनमें ये पत्र-पत्रिकाअें डालती हैं।

पिल्लैजीने अपने आपसे यह प्रश्न कर लिया कि किस परम-पुण्य कार्यकी साधनाके लिअे गाँवके पुजारी और ज्योतिषी सुब्बय्यर, 'बड़ी हवेली' के द्वारपर धन्ना देकर बैठ जाते हैं और पत्रके आते न आते अुसे चीलकी तरह झपटकर अुठा ले जाते हैं ? अच्छा हो यदि पुजारी अपने धर्म-कर्ममें निरत रहें और सुब्बय्यर ज्योतिषका अपना कार्य करते रहें ? अपने कामोंसे निवृत्त होनेपर अवकाशके समय अिन पत्र-पत्रिकाओंमें माथापच्ची न कर रामायण–महाभारत पढ़ें तो कमसे कम परलोकका रास्ता तो बन जाअे ! यदि अुनमें भी मन न लगे तो किसी मन्दिरपर जा बैठें और रामनाम या शिव-स्मरण करें ! अुनको रोकता कौन है ?

झट अुनकी विचार-श्रंखलाने करवट बदली तो अुनका सारा गुस्सा चिन्नतंबिपर गया, जो पासकी गलीमें रहता था। अुनका यह विचार था कि मारिमुत्तु चिन्नतंबि हीके कारण खराब हो रहा है।

चिन्नतंबि स्वभावके अच्छे व्यक्ति थे। चूंकि अुनके बुजुर्ग अुनके नाम बहुत बड़ी जायदाद छोड़ गये थे और अुनका मन अन्य किसी काममें नहीं लगने पाता था, अिसलिअे अुन्होंने सोचा कि किसी सुगम रास्तेसे थोड़ा-सा कीर्ति-लाभ किया जाअे। तंजौरके कुछ मित्रोंने अुनका नाम * 'जस्टिस पार्टी' में लिखा दिया और गाँवकी पंचायतका अुन्हें अेक सदस्य भी बना दिया। अितना ही नहीं, अुनके सिरपर अपने दलके अेक मुख्य-पत्रका भी भार मढ़ दिया।

अिसके बाद ही चिन्नतंबिने समझा कि समाजने अुनके प्रति कैसे-अैसे दुर्व्यवहार और अत्याचार किये हैं ? अुन्होंने अनुभव किया कि अिसका किसी प्रकार परिहार करना चाहिये। अपनी अिन सेवाओंके लिअे अुन्हें अेक शिष्यकी सख्त जरूरत पड़ी तो अुन्होंने मारिमुत्तुको हर तरहसे काबिल पाया और अुसीको चुनकर अपना चेला भी बना लिया। अुसे कुश्ती लड़ाना, लाठी चलाना आदि विद्याअें भी सिखायीं। जस्टिस दलके प्रचारके लिअे यह सब जरूरी है— अिस बातका चिन्नतंबिको जितना ज्ञान था, अुतना अुस दलके और किसी नेताको नहीं था।

अिस संगतमें पला मारिमुत्तु यह कैसे सहन कर सकता था कि अुसके दादा 'बड़ी हवेली' की गुलामी करें ? अतः अुस दिन घरमें जब मारिमुत्तु और वैद्यलिंगम् पिल्लैमें मुलाकात हुअी तो बड़ी खलबली मच गयी। वैद्यलिंगम् पिल्लैजीकी पत्नीने दरवाजेपर खड़ी होकर यह दृश्य देखा तो सिर पीट लिया।

मारिमुत्तु जब घरमें दाखिल हो रहा था, तब वैद्यलिंगम् पिल्लै द्वारके पासके दालानमें आराम कुर्सीपर लेटे थे। मारिमुत्तु सीढ़ीपर पैर रख ही रहा था कि पिल्लैजीने सवाल किया "क्यों भैया ! आज अितनी देर क्यों हुअी ?"

अुनके सवाल करनेके तरीकेहीने यह बता दिया कि गुस्सेका पारा कितना चढ़ा है ? मारिमुत्तुने कोअी जवाब न दिया, चुपचाप खड़ा रहा। अुसके भी हृदयकी तहमें क्रोधकी अग्नि धधक रही थी। फिर भी

---

* दक्षिणमें अेक जमानेमें 'जस्टिस पार्टी' का बोल-बाला था। बड़े-बड़े प्रमुख सज्जन अिसके सदस्य थे। अंग्रेजीके शासन कालमें अिस 'पार्टी' ने मन्त्रित्व ग्रहण कर कअी भले काम किये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिल्लैजीके मुँह लगने या मुकाबला करनेकी हिम्मत अुसे न पड़ी। पिल्लैजीने अुसके मुखपरके भाव पढ़े, सिरके बालोंकी दशा देखी, तो ताड़ गये कि मारिमुत्तुके हृदयमें भी ज्वालामुखी धुआँ अुगल रहा है। न जाने, कब फट पड़े!

"क्यों बे! मैंने तुझसे कितनी बार कहा कि सिरके बाल अितने लंबे न रखा कर। कटवाकर छोटा बना ले! कुछ सुनता ही नहीं? क्या बात है?" वैद्यलिंगम पिल्लैने पूछा।

वैद्यलिंगम पिल्लैको जब कभी अिस प्रकार चिढ़ आती तब मारिमुत्तुके घोर विकृत स्वरूपका वर्णन छेड़ा करते। भारतकी प्राचीन संस्कृति तथा सभ्यताकी निशानी चोटीको कटाकर अिस प्रकार बाल कटवाना अुन्हें जरा भी पसन्द न था। 'बड़ी हवेली'के बलरामने भी जब अिस तरह बाल कटवा लिये तब विवश होकर अुन्हें मारिमुत्तुको क्षमा करना पड़ा।

अेक दिन शहरके कालेजसे बलराम जब बाल कटवाकर लंबा जुब्बा पहने घर आया तो अय्यरकी सहधर्मिणी अुसका यह भेष देखकर आग बबूला हो गयीं और कहा "क्योंरे कलमुँहे! यह कैसा भेष बनाया है, अिन बालोंने तेरा क्या बिगाड़ा कि अिनको अिस प्रकार कटवा दिया?" तब अय्यरने बलरामका पक्ष लेकर कहा कि "नाहक क्यों जबान चलाती हो? जब 'वीर शैव' * वैद्यलिंगम पिल्लैके पोते मारिमुत्तुने ही बाल कटवाकर 'क्राप' रख लिया, तो तुम्हारा लाड़ला, जो सन्ध्या-वन्दनतक ठीक तरह नहीं करता, बाल कटवा ले तो धर्म कैसे बिगड़ेगा? अिस प्रकार यदि परस्परिक मर्यादा और गौरव बढ़नेवाले अुन दोनों कुटुंबोंके बीच वज्र गिरानेवाला कोअी काम हो तो वैद्यलिंगम पिल्लैको गुस्सा क्यों न आता?

पिल्लैजीने अुपरोक्त पूर्व-पीठिकाके बाद सीधा आक्रमण करना शुरू कर दिया, "क्यों भैया! मालूम होता है कि तुम्हारे हाथ आजकल लंबे होते जा रहे हैं। क्या यह सब चिन्नतंबिके पढ़ाये पाठ हैं?"

मारिमुत्तुको अुनकी बात समझते देर न लगी। बोला, "मैं पुजारीके घरके लड़केसे बात कर रहा था तो 'चिन्न कुळन्दै' [छोटा बच्चा] को बीचमें पड़नेकी क्या जरूरत थी?"

गाँवमें बलराम 'चिन्न कुळन्दै'के नामसे प्रसिद्ध था। वही नाम मारिमुत्तुने लिया।

'तुम्हारी हिम्मत अितनी बढ़ गयी? तुम अिस घरमें रहना चाहते हो या कुत्तेकी मौत मरना चाहते हो? जानते हो, हमारा कुटुंब कैसा था और कैसा हो रहा है?"

वैद्यलिंगम पिल्लैकी अिस बातका मारिमुत्तुने कोअी जवाब न दिया, "क्यों, चुप खड़े हो? मालूम होता है कि तुम्हारा दिमाग खराब होता जा रहा है।"

"मैं कहता हूँ, बकवास बन्द कीजिये!" मारिमुत्तुके मुँहसे यह वाक्य सुनकर पिल्लैजी हक्के बक्के रह गये। अुन्होंने स्वप्नमें भी नहीं सोचा था कि मारिमुत्तुके मुँहसे अैसा वाक्य निकल सकता है। वे अत्यन्त दुखी हुअे। भला लड़का बिगड़ रहा है—अिस विचारने अुनका गुस्सा और भी अुभाड़ दिया। वे बोले, "क्यों, बे! मेरे सामने अैसी बातें करते तुझे शरम नहीं आती? "बड़ी हवेली"का लड़का कैसा पढ़ता है, मालूम है? वैसा पढ़ना तो दूर रहा, बातें करना कहाँसे सीख गया?"

यह कहते हुअे वे अुठकर लपके और मारिमुत्तुके गालपर जोरका अेक तमाचा मार दिया। मारिमुत्तुने तब भी कोअी अुत्तर न दिया। अुसको पिल्लैजीके बदले बलरामपर क्रोध आया, जिसने पहले अुसके हाथों मार खायी थी। मारिमुत्तुने गालपर हाथ फेरते हुअे कहा, "हाँ, हाँ; मुझे मालूम है कि वह कैसा पढ़ता है और क्या पढ़ता है? अब मैं देखूँगा कि अुसकी पढ़ाअी कैसे होती है?"

अितना कहकर वह 'धड़ाधड़' सीढ़ी अुतरता जल्दीसे कहीं चला गया।

पिल्लैजीकी पत्नीने द्वारकी ओटसे झाँककर देखा और कहा, "लड़का तो खाने आया था। अुसको अिस

* 'वीर शैव' वे हैं जो शिवजीके भक्त हैं और अितने अपने धर्ममें कट्टर हैं कि भूलकर भी अपने मुँहसे विष्णुका नाम नहीं लेते। वीर वैष्णव भी अिसी प्रकारके हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरह खरी-खोटी सुनाकर निकाल दिया। यह आपने क्या कर दिया ?"

अितना सुनना था कि पिल्लैने रौद्र-रूप धारण कर लिया और कड़ककर बोले, "क्या यहाँ भी स्त्री-राज चलने लगा। अन्दर जाती हो कि मरम्मत हो ? तुम्हारा लाड़ला कहीं जानेका नहीं, कुत्तेकी तरह दुम हिलाकर फिर आ जाअेगा।"

लेकिन पिल्लैने जो सोचा, वह नहीं हुआ। यानी वह भूखे कुत्तेकी तरह दुम हिलाता नहीं आया। दो दिनोंसे पोंगलका त्योहार गांवमें बड़े ठाठ-बाठसे मनाया जा रहा था। किन्तु पिल्लैजीके घरमें कोलाहल या कौतूहल नहीं था। अुनका घर शोभा-शून्य दिखायी दे रहा था। वहाँ त्योहारके कोअी आसार न थे।

पिल्लैजी घरसे बाहर ही नहीं निकले। 'बड़ी हवेली'के 'छोटे मालिक'ने दो बार आदमी भी भेजे। फिर भी पिल्लैजी टससे मस न हुअे। मारिमुत्तुकी याद अुनको हरदम सताती रही। पिल्लैजीको बीती बातपर पश्चात्ताप होने लगा कि हमने अपना मुँह नाहक क्यों खोला ? वह जैसा चाहे, रहे ! हमें अुससे क्या ? हम तो जीवनकी संध्यामें पदार्पण कर चुके हैं। पिल्लैजीकी पत्नीकी आँखें लड़केके वियोगसे बराबर आँसू बहाती रहीं और अपनी बोलीमें कह रही थीं कि फूल जैसे सुकुमार बालकको घरसे भगाकर हम बूढ़े त्योहार क्या मनावें ? दुःखदर्दसे भरे अपनी पत्नीके मुँहको पिल्लैजीसे सीधी आँखें देखते न बन पड़ा तो वे भी अुसकी आँखें छिपा, मुँह ढाँपकर आठ-आठ आँसू बहाने लगे।

× × ×

संक्रान्ति आयी। साफ-सुथरे गाँवकी शोभाको बढ़ाकर और भी जगमग-जगमग करनेके लिअे अुत्तरायन का सूर्य पूर्व दिशामें अुगा। अन्नदानपुरम अुस दिन अलौकिक सौन्दर्यसे शोभायमान था। अुस गाँवमें तीन ही पक्के घर अैसे थे, जिनमें चूना पोता जा सकता था। अेक तो 'बड़ी हवेली' थी, दूसरा वैद्यलिंगम् पिल्लैजीका घर और तीसरा चिन्नतंबिका मकान। बाकी समूचे घर मिट्टी और पत्तेके ही थे। लेकिन अुनकी सजावटमें भी किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं थी। जहां-जहाँ फर्श या दीवारकी मिट्टी अुखड़ी रहोती हाँ-वहाँ काली मिट्टी, कोयला और गोबर तीनोंको मिलाकर, अच्छी तरह पीसकर, घरकी बड़ी-बूढ़ी स्त्रियाँ मरम्मत कर देतीं। अैसा करनेपर फर्शकी शोभा अितनी बढ़ जाती कि कडपाके बहुमूल्य पत्थर भी अुसके सामने फीके मालूम होते।

घर मिट्टीके बने होते थे और अुनकी छतें भी देशी खपरैलोंकी थीं। – अिसलिअे वे बड़े आरामदेह थे। अैसे घरोंमें न तपती गरमी पड़ती थी और न ठिठुरती सरदी। घरोंमें कहीं भी कूड़ा-करकट देखनेको न मिलता था। घरकी बड़ी-बूढ़ी औरतें जब कोअी काम न रहता, तब खुदही झाड़-बुहार देतीं। अगर कभी अुनसे यह काम न हो पाता तो अपनी बहुओं और पोतियोंको आदेशपर आदेश देकर करवाकर छोड़तीं।

घरकी बड़ी-बूढ़ी स्त्रियोंकी यह आदत थी कि अपने अवकाशके अवसरोंपर अपनी पोती-बच्चियोंको 'माक्कल'❀से तरह-तरहकी चौकें पूरना सिखावें और रोज शाम-सवेरे गाँवकी वीथियोंमें अपने घरके सामने चावलके आटेसे चौकें पूरें। संक्रांति जैसे शुभ दिनोंमें अपनी सिखायी चौकें बड़े पैमानेपर पुरवातीं।

अन्नदानपुरमकी बड़ी-बूढ़ी स्त्रियाँ अपनी पोती बच्चियोंको आदेशपर आदेश दे रही थीं कि चौकें पूरो। जब तक चौकें पूरी न हो जातीं तब तक नाकों दम करतीं। लड़कियाँ भी, शुभ दिन आया जानकर, बड़े ही

❀ 'माक्कल' अेक अैसा पत्थर है, जो जमीनपर घिसनेसे खड़िया जैसा अुजला रंग पैदा करता है। अुसके बरतन भी बनते हैं। साँभार और रसम् जैसी खाद्य सामग्रियाँ अुनमें बनायी जाती हैं। अिमली, नींबू जैसी खट्टी चीजें दूसरे बरतनोंमें पकानेसे बिगड़ जाती हैं। पर 'माक्कल'के बरतनोंमें बनानेसे वे चीजें बिगड़ती नहीं। ये बरतन भी मिट्टीके बरतनोंकी तरह नीचे गिरनेपर टूट जानेवाले होते हैं। टूटे बरतनोंके अुन टुकडोंसे घरकी बड़ी-बूढ़ी स्त्रियाँ बच्चियोंको लकीरें खींचकर चौकें पूरना सिखाती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौतूहलके साथ द्वारपर, द्वारकी चौखटपर, देहलीपर, सुन्दर-सुन्दर चौकें पूर रही थीं।

अन्नदानपुरमकी अुस सुन्दरतामें चार चाँद लगानेके प्रयत्नमें अुत्तरायणका मरीचिमाली अपनी सुनहरी किरण-रश्मियाँ बिखेरता हुआ आकाशपर चढ़ने लगा। पक्षी-समूह अपने नाना प्रकारके कलरवोंसे गाँवको गुंजा रहे थे। पश्चिमके तालाबमें बालक कूदते-तैरते हुअे किल्लोलें कर रहे थे। कुमुदकी कलियाँ लड़कोंकी अिस हँसी-खुशीको देखकर, अपनी पंखुडियाँ खोल-खोलकर हँस रही थीं और अुनकी हँसी-खेलमें भाग भी ले रही थीं।

केवल वैद्यलिंगम पिल्लैके घरमें कोअी कौतूहल नहीं था। यह बात 'बड़ी हवेली'के मालिकके कानों तक पहुँची तो वे खुद पिल्लैजीके घरकी तरफ चल पड़े।

'छोटे मालिक' जब पैरोंमें जूता पहने हाथमें छड़ी लिये और कंधेपर अंगोछा डाले, बाहर चल पड़े थे तब किसीने यह नहीं सोचा कि वे पिल्लैजीके घरकी तरफ जा रहे हैं।

'बड़ी हवेली'के 'छोटे मालिक' तो अेक प्रकारसे अुस गाँवके छोटे-मोटे राजा थे। वे किसीके घर नहीं जाते थे। कोअी काम आ पड़ा तो गांवके लोग ही अुनके पास आते। अिसलिअे 'छोटे मालिक' जब वैद्यलिंगम् पिल्लैके घरमें दाखिल हुअे तो साराका सारा गाँव भौचक्का-सा हो गया। किसी-किसीको तो अपनी आँखोंपर भी विश्वास नहीं हो रहा था। आमने-सामनेके और अड़ोस-पड़ोसके लोग बाहर सिर निकालकर देखने लगे कि क्या सचमुच 'छोटे मालिक' ही आये हैं?

अुस वक्त वैद्यलिंगम् पिल्लै बाहरी बैठकमें बैठे पान चबा रहे थे। 'छोटे मालिक' को देखते ही पिल्लैजी अपना अंगोछा काँखमें दबाये झटपट अुठ बैठे।

"पिल्लैजी, आप बैठिये! खड़े क्यों होते हैं? बैठिये न!" कहते हुअे 'छोटे मालिक' अेक ओर बैठ गये। पिल्लैजी बैठे नहीं, मौन खड़े रहे।

"मैं तो कह रहा हूँ कि बैठिये। पर आप खड़े हैं?" जब अय्यरने बहुत आग्रह किया तो पिल्लैजी बैठ गये पर जबान नहीं खोली।

अय्यरने बात समझ ली और स्वयं अिस प्रकार शुरू किया, "क्यों, पिल्लैजी! बादको तो आप अुस ओर आये ही नहीं?"

अय्यरके 'बादको' शब्दका अर्थ पिल्लैजी समझे नहीं – अैसा नहीं हो सकता? अिसलिअे अुन्होंने धीरेसे जबाब दिया, "क्या करूँ? मनमाने तभी तो आ सकता हूँ!"

"अैसा क्या हो गया कि आपका मन बड़ा चंचल हो अुठा? हाँ, बच्चोंका झगड़ा हुआ, वह तो अुसी दम भूल जानेकी बात है। अुसको लेकर हम विरोध ठान लें यह हम जैसोंको शोभा नहीं देगा?" 'छोटे मालिक' ने पूछा।

"बात तो अब बहुत बढ़ गयी, 'छोटे मालिक!' वह अब छोटी न रही।"

"मारिमुत्तुके संबंधमें ही न आप कहते हैं? हाँ, हाँ, वह तो मुझे मालूम है। पर पिल्लैजी, अेक बात है। वह तो अबोध बच्चा है। अनजानमें अुसने कुछ कर दिया तो अुसके लिअे आपको अितना तूल मचाना अुचित न था?"--अय्यरने मारिमुत्तुका पक्ष लेकर यह प्रश्न किया।

अय्यरके मुँहसे निकली अिस बातने वैद्यलिंगम् पिल्लैके दिलको बड़ी शांति प्रदान की। अिस झगड़े और फिसादसे 'छोटे मालिक' का दिल नहीं बिगड़ा - यह जानकर पिल्लैजी मन ही मन बहुत संतुष्ट हुअे। फिर भी अिस बातने अुनके दिलकी वेदनाके फोड़ेको खुरेच दिया कि पोंगलके अिस पर्वके दिन घरका अुत्तराधिकारी घरमें नहीं रहा। अुनकी आँखें छलछला आयीं। फिर वे 'छोटे मलिक' की बातोंका अनुमोदन करते हुअे बोले--"हाँ, मैं तो बूढ़ा हो गया हूँ न, छोटे मालिक! अिसलिअे कब किससे क्या कहना चाहिये और क्या न कहना चाहिये?--अिसका विवेक ही जाता रहा!"

यह सुनते ही 'छोटे मालिक' का भी दिल पिघल गया। वैद्यलिंगम् पिल्लैजीके आँसूने अय्यरके हृदयको हिला दिया कि अुनकी आँखें भी डबडबा आयीं। फिर भी अुन्होंने दिलमें हिम्मत लाकर कहा, "पिल्लैजी! अिसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिअे आप रंज न कीजिये। आपका और हमारा कुटुंब क्या अलग-अलग या दो-दो है? आपका दुख हमारा दुख है। आपका दुख मुझसे देखा नहीं जाता। चिंता त्यागिये। मारिमुत्तुको बुला लानेका मैंने बन्दोबस्त कर दिया है। पेरलम्के सब-अिन्स्पेक्टरको भी खबर दे दी है। मारिमुत्तु आ जाअेगा, जरूर आ जाअेगा, जरूर आ जाअेगा। जहाँ भी हो, अुसे यहाँ लाकर खड़ा कर देंगे। आप दुख करें और हमारे घरमें दूध अुफने-- * यह कहीं हो सकता है?"

अय्यरके मुँहसे निकले अिन वाक्योंकी सत्यता बादको घटी घटनाओंने प्रमाणित कर दिया। अय्यर और पिल्लै दोनों बातें करते हुअे वहाँसे चले और 'बड़ी हवेली' की ओर आये तो देखते क्या हैं कि पुलिसके दरोगा बलरामको गिरफ्तार कर हथकड़ी पहना रहे हैं और मारिमुत्तु कुछ किताबें हाथमें लिये जरा हटकर खड़ा है। अय्यरकी धर्मपत्नी, पतोहू दोनों धाड़ें मारकर रो रही हैं।

यह दृश्य देखा तो दोनोंकी आँखोंके सामने अंधेरा छा गया। वैद्यलिंगम पिल्लैजी तो अैसे पत्थर बने खड़े हो गये कि काटो तो खून नहीं। अय्यरने अपनेको किसी तरह संभाल लिया और जरा हिम्मतके साथ दारोगाकी तरफ बढ़कर सवाल किया, 'क्यों, दारोगा साहब! माजरा क्या है?" फिर अुन्होंने बलरामकी तरफ आँखें फेरीं तो देखा कि बलरामके चेहरेपर केवल अुदासी छायी है और डरका लेश भी नहीं।

"'छोटे मालिक'! आपको मालूम हो या न हो, सरकारने यह घोषित किया है कि कुछ अैसी किताबें हैं, जिन्हें अपने पास रखना बड़ा भारी जुर्म है। अैसी कुछ किताबें आपके लड़केके पास मिलीं। अिसलिअे अुन्हें गिरफ्तार किया है।" दारोगाने अपने कार्यका कारण स्पष्ट करते हुअे कहा।

अय्यरने अपने मनकी पीड़ा और भीतिको अन्दर ही अन्दर दबाते हुअे मारिमुत्तुके हाथोंकी किताबें देखीं। अेक बार देहरीकी आड़में खड़ी अपनी पतोहूको भी देखा। अुनको लगा कि बुद्धि चकराने लगी है और अपनी आँखें अुस ओरसे फेर लीं। फिर दारोगाकी तरफ मुड़कर अुन्होंने पूछा, "क्यों दारोगा साहेब! आज अेक दिनके लिअे लड़केको बाहर छोड़ रखनेका कोअी मार्ग नहीं?

"मालिक? आप तो सब जानते हैं? क्या आपको भी कुछ कहना पड़ेगा? अिस विषयमें, आप जानते हैं कि मेरा कोअी बस नहीं। अगर मेरे बसकी बात होती तो आपकी खातिर अुसे अवश्य करता। मारिमुत्तुने अगर यह पता न दिया होता तो क्या मुझे स्वप्नमें भी यह ख्याल होता कि आपके घरमें अैसी किताबें भी हो सकती हैं? मेरी क्या मजाल कि अैसा विचार मनमें लाता!"—दारोगाने अपनी विवशता दर्शायी।

अुसी समय वैद्यलिंगम पिल्लैजीके जीमें जी आया, होश-हवास ठिकाने हुअे। अुनके दुखका कोअी पारावार न रहा। अुनके हाथपैर ही नहीं, सारा शरीर दुख और क्रोधके भावावेशमें अैसे काँप अुठा मानो आँधीमें केलेके पत्ते हों। अुनके होंठ फड़क अुठे। क्रोधसे काँपते स्वरमें अपना पूरा बल लगाकर वे गरज अुठे, "पाजी! पापी! दुष्ट! आखिर तुम्हीं अिसका कारण बना!" अितना कहनेके बाद वे मारिमुत्तुको अैसा घूरने लगे, जैसे अुसे कच्चा ही चबा जाअेंगे।

मारिमुत्तुके अिस कथनका अर्थ, कि "हाँ, हाँ! मुझे मालूम है कि वह कैसा पढ़ता है और क्या पढ़ता है? अब मैं देखूँगा कि अुसकी वह पढ़ाअी कैसे होती है?" स्पष्ट रूपसे पिल्लैजीके सामने आ गया।

बलरामने अपने पिताको दिलासा दिया, "पिताजी! आप क्यों अिसकी चिंता करते हैं? देशकी खातिर चिन्ता छोड़ दीजिये। जब मैंने देश-सेवाका व्रत ठाना

---

* पोंगल त्योहारके दिन सबसे पहले तामिल-गृहस्थके घरमें चूल्हेपर दूधकी हाँडी ही चढ़ायी जाती है और दूध अुफनकर अूपर आने तक गरम करते हैं। दूधका अुफनना शुभ शकुन माना जाता है। लोग आपसमें पोंगलके दिन मिलते-जुलते हैं तो आपसमें कुशल प्रश्न अिसी सवालसे कहते हैं कि क्या आपके घरमें दूध अुफना? अिससे स्पष्ट है कि पोंगलके दिनके मही अन्दर-अन्दर धन-धान्यसे संपूर्ण हो जाती है और अुसी खुशीमें यह आनन्दोत्सव मनाया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था, तब भली भाँति जानकर ही ठाना था कि यह सब अिस कार्यमें अवश्यम्भावी है। और जरा गौर करके देखा जाअे तो हमारा यह देश ही अेक प्रकारका कैद-खाना है! यहाँ तो 'यह' नहीं बोल सकते, 'वह' नहीं बोल सकते। जिस देशमें अितने कड़े कानून हैं, वहाँ कोअी घरमें रहें या जेलमें दोनों बराबर हैं।"

अितना सुनना था कि अय्यरकी धर्मपत्नी अत्यन्त दुखसे आहत हो गयीं और आँखोंमें आँसू भरकर भर्राये स्वरमें बोलीं, "क्यों बेटा! तुम्हारी बुद्धि फिर गयी क्या जो अैसी बातें मुँहसे निकालते हो? पिताजीके सामने भी तो तुमने अपनी लेक्चरबाजी शुरू कर दी? त्यौहारके शुभ दिन अैसा हो गया—अिस विचारसे हमारा हृदय टुकड़े-टुकड़े होता जा रहा है। अैसी अवस्थामें भी तुम अपनी सनक नहीं छोड़ते! क्या यह तुम्हें शोभा देता है?"

बलरामने देखा कि अुसकी पत्नी भी माँके पीछे मुँह ढाँपकर बिलख-बिलख रोने लगी तो अुसने दारोगासे कहा, "अिन्स्पेक्टर साहब! पाँच मिनटकी मोहलत दीजिये जिससे मैं अिन लोगोंको समझा-बुझाकर आ जाअूँ!"

अिस प्रार्थनाको अिनकार कर देनेका साहस अिन्स्पेक्टरको न हुआ। क्योंकि वे जानते थे कि अुस हलकेमें 'छोटे मालिक' की कैसी धाक है! 'छोटे मालिक'ने यदि ठान लिया तो अुनका अुस हलकेसे तबादला करवाके अैसे किसी नरकमें धकेल सकते थे, जहाँके गुंडोंके चंगुलसे बचना और अपनी जानकी खैर मनाना असंभव हो जाता। अतः, अुन्होंने बलरामको अनुमति दे दी।

बलराम शील-संकोच छोड़ सीधे अपनी पत्नीके पास गया और बोला, "अरे! क्या तुम भी मूर्खोंकी तरह रोने लगीं! मेरी अनुपस्थितिके अवसरोंपर, जब कि माँको समझा-बुझाकर सांत्वना देनेका भार तुमपर हो, अिस तरह रोनेसे काम कैसे चलेगा? तुमने तो वचन दिया था कि देशकी खातिर हर प्रकारके त्यागके लिअे मैं भी तैयार रहूँगी। क्या तुम अपनी वह बात भूल गयीं? तुमको तो दृढ़-प्रतिज्ञ वीरपत्नी बननाही शोभा देगा। अिस प्रकार रोने लगना....."

यह सुनकर अुसका रोना और भी बढ़ गया। वह सिसकियाँ भरती हुअी बोली, "मुझे अिसी बातका बड़ा दुख हो रहा है कि त्योहारके अिस शुभ-दिनमें बिना भोजन किये आपको....."

बलरामने अुसका वह वाक्य पूरा करने न दिया और बीचहीमें टोंककर बोला, "आज त्योहार है तो अुससे क्या हुआ? तुम जानती हो, आज कितनोंके घरमें दूध अुफनेगा, पोंगल याने मेवा-मिठाअी पड़ी खिचड़ी पकेगी? अिस देशमें अैसे कितने लाखों करोड़ों घर हैं, जिनको यहाँ पेटमें कटोराभर 'गंजी' (भातका माँड़) भी मयस्सर नहीं होती, मालूम है? कुछ पैसे-वालोंके घरोंमें दूध अुफने, पोंगल बने और नैवेद्य लगे तो क्या वह काफी होगा? अरी पगली! मैं तो कहता हूँ कि अिसका नाम पोंगल नहीं। किसी दिन हमारे देशकी समूची जनताका दिल जोशसे भरकर अैसा अुफनेगा और अुमगेगा कि गुलामीकी जंजीर तोड़-फोड़ डालेगा और देशको आजाद कर देगा। तभी सच्चे मानेमें हम पोंगल मना सकेंगे। स्वतन्त्रताकी अुफनती-अुमगती भावना भारतके हर घरमें नित्य प्रति 'पोंगल' अर्थात् खाना बनानेका साधन जुटा देगी। सर्व साधारणको भरपेट खाना मिले—देशमें अैसे 'पोंगल'की स्थापना करनेके लिअे ही हम जैसे लाखों-करोड़ों व्यक्ति देश-सेवामें जुटते हैं। तुम दुख करोगी तो मुझे अिस काममें अुत्साह कैसे प्राप्त होगा? तुम अिस काममें अुत्साहसे मेरा हाथ बँटाओ, तभी मैं दुगुने अुत्साहसे अुसे कर सकूँगा? ज्यादासे ज्यादा दो सालकी जेल होगी। अुसके बाद तो हम आजाद होकर जरूर मिलेंगे।"

अितना कहकर अुसने अपनी पत्नीके गालोंपर प्रेमसे हाथ फेरा तो पास ही खड़ी अुसकी माँने अुसे देखा-अनदेखा करके अपना मुँह फेर लिया।

बलराम बादको बाहर आया और दारोगासे बोला, "मैं तैयार हूँ।" फिर अपने पिताकी ओर मुड़कर कहा "पिताजी", आपने अुस दिन कहा था न कि मुझमें और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिल्लैमें अेक बातका तर्क-वितर्क हो रहा था। अुसका जवाब आज मुझे मिल गया। वह यह है कि देश सेवकोंसे झूठी दोस्ती कर जो अैन मौकेपर पुलिसके हाथमें, पकड़वा देता है, वह बदमाश है। बहादुर कौन हो सकता है--अिस बातका आप स्वयं निर्णय कर लें।"

यह कहकर वह आगे बढ़ा। दूसरे क्षण वैद्यलिंगम् पिल्लैजीके मनकी गहराअीसे यह विचार अुफनकर अूपर अुठा कि बलराम जैसा सच्चा देशसेवक ही सचमुच बड़ा बहादुर है, शूरवीर है। अुसके मनमें अुठने-अुमगनेवाला अुत्साह ही देशका सच्चा 'पोंगल' है।

बस, मनमें अिस विचारका अुभरना था कि वैद्यलिंगम् पिल्लैकी नसें फूल गयीं और अुनके दिलमें अेक प्रकारके जोशकी लहरें अुठने लगीं तो वे मारिमुत्तुकी ओर अुंगलीका निर्देशकर गरज अुठे, "अरे, तू ही बदमाश है! मेरे कुलके नामपर बट्टा लगानेवाला कुलांगार है। मेरी आँखोंके सामनेसे हट जा! निकल जा यहाँसे!"

अितना कहना था कि अुनका सिर चकराने लगा, आँखें ज्योतिहीन हो गयीं और अुनकी वृद्ध जर्जर देह लड़खड़ाकर गिरनेको ही थी कि पास खड़े छोटे मालिकने अुनका यह हाल देखा और झट लपककर अपने हाथोंका सहारा देकर पकड़ लिया। अुन दोनोंके अुस आलिंगन-पाशको, प्रेम-बन्धनको दूर ही दूर खड़ा अेक खेतिहर देख रहा था। अुसने दही बेचनेवाली ग्वालिनसे जो पास ही खड़ी यह दृश्य देख रही थी, कहा—

"अिन दोनोंके जीवनके साथ-साथ गाँवकी अेकताका अंत समझो। अिनके बाद हमारा गाँव कभी अेकताके सूत्रमें न बंधेगा और आपसमें झगड़ा-फिसाद करके मर-मिटेगा!"

अुसका वह कथन सत्य हो गया। सुख शांतिमय अुस गाँवमें झगड़ा-फिसाद फैला और अुस आंधीमें वह गाँव नष्टप्राय हो गया।

(तमिलसे अनुवादक—श्री रा. वीळिनाथन)

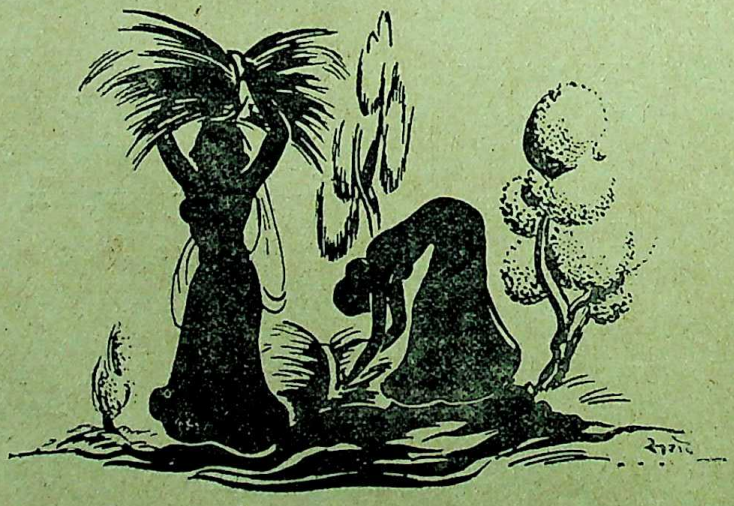

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्त-साहित्यकी अमूल्य विभूति-गुरु ग्रन्थ साहिब

: डॉ. हरदेव बाहरी :

"गुरु ग्रन्थ साहिब"के साथ 'गुरु' शब्द संभवतः अिसलिअे है कि अिसमें अनेक सन्त-सम्प्रदायोंके गुरुओंकी वाणियाँ संग्रहीत हैं। यह ग्रन्थ स्वयं भी गुरु है। गुरु नानक (जन्म सन् १४६९ अी०)से लेकर गुरु गोविंदसिंह (मृत्यु सन् १७०८ अी०) तक दस गुरु हुअे हैं। अंतिम गुरुने ग्रन्थ साहिबको ही अपना अुत्तराधिकारी नियुक्त किया—"सब सिक्खनको हुक्म है गुरु मान्यो ग्रन्थ।" तबसे ग्रन्थ साहिबकी गुरुवत् पूजा-सुश्रूषा होती है। अुसका दरबार लगता है, अुसे सिंहासनपर विराजमान किया जाता है और रेशमी कपड़े ओढ़ाये जाते हैं—रूमाल, चादर दुपट्टे, तकिये अित्यादि। सायं-प्रातः सिक्ख अुसके चरणोंमें पड़ते हैं और अुसके आगे 'अरदास' (अनुनय-विनय) करते हैं। अुसे कड़ाह-प्रसाद, रुपया-पैसा, फल-फूल और अस्त्र-वस्त्रकी भेंट दी जाती है। सब सिक्ख गुरु ग्रन्थ साहबका आशीर्वाद और वरद हाथ चाहते हैं। समय-समयपर आनन्द कार्योंमें अेवं संकट कालमें—अुसका आश्रय ग्रहण करते हैं। अुसकी आज्ञासे काम होता है। बच्चेका नाम रखना हो, कोअी कार्य प्रारंभ करना हो, श्रद्धापूर्वक भेंट-नजराना लेकर गुरु ग्रंथके द्वारपर आते हैं, चँवर झलते हैं, सिंहासनके चरण दाबते हैं और गुरु-मन्त्रका जाप करते हुअे कोअी पन्ना खोल देते हैं। अिस पन्नेका पहला अक्षर पहला शब्द अथवा पहली पंक्ति गुरु-आज्ञाके रूपमें ग्रहण की जाती है। सिक्खोंका विश्वास है कि दसों गुरुओंकी आत्मा ग्रन्थ-साहिबमें वास करती है।

गुरु ग्रन्थ या आदि ग्रन्थका संकलन पाँचवें सिक्ख गुरु, अर्जन देव (१५६३–१६०६ अी०) ने किया था। अुन्होंने प्रथम चार गुरुओंकी वाणियाँ बड़ी खोज और साधनासे संग्रहीत कीं। अुनका यथाक्रम सम्पादन किया और अुनके साथ अपनी वाणी भी जोड़ीं। आदि ग्रंथमें सबसे अधिक पद गुरु अर्जन देवके ही हैं। अुन्होंने भारत भरके सन्तोंकी वाणियोंकी छानबीन की और केवल अुन वाणियोंको अपने संकलनमें स्थान दिया जो निर्गुणिया मतके अनुकूल थीं। जिन भक्त-कवियोंकी वाणी अिस आदर्शसे हीन समझी गयी अुसे नहीं लिया गया। अुदाहरण-स्वरूप—पंजाबहीके कान्ह, छज्जू, शाह हुसैन, पीलू आदिकी वाणियाँ गुरु अर्जनदेवके विचाराधीन रहीं, पर आदि ग्रन्थमें नहीं आ पायीं, क्योंकि कान्हने अपनेको परमेश्वर कहा, छज्जूने स्त्रियोंकी निन्दा की अेवं शाह हुसैन और पीलू निराशावादी थे। गुरु ग्रन्थ साहिबमें छह सिक्ख गुरुओं और १६ भक्तोंकी वाणियाँ हैं। अिनका विवरण अिस प्रकार है—

गुरुओंमें—	प्रथम गुरु, नानक के	२९४१ बन्द
	द्वितीय गुरु, अंगद के	५७ बन्द
	तृतीय गुरु, अमरदास के	२५२२ बन्द
	चतुर्थ गुरु, रामदास के	१७३० बन्द
	पंचम गुरु, अर्जन देव के	६२०४ बन्द
	नवम गुरु, तेगबहादुर के	१९७ बन्द
भक्तोंमें—	कबीर के	११४६ बन्द
	नामदेव[1] के	२३९ बन्द
	रविदास के	१३४ बन्द
	जयदेव के	२ पद
	वेणी के	३ पद
	त्रिलोचन के	४ पद
	रामानन्द का	१ पद
	सेन का	१ पद
	परमानन्द का	१ पद
	सदना का	१ पद

१. नामदेव दो हुअे थे—अेक महाराष्ट्रके, दूसरे पंजाबके। दोनोंकी वाणियोंको अलग-अलग करना अत्यन्त कठिन है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धन्ना के		४ पद
पीपा का		१ पद
भीखन के		२ पद
फरीद के	१३० सलोक,	४ पद
मीरा [२]		१ पद
सूरदास		२ पद

सिक्ख गुरुओंकी कृतियोंको 'गुरु-वाणी' और अन्य सन्तोंकी कृतियोंको 'भगत-वाणी' कहा जाता है। अिनके अतिरिक्त सुन्दरजीका अेक सद् है जिसके छह पद हैं। राय बलवंडकी अेक वार और भाअी मरदानाका अेक 'शब्द' है। अन्तिम भागमें ११ भट्टोंके १२३ सवैये हैं जो सिख-गुरुओंकी स्तुतिमें लिखे गये हैं।

अुपरिलिखित सूचीमें नवें सिक्ख गुरु, तेग बहादुरजीका नाम देखकर पूछा जा सकता है कि पाँचवें गुरुके बाद नौवें गुरु ही की वाणी क्यों ली गयी, दूसरे गुरुओंकी वाणीको क्यों स्थान नहीं मिला? अिस सम्बन्धमें किंवन्दती है कि गुरु अर्जनदेवने स्वयं भविष्य-वाणी की थी कि हमारे संकलनमें केवल गुरु तेग बहादुरकी कृतियोंको स्थान मिलेगा। ६ ठे, ७ वें और ८ वें गुरुकी वाणियाँ मिलती ही नहीं। १० वें गुरु गोविन्दसिंह बहुत अच्छे कवि थे, लेकिन अुनकी वाणी भी आदि ग्रन्थमें नहीं है। अुनका संग्रह 'दशम ग्रन्थ' के नामसे प्रसिद्ध है।

सन् १६०४ अी. में गुरु अर्जनदेव द्वारा संकलित आदि ग्रंथकी हस्तलिखित प्रति हरिमन्दिर, अमृतसर, में रख दी गयी थी। यह प्रति अब करतारपुर (जिला जालन्धर) में पड़ी है। वर्षमें अेक बार अिसके दर्शनोंके लिअे लाखों सिक्ख यहाँ जमा होते और चढ़ावे चढ़ाते हैं। महाराजा रणजीतसिंहने दर्शन करते समय अेक बड़ी जागीर चढ़ावेके रूपमें भेंट की थी जिसका अुपभोग आज भी गुरु अर्जनदेवके वंशज कर रहे हैं। अिस प्रतिमें मीराका पद कलमसे काटा हुआ है।

---

२. मीराका पद मुद्रित प्रतिमें अुपलब्ध नहीं होता।

मूल ग्रन्थकी दो प्रतिलिपियाँ और भी थीं जिन-पर गुरु अर्जनदेवके हस्ताक्षर ले लिये गये थे—अेक मांगट (जिला गुजरात) में और दूसरी दमदमा साहबमें। मांगटवाली प्रति-लिपिका देशके बँटवारे (१९४७) के बाद क्या हुआ, कुछ ज्ञात नहीं, दमदमेवाली प्रतिलिपि अहमदशाह अब्दालीके समयसे अुपलब्ध नहीं, परन्तु जो मुद्रित ग्रन्थ अिस समय प्रचलित है वह अिसीका संस्करण है।

गुरु ग्रन्थ साहिबका क्रम अिस प्रकार है--

१. जपुजी—गुरु नानक-कृत—अिसमें सिखोंका मूलमन्त्र, १ ओंकार सतनाम करता पुरखु निरभअु निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि भी है।

२. सोदर—गुरु नानक-कृत। अिसमें पाँच शब्द (पद) हैं।

३. सो पुरखु—गुरु रामदास-कृत। अिसमें चार पद हैं। जपुजीका पाठ प्रातः तथा सोदर अेवं सोपुरखुका पाठ सायंकालमें करते हैं।

४. सोहिला—गुरु नानक-कृत। अिसमें चार पद हैं। पाठ रातमें सोनेसे पहले किया जाता है।

५. राग; निम्नलिखित ३१ राग प्रयुक्त हुअे हैं—सिरी, माझ, गअुड़ी, आसा, गूजरी, देवगंधारी, बिहागड़ा, बडहंसु, सोरठि, धनासरी, जैतसिरी, टोडी, बैराड़ी, तिलंग, सूही, बिलावलु, गौड, रामकली, नटनाराअिन, माली गउड़ा, मारू, तुखारी, केदारा, भैरअु, बसंतु, सारंगु, मलार, कानड़ा, कलिआन, प्रभाती, जैजावंती।

अिनके अतिरिक्त छह राग संयुक्त होकर प्रधान रागोंके साथ आय हैं—ललित, आसावरी, हिंडोल, भोपाली, विभास, दीपकी।

अिन रागोंमें निम्नलिखित काव्यरूप मिलते हैं—सबद, अष्टपदियाँ, छन्द और वार। अन्य वाणियोंके नाम ये हैं—पहरे, वणजारा, बारहमासा, दिन रैणि, करहले, बावन अक्खरी, सुखमनी, थिती, बिरहड़े, पट्टी, घोड़ियाँ,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अलाहणियाँ, आरती, कुचज्जी, सुचज्जी, गुणवंती, वार-सत, अनन्दु, सद्, ओअंकारु, सिद्धगोष्ठी, अंजलियाँ, सोहिले। ये वाणियाँ प्रायः अष्टपदियोंके बाद आती हैं।

रागोंमें गुरुवाणी पहले और भगत-वाणी अुसके पश्चात् आती है। सिक्ख गुरु सभी अपने शब्दोंके अन्तमें 'नानक' नाम लिखते हैं, अतः अुनकी वाणीके साथ क्रमशः महल्ला १, महल्ला २, महल्ला ३, महल्ला ४, महल्ला ५ और महल्ला ९ का संकेत रहता है। भगत-वाणीमें प्रत्येक भक्तका अपना नाम आता है।

६. भोग जिसके अन्तर्गत सलोक (दोहे), गाथा, फुनहे और चअुबोले हैं।
७. सलोक फरीद।
८. सवैये सिरीमुखवाक्।
९. भट्टोंके सवैये—पहले पाँच गुरुओंकी स्तुतिमें।
१०. अतिरिक्त सलोक।
११. सलोक महल्ला ९।
१२. मुंदावाणी।
१३. रागमाला।

पृष्ठोंकी कुल संख्या १४३० है। मुद्रित ग्रन्थ साहिब हिन्दीमें हो चाहे गुरुमुखीमें, २०×३०/८ हो, १८×२२/८ हो, २०×३०/४ हो, २२×२९/४ हो और चाहे १८×२२/२ हो, कोअी साअिज हो, पृष्ठों और पंवितयोंकी संख्या वही रहती है—टाअिपका अन्तर अिस हिसाबसे रहता है कि प्रत्येक संस्करणका कोअी पृष्ठ ले लो अेक ही शब्दसे प्रारंभ होगा।

किस भावको प्रगट करनेके लिअे किस रागका प्रयोग हुआ, अभी अिस विषयपर विशेष खोज नहीं हुअी। 'रागमाला'में ६ प्रधान राग, ३० रागिनियाँ और ४८ अिनके पुत्र = कुल ८४ राग गिनये गये हैं। पर गुरु ग्रंथमें केवल ३० रागोंके प्रयोग हुअे हैं। अिसका कारण अवश्य होगा। पुरातन रागोंमें मेघ, दीपक, मालकौंस, जोग आदि अत्यन्त प्रसिद्ध रागोंमें वाणियाँ नहीं हैं। अिसका कारण यह जान पड़ता है कि अिनसे असीम शान्ति, ताप, अुदासी अथवा आल्हादकी अुत्पत्ति होती है। ये गुरु ग्रन्थके भाव-मण्डलके अनुकूल नहीं पड़ते। जोगियोंको सम्बोधन करनेवाले पद रामकलीमें और मुसलमानोंको अुपदेश देनेवाले पद आसा, सूही अथवा तिलंगमें लिखे गये हैं। अिसका कारण यह है कि अैसे ही राग क्रमशः जोगियों और मुसलमान फकीरों द्वारा अधिक प्रयुक्त होते थे।

गुरु ग्रन्थकी रचनामें संगीत-शास्त्रका बहुत ध्यान रखा गया है और 'घर', 'ताल', 'स्थायी', 'अस्थायी', 'अन्तरा', 'गत', 'जत', 'धुन' आदिके संबंधमें पूरे-पूरे संकेत दिये गये हैं। काव्यमें संगीतकी सूक्ष्मताओंके महत्त्वको आज बहुत कम लोग समझते हैं।

यह बात विशेषतया अुल्लेखनीय है कि गुरुवाणी तथा भगत-वाणीमें प्रयुक्त छन्दोंमें लोक-छन्दोंको देख-कर यह प्रश्न अुठ सकता है कि जिन्हें आज साहित्यिक छन्द कहते हैं, क्या वे भी मूलमें और विशेषतया अुस समय लोक-गीतों ही के छन्द तो नहीं थे? गुरु ग्रन्थमें प्रयुक्त सिठणियाँ, सोहाग, घोड़ी आदि आज भी विवा-होत्सवोंपर पंजाब भरमें गाये जाते हैं। मृत्युपर वैण और अलाहणियाँ आज भी लोक-प्रचलित हैं। बारहमासा, थिती, वार, सद्, आदि पंजाबके प्रसिद्ध लोक-छंद हैं। सोहिला प्रत्येक शुभ अवसरपर गाया जाता है। दुपदे, चअुपदे, अष्टपदियाँ, दोहरा, आदि छंदभी पुराने लोक-गीतोंमें मिलते हैं। संत-साहित्य लोक-साहित्यका ही अेक विशिष्ट रूप माना जाअे तो अनुचित न होगा। अतः अिसमें लोक-छंदों, लोकालंकारों और लोकभाषाका व्यवहार स्वाभाविक ही है। हमारा विश्वास है कि सवैया, झूलना, कवित्त, दोहा, सोरठा, चौपाअी आदि छंद लोक-साहित्यकी देन हैं— वहींसे ये छन्द गुरुओं और भक्तोंको प्राप्त हुअे हैं।

गुरु ग्रन्थ साहबकी भाषा अेक रूप नहीं है—अेकरूपता थी भी असंभव। जयदेव बंगालके, नामदेव, सेन और त्रिलोचन महाराष्ट्रके कबीरदास और रविदास भोजपुरी प्रदेशके, भीखनजी अवधके, धन्ना राजस्थानके, नानक, अंगद और फरीद लहंदी प्रदेशके अेवं अन्य सिख गुरु पंजाबी प्रदेशके थे। अिनकी वाणियोंमें प्रादेशिकता स्पष्ट है। परन्तु अिस विविधताके बीचमें भाषाकी अेकता देखकर आश्चर्य होता है। गुरु नानक और भक्त कबीरकी भाषामें विशेष अन्तर नहीं, त्रिलोचन और गुरु अर्जनकी भाषा अेक-सी लगती है। अिससे कहा जा सकता है कि कम-से-कम १५ वीं- १६ वीं शताब्दी तक राष्ट्रभाषाका स्वरूप प्रतिष्ठित हो गया था—और वह राष्ट्रभाषा हिन्दी ही थी जिसमें मराठी बंगाली, भोजपुरी, अवधी, गुजराती, राजस्थानी, पंजाबीका पुट होते हुअे भी स्वरूपकी अेकता निश्चित थी। गुरु ग्रंथ साहिबमें सन् १६०४ से सुरक्षित चली आती हुअी भारत भरके लोक-नायकोंकी वाणियाँ हिंदीकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यापक मान्यता और सर्वग्राह्यताका जोरदार प्रमाण अुपस्थित कर रही हैं।

अुद्धरण :—

अंतर मलि निरमलु नहीं कीना, बाहरि भेष अुदासी।
हिरदै कमलु घटि ब्रह्म न चीन्हा, काहे भअिआ संनिआसी॥
भरमे भूली रे जैचंदा। नहीं नहीं चीन्हिआ परमानंदा॥
(त्रिलोचन)

अेक अनेक बिआपक पूरक, जत देषअु तत सोअी।
माअिया चित्र विचित्र विमोहित, बिरला बूझै कोअी॥
सभु गोविंदु है, सभु गोविंदु है, गोविन्द बिन नहिं कोअी।
सूतु अेकु मणि सत सहंस जैसे, ओत पोत प्रभु सोअी॥
(नामदेव)

ना मैं जोग धिआन चितु लाअिआ।
बिन बैराग न छूटसि माअिआ॥
कैसे जीवनु होअि हमारा।
जब न होअि राम नाम अधारा॥
कहु कबीर खोजअु असमान।
राम समान न देखअु आन॥
(कबीर)

तुम चंदन हम अिरंड बापुरे, संगि तुमारे बासा।
नीच रूप ते अूंच भअे हैं, गंध सुगंध निबासा॥
माधअु, संत संगति सरनि तुम्हारी।
हम अअुगन तुम अुपकारी॥
(रविदास)

बेड़ा बंधि न सकिओ बंधन की वेला।
भर सरवर जब अूछले तब तरन दुहेला॥
(फ़रीद)

अेक बूंद जल कारनै, चात्रिक दुषु पावै।
प्रान गअे सागरु मिलै, फुनि कामि न आवै॥
प्रान जु थाके थिरु नहीं, कैसे बिरमावअुं।
बूड़ि मूअे नअुका मिलै, कहु काहि चढ़ावअुं॥
मैं नाहीं कछु हअु नहीं, किछु आहि न मोरा।
अअुसर लजा राषि लेहु सधना जनु तोरा॥
(सदना)

दुख सुख दोअू सम करि जाणै, बुरा भला संसार।
सुधि बुधि सुरति नामि हरि पाअिअै,
सतसंगति गुरु पिआर॥
अहिनिसि लाहा हरि नामु परापति गुरु दाता देवणहारु।
गुरमुखि सिख सोअि जनु पाअे,
जिसनो नदरि करे करतारु॥
काअिआ महलु मंदरु घरु हरि का,
तिस महि राखी जोति अपार॥
नानक गुरुमुखि महलि बुलाअिअै, हरि मेले मेलणहार॥
(नानक)

अैसा नामु रतनु निरमोलकु, पुन्नि पदारथ पाअिआ।
अनिक जतन करि हिरदै राषिआ,
रतनु न छपै छपाअिआ॥
हरिगुन कहते कहनु न जाअी। जैसे गूंगे की मिठिआअी।
रसना रमत सुनत सुषु स्रवना, चित चेते सुषु होअी।
कहु भीषन दुअि नैन सँजोवे, जहँ देखा तहँ सोअी॥
(भीखन)

हरि दरसन कअु मेरा मनु बहु तपतै,
जिहु त्रिषावंतु बिनु नीर।
मेरे मनि प्रेमु लगो हरि तीर।
हमरी वेदन हरि प्रभु जानै, मेरे मन अंतर की पीर।
मेरे हरि प्रीतम की कोअी बात सुनावै, सो भाअी सो बीर॥
मिलु मिलु सषी गुण कहु मेरे प्रभु के,
सतिगुर मति की धीर।
जन नानक की हरि आस पुजावहु
हरि दरसनि सांति सरीर॥
(रामदास)

बिसरि गअी सभ तात पराअी,
जबते साध संगति मोहिं पाअी।
ना को बैरी नाहीं बिगाना,
सगल संगि हम कअु बनि आअी॥
जो प्रभु कीनो सो भल मानिअु, अेह सुमति साधु ते पाअी।
सभ महि रमि रहिआ प्रभु अेकै,
पेषि पेषि नानक बिगसाअी॥
(अर्जनदेव)

मनकी मनही माहि रही।
ना हरि भजे न तीरथ सेवे, चोटी काल गही॥
दारा मीत पूत रथ संपति, धन पूरन सभ मही।
अवर सगल मिथिआ अे जानहु, भजन रामको सही॥
फिरत फिरत बहुते जुग हारिअु, मानस देह लही।
नानक कहत मिलन की बिरिआ, सिमरत कहा नही॥
(तेगबहादुर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दीमें नगरवर्णनात्मक साहित्य

: मुनि श्री कान्ति सागर :

ग़ज़ल अरबी भाषाका शब्द है। अिसका अर्थ छंदका अेक प्रकारका न होकर, काव्यका अेक प्रकार है। फारसीमें अिस शब्दका प्रयोग प्रेम-वर्णन-परक काव्यके साथ अेक विशिष्ट प्रकारसे सम्बद्ध जान पड़ता है। यहाँपर जिन नगरवर्णनात्मक गजलोंका अुल्लेख किया जा रहा है वे छंद विशेषके रूपमें आ अुपस्थित हुअी हैं। तात्पर्य यह कि वर्णनका जो तरीका अख्तियार किया गया, वह सर्वथा गजल शब्दके अुपयुक्त है। वर्णनात्मक काव्योंके लिअे अिस छंद या ढंगका सर्वप्रथम प्रयोग जैन कवि जटमल नाहरने अपनी लाहोरकी गजलमें किया है और परवर्ती अन्य कवियोंने अिसका अनुकरण किया। अिस प्रकारकी रचनाअें हमें दो रूपोंमें मिलती हैं। अेक तो स्वतंत्र नगरवर्णनात्मक काव्योंके रूपमें तथा पुरातन आचार्योंको विशेष प्रसंगोंपर प्रेषित विज्ञप्ति-पत्रोंमें। अुपलब्ध साहित्यसे तो यही प्रकट होता है कि प्रथम अिस प्रकारकी रचनाअें स्वतंत्र हुआ करती थीं, बादमें विज्ञप्ति-पत्र लेखकोंने अिस परम्पराको अपनाया, क्योंकि वैसे पत्रोंमें अिसकी आवश्यकता अधिक रहती थी। छंद, रास और सिलोका आदि शब्दान्तर्गत नगरवर्णनात्मक साहित्य भी प्रचुर परिमाणमें अुपलब्ध होता है।

गजलोंकी पूर्व परम्परापर प्रकाश डालते हुअे पुरातत्वाचार्य मुनि **श्री जिन विजयजी** लिखते हैं:—

"अिस प्रकारके स्थलोंके वर्णनकी पद्धति भारतमें बहुत प्राचीन कालसे चली आ रही है। पुराणकारोंने अिसका माहात्म्य नामसे व्यवहार किया है और जैन ग्रन्थकारोंने अिसका कल्प नामसे व्यवहार किया है। काशी-माहात्म्य, प्रयाग-माहात्म्य, गया-माहात्म्य, श्री-स्थल माहात्म्य अित्यादि नामसे सैकड़ोंही स्थानोंके अैसे माहात्म्य वर्णन पुराणोंमें लिखे हुअे मिलते हैं। पुराणोंकी दृष्टि धार्मिक है, अिसलिअे अुनके वर्णनमें प्रधानतया स्थानका दैवी-माहात्म्य बतलाया गया है और अुसके अंगभूत जो नदी, सरोवर, देवस्थान और पूजनीय वृक्षादि हैं अुनकाही विशेष वर्णन किया गया है। अिन माहात्म्य-वर्णनोंमें, कहीं-कहीं कुछ प्राकृतिक वर्णन और कुछ अैतिहासिक स्मरणका भी थोड़ा-बहुत अुल्लेख मिल जाता है। जैन ग्रन्थकारोंके कल्पात्मक स्थान वर्णन भी प्रायः अिसी धार्मिक दृष्टिको सामने रखकर लिखे हुअे होते हैं और अुनमें भी विशेषतया स्थान या तीर्थका माहात्म्य बतलाया गया है परन्तु साथमें अुनमें कुछ अैतिहासिक अुल्लेखोंकी अुपलब्धि भी अधिक परिमाणमें पायी जाती है। जिनप्रभसूरिका **'विविध तीर्थ कल्प'** नामका ग्रन्थ अिस विषयका मुख्य अुदाहरण-भूत है। पुराणोंकी और कल्पग्रन्थोंकी पद्धतिका अनुकरण पिछले देशी भाषाके कवियोंने भी किया। अुन्होंने भी लोक-भाषामें अैसी स्थल-वर्णनात्मक और तीर्थमाहात्म्य विषयक अनेक रचनाअें कीं। अिन्हीं रचनाओंकी जैसी ये गजलात्मक कृतियाँ समझनी चाहिये। अन्तर अिनमें अितना है कि ये कृतियाँ माहात्म्यकी दृष्टिसे नहीं; किन्तु केवल मनोरंजन और स्थल परिचयकी दृष्टिसे लिखी गयी हैं।

यों तो पुरातन कथात्मक ग्रन्थोंमें और कतिपय अैतिहासिक ग्रन्थोंमें नगर-वर्णन विस्तृत रूपमें पाया जाता है। पर अुनकी सीमा है। कवि अपेक्षित रस-सृष्टिका ही ध्यान रखता है। गजलके लेखकोंने सापेक्षतः अपना दृष्टिकोण बहुत ही व्यापक तथा सार्वजनिक रखा है। अपेक्षाकृत भले ही नूतन ज्ञात होती हो, पर वर्णनात्मक-परम्परा बहुत प्राचीन है।

गजलोंकी अुपलब्धि :

आजसे १४ वर्ष पूर्वकी बात है। मुझे चातुर्मास बम्बअीमें करना था। अुस समय अनन्तनाथजीके पुरातन हस्तलिखित ग्रन्थ व्यवस्थित किये जा रहे थे। मुझे भी कुछ योग देना पड़ा था। अुस समय मैंने अैतिहासिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृतियोंपर विशेष रूपसे ध्यान दिया। जो महत्वकी लगतीं अुसकी प्रतिलिपि भी कर लेता था। चित्तौड़, अुदयपुर, बंगाल, सूरत और बड़ौदाकी गजलें तथा कोठाराका छन्द आदि रचनाअें वहींपर प्राप्त हुअीं। अिनमेंसे कुछ मैंने **भारतीय विद्याभवनके** तात्कालिक सर्वेसर्वा मुनि श्री जिनविजयजीको बतायीं। वे भी प्रसन्न हुअे। अैसी रचनाके संग्रहका महत्व मुझे समझाकर प्रोत्साहित किया। बम्बअीसे अुन्होंने मुझे अपने पूज्य गुरुमहाराज श्री अुपाध्याय सुखसागरजी महाराजके साथ नागपुर आना पड़ा। चातुर्मास वहीं हुआ। यहाँके और कामठीके ज्ञान-भंडारोंकी जाँच करनेपर मुझे अेक गुटका मिल गया। जो वि. सं. १८३५ का था और अिसके लेखक यति दौलतराम थे, जो कामठीके अिति-हास-प्रेमी यति थे। अिसमें अुपलब्ध गजलोंकी नकलें थीं ही, साथ ही नागोर, मरोट, बीकानेरकी गजल और पालनपुर-छंद अुपलब्ध हुआ। नागपुरके बाबू पारसप्रताप कोठारीके और बालापुर निवासिनी श्राविका चंदन बहनके संग्रहके फुटकर पत्रोंमें गजलोंकी प्रतिमाअें मिल गयी हैं। प्राप्त गजलोंमेंसे [1]अुदयपुर, [2]बंगाल, [3]लाहोर और [4]चितौड़ की गजलें मैंने प्रकाशित करवा दी थीं। सूरतकी गजल स्व० मोहनलालभाअी देसाअी "जैनयुग" (वर्ष ४) में तथा बड़ौदाकी गजल पं० लालचन्दभाअी गांधी "सुवास"में प्रकट कर चुके हैं।

बीकानेरवासी श्री अगरचन्दजी नाहटाने लिखनेपर अपने संग्रहकी कतिपय गजलें मुझे भेजीं। बादमें अिन्हीं दिनों मैंने लाहौर, झींगोर, बीकानेर, अुदयपुर, गिरनार, आगरा, चितौड़, भरोट, बंगाल, पाटन, बड़ौदा, डीसा सूरत, कापरडा आदिकी गजलोंके आदि अंत भाग तथा अुनपर कुछ आवश्यक विवेचन लिख "**जैनोनुं गजल साहित्य**" शीर्षक निबन्ध लिखा, जो फार्बस गुजराती सभाके त्रैमासिकमें प्रकट हुआ था। आगे चलकर प्राप्त गजलोंमेंसे चुनी हुअी, मेरे द्वारा सम्पादित गजलें **श्रीनगर वर्णनात्मक हिन्दी-पद्य-संग्रहमें** प्रकट हुअीं। अिस बीच बुद्धिप्रकाशमें मेवाड़पर अेक प्रशस्ति प्रकट हुअी थी जो वर्णनकी दृष्टिसे बहुत ही सुन्दर तथा भावपूर्ण थी। नाहटा बंधुओंने अिस बीच अपनी खोज जारी रखी और जो-जो गजलें अुन्हें नवीन मिलती गयीं वे मुझे बराबर भेजते रहे, क्योंकि मेरा विचार था कि अुनका सामूहिक प्रकाशन होना चाहिये, मैंने प्रारंभ तो किया था, पर अर्थके अभावमें वह कार्य आगे न चल सका।

गजलोंकी शैलीसे प्रभावित होकर अिनकी जैसी चालमें नगरवर्णनके अतिरिक्त अन्य प्रकारकी रचनाअें भी बनीं अेवं अिस चालसे भिन्न अन्य छन्दोंमें नगर-वर्णनात्मक गजलें बनीं। अुन छंदोंमें--पद्धरी, कवित्त, छप्पय आदि तो गजलके अन्तमें प्रायः मिलते हैं। अुपर्युक्त पंक्ति वर्णित रचनाओंके अुदाहरणस्वरूप क्रमशः अिन रचनाओंको रखा जा सकता है, सुन्दरी गजल, हनुमान गजल, पालनपुर-छंद, मेवाड़का छंद, जैसलमेरका सिलोका, गुजरात वर्णन, थलीकाकी अुत्तमता और नीचता, कोठारा[1] (कच्छ) का छंद, पूर्वदेश वर्णन छंद, देशान्तरी छंद, फलबद्धिका छंद आदि-आदि।

प्रस्तुत गजलोंका अैतिहासिक महत्व :

श्रमण परम्पराका अितिहास तथा कला विषयक प्रेम कितना व्यापक था, वह आजके युगमें शायद ही बतानेकी आवश्यकता रहती हो। जैन साहित्यकी विभिन्न शाखाओंके अवगाहनसे स्पष्ट ज्ञात हो जाता है कि अुसके प्रणेताओंने आत्मलक्षी संस्कृति पोषक विचारोंको स्वात्म अनुभवसे लिपिबद्ध तो किया ही, साथ ही साथ लोक चेतनाको अुद्बुद्ध करनेवाले लौकिक तत्त्वोंकी भी अुपेक्षा नहीं की। यही कारण है कि आज जैन-साहित्यके ग्रंथोंमें,

---

१. भारतीय विद्या भा. १ अंक ४ पृष्ठ ४१३
२. भारतीय विद्या भा. १ अंक ४ पृष्ठ ४१३
३. जैन विद्या भा. अंक १ पृष्ठ २५-३१
४. फार्बस गुजराती सभा त्रैमासिक भा. ५ अं. ४ पृष्ठ ४५८-४७२

१. किसी यतिने घनघोर अप्रसन्न वायुमंडलमें अिसकी रचना की है। अिसमें वहाँके जैनोंको खूब गालियाँ दी हैं। कोठाराका छंद अपशब्दोंका कोश है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञान-भंडारोंमें अितिहासकी बहुमूल्य सामग्री प्रचुर परिमाणमें अुपलब्ध होती है। प्रायः प्रत्येक शताब्दीमें जैन मुनियोंने अैतिहासिक-साहित्यकी भी रचना की। १६वीं शताब्दी पूर्वकी अैसी रचनाअें संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंशमें मिलती हैं--अुन दिनों अिन भाषाओंका अितना व्यापक प्रचार था कि सामान्य जनता भी कुछ न कुछ तो समझ ही लेती थी। तदनन्तर भाषाने करवट बदली। कवियोंने भी अपने माध्यममें परिवर्तन किया। अंशतः विषय भी बदला। मुगलोंके संसर्गसे, पूर्व-संचित अितिहास केवल पुनः जाग्रत ही नहीं हुआ, अपितु अुसमें नवीन संस्कार भी प्रविष्ट हुअे। फलस्वरूप गजलोंकी सृष्टि होने लगी। भले ही अिन गजलोंका वर्ण्य-विषय मनोरंजनात्मक ही क्यों न हो पर अिनमें अैतिहासिक तथ्य भी है। अिसलिअे भाषा और साहित्यिका सौन्दर्य न होते हुअे भी, गवेषणाके क्षेत्रमें अिन्हें स्थान प्राप्त है। अिन नगर-वर्णनात्मक गजलोंमें अुसका पूरा अितिहास भलेही न आता हो पर साधन-सामग्रीकी दृष्टिसे अिनका महत्व विशेष है।

समुपलब्ध गजलोंको मैंने अपने दृष्टि-कोणसे पढ़ने-समझनेकी चेष्टा की और गजलवर्णित स्थान तथा विषयका समर्थन, तात्कालिक अन्यान्य अैतिहासिक साधनों द्वारा किस सीमा तक होता है, अिस तुलनामूलक पद्धतिको भी अपनानेका लघु प्रयास किया; कारण सिद्धाचल, गिरिनार और पाटन आदिकी गजलोंमें जिन-जिन महत्वपूर्ण जैन-अजैन स्थानोंके अुल्लेख आये हैं, अुनका समर्थन तीर्थमालाओंसे तो होता ही है; कुछ-अेक स्थानोंका समर्थन पुराण तक करते हैं। कतिपय पद्योंमें किंवदन्तियाँ भी अुपलब्ध होती हैं।

गजलोंमें शुद्ध अितिहास भले ही अुपलब्ध न होता हो; पर अैतिहासिक तथ्योंका संग्रह अवश्य रहता है। अुस स्थानपर अुस समय कौन राजा था? शासित प्रदेशकी सीमा कितनी विस्तृत थी? अिसमें कौन-कौनसे नगर मुख्य थे? अुनके तात्कालिक क्या नाम थे और बादमें कैसे परिवर्तन हुआ? नगर और देशमें किन-किन वस्तुओंका व्यापार होता था? स्थानीय कौनसी वस्तु प्रसिद्ध थी? वहाँपर दर्शनीय तथा अैतिहासिक अेवं धार्मिक कौन-कौनसे स्थान थे और अुनके साथ किस प्रकारकी जनश्रुतियाँ जुड़ी हुअी हैं आदि! नगरके कूप, वापिका और जलाशय, प्रधान खाद्य, नगरके प्रमुख नागरिक और राजकर्मचारी, बाजार, राजा तथा अुनके परिवारके सदस्य, वहाँके खण्डहरोंका परिचय, वहाँ बसनेवाली जातियाँ और अुनके व्यवसाय तथा सामाजिक प्रथाअें आदि अनेक महत्वपूर्ण बातोंका संग्रह अैसी गजलोंमें रहता है जो अन्यत्र शायद अुपलब्ध न हों। भौगोलिक दृष्टिसे भी अिनका अपना महत्व है। अैसी कृतियोंको यदि नगरोंका गजेटियर कहें तो अत्युक्ति न होगी।

अधिकांश गजलोंके रचयिता प्रायः जैन या यति हैं। १७ वीं शताब्दीसे २० वीं शती तक अिस प्रकारकी पद्यनिर्माण पद्धति सुरक्षित रही। धार्मिक नियमानुसार जैन मुनि अधिक समय तक अेक स्थानपर, बिना विशेष कारणके नहीं रह सकते। वे पैदल चलते हैं, किसी भी स्थितिमें वाहनका अुपयोग नहीं करते, अतः पाद-विहार आनिवार्य है। सांस्कृतिक प्रचारकी विशुद्ध भावनासे अिन्हें भारतके सब प्रदेशोंमें भ्रमण करना पड़ता था, जहाँ जैनोंका निवास हो। अतः वे नगर, देश, ग्रामोंसे खूब परिचित थे। अुनमें अैतिहासिक-दृष्टिकोण था, प्रत्येक वस्तुको हियेकी आँखसे देखकर समुचित मूल्यांकनकी क्षमता थी, वे प्रकृति-सुषमाके मौलिक तत्वोंको संयम द्वारा जीवनमें आत्मसात् कर चुके थे, जनकल्याण और सांस्कृतिक लोक-चेतना कैसे जाग्रत हो यह अुनके जीवनका दृष्टि-बिन्दु था। अिन्हीं अुदात्त भावनाओंने अुन्हें अिस ओर आकृष्ट किया। अनुभूतिको कविताके द्वारा व्यक्त करनेको अुत्प्रेरित किया। रचयिता जैन मुनि थे। परन्तु अुनकी दृष्टि विशाल, अुदार और समत्वकी भावनापर प्रतिष्ठित होनेके कारण प्रत्येक साम्प्रदायके साथ न्याय किया गया। गिरिनारकी गजलमें देखेंगे कि अजैन तीर्थस्थानोंका अुल्लेख भी जैनयति कितने सम्मानके साथ करता है। प्रत्यक्ष अनुभवजन्य-ज्ञानका परिपाक गजलों द्वारा हुआ है। ये विश्वस्त साधन हैं। हिन्दी-राजस्थानी भाषाके **अैतिहासिक साहित्यमें जैन श्रमणोंको यह मौलिक देन है।**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गजलका पूरा चित्र पाठक तथा अन्वेषकके खयालमें आ सके अिसलिअे आगरा और बीकानेरकी गजलें ज्यों की त्यों दे रहा हूँ। अतिरिक्तके आदिम तथा अन्त भाग अेवं अैतिहासिक परिचयसे ही संतोष करना पड़ रहा है।

गजलोंका प्रान्तवार विभाजन अिस प्रकार किया जा सकता है:—

(१) **पंजाब**—लाहोर, झिंगोर।

(२) **अुत्तर-प्रदेश**—आगरा।

(३) **सिंध**—मरोट गजल।

(४) **राजस्थान**—अुदयपुर, चित्तौड़, बीकानेर, सोझत, नागोर, मेड़ता, जोधपुर, कापरड़ा, पाली और आबू।

(५) **गुजरात**—डीसा, पाटन, सूरत, खंभायत, जंबूसर, सिनोर, बड़ौदा, बम्बअी, अहमदाबाद।

(६) **सौराष्ट्र**—पोरबन्दर, सिद्धक्षेत्र, पालीताना, भावनगर, गिरिनार, मांगरोल।

(७) **बंगाल**—बंगालकी गजल, पूरब देशका वर्णन।

(८) **मध्य-भारत**—अिन्दौर।

अुपर्युक्त विभाजनसे तो स्पष्ट है कि वर्ण्य गजलोंका मुख्य स्थान पश्चिम भारत ही रहा है। दूरवर्ती जिन नगरोंपर, जिन विद्वान् यतियोंने गजलें लिखीं वे भी पश्चिम भारतीय यति थे। केवल चातुर्मास व्यतीत करनेके लिअे, वे यहाँ गये थे। तात्कालिक क्षेत्रदेश पट्टोंसे भी अुनमेंसे कुछेकका तात्कालिक भौगोलिक अतिरिक्त सिद्ध होता है।

जिन कवियोंने रचनाकाल सूचित किया है और जिनका नहीं है अुनका आनुमानिक रूपसे स्थिर किया जा सका है। वे सब रचनाअें क्रमिक ढंगसे दी हैं पर अिनमें ३–४ रचनायें अैसी हैं जिनमें न लेखकने अपना नाम दिया। और न रचनाकाल ही निर्दिष्ट है—अैसी रचनाअें अन्तमें दी गयी हैं।

ये १–२ गजलें आगराके विजय धर्म लक्ष्मी-ज्ञान भंडारमें कविके हाथकी लिखी विद्यमान हैं।

भाषा:

गजलोंकी भाषामें फारसी भाषाके शब्दोंकी प्रचुरता है अेवं राजस्थानीका भी खूब सम्मिश्रण है, जो स्वाभाविक है। सौराष्ट्रसे सम्बद्ध रचनाओंमें कहीं-कहीं ठेठ काठियावाड़ी शब्द भी मिल जाते हैं तो कहीं-कहीं ठेठ खड़ीबोलीके प्रयोग भी अुपलब्ध हैं। रचनाका ढंग अुर्दू-साहित्यसे मिलता-जुलता है; तो अुर्दू भाषाका प्रभाव पड़ना भी अस्वाभाविक नहीं। अुदाहरणार्थ मरोटकी गजलोंको ही लें, भारतीय साहित्यमें रचनाके अन्तमें लेखनकाल देनेका विधान है और अरबी, फारसीमें रचना-काल ग्रंथके पूर्व। द्वितीय ढंगका प्रभाव, स्वरूप मरोट गजलमें विद्यमान है। अिसमें लेखकने रचनाकाल शुरूमें दे दिया, जब कि भारतीय परम्परानुसार अन्तमें देना चाहिये था। जहाँ भाषाका विचार किया जाता है वहाँ छंद भी अनुपेक्षीय नहीं। मुगलोंसे सम्पर्क बढ़ने पर गजल निर्माताओंने फारसी शब्द परम्पराके साथ छंदोंको भी अपनाया, जैसे रेखता और गजल। गजलोंमें आप देखेंगे दोहे, चौपाअी आदि भारतीय छंद मिलेंगे। अैसा लगता है कि कवियोंने विषय तथा भाषामूलक छंदोंको अपनाया।

हिन्दी-राजस्थानी और अुर्दू मिश्रित ये रचनाअें भाषा विज्ञानकी दृष्टिसे या शुद्ध साहित्यकी दृष्टिसे कुछ भी महत्व नहीं रखतीं पर लोक-साहित्य और अैतिहासिक तत्त्वकी दृष्टिसे अनुपेक्षणीय हैं। हाँ, किसी-किसी रचनामें भाषाके साथ भावमूलक सौन्दर्य है; पर कवि अिस परम्पराको अन्त तक निभा नहीं सका। किसी रचनामें चन्द शब्द सुन्दर रहनेसे वह रस-सृष्टि नहीं हो सकती, अिसके लिअे तो अुसमें प्रचंड प्रवाह, लालित्य और पाण्डित्य चाहिये। मैं नहीं समझता कि गजलके अधिकांश प्रणेता ख्यातिप्राप्त साहित्य-सेवी रहे हों।

समालोचकोंसे मेरा विनम्र विवेदन है कि वे गजलोंकी भाषापर अधिक ध्यान न देकर अुनके वर्ण्य विषयपर ध्यान दें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गजल-प्रति-परिचय :

जिन-जिन प्रतियोंसे प्रस्तुत निबन्ध मूर्तरूप धारण कर सका अुनमेंसे अुपलब्ध प्रतियोंका परिचय देना अत्यंत आवश्यक है।

(१) लाहौर गजल—

छोटेसे गुटकेमें लाहौर, अुदयपुर, चितौड़ और मरोटकी गजलें लिखी हैं। वह मेरे संग्रहमें सुरक्षित हैं। पुष्पिका अिस प्रकार है:—

संवत १८३५ वर्षे शाके १७०० सअीका प्रवर्तमाने मासोत्तम भाद्रमासे शुक्ल पक्षे ७ तिथो चंद्रवासरे श्री मरोटको है। खरतर-आचार्य-गच्छे पंडित प्रवर गुरुजी श्री १०७ वीर भाणजी तत्सिष्य मुक्ष (ख्य) अंतेवासी प. प्र. श्री डाहामलजी तसिष्य प. प्र. दोलतराम मुनिना लिपी चक्रे अियं पुस्तिका ॥

दोहा (दूहा)

जब लग सूरिज चन्द्रमा, जब लग जमी आकास।
तब लग अिह पोथी सदा, रहै अमारे पास ॥१॥

अिह पोथी चितरंजनी, बाँचै ज्यों चिल्लाय।
पद्यां गुण्यां सुख अूपजै, अिह कले दोलतराय ॥२॥

नाहटा संग्रहकी लाहौरकी गजलके बाद जटमल-कृत "स्त्रीगजल" दी है। अुसके अन्तमें यह प्रशस्ति है—

"संवत १७६५ रा हरसरमध्ये पदमा ॥

मेरे संग्रहमें तीन प्रतियाँ लाहौर गज़लकी हैं। सुन्दर हैं, पर लिपिकाल नहीं है।

(२) चितौड़की गज़ल—

अिसकी तो अनेक प्रतियाँ विभिन्न भंडारोंमें पायी जाती हैं; पर नाहटाजीके संग्रहकी प्रति सर्व-प्राचीन है। लेखनकाल है —

संवत १७८९ माह सुदि १ दिने लिषते रिणी नगर मध्ये द० भाव्य समुद्रेण ॥छ॥

लिपि सुन्दर तथा सुपाठ्य है। अिसीमें अुदयपुर गज़ल भी है।

(३) अुदयपुर गज़ल—

सर्वप्राचीन प्रतिकी प्रशस्ति नं. २ में दी है। दो प्रतियाँ मेरे संग्रहमें भी हैं।

(४) आगरा गज़ल—

४ पत्रकी यह प्रति कहीं-कहीं दीमकों द्वारा नष्ट हो चुकी है और अिसकी प्रति अन्यत्र होनेकी सूचना, अिन पंक्तियोंके लिखते समय तक नहीं मिली। प्रति कविने स्वयं अपने हाथसे लिखी है।

(५) बंगालकी गज़ल—

मैंने अनन्तनाथजीके बम्बअीवाले ज्ञान-भंडारसे प्रतिलिपि की थी; अुसीके सहारे मैंने अिसे यहाँ दिया है। परन्तु आज १४ वर्ष पूर्वकी बात है; अतः प्रति-परिचय विस्मृत हो चुका है। प्रतिका आना संभव नहीं। अतः अितनेसे ही संतोष करना पड़ेगा। हाँ, नाहरजीके संग्रह (कलकत्ता) में अिसकी प्रतियाँ हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(६) गिरनार गज़ल—

गिरनारकी गजलकी प्रति नाहटाजीके संग्रहकी है। प्रति अति सामान्य है और कुछ खंडित भी थी। क्योंकि नाहटाजीने कुछ पंक्तियाँ स्वहस्तसे लिखकर प्रति पूर्ण की है। लिपि सामान्य है। पत्र २ हैं।

(७) पाटनकी गजल—

पाटन गजलकी अेक प्रति अभी-अभी मुझे बालापुरवासी चन्दन बहनके कुछ खंडित पत्रोंमें प्राप्त हुअी। लेखन प्रशस्ति अिस प्रकार है—

॥ संवत् १८९४ अमृत विजयेन लपिकृतं बालापुर ॥

अिसके लेखक बालापुरमें ही रहते थे। आपने वहाँपर रहकर सैकड़ों ग्रन्थोंका अपने हाथसे लेखनकर ज्ञान-भंडार स्थापित किया। बालापुरमें पाटनवाले ही अधिकतर हैं; अतः पाटनके प्रति प्रेम होना स्वाभाविक है। बाबू अगरचन्द नाहटाके संग्रहमें भी पाटनकी गजलकी ३ प्रतियाँ हैं, जिनका परिचय अिस प्रकार है—

प्रति १— पत्र संस्था १० प्रशस्ति—

अिति श्री नरसमुद्र पाटगनी गजल संपूर्ण श्री रस्तु ॥श्रीः॥ सं. १८७५ मिति माह बदि ४ लिखतं ॥

प्रति २— पत्र सं. ५, अिसकी लिपि बहुत सुन्दर, स्वच्छ और सुपाठ्य है। अिसका लेखक भी पटु जान पड़ता है। अिस प्रतिकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि हासियेमें पचासों पाठान्तर लिखे हुअे हैं। कहीं-कहीं तो मूल प्रतिके पाठोंमें ही परिवर्तन किये गये हैं। अिन संशोधनोंसे तो मुझे यही लगता है कि अिसकी प्रतिलिपि करनेवाला या तो कविकी ही परम्पराका शिष्य या निकटवर्ती कोअी यति रहा होगा, जब तो वह अितना अधिकारपूर्ण संशोधन कर सका। जो भी हो, सम्पादकका बहुत-सा श्रम लेखकने हलका कर दिया। अन्तिम प्रशस्ति अिस प्रकार है—

॥ अिति श्री नरसमुद्र परणनी गजल सम्पूर्ण ॥
सं. १८७२ वर्षे मा. सु. १० गुरुवासरे लखीतां ॥

मेरा तो ख्याल है, अुपर्युक्त प्रतिका आदर्श यही प्रति है।

प्रति ३—यह प्रति भी अुपर्युक्त प्रतिके समान है। पत्र सं. ६ है। तीनों प्रतियोंकी लिपि तो प्रायः समान है। संभवतः अेक ही परम्पराके लेखकोंकी भिन्न-भिन्न लिपियाँ हों तो क्या आश्चर्य !

(८) दीसानी गज़ल—

अिसकी भी अेक प्रति नाहटाजीके संग्रहमें प्राप्त हुअी है। प्रति बड़ी सुन्दर और छह पत्रोंकी है। अिसमें भी पाठान्तर प्रचुर है। मूलमें भी पाठान्तर परिवर्तित किये गये हैं। पाटन और डीसाके पाठान्तरका लेखक भिन्न नहीं ज्ञात होता; कारण लिपि-साम्य स्पष्ट है। अिसके अतिरिक्त जो छोटे-मोटे वर्णन हैं, वे भी फुटकर पत्रोंमें, टिप्पणाकार कुंडलियोंके रूपमें मिले हैं, कुछेक लम्बे-चौड़े विज्ञप्ति-पत्रोंमें संग्रहीत हैं। अतः, अुनका विस्तृत परिचय देना समुचित प्रतीत नहीं होता।

भाषा विषयक परिवर्तन जितना शीघ्र लोक-भोग्य साहित्य विषयक कृतियोंमें होता है, अुतना साहित्यमें नहीं। गजलें अेक प्रकारका लोक-साहित्य ही हैं; पर निर्माण होनेके बाद बहुत शीघ्र वे लिपिबद्ध हो गयीं—कअी तो कविकी ही लिखी हुअी हैं—अतः भाषा विषयक अधिक परिवर्तन न हो सका। भाषा विज्ञानके आधारपर हिन्दीके वीर-गाथाकालीन ग्रन्थोंके अध्ययन तथा अुनके समयके विद्वानों द्वारा जो भारी भूलें हुअीं, अुनका अेक यह भी कारण है कि जब जो रचना बनी वह तत्काल या अुसी शताब्दीमें न लिखी जाकर, कअी वर्षों तक मौखिक परम्पराके रूपमें जीवित रही, फिर बादमें लिपिबद्ध की गयीं। घिसी-पिटी भाषाको मूल आदर्श न माना जाता तो शायद अितनी भूल न होती। अिसका फल यह हुआ कि भाषा विषयक परिवर्तन अितने अधिक हो गये कि मौलिकता खोजना कठिन हो गया। पर जैन साहित्यकी रचनाओंके लिअे यह बात नहीं है। गजलें तो बिल्कुल अपवाद हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यासका आक्रोश

: आचार्य श्री स. ज. भागवत :

ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष न च कश्चिच्छृणोति माम् ।
धर्मादर्थश्च कामश्च स धर्मः किं न सेव्यते ॥
—महाभारत

समाजके आरम्भसे ही समाजके प्रतिभाशाली पुरुष सतत यह स्वप्न देखते आये हैं कि आदर्श समाजकी रचना किस प्रकार की जाअे । कवियोंने आदर्शोंका चित्र खींचा; सुधारकोंने आदर्शकी ओर ले जानेवाले आचार बतलाये; वीरोंने आदर्शोंकी मूर्तताके लिअे अपने प्राणोंका भी बलिदान कर दिया; तो भी आदर्श अभी प्रत्यक्षसे अतिशय दूर–कल्पनाके अन्तरालमें ही रहते आये हैं ।

भारतीय संस्कृतिके पवित्र काव्य रामायण और महाभारतमें जीवनके दो आदर्श दिखलाये गये हैं । आदर्श-मानव चित्रित करनेमें रामायणमें वाल्मीकिकी प्रतिभा खर्च हुअी है और महाभारतमें व्यासने अपनी समस्त बुद्धिका अुपयोग करके जीवनका सामाजिक आदर्श अुपस्थित किया है । वस्तुतः अिन दोनों आदर्शोंका परस्पर दृढ़ सम्बन्ध है; क्योंकि यद्यपि आदर्शभूत समाजके निर्माणके लिअे असामान्य व्यक्तियोंकी आवश्यकता है; तो भी आदर्श-समाजमें ही आदर्श-मानव निर्मित होना सम्भव है । अिस कारण, समाजके सब व्यवहार आदर्श-जीवन-निर्माण करनेकी दृष्टिसे चलानेके लिअे आदर्शोंकी व्यावहारिक साधनाकी प्रधान रूपसे आवश्यकता है ।

व्यवहारके नित्य और महत्वके प्रश्न अर्थ तथा काम हैं । मानवी-जीवनकी पूर्णताके लिअे भारतीय ऋषियोंने 'मोक्ष' शब्दका अुपयोग किया है । जीवनका प्रत्यक्ष स्वरूप अर्थ-काममें है और अुसका परोक्ष स्वरूप मोक्षमय-आनन्दमय है । भारतीय द्रष्टाओं तथा समाज सुधारकोंका यह परम्परागत विश्वास है कि जीवनके अिन प्रत्यक्ष और परोक्ष स्वरूपोंमें चाहे कुछ भी विरोधका आभास क्यों न हो; परन्तु अुनमें बैर नहीं है और अुन्होंने अर्थ-काम अेवं मोक्ष अिन द्विविध अंगोंके साधनके रूपमें केवल अेक धर्मकी साधनाको प्राधान्य दिया है । 'धर्म' शब्दसे जीवनकी सर्वांगीण साधनाका बोध होता है । प्रस्तुत लेखके आरम्भमें अुद्धृत किये गये महाभारतके प्रसिद्ध श्लोकमें भी 'धर्म' शब्दका यही अर्थ सूचित किया गया है । धर्म-साधनासे मोक्षसिद्धि होती है, अिस विषयमें कभी किसीने संशय प्रकट नहीं किया; फिर भी अर्थ-कामकी जो सिद्धि धर्माचरणसे होती है अुसके विषयमें बहुत मतभेद दर्शाया जाता है । परन्तु भारतीय विचार-सरणिमें यह सिद्धांत सर्वमान्य समझा गया है कि धर्मसे ही अर्थ-कामकी सिद्धि होती है । यदि यह ध्यानमें रख लिया जाअे कि 'धर्म' का अर्थ 'न्याय' है तो यह विदित होगा कि भारतका अुक्त सिद्धांत प्रायः जगत्मान्य है । यदि समाजके व्यवहार कभी भी सबके लिअे सुखकर होना हैं, तो यह आवश्यक होगा कि अिन सब व्यवहारोंका आधार न्यायबुद्धि हो । सुख और न्यायमें तत्वतः विरोध नहीं । परन्तु जब सुखका स्वरूप संकुचित हो जाता है अुस समय अुस संकुचित सुख अर्थात् स्वार्थका न्यायसे विरोध हो जाता है । सबके चिरस्थायी सुखका वास्तवमें, न्यायसे कोअी विरोध नहीं । परन्तु सामाजिक अितिहासके अध्ययनसे यह प्रकट होता है कि समाजमें अभी भी यह न्यायनिष्ठा सुदृढ़ रूपसे स्थापित नहीं हुअी; अिसीलिअे व्यासके समान ज्ञानी और 'सर्वभूतहिते रतः' महान् पुरुषोंको दुखपूर्ण आक्रोश करना पड़ा है ।

समस्त महाभारतका निरीक्षण करनेसे यह बात सहज ही ध्यानमें आ जाती है कि व्यासका यह आक्रोश कितना यथार्थ था । धर्मका संस्थापन करनेकी प्रतिज्ञा पूरी करनेके अुद्देश्यसे अवतीर्ण भगवान् श्रीकृष्णके चरित्रका प्रत्यक्ष परिणाम, समाजसाफल्यकी दृष्टिसे, हमें क्या दिखता है ? जिन यादवोंके कुलमें श्रीकृष्णका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्म हुआ, वे लोग अुन्हींके सामने मदिरामत्त होकर नष्ट हो गये। 'यादवी' शब्द अुसका स्मारक है! पितामह भीष्मने अपने वैयक्तिक सुखजीवनका होम करके जो कुलसेवा की, सम्भवतः अुसके ही फलस्वरूप अुन्हें अपने कुलका सर्वनाश देखना पड़ा और विदुर जैसे स्थितप्रज्ञ ज्ञानी संतको, अपना अुपदेश निरर्थक होते देख, जगत्कल्याणकी अिच्छा होते हुअे भी, अपने स्थान-में दुखी होकर बैठना पड़ा। स्वतः 'महाभारत' कार व्यासके अन्तिम अुद्गार आरम्भमें दिये ही गये हैं।

यह बात नहीं है कि यह अनुभव केवल भारतीय विचारकोंको ही आया हो। योरोपीय संस्कृतिके अग्रभागमें दीप्तिमान साक्रेटीज और प्लेटोकी भी कथा अैसी ही है। साक्रेटीजने यह आग्रहपूर्वक प्रतिपादित किया था कि जीवनका सौख्य विचारोंकी शुद्धतापर अवलम्बित है। अिस कारण अुसे विष-प्याला पीना पड़ा। प्लेटोकी कथा तो अिससे भी करुणाजनक है। अुसने अपनी विशाल प्रतिभासे सामाजिक जीवनके संपूर्ण आदर्शका निर्माण करके अपने सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ 'रिपब्लिक' के द्वारा यह तथ्य तत्कालीन जगत्के सामने अुपस्थित किया कि जीवनका परमसत्य जाननेवाले ज्ञानी पुरुषोंके हाथोंमें ही समाजका शासनसूत्र होना चाहिये। अुसका यह सिद्धांत आज भी विश्व-मान्य है। परन्तु अुसका स्वयंका अनुभव शोचनीय है। तत्वज्ञके राजा होनेकी अपेक्षा राजाका तत्वज्ञ होना सुलभ होगा, अिस कल्पनासे अुसने सिराक्यूजके राजाको, अुसके निमंत्रणपर, अपना प्रथम शिष्य मान लिया। परन्तु राजाको यह प्रतीत हुआ कि तत्वज्ञ होना असुविधाजनक है। अिस कारण अुसने अुस प्रसिद्ध जीवनाचार्यको गुलामके रूपमें बेंच डाला! वहाँ किसी मित्रकी दयासे वह बेचारा किसी प्रकार अपने प्राण बचाकर स्वदेश वापस आया।

प्राचीन चीन देशके प्रसिद्ध ज्ञानी पुरुष कान्-फू-त्से ने भी समाज-धारणाके सम्पूर्ण दर्शनकी रचना की थी। अुसे यह बड़ी आशा थी कि यदि कोअी राजपुत्र मेरा शिष्य होना स्वीकार कर ले तो मैं अपने दर्शनके अनुसार चीनके जीवनकी रचना कर सकूँगा। परन्तु अुस समयके राजा आपसमें प्राणघातक युद्ध करनेमें अितने व्यस्त थे कि अुन्हें कान-फू-त्से की ओर ध्यान देनेका अवकाश ही नहीं मिला। अुसकी मृत्युके समय अुसके शिष्योंने अुससे पूछा 'आपकी आन्तरिक अिच्छा क्या है?' कहा जाता है कि अुसने ये अुद्गार प्रकट किये थे कि मुझे अन्त तक अैसा राजपुत्र नहीं मिला जो मुझे अपने दर्शनका प्रयोग करनेका अवसर देता। यह बात मेरे हृदयको बहुत दुख दे रही है।

प्राचीन अीरानी लोगोंके धर्म संस्थापक जर-दुष्ट्रकी भी कथा अिसी प्रकार मजेदार है। अिस महापुरुषमें समाज-सौख्यकी दिव्यदृष्टि थी और प्लेटोव कान्-फू-त्से के समान ही अुसकी बहुत दिनोंसे यह महत्वाकांक्षा थी कि वह किसी राजाका गुरुत्व करे। अेक राजाको निरुपाय होकर जरदुष्ट्रका शिष्य बनना पड़ा। कारण, अुस राजाका घोड़ा अकस्मात बीमार पड़ गया। जरदुष्ट्रको अश्वविद्या मालूम थी। अिस कारण अुसने अिस अवसरका अुपयोग करके अपना गुरुत्व अुसके अूपर लाद दिया।

आधुनिक यूरोपके 'यूटोपिया' (आदर्श समाज) ग्रंथके कर्ता सर टामस मूरको राजाके हाथसे मरना पड़ा और अुस ग्रंथके नामसे 'यूटोपियन' यह अवहेलनादर्शक विशेषण अंग्रेजी भाषामें रूढ़ हो गया।

आदर्श-वादियोंकी अिस नामावलीमें अिच्छानुसार वृद्धि की जा सकती है। जगके सब साधुसंत सदा ही यह कहते आये हैं कि मनुष्योंको धर्मशील बनना चाहिये। बहुतसे लोगोंका विचार है कि अीसा अथवा बुद्धका अुपदेश सन्यासवादका था; परन्तु अुनके अुपदेशोंका प्रत्यक्ष अवलोकन करनेपर यह कहना पड़ता है कि यह विचार ठीक नहीं। अीसाके 'Kingdom of Heaven' का अर्थ 'Kingdom of Righteousness' है। यह बात अुन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें कही है। अर्थात अुनका 'स्वर्गीय राज्य' 'धर्मराज्य' ही था। अुनका मुख्य सिद्धांत यही था कि 'तुम धर्म और न्यायके अनुसार आचरण करो। तब तुम्हें जीवनके अैहिक सुख भी सरलतापूर्वक प्राप्त होंगे।' यह सिद्धान्त पूर्वोक्त भारतीय सिद्धान्तसे बिलकुल मिलता है; परन्तु अिसी सिद्धान्तके लिअे अीसाको वध-स्तम्भपर चढ़ना पड़ा! अिसी प्रकार यह नहीं कहा जा सकता कि गौतम बुद्धका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अष्टांगमार्ग केवल सन्यास जीवनके लिअे ही है। यह स्पष्ट है कि सामाजिक जीवनका वही आधार है। वैशालीके वज्जी लोगोंको अुन्होंने जो सात प्रसिद्ध नियम बतलाये अुनका अुपदेश अुन्होंने, समाजमें धर्मराज्य प्रस्थापित करनेके साधनके रूपमें ही किया।

अिस्लामी धर्म-संस्थापक महम्मद पैगम्बर तथा यहूदी धर्माचार्य मोजेस ये दोनों महापुरुष कर्मयोगी ही थे। अुन्होंने प्रधानतः अरब और अिस्रायल जातियोंके लोगोंकी समाज-रचना की; परन्तु अुन दोनोंने अपने सामाजिक आदर्शोंकी सिद्धिके लिअे धर्म-साधनाका ही अुपदेश किया। अिस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि व्यासके अिस सिद्धांतको कि **"धर्म ही अर्थ-काम सिद्धिका अेकमात्र साधन है"** सार्वत्रिक मान्यता प्राप्त है। परन्तु अैसा होते हुअे भी प्रत्यक्ष व्यवहारमें धर्मबुद्धिसे आचरण करनेवाले व्यक्तियोंका वर्ग अभीतक अल्प ही दिखता है। सामाजिक सुधारकी दृष्टिसे यह अेक रहस्यमय घटना समझना चाहिये।

यदि हम आधुनिक युगके समाज-सुधारकोंके प्रयत्नोंको देखें तो अैसा नहीं मालूम होता कि यह रहस्य समझ लिया गया। आधुनिक कालमें न्यायकी प्रस्थापनाके लिअे राजकीय, आर्थिक, शैक्षणिक अित्यादि विविध क्षेत्रोंमें अनेक क्रांतिकारक प्रयोग हुअे हैं। अिन नाना-विध प्रयोगोंमें अन्य कितने भी भेद दिखें तो भी अुनमें यह सिद्धांत सर्वत्र अंगीकृत किया हुअा दिखता है कि सामाजिक-व्यवहारोंके न्यायबुद्धिपर आधारित होनेसे ही समस्त समाजको सुख और सन्तोषकी प्राप्ति हो सकेगी। तो भी ये प्रयत्न अुल्लेखनीय रूपसे सफल हुअे प्रतीत नहीं होते।

यह कल्पना अति प्राचीन कालसे प्रचलित रही है कि मनुष्य बुद्धिवादी प्राणी है और अुसकी बुद्धिमें सत्यको जाननेकी शक्ति है। ज्ञान ही मनुष्यका अलंकार है, यह सिद्धान्त हमारे यहाँ मान्य था। और ज्ञान ही सद्गुण है, यही साक्रेटीजका सिद्धान्त था। आधुनिक कालमें पाश्चात्य देशोंमें बुद्धिपूजाका पुनरुज्जीवन बड़े अुत्साहसे किया गया; परन्तु अिन बुद्धिपूजकोंकी श्रद्धा प्रत्यक्ष व्यवहारमें, अिस समय बहुत अंशोंमें, विफल प्रतीत होती है। प्रख्यात अंग्रेज लेखक जार्ज बर्नाड शाका अनुभव बहुत अुद्बोधक है। बुद्धिवादी अिंग्लैण्डमें पले हुअे अिस प्रतिभाशाली पुरुषको तरुणावस्थामें अैसा प्रतीत हुआ कि यदि समाजके सब वर्गोंमें पर्याप्त ज्ञानका प्रसार किया जाअे तो समस्त अन्याय और विषमताका अपने आप अंत हो जाअेगा। अिसलिअे अपनी वाणी और कलमकी सहायतासे शाने अिंग्लैन्डकी अखिल जनतापर ज्ञानकी मूसलधार वर्षा की। तथापि अुसे यह स्पष्ट हो गया कि समाजकी क्रियाशून्यता कम नहीं हुअी। अुसे यह दिखा कि लोगोंकी विशेष प्रवृत्ति व्याख्यान-प्रवचन सुनने अथवा निबन्ध पढ़नेकी ओर न होकर रंगभूमिकी ओर होती है। यह समझनेपर अुसने अपने विचारोंका प्रचार करनेके लिअे रंगशालाका आश्रय लिया और मनोरंजनके लिअे अेकत्रित सब स्त्री-पुरुषोंको ज्ञानी बनानेका निश्चय किया। परन्तु २४ वर्षोंसे अधिक समय तक यह नयी साधना करनेपर भी शा को अिष्टसिद्धि नहीं प्राप्त हुअी। अन्तमें अुसने निराश होकर यह नाटकीय घोषणा की कि, 'प्रचलित मानवप्राणी आदर्श समाजके निर्माणके लिअे स्वभावसेही अपात्र है और आदर्श-समाजके निमित्त 'नवमानव', 'अतिमानव' निर्माण करनेकी योजना करनी चाहिये।' बुद्धिवादके पराभवकी यह स्पष्ट घोषणा है। अिसका निष्कर्ष यह है कि मनुष्यमें बुद्धिकी अपेक्षा भावनाओं और विकारोंका अधिक प्राधान्य है और तर्क बुद्धिसे प्राप्त ज्ञान मनुष्यकी संकल्प शक्तिको जाग्रत नहीं कर सकता। आजकल पाश्चात्य विचार-धारामें बुद्धिवादके विरुद्ध प्रतिक्रिया आरम्भ हुअी दिखती है। मनुष्यके जीवनपर विकारोंका प्रभुत्व रहता है और अुसकी बुद्धिपर भी विकारोंका आधिपत्य होनेके कारण बुद्धिवाद नामके अंतर्गत सत्यके विकृत दर्शनकाही प्रसार होता है। यह बात बहुतसे विचारकोंके ध्यानमें आने लगी है। अनेक लेखकोंने अिस आशयके विचार व्यक्त किये हैं कि यद्यपि मनुष्यको स्वयंके सुखकी अिच्छा होती है तो भी अुसकी सामान्य प्रेरणाअें बहुधा बुद्धिविरोधी और बहुत अंशोंमें दुख-निर्माणका ही कारण होती हैं। अुदाहरणार्थ बट्रेण्ड रसलने अपने विविध ग्रंथोंमें सुखी समाज निर्माण करनेकी अनेक कल्पनाओंका विवेचन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया; परन्तु अंतमें हताश होकर अुसने ये अुद्गार प्रकट किये हैं कि 'मनुष्य स्वयं अपने विनाशकी योजना करनेवाला प्राणी है।'

सामाजिक ध्येयवादके विफलतापूर्ण अितिहासकी यह कहानी कितनी ही करुणाजनक क्यों न हो; फिर भी मानवी अंतःकरणका पूर्णताकी ओर खिंचाव मनुष्यको कभी सम्पूर्ण रूपसे निराश नहीं कर सकता और आज तकके प्रयोगवीरोंको कितनीही असफलता क्यों न प्राप्त हुअी हो, नये प्रयोगवीर नये अुत्साहसे अग्रसर हुअे बिना नहीं रह सकते। अितनाही नहीं, बल्कि प्रत्येक असफलता मनुष्यके ध्येयवादको अधिकाधिक शुद्ध करती जाअेगी। सृष्टिके अितिहासमें मानव संस्कृतिके प्रयोगको आरम्भ हुअे बहुत थोड़ा समय हुआ है। यदि सापेक्ष दृष्टिसे देखा जाअे तो मानव-समाज अभी बाल्यावस्थामें हो है। अपने जीवनकी आंतरिक प्रेरणाओंका अुसे यथार्थ आकलन नहीं हुआ है। अिस कारण अुसे सुखकी अिच्छा होते हुअे भी, सुखका मार्ग स्पष्ट रूपसे नहीं दिखता और यदि अुसे दिखेभी तो वह अुसपर स्थिर रूपसे नहीं चल सकता। मानव-हृदयमें पूर्णताकी जो प्रेरणा है वह अुसके दैवी अंशकी द्योतक है। परन्तु अभी अुस दैवी अंशकी अुसके अखिल जीवनमें प्रभुता स्थापित नहीं हुअी है। जैसा कि खलील जिब्रानने अपने 'Prophet' नामक ग्रथमें कहा है—

"Much in you is still man,
And much in you is not yet man,
But a shapeless pigmy that
Walks asleep in the mist,
Searching for its oWn aWakening."

मनुष्यमें अभी अमानव अंश ही बड़े प्रमाणमें विद्यमान है और दीर्घ तपस्याके पश्चात ही यह अंश मानवताका स्वरूप ग्रहण कर सकेगा। रवीन्द्रनाथने कहा है, कि विधाताके हाथमें काल अनंत है। अुसे जल्दी नहीं है।

"प्रतीक्षा करिते जानो, शतवर्ष धरे
अेकटि पुष्पेर कलि फुटाबार तरे
चले तव धीर आयोजन।"

विधातामें विकासकी प्रतीक्षा करनेकी शक्ति होती है। अेक पुष्पकली खिलानेके लिअे अुसकी तैयारी सैकड़ों वर्षोंसे मन्द गतिमें चलती है। परन्तु मनुष्यमें धैर्य नहीं होता। अुसे फलके आस्वादकी आतुरता होती है, अिसीलिअे वह अत्याचारी और अश्रद्धालु बनने लगता है। यदि ध्येयवादीको किसीका भय है तो वह स्वयं अुसीके हृदयकी अुतावलीका है। मानवी-पूर्णताका कार्य किसी अेक व्यक्तिका नहीं। वह विधाताका विश्वकार्य है। वह यथा समय सफल हुअे बिना नहीं रह सकता। यदि ध्येयवादी पुरुषने अपने हृदयकी प्रेरणासे सत्यनिष्ठ रहकर अपनी शक्तिके अनुसार स्वकर्तव्य किया तो समझना चाहिये कि अुसका कार्य पूरा हो गया। तात्कालिक फलके मोहसे अुसे अपनी श्रद्धाका नाश करना अुचित नहीं। अिसी अर्थसे ही अनासक्ति-योगका अुपदेश सभी तत्वज्ञोंने किया है।

यदि न्याय तथा सुखमें तत्वतः विरोध न हो, तो आज नहीं कल, सामाजिक जीवनमें अिस सिद्धांतका सबको विश्वास अवश्य होना चाहिये। परन्तु यह विश्वास स्थापित होनेके लिअे समाजको अनेक आघात सहन करने पड़ेंगे। अुसके हृदयके अुन्मादों-विकारोंको विवेकांकित होनेके लिअे कदाचित अनेक आपत्तियोंसे गुजरना पड़ेगा। समाजके ज्ञानी व्यक्तियोंको समाज-दुखके सम्बन्धमें कितनी ही दया क्यों न मालूम हो, फिर भी अपेक्षित समाज-व्यवस्था त्वरित मूर्तस्वरूप नहीं धारण करेगी। केवल शाब्दिक अुपदेशसे विशेष कार्य नहीं होगा; अितना ही नहीं, अपितु प्रत्यक्ष अुदाहरणसे भी शीघ्र कोअी भारी परिवर्तन होनेकी सम्भावना नहीं। फिर भी ध्येयवादी लोगोंकी कृतियों तथा अुक्तियोंसे समाजके अन्तर्मनपर सतत शुभ संस्कार होते रहते हैं और अन्तमें अुन्हींके कारण समाजका हृदय-परिवर्तन होगा। समाज-सुखके लिअे समाज-शुद्धिकी आवश्यकता है; और सामाजिक शुद्धिके लिअे समाजमें मंगल-भावनाओंके सतत आवाहनकी आवश्यकता है। अिस कारण, यद्यपि 'बुडती हे जन न देखवे डोळां, म्हणोनी कळवळा' अुत्पन्न होना आवश्यक गुण है, तो भी समाज-हितके लिअे भी 'पिटून काढ़ितों या लोकां' की वृत्ति कभी भी अुपकारक नहीं होगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण किसी भी हिंसात्मक साधनसे समाजके अन्तर्मनकी शुद्धि नहीं होती; अिसके विपरीत अहंकार और अविवेककी ही वृद्धि होती है। यह समझनेका कोअी कारण नहीं कि हिंसाका अर्थ केवल पाशवी-शक्तिका अुपयोग है। नैतिक मूल्योंकी श्रेष्ठता प्रतिपादित करनेमें यदि अवहेलना और असहिष्णुताको अंगीकार किया गया तो हिंसाका ही आश्रय लेना हुआ। अिस कारण समाज शुद्धिके प्रयत्नोंमें दंडधारी राजा, कर्मठ शास्त्रज्ञ अथवा अुतावले शस्त्रवीर सदा विफल होते आये हैं; और अक्रोधसे क्रोधका, साधुतासे असाधुताका अथवा अहिंसासे हिंसाका प्रतिकार करनेवाले प्रेममय संतोंको ही समाजके मानसिक जीवनमें अटल पद प्राप्त हुआ है।

सामाजिक ध्येयवादके अितिहासमें यह अेक विरोधाभास नित्य देखनेमें आया है कि बुद्धिमान तथा साधनसम्पन्न वर्ग ध्येयजीवनसे धीरे-धीरे भ्रष्ट होता जाता है। अुसकी न्यायबुद्धि मलिन अथवा विकृत होने लगती है और अुसकी जीवनश्रद्धा भी लुप्त हो जाती है। परन्तु बुद्धिहीन तथा साधनहीन सामान्य जनतासे चाहे ध्येयवादका आचार सर्वांशमें न सधे, फिर भी अुसके हृदयमें ध्येयवादी पुरुषोंके विषयमें भक्ति रहती है और सामाजिक सत्ययुगकी प्रतिष्ठापनाके सम्बन्धमें श्रद्धाका दीप कभी नहीं बुझता। यह स्पष्ट है कि सामाजिक–न्याय–प्रस्थापनापर ही व्यावहारिक सुखका निर्माण अवलम्बित होनेके कारण सामान्य जनताके लिअे यह श्रद्धा अपरिहार्य है।

प्रत्यक्ष जीवनकी अर्थ-काम-प्राप्ति और परोक्ष जीवनकी मोक्ष-सिद्धि अिन दोनों अंगोंका साधन धर्म ही है। प्रत्यक्ष और परोक्ष ये अेक ही जीवनके दो अंग हैं। ये दोनों अंग तत्वतः अविरोधी ही होने चाहिये। धर्मका संशोधन तथा संस्थापन करनेवाले जीवनाचार्य मोक्षके अंतरंगकी ओर स्वभावतः ही अभिमुख होनेके कारण अुनके सम्बन्धमें धर्मसाधना निष्काम तथा निरपेक्ष जीवन-वृत्ति हो जाती है। अुसीमें अुन्हें निरतिशय आनन्दका लाभ होता है और अुनमें सहज ही यह अिच्छा अुत्पन्न होने लगती है कि यह आनन्द अपने बन्धुओंको भी अुपलब्ध कराया जाअे। सामान्य लोगोंको अपने व्यावहारिक जीवनके अर्थ-काम विषयक प्रश्नोंको हल करनेके लिअे धर्मका, न्यायका आश्रय लेना पड़ता है। अिस कारण वे व्यावहारिक साधनके रूपमें अुक्त जीवनाचार्योंके अुपदेशका आदर करते हैं। फिर भी सम्पूर्ण अहिंसासे जीवनके सब व्यवहार सिद्ध करके दिखानेवाला श्रेष्ठ जीवनाचार्यका अभी निर्माण होना शेष है और व्यवहारोंका मोक्षसे मेल दिखलानेवाला धर्म भी अभी सिद्ध होना है। अिस दृष्टिसे देखनेपर यह कहनेमें कोअी हानि नहीं कि सत्याग्रहका मार्ग सम्पूर्ण जीवन-धर्मका अेक महान् प्रयोग है और म. गांधी अिस धर्मके पहिले आचार्य हैं। लोकनायक अणेने महात्माजीको अुपरोक्त श्लोक बतलाकर अहिंसा धर्मकी विफलता सिद्ध करनेका प्रयत्न किया था। अिसपर म. गांधीने जो अुत्तर दिया वह सच्चे ध्येयवादियों द्वारा यत्नपूर्वक हृदयमें रखा जाने योग्य है। लोग अर्थ-काम प्राप्त करनेवाले धर्मका सेवन क्यों नहीं करते? म. गांधीने व्यासके आक्रोशका यह अर्थ किया कि व्यासके अुद्गारोंसे धर्मवादकी आवश्यकता ही सिद्ध होती है और समाज-कल्याणकी चिन्ता करनेवाले धर्मका ही अनुसरण किया जाना चाहिये। आदर्श समाज निर्माण करनेवाले प्रत्येक ध्येयनिष्ठ साधकको, अिसी विचारसे, अपनी श्रद्धा जीवित रखनी चाहिये तथा अपने क्षेत्रमें ध्येयशुद्धिके निमित्त मरण स्वीकार करनेके लिअे भी तैयार रहना चाहिये, क्योंकि अैसा ध्येयवादी प्रयत्न बाह्यतः चाहे असफल दिखे परन्तु जीवनको अंतिम सफलताकी ओर ले जानेकी शक्ति अवश्य रखता है।

(मराठीसे अनुवादकः— श्री राजेन्द्रप्रसाद भट्ट)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहावत और न्याय

: प्राध्यापक श्री कन्हैयालाल सहल, अेम. अे. :

सन् १८७७ की डा० Biihler की काश्मीर रिपोर्टमें "न्याय" शब्दका प्रयोग "परिचित अुदाहरणोंसे निकाले हुअे अनुमान" के अर्थमें किया गया था। कर्नल जैकबने "न्याय" के पर्यायके रूपमें Maxim शब्दको ग्रहण किया था, किन्तु अिस पर्यायसे वे सन्तुष्ट नहीं थे। अुन्होंने तो केवल बड़े-बड़े विद्वानों द्वारा "न्याय" के अर्थमें गृहीत Maxim शब्दको देखकर ही अिसे अपनाया था; अन्यथा अुनकी मान्यता थी कि अंग्रेजी भाषामें "न्याय" के अर्थको पूर्णतः व्यक्त करनेवाला कोअी अुपयुक्त शब्द है ही नहीं। अुन्होंने "न्याय" के अन्तर्गत दृष्टान्त, नियम और अधिकरण तीनोंका सन्निवेश किया था। अंग्रेजीका Maxim शब्द अितना व्यापक नहीं कि वह अुक्त तीनों प्रकारके अर्थोंका वाचक बन जाअे। अिसलिअे जैकबके मतानुसार तो "न्याय" शब्दका अंग्रेजी अनुवाद न करके अंग्रेजी भाषामें भी अिसे ज्योंका त्यों ग्रहणकर लेना चाहिये। *

"हिन्दी शब्द सागर"के सम्पादकोंकी दृष्टिमें "न्याय" वह दृष्टान्त-वाक्य है जिसका व्यवहार लोकमें कोअी प्रसंग आ पड़नेपर होता है। यह कोअी विलक्षण घटना सूचित करनेवाली अुक्ति है जो अुपस्थित बातपर घटती हो। "न्याय" के पर्यायके रूपमें सम्पादकोंने "कहावत" शब्दका भी प्रयोग किया है। अैसे न्याय या दृष्टान्त वाक्य बहुतसे प्रचलित चले आते हैं और अुनका व्यवहार प्रायः होता है।"

"संस्कृतमें लौकिक न्यायके अन्तर्गत बहुसंख्यक सूत्र अुस समयकी या अुससे पहलेकी लोक-विश्रुत कहावतें ही हैं। अुसमें जो युक्तिमूलक दृष्टान्त हैं, वे किसी अेक समयके नहीं, भिन्न-भिन्न परिस्थितियोंमें पड़कर बद्धिमानोंको जो सच्चे अनुभव हुअे अुन्हींको अुन्होंने सूत्रबद्ध करके जनताको सौंप दिया। जनताने अुनको अुपयोगी समझकर अपना लिया। अिसी प्रकार भुक्त-भोगियोंके कितने ही सच्चे हृदयोद्गार लोकोक्तियोंके रूपमें प्रचलित हो गये। +

संस्कृत-साहित्यमें सहस्रों स्थलोंपर "न्याय" का प्रयोग हुआ है। अिसका व्यवहार अधिकतर टीका-टिप्पणी, समालोचना, व्याख्या, शंका-समाधान आदिमें देखा जाता है। ध्यानपूर्वक मनन करनेसे यह सर्वदा स्पष्ट हो जाअेगा कि "न्याय" में किसी घटना, किसी कहानी अथवा किसी विशेष अर्थके बृहत् भाव-सूत्र-रूपमें गुम्फित रहते हैं। "देखनमें छोटे लगें, घाव करें गम्भीर" वाली अुक्ति यहाँ अक्षरशः चरितार्थ होती है। "न्याय" आकार-प्रकारमें तो बहुत छोटा होता है पर भाव बहुत गंभीर रहता है। पूर्व समयमें मुद्रण-यंत्रके अभावके कारण "सूत्र-पद्धति" प्रचलित थी और अिसीसे लोकोक्तियाँ भी "न्याय" शब्दके नामपर सूत्र-रूपमें ग्रथितकर दी गयी थीं। प्रयोगमें "न्याय" शब्द भी जुटा रहता है। यथा, "घूणाक्षरन्यायः, काकतालीयन्यायः, पंकप्रक्षालनन्यायः, स्थालीपुलाकन्यायः।" न्याय शब्दका व्यवहार कभी अुपमा, कभी नियम, कभी सिद्धान्त, कभी अुक्ति, कभी कहानी तथा कभी विशेष कार्यके अर्थमें होते पाया गया है। प्रसंगानुसार अर्थव्यंजना होती है। प्रत्येक न्यायमें विशेष भावकी व्यंजना रहती है और ध्वन्यात्मक रूपसे अिसका प्रयोग होता है।"[1]

संस्कृतके बहुतसे निबन्धोंमें "लोकप्रसिद्धयुक्ति" को न्यायकी संज्ञा दी गयी है।[2]

---

* लौकिक न्यायाञ्जलिः तृतीयो भागः पृष्ठ २

+ मालवी कहावतें भाग १ का प्राक्कथन पं० रामनरेश त्रिपाठी पृष्ठ २

१ संस्कृत-लोकोक्ति-सुधा (श्री जगदम्बाशरण) पुस्तक-परिचय (ख) और (ग) पृष्ठ-

२ लोकप्रसिद्धयुक्तिन्यायः (भूमिका भुवनेश लौकिक न्याय साहस्री)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोकोक्ति और न्याय दोनों अेक ही हैं अथवा अिन दोनोंमें अन्तर है, अिसपर विचार करना आवश्यक है। न्यायके स्वरूपका विवेचन करनेसे निम्नलिखित तथ्योंपर प्रकाश पड़ता है—

१. अनेक न्याय अैसे हैं जो केवल पदात्मक हैं। "मात्स्य न्याय", "टिट्टिभ न्याय" आदि अुदाहरणस्वरूप रखे जा सकते हैं। विश्वमें शायद ही कोअी अैसी लोकोक्ति हो जो केवल अेक पदमें समाप्त हो जाती हो। छोटी-से-छोटी लोकोक्तिके लिअे भी कम-से-कम दो पद आवश्यक हैं। ट्रेंचके मतानुसार voll, toll जर्मन लोकोक्ति दुनियाकी सबसे छोटी कहवत है।

२. बहुतसे न्याय अथवा अधिकाँश न्याय अैसे हैं जो द्विशब्दात्मक हैं और जिनका सम्पूर्ण वाक्यकी भाँति प्रयोग नहीं होता। अुदाहरणार्थ कुछ न्याय लीजिये—अजाकृपाणी न्याय, अन्धगज न्याय, काकतालीय न्याय, कूपमण्डूक न्याय, जामातृ शुद्धि न्याय आदि। अुक्त सभी न्यायोंके मूलमें कोअी न कोअी कथा मिलती है, जिसको जाने बिना अिन न्यायोंका स्पष्टीकरण नहीं हो सकता। बहुत-सी कहावतें भी अैसी होती हैं, जिनके पीछे कोअी न कोअी कथा पायी जाती है; किन्तु कहावत सामान्यतः सम्पूर्ण वाक्यकी भाँति प्रयुक्त होती है, दो-दो शब्दोंके पदाँशकी तरह नहीं। कहावती रूपमें क्रियाका कभी-कभी अभाव होनेपर भी क्रिया सदा गम्य रहती है।

३. कुछ न्याय अैसे हैं जिन्हें लोक-प्रसिद्ध अुपमाओंका नाम दिया जा सकता है। अूषरवृष्टि न्याय, करस्थामलक न्याय, चक्रमण न्याय, अरण्यरोदन न्याय, अजागलस्तन न्याय आदि अुदाहरणस्वरूप रखे जा सकते हैं। कहावती अुपमाओंके भी अुदाहरण मिलते हैं किन्तु लौकिक न्यायोंमें अिस प्रकारकी अुपमाओंका प्राचुर्य दृष्टिगत होता है।

४. अनेक न्याय अैसे भी अुपलब्ध हैं जिन्हें यदि लोकोक्ति अथवा कहावतका नाम दिया जाअे तो किसी प्रकारका अनौचित्य नहीं दिखलायी पड़ता। नीचे जो अुदाहरण दिये जा रहे हैं अुनमें लोकोक्तिके सभी लक्षण मिलते हैं—

(क) अर्के चेन्मधु विन्देत किमर्थं पर्वतं व्रजेत्। यदि समीप ही मधु मिलता हो तो पर्वतपर जानेसे क्या प्रयोजन ?

(ख) भक्षितेपि लशुने न शान्तो व्याधिः। लहसन खानेपर भी रोग शान्त न हुआ। जैकबने अिस न्यायके लिअे Maxim शब्दका प्रयोग न कर Proverb शब्दका प्रयोग किया है।

(ग) वरं सांशयिकान्निष्कादसांशयिकः कार्षापणः। अनिश्चित निष्ककी अपेक्षा निश्चित कार्षापण श्रेष्ठ है।

(घ) वरमद्य कपोतः श्वो मयूरात्। कलके मयर (मोर) से आजका कपोत (कबूतर) अच्छा। वात्स्यायन कामसूत्रके द्वितीय अध्यायमें ग और घ सम्बन्धी अुक्तियों का प्रयोग हुआ है; जिन्हें जैकब भी proverbs कहना ही अुपयुक्त समझते हैं।

(ङ) अन्धस्येवान्धलग्नस्य विनिपातः पदे-पदे। जो अन्धेके सहारे लगा है अुसे पद-पदपर गिरना पड़ता है। अिस न्यायका प्रयोग भामतीमें हुआ है, जहाँ अिसका "आभाणक" शब्द द्वारा अुल्लेख किया गया है। "तथा चाभाणकः अन्धस्येवान्धलग्नस्य विनिपातः पदे-पदे।"

(च) सर्व पदं हस्तिपदे निमग्नम्। हाथीके पैरमें सब पैर समा जाते हैं।

(छ) शीर्षे सर्पो देशान्तरे वैद्यः। सर्प सिरपर और वैद्य देशान्तरमें।

(ज) विक्रीते करिणि किमंकुशे विवादः। हाथी बिक जानेपर अंकुशका विवाद कैसा ?

(झ) पुत्रलिप्सया देवं भजन्त्या भर्ता पि नष्टः। पुत्र प्राप्तिकी अिच्छासे देवताकी अुपासना करती हुअीका पति भी नष्ट हो गया।

(ञ) वराटकान्वेषणे प्रवृत्तश्चिन्तामणिं लब्धवान्। कौड़ीकी तलाश करते हुअे चिन्तामणि हाथ लग गयी। कबीरकी साखियोंमें अिसका निम्नलिखित रूप अुपलब्ध होता है।

"चौहटे चिन्तामणि चढ़ी, हाडी मारत हाथ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. कुछ न्याय अैसे भी हैं जिनके कहावती रूप आज भी अुपलब्ध होते हैं। अुदाहरणार्थ—

(क) गोमहिषीन्याय :।

अेक राजस्थानी लोकोक्तिमें कहा गया है कि "गायकी भैंसके लागै और भैंसकी गाय कै लागै ?" अर्थात् गायका भैंससे क्या सम्बन्ध और भैंसका गायसे क्या सम्बन्ध ?

(ख) तरक्षडाकिनीन्यायः। अिसी न्यायका प्रतिरूप "डाकण और जरख चढ़ी" राजस्थानी भाषामें अुपलब्ध है।

६. जैकब द्वारा संग्रहीत और सम्पादित "लौकिक न्यायांजलि" में कहीं-कहीं न्यायके स्थानमें "निदर्शन" और "नियम" शब्दका प्रयोग हुआ है। यथा—

(क) तमः प्रकाशनिदर्शनम् अर्थात् अंधकार और प्रकाशकी युगपत् स्थितिका दृष्टान्त।

(ख) तैलकलुषितशालिबीजादकुंरानुदयनियमः।। अर्थात् तैलसे कुलषित शालि बीजके अंकुरित न होनेका नियम।

७. कहीं-कहीं प्रश्नोत्तरके रूपमें भी न्यायोंके अुदाहरण मिलते हैं। जैसे—

(प्रश्न) **जागर्ति लोको ज्वलति प्रदीपः**
सखीजनः पश्यति कौतुकं मे।
क्षणैकमात्रं करु कान्त धैर्यं
बुभुक्षितः किं द्विकरेण भुंक्ते ?

(अुत्तर) **जागर्तु लोको ज्वलतु प्रदीपः**
सखीजनः पश्यतु कौतुकन्ते।
क्षणैकमात्रं न करोमि धैर्यं
बुभुक्षितं न प्रतिभाति किंचित्।।

लौकिकन्यायांजलिः प्रथमो भाग।
वही पृष्ठ ४४
भुवनेशलौकिक न्याय साहस्री पृष्ठ १८५।
वही पष्ठ २३५

भुवनेश लौकिकन्यायसाहस्रीके संपादकने "बुभुक्षितः किं द्विकरेण भुंक्ते" और "भुभुक्षितं न प्रतिभाति किंचित्"की न्यायोंमें गणना की है।

८. न्यायोंमें अेक आभाणक-न्यायकी गणना की गयी है। "बराटकान्वेषणे प्रवृत्तश्चिंतामणिं लब्धान्" अिसे आभाणक-न्यायके अन्तर्गत रखा गया है। आनंदघनकृत कुंथुनाथ-स्तवन भी अिस सम्बन्धमें द्रष्टव्य है, जहाँ कहा गया है—

"रजनी वासर बसती अूजड़, गयण पयालो जाय।
साँप खाय नै मुखड़ूं थोथो, अे अूरवाणो न्याय।।"

साँप दूसरेको काटता है किन्तु अिससे साँपका पेट नहीं भरता। अिसे "अूरवाणो-न्याय" या "आभाणक-न्याय" कहा गया है।

९. कुछ कवियोंकी अुक्तियाँ भी अैसी हैं, जिन्हें "न्याय" के अन्तर्गत कर लिया गया है। अुदाहरणार्थ-

(क) छिद्रेष्वनर्था बहुली भवन्ति (विष्णु शर्मा)

(ख) सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृता
(श्रीमद्भगवदगीता)

"न्याय" के अुक्त स्वरूपोंको देखनेसे स्पष्ट है कि संस्कृत साहित्यमें "न्याय" शब्द अत्यन्त व्यापक है। अिसके अंतर्गत लोक-प्रचलित पदाँशों, प्रसिद्ध अुपमाओं विश्रुत दृष्टान्तों, सूक्तियों तथा आभाणकों अथवा लोकोक्तियों सभीको स्थान मिल गया है। बहुतसे न्याय अैसे हैं जिन्हें "कहावत"की संज्ञा दी जा सकती है। अनेक न्याय अैसे हैं जिन्हें पारिभाषिक दृष्टिसे "लोकोक्ति" तो नहीं कहा जा सकता किन्तु जो सूत्र शैलीमें ग्रथित अैसे पद-समुच्चय हैं जो अपनेमें गंभीर अर्थ छिपाये हुअे हैं। दार्शनिक ग्रन्थोंके भाष्योंमें अिस प्रकारके न्यायोंका प्रचुर प्रयोग हुआ है। "योगाद्रूढिर्बलीयसी" जैसे अनेक शास्त्रीय न्याय भी हैं जो कहावतोंकी अपेक्षा सिद्धान्त, नियम आदिके अधिक सन्निकट हैं।

यही कारण है कि कहावत और न्यायके आपेक्षिक विवेचनमें शास्त्रीय न्यायोंको जान-बूझकर छोड़ दिया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलाचार्य श्री पंधे गुरुजी

: श्री रामेश्वरदयाल दुबे, अेम. अे., साहित्यरत्न :

"यदि कोअी फ्रांस-निवासी 'लुव' के चित्रालयकी बात नहीं जानता, या कोअी अँग्रेज लंडनकी नेशनल गेलरीसे अपरिचित होता है, तो वह अपने समाजमें संस्कारहीन गिना जाता है। परन्तु अिसे भारतका दुर्भाग्य ही कहना चाहिये कि भारतवासी कला, कलाकारों और कलाधामोंकी चर्चा करना केवल निठल्ले, बेकार और आरामतलब मनुष्योंका ही काम समझ बैठे हैं।"

गुजरातके प्रसिद्ध कलाकार श्री रविशंकर रावलजीके अिन शब्दोंमें कलाके प्रति हमारी अुपेक्षाकी करुण कहानी कही गयी है।

किन्तु यह आजकी कहानी है, अतीतकी नहीं। कला और कलाके प्रति प्रेमकी दृष्टिसे हमारा अतीत कम गौरवशाली न था। भारतीय कलाकारोंकी वे विभिन्न कृतियाँ, जिनमें अुनके हृदयका रस छलका था, आज भी विद्यमान हैं; और यदि हम चाहें तो अुनका रसस्वादनकर आत्मविभोर हो सकते हैं। अुन महान कलाकार कवियोंके काव्य-ग्रंथ, चतुर चित्रकारोंके रुचिर चित्र, पत्थरोंमें मृदुताको अंकित करनेवाले मूर्तिकारोंकी मूर्तियाँ, अींट-पत्थरके सहारे सौन्दर्यकी सृष्टि करनेवाले शिल्पियोंके शिल्पकौशल्य आज भी हमारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। किन्तु अुन सबको हमारी ममता नहीं, अुपेक्षा मिल रही है। काश, हम सब अिनका सही-सही मूल्यांकन कर पाते; अुनके प्रति आदर और श्रद्धा व्यक्त करना सीख पाते!

अतीतको हम थोड़ी देरके लिअे छोड़ भी दें, तो भी वर्तमानके कुछ कलाकार अैसे महान् हैं, जो किसी कोनेमें पड़े रहकर अपनी अनवरत साधनाके द्वारा कलाकी भव्य सेवा करते जा रहे हैं। अिस अर्थ-प्रधान-युगमें भी, अिन कलाकारोंने अपना सम्पूर्ण जीवन अेकमात्र कलाकी अुपासनामें अर्पण कर रखा है। वर्तमान युगके अैसे कलाकारोंमेंसे कुछका परिचय जनताको प्राप्त हो चुका है, किन्तु अभी अनेक अैसे व्यक्ति हैं जिन और जिनकी कला-साधनाका ज्ञान बहुत ही थोड़े व्यक्तियोंको है। तिलक राष्ट्रीय विद्यालय खामगाँव (जिला बुलढ़ाना, मध्यप्रदेश) के आचार्य, मौन-साधक, कलाकार श्री पंधेगुरुजी अुनमेंसे अेक हैं। नीचेकी पंक्तियोंमें अुनका संक्षिप्त परिचय देनेका प्रयत्न किया जा रहा है।

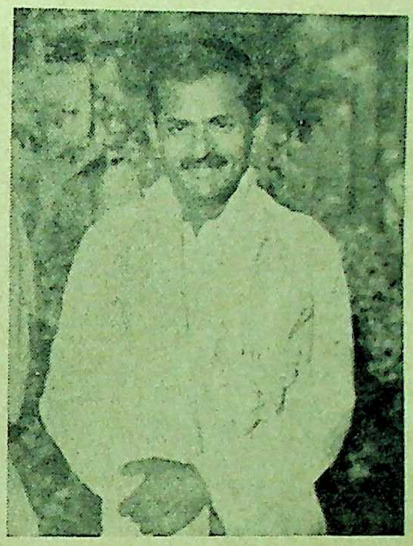

कलाचार्य श्री पंधे गुरुजी

कलाकार पंधेगुरुजीका पूरा नाम श्री मुकुन्द श्रीकृष्ण पन्धे है। आपका जन्म १२ फरवरी १९०३ को नरसिंहपुर जिला होशंगाबादमें अेक मध्यम-वर्गीय ब्राह्मण परिवारमें हुआ था। पन्धेगुरुजीके पिता श्रीकृष्ण अपलाजी पन्धे बड़े ही अुदार तथा धर्मभीरु व्यक्ति थे। सन्त महात्माओंके प्रति वे विशेष श्रद्धा-भाव रखते थे, और हृदयसे अुनका स्वागत किया करते थे।

पन्धेजीका परिवार सुख-समृद्धिसे सम्पन्न था। बाल-बच्चोंसे भरा हुआ घर अभावोंसे वंचित था। अैसे ही सुन्दर तथा धार्मिक वातावरणमें कलाकार पन्धे गुरुजीका शैशवकाल बीता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पन्धेगुरुजीकी प्राथमिक शिक्षा नरसिंहपुर तथा होशंगाबादकी शालाओंमें हुअी। किन्तु यदि सच कहा जाअे तो अुनकी सच्ची शिक्षाका प्रारम्भ प्राकृतिक सौन्दर्यसे सम्पन्न नर्मदा नदीके अुस तटपर हुआ, जहाँ की हरी-हरी झाड़ियाँ झूम-झूमकर हृदयको हरा कर देतीं और नर्मदा नदीकी लोल लहरें जीवनको सरस बना देती हैं। प्रकृति प्रांगणकी यह रंगशाला बालक पन्धेको अितनी आकर्षक प्रतीत होती कि वह शाला न जाकर नर्मदा नदीके रेतीले तटपर कछुअे और मछलियोंके चित्र बनाना अधिक पसन्द करता था।

प्रकृति सौन्दर्यके प्रति अिस आकर्षणका अेक स्थायी प्रभाव श्री पन्धेगुरुजीके जीवनपर पड़ा। शहरकी भीड़-भाड़से अुन्हें अरुचि है और अपने हाथों लगाये पेड़-पौधोंके बीच अपने कला-भवनमें रहकर कलाकी साधनामें अुन्हें विशेष आनन्द मिलता है।

किसे ज्ञात था कि नर्मदा नदीके तटपर चिकनी मिट्टीसे कछुअे और मछलियाँ बनानेवाली छोटी अुंगलियाँ ही आगे चलकर मिट्टीमें सौंदर्य भरकर कलाकी प्राण-प्रतिष्ठा किया करेंगी? खामगाँवके कला-भवनमें निर्मित होनेवाली सुन्दरतम कला-कृतियोंका आरम्भसूत्र नर्मदातटके अुन बाल-खिलौनोंमें मिलेगा, जो टूटे-टूटकर भी अेक कलाकारका निर्माण कर रहे थे।

अपनी प्रायमरी शिक्षा समाप्त करनेके पश्चात अपने पिताजीके साथ बालक पन्धेको नागपुर जाना पड़ा। अिसलिअे आगेकी पढ़ाअीका प्रबन्ध नागपुरमें ही हुआ। सन् १९१९ में आपने मेट्रिक पास की। कालेजमें अिन्टरका दूसरा वर्ग चल रहा था। राष्ट्र-पिता पूज्य महात्माजीका असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। अुथल-पुथलके अुस अैतिहासिक दिनोंकी आज कल्पना भी नहीं की जा सकती। प्रत्येक युवकके हृदयमें अेक द्वंद्व अुठ खड़ा हुआ था। वह क्या करे? अपने स्वार्थोंकी पूजा-साधनामें लगा रहे या देशकी बलिवेदीपर आत्म-बलिदान करे? श्री पन्धे गुरुजीके मनमें भी मंथन चलता रहा। अन्तमें, जैसा अेक सहृदय, भावी कला-कारके लिअे स्वाभाविक था, श्री पन्धेजीने देश-सेवाका पथ अपनाया। वे कालेजको ही नहीं, घर-परिवारको भी अन्तिम नमस्कार करके असहयोग आन्दोलनमें शामिल हो गये।

श्री पन्धे गुरुजीके जीवनकी यह पहली मोड़ थी। अिस नयी दिशाकी ओर जानेके लिअे अुन्हें दो बातोंसे प्रेरणा मिली। सन् १९२० के नागपुर काँग्रेस अधि-वेशनमें स्वयंसेवक बनकर आपने काम किया था। अुसी समय लाला लाजपतरायकी सेवा-सत्संगका लाभ आपको प्राप्त हुआ। लालाजीके जीवनसे आप विशेष प्रभावित हुअे। अिसलिअे जब आप गांधीजीके असहयोग आन्दोलनमें कूदे, तब आजन्म अविवाहित रहकर देश-सेवा तथा आत्मोद्धारकी दृढ़ प्रतिज्ञाके साथ ही कूदे थे। और आज भी हम देखते हैं कि श्री पन्धेजी अुसी तन्मयता, अुसी निष्ठा और अुसी श्रद्धाके साथ दोनों कार्योंमें लगे हुअे हैं।

युवावस्थापर भावनाओंका राज्य रहता है। पंधेजीको धार्मिक वातावरणका लाभ मिला ही था, मनमें यह विचार आया कि अीश्वरी कृपा-प्रसादके बिना लोक-सेवा या देश-कार्य नहीं हो सकता। अुसी अुद्देश्यसे आप रामकृष्ण मिशनमें सम्मिलित हुअे और अीश्वर-भक्तिके साथ जन-सेवाका कार्य करने लगे। धीरे-धीरे वैराग्यकी भावना हृदयमें स्थान पाती गयी। सन्यासी बनकर जीवन बितानेका निश्चय करनेका विचार हुआ। नागपुरके निकट रामटेक तीर्थमें रहकर कुछ समयके लिअे आपने भगवा वस्त्र भी धारण किया था, किन्तु मनमें अन्य विचारोंकी भी आँधियाँ चल ही रही थीं। स्वतंत्रता संग्रामका अेक सक्रिय सिपाही बनना अथवा केवल कलोपासक बनकर जीवन बिताना? अन्तमें देश-भक्तिके प्रति आकर्षणकी विजय हुअी। फलतः मुवाशी सत्याग्रहमें आपने भाग लिया।

अुन दिनों सत्याग्रही और जेलका घनिष्ठ सम्बन्ध था। यरवडा जेलमें आपको बहुत समय तक रहना पड़ा। यहीं आप सेनापति बापट, शंकरराव देव और महात्मा गांधीके निकट सम्पर्कमें आये। सेनापति बापटके ज्वलन्त देश-प्रेम, अटूट सेवा-भाव तथा असीम त्यागने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपको विशेष रूपसे प्रभावित किया। पूज्य बापूके प्रवचनोंका लाभ तो नित्य मिलता ही था। जेलके अुस त्यागमय-तपस्यामय वातावरणमें, बापूके सान्निध्यमें, जीवनको साधना-पथपर चलानेका आपको स्वर्ण अवसर मिला। सर्वस्व समर्पणकी भावना यहीं पल्लवित-पुष्पित हुअी।

सन १९२३ में आप यरवडा जेलसे मुक्त हुअे। अेक सहजेलयात्रीके सुझावपर आपने विदेश भ्रमणका विचार किया, कुछ प्रयत्न भी किया, किन्तु अिस संकल्पमें आप सफल न हो सके। अिधर बचपनमें ही कलाके प्रति जो सहज आकर्षण था, वह अपनी ओर खींच रहा ही था। बम्बअी पहुँचकर आपने बम्बअी स्कूल आफ आर्ट्समें प्रवेश पानेका प्रयत्न किया, किन्तु यहाँ भी आपको सफलता न मिली।

बम्बअी स्कूल आफ आर्ट्सके प्रांगणमें घटनेवाली घटना साधारण न थी। पन्धे गुरुजी जैसा सहज कला-प्रेमी नवयुवक बड़ी श्रद्धाके साथ अुक्त स्कूलके प्रिंसपलके पास प्रवेश पानेकी अिच्छासे गया था। किन्तु अुनकी वेश-भूषाको देखकर ही गोरा प्रिंसिपाल भड़क अुठा। क्योंकि पन्धेजी खादीधारी थे।

देशभक्त भारतीय होनेके कारण श्री पन्धेको जो अुत्तर अेक गोरे प्रिंसिपालसे मिला वह अिस प्रकार था—"You political lunatic ! get out of my Art school, otherWise I shall call my chaparasi to drive you out."

स्वतंत्र भारतके नव नागरिक, दासताकी अुस विभीषिकाकी कल्पना भी न कर सकेंगे, जो अुन दिनों हमारे देशके बड़े-से बड़े व्यक्तियोंके लिअे नित्य अनुभवकी बात थी। किन्तु यह भी कम गौरवकी बात न थी कि अुन दिनों देशका नव युवक समाज अिस दास्य-भावनाके विरुद्ध अेक तीव्र विद्रोहका भाव लेकर अुठ खड़ा हुआ था और अुसीका यह शुभ परिणाम है कि आज हम मुक्त गगनके नीचे स्वतन्त्र वातावरणमें साँस ले रहे हैं—हम स्वतन्त्र हैं।

श्री पन्धेजीने बम्बअीके अुस कला-भवनमें फिर पैर तक न रखनेका निश्चय किया। आप मध्य-प्रदेश लौट आये। अुन दिनों नागपुरमें झंडा-सत्याग्रह चल रहा था। श्री पन्धेजीने अुसमें भाग लिया और फल-स्वरूप फिर अुन्हें जेल जाना पड़ा। स्वातंत्र्य-संग्रामके अेक निष्ठावान सिपाही होनेके कारण आन्दोलनोंमें सक्रिय भाग लेना और जेल जाना ही प्रायः अुन दिनों आपका कार्यक्रम रहा करता था। अिसलिअे आपकी कला-पिपासा अतृप्त ही बनी रही।

सन् १९२४ में कुछ मित्रोंके आग्रहसे आपने खामगाँव तिलक राष्ट्रीय विद्यालयमें काम करनेका निश्चय किया। बहुत दिनोंके हलचलमय जीवनके पश्चात अेक स्थिर जीवनका यहाँ प्रारम्भ हुआ। श्री पन्धेजीने अनुभव किया कि वे यहाँ अुस प्रकारका अेकान्त वातावरण प्राप्त कर सकेंगे, जिसकी आवश्यकता कला-साधनाके लिअे हुआ करती है।

यह कहना ठीक ही होगा कि श्री पंधे गुरुजीकी कला साधनाका वास्तविक प्रारम्भ खामगाँवके राष्ट्रीय विद्यालयमें ही हुआ। और यही वह विद्यालय है जिसमें अुन्होंने अपने स्वप्नोंको साकार रूप देनेका प्रयत्न किया। श्री पन्धे गुरुजीने अपनेको अिस राष्ट्रीय विद्या-लयमें अिस तरह खपा दिया, कि आज अुनमें और अुनके विद्यालयमें विभेद नहीं रह गया है।

अपनी साधनाके प्रारम्भ कालमें श्री पन्धे गुरुजीने भारतके प्रधान-प्रधान कलाकारोंसे परिचय प्राप्त किया तथा अुनकी कला-पद्धतियोंका अध्ययन किया। अध्ययन और आत्म-प्रेरणाके बलपर कलाके विविध रूपोंकी अुपासना चलती रही।

सन् १९३०-३२ के आन्दोलनमें अपनी देशभक्तिके दंडस्वरूप आपको फिर जेल जाना पड़ा। वहाँसे मुक्त होनेपर आपने दक्षिण प्रदेश तथा श्री लंकाकी कला-यात्रा की। द्राविड़ शिल्प-कलासे आप विशेष प्रभावित हुअे और वहाँकी मूर्तियोंका आपने अच्छा अध्ययन किया। खामगाँवके कला-भवनमें आपके द्वारा निर्मित 'नटराज'की दिव्य और भव्य मूर्तिका दर्शन भाव-विभोर बनाये बिना नहीं छोड़ता।

अजंता और अेलोराके कला-मंडपोंका तो आपने बड़ी श्रद्धासे अध्ययन किया है। आपने अुत्तर भारतमें भी घूम-घूमकर विभिन्न स्थानोंकी कला-कृतियोंको देखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। हिमालय-यात्रामें आप अुस प्रकृति देवीके निकट सम्पर्कमें आये जो कलाकारोंको नव-स्फूर्ति और नव-रचनाकी मंजुल प्रेरणा दिया करती है।

वर्तमान भारतीय कलाकारोंमें आप सबसे अधिक शान्तिनिकेतन–निवासी श्री नन्दलाल बोससे प्रभावित हुअे। श्री पन्धेजीको अुनसे कला सम्बन्धी अेक विशेष दृष्टि प्राप्त हुअी है।

काँग्रेस अधिवेशनोंके साथ होनेवाली अनेक प्रदर्शिनियोंमें आपने काम किया है। अिन्हीं मौकोंपर आप कला विषयपर बापूके निकट सम्पर्कमें आये और अुनकी प्रेरणासे ग्रामीण कलाओंके पुनरुद्धारकी ओर आपका ध्यान गया। अिस दिशामें आज तक आपने स्पृहणीय प्रयत्न किया है। राष्ट्रीय क्षेत्रमें आपकी कलाका विशेष आदर है। हैदराबादमें हुअे काँग्रेस–अधिवेशनके अवसरपर आपहीने प्रदर्शिनी तथा पंडाल आदिके द्वारोंको अपनी कला-सृष्टिसे सुन्दर रूप दिया था, जिसकी भूरि-भूरि प्रशंसा सभीने की थी।

खामगाँवका तिलक राष्ट्रीय विद्यालय, जिसे अेक 'कलाधाम'की संज्ञा दी जा सकती है, श्री पन्धेगुरुजीकी कल्पनाओंका मूर्त रूप है। दिन प्रतिदिन अुसे आकर्षक बनानेका अुनका प्रयत्न जारी रहता है। अिस विद्यालयके प्रति अुनकी ममता भी थोड़ी नहीं है, किन्तु यह ममता अुनके कर्तव्य-मार्गमें बाधा नहीं बना करती। व्यापक मानव-जीवनकी ओर दृष्टि रखने और जननी जन्म भूमिके प्रति अगाध प्रेमके कारण सन ४२के आन्दोलनमें आप चौथी बार जेल गये। अिस बार जबलपुर जेलमें सेठ गोविन्ददास, व्योहार राजेन्द्रसिंह, लक्ष्मणसिंह चौहान आदि देशभक्त साहित्यकारोंके सम्पर्कमें आये। श्री पन्धेगुरुजी जेलमें रहे अथवा जेलके बाहर, कला सम्बन्धी अुनका अध्ययन और मनन सदैव चलता रहा। 'अेक भारतीय आत्मा' श्री पंडित माखनलालजी चतुर्वेदीके कलाविषयक विचारोंके जाननेका शुभ अवसर खामगाँवके विद्यालयमें ही आपको मिला; जहाँ वे अतिथि होकर अनेक दिन रहे। अमरावती निवासी डाक्टर पटवर्धनजीकी सक्रिय सहानुभूति यदि आपको न मिली होती, तो आपकी कला-कृतियाँ समाजके सामने न आयी होतीं। डाक्टर साहबके द्वारा ही नेताजी सुभाषचंद्र बोसका आशीर्वाद आपकी कला-साधनाको प्राप्त हुआ था।

श्री पन्धे गुरुजीकी जीवन-प्रवृत्ति राजनीतिकी ओर नहीं है। फिर भी, जब तक देश पराधीन था, राजनैतिक संग्राम जीवन-कार्यका अेक अंग बन जाना अनिवार्य था। प्राणवान कला-अुपासक अिन संघर्षोंसे भागकर किसी अेकान्त कोनेमें बैठकर अपनी कला-निर्मिति कैसे कर सकता था?

किसीने ठीकही कहा है कि "कलाकी प्रेरणाका श्रोत जीवनके संघर्षमें है। संघर्षमें सत्, शिव और सुन्दरको ढूँढ़कर अुसे शब्द, स्वरनाद, वर्ण-छटा आकार रूपमें प्रकट करना कलाकारका काम है। वह दुनियाके प्रमुख शान्ति दूतोंमेंसे अेक है। "Composer, Sculptor, painter poet, prothet—these are the peace makers of the World" अिनके हाथोंसे जन्म पायी हुअी कला, अिनके हृदयमें भरी हुअी अपार शान्ति प्रेमकी धारा बहाती है, जो द्वेष, मत्सर, क्रूरतासे जली-भुँजी मानवताकी भूमिका सिंचनकर अुसे हरी-भरी करती है।

मनुष्यके जीवनमें संस्कारोंका अेक महत्वपूर्ण स्थान है। श्री पन्धे गुरुजीको, अपने प्रारम्भिक जीवनमें जो सात्विक तथा धार्मिक वातावरण मिला, अुसने आपके जीवनपर गहरी छाप डाली। कला विषयक आपके विचार अुसी सात्विक प्रभावकी छायामें विकसित हुअे हैं।

कलाके सम्बन्धमें आपने जो अपने स्पष्ट विचार अपने अेक पत्रमें व्यक्त किये हैं, अुनको यहाँ अुद्धृत करनेका लोभ सम्वरण नहीं कर पा रहा हूँ।

"कलाको मैं सम्प्रदायकी चीज नहीं मानता। वह निर्मल शुद्ध जलके समान पवित्र है। धर्म, पंथ, सम्प्रदायकी अनुयायी कला अपना सत् स्वरूप प्रकट नहीं कर सकती। कला और कलाकारके लिअे देश, धर्मकी सीमा अुचित नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"कला राष्ट्रकी अेक अमूल्य निधि है। समाज और राष्ट्रका हृदय कलाद्वारा पहचाना जाता है। अिसलिअे कलाकारको अिस अमूल्य राष्ट्रनिधिको भ्रष्ट होने नहीं देना चाहिये। व्यक्ति, समाज, राष्ट्र—अिनका सम्बन्ध कलाद्वारा जोड़ा जाता है। अिसलिअे कला और राष्ट्र अभिन्न हैं।"

अपनी कला-दृष्टिके सम्बन्धमें आगे आपने लिखा है—

"सौभाग्यवश मेरी जीवन-ध्येय-दृष्टि सात्विक-आदर्श तथा कला-साधना देशके महान् पुरुषोंके प्रत्यक्ष सान्निध्यसे प्राप्त हुअी है। पूज्य पिताजीकी दार्शनिक प्रवृत्तिका प्रभाव भी पड़ा ही है।"

अेक बार अिन पंक्तियोंका लेखक तिलक राष्ट्रीय विद्यालयमें ही बैठा श्री गुरुजीसे कला-चर्चा कर रहा था। कला सम्बन्धी प्रारम्भिक प्रेरणाओंकी बात करते हुअे अुन्होंने बताया कि—"मेरी माताजी कला शब्दको न जानती होंगी, किन्तु वे कलाकी आत्माको पहचानती थीं। अेक दिन मैं नहाकर घर पहुँचा। भूख लग रही थी। अिसलिअे जल्दीसे अपनी गीली धोती आँगनके तारपर योंही बेढंगे तौरसे फैला दी। रसोअी-घरमें बैठी माँने यह देख लिया। वे वहाँसे अुठकर आयीं और बड़े प्रेमसे मुझे बतलाया कि धोती अिस प्रकार तिरछी-बेंड़ी नहीं डाली जाती है। फिर अुन्होंने धोतीकी किनारीसे किनारीको मिलाकर बराबर किया और मुझसे पूछा—अब अच्छी लगती है या पहले अच्छी लगती थी?

कलाकी शिक्षा मेरी अुसी दिन प्रारम्भ हुअी थी।"

श्री पंधे गुरुजी बहुमुखी प्रतिभाके कलाकार हैं। द्राविड़ मूर्ति तथा शिल्पकलाकी ओर आपकी विशेष अभिरुचि है। चित्रकलाके प्रति भी आप रुचि रखते हैं। विशेषरूपसे आप अजन्ता-पद्धतिकी कलाके अुपासक हैं। चित्रकलाके जितने प्रकार हैं—सभीमें आपने कौशल प्राप्त किया है। संगीत (गीत, वाद्य, नृत्य) अेक प्रकारसे आपके जीवनका मानसिक सात्विक दैनिक आहार बन गया है। साहित्यके भी आप प्रेमी हैं। मराठी-साहित्यके आप ज्ञाता हैं ही, राष्ट्रभाषा हिन्दीका अध्ययन भी आपने बड़ी श्रद्धासे किया है। राष्ट्रभाषाके प्रचार-कार्यमें आप अपना सक्रिय सहयोग दिया करते हैं।

तिलक राष्ट्रीय विद्यालयको 'कलाधाम' की संज्ञा दी जा चुकी है, किन्तु वास्तवमें यह अेक विद्यालय है और अैसा विद्यालय है जहाँ सच्चरित्र राष्ट्रीय वृत्तिके भावी नागरिक तैयार किये जाते हैं। श्री पन्धेगुरुजी ही अिस विद्यालयके प्रधान आचार्य भी हैं। अुन्हींकी देख-रेखमें बालकोंका शिक्षण होता है।

काँग्रेसके राष्ट्रीय शिक्षा सम्बन्धी प्रस्तावके आधारपर तिलक राष्ट्रीय विद्यालय खामगाँवकी स्थापना १९२१ में हुअी थी। राष्ट्रीय शिक्षाका आदर्श रखते हुअे गत ३० वर्षसे यह संस्था राष्ट्र-निर्माणका स्तुत्य कार्य करती आ रही है। विभिन्न राष्ट्रीय आन्दोलनोंमें अिस संस्थाके विद्यार्थियों और शिक्षकोंने भाग लिया था। जात-पाँत-पंथ रहित, प्रखर राष्ट्रीयता तथा प्रजातंत्रकी शिक्षा देकर स्वावलम्बी, नीतिमान राष्ट्र-सेवक नागरिक निर्माण करना—अिस संस्थाका पावन अुद्देश्य है।

विद्यालयको देशके सभी नेताओंने भेंट देकर गौरव तथा आशीर्वाद दिया है। अिस संस्थासे पूज्य महात्मा गांधीका निकट सम्बन्ध रहा है। विद्यालयको प्रान्तीय सरकारका भी सक्रिय सहयोग प्राप्त है।

अिसी विद्यालयके प्रांगणमें श्री पन्धे गुरुजीका वह भव्य कलाभवन स्थित है, जहाँ अेक मौन साधकके रूपमें कलाके विविध रूपोंकी अुपासना वे गत ३० वर्षसे कर रहे हैं। अिस कला-भवनकी स्थापत्य-कला बड़ी ही आकर्षक और प्रभाव डालनेवाली है। स्थापत्य सम्बन्धी भारतीय विभिन्न शैलियोंका बड़ा ही मनमोहक समन्वय अिस भवनमें प्रस्तुत किया गया है। कला भवनके अूपरी भागमें जो अेक विशाल हाल है, संगीत, नृत्य, वाद्य नाट्यके लिअे अुपयोगमें आता है और अुसके नीचेके भागमें, जो अेक प्रकारसे गर्भ-गृहसा है, चित्रकला तथा मूर्तिकलाकी प्राण-प्रतिष्ठा होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिस भवनमें श्री पन्धे गुरुजीकी तथा अुनकी देख-रेखमें अुनके शिष्यों द्वारा तैयार की हुअी अनेक भाव-पूर्ण मूर्तियाँ तथा चित्र सुशोभित हैं। अिन चित्रोंमें 'ज्ञान और शक्ति', 'सुजाता', 'काम-विजय', 'दधीचका अस्थिदान', 'आत्मा और शैतान', 'बापूकी रक्तांजलि' आदि बहुत ही भावपूर्ण सुन्दर चित्र हैं।

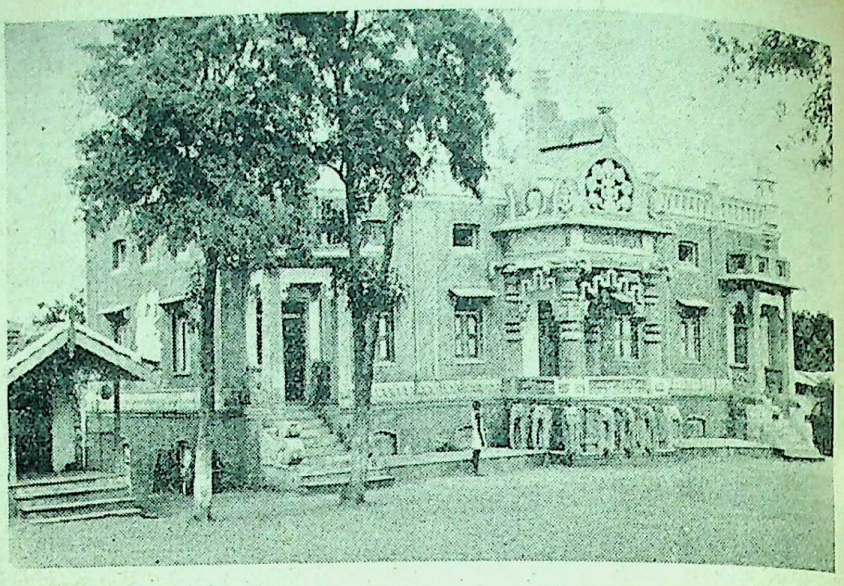

कला भवन खामगाँव

'ज्ञान और शक्ति' चित्रमें शक्तिका प्रतीक— सुगठित शरीरवाला अेक पुरुष पीछे चल रहा है, अुसकी आँखोंपर पट्टी बँधी है—यह सूचित करनेके लिअे कि शक्ति (पशुबल) अन्धी होती है। शक्तिका हाथ पकड़े हुअे ज्ञानका प्रतीक–अेक सुन्दर रमणी आगे-आगे चलकर मार्गदर्शन कर रही है। अुसके दाहिने हाथमें दीपक है, जिससे किरणमाला निकलकर पथ-आलोकित कर रही है।

'सुजाता' में श्रद्धा और करुणा, 'दधीचका अस्थि-दान' में त्यागका भाव साकार हो अुठा है। 'बापूकी रक्तांजलि' तो हृदयको हिला देनेवाला चित्र है। बापू बड़ी ही भावमयी गम्भीर मुद्रामें बैठे हैं। अुनकी छातीके तीन स्थानोंसे, जहाँ गोली लगी थी, रक्तकी बूंदें गिर रही हैं, जो बापूके दोनों हाथोंकी अंजलिको भर रही हैं। अुस अंजलिसे अुमड़कर रक्त बधकते हुअे विश्वपर गिर रहा है। विश्वको अर्ध वृत्ताकारमें अुपस्थित किया गया है, जिससे हिंसाकी ज्वालाअें निकल रही हैं। बापूका रक्तदान विश्वकी अिस हिंसा-ज्वालाको शान्त करनेका प्रयत्न कर रहा है।

चित्रोंके अलावा अनेक भावभीनी मूर्तियां अिस कला-भवनमें विद्यमान हैं। अेक तरफ दीवारमें 'नट-राजका तांडव-नृत्य' बहुत ही भावपूर्ण कलाकृति है।

अुसी प्रकार 'किसान-परिवार' सर्वांग पूर्ण सुन्दर कृति है। अिस कलाभवनमें 'किसान-परिवार' की छोटी मूर्ति है। अेक बड़ी मूर्ति नागपुरके संग्रहालय (म्यूजि-यम) मुख्य द्वारके ठीक सामने रखी हुअी है। संग्रहा-लयमें प्रवेश करते समय दर्शक अिस मूर्तिके भाव-सौन्दर्यको देखकर चित्रस्थ-सा खड़ा रह जाता है। पार्श्व-भूमिमें गाय खड़ी है। किसान अपने अेक हाथमें कुल्हाड़ी लिये है और दूसरे हाथकी अुंगलीको पकड़े अुसका छोटा बच्चा खड़ा है। किसानके पैरके पास बकरी, और बच्चेके पास कुत्ता खड़ा है। किसानके पीछे सिरपर टोकरी और गोदमें बच्चा लिये किसानकी स्त्री खड़ी है। अुसके पीछे किसानकी वृद्ध माँ खड़ी है—कुछ झुकी कमर, सिरपर जलझारी, हाथमें छोटी टोकरी। वहीं पास ही किसानकी लड़की खड़ी है, जिसके सिरपर घास है। पार्श्व-भूमिमें वृक्षकी अेक शाखा दिखायी देती है जिसके घोंसलेसे अेक पक्षी अुझक रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसान-परिवारका यह कितना सर्वांग-सम्पूर्ण सुन्दर चित्र है। कुशल कलाकारने बड़ी ही तन्मयतासे अिसे बनाया है। प्रत्येक पात्रकी मुखमुद्रासे अुसका स्वाभाविक भाव प्रकट हो रहा है। अिस लेखके पाठकोंको यदि कभी नागपुर संग्रहालय देखनेका अवसर मिले, तो मैं अुनसे अनुरोध करूँगा कि वे अिस मंजुल मूर्तिको ध्यानसे देखना न भूलें।

तिलक राष्ट्रीय विद्यालयके कला-भवनमें और भी अनेक सुन्दर मूर्तियाँ रखी हैं, जिनमें 'बंगालका अकाल', 'कला पिपासु', 'खैबर पास' आदि विशेष अुल्लेखनीय हैं।

श्री पन्धे गुरुजी द्वारा निर्मित अनेक सुन्दर मूर्तियाँ देशके विभिन्न स्थानोंमें, दर्शकोंकी श्रद्धाको स्वीकार कर रही हैं। अमरावतीके जोशी-हालमें 'स्वामी विवेकानन्द' की मूर्ति, वहीं व्यायाम-शालामें 'भारतमाता' की मूर्ति, ब्रह्म-विद्यामन्दिरमें 'गौतमबुद्धकी मूर्ति' प्रस्थापित है। नागपुर (महल) में 'अभ्यंकर' की विशाल मूर्ति आप ही के द्वारा बनायी हुअी है। हरिपुरा कांग्रेसमें स्थापित श्री विठ्ठलभाअीकी मूर्तिके निर्माता भी श्री पन्धे गुरुजी ही थे।

कलाकी अनवरत साधनामें लगे श्री पन्धे गुरुजीके द्वारा सुन्दर कलाकृतियाँ तैयार होती रहती हैं, होती रहेंगी। चित्रों और मूर्तियोंको बनानेमें जब गुरुजी कार्यरत होते हैं, तब अुनकी तन्मयता देखते ही बनती है। कोअी कलाकृति जब तैयार हो जाती है, तब अुन्हें जिस आनन्दकी अनुभूति होती है, अुसे शब्दोंमें व्यक्त नहीं किया जा सकता। अैसे अवसरोंपर अुनकी आँखोंमें अेक अपूर्व चमक अिन पंक्तियोंके लेखकने कअी बार देखी है।

अपनी कृतिके साथ कलाकार

श्री पन्धे गुरुजी विज्ञापनसे दूर रहकर कलाकी मौन साधना करनेवाले शान्त स्वभावके निर्मल पुरुष हैं। यही कारण है कि आपकी कलाको विज्ञापनका प्रकाश नहीं मिला है।

श्री गुरुजीका स्वभाव अितना सरल और सौम्य है, कि अुनके निकट खड़े होनेपर सात्विक प्रभावकी अनुभूति स्वयं होती है। सच्चे अर्थोंमें वे साधु पुरुष हैं। कलाके अिस मौन साधकसे परिचय प्राप्त करना और अुसके कलाभवनको देखना जीवनका अेक पुण्य-लाभ समझना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अखॉमिया रामायण

: प्रो० रंजन, अेम. अे. :

'राष्ट्रभारती'के माध्यमसे दक्षिणका श्रेष्ठ साहित्य हिन्दी पाठकोंके सन्मुख नियमित रूपसे आने लगा है। प्रत्येक अंकमें तमिल अथवा तेलुगुके ललित-साहित्यको पढ़नेका सौभाग्य पाठकोंको मिलता रहता है। और अिस प्रकार दक्षिणी-साहित्य (तमिल, तेलुगु, मलयालम और कन्नड)के अनेक अमूल्य पक्ष हिन्दीके माध्यमसे देशके अुत्तरी कोनोंतक पहुँच रहे हैं। प्रान्तीय-साहित्यकी अुच्चतम रचनाओंको अिस प्रकार विभिन्न माध्यमोंसे और विशेषकर राष्ट्रभाषाके माध्यमसे संपूर्ण देशकी संपत्ति बना देना, आजकी अेक बड़ी आवश्यकता है। देशकी कअी अेक अन्य भाषाअें, बंगला, गुजराती और अुड़िया भी हिन्दीके झरोखोंसे जनताके सामने आयी हैं, परन्तु असमिया (अखॉमिया) साहित्यके विषयमें हिन्दीमें बहुत कम अथवा कुछ भी नहीं लिखा गया। जिससे पता चलता है कि अखॉमिया भाषामें देशको देने लायक कुछ हैही नहीं। हमारे असमिया भाअियोंकी यह अुदासीनता व्यापक साहित्यके विकासमें बड़ी बाधक सिद्ध हुअी है। अिस बार अपने असम-भ्रमणके समय मैंने अखॉमियाके कअी अेक पंडितोंसे अिस विषयमें चर्चा की। पर अुनकी अुदासीन वृत्तिको देखकर बड़ा क्षोभ हुआ। अन्य भाषाओंके समानही असमियामें अनेक अमूल्य जन-ग्रन्थ भरे पड़े हैं; पर हिन्दीवाले अुनके विषयमें कुछ भी नहीं जानते। अैसे लोक-प्रचलित ग्रन्थोंमें सर्व प्रथम स्थान संत शंकरदेव रचित 'कीर्तन' को प्राप्त है। असम प्रान्तमें 'कीर्तन'का वही स्थान है जो अुत्तर प्रदेशमें तुलसी-रामायणको और महाराष्ट्रमें संत तुकारामके अभंगको। यह पुस्तक असम प्रान्तके प्रत्येक हिन्दू घरकी बाअिबिल है।

संत शंकरदेव द्वारा रचित 'कीर्तन' के बाद दूसरा लोकप्रिय ग्रंथ माधव कन्दली द्वारा विरचित रामायण है। बहुतसे अुत्तर भारतीय हिन्दी भाषियोंकी यह कल्पना है कि हिन्दीकी तुलसीकृत रामायणही प्रान्तीय भाषाओंकी सबसे प्राचीन रामायण है, अिससे गलत धारणा दूसरी नहीं हो सकती। बाल्मीकि रामायणके बाद प्रान्तीय भाषामें सर्वप्रथम तमिलमें रामायणकी रचना हुअी थी। अिसके पश्चात असम प्रान्तमें आजसे लगभग १२०० वर्ष पूर्व अखॉमियामें माधवे कन्दलीने बाल्मीकि रामायणके आधारपर असमिया रामायणकी रचना की।

भारतीय साहित्यकी दो प्रधान मणियाँ महाभारत और रामायण किसी-न-किसी रूपमें आज प्रत्येक प्रान्तीय साहित्यमें अुपलब्ध हैं। अनेक कारणोंसे अपनी बौद्धिक प्रतिष्ठाके बावजूद महाभारत अुतना लोक-प्रिय नहीं हो सका जितनी कि रामायण। यों रामायणकी कथा भारतीय प्रान्तीय साहित्यमें बाल्मीकि द्वारा रचित संस्कृत रामायणसे ही आयी, परन्तु अपनी भावना, परंपरा और प्रान्तके अनुरूप प्रान्तीय रामायणकी कथा भी मूलसे बहुत भिन्न हो गयी है। असमी लोक-जीवनमें राम, कृष्ण वैसे ही गुथे पड़े हैं जैसे अुत्तर प्रदेशमें। थोड़ा अन्तर अवश्य है और वह यह कि वर्तमान भक्ति-पद्धतिके अुन्नायक हैं संत शंकरदेव और अुनके अिष्ट देव हैं कृष्ण। अिसलिअे असममें आज भक्तिके प्रतीक प्रधानतया कृष्ण माने जाते हैं। परन्तु अपने कीर्तनमें स्वयं संत शंकरदेवने कृष्णको रामका ही रूप बताकर रामकृष्णके अेक होनेकी घोषणाकर कृष्णके साथ रामके प्रति भी भक्तिकी प्रतिष्ठा कर दी है।

भारतीय संस्कृति और परंपराका प्रतिनिधित्व करनेवाली कअी अेक रामायणें आज असमिया भाषामें अुपलब्ध हैं। रामायणोंके अितने प्रकार शायद किसी प्रान्तमें देखनेको नहीं मिलेंगे। ३-४ पद्य-रामायणोंके अलावा जनताके विचार अेक रामायण केवल गद्यमें है। नाटकके रूपमें भी अेक रामायणकी रचना असमिया विद्वानोंने की है। जैसा कि अूपर अुल्लेख किया गया है, आर्य भाषाओंमें असमिया-रामायणसे पूर्वकी रचना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोअी भी नहीं। तुलसीकृत रामायणसे अिसके निर्माणका काल १५० वर्ष पूर्व है। असमियाकी अिस 'रामायनी', (रामायण) के रचयिता श्री माधव कन्दली थे, जिन्होंने अखमिया छन्दमें बाल्मीकि रामायणका रूपान्तर-सा किया है। तुलसीदासने अिससे १५० वर्ष बाद अपनी रामायण जनताको भेंट की। श्री माधव कन्दलीके बाद असममें रामायण लिखनेकी अेक बाढ़-सी आती है। विभिन्न कवियोंने कवितामें, गद्यमें, गीतोंमें, कीर्तनमें, रामायणकी रचना की। परिणामस्वरूप आज अखमियामें रामायणके पाँच रूप प्राप्त हैं। और प्रत्येककी शैली, कथा और छन्द अलग-अलग हैं। परन्तु मूल कथाका श्रोत सबने बाल्मीकिको ही माना है।

१४ वीं शताब्दीमें जब स्वामी रामानंदने राम-भक्तिका प्रचार देशमें शुरू किया तबसे असममें रामायण लेखन द्वारा राम-भक्तिकी प्रतिष्ठाकी लहर फैली। रामानंदके शिष्योंने अुत्तरी भारत और मध्यभारतमें रामभक्तिका प्रचार किया। यही लहर देशमें घूमनेवाले आसामी धार्मिक व्यक्तियोंके द्वारा असममें पहुँची। और अिस प्रकार असममें रामायणके प्रथम रचयिता कविवर माधव कन्दलीका काल १४ वीं शताब्दीका अन्तिम भाग माना जा सकता है। अपने समकालीन राजा महा-माणिकचन्दकी प्रार्थनापर अुन्होंने रामायणकी रचना शुरू की। संत शंकरदेवने अपने अुत्तर काण्डमें अुन्हें अपना पूर्वगामी और दोषशून्य कवि माना है। श्री वारपते द्वारा लिखित 'कथा गुरु चरित' में अेक स्थानपर अैसा अुल्लेख है जिससे पता चलता है कि श्री राघवाचार्य संत शंकरदेवके शिक्षक श्री महेन्द्र कन्दलीके समकालीन थे और महेन्द्रकन्दली श्री माधवकन्दलीके शिष्य थे।

जिस समय श्री माधवने असमियामें रामायण लिखना आरम्भ किया, अुस समय देशकी किसी दूसरी भाषामें कोअी रचना अुपलब्ध नहीं थी जिसके आधारपर वे असमिया भाषामें अपनी रचना करते। अिसलिअे अुन्होंने सीधे संस्कृतके 'आदि काव्य'में व्यवहृत छन्दको ही अपनी रचनाका आधार माना। अिस विषय में स्वयं श्री कन्दलीका कथन है कि महाकवि वाल्मीकिने अनेक छन्दोंमें रचना की। मैंने बड़ी सावधानीसे अुन्हें पढ़ा और अपने ढंगसे जो कुछ समझ सका, अुसे संक्षिप्त रूपमें अिस रामायणमें लिया है। अैसा कौन है जो अुनके समस्त रसोंको समझ सके? और अिसलिअे 'रामायनी' में कवि माधव कन्दली आवश्यकतानुसार कुछ जोड़ देते हैं, कभी कुछ कम कर देते हैं। कवि अेक स्थानपर कहता है कि आदि काव्यके शब्द अीश्वरके वाक्य नहीं वरन् वह भी अेक मानव-कृति ही है; अतः यदि मैं अपनी रचनामें कोअी हेर-फेर करता हूँ तो लोगोंको नाराज नहीं होना चाहिये।

माधव कन्दलीकी रामायणमें केवल ५ काण्ड थे—अयोध्यासे लेकर लंकाकाण्ड तक। आदि काण्ड और अुत्तर काण्डके बारेमें कहा जाता है कि वे शायद खो गये हैं। और बहुत बादमें महादेव और संत शंकर-देवने आदि और अुत्तर काण्डोंको माधव रचित रामायणमें जोड़ा है। बहुतसे लोगोंका विचार है कि माधव कन्दलीने जान-बूझकर ये दो काण्ड छोड़ दिये; लेकिन अुनकी रचनामें कअी स्थानोंपर सात काण्डोंका अुल्लेख मिलता है, जिससे पता चलता है कि शायद अुन्होंने सातों काण्डोंकी रचना की है। अखमिया भाषामें अुपलब्ध अन्य रामायणोंमें भी अिन दो काण्डोंका समावेश नहीं किया गया।

माधव कन्दली द्वारा लिखित रामायणकी विशे-षताओंको संक्षेपमें अिस प्रकार रखा जा सकता है—

(१) प्रकृतिके वर्णनमें अुन्होंने स्थानीय दृश्योंको, व्यक्तियोंके कार्योंका विशेष वर्णन किया है। अुनकी भाषामें वेग है और अुसमें अुचित स्थानीय मुहावरों, कहावतों, रूपकों और अलंकारोंका वर्णन बड़े सम्यक ढंगसे किया गया है। कुछ अलंकार अुन्होंने मूलसे लिये हैं, कुछ स्थानीय भाषासे और कुछ अपने आप बनाये हैं। दृश्योंका वर्णन बड़ा सजीव और नाटकीय है। भिन्न-भिन्न वर्णनोंके अनुसार अुन्होंने अलग-अलग छन्दोंको चुना है। रूपक और अुपमाके विषयमें वे कभी-कभी मूलसे दूर चले जाते हैं। और अैसे अुल्लेखोंमें अुनके युगका प्रभाव स्पष्ट झलकता है। अुदाहरणके लिअे वे राम और अुनके राजमहलकी तुलना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैलाशसे करते हैं। माधव कन्दलीके समयमें असममें शैव विचार-धाराकी प्रधानता थी; अिसीलिअे वैकुंठके स्थानपर अुन्होंने कैलाशको चुना। अिसके अलावा कअी अैसे स्थान हैं जहाँ अुनका वर्णन 'आदिकाव्य' से भिन्न है। चित्रकूटका वर्णन, सुग्रीवके आदेशपर सीताकी खोज, मधुवनमें हनुमानकी राक्षसोंसे मुठभेड़ और लंका-दहनके वर्णन अैसे ही हैं।

कुछ स्थलोंके वर्णन बड़े मार्मिक और सुन्दर हैं:- कवि भरतके चित्रकूट जाते समय निषादके मनकी शंकाको बड़े स्वभाविक ढंगसे प्रस्तुत करता है—

"अितो धज दण्ड पताका देखिया,
जानी लोहो सरुपत,
अनहेतु नहि रामाक मारिते
असिला साजी भरत।"
"कैकेयी मातार हते राघबर
करिला राज्य नैरास।"

अर्थात्—अितने अस्त्रशस्त्रोंसे सज्जित सेना और ध्वज-दण्डोंको देखकर निषाद सोचता है कि निश्चय ही रामको मारनेके लिअे भरतने अितनी सेना सजायी है। कैकेयी माता रामको मारकर निष्कंटक राज्य करना चाहती है।

अिसी प्रकार परशुराम-रामसंवाद तुलसीकी रामायणसे सर्वदा भिन्न है। यहाँ परशुरामके क्रोधको फैलने और लक्ष्मणके क्रोधको पनपनेका कोअी अवसर ही नहीं आया।

"ऋषिधर्म अनुसरि आछा महाभाग,
आमात तोमार केन अेत महाराग।
क्षमासे अुचित धर्म होवम तोमार,
किसक करिला तुमि ताक् परिहार।"
"धर्म अेरी अधर्म करय जितो नर,
ताक दण्ड करिवे लागय क्षत्रियर।"

अर्थात्—राम कहते हैं कि हे महाभाग ऋषिधर्मका अनुसरण करना आपका धर्म है। अैसी अवस्थामें मेरे और अापके बीचमें क्रोधके लिअे कोअी स्थान ही नहीं। आपके धर्मकी शोभा क्षमा है। आप अुसे कैसे छोड़ सकते हैं? अपने धर्मको छोड़कर जो व्यक्ति अधर्म करता है अुसे दण्ड देना क्षत्रियका धर्म है।

रामके बन चले जानेपर दशरथका विलाप बड़ा करुण हुआ है—

"मरन कालत रामने देखिलो तोक।
यम कवलको गैले नेराअि बोहो शोक।
शुना बान्धै कौशल्या नकराँ हृदिखेद।
तोमार आमार अैवे भैल परिच्छेद।
चौधय वरषि रामे वनवास तरि
पुनरपि असिवन्त अयोध्या नगरी।
स्वर्ग हन्ते येहेन आसिव सुरराजे।
लोके वढ़िवेक जे देवता समाजे।
ताक देखिवाक कपालत भाग्य नाअि।
पुत्रशोके हेरा मोर प्राण फुटि याअि।"

अर्थात—मरते समय रामको देखनेकी अिच्छा लेकर मैं जाअूँगा। मेरी अिस अिच्छाको यम-लोकमें चले जानेके कारण शोकमें बदलना पड़ेगा। अैसा सुनकर पत्नी कौशिल्याने अुनसे शोक न करनेकी प्रार्थना की और कहा कि तुम्हारी और हमारी जीवन-यात्रा अब पूरी हो चुकी। १४ वर्षके पश्चात् राम जब बनसे लौटकर आवेंगे तो अयोध्याके नरनारी अुन्हें अपने बीच पुनः देखकर स्वर्गसे आते समय जैसे सुरराजको देवता घेर लेते हैं वैसे अुन्हें घेर लेंगे। अुस अवस्थामें रामको देख सकनेके भाग्य अपने नहीं हैं अैसा दशरथ कहते हैं और कहते हैं कि पुत्र-शोकसे मेरे प्राण शेष नहीं रहेंगे।

(२) गीतरामायण

नीलाचलके निवासी श्री दुर्गावरने संक्षिप्त रूपमें गीत-रामायणकी रचना की। यह कवि कूँच बिहारके विश्वसिंहके राज्यकालमें (१५१५-४०) में हुअे थे। अिस गीत रामायणमें २० रागोंका समावेश है। कुछ छन्दोंमें माधव कन्दलीका प्रभाव झलकता है।

परन्तु दृश्योंके चयन और तथ्योंको जन-मनोविज्ञानके अनुकूल मोड़नेमें अिनकी अपनी मौलिकता है। डा. वी. काकत्यने अपने प्राचीन असमिया साहित्यमें अिस रचनाको बाल्मीकिकी रामायणका जन-संस्करण कहा है। अिस रचनाके भी आदि और अुत्तर पर्व नहीं हैं। यह रचना सर्वप्रथम स्वर्गीय विषयचन्द्र द्वारा ३०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष पूर्व प्रकाशित हुअी थी और आज यह अप्राप्य है। अिस रचनामें स्थल-स्थलपर कविकी मौलिकता झलकती है:—

(१) जंगलमें राम सीता अपना समय पासर खेलकर व्यतीत करते हैं। (२) अिसी समय सीताजी स्वर्ण हिरन देखती हैं और अुसे जीवित पकड़कर लानेके लिअे रामसे आग्रह करती हैं ताकि वे अुसे अपने पास पाल सकें। (३) चित्रकूटमें राम अुदास रहते हैं लेकिन सीताने जंगलमें अयोध्याका निर्माण कर दिया हैं। राम, सीता और लक्ष्मण वसंतोत्सवमें डूब जाते हैं और होली खेलते हैं। ठीक अिसी समय रावण आकर सीताको ले जाता है।

गीत-रामायण आरंभिक असमिया साहित्यका अेक नमूना है। अिसे वेवलागीतकी श्रेणीमें रखा जा सकता है।

अनन्त कन्दलीकी 'रामायण'

दुर्गावरके पश्चात् अनन्त कन्दलीने रामायणकी रचना की। ये संत शंकरदेवके शिष्य और समकालीन थे। अनन्त कन्दलीने माधव-कन्दलीकी रचनाको ही हाथमें लिया और अधिकांशमें अुनकी रचनासे ही वर्णन और छन्दोंको अुधार लिया है। कहीं-कहीं अुन्हें संक्षिप्त कर दिया है, कहीं-कहीं विस्तार दे दिया है। अुन्होंने अपने काव्यमें भगवती-तत्वका विशेष रूपसे अुल्लेख किया है; अुन्होंने स्पष्ट कहा है —

"माधव-कन्दली विरचिला रामायण
ताक सुनि आमार कौतिक करे मन
रामार सामान्य संत कथा यथावत्
भाजन्य गुनजत न भैला बेकत।

अर्थात्– माधव कन्दलीने रामायणकी रचना की। अुसे सुनकर मेरा मन भी कुछ लिखनेको अुत्साहित होता है। रामके जीवनके सभी तत्वोंपर कौन प्रकाश डाल सकता है? परन्तु अभी तक अुनके भक्ति पक्षपर विस्तारसे नहीं लिखा गया अिसलिअे भक्ति पक्षके वर्णनके लिये मैं प्रयत्न करता हूँ।

अनन्त कन्दली और अुनके गुरु शंकरदेवके लिअे रामकृष्णसे भिन्न और कुछ नहीं थे। अिस प्रकार अिसमें भक्ति पक्षका समावेशकर अिसे समयके अनुरूप अेक धार्मिक ग्रंथका रूप दे दिया है। अिसमें कअी स्थानोंपर अुन्होंने अपनी विशेषता प्रदर्शित की है:—

"रामायण कथा पदे निबन्धिलो
भगवंत चरचा करी
हरि कथा बिने दुःघोर कलित
तरि तेके हो रपारी।"

मैंने रामायणके तत्वोंका वर्णन छन्दोंमें किया है और अैसा करनेमें मैंने भागवतका अुल्लेख किया है क्योंकि कलि-कालमें बिना हरि-नामके कोअी मुक्ति नहीं पा सकता।

अनन्त कन्दली तुलसीके समान रामको अीश्वर मानते हैं। वन जाते समय वे सीतासे कहते हैं:—

"भारत हैबेक राजा
पालिबेक सबै प्रजा
तातो मोरकिछो चित्रा नाम
यटेकेसे मार सोक तजिलो माकत लोक
सुभरन्टे प्रान फुटि जाय
यहेन अयोध्यापुरी अर याता नर-नारी
सब मोर परम भक्त।"

अर्थात—भरत राजा होकर प्रजाकी रक्षा करेंगे। मुझे अिसकी चिन्ता नहीं। मेरे दुःखका कारण यह है कि मैंने अपने भक्तोंको छोड़ दिया यह विचार मेरे हृदयको विदीर्ण कर देता है। अयोध्याके समस्त नर-नारी मेरे भक्त हैं।

माधव कन्दलीसे भिन्न अनंतकंदलीने राम-महलकी अुपमा वैकुंठसे दी है। अिस रामायणमें कहीं-कहीं व्यक्तिगत अुल्लेख भी मिलते हैं। कविने अपने जन्म और ग्रामके विषयमें भी कुछ छन्द लिखे हैं।

अुपरोक्त तीन रामायणोंका असमिया-साहित्यमें विशेष महत्व है, परन्तु राम-चरित कहनेकी प्यास आसाममें बड़े जोरसे प्रकट हुअी थी। अिसलिअे अिन तीन रामायणोंके अतिरिक्त भी कुछ अन्य रचनाअें अिस दिशामें हुअीं जिनमें खास-खासके नाम अिस प्रकार हैं—

(४) 'श्रीरामकीर्तन' अिसके रचयिता श्री अनंत ठाकुर थे। अिनका जन्म शंकरदेवके बाद चौथी पीढ़ीमें हुआ था। भाषा, पद्धति अदिकी दृष्टिसे यह रामायण अुपरोक्त रामायणोंसे भिन्न है। 'रामकीर्तन' का रचना-काल १५७४ शाक संवत माना जाता है।

(५) कथा-रामायण— यह रामायण शुद्ध गद्यमें लिखी गयी है। अिसका रचनाकाल १६ वीं शताब्दीका मध्य माना जाता है। श्री रघुनाथ महन्त अिसके लेखक थे। अिसी लेखकने अेक दूसरी रामायण 'अद्भूत-रामायण' भी, लिखी है। अिसकी भाषा बिलकुल जनताकी बोली है।

(६) नाटच रामायण— लोक अिच्छा और जन-प्रचारकी दृष्टिसे संत शंकरदेवने सर्वप्रथम रामायणको नाटकका रूप दिया। 'सीतास्वयंवर' और 'रामविजय' नामसे अुन्होंने रामायणके अनेक प्रसंगोंको लेकर नाटक लिखे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बंगलाका पहला अुपन्यास

: श्री मन्मथनाथ गुप्त :

बंगालमें अंग्रेजी शिक्षाके प्रवर्तनके साथही साथ अुपन्यास साहित्यका आविर्भाव हुआ। यों तो कहनेके लिअे यह कहा जा सकता है कि भारतमें भी पहले अुपन्यास होते थे, पर सच्ची बात यह है कि न केवल भारतमें, बल्कि सभी देशोंमें पूँजीवाद और छापाखानेके साथ-साथ आधुनिक अर्थमें अुपन्यासोंका आरम्भ हुआ।

यों तो रामायण, महाभारतमें भी अुपन्यासका मजा आता है, पर वे पद्यमें हैं। यदि हम संस्कृत गद्य साहित्यकी ओर दृष्टिपात करें, तो क्या सरित्सागर, बेताल पंचविंशति, दशकुमार चरित, कादम्बरी तथा बौद्ध जातकोंमें अुपन्यासके कअी अुपादान मौजूद हैं। अवश्य अिन ग्रन्थोंमें वर्णनके आडम्बरके नीचे अक्सर कहानी दबकर रह गयी है। बौद्ध जातकोंमें फिर भी कुछ गनीमत है, क्योंकि अुनमें राजाओंसे अुतरकर साहित्यकी वस्तुको बहुत कुछ मध्यमवर्गमें लाया गया है और वर्गोंका भेद अुतना स्पष्ट नहीं है। फिर भी अिन सबकी कहानियोंमें अूलजलूल बातोंके साथ-साथ वास्तविक घटनाअें अिस प्रकार मिलायी गयी हैं कि आधुनिक पाठक अुसे सहन नहीं कर सकता। अनैसर्गिक अप्राकृतिक या अतिप्राकृतिक बातोंकी भरमार है।

पंचतंत्र अिनसे बिल्कुल भिन्न प्रकारका साहित्य है। यदि कहा जाअे कि पंचतंत्र सारे विश्व-साहित्यमें अनोखा है, तो कोअी अत्युक्ति न होगी। केवल अीसापकी कहानियाँ अुसके कुछ पास फटकती हैं, यद्यपि यह भी अेक मत है कि अीसापकी कहानियाँ पंचतंत्रसेही अुत्पन्न हैं। पशुपक्षियोंकी बातचीतके जरियेसे जीवन सम्बन्धी मोटी-मोटी बातें बता देनेकी ओरही लेखकका ध्यान है, अुसमें चरित्र चित्रण या नाटकीय गुण-अुत्पादनका कोअी प्रयास नहीं। कहानी तो महज अेक बहाना है, लेखकका अुद्देश्य नीतिकी शिक्षा देना है। अवश्य विष्णु शर्माने अिससे अधिक कुछ दावा भी नहीं किया। अुन्होंने तो साफ कह दिया है कि कथाके मिससे बालकोंके लिअे नीतिशिक्षादानही अुनका अुद्देश्य है। बाल-साहित्यके रूपमें पंचतंत्र हमेशा आदर प्राप्त करेगा, पर अुपन्यास-साहित्यसे जो रस मिलता है, अुसमें अुसकी आशा करना सर्वथा व्यर्थ है।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, हमारे प्राचीन साहित्यमें जातक साहित्यही अुपन्यासके सबसे नजदीक है। अुस युगकी बहुत-सी घटनाओंका अिससे परिचय प्राप्त होता है। अुसमें अतिरंजन और कपोल कल्पनाकी मात्रा अपेक्षाकृत कम है।

जब बंगलाका निजी अस्तित्व कायम हो गया, तो अुसमें भी बहुत कुछ संस्कृतकाही सिलसिला चला, पर बंगलामें अुस प्रकार शब्दाडम्बरपूर्ण समासबहुल रचनाकी गुंजाअिश नहीं थी। अिसके अलावा बंगलाकी रचनाअें पंडितोंके लिअे न होकर साधारण लोगोंके लिअे थीं, अतअेव रचना कुछ सरल अवश्य हो गयी, फिर भी ढाँचा तो वही रहा और अुपाख्यानोंका रुख भी धार्मिकही रहा।

महाप्रभु चैतन्यपर जो पुस्तकें लिखी गयीं, अुनमें रामकृष्णकी जगह चैतन्यको बैठाया गया, फिर भी बातें वही रहीं। अिस सम्बन्धमें बल्कि कलकत्ता विश्वविद्यालयके द्वारा संग्रहीत मैमनसिंहके गीत आधुनिक अुपन्यासके अधिक निकट हैं। अिन गीतोंका रचनाकाल सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी माना गया है। अिन गीतोंके आविष्कारसे बंगला-साहित्यकी अेक लुप्त कड़ीका पता लगा है। कृत्तिवास, काशीराम, मुकुन्दराम और भारतचन्द्रमें जो खाअी है, वह अिनके आविष्कारसे बहुत कुछ पाटी जा चुकी है। अिन गीतोंमें छोटे-छोटे अुपाख्यान भी आते हैं। अिनमें अुस समयके समाजके बहुत सजीव चित्र मिलते हैं। अिन गीतोंके सम्बन्धमें सबसे बड़ी बात यह है कि अिनमें परम्परागत वर्णनशैलीको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बलपूर्वक हटाकर जो चीज जैसी है, अुसे अुसी रूपमें देखनेकी चेष्टा है। प्रेमिक-प्रेमिकाओंकी बातचीत या व्यवहारमें कृत्रिमता लानेकी चेष्टा न कर, अुन्हें अधिकसे अधिक स्वाभाविक बनानेकी चेष्टा की गयी है। यदि बंगला-साहित्यमें अंग्रेजीसे स्वतंत्र कोअी अैसा साहित्य है, जो आधुनिक अुपन्यास साहित्यके बहुत करीब है, तो वह मैमनसिंहके गीत हैं।

अिनके अतिरिक्त बंगला-साहित्यमें अरबी, फारसी सूत्रसे आये हुअे हातिमताअीकी कहानी, लैला मजनू, चहारदरवेश, गुल बकावली आदि कहानियाँ भी मौजूद थीं। अिन कहानियोंका प्रचार हिन्दू, मुसलमान सभी घरोंमें था।

बंगालमें समाचारपत्रोंका आरम्भ हुआ, अुसीके साथ-साथ अुपन्यास-साहित्यका भी सूत्रपात हुआ। १८२१ में समाचार दर्पणमें "बाबू" नामसे अेक रेखा-चित्र छपा। दो अंकोंमें याने २४ फरवरी और ९ जूनके अंकोंमें यह रेखा-चित्र सम्पूर्ण हुआ। अिसमें अुस युगके अेक धनीपुत्र तिलकचन्द्रका चित्रण था। यह धनीपुत्र मुसाहबोंसे घिरे रहते हैं, अुन्हें न तो कोअी शिक्षा मिली और न अुनमें कोअी चरित्र-बल है। तिलकचन्द्र अपने अन्तरकी शून्यताको बाहरी आडम्बरसे ढकनेकी चेष्टा करते रहते हैं। अुनकी अेक चिन्ता यह भी है कि मुसाहबोंमें अुनकी अिज्जत बनी रहे। नतीजा यह है कि वे शुरूसे आखिरतक हास्यास्पद बने रहते हैं। यह रेखा-चित्र पाठकोंके मनोरंजन और साथ ही नसीहतके लिअे लिखा गया था।

मालूम होता है "बाबू" रेखाचित्र बहुत प्रसिद्ध हुआ, अिसलिअे १८२३ में प्रमथनाथ शर्माने "नववाबू विलास" नामसे अेक रचना प्रकाशित की, जिसके सम्बन्धमें यह बताया जाता है कि यह बंगलाका पहला अुपन्यास है। प्रमथनाथ शर्माका असली नाम भवानी-चरण वन्द्योपाध्याय था। अैसा भी अनुमान है कि शायद "बाबू"के भी यही लेखक थे। वे "समाचारचन्द्रिका" और "सम्वाद-कौमुदी" नामक दो पत्रोंके सम्पादक थे और हिन्दू समाजके स्तम्भ माने जाते थे। "नववाबू विलास"को "बाबू"का ही अेक परिवर्द्धित संस्करण कहा जा सकता है। अिसमें भी अुन्हीं बातोंका चित्रण था, जिनका चित्रण "बाबू"में था। अिसका अुद्देश्य भी समाजसुधारमूलक था।

अिन दोनों रचनाओंमें चित्रित "बाबू" अुस समयके समाजकी अेक विशेष अुपज थी। अुसकी सारी आमदनी जमींदारीसे आती थी, पर पहलेके युगमें जमींदारोंपर जो थोड़ा बहुत रोब था, वह अुसके शहरमें आकर बस जानेसे मिट गया था। धन अुड़ानेके अुपाय पहलेके मुकाबलेमें अधिक थे, अिसीसे 'बाबू चरित्र" बना।

१८५७ में प्यारेचांद मित्रका " अलालेर घरेर दुलाल " प्रकाशित हुआ। मजेकी बात यह है कि यह भी अुसी विषयको लेकर चला। १८६२ में कालीप्रसन्न सिंहने 'हुतोम पैंचार नक्शा" लिखा, वह भी अिसी विषयपर था। मालूम होता है कि अुस युगके बुद्धिजीवी धनियोंकी अुच्छृंखलतासे बहुत परेशान थे।

"अलालेर घरेर दुलाल " पहलेके धनी पुत्रोंसे विशिष्ट अिस अर्थमें था कि अुसका नायक मिस्टर शेर-वोर्नके स्कूलमें गया था, अिसलिअे अुसने कुछ अंग्रेजी शब्द और टीमटाम अपनायी। अुस समयका सुन्दर चित्र अुसमें आ जाता है। चरित्र-चित्रणकी दृष्टिसे वह अुपन्यास बादके अनेक अुपन्यासोंसे अच्छा है। अिसमेंसे अेक चरित्र ठग चाचा है। झूठे वादे करनेमें और चालाकीमें वह अेक अैसा चरित्र बन जाता है, जिसे भुलाना असंभव है। कोअी चरित्र नाकसे बोलता है, तो कोअी किसी ढंगसे वाक्योंकी रचना करता है। कोअी गवाससे पीड़ित है, अिस प्रकार यह अेक सफल व्यंग्यात्मक रचना है। अिस अुपन्यासकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि अिसमें वागाडम्बरपूर्ण भाषा छोड़कर बोल-चालकी भाषा अपनायी गयी। अिससे भी बड़ी बात अिस अुपन्यासके बारेमें यह है कि यह बंगलाका पहला अुपन्यास है। अैतिहासिक दृष्टिसे कुछ भी कहा जाअे साहित्यिक दृष्टिसे यहींसे बंगला-अुपन्यासका सूत्रपात होता है। फिर तो वह अेक अनवरत धारामें चलने लगता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अलालेर घरेर दुलाल" में अंग्रेजी शिक्षाकी प्रथम प्रतिक्रियाके चित्र मिलते हैं। श्री श्रीकुमार बनर्जीके अनुसार अिस पुस्तकमें १७७५ से लेकर १८२५ तकके बंगाली समाजका चित्र मिलता है। अभी तक अंग्रेजी-शिक्षा जातीय जीवनमें मज्जागत नहीं हुअी थी, अभी तक अिस बातका प्रबल संघर्ष चल रहा था कि यह रहे या वह रहे। अिस कारण ये अुखाड़-पछाड़का वातावरण था और चूंकि अभी तक यह तय नहीं हुआ था कि कितना रहेगा और कितना जाअेगा, अिसलिअे वातावरणमें विक्षोभ और आलोड़न मचा हुआ था। अुस समय यह तो निर्णीत-सा हो चुका था कि पाश्चात्य रंग-ढंग और विचारधारा बल्कि विचारशैलीकी विजय होगी, पर अभी न तो प्राचीन और अर्वाचीनका कोअी समन्वय होते दिखायी पड़ा था और न दोनों अेक दूसरेपर पूरी तरहसे हावी हो सके थे।

यहाँपर यह बात स्पष्ट कर दी जाअे कि जिन लोगोंने पाश्चात्य सभ्यताकी चकाचौंधमें आकर अुसकी बुरी-भली सब बातें अपना लीं, स्वाभाविक रूपसे अुन लोगोंने बंगला छोड़कर अंग्रेजी अपनायी, नतीजा यह कि बंगला-साहित्यमें वे अपनी कोअी निशानी नहीं छोड़ गये। हाँ, अैसे लोगोंमें माअिकेल मधुसूदन थे, जिन्होंने अीसाअी धर्म ग्रहण किया और अंग्रेजीमें काव्य रचना करनेकी ठानी, पर कुछ अैसा संयोग हुआ कि भीतर-भीतर वे बंगलासे प्रेम करते थे और अन्त तक अुन्होंने अंग्रेजीको तिलांजलि देकर बंगला अपना ली। अिसी प्रकार श्री राजनारायण वसुको बुढ़ापेमें होश आया और अुन्होंने अपने यौवनकी आंग्ल प्रभावित लीलाओंकी कहानी व्यंग्यात्मक रूपसे लिखी। पर किसीने अुपन्यासमें अुस धाराका प्रतिनिधित्व नहीं किया, जिसने पाश्चात्य सभ्यताके सामने साष्टांग दण्डवतकर आत्म-समर्पण कर दिया था। अुपन्यास-साहित्यमें यह पहलू अज्ञात ही रह गया।

फिर भी "अलालेर घरेर दुलाल" और बादके बहुतसे अुपन्यासोंमें जिस संघर्षका चित्र हमारे सामने आता है, अुससे हम अुस युगके सामाजिक मन्थनका बहुत अच्छी तरह अनुमान कर सकते हैं। यह बात कही गयी है कि "आलालेर घरेर दुलाल" के लेखक जीवनके वृहत व्यापक सत्यको अपनी सत्तामें प्रस्फुटित नहीं कर पाये, पर अुन्होंने जो सामाजिक चित्र हमारे सन्मुख पेश किया है, वह बहुमूल्य है।

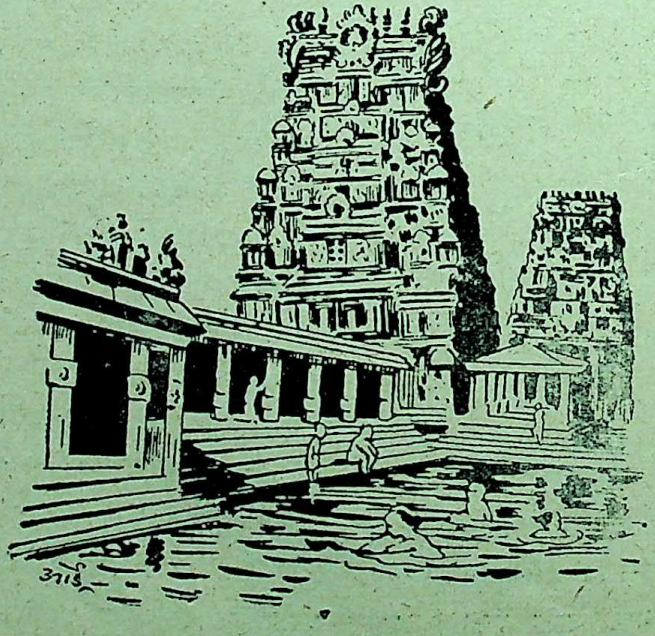

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कन्नड़-लिपिकी अुत्पत्ति और वर्णमाला

: श्री गुरुनाथ जोशी :

भारतमें अति प्राचीन कालसे लिपिका प्रयोग चला आ रहा है। डा० बनर्जीने महासाहस करके हरप्पा और महेंजोदाड़ोका पता लगाया। वहाँ जो अवशेष मिले हैं, अुनपर जो लिपि अंकित है वह चित्र-लिपि है। अुस चित्र-लिपिसे मिलती-जुलती कोअी लिपि भारतमें अब तक अुपलब्ध नहीं हुअी। यही भारतकी सबसे प्राचीन लिपि है। अिस लिपिको कोअी अद्यापि अच्छी तरहसे नहीं पढ़ सका। अिस चित्र-लिपिको अगर छोड़ दें तो भारतमें सबसे प्राचीन लिपियाँ दो हैं:— (१) ब्राह्मी, (२) खरोष्ठी। खरोष्ठी अपसव्य-लिपि है और अिसके शिलालेख बहुत कम मिलते हैं। ब्राह्मी लिपिके लेख ही अधिक मिलते हैं। यह सुनकर सबको आश्चर्य होगा कि यह ब्राह्मी लिपि ही अुत्तर और दक्षिणकी सभी भाषाओंकी लिपियोंकी जननी है। यह बात तब स्पष्ट मालूम हो जाअेगी जब अुत्तर और दक्षिणकी लिपियोंका अध्ययन किया जाअेगा। यह भी विदित होगा कि अुत्तरकी ब्राह्मी लिपि और दक्षिणकी ब्राह्मी लिपिमें थोड़ा-सा अंतर है।

डा० गायीने धारवाड़ आकाशवाणी केन्द्रपर १९५३ मार्चकी ५ वीं को दक्षिण भारतकी लिपियोंपर भाषण देते हुअे कहा था कि अी० पूर्व ४-५ वीं सदीसे अी० सन् ४ थी सदी तक भारत भरमें ब्राह्मी लिपि ही प्रचारमें थी। अुसके अुपरांत अुसमें स्थूल रूपसे दो भाग किये गये—अुत्तरी और दक्षिणी। लिपि-विशारदोंने दक्षिणकी लिपियोंको ६ या ७ भागोंमें विभक्त किया है:—पश्चिम शैलीकी लिपि, मध्यप्रदेशकी लिपि, कलिंग लिपि, कन्नड़-तेलुगु लिपि, तमिळ और वट्टिळुत्तु लिपि। ये लिपियाँ कालक्रमसे परिवर्तित होती गयीं और विशेषताअें प्राप्त करती गयीं। कन्नड़-तेलुगु लिपिका बंबअी, कर्नाटक, हैदराबाद (दखिन) का दक्षिण भाग, मैसूर, मद्रासका पूर्वोत्तर भाग अिन प्रदेशोंमें अी० सन ५ वीं सदीसे प्रचारमें था। अिसके विकासमें ३ या ४ अवस्थाअें हैं:—५ से ८ वीं सदी तक, ८ से ११-१२ वीं सदी तक, अुससे अुपरांत विजयनगरके राजाओंके काल तक। ४ थी सदीसे १४–१५ वीं सदी तक कन्नड़-तेलुगु लिपिका प्रयोग कन्नड़ अेवं तेलुगु दोनों भाषाओंके लिअे किया गया है। अिसलिअे अिसका कन्नड़-तेलुगु लिपि नाम पड़ा। विजयनगर साम्राज्यके पश्चात् कन्नड़ और तेलुगुके लिअे अलग-अलग लिपि बन गयी। पर आधुनिक कन्नड़ लिपिमें बिलकुल थोड़ा-सा अंतर है। तेलुगु-कन्नड़ लिपि अेक दूसरेके निकट है।

मैसूर रियासतमें हल्मिड़ि नामक अेक ग्राममें अेक शिलालेख मिला है जो अबतक अुपलब्ध कन्नड़ शिलालेखोंमें सबसे प्राचीन माना जाता है। डा. श्यामशास्त्रीके अनुसार अिस शिलालेखका समय अी. सन् २८० है, पर लुअी किमसके अनुसार ४ थी सदीका अंत है और डा. अेम्. अेच. कृष्णके अनुसार अी. सन् ४५० है। अिस शिलालेखकी प्रथम पन्द्रह पंक्तियोंमें गुहालिपिका अर्वाचीन रूप दिखायी पड़ता है। अिस शिलालेखकी लिपिके बारेमें मैसूर 'आर्कियालाजिकल' विभागके अधिकारीने कहा है—The Writing of the inscription at least in the first fifteen lines is in a very late form of the cave alphabet which has not yet fully developed into the early Kannada of the Chyalukyan and Ganga inscriptions.

अुपरोक्त बातोंसे हम अिस परिणामपर पहुँचते हैं कि कन्नड़ लिपिकी अुत्पत्ति ब्राह्मी लिपिसे हुअी और वह अुत्पत्ति अी. सन् २८० से ४५० के बीचमें हुअी होगी। कन्नड़ लिपिका विकास आप आगेके चित्रमें देख सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

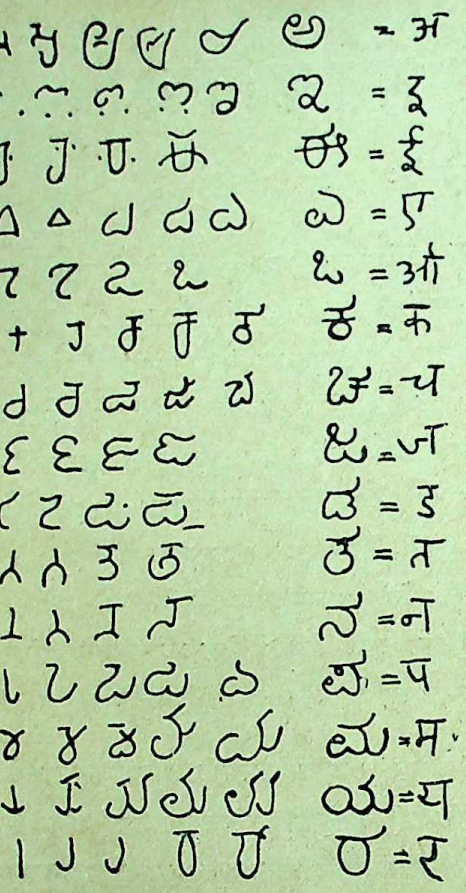

वर्णमाला

कन्नड़की वर्णमाला भी नागरी वर्णमालाके अनुसार ही है, पर थोड़ा-सा अंतर है। स्वर और व्यंजन पूर्ण हैं; स्वरोंमें ह्रस्व तथा दीर्घके भेदको दिखानेवाले संकेत भी हैं; जिव्हामूलीय, अुपध्मानीय, अनुस्वार, विसर्ग और देशी वर्णोंको सूचित करनेवाले चिन्ह भी हैं, व्यंजनाक्षरोंसे स्वरोंका सुन्दर संयोग है और आर्य अेवं द्राविड़ भाषाओंकी ध्वनिको अच्छी तरह व्यक्त भी किया जा सकता है।

कन्नड़ वर्णमालाका परिचय देवनागरी लिपिमें प्राप्त करानेका प्रयत्न कर लें।

कन्नड़में कुल १४ स्वर हैं, जिनमें ६ ह्रस्व हैं और ८ दीर्घ।

ह्रस्व स्वर:— अ, इ, उ, ऋ, ए, ओ

दीर्घस्वर :— आ, ई, ऊ, ॠ, ए, ऐ, ओ, औ

व्यंजनोंमें दो प्रकार हैं—वर्गीय व्यंजन और अवर्गीय व्यंजन और क्रमशः अिनकी संख्या २५ और ९ है।

वर्गीय व्यंजन — (स्वरोंको मिलाकर) :—

क ख ग घ ङ
च छ ज झ ञ
ट ठ ड ढ ण
त थ द ध न
प फ ब भ म

अवर्गीय व्यंजन— (स्वरोंके साथ) :—

य, र, ल, व, श, ष, स, ह, ळ

अयोगवाह:— अयोगवाह २ हैं :— अनुस्वार और विसर्ग। कन्नड़में अनुस्वारकी बिन्दी अक्षरके आगे दी जाती है; जैसे क०=कं अ०=अं। विसर्गकी दो बिन्दियाँ जैसे हिन्दीमें लिखी जाती हैं वैसे ही कन्नड़में भी लिखी जाती हैं; जैसे क°=कः, अ°=अः।

कन्नड़ वर्णमालामें १४ स्वर, ३४ व्यंजन, २ अयोगवाह, कुल ५० मूलाक्षर हैं। पर ऋ, ऌ, ॡ कन्नड़में प्रयोग किये जानेवाले संस्कृत शब्दोंमें आते हैं। महाप्राणोंके मिले हुअे शब्द और श, षकारके शब्द कन्नड़में कम प्रयुक्त किये जाते हैं। पर आजकलकी अधिक संस्कृत मिश्रित शैलीमें अिनका काफी मात्रामें अुपयोग किया जाता है। ज्ञ तो कन्नड़में ज्ञ की तरह और क्ष तो क्ष की तरह ही लिखा जाता है।

व्यंजनोंके आगे स्वर-चिन्ह मिलाकर हिन्दीकी तरह गुणिताक्षर या बारहखड़ी भी बनायी जाती है।

स्वरोंको छोड़कर व्यंजन लिखनेका तरीका भी है; जैसे कें=क्, गें=ग्।

कन्नड़में अुपरोक्त 'ए' ह्रस्व स्वरका अुच्चारण अुसी प्रकार किया जाता है; जैसे 'एक्का' शब्दमें एका किया जाता है, पेन् शब्दके एकारका। ह्रस्वस्वर 'ओ' का अुच्चारण अुसी प्रकार किया जाता है; जैसे कोतवाल, तोहमत, मोगल शब्दोंके ओकारका किया जाता है। ए दीर्घस्वरका अुच्चारण अुसी प्रकार किया जाता है; जैसे 'एक' शब्दमें ए का किया जाता है और दीर्घस्वर ओ का अुच्चारण अिसी प्रकार किया जाता है; जैसे ओदन, गोरा आदि शब्दोंमें ओ का किया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिसका तात्पर्य यह है कि ह्रस्व 'ए' और 'ओ' का अुच्चारण अेक मात्रिक और दीर्घ ए और ओ का अुच्चार प्लुत (त्रिमात्रिक) होता है और कन्नड़में यह भेद दिखानेके लिअे अलग-अलग स्वर-वर्ण हैं।

"कन्नड़ संशोधन संस्था" (Kannada Research Institute) के तत्त्वावधानमें कन्नड़ पंडित श्री म. प्र. पूजारने कन्नड़ व्याकरणपर जो दो व्याख्यान दिये, वे कहते हैं कि कन्नड़ वैयाकरणी केशिराजने 'शब्दमणिदर्पण' में अक्षर प्रकरणमें कहा है कि कन्नड़ भाषाके स्वरूपकी कल्पना देनेके लिअे अे (ह्रस्व) ओ (ह्रस्व) स्वर, महाप्राण अक्षर, र, ड़, ळ आदि सहायक होते हैं।

केशिराजने अक्षरोत्पत्तिके बारेमें कहा है कि शब्द अेक द्रव्य है, वह शुभ्र रंगका है, वह तुरहीका-सा होता है, हमारे कंठसे बाहर निकलनेवाली ध्वनि अुस शब्दद्रव्यका कार्यरूप है। किन्तु शब्द सामान्य-ध्वनि-रूपका हो या अक्षररूपका, यह यहाँ विचारणीय है कि शब्द द्रव्य कैसे? अगर शब्द द्रव्य हो तो गुण चाहिये। श्वेत रूप अुसका गुण है। जैनोंकी राय है कि पुद्गलस्कंधोंके आघातसे ध्वनि पैदा होती है। अुनके अनुसार कर्म केवल क्रिया नहीं, पुद्गलरूप है। 'ज्ञानावरणीय' आदि पुद्गलकर्म आत्माको घेरते हैं। अिन विचारोंके जैनोंके पहले जो हुअे हैं, वे कहते हैं कि शब्द अेक गुण है और वह द्रव्याश्रित है। शब्दगुणकं आकाशम्। आकाश शब्द गुणका है। जैसे गंध पृथ्वीका गुण है, जैसे शीतस्पर्श जलका गुण है वैसे शब्द आकाशका गुण है। आधुनिक वैज्ञानिक भी शब्दको द्रव्य (Matter) नहीं कहते। पर यह तो चर्चात्मक विषय है।

केशिराज अक्षरोंमें दो प्रकार करते हैं—श्रावण और चाक्षुष। चाक्षुष अक्षर कैसे? यह भी विचारणीय है। क्योंकि चाक्षुष अक्षर जो हैं वे अक्षर-चित्र हैं, न कि अक्षर। केशिराजके अनुसार अक्षरोंकी संख्या ५२ है और अुनमें ९ प्लुत और र (ड़) ळ (देशी अक्षर) जोड़ दें तो ६३ अक्षर होते हैं। अगर प्लुतोंको छोड़ दें तो ५७ अक्षर हो जाते हैं। पर कालानुक्रममें कुछ अक्षर हट गये और अब अूपर दिये हुअे ५० मूलाक्षर कन्नडमें हैं।

पंडित पूजारजीका कहना है कि निम्नलिखित विषयोंका कन्नड़ शिक्षा ग्रंथमें समावेश होना चाहिये—

(१) अकारका अुच्चारण सामान्यतः शब्दोंके अंतमें यदि वह हो तो विस्तृत होता है—अुदाहरणार्थ—बंद, होद, माड़िद। अिसलिअे कुछ लोग बंदा, होदा, माडिदा लिखते हैं। यह गलत है। शब्दोंके मध्यमें अकारका अुच्चार संकुचित होता है। (२) ऋ और ऌ का अुच्चारण भी कअी लोग रु और लृ की तरह करते हैं। (३) जिह्वामूलीय (अुदा.–प्रातःकाल), अुपध्मानीय (अुदा.–पयःपान) का ठीक अुच्चार। (४) महाप्राणोंका अुच्चार। (५) सानुनासिक यंवल घटित शब्दोंका अुच्चार। (६) ह्य, ह्व, ह्म, ह्न, ह्ल आदिका अुच्चार। (७) द्वित्ताक्षरोंका लिखना। (८) शिथिल द्वित्ताक्षरवाले शब्दोंका अुच्चार। (९) नित्य शिथिल द्वित्ताक्षरके शब्दोंका अुच्चार।

कुछ अंग्रेजी, फारसी अक्षरोंके लिअे भी कन्नड़ लिपिमें संकेतोंकी आवश्यकता है। अितनी आवश्यकताके बावजूद भी तमिळ और वट्टिळुत्तुको छोड़, दक्षिणकी सभी लिपियाँ सर्वोत्तम हैं, जिनमें अेक कन्नड़ लिपि भी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परकीया

: श्री पी. वें. राजमन्नार :

'पात्र'

ब्रह्मानन्द : अेक अध्यापक

प्रभा : ब्रह्मानन्दकी पत्नी

सत्यं और मोहनराव : ब्रह्मानन्दके मित्र

कृष्णराव : डाक्टर

गाड़ीवान :

(अेलूरमें ब्रह्मानन्दके घरका अेक कमरा जो ड्राअिंगरूम कहला सकता है। बीचमें अेक मेज है, जिसके चारों ओर चार कुर्सियाँ पड़ी हैं। अेक कोनेमें पलंग बिछा हुआ है। दूसरे कोनेमें अंदर जानेका द्वार। दाहिनी ओर बाहर जानेका द्वार।

ब्रह्मानन्द और सत्यं बैठे बातें कर रहे हैं। ब्रह्मानन्द अेक स्कूलमें अध्यापक है। अुम्र लगभग ३० है। सुगठित शरीर है। लेकिन मुख तेजोहीन, बुझे-हुअे चूल्हेके समान। सत्यं भी अुसका समवयस्क है। कुशल व्यवहारिक-सा दीखता है। मद्रासमें किसी कम्पनीका अेजेन्ट है। किसी कामसे अेलूर आया हुआ है। सिगरेटका धुंआ छोड़ रहा है।)

ब्रह्मानन्द :—क्यों भाअी सत्यं ! तो तुमको यहाँ आये तीन दिन हो गये। अब मेरी याद आयी ?

सत्यं :—नहीं भाअी ! जिस दिन आया था अुस दिन अितना थका था कि कहीं हिलनेकी अिच्छा भी नहीं हुअी। कल काम पूरा करके जब यहाँ आनेको निकला कि रास्तेमें अचानक मोहनराव मिला। अुसे देखे बहुत दिन हो गये थे। मैंने कहा, "वाह भअी, कितने दिनों बाद मिले।" "हाँ भअी ! आज तो अच्छा दिन है। अिसलिअे अुचित रीतिसे आदर-सत्कार करना चाहिये। चलो होटलमें चलें। बड़ी भूख लगी है। दावत दोगे ?" अुसने कहा।

जब अुसने अिस प्रकार भोलेपनके साथ पूछा तो मैं कैसे रोकता। खैर, होटलमें गये। अुसके बाद गपशप.....आज तुम्हारे स्कूलमें छुट्टी है, अिसलिअे जल्दी चला आया।

ब्रह्मानन्द :—अरे ! मोहन अिस शहरमें है। यहाँ रहते हुअे अेक दिन भी मुझसे मिलने नहीं आया। बड़ी गहरी दोस्ती थी।

सत्यं :—था तो अिसी शहरमें। आज भी रहेगा शायद। लेकिन क्या ठिकाना ! दस दिन कहीं अेक जगह रहना पड़े तो प्राण छोड़ देगा।

ब्रह्मानन्द :—अेक ही दिन सही। अुसको मालूम है कि मैं अिस शहरमें हूँ। तीन महीने पहले अुसने अपना खंड-काव्योंका अेक संग्रह भी भेजा था।

सत्यं :—(कुछ सोचकर) क्या अुसे मालूम है कि तुम्हारा विवाह हो गया ?

ब्रह्मानन्द :—क्यों नहीं, मेरी स्त्री भी तो मछलीपट्टणम्की है। अुसीके शहरकी।

सत्य :—तो मुझे अेक कारण दिखायी देता है। अुसने सोचा होगा कि तुम अपनी पत्नीके साथ सुखमय जीवन बिताते हो फिर अुसका जैसा आदमी सद्गृहस्थके यहाँ क्यों जाअे।

ब्रह्मानन्द :—अरे ! भाअी ! तुम भी अजीब बात करते हो। हाँ, मुझे मालूम है कि अुसे शराब पीनेकी आदत कालेजके दिनोंसे ही है, लेकिन अितनी-सी बातके लिअे—

सत्यं :—(हँसकर) तो तुम अुसका पूरा अितिहास नहीं जानते। तुमको मालूम है कि अुसकी शादी हुअी ?

ब्रह्मा :—(नकारात्मक रूपसे सिर हिलता है।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्यं :—बचपनमें ही हो गयी। पत्नीके आनेके तीसरे दिन ही अुसने कहा, "तुम्हारे साथ जीवन बिताना मृत्युके समान है। तुमने कोअी अपराध नहीं किया। तुम चाहो तो किसी दूसरेसे शादी कर लो। मुझे कोअी अुज्र नहीं। मैं पिताजीसे कह दूंगा कि मेरी जायजाद तुमको लिख दें।"

अुसने पिताजीसे भी यही कहा और अेक महीनेके अन्दर ही अन्दर निश्शंकवालोंकी * बहूको भगा ले गया। अुसके पिताजी बड़े कट्टर सनातनी विचारके हैं। यह देखकर मारे क्रोधके जल अुठे और अपनी जायजादका आधा हिस्सा बहूको दे दिया। बाकी ट्रस्टियोंको सौंपकर महावार सौ रुपये मोहनरावको देनेका प्रबन्ध किया। अिसके बाद बेचारेने स्वर्गकी राह ली।

ब्रह्मा :—अितना काण्ड हुआ! तो मोहन अब अुसीके साथ.....

सत्यं :— भाग्य अच्छा था कि शीघ्रही अुस बहूकी भी मृत्यु हो गयी। बेचारीने न जाने कितनी तकलीफें अुठायीं। लेकिन मोहन तो कहता है कि अुसको बड़ा सुख था।

ब्रह्मा :—अुसके बाद ?

सत्यं :—निरन्तर भ्रमण। होटलोंमें खाना और स्टेशनोंके छप्परोंमें सोना। हाथमें पैसा रहनेपर मदिरालय या वेश्यालयमें अुसका ठिकाना रहता। अिस हालतमें अुसने यदि यह समझा हो कि तुम्हारे समान प्रतिष्ठित जीवन बितानेवालेके यहाँ जाअूं तो तुम्हें न जाने कैसा लगे, तो आश्चर्य क्या ?

ब्रह्मा :—बेचारा रोटी कैसे कमाता है ?

सत्यं :— कहा न, पिताजीके वसीयतनामेके अनुसार ट्रस्टीवाले माहवार अुसको सौ रुपये देते हैं, जो दस-बारह दिनोंमें ही अुड़ जाते हैं। अुसके बाद जीवन अेक दैनिक समस्या है। किसी तरह महीना पूरा हो जाता है। कल मेरे साथ होटलमें खाया। हो सकता है कि अब तक फाका ही कर रहा हो। बुद्धि ठिकाने रही तो लिखता अद्भुत है। अुसका हमारे समाजमें कोअी स्थान नहीं। क्यों ? क्या सोच रहे हो ?

ब्रह्मा :—कितना ब्रिलियेंट था कालेजमें। बेचारेपर तरस आता है। अुसका भूखा रहना मुझसे नहीं देखा जाता। जानते हो अब कहाँ होगा ?

सत्यं :—निश्चित रूपसे नहीं, क्यों ?

ब्रह्मा :—मेरा होटल जाना अच्छा न होगा। अुसको यहाँ ले आओगे तो अेक दिन हमारे साथ रहेगा। पेटभर खा-पी लेगा। मुझे भी अेक तरहका सन्तोष होगा ?

सत्यं :—मैं कोशिश करूँगा; (अुठकर) लेकिन तुम्हारी पत्नी क्या कहेगी। यह भी सोचा है ? मेरी माँ अपनी बहूसे कहा करती है कि तुम्हारी स्त्री बड़ी पतिव्रता है। अैसे लफंगेको घरमें देखकर न जाने वह क्या कह बैठे। और तो और सारा अपराध मेरे सिर पड़ेगा।

ब्रह्मा :—कोअी डर नहीं। मेरी अिच्छा ही अुसकी अिच्छा है।

सत्यं :— (हँसता और कुछ गुनगुनाता है।) यद्यपि दो हैं तन, तो भी मन अेक है, मन— अच्छा, भाअी अब जाता हूँ।

ब्रह्मा :—हाँ भाअी। अुसको लिवा लाना, भूलना नहीं।

सत्यं :—अच्छा। (जाता है।)

ब्रह्मा :—(चुपचाप कुछ सोचता रहता है।)

(प्रभाका प्रवेश। ब्रह्मानन्दकी पत्नीका पूरा नाम प्रभावती है। गेहुँआ रंग, अुमर बीस वर्षकी है, लेकिन प्रौढ़ा-सी दीखती है। बड़ी-बड़ी आँखें जिनमें बड़ी गम्भीरता है; जिसको अुसका पति भी नहीं देख सकता। पतिसे—)

प्रभा :—क्या सोच रहे हो ?

ब्रह्मा :—क्या ? तुम्हारे ही बारेमें ?

---

* वंश यो घरका नाम है जिससे किसी परिवारकी पहिचान होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभा :—(हँसकर) सच ? मुझे मालूम नहीं था कि आप मेरे बारेमें सोचेंगे। बीमारीके समयके सिवाय...

ब्रह्मा :—मतलब ।

प्रभा :—कुछ नहीं । आश्चर्यकी कोअी बात नहीं । रोज हम जिस खाटपर सोते हैं, अुसके बारेमें कभी सोचते हैं, क्या ? जब अुसकी मरम्मतकी जरूरत पड़ती है तभी हम अुसके सम्बन्धमें सोचते हैं न । (प्रभा बातें करती हुअी कोअी न कोअी काम करती रहती है। मेजपर चीजें ठीक करती है। कैलेण्डरमें तारीख बदलती है और रद्दी कागज टोकरीमें डालती है ।)

ब्रह्मा :—तुम भूलती हो । तुम्हारे ही सम्बन्धमें मैं सोच रहा हूँ ।

प्रभा :—मेरा हृदय घबड़ाता है । कहिये न क्या है ।

ब्रह्मा :—मेरे सहपाठी मोहनरावको जानती हो ? तुम्हारेही गाँवका है ।

प्रभा :—(चौंकती है; फिर सम्भल जाती है।) हाँ।

ब्रह्मा :—बड़ा बुद्धिमान है । कला-प्रेमी और कवि भी ।

प्रभा :—पत्रिकाओंमें कभी-कभी अुसकी कविता देखा करती हूँ । लेकिन आप किसलिअे पूछ रहे हैं ?

ब्रह्मा :—अुसके जीवनकी सारी कहानी क्या तुम जानती हो ? पत्नीको त्याग देना, किसीके साथ भाग जाना, मधुपान और भ्रमण अिस प्रकार अुसका सारा जीवन विचित्र और निकम्मा बन गया है । कैसा होनहार था, परन्तु कैसा गुण्डा-सा बनकर बदनाम हो गया है वह बेचारा—(अेकदम रुककर) प्रभा ! क्या तुम डरती हो कि मैं भी अैसा ही बन जाअूंगा ?

प्रभा :—नहीं ।

ब्रह्मा :—क्यों ?

प्रभा :—(जरा हैरानीसे) बदनाम होना भी क्या सबके लिअे आसान है ?

ब्रह्मा :—(तमाचा लगा-सा तड़फड़ाता है । फिर सम्भल जाता है ।) मोहन अब अिसी शहरमें है ।

प्रभा :—(गुस्सेसे) जाने भी दीजिये अिस पचड़ेको । (जरा शान्तिसे) यही आप मेरे बारेमें सोच रहे थे ?

ब्रह्मा :—अितनी जल्दी क्यों ?

प्रभा :—अच्छा । माफ कीजिये ।

ब्रह्मा :—मोहनको लिवा लानेके लिअे सत्यंको भेजा है, कुछ खिलाने-पिलानेके विचारसे । अब सोचमें हूँ कि तुम हँसी अुड़ाओगी । सत्यंने कहा शायद तुम्हारी स्त्री आपत्ति करे, अिसपर मैंने कह दिया कोअी डर नहीं, मेरी अिच्छाही अुसकी अिच्छा है । अब देखें देवीजीकी क्या आज्ञा है ।

प्रभा :—आपने कह दिया न, अब मुझसे क्यों पूछते हैं । आप अपने मित्रोंके साथ खा-पीकर सुखसे रहें तो मुझे क्या आपत्ति होगी ?

ब्रह्मा:—अच्छा, अब तो जान बची। (थोड़ी देर शान्ति रहती है।) प्रभा। मोहन मछलीपट्टणम्में भी पीता था ना । अब तो और अधिक पीता होगा । बहुत बुरी आदत है ।

प्रभा:—(चुप रहती है।)

ब्रह्मा:—निश्शंकवालोंकी लड़कीको तुम जानती हो ना । अनेक कष्टोंके बाद बेचारीने जान दे दी। तबसे लेकर वह बहुत वेश्यालोलुप हो गया है। अुसका पिता कितना कट्टर सनातनी था । कितना धर्मपरायण था । अैसे पिताका बेटा न जाने अैसा क्यों निकला ?

प्रभा:—(अस्पष्ट रूपसे) शायद अिसीलिअे... अच्छा अब अन्दर जाना है, बहुत काम पड़ा है। (जाती है।) (ब्रह्मानन्द अुठकर टहलने लगता है। अंदर जाकर अेक नया टेबिल-क्लाथ लाकर मेजपर बिछाता है। अुसके चारों ओर तीन कुर्सियाँ रखकर अेक और कुर्सी जरा दूर रखता है । फिर न जाने क्या सोचकर अुसे भी मेजके पास रखता है ।)

(सत्यंका प्रवेश)

ब्रह्मा:—अरे ! अकेले क्यों आये ? क्या मोहन लापता हो गया ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्यं:—(चिन्तित स्वरसे) नहीं। अिसी शहरमें है। लेकिन वह यहाँतक आनेकी परिस्थितिमें नहीं है।

ब्रह्मा:—क्या बीमार है ?

सत्यं:—हाँ बीमारी ही है। बेहद पियक्कड़ है। अब वह अितना बेहोश है कि किसीको पहचान भी नहीं सकता। या तो शून्य दृष्टिसे देखता है या आँखें बंद कर लेता है। सारा शरीर अितना गर्म है मानों बुखार चढ़ा हो। मेरी समझमें नहीं आता कि क्या किया जाअे। वहीं अुस होटलमें पड़ा है।

ब्रह्मा:—यह सब कैसे हुआ ?

सत्यं :—तुम बिल्कुल भोले हो, ब्रह्मानंद ! अैसे लोगोंकी हरकतें तुम नहीं समझ सकते। किसी पत्रिका-वालेने पैसा भेजा होगा। बस ! और क्या ? पैसा खतम होनेतक पिया होगा।

ब्रह्मा :—तो फिर क्या किया जाअे ?

सत्यं :—डाक्टरको दिखाना चाहिये। किसी अच्छे स्थानमें सुरक्षित रूपसे रखनेका प्रबन्ध करना चाहिये बेचारेको देखते दया आती है। हमारा गाँव होता तो सीधे अपने ही घर ले जाता। लेकिन वह रेल-पर सफर करनेकी हालतमें नहीं है।

ब्रह्मा :—यदि यहीं ले आअें तो ?

सत्यं :—अिससे और क्या अच्छा होगा ?

ब्रह्मा :—गाड़ीमें ले आओ।

सत्यं :—नहीं क्या तो कन्धेपर ले आना होगा पलंग तैयार रखो।

ब्रह्मा :—हाँ, हाँ। (जोरसे) प्रभा ! ओ प्रभा !

(सत्यं चला जाता है। प्रभाका प्रवेश कालिख लगे हाथोंसे)

प्रभा :—चाय लाअूँ ? (और किसीको न पाकर) अकेले अेकके ही लिअे ना ?

ब्रह्मा :—देखो प्रभा ! सत्यं कहता है कि मोहन बड़े खतरेमें है। बुखारसे बेहोश हो गया है। बड़ी बुरी आदत है।

प्रभा :—शराब पीनेकी ?

ब्रह्मा :—हाँ। मुझे दया आती है, प्रभा, अिस शहरमें अुसका अपना कोअी नहीं।

प्रभा :—तो ठीक है। जाकर देखिये। चाय पीकर जाअिये। लाअूँ ?

ब्रह्मा :—मेरे देखनेकी क्या जरूरत ? अपने घरमें ही बुला लें, ठीक हो जानेके बाद चला जाअेगा।

प्रभा :—(कठोरतासे) हरगिज नहीं।

ब्रह्मा :—(आश्चर्यसे) क्यों ?

प्रभा :—अस्पतालमें भर्ती करवा दीजिये; नहीं तो और कहीं रखिये।

ब्रह्मा :—प्रभा ! तुम यह क्या कह रही हो ? आज नौकरानीको यहीं रखो। यदि तुम नहीं चाहती तो कल ठीक हो जानेके बाद भेज दूँगा।

प्रभा :—(कठोरताकी जगह कातरतासे) नहीं जी ! मैं प्रार्थना करती हूँ। नहीं। मेरी बात मानिये। आप जाकर देख आअिये। चाहें तो कुछ रुपये दे दीजिये। सत्यनारायणजी भी हैं। अुनको लौकिक व्यवहार अच्छी तरह मालूम हैं।

ब्रह्मा :—(गुस्सेसे) मुझे भी मालूम है। मैं निरा भोंदू नहीं हूँ। क्या समझती हो तुम ? स्कूलका मास्टर हूँ तो भी अपने घरका मालिक मैं भी हूँ। यह मेरा घर है। मेरा आँगन है। क्या अपने घरमें अपने दोस्तको अेक दिन रखनेका भी मुझे अधिकार नहीं ? तुम तो पतिव्रता होकर मेरे अधिकारकी अवहेलना करती हो।

प्रभा :—(बहुत कातरतासे) राम ! राम ! अपनी जबानपर अैसी बात ला सकती हूँ ? मैंने तो प्रार्थना की। क्या पतिसे प्रार्थना करनेका भी पत्नीको अधिकार नहीं ? फिर प्रार्थना करती हूँ यह विचार छोड़ दीजिये ?

ब्रह्मा :—नहीं छोड़ूंगा। नहीं छोड़ूंगा। तुम जो कुछ भी कहो, कितनी ही प्रार्थना करो, नहीं मानूंगा।

प्रभा :—(निराशासे) तो ठीक है। जहाँतक हो सका, कोशिश की। मेरी बात नहीं मानते, अब मैं क्या करूं। समझूंगी दुर्भाग्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मा :—कुछ भी समझो। ले आनेको सत्यंको भेजा है। डाक्टर भी आअेगा। प्रभा ! अरुचिकर काम समझकर आनाकानी तो नहीं करोगी ?

प्रभा :—क्या मुझपर अितना विश्वास नहीं।

ब्रह्मा :—(कन्धेपर हाथ रखकर) क्यों नहीं, मैंने तो योंही कहा था। तो फिर देखो, अुसी पलंगपर लिटाअेंगे।

प्रभा :—अच्छा। (अन्दर जाकर तकिये, चादर वगैरह लाकर शैय्या तैयार करती है) (ब्रह्मानन्द मेजको अेक ओर सरकाकर, पलंगके पास दो कुर्सियाँ डालता है।)

(सत्यं और गाड़ीवान दोनों तरफसे पकड़कर मोहनरावको अन्दर लाते हैं। मोहनकी आँखें मुँदी हुअी हैं। लम्बे-लम्बे काले बाल भालपर बिखरे हुअे हैं। लम्बा चेहरा और नुकीली नाक, घनी भौहें, पतले और सूखे कपोल। होंठ बार-बार टेढ़ा हिलता है। कुछ मैला महीन जुब्बा और पाजामा पहने हैं।)

सत्यं :—ब्रह्मानन्द ! क्या अुसी पलंगपर ?

ब्रह्मा :—(आश्चर्यसे देखता हुआ) हाँ। (सिर हिलाता है)

(सत्यं और गाड़ीवान दोनों मोहनको पलंगपर लिटाते हैं। प्रभा अन्दरसे अेक शाल लाकर ओढ़ाती है)

गाड़ीवान :—सरकार। मैं जाअूँ ?

सत्यं :—(पैसे देकर) हाँ जाओ। जाते समय अेक बार डाक्टर साहबको याद दिला दो।

गाड़ी :—जी हाँ ! (जाता है।)

(सत्यं और ब्रह्मानन्द बिना कुछ बोले अेक-दूसरेको देखते हैं। बादमें दोनों पलंगकी ओर देखते हैं। प्रभा, मोहनके बिखरे बाल ठीक करती है।)

प्रभा :—(भालपर हाथ रखकर) बापरे ! कितना गरम है ! बहुत बुखार है। युडुकुलोनमें भिगोकर रूमाल मस्तकपर रखूं ?

(कोअी जवाब नहीं देता। प्रभा अन्दर जाकर अेक रूमाल युडुकुलोनमें भिगोकर मोहनके मस्तकपर रखती है। अितनेमें डाक्टर आता है।)

कृष्णराव :—हलो ब्रह्मानन्द ! गुडओविनिंग सत्यं !

ब्रह्मा :—डाक्टर ! (पलंगकी ओर दिखाते हुअे) मोहनराव हमारा मित्र है। सत्यं अिस हालतमें देखकर अुसे यहाँ ले आया है।

(डाक्टर पलंगके पास जाकर मोहनकी परीक्षा करता है। थर्मामीटरसे देखकर)

डाक्टर :—कोअी खास बीमारी नहीं। बुखार तो है, लेकिन वह भी अेक लक्षण है। ऑलकॉहॉल ज्यादा पी जानेसे कभी-कभी सन्निपात भी हो जाता है। रातभर पानीके सिवाय और कुछ भी खानेको मत दीजिये। सत्यम् ! मेरे साथ आओ। दवा दूंगा। अेक डोज अभी देना और अेक डोज सुबह देना। यदि ज्यादा बकझक हो तो नींदके लिअे स्लीपिंग ड्राफ्ट भेजूंगा सो देना, कलतक बिल्कुल ठीक हो जाअेगा। गुडनाअिट।

(डाक्टर और सत्यं जाते हैं।)

(प्रभा पलंगके पासवाली कुर्सीपर बैठती है।)

ब्रह्मा :—(धीरेसे) प्रभा !

प्रभा :—क्या ?

ब्रह्मा :—जो ढोवे सो भार जाने ! बड़ी दयाके साथ घरमें रखनेको कह दिया। लेकिन तकलीफ अुठानेवाली तुम हो। मैंने सोचा नहीं ! मुझे क्षमा करो प्रभा !

प्रभा :—नहीं-नहीं, आप भूलते हैं ! कामकी वजहसे मैंने नहीं मना किया था। यह भी कोअी काम है, मेरे लिअे ? जब आपको टाअिफाअिड हो गया था तो बीस दिन तक नर्सके समान काम किया था— याद नहीं है ? (जब ये बातें हो रही थीं अुसी बीच मोहन कराहता हुआ कुछ बड़बड़ाता हुआ हाथ हिलाता है। बातें करती हुअी प्रभा मोहनका हाथ दबाती है।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मा :--कुछ ठीक होनेपर किसी तरह भेज दूंगा ।

प्रभा :--वे भी क्यों रहेंगे जी ?

ब्रह्मा :--(अुत्तर जँचा नहीं ! लेकिन कुछ भी नहीं कह पाता)

प्रभा :--अन्धेरा हो रहा है । जरा दीपक जलाअिये ।

ब्रह्मा :--(दीपक जलाता है) प्रभा ! तुम मोहनको अच्छी तरह जानती हो ?

प्रभा :--मतलब ?

ब्रह्मा :--तुम्हारे ही गाँवका है न । जानती भर हो या कुछ परिचय भी है ।

प्रभा :--कभी-कभी हमारे घर आया करते थे । मेरे पिताजी अिनसे कविता पढ़नेको कहा करते थे ।

ब्रह्मा :--हाँ । अच्छा पढ़ता था । होस्टलमें---(कुछ सोचता है; चुप रहता है) तुमको पहचानता है ।

प्रभा :--(सूखी हँसी हँसकर) अिस प्रश्नका जवाब मैं कैसे दे सकती हूँ ।

ब्रह्मा :--हाँ ठीक है ।

(बातचीत रुक जाती है । ब्रह्मानन्द टहलता रहता है । अितनेमें सत्यं दवाकी शीशियाँ लेकर आता है । शीशियाँ मेजपर रखते हुअे ।)

सत्यं :--देखो; अिस शीशीकी दवा अेक डोज अभी देनेको कहा । दूसरा डोज कल सुबह दे सकते हैं । अिस शीशीमें अेक डोज है । सो जाअे तो देनेकी जरूरत नहीं । नहीं तो बकझक करनेपर देनेको कहा है । (प्रभा अुठकर पहली शीशी लेकर अेक ग्लासमें दवा अुड़ेलती और पिलाती है ।)

सत्यं :--अव्वल दर्जेकी नर्स हैं !

ब्रह्मा :--देर हो गयी । सत्यं । अब तुम जाओ ।

सत्यं :--कल सुबहकी गाड़ीसे मुझे जाना है । विदा । मोहनकी हालत लिखिअेगा ।

ब्रह्मा :--हाँ, जरूर ।

(सत्यं जाता है)

प्रभा :--जाकर भोजन कर आअिये ।

ब्रह्मा :--और तुम ?

प्रभा :--अुपवास तो नहीं करूंगी । मैं बादमें खाअूंगी ।

ब्रह्मा :--ठीक है । (अंदर जाता है ।)

प्रभा :--(सदर दरवाजा बन्द कर आती है)

(मंचपर दीपक बुझाकर फिर जलाअें कुछ व्यवधानकी सूचना देनेके लिअे)

\+ + +

(आधी रातका समय । मोहन पलंगपर सोया हुआ है । और कोअी नहीं है । पहले अस्पष्ट रूपसे बातें सुन पड़ती हैं और बादमें स्पष्ट हो जाती हैं ।)

मोहन :--ओह ! प्यास ! ज्वाला, रक्त-ज्वाला, रक्तकी धारा, होम-कुण्डमें रक्तधाराअें । लाल लाल जीभोंके समान लपटें । खून । ओह ! दर्द ! (आँखें खोलकर देखता है ।)

(प्रभाका प्रवेश जो मोहनकी आवाज सुनकर आयी है । वह पलंगके पास खड़ी हो जाती है)

मोहन :--(आँखें बन्दकर) देखो प्रभा ! राक्षसोंने क्या किया है ?

प्रभा :--(चौंक पड़ती है ।)

मोहन :--मेरे सीनेमें बर्छी मार दी, प्रभा । मेरी हृदयेश्वरी ! अब मेरे हृदयमें खून नहीं । अुसे कुंडमें अुड़ेल दिया गया है । लो देखो ! अुनको भगा दो । अपने हाथोंसे वह खून मेरे हृदयमें भर दो । (आँखें खोलता है । अेक क्षणतक प्रभापर दृष्टि गड़ाकर देखता है ।) कौन हो तुम ?

प्रभा :--प्रभा । आपकी हृदयेश्वरी !

मोहन :--(पागलके समान देखते और हंसते हुअे) राक्षसी ! तुम्हें मालूम नहीं, मेरी प्रभा मर गयी । मुझे मालूम है, तुम्हींने मार डाला । देखो मैं पुलिसमें रिपोर्ट करता हूँ । (अुठना चाहता है ।)

प्रभा :--(फिरसे लिटाकर) प्रभा मर नहीं गयी । आप सो जाअिये ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोहन :—(बात सुननेकी हालत नहीं है।) प्यास, प्यास, दावाग्निकी ज्वालाअें, लपटें !!!

प्रभा:—(पानी पिलाती है।)

मोहन:—आअी हो। फिर आअी हो ? अच्छी तरह देख लेने दो। (आँखें बंद कर लेता है।) दो-अेक चुम्बन। (होठोंसे चूमनेकी आवाज करता है।) ओह ! कितनी मधुरता ! सुधा मधुर है, मधु मधुर है, दधि मधुर है, तुम्हारे होंठ मधुरातिमधुर हैं। (जोरसे) हाय ! मेरी प्रभाको वह राक्षस बलात्कारसे.....ओह। कितना घाव किया है। (हाथोंसे अपनी छाती पकड़ लेता है।)

प्रभा:—(हाथ खोलकर भुजाअें पकड़ती है) कोअी नहीं है। आप डरिये नहीं। सो जाअिये।

मोहन:—(आँखें खोलकर) राक्षसी ! अब भी है। मुझपर नज़र लगी है ? मेरी प्रभाका खून करके मुझसे शादी करेगी ? जा-जा। (आँखें बंद कर लेता है।)

प्रभा :—(कुछ स्मरण करते अुठकर दूसरी शीशीकी दवा पिलाती है।)

मोहन :—विष, विष हलाहल है। नीलकंठके गलेका हलाहल। तुमको कैसे मिला डाक्टर ! (आँखें खोलकर) मुझे मालूम है, डाक्टर ! शिवको मारकर अुसका विष लाये हो ? अब तो शिव ताण्डव नृत्य नहीं करेगा ? (पागलके समान हँसता हुआ) हिश ! हमारा सुब्बू भी शिवका ताण्डव-नृत्य करता है तमिल गानेके साथ। गाअूं ? "कालै तूकि निरांडुम् दैव मे" बाकी शेष गाना नहीं आता। क्यों हँसता है बे ? तेरा सिर फोड़कर टुकड़े-टुकड़े कर दूंगा। पेट चीर डालूँगा। (जम्हाअी लेता है।) अरी प्रिये ! मेघोंपर क्यों चली जाती हो ? धूमज्योति सलिल मरुतां—(फिर जम्हाअी। आँखें झपक जाती हैं।)

प्रभा :—(भालपर बिखरे बाल ठीक करती है। थोड़ी देर देखकर धीरे-धीरे दूरसे ही चूमती है और अहिस्ता-अहिस्ता चली जाती है।)

(फिर मंचपर अन्धेरा)

(दूसरे दिन सुबह लगभग साढ़े नौ बजेका समय। मोहन अभी सोया हुआ है।)

प्रभा :—(प्रवेश करके पलंगके पास खड़ी होकर अुसके भालपर हाथ रखकर देखती है। गरमी नहीं है।)

मोहन :—(जागता है) कौन है ? कहाँ हूँ मैं ?

प्रभा :—यहीं। धीरे-धीरे सब कहूँगी। जी कैसा है ?

मोहन :—कुछ नहीं, ठीक है (सिर हिलाकर) सिरमें थोड़ा-सा दर्द है। क्या यह अस्पताल है और तुम नर्स हो ?

प्रभा :—(हँसकर) अेक तरहसे नर्स ही हूँ। यह आपके बचपनके मित्र ब्रह्मानन्दजी रावका मकान है।

मोहन :—(अेकटक देखता है अुसकी ओर। झट कुछ याद आता है।) देखो ! तुम वेंकटशास्त्रीजीकी बेटी प्रभा हो न ?

प्रभा :—हाँ ! अब अिनकी पत्नी हूँ।

मोहन :—हाँ ! ब्रह्मासे शादी की है न। कहाँ है ब्रह्मानन्द ?

प्रभा :—स्कूलका समय हो गया है। भोजन करके कपड़े पहन रहे हैं। अभी आअेंगे।

मोहन :—मास्टर है ? कालेजके दिनोंमें ही हम लोग अुनको मास्टर साहब कहते थे। बहुत अच्छा है।

प्रभा :—(मुस्कराती हुअी) खूब ! पत्नीसे पतिका सर्टिफिकेट स्वीकृत कराना चाहते हैं ?

मोहन :—अब भी अुतनी ही नटखट हो (अेक टक देखता हुआ) बचपनसे अब अधिक सुन्दर दीखती हो।

प्रभा :—मैं कैसे जानूँ ?

मोहन :—क्या ब्रह्मानन्द नहीं कहता।

प्रभा :—स्कूलके मास्टर क्या हर रोज अपनी पत्नियोंका वर्णन करते हैं ?

मोहन :—(अच्छा धीरे-धीरे अुठकर दीवारके सहारे बैठता है।) मैंने रातमें बड़ा घृणित बर्ताव किया होगा। लेकिन मैं अिस दुनियामें था ही नहीं। माफ करो। शराब बहुत रद्दी चीज है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभा :—हाथ मुँह धोकर काफी पीजिये। बेसिनमें पानी लाती हूँ।

मोहन :—ना, मैं ही आ जाऊँगा। (अुठनेका प्रयत्न करता है।)

प्रभा :—नहीं! आप बहुत कमजोर हैं। (मोहनकी भुजाअें पकड़कर बैठाती है। मोहन झट प्रभाके हाथ पकड़कर अपने नजदीक खींचकर चूम लेता है।)

मोहन :—पाप किया है। क्षमा करो, प्रभा!

प्रभा :—(सब कुछ भूल जाती है।) नहीं-नहीं। (मोहनका सिर पकड़कर चूम लेती है। अुसी समय ब्रह्माराव प्रवेश करता है। जो कुछ हुआ है वह सब देखा तो नहीं लेकिन कोअी सन्देह हृदयमें अुथल-अुथल मचाने लगता है जिसे प्रकट नहीं होने देता।)

ब्रह्मा :—क्या मोहन जगा है? कैसा है।

प्रभा :—(अपनी घबराहट छुपाती हुअी) हाँ! अभी जागे हैं। सिरमें दर्द बताते हैं। अुठते गिर पड़े।

ब्रह्मा :—मोहन! आज कुछ आरामकी जरूरत है। लेटे ही रहो।

मोहन :—ब्रह्मानन्द! मेरे और आरामके बीचम काफी दूरी है। बहुत धन्यवाद, अनाथकी रक्षा की जो तुमने!

ब्रह्मा :—सत्यंने बताया तुम बड़ी बुरी हालतमें हो, अिसलिअे झट यहाँ लानेको कहा।

मोहन :—क्या अब सत्य यहाँ आअेगा?

ब्रह्मा :—नहीं! वह सुबह ही चला गया।

मोहन :—धन्यवाद। लेकिन मुझे बिदा दो भाअी। काफी पीकर चला जाऊँगा।

ब्रह्मा :—नो, नो। (कुछ सोचकर) खैर, मेरे स्कूलसे लौटनेके बाद देखा जाअेगा। अच्छा मैं जाता हूँ। तुम प्रभाको नहीं जानते?

मोहन :—हाँ, बचपनका थोड़ा परिचय है। हम दोनों मछलीपट्टणमके हैं।

ब्रह्मा :—हाँ, वही तो। मेरा समय हो गया है, मैं जाता हूँ। (जाता है।)

प्रभा :—मैं पानी, पेस्ट आदि लाती हूँ। (जाती है।)

मोहन :—(दोनों हाथोंसे सिर पकड़कर आँखें बंद कर लेता है।)

(पर्दा गिरता है)

\+ \+ \+

(पर्दा अुठता है शामके चार बजेका समय। प्रभा पलंगपर बैठी है। मोहन अिधर-अुधर टहलता है।)

मोहन :—हो गया! चाहसे ज्यादा भी हो गया। स्वप्नलोकसे अब यथार्थकी दुनियामें अुतरना चाहिये। प्रभा! अब अेक घंटेमें जा रहा हूँ।

प्रभा :—हाँ, घंटेमें जा रहे हैं?

मोहन :—(पहले नहीं समझता लेकिन बादमें समझकर झट) क्या कहा?

प्रभा :—यही कि अेक घंटेमें जा रहे हैं।

मोहन :—मतलब?

प्रभा :—कवियोंको सीधी-सादी भाषा मालूम नहीं होती। अेक घंटेमें हम तुम दोनों जा रहे हैं, यही मेरे कहनेका मतलब है।

मोहन :—प्रभा! पगली-सी बातें करती हो। तुम स्वप्न संसारसे अभी बाहर नहीं आयीं?

प्रभा :—स्वप्नलोक और यथार्थ संसारका निर्णय करनेकी मुझे जरूरत नहीं। मैं आपके साथ-साथ चल रही हूँ। मैंने अपना सब सामान ठीक कर लिया है। अुनके बनवाये जो गहने हैं, यहीं, छोड़ दिये हैं। क्या यह सब सपना है?

मोहन :—नहीं, प्रभा नहीं!

प्रभा :—क्यों? पापका काम समझकर?

मोहन :—नहीं!

प्रभा :—समाजके डरसे।

मोहन :—नहीं!

प्रभा :—मित्र-द्रोहके डरसे?

मोहन :—नहीं!

प्रभा :—तो क्या यह समझकर कि मुझे तकलीफ होगी? क्या यह समझकर कि बिना घर-बारके कभी-कभी खाने-पीनेकी भी मुझे तकलीफ अुठानी पड़ेगी? मुझे अिसका डर नहीं।

मोहन :—नहीं।

प्रभा :—क्या यह समझकर कि आपकी आजादीमें बाधा डालूँगी?

मोहन :—नहीं, प्रभा, नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभा :--(तीखेसे) तो मालूम हो गया। मुझसे प्रेम नहीं। (खड़ी हो जाती है।)

मोहन :—हाय ! कितना भूलती हो ? प्रेमके कारण ही मैं प्रार्थना करता हूँ कि अैसा न करो।

प्रभा :—(सूखी हँसी हँसकर) प्रेमके कारण ?

मोहन :--(जल्दीसे प्रभाके नजदीक आकर) हाँ, प्रेमके कारण ही। वह प्रेम असाधारण है, अपूर्व है, पवित्र है, कृष्णसे राधाका-सा प्रेम है। प्रभा ! मोह और वासनामें पड़कर अुस प्रेमको मलिन न होने दें? मोह क्षणिक है। प्रेम अमर है।

प्रभा :--प्रेमके कारण ही मैं आपके साथ आ रही हूँ। मोहके कारण नहीं।

मोहन :—मैं नहीं मानता। क्योंकि मोह फल चाहता है। प्रेम फलातीत है। सफलतासे मोह नष्ट होता है। प्रेमके अनुभवके लिअे सफलता हैही नहीं। अिसलिअे अुसका नाश कभी नहीं होता।

प्रभा :—निश्शंकवालोंकी पतोहू कमलाने आपके साथ आकर क्या आनन्दका अनुभव नहीं किया ?

मोहन :—नहीं ! मोहकी आगमें भस्म हो गयी। थोड़ेसे सुखका अनुभव किया होगा लेकिन आनन्दका अनुभव नहीं किया। आनन्दकी सीमा नहीं है। अुसमें न अूँचाअी है और न निचाअी।

प्रभा :—अपने प्रेमीको देह और आत्माका समर्पण करनेसे अधिक क्या कोअी आनन्द स्त्रीके लिअे है ?

मोहन :—फिर भूलती हो। आत्मार्पण करो। मैं मना नहीं करता। जिस क्षण तुम देहको भी अर्पित करोगी अुसी क्षण अुसका मूल्य कम हो जाअेगा। प्रभा, तुम मेरी देवी हो। अपनी देह मुझे अर्पित करके साधारण स्त्री बन जाओगी ?

प्रभा :—तो अिस प्रेमका अनुभव कैसे किया जाअे?

मोहन :--प्रेमका अनुभव निष्काम कार्य है। प्रेम अिच्छा नहीं, जो पूरी हो। प्रेम और भक्तिके लिअे तृप्ति नहीं है। अनुभव करनेसे अुनमें वृद्धि होती है। यही अिसका रहस्य है।

प्रभा :—मुझे कुछ नहीं मालूम। बड़ी व्यथा हो रही है।

मोहन :--मुझे मालूम है। किसीको मारनेके समय दर्द जरूर होता है। तुम मोहनको मारनेका प्रयत्न करती हो, अिसलिअे तुमको व्यथा होती है।

प्रभा :--(आवाज सुनकर) वे आ रहे हैं।

(ब्रह्मानंदका प्रवेश)

ब्रह्मा:—(दोनोंका रंग-ढंग देखकर घबराता है।) मोहन !.....कैसे हो ?

मोहन :— देखते हो ना ! बिल्कुल ओ. के. अब तक तुम्हारी स्त्रीको अपने लेक्चरसे हैरान करता रहा। अब बिदा दो। मुझे समझमें नहीं आता कि तुम दोनोंको धन्यवाद कैसे दिया जाअे ?

ब्रह्मा :--अरे ! बस अिसीके लिअे.....तो जाओगे ?

मोहन :--तुम्हारे स्कूलसे लौटनेतक मैंने रहनेको कहा न। अिसलिअे अबतक रहा।

ब्रह्मा :—तब तो ठीक है। जेबसे बटुआ निकालकर अेक दस रुपयेका नोट देता है।

मोहन :—नहीं ! माफ करो !

ब्रम्हा :--तुम्हारी मर्जी। (नोट जेबमें रख लेता है।)

मोहन :--(प्रभासे) अब बिदा दीजिये। आपकी दया और प्रेम नहीं भूल सकता। ब्रह्मानन्द ! बिदा। फिर न जाने कब मिलेंगे ?

ब्रम्हा :--(प्रभासे) दरवाजेतक पहुँचा आता हूँ।

(मोहन और ब्रह्मानन्द जाते हैं।)

प्रभा :--(पहले निश्चेष्ट होकर खड़ी रहती है। बादमें पलंगपर बैठकर हाथोंसे अपना मुँह ढँक लेती है।)

(ब्रह्मानन्दका प्रवेश)

ब्रह्मा :--(प्रभाके पास जाकर पलंगपर बैठता है और अुसके कन्धेपर हाथ रखकर) प्रभा, तुम्हारी बात नहीं मानी। तुमको बहुत तकलीफ दी।

प्रभा :—(फूटफूटकर रोनेकी आवाज सुन पड़ती है। सब निस्तब्ध।)

[पटाक्षेप]

(तेगुलुसे अनुवादक :- श्री चा. सूर्यनारायण मूर्ति, बी. अे., साहित्यरत्न)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्यासी कवि लोष्ठक भट्ट

: श्री प्रभात शास्त्री, साहित्याचार्य, साहित्यरत्न :

महाकवि मङ्खक [1] ने श्रीकण्ठचरित नामका अेक महाकाव्य लिखा था। अिस काव्यका पच्चीसवाँ सर्ग अैतिहासिक दृष्टिसे बड़ा महत्वपूर्ण है। अिस सर्गमें कविने अपने भाअी लंककी सभाको सुशोभित करनेवाले विभिन्न शास्त्रके प्रकाण्ड पण्डितोंका वर्णन बड़े मनोरंजक ढंगसे किया है। लंकक काश्मीरके तत्कालीन राजा जयसिंहके 'सान्धिविग्रहिक' मंत्री थे। कालके दुष्प्रभावसे अिस काव्यमें वर्णित 'नन्दन', रम्यदेव, रुय्यक, श्रीगर्भ, मण्डन, श्रीकण्ठ, गर्ग, देवधर, नाग, त्रैलोक्य, दामोदर, जिन्दुक, जल्हण, श्रीगोविन्द, कल्याण, भुड्डु, श्रीवत्स, श्यानन्द, पद्मराज, श्रीगुन्न, लक्ष्मीदेव, जनकराज, प्रकट गुप्त, आनन्द, सुहल, महाकवि शम्भु, गोविन्दचन्द्र, जोगराज, अपरादित्य आदिमेंसे कुछ ही ग्रन्थकारोंके नाम और कृतियोंसे हम अिस समय परिचित हैं।

मङ्खकने अिसी परम्परामें कविवर लोष्ठक देवका वर्णन किया है। अिन्हींका दूसरा नाम लोष्टक भट्ट है। अिनके सम्बन्धमें अिन्होंने केवल तीन अनुष्टुप् लिखे हैं, जिससे पता चलता है, कि [2] लोष्टक संस्कृतके सिद्धहस्त कवि और छह भाषाओंके अधिकारी विद्वान् थे। अिन्होंने संस्कृतमें व्युत्पत्तिपूर्ण कअी ग्रन्थोंकी रचना की थी। समयके कुचक्रसे वीणापाणि वागीके अिस वरद् पुत्र कविके सारे ग्रन्थ लुप्त हो गये। अिस समय अेकमात्र कृति [3] 'दीनाक्रन्दनस्तोत्र' प्राप्य है।

कविकी जन्मभूमि प्रकृतिकी विलासस्थली काश्मीर थी। अिनके पिताका नाम रम्यदेव अथवा देवरम्य था। अपने पिताकी चर्चा अिन्होंने 'दीनाक्रन्दन स्तोत्र' में की है। अेक रम्यदेवका अुल्लेख श्रीकण्ठ चरितके पच्चीसवें [4] सर्गमें है। ये ही रम्यदेव अिनके पिता थे अथवा अिससे भिन्न कोअी रम्यदेव थे, यह निर्णय करना कठिन है। अिनके नामके साथ 'भट्ट' लगा रहनेसे प्रतीत होता है, कि ये जातिके ब्राह्मण थे। "दीनाक्रन्दन स्तोत्र" शिवजीके सम्बन्धमें लिखा गया है। अिससे यह सिद्ध होता है, कि ये शैव मतके अनुयायी थे। अपनी तरुणाअी काश्मीरकी सुरम्य-भूमिमें बिताकर अन्तिम समयमें सन्यासी होकर काशीवासी हो गये थे। लंककके सभापण्डितोंमें अिनका नाम चर्चित होनेके कारण अिस कविका जन्मकाल १०८० अी. के आसपास सिद्ध होता है, क्योंकि लंकक काश्मीरके राजा सुस्सलदेव तथा अुनके पुत्र जयसिंहके [5] सान्वि-

---

१ निर्णयसागर प्रेस बम्बअीसे मुद्रित

२ देखिये—

वाग्देवतालिनीलीलाधुतपक्षतिचातुरीम् ।
वदनाम्बुरु हे यस्य षअ्भिाषाऽधिशेरते ॥
खलानां यत्प्रबन्धेषु दृढव्युत्पत्तिवर्मसु ।
प्रोद्य च्चोद्यमया दूरे कुण्ठिता अिव पत्त्रिणः ॥
कतिचिल्लोष्टदेवस्य तस्येतिमुखतोऽश्रृणोत् ।
श्रीलंकक प्रतिप्रोतचारुचाटुरसा गिरः ॥

श्रीकण्ठचरित २५ सर्ग

३ निर्णय सागर प्रेस बम्बअीसे 'काव्यमाला' गुच्छकके छठवें भागमें प्रकाशित।

४ देखिये—

निस्तुषीकृतवैदुष्यं स्मयमात्सर्यसंहृतेः ।
घृतं प्रणतिपारम्यं रम्यदेवं तमैक्षत ॥

श्रीकण्ठचरित २५ सर्ग

५—देखिये—

निवेशिते सुस्सलभूविडौजसा,
स्वयं गरीयस्यपि सान्धिविग्रहे ।
विधाय चक्रे स्वयशोमयीं लिपिं
स लेखवर्गस्य विमुद्रमाननम् ॥

श्रीकण्ठचरित ३ सर्ग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विग्रहिक मंत्री थे। अितिहासकार जयसिंहका शासन-काल ११२९ अी. से ५० तक मानते हैं।

अिन्हें अपनी कृतिपर अत्यधिक आत्मविश्वास था। अिनकी रचनाअें अत्यधिक दुरूह होती थीं। मङ्खकने अिनका परिचय देते हुअे अिनके ग्रन्थोंके संबन्धमें 'यत्प्रबन्धेषु दृढव्युत्पत्तिवर्मसु' लिखा है--अर्थात् जिनके ग्रन्थ सुदृढ़ ज्ञानरूपी कवचके समान हैं। बड़े दुर्भाग्यकी बात है कि अिनके वे सब ग्रन्थ अिस समय नहीं मिलते, जिनके सहारे साहित्य-जगत् अिनके पाण्डित्य और प्रतिभासे पूर्णरूपेण परिचित होता। अिनका शास्त्रीय ज्ञान बड़ा व्यापक था। [1] महान् संभ्रान्त परिवारमें जन्म लेकर अिन्होंने भी वाङ्मय रूपी विशाल पारावारका हनूमान्के समान संतरण किया था। अिसीसे अिन्हें कुछ लोग लोष्ट सर्वज्ञ कहते थे। 'सूक्तिमुक्तावली' प्रणेता-दाक्षिणात्य जल्हणने तो 'लोष्टक भट्टकी अपेक्षा 'लोष्ट सर्वज्ञ'के नामसे ही कवि-काव्य-प्रशंसा प्रकरणमें अिनके दो श्लोक अुद्धृत किये हैं, अुनमेंसे अेक अिनकी दर्पोक्ति है:—

प्रकृत्यैवातिवक्रेण, गुणदैर्घ्यं वितन्वता।
मया शरासनेनैव, वाणो दूरं निरस्यते॥

स्वभावसे ही टेढ़े और डोरीको फैलाये हुअे धनुष द्वारा जैसे बाण दूर फेंक दिया जाता है, अुसी तरह प्रकृतिसे ही वक्रोक्तिपूर्ण रचनाका अभ्यासी तथा काव्यमें गुणके महत्वका विशेषरूपसे विस्तारक मैंने भी (अपनी कृतियोंसे महाकवि) वाणको दूर ढकेल दिया है।

अिससे प्रतीत होता है, कि कविवर वाणके समान लोष्टक ओज, माधुर्य और प्रसाद अिन तीनों गुणकी अभिव्यक्ति-पूर्ण रचनामें अत्यधिक दक्ष थे। सम्भवतः वाणकी कादम्बरीके समान अिन्होंने कोअी गद्य काव्य लिखा हो।

१— **अभ्रंशे जन्मवंशे सुमहति विहितो**
वाङ्मयाब्धौ हनूम—
त्सरम्भो.....।

दीनाक्रन्दनसे

सूक्तिमुक्तावलीके अुसी प्रकरणमें अरसिक श्रोताओंसे संबन्धित अिनकी व्यथाभरी दूसरी रचना देखिये—

केचिद्गर्वगलग्रहेण विषमद्वेषज्वरेणापरे,
केचिन्मौर्ख्यमलेन सततममीलन्ति शान्तोत्तराः।
तद्भो! मन्दिरभित्तयो, भक्त नस्सूक्तेषु सभ्या पुनः
तत्पाठे वरमस्तिवो 'घमु' 'घमु' प्रायं किमप्युत्तरम्॥

कुछ श्रोतागण गर्वरूपी गलग्रहसे ग्रसित हैं और कुछ भीषण विद्वेष-ज्वरसे प्रपीड़ित हैं; दूसरे अपनी निन्दनीय मूर्खताके कारण विवश हैं। अिसीसे ये लोग (सूक्ति सुननेके बाद) सदा मौन रहते हैं और अुत्तर देनेमें अिन्हें संकोच होता है। अतः मंदिरके दीवालो; मेरी सूक्तियोंके श्रोता तुम्हीं हो जाओ। फिर तो सूक्ति-पाठके समय तुम्हारा (प्रतिध्वन्यात्मक) धम्, धम् जैसा कुछ अुत्तर तो (मौनावलम्बनकी अपेक्षा) अच्छा रहेगा।

अपनी कृतियोंकी विडम्बना करनेवाले अिन व्यक्तियोंके प्रति अिन्होंने कितना तीखा और मीठा व्यंग्य किया है। जान पड़ता है कि अिस कविको अपने जीवन-कालमें तत्कालीन विद्वत्समाज द्वारा अच्छा सम्मान नहीं मिला।

लोष्टकका व्यक्तिगत जीवन भी दुःख-दर्द-भरी कहानीसे ओत-प्रोत है। अिन्होंने 'दीनाक्रन्दन स्तोत्र'की रचना यद्यपि भगवान् शंकरकी स्तुतिमें की है, किन्तु अिसे अिनकी आत्मकथा कहें तो अत्युक्ति न होगी। पढ़ते समय पाठकके मनको वे स्थल तो रुला ही देते हैं, जहाँपर कवि अपने व्यक्तिगत जीवनके संबन्धमें कुछ कहने लगता है—

मोहात्कृतः परिणयोप्यनयो महीयान्,
मूलं समस्तभवबन्धनदुर्गतीनाम्।
यस्मादुदेत्य दुरपत्यजननेन सृष्टः
स्नेहोऽस्मि वेष्टित अिवोत्कटनागपाशैः॥
तत्पोषणाय विदुषाऽपि मया समस्तमौ-
चित्यमुच्छितवताऽऽत्तवता कुकृत्यम्।
द्वारि श्ववल्लडितमेव कदीश्वराणाम्।
सोढावमानशतविक्लवमानसेन॥

'दीनाक्रन्दन' से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने मोहवश सांसारिक सारे बन्धन और दुर्गतिका प्रधान कारण अनीतिपूर्ण विवाह भी कर लिया, जिससे अुत्पन्न हुअे दुष्ट पुत्रोंके स्नेह-जालने मुझे भयंकर नागपाशकी तरह घेर लिया है।

अुन दुष्ट (पुत्रों)के पालन-पोषणके लिअे विद्वान् होते हुअे भी मैंने अुचित और अनुचितका परित्याग करके तथा निन्दनीय कृत्योंका सहारा लेकर सैकड़ों अपमानोंसे विक्षुब्ध हृदय होनेपर भी बुरे राजाओंके दरवाजोंपर कुत्तेकी तरह पूछ हिलायी है।

कविने अिन श्लोकोंमें कष्टपूर्ण अपने घरेलू जीवनके संबन्धमें संकेत मात्र किया है। लोष्टकने अपने विवाहको 'अनीतिपूर्ण' बतलाया है। अिससे आभास होता है, कि अिन्होंने किसी तरुणीके प्रेमपाशमें फँसकर अन्तर्जातीय अथवा पारिवारिक-अभिभावकोंकी अिच्छाके विरुद्ध प्रेम-विवाह कर लिया हो। मेरी समझमें अनीतिपूर्ण विवाहका यही अभिप्राय हो सकता है। यह बात सत्य है कि कवि* की कअी प्रेमिकाअें थीं। अुन्हींके चक्करमें अिनका कुछ समय व्यतीत हुआ। अिनके लड़के भी अयोग्य थे, जिनके भरण-पोषणके लिअे अिन्हें बुरे राजाओंके राजदरबारकी शरण लेनी पड़ी। कदीश्वराणाम्' से किस राजाकी ओर अिनका अिशारा है, अिसका निर्णय करना कठिन है। 'कदीश्वराणाम्' के बहुवचनसे यह भी ध्वनित होता है, कि अिस स्वाभिमानी कविको अपने परिवारके पालन-पोषणके लिअे अेक ही नहीं, कअी राजाओंके यहाँ जाकर दरबारदारी करनी पड़ी और अन्तमें अिनकी किसीसे नहीं बनी। यह तो निश्चित है, कि ये मङ्खकके भाअी लंककको सभामें जाते थे। लंकक राजा तो नहीं किन्तु राजमंत्री थे। अिन्होंने लंककको चाटुकारीमें कुछ श्लोक लिखे हैं, जिनकी संख्या ग्यारह है। अुन श्लोकोंको 'श्रीकण्ठ चरित' काव्यके पच्चीसवें सर्गमें मङ्खकने अुद्धृत किया है। अुदाहरणार्थ—

मार्गे पदस्य पथि वाक्यकथाप्रथानाम,
मानस्य वर्त्मनि च कन्दलिताभिषेकः।
राज्ञेव मन्त्रिवरलंकक ! सूक्तिदेव्या,
सर्वाधिपत्यपदवीमधिरोपितोऽसि ॥

'दीनाक्रन्दन'से

व्याकरणमें न्यायशास्त्रकी तर्कपूर्ण वाक्यावलीमें तथा सन्मानके क्षेत्रमें हे मंत्रिवर लंकक ! देवी सरस्वती द्वारा राजाके समान अभिषिक्त होकर (आप) प्रत्येक क्षेत्रमें अधिकारपूर्ण स्थानपर बैठा दिये गये हैं।

कविको किस प्रकार कुछ अर्थलाभके लिअे अपने स्वाभिमानको तिलांजलि देकर "लंकक सब शास्त्रके पंडित हैं" अिसकी घोषणा करे देनी पड़ी। हालाँकि संस्कृत-साहित्यमें अिनका बनाया हुआ अेक अनुष्टुप् भी नहीं पाया जाता। अिनकी अपेक्षा अिनके भाअीकी गणना संस्कृतके अच्छे कवियोंमें होती है।

पद मानवको मदोन्मत बना देता है। लंकक मंत्री थे। मंत्रीभी प्राचीनकालमें अेक छोटा-मोटा राजा होता था। संस्कृतकी अेक कहावतके अनुसार 'स्तुतिप्रिया सन्ति च मंत्रिलोकाः' अर्थात् मंत्री लोग खुशामद पसन्द होते हैं। अिस परिस्थितिमें संस्कृतके स्तुतिवादी समालोचकोंने जिस वाणभट्टके संबन्धमें[1] "कुछ लोग श्लेषात्मक रचनामें, कुछ शब्दोंके गुम्फनमें, कुछ अिसकी अभिव्यक्तिमें, कुछ अलंकारकी भरमारमें, कुछ सुन्दर अर्थके प्रकटीकरणमें तथा कुछ कथाके वर्णनमें कुशल होते हैं, किन्तु बड़े आश्चर्यकी बात है कि महाकवि वाणभट्ट तो गम्भीर कवितारूपी विन्ध्य-वनमें चतुरताके साथ भ्रमण करनेवाले तथा महान्कवि कुंजरोंके मस्तकको विदीर्णकर्ता, वज्ररूपी सिंहके समान हैं" लिखकर वाणको कविकुंजरोंके पराजेता बताया— अुसी वाणको अपने आगे कुछ न समझनेवाले तथा छह छह

---

*— देखिये—

'वैवश्याल्लुठितं चिरं चरणयोःस्त्रीणां गुरुणां न तु।

'दीनाक्रन्दन' से

१-श्लेषेकेचन शब्द गुम्फ विषये केचिद्रसे चापरेऽलंकारे कतिचित् सदर्थ विषये चान्ये कथावर्णने।
आः ! सर्वत्रगमीरधीरकविताविन्ध्याटवी चातुरी-संचारी कविकुम्भिकुम्भभिदुरो वाणस्तु पंचाननः॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषाओंके प्रकाण्ड पण्डित लोष्टककी लंककसे अन्तमें अनबन हो गयी। जो कुछ भी हो - अिस कविका जीवन महान् संघर्षात्मक था, अिसमें अणुमात्र भी संदेह नहीं । सम्भवतः जीवनके अिन्हीं संघर्षोंने अिन्हें अपनी जन्मभूमि काश्मीर छोड़कर काशीमें सन्यासीका जीवन व्यतीत करनेके लिअे विवश किया हो।

मेरी तो धारणा है, कि यदि ये काशी न आये होते तो साहित्य-क्षेत्रमें अिनके अस्तित्वकी पूर्णरूपेण समाप्ति थी। अिन्होंने काश्मीरमें जितने ग्रंथ लिखे, अुनमेंसे अिस समय अेक भी नहीं मिलता। काश्मीर सदियोंसे राजनीतिक अुथल-पुथलका मुख्य केन्द्र रहा। असम्भव नहीं, कि वहाँकी वसुन्धराने अिनके रत्नग्रंथोंको भी अपने अन्दर धारणकर लिया हो। 'दीनाक्रन्दन स्तोत्र' की रचना तो अिन्होंने काशीमें रहकर की थी। अिसीसे यह ग्रंथ बच भी गया।

अब अिस कविकी कुछ रचनाओंका आनन्द लें। कवि आशुतोष शंकरसे निवेदन कर रहा है—

दुर्वारसंसृतिरुजा भृशकांदिशीक--
स्त्वामोषधिपतिभृतं सुकृतैरवाप्य ।
आवेदयामि यदहं तवतन्निदानं
तत्राऽवधेंहि मृडमा कुरु मय्यवज्ञाम् ॥

'दीनाक्रन्दन' स्तोत्रसे

कठिन सांसारिक रोगोंसे (अत्यधिक परेशान होकर) भयके साथ तेजीसे भगा हुआ मैं औषधिपति (चन्द्रमा) धारी तुमको पूर्वजन्मके पुण्य प्रभावसे प्राप्त करके (तुमसे) जो निवेदन कर रहा हूँ, तुम्हारा अुसके निदान (मूलकारण) की ओर ध्यान जाना चाहिये। हे भगवान् (शरणागत) अिस (जन) का तिरस्कार न करें।

अिस श्लोकमें 'औषधिपति' शब्दमें अत्यधिक चमत्कार है। संस्कृतमें औषधिपति वैद्यको भी कहते हैं। रोगी परेशान होकर वैद्यके पास रोगके निदानके लिअे जाता है और आशा करता है कि वह अुसे रोगसे मुक्त कर दे। अिसी प्रकार यदि सांसारिक रोगोंसे परेशान होकर लोष्टक भट्ट औषधिपतिधारी शंकरसे मुक्ति प्राप्ति करनेकी अिच्छा करता है तो यह अनुचित माँग नहीं।

अेक श्लोकका और रस लें। सारी तरुणाओं तरुणियोंके कोमल भुजपाशकी छायामें व्यतीत करनेवाला अतअेव नैतिक दृष्टिसे समाजके सामने महान् अपराधी यह कवि सच्चाओंके साथ अपने अिस अपराधको स्वीकार करता हुआ शंकरसे सहायताकी याचना कर रहा है :--

भ्रष्टोऽस्मि यद्यपि सतां चरितात्तथापि ।
मां त्रातुमर्हसि कृतान्तभिया श्रयन्तम् ।
नो साधवो विदधते सदसद्विवेकम्,
प्रहवेषु विह्वलतया शरणागतेषु ॥

'दीनाक्रन्दन' स्तोत्रसे

हे भगवन् यद्यपि मैं साधुजनोंके चरित्रसे गिर गया हूँ अिसपर भी यमराजके भयसे आपकी शरणमें मैं आया हूँ। आप मेरी रक्षा करनेमें समर्थ हैं, क्योंकि परेशान होकर आये हुअे विनम्र शरणागतके विषयमें बड़े लोग सज्जन और दुर्जनका विचार नहीं करते।

कवि कितनी सीधी-सीधी भाषाके सहारे तर्कपूर्ण शैलीमें अपनी सहायताके लिअे भगवान् शंकरसे हठ कर रहा है। अैसा प्रतीत होता है कि कोअी वकील जजके समक्ष अपने अभियुक्तको छुड़ानेके लिअे वकालत कर रहा हो।

राजदरबारोंकी चमक-दमक, साहित्यिक-साधना तथा घरेलू अन्य समस्याओंमें सर्वदा व्यस्त रहनेके कारण कविको कभी भी भगवान् शिवकी सेवाका सुअवसर तो मिला नहीं। अिस दशामें क्षणिक सेवाके बलपर किसीसे कुछ कामकी आशा करना कहाँ तक युक्तिसंगत है- अिसे कवि अपनी आलंकारिक शैलीमें दृष्टान्त देकर युक्तिपूर्ण सिद्ध करनेका प्रयत्न कर रहा है—

पूर्वं न चेद्विरचिता तव देव ! सेवा,
तेनैव नैव दयसे श्रयतो मभीतिम् ।
किं प्रागसंस्तुत अिति प्रतिपन्नभूल--
च्छायं गतश्रमरुजं न तरुः करोति ॥

'दीनाक्रन्दन' स्तोत्रसे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे देव मैंने (अिसके) पूर्व तुम्हारी सेवा नहीं की। सम्भवतः अिसीसे संकटमें पड़े हुअे अिस व्यक्तिकी (तुम) रक्षा नहीं करते (यह अुचित नहीं है)। क्या वृक्ष, पहलेसे स्तुति न किये जानेपर अपने तले छायाके लिअे आये हुअे (बटोही) जनोंकी थकावटको दूर नहीं करता ?

अिस श्लोकमें भट्टजीने अेक वृक्षका दृष्टान्त अधिक विचारके पश्चात् दिया है। यदि चेतनाहीन तरु पहलेसे अपरिचित पथिकोंको शीतल छाया प्रदान करके अुसकी सहायता करता है, तो भगवान् ! आप तो तरुकी अपेक्षा चेतनाशील हैं और आपका नाम आशुतोष (शीघ्र सन्तुष्ट होनेवाला) भी है– अतः यातनामय जीवनयापन करनेवाले अिस दीनहीन जनकी प्रार्थना सुनकर अिसके कष्टको अवश्य दूर करें।

कवि भगवान् शंकरके प्रेममें अपने सुध-बुधको भूलकर कितना तन्मय हो जाता है और अुसके मनकी क्या स्थिति है ?

द्वारे लुठाभि करुणं प्रलपामि शंभो !
वाच्छामि चुम्बितमथो-परिरम्यचत्वाम् ।
वातूलतामुपगतोऽस्मि तवानुरागात्,
हा दुःसहस्त्वयि ममैष दृढोऽनुरागः ॥

"दीनाक्रन्दन' स्तोत्रसे।

हे भगवन् ! मैं (तुम्हारे) दरवाजेपर लोट रहा हूँ, (बड़ी) कारुणिक स्थितिमें विलख रहा हूँ और अुसके बाद तुम्हें पकड़कर चूमनेकी अिच्छा करता हूँ। (अिस तरह) तुम्हारे प्रेममें मैं बातूनी-सा हो गया हूँ। क्या करूँ तुममें मेरा यह घनिष्ठ प्रेम तो अधिक असह्य होता जा रहा है। अैसा आभास होता है, कि कवि अपने आराध्य देव भगवान् शंकरके प्रेममें अर्ध-विक्षिप्त-सा हो गया है। अिष्टदेवके घनिष्ठ प्रेममें विक्षिप्त होना सच्चे भक्तका लक्षण है। अिस दशामें कविका बातूनी हो जाना स्वाभाविकही है।

राजसी शान-शौकतसे रहनेवाले भगवान् विष्णुकी अुपासनाको छोड़कर यह राजदरबारी कवि दिगम्बर शंकरका अनन्य भक्त क्यों हो गया––अिसे पढ़िये:—

दिव्योत्तरीयभृति कौस्तुभरत्नभाजि,
देवेऽपरे दधतु लुब्धधियोऽनुबन्धम् ।
रूपं दिगम्बर मखण्डनृमुण्डचूडं
भावत्कमेव तु वतेश मम स्पृहायै ॥

'दीनाक्रन्दन' स्तोत्रसे।

सुन्दर दुपट्टा और कौस्तुभमणिकी मालाधारी भगवान् विष्णुका (कुछ प्राप्तिकी आशासे) अन्य लोभी जन (भले ही) अनुसरण करें, (पर) दिगम्बर आपका रूप जो अखण्डित नरमुण्डकी मालासे सुशोभित है—बड़ी प्रसन्नताके साथ मैं अुसीकी अिच्छा करता हूँ।

भट्टजीका यह स्तोत्र शिवजीके प्रति अिनकी अिसी प्रकारकी असीम-भक्ति और अटूट भाव-धाराके द्योतक भावनाओंसे ओतप्रोत है। संस्कृतमें स्तोत्रका भी विशाल साहित्य है। अिस कविके प्रदेशके निवासी जगद्धर भट्ट केवल "स्तुति कुसुमांजलि" लिखकर संस्कृतके महा-कवियोंमें[1] परिगणित किये जाते हैं। लोष्टकका यह स्तोत्र भी अपने सफल शब्द-विन्यास तथा हृदयस्पर्शी, स्वाभाविक अर्थगरिमाके बलपर संस्कृत-साहित्यका अमूल्य रत्न है।

अिनकी कुछ फुटकल रचनाअें भी सुभाषित ग्रन्थोंमें पायी जाती हैं। काश्मीरी विद्वान् वल्लभदेव द्वारा संकलित[2] 'सुभाषितावली' में अुपर्युक्त स्तोत्रसे अेक श्लोक[3] 'कस्यापि' करके अुद्धृत है। बंगाली पंडित श्रीधरदासके[4] सदुक्तिकर्णामृतम् नामक संग्रहात्मक सुभाषित पुस्तकमें भी अिनका अेक श्लोक मिलता है। साहित्यिक दृष्टिसे सदुक्तिकर्णामृतम्में संग्रहीत अिनके अेक ही श्लोकका अत्यधिक महत्व है। श्रीधरदास बंगालके विद्याप्रेमी राजा लक्ष्मण सेनके दरबारसे

---

१ निर्णय सागर प्रेस बम्बअीसे प्रकाशित।

२ अेजुकेशन सोसायटी प्रेस बाकुला बम्बअीसे प्रकाशित।

३—देखिये—

सुभाषितावलीका तीन हजार पाँच सौ छब्बीसवाँ श्लोक तथा दीनाक्रन्दनस्तोत्रका बाअीसवाँ।

४ मोतीलाल बनारसीदास (काशी) के यहाँसे प्रकाशित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संबंधित थे। 'सदुक्तिकर्णामृतम्'का[५] रचनाकाल १२०५ ओ. है। अिस ग्रन्थमें अिनकी कृति आ जानेसे यह सिद्ध होता है कि भट्टजी अपने जीवनमें ही अखिल भारतीय ख्यातिके कवि हो गये थे। यदि यह बात न होती तो १०८० ओ. के आस-पास समुत्पन्न अिस कविकी कृति वैज्ञानिक यातायात तथा मुद्रणालय संबंधी सुविधाओंसे रहित प्राचीन कालमें कश्मीरसे बंगाल अितनी जल्दी कैसे पहुँच गयी? सदुक्तिकर्णामृतम् संग्रहीत अिनका श्लोक अिसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। किन्तु अिस कर्णामृतम्की अंग्रेजी भूमिकामें अिसके विद्वान् संपादक डा० हरदत्त शर्मा अेम. अे., पी-अेच. डी. द्वारा अिस कविके बारेमें "नो अिन्फारमेशन" लिखा हुआ देखकर मुझे महान् आश्चर्य हुआ।

डा. महोदयकी अिस प्रकारकी विज्ञाप्तिको अिस प्रेस-युगमें देखकर अुनकी परिश्रमशीलतापर तरस आता है। यदि अुन्होंने तनिक भी श्रम किया होता तो अिस प्रकारकी प्रमादपूर्ण बात न कहते।

लेख समाप्ति करनेके पूर्व पाठकगण कश्मीरसे बंगालकी शस्यश्यामला भूमिमें पहुँची हुअी वर्षा वर्णन विषयक अुस कृतिको पढ़नेका कष्ट करें।

व्याप्यान्तरीक्षककुभावनुभूभृदगं,
सान्द्रान्धकारगहनासु निशासु गर्जन्।
संवीक्षते विरहिणः क अिह ध्रियन्ते
वर्षासु विद्युदुरुदीपिकयेव मेघः॥

'सदुक्तिकर्णामृतम्' से।

वर्षाकी ऋतुमें पहाड़की चोटियोंके पास आकाश और दिशाओंको घेरकर घने अन्धकारसे भरी हुअी रातमें गरजते हुअे मेघ अुस प्रदेशमें दीपकके समान चमकती हुअी बिजुलीके सहारे दिखलायी पड़ रहे हैं। अैसे समयमें (शायद ही) कोअी वियोगी जीवित रह सकता।

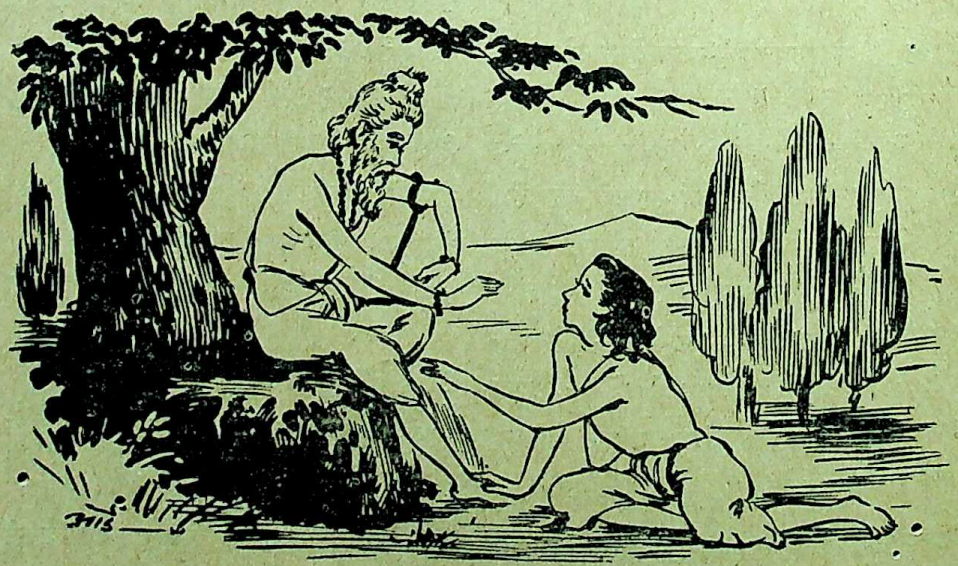

५ **शाकेऽत्र सप्तविंशत्यधिकशतोपेतदशशते शरदाम्।**
श्रीमल्लक्ष्मणसेनक्षितिपस्य रसैकविंशेब्दे॥
सवितुर्गत्या फाल्गुनविंशेषु परार्थहेतवेऽकुतुकात्।
श्रीधरदासेन 'सदुक्तिकर्णामृतम्' चक्रे॥

—सदुक्तिकर्णामृतम्; ३२८ पृष्ठ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेसका भूत

: श्री. प्रो. हरिमोहन झा, अेम. अे. :

अुस दिन पंडित गोनौर झाको अुस दशामें देखकर मैं आश्चर्यचकित रह गया। यही वे पंडितजी हैं जो सदा शानसे लाल धोतीपर रेशमी चादर और मुँहमें पानका बीड़ा रखे चलते थे। वही आज फटी धोतीपर मैला कुचैला गमछा रखे हुअे हैं। ओंठ सूखे हुअे हैं। जिन बालोंमें चमेलीका तेल चपचप करता रहता था अुन्हींसे अभी धूल अुड़ रही है।

मैंने पूछा—पंडितजी, आप तो बहुआअिन-साहिबाकी ड्योढ़ीमें रहते हैं न ?

पंडितजी बोले—रहता था। परन्तु अब नहीं।

मैंने पूछा—सो क्यों ?

वे बोले—भाग्य !

मैंने कहा—आपकी तो खूब चलती थी। बल्कि अुस जगहके कर्ता-धर्ता-विधाता सब कुछ आप ही थे। फिर अैसी हालत क्यों ?

पंडितजी बोले—यह सब ठीक है। बहुआअिन साहिबाकी मुझपर असीम कृपा रहती थी। यहाँतक कि स्टेटकी तरफसे लाखराज ब्रह्मोत्तर भी मिला था। मेरे रहते और भी कितने लोगोंको वृत्ति मिला करती थी। परन्तु अब कुछ नहीं :—

"बहिर्याति यदा लक्ष्मी :
गजभुक्त कपित्थवत्।"

मैंने पूछा—सो क्यों पंडितजी ? कुछ न कुछ कारण तो अवश्य होगा।

पंडितजी बोले—कारण सोचिये तो कुछ नहीं; और नहीं तो, है बहुत कुछ। परन्तु अिस जगह बातें करना ठीक नहीं होगा ! अुस घाटपर चलिये।

हम लोग गंगाजीके अेकान्त घाटपर आये। पंडितजीने गमछेसे चबूतरा साफ किया। फिर मुझे नजदीक बिठाकर कहने लगे—बात यह हुअी कि बहुआअिन साहिबाको अपनी वन्शावली छपानेकी अिच्छा हुअी। यह काम मुझे सौंपा गया। मैंने अपने जानते, जहाँतक हो सका खूब बढ़ा-चढ़ाकर अुनकी प्रशंसा लिखी। अुनके कुल-परिवारमें जो-जो हो गये हैं, सबका गुणानुवाद किया। पढ़कर सुनाया तो बहुत प्रसन्न हुअीं। आशा थी कि ग्रंथ छप जानेपर दरबारसे अितना पुरस्कार मिलेगा कि जन्म भरके लिअे सारा दुःख-दारिद्र्य मिट जाअेगा। परन्तु हुआ ठीक अिसके विपरीत !

मेरी अुत्सुकता और गढ़ गयी।

पूछा—सो कैसे ?

पंडितजी बोले—मैंने वह सब अेक प्रेसमें छापनेके लिअे दिया। आप तो जानते ही हैं कि हम लोग पंडित आदमी हैं। कल-पुर्जेकी बात विशेष समझते नहीं। अुसने कहा कि—अेक महीनेमें छापकर भिजवा दूंगा। ५००) रुपये लगेंगे।

रुपये दरबारसे मिले ही थे। मैंने अिस ख्यालसे कि अच्छी तरहसे छाप देगा, रुपये अग्रिम ही दे दिये।

सोचा कि जबतक यह छपता है तबतक जरा वृन्दाबनकी ओर घूम आअूं। झूलनका समय था। मनमें हुआ जरा कृष्णका रास देख आअूं। परन्तु भाअी ! वही मेरा काल बन गया।

मैंने पूछा—क्यों पंडितजी ! क्या प्रेसने धोखा दिया ? समयपर नहीं छापा ? पंडितजी बोले—आह ! यह बात होती तो क्या था ! परन्तु मैं जबतक वृन्दाबनसे लौटकर आअूं-आअूं तबतक पुस्तक छपकर दरबारमें पहुँच गयी।

मैंने कहा—तब कैसी चिन्ता ? पंडितजी बोले—अरे बाप ! सुनेंगे भी तब न ? मैं दरबारमें पहुँचा नहीं कि अन्दर हवेलीमें बुलाया गया। अेक ओर बहुआअिन साहिबा बैठी थीं, दूसरी तरफ अुनकी माँ। दोनोंका चेहरा क्रोधसे तमतमाया हुआ ! यह दृश्य देखते ही मेरा तो प्राण सूख गया !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुआअिन कड़ककर बोलीं—आप जिस पत्तेमें खाते हैं अुसीमें छेद करते हैं ? अिसीलिअे दरबारसे वृत्ति मिलती थी ?

मैंने हाथ जोड़कर कहा--सरकार, मुझसे कौनसा अपराध हुआ है ?

वे डाँटकर बोलीं—हम लोगोंके बारेमें जैसी-तैसी बातें छपवा आये और अब अनजान बन रहे हैं ?

मैंने भयका भाव बतलाते हुअे पूछा--कौनसी बात सरकार ? वे बोलीं--मेरे नामके पहले "वारांगना" शब्द जोड़ते हुअे आपको शर्म नहीं आयी ?

तबतक अुनकी माँ डाँट-फटकार करने लगीं--क्यों जी ! मेरे पिताजी 'वहलमान' (गाड़ीवान) थे ?

बहुआअिन चमकती हुअी बोलीं--और मेरे पिताजी मुर्गाके प्रेमी थे ? रण्डीकी अुपासना करते थे ?

अितनेमें न जाने किधरसे मैनेजर साहब फट पड़े--क्यों जी ! मैं स्टेटको "लाहेब" (सत्यानाश) करता हूँ ? आपपर मुकदमा क्यों नहीं चलाया जाअे ?

मेरी तो सिट्टी-पिट्टी गुम ! मुँहसे आवाज ही न निकली ।

बहुआअिन बोलीं--अितने दिनोंसे जिस दरबारका नमक खाते रहे, अुसके प्रति यह कर्त्तव्य अदा किया ? जाअिये, आजसे आप बरखास्त !

मैनेजर बोले--और अूपरसे मानहानिका दावा भी आपपर किया जाअेगा । हर्जानाकी नालिश भी !

मैं बहुत रोया-धोया । परन्तु सब व्यर्थ । बहुआअिन साहिबाने मेरे आगे किताब पटक दी और कहा—देखिये तो, ड्योढ़ीके बारेमें आपने क्या लिखा है ? अिसे जो भी पढ़ेगा क्या कहेगा ?

जो कुछ छपा था वह देखकर मैं भी काँप अुठा !

मैंने पूछा—क्या सब छप गया ?

पंडितजी बोले—क्या कहूँ ? अैसा बेवकूफ छापाखाना था, कि पंक्ति-पंक्ति अशुद्ध छाप दी । "वीरांगना" को 'वारांगना', 'पहलवान'को 'वहलमान', 'दुर्गा'को 'मुर्गा', 'चंडी' को 'रंडी' ! मैंने लिखा था—"स्टेटकी तरक्की मैनेजर साहेब करते हैं ।" सो "साहेब" को "लाहेब" कर दिया । वुच्चीकी प्रशंसामें लिखा था कि "ड्योढ़ीमें वुच्चीकी शोभा देखकर लोग मुग्ध हो जाते हैं ।" अुस जगह अैसी संकोचकी बात छप गयी कि क्या कहूँ ?

मेरे भाग्यका ही दोष !

मैंने पूछा—तब क्या हुआ ?

पंडितजी बोले—मैंने कहा कि मैं अपने खर्चसे शुद्धि-पत्र लगा देता हूँ । परन्तु यह अुन लोगोंको मंजूर नहीं हुआ । क्योंकि अनेक स्थानोंपर अत्यन्त अश्लील बातें छप गयी थीं ।

मैंने पूछा—वह क्या ?

पंडितजी बोले— सभी बातें बोलने योग्य नहीं । मैंने अेक जगह लिखा था पंडित-गुणीको 'डेरा' मिलता है । सो 'केरा' (केला) छप गया । अेक जगह था कि मैनेजर साहेब महिला विद्यालयके लिअे चंदा जमा कर रहे हैं । परन्तु मेरे फूटे भाग्यसे छप गया 'फंदा', जिसने अनर्थ कर दिया ।

मैंने पूछा— तब अन्तमें क्या हुआ ?

पंडितजी बोले-- होगा क्या ? विधवाका दरबार ! लोगोंने बढ़ा-चढ़ा दिया । मुझे जो कुछ मिला था सब छीन लिया गया । बहुत हाथ-पैर पटकने-पर मुकदमा वापिस ले लिया गया ।

मैंने पूछा-- तो अब क्या कर रहे हैं ?

पंडित गोनौर झा नस्य लेते हुअे सिर पीटकर बोले-करूँगा क्या ? अेक प्रेसमें प्रूफ संशोधकका काम मिल रहा है, सो करूँ या नहीं यही सोच रहा हूँ । आपकी क्या राय है ?

मैंने कहा--पंडितजी, और जो चाहे कुछ कीजिये, परन्तु यह काम तो नहीं कीजिये । नहीं तो आपकी कृपासे कितने 'साहेब' 'लाहेब' हो जाअेंगे, 'पंडित' 'खंडित' हो जाअेंगे, 'अबला' 'प्रबला' हो जाअेंगी, 'असूता' 'प्रसूता' बन जाअेंगी । 'वैश्य' को 'वेश्या' और 'वर-वधू' को 'वार-वधू' होते क्या देर लगेगी ? कितनी 'सुन्दरी' 'छुछुंदरी' बन जाअेंगो । यदि आपको दया हो तो यह काम न कीजिये ।

पंडितजी बोले-- ठीक कहते हैं । जहाँ जरा भी आँखें चूकीं कि 'सूत्र' से 'मूत्र' हो जाअेगा । यह काम हम लोगोंके लायक नहीं । जिसको चावलका कण चुननेका अभ्यास हो वही प्रूफ-रीडरी करे ।

मैंने कहा-- अच्छा तो अब आज्ञा मिले । मेरी भी अेक पुस्तक प्रेसमें छप रही है, श्रीमान काटजू साहबकी प्रशंसामें लेख है । कहीं आपकी वंशावलीवाली गति हो गयी तो अनर्थ ही हो जाअेगा ।

[मैथिलीसे अनुवादिका--श्रीमती सीता सिन्हा]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वर

बंगला : श्री काजी नजरुल अिस्लाम :

के तुमि खुँजिछ जगदीशे भाअि आकाश पाताल जूड़े
के तुमि फिरिछ बने जंगले, के तुमि पाहाड़ चूड़े ?
हायऋषि-दरवेश,
बूकेर मानिक बूके धरे तुमि खोंज तारे देश-देश।
सृष्टि स्वेछे तोमा पाने चेये तुमि आछ चोख बूजे,
स्रष्टार खोंजो—आपनारे तुमि आपनि फिरिछ खूँजे;
अिच्छा-अन्ध ! आँखि खोलो, देख दर्पणे निज काया,
देखिबे, तोमारि सब अवयवे पड़े छे ताँहार छाया।
शिहरि अुठोना, शास्त्रविदेर करोनाक वीर, भय—
ताहारा खोदार खोद् "प्राअिभेट सेक्रेटारी" तनय !
सकलेर माँझे प्रकाश ताँहार, सकलेर माँझे तिनि !
आमारे देखिया आमार अदेखा जन्मदातारे चिनि !
रत्न लअिया बेचा केना करे वणिक सिन्धु कूले—
रत्नाकरेर खबर ता बले पूछो ना ओदेर भूले
अुहारा रत्न बेने,
रत्न चिनिया मने करे ओरा रत्ना करे ओ चेने !
डूबे नाअी तारा अतल गभीर रत्नसिन्धुतले,
शास्त्रना घेंटे डूब दाओ सखा, सत्यसिन्धु-जले।

हिन्दी : श्री कैलासविहारी सहाय :

कौन खोजते तुम अीश्वरको भटक-भटक अम्बर-पाताल ?
ढूँढ़-ढूँढ़ जंगल-पर्वतमें, सखे, हुअे तुम व्यर्थ बेहाल।
हाय ऋषि दरवेश !
अुरका मानिक अुरमें ही था खोज रहे थे देश-विदेश।
सृष्टि तुम्हारी ओर देखती, आँख मूँद तुम करते ध्यान।
स्रष्टाका कर खोज, हाय, तुम निजका ही करते संधान।
अिच्छा-अन्ध ! आँख तो खोलो, देखो दर्पणमें काया;
देखोगे अपने सर्वांगोंपर पड़ती अुसकी छाया।
सिहरो मत, मत डरो देख शास्त्रज्ञोंका दुर्जेय प्रभाव;
अरे, खुदाके 'प्राअिवेट सेक्रेटरी' हैं क्या ये महानुभाव !
सबमें है आलोक अुसीका, सबमें वह सत्ता है व्याप्त
मुझे देख मेरे स्रष्टाका परिचय प्राप्त करो पर्याप्त।
सिन्धु किनारे रत्न-वणिक रत्नोंका करते क्रय-विक्रय
किन्तु भूलकर भी मत पूछो रत्नाकरका तुम परिचय।
रत्न बेचते हैं ये सब—बस रत्नोंकी करते पहचान;
और समझते हैं वे मनमें, रत्नाकरका हमको ज्ञान।
डूबे हैं वे नहीं कभी रे अतल रत्न-सागर तलमें;
शास्त्रोंको मत मथो, सखे, डुबकी लो सत्यसिन्धु-जलमें।

गीत

: श्री गिरधर गोपाल, अेम. अे. :

तुमने मुझको देखा मेरा भाग खिल गया।
मेघ छटे सूरज निकला हिल अुठीं दिशाअें,
दूर हुअीं पथसे बाधा मनसे चिन्ताअें,
तुमने अंक लगाया मेरा शाप धुल गया।
केंचुल छूटी आज नया मैं रूप रहा धर
ज्योति हृदयके भीतर ज्योति हृदयके बाहर,
तुम मुस्काअे सपनोंको आकार मिल गया।
धरतीके नूपुर नभकी बाँसुरिया बाजे,
मेरे आगे खुलतेसे जाते दरवाजे,
तुम कुछ बोले मुझको जीवन सार मिल गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीत

: श्री 'नीरज', अेम. अे. :

परस तुम्हारा प्राण बन गया, दरस तुम्हारा श्वास बन गया।

युग-युगसे निर्जीव शिला बन लेटी थी मिट्टीकी काया,
पथराअी सी चपल पुतलियाँ, ओठों पर हिम था जम आया,
फिर भी अुस दिन धड़कन बन छू गया हृदय जब प्यार तुम्हारा
विरह विखरकर अश्रु बन गया, मिलन विहँसकर हास बन गया।
परस तुम्हारा प्राण बन गया, दरस तुम्हारा श्वास बन गया॥

मुर्दा था साहित्य, कलाओं पर थी मौन अुदासी छायी,
जब तक ओ! मेरे करुणाकर! तुमको याद न मेरी आयी,
आधीरात मगर जिस दिन तुम मेरे लिअे सिसककर रोये
सब कवियोंका काव्य रच गया, सब जगका अितिहास बन गया।
तुम सोये सो गयी निशा तब, तुम जागे तो हुआ सबेरा,
सूरज भाल-सिन्दूर बन गया, अंजन-बन हो गया अंधेरा,
अधरों पर जो काल-फूल था खिला, वही जीवन-अुपवनमें—
झरझर कर पतझार बन गया, खिल-खिलकर मधुमास बन गया।
परस तुम्हारा प्राण बन गया, दरस तुम्हारा श्वास बन गया॥

अेक वायुके झोंके सा बन भटक रहा जग-जीवन सारा,
कहीं न कोअी नीड़ मिला विश्राम, न कोअी संग-सहारा,
पर जिस दिन अतृप्त संसृतिकी सूनी-प्यासी युग-बाहोंमें—
सिमट गये तुम धरा बन गयी, बिखर गये आकाश बन गया।
परस तुम्हारा प्राण बन गया, दरस तुम्हारा श्वास बन गया॥

तुमने क्या कर दिया कि गाने लगा आज मिट्टीका ढेला,
लगा दिया क्यों अिस नदिया पर अितनी नौकाओंका मेला,
तुम क्या हो, कैसे हो—है कुछ ज्ञात नहीं, बस यही पता है—
जन्म दे गया मोह तुम्हारा, और मरण सन्यास बन गया।
परस तुम्हारा प्राण बन गया, दरस तुम्हारा श्वास बन गया॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोहिनी अवतार

: श्री लहरी, अेम. अे. :

चिर अुदयके भोरसे
अमित आभाका सरल
नित्य नूतन, प्रति निमिष घुलता हुआ—
रूप लेकर, वर्ण लेकर
सुधा लेकर, स्वर्ण लेकर
सृष्टिके प्रति प्राणमें घुलता हुआ—
अेक निर्मल सत्य लेकर;
चिर अपावन, नित्य पावनके बहकते—
दो चरण धर—
आ गयी अुस छोरसे;
मर्त्यके वैषम्यमें रमती हुअी, थमती हुअी,
अधरपर टुक हँसीके छंद-सी
अरुणिमामें झूमती, गोधूलिमें जमती हुअी,
टहलती आयी अमावस मंद-सी,
झरझरित, अुफनते, फेनिल, घुमड़ते,
ज्वार-पूरित, अचल, अस्थिर, गहन-स्वरमें अुमड़ते,
निस्सीम लहरोंकी हिलोरोंमें, थपेड़ोंमें,
अुतरती आयी, विहँसती-सी, विलसती-सी,
री चिरन्तन, केलिमयि !
गरजते जीवन अुदधिके तीरपर
आर्य चिर-अकल्पित प्रेयसी !
नृत्यमें डूबी, ठुमुकती-सी,
कटि-किंकिणीमें गमकती-सी,
नूपुरोंमें घुँघुरुओंमें छमकती-सी,
कौन ? हो तुम देवि, दानवि, रूपसी, रमणी,
विधात्री, वारुणी, वेश्या कि दुर्गा हो ?
कि निपट निर्लज्जा, छलांकुश राक्षसी,
छद्मके सौन्दर्यकी साकार प्रतिभा ?
ओ ! अपरिचिते ! कुछ तो कहो !
हास-रोदनके बदलते रागमें,
प्रीति, मिलनेके, विरहकी आगमें,
नैराश्यके नीरव तमावृत विजनमें,
चोटकी बौछारपर स्वप्निल, सजल
मंदिर आशाके लहकते बागमें,
कौन हो ? कविते, कलामयि ! नर्तकी ?
शिवा ? अबला ? विध्वंसनी, प्रलंयकरी हो ?
आज वाणीका हुआ है रुद्ध स्वर !
कहती नहीं क्यों ? बोल दो !
प्रभंजनके अुर्ध्वगामी वेगमें
अंधके विकराल तांडवमें,
ज्वारमें, ज्वरमें, निपट भूचालमें,
गाज-सी गिरती सतीकी लाजमें,
ठिठुरी, बुभुक्षित, दलित, घूर्मित
अस्थिकी सुसकारती, भभकी हुअी आवाजमें
कौन हो ? मंगलमयी ! लांछना-जननी !
सुंदरी, कल्याणि, कल्पना-सरसी !
सहज सरला हो कि क्या हो—
कहो तो—
तुम्हारा ध्यान मैं कैसे करूँ ?
अिधर जीवन है, अुधर वह मरण भी,
दुख भरा है—
लहरता है यह--
कि जीवन घुल रहा है ।
घहरता है यह—
कि जीवन घुल रहा है ।
ठहरता है यह--
कि जीवन तुल रहा है ।
फहरता है यह--
कि जीवन खुल रहा है ।
साँस आती है--
कि अिसका दंश भाता है।
साँस जाती है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि जिसका वंश ढाता है।
साँसके आयातमें निर्यातमें
मैं तुम्हारी अरुण मुद्राका,
तरुण मुद्राका
करुण मुद्राका
तुम्हारी भटकती-सी भंगिमाका,
तुम्हारी चटकती-सी रंगिमाका,
कुतूहल-पूर्ण कौतुकका
अनाहत वरद चितवनका
अमृत पीता हूँ;
विष नहीं पीता ? कहूँ ?
जब अभावोंमें निरंजन आप जीता हूँ।
कभी सहसा परस पाकर
लिपट जाता हूँ—
जिसी दुखसे कि जो भरपूर है।
पूर हैं सुखका--
कि सुख, दुखसे हरा है--
छलकता है ये—
कि जीवन पल रहा है।
ढलकता है ये—
कि जीवन ढल रहा है।
ललकता है ये—
कि जीवन खल रहा है।
झलकता है ये--
कि जीवन जल रहा है।
साँसके टुक तानपूरेपर
नृत्यकी हर झमका, हर तालका,
हर भावके सँवरे, सजे
थिरके, थमे, गूँजे, बजे,
झनझनाते--
बोलते—
हर ख्यालका,
प्रतिघात पाता हूँ कि गाता, गुनगुनाता-सा,
मेघके अंतर-अतलमें,
छहरते संगीतकी संवेदनाका
राग ढरता है कि नूपुरके स्वरोंमें--
मैं तुम्हारे नृत्यके अुपकरण-सा,
छुनकता हूँ नित्य तेरे चरण-सा।

गीत जयके !

: श्री भवानीप्रसाद तिवारी, अेम. अे. :

डूबकर मैंने लिखे हैं गीत जयके।
समय असमयके, प्रणयके, लय-प्रलयके !

* * *

चल पड़ी पतवार तट छूटा सुहावन
अेक सुधि-सम्बल सहेजे परम पावन
कट नहीं पाये लगन-बन्धन हृदयके
डूबकर मैंने लिखे हैं गीत जयके

* * *

लहर पर डगमग तरी, पथ है अजाना
पवनके झोंके चले तो पाल ताना
पल गया संघर्ष यों पलमें विनयके
डूबकर मैंने लिखे हैं गीत जयके

* * *

युग बिताये ढूँढ़ते जीवन-सहारे
नहीं मिल पाये नदीके दो किनारे
सुन पड़े मझधारमें तब स्वर अभयके
डूबकर मैंने लिखे हैं गीत जयके।

* * *

समय असमयके, प्रणयके, लयप्रलयके
डूबकर मैंने लिखे हैं गीत जयके !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीढ़ीका पत्थर

: श्री रामकृष्ण श्रीवास्तव, अेम. अे. :

जिस पत्थरसे देव बने तुम
अुस पत्थरका मैं टुकड़ा हूँ !

मेरी छातीपर चढ़कर दुनियाँ पैरोंकी धूल झाड़ती,
लोट तुम्हारे चरणोंमें आँसू से भीगे फूल चढ़ाती
आँख मूँदकर मानवकी परवशता गीत तुम्हारे गाती,
मन्दिरके आगे मेरी ममता अपना मुँह खोल न पाती !
कंधोंपर वैभवकी सत्ता लेकर
मैं चुपचाप खड़ा हूँ !

जिस दिनसे मानवने मानवका शासन स्वीकार किया है,
पत्थरने पत्थरसे निर्मित अपना कारागार किया है !
जिस दिनसे मानवने अपनी जड़ताको साकार किया है,
पत्थरने पत्थरपर चढ़कर मन्दिरमें अवतार लिया है !
अंधकारमें पड़कर तुम कुछ बने
और कुछ मैं बिगड़ा हूँ !

मानव मनमाना है चाहे जिसको वह भगवान बनाये,
वह शरीर केवल पत्थर है जिसके वशमें प्राण न आये !
मैंने अपने जीवनमें तुमसे कोअी वरदान न पाये,
पत्थर होकर भी तुम अपने पत्थरको पहचान न पाये !
टूट-फूटकर अिसी लिअे
लज्जामे अपनी स्वयं गड़ा हूँ !

त्याग असुन्दरता-अपनापन तुम चाहे जितने सुन्दर हो,
अरे अनश्वरता-अभिनेता, आखिर तो तुम भी नश्वर हो !
बाहरसे मैं जो कुछ हूँ तुम छिपे हुअे मेरे भीतर हो,
मैं पत्थरका पत्थर हूँ, पर तुम पत्थरके आडम्बर हो !
विद्रोही बनकर मैं कितनी बार
सीढ़ियोंसे अुखड़ा हूँ !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काश्मीरी कविता :—

पहाड़ी नदी

: श्री आरिफ़ :

१. नेरे पोशन बुथ छलित, सुलि आअे दुरदानिअे,
विगनी वनवुन साज़, यन्दराजुन छक्खे वायानिअे।

२. तार कोज़सह डह रावथि, जूनि नॉविथ यान मँज़,
मौरकन मँज़ चूनि, जिर-जिर आअी-ख अस्मानिअे।

३. बोलि रंग-२ छय कनस, मँज़ सोज़ नौ-२ मँज़ मनस,
मँज़ वनस हेरि शबनमस, सपथ ज़ाअी-खै पदमानिअे।

४. रेश त गुपने विरह कयम, सुन्ज़ बेराह चानिये हरि बीठ,
मीयठ करि-करि ज़ियेठ नरि बोना डियडथे तम्बलानिअे।

५. सोत कदम तुल, कोत गसुन छुअी; बोज़खे वनै फेर बुथ;
गयमस घुअी सदरस जु छल; दोनवन छल्लन दीवानिअे।

६. नाजनीनी दीन कम छुक, कीन रोस छुअी सीन साफ़,
छक बेयन हुन्द मल छलान, छुअी दाग मा लारानिअे।

७. तह दी हेयन आबस, मसर वॅनी खोत सख़ क्षिपरस अन्दर,
रावह रावख क्याज़ी बॅल, आसुन पननु जानानिअे।

अनुवाद :—

[अे प्रियतमा, तुम जंगली फूलोंका मुँह धोकर सबेर-सबेर ही आ गअी हो। तुम अप्सराओंके गीत गाती हो और अिन्द्रका स्वर्गीय संगीत हो।

तारोंने अपनी किरणोंसे चन्द्रमाको स्नान कराया और तू नाचती-गाती पृथ्वीपर प्रकट हुअी।

भिन्न-भिन्न बोलियोंकी गूंज तेरे कानोंमें गूंज रही है, और हृदयमें नित नअी पीड़ाओंको समोये हुअे तू बहती रहती है। तूने शबनमके साथ ही बीच जंगलमें जन्म लिया।

ऋषि और गवालने क्यों अभीतक तेरे अूपरी किनारों पर मौजूद हैं? मैदानी प्रदेशोंमें तुमने पुण्यआत्मा व्यक्तियोंको अपने पानीको चूमते देखा और तुम्हारा संयम टूट गया।

धीरेसे पग बढ़ाओ, तुम्हें जाना कहाँ है? अच्छा तो यह है कि तुम लौट आओ। समुद्र दो भागोंमें बँट गया है, और दोनों भागोंपर मस्ती छाअी हुअी है।

तुम्हारे विचार कितने निर्मल हैं? डाह और द्वेषसे रहित तुम्हारा हृदय कितना सुकोमल है! तुम औरोंकी मलिनता दूर करती हो, किन्तु तुम्हारे आँचल पर कोअी धब्बा नहीं है।

पानीको तहमें बैठ लेने दो। अभी अिसमें बड़ी तीव्रता है। अिन भँवरोंमें क्यों पड़ना चाहती हो? अे प्रियतमा, तुम अपना व्यक्तित्व क्यों मिटाना चाहती हो?]

अनुवादक :— घनशाम सेठी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(शेषांश पृष्ठ ७१६ के आगे)

"त्रिपदी" नामक छंदमें नीति-धर्मकी अनूठी बातें सुनाकर कन्नड़ साहित्यका भण्डार अलंकृत किया। 'सर्वज्ञ' आशु कवि थे और अुनकी अुक्तियाँ लोकोक्तियोंकी भांति आजकल भी जनताकी जीभपर नाचती रहती हैं।

कर्नाटकका लोकजीवन कितना सुसंकृत और मधुर है, अिसका परिचय कन्नड़के ग्राम-गीतोंके द्वारा मिलता है। यद्यपि रचयिताओंके नाम-धाम आदिका पता नहीं चलता, तो भी ग्रामगीत बड़ी ही प्रचुर मात्रामें मिलते हैं। भाषाकी सरसता, रचना-चातुर्य, विषयकी विविधताकी दृष्टिसे कन्नड़के ग्राम्यगीत अुत्तम साहित्यके अंतर्गत आ जाते हैं। अिन गीतोंकी महत्ताको समझकर अब कअी लेखकोंने अिस दिशामें काम करना आरम्भ किया है और अिस लोक-साहित्यकी आलोचना और मूल्यांकनके लिअे सामग्री जुटानेका बीड़ा अुठाया है।

कर्नाटकके राजाओंके दरबारोंमें कन्नड़के कवियोंका सदा आदर रहा और प्रोत्साहन भी मिलता रहा। मान्यखेटके राष्ट्रकूट राजा व विजयनगरके राजा कन्नड़की श्रीवृद्धिमें भरपूर योग देते रहे। राष्ट्रकूट राजा नृपतुंग स्वयं कवि थे। तैलप और अरिकेसरी प्रभृतिने कवियोंको प्रोत्साहन देकर काव्य रचनाकी परम्परा चलायी। चाअुण्डराय जैसे सेनापतियोंने भी ग्रंथ रचकर साहित्य प्रेमका परिचय दिया। वसव भी कुछ समयतक बिज्जळ नामक राजाके यहाँ सेनापति थे—अैसी जनश्रुति है। विजयनगरके राजाओंने अपने शासन कालमें ललित-कलाओंकी वृद्धिके लिअे कैसा प्रोत्साहन दिया था यह बात अितिहास प्रसिद्ध है ही। तिज्झणने विजयनगरके दरबारमें रहकर ही 'भारत' जैसे अति लोकप्रिय काव्यकी रचना की। किन्तु जैसे ही विजयनगरका वैभव-सूर्य डूब गया, वैसे ही बहुत-से छोटे-मोटे राजा जहाँ-तहाँ सिर अुठाने लगे और कन्नड़ देश छिन्न-भिन्न होकर बँट गया तथा देशमें सर्वत्र अशांति बढ़ी, जो साहित्यके विकासमें बाधक सिद्ध हुअी।

मैसूरके नरेशोंके अभ्युदयके साथ-साथ फिरसे कन्नड़ साहित्यका क्षेत्र हराभरा होने लगा। मैसूरके चिक्कदेवराय स्वयं कवि थे और अुन्होंने "गीत गोपाल" नामक भक्ति-रसपूर्ण ग्रंथ रचकर कर्नाटकमें भक्ति साहित्यकी परम्परा फिरसे चलायी। चिक्कदेवरायके दरबारी कवियोंमें तिरुमालार्य प्रमुख थे, जिन्होंने "चिक्कदेवरायकी वंशावली" नामक अेक ग्रंथ गद्यमें और 'अप्रतिमवीर चरिते' नामक अलंकार-ग्रंथ पद्यमें रचकर अपनी बहुमुखी प्रतिभाका परिचय दिया। अिनके अतिरिक्त अिस कालके कवियोंमें सिंगरार्य और चिक्कुपाध्यायके नाम अुल्लेखनीय हैं। सिंगरार्यका लिखा हुआ "मित्रविंदगोविंद" अपने ही ढंगकी अेक सुन्दर कलाकृति है। चिक्कुपाध्यायकी प्रतिभा बड़ी ही प्रखर थी। अुन्होंने जितने ग्रंथ लिखे हैं, अुतने शायद ही अबतक और किसी कन्नड़के कविने लिखे हों। अिनके सभी ग्रंथोंमें वैष्णव संप्रदायोंके तत्वोंका प्रतिपादन हुआ है। "विष्णु पुराण" "दिव्य सूरि चरिते," अिनके रचे हुअे ग्रंथोंमें अति मुख्य हैं। चिक्कदेव रायके अन्तःपुरमें 'होन्नम्मा' नामक अेक दासी थी, जो महलके साहित्यक वातावरणमें रहनेके कारण स्वयं बड़ी भावुक बन गयी थी। अुसने "हृदिवदेय धर्म" नामक अेक रसपूर्ण काव्य सांगत्य छंदमें रचा, जिसमें स्त्री-पुरुषके सम्बन्धका अनूठे ढंगसे निरूपण किया गया है। अिस प्रकार चिक्कदेव रायके कालमें कन्नड़ साहित्यको अेक नयी स्फूर्ति मिली। अिस कालकी अेक विशेषता यह थी कि या तो अधिकांश कवि ब्राह्मण थे या ब्राह्मण धर्मसे प्रभावित थे। अिसलिअे सन् १६०० से सन् १९०० तकका काल ब्राह्मण-कालके नामसे प्रख्यात हुआ। चिक्कदेव ओडेयरके अुपरांत मुम्मुडि कृष्णदेवराय गद्दीपर बैठे। अिनके समयमें पूर्ववत् ही कन्नड़के लिअे प्रोत्साहन मिलता रहा। स्वयं कृष्णदेवरायने "श्रीकृष्ण वाणी विलास भारत" नामक अेक वृहत् काव्यका निर्माण किया। अिसी राजाके दरबारमें केम्पुनारायण नामक अेक कवि थे जिन्होंने जनप्रिय "मुद्राराक्षस" का कन्नड़में अनुवाद किया। चामराज ओडेयरके प्रोत्साहनके फलस्वरूप कअी संस्कृत नाटकोंका अनुवाद हुआ। बसवशाली, जो चामराज ओडेयरके दरबारी कवि थे, संस्कृत नाटकोंका अनुवाद करनेके कारण अभिनव कालिदासके नामसे मशहूर हुअे। अिनका अनूदित "शाकुंतल नाटक" अति लोकप्रिय है। अिनकी देखा-देखी कअियोंने संस्कृत नाटकोंका कन्नड़में अनुवाद करनेका कार्य शुरू किया।

अुन्नीसवीं शताब्दीके अंतमें कन्नड़का आधुनिक काल शुरू होता है। अंग्रेजी भाषा और साहित्यके सम्पर्कमें आनेके कारण कन्नड़ साहित्यकी सर्वतोमुखी अभिवृद्धि हुअी। आधुनिक कन्नड़ साहित्यके विकासकी गतिविधिका अितिहास काफी रोचक और बड़ा है।

कन्नड़से अनुवादक—श्री. प्रो. हिरण्मय, अेम. अे., सा. र.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिन्धी लघुकथा :

देशभक्त मारवी

: श्री दौलतराम शर्मा :

भारतवर्षने अैसे-अैसे अनोखे रत्न पैदा किये हैं जिनकी मिसाल संसारमें ढूंढ़नेसे बहुत कम मिलती है। मारवी भी अुन रत्नोंमेंसे अेक थी। जिसकी गाथा प्रेम, तप, त्याग, रूप-लावण्य और शील आदि सद्गुणोंसे पूर्ण है। हम भारतवासी अुपरोक्त गुणोंके लिअे स्त्री जातिकी शिरोमणि सीताका स्मरण करते हैं। मारवी भी पुण्य-स्मरण योग्य है। दोनोंमें अन्तर अितना ही है कि अेक राजा मिथिलेशकी राजकन्या, दशरथकी राजवधू और राजा रामचन्द्रकी राजरानी; तो दूसरी अेक गरीब किसानकी बेटी, गरीबकी मँगतर और अेक अत्याचारी नवाब द्वारा कुअेंपर पानी भरते समय अपहरण की हुअी अबला थी। दोनोंको बन्दी जीवन बिताना पड़ा। रावणकी अशोक वाटिकामें अेकको, तो दूसरीको ज़ालिम नवाबकी कैदमें। अेकको मुक्ति मिली असंख्य वानरोंकी सेनाके सरदारों हनुमान, सुग्रीव, अंगद आदि द्वारा, तो दूसरीको बन्दी जीवनसे छुटकारा मिला अपने त्याग, तप और शान्तिसे।

विजय पा लेनेके बाद, जहाँ राजा रामचन्द्रने सीताको अेक धोबीके कथन मात्रसे त्याग दिया था, तब रावण जीवित न था, जो अुस धोबीके गालपर जोरका थप्पड़ जमाता और बताता कि सीता सती है, निर्दोष है; वहाँ मारवीके पतिने अुसपर शंका की और जब यह बात नवाबके कानोंतक पहुँची तो, वह सेनाको लेकर पहुँचा और मारुने सबके सामने अुसको अपनी पूज्य बहन बनाया।

रमणी-रत्न मारवीके चरित्रको सिन्धके अनेक कवियों और लेखकोंने गद्य-पद्यबद्ध किया है। मीर ज़ाहिर मुहम्मदने भी जिसने सिन्धका अितिहास १६२१ में लिखा, अिस घटनाका अुल्लेख किया है। बादके लेखकोंने, जो कुछ लिखा, जान पड़ता है, अिसी अितिहासका आधार लेकर लिखा। यह बात भी प्रसिद्ध है, कि नवाब ख़ान-खानाने जब सिन्धके अेक मुख्य नगर ठट्ठाको अपने अधिकारमें कर लिया, तो वह कअी सरदारोंको लेकर अकबरके दरबारमें पहुँचा। वहाँ मारवीका ज़िक्र आया। तब खानखानाने अेक कविसे कहा कि बादशाहको मारवीका चरित्र सुनाओ। कविने बादशाहको खुश करनेके लिअे कुछ मनगढ़न्त बातें शुरू की, जिसपर अकबर सख्त नाराज हुआ। तब आये हुअे सरदारोंमेंसे मिरज़ा जानीबेग नामक सरदारने बादशाहको सारी सच्ची घटना कह सुनायी, जिसे सुनकर अुसकी आँखोंमें आँसू भर आये।

कहते हैं कि शाअिनाअित पहले कवि थे, जिन्होंने अिस घटनाको सिन्धीमें अवतरित किया और शाअबदुल लतीफको सुनाकर अुनमें प्रेरणा भरी कि वे 'मारवीके गीत' कहें। ये गीत आज समूचे सिन्धमें बड़े प्रेम और दर्द भरे दिलके साथ गाये जाते हैं। अुनकी वह रचना 'शाजो रक्षालो' के नामसे प्रख्यात है और जिसमें "सुर मारवी" नामक अेक बाब (अध्याय) है, जिसमें सारी घटना बड़े ही मार्मिक ढंगसे वर्णित है। घटना अिस प्रकार है :—

अुमर सूमरो नामका अेक नवाब अमरकोटमें राज्य करता था। अुसके राज्यके मलीर नामक अेक गाँवमें पालन नामका अेक पनिहार रहता था। माँडवी नामकी अुसकी स्त्री थी। दोनों पति-पत्नी पशुपालनका काम करते थे। आज भी प्रायः अुस अिलाकेके बाशिन्दोंका धन्धा पशुपालन ही है। भाग्यसे अुनके अेक पुत्री हुअी, जो कविके शब्दोंमें अितनी सुन्दर थी कि अुसका वर्णन असम्भव है। पद्मिनीके समान-शरीरका रंग, बिजलीकी तरह, प्रकाश सूर्य जैसा; अैसी परम सुंदर लड़की पाकर मारू लोग प्रसन्न थे और अुस बलिकासे प्रेम करने लगे, अिसलिअे अुसका नाम मारवी पड़ गया। वह सयानी हुअी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पालनका नौकर मारवीपर मोहित हो गया। वह चाहता था कि मारवीकी शादी अुससे कर दी जाअे। मगर पालनको यह मंजूर न था और लड़कीकी मँगनी अपने अेक स्वजातीय नौजवानके साथ कर दी। फोग अिससे नाराज होकर अमरकोटके अुमर सूमरोंके दरबारमें पहुँचा और प्रार्थना की कि वह अुमरसे अेकांतमें कुछ अर्ज करना चाहता है। दरबार बरखास्त किया गया और फोगने अुमरके आगे मारवीकी अपूर्ण सुन्दरताका वर्णन किया और अुसे अिस बातके लिअे तैयार किया कि वह मारवीको भगा लाअे। अुमर जो प्रजाका रक्षक बना हुआ था, भक्षक बन गया। वह अपने साथियों और फोगको साथ लेकर, डाकू-लुटेरोंकी तरह अुस किसान सुन्दरीका अपहरण करने चल पड़ा।

\+ + + +

प्रातः कालका समय था। शीतल हवा बह रही थी। सूरज आसमानकी सीढ़ियोंपर चढ़नेको अभी अंगड़ाअियाँ ले रहा था। मलीर गांवके किसान अभी जागे न थे। अुस समय दो औरतें कुअेंपर पानी भर रही थीं। अुनमेंसे अेक परम सुन्दरी मारवी थी। अितनेमें कुछ दूरसे कुछ ओठी (राहगीर) अुस तरफ आते दिखायी दिये।

मारवी कुछ डरी, तो सहेलीने ढांढस बँधाया कि डरती क्यों हो, ज्यादा से-ज्यादा वे लोग हमसे पानी माँगेंगे। हम अुनसे देश देशांतरके समाचार पूछेंगे। अितनेमें वे लोग कुअेंके पास आ पहुँचे। फोग बड़ा कमीना था। औरतोंको अकेला पाकर अुसने नवाबको अिशारा किया। नवाबने अैसा सुन्दर रूप-यौवन कभी जीवनमें देखा न था। कुछ क्षण तक वह अेक टक मारवीके रूपरसका पान करता रहा। फिर अुसने अपनेको सँभाला। मारवीसे पानी माँगा और पानी पीनेके लिअे, अपने अूंटको जमीनपर बैठाया। ज्यों ही मारवी पानी पिलाने पास आयी कि नवाबने अपनी बाजुओंमें पकड़कर अूंटपर बैठा लिया और अमरकोट लाकर अपने राजमहलोंमें बन्द कर दिया।

\+ + +

अिधर जब यह मारुओंने सुना कि अुनकी अिज्जत-आबरूपर अिस प्रकार हमला हो रहा है, तो वे दर्दसे चीख अुठे; कोअी बराबरीका होता, तो दो-दो हाथ निपट लेते पर, जब बाड़ ही खेतीको खाना शुरू कर दे तो बेचारी खेती क्या करे। प्रजाका रक्षक ही भक्षक भस्मासुर बन गया! गरीब किसान लाचार पस्त हिम्मत होकर घर पर बैठ गये। लाज भी गयी और लोकहँसी भी हुअी।

अुधर, मारवी जब राजमहलमें बन्द हुअी, तो अुसने सत्याग्रह किया। अुमर रोज समझाता, लालच दिखाता, पर अुस लड़कीपर कुछ भी प्रभाव न पड़ा। वह हर वक्त घरकी मिट्टी घरके पशु, घरके लोग, सखी-साथिनोंको यादकर-करके रोती रहती। कअी दिन, कअी महीने, गुजर गये। दशा बहुत बुरी होती गयी। बालोंमें कंघी नहीं की, नहाया नहीं। कपड़े फट चिथड़े हो रहें हैं। कपड़े बदलनेको कहा जाता है, तो अुसका अेक ही जवाब होता है कि जो कपड़े अुसके देशमें नहीं बनें, अुन्हें पहनना तो दूर, वह हाथ भी न लगाअेगी।

खाने-पीनेकी बढ़िया चीजें चाँदी-सोनेके थालमें सजाकर अुसे ललचाया जाता है, मगर वह अुस मीठे मिष्टान्नसे जहरको लाख अच्छा समझती है और रोकर कहती—मेरे माता पिताका घोर अपमान हुआ है। मैं मर गयी होती, तो अुनकी बेअिज्जती न होती।

\+ + +

वह मेघोंकी बौछार द्वारा, पक्षियों द्वारा और हवाओं द्वारा अपने मारुओंको संदेशा भेजती है। पर अुसकी हाय-पुकार कोअी नहीं सुनता।

अुमर मारवीको महलसे जेलमें डाल देता है। काराकी नाना यातनाअें सहती है, आशाअें टूट जाती हैं। अुसे आशा थी, वह दिन आअेगा। अुमर अपनी करनीपर पछताअेगा, तब मैं अपनी अिन आँखोंसे अपना गाँव, घर कुटुंब-कबीला और प्यारी सहेलियोंको देखूंगी। अुसने अन्न-जल तक छोड़ दिया और अुसका चाँद-सा मुखड़ा पीला पड़ गया। अिस तरह मृत्यु शैयापर पड़ी मारवीको देखकर अुमरका हृदय पिघल अुठा। अुसका जी भर आया। वह पश्चाताप करने लगा कि मैंने बड़ा नीच काम किया— अेक बेगुनाह औरतको सताया। अुस नीच फोगके कहे में आकर अपनी प्रजा-अबलाको सताया।

अेक दिनकी भी देर न कर, नवाब अुमर ने मारवीको अुसके मैंगेतरको खुशी-खुशी सौंप दिया और अुसने अुन दोनोंसे माफी माँगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुत्कलका—'यात्रा, पाला, गोटिपुआ और दासकाठिया'

: श्री अनुसूयाप्रसाद पाठक :

यह देखा जाता है कि आनन्दका अुपभोग करना संसारमें जीव मात्रके लिअे अेक जरूरी वस्तु बन गयी है। यहाँ तक कि पेड़-पौधोंतकमें भी अिस विषयके रसको रसास्वादन करनेकी क्षमता है। सुख-दुख व्यक्त करनेके भाव हैं—और अुनकी भाषा भी है। रात और दिनके प्रकृति-परिचालित कार्य-कलापके अन्दर, कौन किससे प्रेम करता है, कौन किसे देखकर खुश होता है और किसे देखकर दुखी— यह कमल औ कुमुदिनीके भावोंसे जाना जा सकता है। अेक सूर्यको देखकर हँसता है, खुश होता है तो दूसरा दुखी होता है। जो दिनमें सूर्यको देखकर दुखी होता है वही रातको चन्द्रमाको देखकर खुश भी होता है। अुस समय सूर्य-प्रेमी अपना मुख लटका लेता है। चकौंडे आदिके पत्ते शाम होते ही मुरझा जाते हैं। तरोअी आदिके फूल शामको ही खिलते हैं, मुस्काते हैं। अुसकी "वह चितवन कुछ और है जेहि बस होत सुजान"—अिस प्रकारके आनन्द और शान्ति-पूर्ण वायुमण्डलमें नीरव-रव करते जो अपना जीवन बिताते हैं, अुनका भी समाज है और साहित्य है। शाम-सबेरे चिड़ियोंकी चहक और झींगुरोंकी झंकार, अुनके कार्य कलापका निदर्शन नहीं तो और क्या है? और व्यक्ति तथा समाजके कार्य-कलापका चित्रण ही तो साहित्य है।

साहित्यिक जीवन बितानेके लिअे यही जरूरी नहीं, कि जो साक्षर हों, साहित्यिक रसका रसास्वादन करनेके वे ही अधिकारी हों। अिसके लिअे दिल, दिमाग और अनुभूतिकी भी आवश्यकता है।

जब पेड़-पौधों तकमें अिस प्रकार साहित्य चर्चा होती है, तो नरोंमें और भी अधिक क्यों न होगी?

अिस प्रकारका लोक-साहित्य भारतके प्रत्येक प्रान्तमें, गाँव तथा नगरोंमें है। गाँवोंमें रामायण, महाभारत, भागवत तथा सत्यनारायणकी कथा, देवी-देवोंका पूजन-गायन तथा अुनके कार्योंकी चर्चा और आलोचना अेक प्रकारकी साहित्य-चर्चा है।

अुत्कल प्रान्त अन्य प्रान्तोंकी अपेक्षा अिस कलामें अत्यन्त निपुण अुतरेगा, कम नहीं। कारण, भजन-पूजन, संगीत-वाद्य और पुराण-पाठ आदिके अलावा यहाँ साहित्य-चर्चा करनेके अनेक साधन गाँव-गाँवमें हैं। और फिर अैसी चर्चाअें अैसे व्यक्तियोंके जरिये की जाती हैं जिनको मामूली अक्षर-ज्ञान है, अधिकांशोंको तो वह भी नहीं। "यात्रा, पाला, गोटिपुआ और दास काठिया" अुत्कलकी अपनी विशेषताअें हैं। यात्राको हम रामलीलाके साथ जोड़ सकते हैं। लेकिन साधारणतः यह भिन्न है। किसी अेक राजाके चरितको लेकर अुसके जीवनकी घटनाओंको, अुसकी भाषामें व्यक्त किया जाता है। यह रातके ९–१० बजेसे शुरू होती है, तो सबेरे ४ से ७ तक खतम होती है। ग्रीष्म-ऋतु अिसका समय है। अिसके लिअे खास किसी मंचकी आवश्यकता नहीं होती यह तो आकाश-वितान-तले, प्रकृतिकी गोदमें हुआ करता है। कभी-कभी चन्द्रमा अिस अुत्सवको देखकर हँसता है तो कभी घनान्धकार। अुस समय आकाशमें चमकनेवाले असंख्य तारा-गणोंको देखकर तम और अिन्द्र तथा गौतममुनिके सम्वादको साहित्यिक या पौराणिक कथाकी कल्पना की जा सकती है। लेकिन जब यात्राकरियोंकी ढोलकी और मृदंग बजते हैं, तो दर्शकोंकी कल्पना अुधर थोड़े ही जाती है। वह तो निस्तब्ध अँधेरी निशाके शान्त वातावरणमें निकलते हुअे अनतिदूर क्षितिजसे टकराकर समा जाती है—अेक क्षीण गमक गमका कर।

यात्राके कलकार अधिकांश 'बाअुरी' होते हैं, जो हरिजनोंकी जातियोंमें अेक है। बालकसे बूढ़े तक अिसमें भाग लेते हैं। ये लोग स्त्री-पुरुषोंका अभिनय बड़े ही सुन्दर ढंगसे करते हैं। ये अपन-अपने कार्यमें अैसे दक्ष होते हैं कि अुसीमें तल्लीन हो जाते हैं। नारीका अभिनय करते-करते नारीमय बन जाते हैं। आप अुन्हें साधारण कालमें भी किसी औरतके साथ बातचीत करते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखेंगे, तो वेशसे ही पहचानेंगे कि स्त्री है या पुरुष। यह व्यवहार, चालढाल और भाव-भंगीसे कभी भाँप न सकेंगे—कि यह कौन है।

काल-गतिके शिकार बनकर बेचारे कुछ नारीवेश धारण कर कलकत्ते आदि नगरोंमें ढोलकी बजाकर नाचते, गाते और अपनी जीविका अुपार्जित करते हैं।

पाला—यात्रासे भिन्न है। अिसमें ५-७ आदमी होते हैं, अिनके वेश भी विचित्र होते हैं। अेक मुखिया (गायक) होता है, जो काव्य छन्दोंका नाना प्रकारसे अर्थ करता और अुन्हें गाता है। बाकी अुसके सहायक होते हैं। कुछ बाजा बजाते और शेष लम्बास्वर बनाकर अुस गायनमें मधुर ध्वनि तथा मुखियाके अर्थमें हुँकारी भरते हैं। यात्राकी अपेक्षा अिसमें साहित्यिक आलोचनाकी आवश्यकता अधिक होती है। अर्थकी व्यंजना, शब्दाडम्बर, कलात्मक अुक्ति-चातुर्य मुग्धकर होता है। ये छन्दोंके अर्थ करनेमें निपुण होते हैं। अिसका यह अर्थ नहीं, कि अिनकी आलोचना साहित्य-भण्डारकी चिरस्थायी प्रामाणिक वस्तु समझी जाती है, फिर भी अुनकी मजेदार हास्य रसात्मक काव्य-चर्चा सुननेके लिअे अच्छे-अच्छे साहित्यिक लालायित रहते हैं। समय समयपर अिस कलाके लिअे अिनकी कद्र भी होती है।

अिस दलका सहारा और धंधा कुछ नहीं है। जगह-जगह बुलाये जाते हैं और धन पानेपर जाते हैं। धर्म और त्यागका अुपदेश अिनके सामने जीविका-निर्वाहका प्रश्न होता है। अिनका कार्य ४-६ घंटेसे अधिक नहीं होता।

आरम्भिक अुपासना अिनकी अपनी कला है। संगीतक जिस प्रकार तमूरा और तबला मिलाते-मिलाते श्रोताओं, दर्शकोंमें रस पैदा करता है ठीक अुसी प्रकार अिनकी आरंभिक प्रार्थनाका हाल है। प्रार्थनाके अन्तमें झट मुखिया आ जाता है और वहींसे भाषाके पद्यको पकड़कर अर्थ-गान शुरू कर देता है।

गोटिपुआ—'गोटिपुअ' अेक प्रकारका बालकोंका संगीतमय नाच है। अुसमें बालक नाना प्रकारके नृत्य करते हुअे जनताका मनोरंजन करते हैं। दिन भरके थके-माँदे कर्म-क्लान्त व्यक्ति खिन्न मन लिये जीवन-यापन किया करते हैं और कभी-कभी मनोरंजनार्थ "गोटिपुआ" नाचका आयोजन करते हैं। अिसमें संगीत-कला, वाद्यकला तथा नृत्यकला प्रधान वस्तु मानी जाती है। अिसकी मूर्च्छनाअें दिलको हरा करती हैं। थोड़ी देरके लिअे क्लान्ति दूर होकर मनमें हरियाली लहराने लगती है। आनन्द मग्न दर्शक-वृंद अपने-अपने घर लौटते हैं। अिसे हम ललित कलात्मक साहित्य-चर्चा कह सकते हैं।

दासकाठिआ—ये अेक प्रकारके कथा वाचक हैं। पात्र दो होते हैं। अेक गायक दूसरा अुसका सहायक। ओडिआ सारला महाभारतके १६ अुपाख्यान जो, संस्कृत महा-भारतमें नहीं हैं, अिनकी गायनकी मुख्य वस्तु है। आख्यानोंको रोचक बनानेके लिअे अन्यान्य कवियोंकी मुक्तक कविताअें भी अिसमें जोड़ी जाती हैं। महा-भारतकी अेक विशेषता है, कि अुसमें अनेक सुन्दर मौलिक कहानियाँ हैं। दासकाठिआ दल अिन्हें तिकोंड़े बाजा बजाकर रोचक ढंगसे गाता है। अिनके ताल, राग और साज-बाज आकर्षक होते हैं। बीच-बीचमें विश्राम हास्योत्पादक सामाजिक कथा भी कहते जाते हैं। जब केवल गायक सुस्तानेका अिशारा करता है, तब अुसका सहायक लोकोंडा बजा बजाकर—'जै हरि हरि राम नवीन सुन्दर श्याम"—भजन गाकर जनता तथा भक्त-मण्डलीका मनोरंजन करता है।

अिनका सम्मान सभी श्रेणीके लोगोंमें होता है, लेकिन अुत्कलके ग्रामोंमें ये बहुत सम्मान और धन पाते हैं।

अूपर यात्रा, पाला, गोटिपुआ और दासकाठिआका जो अति संक्षिप्त परिचय दिया गया है, वह अुत्कलके ग्रामोंकी देन है। यात्रा और बालकोंका नाच तो मेलोंमें भी हुआ करता है, लेकिन अिसे भी अुत्कलकी देन मान लेना अुदारता और सत्यका सम्मान ही समझा जावेगा।

मेरा तो विचार है—अिन चार प्रकारके मनोरंजन साधनोंका भारतके सभी प्रान्तोंमें प्रचार होना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुच्छ !

: श्री प्रबोध सान्याल :

[बंगला]

माझरात्रे दिदिमार साड़ा पाओआ याय ।
तारं घुम नेअि, घुम तार आसे ना ।
तिनि डाकेन, जेगे आछो मा, विशु ?
अेदिक थेके अुत्तर आसे केन, मा ?
तोभार मने आछे, ओ महलेर कोणेर घरे सेअि
वोष्टमदेर ? की गानअि गाअितो तारा ।
अेखनो काने शुनछि ।
मा बलेन, सव मने आछे ।
दिदिमा बलेन, सेअि मेयेटाके कोत्थेके येन धरे
अेनेछिल । की मारघरअि करतो ।
मेयेटार आचार व्याभार किन्तु भालोअि छिल ।
मा बलेन, पोडारमुखिर ज्ञानबुद्धि छिलना किछु ।

ओअि पर्यन्तअि । दिदिमाओ चुप, मायेर ओ आर कोनो साड़ा नेअि । पोड़ारमुखिर कथाटा आमिओ किन्तु मूलिनि । मेयेटार नाके तिलक, हाते अुल्कि लेखा हरे कृष्ण, माथार खोंपाय बेलफुलेर माला, चोख दुटोय येन घुमेर भाव, परणे थ्यून कापड़, मेयेटार सोंदा-सोंदा गा, सेअि गा थेके चन्दनेर गन्ध पेतुन । कीर्तनेर कलि थाकतो तार मुखे दिनरात, आर से गान गाअिले आमादेर अेदिके सकलेर हात थेके काज पड़े येतो । अेकदिन वाड़ी छेड़े तारा चले गेल, किन्तु तार माथुरेर गान सेअि थेके अेअि बाड़ीर बुकेर तलाटाके टनटनिये तुलतो । कीर्तनेर सेअि कान्ना रेखे गेछे ओअि कोणेर घरेर हाओ-याय ।

ओरअि पाशेर घरेर सेअि बेथुन कलेजे पड़ा फ़सी मेये दुटोके मने पड़े । तारा वयसे अनेक बड़ । तादेर बापेर नाम रमाकान्त काकाटिया । तारा आसामेर लोक, अेखाने अेसेछिल लेखापड़ार सुविधेर जन्य । मने पड़छे कोनो दिन कथा बलेनि तारा । तारा सम्भ्रान्त तारा शिक्षित, तादेर पोषाकेर आभिजात्य । काछा-काछि गिये दाड़ियेछि दयार चोखे देखे सरे गेछे निजेदेर मध्ये विद्रुपेर हासि हेसेछे निजेदेर भाषाय, किन्तु सम्भ्रमेर चक्षे ओदेर देखेछि । बुझते पारतुम की घृणाकी कृपा आमादेर ओपर । की कठिन हासि माखानो थाकतो ओदेर मुखे । गोलाप फुलेर वतन चेहारा, किन्तु येन शुकनो रंगीन कागजेर फुल । ओदेर चोख दिये आमरा निजेदेरअि देखतुम, आमरा की कांगाल, की अकिंचन, की निर्बोध । यतदिन तारा छिल ओअि बड़ घरे, ततदिन ओदेर घृणा बये बेड़ियेछि ।

[हिन्दी]

अनुवादक : श्री मन्मथनाथ गुप्त

[श्री प्रबोध सान्याल बंगलाके प्रसिद्ध अुपन्यास-कार हैं । अुन्होंने बहुतसे अुपन्यास लिखे हैं । कअीके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिल्म भी बन चुके हैं। नीचेकी पंक्तियाँ 'तुच्छ' नामके अेक संग्रहसे हैं, जिनमें दो किरायेदारोंका वर्णन है।]

आधी रातके समय नानीकी आहट मिलती थी। अुनको नींद नहीं, नींद नहीं आती थी वह पुकारती थी—बेटी बिशु जाग रही हो ?

अिधरसे अुत्तर जाता था—क्यों माँ बात क्या है?

—तुम्हें याद है, अुस हिस्सेके कोनेके कमरेमें जो वैष्णव रहते थे ? क्या खूब गाने गाते थे। अब भी जैसे सुन रही हूँ।

माँ कहती थी—सब याद है।

नानी कहती थी—न जाने कहाँसे अुस लड़कीको पकड़ लाये थे। और अुस पर कितनी मारपीट करते थे। पर लड़कीकी चालचलन अच्छी ही थी।

माँ कहती थी—जलमुँहीमें ज्ञानबुद्धिका अभाव था।

यहीं तक (बात होकर रह जाती थी)। नानी भी चुप हो जाती थी, और माँ की भी कोअी आहट नहीं मिलती थी। (कथित) जलमुँहीकी बात मैं भी नहीं भूल सका था। अुस स्त्री की नाकपर तिलक बना रहता था, हाथ पर 'हरेकृष्ण' गुदना गुदा था, जूड़ेसे बेलाकी माला लटकती रहती थी, अुसकी आँखोंमें जैसे (हर समय) नींद बनी रहती थी, बिना किनारेकी सफेद साड़ी पहनती थी, अुसका बदन सोंधा-सोंधा (लावण्य युक्त) था, और अुससे चन्दनकी (भीनी-भीनी) गंध आती रहती थी। अुसकी जीभपर हर समय कीर्तनकी अेक कलि बनी रहती थी, और वह जब गा अुठती थी तो हमारे अिधरके लोग काम छोड़ कर खड़े हो जाते थे। अेक दिन वे मकान छोड़कर चले गअे, पर (अिससे क्या) अुसके गाने तबसे अिस मकानके अन्तस्थलमें बराबर अेक हूक सी पैदा करते हैं। कोनेके कमरेकी हवामें वे मानो कीर्तनकी अुस टीसको छोड़ गये हैं।

अुसीके बगलके कमरेमें रहनेवाली बेथून कालेजकी छात्रा—दो गोरी लड़कियां भी याद आतीं। अुनकी अुम्र बहुत काफी थी। अुनके पिताका नाम रमाकांतका काटिया था। वे आसाम की थीं, और यहाँ पढ़ने-लिखने की सुविधाके लिअे आयी थीं। स्मरण आ रहा है कि किसी भी दिन अुन लोगोंने हमसे बातचीत नहीं की। वे सम्भ्रान्त और शिक्षिता थीं, (तिसपर) कपड़े लत्तोंका आभिजात्य था। कभी-कभी मैं पास जाकर खड़ा हुआ, तो वे अनुकम्पाकी दृष्टिसे देखकर दूर हट जाती थीं। वे आपमें अपनी भाषामें विदूषकी हँसी हँसती थीं, फिर भी हम अुन्हें अिज्जतकी निगाहसे देखते थे। हम समझ पाते थे कि हमपर वे कितनी घृणा और कितनी कृपा रखती थीं। अुनके चेहरेपर कैसी कठोर हँसी रहती थी। गुलाबके फूलकी तरह चेहरे थे, पर (अैसे बनाअे रहती थीं कि) सूखे रंगीन कागजके फूल मालूम होते थे। अुनकी आँखोंसे हम अपनेको ही देखते थे, हम कितने कंगाल, कितने अकिंचन, कितने निर्बोध थे। जबतक वे अुस बड़े कमरेमें थीं, तबतक हम अुनकी घृणाके वाहन बने रहे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिस अंकके सम्बन्धमें :

'राष्ट्रभारती'का यह "सम्मेलन-विशेषांक" हम अपने प्रेमी पाठकोंकी सेवामें अत्यंत विनय और आदर पुरस्सर अुपस्थित करते हैं। अिस अंकमें जो कुछ भी अच्छाअी आ सकी है, वह 'राष्ट्रभारती' के शुभेच्छु-सहृदय-समर्थ लेखकों अेवं सुरुचि-सम्पन्न पाठकोंकी सद्भिलाषा और हार्दिक सहयोगका फल है। सन्त तुलसीके शब्दोंमें कहें--'राम निकाअी रावरी है सब ही को नीक'। जो कुछ त्रुटियाँ रह गयीं हैं, वे हमारी अयोग्यताके ही कारण रह गयीं। हम जैसा विशेषांक निकालना चाहते थे, हमें खेद है, वैसा नहीं निकाल सके। क्षमध्वम्! 'राष्ट्र-भारती' लोकप्रिय अन्तरप्रान्तीय समग्र भारतीय साहित्यका प्रतिनिधित्व करनेवाली पत्रिका है। प्रत्येक सुरुचिके शिष्ट पाठकको अुसकी अपनी सुरुचिकी सामग्री अिसमें पढ़नेको मिलती है।

'राष्ट्रभारती' को पढ़नेसे पाठक अन्दाज लगा सकते हैं कि किस नीति-रीतिसे, किस भावनासे, हम भारतकी राष्ट्रभाषा, राजभाषा, हिन्दीकी सेवा करना चाहते हैं। जिस हिन्दीको अमीर खुसरो, कबीर, तुलसी, सूर, नानक, रहीम और रसखानकी अमृतमयी वाणीका बल मिला हो; और जिसे भारतेन्दु, हरिश्चन्द्र, दयानन्द, गान्धी, महावीर प्रसाद और प्रेमचन्दकी समस्त चेतना और जीवन-साधनाकी शक्ति मिली हो-अुस हिन्दीमें हम कविकुलगुरु रवीन्द्र गुरुदेव, बल्लात्तोल, सुब्रह्मण्य भारती, खांडेकर, विश्वनाथ सत्यनारायण, कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी, मेघाणी, बेन्द्रे, जोश मलीहाबादी, अमृताप्रीतम, वरुआ, अुड़ियाके अपने कुंजबिहारीदास आदि-आदि महानुभाव, जो शब्दों और अर्थोंमें युगकी चेतना व्यक्त करते हैं; जिन-जिन भाषाओंका प्रतिनिधित्व करते हैं, भारतके जन-जनकी बोली बँगला, मराठी, गुजराती, असमिया, अुड़िया, अुर्दू, काश्मीरी, पंजाबी, तेलुगु, तमिल, कन्नड़, मलयालम आदि भारतीय भाषाओंका सम्पूर्ण संबल लेकर समूचे समुन्नत राष्ट्रकी अेक भाषाका रूप देना चाहते हैं। 'राष्ट्रभारती' को राष्ट्रका हम अैसा स्वच्छ सुन्दर दर्पण बनाना चाहते हैं, जिसमें राष्ट्रभाषा अपना स्वस्थ अेवं सुन्दर मुखबिम्ब निहार सके।

हमारा विश्वास है, अेक राष्ट्र-भाषाके बिना, सारे राष्ट्रकी अेकता हो नहीं सकती, भारत अुन्नत राष्ट्र बन नहीं सकता, सुख, शान्ति और शोभा राष्ट्रमें नहीं आ सकती।

अिस अंकमें, श्री बाबूराव विष्णु पराड़करजीका, काका साहब गाडगीलजीका संक्षिप्त परिचय हम दे सके हैं, जो भारतकी विभूतियोंमेंसे हैं। अखिल भारतीय राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनके अधिवेशनमें श्रद्धेय पराड़करजीका सम्मान और माननीय काका साहब गाडगीलजीकी अध्यक्षता,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—दोनों बातें, देशका और हिन्दीका महान् सम्मान करना है। राष्ट्रभक्त बाबू श्रीप्रकाशजी और डॉ. पट्टाभि सीतारामय्या अिस आयोजन, राष्ट्रीय-यज्ञ समारम्भके अुद्घाटक, अुद्घोषक हैं। समस्त हिन्दी जगत् अुनपर अपना स्नेहादर सिंचन करता है।

जिस महात्माने, जिस राष्ट्रपिताने हमें यह धन्य-दिवस दिया, हमें दृष्टि दी, हमारी आँखें खोलीं, हम अुनके ऋणसे अुऋण कदापि नहीं हो सकते।

चर्चाका स्वागत :

गत सितम्बरकी 'राष्ट्रभारती' के अंकमें भाषा विज्ञानाचार्य डॉ० सिद्धेश्वर वर्माजीका अेक पत्र हमने प्रकाशित किया था। वह पत्र "साहित्यावलोकन" (साहित्य भवन लिमिटेड प्रयाग द्वारा प्रकाशित पुस्तक) के लेखक श्री विनयमोहन शर्माको लिखा गया था। वह पत्र हमारे पास श्री सिद्धेश्वरजी द्वारा दिल्लीसे सीधे ही प्रकाशनार्थ प्राप्त हुआ था। अुसमें साहित्य सम्बन्धी कुछ प्रश्न अुठाये गये हैं, जिनपर पाठकोंके मतका हम सहर्ष स्वागत करेंगे।

स्पष्टीकरण :

श्री अनिलकुमार 'साहित्य-रत्न' ने अुक्त अंकमें प्रकाशित सम्पादकीयमें ऋषि दयानन्द सरस्वतीके सम्बन्धमें लिखी हुअी पंक्तिकी ओर हमारा ध्यान खींचा है। स्पष्टी-करण यही, कि ऋषिका जन्म गुजरात-सौराष्ट्रके अेक छोटेसे देहात टंकारा नामक गांवमें हुआ था। अिसलिअे वे जन्मना गुजराती, मातृभाषा अुनकी गुजराती, देश गुजरात; कर्मभूमि यों अुनकी सारा भारत ही; किन्तु पंजाब और अुत्तर प्रदेश तो विशेष रूप से।

हृ० श०

अँग्रेजीका मोह :

अभी पटनामें भारतीय हिन्दी-परिषद्के अधिवेशनमें दिये गये अपने अध्यक्षीय भाषणमें अुत्तर प्रदेशके राज्यपाल साहित्य वाचस्पति श्री कन्हैयालाल मा. मुन्शीने अँग्रेजीको अति शीघ्रतासे दूर करनेकी प्रवृत्तिके विरुद्ध चेतावनी दी है। अुनका कहना है कि अिससे भाषा सम्बन्धी प्रान्तीय भावनाओंको अुत्तेजन मिलेगा, हमारी राष्ट्रीय भावनाअें दुर्बल होंगी और विज्ञान आदि विषयोंका शास्त्रीय ज्ञान प्राप्त करनेमें असुविधाअें तथा अड़चनें पैदा होंगीं। अिसका अर्थ यह नहीं कि वे हिन्दीका प्रचार नहीं चाहते। वे कहते हैं कि हिन्दीका प्रचार अुत्साहपूर्वक किया जाअे, साहित्य तथा अुसकी शास्त्रीय ग्रंथ-समृद्धि बढ़ायी जाअे और अिसके लिअे जितना भी बन पड़े, प्रयत्न किया जाअे; परन्तु अँग्रेजीको निकाल बाहर करनेकी बात करना अुपयुक्त नहीं।

अँग्रेजीके पक्षमें श्री मुन्शीजीका अिस तरहका कथन कोअी नयी बात नहीं है, परन्तु अिस समय अुन्होंने जिन ज़ोरदार शब्दोंमें यह कहा है, अुससे अुनका यह विचार बड़ी चर्चाका विषय बन गया है। यह स्वाभाविक है कि अुनका अिस तरह अँग्रेजीका पक्ष लेना, किसी भी राष्ट्रभाषा-हिन्दीके प्रेमीको अखरेगा। यह नहीं, कि अुनकी दलीलोंमें कुछ तथ्य नहीं; बहुत कुछ तथ्य है। अँग्रेजी ब्रिटिश साम्राज्यकी भाषा थी और वह साम्राज्यकी भाषाके रूपमें ही हिन्दपर लादी गयी थी। अिसलिअे जब हम यह कहते हैं कि भारतके स्वतन्त्र हो जानेके बाद, अब जहाँ पहले अँग्रेजी चलती थी, वहाँ राष्ट्रभाषा हिन्दी चलनी चाहिये, पहले हाअीस्कूल तथा कालेजोंमें अँग्रेजीमें पढ़ाअी होती थी, तो अब हिन्दीमें होनी चाहिये,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अदालत तथा कचहरियोंमें भी अँग्रेजीका स्थान हिन्दीको मिले; तो अिसका परिणाम यह होता है कि लोग अँग्रेजीके साथ जिस प्रकार साम्राज्य-वादका सम्बन्ध जोड़ा करते थे, अुसी प्रकार हिन्दीके साथ भी साम्राज्यवादका सम्बन्ध जोड़ने लगते हैं। अिससे हिन्दीको हानि पहुँचनेकी सम्भावना है।

प्रान्तीय भाषाओंके साहित्यिकों तथा राज-नीतिक पुरुषोंको अपनी-अपनी भाषाओंको समृद्ध बनानेका और अुन्हें अूँचा-से-अूँचे पद दिलानेका मोह हो, तो अुसे हम अनुचित नहीं कहेंगे। अिन लोगोंको भय है कि यदि सब स्थानोंपर हिन्दी ही का अुपयोग होने लगा तो अुनकी मातृभाषाको अुचित स्थान नहीं प्राप्त हो सकेगा और वह समृद्ध न बन सकेगी। अिस भयके कारण भाषा-कीय प्रान्तीय भावनाअें जोर पकड़ती जा रही है, जो हमारी अेक राष्ट्रीयताके लिअे बड़ी ही खतरनाक चीज है; अिसमें संदेह नहीं।

हिन्दी अँग्रेजीकी तरह अितनी समृद्ध भी नहीं कि अुसके द्वारा सभी प्रकारके विषयोंका सम्पूर्ण अध्ययन किया या कराया जा सके। अिसके लिअे हमें किसी विदेशी भाषाकी सहायता लेनी ही पड़ेगी और क्योंकि हमारे शिक्षित वर्गकी शिक्षा अबतक अँग्रेजीमें हुअी है, अिसलिअे अँग्रेजी ही हमारे लिअे विशेष अुपयोगी हो सकती है--यह बात भी निर्विवाद मानी जाअेगी।

हमें यह भी नहीं भूलना चाहिये कि हम अेक संक्रांतिकालमें हैं। संक्रातिकालमें अैसी अनेक कठिनाअियाँ और समस्याअें अुपस्थित होती हैं, जिनका सुलझाना कठिन ही नहीं, असम्भव प्रतीत होता है। कभी तो अैसा लगता है कि अुन्हें जितना सुलझानेका प्रयत्न किया जाअेगा, वे अुतनी ही अधिक अुलझनें पैदा करेंगी। श्री मुन्शीजीका यह सुझाव अवश्य स्वागत करने योग्य है कि हमें हिन्दीके प्रचारपर, अुसको समृद्ध बनानेपर ही अधिक जोर देना चाहिये। किसी भी रचनात्मक कार्य-प्रवृत्तिमें 'यह नहीं करना चाहिये' कहनेके बदले 'यह करना चाहिये', कहना ही अधिक अुपयोगी होता है। अुससे कार्य करनेकी प्रेरणा मिलती है और नाहक विरोध नहीं पैदा होता।

परन्तु आजकल बार-बार अँग्रेजीकी प्रशंसा सुननेको मिलती है और मनमें संदेह होता है। श्री मुन्शीजीके भाषणने भी अिसी प्रकारका संदेह पैदा किया है। अँग्रेजीकी अितनी प्रशंसा और अुसको रखनेके आग्रहके पीछे क्या भावनाअें कामकर रही हैं--अिसका अनुमान किया जा सकता है। अँग्रेजी भारतकी राष्ट्रभाषा, आंतर-प्रान्तीय व्यवहारकी भाषा नहीं बन सकती--अिसे स्वीकार कर लेनेके बाद भी जब बार-बार अँग्रेजीके महत्वकी बात कही जाती है, अुसे बनाये रखनेकी चर्चा भी कुछ लोग करते हैं, तब यही शंका होती है कि वे केवल अपना या अपने स्तरके लोगोंका ही विचार करते हैं, राष्ट्र या राष्ट्रकी जनताका वे विचार नहीं करते। जनता, जनताकी शिक्षा, जनताके हृदयके भाव--अिन सबका यदि विचार किया जाअे, तो अँग्रेजीकी प्रशंसा और अुसके बनाये रखनेकी दलीलें केवल सारहीन ही नहीं, विकृत दृष्टिकी भी प्रतीत होंगी।

भारतीय संघके राज्योंका पुनर्विभाजन :

मद्रासमें भाषानुसार प्रान्त रचनाके प्रश्न-पर भारतके प्रधान-मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरूने अपने विचार बड़ी स्पष्टता पूर्वकप्रजाके समक्ष रख दिये। काँग्रेसने कअी वर्षोंसे भाषा-नुसार प्रान्त रचनाके सिद्धान्तको स्वीकार किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ है। परन्तु आज अिसके लिअे जिस प्रकार आन्दोलन चलाया जा रहा है और अैसी पुनर्रचना बहुत जल्दी करनेपर जो जोर दिया जा रहा है, वह अवश्य चिन्ताका विषय है। श्री नेहरूने स्पष्ट कहा है--"मैं केवल भाषानुवृत्त प्रान्तोंका ही विचार करनेके लिअे तैयार नहीं हूँ। लेकिन मैं अिसी वक्त सारे भारतका विचार करनेके लिअे तैयार हूँ-- सारी बातोंको ध्यानमें रखकर और भाषा सम्बन्धी, सांस्कृतिक और अन्य बातोंको दृष्टिमें रखकर विभिन्न राज्योंका पुनर्गठन कैसे किया जाअे--यह सोचना है, जिससे कमीशन भारतके लोगोंके सामने पूरी तसवीर पेश कर सके।"

'भाषानुसार प्रान्तरचनाका सिद्धान्त हमारी दृष्टिको संकुचित बना देता है और हमें भारतके प्रति कम तथा अपने राज्यों या प्रान्तोंके प्रति अधिक सजग बनाता है। अगर अिसका यही नतीजा हो, तो यह बुरा नतीजा है। हमें सबसे पहले और सबसे ज्यादा ध्यान सम्पूर्ण राष्ट्रका होना चाहिये। अिसे ही राष्ट्रीय चेतना कहते हैं, वरना आम लोग संकुचित और प्रान्तीय दृष्टिवाले बन जाते हैं। भले हम भारतके किसी भी हिस्सेसे क्यों न हों, जब हम भारतके बाहर जाते हैं, तब हममें भारतका ख्याल ही ज्यादा मजबूत होता है। लेकिन अगर आप अपने राज्य, जिले या शहरका विचार करते रहे, तो देशकी भावना अितनी मजबूत नहीं हो सकती। मैंने हमेशा यह महसूस किया है कि भारतकी स्वतंत्रता प्राप्त करनेके बाद दूसरी मंजिल-भावना और मनोवैज्ञानिक आधारपर अिस अेकताकी सिद्धि होगी।

"मैं भारतके लोगोंको अुनके दिमागों, आदतों या विचारोंको अेक साँचेमें ढालनेकी जरा भी अिच्छा नहीं रखता। अैसा करना घातक होगा। मैं चाहता हूँ कि भारतकी समृद्ध-विविधता कायम रहे और भारतका हर हिस्सा अपनी आदतों और जीवन तथा विचारोंकी विविध पद्धतियोंके अनुसार अपना विकास करे। लेकिन अुसे भारतीय अेकताके नकशेका जरूर ख्याल रखना चाहिये। अगर हम अिस दृष्टिसे अिस महत्वपूर्ण समस्यापर विचार नहीं करेंगे, तो अेक मजबूत राष्ट्रके रूपमें आगे नहीं बढ़ सकेंगे। अिसके फलस्वरूप अतीतमें हमने जो बुरे दिन देखे हैं, वैसे ही फिर देखने पड़ सकते हैं।

अेक से अधिक लिपि सीखो :

बम्बअीमें हिन्दुस्तानी प्रचार सभाके अुत्सवमें भाषण करते हुअे राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसादने कहा कि भारतीय संविधानमें अेक लिपि-नागरी लिपिको स्वीकार किया है, फिर भी अुर्दू लिपि सीख ली जाअे, तो अच्छा है और दक्षिण भारतकी भी कोअी अेक लिपि सीख लेनी चाहिये।

आज हमारे यहाँ अनेक लिपियाँ प्रचलित हैं, अिसको स्वीकार करना होगा। बलपूर्वक हम किसी लिपिको हटा भी नहीं सकते हैं। अैसी परिस्थितिमें जो लोग जनतामें काम करना चाहते हैं, अुन्हें नागरीके अलावा दूसरी लिपियाँ भी सीखनी पड़ेंगी और जो लोग स्वेच्छासे अैसा करेंगे, वे धन्यवादके पात्र होंगे। परन्तु प्रश्न यह है कि संविधानमें केवल नागरी लिपि स्वीकार की गयी है तो अुसीका सर्वत्र प्रचार क्यों न किया जाअे? कुछ समय पहले पं० जवाहरलाल नेहरूने भी, आसाममें अुन्हें जो अनुभव हुआ, अुसपरसे यह कहा था कि भाषाअें विभिन्न प्रदेशोंकी विभिन्न रहनेपर भी, यदि अुन सबकी अेक लिपि हो, वे अेक नागरी लिपिमें लिखी जाअे, तो बहुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुविधा होगी। यदि अैसा हो तो अिसका अेक परिणाम यह भी होगा कि विभिन्न भाषा-भाषी जनताका अेक दूसरेसे सम्पर्क बढ़ेगा और वह अेक दूसरेके अति निकट आ सकेंगी। अिस दिशामें कुछ प्रयत्न भी हो रहे हैं, लेकिन ये प्रयत्न बहुत ही नगण्य हैं। अिसके लिअे संगठित और बड़े पैमानेपर प्रयत्न करनेकी आवश्यकता है। परन्तु जबतक सभी प्रान्तके लोग अपनी-अपनी लिपिका मोह छोड़कर केवल नागरी लिपिको अपनानेके लिअे तैयार नहीं होते, तबतक हमें दूसरी लिपियोंके सीखनेका कुछ-न-कुछ प्रयत्न करना ही होगा––अिसमें सन्देह नहीं।

हिन्दी-भवन-दिल्ली :

यह हर्षका विषय है कि दिल्लीमें हिन्दी-भवनकी स्थापना हो गयी। हम अुसका स्वागत करते हैं। कअी दिनोंसे अिसकी चर्चा हो रही थी, परन्तु अब अुसकी नींव पड़ गयी और वह नींव डाली गयी है भारतके केन्द्रीय-नगर दिल्लीमें। दिल्लीमें हिन्दीके विद्वानों तथा प्रेमियोंकी कमी नहीं और जिन दिनों पार्लामेंट या विधान-सभाकी बैठक होती है, अुस समय वहाँ भारतके अच्छे-से-अच्छे हिन्दीके विद्वान तथा हिन्दी-प्रेमियोंकी अुपस्थिति रहती है। हिन्दीका प्रचार और अुसको समृद्ध बनानेके लिअे साहित्य-निर्माण-कार्य दोनों प्रकारके कार्य आज अत्यन्त आवश्यक हैं। हिन्दी-भवन द्वारा ये दोनों सुचारु रूपसे संपादित हो सकेंगे। हम आशा करते हैं कि हिन्दी-भवन अिन दोनों प्रकारके कार्योंमें मार्गदर्शकका काम करेगी। प्रचारका कार्य तो कुछ संस्थाअें अच्छी तरहसे कर ही रही हैं। परन्तु सबकी अपनी-अपनी मर्यादा होती है। प्रचार-कार्य अैसा कार्य है, जिससे छोटे-बड़े सब योग दे सकते हैं, परन्तु अुनमें काम लेनेवाला कोअी हो। १५ वर्षमें केन्द्रीय सरकारके सब विभागोंमें हिन्दीको अुसका अुचित स्थान दिलाना हो, तो दिल्लीमें ही बहुत काम है। ३५००० से अधिक भारत सरकारके हिन्दीतर-भाषी कर्मचारी हैं, जिन्हें हिन्दी सिखानेकी आवश्यकता है। हिन्दी-भवन अिस दिशामें बहुत कुछ कर सकता है।

परन्तु प्रचार कार्यसे कहीं अधिक महत्वका कार्य है 'साहित्य-निर्माणका' और यह कार्य अैसा है कि अुसे सब लोग कर भी नहीं सकते। अिस कार्यको तो हिन्दीके गण्यमान्य साहित्यिक ही कर सकते हैं और हिन्दी-भवनको तो अैसे ही लोगोंका विशेष सहयोग मिलेगा। यह भी कह सकते हैं कि यह संस्था अैसे लोगोंकी ही होगी। यदि वे सब राष्ट्रके नामपर, हिन्दी तथा हिन्दीके समृद्धिके नामपर कुछ अपने श्रमका तथा प्रतिभा का दान करें, तो यह यज्ञ बड़ी आसानीसे सफल हो सकता है।

––मो० भ०

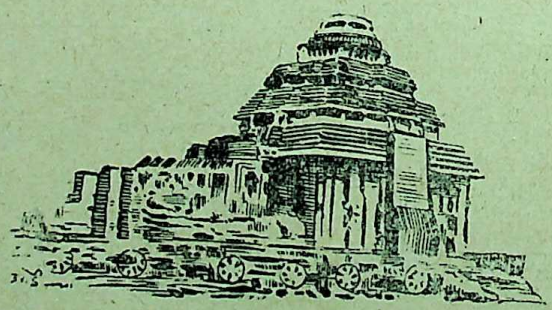

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे सुविख्यात प्रकाशन

स्वामी विवेकानन्दजीकी सुप्रसिद्ध पुस्तकें

भारतमें विवेकानन्द–जैकेट सहित सचित्र ५) "आजकी परिस्थितिके अपयुक्त राष्ट्र निर्माण संबंधी वैध श्रेवं ठोस विचारोंसे भरे, स्वामीजी द्वारा भारतमें दिये गये भावयुक्त स्फूर्तिप्रद भाषण।"

विवेकानन्दजीके संगमें–आकर्षक जैकेटसह,५।) "स्वामीजीके आध्यात्मिक, राष्ट्रीय, कलाविषयक तथा भक्ति संबंधी संभाषणोंका रोचक, महान् शिक्षाप्रद तथा पथप्रदर्शक संग्रह।"

पत्रावली–दो भागोंमें, प्रत्येक भागका मू० २=) "स्वामीजीके शक्ति सम्पन्न पत्रोंका संकलन।"

देववाणी–सचित्र, २=) "अमृततुल्य आध्यात्मिक अन्तःप्रेरणासे भरे हुअे अुपदेश।" शक्तिदायी विचार ।।=); भारतीय नारी ।।।) व्यावहारिक जीवनमें वेदान्त १=); मेरे गुरुदेव ।।=); विवेकनन्दजीकी कथायें १।); कवितावली।।=)

गीतातत्त्व–स्वामी विवेकानन्दजीके गुरुभाअी स्वामी सारदानन्द कृत, सुन्दर जैकेट सहित,२।=)

विवेकानन्द-चरित–हिन्दीमें स्वामीजीकी अेकमात्र प्रामाणिक विस्तृत जीवनी,आकर्षक जैकेट,६)

श्रीरामकृष्णलीलामृत– विस्तृत जीवनी, दो भागोंमें, महात्मा गांधीकी भूमिका सहित, प्रत्येक का ५)

श्रीरामकृष्णवचनामृत–तीन भागोंमें, संसारकी प्रायः सभी प्रमुख भाषाओंमें प्रकाशित, सजिल्द, जैकेट सहित, प्र.भा.६); द्वि.भा.६); तृ.भा.७)

स्वामीजीकी लोकप्रिय पुस्तकें

नये प्रकाशन–जाति, संस्कृति और समाजवाद १); चिन्तनीय बातें १); विविध प्रसंग १=)

योग पर–ज्ञानयोग ३); भक्तियोग १।=); राजयोग १=); कर्मयोग १।।=); प्रेमयोग १।=);

हिन्दू धर्म संबंधी–हिन्दू धर्म १।।); धर्मरहस्य १); धर्मविज्ञान १।।=); हिन्दू धर्मके पक्षमें ।।=); शिकागो वक्तृता ।।=); आत्मानुभूति तथा अुसके मार्ग १।)

भारत पर–हमारा भारत ।।); वर्तमान भारत ।।); स्वाधीन भारत जय हो १=); प्राच्च और पाश्यात्य १।)

विस्तृत सूचीपत्रके लिअे लिखिये **श्रीरामकृष्ण आश्रम, धन्तोली, (रा.) नागपुर—१.(म०प्र०)**

आलोचनाके तृतीय वर्षका पहला अंक

"आलोचना अंक"

के नामसे लगभग २५० पृष्ठोंका विशेष अंक होगा। अिस अंकका मूल्य ५) मात्र होगा, लेकिन वार्षिक ग्राहकोंको यह अंक साधारण मूल्यमें ही मिलेगा।

अिस अंकमें दार्शनिक-चिन्तन और समीक्षा-पद्धतियोंके मूलाधार, मनोविज्ञान, सौन्दर्य-शास्त्र और साहित्य-शास्त्र आदिका समीक्षा-पद्धतिपर प्रभाव, यूनानी, यूरोपीय, मार्क्सवादी, चीनी, अीरानी अित्यादिके साहित्य-शास्त्रोंका भारतीय साहित्यपर प्रभाव, भारतीय समीक्षा व साहित्य शास्त्रके आधार, आदर्श व क्रमिक विकास, हिन्दीकी मध्यकालीन आचार्य-परम्परा, द्विवेदी-युगके समीक्षात्मक मानदण्ड, शुक्लजीकी परम्परा, बाबू गुलाबराय, आचार्य हजारीप्रसाद, विभिन्न "वादों"की समीक्षात्मक प्रवृत्तियां, अिलियट, रिचर्ड्ज, मार्क्स, काडवेल और अरविन्द, रसशास्त्र, भविष्यत्-साहित्य-दर्शन, आदि आदि विषयोंपर अध्ययन और अनुशीलनपूर्ण निबन्धोंका संग्रह रहेगा।

सम्पादक-समितिः— डा० धर्मवीर भारती, डा० रघुवंश, डा० व्रजेश्वर वर्मा, श्री विजयदेव नारायण साही। सरकारी सम्पादक : श्री क्षेमचन्द्र सुमन।

वार्षिक मूल्य १२) मात्र मनीआर्डर द्वारा भेजिये

प्रकाशकः— राजकमल प्रकाशन, १ फैज बाजार, दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नयी धारा

याद रखिये पत्रिकाके लिअे
१ अेक निश्चित अुद्देश्य चाहिये !
२ अुसका अपना व्यक्तित्व चाहिये !

अैसी ही अेक मासिक पत्रिका है। कहानियाँ, कविताअें, शब्द-चित्र, संस्मरण, नाटक, आलोचना, निबन्ध आदि। हिन्दीमें नयी धाराके प्रतीक श्री रामवृक्ष बेनीपुरी अिसका सम्पादन कर रहे हैं। जिनकी सहायताके लिअे साहित्य-महारथियोंका अेक सम्पादक-मण्डल संगठित किया गया है। प्रादेशिक सरकारोंके शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत।

नयी धाराके पुराने प्राप्य अंक आधी कीमतमें प्राप्त होंगे। पोस्टेज फ्री। रंगमंच अंककी थोड़ीसी प्रतियाँ शेष हैं। ग्राहक शीघ्रता करें।

डिमाअी आठ पेजीके १०० पृष्ठ, पक्की जिल्द, आकर्षक कवर, सचित्र, सुसज्जित।

अेक अंक १) रु.] [**वार्षिक १०) रु.**

पताः— प्रबंधक, नयी धारा, अशोक प्रेस, पटना ६

साहित्यिक-त्रैमासिक-पत्रिका

"राष्ट्रवीणा"

संपादकः— जेठालाल जोषी

विद्वानोंसे प्रशंसा प्राप्त राष्ट्रवीणामें——

विद्वानोंके चिंतनप्रधान लेख अेवं गुजरातीके साहित्यिक, सांस्कृतिक, कला विषयक लेख, कविताअें, प्रवास वर्णन, परीक्षोपयोगी लेख, गुजराती, मराठी, बंगाली तथा हिन्दीकी समानार्थी शब्दावली आदि सामग्री, चयनिका, संस्कृति स्रोत, साहित्य समीक्षा, गुजरात, सौराष्ट्र और कच्छके राष्ट्रभाषा प्रचार समाचार आदि कअी स्तंभ प्रकाशित होते हैं।

वार्षिक मूल्य ४) **अेक प्रति १)**

वर्धा समितिके सक्रिय प्रचारकों और केन्द्र-व्यवस्थापकोंको पत्रिका आधे मूल्यमें भेजी जाती है।

— व्यवस्थापक "राष्ट्रवीणा"

गुजरात प्रां. रा. भा. प्र. समिति, कालूपुर, खजूरीकी पोल, **अहमदाबाद**।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस घरमें आरोग्य प्रकाश नहीं, वहाँ सुख शान्ति कहाँ ?

आरोग्य, स्वच्छता और चिकित्साका सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ

भारत-प्रसिद्ध श्रीवैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लिमिटेडके अध्यक्ष वैद्यराज पं० रामनारायणजी वैद्यशास्त्रीने ५-६ वर्ष बड़ी मेहनतसे स्वयं अिस ग्रंथको लिखा है। ग्रंथका अेक-अेक वाक्य हजारों रुपयेका काम देता है। व्यायाम, ब्रह्मचर्य, भोजन, सदाचार, अुत्तम विचार आदि पूर्वार्द्ध विषयोंको पढ़कर और तदनुसार चलकर सदा बीमार रहनेवाला रोगी बिना दवाके नीरोग (तन्दुरुस्त) हो जाता है। ग्रंथके अुत्तरार्द्धमें शरीरमें पैदा होनेवाले सभी रोगोंकी अुत्पत्ति, कारण, निदान, रोगके लक्षण, चिकित्सा, पथ्यापथ्य आदि बड़ी ही सरल भाषामें लिखे है, जो पढ़कर विद्वानसे लेकर साधारण पढ़े-लिखे दोनों समान भागसे लाभ अुठा सकते हैं। अिसमें दवाओंके जो नुकसे लिखे गये हैं वे बहुत बार परीक्षित, कभी भी फेल न होनेवाले और शास्त्रानुमोदित है। शहर हो या देहात, सब जगह अिस पुस्तकके घरमें रहनेसे रोगीको तत्काल लाभ पहुँचाया जा सकता है। औषध तैयार करनेका विधान तो अिस पुस्तकमें श्रेष्ठ है क्योंकि लेखक अिस विषयके निर्णयात्मक ज्ञाता हैं। अिसके आठ संस्करणोंमें ७१००० प्रतियां छपकर बिक चुकी हैं। यह नवां संस्करण १५ हजारका अभी छप रहा है। अिससे अिसकी लोक-प्रियता और अुपयोगिता स्पष्ट मालूम होती है। हिन्दीमें अैसी अुत्तम पुस्तक दूसरी नहीं है, यह कहा जाय तो अनुचित न होगा। प्रचारकी दृष्टिसे मूल्य भी बहुत कम रखा गया है। ५१५ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य सिर्फ १।।।), डाक खर्च ।।≈), हमारी चार निर्माणशाला, ५० बिक्री केन्द्र, १५००० अेजेन्सियोंसे प्रत्यक्ष खरीदनेपर डाक खर्च नहीं लगेगा।

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लिमिटेड, कलकत्ता, पटना, झांसी, नागपुर।

—: अुद्यम :—

हिन्दी और मराठी भाषामें प्रकाशित होता है।

प्रतिमास १५ वीं तारीखको पढ़िये।

अुद्यममें निम्न विषयोंके लेख छपते हैं :—

लाभदायक अुद्योगधंधोंकी जानकारी, अनाज तथा सब्जीकी खेती व रोगोंका निवारण, पशुपालन, दुग्धव्यवसाय व ग्रामोद्योग संबंधी लेख, विद्यार्थियोंके लिअे वैज्ञानिक व अन्य जानकारी, आरोग्य, घरेलू औषधियों संबंधी लेख, हिन्दुस्थानके वैज्ञानिक और औद्योगिक क्षेत्रकी अुपयोगी जानकारी, कृषि, औद्योगिक और व्यापारिक क्षेत्रमें काम करनेवाले लोगोंकी मुलाकात तथा परिचय।

अुद्यमके विशेष स्तंभ

महिलाओंके लिअे अुपयुक्त, रुचिकर खाद्यपदार्थ बनानेकी विधि, घरेलू मितव्ययिता, अुद्यमका पत्रव्यवहार, खोजपूर्ण खबरें, आर्थिक तथा औद्योगिक परिवर्तन, जिज्ञासु जगत्, व्यापारिक हलचलोंकी मासिक समालोचना, नित्योपयोगी वस्तुअें स्वयं तैयार कीजिये।

वार्षिक चन्दा ७ रु. और प्रति अंक १२ आना

पता:— **'अुद्यम' मासिक, धर्मपेठ, नागपुर (म. प्र.)**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मेघदूत' के महत्वपूर्ण प्रकाशनके बाद "प्रेरणा" का छठा-सातवाँ अंक

:प्रेमचन्दके पात्र:

विशेषांक होगा

★ अिस अंकमें प्रेमचन्दके अुपन्यासों और कहानियोंके सभी महत्वपूर्ण पात्रोंपर अधिकारपूर्ण लेख होंगे। ★ विशेषांकका मूल्य लगभग ४) होगा।
★ प्रेरणाके स्थाअी ग्राहकोंके लिअे वही मूल्य रहेगा। अग्रिम आर्डर भेजिये।

शीघ्र ही वार्षिक ग्राहक बनकर अिस सुविधाका लाभ अुठावें। वा. १४) रु.

सम्पादक : कोमल कोठारी,
सोजतीगेट, जोधपुर (राजस्थान)

पुस्तक-परिचय

अुत्कल साहित्य और साहित्यिकोंसे परिचय प्राप्त करना चाहते हैं तो निम्नलिखित पुस्तकें पढ़िये--

१—प्रतिभा—लेखक डा. श्री हरेकृष्ण महताब। प्रतिभा जो अुत्कल विश्वविद्यालयकी बी. अे. परीक्षाके पाठ्यक्रममें है, अुसीका यह हिन्दी अनुवाद है।

२—अुत्कल माणि पं० गोपबन्धु दास—पं० गोपबन्धु दासकी जीवनी है। मूल अुत्कल भाषाके लेखक पं. लिंगराज मिश्र अेम. पी. हैं।

३—धर्मपद--पं. अुत्कलमणि गोपबंधु दासका लिखित अुत्कल भाषाका खण्ड-काव्य है।

४—अुत्कल साहित्यकी श्रेष्ठ कहानियाँ—अिसमें अुत्कल भाषाके प्रसिद्ध आठ लेखकोंकी कहानियाँ संग्रहीत हैं।

५—राष्ट्रभाषा बन्धु और राष्ट्रभाषा सुबोधिनी--
अुत्कल भाषा सीखनेमें सहायक

६—क्या यह सुनी कहानी--लेखक पं० रामेश्वर दयालुजी दुबे हैं।

प्रकाशक—अुत्कल प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार सभा, कटक- १

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दीका स्वस्थ, सात्विक अेवं सस्ता मासिक पत्र

'जीवन-साहित्य'

वार्षिक शुल्क केवल ४)

चाहें तो पहले अेक कार्ड भेजकर नमूना मंगाकर देख लें।

जुलाअी और जनवरीसे ग्राहक बनाये जाते हैं।

पता:-- सस्ता साहित्य मण्डल, नअी दिल्ली

नव निर्माण

[सम्पादक - नेमिचन्द जैन 'भावुक']

+ साहित्य, शिक्षा, संस्कृति और कलाका संगम + राजनीति-विज्ञान, + तारोंकी छायामें + चना जोर गरम + अिमनके आलोकमें + आप भी कहें, हम भी कहें + कसौटीपर + ये धूल भरे हीरे आदि स्थायी स्तंभोंसे युक्त अपनी ही विशेषताओंसे प्रेरित प्रभावित नयी पीढ़ीका सचित्र त्रैमासिक : अेक प्रति १) विशेषांक युक्त वा. ४)

कुमार साहित्य परिषद, जोधपुर

विशेष:— मार्च अंककी प्रतियां अप्राप्य, जूनकी प्राप्य। निशुल्क प्रति भेजनेमें असमर्थ।

मद्रास तथा पंजाब सरकार द्वारा
समस्त शिक्षा संस्थाओंके लिअे स्वीकृत
देशबन्धु पुस्तकालय मथुराका प्रमुख साहित्यिक
मासिक-पत्र

देशबन्धु

प्रधान सं. : कृष्णादत्त वाजपेयी, अेम. अे.
सम्पादक : ज्यो० राधेश्याम द्विवेदी
स. सम्पादक : बैजनाथ दाणी
वार्षिक मूल्य ४) * अेक प्रति ।=)

देशबन्धु अगस्त ५३ से अपने द्वितीय वर्षमें प्रवेश कर चुका है अिसकी खुशीमें ३० सितम्बर-तक केवल ३) रु० में वार्षिक ग्राहक बनाये जा रहे हैं और अुसका प्रथम अंक व्रज संस्कृति अंक निकल रहा है जो संग्रहीय वस्तु होगी।

पत्र-बिक्री [अेजेन्सी] तथा विज्ञापनके लिअे आज ही लिखिये।

पता—व्यवस्थापक, "देशबन्धु"
मथुरा (यू० पी०)

सुन्दर टाअिप और बार्डर

अिस कारखानेके सुन्दर और मजबूत टाअिपको अनेक छापखानेवाले पसन्द करते हैं। हमारे यहाँ अंग्रेजी, मराठी, गुजराती तथा कानड़ी टाअिप और अनेक प्रकारके बार्डर तथा अिलेक्ट्रो ब्लाक्स हमेशा तैयार मिलते हैं।

अुसी प्रकार हमारे यहाँ मोनो सुपर कास्टरसे तैयार किये हुअे १२ पाअिंट हिन्दी और मराठी टाअिप भी तैयार हैं। केटलाग जरूर मँगावें।

पता—मैनेजर, निर्णय सागर प्रेस,
बम्बअी नं० २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रानी

आपके मनोरंजनके लिअे

नाना प्रकारके सचित्र लेख, कहानियाँ, छाया लोक और आलोचनाअें आदि-आदि। वर्षमें होलिकांक और दीपावली-अंक मुफ्त।

रानीका वार्षिक चन्दा केवल चार रुपये है। रानी १५ वर्षसे हिन्दी-पाठकोंको निरन्तर नवीन पाठ्य-सामग्री देती आ रही है।

"रानी" कार्यालय,
१२१ चित्तरंजन अेवियू,
कलकत्ता ७

जल्दी ही आर्डर दीजिये

राष्ट्रभाषा--डायरी
१९५४

अिसमें राष्ट्रभाषा प्रचार समितिकी परीक्षा आदि प्रवृत्तियोंके सम्बन्धमें विभिन्न जानकारियोंके साथ दैनिक व्यवहारमें आनेवाली अुपयोगी बातें संग्रहीत हैं।

राष्ट्रभाषा प्रेमी, प्रचारक वर्ग, छात्र वर्ग तथा सभी कोटिके लोगोंके लिअे यह डायरी बहुत ही अुपयोगी होगी।

सुन्दर कागज, आकर्षक छपाअी तथा कपड़ेकी पक्की जिल्द।

साअिज—४" + ६½"

लागत मूल्य- १) अेक रुपया, डाक खर्च अलग।

प्रकाशक— राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

महाराष्ट्र रा.भा. प्रचार समिति, पुणेके तत्वावधानमें
राष्ट्रभाषा प्रचारकों अेवं परीक्षार्थियोंके
अुपयोगकी हिन्दीकी अभिनव साहित्यिक
मासिक पत्रिका

"जयभारती"

सम्पादक अेवं प्रकाशकः--श्री पं. मु. डांगरे

प्रारम्भिकसे लेकर अूँची परीक्षाओंतककी परीक्षोपयोगी सामग्री; साहित्य, परंपरा, संस्कृति विषयक लेख; शंका समाधान; साहित्य परिचय; मधुसंकलन; हिन्दी जगत्; परीक्षा विषयक सूचनाअें; आवश्यक जानकारी, कहाँपर कौन क्या पढ़ें? आदि नाविन्यपूर्ण अेवं समयोचित रचनाओं अेवं विशेषताओंसे भरपूर।

मनिआर्डरसे वार्षिक मूल्य १) अेक रुपया भिजवाकर शीघ्र ग्राहक बन जाअिये।

पताः—८६६ सदाशिव, पो. बॉ. नं.५५८, **पुणे २.**

गुजराती भाषाका निराला साप्ताहिक-पत्र

निर्माण

[सम्पादक : हरिलाल पंड्या]

समस्त भारतकी शैक्षणिक, सांस्कृतिक और प्रजाजीवनके नव-निर्माणकी प्रवृत्तियोंका ज्योतिर्धर।

निर्माणमें आप देखेंगे :—

आनंद, अुत्साह और चेतनाप्रद लेख, कहानियाँ अेवम् अपने ही ढंगसे चुने हुअे समाचार। राष्ट्र-भाषासे सम्बन्धित सभी प्रवृत्तियोंका विवरण और किसी भी वादसे परे रहकर तटस्थ और स्पष्ट मंतव्य प्रकट करना निर्माणका ध्येय है।

विज्ञापनका अत्युत्तम साधन।

आज ही पत्र लिखकर नमूनार्थ प्रति मंगवाअिये।

वार्षिक मूल्य ५)
छः माही ३)
अेक प्रति दो आना

'निर्माण' कार्यालय
स्वस्तिक प्रिन्टरी
धर्मेन्द्र मार्ग
राजकोट (सौराष्ट्र)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुषमा

सम्पादक : कुंडलराय मोहेकर

या मासिकाचीं वैशिष्ठयें—

★ सुन्दर लघुकथा. ★ नामांकित लेखकांचें लिखाण. ★ जीवन, कला, साहित्य अित्यादि विषयांवर अुपयुक्त मजकूर. ★ या शिवाय चेतोहारी चित्र.

नियमित वाचण्यासाठी आजच वर्गणी पाठवून ग्राहक होणें फायद्याचें आहे.

वार्षिक वर्गणी ६ रुपये. किरकोळ अंकास आठ आणे.

सुषमा : पराग बिल्डिंग्ज़, धरमपेठ, नागपुर (म. प्र.)

"दक्षिण भारत"

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभाका
सांस्कृतिक मासिक पत्र

अिस पत्रके द्वारा:—दक्षिणको प्राचीन और आधुनिक संस्कृति संबंधी जानकारी, दक्षिणके साहित्य, राजनीति, शिक्षा, कला, रचनात्मक कार्य-क्षेत्रोंके विवरण और अुनके अुन्नायकोंका परिचय, दक्षिणकी तेलुगु, तमिल, कन्नड़ मलयालम भाषाओंके और अुत्तरके विद्वानोंका साहित्य सृजनका परिचय पाअिये।

वार्षिक चंदा रु. ६-०-० अर्धवार्षिक रु. ३-८-०
अेक प्रति रु. ०-१०-०

अिस पतेपर लिखें: —
व्यवस्थापक, पत्रिका विभाग,
दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा,
त्यागरायनगर, मद्रास १७,

गोवध बन्द करनेके लिअे
३१ करोड़ हिन्दुओंकी माँग!
क्रान्तिकारी विचारोंके साथ।

* गोरक्षण *

मासिक-पत्रमें पढ़िये

गोसेवामें भाग लेनेके लिअे आज ही १।) रु. वार्षिक भेजकर ग्राहक बनिये। नमूनांकके लिअे पाँच आनेका टिकट अवश्य भेजिये। धार्मिक संस्थाओंको मुफ्त।

गोरक्षा प्रचारके लिअे हर प्रकारकी सहायता तथा दान नीचेके पतेपर भेजिये।

व्यवस्थापक —गोरक्षण साहित्य मन्दिर,
रामनगर, बनारस (अु. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके, आपके परिवार के प्रत्येक सदस्य के, प्रत्येक शिक्षा-संस्था तथा पुस्तकालय के लिअे अुपयोगी

हिन्दीका अपने ढंगका पहला पत्र

गुलदस्ता

(हिन्दी डाअिजैस्ट)

३९३८ पीपलमंडी, आगरा

वार्षिक मूल्य १०)
पृष्ठ संख्या १२५

नमूने की प्रति
अेक रुपया

अजन्ता

सम्पादक—
श्री वंशीधर विद्यालंकार : श्री श्रीराम शर्मा

प्रकाशक:— हैदराबाद राज्य हिन्दी प्रचार सभा, हैदराबाद दक्षिण

१. अुच्च कोटिका साहित्य, २. सुन्दर और स्वच्छ छपाअी, ३. कलापूर्ण चित्र

वार्षिक मूल्य ९ रुपया

किसी भी माससे ग्राहक बना जा सकता है ।

"नया पथ"

हिन्दीकी नयी साहित्यिक चेतनाका प्रतिनिधि मासिक पत्र ।

विशेष स्तम्भ— मासिक टिप्पणियाँ, व्यंग और प्रहसन, आजकी राजनीति, मार्क्सवादकी पाठशाला, आर्थिक लेखाजोखा, कथा-कहानी और कविताअें, विज्ञान और हम, सिनेमा-जगत, हमारी संस्कृति, पुस्तक परिचय आदि ।

सम्पादक:— श्री शिव वर्मा

वार्षिक चन्दा ६ रु. : छः माही ३ रु.
अेक प्रतिका मू. ८ आना : पृष्ठ संख्या ४८

अेजेन्सी लेनेवालोंको २५% कमीशन और डाकखर्च मुफ्त ।

"नया पथ" कार्यालय,
३१४ वल्लभभाअी पटेल रोड, बम्बअी

हिन्दीका स्वतंत्र मासिक

"नया समाज"

संचालक: नया समाज-ट्रस्ट ★ संपादक: मोहनसिंह सेंगर

वार्षिक चन्दा ८) : अेक प्रति ।।।) : विदेशोंमें १२) वार्षिक

आप यदि ग्राहक नहीं हैं, तो आज ही बन जाअिये । यदि हैं, तो अपने अिष्टमित्रोंको भी बनाअिये । यदि किसी कारण आप ग्राहक नहीं बन सकते, तो चेष्टा कीजिये कि 'नया समाज' आपके पड़ोसके पुस्तकालयमें मँगाया जाय ।

आज ही नमूनेके लिअे लिखिये :—
व्यवस्थापक 'नया समाज', ३३, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता– १

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ महत्वपूर्ण प्रकाशन

भारतीय वाङ्मय भाग १, २, ३.

प्रथम भागमें संस्कृत, पालि, प्राकृत अपभ्रंश तथा द्वितीय भागमें हिन्दी, अुर्दू और तृतीय भागमें बंगला, अुड़िया, असमिया भाषाओंके संक्षिप्त अितिहास संग्रहीत हैं। मूल्य भाग १, तथा ३ प्रत्येक २) रु., भाग दूसरा १॥)

फ्रेंच स्वयं शिक्षक

लेखकः— डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार

अिस पुस्तककी सहायतासे विद्यार्थी सहजहीमें फ्रेंच भाषाका ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। मूल्य ५)

मराठीका वर्णनात्मक व्याकरण

लेखकः--प्रो. न. चि. जोगळेकर, अेम. अे.

मराठी भाषाकी अुत्पत्ति, विकास तथा मराठी साहित्यके संक्षिप्त अितिहासके साथ-साथ, अुसके व्याकरणको रोचक शैलीमें समझाया गया है। मूल्य २।)

संक्षिप्त राष्ट्रभाषा कोश

(सम्पादक—महापंडित राहुल सांकृत्यायन)

शब्दसंख्या—२५००० [मूल्य ५) डाक व्यय अलग]

राष्ट्रभाषा प्रेमियों, विद्यार्थियों, संस्था तथा सरकारी कार्यालयों आदिके लिअे यह कोश बहुत अुपयोगी अेवं संग्रहणीय है।

विशेष जानकारीके लिअे लिखें--

पुस्तक-विक्री-विभाग,

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रभारती-विज्ञापन दर

साधारण पृष्ठ	पूरा --	४०)	प्रतिबार
,,	आधा --	२५)	,,
द्वितीय कवर पृष्ठ	पूरा --	१००)	,,
,,	आधा --	५५)	,,
तृतीय कवर पृष्ठ	पूरा --	८०)	,,
,,	आधा --	४५)	,,
चतुर्थ कवर पृष्ठ	पूरा --	१२०)	,,
,,	आधा --	७०)	,,

राष्ट्रभारतीकी साअिज-- ९½"×७"
छपे पृष्ठकी साअिज-- ८"×५½"

तीनसे अधिक बार विज्ञापन देनेवालोंको सुविधा दी जायगी।

'राष्ट्रभारती' में अपने व्यापारका विज्ञापन देकर लाभ अुठाअिये। क्योंकि यह कश्मीरसे लेकर रामेश्वरतक और जगन्नाथपुरीसे द्वारकापुरीतक हजारों पाठकोंके हाथोंमें पहुँचती है।

★

राष्ट्रभारती-अेजेन्सी

१. प्रतिमास कम-से-कम पाँच प्रतियाँ लेनेपर ही अेजेन्सी दी जायगी।
२. पाँच प्रतियाँ लेनेपर २०) प्रतिशत कमीशन दिया जायगा।
३. छहसे अधिक प्रतियाँ लेनेपर २५) प्रतिशत कमीशन दिया जायगा।
४. पाँचसे अधिक ग्राहक बना देनेवालोंको भी विशेष सुविधा दी जायगी।

विशेष जानकारीके लिअे आज ही लिखियेः—

श्री प्रबन्धक, "राष्ट्रभारती" पो० हिन्दीनगर (वर्धा, म.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. कहानी :

१. कुमार दुरंजय ... राहुल सांकृत्यायन ८२०

२. अेकताका अंत (तमिळ) ... श्री शाण्डिल्यन्
अनु०–श्री रा. वीळिनाथन ८३२

३. प्रेसका भूत (मैथिली) ... श्री प्रो. हरिमोहन झा
अनु०–श्रीमती सीता सिन्हा ८९५

४. देशभक्त मारवी (सिंधी) ... श्री दौलतराम शर्मा ९०४

३. अेकांकी :

१. परकोया (तेलुगु) ... श्री चीफजस्टिस पी. वें. राजमन्नार
अनु०–श्री चा. सूर्यनारायण मूर्ति ८८०

४. कविता :

१. अीश्वर (बँगला) ... श्री काजी नजरुलअिस्लाम
अनु०–श्री कैलास बिहारी सहाय ८९७

२. गीत ... श्री गिरधर गोपाल ८९७

३. गीत ... श्री 'नीरज' ८९८

४. मोहिनी अवतार ... श्री 'लहरी' ८९९

५. गीत जयके ... श्री भवानी प्रसाद तिवारी ९००

६. सीढ़ीका पत्थर ... श्री रामकृष्ण श्रीवास्तव ९०१

७, पहाड़ी नदी (काश्मीरी) ... श्री आरिफ
अनु०–घनश्याम सेठी ९०२

५. देवनागर :

१. तुच्छ (बँगला) ... श्री प्रबोध सान्याल
अनु०–श्री मन्मथनाथ गुप्त ९०८

६. सम्पादकीय ९१०

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे : अर्धवार्षिक ३॥) : : अेक अंकका मूल्य १० आना

पताः—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
रजिस्टर्ड नं० ना० १३८६

हम आपसे कुछ कहना चाहते हैं !

'राष्ट्रभारती' का तीसरा वर्ष जनवरी ५३ से ही शुरू हो चुका है। तीसरे वर्षका यह ग्यारहवाँ (नवम्बर मासका) अंक आपके हाथमें है।

'राष्ट्रभारती' के जिन प्रेमी ग्राहकोंका वार्षिक चन्दा अिस अंकके साथ पूरा हो जाता है, अुनसे हमारा नम्र निवेदन है कि वे अपना अगले वर्षका चंदा ६ रु. मनीआर्डर द्वारा तुरन्त भेजनेकी कृपा करें। वार्षिक या छहमाही चंदा हर हालतमें मनीआर्डर द्वारा भेजना ही ठीक होगा। अिससे हमको और आपको सुविधा होगी। आपको अंक समयपर मिलेगा। वी.पी. और 'रजिस्ट्री' चार्जकी झंझटसे आप और हम दोनों बचेंगे। आशा है, आप हमारी अिस प्रार्थनापर जरूर ध्यान देंगे।

दूसरा निवेदन यह भी है कि कमसे-कम अपने किसी अेक-दो पड़ोसी मित्रोंको भी ग्राहक अवश्य बना दें और अुनका सालाना चंदा मनीआर्डरसे भिजवा दें। यह 'राष्ट्रभारती' सबसे सस्ती, सुन्दर साहित्यिक, सांस्कृतिक पत्रिका है, जो ठीक समयपर हर १ ली ता० को निकलती है।

अिस पत्रिकाके प्रचारमें आप अवश्य अपना सहयोग बढ़ावें।

मनीआर्डरसे वार्षिक चंदा ६ रु. और छहमाही चंदा ३ रु. ८ आ.

नमूना अंकके लिअे दस आना मात्र।

पता :– व्यवस्थापक—'राष्ट्रभारती', पो०—हिन्दीनगर (वर्धा, म० प्र०)

राष्ट्रभारतीके लेखकोंसे निवेदन !

(१) 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ रचना आदि सामग्री स्वच्छ सुवाच्य लिखावटमें अथवा अच्छी टाअिप की हुअी भेजनी चाहिये। प्रकाशन योग्य सामग्री जो कुछ भी आप भेजें वह बहुत भारी-बोझिल और खूब लंबी चौड़ी नहीं होनी चाहिये, कृपया अिसका खयाल रखें। आपके हार्दिक सहयोगके लिअे राष्ट्रभारती बहुत आभारी होगी।

(२) यह अच्छी तरह ध्यानमें रहे कि राष्ट्रभारतीमें प्रकाशनार्थ भेजी हुअी आपकी रचना अिसके पूर्व किसी हिन्दी पत्र-पत्रिकामें प्रकाशित न हो चुकी हो; और जो कुछ सामग्री भेजें वह 'राष्ट्रभारती' के लिअे ही भेजें।

(३) अनुवादक महाशय किसी अनूदित रचनाको भेजनेसे पूर्व अुसके मूल-लेखकसे पत्रद्वारा अनुमति अवश्य प्राप्त कर लें; तभी अनूदित रचना हमारे यहाँ भेजें।

(४) आपकी स्वीकृत रचना संबंधी सूचना संपादक द्वारा आपको दी जाअेगी और छपनेतक आपको प्रतीक्षा करनी होगी।

(५) अपनी अस्वीकृत रचनाको वापस मंगानेके लिअे डाक-टिकट अवश्य भेजें अथवा आप अुसकी प्रतिलिपि अपने पास सुरक्षित रखें।

(६) लेख, रचना आदि प्रकाशन योग्य सम्पादकीय सारा व्यवहार अिस पतेपर करें:—

संपादक : 'राष्ट्रभारती'

पोस्ट—हिन्दीनगर (वर्धा, मध्यप्रदेश)

मुद्रक तथा प्रकाशक:— मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस,— राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

दिसम्बर, १९५३

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्रभारती बिहार, राजस्थान, मध्यभारत, हैदराबाद और भोपाल राज्यके शिक्षा-विभागों द्वारा स्कूलों, कालेजों और वाचनालयोंके लिअे स्वीकृत हो चुकी है।

[सूचना:— 'राष्ट्रभारतीमें, सर्वश्री डॉ. बाबूराम सक्सेना, आचार्य काका कालेलकर, महामहोपाध्याय दत्तो वामन पोतदार, स्वर्गीय किशोरीलाल मशरूवाला और अुत्तर-प्रदेशके वर्तमान राज्यपाल श्री क०मा०मुन्शीजी आदि विशेषज्ञोंकी अेक 'समिति' द्वारा १९३६ में निर्णीत नागरी लिपिका प्रयोग होता है: —अि, अी, अु, अू, अे, अै (इ,ई, उ, ऊ, ए और ऐ की जगह) और ञ, ण और क्ष अक्षरोंके स्थानपर) —सं०]

—:विषय-सूची:—

	लेखक	पृ० सं०
१. लेख :		
१. राष्ट्रभाषा हिन्दी : 'बहता नीर'	श्री डा. बलदेवप्रसाद मिश्र	९१५
२. कूपासक	श्री आचार्य चन्द्रबली पांडे	९१७
३. सत्य और रीति-रिवाज	श्री महात्मा भगवानदीन	९२०
४. स्व. सुब्रह्मण्य भारतीके कान्हा-गीत— कान्हा मेरे सद्गुरु (तमिळ साहित्य)	श्री प्रो० के. अेस. चिदम्बरम	९२८
५. नीमाड़ी सन्त सिंगाजी और अुनका साहित्य	श्री कृष्णलाल 'हंस'	९३१
६. गद्दार (अेक मनोवैज्ञानिक विश्लेषण)	श्री रामराजसिंह	९३५
७. तक्कयागप्परणी (तमिळ साहित्य)	श्री ति शेषाद्रि	९४०
८. जनश्रुति—असत्यपर सत्य	श्री ब्रह्मानन्द श्रीवास्तव	९४७
९. अश्कके नाटकोंमें युग-सत्य	श्री गोपालकृष्ण कौल श्री रामगोपालसिंह चौहान	९६३
२. कहानी :		
१. जुम्मा भिश्ती (गुजराती)	श्री धूमकेतु' अनु०— श्री अिन्द्र वसावड़ा	९३७
२. निराश्रयकी जीत (लघुकथा)	श्री रावी	९५०
३. अनुभूतिका आलोक	श्री रतनलाल बंसल	९५७
३. आलोचना :		
१. 'दिनकर'जीका कुरुक्षेत्र	श्री गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश'	९५२
४. कविता :		
१. मैं पागल, प्राण लुटा आया	श्री विद्याधर द्विवेदी 'विज्ञ'	९३९
२. शिशिरकी रात	श्री प्रो० महेन्द्र भटनागर	९४९
३. चार चतुष्पदियाँ	श्री अजितकुमार	९५१
४. स्वप्न-सत्य साकार करो तुम !	श्री प्रभुदयालु अग्निहोत्री	९६८
५. देवनागर :		
१. ओड़िया (अुड़िया)	श्री 'निःस्पृह'	९६९
२. राष्ट्रोन्नतिके नियम (मराठी)	श्री 'निःस्पृह'	९६९
६. साहित्यालोचन :		९७०
७. सम्पादकीय		९७४
८. 'राष्ट्रभारती' पर कृपा करनेवालोंसे निवेदन		९७९
९. श्रद्धेय टण्डनजीको थैली		९८१

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे : अर्धवार्षिक ३॥) : : अेक अंकका मूल्य १० आना

पता:—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

* वर्ष ३ * वर्धा, दिसम्बर १९५३ * अंक १२ *

राष्ट्रभाषा हिन्दी : "बहता नीर"

: डॉ. बलदेवप्रसाद मिश्र, डी. लिट. :

जबसे हिन्दी राजभाषा घोषित हो चुकी है, तबसे विचारकोंका ध्यान अिसपर और अधिक केन्द्रित हो गया है। वस्तुतः वह राष्ट्रभाषा तो थी ही; भले ही राज्यकी ओरसे अुसकी अधिकृत घोषणा न हुअी हो। परन्तु घोषणा हो जानेके बाद अब अुसकी ओर प्रत्येक प्रांतके विचारकोंका ध्यान विशेष आकर्षित हो गया है।

पहिले तो हिन्दी और अुर्दूकी खींचतान थी और भारतीय राष्ट्रभाषाके अिन दो रूपोंको अेकमें मिलानेके लिअे हिन्दुस्तानीके सृजनकी ओर विचारकोंका ध्यान गया था। परन्तु वह बात कुछ चल न पायी। बात यह है कि लोकभाषा कोअी "कूप जल" तो है नहीं, वह तो "बहता नीर" है। अिसलिअे वह तो नैसर्गिक गति ही से आगे बढ़ेगी। जन-साधारण जिसे चला दे, वही भाषा है। लोकभाषा कहीं किसी विशेषज्ञोंकी समितिमें गढ़ी नहीं जाती। यदि कुछ लोगोंने भगीरथ प्रयत्न करके अुसे गढ़ लिया, तो जन-साधारणपर अुसका मढ़ना और भी कठिन व्यापार समझिअे। गढ़ी हुअी भाषा शब्द-कोशोंमें अपनी बहार भलेही दिखाती फिरे; परन्तु कोअी विधान, कोअी व्याकरण, कोअी कोश, अुसे जन-साधारणपर मढ़ नहीं सकता, जबतक कि जन-साधारणकी रुचि स्वतः अुस ओर प्रवृत्त न हो जाअे। अुर्दूकी शब्दावलीके बहुतसे विदेशी शब्द अैसे थे, जो अपने साथ विदेशी संस्कार भी लिये हुअे थे; अतअेव "हिन्दुस्तानी" के नामसे अुन शब्दोंको ग्रहण कर लेना, अर्थकी जगह अनर्थ पैदा कर सकता था। गुरु वशिष्ठ कभी अुस्ताद वशिष्ठ नहीं हो सकते और न महारानी सीता कभी बेगम सीता हो सकती हैं। विचारकोंने यह बात समझी, अिसीलिअे अुन्होंने अपना वह हठ छोड़ दिया और यह निश्चय कर दिया कि हिन्दीका वही रूप राज-भाषा और राष्ट्रभाषाके रूपमें मान्य होगा जो अुसका परम्परागत रूप है और अुसकी खास प्रकृति तथा प्रवृत्तिके अनुकूल है।

अिस निर्णयकी अेक प्रतिक्रिया भी हुअी। कुछ लोगोंने अिसीलिअे अब संस्कृत-निष्ठतापर जरूरतसे ज्यादा जोर देना शुरू किया और संस्कृतके आधारपर अनेकानेक अप्रचलित नये-नये शब्द गढ़ने प्रारंभ किये। हिन्दी केवल संस्कृतके व्याकरण अथवा संस्कृतके कोशका ही आधार लेकर नहीं चली है। वह देशज बोलियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और द्रविड़ भाषाओंसे भी तो प्रभावित है। वह वास्तविक अर्थमें राष्ट्रभाषा है। अतअेव अिस प्रकारके अेकांगी गढ़े हुअे शब्द भी जन-साधारणपर पूरी तरह मढ़े नहीं जा सकेंगे। नये-नये भाव, नये-नये सूक्ष्म विचार, नयी-नयी परिस्थितियोंके अनुकूल नये-नये व्यक्तीकरण, नये-नये शब्दोंकी अपेक्षा अवश्य रखते हैं। अतअेव अिनके लिअे नये-नये शब्द अवश्य गढ़े जाअें, परन्तु अिस प्रकारकी गढ़नके लिअे हिन्दीकी प्रकृति और प्रवृत्तिका ध्यान अवश्य रखा जाअे; तभी वे शब्द जनता द्वारा ग्राह्य होंगे। अिस प्रकृति और प्रवृत्तिका असली निर्णय होता है जनता-जनार्दन द्वारा, न कि कोशकारों, वैय्याकरणों अथवा शब्द-निर्माताओं द्वारा। ये लोग नये-नये शब्द बनाकर जन-साधारणके सम्मुख रख दें, जनता अुस शब्दावलीमेंसे लोक-भाषाके अनुकूल शब्दोंको आप ही ग्रहण कर लेगी और शेषको विस्मृतिके गर्भमें ढकेल देगी।

प्रत्येक प्रांतवासी राष्ट्रभाषामें अपनी-अपनी भाषाओंका योगदान देनेको अुत्सुक हो रहे हैं। यह भी स्वाभाविकही है। राष्ट्रभाषा सभीकी भाषा है, अिसलिअे प्रांत-भाषाअें अपनी-अपनी अभिव्यंजनाके सुंदरसे सुन्दर शब्द और प्रयोग क्यों न अिस भाषाको अर्पित करें। हमारा तो अनुमान है कि अिसमें किसी प्रकारके डरकी कोअी बात नहीं। भगवती भारतीके मंदिरमें प्रत्येक भारतीय अपनी श्रद्धाके पुष्प अर्पित करनेको स्वतंत्र है। देवताको जो फूल ग्राह्य होंगे, वे ही वहाँ टिकें रहेंगे; शेष कुम्हलाकर अलग हो जाअेंगे। बरसाती बाढ़में सभी दिशाओंसे सभी तरहकी चीजें प्रवाहमें बहकर आती हैं परन्तु कुछ दिनोंके बाद "बहता नीर" आवश्यक सुरसको आत्मसात करता हुआ अपनी नैसर्गिक निर्मलता फिर धारण कर लेता है और बाढ़की अनावश्यक वस्तुअें आप-ही-आप अिधर-अुधर विलीन हो जाती हैं।

कबीरका दोहा अिस मौकेपर कितना चुस्त बैठ रहा है। वे कहते हैं—

"भक्ति भाव भादौं नदी सबै चलीं घहराय,
सरिता सोअि सराहिये जो जेठ मास ठहराय।"

हिन्दीमें भी अिस समय विदेशी शब्दोंकी,संस्कृत कोश और संस्कृत व्याकरण द्वारा गढ़े हुअे शब्दोंकी, प्रादेशिक शब्दों तथा प्रयोगोंकी बाढ़ आ रही है। यह स्वाभाविक ही है। अिससे घबरानेकी कोअी जरूरत नहीं। यह तो समयका तकाजा है। परन्तु आगामी कलके अिसके स्वरूपमें अिस मदैली बाढ़का गंदलापन आप-ही-आप दूर हो जाअेगा और अुस बाढ़के स्वस्थ तत्वोंको आत्मसात करते हुअे यह अपनी स्वाभाविक प्रकृति और स्वाभाविक प्रवृत्तिके अनुसार जेठमासकी सरिताकी तरह निर्मल कल्याणकारी रूप प्रदर्शित करेगी, अिसमें कोअी संदेह नहीं।

बहते नीरकी धाराको अेकदम अुलटना असंभव कार्य है। अुसकी विशिष्ट प्रकृति अुसीकी होकर रहेगी। अुसके बहावकी प्रवृत्तिको भी न पहचानना, अुसके वास्तविक लाभसे अपनेको वंचित रखनाही है। चतुर किसान वही है, जो अुसकी विशिष्ट शक्ति और अुसके बहावका विचार रखता हुआ, अुसमें यत्र-तत्र संशोधन करता जाता है, जिससे वह देशके विविध-क्षेत्रोंको और अच्छी तरह हरा-भरा करती चले। जो लोग राज-भाषाके विषयमें परिवर्तन और संशोधनकी अिच्छा रखते हैं, अुन्हें अिस सिद्धांतका ध्यान अवश्य रखना चाहिअे। राजभाषा हिन्दी जीवनी शक्तिसे ओत-प्रोत है। वह निस्संदेह अेकदम जीवित भाषा है। जीवनका अर्थही है कि अनुकूल शब्दावलीका संग्रह किया जाअे और अनुपयुक्त शब्दावलीका त्याग किया जाअे। जीवित शरीर अपने पोषणके लिअे अनुकूल खाद्य लेताही रहता है और अनुपयुक्त वस्तुअें त्यागता ही रहता है। हिन्दी भाषा नूतन शब्दावलीकी विरोधिनी न होगी; चाहे वे देशज हों या विदेशज। यही तो अुसके जीवटके लक्षण हैं। परन्तु अितना अवश्य ध्यान रखा जाअे कि अुसकी प्रकृति और प्रवृत्तिके विरुद्ध नयी-नयी गढ़ी हुअी या खींच-खाँचकर अेकत्र की हुअी शब्दावलियोंका बोझ अुसपर लादा न जाअे। यदि कहीं कोअी अैसी चेष्टा की गयी, जिसके कारण अुसका स्वरूप ही बदल जानेकी संभावना हो, तो निश्चय है कि अैसी शब्दावली अथवा प्रयोगावलीका बोझ शीघ्र ही बरसाती कूड़े-कचरेकी तरह कुछ ही दिनोंमें आप-ही-आप अदृश्य हो जाअेगा।

[राजनादगाँव।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कूर्पासक

: आचार्य चन्द्रबली पांडे, अेम. अे. :

अतीतके अध्ययनका जिन्हें चसका है, अुन्हें अिस बातका पता है, कि 'कूर्पासक' का ठीक-ठीक रूप अभी हमारी आँखके सामने न आ सका और आया भी तो यह कहना अत्यन्त कठिन हो गया कि वास्तवमें यही अिसका वास्तविक रूप है। विचारके लिअे लीजिअे डा. मोतीचन्द्रजी जैसे वेष-मर्मज्ञकी यह वाणी—

"अमरकोश और अृतुसंहारमें तो यह शब्द स्त्रियोंकी चोलीके लिअे आया है, पर यहाँ तो अुसे योद्धा पहनते थे। लगता है कूर्पासक आधे बाँहवाली मिर्जअी अथवा कोअी गंजीनुमा वस्त्र रहा हो। अजंताके भित्ति-चित्रोंमें बहुधा सिपाही अैसा वस्त्र पहने दिखाये गये हैं।" ❀

सं. २००७ विक्रमकी यह मीमांसा अपने विषयमें बहुत कुछ आप ही बोल रही है। 'कूर्पासक' का ठीक पता नहीं, अनुमानसे जो सिद्ध होता है वह सामने है। अुसको दृष्टिमें रखकर देखें यह कि अतीतके दूसरे विचारक डा. वासुदेवशरण अग्रवालका विचार क्या है। आप बड़ी खोजके बाद लिखते हैं—

"कूर्पासकका पहनावा गुप्त-कालमें खूब प्रचलित रहा होगा। अमरकोशने कूर्पासकका अर्थ चोल किया है। कूर्पासक थोड़े भेदसे स्त्री और पुरुष दोनोंका पहनावा था। स्त्रियोंके लिअे यह चोलीके ढंगका था और पुरुषोंके लिअे फतुअी या मिर्जअीके ढंगका। अिसकी दो विशेषताअें थीं—अेक तो यह कटिसे अूँचा रहता था और दूसरे प्रायः बिना आस्तीनका होता था। वस्तुतः कूर्पासक नाम अिसीलिअे पड़ा, क्योंकि अिसमें आस्तीन कोहनियोंसे अूपर ही रहती थी। मूलमें कूर्पासक भी चीनचोलककी तरह मध्य-अेशियाकी वेशभूषामें ही प्रचलित था और वहींसे अिस देशमें आया। कूर्पासकके जोड़की आधुनिक पोशाक वास्कट है। अेशियाके शिष्टाचारके अनुसार वास्कट सबसे अूपर पहननेका वस्त्र माना जाता है, जब कि पश्चिमी नियममें वास्कट भीतर पहननेका वस्त्र है। समस्त मंगोलिया प्रदेश, चीनी तुर्किस्तान और पख्तून प्रदेशोंमें भी फतुअी पहननेका रिवाज सार्वदेशिक था और वह अपने आपमें पूर्ण और सम्मानित पहनावा माना जाता था। फतुअी या फितूरी, बंद या कब्जा अेवं चोली अेक ही मूल पहनावेके नाम और भेद हैं। वही पहनावा गुप्तकालमें कूर्पासक नामसे प्रसिद्ध था।" *

'कूर्पासक' के प्रसंगमें डा. अग्रवालने बहुत कुछ कह दिया। क्या कुछ कह दिया? अिसका समाधान ठीक-ठीक कर पाना खेल नहीं। आपहीका कथन अिसी प्रसंगमें यह भी है—

"जैसा कहा जा चुका है, कूर्पासक स्त्री और पुरुष दोनोंका पहनावा था। अजंताके लगभग आधे दर्जन चित्रोंमें स्त्रियाँ बिना आस्तीनकी या आधी बाँहकी चोलियाँ पहने हैं, जिनमें कअी रंगोंका मेल दिखाया गया है। अेक ही चोलीमें पीठका रंग कुछ और है और सामनेका कुछ और। औंध-नरेशकृत 'अजंता' पुस्तकके फलक ७२ में यशोधरा बिना आस्तीनका कूर्पासक पहने हैं, जिसपर बाँधनूकी बुंदकियाँ पड़ी हैं। फलक ७७ में रानी और कअी अन्य स्त्रियाँ कूर्पासक पहने हैं। अेक चित्रमें पीठकी ओर कत्थअी और सामने लाल रंगसे कूर्पासक रंगा गया है और अुसपर भी बड़ी बुंदकियाँ डाली गयी हैं। फलक ७५ (गुफा १)के चित्रमें नर्तकी पूरी बाँहका दुरंगा कूर्पासक पहने है। फलक ५७ (गुफा १७, दंपतीका मद्यपान दृश्य) में झारी लिये हुअे यवन स्त्री आधी बाँहका कर्बुर कूर्पासक पहने है।" (पृष्ठ ३२७)। अब समझ तो लें कि 'कूर्पासक' वस्तुतः है क्या। वास्तवमें वह 'बिना बाँह' का पहनावा है या 'पूरी बाँह'

❀ (प्राचीन भारतीय वेश-भूषा, पृ. १६१)

* (नागरी प्रचारिणी पत्रिका, सं. २००९ वि. पृष्ठ ३२६-७)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा 'आधी बाँह' का ? डा. अग्रवाल तो तीनोंको ही 'कूपासक' कहते हैं न ? अुनका मुख्य कथन है--

"अेक तो यह कमरसे अूंचा रहता था और दूसरे प्रायः बिना आस्तीनका होता था।"

और अिसीके साथ है टिप्पणी भी—

"'चोली दामनका साथ है' अिस मुहावरेका तात्पर्य यही है कि कटिभागमें जहाँसे नीचे दामन या लहँगा शुरू होता है, वहींसे अूपर चोली प्रारंभ होती है। चोली और दामन दोनों मिलकर पूरा वेश बनता है, अतः दोनोंका साथ अनिवार्य है।"

स्थिति कुछ भी हो। डा. अग्रवालका यह कथन मननीय है—

"वस्तुतः कूर्पासक नाम अिसीलिअे पड़ा, क्योंकि अिसमें आस्तीन कोहनियोंसे अूपर ही रहती थी।"

तो फिर 'कूर्पासक' के विवेचन और प्रयोगमें अिसकी अुपेक्षा क्यों की जाअे ? स्मरण रहे। अुदीच्य कवि आर्यश्यामिलकका कथन है--

कर्णद्वयावनतकाञ्चनतालपत्रा
वेण्यन्तलग्नमणिमौक्तिकहेमगुच्छा।
कूर्पासकोत्कवचितस्तनबाहुमूला
लाटी नितम्बपरिवृत्तदशान्तनीवि ॥ १०३ ॥

—(पादताडितक भाण, सन् १९२२ अी.)

जी। 'कूर्पासकोत्कवचितस्तनबाहुमूला' से स्वयं स्फुट है कि 'कूर्पासक' वस्तुतः है क्या वस्त्र, जो अुसकी खोजमें अितनी मनमानी व्याख्या हो रही है। 'स्तन-बाहुमूला' से स्पष्ट ही है कि वह यथार्थमें अिसी प्रदेशका आच्छादन है। अुसे संक्षेपमें वक्षस्थलका वस्त्र कह सकते हैं। नाभिप्रदेश तक अुसकी गति नहीं। कवि-कुलगुरु कालिदास कहते हैं—

मनोज्ञकूर्पासकपीडितस्तनाः
सरागकौशेयकभूषितोरुकः।
निवेशितान्तः कुसुमैः शिरोरुहै
र्विभूषयन्तीव हिमागमं स्त्रियः ॥८॥

—(अृतुसंहार, पंचम सर्ग)।

श्री सीताराम चतुर्वेदीजीका अिसका 'नागरी' अनुवाद है—

"सुन्दर चोलियोंसे अपने स्तन कसे हुअे, जाँघोंपर रेशमी कपड़े पहने हुअे और बालोंमें फूल गूँथे हुअे स्त्रियाँ अैसी लग रही हैं, मानो जाड़ेके स्वागतका अुत्सव मनानेके लिअे सिंगार कर रही हों ॥८॥" (कालिदास-ग्रन्थावली)।

आर्यश्यामिलकने 'कूर्पासकोत्कवचितस्तन-बाहुमूला' में 'कूर्पासक' का जो अुपयोग किया है वह सर्वथा कविकुलगुरुके 'मनोज्ञकूर्पासकपीडितस्तना' के साथ है और खुलकर बता रहा है कि यह कसा-कसाया परिधान है कुछ ढीलाढाला पहनावा नहीं। कविकुलगुरुने पहले भी कहा था—

कूर्पासकं परिदधाति नखक्षताङ्गी व्यालम्बिनी-ललितालककुञ्चिताक्षी। अुनका पूरा श्लोक है—

अन्या प्रियेण परिभुक्तमवेक्ष्यगात्रं
हर्षान्विता विरचिताधरचारुशोभा।
कूर्पासकं परिदधाति नखक्षताङ्गी
व्यालम्बिनीललितालककुञ्चिताक्षी ॥

यह 'हेमन्त' की स्थिति है। अिसका अर्थ है—

"नखोंके घावोंसे भरे हुअे अंगोंवाली और लटकती हुअी सुन्दर अलकोंसे ढकी हुअी आँखोंवाली अेक दूसरी स्त्री, अपने प्यारेसे अुपभोग किये हुअे शरीरको देख-देखकर बड़ी मगन होती हुअी अपने अधरोंको फिर पहलेकी नाअीं सुन्दर बनाकर अपनी चोली पहनने लगी है ॥१७॥" (वही)।

ध्यान देनेकी बात है कि कालिदासने 'हेमन्त' और 'शिशिर' अर्थात् जाड़ेके दिनोंमें ही 'कूर्पासक' का व्यवहार किया है। अन्यथा 'वसन्त' की स्थिति तो अुनके यहाँ यह है—

कुसुम्भरागारुणितैर्दुकूलै
र्नितम्बबिम्बानि विलासिनीनाम्।
तन्वंशुकैः कुङ्कुमरागगौरै
रलंक्रियन्ते स्तनमण्डलानि ॥५॥

अर्थात्—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"कामिनियोंने अपने गोल-गोल नितम्बोंपर कुसुमके लाल-लाल फूलोंसे रंगी रेशमी साड़ी पहन ली है और स्तनोंपर केशरमें रंगी हुअी महीन कपड़ेकी चोली पहन ली है ॥५॥"

किन्तु यह आवश्यक नहीं कि 'अंशुक' का अर्थ 'चोली' ही किया जाअे। वह केवल वस्त्रखंड मात्र भी हो सकता है। 'कूर्पासक' की भाँति वह 'अुत्कवचित-स्तनबाहुमूला' का रूप किसी रमणीको नहीं दे सकता। नहीं 'कूर्पासक' 'कवच' का काम करता और 'रतिरण' के योग्य ठहरता है। यही कारण है कि अिसे रणवीर भी धारण करते हैं। डा. मोतीचन्द्रहीका यह भी कथन है—

"अजंताके सिंहल-युद्ध नामक चित्रमें घुड़सवार आधी बाहोंवाले कूर्पासक और जाँघिया पहने हैं। अिस कूर्पासकके गले और मुहरियोंपर गोटें लगी मालूम पड़ती हैं (आ. ३१२)।" (वही, पृष्ठ १९१)।

और सच तो यह है कि डा. वासुदेवशरण अग्रवालकी खोजका विषय ही है यही पुरुषधारी कूर्पासक'। आप लिखते हैं—

"राजाओंका अेक वर्ग नाना रंगोंसे रंगे हुअे चितकबरे कूर्पासक पहने हुअे था (नानाकषायकर्बुरैः कूर्पासकैः, २०६)।" (वही, पृष्ठ ३२६)।

अिसके आगे अुन्होंने जो कुछ कहा है अुसका बहुत कुछ अंश पहले आ गया है। अुससे 'कूर्पासक' की स्थिति कहाँ तक स्पष्ट होती है, अिसे पाठक स्वयं देख सकते हैं। हमारी समझमें तो 'कूर्पासक' का सच्चा संकेत वही है, जिसका पता आर्यश्यामिलकने अपने 'भाण' में दिया है। अुसे आज 'अँगिया' कहना कहाँतक ठीक होगा, कह नहीं सकता। हाँ, अितना विदित अवश्य है कि अुसका अुपयोग है 'स्तनबाहुमूल' को 'कवचित' करनेमें, फिर वह चाहे स्त्रीका यह प्रदेश हो, चाहे पुरुषका।

[काशी।

सहनशीलता

"सहनशीलता अुच्च स्वभावका भूषण है। सहनशक्ति सबको नहीं मिलती। 'कुशब्द' को केवल सहनशील सत्पुरुष ही सहन कर सकते हैं। दूसरे नहीं सहन कर सकते। सहनशीलता अहंकारको त्यागने और दीनताको ग्रहण करनेसे प्राप्त होती है। जो दंभ और अहंकारका त्यागकर दीन तथा सहनशील बन जाता है, अुसीको भगवान सफलता देते हैं। जिस प्रकार अुत्तम पुरुष विनीत होते हैं, अुसी प्रकार दुष्टजन अुद्धत दुर्विनीत होते हैं। अच्छे लोग खलके वचनोंको, अैसे निर्विकार भावसे सहते रहते हैं, जैसे पर्वत वर्षाकी बूंदोंके आघात सहते रहते हैं। क्षमा जो सबसे अच्छा धर्म है, सहनशीलताकी सहचरी है। सत्पुरुष सहनशीलता और क्षमाको कभी नहीं छोड़ते और निन्दासे हर हालतमें भी विचलित नहीं होते।"

—"संतवाणी"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्य और रीति-रिवाज

: महात्मा भगवानदीन :

बिलकुल छोटे बच्चेका पता नहीं, पर बड़े बच्चेसे लेकर बूढ़े तक अेक खास कमजोरी लिये हुअे हैं। यह कमजोरी सत्यको सहन नहीं। यह कमजोरी अितनी फैल गयी है कि सत्यकी लाख मेहनत करनेपर भी कम नहीं हो पाती। रिजका नामकी अेक घास होती है। जानवरोंके लिअे अुसे बोते हैं। अुसे अेक तरफसे काटें तो दूसरी तरफसे बढ़ने लगती है। यह कमजोरी अिसी घासकी तरह अेक तरफ कटती और दूसरी तरफ अुग आती है। अिस कमजोरीका नाम है **सहज विश्वास**। रीति-रिवाज अिस सहज विश्वासकी सन्तान है।

न कभी सहज विश्वास आदमीको छोड़ सकेगा और न रीति-रिवाज। सत्यकी यह कोशिश नहीं कि रीति-रिवाज खत्म हों। रीति-रिवाजके बढ़नेसे सत्यका कोअी नुकसान नहीं। सत्यको धक्का पहुँचता है अुस समय, जब रीति-रिवाजको यह कहकर अपनाया जाता है कि अगर ये न किये जाअें तो कोअी अैसी आफत कुटुम्ब या समाजपर आ जाअेगी जो हटाये न हट सकेगी। सत्य अिस वहमको दूर कर देना चाहता है। वहम अन्धेरा है, सत्य प्रकाश है। ये दोनों अेक जगह नहीं रह सकते। सत्य जीवनमें प्रसन्नता लाता है, वहम अुस प्रसन्नताका रस चूस लेता है, फिर जो कुछ आदमीके हाथ पड़ता है, वह छूँछ होती है। गन्नेकी खोअी और बादामकी खलकी तरह अुस छूँछमें मिठास और चिकनाअी रहती तो है, पर अितनी नहीं जिससे आदमी पूरा-पूरा लाभ अुठा सके। अगर अुसको वह खोअी और खल बिलकुल न मिली तो कुछ बुरा तो होगा, पर अितना बुरा न होगा जितना खोअी और खल मिल जानेसे होता है। क्योंकि अुनके मिलनेसे अुसे मिठास और चिकनाअीका स्वाद आता है, तबीयत नहीं भर पाती, तृष्णा जाग अुठती है। वह अुसे पहलेसे ज्यादा दुबला कर देती है। सत्यकी कोशिश है, अुसके सहज विश्वासको ठीक करे और रीति-रिवाजोंका पूरा मिठास और पूरी चिकनाअी आदमीको मिलने दे।

जब रीति शुरू होती है तब अुसे रीति नहीं कहा जाता। वह किसी रीतिकी जगह लेती है, अिसलिअे रीति कहा जाता है। रीतिके माने हैं किसी कामके ढंगको बहुतोंका अपना लेना और बहुत दिनोंतक अपनाये रखना। जो ढंग आज निकला है अुसे रीति-रिवाज कैसे कहा जा सकता है? नये ढंगको अेकदम रीति-रिवाज नाम क्यों दिया जाने लगा? अिस सवालका जवाब सीधा है। संगठित समाजमें कोअी ढंग कानूनके जरिये अेक दिनमें जारी किया जा सकता है। जिस तरह आमतौरसे लम्बे लिफाफे चलते थे, अेकदम चौकोर चल पड़े तब चौकोर लिफाफोंके बारेमें यह कह देना बेजा नहीं कि आजसे चौकोर लिफाफोंका रिवाज हो गया। रीति-रिवाजके माने बदल गये। रीति-रिवाज जिस वक्त शुरू हुअे थे, अुस वक्त समाज संगठित न था, या था तो अितना संगठित न था कि अपने हुक्मसे काम करनेके किसी ढंगको अेकदम बदल सके। होता यह था कि किसीने अेक ढंग अपनाया, अुसको समाजमें फैलनेमें समय लगता था; दिनोंमें ढंग रीति-रिवाज नाम पाता था।

किसी देशका समाज आजकल कुछ बातोंको छोड़-जिनका सरकारी कानूनसे सम्बन्ध है, किसी बातमें साराका सारा अेक रीति-रिवाजमें बंधा मिलेगा। हर देशका समाज अनेक टुकड़ोंमें बँटा हुआ है।

चार वर्णोंकी बात पहलेसे चली आ रही है, अुनमें तो समाज बँटा है ही, पर अुन चारमेंसे हर अेक चार-चार और आठ-आठमें बँटा हुआ है। आज जितनी जातियाँ हैं सबके अलग-अलग रिवाज हैं। यानी सबके रहन-सहनके अलग-अलग ढंग हैं। समाजी मामलोंको छोड़ दिया जाअे, सिर्फ सरकारी मामलोंको लिया जाअे, अुसके भी ढंग सब जगह अेक-से नहीं हैं। हर प्रान्त अपने ढंगोंके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिअे स्वाधीन है। कुछ बातोंमें अेक ही प्रान्तका हरअेक जिला अपने ढंगके लिअे स्वाधीन है। यही हाल तहसील-तालुकों, परगनों और गाँवोंका है।

समाजी और सरकारी कामोंका अलग-अलग ढंग यह साबित करता है कि हर जगहके रीति-रिवाज अलग-अलग हैं। अलग-अलग यों है कि हर जगहका हवा-पानी अलग-अलग है। अेक ढंग दूसरी जगह नहीं बैठ सकता। राजपूतानेमें, जहाँ रेतके टीले हैं और दूर दूरतक रेत फैला हुआ है, काम करनेके जो ढंग सोचे जाअेंगे वे पंजाबमें नहीं सोचे जा सकते। पंजाबमें बड़ी और कअी छोटी नदियाँ बहती हैं। यही हाल अुत्तरप्रदेशका है। वहाँ भी नदियोंकी कमी नहीं। पंजाब और अुत्तरप्रदेशमें काम करनेके ढंग बिलकुल अलग रहेंगे। अब राजपूतानेके ढंग, पंजाब या अुत्तरप्रदेशके ढंगोंसे मेल न खाअें और राजपूतानाके आदमी अपने सहज विश्वासको लेकर पंजाब और अुत्तरप्रदेशवालोंसे झगड़ बैठें या समझें कि वे अुनके विपरीत ढंगोंको अपनाकर कोअी अनीति कर रहे हैं तो यह कितनी बुरी बात होगी? किन्तु हो रहा है अैसा ही। सत्य अिस आपसी झगड़ेको मिटा देना चाहता है। झगड़ा मिटानेका नुस्खा बड़ा अच्छा आता है, पर लोग अुस नुस्खेके अिस्तेमालमें बड़ी गड़बड़ी कर जाते हैं। नुस्खा अुस कागजके परचेको कहा जाता है जिसपर कोअी हकीम कुछ दवाअी लिख देता है और यह भी लिख देता है कि वह दवा किस तरह तैयार की जाअेगी और किस तरह काममें लायी जाअेगी। अब अगर कोअी आदमी नुस्खेके अुस कागजको ही दवा समझकर खा ले तो अिसमें हकीमका क्या दोष? ठीक अिसी तरह सत्य अेक रिवाजके ढंगको बदलता है और अुसकी असलियत समझा देता है, पर लोग अुस ढंगको अपना लेते हैं और अपने सहज विश्वासको अुसके साथ नत्थी कर देते हैं। वही ढंग नया होनेपर पुराने ढंगकी तरह मिठास और चिकनाअी खो बैठता है।

सत्य अिस बातपर जोर नहीं देता कि रीति-रिवाज बदल डालो। अुसका जोर अिस बातपर है कि रीति-रिवाजकी असलियत जान लो। यह ठीक है जैसे ही आदमीको किसी रिवाजकी असलियतका पता चला वैसे ही वह अुसे छोड़ बैठेगा। क्योंकि बहुत कम रिवाज अैसे हैं जिनकी असलियत आज कायम रह गयी है। अुदाहरणके लिअे अगर कोअी रिवाज अुस वक्त बना था जिस वक्त हमारे देशमें रेल न थी तो वह रिवाज आज कैसे रह सकेगा अगर अुसकी असलियतको लोग समझ जाअें। सत्य जबरदस्ती नहीं करता। सत्य हमें बल देता है, हमें जगाता है, हमारे मस्तकको विचारकी आजादी देता है, हमारे ज्ञानको साफ करता है और हमें सच्चा ढंग सोचने, अुसपर अमल करनेकी हिम्मत देता है।

सारे रीति-रिवाज जन्म, विवाह और मौतके चारों तरफ घूमते हैं। अगर अिन तीनोंको ठीक-ठीक समझ लिया जाअे तो रीतिरिवाजोंके पीछे रहनेवाले जिस सहज विश्वासने मिथ्या और अन्धविश्वासका रूप ले लिया है वह ठीक हो जाअे और फिर रीतिरिवाज, जो आदमीपर सवारी गाँठे हुअे हैं, आदमीकी सवारीमें आ जाअें, और जीवन-यात्रामें गति और प्रसन्नता आ जाअे।

जन्म अिससे ज्यादा कुछ नहीं, कि वह आदमी जो अभीतक बीजकी तरह जमीनके अन्दरसे बाहर निकलनेके लिअे जोर लगा रहा था, अंकुरके रूपमें बाहर निकल आया। पेड़का जमीनसे रिश्ता बना रहता है। यानी अुसकी जड़ अंकुर निकलनेके बादसे बड़े होने तक जमीनके अन्दर रहती है। आदमीके मामलेमें अैसा नहीं होता। आदमी या अुसी जैसे प्राणी अपनी माँसे अेकदम सम्बन्ध छोड़ देते हैं, पर अुनको भी आगे बढ़नेके लिअे भोजन पानेकी खातिर माँसे सम्बन्ध जोड़ना पड़ता है। अिसलिअे किसी अंशमें आदमी पेड़से मिलता है। बहुत पेड़ अैसे हैं जो अपने फूल और फल गिरा देते हैं, पर अुनके फल-फूल गिरानेको जन्म नाम नहीं दिया जाता, क्योंकि वह गिरकर बढ़ते नहीं। पेड़के अंकुरको जन्म नाम दिया जाता है क्योंकि वह बढ़ता है। पेड़ोंसे लेकर आदमीतक सबके जन्मपर नजर डाली जाअे तो अैसा मालूम होगा, प्रकृतिने अुनकी कोमलताको ध्यानमें रखकर अुनको बचाये रखनेके लिअे काफी प्रबन्ध किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है; बाहरी आफतोंसे बचानेके लिअे सब प्राणियोंमें अैसी भावना पैदा कर दी है जिसकी वजहसे वह अुन कोमल देहधारियोंको कमसे कम सतानेकी सोचते हैं। सत्य चाहता है, प्रकृतिके अुन कोमल देहधारियोंकी रक्षा करनेमें मदद की जाअे, और आदमी अिस बारेमें अपने सहज विश्वासको मैला न होने दे। जन्मके कोमलपनको ध्यानमें रखकर जो कुछ किया जाअे, ठीक है; और जो किया जाअेगा वह सत्य होगा।

विवाह अिसके सिवाय और कुछ नहीं कि प्राणीके अन्दर जो अेक विशेषता है कि वह अपने पीछे अपने जैसे प्राणी छोड़ जाता है, अुस विशेषताको बनाये रखे, सृष्टि रचनाको सुखसे चलनेमें प्रकृतिकी मदद करे। विवाह अेक अैसी रस्म है जो आदमीकी अपनी सूझ है, क्योंकि और प्राणियोंमें विवाह जैसी रस्म नहीं पायी जाती। आदमी पशुओंको पालता है और जो पशु पूरी तरह आजाद नहीं हैं अुनके गर्भाधानका प्रबन्ध करता है। अुस गर्भाधानको विवाह नाम दिया जा सकता है। वैदिक कालके शुरू-शुरूमें या मानव समाजके बालपनमें विवाह नामकी कोअी चीज न थी। विवाहका सम्बन्ध गुलामीसे है। विवाह आदमीकी दासताकी निशानी है, आदमीके पतनका चिन्ह है। जैसे-जैसे आदमी समाजके बन्धनोंमें ज्यादह ज्यादह जकड़ता गया, वैसे-वैसे विवाहके कायदे सख्त होते गये और वैसे वैसे आदमीका वासनापरसे काबू हटता गया। आज भी जिन्हें-जंगली जाति नामसे पुकारा जाता है, वह वासनाके लिहाजसे शहरी जातियोंसे बहुत अच्छे हैं। मनुष्य समाज अपनी आजादी खोकर जब सामाजिक बन्धनमें फँसा तब वह अितना आजाद था कि अुसे किसी तरहके विवाहकी जरूरत न थी, अुसकी वासनाअें काबूमें थीं, पर समाजके साथ रहकर खाने-पीनेका सुभीता हो जानेसे वह अपनी वासनाका संतुलन खो बैठा।

समाजको अुसके बन्धन सख्त करने पड़े। सबसे पहले समाजने आदमीको बाँधनेके लिअे अुससे यह आजादी छीनी कि वह गर्भाधानके मामलेमें पूरा स्वाधीन न होगा। आजके पालतू पशु भी कहाँ आजाद हैं? गर्भाधानका रिवाज बढ़कर विवाह नाम ले बैठा। यह है विवाहकी असलियत।

गर्भाधान नामी विवाह आज सुहाग-रात नामसे मौजूद है। गर्भाधानके अुस वक्तके रिवाज जब अुसका संस्कार नाम था, कभीके नष्ट हो गये। सुहाग-रातकी रीतियाँ अब वे नहीं रहीं। सुहाग-रात खतम हो रही है। यह खत्म हुअी कि गर्भाधान नामी विवाह अेकदम खतम। गर्भाधान संस्कार अुन दिनों ज्यादा जोर पकड़ गया था। जब दो-दो तीन-तीन बरसकी लड़कियोंकी शादी चल पड़ी थी। अुस वक्त अिसकी जरूरत थी, अब नहीं। सौ, दो सौ, पांच सौ बरसमें, अगर मनुष्य समाज अितना समझदार हो गया कि वह अपनी वासनाओंपर काबू रख सके और अितना आजाद हो गया कि वह दुनियाभरसे अपना नाता जोड़ ले और मेल मुहब्बतसे रहने लगे, तो विवाहकी रस्म खत्म हो जाअे। हमारा खयाल है, मनुष्य समाज जिस जंगलीपनसे निकलकर आजकी सभ्यता तक पहुँचा है, अेक दिन पूरा सभ्य होकर अुसी जंगलीपनको अपना लेगा जहाँसे वह चला था। यह अेक अलग विषय है, पर यहाँ अितना साफ कर देना जरूरी है कि मनुष्य जब फिर जंगली बनेगा तब वह जंगली न होगा। बहुत संस्कृत और सभ्य होगा, अुसका आत्मा समझकर साफ हो चुका होगा। वह जिस जंगलीपनको मूर्खतावश अपनाये था, नुकसान कर रहा था, आगे बढ़नेसे रुका हुआ था, अब अुसी जंगलीपनको सोच-समझकर अपनाअेगा और मेल मोहब्बतके साथ दूसरे चक्रकी तैयारी करेगा। अुस चक्रकी अगली मंजिल क्या होगी, अुसके बारेमें कुछ कहना बेकार है। हमारे कामकी अितनी बात है कि विवाहकी असलियत सिर्फ अितनी है कि मनुष्य जैसा प्राणी अपने पीछे, अपने जैसे और अपनेसे अुन्नत प्राणी छोड़ सके। बस, अितनी बातको ध्यानमें रखकर हमें विवाह करनेके ढंग अपनाने चाहिअे।

मौतका मतलब है, शरीरका बेकार हो जाना। मनुष्य समाज जब बालक था, तब किसीके मर जानेपर न रोता था, न अुस मरे हुअे आदमीके बारेमें कुछ सोचता था। बंदरमें अपने छोटे बच्चेके लिअे मोह है, मादा अपने मरे बच्चेके खल्लड़को छह-छह महीने गलेसे लगाये फिरती है, पर बड़े बन्दरोंकी मौत हो जानेपर बन्दर समाज मरे बन्दरके लिअे न रोता है, न कुछ और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करनेकी सोचता है। कअी किताबोंमें हमने पढ़ा है कि कहीं-कहीं कुछ खास तरहके बन्दर किसीके मर जानेका शोक मनाते हैं। हो सकता है, यह बात ठीक हो, पर शोक मनानेवाले बन्दर अुस मरे हुअे बन्दरके बारेमें अौर ज्यादह नहीं सोच सकते।

मनुष्य समाजमें मुर्दोंको दफन करने, जलानेका रिवाज बहुत पीछे चला। कुछ रिवाज अैसे हैं, जो पहले थे, पीछे बन्द हो गये, फिर चल पड़े, फिर बन्द हो गये। कुछ रिवाज अैसे हैं, जो कहीं-कहीं बन्द हो गये, कहीं-कहीं जारी हैं। वे रिवाज ये हैं:— मुर्दोंको वहा देना, मुर्दोंको जलाकर वहा देना, मुर्दोंको जानवरोंको खिला देना। वहा देनेका रिवाज जलाने और दफन करनेके पहलेका है। अिसको आदमीने प्रकृतिसे सीखा। डूबनेपर आदमी मरकर अूपर तैरने लगता था। अुसको जानवर खा जाते थे। वहा देनेका रिवाज मुर्देके प्रति मोह होनेसे, जँचा नहीं। अुसे दफन करने और जलानेका रिवाज अपना लिया गया। जलानेके रिवाजके बाद और नये तजुर्बे हुअे। और अुन तजुर्बोंके बलपर अुसने गर्भवती औरतों, जहर खाये हुओं, साँपके काटोंको, जलानेकी जगह वहानेका रिवाज शुरू किया। जानवरोंको खिलानेका रिवाज पारसियोंको छोड़ और कहीं नहीं रह गया। अुनमें यह रिवाज किन मनोभावोंको लेकर मौजूद है, अुनको हम यहाँ नहीं लिखना चाहते। यहाँ सिर्फ अितना कहना चाहते हैं कि मरनेके बाद आदमीका जिस्म मिट्टी हो जाता है, अुस जिस्ममें और मिट्टीमें कोअी अन्तर नहीं करना चाहिअे। यह अन्तर रहेगा ही कि आदमीके देहकी मिट्टी सड़ने लगती है, आदमियोंमें बीमारी पैदा करती है, पर यह बात तो गाय-भैंस, कुत्ते-बिल्लीकी देहके साथ भी है। आदमी जिस तरह कुत्ते बिल्लियोंकी देहके लिअे सोचता है वैसे ही आदमीकी देहके लिअे सोचे। सत्य चाहता है, आदमी मुर्देकी देहको मिट्टी समझे। अैसा समझकर अुसको फेंकने या ठिकाने लगानेके तरीके सोचे। अुसके साथ बेमतलबकी भावना जोड़कर, तरह-तरहकी बेतुकी बातें सोचकर, अपना मन गंदला न करे। सहज विश्वासको अन्धविश्वास और मिथ्या विश्वासके जालमें न फँसाअे।

"सत्य और सुख-दुख" अध्यायमें कहा जा चुका है कि दुख कोअी बुरी चीज नहीं। दुनियाके कम दुख-दर्द अैसे हैं जिनसे बचनेकी जरूरत है। बहुत तो आदमीको सुख पहुँचानेके लिअे हैं। बच्चा पैदा होनेसे पहले जो दर्द माँको होता है, वह अुन्हींको ज्यादा तकलीफ देता है जो तन्दुरुस्त नहीं होतीं। जिनका जीवन प्राकृतिक होता है अुनको बहुत मामूली तकलीफ होती है। अिस मामूली और प्राकृतिक तकलीफको लेकर समाजमें सैंकड़ों वहम खड़े हो गये हैं। जहाँ जरा तकलीफ हुअी कि घरवाले दौड़े किसी ओझाके पास और लगे अुससे झाड़-फूंककी प्रार्थना करने। अगर बहू सासकी प्यारी हुअी तो वह भी अुतारा अुतारती है, देवताओंके नामपर अुठावा अुठाकर रखती है, और अगर कहीं वह पहलौटी गर्भवाली हुअी तब तो न जाने क्या-क्या तूफान खड़े हो जाते हैं। बहुत तकलीफ होनेपर दवा-दारू कम चलते हैं, मन्तर-जन्तर ज्यादा। हम जब छोटे थे तब मोहल्लेमें आये दिन झाड़-फूंकका तमाशा देखनेको मिलता था। अेक बार अेक औरतको बेहद तकलीफ थी, अुसके लिअे अेक पंडितने यह किया—

अेक काँसेकी थाली मंगायी, थोड़ा गेरू मंगाया, अुस गेरूको पानीमें घोला। गेरूके रंगसे थालीमें अेक चक्रव्यूह बनाया और थालीमें थोड़ा पानी डालकर अुस औरतको पिला दिया जिसको दर्द हो रहा था। पीनेके कुछ देर बाद दर्द कम हुआ और थोड़ी देरमें अुसे बच्चा हो गया।

चक्रव्यूह बनाना हमने सीख लिया। और अेकसे ज्यादा बार हमें भी अिस कामके लिअे बुलाया गया और सफलता मिली। जब हम कुछ बड़े हुअे और जन्त्र-मन्त्रसे हमारा विश्वास अुठ गया तब हमने अुस कामको छोड़ दिया। तीस बरसकी अुमरमें हमें किसी वैद्यककी किताबमें यह लिखा मिला कि काँसेकी थालीमें गेरू पिला देनेसे दर्द कम हो जाते हैं, और बच्चा पैदा होनेमें आसानी होती है। रहा चक्रव्यूह, अुसके बारेमें समाजने यह विश्वास फैला रखा कि अुसके देखनेसे बच्चा पैदा होनेमें आसानी होती है। यह मिथ्या विश्वास और दवा मिलकर कभी-कभी कुछ काम कर जाते हैं, कभी-कभी बिलकुल नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चक्रव्यूहके मिथ्या विश्वाससे समाजको यह नुकसान हुआ कि गेरू, जो दवा थी, अुसकी तरफसे लोगोंकी नजर हटकर चक्रव्यूहकी तरफ चली गयी। और गेरूकी शोध अेकदम पीछे पड़ गयी। अगर चक्रव्यूहका मिथ्या विश्वास न होता तो गेरूपर वैज्ञानिक खोजबीन की जाती और अुस खोजबीनसे, हो सकता है, समाजको लाभ पहुँचा होता।

अिसी सिलसिलेमें यह लिख देना ठीक होगा कि मलेरिया बुखारमें पीपलके पत्तेपर गेरूसे कोअी जन्तर लिखकर बुखार अुतारनेका रिवाज आजतक मौजूद है। कोअी-कोअी नासमझ जन्तरको महत्व देकर गेरूकी बजाय केशरसे जन्तर लिख देते हैं। अगर मिथ्या विश्वासको महत्व न मिला होता तो अिस तरहकी भूलें कभी न होतीं।

मिथ्या विश्वासकी मददसे अैसे मौकेपर दाअियाँ खूब फायदा अुठाती हैं, और अैसे मौकेपर घरके सभी लोग घबराये हुअे होते हैं और वह सब करनेके लिअे तैयार होते हैं, जो अुन्हें करनेके लिअे कहा जाअे। दाअी, जो बच्चा जनानेके कामकी मुखिया होती है, अुसकी बात कैसे टाली जा सकती है। अुस वक्त जो अुतारा, अुठावा बताया जाता है, किया जाता है।

बच्चा पैदा करनेका काम औरतें करती हों, अैसा नहीं, सारे पशु करते हैं। पशुओंके बच्चे जंगलमें होते हैं और आदमीके बच्चेसे कअी गुना तन्दुरुस्त होते हैं। कअी जंगली जातियाँ अैसी हैं जिनके बच्चे जंगलमें पैदा होते हैं; वे भी शहरी बच्चोंसे ज्यादह तन्दुरुस्त होते हैं।

जन्मके रीतिरिवाजोंके बारेमें अब ज्यादा कहनेकी जरूरत नहीं, सिर्फ अितना समझ लेना काफी है कि हर जंतर-मंतरके पीछे कोअी-न-कोअी विज्ञानकी सचाअी छिपी रहती है। जितनी सचाअी होती है अुतना फायदा होता है, जितना अुसके साथ मिथ्या विश्वास रहता है अुतना नुकसान होता है। अुस नुकसानसे न व्यक्ति बचता है, न समाज। अिसी सिलसिलेमें अेक आपबीती सुनिअे —

सन् १९२३ में नागपुरमें झंडा-सत्याग्रह जोरोंसे चल रहा था। स्वयंसेवकोंका अेक शिविर खुला हुआ था। वहाँ किसी स्वयंसेवकको बिच्छूने डंक मार दिया। किसीने कह दिया, हम बिच्छूका मंत्र जानते हैं। हमारे पास खबर पहुँची। हम मंत्र नहीं जानते थे,— पर स्वयंसेवकोंके सरदार होनेके नाते हम अुसके साथ चल दिये, जो हमें बुलाने आया था। डिपोमें पहुँचकर हम बिच्छू काटे स्वयंसेवककी अुसी तरह झाड़-फूँक करने लगे जैसे मंत्रवादी करते हैं। हमने कअी बार बिच्छूका जहर अुतारते मंत्रवादियोंको देखा था। हमें आये आधा मिनिट न हुआ था कि अेक मंत्रवादी आ पहुँचे। जैसे ही लोगोंने अुनके आनेकी खबर दी हमने छुट्टी ली। वह काम नये आये हुअेको सुपर्द कर दिया। जब हम जाने लगे तो नये सज्जन बोले, आप ठीक कर रहे थे, मेरी क्या जरूरत थी। हम हैरान हुअे क्योंकि हम मंत्र जानते न थे। हमने अब यह किया कि झाड-फूंकका काम नये आदमीके सुपर्द किया और हम खड़े-खड़े देखने लगे। थोड़ी देरमें जहर अुतर गया। हम नये मंत्रवादीके साथ-साथ बाहर आये, बोले, हम मंत्र नहीं जानते, आपने कैसे कहा ठीक कर रहे थे। वह भले आदमी थे। बोले, मंत्र कुछ नहीं होता, बात यह है कि जब बिच्छू डंक मारता है तब अुसके जहर चढ़नेको, कोअी दवा भले रोक सके, मंत्र हर्गिज नहीं रोक सकता। मंत्र जहर अुतार सकता है। जहरको पूरी तरह चढ़ने देना ही होगा। मंत्रवादी अपनी अिस कमजोरीसे बचनेके लिअे किसी-न-किसी तरह अितनी देर जरूर कर देते हैं कि वह अुस वक्त पहुँचे जब जहर पूरा चढ़ चुका हो। अुनके लिअे अुतारनेका काम रह जाता है। अुतारनेके लिअे यह करना पड़ता है कि पहले अुस आदमीका ध्यान अपनी तरफ करे जिसे बिच्छूने काटा हो। फिर अपने मनमें कुछ गुनगुनाकर अुससे कहना होता है, जिस जगह काटा है अुसको दिलके खिलाफ झटका दो जिससे दिलका खून जोर मारकर नीचेकी तरफ जानेकी जल्दी करे। अुस झटकेका नतीजा यह होता है कि तकलीफ या जहर नीचे अुतरना शुरू हो जाता है। दस-पाँच बार अिस तरह करनेसे तकलीफ अुस जगह तक आ जाती है जहाँ बिच्छूने डंक मारा होता है। अुस तकलीफको मिटानेके लिअे मंत्रवादी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गरम नमकसे सेंकनेकी सलाह दे देता है। बताअिये मंत्र क्या रहा? मंत्रवादी जहर न अुतारता तो जहर अपने आप नीचे अुतरता; हाँ, थोड़ी देर लगती। प्रकृतिने हर प्राणीमें दिलके खिलाफ हाथ-पाँव झटकनेका प्रबन्ध कर रखा है। आप देख सकते हैं। जैसेही बच्चेके हाथमें कोअी भिण्ड डंक मार दे वैसेही वह बच्चा अेकदम हाथ झटकना शुरू कर देता है। यही है बच्चेका अपना अिलाज आप करना।

मंत्रवादी पैसे कमानेकी खातिर लोगोंमें मंत्रकी श्रद्धा जगाते रहते हैं, अुसकी वैज्ञानिकताको छिपाये रखते हैं। यह बात आपसे छिपी हुअी नहीं कि हर मंत्रवादी जब किसीको मंत्र सिखाता है तब अुसकी शर्त होती है कि वह अुस मंत्रको किसीको न बताअे। अिस सिलसिलेमें अेक और सुन लीजिअे।

फीरोजाबादमें अेक आदमी था। वह हमपर बड़ी श्रद्धा रखता था, हमको गुरु मानता था। अेक दिन हम मंत्रोंके खिलाफ बोल रहे थे। वह आदमी मौजूद था। जब हम अपनी कह चुके और सब चले गये, वह बड़ी श्रद्धाके साथ बोला, महाराज, आपकी बात मैंने सुन ली, पर मैं खुद अेक मंत्र जानता हूँ, अुसका चमत्कार मैं आपको दिखा सकता हूँ। हमने कहा, दिखाओ। अुसने मंत्र पढ़ना शुरू किया और अपनी जाँघमें अेक जगह सुअी खोंप दी। बोला, देखिअे, यह है कि नहीं मंत्रका चमत्कार, मेरे खून नहीं निकला। हम बोले, क्या तुम हमारे कहनेसे मंत्र पढ़े बिना सुअी खोंप सकते हो? वह बोला जरूर, हमने कहा, खोंपो। अुसने वैसा ही किया और खून नहीं निकला। यह तमाशा देखकर वह अेकदम भक्तिमें आकर हमारे पाँवपर गिर पड़ा। बोला, ठीक है मंत्र कुछ नहीं होते और पूछ बैठा फिर यह मामला क्या है? खून क्यों नहीं निकलता? हमने अुसे बताया जब तुम अपने हाथसे खालको खींच लेते हो तो खूनकी नसें नीचे रह जाती हैं, और सुअी अुस जगह जाती है जहाँ नसें नहीं हैं; फिर खून कहाँसे निकलेगा?

यह बात हमने अिसलिअे लिख दी कि हर रीति-रिवाज और मंत्रके पीछे श्रद्धाके घटाटोपमें विज्ञानका अंश छिप जाता है और अुससे बहुत नुकसान होता है। अिससे बचना हरेकका काम है।

विवाहकी रस्में अिसी तरहकी हैं। किसी रस्ममें कोअी जरूरत छिपी हुअी है, किसीमें कोअी वैज्ञानिकता और कुछ अैसी रस्में हैं जिनमें दोनोंमेंसे अेक नहीं। वह लोगोंने पैसा कमानेके लिअे गढ़ ली हैं। आदमीके विश्वासकी कमजोरीसे आदमी खूब फायदा अुठा रहा है।

विवाहमें आरतीकी रस्मको ले लीजिअे। यह रस्म मंदिरोंमें खूब चलती है। अिसमें होता यह है कि थालीमें और चीजोंके साथ-साथ अेक जलता दीपक रहता है। अुसको थाली समेत दो-तीन बार अुस आदमीके दायें-बायें करते हैं जिसका आरता करना होता है। अिस रस्मकी तहमें जरूरत छिपी हुअी है। अब यह रस्म बिलकुल बेकार है। जरूरत यह है कि जितने पुराने मंदिर हैं, अुनकी वेदियाँ अैसी जगह बनी हुअी हैं जहां करीब-करीब चौबीसों घंटे अन्धेरा रहता है, पुजारी दियेकी रोशनीमें मूर्तिका शृंगार करता है। अुसे कभी-कभी अपने शृंगारको जाँचनेके लिअे दीपकको आँखके सामनेसे हटाकर दायें-बायें करना होता है। अैसा किये बगैर वह मूर्तिके दोनों तरफके शृंगारकी पूरी जाँच नहीं कर सकता। विवाह शादियोंमें आम तौरसे रस्में रातको होती हैं और दुल्हे-दुलहनको सजानेका काम भी अुसी वक्त होता है। आरतेकी रस्म हमेशा सजानेके बाद की जाती है जब यह रस्म चली थी तब वह रस्म न थी, कलाकारकी जरूरत थी। अब वह रस्म है और सिवाय नुकसानके कोअी फायदा नहीं। अब दिनमें खुले मैदानमें आरता किया जाता है और अुसी तरह दिया जलाकर किया जाता है जिस तरह अन्धेरेमें या रातमें।

रस्मोंके सिलसिलेका सिलसिला अैसा है कि अुसके लिअे अेक अलग किताबकी जरूरत है। पर दो-अेक रस्मोंका जिक्र करके हम पढ़नेवालोंमें अैसी भावना जगा देना चाहते हैं कि वे अपने आप ही रस्मोंकी परख कर सकें।

विवाहके अवसरपर कूड़ी यानी घूरा पूजनेका रिवाज है। वह भी अेक जरूरत है। गाँवमें शायद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज भी अुसकी जरूरत हो। शहरोंमें वह बिलकुल बेकार चीज है। कूडी या घूरा अुस जगहका नाम है, जहाँ मुहल्लेभरका कूड़ा जमा रहता है। अुसको पूजनेका रिवाज है। पूजाके और काम छोड़कर असली काम यह होता है, वहाँ अेक जलता हुआ दिया रखा जाता है। यह दिया ही असली जरूरत है। यह अिसलिअे होता है कि रातके वक्त बाहरसे आये बराती यह जान लें कि यहाँ कूड़ा पड़ा है और भूलसे अपने पाँव अुसपर न रखें। दिनमें दियेकी जरूरत नहीं; पर, अगर घूरेकी पूजा दिनमें हुअी, तब भी दिया रखा जाअेगा। दिया रखना कभी जरूरी और अकल-मंदीका काम था, आज गैरजरूरी और बेवकूफीका काम है।

यों तो शृंगार रोज ही सब करते हैं, पर विवाहके अवसरपर वह रस्मके तौरपर किया जाता है और आजकल वह अितना भद्दा मालूम होता है कि शहरमें रहनेवालोंकी आँखें अुसें देखना पसन्द नहीं करतीं। जिस तरह मेंहदी रचाना, काजल लगाना, रोलीसे चेहरेको रंगना, हाथमें कलावा बांधना अित्यादि कुछ रस्में जरूरतसे हैं, कुछमें वैज्ञानिकता छिपी है, कुछ लोभकी अीजाद हैं, कुछमें ये तीनों मौजूद हैं। काजलको ले लीजिअे, अुसमें वैज्ञानिकता तो यह है कि वह दवा है, आँखोंको रोशनी देता है। अुसके लगानेकी बात वैद्यकके हर ग्रंथमें मिल सकती है। जरूरत यह है कि वह शृंगारका अंग बन गया है और काली आँखें खूबसूरतीको और बढ़ा देती हैं। यह दूसरी बात है कि काजल बेवकूफीसे लगाकर खूब-सूरतीको बढ़ानेकी जगह घटा दिया जाअे। काजलकी बजाय सुरमा ज्यादा ठीक रहेगा। क्योंकि वह सलाअीसे लगाया जाता है। वह अुतना ही लगता है जितना जरूरी होता है। लोभकी अीजाद यों है कि काजल लगानेवालीको कुछ पैसे मिलते हैं। अिसलिअे वह दिनमें लगाया जाने लगा। जरूरतके लिअे दवाके तौरपर काजल रातको लगाया जाता है। काजल लगाकर सो जाना जरूरी है, तभी वह फायदा करता है। पर रस्मसे और फायदेसे क्या लेना-देना? रस्मके माने है अैसे काम जहाँ अकलको दखल न हो। अब रह गया अिस रस्मका धोखा, काली आँखें तन्दुरुस्तीकी पहचान हैं। पूरे तन्दुरुस्त आदमीकी आँखें कम काली होंगी। बीमार आदमीकी आँखें अपना कालापन अेकदम खो बैठती हैं। काजल अिसलिअे भी लगाया जाता है कि लोगोंको धोका दिया जा सके। और बीमार आँखोंको तन्दुरुस्त आँखोंका रूप दिया जा सके। अिस सिलसिलेमें पढ़नेवालोंके मनमें कुछ और सवालात अुठ सकते हैं। पर अगर वे जरा कोशिश करें तो अपने सवालका जवाब खुद सोच सकते हैं। अुदाहरणके लिअे कुछ आँखें नीली होती हैं, कुछ पीली। पर हिन्दुस्तानमें वैसी आँखें बहुत कम मिलती हैं। अुन आँखोंके पलक काले होते हैं। वह भी काली अच्छी लगती हैं। हिन्दुस्तानी आँखोंको वैसी आदत है, अिसलिअे अुन आँखोंको काजल सुन्दर बना देता है।

रीति-रिवाजोंने हमारी अकलको अेकदम पीछे डाल दिया है। कुछ नासमझ आदमियोंके हाथोंमें अैसी सत्ता दे दी है कि वह समझदारोंपर शासन करने लगते हैं। रीति-रिवाजके मामलेमें बिरादरीके अनपढ़ और मूर्ख लोग रस्मोंकी याददाश्तके बलपर किसीपर रोब जमा बैठते हैं। कभी-कभी अिन रस्मोंको लेकर तरह-तरहके झगड़े खड़े हो जाते हैं। कअी रस्में अैसी हैं जो घर-घरमें अलग-अलग तरह मनायी जाती हैं। अुस वक्त तो बड़ी मुश्किल हो जाती है, जब किसी विवाहमें अेक ही रस्म लड़केवालेके यहाँ अेक तरह मनायी जाती हो और लड़कीवालेके यहाँ दूसरी तरह। दोनोंमें, जो जोरदार होता है, अुसीकी रस्म चलती है। अगर दोनों बराबरके हुअे तो या तो दोनों रस्में होती हैं या दोनोंकी कोअी खिचड़ी तैयार कर ली जाती है।

विवाहकी अनगिनत रस्में हैं। अुन सबपर यहाँ लिखा जा सकता, पर अितना ही याद रखना काफी है कि रस्में हमारे अूपर अधिकार न जमा पाअें, अुनपर हमारा अधिकार रहे। वे जरूरत लिहाजसे बदलती रहें। अिसमें शक नहीं कि रस्में बदलती रहती हैं, बदलती रही हैं, और बदलती रहेंगी। पर क्या ही अच्छा हो अगर अुन रस्मोंको हम सोच-समझकर बदलें। सोच-समझकर बदलनेसे रस्में हमारे कामकी चीज बन सकेंगी, अपने आप बदली हुअी रस्में हमारे काममें अड़चन बनी रहेंगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन् १९०३ का जिक्र है। हमारे अेक दोस्तके बूढ़े बापकी मौत हुअी। अुसका बाप अितना बूढ़ा था कि शोक मनानेकी जरूरत न थी। अुधर हमारा दोस्त रस्मोंके मामलेमें अितना अुदार था कि किसी रस्मको अपनानेके लिअे तैयार। ये दो बातें मिलकर अेक अजब रूप ले बैठीं। मुर्देकी रथी बनानेसे जलानेतक कदम-कदम रस्मोंका सवाल अुठा। हमारे पढ़नेवाले अेक बात और नोट कर लें कि हमारे दोस्तके बापकी रथी ले जानेमें जितने आदमी शामिल थे उनमें अेक भी अैसा न था जिसकी अुमर ३०-३५ से अूपर हो। हमारे दोस्तके घरमें कोअी बुढ़िया न थी। कोअी अैसा न था जो किसी खास रस्मपर जोर देता। नतीजा यह हुआ कि जो रस्म जिसने बतायी हमारे दोस्तने की और करीब-करीब सब निभ गयीं। अब मुर्देको चितापर रखनेकी घड़ी आयी। यहाँ मुश्किल पड़ी। हमने कहा, हमारे यहाँ मुर्देको चितापर लिटाया जाता है यानी पेटके बल। कुछ लोग बोले नहीं चित लिटानेकी रस्म है। यह सुनकर हमारा दोस्त हँस पड़ा और बोला, भाअी अब मेरे बाप तुम सबके बाप, तुम जैसा चाहो करो। रस्मपर चल पड़ी बहस, हमारी दलील थी कि पेटके बल लिटानेमें बुद्धिमानी है, सूझ-बूझ है, वैज्ञानिकता है और शिष्टता, चित लिटानेमें हमें कोअी अैसी बात नजर नहीं आती। पेटके बल लिटानेमें सूझ-बूझ यह है कि पेटकी तरफका हिस्सा मुलायम है, जल्दी आग पकड़ेगा और आदमीका चेहरा जो आग जलनेसे बुरा रूप लेगा वह लोगोंकी नजरोंमें न आ सकेगा। शिष्टता यह है कि वह अंग नीचे रहते हैं जिनको आम तौरसे छिपाये रखनेका रिवाज है। वैज्ञानिकता यह है कि मुर्दा आग लगनेपर जो अूपरकी तरफ उठता है, अब नीचेकी तरफ जाअेगा। और चिताके बिगड़नेका डर न रहेगा। टाँगोंका घुटनेसे नीचेका भाग अूपरको अुठेगा और वह अपने आप आगमें जा पड़ेगा। अिसलिअे यह रस्म ठीक है। पर अिस रस्मवाले हम अकेले थे और बाकी सब थे चित लिटानेकी रस्मवाले। हम हार गये। आखिर यह तय हुआ कि पहले पट लिटाया जाअे और फिर चित, वैसा ही किया गया।

मुर्देकी मिट्टीको ठिकाने लगानेकी रस्में अनगिनत हैं। नयी-नयी रस्में भी चल पड़ी हैं। कलकत्तेमें अिजनमें जलानेकी रस्म है। कहीं-कहीं बिजलीसे जलानेकी रस्म है, पर अभीतक मुर्देसे अितना मोह नहीं छूटा कि अुसका कुछ अुपयोग कर लिया जाअे, जिस तरह गाय-भैंसोंका। अिस मामलेमें सुधार होनेमें सैकड़ों बरस लगेंगे। जो सुधार अबतक हुअे हैं, अुन सबमें जरूरतके लिहाजसे लोग काफी आगे बढ़े हैं, पर मोहके लिहाजसे वहींके वहीं हैं। सुना था, लड़ाअीके मौकेपर किसी डॉक्टरको मुर्देके अुपयोगकी बात सूझी थी, अूपरसे वैसा करनेसे रोक दिया गया। अुसे यह डर दिखाया गया कि अगर अैसा किया गया तो अिस अुपयोगकी खातिर आदमी अैसे ही मारे जाने लगेंगे जैसे पशु-पक्षी। मुर्दोंका अुपयोग न हो सका।

अिसी सिलसिलेमें कपाल-क्रिया नामकी रस्मका थोड़ा जिक्र कर देना ठीक होगा। अिस रस्ममें यह होता है कि जब मुर्दा काफी जल चुका होता है तब बाँससे अुसकी खोपड़ी फोड़ देते हैं। अिसकी तहमें सूझ-बूझ है, जरूरत भी है। अुस वक्त अिसकी बहुत ज्यादा जरूरत है जब चिताके आसपास औरतें या बच्चे हों। गर्भवती औरतको जलानेका रिवाज नहीं है। वजह यह है कि कभी-कभी गर्मी पाकर पेटमेंसे बच्चा निकलकर चितासे दूर जा पड़ता है। अुससे लोगोंके घबरा जानेका डर रहता है। ठीक अिसी तरह आदमीके खोपड़ीके अंदरका भेजा कभी-कभी अितना गर्म हो जाता है कि वह खोपड़ीको आवाजके साथ तोड़ता है और अुसके टुकड़ोंको दूरतक फेंकता है, अिसलिअे खोपड़ीको जान-बूझकर तोड़ दिया जाता है ताकि भाप निकलनेके लिअे रास्ता बन जाअे और खोपड़ी अिधर-अुधर छिटकनेका डर न रहे। अिसीका नाम कपाल-क्रिया है।

रस्म-रिवाजोंको अपनी सीमासे बाहर नहीं जाने देना चाहिअे। चाहिअे यह कि समय-समयपर रस्म-रिवाजोंकी जाँच-पड़ताल होती रहे, अुनमें कमी-बेशी होती रहे और वे कभी अैसी न बन पाअें जो हमारे विश्वासपर अन्धविश्वास बनकर जमी रहें।

[नागपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तमिळ :

स्व० सुब्रह्मण्य भारतीके कान्हा-गीत

: प्रो. के. अेस. चिदम्बरम, अेम. अे., 'भारद्वाजन' :

६. कान्हा मेरे सद्गुरु

पुन्नाग-वराळि रागमें (तिस्रजाति, अेकताल) गेय अिस गीतमें, राष्ट्रके महाकवि भारतीने अद्भुत तथा भक्ति-रसका आश्रय लेकर, अपने आराध्य कृष्णका वर्णन, सद्गुरुके रूपमें किया है। अुनका कहना है—

शात्तिरंगळ् पल तेडिनेन् अंगु
शंकैयिल्लादन शंकैयाम् पळं
गोत्तिरंगळ् शोल्लुं मूढरुतम्-पोय्मै–
क्कूडैयिल् अुण्मै किडैक्कुमो ?–नेञ्जिल्
मात्तिरं अेन्द वहैयिलुं-जग
मायं अुणर्न्दिडल् वेण्डुमे-अेन्नुं
आत्तिरं निन्द्रनिडै-नित्तं
आयिरं तोल्लैहळ् शूष्न्दन ॥ १ ॥

"मैंने कअी शास्त्रोंकी खोज कर डाली। अुनमें अैसी कोअी बात नहीं दिखायी दी, जो शंकास्पद न हो। निःशंक निर्धारण कर लेनेकी कोअी बात अुनमें हो—अिसीमें शक है। आखिर वे हैं क्या? प्राचीन गोत्रोंकी शेखी बघारनेवाले मूढ़ोंकी झूठ-मूठकी बातों रूपी कूड़े-करकटकी टोकरी ही तो हैं! अुनके जरिये सत्यकी प्राप्ति कैसे संभव है? अिस अन्वेषणमें लगे रहते हुअे भी मेरे हृदयमें हमेशा यह अुत्सुकता प्रबल हो रही है, कि येनकेन प्रकारेण, जगकी मायाकी पहचान पा लेनी चाहिअे। अिस प्रयत्नमें लगते ही मुझे नित्य हजारों मुसीबतोंने आ घेरा।"

नाडु मुळुदिलुं चुट्रि नान्-पल
नाट्कळ् अलैन्दिडुं पोदिनिल्-निरै–
न्दोडुं यमुनैक्करैयिले-तडि
अून्ड्रिच्चेन्ड्रार् ओर् किषवनार् ओळ
कूडु मुहमुं तेळिवुतान्-कुडि
कोण्ड विषियुं जटैकळुं-वेल्कै
त्ताडियुं कण्डु वणंगिये-पल
संगति पेशि वरुहैयिल्,... ॥ २ ॥

"दुनिया भरका चक्कर लगाते हुअे, कअी दिन भटकते बीते। अेकबार देखा, जल-प्रवाह-शोभित यमुनाके किनारे-किनारे, अेक बूढ़े सज्जन, लाठी टेकते हुअे चले जा रहे थे। मैं अुनके पास गया। अुनका अुज्ज्वल मुख, स्वच्छताके आगार-रूपी नयन, शुभ्र जटा-जूट तथा सफेद दाढ़ी आदि देख, अुन्हें प्रणाम किया। मैं फिर, अुनसे कअी बातें कहता चला। अितने ही में,....."

अेन्नुळत्ताशै आरिन्दवर्-मिह
अिन्बुट्रु रैत्तिडलायिनर्–"तम्बि,
निन्नुळत्तिर्कुत्तहुन्दवन्-चुडर्
नित्तिय मोनत्तिरुप्पवन्-अुयर्
मन्नर् कुलत्तिल् पिरन्दवन्-वड
मामथुरैप्पति आळ्हिन्ड्रान्-कण्णन्
तन्नैच्चरणेन्ड्र पोवैयेल्-अवन्
सत्तियं कूरुवन्" अेन्ड्रनर् ॥ ३ ॥

"अुन्होंने मेरे मनकी चाह भाँप ली और प्रेमपूर्ण स्वरमें कहा—"रे भाअी, अुत्तरमें, महान् मथुरापुरीका शासन कर रहा है अेक 'कान्हा'—नामधारी राजा। वह बेशक, तुम्हारे विचारोंके अनुकूल है। वह अूँचे राजकुलमें पैदा हुआ था, पर अब वह अुज्ज्वल नित्य समाधिमें लीन है। तुम अुसकी शरणमें जाओ तो वह तुम्हें सत्यका परिचय करा देगा।"

मा मथुरैप्पति शेन्ड्र नान्-अंगु
बाष्हिन्ड्र कण्णनैप्पोट्रिये-अेन्ड्रन्
नाममुं अूरुं करुत्तुमे-शोल्लि
नन्मै तरुहेन वेण्डिनन्-अवन्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कामनैप्पोन्ड्र वडिवमुं-अिळं
काळैयर् नट्पुं पषक्कमुं-केट्ट
भूमियैक्काक्कुं तोषिलिले-अेन्द-
प्पोदुं शेलुत्तिडुं चिन्तैयुं... ॥ ४ ॥

"मैं तुरन्त अुस सबसे बड़ी मथुरापुरीमें जा पहुँचा। कान्हाके दर्शन किये। अपना नाम-धाम बताकर मनोरथ व्यक्त किया और कुशल प्रदान करनेकी प्रार्थना की। पर, कामदेव जैसा अुसका सुन्दर रूप, नवयुवकोंके साथ अुसकी मैत्री और चाल-चलन, बिगड़ी हुअी भूमिके शासन करनेका अुसका काम, अुसकी चिन्ताशीलता....."

आडलुं पाडलुं कण्डु नान्-'मुन्नर्
आट्रंकरैयिनिल् कण्डदोर्-मुनि
वेडं धरित्त किषवरैक्-कोल्ल
वेण्डुं' अेन्ड्रुळ्ळत्तिल् अेण्णिनेन्-'चिरु
नाडु पुरिन्दिडुं मन्नवन्-कण्णन्
नाळुं कवलैयिल् मूषिहिनोन्-तवप्-
पाडु पट्टोर्क्कुं विळंगिडा- अुण्मै
पार्थिवन् अेङ्ङनं कूरुवान्?' ॥ ५ ॥

"(तथा) नाचने-गानेमें कौशल देखते ही मेरे मनमें हुआ कि यमुनाके किनारे, मुनि वेषधारी जो बूढ़े मिले, अुन्हें मार ही डालना चाहिअे--मैंने मन-ही-मन सोचा, 'अिस छोटेसे देशका शासक यह कान्हा, जो कि हमेशा चिन्ता-मग्न ही दीखता है, कैसे मुझे सत्यका परिचय दे सकेगा? जो बड़े-बड़े तपस्वियों तकके लिअे अज्ञात है, तत्संबंधी बातें यह पार्थिव कैसे बता पाअेगा?"

अेन्ड्रु करुदि अिरुन्दिट्टेन्-पिन्नर्
अेन्नैत्तनि अिडं कोण्डु पोय्-"निनै
नन्ड्रु मरुवुह! मन्दने! -पर
ज्ञान अुरैत्तिडक्केट्पंनी-नेज्जिल्
ओन्ड्रुं कवलै अिल्लामले-चिन्तै
अून्ड्र निरुत्तिक्कळिप्पुट्रे-तन्नै
वेन्ड्रु मरन्दिडुं पोषिदिनिल-अंगु
विण्णै अळक्कुं अरिवु तान्! ॥६॥

"मैं यह सोचता ही रहा कि वे मुझे कहीं अेकान्तमें ले चले और कहने लगे—"बेटा, तेरा कुशल हो! अुस परम ज्ञानकी बातें सुनो। हृदयको चिन्तासे अछूता रखकर बिलकुल निश्चिंत हो। बड़ी अेकाग्रतामें मनको स्थापित कर, आनन्द मग्न हो, अपने आपको जीतकर, जब तुम सुध-बुध भूल जाओ, तन्मय हो जाओ, तभी अुधर, विस्तृत आकाश भरको नापनेवाली बुद्धि हो जाती है!"

"चन्दिरन् जोति अुडैयदाम्-अदु
सत्तिय-नित्तिय-वस्तुवाम्-अदैच्-
चिन्निक्कुं पोदिनिलवन्दु तान्-निनैच्-
चेर्न्दु तषुवि अरुळ् शेयुं-अदन्
मन्तिरत्ताल्-अिव् अुलहेंलां-वन्द
मायक्कळिप्पेरुं कूत्तुक्काण्-'अिदैच्
चन्ततं पोय्-अेन्ड्रु रैत्तिडुं-मठच्
चात्तिरं पोय्' अेन्ड्रु तळ्ळडा! ॥ ७ ॥

"चन्द्र ज्योतिष्मान् है। वह सत्य है, अेक नित्य वस्तु है। जभी तुम अुसकी सोचो, तत्क्षण वह तुम्हारे पास आ जाता और तुम्हें गले लगाकर कृपाकी वर्षा कर देता है। अिस विश्वभरमें, अुसकी मंत्र-शक्तिसे दृश्यमान मायाके खेल-तमाशे देखो। जो अज्ञानमय शास्त्र कहते हैं कि यह दुनिया सतत मिथ्या है, वे शास्त्र ही सचमुच असत्य हैं, अुन्हें तुम दुत्कार दो।"

आदित्तनिप्पोरुळ् आहुं ओर्-कडल्
आरुं कुमिषि अुयिर्हळाम्-अन्दच्
चोदियरिवेन्नुं ज्ञायिरु-तन्नैच्
चून्द कदिर्हळ् अुयिर्हळाम्-अिंगु,
मोदिप्पोरुळ्हळ् अेवैयुमे—अदन्
मेनियिल् तोण्डिडुं वण्णंगळ्--वण्ण
नीति अरिन्दिन्बम् अेय्दिये--ओर
नेमैत्तोषिलिल् अियंगुवार्..... ॥ ८ ॥

"आदिम श्रेष्ठ वस्तु जो समुद्र है, अुसमें अुमड़ते हुअे बुद-बुद भी जीव हैं। ज्योतिकी खान अुस सूर्यकी चारों ओरसे बिखर पड़नेवाली किरणें भी तो जीव हैं। अिधर, दूसरी जो-जो चीजें विद्यमान हैं, अुनकी आकृति-पर चमकनेवाले रंगविधान कअी प्रकारके हैं। अुनकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रीति-नीति समझकर आनन्दित हो, किसी सीधे-सादे काममें लगकर जो प्रयत्नशील होते हैं... "

" चित्तत्तिले शिवं नाडुवार—अिंगु
शन्र्दु कळित्तुलहाळुवार्—नल्ल
मत्त मदवेंकळिरु पोल्—नडै
वाग्न्दिरुमान्दु तिरिहुवार्—'अिंगु
नित्तं निहष्वदनैत्तुमे—अेन्तै
नीण्ड तिरुवरुळाल् वरुं—अिन्बं
शुद्ध-सुखं तनि आनन्दम्'—अेनच्
चन्दु कवलैहळ् तळिळये ..... ॥ ९ ॥

" (वे ही) अपने चित्तमें शिवको पाते हैं। अिधर वे मिलजुलकर सानन्द विश्वभरका शासन करते हैं। मदमस्त हाथीकी-सी चाल अपनाकर वे गर्वसे घूमते-फिरते हैं। वे समझते हैं—'अिधर विश्वमें दिन-ब-दिन जो कुछ होता है, वह सब कुछ हमारे परम पिताकी अनन्त कृपाके फलस्वरूप, मधुर शुद्ध सुख व श्रेष्ठ आनन्द मात्र है। अिसलिअे वे दूसरी समग्र चिन्ताओंको दूर कर डालते हैं।"

" जोति अरिविल् विळंगवुं—अुयर्
शूष्च्च मतियिल् विळंगवुं—अर
नीति मुरै वषुवामले—अेन्द
नरमुं भूमित्तोषिल् शेय्दु—कलै
ओदिप्पोरुळियल् कण्डु ताम—पिरर्
अुट्रिडुं तोल्लैहळ् माट्रिये—अिन्ब
मोदि विषिक्कुं विषियिनार्—पेण्मै
मोहत्तिल्, शेल्वत्तिल्, कीर्तियिल् ...॥१०॥

" तब अुनकी बुद्धि बड़ी अुज्ज्वल हो जाती है। नय-तंत्रयुक्त मतिमान हो जाते हैं वे। धर्म-नीतिकी रीतिसे अविचल, वे हर हमेशा लौकिक कामोंमें लगे रहते हुअे भी कलाका अध्ययनकर, स्वयं अर्थशास्त्र-विचक्षण हो दूसरोंकी समग्र दुख बाधाओंको दूर करनेमें लग जाते हैं। कामकी लहरें मारनेवाली दृष्टि युक्त हो, वे स्त्री, मोह, संपत्ति, कीर्ति....."

"आडुदल्, पाडुदल् चित्तिरं—कवि
आदि अिनैय कलैहळिल्—अुळ्ळं
ओडुपट्टेन्ड्रुं नडप्पवर्—पिरर
ओन निलै कण्डु तुळ्ळुवार्—अवर्
नाडुं पोरूळहळ् अनैत्तैयुं—चिल
नाळिनिल् अेय्दप्पेरुहुवार्—अवर्
काडु पुदरिल् वळरिनुं—देय्वक्-
कावनमेन्ड्रदैप्पोट्रलाम.. ... ॥ ११ ॥

" नृत्य, गीत, चित्रकला, कविता आदि अितरेतर कलाओंमें मन लगाये रहते हैं। दूसरोंकी हीन दशा देख तड़प अुठते और अुनकी चाहकी समग्र संपत्तिकी प्राप्ति कुछही दिनोंमें करा देनेके अुपाय कर देते हैं। चाहे वे किसी जंगल या झाड़ीमें गुजरते हों, वे प्रदेश दैवी नन्दन-वन जैसे आदरणीय हो जाते हैं। "

" ज्ञानियर् तम् अियल कूरिनेन्—अन्द
ज्ञानं विरैविनिल् अेय्दुवाय्"—अेन
त्तेनिलिनिय कुरलिले—कण्णन्
शेप्पवुं अुण्मै निलै कण्डेन्—पण्डै
ओनमगिदक्क नवेलाम्—अेङ्ङन्
अेहि मरैन्ददु कण्डिलेन्—अदि
वान तनिच्चुडर् नान् कण्डेन्!—अदन्
आडल् अुलहेन नान् कण्डेन् ! ॥ १२ ॥

" मैंने ज्ञानियोंके स्वभावकी बातें कहीं। अुनका वही ज्ञान तुम्हेंभी शीघ्र अुपलब्ध हो जाअें ! " कान्हाने, मधु-मधुर स्वरमें जो कुछ कहा, अुनके सुनने मात्रसे मैं सत्यकी असली स्थिति समझ गया। पुराने हीन मनुष्योंके स्वप्नका जो कुछ प्रभाव मेरे मनपर पड़ा हुआ था, वह अब जाने क्या हुआ, कहाँ गया ! बुद्धिका श्रेष्ठ प्रकाश मात्र मैंने अब देखा। और देखा विश्व-भरमें अुसके नृत्यको। "

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीमाड़ी सन्त सिंगाजी और अुनका साहित्य

:श्री कृष्णलाल 'हं ', अेम. अे., साहित्यरत्न:

सन्त सिंगाका जन्म १५७४ वि. सं. में खजूरी नामक ग्राममें हुआ था, जो मध्यभारतीय नीमाड़ जिलेमें है। अिनके पिताका नाम भीमा तथा माताका नाम गौरीबाअी था। ये जातिके गौली थे। कुछ दिनोंके पश्चात् अिनके पिता मध्यप्रदेशीय नीमाड़के हरसूद नामक ग्राममें बसे। अेक दिन जब ये अपने किसी सम्बन्धीके निमंत्रणपर जा रहे थे तब मार्गमें अिनकी सन्त मनरंगीरसे भेंट हो गयी और अुनकी वाणीसे प्रभावित होकर अिन्होंने अुनसे दीक्षा देनेका आग्रह किया। पर अुन्होंने अुस समय दीक्षा देना स्वीकार न किया। अन्तमें रामनगर जाकर अिन्होंने अुनका शिष्यत्व स्वीकार किया। ये अपने गुरुके बड़े आज्ञाकारी थे। बिना अुनकी आज्ञाके कोअी कार्य न करते थे। आरम्भमें अिन्होंने सन्यास लेनेका हठ किया, पर गुरु मनरंगीरने कहा कि "अेक सच्चे भक्तको सन्यास लेनेकी आवश्यकता नहीं, वह अपने घर, अपने परिवारके साथ रहकर भी अीश्वरको पा सकता है। तुम गृहस्थ रहते हुअे भी अपनेको संसारसे विरक्त समझो और घर, स्त्री, पुत्रादिको अीश्वरकी वस्तु समझते हुअे आत्मदेवका ध्यान करो।" सिंगाजी अपने घर आ गये, और अुसी दिनसे संसारसे विरक्त होकर आत्मामें निवास करनेवाले प्रभुके ध्यानमें मग्न हो गये।

सन्त सिंगाके जीवनसे संबंधित अनेक चमत्कार-पूर्ण घटनाअें सुनी जाती हैं। खेमदासने "सिंगाजीकी परचुरी"में लिखा है कि अेकबार अिनकी भैंसें चोर चुरा ले गये। घरभरने अिन्हें अुनका पता लगानेको कहा, पर अिन्होंने कोअी ध्यान न दिया। अन्तमें माताके नाराज होनेपर ये चुरायी गयी भैंसोंके केड़े और केड़ियें (भैंसके बच्चे) लेकर जंगलकी ओर चले गये और कुछ ही समयके पश्चात् भैंसोंके साथ घर लौट आये।

अेक बार अिनके परिवारने अिन्हें मान्धाताकी यात्रा करनेके लिअे अपने साथ चलनेको कहा। अिन्होंने अुत्तर दिया कि 'आदि ओंकार' तो हमारे घटमें ही निवास करते हैं, अुनके दर्शनको मान्धाता जानेकी आवश्यकता नहीं। अन्तमें अिनका परिवार अिनसे नाराज होकर मान्धाता चला गया और तीसरे दिन वहाँ पहुँचा। वहाँ पहुँचनेपर परिवारवालोंने देखा कि सिंगाजी अेक नावमें बैठे नर्मदामें विहार कर रहे हैं। खेमदासने अिसी प्रकारकी और भी कुछ घटनाअें अुनकी 'परचुरी'में लिखी हैं।

बहुत दिनोंतक हरसूदमें रहनेके पश्चात सिंगाजी पीपल्या ग्रामको चले गये। वहाँ डोंगरु हरजू नामक अेक पटेलने अिनके निवासकी व्यवस्था कर दी। खेमदासने लिखा है कि यहीं भगवानने अिन्हें अेक सन्यासीके रूपमें दर्शन दिये और सिंगाजीने अुनसे पुनः जन्म ग्रहण न करनेका वरदान प्राप्त किया। यह पीपल्या ग्राम बाणगंगाके तटपर बसा बतलाया गया है। आजकल अिस ग्रामके समीप जो वेण नदी बहती है, वही अुस समय बाणगंगा कही जाती थी।

"परचुरी"में लिखा है कि अेक दिन अिनके पास कुछ सन्यासी आये और अिनसे दूध पिलानेको कहनेपर अिन्होंने कहा कि स्त्री दूध दुहकर लानेके लिअे गयी है, आप कुछ समयतक बैठें। पर सन्यासी बहुत भूखे थे, वे वहीं चले गये, जहाँ अिनकी स्त्री दूध दुह रही थी। अिन्होंने दुहा हुआ सब दूध पी लिया और सिंगाजीकी स्त्री जसोदा रीता बर्तन लिये घर आ गयी, पर अुसने जैसे ही रीता बर्तन अपने सिरसे अुतारकर नीचे रखा, दूधसे भरा पाया।

संत सिंगाने अपने जीवनके अंतिम दिन पीपल्यामें ही बिताये। जब अिनका मृत्युकाल समीप आया, तब अिन्होंने अेक शिष्यको रामनगर भेजकर गुरु मनरंगीरसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर त्याग, परमधाम जानेकी आज्ञा माँगी। आज्ञा प्राप्त होते ही अिन्होंने अपने परिवार और शिष्य-मंडलको सूचना दे दी। अिन्होंने स्नान किया और अपने मस्तकपर चन्दनका तिलक लगा, ध्यानस्थ हो गये और अिस प्रकार अपनी आत्मामें स्थित निराकार ब्रह्मका ध्यान करते हुअे श्रावण शुक्ल ९ को परमधाम सिधारे।

खेमदासने संवत १७४८ वि. में अुन्हें सिंगाजी द्वारा दर्शन देने तथा अपना सब चरित्र सुनानेका अुल्लेख किया है। तदनुसार खेमदास-लिखित "सिंगाजीकी परचुरी" सिंगाजी-द्वारा बतलायी गयी बातोंपर आधारित कही गयी है।

सिंगाजीका साहित्य

काव्य-रचनाकी दृष्टिसे संत सिंगा नीमाड़ी लोक-साहित्यके अेक सर्वश्रेष्ठ लोककवि हैं। ये वास्तवमें 'लोककवि' हैं। अिनके पद नीमाड़ी-भाषी क्षेत्रके अतिरिक्त मध्य-प्रदेशके होशंगाबाद, बैतूल, छिंदवाड़ा जिलों और मध्यभारतके भी कुछ मालवी-भाषा क्षेत्रमें सुने जाते हैं। संत सिंगा और अुनके पदोंके प्रति अिस क्षेत्रकी ग्रामीण जनताकी अटूट श्रद्धा है। वे प्रत्येक अुपवास, व्रत और त्योहारोंके अवसरपर गाये जानेवाले भजनोंमें अिनके पदोंको प्रमुख स्थान देते और झूम-झूमकर गाते हुअे भक्ति-विभोर हो जाते हैं। हम संत सिंगाके पदोंको विषयकी दृष्टिसे निर्गुण स्वरूप-वर्णन, ब्रह्म और जीवकी अेकता, पाखंड-खंडन, अुलटवानी, रहस्यवाद, रूपक, विरक्त-भावना, सत्गुरु महिमा तथा विनयके पदोंमें विभाजित कर सकते हैं। अुदाहरणार्थ प्रत्येक विषयसे संबंधित अेक-अेक पद देखिअे :—

निर्गुण ब्रह्म :—

"निरगुन ब्रह्म है न्यारा, कोअी समजो समजन हारा ॥
खोजत ब्रह्म जलमें[1] सिरानो[2], मुनिजन पार न पावे।
खोजत-खोजत शिवजी थाँके, अैसो अपरम्पारा ॥ १ ॥
वेद कहे अेक अगम बानी, सुरता[3] करो विकारा।
काम, क्रोध, मद, मत्सर व्यापे, झूठा कलप[4] पसारा ॥२॥

---

१ जन्म, २ बीत गया, ३ समझदार, ४ संसार।

त्रिकुटी महल[5] में अनहद[6] बाजे, होत सबद झनकारा।
सुकमन[7] सेज सुन्न[8] में झूले,
सोहम[9] पुरुष हमारा ॥३॥
सहसअी[10] निसदिन रटे, रैन-दिवस अिक सारा।
रिखि-मुनि और सिद्ध चौरासी,
तेतिस कोटि पचिहारा ॥४॥
अेक ब्रह्मकी रचना सारी, जाका सकल पसारा।
सिंगाजी भर नजरों देखें, वो ही गुरू हमारा ॥५॥"

अिस पदकी विचार-धारा हिन्दीके संत-साहित्यकी ही विचारधारा है। कबीरकी त्रिकुटी महल, अनहद, सुकमन सेज आदिकी कल्पना हमें सिंगाजीके अिस पदमें भी अुसी रूपमें मिलती है। भाषा-साम्य भी स्पष्ट है।

ब्रह्म-जीवकी अेकता

"मैं तो जानूं साअीं दूर है, मुझे पाया हो नेड़ा[11]।
रैनी रही सामरत[12] भअी, मुझे आसरा तेरा ॥
तुम तो सोना हम गहना, मुझे लगा है हाका।
तुम बोले हम देह धरी, बोले कअी रंग भाका[13] ॥
तुम चंदा हम चाँदनी[14], रैनी[15] अुजियाला।
तुम सूरज हम घामला[16], साअीं चौजुग[17] पुरिया ॥
तुम तरवर हम पँछिड़ा[18], बैठे अेकही डाला।
चोच मार फलभाँजिया[19], फल अमृतसारा ॥
तुम दरियाव हम माछली, बिम्बास[20] का रहना।
देह गली मट्टी भअी, तेरा तुज-में[21] समाना ॥
तुम बिरछ[22] हम बेल हैं, मूलसे लपटाना।
कहे सिंगा पहिचान ले, दरियाव ठिकाना[23] ॥"

यही भाव व्यक्त करनेवाला संत कबीरका अेक पद देखिअे—

---

५ दोनों भौंहोंके बीचका स्थान (आज्ञाचक्रका मध्य-भाग), ६ ब्रह्मांध्रमें होनेवाला शब्द, ७ सुषुम्ना, ८ शून्य (ब्रह्मांड), ९ जो हमारी आत्मामें है, १० शेष-नाग, ११ समीप, १२ सामर्थ्य, १३ भाषा, १४ चाँदनी, १५ रात्रि, १६ धूप, १७ चारों युग, १८ पक्षी, १९ फोड़ा, २० हमेशा, २१ तुझमें, २२ वृक्ष, २३ संसार रूपी समुद्रमें रहनेका स्थान।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"माधव जलकी पियास न जाअि ।
जल महि अगनि अुठी अधिकाअि ॥
तूं जलनिधि हअु[1] जलका मीनु ।
जल महि रहअु, जलहिबिनु खीनु[2] ॥
तूं पिंजर हअु सूअटा तोर ।
जमु मंजारु[3] कहा करै मोर ॥
तूं तरवर हअु पंखी आहि ।
मंद भागी तेरो दरसन नाहि ॥
तू सतगुरु हअु नअुतनु चेला[4] ।
कहि कबीर मिलु अंतकी बेला ।"

दोनों संत कवियोंकी अपने आराध्यके प्रति अनन्यता प्रशंसनीय है । भक्त और भगवानकी यह अेकरूपता हिन्दीके अन्य भक्त कवियोंके काव्यमें भी विद्यमान है ।

पाखंड खंडन

कबीरकी तरह संत सिंगाने भी अुपासना और भक्तिके नामपर किये जानेवाले आडम्बरोंको पाखंडकी संज्ञा दी है ।

संत सिंगाजीने कीर्तन, देव-पूजा, तुलादान, शिवलिंगपूजा आदि सनातन कर्मकांडोंका ही नहीं, पर नाथ पंथियोंकी धार्मिक क्रियाओंकी भी निन्दा कर अुन्हें पाखंड बतलाया है । सिंगाकी दृष्टिमें अपनी आत्मामें निवास करनेवाले, 'बिनादेहीके साहब' को पहिचाननेका प्रयत्न ही मुक्तिका साधन है ।

अुलटवासी :—

कबीरकी तरह सिंगाने भी कुछ अुलटबांसी पद रचे हैं । अुनका निराकार ब्रह्मपर रचित अेक पद अिस प्रकारका है—

"फूल नजदीक नजर नहि आवे,
सतगुरु बिन कौन बतावे ॥
बिना पाल[5] को सखर कहिये,
लहरी अुठकर आवे ।
बिना चोंचको हंसा कहिये,
मोती चुग चुग खावे ॥
बिना बीजको बीरछ[1] कहिये,
डाल नवी नवी[2] आवे ।
बिना पंखको पंछी कहिये,
अुड़ि अकासको जावे ॥
बिना पत्रकी बेली कहिये,
छाव नजर नहीं आवे ।
बिना फूल फल लागा अुनको,
कोअी साधुजन पावे ॥
अुलट ज्ञान कोअी बिरला बूझे,
और न बुझे कोअी ॥
कहे जन सिंगा सुन भाअी साधू,
चौरासी छुट जावे ॥"

अिस अेकही पदमें अिस लोकगायक संत कविने कितनी सुन्दरतासे अदृश्य, अजन्मा और निराकार ब्रह्म तथा अुसकी आश्चर्यमयी विविध लीलाअें अुपस्थित कर दी हैं !

रहस्यवाद:—

कबीर हिन्दी-काव्य-जगत्में रहस्यवादके प्रथम स्रष्टाके रूपमें प्रसिद्ध हैं । अुन्होंने निर्गुण ब्रह्मोपासनाके विस्तारके साथ जिस रहस्यवादको जन्म दिया, अुसके प्रभावस्वरूप तत्कालीन अनेक संत कवियोंका आविर्भाव हुआ । अुन सभीने निर्गुण काव्य धाराको मूल्यवान योग प्रदान किया, पर अुनमेंसे अधिकांश कबीरकी तरह अपने काव्यमें रहस्यवादको स्थान देनेमें पूर्ण सफल न हो सके । मध्यप्रदेशके अेक अनुन्नत कोनेमें निर्गुण भक्तिकी मस्तीमें मस्त संत सिंगाके अनेक अैसे पद प्राप्त हैं, जिनमें कबीरकालीन अनेक कवियोंसे कहीं अधिक स्पष्ट और प्रौढ़रूपमें रहस्यवादके दर्शन होते हैं । अुदाहरणार्थ अुनका अेक पद देखिअे—

"कोअी देखो दरियावकी लहरी,
सतगुरु सौदा हेरी[3] ॥

---

१ मैं, २ अुदास, ३ बिल्ली (नीमाड़ीमें मांजर, मराठीमें मांजर और संस्कृतमें मार्जार कहते हैं ।), ४ नया शिष्य, ५ तट ।

---

१ वृक्ष, २ नयी, ३ ढूंढना ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिस दरियावमें सात समुन्दर[1],
बीच गयेंब[2]की डेरी[3] ।
डेरी अन्दर अलख[4] बिराजे,
जहाँ सुरत[5] लाग रही मेरी ॥
अिस दरियावमें बाजा[6] बाजे,
बाजे आठों पहरी ।
ताल पखावज बाजे झांजरी,
बंसी बाजे गयरी[7] ॥
बिना पेड़को[8] वृक्ष कहिये,
डाल पंख ना फेरी ।
रूप रेख वाकी कछु नाहीं,
फिरी रह्यो चहुंफेरी ॥
अगम अगोचर पद पाया भाअी,
क्या पूछोरे मेरी ।
कहे जन सिंगा सुनो भाअी साधू,
निरभय माला[9] फेरी ॥

रूपकः—

संत सिंगाके पदोंमें कुछ बड़े सुन्दर रूपक भी मिलते हैं। कबीर तथा तत्कालीन सन्त कवियोंने भी कुछ रूपकोंकी रचना की है। संत सिंगाका अेक खेती विषयक रूपक देखिअे—

" खेती खेड़ो[10] हरिनामकी
जा-में[11] थासे[12] लाभ ॥
पापका पालवा काटजे,
काढ़ो बाहेर राल ।
कर्मकी कासीयें चाड़जो[13]
खेती चोखी भाय ।[14]
मन पवन दोओ बलदिया[15]
सुरती[16] रास लगाय
प्रेम पिराणों[17] कर धरचो,
ज्ञान आर लगाय ॥
ओटंग[18] बरवर जूपजो,[19]
सोहंग[20] सरतो[21] लगाय ।
मूल मंत्र[22] बीज बोवजो[23]
लड़ झुंमड़[24] थाय ॥
सतको माल्यो[25] रोपजो,
धरम पैंड़ी[26] लगाय ।
ज्ञान गोला चलावजो,
सूवा अुड़ि जाय ॥
दयाकी दावण रालजे,
भवरी[27] फेरा[28] न होय ।
मुगता[29] बिचारो सिंगा आपणी,
आवागमन नी होय ॥

अिस पदमें सन्त सिंगाने खेतीके रूपक द्वारा मुक्तिकी साधना बतलायी है। वे कहते हैं, "हरि-नामकी खेती करनेसे ही लाभ होगा। सिंगाकी यह खेती बड़ी विचित्र है। अच्छी फसल होनेके लिअे खेतमें अूगा-नींदा पहिले साफ कर देना पड़ता है। बिना अुसे अुखाड़कर बाहर फेंके खेत बोने योग्य नहीं होता। सिंगाजी कहते हैं—" पापरूपी घास-पात अुखाड़कर बाहर फेंक दो।" घास-पातके सिवाय खेतमें काँस नामक अेक गहरी जड़ोंवाली घास भी होती है। कर्मकांडको ही सिंगा काँस कहते हैं। वे कहते हैं " कर्मकांड रूपी काँस भी जड़से अुखाड़कर निकाल दो, तब कहीं अच्छी खेती हो सकेगी। मन और श्वास ही दोनों बैल हैं, जिन्हें आत्माकी रस्सीसे बाँधकर प्रेमके पिरानेसे हांको। लेकिन प्रेमका पिराना अैसा वैसा न हो; अुसमें ज्ञानकी आर (लोहेकी पतली नुकीली कील) लगी हो।" कितनी सुन्दर है अिस अपढ़ लोक-कविकी कल्पना। अुसकी अिस कल्पनामें जो महान अध्यात्म भरा हुआ है, बड़े-बड़े दर्शन शास्त्रियोंके लिअे भी दुर्लभ है।

---

१ समुद्र, २ अदृश्य ब्रह्म, ३ निवास, ४ न दिखलायी देनेवाला, ५ ध्यान, ६ अनहद नाद, ७ गहरी, ८ पीड़, ९ ब्रह्मकी माला जिसे फेरनेपर कोअी भय नहीं रहता, १० करो, ११ जिसमें, १२ होगा, १३ निकाल दो, १४ होना, १५ बैल, १६ ध्यान।

१७ बैल हांकनेकी लकड़ी (पिराना), १८ निरहंकार, १९ जोतना, २० ब्रह्ममय आत्मा, २१ सरता (खेतीके काममें आनेवाला अेक औजार), २२ बीज मंत्र (ओऽम्), २३ बोओ, २४ हरी भरी शाखें, २५ मल्ला (क्यारियाँ), २६ मेड़, २७ संसार, २८ आवागमन, २९ मुक्ति, मोक्ष।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गद्दार

: श्री रामराजसिंह :

गद्दारके असली माने होते हैं—भेंदिया; घाट करनेवाला अथवा समयपर खिसकनेवाला। लेकिन जहाँ तक गद्दारके अपने काम गद्दारीसे तात्पर्य है, वहाँ द्रोहात्मक और हिंसात्मक नहीं और क्रोधात्मकभी नहीं; बल्कि वहाँ गद्दारकी कायरता, काहिली और अक्षमतासे है। गद्दार अिसलिअे गद्दारी नहीं करता कि अुसे मजा मिलता है, या कोअी विशेष लाभ होता है, वरन् वह गद्दारी अिसलिअे करता है कि वह अक्षम है, अुसमें दृढ़प्रतिज्ञता नहीं, वह कष्ट सहन नहीं कर सकता; अतः अुसकी आत्मा गवाही दे देती है। जब कभी अेक विश्वसनीय व्यक्ति गद्दारी करते देखा या पाया जाता है, तो अुसके अन्यान्य बन्धु-बान्धवों और स्वजनों तथा प्रिय जनोंको अेक अप्रत्याशित धक्का-सा लगता है। लेकिन कभी-कभी तो अैसा देखनेमें आया है कि स्वयं गद्दारभी अपनी करतूतसे अनभिज्ञ और अपरिचित रहता है; यहाँ तक कि गद्दारी करनेके पहले तक वह नहीं जानता कि वह क्या करने जा रहा है। किन्तु करनीके पश्चात् अुसे कम दुख, संवेदना और पश्चात्ताप नहीं होता।

मनुष्य अन्यान्य प्राणियोंसे जिस प्रकार अधिक विवेकी और चिन्तनशील है, अुसी प्रकार वह घोर पापी, अन्यायी और क्रोधीभी है। 'क्रोध पाप कर मल' का मंत्र जपनेवाले अिन्सानने क्रोधकी सीमाभी पार कर दी है। कहनेको तो पशुओंमें हिंसकता और बर्बरताका दुर्गुण प्रचुर मात्रामें है, लेकिन अहिंसाके पुजारी बननेवाले मानवने और सहिष्णुताका आडम्बर दिखलानेवाले अिन मर्मज्ञ नरोंने अपनी सारी कलअी खोल कर रख दी है। जब-जब अितिहास बदलता है, वह अपने पीछेकी तरहही बिना किसी प्रकारके रद्दोबदलके अेक नये रूपमें मार्ग प्रशस्त करता हुआ आगे बढ़ता है। (History repeats itself) और किस राजा (क्योंकि अितिहासमें राजा अथवा राज्यसम्बन्धी वर्णन रहता है) ने किस अवसरपर कैसे धोखा खाया था, अुसने दूसरेको अपने जालमें किन-किन अुपायोंसे फँसाया आदिको जानते और अुससे शिक्षा प्राप्त करते अथवा लाभ या हानिकी जानकारी रखते हुअेभी मनुष्य धोखा खाता, असफल होता है और मुँहकी खाता है। क्यों अेक पक्षके लोग दूसरेके किसी विशेष व्यक्तिको फोड़ लेते हैं और किस प्रकारसे अुसका अुचित-अनुचित लाभ अुठाते हैं! कोअी कहता है कि अमुकने गद्दारी की; लेकिन गद्दार अपनी स्थितिको अवश्य समझनेकी कोशिश करता है।

गद्दारके समय-समयपर अनेक माने होते हैं। अुसे चुगलखोर, द्रोही, भेदिया, कान भरनेवाला और हाँ-हुजूरी करनेवालाभी कह सकते हैं। दासी मन्थरा गद्दारिन कुटनी थी, विभीषण गद्दार अपने पक्षका भेदिया था, मानसिंह अपनी जातिका गद्दार (द्रोही) था और ध्रुवका पिता अुत्तानपाद भी गद्दार (विवश) था। अिस तरह विभिन्न स्थलोंपर अिनके नाना रूप मिलते हैं। गद्दारी करनेसे कुछ लाभ तो जरूरही होता है। लेकिन अिस कारण वैयक्तिक जितना सुख मिलता है, प्रायः अुसका कअी गुना सामूहिक रूपसे विनष्ट होता है। और अक्सर यह होता है कि गद्दार किसी अेक-दो को नहीं ले बैठता, बल्कि समूचे-का-समूचा दल और जातिही वह विनष्ट करके छोड़ता है। यह कितना संभव है, यह तो गद्दारकी अुग्र हिंसक भावनाओंपर आधारित है। जितनीही अुसकी बदलेकी भावना तीव्रतर होगी, अुतनाही अधिक सफाया वह कर सकता है। गद्दार निम्नलिखित कारणोंसे प्रेरित होता है।

मानसिक दुर्बलता

कहीं-कहीं यह देखनेमें आता है कि किसी ग्रूप या दल विशेषमेंसे कोअी अेक अिसलिअे अलग हो जाता है कि अुसका मानस स्थिर नहीं रह पाता। अपने दलकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुप्त बातोंका रहस्यभी विपक्षवालोंके सामने प्रकट करनेमें वह कुछ हानि नहीं समझता। वैसा कर देनेके बाद वह भलेही पश्चात्ताप करे, लेकिन अस्थिर बुद्धिके कारण अुत्पन्न होनेवाली आपदाओंसे वह लाख चेष्टा करनेपरभी नहीं बच पाता। वह अपनी अेक मानसिक कमजोरीको छिपानेके लिअे नाना प्रकारका मिथ्या प्रयास करता है।

प्रलोभन

रुपये-पैसे, जमीन-जायदाद और पदका प्रलोभन पानेसे भी अेक पक्षका कोअी मनुष्य किसी समय गद्दारी कर सकता है। अुस समय अपनी स्वार्थ-सिद्धिके आगे अुसकी अपनी संस्था, जाति, अपने देश या अपने राष्ट्रके हितका ध्यानभी नहीं रहता। और वह यह भी नहीं समझता कि अिस प्रलोभनसे वह कितने लोगोंके हितोंका गला घोंट रहा है। अिस आर्थिक-युगमें साधारणतया अिसी किस्मके गद्दार पाये जाते हैं, जो बहुजनहितायको तिलांजलि देकर और दूसरोंके हितोंका गला घोंटकर अपने सुखके लिअे, स्वार्थके लिअे, सबकुछ करनेके निमित्त अपना नैतिक स्तर पतित करनेमें नहीं झिझकते। प्रलोभनकी बात किसकेद्वारा पहले अुठायी गयी, यह तो गद्दार और विपक्षवालोंके मनकी अवस्थितिपर निर्भर है। किन्तु गद्दारकी मनःस्थिति तो अुसी समय विचलित हो जाती है, जब अिस किस्मकी कोअी बात अुठ भर जाती है।

प्रताड़ना

यों तो चोर पकड़े जाने और पुलिसके हवालातमें कोड़े-पर-कोड़े खानेपरभी अपने हमराहियोंका भेद और नाम नहीं बताता, किन्तु यहभी सत्य है कि मारके आगे भूतभी भागता है। अतः यह निर्विवाद है कि प्राणोंकी परवाह करनेवाले अिस गद्दारीकी बातको ध्यानमें भी नहीं लाते। प्राणका सौदा अितना सस्ता नहीं है! बेंत-पर-बेंत कसकर जमा देने और खपच्चारियोंके खोंचे जानेकी पीड़ा पक्के चोरोंका भी मुँह खोलवा देती है। कहनेका तात्पर्य यह है कि वह व्यक्ति नहीं बोलता, वरन् शारीरिक पीड़ा और यातनाओंसे वह बोलनेपर बाध्य किया जाता है। किन्तु साथ-ही-साथ, अिसमें कुछ सन्देह नहीं, कुछ अैसेभी जीव हैं, जो अपनी गुरुता और महानताको अपने प्राणोंसे अधिक मूल्यवान समझते हैं।

अनबन

कभी-कभी किसी दलमेंसे कोअी अेक व्यक्ति न पटनेके कारण अलग हो जाता है अथवा दलके अन्य व्यक्ति अुसकी किसी कमजोरीसे अुसको निकाल देते हैं। अिसका प्रभाव अुसके मानसपर बहुत बुरा होता है; वह बदला लेनेकी सोचता है। अतः स्वभावतया वह अपने विपक्षियोंकी शरण जाता और अपनी पोल-पट्टी खोल देता है। अिस प्रकारकी घटनाअें आर्थिक बाँट-बँटावकी खींचातानीसे ही अधिक होती हैं। बड़े-बड़े डाकुओंका दल अिसी कारण पकड़में आ जाता है।

सहानुभूति

विद्रोहियों और ध्वंसक-क्रान्तिकारियोंमेंसे अपने विपक्षीके किसी अेकके प्रति जब सहानुभूतिकी भावना घर कर लेती है, तो वह अुसकी रक्षार्थ पत्र या अन्य किसी साधनसे सूचना दे देता है। फिर क्या पूछना, सहानुभूतिका पात्र वह व्यक्ति अपने दलों या अपने पक्षमें अिसकी जानकारी करा देता है। परिणाम-स्वरूप अुसके प्रतिपक्षियोंकी सारी योजनाअें निष्फल हो जाती हैं और वे पकड़में भी आ जाते हैं। अिंग्लेंडके कैथोलिकोंका १६०५ अी० के 'गत प्लाट' का भेद अैसेही खुला और वे विफल तो हुअे ही; पकड़कर मारभी डाले गये।

अिसके अतिरिक्त कुछ गद्दार स्वभावतया अुस प्रकृतिके होते हैं। कितने तो अपना हित हो, या न हो दूसरोंका अहित करनेके लिअेही गद्दारी करते हैं। मंथरा वैसीही थी। कुछ नेकनाम गद्दार अपने पक्षकी कुरीतियों-दुर्नीतियों और अत्याचारोंको पसन्द न कर विपक्षियोंको अपने सारे अड्डे बता देते हैं। विभीषण अिसी प्रकारके भेदिये थे।

कहनेका मतलब यह है कि वास्तविक गद्दारभी वही है जो अपने राष्ट्र, जाति, और समाज-देशके हितोंका गला घोंट दे, जो अपना अुल्लू सीधा करनेके लिअे अपने स्वजन-प्रियजनोंको धोखा दे, और जो केवल मजा लेनेके लिअे दो पक्षोंको भिड़ा दे।

[कलकत्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जुम्मा भिश्ती

: श्री 'धूमकेतु' :

['धूमकेतु' गुजरातके श्रेष्ठ कहानीकार —कहानी-संसारके स्रष्टा हैं। भावात्मक मर्मस्पर्शी शैलीमें आधुनिक कहानियोंका सूत्रपात अुन्हींने किया— राजनैतिक, अैतिहासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक सभी प्रकारकी कहानियोंका। अुनकी दर्जनों कहानियोंके अनेक भाषाओंमें अनुवाद हुअे। अुनकी "पोस्ट आफिस" कहानी बड़ी ही हृदयस्पर्शी मानी गयी है। अेक सिद्धहस्त सफल अुपन्यासकार हैं वे और निबंधकार भी। धूमकेतुकी "जुम्मा भिश्ती" अेक दर्दभरी छोटी-सी कहानी है। कलाकारने अपने भिश्ती और अुसके जीवन साथी प्यारे भैंसेके सच्चे प्रेमको बड़े मार्मिक तथा कलात्मक ढंगसे सभी देशों और सभी कालोंके लिअे अमर बना दिया है। — सं.]

आनन्दपुर गाँवके अुस छोरपर अेक कोनेमें, तीन झोपड़ियाँ चलते-फिरते राहगीरोंका ध्यान अपनी ओर खींचती थीं। पुराने अूंचे-अूंचे घने अिमलीके वृक्षोंकी झुरमुट छाया अुनपर पड़ती थी। पासहीमें गन्दी गटर दुर्गन्धको चारों ओर फैलाती और कभी-कभी तेज हवा धूलके गुब्बारे अुड़ाती। वर्षोंसे बेमरम्मत झोंपड़ियोंकी खिड़कियाँ हवाके थपेड़े खातीं—जो फटे पुराने टाटके टुकड़ों और पुराने बाँसकी खपच्चियोंसे बंधी हुअी हमेशा खुली रहतीं।

अन्दर अेक टूटी हुअी पुरानी चटाअीपर बैठा हुआ जुम्मा भिश्ती अपना हुक्का गुड़गुड़ाया करता। दुनियाके बदलते रंग देखे थे अुसने। सोने चांदीके बर्तनोंसे लेकर टूटी-फूटी हंडिया तकके दिन देखे थे। अपनी बचपनकी यादके, धनी माता-पिताके लाड़-प्यारके वे दिन अुसे याद थे। हुक्का गुड़गुड़ाते वह सोच रहा था अुन दिनोंकी बातें, जब वह झूमते हाथीपर बैठकर शादीमें दुलहिन लेने ससुराल गया था। और आज ?

शौकके लिअे अुभरती जवानीमें जुम्माने अेक भैंसा पाला था। दहेजमें मिली हुअी, वस्तुओंमेंसे वह अेक था। वह अुसे 'वेणु' कहकर पुकारता था।

दुनिया कितनी अूंची चढ़ी और कितनी नीचे गिरी, आज सिर्फ दो जीव ही बचे थे—जुम्मा और वेणु, दो जीवन-साथी,—पक्की दोस्तीके नमूने। हाँ, वेणुका नाम कुछ विचित्र जरूर लगेगा; पर जब लक्ष्मी और यौवन जुम्मापर प्रसन्न थे, कअी दोस्त थे अुसके, दोस्तोंमें अेक साहित्य-रसिक हिन्दू मित्रने भैंसेका नाम 'वेणु' रख दिया था और जुम्माने अुसे अपना लिया था।

जुम्मा आज गरीब है। अुसके पास सिर्फ बचे हैं ये झोंपड़े और अुसका हमेशाका साथी वेणु।

अेक झोंपड़ेमें वेणु बाँधा जाता। बीचके द्वारसे जुम्मा अपने वेणुसे बातें करता और हुक्का गुड़गुड़ाया करता। तीसरे झोंपड़ेमें घास भरी रहती।

अुसके अनेक मित्र, संगी-साथी आये और गये; पर अिन दोनोंकी दोस्ती अखंडित बनी रही।

* * *

रोजका कार्यक्रम। दिन निकलते ही जुम्मा वेणुकी पीठपर मशक रखकर अपने गाहकोंके घरोंमें पानी भरने चल देता। भैंसेके गलेमें बंधी हुअी घन्टी बजने लगती। जुम्मा पीछे-पीछे अेकाध शेर, गजल-गीत गाता हुआ चलता। दोपहर तक वह अपने झोंपड़ेमें लौट आता। लौटते समय वह अेक-दो पैसेकी गाजर-मूलीका साग अपने लिअे और घासका भारी गट्ठा अपने वेणुके लिअे बाजारसे ले आता। यही था अुसका रोजका काम और यही था रोजका बाजार।

दोपहरसे शामतक वह अपने झोपड़ेमें बैठा हुक्का गुड़गुड़ाया करता और हुक्केके संगीतमें लीन वेणु अपने कर्ण-संचालनसे ताल दिया करता और आँखें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूंदे या खोले पड़ा रहता। दोनों अेक दूसरेसे, मानो मूक भाषामें बातें किया करते।

संध्या होते ही दोनों दोस्त नदीके किनारे घूमने जाते। कभी-कभी अिच्छा हुअी तो भिनसारे ही हवा-खोरीको चल निकलते।

अेक दिन बहुत सबेरे, पाँच बजे दोनों घूमनेके लिअे चल निकले। जुम्माने सोचा, अिस ठंडी वेलामें, वेणु कुछ चरकर पेट भर ले तो अच्छा। पर यह बात वेणुको पसंद न आयी। घूमने जाते समय राहमें कुछ खाना भले मानुसोंका लक्षण थोड़े ही है! अतः वेणुने स्पष्ट अिनकार कर दिया।

थोड़ी देर बाद जुम्मा वेणुसे बोला-'चल भैया' अब तो घूम लिये, घर जाकर, कुछ खा-पीकर, अपने कामपर चलें।

अुसकी अिस विनयपर खुश होकर वेणुने हुंकार किया, अपनी पूंछ पीठपर पछाड़ी, और जुम्माके सामने देख, कान फटकार, आनन्दसे दौड़ने लगा।

"अरे कहाँ दौड़ा जा रहा है? दौड़नेकी क्या जरूरत है?" जुम्माने कहा; पर वेणुने अुसकी न सुनी। वह दौड़ा चला जा रहा था। सामने ही बी. बी. अेण्ड सी. आअी. रेलवेकी लाअिन थी। वह रेलकी पांतोंके अूपर दौड़ रहा था कि अगली लाअिनके जोड़के बीच अुसका पैर फंस गया और वह ठोकर खाकर वहीं गिर पड़ा। फिर वह फँसे पैरको निकालनेकी कोशिश करने लगा। पर ज्यों-ज्यों वह पैर निकालनेकी कोशिश करता था, त्यों-त्यों अुसका पैर ज़्यादा फँसता जाता था। जुम्माने दूरसे यह देखा और वह पागलकी नाअीं दौड़ा। 'या खुदा! यह क्या हो गया!!' वह बोला और वेणुके पास बैठकर अुसका पैर खींच अुसे रेल-पातोंमेंसे निकालनेकी कोशिश करने लगा।

कुछ-कुछ अुजेली होने लगा था। सामनेसे सैर-सपाटेके शौकीन दो नौजवान घूमते आ रहे थे; जिनके अेक हाथमें छड़ी थी जिसे वे घुमा रहे थे। दूसरेमें थी टोपी, जो सिरपरसे अुतारकर हाथमें रख ली थी, ताकि ठंडी हवा खोपड़ीको लगे और दिमाग तक पहुँच जाअे। जुम्मा दौड़ा अुनके पास। बोला—

"सुनिअे, भाअी साहब! मेरा, मेरा, वेणु... फँस गया है, रेलमें कट जाअेगा। देखिअे, देखिअे।"

दोनोंने अुस ओर दृष्टिपात करनेकी कृपा की। देखा, कोअी काली-काली चीज तड़प रही है।

"पर है क्या?"

"मेरा वेण—मेरा पाड़ा"

"ओह! दौड़, दौड़, फाटकवालेके पास। यहाँ क्या खड़ा है?"

"भैया। कुछ मदद करो, हाथका सहारा दो तो अुसे निकाल लूँ। वह बच जाअेगा।"

"मदद? हम? अरे बेवकूफ दौड़कर फाटक-वालेके पास जा। दौड़, दौड़।" और यों परअुपकारका अुपदेश देकर वे आगे हवाखोरीको चल दिये।

जुम्मा फाटकवालेकी ओर दौड़ा। घरके अंदर चक्की चल रही थी, अुसकी घरघर ध्वनिमें किसीने अुत्तर नहीं दिया। दूरसे गाड़ीकी व्हिसिल सुनायी दी। निराशाभरी दृष्टिसे जुम्माने चारों ओर देखा। कोअी दिखायी नहीं दिया। वह सिगनलकी ओर दौड़ा। वह साँकल खींचने लगा और जोरोंसे चिल्लाने लगा। पर चक्कीकी घरघराहटने अुसकी आवाज ही दबा दी। कोअी न आया। वह फिरसे किवाड़की ओर लपका और लातें लगाकर कहने लगा।

"अरे बहन, देखो, सुनो, सिगनल अूँचा करो, मेरा वेणु कट जाअेगा।"

"घरपर कोअी मरद नहीं है," लापरवाही भरा अुत्तर मिला, और फिर चक्की चलने लगी।

अब गाड़ी बहुत नजदीक आ चुकी थी। अेक बार वह फिर चीख मारकर पुकार अुठा—

"अरे कोअी दौड़ो, दौड़ो मेरा वेणु कट जाअेगा। अरे बचाओ, बचाओ।" पर अुसकी आवाज, अुसीकी प्रतिध्वनिमें डूब गयी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जुम्माने आकाशकी ओर देखा। आकाशका अंतिम तारा डूबनेको था। चारों ओर कुहरा होने लगा था। गाड़ी धड़धड़ करती बहुत नजदीक आ चुकी थी। जुम्माने हाथकी लकड़ी अेक ओर फेंक दी और चिल्लाया "या परवरदिगार!"

फिर वह वेणुकी ओर लपका।

वेणु पछाड़े खा-खाकर थक गया था; हाँफ रहा था। जुम्मा अुसकी गोदमें जाकर छिप गया, अुसकी पीठ सहलाने लगा और बोला--

"प्यारे दोस्त, भैया मेरे, वेणु! हम सदासे साथ हैं, और सदाके साथी रहेंगे," और जुम्मा भैंसेके पास ही लेट गया।

फक्-फक् करती गाड़ी आयी। मौत नजदीक आ रही थी। जुमाने आँखें मूँद लीं। वेणूने भी मौतको आते देखा। अेकाअेक अुस भैंसेने अपनी पूरी ताकतसे माथा अूँचा किया और अेकही झटकेसे जुम्माको अुठाकर रेलकी पाँतके पार फेंक दिया। दूसरेही क्षण, रेलगाड़ीका पहिया वेणूपर फिर गया। लोहूके फव्वारे छूटे और अुन फव्वारोंने जुम्माके कपड़ोंको रंग दिया।

जब जुम्मा होशमें आया, तो देखा लोहूके गढ़ेमें, वेणूके कटे अंग तितर-बितर पड़े हैं। भैंसेका कोअी नामोनिशान न था।

आज भी, नित्य सुबह, सवेरे, जुम्मा, अकेला और अशांत, हाथोंमें जूही-मोंगरेके फूल लेकर वहाँ आता है और अुस गढ़ेके पासके पत्थरपर अिन फूलोंकी अंजली बिखेरकर चिल्लाता है—.

"या अल्लाह! वेणु, वेणु, वेणु!" और फिर वहाँसे चला जाता है।

(गुजरातीसे अनुवादकः- श्री अिन्द्र वसावड़ा)

मैं पागल, प्राण लुटा आया

: श्री विद्याधर द्विवेदी 'विज्ञ' :

दुनियाने केवल स्वर माँगा,
मैं पागल, प्राण लुटा आया॥
मनका वन फूला फूला था,
साँसोंमें सौरभ झूला था,
प्राणोंकी धरतीपर जैसे
माधवका यौवन भूला था,
तब ढँक न सका मैं अपनापन
भर गये सुरभिसे धरा-गगन;
अिसलिअे कि स्वरकी बाँहोंसे
फूलों-सा गान लुटा आया॥
दुनियाने केवल स्वर माँगा,
मैं पागल, प्राण लुटा आया।
फिर चिन्ताके दो क्षण आये,
पग थके डगरपर भरमाये,
मन अूब गया सूनेपनमें,
आँखोंमें बादल भर आये,
तब मैंने मन पहचान लिया,
अिसलिअे धुअेंमें डूबा भी
फूलों-सा गान लुटा आया॥
दुनियाने केवल स्वर माँगा,
मैं पागल, प्राण लुटा आया।
सुखने तो मधुर पराग लिया,
दुखने छातीपर दाग लिया,
फिर भी जब दुनियावालोंने
मेरी घर मुझसे माँग लिया
तब बेघरका बेचारा मैं,
अपनी मंजिलसे हारा मैं,
असहाय पड़े करुणावाले
पथको आह्वान लुटा आया॥

[गोरखपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक्कयागप्परणी

: श्री ति. शेषाद्रि, अेम. अे. :

तमिल भाषाके साहित्यका वह भागभी काफी लंबा है जो अनुमानका विषय न रहकर प्रत्यक्ष अुपलब्ध है। लगभग ढाअी-तीन हजार सालोंका साहित्य है वह।

अिस साहित्यमें आरम्भसे ही अेक प्रवृत्ति साफ दृष्टिगोचर हो रही है। वह है सामंजस्यकी प्रवृत्ति; विषयके लिअे गंभीर तथा सनातन सत्य चुननेकी प्रवृत्ति; भावोंमें विशालता तथा विराटता लानेकी प्रवृत्ति, जिससे भारतीय विचारोंकी वह सक्षम विलक्षणता अक्षुण्ण रहे। स्पष्ट रूपसे कहें तो तमिलके साहित्य-स्रष्टाओंने लगातार यही कोशिश की कि साहित्यमें वह सर्वग्राही विशालता बनी रहे; ताकि देशवासी अुसे अपना सकें। शायद अुन्होंने सनातन सत्यमें विभिन्नता नहीं देखी। सत्यका अेक ही रूप हो सकता था।

शुरूमें शायद तमिल साहित्य अपनी विशिष्टता तथा विलक्षणता अधिक लिये हुअे था। लेकिन धीरे-धीरे दसवीं सदीतक-जिस कालको मैं काव्यकाल कहना चाहूँगा-साहित्य सिर्फ तमिलनाडका न रहकर भारतीय बन गया। मतलब यह कि अुसका बाहरी रूप तथा वेशभूषा तमिलका अपना रहा; अुसकी आत्मा पूर्ण भारतीय हो गयी।

कम्बनकी रामायण अेक अैसी कृति है। अगर अुत्तर भारतके लोग नाम सुनकर समझ लें कि रामायण अुत्तर भारतकी कहानी है; कम्बनकी रामायण अुसका अनुवाद होगा, तो यह भ्रम है। कम्बनकी रामायण पढ़िअे तो पता चलेगा कि रामकथाने तमिल भाषाका आवरण तथा तमिलनाडका वास पाकर कितना सुन्दर रूप धारण कर लिया है। यह तमिलवालोंकी विशेषता थी कि वे तोता कहींसे पकड़ लाये लेकिन अुसके लिअे अपना पिंजरा अलग अपने ढंगसे तैयार किया तथा अुसे अपनी बोली सिखा दी। सरयूने कावेरीका रूप धारण कर लिया; राम ठेठ तमिलवाले बन गये; स्वयं अयोध्या नगरीभी शोळ राजाकी कोअी सुन्दर पुरी बन गयी। काव्य-शैली तमिलकी परिपाटीके सांचेमें ढल गयी।

यह प्रयास स्तुत्य है। लेकिन अगर अुत्तरभारत-वाले यह समझते हैं कि देखो तमिल भाषामें मौलिकता नहीं रही तो दक्षिण भारतवाले अपनी परंपराको कोसने लगते हैं और अपनी अलग खड़े होनेकी क्षमताके प्रदर्शनके लिअे छटपटाते हैं। अिसीलिअे तमिलनाडके विद्वान दूरदर्शी लोग चाहते हैं कि यह परंपरा जारी रखनेका प्रयास दोनों ओरसे सक्रिय रहे।

खैर, अुसी परंपरा-लड़ीकी अेक सुंदर मणिसे परिचय करानेका ही मेरा अिस लेखसे अुद्देश्य है। पाठकोंको अेक नवीन चीज मिलेगी, जो नवीन होते हुअे भी बिलकुल अपरिचित नहीं रहेगी यानी "अेक परिचित नवीनता" का रसास्वाद मिलेगा।

अिस ग्रंथका नाम "तक्कयागप्परणी" है। नाममेंही आप अिस विचित्र सामंजस्यका अुदाहरण लीजिअे। यह शुद्ध संस्कृतके 'दक्षयज्ञ भरणी' का साफ तमिल रूप है (विकृत रूप नहीं)। जी हाँ, यह दक्षयज्ञकीही कहानी है जिसे स्वयं तुलसीदासजीने बड़े चावके साथ रामचरित-मानसमें बखाना है। लेकिन अिस ग्रंथमें वह कहानी जिस ढंगसे कही गयी है अुसमें कलासौष्ठव है; और अुस कहानीकी पेटीके अंदर कितनेही भावमणि बटोरकर रखे गये हैं, अुसीमें चमत्कार है।

कवि

अुसके प्रणेता कवि ओट्टक्कूत्तर हैं। 'कूत्तर' नटराजका तमिल नाम है, कूत्तर कम्बनके समकालीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवि माने जाते हैं। कूत्तर मुदलियार जातिके थे। अुनमें तथा तत्कालीन प्रसिद्ध कवियोंमें बड़ी भयंकर होड़ थी। वे बड़े साहसी कवि थे तथा वीर हृदय रखते थे। असमर्थ कवि अुनके सामने टिकही नहीं सकते थे। अलंकारिक अर्थमें ही नहीं, बल्कि यथार्थमें ही अुनके प्रतिद्वन्द्वीका नाश निश्चित था, अगर वह कम-प्रतिभा-वाला तथा कमजोर रहकर भी होड़ लगानेका दुस्साहस करे। वे तीन शोळ (Chola) राजाओंके आश्रयमें रहे।

अिस कविके बारेमें यह जनश्रुति प्रसिद्ध है। शोळ राजाका विवाह पांड्य राजकुमारीसे हुआ था। अेक दिन किसी कारणवश पति-पत्नीमें मनमुटाव हो गया। रानी अपने कमरेके अंदर गयी और किवाड़की चटखनी अंदरसे चढ़ा ली। राजाने कूत्तरको रानीके पास अुन्हें शांत करनेके लिअे भेजा। कूत्तरने जाकर अेक पद्य सुनाया। लेकिन रानीने अुसे सुनातक नहीं; ओट्टक्कू-त्तन पाट्टुक्कु रेट्टै ताप्पाल-(ओट्टक्कूतनके पद्यके जवाबमें दो चटखनियाँ) कहकर दूसरी चटखनी भी चढ़ा ली।

रानी जब पतिगृह आयी थी तब पांड्यराजाने अपने दरबारी कवि पुगषेंदिको, जो प्रसिद्ध "नलवेण्बा" (नलदमयन्तीकी कहानी) के प्रणेता हैं, अपनी पुत्रीको साथ कर दिया था। तब वे वहीं थे। शोलराजाने अुन पुगषेंदिको अपनी रानीके क्रोधको शांत करनेके लिअे भेजा। पुगषेंदिने जाकर अेक पद्य सुनाया तो रानी किवाड़ खोलकर बाहर आ गयी। पुगषेंदि तथा ओट्टक्कूत्तरमें पहले ही हुअी होड़की भावनामें अिस घटनाने आगमें घीका काम कर दिया। तो भी अेक दूसरेकी प्रशंसा अुनके कानोंसे दूर रहकर दोनोंने की।

कूत्तर तमिल तथा संस्कृत दोनों भाषाओंके प्रकांड पंडित थे। अुनके काव्योंके अध्ययनसे पता चलता है कि अुनका साहित्य तथा शास्त्रज्ञान कितना गहरा था। संस्कृतके शब्दोंके तद्भव तथा तत्सम दोनों रूपोंके प्रयोगको वे कभी तमिलके हितका बाधक नहीं मानते थे।

मालूम पड़ता है कि वे "श्यामलाकी अुपासना" के शास्त्रके भी ज्ञाता थे, और देवीके अुपासक थे। अुनको "कवि राक्षसकी अुपाधि" अिसलिअे मिली कि वे देवीके साहसपूर्ण अुपासक थे। अब भी यहाँ जिनको यक्षिणी या दुर्गा आदि देवियाँ अिष्ट हैं, वे भयमिश्रित सम्मानके साथ देखे जाते हैं।

जहाँ कूत्तरके प्रेमियोंने कविराक्षसका संबोधन कर अुनकी साहसपूर्ण प्रकृति तथा कविताके क्षेत्रमें अुनकी निःसंकोच तथा निडर गतिका सम्मान किया, वहाँ कविचक्रवर्ती या सिर्फ चक्रवर्तीकी अुपाधिसे भूषित कर अुनके साहित्यके पसन्द करनेवालोंने अुनकी अद्वितीयताका अभिनन्दन किया।

अुनका काव्य सचमुच अेक सुन्दर साहसपूर्ण कला-योजना है। अुनकी कल्पना कल्पनातीत लोकोंको लांघ जाती है; अैसी कल्पनाअें, जो कमजोर दिलोंको अेक-दम कँपा देगी। रातके वक्त कोअी अुनके भूतगणोंसे परिचय प्राप्त कर ले तो अुस रातको अुसकी नींद हराम हो जाअे।

वर्णनोंमें आपको लोकोत्तर विचित्र वातावरण बनानेमें प्रशंसनीय दक्षता प्राप्त है। अिस वजहसे अुनको "कौडप्पुलवर" (शायद गूढ़ कविका रूप हो) की अुपाधि अुपलब्ध थी।

राजाने अिनको "कालम"* आदि भेजकर सम्मानित किया था; अतः अुनको "कालप्पुलवर" भी कहा जाता है।

ओट्टक्कूत्तरके काव्यको समझनेके लिअे आपको शास्त्रका गहरा ज्ञान, तीक्ष्ण बुद्धि, सशक्त मन तथा कविका साथ न छोड़नेवाली कल्पना शक्ति अिन सबकी आवश्यकता पड़ेगी। अुसका अध्ययन कर लीजिअे। आप भी अेक प्रकांड पंडित बन जाअें।

भरणी

जैसे नामसे जाना जा सकता है, अिस काव्य-ग्रंथमें दक्षयज्ञकी कथा भरणी-रीतिसे रची गयी है। तमिल साहित्यके लक्षण ग्रंथोंमें प्रबंध रचनाकी ९६ रीतियाँ प्रचलित हैं। जिनमें भरणी-विधि भी अेक है। अुस

*(शहनाअीके समान अेक बाजा जो सत्ताधारीके भ्रमणपर निकलनेके समय बजाया जाता है।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रीतिकी रचनाकी विशेषताअें मुख्यतः ये हैं— अुसमें किसी प्रसिद्ध युद्धका वर्णन किया जाता है। युद्धके विजयी वीरको नायक बनाकर यह रचा जाता है। कभी-कभी आचार्य या कोअी देवता भी काव्यनायक बनाये जा सकते हैं।

अिस काव्यमें प्रधानतया, अीश्वर-वन्दना, कडैतुरप्पु (द्वार खोलना), दुर्गाको भेंट चढ़ाना आदि अंग होते हैं। (अिनका सविस्तर वर्णन आगे किया जाअेगा)।

यह क्यों भरणी कही गयी ? अिसके भी विशेष कारण हैं। भरणी नामक नक्षत्रके बाद ही अिसका नामकरण हुआ है।

भरणीके दिनमें ही भूतगण भोजन बनाकर काली देवीको भोग लगाते हैं। भरणी दुर्गा-देवीका नक्षत्र है तथा यमराजका भी। अिस तरहके काव्यमें दुर्गादेवीका वर्णन, दुर्गादेवीके भोजनका वर्णन तथा यमराजके कार्य विस्तारका वर्णन अवश्य रहता है। अिस कारण अिस प्रबंधका नाम भरणी पड़ा।

भरणी नक्षत्र विजयका सूचक भी है। तमिलमें यह मसल मशहूर है, भरणीका जात—धरणीका राजा। किसी वीर विजयीकी वह कथा है, अतः अिसका नाम भरणी हुआ है।

दक्ष-यज्ञ भरणी

अिस रीतिकी और अेक विशेषता है कि अिस प्रबंधके शीर्षमें हारे हुअेका नाम जुड़ा रहता है। कथाके अनुसार दक्षप्रजापतिके सत्ताजनित घमंडको तोड़कर, अुनकी अनधिकार चेष्टा, अनीति सम्मत कार्य तथा अुद्दंडताकी सजा दी जाती है। अतः दक्षका नाम ही शीर्षक है। असलमें वीरबाहुदेवने दक्षका ही नहीं दक्षके सहायक देवोंका भी गर्व जरूर तोड़ा था; बल्कि अुनका नाश भी कर दिया था। तो भी अिसका नाम 'वीरबाहु भरणी' नहीं रखा गया।

अन्य प्रसिद्ध भरणियोंमें कलिंगत्तुधरणी, हिरण्यवदैप्परणी, मोहवदैप्परणी आदि अुल्लेखनीय हैं। अब अिस काव्य विषयको अध्यायवार संक्षेपमें देखिअे :—

१. अीश्वर वन्दना। अिसमें क्रमशः अुमापति, गणनायक (विघ्नहर) मुरुगन (सुब्रह्मण्य) आदि देवों की वन्दनाके साथ श्री ज्ञानसंबंधकी भी महिमा गायी गयी है। ज्ञानसंबंध शैव भक्तोंमें प्रसिद्ध चार संतोंमें बहुत प्रसिद्ध बाल संत हैं। अुनका नाम अिसलिअे चिरस्मरणीय है कि अुन्होंने शैवमतकी स्थापनाकर, अुसे दृढ़ किया। अुनके तेवारम (अीश्वर-भजन) तमिलनाडके शैवोंके कंठाभरण हैं और मन्दिरोंमें श्रद्धाके साथ पूजा-अर्चनाके समय गाये जाते हैं। अुनकी जैनोंके साथ जो मुठभेड़ हुअी अुसका वर्णन अिसी भरणीके अंतर्गत किया जाता है।

अिस अध्यायका आखिरी पद्य है :—

" अिरै वाळि तरैवाळि, अियल वाळि, अिशै वाळिअे।

मरै वाळि, मनु वाळि, मदि वाळि, रवि वाळि, मळै वाळिअे।"

क्रमशः अीश्वर, भूमि, रक्षाशक्ति, चरित्र, यश, वेद, मनु नायक, शोळ राजा, चंद्र, सूर्य, वर्षा सब चिरजीवी हों।

२. अिसके बाद दूसरा अध्याय "कडैतिरुप्पु" है। अिसमें कअी देवियोंसे द्वार खोलनेकी प्रार्थना की जाती है। यह भाग अिस ग्रंथका विशिष्ट भाग है तथा कोमल भावोंसे पुष्ट होनेके कारण सबसे रसवान् भी। शायद अिसका आशय है कि देवियोंकी कृपासे कविताका द्वार खुलेगा।

यह भाग सरस्वतीदेवी तथा लक्ष्मीदेवीसे की गयी प्रार्थनाके साथ शुरू होता है। क्रमशः सुर स्त्रियाँ, जलदेवियाँ, पर्वतकुमारियाँ, वनदेवियाँ तथा नगरवासिनीदेवियाँ संबोधित की जाती हैं। अुनमेंसे दो-अेक पद्य देखिअे :—

अुरुहूं शुररुथिरुण्डन अुणर्वुण्डन वोषुग।
तिरुहुं कुळलर मँगयर तिरमिन् कुडै तिरमिन्।

अिसमें अुन सुरबालाओंको संबोधित किया जाता है, जो स्नान करनेके बाद अपनी केश राशिको अुमैठकर अुनसे पानी निकाल रही हैं। बेचारियोंको पता नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि जिन केशोंको अैंठ रही हैं, अुनके अन्दर सिर्फ पानी नहीं है, बल्कि देव-युवकोंकी जानें तथा स्मृतियाँ भी हैं। अुनके केशोंने देखनेवाले युवकोंकी जान तथा सुध समेट रखी थी। अब वह भी अैंठन खा रही है।

दूसरा अेक पद्य लीजिअे :—

अरनुमेनै अिमय वरु मुण्बरन
अंजि नंजुं अमुदमु मुडन्।
तिरै महोदधियै विड विरुन्दनैय
दैव मादर् कडै तिरमिनो।

समुद्रमें विष तथा अमृत छिपे रूपसे विद्यमान हैं। यह सबको मालूम है। पौराणिक कथाअें बताती हैं कि विषके भक्षक शिवजी हैं तथा अमृतके देव। अपने दुश्मनोंसे डरकर अमृत तथा विष अिन सुन्दरियोंमें शरण पा गये हैं। अुनसे कवि कहता है— "अैसी सुन्दरियो, किवाड़ खोलो!"

टीकाकारने समझनेमें सहायता देनेके लिअे विषको अुनकी आँखोंमें तथा अमृतको कुचोंमें छिपा हुआ बतलाया है। विज्ञ तथा रसिक पाठकगण कल्पना तथा अपने-अपने अनुभवके आधारपर अिसका अर्थ-गांभीर्य समझ लें।

तदनन्तर (३) दुर्गापरमेश्वरीका वासस्थान-स्मशानका भयंकर वर्णन होता है। वहाँ कालमुख भैरव आदि घूमते हैं। पिशाचगण भूतगण आदि भी अपने भयंकर रूप लिये विचर रहे हैं। रविके घोड़े भी अुस ओरसे जाते डरते हैं, फिर मेघोंका क्या पूछना। कंटीले झाड़ोंको छोड़कर वहाँ कोअी और चीज नहीं अुगती। "Ancient Mariner" पुरातन समुद्र-यात्रीके जहाजोंके समान रेखा रथोंमें भूत दिखायी देते हैं। भूतोंका शोर तथा मृतकोंके साथ बजते आनेवाले भयंकर बाजोंकी आवाजें अितनी तुमुल हैं कि देवोंके कान भी फट जाते हैं।

अिस पृष्ठ-भूमिमें (४) दुर्गादेवीका वर्णन होता है। मरकत-कांता देवीका वर्णन आपादमस्तक किया गया है। अुनकी सन्निधिमें बहुत अुपासक हैं, जो होम आदि विधिसे अुस देवीका प्रसाद पानेके लिअे सतत अुद्यत हैं।

अिस भागमें श्यामला देवीकी अुपासनाके शास्त्रका सम्यक् ज्ञान मिलता है। अिस भागका आखिरी पद्य यह है :—

अडिच्चुटटु नूपुरमो? वारणंगलनैत्तुमे
मुडिच्चूटटु मुल्लैयो? मुदर्कर्पु मुल्लैये।

पादवलय वे क्या नूपुर हैं? नहीं, वे अनंत वेदोंके सहस्त्रों मंत्र हैं। सिरपर क्या वह चमेली लता है? नहीं, सतीत्वकी लता है। चमेलीकी लता सतीत्वका प्रतीक मानी जाती है। और अुमादेवी सतियोंकी सिर-ताज हैं। देवीका श्रद्धाके साथ वर्णन पूरा करनेके बाद (५) पिशाचगणमें परिचय किया जाता है। अिसमें पिशाचोंके रूप और अुनकी सर्वभक्षिणी तथा अदम्य भूखका वर्णन मिलता है।

आकाशके छू जानेसे तथा आकाशमें और भी अूँचा होनेकी शक्तिके न होनेकी वजहसे नाटे हुअे पिशाच; तथा दिगंतकी तंगीकी वजहसे पतले हुअे पिशाचके दाँत अगर किवाड़का काम नहीं करते तो शायद पेटकी भूख मुखके द्वारसे बाहर निकलकर सारे विश्वको निगल जाती! अुसके हाथ अितने लम्बे हैं कि सारे समुद्रोंकी चौड़ाअी तक फैल जाते; तथा अितने बड़े कि सारे अिक्षुसमुद्र तथा मधुसमुद्रको अेक ही चुल्लूमें लेकर पी जाते! अिनकी भूखको क्या कहा जाअे! (६) अिनकी अधिनायकी देवीके मंदिरका वर्णन बादको होता है।

यह अंश बहुत ही श्रेष्ठ है; क्योंकि अिसमें ज्ञान-संबंधकी धर्म-विजयकी कहानी सरस्वती देवीके मुखसे कहलायी गयी है। वटवृक्ष, देवीकी शैय्याका सर्प, अुनके पंचायुधके वर्णनके बाद देवीके दरबारका वर्णन होता है। देवी नारायणकी बहन समझी जाती है तथा मूल देवी। शिवजीकी पत्नी तथा नारायणकी पत्नी भी अिनके ही अंश हैं। श्यामला शास्त्रमें यही सबसे अुच्च-परब्रह्म समझी जाती हैं।

अुनकी सेवामें सप्तमाताअें, स्वयं लक्ष्मी देवी, भूदेवी तथा सरस्वती देवी विद्यमान हैं। देवीकी कृपा-दृष्टि सरस्वती देवीपर पड़ जाती है और देवी कहती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है—वल्लीके (Valli) प्रेमी, मेरे पुत्रकी वह कथा गाओ जिसमें अुसने अपने प्रतिस्पर्धियोंपर विजय पायी थी।

तिरुज्ञानसंबंध मुरुगनके अवतार माने जाते हैं। सरस्वती देवीने कथा सुनायी; जिसका सार यों है:—

ज्ञानसंबंध मधुरा नगरीकी दयनीय स्थितिका पता पाकर मधुरा आये। नगरकी चहारदीवारीके बाहर अेक मंडपमें विराज रहे थे। विरोधियोंको अिसका ज्ञान मिला तो अुन्होंने अुसमें आग लगा दी। ज्ञानसंबंधने अपनी योग-शक्तिसे अुस आगको आज्ञा दी कि तुम पांड्य राजाके शरीरकी ताप बन जाओ। पांड्य राजा, जो कून पांड्यभी कहलाता था (अपनी कुब्जता के कारण) ज्वरसे पीड़ित हो गया। बहुत अुपचार किये, पर कोअी लाभ नहीं हुआ। तब मन्त्री कुलशिरैयार तथा रानी मंगैयर्करशी (नारीमें रानी) ने राजासे प्रार्थना की कि ज्ञानसंबंध बुलाये जायें। ज्ञानसंबंध आये तथा अुनको अुच्चपीठपर बिठाया गया। अुनके विरोधियोंने अीर्ष्याविश आरोप लगाया—"यह पांड्य राजा विरोधी शोळराजाके राज्यका बालक है; वहभी शैव बालक। अिसका यहाँ आनाही दुस्साहस है। और राजाके ज्वरको दूर करनेका प्रयास वृथा है।" लेकिन मन्त्रीने अुनको चुप कराया। तथा बालसंत ज्ञानसंबंधसे प्रार्थना की कि आप राजाको ज्वरपीड़ासे मुक्त कीजिअे। ज्ञानसंबंधने राजाके शरीरपर विभूति लगायी और राजा स्वस्थ हो गया। राजाने अुठकर बालकका स्वागत किया। विरोधियोंका मन अीर्ष्यासे राख हो रहा था। विरोधियोंने बेमतलबकी बातें कहीं। राजाने कहा, जिस ज्वरकी चिकित्सा आप नहीं कर सके वह ज्वर अिनकी विभूतिके कारण दूर हो गया। तब मैं क्यों न अिनकी वन्दना करूँ?

तब विरोधियोंने शर्त लगायी कि हम दोनों अपने-अपने मन्त्र ताड़के पत्तोंपर लिखेंगे। जिनका पत्र आगमें नहीं जलेगा तथा वैगे नदीमें पानीकी धाराके विपरीत दिशामें बहेगा वे विजयी माने जायें। हारे हुअे स्वयं सूलीपर चढ़ेंगे। तथास्तु कहा गया। रानी बालक ज्ञानसंबंधके मुखको देखकर शंकाकुल हुअी। तब बालसन्तने कहा, देवी चिन्ता मत कीजिअे:—

"अग्नि हमारी है। अुसी अग्निकी शक्तिसे पानी बरसता है। वर्षासेही नदी अुत्पन्न होती है। अतः नदी भी हमारी है। फिर क्या अग्नि हमारे मन्त्रको जलाअेगी? नदी ताड़पत्रको बहा ले जाअेगी?"

मतलब, अग्नि तथा वरुण हमारे शिवके अधीन हैं। हमारे ही अधीन हैं। अिस तरह वीर-वचन बोलनेवाले बालकका चित्र भी देख लीजिअे, लगे हाथों—

कादिर्कनगक्कुळै निन्रिलगक्
कमषुं कुळल्मुन्बु कलन्दशैपच्
चोदित्तिरत्र नेरियलि् नीरिलहच्
चुट्टिक्कलन् मीदु तुलंगवुमे।

कानोंमें कुंडल झूल रहे हैं। सुगंधित अलकें मुखसे मिलकर हिल रही हैं। ज्योतिर्मय ललाटपर भभूत देदीप्यमान है। अुसके अूपर "शुट्टी"* सुशोभित हो रही है।

क्या यह चित्र देखकर आपका मातृ या पितृ-हृदय अुस बच्चेको गोदमें अुठानेके लिअे मचल नहीं अुठता? साथ-साथ ज्योतिर्मय ललाटकी भभूतको देखकर आपका भक्त-हृदय श्रद्धासे झुक नहीं जाता? खैर; यथा-विधि स्पर्धा शुरू हुअी। ज्ञानसंबंधकी जीत हुअी तथा विरोधियोंकी हार। विरोधी स्वयं सूलीपर चढ़ गये।

अिस कथाका संकेत "अीश्वरवन्दना" के अंशमें है। वहाँ ज्ञानसंबंधको "स्वयं सूलीपर चढ़कर प्राण खोये विरोधियोंके समूल अुन्मूलनको विक्रमी" के नामसे संबोधित किया गया है।

अिस कथा-श्रवणसे आनंदित होकर देवीने सरस्वतीको अपने सामने स्थान देकर सम्मानित किया।

तभी [७] पिशाच आकर अपनी भूखका विह्वल वर्णन करने लगते हैं। कितने ही दिन हुअे

---

*"शुट्टी" झूमर-सा अेक 'आभरण' है जो बच्चोंके सिरपर अग्रभागमें लटकता रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुनको कुछ खाये हुअे। भूख नहीं सही जाती। जब यह अर्ज की जा रही है तभी अेक पिशाच आता है जो दक्षयज्ञ तथा युद्ध देखकर आया हुआ है।

वह पिशाच [८] देवीसे सारी कहानी कहता है। "कालिकु कूलि कूरियदु"के सर्गमें सारी कहानी विस्तारके साथ कही जाती है।

दक्षने यज्ञ शुरू किया, अन्य सभी देवताओंको निमंत्रित किया। लेकिन पुराने विद्वेषके कारण अेक शिवजीको नहीं बुलाया। पार्वती देवीने देखा कि सभी देव जा रहे हैं। जानेकी अिच्छा जाग्रत हुअी तो अुन्होंने पतिसे अनुमति मांगी। शिवजीने कुछ आक्षेप किया तो देवीने पिताकी भूलके लिअे माफी मांगी। भविष्यद्रष्टा महेशने अनुमति दे दी।

देवी गयीं; पर स्वागत किसीकी ओरसे न हुआ। स्वयं माताने भी अनदेखी कर दी। शिवा कुपित होकर लौटीं। अुनकी परिचारिकाओंने कोप शमन करनेका प्रयास किया लेकिन कुछ लाभ नहीं हुआ। वे सीधे पतिके पास गयीं और प्रार्थना करने लगीं कि पिताको अिस बे-अदबीकी अुचित सजा दी जाअे। अीश्वरने सोचा, आखिर पिताकी पुत्री है, क्या पता कि सजा देनेपर शिकायत करने लग जाअे। वे चुप्पी साध गये।

देवीके गुस्सेका पारा और भी चढ़ गया। वे पतिसे अलग हो गयीं और कहीं दूर जाकर बैठ गयीं। शिवजीको भी गुस्सा आ गया। अुन्होंने वीरबाहुको बुलाया और आज्ञा दी कि जाके यज्ञसहित दक्षका नाश कर दो और अुनके सहायक देव भी छूट न जाअें।

वीरभद्रदेव भूतगणोंको लेकर युद्धमें गये। दक्षके दलमें विष्णु, ब्रह्म, अिन्द्र, द्वादशादित्य, अेकादश मरुद्रण थे, समुद्र था, पर्वत थे, वायु थे।

बारी-बारीसे सबका नाश होता गया। लेकिन ब्रह्माने सबकी पुनः सृष्टि कर दी। अिस युद्धके विशद तथा सजीव वर्णनके बाद हम देखते हैं कि वीरभद्रदेवने भद्रकालीकी सहायता लेकर सबका नाश कर दिया। विष्णु, दस ब्रह्मदेव आदि सब मरकर भूत बन गये।

यह प्रकरण लंबा प्रकरण है। अिससे हमको कअी बातोंका ज्ञान होता है। हमारे आजतकके देव-अितिहासमें कितने देव हैं, अेक-अेक देवके कितने अंश हैं, अिन सबका ज्ञान अुपलब्ध होता है। अेक तरहसे देव-वंशका अितिहास पूर्णरूपेण बताया जाता है। अुनके नाम, अुनके गुण, अुनके काम, अुनकी प्रकृति सबसे हम परिचित हो जाते हैं।

दूसरी भद्रकालीके गणोंमें जो योगिनियाँ, डाकिनियाँ, मोतिनियाँ आदि हैं अुनका भी परिचय हमको दिया जाता है। वीरभद्रके गणोंमें कुछ पक्षी रूपी भूत हैं। अुनके वर्णनके मिस पक्षियोंके गुणोंका भी वर्णन मिल जाता है; जैसे :—

चकोरोंने चन्द्रकी अल्पवया किरणोंको चुग लिया। कबूतरोंने पर्वतोंको चुग लिया। कबूतर छोटे-छोटे कंकड़ निगल लेनेके आदी हैं। अिस स्वभावका यहाँ प्रयोग करके कविने पर्वतोंको कपोतकवलित बताया है।

मोरोंने सर्पोंको निगल लिया आदि। यह कहानी सुनकर काली पिशाचोंको लेकर युद्धके मैदानमें आती है, जहाँ—

(९) कूळडुदलुम् डडुदलुं (भोजन बनाकर कालीकी भेंट करने)की क्रिया संपन्न होती है। वह भोजन क्या है– देवमांस, हड्डियाँ तथा अन्य सामग्रियोंका पड़ा हुआ मांड है। अिसमें बीभत्स रसका पक्का पकवान तैयार हुआ है। पिशाच भर पेट खा-खा करके राजाकी जय मनाते हैं। जिसकी अिच्छासे यह काव्य-प्रणयन हुआ। यह ओट्टक्कूत्तरके साहसका और अेक अुदाहरण है कि पिशाचगण जहाँ अुनको काव्य नायककी जय मनानी चाहिअे थी वहाँ काव्य-सहायक राजाकी जय गा दी।

यहाँ कहानीको समाप्त हो जाना चाहिअे। लेकिन यहाँ कहानी समाप्त नहीं होती।

(१०) कलं गाट्टल (मैदान दिखाना) में शिवजी पार्वती देवीको ले आकर समर-भूमि दिखाते हैं।

समर-भूमिमें सभी शत्रु भूत रूपमें खड़े हैं। विष्णुका भूत अुस दिनकी अुनकी छायाके समान लंबा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खड़ा है जिस दिन अुन्होंने त्रिविक्रमावतार लेकर ब्रह्मांड को नापा था।

भूत गणोंपर राज्य करनेवाला देवराजका भूत; पेटके अन्दर आग रखनेवाला वरुणका भूत; निर्जीव धूमाकार अगिनका भूत; दूसरे भूतपर सवार निरुतिका भूत (निरुति भूतवाहन है), यमका भूत, कहाँ तक कहें सब देव-भूत विचर रहे हैं।

यह सब देखकर देवीका दुहरा कोप हवा हो गया। वे अपने पतिदेवसे प्रार्थना करती हैं कि अिनको माफ कर दें तथा पूर्ववत् रूप तथा पद दिला दें।

शिवजी, अपनी पत्नीका मन रख लेते हैं। सभी देव पूर्ववत होकर शिव-पार्वतीका मंगल गाते हुअे चले जाते हैं। दक्ष ही अैसे थे, जिनको पूर्वरूप नहीं मिल सका। अुनका शिरभर अजका-सा हो जाता है। आखिरी (११) प्रकरणमें जयगान होता है। यहाँ भी राजाका ही जयगान है।

अुपसंहार

पाठकोंने स्थालीपुलाक न्यायसे देखा होगा कि अिस काव्यसे कविका विविध शास्त्र-ज्ञान, साहित्याध्ययन, कवित्व-शक्ति, मौलिक प्रतिभा, अद्भुत-कल्पना अिनका पूरा ज्ञान मिलता है।

अिनके साथ-साथ कुछ विशिष्टताअें भी हैं, जिनकी ओर ध्यान दिये बगैर मन नहीं भरता। कवि अेकके बाद अेक, तीन शोळ राजाओंके आश्रयमें रह चुके हैं। यह बड़े राज-भक्त थे तथा कृतज्ञतासे भरे कवि थे। अतः, अुन तीनों राजाओंपर पृथक-पृथक अेक "अुला" गाया है। अुला अुस रचनाका नाम है, जिसमें किसी वीरका वर्णन अुसकी महिमाके साथ किया जाता है। अुसके अलावा कुलोत्तुंगन् पिल्लैत्तमिल (बाल काव्य-लीला) लिखकर कुलोत्तुंग राजाका सम्मान किया है। अिस भरणीमें विक्रमशोळनकी जय गायी गयी है। राजराजनका भी जय-गान यत्र-तत्र अिसीमें पाया जाता है। अिसी कृतज्ञतासे प्रेरित होकर नियमके प्रतिकूल जाते हुअे भी अुन्होंने पिशाचोंके मुखसे विक्रमका ही जय-गान करवाया है। आखिरमें भी कविने स्वयं अुनका ही जय-गान किया है।

दूसरे, अुनकी ज्ञानसंबंधके प्रति अगाध श्रद्धा थी। अिसी कारण अुन्होंने सरस्वती देवीके मुखसे ज्ञान संबंधकी महिमा गवायी। अिस सारी पुस्तकका नाश हो जाअे, तथा वही अेक अंश बच जाअे, तो भी वही अिसकी महिमाके परिचयके लिअे पर्याप्त होगा।

अिन दोनों भावनाओंके मूलमें शिव-भक्तिका स्रोत निःसृत हो रहा है। वे कट्टर शिव-भक्त थे। अिसी कारण अुनको यह कथा पसंद आयी। क्योंकि अिसमें शिवजीकी शक्तिके सामने अन्य देव नहीं ठहर सके। अिसी शिव-भक्तिके फलस्वरूप विरोधी हारकर म्रियमाण हुअे। शैवमतको पुनः स्थापित करनेवाले ज्ञानसंबंधके प्रति अपनी श्रद्धाको तथा शैव राजा शोलनके प्रति अपनी कृतज्ञताको प्रकट करनेमें वे अितने आतुर थे कि कहीं-कहीं काव्य-लक्षणके अुल्लंघनकी भी परवाह नहीं की।

तमिल भाषाकी प्रकृतिजन्य विशेषताओंको छोड़ दें तो भी अिस काव्यका हिन्दी ही नहीं, किसी भी भाषामें अनुवाद हो जाअे तो अुसके रसिक मुग्ध हुअे बिना नहीं रहेंगे—खासकर भारतके किसी भी कोनेका निवासी जो अपने पुराणोंमें आस्था रखता है, अपनी धर्म-मूलक देवप्रधान परंपरापर सहानुभूति (कमसे कम सहानुभूति ही) रखता है, अिसे पढ़कर अिसीमें खो जाअेगा, अिसमें संदेह नहीं है।

यह काव्य अपनी विषयआत्माकी परिचितताके कारण आकर्षक तथा अपनी नवीनताकी वजहसे रोचक सिद्ध होकर किसीको भी मोह लेगा।

[मदुरा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जनश्रुति—असत्यपर सत्य

: श्री ब्रह्मानन्द श्रीवास्तव, अेम. अे. :

संभव तो नहीं है पर मान लिया जाअे कि यदि अवकाशका जनक आकाश न होता, तो मनुष्य अपना मस्तक कहाँ रखता !

अिस बेढंगे प्रश्नका बेढंगा अुत्तर यह है कि मनुष्य अपना मस्तक भी भूमिपर रखता और खड़े-खड़े चलनेके अतिरिक्त लेटकर चलता।

आकाश क्या है ? कुछ नहीं। पर यह कुछ नहीं खड़े-खड़े चलनेके लिअे आवश्यक है।

जितना अव्यक्त और रहस्यमय है, वह आकाशमें ही है। आकाश स्वयं अव्यक्त है। घट-घटवासी नीला ब्रह्मही तो है।

हमारे जीवनके चारों ओर अैसी "कुछ नहीं" वस्तुअें घेरा डाले पड़ी हैं कि अुस घेरेके बाहर जातेही जीवनके बाहर जाना पड़ता है।

यदि कोअी आधुनिक मनुष्य जोरसे शोर मचाकर कहे कि पुराणकी कहानियाँ गलत हैं, तो हिन्दू चाणक्य चुटिया हिलाकर कहेगा, 'तू नास्तिक है, भ्रष्ट है, तू अधर्मी है।'

धर्म-ग्रन्थोंमें कअी अैसे स्थल हैं, जहाँ भगवानने स्वयं कुछ कहा है। जो कहा है वह जान लेनेके बाद पहली बात जो मनमें आती वह यह है कि भगवान अमुक व्यक्तिके पास गये होंगे और अपनी बात कहने लगे होंगे। अमुक व्यक्ति अुसे नोट करता गया होगा। यदि नोट न करता तो आजकी जनता क्या जानती कि भगवानने क्या कहा था।

यदि कहा जाअे कि जैसे आजके कहानीकार अपने पात्रोंसे ज्ञान और दर्शनकी व्याख्या करवाते हैं, वैसे अुस समयके काव्यकारों या कहानीकारोंने भगवानसे जीवन और धर्मकी व्याख्या करवा दी तो यह निबन्ध लेखक यहाँ नास्तिक माना जाअेगा। धर्मकी झण्डीके नीचेसे भागा हुआ आधुनिक व्यक्ति 'लाल झण्डी' का समर्थक माना जाता है। अतीतके अैसेही व्यक्ति असुर थे।

पर यह दावेके साथ कहा जा सकता है कि अुन पुरानी बातोंमेंसे अधिक पुराने काव्यकारोंकी कल्पनाअें हैं, जो साहित्य, धर्म और समाजमें घुस आयी हैं। वे केवल जनश्रुति हैं। धर्म-ग्रन्थोंमेंसे यदि दर्शन और ठोस अितिहासिक घटनाअें निकाल दी जाअें तो जनश्रुतिही शेष बचेगी।

पर अितना याद रखिअे कि ये जन-श्रुतियाँ अुड़ा देनेकी चीज नहीं हैं। वे असत्य हैं, पर जीवनमें सत्य बनकर आ पड़ी हैं। धर्मकी धरतीपर चलनेवाले प्रगतिका मस्तक अुसी जनश्रुति आकाशमें ही है, जो वस्तुतः है कुछ नहीं; पर अुस 'कुछ नहीं' का रहना आवश्यक है। भूगोल चन्द्रकी काली छायाको चाहे जमा हुआ समुद्र माने, चाहे पहाड़पर धार्मिक लोग विश्वासके साथ कहते हैं कि जब चन्द्रमा मुर्गा बनकर गौतमकी पत्नी अहिल्याको छलनेमें अिन्द्रकी सहायता करने गया था तब गौतमने मृग-चर्मसे मुर्गारूपी चन्द्रको मारकर गोरेसे काला कर दिया। तभीसे मृग-लांच्छन वहीं लटका है। कथाकी सत्यताका निर्णय विद्वान पाठक करें, पर सत्य अितना अवश्य है कि किसीकी पत्नीको छलनेवालेका मुँह काला होता है।

लोगोंको अतीत जितना अच्छा लगता है, वर्तमान अुतना अच्छा नहीं। अलंकार मढ़ा अतीत सत्य बन गया और अुसी अलंकारसे मुक्त वर्तमान बुरा ही रह गया।

तुलसीदासजीने कुंभकरणके विषयमें लिखा है, "भूधराकार शरीरा।" माननेवाले आखें मूँदकर मानते हैं कि कुंभकरणकी अूँचाअी यदि हिमालयके बराबर न रही होगी तो विन्ध्याचलके बराबर अवश्य रही होगी। और यदि आज कोअी कवि किसीको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'भूधराकार शरीरा' कह दे, तो वह अधिकसे अधिक छह या सात फीट अूँचा समझा जाअेगा।

धीवरकी पुत्री मत्स्य-गन्धाकी सुगन्ध दूर तक जाती थी। अुसे योजन-गन्धा भी कहा गया है। अिसका विरोध करनेवाला प्राचीन सभ्यता विरोधी और महाभारत अविश्वासी माना जाअेगा, पर "आनन ओप अुजास"वाले विहारीके अिस दोहेमें अतिशयोक्ति है।

शकुन्तलाके लाल अधरको फल समझकर पक्षी अवश्य चोंच मार सकता है, पर आजकी 'चन्द्रमा' कही जानेवाली नायिका केवल 'गोरी' मानी जाअेगी।

जनश्रुतिका जन्म बेमतलबकी गप्पों और मतलबके तर्कोंसे होता है। कुछ बातें चल पड़ती हैं, कुछ चला दी जाती हैं। चल पड़ती हैं किसी अनुमानके आधारपर, और चला दी जाती हैं किसी कार्य-सिद्धिके लिअे। ये न पूर्णतः सत्य होती हैं, न असत्य। सत्य अिसलिअे होती हैं कि अिनका आधार शून्य नहीं होता और असत्य अिसलिअे होती हैं कि चल पड़ती हैं या चला दी जाती हैं।

वस्तु या व्यक्ति जो किसी भाँति हमारे जीवनमें आ जाते हैं, अुनके जीवनका वह आवश्यक अंग जो खो गया है या छिप गया है वहाँ अुनके जीवनके किसी विशेष अंशका आधार लेकर या कोरी कल्पनाकर कुछ अनुमान कर लिया जाता है। वस्तु या व्यक्तिकी महत्ताके अनुसार अनुमान भी होता है। कभी-कभी व्यक्ति और व्यक्तित्वके अनुसार बहुत-सी भ्रामक और अनर्गल बातें चल पड़ती हैं। अुन बातोंके लिअे व्यक्तित्व चाहिअे। सुन्दर व्यक्तित्व सुन्दर बात; असुन्दर व्यक्तित्व असुन्दर बात।

जनश्रुतिसे कोअी भी समाज, सम्प्रदाय, धर्म और साहित्य वंचित नहीं है। कहीं-कहीं वे आत्माकी भाँति जीवन-शक्ति प्रदान कर रही हैं; आत्मा अुड़ी कि शरीर निर्जीव होकर गिरा।

जनश्रुतिके आधारपर यदि सृष्टिका रचना-काल मान लें, तो यह मानना ही पड़ेगा कि अुस सृष्टिमें निर्मित धार्मिक और सामाजिक-व्यवहार स्तम्भोंकी नींव बांधनेके लिअे जनश्रुतिका मसाला जमाया गया होगा।

धर्मकी कल्पना हुअी, अुसकी सीमामें सृष्टिको रखा और बिन्दुमें ब्रह्मको। ब्रह्मकी व्यापकता और अुसकी शक्तिको व्यक्त करनेके लिअे कुछ बातें चलीं। अुन बातोंका आधार वही बिन्दु है। अुस अव्यक्त शक्तिको व्यक्त करनेके लिअे कुछ अनुमान हुआ और अनुमान सत्य होते-होते आगे बढ़ गया। विकसित बुद्धिने तर्कहीन समझकर अुसे गल्प कहा, पर वे गल्प अब भी सत्य हैं।

गौतमकी पत्नी अहल्याको ही लीजिअे। वह पतिके शापसे पाषाण हो गयी थी और रामके चरण-रज-स्पर्श मात्रसे अपना वास्तविक स्वरूप पा गयी। पाषाणको जीवित स्त्री बना देना, बुद्धि अिसे कैसे ग्रहण करे? शायद कोअी पाषाण-हृदया अहल्या रही हो, जो अपने स्वभावके कारण पति-वंचिता हो गयी हो और मर्यादा पुरुषोत्तम रामके प्रभावसे सुधर गयी हो। किसीको सुधार देना ही रामको भगवान बनानेमें योग नहीं दे सकता, पर ज्यों-ज्यों राम भगवान होते गये, पाषाण-अहल्या पाषाण होती गयी।

अहल्याकी कथाको हम सादर ग्रहण करते ही हैं, क्योंकि वही भक्तोंकी शक्ति है।

जब अव्यक्तके सत्ताकी नींव पड़ती है तब अुसके प्रचारके लिअे जनश्रुतियों द्वारा अुसका समर्थन कराया जाता है। अैसी जनश्रुतियोंका जन्म भावावेशके कारण हुआ होगा।

रावण प्रतापी था, विद्वान था और शैव था। अन्य राजाओंकी भाँति अुसमें अेक बड़ा दोष था वह कामी था। वह रामका विरोधी था और शैव था। शायद अिसलिअे वह वैष्णवोंके लिअे राक्षस था। देवताओंके शत्रु राक्षस होते ही। अिस युगमें भैंसा खानेवाले राक्षस नहीं हो पाये और मनुष्योंका मांस खानेवाले कतिपय जंगली जंगली ही रह गये। दुःशासनका रक्त पीनेवाला भीम महा पराक्रमी भीम हुआ। वैष्णवोंने रावणकी किसी दुर्बलताकी व्याख्या करके अुसे राक्षस करार दिया हो। वह आर्यों अथवा देवताओंका ही समझिअे, शत्रु था, फिर अैसे शैवको रामभक्त वैष्णव राक्षस न कहकर देवता कहते!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारी, गौ, और ब्राह्मणकी रक्षा करनेवाले रामके सामने सूर्पणखाकी नाक कट गयी। केवल अुसने प्रेम-निवेदन किया था अिसीलिअे। भक्तोंने बात चलायी, वह राक्षसी थी, सीताको मारने दौड़ी या भगवानने माया की। कैसी माया? "लछिमनहू यह मरम न जाना"। बात आगे न बढ़ पायी, मायामें सिमिटकर बैठ गयी। न मालूम कितनी धार्मिक जनश्रुतियाँ मायाके पर्देमें छिपी हुअी हैं, अुन्हें छेड़ा नहीं कि नास्तिककी अुपाधि मिली।

जनश्रुति चली आ रही है कि रावणने देवताओंसे रक्तका टैक्स लिया था और अुसी रक्तसे सीताका जन्म हुआ। पर रक्तकी होली खेलनेवाली और मस्तकका टैक्स लेनेवाली आजकी सरकारें धन्य हैं।

राम और रावणके जीवनसे सम्बन्ध रखनेवाली प्रचलित जनश्रुतियाँ यदि निकाल दी जाअें, तो राम अेक विजयी राजा हों और रावण राक्षस न होकर मनुष्य हो जाअे।

जनश्रुति यहाँ मापक-यंत्र बन जाती है। अच्छा कितना अच्छा हो और बुरा कितने नीचे गिराया जाअे!

कामदेवको भस्म करके भगवान शंकरने रतिको अमर सुहागका वरदान दिया। 'काम' यहाँ अेक भाव है, और रति है अुस भावका कारण और निदान। यहाँ भाव और कारणका मानवीकरण किया गया है। अिसी भाँति भगवान शंकरको अिंद्रियोंका दमन करनेवाला योगी कहा गया है।

भावोंका मानवीकरण अब प्रचुर मात्रामें होता है।

अिन्द्रके कोपसे ब्रजकी रक्षा करनेवाले भगवान श्रीकृष्णने पर्वत अुठा लिया था।

वर्षा अधिक होनेके कारण शायद बाढ़ आ गयी हो और भगवान कृष्णने सबकी रक्षा की हो। लोग कार्य-भारके कारण अब भी कहते फिरते हैं कि "सिरपर पहाड़ धरा है"। विरही और आलसियोंका दिन पहाड़-सा होता ही है।

[बस्ती।

कविता

शिशिरकी रात

(श्री प्रो० महेन्द्र भटनागर)

शिशिर-ऋतु-राज, राका-रश्मियाँ चंचल!
कि फैला दिग-दिगन्तोंमें सघन कुहरा,
सजल कण-कण कि मानों प्यार आ अुतरा,
प्रकृति-संगीत-स्वर बस गूँजता अविरल!
शिशिर ऋतु-राज, राका-रश्मियाँ चंचल!
शिथिल तरु-डाल सम्पुट फूल-पाँखुड़ियाँ,
रहीं चुपचाप गिर ये ओसकी लड़ियाँ,
धवल हैं सब दिशाअें झूमती अुज्जवल!
शिशिर-ऋतु-राज, राका-रश्मियाँ चंचल!
गगनके वक्षपर कुछ टिमटिमाते हैं
सितारे जो नहीं फूले समाते हैं,
सुखद प्रत्येक अुर है नृत्यमय झलमल!
शिशिर-ऋतु-राज, राका-रश्मियाँ चंचल!
धरा-आकाश अेकाकार आलिंगन,
प्रणयके तारपर यौवन भरा गायन,
फिसलता नीलवर्णी शून्यमें आँचल!
शिशिर-ऋतु-राज, राका-रश्मियाँ चंचल!
विहग तरुपर अकेला कूक देता है,
किसीकी यादमें बस हूक लेता है,
नयन प्रिय-पंथपर प्रतिपल बिछे निर्मल!
शिशिर-ऋतु-राज, राका-रश्मियाँ चंचल!
सवेरा है कहाँ? संसार सब सोया,
पवन सुनसानमें बहता हुआ खोया,
अभी हैं स्वप्नके पल शेष कुछ कोमल!
शिशिर-ऋतु-राज, राका-रश्मियाँ चंचल!

[धार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निराश्रयकी जीत

: श्री रावी :

समुद्रके बीच बसा हुआ अेक छोटा-सा द्वीप था। कभी-कभी पाससे निकलनेवाले जहाज कुछ समयके लिअे अुसके तटपर लंगर डाल देते थे। अुन जहाजोंके द्वारा अुस द्वीपके भी कुछ निवासी दूसरे द्वीपों और महाद्वीपोंमें जाकर बस गये थे और अुनमेंसे कुछ कभी-कभी अिस द्वीपमें भी आकर कुछ समय रह जाते थे।

अेक बार अुस द्वीपमें अैसा अकाल पड़ा कि लोगोंके भूखों मरनेकी नौबत आ गयी। बाहरका जहाज भी बहुत दिनोंसे कोअी नहीं आया था। बाहरसे खाद्य-सामग्री प्राप्त करने या द्वीप छोड़कर अन्यत्र जा बसनेका अुनके पास कोअी अुपाय नहीं था। अुनके पास जो छोटी-छोटी नौकाअें थीं, वे समुद्र पार करनेके लिअे बिलकुल बेकार थीं।

द्वीपके मुखिया लोग अिसी चिन्तामें अेकत्र होकर सोच-विचार कर रहे थे कि अचानक अेक युवकने अुनकी सभामें आकर कहा :—

"समुद्रके पार महाद्वीपमें पहुँचनेका प्रबंध मैंने कर लिया है। आप सब द्वीपके सभी निवासियों सहित मेरे साथ चलनेको तैयार हो जाअें।"

"अिस प्राण-रक्षक समाचारके लिअे हम हृदयसे तुम्हारे कृतज्ञ हैं। क्या तुम अुसी महाद्वीपसे आये हो? तुम्हारे साथ कोअी बड़ा जहाज आया है? या तुम अेकसे अधिक जहाज ला सके हो? वह महाद्वीप किस दिशामें, कितनी दूर है?" आदि प्रश्नोंकी झड़ी अुस युवकपर बरस पड़ी।

"मेरे पास कोअी भी वैसा जहाज नहीं है। मैं अिसी द्वीपका रहनेवाला हूँ। मैंने समुद्र-पारके महाद्वीपकी कभी भी यात्रा नहीं की। मैं केवल अितना जानता हूँ कि वह अुत्तरकी ओर है फिर भी वह महाद्वीप कितनी भी दूर हो, मैंने अुस तक पहुँचनेका प्रबंध कर लिया है और आप सबको अपने साथ चलनेका निमंत्रण देता हूँ।" युवकने अुत्तर दिया।

"जिसके पास कोअी बड़ा जल-पोत नहीं, जिसने महाद्वीपकी यात्रा नहीं की और जो अुसकी दूरीको भी नहीं जानता, अुसका साथ देकर हम अपनी आती हुअी मृत्युको बुलानेमें कुछ शीघ्रता ही कर सकते हैं।" अुन्होंने बदले हुअे स्वरमें युवकको अुत्तर दिया और अपनी चिन्तामें लग गये।

फिर भी अगले दिन जब अुस युवकने द्वीपके अुत्तरी समुद्रमें अपनी नाव खोली तब लोगोंने देखा, कुछ और भी युवक अपनी-अपनी नावें लेकर अुसके साथ हो गये थे। वे सभी नावें पारस्परिक समीपता और वार्तालापकी सुविधाके विचारसे अेक दूसरेके साथ रस्सियोंसे बंधी हुअी थीं।

तट छोड़ते ही वेगका अेक तूफान समुद्रमें अुठ खड़ा हुआ और द्वीप-तटपर खड़े देखनेवालोंने अपने दूर-वीक्षण यंत्रोंसे देखा, वे नावें अेक दूसरेसे टकराकर और क्षत-विक्षत होकर समुद्रमें डूबने लगीं और कुछ ही घंटोंमें जलके गर्भमें विलीन हो गयीं।

अिस भयंकर दुर्भाग्य-कांडको देखकर द्वीपके लोग भरे हृदयसे अपने घरोंको लौटे।

अुसी सांझ अुनके आश्चर्यकी सीमा नहीं रही, जब अुन्होंने कुछ युवकोंको अपने सामने अुपस्थित देखा। ये अुन्हींमेंसे कुछ थे जो प्रातःकाल अपनी नावें लेकर समुद्रमें अुतर गये थे और जिन्हें नौकाओंसमेत डूबते हुअे, वे अपनी आँखोंसे देख चुके थे।

"समुद्रको सकुशल और निष्प्रयास पार करनेका रहस्य हमने जान लिया है। हमारी नावें जब छिन्न-भिन्न होकर डूबने लगीं, तब हमारे साथीने हमें समुद्रकी अधिक-से-अधिक गहराअीमें अुतर जानेका संकेत किया। हमने भरसक प्रयत्न किया लेकिन अधिक नीचे नहीं अुतर सके और नीचे जानेके प्रत्येक प्रयत्नने हमें अगले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही क्षण पानीके अूपर ला फेंका। हमारा अनुभव है कि मनुष्य पानीमें डूबकर तभी मरता है जब वह अुसकी गहराअीमें जानेसे बचना चाहता है; अन्यथा समुद्रको मनुष्यका शरीर अपने भीतर रखना सर्वथा अरुचिकर है। हमारे अधिकांश साथी निश्चिन्त जल-विहार पूर्वक अुत्तरकी ओर बढ़े चले जा रहे हैं और हम कुछ लोग बीचसे ही अिसलिअे लौट आये हैं कि और भी जो लोग यहाँसे चलनेको तैयार हो सकें, वे हमारे साथ चलें।" अुन युवकोंमेंसे अेकने कहा।

\+ \+ \+ \+ \+

आगरा]

अिस कथापर मेरे कथा-गुरुकी टिप्पणी है कि संसारकी बड़ीसे बड़ी विपत्तियाँ भी मनुष्यको अपने भीतर रखना अरुचिकर समझती हैं और अुनमें फँसकर मनुष्य तभी अपनी कमर तोड़ लेता है जब अुनसे बचनेके लिअे बे-तहाशा भाग-दौड़ करता है। अुनका यह भी संकेत है कि छोटी-बड़ी लौकिक विपत्तियोंसे लेकर विश्वकी महामायातकसे बचनेके लिअे वास्तवमें मनुष्यको किसी समर्थ, जानकार मुक्त या सिद्ध 'गुरु' के सहारे, और पथ-प्रदर्शनकी अनिवार्य आवश्यकता नहीं है। वह अकेला और निराश्रय होकर ही अिनपर अन्तिम विजय पा सकता है।

चार चतुष्पदियाँ

: श्री अजितकुमार :

अेक : विधान

प्यास तो अैसी लगी थी
क्या समन्दर, क्या सितारे
सभीको पी लूँ;
कामना अैसी जगी थी
क्या तुम्हारे, क्या हमारे
सभी क्षण जी लूँ;
किन्तु विधिके अुन निषेधों,
अुन विरोधोंको कहूँ क्या
जो यही बोले,
प्रीत जो मनमें रँगी थी
तोड़ डालूँ बिन विचारे;
होंठको सी लूँ।

दो : श्रम-विभाजन

दो आँखें हैं अिसलिअे कि हम देखें ज्यादा
दो कान कि सुन लें जितना भी होअे संभव
लेकिन अीश्वरने अेक जबान हमें क्यों दी?
अिसलिअे कि देखें-सुनें अधिक : बोलें कुछ कम।

तीन : आशीर्वाद

'वे जो आँसूके बीज आज बोते हैं;
कल खुशियोंके अंकुर अुपजे देखेंगे,
परसों प्रसन्नताकी फसलें काटेंगे'--
अैसी है अेक कहावत अंग्रेजीमें।

चार : आकाश स्थिर

और सब अस्थिर
मगर आकाश स्थिर है,
अचिर सब है
शून्यका पर भाव यह चिर है,
नभ असीम, अपारका
वैभव अदृष्ट जमाप :
मनुज है अूँचा बहुत, पर यहाँ—
नतशिर है।

[अुन्नाव।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलोचना :

'दिनकर'जीका 'कुरुक्षेत्र'

: श्री गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश' :

हमारे दैनिक जीवनमें जब सत्यका कोअी स्वरूप नीरस, प्राणशून्य रूढ़िका रूप धारण कर लेता है और हम स्वयं अनुभव करने लगते हैं कि हम किसी बंधनमें कारागारमें पड़ गये हैं, तब कविही स्वस्थ, सुंदर, कल्याणकर तथा जीवनसे अधिक घनिष्ठता रखनेवाला सरस सत्य लेकर हमारे सामने अुपस्थित होता है, और अुसे ही स्वीकारकर, अुसमें ही अपनी चित्त-वृत्तियोंको रमाकर हम तदनुरूप अपनेको ढालने लगते हैं। भारतीय राजनीतिके क्षेत्रमें महात्मा गांधी-द्वारा प्रवर्तित अहिंसा अुनके कुछ ही अनुयाअियोंको छोड़कर शेष अधिकांश लोगोंको प्रिय नहीं हुअी। अहिंसाकी निर्विवाद अुपयोगिता होनेपर भी लोगोंने अुसके प्रति सौहार्दका भाव नहीं बढ़ाया। अैसी अवस्थामें अुसके प्रति भक्तिके अभावका स्थान विवश मान्यताके भावने ले लिया। क्रमशः लोगोंमें यह विचार बल-संग्रह करने लगा कि अन्याय और अत्याचारके प्रतिकारके लिअे हिंसात्मक अस्त्रोंका अुपयोग अनुचित नहीं है. अिसी विचार-धाराको वाणी प्रदान करनेके लिअे 'दिनकर' जीने 'कुरुक्षेत्र' नामक काव्यकी रचना की है। अिस दृष्टिसे 'दिनकर'जीके अिस काव्यका अैतिहासिक महत्व है। अुसने अेक निर्जीव सत्यके स्थानमें अेक सजीव सत्यकी स्थापनाका प्रयत्न करके हिन्दी-भाषी समाजकी विचार-शक्तिको प्रेरणा देनेके रूपमें अुसकी प्रशंसनीय सेवा की है। अपने अिस अुद्योगमें वे कहाँतक सफल हुअे हैं, यही यहाँ विचारणीय है।

अपने नवीन सत्यकी प्रतिष्ठापनाके लिअे कविको महाभारत-संग्राम द्वारा प्रस्तुत परिस्थितियाँ स्वभावतः बड़ी अुपयुक्त और सहायक प्रतीत हुअीं। अुसमें विजय प्राप्त करके भी युद्धिष्ठिर अुत्साह और अुल्लाससे युक्त न हो सके। अनुताप और ग्लानिने अुन्हें घेर लिया। वे सोचने लगे कि अिस विजयसे अच्छा तो यही होता कि हमने त्याग-भाव स्वीकार किया होता। अपनी शंकाओंको लेकर वे भीष्मपितामहके पास पहुँचते हैं, और भीष्मपितामह अुनका समाधान करनेका प्रयत्न करते हैं। महाभारतके अिसी प्रसंगको लेकर दिनकरजीने अपने कुरुक्षेत्रकी वस्तु-रचना की है। अुन्होंने अपने संदेशका अुपयुक्त वाहक बनानेके अुद्देश्यसे भीष्मपितामहके चित्रणमें कुछ मौलिकतासे काम लिया है। अुनका यह चित्रण कैसा है, अिसके सम्बन्धमें आगे लिखा जाअेगा; यहाँ पहले अितना जान लेना आवश्यक है कि प्रत्येक अवस्थामें त्याग और अहिंसाका पक्ष लेनेके लिअे अिस काव्यमें अेक ओर युद्धिष्ठिर प्रस्तुत हैं, तो दूसरी ओर अन्यायके निराकरण-अुद्देश्यको लेकर की जानेवाली हिंसाका समर्थन करनेके लिअे भीष्मपितामह अुपस्थित हैं। किसकी वाणीमें कविकी निश्चयात्मक वाणी अपनी गूँज पा रही है, यह पहिचानना कठिन नहीं है। यह स्पष्ट ही है कि सन्देहकी स्थितिमें युद्धिष्ठिर हैं और व्याख्याताका पद भीष्मपितामहका है। अैसी अवस्थामें अिस बातमें कोअी दुविधा नहीं रह जाती कि भीष्मपितामहकी विचार-धारा स्वयं कविकी विचार-धारा है।

भीष्मपितामहके अपार त्याग और प्रायः अमानुषिक ब्रह्मचर्य-संकल्पके कारण मानव-मात्रकी श्रद्धा अुनकी ओर सहज ही अुमड़ती है; तथापि दुर्योधनके प्रति अनुचित पक्षपात और द्रौपदीके महान् संकट-कालमें भी सहज कर्तव्य-पालनसम्बन्धी अुदासीनताने अुनके चरित्रपर कलंककी अेक रेखा खींच दी है। 'दिनकर'जीने अुनके व्यक्तित्वके भीतर छिपे हुअे अनेक मार्मिक स्थलोंका अुद्घाटन किया है, जिससे पाठकके सामने अुनका अेक पूर्ण स्वरूप अुपस्थित होता है और वह अुनके लिअे सहानुभूतिसे प्रेरित हो जाता है। भीष्म-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पितामहकी वाणीको प्रभावशाली बनानेके लिअे अुनका यह कवि-कौशल सराहनीय हुआ है।

अपनेको धिक्कारते हुअे भीष्मपितामह कहते हैं:—

"धिक् धिक् मुझे, हुअी अुत्पीड़ित सम्मुख राजवधूटी

+ + +

"और रहा जीवित मैं, धरणी फटी न दिग्गज डोला,
गिरा न कोअी वज्र, न अम्बर गरज क्रोधमें बोला।"

वे अपना पतन स्वयं स्वीकार करते हैं—

'सदा सुयोधनके कृत्योंसे मेरा क्षुब्ध हृदय था,
पर क्या करता? यहाँ सबलकी नीति अबलतम नय था।
अनुशासनका स्वत्त्व सौंपकर स्वयं नीतिके करमें।
पराधीन सेवक बन बैठा मैं अपने ही घरमें।

वीरताका पतन किस प्रकार होता है, अिसका वर्णन भी भीष्मपितामहने बड़ी ही सच्चाअीके साथ किया है:—

"यौवन चलता सदा गर्वसे सिर ताने शर खींचे।
झुकने लगता किन्तु क्षीणबल वह विवेकके नीचे।
किन्तु बुद्धि नित खड़ी ताकमें रहती घात लगाअे।
कब जीवनका ज्वार शिथिल हो, कब वह अुसे दबाअे।

+ + +

"जीवनकी है श्रान्ति घोर हम जिसको वय कहते हैं।
थके सिंह आदर्श ढूँढ़ते व्यंग्य बाण सहते हैं।"

० ० ०

"बात पूछनेको विवेकसे जभी वीरता जाती।
पी जाती अपमान पतित हो अपना तेज गँवाती।"

भीष्मपितामहका कहना है, कि विवाह न करनेके कारण अुन्होंने दुर्योधनको अपना स्नेह दिया और अुसी स्नेहके प्रकाशमें अपना यौवन-काल व्यतीत कर दिया। वृद्धवस्थाने अुन्हें और अुनकी वीरताको विवेकके हवाले करके अुनकी कार्यकारिणी शक्ति नष्ट कर डाली। अिन स्वीकारोक्तियोंके द्वारा अुनका चरित्र तपे हुअे सोनेकी तरह खरा अुतर आया है।

धर्मराज युधिष्ठिरके सम्बन्धमें भी लोग प्रायः कहा करते हैं कि युद्धमें भाग लेना अुचित नहीं था। शायद अैसे ही शंकालुओंका समाधान करनेके लिअे कविने अुनकी स्वीकारोक्तियोंकी भी नियोजना की है। धर्मराज अपनी विजयको सम्बोधित करते हुअे कहते हैं—

"अयि विजय, रुधिरसे क्लिन्न वसन है तेरा
यम दंष्ट्रासे क्या भिन्न दशन है तेरा?"

× ×

'ओ कुरुक्षेत्रकी सर्वग्रासिनी ज्वाली!
मुखपरसे तो ले पोंछ रुधिरकी लाली'।

+ +

'धनही परिणाम है युद्धका अंतिम
तात अिसे यदि जानता मैं—

× ×

फिरसे कहता हूँ पितामह! तो
यह युद्ध कभी नहीं ठानता मैं'।

युधिष्ठिर अिस बातको स्वीकार करते हैं कि राजसिंहासनके लोभहीसे पाण्डव अिस युद्धमें सम्मिलित हुअे। अुनका कहना है कि जबतक अुनमें यह लोभ प्रबल रूपसे विद्यमान है, तबतक संग्राममें विजेता होकर भी वे वास्तवमें विजेता नहीं हैं, अतअेव वे निर्णय करते हैं कि अिस लोभको जीतनेके लिअे अेक और रण करना अुनके लिअे आवश्यक है—

'यह होगा महारण रागके साथ
युधिष्ठिर हो विजयी निकलेगा।
वर संस्कृतिकी रण-छिन्न लतापर
शान्ति सुधाफल दिव्य फलेगा।'॥

फिरभी युधिष्ठिरकी स्वीकारोक्तियोंमें अेक कसर है। अुन्होंने यह कहीं नहीं स्वीकार किया कि अनर्थका बहुत कुछ अुत्तरदाअित्व अुनकी जुआ खेलनेकी दूषित प्रवृत्तिपर था। अस्तु।

हमारे जीवनमें देवपक्षके साथ-साथ दानव-पक्ष सदैव क्रियाशील रहा है। देवपक्षका प्रतिनिधित्व करनेवाले अनिवार्य होनेपर ही युद्ध करते हैं और युद्धमें विजयी होनेपर भी अिस बातके लिअे खेद करते हैं "कि अुनके द्वारा हिंसात्मक कार्य होनेके कारण समाजमें कष्टका संचार हुआ। युधिष्ठिर अिसी पक्षके प्रतिनिधि हैं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दानव-पक्षके प्रतिनिधिगण आवश्यकता न होने-पर भी युद्ध करनेके लिअे बहाने ढूँढ़ा करते हैं। वे अस्त्र-शस्त्रकी भाषा ही समझ सकते हैं। अतः अैसे लोगोंको जीवन-सत्य समझानेके लिअे युद्धकी भाषाका ही प्रयोग करना पड़ता है। दुर्योधन अिसी पक्षके प्रतिनिधि थे और भीष्मपितामह अैसे ही विपथगामी दुर्योधनके पृष्ठपोषक थे।

युधिष्ठिर और भीष्मपितामहके संवादमें दोनोंकी सत्यनिष्ठा सराहनीय है, युधिष्ठिर युद्धकी निंदा करते हैं और भीष्मपितामह युधिष्ठिरके युद्धको 'ज्वलित प्रतिशोध' पर आश्रित होनेके कारण सर्वथा अुचित ठहराते हैं; यही नहीं, वे तो यह कहते हैं कि जब तुम्हारे स्वत्वका हरण हो रहा है तब त्याग और तपसे काम लेनाही पाप है। भीष्मपितामहको लेकर कविने और भी बहुत-सी बातें स्पष्ट रूपसे कही हैं— (१) आहका अवलम्बन लेना अुस व्यक्तिके लिअे विचारणीय हो सकता है जो "बद्ध, विदलित और साधनहीन" हैं, भुजाओंमें शक्ति रखनेवालेको तो लड़ना ही होगा। (२) धर्म्म, तप, करुणा, क्षमा आदि व्यक्तिकी शोभा हैं। किन्तु समुदायका प्रश्न खड़ा होनेपर हम अुन्हें भुलानेके लिअे विवश हो जाते हैं। (३) मनोबल देहका शास्त्र नहीं हो सकता। अुसका क्षेत्र वह मनोमय भूमि है, जहाँ मनुष्य अपने 'ज्वलंत विकार' से लड़ता है। (४) केवल प्राप्त-बलको साधन बनाकर जूझने-वाला देहके संग्राममें विजयी नहीं हो सकता, क्योंकि,

"पाशविकता खड्ग जब लेती अुठा
आत्मबलका अेक वश चलता नहीं।"

(५) तप और त्यागकी शक्तिका प्रभाव व्यक्तिके मनपर तो पड़ सकता है, किन्तु जहाँ समुदायका सम्बन्ध आ जाअेगा, वहाँ योगियोंकी शक्तिसे वह कभी पराजित नहीं हो सकता।

अुक्त समस्त स्थापनाओंपर विचार करनेपर हम अिस परिणामपर पहुँचते हैं कि हिंसाके द्वारा ही हिंसाका अुत्तर सफलतापूर्वक दिया जा सकता है। निस्सन्देह कविने आक्रमक हिंसाका पक्ष समर्थन नहीं किया है— वह हिंसा जो आक्रमणकारी दानव पक्ष-समर्थक दुर्योधनकी है, अुन्होंने केवल अुस हिंसाका आवाहन अुचित माना है, जो देवपक्ष—पोषक, आत्मरक्षक युधिष्ठिरकी है। कविका कथन वहाँतक सर्वथा अुचित है जहाँतक आक्रामक और आत्मरक्षक दोनोंही स्वार्थ-साधनम भौतिक दृष्टिकोणको ही महत्व देते हैं। दुर्योधन अपने अधिकारके बाहर भी राज्य चाहता है, अिससे कुछ अुतरकर युधिष्ठिर अपने अधिकारसे कमही राज्य चाहते हैं। अिसमें सन्देह नहीं कि सांसारिक सुखोपभोगके लिअे प्रचुर भौतिक साधनोंसे सम्पन्न होनेकी वासना दोनोंहीमें है। अतअेव, अधिकार किसे मिले और किसे न मिले अिसका निर्णय रक्तपातपूर्ण संग्रामके द्वारा ही हो सकता है, अैसे अवसरपर यदि कोअी अहिंसा-सिद्धान्तके पालनका आग्रह करे तो यह मानना पड़ेगा कि अुसमें बहुत अधिक भोलापन है। सांसारिक विलासिताकी सामग्री अेकत्र करनेके लिअे अहिंसाका अुपयोग निरर्थक है; भले ही किसीको अुसका न्यायो-चित अधिकार प्राप्त हो।

सच बात यह है कि महाभारत-कालमें संग्रामके हिंसात्मक साधनोंकी अितनी प्रचुरता हो गयी थी कि अहिंसात्मक संघर्षकी कल्पना ही नहीं की जा सकती थी। किन्तु यदि अुसकी सम्भावना होती तो क्या अहिंसात्मक युद्धका यह रूप होता कि अेक ओर कौरवी सेना खड़ी होती और दूसरी ओर अहिंसक पाण्डव खड़े होते? नहीं, अहिंसात्मक संग्रामका संचालन अिस प्रकार नहीं होता।

यदि युधिष्ठिर अहिंसात्मक संघर्षमें रत होते तो सबसे पहले आत्मशुद्धिके रूपमें वे जुआ खेलना बंद करते, अुसके अनंतर अुन्हें राज्य-प्राप्तिकी वासनाको त्यागकर साधारण श्रमिकका जीवन स्वीकार करना पड़ता, साथही दुर्योधनके प्रति वे सच्चा स्नेह रखते और अपने स्नेहके लिअे कोअी बदला न माँगते। त्यागके अिस वातावरणमें यह पूर्ण सम्भव है कि दुर्योधनका दुराग्रह शिथिल पड़ता और वह प्रेमपूर्वक अुनके सुख-मय जीवन-निर्वाहका कुछ प्रबन्ध कर देता। सामान्य श्रमिकका जीवन हम स्वीकार नहीं करेंगे, हम राजा ही होकर रहेंगे—अहिंसाका पुजारी अिस प्रकारका आग्रह नहीं करता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यक्ति हो अथवा समुदाय, वासनामय जीवनके साधन-संग्रह-निमित्त अथवा जीवनके प्रति मोहमय दृष्टिकोण-निर्वाहके अुद्देश्यसे वह अहिंसात्मक साधनोंका अवलम्ब लेकर लाभ नहीं अुठा सकता। व्यक्ति और समुदाय दोनोंहीको यह स्मरण रखनेकी आवश्यकता है कि अहिंसात्मक संग्रामकी शैली और अुसके साधन, हिंसात्मक संग्रामकी शैली और अुसके साधनोंसे सर्वथा भिन्न हैं और अहिंसात्मक संग्रामकी सफलताके लिअे भी अुसी प्रकार तैयारी करनी पड़ती है जिस प्रकार हिंसात्मक संग्रामके लिअे। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि पाण्डवोंमें अहिंसात्मक संघर्षकी क्षमता नहीं थी और आवश्यक क्षमता-प्राप्तिके लिअे अुन्हें साधना करनी पड़ती। अिसके विपरीत हिंसात्मक रणके लिअे धनुष-बाणसे वे सदैव सज्जित रहते थे। अुनकी अिसी तैयारीके कारण परिस्थितियाँ अिस प्रकार विकसित हुअीं कि अुन्हें हिंसात्मक संग्राममें भाग लेनेके लिअे बाध्य होना पड़ा। ये परिस्थितियाँ अनिवार्य नहीं थीं; साधनाके अभावहीमें अुन्होंने भयानक रूप धारण किया। आखिर अयोध्याकी राजगद्दीपर रामचन्द्रका भी तो अधिकार था। यदि लक्ष्मण अैसा समर्थक पाकर अुन्होंने कैकेयीकी अिच्छा-पूर्तिके विरुद्ध युद्ध ठान दिया होता तो क्या अुन्हें कोअी दोषी ठहराता? और अिसमें भी सन्देह नहीं कि विजय अुन्हींकी होती। किन्तु रामचन्द्रने अपने अधिकारका त्याग किया और अिस त्यागके द्वारा और अधिक महान होकर वे जनताके हृदय-सम्राट बने। अुन्होंने राज्यको लात मारकर बनवासीका जीवन स्वीकार किया। अुनके अुच्चकोटिके त्यागने राजलक्ष्मी को अुनका चरण चूमनेके लिअे बाध्य कर दिया। यहाँ हमारे सामने प्रश्न यह खड़ा होता है कि जिस मार्गपर रामचन्द्र चल सके, अुसपर युधिष्ठिर और अुनके भाअियोंके पाँव क्यों गतिशील नहीं हो सके? अिसका असंदिग्ध अुत्तर यही है कि पाण्डवोंमें अहिंसात्मक संघर्ष चला सकनेकी क्षमता नहीं थी। अुसके लिअे आवश्यक मात्रामें अुदारता और त्याग-भावनाका अुनमें अभाव था। युधिष्ठिरने बात आरम्भमें नहीं समझी, किन्तु युद्धका कुपरिणाम देखकर अुन्हें असह्य आघात लगा और अुन्हें संदेह हुआ कि अुनसे कहीं भूल हो गयी है। वे भीष्म-पितामहसे कहते हैं—

"कुछके अपमानके साथ पितामह,
विश्व-विनाशक युद्धको तोलिअे।
अिनमेंसे विघातक पातक कौन—
बड़ा है? रहस्य विचारके खोलिअे।"

किन्तु कुरुक्षेत्रके 'भीष्मपितामह' के पास युधिष्ठिरके युद्धको अुचित ठहरानेके अतिरिक्त और कोअी अुत्तर नहीं है। सातवें सर्गमें अुन्होंने श्रमके महत्वकी घोषणा की है, किन्तु अिस सम्बन्धमें कहीं अेक शब्द भी नहीं कहा है कि राज्य-लोभसे विरत रहकर श्रमिक-जीवन यापन स्वीकार करना, भ्रांति-मग्न भाअियोंके प्रति युद्धकी नीति न ग्रहण कर प्रेमका व्यवहार करना युधिष्ठिरके लिअे अधिक अूँचा और श्रेयस्कर आदर्श होता।

युधिष्ठिर अपने प्रश्नको और भी सरल बनाते हुअे कहते हैं कि अिस ध्वंसके द्वारा हमें जिस सुखकी अुपलब्धि हुअी है, वह अुचित है या शांतिके मार्गपर चलते हुअे आँसूका अुपहार लेकर प्रस्तुत होनेवाला दुख सहन करना अुचित होता? किन्तु कविने प्रश्नको यह रूप देकर अुसे विकृत कर दिया है। यह क्यों मान लिया जाअे कि राज्यके न मिलनेपर युधिष्ठिर अुसके लिअे जीवनभर रोते ही रहते? बिना संतोषके शांतिका मिलना संभव ही नहीं हो सकता था। जीवनभर राज्यके मोहमें मग्न होकर रोते रहनेकी तुलनामें तो युद्धहीका मार्ग अुचित था। किन्तु यदि युधिष्ठिरका अुद्देश्य यह मान लिया जाअे कि वे संतोष और परिश्रमपूर्ण जीवनसे अधिकार-मान्य युद्धकी तुलना करना चाहते हैं, तो स्पष्ट रूपसे यह कहना होगा कि महाभारत-संग्रामके अेक पक्षका नेतृत्व करके अुन्होंने अुचित नहीं किया— भले ही वह संग्राम अुन्होंने अपने स्वत्वोंकी रक्षाके लिअे किया हो। और, भीष्मपितामहको भी यह स्वीकार करनेमें कोअी आपत्ति नहीं होनी चाहिअे थी कि शांतिका अुक्त मार्ग मानव-सभ्यताको विकासकी ओर ले चलता है। अिस प्रकार यह देखा जाअेगा कि जीवनमें मनोबल, अहिंसा, प्रेम अादि आधारोंका विरोध करनेकी धुनमें कविने भीष्मपितामहको अुस योग्यतासे वंचित कर दिया, जो युधिष्ठिरको किसी अूँचे लक्ष्यकी ओर ले चलती। अपने प्रस्तुत रूपमें भीष्मपितामह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युद्ध-भावनासे अभिभूत जान पड़ते हैं और युद्ध-कालमें वे युधिष्ठिर-पक्षके जितने ही बड़े विरोधी थे, युद्धके अनन्तर युधिष्ठिर-पक्षके अुतने ही बड़े समर्थक हो गये। खेद है, भीष्मपितामहका यह चित्रण संतोषजनक नहीं है। अेक बहुत बड़े सिद्धांतपर आक्रमण करनेके लिअे सन्नद्ध होनेपर कविके लिअे युधिष्ठिरके पक्षको जितने सरल रूपमें अुपस्थित करना आवश्यक था अुसका भी अभाव दिखायी पड़ता है। अतअेव यह कहना पड़ता है कि अपने दृष्टिकोणको सबल अभिव्यक्ति प्रदान करनेकी अुमंगमें कविने युधिष्ठिर-पक्षके साथ पूर्ण न्याय नहीं किया और युधिष्ठिरका अेक धुँधला व्यक्तित्त्व ही हमारे सामने खड़ा होता है।

हमारे पास अिस बातका कोअी प्रमाण नहीं है कि कविने अिस काव्यमें महात्मा गांधीके अहिंसात्मक संघर्ष-सम्बन्धी सिद्धान्तका विरोध करना चाहा है। किन्तु मनोबल और आत्मबलकी अुपयोगितापर जिस प्रकार आक्रमण किया गया है और काव्यके निर्माणका जिस कालसे सम्बन्ध रहा है, अुसे ध्यानमें रखकर विचार करनेपर अिस बातमें कोअी संदेह नहीं रह जाता कि अहिंसाके राजनैतिक प्रयोगोंमें अस्वाभाविकता देखकर अुसके विरुद्ध प्रतिक्रियाको काव्यात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करना अुनका अुद्देश्य रहा है। किन्तु भीष्मपितामह और युधिष्ठिर दोनोंहीके चित्रणमें कहीं न कहीं त्रुटि होनेके कारण हम अिस सम्बन्धमें किसी परिणामपर पहुँच नहीं पाते; हमें किसी प्रकारका नेतृत्त्व नहीं प्राप्त होता। हम यह नहीं समझ पाते कि आखिर हम क्या करें? अेक ओर तो हमें बताया जाता है कि मनोबल, आत्मबल आदिसे कुछ नहीं होनेका, दूसरी ओर हमसे यह कहा जाता है कि हम विज्ञानकी सहायता लेकर नये-नये शास्त्रोंका आविष्करण न करें। यदि यह सच है कि युद्ध अनिवार्य है तो यहभी सच है कि नये अस्त्रोंके अनुसन्धानके लिअे अुपयोग निरंतर जारी रहेगा। यदि कोअी चाहता है कि नर-संहारकारी अविष्कारोंका अंत हो तो अुसे अुन साधनोंकी खोज करनी पड़ेगी, जो युद्धकी आवश्यकताको कम करें। मनोबल और आत्मबलके प्रयोगद्वारा हम अपने मत-भेद और वैमनस्यकी समस्याको, जितना कविने समझा है अुससे कहीं अधिक दूरतक, हल कर सकते हैं। किन्तु जैसा कि मैं कह आया हूँ, यह कदापि सम्भव नहीं कि भौतिक वासनाओंकी समस्त माँगोंकी पूर्तिके लिअे अुस मतके माननेवाले हिंसात्मक संग्रामकी सेनाओंके सामने कुरुक्षेत्रके मैदानमें खड़े किये जा सकें। देह और आत्मामें जितना अंतर है, अुतनाही अंतर हिंसात्मक और अहिंसात्मक-रणकी शैलियोंमें भी रहेगा।

छठे सर्गमें मनुष्यकी नीचताका वर्णन दिया गया है। कतिपय पंक्तियाँ अवलोकनार्थ प्रस्तुत की जाती हैं—

"अेक छोटी, अेक सीधी बात।
विश्वमें छायी हुअी है वासनाकी रात।
बुद्धिमें नभकी सुरभि, तनमें रुधिरकी कीच।
यह वचनसे देवता पर कर्मसे पशु नीच।"

जीवनमें यदि मनोबल और आत्मबलका अुपयोग घटाया जाअेगा तो मनुष्यकी यह नीचता घटेगी नहीं, बढ़तीही जाअेगी।

यहाँ मैं यह भी कह देना चाहता हूँ कि आत्मरक्षा का कोअी साधन शेष न रह जानेपर सीमित मात्रामें हिंसात्मक संग्रामकी अुपयोगिता सदैव बनी रहेगी। अुसे कोअी अस्त्रीकार नहीं कर सकेगा। सच पूछिअे तो हिंसा और अहिंसामें किसी अेकके बहिष्कारकी नहीं, दोनोंहीके समन्वयकी आवश्यकता है। साथही हिंसाके स्थानमें अहिंसापर बल देना अधिक हितकर होगा।

देशके लिअे यह बड़े दुर्भाग्यकी बात है कि महात्मा गांधीके सिद्धान्तोंको काव्यात्मक अभिव्यक्ति न प्राप्त होनेके कारण जनताका अुनके प्रति सौहार्द न बढ़ सका और अुस दिशामें कोअी प्रयत्न आरंभ होनेके पहलेही अुनके विरोधमें प्रतिक्रिया शुरू हो गयी। काव्यमें अिस प्रतिक्रियाका नेतृत्व 'दिनकरजी' ने किया है, किन्तु अहिंसा और आत्मबलपर अपना मार्ग प्रशस्त करनेके लिअे जैसा आघात अुन्हें करना चाहिअे था वैसा वे नहीं कर सके हैं।

अिस काव्यमें ओज, प्रवाह, सद्विचार-संग्रह आदिकी कमी नहीं है; भाषा सरल और प्रभावशालिनी है; सन्यासके विरोधमें समाज-सेवाका संदेश, श्रम-सिद्धान्त, जीवन-साधनोंका सम-वितरण आदि विचारोंकी सजावट सुन्दर हैं, किन्तु अपनी मूल स्थापनाको सशक्त न बना सकनेके कारण वह साहित्यके अितिहासमें किसी प्रकारकी क्रान्ति करनेमें असमर्थ रहेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुभूतिका आलोक

: श्री रतनलाल बंसल :

कन्धारके बाजारोंमें पूरे तीन महीनोंतक कड़ी-से-कड़ी मेहनत-मजदूरी करनेके बाद जब करीम अपने गाँव हालिमजअी चलनेको तैयार हुआ, तो अुसने देखा कि हालाँकि अुसने कभी पेट भरकर खाना नहीं खाया, फिर भी अिस बीच वह केवल सत्रह रुपये बचा सका है।

"अिन सत्रह रुपयोंमें भला मैं क्या-क्या कर लूंगा? अिसमेंसे सात रुपये तो सरदारको ही देने होंगे, जिसके सख्त तकाजोंके डरसे मैं गाँव छोड़कर यहाँ आनेके लिअे मजबूर हुआ। बचे दस, अिनसे गल्ला खरीदना है, कुछ कपड़े भी लेने हैं और हाँ, अेक मोटा-सा कम्बल भी तो चाहिअे। पिछली सर्दियाँ तो मैंने और अस्मतने सिर्फ आगके सहारे काट दी थीं, लेकिन अब यह कैसे हो सकता है। अस्मत अब अेक बच्चेकी माँ जो हो गयी है। कम्बख्त अब तो मुस्कुराने लगा होगा।" बच्चेका ध्यान आते ही करीमकी मनोदशा बदल गयी और अुन चिन्ताभरे क्षणोंमें भी अुसकी कल्पना कुछ जगमगा अुठी। किन्तु कुछ ही क्षणोंके पश्चात् अुसकी विचारधारा फिर अुन सत्रह रुपयोंपर आकर अटक गयी और वह सरदारके सात रुपयोंको निकालकर शेष रहे, दस रुपयोंमें कम-से-कम तीस रुपयेके व्ययका व्यर्थ ही जोड़-तोड़ बैठाने लगा। अन्तमें जब अुसे अपने अिस प्रयासमें किसी प्रकार भी सफलता नहीं मिली, तो अुसने न जाने किसे अेक गन्दी-सी गाली दी और रुपयोंकी मैली थैली अपनी सलवारकी अन्टीमें ठूँस, लाठी अुठा, गाँवकी ओर चल पड़ा।

"अगर अिसी बीच सरदार साला मर गया हो, तो यह सात रुपये भी बच जाअेंगे," रास्ता चलते-चलते अेक बार करीमने सोचा और दूसरे ही क्षण अुसे स्वयं ही अपनी अिस व्यर्थकी कल्पनापर हँसी आ गयी। "भला ये सूदखोर अितनी आसानीसे मरा करते हैं," करीमने बड़बड़ाते हुअे कहा, "मुल्ला लोग फजूल बका करते हैं कि सूद लेनेसे दोजख मिलता है। मरनेके बाद दोजख मिले या कुछ और, लेकिन जिन्दगीमें तो वे खूब आराम अुठा ही लेते हैं।"

"और यह मुल्ला-मौलवी," करीमकी विचार-धारा अब अिन लोगोंकी तरफ मुड़ी, "ये लोग हमेशा दौलतकी बुराअी करते हैं, अुससे अलग रहनेका अुपदेश देते हैं, लेकिन येही लोग दौलतमंदोंकी जूतियाँ चाटते और गरीबोंको कुत्तोंकी तरह दुतकारते हैं।" करीमको स्मरण हो आया कि जब अुसके घरमें पुत्र जन्म हुआ था और वह गाँवके मुल्लाको बुलाने गया था, तब मुल्लाजीने कितनी घृणाके साथ मुँह बिचकाकर कहा था, "आज मुझे सरदारके यहाँ दावतमें जाना है। जो कुछ लाये हो, यहीं दे जाओ, मैं शामकी नमाजमें तुम्हारे बच्चेके लिअे भी दुआ माँगकर आअूँगा।" अुस समय करीमको गुस्सा तो अैसा आया था कि मुल्लाकी गर्दनको अुमेठता ही चला जाअे, लेकिन वह अपने आनन्दमें विघ्न नहीं डालना चाहता था और दो पैसे मुल्लाकी तरफ फेंककर चुपचाप घर चला आया था।

अिसी तरह न जाने क्या-क्या सोचते— विचारते करीमने अपने गाँवका कठिन रास्ता पार कर लिया और जब गाँवकी बुर्जी अुसे दिखायी देने लगी, तब थकावटसे चूर-चूर होनेपर भी अुसके पैर अधिक तेजीसे अुठने लगे।

आखिर गाँव भी आ गया। अस्मत और बच्चेकी सूरतको आँखोंमें बसाये करीम घरकी ओर लपका चला जा रहा था कि अुसके कानोंसे अेक घिनौनी, कड़वी आवाज आकर टकरायी, "अबे करीमा है क्या?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ करीमा ! आ गया तू। न जाने कितना माल मारकर लाया होगा शहरसे ? ला, हमारे रुपये तो दे जा।" यह सरदारकी आवाज थी।

करीमके पैर जैसे जमीनसे चिपककर रह गये और अेक सुपरिचित आतंकसे प्रेरित होकर अुसका हाथ अपने आप सलवारकी अण्टीमें खुँसी हुअी रुपयोंकी थैलीपर पहुँच गया। थैली खोलते हुअे अुसने सहमे और बेबस स्वरमें कहा, "हाँ, हाँ सरदार ! तुम भी अपना हिसाब कर लो। कितने रुपये निकलते मेरे अूपर ?"

"आठ रुपये पाँच आने।" सरदारको अपने सैकड़ों कर्जदारोंका हिसाब जबानी याद रहता था।

"हैं, सातके अब आठ रुपये पाँच आने हो गये। सरदार ! कम-से-कम अितना जुल्म तो मत करो।" करीमने झुँझलाहट-भरे स्वरमें कहा। शायद सरदारसे अैसे स्वरमें वह आजतक नहीं बोला था। "बदमाशीकी बातें मत करो,....." सरदारने डपटकर कहा, "अपना रुपया माँगना भी जुल्म है। जब गया था, तब सात रुपये बताये थे, अिधरका सूद नहीं देगा। लाओ, अिधर बढ़ाओ आठ रुपये पाँच आने।"

करीमने अनुभव किया कि गलती अुसकी ही थी। अुसने दो-अेक क्षण कुछ सोचा और फिर सात रुपये थैलीमेंसे निकालकर सरदारकी ओर बढ़ाते हुअे अत्यन्त खुशामदभरे स्वरमें बोला, "माफ करना सरदार! आप जानते हैं, हिसाब-किताब मुझे नहीं आता। अभी अितना ले लो, बाकी फिर दे दूँगा।"

सरदारको यह सुनकर प्रसन्नता हुअी, क्योंकि अेक रुपया पाँच आना शेष रह जानेका अर्थ था, शीघ्र ही पुनः अितनी रकम हो जाना। अतः अुसने दबी-सी मुस्कराहटके साथ कहा, "हिसाब-किताब नहीं आता, दूसरेपर ही भरोसा किया कर। हम बेअीमानीका अेक पैसा भी हराम समझते हैं। चल अब घर जा, हारा-थका होगा।" करीम अेक ठंडी साँस लेकर आगे बढ़ गया।

"आ गये तुम ?" करीमके दहलीजमें घुसते ही अुसकी बीवी अस्मतने कहा और दो बूँद आँसू अुसकी आखोंसे बहकर गुलाबी गालोंको चूमने लगे।

"हाँ, आ गया। जिस दिन तेरी खबर फजलसे मिली थी, अुसके दूसरे दिन ही मैं चल दिया। फिर तबीयत ही नहीं लगी। तू अच्छी तो है!" करीमने हाथकी लाठी जमीनपर फेंक अस्मतकी गोदसे बच्चेको लेते हुअे कहा और फिर बच्चेको अुछाल-अुछालकर खिलाने लगा। अस्मत खाने-पीनेका अिन्तजाम करने घरके भीतर चली गयी।

× ×

करीमको घर आये पूरे आठ महीने बीत गये। अब वह फिर अेक-अेक पैसेको तंग है। सरदारके दस-बारह रुपये अुसके सर चढ़ गये हैं और अुसके तकाजोंके मारे करीमका नाकमें दम आ गया है। अुधर कन्धारके बाजारमें भी मजदूरी बेहद मुश्किल हो गयी है। गाँवके कअी आदमी वहाँसे निराश होकर लौट आये हैं। अब अस्मत और करीममें प्रायः झगड़ा हो जाता है।

अकस्मात् अेक दिन करीमको अुसका पुराना साथी बशीर मिला। नयी सलवार, कीमती कुर्ता और मखमली जाकैटमें वह बिलकुल दुलहा मालूम होता था। करीमने अुसके अैसे ठाठ-बाट देखे तो अीर्ष्यासे अुसका दिल कुढ़कर रह गया। फिर भी अूपरसे अुसने बशीरसे बड़ी मुहबत भरी बातें कीं, यहाँतक कि बशीरने अुसे अपने अिस ठाटबाटका रहस्य भी बता दिया। करीमको मालूम हुआ कि बशीर दो साल पहिले अिससे भी बुरी हालतमें हिन्दुस्तान गया था और आज अुसका हजारों रुपया वहाँके आसामियोंपर फैला हुआ है। यहींतक नहीं, बल्कि बशीरने यह भी कह दिया कि अगर करीम अुसके साथ चलना चाहे, तो वह अपने खर्चपर अुसे हिन्दुस्तान ले जा सकता है। करीम जैसे अेक मुस्तैद तथा विश्वस्त आदमीकी अुसे जरूरत भी है।

करीमने बड़ी प्रसन्नता और कृतज्ञतासे बशीरका यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया, किन्तु अस्मतको समझाने-बुझानेमें अुसे लोहेके चने चबाने पड़े। जो अस्मत अिधर अुससे दिन-रात लड़ा करती थी, वही अुसके जानेकी बात सुनतेही अितनी बुरी तरह रोने लगती कि कभी-कभी करीमका निश्चयभी डगमगा जाता। आखिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत समझाने-बुझानेके बाद अस्मतने अपनी स्वीकृति दी। अुस स्वीकृतिमें सिर्फ बेबसी-ही-बेबसी थी।

× × ×

करीम अब घूमते-घामते दिल्ली आ पहुँचा। वशीरसे तो अुसकी अनबन लाहौरमेंही हो गयी, क्योंकि वह सिर्फ अिने-गिने पैसोंपर ही अुसे रखना चाहता था। लेकिन करीम अब अुसके रोजगारके तमाम दाँवपेंच समझ गया है। जब वह लाहौरसे दिल्ली चला, तो अुसके पास सिर्फ पचीस रुपये थे, लेकिन अब अुसके सत्तर रुपये तो अुधार में हैं, जो प्रति-दिन बढ़ते जाते हैं। अिसके अलावा अेक डेढ़ रुपयेका मनाफा वह थोड़ा-सा सौदा बेचकर कमा लाता है। परिश्रम करनेमें तो वह भूत जैसा है।

करीमका कायदा है कि आधी रातको वह अपने तमाम कर्जदारोंके घरोंपर चक्कर लगाअे और अुनसे अपना सूद रोजका-रोज वसूल कर ले। अुस समय ज्यादातर कर्जदार अपने घरपर ही मिल जाते और दूसरी सुविधा यह होती है कि अुस समय कर्जदारको डराने-धमकाने, मारने-पीटनेमें कोअी बाधा नहीं डालता। वह बड़ी क्रूरतासे अपना सूद वसूल करता और कभी-कभी पाँच-सात रुपये अुसके पास सिर्फ सूदकेही आ जाते हैं। अिनमेंसे कुछ वह नये कर्जमें बाँट देता है और कुछका सामान विक्रीके लिअे खरीद लाता। भूख लगनेपर तन्दूरपर * जाकर सस्तेसे-सस्ता खा आता और थक जानेपर अेक मस्जिदमें कुछ देरके लिअे कमर सीधी कर लेता। हाँ, कभी-कभी अस्मत और अपने बेटे वाजिदकी याद अुसके दिलको जरूर कचोटने लगती, लेकिन तभी करीम अपना डण्डा अुठा सीधे कर्जदारके घरकी ओर चल देता और अुससे लड़-झगड़कर अपने दिलका बुखार निकाल आता। अिसके अलावा वह करे भी क्या?

अिस तरह लगातार डेढ़ साल बिताकर जब अेक दिन अुसने अपनी पूँजी गिनी, तो नकद तेरह सौ रुपये अुसके पास थे। अिसके अलावा पाँच-छह सौ कर्जदारोंपर भी बाकी थे। करीमको अुस दिन न जाने क्या सूझा, कि बाजार पहुँचकर अुसने थोड़ा-सा सामान खरीदा और सीधा अपने वतनके लिअे चल दिया। अस्मत और वाजिदकी यादने अुसे बेकल कर दिया था।

× × ×

करीम हिन्दुस्तानके लिअे दूसरी बार चला, तो अस्मतकी ओरसे तो किंचित् भी बाधा अुपस्थित नहीं हुअी, किन्तु करीम स्वयं बड़ी कठिनाअीसे या कहना चाहिअे कि अपने फैले हुअे कर्जको वसूल करनेके मोहसे ही यहाँतक आ सका। वाजिदके कारण अुसका दिल घरसे अितनी दूर रहनेसे घबड़ाता-सा है। वह जबतक घरपर रहा, चौबीसो घंटे वाजिदमें ही अुलझा रहा। अिसीलिअे रास्तेमें भी अुसके पैर बार-बार घरकी ओर मुड़ने लगे, किन्तु कर्जके आकर्षणने अुसे दिल्ली पहुँचाकर ही छोड़ा।

---

* तन्दूर वह भट्टी जहाँ मिट्टीके बने गोल बड़े तवेपर मोटी-मोटी रोटियाँ पकती हैं।—संपादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिल्ली आकर दो-तीन दिन करीम गुम-सुम मस्जिदमें पड़ा रहा। अिसके बाद अुसने दिल कड़ा करके कर्जदारोंके घरोंपर चक्कर लगाने शुरू किये।

आखिर कर्ज तो वसूल करना ही है। अेक दिन वह अिसी प्रकार कर्ज वसूल करने चला तो सबके पहले मंजूके घर पहुँचा, जिसपर अुसकी सबसे ज्यादा रकम थी। करीमने मंजूके दरवाजे तक पहुँचते-पहुँचते हिसाब लगा लिया कि आजकी तारीख तक ठीक तिहत्तर रुपये अुसकी तरफ निकलते हैं। "तिहत्तर रुपये यानी सत्तर और तीन" करीमने मन-ही-मन सोचा "अगर मंजू चाहे, तो अितने रुपये देना अुसके लिअे कोअी मुश्किलकी बात नहीं। दस-बीस रुपयेके गहने अुसकी औरतके पास जरूर होंगे, अिसके अलावा कपड़े लत्ते, बर्तन भांडे। ये हिन्दुस्तानी भी अजीब होते ह, कर्ज लेते हैं और गहने बनवाते हैं। साला, औरतका गुलाम।" करीमको रास्ता चलते गालियाँ बड़-बड़ानेकी आदत पड़ गयी थी।

"मंजू हय? मंजू, ओ मंजू!" करीमने हाथकी लाठीसे मंजूके किवाड़ोंको ठोकते हुअे पठानी हिन्दीमें आवाज दी, किन्तु भीतरसे कोअी आवाज नहीं आयी।

"बोलता नहीं साला! अम तुम्हारा बाप खड़ा है।" करीमने क्रोधसे चीखते हुअे पुनः आवाज दी, किन्तु अुत्तर फिर भी नहीं मिला।

करीमने अेक-दो क्षण कुछ सोचा और फिर किवाड़ोंमें अेक लात जमाकर बोला,—"अम दरवाजा तोड़कर भीतर आ जाअेगा, वरना, चलो बाहर।"

अिस बार करीमने अनुभव किया कि दहलीजमें कोअी आ रहा है। कुछ ही देरमें किवाड़ खुले और दीनताकी मूर्ति बने हुअे मंजूने करीमके पैरोंको पकड़कर कहा, "खान! आज अट्ठाअीस तारीख है, परसों तीस होगी। बस दो दिनकी मुहलत दे दो। अिस महीनेकी पूरी तनख्वाह तुम्हें ही दे दूंगा।"

करीमने मंजूकी पीठपर तीन-चार घूंसे जमाकर कहा, "बदमाश! जब माँगता है बस, दो दिनकी मुहलतका बहाना कर देता है। हमको अपने बापका नौकर समझता है!"

मंजू घूंसोंकी चोटसे बिलबिलाकर बोला—"चाहे मार डालो खान, लेकिन रुपया तीसकी शामको ही मिलेगा। अुस दिन न दूँ तो जान निकाल लेना।"

"दो दिन! अच्छा दो दिनका मोहलत दिया। लेकिन फिर बहाना किया, तो मालूम हय ....." करीमने मंजूके अेक लात जमाते हुअे कहा और आगे चल दिया। कुछ कदम चलनेपर करीमको अनुभव हुआ कि अुसने मंजूको अितना नहीं पीटा, जितना पीटना चाहिअे था। परिणाम यह हुआ कि जिस अगले कर्जदारके पास करीम पहुँचा, अुसपर सिर्फ सात आने ही अुधार थे, फिर भी अुसे अितना पीटा कि अुसकी नाकसे खून बहने लगा। करीम कर्जदारोंको पीटनेमें कुछ तृप्ति-सी अनुभव करने लगा था।

अिस प्रकार अुस रातको करीम जिस कर्जदारके पास पहुँचा, अुसकी जैसे शामत आ गयी। किन्तु अुस दिन वसूली भी अच्छी हुअी। करीम जब लौटकर आया, तो अुसने मस्जिदके मुल्लाको अेक रुपया दिया कि वह अुसके वाजिदके लिअे पाँचों वक्तकी नमाजमें दुआ माँगे।

किसी तरह दो दिन भी बीत गये। करीम आज सुबहसे ही सोचने लगा कि अगर मंजूने आज भी टालमटूल की, तो अुसे वह अितना मारेगा कि बच्चूको छठीका दूध याद आ जाअेगा।

शाम हुअी और करीम लाठी लेकर मंजूके द्वारपर जा पहुँचा। "मंजू हय!" अुसने अपने स्वभावानुसार आवाज लगायी और दूसरे ही क्षण अेक आदमीने किवाड़ खोलकर अुससे पूछा "क्या है?"

"तुम कौन है? अुसी सालेको भेजो।" करीमने घुड़ककर कहा। "मैं अिसी घरमें किरायेदार हूँ। मंजूको कहाँसे भेजूँ, वह तो मर गया।"

"अमारा बिना अिजाजत वह नहीं मर सकता। देखो, वह अबी आता है।" करीमने दरवाजेकी ओर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैर बढ़ाते हुअे कहा। अुसे महसूस हो रहा था कि अुसके साथ चाल खेली जा रही है।

करीम घरकी चौखटपर चढ़ाही था कि अेक राहगीरने किंचित् व्यंग्यसे कहा, "खान! मंजूको तलाश करता है क्या? अुससे मिलनेके लिअे तो अब तुम्हें दूसरी दुनियामें जाना पड़ेगा। यह कहकर अुसने आसमानकी तरफ अुंगली अुठा दी।

करीमको अब मंजूके मरनेका विश्वास आया। वह फिर चौखटसे अुतरकर सड़कपर आ गया और झुंझलाहट भरे स्वरमें अुस किरायेदारसे पूछा--

"तुम मंजूका कौन हय?"

"कोअी नहीं। मैं ठाकुर हूँ, मंजू बामन था।"

"अुसका औरत है?"

"है, पर अिस वक्त नदीपर गयी है, मंजूके फूल चुनने।"

"कब आअेगा?"

"क्या मालूम?"

"जब आये, तो अुससे बोलना कि खान आया था। कोअी मर जाअेगा, तो अमारा रुपया नहीं छूटेगा। अुसे रुपया देना पड़ेगा, वरना हम बेअिज्जत करेगा।"

"कह दूँगा," अुस आदमीने सहमकर कहा, फिर खुशामद भरे स्वरमें बोला, "वह कहाँसे देगी खान! कफन तो चन्देका पड़ा। अुस बेचारीको माफ करो।"

"अम किसीको माफ नहीं करता," करीमने तमककर कहा, "चन्दा कौन है? अुसने कफन दिया था, अमारा रुपया नअी दे सकता?"

आदमी समझ गया कि यह राक्षस है। अिसकी खुशामद करनेसे कोअी लाभ नहीं होगा। कुछ देर खड़ा रहकर वह घरके भीतर चला गया।

करीम वहाँसे चला, तो सोचने लगा कि अब रुपया कैसे वसूल होगा। अुसे याद आया कि मञ्जूने तनख्वाह मिलनेकी बात कही थी। तो फिर तनख्वाहका रुपया तो मञ्जूकी बहूको मिला ही होगा। वह यह सोचकर झुंझला अुठा कि अगर मञ्जू सिर्फ कुछ घंटे और जिन्दा बना रहता, तो कमसे कम अुसका रुपया तो वसूल हो जाता।

करीम जब मस्जिदमें लौटा, तो अुसने अपने बिस्तरके अूपर अेक कार्ड पड़ा देखा। कार्ड घरका है, अितना वह अुसकी शक्ल-सूरत देखकर ही समझ गया। अिस समय अुसे बड़ी भूख-प्यास लगी थी, लेकिन कार्डको देख सब भूख-प्यास भूल गया और सीधा मुल्लाजीके पास पहुँचकर बोला, "मौलवी! अमारा खत सुना दो।"

मुल्लाजीने खत लिया। अुसमें सिर्फ दो लाअिने थीं, फिर भी कुछ देर वे खामोशीके साथ कार्डपर नजर जमाये रहे। अिसके बाद बोले, "क्या पूछता है खान?"

"खतमें क्या लिखा है, यह सुनाओ।"

"क्या सुनाअूँ? तुम्हारा लड़का था, वह जाता रहा। तुम्हें फौरन बुलाया है।"

करीमको अनुभव हुआ, जैसे जमीन आसमानकी तरफ अुड़ी जा रही है। गिरनेसे बचनेके लिअे अुसे दीवालका सहारा लेना पड़ा।

"रंज करनेसे क्या फायदा? खुदासे दुआ माँगो कि मरनेवालेको नजात (मुक्ति) दे।" मौलवीने कहा और मस्जिदके बाहर चला गया।

करीमने वह रात अैसे काटी, जैसे अुसके दिलपर आरा चलता रहा हो।

× × ×

"मञ्जूका औरत! चलो बाहर।" करीमके स्वरमें यद्यपि नरमी थी, फिर भी देहलीजमें बैठी हुअी मञ्जूकी औरतका दिल यह आवाज सुनते ही काँप गया। करीम पहले दिन जो कुछ कह सुन गया था, अुसे वह अक्षर-अक्षर पड़ोसियोंसे सुन चुकी थी।

"कोअी नअी आता हय। फिर अम भीतर आकर खींचेगा।" करीमने धमकी भरे स्वरसे कहा।

'अरी मञ्जूकी बहू! जो कुछ कहना है, कह दे। अपनी मिट्टी क्यों पलीत करा रही है? यह खाने बड़ा जालिम है, भीतर आकर न जाने क्या करने लगे?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी पड़ोसकी स्त्रीने मञ्जूकी बहूसे कहा, तो करीमने भी यह बात सुनी। अिससे पहले वह जब किसीको अपने सम्बन्धमें 'जालिम' कहते सुनता था, तो कुछ गर्व-सा अनुभव करता था किन्तु आज अिस शब्दने अुसपर दूसरा ही प्रभाव डाला। वह अिस सम्बन्धमें कुछ सोचने लगा और तभी मञ्जूकी बहू अपने छोटे-से बच्चेको गोदीमें लेकर किवाड़की ओटमें आ खड़ी हुअी।

"अम अपना रुपया चाहता है। अबी चाहता है, बिलकुल अबी।" करीमने तकाजेके झोंकमें कहा, लेकिन तभी अुसकी निगाह मञ्जूकी बहूकी गोदमें चढ़े हुअे अुसके बच्चेपर पड़ी, तो वहींकी वहीं जमी रह गयी।

"वह तो चले गये सरकार! अब.....।" मञ्जूकी बहूने भयसे काँपते हुअे कुछ कहनेका प्रयास किया ही था कि करीमने बिलकुल दूसरे ही स्वरमें बच्चेकी ओर संकेत करते हुअे पूछा, "यह कौन है? तुम्हारा बेटा है? तुम्हारा वाजिद है?"

मंञ्जूकी बहू कुछ समझी, कुछ नहीं समझी। आज अुसे पहली बार मालूम हुआ कि खूँख्वार दीख पड़नेवाला यह खान अितनी मीठी बोली भी बोल सकता है।

"यह वाजिद तुम अमको दे दो। अम तुमको भौत रुपया देगा।" यह कहकर खानने पागलकी भाँति अपने हाथ फैला दिये।

मञ्जूकी बहू खानका यह अद्भुत व्यवहार देखकर डर-सी गयी। वह कअी कदम पीछे हटकर खड़ी हो गयी और तभी न जाने क्यों अुसकी गोदका बच्चा भी रोने लगा।

"ओह! यह रोता हय! अम अपने वाजिदके लिअे रोता है और यह अपने वालिदके लिअे रोता हय। अिसे तुम चुप कर लो।" कहते-कहते खानकी दाढ़ी आँसूओंसे तर होने लगी। मंजूकी बहूने समझा कि खान पागल हो गया है। वह सहमकर भीतर भाग गयी।

"ओह, तुम भी भागता हय। अमारा वाजिद भी भाग गया और यह वाजिद भी भागता हय। अमसे सब नाराज हय। अम जाता हय। तुम, अपने वाजिदको अिसका मिठाअी खिलाना। अितना कहकर खानने अपनी जाकैटकी जेबसे कुछ नोट निकाल दहलीजमें फेंक दिये और रोता हुआ वहाँसे चला गया। अिसके बाद फिर कभी किसीने खानको अुस नगरमें नहीं देखा।

[फीरोजाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अश्कके नाटकोंमें युग सत्य

: श्री गोपालकृष्ण कौल, श्री रामगोपालसिंह चौहान :

समाजके द्वन्द्वात्मक विकाससे साहित्यका अटूट संबंध है। जब लोग कबीलोंमें रहते थे और अुनमें वर्गोंकी सृष्टि नहीं हुअी थी, अुस समय मानवको प्रकृतिसे संघर्ष करना पड़ता था। और जब अुत्पादन और अुत्तराधिकारके क्रममें होनेवाले परिवर्तनोंके कारण वर्ग-समाजका विकास होने लगा तो मानवका संघर्ष प्रकृति और मानवकृत-शोषण दोनोंके विरुद्ध शुरू हुआ। अिस संघर्षकी प्रगतिके साथ-साथ वर्ग-स्वार्थ भी स्पष्ट होते गये। मानव-समाजकी अिस संघर्षशील, द्वन्द्वात्मक-प्रगतिका प्रभाव साहित्यमें किसी न किसी रूपमें सदा प्रतिबिम्बित हुआ है। अिस संघर्षके क्रममें ही धर्म अधर्म, नीति-अनीति, दास-मालिक, अूँच-नीच और पाप-पुण्यकी विविध धार्मिक, सामाजिक तथा राजनैतिक आदि मान्यताओं, रीति-रूढ़ियों, मिथ्या विश्वासोंका जन्म हुआ, जो देश-कालके प्रभावोंसे वर्ग-समाजमें होनेवाले परिवर्तनोंसे प्रभावित होकर भिन्न-भिन्न युगोंमें भिन्न रूप धारण करते गये। सत्य-असत्य, धर्म-अधर्म और रीति-रिवाज आदिका अुदय और प्रचलन वर्ग-शासनों और वर्ग-प्रभुताओंसे अनुशासित होता रहा। अिस प्रकार प्रभुताधारी और शासित, शोषक और शोषित धनी और निर्धन अेवं श्रमिक और अवकाश-भोगीके वर्ग संघर्ष भी जीवनके विविध क्षेत्रोंमें अपने विविध रूपोंमें चलते रहते हैं। अिस मानव संघर्षका अन्त होता है वर्गहीन-समाजके निर्माणसे।

साहित्य मानव-संघर्षकी कलात्मक अभिव्यक्ति है। यह संघर्ष चाहे आन्तरिक हो या बाह्य। अिस संघर्षका अेक मनोवैज्ञानिक परिणाम और लक्ष्य है— स्वार्थ आधारित अवकाशभोगी मानव सत्ताओं और व्यवस्थाओंका अन्त और मानवश्रमको महत्व देनेवाले समता-आधारित, रचनात्मक वर्गहीन समाजका निर्माण। अिस संघर्षमें रचनात्मक श्रमशील मानव समुदाय अेक ओर है और अवकाशभोगी सत्तासम्पन्न सीमित वर्ग दूसरी ओर। अेक शोषित है, दूसरा शोषक। मानव संघर्षके अितिहासमें सदा दो पक्ष रहे हैं। चाहे अुनके वर्ग रूप देश, कालके अनुसार बदलते रहे हों। आज भी अिस संघर्षके दो पक्ष हैं— अेक अुनका, जो अवकाश-भोगी शोषक हैं, और सत्ताको जैसे भी हो अपने हाथोंमें बनाये रखना चाहते हैं, वे जीवनके विविध क्षेत्रोंमें अपने अुच्च वर्गके पुरखोंकी परम्पराका अैन्द्रजालिक विस्तार किये हुअे हैं, वे आज साम्राज्यवाद और पूंजीवादके पक्षधर हैं और अपनी अस्तित्व-रक्षामें बड़े-बड़े युद्धोंकी तैयारी करते हैं। दूसरा पक्ष अुनका है, जो अिस शोषण-चक्रमें पिसते हुअे भी नव-जीवन-रचनाके लिअे श्रम करते हैं और संसारकी शान्ति और रचनामें विश्वास रखनेवाली अधिकांश मानवजातिके प्रतीक हैं। सांकृतिक, सामाजिक और आर्थिक भेद अिस वर्ग स्वार्थकी शोषण-परम्परासे नत्थी है। प्रत्येक युगके साहित्यमें अिस संघर्षका प्रतिबिम्ब किसी-न-किसी रूपमें दिखायी पड़ता है। हमें देखना होता है कि किस साहित्यमें, किन अैतिहासिक परिस्थितियोंके कारण तमाम अन्तर्विरोधोंके साथ, किस पक्षका अधिक समर्थन किया गया है। जिस साहित्यमें मानव संघर्षके रचनात्मक जन-कल्याणकारी पक्षका समर्थन जितना अधिक होता है वह अुतना ही अपने युग-सत्य को यथार्थ अभिव्यक्ति प्रदान करता है। यह अभिव्यक्ति दो प्रकारकी होती है। अेकमें जन-कल्याणकारी शोषित वर्गकी क्रांतिकारी शक्तियोंका सीधा समर्थन किया जाता है और दूसरेमें शोषक वर्गके जन-विरोधी तत्वोंका अुद्घाटन।

युग सत्यकी अिन यथार्थ अभिव्यक्तियोंके अतिरिक्त लेखकके वर्गीय जीवनके अन्तर्विरोध भी अुसके साहित्यमें प्रकट होते रहते हैं। वह जिन सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक परिस्थितियोंके वातावरणमें अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यकी रचना करता है, अुनके अज्ञात प्रभाव भी अुसकी रचनाओंपर अपनी छाप डालते हैं। साथ ही जन-विरोधी-शक्तियाँ अर्थ और संस्कृतिके माध्यमसे अैसी परिस्थितियाँ अुत्पन्न करती हैं जिनसे जनवादी शक्तियोंके साहित्यिक और सांस्कृतिक पक्ष दुर्बल हो जाअें। वे अुदार-मानवदाता, व्यक्तिवाद, प्रजातंत्र, धर्म और दर्शन आदिके नामपर अनेक अैसे सिद्धान्त गढ़ती हैं, जो साहित्यके जनवादी रुखको कुंठित करनेके प्रच्छन्न प्रयत्न होते हैं। जो लेखक अिन सिद्धांतोंके कृत्रिम मानववादी रूपोंके आकर्षणमें फँस जाते हैं, वे साहित्यमें कलावादी, रूपवादी और समाजविरोधी व्यक्तिवादी-प्रतिक्रियावादके चतुर शिल्पी बन जाते हैं। अुनके शिल्पमें अैन्द्रजालिक चमत्कार तो होता है, किन्तु वस्तुमें युग-सत्यकी सही अभिव्यक्ति नहीं होती। क्योंकि अुनके प्रतिगामी संस्कार अुन्हें जन-जीवनके सम्पर्कमें नहीं आने देते।

मानव संघर्ष और साहित्यके अिस अटूट सम्बन्धको देखते हुअे, आजके युग-सत्यको साहित्यमें परखनेका अेक ही माध्यम है— हम देखें कि साहित्यमें जन-पक्षका कितना समर्थन है और जन-विरोधी ताकतोंके षड्यंत्रोंका पर्दाफाश कितना हुआ है— अिसके अतिरिक्त जो लेखक अिस वर्ग-समाजमें तटस्थ-वर्गहीन-मानववादी-अभिव्यक्तिका दावा करते हैं, वे वर्ग-संघर्षके युग-व्यापी सत्यपर पर्दा डालकर कृत्रिम मानवतावादियों (साम्राज्य-वादियों और पूंजीवादियों) के पक्षका अज्ञात रूपसे समर्थन करते हैं; चाहे सचेतन रूपसे अुन लेखकोंका यह लक्ष्य न भी हो।

अिस दृष्टिसे अश्कके नाटकोंमें हमें अुनके मध्य-वर्गीय अन्तर्विरोधोंकी अभिव्यक्ति तो मिलती ही है, साथ ही अुनमें जन-विरोधी शक्तियोंका पर्दा-फ़ाश भी दिखायी देता है। अश्कने मध्य-वर्गीय जीवनकी विभिन्न समस्याओंका विश्लेषण करते हुअे अिस वर्गके तमाम अन्तरविरोधों और अुसके प्रतिगामी तत्वोंका यथार्थ अुद्घाटन किया है। वे समस्याओं या पात्रोंको केवल प्रकृत रूपमें अुपस्थित नहीं करते। न शिल्प-चमत्कारकी सनकसे अैसे रूप-गठन या शैलीका प्रयोग करते हैं जो पाठकों और दर्शकोंके लिअे केवल अेक रहस्यमय चमत्कार बन जाअे और अुससे किसी प्रकारकी सामाजिक चेतना न प्राप्त हो। अश्क, अुसके विपरीत अपने रूप-गठन और शैलीको भी वस्तुगत सत्यकी सरल अभि-व्यक्तिका कलात्मक माध्यम बनाते हैं।

अुन्होंने विवाह और प्रेमकी समस्याको लेकर कअी नाटक लिखे हैं जिनमें अिस समस्याके विभिन्न पहलुओंको यथार्थवादी दृष्टिसे अुपस्थित किया गया है। "स्वर्गकी झलक" में आधुनिकाओंकी पारिवारिक-दायित्वहीन-बुर्जुआ फैशनपरस्तीकी खिल्ली अुड़ायी है और अैसी नारियोंसे अभिभूत होनेवाले पतियों और डर जानेवाले मध्यवर्गीय नौजवानोंपर व्यंग्य भी किया गया है। "बहनें" नामक अेकांकी भी वर-निर्वाचनके नामपर आधुनि-काओंके अुनमुक्त प्रेमके स्वांगका अेक व्यंग्य-चित्र है। 'कैद" नाटकमें निष्क्रिय, पुराने संस्कारोंके प्रभावमें जकड़ी अेक नारीका करुण चित्र अंकित है जो अवांछित पतिकी पारिवारिक "कैद"में घुटी जा रही है। किन्तु 'अलग-अलग रास्ते'में 'कैद'के अुस विवश नारी जीवनकी असमर्थताके प्रति घोर विद्रोहका स्वर है। 'अलग-अलग रास्ते'में रानीका अपने पतिके विषयमें यह कथन—जिस व्यक्तिके समीप चन्द हजारके अेक मकानका मूल्य मेरे मानसे कहीं अधिक है, जो मुझे नहीं, मकानको चाहता है, मैं अस लोलुपकी शक्ल तक नहीं देखना चाहती— अुस विद्रोहको वाणी देता है। जब रानीका पिता तारा-चन्द गरजकर पूछता है—'तू अपने पतिसे घृणा करती है?' तो रानी निर्भीकतासे अुत्तर देती है—'मेरा रोम-रोम अुससे घृणा करता है।' वह अपने पितासे कहती है— 'आपका धर्म भी पुरुषोंका धर्म है।' और अिस प्रकार वह धन-लोलुप पतिका त्याग कर देती है।

'मैमूना' अेकांकीकी नायिका 'आमना'के चरित्रमें बुर्जुआ-संस्कृतिकी प्रतिगामी आधुनिक-नारीके अन्तर-विरोधोंका मनोवैज्ञानिक अुद्घाटन होता है। अुसी प्रकार 'अंजो दीदी' में बुर्जुआ नारीके अेक दूसरे पहलूपर व्यंग्य है और 'भँवर'में अभिजात वर्गीय बौद्धिक नारियोंकी अतृप्त आकांक्षाका यथार्थ रूप है। अैसी भाँति दूसरे नाटकोंमें भी विवाह और प्रेमकी समस्याओंको लेकर नारी-जीवनके अनेक पहलुओंपर प्रकाश डाला गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'देवताकी छायामें' अेकांकीमें भरीका यह कहना—"हम लड़कियाँ हैं। हम अपनी अिच्छासे हँस नहीं सकतीं, बोल नहीं सकतीं, हिल-डुल नहीं सकतीं, चाहे घुट-घुटकर मर जाअें।" भारतीय-नारी-जीवनके रुढ़िग्रस्त बन्धनोंकी घुटनभरी करुण पुकार है।

अश्कके अैसे सभी नाटकोंमें ज्ञात-अज्ञात रूपसे सामाजिक व्यक्तिकी हैसियतसे नारीको सामन्ती और पूंजीवादी बन्धनोंसे मुक्त करनेकी भावना विद्यमान दिखायी देती है।

"अुड़ान" में अिन बन्धनोंकी तमाम समस्याओंका निदान है। अिसमें मायाके चरित्रके माध्यमसे नारीके अुस रूपको अुपस्थित किया गया है जो पुरुषकी दासताकी मात्र दासी, पूज्या या भोग्या बनकर ही स्वीकार नहीं करना चाहती, बल्कि वह अेक सामाजिक अिकाअी बनकर पुरुष-संगिनी बनना चाहती है।

अश्ककी सहानुभूति श्रमिक वर्गके साथ है। यद्यपि अुन्होंने मजदूरोंके जीवनपर कोअी नाटक नहीं लिखा, फिर भी अुनके नाटकोंमें यत्र-तत्र श्रमका शोषण करनेवाली पूंजीवादी मनोवृत्तिका पर्दाफाश किया गया है। 'देवताओंकी छायामें' में शोषणग्रस्त मजदूर जीवनकी अेक छोटी-सी झाँकी अुन्होंने प्रस्तुत की है। अिस नाटकके पहले दृश्य-विधानमें ही अश्क दृश्यका संकेत देते हुअे अपनी अिस भावनाको भी प्रकट करते हैं। वे लिखते हैं—

> "काकूके अैसी ही अेक नयी आबादीके पास दो अढ़ाअी सौ कच्चे घरोंका अेक गाँव है। अेक व्यवसायी सोसाअिटीने (जो शिष्ट व्यवसायकी कलामें निपुण है) अिसके पास तीन चार सौ अेकड़ अूसर धरती सस्ते दामोंमें मोल ले ली है। और फिर अिस अपीलपर कि अुस धरतीपर अेक नये समाजकी नींव रखी जाअेगी, जो सम्प्रदायके स्थानपर मानवको अपने प्रेमका भाजन बनाअेगा और देशके दीन-हीन कृषकोंका सुधार करेगा, महंगे दामों प्लाट बेचकर "देवनागर" के नामसे अेक नयी बस्तीका सूत्रपात कर दिया है। निकटवर्ती गाँवोंके श्रमी वहाँ सुबह सात-आठ बजेसे शामके सात-आठ बजे तक सख्त सर्दी अथवा सख्त गर्मीमें काम करते हैं और पाँच-छह आने दैनिक मजूरी पाते हैं और वे लोग पत्र-पत्रिकाओंमें बड़े गर्वस्फीत स्वरमें घोषणा करते हैं कि अुन्होंने लाखों रुपये देहातमें वितरण कर दिये हैं और अुनके नगरके निकटवर्ती गाँव सम्पन्न हो रहे हैं!"

यह दृश्य-विधान लेखककी वर्ग-भेदको पहचाननेवाली सजग प्रगतिशील दृष्टिका ही परिचायक है। नाटकका दृश्य-विधान अिस टिप्पणीके बिना भी पूरा हो सकता था, किन्तु शायद अुस तरह पाठकोंके सम्मुख श्रमिकोंका शोषण करनेवाले पूंजीवादी मानववादका पर्दा फाश न होता। अिस टिप्पणीकी पृष्ठभूमिमें नाटकमें दिखायी गयी गरीबीका चित्र वर्ग-भेदकी यथार्थताको और भी अधिक स्पष्ट कर देता है।

"अधिकारका रक्षक" अेकांकीमें पूंजीवादी संस्कारोंपर कठोर व्यंग किया गया है, साथ ही आजके अवसरवादी नेताओंकी पोल खोली गयी है। अिस नाटकके प्रमुख पात्र मि. सेठ चुनावके लिअे जिस प्रकार ढोंग रचते हैं (जिनकी करनी कुछ और कथनी कुछ) वह आधुनिक नेताशाहीके ढोंगी रूपका ही अेक चित्र है। अेक ओर तो वे हरिजन-सभाके मन्त्रीसे बात करते हुअे पीड़ितों और पददलितोंको अूपर अुठानेका दम भरते हैं, दूसरी ओर अपने नौकरको बुरी तरह गालियाँ देते और अपनी मेहतरानीको महीनेकी पगार माँगनेपर डाँटते हैं। सार्वजनिक रूपसे वे अेक ओर तो बच्चेको शारीरिक रूपसे दण्ड देनेका शाब्दिक विरोध करते हैं, दूसरी ओर अपने बच्चेको बेमतलब पीटते हैं। बाहर मालिकोंके अत्याचारोंके विरोधका ढोंग रचते हैं और घरमें अपने नौकरको तनख्वाह माँगनेपर कहते हैं "जा अेक कौड़ी भी नहीं देते, निकल जा यहाँसे, जा, जाकर पुलिसमें रिपोर्ट कर दे। पाजी, हरामखोर, सूअर! आजतक सब्जीमें, दालमें, सौदा सुलफमें, यहाँतक कि बाजारसे आनेवाली हरे अेक चीजमें पैसे रखता रहा। हमने कभी कुछ न कहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अब यों अकड़ता है।' और जब अिसपर नौकर यह कहता है कि 'सच है बाबू! जो गरीब लाख अीमानदार हो तो भी चोर है, डाकू है। अमीर यदि आँखोंमें धूल झोंककर हजारोंपर हाथ साफ कर जाअे, चन्देके नामपर सहस्त्रों अुड़ा दे..." तो मि. सेठ अिस यथार्थको सुनकर भड़क अुठते हैं" और अपने नौकरको पीटने लगते हैं। अितना सब ढोंग रचनेके बाद भी वे होजरी यूनियनके मन्त्रीसे कहते हैं, "मैं अुन लोगोंमेंसे नहीं जो कहते कुछ हैं और करते कुछ हैं। मैं जो कहता हूँ वही करता हूँ और जो करता हूँ वही कहता हूँ। वे स्वयं पूंजीवादी मनोवृत्तिके गुलाम होकर भी मजदूरोंको बहकानेके लिअे, दिखावेके रूपमें पूंजीपतियोंकी निन्दा करते हैं—" ये पूंजीपति गरीब मजदूरके कअी-कअी महीनोंका वेतन रोककर अुन्हें भूखों मरनेपर विवश कर देते हैं, स्वयं मोटरमें सैर करते हैं, शानदार होटलोंमें खाना खाते हैं और जब दिन-रात परिश्रम करनेके बाद ये गरीब लोहू-पानी अेककर देनेके बाद अपनी मजदूरी माँगते हैं, तब हाथ तंग होने, कारोबारमें हानि होने अथवा कोअी अैसा ही दूसरा बहाना बनाकर टाल देते हैं। "अिस प्रकार मजदूरोंके पक्षका ढोंग भरनेवाले नेता (श्री सेठ) के पास अुनके अखबारके सम्पादक जब स्वास्थ्यकी खराबी और कामके आधिक्यके कारण अेक सहायककी माँग करते हैं तो वे अुन्हें अेक नहीं दस आदमी मिल जानेकी धमकी देते हैं। अिसी तरह यह नेता विद्यार्थियोंको धोखा देता है। महिलाओंमें नारी-मुक्तिकी बात कहकर अपने घरमें अपनी पत्नीको सताता है। और यों "अधिकारका रक्षक" आधुनिक नेताओंके ढोंगी जीवनपर अेक करारा व्यंग बन जाता है। अिससे पूंजीवादी-वर्ग-स्वार्थकी पोल खुल जाती है।

विज्ञान और कलाके क्षेत्रोंमें पूंजीवादी व्यवसायिकताके कुप्रभावके अनेक यथार्थ चित्र भी अुसके नाटकोंमें मिलते हैं। अाजकल किस प्रकार डाक्टरोंका ध्येय रोग-मुक्ति नहीं बल्कि पैसा कमाना बन गया है, अिसका अेक चित्र "आपसका समझौता" अेकांकीमें है। अिसमें दो डाक्टर कमीशनके आधारपर अेक दूसरेके पास मरीज भेजनेका समझौता करते हैं। अिसके प्रधान पात्र डाक्टर वर्मा अपनी पत्नीसे फर्माते हैं— "और तुम नहीं जानती बाहरके रोगियोंसे कितना लाभ होता है। काम खराब हो जाअे तो डर नहीं, बिगड़ जाअे तो डर नहीं और यदि ठीक हो जाअे तो बाहरसे और भी रोगी आने लगते हैं। और फिर सबसे बड़ी बात यह है कि अुनसे फीस अधिक ली जा सकती है। विज्ञानके साथ कलाके दूसरे क्षेत्रोंमें भी पूंजीवादी मनोवृत्तियोंका कैसा कुप्रभाव फैल गया है, अिसके भी कअी चित्र "मस्कैबाजोंका स्वर्ग" "पैंतरे और पक्का गाना" नामक नाटकोंमें मिलते हैं। "मस्कैबाजोंका स्वर्ग" फिल्मी कलाकारोंपर लिखा गया अेक प्रहसन है जिसमें अेक फिल्मी अभिनेता परेश कहता है, "यहाँ किसी साहित्यिकके लिअे अभी जगह नहीं।" अिसके अुत्तरमें अुसका दूसरा स्वाभिमानी कथाकार मित्र हरीश कहता है— "अच्छे साहित्यिकके लिअे अभी कहीं भी जगह नहीं!" अिस नाटकके अन्तमें खुशामदपरस्त फिल्मी दुनियापर हरीशका यह अन्तिम वाक्य बिलकुल फिट बैठता है— "यह फिल्मी दुनिया है—यह मस्कैबाजोंका स्वर्ग!

"पैंतरे"में भी अिसी तरह बम्बअीके फिल्मी क्षेत्रमें काम करनेवाले निर्देशकों और कलाकारोंकी पतनोन्मुखी प्रवृत्तियोंका बड़ा यथार्थ और सुन्दर खाका खींचा गया है, जो पूंजीवादी प्रभावका भी अुद्घाटन करता है।

"पक्का गाना" अेकांकीमें फिल्म-कलाके क्षेत्रमें पूंजीपतियोंकी धांधलीके विषयमें दीपक कहता है..... "पूंजीपति अिस मशीनसे जो कुछ पैदा करना चाहता है, वह यह आपका आर्ट नहीं बल्कि रुपया है। अुसे गालियाँ खाकर भी रुपया मिल जाअे तो अुसे अिससे भी झिझक न होगी। वह धड़ाधड़ अैसी फिल्में बनाअेगा, जिनमें सरमाअेदारोंको गालियाँ मिलें और अुसकी जेब गर्म हो। लेकिन ज्यों ही पब्लिक अुनसे अुकतायी कि अुसने फिर स्टंटबाजी शुरू की। सरमाये का अधिकार अिन्डस्ट्रीसे हटे तो कुछ हो।" ये शब्द कलाके क्षेत्रमें पूंजीकी अमलदारीका विरोध करते हैं और कलाके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षेत्रको गन्दा करनेवाले पूंजीके प्रभावकी यथार्थताको अुद्घाटित करते हैं।

'बतसिया' नाटकमें समाजकी पूंजीवादी जहनियत और आजके न्यायकी परिचय लूकसके अिस कथनसे होता है :— "यह हिन्दुस्तान है। यहाँ काबलियतकी कदर नहीं, दिखावेकी कदर है। जो साधु गाली दे वह सिद्ध, जो डाक्टर मरीजोंके साथ तीखेपनसे पेश आये वह धनवन्तरीका बाप और जो वकील जितना ही झूठा हो अुतना ही सफल। वकालत आखिर रह ही क्या गयी। सचको सच और झूठको झूठ साबित कर दिखाना वकालत नहीं, बल्कि हर तरीकेसे झूठको सच साबित कर देना वकालत है।"

अश्कने अपने नाटक "अुड़ान" में मायाके चरित्र-पर युद्धकी विभीषिकाके कुछ प्रभाव दिखाकर संकेत रूपमें युद्धका विरोध करते हुअे शान्तिका पक्ष ग्रहण किया है। माया कहती है "बमबारीने जहाँ मकानोंके परखचै अुड़ा दिये, जहाँ अुनके वासियोंकी लज्जाको भी तार-तारकर दिया। जिनकी शर्म अुन्हें झरोखेसे झाँकने तककी आज्ञा न देती थी। अुन्हें मैंने नंगे मुँह, नंगे मुँह क्या, नंगे शरीर सड़कोंपर भागते देखा है।" युद्धकी विभीषिकाका नग्न रूप देखनेवाली माया अेक गीतके सहारे युद्धके आघातोंको भूलकर बड़े-बड़े जंगल और पहाड़ पार करती रही। मायाका यह गीत मानवकी शान्ति भावनाका प्रतीक है जो युद्ध नहीं चाहता।

अश्कने धर्मके नामपर साम्प्रदायिकताको अुभाड़नेवाली पूंजीवादी मनोवृत्ति और अुसके पीछे साम्राजी साजिशका भण्डा-फोड़ "तूफानसे पहले" नामक अपने अेकांकीमें किया है। अिसमें मुसलमानोंकी रक्षा करते हुअे हिन्दू गुण्डेसे मारा जानेवाला प्रधान पात्र घीसू मरते समय दाँत पीसकर कहता है:— 'अेक तूफान आ रहा है। जिसमें ये सब दाग, ये गुण्डे, ये धर्म और जाति-पाँतिके दर्प, गरीबोंका लोहू पीनेवाले पूंजीपति, ये भोले-भोले लोगोंको लड़वाकर अपना अुल्लू सीधा करनेवाले नेता--सब मिट जाअेंगे। नयी दुनिया बसेगी जिसमें गरीबोंका, मजदूरोंका राज होगा जहाँ हिन्दू-मुसलमान न होंगे काले-गोरे न होंगे। सब अिन्सान भाअी-भाअी होंगे!" यह कथन अश्कके प्रगतिशील जनवादी दृष्टिकोणका अुद्घोषक है। अिससे यह प्रतीत होता है कि समाजकी प्रतिक्रियावादी, जन-विरोधी शक्तियोंकी मिटती हुअी सत्ता और वर्गहीन-समाजके निर्माणके भविष्यके प्रति लेखक कितना जागरूक है।

अश्कने अपने नाटकोंमें मध्यवर्गीय जीवनमें पूंजीवादी प्रभावोंसे अुत्पन्न विशृंखलताओं और अुच्छृंखलताओं तथा अुनके जीवनके अन्तर्विरोधोंके व्यंगात्मक चित्र अुपस्थित करनेके साथ-साथ जीवनके अुदात्त मानवीय भावोंका चित्र भी प्रस्तुत किया है, जो मानव विकासका आशावादी प्रतीक है।

अिस प्रकार वर्ग समाजके युग-सत्यको विभिन्न रूपोंमें अश्कने अपने नाटकोंमें यथार्थवादी ढंगसे अभिव्यक्त किया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता :

स्वप्न-सत्य साकार करो तुम !

: श्री प्रभुदयालु अग्निहोत्री, अेम. अे. :

सहज सुभग शृंगार करो तुम ।
नील-निलयकी नील निवासिनि, भूतलपर अभिसार करो तुम ।

द्वार-द्वारके दीप निवापित और तमोरेखाअें गहरी,
यौवनके सपनोंसे अस्थिर किन्तु सजग अम्बरके प्रहरी,
मन्द चरण छिप-छिप पलकोंपर अुतर सकल श्रमताप हरो तुम ।

बिखरीं खण्ड-खण्ड प्रतिमाअें मन्दिर आज बना खण्डहर है,
जीवन जलता पृष्ठ कि जिसका ध्वस्तव्यस्त अक्षर-अक्षर है,
पटाक्षेप कर हे रसरंगिणि, नव-विधान-विस्तार करो तुम ।

लघु सर अेक, अनन्त लहरियाँ, क्षुब्ध-क्षुब्ध सर अन्तर्मन,
लघु अुर अेक अनन्त विकल स्मृतियोंका पल-पलमें आवर्तन,
अपने शीतल मंदिर स्पर्शसे चेतनताका भार हरो तुम ।

आज प्रभंजनसे कम्पित हैं स्नेह-समर्पणकी दीवारें,
और अमर विश्वास हिला है, सूख चलीं मधुरसकी धारें,
अब नीरस आख्यान हो चला अिसका अुपसंहार करो तुम !

कबतक ठहरे ज्योतिस्नेह जल चुका और धूमित है वाती,
घूम रही है सूनेपनमें अेक करुण-ध्वनि-सी टकराती,
युगयुगसे रीते अन्तरमें आज हृदयभर प्यार भरो तुम ।

कैसा शीतल अंक कि जिसमें तम-प्रकाश शिशुसम पलते हैं !
औ, वट जिसकी डाल-डालपर जन्म-मरण समरस फलते हैं !
आज हिरण्मय पात्र हटाकर स्वप्न-सत्य साकार करो तुम ।

[अकोला ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओड़िया

समग्र भारतरे प्राय आठ शह भाषा प्रचलित, तन्मध्यरु अधिकांश साहित्य विवर्जित -केवल कथ्य भाषा। हिन्दी, बंगला, तेलुगु, तामिल, कानारिज (कन्नड़), मलयालम्, मरहट्टी, गुजराती, गुरुमुखी, नेपाली, अुर्दू ओ आभमानक ओड़िया प्रभृति अत्यल्प भाषा प्राचीन ओ आधुनिक साहित्य विभवरे प्रकृत भाषा नामरे अभिहित हुअे। वर्त्तमान युगरे ओड़िआ भाषा अेहि सबु परवर्त्ती भाषा समाजरे समान आसनर अधिकारी न हेले हें–प्राचीन विभवरे अे जे शीर्ष स्थान अधिकार करीब, अेहा अनेक भाषाविद् स्पष्टरूपे स्वीकार करि अछन्ति।

मराठी

राष्ट्रोन्नतीचे नियम

१. "जें पोटीं तेंच ओठीं" ही हृदयशुद्धीची परीक्षा आहे.

२. "चित्त शुद्ध जरी शत्रु मित्र होती" हेंच सत्य आहे.

३. वाअीटाला चांगल्याच्या नांवाखाली खपूं देणें तर धोक्याचें आहेच; पण चांगल्या माणसांना निष्कारण बदनाम करणें हें अधिकच हानिकारक आहे.

४. दुसरा वाअीट ठरला ह्मणजे तुह्मी चांगले ठरणार नाहीं.

५. कर्तव्य–पथावर सोबती मिळण्याची वाट पाहूं नका.

६. स्वतःपेक्षा अधिक शाहण्यापासून शिका व कमी शाहण्यास शिकवा; संपूर्ण समाजास वर ओढण्याचें यापेक्षा दुसरें हमखास साधन संभवत नाहीं.

हिन्दी

समग्र भारतमें प्रायः आठ सौ प्रकारकी भाषाअें प्रचलित हैं। अुनके मध्यमेंसे अधिकांश साहित्य-विवर्जित केवल बोलचालकी (कथ्य) भाषाअें हैं। हिन्दी, बंगला, तेलुगु, तामिल, मलयालम, कन्नड, मरांठी, गुजराती, गुरुमुखी, नेपाली, अुर्दू और हम-लोगोंकी ओड़िया प्रभृति अत्यल्प भाषाअें प्राचीन तथा आधुनिक साहित्य वैभवमें प्रकृत (वास्तव) भाषाओंके नामसे अभिहित होती ह। वर्तमान युगमें ओड़िया भाषा अिन सब परवर्ती भाषा-समाजमें समान आसनकी अधिकारी न होनेपर भी प्राचीन वैभवमें यह अवश्य शीर्ष स्थानपर अधिकार करेगी, यह अनेक भाषाविद् स्पष्ट रूपमें स्वीकार कर चुके हैं।

हिन्दी

राष्ट्रोन्नतिके नियम

१. 'जो मनमें वही मुंहमें' यही हृदय-शुद्धिकी परीक्षा है।

२. 'हृदय शुद्ध हो तो शत्रु मित्र बन जाअे।' यही सत्य है।

३. बुराअीको अच्छाअीका बुरका पहननेकी अिजाजत देना तो संकटकारक हैही; किन्तु भलाअीकी बदनामी करना अुससे भी अधिक हानिकारक है।

४. दूसरेको बुरा कह देनेसे आप अच्छे नहीं सिद्ध होंगे।

५. कर्तव्य-पथपर साथीकी राह देखनेमें समय मत खोअिअे।

६. अपनेसे अधिक बुद्धिमानोंसे पढ़िअे; कम बुद्धिमानोंको पढ़ाअिअे। पूरे समाजको अूपर अुठानेका अिससे अधिक सच्चा साधन सम्भव नहीं।

—"निःस्पृह"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

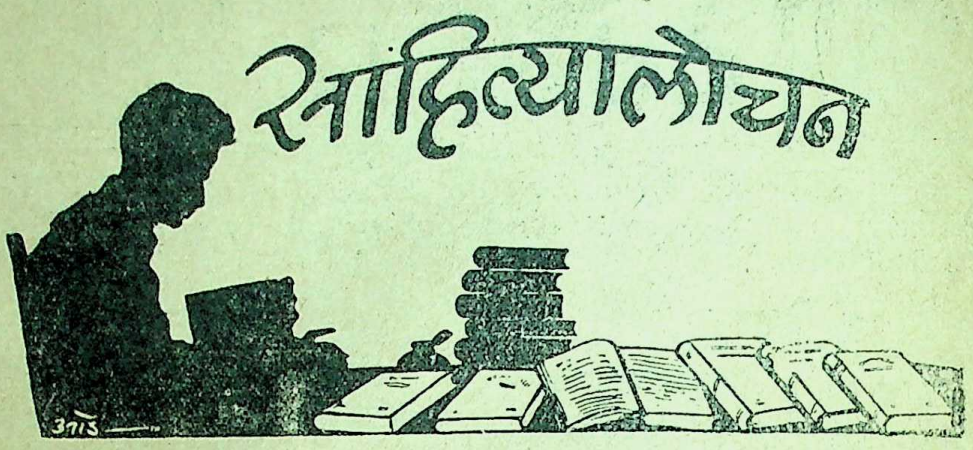

[सूचना—'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिअे।]

राधा और राजन (अुपन्यास) : लेखक—श्री बलभद्र ठाकुर, पृष्ठ-संख्या—३२६, डबल क्राअुन, सोलह पेजी। प्रकाशक, ग्रामोत्थान विद्यापीठ, संगरिया (राजस्थान)।

लेखकके शब्दोंमें यह अुपन्यास "शहीदोंकी कहानी है।" और शहीदके रूपमें अुसका नायक राजन है। राजन गंभीर प्रतिभाशाली युवक है, अुसके हृदयमें अुन्मुक्त राष्ट्रप्रेम है और अिसीलिअे वह प्रतिभाशाली होते हुअे भी कालेज छोड़ देता है तथा आअी. सी. अेस. बननेकी अभिलाषा भी। वह चरित्रवान भी है। नारी जातिके प्रति श्रद्धा रखता है, अैसी हालतमें ट्रेनपर लीलाके साथ जो व्योहार करता है, वह अुचित नहीं प्रतीत होता। लेखकका कहना है कि "अिस अुपन्यासमें शहीद पात्रोंको मानव रूपमें ही अुपस्थित किया गया है।" शहीद पात्र तो केवल राजन ही है, और यह घटना राजनके स्वभावके प्रतिकूल जान पड़ती है। राजन स्वयं ही लीलासे कहता, "स्वभाविक वातावरणमें अनाचार भी संयत रहता है, जब कि कृत्रिमताके मोहक पर्देके भीतर वही अनाचार बीभत्स हो अुठता है।" लीलाके पिता पंडित रमाशंकरका अुसपर आसक्त होना भी विचित्र बात है!

काशी युग और प्रलोभनोंके प्रवाहमें बहनेवाला नवयुवक है। यही हाल राधाका भी है, परन्तु अुसकी शिक्षा-दीक्षा राजनके द्वारा हुअी। अिसलिअे बादमें सम्हल जाती है और देश-सेविकाके रूपमें सामने आती है। मानो हरिऔधके 'प्रिय-प्रवास' की राधा हो। काशी भी सम्हलता है, परन्तु तब जब राजन राजद्रोहके अपराधमें फांसीके तख्तेपर चढ़कर हंसते-हंसते मृत्युका आलिंगन कर लेता है। अिसके पहले लंदनसे लौटनेके बादसे तो वह पूरा बैरिस्टर ही था, साहब था।

लीलाका चरित्र तो प्रारम्भसे अन्ततक रहस्यमय है, परन्तु अुसमें कर्मठता और कर्तव्यके प्रति जागरुकता अवश्य है। अपने पिता पंडित रामशंकरकी वासनासे बचनेके लिअे लीला राजनके साथ काशीसे भाग आयी थी। अुस समय अुसने कहा था, "अुस पिताकी सामाजिक स्थितिकी सुरक्षाके लिअे ही तो भाग चली हूँ।" पिताका यह रूप भी वीभत्स और अनावश्यक है। बादमें पंडित रामशंकरको भी अपनी हरकतोंपर पश्चाताप हुआ और वे लीलाकी शरणमें आ गये। महन्त प्रज्ञाकीर्तिका समावेश अुपन्यासमें बिलकुल अनावश्यक प्रतीत होता है। राधाकी 'माँ' 'चाची' पूरी भारतीय माँ है, कविवर मैथिलीशरण गुप्तकी भांति "आँचलमें दूध और आँखोंमें पानी" छिपाये।

अुपन्यासमें रजिया, रहीमखान और बनारसी न भी होते तो भी काम चल जाता, परन्तु अुन चरित्रोंके समावेशने अुपन्यासकी सामयिकताको श्री-प्रदान की है। अिनके चरित्रका विकास भी सुन्दर है। बहिनजीके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चरित्रको स्फुटित होनेका मौका ही नहीं मिला। वे अेक धमिल छाया-सी रह गयीं।

मानव— (अुत्पत्ति, स्थिति और विकास), लेखक, श्री बलभद्र ठाकुर, पृष्ठसंख्या २४३, डबलक्राअुन सोलह पेजी। प्रकाशक, ग्रामोत्थान विद्यापीठ, संगरिया (राजस्थान)।

लेखकके शब्दोंमें "अिस छोटी-सी पुस्तकमें मानव समाजके लाखों वर्षोंके परिवर्त्तन और निर्माणकी कहानी है।" पुस्तकका आरम्भ "पृथ्वी और अुसके मूल तत्वसे होता है" फिर पृथ्वीपर मनुष्यके आगमनकी चर्चा चलती है। और फिर विभिन्न अध्यायोंमें अुसके सांस्कृतिक अेवं सामाजिक विकासपर प्रकाश डाला जाता है। लेखकका मत है कि "भारतीय समाज अबतक विकासकी चार अवस्थाओंको देख चुका है।" अुसका यह भी मत है कि ५ हजार वर्ष पूर्व समाजका रूप आदि साम्यवादी था, यह हो सकता है, परन्तु वह साम्यवाद आजके साम्यवादसे भिन्न था। वर्ग-चेतना तो थी, परन्तु वर्ग-संघर्षकी भावनाका अभाव था। पुस्तकमें विद्यार्थियों तथा साधारण ज्ञान बढ़ानेकी अिच्छा रखनेवालोंको पर्याप्त सामग्री मिल सकती है।

रावीका तट [लेखक—श्री राधेश्याम द्विवेदी; प्रकाशक: केशव-साहित्य-कुटीर, करेरा (मध्यभारत) पृष्ठ-संख्या ७२; मूल्य १।।।)] बहुत अधिक मूल्य है केवल ७२ पृष्ठोंवाली पुस्तिकाका!

अिस नवोदित कविने अपनी अिस छोटी-सी काव्य-पुस्तिकाको, सन् १९५७ के सिपाही-विद्रोहसे लेकर २६ जनवरी १९५०की गणतांत्रिक स्वाधीनताकी घोषणा तककी आंदोलन-पृष्ठभूमिपर खंड-काव्यका रूप देनेका प्रथम प्रयास किया है। विषयसे संबंधित जिन तिथियोंका लेखकने सूचीपत्रमें घटनाक्रमके अनुसार अुल्लेख किया है, अुस विस्तृत क्षेत्रमें तो प्रतिभासम्पन्न हाथोंकी समर्थ लेखनी ही विचरण कर सकती थी। नवकविने घटनाओंका नीरस तुकबन्दीमें अुल्लेख मात्र कर दिया है।

पुस्तक रावीके अुस तटसे आरंभ होती है, जहाँ लाला लाजपतरायके बलिदानसे शोक-छाया मँडरा रही है और अन्तमें भारतमें स्वतंत्रता देवीके आनेपर भी रावीके तटपर वही शोक-छाया मँडराती रहती है। रावी जिसके तटपर पंजाब-केसरी लाला लाजपतरायका अंतिम संस्कार हुआ, जिसके तटपर ३१ दिसम्बर १९२९ की अर्धरात्रिको पूर्ण स्वाधीनताका प्रस्ताव पास हुआ और २६ जनवरी सन् ३० को राष्ट्रके कर्णधारोंने स्वाधीनताकी प्रतिज्ञा दुहरायी, जिसके तटपर क्रान्तिकारी भगतसिंहको कारामुक्त करानेके हेतु बम परीक्षण करते हुअे साथी भगवतीचरण शहीद हुअे, वही रावी स्वतंत्रताके अवसरपर भारतीय द्वारके बाहर निष्कासित कर दी गयी, यह भावना अपने-आपमें जितनी नाटकीय और प्रभावशाली है, कविने अपनी रचनामें अुसका अुपयोग नहीं किया।

दुर्बल अभिव्यक्ति और अनुभूतिकी शिथिलताने पुस्तकको नीरस बना दिया है। कहीं भी पाठकको रसमग्न कर देनेवाली काव्य-पंक्तिके दर्शन नहीं होते। अिस कच्चे प्रयासमें अैसे अनेक स्थल हैं जहाँ भाषाके कदम बुरी तरह लड़खड़ाये हैं और चित्य प्रयोगोंसे कविता लुप्तप्राय हो गयी है। अेक अुदाहरण देखिअे—

और अहिंसात्मक आन्दोलन,
से घबड़ा जाता है शासन।
हिलने लगती है वह जड़से
वर्षोंकी तिष्ठित, दृढ़ आसन॥

गार्हस्थ्य जीवन और ग्राम-सेवा (लेखक—श्री परशुराम चतुर्वेदी; प्रकाशक—साहित्य भवन लिमिटेड, अिलाहाबाद; पृष्ठ-संख्या ७२; मूल्य बारह आना)

गार्हस्थ्य जीवन और ग्राम-सेवा दो विभिन्न क्षेत्र और विषय हैं। प्रत्येक विषयपर प्रतिपादन अेवं समस्याओंको सुलझानेकी दृष्टिसे वास्तवमें बृहत् ग्रंथ लिखा जाना चाहिअे था जिसमें गृह-जीवनकी समस्याओंका समग्र विवेचन प्रस्तुत हो। यही बात ग्राम-सेवाके सम्बन्धमें कही जा सकती है। परन्तु प्रस्तुत पुस्तिका किसी बड़े ग्रंथकी रूपरेखा अथवा सार-संकलन मात्र प्रतीत होती है।

प्रकाशकने अपने वक्तव्यमें स्वीकार किया है कि "गार्हस्थ्य जीवन और ग्राम सेवाके व्यवहारिक पक्षकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओर जितना कम ध्यान दिया जाता है अुतना कम ध्यान शायद ही अन्य किसी ओर दिया जाता हो।" किन्तु प्रकाशकके शब्दोंमें अुसके 'जागरूक लेखक' ने भी अिस विषयकी ओर वास्तवमें जितना ध्यान देना चाहिअे, नहीं दिया।

पुस्तिकाके गार्हस्थ्य जीवनवाले अंशमें पाँच परिच्छेद हैं और प्रत्येक परिच्छेद चारसे पाँच पृष्ठकी परिमित सीमामें समाप्त किया गया है। फुटनोटकी तरह लिखे गये अिन पाँचों परिच्छेदोंका क्रम अिस प्रकार है... ...गार्हस्थ्य-जीवन, गृहवस्तु-व्यवस्था, आय-व्यय, वेशभूषा और बातचीत। केवल तीस पृष्ठोंमें लेखकने गार्हस्थ्य जीवन सम्बन्धी अपने व्यवहारिक सुझाव देकर प्रथम अंश समाप्त कर दिया है। अिन तीस पृष्ठोंमें थ्योरी अंश ही अधिक है, दृष्टान्तोंका समावेश नहींके बराबर है जिससे पुस्तककी अुपादेयता घट गयी है। परन्तु खूबी यही है कि संक्षेपमें सांकेतिक ढंगसे सब कुछ कह दिया गया है। ग्राम-सेवा सम्बन्धी दूसरे अंशमें यह खूबी नहीं है। ग्राम-सेवाके लिअे शहरोंसे गांवोंमें जानेवाले युवक या अन्य सेवापरायण व्यक्तियोंके सम्मुख आनेवाली समस्याअें भी यथार्थ रूपमें लेखक द्वारा नहीं अुठायी गयीं। शहरों अेवं राजनैतिक आन्दोलनोंके प्रभावसे हमारे गांवोंका स्वरूप वह नहीं रहा जैसा लेखकने बार-बार दुहराया है। न ही ग्रामीणोंकी कट्टरपंथी वृत्ति अुतनी तीव्र रह गयी है। गावोंकी नयी पीढ़ीमें द्रुत परिवर्तन हुअे हैं और अुनकी समस्याओंके रूप अब कुछ दूसरे ही हैं जिनसे आजके ग्राम-सेवकोंको संघर्ष करना पड़ता है। "ग्राम सेवाके सूत्र" महत्वपूर्ण अध्याय है परन्तु अुसका संक्षिप्त रूप अुसके महत्वको घटाता ही है। अिन सूत्रोंके प्रकाशमें कुछ तथ्योंकी चर्चा अपेक्षित है। फिर भी पुस्तिका कार्यव्यस्त जीवनमें अवकाशके समय देख लेने योग्य है। छपाअी गेट-अप तथा मूल्य यथायोग्य है।

—अनिलकुमार, सा. र.

महात्मा गान्धी - जीवन कथा :—ले०— ना. सी. फडके, प्रका०— अंजलि प्रकाशन लिमि०, फरोजशहा मेहता रोड, बम्बअी १। पृष्ठ सं. १४२ मूल्य १॥)

मराठीके ख्यातनामा ललित साहित्य स्रष्टा श्री प्रो० ना. सी. फडके द्वारा मूल मराठीमें लिखित पुस्तकका यह हिन्दी-रूपान्तर है। अनुवादक हैं श्री पं. माणिकलाल परदेशी।

अिसमें जैसा कि पुस्तकका नाम है, महात्मा गांधीजीकी जीवन कथा है, किन्तु यह आत्मकथापरक नहीं है, न संस्मरणात्मक, न कथात्मक है। अिसे अुपन्यासपरक कह सकते हैं। यही कारण है कि अिसकी रोचकता बढ़ गयी है। विषय अति परिचित, जाना-समझा हुआ होते हुअे भी पढ़ते ही बनता है। अिसके लिअे भारतके ही नहीं, संसारके सरताज महान् पुरुष भारतके प्रधान मंत्री श्री पं. जवाहरलाल नेहरूकी भूमिकाने चार चाँद लगा दिये हैं। और भी अिस पुस्तकपर कअी सम्माननीय व्यक्तियोंकी सम्मतियाँ हैं। पं. नेहरूके शब्दोंमें अिसका हर कोअी समर्थन करेगा कि— "महात्मा गांधीके जीवनका संदेश प्रो. फडकेने अपनी अिस सुंदर पुस्तकमें अत्यंत प्रभावपूर्ण ढंगसे विशद किया है। मेरी हार्दिक कामना है कि यह चरित्र सब लोग पढ़ें और अिसपर मनन करें।"

अिस दिशामें लेखनी चलानेके लिअे प्रो. फडकेजी बधाअीके पात्र हैं। प्रस्तुत पुस्तकमें गांधीजीकी अुपदेश-वाणी, विशिष्ट घटनाओंका तिथिवार विवरण और अभ्यासके लिअ प्रश्न भी दिये गये हैं। पुस्तक हाअीस्कूल कक्षाओंमें तथा राष्ट्रभाषाकी परीक्षाओंमें स्थान देने योग्य है। भाषा दोषरहित, सरल, स्वाभाविक है।

पुस्तककी छपाअी-सफाअी अच्छी है।

लड़खड़ाते कदम—ले० प्रोफेसर महेन्द्र भटनागर, प्रकाशक—स्वरूप ब्रदर्स, खजूरी बाजार, अिन्दौर। पृष्ठ सं. ७८। मूल्य अेक रुपया।

आज पाठक-वर्ग कहानी द्वारा मनोरंजन मात्र नहीं चाहता, अपनी व्यथाकी कथाको वह अुसमें ढूंढ़ता है। यहाँ 'अपनी व्यथा' से मतलब व्यक्तिकी, समाजकी राष्ट्रकी और अिससे भी अूपर अुठकर मानवकी व्यथा-मजबूरीसे है। समदुखी ही अपना दुख-दर्द सुनकर-सुना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर हलका कर सकते हैं। अिससे अुनके हृदयका अंधकार प्रच्छन्न हो, हृदयमें ज्ञान प्रकाश और प्रेरणाकी शक्तिका संचार होता है। ठीक अिसी दिशामें प्रस्तुत कहानी-संग्रहकी प्रत्येक रचना सन्नद्ध है।

यद्यपि कहीं-कहीं कथानकके बीचकी घटनाअें अेकदम अंक परिवर्तन-सी जान पड़ती हैं तथापि पाँच सात मिनटमें पढ़ी जा सकनेवाली छोटी रचनाओंका होना विशेष आकर्षक जान पड़ता है। प्रथम कहानीमें चपरासी परमाका पार्वतीसे यह कहना कि 'कित्ती खूबसूरत लगे है तू पारवती !' भाषाकी दृष्टिसे स्वाभाविक और सुन्दर प्रयोगको बताता है।

तरुण भटनागरजी कवि, कहानीकार और आलोचकके रूपमें साधना कर रहे हैं। यदि वे बढ़ते ही चले कदम बढ़ाकर तो हिन्दीको अुनसे बहुत कुछ आशा है।

अिसमें संदेह नहीं कि पाठकों द्वारा अिसका अच्छा स्वागत होगा।

—अभिराम, सा. र.

शकुन्तला दर्शन :— लेखक-सिद्धांतवाचस्पति मूंगाराम त्रिपाठी, 'साहित्यरत्न', 'शिक्षा-विशारद'; प्रकाशक:—भारतीय साहित्य मंदिर, गोरखपुर, हवाबाग, जबलपुर। पृष्ठसंख्या १२८, मूल्य १।)

महाकवि कालिदासका 'अभिज्ञान शाकुंतल' संस्कृत साहित्यका अेक विश्वविख्यात नाटक है। संसारकी प्रमुख भाषाओंमें अुसके अनुवाद भी हो चुके हैं। हिन्दीमें राजा लक्ष्मणसिंहने अिसका सुन्दर अनुवाद किया है। प्रस्तुत पुस्तक मूल संस्कृत नाटक और अुसके अिसी हिन्दी अनुवादकी सर्वांगीण समीक्षा है। अिसमें लेखकने 'शाकुंतल' के सम्पूर्ण विषयपर, अुसके केन्द्र बिन्दु, कथा भाग, नाटकीय तत्व, दिव्य-तत्वोंका-समावेश, चरित्र-चित्रण, रस-विचार, अैतिहासिकता, भौगोलिक तथ्य, सांस्कृतिक परम्परा, विश्व-व्यापी प्रभाव, श्रेष्ठ अनुवाद अित्यादि पन्द्रह अध्यायों द्वारा अुत्कृष्ट प्रलाश डाला है।

पात्रोंके चरित्र लेखकने सबसे अधिक जागरूकता अेवं निष्पक्षतासे प्रस्तुत किये हैं—विशेषतः शकुंतलाके चरित्र-चित्रणको तो नारी-जीवनके गंभीर मनोवैज्ञानिक निरीक्षणके पश्चात् ही खींचा गया प्रतीत होता है।

पुस्तक छोटी होते हुअे भी समीक्षा-जगत्में अवश्य ही अेक नया और अूंचा स्तर स्थापित करती है। यथासंभव सभी दृष्टियोंसे लेखकने शकुंतलाके नाटकत्व और स्थायित्वकी परीक्षा की है। भारतीय नाट्यशास्त्रकी दृष्टिसे तो लेखकने नाटककी परीक्षा की ही है; साथ ही शेक्सपियरके कुछ नाटकोंसे भी अुसकी तुलना की गयी है; अतः पुस्तक जहाँ अेक ओर परीक्षार्थियोंके विशद अध्ययनके अुपयोगकी वस्तु है, तो दूसरी ओर साहित्य-मर्मज्ञोंके लिअे भी चिन्तन-सामग्री प्रस्तुत करती है। पुस्तककी छपाअी-सफाअी अच्छी ही है।

—मूलशंकर त्रिपाठी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अखिल भारतीय राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलन पाँचवाँ अधिवेशन, नागपुर :

अ. भा. राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनका पाँचवाँ अधिवेशन जो नागपुरमें हुआ, बड़े महत्वका था। श्री काकासाहब गाडगील अुसके अध्यक्ष थे और मद्रासके राज्यपाल श्री श्रीप्रकाशजीने अुसका अुद्घाटन किया। श्री गाडगीलजीने अपने अध्यक्षीय भाषणमें राष्ट्रभाषा हिन्दीके सम्बन्धमें दो-तीन बड़े महत्वके प्रश्नोंकी चर्चा की और श्री श्रीप्रकाशजीने भी कुछ नये प्रश्न अुपस्थित किये। सम्मेलनमें कोअी ६०० के लगभग भिन्न-भिन्न प्रान्तोंमें राष्ट्रभाषा प्रचारका कार्य करनेवाले प्रचारक-प्रतिनिधि अिकट्ठे हुअे थे। मणिपुर, आसाम, बंगाल, अुत्कल, कच्छ, सौराष्ट्र, गुजरात, बम्बअी, महाराष्ट्र, कर्नाटक, हैदराबाद, आंध्र, राजस्थान, मध्यभारत, मध्यप्रदेशसे प्रतिनिधि आये और अुनमें ९० प्रतिशत हिन्दीतर भाषी थे।

अिन प्रचारकोंका प्रचार-कार्य मुख्यतः हिन्दीतर भाषी लोगोंमें ही हो रहा है। प्रचार-सम्मेलनका अुद्देश्य यही तो है कि भिन्न-भिन्न प्रान्तोंके प्रचारक आपसमें अेक दूसरेसे मिलें, अपने कार्यका लेखा-जोखा करें, प्रचार-कार्यकी समस्याअें और अुनके हलपर विचार करें, और यदि हो सके, तो अपने कार्यमें बड़े नेताओंसे मार्ग-निर्देशन भी प्राप्त करें।

श्री श्रीप्रकाशजीने सम्मेलनका अुद्घाटन करना स्वीकार किया, यह वास्तवमें बड़ी आशाजनक बात थी। अुन्होंने ४५ मिनटका लम्बा भाषण दिया, परन्तु सुननेवालोंको, जो अधिकतर हिन्दीतर भाषी थे, अिस बातका आश्चर्य हुआ कि अुन्होंने जो बातें कहीं वे अधिकतर हिन्दी-भाषी-जनोंके लिअे थीं। सम्भवतः अुद्घाटनकर्ता स्वयं हिन्दी भाषी थे, अतः अुन्होंने अिस अवसरका अुपयोग अपने हिन्दी-भाषी बन्धुओंको जाग्रत करनेके लिअे करना ही अच्छा समझा।

डंडेके बल प्रचार !

यह बार-बार सुननेमें आता है कि राष्ट्रभाषाका प्रचार जोर-जबरदस्तीसे नहीं होना चाहिअे, डंडेके बलसे अुसका प्रचार नहीं किया जा सकेगा। श्री जवाहरलाल नेहरूने भी यह बात अेक-दो बार कही है और नागपुर-सम्मेलनके अुद्घाटक महोदयने भी अिस बातको अपने भाषणमें दोहराया। सम्मेलनमें अेकत्र हुअे प्रचारक अिस बातको सुनकर हैरान दिखायी देते थे। यह बात ही अुनकी समझमें न आ सकी कि हिन्दीका प्रचार जबरदस्ती कहाँ किया जा रहा है, कौन कर रहा है? और जबरदस्तीसे हिन्दीका प्रचार किस प्रकार किया जा सकता है? वे सब जानते हैं कि हिन्दीका प्रचार किस प्रकार किया गया है और आज भी किस प्रकारसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो रहा है। हिन्दी-भाषी प्रान्तोंमें तो हिन्दीके प्रचारका प्रश्न ही नहीं है। हिन्दीतर भाषी प्रान्तोंमें जहाँ हिन्दीका प्रचार किया जा रहा है, वहाँ स्वराज्य मिलनेसे पहले तो सरकारके विरोधके होते हुअे भी, जनताकी मीठी नजर प्राप्त कर ही अुसका प्रचार बढ़ाया गया, और स्वराज्य मिलनेके बाद तो प्रान्तोंमें प्रान्तीय भावनाअें प्रबल होनेके कारण विरोध बढ़ा ही है, घटा नहीं। जो राज्य-सरकारें हिन्दीके काममें सहायता करना चाहती हैं, वे भी यदि डर-डरकर कदम रखनेको बाध्य होती हैं तो प्रचारकगण तथा प्रचार-संस्थाअें किसके बलपर ज़ोर-जबरदस्ती कर सकती हैं, यह समझना अुनके लिअे कठिन था। जो लोग जोर-जबरदस्ती-की बातें करते हैं वे शायद वस्तुस्थितिको जानते ही नहीं, अथवा यों ही कुछ कहनेके लिअे अैसी बातें कह देते हैं। शायद कुछ लोगोंको अैसी बातें सुननेमें यह अच्छी भी लगती होंगी, अिसलिअे भी सम्भव है कि कही जाती हों!

संतोंकी वाणीसे प्रभावित भाषा :

अुद्घाटक महोदयने अेक बात यह भी कही कि हिन्दीमें गाली-गलौजकी क्षमता अधिक है और अुसमें अपशब्द बहुत भरे हैं। अिसे सुनकर भी सम्मेलनके प्रतिनिधियोंको बड़ा आश्चर्य हुआ था। और क्यों न होता? आजतक तो वे यह मानते आये थे कि हिन्दीपर सन्तोंकी वाणीका ही अधिक प्रभाव है। हिन्दी राष्ट्रभाषा बनी अुसके पहले साधुओं और सन्तों द्वारा ही अुसका सारे भारतवर्षमें प्रचार हुआ। तुलसी, सूर, कबीर, मीरां, दादू, नानक आदि सन्तोंकी वाणीसे हिन्दी समृद्ध है। कअी स्थानोंपर तो राष्ट्रभाषा-प्रचारका आरम्भ अिन सन्तोंका तथा अुनकी वाणीका प्रचार करनेसे किया गया। गुजरातमें भी अिसी प्रकार अिस कार्यका आरम्भ किया था। अिसलिअे आज तक प्रचारकोंकी जो भावना बनी हुअी थी अुसपर आघात करने-वाला मन्तव्य सुननेसे अुन्हें खेदसहित आश्चर्य होना स्वाभाविक ही है। कअी लोग गुस्सा होनेपर अंग्रेजीमें गालियाँ देने लगते हैं अिसलिअे अंग्रेजी गालियाँ देनेकी क्षमता रखनेवाली भाषा नहीं कही जा सकती; अुसी प्रकार यदि गुस्सेमें कोअी हिन्दी या अुर्दूमें गाली देने लगे तो अुसमें अुस भाषाका दोष नहीं। गाली देना कोअी अच्छी बात नहीं, अिसलिअे जब मनुष्यका अन्तर-मन अुसे अन्दरसे टोकता है, तब वह दूसरी भाषाका प्रयोग करने लगता है, और समझता है कि अिस तरहसे अुसने अुसपर अेक बारीक-सा परदा डाल दिया है। यही अिसका मनोवैज्ञानिक रहस्य है। अिसलिअे किसी भाषापर अिसका दोष मढ़ना किसी प्रकार अुपयुक्त नहीं माना जा सकता।

भाषा कैसी हो?

राष्ट्रभाषा कैसी हो अिसके सम्बन्धमें अब विवादकी आवश्यकता नहीं। प्रचलित अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओंके शब्दोंको निकालकर अुनके स्थानपर संस्कृतके भारी-भरकम शब्दोंका अुपयोग किसी प्रकार भी वाँछनीय नहीं। श्री श्रीप्रकाशजीका अिस सम्बन्धमें जो मन्तव्य है वह हिन्दीके अधिकतर विद्वानोंको भी मान्य है। प्रान्तीय भाषाओं तथा हिन्दीमें परस्पर लेन-देन हो, और हिन्दी-भाषी भी अेकाध दूसरी भारतीय भाषा सीखें, अुनका यह सुझाव भी अच्छा था। राष्ट्रभाषा प्रचार-समिति अिसके लिअे प्रयत्न भी कर रही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सचमुच ही यदि हिन्दीको राष्ट्रभाषा बनना है तो अुसमें सभी प्रान्तीय भाषाओंके अुपयोगी शब्दोंको आत्मसात करनेकी क्षमता होनी चाहिअे और भावना तथा विचारोंमें सारे भारतका प्रतिनिधित्व करनेकी भी शक्ति आनी चाहिअे।

गाडगीलजीकी योजना :

श्री गाडगीलजीने अपने भाषणमें कुछ महत्वके प्रश्नोंकी चर्चाही नहीं की, अुन्होंने हिन्दी-प्रचारकी अेक योजना भी दी। यह योजना नयी नहीं। अपने दिल्लीके अेक भाषणमें अुन्होंने यह योजना सर्वप्रथम रखी थी। योजना अच्छी है, परन्तु सरकारी सहायताके बिना सफल नहीं हो सकती, यही अुसकी सबसे बड़ी त्रुटि है। सरकारकी ओरसे अिस कार्यमें सहायता मिलेगी, अैसी आशा करके बैठे रहना कार्यको बड़ी हानि पहुँचाना है। सार्वजनिक संस्थाअें जो अिस कार्यमें लगी हुअी हैं, वे सब मिलकर यदि कोअी योजनाबद्ध कार्य आरम्भ करें, तो बहुत कुछ काम हो सकता है। परन्तु यह कैसे सम्भव होगा, यह प्रश्न है जिसका अुत्तर अभी तक हमें नहीं मिला।

अंग्रेजीके सम्बन्धमें :

श्री गाडगीलजीने अंग्रेजीको अेकदम न हटानेकी चेतावनी भी अपने भाषणमें दी है। विधानमें अंग्रेजीके लिअे १५ वर्ष दिये गये हैं और आज भी केन्द्र तथा राज्य सरकारोंका अधिकांश कार्य अंग्रेजीमें ही चल रहा है। अितना ही नहीं, बड़ौदा, ग्वालियर आदि स्थानोंमें, जहाँ गुजराती या हिन्दीमें काम होता था, वहाँ फिरसे अंग्रेजीको स्थान दिया गया है। अैसी स्थितिमें अंग्रेजीको अेकदम हटानेका प्रश्न अुपस्थित ही नहीं होता। प्रश्न तो यह है कि अंग्रेजी हटेगी भी, और कब हटेगी? श्री गाडगीलजीने श्री राजाजीके अेक अवतरणको देकर, अंग्रेजी भारतके लिअे सरस्वती देवीकी अेक देन है, अिस ओर हमारा ध्यान खींचा। सरस्वती देवीकी अिस देनको हम स्वीकार कर सकते हैं, परन्तु देनका मूल्यांकन भी तो सरस्वतीके पुत्रही कर सकेंगे। साधारण जनता तो शायद अुसका मूल्य समझ भी न सकेगी। अैतिहासिक दृष्टिसे यदि देखा जाअे तो कुछ लोगोंके मतसे भारतमें अंग्रेजी राज्य भी विधाताका अेक विधान था—अर्थात् अीश्वरकी देन थी। अुसके लाभ भी गिनाये जा सकते हैं, परन्तु अिसी कारण अुसके गुलामीके तौकको तो हम सदा गलेमें लटकाये नहीं रख सकते थे। अिसी प्रकार सरस्वती देवीकी देन अंग्रेजीको भी, हमारे अूपर सदा प्रभुत्व करने नहीं दिया जा सकता। जनताके हितके लिअे राष्ट्रभाषा हिन्दीको अपना स्थान तथा प्रान्तोंमें प्रान्तीय भाषाओंको अपना स्थान देना ही होगा और वह भी यथासम्भव शीघ्रही। अिसका यह अर्थ नहीं कि अंग्रेजीका बहिष्कार किया जाअेगा। अेक वर्ग तो अंग्रेजीका अध्ययन करताही रहेगा और अुसके द्वारा प्राप्त ज्ञानसे भारतकी सेवा भी करेगा। परन्तु अंग्रेजी पढ़ा-लिखा वर्ग आज शासनमें तथा अन्य महत्वके स्थानोंपर अधिकार कर बैठा है और साधारण जनतासे अलग रहकर अपनेको धन्य मानता है। अिस स्थितिमें आमूल परिवर्तन तभी होगा जब हिन्दी तथा प्रान्तीय भाषाअें, जिनको साधारण जनता भी समझती है अपना अुपयुक्त स्थान प्राप्त करेगी और पढ़ी-लिखी तथा साधारण जनतामें आज जो दूरका सम्बन्ध है, वह निकटका तथा निजी सम्पर्क बन जाअेगा।

भारतकी भारती :

श्री काकासाहब गाडगीळ तो जाने और माने हुअे साहित्यिक हैं। स्वाभाविक है कि वे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रभाषाको अुपमा देनेका मोह संवरण न कर सके। अुन्होंने अुसे पतिगृह जानेवाली शकुंतलासे अुपमा दी है। अुन्हें शकुंतला ही क्यों याद आयी? क्या अिसीलिअे कि वह भरत जिसके प्रभाव तथा गौरवके कारण अिस देशका नाम भारत पड़ा है, अुसकी वह माता थी? परंतु यदि राष्ट्रभाषा हिन्दी हमारी राष्ट्रवाणीका रूप लेनेवाली हो तो हमारी पुरानी परम्पराके अनुसार अुसे भारती-सरस्वतीकी अुपमा देनी चाहिअे, जिसकी राष्ट्रकी पीठिकापर प्रतिष्ठा की गयी है और जिसकी पूजामें भारतकी समस्त प्रजा अुत्तमसे अुत्तम भेंट चढ़ानेको अुत्सुक है।

श्री पराडकरजीकी हिन्दीको देन :

नागपुरमें राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनमें हिन्दीके सुप्रसिद्ध पत्रकार आजके सम्पादक श्री बाबूराव पराड़करजीको १५०१) का 'महात्मा गांधी पुरस्कार' देकर जो सम्मान दिया गया, वह अपना अलग ही महत्व रखता है। अुनके जीवन तथा कार्यके सम्बन्धमें नवम्बरके अंकमें जो दो लेख छपे हैं, अुससे पाठकोंको पर्याप्त जानकारी मिल गयी होगी। परन्तु राष्ट्रभाषा हिन्दीके विकासकी दृष्टिसे अुन्होंने जो कार्य किया है, वह अनुपम है। राष्ट्रभाषा प्रचार समितिमें जब वे गत १३ नवम्बरको पधारे, तो अुन्होंने समितिके कार्यकर्ताओंके समक्ष हिन्दी भाषाके रूपके सम्बन्धमें अपने विचार प्रकट करते हुअे कहा कि अुन्होंने हिन्दीमें अपनी लेखनी द्वारा कोअी २०० अैसे शब्दोंको हिन्दीमें टकसाली बना दिया, जो मराठी, बंगाली आदि भाषाओंसे लिये गये थे। आज वे अुस रूपमें पहचाने नहीं जाते और हिन्दीके ही बन गये हैं। अेक पत्रकार तथा लेखक अपनी लेखनी द्वारा क्या कर सकता है, अिसका यह बड़ा अच्छा अुदाहरण है। परन्तु अिसके लिअे अुसके पास विशाल हृदय, राष्ट्रीय भावना तथा समन्वय-दृष्टिका होना आवश्यक है। हमारी दृष्टिमें राष्ट्रभाषाके विकासकी दृष्टिसे श्री पराड़करजीका यह कार्य सदा अनुकरणीय रहेगा। समितिने अुनका सम्मानकर स्वयं अपना गौरव बढ़ाया है।

सरकार सहानुभूति तथा सहयोग दे :

नागपुरके प्रचार सम्मेलनके अवसरपर अिस वर्ष राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके रत्नोंको मध्यप्रदेशके मुख्य मन्त्री श्री रविशंकर शुक्लजी के शुभ हाथोंसे प्रमाण-पत्र तथा अुपाधि-शाल दिये गये। श्री शुक्लजी कुछ अस्वस्थ होनेपर भी आये और अुन्होंने अुस समय जो दीक्षांत भाषण दिया, अुसमें अेक बड़े महत्वके प्रश्नकी चर्चा की। अुन्होंने राष्ट्रभाषाके प्रचारकोंसे अपने ही बलपर अिस कार्यको आगे बढ़ानेका अनुरोध किया। अुन्होंने कहा सरकार भी कुछ करती है, परन्तु वह जो करती है, वह अुस कार्यके प्रति सहानुभूति तथा सहयोग देनेकी दृष्टिसे करती है। अर्थात् मुख्य कार्य तो सार्वजनिक संस्था तथा प्रचारकोंको ही करना होगा।

सार्वजनिक संस्थाअें तथा प्रचारक भी तो यही चाहते हैं। वे राज्य-सरकारों तथा केन्द्रीय सरकारसे अनेक कार्यमें सहानुभूति तक सहयोग चाहते हैं और यही कारण है कि आज प्रचार-सम्मेलनों तथा अैसे ही दूसरे मन्चोंपर राजकीय नेताओंको लानेका प्रयास किया जाता है। स्वराज्य मिलनेसे पहले अिन संस्थाओंमें तथा सरकारी तन्त्रोंमें जो विरोध रहता था, वह आज नहीं रहा अिसका निश्चित ज्ञान भी कार्यकर्ताओंका अुत्साह बढ़ानेके लिअे पर्याप्त है। परन्तु राजकीय नेतागण कभी-कभी अैसे मंचोंपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकर रचनात्मक कार्यकी दृष्टिको गौण बनाकर राजनैतिक दृष्टिको ही प्रधानता देने लगते हैं, तब बड़ी विषम परिस्थिति अुपस्थित होती है। परन्तु आजके क्रांति-कालमें यह सब होगा ही। अिसे सहन करनेके सिवा दूसरा कोअी चारा नहीं। परन्तु हम यह आशा अवश्य करें कि राजनैतिक क्षेत्रके नेता भी यह शीघ्र ही समझ जाअेंगे कि अिन कार्योंसे अन्ततोगत्वा अुन्हींको बल मिलनेवाला है। रचनात्मक कार्यके द्वारा ही प्रजामें भावनाका, संगठनका तथा कार्यका बल आअेगा और बलवान प्रजाका नेतृत्व ही अुसके नेताको गौरव प्रदान करेगा।

लिपि सुधारका महत्व :

निकट भविष्यमें ही लखनअूमें अुत्तर प्रदेशके मुख्य मंत्री श्री पंतजीके द्वारा निमंत्रित लिपि-परिषद होने जा रही है। हम अिस परिषदका स्वागत करते हैं। नागरी लिपिमें जो कुछ सुधार करना आवश्यक हो अुसका अब निर्णय हो जाना चाहिअे। वर्षोंसे अिस सम्बन्धमें चर्चा होती आयी है, विचार-विनिमय तथा विवाद भी हुअे हैं, परन्तु अभीतक अंतिम निर्णय नहीं हो सका। अिस अनिश्चित दशाका अंत होना चाहिअे।

अिस परिषदका ध्यान हम अेक विशेष बातपर दिलाना चाहते हैं। 'अ' की बारहखड़ी तथा अन्य कुछ सुधारोंका प्रचलन देशमें हो चुका है। हिन्दीतर भाषी प्रांतोंमें राष्ट्रभाषा प्रचार समिति आदि जो संस्थाअें काम कर रही हैं अुनमें अधिकांशने लिखनेमें 'अ' की बाराखड़ीको स्वीकार किया है। आज लाखों लोग अिस तरहकी लिपि लिखने तथा पढ़नेके आदी हो गये हैं। अनेक संस्थाओंका सारा प्रकाशन भी अिसी लिपिमें होता है।

अिन सुधारोंको जनताने अपनाया है। अतः परिषद यदि अिन प्रचलित सुधारोंके पक्षमें अपना निर्णय दे तो वह हितकर ही होगा।

शास्त्रीय या विज्ञानिक दृष्टिसे हम यहाँ अिसपर किसी प्रकारकी चर्चा करना नहीं चाहते। सुविधाकी दृष्टिसे अिसे हिन्दीतर भाषी प्रांतोंमें स्वीकार किया गया है और 'अि, अु' आदिको भी अिन स्वरोंका चिन्ह मानकर चलानेसे अुसमें फिरसे कोअी आपत्ति नहीं रहनी चाहिअे। परिषद यदि विकल्प रूपसे भी अिस पद्धतिका स्वीकार कर लेगी तो भी विरोधका कारण टल जाअेगा और सबको सन्तोष होगा।

आशा है, परिषद अिसपर अवश्य सहानुभूतिपूर्वक विचार करेगी और हिन्दीतर भाषी प्रांतोंके निवासियोंकी कठिनाअियोंको ध्यानमें रखकर, अिस सुझावको मान्य करनेमें किसी प्रकारका विवाद न खड़ा करेगी।

प्राच्य विद्या परिषद :

प्राच्य विद्या परिषदका अहमदाबादका अधिवेशन आंतर-राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त विद्वान श्री सुनीतिकुमार चाटुर्ज्याकी अध्यक्षतामें सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। देशके कोने-कोनेसे प्राच्य विद्यामें दिलचस्पी रखनेवाले प्रथम पंक्तिके विद्वान अुसमें अेकत्रित हुअे थे। अुसके साथ प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथोंकी अेक प्रदर्शनी भी की गयी थी। प्रदर्शनीमें अधिकांश तो जैन ग्रंथोंकी पाण्डुलिपियाँ थीं। फिर भी प्रदर्शनी दर्शनीय ही नहीं, अुपयोगी भी थी। परिषदके विभिन्न विभागोंमें जो निबन्ध-वाचन हुआ, वे भी अुस-अुस विभागके भारतीय विद्वानोंके अध्ययन तथा योग्यताके परिचायक थे। गुजरात प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार समितिकी ओरसे परिषदके विद्वान प्रतिनिधियोंका अेक प्रीति-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्मेलन आयोजित किया गया था। अिसमें राष्ट्रभाषाके सम्बन्धमें जो विचार भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी विद्वानों द्वारा व्यक्त किये गये, वे सचमुच ही अुत्साहवर्धक थे। अेक-दोको छोड़कर सभी वक्ताओंने हिन्दीमें ही अपने विचार प्रगट किये। अुनका यह प्रयत्न अवश्य अभिनन्दनीय था।

परिषदके बारेमें अेक बात अवश्य खटकती रहेगी। परिषदने निबन्धोंके लिअे तो हिन्दी भाषाको स्वीकार कर लिया; परन्तु प्रयाग विश्वविद्यालयके सुप्रसिद्ध विद्वान डा० बाबूराम सक्सेनाका 'हिन्दी' को परिषदका अेक स्थायी-विभाग बनानेका प्रस्ताव काअुंसिल-की बैठकमें बहुमतसे अस्वीकृत रहा। अिस प्रस्तावका विरोध करनेवालोंका तर्क था, कि हिन्दी अभी राष्ट्रभाषा बनी नहीं, जब वह राष्ट्रभाषा बन जाअेगी तब अुसपर विचार करेंगे। अिस प्रकार तर्क करना क्या ठीक है? अिसका जनता ही विचार करेगी। विधानमें तो हिंदीको संघीय भाषाका महत्व दिया जा चुका है। जनता भी अुसको अपनाती जा रही है और अनेक वर्षोंसे राष्ट्रभाषाके रूपमें हजारों प्रचारक अुसका प्रचार करते आ रहे हैं। अैसी स्थितिमें यदि प्राच्य विद्या-परिषद् श्री सक्सेनाजीका प्रस्ताव स्वीकार कर लेती, तो अुससे राष्ट्रभाषाके कार्यको बहुत बल मिलता। परन्तु यह प्रस्ताव वहाँ स्वीकार नहीं कराया जा सका, अुसका कारण हिन्दीके विद्वानोंकी अुदासीनता है। प्रतीत होता है कि वे प्राच्य विद्याके क्षेत्रमें भी जैसी चाहिअे वैसी दिलचस्पी नहीं लेते। यदि वे यह अुदासीनता दूर कर सकें, तो आगामी अधिवेशनमें अिस प्रश्नको फिरसे लाया जा सकता है। परन्तु यह तभी हो सकेगा जब हिन्दीके विद्वानोंपर जो अेक बहुत बड़ी जवाबदेही है, अुसे वे समझें।

—मो० भ०

'राष्ट्रभारती' पर कृपा करनेवालोंसे निवेदन

'राष्ट्रभारती' राष्ट्रभाषामें अपने ढंगकी निराली लोकप्रिय भारतीय साहित्यकी मासिक पत्रिका है, जिसपर कलोपासक श्रेष्ठ लेखकों, कहानीकारों और कवियोंकी विशेष ममत्व-भरी कृपा रही है और अुनके सहयोगका हमें आश्वासन रूपी सम्बल मिला है। दिसंबरका यह अंक तीसरे वर्षका अन्तिम अंक है। अिस वर्ष (१९५३) में जिन सहृदय श्रमजीवी, अुदारमना महानुभावोंने अपनी कृतियोंसे राष्ट्रभारतीको अलंकृत किया, कृपादृष्टि रखकर हमें अुत्साहित करते हुअे अपना आदर और प्यार दिया, हम अुनके अत्यन्त आभारी हैं। हमारा हाथजोड़ निहोरा है अुनके प्रति कि 'राष्ट्रभारती' पर वे सदैव पूर्ववत् कृपा रखें।

हम कृतज्ञता पूर्वक अिस वर्षके अपने प्यारे सहयोगी लेखक-बन्धुजनोंके नाम यहाँ प्रकाशित करते हैं :—

सर्वश्री पं. माखनलालजी चतुर्वेदी, क्षितिमोहन सेन, मौ. अ. कलाम आजाद, डॉ वियोगी हरिजी, डॉ. अमरनाथ झा, आचार्य सिद्धेश्वर वर्मा, आचार्य चन्द्रबली पांडे, ब्रिजलाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बियाणी, मामा वरेरकर, भदन्त आनन्द कौसल्यायन, मन्मथनाथ गुप्त, महाराजकुमार डॉ. रघुवीर सिंह, डॉ. रामकुमार वर्मा, जगदीशचंद्र माथुर आअी. सी. अेस., रमाप्रसन्न नायक आअी. सी. अेस., महात्मा भगवानदीन, प्रो. विनयमोहन शर्मा, प्रो. मोहनलाल बाजपेयी, प्रो. प्रभाकर माचवे अेम. अे., अुदयशंकर भट्ट, भवानीप्रसाद तिवारी अेम. अे., 'नीरज' अेम. अे., किशोरीदास बाजपेयी, भदन्त शान्ति भिक्षु, शिवनाथ अेम. अे., प्रो. रामपूजन तिवारी अेम. अे., मोहनसिंह सेंगर, अुमाशंकर जोशी, राजेन्द्र यादव अेम. अे., गंगाप्रसाद पांडेय अेम. अे., प्रो. अंचल, प्रो. राममूर्ति रेणु अेम. अे., शंकरदेव विद्यालंकार, श्रीमती शान्ति अेम. अे., श्रीमती विद्यावती मिश्र, प्रो. रंजन अेम. अे., जगदीशचन्द्र, कि. रा., पितरस, नज्मुन्निसा बेगम, कु. मुबारकजहाँ, अध्यापक जहूरबख्श, ओमप्रकाश आर्य, श्रीमती कमल आर्य बी. अे., मुमताज अशरफ कादरी अेम. अे., 'लहरी' अेम. अे., प्रो. कन्हैयालाल सहल अेम. अे., प्रो. रामचरण महेन्द्र अेम. अे., प्रो. शंभुप्रसाद बहुगुणा अेम. अे., अमिताभ अेम. अे., रा. वीलिनाथन, वीरेन्द्र त्रिपाठी, प्रो. जगदीशप्रसाद व्यास अेम. अे., प्रो. म. ना. अदवन्त अेम. अे., प्रो. य. शं. गोडबोले, यशपालजी, डॉ. धर्मवीर भारती, हकीम अबदुलवाली, पं रामनरेशजी त्रिपाठी, विष्णु प्रभाकर, लक्ष्मीशंकर व्यास अेम. अे., पां. ग. पेशपांडे, श्रीमती कमला चौधरी, रा. कृष्णमूर्ति, रामरत्न बडोला अेम. अे., मुनि श्रीकांतिसागरजी, आचार्य स. ज. भागवत, डॉ. हरदेव बाहरी अेम. अे., प्रो. हरिमोहन झा अेम. अे., श्रीमती सीता सिन्हा, भगवत शरण अुपाध्याय अेम. अे., प्राचार्य डॉ. सोमनाथ गुप्त, केदारनाथ मिश्र 'प्रभात', लक्ष्मीकान्त वर्मा, रमणलाल वसन्त देसाअी, गौरीशंकर जोशी, स. म. मालवड, गुरुनाथ जोशी, 'भिक्खु', सर्वेश्वर दयाल सकसेना अेम. अे., गिरिधर गोपाल अेम. अे., गोपाल शर्मा अेम. अे., हर्षनाथ, कु. लक्ष्मी कृष्णन, ललित सहगल, गंगाधर गाडगील, अनिलकुमार सा. र., वैकुंठनाथ मेहरोत्रा अेम. अे., श्रीपरशुराम, महेशकुमार मूंधडा, श्रीमती गुहप्रियै, श्रीमती सरस्वती रामनाथन, लोकचक्षु, डॉ. अ. स. अल्तेकर, प्रेमकपूर कंचन, सुजानसिंह, अ. न. कृष्णराव, राजकुमारसिंह कुमार, श्रीमती माया गुप्त, देवराज दिनेश, जनार्दन मुक्तिदूत, प्रभातशास्त्री साहित्याचार्य, वृन्दावन नामदेव, बालमुकुन्द मिश्र, कृष्णलाल टी. जेतली, प्रो. महेन्द्र भटनागर, नीलमणि फूकन, प्रा. विश्वनाथ सत्यनारायण, श्रीनाडोडी, अमरेन्द्र, चावलि सू. ना. मूर्ति बी. अे. सा. र., देवदूत विद्यार्थी, राजेन्द्रप्रसाद भट्ट बी. अे. अेलअेल. बी., कु. मोहिनी शर्मा अेम. अे. सा. र., महेन्द्रराज अेम. अे. सा. र., प्रताप विद्यालंकार, प्रो. आंबेकर, प्रो. न. चिं. जोगलेकर, जगदीशचन्द्र सिन्हा, नन्दकुमार पाठक, गोपालकृष्ण कौल, रामगोपालसिंह चौहान, कुसुमाकर दीक्षित, परदेशी सा. र., आसाराम वर्मा सा. र., 'सोमु', प्रो. कृष्णचंद्र गुप्त, प्रो. हिरण्मय अेम. अे. सा. र., आनन्दकन्द, वसु व्यास 'अनल', रायप्रोलु सुब्बराव, यदुनाथ थत्ते, घनश्याम सेठी, श्रीराम शर्मा 'राम', मो. र. करंदीकर, आरसीप्रसाद सिंह, रतनलाल बंसल, प्रो. के. अेस. चिदम्बरम भारद्वाज अेम. अे., सत्यव्रत अवस्थी, अरविन्द जोशी, मनोहर देशपांडे, अनुसूयाप्रसाद पाठक, जितेन्द्रचन्द्र चौधुरी, रंजन परमार, पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' अेम. अे. सा. र., प्रो. बेंकारामप्पा, श्रीमती राजलक्ष्मी राघवन, अहमदयूसुफ बद्र, अिब्राहीम अली बदवी, अीशनारायण जोशी, प्रो. हरिमोहन झा।

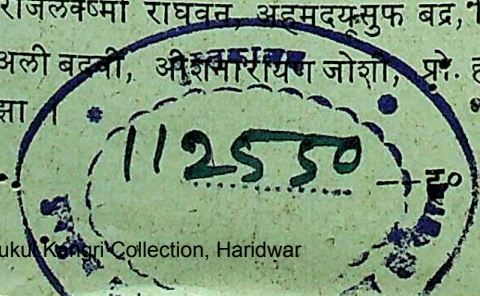
112550

—ह० श०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रद्धेय टंडनजीकी थैली

अं. भा. राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनके पाँचवें अधिवेशन नागपुरमें निम्नलिखित प्रस्ताव पास हुआ है :—

"यह सम्मेलन निश्चय करता है कि हिन्दी'के प्राण श्रद्धेय श्री पुरुषोत्तमदासजी टण्डनको अुनकी हिन्दीकी अमूल्य सेवाओंके प्रति श्रद्धा व्यक्त करनेके लिअे अेक अच्छी निधि अेकत्रित की जाअे, और अुचित समयपर अुन्हें वह समर्पित की जाअे।"

प्रचारक तथा केन्द्र-व्यवस्थापकोंने मिलकर जो यह प्रस्ताव किया है अुसकी जवाबदेही वे समझते ही होंगे। अुनका अब यह कर्तव्य है कि अिस थैलीके लिअे जितना भी हो सके, धन शीघ्र अिकट्ठा करें। यह कोअी कठिन बात भी नहीं है। पुराने तथा नये परीक्षार्थियोंतक पहुँचनेका ही सवाल है। राष्ट्रभाषा प्रचार समितिकी परीक्षाओंसे लाभ अुठानेवालोंकी संख्या लाखोंकी है। यदि वे आठ आना मात्र भी अिस थैलीके लिअे दें, तो भी लाखोंकी रकम अिकट्ठी हो जाअेगी। प्रचारक, केन्द्र-व्यवस्थापक तथा अन्य राष्ट्रभाषा-प्रेमियोंका भी तो कुछ हिस्सा अिस रकममें रहेगा। अिस प्रकार यह थैली अच्छी खासी बड़ी हो सकती है।

श्री टण्डनजीके सम्बन्धमें यहाँ कुछ कहना मुझे आवश्यक प्रतीत नहीं होता। राष्ट्रभाषा हिन्दीका विकास, प्रचार आदि प्रवृत्तियोंके वे प्राण हैं और भारतीय संविधानमें हिन्दीको राजभाषाका जो स्थान प्राप्त हुआ है, वह भी अधिकांशमें आपहीके प्रयत्नोंका परिणाम है। श्री टण्डनजी हिन्दीके कार्यको अपना जीवन-कार्य मानते हैं और राजनैतिक क्षेत्रमें अुनका बहुत अूँचा स्थान होनेपर भी, वे अपने राजनैतिक कार्यको हिन्दीके कार्यकी तुलनामें गौण स्थान देते हैं। गत चुनावके समय अुन्होंने 'पार्लमिण्ट' (संसद) में जानेका निश्चय किया, अुस समय भी हिन्दीका कार्य ही अुनकी दृष्टिके समक्ष मुख्य कार्य था। श्री टण्डनजीको थैली अर्पण करनेसे राष्ट्रभाषा हिन्दीके कार्यकी ही सेवा होगी। सब केन्द्र-व्यवस्थापक तथा प्रचारकोंसे हम अिस कार्यमें सम्पूर्ण सहयोग तथा प्रयत्नकी आशा रखते हैं। अिस थैलीके लिअे हम धनिकोंके पास जाना पसंद नहीं करेंगे। हमारे प्रचारक, केन्द्रव्यवस्थापक तथा परीक्षार्थियों द्वारा श्रद्धापूर्वक जो भी दिया जाअे अुसीको हम श्री टण्डनजीकी सेवामें अर्पण करेंगे। अिसलिअे जो रकम वे अेकत्र कर सकें, मन्त्री, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धाके पास "टण्डनजीकी थैलीके लिअे" अिस प्रकार लिखकर मनिआर्डर या चेकके द्वारा भेज दें। जो प्रचारक तथा केन्द्र-व्यवस्थापक विशेष रूपसे प्रयत्न करके अिस थैलीके लिअे धन अेकत्र करना चाहेंगे अुन्हें, लिखनेपर यहाँसे रसीद-बुकें भेज दी जाअेंगी। अिस थैलीके लिअे जो धन प्राप्त होगा वह 'राष्ट्रभाषा' पत्रमें क्रमशः प्रकाशित किया जाअेगा।

मोहनलाल भट्ट,
मंत्री,
राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नयी धारा

याद रखिये पत्रिकाके लिअे

१ अेक निश्चित अुद्देश्य चाहिये !

२ अुसका अपना व्यक्तित्व चाहिये !

नयी धारा अैसी ही अेक मासिक पत्रिका है।

नयी धाराके पुराने प्राप्य अंक आधी कीमतमें प्राप्त होंगे। पोस्टेज फ्री। रंगमंच अंककी थोड़ीसी प्रतियाँ शेष हैं। ग्राहक शीघ्रता करें।

डिमाअी आठ पेजीके १६० पृष्ठ, पक्की जिल्द, आकर्षक कवर, सचित्र, सुसज्जित।

अेक अंक १) रु.] [वार्षिक १०) रु.

पता:—प्रबंधक, नयी धारा, अशोक प्रेस, पटना ६

'मेघदूत' के महत्वपूर्ण प्रकाशनके बाद
"प्रेरणा" का छठा-सातवाँ अंक

:प्रेमचन्दके पात्र:

विशेषांक होगा

★ अिस अंकमें प्रेमचन्दके अुपन्यासों और कहानियोंके सभी महत्वपूर्ण पात्रोंपर अधिकारपूर्ण लेख होंगे।

★ विशेषांकका मूल्य लगभग ४) होगा।

★ प्रेरणाके स्थाअी ग्राहकोंके लिअे वही मूल्य रहेगा। अग्रिम आर्डर भेजिये।

शीघ्र ही वार्षिक ग्राहक बनकर अिस सुविधाका लाभ अुठावें। वा. १४) रु.

सम्पादक : कोमल कोठारी,
सोजतीगेट, जोधपुर (राजस्थान)

रानी

आपके मनोरंजनके लिअे

नाना प्रकारके सचित्र लेख, कहानियाँ, छाया-लोक और आलोचनाअें आदि-आदि। वर्षमें होलिकांक और दीपावली-अंक मुफ्त।

रानीका वार्षिक चन्दा केवल चार रुपये है। रानी १५ वर्षसे हिन्दी-पाठकोंको निरन्तर नवीन पाठ्य-सामग्री देती आ रही है।

"रानी" कार्यालय,
१२१ चित्तरंजन अेविन्यू,
कलकत्ता ७

गुजराती भाषाका निराला साप्ताहिक-पत्र

निर्माण

[सम्पादक : हरिलाल पंड्या]

समस्त भारतकी शैक्षणिक, सांस्कृतिक और प्रजाजीवनके नव-निर्माणकी प्रवृत्तियोंका ज्योतिर्धर।

निर्माणमें आप देखेंगे :—

आनंद, अुत्साह और चेतनाप्रद लेख, कहानियाँ अेवम् अपने ही ढंगसे चुने हुअे समाचार। राष्ट्र-भाषासे सम्बन्धित सभी प्रवृत्तियोंका विवरण और किसी भी वादसे परे रहकर तटस्थ और स्पष्ट मंतव्य प्रकट करना निर्माणका ध्येय है।

विज्ञापनका अत्युत्तम साधन।

आज ही पत्र लिखकर नमूनार्थ प्रति मंगवाअिये।

वार्षिक मूल्य ५) छः माही ३) अेक प्रति दो आना

'निर्माण' कार्यालय
स्वस्तिक प्रिन्टरी,
धर्मेन्द्र मार्ग,
राजकोट (सौराष्ट्र)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस घरमें आरोग्य प्रकाश नहीं, वहाँ सुख शान्ति कहाँ ?

आरोग्य, स्वच्छता और चिकित्साका सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ

भारत-प्रसिद्ध श्रीवैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लिमिटेडके अध्यक्ष वैद्यराज पं० रामनारायणजी वैद्यशास्त्रीने ५-६ वर्ष बड़ी मेहनतसे स्वयं अिस ग्रंथको लिखा है। ग्रंथका अेक-अेक वाक्य हजारों रुपयेका काम देता है। व्यायाम, ब्रह्मचर्य, भोजन, सदाचार, अुत्तम विचार आदि पूर्वार्द्ध विषयोंको पढ़कर और तदनुसार चलकर सदा बीमार रहनेवाला रोगी बिना दवाके नीरोग (तन्दुरुस्त) हो जाता है। ग्रंथके अुत्तरार्द्धमें शरीरमें पैदा होनेवाले सभी रोगोंकी अुत्पत्ति, कारण, निदान, रोगके लक्षण, चिकित्सा, पथ्यापथ्य आदि बड़ी ही सरल भाषामें लिखे हैं, जो पढ़कर विद्वानसे लेकर साधारण पढ़े-लिखे दोनों समान भागसे लाभ अुठा सकते हैं। अिसमें दवाओंके जो नुकसे लिखे गये हैं वे बहुत बार परीक्षित, कभी भी फेल न होनेवाले और शास्त्रानुमोदित हैं। शहर हो या देहात, सब जगह अिस पुस्तकके घरमें रहनेसे रोगीको तत्काल लाभ पहुँचाया जा सकता है। औषधि तैयार करनेका विधान तो अिस पुस्तकमें श्रेष्ठ है क्योंकि लेखक अिस विषयके निर्णयात्मक ज्ञाता हैं। अिसके आठ संस्करणोंमें ७१००० प्रतियां छपकर बिक चुकी हैं। यह नवां संस्करण १५ हजारका अभी छप रहा है। अिससे अिसकी लोक-प्रियता और अुपयोगिता स्पष्ट मालूम होती है। हिन्दीमें अैसी अुत्तम पुस्तक दूसरी नहीं है, यह कहा जाय तो अनुचित न होगा। प्रचारकी दृष्टिसे मूल्य भी बहुत कम रखा गया है। ५१५ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य सिर्फ १।।।), डाक खर्च ।।≈), हमारी चार निर्माणशाला, ५० विक्री केन्द्र, १५००० अेजेन्सियोंसे प्रत्यक्ष खरीदनेपर डाक खर्च नहीं लगेगा।

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लिमिटेड, कलकत्ता, पटना, झांसी, नागपुर।

—: अुद्यम :—

हिन्दी और मराठी भाषामें प्रकाशित होता है।

प्रतिमास १५ वीं तारीखको पढ़िये।

अुद्यममें निम्न विषयोंके लेख छपते हैं :—

लाभदायक अुद्योगधंधोंकी जानकारी, अनाज तथा सब्जीकी खेती व रोगोंका निवारण, पशुपालन, दुग्धव्यवसाय व ग्रामोद्योग संबंधी लेख, विद्यार्थियोंके लिअे वैज्ञानिक व अन्य जानकारी, आरोग्य, घरेलू औषधियों संबंधी लेख, हिन्दुस्तानके वैज्ञानिक और औद्योगिक क्षेत्रकी अुपयोगी जानकारी, कृषि, औद्योगिक और व्यापारिक क्षेत्रमें काम करनेवाले लोगोंकी मुलाकात तथा परिचय।

अुद्यमके विशेष स्तंभ

महिलाओंके लिअे अुपयुक्त, रुचिकर खाद्यपदार्थ बनानेकी विधि, घरेलू मितव्ययिता, अुद्यमका पत्रव्यवहार, खोजपूर्ण खबरें, आर्थिक तथा औद्योगिक परिवर्तन, जिज्ञासु जगत्, व्यापारिक हलचलोंकी मासिक समालोचना, नित्योपयोगी वस्तुअें स्वयं तैयार कीजिअे।

वार्षिक चन्दा ७ रु. और प्रति अंक १२ आना

पता:— **'अुद्यम' मासिक, धर्मपेठ, नागपुर (म. प्र.)**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

112550
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यिक-त्रैमासिक-पत्रिका

"राष्ट्रवीणा"

संपादकः - जेठालाल जोषी

विद्वानोंसे प्रशंसा प्राप्त राष्ट्रवीणामें--

विद्वानोंके चिंतनप्रधान लेख अेवं गुजरातीके साहित्यिक, सांस्कृतिक, कला विषयक लेख, कविताअें, प्रवास वर्णन, परीक्षोपयोगी लेख, गुजराती, मराठी, बंगाली तथा हिन्दीकी समानार्थी शब्दावली आदि सामग्री, चयनिका, संस्कृति स्रोत साहित्य समीक्षा, गुजरात सौराष्ट्र और कच्छके राष्ट्रभाषा प्रचार समाचार आदि कअी स्तंभ प्रकाशित होते हैं।

वार्षिक मूल्य ४) . अेक प्रति १)

वर्धा समितिके सक्रिय प्रचारकों और केन्द्र-व्यवस्थापकोंको पत्रिका आधे मूल्यमें भेजी जाती है।

—व्यवस्थापक "राष्ट्रवीणा"
गुजरात प्रां. रा. भा. प्र. समिति, कालूपुर,
खजूरीकी पोल, अहमदाबाद।

महाराष्ट्र रा.भा. प्रचार समिति, पुणेके तत्वावधानमें
राष्ट्रभाषा प्रचारकों अेवं परीक्षार्थियोंके
अुपयोगकी हिन्दीकी अभिनव साहित्यिक
मासिक पत्रिका

"जयभारती"

सम्पादक अेवं प्रकाशकः--श्री पं. मु. डांगरे

प्रारम्भिकसे लेकर अूँची परीक्षाओंतककी परीक्षोपयोगी सामग्री; साहित्य, परंपरा, संस्कृति विषयक लेख; शंका समाधान; साहित्य परिचय; मधुसंकलन; हिन्दी जगत्; परीक्षा विषयक सूचनाअें; आवश्यक जानकारी, कहाँपर कौन क्या पढ़ें? आदि नाविन्यपूर्ण अेवं समयोचित रचनाओं अेवं विशेषताओंसे भरपूर।

मनीआर्डरसे वार्षिक मूल्य १) अेक रुपया भिजवाकर शीघ्र ग्राहक बन जाअिये।

पताः-८६६ सदाशिव, पो. बॉ. नं.५५८, पुणे २.

जल्दी ही आर्डर दीजिये

राष्ट्रभाषा--डायरी
१९५४

अिसमें राष्ट्रभाषा प्रचार समितिकी परीक्षा आदि प्रवृत्तियोंके सम्बन्धमें विभिन्न जानकारियोंके साथ दैनिक व्यवहारमें आनेवाली अुपयोगी बातें संग्रहीत हैं।

राष्ट्रभाषा प्रेमी, प्रचारक वर्ग, छात्र वर्ग तथा सभी कोटिके लोगोंके लिअे यह डायरी बहुत ही अुपयोगी होगी।

सुन्दर कागज, आकर्षक छपाअी तथा कपड़ेकी पक्की जिल्द।

साअिज -४" + ६½"

लागत मूल्य- १) अेक रुपया, डाक खर्च अलग।

प्रकाशक— राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

पुस्तक-परिचय

अुत्कल साहित्य और साहित्यिकोंसे परिचय प्राप्त करना चाहते हैं तो निम्नलिखित पुस्तकें पढ़िये-

१-प्रतिभा-लेखक डा. श्री हरेकृष्ण महताब। प्रतिभा जो अुत्कल विश्वविद्यालयकी बी. अे. परीक्षाके पाठ्यक्रममें है, अुसका यह हिन्दी अनुवाद है।

२-अुत्कल मणि पं० गोपबन्धु दास-पं० गोपबन्धु दासकी जीवनी है। मूल अुत्कल भाषाके लेखक पं. लिंगराज मिश्र अेम. पी. हैं।

३-धर्मपद-पं. अुत्कलमणि गोपबन्धु दास द्वारा लिखित अुत्कल भाषाका खण्ड-काव्य है।

४-अुत्कल साहित्यकी श्रेष्ठ कहानियाँ-अिसमें अुत्कल भाषाके प्रसिद्ध आठ लेखकोंकी कहानियाँ संग्रहीत हैं।

५-राष्ट्रभाषा बन्धु और राष्ट्रभाषा सुबोधिनी-अुत्कल भाषा सीखनेमें सहायक

६-क्या यह सुनी कहानी-लेखक पं. रामेश्वर दयालजी दुबे हैं।

प्रकाशक—अुत्कल प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार सभा, कटक-१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दीका स्वस्थ, सात्विक अेवं सस्ता मासिक पत्र

'जीवन-साहित्य'

वार्षिक शुल्क केवल ४)

चाहें तो पहले अेक कार्ड भेजकर नमूना मंगाकर देख लें।

जुलाअी और जनवरीसे ग्राहक बनाये जाते हैं।

पता:-- सस्ता साहित्य मण्डल, नअी दिल्ली

नव निर्माण

[सम्पादक — नेमिचन्द जैन 'भावुक']

+ साहित्य, शिक्षा, संस्कृति और कलाका संगम + राजनीति-विज्ञान, + तारोंकी छायामें + चना जोर गरम + अिमनके आलोकमें + आप भी कहें, हम भी कहें + कसौटीपर + ये धूल भरे हीरे आदि स्थायी स्तंभोंसे युक्त अपनी ही विशेषताओंसे प्रेरित प्रभावित नयी पीढ़ीका सचित्र त्रैमासिक : अेक प्रति १) विशेषांक युक्त वा. ४)

कुमार साहित्य परिषद, जोधपुर

विशेष:— मार्च अंककी प्रतियां अप्राप्य, जूनकी प्राप्य। निशुल्क प्रति भेजनेमें असमर्थ।

मद्रास तथा पंजाब सरकार द्वारा
समस्त शिक्षा संस्थाओंके लिअे स्वीकृत
देशबन्धु पुस्तकालय मथुराका प्रमुख साहित्यिक
मासिक-पत्र

देशबन्धु

प्रधान सं. : कृष्णादत्त वाजपेयी, अेम. अे.
सम्पादक : ज्यो० राधेश्याम द्विवेदी
स. सम्पादक : बैजनाथ दाणी
वार्षिक मूल्य ४) * अेक प्रति ।=)

देशबन्धु अगस्त ५३ से अपने द्वितीय वर्षमें प्रवेश कर चुका है अिसकी खुशीमें ३० सितम्बर-तक केवल ३) रु० में वार्षिक ग्राहक बनाये जा रहे हैं और अुसका प्रथम अंक ब्रज संस्कृति अंक निकल रहा है जो संग्राह्य वस्तु होगी।

पत्र-विक्री [अेजेन्सी] तथा विज्ञापनके लिअे आज ही लिखिये।

पता—व्यवस्थापक, "देशबन्धु"
मथुरा (यू० पी०)

सुन्दर टाअिप और बार्डर

अिस कारखानेके सुन्दर और मजबूत टाअिपको अनेक छापखानेवाले पसन्द करते हैं। हमारे यहाँ अंग्रेजी, मराठी, गुजराती तथा कानड़ी टाअिप और अनेक प्रकारके बार्डर तथा अिलेक्ट्रो ब्लाक्स हमेशा तैयार मिलते हैं।

अुसी प्रकार हमारे यहाँ मोनो सुपर कास्टरसे तैयार किये हुअे १२ पार्अिट हिन्दी और मराठी टाअिप भी तैयार हैं। केटलाग जरूर मँगावें।

पता—मैनेजर, निर्णय सागर प्रेस,
बम्बअी नं० २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे सुविख्यात प्रकाशन

स्वामी विवेकानन्दजीकी सुप्रसिद्ध पुस्तकें

भारतमें विवेकानन्द–जैकेट सहित, सचित्र ५) "आजकी परिस्थितिके अपयुक्त राष्ट्र निर्माण संबंधी वैध अेवं ठोस विचारोंसे भरे, स्वामीजी द्वारा भारतमें दिये गये भावयुक्त स्फूर्तिप्रद भाषण।"

विवेकानन्दजीके संगमें–आकर्षक जैकेटसह, ५।) "स्वामीजीके आध्यात्मिक, राष्ट्रीय, कलाविषयक तथा भक्ति संबंधी संभाषणोंका रोचक, महान् शिक्षाप्रद तथा पथप्रदर्शक संग्रह।"

पत्रावली–दो भागोंमें, प्रत्येक भागका मू० २=) "स्वामीजीके शक्ति सम्पन्न पत्रोंका संकलन।"

देववाणी–सचित्र, २=) "अमृततुल्य, आध्यात्मिक अन्तःप्रेरणासे भरे हुअे अुपदेश।" शक्तिदायी विचार ।।=); भारतीय नारी ।।।) व्यावहारिक जीवनमें वेदान्त १=); मेरे गुरुदेव ।।=); विवेकनन्दजीकी कथायें १।); कवितावली।।=)

गीतातत्त्व–स्वामी विवेकानन्दजीके गुरुभाअी स्वामी शारदानन्द कृत, सुन्दर जैकेट सहित, २।=)

विवेकानन्द-चरित–हिन्दीमें स्वामीजीकी अेकमात्र प्रामाणिक विस्तृत जीवनी, आकर्षक जैकेट, ६) विस्तृत सूचीपत्रके लिअे लिखिये **श्रीरामकृष्ण आश्रम, धन्तोली, (रा.) नागपुर—१, (म०प्र०)**

श्रीरामकृष्णलीलामृत– विस्तृत जीवनी, दो भागोंमें, महात्मा गांधीकी भूमिका सहित, प्रत्येक का ५)

श्रीरामकृष्णवचनामृत–तीन भागोंमें, संसारकी प्रायः सभी प्रमुख भाषाओंमें प्रकाशित, सजिल्द, जैकेट सहित, प्र.भा.६); द्वि.भा.६); तृ.भा.७)

स्वामीजीकी लोकप्रिय पुस्तकें

नये प्रकाशन–जाति, संस्कृति और समाजवाद १); चिन्तनीय बातें १); विविध प्रसंग, १=)

योग पर–ज्ञानयोग ३); भक्तियोग १।=); राजयोग १=); कर्मयोग १।।=); प्रेमयोग १।=);

हिन्दू धर्म संबंधी–हिन्दू धर्म १।।); धर्मरहस्य १); धर्मविज्ञान १।।=); हिन्दू धर्मके पक्षमें ।।=); शिकागो वक्तृता ।।=); आत्मानुभूति तथा अुसके मार्ग १।)

भारत पर–हमारा भारत ।।); वर्तमान भारत ।।); स्वाधीन भारत जय हो १=); प्राच्च और पाश्यात्य १।)

आलोचनाके तृतीय वर्षका पहला अंक

"आलोचना अंक"

के नामसे लगभग २५० पृष्ठोंका विशेष अंक होगा। अिस अंकका मूल्य ५) मात्र होगा, लेकिन वार्षिक ग्राहकोंको यह अंक साधारण मूल्यमें ही मिलेगा।

सम्पादक-समितिः— डा० धर्मवीर भारती, डा० रघुवंश, डा० व्रजेश्वर वर्मा, श्री विजयदेव नारायण साही। सहकारी सम्पादक श्री क्षेमचन्द्र सुमन।

वा० मू० ५२) मात्र मणीआर्डर द्वारा भेजिये

प्रकाशकः — **राजकमल प्रकाशन, १ फैज बाजार, दिल्ली**

सुषमा

सम्पादक : कुंडलराय मोहेकर

या मासिकाचीं वैशिष्ठ्यें—

★ सुन्दर लघुकथा. ★ नामांकित लेखकांचें लिखाण. ★ जीवन, कला, साहित्य अित्यादि विषयांवर अुपयुक्त मजकूर. ★ या शिवाय चेतोहारी चित्र.

नियमित वाचण्यासाठी आजच वर्गणी पाठवून ग्राहक होणें फायद्याचें आहे.

वार्षिक वर्गणी ६ रुपये.

किरकोळ अंकास आठ आणे.

सुषमा : पराग बिल्डिंग्ज, धरमपेठ, नागपुर (म.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रभारती-विज्ञापन दर

साधारण पृष्ठ	पूरा --	४०)	प्रतिवार
,,	आधा --	२५)	,,
द्वितीय कवर पृष्ठ	पूरा --	१००)	,,
,,	आधा --	५५)	,,
तृतीय कवर पृष्ठ	पूरा --	८०)	,,
,,	आधा --	४५)	,,
चतुर्थ कवर पृष्ठ	पूरा --	१२०)	,,
,,	आधा --	७०)	,,

राष्ट्रभारतीकी साअिज-- ९½"×७"
छपे पृष्ठकी साअिज-- ८"×५½"

तीनसे अधिक बार विज्ञापन देनेवालोंको सुविधा दी जाअेगी।

'राष्ट्रभारती' में अपने व्यापारका विज्ञापन देकर लाभ अुठाअिअे। क्योंकि यह कश्मीरसे लेकर रामेश्वरतक और जगन्नाथपुरीसे द्वारकापुरीतक हजारों पाठकोंके हाथोंमें पहुँचती है।

★

राष्ट्रभारती-अेजेन्सी

१. प्रतिमास कम-से-कम पाँच प्रतियाँ लेनेपर ही अेजेन्सी दी जाअेगी।
२. पाँच प्रतियाँ लेनेपर २०) प्रतिशत कमीशन दिया जाअेगा।
३. छहसे अधिक प्रतियाँ लेनेपर २५) प्रतिशत कमीशन दिया जाअेगा।
४. पाँचसे अधिक ग्राहक बना देनेवालोंको भी विशेष सुविधा दी जाअेगी।

विशेष जानकारीके लिअे आज ही लिखिअे:-

श्री. प्रबन्धक, "राष्ट्रभारती" पो० हिन्दीनगर (वर्धा, म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम आपसे कुछ कहना चाहते हैं !

'राष्ट्रभारती' का तीसरा वर्ष जनवरी ५३ से ही शुरू हो चुका है। तीसरे वर्षका यह बारहवाँ (दिसम्बर मासका) अंक आपके हाथमें है।

'राष्ट्रभारती' के जिन प्रेमी ग्राहकोंका वार्षिक चन्दा अिस अंकके साथ पूरा हो जाता है, अुनसे हमारा नम्र निवेदन है कि वे अपना अगले वर्षका चंदा ६ रु. मनीआर्डर द्वारा तुरन्त भेजनेकी कृपा करें। वार्षिक या छहमाही चंदा हर हालतमें मनीआर्डर द्वारा भेजना ही ठीक होगा। अिससे हमको और आपको सुविधा होगी। आपको अंक समयपर मिलेगा। वी.पी. और 'रजिस्ट्री' चार्जकी झंझटसे आप और हम दोनों बचेंगे। आशा है, आप हमारी अिस प्रार्थनापर जरूर ध्यान देंगे।

दूसरा निवेदन यह भी है कि कमसे-कम अपने किसी अेक-दो पड़ोसी मित्रोंको भी ग्राहक अवश्य बना दें और अुनका सालाना चंदा मनीआर्डरसे भिजवा दें। यह 'राष्ट्रभारती' सबसे सस्ती, सुन्दर साहित्यिक, सांस्कृतिक पत्रिका है, जो ठीक समयपर हर १ ली ता० को निकलती है।

अिस पत्रिकाके प्रचारमें आप अपना ज्यादा-से-ज्यादा सहयोग दें और अिस पत्रिकाको स्वावलंबी बनावें।

मनीआर्डरसे वार्षिक चंदा ६ रु. और छहमाही चंदा ३ रु. ८ आ.

नमूना अंकके लिअे दस आना मात्र।

पता:— व्यवस्थापक—'राष्ट्रभारती', पो०—हिन्दीनगर (वर्धा, म० प्र०)

राष्ट्रभारतीके लेखकोंसे निवेदन !

(१) 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ रचना आदि सामग्री स्वच्छ सुवाच्य लिखावटमें अथवा अच्छी टाअिप की हुअी कापी भेजनी चाहिये। प्रकाशन योग्य सामग्री जो कुछ भी आप भेजें वह बहुत भारी-बोझिल और खूब लंबी नहीं होनी चाहिअे। कृपया अिसका खयाल रखें कि लिखावट स्वच्छ अेवं सुवाच्य होनी चाहिअे।

(२) यह अच्छी तरह ध्यानमें रहे कि राष्ट्रभारतीमें प्रकाशनार्थ भेजी हुअी आपकी रचना अिसके पूर्व किसी हिन्दी पत्र-पत्रिकामें प्रकाशित न हो चुकी हो; और जो कुछ सामग्री भेजें वह 'राष्ट्रभारती' के लिअे ही भेजें। 'राष्ट्रभारती' अपने लेखकोंको "पत्रपुष्प-पुरस्कार" भी भेंट करती है।

(३) अनुवादक महाशय किसी अनूदित रचनाको भेजनेसे पूर्व अुसके मूल-लेखकसे पत्र द्वारा अनुमति अवश्य प्राप्त कर लें; तभी अनूदित रचना हमारे यहाँ भेजें।

(४) आपकी स्वीकृत रचना संबंधी सूचना संपादक द्वारा आपको दी जाअेगी और छपनेतक आपको प्रतीक्षा करनी होगी।

(५) अपनी अस्वीकृत रचनाको वापस मंगानेके लिअे डाक-टिकट अवश्य भेजें अथवा आप अुसकी प्रतिलिपि अपने पास सुरक्षित रखें।

(६) लेख, रचना आदि प्रकाशन योग्य सम्पादकीय सारा व्यवहार अिस पतेपर करें:—

संपादक : 'राष्ट्रभारती'
पोस्ट—हिन्दीनगर (वर्धा, मध्यप्रदेश)

मुद्रक तथा प्रकाशक:— मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस,— राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

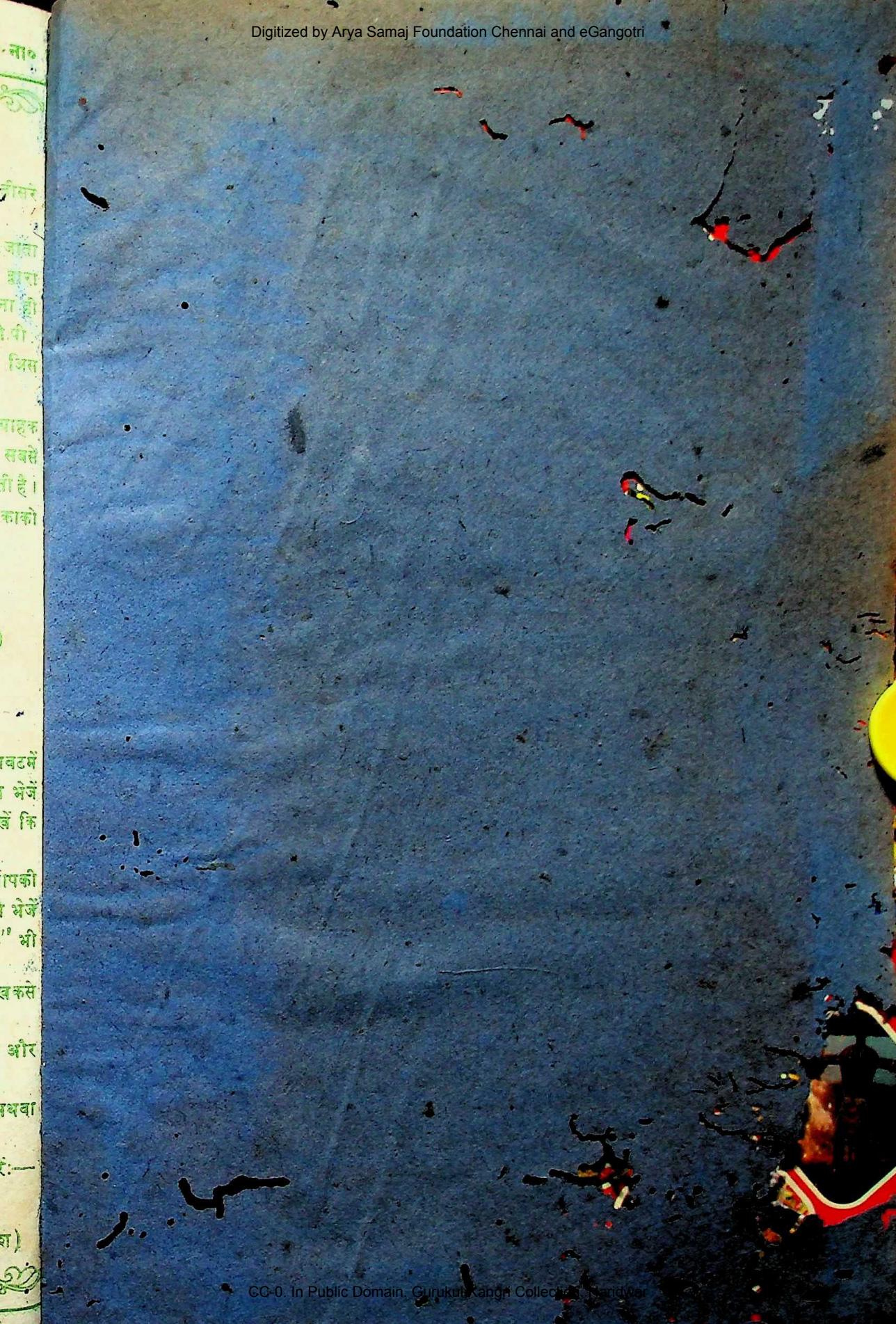

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

76038

Compiled
1988-2008

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri